3 1761 04413 5531

THE

RAGHUVANŚA.

OF

KÁLIDÁSA.

(Especially adapted to meet the requirements of University Students.)

WITH THE COMMENTARY OF MALLINÂTHA,

EDITED WITH

A LITERAL ENGLISH TRANSLATION, WITH COPIOUS NOTES IN ENGLISH INTERMIXED WITH FULL EXTRACTS, ILLUCIDATING THE TEXT, FROM THE COMMENTARIES OF BHATTA HEMÁDRI, CHÁRITRAVARDHANA, VALLABHA, DINAKARAMIŚRA, SUMATIVIJAYA, VIJAYAGANI, VIJAYÂNANDASÛRIŚVARACHARANASEVAKA AND DHARMAMERU, WITH VARIOUS READINGS &c., &c.,

BY

GOPAL RAGHUNATH NANDARGIKAR,
Sanskrit Tutor, New English School, Poona.

Third Edition.

REVISED AND ENLARGED.

Printed at the Arya-Bhushana Press,
Poona.

1897.

RADHABAI ATMARAM SAGOON,
Book-seller and Publisher, Kalkadevi road,
BOMBAY.

(Registered for Copy-right under Act XXV of 1867.)

(All rights including that of the extracts from other commentaries in their present form are specially reserved.)

Respectfully dedicated

TO

Ramkrishna Gopal Bhandarkar,

M. A., Ph. D. & A. L. M., (Gottingen), C. I. E.

Honorary Member of the Royal Asiatic Society of Great Britain and Ireland; Honorary Member of the Italian Asiatic Society; Corresponding Member of the German Oriental Society, Fellow of the Universities of Bombay and Calcutta, and Professor of Oriental languages, Deccan College, Poona.

BY THE EDITOR.

ABBREVIATIONS.

Malli.	= म०	= Mallinátha.	मल्लिनाथः.
Hem.	= हे०	= Hemádri.	हेमाद्रिः.
Chá.	= चा०	= Cháritravardhana.	चारित्रवर्धनः.
Val.	= व०	= Vallabha.	वल्लभः
Su.	= सु०	= Sumativijaya.	सुमतिविजयः.
Din.	= दि०	= Dinakaramis ra.	दिनकरमिश्रः.
Vija.	= वि०	= Vijayagaṇi.	विजयगणिः.
Vijay.	= विज०	= Vijayánandasúris vara-charaṇasevaka.	विजयानन्दसूरीश्वरचरणसेवकः.
Dharm.	= ध०	= Dharmameru.	धर्ममेरुः.

A_2. = The second Ms. of the Group A.
B_2. = The second Ms. of the Group. B.
C_2. = The second Ms. of the Group C.
D_2. = The second Ms. of the Group D.
R. = Raghuvans'a.
Ku. = Kumárasambhava.
Ri. = *Ri*tusamhára.
Meg. = Meghadúta.
Mv. = Málavikágnimitram.
Vi. = Vikramorvas'íyam.
S'á. = S'ákuntalam.
Budha. = Buddhacharitam.
Mál. = Málatîmádhavam.
Uttar. = Uttaracharitam.
Máhv. = Mahávíracharitam.
Ve. = Ve*n*ísamhara*n*am.
Mu. = Mudrárákshasam.
Rat. = Ratnávalí.
M*ri*. = M*ri*chchhaka*t*ikam.

CORRECTIONS AND ADDITIONS.

N. B.—The reader should make these corrections and additions before commencing to read. It will be found that some insignificant mistakes have crept in owing to the great haste with which the book has been issued.

PAGE.	LINE.	INCORRECT.	CORRECT.
5	7	*for* विंशपर्णं	*read* विंशपर्णः
16	21	,, मयूरवाण्याः	,, मयूरवाण्यः
,,	1 from below	,, °पद्गे	,, °पद्ज्ञे
22	16	,, °कुशारन्य-	,, कुशारन्य.
,,	5 from below	,, queen	,, queen,
,,	4 from below	,, king	,, king,
24	20	,, निराकृति	,, निराकृतिः
27	3	,, मां	,, मां
,,	9	,, °वाला	,, °वालो
,,	9	,, °वालः	,, °वालः
33	19	,, अनुगंनन	,, अनुगमनेन
40	13	,, °पामुखं	,, मानमुखं
42	19	,, उधस्तु	,, ऊधस्तु
46	7 from below	,, he	,, the
48	2	,, °शाक्तिः	,, °शाक्ति
51	5 from below	,, °स्तुल्ाम°	,, °स्तुलीम°
56	5	,, दोग्धीणां	,, दोग्ध्रीणां
,,	22	,, स्वयम°	,, स्वयम°
58	6 from below	,, man';	,, man;
,,	5 from below	,, prey	,, prey'
59	22	,, think me that	,, think that
62	1 from below	,, °वत°	,, °व्रत°
64	8	,, प्रातकालं	,, प्रातकालं
67	4 from below	,, °कांशयोः । बभार	,, °कोशयोर्बभार
68	12	,, मन्थतीति	,, मथ्नन्तीति
72	21	,, पित-	,, पितृ-
75	7	,, मुखै-	,, सुखं-
77	12	,, एक	,, एक-

PAGE.	LINE.	INCORRECT.	CORRECT.
77	5 from below	*for* अशिक्षिताश्चं	*read* अशिक्षताश्चं
81	15	,, शतैर्हभि°	,, शतैर्हरिभि°
,,	16	,, वाजिरिभि°	,, वाजिभि°
89	1 from below	,, मद्गुरुः	,, मद्गुरुः
90	7	,, °लोचनमास्यै°	,, °लोचनस्यै°
92	2	,, सवित्रव	,, सवित्रेव
96	6	,, नन्यारिद्°	,, नन्यादि°
97	25	,, रचिताः	,, रेचिताः
98	4 from below	,, प्रसादमुमुखे	,, प्रसादसुमुखे
102	10 from below	,, पुरोगः	,, पुरोगः
106	2 from below	*add* B. C. E. I. R. with Val., Din., and Su., शात्रवं व for शात्रवं च.	
107	17	,, °कारदेशः	,, °कारादेशः
111	16	,, कपितानां	,, कम्पितानां
,,	26	,, junglings	,, jinglings
112	2 from below	,, °वदनौ°	,, °वदना°
113	4 from below	*add* A. B. R. with Su., जलवर्त्मना for स्थलवर्त्मना.	
115	9	,, दिशमुदांचा	,, दिशमुदीचीं
,,	,,	,, अनेकव-	,, अनेकेनेव-
116	5	,, अस्तःपुर°	,, अन्तःपुर°
,,	11 from below	,, प्रात्पेः	,, प्राप्तेः
117	10	,, उद्धूतैश्च°	,, उद्धूतैरश्च°
119	25	,, Utsavasanktas	,, Utsavasanketas
120	18	,, रथवर्त्म°	,, रथवर्त्म°
122	6 from below	,, °मिषेक°	,, °भिषेक°
124	15	,, अभ्यग्र°	,, अभ्यग्र°
125	10	,, शश्वरदस	,, शश्वदस°
128	21	,, तवाहत	,, तवार्हत
,,	24	,, Vartantu's	,, Varatantu's
129	22	,, मालवनिता	,, बालवनिता
130	11	,, °स्नम्ब्वेव	,, °म्ब्वेव
133	4	,, तत्रस्थस्य	,, तत्रथस्य
135	14 from below	,, lighted	,, delighted
,,	11 from below	,, camels and mares	,, she-camels
136	1	,, जेन्मुषस्त	,, जन्मुषस्ते
,,	9 from below	,, they say	,, they say,
,,	5 from below	,, भवांस्तत्व	,, भवांस्त्व°
140	10	,, बृहतस्तरगान्	,, बृहस्तरङ्गान्
145	10 from below	,, प्रयोक्त°	,, प्रयोक्तुः

Page.	Line.	Incorrect.	Correct.
147	4 from below	*for* अधिकाग°	*read* अधिकारि°
148	14	,, वन्दिदुत्रा:	,, वन्दिदुत्रा:
,,	7 from below	,, वैतालिका:	,, वैतालिका
149	7 from below	,, कांलाक्षम°	,, कालाक्षम°
152	16	,, वजनाक्ष	,, वनजाक्ष
,,	18	,, वानायुजा:"	,, वनायुजा:"
,,	24	,, chanking clains,	,, clanking chains,
155	21	,, exhibited	,, exhibiting
161	5	,, लिलेख	,, विलिलेख [way
163	7 from below	,, but the way	,, but from the
164	6	,, दिदेश°	,, °दिदेश
167	7 from below	,, वल्यांग पद्मानिबंधं ॥	,, वल्यांग पद्मानिबंधं
,,	5 from below	,, माहात्म्यं दर्श-	,, °माहात्म्यदर्श-
168	2 from below	,, चन्द्रमौलि,	,, चन्द्रमौलि:,
176	20	,, वलौऽसौ	,, वलौऽसौ
178	16	,, वानरा	,, वानैरा°
,,	26	,, palm tree groves	,, palm-tree-groves
180	1	,, पाण्ड्याऽय°	,, पाण्ड्यांऽय
186	9 from below	,, दश्यादिके विकार कल्यं	,, दश्यादिविकल्प°
187	28	,, like as	,, like
188	18	,, अधदका—	,, अधशाका—
190	13	,, अत्यतां	,, अन्यतां°
,,	28	,, had gone	,, gone
193	13	,, गवाक्षऽवाक्ष	,, गवाक्षाऽवाक्ष°
198	6	,, वधूवर्गं	,, वधूवरौ
202	18	,, hat	,, that
213	22	,, of his	,, to his
219	9	,, क्षौणीं	,, क्षौणीं
,,	3 from below	,, महाभिषेचनं	,, महोऽभिषेचनं
225	4	,, °विशारदं°	,, विशारदं
229	13	,, संन्यासाभि:	,, संन्यासिभि:
234	8 from below	,, क्षितेर तलं	,, क्षितेस्तलं
236	6	,, °सज्जीकरण°	,, °सज्जीकरण°
,,	4 from below	,, विभ्रामा विला	,, विभ्रमाविलां
239	7	,, °त्यादना	,, °त्यादिना
241	14	,, मुकालितं	,, मुकुलितं
251	3	,, कृतवना°	,, कृतवाना°
253	23	,, burn (*i.e.* torment)	,, burns(*i.e.*torments)
,,	6 from below	,, श्रीसुखं	,, श्री: सुखं
,,	,, ,,	,, तेन कर्मणा	,, स्तेनकर्मणा

Page.	Line.	Incorrect.	Correct.
253	5 from below	*for* गङ्गहस्तिभः	*read* गङ्गहस्ततः
254	5 from below	,, H. इतस्तु,	,, H. इतरस्तु,
260	2 from below	,, नवयौवना	,, नवयौवनाः
262	2 from below	,, पाट	,, पाटे
264	2	,, °नाभिम्	,, °नाभिताम्
,,	8	,, श्वत°	,, श्वेत°
266	12	,, यस्यः	,, यस्याः
276	2	,, आलिमि°	,, आलिभि
295	11	,, मुनि शापात्	,, मुनिशापात्
,,	6 from below	,, इवाभत्	,, इवाभूत्
301	6	,, °रस	,, °रसं
312	12	,, पुष्पेः	,, पुष्पैः
315	20	,, °प्रादुर्भावाः	,, °प्रादुर्भावाः
329	7 from below	,, वासितैः	,, वाशितैः
337	8	,, मन्वग	,, °मन्वग
345	13	,, रघुद्रहो	,, रघूद्रहो
352	8	,, सुप्सुतेति	,, सुप्सुपेति
357	11	,, कर्वतः	,, कुर्वतः
361	11 from below	,, (expressed of)	,, (expressed)
363	18	,, hearts	,, heart
365	13 from below	,, father	,, father,
,,	,, from below	,, heaven for	,, heaven,
376	12	,, सन	,, सना
386	6	,, परिंदवन	,, परिदेवने
388	13	,, भार्गवशात्	,, मार्गवशात्
398	2	,, स्थित	,, स्थितं
403	1 from below	,, सुरन्द्र	,, सुरेन्द्र
405	14	,, इन्द्रियाभात्	,, इन्द्रियाभावात्
,,	15	,, नमिताः	,, नामिताः
415	3 from below	,, कर्णार्पितन	,, कर्णार्पितेन
419	14 from below	,, °धमराज्या	,, °धूमराज्या
,,	11 from below	,, °गोचरणां	,, °गोचराणां
438	15	,, कशवन्ति	,, कुशवन्ति
439	5 from below	,, मुदितां	,, मुदिता
442	19	{ Such a one as I am is not able to endure }	So circumstanced I am unable to endure
144	19	,, worlds	,, worlds,

Page.	Line.	Incorrect.	Correct.
444	20	*for* and addressed	*read* addressed
,,	21	,, gave him	,, and gave him
446	11	,, विशादात	,, विषादात्
447	6	,, जहांदुंहिता	,, जह्नांदुंहिता
448	10	,, स्वांतनें:	,, स्वान्तनें:
,,	20	,, When	,, Then
450	13	,, न्वतयस्य	,, न्वन्तुयस्य
453	11	,, कर्तव्या	,, कर्तव्या
464	21	,, सानवनावन्येस्य	,, साधनायेन्येकस
471	8	,, मगंगात	,, मग गात
477	7	,, शांकुक	,, शाकवक
481	3	,, ाचंतसंाद	,, ाचंतसंादं
490	15	,, रर्मि	,, रहृमि
493	7 from below	,, वांदन	,, नंदिन:
494	2	,, शिरश्छेद	,, शिरश्छेद
,,	3 from below	,, शिरश्छेदि	,, शिरश्छेदि
497	7	,, प्रवृत्ति:	,, प्रवृत्ति
501	12 from below	,, thongh	,, though
502	12	,, कमि	,, कृमि
504	11	,, तन तन	,, तन
512	8	,, शिख	,, शिखं
514	19	,, नगर	,, नगर
519	12 from below	,, विश्रेषि	,, विश्रेणी
526	18	,, न्यान्वर्दिन्दिन्यस्तंप	,, न्यानुवन्दिनयस्तुयें
527	2	,, दत्व	,, दत्वं
528	9 from below	,, as will as	,, as well as
535	20	,, cometics	,, cosmetics
539	2	,, नेंत:	,, नेंतं
540	3 from below	,, न्डत्ता	,, न्डेना।
545	11	,, सन्धानन	,, सन्धानेन
548	14	,, आवगीत	,, आवृगान्
550	15	,, षष्ठीमास:	,, षष्ठीसमास:
,,	19	,, अप्रनाघातं	,, अप्रतिघातं
558	15	,, पुत्रीऽर्जनि	,, पुत्रोऽर्जनि
559	11	,, गत्यर्थत्वन	,, गत्यर्थत्वात्
,,	19	,, qade	,, made
560	8	,, पुत्रयामध्यें	,, पुत्रयांमध्यें
,,	16	,, कार्श्वनं	,, काश्चनं
562	23	,, crown prince	,, crowned-prince

Page.	Line.	Incorrect.	Correct.
565	11 from below	*for* This	*read* The majority of the
566	3	,, °विलम्बि	,, °विलम्बि
567	2 from below	,, टाकृतिः	,, स्पष्टाकृतिः
570	10	,, अनार्थावहा	,, अनर्थावहा
571	5	,, प्रेक्षन्तः	,, प्रेक्षन्त
573	20	,, The word command	,, The word of command
574	11	,, उपाययुङ्क्ष	,, उपायुङ्क्त
,,	1 from below	,, °मौर्वां	,, °मौर्वी°
585	18	,, अन्तपुरजनात	,, अन्तःपुरजनात्
588	22	,, hung	,, hang
589	17	,, कुवर्ते	,, कुर्वते
592	12	,, अग्निवणा	,, अग्निवर्णा
593	7	,, चासौविशदा	,, चासौ विशदा
,,	15	,, नितम्बकदेशे	,, नितम्बैकदेश
594	17	,, अङ्गना	,, अङ्गनाः

NOTES.

5	4 from below	,, विषयैषिणां,	,, विषयैषिणां,
9	8	,, ग्रीष्मे	,, ग्रीष्मे
,,	9	,, °रत्न	,, °रत्नं
12	20	,, उदपद.	,, उपपद.
13	13	,, प्रजापतिः	,, प्रजापति
14	2	,, युवयोरियम.	,, युवयोरियम्.
18	7 from below	,, शलभाः	,, शलभा
20	5 from below	,, cleary	,, clearly
23	9	,, सूनृत्वाक्,	,, सूनृतवाक्,
29	4 from below	,, यवा	,, यवाः
31	16	,, dutifu	,, dutiful
34	10	,, तृर्पे	,, तृप्त्यै
37	12	,, दुर्हादिनोमक°	,, दुहादीनामेक°
39	14	,, अमृममिवा	,, अमृतमिवा
41	20	,, ending	,, enduring
42	3 from below	,, भू श्रियते	,, भूर्भ्रियते
46	11	,, langanor	,, languor
49	9 from below	,, °दिगतानि	,, °दिगंतानि
60	1	,, rm	,, arm
62	4	,, compound word	,, compound-word
65	16	,, दक्षिणोः नभस्वामिव	,, दक्षिणो नभस्वानिव

PAGE.	LINE.	INCORRECT.	CORRECT.
65	2 from below	*for* राजान्	*read* राजन्
66	6	,, राजदारा	,, राजदारा°
72	10 from below	,, place	,, palace
77	1 from below	,, श्रिय	,, श्रियं
80	5	,, °श्रयान्	,, °श्रयान्.
90	10 from below	,, त्सुकः	,, उत्सुकः
,,	8 from below	,, यः	,, येय
91	3 from below	,, किमन्यार्क	,, किमंन्यार्क
92	7	,, interpreter	,, interpreted
93	12	,, proceptor's	,, preceptor's
97	18	,, पुंल्लिंग	,, पुंलिंग
104	11 from below	,, इत्त्वालन	,, इत्यालन
105	21	,, °यतसर	,, °यतःसर
109	20	,, न्यथा	,, न्यन्था
,,	21	,, न्द्वारः	,, न्द्वार
,,	22	,, न्निर्तभ्मा	,, न्निर्तश्मा°
112	1	,, दशन	,, दर्शन
,,	26	,, which described	,, which are described
113	3	,, have derived	,, have been derived
,,	,,	,, abundance,	,, abundance.
,,	,,	,, at	,, At
114	6	,, हाभराः मूर्खा	,, हाभरा मूर्खाः
,,	24	,, litter bearers	,, litter-bearers
,,	6 from below	,, आक्षिपन्त्यराविन्दानि	,, आक्षिपन्त्यरविन्दानि
116	20	,, did not fixed	,, did not fix
119	6 from below	,, त्यन्वर्था	,, °त्यन्वर्था
124	25	,, नि सौरभ्य	,, इति सौरभ्यं
128	6	,, एपश्च	,, एषा च
130	19	,, न्यायार्थ्यं	,, त्ययार्थ्यं
134	10	,, दृशद्दर्ये	,, दृषद्दर्ये
,,	,,	,, दृशद्दर्पं	,, दृषद्दर्पं
139	7	,, Greedly	,, Greedy
,,	19	,, कबन्धस्यादेका,,	,, °कबन्धः स्यादेका
140	8 from below	,, धनुरस्यार्त्तांति	,, धनुरस्यार्त्तीति
142	16	,, °स्वयंवरण	,, त्स्वयंवरण
146	16	,, परिमार्जयन	,, परिमार्जयन्
147	4	,, °लक्षीकः	,, °लक्ष्मीकः
149	13 from below	,, अत्या	,, श्रुत्या
151	6	,, पदक्नोदः	,, पदक्षोदः
,,	15	,, °समाधिनां	,, °समाधिना

Page.	Line.	Incorrect.	Correct.
152	2	*for* परार्धगते:	*read* पराऽर्ध्यगते:
,,	8	,, परार्धगते:	,, पराऽर्ध्यगते:
153	16 from below	,, वाद्य	,, वाद्यं
,,	6 from below	,, quote	,, quotes
154	14 from below	,, दीपार्चे:	,, दीपार्चि:
,,	10 from below	,, चक्रुशु:	,, चुक्रुशु:
156	17 from below	,, °भावा:	,, °भाव:
157	3	,, कृतवति	,, कृतवती
161	13	,, सम्बुधौ	,, सम्बुद्धौ
163	9	,, क्षत्रियस्तु	,, क्षत्रियस्य तु
172	15 from below	,, कामज्यानि	,, कामजानि
174	15 from below	,, हेमयुपस्तु	,, हेमयूपस्तु
188	12	,, °जिमूत°	,, °जीमूत°
,,	28	,, °लक्ष्मीचकार	,, °लक्ष्यीचकार
191	2	,, वांद्रियोक्ति:	,, वाद्रियोक्ति:
193	14 from below	,, वत्सर: शरत	,, वत्सरे शरत्
194	19	,, सूतितं	,, सूचितं
,,	,,	,, गांभीर्य	,, गांभीर्यं
,,	22	,, जाबालीम्	,, जाबालिम्
,,	7 from below	,, भटोक्त°	,, भट्टोक्त°
,,	5 from below	,, होमान्यत्	,, होमोऽन्यत्
199	15 from below	,, व्यक्त	,, व्यक्त
201	17 from below	,, सर्वभिदं	,, सर्वमिदं
202	8	,, अन्तपुरं	,, अन्तःपुरे
205	18	,, नियमात्मन:	,, नियतात्मन:
206	17	,, त्यजन्त	,, त्यजन्तु
,,	24	,, सरवर्त्मे	,, सुरवर्त्मे
208	1 from below	,, hey	,, they
222	1	,, tertor	,, terror
224	19	,, निशांपाति:	,, विशांपति:
225	14 from below	,, भगवंश्छन्दौ	,, भगवच्छन्दौ
230	11	,, the Garu*d*a	,, Garu*d*a
,,	12	,, the Garu*d*a	,, Garu*d*a
232	8 from below	,, शिरच्छिदा	,, शिरश्छिदा
234	2 from below	,, दुःखाकरोति	,, दुःखीकरोति
238	8	,, to have used	,, to have been used
245	9	,, ऐन्द्रि	,, ऐन्द्रि:
247	8	,, °नभस्यो:	,, °नभस्ययो:

Page.	Line.	Incorrect.	Correct.
248	3	*for* five fig trees	*read* five trees
250	6 from below	,, इन्युक्तवात्	,, इन्युक्तत्वात्
251	9 from below	,, ॰पिते:	,, ॰प्रीतिः
253	19	,, अभ्याम्न	,, अभ्याम्ने
256	16 from below	,, मारुतां	,, मारुति
259	19	,, सकम्पत	,, समकम्पत
264	2	,, happened to	,, he happened to
,,	4	,, he saw	,, when he saw
266	3 from below	,, ज्योति,	,, ज्योति ,
272	12 from below	,, मांद्य	,, मान्द्यं
274	11 from below	,, वर्षतु:	,, वर्षेतुः
276	4	,, इति वा	,, वा
278	19	,, शुभंव	,, शुभं च
280	11 from below	,, ककुद्मान,	,, ककुद्मान्,
285	5 from below	,, आलिलिंग	,, आलिलिंग
292	3	,, गौरमेव	,, गौरवमेव
,,	24	,, पुत्रार्थान्य	,, पुत्रार्थिन्यः
294	11 from below	,, ॰द्रः	,, ॰द्रः
302	16	,, गमाति	,, ममाति
,,	1 from below	,, till	,, still
308	13	,, विभ्रमं	,, विभ्रमं
315	4	,, knwn	,, known
316	16 from below	,, कौतुहल	,, कौतूहल
317	2	,, expression of वाम्	,, expression वाम्
,,	1 from below	,, देह	,, देहं
319	16	,, दास्यति	,, दास्यसि
328	13 from below	,, anttopes	,, antilopes
333	23	,, प्रिया वेशं	,, प्रियावेशं
,,	4 from below	,, दक्षिणाश	,, दक्षिणाशां
334	22	,, भूइष्ठ॰	,, भूयिष्ठ
,,	24	,, आहिताग्न्यादात्वात्	,, आहिताग्न्यादित्वात्
337	6 from below	,, भ्राजिष्णु	,, भ्राजिष्णू
344	21	,, फले दूरं	,, फलेदूरं
346	4	,, प्रतिबिम्ब:	,, प्रतिबिम्ब
351	22	,, चित्यं	,, चिन्त्यं
354	17	,, शभनिरंतरं	,, शभन्निरंतरं
,,	18	,, निष्णापा:	,, निष्पापाः
362	9 from below	,, शातानि	,, शतानि
364	8 from below	,, चाय	,, चार्यं
366	11 from below	,, क्रमुत्पाँय	,, क्रमुत्पाद्य

Page.	Line.	Incorrect.	Correct.
367	1 from below	*for* °गृह	*read* °गृहं
373	3	,, °ससग	,, °संसग

INTRODUCTION.

Page.	Line.	Incorrect.	Correct.
97	13	,, R. E. Dutt	,, R. C. Dutt
,,	1 from below	,, R. E. Dutt's	,, R. C. Dutt's
111	1	After the quotation from Chāritravardhana's commentary add	We have also the same idea expressed in almost the same words in the S'ákuntala :— " छाया न मूर्च्छति मलोपहतप्रसादे शुद्धे तु दर्पणतले सुलभावकाशा " ॥ VII. 32.
146	5 from below	,, मञ्जन्तून्	,, मञ्जञ्जन्तून्
158	20	,, Vaidarbha	,, Vidarbha
159	3	,, but says that	,, but that
163	1	,, tyle	,, style

CRITICAL NOTICE.

THE MSS. COLLATED FOR THE FIRST EDITION.

A. Under this group come two Mss. one of which is complete and includes the commentary of Mallinatha as published here. It is quite legible but incorrect. It belongs to my grand-father, Tima*nn*ácharya. It contains 311 folia, having eleven lines on each page, and is wanting in 2 leaves of the tenth canto. It is a transcript from a Ms. in the Ma-*nd*ra Library of the Bijápur district. The marginal space at right hand side of most of the leaves of this Ms. has been eaten by worms. Most of the leaves are also marked with small holes made by the white ants the little ravagers. It has no date, but appears to be probably about a hundred and fifty years old, and is carefully revised. The other codex belongs to the late S'ankara Bha*tt*a Dravi*d*a. This also is complete, containing 648 palm-tree leaves having on an average 12 lines on each leaf, with short explanatory notes. It does not differ from the first except in a few places where it appears to have been corrected or modified by some one who probably used it. The colophon of this Ms. writes that it is a transcript of a Ms. in the Tanjore Palace Library in the Devanâgarì character. Although this codex does not give any date of its production yet it appears to be more than a hundred years old from the appearance of the worn-out codices and the faint marks of the black powder that is generally rubbed against letters in order to make them distinct and readable. These two Mss., therefore, may probably be said to represent the Karnatic text of the poem.

B. I have arranged three Mss. under this group, two of which contain the text and the commentary of Mallinàtha. One of these is a transcript from a Ms. in the library of Mr. Govinda S'ástrì Nirantara of Nassick. It is wanting in the pages of the second canto, being otherwise complete. It is a

very legible, pretty correct, and considerably old copy, though it gives no date of its production. It contains 320 leaves and bears 10 lines on each page. Another Ms. belongs to Mr. Nârâyaṇa S'âstrî who kindly lent it to me on condition that I should return it safe after I had made use of it. This, too, is a most valuable manuscript. The pages of this Ms. are not continuous, each canto having a separate paging and having on each page 11 lines of writing in the Kàyastha form of Devanàgarî character. These two Mss. appear to have been transcripts of each other and to have a common source. The third and the most authentic Ms., containing the text only, was lent to me, after the first seven cantos had been printed off, by the honourable Mr. Bál Gangádhar Tilak B. A. LL. B. to whom it belongs. It is about 509 years old since it gives the date of its production.[1]

As all these three Mss. have a remarkable coincidence among each other in their readings so as to indicate a distinct rescension they are classed under the same group B. These Mss., therefore, may probably be said to represent the text of the North-West provinces.

C. This group contains two Mss. both having the commentary of Mallinâtha. One of them was procured for me by Mr. S'rîdhara S'âstrî Limaye from a Jaina S'râvaka (*i. e.* श्रमणक). It contains 276 folia of thick, yellow paper, having 12 lines on each page. The writing is extremely careful except on eight pages which appear to be of a later hand. The other belongs to Mr. S'rîdhara S'âstrî Limaye himself, containing 266 leaves with 14 lines on each page, and having a

1. The following is its colophon :—

श्रीविक्रमार्कनरेन्द्रसंवत् १४४४ वर्षे राजाधिराजश्रीफेरोजसाहि राज्ये अश्विनसुदि विजयदशम्यां सोमश्रवणे रु० श्रीयशःकलशोपाध्यायैरूपकेशीयगच्छगगनांगणमण्डनादिनकरश्रीसिद्धसूरिशिष्यवा० राजहंसमिश्रतत्प्रधानवाचंयमशिरोमणेः सं० लक्ष्मीचन्द्रमुनेर्भणनाय रघुमहाकाव्यं मुदा लिखिकर्माचक्रे । आचन्द्रार्कं नंद्यात्पुस्तकं । सर्गाष्टावनन्तरं शेषाः सर्गा गुणापण्डितमतिरत्नपठनार्थम् ।

separate pagination for each canto. These two codices are mostly correct. Each word of the text is written separately according to the modern fashion of Devanâgarî writing except the cantos 13th, 14th, 15th and 16th, where this rule of writing is totally ignored. The text and the commentary in this Ms. do not appear to have been written at one and the same time, because some readings in the one differ from those in the other, and on the margin some of the readings have been purposely changed or modified by a later hand. It appears that the text of the Raghuvans'a was written first and then the scribes wrote out the commentary of Mallinâtha. Because the commentary in these Mss. does not invariably explain the various readings adopted by these texts. Neither of them bears any date. Mr. Limaye says that this last one was presented to his father by a Guzarâthi Bráhma*n*a of Va*d*avhâ*n*a. These two Mss., therefore, may be said to represent the Guzarâtha and Râjaputânâ text.

D. Under this group come two Mss. with the commentary of Mallinâtha, one of which is a very correct and legible one. It contains 259 leaves and gives 18 cantos, but wants the second canto and the last two pages of the eighteenth canto. It was procured for me by one of my students from his Upádhyâya, a resident of Malegâva in Khândesha. It is a copy of a Ms. in the Library of Mr. Hatti S'âstrî of Indore, which was copied down at Ujjayinî in the Samvat year of 1827, as given on its colophon. The other Ms. was procured for me by Mr. Narasimha S'âstrî. It is a very incorrect and rather illegible copy ; it contains, however, all the 19 cantos with the commentary of Mallinâtha. Its colophon has the Samvat year 1793. This also is a representative of the Benares text, since it is a transcript of a Ms., in the Library of the late lamented Bâla S'âstrî Rânade. These two Mss., therefore, may safely be said to represent the text of Benares and Central provinces.

The first Ms. of the group A. is the most incorrect of my texts ; but such as it is, it does not differ materially from the accompanying next of the same group. The third, the fourth

and the fifth, which form the group B. correspond very closely, and seem to have been taken from one original. The peculiar feature of this group of codices is that the rescension of the readings adopted by it has a remarkable correspondence to the distinct rescension of readings followed by all the Jaina commentators, including in most cases also Hemâdri and Dinakara, the Brâhma*n*a commentators, and the Calcutta edition of 1832. The sixth and the seventh codices represent the text as current in the Guzarâtha and Rájaputânâ provinces, and are by far the most correct. The eighth and the ninth, from Benares and the Central provinces, correspond pretty closely ; but they are not copies of the same original, nor are they in most cases so markedly separate in their readings from the Guzarátha and Râjaputânâ text as to indicate a distinct rescension. In classifying these texts the first two may be taken to form one group, and the next three another. Under the third group fall two codices and under the fourth come only two Mss. These two codices of the group D. invariably constitute distinct rescensions, though they are very corrupt. On the whole, however, the two groups B. C. invariably correspond so closely, that it would be misleading to say that they constitute distinct rescensions. They are all copies of one original, differing just enough to show that they have undergone the usual corruptions which a long course of copying and recopying under different circumstances in different times renders unavoidable.

The commentaries of Hemâdri, Châritravardhana and Dinakara correspond pretty closely ; but they are not copies of the same original nor are they so markedly separate in their readings from the groups B. and C. as to indicate a distinct rescension. This family or group of codices, though it has an occasional leaning to A. and D. and sometimes to the commentary of Mallinâtha, yet it mainly departs from our scholiast. Under the second group fall the commentaries of Vallabha, Vijayaga*n*i, Vijayânandasûrîs'varachara*n*asevaka, Dharmameru and Sumativijaya. These commentators very closely correspond to each other and have an occasional leaning to A. or D.

This group also does not agree with Mallinâtha except on occasional purposes. In classifying the texts of these commentators the first three with B. and C. may be taken to form one group or family, and the next five another. On the whole, however, the two groups correspond so closely, that it would be misleading to say that they constitute distinct rescensions.

Besides these nine Mss. which have been regularly collated in preparing the present edition, I have also consulted two lithograph editions available here, the Calcutta edition of 1832, Prof. Kâlicharaṇa's edition, as well as Prof. Kailâsa Chandra's F. A. course, and lastly the late lamented Rao Bahadur S'ankara P. Pandit's admirable edition of the Bombay series. All these printed editions, except the last have probably one and the same source. I have not, therefore, thought it necessary to use them except for occasional reference in ascertaining unintelligible letters either in the text or Mallinâtha's commentary. In editing this book I have generally adopted the principle which has been followed by the distinguished editors of the Government Bombay Sanskrit Series. But I have also followed, in most cases, the rules laid down by Dr. Râjendralâl Mitra. There are differences of opinion on this point between European and the Native scholars. Dr. Râjendralâl Mitra has laid down some rules on this practice and has ably defended them. It would not, I think, be out of place to quote Dr. Râjendralâl Mitra's remarks on the said principle here. He says :—" Ancient and mediæval Indian exegets did not tolerate any eclecticism. They were very particular in preserving the errors of their texts, so as not in any way to injure the authenticity of the originals. As regards the Vedas the variations resulting from the practice of early chanters were classed under different schools or S'âkhas, and to preclude the possibility of further change, the words were recorded in various arbitrary forms under the names of क्रमपाठ, जटापाठ, &c. The religious feeling which prompted these arrangements, did not apply to works of minor importance ; but their commentators were particular in noticing the *varietas lectionis* of their texts, and in pointing out what they thought were apocryphal, or of doubtful authenticity. Modern Indian editors

do not, as a rule, follow this practice. They, in a manner, repudiate 'various readings.' They assume that the original must be one, and the differences observable are merely copyists' errors, which it is their duty to correct. The consequence is, not unoften, a serious tampering with originals; and this is also the cause of the almost invariable absence of critical apparatus in their editions.[1] "

Generally speaking, European scholars follow a different course. As in their editions of Greek and Latin texts so in Sanskrit, they reproduce, either in footnotes or in appendices, all the variations and blunders of the different codices they have at command. For critical purposes their practice is unquestionably the best, for it would be intolerable to permit editors to become the arbiters of what really were the original readings of their texts. They are, in the present day, so far removed from the language, habits, customs and surroundings of the authors whose works they edit, that they cannot be too careful in preserving, as far as possible, the materials at command for the proper elucidation of their texts.

European practice, in this respect, however, is not so uniform as to admit of being classed under one head, or to be generally set up as models for the people of this country to copy. While some European scholars are in favour of an intelligent discrimination between what are different readings and what are mere blunders of copyists, others insist upon a faithful reproduction of even the most obvious and unquestionable mistakes.

The learned Professor Max Müller, the prince of modern Sanskrit editors, belongs to the first class. In the prefaces to his magnificent edition of the *Rig* Veda, he has discussed at great length the principles which he has followed. Denouncing most vehemently "the mischief done by conjectural criticism of classical scholarship, and deprecating most strongly any countenance given to it by Sanskrit scholars," he sets down the principle—"Let an editor give what there is, and

---

1. See Preface, Vâyupurâna, Dr. Râjendralâl's edition, *Bibli. Ind.* series, page 3.

let the commentator and translator say what might be, or what ought to be." He, nevertheless adds: "it may be truly said that the chief business of modern critics is to cleanse the text of the classics from the improvements introduced by the ingenious editors of the last three centuries, and we ought not to neglect this lesson in preparing our own *editiones principes.*"[1]

The principle by itself is sound enough, but it is open to a grave practical objection, for it involves the question of "restoration" of texts, and opens a wide door to "ingenious editors" of our times to commit the very mischief of "conjectural criticism" which the learned scholar condemns. In carrying out this principle in his work, he says:—"I have not thought it necessary to give all the extraordinary corruptions that have crept into Sâya*n*a's text, particularly when they occurred in passages the wording of which admitted of easy restoration."[2]

On the other hand, some European Sanskritists, particularly those who are not perfect masters of their subject and are nevertheless conscientious, follow a different rule, they jot down all the blunders they meet with, not excepting printers' mistakes, as *varietas lectionis*. In very ancient and in archaic, unintelligible works, such as the Vedas and Chanda's poems, this is ordinarily a safe rule to follow, but, strictly enforced, it results in a Chinese tailor's work, copying patch and all. It cannot lay claim to the credit of intelligent critical editing.

In dealing with mediæval Sanskrit works it would be absurd to follow such a rule, except in exceptional cases.

I think the proper rule to follow is what has been laid down by Dr. Max Müller to give every reading that admits of a meaning, and every blunder in orthography, etymology, or syntax, which is constant, or generally prevailing: but to

---

1. See Max Müller's edition of *Rig* Veda, preface V. page XIX.

2. See Max Müller's edition of *Rig* Veda, preface page, XXXVII.

take no note of what are mere accidental lapses. There are many obvious blunders and lacunæ in Mss. which bear no relation to their authors, and for critical purposes are of no value whatsoever. The manner in which due discrimination is made between what are obvious blunders, and what are doubtful and unquestionable variations, marks the distinction between the critical and the uncritical editor. This is but a trite axiom to notice, but some differences of opinion having arisen in connection with the works published in the 'Bibliotheca Indica,' it is necessary to explain the principles which have been followed by me and some of those who have worked under my advice and guidance.

Variations in Mss. may be classed under six heads; 1, Sentences; 2, Phrases, 3, Words; 4, Spelling; 5, Grammatical concordance; 6, Metre.

(1) A sentence may occupy one place in one Ms. and another in a different one, or be present in one, and absent in others. In either case, I think, it is imperative on the editor to record the fact in a footnote. Should the absence occur in an apparently very correct and old Ms. and later codices should supply the sentence, the fact is still of sufficient importance to be recorded; but if the absence be noticed in a modern and obviously corrupt text, it would, in my opinion, be a waste of time to take note of it. For my part I have systematically overlooked it.

(2, 3) Differences in phrases and words should always be noticed, except when undoubtedly corrupt and unmeaning, and occurring in one or two out of several Mss. In India, with the aid of Pandits who are experts in the branch of literature to which the works belong, it is not difficult, in preparing copy for the press, to correct such corruptions, and to restore the texts, and, as long as we have the advantage of Pandits who are unrivalled in their knowledge of the works to which they have devoted their lives, it would be a sin and a shame to overlook them. No European scholar in India has done so. In Europe, where

they are not to be had, the case may be different, and, in conscientious editing, footnotes may be needed. When a corrupt form occurs in all the Mss. and a restoration is needed, the fact should always be recorded.

(4) In spelling it is not unfrequently seen that peculiarities are as uniform and regular as variations in words, phrases, and sentences, while in other cases they are quite accidental. In such cases the forms which are constant or generally prevailing in the texts before an editor, are those which should always be adopted, and mere blunders entirely overlooked. For instance, in Chanda's poem the well-known word Anangapàla occurs repeatedly, spelled अंनंगपाल. If in one place the dot on the top indicating then be absent, I think it would *n* be the merest pedantry to notice it. In some cases even persistent forms occurring in ancient works, such as the Vedas, may be safely corrected without a footnote, and I cannot illustrate this better than by reference to the letters ष, क्ष, ख, which, in Mss. copied in Northern India, are frequently misplaced, and which Professor Max Müller has not thought it worth his while to notice.

(5) As regards grammatical concordance, Professor Max Müller has not hesitated to change simple forms, such as जयति into जयंति where the context required the change. I fully subscribe to his rule; but in the use of the tenses and other more complicated questions the safest plan appears to be to adhere to the text as closely as possible.

(6) Errors in metre, when accidental or the results of bad copying, are easily corrected. Ancient authors, however, were, in अनुष्टुप् particularly, careless, and their errors cannot be corrected without tampering with the original. In all sacred works they have been respected by mediæval Indian scholars, and accounted for as peculiarities of holy sages, आर्ष. Modern editors can do no better.

THE MSS. COLLATED FOR THE SECOND EDITION.

E. From the Library of the Deccan College, Poona. No. 74. XI. Collection A of 1879-80. Paper, 9 × 5 inches.

Foliâ, 142. The average number of lines on each page is 8. Character, Devanâgarî. Date, 1830 of the Samvat year. Wanting 16 leaves of the second and third cantos, but pretty correct and legible. It gives only the text of the Raghuvans'a.

F. From the Library of the Deccan College, Poona. No. 185. XIX. Vis'râmabâga Collection 1. Paper, 12 × 5 inches. Folia 17. The average number of lines on each page is 9. Character, Devanâgarî. Date, none, about a hundred and fifty years old. It gives only the second canto with the commentary of Mallinâtha written above and below the text, but correct.

G. From the Library of the Deccan College, Poona. No. 254. XIX. Vis'râmabâga Collection 1. Paper, 12 × 5 inches. Folia 61. The average number of lines on each page is 10. Character, Devanâgarî. Date, none, about a hundred and twenty-five years old. It gives only the cantos III, IV, and VI with the commentary of Mallinâtha written above and below the text. It is pretty correct and legible.

H. From the Library of the Deccan College, Poona. No. 253. XIX. Vis'râmabâga Collection 1. Paper, 12 × 5 inches. Folia 232. The average number of lines on each page is 11. Character, Devanâgarî. Date, none, about a hundred and fifty years old. It is wanting in the first three cantos and also in the ninth. It gives the text and the commentary of Mallinâtha ; but the readings in the text differ from those in the commentary, which appears to be due to the fact of the text having been copied before the commentary and independently of it. The appearance of the writing bears out this conclusion.

In preparing the first edition of the Raghuvans'a the Ms. of the commentary of *Vijayânandasûris'varacharanasevaka* came to my hands after the first seventeen cantos had been printed off. It was, therefore, collated for the last two cantos only. In the present edition this Jaina commentary has been collated throughout and the variants noted down.

In the collation of Mss. for the first edition we made four main classes or groups and named them A. B. C. D. In pre-

paring the present edition four more Mss. have been collated which we have named E. F. G. and H. as already described. Of the four new codices, however, two, viz., F. and G. giving only a few cantos need not be much commented upon. They have both a general agreement with our original groups A. and D. and occasionally they agree with Mallinâtha's commentary and sometimes with the groups B. C. and the new Mss. E. H. We have, therefore, left them out of consideration in the following comments. As to the new codices E. and H. they indicate a very strong agreement with the classes B. and C. and more emphatically with the group B. The original classification is not therefore affected by the two Mss. just mentioned and a corroboration has been found for certain conclusions to be hereafter recorded. Now of the four groups already enunciated, we can approximate the age of only one group, viz. B. while the age of the other groups is a matter for inference only. But the age assigned to the group B. appears to be decidedly prior to the age of the rest.

Now the text that we have adopted evidently follows that adopted by Mallinâtha whose commentary we have given. The commentary has been, so far as we could, purified of all dross due to transcription and other causes. But still we are far from being confident in the assertion that Mallinâtha's commentary follows the purest text. We are diffident as to the genuineness of its text and so we propose to discuss here the merits of the various classes of codices and will try to prove that a particular one of these classes is superior to all the rest.

Apart from the question of the age of the various copies under consideration there can be detected certain broad features which give us some clue as to which class of Mss. may be considered genuine as compared with the rest. Generally speaking the difference of the contents of the several codices of a measured composition like a poem is due to two facts: the addition or omission of any stanzas; the substitution of whole lines or expressions for presumingly original ones. Conducted on this limited field of mutation the inquiry is not very difficult and when backed by a strongly presumptive

evidence of priority it is much easier to authenticate the text of the composition. Of these two means we have enough data to pursue the present inquiry to the authentication of a certain one of these classes of codices. Of this sort are the Mss. E. H. and those contained in the classes B. and C. We consider these codices to be decidedly superior to the rest in point of style as well as of sense ; as instances of this superiority we can point out readings in several places for comparison.[1]

Again in the other Mss. a decided inferiority of rescension is observable. The sense and construction in some cases are far-fetched, sometimes inclining even to obscurity.[2]

Then some readings in this second class appear very suspicious as to their genuineness.[3]

These points of difference that we have noted are of course not too many. But those that are, will be found to be sufficiently convincing. That a vast general resemblance between the several classes can be observed is in no way singular when this resemblance is to be found even in the decidedly interpolated passages. But points like those marked above give us enough data to draw a line of demarkation between the superior and inferior classes. Yet better proof, however, is available. Of the host of commentators that we have had the good fortune to call to our aid, Hemâdri, Châritravardhana, Vallabha and Mallinâtha are the leading ones. Hemâdri, Châritravardhana and Vallabha agree among

---

1. See Canto V. 67. Notes अनवेक्ष्यमाणा ; VII. 36. Notes ज्योतिरथा ; VII. 57. Notes तूणमुखेन; XII. 88. Notes यथापूर्वम् ; XV. 69. Notes को नु विनेता वाम् &c. and compare these with the variants. See readings. Many such instances can also be quoted.

2. See Canto I. 51. विविक्तीकृतवृक्षकम्; II. 63. वत्स; III. 4. मत्सुत:; III. 13. अक्षतम् ; VII. 71. चीरमाधातुमैच्छत् ; X. 12. मूर्तिमद्भिः प्रहरणै: ; XIV. 64 प्रवत्स्ये and वर्तमाने ; XVIII. 37 पुष्करकुड्मलेन &c. See readings. Many such instances can also be added.

3. Variants of this sort are innumerable and will be detected at a glance among the readings.

one another to a great extent, but Mallinâtha very widely differs from them. In fact Hemâdri, Châritravardhana and Vallabha represent one rescension and Mallinâtha another. Of these four leaders Vallabha and Hemâdri seem to be the oldest. Now, making the necessary reservation we are of opinion that superiority can unquestionably be detected in the generality of the readings adopted by Hemâdri, Vallabha and Châritravardhana. Of these Hemâdri is in our estimation decidedly superior in judgment to Mallinâtha; Châritravardhana and Vallabha standing next to our scholiast; we therefore place some reliance on the ablest of these four commentators in determining the genuineness of the text.

A third proof can also be adduced by determining the chronological superiority of some of our codices. We refer the reader to the description of our B. class in the critical notice. This class is, as already said, of greater antiquity than the other classes and if the readings of this class are incontrovertibly excellent, their more probable genuineness may very easily be corroborated by this priority of age.

Now although we have pointed out a few reasons for preferring a certain rescension for the purposes of authentication, still we have misgivings on this point as we could not gather sufficient data to make an unquestionable judgment. For this very reason we have adopted the text and commentary of Mallinâtha in preference to those of the other commentators. The main grounds for making this preference being that Mallinâtha's commentary is always definitely to the point, never verbose, and short and sweet, and accurate; he was moreover familiar with almost each and every one of the other commentators and has made use of the necessary information that they give in his own commentary as we shall try to point out hereafter in the Preface; and lastly what differences we detect as going to prove that his text is inferior to that of the older commentators are only few and therefore do not materially affect the reading of the poem with the help of his commentary.

THE MSS. COLLATED FOR THE THIRD EDITION.

I. From the Library of the Deccan College, Poona, No. 628. XV. Collection of 1882-83. Paper, 8×4 inches. Folia, 133. The average number of lines on each page is 10. And the average number of letters in each line is 31. Character, Devanâgarî, after the Jaina form of writing. Date, none, about six hundred years old. This Ms. contains only the text of the poem. The paper of this is very old and worm-eaten. And the marginal sides are considerably damaged. A leaf or two wanting at the end, otherwise it is complete. It contains some marginal notes here and there. It is purchased for Bombay Government by Dr. Bhandarkar in Gujarâtha. It agrees in all respects with the B. group.

J. From the Library of the Deccan College, Poona, No. 168. VIII. Collection of 1875-76. Paper, 8×4 inches, Folia, 138. The average number of lines on each page is 15. Character, Devanâgarî, after the Brâhma*n*a form of writing. Date none, about 150 years old. This Ms. contains only the commentary of Mallinâtha. The paper of this is very thick and considerably old. It is purchased at Bikâner for Bombay Government by Dr. Bühler. It represents then the text of the Râjaputânâ States. The commentary is faithful and correct ; and the writing particularly beautiful.

K. From the Library of the Deccan College, Poona No. 541. XIX. Vis'râmabâga Collection. Paper, 10×4 inches. Folia, 297. The average number of lines on each page is 11. And the average number of letters in each line is 38. Character, Devanâgarî after the Brâhma*n*a form of writing. Date, none, about a hundred and fifty years old. It includes the text and the commentary of Mallinâtha of all the nineteen cantos except the second. The text is written in the middle and above and below the commentary. The writing is extremely careful throughout. The readings of the text do not agree with those of commentary but they appear to be independent of it. This codex also agrees with the B. group.

L. From the Library of the Deccan College, Poona. No. 542. XIX. Vis'râmabâga Collection. Paper, 9×4 inches.

Foila, 183. The average number of lines on each page is 9. And the average number of letters in each line is 32. This Ms. is wanting in 2, 3, 4, 9, 10, 11, 12 and 13 cantos otherwise it is complete. It has the text written in the middle and above and below the commentary of Mallinâtha. The writing is very careless and incorrect but unique throughout. Character, Devanâgarî, after the Jaina form of writing. Date, none, about a hundred and fifty years old. This codex also agrees with B. and C. groups.

P. This is from the Library of the late lamented Gangâdhara S'âstrî Dâtâra of Poona. It contains the first eleven cantos except the tenth with the text generally written in the middle and the commentary of Mallinâtha above and below the text. The writing of this is very fine and legible. It is also very correct throughout. It is written after the Brâhma*n*a form of writing. Date, none, about a hundred years old.

P_2. P_3. P_4. These Mss. are from the same library and contain only the sixth canto with the commentary of Mallinâtha. This class of Mss. agrees with our A. group.

R. This Ms. of the text of the Raghuvans'a comes from Ratalâm. It was lent to me by my friend Mr. Raghunâtha Râmchandra Muzumadar alias Patavardhana of Bhusâval. Paper, 8 × 3 inches. Folia, 42. The average number of lines on each page is 15. And the average number of letters in each line is 55. The writing of this is extremely beautiful and correct. Character, Devanâgarî, after the Jaina form of writing. Date, 1636 of the Samvat year corresponding to 1579 A. D. From this date given in the colophon it appears that the Ms. is 316 years old. It begins thus : ओम् नमः श्रीसर्वज्ञाय and has at its end the following colophon :—

॥ संवत् १६३६ वर्षे भाद्रपदशुक्लपक्षे नवम्यां तिथौ रविवासरे मूलनक्षत्रे त्रि· कासिद्धियोगे मालवदेशे श्रीमति रतलामनगरे श्रीराजविजयसूरीश्वराशिष्यगणि-रामविजयेन लिखितं। वाच्यमानं चिरं नन्दतु ॥ श्रीः॥ अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यंजनसन्धिविवर्जितरेफं। साधुभिरेव मम क्षंतव्यं कोऽपि न मुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥ १ ॥ श्रीः ॥ This Ms. solely agrees with our B. group.

Next comes a Ms. called रघुसंक्षेपः. This is also from the Library of the Deccan College, Poona. No. 162. XV. Collec-

tion of 1882-83. Paper, 8×4 inches. Folia, 4. The average number of lines on each page is 11. The average number of letters in each line is 32. Character, Devanâgarî, after the Jaina form of writing. Date, none, about a hundred and twenty-five years old. It gives the succinct account of the Raghuvans'a which is as follows :—

॥ प्रथमसर्गे प्रथममीश्वरगौर्योर्नमस्कारः । पश्चाद्वंशवर्णनं । पश्चान्नृपदिलीपवर्णनं । पश्चाद्राजा राज्ञ्या समं पुत्रार्थं वशिष्ठर्षेराश्रमं गतः । वासिष्ठर्षिणाऽभाणि राजन् कामधेनुसेवां कुरु इति । श्लोकाः ९९ इति प्रथमः सर्गः ॥१॥ द्वितीयसर्गे राजा कामधेनुसेवां कर्तुं निर्गतः । राज्ञा एकविंशतिदिनं यावद्धेनोः सेवा कृता । एकदा सिंहेन कामधेनुर्धृता । राज्ञा स्वसत्त्वेन रक्षिता । पश्चाद्धेनुः प्रसन्ना जाता । तयाऽयं न्यगादि । तव पुत्रो भविष्यति । श्लोकाः ७५ इति द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥ सुदक्षिणा सगर्भाऽभवत् । तस्या दोहदा अभवन् । एवं नवापि मासाः । प्रान्ते रघुनामा पुत्रो जातः । राज्ञा वर्द्धापनकं कृतं । क्रमाल्लाल्यमानोऽवर्धत । विद्याभ्यासमकरोत् । पश्चाद्यौवने विवाहमकारयत् । पश्चाद्राज्ञा दिलीपेन यज्ञ आरब्धः । अश्वरक्षणार्थं रघुर्गतः । तावदिन्द्रोऽश्वं गृहीत्वा गतः । इन्द्रेण समं युध्वाऽश्वो मोचितः । पश्चात्सुरेन्द्रः प्रसन्नो जातः । शतयज्ञस्य फलं दत्तं । पश्चाद्रघुर्नृपतिः पित्रा पदे निवेशितः । राजा दिलीपो वनमगमत् । नृपसमाचार इति । श्लोकाः ७१ इति तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ अथ चतुर्थे राजा रघू राजनीत्या लोकान्पालयति । अथ दिग्विजयं कर्तुं निर्गतः । चतस्रोऽपि दिशः साधिताः । दिग्विजयानन्तरं यज्ञः समारब्ध इति ॥ श्लोकाः ९४ इति चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥ अथ पंचमे यज्ञे क्रियमाणे धनं सकलमपि तत्र व्ययीकृतं । ततः पश्चाद्द्विजश्चतुर्दशकोटिधनं याचितुमागतः । तावता भाण्डागारे धनं किमपि नास्ति । धनदोपरि संग्रामं कर्तुं चलितः । धनदो भाण्डागारमपूरयत् । चतुर्दशकोटीर्द्विजाय दत्ताः । द्विजः सुखीजातः । आशीर्वादं दत्तवानिति । तव पुत्रो भवतु । पश्चाद्राज्ञः पुत्रो जातः । अज इत्यभिधानं व्यधायि । क्रमाद्वृद्धिमगमत् । सयौवनो जातः । इतश्च कुण्डिनपुरे इन्दुमत्याः स्वयंवरार्थमचालीत् । पश्चान्मार्गे रेवानदीतीरं कोऽप्येको गजेन्द्रो निर्गतः । अजकुमारेण गजो बाणेन हतः । तावता स एव विद्याधरो बभूव । प्रसन्नो जातः संमोहनं नामास्त्रं दत्तवान् । पश्चादग्रे चलितः । कुण्डिनपुरं प्राप्तः । श्लोकाः ७६ इति पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥ अथ षष्ठे स्वयंवरे सर्वेऽपि राजानः समागमन् । अथ स्वयंवरोपनिविष्टानां राज्ञामिन्दुमत्या अग्रे सुनन्दा तेषां वर्णनां कुर्वत्यजकुमारस्याग्रे गता । इन्दुमत्या तस्य कण्ठे माला निचिक्षिपे इति ॥ श्लोकाः ८५ इति षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥ अथ सप्तमे कुमार इन्दुमतीं परिणीयाऽयोध्यां चचाल । मार्गे सर्वेऽपि राजानः संभूय कुमारेण सार्धं युद्धं कुर्वन्ति स्म । अथैकेनापि कुमारेण सर्वे जिताः । प्रियं

गृहीत्वायोध्यामागत इति ॥ श्लोकाः ७१ इति सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥ अथाष्टमो लिख्यते । अजकुमारं राज्यपदे न्यस्य राजा रघुस्तपःक्रियार्थं वने गतः । अथ राजाऽजो वनक्रीडार्थं प्रियया सार्धं चलितः । वनक्रीडानन्तरं तत्रैव दशरथः पुत्रो जातः । इतश्चेन्दुमती वने उपविष्टाभवत् । तावता तस्या उपरि विद्याधरस्य मालाऽऽकाशात्पतिता । पश्चादिन्दुमती दिवं गता । राजा विलापं करोतीति ॥ श्लोकाः ९६ इति अष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥ अथ नवमः सर्गो लिख्यते । अथ राजाऽजो दशरथं राज्ये न्यस्य वनं गत्वा तपस्तप्त्वा स्वर्गं गतः । दशरथो राजा राज्यं करोति । तिस्रः प्रियाः समभवन् । एकदा राजा मृगयां कर्तुं वनं गतः । तत्र शब्द उत्पन्नः । ततः श्रावणो व्यापादितः । ततः श्रावणस्य पित्रा शापो दत्तः । तव पुत्रशोको भवतु । राज्ञा शकुनं मत्वा ग्रंथिर्बद्धा इति॥ श्लोकाः ९० नवमः सर्गः॥९॥ अथ दशमो लिख्यते । दशरथेन राज्ञा पुत्रार्थं यज्ञः प्रारब्धः । तत्र यज्ञे सर्वेऽपि देवाः संभूय क्षीरसमुद्रे गताः । तत्र विष्णोः प्रबोधो जातः । विष्णुना कथितमहं राजदशरथगृहेऽवतारं ग्रहीष्ये । गृहीत्वा च युष्माकं सर्वान्वैरिणो व्यापादयामि । ततो राज्ञश्चत्वारः पुत्रा बभूवुः ॥ श्लोकाः ८७ इति दशमः सर्गः ॥१०॥ अथैकादशे यागरक्षणार्थं कौशिकर्षिः समागमत् । पश्चात्स रामलक्ष्मणौ गृहीत्वा गतः । ततो रामेण ताडकादेवी बाणेन हता । कौशिकर्षेराश्रमं गतौ । ततो जनकेन कौशिकर्षिराकारितः । रामलक्ष्मणावपि तेन सार्धं गतौ । सीतामुद्वाह्य राजा सपुत्रोऽयोध्यां प्रति चचाल । मार्गेऽशकुनो जातः पश्चात्परशुरामः संग्रामं कर्तुमागतः । रामेण जितः ॥ श्लोकाः ९४ इत्येकादशः सर्गः ॥११॥ अथ द्वादशे राजा रामस्य राज्यं दातुमुद्यतः । कैकेय्या कथितं मत्सूनोर्भरतस्य राज्यं देहीति । ततो रामलक्ष्मणौ वनं प्रति निर्गतौ । ततो लक्ष्मणेन शूर्पणखायाः कर्णनासिका छेदिता । तस्यास्त्रयोऽपि पुत्रा हताः । रावणेन श्रुतं । तेन स्वयमागत्य सीता हृता । सीताविलोकनाय हनूमान्गतः । पश्चाद्रामरावणयोर्युद्धं जातं । दशकन्धरो रामेण हतः ॥ श्लोकाः १०४ द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥ अथ त्रयोदशे सीतां गृहीत्वा रामो दक्षिणोदधेर्मार्गस्य च बह्वीं वर्णनां कुर्वन्समागतः । अयोध्यां च प्रविष्टः ॥ श्लोकाः ७९ त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥ अथ चतुर्दशे रामस्य राज्याभिषेकोऽभवत् । ततो भरतो यत्सुराज्यं पालयति । सीताया गर्भोऽभवत् । वनगमने दोहदोऽप्यभवत् । ततो लक्ष्मणः सीतां गृहीत्वा गतः । वाल्मीकर्षेराश्रमे मुक्ता सीता विलापमकरोत् । ऋषिणा निजाश्रमे रक्षिता ॥ श्लोकाः ७७ इति चतुर्दशः सर्गः ॥१४॥ अथ पञ्चदशे श्रीरामे राज्यं कुर्वति राक्षसा मुनीनुपद्रवन्ति । ऋषयः फूत्कुर्वन्तः समागताः । ततः शत्रुघ्नस्तत्र प्रहितः । लवणासुरो हतः। शत्रुघ्नः पुत्रस्य राज्यं दत्त्वाऽगतः । ततः कस्यापि द्विजस्य पुत्रो मृतः। द्विजः फूत्कुर्वन्नुपराममागतः । श्रीरामो यमोपरि संग्रामार्थं चलितः । श्रीसरस्वत्यवदत् । तव प्रजास्वन्यायो वर्तते । रामेण शूद्रस्तपः कुर्वन्हतः। पश्चाद्द्विज-

पुत्रः सजीवो जातः। पश्चाद्रामेण यज्ञः प्रारब्धः। ततो वाल्मीकर्षिर्लवकुशौ गृहीत्वाऽऽगतः। रामायणं कथितुं लग्नः। सीताऽऽकारिता रामेण दिव्यं देहीति। तदा पृथ्व्या सीतायै दिव्याय स्थानकं दत्तं। दिव्याच्छुद्धाभवत्। ततः कुशस्य राज्यं दत्त्वा परलोकं गतो रामः॥ श्लोकाः १०२ पञ्चदशः सर्गः॥१५॥ अथ षोडशे कुशावत्यां नगर्यां कुशनामा राजास्ति। एकदा कुशावती देवी रात्रावागत्य तं कुशं प्रति कथयति त्वमयोध्यामागच्छ। ततोऽयोध्यां प्रति चचाल। अयोध्यां प्रविष्टो महता महेन तत्र राज्यं पालयति। इतश्च प्रियाभिः समं गंगायां जलक्रीडार्थं गतः। तत्र गंगायां हस्तकंकणं पतितं। राजा कुपितः। ततो नागेन्द्रः कंकणं गृहीत्वाऽऽगतः। ततः कुमुद्वत्याः पुत्रो जातः॥ श्लोकाः ८८ इति षोडशः सर्गः॥ १६॥ अथ सप्तदशे राजातिथी राज्यपदे न्यस्तः। अतो राजवर्णना एव वह्वी॥ श्लोकाः ८१ इति सप्तदशः सर्गः॥ १७॥ अथाष्टादशे राजानः पंचविंशतिरुपविष्टाः॥ श्लोकाः ५४ इत्यष्टादशः सर्गः॥ १८॥ अथैकोनविंशतितमेऽग्निवर्णो राजा राज्यं करोति। सर्वराज्यं सचिवेषु न्यस्य प्रियाभिः समं राजा क्रीडां कुर्वन्नास्ते। अथ राजा राजयक्ष्मोपहतो दिवं गतः। सचिवैस्तस्य पट्टराज्ञी तद्राज्येऽभिषिक्ता। अत्र परिसमाप्तमिदं महाकाव्यं॥ श्लोकाः ५८ इत्येकोनविंशतितमः सर्गः॥१९॥ इति रघुवंशे सर्वसंख्या कथा लिखिता॥ "आदित्यस्य कुले दिलीपनृपतिर्जातो (१) मनोरन्वये तत्पुत्रो रघु- (२) रन्वजो (३) दशरथो (४) राम (५) स्ततोऽभूत्कुशः (६)॥ तज्जन्मातिथि (७) रात्मजोऽस्य निषध (८) स्तस्मान्नलो (९) ऽभून्नृपस्तद्राज्ये समभून्नभो (१०) नरपतिः श्रीपुण्डरीकः (११) सुतः॥१॥ लोके क्षेमकरः क्षमोऽग्विजये स क्षेमधन्वा (१२) ततो देवानीक (१३) अहीनगुः (१४) समभवच्छ्रीपारियात्रो (१५) दलः (१६)॥ शीलो (१७) न्नाभक- (१८) वज्रणाभपतयो (१९) भेजुर्महीमण्डलं तद्राज्येऽध्युषिताश्व (२०) विश्वसहकौ (२१) नाभो हिरण्याह्विकः (२२)॥ २॥ कौशल्यस्तदनन्तरं (२३) नरपतिर्ब्रह्मिष्ठनामा तत (२४) स्तस्मात्पुष्करपत्रनेत्रनृपतिः पुष्यो (२५) ध्रुवसंन्धियुक् (२६)॥ तस्मादस्य सुदर्शनो (२७) जनपदेऽभूदग्निवर्णोऽन्तिकः (२८) संक्षेपाद्रघुवंशमित्यभिदधे श्रीकालिदासः कविः॥ ३॥

Although some of the incidents referred to in the above do not closely agree with those narrated by Kâlidâsa still on the whole it gives a very good summary of the entire poem.

PREFACE.

MALLINÂTHA.

Modern antiquarians and researchers, both European and Native have assigned the middle of the fourteenth century to be the approximate time to Mallinâtha. Dr. Bhandarkar holds that Mallinâtha lived before Jagaddhara[1]; because at the beginning of the seventh Act of Mâlatî-Mâdhava, after explaining that the root प्रच्छ् with आ signifies to "take leave finally" or to "bid adieu," Jagaddhara says that the same root occurs in the Meghadúta[2] and is explained by *the* commentator in the same way. Jagaddhara has also written a commentary called Rasadípiká on Kálidása's Meghadúta.[3]

---

1. See Dr. Bhandarkar's Málatî-Mádhava preface, page XII.

2. See Dr. Bhandarkar's Málatî-Mádhava, page 235.

3. Prof. Aufrecht, in his Catalogus Catalogorum, page 466, gives the following commentaries on Meghadúta. 1, Mâlatî by Kallyá*n*amalla 2, Súchîpattra by Kaviratna. 3, Súchîpattra by K*r*ish*n*adása. 4, by Kshemaha*n*saga*n*i. 5, by Chintáma*n*i. 6, Rasadîpiká by Jagaddhara. 7, by Janárdana. 8, by Janendra. 9, by Divákara. 10, by Bharatasena. 11, Tattvadîpiká by Bhagîrathamis'ra. 12, Sanjîvinî by Mallinátha. 13, by Mahimasinhaga*n*i. 14, by Rámopádhyáya. 15, Muktávali by Ramanátha. 16, S'is'yahitaishi*n*i by Lakshmînivása. 17, by Vallabhadeva. 18, by Váchaspatigovinda. 19, Durbodhapadabhanjiká by Vis'vanátha. 20, Meghadútárthamuktávali by Vis'vanâthamis'ra. 21, by S'ás'vata (he quotes the commentary by Vallabha). 22, Tàtparyadîpiká by Sanátanas'arman. 23, by Sarasvatîtîrtha. 24, Meghadútávachúri by Sumativijaya. 25, Haridása. 26, Avachúri. 27, Kathambhûtî. 28, Meghalatá. 29, Vidyullatá. 30, by Uddyotakara (quoted by Kalyá*n*amalla on Meghadûta 47). To prevent mistakes, it may be as well to remark that a Jaina Meghadúta was written by Merutu*n*ga. Most of these commentators appear older than either Mallinátha or Jagaddhara. Compare also the foregoing list of the commentators on Raghuvans'a.

Prof. Aufrecht in his Oxford catalogue mentions five commentaries of Bharata, Sanâtana, Râmanâtha, Haragovinda and Kalyâṇamalla on Meghadûta, besides that of Mallinâtha[1]. And besides these there are also Mss. of the commentaries on Meghadûta of Vallabha, Mahimasinhagaṇi and Sumativijaya in the collection of the Deccan College Library[2]; but excepting Vallabha none of these appear older than either Mallinâtha or Jagaddhara and consequently flourished even after the author of Medini. And since Jagaddhara speaks of one commentator only without giving his name, he must be understood, says the learned Doctor, to have been aware of one commentary only, so well-known as to render a mention of the author's name superfluous. Dr. Bhandarkar concludes that Jagaddhara alludes only to Mallinâtha who, in his scholia on the poem, does explain the root in the same way as the commentator on Mâlatî-Mâdhava. Prof. Aufrecht says that Mallinâtha flourished after the thirteenth century[3], since he quotes from a work of Bopadeva in one of his commentaries. Bopadeva was one of the protegees[4] of Hemâdri who was a counsellor[5] to Mahâdeva and Râmarâja, the Yâdava kings of Devagiri, and consequently flourished at the end of the thirteenth century[6] *i. e.* from 1271 A. D. to 1309 A. D. Another fact which indicates Mallinâtha's priority to Jagaddhara is that while the latter quotes from the Medini every now and then, the lexicon is never re-

---

1. See Prof. Aufrecht's Oxf. Cat. No. 218.

2. See Cat. of 1888 Deccan College, Index page 518 and 519.

3. Oxf. Cat. page 113 *a*.

4. See Prof. Aufrecht's Oxford Cat. p. 37 b. and Dr. Bhandarkar's early history of the Dekkan, page 117. Second edition.

5. See the introduction to the Dânakhanda and Wathen's copperplates in Journal R. A. S. Vol. V. 1839. Also Oxf. Cat. page 37 *b*. Also Dr. Bhandarkar's early history of the Dekkan, page 116. Second edition. Also Dr. Anandoram Borooah's नामलिंगानुशासनं, page IX.

6. See Early history of the Deccan, p. 120, Second edition.

ferred to by Mallinâtha.[1] If the Medini were composed before Mallinâtha, we might certainly expect quotations from it somewhere in his vast commentaries. Medinikâra, therefore, very probably lived after Mallinâtha and certainly before Jagaddhara.

In the introduction to his vocabulary, the author of Medini mentions Mâdhava. If this Mádhava is the same as the great minister of Bukka and Harihara, kings of Vijayânagara, the Medini must have been written after the ninth decade of the fourteenth century.[2]

In Râyamuku*t*a's commentary on the Amarakos'a, there are many quotations from this lexicon. Râyamuku*t*a wrote his work, as he himself informs us, in 1353 S'aka and in 4532 Kaliyuga,[3] corresponding with 1431 A. D. Medinikára, therefore, lived after about 1495 A. D. and before 1331 A. D.

There are differences of opinion on the identity of Mallinátha. Pandit Durgáprasáda in his preface to the poem of Mágha declares that Mallinátha was a Bráhma*n*a of the Vatsa Gotra. He was born in the village of Tribhuvanagiri, district Ka*d*appa, in the country of Telanga*n*a. His father's name was Narasinhabha*tt*a, grandfather's Rámes'varabha*tt*a. His wife's name was Nâgammá. He had also two sons whose names were Náráya*n*a and Narhari. The latter appears to have taken a Sanyàsadîkshá and wrote a commentary called Bâlachittánura*n*janî on Kâvyaprakás'a. Narahari or as he is otherwise called Sarasvatîtîrtha in his work incidentally tells us the date of his birth-time. He was born in the S'aka year of 1298 corresponding with 1242 A. D. From the above statement

---

1. See Oxf. Cat. p. 113 and Appendices to Mr. Pandit's edi. of Raghuvans'a. Also G. A. Jacob's महानारायणोपनिषद् notes, page 9. Bombay Sanskrit series.

2. See Jour. B. B. R. A. S. Vol. IV. p. 107. The date of Mádhava's grant is 1313 S'aka *i. e.* 1391 A. D. Comp. also Thomson's Ed. of Prinsep. genealogical tables.

3. इदानीं च शकाब्दाः १३५३ द्वात्रिंशदब्दारधिकपञ्च (शत ?) वर्षोत्तर-चतुःसहस्रवर्षाणि कलिसंध्यायां भूतानि ४५३२ । Ray. on Am. I., 1, 3, 22.

it is quite clear that a Mallinátha's son Narahari flourished in the middle of the thirteenth century[1]. This fact which Pandit Durgáprasáda has put forth in support of his proposition appears inconsistent when compared with the statement made by Dr. Bhandarkar.

Sarasvatîtîrtha, in his preface to *Bálachittànuranjinî*, praises his great-grandfather and grandfather in most extravagant terms. But with respect to his father, he simply says, that he was a Somayáji because he performed a Soma sacrifice once in his life-time; and from that time the future persons in his family received the title of *Dîkshita*. Further on he says that after having celebrated the Soma sacrifice his father became one having inconceivable greatness and of illustrious fame. And the people began to look upon him with pious veneration. After this he begins to speak about his brother Náráya*n*a and about himself. But he does not at all say that his father Mallinátha *was* a poet and a commentator who wrote vast commentaries on the five great artificial poems. While our scholiast who wrote commentaries on Raghuvans'a and other Kávyas calls himself a poet and a commentator. And this fact which Sarasvatîtîrtha ought to have mentioned and which escaped his notice appears rather suspicious[2]. It is quite evident from this that Sarasvatîtîrtha's father was not a poet nor a commentator who wrote commentaries on Raghuvans'a and other Kávyas. Now Pandit Vámanácházrya of the Deccan College declares of course from a second-hand information that Mallinátha who wrote commentaries on Raghuvans'a and other Kávyas was a Bráhma*n*a of the Kás'yapa Gotra. His descendants are still living at Gajendraga*d*a. This town is situated in the District of Dhârvá*d*a near Gadaga. Pandit Vámanácházrya it appears has not put forth any evidence in support of his proposition. His statements may perhaps have been based on an insufficient infor-

---

1. See Pandit Vámanácházrya's Kávyaprakás'a preface, page 18-19 Bom. ed. Also the preface to S'is'upálavadha by Pandit Durgáprasáda, page 5. Nir*n*aya-Sâgara edition, Bombay.

2. See Pandit Vàmanácházrya's preface to Kávyaprakás'a, page 18-19.

mation[1]. The truth that may be gleaned from these various assertions and statements is that Mallinátha who wrote vast commentaries on the five artificial poems or Kávyas lived before the author of the Medini and thus he must have flourished in the middle of the fourteenth century. And this appears to be the probable period in which Mallinátha might have lived. Mr. K. B. Páthak a well-known antiquarian on this side of India also arrives at the same date by adducing different proofs in support of his arguments[2]. He says :—" Mallinátha frequently quotes the Sangîtaratnákara[3] a work composed in the time of the Yádava king Singha*n*a who reigned from S'aka 1132-1169[4]. In his commentary on the Kumárasambhava Canto II stanza 1, Mallinátha mentions Bopadeva the author of the Mugdhabodha who was

---

1. See Pandit Vámanácharya's preface to Kávyaprakás'a, Bombay edition, page 19. This statement of the learned Pandit appears to be rightly applicable to the commentator Hemádri whose birth-place is in all likelihood Karnatic. He is said to have afterwards settled himself in the Mahárásh*t*ra territories. See notes pp. 222, 325, 356. One of the three Mss. of Hemádri's Darpa*n*a (No. 25 of the collection of 1872-73 Deccan College ; this Ms. appears to us to be about five hundred years old, probably older, because the paper has become so brittle that the slightest touch brings off a piece, and the edges of the leaves and the corners have worn away and portions of the written letters have thus disappeared, making the rest difficult to be read,) is written in beautiful Devanágarî character after the Bráhma*n*a form of writing.

2. See K. B. Páthak's edition of Meghadûta, introduction p. 11.

3. See page 75 of our edition of Meghadûta. Also Dr. Bhandarkar's Early history of the Dekkan, second edition, p. 112, where the learned doctor refers to the Introduction to Sa*n*gitaratnákara, No. 979, Collection of 1887-91, Dekk. Coll. इति श्रीमदनविनोदश्रीकरणाधिपतिश्रीसोढलनन्दननिःशङ्कश्रीशार्ङ्गदेवविरचिते संगीतरत्नाकरे प्रकीर्णकाध्यायस्तृतीयः समाप्तः fol. 122 *a*.

4. See Early history of the Dekkan, second edition, p. 107. This is certainly a monumental work of Dr. R. G. Bhandarkar ; every lover of Sanskrit who has a spark of national pride ought to read it at least *once*.

contemporary with the Yádava king Maháileva and his successor Rámachandra. The last-mentioned king reigned from A. D. 1271 to 1309[1]. Another work quoted in Mallinátha's commentary on the Meghadúta is the Ekávalî of Vidyádhara who frequently speaks of king Vîranarasimha as having humbled the pride of Hammîra who was contemporary with Singha*n*a[2]. Mallinátha has also written a commentary on the Ekávalî. His son Kumárasvámin has written a commentary on the Pratáparudrîya, a treatise on *Alankára*. The last-named work frequently mentions the Káka*t*îya king Pratáparudra who invaded the kingdom of the Yádava king Rámachandra and reigned from A. D. 1295 to 1323[3]. The second verse in Mallinátha's introduction to his commentaries on the Raghuvans'a, Meghadúta and Kumárasambhava is quoted in an inscription[4] dated in S'aka 1455 or A. D. 1533. From these facts it is clear that Mallinátha must have flourished in the latter half of the fourteenth century."

Mallinátha is the most popular and well-known commentator on this poem. He has named his commentary Sanjîvinî 're-inspiring with life' since, as he says, he composed it for the purpose of "re-inspiring with life the speech of Kálidása that was fainting under the trance produced by the poison of bad commentaries." This statement shows that he knew almost all the commentaries that preceded his own. He actually names two older commentators Dakshinâvarta and Nátha, and refers to some by the pronoun केचित् or अन्ये. I have found on comparing his commentary with those of Hemâdri, Châritravardhana, Vallabha, K*r*ish*n*abha*tt*a, Dinakara, Vijayânandasûrîs'varachara*n*asevaka and a few others, that so many commentaries were at his command and he often consulted and made use of them while writing his own. It will be seen that he actually borrows his explanations and authorities from some of them in almost every point that cannot be settled without discussion. Instances of this fact will be observed in

---

1. See Early history of the Deccan, second edition p. 120. *ff.*
2. Early history of the Deccan, second edition p. 108.
3. Indian Antiquary Vol. XXI. p. 197 *ff.*
4. Indian Antiquary Vol. V.

the same critical remarks, the same quotations, the same refutations of the former commentators, the same grammatical disquisitions, &c. &c., being found in Mallinâtha's commentary as in those of Hemâdri and Châritravardhana.[1] They are in some cases identical even to a word. As one instance of this fact I may refer to the synonym for the word ब्राह्ममुहूर्त in stanza 36, Canto V., where Mallinâtha only gives अभिजित् a synonym for ब्राह्ममुहूर्त ; whereas Hemâdri cites five or six quotations in support of his explanation and none other of the commentators seems to have even noticed अभिजित् as a correct equivalent for ब्राह्ममुहूर्त, it follows from this that Mallinâtha must have repeated the word on the authority of Hemâdri. curtailing of course his long explanations and citations. And as another instance I refer to the remarks on the various sentiments of the royal suitors of Indumati in Canto VI. These remarks are literally the same in Hemâdri and Mallinâtha and are found only in *their* commentaries among the nine in my possession. What other conclusion can be drawn from this than that the latter must have borrowed them from the former! I do not, therefore, doubt that the one was based on the other. Coincidences of this sort cannot be accidental, and they are so numerous that they may be found on almost every page. These remarks in all their details also hold good in case of Hemâdri, Châritravardhana and a host of other commentators. On a close and careful comparison of the commentaries in question one is sure to be led to conclude that these commentators, so to speak, have drawn much upon a host of the best commentators who must have preceded them. That Hemâdri lived earlier than Mallinâtha appears probable; because the latter quotes Vallabha several times.[2] Hemâdri also quotes

1. See Notes on Cantos VII. 57, X. 35, 41, XII. 88, XV. 69, XVII. 65, XVIII. 38; and also Notes on Cantos VI. 20, 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 37, 38, 43, 45, 48, 55, VII. 7, 22, XIII. 10, 52, XIX. 9, 12, 16, 25, 29, 32, 36, 37, 38, 39, 41, 42, 43, 44, and 51; and many more from Notes may be added to the list. See also the various readings, Canto V. 67.

2. See Mágha, Durgâprasáda's edition, especially the commentary on the 26th verse, where the scholiast says "इट क्रिटकीटगतौ इत्यत्र केचिदीकारप्रश्लेषं वर्णयन्ति ॥ इति अनेनैव श्लोकेन कविना 'घण्टामाघः' इति नाम लब्धम्, इति च वल्लभदेवः"।

Vallabha[1]; and Châritravardhana, who in his turn quoting Vallabha[2] oftentimes, imitates Hemâdri in everything that is worth imitation[3]. That Mallinátha is the latest commenta-

---

1. See Note to St. 12, Canto XVII. p. 343.

2. See Note to St. 15, Canto VIII. p. 148. On commenting the 78th stanza of the VI Canto Vallabha says :—" असावजाख्यः कुमारः । तं रघुमनुजातः । तस्माद्रघोरुत्पन्नः । अनुजात इति " गत्यर्थाकर्मक°" इत्यादिना कर्तरि क्तः । उपसर्गवशाज्जनेः सकर्मकता । अनुजननं यद्यपि भातृविषयं प्रसिद्धं तथापीह प्रकरणाज्जन्यजनकविषयमवगंतव्यं । तस्मात्पितुरित्ययमर्थोऽवतिष्ठते । केचित्तु तृतीयार्थे कर्मप्रवचनीयमनु प्राहुः । तमनु जातस्तेन जात इत्यर्थः &c." This view of केचित् as quoted by Vallabha is also reproduced by Cháritravardhana (omiting of course the name of Vallabha's commentary from which he borrows this) who says :—असावजः कुमारस्तं रघुमनुजातो रघुणा हेतुनोत्पन्नः क इव त्रिविष्टपस्य पतिमनु त्रिविष्टपपतिना शक्रेण जयन्त इव ॥ " अनुर्लक्षणे " इति कर्मप्रवचनीयसंज्ञा तद्योगे द्वितीया । लक्षणं हेतुरित्यर्थः । Cháritravardhana also quotes Dakshi*ná*vartta several times, see Note to St. 56, Canto X. p. 209. See Note to St. 32, Canto XV. p. 311. See Note to St. 69, Canto XV. p. 317.

3. In order to convince the reader of the fact, I have quoted in the Notes Hemádri, Cháritravardhana and Vallabha side by side, almost on every stanza that admitted of some disquisitions; see Note to St. 7. Canto XII. p. 240; *ibid.* St. 19. p. 244; *ibid.* St. 22. p. 245; *ibid.* Sts. 25, 28. p. 246; *ibid.* St. 35. p. 248; *ibid.* Sts. 43, 44. p. 250; *ibid.* St. 60. p. 253; *ibid.* St. 67. p. 254; *ibid.* St. 79. p. 257; *ibid.* St. 89. p. 259; *ibid.* Sts. 92, 93, 94. p. 260; *ibid.* Sts. 95, 96, 98. 101. p. 261. See Notes to Sts. 1, 2. Canto XIII. p. 265; *ibid.* Sts. 3, 4. pp. 266-267; *ibid.* Sts. 5, 6. pp. 267-268; *ibid.* St. 9. pp. 269-270; *ibid.* Sts. 11, 12. p. 270; *ibid.* Sts. 17, 19, 21. p. 272; *ibid.* Sts. 22, 23. pp. 273-274; *ibid.* Sts. 25, 26. p. 274; *ibid.* Sts. 29, 30, 31, 33. p. 275; *ibid.* St. 34. p. 276; *ibid.* St. 47. p. 280; *ibid.* St. 52. p. 282; *ibid.* Sts. 58, 62. p. 283; *ibid.* Sts 65, 67. p. 284; *ibid.* St. 73. p. 285. See Notes, Canto XIV. St. 6. p. 289; *ibid.* St. 12. p. 290; *ibid.* Sts. 14, 15. p. 291; *ibid.* St. 24. pp. 292-293; *ibid.* Sts. 25, 27. p. 293; *ibid.* St. 33. p. 294; *ibid.* St. 37. p. 295; *ibid.* St. 40. p. 296; *ibid.* Sts. 44, 47. p. 297; *ibid.* Sts. 49, 51. p. 298; *ibid.* St. 55. p. 299; *ibid.* St. 62. p. 301; *ibid.* St. 70. p. 303; *ibid.* St. 74. p. 304. See Notes, Canto XV. St. 22. p. 309; *ibid.* St. 24. p. 310; *ibid.* St. 99. p. 324. See Notes, Canto XVI. Sts. 2, 5. p. 326; *ibid.* Sts. 9, 10. p. 327; *ibid.* St. 28. p. 330; *ibid.* St. 31. p. 331; *ibid.* Sts. 34, 35, 38. p. 332; *ibid.* Sts. 41,

tor on Raghuvans'a is equally indubitable. I, therefore, conclude my remarks on this point by observing that this last learned commentator wrote his commentary with a view to improve upon the older commentators by way of polishing their style, curtailing their unnecessarily long observations and citations of authorities, and correcting them where he thought necessary.

The commentaries :—In preparing the commentary for the present edition I have, of course, preserved Mallinátha's as the most popular having compared eight others which are as follow :—

1. The Darpa*n*a of Hemádri, 2. the S'is'uhitaishi*n*î of Cháritravardhana, 3. the Raghupanjiká of Vallabha, 4. the Sugamânvayaprabodhikâ of Pandit Sumativijaya, 5. the Raghu*t*îkâ of Dharmameru, 6. the Subodhikâ of Pandit Srî-Vijayaga*n*i, 7. the Raghuvans'a-Sûtrav*r*itti of Pandit Vijayânandasûrîs'varacharana*n*asevaka, and 8. the Subodhinî of Pandit Dinakara Mis'ra, of these the Raghu*t*îkâ of Dharmameru was procured for me by the late S'ankara Bha*tt*a Dravi*d*a, and the Raghuvans'asûtrav*r*itti of Pandit Vijayaga*n*i was lent me from a Guzaráthi Bráhma*n*a by Mr. Limaye. The Deccan College Ms. being a fragment, the complete Ms. of Dinakara's Subodhinî was also kindly lent to me by the late lamented Bâbâ Saheb Pha*d*anavîsa of the Morobâ Dâdâ family. The rest

---

44. p. 333; *ibid.* Sts. 47, 48. p. 334; *ibid.* Sts. 50, 53, 54. p. 335; *ibid.* Sts. 61, 62. p. 336; *ibid.* Sts. 64, 65, 67, 68. p. 337; *ibid.* St. 76. p. 338. See Notes, Canto XVII. St. 3. p. 341; *ibid.* Sts. 7, 9. p. 342; *ibid.* St. 12. p. 343; *ibid.* St. 22. p. 344; *ibid.* Sts. 24, 25. p. 345; *ibid.* St. 35. p. 347; *ibid.* St. 39. p. 348; *ibid.* St. 81. p. 355. See Notes, Canto XVIII. St. 9. p. 357; *ibid.* Sts. 18, 22. p. 359; *ibid.* Sts. 42, 44. p. 364; *ibid.* St. 51. p. 365. See Notes, Canto XIX. St. 9. p. 367; *ibid.* Sts. 10, 11, 12, 14. p. 368; *ibid.* St. 15. p. 369; *ibid.* Sts. 17, 19. pp. 370-371; *ibid.* St. 21. p. 371; *ibid.* St. 31. p. 372; *ibid.* Sts. 35, 38, 39, 41, 42, 43, 44. p. 373; *ibid.* Sts. 47, 48. p. 374. Many quotations of this description are also added to the Notes on the first eleven Cantos.

belong to the Deccan College library which were kindly placed at my disposal by our distinguished orientalist Dr. R. G. Bhándarkar.

VALLABHA.

Vallabha's Raghupanjiká comes from the Library of the Deccan College, Poona. No. 150. XVI. Collection A. of 1882-83. Paper, 7 × 3 inches. Folia, 59 (51, 52, 53, 54 and 57 leaves are wanting). The average number of lines on each page is 26. Character, Devanágarî after the Jaina form of writing. Date, 1587 of the Samvat year [1] corresponding with 1530 A. D. This Ms. of the *Panjiká* is bought for the Bombay Government by Dr. P. Peterson probably somewhere in Kâs'mîra. The other Ms. of the *Panjikâ* containing the first 18 Cantos and 46 verses of the 19th Canto was lent to me by the late lamented Bâbâ Sâheb Pha*d*anavîsa of the Morobâ Dádá family. Vallabha it appears was a native of Kás'mîra. He wrote commentaries on three Kávyas of Kálidása and also on three other Mahákávyas of Bháravi, Mágha, and S'rî Harsha. Vallabha's commentaries [2] are most popular in North-Western Provinces and are read with great national pride and zeal in Kás'mîra and Panjáb to this day. His Panjiká otherwise called Panchiká [3] is not very valuable as it rarely resorts to authority in support of its interpretations. The number of his quotations is very small and limited. Some verses from the S'rutis, Sm*r*itis, Nîtis and similar works bearing on his text are all that is found in his commentary. Again some verses are given without the name

---

1. The colophon at the end :—इत्यानन्ददेवायनिवल्लभदेवविरचितायां रघुपञ्जिकायां &c., संवत् १५८७ वर्षे चैत्रमासे शुक्लपक्षे द्वितीयादिने लिलेषि. This Samvat year is given at the end of the 13th Canto in the Ms. The colophon at the beginning is as follows :—ओम् नमः शिवाय । ओम् यस्य भृंगावलिः कण्ठे दानाम्भोराजिराजिते । भाति रुद्राक्षमालेव स नः पायाद्गणाधिपः ॥ १ ॥ कालिदासवचः कुत्र व्याख्यातारो वयं क्व च तदिदं मन्ददीपेन राजवेश्मप्रकाशनम् ॥ २ ॥ तथापि क्रियतेऽस्माभी रघुवंशस्य पञ्जिका । उन्नताश्रयमाहात्म्यस्वरूपख्यातिलालसैः ॥ ३ ॥

2. See Introduction to Mágha, Durgâprasâda's edition, p. 5.

3. See Introduction to our edition of Meghadûta, p. 11, *footnote*.

of their author or authors. He sometimes gives notes on grammar and sometimes enters into critical discussions on the merits of the explanations of other commentators, whom he refers to by the pronoun केचित् or अन्ये.[1] Vallabha appears to be older than Hemádri, Cháritravardhana, Mallinátha and Sumativijaya as all these commentators quote him several times [2] in their commentaries. His Panjiká is a कथंभुतिनीटीका, of the same kind as those of Vijayagaṇi, Sumativijaya and a pupil of Vijayánanda. There is no date given of the composition of his commentary; nor have I the means of ascertaining it. From the colophon it appears that he was one of the followers of the Kás'mîra S'aivism. This school of philosophy, it is said, is altogether different from either the नकुलीशपाशुपतदर्शन (or according to some the Kápálas and the Kálámukhas also include the above sects) or the S'aivadars'ana as epitomised by Mádhaváchárya in his Sarvadars'anasangraha. [3]

The literature of Kás'mîra Máhes'varas has two branches, one of which is called स्पन्दशास्त्र and the other प्रत्यभिज्ञाशास्त्र. The principal work belonging to the former is that called शिवसूत्राणि which according to Bháskara, the author of the Vártikas manifested themselves to Vasugupta under the guidance of a Siddha [4]. The founder of the प्रत्यभिज्ञाशास्त्र, the other branch of Kás'mîra S'aiva philosophy, was Sománanda, the author of a work called शिवदृष्टि ; but the writer of the principal work of the system, the so-called Sûtras which are verses, was his pupil Utpala, the son of Udayákara.[5]

---

1. See page 8th of this introduction, *footnote*. See also his commentary.

2. See Introduction, p. 8th *footnote*. On commenting the 49th verse of the XV. Canto, Sumativijaya says, "ऐक्ष्वाकः इति पाठे। इक्ष्वाकोरपत्यमैक्ष्वाकः। अण् इत्युकारलोपो निपात्यते इति वल्लभः."

3. Sarvadars'anasangraha, Bibli. Indi. series, p. 74 and 80.

4. श्रीमन्महादेवगिरौ वसुगुप्तगुरोः पुरा।
सिद्धादेशात्प्रादुरासञ्शिवसूत्राणि तस्य हि॥
सरहस्यान्यतः सोऽपि प्रादाद्भट्टाय सूरये।
श्रीकल्लटाय सोऽप्येवं चतुष्खण्डानि तान्यथ।
व्याकरोच्चिक्रमेतेभ्यः स्पन्दसूत्रैः स्वकैस्ततः॥—
From No. 171 of this collection.

5. Dr. Bhandarkar's Report on Sanskrit Mss. 1883-84, p.76-78.

HEMÂDRI.

Hemádri's Darpa*n*a next engages our attention. It also comes from the Library of the Deccan College, Poona. No. 47. VI. Collection of 1873-74. Paper 9 × 4 inches. Folia, 185. The average number of lines on each page is 13. Character, Devanágari, after the Jaina form of writing. Date, none, about four hundred years old, probably older. It is bought for the Bombay Government by Dr. Bülher at Bikáner in Rájaputânâ. At the close of the commentary (the Ms. does not give the text of the poem) the marginal sides and the edges of about 25 leaves on the left hand have almost worn away, and the paper has become so brittle that the slightest touch brings off a piece. The fragment begins with the 5th Canto. The last three pages which ought to contain the commentary on the last ten verses of the nineteenth Canto and probably some personal account about the author and his date are unfortunately wanting. Otherwise it is complete, as far as it goes. This fragment is most incorrect. Another fragment of the same, containing from V to XV Cantos and the commentary of the first 45 verses of the XVI Canto also comes from the Library of the Deccan College, Poona. No. 161. XV. Collection of 1882-83. Paper, 9 × 3 inches. Folia, 127. The average number of lines on each page is 16. Character, Devanágarî, after the Jaina form of writing. Date, none, about three hundred years old. It is purchased for the Bombay Government by Dr. Bhândârkar probably in Guzarátha or Rájaputáná. The Ms. does not give the text of the poem. The third fragment of the Darpa*n*a containing Cantos VIII to X and some 9 verses of the XI Canto is also from the same library. No. 26. V. Collection of 1872-73. Paper, 7 × 3 inches. Folia, 68. The average number of lines on each page is 8. Character, Devanágarî, after the Bráhma*n*a form of writing. Date, none, about five hundred years old, probably older. The writing of this codex is most beautiful and correct. It is bought for the Bombay Government by Dr. Bülher somewhere in Marátha countries. This Ms. of the Darpa*n*a gives the text of the poem. And the Ms. so to speak is in a very bad condition. The paper has become so brittle that the slightest touch brings off a

piece, and the edges of the leaves and the corners have considerably worn away. The commentary of Hemádri is certainly very learned and meritorious. and it is no doubt a most valuable addition to the library. Hemádri mentions in two or three places Maráthi synonyms for some words in the text.[1] And from these Maráthi synonyms it appears that Hemádri was a Maráthá Bráhma*n*a or at least one thoroughly conversant with Maráthî. His father's name was, it appears from the colophon given at the end of each canto, Îs'varasûri. If the title Sûri were no objection his father would appear to have been a native of Karnâtak or that part of Karnâtaka which is near the Mahârâsh*t*ra territory. His son Hemâdri must have settled in Mahârâsh*t*ra from his childhood. The name Îs'vara is generally found among the Karnâtic Brâhma*n*as even to this day. Hemâdri's fame as a great Pandit reached far and wide so as to attract the notice even of the kings of Gujarátha and Râjaputânâ by whom he is afterwards said to have been probably patronized. Because the Mss. of his Darpa*n*a are mostly found in Maráthâ countries as well as in Gujarátha and Râjaputânâ. Hemâdri, as mentioned before, flourished after Vallabha whom he quotes in his commentary[2]. So that chronologically speaking he stands second to Vallabha. And what Pandit Vâmanâchârya speaks of Mallinátha in his admirable edition of Kâvyaprakâs'a becomes truly and most probably applicable to Hemâdri who must have been then a resident of Gajendraga*d*a in the Dhârwâr District.

As to the commentary of Mallinátha, I have already given a full account of Mss. containing it in the beginning of this critical notice. As a rule, Mallinátha, Hemádri and Cháritravardhana have attempted to give satisfactory explanations and held long discussions in some places upon the dubious points pertaining to different S'âstras such as Grammar. Alankára, Jyotish, Mîmánsâ, Nyáya, Vedánta &c. But the commentary of Hemádri excels by far all the others both in point of scholar-

---

1. See Note to St. 93, Canto VIII, p. 167. Also St. 25, Canto XI. p. 222.

2. See Introduction p. 8th, *Foot-note*.

ship and judgment. But excepting Hemádri neither of the other two notices the genuine merit of the author as a poet; namely his masterly command over the language, the fertility of his imagination, the harmonious flow of his expressions, his excellence in tenderness of delicacy, his highly poetic description, his admirable versatility, the vastness and profoundity of his learning, his manner of interweaving in poetry impressive universal truth couched in the happiest expressions which are peculiarly his own and above all that poetic charm which exercises an almost magic influence upon the reader's mind ; all which have combined to raise Kálidása to the highest pinnacle of glory. Hemádri's commentary abounds in quotations from various lexicons, from S'rutis and Sm*ri*tis, from Jyotish and Tantras, from पालकाप्य on the art of training elephants and from S'âlihotra, from various schools of Grammar and Rhetoric, from Hemádri's Chaturvargachintáma*n*i Vratakhan*d*a, and from Vátsyáyana's Kámasútra, from Apastamba, Âs'valáyana, Ka*n*áda, Káma*n*daka, Bharata and Kshemendra, from dramatic works and Kâvyas, from Yoga-Darpa*n*a and Ratnaparîkshá, from Rámáya*n*a and Mahábhárata, from Rasákara, Vasantarája, V*ri*kshodaya, Sangîtakaliká, Sangîtaratnákara, Nárada, Vágbheda and Vijnánes'vara, from Pratápamárta*nd*a and Gonardîya, from Kar*n*ám*ri*ta, Dhara*n*idhara and Prayogaratnákara, a treatise on horticulture, from Rúpamálá and Sindhuyoga-Sangraha, from Sakunár*n*ava, K*ri*sh*n*a and Vish*n*u, from numerous Pura*n*as, Âgamas and Âkhyáyikas. It exhibits the commentator's pre-eminent acquaintance with the history of the family of the Raghus. His commentary is replete with a great deal of information and innumerable quotations. The style is very easy and the expressions are peculiarly his own. As to his personal account which may be expectd on the colophon of the commentary, I could not give it as the colophon of the Ms. with me is lost. He was the son of Bha*tt*a Îs'varasúri ; beyond the title of Bha*tt*a which signifies his profound knowledge of Sanskrit nothing of a certain nature is known as yet except that he chronologically lived before Mallinátha and that he knew the Marâthî language well. He names Dakshi*n*ávartta, K*ri*sh*n*a and

Vallabha, and must be referring to some old commentators whom he names under the title of अन्यः, अन्ये, कश्चित् &c. Wherever he does not agree with them, he gives argumentative refutations, in which he appears to be decidedly superior to his opponents. His scholarly penetration into the poet's meaning is unrivalled, and it was hence that Cháritravardhana, Mallinátha and others have followed him closely in numerous places ; but it is curious to note that Cháritravardhana and Mallinátha, although they literally imitate him, nowhere give his name or at least indicate that those expressions are not their own. The remark is also true in *his* imitations of Vallabha and other commentators that preceded him.

CHÂRITRAVARDHANA.

Châritravardhana's S'is'uhitaishi*n*î[1] comes from the Deccan College Library, Poona. No. 48. VI. collection of 1873-74. Paper, 7×2 inches. Folia, 224. The average number of lines on each page is 12. Character, Devanâgarî, after the Jaina form of writing. Date, none, about 500 years old, probably older. It is bought for the Bombay Government by Dr. Bühler at Va*d*hvâ*n*a in Gujarâtha. The Ms. is in a very bad condition ; the paper has become so brittle that the slightest touch brings off a piece, and at the close of the Ms. most of the leaves are turned into pieces. Another Ms. of the same also comes from the same library. No. 45. VI. Collection of 1873-74. Paper, 7 × 3 inches. Folia, 107. The average number of lines on each page is 18. Character, Devanâgarî, after the Jaina form of writing. Date, 1687 (*i. e.* संवत् १६८७ वर्षे कार्त्तिक सुदि ५)

---

1. The colophon at the beginning runs thus :—प्रत्यूहव्यूहनाशं दिशतु जिनपतिः पार्श्वनाथः स देवो भक्तिप्रह्वो द्विजिह्वोऽप्यतुलबलमलं स्थानमुच्चैरवापत् । यस्मिन्विस्मेरकारिस्फुरदुरुमहिमा मोहभूमीशगर्वोखर्वाद्रीन्द्रः कृपार्द्रो द्रुहिणहरिहरध्येयपादारविन्दः ॥१॥ सद्भक्तियुक्तिनतकल्पितकल्पवल्ली विघ्नौघसंतमशनाशनवासरश्रीः । पद्मावती मम तनोतु मनामनानि देवासुरैश्वरनुताहिपरःशतानि ॥२॥ श्रीशारदाशारदनीरदाभा समग्रजाग्रज्जनजाड्यहंत्री । कर्त्री चिदानन्दमहोदयस्य स्फुरत्वहोरात्रमियं ममान्तः ॥ ३ ॥ समस्तविद्वज्जनमानसाब्जं प्रकाशभास्वद्दिवसायमानान् । गुरूनमेयाद्भुतवैभवाढ्यान् नमामि बाढं दृढभक्तियुक्तः ॥४॥ राघवीयस्य काव्यस्य विद्वज्जनमनोहरां । मन्दधीरपि कुर्वेऽहं टीकां शिशुहितैषिणीं ॥ ५ ॥

of the Samvat year corresponding with 1630 A. D. The first two leaves of this Ms. are considerably damaged. It is bought for the Bombay Government by Dr. Bühler at Bikâner in Râjaputânâ. The third fragment of the same containing the first Canto and 27 verses of the second, and from the tenth verse of the tenth Canto to the 50th verse of the fifteenth Canto, also comes from the same library. No. 85. XVII. Collection A. of 1883-84. Paper, 7 × 4 inches. Folia, 74. The average number of lines on each page is 18. Character, Devanâgarî after the Jaina form of writing. Date, none, about 500 years old. It is bought for the Government of Bombay by Dr. P. Peterson in Râjaputânâ. The S'is'uhitaishi*n*î appears learned and the explanations that it gives are clear and lucid. Châritravardhana, like Hemâdri, is full of disquisitions, very often refers to old commentators by the pronoun कश्चित्, अन्यः, केचित् &c., and sometimes attempts to refute them. He names Dakshi*n*âvartta [1], Vallabha, Bhoja,

---

1. See Note to St. 36. Canto I. p. 19. See Note to St 32. Canto XV. p. 311. See Note to St. 69. Canto XV. p. 317. See Note to St. 56. Canto X. p. 209. See Note to St. 15. Canto VIII. p. 148. See Note to St. 19. Canto VI. pp. 110-111. See Note to St. 69. Canto XV. p. 317. In commenting on this verse of the fifteenth Canto Dinakara, Sumativijaya and the pupil of Vijayánanda quote the name of K*r*ish*n*abha*tt*a Dinakara, in commenting on the 49th verse of the III. Canto says "कृष्णभट्टास्तु पुरुषेषूत्तमः पुरुषोत्तम इति सप्तमीति योगविभागाद्व्याचक्षिरे." The first Canto of K*r*ish*n*abha*tt*a's commentary on Raghuvans'a is deposited in the Library of the Deccan College, Poona, No. 395. See Dr. Bhándárkar's report on the search for Sanskrit Mss. during the years 1884-85, 1885-86, and 1886-87, page 52. In commenting on the 72nd verse of the first Canto Cháritravardhana says:—नन्विक्ष्वाकूणां दुरापे इति सम्बन्धः "न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्" Pá*n*ini, II. 3. 69. इति षष्ठीनिषेधात्कथं कर्त्तरि षष्ठी ॥ "आक्षिपन्त्यरविन्दानि मुग्धे तव मुखश्रियं कोशदण्डसमग्राणां किमेषामस्ति दुष्करं" इत्यादावालंकारिकैरादृतत्वान्न दोषः ॥ यदाह च भोजः ॥ "इदं शास्त्रमहात्म्यदर्शनालसचेतसां । अपशब्दवदाभाति न च सौभाग्यमुज्झति" इति । यद्वा सम्बन्धविवक्षया षष्ठी । न कृद्योगे । तस्यास्त्वनिषिद्धत्वात् । इक्ष्वाकुशब्दाद्दहृण्वणोलुक् । This quotation of Bhoja is found repeated more than five times by Hemádri in his Darpa*n*a.

Vistarkâra or Vistarak*ri*t and K*ri*sh*n*abha*tt*a. He gives quotations from a number of works almost on all subjects. He, like Hemâdri, is full of grammatical discussions and of disquisitions on the merits not only of the explanations of other commentators but of the text itself which, though he comments upon it, he not infrequently condemns sometimes on the plea of indecency (असभ्यं) and sometimes on that of unintelligibility (दुःप्रतीतिकरं). It is quite possible that Mallinátha was referring to Hemádri and Cháritravardhana when he remarked the Raghuvans'a as fainting under the poison of worthless explanations. For though Cháritravardhana comments ably, he nevertheless is free in his censures of the text which might probably have wounded the feelings of Mallinátha. His S'is'uhitaishi*n*î is copious and generally repeats each word of the text before explaining it. Cháritravardhana flourished after Vallabha for he quotes him in his commentary.[1] And we have proved that Cháritravardhana imitates Hemádri in everything that is worth imitation. Or perhaps both Hemádri and Cháritravardhana might have a common source to draw upon their information. Now Dinakara gives the date of his composition.[2] And Subodhinî is simply the epi-

---

See also Note to St. 65, Canto V. p. 103. See Note to St. 2. Canto IV. p. 63. In commenting on the 2nd verse, Canto XIX. Dinakara says विस्मृतः इत्यादि कर्मणि क्तः । यथा प्रभाकरटीकायां । " नत्वेवं तुरगारूढस्तुरङ्गं विस्मृतो भवान् " । This discussion of Prabhákara is also reproduced by Châritravardhana under कश्चित् without of course giving his name; but Dinakara faithfully produces the source. See Note to St. 2. Canto XIX. p. 366. Prabhákara is then one of the commentators on Raghuvans'a.

1. See Note to St. 15, Canto VIII. p. 148.

2. The colophon at the end of Canto XIX. of his Subodhi*n*i is as follows:—इति श्रीमद्धर्माङ्गदसूनोः कमलाहृदयनन्दनस्य दिनकरमिश्रस्य कृतौ रघुवंशटीकायां सुबोधिन्यामेकोनविंशः सर्गः समाप्तिमगमत् ॥१९॥ श्रीमद्धर्माङ्गदस्य द्विजकुलकुमुदामोदनैकामृतांशोः । शास्त्राकूपारपारप्रसृमरधिषणावागधीशस्य सूनुः । वर्षेऽस्मिन्वैक्रमार्के शशियुगमनुभिश्चिह्निते सूक्तिमुक्तां टीकामेतां सुबोधां व्यतनुत कमलाकुक्षिजन्मा दिनेशः ॥ That is the Samvat year 1441 corresponding with A. D. 1385.

tome of S'is'uhitaishi*n*i as will be shown hereafter; therefore it is clear that Vallabha lived long before 1385 A. D. And between him and Dinakara flourished Hemádri and Cháritravardhana. The late lamented Pandit has proved that Dinakara's commentary is only the copy of Cháritravardhana's S'is'uhitaishi*n*î and it would not be out of place to quote here his remarks. He says :—"The chief value attaching to this commentary is the fact that it was from it directly or indirectly that Dinakaramis'ra most probably wrote his own. For the Subodhinî of the latter is evidently only an epitome of the S'is'uhitaishi*n*î. Dinakara himself does not openly acknowledge the source; on the contrary he would seem to state in his introduction that it was with his father's commentary that he studied the poem [1]. But there is ample evidence to prove that Dinakara borrowed wholesale from Cháritravardhana.[2] As both have the same text to explain, their explanations must indeed be very similar, nay must even be identical in tenor though not in words. But it is by the same critical remarks, the same quotations made, the same censures of the text, the same refutations of former commentators, the same pretty long disquisitions on grammar, the same proposals to read differently from the received readings of the text, the same variety of readings noticed, the same questions asked and the same answers given,—and all this very often in

---

1. The colophon at the beginning is as follows :—"आसीद्यदिच्छा ह्यणुकादिसृष्टिमूलं श्रुतिः श्वासततिर्यदीया । भवाब्धिपोतस्तनुताद्विभूतिं भूभूषणं तन्महितं महो वः ॥ १ ॥ धुनोतु विघ्नान्विषकाण्डबुद्ध्या बलेन कर्षन्करपुष्करेण । हरन्हरोरःस्थलनागहारं मुदं वितन्वन् शिवयोः शिशुर्वः ॥ २ ॥ यद्यांसि लिप्सुर्विदुषां विधित्से महानिबन्धं नरधीरधीरः । देयादतो वागधिदैवतं मे सदुक्तिमुक्ताः करणैकधाम ॥ ३ ॥ सौधाकरैककिरणावलिरम्बुराशिमुल्लासयत्यतिजडं विपरीतमेतत् । श्रीकालिदासकवितैव परं मनो मे वैदुष्यसंपदमलं विपुलीकरोति ॥ ४ ॥ व्याख्यानतः समधिगम्य गुरोश्चिराय नित्यं चिरंतननिरुक्तिसदुक्तिदर्शी । भर्तॄहरस्य तनयस्तनवै सुबोधां मेधाजुषां दिनकरो रघुवंशटीकां ॥ ५ ॥ यद्यपि सन्ति विचित्राष्टीकाबन्धास्तथापि कुत्रापि । एषा विशेषजननी भविष्यतीति श्रमो मेऽत्र ॥ ६ ॥

2. Dinakara could not have been the son of Cháritravardhana, and hardly his pupil either, as he was a Bráhma*n*a and the latter a Jaina.

identical words and phrases—that the evidence of the one being a copy of the other is supplied. Coincidences in such and all these matters connot be fortuitous, and they are so numerous, that they may indeed be found on almost every page. The S'is'uhitaishi*n*î is very much more copious than the Subodhinî, a fact that may fairly indicate the shorter one to be an epitome of the other. But there is one circumstance that unmistakably betrays the true origin of Dinakara's commentary. That commentator though he calls his commentary Subodhinî at the end of each Canto, the colophon of Canto VI. is as follows: **इति श्रीमद्धर्माङ्गदसूनोः कमलानन्दनस्य दिनकरमिश्रस्य कृतौ रघुवंशटीकायां शिशुहितैषिण्यां षष्ठः सर्गः ।** This leaves no doubt whatever that Dinakara had the S'is'uhitaishi*n*î before him, and that he unconsciously allowed the title of his original to remain in one part of the copy he was so cleverly making. There is no other way of satisfactorily explaining the title of S'is'uhitaishi*n*î as given only to one canto of Dinakara's commentary while the others are described under the title set forth in the introduction. It is indeed possible, though not quite probable, that he copied from an intermediate commentary that had itself been borrowed from Chéritravardhana, and that had also kept the title S'is'uhitaishi*n*î in Canto VI. If this be true the intermediate copy might be what he calls the commentary of his Guru (father or preceptor), to which he refers in his introduction. Another possible supposition is (I do not think it is probable) that Dinakara uses S'is'uhitaishi*n*î as being equivalent to Subodhinî, the name of his commentary. It is to be remarked against this supposition that neither in this introduction nor in his conclusion does he give us to know, as is the case with some other commentators that he composes it for the use of children (**शिशु**). "

From his colophon[1] it appears that Châritravardhana's re-

---

1. The colophon at the end of his commentary runs thus :— **इति श्रीमालान्वयसाधुश्रीशालिगतनुजसाधुश्रीअरडकमल्लसमभ्यर्थितखरतरगच्छीयश्रीजिनप्रभाचार्याचार्यसंतानधुर्यनरवेषसरस्वतीवाचनाचार्यश्रीचारित्रवर्द्धनविरचितायां शिशुहितैषिण्यां राघवीयटीकायामेकोनविंशतितमः सर्गः । " वंशे श्रीजिनवल्लभस्य सुगुरोः सिद्धान्तशास्त्रार्थविदप्पि (?) दृप्रतिवादिकुंजरघ-**

putation as a Sanskrit scholar was very great among the Jaina Pandits of classical Sanskrit literature.

Next to Darpa*n*a and S'is'uhitaishi*n*î must be ranked the Sa*n*jîvinî of Mallinâtha. I have already made several observations regarding the composition of this commentary. Now regarding the commentator himself, I must observe that he is in some respects inferior to Hemâdri : for in the first place it is probable that Mallinâtha may have designed a condensation of the older commentaries ; in which he has not entirely succeeded since it has led him to omit much valuable information obtainable from them. Again he has professed to follow Dakshi*n*âvartta and Nâtha. Now Hemâdri and Châritravardhana also appear to have consulted Dakshi*n*âvartta, Bhoja, Vallabha, Vistarakâra, K*r*ish*n*abha*tt*a and others ;

टाकण्ठीरवः सूरिराट् । नानाभव्यमुभव्यकाव्यरचनाकाव्यो विभाव्यामलप्रज्ञो विज्ञानतो जिनेश्वर इति प्रौढप्रतापोऽभवत्'' ॥१॥ "शिष्यस्तदीयोऽजनि जन्तुजातहितार्थसंपादनकल्पवृक्षः । विपक्षवादिष्वपि पञ्चवक्त्रः सूरीश्वरोऽजीजिनसिंहसूरिः ॥२॥ "तत्पट्टपूर्वादिसहस्ररश्मिर्जिनप्रभाः सूरिपुरन्दरोऽभूत् । वाग्देवताया रशनां यदीयामास्थानपट्टं जगदुर्बुधेन्द्राः ॥३॥ "तदनु जिनदेवसूरिः स्वेदमुखीतर्जितस्त्रिरशसूरिः । निरुपमरस + + भूरिः सूरिवरः समजनिष्ट जयी ॥४॥ तदनुजिनमेरुसूरिर्दूरीकृतपातको निरातङ्कः । समजनि रजनीवल्लभवदनो मदनोरगे तार्क्ष्यः" [ताक्षः Ms.] ॥५॥ गुणगणमणिसिन्धुर्भव्यलोकैकबन्धुर्विकारितकुमतौघः प्रीणिताशेषसंघः । जिनमतकृतरक्षस्तर्जितारातिपक्षोऽजनि जनहितसूरिस्त्यक्तनिशेषभूरिः" ॥६॥ जिनसर्वसूरिरभवत्तत्पट्टे + + धृतप्रबलमोहः । सज्जनपंकजराजीविकासभास्वानमहोजस्कः" ॥७॥ "तस्य जिनचंद्रसूरिः शिष्यो दक्षः कलावतां पक्षः । कमलीकृताखिलजनोऽपकारसारः सदाचारः" ॥८॥ सूरिर्जिनसमुद्राख्यस्तस्य जज्ञे महामतिः । अन्तिषत्सुकृती साधुवृन्दो (?) भोजनभोमणिः" ॥१०॥ जिनतिलकसूरिः स्याद्विजयीया (?) दशेषगुणकलितः । श्रीवीरनाथशासनसरसीरुहभास्करः श्रीमान्" ॥११॥ "तत्पट्टपूर्वाचलमौलिचन्द्रो विपक्षवादी द्विपपञ्चवक्त्रः । जीयात्सदासौ जिनराजशौरिः सत्पक्षयुक्तो जिनधर्मरक्षः" ॥१२॥ "जिनहितसूरेः शिष्यो बभूव भूमीशवन्दितांघ्रियुगः । कल्याणराजनामोपाध्यायस्तीर्णशास्त्राब्धिः" ॥१३॥ "तच्छिष्यप्रतिपक्षदुर्धरमहावादीभपञ्चानने । नानानाटक + + + + + गिरिः साहित्यरत्नाकरः । न्यायांभोजविकाशवासरमणिर्द्योद्वेति (?) जाग्रत्प्रभे । वेदान्तोपनिषण्णिषण्णधिषणोऽलंकारिचूडामणिः" ॥१४॥ "श्रीवीरशासनसरोरुहवासरेशः । सद्धर्मकर्मकुमुदाकरपूर्णिमेन्दुः । वाचस्पतिप्रतिमधीश्चरवेषवाणिश्चारित्रवर्धनमुनिर्विजयी जगत्यां" ॥१५॥ "श्रीमद्भिर्वाचनाचार्यैः कृते चारित्रवर्द्धनैः ग्रन्थसंख्याविवरणं रायवेष्टसहस्रिकी" । ग्रन्थाः १०००० ॥ यादृशं पुस्तके दृष्ट्वा तादृशं लिखितं मया । यदि शुद्धमशुद्धं वा मम दोषो न दीयते । संवत् १६८७ वर्षे कार्तिकसुदि ९ ॥ शुभं भवतु ॥

admitting, therefore, that the commentaries of Dakshiṇâvartta and Nâtha had been popular before these three commentaries were written, we may conclude that they were intended as improvements upon the older ones. And the improvements made by Mallinátha in his commentary, though perhaps more striking, are not so many, as he sometimes sacrifices even necessary information to conciseness, while Hemâdri and Châritravardhana never fail to add it although they might seem to go beyond the mark.

No doubt faithful adherence to succinctness helps the memory of young students into whose hands Mallinátha's commentary is certainly very adequately placed; but it is not calculated to encourage habits of thinking which are so useful to advanced students. This last point is attainable with Hemádri's help who attempts not so much at supplying the explanation to ordinary readers as satisfying the curiosity of a scrutiniser. These remarks with the observations which I have made on the second point of this introduction will enable the reader to form the conclusion regarding the most popular commentator on Raghuvans'a which I have formed.

The difference between Mallinátha and other commentators is discernible at least in one particular point. And that point deserves our special notice here. Of all the commentators on Raghuvans'a, that I have met with, I think Mallinâtha is the only commentator who shows a strong inclination to preserve as far as he could and appreciate the oldest and therefore most probably the original readings of the poet himself, and to exclude most scrupulously the spurious substitutions of all simple words and phrases, and sometimes the interpolations of whole stanzas with which the poem is seen to have overgrown in most of the Mss.; and it is no doubt owing to this his scrupulousness, that he is studied most and that the other commentators are as much neglected as to be scarcely known to the general public all over India. It is my firm belief that the text that Mallinâtha has commented upon is generally the true text of Kâlidâsa or at least most probably so. For even when the

other commentators choose other readings, it is perhaps seldom that they do not notice those which Millinâtha has selected for his commentary. And this is, I think, the difference between the author of Sanjîvinî and other commentators.

DINAKARA.

Dinakaramis'ra's Subodhinî next engages our attention. This Ms. also comes from the Library of the Deccan College, Poona. No. 629. XV. Collection of 1882-83. Paper, 8 × 4 inches. Folia, 20. The average number of lines on each page is 13. Character, Devanágarî, after the Bráhma*n*a form of writing. Date, 1666 of the S'aka year[1] corresponding with 1744 A. D. This Ms. of Subodhinî is bought for the Bombay Government by Dr. Bhândárkar. The Ms. is a fragment containing only the third Canto and 57 verses of the fourth. Another Ms. of the same comes from the Library of the late lamented Bábá Sáheb Pha*d*anavîsa of the Morobá Dádá family. Paper, 10 × 4 inches. Folia, 312. The average number of lines on each page is 17. Character, Devanágarî, after the Bráhma*n*a form of writing. Date, none, about three hundred years old, probably older. The Ms. has all the nineteen cantos without the text. The commentary in question need not be considered as it is simply the epitome or paraphrase of Cháritravardhana's S'is'uhitaishi*n*î as mentioned before.

VIJAYÂNANDA'S PUPIL.

This Jaina commentary called Raghuvans'asûtravr*i*tti is by some one whose name is not given in the Ms. The manuscript comes from the Library of the Deccan College, Poona. No. 65. IV. Collection of 1871-72. Paper, 7 × 3 inches. Folia, 85. The average number of lines on each page is 21. Character, Devanágarî, after the Jaina form of writing. Date,

---

1. The colophon at the end is:—श्रीमद्धर्मांङ्गदसूनोः कमलाहरयनन्दनस्य दिनकरमिश्रस्य कृतौ रघुवंशटीकायां सुबोधिन्यां + + + सर्गः आषाढे असितपक्षे नवम्यां भानुवासरे। कृत्तिकावृद्धियोगे च रजन्यां च समाप्तिमत् ॥ ३ ॥ शाके १६६६ रक्ताक्षीनामसंवत्सरे विठ्ठलेन लिखितम् ॥

1763 of the Samvat year [1] corresponding with A. D. 1708. It is bought for the Bombay Government by Dr. Bühler in Rájaputáná. This fragment begins with the 9th verse of the fifth canto. Then it breaks off from the 53rd up to the 78th leaf, the missing pages depriving us of Cantos VII, VIII, IX and of the first 7 stanzas of Canto X. The commentator whose name is unknown calls himself the servant of the lotus-like feet of Vijayánandasúri. The Ms. contains the text in the middle of each leaf and the commentary above and below it. This commentary is of the same kind as the Panjiká of Vallabha, the remarks on which made before apply to it also. He quotes some Sm*ri*tis, the Nîtis and the Bhagavatgîtá, and that too in most cases anonymously. His explanations are short and meagre. In commenting upon the 81st stanza of the XI Canto and the 42nd stanza of the XVIII Canto, this pupil of Vijayánanda quotes Cháritravardhana [2]. He also quotes Vallabha, Dakshi*n*ávartta and K*ri*sh*n*abha*tt*a [3]. In writing his commentary on the spurious stanzas, *viz.* " क्लेशेन महता " &c., and " स जघान " &c., between the verses 79-80 of the XII Canto, the pupil of Vijayànanda observes " इति जनार्दनटीकायां श्लोकद्वयमधिकं. " Janârdana then appears to have been one of the commentators on Raghuvans'a. [4] It is clear that this pupil of Vijayánanda lived after Châritravardhana and was also a contemporary to Dinakara who composed his commentary in A. D. 1385.

VIJAYAGANI.

Vijayaga*n*i's Subodhiká comes from the Library of the Deccan College, Poona. No. 44. VI. Collection of 1873-74. Paper, 7 × 3 inches. Folia, 26. The average number of lines on each page is 12. Character, Devanágarî, after the Jaina form of writing. Date, none, about three hundred years old.

---

1. The colophon at the end runs thus :—संवत् १७६३ वर्षे वैशाष [ख] वदि १३ सोमे ॥ सकलभट्टारक श्री ॥ ५ ॥ श्रीविजयाणंदसूरीश्वरचरणसेवकपय—

2. See Note to St. 81. Canto XI. p. 236. See Note to St. 42. Canto XVIII, p. 364.

3. See Note to St. 69, Canto XV, p. 317.

4. See readings to the St. 79. Canto XII, p. 386.

It is bought for Bombay Government by Dr. Bühler at Va*d*hvá*n*a in Gujarátha. It contains the commentary on the first Canto of Raghuvans'a. Another fragment of the same containing the first nine cantos and some verses of the tenth was procured for me by S'ridhara S'as'trî Limaye of Poona. It is also a कथंभूतिनीटीका, of the same kind as that of Vallabha. Pandita Vijayaga*n*î was a pupil of Pandit Rámavijaya of the Tapágachchhîya sect. [1] This commentary is a mere Avachûri or a gloss, a literal and close translation of the text, which it neither elucidates by several quotations nor explains by copious grammatical notes. He quotes some passages from S'rutis, Sm*ri*tis and S'atakas. There are no other quotations from any Sanskrit works or standard authors, not even from the Kos'as, so generally quoted by all commentators. The commentary, therefore, need not be considered as it is still more modern and inferior in merits.

SUMATIVIJAYA.

Sumativijaya's Sugamânvayá also comes from the Library of the Deccan College, Poona. No. 46. VI. Collection of 1873-74. Paper, 7 × 3 inches. Folia, 238. The average number of lines on each page is 14. Character, Devanàgarî, after the Jaina form of writing. Date, 1609 of the Samvat year [2] cor-

---

1. The colophon at the end runs thus :—इति श्रीतपागच्छीयपण्डितरामविजयगणिचरणसेविपण्डितश्रीविजगणिसमर्थितायां रघुवंशमहाकाव्यव्याख्यायां सुबोधिकासमाख्यायां नवमः सर्गः ॥

2. The colophon at the beginning :—श्रीभगवत्यै नमः ॥ प्रणम्य जगदाधीशं गुरून्सद्भारतीमलं । वामांगप्रभवं ज्ञात्वा वृत्तिमत्यां हि दुर्घटां ॥ १ ॥ सुमतिविजयाख्येन क्रियते सुगमान्वया । टीका श्रीरघुकाव्यस्य ममेयं शिशुहेतवे ॥ २ ॥ The colophon at the end runs thus :—श्रीमन्नन्दिजयाख्यानां पाठकानामभूध[द्व]रः शिष्यः पुण्यकुमारेतिनामा स पुण्यवारिधिः ॥ १ ॥ तस्याभवन्विनेयाश्च राजसारास्तु वाचकाः । सजिनोक्तक्रियायुक्ता वैराग्यरसरञ्जिताः ॥ २ ॥ शिष्यमुख्यास्तु तेषां तु हेमधर्माः सदाह्वयाः । शिष्यदिष्टा गुणाभिष्टा बभूवुः साधुमण्डले ॥ ३ ॥ संप्राप्तं [सांप्रतं] तद्विनेयाश्च जीयासुर्धीधनाश्चिरं । पाठका वादिवृंदेन्द्राः श्रीमद्विनयमेरवः ॥ ४ ॥ सुमतिविजयेनेयं विहिता सुगमान्वया । वृत्तिर्बालावबोधार्थं तेषां शिष्येण धीमता ॥ ५ ॥ विक्रमाख्ये पुरे (*i. e.* Bikánera) रम्येऽभीष्टदेवप्रसादतो । रघुकाव्यस्य टीकेयं कृता पूर्णा मया शुभा ॥ ६ ॥ निर्विघ्नहं रसशशिसंवत्सरे (*i. e.* 1609) फाल्गुनसितैकादश्यां तिथौ

responding with A. D. 1552. This Ms. of Sugamânvayâ is bought for the Bombay Government by Dr. Bühler at Bikâner in Râjaputânâ. It has all the nineteen Cantos. The Ms. collated contains the text as well as the commentary. The commentary does not abound in quotations; some verses from S'rutis, Sm*ri*tis, Nîtis and some other works with a few quotations from lexicons especially the Abhidhànachintâma*n*î, are all that it generally produces. It is a mere V*ri*tti or gloss, a literal and close paraphrase of the text, which it neither elucidates by arguments nor explains by quotations. It also gives some notes on grammar. It is a कथंभूतिनी commentary and appears to have been closely allied to Châritravardhana's S'is'uhitaishi*n*î and Vallabha's Panjikâ. In commenting upon the 49th stanza of the XV. Canto Sumativijaya supports his arguments on the epithet of इक्ष्वाकु by quoting Vallabha's assertion as mentioned before. He also quotes K*ri*sh*n*abha*tt*a in his commentary on the 69th stanza of the XV. Canto. He appears to have lived long after Châritravardhana and evidently must have been a modern commentator. He does not deserve any further notice.

DHARMAMERU.

We have now to notice the last Jaina commentary that we have secured. The author's name is Dharmameru, and that of his work *Raghutiká*. It was procured for me by my friend Mr. S'ridhara S'âstrî Limaye of Poona. This fragment contains the first nine cantos and some 12 verses of the tenth. The Ms. gives only the commentary without the text. It is a कथंभूतिनी commentary, of the same kind as those of Vallabha, Sumativijaya and others. It is a mere Avachûri or gloss, being a literal and close paraphrase of the text, which it neither elucidates by quotations nor explains by grammati-

---

संपूर्णा। श्रीरस्तु मंगलं सदा कर्त्तुष्टीकायाः॥ ओं ह्रीं क्लीं नमो भगवत्यै सरस्वत्यै नमः॥ सत्येन धार्यते पृथ्वी सूर्यस्तपति सत्यतः। सत्येन वायवो वान्ति सर्वं सत्यं प्रतिष्ठितं॥ ७॥ यत्सत्यं त्रिषु लोकेषु इन्द्रे वैश्रव[व]णे यमे। ब्रह्मवादिषु यत्सत्यं तत्सत्यमिह दृश्यते॥ ८॥ शुभाशुभानि कार्याणि विचार्यकार्यवादिनि। याथातथ्येन मे ब्रूहि रघुवंशे सरस्वति॥ ९॥ श्रीरस्तु॥ कल्याणमस्तु॥ श्रीः॥ श्रीः॥
See also our edition of Meghadûta, Preface, pages 13-14.

cal notes. Except some passages from the Smṛtis and S'atakas, there are no other quotations in the fragment from any standard Sanskrit authors or any Sanskrit works, not even from the lexicons, so generally quoted by commentators. It is neither practical nor learned, being in many places far from correct in its interpretations. The commentator appears to be a modern writer and does not deserve any further notice.

I.

The poem of Raghuvans'a is the first text-book read all over India by those who begin the study of Sanskrit, whether privately or at school. And the fact is amply proved by the overwhelming number of commentaries on it that are still extant.[1] No less than 33 names of the commentaries have

---

1. 1. Mallinátha, 2. Hemádri, 3. Cháritravardhana, 4. Vallabha, 5. Dinakaramis'ra, 6. Sumativijaya, 7. Vijayagaṇi, 8. Vijayánandasûrîs'varacharaṇasevaka, 9. Dharmameru,—consulted by myself, 10. Dakshiṇávartta, 11. Nátha, referred to by Mallinátha and other commentators, 12. Kṛishṇabhaṭṭa, 13. Bhoja, 14. Vistarakára, referred to by Hemádri, Cháritravardhana and others, 15. Prabhákara, referred to by Dinkara, 16. Janárdana B. 2,100, referred to by the pupil of Vijayánanda, 17. Gopináthakaviraja (कविकान्ता), L. 1184; 18. Trividákara, 19. Udayákara, 20. Bhagîratha (जगच्चन्द्रचन्द्रिका) L. 1421 ; 21. Bharatasena or Bharatamallika, *IO*. 551; 22. Bṛihaspatimis'ra (रघुवंशविवेकः), *IO*. 551. 997, L. 2181, consulted by Dr. Stenzler, 23. Kṛishṇapatis'arman (अन्वयलापिका), L. 2404; 24. Guṇavinayagaṇi (विशेषार्थबोधिका), L. 3060, W. 1547; 25. Nagnadhara N. W. 620; 26. Náráyaṇa (भावदीपिका), Oppert 2651; 27. Bhavadevamis'ra (सुबोधिनी), L. 2374; 28. Mahes'vara. Oppert 6156; 29. Rámabhadra (विद्वन्मोदिनी , L. 2505; 30 Samudrasûri, Lahore 4. The ollowing three are the names of the commentaries the authors of which are not known ; they are as follows:—31. Advaitasárasvatasûtra, N. P. VII. 44; 32. Kathambhûtî. Radh. 22; 33. Padárthadîpiká, Oppert 2975. See preface to S'is'upálavadha, Durgáprasáda and S'ivadatta's edition, p. 5. See Preface to Naishadha, S'ivadatta's edition, pp. 15-17. See Dr. T. Aufrecht's catalogus catalogorum, pp. 486-487. See report on the search for Sanskrit Mss. during the years 1884-85, 1885-86, and 1886-87, page 82. Nos, 395, 396, and 397.

come to light, and many more will doubtless yet be found if the Government of India will not abandon their important work of searching and buying up Sanskrit manuscripts hidden in private libraries in different parts of this land of Bharatas. I myself have had the good fortune to meet with twelve of them (nine of which I actually made use of), all of which (except that of Dharmameru) belong to the Government of Bombay for whom they have been purchased at different times by Dr. Bühler, Dr. Keilhorn and our distinguished orientalist Dr. R. G. Bhândârkar. It is often one of the Sanskrit books appointed for the P. E. and F. A. Examinations of different Universities. Hence a critical edition of the poem has long been a desideratum.

I have, therefore, tried to make this edition as useful as possible to students of schools and colleges as well as to the general reader.

From my experience as a Sanskrit teacher for the last twenty-five years both in my Sanskrit classes and afterwards in the New English School, I have found that Mallinátha's commentary though a valuable assistance to young students requires, in some places, explanations more clear and lucid that ordinary students may easily understand them. A thorough knowledge of Sanskrit requires a deep study continued for years together, with undivided attention. But, as the time at the disposal of students is limited, they are most in want of such help, as explanations, notes on historical points, Alankáras, and obscure metres and a literal English translation, can afford. In order to supply this want I have added at the end of the volume, copious notes elucidating the text from eight other commentaries, and have given a literal English translation. I have also attempted to supply in the notes most of the information that is generally required by a student for his examination purposes: the allusions have been fully explained ; full grammatical notes and sometimes the translation of the important Sútras of Pâṇini have been given, with the derivations of important words ; the names of the noteworthy figures have also been added ; the geographical names of places, rivers,

mountains &c., have been identified. In fact, I have done everything that lies in my power to make the volume specially useful to students. I have endeavoured to give the literal meaning of the text without mixing up Oriental and Western ideas in order to make them agreeable to the taste of Englishmen. This mode of translation has been adopted by Mr. Pickford in his admirable translation of the Mahâvîracharita, and ably defended by him in his learned preface to that work. I fully concur with him in the opinion that it is ridiculously absurd to expect idiomatic English in a version of a Sanskrit poem. He says " We often find a compound word in Sanskrit which cannot be rendered into English except by a long and intricate sentence with a dependent relative clause for each epithet and allusion. Moreover the frequent digressions and sudden transitions of Sanskrit compositions clearly mark them as alien from the thought and language of modern Europe. The canons which are with perfect fairness applied to modern versions of classical authors, are inadmissible with regard to translations from the Sanskrit. "

We must not, therefore, be surprised if such phrases as the " lotus-like face, " " the moon-faced damsel, " " limbs cool like a lump of snow, " " feet of my sire, " " not seeing purifying progeny, " " the hot water from her eyes, " &c. excite the smiles of Englishmen unacquainted with Sanskrit. In fact I have attempted to translate the poem as literally as the English language could allow me to do, the translation being originally intended for young students reading Sanskrit with me. There are already several translations of this " history of solar princes " in English in which the rendering is happy so far as English is concerned, but I venture to say that they do not, in many places, do justice to the beautiful pathos of the sentiments and expressions in which the poem, like all other poems of Kâlidâsa, abounds. The results of the labours of these scholars to reveal the beauties of oriental poetic and dramatic literature, are, to a certain extent, marred by the fact that they try to adorn Hindu beauty with a foreign garb worn exactly after a foreign fashion. While in my endeavour to decorate the Aryan beauty although necessity has compelled

me to invest her with a foreign dress I have retained but little of the foreign fashion, thereby enabling the beholder to realise her genuine charms. In the translation of Raghuvans'a, therefore, that I present to the learned public, I have attempted to preserve the sense of the Sanskrit expressions without sacrificing it to the beauty of English phraseology. In undertaking the English translation I have been convinced of the real difficulties that lie in the path of rendering the thoughts of an ancient and now defunct race of writers into the language of another race, so unlike in their traditions, usages, customs, and modes of daily life. The reason is to be found in the difference of national habits and associations. I have tried my best, with the aid of dictionaries and other materials, to make the English rendering a close one; how far I have succeeded I leave it to my critics to judge.

For the large number of Mss. which were placed at my disposal I am highly indebted to Dr. R. G. Bhândârkar whose kind advice, and occasional instructions and the general sympathetic help are highly valued and acknowledged every where by every worker in the field of Sanskrit literature. Owing to this supremely eminent scholar's effort, most valuable Mss. are being collected at the Deccan College Library, and it is to be hoped that the Indian Government will not, for several years to come, abandon the important work of buying up Sanskrit manuscripts hidden in private Libraries and therefore out of reach of outsiders; although our late lamented distinguished citizen Rao Saheb M. C. Apte has established a valuable institution for the custody and preservation of Mss. still Government efforts are equally necessary for this important work, mere publication of lists being often useless. The old S'âstris who may be deemed living encyclopedias of ancient scholarship are fast disappearing from the scene, and their industry on this point is long at an end. It behoves us, therefore, to take the charge, preserve and collect the repositories of our national lore from decay and obscurity.

It now simply remains for me to do the agreeable duty of acknowledging my obligations to those whose works have been consulted in preparing the first three editions. Foremost among them stand the late lamented Anundoram Borooah, the author of Nánârthasangraha and the late lamented S. P. Pandit, the editor of Raghuvans'a, Bombay series. I have also frequently referred to the admirable editions of Prof. Kailâsachandra Datta and Prof. Kâlicharana Banerjea, for which my sincere thanks are due to them. I have also to thank sincerely Dr. R. G. Bhándárkar the retired professor of Oriental languages, Deccan College, Poona, who was kind enough to lend me his valuable assistance in the solution of certain knotty points which I referred to him.

In conclusion, I trust that the Raghuvans'a as here presented to the public will be useful, not only to those, for whom it is chiefly intended, but to the general Sanskrit-reading public also. No one is more conscious than myself of the short-comings and defects of such a work, but a sense of duty to my countrymen, to the younger generation and above all to Kálidása the immortal bard of Sanskrit literature, the idol of the shrine of the heart of every Hindu and worshipped with no less fervour and devotion by the Sanskrit-knowing public in all parts of the globe, that literary hero of this land of the Aryas, the flood of whose glory overflows this sublunary world with a bright refulgence, whose fame the olden times sang—the present sing—and the future shall ever sing—a sense of duty, I say, to such a jewel of the mine of Indian poets has irresistibly prompted me to undertake this arduous task, and the inward prompting of my soul was so powerful that it rendered me blind to the difficulties which I had to surmount but which I have at last only partially surmounted. I shall, therefore, be very happy to receive any suggestions or corrections that readers may have to make and shall be but too willing to consider about them in the subsequent editions. With these prefatory remarks I leave the book to the indulgent judgment of the learned public.

II.

In this edition of Raghuvans'a I have but partially fulfilled the promise I made long before, of writing a short dissertation on Kâlidâsa and the times in which he flourished, and if possible, his place in Sanskrit literature. in order to create in the minds of students a taste for the literary and poetic beauty of the Kávyas of the prince of poets. For unless such a taste is created in them, it is in vain that one of the grandest achievements of the poetical genius of our greatest poet. has been placed in their hands. But this defect has been, so to speak, justly removed by my esteemed friend the late lamented Vishnu Krishna Chiplunkar. B. A., the founder of the New English School, in his admirable essay on "Kâlidâsa and his place in Sanskrit literature" written in Maráthî.[1] Kâlidâsa's birth, his lineage, his home, the countries over which he travelled, the name of the king at whose court he flourished, his achievements, his friends, his surroundings, his successes and disappointments in life, in fact his complete biography, are matters that are most important to a student of history and they have, it is next to probability, for ever disappeared from the memory of man; but his marvellous works stand as a column to mark the achievements of Aryan civilization in India, and will do so till another universal deluge sweeps them away. The learned Sástri, however, is silent on this point. but he has written his able judgment on the unrivalled poetic merits of Kâlidâsa. Many a reader will, perhaps, be startled to hear Raghuvans'a and Maghadûta described as the grandest achievements of Kâlidâsa's genius: for the general current of opinion amongst Indian scholars, ascribes to the Abhijnâna S'ákuntala the first place amongst his productions. There is a current Sanskrit saying among old people of this country :—

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्यं शकुन्तलम् ।
तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोकचतुष्टयम् ॥

1. Every lover of Sanskrit ought to read this essay styled "Sanskrit Poets" written in Maráthi by the late lamented founder of the New English School and the Deccan Education Society of Poona.

which means,—Of all poems the dramatic composition is the loveliest; of the dramas the S'âkuntala is the best: in it again the fourth Act is unrivalled, and of which the couplet of the four verses is simply transcendent! The critic who composed the couplet must have had a nice discriminating eye for moral beauty. Indeed we have seldom met within the whole range of Sanskrit literature, lovelier scenes than those that are depicted at the time of S'akuntalâ's departure. They show, what transcending beauty a master-painter can produce out of the common every day materials of human life. Let the reader who has read the drama of Abhijnâna-S'âkuntala but transfer himself in imagination to that quiet and serene bank of the river Mâlinî, the most favourite haunt of large-eyed deer, and the loved retreat of the hermit's daughter and her maiden friends, during the declining hours of the day, and what scene does he find there? He finds the solitary sage Kanva, standing alone, and deploring his coming separation from his loving daughter, and wonders that there was so much love in that old heart of his. He makes a new discovery that he loves S'akuntalâ, though not his own daughter but only a fondling picked up in the forest. Let him take his stand on that solitary river-bank and listen to what the hoary-headed sage has to say :—

यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया
कण्ठः स्तम्भितबाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनम् ॥
वैक्लव्यं मम तावदीदृशमपि स्नेहादरण्यौकसः ।
पीड्यन्ते गृहिणः कथं नु तनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः ॥

Has not that a sort of moral beauty ennobling to our hearts! However this is a digression. Whilst not disputing the claims of the Abhijnâna S'âkuntala to be regarded as the first of the productions of the poet's genius, the Raghuvans'a can be ranked as the next. There are special considerations in its favour. In his other works the poet confines himself to a single or a few incidents of history or mythology; and accordingly has room enough for the play of his imagination. But in the Raghuvans'a, he attempts a rapid sketch of the history of an illustrious line of kings. It partly resembles a

historical synopsis in its character ; such works are calculated to be dull and tedious, full of rapid narration of facts and events. Still the facts and events mentioned in this work have been so manipulated by our master charmer that they have assumed quite another shape. Within the restricted limits he has prescribed to himself, he has found room enough for the play of his superior imagination. The student need not go through the whole work : within these first fourteen cantos he will find enough to illustrate what I have said above. The description of Dilîpa, and his manly and regal virtues for instance, of his visit to Vasis*th*a's holy hermitage and his rigid vows and austerities, how life-like and real, how morally elevating to heart and soul ! His faith in the devotion to the service of the sacred cow; his manly submission to her test are all beyond description ! The chivalrous description of the prince Raghu ; his undaunted spirit in the fight with Indra ; his ambition for the conquest of the quarters are all interesting and charming in themselves. Above all the account given of Aja's lamentation, after Indumatî's departure to heaven, is, indeed, most graphic and heart-rending. Let the reader take his stand on a stone outside the garden where the king Aja is weeping for the loss of his beautiful queen Indumatî and listen to what he has to say :—

कुसुमान्यपि गात्रसंगमात्प्रभवन्त्यायुरपोहितुं यदि ।
न भविष्यति हन्त साधनं किमिवान्यत्प्रहरिष्यतो विधेः ।
दयितां यदि तावदन्वगाद्विनिवृत्तं किमिदं तया विना ।
सहतां हतजीवितं मम प्रबलामात्मकृतेन वेदनाम् ॥

नवपल्लवसंस्तरेऽपि ते मृदु दूयेत यदङ्गमर्पितम् ।
तदिदं विषहिष्यते कथं वद वामोरु चिताधिरोहणम् ॥

Here the poet is making the husband mourn the death of his wife and the description is indeed most pathetic and touching. Let the reader also transport himself in his imagination to the Válmîki's penance forest and behold how Sîtá bewails her cruel fate. Picture to yourself what passes in her mind and you will at once realise it in the following couplets :—

वाच्यस्त्वया मद्वचनात्स राजा वह्नौ विशुद्धामपि यत्समक्षम् ।
मां लोकवादश्रवणादहासीः श्रुतस्य किं तत्सदृशं कुलस्य ॥
कल्याणबुद्धेरथ वा तवायं न कामचारो मयि शङ्कनीयः ।
ममैव जन्मान्तरपातकानां विपाकविस्फूर्जथुरप्रसह्यः ॥

Now imagine her mental agitations and also the pangs caused by separation from her beloved lord :—

निशाचरोपप्लुतभर्तृकाणां तपस्विनीनां भवतः प्रसादात् ।
भूत्वा शरण्या शरणार्थमन्यां कथं प्रपत्स्ये त्वयि दीप्यमाने ॥
किं वा तवात्यन्तवियोगमोघे कुर्यामुपेक्षां हतजीवितेऽस्मिन् ।
स्याद्रक्षणीयं यदि मे न तेजस्त्वदीयमन्तर्गतमन्तरायः ॥

It is certainly very difficult to describe in words the spontaneous overflow of fatherly love that sprang from the bosom of Válmíki at the piteous sight of the abandoned daughter of the Videha king :—

जाने विसृष्टां प्रणिधानतस्त्वां मिथ्यापवादक्षुभितेन भर्त्रा ।
तन्मा व्यथिष्ठा विषयान्तरस्थं प्राप्तासि वैदेहि पितुर्निकेतम् ॥

The following couplets are intended to move every loving heart. They are, no doubt, the specimens of Karuna Rasa :—

अपि प्रभुः सानुशयोऽधुना स्यादित्युत्सुकः शक्रजितोऽपि हन्ता ।
शशंस सीतापरिदेवनान्तमनुष्ठितं शासनमग्रजाय ॥
बभूव रामः सहसा सबाष्पस्तुषारवर्षीव सहस्यचन्द्रः ।
कौलीनभीतेन गृहान्निरस्ता न तेन वैदेहसुता मनस्तः ॥

Of all the Sargas of the Raghuvans'a this is, in our opinion, the most beautiful Sarga. In it the poet's imagination finds no parallel. Here again in Meghadûta is a faithful picture of Yaksha's feelings excited by separation from his dear wife and home !

तां चावश्यं दिवसगणनातत्परामेकपत्नीम् ।
अव्यापन्नामविहतगतिर्द्रक्ष्यसि भ्रातृजायाम् ।
आशाबन्धः कुसुमसदृशं प्रायशो ह्यङ्गनानाम् ।
सद्यःपाति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रुणद्धि ॥

The following stanza illustrates the transcending picture of Kálidása's imagination.

हित्वा तस्मिन्भुजगवलयं शंभुना दत्तहस्ता ।
क्रीडाशैले यदि च विचरेत्पादचारेण गौरी ॥
भङ्गीभक्त्या विरचितवपुः स्तम्भितान्तर्जलौघः ।
सोपानत्वं कुरु मणितटारोहणायाग्रयायी ॥

His पूर्वमेघ and the picturesque description of Yaksha's home in the उत्तरमेघ are simply unrivalled. And many more instances of this description may also be added to the above where the poet has indeed given a full scope to the play of his towering imagination.

Speaking of Kâlidâsa Dr. Bhâu Dáji says :—" His illustrations are derived chiefly from the Natural history and physical geography of Northern India. The " towery summits " of the Himálaya decked with " diadems of snow " ; the peak of Kailása " reflected in the waters of the dark Yamunà ; " the " rippling Gangâ laving the mountain pine, " the " musky breezes throwing their balmy odours over eternal snow "; the " wilds where eager hunters roam, tracking the lion to his dreary home ": the " peaks where sunshine ever reigns, " where " birch-trees wave ", the " bleeding pines their odourous gums distill "; and the " Musk Deer spring frequent from their caves "; " the magic herbs that pour their streamy light from mossy Caverns, through the darksome night ; " " the wild kine " with " her bushy streaming hair "; the fierce elephants ; the startled deer ; the lotuses that " lave their beauties in the heavenly Gangâ's wave " ; the mountain lake ; " the clefts from which dark bitumen flowed " ; the melting snow ; the cool gale : the " rude mantles of the birch-trees rind " ; these and other allusions indicate extensive observation, familiarity with the gorgeous scenery of the Himálaya mountains, and an ardent love of nature. Kálidása is the only great poet who, so far as the writer is aware, describes a living saffron flower. The plant, we know, grows in Kás'mîra and the regions west of it. He never compares any thing to the pomegranate or to the rose, which are frequent subjects of allusion and comparison in almost all modern oriental poetry. The lips of Kálidása's young maidens are of coral hue, red as the petals of the Nelumbeum or as the ripe Bimba, (mo-

mordica Dioica), or as the Pátala flower (Bignonia Suaveolens) —or as the budding leaves. Their teeth are "white as pearls" or as the Kunda (Jasmine). Their eyes are "bright like wine" "and beautiful as the lotus,—they write their love-letters on the rind of the birch with mineral dyes or on leaves with their nails." He speaks of "the sentimental compositions of former poets." His language is simple and his similitudes are copious and unrivalled for their elegance. The Vocabulary of Amarasinha is sufficient for explaining almost all the words in Kálidása's works—whilst to understand the poems of Mágha, a contemporary of the Bhoja of the 11th century, the assistance of a number of Vocabularies is required. The metres are more varied and the grammatical constructions long and difficult. Kálidása's metres and grammatical constructions are plain and generally known. Yet the effect is great. He is justly praised for his happy choice of subjects, his complete attainment of his poetical intentions, for the beauty of his representations, the tenderness of his feeling, and the richness of his imagination. He shows an acquaintance with Chinese pottery and silks.—with the magnet,—in one instance the true cause of eclipses, the influence of the moon on the tides and with ships. His kings are attended by Yavana women (Greek or Bactrian) with bows in their hands. He has minute acquaintance with Court-life. The various beasts, birds, trees, flowers, fishes and insects alluded to by Kálidása, are common to nearly the whole of India, and, therefore do not assist in discovering the poet's birth-place, or his favourite places of residence. He had undoubtedly travelled a great deal."

"Like many congenial spirits, he had no doubt suffered from the pangs of poverty and neglect. He devoutly prays that "for the common welfare of the good, the mutual rivals Fortune and Eloquence may at last be wedded in that union which now seems so hard to be attained." With these prefatory remarks turn we now to the date of Kálidása.

ON THE DATE OF KÂLIDÂSA.

III.

Kâlidâsa has been, so to speak, the darling of India for more than nineteen hundred years.[1] We obtain a documentary record[2] that even since so early as the seventh century A. D. his fame as an immortal poet has spread throughout the then five divisions of India. His genius has been recognised and appreciated by poets and critics and admired by the literary public.[3]

---

1. This essay was written in July 1893 and added to the Preface to our edition of Meghadúta. See Introduction to our edition of Meghadúta, p. 31.

2. The Aiho*l*e inscription of Pulakes'i II., (634 A. D.) has an allusion to Kálidása :—" येनायोजि नवेश्म स्थिरमर्थविधौ विवेकिना जिनवेश्म । स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदासभारविकीर्तिः" ॥ Ind Ant., Vol. VIII., p. 237. Another allusion is also found in Bá*n*a's introduction to his Harshacharita :—" निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु । प्रीतिर्मधुरसार्द्रासु मंजरीष्विव जायते " ॥ Dr. P. Peterson observes that " Bá*n*a's references to the younger poet, and to Bhása respectively, is that at the time he wrote the above verse Kálidása's plays had either not been written or were still far from occupying the prominent place in the nation's literature. Kálidása was therefore either a contemporary of (Bá*n*a) or was his elder by little more than a generation." Preface to Bá*n*a's Kádambari, p. 81. The learned doctor afterwards changes his opinion as to the above remarks and observes :—" I will say only in passing that I hope on some future occasion to show that what is true of Bhavabhúti is true of his great predecessor Kálidása. If that is so, a vista of antiquity opens up for our book. For it is certain now that Kálidása must be put earlier than has lately been very generally supposed. He stands near the beginning of our era, if indeed he does not overtop it, and date from the year *one* of Vikrama's era." Jour. B. B. R. A. S. 1892., Vol. XVIII., p. 110.

3. Another reference in chronological order to the great poet occurs in Kumárila's Tantravártika, Benares edition, p. 133. " एवं च विद्वद्वचनाद्विनिर्गतं । प्रसिद्धरूपं कविभिर्निरूपितं । "सतां हि संदेहपदेषु वस्तुषु । प्रमाणमतःकरणप्रवृत्तयः " इति ॥ This Kumárila, the bitterest foe of the Jainas and Buddhas flourished between 700 and 750 A. D.;

Numerous editions of his works have been printed ; voluminous commentaries have been written ; various translations in the different dialects of the country have been made[1]. All these things bear ample testimony to the affectionate zeal and loving care with which his works have been and are being studied. From the snowy Himàlaya in the north to Cape Camorin in the south there is not a single educated man who has not read at least a Canto of his poems or an act of his Mâlavikágnimitra or Vikramorvs'i or some stanzas from the beautiful episode of S'ákuntala, the all in all of the poet.

But his fame is not confined to his birth-land only, it has travelled to distant countries and foreign climates. His genius like a load-stone attracts at once every one who comes in con-

---

in other words he belongs to the first half of the eighth century. Jour. B. B. R. A. S. Vol. XVIII. pp. 225, 231 and 238. The author of the Gau*d*avaho, a Prák*r*ita poem of the eighth century, refers to the Raghukára or the author of the Raghuvans'a. S. P. Pandit's edition of Gau*d*avaho, verse 800. Kshirasvámin the well-known lexicographer quotes from the Raghuvans'a, Vikramorvasîyam and Meghadúta. S. P. Pandit's edition of Raghuvans'a Preface, p. 77 *ff.* Meghadúta was incorporated by way of *Samasyá* into the Párs'vabhyudaya by Jinasena in the beginning of the ninth century or about S'aka 735 or A. D. 813 the year in which his patron the Ràsh*t*rakú*t*a king Amoghavarsha ascended the throne. Ind. Ant. Vol XII. p. 216. Also Jour. B. B. R. A. S. Vol. XVIII. p. 224, Ms of the Kolhapur Jaina Ma*t*ha. See also Málati-Mádhava, Dr. Bhándarkar's edi. A. II., p. 92, A. III., p. 106. In the first half of the tenth century or about A. D. 945 when the Rásh*t*rakú*t*a king K*r*ish*n*arája III. was ruling over the Kanarese and Maratha countries, lived the poet Ponna who boasts that he is superior to Kálidása Karná*t*aka शब्दानुशासनम्, Introduction p. 28. To this period of Rásh*t*rakú*t*a supremacy must also be assigned a Kanarese translation of Vikramorvas'i which is quoted in the शब्द-मणिदर्पण by Kes'irája contemporary of the Hoysala king Vira Ballála Deva (A. D. 1217) *Id.* p. 36. See also K. B. Páthak's paper on Pújyapáda, Ind. Ant. Vol. XII. p. 19.

1. Dr. Bháu Dáji's essay on Kálidása, The Literary Remains, pp. 2-5. Monier Williams' Abhij*n*ána S'ákuntala, 2nd edition, p. 7.

tact with it. It has thus attraced scholars and distinguished orientalists of Europe and America. He is now known partly through originals, and partly through the medium of translations to the whole civilised world. Along the banks of the Rhine and of the Thames he is at this day read with as much enthusiasm and delight as he is on the banks of the Ganges or the Godávarí. This "son of song" has passed through the fiery ordeal of foreign criticism and has elicited admiration from the critics of Europe. The lines of Goëthe [1], the celebrated poet, philosopher and critic of Germany of whom it may be truly said that he was the man of all times and all climes. are well-known to everybody ; Alexander Von-Humboldt has appreciated 'the richness of his creative [2] fancy.' Prof. Lassen has called him 'the brightest star in the firmament of Indian artificial [3] poetry.'

---

1. Thus translated by Mr. E. B. Eastwick:—

"Wouldst thou the young years blossoms and the fruits of its decline,
And all by which the soul is charmed, enraptured, feasted, fed ?
Wouldst thou the earth, and heaven itself in one soul name combine?
I name thee, O S'akoontalá ! and all at once is said. "

Dr. Bháu Dáji's Essay on Kálidása, p. 1. Monier Williams says:— " No composition of Kálidása displays more richness of his poetical genius, the exuberance of his imagination, the warmth and play of his fancy, his profound knowledge of human heart, his delicate appreciation of its most refined and tender emotions, his familiarity with the workings and counter-workings of its conflicting feelings,—in short, more entitles him to rank as the Shakespeare of India. " Vishnu Krishna Chiplunkar's Essay on Kálidása written in Maráthí, p. 14.

2. " Kálidása the celebrated author of the 'S'ákoontala' is a masterly describer of the influence which Nature exercises upon the minds of lovers. Tenderness in the expression of feeling, and richness of creative fancy, have assigned to him his lofty place among the poets of all nations. " *Alexander von-Humboldt.* V. K. Chiplunkar's Essay on Kálidása, p. 14. The Literary Remains or Dr. Bháu Dáji's Essay on Kálidása, p. 1.

3. Indische Alterthumskunde, ii, 49, 50, 398. Dr. Bháu Dáji's Essay on Kálidása, p. 2.

Sir William Jones who first introduced him to the notice of the literary public of Europe has conferred upon him the title of 'the Indian Shakespeare.'[1] M. Hippolyte Fauche has considered his Meghadúta to be without a rival in the whole elegiac literature of Europe. [2]

About the poet of such world-wide repute, we are naturally led to ask the following questions :—When was he born and when did he die ? Who were his parents ? What was his dwelling place ? Who were his friends and what were his surroundings ? How did he live and how did he think ? But in the case of our poet, all such queries are vain. Our curiosity in this matter is doomed to disappointment. The details about which we anxiously solicit information are lost for ever, and are beyond the hope of recovery. The life of Kálidása as of Shakespeare 'remains almost a blank and his very name a subject[3] of contention.' About his private life absolutely no information that is trustworthy is available. The poet has observed a painful reticence regarding himself in his works. Throughout these, we fail to find even a passing allusion either to his own person or to any remarkable incident of his life. Nay, he has not even affixed his name to his poetic productions. The evil consequence has been that even the jingling rhymes of wretched poetasters, as the Nalodaya [4] or Jyotirvidábharaṇa for in-

---

1. Dr. Bháu Dáji's Essay on Kálidása, p. 5. V. K. Chiplunkar's Essay on Kálidása, p. 14.

2. Dr. Báhu Dáji's Essay on Kálidása, p. 7.

3. Dr. Bháu Dáji's Essay on Kálidàsa, p. 5.

4. At last our profound Sanskrit scholar Dr. R. G. Bhandarkar has found out the name of the author of Nalodaya which has long been attributed to Kálidása. He says:—"This is usually attributed to Kálidása ; but in this manuscript the name of the author is given as Ravideva son of Náráyaṇa. There are one or two manuscripts in our collection in which also the same name occurs." Report on the search for Sanskrit Manuscripts, D. C. during the year 1883-84. p. 16.

stance, have been palmed off as the poet's productions [1]. Nor has any of his one thousand and one commentators (including the Bráhma*n*as and the Jainas) deigned to afford us any clue to the elucidation of this problem [2]. The personal history of this immortal poet is thus involved in an impenetrable mist of obscurity.

Tradition, it is true, has handed down through a succession of ages certain stories and anecdotes about him ; but they are so marvellous as to be opposed to all historic credibility. Facts and fables have been so strangely and inextricably interwoven, that it is impossible to disentangle the one from the other.

With regard to his date also we are in the same state of uncertainty as we are with regard to his personal history. Here also we are not on *terra firma*, but on the quicksand of tradition. The accounts preserved by tradition are so inconsistent and contradictory, that they defy human credibility. For instance there is an old and trustworthy tradition that has been handed down to us from times immemorial which says that Kálidása flourished in the reign of Vikramáditya 56 B. C. [3] But there is another tradition which says that he was patronised by a king named Bhoja

---

1. Dr. Bháu Dáji's Essay on Kàlidása. p. 10; S. P. Pandit's edition of Raghuvans'a Vol., III., p. 29; Dr. H. Kern's preface to B*ri*hatsanhitá of Varàhamihira, p. 12; Prof. Weber's History of Sanskrit Literature, p. 201, and the notes thereon. Also on pages 260, 261, and 266 of the same. Prof. Max Müller's India what can it teach us, The renaissance of Sanskrit Literature, first edition, p. 281, and the notes thereon.

2. Dr. Bháu Dàji's Essay on Kálidása, p. 5.

3. Kathásaritságara, pp. 650-51. Nir*n*ayaságara edi. Also other Purá*n*as. The word Vikramáditya signifies " The sun of valour, " and the title was assumed by many kings of Ujjayinî and other kingdoms of India. Prof. Weber's History of Sanskrit Literature, p. 201, *notes.*

in the eleventh century. [1] Now it is impossible to reconcile these flagrant inconsistencies. Traditions unless corroborated by documentary evidence from independent sources are worthless and are not entitled to serious consideration. Of this, however, further on.

---

1. Dr. Bháu Dáji says :—Mr. Bently, on the authority of the Bhojaprabandha and the Ayin-i-Akabari, supposed the patron of learning to be the same as "Rájá Vikram, successor to Rájá Bhoja," in the 11th century of the Christian Era. Col. Wilford and Mr. James Prinsep place Káidása in the 5th century, and Mountstuart Elphinstone adopts this date in his admirable History of India. In Gujarátha, Málvà and the Deccan, Kálidása is believed, chiefly on the authority of the Bhojaprabandha to have flourished at the court of Bhoja, the nephew of Munja, at Ujjayinî, in the 11th century of the Christian Era. There have been several Bhojas as well as Vikramas or Vikramádityas at Ujjayinî, the last Bhoja having flourished in the 11th century of the Christian Era ; and to reconcile the two suppositions, it is necessary to suppose that the Vikrama or Vikramáditya at whose court the "nine" learned men flourished, was also styled "Bhoja." Dr. Bháu Dàji's Essay, p. 6, 7. Prof. Weber says—"But then, we know of a good many different Vikramas and Vikramádityas ; and, besides, a tradition which is found in some modern works, and which ought surely, in the first instance, to have been shown to be baseless before any such conclusion was adopted, states expressly (whether correctly or not is a question by itself) that king Bhoja, the ruler of Málvâ, who dwelt at Dhárá and Ujjayini was the Vikrama at whose court the 'nine gems' flourished ; and, according to an inscription, this king Bhoja lived about 1040-1090 A. D." Prof. Weber's History of Sanskrit Literature p. 201-202 and the notes thereon; and see also the pages, 203, 215, 228, 230, 261, 319, of the same. Max Müller's India 'What can it teach us,' first edi. p. 284, and the notes; S. P. Pandit's edition of Raghuvans'a, part III., p. 30 note ; F. Hall's edition of Vásavadattá, preface, pages 7, 8 and 9, foot-notes, p. 20 note of the same. Dr. Kern's preface to B*ri*hatsanhitá pages 15 and 16. Life and Essays of H. T. Colebrooke, Essays Vol. II. p. 49. Wilson's Hindu Theatre, Vol. I. p. 185. Indian Antiquary, Vol. I. 1872, pp. 82, 83, 314-15. Indi. Anti. Vol II. 1873, pp. 58, 272, 297 and 362 foot-note. Ind. Anti. Vol. XII. 1883, pp. 94, 230, 234, 291,

It is now a patent fact that India is wanting in chronology. The want of historic faculty is a defect in our national character. Through the influence and inspiration of western education, our minds are being awakened to a sense of this defect, and some of our men, though few in number, are engaged in antiquarian researches with the laudable desire of unveiling the past. But no success has yet been attained, commensurate with the extent of their hopes or the magnitude of their efforts. Vast numismatic and paleographic evidence has been brought to bear upon the date of Kálidása; yet what may be said at the most about it, is that it has reached the region of probability but not of certainty.

Among antiquarians no unanimity exists upon this question of the date of Kálidása. Their divergencies have been very remarkable. We shall try in these pages to discuss the various dates assigned to Kálidása by them, and thus bring to a focus all the evidence bearing upon this point which has been hitherto collected by orientalists both at home and abroad.

I. M. Hippolyte Fauche supposes the poet to have lived at the time of the posthumous [1] child who is said at the end of

---

293, 294, 295. Ind. Anti. Vol. XI. p. 125, footnote. Ind. Antiquary. Vol. XVIII. Vikramáditya I. (Western Chálukya) ; pp. 285, 1889. Vikramáditya V. (West Chálukya); he had the *Biruda* of Tribhuvanamalla, p. 275 ;—note on the period of his death, and on the परोक्षम् used in connection with his successor, pp. 272-73. Vikramáditya VI. (West Chálukya); an inscription of शक-संवत् 998, which perhaps belongs to the beginning of his reign, p. 35 of the same volume. Indian Antiquary. Vol. XIX. 1890. Vikramáditya, a king mentioned in connection with Pratápáditya 1 ; Kalhana says he is not " the enemy of the Sakas (शकारि), pp. 261 to 264." Vikramáditya I, (West Chálukya) p. 151 of the same. Vikramáditya II. (East Chálukya) p. 435 of the same, E. H. D. pp. 41-45 ; 62-67 ; 74.

1. Dr. Bháu Dáji's Essay on Kálidása, p. 7. S. P. Pandit's edition of Raghuvansa, part III. preface, p. 27-28. Jour. B. B. R. A. S. for 1861.

the last canto of Raghuvans'a to have succeeded to the throne. This would place Kálidása at the latest in the eighth century before Chirst.

Against this date the following objections have been justly urged by Mr. Pandit in his edition of Raghuvans'a [1]—(*a*) If Kálidása really lived in the reign of the posthumous child, we cannot suppose him to have described his ancestors and said nothing about the living king himself. (*b*) We do not know for certain that the nineteenth Canto is the real conclusion of the poem. The end of the nineteenth Canto is abrupt; the Raghuvans'a, unlike other works of the poet, does not end with a benedictory stanza. [2] Tradition says that there is a sequel to the 'History of the solar kings.' (*c*) From the fact that no more kings are described by Kálidása it does not necessarily follow that no more kings had lived. The Vâyu Purâ*n*a states seven kings to have reigned at Ayodhyá after the son of Sudars'ana ; and other Purá*n*as mention thirty-seven princes to have lived after the voluptuous king Agnivar*n*a. [3]

Another very strong objection also, based upon style, may be legitimately urged against this date. It has been indisputably proved that Bhavabhúti belonged to the first decade of the 8th century A. D. [4] Now if we would suppose Kálidása to have lived in the 8th century B. C., there would be distance of 16 centuries between them. [5] Corresponding to this difference

---

1. S. P. Pandit's Raghuvans'a, part III., preface, p. 28, and the foot-note.

2. तं भावाय प्रसवसमयाकांक्षिणीनां प्रजाना-
मन्तर्गूढं क्षितिरिव नभोवीजमुष्टिं दधाना ।
मौलैः सार्धं स्थविरसचिवैर्हैमसिंहासनस्था
राज्ञी राज्यं विधिवदशिषद्भर्तुरव्याहताज्ञा ॥

3. S. P. Pandit's edition of Raghuvans'a, part III, preface, p. 24.

4. Dr. Bhándárkar's Report on the Search for Sanskrit MSS. during the year 1883-84, p. 15. Dr. Bhándárkar's edition of Málatîmádhava preface p. XII ; Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 334.

5. Prof. Weber's History of Sanskrit Literature, p. 200.

of time, there ought to be a considerable difference of style between the compositions of these two poets. The style of Kálidása ought to differ from that of Bhavabhûti as much as the Vedic differs from the classical. But no such marked difference is discernible. Almost the same spirit, the same manner of treatment, pervade the productions of both. The artificiality of diction which is observable in Bhavabhûti, will only justify us in supposing an interval of about eight centuries at the most to have elapsed between him and Kálidása.[1]

II. Sir William Jones places Kálidása in the first century preceding the Christian era.[2] This date rests on a

1. In his History of Sanskrit Literature, p. 204 footnote, Prof. Weber says :—" In the Introduction to my translation of this drama, the Málavikágnimitra, I have specially examined not only the question of its genuineness, but also that of the date of Kálidása. The result arrived at is, in the first place, that this drama also really belongs to him,—and in this view S'ankar Pandit, in his edition of the play concurs. As to the second point, interal evidence partly derived from the language, partly connected with the phase of civilisation presented to us, leads me to assign the composition of Kálidása's three dramas to a period from the second to the fourth century of our era, the period of the Gupta princes, Chandragupta, &c. " whose reigns correspond best to the legendary tradition of the glory of Vikrama, and may perhaps be gathered up in it in one single focus." Prof. Lassen has expressed himself to essentially the same effect. See *I. Ak.*, Vol. II. 457, 1158-1160. See also *I. St.*, Vol. II. 148, 415-417." In his India what can it teach us, first edition, p. 301, foot-note, Prof. Max Müller says :—"It seems almost impossible to give the opinions held by various Sanskrit scholars on the date of Kálidása, or on the dates of certain works ascribed to Kálidása, on account of their constantly varying opinions and the vague language in which they are expressed. Those who desire information on this point, may consult Professor Weber's Sanskrit Literature. That accomplished scholar seems to put Kálidása's three plays between the second and fourth centuries A. D., the period of Gupta princes, Chandragupta, &c., see L. C., p. 204 note ; but I am not quite certain that this is his real opinion."

2. Dr. Bháu Dáji's Essay on Kálidása, p. 6.

solid foundation of a tradition of remote antiquity founded on the astronomical data, which runs to the effect that there was once a king named Vikramáditya who after defeating the S'akas or Scythians established the Samvat era which commences 57 years before Christ. Of this, however, further on. Another story tells us that Kálidása was one of the nine men of genius who adorned the court of this Vikramáditya. A memorial verse gives the names of these nine gems as follows :--

धन्वन्तरिः क्षपणकोऽमरसिंहशंकु—
वेतालभट्टघटकर्परकालिदासाः ।
ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायाम्
रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य ॥ [1]

Here then are involved three questions of great importance which, for clearness' sake, we shall discuss separately. They are as follows :—

(*a*) Was there such a prince as Vikramáditya, the destroyer of Mlechchhas, the founder of the Samvat era, who reigned in the first century B. C. ?

(*b*) Was there only one prince bearing the name of Vikramâditya[2] or was Vikramáditya a title simply assumed by various princes of different dynasties.

---

1. S. P. Pandit's editlon of Raghuvans'a, part III, perface pp. 28-29. Max Müller's India what can it teach us, first edition, pp. 328-[illegible]. Dr. Bháu Dáji's Essay on Kálidása, pp. 9-10. J. B. B. R. A. S. 1860, p. 26. Prof. Weber's History of Sanskrit Literature, p. 200, and the notes on pages 260, 261 and 266 of the same. Dr. H. Kern's perface to B*r*ihatsanhitá, pp. 12-17. Wilson's trans. of Vish*n*u Purá*n*a edited by F. E. Hall, preface p. VIII. footnote. Dr. Bhándarkar's Early History of the Dekkan, first edition, pp. 41-46, 59-67 ; 74. Also see notes on page 31 of the same.

2. Dr. H. Kern's preface B*r*ihatsanhitá, pp. 14, 15, 16, 17 and 2[illegible]. Pandit's ed. of Raghuvans'a, part III, preface, pp. 32-33. Prof. Weber's History of Sanskrit Literature, pp. 201, 202, 205 and 228. Dr. Bháu Dáji's Essay on Kálidása, pp. 6, 8, 9, 18, 19 and 55. Prof. Max Müller's India what can it teach us, first edition, pp. 28[illegible], 282, 283 and 301. Dr. Hall's preface to Vásavadattá, p. 6. Alberuni's India, Vol II., chapter XLIX. p. 6.

(c) Did the celebrated nine gems flourish in the court of that Vikramâditya who flourished in 56 B. C. ?

(a) The belief in Vikramáditya of the first century before Christ rests upon a tradition of remote antiquity supported by astronomical data. But it is also, according to Dr. Bhau Daji, confirmed by a *Patávali* composed by Merutungâchârya, a Jaina Pandit. [1] Merutunga says that "after Nabhovâhana, Garddabhilla ruled at Ujjayinî for 13 years, when S'rî Kâlikâchârya, [2] on account of violence offered to his sister Sarasvatî, uprooted Garddabhilla, and established S'aka kings in Ujjayinî. They ruled there for 4 years. Garddabhilla's son Vikramáditya regained the kingdom of Ujjayini, and having relieved the debt of the world by means of gold, commenced the Vikrama Samvat era. This took place 470 (453 + 17) years after Vîra's era. Vikrama's reign extended over 60 years. His son Vikramacharitra alias Dharmâditya ruled for 40 years. The next kings Bhâilla, Nâilla, and Nâhada ruled for 11, 14 and 10 years respectively. The S'aka era now commenced 605 years after Vîra Nirvâna. " [3]

From this extract of the Patâvali, it will be seen that there was a king named Vikramâditya who reigned 135 years, before the commencement of the S'aka era. This, it appears, is also corroborated by the account given of this Vikramâditya in the Kathásaritsagara 120. page 651.

There are some investigators who doubt the existence of this prince. They say that there is absolutely no documentary evidence whatever for the existence of such a prince as

1. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, pp. 123-142.

2. For the full account of this Kálikácharya or Kálakácharya see "The Literary Remains " of Dr. Bhau Dàji, p. 120.

3. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, pp. 131, 132, and 133.

4. The Literary remains of Dr. Bhau Daji, p. 132.

Vikramáditya in the first century B. C.[1] Mr. Fergusson[2] has started the bold theory that what is called the era of Vikramáditya 56 B. C. was a date arrived at by taking the date of the great battle of Korur[3] in which Vikrama

1. Dr. H. Kern, Prof. Weber, Prof. Max Müller, Dr. Bhau Daji, Dr. Bhandarkar, Dr. Fleet, Mr. Páthaka and other orientalists hold this opinion. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji. p. 9. See also Dr. Fleet's Gupta inscriptions, Introduction pp. 37, 56.

2. Journal of the Royal Asiatic Society, 1880. On the S'aka, Samvat, and Gupta Eras ; a Supplement to his paper on Indian Chronology, 1870.

3. Prof. Max Müller says that 'this battle of Korur is described by Albirúni in his account of the S'aka era :—

'The S'aka era,' he writes, 'called by the Indians S'akakála is posterior to that of Vikramáditya by 135 years. S'aka is the name of a prince who reigned over the countries situated between the Indus (Dr. Bhau Daji, J. B. B. R. A. S. VIII., p. 242, 1864) and the sea. His residence was in the centre of the empire, in the country named Âryávarta.

The Indians represent him as born in another class than that of the S'akas ; some pretend that he was a S'údra and a native of the town of Mansûra (Bahmanábád). There are even some who say that he was not of the Indian race, and that he was born in Western countries. The people had much to suffer from his despotism until they received aid from the East. Vikramáditya marched against him, put his army to flight and killed him in the territory of Korur, situated between Multan and the castle of Luny (in the Panjab ?). This epoch became celebrated by the joy which the people felt at S'aka's death, and it was selected for era, principally by astronomers. On the other hand, Vikramáditya received the title of S'ri, on account of the honour which he had acquired.' But Albirúni adds that the date of the reign of this Vikramáditya does not allow us to identify him with the prince of the same name who ruled in Málvá. And this statement of Albirúni appears to us correct since it has nothing to do with Harsha Vikramáditya of the sixth century. This battle of Korur may be the same as that of Multan, mentioned by Táránátha, 'S'riharsha abolished the teaching of the Mlechchhas by massacring them at Multán. Asanga

Harsha of Ujjayinî finally defeated the Mlechchhas in 544 A. D. and by throwing back the beginning of the new era 6×100 (or 10 × 60) before that date *i. e.* 56 B. C. Prof. Max Müller praises the architectionical genius of Mr. Fergusson and thinks that his theory will at last turn out to be correct.[1] Why, however, 600 years were added to the new era by Vikramâditya is beyond the ken of Mr. Fergusson. 'Nothing short of a contemporaneous document dated less than 600 of the Vikrama era, would upset Mr. Fergusson's theory ' says Max Müller.[2] The Kâvî inscription[3] discovered by Dr. Bühler which gives the date 430 of the Vikrama Samvat for its grantor Jayabhaṭa does not satisfy the Professor who strongly criticises it in his 'India, what can it teach us.'[4] But the several objections raised by him against the date given in that inscription[5] have been fairly refuted by Dr. Fleet. 'Whatever may be the case, ' continues Dr. Fleet, 'as regards the reading of the second numerical symbol and the computation of the details of the date, the fact remains that the first numerical symbol is undoubtedly 400 and that we have here a date which can only be referred to the fifth

---

and Vasubandhu were his contemporaries (900 p. B. N.); his predecessor was called Ganbhirapaksha, his successor S'îla, Ind. Ant. 1875, p. 365. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 282. Albirûni's India, Vol. II. chapter XLIX. p. 6. See also Buddh. Rec. Western World, Introduction, p. 99 *ff.* *ibid.* p. 16.

1. Prof. Max Müller's India what can it teach us, first edition, pp. 281-82. Prof. Weber's History of Sanskrit Literature, p. 203, footnote.

2. Prof. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 284.

3. Indian Antiquary, 1876, p. 152. Prof. Max Müller says that 'Prof. Bühler's remark has not escaped me ; but here again the reading of the figures is very doubtful, see Fleet, Indian Antiquary, 1876, p. 68, and Prof. Bühler himself admits now that there is no Samvat date on the plate.' Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 286, footnote.

4. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 286.

5. Indian Antiquary, 1876, p. 152.

century of the Vikrama era.'[1] And further on he gives a short summary of the arguments about the theory of the Gupta-era and Vikrama-era of Mr. Fergusson, and says that 'as regards the Gupta era, Mr. Fergusson took this opportunity of recording his impression (*id.* p. 285) that his view of it "would never have been considered doubtful, had it not been that the chronology of that period had hitherto been based almost exclusively on numismatic researches." And, in repeating his conviction (*id.* p. 281) that the commencement of the era was in A. D. 319, and (*id.* p. 270) that it was established in the reign of the Ândhra king Gotamîputra, he also now maintained (*id.* p. 271) that the era did not necessarily date from the accession of the king, or from his death, or from any specific event in his reign, but that, in order that dates in the new era might be easily convertible into the old era, the commencement of the new era was simply fixed by the expiration of four of Jupiter's Sixty-Year Cycles from the commencement of the S'aka era. In respect of his theory that the S'aka era was established by Kanishka, and of some others of his general results, I see no reason, at present, to dispute them, apart from the arguments on which they were based. But a few words seem necessary, in connection with the key-note to his whole paper, which is plainly to be recognized in his desire to find for the Vikrama era some origins other than its actual establishment in B. C. 57, and, according to tradition, by a king Vikrama or Vikramáditya, actually reigning at that time. He had already thrown out this suggestion in his previous paper. And now he claimed that, granting the correctness of his other conclusions, there could be found (*id.* p. 271) no direct evidence for the existence of a Vikram era in the first century, B. C., nor for a very long time afterwards; for so long, in fact that it was impossible to establish any connection between a king Vikrama and the original establishment of the era. Referring to two passages in the Rájatarangi*n*î one

1. Indian Antiquary. Vol. XII. 1883. p. 293.

of which[1] speaks of Prátápáditya, who was brought from another country to be crowned king of Kás'mîra, as a kinsman of a king Vikramáditya who, the book states, was wrongly thought by some to be the S'akári or ' enemy of the S akas,' and the other of which[2] states that, at the time of the death of

1. अथ प्रतापादित्याख्यस्तैरानीय दिगन्तरात् ।
विक्रमादित्यभूभर्तुर्ज्ञातिरत्राभ्यषिच्यत ॥ ५ ॥
शकारिर्विक्रमादित्य स इति भ्रममाश्रितैः । *Ràjatarangini*. II. 5-6, p. 34.
अन्यैरत्रान्यथालेखि विसंवादकदर्थितं ॥ ६ ॥ Bombay edition.

2. रक्षित्वा दशमासोनाः क्ष्मामेकत्रिंशतिं समाः ।
तस्मिन्क्षणे हिरण्योऽपि शांतिं निःसंततिर्ययौ ॥ १२४ ॥
तत्रानेहस्युज्जयिन्यां श्रीमान्हर्षापराभिधः ।
एकच्छत्रश्चक्रवर्ती विक्रमादित्य इत्यभूत् ॥ १२५ ॥
भूपमद्भुतसौभाग्यं श्रीर्विद्धुरभसाभजत् ।
विहाय हरिबाहूंश्च चतुरः सागरांश्च यं ॥ १२६ ॥
लक्ष्मीं कृत्वोपकरणं गुणे येन प्रवर्धिते ।
श्रीमत्सु गुणिनोऽद्यापि तिष्ठंत्युद्धुरकन्धराः ॥ १२७ ॥
म्लेच्छोच्छेदाय वसुधां हरेरवतरिष्यतः ।
शकान्विनाश्य येनादौ कार्यभारो लघूकृतः ॥ १२८ ॥
नानादिगन्तराख्यातं गुणवत्सुलभं नृपम् ।
तं कविर्मातृगुप्ताख्यः सर्वास्थानस्थमासदत् ॥ १२९ ॥

Hiranya also, after having governed the country during thirty-one years less ten months, died without leaving posterity. 124.

At the same time the Srîmat Vikramáditya, otherwise called Harsha, ruled in Ujjayinî, as Emperor of all India. 125.

The goddess S'ri served this king, who was blessed with unusual happiness, by attaching herself to him with pleasure, having, for him, abandoned the arms of Hari and the four Oceans. 126.

Making use of wealth as a means (of usefulness), he made the virtues flourish ; and thus, till this day, men of talent sit with their heads high in the midst of rich people. 127.

Having first destroyed the S'akas he made easy the burden of the work to Hari, who was to descend to the earth to exterminate the Mlechchhas. 128.

The Kavi, named Mátrigupta, went to see the lord of the world whose fame had extended to distant countries, and who was then seated in the midst of an assembly of accomplished men to whom he was always accessible. 129.

Râjataranginî. III. 124—129. p. 60.
Bombay edition.

Hiranya of Kás'míra, there reigned at Ujjain a powerful king Vikramáditya, who had the second name of Harsha, and who also had destroyed the S'akas ; and quoting also Albèrunî's explanation that the Vikramáditya who, according to the tradition given to him, conquered the S'akas a hundred and thirty-five years after the establishment of the Vikrama era, could not be identical with the founder of that era,—the conclusions at which he arrived were (*id.* p. 274) that the Vikramáditya who conquered the S'akas at the battle of Karûr, was Harshavikramáditya of Ujjain ; that his death took place about A. D. 550, and the battle of Karûr, in A. D. 544 ; that, about or before A. D. 1000, when "the struggle with the Buddhists was over, and a new era was opening for the "Hindu Religion," the Hindus sought to establish some new method of marking time, to supersede the Buddhist S'aka era of Kanishka ; that, the Guptas and the kings of Valabhi having then passed away, and having also been insignificant and of doubtful orthodoxy, in looking back for some name and event of sufficient importance to mark the commencement of a new era, they hit on the name of Vikramáditya, as the most illustrious known to them, and his victory at Karûr as the most important event of his reign ; and that then, since the date of that victory, A. D. 544,—was too recent to be adopted, they antedated the epoch by ten cycles of sixty years, thus arriving at B. C. 56 for their Vikrama era, and also, not content with this, devised another era, which they called the Harsha era, from the other part of his name, and the epoch of which was fixed in B. C. 456, by placing it ten even centuries before the date of the battle of Karûr. It is an actual fact, that the name of Vikrama does not occur in connection with the era of B. C. 57 until a comparatively late date. [1] But Mr. Fergusson's arguments are vitiated throughout by the undue reliance which he placed on the quasi-historical records of

1. I am not prepared, observes the learned doctor, to specify the exact date. But the 'Gyâraspur' or 'Gyárispur' inscription (*Archaeol. Surv. Ind.* Vol. X. p. 33. and Plate XI.) shows that the era was still known as the Málava era, in Central India, down to about A. D. 880.

the *Rājataranginī*. The early chronology of Kás'mîra has still to be fixed; and the means of adjusting it are to be found in A. D. 533 as the date of Mihirakula, who, according to the book itself, reigned in the eighth century B. C. And, if the date of Harsha-Vikramāditya of Ujjain is really dependent on the date of Hiranya of Kás'mîra it certainly cannot be placed as early as the sixth century A. D.'[1] And, after having taken a brief résumé of results of the work of preceding investigators such as Dr. Ordenberg, Mr. Thomas, Sir E. Clive Bayley, General Cunningham, Dr. R. G. Bhandarkar and Dr. A. F. R. Hoernle, the learned doctor arrives at the following conclusion.

The Mandasór Inscription of Málava-Samvat 529.[2]

"The summary that I have given above," observes the learned doctor, "will show sufficiently well the curious in-

---

1. Corpus Inscriptionum Indicarum, Vol. III., Introduction, pp. 55-56.

2. मालवानां गणस्थित्या याते शतचतुष्टये ।
त्रिनवत्यधिकेऽब्दानामृतौ सेव्यघनस्वने ॥ १९ ॥
सहस्यमासशुक्लस्य प्रशस्तेऽह्नि त्रयोदशे ।
मंगलाचारविधिना प्रासादोऽयं निवेशितः ॥ २० ॥
बहुना समतीतेन कालेनान्यैश्च पार्थिवैः ।
व्यशीर्यतैकदेशोऽस्य भवनस्य ततोऽधुना ॥ २१ ॥
स्वयशोवृद्धये सर्वमत्युदारमुदारया ।
संस्कारितमिदं भूयः श्रेण्या भानुमतो गृहम् ॥ २२ ॥
अत्युन्नतमवदातं नभःस्पृशन्निव [नभःस्पृशदिव] मनोहरैः शिखरैः ।
शशिभान्वोरभ्युदयेष्वमलमयूखायतनभूतम् ॥ २३ ॥
वत्सरशतेषु पंचसु विंशत्यधिकेषु नवसु चाब्देषु ।
यातेष्वभिरम्यतपस्यमासशुक्लद्वितीयायाम् ॥ २४ ॥
स्पष्टैरशोकतरुकेतकसिंदुवार-
लोलातिमुक्तकलतामदयन्तिकानाम् ।
पुष्पोद्गमैरभिनवैरधिगम्य नून-
मैक्यं विजृंभितशरे हरपू [धू] त देहे ॥ २५ ॥
मधुपानमुदितमधुकरकुलोपगीतनगणैकपृथुशाखे ।
काले नवकुसुमोद्गमदंतुरकान्तप्रचुररोध्रे ॥ २६ ॥

genuity that was displayed from time to time, in aiming at any settlement of the question rather than the correct one: and also the insufficiency of the arguments used in support of the true solution, even by those who perceived it. "

" But of course it may be claimed that, as long as M. Reinaud's translation of the statement regarding the circumstances under which the era of A. D. 319-20 or thereabouts was established, remained without correction, there was some-

---

शशिनेव नभोविमलं कौस्तुभमणिनेव शार्ङ्गिणो वक्षः ।
भवनवरेण तथेदं पुरमखिलमलंकृतमुदारम् ॥ २७ ॥

—when by (*the reckoning from*) the tribal constitution of the Mâlavas four centuries of years, increased by ninety-three, had elapsed ; in that season when the low thunder of the muttering of clouds is to be welcomed (*as indicating the approach of warmth again*);—on the excellent thirteenth day of the bright fortnight of the month सहस्य (पौष), this temple was established, with the ceremony of auspicious benediction.—And, in the course of a long time, under other kings, part of this temple fell into disrepair ; so now, in order to increase their own fame, the whole of this most noble house of the Sun has been repaired again by the munificent corporation ;—(this temple) which is very lofty (*and*) pure ; which touches the sky, as it were, with (*its*) charming spires ; (*and*) which is the resting-place of the spotless rays of the moon and the sun at (*their*) time of rising. Thus, when five centuries of years, increased by twenty and nine years had elapsed: on the charming second lunar day of the bright fortnight of the month तपस्य (फाल्गुन);—in the season when (कामदेव), whose body was destroyed by Hara, develops (*his number of five*) arrows by attaining unity with the fresh bursting-forth of the flowers of the As'oka and Ketaka and Sinduvára trees, and the pendulous Atimukta creeper, and the wild jasmine ;—when the solitary large branches of the Nagana bushes are full of the songs of the bees that are delighted by drinking the nectar ; (*and*) when the beautiful and luxuriant Rodhra trees swing to and fro with the fresh bursting forth of (*their*) flowers,—the whole of this noble city was decorated with (*this*) best of temples ; just as the pure sky is decorated with the moon, and the breast of (the god) शार्ङ्गिन् with the Kaustubha jewel.

thing to be said from the point of view that we had to deal with a mistake made by Alberúni, laying in a confusion between a true Gupta era, anterior to A. D. 319, used by Early Gupta kings themselves, and another Gupta era, or more properly a Valabhi era, with an epoch of A. D. 319-20 or thereabouts, established, whether used or not by some member of the Valabhi family; and that he was right in respect of the historical event, from which, as he appeared to assert, this latter era took its origin. And in default of definite evidence, settling the question one way or the other, perhaps the strongest argument against the views held by Mr. Thomas, General Cunningham, and Sir E. Clive Bayley, was to be found in the following anomalous position, which had occasionally been noticed more or less directly, but had never been disposed of. It was held by all that the Valabhî family came immediately after the Guptas. It was also held that in A. D. 318 or 319, some member of this family founded the city of Valabhî; and, in commemoration partly of that event, and partly of the Gupta rule having then ceased and the power having passed into his own hands, established the Valabhî era dating from then. And yet,—as it proved by, amongst other things, the fact that Bha*ttá*raka, the founder of the family, came only one generation before the year 207, the earliest date that we have in the era used in their own charters,—the founder of this era, and his successors, did not allow this era of their own, established under such memorable circumstances to supersede the Gupta era; but continued the use of the Gupta era for, in accordance with the three earlier starting-points given on page 32, f. above, respectively 205, 294, and 318 years at least, (as is shown by the Alînâ grant of S'íláditya VII., dated in the year 447), after the establishment of their own era ! This surely involves an improbability far greater than any other, of whatever kind, that can be imagined in connection with the whole subject. "

" In order to arrive at any prospect of a final settlement of the question, what was wanted was a date for one of the Early Gupta kings, recorded in some era, capable of identification, other than that which was specially used by them in their own inscriptions. This has now, at length, been found in my

new **Mandasôr inscription**, which, composed and engraved when the year 529 had expired from tribal constitution of the Mâlavas, gives us, through his feudatory Bandhuvarman, the date of the year 493, expired, of the same era, for Kumáragupta. "

" This was not the first instance that had been obtained of the use of this era, which may for convenience be called the Mâlava era. For, it is obviously identical with the era which is alluded to in the Ka*n*asva inscription [1] dated when the 795th year of the Málava lords had expired ; and is also mentioned, under the specific name of the Málava-Kála, *i. e.* ' the Malava era,' or ' the time of the Málavas,' in a fragmentary inscription at ' Gyâraspur ' or ' Gyárispur ' in Central India, dated when the 936th year had expired. [2] But though, in commenting on this latter inscription, General

---

1. Edited by Dr. Kielhorn in *Ind. Ant.* Vol. XIII. p. 162. ff. The date (from the published text ; p. 164 f., line 14 f.) runs—" संवत्सरशतैर्यातैः सपञ्चनवत्यर्गलैः सप्तभिर्मालवेशानां मंदिरं धूर्जटेः कृतम्,"—" (In the year that is denoted) by seven expired centuries of years, coupled with ninety-five, of the Málava lords, (this) temple of (the god) Dhúrja*ti* has been made."

2. *Archaeol. Surv. Ind.* Vol. X. p. 32 f., and Plate XI. The date, part of which is broken away, (from the Plate) runs :—" मालवकालाच्छरदां षट्त्रिंशत्संयुतेष्वतीतेषु नवसु शतेषु,—when nine centuries of autumns, joined with thirty six, have gone by, from (the commencement of) the Málava era (or, from the time of the Málavas)."—The counting of the era by autumns is followed also in line 21 of the Mandasôr inscription of Yas'odharman and Vish*n*uvardhana, of Málava Samvat 589 expired, No. 35, page 150. And it is worth noting, as being one of the points which identify the Málava era with the Vikrama era. It can hardly be doubted that the original scheme of the Vikrama years is the one commencing with the first day of the bright fortnight of Kártika (October-November). And Kártika is still the second month in the Hindu autumn according to the usual division of the six seasons. It seems, however, to be more properly the first autumn month, according to the true southern division of the seasons. And it appears also to have been the first month of a season, when the year was divided in ancient times, into only three seasons.

Cunningham expressed the opinion[1] that this Mâlava era must be the same as the era of Vikramâditya of Ujjain, commencing in B. C. 57, this point has not hitherto been capable of proof ; for the reason that neither of these two dates gave sufficient details for actual computation, or any other available grounds for historical identification. Nor does the Mandasór inscription, now brought to notice, furnish any details for calculation. But in its mention of Kumâragupta, it answers the purpose equally well. "

" Turning to the Gupta inscriptions and coins, the earliest and latest dates that we have for Kumâragupta, are, respectively, Gupta-Samvat 96 and 130 odd. The first is established by his well known Bilsá*d* pillar inscription, No. 10, page 42 ; and the latter, by one of General Cunningham's coins.[2] Lest, however, the coin-date should be looked upon as at all doubtful, we must note also his Mankuvâra inscription, No. 11, page 42, dated Gupta-Samvat 129. And, of these extreme dates, we may take Gupta Samvat 113 as the mean. "

"Applying this mean year to the various theories regarding the epoch of the Gupta era, it represents—(1) according to Mr. Thomas, A. D. 190-91 ; (2) according to General Cunningham, A. D. 279-80 ; (3) according to Sir E. Clive Bayley, A. D. 303-304 ; and (4) according to my own view, A. D. 432-33. "

" Next, applying to these figures the date of Mâlava-Samvat 493 expired, recorded for Kumáragupta in the inscription under notice, we find that the initial point of the Mâlava era must lie within a few years on either side of—(1) B. C. 301 ; (2) B. C. 214 ; (3) B. C. 190 ; and (4) B. C. 61-60. "

" The first three results, however, each entail the supposition of a brand-new era, hitherto unheard of, and entirely unexpected. At the same time, as regards the second possible result of about B. C. 214, we must not overlook the existence

---

1. *Archaeol. Surv. Ind.* Vol. X. p. 34.
2. *id.* Vol. IX. p. 24, and Plate V. No. 7.

of certain coins, found in large numbers at Nâgara in the north of Mâlvâ, about forty-five miles north of Kotâ, and originally brought to notice by Mr. Carlleyle,[1] which have on them the legend मालवानां जयः, "the victory of the Mâlava," in characters ranging, in General Cunningham's opinion, "from perhaps B. C. 250 to A. D. 250," These coins show that the Mâlavas existed, as a recognised and, important clan, long before the time when, as I consider, their "tribal constitution" which led to the establishment of their era, took place; and so also, in the other direction, does the mention of them in the Allâhâdâd pillar inscription, among the tribes subjugated by Samudragupta, show that, down to his time at least, they maintained tribal constitution and importance. And if we were compelled to have recourse to a new era, these coins might justifiably induce us to select, as its epoch, B. C. 223, the date fixed by General Cunningham for the death of As'oka;[2] which would make the date of Mâlava-Samvat 493 correspond with A. D. 270, or well on into the first decade of Kumáragupta's reign according to General Cunningham's theory. But this entails, as I have said, the supposition of the existence of an era, of which not the slightest indication has ever yet been afforded by the very numerous inscriptions that have now been examined from all parts of the country; and this is an expedient that must by all possible means be avoided. And, further, it forces the Kanasva inscription of Mâlava-Samvat 795, and the 'Gyâraspur' inscription of Mâlava-Samvat 936, back to respectively A. D. 572 and 713; periods to which, from their alphabets, they cannot possibly belong. And thus,—since, within certain limits, palæographical evidence must be followed,—it creates a palæographical difficulty that is insuperable. So also does the third result, to practically the same extent; and the first, to a still more marked degree."

"The fourth result, on the contrary satisfies all the palæographical requirements of the case. And it brings us so very

1. *id.* Vol. VI. pp. 165 f., and 174 ff.; see also *id.* Vol. XIV. p. 149 ff., and Plate XXXI. Nos. 19 to 25.

2. *Corp. Inscr. Indic.* Vol. I. Preface. p. VII.

close to B. C. 57, the commencement of the well-known Vikrama era,—which, by the tradition of later times, is closely connected with the country of the Mâlavas, through the name of its supposed founder, king Vikramâditya, whose capital, Ujjain, was the principal city in Mâlavâ,—that we are compelled to find in it the solution of the question, and to adjust the equation of the dates thus,—Gupta-Samvat 113 (the mean date for Kumâragupta) + A. D. 319-20 = A. D. 432-33 ; and Mâlava-Samvat 493—B. C. 57-56 = A. D. 436-37 ; which, of course, falls well within the seventeen years of Kumâragupta's reign, remaining after this mean date. "

" My new Mandasôr Inscription, therefore, proves— (1) that any statement by Albêrûnî that the Early Gupta power came to an end in or about A. D. 319, must certainly be wrong ;—(2) that, on the contrary, Kumâragupta's dynastic, dates,—and, with them, those of his father Chandragupta II., and his son Skandagupta, which belong undeniably to the same series; and also any others which can be shewn to run uniformly with them,—must be referred to the epoch of A. D. 319—20, or thereabouts, brought to notice by Albêrûnî and substantiated by the Verâvala inscription of Valabhî-Samvat 945 ;—and (3) incidentally, that under another name, connecting with the Mâlava tribe, the Vikrama era did undoubtedly exist anterior to A. D. 544, which, as we have seen, at page 55 above, was held by Mr. Fergusson to be the year in which it was invented. These results are, of course, independent of the question whether the Early Guptas established an era of their own, with the above-mentioned epoch, or whether they only adopted the era of some other dynasty. "

" The Determination of the exact epoch of the era, I have shewn, observes the learned doctor, so far, that the Early Gupta dates, and with them, any others that can be proved to belong to the same uniform series, are to be referred to the epoch of A. D. 319—20, or thereabouts, brought to notice by Albêrûnî and substantiated by the Verâwal inscription of Valabhî-Samvat 945. "

" It now remains to be shewn why, out of the three possible epochs of A. D. 318—19, 319--20, and 320--21, current, which appear. at first sight, to be deducible from Alberúní's statements, we have to select, as the true and exact epoch, that of A. D. 319–20, equivalent to S'aka-Samvat 241 expired. "

" This point is one that can be settled only by accurate calculations of the recorded dates, explained in detail, so that it may be seen that the process applied is satisfactory, and that the inferences drawn are correct. "

Thus, then, Mr. Fergusson's theory collapses and the tradition upon which our belief in the Vikramáditya of the first century B. C., really rests, is, in this instance. corroborated by a fact and also substantiated by a tradition of remote antiquity founded upon an astronomical data.[2]

(*b*) With regard to the second question it may be observed that there were many Vikramâdityas, not one only. For instance, the *Rájataranginí* makes mention of two Vikramádityas, who were the rulers at Ujjain. The first Vikramâditya, is referred to as having placed Pratápâditya one of his relatives,[3] and the second who flourished about 276 years after the first, as having placed Matrigupta, a great poet, upon the throne of Kâs'mîra.[4] The *Râjataranginî* mentions

1. Dr. Fleet's *Corpus Inscriptionum Indicarum* Vol. III. pp. 65 to 69.

2. Kathásaritságara 120. p. 651. Nirnayaságara edition.

3. *Ra'jataranginí*, II., verse 5, page 34, Bombay edition. See also the note on page 51 of this Introduction. Corpus Inscriptionum Indicarum. Vol. III. Introduction, page 55. Dr. Kern's Preface to Brihatsanhitá pp. 7, 8 and 14.

4. इति निश्चित्य चतुरं क्षपायामेव पार्थिवः ।
गूढं व्यसर्जयद्दूतान्काश्मीरीः प्रकृतीः प्रति ॥ १८८ ॥
आदिदेश च तान्यो वो दर्शयेच्छासनं मम ।
मातृगुप्ताभिधो राज्ये निःशंकं सोऽभिषिच्यताम् ॥ १८९ ॥
अथ प्राङ्मुखसौवर्णभद्रपीठप्रतिष्ठितः ।
सन्निपत्य प्रकृतिभिर्मातृगुप्तोऽभ्यषिच्यत ॥ २३९ ॥

Having taken this firm resolution, the king secretly sent messengers that very night to the Council of Kás'mira.

a third Vikramáditya also, who, it is determined, ruled over Kás'míra about 592 A. D.[1] The early chronology of Kâs'míra kings as given by Kahlana is unsettled, therefore the results that are to be deduced from it must be considered as incorrect and unworthy of belief. Vikramâditya was also a title assumed by many princes of the Châlukya Dynasty;[2] but it bears no connection whatever to our present inquiry.

(*c.*) But the third question is really germane to our present subject. Granting that the Vikramâditya, the enemy of the S'akas, flourished in the first century B. C., and was also the founder of the Samvat era, we possess no authoritative proof or a documentary evidence except the reliable tradition of remote antiquity founded upon an astronomical data and supported by

---

And the following order, viz:—" Let the person named Matrigupta, as soon as possible after he shows you this order, be installed king of Kás'míra.

Then Matrigupta was placed upon a magnificent seat of gold facing the east, and being surrounded by the principal authorities, he was installed king with the usual ceremony.

Ra'jatarangini, III. pp. 65, 70. Bombay edi. Dr. Bhau Daji's Essay on Kálidása, p. 38. Prof. Max Müller's India what can it teach us, first edi. p. 313. Dr. Kern's preface to Brihatsanhitá, p. 7. Rev. T. Foulkes of Bangalore also mentions a king named Vijayabáhu alias Vikramâditya II., of the Bâna dynasty who ruled over the western region of the Ândhra country. The name occurs in the copper-plate inscriptions of a grant of land to certain learned Bráhmanas of Udayendumangala. Indian Antiquary, 1884. Vol. XIII. p. 6. See also Indian Antiquary, 1872, Vol. I. p. 245.

1. विक्रमाक्रान्तविश्वस्य विक्रमेश्वरकृत्स्तुतः ।
तस्यासीद्विक्रमादित्यस्त्रिविक्रमपराक्रमः ॥ ४७४ ॥
राजा ब्रह्मगल्लूनाभ्यां सचिवाभ्यां समं मही ।
सोऽपासीद्वासवसमो द्वाचत्वारिंशतिं समाः ॥ ४७५ ॥
चक्रे ब्रह्ममठं ब्रह्मा गल्लूनो लूनदुष्कृतः ।
रत्नावल्याख्यया बध्वा विहारं निरमापयत् ॥ ४७६ ॥

Ra'jatarangini, III., p. 90. Bombay edition.

2. See Dr. Bhandarkar's Early History of the Dekkan, second edition, pp. 48 and 54; and also at pp. 56, 57, and the Genealogies of the Chálukya families given at pages 61 and 97 of the same.

Gu*nádhya*'s *Bri*hatkathá and other Purá*n*as. But the date whereof is also substantiated by the Mandasór Inscription of Dr. Fleet, the distinguished orientalist on this side of India. And thus the tradition, which now finds an independent support in the Mandasór inscription as mentioned before, should be considered as true historical fact founded upon a palæographical evidence. The story of the nine gems of poets, who, according to some, are said to have flourished in the court of this Vikramàditya rests simply on surmises and it is therefore unworthy of historical credence. The only work that connects the *Navaratnas* with the Vikramáditya of the first century B. C. is the *Jyotirvidâbharana* [1] bearing the name of Kálidása as its author. But Dr. Bhau Daji has well shown that the work is not the production of the author of the Raghuvans'a. [2] Ráva Bahadur S. P. Pandit calls it a pretty Jaina forgery. [3] Dr. Hall believes it to be not only pseudonymous but of recent composition; [4] and Dr. Kern concurs in his opinion. [5] The tradition that nine gems flourished at the court of a Vikramáditya is true according to some, because they say it is confirmed by an inscription found at Buddha Gayá, [6] a translation of which

1. See notes on page 46 of this Introduction.

2. Dr. Bhau Daji's Essay on Kálidása, p. 12.

3. Pandit's edition of Raghuvans'a, part III., preface. p. 29.

4. Wilson's translation of Vish*n*u Purà*n*a, edited by Dr. F. E. Hall, preface p. VIII. footnote.

5. Dr. H. Kern's preface to B*ri*hatsanhitá, p. 12 and p. 17.

6. History of Sanskrit Literature, p. 228; Prof. Weber says that 'this tradition is distinctly contradicted, in particular, by a temple-inscription discovered at Buddhagayá, which is dated 1015 of the era of Vikramáditya (*i. e.* A. D. 949), and in which Amaradeva is mentioned as one of the 'nine-jewels' of Vikramá's court, and as builder of the temple in question. This inscription had been turned to special account by European criticism in support of its view; but Holtzmann's researches (*op. cit.* pp., 26-32) have made it not improbable that it was put there in the same age in which Amarasinha's dictionary was written, seeing that both give expression to precisely the same form of belief, a combination, namely of Buddhism with Vishnuism—a form of faith which cannot possibly have continued very long in vogue, resting as it does on a union

is given by Ch. Wilkins; but the tradition that that Vikramáditya was the same as the Vikramáditya, the founder of the Samvat era, is without any foundation in fact. And the inscription itself is thought of doubtful character by some, because the text of the inscription in question is lost, with the stone on which it was incised. And some investigators even entertain grave doubts regarding its translation.

The objection which was raised against the first date based upon its style also holds good in this case.

III. Mr. Bentley on the authority of the Bhojaprabandha composed by one Ballâlamis'ra supposed the patron of learning to be the same as Rájâ Vikrama successor to Rájá Bhoja in the 11th century of the Christian era. [1]

Now although we may not concur in the opinion of Ráva Bahâdur Pandit that the Bhojaprabandha is a silly medley of absurd anachronisms, [2] still we must bear in mind

---

of directly opposite systems. At all events, inscription and dictionary cannot lie so much as 1000 years apart,—that is a sheer impossibility. Unfortunately this inscription is not known to us in the original, and has only survived in the English translation made by Ch. Wilkins in 1785 (a time when he can hardly have been very proficient in Sanskrit !): the text itself is lost, with the stone on which it was incised.' Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 327. Dr. Kern's preface to Brihatsanhitá, pp. 18–19. Asiatic Researches, Vol. I., p. 284. Dr. Fleet, in his Corpus Inscriptionum Indicarum, Vol. III. p. 274, gives a Bodh-Gayá inscription Mahánáman, the year 269. "संवत् २०० + ६० + ९ चैत्रसुदि ७ ॥" The year 200 (and) 60 (and) 9; (the month) Chaitra; the bright fortnight; the day 7. He says that 'the date of the present inscription has to be referred to the Gupta era, with the result of A. D. 588–89.' See also the 68th page of the same.

1. Dr. Bhau Daji's Essay on Kálidása, p. 6.

2. S. P. Pandit's edition of Raghuvans'a part III ; preface, p. 30. Dr. Hall's preface to Vásavadattá, p. 7. *and the footnotes.*

that there were many princes who bore the title of Bhoja;[1] besides this the kings of Ujjayinî might have been styled Bhojas[2] as Ferishtah does call S'ilâditya Pratápas'îla by that name.[3]

---

1. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, p. 7. Dr. Kern's preface to B*ri*hatsanhitâ, pp. 15, 16 and 20. Max Müller's India what can it teach us, first edition, pp. 284, 321 *note*, 331 *note*. Prof. Weber's History of Sanskrit Literature, pp. 195 *note*, 201, 202 *note*, 203, 215 *note*, 228, 230, 261. Dr. Hall's preface to Vásavadattá, pp. 7 *and the foot-note*, 8 *note*, 9 *note*, 19 *note*, 20 *note*, 21 &c. Dr. Bhandarkar's Early History of Dekkan, second edition, pp. 11, 12, 14, 41, 46, 81, 82.

2. See notes on Bhoja above.

3. *Rajâtarangini*, III. verses 330 and 331 ; p. 78, Bombay Edition. Dr. Hall's preface to Vásavadattá, p. 14 *note*. Prof. Weber's History of Sanskrit Literature, p. 214 *note*. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, pp. 14–18. Prof. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 289 and the foot-note. S'iláditya (Harshavardhanakumárarája), ruler of North India (उत्तरापथ) pp. 286, 297, 309, 317, 329 ; He is also called S'iláditya of Kányakubjya, p. 287. His true date, p. 288. S'ilâdityapratápas'ila, pp. 288, 313. He is also called Bhoja, p. 290. He was finally restored to the throne of Ujjayini, p 313. J. R. A. S. 1880, p. 278 *note*. Like Bhojas and Vikramádityas there were many S'ilâdityas. S. Beal's Buddhist Records of the Western World, Vol. I. pp. 210 n., 211 n., 213, 215–22; Vol. II. pp. 170, 174, 193, 198, 223, 234, 235 n. S'iláditya of Ujjayinî, Vol. I. p. 108 n. Vol. II. pp. 261, 267. S'iláditya VI. of Valabhi, Vol. II. 267 n. Corp. Inscrip. Indi. Vol. III. p. 171. S'iláditya VII. the year 447. Dr. Bhau Daji says that the S'iládityas have become as great a source of confusion in Indian chronology as the various Vikramádityas and Chandraguptas; and, to prevent repetition, we shall here remark that the oldest S'iláditya we read of in the Jaina records is the son of Subhagá, daughter of Deváditya Bráhma*n*a, of the village of Khatá in Gurjarades'a.

Subhagá became a widow in her childhood, but according to the chronicles of Gujarat (See A. K. Forbes's Rásamálá, Vol. I. p. 13), conceived afterwards by the Sun and gave birth to twins.

Col. Tod gives A. D. 555, A. D. 665, and A. D. 1044 for the first, second and third Bhojas respectively. [1] From this it is difficult to determine which of the three Bhojas is particularly alluded to, as they all appear to have been patrons of science.

The male child became renowned as S'iláditya. He destroyed the king of Valabhi and became the lord of Sauráshtra ; but was himself slain in the sack of Valabhi in A. D. 319 by the Mlechchhas or S'akas.

The second S'iláditya was of the Yadu family. He ruled over Sauráshtra at the commencement of the fifth century and has already been noticed.

The third S'iláditya is the one noticed by Col. Tod as having been killed at the sack of Valabhi by barbarians in A. D. 524 (" Annals of Rájasthána. " Vol. I. p. 217). Some important change appears undoubtedly to have occurred about this time in the Government of Valabhi, as the date appears undoubtedly to correspond with the establishment of the dynasty of the kings commencing with Bha*tt*árakasenápatî, brought to light in Mr. Wathen's Valabhi *copper-plate grants* (J. R. A. S. Vol. IV. p. 497.—Prinsep's Indian Antiquities, by Thomas, Vol. I. p. 252): their dates 365 and 380 being from the Valabhi, and not from the Vikramáditya Samvat, as hitherto supposed.

There are four S'iládityas noticed in these "*Grants*" as belonging to the dynasty. Harshavardhana of Kanauja, the patron of Bá*n*a and Hiouen-thsang, and the subject of a biography by both with extraordinary coincidence of facts, had, it appears, the title of " S'iláditya " and the Chinese pilgrim, also gives the title to a king of Malvá, who ruled about 60 years before this period (Gen. Cunningham's Ancient geography of India, p. 492). The " *Râjatarangini* " applies the title to the son and successor of Harshavikramáditya of Ujjain. This exhausts the list of " S'iláditya " known to us at present. See also Dr. Bhandarkar's Early History of Dekkan, second edition, p. 129.

1. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji., pp. 7-8. Col. Tod's Annals of Rájasthàna, Vol. I, p. 92 old edi.

IV. Professor Lassen assumes Kâlidâsa to have flourished in the second half of the second century after Christ,[1] at the court of Samudra-gupta, chiefly on account of the designation, 'Friend of poets', applied to that king in inscriptions.[2]

Now this date of Professor Lassen is based upon very insufficient evidence; since many other kings than Samudragupta have been described as 'Friends of poet;' as for instance S'ilâditya of Mâlvâ, Harshavardhana of Kanauj, or S'rî Harsha of Kâs'mîra.[3] According to Prof. Lassen's reasoning, Kâlidása might have lived as well in the reign of any of these princes as in that of his Samudragupta.

V. Col. Wilford, on the authority of the शत्रुञ्जयमाहात्म्य, a Jaina work composed by one Dhanes'varasúrî, places Kâlidâsa in the fifth century of the Christian era; and is followed by James Prinsep and H. H. Wilson. Thus writes Col. Wilford:—"In the शत्रुञ्जयमाहात्म्य[4] we read that after 466 years of the

---

1. Monier Williams, in his Indian Wisdom, page 494, fourth edition, says that 'Prof Lassen places Kálidása about the year 250 after Christ.'

2. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji. p. 7. Prof. Lassen's *I. Ak.* Vol. II. 451, 1158—1160. See also *I. St.*, Vol. II. 148, 415-417, of Prof. Weber. Corpus Inscriptionum Indicarum, Vol. III. p. 195. Alláhábád Posthumous Stone pillar inscription of Samudragupta. Speaking of this inscription Dr. Fleet says that 'the round monolith sandstone column, thirty-five feet in height, on which this inscription is, dates from the third century B. C., as is shown by the famous edicts of As'oka on it.'—

L. 5. "यस्य प्रज्ञानुषंगोचितसुखमनसः शास्त्रतत्त्वार्थभर्त्तुः ॥"

L. 5. Whose happy mind was accustomed to associate with learned people;—who was the supporter of the real truth of the scriptures.

3. See notes on page 51. Dr. Hall's preface to Vásavadattá, p. 15 *note*. See notes on page 61. Max Müller's India, first edi., p. 356.

4. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, pp. 14-18. Dr. Hall's preface to Vásavadattá, p. 11 *note*. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 282. Dr. Bühler, however, calls the शत्रुञ्जयमाहात्म्य 'a wretched forgery of the 12th or 14th century.' Dr. H. Kern's preface to Brihatsanhitá, p. 15. Wilford's statements about शत्रुञ्जयमाहात्म्य, As. Res. Vol. IX. p. 156. Prof. Weber's History of Sanskrit Literature, p. 214. Prof. Lassen, *I. Ak.*, Vol. IV. p. 761.

era are elapsed, then would appear the great and famous Vikramâditya; and then 477 years after him S'ilâditya or Bhoja would reign." The authority of this शत्रुञ्जयमाहात्म्य has been questioned by able antiquarians and investigators, therefore whatever conclusions drawn from this become useless for reasonable inquiry or investigation.

The era referred to in this passage is, as has been clearly shown by the late Dr. Bhau Daji, not of Vikrama, but of Vîra i. e. Mahávîra or Vardhamána, the last of the Jaina Tîrthankâras. Col. Wilford has confounded this Víra with Vikramáditya who is also called Vîra Vikrama. Prof. Wilson who assigns Kâlidása to the fifth century on the authority of the same शत्रुञ्जयमाहात्म्य is led into the same mistake as that of Col. Wilford and he besides incorrectly assumes S'ilâditya of the शत्रुञ्जयमाहात्म्य to be the same as the S'iláditya the son and successor of Vikramâditya of Ujjain. [1] Now there are as many S'ilâdityas as there are Vikramâdityas or Bhojas, [2] and the S'iláditya referred to in the above passage of the शत्रुञ्जयमाहात्म्य is a king of Valabhî who expelled the Buddhists from the Saurâshtra 477 years after Vikrama i. e. in 420 A. D. as we learn from the same work. [3]

It is then evident from the above that the शत्रुञ्जयमाहात्म्य does not help us in the least in the matter of fixing the date of either Vikramáditya or Kálidâsa.

---

1. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, pp. 14, 15, 16, 37. Asiatic Researches, Vol. XV., p. 39 and 87. See notes on pages 64-65.

2. See notes on pages 64-65.

3. See notes on page 66. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, p. 15. Prof. Weber's शत्रुञ्जयमाहात्म्य, p. 109, verse 286.

सप्तसप्ततिमब्दान्तामतिक्रम्य चतुःशतीम् ।
विक्रमार्काच्छिलादित्यो भविता धर्मवृद्धिकृत् ॥
सर्ग १४ श्लोक २८६ ।

4. The early traditions say that Kálidâsa the author of Raghuvans'a and S'akuntalá was in the court of the Vikramâditya who flourished in 57 B. C. Another writer, who assumes the litle of Kâli-

VI. The late Dr. Bhau Daji has tried to fix the first half of the sixth century [1] as the probable period during which Kálidâsa might have flourished; and in support of this view he has attempted to adduce several facts which are new, and various arguments which if not convincing may be considered worth deliberation. [2] This is the date which has been acquiesced in by some of the antiquarians of the present day; for instance, by Prof. Max Müller, [3] by Dr. Kern, [4] by Dr. Bhandarkar and by Mr. K. B. Páthaka. [5]

---

dása, is the author of S'atruparábhavagrantha an astrological work treating of favourable opportunities for action, by determining the predominance of " स्वर " or ' breath ' through the right or left nostril. The first and last verses are as follows:—नत्वा सुरासुरशिरोमणिरत्नरश्मि। चित्रीकृतांघ्रियुगुलं हरिमादिदेवं ॥ श्रीकालिदासगणकः स्वरशास्त्रसारं वक्ष्यामहं प्रबलशत्रुपराभवाख्यं ॥ १ ॥ आसीत्कश्यपवंशजोऽर्कतनयातीराधिवासो द्विजः। श्रौतस्मार्तविचारसारचतुरः श्रीभानुभट्टः सुधीः। तत्पुत्रोहरिभक्तिनिर्मलतनुर्ज्योतिर्विदामग्रणीः। शास्त्रं शत्रुपराभवाख्यमकरोच्छ्रीकालिदासः कविः ॥ २ ॥ Trans:—" I, Kálidása Ga*n*aka, after making obeisance to Hari, the Âdideva, whose joint feet are resplendent with the rays of jewels in the crowns of Gods and Demons, proceed to give the substance of Svara S'ástra, called S'atruparábhavagrantha." " Deeply versed in the knowledge of the S'rutis and the Sm*r*itis, and born in the race of Kas'yapa there lived on the banks of the Arkatanayá (Jumna) the talented Bhánubha*tt*a Bráhma*n*a. His son, whose body has been purified by devotion to Hari, is the poet Kálidása, the first among astrologers. He composed the S'ástra, called S'atruparábhava." And the third writer who assumes the title of Kálidása is the author of Jyotirvidàbhara*n*a, the wretched Jaina forgery. The 20th verse of the 22nd chapter runs thus:—" Having first composed three Kávyas *i. e.* Raghuvans'a and others, I compose several treatises on Vedic subjects (श्रुतिकर्मवाद); then from Kálidása proceeded the astrological treatise called Jyotirvidábhara*n*a.

1. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, p. 37.
2. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, pp. 19—48, and the notes thereon.
3. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 301, and the *note*, 307, 312.
4. Dr Kern's preface to B*r*ihatsanhitá of Varàhamihira, p. 20.
5. Dr. Bhandarkar's Early History of Dekkan, second edi , p. 12; and Dr. Bhandarkar, J. B. B. R. A. S. Vol. XIV, p. 24. See also Mr. Páthaka's edition of Meghadûta, Introduction, p. 10.

We shall try to arrange the materials which have been collected and brought to bear upon this date, in the following order.

(*a*) It has been said by some that Kàlidása was one of the nine gems that adorned the court of a Vikramáditya. Now the date of Varáhamihira has been discovered by the late Dr. Bhau Daji. [1] In a commentary on the Khandakhádya of Brahmagupta, an astronomer of 628 A. D. by Âmarája we have the following :—" नवाधिकपञ्चशतसंख्यशाके वराहमिहिराचार्यो दिवं गतः ॥ " Varáhamihirácharya went to heaven in the 509th year of the S'akakála, *i. e.* 587 A. D. [2] H. T. Colebrooke had already assigned to him the close of the fifth century of the Christian era from a calculation of the position of the colures affirmed as actual in his time by Varáhamihira. [3]

The date of Varáhamihira now being ascertained, the time of Kálidása, according to the theory of these antiquarians, and the other gems of the above verse and their patron Harsha Vikramáditya is also fixed. But as there is no positive proof or any documentary evidence to show that Kâlidâsa of the Raghuvans'a was a contemporary with Varàhamihira, the statement which contains the memorial verse becomes in fact in-

---

1. Dr. Bhau Daji's Essay on Kálidása, p. 45. Dr. Bhau Daji says that 'the latest and the most judicious writers on Hindu Astronomy have placed Varàhamihira about A. D. 570.' But in page 240 he says that 'he flourished after A. D. 505.' H. T. Colebrooke's Essays, Cowell's edition, Vol. II. p. 415. Prof. Weber's History of Sanskrit Literature, p. 254. J. R. A. S. Vol. I. (1864) p. 392.

2. Dr. Fleet's Corpus Inscriptionum Indicarum Vol. III. appendix I. p. 143. *Jour.* R. A. S. N.S. Vol. I. pp. 407, 392 (1864). Dr. Bhau Daji's brief notes on the Age and Authenticity of the works of Âryabha*t*a, Varâhamihira, Brahmagupta, Bha*tt*otpala, and Bháskarácharya, p. 240.

3. Dr. Bhau Daji's brief notes on the age and authenticity of the works of Âryabha*t*a, Varáhamihira, Brahmagupta, Bha*tt*otpala, and Bháskaráchárya, p. 239. H. T. Colebrooke's Essays. Vol. II, Cowell's edition, p. 434.

valid. Because Harshavikramâditya, who had established his own era, was a different king from Vikramâditya, the founder of the astronomical era which commenced in B. C. 57.

(*b*) It is stated in the *Rájatarangini* that when Hira*n*ya the ruler of Kás'míra died without issue, Harshavikramáditya of Ujjain appointed a poet named Mát*ri*gupta who had come to seek service at his court to the throne of Kâs'mîra.[1] Mât*ri*gupta ruled Kâs'mîra for four years and retired to Vârâ*n*asî as a यति, when Pravarasena II, the nephew of Hira*n*ya who had gone on a pilgrimage, returned to assume the throne.[2] Dr. Bhau Daji thought that this Mât*ri*gupta who was for a time ruler of Kâs'mîra was the great poet Kâlidása, and he supported his theory by the following reasons.

(1) There always has been a tradition that Vikramâditya was so pleased with Kálidâsa that he bestowed on this poet half of his territories.[3] But this, according to the chronicle of Kás'mîra, is applicable to Mát*ri*gupta and not to Kâlidása. Because both of these were poets of different ages as will be shown hereafter.

(2) Mât*ri*gupta is rather an appallation than a proper name and it conveys the same import as Kálidása. The "त्रिकाण्डशेष," a Sanskrit Vocabulary by Purushottama, gives रघुकार, मेधारुद्र and कोटिजित, as synonyms of Kálidâsa.[4] But this statement of the learned doctor does not go to prove that Mât*ri*gupta and Kâlidâsa were one and the same poets.

---

1. *Rájatarangini*, III. verses, 124, 125, 189, 239, pp. 60, 65, 70. Bombay edition. See our notes on pages 51, 60. Dr. Bhau Daji's Essay on Kálidása p. 21, verse 124. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 313.

2. *Rájatarangini*, III. Bombay edition, verses 287, 320, pp. 74, 77. Dr. Bhau Daji's Essay on Kálidása, p. 48. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 313.

3. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, p. 48. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 313.

4. The Literary Remain of Dr. Bhau Daji, p. 30. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 314.

(3) The *Rájataranginí* does not omit to notice the great Sanskrit poets in their respective historical periods. Thus it mentions Bhavabhúti[1] as patronised by Yas'ovarman of Kanoj. But it never mentions Kálidâsa. And how could it mention Kâlidása who flourished in the first century B. C. and was never contemporary with Harshavardhana of the sixth century, as will be shown hereafter.

---

1. कविर्वाक्पतिराजश्रीभवभूत्यादिसेवितः ।
जितो ययौ यशोवर्मा तद्गुणस्तुतिबन्दिताम् ॥ १४४ ॥

Rájataranginí IV. 144. Bombay edi. Dr. Bhandarkar's edition of Málatî-Mádhava, preface, page IX. In his report on the search for Sanskrit MSS. during the year 1883-84, page 15, Dr. Bhandarkar says:—" We learn from Rájas'ekhara's Prabandhakos'a that Âmarája converted by Bappabhatti was the son and successor of Yas'ovarman, king of Kanoj. A king of the name of Dharma, who was hereditary enemy of Âma, ruled over the Gauda country at that time, and Lakshanávatî was his capital. He had Vákpatirája a poet, in his service, who composed a Prákrita poem entitled Gaudavadha or Gaudavaho, after his patron had been killed by a neighbouring prince of the name of Yas'odharman. It would thus appear that Vákpatirája belonged to the next generation after Yas'ovarman, and I have given reasons in the introduction to my edition of Málatîmàdhava to believe that he belonged to the next generation after Bhavabhúti also. The *Rájatarangini* speaks of both the poets as having been patronised by Yas'ovarman, wherefore it must be concluded that Vàkpatirája first came into prominence in the latter part of his reign, while Bhavabhúti belonged to the first part.*****Yas'ovarman thus died between 807 and 811 of the era of Vikrama, *i. e.* about the year 753 A. D. Lalitáditya of Kás'mîra who subdued Yas'ovarman, reigned from 693 to 729 A. D. according to the chronology of the *Rájataranginí* as interpreted by General Cunningham by the use of the key furnished by Kalhana himself, *viz.* that S'aka 1070 corresponded with the Kás'mîra year 24. The date of Yas'ovarman's death now determined agrees well enough with this ; at least it does not furnish any reason for supposing an error in Kalhana's dates and applying a correction to them as General Cunningham afterwards did, though even the corrected date of Lalitáditya, 723—760 A. D., would be equally

(4) A Prâk*ri*ta poem called the Setukávya is described by its commentator to have been composed by Kálidása at the request of Rájá Pravarasena. An expression in the Vârá*n*asî-darpa*n*a of Sundara is explained by the commentator Rámás'rama to be an allusion to Kálidása who wrote the Setukávya. In a work on poetry called Prataparudra by Vidyánátha who was patronised by Prataparudra of Telinga*n*a about the end of the 12th century, an Aryá is quoted from the 'Setukávya' which is styled a "महाप्रबंध." Dandin praises the poem although written in Prák*ri*ta as an 'ocean of the jewels of beautiful sentences'. The work is alluded to in the Sáhitya Darpa*n*a or Mirror of Composition. The *Rájatarangini* states that Pravarasena had constructed a bridge of boats across the Vitastá (Hydaspes) on which the capital of Kás'mîra was then situated. The construction of this very bridge is the subject of the Setukávya.[1] Bá*n*a's notice of Pravarasena and the Setukávya confirms the correction of the assertion of the commentator of the Setukávya that the poem was composed at the request of that king.[2]

---

consistent with it. And Bhavabhúti must be referred to the last quarter of the seventh century and the first of the eighth." See also Pandit's edition of Gau*d*avadha, Introduction, p. LXIX, and *note*. In गउडवहो, p. 221, are the following :—

भवभूइजलहिणिग्गयकव्वामयरसकणा इव फुरन्ति ।
जस्स विसेसा अज्जवि वियडेसु कहाणिवेसेसु ॥ ७९९ ॥

com.— भवभूतिजलधिनिर्गतकाव्यामृतरसकणा इव स्फुरन्ति ।
यस्य विशेषा अद्यापि विकटेषु कथानिवेशेषु ॥ निबन्धेष्विति क्वचित्पाठः ॥

See also Dr. Bhau Daji's Essay on Kálidása, p. 37.

1. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, pp. 39—40. Also *Râjatarangini*, III. Bombay edition, p. 80, verse 354:—

" वितस्तायां स भूपालो बृहत्सेतुमकारयत् ।
ख्याता ततः प्रभृत्येव तादृङ्नौसेतुकल्पना ॥ ३५४ ॥

Max Müller's India what can it teach us, first edition, pp. 314-315.

2. Introduction to Harshacharita :—

कीर्तिः प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्ज्वला ।
सागरस्य परं पारं कपिसेनेव सेतुना ॥

Dr. Bhau Dáji himself, however, justly brought forward some objections against his identification of Mát*ri*gupta and Kálidása. Kálidása, he remarks, was a Sárasvata Bráhma*n*a, (the learned doctor has not given any proofs for this assertion) a worshipper of S'iva and Párvatî while Mát*ri*pupta as ruler of Kás'mîra appears from the *Rájatarangini* to have conciliated the Buddhists and Jainas by prohibiting the destruction of living beings.[1] He also pleased the Vaish*n*avas by constructing a temple to Vish*n*u, and the deities invoked in the Setukávya are first Vish*n*u and then S'iva.[2] This, in the

---

निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु ।
प्रीतिर्मधुरसार्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते ॥

Trans. The glory of Pravarsena, bright as the white lotus extended beyond the ocean by means of the Setu (Kàvya), just as the monkey army crossed the ocean by the Setu (bridge).

Who is not enraptured with the sweet and good diction of Kálidása, ? as in clusters of flowers moist with honey.

See also Dr. Bhau Daji's Essay on Kálidása p. 40. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 315.

1. *Ra'jatarangini*, III, Bombay edition, p. 71, verses 255-258. The Literary Remains of Dr. Bhau Dáji, pp. 38-39.

2. The poem opens (*i. e.* the first four verses) with the praise of the god Madhumathana (The *Rájatarangini*, III. p. 72, verse 263 runs thus:—स मातृगुप्तस्वाम्याख्यं निममें मधुसूदनं। कालेनादत्त यद्ग्रामान्मम्मः स्वसुरसद्मने ॥) ; and the next four verses invoke the blessings of S'iva. The god Madhumathana of the Setubandha and the god Madhusûdana of the above verse of the *Rájatarangini* appear to be one and the same deity. The Nir*n*ayaságara edition says that the author of Setubandhakávya was the king Pravarasena and not the author of Raghuvans'a, and hence the authorship of Kálidása to Setukávya becomes doubtful. The colophon runs thus:—
महाकविश्रीप्रवरसेनमहीपतिविरचितं (दशमुखवधापरनामकं) सेतुबन्धम् ॥
Dr. Bhau Daji says:—" Mát*ri*gupta in Kás'mîra is said in the *Rájatarangini* to have established the worship of Madhumathana or Vish*n*u under the name of " Mát*ri*guptasvámí, " and this is the only circumstance that creates a shade of doubt in our mind respecting the identity of Mát*ri*gupta with Kálidása, who, in his extant works always invokes S'iva, and otherwise, appears to have been a devout S'aiva. "

opinion of Professor Max Müller, however, is no serious objection; for such was the character of that time that men like Mát*ri*cheta [1] began as worshippers of S'iva and then became Buddhists and like Lalitáditya erected statues to Buddha and Vish*n*u. [2] What troubles the Professor is that Mát*ri*gupta is spoken of in the *Rájatarangini* as a poet and yet never identified with the famous author of the S'ákuntala. It then looks improbable that Kalha*n*a Pandit who is so well acquainted with the literary history of his country should have told the extraordinary career of Mát*ri*gupta without even giving a hint that this poet, raised to the throne of Kás'mîra, was the famous Kálidása? [3]

The above statement leaves the identification of Mát*ri*gupta and Kálidâsa doubtful, and it does not, in our opinion, clearly establish the connection of Kálidása with the Setukávya and with Pravarasena II king of Kás'mîra. Mát*ri*gupta then might have been a different poet and might also have been, according to the chronicles of Kás'mîra, first patronized and afterwards raised to the governorship of Kâs'mîra by Harshavardhana of Kányakubja.

Again Kshemendra in his Auchityavicháracharchá or Auchityálamkára quotes the verse "शीतेनोद्धूषितस्य &c.," as from Karpa*t*ika which Kalha*n*a in his Ràjatarangi*n*î (III. 181) puts into the mouth of the poet Mát*ri*gupta, who is there said to have composed it impromtu, in reply to the king's enquiry as to why he alone of all the palace servants was not asleep. "Its appearance," observes the learned doctor, "here is

---

1. Prof. Max Müller says:—'Thus I-tsing tells us that Mát*rik*eta, who in his youth worshipped Mahes'vara, became later in life a follower of Buddha and composed 400 hymns, and aftewards 150 hymns.' India what can it teach us, first edition, pp. 302, 315 *note*. See preface under Vallabha, *note*, p. 11.

2. Max Müller's India what can it teach us, first edi. pp. 307, 315 *note*.

3. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 315 *note*.

noteworthy.[1] Kshemendra in another passage of this small book quotes Mât*ri*gupta by name. It is impossible, I think, to say whether we are to take Karpa*t*ika as the real name of the author of one of the works which are summarised for us in the Rájatarangi*n*î or as a synonym of Mát*ri*gupta, referring to his condition as a suppliant for the king's favour. The verse occurs also in Vallabhadeva's Subháshitâvali, where it is ascribed to Mát*ri*gupta."[2] And further on Kshemendra quotes some verses from the Raghuvans'a and the Vikramorvas'îyam and distinctly ascribes them to Kâlidása. He also quotes the following verse from Mât*ri*gupta :—"नायं निशामुखसरोरुहराजहंसः कीरीकपोलतलकान्ततनुः शशांकः। आभाति नाथ तदिदं दिवि दुग्धसिन्धुडिण्डीरापिण्डपरिपाण्डु यशस्त्वदीयम् " ॥ He does not, it appears, ascribe it to Kâlidása. Dr. Peterson says " note that Kshemendra would seek to distinguish between Mât*ri*gupta and Kâlidâsa. Compare Max Müller's ' India : what can it teach us ? ' first edition, p. 133. " Thus the existence of a poet Mât*ri*gupta is vouched for by Kshemendra, who in his Auchityavichâracharchá has quotations from both Mât*ri*gupta and Kâlidâsa.[3] Kshemendra also quotes two verses from Setubandhakâvya on his Auchityâlamkâr and ascribes them to Pravarasena. These verses occur in his Setubandha (I. 2, and III. 20) From this it is clear that Kshemendra ascribes the Prâk*ri*ta poem of Setubandha to the king Pravarasena and not to the author of the Raghuvans'a.[4] It is again evident that at the time when Kshemendra wrote his work on Alamkära, the works of Mát*ri*gupta, Pravarasena and also those of Kâlidâsa were extant in India and that he chose the verses in illustration of his Alamkâras from the respective works of the above-mentioned poets.

---

1. Dr. Peterson's paper on the Auchityálamkâra of Kshemendra, p. 21.

2. Dr. Peterson's edition of the Subháshitávali, Introduction, p. 89. Also his paper on the date of Pata*n*jali, p. 21.

3. Dr. Peterson's paper on the date of Pata*n*jali, p. 28. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 133.

4. Dr. Peterson's paper on the date of Pata*n*jali, p. 27.

There is a commentary on the S'akuntalá by Rághava Bhatta, son of Prithvîdhara of Vis'ves'varapattana (Benares) in which he distinctly quotes Mátriguptácharya with reference to the characteristics of dramatic composition. [1]

(*c*) The fourteenth verse of the Meghadûta and especially the last line [2] of it affords, according to these investigators, another datum for fixing the time of Kâlidása. The verse bears, according to Mallinátha, two senses, one expressed and the other implied or 'suggested' in the language of the Alankárists. There is nothing particular in this verse bearing a double sense, as the works of Kálidása, Kumáradása and As'vaghosha abound with verses and the Meghadúta itself contains many other verses of a similar nature. Now Mallinátha in the implied sense of the verse, discovers a pointed allusion of Kâlidâsa's words ' Nichula ' and ' Dinnága ' to two men who were the contemporaries of Kálidása, one, an intimate friend of his and the other his adversary. [3] But how much reliance could be made

---

1. See Dr. Peterson's edition of Subhâshitâvali, p. 89 and the verse of Mâtrigupta as quoted there. The Literary Remains of Dr. Bhau Daji, pp. 36-37 *note.* " Throughout the commentary, " observes the learned doctor, " we meet with 17 verses, which, from their style appear to be the production of a great poet, and are not perhaps unworthy of Kálidâsa. One S'loka is quotated second-hand from Bhámaha, a commentator on the " Prâkritaprakàs'a, " who again quotes it from the " Hayagrîvavadhanátaka ".

हयग्रीववधं मेण्ठस्तस्मै दर्शयन्नवम् ।
आसमाप्ति ततो नापत्साध्वसाध्विति वा वचः ॥ २६० ॥
अथ ग्रथयितुं तास्मिन्पुस्तकं प्रस्तुते न्यधात् ।
लावण्यनिर्याणभिया तदधः स्वर्णभाजनम् ॥ २६१ ॥
अन्तरज्ञतया तस्य तादृश्या कृतसत्कृतिः ।
भर्तृमेण्ठः कविर्मेने पुनरुक्तं श्रियोऽर्पणम् ॥ २६२ ॥

Rájatarangin, III. p. 72. Bombay edition. Max Müller's India what can it teach us, first edi. p. 314 *note.*

2. दिङ्नागानां पथि परिहरन्स्थूलहस्तावलेपान् ॥ १४ ॥

3. See Mallinátha's commentary on the 14th verse of the Meghadùta. Max Müller's India what can it teach us, first edi. pp. 306-307. Dr. Bhau Daji's Essay on Kálidása p. 49.

on this vague and groundless assertion of Mallinátha I leave public to decide. Because about Nichula nothing absolutely is yet transpired except that the lexicon S'abdár*n*ava recognises Nichula as a proper name, being that of a poet. We are not prepared to put implicit faith in the assertion of mere S'abdár*n*ava unless it is supported by ancient lexicographers such as Kshîrasvámin and others and unless it is substantiated by a palæographical evidence. Hemâdri, one of the most intelligent interpreters of Kâlidása, does not support this sense. We, therefore, reject the interpretation on the ground that the stanza in question does not at all convey the implied sense although it is suggested by an able scholiast. But Di*n*nága or more properly Di*n*nágáchárya [1] is a celebrated name in the Pramá*n*a S'ástra or Sanskrit logic.

From the life of Bhagavat Buddha by Ratnadharmarája (a Tibetan work) that Di*n*nága and Dharmakîrti were the pupils of the Buddhist Ârya Asanga [2] in Pramá*n*a that is logic.

Again we learn from Váchaspatimis'ra's Nyáyavártikatátparya*t*îká that Uddyotakaráchárya composed his Nyáyavártika, a commentary on Pakshila Svámin's Nyáyabháshya in order to clear away the erroneous interpretations of Di*n*nága and others. [3]

---

1 Max Müller's India what can it teach us, first edi., p. 307. Dr. Bhau Daji's Essay on Kálidása, p. 49. Prof. Weber's history of Sanskrit Literature, p. 209 *note*. Prof. Cowell's preface to the Kusumâ*n*jali, p. VII. S. P. Pandit's preface to the Raghuvans'a, part III. p. 68. Dr. Hall's preface to Vásavadattâ, p. 9. J. B. B. R. A. S. Vol. XVIII. pp. 229-330. J. B. B. R. A. S. Vol. XVII. p. 51.

2. Prof. Max. Müller's India what can it teach us, first edition, pp. 304, 305, 309, 311.

3. अथ भगवताक्षपादेन निःश्रेयसहेतौ शास्त्रे प्रणीते, व्युत्पादिते च भगवतापक्षिलस्वामिना, किमपरमवशिष्यते यदर्थं वार्तिकारंभ इति शंकां निराचिकीर्षुः सूत्रकारोक्तप्रयोजनानुवादपूर्वकं वार्तिकारंभप्रयोजनं दर्शयति ‘ यदक्षपादः ’ इति । यद्यपि भाष्यकृता कृतव्युत्पादनमेतत्तथापि दिङ्नागप्रभृतिभिरर्वाचीनैः कुहेतुसंतमससमुत्थापनेनाच्छादितं शास्त्रं न तत्त्वनिर्णयाय पर्याप्तमित्युद्योतकरेण स्वनिबन्धोद्योतेन तदपनीयत इति प्रयोजनवानयमारंभः ॥ Cowell's preface to Kusumánjali, p. VII.

This shows that Uddyotakàra was the contemporary or immediate successor[1] of Di*n*nága and that Di*n*nága as befitting a pupil of the Buddhist logician Asanga was an authority on logic.

---

1. In his paper read before the society Mr. Páthak says that "the works of Prabháchandra and Vidyânanda place at our disposal a mine of useful information. Prabháchandra mentions, among other authors, Bhagavánupavarsha, Di*n*nága, Uddyotakara, Dharmkîrti, Bhart*ri*hari, S'abarasvámin, Prabhákara and Kumárila. All these authors, with the exception of Bhagavànupavarsha, are quoted by Vidyánanda. Bhagavánupavarsha, S'abarasvámin, Dharmakîrti, and Kumárila are also referred to by S'ankarácharya. The अष्टसहस्री represents Kumárila as refuting the views of Dharmakîrti and Prabhákara. From this circumstance we infer the chronological priority of the two last mentioned authors to Kumárila. Vàchaspatimis'ra says that Di*n*nága is refuted by Uddyotakara; and according to the Jaina श्लोकवार्तिक, Uddyotakara himself is attacked by Dharmakîrti.

In his paper on the Nyáyabindu*t*íká, Dr. Peterson says that "in the Jesalmîra fragment there is an interesting reference to Kumárila's critique of Di*n*nága. The writer asserts that when Kumárila rejects mental preception as that had been established from the scriptures (आगमसिद्ध) by Di*n*nága it was because he did not understand Di*n*nága's definition." This critique of Di*n*nága occurs in Kumárila's श्लोकवार्तिक, chapter on प्रत्यक्ष. There is another reference to Di*n*nága in the same work :—

वासनाशब्दभेदोत्थविकल्पप्रविभागतः ।
न्यायविद्भिरिदश्चोक्तं धर्मादौ बुद्धिमाश्रिते ॥ १६७ ॥
व्यवहारानुमानादेः कल्प्यते न बहिःस्थिते ।
अस्तीदं वचनं तेषामिदं तत्र परीक्ष्यताम् ॥ १६८ ॥

न्यायविद्भिरिति । न्यायविद्भिर्हि दिङ्नागाचार्यैरिदमुक्तं । सर्व एवायमनुमानानुमेयव्यवहारो बुद्ध्यारूढेन धर्मधर्मिन्यायेन न बहिःसत्वमपेक्षत इति । एतदपि दूषयति ।

In this passage Sucharitamis'ra says, Kumârila applies the expression न्यायविद्भिः to Di*n*nâgâchárya. It is obvious, therefore, that the Buddhist author of the Jasalmîra fragment and the Brahmanical commentator Sucharitamis'ra are unanimous in holding that Di*n*nâga is criticised by Kumârila. In his chapter entitled the शून्यवाद the Mîmânsaka controverts the Buddhist view denying the

Now Uddyotakara and Dharmakîrti are mentioned by Subandhu in his Vásavadattá, the former by name and the latter, by the name of Bauddhasangati, which, the commentator says, is the name of a work of Dharmakîrti.[1] Subandhu again is quoted by Báṇa at the beginning of the Harshacharita,[2] who flourished in the first half of the seventh century (607—648 A. D.).

From Táránátha's 'History of Buddhism' we learn that Ârya Asanga was the elder brother and teacher of Vasubandhu.[3]

Hiouen-thsang tells us that Vasubandhu and his teacher Manorhita were the contemporaries of Vikramáditya of S'rávastî[4] (probably his northern residence).[5]

---

existence of the soul as distinct from the intellect. In explaining this part of the श्लोकवार्त्तिक, Sucharitamis'ra frequently cites the well-known verse of Dharmakîrti which is quoted by S'ankara and Sures'vara (or मण्डनमिश्र), and thus leads us to infer that Dharmakîrti as well as Diṅnága is criticised by Kumárila. This view is corroborated, as we have seen, by Vidyánanda who in the अष्टसहस्री represents Kumárila as refuting a verse of Dharmakîrti.

These facts enable us to fix the chronological order in which Diṅnága, Uddyotakara, Dharmakirti, Bhartṛihari and Kumàrila flourished. Each of these authors lived prior to the one named next after him." J. B. B. R. A. S. Vol. XVIII. pp. 229-230.

1. न्यायस्थितिमिवोद्योतकरस्वरूपां बौद्धसंगतिमिवालंकारभूषिताम् ॥ २३९ ॥ बौद्धसंगतिमिवालंकारो धर्मकीर्तिकृतो ग्रन्थविशेषस्तेन भूषिताम्. Hall's Vásavadattá, p. 235, and the commentary. See also the preface p. 9 of the same. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 308.

2. Introduction to Harshacharita :—

कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया ।
शक्त्येव पाण्डुपुत्राणां गतया कर्णगोचरम् ॥

Dr. Hall's preface to Vàsavadattá, p. 18. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 308.

3. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 303. Táránátha's History of Buddhism, p. 118.

4. Max Müller's India what can it teach us, first edi. p. 302.

5. Pandit's preface to गउडवहो, p. CXI, *note*, also p. CXXVIII note of the same. Buddhist Records of the Western World, Vol. I. p. 106 *note*.

Thus Hiouen-thsang speaks of a king Vikramáditya. "The king Vikramáditya of the country of S'rávastî was of wide renown. He ordered his minister to distribute daily throughout India five lákhas of gold coin. He every where supplied the wants of the poor, the orphan and the bereaved." "This Vikramáditya once summoned an assembly of the Shamans (श्रमणाः) and the heretics (Bráhma*n*as) in which Manorhita was defeated by the 'heretics' rather by noise than by argument. Manorhita ashamed to see himself thus treated by the people bit out his tongue and wrote a warning to his disciple Vasubandhu saying "In the multitude of partisans there is no justice ; among persons deceived there is no discernment." Having written this he died.

"A little afterwards Vikramáditya lost his kingdom and was succeeded by a monarch" S'ilâditya Pratápas'îla of Ujjain who widely patronised those distinguished for literary merit. Vasubandhu wishing to wash out the former disgrace came to the king and said "Mahárâja, by your sacred qualities you rule the empire and govern with wisdom. My old master Manorhita was deeply versed in the mysterious doctrine. The former king from an old resentment deprived him of his high renown. I now wish to avenge the injury done to my master. The king knowing that Manorhita was a man of superior intelligence approved of the noble project of Vasubandhu. He summoned the heretics who had discussed with Manorhita. Vasubandhu, having exhibited afresh the former conclusions of his master, the heretics were abashed and retired."[1]

Now if we can fix the dates of *this* Vikramáditya (not the founder of the Samvat era) and Asanga or Vasubandhu we can also fix that of Di*n*nága who, according to Mallinátha and these investigators, was a contemporary of Kâlidâsa. Again, Hiouen-thsang (629-645 A. D.) says that sixty years before his time the throne was occupied by S'ilâditya Pratá-

1. Buddhist Records of the Western World. Vol. I. pp. 106—109.

pas'ila.[1] So that his reign, according to Dr. Fergusson,[2] ends in 580 A. D. He ruled, according to Ferishtah, fifty years 530-580, and was preceded by Vikramàditya whose reign would accordingly have ended in 530.

Again the Tibetan chronicler Ratnadharmaràja says that 900 years after the death of Buddha there appeared Ârya Asanga and Vasubandhu.[3]

Hiouen-thsang states that As'oka flourished 100 years after Nirvána. Now the date of As'oka is known to be 263-229 B. C.[4] Asanga and Vasubandhu thus appeared to have lived

---

1. Buddhist Records of the Western World. Vol. II. p. 261. Gen. Cunningham's Ancient Geography of India. p. 492.

2. Max Müller's India what can it teach us, first edition, pp. 288-289, and the *note*. Journal of the Royal Asiatic Society, 1880, p. 278, *note*. In a note of the Buddhist Records of the Western World, Vol. I. p. 106, Rev. S. Beal says:—" Manorhita is placed under Vikramádityaharsha of Ujjain, and therefore lived about the middle of the 6th century A. D., according to Max Müller's *India*, first edition, p. 290. This is supposed to be the same as Vikramáditya or Harsha of Ujjain, according to Dr. J. Fergusson and Prof. M. Müller, the founder of the usual Samvat era, 56 B. C. The Chinese equivalent for his name is *chaoujih*, or " leaping above the sun, " or, " the up-springing light, " " the dawn. " As to the mode in which this era of Vikramáditya might have contrived, see Fergusson (J. R. A. S. N.S. Vol. XII. p. 273). The starting-point from which these writers suppose it came into use is 544 A. D. The expression of Vikramáditya of S'rávasti, is the same as Vikramâditya of Ayodhyá, where we are told (Vassilief, p. 219) he held his court. The *town* of S'rávastî was in ruins even in Fahian's time (chap. XX).

3. Max Müller's India, first edition, p. 305.

4. In his India what can it teach us, first edi., p. 306, Professor Max Müller says:—"We had placed Vikramáditya in the first half of the sixth century, about 100 years before Hiouen-thsang. If then we remember that Kanishka's birth is placed 400 years and Asanga 900 years after Buddha's death (see also Wassiljew, Buddhismus, p. 52), we find an interval of 500 years between Kanishka and Asanga. And if we are right in placing Kanishka's coronation 78

541 A. D. And Diṅnága the celebrated pupil of Vasubandhu must have lived about the same time. Thus all the above-mentioned statements or assertions made by these investigators, more or less support, according to them, their theory and go to prove the end of the fifth and the beginning of the sixth century to be the probable time in which Kálidása might perhaps have lived. But of this, however, furtheron.

A. D., we should get for Asanga and Vasubandhu about the second half of the sixth century, that is, nearly the same date at which we arrived before, on the evidence supplied by Hiouen-thsang." And further in the notes he says :—" This is a very common date for Kanishka with the Northern Buddhists, whether of his birth or of his coronation, may sometimes seem doubtful (Hiouen-thsang, II, 172). If we take 78, the beginning of the S'aka era, as the date of Kanishka's coronation (अभिषेक), the initial date of Buddha's Nirváṅa would have to be placed not as a real event, but for the purpose of chronological calculation only, at about 322 B. C. Párs'va and Vasumitra would belong to the same period as Kanishka.

According to the same chronological system, As'oka is placed 100 years after Buddha's Nirváṅa (Hiouen-thsang, II, p. 170), *i. e.* 222 B. C., and this, if I am right in my rectification of the chronology of the Southern Buddhists, is the real date of his death (Dhammapada, Introduc. p. XXXIX).

Again, the king of Himatala, who defeats the Kritiyas, who are enemies of Buddhism, is placed 600 after Buddhanirváṅa, *i. e.* 278 A. D. (Hiouen-thsang, II, p. 179).

Hiouen-thsang is fully aware of the existence of three different eras. He says that some place the Nirváṅa 1200 years ago (about 560 B. C.), others 1500 years ago (about 860 B. C.), but, he adds, some assert that more than 900 and less than 1000 years have now elapsed since Buddha's Nirváṅa. These were no doubt the authorities who placed Kanishka 400 years after the Nirváṅa, and Hiouen-thsang himself, about 960 years after Buddha (Hiouen-thsang, I, p. 131). Wassiljew (Buddhismus, p. 52) states from Tibetan sources that after the death of Gambhîrapaksha (p. 282. n.), the patron of Asanga (900 post Buddhanirváṅa) S'rîharsha was the most powerful king in the west of India, and was succeeded by his son S'íla. It is curious to observe that in Tibetan literature Buddha's birth is supposed to have happened not long be-

And the above-mentioned results, according to *their* theory, can be gathered from the following table :—[3]

—550. Vikramáditya Harsha of Ujjayinî.

531-579. Khosru Nushirvân and Barzôi.

544. Battle of Kârur, 600 after 56 B. C., era of Vikrama.
Siddhasena Sûri, a Jaina, helps in reckoning the era.

544. Mât*ri*gupta, ruler of Kás'mîra, contemporary of Bhart*ri*me*nth*a.
Kálidása, (perhaps) contemporary of Di*n*nága, Vasubandhu, and Asanga.
,, mentioned with Bhâravi in inscript. 634 A. D.
,, his Setukávya praised by Dandin (6th cent.)
,, quotes Bhása, Saumilla.
Varáhamihira, died 587.
,, quotes Âryabha*ta*,born 476.
,, ,, Romaka-siddhánta by S'rîshe*n*a, 505, based on लाट, वसिष्ट, विजयनंदी &c.
,, ,, Paulis'a-siddhânta by Paulus al Yunâni.
,, ,, Vasish*th*a-siddhánta by Vish*n*uchandra.
,, ,, Saurasidhánta.
,, ,, Paitámaha-siddhânta ; also Satyabhadanta, Bádaráya*n*a, &c.
Amarasinha, translated into Chinese 561-566.
Jish*n*u, father of Brahmagupta (born 598).

---

fore the birth of confucious (J. B. B. R. A. S. 1882, p. 100). It might be well to distinguish the Southern Buddhist era by p. B. S. from the Northern Buddhist era, p. B. N." See also Dr. Bhandarkar's Early History of the Dekkan, second edition, p. 14 and also pp. 26-27 *notes* of the same. See Prof. Cowell's preface to Buddhacharita, p. V.; also sacred Books of the East, Vol. XIX. Introduction, p. XXXI., also sacred Books of the East, Vol. XLIX., part I. Introduction, p. 1.

3. Prof. Max Müller's India what can it teach us, first edition, p. 290. Indian Antiquary, 1883, Vol. XII., p. 234.

Diṅnâga criticised by Uddyotakara who is mentioned by Subandhu, who is mentioned by बाण,
Manoratha, teacher of Vasubandhu, disgraced. 900 p. B. N.?

550-600. S'iláditya Pratápas'íla (Málava), called Bhoja by Ferishtah.
Vasubandhu, restored, Pandit at Nálanda, brother of Asanga ; died before 569.
Prabhákaravardhana.
Mâdhavagupta, Târaka, Sushena, at his court.
Râjyavardhana (eldest son).
Defeats king of Málava.
Is defeated by S'as'ánka of Karnasuvarna. an enemy of Buddha or Gupta of Gauda,
Fei-tu, Chinese ambassador, 605.

610-650. S'iláditya Harshavardhana (younger son), called Kumâraràja, a Vais'ya.
His sister, Rájyas'rî, wife of Grahavarman who was killed by king of Málava.
His minister Bhandi (Po-ni).
Alliance with Bháskaravarman, Kumára of Prâgjyotisha (Kámarûpa).
Wars with Pulakes'in II of Mahárâshtra, temp. Hiouen-thsang (618-625, Ma Tuan-lin).
Defeated by Pulakesin II, Satyás'raya, who began to reign 609.
Chinese embassy to Magadha, leaves 648, arrives after S'íláditya's death.
Visited by Hiouen-thsang, 629-645 ; by Alopen, 639.
Dandin, Das'akumâracharita, Kávyádars'a, old.
Subandhu, Vâsavadattâ, quoted by Bâna.
„ „ quotes Uddyotakara, Dharmakîrti, pupil of Asanga.
Bâna, Harshacharita, Kâdambarî, Chandikâstotra, Ratnâvalî (Dhávaka ?) Pârvatîparinayanâtaka (a paraphrase of Kumârasambhava attributed to Bâna.)

Mayûra, Mayûras'ataka.
Mánatu*n*gasùri, Bhaktâmarastotra,
Náráya*n*a.
A*dh*y*a*râja.
Bhart*ri*hari, died 650 (I-tsing).
Jayáditya, (Kâs'ikà), died 660 (I-tsing).
Brahmagupta, born 598.

" Though some of the links," observes Prof. Max Müller, " in this chronological system are still doubtful, the belief in the existence of a Vikramâditya in the first century B. C. may now be accounted for, while his real existence in the sixth century admits of little doubt. "

And this statement which the learned Professor has based upon Dr. Fergusson's theory has now been proved by Dr. Fleet's discovery of Mandasór Inscriptions to be vague and unfounded, and thus it does not, in our opinion, at all deserve any historical credence.

Again some antiquarians hold that ' the Hindu tradition, which makes Kálidása contemporary with Vikramáditya, the supposed founder of the era commencing in B. C. 57, does not help us towards the solution of the problem because the earliest inscriptions mentioning this era, which have been discovered in Málava, speak of it as the *Málava era* or the era of the Mâlavas and do not connect it with Vikramàditya as its founder.' Now Dr. Fleet, as mentioned before, from the dates of his Mandasòr inscriptions, has with the astronomical calculations, conclusively proved the Samvat or Sam era to be no other than the *Málava Samvat* or Málavakála. [1]

It will also be remembered that the Samvat era and the Málava Samvat were originally one and the same eras and were not considered as two different periods or the eras. Dr. Fleet by actual computation has proved it to be one and the same, whether its founder was Vikramáditya or not is a question by itself.

---

1. See pages 53-60 of this Introduction.

Thus it is clear that the Samvat era or as it is otherwise called the Málava Samvat was an actual astronomical era and had its beginning in B. C. 57, and as such had been accepted by Hindu astronomers. Supposing these Mandásór inscriptions which have been lately discovered by Dr. Fleet do not connect them with Vikramáditya as its founder, how should the dates mentioned in these rock documents when reduced by actual computation come up to B. C. 57-56 or thereabouts? Or to recapitulate the learned Doctor's words "We are compelled", says he, "to find in it the solution of the question, and to adjust the equation of the dates thus,—Gupta-Samvat 113 (the mean date for Kumâragupta) + A. D. 319-20 = A. D. 432-433; and Mâlava-Samvat 493–B. C. 57-56 = A. D. 436-37; which, of course, falls well within the 17 years of Kumâraguptâ's reign, remaining after this mean date." And thus the results of all these palæographical researches brought to bear upon the *date* satisfy the necessary requirements. And they bring us so very close to B. C. 57, the commencement of the well-known Vikrama era,—which, by the tradition of remote antiquity, is closely connected with the country of the Mâlavas, through the name of its celebrated founder, king Vikramâditya, whose capital, Ujjayinî, was also the principal city in Mâlava. Unfortunately no historical account of certain nature, except the tradition of remote times with a reliable era, is as yet, found of this Vikramâditya. Many inscriptions and copper-plates have come to light, and many more will doubtless yet be found that would perchance give us some clue to the real history of this distinguished universal monarch of remote past time, if diligently searched for in the different parts of the country.

Again if Dr. Bhandarkar from Kálidásá's mere mention of the names of Pushpamitra, or Pushyamitrâ, [1] Agnimitra, Vasumitra and the political conditions of Vidarbha and other countries as existing in their times, and from the Paurá*n*ika

---

1. See Early History of the Dekkan, second edition, pp. 14-15, also pp. 23, 30-34. Dr. Bhandarkar's paper on Pata*n*jali, pp. 20-21.

traditions corroborated by inscriptions and other palœographical evidence, establishes the true historical epochs, events, narrations and finally the dynasties and the lines of several kings and paramount monarchs of the Dekkan and other countries ; why should not this Hindu tradition, the date whereof now finds a solution in the Mandasór inscriptions, and of remote antiquity with an astronomical datum, be connected with its illustrious founder Vikramâditya and be accepted as a *true* historical fact ? The general Pushpamitra, according to the ancient history of India, is said to have murdered his master B*ri*hadratha the last scion of the Maurya dynasty and usurped the throne of Magadha.[1] He was the first king of the S'unga dynasty and was known for his bravery in pressing back the Yavanas to their northern home. From the fact that Pata*n*jali, the author of the Mahâbhâshya who lived in 150 B. C. or about 450, B. C. according to Pandit Satyavrata Sámis'rami[2], refers to Pushpamitra, his court, his horse-sacrifice and the Yavanas in such a way as to show that the former was a contemporary of the latter—a fact very conclusively and most ably established by Dr. Bhandarkar in his paper on the date of Pata*n*jali[3] from a *Vàrtika* of Kátyâyana, explaining the use of the present tense[3]—and from other independent evidence it is now accepted as a fact by all antiquarians which goes to prove that Pushpamitra, whose son Agnimitra figures as the hero of the Mâlavikágnimitra a drama composed by Kâlidása, lived in B. C. 150 or thereabouts. The conclusion therefore is irresistible that Kàlidâsa lived at a time between A. D. 78 on the one hand and B. C. 150, on the other. This external evidence is again very strongly supported by such internal evidence as can be gathered from the several historical allusions that have scattered through the works of Kàlidása. In S'âkuntala, Vikramorvas'iyam and Raghuvans'a for

1. Principal Tawney's Mâlavikágnimitra, Introduction and the account of Maurya kings translated from Lassen.

2. See Pandit Satyavrata Sámis'rami's Nirukta, Introduction, Vol. IV. fasciculus VI. p. ३.

3. Dr. Bhandarkar's paper on the date of Pata*n*jali, pp. 13, 16, 17, 18, 20—23.

example, Kálidása distinctly refers to the Yavanas, the Pârasîkas, the Hûnas, the Kámbojas, the Kalingas and other foreign tribes and races and their kingdoms bordering on the frontiers of India. The descriptions given by Kâlidâsa of them, closely resemble the national customs of the foreign races, tribes and kingdoms at the time about which Kâlidâsa is supposed to have lived, *i. e.*, about the middle of the first century B. C. But of this further on.

In his Raghuvans'a, Kálidása while describing the conquest of Raghu, declares that his hero invaded the northern countries on the Indus where saffron is cultivated and there he encountered the Hûna kings whom he defeated and killed in a battle. The northern countries [1] alluded to by our poet are of course Kâbul, Kás'mîra, Panjâb and the neighbouring provinces of the north where, as is well-known, saffron is cultivated to this day. Amarsinha in his lexicon gives Kás'mîraja as a synonym for saffron which means what is produced in Kás'mîra.

Dr. Bhau Daji says [2] " Kálidása is the only great Sanskrit poet, who as far as the writer is aware, describes a living saffron flower ; the plant, we know, grows in Kás'mîra and the regions west of it." It is thus clear that what our poet means to say is that Kâbul, Kás'mira, Panjáb and the countries north of them were under the actual sway of Hûna kings when Raghu invaded them. It is also plain that the Hûna kings here alluded to by our poet are not Toramána and his son Mihirakula so pointedly shown by some researchers ; because they have not as yet put forth any positive evidence in support of this assertion. Mere allusion to Húna kings in the Raghuvans'a does not go to prove that our poet has made *a direct* reference to Toramána and Mihirakula until it is shown to have been corroborated by his brother bard Kumáradása, who, according to them, was also his contemporary. Again it looks probable that by Hùna kings Kálidása

---

1. See Canto IV. Sts. 66, 67, 68.

2. Literary remains of Dr. Bhau Daji, p. 49. See Introduction, p. 35.

might have meant one of the remote ancestors of the Hûna kings whom Raghu vanquished; perhaps our poet might have alluded to some chief or chieftain of the Húna tribes, whose full and detailed account might be existing in the works of some ancient writers like Chyavan, and from whom he might have borrowed information for his history, and who, as we know, side by side with the Yavanas, might have lived chiefly upon war, and made constant invasions many centuries before the beginning of the Christian era. The country, we know, was exposed to the inroads of these foreign tribes in the second century B. C.[1]; which looks probable as Kálidása uses the epithet in the plural. Had he but meant Toramána and Mihirakula he might well have used the dual; but since he does not, it might be inferred that he alludes to some of the early Hûna chiefs. Lae-lih who, as General Cunningham maintains, was the father of Toramána and whom the Hûnas set up as their king after the conquest of Gândhâra about A. D. 465.[2] The ancient history of the White Huns on the Indus before the fifth century is not as yet finally established or traced by any palæographical evidence. Nothing can be said as going to prove the conclusive establishment of the poet's allusion to the Hûna kings until the materials for the real history of the White Huns are discovered and admitted on all hands as an authentic document. General Cunningham says, "The connection of the White Huns with India cannot be traced till near the end of the fifth century, from which time they may be looked upon as a separate branch of the Indo-Scythian conquerors, or the "Indian Ephthalites." Their history, as far as I have been able to trace it, begins with Lae-lih, the father of *Toramána and* grandfather of *Mihirakula or Mihirgul.* Both the last kings were rulers of the Panjâb, and both made conquests in India in the early part of the sixth century A. D., while the main horde remain-

---

1. See Dr. Bhandarkar's paper on the date of Patanjali, pp. 20-21. Early history of the Deccan, second edition, p. 23.

2. Transactions of the ninth congress of orientalists, Vol. I. Ephthalites, or White Huns, page 223.

ed in possession of the countries to the north of the Indian Caucasus, with Gorgo as their capital[1] (Procopius, A. D. 540)." From the above statement of the distinguished orientalist it is clear that we are not as yet in possession of the materials of history that would at least give some clue to the White Huns and their kings on the Indus before A. D. 520.[2] And until our statement is disproved by substantial evidence we can hold that Kâlidâsa's allusion to Hüna kings of Kâbul, Kâs'mîra and Panjâb has a direct reference to one of the remotest ancestors of the Hüna king Lae-lih or to some chieftains of the main horde of the Hünas, who, it is alleged, were a great scourge to the people living on the frontiers of India. It is next to probable that this ancestor of Lae-lih or some chiefs of the main horde of the Hünas to whom Kálidása refers might have established a kingdom over some part of Kâbul and Kás'mîra. It will also be remembered that the Hüna kings Toramána and his son Mihirakula or Mihiragul, who established the vast empire over Kás'mîra, Panjâb, Sindh and provinces reaching as far as Málava, could not easily have done so (because they were foreign invaders), unless the empire had an early founder or founders with a small confederacy.

It also appears probable that the Húna chieftains or chiefs of whom Lae-lih, Toramána and Mihirakula were the descendants or representatives at the close of the fifth century A. D., might have established a small confederacy over some part of Kâbul, Kás'mîra and the countries north to them long before the beginning of the Christian era. Their future descendants or successors were gradually, as circumstances would allow, extending their kingdom until Toramána and Mihirakula found it easy for them to make a rapid progress. Thus they must have extended their kingdom without, of course, encountering any difficulty and finally established a vast empire. Kálidása's allusion to Húna kings thus plainly refers to the founder or his immediate successor or to

---

1. Ephthalites or White Huns, p. 224.

2. Ephthalites or White Huns, p. 222. See also Dr. Fleet's inscriptions of the Guptas, p. 56.

the chiefs of the main horde of the Hú*n*as who had formed a confederacy in the early times ; and not to their descendants Toramá*n*a and Mihirakula who flourished in the beginning of the sixth century or thereabouts, and thus the evidence which these investigators have put forth as corroborative of the sixth century are inapplicable to Kálidâsa's mention of the Hü*n*a kings or the Hü*n*a chiefs. This is also proved from the following account of Rev. Charles Gutzlaff's history of China and other sources. Rev. Charles Gutzlaff says that after the Chow Dynasty the Tsin Dynasty (from 249-206 B. C.) took the reins of the Chinese Empire. In the reign of Che-Hwangti, the Huns began to invade the Chinese frontier. The Emperor Che-Hwangti resolved to attack the Hiengnu or the Huns ; for these he understood were the Hoo which would put an end to the reign of his family. "The Huns, this scourge of the civilized world," observes Gutzlaff "dated their empire from one of the princes of the Héa dynasty. Their country was of great extent, situated on the west of Shen-se, of which they possessed the western parts ; and their posterity still inhabit a part of that territory, the present Ele. They belonged to that extensive tribe which the ancients comprised under the name of Scythians. The country they inhabited was so barren as to render agriculture little available to the maintenance of life. Their indolent, pastoral habits had for them greater attractions than the constant toil of the Chinese peasant. Hunting is their chief amusement, and next to their herds, their principal means of subsistence. Without the arts of civilized life, they are cruel and blood-thirsty, desirous of conquest, and insatiable in rapine. Even the eastern provinces of the Grecian colonies were often molested by the savages who dwelt in the plains beyond the Oxus and Jaxartes. The famous valour of the Persian heroes, Rustam and Asfendiar, was signalized in the defence of their country against the Afrasiabs of the North ; and the invincible spirit of the same barbarians resisted the victorious arms of Cyrus and Alexander. The Huns were not the least amongst those numerous hordes. Their rulers, named Tanjous, gradually became the conquerors and the sovereigns of a formidable empire. Their victorious

arms were only bounded by Eastern Ocean ; the thinly-inhabited territories along the banks of the Amoor acknowledged their sway ; they conquered countries near the Irtish and Imaus ; nothing could stop them but the ice-fields of the Arctic seas. Their principal strength was in their innumerable cavalry, which appears to have been very skilful in the use of the bow. Their march was neither checked by mountains nor by torrents ; they swam over the deepest rivers, and surprised with rapid impetuosity the camps of their enemies. Against such hordes no military tactics, no fortifications proved of any avail. They carried all before them with irresistible power, and never waited until a numerous army could be assembled to overwhelm them. Hardy to an extreme, they could support fatigue and hunger, and never lost view of the object of all their excursions—plunder."

"Che-Hwang-ti surprised and sought to extirpate these fierce barbarians, and finding them unprepared, the conquest was very easy. His generals having subdued the people in the South, nothing more remained to be done than to subjugate these Tatars, or, at least, to put a stop to their inroads. Some of the Northern states had eventually built a wall to keep these unbidden guests out of their territories. Che-Hwang-ti resolved to erect a monument of his enterprising spirit, which should be a lasting memorial of his greatness. This was the building of the great wall, which commences at the Lin-têaou, in the western part of Shen-se, and terminates in the mountains of Leaou-tung, in the sea, a distance of more than fifteen hundred miles. It runs over hills and rivers, through valleys and plains, and is perhaps the most stupendous work ever produced by human labour. He lined it with fortresses, erected towers and battlements, and built it so broad that six horsemen might ride abreast upon it. To lay the foundation in the sea, several vessels, loaded with ballast, were sunk, and upon this the wall was erected. Every third man in the empire was required to work on it, under the direction of Mung-teén, 240 B. C. The enormous work was finished within five years, but the founder had not the satisfaction of seeing it complet-

ed." After this the Han dynasty ruled over China (from 202 B. C.—220 A. D.); but the empire was involved in its internal troubles. In the reign of Lew-pang the Huns again regained their strength. Under Mete, a wise prince, who understood how to take advantage of every circumstance they became formidable to China, and retook those parts, which the celebrated general, Mung-téen had conquered. The emperor's general being struck with fear delivered the fortresses into their hands. The emperor advanced with a large army but was compelled to buy an ignominous peace, by the intervention of a beautiful lady, whom he sent as a present to the Tangoo-Mete. After this the Tartars withdrew to their own country with immense booty ; but very soon returned. The emperor sent an army against them under Chang-e : but he was defeated by the enemies.[2]

In B. C. 141, the prince Tangoo-Mete of the Huns asked an imperial princess in marriage. These barbarians despised their own women, and looked wistfully after the fair daughters of China. This corruption had its beginning in the reign of the emperor Woo-hwang-ti.[3] Under this prince the Huns extended their power far and wide and constituted a powerful empire extending from the great wall to the Caspian Sea. Now the Huns turned their compaigns westward, and for about 70 years nothing of importance occurred on the Chinese frontier.

In the meanwhile, the Huns were not idle, and constantly attacked the frontiers of the Chinese empire. Woo-te was not backward to repel their inroads. The Chinese on the frontiers were trained for the service against these swift enemies ; some Tatar tribes also joined the imperial standards, and after many reverses, General Wei-sing surprised them, routed the whole horde, and took about 15000 prisoners, with the whole camp and baggage. Such a disaster intimidated them for a while, but they shortly regained sufficient strength to renew the struggle. New

---

1. Gutzlaff's History of China, 1834, vol. I, pp.220-223.
2. Gutzlaff's History of China, Vol. I. p. 230.
3. Gutzlaff's History of China, Vol. I. p. 235.

incursions threw the whole empire into consternation. But this prince was not daunted. After many campaigns, he finally struck such a decisive blow, that the Huns were so enfeebled, as not to return for many years.[1]

In B. C. 73 the emperor Seuen-te ascended the throne of China. At that time the Huns and some other Tartar tribes, after many fruitless attempts to make themselves masters of the fertile provinces of China, came to render homage to the emperor.[2]

In A. D. 25 the emperor Kwang-woo-te came to the throne of China. And in A. D. 58 the emperor completely overthrew the Huns, who constantly wagedwar with him, and who at the time were gradually much reduced in number. And as they found an equal match in the Western tribes of Bukharia, they became more and more harmless.[3] At this time the emperor Kwang-woo-te died after a glorious reign of thirty-two years. Thus from about 250 B. C., to about 202 B. C., or a little afterwards, the Huns were carrying successive campaigns to the Chinese frontier, but after that time they changed their warfares towards the west. It appears that they must have followed the Yuchi whom they signally defeated and vanquished. These Hiungnu or Huns were the direct ancestors of the Huns who in the fourth century A. D., began to take an active part and exercised their influence in the affairs of Europe. The Yuchi came to Yarkand and Kashgar about 165 B. C., thirty years afterwards a peace was made between these Yuchi and the Chinese Emperor against their common enemy, the Huns. Now the Yuchi had actually reached India. The Huns, therefore, may have followed the Yuchi up to Kás'mîra and Punjáb at this time.

And this is also corroborated by Rev. S. Beal, who says that "just before 200 B. C. they had been defeated and

---

1. Gutzlaff's History of China, Vol. I. p. 237.
2. Gutzlaff's History of China, Vol. I. p. 241.
3. Gutzlaff's History of China, Vol. I. p. 249.

driven from their territories by Mothe, Chief of the Huns, who finally extended his conquest from the frontier provinces of China on the East, to the Volga on the West. The increasing power of this prince alarmed the Chinese. Accordingly, during the reign of Kaoutsu, the first emperor of the Han dynasty (202—194 B. C.), they marched an army against him, but were obliged to escape by a ruse from his overwhelming forces. The victorious career of the Huns continued unchecked during the following half century. The Yuchi then separated, the smaller division called the little Yuchi proceeding southwards into Thibet, and the larger division, called the Great Yuchi, advancing westward to the banks of the Ili. Finally the Great Yuchi (163 B. C.) moved still further to the W. and S. and occupied the provinces now called Yarkand and Kashgar, driving out the original inhabitants, whom the Chinese name S'akas or Sus. "

" In 139 B. C. the emperor Woo-ti of the Han dynasty, wishing to humble the power of the Hioung-nu (Huns), sent an embassy tothe Great Yuchi to obtain assistance from them against their common enemy. The Chinese ambassador, however, was captured, and only after ten years' imprisonment managed to effect his escape. The Yuchi at this time were being pressed further westward by the Usun, whilst they themselves were pushing Sus or S'akas out of Sogdiana and Tahia (the country of the Dahœ), across the Oxus and the mountains, into the territory watered by the Cophes (Cabul R.), commonly called Kipin or Cophene. The Yuchi, in this expedition, were accompanied by Chang-Kian (the Chinese ambassador above referred to), who, after thirteen years' absence, returned to his country with two companions out of 100 who had originally composed his suite. In consequence of the knowledge of Western Nations which Chang-Kian had gained during this expedition, he was elevated to an important post, and served (123-121 B. C.) on various occasions against the Hioung-nu (Huns). Finally he was reduced to the ranks on account of his ill success against these barbarians. It was during this war with the Hioung-nu (Huns) that Hou Kiu-ping, the Chinese General, first saw a golden statue of Buddha, to which the King of Hieou-to

(Kartchou?) paid worship, and which accurately corresponded with the reports of Chang-Kian respecting the worship of Feou-to (Buddha) in Thian (India). This statue was taken and brought to the emperor 121 A. D., and was the origin of the statues of Buddha, that were afterwards in use. "

" Thus, whilst the missionary zeal of the Buddhist church had spread their doctrines to the borders of the great country of the conflicting tribes, the warlike spirit of the Chinese, under the Han dynasty, had caused their arms to extend to the same point, and the knowledge of Buddha and of his doctrine was carried back to the seat of government as a seed ready to germinate in due season. "

" The events on the Indian frontier which followed this first intercourse of the two civilizations were rapid and most interesting. "

" The emperor Wu-ti, although at first unsuccessful, was yet in the end able to check and humble the power of the Hioung-nu (Huns); and his successor, Chaou-Ti, signally defeated them. This reverse was followed by civil war, plague, and famine—till, in 60 B. C. they became subject to the Chinese Empire. "

"The great Yuchi (who had been driven by their enemies towards the northern frontier of India), being thus relieved from pressure, were able to consolidate their power, so that about 100 years after Chang-Kian's embassy, *i. e.* about 30 B. C., the five tribes into which they had separated were united under Khieu-tsiu-ki, the chief of the Gushan (Kuei-shang) horde ; and, thus united, proceeded to advance further south to the conquest of Kâs'mîra and Kábul. It is conjectured that the chief, Khieu-tsiu-ki, who thus consolidated the power of the Yuchi, is the same as Hyrkodes of the coins, who probably effected his conquests about 50 B. C., and died 35 B. C., at 84 years of age. This chieftain left the throne to his son, Yen-kao-ching, to whom the Chinese assign the conquest of India to the west of the Jumná. He has been identified with Hima Kadphises of the Coins. His successor was Kanish-

ka (about 15 B. C.) to whom frequent allusion is made in the following memoirs. "[1] In the tenth chapter of the Lalita Vistara of the Buddhas we find that a distinct allusion is made to the Hûna alphabets along with those of different peoples and nations. The author of the book mentions sixty-four different alphabets; and the Bodhisatva asks his preceptor whether he is to study them all or some of them. And he enumerates these as follows[2] :—

" ब्राह्मीं खरोष्टीं पुष्करसारीमंगलिपिं वंगालिपिं मगधलिपिं मांगल्यलिपिं मनुष्यलिपिमङ्गुलीयलिपिं शकारिलिपिं ब्रह्मवल्लीलिपिं द्राविडलिपिं किनारिलिपिं दक्षिणलिपिमुग्रलिपिं संख्यालिपिमनुलोमलिपिमर्द्धधनुर्लिपिं दरदलिपिं खास्यलिपिं चीनलिपिं हूणलिपिं &c.

R. E. Dutt in his history of India[3] tells us that the composition of this gorgeous poem probably took place in the second or third or at most the fourth century A. D. in Nepál. Now if Toramâna and his son Mihirakula established a Hûna empire at the close of the fifth century A. D. in India, and not before, we naturally expect no special reference to Hûnas in that Buddhist work. But since it alludes, we may as well conclude that Kâlidása never flourished in the sixth century and that he was not a contemporary of Kumáradâsa. Had the Hûnas or their kings Toramâna and Mihirakula appeared on the frontier of India or beyond it only for the first time in the fifth or the sixth century A. D., and had been unknown to the people of India before this time, the argument that the Hûnas were most powerful in the fifth century and upwards and that they overthrew the Gupta dynasty would have carried some weight; but we have distinct allusions to these in the Mahâbhárata and *Gunâdhya*'s Brihatkathá, works which were existing in India long before the beginning of the Christian era. It may as well be remembered that the word ' Hûna ' in the mouth of Grecian people and their writers was a vague and meaningless expression and might have been ap-

---

1. Travels of Fah-hian and Sung-yun, Introduction 1869, pp. 16-19.

2. Lalita Vistara, X. pp. 143-144, Biblio. Indi. series.

3. Prof. R. E. Dutt's History of India, Chap. XIII. p. 347.

plied generally to the Indo-Scythians who poured in India in ancient times.

From these statements of the historians it is now pretty clear that the Hûnas were most powerful kings and had established a vast empire from the middle of the third century B. C. to the close of the first or the second century A. D. on the frontier of Bactria, or more properly the very threshold of Ancient India. And Kàlidâsa's reference to the Hûnas now finds an easy solution.

They also assert that 'Raghu as described in the poem is more or less, a mythical hero and that no conquest of the northern countries on the Indus ruled over by Huna kings is ascribed to this mythical king in the Rámáyana the very work which, as Kálidása himself tells us, he has adopted as the basis of his Raghuvans'a.' It is absurd to think that the Râmáyana would give the full account of the kings that preceded and succeeded its hero. For, in the first place Vâlmîki wrote his epic describing the career of Râma from the beginning to the end ; and it is not, as Válmîki himself tells us, intended to describe all the kings that took their birth in the line ;[1] while in the Raghuvans'a Kálidâsa intends to give a brief account of almost all the kings (*i. e.* a considerable number of kings whose account he gathered from the sources available to him in his times) of the solar dynasty. For he himself declares that he intends to write the history of the kings born in the line of the sun in general and not a particular king of that line. And when he himself tells us that he writes a history, his characters of history cannot in the least be said as mythical beings. Had he but written a mythology he would have told us in plain words that his characters are mythical and not historical personages ; but he nowhere tells us so. And in this sense of course it is unfair to say that his characters are mythical. And in the second place Kâlidâsa does not tell us that he has based his Raghuvans'a on the Râmâyana or that his Raghuvans'a is the prototype of Râmâyana. He distinctly says that he composed his poem from the

1. See Rámâyana Bálakánda, Canto II, Sts. 32-35.

various accounts of the solar kings as handed down to him from different types of Rámáyana or other works of ancient history written by old sages.[1] It is thus clear that Kâlidása composed his Raghuvans'a not directly from Vâlmiki's version of the Râmâyana but from the various accounts and episodes of different types of Râmáyanas or some other ancient works. And this is also corroborated by the following verses from As'vaghosha's Buddhacharita :—

वाल्मीकिनादश्च ससर्ज पद्यं जग्रंथ यन्न च्यवनो महर्षिः ।
चिकित्सितं यच्च चकार नात्रिः पश्चात्तदात्रेय ऋषिर्जगाद ॥ ४८ ॥

यच्च द्विजत्वं कुशिको न लेभे तत्साधनं सूनुरवाप राजन् ।
वेलां समुद्रे सगरश्च दध्रे नेक्ष्वाकवो यां प्रथमं बबंधुः ॥ ४९ ॥

आचार्यकं योगविधौ द्विजानामप्रातमन्यैर्जनको जगाम ।
ख्यातानि कर्माणि च यानि शौरेः शूरादयस्तेष्वबला बभूवुः ॥ ५० ॥

(48) "The voice of Válmîki uttered its poetry which the great Chyavana could not compose ; and that medicine which Atri never invented the wise son of Atri[2] proclaimed after him."

(49) "That Bráhmanahood which Kus'ika never attained,—his son, O king, found out the means to gain it ; (so) Sagara made a bound for the ocean, which even the Ikshvákus had not fixed before him."

---

1. See Canto I. St. 4. Here Kálidása uses the plural of the epithet of पूर्वसूरि. Had he but meant Vâlmíki by the epithet, he would not have used the plural. The epithet, again, does not signify the honourific term. There are several direct allusions to Válmîki's name in the Raghuvans'a where the plural is not used by the poet. So it is plain that Kâlidâsa did allude not to Válmiki only but other sages who composed the different versions of Rámàyana that might perhaps have contained fuller account of all the kings of that line or some other works from which he borrowed his information. See also Buddhacharita, Canto I. St. 48.

2. Âtreya is the proclaimer of Charakasambita.

(50) "Janaka attained a power of instructing the twice-born in the rules of Yoga which none other had ever reached;[1] and the famed feats of the grandson of S'úra (K*ri*sh*n*a) S'úra and his peers were powerless to accomplish."

From the above-mentioned statement we can safely infer that before the composition of Válmîki's Rámâya*n*a there existed the Râmâya*n*a of the sage Chyavana and other sages, and also some other works of historical poems and from the illustrious works or chronicles of these inspired sages of old times Kàlidâsa, As'vaghosha, Kumáradása and others wrote their history, biography and poems.

And from the foregoing remarks it is abundantly evident that the Raghuvans'a of Kálidâsa is not the prototype of the Rámâya*n*a. We find in Raghuvans'a several allusions to Válmîki;[2] but from those allusions we cannot infer that Raghuvans'a is based on the Rámáya*n*a or it is the prototype of that epic. No doubt Kâlidása has devoted nearly seven Cantos descriptive of the main story of the Rámáya*n*a; because Válmîki had given a full account of Ráma, his royal brothers and the Rákshasas and also Ráma's father Das'aratha as was necessary in connection with the hero of the Rámáya*n*a as mentioned before. But the difference is discernible in the small incidents even in the description of these seven

---

1. Compare Chhàndogya Upanishad, V. 3. 7. Compare Buddhacharita, Canto XII. St. 67.

2. R. XIV. 45, in this verse Válmîki is named as the sage to whose hermitage Lakshma*n*a takes Sitá by order of his royal brother and abandons her in its neighbourhood. XIV. 70, in this verse the sage is referred to as the "poet" whose lamentation for the death of one of the couple of Krau*n*cha birds took the form of the famous verse—the first verse that gave origin to the Rámáya*n*a. XV. 37, in this S'atrughna after having killed Lava*n*a came to the hermitage of Válmíki but did not enter it. XV. 80, in this verse Sîtà when called to prove her innocence the water that she sips was poured by a pupil of Vâlmiki. See also Canto XV. St. 64. See also Canto XV. Sts. 71—75. See also Canto XV. St. 33. See also Canto XV. Sts. 12, 14, 31, 41, 59, 63, 69, 70, 76, 79. See Canto XIV. Sts. 70,72.

Cantos.[1] And these incidents of the Raghuvans'a sometimes agree with the story as given in the Pátálakhan*d*a Rámás'vamedha of the Padmapurá*n*a and sometimes with the episodes of the Adhyátma Rámáya*n*a. And this is also corroborated by a different version of the main story of Rámáya*n*a as given in the Káthásaritságara of Somadeva, pages 287 and 582, which we know is a close translation of Gu*n*á*d*h*y*á's B*ri*hatkathá written in the Pais'âchî language about the close of the third century B. C. It is also evidenced by Jánakîhara*n*a where the main story of the Rámáya*n*a is preserved, but the difference is found in the small incidents and even in the speeches put in the mouths of the different characters of that poem. Besides these works even Máhábhárata, Agnipurá*n*a, Padmapurá*n*a and many other Purá*n*as contain the account of the Rámáya*n*a. In these the main story is found just the same but the difference is observable in small incidents. From this it follows that Kálidása and the authors of these Purá*n*as (including the author of the S'iva Purâ*n*a) and the different versions of the later compositions of the Rámáya*n*as had probably a common source to draw upon. Hemádri, one of the poet's most intelligent interpreters and very intimately acquainted with his works, pointedly observes at the beginning of the sixteenth Canto that the Rámáya*n*a having been the poet's source for the history from nine to fifteen Cantos, he now gives in four more Cantos the sequel of the story as it is found in other works containing fuller account of the solar dynasty. This statement of Hemádri shows that he considered at least the Ra-

---

1. See commentary on the St. 77, Canto IX. See note to St. 6, Canto X. See commentary on the St. 13, Canto X. See notes to Sts. 52, 56, Canto X, also Mallinátha's commentary on 56. See note to St. 22, Canto XII. See Note to St. 30, Canto XII. See Note to St. 68, Canto XII. See Note to Sts. 72, 73, Canto XIII. See Note to Sts. 44, 45, 46, Canto XIV. See Note to St. 50, Canto XIV. See Note to St. 55, Canto XIV. See Note to Sts. 59, 60, 61, Canto XIV. See Note to St. 72, Canto XIV. See Note to St. 60, Canto XV. See Note to St. 85, Canto XV. See Note to St. 96, Canto XV. See Note to St. 103, Canto XV.

ghuvans'a as not at all the prototype of the Rámáya*n*a of Válmîki. It is thus plain that the materials of the historical element of the Raghuvans'a were not drawn chiefly from Válmîki's Rámáya*n*a but from other versions of that national epic or from different sources altogether. Kálidása refers to "acquaintance with ancient history" in Canto VI., while making Sunandá describe the great ancestors of the several suitors of Indumatî, where the former is described as being "learned in the history of the families of the kings" VI., 20. A more distinct mention of those "conversant with antiquities" is found in Canto XVIII., 22, where the poet mentions king Vyushitas'va [1] as the successor of S'a*n*khavar*n*a or S'a*n*kha*n*a. Kálidása, it appears, had prepared his list of the Raghu-race either as was given in the ancient Purâ*n*as or from the family pedigrees of some dynasties or some other that was extant in his time before the beginning of the Christian era. His list of the princes that preceded and followed Ráma agrees closely with that of the Váyupurá*n*a, but it is likely that he consulted other "authorities conversant with antiquity." But our poet's list does not in the least agree with that given in Válmîki's Rámáya*n*a.[2] From the above-mentioned statements it is abundantly evident that the Raghuvans'a is not the prototype of the Rámáya*n*a nor has our poet adopted it as the basis of his Raghuvans'a.

Besides the above-mentioned remarks one circumstance demands our attention. The list of the kings as given by Kálidása in his Raghuvans'a does not at all agree with that given in the Rámáya*n*a: but it generally agrees with those which are found

---

1. Hemádri, Cháritravardhana, Dinakara, Vallabha, Sumativijaya and Vijayánanda's pupil read व्युषिताश्व. This reading of the majority of Mss. and commentators is also corroborated by most of the ancient Purá*n*as. Prof. Hall also considers it to be the correct reading. See also the genealogical table given at the beginning of the Notes.

2. See Rámáya*n*a Bálaká*nd*a, Canto 70. p. 143. Nir*n*ayaságara edition.

in the Váyu Purána and the Vishnu Purána. Some difference, of course, is observable even between the list of Kálidása and those of the Puránas. The following table will illustrate this:—

Váyu Purána.	Vishnu Purána.	Rámáyana.
1. Dilípa.	1. Dilípa.	1. Dilípa.
2 Bhagíratha.	2. Bhagíratha.	2. Bhagíratha.
3. S'ruta.	3. S ruta.	3. Kakutstha.
4. Nábhága.	4. Nábhága.	4. Raghu.
5. Ambarisha.	5. Ambarisha.	5. Pravriddha.
6. Sindhudvípa.	6. Sindhudvípa.	6. Kalmáshapáda.
7. Âyutáyu.	7. Âyutáyu.	7. S'ankhana.
8. Rituparna.	8. Rituparna.	8. Sudars'ana.
9. Sarvakáma.	9. Sarvakáma.	9. Agnivarna.
10. Sudása or Hansamukha.	10. Sudása.	10. S'íghraga.
11. Saudása or Kalmáshapáda.	11. Saudása or Kalmáshapáda.	11. Maru.
12. As'maka.	12. As maka.	12. Pras'us'ruka.
13. Urakáma.	13. Múlaka or Nárikavacha.	13. Ambarísha.
14. Mulaka or Nárikavacha.	14. Das'aratha.	14. Nahusha.
15. S'ataratha.	15. Ilavila.	15. Yayáti.
16. Aidivida.	16. Vis'vasaha.	16. Nábhága.
17. Vis'vamahán.	17. Khatvánga.	17. Aja
18. Dilipa or Khatvángada.	18. Dírghabáhu.	18. Das aratha.
19. Dírghabáhu.	19. Raghu.	19. Ráma.
20. Raghu.	20. Aja.	
21. Aja.	21. Das'aratha.	
22. Das'aratha.	22. Ráma.	
23. Ráma.		

From these lists of the kings it is clear that Kálidása has not adopted the Rámáyana as the basis of his Raghuvans'a. It also appears probable that the author of the Raghuvans'a and of the Váyu Purána had a common source to draw their materials upon which is now beyond the hope of recovery. The Rámáyana gives two kings between Dilípa and Raghu and between Raghu and Aja are mentioned eleven kings; while in the Váyu Purána between Raghu and Dilípa intervenes Dírghabâhu, and Aja is mentioned as the son of Raghu. And this

statement tallies well with Vishnu Puráṇa. Kumáradása in his Janakîharaṇa, Canto I, St. 14 states Das'aratha as the son of Aja, so As'vaghosha in his Buddhacharita, Canto VIII, St. 79, calls Das'aratha by the epithet of Ajanandana. These circumstances go to establish that the Raghuvans'a is not the prototype of Rámáyaṇa and that the materials upon which Janakîharaṇa and the allusions in the Buddhacharita were based had also a common source.

During the long interval which elapsed between the composition of the Rámáyaṇa and that of the Raghuvans'a the countries on the banks of the Indus including Kâs'mîra must have been under the rule of a powerful dynasty of Hûṇa kings. And Kálidása's allusion to Húṇa kings must be referred to one of the early founders of that dynasty as mentioned before and not to their descendants *i. e.*, Toramáṇa and Mihirakula who, it is said, flourished about the end of the 5th century A. D. It is thus clear that Raghu the powerful king of Northern India must have vanquished one of these early Hûṇa kings and Kálidása must have borrowed his account from some ancient work containing the detailed accounts of almost all the kings of the solar line for his Raghuvans'a. He, it is true, narrates hurriedly the short and brief account of the detailed main incidents throughout his works. And he nowhere attempts to give long descriptions of the main episodes. When viewed with this chain of arguments we can clearly see that Kâlidása does not magnify the glory of his hero but on the contrary he depicts the true historical character of the most powerful king Raghu who, it is presumed, completely vanquished the early Hûṇa kings or some of their leading chiefs. Because what is admitted as historically true with regard to the incidents of Málavikágnimitra becomes true also to the incidents, nay historical facts of the Raghuvans'a. For it would be absurd to say that Kálidása narrates real historical facts in one of his dramas and gives absurdities in his historical poem. It will not again stand to reason that Kálidása in order to magnify the glory of his hero tells us false things in one place, and mentions true historical facts in the other. It is equally true that Kálidása does not unconsciously

mention some facts relating to the political condition of Kás'mîra, which was only true of his own age. But these facts regarding the political condition of that country have a distinct reference to one of the founders of Hûna kings or their immediate successors or to the early Hûna chiefs; they have no connection whatever to Toramána and his son Mihirakula the descendants of those early Hûna chiefs. For, these antiquarians have not given any positive proof to the effect that Kálidása's allusion to Hûna kings and the political condition of Kâs'mîra, has a direct reference to Toramána and his son Mihirakula. Again granting that the facts have a direct reference to Toramána and Mihirakula, Kumáradása, one of the contemporaries of our poet, ought to have corroborated these with a substantial evidence; but he appears to be silent or ignorant of these political changes. Kálidása, it appears, does not speak highly of these Húna kings, or chiefs nor does he attach any importance to them; but he simply makes a passing allusion to them; but these antiquarians conclude that 'Kálidâsa lived at a period when the Hûna kings actually held sway over Punjab and Kás'mîra, when the victories of Toramâna and Mihirakula had made the name of the Hûnas so famous as to attract the notice of distinguished foreign writers and when they were mentioned in contemporary inscriptions as the most formidable rivals of the Guptas whom they finally overthrew &c.' How these discrepancies are then to be accounted for? Either we must assume that Kálidâsa was never contemporary of Toramána and Mihirakula, so pointedly shown by these researchers, or that he did not choose to mention the facts regarding the political conditions of that country, which were true of his own age, or that Kumáradása was not a contemporary of our poet. The conclusion that we can draw from these facts is that Kálidása lived at a period when the early founders of the Hûna dynasty or their immediate successors or some chiefs of the Hûnas had actually held sway over Kás'mîra and the countries north of it. We shall therefore be very near the mark if we place Kálidása somewhere in the first century B. C., or thereabouts.

Kálidása in his Kumárasambhava (VII. I.) says.

अथौषधीनामधिपस्य वृद्धौ तिथौ च जामित्रगुणान्वितायाम् ।
समेतबन्धुर्हिमवान्सुताया विवाहदीक्षाविधिमन्वतिष्ठत् ॥

The word *jámitra* used in the first line is according to these antiquarians, a corrupt form of the Greek term *diametron*. It is possible that these terms must have been borrowed from either the Greek astronomy or from Chaldeans or Egyptians. Prof. Max Müller says that the Greeks received the science of astronomy from Babylonia about 700 B. C.[1] And further he says that 'in the time of Eudoxos, 380 B. C., the Greeks, though they had twelve divisions (introduced by Kleostratos of Tenedos, 496 B. C.), had but eleven signs, the two divisions, now represented by scorpion and balance, being represented by one sign only, the scorpion with its claws stretching across two divisions. Even Aratus and Hipparchus, 150 B. C. do not know the Balance as a separate sign, and it is first mentioned by Geminus and Varro, about the beginning of the first century B. C.' Whatever may be the historical state of these sciences of astronomy and astrology before the beginning of the Christian era, it is certain that these sciences had an early beginning in India and that the judicial astrology based on the zodiac was introduced and assimilated by the Indian astronomers somewhere between the fifth and the third century B. C., as will be shown hereafter. In the Baudhâyana Sûtras[2] (See Sâyana's commentary in Mss. India Office Library, p. 13 *a*) we read: "मेष-वृषभौ सौरौ वसंतः । मीनमेषौ वा[3] ॥ The composition of Apastamba-sûtra is attributed by Dr. Bühler to the third century B. C., nay, even to the fifth century[4] before the Christian era.

1. India what can it teach us, first edition, page 321.

2. The names of the Rási's or the zodiacal signs occur in Baudháyana Sútras. See Prof. S. B. Dikshita's Early History of Indian Astronomy, pp. 137-139.

3. For the full passage see Max Müller's India what can it teach us, first edition, pp. 322-323 *Footnote*.

4. See Introduction to Baudháyana, Sacred Books of the East, Vol. XIV, p. xliii. See Apastamba &c., Sacred Books of the East, Vol. II. part I, p. xxii, and xliii, where the learned doctor says :— " And his statement regarding S'vetaketu is taken into account, the lower limit for the composition of his Sútras must be put further back by 150-200 years. "

And Baudhâyana, according to Dr. Bühler, is older than Apastamba, but Dr. Bhandarkar, in his report on the Sanskrit Mss. during the year 1883-84, has proved the posterity of Baudháyana from his assigning twelve days to Châturmâsyâni and concludes that 'the Baudhâyanasûtra, therefore, in which the period from the performance of the Châturmâsyâni is thus shortened must be later, as is also shown by its mentioning many other such later developments and ceremonies not laid down in the other Sutras.'[1] Baudháyana, who mentions the names of Rás'is or the zodiacal signs, cannot, therefore, be placed later than the third century B. C. Sâya*n*a Mâdhava when commenting on Baudhâyana must evidently have borrowed the passage in question from some of the old commentaries on the Sûtra which contained the names of Râs'is or the zodiacal signs. The allusions to the Kalpasûtras are also found in Râmâya*n*a and Mahâbhârata.[2] We also find in the Râmâya*n*a the distinct allusions to the Râs'is or the zodiacal signs.[3] From Valmîki's use of the zodiacal signs, it is clear that the Greek astronomical terminologies or the science of astrology which according to some was borrowed and assimilated by the Hindus in their Jyotish, from the Greeks or from their masters the Chaldeans and the Egyptians, had its existence about one thousand years

---

1. Report on the search for Sanskrit Mss. during the year 1883-84, p. 34, and 39. And also Sacred books of the east, Vol. XIV. part II. p. xliii, Introduction. Also page xxxv of the same Introduction.

2. Râmâya*n*a I. Canto 14, verses 3-7 and 24-35, and also 36-45, Nir*n*ayaságara edi. Mahábhárata Sabháparvan, Adh. 35 verses 16-18. Bom. edi. Also Sacred books of the east, Baudháyana, Vol. XIV. part II. p. xli.

3. Rámáya*n*a I. Canto 18, verses 9, 15. "नक्षत्रेऽदितिदैवत्ये स्वोच्चसंस्थेषु पंचसु । ग्रहेषु कर्कटे लग्ने वाक्पताविंदुना सह " ॥ पुष्ये जातस्तु भरतो मीनलग्ने प्रसन्नधीः । सार्पे जातौ तु सौमित्री कुलीरेऽभ्युदिते रवौ ॥ And also Rámáya*n*a II. Canto 15, verse 3, "उदिते विमले सूर्ये पुष्ये चाभ्यागतेऽहनि । लग्ने कर्कटके प्राप्ते जन्म रामस्य च स्थिते " ॥ The composition of these verses does not at all appear to have come from Válmiki's pen.

before A. D. 476, the time in which Âryabhaṭa was born at Paṭaliputra.[1] To suppose even for argument's sake that these passages are later interpolations by some Pandits is absurd : for they are found in almost all editions printed by natives as well as Europeans and particularly in the oldest Mss. of southern India. And the southern Mss. are considered on all hands to be pure and chaste. So the passages above referred to cannot be said to be later interpolations, but the interpolations somewhere between the fifth and the third century before the Christian era.

Prof. S. B. Dikshita in his 'Early History of Indian Astronomy,' gives the history of the five astronomical Siddhântas in their chronological order. The following is the order :—(1) Paitâmaha, (2) Vâsishṭha, (3) Paulis'a, (4) Saura and (5) Romaka. From its affinity with the Vedânga-jyotish and with other astronomical proofs, the learned Professor assigns to Vâs'ishṭha Siddhânta the period after the Vedânga-jyotish; and with the same kind of reasoning and the same astronomical proofs he assigns the different periods to the above-mentioned Siddhântas given in their chronological order. He also mentions two Vás'ishṭha Siddhântas one of which was the original and the oldest and the other composed by Vishṇuchandra.[2] He also mentions two Romaka Siddhántas one of which was the original and older and the other composed by S'rîsheṇa. The Greek astronomer Hipparchus flourished in B. C. 150 or thereabouts. It is also alleged that Ptolemy wrote his astronomical works on the principles and theories laid down by Hipparchus ; and this is also supported by distinguished European astronomers. European astronomers also assert that the system of judicial astrology and the Greek astronomy was introduced in India before the time of Ptolemy.[3]

---

1. Max Müller's India p. 319, first edition.

2. See Prof. S. B. Dikshita's 'Early History of Indian Astronomy', pp. 151, 155.

3. See Prof. S. B. Dikshita's 'Early History of Indian Astronomy' p. 158. Also Grant's History of Physical Astronomy, Introduction, p. iii; and p. 439. See also English Translation of Sûrya Siddhânta by Dr. Burgess, p. 330.

The names of the Râs'is or the zodiacal signs first occur in the original and the ancient Vás'ishtha Siddhânta : and not in that composed by Vishnuchandra. The learned professor asserts that the composition of the said Vâs'ishtha Siddhânta should be placed somewhere between 500 B. C. and 300 B. C. And this he has conclusively proved with internal evidence corroborated by astronomical proofs. [1] Between B. C. 150 and A. D. 150 he places the original Romaka Siddhánta ; and not the one by S'rishena. And to the Paulis'a and the Saura Siddhântas he assigns the time between 500 B. C. and 78 A. D. [2]

Thus then of the five astronomical Siddhántas the Romaka Siddhánta stands last. The learned professor states that the Romaka Siddhánta was composed according to the principles and the theories laid down by Hipparchus. There is, he remarks, a close affinity between the works of Hipparchus and Ptolemy. At the time when the Romaka Siddhánta was introduced in India Ptolemy's astronomical works, had he but written at the time, would easily have come to India along with the Romaka Siddhânta ; but since it did not make its appearance in this land of the Bharatas. it was not written at the time when the Romaka Siddhânta was known in India. And thus the composition of the Romaka Siddhânta was earlier than the astronomical works of Ptolemy. [3] And this theory of the learned professor is finally adopted by Dr. Thibout. [4] And as this theory is conclusively proved by the distinguished astronomer of the present day, it may now be considered as finally established, and may safely be relied on. And

---

1. See Prof. S. B. Dikshita's Early History of Indian Astronomy, the résumé of the views of the European investigators, p. 509.

2. See Prof. S. B Dikshita's Early History of Indian Astronomy, the résumé of the views of the European investigators, p. 509.

3. Prof. S. B. Dikshita's résumé, p. 508.

4. Prof. S. B. Dikshita's Early History of Indian Astronomy, p. 507.

thus Kâlidâsa, it appears, has not derived his knowledge of Greek terminology from Áryabhata, but from some Indian astronomers who were his contemporaries in the first century B. C., or who must have preceded him.

Again some scholars urge that Kâlidása had knowledge of the true origin of lunar eclipses and they put forth in support of their evidence the following passage from the Raghuvans a.

छाया हि भूमेः शशिनो मलत्वेनारोपिता शुद्धिमतः प्रजाभिः ।

" For what in reality is only the *reflection* of the earth is regarded by the people as a spot of the pure moon."

Here Ráma has resolved to abandon his queen, and says : ' I know she is sinless, but evil report appears to have overpowered me. The moon is itself clear and bright and pure as the mirror, but the reflection of the earth in this heavenly mirror is regarded by the people as a stain on its surface. ' The moon is the mirror, the earth an object, and the stain is only the reflection of the earth in the mirror, and this reflection looks like a spot on the surface of the mirror. The illustration, in our opinion, is only a poetical explanation and not an astronomical allusion. The late lamented S. P. Pandit says that it is an astronomical fact, but it is rather an optical phenomenon.

Here then according to Mallinátha and Hemádri the most intelligent interpreters of Kálidása, the notion of moon's eclipse is not alluded to by our poet. They say that the reflection of the earth is a stain or the black spot that is sometimes visible on the surface of the moon and has nothing to do with the eclipse of the moon. And Hemádri in support of this assertion quotes the following from the Jyotishs'âstra ; " शशमेके मृगं त्वन्ये भूच्छायामपरे विदुः । इन्दोर्मण्डलमालिन्यं तमः स्पर्शमलं परे।" उक्तं च । "अंकं केऽपि शशांङ्किरे जलनिधेः पङ्कं परे मेनिरे। सारंगं कतिचिच्च संजगदिरे भूमेश्च बिम्बं परे। इन्दोर्यद्दलितेन्द्रनीलशकलश्यामं दरीदृश्यते । तन्मन्ये परिपीतमंधतमसं कुक्षिस्थमालोक्यते. And Châritravardhana has the following:—"शशमंके । अभ्रमपर । अभ्रछायंत्यन्ये । चंद्रस्यान्ते मालिन्यं सत्य-

मिति केचित्" । It is then clear that Kâlidása does not, at least in this instance, allude to the well-known notion of the lunar eclipse but simply mentions the reflection of the earth as a spot (*i. e.* the black spots) on the surface of the moon.

It is then perfectly plain to every intelligent reader of the Raghuvans'a that the time between Kàlidása and Válmîki must be counted not by decades but by centuries, and that the Râmáya*n*a must have been written very many centuries before the time of Kâlidása, many centuries before the time when these modern investigators are inclined to regard it to have been composed, and that the adoption or so to speak the assimilation of the zodiac and the science of judicial astrology must have been current in India long after the time of the author of the Râmâya*n*a. And if in future researches it is turned out that the composition of the Rámâya*n*a is later than that of the Mahábhárata, or *vice versa,* still the distance of time no doubt would be considerably great between Válmîki and Kâlidása. [1]

" But the date of the Râmâya*n*a ", observes Dr. Bhandarkar, " is uncertain ; the present Hindu belief based on the Purâ*n*as is that Ráma's incarnation is older than K*r*ish*n*a's, and consequently the Rámâya*n*a older than the Mahábhârata ; but is it not a little curious that while there is an allusion to Vásudeva and Arjuna and to Yudhish*th*ira [2] in Pá*n*ini, and Pata*n*jali frequently brings in Mahábhârata characters in his illustrations and examples, [3] there is not one allusion to Ráma or his brothers or their father Das'aratha in the works of those grammarians. Even a much later author, Amarasinha the lexicographer, in his list of the synonyms of Vish*n*u, gives a good many names derived from the K*r*ish*n*a incarnation ; but

---

1. Early History of the Deccan III. pp. 9-10, second edition. S. P. Pandit's edition of Raghuvans'a, preface Vol. III. p. 82.

2. " वासुदेवार्जुनाभ्यां वुन् " Pá*n*ini, IV. 3. 98. " गवियुधिभ्यां स्थिरः " Pá*n*ini, VIII. 3. 95.

3. See Pata*n*jali's Ânhikas on the fourth Adhyáya of Pá*n*ini's Ash*t*ádhyáyî.

the name of Râma, the son of Das'aratha, does not occur, though Râma or Balabhadra, the brother of K*ri*sh*n*a, is mentioned ". And further on the learned doctor mentions some countries of the epics and observes " but between these and the southernmost countries of the Cholas, Pá*n*dyas, and Keralas the Râmâya*n*a mentions no other place or country but Da*nd*akára*n*ya. This condition of the country, as observed before, is to be considered as previous to the Aryan settlements in the Deccan, while that represented by the Mahábhárata in the place indicated seems subsequent; and herein, we may see a reason for believing that the Rámáya*n*a is the older of the two epics.[1] " Dâkshi*n*átya and Saurásh*t*reya occur in the Rámáya*n*a, but the latter appears to us a later addition. According to Prof. S. B. Dîkshita some additions seem to have been made about B. C. 500. Dr. Bhandarkar also holds the same opinion; he also adds that some interpolations were made even in the Râmâya*n*a as in the Mahábhárata.[2] Prof. Lassen places the composition of the Rámáya*n*a somewhere before Buddha's Nirvâ*n*a *i. e.* before B. C. 560 or thereabouts.[3] Since the Râmáya*n*a gives the names of the Rás'îs or the zodiacal signs, and since the zodiacal signs or the Râs'is were first introduced in the oldest Vasish*th*a Siddhánta the composition whereof is placed at the beginning of the fifth century B. C. as mentioned before, the composition of the Rámáya*n*a of Válmîki can perhaps be placed some four hundred years before this period. And this appears to us to be the probable time in which Vâlmîki must have composed the Rámâya*n*a. Prof. S. B. Dîkshita remarks that some portion of the Rámáya*n*a at least must be placed before the Mahábhárata and some portion must have been the later addition; but with respect to this statement he entertains grave doubts.[4] And Chyavana's composition

1. Early history of the Deccan, second edition, p. 10.

2. Early history of the Deccan, second edition, p. 9.

3. Pandit Satyavrata Sámas'rami's Introduction to Nirukta, Vol. IV, Fasciculus VI. p. ङ.

4. Prof. S. B. Dikshita's Early History of Indian Astronomy, p. 127.

of the Rámáyana should be placed some fifty years previous to this date. And Ráma and his brothers and the monkey legions and also the war of Lanká must be placed in the middle of the twelfth century B. C. And yet the date of the Rámáyana appears to us uncertain. It must remain so till some fresh discoveries are made. Pandit Satyavrata Sámas'rami attributes the composition of the Mahábhárata to 2400 B. C. This is also the period in which he observes the great grammarian Pânini must have flourished.[1] Prof. S. B. Dîkshita places the Mahábhárata somewhere between 3000 and 1500 B. C. The latter century is held by European antiquarians as the time of the epic. Prof. S. B. Dîkshita, like Dr. Bhandarkar, also holds that though the Mahábhárata existed before Pânini and Âs'valâyana, it is highly questionable whether our present text is the same as that which existed in their times. On the contrary, the probability is that the work has been added to from time to time; and the text itself has undergone such corruption that no one can be positively certain that a particular word was not foisted into it in comparatively modern times.[2]

It is mentioned above that the Yavana astronomer had introduced the zodiac and the science of judicial astrology in India somewhere between the fifth and the third century B. C.; and the Hindu astronomers seeing the utility of the science adopted it and subsequently assimilated it into their own. The earliest mention of the Yavanas is found in Pánini IV. 1, 49. Dr. Bhandarkar places Pánini in the beginning of the seventh century before the Christian era.[3] The second allusion is made by Patanjali in his Mahábháshya. In commenting on Pánini III. 2. 111., Patanjali gives अरुणद्यवनः साकेतम् in illustration of Katyáyana's rule of the Imperfect tense.[4] The

---

1. Pandit Satyavrata Sámas'rami's Introduction to Nirukta, Vol. IV, fasciculus VII. p. त्रि.

2. Prof. S. B. Dikshita's Early History of Indian Astronomy, pp. 107-108.

3. Early History of the Deccan, second edition p. 9.

4. Vyákarana Mahábháshya, Vol. II, p. 119. Bombay Sanskrit series.

Yavana alluded to here is the Indo-Bactrian prince Menander. Dr. Bhandarkar observes that "according to Strabo, as Goldstücker has stated, Menander pushed his conquests up to the Jumná (Yamuná) river. The Indo-Bactrian dynasty became extinct in B. C. 85, according to Lassen. In the Gárgî Samihitá the Yavanas are mentioned as having conquered Sáketa, Panchála, and Mathurá, and penetrated even to Kusumapura or Pátaliputra. Of the Indo-Bactrian kings, Menander was the one who seems to have come in close contact with the Indians. There is a work in Páli entitled Milindapanho which gives an account of a religious conversation between a Yona king of the name of Milinda and a Buddhist sage of the name of Nâgasena. Milinda has been identified with Menander. There is, therefore, every probability that it was Menander that laid seige to Sáketa alluded to by Patanjali." And further on he observes :—"that the Indians called the Greeks only Yavanas during the three centuries preceding the Christian era and about as many after, is a fact. As'oka calls Antiochus, king of Syria, a Yona-râja.[1] Milinda or Menandar is so styled in the Milindapanho and in the Gârgî Samhitá the Yavanas are spoken of as good astronomers, wherefore the Greeks must have been meant. Kanishka and his successors are called Turushkas in the Râjataranginî, and the Indo-Scythians, who overran a large part of the country, were called S'akas. Persians or Parthians are spoker of as Palhavas ; and the Huns, who poured into the country later, are styled Hûnas. So that during this early period, each of these foreign races was called by a distinctive name and there was no confusion. By the name Yavana, Patanjali, therefore, could

---

1. अन्तियोक नाम योणराज । परञ्च तेनान्तियोकेन चतुरराजनि। तुरमाये नाम अन्तिकीन नाम मक नाम अलिकसन्दरे नाम। These five names are those of Antiochus of Syria, Ptolemy of Egypt, Antigonus of Macedon, Magas of Cyrene, and Alexander of Epiros. They were contemporaries of As'oka, and the latter made treaties with them, and with their permission sent Buddhist missionaries to preach the religion in those countries. R. C. Dutt's History of India, IV, I., p. 468. See also the thirteenth edict of As'oka.

not have meant a prince of any other than the Greek race.[1]" Gautama's Dharmas'âstra contains a reference to Yavana. Gautama quotes in IV, 21, an opinion of 'some', according to which a Yavana is the offspring of a S'udra male and a Kshatriya female. "Now," observes Dr. Bühler, "it is well-known that this name is a corruption of the Greek Ionian, and that in India it was applied, in ancient times, to the Greeks, and especially to Bactrian and Indo-Bactrian Greeks, who ruled in the second century B. C. over a portion of Northern India. As there is no historical evidence to show that the Indians became acquainted with the Greeks before the invasion of Alexander in the fourth century B. C., it has been held that works containing the word Yavana cannot have been composed before 300 B. C."[2] But this statement of the learned Doctor carries no weight, since, as mentioned before, Prof. S. B. Dîkshita has, with astronomical evidence, proved that in the beginning of the fifth century B. C., the zodiacal signs or the Rás'îs were first introduced in the oldest Vasishtha Siddhânta. And since Pánini, as said above, mentions the Yavana alphabet, it follows from this that in the beginning of the seventh century B. C. the Yavanas had settled in India and the people of this country had recognised their language. Or if we believe the statement of Pandit Satyavrata Sámas'rami who places Pânini somewhere in B. C. 2400, the Yavanas no doubt secure undisputed higher antiquity in this land. In his introduction to Nirukta Pandit Satyavrata Sámis'rami has proved from the internal evidence which Pânini furnishes the date above referred to;[3] and we see no reason why we should question the genuineness of this date.

---

1. Dr. Bhándárkar's paper on the date of Patanjali pp. 16-17 and also pp. 20-22. Mudrárákshasa by K. T. Telang, Intro., p. xxix.

2. Sacred Books of the East, Vol. II. Part I. Introduction, p. lvi., and the *note*.

3. Pandit Satyavrata Sámis'rami's Introduction to Niruktta, Vol. VI. fasciculus VII. pp. ञि—ङि.

In the Sabhâparvan of the Mahâbhárata we also find serveral allusions to the Yavanas, [1] the Hú*n*as, the S'akas, the Palhavas, the Kirâtas and other barbarians of foreign nations. Anando-ram Booroosh says that "the history of the dark Yavana is a sufficient refutation of the opinion that the Yavanas were Ionians or Greeks as its latest advocate puts. [2] In the Mahâbhárata we have not only western Yavanas who went with the Kámboja prince to fight on the side of Suyodhana, but also eastern Yavanas who came to the Rájasúya festival with the chief of Kâmarùpa and southern Yavanas, who were subjugated by Sahadeva. There is, therefore, no doubt whatever that the term Yavana was never restricted to the Greeks—an opinion which, so far as I can see, rests on mere surmises and no evidence whatever." This assertion of the late lamented Sanskritist finds a corroboration in the quotation from the Gautama Dharmas'ástra as mentioned before, and is also supported by the author of the Rámáya*n*a. But of this, further on. And the investigator goes on saying that "in the U*n*âdi Sùtras (II. 74.) the word is derived from यु meaning (says Ujjvaladatta) 'to mix' in which it would mean (mixed *i. e.*) a mixed race." 'I have already explained,' observes he 'that Mlechchha was the generic name for all bordering barbarians or aboriginal tribes. The Kirâtas—the Pulindas—the S'abaras were all Mlechchhas. [3] Yavana seems to be the generic name for all Mlechchhas who were advanced in civilization and from whom our ancestors had no scruples to learn. Dr. Kern quotes a verse from the Gârgî Sanhitâ which is very interesting in this

---

1. "प्राग्ज्योतिषाधिपः शूरो म्लेच्छानामधिपो बली । यवनैः सहितो राजा भगदत्तो महारथः" ॥ Sabháparvan 31. 71-2. Bengal edition.

पाण्ड्यांश्च द्रविडांश्चैव सहितांश्चोड्रकेरलैः । आन्ध्रांस्तालवनांश्चैव कलिङ्गानुष्ट्रकर्णिकान् ॥ आटवीश्च पुरीं रम्यां यवनानां पुरं तथा । दूतैरेव वशे चक्रे करश्चैनानदापयत् ॥ Sabháparvan 31. 71-72. ततः सागरकुक्षिस्थान् म्लेच्छान्परमदारुणान् । पह्लवान्बर्बरांश्चैव किरातान्यवनाञ्शकान् ॥ Sabháparvan 32. 16, 17. Bom. edi.

2. Dr. Kern's B*r*ihatsanhitá, preface.

3. "भेदाः किरातशबरपुलिन्दा म्लेच्छजातयः" Amara II. 10, 20.

respect.' [1] In the Bâlakâ*nd*a and the Kishkindhâkâ*nd*a of the Râmâya*n*a we also find several allusions to the Yavanas. [2] The Kathâsaritsâgara makes mention of the Yavanas and other foreign tribes. [3] In the Mânava-Dharmas'âstra a reference is made to the Yavanas along with the Kâmbojas and the S'akas. [4] "For an answer to the question," observes Dr. Bühler, "whether our Manu-sm*r*iti can go back to a higher antiquity, and how much older it may be, we have at present very scant data. Its posteriority to the twelfth and thirteenth Parvans of the Mahâbhârata teaches us, as already stated, nothing definite. But there is a passage in its tenth chapter, VV. 43-44, which has been frequently supposed to convey, and probably does contain, a hint regarding its lower limit. There the Kâmbo-

---

1. " म्लेच्छा हि यवनास्तेषु सम्यक् शास्त्रमिदं स्थितं ।
ऋषिवत्तेऽपि पूज्यन्ते किं पुनर्दैवविद्द्विजः ॥

'The Yavanas are indeed Mlechchhas, but amongst them this science (astronomy) is firmly established. Hence they are honoured, as though they were *Rishis*; how much more then an astrologer who is a twice-born man!' Dr. Kern's preface, p. 35; see also B*r*ihatsanhitâ, II. 15.

2. " तस्या हुंभारवोत्सृष्टाः पह्लवाः शतशो नृप । नाशयन्ति बलं सर्वं विश्वामित्रस्य पश्यतः । स राजा परमक्रुद्धः क्रोधविस्फारितेक्षणः । पह्लवान्नाशयामास शस्त्रैरुच्चावचैरपि । विश्वामित्रार्दितान्दृष्ट्वा पह्लवाञ्शतशस्तदा । भूय एवासृजद्घोराञ्छकान्यवनमिश्रितान् । तैरासीत्संवृता भूमिः शकैर्यवनमिश्रितैः " ॥ Canto 54. " योनिदेशाच्च यवनाः शकृद्देशाच्छकाः स्मृताः । रोमकूपेषु म्लेच्छाश्च हारीताः सकिरातकाः " ॥ Canto 55, Bàlakâ*nd*a. " तत्र म्लेच्छान्पुलिन्दांश्च शूरसेनांस्तथैव च । प्रस्थलान्भरतांश्चैव कुरूंश्च सह मद्रकैः । कांबोजयवनांश्चैव शकानां पत्तनानि च । अन्वीक्ष्यवरदांश्चैव हिमवन्तं विचिन्वथ ॥ " Canto 43, Kiskindhâkâ*nd*a.

3. सिन्धुराजं वशीकृत्य हरिसैन्यैरनुद्रुतः । क्षपयामास च म्लेच्छान्राघवो राक्षसानिव ॥ तुरुष्कतुरगत्राताः क्षुब्धस्याब्धेरिवोर्मयः । तद्गजेन्द्रघटा वेलावनेषु दलशो ययुः ॥ गृहीतारिकरः श्रीमान्पापस्य पुरुषोत्तमः । राहोरिव स चिच्छेद पारसीकपतेः शिरः ॥ हूणहानिकृतस्तस्य मुखरीकृतदिङ्मुखा । कीर्तिर्द्वितीया गंगेव विचचार हिमाचले " ॥ Tara*n*ga 20, p. 84, Nir*n*ayasâgara edition.

4. " पुण्ड्रकाश्चोड्रद्रविडाः काम्बोजा यवनाः शकाः ।
पारदाः पह्लवाश्चीनाः किराता दरदास्तथा " ॥

B*r*igusm*r*iti, X. 44.

jas, Yavanas, S'akas, and Pahlavas are enumerated among the races which, originally of Kshatriya descent, were degraded to the condition of S'ûdras in consequence of their neglect of the Brâhma*n*as. As the Yavanas are named together with the Kâmbojas or Kâbulîs exactly in the same manner as in the edicts of As'oka, it is highly probable that Greek subjects of Alexander's successors and especially the Bactrian Greeks are meant. This point, as well as the mention of the S'akas [1] or Scythians, would indicate that the S'lokas could in no case have been written before the third century B. C." Dr. Bühler assigns the second century B. C. to the composition of the Bh*ri*gu Samhitá. He says that "this estimate of the age of the Bh*ri*gu-Samhitá according to which it certainly existed in the second century A. D., and seems to have been composed between that date and the second century B. C., agrees very closely with the views of Prof. Cowell and Mr. Talboys Wheeler." [2] The Bh*ri*gu-Samhitá contains no allusion to the Greek order of the planets, to the zodiac, to judicial astrology, and to Greek or Scythian Dinâras, Drammas and Ná*n*akas or other coins, while all the other secondary law books (such as those of Nárada and B*ri*haspati) mention one or the other of these foreign importations ; the omission, it appears, may be purely accidental. Dr. Bühler says that "these and similar points can be used for no other purpose than to show that there is nothing in Manu's text that compels us to place it in or after the period between 300-500 A. D., during which Greek influence made itself strongly felt in India." [3] From innumerable instances which the Mánava-Dharmas'ástra furnishes in support of the time of its composi-

---

1. The earliest mention of the S'akas probably occurs in a Vàrttika of Kàtyáyana of Pâ*n*ini VI, 1, 94, where S'akandhu is explained by S'aka + andhu. According to the traditional explanation the compound means 'the well of the S'aka king.' Sacred Books of the East, Vol. XXV. pp. cxiv-cxv., of the Introduction.

2. Sacred Books of the East, Vol. XXV. Introduction, p. cxvii Elphinstone, History of India, p. 249. History of India, Vol. II. p. 422. See also the Introduction of tho same. p. cvii., and the *notes*.

3. Sacred Books of the East, Vol. XXV. Introduction p. cv.

tion and from several allusions direct or indirect to almost all the Dars'anas which were extant at the time and from similar positive evidences Pandit Satyavrata Sámis'rami has with admirable literary acumen conclusively proved 900 B. C. to be the higher and 788 to be the lower limit in which the Mánavadharmas'âstra must have been composed.[1] And to us the statement of the learned Pandit appears most convincing.

In the thirteenth edict the king Piyadasi (प्रियदर्शी) or As'oka mentions his conquest of the vast kingdom of Kalinga. The edict also gives the following :—" Among his neighbours, Antiochus, king of the Yavanas, and beyond Antiochus, four kings, Ptolemy, Antigonas, Magas, and Alexander ; to the south among the Cholas, Pá*nd*yas, as far as Tambapanni, and also the He*n*arája Vismavasi ; among the Yavanas and the Kámbojas, the Nábhakas and the Nâbhapantis, the Bhojas, and the Petenikas, the Ândhras, and the Pulindas ;—everywhere they conform to the religious instructions of the beloved of the Gods. "[2] The Bactrian-Greeks came in contact with the Maurya kings before the close of the third century B. C., and settled over the Panjáb and Sindh. In the times of As'oka (B. C. 240) there was in Kâ*th*iavä*da*, a Yavana viceroy of the emperor.[3] In the early part of the second century B. C., the Yavanas conquered Taxila (Takshas'ílá) and were powerful about 180 B. C. Pushpamitra, as mentioned before, pushed them back to their northern home, but they must have remained in the frontier provinces till the invasions of the Indo-Scythians.[4] From the above-mentioned allusions to the Yavanas in the early works, it is clear that Kâlidâsa's allusions to the Yavanas cannot be referred to the middle of the sixth century A. D., but to an early period before the beginning of the Christian era.

---

1. See Pandit Satyavrata Sámis'rami's Introduction to Nirukta Vol. IV. fasciculii 6-7 pp. चौ-ज.

2. R. C. Dutt's History of India, IV. Chap. I. p. 467.

3. J. B. B. R. A. S. Vol. XVIII, p. 47, essay on Sudars'ana.

4. Gen. Cunningham's Archæological Survey, Vol. II. p. 41.

From the statements made before, it is thus clear that Kálidása cannot have borrowed his knowledge of astronomy from Âryabhata who flourished in the fifth century A. D., and that he was not his predecessor. But he may probably be placed somewhere in the latter half of the first century B. C., or in the period when the great Vikramáditya was reigning at Ujjayinî. As mentioned before the earliest general allusions to Hûna are mostly found in the Mahábhárata, Gunâdhya's Brihatkathâ and other ancient works. Gunâdhya's work is preserved to us through translations by Kshemendra and Somadevabhatta respectively. The Brihatkathâ is generally believed to have been composed in the Pais'âchî language at the close of the third and the beginning of the second century B. C., the period to which is also assigned the composition of the *Riggrihyaparis'ishta*, Atharvajyotish and the Smriti of Yájnavalkya.[1] Anundoram Borooah says that "the Hûnas are evidently the Nomadic tribe of Huns, who dwelt for some centuries in the plains of Tartary and were a great scourge to the Chinese and Roman possessions."[2] Gen. A. Cunningham in his Ephthalites or White Huns, Transactions of the Ninth Congress of Orientalists, says that the occupation of the countries on the Oxus by the Húnas or the White Huns can be traced from the beginning of the fifth century A. D., but the connection of the Hûnas with India cannot be traced till near the end of the fifth and the beginning of the sixth century. From this statement of the distinguished Orientalist it may be inferred that the Húnas had occupied the countries on the Indus from the earliest times and that they were making a slow but continuous progress towards proper India. And in the sixth century they had, as mentioned before, extended their power as far as Central India. But the fact that they were establishing their power from the earliest times *i. e.* from the beginning of the third century B. C., cannot be denied. That the materials on which to lay

---

1. Prof. S. B. Dikshita's Early History of Indian Astronomy, p. 395, *foot-note*. J. B. B. R. A. S. Vol. XVII. Part II. p. 8.

2. A. Borooaha's Ancient Geography of India, para 58, p. 51.

a solid foundation of their early history are now beyond the reach of researchers and investigators does not go to establish that the Hûnas from their northern home had not pushed their conquests slowly but vigorously towards the south-west and established their power long before the beginning of the Christian era. Towards the middle of the second century or thereabouts the Húnas, as mentioned before, had finally established their northern home (that is to say they occupied the countries to the north of Kâbul) may now be relied on. This view is also supported by the Mahâbhárata in which the mention of the Hûnas is distinctly made. [1] Prof. S'ankara Bâlkrishna Dîkshita, one of the well-known astronomers on this side of India, concludes, as mentioned before, from the astronomical allusions in the epic itself, that the Mahâbhârata was in existence between 3000-1500 B. C. in India. Since then it may be presumed that the Hûnas might have been making inroads in India, sometimes by rendering assistence to the powerful kings and sometimes undertaking invasions themselves. Thus for centuries together they must have been carrying these inroads and afterwards towards the middle of the second century they must have established their power and must have made the northern countries of Kábul their home.

Another proof these investigators adduce in support of the second half of the sixth century is their reference to the Singálese well-known tradition [2] which, according to them, makes Kálidâsa contemporary of Kumáradása the king of Ceylon, who, it may be presumed, ascended the throne in A. D. 515 It is said that this Kumâradása the scion of the Maurya dynasty was according to the ' Pujâvalî ' the son of Mudgalâyana or Moggallana and a celebrated Sanskrit poet. After a glorious reign of about nine years he is said to have perished by throwing himself on the funeral pile of his friend Kálidâsa. This tradition is also narrated by a Ceylonese work called

---

1. रामठान्हारहूणांश्च प्रतीच्याश्चैव ये नृपाः । तान्सर्वान्स वशे चक्रे शासनादेव पाण्डवः ॥ Sabháparvan Ady. 32. St. 12.

2. Orientalist, Vol. II. p. 220.

'Perakumbâsivita.' Principal Dharmârâma Sthavira gives the following account in his Sinhalese edition of the Jânakîhara*n*a. It is said that Kumâradâsa was in the habit of frequenting the mansion of a beautiful courtezan, to whom, it is alleged, he was firmly attached. On one of these visits he happened to write on the wall the following lines :—

" कमले कमलोत्पत्तिः श्रूयते न तु दृश्यते "

'It is heard but not seen that a lotus grows on a lotus' and under these lines a notice of a munificent reward for the person who would complete the Samasyâ. Kâlidâsa, then on a visit to the great royal bard, whose poem he had seen in India, took lodgings that evening, as fate would have it, in the same mansion, and happening to see the lines written on the wall completed the Samasyá by adding the following,

" बाले तव मुखाम्भोजे दृष्टमिन्दीवरद्वयम् " ॥

'Damsel, on the lotus of thy face is (actually) seen a pair of blue lilies.' The courtezan, to whom, perhaps the poet meant the Samasyâpúra*n*a to be a compliment, influenced by the evil desire of securing the promised reward, murdered the illustrious poet in cold blood that very night and concealed his body. When the king visited her next morning, she demanded the notified reward as the author of the Samasyâpûra*n*a, but the king, detecting in it the highest genius of a true poet, would not believe her, but on the contrary insisted on her disclosing the real author. On being threatened the murderess confessed her crime ; when the corpse of Kâlidâsa was brought out, the sorrow and the consternation of the king knew no bounds. He at once ordered a grand funeral in honour of the renowned bard ; and when the pile was lighted, the generous-hearted monarch, overwhelmed with sorrow, sprang into fire and was soon consumed by the flames together with his brother poet. Five queens of his harem instantly followed his example. But how far this story conveys the historical truth it is for the reader to judge. This story

is also attributed to Kâlidâsa's wife, [1] at least in this part of the country. From the above episode it can be inferred that Kumâradása was one of the greatest admirers of Kálidâsa's poetical productions. And this is almost literally true when we but compare his Jánakîhara*n*a with any of the Kávyas of our poet, especially his Raghuvans'a. His Jânakîhara*n*a is no doubt a close imitation of Kálidása's great epic, to which, we may add, it is not inferior either in quality or in quantity. Most of his verses are saturated with the legends of Râmâya*n*a and with the style of Kâlidâsa. Kâlidâsian words, phrases, metres and Alankâras are interwoven in almost every verse of his poem. [2] But there is a marked difference between the styles of these two poets. The artificiality of diction which is observable in Kumâradâsa will justify us in supposing an interval of about a century at the most to have elapsed between him and Kâlidâsa. Both Kâlidâsa and Kumâradâsa have chosen for the subject of their poems an illustrious line of the kings sprung from the sun. Kumâradâsa in the first Canto of his Jánakîhara*n*a mentions a powerful Yavana king [3] and the Turush-

---

1. The name of Kâlidâsa's wife, according to Dr. Bhau Daji, was in all likelihood Kamalá. But the learned doctor, it appears, has not given any clue as to how he found out this name and where is it recorded? See Literary Remains of Dr. Bhau Daji, p. 51.

2. See Canto I. Sts. 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 16, 17, 21, 22, 24, 26, 27, 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35, 36, 38, 39, 40, 43, 44, 45 &c. In fact the first Canto of this poem is exactly a counterpart of the ninth and his second that of the tenth Canto of the Raghuvans'a, differing just only in some description. Except a few verses in the Kàvya, the whole poem appears to us no doubt a successful imitation of the prince of poets.

3. See Kumáradása's Jánakîhara*n*a, Canto I. Sts. 19-20.

विनिर्जितोऽप्यस्य शरेण घातं लब्ध्वासुरासुप्रघसाद्युधस्य ।
आत्मानमन्यैरसमानमानं मेने मनस्वी युधि यावनेन्द्रः ॥ १९ ॥

This verse also admits of a different reading in two of the Ceylonese Mss., but the majority of the Ceylonese as well as Indian Mss. omits this. The reading is as follows :—अस्यासुरासुप्रघसाद्युधस्य शरेण लब्ध्वा यवनोऽभिघातम् । आत्मानमन्यैरसमानमानं । मेने मनस्वी युधि निर्जितोऽपि ॥

kas[1] in general ; while in Kâlidâsa's works we find an allusion to the Hûna kings[2] and the Yavanas.[3] Now then it is obvious that both Kâlidâsa and Kumâradâsa have mentioned the Yavanas. From Kâlidása's works it appears that he considers them to be foreigners, probably Indo-Bactrians or Greeks who might have been carrying inroads or living upon war ; and their women might also have been assisting them in carrying their arms in such excursions. It is thus plain that Kálidása does not attach any importance to this Yavana tribe. But Kumáradása distinctly tells us that his hero defeated a Yávanendra or a mighty Yavana king. If Kâlidása is held to be the contemporary of the author of the Jánakîharana, his omission of this Yavana king appears to us suspicious. Like Kumâradâsa, Kálidâsa ought to have mentioned this powerful Yavana king somewhere in his history of the Raghus or his other works ; but since he does not mention this king, it appears probable that he was never a contemporary of the Ceylonese poet. Kâlidâsa in his works shows a perfect knowledge of the history and geography of India. He, no doubt, alludes to the Húna chiefs or perhaps the Hûna kings in his Raghuvans'a ; but the royal poet of Ceylon is silent on this point and simply makes mention of the Turushkas. As mentioned before Kanishka and his successors are called Turushkas in the Râjatarangini, in his paper on the date of Pâtanjali by Dr. Bhandarkar, and in R. C. Dutt's History of India ;[4] it follows from this that the ancient Aryas had no doubt a distinct notion of the names of each of these foreign races and had made no confusion whatever. Thus then Kumâradâsa had a distinct notion of the Turushka descendants

---

1. तेजश्छलेनाथ हुताशनेन श्रीवासरम्यं प्रदहन् तुरुष्कम् ।
धूपैरिवासक्तगतैर्यशोभिराशीयमन्तं सुरभीचकार ॥ २० ॥

2. Raghuvans'a Canto IV. St. 68.

3. R. IV. St. 61. S'a. II. p 62, Monier William's second edi. S'a. VI. p. 265. Vi. p. 134. Bom. Sans. series first edition. Mv. V. p. 153. Bom. Sans. series second edition.

4. Romesh Chundra Dutt's History of India, first edition Chap. 14.

of Kanishka and as such he has not substituted the term for the Hú*n*as. In the same way Kâlidâsa also holds silence about the Turushkas. From Kâlidâsa's silence about the Turushkas and that of the Ceylonese poet about the Hú*n*as, are we then to infer that both these poets had a knowledge of these foreign races whose names they omit in their works. Had they but kept a total silence about these foreign people, it would have meant something. But since such is not the case with them, their silence cannot be interpreted in a different sense. Because both these poets have used the word Yavana in a different sense. Kumâradása does not here speak of the Yavanas *generally* but as a powerful king holding his sway over some territories of north-western India; while Kâlidâsa speaks of them in general. Thus then it is clear that both these poets were never contemporaries of each other and their mention of the Hú*n*as and the Turushkas had also a different import.

The following words are used by Kumâradàsa in his Jânakîhara*n*a ; but Kálidâsa nowhere uses them :—कीनाश, ii. 27, धिषण, ii. 33, चीरि, ii. 36, कृकवाकु, ii. 45, वृषाकपि fire, ii. 59, क्लमथुमत्, ii. 60. शायिका a sleep, ii. 72, मद्गुः, iii. 30, नमस्या, salutation, iv. 30, vii. 1, 57. xii. 40, क्लमथः, iv. 51. तुन्दुमः a mouse, iv. 55, vii. 11, करीरि the tusk of an elephant, v. 36, शाक्य a Buddhist philosopher or a follower of Buddha, v. 55, ब्रध्न the sun, vi. 6, स्थपुट uneven ground, vi. 10, उद्दालिका a worm, vi. 11, विटंक in the sense of कपोतपालिका, vi. 22, 23, संदोह vi. 30, सप्ततन्तुः a sacrifice, vi 34. विसस्रा an old age, vi. 35, this word occurs more than four times; अहिर्बुध्न, vi. 45, समुद्ग in the sense of संपुट, vi. 45, कलत्र in the sense of श्रोणिप्रदेश, vii. 20, स्थामन् vii. 20. धिष्ण्य a dwelling, vii. 37. आम्रेडित vii. 40, xii. 15, निधुवन viii. 22, 27, सृजा viii. 34, कुहचित् viii 53, क्षय an abode, ix. 10, समज्या x. 4. वल्लवः x. 31, शक्रु a flatterer, x. 48 संघाटः x. 57, xi. 95, तनूनपात् x. 69, ककच xi. 70, xiii. 36, अलात xi. 74, प्रणीवाकविधिः an act of saluting, xii. 52 ; and some others. Of the list the words धिष्ण्य, निधुवन, अलात and चार are found in Kálidása's works. These words appear to us a later addition to Sanskrit literature. Except five or six most of these words are not found even in As'vaghosha's Buddhacharita. But

these words are generally used in the Buddhist works such as Lalita-Vistara and others. Kshemendra in his Auchitya-vichácharchá quotes the following verse and assigns it to Kumâradása. The verse is as fallows :—

" अयि विजहीहि दृढोपगूहनं त्यज नवसंगमभीरु वल्लभं ।
अरुणकरोद्गम एष वर्तते वरतनु संप्रवदन्ति कुक्कुटाः ॥ "

The fourth line of this verse also occurs in Pata*n*jali's Mahâbhâshya [1] and in the U*n*âdi Sûtras annotated by Ujjvaladatta. [2] But the printed edition of the Jânakîhara*n*a by Pandit Haridása S'ástri does not give the S'loka. The authorship of the verse in question has been discussed by many scholars and able orientalists. Mere occurrence of certain names after certain verses is often untrustworthy. Dr. Bhandarkar says, " such mistakes are by no means uncommon in anthologies ; and therefore the mere fact of the occurrence of the name of a certain poet after a certain verse in manuscript of anthology ought not, without corroborative evidence, to be made the basis of far-reaching historical conclusions. For instance, the stanza one *páda* of which वरतनु संप्रवदन्ति &c., is quoted by Pata*n*jali is fully given by Kshemendra and attributed to Kumâradása, and this fact has been used as a reason for bringing down the date of Pata*n*jali. But the same *pâda* is attributed by Râya-muku*t*a to Bhâravi (p. 419) to whom also the whole stanza as given by Kshemendra is ascribed in the Chhandoma*n*jarî. This throws such a doubt on the authorship of the stanza as to make it of little use in determining Pata*n*jali's date. And supposing that it belongs to any one of the two, that does not, by any means, make Patanjali later than either. Another explanation is quite possible, *viz*., that the *pâda* was taken from Pata*n*jali, and three other were composed and added by either of the later writers in the way of what is known as Samasyá-pûra*n*a. " [3] And it has been held by the antiquarians that

1. Dr. Kielhorn's edition of the Mahábháshya, Vol. I. p. 283.
2. See Ujjvaladatta's commentary on I. 82. Aufrecht's edi.
3. (पत्रे २९२ ॥ १ ॥ ९ तनुपदव्याख्याने)
" वरतनु संप्रवदन्ति कुक्कुटाः इति भारवि । " Dr. Bhandarkar's report on the search for Sanskrit Mss, 1883-84, p. 56, and the additions &c.

works containing the word Turushka cannot have been composed before the beginning of the Christian era. Lyric poetry, it appears, must have been reached its highest perfection long before the date of Pata*n*jali. From this we can infer that Kumáradâsa must have flourished a hundred years after Kálidása; and a century after him must have flourished As'vaghosha the Buddhist poet and philosopher.

The volumes of the Indian Antiquary, the Journals of the Royal Asiatic Societies, the reports of the Archæological Survey, and the reports on the search for Sanskrit manuscripts furnish us with inexhaustible information as regards everything that is most valuable to researchers. These volumes are in fact a mine of useful information. Dr. Fleet, Dr. Bühler, Dr. Kielhorn, Dr. Bhandarkar, Dr. Peterson and other orientalists have made meritorious discoveries. Dr. Kielhorn has made out a list of quotations occurring in Pata*n*jali's works and it appears that the quotations are from a poet who must have lived after Kâlidâsa. Let us now consider the new discoveries made by Dr. Bühler and Dr. Kielhorn, and follow up a line suggested by distinguished orientalists like Dr. Goldstücker and Dr. Peterson. The line of thinking and researches which these scholars have suggested from time to time is, in our opinion, simply unrivalled and every worker in the field of Sanskrit literature ought to follow it with a feeling of gratitude. Dr. Bühler says that Vatsabhutti, who composed the verses of the Mandasòr inscriptions, was not himself an original poet. The learned doctor has pointed out his mistakes even when he is copying the best poets. He composed the verses of the said inscriptions in 472 A. D., and it is clear, therefore, that his best poets whom he copies lived before that date.

The tenth verse of this inscription runs thus :—

" चलत्पताकान्यबलासनाथान्यत्यर्थशुक्लान्यधिकोन्नतानि ।
तडिल्लताचित्रसिताभ्रकूटतुल्योपमानानि गृहाणि यत्र ॥ "

This is, we think. copied from Kálidása's Uttaramegha and *R*itusamhâra.

विद्युत्वन्तं ललितवनिताः सेन्द्रचापं सचित्राः
संगीताय प्रहतमुरजाः स्निग्धगंभीरघोषम् ।

अन्तस्तोयं मणिमयभुवस्तुङ्गमभ्रंलिहाग्राः
प्रासादास्त्वां तुलयितुमलं यत्र तैस्तैर्विशेषैः ॥ १ ॥
ससीकराम्भोधरमत्तकुञ्जरस्तडित्पताकोऽशनिशब्दमर्दलः ॥ *Ri.* II. 1.

In the next verse the epithets of which are of course based on our poet's expressions of the *Ri*tusamhára, Meghadúta and Kumárasambhava,Vatsabhutti depicts the ideas of music and painting :—

" कैलासतुङ्गशिखरप्रतिमानि चान्यान्याभान्ति दीर्घवलभीनि सवेदिकानि।
गन्धर्वशब्दमुखराणि निविष्टचित्रकर्माणि लोककदलीवनशोभितानि ॥ "

The composer of the inscriptions must have had the following couplets running in his mind—

काञ्चीगुणैः काञ्चनरत्नचित्रैः । *Ri.* 4, 4.

चित्रार्पितचेष्टया किमेव मयि । Mv. IV. 10.

न च सुवदनामालेख्येऽपि प्रियामसमाप्य ताम् । Vi. II. 10.

सादृश्यप्रतिकृतिदर्शनैः प्रियायाः । R. VIII. 91.

बाष्पायमाणो बलिमन्निकेतम्
आलेख्यशेषस्य पितुर्विवेश । R. XIV. 15.

यद्यत्साधु न चित्रे स्यात् । S'a. VI. 146.

बाष्पस्तु न ददात्येनां द्रष्टुं चित्रगतामपि । S'a. VI. 154.

चित्रार्पितां मुहुरिमां बहुमन्यमानः । S'a. VI. 148.

चित्रगताया देव्याः परिजनमध्यगताम् &c. Mv. I.

ननु एष चित्रगतो भर्ता । Mv. IV

अथवा तत्रभवत्या उर्वश्याः प्रतिकृतिमालिख्यावलोकयंस्तिष्ठ । Vi. II.

आसेदुषोः सद्मसु चित्रवत्सु । R. XIV. 25.

चित्रे निवेश्य परिकल्पितसत्त्वयोगा । S'a. II. 43.

चित्रकर्मपरिचयेनाङ्गेषु त आभरणविनियोगं कुर्वः । S'a. IV.

तस्मिन्मे चित्रफलकगतां स्वहस्तलिखितां तत्रभवत्याः शकुन्तलायाः प्रतिकृतिमानय । S'a. VI.

स्मृतिकारिणा त्वया मे पुनरपि चित्रीकृता कान्ता । S'a. VI. 153.

चित्रार्पितारम्भ इवावतस्थे । Ku. III. 42. R. II. 31.

चित्रगतायामस्यां कान्तिविसंवादशङ्कि मे हृदयं । संप्रति शिथिलसमाधि मन्ये येनेयमालिखिता ॥ Mv. II.

चित्रशालां गता देवी प्रत्यग्रवर्णरागान्वितलेखामाचार्यस्यालोकयन्ती तिष्ठति । Mv. I.

We meet with many allusions to music and dancing in the first act of the Mâlavikágnimitra, in the fifth act of the S'ákuntala, in the second and third acts of the Vikramorvas'íyam, in the 39th verse of the first and the 40th verse of the thirteenth Canto,

and the 19th Canto of the Raghuvans'a, and in the *Ri*tusamhâra;[1] and some allusions are also found in the Kumárasambhava and Meghadûta of our poet. And music and the art of dancing must have reached their highest perfection long before his time. Again, Vatsabhutti writes—

" रामासनाथभवनोदरभास्करांशुवह्निप्रतापसुभगे जललीनमीने ।
चन्द्रांशुहर्म्यतलचन्दनतालवृन्तहारोपभोगरहिते हिमदग्धपद्मे ॥ "

Dr. Kielhorn points out the similarity between the idea in this verse and those in Kálidâsa's *Ri*tusamhára, V. 2,3. (S'is'iravar*n*aná), which run—

निरुद्धवातायनमन्दिरोदरम्
हुताशनो भानुमतो गभस्तयः ।
गुरूणि वासांस्यबलाः सयौवनाः
प्रयान्ति कालेऽत्र जनस्य सेव्यताम् ॥
न चन्दनं चन्द्रमरीचिशीतलम्
न हर्म्यपृष्ठं शरदिन्दुनिर्मलम् ।
न वायवः सान्द्रतुषारशीतलाः
जनस्य चित्तं रमयन्ति सांप्रतम् ॥

From this it seems clear that Kâlidása's works must have been in existence long before A. D. 472. This seems likely enough. And we know already from the Aiho*l*e Mêgu*t*i inscription that the fame of Kálidâsa, as also of Bhâravi, was completely established far to the south of Mandasôr before A. D. 634.[2] And thus Kálidása cannot come up to the middle of the sixth century A. D.

In his S'ákuntala Kálidása brings in some idea of the law of inheritance and the law of theft as prevailing in his times. In the sixth Act the prime-minister submits a report of the case he has decided. The pratîhârî hands it over to the king, and he reads the following :—" A merchant named Dhanamitra trading on the seas died in a ship-wreck ; and the poor man is with-

---

1. *Ri.* I. 3, 8. II. 6, 14, 16. III. 10, 13, 23. VI. 29, 32. Ku. I. 45. III. 38, 40. Megh. II. 5, 10, 25.

2. Corpus Inscriptionum Indicarum, Vol. III. The Gupta Inscriptions, p. 83. Indian Antiquary, Vol. XV., p. 198. Indian Antiquary, Vol. XIX., p. 285.

out issue; and thus the whole of his immense property becomes by law forfeited to the king." The king then inquires and says :—"If he was wealthy, he must have had many wives. Let an inquiry be instituted whether any one of them is expecting to give birth to a child." A little further on the king says "the child in the womb has a right to his father's property." And this exactly corresponds with the law laid down by Vasis*th*a, for, he says "And (let it be delayed) until those (widows) who have no offspring, (but are supposed to be pregnant), bear sons." [1] And further in the 83rd he says,— "On failure of those two the king inherits."

From these passages in the S'ákuntala it is clear that in the days of Kálidása a widow was not entitled to inherit the property of her husband. The king orders an inquiry to be made, not whether there is a widow of the merchant who lost his life in the ship-wreck, but whether any one of his wives has a child in her womb, and the king's decree is that the child in the womb is entitled to receive his father's estate. The prime-minister appears to have inquired whether there was a child living, and not whether any one of the merchant's wives was with child, and our poet thus puts in the mouth of his principal character a most questionable point of law. We also find a similarity of decision in modern times. [2] From this it seems clear that our poet must have been conversant with the laws prevailing in his times, and thus it follows that a widow in his days was not entitled to her husband's estate, though the right of a child in the mother's womb was fully recognised. It is admitted that a widow's right to inherit was gradually recognised. Manu, Âpastamba, Baudhâyana and Vasis*th*a do not recognise a widow as heir to the property of her husband. Âpastamba says "On failure of sons the near-

---

1. Sacred Books of the East, Vol. XIV. part II. Chap. XVII. St. 41. Colebrooke V, Dig. CXVII ; Vyavahára Mayûkha IV, 4, 37. p. 88. Also the same series, verse 83, p. 93.

2. Mayne's Hindu Law, p. 544 (*d*).

est Sapi*nd*a (takes the inheritance)."[1] Nârada makes provision for her maintenance.[2] Kátyáyana says that a small part of the property of a widow's husband should be kept apart for her maintenance. Gautama recognises her share along with the Sapi*nd*as, Sagotras and with those connected by descent from the same *Ri*shi. For, he says : " Sapi*nd*as (blood relations within six degrees), Sagotras (relations bearing a common family name), (or) those connected by descent from the same *Ri*shi (Vaidika gotra), and the wife shall share (the estate) of a person deceased without (male) issue[3] (or an

---

1. Sacred Books of the East, Vol. II, part I. Pras'na II. Pa*t*ala 6, Kha*nd*a 14, St. 2. p. 132. " Haradatta declares that it is the opinion of Âpastamba, that widows cannot inherit. In this, observes Dr. Bühler, he is probably right, as Âpastamba does not mention them, and the use of the masculine singular, 'सपिण्ड:' in the text precludes the possibility of including them under that collective term. It seems to me certain, that Âpastamba, like Baudháyana, considers women, especially widows, unfit to inherit,'' See also Mayne's Hindu Law, pp. 576-577.

2. मृते भर्तर्यपुत्रायाः प्रतिपक्षः प्रभुः स्त्रियाः ।
विनियोगात्मरक्षासु भरणे च स ईश्वरः ॥ २८ ॥
परिक्षीणे पतिकुले निर्मनुष्ये निराश्रये ।
तत्सपिण्डेषु वासत्सु पितृपक्षः प्रभुः स्त्रियाः ॥ २९ ॥

XIII. व्यवहारपद, Biblio. Indi. series, p. 197.

28. " After the death of her lord, the relations of her husband shall be the guardians of a woman who has no son. They shall have full authority to control her, to regulate her mode of life, and to maintain her. "

29. " When the husband's family is extinct, or contains no male, or when it is reduced to poverty, or no one related to it within the degree of a Sapi*nd*a is left, the father's relations shall be the guardians of a woman. "

Sacred Books of the East, Vol. XXXIII. part I. Nárada. B*ri*haspati, p. 196.

3. Sacred Books of the East, Vol. II, part I. 302. XXVIII. 21 and 42. See also Colebrooke, Dàyabhága XI, 6, 25 ; Mitákshará II, 1, 18 ; V. Digest 440. My copies, observes Dr. Bühler, as well as Jîmûtavàhana and Vij*n*ànes'vara read in the text स्त्री वा, 'or the wife', instead of स्त्री च, 'and the wife'. Still the latter seems

appointed daughter)." And in the 42nd, he says "The king (shall take the property of men) of other (castes)." B*ri*haspati also seems to recognise her right to the estate of her deceased husband, for he says :—

47. "Of him whose wife is not dead, half his body survives. How should any one else take the property, while, half (his) body lives ? "

48. "Although Kinsmen (Sakulyas), although his father and mother, although uterine brothers be living, the wife of him who dies without leaving male issue shall succeed to his share."

49. "A wife deceased before (her husband) takes away his consecrated fire (Agnihotra); but if the husband dies before the wife, she takes his property, if she has been faithful to him. This is an eternal law."

As for immovable property he ordains thus :—

54. "A wife, although preserving her character and though partition has been made, is unworthy to obtain immovable property. Food or a portion of the arable land shall be given to her at will (for her support)."

55. "The wife is declared to succeed to her husband's property, and in her default, the daughter." [1]

S'ankha, Likhita, Yáj*n*avalkya and Vyâsa also admit the right of a widow. [2] In this way we find the gradual develop-

---

to be the reading recognised by Haradatta, as he says, 'But the wife is joined together (समुच्चीयते) with all the Sagotras and the rest. When the Sagotras and the rest inherit, then the wife shall inherit one share with them', &c. Âpastamba II, 6, 19, 2; Manu, IX, 187; Yáj*n*avalkya, II, 135-136.

1. Sacred Books of the East. Vol. XXXIII. part I. Nárada. B*ri*haspati, XXV. 47-49, 54-55, pp. 377-378.

2. पितृभ्यां यस्य यद्दत्तं तत्तस्यैव धनं भवेत् ।
पितुरूर्ध्वं विभजतां माताप्यंशं समं हरेत् ॥ १२३ ॥

Yáj*n*avalkya, II. p. 137.

"The wealth which is given to one by parents, belongs to him

ment of the right of a woman after the death of her husband. And it appears that this right of a widow is not recognised in the case brought before the king Dushyanta. Thus the composition of the drama of the S'ákuntala must be placed after Manu, Âpastamba, Baudhâyana and Vasis*th*a and before Nárada, Kâtyâyana, Gautama, B*ri*haspati, S'ankha, Likhita, Yáj*n*avalkya and Vyása. But since the law of Vasis*th*a exactly corresponds with the inquiry made by Dushyanta as regards a child in the womb, we should place the composition of the drama in question after Vasis*th*a. Prof. Julius Jolly assigns the first century A. D. to be the probable date to B*ri*haspati.[1] We must, therefore, place the S'âkuntala long before this date, and this is consistent with what we have said about the date of Kálidâsa.

The next point is one of Criminal Law. In the Praves'aka the policemen Súchaka and Jânuka, acting under S'yâla, the mayor of the city, get hold of the fisherman with a diamond ring, which they recognise to be the signet-ring of the king. The fisherman is at once charged with theft. The punishment that is expected for this offence by the policemen and the mayor is death. It would appear thus that for the theft of a gem there was capital punishment in the time of Kálidása. The policemen and the city mayor could not have expected this punishment simply because the ring belonged to the king, and it cannot be said so in a play like the S'âkuntala, which holds a mirror to the times of its composition. Ká-

---

alone. When sons divide after the death of the father, the mother should also receive an equal share."

असुतास्तु पितुः पत्न्यः समानांशाः प्रकीर्तिताः ।
पितामह्यश्च सर्वास्ता मातृतुल्याः प्रकीर्तिताः ॥

"The sonless wives of the father are declared equal sharers, and so are all paternal grandmothers declared equal to the mother." Ma*n*dalika's edition of Yàj*n*avalkya, English translation, pp. 216-217.

1. Sacred Books of the East, Vol. XXXIII. part I. Nárada. Brihaspati, introduction, p. 275. Dînara coins—reference to—West and Bühler, I. p. 448.

lidása's perfect acquaintance with the laws, customs, manners, arts, the schools of philosophy and science of his day are seen throughout his works.

Now let us trace the law of theft, especially the theft of a gem and precious things, from the times of Manu and others down to those of B*ri*haspati and Yáj*n*avalkya and see at what results we arrive. We find that the punishment for the theft of a gem has gradually been reduced from death to fine. Manu says that "property lost and afterwards found (by the king's servants) shall remain in the keeping of (special) officials ; those whom the king may convict of stealing it, he shall cause to be slain by an elephant." [1] And further he says that "for stealing men of noble family and especially women and the most precious gems, (the offender) deserves corporal (or capital) punishment." [2] Âpastamba says that "in case (a S'údra) commits homicide or theft, appropriates land (or commits similar heinous crimes), his property shall be confiscated and he himself shall suffer capital [3] punishment." He also says that "a thief shall go to the king with flying hair, carrying a club on his shoulder, and tell him his deed. He (the king) shall give him a blow with that (club). If the thief dies, his sin is expiated." [4] Baudháyana declares that "a thief shall go to the king with flying hair, carrying on his shoulder a club of Sindhraka wood (and say), 'Strike me with that.' (Then the king) shall strike him." "Now they quote also (the following verses). 'A thief shall go to the king carrying a club on his shoulder (and say to him), 'Punish me with that, O king, remembering the duty of Kshatriyas.' 'Whether

---

1. प्रनष्टाधिगतं द्रव्यं तिष्ठेद्युक्तैरधिष्ठितम् ।
यांस्तत्र चौरान्गृह्णीयात्तान्राजेभेन घातयेत् ॥३४॥ Manu, VIII,34.

2. पुरुषाणां कुलीनानां नारीणां च विशेषतः ।
मुख्यानां चैव रत्नानां हरणे वधमर्हति ॥३२३॥ Manu, VIII, 323.

3. Sacred Books of the East, Vol. II, part I. Âpastam ba,II. 10, 27, St. 16, p. 165.

4. Sacred Books of the East, Vol. II. part I. Âpastamba, I. 9, 25, St. 4, p. 82.

he be punished or pardoned, the thief is freed from his guilt. But if the king does not punish him, that guilt of the thief falls on him."[1] Vasis*th*a says "if a man has stolen gold belonging to a Bráhma*n*a, he shall run, with flying hair, to the king, (exclaiming) 'Ho, I am a thief; sir, punish me!' The king shall give him a weapon made of Udumbara wood; with that he shall kill himself. It is declared in the Veda that he becomes pure after death."[2] Gautama says that "a man who has stolen (gold) shall approach the king, with flying hair, holding a club in his hand, and proclaim his deed." "Whether he be slain or pardoned, he is purified (from his guilt)". "If the king does not strike, the guilt falls on him."[3] Nárada says "(for stealing) more than a hundred (Palas' worth) of gold, silver, or other (precious metals), or finest clothes, or very precious gems, corporal punishment (or death shall be inflicted)."[4] Bri*h*aspati says "in the case of women, men, gold, gems, the property of a deity or Bráhma*n*a, silk, and (other) precious things, the fine shall be equal to the value (of the article stolen)." "Or double the amount shall be exacted by the king as a fine; or the thief shall be executed, to prevent a repetition (of the offence)."

---

1. Sacred Books of the East, Vol. XIV. part II. Baudhàyana, II. 1, 1, Sts. 16-17, p. 213.

2. Sacred Books of the East, Vol. XIV. part II. Vasis*th*a, XX. 37, St. 41. K*r*ish*n*a Pandit remarks, observes Dr. Bühler, that S'úlapá*n*i explains औदुम्बरं, 'made of Udumbara wood', by 'made of copper', and that the weapon intended is a club. The last remark is probably true, as the parallel passages of the other Sm*r*itis state that the thief is to take a club to the king, with which he is to be struck. See also 42.

3. Sacred Books of the East, Vol. II. part I. Gautama, XII. 43, 44, 45, pp. 241-242.

4. Sacred Books of the East, Vol. XXXIII. part I. p. 227. See also "सुवर्णरजतादीनामुत्तमानां च वाससाम् । रत्नानां चैव मुख्यानां शतादभ्यधिके वधः" ॥ २७ ॥ परिशिष्टम्. Institutes of Nárada, p. 226, Bibli. Indi. series.

Yâj*n*avalkya says : " Having caused restitution of the stolen property, the king shall cause the thief to be punished by different modes of corporal punishment. A Brâhma*n*a (guilty of theft) should be branded and banished from the kingdom." And further in 275 he says : " In the case of the theft of inferior, middling and superior articles, the fine shall be according to the value (of the article stolen). In passing sentence, the place, the time, the age and the ability (of the offender) shall be considered. "[1] Thus we have traced the laws and we can say that in the times of Manu, Âpastamba, Baudháyana, Vasis*t*ha, Gautama and Nârada the punishment for theft was death. As the progress of civilization advanced, so the means of protecting property increased, and there was greater safety and security of people's property. Death was thus thought to be a very severe punishment for the offence of theft, and gradually an option was made. The punishment that was introduced at the time of B*ri*haspati, Yáj*n*avalkya and Vyâsa was either fine or death. It appears, therefore, that the law in the days of our poet had not attained that mild stage so evident in the Smr*i*tis of B*ri*haspati, Yâj*n*avalkya and Vyâsa. The earliest probable date of B*ri*haspati is the first century A. D., as mentioned before, and therefore, Kálidása may be placed long before this date. Another instance of this is found in our poet's Vikramorvas'îyam where the king Purúravas says :—" आत्मनो वधमाहर्ता क्वासौ विहगतस्करः । येन तत्प्रथमं स्तेयं गोप्तुरेव गृहे कृतम् " ॥ And further the Vidùshaka says "अलमत्र घृणया । अपराधी शासनीयः । " And the king says, " सम्यगाह भवान् । धनुर्धनुस्तावत् " । From this it is clear that at the time of Kálidâsa the punishment for theft was death and no option of any kind was made. Manu's law was, it

---

1. " चौरं प्रदाप्यापहृतं घातयेद्विविधैर्वधैः ।
सचिह्नं ब्राह्मणं कृत्वा स्वराष्ट्राद्विप्रवासयेत् ॥ २७० ॥
क्षुद्रमध्यमहाद्रव्यहरणे सारतो दमः ।
देशकालवयः शक्ति सञ्चिन्त्यं दण्डकर्मणि ॥ २७५ ॥ Yáj*n*avalkya, II. pp. 148-149. Ma*nd*alika's edition of Yáj*n*avalkya, translation, p. 240, and the notes. In this he appears to have followed Manu, see VIII. 337-338.

appears, very popular and greatly respected in his day. For in XIV. 67 of the Raghuvans'a he says, " नृपस्य वर्णाश्रमपालनं यत् । स एव धर्मो मनुना प्रणीतः " । In Raghuvans'a IX. 7, our poet says, " न मृगयाभिरतिर्न दुरोदरं न च शशिप्रतिमाभरणं मधु । तमुदयाय न वा नवयौवना प्रियतमा यतमानमपाहरत् " ॥ Here our poet simply quotes Manu VII. 50, " पानमक्षाः स्त्रियश्चैव मृगया च यथाक्रमम् । एतत्कष्टतमं विद्याच्चतुष्कं कामजे गणे " ॥ ५० ॥ " Drinking, dice, women and hunting, these four (which have been enumerated) in succession, he must know to be the most pernicious in the set that springs from love of pleasure. " Of these the last *i. e.* hunting had, in the time of Kálidása, become only a ' व्यसनं ' in name, because he says in S'âkuntala, " मिथ्यैव व्यसनं वदन्ति मृगयामीदृग्विनोदः कुतः " । We also find many references to Manu in Kálidâsa's works. Hemádri, Mallinátha, Châritravardhana and others have made innumerable references to Manu in their commentaries on the Raghuvans'a. They, as a rule, scarcely refer to other Sûtrakáras or the authors of the Smritis. And this statement of the scholiasts goes to prove that in the days of Kâlidása the Smritis of Manu and Vasistha must have been very popular and greatly respected all over India.

The language that is put in the mouths of the policemen and the fisherman in the Praves'aka is Mágadhî. From the edicts of As'oka and from various palæographical sources, antiquarians have discovered that the ' spoken language of Northern India at the time was essentially the same, though there were slight variations. '[1] The Mágadhî language was the spoken language of Northern India two centuries before this time and also a century or so afterwards, and, therefore, we can see why Kálidâsa has made use of it in his dramas. It must be the prevalent popular dialect of his times.

Pânini, whose date may be referred to somewhere in the beginning of the seventh century B. C., according to Dr. Bhandarkar and somewhere in B. C. 2400, according to Pandit Satyavrata Sâmas'ramî, as mentioned before, gives in

---

1. R. C. Dutt's History of India, IV. II., p. 476.

his Sûtras the names of the northern countries, peoples, tribes, rivers &c. The following names are found :— Sâlveya,[1] Gândhâri ; Magadha, [2] Kalinga, Sûramasa ; Kosala,[3] Ajâda ; Kuru : [4] under the subdivisions [5] of the country of Sálva are mentioned the six countries, *viz.*, Udumbarâs, Tilakhatâs, Madrakârâs, Yugandharâs, Bhulingâs and S'arada*nd*as, and also Pratyagratha, Kalakú*t*a and As'maka. According to the Mahâbhâshya, the words Busa, Ajamî*dha*, and Âjakanda also take the affix इञ् when they signify 'the king thereof.'[6] Pâ*n*ini gives Kámboja[7] and Avanti,[8] and Kunti. Under the list of 'Bharga' and 'Yaudheya' [9] are mentioned the following names :—1. Bharga, 2. Karûs'a (Karûsha), 3. Kekaya, 4. Kas'mîra, 5. Sâlva, 6. Susthâla, 7. Uras (Uras'a or Urasa), 8. Kauravya ; and also 1. Yaudheya, 2. Kaukreya, 3. S'aubhreya, 4. Jyábá*n*eya (Yává*n*eya), 5. Dhaurteya (Ghârteya or Dhárteya) 6. Trigarta, 7. Bharata, 8. Us'înara, and 9. Vârteya. The names of Sauvîra and Sâlva are mentioned in IV. 2. 76. In IV. 2. 87, Pá*n*ini tells us that the countries Kumudvat, Na*d*vat, and Vetasvat are so called because they contain Kumudas or water-lilies, Na*d*as or reeds, and Vetas or canes respectively. Kátyáyana adds, " Máhishmat is so called because it contains Mahishas or buffaloes." In IV. 2. 89, Pâ*n*ini mentions the city of S'ikhâvala. In IV. 2. 108, he mentions Madra. He also mentions the villages of Vâhîka in the class called Paladyádi (IV. 2. 110. also IV. 2. 117). In IV. 2. 113, the Bharatas are mentioned. In IV. 2. 116, occur Kâs'î, Chedi, and Sânyáti. In IV. 2. 118, the country Us'înara is mentioned. Pâ*n*ini mentions the following names of countries in IV. 2. 130, *viz.*, Kuru, Yugandhara &c. The countries called Madra and Kachchha are mentioned in IV. 2. 131 and 133. [10] Sindhu and

---

(1) IV. 1. 169. (2) IV. 1. 170. (3) IV. 1. 171. (4) IV. 1. 172. (5) IV. 1. 173. (6) IV. 1. 174. (7) IV. 1. 175. (8) IV. 1. 176. (9) IV. 1. 178. See Early History of the Deccan, second edition, section III, foot-note under the figure four.

10. कच्छ, सिन्धु, वर्णु, गन्धार, मधुमत्, कम्बोज, कश्मीर, साल्व, कुरु, अनुषण्ड, द्वीप, अनूप, अजवाह, विजापक, कलूतर, (कुलून), रङ्कु &c., are mentioned in the list of Kachchha.

Takshas'ilá are given in IV. 3. 93. Under 'this is his native land,' are mentioned the following:—Tûdî, S'álátura, Varmatî and Kúchavâra (IV, 3. 94). Thus then Pâ*n*ini in his Sútras shows an extensive knowledge of the geography of India. Of the places and rivers mentioned by him a good many exist in the Panjáb and Afghanistan. Most of the countries he mentions are situated in northern and north-western India. From this Dr. Bhandarkar concludes that in the time of Pâ*n*ini *i. e.* before the eighth century B. C., the Âryas had not penetrated into the southern countries of India.

Kátyâyana, however, the object of whose Vártikas is to explain and supplement Pá*n*ini, shows an acquaintance with the southern countries of India. He mentions the kings of Pâ*nd*ya and Chola. [1] He also mentions a town of the name of Nâsikya. [2] According to the popular tradition he flourished at the time of the Nandas who preceded the Mauryas. Dr. Bhandarkar assigns him the first half of the fourth century before the Christian era. Pandit Satyavrata Sámas'ramí, from the internal evidence which the *Vàrtikas* furnish and from several other substantial proofs direct or indirect and from other sources, finally establishes 1200 B. C. to be the probable date in which Kátyáyana might have flourished. We also believe his statement to be literally true. [3] It is clear then at the time of Kâtyâyana *i. e.*, between B. C. 1200 and B. C. 400, the A'ryas had penetrated into the southern nations of India ; and also had made their settlements there.

According to the Early History of the Deccan Pata*n*jali had an intimate acquaintance with the south. He tells us that in Dakshinápatha the word *Sarasî* is used to denote

---

1. See the Várttikas, " जनपदशब्दात्क्षत्रियादञ् " ॥ पाण्डोर्ड्यण् । " कम्बोजादिभ्यो लुग्वचनं चोलाद्यर्थम् " ॥

2 In VI. 8. 63, he adds, " यतिवर्णनगरयोर्नेति वक्तव्यम् " ॥ नासिक्यो वर्णः । नासिक्यं नगरम ॥

3. Pandit Satyavrata Sámas'rami's Introduction to Nirukta, **Vol. IV. Fasciculii VI-VII. pp. छो-ज.**

large lakes.[1] He mentions Mahishmatî [2], Vaidarbha[3], Kâ*n*chîpura[4], the modern Conjiveram, and Kerala[5] or Malbâr. In IV. 2, second Âhnika, Pata*n*jali mentions Sáketa and Kas'mîra. In IV. 1, fourth Âhnika, he mentions the following names of kings, Pá*n*châla, Paurava and Pá*nd*ya. In IV. 2, second Âhnika he gives the following towns, S'ivapura, S'ákala, and Sausuka. In IV. 2, second Âhnika, Pata*n*jali mentions Glauchukáyan, Trigarta, Vatsa and Mâlava as the names of the countries. In IV. 2, second Âhnika, he gives the following names of the towns, Pâtânaprastha, Ká*n*chîpura, Nândipura and Kaukkudîvaha belonging to the country called Vâhika. In the same Âhnika Anga, Jihnava, Ikshvâku and Bráhma*n*aka are mentioned as the names of countries.[6] This statement shows that Pá*n*ini, Kâtyáyana and Pata*n*jali had a complete knowledge of the ancient geography of India as existing in their times. The date of Pata*n*jali, as mentioned before, falls somewhere between 450 B. C. and 150 B. C. In connection with this, it may be noted that Pâta*n*jali shows his acquaintance with the Nyâya philosophy of Gautama.[7]

Now let us examine what geographical names we trace in the national epics, the Rámâya*n*a and the Mahâbhárata, and compare the statements of the grammarians and the epic writers with those of Kâlidâsa. On comparing the results of these, we think, we can assign an approximate time to Kâlidâsa. The following names, as given in the Bálakâ*nd*a and the Kish-

---

1. Dr. Keilhorn's edition of Mahábhàshya Vol. I. p. 73, "दक्षिणापथे हि महान्ति सरांसि सरस्य इत्युच्यन्ते ॥ "

2. Mahábháshya, Vol. II. p. 35. " उज्जयिन्याः प्रस्थितो माहिष्मत्यां सूर्योद्गमनं संभावयते."

3. Mbh. Vol. II. p. 252. "ऐक्ष्वाकः " । पाञ्चालः वैदेहः वैदर्भः " ॥

4. Mbh. Vol. II. p. 298.

5. Mbh. Vol. II. p. 270. " चोलः (डः) कडेरः केरलः " ॥

6. In the fourth Adhyaya of Pá*n*ini, and the Vártikas and the Mahâbhâshya on the same are mentioned innumerable names of countries, towns, peoples, tribes, kings, mountains, rivers, lakes &c.

7. See Goldstücker's Pá*n*ini, pp. 155-56, *foot-notes.*

kindhâkán*d*a of the Râmáya*n*a are not found in the works of Kâlidâsa—Romapâda and Mahes'vâsa being names of kings, the Sauvîras, the Saurâsh*t*reyas, the Dâkshi*n*âtyas, the Pahlavas, the S'akas, the Barbaras, the Mahâgrámas, the Pu*nd*ras, the Mekhalas, the *Ri*chîkas, the Mahishakas (also mentioned by Kâtyâyana), the Matsyas, Kaus'ikas or the descendants of Kus'ika,[1] the Ândhras, the Cholas, the Bâhlîkas, the Chandrachitras, the Mlechchhas, the Prasthalas, the Bharatas, the Madrakas and the Nâgas being names of people and tribes, and Brahmamâla, Yavadvîpa, Suvar*n*advîpa, Rûpyadvîpa, Jambudvîpa, Bhogâvatî, the Marus, Murachipattana, Ja*t*âpura and A*n*galepá being names of countries and towns. The following names of the mountains and rivers of the Râmâya*n*a are not given by Kàlidâsa. The Yâmuna, the Sudars'ana, the Játarùpa, the Ayomukha, the Pushpitaka, the Súryavat, the Vaidyut, the Kunjara, the Vajra, the Chakravat, the Râha, the Megha, the Kâla, the Devasakha and the Somagiri ; the rivers Kaus'ikî, the Mahî, the Kálamahî, the Ve*n*î and the Mahánadî. In the Sabhâparvan of the Mahábhârata Arjuna, Bhîma, Sahadeva and Nakula were sent with armies for the conquest of the regions by Yudhish*th*ira who was then about to perform the horse-sacrifice. These Pá*nd*avas chose different quarters of India for their conquest ; Sahadeva is said to have conquered the southern countries and came as far as Kishkindhâ which was proprobably situated somewhere near Hampi. He is there represented to have subdued the Pulindas, the Pâ*ndy*as, Dravi*d*as, U*d*ras, Keralas, Ândhras, Tâlavanas, Kalingas and Ush*t*rakar*n*ikas. In the same Parvan we find the names of the following races:—the Háras, Hù*n*as, Mlechchhas, Pahlavas, Barbaras, Kiràtas, Yavanas, S'akas, Kulindas, Chînas, Párvatîyas, Kâs'mîrakas, Daradas, Suhmas, Kâmbojas and Sekas. In the other Parvans of the Mahábhárata many names of the countries, people, tribes, towns, mountains, rivers and the

---

1. See Aitareya Bráhma*n*a, VII, 18. Early History of the Deccan, Section III. second edition, p. 6.

lakes are found. On comparing these names with those that are given in the Rámáyan*a* and the Raghuvans'a we find the number of the geographical names of the Râmàyan*a* is very small. Most of these names are also not given by Kálidása. Granting that the later additions were made to the Mahábhârata, still the number exceeds that of the Rámâyan*a* but generally agrees with that of the Raghuvans'a of Kálidása. On a close comparison of the geographical names of the epics and of the three grammarians with those of Kâlidása we find some names are new in the works of the latter and cannot be traced in those of the former. And the later addition of Kálidâsa leads us to conclude that he must have lived a hundred and fifty years after the date of Patañjali, who, as we mentioned before, flourished somewhere between 450 B. C. and 150 B.C. So that Kálidâsa comes to B. C. 300. Because he speaks of the Aparântas, Párasîkas and Hún*a*s and these names are nowhere found in the list of the names of the above-mentioned writers of the epics (except the Mahábhârata where the names of the Hûn*a*s appear to us a later interpolation) and those of the said grammarians."In the middle of the third century before Christ, As'oka, the great king of the Maurya dynasty, reigning at Pât*a*liputra in Magadha, speaks in the fifth edict of his rock-inscriptions, which are found at Girnâr in Kât*h*iavâ*da* on the west, at Dhauli in Ka*t*ak and Jauga*d* in Ganjam on the eastern coast, at Khalsi in the Himâlaya, Shahbaz-garhi in Afghanistan, and Mansehra on the northern frontier of the Panjab, of his having sent ministers of religion to the Râs*t*ikas and the Petenikas and to the Aparântas. The last which we know best is Northern Konkan, the capital of which was Surparaka."[1] From the above statement of the learned doctor it is plain that Kâlidâsa must have lived nearly a hundred years after the great king of Maurya dynasty if the dates assigned to these kings be accepted as true. It is alleged that Chandragupta who founded the Maurya dynasty in about B. C. 320, ruled over Northern India as far as Kât*h*iâvâ*d*a, and his grandson As'oka

---

1 See Early History of the Deccan, second edition, p. 10.

began to reign from B. C. 263 to B. C. 229.[1] Kâlidâsa mentions Pârasíkas about the north-western banks of the Indus. The Mahâbhârata notices them in the same direction, but Vâlmîki and the grammarians do not mention this tribe of the foreign people. Some say that the word Párasîka is derived from Bâlhîka according to the process of philology. But this, we think, simply rests on surmises and has no historical foundation whatever. For, the Mahábhárata mentions the Bálhikas as well as the Pârsîkas, and we know that these ancient writers had a distinct notion of the names of these foreign races during this early period and there was no confusion whatever. The Bàlhîkas therefore were the people of the country known as Balkh in Asiatic Tartary. Bálhîka is also one of the synonyms for कुंकुम or saffron.[2] It has been discovered that the countries which are in the same latitude with Kás'mîra in the ancient world produce saffron. The country of Balkh in Tartary is noted for its saffron. This tribe was known in India since the time of the Atharva Veda. In ancient times these barbarians must have been carrying inroads or trading in saffron with India. Dr. Bhandarkar says that the Palhavas were called Persians or Parthians.[3] And the Palhavas occur in both the epics. But Kâlidâsa does not call the tribe by that name; the Palhavas, therefore, must be a different tribe altogether and the epithet does not appear to us a synonym of the Persian. They may be the Parthians or some foreign race or perhaps the aborigines of the country. The Pârasîkas appear to be the Persians and the followers of Darius Hystaspes who invaded India and conquered the north-western part of Kâs'mîra and the Panjab in B. C. 520. According to the Persian history there were great political changes and vicissitudes

---

1 See Early History of the Dekkan, second edition, p. 14.

2. अथ कुङ्कुमम् ॥ १२३ ॥

काश्मीरजन्माग्निशिखं वर बाल्हीकपीतनम् ।
रक्तसंकोचपिशुनं धीरलोहितचन्दनम् ॥ १२४ ॥

Amara, Manushyavarga 6, II. p. 409.

Pandit S'ivadatta's edition.

3. Dr. Bhandarkar's paper on the date of Patanjali, p. 17.

from the sixth century to the middle of the fourth century B. C. And in the beginning of the fourth century B. C. they extended their power in neighbouring countries as far as the north-western banks of the Indus. [1] It is thus clear that Kâlidâsa's allusion to the Párasîkas has its source from history. Although the names of the Bálhîkas, Hâras, Mlechchhas, Pahlavas, Barbaras, S'akas, Kulindas, Kás'mîrakas, Daradas, Cholas, Pânchâlas, and Pun*d*ras are mentioned in the great epics and some in the list of the grammarians, still Kâlidâsa nowhere mentions them in his works, and this circumstance throws a doubt and creates some suspicion with regard to these names; these epithets might perhaps have been the later interpolations. India must have been very prosperous at his time. His graphic description of the countries of the Magadhas, Avantis and also of Ujjayinî, Mâhishmatî, Pushpapura and others, clearly shows that upper India must have reached the zenith of civilization and artificial poetry must have attained the highest perfection; in fact the age of Kâlidâsa must have been the age of poetry, civilisation, science, art and commerce. And it was hence that India attracted the notice of foreign nations and tribes who afterwards, it is alleged, poured in by hoards.

Let us now turn to the historical accounts of such of the above-mentioned countries as have been described by Kâlidása and see whether we can from these accounts assign any approximate time which would be a nearer approach to the date of our poet. In his great epic Kálidâsa mentions a number of kingdoms and towns. As mentioned before he means to describe them from several works containing the full account of the kings of the solar line as they were represented in their own times; but it may be assumed that in his history he produces a faithful picture of the social, religious, commercial and political phase of India of his own times. Allowance, of course, should be made for some traditional accounts which may be prevalent in his days, but excepting these, his description of the several

1. Dosabhai Framji's History of Persia, pp. 6-7 and the *foot-note* at page 25.

kingdoms may be taken as the true picture of the political condition of the internal and frontier states as they existed in his days.

In Northern India, our poet mentions a number of states all separate and independent. This group of independent states is surrounded on all sides by other powerful states of foreign people. This description of our poet agrees well with that incised on the different edicts of the Emperor Priyadars'in or As'oka. We find in those edicts the names of different states of heterogeneous people surrounding his vast empire and the rulers of those states were on friendly terms with him ; and with their permission the emperor is said to have sent the Buddhist missionaries to their countries to preach the religion. It is probable that, after the death of Priyadars'in, his vast empire which was formed partly by conquering and partly by holding under his sway several small states was again split up, and several new kingdoms took their rise. In the fourth Canto, the poet mentions the bordering powerful states, while he brings together in the sixth Canto all the kings and princes ruling in the heart of Northern and Southern India.

In the 25th stanza of the fourth Canto, Suhma is mentioned corresponding to the province between the Vanga (Bengal) and Utkala (Orissa). The grammarians do not mention this province ; but the Mahábhârata mentions it as well as Prasuhma. The statement of the epic appears to us rather doubtful, it might perhaps have been a later addition. The Râmáya*n*a and As'oka's edicts are silent about this country. Vallabha and Sumativijaya call it Brahmades'a, but we are not so sanguine about their statement. The country must have risen into prominence a little before the time of Kálidâsa.

Next comes the country of the Vangas. It is mentioned in the Mahábhârata ; but the Râmâya*n*a is silent about it. The king of this country is mentioned as possess-

---

1. **R. C. Dutt's History of India, IV. I. p. 468, also at pages 466-467.**

ing war-ships. In ancient times this country as well as its neighbouring provinces kept a commercial intercourse with Ceylon and the neighbouring islands of Burma and China, especially the islands of Java and Bali. [1] The institution of armed boats was greatly necessitated by the river Bhágîrathî and its tributaries. In Kumârasambhava VII. 3, our poet, says " संतानकाकीर्णमहापथं तच्चीनांशुकैः कल्पितकेतुमालम् "; in S'ákuntala I. 32, we find " चीनांशुकमिव केतोः प्रतिवातं नीयमानस्य "; in Raghuvans'a XVII. 81, there is "यादोनाथः शिवजलपथः कर्मणे नौचराणाम्", in S'ákuntala VI. page 293, the king says "—कथम् । समुद्रव्यवहारी सार्थवाहो धनमित्रो नाम नौव्यसने विपन्नः "; these passages clearly indicate that in Kâlidása's time the international trade between India and China and its neighbouring islands was greatly facilitated; the merchants used to undertake sea-voyages to foreign nations and islands. The first 17 verses of the thirteenth canto of the Raghuvans'a are no doubt descriptive of the sea or properly speaking they give a picturesque description of a sea-voyage. In Raghuvans'a VI. 57, our poet says " अनेन सार्धं विहराम्बुराशेस्तीरेषु तालीवनमर्मरेषु । द्वीपान्तरानीतलवङ्गपुष्पैरपाकृतस्वेदलवा मरुद्भिः " ॥ This is no doubt a direct reference to spice-islands. The word चीनांशुक in the above passages shows that finest silk or silken-cloths from China were greatly being imported. In the second century B. C. many books of the Buddhist religion were taken from India to China. Vanga[2] is also a name of tin,[3] which is not found in Bengal, but " in Malaya, Pegu, China,

---

1. J. B. B. R. A. S. Vol. XVII. part II. pp. 8-9. The island of Sumatra and Java are identified with Suvar*n*advîpa and Yavadvípa respectively. Allusions to these are met with in the Kikshindháká*nd*a and Kathásaritságara. In the latter work we find the islands of the name of Nárîkela or the cocoanut island, Karpûra or the camphor island, and Ka*t*áha. See also Kámandaki's Nîtisára, preface, p. 2. Biblio. Indi. series.

2. " अस्ति तावद्वङ्गनामा देशः । यस्मिन्पारावारसदृश्यः पद्मावतीप्रभृतयस्तरङ्गिण्यः समुल्लसन्ति । यत्र च पावनो ब्रह्मपुत्रनामा महानदो मज्जज्जन्तून्पावयती । तस्यायमीश्वरः प्रभूतसेनात्मजो वीरसेनाह्वयः " । Mádhava Champu.

3. " रङ्गवङ्गे " Amara II. वैश्यवर्गः 9, 106. " वङ्गं त्रपुणि सीसे च " इति हैमः.

and especially the island of Banka in the East Indies."[1] It is probably so called because it was known to the people of India from Vanga or Eastern Bengal, in which case, it must have had a considerable coasting trade from the earliest times, as the word in the sense of tin (*i. e.* त्रपु or वंग) is mentioned by so early a writer as Sus'ruta.[2] Vanga was known to the Chinese traveller Fahian who afterwards started for Ceylon in a merchant's vessel.

Next comes Utkala or Orissa. The Rámáya*n*a mentions this country, but to Mahábhárata and to some Sûtrakâras (including Manu and Baudhâyana) it was known by the name of O*d*ra or U*d*ra. This appears to us an old kingdom, though the grammarians do not mention it. It was known for its coasting trade in ancient times.

Next the country of the Kalingas engages our attention. The epics mention it.[3] From the description of Kálidása the kingdom of Kali*n*ga seems to have been of some power in his times. As mentioned before, Pá*n*ini knew this country in the beginning of the seventh century according to Dr. Bhandarkar, and somewhere in B. C. 2400 according to Pandit Satyavrata Sámas'ramin. The country of Kali*n*ga was known to Kátyáyana, the author of the Vártikas. Kátyáyana is placed in 1200 B. C. by some and in 350 B. C. by others. In the fourth century before the beginning of the Christian era, Magasthenes describes Kali*n*ga as a very powerful kingdom, and says that it extended from the mouths of the Ganges to those of the K*r*ish*n*á.[4] In the days of As'oka, also, the kingdom of Kali*n*-

1. Dana's Mineralogy.

2. Sus'ruta, 27, p. 148 and p. 138, Adhy. 38 and also at page 218, Adhy. 46.

3. "तथा मत्स्यकालिङ्गांश्च कौशिकांश्च समन्ततः" 1 Rámáy. IV. 41. St. 11.

"ततः समुद्रतीरेण जगाम वसुधाधिपः। भ्रातृभिः सहितो वीरः कलिंगान्प्रति भारत" ॥ ३ ॥

"अंगान्वंगान्कलिंगांश्च शुंडिकान्मिथिलानथ । मागधान्कर्कखंडांश्च निवेद्य विषयेऽस्मनः" ॥ ८ ॥

Mahábhárata Vanaparvan Adhy. 114 and 523 Sts. 3, 8.

4. Ancient India, Magasthenes and Arrian, by J. W. McCrindle, p. 141 and the *notes*, also p. 135 and the *notes* and at page 63. XX. B. and the *notes*.

ga was very powerful. The emperor in his thirteenth edict says "vast is the kingdom of Kalinga conquered by king Piyadasi, beloved of the gods. Hundreds of thousands of creatures have been reduced to slavery, a hundred thousand have been killed. Since the conquest of Kalinga, the king, beloved of the gods, has turned towards religion, been devoted to religion, conceived a zeal for religion, and applied himself to the diffusion of religion,—so great was the regret which the beloved of the gods felt at the conquest of Kalinga. In conquering the country which was not subject to me, I, beloved of the gods, have deeply felt and sorrowed for the murders, the deaths, and the reduction of the native inhabitants to slavery. But this is what the beloved of the gods has felt and sorrowed for more keenly. Everywhere dwell Bráhma*n*as or S'rama*n*as, ascetics or house-holders; and among such men are witnessed respect to authorities, obedience to fathers and mothers, affection towards friends, companions and relations, regard for servants and fidelity in affections. Such men are exposed to violence, death, and separation from those who are dear to them. And even when by special protection they themselves escaped personal harm, their friends, acquaintances, companions and relations are ruined ; and thus they too have to suffer. All violence of this kind is keenly felt and regretted by me, beloved of the gods. There is no country where bodies of men like the Bráhma*n*as and S'rama*n*as are not known, and there is no spot in any country where men do not profess the religion of some sect or other. It is because so many men have been drowned, ruined, killed and reduced to slavery in Kalinga that the beloved of the gods feels this to-day a thousand times more keenly." [1] From this it appears that the kingdom of Kalinga was very powerful between B. C. 263 and B. C. 229. Baudháyana also mentions its people as a degraded tribe :—

13. "The inhabitants of Avantî, of A*n*ga, of Ma-

1. R. C. Dutt's History of India, Book IV, Chap. I. p. 466.

gadha, of Suráshtra, of the Dekhan, of Upâvrit, of Sindh, and the Sauvîrás are of mixed origin."

14. "He who has visited the (countries of the) Ârattas, Káraskaras, Pundras, Sauvîras, Vangas, Kalingas (or) Pránúnas shall offer a Punastoma or a Sarvaprishthá (ishti)."

15. "Now they quote also (the following verses): 'He commits sin through his feet, who travels to the (country of the) Kalingas. The sages declare the Vais'vânarî ishti to be a purification for him." [1]

Thus in the days of Baudhâyana, the Kalingas must have been a race of degraded people and lost their warlike spirit and independence. Patanjali frequently mentions this kingdom. [2] From the time of As'oka to the close of the first century B. C. the kingdom of Kalinga must have gradually commenced its decline. And in the seventh century A. D. Hiouen-Thsang describes it as an ancient kingdom surrounded by forests abounding in wild elephants. But Kálidása describes it as a powerful kingdom and refers to its war-elephants and its warlike spirit. This clearly shows that Kálidása's time must either be referred previous or subsequent to As'oka's date. Because Kálidása witnessed its prosperity while As'oka effected its fall. And after 800 or 900 years the country of Kalinga must have been reduced to jungles when the Chinese traveller beheld it first time. We have no historical account of the country being powerful or flourishing after the time of As'oka. So that As'oka's overthrow of the country was the beginning of its decline.

In the 49th verse, Kálidása takes us to the Pándyas. This kingdom of Pándya was founded in the *sixth century* before the beginning of the Christian era according to the modern antiquarians, but according to Pandit Satyavrata Sámas'ramin before B. C. 1200. The learned Pandit arrives at this

---

1. See Sacred Books of the East, Vol. XIV. part II, Baudháyana, I. 1, 2. p. 148.

2. Dr. Keilhorn's edition of the Mahábháshya, Vol. II, p. 120. "नो खण्डिकाश्रगाम नो कलिङ्गाश्रगाम &c."

date by pointing out the inconsistencies of the arguments which the investigators advance in support of their date.[1] The three kingdoms of the Páṇḍya, Chola and Kerala were known to be powerful kingdoms for many centuries before the Christian era. Páṇini, as mentioned before, does not seem to have known these kingdoms, but they are mentioned in the Rámáyaṇa and Mahábhárata.[2] Kátyáyana, as said before, shows his acquaintance with these southern-most nations, and their names occur in Patañjali's Mahábháshya. In the thirteenth edict the emperor As'oka gives their names along with others. They are also mentioned in the Manu Smṛiti and other Dharmas'ástras the compositions whereof are placed long before the beginning of the Christian era. Kálidása describes the Páṇḍyas as a most powerful nation. He passingly notices the Keralas, and says nothing about the Cholas. When he describes the south-east, the southern and the south-western nations, his omission of the Cholas does not at all appear to us mere accidental ; on the contrary it may be said with certainty that the Cholas were not existing at the time of Kálidása. In the two centuries previous to the date of As'oka, the Pâṇḍyas probably extended their conquests and became the only powerful nation of the south. Kálidása gives nearly seven verses descriptive of this powerful king in his sixth Canto. Kátyáyana in one of his *Várttikas* mentions the name of the Cholas ; but the *Várttika* itself seems to us a later interpolation. And this view is also corroborated by Pandit Satyavrata Sámas'ramin, who says :—

" अपरमप्यस्तीह तावत्किञ्चिद्विचारयितव्यम् । कैश्चित्पुरातत्त्वानुसन्धित्सुभिर्दाक्षिणात्येषु पाण्ड्यराज्यस्थापनं ननु खीष्टजन्मतः पुरा षष्ठ्यामेव शताब्द्यां बभूवेति निर्णीतम् । अस्ति च कात्यायनवचनम्—" पाण्डोर्ड्यण् (पा० ४. १. १६८. वा०) "—इति । तथा चैतस्य कात्यायनस्य खीष्टजन्मतोऽप्यधिकपञ्च-

---

1. See Pandit Satyavrata Sámas'ramî's Introduction to Nirukta, Vol. IV. Fasciculus, VII. p. ज.

2. " नदीं गोदावरीं चैव सर्वमेवानुपश्यत । तथैवांध्रांश्च पुंड्रांश्च चोलान्पाण्ड्यांश्च केरलान् " ॥ १२ ॥ Rámáyaṇa IV. 41. 12.

" समेत्य रुक्मिणा कर्णः पाण्ड्यं शैलं च सोऽगमत् । स केरलं रणे चैव नीलं चापि महीपतिं " ॥ १४-१५ ॥ Máhábhárata Vanaparvarn Adhy. 524, Sts. 14-15. p. 266.

शताब्दीपूर्वजत्वमेव संपद्यते। नैतच्चतुरस्रम् । ख्रीष्टपूर्वाष्टमशताब्द्यां शैवमतं प्रचलितमित्यत्र तेषामपि संमतिदर्शनात् । तादृशशैवमतप्रचारतोऽपि प्राचीनात्किल मनुसंहिताकारात्प्राचीनोऽयं वार्त्तिककारः कात्यायनः कथङ्कारं स्यात्ख्रीष्टपूर्वषष्ठशताब्दीतोऽपि परज इति? अतः पाण्डघराज्यस्थापनमवश्यं बभूव ख्रीष्टजन्मतो द्वादशाब्दीतोऽपि प्रागेव। अथ वा " पाण्डोडर्यण् (पा० ४. १ १६८. वा०)"—इत्यादिवचनानि नैव कात्यायनीयानि, अपि तु भाष्यकाराद्युक्तान्यनतिप्राचीनान्येवेति सर्वैर्मन्तव्यम् । अन्यथा हि सर्वमत एव सर्वं भवेत्पिण्डीभूतमिति धीमद्भिरेव विचार्यं पूर्वापरदर्शिभिः समन्तादिति। "[1] Thus Kâlidása may be placed somewhere between B. C. 350 and B. C. 150.

In North-Western India, our poet mentions a number of states all separate and independent. In the fourth Canto of the Raghuvans'a, stanza 60th, he refers to the Persians. In the next verse, on his way to the countries occupied by the Persians, Raghu conquers the Yavanas, and in the 62nd and the subsequent three stanzas, we are told that between Raghu and the Westerns a very fierce and tumultuous battle took place in which they were completely overthrown. The poet then mentions the Huns and the Kámbojas. There is, therefore, no doubt that the term ' पाश्चात्य ' plainly refers to the Persians and not to the Yavanas or the Greeks to whom he, as mentioned before, nowhere attaches any importance. The above statement also finds a support in the 73rd verse of the fifth Canto where the poet specially mentions the " Vanáyu " horses, and the epithet is taken generally to mean Persian.[2] According to some the term 'पाश्चात्य' may mean both Persians and Ionians or the Greeks, but we cannot accept this view because it is not supported by any of these commentators on Kálidása. The term ' पाश्चात्य, ' must be taken to mean Persians ; for in the 60th verse Raghu starts with the intention of conquering the Persians, in the 61st he meets on his way with the Yavanas, and in the 62nd fights with the Persians. This in-

---

1. Pandit Satyavrata Sámas'rami's Introduction to Nirukta, Vol. IV. Fasciculus VII. p. ज.

2. " वनायुजाः पारसीकाः काम्बोजा बाल्हिका हयाः "। Amara II. क्षत्त्रवर्गः 45. " वनायुजः पारसीक उक्तः " इति रत्नकोशे। " श्वेताश्वं कर्काख्यं वनायुजमपि पारसीकं तु " इति नाममालायां।

terpretation receives no doubt an additional support from a similar description of the Keralas. In the 53rd stanza Raghu's troops are prepared to conquer the Aparántas or the Kau*n*ka*n*as, and on their way they meet with the Keralas. In the 58th and 59th the conquest of the Aparántas being complete their king comes to pay the tribute ; so Raghu starts in the 60th verse, and the battle is described in the 62nd stanza.

Hemádri one of the most intelligent interpreters of Kálîdâsa renders 'पाश्चात्यैः &c.,' by "पारसीकानां राजभिः सार्द्धं &c." Châritravardhana interprets the epithet by "पाश्चात्यैः पारसीकैः &c.," Sumativijaya translates the epithet by "पाश्चात्यैः पारसीकराजैः सार्द्धम् &c." Dinakara has the following:—"पाश्चात्यैः सिन्धुतीरनिवासिभिः पारसीकैः सह &c.," so does Vijayaga*n*i. Vallabha has, "पाश्चात्यैः पश्चिमदेशीयैः सह &c.," but he analyses प्रतियोधे in the following way, "प्रतियोधाः पारसीका यत्र &c.;" this shows that he takes पश्चिमदेशीयैः for पारसीकैः and not for यवनैः. Dharmameru says "पाश्चात्यैः पश्चिमदेशीयनृपैः सार्द्धं" &c., but does not connect it with the Yavanas like Mallinátha. All these commentators interpret Kálidása better than Mallinátha ; so it is needless to follow Mallinátha's explanation of the stanzas in question, and connect the import of the 62nd and the 63rd verses with that of the 61st. Thus then Kálidása regards the Persians as a powerful race on the North-West frontier of India and the Yavanas as only a secondary tribe. As'oka's edicts of the North-West frontier are engraved in the Pelhavi characters. These Persian alphabets are supposed to have found their way to this country along with the Persian conquests of Northern India. For about two hundred years previous to the date of As'oka, the Persian power must have exercised its influence over Northern India and it must have been of some consequence even in the days of As'oka.[1] Thus then the Persians were powerful in the Panjáb in 350 B. C., while the Greeks or the Yavanas were very strong between the second and the first century before the Christian era. The Panjáb was under the actual sway of the Persians for about 250 years. It formed a part of the Persian empire from about

1. J. B. B. R. A. S. Vol. XVII, part II. No. XLVII. p. 12.

520 B. C. to about 350 B. C. Cyrus the Great (B. C. 558) of Persia conquered the once great and glorious kingdom of Bactria, and followed up his successes with an attack upon the Sacæ tribe, then occupying the districts now known as Kashgar and Yarkand[1] the northern boundary or the very threshold of ancient India. After his death his son Cambyses conquered Egypt in B. C. 525.[2] But, next to Cyrus, Darius Hystaspes (B. C. 521) was the greatest of the Persian kings. His long reign formed an important epoch in Persian annals. He not only devoted a good deal of his attention to the consolidation and organisation of the empire founded by Cyrus, but by fresh conquests he increased its renown. He extended the empire beyond the point to which Cyrus had carried it in the east, by bringing under the Persian sway the Panjáb and the whole valley of the Indus, a conquest which introduced immense wealth into Persia, and resulted in the springing up of a regular trade by means of coasting vessels between the mouths of the Indus and the Persian Gulf.[3] This part of the Panjâb remained under Persian sway till about 350 B. C.[4] Then came the Bactrians to the frontier of India.

Then our poet describes the Yavanas and the Hüṇas. We have already given the full history of these foreign tribes, so it is not necessary to speak of them here.

Beyond the Huns our poet mentions the Kâmbojas or the Kabulis. This old tribe is noticed by grammarians in connection with the north-west frontier. The epic writers also mention this in the same direction. Some Smṛitis including that of Manu notice this race. Thus on the north-west frontier Kálidása refers to

1. Dosabhai Framji's History of the Pârsis 1884, Vol. I. p. 6.
2. Dosabhai Framji's History of the Pársis, Vol. I. p. 7.
3. Dosabhai Framji's History of the Pârsis, Vol. I. pp. 7-8.
4. In historic times the Panjáb formed part of the Persian dominions from its conquest by Darius Hystaspes about B. C. 510 till the later days (B. C. 350) of the Achæmenean dynasty. Dosabhai Framji's History of Persia, Vol. I. p. 25, *foot-note.*

four races—the Párasîkas (or the Persians), the Yavanas (or the Greeks), the Hú*n*as (or the Huns) and the Kámbojas (or the Kabulis), and from the history of the invasions of the first three tribes we have seen that our poet refers to a period somewhere between 350 B. C. to 150 B. C.

In the sixth Canto Sunandá takes Indumatî to the Svayamvara hall where the different princes and kings are seated according to their rank and dignity, and narrates to her their account with their pedigrees. The first king to whom she takes the bride is the lord of Magadha. The way in which he is described, and the way in which the princess makes a bow to him, at the time of her leaving him, show great respect for the king. Our poet describes Magadha first because it was the oldest kingdom known for its valour, commerce and as a great seat of learning from the times of Páni*n*i. Learning including all the S'âstras and Dârs'anas was highly cultivated here. Even the Kâmasûtras had their origin in this land. Dattaka one of the Kâmasûtrakâras was born in Pâ*t*aliputra. Vâtsyâyana says :—

" तस्य षष्ठं वैशिकमधिकरणं पाटलिपुत्रिकाणां गणिकानां नियोगाद्दत्तकः पृथक्चकार " ।[1]

The antiquity of Vâtsyâyana's Kâmasûtras is now considered indisputable.[2] And it seems that he describes this and other countries in accordance with their seniority in time and not in their power. It appears then that this king of Magadha must have been of some power in the time of our poet. But in the Buddhist period the kingdom of Magadha was very extensive and most powerful. More than two centuries before the time of As'oka the Buddhist kings Bimbisára and Ajátas'atru had extended the limits of the Magadha empire east and west, when the founder of Buddhism was still living and preaching his religion. As'oka's grandfather, the powerful Chandragupta, had, after the retreat

---

1. Vátsyáyana's Kámasûtra, Adhy. I. Adhikara*n*a I. 12. p. 5. Durgáprasáda's edition.

2. J. B. B. R. A. S. Vol. XVIII. No. XLIX. p. 111.

of Alexander the great, extended the limits of the Magadha empire over the whole of Northern India. As'oka's father, Bindusára, upheld the glory of Chandragupta, and young As'oka was sent during his father's life-time to be Vicerory of Ujjayinî.[1] In B. C. 240, when the emperor As'oka was reigning at Pâ*t*aliputra, Magadha was the most powerful empire, and Ká*th*iavá*d*a was under the sway of the Magadhas for many years. In the reign of Chandragupta, it was governed by his viceroy Vaishya Pushpagupta in B. C. 300. In the times of As'oka B. C. 240, it was under Tushaspa, his Yavana viceroy. But it seems that in A. D. 137, it was a part of the dominions of the Mâlava king and his Palhava viceroy completed the work of the Sudars'ana lake.[2] Thus after the death of As'oka the empire of Magadha began to decline and it is alleged that in A. D. 137 it lost one of its most prosperous provinces. It must have been conquered long before A. D. 137. Between the third and the second century B. C., Magadha is mentioned by Baudháyana,[3] Manu and Pata*n*jali.[4] The kingdom is also mentioned in other Sm*ri*tis. In the days of As'oka Pâ*t*alipura or Pá*t*aliputra[5] was the capital of Magadha ; but Kàlidâsa describes Pushpapura or Kusumapura. It was the ancient capital of Magadha and after many centuries Pa*t*aliputra must have become its capital or the principal seat of its kings.[6] The Kathâsaritsâgara a close sanskrit rendering of Gu*nádh*ya's B*ri*hatkathá also mentions Pushpapura as the capital of Magadha. But in the times of As'vaghosha *i. e.* about A. D. 78, Râjag*ri*ha seems to have been its capital.[7] The

---

1. R. C. Dutt's History of India, Book IV. Chap. I. p. 458.
2. J. B. B. R. A. S., Vol. XVIII. No. XLVIII. p. 47.
3. Sacred Books of the East, Vol. XIV. part. II. Baudháyana, I. 1, 2, p. 148.
4. Sacred Books of the East, Vol. XXV. Manu, X. 11, 17, 26, and 47.
5. R C. Dutt's History of India, Book IV. Chap. I. p. 460.
6. Buddhist Records of the Western World, Vol. II. p. 83.
7. Prof. Cowell's Sanskrit edition of As'vaghosha's Buddhacharita, Canto X. Sts. 1, 9, 10, 16. Canto XI, St. 1. pp. 81-82 and 86.

political condition of Magadha and Avantis or the eastern and western Málava appears to be the same ; both were separate and independent and the latter never owed its suzerainty to the former. Both are described almost in similar terms. Thus then the times of Kálidâsa and As'oka were different. Magadha is also celebrated for the particular rice called Mahás'âli and Sugandhiká. Hiuen-Thsang says, " There is an unusual sort of rice grown here, the grains of which are large and scented and of an exquisite taste. It is specially remarkable for ite shining colour. It is commonly called " the rice for the use of the great." [1] Next to the king of Magadha, the king of Avantis or the eastern and western Mâlava is mentioned ; but he is described there as an independent king and not as a vassal-king to the lord of the Magadhas. The kingdom of Málava or Avantis is mentioned by Pâni*n*i. It is also noticed by the epic writers, Baudháyana and by Manu, Patañjali. In A. D. 137 the king of Málava, as mentioned above, was very powerful and was the lord of the Avantis, Gujarath, Ká*th*iavá*da*, Kachha and Aparânta or the north Konka*na*. From Kálidâsa's description of Aparánta it seems that it was a separate and independent kingdom. Thus from our poet's description of the kings of Magadha and Avantis, his work must be placed between 300 B. C. and 100 B. C. Like Magadha, Mâlava was also celebrated for its seat of profound learning. And in the seventh century A. D. Hiuen-Thsang says, " Two countries in India, on the borders, are remarkable for the great learning of the people, *viz.*, Mâlava on the South-West, and Magadha on the North-East. In this they esteem virtue and respect politeness. They are of an intelligent mind and exceedingly studious." [2]

In the Meghadûta as well as in the Málavikágnimitra, Kàlidâsa speaks of Vidis'â, the modern Bhilsá as the capital of Das'âr*n*a or the eastern Mâlava. In the play Kálidâsa tells us that Agnimitra, the son of the general Pushpamitra was reigning there. We have seen above that after the death of

1. Buddhist Records of the Western World, Vol. II. p. 82.
2. Buddhist Records of the Western World, Vol. II. p. 260.

As'oka the empire of Magadha was divided into several small kingdoms or principalities. Some years before A. D. 133, Kshatrap sovereigns were ruling at Ujjayinî. In about 149 A. D., Rudradáman [1] became very powerful and was in possession of Kát*h*iâvà*d*a. A new state must have taken its rise in Vidis'â at this time. Kálidâsa's description would apply to a time when the kingdom of Avantis with its capital Ujjayinî was not yet conquered by foreign kings and when Vidis'â had become an independent and separate kingdom. Afterwards we have no history of Vidis'á, and in the seventh century A. D. Hiouen-Thsang does not notice it. In connection with the Meghadúta it may be noted here that our poet, as mentioned before, refers to Gu*n*á*d**h*ya's B*r*ihatkathá, especially the story of Vásavadattá. Pata*n*jali also has noticed it in his Mahábhâshya. [2] The plot of the play of the Vikramorvas'iyam appears to have been based on Gu*n*à*d**h*ya's B*r*ihatkathá [3] like some of the incidents of the Meghadûta. We think the play of Málvikágnimitra is based on the historical events current in his times. As said before, Pushpamitra, the first king of the S'unga dynasty, put to death B*r*ihadratha, the last scion of the Maurya family, and usurped the throne of Magadha in B. C. 183. Agnimitra is represented to have reigned at Vidis'á, probably as his father's viceroy. He had made proposals of marriage with Málaviká to her brother Mádhavasena, the cousin of Yaj*n*asena, king of Vidarbha, the modern Berar. Between these cousins there was a quarrel as regards the succession to the throne, and Yaj*n*asena took possession of the seals of the kingdom for a time. When Mâdhavasena was secretly on his way to Vidis'á, the general of Yaj*n*asena, posted on the frontier-fort of the kingdom, captured him. His counsellor Sumati and Málaviká somehow escaped in the

---

1, Gupta-inscriptions, Vol. III.

2. "अधिकृत्य कृते ग्रन्थ इत्यत्राख्यायिकाभ्यो बहुलं लुब्वक्तव्यः । वासवदत्ता सुमनोत्तरा । न च भवति । भैमरथी " ॥ Pá*n*ini, IV. 3. 87. Dr. Kielhorn's edition of the Mahábhásya, Vol. II. p. 313.

3. See Kathásaritságara, Taranga 17, pp. 63-64. Nir*n*ayaságara edition.

tumult, but Mádhavasena was kept in custody. Thereupon Agnimitra demanded of Yajnasena the surrender of Mâdhavasena. Yajnasena promised to give him up on condition that his wife's brother, who was the counsellor of the last Maurya king and had been imprisoned by Agnimitra or his father Pushpamitra, should be released. This enraged Agnimitra, who thereupon sent an army against Yajnasena and conquered him. Mádhavasena was released, and the country of Vidarbha was divided between the two cousins, the river Varadâ flowing between their kingdoms. [1]

If the dates assigned to the monarchs of the Maurya and S'unga dynasties by these antiquarians be true and admitted as historical facts, Kàlidása comes to be the contemporary of the first king of the S'unga dynasty. There is no connected history of these kings in the Váyu, Mátsya, Vishnu, Bhágavat and other Puránas, and it is quite probable that these political events must have occurred in the life-time of our poet. And the object of the poet's saying ' वर्तमानकवेः &c., ' in this play may now be accounted for.

The kingdom of Vaidarbha is spoken of as a separate kingdom at this time (B. C. 180). As mentioned before, the edicts of As'oka mention fourteen nations that owed their suzerainty to the emperor. Some independent nations are also mentioned in these edicts. Here of course a question arises whether the emperor makes any distinction between countries that were quite independent and those that were under his direct sway, or whether he speaks of his dominions as ' the conquered countries ', and gives the names of such as did not acknowledge his suzerainty. On this point we learn from the Málavikágnimitra that the kingdom of Vidarbha was independent. We learn also that there were friendly relations subsisting between the Maurya kings and the kings of Vidarbha. When the last scion of the Maurya dynasty was put to death by the Senâpati, the king of Vidarbha would naturally be looked upon as an enemy by the new dynasty that came in power. When Agnimitra receives

1. Early History of the Deccan, second edition, p. 15.

the proposal of the exchange of prisoners from the king of Vidarbha, he does not say that the king is his enemy because the brother of the king's wife is kept in custody, but says that he is 'प्रकृत्यमित्र', a natural enemy. If these relations between the Maurya kings and the kings of Vidarbha be accepted, and the object of the fifth and the thirteenth edicts be considered, the absence, in the said edicts, of a prominent mention of this kingdom can be easily explained.

In the 37th verse Sunandá describes the lord of the Anúpas. The situation of this country appears to be the southern part of the Central Provinces through which the Narmadá flows. In the days of Kálidása, Máhishmatî was its capital. This is an old kingdom of the times of the Mahâbhárata.[1] This kingdom was known to the grammarian Kâtyáyana, who is placed in B. C. 1200 by some and in B. C. 350 by others. Pátanjali the author of the Mahábháshya also mentions this country of the Anúpas: and he is believed to have lived in 450 B. C. by some and in 150 B. C. by others. From Kálidása's reference to Anúpa it seems that it was a separate and most powerful kingdom.

In the 45th verse Sunandá takes the bride to the lord of the S'urasenas. This old kingdom is mentioned in the epics. Along with this the Mahábhárata and Patanjali's Mahábháshya mention the Vatsabhúmi or the country of Vatsa. The position of this old kingdom appears to be the modern Bundelkhanda. In the days of Kálidása this powerful kingdom must have been very extensive, reaching as far as Magadha and Avanti and including the country of the Vatsas. In it run the Yamuná and the Gangâ. Mathurâ to the north and Kaus'ámbî to the south-east appear to be the principal towns of the country at this time. Mathurá is mentioned by Pánini in the

---

1. " कदाचित्तु तथैवास्य विनिष्क्रान्ताः सुताः प्रभो ।
अथानूपपतिर्वीरः कार्त्तवीर्योऽभ्यवर्तत " ॥ १९ ॥
Mahábhárata Vanaparvan, Adhy. 116. St. 19. p. 124.

list of Vara*n*âdi, IV. 2. 82, [1] and Kaus'ámbî occurs in the Râmâya*n*a. In the fourth century B. C. Mathurá is described by Arrian and Pliny. [2] And in the second century B. C. Ptolemy mentions Mathurá. [3] In Kálidása's time this powerful state must have been a separate independent kingdom. The land of the Vatsas or Kaus'âmbi [4] is famous for its excellent rice and sugar-cane. In 629 A. D. Hiuen-Tsang while describing Kaus'âmbî says, " the land is famous for its productiveness ; the increase is very wonderful. Rice and sugar-canes are plentiful. " We have seen many allusions to शालि, कलम, and इक्षु in our poet's works. In *Ri*tusamhára he says " आपक्कशालिरुचिरानतगात्रयष्टिः " । *Ri*. III. 1. "वप्राश्च पक्ककलमावृतभूमिभागाः"। *Ri*. III. 5. " आकम्पयन्फलभरानतशालिजालान् " । *Ri*. III. 10. " संपन्नशालिनिचयावृतभूतलानि " । *Ri*. III. 16. " विगतकलुषमम्भः शालिपक्का धरित्री " । *Ri*. III. 22. " नवप्रवालोद्गमसस्यरम्यः । प्रफुल्ललोध्रः परिपक्कशालिः " । *Ri*. IV. 1. " प्रभूतशालिप्रसवैश्चितानि " । *Ri*. IV, 8. " परिणतबहुशालिव्याकुलग्रामसीमः " । *Ri*. IV. 18. " प्ररूढशालीक्षुचयावृतक्षितिं"। *Ri*. V. 1. " प्रचुरगुडविकारः स्वादुशालीक्षुरम्यः " । *Ri*. V. 16. In the Raghuvans'a we have " इक्षुच्छायनिषादिन्यस्तस्य गोप्तुर्गुणोदयम् । आ कुमारकथोद्धातं शालिगोप्यो जगुर्यशः " । *R*. IV. 20. " आपादपद्मप्रणताः कलमा इव ते रघुम् । फलैः संवर्धयामासुरुत्खातप्रतिरोपिताः "। *R*. IV. 37. " तस्थुस्तेवाङ्कुराः सर्वे फलिता इव शालयः " । *R*. XV. 78. " गर्भशालिसधर्माणस्तस्य गूढं विपेचिरे " । *R*. XVII. 53. " कृष्यां दहन्नापि खलु क्षितिमिन्धनेद्धो बीजप्ररोहजननीं ज्वलनः करोति " । *R*. IX. 80. In the Kumârasambhava Kálidâsa says " उपेक्षते यः श्लथलम्बिनीर्जटाः

---

1. In the वरणादि list are given the following :—1. वरणा (वरण), 2. शृङ्गी, 3. शाल्मलि, 4. शुण्डी, 5. शयाण्डी, 6. पर्णी, 7. ताम्रपर्णी, 8. गोद (पूर्वो गोदो, पूर्वेण गोदौ, अपरेण गोदौ), 9. आलिङ्ग्यायन, 10. जानपदी, (जालपदी; जालपद), 11. जम्बू, 12. पुष्कर, 13. चम्पा, 14. पम्पा, 15. वल्गु, 16. उज्जयनी (उज्जयिनी), 17. गया, 18. मथुरा, 19. तक्षशिला, 20. उरसा (उरशा), 21. गोमती, 22. वलभी, 23. कट्टकबदरी (with कन्दुक), 24. शिरीषाः, 25. काञ्ची, 26. सदाण्डी, 27, वणिकि, 28. वणिक ; this is an आकृतिगण.

2. Ind., c. 8 and *H. N.* lib. vi. c. 19, s. 22.

3. Lib. vii. c. 1, 49.

4. For the full account of Kaus'ámbî see notes on stanza 31, p. 34 of our edition of the Meghadúta. Mrs. Rádhábai Atmárám Sagoon, Book-sellers, publishers, Bombay.

कपोलदेशे कलमाग्रपिङ्गलाः " । Ku. V. 47. From these stanzas we can infer that agriculture was in a most flourishing condition in the days of Kâlidása. And from the *Ri*tusamhára the most charming of our poet's productions we also can infer that the days of our poet were the days of wealth, civilization and luxury and that his birth-place must have been some one of the central towns between the countries of Vatsa, Magadha and Avanti in what is called the Madhyades'a [1] by Manu. Thus the position of our poet's birth-place lies as follows :—

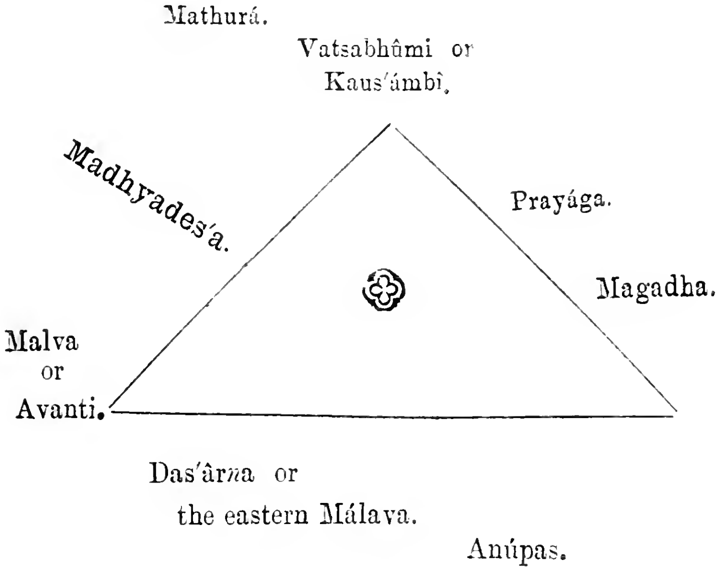

There is another point to which we beg to draw the attention of the reader. Professor Cowell, in his introduction to As'vaghosha's Buddhacharita, says, ' I can hardly doubt that Kâlidâsa's finished picture was suggested by the rough, but vigorous outlines in As'vaghosha.' But imitators, as a rule, are not

---

1. " हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्यं यत्प्राग्विनशनादपि । प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः " ॥ " That (country) which (lies) between the Himavat and the Vindhya (mountains) to the east of Prayága and to the west of Vinas'ana (the place where the river Sarasvatî disappears) is called Madhyades'a (the central region). "

always successful in their imitations and this is to be clearly seen from the Jánakîharaṇa of Kumáradása who, as mentioned before, imitates Kálidása like As'vaghosha in everything that he finds worth imitation. Imitators may perhaps try to imitate exactly the words, the phrases, the grammatical peculiarities, and if possible even the Alankáras with all the proprieties of the Rasa, but he cannot, in our opinion, lay claim to the *prasáda*, the exclusive gift that is invariably found in the poet's original. Thus then the poet's original must remain unaffected in every condition; and the copy cannot, in our opinion, come up to that test. The style of the Buddhist writers is generally rough and barbarous. And this is to be realised in As'vaghosha's Buddhacharita, the Lalitavistara and other works of Buddhism. And moreover it cannot stand to reason that a poet of such towering intelligence as Kâlidâsa, whom the learned professor is pleased to call the Hindu Virgil, should have copied As'vaghosha and that too from a solitary verse of his, and that he should have received inspiration from the rough but barbarous song of As'vaghosha. On the contrary it can be said with greater certainty that the Buddhist Ennius took his outlines, rough as they may appear to a reader, from the finished picture of the Hindu Virgil. The foregoing analogies conclusively go to prove that As'vaghosha had before him, when of course he wrote his Buddhacharita, almost all the works of Kálidása, and that he freely copied from them. No doubt there is a close similarity of style and language between the compositions of these poets. Nevertheless it cannot be said that Kálidása who wrote several dramas and poems should have felt the necessity of borrowing the style or imitating an idea or two from As'vaghosha's Buddhacharita. Kâlidâsa's genius is seen throughout his works, and that such a poet should have taken a certain verse from As'vaghosha's Buddhacharita [1] and amplified it in his Raghuvans'a

---

1. Anecdota Oxoniensia, Arian series, Vol. I. part VII. 'The Buddhacharita of As'vaghosha,' edited from three Mss. by E. B. Cowell, Oxford, 1893.

looks on the very face of it absurd. The Sanskrit tyle preceding the Christian era might have received a settled form of composition, and been in fashion throughout the then five divisions of India. The similarity of style that is seen in the writings of these poets might thus be due to this fashion.

In the seventh Canto, stanzas 5-15, Kâlidâsa describes the ladies of the city crowding at the windows to see the prince Aja as he passes by from the Svayamvara. where the princess Bhojyá has chosen him for her husband. It has a striking parallel in the third canto of the Buddhacharita, where the young prince makes his first entry into his father's capital,—that expedition, during the course of which he is to make his first acquaintance with old age as the inevitable shadow which dogs the steps of youth.

बुद्धचरितम्:—

ततः कुमारः खलु गच्छतीति
श्रुत्वा स्त्रियः प्रेष्यजनात्प्रवृत्तिम्।
दिदृक्षया हर्म्यतलानि जग्मुः
जनेन मान्येन कृताभ्यनुज्ञाः ॥ १३ ॥
ताः स्रस्तकांचीगुणविघ्निताश्च
सुप्तप्रबुद्धाकुललोचनाश्च ।
वृत्तान्तविन्यस्तविभूषणाश्च
कौतूहलेनापि भृताः परीयुः ॥ १४ ॥
प्रासादसोपानतलप्रणादैः
कांचीरवैर्नूपुरनिस्वनैश्च ।
विभ्रामयन्त्यो गृहपक्षिसंघान्
अन्योन्यवेगाच्च समाक्षिपन्त्यः ॥१५॥
कासांचिदासां तु वरांगनानां
जातत्वराणामपि सोत्सुकानाम्।
गतिं गुरुत्वाज्जगृहुर्विशालाः
श्रोणीरथाः पीनपयोधराश्च ॥ १६ ॥
शीघ्रं समर्थापि तु गंतुमन्या
गतिं निजग्राह ययौ न तूर्णम्।
ह्रिया प्रगल्भानि निगूहमाना
रहः प्रयुक्तानि विभूषणानि ॥ १७ ॥
परम्परोत्पीडनपिंडितानां
संमर्दसंक्षोभितकुण्डलानाम् ।

रघुवंशम् :—

ततस्तदालोकनतत्पराणां
सौधेषु चामीकरजालवत्सु।
बभूवुरित्थं पुरसुंदरीणाम्
त्यक्तान्यकार्याणि विचेष्टितानि ॥ ५॥
आलोकमार्गं सहसा व्रजन्त्या
कयाचिदुद्वेष्टनवान्तमाल्यः ।
बंद्धुं न संभावित एव तावत्
करेण रुद्धोऽपि च केशपाशः ॥ ६ ॥
प्रसाधिकालम्बितमग्रपादम्
आक्षिप्य काचिद्द्रवरागमेव ।
उत्सृष्टलीलागतिरागवाक्षाद्
अलक्तकांकां पदवीं ततान ॥ ७ ॥
विलोचनं दक्षिणमञ्जनेन
संभाव्य तद्वञ्चितवामनेत्रा ।
तथैव वातायनसंनिकर्षं
ययौ शलाकामपरा वहन्ती ॥ ८॥
जालान्तरप्रेषितदृष्टिरन्या
प्रस्थानभिन्नां न बबन्ध नीवीम्।
नाभिप्रविष्टाभरणप्रभेण
हस्तेन तस्थाववलम्ब्य वासः ॥ ९ ॥
अर्धाचिता सत्वरमुत्थितायाः
पदे पदे दुर्निमिते गलन्ती।

तासां तदा सस्वनभूषणानां
वातायनेष्वप्रशमो बभूव ॥ १८ ॥
वातायनेभ्यस्तु विनिःसृतानि
परस्परोपासितकुंडलानि ।
स्त्रीणां विरेजुर्मुखपंकजानि
सक्तानि हर्म्येष्विव पंकजानि ॥ १९ ॥
ततो विमानैर्युवतीकलापैः
कौतूहलोद्घाटितवातयानैः ।
श्रीमत्समंतान्नगरं बभासे
वियद्विमानैरिव साप्सरोभिः ॥ २० ॥
वातायनानामविशालभावाद्
अन्योन्यगण्डार्पितकुण्डलानि ।
मुखानि रेजुः प्रमदोत्तमानाम्
बद्धाः कलापा इव पंकजानाम् ॥ २१ ॥
तस्मिन्कुमारं पथि वीक्षमाणाः
स्त्रियो बभुर्गामिव गंतुकामाः ।
ऊर्ध्वोन्मुखाश्चैनमुदीक्षमाणाः
नरा बभुर्द्यामिव गन्तुकामाः ॥ २२ ॥
दृष्ट्वाच तं राजसुतं स्त्रियस्ता
जाज्वल्यमानं वपुषा श्रिया च ।
धन्यास्य भार्येति शनैरवोचन्
शुद्धैर्मनोभिः खलु नान्यभावात् ॥२३॥
अयं किल व्यायतपीनबाहु
रूपेण साक्षादिव पुष्पकेतुः ।
त्यक्त्वा श्रियं धर्ममुपैष्यतीति
तस्मिन्हि ता गौरवमेव चक्रुः ॥ २४ ॥

कस्याश्चिदासीद्रशना तदानीं
अंगुष्ठमूलार्पितसूत्रशेषा ॥ १० ॥
तासां मुखैरासवगन्धगर्भैः
व्याप्तान्तराः सान्द्रकुतूहलानाम् ।
विलोलनेत्रभ्रमरैर्गवाक्षाः
सहस्रपत्राभरणा इवासन् ॥ ११ ॥
ता राघवं दृष्टिभिरापिबन्त्यो
नार्यो न जग्मुर्विषयान्तराणि ।
तथा हि शेषेन्द्रियवृत्तिरासां
सर्वात्मना चक्षुरिव प्रविष्टा ॥ १२ ॥
स्थाने वृता भूपतिभिः परोक्षैः
स्वयंवरं साधुममंस्त भोज्या ।
पद्मेव नारायणमन्यथासौ
लभेत कान्तं कथमात्मतुल्यम् ॥ १३ ॥
परस्परेण स्पृहणीयशोभं
न चेदिदं द्वंद्वमयोजयिष्यत् ।
अस्मिन्द्वये रूपविधानयत्नः
पत्युः प्रजानां वितथोऽभविष्यत् ॥१४॥
रतिस्मरौ नूनमिवावभूतां
राज्ञां सहस्रेषु तथा हि बाला ।
गतेयमात्मप्रतिरूपमेव
मनो हि जन्मान्तरसंगतिज्ञम् ॥ १५ ॥

In the Kumârasambhava III. 64, Kâlidása describes Kâma. It has also a parallel in the Buddhacharita XIII. 1—13, in very similar terms—

उमासमक्षं हरबद्धलक्ष्यः शरासनज्यां मुहुराममर्श ॥

" In the presence of Umá, fixing his aim at Hara, he repeatedly fingered the bow-string."

बुद्धचरितम् :—

तस्मिंश्च बोधाय कृतप्रतिज्ञे
राजर्षिवंशप्रभवे महर्षौ ।
तत्रोपविष्टे प्रजहर्ष लोकः
तत्रास सद्धर्मरिपुस्तु मारः ॥ १ ॥

कुमारसंभवम् :—

तथेति शेषामिव भर्तुराज्ञाम्
आदाय मूर्ध्ना मदनः प्रतस्थे ।
ऐरावतास्फालनकर्कशेन
हस्तेन पस्पर्श तदंगमिन्द्रः ॥ १ ॥

यं कामदेवं प्रवदन्ति लोके
चित्रायुधं पुष्पशरं तथैव ।
कामप्रचाराधिपतिं तमेव
मोक्षद्विषं मारमुदाहरन्ति ॥ २ ॥

तस्यात्मजा विभ्रमहर्षदर्पाः
तिस्रो रतिप्रीतितृषश्च कन्याः ।
पप्रच्छुरेनं मनसो विकारं
स तांश्च तांश्चैव वचो बभाषे ॥ ३ ॥

असौ मुनिर्निश्चयवर्म बिभ्रत्
सत्त्वायुधं बुद्धिशरं विकृष्य ।
जिगीषुरास्ते विषयान्मदीयान्
तस्मादयं मे मनसो विषादः ॥ ४ ॥

यदि ह्यसौ मामभिभूय याति
लोकाय चाख्यात्यपवर्गमार्गम् ।
शून्यस्ततोऽयं विषयो ममाद्य
वृत्ताच्च्युतस्येव विदेहभर्तुः ॥ ५ ॥

तद्यावदेवैष न लब्धचक्षुः
मद्गोचरे तिष्ठति यावदेव ।
यास्यामि तावद्व्रतमस्य भेत्तुं
सेतुं नदीवेग इवाभिवृद्धः ॥ ६॥

ततो धनुः पुष्पमयं गृहीत्वा
शरांस्तथा मोहकरांश्च पंच ।
सोऽश्वत्थमूलं ससुतोऽभ्यगच्छत
अस्वास्थ्यकारी मनसः प्रजानां ॥ ७ ॥

अथ प्रशान्तं मुनिमासनस्थं
पारं तितीर्षुं भवसागरस्य ।
विषज्य सव्यं करमायुधाग्रे
क्रीडञ्शरेणेदमुवाच मारः ॥ ८ ॥

उत्तिष्ठ भोः क्षत्रिय मृत्युभीत
चरस्व धर्मं त्यज मोक्षधर्मम् ।
बाणैश्च * * * विनीय लोकान्
लोकान् परान् प्राप्नुहि वासवस्य ॥ ९ ॥

पंथा हि निर्यातुमयं यशस्यो
यो वाहितः पूर्वतमैर्नरेन्द्रैः ।
जातस्य राजर्षिकुले विशाले
भैक्षाकमश्लाघ्यमिदं प्रपत्तुम् ॥ १० ॥

अथाद्य नोत्तिष्ठसि निश्चितात्मा
भव स्थिरो मा विमुचः प्रतिज्ञां ।
मयोद्यतो ह्येष शरः स एव
यः सूर्यके मीनरिपौ विमुक्तः ॥ ११ ॥

तस्मिन्वने संयमिनां मुनीनां
तपःसमाधेः प्रतिकूलवर्ती ।
संकल्पयोनेरभिमानभूतम्
आत्मानमाधाय मधुर्जजृंभे ॥ २ ॥

दृष्टिप्रपातं परिहृत्य तस्य
कामः पुरः शुक्रमिव प्रयाणे ।
प्रान्तेषु संसक्तनमेरुशाखं
ध्यानास्पदं भूतपतेर्विवेश ॥ ३ ॥

स देवदारुद्रुमवेदिकायाम्
शार्दूलचर्मव्यवधानवत्याम् ।
आसीनमासन्नशरीरपातः
त्रियंबकं संयमिनं ददर्श ॥ ४ ॥

स्मरस्तथाभूतमयुग्मनेत्रं
पश्यन्नदूरान्मनसाप्यधृष्यम् ।
नालक्षयत्साध्वससन्नहस्तः
स्रस्तं शरं चापमपि स्वहस्तात् ॥ ५ ॥

तां वीक्ष्य सर्वावयवानवद्यां
रतेरपि ह्रीपदमादधानाम् ।
जितेन्द्रिये शूलिनि पुष्पचापः
स्वकार्यसिद्धिं पुनराशशंसे ॥ ६ ॥

उमापि नीलालकमध्यशोभि
विस्रंसयन्ती नवकर्णिकारम् ।
चकार कर्णच्युतपल्लवेन
मूर्ध्ना प्रणामं वृषभध्वजाय ॥ ७ ॥

कामस्तु बाणावसरं प्रतीक्ष्य
पतंगवद्वह्निमुखं विविक्षुः ।
उमासमक्षं हरबद्धलक्ष्यः
शरासनज्यां मुहुराममर्श ॥ ८ ॥

प्रतिग्रहीतुं प्रणयिप्रियत्वात्
त्रिलोचनस्तामुपचक्रमे च ।
संमोहनं नाम च पुष्पधन्वा
धनुष्यमोघं समधत्त बाणम् ॥ ९ ॥

अथेन्द्रियक्षोभमयुग्मनेत्रः
पुनर्वशित्वाद्बलवन्निगृह्य ।
हेतुं स्वचेतोविकृतेर्दिदृक्षुः
दिशामुपांतेषु ससर्ज दृष्टिम् ॥ १० ॥

स दक्षिणापांगनिविष्टमुष्टिं
नतांसमाकुञ्चितसव्यपादम् ।
ददर्श चक्रीकृतचारुचापं
प्रहर्तुमभ्युद्यतमात्मयोनिम् ॥ ११ ॥

पृष्टः स चानेन कथंचिदैडः
सोमस्य नप्ताप्यभवद्विचित्तः ।
स चाभवच्छांतनुरस्वतंत्रः
क्षीणे युगे किं बत दुर्बलोऽन्यः ॥ १२ ॥
तत्क्षिप्रमुत्तिष्ठ लभस्व संज्ञां
बाणो ह्ययं तिष्ठति लेलिहानः ।
प्रियाभिधेयेषु रतिप्रियेषु
यं चक्रवाकेष्वपि नोत्सृजामि ॥ १३ ॥
Buddhacharita, Canto XIII.

तपः परामर्शविवृद्धमन्योः
भ्रूभंगदुष्प्रेक्ष्यमुखस्य तस्य ।
स्फुरन्नुदर्चिः सहसा तृतीयाद्
अक्ष्णः कृशानुः किल निष्पपात ॥ १२॥
क्रोधं प्रभो संहर संहरेति
यावद्गिरः खे मरुतां चरन्ति ।
तावत्स वह्निर्भवनेत्रजन्मा
भस्मावशेषं मदनं चकार ॥ १३ ॥
Kumárasambhava, Canto III.

Readers of the Raghuvans'a will well remember Kálidása's peculiar way of using the Periphrastic Perfect and Future. A parallel of this is also found in the Buddhacharita.

बुद्धचरितम्:—
यथावदेनं दिवि देवसंघा
दिव्यैर्विशेषैर्महयां च चक्रुः ॥
Canto VI, 58.

रघुवंशम्:—
तं पातयां प्रथममास पपात पश्चात् ॥
Canto IX, 61.
प्रभ्रंशयां यो नहुषं चकार ॥
Canto XIII, 36.
संयोजयां विधिवदास समेतबंधुः ॥
Canto XVI, 86.

Extracts illustrating the use of similar words and phrases are cited below.

बुद्धचरितम्:--
क्वचित्प्रदध्यौ विललाप च क्वचित्
क्वचित्प्रचस्खाल पपात च क्वचित् ।
Canto VI, 68.
तथापि पापीयसि निर्जिते गते
दिशः प्रसेदुः प्रबभौ निशाकरः ।
दिवो निपेतुर्भुवि पुष्पवृष्टयः
रराज योषेव विकल्मषा निशा ।
Canto XIII, 73.
वाता ववुः स्पर्शसुखा मनोज्ञा
दिव्यानि वासांस्यवपातयन्तः ।
सूर्यः स एवाभ्यधिकं चकाशे
जज्वाल सौम्यार्चिरनीरितोऽग्निः ।
Canto I, 41.

रघुवंशम्:--
क्वचित्पथा संचरते सुराणां
क्वचिद्घनानां पततां क्वचिच्च ।
Canto XIII, 19.
दिशः प्रसेदुर्मरुतो ववुः सुखाः
प्रदक्षिणार्चिर्हविरग्निराददे ।
बभूव सर्वं शुभशंसि तत्क्षणं
भवो हि लोकाभ्युदयाय तादृशाम् ।
Canto III, 14.
वाता ववुः सौख्यकराः प्रसेदुः
आशाविधूमो हुतभुग्दिदीपे ।
जलान्यभूवन्विमलानि तत्रो-
त्सवेऽन्तरिक्षं प्रससाद सद्यः ।
Ku. XI. 37.

Here is also a striking parallel which undoubtedly betrays the imitator, As'vaghosha—

बुद्धचरितम् :—

द्वन्द्वानि सर्वस्य यतः प्रसक्ता-
न्यलाभलाभप्रभृतीनि लोके ।
अतोऽपि नैकान्तसुखोऽस्ति कश्चि-
न्नैकान्तदुःखः पुरुषः पृथिव्यां ॥
XI. 43.

कामेष्वनैकान्तिकता च यस्मा-
दतोऽपि मे तेषु न भोगसंज्ञा ।
य एव भावा हि सुखं दिशन्ति
त एव दुःखं पुनरावहन्ति ॥ XI. 41.

धर्मार्थकामा विषयं मिथोऽन्यं
न वेशमाचक्रमुरस्य नीत्या ॥
I. 13.

ततः प्रसन्नश्च बभूव पुष्य-
स्तस्याश्च देव्या व्रतसंस्कृतायाः ।
पार्श्वात्सुतो लोकहिताय जज्ञे
निर्वेदनं चैव निरामयं च ॥
I. 25.

तं जातमात्रमथ काञ्चनयूपगौरं
प्रीतः सहस्रनयनः शनकैरगृह्णात् ।
मन्दारपुष्पनिकरैः सह तस्य मूर्ध्नि
खान्निर्मले च विनिपेततुरम्बुधारे ॥
खात्प्रसुते चन्द्रमरीचिशुभ्रे
द्वे वारिधारे शिशिरोष्णवीर्ये ।
शरीरसौख्यार्थमनुत्तरस्य
निपेततुर्मूर्धनि तस्य सौम्ये ॥
I. 27, 35.

सन्ध्याभ्रजालोपरि संनिविष्टम्
I. 28.

क्रमेण गर्भादभिनिःसृतः सन् ।
I. 30.

कल्पेष्वनेकेष्विव भावितात्मा ।
I. 30.

मेघदूतम् :—

कस्यैकान्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्त-
तो वा । नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा
चक्रनेमिक्रमेण ॥
II. 48.

रघुवंशम्

एकान्तविध्वंसिषु मद्विधानां
पिण्डेष्वनास्था खलु भौतिकेषु ॥
II. 57.

न धर्ममर्थकामाभ्यां बबाधे न च तेन तौ।
नार्थं कामेन कामं वा सोऽर्थेन सदृश-
स्त्रिषु ॥ XVII. 57.

भवो हि लोकाभ्युदयाय तादृशाम् ।
III. 14.

तस्य प्रभानिर्जितपुष्परागं
पौष्यां तिथौ पुष्यमसूत पत्नी ।
तस्मिन्नपुष्यन्नुदिते समग्रां
पुष्टिं जनाः पुष्य इव द्वितीये ॥
XVIII. 32.

सन्तानकमयी वृष्टिर्भवने चास्य पेतुषी ।
सन्मङ्गलोपचाराणां &c.
X. 77.

तस्यापतन्मूर्ध्नि जलानि जिष्णोः
XIV. 8.

सन्ध्याभ्रकपिशस्तस्य विराधो नाम
राक्षसः । XII. 28.

क्रमेण निस्तीर्य च दोहदव्यथाम् ।
III. 7.

भावितात्मा भुवो भर्तुः ।
I. 74.

Mark also the use of the Instrumental case.

दीप्त्या च धैर्येण श्रिया रराज ।
I. 31.

कुलेन कान्त्या वयसा नवेन
गुणैश्च तैस्तैर्विनयप्रधानैः ।
VI. 79.

कान्त्या गिरा सूनृतया च योग्या ।
VI. 29.

रराज धाम्ना रघुसूनुरेव ।
VI. 6.

The same idea differently worded.

स हि स्वगात्रप्रभयोज्ज्वलन्त्या
दीपप्रभां भास्करवन्मुमोष
महार्हजाम्बूनदचारुवर्णो
विद्योतयामास दिशश्च सर्वाः ।
I. 32.

Mark the use of महार्ह.

अरिष्टशय्यां परितो विसारिणा
सुजन्मनस्तस्य निजेन तेजसा
निशीथदीपाः सहसा हतत्विषो
बभूवुरालेख्यसमर्पिता इव ।
III. 15.

तेषां महार्हासनसंस्थितानाम् ।
VI. 6.

सचन्दना चोत्पलपद्मगर्भा
पपात वृष्टिर्गगनादनभ्रात् ।
I. 40.

अवाङ्मुखस्योपरि पुष्पवृष्टिः
पपात विद्याधरहस्तमुक्ता ॥
II. 60.

प्रागुत्तरे चावसथप्रदेशे ।
I. 42.

निवसन्नावसथे पुराद्बहिः ।
VIII. 14.

क्वचित्क्वणत्तूर्यमृदङ्गगीत-
वीणामुकुन्दामुरजादिभिश्च ।
I. 45.

सुखश्रवा मङ्गलतूर्यनिस्वनाः ।
पथि व्यजृम्भन्त दिवौकसामपि
III. 19.

तस्मात्प्रमाणं न वयो न कालः ।
I. 51.

तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते ।
XI. 1.

सत्कारपूर्वं प्रददौ धनानि ।
भूयादयं भूमिपतिर्यथोक्तो ।
यायाज्जरामेत्य वनानि चेति ।
I. 53.

दिदेश कौत्साय समस्तमेव
V. 30.

नृपतिककुदं दत्त्वा यूने सितातपवारणं।
मुनिवनतरुच्छायां देव्या तया सह शि-
श्रिये । गलितवयसामिक्ष्वाकूणामिदं
हि कुलव्रतम् । III. 70.

धन्योऽस्म्यनुग्राह्यमिदं कुलं मे
यन्मां दिदृक्षुर्भगवानुपेतः ।
आज्ञाप्यतां किं करवाणि सौम्य
शिष्योऽस्मि विश्रंभितुमर्हसीति ॥
I. 58.

तवार्हतो नाभिगमेन तृप्तं
मनो नियोगक्रिययोत्सुकं मे ।
अप्याज्ञया शासितुरात्मना वा
प्राप्तोऽसि संभावयितुं वनान्माम् ॥
V. 11.

सविस्मयोत्फुल्लविशालदृष्टिः
गंभीरधीराणि वचांस्युवाच ।
I. 59.

महात्मनि त्वय्युपपन्नमेतत् ।
I. 60.

शक्रध्वजस्येव समुच्छ्रितस्य ।
I. 63.

इत्येतदेवं वचनं निशम्य
प्रहर्षसंभ्रान्तगतिर्नरेंद्रः ।
आदाय धात्र्यंकगतं कुमारं
संदर्शयामास तपोधनाय ॥
I. 64.

आज्ञापय ज्ञातविशेषपुंसां
लोकेषु यत्ते करणीयमस्ति ।
अनुग्रहं संस्मरणप्रवृत्त-
मिच्छामि संवर्धितमाज्ञया ते ॥
Ku. III. 3.

अवोचदेनं गगनस्पृशा रघुः
स्वरेण धीरेण निवर्तयन्निव ।
III. 43.

सर्वं सखे त्वय्युपपन्नमेतत् ।
Ku. III. 12.

पुरुहूतध्वजस्येव तस्योन्नयनपङ्क्तयः ।
IV. 3.

निशम्य देवानुचरस्य वाचं ।
II. 52.

प्रत्यभिज्ञानरत्नं च रामायादर्शयत्
कृती । XII. 64.

निदर्शयामास विशेषदृश्यम्
इन्दुं नवोत्थानमिवेन्दुमत्यै ॥
VI. 31.

In the Kâlidásian literature the root दृश् is generally found used with the Dative instead of the Accusative; we have a similar instance in the above verse of the Buddhacharita.

बभूव पक्ष्मांतरिवांचिताश्रुः ।
I. 66.

दृष्ट्वासितं त्वश्रुपरिप्लुताक्षं
स्नेहाच्च पुत्रस्य नृपश्चकम्पे ।
सगद्गदं बाष्पकषायकंठः
पप्रच्छ च प्रांजलिरानतांगः ।
I. 67.

उभावलंचक्रतुरञ्चिताभ्याम् ।
II. 18.

For the third line compare:—

चूताङ्कुरास्वादकषायकण्ठः ।
Ku. III. 32.

यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्ट-
मुत्कण्ठया ।
कण्ठः स्तम्भितबाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ता-
जडं दर्शनम् ।
पीड्यन्ते गृहिणः कथं नु तनयाविश्लेष-
दुःखैर्नवैः ।
S'â. IV. 6.

विहाय राज्यं विषयेष्वनास्थ-
स्तीव्रैः प्रयत्नैरधिगम्य तत्त्वम् ।
जगत्ययं मोहतमो निहन्तुं ।
ज्वलिष्यति ज्ञानमयो हि सूर्यः ।
I. 74.

अपरो दहने स्वकर्मणां
ववृते ज्ञानमयेन वह्निना ।
VIII. 20.

विषयेषु विनाशधर्मसु
त्रिदिवस्थेष्वपि निःस्पृहोऽभवत् ।
VIII. 10.

विदह्यमानाय जनाय लोके
रागाग्निनायं विषयेन्धनेन ।
प्रह्लादमाधास्यति धर्मवृष्ट्या
वृष्ट्या महामेघ इवातपान्ते ।
I. 78.

स्मर एव तापहेतुर्निर्वापयिता स एव मे
जातः ।
दिवस इवाभ्रश्यामस्तपात्यये जीव-
लोकस्य ॥
S'á. III. 11.

For a parallel use of सौम्य compare the following:—

तन्मा कृथाः शोकमिमं प्रति त्वं
तत्सौम्य शोच्ये हि मनुष्यलोके ।
I. 81.

प्रीतास्मि ते सौम्य चिराय जीव ।
XIV. 59.

कच्चित्सौम्य व्यवसितमिदं
बन्धुकृत्यं त्वया मे ।
Meg. II. 53.

पवनपथेन यथागतं जगाम ।
I. 85.

यथागतं मातलिसारथिर्ययौ ।
III. 67.

प्रयतमनाः परया मुदा परीतः ।
I. 88.

अभ्यास्य प्रयतपरिग्रहद्वितीयः ।
I. 95.

प्रियतनयं तनयस्य जातकर्म
I. 87.

स जातकर्मण्यखिले तपस्विना ।
III. 18.

पुरमथ पुरतः प्रवेश्य पत्नीं
स्थविरजनानुगतामपत्यनाथाम् ।
नृपतिरपि जगाम पौरसंघैः
दिवममरैर्मघवानिवार्च्यमानः ॥
I. 92.

पुरंदरश्रीः पुरमुत्पताकं
प्रविश्य पौरैरभिनन्द्यमानः ।
भुजे भुजंगेन्द्रसमानसारे
भूयः स भूमेर्धुरमाससञ्ज ।
II. 74.

आ जन्मनो जन्मजरान्तकस्य
II. 1.

आ जन्मनः शाठ्यमशिक्षितो यः ।
S'á. V. 25.

द्वावस्य पक्षावपरस्तु नाशम् ।
II. 6.

पूर्व एवाभवत्पक्षस्तस्मिन्नाभवदुत्तरः ।
IV. 10.

यच्च प्रतिभ्वो विभवेऽपि शक्ये
न प्रार्थयंति स्म नराः परेभ्यः ।
अभ्यर्थितः सूक्ष्मधनोऽपि चायं
तदा न कश्चिद्विमुखो बभूव ॥
II. 10.

गुर्वर्थमर्थी श्रुतपारदृश्वा
रघोः सकाशादनवाप्य कामम् ।
गतो वदान्यान्तरमित्ययं मे
मा भूत्परीवादनवावतारः ॥
V. 24.

ततो नृपस्तस्य सुतस्य नाम
सर्वार्थसिद्धोऽयमिति प्रचक्रे ।
II. 17.

अवेक्ष्य धातोर्गमनार्थमर्थवि-
च्चकार नाम्ना रघुमात्मसंभवम् ।
III. 21.

जातं प्रहर्षं न शशाक सोढुम् ।
II. 18.

गुरुः प्रहर्षः प्रबभूव नात्मनि ।
III. 17.

ततः स बालार्क इवोदयस्थः
समीरितो वह्निरिवानिलेन ।

शुभैः शरीरावयवैर्दिने दिने
पुपोष वृद्धिं हरिदश्वदीधिते-

क्रमेण सम्यग्ववृधे कुमारः
ताराधिपः पक्ष इवातमस्के ॥
II. 20.

एवं स तैस्तैर्विषयोपचारैः
वयोऽनुरूपैरुपचर्यमाणः।
बालोऽप्यबालप्रतिमो बभूव
धृत्या च शौचेन धिया श्रिया च ॥
II. 23.

वयश्च कौमारमतीत्य मध्यं
संप्राप्य बालः स हि राजसूनुः।
अल्पैरहोभिर्बहुवर्षगम्या
जग्राह विद्याः स्वकुलानुरूपाः ॥
II. 24.

कुलात्ततोऽस्मै स्थिरशील-
संयुतात्साध्वीं वपुर्ह्रीवि-
नयोपपन्नां। यशोधरां नाम
यशोविशालां तुल्याभिधानां
श्रियमाजुहाव ॥
II. 26.

अथापरं भूमिपतेः प्रियोऽयं
सनत्कुमारप्रतिमः कुमारः।
सार्धं तया शाक्यनरेन्द्रवध्वा
शच्या सहस्राक्ष इवाभिरेमे ॥
II. 27.

पुत्रप्रियः स्वर्गमिवारुरुक्षन्।
II. 48.

रनुप्रवेशादिव बालचन्द्रमाः।
III. 22.

दिने दिने सा परिवर्धमाना
लब्धोदया चान्द्रमसीव लेखा।
पुपोष लावण्यमयान्विशेषा-
ञ्ज्योत्स्नान्तराणीव कलान्तराणि ॥
Ku. I. 25.

धियः समग्रैः स गुणैरुदारधीः
क्रमाच्चतस्रश्चतुरर्णवोपमाः।
ततार विद्याः पवनातिपातिभि-
र्दिशो हरिद्भिर्हरितामिवेश्वरः ॥
III. 30.

तमादौ कुलविद्यानां
अर्थमर्थविदां वरः।
पश्चात्पार्थिवकन्यानां
पाणिमग्राहयत्पिता
XVII. 3

स पूर्वजन्मान्तरदृष्टपाराः
स्मरन्निवाक्लेशकरो गुरूणाम्।
तिस्रस्त्रिवर्गाधिगमस्य मूलं
जग्राह विद्याः प्रकृतीश्च पित्र्याः ॥
XVIII. 50.

तां पार्वतीत्याभिजनेन नाम्ना
बन्धुप्रियां बन्धुजनो जुहाव।
उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा
पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम ॥
Ku. I. 26.

आखण्डलसमो भर्ता
जयन्तप्रतिमः सुतः।
आशीरन्या न ते योग्या
पौलोमीसदृशी भव ॥
S'â. VII. 28.

समारुरुक्षुर्दिव मायुषः क्षये।
III. 69.

तप् governing a cognet object should be marked.

गुक्लान्यमुक्त्वापि तपांस्यतप्त
II. 49.

यच्च तप्तं तपस्तस्य
विपक्वं फलमद्य नः।
Ku. VI. 16,

The nse of स्थिति should be remembered in the following:—

जजाप पुत्रस्थितये स्थितश्रीः ।
II. 51.

वनमनुपमसत्त्वा* बोधिसत्त्वास्तु सर्वे
विषयसुखरसज्ञा जग्मुरुत्पन्नपुत्राः ।
अत उपचितकर्मारूढमूलेऽपि हेतौ स
रतिमुपसिषेवे बोधिमापन्न यावत् ॥
II. 56.

ततः कदाचिन्मृदुशाद्वलानि
पुंस्कोकिलोन्नादितपादपानि ।
शुश्राव पद्माकरमण्डितानि
शीते निबद्धानि स काननानि ॥
III. 1.

अन्तर्गृहे नाग इवावरुद्धः ॥
III. 2.

ततो नृपस्तस्य निशम्य भावं ।
III. 3.

गच्छेति चाज्ञापयति स्म वाचा
स्नेहान्न चैनं मनसा मुमोच ।
III. 7.

कौतूहलात्स्फीततरैश्च नेत्रैः
नीलोत्पलाभैरिव कीर्यमाणः ।
शनैः शनै राजपथं जगाहे
पौरैः समंतादभिवीक्ष्यमाणः ॥
III. 10.

स्थितेरभेत्ता स्थितिमन्तमन्वयम् ।
III. 27.

गलितवयसामिक्ष्वाकूणामिदं हि कुल-
व्रतम् । III. 70.

वार्द्धके मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनु-
त्यजाम् । I. 8.

स पल्वलोत्तीर्णवराहयूथा-
न्यावासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि ।
ययौ मृगाध्यासितशाद्वलानि
श्यामायमानानि वनानि पश्यन् ॥
II. 17.

चूताङ्कुरास्वादकषायकण्ठः
पुंस्कोकिलो यन्मधुरं चुकूज ॥
Ku. III. 32.

भोगीव मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः ॥
II. 32.

मृगाधिराजस्य वचो निशम्य ।
II. 41.

निशम्य देवानुचरस्य वाचं ।
II. 52.

कौलीनभीतेन गृहान्निरस्ता
न तेन वैदेहसुता मनस्तः ॥
XIV. 84.

तावत्प्रकीर्णाभिनवोपचार-
मिन्द्रायुधद्योतिततोरणाङ्कं ।
वरः स वध्वा सह राजमार्गं
प्राप ध्वजच्छायनिवारितोष्णम् ॥
VII. 4.

---

* The Chinese translation agrees well with Kálidása's verses. It runs thus :—" In former times the Bodhisattva kings although their life has been restrained, have yet enjoyed the pleasures of the world, and when they have begotten a son, then separating themselves from family ties, have afterwards entered the solitude of the mountains to prepare themselves in the way of a silent recluse. "

The following is the verse, which, Professor Cowell says, Kálidâsa seems to have directly taken from As'vaghosha ; and after translating the verse in question the learned Professor remarks that Kálidása developes this crude sketch into a more finished picture ; but how far this assertion is true we leave the reader to judge for himself.

वातायनेभ्यस्तु विनिःसृतानि परस्परोपासितकुण्डलानि । स्त्रीणां विरेजुर्मुखपंकजानि सक्तानि हर्म्येष्विव पंकजानि ॥ III. 19.	तासां मुखैरासवगन्धगर्भै- र्व्याप्तान्तराः सान्द्रकुतूहलानाम् । विलोलनेत्रभ्रमरैर्गवाक्षाः सहस्रपत्राभरणा इवासन् । VII. 11.
	प्रासादवातायनदृश्यबन्धैः साकेतनार्योऽञ्जलिभिः प्रणेमुः । XIV. 13.
अयं किल व्यायतपीनबाहु III. 24.	युवा युगव्यायतबाहुरंसलः । III. 34.
तस्मिन्हि ता गौरवनेव चक्रुः ॥ III. 24.	स्वविक्रमे गौरवमादधानम् ॥ XIV. 18.
आयुष्मतोऽप्येष वयःप्रकर्षात् । III. 33.	वपुःप्रकर्षादजयद्गुरुं रघुः । III. 34.
ततः प्रणेता वदति स्म तस्मै सर्वप्रजानामयमन्तकर्मा । हीनस्य मध्यस्य महात्मनो वा सर्वस्य लोके नियतो विनाशः ॥ III. 59.	मरणं प्रकृतिः शरीरिणाम् विकृतिर्जीवितमुच्यते बुधैः । क्षणमप्यवतिष्ठते श्वसन् यदि जन्तुर्ननु लाभवानसौ ॥ VIII. 87.
सचेतनः (कथं) स्यादिह हि प्रमत्तः ॥ III. 62.	सचेतसः कस्य मनो न दूयते । Ku. V. 48.
प्रत्युज्जग्मुर्नृपसुतं प्राप्तं वरमिव स्त्रियः । IV. 1.	प्रत्युज्जगामातिथिमातिथेयः । V. 2.
निश्चलैः प्रीतिविकचैः पिबन्त्य इव लोचनैः । IV. 3.	पपौ निमेषालसपक्ष्मपङ्क्तिः उपोषिताभ्यामिव लोचनाभ्याम् । II. 19.
गौतमं दीर्घतपसं महर्षिं दीर्घजीविनम् IV. 18.	येषु दीर्घतपसः परिग्रहः । XI. 33.
एवमादीनृषींस्तांस्तान् अनयन्विक्रियां स्त्रियः ।	क्रमपरवशं न विप्रकुर्यु- र्विभुमपि तं यदमी स्पृशन्ति भावाः । Ku. VI. 95.

ललितं पूर्ववयसं
किं पुनर्नृपतेः सुतं ॥
IV. 21.

स्रस्तांसकोमलालम्ब-
मृदुबाहुलताबला ।
अनृतं स्खलितं काचि-
त्कृत्वैनं सस्वजे बलात् ॥
IV. 30.

सुवर्णकलशप्रख्यान्
दर्शयन्त्यः पयोधरान् ।
IV. 35.

काचित्पद्मवनादित्य
सपद्मा पद्मलोचना ।
पद्मवक्त्रस्य पार्श्वेऽस्य
पद्मश्रीरिव तस्थुषी ॥
IV. 36.

अशोको दृश्यतामेष
कामिशोकविवर्धनः ।
रुवन्ति भ्रमरा यत्र
दह्यमाना इवाग्निना ॥
चूतयष्ट्या समाश्लिष्टो
दृश्यतां तिलकद्रुमः ।
शुक्लवासा इव नरः
स्त्रिया पीताङ्गरागया ॥
फुल्लं कुरुबकं पश्य
निर्मुक्तालक्तकप्रभं
यो नखप्रभया स्त्रीणां
निर्भर्त्सित इवानतः ॥
बालाशोकश्च निचितो
दृश्यतामेष पल्लवैः ।
योऽस्माकं हस्तशोभाभिः
लज्जमान इव स्थितः ॥
IV. 45, 46, 47, 48.

चूतयष्ट्या समाश्लिष्टः ।
IV. 46.

मत्तस्य परपुष्टस्य रुवतः
श्रूयतां ध्वनिः ।
IV. 51.

विकारहेतौ सति विक्रियन्ते
येषां न चेतांसि त एव धीराः ।
Ku. II. 59.

बद्धं कर्णशिरीषरोधि वदने
घर्माम्भसां जालकम् ।
बन्धे स्रंसिनि चैकहस्तय-
मिताः पर्याकुला मूर्धजाः ॥
S'â. I. 28.

या हेमकुम्भस्तननिःसृतानां ।
II. 36.

छाया मण्डललक्ष्येण
तमदृश्या किल स्वयम् ।
पद्मा पद्मातपत्रेण
भेजे साम्राज्यदीक्षितं ॥
IV. 5.

रक्ताशोकरुचा विशेषितगु-
णो बिम्बाधरालक्तकः ।
प्रत्याख्यातविशेषकं कुरबकं
श्यामावदातारुणम् ।
आक्रान्ता तिलकक्रियापि
तिलकैर्लीनद्विरेफाञ्जनैः ।
सावज्ञेव मुखप्रसाधनविधौ
श्रीर्माधवी योषिताम् ॥
Mv. III, 5.

चूतयष्टिरिवाभ्यासे ।
Ku. VI. 2.

अन्यैर्द्विजैः परिभृताः खलु पोषयन्ति
S'â. V. 22.

स्त्रीष्वदाक्षिण्यमीदृशम् ।
IV. 66.

दाक्षिण्यं नाम बिम्बोष्ठि ।
Mv. IV. 14.

In both these verses the epithet दाक्षिण्य is used with reference to women only.

रूपस्यास्यानुरूपेण
दाक्षिण्येनानुवर्तितुं ।
IV. 69.

तस्य दाक्षिण्यरूढेन
नाम्ना मगधवंशजा ।
I. 31.

विश्वाच्याप्सरसा सार्धं
रेमे चैत्ररथे वने ।
IV. 78.

वृन्दावने चैत्ररथादनूने
निर्विश्यतां सुन्दरि यौवनश्रीः ।
VI. 50

मेघस्तनितनिर्घोषः
कुमारः प्रत्यभाषत ।
IV. 83.

जीमूतस्तनितविशङ्किभिर्मयूरैः । Mv. I. 21.

नावजानामि विषयान् ।
IV. 85.

अवजानासि मां यस्मात् ।
I. 77.

माहात्म्यं न च तन्मध्ये
यत्र सामान्यतः क्षयः ।
विषयेषु प्रसक्तिर्वा
युक्तिर्वा नात्मवत्तया ॥
IV. 91.

अथ वीक्ष्य रघुः प्रतिष्ठितं
प्रकृतिष्वात्मजमात्मवत्तया ।
विषयेषु विनाशधर्मसु
त्रिदिवस्थेष्वपि निःस्पृहोऽभवत् ।
VIII. 10.

अयोमयीं तस्य परैमि
चेतनां । IV. 99.

अभितप्तमयोऽपि मार्दवं
भजते कैव कथा शरीरिषु ।
VIII. 43.

विवेश धिष्ण्यं क्षितिपालकात्मजः । IV. 102.

अमी वेदिं परितः
कॢप्तधिष्ण्याः । S'á. IV. 8.

अवतीर्य ततस्तुरङ्गपृष्ठात् ॥
V. 7.

तेनावतीर्य तुरगात्प्रथितान्वयेन । IX. 76.

अधिगम्य ततो विवेकजं
तु । V. 11.

समधिगम्य समाधिजितेन्द्रियः । IX. 1.

तदिमं व्यवसायमुत्सृज त्वं
भव तावन्निरतो गृहस्थधर्मे ।
पुरुषस्य वयःसुखानि भुक्त्वा
रमणीयो हि तपोवनप्रवेशः ॥
V. 33.

अथ स विषयव्यावृत्तात्मा
यथाविधि सूनवे
नृपतिककुदं दत्त्वा यूने
सितातपवारणम् ।
मुनिवनतरुच्छायां देव्या तया
सह शिश्रिये । III. 70.
सर्वः कल्ये वयसि यतते
भोक्तुमर्थान्कुटुम्बी ।
पश्चात्पुत्रैरपहृतभरः
कल्पते विश्रमाय । Vi. III. 7.

चलकुण्डलचुम्बिताननाभिः
घननिश्वासविकम्पितस्तनीभिः ।
वनिताभिरधीरलोचनाभिः
मृगशावाभिरिवाभ्युदीक्ष्यमाणः ।
V. 41.

वरकालागुरुधूपपूर्णगर्भम् ।
V. 44.

परमैरपि दिव्यतूर्यकल्पैः ।
V. 46.

स्तनविस्रस्तसितांशुका शयाना ।
V. 49.

महतीं परिवादिनीं च काचित् ।
V. 55.

प्रतिसंकुचितारविन्दकोशाः ।
सवितर्यस्तमिते यथा नलिन्यः ।
V. 57.

शिथिलाकुलमूर्धजा तथान्या
जघनस्रस्तविभूषणांशुकान्ता ।
अशयिष्ट विकीर्णकण्ठसूत्रा
गजभग्ना प्रतिपातिताङ्गनेव ॥
V. 58.

विवृतास्यपुटा विवृद्धगात्रा
प्रपतद्वक्त्रजला प्रकाशगुह्या ।
अपरा मदघूर्णितेव शिश्ये
न बभाषे विकृतं वपुः पुपोष ।
V. 61.

समवेक्ष्य ततश्च ताः शयानाः ।
V. 63.

प्रतिगृह्य ततः स भर्तुराज्ञाम् ।
V. 71.

कनकवलयभूषितप्रकोष्ठैः ।
V. 8.

प्रमुदितमनसश्च देवसंघाः ।
V. 85.

तुरगवल्गनचञ्चलकुण्डलो
विरुरुचे रुरुचेष्टितभूमिषु ।
IX. 51.

Cf. also the 55th of the same.

प्रासादकालागुरुधूमराजिः ।
XIV. 12.

तूर्यस्वने मूर्छति मङ्गलार्थे ।
VI. 9.

सितांशुका मङ्गलमात्रभूषणा
Vi. III. 12.

परिकीर्णां परिवादिनीं मुनेः ।
VIII. 35.

दिवाकरादर्शनबद्धकोशे
नक्षत्रनाथांशुरिवारविन्दे ।
VI. 66.

निशि सुप्तमिवैकपङ्कजं
विरताभ्यन्तरषट्पदस्वनम् ।
VIII. 55.

तस्य निर्दयरतिश्रमालसाः
कण्ठसूत्रमपदिश्य योषितः ।
अध्यशेरत बृहद्भुजान्तरं
पीवरस्तनविलुप्तचन्दनम् ।
XIX. 32.

नयनान्यरुणानि घूर्णयन्
वचनानि स्खलयन्पदे पदे ।
असति त्वयि वारुणीमदः
प्रमदानामधुना विडम्बना ।
Ku. IV. 12.

नृपतिः प्रकृतीरवेक्षितुम् ।
VIII. 18.

प्रतिगृह्य वचो विससर्ज मुनिम् ।
VIII. 91.

तथेति शेषामिव भर्तुराज्ञाम् ।
Ku. III. 22.

नीत्वा मासान्कनकवलयभ्रंश-
रिक्तप्रकोष्ठः ।
Meg. I. 2.

प्रमुदितवरपक्षमेकतस्तत् ।
VI. 86.

हरितुरगतुरङ्गवत्तुरङ्गः । V. 87.	दिशो हरिद्भिर्हरितामिवेश्वरः । III. 30.
	हरति मे हरिवाहनदिङ्मुखम् । Vi. III. 6.
भार्गवस्याश्रमपदं स ददर्श नृणां वरः । VI. 1.	वामनाश्रमपदं ततः परं पावनं श्रुतमृषेरुपेयिवान् । XI. 22.
सुप्तविश्वस्तहरिणं स्वस्थस्थितविहङ्गमम् । विश्रान्त इव यद्दृष्ट्वा कृतार्थ इव चाभवत् ॥ VI. 2.	निष्कम्पवृक्षं निभृतद्विरेफं मूकाण्डजं शान्तमृगप्रचारं । तच्छासनात्काननमेव सर्वं चित्रार्पितारम्भमिवावतस्थे ॥ Ku. III. 42.
इमं तार्क्ष्योपमजवं तुरङ्गमनुगच्छता । VI. 5.	अनेन रथवेगेन पूर्वप्रस्थितं वैनतेयमप्यासादयेयं किं पुनस्तमपकारिणं मघोनः । Vi. I.
विप्रयोगः कथं न स्याद् भूयोऽपि स्वजनादिभिः । VI. 17.	नाप्यन्यस्मात्प्रणयकलहाद्विप्रयोगोपपत्तिः । Meg. II. 4.
पुरुषस्य विपर्यये । VI. 20.	श्रुतसंयोगविपर्ययौ यदा । VIII. 89.
मृत्यौ प्रत्यर्थिनि स्थिते । VI. 22.	प्रत्यर्थिभूतामपि तां समाधेः । Ku. II. 59.
एवमादि त्वया सौम्य विज्ञाप्यो वसुधाधिपः । प्रयतेथास्तथा चैव यथा मां न स्मरेदपि ॥ VI. 23.	वाच्यस्त्वया मद्वचनात्स राजा वह्नौ विशुद्धामपि यत्समक्षम् । मां लोकवादश्रवणादहासीः श्रुतस्य किं तत्सदृशं कुलस्य ॥ XIV. 61.
अयोमयेऽपि हृदये किं पुनः स्नेहविक्लवे VI. 27.	अभितप्तमयोऽपि मार्दवं भजते कैव कथा शरीरिषु । VIII. 43.
विमानशयनार्हं हि सौकुमार्यमिदं क्व च । खरदर्भाङ्कुरवती तपोवनमही क्व च ॥ VI. 28.	क्व बत हरिणकानां जीवितं चातिलोलम् । क्व च निशितनिपाता वज्रसाराः शरास्ते ॥ S'a. I. 10.

This appears to be a favourite construction or Alankára with Kálidása as well as with As'vaghosha.

श्रुत्वा तु व्यवसायं ते यदश्वोऽयं मया हृतः । VI. 29.	अतोऽयमश्वः कपिलानुसारिणा पितुस्त्वदीयस्य मयापहारितः । III. 50.

इव नार्हसि विस्मर्तुं
कृतघ्न इव सत्क्रियां ।
VI. 82.

संयोगो विप्रयोगश्च
तथा मे प्राणिनां मतः ।
VI. 47.

बाष्पमुष्णं मुमोच च ।
VI. 53.

ततो मृगव्याधवपुर्दिवौका
भार्वं विदित्वास्य विशुद्धभावः ।
VI. 60.

ययौ शरीरेण पुरं न चेतसा ।
VI. 67.

संध्याभ्रसंवीत इवाद्रिराजः ।
VI. 65.

क्वचित्प्रदध्यौ विललाप च क्वचित्
क्वचित्प्रचस्खाल पपात च क्वचित् ।
VI. 68.

स राजसूनुर्मृगराजगामी
मृगाजिरं तन्मृगवत्प्रविष्टः ।
लक्ष्मीवियुक्तोऽपि शरीरलक्ष्म्या
चक्षूंषि सर्वाश्रमिणां जहार ॥
VII. 2.

वप्राश्च गत्वा बहिरिध्महेतोः
प्राप्ताः समित्पुष्पपवित्रहस्ताः ।
तपःप्रधानाः कृतबुद्धयोऽपि
तं द्रष्टुमीयुर्न मठानभीयुः ॥
VII. 4.

हृष्टाश्च केका मुमुचुर्मयूरा
दृष्ट्वाम्बुदं नीलमिवोन्नमन्तम् ।
शष्पाणि हित्वाभिमुखाश्च तस्थु
र्मृगाश्चलाक्षा मृगचारिणश्च ॥
VII. 5.

न क्षुद्रोऽपि प्रथमसुकृता-
पेक्षया संश्रयाय ।
प्राप्ते मित्रे भवति विमुखः
किं पुनर्यस्तथोच्चैः ॥
Meg. I. 17.

स्वशरीरशरीरिणावपि
श्रुतसंयोगविपर्ययौ यदा ।
VIII. 89.

स्नेहव्यक्तिश्चिरविरहजं मुञ्च-
तो बाष्पमुष्णम् ।
Meg. I. 12.

अन्येद्युरात्मानुचरस्य भावं
जिज्ञासमाना मुनिहोमधेनुः ।
II. 26.

गच्छति पुरः शरीरं धावति
पश्चादसंस्तुतं चेतः ।
S'â. III. 10.

निपेतुरन्तःकरणैर्नरेन्द्रा
देहैः स्थिता केवलमासनेषु ।
VI. 11.

सांध्यमेघरुधिरार्द्रवाससः ।
XI. 60.

क्वचित्पथा संचरते सुराणाम्
क्वचिद्घनानां पततां क्वचिच्च ।
XIII. 19.

ततो मृगेन्द्रस्य मृगेन्द्रगामी ।
II. 30.

नेत्रव्रजाः पौरजनस्य तस्मिन्
विहाय सर्वान्नृपतीन्निपेतुः ।
VI. 7.

कविः कुशेध्माहरणाय यातः ।
XIV. 70.

दिदृक्षवस्तामृषयोऽभ्युपागमन्
न धर्मवृद्धेषु वयः समीक्ष्यते ।
Ku. V. 16.

वनान्तरादुपावृत्तैः समित्कुशफलाहरैः ।
I. 49.

नृत्यं मयूराः कुसुमानि वृक्षा
दर्भानुपात्तान्विजहुर्हरिण्यः ।
XIV. 69.

दृष्ट्वा तमिक्ष्वाकुकुलप्रदीपं
ज्वलन्तमुद्यन्तमिवांशुमन्तम् ।
VII. 6.

जातः कुले तस्य किलोरुकीर्तिः
कुलप्रदीपो नृपतिर्दिलीपः ।
VI. 74.

ततो द्विजातिः स तपोविहारः ।
VII. 13.

द्विजातिभावादुपपन्नचापलः ।
Ku. V. 40.

अग्राम्यमन्नं सलिलप्ररूढं
पर्णानि तोयं फलमूलमेव ।
यथागमं वृत्तिरियं मुनीनाम्
भिन्नास्तु ते ते तपसां विकल्पाः ।
VII. 14.

अयाचितोपस्थितमम्बु केवलं
रसात्मकस्योडुपतेश्च रश्मयः ।
बभूव तस्याः किल पारणाविधि-
र्न वृक्षवृत्तिव्यतिरिक्तसाधनः ।
Ku. V. 22.

उञ्छेन जीवन्ति खगा इवान्ये ।
VII. 15.

तान्युञ्छषष्ठाङ्कितसैकतानि ।
V. 8.

कायक्रमैर्यैश्च तपोऽभिधानैः
प्रवृत्तिमाकाङ्क्षति कामहेतोः ।
संसारदोषानपरीक्षमाणो
दुःखेन सोऽन्विच्छति दुःखमेव ।
VII. 22.

प्राणानामनिलेन वृत्तिरुचिता
सत्कल्पवृक्षे वने ।
तोये काञ्चनपद्मरेणुकपिशे
धर्माभिषेकक्रिया ।
ध्यानं रत्नशिलातलेषु
विबुधस्त्रीसंनिधौ संयमो ।
यत्काङ्क्षन्ति तपोभिरन्यमुनयः
तस्मिंस्तपस्यन्त्यमी । S'á. VII. 12.

स्पृष्टं हि यद्यद्गुणवद्भिरम्भः
तत्तत्पृथिव्यां यदि तीर्थमिष्टं ।
तस्माद्गुणानेव परैमि तीर्थ-
मापस्तु निःसंशयमाप एव ॥
VII. 31.

अद्यप्रभृति भूतानामधिग-
म्योऽस्मि शुद्धये ।
यदध्यासितमर्हद्भिस्तद्धि
तीर्थं प्रचक्षते । Ku. VI. 56.

ततो हविर्धूमविवर्णवृक्षम् ।
VII. 32.

भिन्नो रागः किसलयरुचामाज्यधूमो-
द्गमेन । S'á. I. 15.

अभ्युद्धृतप्रज्वलिताग्निहोत्रं
कृताभिषेकर्षिजनावकीर्णम् ।
जाप्यस्वनाकूजितदेवकोष्टं
धर्मस्य कर्मान्तमिव प्रवृत्तम् ।
VII. 33.

अन्वत्रजन्नाश्रमिणस्ततस्तं
तद्रूपमाहात्म्यगतैर्मनोभिः ।
VII. 34.

कृताभिषेकां हुतजातवेदसं
त्वगुत्तरासङ्गवतीमधीतिनीम् ।
दिदृक्षवस्तामृषयोऽभ्युपागमन्
न धर्मवृद्धेषु वयः समीक्ष्यते ।
Ku. V. 16.

ततो जटावल्कलचीरखेलां
तपोधनांश्चैव स तान्ददर्श ।

अथाजिनाषाढधरः प्रगल्भवाग्
ज्वलन्निव ब्रह्ममयेन तेजसा ।

तपांसि चैषामनुबुध्यमानः
तस्थौ शिवे श्रीमति मार्गवृक्षे ।
VII. 36.

विवेश कश्चिज्जटिलस्तपोवनं
शरीरबद्धः प्रथमाश्रमो यथा ।
Ku. V. 30.

भवप्रणाशाय कृतप्रतिज्ञः
स्वं भावमन्तर्गतमाचचक्षे ।
VII. 44.

अन्तर्गतं प्राणभृतां हि वेद
सर्वं भवान्भावमतोऽभिधास्ये ।
II. 43.

एवं प्रवृत्तान्भवतः शरण्यान् ।
VII. 47.

भूत्वा शरण्या शरणार्थमन्याम् ।
XIV. 64.

स्वर्गाय युष्माकमयं तु धर्मः
ममाभिलाषस्त्वपुनर्भवाय ।
VII. 48.

ममापि च क्षपयतु नीललोहितः
पुनर्भवं परिगतशक्तिरात्मभूः ।
S'á. VII. 35.

परलोकजुषां स्वकर्मभिः
गतयो भिन्नपथा हि देहिनाम् ।
VIII. 85.

The use of two negatives should be marked.

तत्रारतिर्मे न परापचारः ।
VII. 49.

नासौ न काम्यो न च वेद सम्यक् ।
VI. 30.

ततो वचः सूनृतमर्थवच्च
सुश्लक्ष्णमोजस्वि च गर्वितं च ।

सूनुः सूनृतवाक्स्रष्टु-
र्विससर्जोर्जितश्रियम् ।
I. 93.

As'vaghosha construes ओजस्वि with वचः, while Kâlidása construes it with रूप.

श्रुत्वा कुमारस्य तपस्विनस्ते
विशेषयुक्तं बहुमानमीयुः ।
VII. 50.

रूपं तदोजस्वि तदेव वीर्यम् ।
V. 37.

कश्चिद्द्विजस्तत्र तु भस्मशायी
प्रांशुः शिखी दारवचीरवासः ।
आपिङ्गलाक्षस्तनुदीर्घघोणः
कुण्डोदहस्तो गिरमित्युवाच ॥
VII. 51.

एकः कृत्स्नां नगरपरिघप्रांशुबाहु-
र्भुनक्ति । S'á. II. 16.

प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव
वामनः । I. 3.

आचार्यकं प्राप्स्यति तत्पृथिव्यां
यन्नर्षिभिः पूर्वयुगेऽप्यवाप्तम् ।
VII. 57.

लङ्कास्त्रीणां पुनश्चक्रे
विलापाचार्यकं शरैः ।
XII. 78.

परममिति ततो नृपात्मजस्त-
मृषिजनं प्रतिनंद्य निर्ययौ ।
VII. 58.

तौ गुरुर्गुरुपत्नी च
प्रीत्या प्रतिननन्दतुः ।
I. 57.

यमैकरात्रेण तु भर्तुराज्ञया
जगाम मार्ग सह तेन वाजिना ।

तमसां प्राप नदीं तुरङ्गमेण ।
IX. 72.

इयाय भर्तुर्विरहं विचिन्तयं- स्तमेव पंथानमहोभिरष्टभिः ॥ VIII. 2.	विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा S'a. IV. 1.

The idea is reverse with regard to the ornaments.

दिवाकरेणेव विनाकृतं नभः । VIII. 5.	मदनेन विनाकृता रतिः । Ku. IV. 21.
ततो भ्रमद्भिर्दिशि दीनमानसै- रनुज्ज्वलैर्बाष्पहतेक्षणैर्नरैः । निवार्यमाणाविव तावुभौ पुरं शनैरजःस्नातमिवाभिजग्मतुः ॥ VIII. 7.	विस्पष्टमस्त्रान्धतया न दृष्टौ । XIV. 2. रजःकणैः खुरोद्धूतैः स्पृशद्भिर्गात्रमन्तिकात् । I. 85. निवार्यतामालि किमप्ययं बटुः । Ku. V. 83.
ततः स तान्भक्तिमतोऽब्रवीज्जनान् । VIII. 10.	वधूर्भक्तिमती चैनाम् । I. 90.
मनो निनिन्दुश्च फलार्थमात्मनः । VIII. 11.	निनिन्द रूपं हृदयेन पार्वती । Ku. V. 1. चारु नृत्यविगमे च तन्मुखम् । XIX. 15.
यथेन्द्रियाणां विगमे शरीरिणाम् । VIII. 12.	यस्मिन्दृष्टे करणविगमात् । Meg. I. 59.
प्रविष्टदीक्षस्तु सुतोपलब्धये व्रतेन शोकेन च खिन्नमानसः । VIII. 15.	अनपायिपदोपलब्धये । VIII. 17. इत्थं व्रतं धारयतः प्रजार्थं । II. 25.
विगाहमानश्च नरेन्द्रमन्दिरं VIII. 17.	तस्मिन्वनं गोप्तरि गाहमाने । II. 14.

"ततः खगाश्च क्षयमध्यगोचराः" &c. In this verse As'vaghosha uses क्षय in the sense of 'a house,' but Kâlidâsa, it appears, has not used the word in this sense.

विलम्बवेद्यो मलिनांशुकाम्बरा निरञ्जनैर्बाष्पहतेक्षणैर्मुखैः । कृष्णा विवर्णाञ्जनया विनाकृता । दिवीव तारा रजनीक्षयारुणाः । VIII. 21.	शरीरसादादसमग्रभूषणा मुखेन सालक्ष्यत लोध्रपाण्डुना । तनुप्रकाशेन विचेयतारका प्रभातकल्पा शशिनेव शर्वरी । III. 2.

प्रगृह्य बाहू निपपात गौतमी
विलोलपर्णा कदलीव काञ्चनी ।
VIII. 24.

हतत्विषोऽन्याः शिथिलात्मबाहवः
स्त्रियो विषादेन विचेतना इव ।
न चुक्रुशुर्नाश्रु जहुर्न शश्वसु-
र्न चेतना उल्लिखिता इव स्थिताः ।
VIII. 25.

सुवृत्तपीनाङ्गुलिभिर्निरन्तरै-
रभूषणैर्गूढशिरैर्वराङ्गनाः ।
उरांसि जघ्नुः कमलोपमैः करैः
स्वपल्लवैर्वातचला लता इव ।
VIII. 28.

विवर्णभावं स स भूमिपालः ।
VI. 67.

वसने परिधूसरे वसाना
नियमक्षाममुखी धृतैकवेणिः ।
अतिनिष्करुणस्य शुद्धशीला
मम दीर्घं विरहव्रतं बिभर्ति ।
S'a. VII. 21.

वपुषा करणोज्झितेन सा
निपतन्ती पतिमप्यपातयत् ।
VIII. 38.

सक्ताङ्गुलिः सायकपुङ्ख एव
चित्रार्पितारम्भ इवावतस्थे ।
II. 31.

निशीथदीपाः सहसा हतत्विषो
बभूवुरालेख्यसमर्पिता इव ।
III. 15.

निष्कम्पवृक्षं निभृतद्विरेफं
मूकाण्डजं शान्तमृगप्रचारम् ।
तच्छासनात्काननमेव सर्वं
चित्रार्पितारम्भमिवावतस्थे ॥
Ku. III 42.

तमवेक्ष्य रुरोद सा भृशं
स्तनसम्बाधमुरो जघान च ।
Ku. IV. 26.

पुराणपत्रापगमादनन्तरं
लतेव संनद्धमनोज्ञपल्लवा ।
III. 7.

वृत्तानुपूर्वे च न चातिदीर्घे
जङ्घे शुभे सृष्टवतस्तदीये ।
Ku. I. 35.

विशालवक्षास्तनुवृत्तमध्यः ।
VI. 32.

Mark the sense of वृत्त in all these passages.

करप्रहारप्रचलैश्च ता बभुः
यथापि नार्यः सहितोन्नतैस्तनैः ।
वनानिलाघूर्णितपद्मकम्पितैः
रथाङ्गनाम्नां मिथुनैरिवापगाः ।
VIII. 29.

आसां जलास्फालनतत्पराणाम् ।
XVI. 62.

रथाङ्गनाम्नोरिव भावबन्धनं
बभूव यत्प्रेम परस्पराश्रयम् ।
III. 24.

उवाच निःश्वासचलत्पयोधरा
विगाधशोकाश्रुधरा यशोधरा ।
VIII. 31.

निशि प्रसुप्तामवशां विहाय मां
गतः क स च्छन्दक मन्मनोरथः ।
VIII. 32.

प्रियेण वश्येन हितेन साधुना
त्वया सहायेन यथार्थकारिणा ।
गतोऽर्यपुत्रो ह्यपुनर्निवृत्तये
रमस्व दिष्ट्या सफलः श्रमस्तव ॥
VIII. 34.

वरं मनुष्यस्य विचक्षणो रिपुः
न मित्रमप्राज्ञमयोगपेशलम् ।
सुहृद्ब्रुवेण ह्यविपश्चिता त्वया ।
कृतः कुलस्यास्य महानुपप्लवः॥
VIII. 35.

अहं हि जानन्नपि राजशासनम् ।
VIII. 44.

व्रजन्नयं वाजिवरोऽपि नास्पृशन्
महीं खुराग्रैः विधृतैरिवान्तरा ।
VIII. 45.

रथाङ्गनामन् वियुता
रथाङ्गश्रोणि बिम्बया ।
Vi. IV. 18.

परस्पराक्रन्दिनि चक्रवाकयोः
पुरो वियुक्ते मिथुने कृपावती ।
Ku. V. 26.

पश्य हरिचन्दनेन स्तन-
मध्योच्छ्वासिना कथितम् ।
Vi. I. 5.

क नु मां त्वदधीनजीविताम्
विनिकीर्य क्षणभिन्नसौहृदः ।
नलिनीं क्षतसेतुबन्धनो
जलसंघात इवासि विद्रुतः॥
Ku. IV. 6.

परलोकमसंनिवृत्तये यदनापृच्छ्य ग-
तासि मामितः । VIII. 48.

असंनिवृत्त्यै तदतीतमेव ।
S'a. VI. 10.

गत एव न ते निवर्तते ।
Ku. IV. 30.

याच्ञामोघा वरमधिगुणे
नाधमे लब्धकामा ।
Meg. I. 6.

तस्मिन्नवसरे देवाः पौलस्त्यो-
पप्लुता हरिम् । X. 5.

त्वामासारप्रशमितवनोपप्लवं
साधु मूर्ध्ना । Meg. I. 17.

जीवन्पुनः शश्वदुपप्लवेभ्यः ।
II. 48.

निशाचरोपप्लुतभर्तृकाणां ।
XIV. 64.

कच्चिन्न वाय्वादिरुपप्लवो वः ।
V. 6.

उपप्लवाय लोकानां धूमकेतु-
रिवोत्थितः । Ku. II. 32.

प्रत्यग्रहीदग्रजशासनं तद् ।
XIV. 46.

अभूतलस्पर्शतयानिरुद्ध-
स्तवावतीर्णोऽपि रथो न लक्ष्यते ।
S'a. VII. 10.

	महीतलस्पर्शनमात्रभिन्न- ऋद्धं हि राज्यं पदमैन्द्रमाहुः । II. 50.
तमश्च नैशं रविणेव पाटितं ततोऽपि दैवो विधिरेष गृह्यताम् ॥ VIII. 46.	तमसां निशि मूर्छतां निहन्त्रे हरचूडानिहितात्मने नमस्ते । Vi. III. 7. उच्छेत्तुं प्रभवति यन्न सप्तसप्तिस्तन्नैशं तिमिरमपाकरोति चन्द्रः । Śá. VI. 30.
न कामचारो मम नास्य वाजिनः। VIII. 49.	न कामचारो मयि शङ्कनीयः । XIV. 62.
विषादपारिप्लवलोचना ततः प्रनष्टपोता कुररीव दुःखिता । विहाय धैर्यं विरुराव गौतमी ननाम चैवाश्रुमुखी जगाम च ॥ VIII. 51.	ननन्द पारिप्लवनेत्रया नृपः। III. 11. विषादलुप्तप्रतिपत्ति विस्मितम् । III. 40. चक्रन्द विग्ना कुररीव भूयः । XIV. 68. सहजामप्यपहाय धीरताम् । VIII. 43.
विशालवक्षा घनदुन्दुभिस्वनः। VIII. 53.	विशालवक्षास्तनुवृत्तमध्यः । VI. 32. कपाटवक्षाः परिणद्धकन्धरः । III. 34.
नृपः प्रजाभाग्यगुणैः प्रसूयते । VIII. 54.	भवो हि लोकाभ्युदयाय तादृशाम् । III. 14.

The idea is reversed in the following :—

अभागिनी नूनमियं वसुंधरा तमार्यकर्माणमनुत्तमं प्रति । गतस्ततोऽसौ गुणवान्हि तादृशो नृपः प्रजाभाग्यगुणैः प्रसूयते ॥ VIII. 54.	कामं नृपाः सन्तु सहस्रशोऽन्ये राजन्वतीमाहुरनेन भूमिम् । नक्षत्रताराग्रहसंकुलापि ज्योतिष्मती चन्द्रमसैव रात्रिः ॥ VI. 22.
सुजातजालावनताङ्गुलीमृदू निगूढगुल्फौ बिसपुष्पकोमलौ । वनान्तभूमिं कठिनां कथं नु तौ सचक्रमध्यौ चरणौ गमिष्यतः ॥ VIII. 55.	सुजातयोः पङ्कजकोशयोः श्रियम् । III. 8. ते रेखाध्वजकुलिशातपत्रचिह्नं सम्राजश्चरणयुगं प्रसादलभ्यम् । IV. 88.

Kálidása's *Ri*tusamhâra furnishes several expressions for वनान्तभूमि.

महार्हवस्त्रागुरुचन्दनार्चितम् । **VIII. 56.**	**तेषां महार्हासनसंस्थितानाम् ।** **VI. 6.**

महार्हशय्यापरिवर्तनच्युतैः ।
Ku. V. 12.

कुलेन सत्त्वेन बलेन वर्चसा ।
श्रुतेन लक्ष्म्या वयसा च गर्वितः ।
VIII. 57.

कुलेन कान्त्या वयसा नवेन
गुणैश्च तैस्तैर्विनयप्रधानैः ।
VI. 79.

शुचौ शयित्वा शयने हिरण्मये
प्रबोध्यमानो निशि तूर्यनिस्वनैः ।
कथं बत स्वप्स्यति सोऽद्य मे व्रती
पटैकदेशान्तरिते महीतले ॥
VIII. 58.

तूर्यस्वने मूर्छति मङ्गलार्थे ।
VI. 9.

सुखश्रवा मङ्गलतूर्यनिस्वनाः ।
III. 19.

महार्हशय्यापरिवर्तनच्युतैः
स्वकेशपुष्पैरपि या स्म दूयते ।
अशेत सा बाहुलतोपधायिनी
निषेदुषी स्थण्डिल एव केवले ॥
Ku. V. 12.

नवपल्लवसंस्तरेऽपि ते
मृदु दूयेत यदङ्गमर्पितम् ।
तदिदं विषहिष्यते कथं
वद वामोरु चिताधिरोहणम् ॥
VIII. 57.

इमं विलापं करुणं निशम्य ता
भुजैः परिष्वज्य परस्परं स्त्रियः ।
विलोचनेभ्यः सलिलानि तत्यजु
र्मधूनि पुष्पेभ्य इवेरिता लताः ॥
VIII. 59.

विलपन्निति कोशलाधिपः
करुणार्थग्रथितं प्रियां प्रति ।
अकरोत्पृथिवीरुहानपि
सुतशाखारसबाष्पदूषितान् ॥
VIII. 70.

अवाकिरन्बाललताः प्रसूनैः ।
II. 10.

ततो धरायामपतद्यशोधरा
विचक्रवाकेव रथाङ्गसाह्वया ।
शनैश्च तत्तद्विललाप विक्लवा
मुहुर्मुहुर्गद्गदरुद्धया गिरा ॥
VIII. 60.

अथ सा पुनरेव विह्वला
वसुधालिङ्गनधूसरस्तनी ।
विललाप विकीर्णमूर्धजा
समदुःखामिव कुर्वती स्थलीम् ॥
Ku IV. 4.

विललाप स बाष्पगद्गदं
सहजामप्यपहाय धीरताम् ।
VIII. 43.

अभागिनी यद्यहमायतेक्षणं
शुचिस्मितं भर्तुरुदीक्षितुं मुखम् ।
न मन्दभाग्योऽर्हति राहुलोऽप्ययं
कदाचिदङ्के परिवर्तितुं पितुः ॥
VIII. 67.

शुचिस्मिता मध्यगता सुमध्या ।
Ku. V. 20.

अर्धोप्सितं भर्तुरुपस्थितोदयं ।
III. 1.

अङ्काश्रयप्रणयिनस्तनयान्वहन्तो
धन्यास्तदङ्गरजसा मलिनीभवन्ति ।
S'a. VII. 17.

अहो नृशंसं सुकुमारवर्चसः
सुदारुणं तस्य मनस्विनो मनः ।
कलप्रलापं द्विषतोऽपि हर्षणं
शिशुं सुतं यस्त्यजतीदृशं स्वतः ॥
VIII. 68.

इतीह देवी पतिशोकमूर्छिता
रुरोद दध्यौ विललाप चासकृत् ।
स्वभावधीरापि हि सा सती शुचा
धृतिं न सस्मार चकार नो ह्रियं॥
VIII. 70.

निशाम्य च छंदककंथकावुभौ
सुतस्य संश्रुत्य च निश्चयं स्थिरम् ।
पपात शोकाभिहतो महीपतिः
शचीपतेर्वृत्त इवोत्सवे ध्वजः ॥
VIII. 73.

मद्दस्त्वया कंथक विप्रियं कृतम् ।
VIII. 75.

नयस्य मां वा नय तत्र यत्र स
व्रज द्रुतं वा पुनरेवमानय ।
ऋते हि तस्मान्मम नास्ति जीवितं
विगाढरोगस्य सदौषधादिव ॥
VIII. 76.

प्रचक्ष्व मे भद्र तदाश्रमाजिरं
हृतस्त्वया यत्र स मे जलाञ्जलिः ।
इमे परीप्संति हि ते पिपासवो
ममासवः प्रेतगतिं यियासवः ॥
VIII. 80.

उपमानमभूद्विलासिनां
करणं यत्तव कान्तिमत्तया।
तदिदं गतमीदृशीं दशां
न विदीर्ये कठिनाः खलु स्त्रियः ॥
Ku. IV. 5.

अन्तर्बाष्पश्चिरमनुचरो
राजराजस्य दध्यौ ।
Meg. I. 3.

अथ सा पुनरेव विह्वला
वसुधालिङ्गनधूसरस्तनी ।
विललाप विकीर्णमूर्धजा
समदुःखामिव कुर्वती स्थलीम ॥
Ku. IV. 4.

क ईप्सितार्थस्थिरनिश्चयं मनः ।
Ku. V. 5.

पुरुहूतध्वजस्येव ।
IV. 3.

कृतवानसि विप्रियं न मे ।
Ku. IV. 7.

मनसापि न विप्रियं मया
कृतपूर्वं तव किं जहासि माम् ।
VIII. 52.

तामानय प्रियतमां मम वा समीपं ।
Vi. IV. 11.

अपशोकमनाः कुटुम्बिनीम्
अनुगृह्णीष्व निवापदत्तिभिः ।
स्वजनाश्रु किलातिसन्ततं
दहति प्रेतमिति प्रचक्षते ॥
VIII. 86.

नूनं मत्तः परं वंश्याः
पिण्डविच्छेददर्शिनः ।
न प्रकामभुजः श्राद्धे
स्वधासंग्रहतत्पराः ॥
I. 66.

अस्मात्परं बत यथाश्रुति
संभृतानि .

	को नः कुले निवपनानि करिष्यतीति । नूनं प्रसूतिविकलेन मया प्रसिक्तं धौताश्रुशेषमुदकं पितरः पिबन्ति ॥ S'á. VI. 25.
त्यज नरवर शोकमेहि धैर्यं कुधृतिरिवार्हसि धीर नाश्रु मोक्तुम् । स्रजमिव मृदितामपास्य लक्ष्मीं भुवि बहवो हि नृपा वनान्यभीयुः ॥ VIII. 83.	न पृथग्जनवच्छुचो वशं वशिनामुत्तम गन्तुमर्हसि । VIII. 90. उपस्थितां पूर्वमपास्य लक्ष्मीं वनं मया सार्धमसि प्रपन्नः । XIV. 63.
इक्ष्वाकुवंशप्रभवस्य राज्ञः । IX. 4.	इक्ष्वाकुवंशप्रभवः कथं त्वाम् । XIV. 55.
अपश्यतां तं वपुषा ज्वलन्तम् । IX. 8.	ज्वलन्निव ब्रह्ममयेन तेजसा । Ku. V. 30.
तावर्चयामासतुरर्हतस्तं प्रत्यर्चयामास स चार्हतस्तौ । IX. 10.	प्रणम्य चानर्च विशालमस्याः । II. 21.
पुनर्वसू योगगताविवेन्दोः । IX. 11.	गां गताविव दिवः पुनर्वसू । XI. 36.
त्वच्छोकशल्ये हृदयावगाढे मोहं गतो भूमितले मुहूर्तम् । कुमारराजा नयनाम्बुवर्षो यत्त्वामवोचत्तदिदं निबोध ॥ IX. 13.	शल्यप्रोतं प्रेक्ष्य सकुम्भं मुनिपुत्रम् । IX. 75. शल्यं निखातमुदहारयतामुरस्तः । IX. 78. बभूव रामः सहसा सबाष्पः । XIV. 84.
नदीरयः कूलमिवाभिहन्ति । IX. 15.	जम्बूकुञ्जप्रतिहतरयं तोयमादाय गच्छेः । Meg. I. 20. तस्मात्सिन्धुरयादिव । IV. 35. खातमूलमनिलो नदीरयैः । XI. 76.
समीरणार्काग्निमहाशनीनाम् । IX. 16.	समीरणो नोदयिता भवेति व्यादिश्यते केन हुताशनस्य । Ku. III. 21.
अगस्त्यजुष्टां दिशमप्रयाताम् । IX. 26.	अगस्त्याचरितामाशामनाशास्य- जयो ययौ । IV. 44.

एकं सुतं बालमनर्हदुःखं
संतापसंतप्त* * * * * ।
तं राहुलं मोक्षय बन्धुशोकाद्
राहूपसर्गादिव पूर्णचन्द्रम् ॥
IX. 28.

सन्तप्तानां त्वमसि शरणम् ।
Meg. I. 7.

प्रत्यागतप्रसादं चन्द्रमिवोपप्लवान्मुक्तम् ।
Vi. I. 11.

यदाध्वगानामिव संगतानां
काले वियोगो नियतः प्रजानाम् ।
प्राज्ञो जनः को नु भजेत शोकं
बन्धुप्रियः सन्नपि बन्धुहीनः ॥
IX. 35.

स्वशरीरशरीरिणावपि
श्रुतसंयोगविपर्ययौ यदा ।
विरहः किमिवानुतापयेद्
वद बाह्यैर्विषयैर्विपश्चितम् ॥
VIII. 89.

कालस्तथैवाभिविधौ प्रदिष्टः ।
IX. 38.

प्रदिष्टकाला परमेश्वरेण ।
II. 39.

अतोऽपि मोघो भवति प्रयत्नः ।
IX. 48.

तत्पूर्वसङ्गे वितथप्रयत्नः ।
II. 42.

मोघवृत्ति कलभस्य चेष्टितम् ।
XI. 39.

नरः पितृणामनृणः प्रजाभि
र्वेदैर्ऋषीणां क्रतुभिः सुराणाम् ।
उत्पद्यते सार्धमृणैस्त्रिभिस्तै
र्यस्यास्ति मोक्षः किल तस्य मोक्षः ॥
IX. 55.

असह्यपीडं भगवन्नृणमन्त्यमवेहि मे ।
I. 71.

न चोपलेभे पूर्वेषामृणनिर्मोक्षसाधनं ।
सुताभिधानं स ज्योतिः सद्यः शोक-
तमोपहम् ॥
X. 2.

बुद्धः परप्रत्ययतो हि को व्रजेत् ।
IX. 64.

मूढः परप्रत्ययनेयबुद्धिः ।
Mv. I. 2.

तं द्रष्टुं न हि पथि शेकतुर्न मोक्तुम् ।
IX. 71.

न च खलु परिभोक्तुं
नापि शक्नोमि हातुम् ।
S'à. V. 19.

तदेव तस्यानुबबन्ध चक्षुः ।
X. 8.

चक्षुर्बध्नाति धृतिं । Vi. II. 8.

मौलीधरः सिंहगतिर्नृसिंहः
चलत्सटः सिंह इवारुरोह ।
X. 17.

शिलाविभङ्गैर्मृगराजशाव-
स्तुङ्गं नगोत्सङ्गमिवारुरोह ।
VI. 3.

चलस्य तस्योपरि शृङ्गभूतं
शान्तेन्द्रियं पश्यति बोधिसत्त्वम् ।
पर्यङ्कमास्थाय विरोचमानं
शशांकमुद्यन्तमिवाभ्रकूटात् ॥
X. 18.

पर्यंकबन्धस्थिरपूर्वकाय
मृज्वायतं संनमितोभयांसम् ।
उत्तानपाणिद्वयसंनिवेशात्
प्रफुल्लराजीवमिवाङ्कमध्ये ॥
Ku. III. 45.

नृपोपविश्यानुमतश्च तस्य
भावं विजिज्ञासुरिदं बभाषे ।
X. 21.

अन्येद्युरात्मानुचरस्य भावं
जिज्ञासमाना मुनिहोमधेनुः ।
II. 26.

आदित्यपूर्वं विपुलं कुलं ते
नवं वयो दीप्तमिदं वपुश्च ।
कस्मादियं ते मतिरक्रमेण
भैक्षाक एवाभिरता न राज्ये ॥
X. 23.

एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं
नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च ।
II. 47.

कुले प्रसूतिः प्रथमस्य वेधसः
त्रिलोकसौन्दर्यमिवोदितं वपुः ।
अमृग्यमैश्वर्यसुखं नवं वयः
तपःफलं स्यात्किमतः परं वद ॥
Ku. V. 41.

गात्रं हि ते लोहितचन्दनार्हं
काषायसंश्लेषमनर्हमेतत् ।
हस्तः प्रजापालनयोग्य एष
भोक्तुं न चार्हः परदत्तमन्नम् ॥
X. 24.

किमित्यपास्याभरणानि यौवने
धृतं त्वया वार्धकशोभि वल्कलम् ।
वद प्रदोषे स्फुटचन्द्रतारका
विभावरी यद्यरुणाय कल्पते ॥
Ku. V. 44.

As'vaghosha here describes the S'âkya Muni. and Kâlidâsa also gives the description of Pârvatî ; in both, the description is the same.

तत्सौम्य राज्यं यदि पैतृकं त्वं
स्नेहात्पितुर्नेच्छसि विक्रमेण ।
X. 25.

तेन सिंहासनं पित्र्यमखिलं चारिमण्डलम् । IV. 4.

तस्मात्त्रिवर्गस्य निषेवणेन
त्वं रूपमेतत्सफलं कुरुष्व ।
धर्मार्थकामाधिगमं ह्यनूनं
नृणामनूनं पुरुषार्थमाहुः ॥
X. 30.

इयेष सा कर्तुमवन्ध्यरूपतां
समाधिमास्थाय तपोभिरात्मनः ।
अवाप्यते वा कथमन्यथा द्वयं
तथाविधं प्रेम पतिश्च तादृशः ॥
Ku. V. 2.

प्रत्यर्थिभूतानि हि यौवनानि ।
X. 35.

प्रत्यर्थिभूतामपि तां समाधेः ॥
Ku. II. 59.

बहुच्छलं यौवनमभ्यतीत्य
निस्तीर्य कान्तारमिवाश्वसन्ति ।
X. 37.

गुणवत्सुतरोपितश्रियः
परिणामे हि दिलीपवंशजाः ।
पदवीं तरुवल्कवाससां
प्रयताः संयमिनां प्रपेदिरे ॥
VIII. 11.

गलितवयसामिक्ष्वाकूणामिदं
हि कुलव्रतम् । III. 70.

नवं वयस्तावदिदं व्यपैतु ।
X. 38.

नवं वयस्तपःफलं स्यात् ।
Ku. V. 41.

नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च ।
II. 47.

सुवर्णकेयूरविदष्टबाहवो मणिप्रदीपोज्ज्वलचित्रमौलयः । X. 40.	नीवीबन्धोच्छ्वसितशिथिलं यत्र बिम्बाधराणाम् । क्षौमं रागादनिभृतकरेष्वाक्षिपत्सु प्रियेषु । अर्चिस्तुङ्गानभिमुखमपि प्राप्य रत्नप्र- दीपान् । Meg. II. 7. केयूरबन्धोच्छ्वसितैर्नुनोद । VI. 68.
शौद्धोदनिर्वाक्यमिदं जगाद । XI. 1.	प्रचक्रमे वक्तुमनुक्रमज्ञा सविस्तरं वाक्यमिदं सुनन्दा । VI. 70. जगाद चैनामयमङ्गनाथः । VI. 27. जगाद भूयः सुदतीं सुनन्दा । VI. 37.
पूर्वैः कृतां प्रीतिपरम्पराभिः तामेव सन्तस्तु विवर्धयन्ति । XI. 3.	पूर्वैः किलायं परिवर्धितो नः । XIII. 3.
आशास्यमाना अपि मोहयन्ति । XI. 9.	आशास्यमन्यत्पुनरुक्तभूतम् । V. 34.
समुद्रवस्त्रामपि गामवाप्य पारं जिगीषन्ति महार्णवस्य । XI. 12.	निधानगर्भामिव सागराम्बराम् । III. 9. समुद्रवसना चोर्वी सखी च युवयोरियम् । S'â. III. 19.
शक्रस्य चार्धासनमप्यवाप्य । XI. 13.	अर्धासनं गोत्रभिदोऽधितष्ठौ । VI. 73.
भुक्त्वापि राज्यं दिवि देवतानां शतक्रतौ वृत्रभयात्प्रनष्टे । दर्पान्महर्षीनपि वाहयित्वा कामेष्वतृप्तो नहुषः पपात ॥ XI. 14.	भ्रूभेदमात्रेण पदान्मघोनः प्रभ्रंशयां यो नहुषं चकार । XIII. 36.
बलेर्महेन्द्रं नहुषं महेन्द्रा- दिन्द्रं पुनर्ये नहुषादुपेयुः । XI. 16.	See the above verse.
यैरन्यकार्या मुनयोऽपि भग्नाः । XI. 17.	अभग्नकामा मुनिभिः कुशेषु । V. 7.

The use of भग्न should be noted here.

गीतैर्ह्रियन्ते हि मृगा वधाय
रूपार्थमग्नौ शलभाः पतन्ति ।
मत्स्यो गिरत्यायसमामिषार्थी
तस्मादनर्थं विषयाः फलन्ति ॥
XI. 35.

तवास्मि गीतरागेण
हारिणा प्रसभं हृतः ।
एष राजेव दुष्यन्तः
सारङ्गेणातिरंहसा ।
Śa. I. 5.

पतङ्गवद्वह्निमुखं विविक्षुः ।
Ku. III. 64.

गतः शलभत्वं हरलोचनार्चिषि ।
Ku. IV. 40.

किं नाम सौख्यं चकितस्य राज्ञः ।
XI. 46.

चकितमुपैमि तथापि पार्श्वमस्य ।
Mv. I. 11.

दाहात्मिकां वा ज्वलितां तृणोल्कां
संत्यज्य कामान्स पुनर्भजेत ।
XI. 52.

शमप्रधानेषु तपोधनेषु
गूढं हि दाहात्मकमस्ति तेजः ।
Śa. II. 7.

स्पृहां स कुर्याद्विषयात्मकाय ।
XI. 53.

स्पृहावती वस्तुषु केषु मागधी ।
III. 5.

Aśvaghosha uses the derivatives of the root स्पृह् in the Dative case; while Kālidāsa employs them in the Locative.

नेच्छेयमाप्तुं त्रिदिवेऽपि राज्यं
निरामयं किं बत मानुषेषु ।
XI. 57.

विषयेषु विनाशधर्मसु
त्रिदिवस्थेष्वपि निःस्पृहोऽभवत् ।
VIII. 10.

त्रिवर्गसेवां नृप यत्तु कृत्स्नतः
परो मनुष्यार्थ इति त्वमात्थ माम् ।
अनर्थ इत्यात्थ ममार्थदर्शनं
क्षयी त्रिवर्गो हि न चापि तर्पकः ॥
XI. 58.

पुरुषस्य पदेष्वजन्मनः
समतीतं च भवच्च भावि च ।
स हि निष्प्रतिघेन चक्षुषा
त्रितयं ज्ञानमयेन पश्यति ॥
VIII. 77.

प्रयामि चाद्यैव नृपास्तु ते शिवं
वचः क्षमेथाः शमतत्त्वनिष्ठुरम् ।
XI. 69.

राज्ञः शिवं सावरजस्य भूयात् ।
XIV 50.

The use of शिव should be noted in these couplets.

विदितं मे यथा सौम्य
निष्क्रान्तो भवनादसि ।
XII. 5.

विदितं वो यथा स्वार्था
न मे काश्चित्प्रवृत्तयः ।
Ku. VII. 26.

नाश्चर्यं जीर्णवयसो य-
ज्जग्मुः पार्थिवा वनम् ।
अपत्येभ्यः श्रियं दत्त्वा
भुक्तोच्छिष्टामिव स्रजम् ॥
XII. 7.

मुनिवनतरुच्छायां देव्या
तया सह शिश्रिये ।
गलितवयसामिक्ष्वाकूणा-
मिदं हि कुलव्रतम् ।
III 70.

त्वद्दर्शनादहं मन्ये तितीर्षुरिव च प्लवम् । XII. 13.	तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम् । I. 2.
एतत्तत्परमं ब्रह्म निर्लिङ्गं ध्रुवमक्षरं । यन्मोक्ष इति तत्त्वज्ञाः कथयन्ति मनीषिणः ॥ XII. 65.	मनीषिभिः साप्तपदीनमुच्यते । Ku. V. 39. माननीयो मनीषिणाम् । I. 11. धर्म एव मनीषिणः । I. 25.
ततो मुञ्जादिषीकेव शकुनिः पञ्जरादिव । XII. 64.	शब्दो यथार्थाक्षरः । Vi. I 1. पृच्छन्ती वा मधुरवचनां सारिकां पञ्जरस्थाम् । Meg. II. 24. तस्मिन्नास्थदिषीकास्त्रम् । XII. 23.
कुमुदानामिव शर- च्छुक्लपक्षादिचन्द्रमाः । XII. 95.	कुमुदान्येव शशाङ्कः सविता बोधयति पङ्कजान्येव । S'â. V. 28.
प्राप्नुयान्मनसावाप्यं फलं कथमनिर्वृतः । XII. 100.	अवाप्यते वा कथमन्यथा द्वयम् । Ku. V. 2.
दुर्लभं शान्तमजरं परं तदमृतं पदम् । XII. 103.	दयालुमनघस्पृष्टं पुराणमजरं विदुः । X. 19.
शिरसा प्रणिपत्यैनं ग्राहयामास पायसम् । XII. 108.	शिरसा प्रणिपत्य याचितान् । Ku. IV. 17. आदधानः पयश्चरुम् । X. 51. तदन्नं प्रत्यग्रहीन्नृपः । X. 52.
यास्यामि तावद्भुवनस्य भेत्तुम् सेतुं नदीवेग इवाभिवृद्धः । XIII. 6.	नलिनी क्षतसेतुबन्धनो जलसंघात इवासि विद्रुतः । Ku. IV. 6. सरितां कूलमुद्रुजाः । IV. 22.
ततो धनुः पुष्पमयं गृहीत्वा शरांस्तथा मोहकरांश्च पञ्च । XIII. 7.	उमासमक्षं हरबद्धलक्ष्यः शरासनज्यां मुहुराममर्श । Ku. III. 64.
अथ प्रशान्तं मुनिमासनस्थं पारं तितीर्षुं भवसागरस्य । विषज्य सव्यं करमायुधाग्रे क्रीडञ्शरेणेदमुवाच मारः ॥ XIII. 8.	स्मरस्तथाभूतमयुग्मनेत्रं पश्यन्नदूरान्मनसाप्यधृष्यम् । नालक्षयत्साध्वससन्नहस्तः स्रस्तं शरं चापमपि स्वहस्तात् ॥ Ku. III. 51.

शैलेन्द्रपुत्रीं प्रति येन विद्धो
देवोऽपि शंभुश्चलितो बभूव ।
न चिन्तयत्येष तमेव बाणं
किं स्याद्दचित्तो न शरः स एषः ॥
XIII. 16.

विष्वग्ववौ वायुरुदीर्णवेगः ।
XIII. 29.

कडंगरं पर्वतशृङ्गमात्रम् ।
XIII. 40.

ते मन्त्रबद्धा इव तत्समीपे ।
XIII. 44.

भूत्वापरे वारिधरा बृहन्तः
सविद्युतः साशनिचण्डघोषाः ।
XIII. 45.

सोऽप्राप्तकालो विवशः पपात ।
XIII. 48.

कश्चित्प्रदीप्तं प्रणिधाय चक्षुः
नेत्राग्निनाशीविषवद्दिधक्षुः ।
XIII. 50.

गुर्वीं शिलामुद्यमयंस्तथान्यः
शश्राम मोघं विहतप्रयत्नः ।
निःश्रेयसं ज्ञानसमाधिगम्यं
कायक्लमैर्धर्ममिवाप्तुकामः ॥
XIII. 51.

मृगा गजाश्चार्तरवान्सृजन्तो
विदुद्रुवुश्चैव निलिल्यिरे च ।
रात्रौ च तस्यामहनीव दिग्भ्यः
खगा रुवन्तः परिपेतुरार्ताः ॥
XIII. 53.

हरस्तु किंचित्परिलुप्तधैर्यः
चन्द्रोदयारम्भ इवाम्बुराशिः ।
उमामुखे बिम्बफलाधरोष्ठे
व्यापारयामास विलोचनानि ॥
Ku. III. 67.

अथेन्द्रियक्षोभमयुग्मनेत्रः
पुनर्वशित्वाद्बलवन्निगृह्य ।
हेतुं स्वचेतोविकृतेर्दिदृक्षु-
र्दिशामुपान्तेषु ससर्ज दृष्टिम् ॥
Ku. III. 69.

तत्प्रतीपपवनादिवैकृतम् ।
XI. 62.

नीवारपाकादि कडंगरीयैः ।
V. 9.

भोगीव मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः ।
II. 32.

विद्युत्वन्तं ललितवनिताः
सेन्द्रचापं सचित्राः ।
Meg. II. 1.

विवशा कामवधूर्विबोधिता ।
Ku. IV. 1.

तपःपरामर्शविवृद्धमन्यो-
र्भ्रूभङ्गदुष्प्रेक्ष्यमुखस्य तस्य ।
Ku. III. 71.

तत्पूर्वसङ्गे वितथप्रयत्नः ।
III. 42.

निःश्रेयसायास्तु वः । Vi. I. 1.
कायेन वाचा मनसापि शश्वत् ।
V. 5.

क्लमं ययौ कन्दुकलीलयापि ।
Ku. V. 19.

तदीयमाक्रन्दितमार्तसाधोः ।
II. 28.

विरुतैः करुणस्वनैरियं ।
गुरुशोकामनुरोदितीव माम् ।
Ku. IV. 15.

दुर्धर्षयं दुग्धमवैरहृष्टं
मारं बभाषे महता स्वरेण ।
XIII. 56.

इति देहविमुक्तये स्थितां
रतिमाकाशभवा सरस्वती ।
शफरीं ह्रदशोषविक्लवां
प्रथमा वृष्टिरिवान्वकम्पयत् ॥
Ku. IV. 39.

मोघं श्रमं नार्हसि मार कर्तुं
हिंसात्मतामुत्सृज गच्छ शर्म ।
नैष त्वया कम्पयितुं हि शक्यो
महागिरिर्मेरुरिवानिलेन ।
XIII. 57.

अलं महीपाल तव श्रमेण
प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात् ।
न पादपोन्मूलनशक्ति रंहः
शिलोच्चये मूर्छति मारुतस्य ॥
II. 34.

अप्युष्णभावं ज्वलनः प्रजह्यात्
आपो द्रवत्वं पृथिवी स्थिरत्वम् ।
अनेककल्पाचितपुण्यकर्मा
नत्वेव जह्याद्व्यवसायमेषः ॥
XIII. 58.

व्यवसायः प्रतिपत्तिनिष्ठुरः ।
VIII. 64.

अप्राप्य नोत्थास्यति तत्त्वमेष
तमांस्यहत्वेव सहस्ररश्मिः ।
XIII. 59.

किं वाभविष्यदरुणस्तमसां विभेत्ता ।
तं चेत्सहस्रकिरणो धुरि नाकरिष्यत् ।
S'â. VII. 4.

तमसां निशि मूर्छतां निहन्त्रे ।
हरचूडानिहितात्मने नमस्ते ।
Vi. III. 7.

काष्ठं हि मथ्नल्लभते हुताशं
भूमिं खनन्विन्दति चापि तोयम् ।
निर्बन्धिनः किंच न नास्य साध्यं
न्यायेन युक्तं च कृतं च सर्वम् ॥
XIII. 60.

निर्बन्धसंजातरुषार्थकार्श्यम् ।
V. 21

निर्बन्धपृष्टः स जगाद सर्वम् ।
XIV. 32.

सत्त्वेषु नष्टेषु महान्धकारैः
ज्ञानप्रदीपः क्रियमाण एषः ।
आर्यस्य निर्वापयितुं न साधु
प्रज्वाल्यमानस्तमसीव दीपः ॥
XIII. 63.

शशाक निर्वापयितुं न वासवः ।
स्वतश्च्युतं वह्निमिवाद्भिरम्बुदः ।
III. 58.

हृदयं तमसि न पश्यति
दीपेन विना सचक्षुरपि ।
Mv. I. 9.

युवतिरिव सहसा द्यौश्चकाशे सचन्द्रा
सुरभि च जलगर्भं पुष्पवर्षं पपात ।
XIII. 72.

अवाङ्मुखस्योपरि पुष्पवृष्टिः
पपात विद्याधरहस्तमुक्ता ।
II. 60.

अथ नयनसमुत्थं ज्योतिरत्रेरिव द्यौः
सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्ठ्यूतमैशम् ।
II. 75.

	विमुञ्चतां पुष्पचयान्प्रसन्नुः । Ku. XI. 38.
तथापि पार्पीयसि निर्जिते गते दिशः प्रसेदुः प्रबभौ निशाकरः । दिवो निपेतुर्भुवि पुष्पवृष्टयो रराज योषेव विकल्मषा निशा ॥ XIII. 73.	प्रसन्नदिक्पांशुविविक्तवातं शङ्खस्वनानन्तरपुष्पवृष्टि । Ku. I. 23. दिशः प्रसेदुर्मरुतो ववुः सुखाः प्रदक्षिणार्चिर्हविरग्निराददे । बभूव सर्वं शुभशंसि तत्क्षणं । भवो हि लोकाभ्युदयाय तादृशाम् ॥ III. 14.
See Canto I., Stanza 41.	वाता ववुः सौख्यकराः प्रसेदुः आशा विधूमो हुतभुग्ददीपे । जलान्यभूवन्विमलानि तत्रो- त्सवेऽन्तरिक्षं प्रससाद सद्यः ॥ Ku. XI. 37.
स दध्यौ ध्यानकोविदः । XIV. 1.	ध्यानस्तिमितलोचनः । I. 73.
सस्मारानुभवन्निव । XIV. 3.	सस्मार स्मरशासनः । Ku. VI. 3.
ततः सत्त्वेषु कारुण्यं चकार करुणात्मकः । XIV. 4.	भूतानुकम्पा तव चेदियं गौः । II. 48.
दिव्यं चक्षुः परं लेभे सर्वचक्षुष्मतां वरः । XIV. 7.	त्वया नियम्या ननु दिव्यचक्षुषा । III. 45. चक्षुष्मत्ता तु शास्त्रेण । IV. 13.
ददर्श निखिलं लोकं आदर्श इव निर्मले । XIV. 8.	छाया न मूर्छति मलोपहतप्रसादे शुद्धे तु दर्पणतले सुलभावकाशा । S'á. VII. 32.
अयस्कुम्भीष्ववाङ्मुखाः । XIV. 13.	अवाङ्मुखस्योपरि पुष्पवृष्टिः । II. 60.
असिपत्रं वनं नीलम् । XIV. 15.	अभ्यस्यतीव व्रतमासिधारम् । XIII. 67.
फलं तस्येदमवशैर्दुःख- मेवोपभुज्यते । XIV. 17. कृपणं भुञ्जते फलम् । XIV. 28.	तपसामुपभुञ्जानाः फलान्यपि तपस्विनः । Ku. VI. 10.

And many more parallel passages may be added from the *Ri*tusamhára, and the latter portion of the Kumárasambhava.

From these close resemblances it will appear that As'vaghosha has no doubt closely imitated Kálidâsa. Now As'vaghosha's poem may be divided into two parts—poetical narration as far as the twelfth Canto and philosophical exposition of Buddhist tenets as far as the 65th stanza of the fourteenth Canto. The last 27 stanzas of the 14th Canto and the subsequent three Cantos are the production of Pandit Amr*i*tánanda of Nepal. It is only in the first thirteen Cantos and 65 verses of the fourteenth that we have marked the resemblances between these two poets. As'vaghosha is more a philosopher than a poet. The instances of his philosophy are seen throughout the first fourteen Cantos of his Sanskrit edition of Buddhacharita. Kâlidása, on the other hand, is a great original poet. His models in poetry and drama were old writers like Chyavana, Válmîki, Bharata, Bhâsa, Saumilla and Kaviputra.[1] His powers of description may fairly be said to be yet unparalleled in this land of poetry. His special excellence is in poetry and not in philosophy, and it was hence that As'vaghosha made him his model in the art of poetry. Thus Kálidâsa may be placed some two centuries before this Buddhist philosopher. Prof. Cowell does not place As'vaghosha in the latter half of the sixth century, but he would, on the contrary, prefer to assign him the priest-hood of Râjâ Kanishka [2] about A. D. 78. So that the higher limit of Kâlidâsa's date would become B. C. 300, and the lower B. C. 100 at the most.

We next pass to some other points. In the fourth century B. C. Megasthenes describes the Indian kings. He says " The king leaves his palace not only in times of war, but also for the purpose of judging causes. He then remains in court for

1. See Mv. 1. " प्रथितयशसां भाससौमिल्लकविपुत्रादीनां प्रबन्धानतिक्रम्य " &c.

2. " The Sanskrit text of Buddhacharita is ascribed to As'vaghosha ; and, although there were several writers who bore that name, it seems most probable that our author was the contemporary and spiritual adviser of Kanishka in the first century of our era." Sacred Books of the East, Vol. XLIX. part I. Buddhist Maháyána texts. Also sacred Books of the East, Vol. XIX. Introduction, pp. xxx, *note.*, xxxi, Prof. Cowell's Preface to Buddhacharita, p. v.

the whole day, without allowing the business to be interrupted, even though the hour arrives when he must needs attend to his person,—that is, when he is to be rubbed with cylinders of wood. He continues hearing cases while the friction, which is performed by four attendants, is still proceeding. Another purpose for which he leaves his palace is to offer sacrifice: a third is to go to the chase, for which he departs in Bacchanalian fashion. Crowds of women surround him, and outside of this circle spearsmen are ranged. The road is marked off with ropes, and it is death, for man and woman alike, to pass within the ropes. Men with drums and gongs lead the procession. The king hunts in the enclosures and shoots arrows from a platform. At his side stand two or three armed-women. If he hunts in the open grounds he shoots from the back of an elephant. Of the women, some are in chariots, some on horses and some even on elephants, and they are equipped with weapons of every kind, as if they were going on a campaign."[1] This picture exactly corresponds with that given by Kâlidása in his S'ákuntala and Vikramorvas'îyam. The Yavana women are ready to take care of the king's bows and arrows and hand them over to him whenever he requires them.

In Kâlidâsa's works there are no specified names of the weekly days although the word वार [2] or वासर occurs. In his early history of the Bhâratîya Jyotish Prof. S. B. Dîkshita says that the names of the seven days of the week were introduced in India at about 1000 B. C.[3] from Chaldea or Egypt. It cannot, therefore, be said with certainty that the names of the weekly days were in actual use in the days of our poet.

Medicine also seems to have made a great advance in the time of Kâlidâsa. We have references to diseases, medicines and medical plants in his works. In Kumára II. 48, he says, "वीर्यवन्त्यौषधानीव विकारे सांनिपातिके"। "उपेत्य सा दोहददुःखशील-

1. Ancient India as described by Megasthenes and Arrian, by J. W. McCrindle M. A. pp. 72-73 and the notes.

2. "पृष्ठतः सुरतवाररात्रिषु"। R. XIX. 18.

3. Prof. S. B. Dikshita's Early History of Bharatiya Jyotish, part I. pp. 137-139. Also at page 112.

तान् ” । R. III. 6. “ कुमारभृत्याकुशलैरनुष्ठिते भिषग्भिराप्तैरथ गर्भभर्मणि ” । R. III. 12. “ रोगोपसृष्टतनुदुर्वसतिं मुमुक्षुः । प्रायोपवेशनमतिर्नृपतिर्बभूव ” । R. VIII. 94. “ ब्राह्ममस्त्रं प्रियाशोकशल्यनिष्कर्षणौषधम् ” । R. XII. 97. “ आमयस्तु रतिरागसंभवो दक्षशाप इव चन्द्रमक्षिणोत् ” । R. XIX. 48. “ सङ्गवस्तु भिषजामनाश्रवः ” । R. XIX. 49. “ राजयक्ष्मपरिहानिराययौ ” । R. XIX. 50. “ वैद्ययत्नपरिभाविनं गदम् ” । R. XIX. 53. “ In commenting upon the 20th stanza of the Meghadûta I., Mallinátha detects a ध्वनि and remarks :—यथाह वाग्भट :—“ कषायाश्चाहिमास्तस्य विशुद्धौ श्लेष्मणो हिताः । किमु तिक्तकषाया वा ये निसर्गात्कफापहाः ॥ कृतशुद्धेः क्रमात्पीतपेयादेः पथ्यभोजिनः । वातादिभिर्न बाधा स्यादिन्द्रियैरिव योगिनः ” इति. Hemádri, Cháritravardhana and other commentators have also quoted many references to medicine in their commentaries of the Raghuvans'a. In the S'âkuntala our poet says, “ मुस्ताक्षतिः पल्वले ” । S'â. II. 40. “ मुस्ताप्ररोहकवलावयवानुकीर्णम् ” । R. IX. 59. “ भवन्ति यत्रौषधयो रजन्याम् ” । Ku. I. 10. “ महौषधिं नक्तमिवात्मभासः ” । Ku. I. 30. “ यत्रौषधिप्रकाशेन ” । Ku. VI. 43. “ भोगीवमन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः ” । R. II. 32. “ आसन्नौषधयो नेतुः ” । R. IV. 75. “ तुहिनाद्रिरिव नक्तमोषधिः ” । R. VIII. 54. “ ज्वलितमहौषधिदीपिकासनाथाम् ” । R. IX. 70. “ जानकी विषवल्लीभिः परीतेव महौषधिः ” । R. XII. 61. “ अन्त्यां कलां दश इवौषधीषु ” R. XIV. 80. In the Mâlavikâgnimitra, Act. IV., we have “ततः प्रविशति यज्ञोपवीतबद्धाङ्गुष्ठः संभ्रान्तो विदूषकः” and the Parivrájiká remarks, “ तेन हि दंशच्छेदः पूर्वकर्मेति श्रूयते । स तावदस्य क्रियताम् ।

छेदो दंशस्य दाहो वा क्षतेर्वा रक्तमोक्षणम् ।
एतानि दष्टमात्राणामायुषः प्रतिपत्तयः ” ॥

And the king says :—“ संप्रति विषवैद्यानां कर्म । जयसेन क्षिप्रमानीयतां ध्रुवसिद्धिः ” ।

The above has a reference to Sus'ruta. Under Chikitsitakalpa Adhyáya 5. page 25, Sus'ruta gives the following :—

“ सर्वैरेवादितः सर्पैः शाखादष्टस्य देहिनः ।
दंशस्योपरि बध्नीयादरिष्टाश्चतुरङ्गुले ॥ १ ॥

दहेद्दंशमथोत्कृत्य यत्र बन्धो न जायते ।
आचूषणच्छेददाहाः सर्वत्रैव तु पूजिताः ॥ ३ ॥
समन्ततः सिरादंशाद्विध्येत्तु कुशलो भिषक् ।
शाखाग्रे वा ललाटे वा वेध्यास्ता विसृते विषम् ॥ १२ ॥
रक्ते निर्ह्रियमाणे तु कृत्स्नं निर्ह्रियते विषं ।
तस्माद्विस्रावयेद्रक्तं साह्यस्य परमा क्रिया ” ॥ १३ ॥

The generally admitted date of Sus'ruta falls somewhere between 350 B. C. to 100 B. C., and this corresponds pretty well to the date of our poet. From Parivrâjika's use of श्रूयते it seems that between our poet and Sus'ruta a considerable period must have passed. And it is interesting to notice that under *Ri*tucharyâ, Adhyáya 6, pages 18-19, Sus'ruta gives the following :—"तत्र माघाद्यो द्वादश मासा द्विमासिकमृतुं कृत्वा षडृतवो भवन्ति"। Does the year begin with the month of Mágha in the days of Sus'ruta or has this passage any other interpretation?

In the Málavikágnimitra, First Act, Kálidása uses the word तंत्रकार meaning 'an inventor of practical or useful science.' In it, when the letter from the king of Vidarbha is read and Agnimitra has ordered to send an army against the king and asks the minister his opinion, the latter says :— "Your Majesty says what is known to the S'âstra. "अचिराधिष्ठितराज्यः" &c., The king remarks "तेन ह्यवितथं तंत्रकारवचनम्." The stanza "अचिरा°" &c., seems to be a quotation from some work on polity well known in the times of Kálidâsa or it may be a verse-translation of some Sûtra *i. e.*, सूत्रमन्थ on polity by our poet. We have a parallel use of the word तंत्रकार in Pâlakâpya's 'Hastyâyurveda.' "एकरात्रोषितं तत्र तंत्रकारं यशस्विनः। तं मुनिं कर्म चैवास्य पप्रच्छुर्विस्मितास्तदा" ॥ ७६ ॥ [1] The use of the word तंत्र in the play is exactly similar to that in 'पञ्चतंत्र.' The composition of the Punchatantra is attributed to the first century A. D., so that the source of Kâlidása must evidently be older than Vishnus arman's books.

In the Raghuvans'a Canto VI., verse 27th, Kâlidása refers to Gajasûtrakâras. By Sútrakâras in the above verse the poet evidently refers to Gautama, Râjaputra, Mrigas'arman, Pálakápya and others. [2] We have the following references to Gajasûtras or Pálakápya in Kálidása's works. "पवनस्यानुकूलत्वात्" &c. R. I. 42. "अनिर्वाणस्य दन्तिनः" । R. I. 71. "असूययेव तन्नागाः सप्तधैव प्रसुस्रुवुः" । R.

---

1. The Hastyáyurveda by Pálakápya Muni, वनानुचरिताध्यायः I. p. 7. Ânandás'rama series.

2 Hastyáyurveda, Vanânucharitádhyáya, I. Sts. 25, 26, 30. p. 3. Ânandás'rama series.

28

IV. 23. " अंकुशं द्विरदस्येव यन्ता गम्भीरवेदिनः " । R. IV. 39. " गन्धद्विपे वन्य इव द्विरेफाः " । R. VI. 7. " विनीतनागः किल सूत्रकारैः " R. VI. 27. " सुरद्विपानामिव सामयोनिर्भिन्नोष्टधा विप्रससार वंशः " । R. XVI. 3. " रणो गन्धद्विपस्येव गन्धभिन्नान्यदन्तिनः " । R. XVII. 70. The commentators have also supported these verses with quotations from Gautama, Râjaputra, M*ri*gacharman or M*ri*gas'arman and Pálakápya. [1] And we know that the Hastyáyurveda of Pálakápya is the oldest work on the medical science. It is also alleged that the sage Pálakâpya was a contemporary with Ráma's father the king Das'aratha. [2] As mentioned before, Kálidása quotes ancient writers and the later quotations are not found in any of his works. Thus he cannot be referred to any centuries after Christ.

Kâlidâsa also refers to Kámasútras such as of Gho*t*akamukha. Gonardîya, Go*n*ikaputra. Vâtsyàyana and of others. The following are the general references to Kâmasútras. In Kumârasambhava Canto VIII., verses 8-10 ; 14-19 ; 22, 23, 25; 83, 87, 88. In the Raghuvans'a Canto VI. 17, Canto XI. 52, Canto XIX., verses 16-21; 22-35; 38, 46 and others. In the Mâlavikágnimitra, Vikramorvas'îyam and S'âkuntala there are several references to the Kámasútras of Vátsyâyana. In the Meghadûta II. 4, the poet uses the technical term of प्रणयकलह from Vâtsyáyana's tenth Adhyâya, second Adhikar*n*a, where the Sútra runs thus : " स्वभवनस्था तु निमित्तात्कलहिता तथाविधचेष्टैव नायकमभिगच्छेत् । तत्र पीठमर्दविटविदूषकैर्नायकप्रयुक्तैरुपशमितरोषा तैरेवानुनीता तैः सहैव तद्भवनमधिगच्छेत् । तत्र च वसेत् । इति प्रणयकलहः " ॥ At the close of the third Act of the Málavikágnimitra, the king Agnimitra falls at Îrâvati's feet ; so does the king Dushyanta in the seventh Act of S'âkuntala. These actions of the kings correspond to the following Sútra of Vátsyâyana : " तत्र युक्तरूपेण साम्ना पादपतनेन वा प्रसन्नमनास्तामनुनयन्नुपक्रम्य शयनमारोहयेत् " &c. In the 23rd and 33rd verses of the nineteenth Canto, the दूती af-

1. Vátsyáyana alludes to the Gajasútras and says : " तथाश्वारोहा गजारोहाश्वाश्वान्गजांश्चानधिगतशास्त्रा अपि विनयन्ते " । Kámasûtra Adhy. III. p. 29. Durgáprasáda's edition.

2. See Pandit S'ivadatta's Introduction to Hastyáyurveda, p. 2. Ânandás'rama series.

fairs are described ; these affairs come under Vátsyáyana's fifth chapter ; where the दूतीकर्म is explained in details. On a closer examination of Kálidása's works one can easily detect many references to the Kámasútras of Vâtsyâyana.

Our brother-worker Prof. Raghunátha Nârâyaṇa Apte, the distinguished researcher of the Rájárám College, Kolhapur, has proved the date of our poet from a theological point of view in his admirable essay on Kâlidâsa that has but just come out of the press. The literary acumen which the learned professor has shown in disproving many of the theories and bold assertions made by the writers on the date of Kâlidâsa is simply unrivalled. He holds that the Nyáya philosophy was unknown to the times of Kálidása, but in the Raghuvans'a, Canto XIII., verse first, our poet uses ' शब्दगुणं ' the term, we think, belonging to Nyâya. But the term being a solitary example we think we cannot so much rely on its strength. Perhaps it may have been borrowed from Sânkhya.

From these proofs we think we have no hesitation to place Kâlidâsa somewhere between 300 B. C. and 100 B. C. To this date perhaps grammar would be an objection. But we know that Kálidása uses लुङ्, लङ्, and लिट्[1] promiscuously. In his works, we think, the poet makes no distinction whatever between लुङ्, लङ्, and लिट्.

Here we close this easay on the date of Kálidása. We have considered the views of M. Hippolyte Fauche and Sir William Jones, the theories of Dr. Bhâu Dàji as regards the nine jems, Vikramâdityas, S'ilâdityas, Mátṛigupta and Pravarasena, the arguments about the theories of Korur and Renaissance, those about Diṅnága, Vasubandhu and others and also the tradition of Mallinâtha. We have also examined the arguments and theories of Mr. Pâthaka, the arguments of Greek astrology and Kumâradása all advanced to place Kálidàsa in the sixth century A. D., and we have seen that all

---

1. Dr. Bhándárkar's Second Book of Sanskrit, Preface to the first edition , p. ix., eighth edition 1892.

these are imperfect and some are quite exploded. In the Raghuvans'a and Málavikágnimitra we considered the political history of his days, particularly the history of the Huns, the Yavanas, Párasîkas and others: in the *Ri*tusamhára, Kumârasambhava and Raghuvans'a we have determined the probable country of his birth-place, and in the S'âkuntala we have taken an historical review of the law that was administered in his days. We have also marked the condition of commerce, the progress of agriculture, learning and civilization of his times. Thus we have seen that the conclusions arrived at about the date of Kálidása are amply supported by historical facts, contemporary evidences and the overwhelming internal proofs.

POONA, *June*, 1897. } G. R. N.

॥ श्रीः ॥

॥ रघुवंशम् ॥

। संजीविन्या समेतम् ।

। प्रथमः सर्गः ।

मातापितृभ्यां जगतो नमो वामार्धजानये ।
सद्यो दक्षिणदृक्पातसंकुचद्वामदृष्टये ॥ १ ॥
अन्तरायतिमिरोपशान्तये शान्तपावनमचिन्त्यवैभवम् ।
तं नरं वपुषि कुञ्जरं मुखे मन्महे किमपि तुन्दिलं महः ॥ २ ॥
शरणं करवाणि शर्मदं ते चरणं वाणि चराचरोपजीव्यम् ।
करुणामसृणैः कटाक्षपातैः कुरु मामम्ब कृतार्थसार्थवाहम् ॥ ३ ॥
वाणीं काणभुजीमजीगणदवाशासीच्च वैयासिकी-
मन्तस्तन्त्रमरंस्त पन्नगगवीगुम्फेषु चाजागरीत् ।
वाचामाकलयद्रहस्यमखिलं यश्चाक्षिपादस्फुरां
लोकेऽभूद्यदुपज्ञमेव विदुषां सौजन्यजन्यं यशः ॥ ४ ॥
मल्लिनाथः कविः सोऽयं मन्दात्मानुजिघृक्षया ।
व्याचष्टे कालिदासीयं काव्यत्रयमनाकुलम् ॥ ५ ॥
कालिदासगिरां सारं कालिदासः सरस्वती ।
चतुर्मुखोऽथ वा साक्षाद्विदुर्नान्ये तु मादृशाः ॥ ६ ॥
तथापि दक्षिणावर्तनाथाद्यैः क्षुण्णवर्त्मसु ।
वयं च कालिदासोक्तिष्ववकाशं लभेमहि ॥ ७ ॥
भारती कालिदासस्य दुर्व्याख्याविषमूर्छिता ।
एषा संजीविनी टीका तामद्योज्जीवयिष्यति ॥ ८ ॥
इहान्वयमुखेनैव सर्वं व्याख्यायते मया ।
नामूलं लिख्यते किंचिन्नानपेक्षितमुच्यते ॥ ९ ॥

---

2. K. तिमिरौघ° for तिमिरोप°. 3. C. D. कामदं for शर्मदं. 4. A. B. D. J. L. P. वैयासकीं for वैयासिकीं. C. D. J. K. L. आचकलत् for आकलयत्. 5. B. C. J. K. L. P. मल्लिनाथकविः for मल्लिनाथः कविः. 6. D. J. K. L. P. कालिदासो गिरां for कालिदासगिरां. D. L. P. यथा for अथवा. 8. C. J. L. P. यथा for तामद्य. 9. J. ह्युत्तमं for ह्युच्यते. K. omits the 7th and L. the 9th verse of Mallinâtha's introduction.

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये ।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ ॥ १ ॥
क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः ।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम् ॥ २ ॥

इह खलु सकलकविशिरोमणिः कालिदासः " काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये । सद्यः परनिर्वृतये कान्तासंमिततयोपदेशयुजे " इत्याद्यालंकारिकवचनप्रामाण्यात्काव्यस्यानेकश्रेयःसाधनताम् " काव्यालापांश्च वर्जयेत् " इत्यस्य निषेधशास्त्रस्यासत्काव्यविषयतां च पश्यन्रघुवंशाख्यं महाकाव्यं चिकीर्षुश्चिकीर्षितार्थाविघ्नपरिसमाप्तिसंप्रदायाविच्छेदलक्षणफलसाधनभूतविशिष्टदेवतानमस्कारस्य शिष्टाचारपरिप्राप्तत्वात् "आशीर्नमस्क्रिया वस्तुनिर्देशो वापि तन्मुखम् " इत्याशीर्वादाद्यन्यतमस्य प्रबन्धमुखलक्षणत्वात्काव्यनिर्माणस्य विशिष्टशब्दार्थप्रतिपत्तिमूलकत्वेन विशिष्टशब्दार्थयोश्च " शब्दजातमशेषं तु धत्ते शर्वस्य वल्लभा । अर्थरूपं यदखिलं धत्ते मुग्धेन्दुशेखरः " इति वायुपुराणसंहितावचनबलेन पार्वतीपरमेश्वरायत्तत्वदर्शनात्तत्प्रतिपित्सया तावेवाभिवादयते ॥

१ ॥ वागर्थाविति । वागर्थाविवेत्येकं पदम् ॥ इवेन सह नित्यसमासो विभक्त्यलोपश्च पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वं चेति वक्तव्यम् । एवमन्यत्रापि द्रष्टव्यम् ॥ वागर्थाविव शब्दार्थाविव संपृक्तौ । नित्यसंबन्धावित्यर्थः। नित्यसंबन्धयोरुपमानत्वेनोपादानात्॥ " नित्यः शब्दार्थसंबन्धः " इति मीमांसकाः ॥ जगतो लोकस्य पितरौ । माता च पिता च पितरौ ॥ " पिता मात्रा " इति द्वन्द्वैकशेषः ॥ " मातापितरौ पितरौ मातरपितरौ प्रसूजनयितारौ " इत्यमरः ॥ एतेन शर्वशिवयोः सर्वजगज्जनकतया वैशिष्ट्यमिष्टार्थप्रदानशक्तिः परमकारुणिकत्वं च सूच्यते ॥ पर्वतस्यापत्यं स्त्री पार्वती ॥ " तस्यापत्यम् " इत्यण् ॥ " टिड्ढाणञ् " इत्यादिना ङीप् ॥ पार्वती च परमेश्वरश्च पार्वतीपरमेश्वरौ । परमशब्दः सर्वोत्तमत्वद्योतनार्थः ॥ मातुरभ्यर्हितत्वादल्पाक्षरत्वाच्च पार्वतीशब्दस्य पूर्वनिपातः ॥ वागर्थप्रतिपत्तये शब्दार्थयोः सम्यग्ज्ञानार्थं वन्देऽभिवादये ॥ अत्रोपमालंकारः स्फुट एव ॥ तथोक्तम्—" स्वतःसिद्धेन भिन्नेन संमतेन च धर्मतः । साम्यमन्येन वर्ण्यस्य वाच्यं चेदेकगोपमा " इति ॥ प्रायिकश्चायमलंकारः कालिदासोक्तकाव्यादौ ॥ भूदेवताकस्य सर्वगुरोर्मगणस्य प्रयोगाच्छुभलाभः सूच्यते ॥ तदुक्तम्—" शुभदो मो भूमिमयः " इति ॥ वकारस्यामृतबीजत्वात्प्रचयगमनसिद्धिः ॥

२ ॥ संप्रति कविः स्वाहंकारं परिहरति " क्व सूर्य—" इत्यादि श्लोकद्वयेन ॥ प्रभवत्यस्मादिति प्रभवः कारणम् ॥ " ऋदोरप् " ॥ " अकर्तरि च कारके संज्ञायाम् "

---

1. For the right understanding (or the proper knowledge) of words, and their meanings, I bow down to पार्वती and परमेश्वर, the greatest of the gods, who are the parents of the universe (or creation) and the perpetual relation (or constant union) between whom is as close as the one subsisting between words and their meanings.

2. Where is the race sprung from the sun (the race which traces its origin to the sun) ? and where my scanty powers of

मन्दः कवियशःप्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यताम्।
प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः ॥ ३ ॥
अथ वा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन्पूर्वसूरिभिः।
मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः ॥ ४ ॥

इति साधुः ॥ सूर्यः प्रभवो यस्य स सूर्यप्रभवो वंशः क्व। अल्पो विषयो ज्ञेयोऽर्थो यस्याः सा मे मतिः प्रज्ञा च क्व॥ द्वौ क्वशब्दौ महदन्तरं सूचयतः। सूर्यवंशमाकलयितुं न शक्नोमीत्यर्थः। तथा च तद्विषयप्रबन्धनिरूपणं तु दूरापास्तमिति भावः॥ तथा हि। दुस्तरं तरितुमशक्यम्॥ "ईषद्दुःसुषु—" इत्यादिना खल्प्रत्ययः॥ सागरं मोहादज्ञानादुडुपेन प्लवेन॥ "उडुपं तु प्लवः कोलः" इत्यमरः॥ अथ वा चर्मावनद्धेन पानपात्रेण ॥ "चर्मावनद्धमुडुपं प्लवः काष्ठं करण्डवत्" इति सज्जनः ॥ तितीर्षुस्तरीतुमिच्छुरस्मि भवामि॥ तरतेः सन्नन्तादुप्रत्ययः ॥ अल्पसाधनैरधिकारम्भो न सुकर इतिभावः ॥ इदं च वंशोत्कर्षकथनं स्वप्रबन्धमहत्त्वार्थमेव॥ तदुक्तम्—"प्रतिपाद्यमहिम्ना च प्रबन्धो हि महत्तरः" इति॥

३ ॥ मन्द इति। किंच मन्दो मूढः॥ "मूढाल्पापटुनिर्भाग्या मन्दाः स्युः" इत्यमरः॥ तथापि कवियशःप्रार्थी। कवीनां यशः काव्यनिर्माणेन जातं। तत्प्रार्थनाशीलोऽहं प्रांशुनोन्नतपुरुषेण लभ्ये प्राप्ये फले फलविषये लोभार्थिनोद्बाहुः फलग्रहणायोच्छ्रितहस्तो वामनो ह्रस्व इव ॥ "खर्वो ह्रस्वश्च वामनः" इत्यमरः॥ उपहास्यतामुपहासविषयताम्॥ "ऋहलोर्ण्यत्" इति ण्यत्प्रत्ययः॥ गमिष्यामि प्राप्स्यामि ॥

४ ॥ अथ मन्दश्चेत्तर्हि त्यज्यतामयमुद्योग इत्यत आह॥ अथ वेति। अथ वा पक्षान्तरे पूर्वैः सूरिभिः कविभिर्वाल्मीकादिभिः कृतवाग्द्वारे। कृतं रामायणादिप्रबन्धरूपा या वाक्सैव द्वारं प्रवेशो यस्य तस्मिन्। अस्मिन्सूर्यप्रभवे वंशे कुले। जन्मनैकलक्षणः संतानो वंशः। वज्रेण मणिवेधकसूचीविशेषेण॥ "वज्रं त्वस्त्री कुलिशशस्त्रयोः। मणिवेधे रत्नभेदे" इति केशवः॥ समुत्कीर्णे विद्धे मणौ रत्ने सूत्रस्येव मे मम गतिः संचारोऽस्ति। वर्णनीये रघुवंशे मम वाक्प्रसरोऽस्तीत्यर्थः॥

---

mind? Methinks! from sheer folly I am bent upon crossing the ocean, though difficult to be passed over, by means of a small raft (or a boat).

3. Incompetent (*lit.* stupid) as I am I should make myself the butt of ridicule were I to covet the fame of a poet, like a dwarf (who would be laughed at) in greedily stretching up his hands to pluck fruits, attainable (only) by a tall man.

4. Or rather in this royal dynasty, where the door for poetical description has been opened by ancient (or preceding) poets, there is also a way for me to enter; just as there is a passage for the thread, in the precious stone, (previously) bored through by means of a diamond-pin.

---

3. C. D. °प्रेप्सुः for °प्रार्थी. C. D. °गम्ये for °लभ्ये. B. C. E. I. K. L. P, R. with Chá., Din., Val., Su., and Vija., मोहात् for लोभात्.

सोऽहमाजन्मशुद्धानामाफलोदयकर्मणाम् ।
आ समुद्रक्षितीशानामानाकरथवर्त्मनाम् ॥ ५ ॥
यथाविधिहुताग्नीनां यथाकामार्चितार्थिनाम् ।
यथापराधदण्डानां यथाकालप्रबोधिनाम् ॥ ६ ॥
त्यागाय संभृतार्थानां सत्याय मितभाषिणाम् ।
यशसे विजिगीषूणां प्रजायै गृहमेधिनाम् ॥ ७ ॥

५ ॥ एवं रघुवंशे लब्धप्रवेशस्तद्वर्णनं प्रतिजानीते सोहमित्यादिभिः पञ्चभिः श्लोकैः । कुलकेनाह ॥ सोहमिति । सोऽहम् । " रघूणामन्वयं वक्ष्ये " (१।९) इत्युत्तरेण संबन्धः । किंविधानां रघूणामित्यत्रोत्तराणि विशेषणानि योज्यानि । आ जन्मनः । जन्मारभ्येत्यर्थः ॥ " आङ्मर्यादाभिविध्योः " इत्यव्ययीभावः ॥ तस्य शुद्धानामित्यनेन । सुप्सुपेति समासः । एवमुत्तरत्रापि द्रष्टव्यम् ॥ आजन्मशुद्धानाम् । निषेकादिसर्वसंस्कारसंपन्नानामित्यर्थः । आफलोदयमा फलसिद्धेः कर्म येषां ते तथोक्तास्तेषाम् । प्रारब्धान्तगामिनामित्यर्थः । आसमुद्रं क्षितेरीशानाम् । सार्वभौमाणामित्यर्थः । आनाकं रथवर्त्म येषां तेषाम् । इन्द्रसहचारिणामित्यर्थः ॥ अत्र सर्वत्राङोऽभिविध्यर्थत्वं द्रष्टव्यम् । अन्यथा मर्यादार्थत्वे जन्मादिषु शुद्ध्यभावप्रसङ्गात् ॥

६ ॥ यथाविधीति । विधिमनतिक्रम्य यथाविधि ॥ " यथासादृश्ये " इत्यव्ययीभावः । ततो हुतशब्देन सुप्सुपेति समासः । एवं " यथाकामार्चित-" इत्यादीनामपि द्रष्टव्यम् ॥ यथाविधि हुता अग्नयो यैस्तेषाम् । यथाकाममभिलाषमनतिक्रम्यार्चितार्थिनाम् । यथापराधमपराधमनतिक्रम्य दण्डो येषां तेषाम् । यथाकालं कालमनतिक्रम्य प्रबोधिनां प्रबोधनशीलानाम् ॥ चतुर्भिर्विशेषणैर्देवतायजनातिथिसत्कारदण्डधरत्वप्रजापालनसमयजागरूकत्वादीनि विवक्षितानि ॥

७ ॥ त्यागायेति । त्यागाय । सत्पात्रे विनियोगस्त्यागः । तस्मै ॥ " त्यागो विहापितं दानम् " इत्यमरः । संभृतार्थानां संचितधनानाम् । न तु दुर्व्यापाराय ॥ सत्याय मितभाषिणां मितभाषणशीलानाम् । न तु पराभवाय ॥ यशसे कीर्तये ॥ " यशः कीर्तिः समज्ञा च " इत्यमरः ॥ विजिगीषूणां विजेतुमिच्छूनाम् । न त्वर्थसंग्रहाय ॥ प्रजायै संतानाय गृहमेधिनां दारपरिग्रहाणाम् । न तु कामोपभोगाय ॥ अत्र " त्यागाय " इत्यादिषु " चतुर्थी तदर्थ—" इत्यादिना तादर्थ्यचतुर्थीसमासविधानज्ञापकाच्चतुर्थी ॥ गृहैर्दारैर्मेधन्ते संगच्छन्त इति गृहमेधिनः ॥ " दारेष्वपि

5-9. Though possessed of scanty powers of speech (*i. e.* wanting in poetical powers), I, thus driven by the attributes (or virtues) of the princes of the line of the Ragus coming close to my ears to an inconsiderate undertaking, will yet describe their line—a line of monarchs, who maintained the purity of their lives from the very time of their birth ; who carried on their undertakings till they were crowned with success ; who held sway over the (whole) earth bounded by (*lit.* up to) the ocean ; whose chariots ran unhindered up to the gates of the स्वर्ग ; who performed the

शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम्।
वार्द्धके मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम्॥ ८॥
रघूणामन्वयं वक्ष्ये तनुवाग्विभवोऽपि सन्।
तद्गुणैः कर्णमागत्य चापलाय प्रणोदितः॥ ९॥

गृहाः" इत्यमरः॥ "जाया च गृहिणी गृहम्" इति हलायुधः॥ 'मेधृ संगमे' इति धातोर्णिनिः॥ एभिर्विशेषणैः परोपकारित्वं सत्यवचनत्वं यशःपरत्वं पितॄणां शुद्धत्वं च विवक्षितानि॥

८॥ शैशव इति। शिशोर्भावः शैशवं बाल्यम्॥ "प्राणभृज्जातिवयोवचनोद्गात्र-" इत्यादिनाञ्प्रत्ययः॥ "शिशुत्वं शैशवं बाल्यम्" इत्यमरः॥ तस्मिन्वयस्यभ्यस्तविद्यानाम्। एतेन ब्रह्मचर्याश्रमो विवक्षितः॥ यूनो भावो यौवनं तारुण्यम्॥ युवादित्वादण्प्रत्ययः॥ "तारुण्यं यौवनं समे" इत्यमरः॥ तस्मिन्वयसि विषयैषिणाम् भोगाभिलाषिणाम्। एतेन गृहस्थाश्रमो विवक्षितः॥ वृद्धस्य भावो वार्द्धकं वृद्धत्वम्॥ "द्वन्द्वमनोज्ञादिभ्यश्च" इति वुञ्प्रत्ययः॥ "वार्द्धकं वृद्धसंघाते वृद्धत्वे वृद्धकर्मणि" इति विश्वप्रकाशः॥ संघातार्थेऽत्र "वृद्धाच्च" इतिवक्तव्यात्सामूहिको वुञ्॥ तस्मिन्वार्द्धके वयसि मुनीनां वृत्तिरिव वृत्तिर्येषां तेषाम्। एतेन वानप्रस्थाश्रमो विवक्षितः॥ अन्ते शरीरत्यागकाले योगेन परमात्मध्यानेन॥ "योगः संनहनोपायध्यानसंगतियुक्तिषु" इत्यमरः॥ तनुं त्यजन्तीति तनुत्यजः॥ "कायो देहः क्लीबपुंसोः स्त्रियां मूर्तिस्तनुस्तनूः" इत्यमरः॥ "अन्येभ्योऽपि दृश्यते" इति क्विप्॥ तेषां देहत्यागिनां॥ एतेन मोक्षभावो विवक्षितः॥

९॥ रघूणामिति। सोहं लब्धप्रवेशः। तनुवाग्विभवोऽल्पवाणीप्रसारोऽपि सन्। तेषां रघूणां गुणैस्तद्गुणैः। आजन्मशुद्ध्यादिभिः। कर्तृभिः। कर्णं मम श्रोत्रमागत्य चापलाय॥ युवादित्वात्कर्मण्यण्॥ चापलं चपलकर्माविमृश्यकरणरूपं

---

sacrificial rites to the fire according to the rule; who honoured the prayers of supplicants by gifts according to their desires; whose punishments were proportionate to the crimes (of the offenders); who were roused into action at the proper time; who collected wealth only for the acts of charity; who spoke in a measured or deliberate manner (*i. e.* spoke seldom or sparingly) in order to preserve the vow of truth; wished to extend their conquest only for fame; and entered upon a married life only for issue;—who devoted themselves to the acquisition of knowledge in their childhood; who sought pleasures in their youth; who led an ascetic-life in their declining years and finally

---

9. A. J. with Châ., Din., and Vija., प्रचोदितः, C. L. प्रमोदितः, D. प्रतारितः, F. प्रसारितः for प्रणोदितः. Vijayaga*n*i's text only with **Mallinâtha.**

तं सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद्व्यक्तिहेतवः ।
हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकापि वा ॥ १० ॥
वैवस्वतो मनुर्नाम माननीयो मनीषिणाम् ॥
आसीन्महीक्षितामाद्यः प्रणवश्छन्दसामिव ॥ ११ ॥
तदन्वये शुद्धिमति प्रसूतः शुद्धिमत्तरः ।
दिलीप इति राजेन्दुरिन्दुः क्षीरनिधाविव ॥ १२ ॥

कर्तुम् ॥ " क्रियार्थोपपदस्य " इत्यादिना चतुर्थी ॥ प्रणोदितः प्रेरितः सन् । रघूणामन्वयमन्वयविषयप्रबन्धं वक्ष्ये ॥ कुलकम् ॥

१० ॥ संप्रति स्वप्रबन्धपरीक्षार्थं सतः प्रार्थयते ॥ तमिति । तं रघुवंशाख्यं प्रबन्धं सदसतोर्गुणदोषयोर्व्यक्तेर्हेतवः कर्तारः सन्तः श्रोतुमर्हन्ति ॥ तथा हि। हेम्नो विशुद्धिर्निर्दोषस्वरूपं श्यामिकापि लोहान्तरसंसर्गात्मको दोषोऽपि वाग्नौ संलक्ष्यते । नान्यत्र ॥ तद्वदत्रापि सन्त एव गुणदोषविवेकाधिकारिणो नान्य इति भावः ॥

११ ॥ वर्ण्यं वस्तूपक्षिपति ॥ वैवस्वत इति । मनस ईषिणो मनीषिणो धीराः । विद्वांस इति यावत् ॥ पृषोदरादित्वात्साधुः ॥ तेषां माननीयः पूज्यः । छन्दसां वेदानाम् ॥ " छन्दः पद्ये च वेदे च " इति विश्वः ॥ प्रणव ओंकार इव । महीं क्षयन्तीशत इति महीक्षितः क्षितीश्वराः ॥ क्षिधातोरैश्वर्यार्थात्क्विप् तुगागमश्च ॥ तेषामाद्य आदिभूतः । विवस्वतः सूर्यस्यापत्यं पुमान्वैवस्वतो नाम वैवस्वत इति प्रसिद्धो मनुरासीत् ॥

१२ ॥ तदन्वय इति । शुद्धिरस्यास्तीति शुद्धिमान् । तस्मिञ्छुद्धिमति तदन्वये तस्य मनोरन्वये कुले ॥ " अन्ववायोऽन्वयो वंशो गोत्रं चाभिजनं कुलम् " इति हलायुधः ॥ अतिशयेन शुद्धिमानिति शुद्धिमत्तरः ॥ " द्विवचनविभज्योप- " इत्यादिना तरप्प्रत्ययः ॥ दिलीप इति प्रसिद्धो राजा इन्दुरिव राजेन्दू राजश्रेष्ठः ॥ उपमितं व्याघ्रादिना समासः ॥ क्षीरनिधाविन्दुरिव प्रसूतो जातः ॥

---

closed their lives in a state of raft communion (*i. e.* योग contemplation.)

10. Let, therefore, the wise alone who can discriminate between good and bad listen to this (description); for the purity or alloy of gold can (easily) be tested in fire.

11. Once there lived a king named Manu the son of *Vivasvat*, esteemed by the wise and first of those who ruled over the earth, like the mystic letter ॐ Om, the first word in the Vedas.

12. In this pure line a purer soul was born by name दिलीप, who was an excellent king, as the pure moon was produced in the pure milky ocean.

---

10. D. इच्छन्ति for अर्हन्ति. C. D. °हेतवे for °हेतवः.

11. B. E. I. K. L. P. R. महीभृताम् for महीक्षिताम्. Vijayaga*n*i notices the reading of Mallinâtha.

12. C. D. E. I. J. K. L. P. R. with Vallabha राजेन्द्रः for राजेन्दुः.

व्यूढोरस्को वृषस्कन्धः शालप्रांशुर्महाभुजः ।
आत्मकर्मक्षमं देहं क्षात्रो धर्म इवाश्रितः ॥ १३ ॥
सर्वातिरिक्तसारेण सर्वतेजोभिभाविना ।
स्थितः सर्वोन्नतेनोर्वीं क्रान्त्वा मेरुरिवात्मना ॥ १४ ॥
आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः ।
आगमैः सदृशारम्भ आरंभसदृशोदयः ॥ १५ ॥

१३ ॥ " व्यूढ- " इत्यादिभिस्त्रिभिः श्लोकैर्दिलीपं विशिनष्टि ॥ व्यूढेति । व्यूढं विपुलमुरो यस्य स व्यूढोरस्कः ॥ उरःप्रभृतिभ्यः कप् ॥ " व्यूढं विपुलं भद्रं स्फारं समं वरिष्ठं च " इति यादवः ॥ वृषस्य स्कन्ध इव स्कन्धो यस्य स तथा ॥ " सप्तम्युपमान- " इत्यादिनोत्तरपदलोपी बहुव्रीहिः ॥ शालो वृक्ष इव प्रांशुरुन्नतः शालप्रांशुः ॥ " प्राकारवृक्षयोः शालः शालः सर्जतरुः स्मृतः " इति यादवः ॥ महाभुजो महाबाहुः । आत्मकर्मक्षमं स्वव्यापारानुरूपं देहमाश्रितः प्राप्तः क्षात्रः क्षत्रसंबन्धी धर्म इव । स्थितः ॥ मूर्तिमान्पराक्रम इव स्थित इत्युत्प्रेक्षा ॥

१४ ॥ सर्वातिरिक्तेति । सर्वातिरिक्तसारेण सर्वेभ्यो भूतेभ्योऽधिकबलेन ॥ सर्वाणि भूतानि तेजसाभिभवतीति सर्वतेजो भिभावी । तेन सर्वेभ्य उन्नतेनात्मना शरीरेण ॥ " आत्मा जीवे धृतौ देहे स्वभावे परमात्मनि " इति विश्वः ॥ मेरुरिव । उर्वीं क्रान्त्वाक्रम्य स्थितः । मेरावपि विशेषणानि तुल्यानि ॥ " अष्टाभिश्च सुरेन्द्राणां मात्राभिर्निर्मितो नृपः । तस्मादभिभवत्येष सर्वभूतानि तेजसा " इति मनुवचनाद्राज्ञः सर्वतेजोभिभावित्वं ज्ञेयम् ॥

१५ ॥ आकारेति । आकारेण मूर्त्या सदृशी प्रज्ञा यस्य सः । प्रज्ञया सदृशागमः

---

13. His chest was broad and full, his shoulders like those of a bull, his height like that of a शाल tree, and his arms were long; so that he looked like the presiding god of क्षात्र spirit (*i. e.* heroism) that had incorporated himself into a body worthy of (the performance of) his deeds.

14. He, like the mountain Meru, stood occupying the earth with his body (frame) possessed of an all-surpassing firmness (*lit.* strength), an all-transcending lustre, and an all-excelling tallness.

15. His intellect was equal (in proportion) to his bodily frame, his knowledge (or study of *S*ástra) to his intellect, his undertakings to his knowledge and his success to his undertakings.

---

13. P. क्षात्रधर्मः for क्षात्रो धर्मः. C. D. with Châ., and Din., आस्थितः, P. श्रितः for आश्रितः. Châritravardhana notices the reading of Mallinàtha; and Sumativijaya notices the reading of Châritravardhana and others.

14. C. D. E. K. with Su., सर्वतेजोविभाविना for सर्वतेजोभिभाविना.

15. B. C. D. E. I. J. K. L. P. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vija., प्रारंभसदृशोदयः for आरंभसदृशोदयः.

भीमकान्तैर्नृपगुणैः स बभूवोपजीविनाम् ।
अधृष्यश्चाभिगम्यश्च यादोरत्नैरिवार्णवः ॥ १६ ॥
रेखामात्रमपि क्षुण्णादा मनोर्वर्त्मनः परम् ।
न व्यतीयुः प्रजास्तस्य नियन्तुर्नेमिवृत्तयः ॥ १७ ॥
प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत् ।
सहस्रगुणमुत्स्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः ॥ १८ ॥

प्रज्ञानुरूपशास्त्रपरिश्रमः । आगमैः सदृश आरम्भः कर्म यस्य स तथोक्तः । आरभ्यत इत्यारम्भः कर्म । तत्सदृश उदयः फलसिद्धिर्यस्य स तथोक्तः ॥

१६ ॥ भीमेति । भीमैश्च कान्तैश्च नृपगुणै राजगुणैस्तेजःप्रतापादिभिः कुलशीलदाक्षिण्यादिभिश्च स दिलीप उपजीविनामाश्रितानाम् । यादोभिर्जलग्राहैः ॥ “ यादांसि जलजन्तवः ” इत्यमरः ॥ रत्नैश्चार्णव इव । अधृष्योऽनभिभवनीयश्चाभिगम्य आश्रयणीयश्च बभूव ॥

१७ ॥ रेखामात्रमिति । नियन्तुः शिक्षकस्य सारथेश्च तस्य दिलीपस्य संबन्धिन्यो नेमीनां चक्रधाराणां वृत्तिरिव वृत्तिर्व्यापारो यासां ताः ॥ “ चक्रधारा प्रधिर्नेमिः ” इति यादवः ॥ “ चक्रं रथाङ्गं तस्यान्ते नेमिः स्त्री स्यात्प्रधिः पुमान् ” इत्यमरः ॥ प्रजाः । आ मनोः ॥ मनुमारभ्येत्यभिविधिः । पदद्वयं चैतत् । समासस्य विभाषितत्वात् ॥ क्षुण्णादभ्यस्तात् प्रहताच्च वर्त्मन आचारपद्धतेरध्वनश्च परमधिकम् । इतस्तत इत्यर्थः । रेखा प्रमाणमस्येति रेखामात्रम् । रेखाप्रमाणम् । ईषदपीत्यर्थः ॥ “ प्रमाणे द्वयसज्— ” इत्यादिना मात्रच्प्रत्ययः ॥ परशब्दविशेषणं चैतत् । न व्यतीयुर्नातिक्रान्तवत्यः ॥ कुशलसारथिप्रेरिता रथनेमय इव तस्य प्रजाः पूर्वक्षुण्णमार्गं न जहुरिति भावः ॥

१८ ॥ प्रजानामिति । स राजा प्रजानां भूत्या इति भूत्यर्थं वृद्ध्यर्थमेव ॥ अर्थेन सह नित्यसमासः सर्वलिङ्गता च वक्तव्या । ग्रहणक्रियाविशेषणं चैतत् ॥

---

16. By the combination of fierce yet amicable virtues he was to his dependents both ill-approachable and inviting as the ocean on account of its sea-monsters and jewels.

17. The subjects of that king had never gone out of the course (or path) trodden from the time of मनु even to the extent of a line (*lit.* even as much as has a line for its measure), as the outer rim of a wheel does not rotate out of its beaten path (under a clever charioteer).

18. It was for the welfare of his subjects alone, that he collected taxes from them. In this he resembled the sun, who

---

16. C. D. L. with Chà., Din., Val., and Su., अधिगम्यः for अभिगम्यः.

17. C. D. R. with Chà., Din., Val., and Su., रेषा° for रेखा°. B. D. E. I. K. P; R. with Val., Su., and Vija., आत्मनः for आ मनोः.

18. C. रसान् for रसम्.

सेना परिच्छदस्तस्य द्वयमेवार्थसाधनम् ।
शास्त्रेष्वकुण्ठिता बुद्धिर्मौर्वी धनुषि चातता ॥ १९ ॥
तस्य संवृतमन्त्रस्य गूढाकारेङ्गितस्य च ।
फलानुमेयाः प्रारम्भाः संस्काराः प्राक्तना इव ॥ २० ॥

ताभ्यः प्रजाभ्यो बलिं षष्ठांशरूपं करमग्रहीत् ॥ "भागधेयः करो बलिः" इत्यमरः ॥ तथा हि । रविः सहस्रं गुणा यस्मिन्कर्मणि तद्यथा तथा सहस्रगुणं सहस्रधोत्स्रष्टुं दातुम् । उत्सर्जनक्रियाविशेषणं चैतत् । रसमम्ब्वादत्ते गृह्णाति ॥ "रसो गन्धे रसे स्वादे तिक्तादौ विषरागयोः । शृङ्गारादौ द्रवे वीर्ये देहधात्वम्बुपारदे" इति विश्वः ॥

१९ ॥ संप्रति बुद्धिशौर्यसंपन्नस्य तस्यार्थसाधनेषु परानपेक्षत्वमाह ॥ सेनेति । तस्य राज्ञः सेना चतुरङ्गबलम् । परिच्छाद्यतेऽनेनेति परिच्छद उपकरणं बभूव । छत्रचामरादितुल्यमभूदित्यर्थः ॥ "पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण" इति घप्रत्ययः ॥ "छादेर्घेऽद्व्युपसर्गस्य" इत्युपधाह्रस्वः ॥ अर्थस्य प्रयोजनस्य तु साधनं द्वयमेव । शास्त्रेष्वकुण्ठिताव्याहता बुद्धिः ॥ 'व्यापृता' इत्यपि पाठः ॥ धनुष्याततारोपिता मौर्वी ज्या च ॥ "मौर्वी ज्या शिञ्जिनी गुणः" इत्यमरः ॥ नीतिपुरःसरमेव तस्य शौर्यमभूदित्यर्थः ॥

२० ॥ राजमूलमन्त्रसंरक्षणं तस्यासीदित्याह ॥ तस्येति । संवृतमन्त्रस्य गुप्तविचारस्य ॥ "वेदभेदे गुप्तवादे मन्त्रः" इत्यमरः ॥ शोकहर्षादिसूचको भ्रुकुटीमुखरागादिराकारः । इङ्गितं चेष्टितं हृदयगतविकारो वा ॥ "इङ्गितं हृद्गतो भावो बहिराकार आकृतिः" इति सज्जनः ॥ गूढे आकारेङ्गिते यस्य । स्वभावचापलादाप्तपरंपरया मुखरागादिलिङ्गैर्वा तृतीयगामिमन्त्रस्य तस्य । प्रारभ्यन्त इति प्रारम्भाः सामाद्युपायप्रयोगाः ॥ प्रागित्यव्ययेन पूर्वजन्मोच्यते । तत्र भवाः ॥ प्राक्तनाः "सायं-

---

draws up watery vapour (from the earth) only to pour it thousand-fold (in the shape of rain in autumn).

19. His army was to him like his paraphernalia. His means of accomplishing his object (preservation of peace, &c.) were only two-fold : consisting (first) of a genius that penetrated every *S*ástra, and (secondly) of the cord stretched out on the bow.

20. The political measures (or diplomatic schemes) of that monarch whose policy (of Government) was secret and whose attitudes and gestures were (also equally) inconceivable could only be inferred from the results they put forth (*lit.* from the fruits they showed), like unto the impressions of the actions of previous birth.

---

19. C. D. E. L. P. R. with Val., Su., and Vija., सेनापरिच्छदः for सेना परिच्छदः. D. स्वयम् for द्वयम्. C. शास्त्रे च for शास्त्रेषु. C. R. with Châ., Din., Val., and Vija., व्यापृता, B. E. I. K. P. with Su., व्यापृता, D. L. अव्याहता, A. व्याहता for अकुण्ठिता. Mallinâtha also notices the reading of Sumativijaya and others.

जुगोपात्मानमत्रस्तो भेजे धर्ममनातुरः ।
अगृध्नुरादद्दे सोऽर्थमसक्तः सुखमन्वभूत् ॥ २१ ॥
ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघाविपर्ययः ।
गुणा गुणानुबन्धित्वात्तस्य सप्रसवा इव ॥ २२ ॥
अनाकृष्टस्य विषयैर्विद्यानां पारदृश्वनः ।
तस्य धर्मरतेरासीद्वृद्धत्वं जरसा विना ॥ २३ ॥

च्चिर—" इत्यादिना ट्युल्प्रत्ययः ॥ संस्काराः पूर्वकर्मवासना इव । फलेन कार्येणानुमेया अनुमातुं योग्या आसन् ॥ अत्र याज्ञवल्क्यः—" मन्त्रमूलं यतो राज्यमतो मन्त्रं सुरक्षितम् । कुर्याद्यथा तन्न विदुः कर्मणामा फलोदयात् " इति ॥

२१ ॥ संप्रति सामाद्युपायान्विनैवात्मरक्षादिकं कृतवानित्याह ॥ जुगोपेति । अत्रस्तोऽभीतः सन् ॥ " त्रस्तो भीरुभीरुकभीलुकाः " इत्यमरः ॥ त्रासोपाधिमन्तरेणैव त्रिवर्गसिद्धेः प्रथमसाधनत्वादेवात्मानं शरीरं जुगोप रक्षितवान् । अनातुरोऽरुग्ण एव धर्मं सुकृतं भेजे । अर्जितवानित्यर्थः । अगृध्नुरगर्धनशील एवार्थमाददे स्वीकृतवान् ॥ " गृध्नुस्तु गर्धनः । लुब्धोऽभिलाषुकस्तृष्णक्समौ लोलुपलोलुभौ " इत्यमरः ॥ " त्रसिगृधिधृषिक्षिपेः क्नुः " इति क्नुप्रत्ययः ॥ असक्तः आसक्तिरहित एव सुखमन्वभूत् ॥

२२ ॥ परस्परविरुद्धानामपि गुणानां तत्र साहचर्यमासीदित्याह ॥ ज्ञान इति । ज्ञाने परवृत्तान्तज्ञाने सत्यपि मौनं वाङ्नियमनम् ॥ यथाह कामन्दकः—" नान्योपतापि वचनं मौनं व्रतचरिष्णुता " इति ॥ शक्तौ प्रतीकारसामर्थ्येऽपि क्षमापकारसहनम् ॥ अत्र चाणक्यः—" शक्तानां भूषणं क्षमा " इति ॥ त्यागे वितरणे सत्यपि श्लाघाया विकत्थनस्य विपर्ययोऽभावः ॥ अत्राह मनुः—" न दत्त्वा परिकीर्तयेत् " इति ॥ इत्थं तस्य गुणा ज्ञानादयो गुणैर्विरुद्धैर्मौनादिभिरनुबन्धित्वात्सहचारित्वात् । सह प्रसवो जन्म येषां ते सप्रसवाः । सोदरा इवाभूवन् ॥ विरुद्धा अपि गुणास्तस्मिन्नविरोधेनैव स्थिता इत्यर्थः ॥

२३ ॥ द्विविधं वृद्धत्वं ज्ञानतो वयसा च । तत्र तस्य ज्ञानेन वृद्धत्वमाह ॥ अना-

---

21. He kept a guard about his body without fear (*i. e.* he was vigilant without fear). He practised religious exercise even when he was not ill (*i. e.* without a disease). Free from avarice he sought wealth, and he enjoyed pleasures without being voluptuous (*lit.* without being attached to them).

22. In him there was knowledge conjoined to (modest) silence, power graced by forgiveness, and charity, free from self-adulation,—in fact, his virtues (mutually antagonistic) from mutual association seemed to have sprung from one and the same origin.

23. Worldly enjoyments had no hold on him; and he had

---

21. B. C. D. E. I. K. L. P. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vija., अर्थान् for अर्थम्.

22. I. reads first the 23rd verse and then the 22nd of our text.

23. I. R. पारदर्शिनः for पारदृश्वनः.

प्रजानां विनयाधानाद्रक्षणाद्भरणादपि ।
स पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः ॥ २४ ॥
स्थित्यै दण्डयतो दण्ड्यान्परिणेतुः प्रसूतये ।
अप्यर्थकामौ तस्यास्तां धर्म एव मनीषिणः ॥ २५ ॥

कृष्टस्येति । विषयैः शब्दादिभिरनाकृष्टस्यावशीकृतस्य विद्यानां वेदवेदाङ्गादीनां पारदृश्वनः पारमन्तं दृष्टवतः ॥ दृशेः क्वनिप् ॥ धर्मे रतिर्यस्य तस्य राज्ञो जरसा जरया विना ॥ "विस्रसा जरा" इत्यमरः॥ "षिद्भिदादिभ्योऽङ्" इत्यङ्प्रत्ययः॥ "जराया जरसन्यतरस्याम्" इति जरसादेशः ॥ वृद्धत्वं वार्द्धकमासीत् ॥ तस्य यूनोऽपि विषयवैराग्यादिज्ञानगुणसंपत्त्या ज्ञानतो वृद्धत्वमासीदित्यर्थः ॥ नाथस्तु चतुर्विधं वृद्धत्वमिति कृत्वा 'अनाकृष्टस्य' इत्यादिना विशेषणत्रयेण वैराग्यज्ञानशीलवृद्धत्वान्युक्तानीत्यवोचत् ॥

२४ ॥ प्रजानामिति । प्रजायन्त इति प्रजा जनाः ॥ "उपसर्गे च संज्ञायाम्" इति डप्रत्ययः ॥ तासां विनयस्य शिक्षाया आधानात्करणात् । सन्मार्गप्रवर्तनादिति यावत् । रक्षणाद्भयहेतुभ्यस्त्राणात् । आपन्निवारणादिति यावत् । भरणादन्नपानादिभिः पोषणादपि ॥ अपिः समुच्चये ॥ स राजा पिताभूत् ॥ तासां पितरस्तु जन्महेतवो जन्ममात्रकर्तारः केवलमुत्पादका एवाभूवन् ॥ जननमात्र एव पितॄणां व्यापारः । सदा शिक्षारक्षणादिकं तु स एव करोतीति तस्मिन्पितृत्वव्यपदेशः ॥ आहुश्च- "स पिता यस्तु पोषकः" इति ॥

२५ ॥ स्थित्या इति । दण्डमर्हन्तीति दण्ड्याः ॥ "दण्डादिभ्यो यः" इति यप्रत्ययः ॥ "अदण्ड्यान्दण्डयन्राजा दण्ड्यांश्चैवाप्यदण्डयन् । अयशो महदाप्नोति नरकं चैव गच्छति" इति शास्त्रवचनात् ॥ तान्दण्ड्यानेव स्थित्यै लोकप्रतिष्ठायै दण्डयतः शिक्षयतः । प्रसूतये संतानायैव परिणेतुर्दारान्परिगृह्णतः । मनीषिणो विदुषः । तस्य दिलीपस्यार्थकामावपि धर्म एवास्तां जातौ ॥ अस्तेर्लङ् ॥ अर्थकामसाधनयोर्दण्डविवाहयोर्लोकस्थापनप्रजोत्पादनरूपधर्मार्थत्वेनानुष्ठानादर्थकामावपि धर्मशेषतामापादयन्स राजा धर्मोत्तरोऽभूदित्यर्थः ॥ आह च गौतमः— "न पूर्वाह्णमध्यंदिनापराह्णानफलान्कुर्यात् । यथाशक्ति धर्मार्थकामेभ्यस्तेषु धर्मोत्तरः स्यात्" इति ॥

---

mastered (*lit.* seen the other end of) all the branches of learning ; consequently this king who took delight in virtue had (all) the wisdom of age without its (attendant) infirmities.

24. For enforcing discipline (*lit.* from imparting moral training to or instructing in duties) on his subjects and (also) for protecting and supporting them, he was (truly) their father whereas their fathers were merely the authors of their birth.

25. Even the (acquisition of) wealth and (the gratification of) desire became the acts of righteousness in case of this wise

---

25. D. प्रणयतः for दण्डयतः. C. D. दण्डम् for दण्ड्यान्. C. with Vija., परणेतुः for परिणेतुः. D. J. P. धर्माय for धर्मे. I. मनीक्षणः for मनीषिणः.

दुदोह गां स यज्ञाय सस्याय मघवा दिवम् ।
संपद्विनिमयेनोभौ दधतुर्भुवनद्वयम् ॥ २६ ॥
न किलानुययुस्तस्य राजानो रक्षितुर्यशः ।
व्यावृत्ता यत्परस्वेभ्यः श्रुतौ तस्करता स्थिता ॥ २७ ॥
द्वेष्योऽपि संमतः शिष्टस्तस्यार्तस्य यथौषधम् ।
त्याज्यो दुष्टः प्रियोऽप्यासीदङ्गुलीवोरगक्षता ॥ २८ ॥

२६ ॥ दुदोहेति । स राजा यज्ञाय यज्ञं कर्तुं गां भुवं दुदोह । करग्रहणेन रिक्तां चकारेत्यर्थः । मघवा देवेन्द्रः । सस्याय सस्यं वर्धयितुं दिवं स्वर्गं दुदोह ॥ द्युलोकान्महीलोके वृष्टिमुत्पादयामासेत्यर्थः ॥ "क्रियार्थोपपदस्य—" इत्यादिना यज्ञसस्याभ्यां चतुर्थी ॥ एवमुभौ संपदो विनिमयेन परस्परमादानप्रतिदानाभ्यां भुवनद्वयं दधतुः पुपुषतुः ॥ राजा यज्ञैरिन्द्रलोकमिन्द्रश्चोदकेन भूलोकं पुपोषेत्यर्थः ॥ उक्तं च दण्डनीतौ–"राजा त्वर्थान्समाहृत्य कुर्यादिन्द्रमहोत्सवम् । प्रीणितो मेघवाहस्तु महतीं वृष्टिमावहेत्" इति ॥

२७ ॥ न किलेति । राजानोऽन्ये नृपा रक्षितुर्भयेभ्यस्त्रातुस्तस्य राज्ञो यशो नानुययुः किल नानुचक्रुः खलु ॥ कुतः । यद्यस्मात्कारणात्तस्करता चौर्यं परस्वेभ्यः परधनेभ्यः स्वविषयभूतेभ्यो व्यावृत्ता सती श्रुतौ वाचकशब्दे स्थिता प्रवृत्ता । अपहार्यान्तराभावात्तस्करशब्द एवापहृत इत्यर्थः ॥ अथ वा ॥ "अत्यन्तासत्यपि ज्ञानमर्थे शब्दः करोति हि" इति न्यायेन शब्दे स्थिता स्फुरिता न तु स्वरूपतोऽस्तीत्यर्थः ॥

२८ ॥ द्वेष्य इति । शिष्टो जनो द्वेष्यः शत्रुरपि । आर्तस्य रोगिण औषधं यथौ-

---

monarch who punished criminals for the preservation (or stability) of society and led a married life (*i. e.* took a wife to himself) for progeny.

26. He drained (*lit.* milked) the earth (of its resources) for spreading sacrifices and Indra the heavens for nourishing his crops ; thus by an exchange of their wealth they maintained both the worlds.

27. Other princes could not indeed rival (*lit.* imitate) his fame as a guardian of the people ; for theft, withdrawing itself from other men's riches, resided in (came to be applied to) the word expressive of itself (*i. e.* remained in the hearing of men).

28. A good man even though an enemy was accepted (esteemed or prized) by him as a medicine is by a sick person, and a wicked man even though dear was rejected by him like a finger bitten by a cobra.

---

28. B. C. E. I. K. L. P. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vija., दष्टोङ्गुष्ठ इवाहिना for अङ्गुलीवोरगक्षता.

तं वेधा विदधे नूनं महाभूतसमाधिना ।
तथा हि सर्वे तस्यासन्परार्थैकफला गुणाः ॥ २९ ॥
स वेलावप्रवलयां परिखीकृतसागराम् ।
अनन्यशासनामुर्वीं शशासैकपुरीमिव ॥ ३० ॥
तस्य दाक्षिण्यरूढेन नाम्ना मगधवंशजा ।
पत्नी सुदक्षिणेत्यासीदध्वरस्येव दक्षिणा ॥ ३१ ॥

षधमिव । तस्य संमतोऽनुमत आसीत् । दुष्टो जनः प्रियोऽपि प्रेमास्पदीभूतोऽपि । उरगक्षता सर्पदष्टाङ्गुलीव ॥ "छिन्द्याद्बाहुमपि दुष्टात्मनः" इति न्यायात् ॥ त्याज्य आसीत् ॥ तस्य शिष्ट एव बन्धुर्दुष्ट एव शत्रुरित्यर्थः ॥

२९ ॥ तस्य परोपकारित्वमाह ॥ तमिति । वेधाः स्रष्टा ॥ "स्रष्टा प्रजापतिर्वेधाः" इत्यमरः ॥ तं दिलीपम् । समाधीयतेऽनेनेति समाधिः कारणसामग्री । महाभूतानां यः समाधिस्तेन विदधे ससर्ज नूनं ध्रुवम् । इत्युत्प्रेक्षा ॥ तथा हि । तस्य राज्ञः सर्वे गुणा रूपरसादिमहाभूतगुणवदेव परार्थः परप्रयोजनमेवैकं मुख्यं फलं येषां ते तथोक्ता आसन् ॥ महाभूतगुणोपमानेन कारणगुणाः कार्ये संक्रामन्तीति न्यायः सूचितः ॥

३० ॥ स इति । स दिलीपः । वेलाः समुद्रकूलानि ॥ "वेला कूलेऽपि वारिधेः" इति विश्वः ॥ ता एव वप्रवलयाः प्राकारवेष्टा यस्यास्ताम् ॥ "स्याच्चयो वप्रमस्त्रियाम् । प्राकारो वरणः शालः प्राचीनं प्रान्ततो वृतिः" इत्यमरः ॥ परितः खातं परिखा दुर्गवेष्टनम् ॥ "खातं खेयं तु परिखा" इत्यमरः ॥ "अन्येष्वपि दृश्यते" इत्यपिशब्दात्खनेर्डप्रत्ययः । अपरिखाः परिखाः संपद्यमानाः कृताः परिखीकृताः सागरा यस्यास्ताम् ॥ "अभूततद्भावे च्विः" ॥ अविद्यमानमन्यस्य राज्ञः शासनं यस्यास्तामनन्यशासनामुर्वीमेकपुरीमिव शशास । अनायासेन शासितवानित्यर्थः ॥

३१ ॥ तस्येति । तस्य राज्ञो मगधवंशे जाता मगधवंशजा ॥ "सप्तम्यां जनेर्डः" इति डप्रत्ययः ॥ एतेनाभिजात्यमुक्तम् । दाक्षिण्यं परच्छन्दानुवर्तनम् ॥ "दक्षिणः

---

29. Surely the god Brahmà formed him with the substance of the great elements ; for he inherited all virtues the sole effect of which was the good of others.

30. He governed the earth which was subject to no other rule and the encircling ramparts of which were the sea-beaches and the (high) seas were its moats, as if it was a single city.

31. He had a wife born in the family of the Magadha kings, by name Sudakshi*n*à, a name celebrated for its nobility, like Dakshi*n*à the wife of the sacrifice (a deity presiding over the gifts to officiating priests).

---

29. R. महाभूति° for महाभूत°.
30. C. D. I. R. with Su., परीखी° for परिखी°.
31. C. L. °युक्तेन for °रूढेन.

कलत्रवन्तमात्मानमवरोधे महत्यपि ।
तया मेने मनस्विन्या लक्ष्म्या च वसुधाधिपः ॥ ३२ ॥
तस्यामात्मानुरूपायामात्मजन्मसमुत्सुकः ।
विलम्बितफलैः कालं स निनाय मनोरथैः ॥ ३३ ॥
संतानार्थाय विधये स्वभुजादवतारिता ।
तेन धूर्जगतो गुर्वी सचिवेषु निचिक्षिपे ॥ ३४ ॥

सरलोदारपरच्छन्दानुवर्तिषु " इति शाश्वतः । तेन रूढं प्रसिद्धम् । तेन नाम्ना । अध्वरस्य यज्ञस्य दक्षिणा दक्षिणाख्या पत्नीव । सुदक्षिणेति प्रसिद्धा पत्न्यासीत् ॥ अत्र श्रुतिः-- " यज्ञो गन्धर्वस्तस्य दक्षिणाप्सरसः " इति ॥ " दक्षिणाया दाक्षिण्यं नामर्त्विजो दक्षिणत्वप्रापकत्वम् । ते दक्षन्ते दक्षिणा प्रतिगृह्य " इति श्रुतेः ॥

३२ ॥ कलत्रवन्तमिति । वसुधाधिपः । अवरोधेऽन्तःपुरवर्गे महति सत्यपि । मनस्विन्या दृढचित्तया । पतिचित्तानुवृत्त्यादिनिर्बन्धक्षमयेत्यर्थः । तया सुदक्षिणया लक्ष्म्या चात्मानं कलत्रवन्तं भार्यावन्तं मेने ॥ " कलत्रं श्रोणिभार्ययोः " इत्यमरः ॥ वसुधाधिप इत्यनेन वसुधया चेति गम्यते ॥

३३ ॥ तस्यामिति । स राजा । आत्मानुरूपायां तस्याम् । आत्मनो जन्म यस्यासावात्मजन्मा पुत्रः । तस्मिन्समुत्सुकः । यद्वा । आत्मनो जन्मनि पुत्ररूपेणोत्पत्तौ समुत्सुकः सन् ॥ " आत्मा वै पुत्रनामासि " इति श्रुतेः ॥ विलम्बितं फलं पुत्रप्राप्तिरूपं येषां तैर्मनोरथैः कदा मे पुत्रो भवेदित्याशाभिः कालं निनाय यापयामास ॥

३४ ॥ संतानेति । तेन दिलीपेन । संतानोऽर्थः प्रयोजनं यस्य तस्मै संतानार्थाय विधयेऽनुष्ठानाय । स्वभुजादवतारितावरोपिता जगतो लोकस्य गुर्वी धूर्भारः सचिवेषु निचिक्षिपे निहिता ॥

---

32. Though the inner-apartments of his palace were greatly crowded with damsels it was by reason of (his union with) this noble princess and also with the goddess of his kingly power, that the lord of the earth regarded himself as truly married.

33. Anxious to see the birth of a son from her who was (in every respect) worthy of himself, he passed his time in hopes the fulfilment (*lit.* the fruit) whereof was long delayed.

34. In order to perform some ceremony with a view to get issue, the heavy yoke of the world was taken down by him from his arms and laid on (thrown upon) his ministers.

---

33. I. reads this verse after the 26th stanza of our text.

34. B. C. महते सुतलाभाय for सन्तानार्थाय विधये. Cháritravardhana and Dinakara notice the reading. C. D. E. I. P. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vija., read the following spurious verse between 34 and 35. " गङ्गां भगीरथेनेव पूर्वेषां पावनक्षमाम् । ईप्सिता सन्ततिं न्यस्ता

अथाभ्यर्च्य विधातारं प्रयतौ पुत्रकाम्यया ।
तौ दंपती वशिष्ठस्य गुरोर्जग्मतुराश्रमम् ॥ ३५ ॥
स्निग्धगम्भीरनिर्घोषमेकं स्यन्दनमास्थितौ ।
प्रावृषेण्यं पयोवाहं विद्युदैरावताविव ॥ ३६ ॥
मा भूदाश्रमपीडेति परिमेयपुरःसरौ ।
अनुभावविशेषात्तु सेनापरिवृताविव ॥ ३७ ॥

३५ ॥ अथेति । अथ धुरोवतारणानन्तरं पुत्रकाम्ययात्मनः पुत्रेच्छया ॥ "काम्यच" इति पुत्रशब्दात्काम्यच्प्रत्ययः ॥ "अ प्रत्ययात्" इति पुत्रकाम्यधातोरकारप्रत्ययः ॥ ततष्टाप् ॥ तया तौ दंपती जायापती ॥ राजदन्तादिषु जायाशब्दस्य दमिति निपातनात्साधुः ॥ प्रयतौ पूतौ विधातारं ब्रह्माणमभ्यर्च्य ॥ "स खलु पुत्रार्थिभिरुपास्यते" इति मान्त्रिकाः ॥ गुरोः कुलगुरोर्वशिष्ठस्याश्रमं जग्मतुः । पुत्रप्राप्त्युपायापेक्षयेति शेषः ॥

३६ ॥ स्निग्धेति । स्निग्धो मधुरो गम्भीरो निर्घोषो यस्य तमेकं स्यन्दनं रथम् । प्रावृषि भवः प्रावृषेण्यः ॥ "प्रावृष एण्यः" इत्येण्यप्रत्ययः ॥ तं प्रावृषेण्यं पयोवाहं मेघं विद्युदैरावताविव । आस्थितावारूढौ । जग्मतुरिति पूर्वेण संबन्धः ॥ इरा आपः । "इरा भूवाक्सुराप्सु स्यात्" इत्यमरः ॥ इरावान्समुद्रः । तत्र भव ऐरावतोऽभ्रमातङ्गः । "अभ्रमातङ्गत्वाचाभ्रस्थत्वादभ्ररूपत्वात्" इति क्षीरस्वामी ॥ अत एव मेघारोहणं विद्युत्साहचर्यं च घटते । किं च विद्युत ऐरावतसाहचर्यादैरावती संज्ञा । ऐरावतस्य स्त्र्यैरावतीति क्षीरस्वामी ॥ तस्मात्सुष्ठूक्तं विद्युदैरावताविवेति ॥ एकरथारोहणोक्त्या कार्यसिद्धिबीजं दंपत्योरत्यन्तसौमनस्यं सूचयति ॥

३७ ॥ मा भूदिति । पुनः कथंभूतौ दंपती । आश्रमपीडा मा भून्मास्त्विति हेतोः ॥

35. After having worshipped the god Brahmá with the desire of getting a son, the self-controlled and purified (royal) couple started for the hermitage of वशिष्ठ —their spiritual preceptor.

36. They took their seat in the same (*lit.* one) car of a deep but agreeable rattle, like Lightning and Airávata riding (together) on an autumnal cloud.

37. There should not be any disturbance to (the peace of)

तेन मंत्रिषु कौशलाः ॥ " R. reads this between 33-34. [I. P. R. तेन न्यस्ता for न्यस्ता तेन. D. E. I. P. R. with Vija., इच्छता for ईप्सिता, and कोशलाः for कौशलाः]. L. R. omit the 34th verse of our text. L. omits the 35th verse of our text.

36. A. B. E. J. K. L. P. R. with Chà., Din., Val., Su., and Vija., एकस्यन्दनम् for एकं स्यन्दनम्. A. I. K. with Vija., आश्रितौ for आस्थितौ. Châritravardhana notices the reading.

37. B. E. I. K. L. R. with Val. Su., and Vija., °परिगतौ for °परिवृतौ.

सेव्यमानौ सुखस्पर्शैः शालनिर्यासगन्धिभिः ।
पुष्परेणूत्किरैर्वातैराधूतवनराजिभिः ॥ ३८ ॥
मनोभिरामाः शृण्वन्तौ रथनेमिस्वनोन्मुखैः ।
षड्जसंवादिनीः केका द्विधा भिन्नाः शिखण्डिभिः ॥ ३९ ॥

" माङि लुङ् इत्याशीरर्थे लुङ् " ॥ " न माङ्योगे " इत्यडागमनिषेधः ॥ परिमेयपुरःसरौ परिमितपरिवारौ । अनुभावविशेषात्तु तेजोविशेषात् सेनापरिवृताविव स्थितौ ॥

३८ ॥ सेव्यमानाविति । पुनः कथंभूतौ । सुखः शीतलत्वात्प्रियः स्पर्शो येषां तैः शालनिर्यासगन्धिभिः सर्जतरुनिष्पन्दगन्धवद्भिः ॥ " शालः सर्जतरुः स्मृतः " इति शाश्वतः ॥ उत्किरन्ति विक्षिपन्तीत्युत्किराः ॥ " इगुपध— " इत्यादिना किरतेः कप्रत्ययः ॥ पुष्परेणूनामुत्किरास्तैराधूता मांद्यादीषत्कम्पिता वनराजयो यैस्तैर्वातैः सेव्यमानौ ॥

३९ ॥ मनोभिरामा इति । रथनेमिस्वनोन्मुखैः मेघध्वनिशङ्कयोन्नमितमुखैरित्यर्थः । शिखण्डिभिर्मयूरैर्द्विधा भिन्नाः । शुद्धविकृतभेदेनाविष्कृतावस्थायां च्युताच्युतभेदेन वा षड्जो द्विविधः । तत्सादृश्यात्केका अपि द्विधा भिन्ना इत्युच्यते । अत एवाह षड्जसंवादिनीरिति । षड्भ्यः स्थानेभ्यो जातः षड्जः ॥ तदुक्तम्—" नासाकण्ठमुरस्तालु जिह्वादन्तांश्च संस्पृशन् । षड्भ्यः संजायते यस्मात्तस्मात्षड्ज इति स्मृतः " ॥ स च तन्त्रीकण्ठजन्मा स्वरविशेषः ॥ " निषादर्षभगान्धारषड्जमध्यमधैवताः । पञ्चमश्चेत्यमी सप्त तन्त्रीकण्ठोत्थिताः स्वराः " इत्यमरः ॥ षड्जेन संवादिनीः सदृशीः ॥ तदुक्तं मातङ्गेन—" षड्जं मयूरो वदति " इति ॥ मनोभिरामा मनसः प्रियाः । के मूर्ध्नि कायन्ति ध्वनन्तीति केका मयूरवाण्याः ॥ " केका वाणी मयूरस्य " इत्यमरः ॥ ताः केकाः शृण्वन्तौ । इति श्लोकार्थः ॥

---

the hermitage they, with a limited (number of) attendants, appeared as if surrounded by an army on account of the peculiar majesty of their mien (or bearing *i. e.* peculiarly dignified lustre).

38. (On their way) they were fanned (*lit.* served) by the breezes agreeable to the touch, fragrant with odorous exudation of शाल trees, wafting (or scattering) over the dust of the pollen of flowers, and by which the groves of forests were gently shaken.

39. They listen to the cries of (wild) peacocks having their heads up-lifted at the rattle of the car-wheels, which, being divided into two folds, were very charming to the mind and in conformity with the षड्ज air.

---

38. B. C. I. K. P. R. with Val., Su., and Vija., °उत्करैः for °उत्किरैः. Châritravardhana and Dinakara also notice the reading. After this verse I. P. R. read the 42, 45, 43, 39, 40, 41, 44 and 46 verses of our text. This appears to be the order of these Mss.

39. B. E. I. K. R. °खड्ग for °षड्ज.

परस्पराक्षिसादृश्यमदूरोज्झितवर्त्मसु ।
मृगद्वन्द्वेषु पश्यन्तौ स्यन्दनाबद्धदृष्टिषु ॥ ४० ॥
श्रेणीबन्धाद्वितन्वद्भिरस्तम्भां तोरणस्रजम् ।
सारसैः कलनिर्ह्रादैः क्वचिदुन्नमिताननौ ॥ ४१ ॥
पवनस्यानुकूलत्वात्प्रार्थनासिद्धिशंसिनः ।
रजोभिस्तुरगोत्कीर्णैरस्पृष्टालकवेष्टनौ ॥ ४२ ॥

४० ॥ परस्परेति । विश्रम्भाददूरं समीपं यथा भवति तथोज्झितं वर्त्म यैस्तेषु । स्यन्दनाबद्धदृष्टिषु कौतुकवशाद्रथासक्तदृष्टिषु । मृग्यश्च मृगाश्च मृगाः ॥ "पुमान्स्त्रिया" इत्येकशेषः ॥ तेषां द्वन्द्वेषु मिथुनेषु ॥ "स्त्रीपुंसौमिथुनं द्वन्द्वम्" इत्यमरः ॥ परस्पराक्ष्णां सादृश्यं पश्यन्तौ ॥ द्वन्द्वशब्दसामर्थ्यान्मृगीषु सुदक्षिणाक्षिसादृश्यं दिलीपः । दिलीपाक्षिसादृश्यं च मृगेषु सुदक्षिणा । इत्येवं विवेक्तव्यम् ॥

४१ ॥ श्रेणीति । श्रेणीबन्धात्पङ्क्तिबन्धनाद्धेतोरस्तम्भामाधारस्तम्भरहिताम् । तोरणं बहिर्द्वारम् ॥ "तोरणोऽस्त्री बहिर्द्वारम्" इत्यमरः ॥ तत्र या स्रग्विरच्यते तां तोरणस्रजं वितन्वद्भिः । कुर्वद्भिरिवेत्यर्थः । उत्प्रेक्षाव्यञ्जकेवशब्दप्रयोगाभावेऽपि गम्योत्प्रेक्षेयम् ॥ कलनिर्ह्रादैरव्यक्तमधुरध्वनिभिः सारसैः पक्षिविशेषैः करणैः । क्वचिदुन्नमिताननौ ॥ "सारसो मैथुनी कामी गोनर्दः पुष्कराह्वयः" इति यादवः ॥

४२ ॥ पवनस्येति । प्रार्थनासिद्धिशंसिनोऽनुकूलत्वादेव मनोरथसिद्धिसूचकस्य पवनस्यानुकूलत्वाद्गन्तव्यदिगभिमुखत्वात् । तुरगोत्कीर्णै रजोभिरस्पृष्टा अलका देव्या वेष्टनमुष्णीषश्च राज्ञो ययोस्तौ तथोक्तौ ॥ "शिरसा वेष्टनशोभिना सुतः" इति वक्ष्यति ॥

---

40. They beheld a (marked) similarity of each other's eyes in the pair of antelopes which had withdrawn to a little distance from the road and had fixed their gaze on the car.

41. In some place they were made to raise their heads (*lit.* faces) by the सारस cranes cackling melodiously (but unintelligible), who, from their arranging themselves in rows, (appeared to have) stretched a front-door-garland unsupported by pillars.

42. On account of the favourable-blowing of the wind betokening the fulfilment of their wish, they (two) were untouched in the hair and the turban by the dust raised up by (the hoofs of) their horses.

---

41. C. D. K. कलनिह्लादैः for कलनिर्ह्रादैः.

42. C. D. °सिद्धिशासिनः for °सिद्धिशंसिनः. L. omits 41st and 42nd verses.

सरसीष्वरविन्दानां वीचिविक्षोभशीतलम् ।
आमोदमुपजिघ्रन्तौ स्वनिःश्वासानुकारिणम् ॥ ४३ ॥
ग्रामेष्वात्मविसृष्टेषु यूपचिह्नेषु यज्वनाम् ।
अमोघाः प्रतिगृह्णन्तावर्घ्यानुपदमाशिषः ॥ ४४ ॥
हैयंगवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान् ।
नामधेयानि पृच्छन्तौ वन्यानां मार्गशाखिनाम् ॥ ४५ ॥

४३ ॥ सरसीष्विति । सरसीषु वीचिविक्षोभशीतलमूर्मिसंघट्टनेन शीतलं स्वनिःश्वासमनुकर्तुं शीलमस्येति स्वनिःश्वासानुकारिणम् । एतेन तयोरुत्कृष्टस्त्रीपुंसजातीयत्वमुक्तम् । अरविन्दानामामोदमुपजिघ्रन्तौ घ्राणेन गृह्णन्तौ ।

४४ ॥ ग्रामेष्विति । आत्मविसृष्टेषु स्वदत्तेषु । यूपो नाम संस्कृतः पशुबन्धाय दारुविशेषः । यूपा एव चिह्नानि येषां तेषु ग्रामेष्वमोघाः सफला यज्वनां विधिनेष्टवताम् ॥ " यज्वा तु विधिनेष्टवान् " इत्यमरः ॥ " सुयजोर्ङ्वनिप् " इति ङ्वनिप्प्रत्ययः ॥ आशिष आशीर्वादान् । अर्घः पूजाविधिः । तदर्थं द्रव्यमर्घ्यम् ॥ " पादार्घाभ्यां च " इति यत्प्रत्ययः ॥ " षट्टु त्रिष्वर्घ्यमर्घार्थे पाद्यं पादाय वारिणि " इत्यमरः ॥ अर्घ्यस्यानुपदमन्वक् । अर्घ्यस्वीकारानन्तरमित्यर्थः । प्रतिगृह्णन्तौ स्वीकुर्वन्तौ ॥ पदस्य पश्चादनुपदम् ॥ पश्चादर्थेऽव्ययीभावः ॥ " अन्वगन्वक्षमनुगेऽनुपदं क्लीबमव्ययम् " इत्यमरः ॥

४५ ॥ हैयंगवीनमिति । ह्यस्तनगोदोहोद्भवं घृतं हैयंगवीनम् ॥ ह्यः पूर्वेद्युः ॥ " तत्तु हैयंगवीनं यद्ध्योगोदोहोद्भवं घृतम् " इत्यमरः ॥ " हैयंगवीनं संज्ञायाम् " इति निपातः । तत्सद्योघृतमादायोपस्थितान्घोषवृद्धान् ॥ " घोष आभीरपल्ली स्यात् " इत्यमरः ॥ वन्यानां मार्गशाखिनां नामधेयानि पृच्छन्तौ ॥ ' दुह्याच् ' इत्यादिना पृच्छतेर्द्विकर्मकत्वम् ॥

---

43. They smelt the fragrance of the lotus-flowers in large lakes, cool by contact with ripples and imitating (*i. e.* resembling) their own breath.

44. They (*i. e.* the royal couple) reverentially accepted the efficacious (or infalliable) blessings after receiving the offerings of अर्घ्य of sacrificers in villages which were (previously) granted to them by themselves and which were conspicuous with their sacrificial posts.

45. They inquired about the names of the wild trees (standing) on (both sides of) the road to the old cow-herds who had come to them with fresh *ghee* (*lit.* having taken with them the newly-made ghee).

---

43. R. अपि° for उप°.
44. I. °निसृष्टेषु for °विसृष्टेषु. I. K. L. R. °वर्घान्° for °वर्घ्यान्°.
45. B. E. I. उपागतान् for उपस्थितान्.

काप्यभिख्या तयोरासीद्व्रजतोः शुद्धवेषयोः ।
हिमनिर्मुक्तयोर्योगे चित्राचन्द्रमसोरिव ॥ ४६ ॥
तत्तद्भूमिपतिः पत्न्यै दर्शयन्प्रियदर्शनः ।
अपि लङ्घितमध्वानं बुबुधे न बुधोपमः ॥ ४७ ॥
स दुष्प्रापयशाः प्रापदाश्रमं श्रान्तवाहनः ।
सायं संयमिनस्तस्य महर्षेर्महिषीसखः ॥ ४८ ॥
वनान्तरादुपावृत्तैः समित्कुशफलाहरैः ।
पूर्यमाणमदृश्याग्निप्रत्युद्यातैस्तपस्विभिः ॥ ४९ ॥

४६ ॥ कापीति । व्रजतोर्गच्छतोः शुद्धवेषयोरुज्ज्वलनेपथ्ययोस्तयोः सुदक्षिणादिलीपयोः । हिमनिर्मुक्तयोश्चित्राचन्द्रमसोरिव । योगे सति काप्यनिर्वाच्याभिख्या शोभासीत् ॥ "अभिख्या नामशोभयोः" इत्यमरः ॥ "आतश्चोपसर्गे" इत्यङ्प्रत्ययः ॥ चित्रा नक्षत्रविशेषः । शिशिरापगमे चैत्र्यां चित्रापूर्णचन्द्रमसोरिवेत्यर्थः ॥

४७ ॥ तत्तदिति । प्रियं दर्शनं स्वकर्मकं यस्यासौ प्रियदर्शनः । दर्शनीय इत्यर्थः । भूमिपतिः पत्न्यै तत्तदद्भुतं वस्तु दर्शयँल्लङ्घितमतिवाहितमप्यध्वानं न बुबुधे न ज्ञातवान् । बुधः सौम्य उपमोपमानं यस्येति विग्रहः ॥ इदं विशेषणं तत्तद्दर्शयन्नित्युपयोगितयैतस्य ज्ञातृत्वसूचनार्थम् ॥

४८ ॥ स इति । दुष्प्रापयशा दुष्प्रापमन्यदुर्लभं यशो यस्य स तथोक्तः । श्रान्तवाहनो दूरोपगमात्क्लान्तयुग्यः । महिष्याः सखा महिषीसखः ॥ "राजाहःसखिभ्यष्टच्" इति टच्प्रत्ययः ॥ सहायान्तरनिरपेक्ष इति भावः । स राजा सायं सायंकाले संयमिनो नियमवतस्तस्य महर्षेर्वशिष्टस्याश्रमं प्रापत्प्राप ॥ पुषादित्वादङ् ॥

४९ ॥ तमाश्रमं विशिनष्टि ॥ वनान्तरादिति । वनान्तरादन्यस्माद्वनादुपावृत्तैः प्रत्यागतैः । समिधश्च कुशांश्च फलानि चाहर्तुं शीलं येषामिति समित्कुशफलाहराः ।

---

46. Invested with a peculiar (or indescribable) beauty and with a bright dress they, on their journey, looked like the (star) चित्रा and the Moon in their conjunction when freed from the frost.

47. That lord of the earth of agreeable appearance, who looked like बुध, and who was showing to his wife (now) this and (now) that, was not even conscious (of the length) of the road he had passed.

48. At last towards the close of day, that king of unattainable glory, arrived with his queen and with the horses fatigued, at the hermitage of the great sage who practised religious observances.

49. The hermitage which was (at the time) being filled up

---

46. K. P. अभिक्षा for अभिख्या.

49. B. C. D. E. L. P. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vija., स्कन्धासक्तसमित्कुशैः for समित्कुशफलाहरैः. Châritravardhana explains it as,

आकीर्णमृषिपत्नीनामुटजद्वाररोधिभिः ।
अपत्यैरिव नीवारभागधेयोचितैर्मृगैः ॥ ५० ॥

सेकान्ते मुनिकन्याभिस्तत्क्षणोज्झितवृक्षकम् ।
विश्वासाय विहंगानामालवालाम्बुपायिनाम् ॥ ५१ ॥

तैः ॥ " आङि ताच्छील्ये " इति हरतेराङ्पूर्वादिच्प्रत्ययः ॥ अदृश्यैर्दर्शनायोग्यैरग्निभिर्वैतानिकैः प्रत्युद्याताः प्रत्युद्गताः । तैस्तपस्विभिः पूर्यमाणम् ॥ "प्रोष्यागच्छतामाहिताग्नीनामग्नयः प्रत्युद्यान्ति " इति श्रुतेः ॥ यथाह—" कामं पितरं प्रोषितवन्तं पुत्राः प्रत्याधावन्ति । एवं ह वा एतमग्नयः प्रत्याधावन्ति सशाकलान्दारूनिवाहरन् " इति ॥ यथैव तत्पुत्रेभ्य आहरन्निति । तादृगेति विज्ञायते ॥

५० ॥ आकीर्णमिति । नीवाराणां भाग एव भागधेयोंऽशः ॥ " रूपनामभागेभ्यो धेयः " इति धेयप्रत्ययो वक्तव्य इति स्वार्थिके धेयप्रत्ययः ॥ तस्योचितैः ॥ अत एवोटजानां पर्णशालानां द्वाररोधिभिर्द्वाररोधकैर्मृगैः । ऋषिपत्नीनामपत्यैरिव । आकीर्णं व्याप्तम् ॥

५१ ॥ सेकान्त इति । सेकान्ते वृक्षमूलसेचनावसाने मुनिकन्याभिः । सेक्त्रीभिः आलवालेषु जलावापदेशेषु यदम्बु तत्पायिनाम् ॥ "स्यादालवालमावालमावापः" इत्यमरः ॥ विहंगानां पक्षिणां विश्वासाय विश्रम्भाय ॥ " समौ विश्रम्भविश्वासौ " इत्यमरः ॥ तत्क्षणे सेकक्षण उज्झिता वृक्षका बालवृक्षा यस्मिंस्तम् ॥ अल्पार्थे कप्रत्ययः ॥

---

by hermits who had returned from other (parts of the) forests bringing with them sacrificial wood, कुश grass, and fruits, and who were welcomed by their invisible holy fires.

50. The hermitage which was (at the time) being crowded with the (domesticated) deer blocking up the doors of the huts and which were accustomed to (eat) a part of the नीवार corn, like children of the wives of the sages.

51. The hermitage in which the young plants had been left by the *Munis'* daughters the moment after watering them for inspiring confidence in the birds which drank the water from the basins (at the foot of the shrubs.)

" समिधश्च कुशाश्च समित्कुशं स्कन्धासक्तमंसं न्यस्तं समित्कुशमेषां तैः ". B. D. L. P. with Val., Su., and Vija., "अग्निप्रत्युद्गमात्पूतैः पूर्यमाणं तपस्विभिः " for the second half of the stanza. Between 49-50 B. P. with Su., read " आकीर्यमाणमामन्त्रविधिभिः समिधाहरैः । वैखानसैरदृश्याग्निप्रत्युद्गमनवृत्तिभिः " ॥

51. D. L. विविक्तीकृतवृक्षकम् for तत्क्षणोज्झितवृक्षकम्. Chāritravardhana and Dinakara notice the reading.

आतपात्ययसंक्षिप्तनीवारासु निषादिभिः ।
मृगैर्वर्तितरोमन्थमुटजाङ्गनभूमिषु ॥ ५२ ॥
अभ्युत्थिताग्निपिशुनैरतिथीनाश्रमोन्मुखान् ।
पुनानं पवनोद्धूतैर्धूमैराहुतिगन्धिभिः ॥ ५३ ॥
अथ यन्तारमादिश्य धुर्यान्विश्रमयेति सः ।
तामवारोपयत्पत्नीं रथादवततार च ॥ ५४ ॥

५२ ॥ आतपात्ययेति । आतपस्यात्ययेऽपगमे सति संक्षिप्ता राशीकृता नीवारास्तृणधान्यानि यासु तासु ॥ "नीवारास्तृणधान्यानि" इत्यमरः ॥ "उटजानां पर्णशालानामङ्गनभूमिषु चत्वरस्थानेषु ॥ "पर्णशालोटजोऽस्त्रियाम्" इति ॥ "अङ्गनं चत्वराजिरे" इति चामरः ॥ निषादिभिरुपविष्टैर्मृगैर्वर्तितो निष्पादितो रोमन्थश्चर्वितचर्वणं यस्मिन्नाश्रमे तम् ॥

५३ ॥ अभ्युत्थितेति । अभ्युत्थिताः प्रज्वलिताः । होमयोग्या इत्यर्थः ॥ "समिद्धेऽग्नावाहुतीर्जुहोति" इति वचनात् ॥ तेषामग्नीनां पिशुनैः सूचकैः पवनोद्धूतैः । आहुतिगन्धो येषामस्तीत्याहुतिगन्धिनः । तैर्धूमैराश्रमोन्मुखानतिथीन्पुनानं पवित्रीकुर्वाणम् ॥

५४ ॥ अथेति । अथाश्रमप्राप्त्यनन्तरं स राजा यन्तारं सारथिम् । धुरं वहन्तीति धुर्या युग्याः ॥ "धुरो यड्ढकौ" इति यत्प्रत्ययः ॥ "धूर्वहे धुर्यधौरेयधुरीणाः सधुरंधराः" इत्यमरः ॥ धुर्यान्रथाश्वान्विश्रमय विनीतश्रमान्कुर्वित्यादिश्याज्ञाप्य । तां पत्नीं रथादवारोपयदवतारितवान्स्वयं चाववतार ॥

---

52. The hermitage where, after the sunset, the नीवार corn had been collected in heaps and where the antelopes sitting on the court-yard-grounds of the huts had done their rumination.

53. The hermitage where the volumes of smoke thrown up by the breeze and betokening the blazing (*lit.* mounting or rising) flames and odorous with the sacrificial offerings, sanctified the (royal) guests who were about to enter (it).

54. Then having ordered the charioteer to tend (*lit.* to give rest to) the yoked horses, the king alighted from the car and also helped the queen to alight.

---

52. D. C. आतमापाय° for आतपात्यय°. I. J. P. R. अङ्गण° for अङ्गन°.

53. B. I. L. P. with Chà., Din., Val., and Vija., अभ्युद्धताग्निपिशुनैः, C. with Su, अभ्युत्थानाग्निपिशुनैः for अभ्युत्थिताग्निपिशुनैः.

54. A. C. D. E. L. P. with Chà., Din., Val., and Su., विश्रामय for विश्रमय. The northern Mss. of Mallinátha's commentary also explain the reading of these commentators. They read,—"विश्रामय" इति दीर्घ पाठे । "मितां ह्रस्वः" इति सूत्रे "वा चित्तविरागे" इत्यतो 'वा' इत्यनुवर्त्य व्यवस्थित विभाषाश्रयणत्वाद्ध्रस्वाभावः इति वृत्तिकारः" ॥ Vijayaga*n*i agrees with Mallinátha. A. C. L. अवारोहयत् for अवारोपयत्. Chàritravardhana also notices the reading of A. C. L. Mss. D. अवरुरोह for अवततार.

तस्मै सभ्याः सभार्याय गोप्त्रे गुप्ततमेन्द्रियाः ।
अर्हणामर्हते चक्रुर्मुनयो नयचक्षुषे ॥ ५५ ॥
विधेः सायंतनस्यान्ते स ददर्श तपोनिधिम् ।
अन्वासितमरुंधत्या स्वाहयेव हविर्भुजम् ॥ ५६ ॥
तयोर्जगृहतुः पादान्राजा राज्ञी च मागधी ।
तौ गुरुर्गुरुपत्नी च प्रीत्या प्रतिननन्दतुः ॥ ५७ ॥

५५ ॥ तस्मा इति । सभायां साधवः सभ्याः ॥ "सभाया यः" इति यप्रत्ययः ॥ गुप्ततमेन्द्रिया अत्यन्तनियमितेन्द्रिया मुनयः सभार्याय गोप्त्रे रक्षकाय । नयः शास्त्रमेव चक्षुस्तत्त्वावेदकं प्रमाणं यस्य तस्मै नयचक्षुषे । अत एवार्हते प्रशस्ताय । पूज्यायेत्यर्थः ॥ "अर्हः प्रशंसायाम्" इति शतृप्रत्ययः ॥ तस्मै राज्ञेऽर्हणां पूजां चक्रुः ॥ "पूजा नमस्यापचितिः सपर्यार्चार्हणाः समाः" इत्यमरः ॥

५६ ॥ विधेरिति । स राजा सायंतनस्य सायंभवस्य ॥ "सायंचिरम्"—इत्यादिना ट्युल्प्रत्ययः ॥ विधेर्जपहोमाद्यनुष्ठानस्यान्तेऽवसानेऽरुंधत्यान्वासितं पश्चादुपवेशनेनोपासितम् । कर्मणि क्तः । उपसर्गवशात्सकर्मकत्वम् । अन्वास्यैनामित्यादिवदुपपद्यते ॥ तपोनिधिं वशिष्ठम् । स्वाहया स्वाहादेव्या ॥ "अथाग्नायी स्वाहा च हुतभुक्प्रिया" इत्यमरः ॥ अन्वासितं हविर्भुजमिव । ददर्श ॥ "समित्पुष्पकुशाग्न्यम्बुमृदन्नाक्षतपाणिकः । जपं होमं च कुर्वाणो नाभिवाद्यो द्विजो भवेत्" । इत्यनुष्ठानस्य मध्येऽभिवादननिषेधाद्विधेरन्ते ददर्शेत्युक्तम् ॥ अन्वासितं चात्र पतिव्रताधर्मत्वेनोक्तं न तु कर्माङ्गत्वेन । विधेरन्त इति कर्मणः समाप्त्यभिधानात् ॥

५७ ॥ तयोरिति । मागधी मगधराजपुत्री राज्ञी सुदक्षिणा राजा च तयोररुंधतीवशिष्ठयोः पादाञ्जगृहतुः । पादग्रहणमभिवादनम् । गुरुपत्नी गुरुश्च । कर्तारौ । सा च स च तौ सुदक्षिणादिलीपौ कर्मभूतौ प्रीत्या हर्षेण प्रतिननन्दतुः । आशीर्वादादिभिः संभावयांचक्रतुरित्यर्थः ॥

---

55. The polite *Munis*, who were pre-eminent in the virtue of self-control, gave a respectful welcome to him who so (richly) deserved, who was in company with his queen, who was the protector (of his subjects), and who had an eye having political foresight.

56. At the conclusion of vespertine rites, he, like the god अग्नि attended on by (his wife) स्वाहा, saw the holy sage (*lit.* the treasure of asceticism) with अरुन्धती made to take her seat after him (or along side of him).

57. Both the king and the queen the daughter of the Magadha king touched (*i. e.* greeted) their feet ; and the preceptor and his wife too (in their turn) gave a loving welcome to them.

---

56. D. E. L. अन्वासितम्, I. अध्यासितम् for अन्वासितम्.
57. C. with Chāritravardhana पादौ for पादान्.

तमातिथ्यक्रियाशान्तरथक्षोभपरिश्रमम् ।
पप्रच्छ कुशलं राज्ये राज्याश्रममुनिं मुनिः ॥ ५८ ॥

अथाथर्वनिधेस्तस्य विजितारिपुरः पुरः ।
अर्थ्यामर्थपतिर्वाचमाददे वदतां वरः ॥ ५९ ॥

५८ ॥ तमिति । मुनिः । अतिथ्यर्थमातिथ्यम् ॥ "अतिथेर्ञ्यः" इति ञ्यप्रत्ययः॥ आतिथ्यस्य क्रिया । तया शान्तो रथक्षोभेण यः परिश्रमः स यस्य स तं तथोक्तम् । राज्यमेवाश्रमस्तत्र मुनिम् । मुनितुल्यमित्यर्थः । तं दिलीपं राज्ये कुशलं पप्रच्छ ॥ पृच्छतेस्तु द्विकर्मकत्वमित्युक्तम् ॥ यद्यपि राज्यशब्दः पुरोहितादिष्वन्तर्गतत्वाद्राजकर्मवचनः । तथाप्यत्र सप्ताङ्गवचनः । " उपपन्नं ननु शिवं सप्तस्वङ्गेषु " इत्युत्तरविरोधात् ॥ तथाह मनुः—" स्वाम्यमात्यपुरं राष्ट्रं कोशदण्डौ तथा सुहृत् । सप्तैतानि समस्तानि लोकेऽस्मिन्राज्यमुच्यते " इति ॥ तत्र ॥ " ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत्क्षत्रबन्धुमनामयम् । वैश्यं क्षेमं समागम्य शूद्रमारोग्यमेव च " ॥ इति मनुवचने सत्यपि तस्य राज्ञो महानुभावत्वाद्ब्राह्मणोचितः कुशलप्रश्न एव कृत इत्यनुसंधेयम् । अत एवोक्तं ' राज्याश्रममुनिम् ' इति ॥

५९ ॥ अथेति । अथ प्रश्नानन्तरं विजितारिपुरो विजितशत्रुनगरो वदतां वक्तॄणां वरः श्रेष्ठः ॥ " यतश्च निर्धारणम् " इति षष्ठी ॥ अर्थपती राजाथर्वणोऽथर्ववेदस्य निधेस्तस्य मुनेः पुरोऽग्रेऽर्थ्यामर्थादनपेताम् ॥ " धर्मपथ्यर्थन्यायादनपेते " इति यत्प्रत्ययः ॥ वाचमाददे । वक्तुमुपक्रान्तवानित्यर्थः ॥ अथर्वनिधेरित्यनेन पुरोहितकृत्याभिज्ञत्वात्प्रकृतकार्यनिर्वाहकत्वं मुनेरस्तीति सूच्यते ॥ यथाह कामन्दकः— " त्रय्यां च दण्डनीत्यां च कुशलः स्यात्पुरोहितः । अथर्वविहितं कुर्यान्नित्यं शान्तिकपौष्टिकम् " इति ॥

---

58. The sage asked him whether it fared well with his kingdom, who was the *Muni* of the hermitage in the form of the kingdom and whose fatigue caused by the joltings of the car had been relieved by the hospitable treatment (or reception).

59. Then the lord of wealth, the best of the eloquent and by whom the enemies' cities were conquered, spoke in words replete with sense before that repository of the Atharva Veda.

---

58. C. आतिथेयस्तमातिथ्यविनीताङ्गपरिश्रमम्, I. आतिथेयस्तमातिथ्यविनीताध्वपरिश्रमम्, B. L. आतिथेयस्तमातिथ्यं विनीताध्वपरिश्रमम् for the first half, supported by Cháritravardhana, Dinakara and Sumativijaya, who say, अतिथौ साधुरातिथेयः स मुनिर्वशिष्ठः । आतिथ्यं अतिथिरेवातिथ्यं ॥ " अतिथेर्ञ्यः " ॥ V-4-26. इति स्वार्थे ञ्यः प्रत्ययः ॥

59. D. L. with Su.. अथर्वविदः for अथर्वनिधेः. D. P. °पुरःसरः for °पुरः पुरः. L. reads first the 60th verse and then the 59th of our text.

उपपन्नं ननु शिवं सप्तस्वङ्गेषु यस्य मे ।
दैवीनां मानुषीणां च प्रतिहर्ता त्वमापदाम् ॥ ६० ॥
तव मन्त्रकृतो मन्त्रैर्दूरात्प्रशमितारिभिः ।
प्रत्यादिश्यन्त इव मे दृष्टलक्ष्यभिदः शराः ॥ ६१ ॥
हविरावर्जितं होतस्त्वया विधिवदग्निषु ।
वृष्टिर्भवति शस्यानामवग्रहविशोषिणाम् ॥ ६२ ॥

६० ॥ उपपन्नमिति । हे गुरो । सप्तस्वङ्गेषु स्वाम्यमात्यादिषु ॥ "स्वाम्यमात्यसुहृत्कोशराष्ट्रदुर्गबलानि च । सप्ताङ्गानि" इत्यमरः ॥ शिवं कुशलमुपपन्नं ननु युक्तमेव । नन्ववधारणे ॥ "प्रश्नावधारणानुज्ञानुनयामन्त्रणे ननु" इत्यमरः ॥ कथमित्यत्राह—यस्य मे दैवीनां देवेभ्य आगतानां दुर्भिक्षादीनां मानुषीणां मनुष्येभ्य आगतानां चौरभयादीनाम् ॥ उभयत्रापि "तत आगतः" इत्यण् ॥ "टिड्ढाणञ्—" इत्यादिना ङीप् ॥ आपदां व्यसनानां त्वं प्रतिहर्ता वारयितासि ॥ अत्राह कामन्दकः—"हुताशनो जलं व्याधिर्दुर्भिक्षं मरणं तथा । इति पञ्चविधं दैवं मानुषं व्यसनं ततः । आयुक्तकेभ्यश्चौरेभ्यः परेभ्यो राजवल्लभात् । पृथिवीपतिलोभाच्च नराणां पञ्चधामतम्" इति ॥

६१ ॥ तत्र मानुषापत्प्रतीकारमाह ॥ तवेति । मन्त्रान्कृतवान्मन्त्रकृत् ॥ "सुकर्मपापमन्त्रपुण्येषु कृञः" इति क्विप् ॥ तस्य दूरात्परोक्ष एव प्रशमितारिभिर्मन्त्रकृतो मन्त्राणां स्रष्टुः प्रयोक्तुर्वा तव मन्त्रैः । कर्तृभिः । दृष्टं प्रत्यक्षं यल्लक्ष्यं तन्मात्रं भिन्दन्तीति दृष्टलक्ष्यभिदो मे शराः प्रत्यादिश्यन्त इव । वयमेव समर्थाः किमेभिः पिष्टपेषकैरिति निराक्रियन्त इव । इत्युत्प्रेक्षा ॥ "प्रत्यादेशो निराकृतिः" इत्यमरः ॥ त्वन्मन्त्रसामर्थ्यादेव नः पौरुषं फलतीति भावः ॥

६२ ॥ संप्रति दैविकापत्प्रतीकारमाह ॥ हविरिति । हे होतस्त्वया विधिवदग्निष्वावर्जितं प्रक्षिप्तं हविराज्यादिकम् । कर्तृ । अवग्रहो वर्षप्रतिबन्धः ॥ "अवे

---

60. As long as you (are able to) avert (all) my dangers, either human or divine, so long prosperity is sure to reign in (all) the seven departments of my state.

61. You are yourself a composer of the *Mantras* (or hymns of the Veda), and my arrows which can pierce only visible marks are, as it were, driven back (*i. e.* rendered useless) by those *Mantras* of yours that (are able to) thwart my enemies from a distance.

62. The holy offerings that you, O sacrificer, pour, according

---

60. D. I. L. with Chá., and Din., प्रतिहन्ता, B. प्रतिकर्ता for प्रतिहर्ता.

61. B. E. K. L. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vija., संशमितारिभिः, C. संयमितारिभिः for प्रशमितारिभिः.

62. C. L. with Châ., Din., Val., Su., and Vija., वृष्ट्यै for वृष्टिः. Châritravardhana says,—"तादर्थ्ये चतुर्थी."

पुरुषायुषजीविन्यो निरातङ्का निरीतयः ।
यन्मदीयाः प्रजास्तस्य हेतुस्त्वद्ब्रह्मवर्चसम् ॥ ६३ ॥
त्वयैवं चिन्त्यमानस्य गुरुणा ब्रह्मयोनिना ।
सानुबन्धाः कथं न स्युः संपदो मे निरापदः ॥ ६४ ॥
किं तु वध्वां तवैतस्यामदृष्टसदृशप्रजम् ।
न मामवति सद्वीपा रत्नसूरपि मेदिनी ॥ ६५ ॥

ग्रहो वर्षप्रतिबन्धे " इत्यप्प्रत्ययः ॥ " वृष्टिर्वर्षं तद्विघातेऽवग्राहावग्रहौ समौ " इत्यमरः ॥ तेन विशोषिणां विशुष्यतां शस्यानां वृष्टिर्भवति । वृष्टिरूपेण शस्यान्युपजीवयतीति भावः ॥ अत्र मनुः—" अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते । आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः " इति ॥

६३ ॥ पुरुषेति । आयुर्जीवितकालः । पुरुषस्यायुः पुरुषायुषम् । वर्षशतमित्यर्थः ॥ " शतायुर्वै पुरुषः " इति श्रुतेः ॥ " अचतुर— " आदिसूत्रेणाच्प्रत्ययान्तो निपातः ॥ मदीयाः प्रजाः । पुरुषायुषं जीवन्तीति पुरुषायुषजीविन्यः । निरातङ्का निर्भयाः ॥ " आतङ्को भयमाशङ्का " इति हलायुधः ॥ निरीतयोऽतिवृष्ट्यादिरहिता इति यत्तस्य सर्वस्य त्वद्ब्रह्मवर्चसं तव व्रताध्ययनसंपत्तिरेव हेतुः ॥ " व्रताध्ययनसंपत्तिरित्येतद्ब्रह्मवर्चसम् " इति हलायुधः ॥ ब्रह्मणो वर्चो ब्रह्मवर्चसम् ॥ " ब्रह्महस्तिभ्यां वर्चसः " इत्यच्प्रत्ययः ॥ " अतिवृष्टिरनावृष्टिर्मूषिकाः शलभाः शुकाः । अत्यासन्नाश्च राजानः षडेता ईतयः स्मृताः " इति कामन्दकः ॥

६४ ॥ त्वयेति । ब्रह्मा योनिः कारणं यस्य तेन ब्रह्मपुत्रेण गुरुणा त्वयैवमुक्तप्रकारेण चिन्त्यमानस्यानुध्यायमानस्य । अत एव निरापदो व्यसनहीनस्य मे संपदः सानुबन्धाः सानुस्यूतयः । अविच्छिन्ना इति यावत् । कथं न स्युः । स्युरेवेत्यर्थः ॥

६५ ॥ संप्रत्यागमनप्रयोजनमाह ॥ किंत्विति । किं तु तवैतस्यां वध्वां स्नुषायाम् ॥ " वधूर्जाया स्नुषा चैव " इत्यमरः ॥ अदृष्टा सदृश्यनुरूपा प्रजा येन तं

---

to the rule, on the sacrificial fire, become converted into rain for (nourishing) the crops that are parched up by drought.

63. That my subjects live to the full extent of man's life, or that they are free from fears and from social calamities, are (all) owing to the influence of your meritorious act of austerity and learning.

64. How could the fortunes of me, who am free from miseries, be not in a state of continued prosperity, whose interests are being taken care of by yourself—one who is descended from ब्रह्मा.

65. But the (sovereignty of) earth, with all its produce of gems, and with all its continents, does not give me any comfort,

---

63. B. C. E. I. K. L. P. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vija., तत्र for तस्य. K. तन्मदीयाः for यन्मदीयाः.

नूनं मत्तः परं वंश्याः पिण्डविच्छेददर्शिनः ।
न प्रकामभुजः श्राद्धे स्वधासंग्रहतत्पराः ॥ ६६ ॥
मत्परं दुर्लभं मत्वा नूनमावर्जितं मया ।
पयः पूर्वैः स्वनिःश्वासैः कवोष्णमुपभुज्यते ॥ ६७ ॥
सोऽहमिज्याविशुद्धात्मा प्रजालोपनिमीलितः ।
प्रकाशश्चाप्रकाशश्च लोकालोक इवाचलः ॥ ६८ ॥

मां सद्वीपापि । रत्नानि सूयत इति रत्नसूरपि ॥ "सत्सूद्विष—" इत्यादिना क्विप् ॥ मेदिनी नावति न प्रीणाति ॥ अवधातू रक्षणगतिप्रीत्याद्यर्थेषूपदेशादत्र प्रीणने । रत्नसूरपीत्यनेन सर्वरत्नेभ्यः पुत्ररत्नमेव श्लाघ्यमिति सूचितम् ॥

६६ ॥ नूनमिति । मत्तः परं मदनन्तरम् ॥ "पञ्चम्यास्तसिल्" ॥ पिण्डविच्छेददर्शिनः पिण्डदानविच्छेदमुत्प्रेक्षमाणाः । वंशे भवा वंश्याः पितरः ॥ स्वधेत्यव्ययं पितृभोज्ये वर्तते । तस्याः संग्रहे तत्परा आसक्ताः सन्तः श्राद्धे पितृकर्मणि ॥ "पितृदानं निवापः स्याच्छ्राद्धं तत्कर्म शास्त्रतः" इत्यमरः ॥ प्रकामभुजः पर्याप्तभोजिनो न भवन्ति नूनं सत्यम् ॥ "कामं प्रकामं पर्याप्तम्" इत्यमरः ॥ निर्धना ह्यापद्धनं कियदपि संगृह्णन्तीति भावः ॥

६७ ॥ मत्परमिति । मत्परं मदनन्तरम् ॥ "अन्यारात्—" इत्यादिना पञ्चमी । दुर्लभं दुर्लभ्यं मत्वा मयावर्जितं दत्तं पयः पूर्वैः पितृभिः स्वनिःश्वासैर्दुःखजैः कवोष्णमीषदुष्णं यथा तथोपभुज्यते ॥ नूनमिति तर्के ॥ कवोष्णमिति कुशब्दस्य कवादेशः ॥ "कोष्णं कवोष्णं मन्दोष्णं कदुष्णं त्रिषु तद्वति" इत्यमरः ॥

६८ ॥ सोहमिति । इज्या यागः ॥ "व्रजयजोर्भावे क्यप्" इति क्यप्प्रत्ययः ॥ इ-

---

seeing that I am denied the pleasure of beholding worthy issue, from this your daughter-in-law.

66. Methinks ! my ancestors, apprehending the (total) cessation of the पिण्ड offerings after my death, do not (now) eat to their heart's content at श्राद्ध ceremony, in their anxiety to store up the स्वधा food (as a provision for the future).

67. Methinks ! those ancestors of mine are drinking the libations of water offered by me, made tepid by their sighs, at the thought of its difficult to be found after my death.

68. Therefore, though my soul is brightened (*lit.* purified) by the performance of sacrifices to the Gods, yet obscured by the

---

67. B. E. K. R. with Val., Su., and Vija., पयः पूर्वे सनिःश्वासं कवोष्णमुपभुञ्जते, C. P. पयः पूर्वैः सनिःश्वासं कवोष्णमुपभुज्यते, D. with Cha., and Din., पयः पूर्वे स्वनिःश्वासैः कवोष्णमुपभुञ्जते, I. पयः पूर्वे सनिःश्वासं कदुष्णमुपभुञ्जते for पयः पूर्वैः स्वनिःश्वासैः कवोष्णमुपभुज्यते. P. R. read first the 67th verse and then the 66th of our text.

68. B. C. E. I. K. R. with Val., Su., and Vija., अन्धकारः for अप्रकाशः.

लोकान्तरसुखं पुण्यं तपोदानसमुद्भवम् ।
संततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेह च शर्मणे ॥ ६९ ॥
तया हीनं विधातर्मां कथं पश्यन्न दूयसे ।
सिक्तं स्वयमिव स्नेहाद्वन्ध्यमाश्रमवृक्षकम् ॥ ७० ॥
असह्यपीडं भगवन्नृणमन्त्यमवेहि मे ।
अरुंतुदमिवालानमनिर्वाणस्य दन्तिनः ॥ ७१ ॥

ज्यया विशुद्धात्मा विशुद्धचेतनः प्रजालोपेन संतत्यभावेन निमीलितः कृतमीलनः सोऽहम् । लोक्यत इति लोकः । न लोक्यत इत्यलोकः । लोकश्चासावलोकश्चेति लोकालोकश्चक्रवालोऽचल इव ॥ "लोकालोकश्चक्रवालः" इत्यमरः ॥ प्रकाशत इति प्रकाशश्च देवर्णविमोचनात् । न प्रकाशत इत्यप्रकाशश्च पितृणाविमोचनात् ॥ पचाद्यच् ॥ अस्मीति शेषः । लोकालोकोऽप्यन्तः सूर्यसंपर्काद्बहिस्तमोव्याप्त्या च प्रकाशश्चाप्रकाशश्चेति मन्तव्यम् ॥

६९ ॥ ननु तपोदानादिसंपन्नस्य किमपत्यैरित्यत्राह ॥ लोकान्तरेति । समुद्भवत्यस्मादिति समुद्भवः कारणम् । तपोदाने समुद्भवो यस्य तत्तपोदानसमुद्भवं यत्पुण्यं तल्लोकान्तरे परलोके सुखं सुखकरम् । शुद्धवंशे भवा शुद्धवंश्या संततिर्हि परत्र परलोक इह च लोके शर्मणे सुखाय ॥ "शर्मशातसुखानि च" इत्यमरः ॥ भवतीति शेषः ॥

७० ॥ तयेति । हे विधातः स्रष्टः । तया संतत्या हीनमनपत्यं माम् । स्नेहात्प्रेम्णा स्वयमेव सिक्तं जलसेकेन वर्धितं वन्ध्यमफलम् ॥ "वन्ध्योऽफलोऽवकेशी च" इत्यमरः ॥ आश्रमस्य वृक्षकं वृक्षपोतमिव । पश्यन्कथं न दूयसे न परितप्यसे ॥ विधातरित्यनेन समर्थोऽप्युपेक्षस इति गम्यते ॥

७१ ॥ असह्येति । हे भगवन्मे ममान्त्यमृणं । पैतृकमृणम् । अनिर्वाणस्य

---

extinction of the race, I am both shining and dark, like the mountain लोकालोक.

69. The merit arising from asceticism and alms-giving procures felicity only in the next world, while offspring born of a pure family (origin) are for happiness both here and hereafter.

70. How is it ! O venerable father ! that you are not pained to see me devoid of that blessing—as you would (surely) be (when you behold) a young plant that has been personally watered by you through affection of this hermitage, failing to produce any fruit (in a proper season) ?

71. Be it known to you, venerable sage, that these last of my

---

69. D. °वंशास्तु, P. °वंशा हि for °वंश्या हि.

70. B. C. I. K. P. R. with Val., and Vija., वितानम्, D. L. with Châ., Din., and Su., विनेतर् for विधातर्. C. D. E. J. L. P. with Châ., and Din., °पादपम for °वृक्षकम.

71. D. with Su., and Vija., ऋणबन्धम् for ऋणमन्त्यम्. D. L. P.

तस्मान्मुच्ये यथा तात संविधातुं तथार्हसि ।
इक्ष्वाकूणां दुरापेऽर्थे त्वदधीना हि सिद्धयः ॥ ७२ ॥
इति विज्ञापितो राज्ञा ध्यानस्तिमितलोचनः ।
क्षणमात्रमृषिस्तस्थौ सुप्तमीन इव ह्रदः ॥ ७३ ॥
सोऽपश्यत्प्रणिधानेन संततेः स्तम्भकारणम् ।
भावितात्मा भुवो भर्तुरथैनं प्रत्यबोधयत् ॥ ७४ ॥

मज्जनरहितस्य ॥ "निर्वाणं निर्वृतौ मोक्षे विनाशे गजमज्जने" इति यादवः ॥ दन्तिनो गजस्य । अरुर्मर्म तुदतीत्यरुंतुदं मर्मस्पृक् ॥ "व्रणोऽस्त्रियामीर्ममरुः" इति । "अरुंतुदस्तु मर्मस्पृक्" इति चामरः ॥ "विध्वरुषोस्तुदः" इति खश्प्रत्ययः ॥ "अरुर्द्विषत —" इत्यादिना मुमागमः ॥ आलानं गजबन्धनस्तम्भमिव ॥ "आलानं बन्धनस्तम्भे" इत्यमरः ॥ असह्या सोढुमशक्या पीडा दुःखं यस्मिंस्तदवेहि । दुःसहदुःखजनकं विद्धीत्यर्थः ॥ "निर्वाणोत्थानशयनानि त्रीणि गजकर्माणि" इति पालकाप्ये ॥ "ऋणं देवस्य यागेन ऋषीणां पाठकर्मणा । संतत्या पितृलोकानां शोधयित्वा परिव्रजेत्" ॥

७२ ॥ तस्मादिति । हे तात तस्मात्पैतृकादृणाद्यथा मुच्ये मुक्तो भवामि ॥ कर्मणि लट् ॥ तथा संविधातुं कर्तुमर्हसि । हि यस्मात्कारणादिक्ष्वाकूणामिक्ष्वाकोरपत्यानां पुंसाम् ॥ तद्राजत्वाद्बहुष्वणो लुक् ॥ दुरापे दुष्प्रापेऽर्थे ॥ सिद्धयस्त्वदधीनास्त्वदायत्ताः ॥ इक्ष्वाकूणामिति शेषे षष्ठी ॥ "न लोक"—इत्यादिना कृद्योगे षष्ठीनिषेधात् ॥

७३ ॥ इतीति । इति राज्ञा विज्ञापित ऋषिर्ध्यानेन स्तिमिते लोचने यस्य ध्यानस्तिमितलोचनो निश्चलाक्षः सन्क्षणमात्रम् । सुप्तमीनो ह्रद इव । तस्थौ ॥

७४ ॥ स इति । स मुनिः प्रणिधानेन चित्तैकाग्र्येण भावितात्मा शुद्धान्तःक-

debts have become galling (*i. e.* unbearable) to my spirit, like a chain that inflicts wounds to an elephant that has been kept without a (daily) bath.

72. Order it so then. O father, that I may be discharged from these debts ; in objects difficult of achievement, by the princes born in the line of इक्ष्वाकु, success is entirely at your disposal.

73. Thus requested by the king, the *Rishi,* like a large lake in which the fish are asleep, remained still for a moment with his eyes closed in deep meditation.

74. By profound abstract meditation he discovered the cause

with Su., नवबद्धस्य for अनिर्वाणस्य. Chāritravardhana and Dinakara notice the reading.

72. A. L. with Chā., and Din., यथा विमुच्येऽहं, D. with Su., यथा हि मुच्येऽहं for मुच्ये यथा तात. D. J. K. P. with Chā., Din., Val., and Su., यथा for तथा.

73. D. L. P. यथा for इव. All commentators with us.

74. D. K. सन्ततिस्तम्भकारणम् for सन्ततेः स्तम्भकारणम्. D. पुरः for भुवः.

पुरा शक्रमुपस्थाय तवोर्वीं प्रति यास्यतः ।
आसीत्कल्पतरुच्छायामाश्रिता सुरभिः पथि ॥ ७५ ॥
धर्मलोपभयाद्राज्ञीमृतुस्नातामिमां स्मरन् ।
प्रदक्षिणक्रियार्हायां तस्यां त्वं साधु नाचरः ॥ ७६ ॥

रणो भुवो भर्तुर्नृपस्य संततेः स्तम्भकारणं संतानप्रतिबन्धकारणमपश्यत् ॥ अथानन्तरमेनं नृपं प्रत्यबोधयत् । स्वदृष्टं ज्ञापितवानित्यर्थः ॥ एनमिति "गतिबुद्धि—" इत्यादिनाणिकर्तुः कर्मत्वम् ॥

७५ ॥ पुरेति । पुरा पूर्वं शक्रमिन्द्रमुपस्थाय संसेव्योर्वीं प्रति भुवमुद्दिश्य यास्यतो गमिष्यतस्तव पथि कल्पतरुच्छायामाश्रिता सुरभिः कामधेनुरासीत् । तत्र स्थितेत्यर्थः ॥

७६ ॥ ततः किमित्यत आह ॥ धर्मलोपेति । ऋतुः पुष्पम् । रज इति यावत् ॥ "ऋतुःस्त्रीकुसुमेऽपि च" इत्यमरः ॥ ऋतुना निमित्तेन स्नातामिमां राज्ञीं सुदक्षिणां धर्मस्य ऋत्वभिगमनलक्षणस्य लोपाद्भ्रंशाद्भयं तस्मात् स्मरन्ध्यायन् ॥ "मृद्गां दैवतं विप्रं घृतं मधु चतुष्पथम् । प्रदक्षिणानि कुर्वीत विज्ञातांश्च वनस्पतीन्" ॥ इति शास्त्रात्प्रदक्षिणक्रियार्हायां प्रदक्षिणकरणयोग्यायां तस्यां धेन्वां त्वं साधु प्रदक्षिणादिसत्कारं नाचरो नाचरितवानसि ॥ व्यासक्ता हि विस्मरन्तीति भावः ॥ ऋतुकालाभिगमने मनुः—"ऋतुकालाभिगामी स्यात्स्वदारनिरतः सदा" इति ॥ अकरणे दोषमाह पराशरः—"ऋतुस्नातां तु यो भार्यां स्वस्थः सन्नोपगच्छति । बालगोघ्नापराधेन विध्यते नात्र संशयः" इति ॥

---

of the obstacles lying in the path of progeny to the lord of the earth and then, in an inspired mood, made known to him the secret (that he had learnt).

75. On a past occasion, when you were returning to the earth after waiting upon Indra, there was on your way the divine cow सुरभि lying (at her ease) under the shade of the कल्प tree.

76. And thinking of this queen of yours who had bathed after menstruation, you, from fear of the violation of duty, did not behave well towards her who was worthy of the honour of being gone round.

---

76. D. P. ऋतुस्नातां तु संस्मरन्, C. E. I. K. R. with Châ., Din., Val., and Vija., इमां संचिन्त्य सत्वरः for ऋतुस्नातामिमां स्मरन्. I. प्रदक्षिणक्रियार्हायास्तस्याः कोपमजीजनः for the second half, and calls it a spurious verse. Between 75-76 B. E. I. L. P. R. with Su., and Vija., read the following :—"इमां देवीमृतुस्नातां स्मृत्वा सपदि सत्वरः । प्रदक्षिणक्रियातीतस्तस्याः कोपमजीजनः" ॥ (I. तस्यां त्वं साधु नाचरः for तस्याः कोपमजीजनः. B. श्रुत्वा for स्मृत्वा) L. P. call it a spurious stanza. Chāritravardhana and Dinakara notice this verse.

अवजानासि मां यस्मादतस्ते न भविष्यति ।
मत्प्रसूतिमनाराध्य प्रजेति त्वां शशाप सा ॥ ७७ ॥
स शापो न त्वया राजन्न च सारथिना श्रुतः ।
नदत्याकाशगङ्गायाः स्रोतस्युद्दामदिग्गजे ॥ ७८ ॥
ईप्सितं तदवज्ञानाद्विद्धि सार्गलमात्मनः ।
प्रतिबध्नाति हि श्रेयः पूज्यपूजाव्यतिक्रमः ॥ ७९ ॥

७७ ॥ अवजानासीति । यस्मात्कारणान्मामवजानासि तिरस्करोषि । अतः कारणान्मत्प्रसूतिं मम संततिमनाराध्यासेवयित्वा ते तव प्रजा न भविष्यतीति सा सुरभिस्त्वां शशाप ॥ शप आक्रोशे ॥

७८ ॥ कथं तदस्माभिर्न श्रुतमित्याह ॥ स शाप इति । हे राजन्स शापस्त्वया न श्रुतः । सारथिना च न श्रुतः ॥ अश्रवणे हेतुमाह—क्रीडार्थमागता उद्दामानो दाम्न उद्गता दिग्गजा यस्मिंस्तथोक्ते आकाशगङ्गाया मन्दाकिन्याः स्रोतसि प्रवाहे नदति सति ॥

७९ ॥ अस्तु प्रस्तुते किमायातमित्यत्राह ॥ ईप्सितमिति । तदवज्ञानात्तस्या धेनोरवज्ञानादपमानादात्मनः स्वस्याप्तुमिष्टमीप्सितं मनोरथम् ॥ आप्नोतेः सन्नन्तात्क्तः । ईकारश्च ॥ सार्गलं सप्रतिबन्धं विद्धि जानीहि ॥ तथा हि । पूज्यपूजाया व्यतिक्रमोऽतिक्रमणं श्रेयः प्रतिबध्नाति ॥

---

77. And she cursed you by saying —" As thou hast treated me with disrespect, so shalt thou never have any issue without (first) propitiating my offspring."

78. That curse, O king, was neither heard by you nor by your charioteer since the stream of the celestial गंगा was roaring on account of the furious elephants of quarters which were diverting themselves in it.

79. Know then ! O prince, that the attainment of your desire is prevented by the insult you offered to her ; for the neglect (or omission) of worship to those that are to be worshipped arrests (*i. e.* prevents one's) well-being.

---

77. A. B. and K. omit the 77-78 verses. Prof. Paranjape of Rájárám College, Kolhapur, tells me that the लक्ष्मीसेन one of the oldest and most authentic Ms. of the Jaina family, belonging to the Kolhapur collection also omits these stanzas.

79. D. P. with Chá., and Din., अवेहि तदवज्ञानायत्नापेक्षं मनोरथं, B. अवेमि तदपध्यानायत्नापेक्षं मनोरथं, A. C अवेहि तदवज्ञानादनपेक्षं मनोरथं for the first line. Cháritravardhana has the following :—" भो नृप । तस्या धेनोरवज्ञानं तदवज्ञानं तस्मान्मनोरथं पुत्रलक्षणं यत्नमपेक्षत इति तादृशमवेहि जानीहि । यत्नेन भविष्यतीत्यर्थः " ।

हविषे दीर्घसत्रस्य सा चेदानीं प्रचेतसः ।
भुजंगपिहितद्वारं पातालमधितिष्ठति ॥ ८० ॥
सुतां तदीयां सुरभेः कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः ।
आराधय सपत्नीकः प्रीता कामदुघा हि सा ॥ ८१ ॥
इति वादिन एवास्य होतुराहुतिसाधनम् ।
अनिन्द्या नन्दिनी नाम धेनुराववृते वनात् ॥ ८२ ॥

८० ॥ तर्हि गत्वा तामाराधयामि । सा वा कथंचिदागमिष्यतीत्याशा न कर्तव्येत्याह ॥ हविष इति ॥ सा च सुरभिरिदानीं दीर्घं सत्रं चिरकालसाध्यो यागविशेषो यस्य तस्य प्रचेतसो हविषे दध्याज्यादिहविरर्थं भुजंगपिहितद्वारं भुजंगावरुद्धद्वारं ततो दुष्प्रवेशं पातालमधितिष्ठति । पाताले तिष्ठतीत्यर्थः ॥ " अधिशीङ्स्थासां कर्म " इति कर्मत्वम् ॥

८१ ॥ तर्हि का गतिरित्याह ॥ सुतामिति । तस्याः सुरभेरियं तदीया । तां सुतां सुरभेः प्रतिनिधिं कृत्वा शुचिः शुद्धः । सह पत्न्या वर्तत इति सपत्नीकः सन् ॥ " नद्यृतश्च " इति कप्प्रत्ययः ॥ आराधय । हि यस्मात्कारणात्सा प्रीता तुष्टा सती । कामान्दोग्धीति कामदुघा । भवति ॥ " दुहः कब्घश्च " इति कप्प्रत्ययः ॥ घादेशश्च ॥

८२ ॥ इतीति । इति वादिनो वदत एव होतुर्हवनशीलस्य ॥ " तृन " इति तृन्प्रत्ययः । अस्य मुनेराहुतीनां साधनं कारणं । नन्दयतीति व्युत्पत्त्या नन्दिनी नामानिन्द्या प्रशस्ता धेनुर्वनादाववृते प्रत्यागता ॥ " अव्याक्षेपो भविष्यन्त्याः कार्यसिद्धेर्हि लक्षणम " इत्यभिप्रायः ॥

---

80. She is at present staying in the nether regions,—the gates of which are closed (*i. e.* guarded) by serpents,—with a view to supply *ghee* to Prachetas engaged in a long continued सत्र sacrifice.

81. Make then the daughter of सुरभि her mother's representative, and with your body purified worship her in company with the queen. She too, if pleased, can fulfil (all) your desires.

82. Scarcely had the sacrificer finished his speech in this way, when the blessed cow named Nandini, the source of his offerings, returned home from the forest.

---

81. B. C. E. R. with Val., स गां मदीयां, K. सुतां मदीयां for सुतां तदीयां. D. E. I. P. with Chà., Din., Su., and Vija., स त्वमेकान्तरां तस्यां मदीयां वत्समातरम् for the first line [E. and Vija., तस्याः for तस्यां. D. and Vija., सा वां कामं विधास्यति, I. L. P. सा वां कामं विधास्यति, E. and Chà., Din., and Su., सर्वकामं विधास्यति for प्रीता कामदुघा हि सा] R. reads the above verse in a slightly different way,—" स त्वमेकान्तरां तस्या मदीयां वत्समातरं । आराधय सपत्नीकः सा वां कामान्प्रदास्यति " ॥ Besides this I. L. P. R. have also the 81st stanza exactly like our text with this difference स गां मदीयां for सुतां तदीयां only. L. omits the verses 79 and 80.

ललाटोदयमाभुग्नं पल्लवस्निग्धपाटला ।
बिभ्रती श्वेतरोमाङ्कं संध्येव शशिनं नवम् ॥ ८३ ॥
भुवं कोष्णेन कुण्डोध्नी मेध्येनावभृथादपि ।
प्रस्रवेणाभिवर्षन्ती वत्सालोकप्रवर्तिना ॥ ८४ ॥
रजःकणैः खुरोद्धूतैः स्पृशद्भिर्गात्रमन्तिकात् ।
तीर्थाभिषेकजां शुद्धिमादधाना महीक्षितः ॥ ८५ ॥

८३ ॥ संप्रति धेनुं विशिनष्टि ॥ ललाटेति । पल्लववत्स्निग्धा चासौ पाटला च । संध्यायामप्येतद्विशेषणं योज्यम् । ललाट उदयो यस्य स ललाटोदयः । तमाभुग्नमीषद्वक्रम् ॥ " उदितश्च " इति निष्ठातस्य नत्वम् ॥ श्वेतरोमाण्येवाङ्कस्तं बिभ्रती । नवं शशिनं बिभ्रती संध्येव स्थिता ॥

८४ ॥ भुवमिति । कोष्णेन । किंचिदुष्णेन ॥ " कवं चोष्णे " इति चकारात्कादेशः ॥ अवभृथादप्यवभृथस्नानादपि मेध्येन पवित्रेण ॥ " पूतं पवित्रं मेध्यं च " इत्यमरः ॥ वत्सस्यालोकेन प्रदर्शनेन प्रवर्तिना प्रवहता प्रस्रवेण क्षीराभिस्यन्दनेन भुवमभिवर्षन्ती सिञ्चन्ती । कुण्डमिवोध आपीनं यस्याः सा कुण्डोध्नी ॥ " ऊधस्तु क्लीबमापीनम् " इत्यमरः ॥ " ऊधसोऽनङ् " इत्यनङादेशः ॥ " बहुव्रीहेरूधसो ङीष् " इति ङीष् ॥

८५ ॥ रज इति । खुरोद्धूतैरन्तिकात्समीपे गात्रं स्पृशद्भिः ॥ " दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च " इति चकारात्पञ्चमी ॥ रजसां कणैः । महीं क्षियत ईष्ट इति म-

---

83. Bearing a little curved round mark of white hair on her forehead she, with her colour pale-red like that of a new leaf, appeared like the twilight hour adorned with the new moon.

84. That cow of a full udder sprinkled the earth by the flow of her lukewarm milk which streamed forth at the sight of her young and which was even more sanctifying than the अवभृथ ablutions (after a sacrificial ceremony).

85. The cow imparted to that ruler of the earth the sanctity sprung from bathings in sacred places of pilgrimage, by touching his body from near with particles of dust raised up by her hoofs.

---

83. Between 82-83 B. D. E. I. P. R. with Vija., read the following:—" ताम्रां ललाटजां रेखां बिभ्रतीं सा सितेतरां । सन्ध्या प्रातिपदेनेव प्रतिभिन्ना हिमांशुना " ॥ (D. व्यतिभिन्ना for प्रतिभिन्ना I. लेखां, D. and Vija., रेखां for रेखां) R. reads it after the 83rd verse of our text.

84. D. with Su., क्षितिं for भुवं. B. C. D. I. K. L. R. प्रस्रवेन for प्रस्रवेण. D. R. °प्रवर्तिनीं for °प्रवर्तिना. E. वत्सालोभ° for वत्सालोक°.

85. D. with Vallabha तीर्थाभिषेकसंशुद्धिम् for तीर्थाभिषेकजां शुद्धिम्. D. L. P. R. with Val., and Vija., महीभृतः, B. C. E. I. K. with Châ., Din., and Su., महीपतेः for महीक्षितः.

तां पुण्यदर्शनां दृष्ट्वा निमित्तज्ञस्तपोनिधिः ।
याज्यमाशंसितावन्ध्यप्रार्थनं पुनरब्रवीत् ॥ ८६ ॥
अदूरवर्तिनीं सिद्धिं राजन्विगणयात्मनः ।
उपस्थितेयं कल्याणी नाम्नि कीर्तित एव यत् ॥ ८७ ॥
वन्यवृत्तिरिमां शश्वदात्मानुगमनेन गाम् ।
विद्यामभ्यसनेनेव प्रसादयितुमर्हसि ॥ ८८ ॥
प्रस्थितायां प्रतिष्ठेथाः स्थितायां स्थितिमाचरेः ।

दीक्षित् । तस्य । तीर्थाभिषेकेण जातां तीर्थाभिषेकजाम् । शुद्धिमादधाना कुर्वाणा ॥ एतेन वायव्यं स्नानमुक्तम् ॥ उक्तं च मनुना—" आग्नेयं भस्मना स्नानमवगाह्यं तु वारुणम् । आपोहिष्ठेति च ब्राह्मं वायव्यं गोरजः स्मृतम् " इति ॥

८६ ॥ तामिति । निमित्तज्ञः शकुनज्ञस्तपोनिधिर्वसिष्ठः । पुण्यं दर्शनं यस्यास्तां तां धेनुं दृष्ट्वा । आशंसितं मनोरथाः ॥ नपुंसके भावे क्तः ॥ तत्रावन्ध्यं सफलं प्रार्थनं यस्य स तमाशंसितावन्ध्यप्रार्थनम् । अवन्ध्यमनोरथमित्यर्थः । याजयितुं योग्यं याज्यं पार्थिवं पुनरब्रवीत् ॥

८७ ॥ अदूरेति । हे राजन्नात्मनः कार्यस्य सिद्धिमदूरवर्तिनीं शीघ्रभाविनीं विगणय विद्धि । यद्यतः कारणात्कल्याणी मङ्गलमूर्तिः ॥ " बह्वादिभ्यश्च " इति ङीप् ॥ इयं धेनुर्नाम्नि कीर्तिते कथिते सत्येवोपस्थिता ॥

८८ ॥ वन्येति । वने भवं वन्यं कन्दमूलफलादिकं वृत्तिराहारो यस्य तथा भूतः सन् । इमां गां शश्वत्सदा । आ प्रसादादविच्छेदेनेत्यर्थः । आत्मनस्तव । कर्तुः । अनुगमनेनानुसरणेन । अभ्यसनेनानुष्ठातुरभ्यासेन विद्यामिव । प्रसादयितुं प्रसन्नां कर्तुमर्हसि ॥

८९ ॥ गवानुसरणप्रकारमाह ॥ प्रस्थितेति । अस्यां प्रस्थितायां प्रतिष्ठेथाः प्र-

---

86. That treasure of asceticism, who had the knowledge of omens, saw (at once) that cow of beautiful (or blessed) appearance, and again addressed him who was worthy of sacrifices being done for him and whose hope for the desired object was not destined to be fruitless.

87. Depend upon it, O king, the fruition of your desires is close at hand ; for at the very mention of her name as it were, this blessed cow has thus made her appearance.

88. Living upon forest fare you should try to propitiate this cow by your constant (personal) attendance upon her, as one acquires learning by constant application.

89. You are to start when she starts, to stand when she

---

86. B. with Vija., तपोधनः for तपोनिधिः. E. अवन्ध्यं for अवन्ध्य°. D. J., °पार्थिवं, L. °प्रार्थितं for °प्रार्थनं.

87. P. तत् for यत्.

88. D. °वृत्तिं for °वृत्तिः. D. सम्यगाराधनेन for आत्मानुगमनेन.

89. B. C. E. K. L. R. with Cha., Din., Val., Su., and Vija., स्थानमाचरेः for स्थितिमाचरेः.

निषण्णायां निषीदास्यां पीताम्भसि पिबेरपः ॥ ८९ ॥
वधूर्भक्तिमती चैनामर्चितामा तपोवनात् ।
प्रयता प्रातरन्वेतु सायं प्रत्युद्व्रजेदपि ॥ ९० ॥
इत्या प्रसादादस्यास्त्वं परिचर्यापरो भव ।
अविघ्नमस्तु ते स्थेयाः पितेव धुरि पुत्रिणाम् ॥ ९१ ॥
तथेति प्रतिजग्राह प्रीतिमान्सपरिग्रहः ।
आदेशं देशकालज्ञः शिष्यः शासितुरानतः ॥ ९२ ॥

याहि ॥ "समवप्रविभ्यः स्थः" इत्यात्मनेपदम् ॥ स्थितायां निवृत्तगतिकायां स्थितिमाचरेः स्थितिं कुरु । तिष्ठेत्यर्थः । निषण्णायामुपविष्टायां निषीदेरुपविश ॥ विध्यर्थे लोट् ॥ पीतमम्भो यया तस्यां पीताम्भसि सत्यामपः पिबेः पिब ॥

९० ॥ वधूरिति । वधूर्जाया च भक्तिमती प्रयता सती गन्धादिभिरर्चितामेनां गां प्रातरा तपोवनात् ॥ आङ्मर्यादायाम् । पदद्वयं चैतत् ॥ अन्वेत्वनुगच्छतु । सायमपि प्रत्युद्व्रजेत्प्रत्युद्गच्छेत् ॥ विध्यर्थे लिङ् ॥

९१ ॥ इतीति । इत्यनेन प्रकारेण त्वमा प्रसादात्प्रसादपर्यन्तम् ॥ "आङ्मर्यादाभिविध्योः" इत्यस्य वैभाषित्वादसमासत्वम् ॥ अस्या धेनोः परिचर्यापरः शुश्रूषापरो भव ॥ ते तवाविघ्नं विघ्नस्याभावोऽस्तु ॥ "अव्ययं विभक्ति—" इत्यादिनार्थाभावेऽव्ययीभावः ॥ पितेव पुत्रिणां सत्पुत्रवताम् ॥ प्रशंसायामिनिप्रत्ययः ॥ धुर्यग्रे स्थेयास्तिष्ठेः ॥ आशीरर्थे लिङ् ॥ "एर्लिङि" इत्याकारस्यैकारादेशः ॥ त्वत्सदृशो भवत्पुत्रोऽस्त्विति भावः ॥

९२ ॥ तथेति । देशकालज्ञः । देशोऽग्निसंनिधिः । कालोऽग्निहोत्रावसानसमयः । विशिष्टदेशकालोत्पन्नमार्षं ज्ञानमव्याहतमिति जानन् । अत एव प्रीतिमाञ्शिष्योऽन्तेवासी राजा सपरिग्रहः सपत्नीकः ॥ "पत्नीपरिजनादानमूलशापाः परिग्रहाः" इत्यमरः ॥ आनतो विनयनम्रः सन् । शासितुर्गुरोरादेशमाज्ञां तथेति प्रतिजग्राह स्वीचकार ॥

---

stands, to sit down when she sits, and to drink water, only after she has drunk it.

90. And let your self-subdued wife, full of devotion, follow her (*i. e.* the cow) worshipped in the morning, as far as the sacred forest of penance, and let her also go forth to meet her (half way) in the evening.

91. Go on attending upon her in this wise, till she is propitiated. May there be no obstacles to you, and may you, like a father, stand at the head of those mortals who are favoured with worthy sons.

92. "So be it," in these words that disciple with his wife, who knew the time and the place, received, in a spirit of delight and humility, the instructions of his preceptor.

---

90. D. E. L. with Chá. Din., and Su., प्रयातां, P. R. प्रयतां for प्रयता. K. reads first the 90th verse and then the 89th stanza of our text.

91. B. C. E. I. K. P. R. with Val., Su., and Vija., भूयाः for स्थेयाः.

अथ प्रदोषे दोषज्ञः संवेशाय विशांपतिम् ।
सूनुः सूनृतवाक्स्रष्टुर्विससर्जोर्जितश्रियम् ॥ ९३ ॥
सत्यामपि तपःसिद्धौ नियमापेक्षया मुनिः ।
कल्पवित्कल्पयामास वन्यामेवास्य संविधाम् ॥ ९४ ॥
निर्दिष्टां कुलपतिना स पर्णशालामध्यास्य प्रयतपरिग्रहद्वितीयः ।
तच्छिष्याध्ययननिवेदितावसानां संविष्टः कुशशयने निशां निनाय ॥९५॥
॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कविश्रीकालिदासकृतौ
वशिष्ठाश्रमाभिगमनो नाम प्रथमः सर्गः ॥

९३ ॥ अथेति । अथ प्रदोषे रात्रौ दोषज्ञो विद्वान् ॥ " विद्वान्विपश्चिद्दोषज्ञः " इत्यमरः ॥ सूनृतवाक्सत्यप्रियवाक् ॥ " प्रियं सत्यं च सूनृतम् " इति हलायुधः ॥ स्रष्टुः सूनुर्ब्रह्मपुत्रो मुनिः । अनेन प्रकृतकार्यनिर्वाहकत्वं सूचयति । ऊर्जितश्रियं विशांपतिं मनुजेश्वरम् ॥ "द्वौ विशौ वैश्यमनुजौ " इत्यमरः ॥ संवेशाय स्वापाय ॥ " स्यान्निद्रा शयनं स्वापः स्वप्नः संवेश इत्यपि " इत्यमरः ॥ विससर्जाज्ञापयामास ॥

९४ ॥ सत्यामिति । कल्पविद्व्रतप्रयोगाभिज्ञो मुनिः । तपःसिद्धौ सत्यामपि । तपसैव राजयोग्याहारसंपादनसामर्थ्ये सत्यपीत्यर्थः । नियमापेक्षया तदाप्रभृत्येव व्रतचर्यापेक्षया । अस्य राज्ञो वन्यामेव । संविधीयतेऽनयेति संविधाम् । कुशादिशयनसामग्रीम् ॥ " अतश्चोपसर्गे " इति कप्रत्ययः ॥ " अकर्तरि च कारके संज्ञायाम् " इति कर्मार्थत्वम् । कल्पयामास संपादयामास ॥

९५ ॥ निर्दिष्टामिति । स राजा कुलपतिना मुनिकुलेश्वरेण वशिष्ठेन निर्दिष्टां पर्णशालामध्यास्याधिष्ठाय । तस्यामधिष्ठानं कृत्वेत्यर्थः ॥ "अधिशीङ्—" इत्यादिनाधारस्य कर्मत्वम् ॥ कर्मणि द्वितीया ॥ प्रयतो नियतः परिग्रहः पत्नीद्वितीयो यस्येति स तथोक्तः कुशानां शयने संविष्टः सुप्तः सन् । तस्य वशिष्ठस्य शिष्याणामध्ययनेनापररात्रवेदपाठेन निवेदितमवसानं यस्यास्तां निशां निनाय गमयामास॥ अपररात्राध्ययने मनुः—" निशान्ते न परिश्रान्तो ब्रह्माधीत्य पुनः स्वपेत् " ॥ " न चापररात्रमधीत्य पुनः स्वपेत् " इति गौतमश्च ॥ प्रहर्षणीवृत्तमेतत् । तदुक्तम्—" म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षणीयम् " ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमच्छपाच्छयसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

---

93. After this the learned son of Creater, true and agreeable in his speech, bade the lord of men of distinguished fortune (or blazing radiance) to retire for the night.

94. In spite of his power of asceticism, the sage, who knew the ritualistic procedure (or rules for ceremonial acts), arranged but a sylvan preparation for him out of regard for his abstinence (or vow).

95. He, with his self-subdued wife as his second (companion), having occupied a hut made of leaves and grass, pointed out to him by the lord of the clan, and lying on a rude bed made of कुश grass, passed the night the close of which was indicated to him by his (Muni's) disciples reading the Vedas.

---

93. A. D. E. उदितश्रियं, P. उज्झितश्रियं for ऊर्जितश्रियं.

95. D. E. with Cha., and Din., अनैषीत् for निनाय.

। द्वितीयः सर्गः ।

अथ प्रजानामधिपः प्रभाते जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम् ।
वनाय पीतप्रतिबद्धवत्सां यशोधनो धेनुमृषेर्मुमोच ॥ १ ॥
तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुमपांसुलानां धुरि कीर्तनीया ॥
मार्गं मनुष्येश्वरधर्मपत्नी श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत् ॥ २ ॥

आशासु राशीभवदङ्गवल्लीभासैव दासीकृतदुग्धसिन्धुम् ।
मन्दस्मितैर्निन्दितशारदेन्दुं वन्देऽरविन्दासनसुन्दरि त्वाम् ॥

१ ॥ अथेति । अथ निशानयनानन्तरं यशोधनः प्रजानामधिपः प्रजेश्वरः प्रभाते प्रातःकाले जायया सुदक्षिणया । प्रतिग्राहयित्र्या । प्रतिग्राहिते स्वीकारिते गन्धमाल्ये यया सा जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्या । तां तथोक्ताम् ॥ पीतं पानमस्यास्तीति पीतः । पीतवानित्यर्थः ॥ "अर्श आदिभ्योऽच्" इत्यच्प्रत्ययः ॥ "पीता गावो भुक्ता ब्राह्मणाः" इति महाभाष्ये दर्शनात् ॥ पीतः प्रतिबद्धो वत्सो यस्यास्तामृषेर्धेनुं वनाय वनं गन्तुं मुमोच ॥ "क्रियार्थोपपद—" इत्यादिना चतुर्थी ॥ जायापदसामर्थ्यात्सुदक्षिणायाः पुत्रजननयोग्यत्वमनुसंधेयम् ॥ तथा हि श्रुतिः—"पतिर्जायां प्रविशति गर्भो भूत्वा स मातरम् । तस्यां पुनर्नवो भूत्वा दशमे मासि जायते । तज्जाया जाया भवति यदस्यां जायते पुनः" इति ॥ यशोधनः । इत्यनेन पुत्रवत्ताकीर्तिलोभाद्राजानर्हे गोरक्षणे प्रवृत्त इति गम्यते ॥ अस्मिन्सर्गे वृत्तमुपजातिः—"अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः" इति ॥

२ ॥ तस्या इति । पांसवो दोषा आसां सन्तीति पांसुलाः स्वैरिण्यः ॥ "स्वैरिणी पांसुला" इत्यमरः ॥ "सिध्यादिभ्यश्च" इति लच्प्रत्ययः ॥ अपांसुलानां पतिव्रतानां धुर्यग्रे कीर्तनीया परिगणनीया मनुष्येश्वरधर्मपत्नी । खुरन्यासैः पवित्राः पांसवो यस्य तम् ॥ "रेणुर्द्वयोः स्त्रियां धूलिः पांसुर्ना न द्वयो रजः" इत्यमरः ॥ तस्या धेनोर्मार्गम् । स्मृतिर्मन्वादिवाक्यं श्रुतेर्वेदवाक्यस्यार्थमभिधेयमिव । अन्वगच्छदनुसृतवती च । यथा स्मृतिः श्रुतिक्षुण्णमेवार्थमनुसरति तथा सापि गोखुरक्षुण्णमेव मार्गमनुससारेत्यर्थः ॥ धर्मपत्नीत्यत्राश्वघासादिवत्तादर्थ्ये षष्ठीसमासः प्रकृतिविकाराभावात् ॥ पांसुलपथप्रवृत्तावप्यपांसुलानामिति विरोधालंकारो ध्वन्यते ॥

---

1. Then in the morning the lord of the people, who valued his fame as a treasure (*i. e.* rich in fame) set free the cow of the sage (to conduct her) to a forest, whose young had had his fill of drink (*i. e.* had his suck), and had then been tied to his post, and who had been made to accept sandle and flowers by his wife.

2. The lawful wife of the lord of men, who deserved to be ranked at the head of chaste women, followed her path, the dust on which was hallowed by the prints of her hoofs, as Smṛiti follows the meaning of *S*ruti.

निवर्त्य राजा दयितां दयालुस्तां सौरभेयीं सुरभिर्यशोभिः ।
पयोधरीभूतचतुःसमुद्रां जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम् ॥ ३ ॥
व्रताय तेनानुचरेण धेनोर्न्यषेधि शेषोऽप्यनुयायिवर्गः ।
न चान्यतस्तस्य शरीररक्षा स्ववीर्यगुप्ता हि मनोः प्रसूतिः ॥ ४ ॥
आस्वादवद्भिः कवलैस्तृणानां कण्डूयनैर्दंशनिवारणैश्च ।
अव्याहतैः स्वैरगतैः स तस्याः सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत् ॥ ५ ॥

३ ॥ निवर्त्येति । दयालुः कारुणिकः ॥ " स्याद्दयालुः कारुणिकः " इत्यमरः ॥ " स्पृहिगृहि—" इत्यादिनालुच्प्रत्ययः । यशोभिः सुरभिर्मनोज्ञः ॥ " सुरभिः स्यान्मनोज्ञेऽपि ' ' इति विश्वः ॥ स राजा तां दयितां निवर्त्य सौरभेयीं कामधेनुसुतां नन्दिनीम् । धरन्तीति धराः ॥ पचाद्यच् ॥ पयसां धराः पयोधराः स्तनाः ॥ " स्त्रीस्तनाब्दौ पयोधरौ " इत्यमरः ॥ अपयोधराः पयोधराः संपद्यमानाः पयोधरीभूताः ॥ अभूततद्भावे च्विः ॥ " कुगतिप्रादयः " इति समासः ॥ पयोधरीभूताश्चत्वारः समुद्रा यस्यास्ताम् ॥ " अनेकमन्यपदार्थे " इत्यनेकपदार्थग्रहणसामर्थ्यात्त्रिपदो बहुव्रीहिः ॥ गोरूपधरामुर्वीमिव । जुगोप ररक्ष ॥ भूरक्षणप्रयत्नेनेव ररक्षेति भावः ॥

४ ॥ व्रतायेति । व्रताय धेनोरनुचरेण । न तु जीवनायेति भावः । तेन दिलीपेन शेषोऽवशिष्टोऽप्यनुयायिवर्गोऽनुचरवर्गो न्यषेधि निवर्तितः ॥ शेषत्वं सुदक्षिणापेक्षया ॥ कथं तर्ह्यात्मरक्षणमत आह—न चेति ॥ तस्य दिलीपस्य शरीररक्षा चान्यतः पुरुषान्तरान्न । कुतः । हि यस्मात्कारणान्मनोः । प्रसूयत इति प्रसूतिः । संततिः स्ववीर्यगुप्ता स्ववीर्येणैव रक्षिता ॥ न हि स्वनिर्वाहकस्य परापेक्षेति भावः॥

५ ॥ आस्वादवद्भिरिति। सम्राण्मण्डलेश्वरः स राजा । आस्वादवद्भिः स्वादयुक्तैस्तृणानां कवलैर्ग्रासैः । कण्डूयनैः खर्जनैः । दंशानां वनमक्षिकाणां निवारणैः ॥

---

3. The compassionate king, charming (or imposing) in his fame, having made his beloved return, took the charge of protecting the daughter of Surabhi, who was, as though, Earth, assuming the form of a cow and with the four oceans turned into udders.

4. He following the holy cow for the sake of his vow dismissed even the rest of that band of followers. He needed no help from without to protect his body ; for the princes, born in the line of मनु, were protected by power of their own.

5. The universal emperor became diligently engaged in her propitiation with offerings of palatable mouthfuls of grass, by scratchings, by the dispersion (or brushing away) of forest flies , and by unimpeded rovings at will.

---

5. B. F. अव्याहतस्वैरगतेः, C. I. P. R. अव्याहतस्वैरगतैः for अव्याहतैः स्वैरगतैः.

स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयातां निषेदुषीमासनबन्धधीरः ।
जलाभिलाषी जलमाददानां छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत् ॥ ६ ॥
स न्यस्तचिह्नामपि राजलक्ष्मीं तेजोविशेषानुमितां दधानः ।
आसीदनाविष्कृतदानराजिरन्तर्मदावस्थ इव द्विपेन्द्रः ॥ ७ ॥
लताप्रतानोद्ग्रथितैः स केशैरधिज्यधन्वा विचचार दावम् ।
रक्षापदेशान्मुनिहोमधेनोर्वन्यान्विनेष्यन्निव दुष्टसत्त्वान् ॥ ८ ॥

" दंशस्तु वनमक्षिका " इत्यमरः ॥ अव्याहतैरप्रतिहतैः स्वैरगतैः स्वच्छन्दगमनैश्च । तस्या धेन्वाः समाराधनतत्परः शुश्रूषासक्तोऽभूत् ॥ तदेव परं प्रधानं यस्येति तत्परः ॥ " तत्परौ प्रसितासक्तौ " इत्यमरः ॥

६ ॥ स्थित इति । भूपतिस्तां गां स्थितां सतीं स्थितः सन् । स्थितिरूर्ध्वावस्थानम् । प्रयातां प्रस्थितामुच्चलितः प्रस्थितः । निषेदुषीं निषण्णाम् । उपविष्टामित्यर्थः ॥ " भाषायां सदवसश्रुवः " इति क्वसुप्रत्ययः ॥ " उगितश्च " इति ङीप् ॥ आसनबंध उपवेशने धीरः स्थित । उपविष्टः सन्नित्यर्थः । जलमाददानां पिबन्तीं जलाभिलाषी । पिबन्नित्यर्थः । इत्थं छायेवान्वगच्छदनुसृतवान् ॥

७ ॥ स इति । न्यस्तानि परिहृतानि चिह्नानि छत्रचामरादीनि यस्यास्तां तथाभूतामपि तेजोविशेषेण प्रभावातिशयेनानुमिताम् । सर्वथा राजैवायं भवेदित्यूहितां राजलक्ष्मीं दधानः स राजा । अनाविष्कृतदानराजिर्बहिरप्रकटितमदरेखः । अन्तर्गता मदावस्था यस्य सोऽन्तर्मदावस्थः । तथाभूतो द्विपेन्द्र इव । आसीत् ॥

८ ॥ लतेति । लतानां वल्लीनां प्रतानैः कुटिलतन्तुभिरुद्ग्रथिता उन्नमय्य ग्रथिता ये केशास्तैरुपलक्षितः ॥ " इत्थं भूतलक्षणे " इति तृतीया ॥ स राजा । अधिज्यमारोपितमौर्वीकं धनुर्यस्य सोऽधिज्यधन्वा सन् ॥ " धनुषश्च " इत्यनङादेशः ॥ मुनि-

---

6. The lord of the earth followed her as her shadow ;--halting did he follow her halted ; moving forth did he follow her moved forth ; fixed in the assumption of a sitting posture, did he follow her sat down ; and water-seeking followed he her drinking water.

7. Bearing a king's (or kingly) fortune which, though with its insignia laid aside, could be inferred from the super-abundance of splendour, he was like a mighty elephant in whom the conditions of being in rut were ready within without the line of ichor being displayed.

8. With his hair tied up into a knot by means of strings made of tendrils of wild creepers, he roamed about the forest with his bow strung, as if taming the cruel beasts of the forest under the show of protecting the holy cow of the *Muni*.

---

7. B. C. F. with Val., and Su., संन्यस्तचिह्नाम् for स न्यस्तचिह्नाम्. B. C. P. with Val., and Su., राज्यलक्ष्मीम् for राजलक्ष्मीम्.

8. A. C. D. I. J. P. with Chá., Din., Val., and Su., रक्षापदेशात्, B. F. R., रक्षांपदेशात्. C. F. I. with Su., गुरु° for मुनि°.

विसृष्टपार्श्वानुचरस्य तस्य पार्श्वद्रुमाः पाशभृता समस्य ।
उदीरयामासुरिवोन्मदानामालोकशब्दं वयसां विरावैः ॥ ९ ॥
मरुत्प्रयुक्ताश्च मरुत्सखाभं तमर्च्यमारादभिवर्तमानम् ।
अवाकिरन्बाललताः प्रसूनैराचारलाजैरिव पौरकन्याः ॥ १० ॥
धनुर्भृतोऽप्यस्य दयार्द्रभावमाख्यातमन्तःकरणैर्विशङ्कैः ।
विलोकयन्त्यो वपुरापुरक्ष्णां प्रकामविस्तारफलं हरिण्यः ॥ ११ ॥

होमधेनो रक्षापदेशाद्रक्षणव्याजात् । वन्यान्वने भवान्दुष्टसत्त्वान्दुष्टजन्तून् ॥ "द्रव्यासुव्यवसायेषु सत्त्वमस्त्री तु जन्तुषु " इत्यमरः ॥ विनेष्यन्शिक्षयिष्यन्निव । दावं वनं विचचार ॥ " वने च वनवह्नौ च दावो दाव इहेष्यते " इति यादवः ॥ वने चचारेत्यर्थः ॥ " देशकालाध्वगन्तव्याः कर्मसंज्ञा ह्यकर्मणाम् " इति दावस्य कर्मत्वम् ॥

९ ॥ विसृष्टेत्यादिभिः श्लोकैस्तस्य महामहिमतया द्रुमादयोऽपि राजोपचारं चक्रुरित्याह ॥ विसृष्टेति । विसृष्टाः पार्श्वानुचराः पार्श्ववर्तिनो जना येन तस्य । पाशभृता वरुणेन समस्य तुल्यस्य ॥ अनुभावोऽनेन सूचितः ॥ तस्य राज्ञः पार्श्वयोर्द्रुमाः । उन्मदानामुत्कटमदानां वयसां खगानाम् ॥ "खगबाल्यादिनोर्वयः" इत्यमरः ॥ विरावैः । आलोकस्य शब्दं वाचकम् । आलोकयेति शब्दमित्यर्थः । उदीरयामासुरिवावदन्निव । इत्युत्प्रेक्षा ॥

१० ॥ मरुदिति । मरुत्प्रयुक्ता वायुना प्रेरिता बाललता आरात्समीपेऽभिवर्तमानम् ॥ " आराद्दूरसमीपयोः " इत्यमरः ॥ मरुतो वायोः सखा मरुत्सखोऽग्निः । स इवाभातीति मरुत्सखाभः ॥ " आतश्चोपसर्गे " इति कप्रत्ययः ॥ तमर्च्यं पूज्यं दिलीपं प्रसूनैः पुष्पैः । पौरकन्याः पौराश्च ताः कन्या आचारार्थैर्लाजैराचारलाजैरिव । अवाकिरन् । तस्योपरि विक्षिप्तवत्य इत्यर्थः ॥ सखा हि सखायमागतमुपचरतीति भावः ॥

११ ॥ धनुर्भृत इति । धनुर्भृतोऽप्यस्य राज्ञः । एतेन भयसंभावना दर्शिता । तथापि विशङ्कैर्निर्भीकैरन्तःकरणैः । कर्तृभिः । दयया कृपारसेनार्द्रो भावोऽभिप्रायो यस्य तद्दयार्द्रभावं तदाख्यातम् । दयार्द्रभावमेतदित्याख्यातमित्यर्थः ॥ " भावः

---

9. To him, who had dismissed his attendants (*lit.* who walked by his side) and who was equal (in strength) to the noose-bearing god (*i. e.* the king Varuṇa). the trees on both sides of the road uttered, as it were, a chorus of a panegyric with the cries of birds intoxicated (with joy).

10. On him, worthy of adoration and lustrous like the friend of the god of wind (*i. e. Agni*), the tender creepers, set in motion by the breeze, showered their flowers as he was passing near, like the young girls of his capital showering the customary *Lājās* (the friend-grain-rice).

11. The female deer obtained a sufficient reward (*lit.* fruit) for their (beautiful) large eyes when with fearless hearts they saw

स कीचकैर्मारुतपूर्णरन्ध्रैः कूजद्भिरापादितवंशकृत्यम् ।
शुश्राव कुञ्जेषु यशः स्वमुच्चैरुद्गीयमानं वनदेवताभिः ॥ १२ ॥
पृक्तस्तुषारैर्गिरिनिर्झराणामनोकहाकम्पितपुष्पगन्धी ।
तमातपक्लान्तमनातपत्रमाचारपूतं पवनः सिषेवे ॥ १३ ॥

सत्त्वस्वभावाभिप्रायचेष्टात्मजन्मसु " इत्यमरः ॥ तथाविधं वपुर्विलोकयन्त्यो हरिण्योऽक्ष्णां प्रकामविस्तारस्यात्यन्तविशालतायाः फलमापुः ॥ " विमलं कलुषीभवच्च चेतः कथयत्येव हितैषिणं रिपुं च " इति न्यायेन स्वान्तःकरणवृत्तिप्रामाण्यादेव विश्रब्धं ददृशुरित्यर्थः ॥

१२ ॥ स इति । स दिलीपो मारुतपूर्णरन्ध्रैः । अत एव कूजद्भिः स्वनद्भिः । कीचकैर्वेणुविशेषैः ॥ " वेणवः कीचकास्ते स्युर्ये स्वनन्त्यनिलोद्धताः " इत्यमरः ॥ वंशः सुषिरवाद्यविशेषः ॥ " वंशादिकं तु सुषिरम् " इत्यमरः ॥ आपादितं संपादितं वंशस्य कृत्यं कार्यं यस्मिन्कर्मणि तत्तथा । कुञ्जेषु लतागृहेषु ॥ " निकुञ्जकुञ्जौ वा क्लीबे लतादिपिहितोदरे " इत्यमरः ॥ वनदेवताभिरुद्गीयमानमुच्चैर्गीयमानं स्वं यशः शुश्राव श्रुतवान् ॥

१३ ॥ पृक्त इति । गिरिषु निर्झराणां प्रवाहाणाम् ॥ " प्रवाहो निर्झरो झरः " इत्यमरः ॥ तुषारैः सीकरैः ॥ " तुषारौ हिमसीकरौ " इति शाश्वतः ॥ पृक्तः संपृक्तोऽनोकहानां वृक्षाणामाकम्पितानीषत्कम्पितानि पुष्पाणि तेषां यो गन्धः सोऽस्यास्तीत्याकम्पितपुष्पगन्धी । ईषत्कम्पितपुष्पगन्धवान् । एवं शीतो मन्दः सुरभिः पवनो वायुरनातपत्रं व्रतार्थं परिहृतच्छत्त्रम् । अत एवातपक्लान्तमाचारेण पूतं शुद्धं तं नृपं सिषेवे ॥ आचारपूतत्वात्स राजा पवनस्यापि सेव्य आसीदिति भावः ॥

---

his body indicating a nature softened by compassion even though he carried a (ready) bow about him.

12. He heard his own fame loudly sung in the bowers of creepers by the fairies of the forest to the accompaniment of the music issuing from bamboos the holes of which were filled (or pregnant) with air and doing duties of flutes.

13. The soft cooling breeze, surcharged with the watery sprays from the hill-streams and mixed with the fragrance of flowers gently shaking on the trees, honoured (*lit.* served) him, who was purified by observances of devotion, was oppressed by heat and had no umbrella (to cover his head).

---

13. B. D. °कम्पनपुष्पगन्धी, I. °कम्पनलब्धगन्धः, C. J. P. with Chá., Din., Val., and Su., °कम्पितपुष्पगन्धिः, R. °कम्पितपुष्पगन्धी for °कम्पितपुष्पगन्धी.

शशाम वृष्ट्यापि विना दवाग्निरासीद्विशेषा फलपुष्पवृद्धिः ।
ऊनं न सत्त्वेष्वधिको बबाधे तस्मिन्वनं गोप्तरि गाहमाने ॥ १४ ॥
संचारपूतानि दिगन्तराणि कृत्वा दिनान्ते निलयाय गन्तुम् ।
प्रचक्रमे पल्लवरागताम्रा प्रभा पतंगस्य मुनेश्च धेनुः ॥ १५ ॥
तां देवतापित्रतिथिक्रियार्थामन्वग्ययौ मध्यमलोकपालः ।
बभौ च सा तेन सतां मतेन श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपपन्ना ॥ १६ ॥

१४ ॥ शशामेति । गोप्तरि तस्मिन्राज्ञि वनं गाहमाने प्रविशति सति वृष्ट्या विनापि । दवाग्निर्वनाग्निः ॥ "दवदावौ वनानले" इति हैमः ॥ शशाम । फलानां पुष्पाणां च वृद्धिः । विशेष्यत इति विशेषा । अतिशयितासीत् ॥ कर्मार्थे घञ्प्रत्ययः ॥ सत्त्वेषु जन्तुषु मध्ये ॥ "यतश्च निर्धारणम्" इति सप्तमी ॥ अधिकः प्रबलो व्याघ्रादिरूनं दुर्बलं हरिणादिकं न बबाधे ॥

१५ ॥ संचारपूतानीति । पल्लवस्य रागो वर्णः पल्लवरागः ॥ "रागोऽनुरक्तौ मात्सर्ये क्लेशादौ लोहितादिषु" इति शाश्वतः ॥ स इव ताम्रा पल्लवरागताम्रा पतंगस्य सूर्यस्य प्रभा कान्तिः ॥ "पतंगः पक्षिसूर्ययोः" इति शाश्वतः ॥ मुनेर्धेनुश्च । दिगन्तराणि दिशामवकाशान् ॥ "अन्तरमवकाशावधिपरिधानान्तर्धिभेदतादर्थ्ये" इत्यमरः ॥ संचारेण पूतानि शुद्धानि कृत्वा दिनान्ते सायंकाले निलयायास्तमयाय । धेनुपक्ष आलयाय च । गन्तुं प्रचक्रमे ॥

१६ ॥ तामिति । मध्यमलोकपालो भूपालः । देवतापित्रतिथीनां क्रिया यागश्राद्धदानानि ता एवार्थः प्रयोजनं यस्यास्ताम् । तां धेनुमन्वगनुपदं ययौ ॥ "अ-

---

14. When he entered the forest as its protector, the forest-conflagration became extinguished, even without any shower of rain; there appeared on trees an abundant growth of blossoms and fruits; and the stronger amongst the animals no longer oppressed the weaker ones.

15. After having by their rambles purified the spaces intervening between the cardinal points, the cow of the Muni and the light of the sun which were (both) red as the colour of a fresh sprout, bent their course towards home at the close of the day.

16. The protector of the intermediate world followed her (*i. e.* cow) who was a help towards discharging (the duties of) sacrificial rites to gods, to manes and to guests (of the Muni); and thus in company with him who was honoured by the good, she looked like faith embodied, when accompanied by the performance of religious works.

---

14. B. C. F. I. P. R. with Chá., Din., Val., and Su., विशेषात् for विशेषा. D. F. वने for वनं. We according to A. B. C. I. J. K. L. P. R. supported by Cháritravardhana, Dinakara, Vallabha and Sumativijaya.

स पल्वलोत्तीर्णवराहयूथान्यावासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि ।
ययौ मृगाध्यासितशाद्वलानि श्यामायमानानि वनानि पश्यन् ॥ १७ ॥
आपीनभारोद्वहनप्रयत्नाद्गृष्टिर्गुरुत्वाद्वपुषो नरेन्द्रः ।
उभावलंचक्रतुरञ्चिताभ्यां तपोवनावृत्तिपथं गताभ्याम् ॥ १८ ॥

न्वगन्वक्षमनुगेऽनुपदं क्लीबमव्ययम् " इत्यमरः ॥ सतां मतेन सद्भिर्मान्येन ॥ " गतिबुद्धि " इत्यादिना वर्तमाने क्तः ॥ " क्तस्य च वर्तमाने " इति षष्ठी ॥ तेन राज्ञोपपन्ना युक्ता सा धेनुः । सतां मतेन विधिनानुष्ठानेनोपपन्ना युक्ता साक्षात्प्रत्यक्षा श्रद्धास्तिक्यबुद्धिरिव । बभौ ॥

१७ ॥ स इति । स राजा । पल्वलेभ्योऽल्पजलाशयेभ्य उत्तीर्णानि निर्गतानि वराहाणां यूथानि कुलानि येषु तानि । बर्हाण्येषां सन्तीति बर्हिणा मयूराः ॥ " मयूरो बर्हिणो बर्ही " इत्यमरः ॥ फलबर्हाभ्यामिनज्वक्तव्यः ॥ आवासवृक्षाणामुन्मुखा बर्हिणा येषु तानि श्यामायमानानि वराहबर्हिणादिमलिनिम्नाश्यामानि । श्यामानि भवन्तीति श्यामायमानानि ॥ " लोहितादिडाज्भ्यः क्यष् " इति क्यष्प्रत्ययः ॥ " वा क्यषः " इत्यात्मनेपदे शानच् ॥ मृगैरध्यासिता अधिष्ठिताः शाद्वला येषु तानि ॥ शादाः शष्पाण्येषु देशेषु सन्तीति शाद्वलाः शष्पश्यामदेशाः ॥ " शाद्वलः शादहरिते " इत्यमरः ॥ " शादः कर्दमशष्पयोः " इति विश्वः ॥ " नडशादाड्ड्वलच् " इति ड्वलच्प्रत्ययः ॥ वनानि पश्यन्ययौ ॥

१८ ॥ आपीनेति । गृष्टिः सकृत्प्रसूता गौः ॥ " गृष्टिः सकृत्प्रसूता गौः " इति हलायुधः ॥ नरेन्द्रश्च । उभौ यथाक्रमम् । आपीनमूधः ॥ " ऊधस्तु क्लीबमापीनम् " इत्यमरः ॥ आपीनभारोद्वहने प्रयत्नात्प्रयासात् । वपुषो गुरुत्वादाधिक्याच्च । अञ्चिताभ्यां चारुभ्यां गताभ्यां गमनाभ्यां तपोवनादावृत्तेः पन्थानं तपोवनावृत्तिपथम् ॥ " ऋक्पूः-" इत्यादिना समासान्तोऽप्रत्ययः ॥ अलंचक्रतुर्भूषितवन्तौ ॥

---

17. He went on beholding the forests as they were being obscured (by the approaching darkness of the night), in which herds of wild boars were rushing forth from their marshes (*lit.* muddy ponds), in which peacocks were turning towards the trees of their habitations (*i. e.* the trees in which they perched for the night), and in which the deer were lying down in their (accustomed) grassy spots.

18. On account of the labour of bearing the burden of the udders the cow which had only one calf, and the king by reason of his bodily heaviness both decorated the way by which they returned from the sacred forest with their graceful gaits.

---

17. F. P. R. °शाड्ड्लानि for °शाद्वलानि.

18. C. उरसः for वपुषः. Chāritravardhana notices the reading.

वशिष्ठधेनोरनुयायिनं तमावर्तमानं वनिता वनान्तात् ।
पपौ निमेषालसपक्ष्मपङ्क्तिरुपोषिताभ्यामिव लोचनाभ्याम् ॥ १९ ॥
पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या ।
तदन्तरे सा विरराज धेनुर्दिनक्षपामध्यगतेव संध्या ॥ २० ॥
प्रदक्षिणीकृत्य पयस्विनीं तां सुदक्षिणा साक्षतपात्रहस्ता ।
प्रणम्य चानर्च विशालमस्याः शृङ्गान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः ॥ २१ ॥
वत्सोत्सुकापि स्तिमिता सपर्यां प्रत्यग्रहीत्सेति ननन्दतुस्तौ ।
भक्त्योपपन्नेषु हि तद्विधानां प्रसादचिह्नानि पुरःफलानि ॥ २२ ॥

१९ ॥ वशिष्ठेति । वशिष्ठधेनोरनुयायिनमनुचरं वनान्तादावर्तमानं प्रत्यागतं तं दिलीपं वनिता सुदक्षिणा निमिषेणालसा मन्दा पक्ष्मणां पङ्क्तिर्यस्याः सा। अनिमेषा सतीत्यर्थः । लोचनाभ्याम् । करणाभ्याम् । उपोषिताभ्यामिव । उपवासो भोजननिवृत्तिः । तद्वद्भ्यामिव ॥ वसतेः कर्तरि क्तः ॥ पपौ ॥ यथोपोषितोऽतितृष्णया जलमधिकं पिबति तद्वदतितृष्णयाधिकं व्यलोकयदित्यर्थः ॥

२० ॥ पुरस्कृतेति । वर्त्मनि पार्थिवेन पृथिव्या ईश्वरेण ॥ "तस्येश्वरः" इत्यञ्प्रत्ययः ॥ पुरस्कृताग्रतः कृता । धर्मस्य पत्नी धर्मपत्नी । धर्मार्थपत्नीत्यर्थः ॥ अश्वघासादिवत्तादर्थ्ये षष्ठीसमासः ॥ पार्थिवस्य धर्मपत्न्या प्रत्युद्गता सा धेनुस्तदन्तरे तयोर्दम्पत्योर्मध्ये । दिनक्षपयोर्दिनरात्र्योर्मध्यगता संध्येव । रराज ॥

२१ ॥ प्रदक्षिणीकृत्येति । अक्षतानां पात्रेण सह वर्तेते इति साक्षतपात्रौ हस्तौ यस्याः सा सुदक्षिणा पयस्विनीं प्रशस्तक्षीरां तां धेनुं प्रदक्षिणीकृत्य प्रणम्य च । अस्या धेन्वा विशालं शृङ्गान्तरं शृङ्गमध्यम् । अर्थसिद्धेः कार्यसिद्धेर्द्वारं प्रवेशमार्गमिव । आनर्चार्चयामास । अर्चतेर्भौवादिकाल्लिट् ॥

२२ ॥ वत्सोत्सुकेति । सा धेनुर्वत्सोत्सुकापि वत्स उत्कण्ठितापि स्तिमिता नि-

19. His wife, the rows of whose eye-lashes were slow in twinkling, intently looked at him (*lit.* drank him up), the follower of Vasistha's cow and who was (then) returning from the forest ground, with her eyes, as it were, long-fasting.

20. Placed in front by the ruler of the earth on the way and met in advance by the lawful consort of the king, that cow in the intervening space between them looked very much like the twilight coming between day and night.

21. Sudakshina carrying in her hands a tray full of अक्षता, went round the cow that yielded plenty of milk, and bowed to her and worshipped the spacious portion of her head between her horns, which was the gate, as it were, to the fulfilment of her object.

22. Though eager for her young, yet with patience she accepted the worship offered to her ; whereupon both of them were

21. D. R. आत्मसिद्धेः for अर्थसिद्धेः.

गुरोः सदारस्य निपीड्य पादौ समाप्य सांध्यं च विधिं दिलीपः ।
दोहावसाने पुनरेव दोग्ध्रीं भेजे भुजोच्छिन्नरिपुर्निषण्णाम् ॥ २३ ॥
तामन्तिकन्यस्तबलिप्रदीपामन्वास्य गोप्ता गृहिणीसहायः ।
क्रमेण सुप्तामनु संविवेश सुप्तोत्थितां प्रातरनूदतिष्ठत् ॥ २४ ॥
इत्थं व्रतं धारयतः प्रजार्थं समं महिष्या महनीयकीर्तेः ।
सप्त व्यतीयुस्त्रिगुणानि तस्य दिनानि दीनोद्धरणोचितस्य ॥ २५ ॥

श्चला सती सपर्यां पूजां प्रत्यग्रहीदिति हेतोस्तौ दम्पती ननन्दतु ॥ पूजास्वीकारस्यानन्दहेतुत्वमाह—भक्तेति । पूज्येष्वनुरागो भक्तिः । तयोपपन्नेषु युक्तेषु विषये तद्विधानाम् । तस्या धेन्वा विधेव विधा प्रकारो येषां तेषाम् । महतामित्यर्थः । प्रसादस्य चिह्नानि लिङ्गानि पूजास्वीकारादीनि पुरःफलानि । पुरोगतानि प्रत्यासन्नानि फलानि येषां तानि हि ॥ अविलम्बितफलसूचकलिङ्गदर्शनादानन्दो युज्यत इत्यर्थः ॥

२३ ॥ गुरोरिति । भुजोच्छिन्नरिपुर्दिलीपः सदारस्य दारैररुंधत्या सह वर्तमानस्य गुरोः । उभयोरपीत्यर्थः । पादौ निपीड्याभिवन्द्य । सांध्यं संध्यायां विहितं विधिमनुष्ठानं च समाप्य । दोहावसाने निषण्णामासीनां दोग्ध्रीमेव दोहनशीलामेव ॥ "तृन्" इति तृन्प्रत्ययः ॥ पुनर्भेजे सेवितवान् ॥ दोग्ध्रीमिति निरुपपदप्रयोगात्कामधेनुत्वं गम्यते ॥

२४ ॥ तामिति । गोप्ता रक्षको गृहिणीसहायः पत्नीद्वितीयः सन् । उभावपीत्यर्थः । अन्तिके न्यस्ता बलयः प्रदीपाश्च यस्यास्तां तथोक्तां तां पूर्वोक्तां निषण्णां धेनुमन्वास्यानूपविश्य क्रमेण सुप्तामन्वनन्तरं संविवेश सुष्वाप ॥ प्रातः सुप्तोत्थितामनूदतिष्ठदुत्थितवान् ॥ अत्रानुशब्देन धेनुराजव्यापारयोः पौर्वापर्यमुच्यते । क्रमशब्देन धेनुव्यापाराणामेव । इत्यपौनरुक्त्यम् ॥ "कर्मप्रवचनीययुक्ते—" इति द्वितीया ॥

२५ ॥ इत्थमिति । इत्थमनेन प्रकारेण प्रजार्थं संतानाय महिष्या सममभिषि-

(exceedingly) glad ; for marks of favour in those of her kind towards those who are full of devotion have the fruit (*i. e.* the reward conspicuously) before them.

23. After having bowed at the feet of his spiritual preceptor and his wife, and having finished his evening rites, Dilipa, who had destroyed his enemies with his own arms, once more waited upon the cow, who was lying at her ease after the milking was over.

24. The protector, who had his consort (*i. e.* queen) for his companion, having sat after her, near whom were placed religious offerings and evening lamps, slept after she had gradually fallen asleep, and, in the morning got up after her, awake after being asleep.

25. In this manner observing the vow with his queen in

25. B. C. F. I. with Chá., Din., Val., and Su., पालयतः for धारयतः, I. महनीयकीर्तिः for महनीयकीर्तेः.

अन्येद्युरात्मानुचरस्य भावं जिज्ञासमाना मुनिहोमधेनुः ।
गङ्गाप्रपातान्तनिरूढशष्पं गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेश ॥ २६ ॥
सा दुष्प्रधर्षा मनसापि हिंस्रैरित्यद्रिशोभाप्रहितेक्षणेन ।
अलक्षिताभ्युत्पतनो नृपेण प्रसह्य सिंहः किल तां चकर्ष ॥ २७ ॥

त्पत्न्या सह ॥ " कृताभिषेका महिषी " इत्यमरः ॥ व्रतं धारयतः महनीया पूज्या कीर्तिर्यस्य तस्य । दीनानामुद्धरणं दैन्यविमोचनम् । तत्रोचितस्य परिचितस्य तस्य नृपस्य । त्रयो गुणा आवृत्तयो येषां तानि त्रिगुणानि त्रिरावृत्तानि सप्त दिनान्येकविंशतिदिनानि व्यतीयुः ॥

२६ ॥ अन्येद्युरिति । अन्येद्युरन्यस्मिन्दिने द्वाविंशे दिने ॥ " सद्यः परुत्परारि—" इत्यादिना निपातनादव्ययम् ॥ मुनिहोमधेनुः । आत्मानुचरस्य भावमभिप्रायं दृढभक्तित्वम् ॥ " भावोऽभिप्राय आशयः " इति यादवः ॥ जिज्ञासमाना ज्ञातुमिच्छन्ती ॥ " ज्ञाश्रुस्मदृशां सनः " इत्यात्मनेपदे शानच् ॥ प्रपतत्यस्मिन्निति प्रपातः पतनप्रदेशः । गङ्गायाः प्रपातस्तस्यान्ते समीपे निरूढानि जातानि शष्पाणि बालतृणानि यस्मिंस्तत् ॥ " शष्पं बालतृणं घासः " इत्यमरः ॥ गौरीगुरोः पार्वतीपितुर्गह्वरं गुहामाविवेश ॥

२७ ॥ सेति । सा धेनुर्हिंस्रैर्व्याघ्रादिभिर्मनसापि दुष्प्रधर्षा दुर्धर्षेति हेतोरद्रिशोभायां प्रहितेक्षणेन दत्तदृष्टिना नृपेणालक्षितमभ्युत्पतनमाभिमुख्येनोत्पतनं यस्य स सिंहस्तां धेनुं प्रसह्य हठात् ॥ " प्रसह्य तु हठार्थकम् " इत्यमरः ॥ चकर्ष ॥ किलेत्यलीके ॥

---

the hope of getting issue he, who was of adorable fame and was accustomed to relieve the distressed, passed twenty-one (*lit.* three times seven) days.

26. On the following day (*i. e.* the 22nd), wishing to test the devotion (or sincerity) of her follower, the sacred cow of the Muni entered a cave of the sire of गौरी (*i. e.* the Himálaya) in which was grown young grass near a cataract of the Gangà.

27. A lion feigned to seize her forcibly without (of course) his spring (or assault) being noticed by the king who had (at the time) fixed his eyes on the beauty of the mountain (sceneries), thinking that she was too difficult to be assailed, even in thought, by any beasts of prey.

---

26. D. F. with Su., गुरुहोमधेनुः for मुनिहोमधेनुः. B. C. F. I. P. R. with Chá., Din., Val., and Su., °विरूढ° for °निरूढ.°

27. B. C. D. F. P. R. with Chá., Din., Val., and Su., दुःप्रधर्षा for **दुष्प्रधर्षा.**

तदीयमाक्रन्दितमार्तसाधोर्गुहानिबद्धप्रतिशब्ददीर्घम् ।
रश्मिष्विवादाय नगेन्द्रसक्तां निवर्तयामास नृपस्य दृष्टिम् ॥ २८ ॥
स पाटलायां गवि तस्थिवांसं धनुर्धरः केसरिणं ददर्श ।
अधित्यकायामिव धातुमय्यां लोध्रद्रुमं सानुमतः प्रफुल्लम् ॥ २९ ॥
ततो मृगेन्द्रस्य मृगेन्द्रगामी वधाय वध्यस्य शरं शरण्यः ।
जाताभिषङ्गो नृपतिर्निषङ्गादुद्धर्तुमैच्छत्प्रसभोद्धृतारिः ॥ ३० ॥

२८ ॥ तदीयमिति । गुहानिबद्धेन प्रतिशब्देन प्रतिध्वनिना दीर्घम् । तस्या इदं तदीयं । आक्रन्दितमार्तघोषणम् । आर्तेष्वापन्नेषु साधोर्हितकारिणो नृपस्य नगेन्द्रसक्तां दृष्टिम् । रश्मिषु प्रग्रहेषु ॥ " किरणप्रग्रहौ रश्मी " इत्यमरः ॥ आदायेव गृहीत्वेव । निवर्तयामास ॥

२९ ॥ स इति । धनुर्धरः स नृपः पाटलायां गवि तस्थिवांसं स्थितम् ॥ " क्वसुश्च " इति क्वसुप्रत्ययः ॥ केसरिणं सिंहम् । सानुमतोऽद्रेः । धातोर्गैरिकस्य विकारो धातुमयी ॥ तस्यामधित्यकायामूर्ध्वभूमौ ॥ " उपत्यकाद्रेरासन्ना भूमिरूर्ध्वमधित्यका " इत्यमरः ॥ " उपाधिभ्यां त्यकन्नासन्नारूढयोः " इति त्यकन्प्रत्ययः ॥ प्रफुल्लो विकसितस्तम् ॥ ' प्रफुल्ल विकसने ' इति धातोः पचाद्यच् ॥ लोध्राख्यं द्रुममिव । ददर्श ॥

३० ॥ तत इति । ततः सिंहदर्शनानन्तरं मृगेन्द्रगामी सिंहगामी । शरणं रक्षणम् ॥ " शरणं गृहरक्षित्रोः " इत्यमरः ॥ " शरणं रक्षणे गृहे " इति यादवः ॥ शरणे साधुः शरण्यः ॥ " तत्र साधुः " इति यत्प्रत्ययः ॥ प्रसभेन बलात्कारेणोद्धृ-

28. Her lowing swollen by the echo arising from the caves, drew back the sight, rivetted on the king of mountains, of the king kind to the distressed, as if drawing it by means of reins (catching as it were, in a noose of ropes).

29. That bow-man beheld the lion sitting upon the rosy cow like the full blossomed Lodhra tree on the table-land of a mountain full of red metallic substance.

30. Then the king, whose motions were as graceful as those of a lion and who was a refuge for the needy and who had conquered his enemies by his might, felt humiliated (by this sudden attack) and wished to draw an arrow from the quiver for killing he king of beasts that certainly deserved death.

---

28. F. R. read नगेन्दु° for नगेन्द्र°. C. F. I. R. with Val., and Su , °दत्तां for °सक्ताम्. Cháritravardhana also notices the reading.

29. B. C. F. I. R. with Val., and Su., रोध्र° for लोध्र°. Cháritravardhana and Dinakara with us. A. B. C. F. J. P. R. with Chà., Din., Val., and Su., प्रफुल्लम्, D. प्रफुल्तम्, also Malli., who says, " प्रफुल्तम् " इति तकारपाठे ' ञिफला विशरणे ' इति धातोः कर्तरि क्तः । उत्परस्यातः इत्युकारादेशः ॥

वामेतरस्तस्य करः प्रहर्तुर्नखप्रभाभूषितकङ्कपत्रे ।
सक्ताङ्गुलिः सायकपुङ्ख एव चित्रार्पितारम्भ इवावतस्थे ॥ ३१ ॥
बाहुप्रतिष्टम्भविवृद्धमन्युरभ्यर्णमागस्कृतमस्पृशद्भिः ।
राजा स्वतेजोभिरदह्यतान्तर्भोगीव मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः ॥ ३२ ॥
तमार्यगृह्यं निगृहीतधेनुर्मनुष्यवाचा मनुवंशकेतुम् ।
विस्माययन्विस्मितमात्मवृत्तौ सिंहोरुसत्त्वं निजगाद सिंहः ॥ ३३ ॥

ता अरयो येन स नृपती राजा जाताभिषङ्गो जातपराभवः सन् ॥ "अभिषङ्गः पराभवः" इत्यमरः ॥ वध्यस्य वधार्हस्य ॥ "दण्डादिभ्यो यः" इति यप्रत्ययः ॥ मृगेन्द्रस्य वधाय निषङ्गात्तूणीरात् ॥ "तूणोपासङ्गतूणीरनिषङ्गा इषुधिर्द्वयोः" इत्यमरः ॥ शरमुद्धर्तुमैच्छत् ॥

३१ ॥ वामेति । प्रहर्तुस्तस्य वामेतरो दक्षिणः करः । नखप्रभाभिर्भूषितानि च्छुरितानि कङ्कस्य पक्षिविशेषस्य पत्राणि यस्य तस्मिन् ॥ "कङ्कः पक्षिविशेषे स्याद्द्विजाकारे युधिष्ठिरे" इति विश्वः ॥ "कङ्कस्तु कर्कटः" इति यादवः ॥ सायकस्य पुङ्ख एव कर्तर्याख्ये मूलप्रदेशे ॥ "कर्तरी पुङ्खे" इति यादवः ॥ सक्ताङ्गुलिः सन् । चित्रार्पितारम्भश्चित्रलिखितशरोद्धरणोद्योग इव । अवतस्थे ॥

३२ ॥ बाह्विति । बाह्वोः प्रतिष्टम्भेन प्रतिबन्धेन ॥ "प्रतिबन्धः प्रतिष्टम्भः" इत्यमरः ॥ विवृद्धमन्युः प्रवृद्धरोषो राजा । मन्त्रौषधिभ्यां रुद्धवीर्यः प्रतिबद्धशक्तिर्भोगी सर्प इव ॥ "भोगी राजभुजंगयोः" इति शाश्वतः ॥ अभ्यर्णमन्तिकम् ॥ "उपकण्ठान्तिकाभ्यर्णाभ्यग्रा अप्यभितोऽव्ययम्" इत्यमरः ॥ आगस्कृतमपराधकारिणमस्पृशद्भिः स्वतेजोभिरन्तरदह्यत ॥ "अधिक्षेपाद्यसहनं तेजः प्राणात्ययेष्वपि" इति यादवः ॥

३३ ॥ तमिति । निगृहीता पीडिता धेनुर्येन स सिंहः । आर्याणां सतां गृह्यं पक्ष्यम् ॥ "पदास्वैरिबाह्यापक्ष्येषु च" इति क्यप् ॥ मनुवंशस्य केतुं चिह्नं केतुव-

---

31. But the right hand of the striker, whose fingers were stuck to the root of the arrow the heron's feathers whereof were illumined with the lustre of his nails, remained fixed like one drawn in a picture.

32. The king, like a cobra whose power has been checked by an incantation and a drug, with increased rage on account of a restraint upon his arm, began to burn internally with the fire of his energy that could not touch the offender though very near.

33. Then the lion, who had seized the cow, addressed him, who was a friend to the noble, the standard of Manu's race, and

---

31. B. R. with Chā., Din., Val., and Su., सायकपुंखे for सायकपुंखे. B. I. लग्नाङ्गुलिः for सक्ताङ्गुलिः.

33. B. C. F. I. P. R. with Chā., Din., Val., and Su., विस्मापयन् for विस्माययन्. On this Malli. says, "विस्मापयन्" इति पाठे पुगागममात्रं वक्तव्यं ।

अलं महीपाल तव श्रमेण प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात् ।
न पादपोन्मूलनशक्ति: रंहः शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य ॥ ३४ ॥
कैलासगौरं वृषमारुरुक्षोः पादार्पणानुग्रहपूतपृष्ठम् ।
अवेहि मां किंकरमष्टमूर्तेः कुम्भोदरं नाम निकुम्भमित्रम् ॥ ३५ ॥

द्व्यावर्तकम् । सिंह इवोरुसत्त्वो महाबलस्तम् । आत्मनो वृत्तौ बाहुस्तम्भरूपे व्यापारेऽभूतपूर्वत्वाद्विस्मितम् ॥ कर्तरि क्तः ॥ तं दिलीपं मनुष्यवाचा ॥ करणेन ॥ पुनर्विस्माययन्विस्मयमाश्चर्यं प्रापयन्निजगाद ॥ "स्मिङीषद्धसने" इति धातोर्णिचि वृद्धावायादेशे शतृप्रत्यये च सति विस्माययन्निति रूपं सिद्धम् ॥

३४ ॥ अलमिति । हे महीपाल तव श्रमेणालम् । साध्याभावाच्छ्रमो न कर्तव्य इत्यर्थः ॥ अत्र गम्यमानसाधनक्रियापेक्षया श्रमस्य करणत्वात्तृतीया ॥ उक्तं च न्यासोद्योते–"न केवलं श्रूयमाणैव क्रिया निमित्तं करणभावस्य । अपि तर्हि गम्यमानापि" इति ॥ "अलं भूषणपर्याप्तिशक्तिवारणवाचकम्" इत्यमरः ॥ इतोऽस्मिन्मयि ॥ सार्वविभक्तिकस्तसिः ॥ प्रयुक्तमप्यस्त्रं वृथा स्यात् ॥ तथा हि । पादपोन्मूलने शक्तिर्यस्य तत्तथोक्तं मारुतस्य रंहो वेगः शिलोच्चये पर्वते न मूर्च्छति न प्रसरति ॥

३५ ॥ कैलासेति । कैलास इव गौरं शुभ्रम् ॥ "चामीकरं च शुभ्रं च गौरमाहुर्मनीषिणः" इति शाश्वतः ॥ वृषं वृषभमारुरुक्षोरारोढुमिच्छोः। स्वस्योपरि पदं निक्षिप्य वृषमारोहतीत्यर्थः । अष्टौ मूर्तयो यस्य स तस्याष्टमूर्तेः शिवस्य पादार्पणं पादन्यासस्तदेवानुग्रहः प्रसादस्तेन पूतं पृष्ठं यस्य तं तथोक्तं निकुम्भमित्रं कुम्भोदरं नाम किंकरं मामवेहि विद्धि ॥ "पृथिवी सलिलं तेजो वायुराकाशमेव च । सूर्याचन्द्रमसौ सोमयाजी चेत्यष्ट मूर्तयः" इति यादवः ॥

---

of a valour mighty like that of a lion, in human accents thus astonishing him (the more) who was (already) surprised at his own state.

34. There is no need, O ruler of the earth, of any effort on thy part. Even if discharged, thy shafts will be of no use here. The force of the wind which is sufficient only to uproot a tree will not prevail against a mountain.

35. Be it known to thee, O King, that my name is Kumbhodara, a friend of Nikumbha; and I am a servant of the eight-formed God (S'iva), and my back is sanctified by the favour of placing his footsteps, when wishing to mount his bull white as the mount Kailàsa.

तच "नित्यं स्मयतेः" इति हेतुभयविवक्षायामेवेति "भीस्म्योर्हेतुभये" इत्यात्मनेपदे विस्मापयमान इति स्यात् । तस्मान्मनुष्यवाचा विस्माययन्निति रूपं सिद्धम् । करणविवक्षायां न कश्चिद्दोषः । B. C. F. I. P. R. with Chà., Din., Val., and Su., भूपालसिंहम् for सिंहोरुसत्त्वम्.

35. B. अवेहि for अवेहि. C. F. I. P. R. with Chà., Din,. Val., and Su., निकुम्भतुल्यम् for निकुम्भमित्रम्.

अमुं पुरः पश्यसि देवदारुं पुत्रीकृतोऽसौ वृषभध्वजेन ।
यो हेमकुम्भस्तननिःसृतानां स्कन्दस्य मातुः पयसां रसज्ञः ॥ ३६ ॥
कण्डूयमानेन कटं कदाचिद्वन्यद्विपेनोन्मथिता त्वगस्य ।
अथैनमद्रेस्तनया शुशोच सेनान्यमालीढमिवासुरास्त्रैः ॥ ३७ ॥
तदाप्रभृत्येव वनद्विपानां त्रासार्थमस्मिन्नहमद्रिकुक्षौ ।
व्यापारितः शूलभृता विधाय सिंहत्वमङ्कागतसत्त्ववृत्ति ॥ ३८ ॥

३६ ॥ अमुमिति । पुरोऽग्रतोऽमुं देवदारुं पश्यसि । इति काकुः ॥ असौ देवदारुः । वृषभो ध्वजे यस्य तेन शिवेन पुत्रीकृतः पुत्रत्वेन स्वीकृतः ॥ अभूततद्भावे च्विः ॥ यो देवदारुः स्कन्दस्य मातुर्गौर्या हेम्नः कुम्भ एव स्तनः । तस्मान्निःसृतानां पयसामम्बूनां रसज्ञः स्वादज्ञः ॥ स्कन्दपक्षे हेमकुम्भ इव स्तन इति विग्रहः ॥ पयसां क्षीराणाम् ॥ " पयः क्षीरं पयोऽम्बु च " इत्यमरः ॥ स्कन्दसमानप्रेमास्पदमिति भावः ॥

३७ ॥ कण्डूयमानेनेति । कदाचित्कटं कपोलं कण्डूयमानेन कर्षता ॥ " कण्ड्वादिभ्यो यक् " इति यक् ॥ ततः शानच् ॥ वन्यद्विपेनास्य देवदारोस्त्वगुन्मथिता ॥ अथाद्रेस्तनया गौरी । असुरास्त्रैरालीढं क्षतम् । सेनां नयतीति सेनानीः स्कन्दः ॥ " पार्वतीनन्दनः स्कन्दः सेनानीः " इत्यमरः ॥ " सत्सूद्विष- " इत्यादिना क्विप् ॥ तमिव । एनं देवदारुं शुशोच ॥

३८ ॥ तदेति । तदा तत्कालः प्रभृतिरादिर्यस्मिन्कर्मणि तत्तथा तदाप्रभृत्येव वनद्विपानां त्रासार्थे भयार्थे शूलभृता शिवेन । अङ्कं समीपमागताः प्राप्ताः सत्त्वाः प्राणिनो वृत्तिर्यस्मिंस्तत् ॥ " अङ्कः समीप उत्सङ्गे चिह्ने स्थानापराधयोः " इति केशवः ॥ सिंहत्वं विधाय । अस्मिन्नद्रिकुक्षौ गुहायामहं व्यापारितो नियुक्तः ॥

---

36. Yonder देवदारु tree, that thou seest before, has been adopted as a son by the bull-bannered-god, and has (since) become capable of appreciating flavour of Skanda's mother's milk flowing out of her breasts resembling golden jars.

37. On one occasion, the bark of this tree was peeled off by a wild elephant, while scratching his temples against it, and then on that account the daughter of the mountain (Himālaya) deeply bemoaned it as she would do Skanda (*lit.* the leader of the army of the gods), wounded by the missiles of demons.

38. From that time have I been appointed by the trident-bearing god in this mountain valley to scare away wild elephants, after having transformed me into a lion the maintenance of which is the animals that come (unsought) within his grasp.

---

36. B. with Val., and text only of Su., अयं for असौ.

38. D. मतंगजानाम् for वनद्विपानां. B. D. I. R. with Châ., Din., Val., and Su., अंकागतसत्त्ववृत्तिः for अंकागतसत्त्ववृत्ति.

तस्यालमेषा क्षुधितस्य तृप्त्यै प्रदिष्टकाला परमेश्वरेण ।
उपस्थिता शोणितपारणा मे सुरद्विषश्चान्द्रमसी सुधेव ॥ ३९ ॥
स त्वं निवर्तस्व विहाय लज्जां गुरोर्भवान्दर्शितशिष्यभक्तिः ।
शस्त्रेण रक्ष्यं यदशक्यरक्षं न तद्यशः शस्त्रभृतां क्षिणोति ॥ ४० ॥
इति प्रगल्भं पुरुषाधिराजो मृगाधिराजस्य वचो निशम्य ।
प्रत्याहतास्त्रो गिरिशप्रभावादात्मन्यवज्ञां शिथिलीचकार ॥ ४१ ॥

३९ ॥ तस्येति । परमेश्वरेण प्रदिष्टो निर्दिष्टः कालो भोजनवेला यस्याः सोपस्थिता प्राप्तैषा गोरूपा शोणितपारणा रुधिरस्य व्रतान्तभोजनम् । सुरद्विषो राहोः । चन्द्रमस इयं चान्द्रमसी सुधेव । क्षुधितस्य बुभुक्षितस्य । तस्याङ्कागतसत्त्ववृत्तेर्मे मम सिंहस्य तृप्त्या अलं पर्याप्ता ॥ "नमः स्वस्ति—" इत्यादिना चतुर्थी ॥

४० ॥ स इति । स एवमुपायशून्यस्त्वं लज्जां विहाय निवर्तस्व । भवांस्त्वं गुरोर्दर्शिता प्रकाशिता शिष्यस्य कर्तव्या भक्तिर्येन स तथोक्तोऽस्ति ॥ ननु गुरुधनं विनाश्य कथं तत्समीपं गच्छेयमत आह—शस्त्रेणेति । यद्रक्ष्यं धनं शस्त्रेणायुधेन ॥ "शस्त्रमायुधलोहयोः" इत्यमरः ॥ अशक्या रक्षा यस्य तदशक्यरक्षम् । रक्षितुमशक्यमित्यर्थः । तद्रक्ष्यं नष्टमपि शस्त्रभृतां यशो न क्षिणोति ॥ अशक्यार्थेष्वप्रतिविधानं न दोषायेति भावः ॥

४१ ॥ इतीति । पुरुषाणामधिराजो नृप इति प्रगल्भं मृगाधिराजस्य वचो निशम्य श्रुत्वा गिरिशस्येश्वरस्य प्रभावात्प्रत्याहतास्त्रः कुण्ठितास्त्रः सन्नात्मनि

---

39. For the satisfaction of me, grown hungry, this meal of blood (*i. e.* the bloody breakfast of cow) the time of which is fixed by the mighty lord and which has presented itself before me is quite sufficient, as suffices the nectar of the moon (to give satisfaction) to the enemy of the gods (*i. e.* Ràhu).

40. Do thou, therefore, abandon (the sense of) shame and return home ; thou art one who has shown the devotion of a disciple to his preceptor. That charge, which it is impossible to protect by arms, does not (if lost) impair the reputation of those who hold weapons (*i. e.* warriors).

41. In this manner the king of the mortals, whose missile had been made useless (*i. e.* impeded in its course) by the power of the mountain-resident god, listened to these proud words of the king of beasts and (accordingly) moderated his feeling of self-reproach.

---

39. B. D. कला for सुधा.

40. B. with Chá., and Su., गुरो for गुरोः. B. with Chà., Din., Val., and Su., क्षणोति for क्षिणोति. Cháritravardhana also notices this reading. F. I. R. with Val., and Su., यदशक्यरक्ष्यं for यदशक्यरक्षं.

प्रत्यब्रवीच्चैनमिषुप्रयोगे तत्पूर्वसङ्गे वितथप्रयत्नः।
जडीकृतस्त्र्यम्बकवीक्षितेन वज्रं मुमुक्षन्निव वज्रपाणिः ॥ ४२ ॥
संरुद्धचेष्टस्य मृगेन्द्र कामं हास्यं वचस्तद्यदहं विवक्षुः।
अन्तर्गतं प्राणभृतां हि वेद सर्वं भवान्भावमतोऽभिधास्ये ॥ ४३ ॥

विषयेऽवज्ञामपमानं शिथिलीचकार। तत्याजेत्यर्थः। अवज्ञातोऽहमिति निर्वेदं न प्रापेत्यर्थः॥ समानेषु हि क्षत्रियाणामभिमानः। न सर्वेश्वरं प्रतीति भावः॥

४२॥ प्रतीति। स एव पूर्वः प्रथमः सङ्गः प्रतिबन्धो यस्य तस्मिंस्तत्पूर्वसङ्ग इषुप्रयोगे वितथप्रयत्नो विफलप्रयासः। अत एव वज्रं कुलिशं मुमुक्षन्मोक्तुमिच्छन्। अम्बकं लोचनम्॥ "दृग्दृष्टिनेत्रलोचनचक्षुर्नयनाम्बकेक्षणाक्षीणि" इति हलायुधः॥ त्रीण्यम्बकानि यस्य स त्र्यम्बको हरः। तस्य वीक्षितेन वीक्षणेन जडीकृतो निष्पन्दीकृतः। वज्रं पाणौ यस्य स वज्रपाणिरिन्द्रः॥ "प्रहरणार्थेभ्यः परे निष्ठासप्तम्यौ भवत इति वक्तव्यम्" इति पाणेः सप्तम्यन्तस्योत्तरनिपातः॥ स इव स्थितो नृप एनं सिंहं प्रत्यब्रवीच्च॥ "बाहुं सवज्रं शक्रस्य क्रुद्धस्यास्तम्भयत्प्रभुः" इति महाभारते॥

४३॥ संरुद्धेति। हे मृगेन्द्र। संरुद्धचेष्टस्य प्रतिबद्धव्यापारस्य मम तद्वचो वाक्यं कामं हास्यं परिहसनीयम्। यद्वचः॥ "स त्वं मदीयेन" इत्यादिकमहं विवक्षुर्वक्तुमिच्छुरस्मि। तर्हि तूष्णीं स्थीयतामित्याशङ्क्येश्वरकिंकरत्वात्सर्वज्ञं त्वां प्रति न हास्यमित्याह–अन्तरीति। हि यतो भवान्प्राणभृतान्तर्गतं हृद्गतं वाग्वृत्त्या बहिरप्रकाशितमेव सर्वं भावं वेद वेत्ति॥ "विदो लटो वा" इति णलादेशः॥ अतोऽहमभिधास्ये वक्ष्यामि॥ वच इति प्रकृतं कर्म संबध्यते॥ अन्ये त्वादृग्वचनमाकर्ण्यासंभावितार्थमेतदित्युपहसन्ति। अतस्तु मौनमेव भूषणम्। त्वं तु वाङ्मनसयोरेकविध एवायमिति जानासि॥ अतोऽभिधास्ये यद्वचोऽहं विवक्षुरित्यर्थः॥

---

42. He, baffled in his attempt of discharging an arrow—which for the first time knew what a check was,—like Indra (*lit.* in whose hand there is the thunder-bolt) when about to discharge the thunder but suddenly paralysed by the mysterious gaze of the three-eyed god, thus addressed him.

43. What am I about to say, whose movements are strictly checked, will be most likely, O lord of beasts, regarded as laughable by you, but because you know all the inward feelings of living beings, I may give it vent.

---

42. B. R. प्रत्यब्रवीद्रैनं for प्रत्यब्रवीच्चैनं. A. D. भङ्गे for सङ्गे. A. D. P. with Su., वीक्षणेन for वीक्षितेन. After the 42nd verse Vallabha gives the following spurious stanza. He says, अत्र पाठांतरं॥ प्रत्याह चैनं शरमोक्षवन्ध्यो मा पत्र पत्री [?] स्वरभेदमाप्तः। महीपतेर्ध्वनिनाधिरूढस्तुलामसारेण शरद्रुनेन॥ Châritravardhana also notices this reading and says, "प्रत्याह" इति पाठे प्रत्युवाचार्थेऽव्ययं.

43. C. F. I. R. with Châ., Din., Val., and Su., संरुद्धचेष्टस्तु, B. संरुद्धचेष्टश्च for संरुद्धचेष्टस्य. D. with Châ., and Din., तु for हि.

मान्यः स मे स्थावरजंगमानां सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुः ।
गुरोरपीदं धनमाहिताग्नेर्नश्यत्पुरस्तादनुपेक्षणीयम् ॥ ४४ ॥
स त्वं मदीयेन शरीरवृत्तिं देहेन निर्वर्तयितुं प्रसीद ।
दिनावसानोत्सुकबालवत्सा विसृज्यतां धेनुरियं महर्षेः ॥ ४५ ॥
अथान्धकारं गिरिगह्वराणां दंष्ट्रामयूखैः शकलानि कुर्वन् ।
भूयः स भूतेश्वरपार्श्ववर्ती किंचिद्विहस्यार्थपतिं बभाषे ॥ ४६ ॥

४४ ॥ मान्य इति । प्रत्यवहारः प्रलयः । स्थावराणां तरुशैलादीनां जंगमानां मनुष्यादीनां सर्गस्थितिप्रत्यवहारेषु हेतुः स ईश्वरो मे मम मान्यः पूज्यः । अलङ्घ्यशासन इत्यर्थः । शासनं च "सिंहत्वमङ्कागतसत्त्ववृत्ति" इत्युक्तरूपम् ॥ तर्हि विसृज्य गम्यताम् । नेत्याह-गुरोरपीति । पुरस्तादग्रे नश्यदिदमाहिताग्नेर्गुरोर्धनमपि गोरूपमनुपेक्षणीयम् ॥ आहिताग्नेरिति विशेषणेनानुपेक्षाकारणं हविःसाधनत्वं सूचयति ॥

४५ ॥ स इति । सोऽङ्कागतसत्त्ववृत्तिस्त्वं मदीयेन देहेन शरीरस्य वृत्तिं जीवनं निर्वर्तयितुं संपादयितुं प्रसीद ॥ दिनावसान उत्सुको माता ममागमिष्यतीत्युत्कण्ठितो बालवत्सो यस्याः सा महर्षेरियं धेनुर्विसृज्यताम् ॥

४६ ॥ अथेति । अथ भूतेश्वरस्य पार्श्ववर्त्यनुचरः स सिंहो गिरेर्गह्वराणां गुहानाम् ॥ "देवखातबिले गुहा । गह्वरम्" इत्यमरः ॥ अन्धकारं ध्वान्तं दंष्ट्राम-

41. True, my respect is due to that god, who is the author (*lit.* cause) of the creation, preservation, and destruction of all things, animate and inanimate; but (it is also my duty), on the other hand, not to allow this property of my preceptor, who maintains his sacrificial fire, to be destroyed before my eyes.

45. Such a one as thou, therefore, be pleased to appease thy hunger with this body of mine; and let this cow of the great sage, whose young calf is anxious to see her at the close of day, be set at liberty.

46. Then partly dissipating (*lit.* dividing into pieces) the darkness of the mountain-caves with the rays of his white teeth, laughed a little the servant of the lord of all beings; and again spoke to the lord of the wealth.

44. R. with Val., प्रत्युपहार° for प्रत्यवहार°.

45. C. with Cha., and Din., यतस्व for प्रसीद. Châritravardhana also notices the reading of Mallinâtha. B. C. F. I. P. R. with Chá., Din., Val., and Su., विमुच्यताम् for विसृज्यताम्.

46. B. R. with Chà., Din., Val., and Su., गिरिकन्दराणां for गिरिगह्वराणां. Vallabha's text gives °गह्वराणां, but his commentary reads °कन्दराणां. B. C. R. with Chà., Din., Val., and Su, °मयूखैः for °मयूखैः. D. शकलं प्रकुर्वन् for शकलानि कुर्वन्.

एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च ।
अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन्विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम् ॥ ४७ ॥
भूतानुकम्पा तव चेदियं गौरेका भवेत्स्वस्तिमती त्वदन्ते ।
जीवन्पुनः शश्वदुपप्लवेभ्यः प्रजाः प्रजानाथ पितेव पासि ॥ ४८ ॥
अथैकधेनोरपराधचण्डाद्गुरोः कृशानुप्रतिमाद्बिभेषि ।
शक्योऽस्य मन्युर्भवता विनेतुं गाः कोटिशः स्पर्शयता घटोध्नीः ॥४९॥

यूखैः शकलानि खण्डानि कुर्वन् । निरस्यन्नित्यर्थः । किंचिद्विहस्यार्थपतिं नृपं भूयो बभाषे ॥ हासकारणम् ॥ "अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन्" इति वक्ष्यमाणं द्रष्टव्यम् ॥

४७ ॥ एकेति । एकातपत्रमेकच्छत्रं जगतः प्रभुत्वं स्वामित्वम् । नवं वयो यौवनम् । इदं कान्तं रम्यं वपुश्च । इत्येवं बहु । अल्पस्य हेतोरल्पेन कारणेन । अल्पफलायेत्यर्थः ॥ "षष्ठी हेतुप्रयोगे" इति षष्ठी ॥ हातुं त्यक्तुमिच्छंस्त्वं मे मम । विचारे कार्याकार्यविमर्शे मूढो मूर्खः । प्रतिभासि ॥

४८ ॥ भूतेति। तव भूतेष्वनुकम्पा दया चेत् ॥ "कृपा दयानुकम्पा स्यात्" इत्यमरः ॥ कृपैव वर्तते चेदित्यर्थः ॥ तर्हि त्वदन्ते तव नाशे सतीयमेका गौः । स्वस्ति क्षेममस्या अस्तीति स्वस्तिमती । भवेत् । जीवेदित्यर्थः ॥ "स्वस्त्याशीः क्षेमपुण्यादौ" इत्यमरः ॥ हे प्रजानाथ जीवन्पुनः पितेव प्रजा उपप्लवेभ्यो विपद्भ्यः शश्वत्सदा ॥ "पुनः सदार्थयोः शश्वत्" इत्यमरः ॥ पासि रक्षसि । स्वप्राणव्ययेनैकधेनुरक्षणाद्वरं जीवितेनैव शश्वदखिलजगत्त्राणमित्यर्थः ॥

४९ ॥ 'न धर्मलोपादियं प्रवृत्तिः' किं तु गुरुभयादित्यत आह ॥ अथेति । अथेति पक्षान्तरे । अथ वा । एकैव धेनुर्यस्य तस्मात् । अयं कोपकारणोपन्यास

47. Thou dost not seem to be wise in thy decision, O King, in thus offering to sacrifice so much as thy sovereignty over the world with only one imperial umbrella (over thy head), thy tender youth, and this comely form, for a trifle (like this beast).

48. If you entertain a feeling of compassion for (other) creatures, this single cow will be safe on your destruction (*i. e.* death) ; but if you live, you will, O lord of people, ever protect your people (or subjects), as their father, from all their troubles.

49. But if you fear to meet the great displeasure of your single-cowed preceptor, who is the very image of fire, it is in *your* power to allay his anger by presenting him crores of cows, whose udders are as big as pitchers of water (*i. e.* having ample and full udders).

47. D. दातुम् for हातुम्.

49. B. C. F. R. with Val., and Su., °दण्डात् for °चण्डात्. Chāritravardhana and Dinakara notice the reading of Vallabha and others. C. P. R. कल्पयता for स्पर्शयता.

तद्रक्ष कल्याणपरंपराणां भोक्तारमूर्जस्वलमात्मदेहम् ।
महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नमृद्धं हि राज्यं पदमैन्द्रमाहुः ॥ ५० ॥
एतावदुक्त्वा विरते मृगेन्द्रे प्रतिस्वनेनास्य गुहागतेन ।
शिलोच्चयोऽपि क्षितिपालमुच्चैः प्रीत्या तमेवार्थमभाषतेव ॥ ५१ ॥

इति विज्ञेयम् । अत एवापराधे गर्वोपेक्षालक्षणे सति चण्डाइतिकोपनात् ॥ " चण्डस्त्वत्यन्तकोपनः " इत्यमरः ॥ अत एव कृशानुः प्रतिमोपमा यस्य तस्माद्भिकल्पाद्गुरोर्बिभेषि । इति काकुः ॥ " भीत्रार्थानां भयहेतुः " इत्यपादानात्पञ्चमी ॥ अल्पवित्तस्य धनहानिरतिदुःसहेति भावः । अस्य गुरोर्मन्युः क्रोधः ॥ " मन्युर्दैन्ये क्रतौ क्रुधि " इत्यमरः ॥ घटा इवोधांसि यासां ता घटोध्नीः ॥ " ऊधसोऽनङ् " इत्यनङादेशः ॥ " बहुव्रीहेरूधसो ङीष् " इति ङीष् ॥ कोटिशो गाः स्पर्शयता प्रतिपादयता ॥ " विश्राणनं वितरणं स्पर्शनं प्रतिपादनम् " इत्यमरः ॥ भवता विनेतुमपनेतुं शक्यः ॥

५० ॥ तदिति । तत्तस्मात्कारणात्कल्याणपरंपराणां भोक्तारम् ॥ कर्मणि षष्ठी ॥ ऊर्जो बलमस्यास्तीत्यूर्जस्वलम् ॥ " ज्योत्स्नातमिस्रा–" इत्यादिना वलच्प्रत्ययान्तो निपातः । आत्मदेहं रक्ष ॥ ननु गामुपेक्ष्यात्मदेहरक्षणे स्वर्गहानिः स्यात् । नेत्याह—महीतलेति । ऋद्धं समृद्धं राज्यं महीतलस्पर्शनमात्रेण भूतलसम्बन्धमात्रेण भिन्नमैन्द्रमिन्द्रसम्बधि पदं स्थानमाहुः ॥ स्वर्गान्न भिद्यत इत्यर्थः ॥

५१ ॥ एतावदिति । मृगेन्द्र एतावदुक्त्वा विरते सति गुहागतेनास्य सिंहस्य प्रतिस्वनेन शिलोच्चयः शैलोऽपि प्रीत्या तमेवार्थं क्षितिपालमुच्चैरभाषतेव । इत्युत्प्रेक्षा ॥ भाषिरयं ब्रुविसमानार्थत्वाद्विकर्मकः । ब्रुविस्तु द्विकर्मकेषु पठितः । तदुक्तम्—" दुहियाचिरुधिप्रच्छिभिक्षिचिञामुपयोगनिमित्तमपूर्वविधौ । ब्रुविशासिगुणेन च यत्सचते तदकीर्तितमाचरितं कविना " इति ॥

---

50. Preserve then your own body which possesses strength and which is worth (or capable of) enjoying a series of blessings; for the prosperous kingdom is said to be the position of Indra only different from it because of its contact with the surface of the earth (*i. e.* you hold your sway on earth &c.).

51. After having said this, when the speech of the king of beasts ceased, even the mountain, by means of its (lion's) echoes resounded in the caves, loudly repeated the same purport (of request) to the protector of the earth, as if with great pleasure.

---

50. Vallabha in his text reads महीतलस्पर्शनभिन्नमात्रं, but the reading of his commentary does not differ from our text.

51. A. C. with Cha., and Din., read आत्मगुहागतेन for अस्य गुहागतेन ; and explain :—आत्मगुहागतेन = निजकंदरास्थितेन.

निशम्य देवानुचरस्य वाचं मनुष्यदेवः पुनरप्युवाच ।
धेन्वा तदध्यासितकातराक्ष्या निरीक्ष्यमाणः सुतरां दयालुः ॥ ५२ ॥
क्षतात्किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्त्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः ।
राज्येन किं तद्विपरीतवृत्तेः प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा ॥ ५३ ॥
कथं नु शक्योऽनुनयो महर्षेर्विश्राणनाच्चान्यपयस्विनीनाम् ।
इमामनूनां सुरभेरवेहि रुद्रौजसा तु प्रहृतं त्वयास्याम् ॥ ५४ ॥

५२ ॥ निशम्येति । देवानुचरस्येश्वरकिङ्करस्य सिंहस्य वाचं निशम्य मनुष्यदेवो राजा पुनरप्युवाच । किंभूतः सन् । तेन सिंहेन यदध्यासितं व्याक्रमणम् ॥ नपुंसके भावे क्तः ॥ तेन कातरे अक्षिणी यस्यास्तया ॥ " बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात्षच् " इति षच् ॥ " षिद्गौरादिभ्यश्च " इति ङीष् ॥ किं वा वक्ष्यतीति भीत्यैवं स्थितयेत्यर्थः । धेन्वा निरीक्ष्यमाणः । अत एव सुतरां दयालुः सन् ॥ सुतरामित्यत्र ॥ " द्विवचनविभज्य—" इत्यादिना सुशब्दात्तरप् ॥ " किमेत्तिङव्यय—" इत्यादिनाम्प्रत्ययः ॥ " तद्धितश्चासर्वविभक्तिः " इत्यव्ययसंज्ञा ॥

५३ ॥ किमुवाचेत्याह ॥ क्षतादिति ॥ " क्षणु हिंसायाम् " इति धातोः संपदादित्वात्क्विप् ॥ " गमादीनाम् " इति वक्तव्यादनुनासिकलोपे तुगागमे च क्षदिति रूपं सिद्धम् ॥ क्षतो नाशात् त्रायत इति क्षत्त्रः ॥ सुपीति योगविभागात्कः ॥ तामेतां व्युत्पत्तिं कविरर्थतोऽनुक्रामति—क्षतादित्यादिना ॥ उदग्र उन्नतः क्षत्त्रस्य क्षत्त्रवर्णस्य शब्दो वाचकः । क्षत्त्रशब्द इत्यर्थः । क्षतात्त्रायत इति व्युत्पत्त्या भुवनेषु रूढः किल प्रसिद्धः खलु । नाश्वकर्णादिवत्केवलरूढः । किं तु पङ्कजादिवद्योगरूढ इत्यर्थः ॥ ततः किमित्यत आह—तस्य क्षत्त्रशब्दस्य विपरीतवृत्तेर्विरुद्धव्यापारस्य क्षतत्त्राणमकुर्वतः पुंसो राज्येन किम् । उपक्रोशमलीमसैर्निन्दामलिनैः ॥ " उपक्रोशो जुगुप्सा च कुत्सा निन्दा च गर्हणे " इत्यमरः ॥ " ज्योत्स्नातमिस्रा--" इत्यादिना मलीमसशब्दो निपातितः ॥ तैः प्राणैर्वा किम् । निन्दितस्य सर्वं व्यर्थमित्यर्थः । एतेन " एकातपत्त्रम् " इत्यादिना श्लोकद्वयेनोक्तं प्रत्युक्तमिति वेदितव्यम् ॥

५४ ॥ " अथैकधेनोः " इत्यत्रोत्तरमाह ॥ कथमिति । अनुनयः क्रोधापनयः ।

52. Having heard the speech of the servant of the god (*Siva*), the king of men even much more compassionate (than before) because of his being looked at by the cow whose eyes were tremulous through fear under his (lion's) grasp, thus rejoined to his words.

53. No doubt the high-sounding epithet of क्षत्र is so called because it is commonly known all over worlds that it protects (others) from death ; to one whose conduct is contrary to this spirit of what use is either kingdom or life stained by ignominy !

54. And again how is it possible to avert the wrath of the

52. D. F. वाचः for वाचं. B. I. R. with Cha., Val., and Din., तदध्यासनकातराक्ष्या for तदध्यासितकातराक्ष्या.

54. A. D. च for नु. A. D. शक्यानुनयः for शक्योऽनुनयः. Charitra-

सेयं स्वदेहार्पणनिष्क्रयेण न्याय्या मया मोचयितुं भवत्तः ।
न पारणा स्याद्विहता तवैवं भवेदलुप्तश्च मुनेः क्रियार्थः ॥ ५५ ॥
भवानपीदं परवानवैति महान् हि यत्नस्तव देवदारौ ।
स्थातुं नियोक्तुर्न हि शक्यमग्रे विनाश्य रक्ष्यं स्वयमक्षतेन ॥ ५६ ॥

चकारो वाकारार्थः । महर्षेरनुनयो वान्यासां पयस्विनीनां दोग्ध्रीणां गवां विश्राणनाद्दानात्कथं नु शक्यः । न शक्य इत्यर्थः ॥ अत्र हेतुमाह--इमां गां सुरभेः कामधेनोः ॥ " पञ्चमी विभक्ते " इति पञ्चमी ॥ अनूनामन्यूनामवेहि जानीहि ॥ तर्हि कथमस्याः परिभवोऽभूदित्याह—रुद्रौजसेति । अस्यां गवि त्वया । कर्त्रा । प्रहृतं नु प्रहारस्तु ॥ नपुंसके भावे क्तः ॥ रुद्रौजसेश्वरसामर्थ्येन । न तु तवेत्यर्थः ॥ " सप्तम्यधिकरणे च " इति सप्तमी ॥

५५ ॥ तर्हि किं चिकीर्षितमित्यत्राह ॥ सेयमिति । सेयं गौर्मया । निष्क्रीयते प्रत्याह्रियतेऽनेन परगृहीतमिति निष्क्रयः प्रतिशीर्षकम् ॥ " एरच् " इत्यच्प्रत्ययः ॥ स्वदेहार्पणमेव निष्क्रयस्तेन भवत्तस्त्वत्तः ॥ पञ्चम्यास्तसिल् ॥ मोचयितुं न्याय्या न्यायादनपेता ॥ युक्तेत्यर्थः ॥ " धर्मपथ्यर्थ—" इत्यादिना यत्प्रत्ययः ॥ एवं सति तव पारणा भोजनं विहता न स्यात् ॥ मुनेः क्रिया होमादिः । स एवार्थः प्रयोजनम् । स चालुप्तो भवेत् ॥ स्वप्राणव्ययेनापि स्वामिगुरुधनं संरक्ष्यमिति भावः ॥

५६ ॥ अत्र भवानेव प्रमाणमित्याह ॥ भवानिति । परवान्स्वामिपरतन्त्रो भवानपीदं वक्ष्यमाणमवैति । भवतानुभूयत एवेत्यर्थः ॥ " शेषे प्रथमः " इति प्रथमपुरुषः ॥ किमित्यत आह—हि यस्माद्धेतोः ॥ " हि हेताववधारणे " इत्यमरः ॥ तव देवदारौ विषये महान्यत्नः । महता यत्नेन रक्ष्यत इत्यर्थः ॥ इदं शब्दोक्तमर्थं दर्शयति स्थातुमिति । रक्ष्यं वस्तु विनाश्य विनाशं गमयित्वा स्वयमक्षतेनात्रणेन । नियुक्तेनेति शेषः । नियोक्तुः स्वामिनोऽग्रे स्थातुं शक्यं न हि ॥

great sage by offering other cows? Know that this cow is in no way inferior to Surabhi, and it is only through the influence of the god Rudra that you have been able to attack her.

55. Accordingly, she is perfectly entitled to be liberated by me from you by the offer of my body as ransom; for this being agreed to, neither shall your dinner-after-fast be violated, nor the means of the sage's rites be destroyed.

56. Since because there is a great effort of yours towards protecting this pine tree, you too, dependent upon another will be able to understand me when I say, that it is impossible for one to stand unwounded before his employer after having allowed the charge to be destroyed.

vardhana also notices this reading. B. C. F. I. P. R. with Val., Din., and Su., अन्य for चान्य. A. D. F. नु, I. हि, for तु.

55. R. स्याद्विनथा ननैवं for स्याद्विहता तवैवं. R. कृपार्थः for क्रियार्थः.

56. B. C. F. I. R. with Val., and Su., यदशक्यम् for न हि शक्यम्.

किमप्यहिंस्यस्तव चेन्मतोऽहं यशःशरीरे भव मे दयालुः ।
एकान्तविध्वंसिषु मद्विधानां पिण्डेष्वनास्था खलु भौतिकेषु ॥ ५७ ॥
सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहुर्वृत्तः स नौ संगतयोर्वनान्ते ।
तद्भूतनाथानुग नार्हसि त्वं सम्बन्धिनो मे प्रणयं विहन्तुम् ॥ ५८ ॥
तथेति गामुक्तवते दिलीपः सद्यः प्रतिष्टम्भविमुक्तबाहुः ।
स न्यस्तशस्त्रो हरये स्वदेहमुपानयत्पिण्डमिवामिषस्य ॥ ५९ ॥

५७ ॥ सर्वथा चेतदप्रतिहार्यमित्याह । किमिति । किमपि किं वाहं तवाहिंस्योऽवध्यो मतश्चेत्तर्हि मे यश एव शरीरं तस्मिन्दयालुः कारुणिको भव ॥ ननु मुख्यमुपेक्ष्यामुख्यशरीरे कोऽभिनिवेशः । अत आह—एकान्तेति । मद्विधानां मादृशानां विवेकिनामेकान्तविध्वंसिष्ववश्यविनाशिषु भौतिकेषु पृथिव्यादिभूतविकारेषु पिण्डेषु शरीरेष्वनास्था खल्वनपेक्षैव ॥ " आस्था त्वालम्बनास्थानयत्नापेक्षासु कथ्यते " इति विश्वः ॥

५८ ॥ सौहार्दादहमनुसरणीयोऽस्मीत्याह । सम्बन्धमिति । सम्बन्धं सख्यम् । आभाषणमालापः पूर्वं कारणं यस्य तमाहुः ॥ " स्यादाभाषणमालापः " इत्यमरः ॥ स तादृक्सम्बन्धो वनान्ते संगतयोर्मिलितयोर्नौ वृत्तो जातः । तत्तस्मात् हे भूतनाथानुग शिवानुचर । एतेन तस्य महत्त्वं सूचयति । अत एव सम्बन्धिनो मित्रस्य मे प्रणयं याञ्चाम् ॥ " प्रणयास्त्वमी । विश्रम्भयाञ्चाप्रेमाणः " इत्यमरः ॥ विहन्तुं नार्हसि ॥

५९ ॥ तथेति । तथेति गामुक्तवते हरये सिंहाय ॥ " कपौ सिंहे सुवर्णे च वर्णे विष्णौ हरिं विदुः " इति शाश्वतः ॥ सद्यस्तत्क्षणे प्रतिष्टम्भात्प्रतिबन्धाद्विमुक्तो बाहुर्यस्य स दिलीपः । न्यस्तशस्त्रस्त्यक्तायुधः सन् । स्वदेहम् । आमिषस्य ॥

57. Or, if you think very much the same that I should be uninjured, then be kind to my body made up of fame. For, in truth, persons like myself have little regard for material lumps (*i. e.* bodies) framed out of earth and other elements and destined to perish.

58. The friendship proceeds from conversation, they say; accordingly it is formed between us two after our meeting together in the midst of this forest; do not refuse, then, O follower of the lord of living beings, to comply with this request of mine, now that I have become your friend.

59. 'So be it,' the lion replied and दिलीप, who had his arm instantly released from restraint, laid down his weapon and offered his body to the lion, as if it was a lump of flesh.

58. B. with Chá., Din., and Su., जातः for वृत्त .

59. Cháritravardhana and Dinakara appear to have read तथेति गां मुक्तवते " &c. B. F. I. R. with Cha., Din., Val., and Su., सन्यस्त° for स न्यस्त°.

8

तस्मिन्क्षणे पालयितुः प्रजानामुत्पश्यतः सिंहनिपातमुग्रम् ।
अवाङ्मुखस्योपरि पुष्पवृष्टिः पपात विद्याधरहस्तमुक्ता ॥ ६० ॥
उत्तिष्ठ वत्सेत्यमृतायमानं वचो निशम्योत्थितमुत्थितः सन् ।
ददर्श राजा जननीमिव स्वां गामग्रतः प्रस्रविणीं न सिंहम् ॥ ६१ ॥
तं विस्मितं धेनुरुवाच साधो मायां मयोद्भाव्य परीक्षितोऽसि ।
ऋषिप्रभावान्मयि नान्तकोऽपि प्रभुः प्रहर्तुं किमुतान्यहिंस्राः ॥ ६२ ॥

"पललं क्रव्यमामिषम्" इत्यमरः ॥ पिण्डं कवलमिव । उपानयत्समर्पितवान् । एतेन निर्ममत्वमुक्तम् ॥

६० ॥ तस्मिन्निति । तस्मिन्क्षण उग्रं सिंहनिपातमुत्पश्यत उत्प्रेक्षमाणस्य तर्कयतोऽवाङ्मुखस्याधोमुखस्य ॥ "स्यादवाङप्यधोमुखः" इत्यमरः ॥ प्रजानां पालयितू राज्ञ उपर्युपरिष्टात् ॥ "उपर्युपरिष्टात्" इति निपातः ॥ विद्याधराणां देवविशेषाणां हस्तैर्मुक्ता पुष्पवृष्टिः । पपात ॥

६१ ॥ उत्तिष्ठेति । राजा । अमृतमिवाचरतीत्यमृतायमानं ॥ "उपमानादाचारे" इति क्यच् ॥ ततः शानच् ॥ उत्थितमुत्पन्नं "हे वत्स उत्तिष्ठ" इति वचो निशम्य श्रुत्वा । उत्थितः सन् ॥ अस्तेः शतृप्रत्ययः । अग्रतोऽग्रे प्रस्रवः क्षीरस्रावोऽस्ति यस्याः सा तां प्रस्रविणीं गां स्वां जननीमिव ददर्श । सिंहं न ददर्श ॥

६२ ॥ तमिति । विस्मितमाश्चर्यं गतम् ॥ कर्तरि क्तः ॥ तं दिलीपं धेनुरुवाच ॥ किमित्यत्राह–हे साधो मया मायामुद्भाव्य कल्पयित्वा परीक्षितोऽसि । ऋषिप्रभावान्मय्यन्तको यमोऽपि प्रहर्तुं न प्रभुर्न समर्थः । अन्ये हिंस्राः घातुकाः ॥ "शरारुर्घातुको हिंस्रः" इत्यमरः ॥ "नमिकम्पि–" इत्यादिना रप्रत्ययः ॥ किमुत सुष्ठु । न प्रभव इति योज्यम् ॥ "बलवत्सुष्ठु किमुत स्वत्यतीव च निर्भरे" इत्यमरः ॥

---

60. Expecting the dreadful bound of the lion the protector of the people sat with his face looking downwards, and at that moment showers of flowers fell upon him from the sky, discharged by the hands of the Vidyâdharas.

61. "Rise up my son."—exclaimed a voice; and the king hearing the words sweet like nectar got up and saw before him, like his own mother, the cow discharging milk and nowhere the lion!

62. The cow thus addressed the wondering monarch :—'I created that delusive phantom (or illusion) to test thy faith, my good man'; through the power of the sage even the god of death has no power to strike at me, what then of other beasts of prey (*i. e.* far less such savages)?

---

60. B. D. F. R. अधोमुखस्य for अवाङ्मुखस्य. Vallabha's text reads अधोमुखस्य, while his commentary gives अवाङ्मुखस्य.

62. I. गुरुप्रभावात् for ऋषिप्रभावात्.

भक्त्या गुरौ मय्यनुकम्पया च प्रीतास्मि ते पुत्र वरं वृणीष्व ।
न केवलानां पयसां प्रसूतिमवेहि मां कामदुघां प्रसन्नाम् ॥ ६३ ॥
ततः समानीय स मानितार्थी हस्तौ स्वहस्तार्जितवीरशब्दः ।
वंशस्य कर्तारमनन्तकीर्तिं सुदक्षिणायां तनयं ययाचे ॥ ६४ ॥
सन्तानकामाय तथेति कामं राज्ञे प्रतिश्रुत्य पयस्विनी सा ।
दुग्ध्वा पयः पत्त्रपुटे मदीयं पुत्रोपभुङ्क्ष्वेति तमादिदेश ॥ ६५ ॥

६३ ॥ भक्त्येति । हे पुत्र गुरौ भक्त्या । मय्यनुकम्पया च । ते तुभ्यं प्रीतास्मि ॥ " क्रियाग्रहणमपि कर्तव्यम् " इति चतुर्थी ॥ वरं देवेभ्यो वरणीयमर्थम् ॥ " देवाद्वृते वरः श्रेष्ठे त्रिषु क्लीबे मनाक्प्रिये " इत्यमरः ॥ वृणीष्व स्वीकुरु । तथा हि मां केवलानां पयसां प्रसूतिं कारणं नावेहि न विद्धि । किं तु प्रसन्नां माम् । कामान्दोग्धीति कामदुघा । तामवेहि ॥ " दुहः कब्घश्च " इति कप्प्रत्ययः ॥

६४ ॥ तत इति । ततो मानितार्थी स्वहस्तार्जितो वीर इति शब्दो येन सः । एतेनास्य दातृत्वं दैन्यराहित्यं चोक्तम् । स राजा हस्तौ समानीय संधाय । अञ्जलिं बध्द्वेत्यर्थः । वंशस्य कर्तारं प्रवर्तयितारम् ॥ अत एव रघुकुलमिति प्रसिद्धिः ॥ अनन्तकीर्तिं स्थिरयशसं तनयं सुदक्षिणायां ययाचे ॥

६५ ॥ संतानेति । सा पयस्विनी गौः । संतानं कामयत इति संतानकामः ॥ " कर्मण्यण् " ॥ तस्मै राज्ञे तथेति । काम्यत इति कामो वरः ॥ कर्मार्थे घञ्प्रत्ययः ॥ तं प्रतिश्रुत्य प्रतिज्ञाय हे पुत्र मदीयं पयः पत्त्रपुटे पत्त्रनिर्मिते पात्रे दुग्ध्वोपभुङ्क्ष्व पिबेति । तमादिदेशाज्ञापितवती ॥

---

63. I am pleased with thee for thy devotion to thy preceptor and (also) for thy compassion for me ; ask any boon of me, my son ; do not think me that I can produce milk alone, if pleased I can also grant (the fulfilment of one's) desires.

64. Then the king, who honoured the supplicants and who by the dint of his arms had won for himself the name of hero, folded both his hands and prayed for the birth from सुदक्षिणा, of a son of endless glory, and who would be the founder of his dynasty.

65. 'So be it', said the cow, of copious milk, and after having granted the king the desired boon, who (ardently) longed for issue, ordered him thus :—extract, my son, in a vessel of leaves my milk, and then drink it up.

---

63. A. B. C. I. R. with Val., and Su., वत्स for पुत्र. We with D. F. J. P. supported by Cháritravardhana and Dinakara.

64. B. C. I. P. R. with Chá., Din., Val., and Su., समानितार्थी for स मानितार्थी. I. R. with Val., अनन्तकीर्तिः for अनन्तकीर्तिं.

65. D. उपयुङ्क्ष्व for उपभुङ्क्ष्व. So also Mallinátha who says ' उपयुङ्क्ष्व ' इति वा पाठः.

वत्सस्य होमार्थविधेश्च शेषमृषेरनुज्ञामधिगम्य मातः ।
ऊधस्यमिच्छामि तवोपभोक्तुं षष्ठांशमुर्व्या इव रक्षितायाः ॥ ६६ ॥
इत्थं क्षितीशेन वशिष्ठधेनुर्विज्ञापिता प्रीततरा बभूव ।
तदन्विता हैमवताच्च कुक्षेः प्रत्याययावाश्रममश्रमेण ॥ ६७ ॥
तस्याः प्रसन्नेन्दुमुखः प्रसादं गुरुर्नृपाणां गुरवे निवेद्य ।
प्रहर्षचिह्नानुमितं प्रियायै शशंस वाचा पुनरुक्तयेव ॥ ६८ ॥

६६ ॥ वत्सस्येति । हे मातर्वत्सस्य वत्सपीतस्य शेषम् । वत्सपीतावशिष्टमित्यर्थः । होम एवार्थः । तस्य विधिरनुष्ठानम् । तस्य च शेषम् । होमावशिष्टमित्यर्थः । तव । ऊधसि भवमूधस्यं क्षीरम् ॥ "शरीरावयवाच्च" इति यत्प्रत्ययः ॥ रक्षिताया उर्व्याः षष्ठांशं षष्ठभागमिव । ऋषेरनुज्ञामधिगम्य । उपभोक्तुमिच्छामि ॥

६७ ॥ इत्थमिति । इत्थं क्षितीशेन विज्ञापिता वशिष्ठस्य धेनुः प्रीततरा । पूर्वं शुश्रूषया प्रीता । संप्रत्यनया विज्ञापनया प्रीततरातिसंतुष्टा बभूव । तदन्विता तेन दिलीपेनान्विता हैमवताद्धिमवत्सम्बन्धिनः कुक्षेर्गुहायाः सकाशादश्रमेणानायासेनाश्रमं प्रत्याययावागता च ॥

६८ ॥ तस्या इति । प्रसन्नेन्दुरिव मुखं यस्य स नृपाणां गुरुर्दिलीपः प्रहर्षचिह्नैर्मुखरागादिभिरनुमितमभ्यूहितं तस्या धेनोः प्रसादमनुग्रहं प्रहर्षचिह्नैरेव ज्ञातत्वात्पुनरुक्तयेव । वाचा गुरवे निवेद्य विज्ञाप्य पश्चात्प्रियायै शशंस । कथितस्यैव कथनं पुनरुक्तिः । न चेह तदस्ति । किं तु चिह्नैः कथितप्रायत्वात्पुनरुक्तयेव स्थितयेत्युत्प्रेक्षा ॥

---

66. After having obtained the permission of the sage I wish to drink the milk of your udder, O mother, that may remain after the calf has had its drink, and after the (requisite quantity for) sacrificial rite has been milched out, in persuance of my custom to receive only the sixth part of (the product of) the earth, well-guarded by me.

67. Vasistha's cow became still more pleased with the above humble request of the lord of the earth, and returned without fatigue to the hermitage, from the valley of the mountain हिमवत्, followed by him.

68. The king of kings with a countenance (beaming with joy) like the bright moon, communicated to his preceptor her (*i. e.* cow's) favour, which could be inferred by the evident marks of gladness, in words which were, therefore, a repetition and then related (the same) to his beloved.

---

66. B. D. F. with Chá., Din., and Val., गुरोः for ऋषेः. A. D. P. with Chá., and Din., औधस्यं for ऊधस्यं. Chāritravardhana also notices the reading of our text.

67. D. क्षितीपेन for क्षितीशेन. B. I. R. with Val., अश्रमेव for अश्रमेण.

स नन्दिनीस्तन्यमनिन्दितात्मा सद्वत्सलो वत्सहुतावशेषम् ।
पपौ वशिष्ठेन कृताभ्यनुज्ञः शुभ्रं यशो मूर्तमिवातितृष्णः ॥ ६९ ॥
प्रातर्यथोक्तव्रतपारणान्ते प्रास्थानिकं स्वस्त्ययनं प्रयुज्य ।
तौ दम्पती स्वां प्रति राजधानीं प्रस्थापयामास वशी वशिष्ठः ॥ ७० ॥
प्रदक्षिणीकृत्य हुतं हुताशमनन्तरं भर्तुररुंधतीं च ।
धेनुं सवत्सां च नृपः प्रतस्थे सन्मङ्गलोदग्रतरप्रभावः ॥ ७१ ॥

६९ ॥ स इति । अनिन्दितात्मागर्हितस्वभावः । सत्सु वत्सलः प्रेमवान्सद्वत्सलः ॥ " वत्सांसाभ्यां कामबले " इति लच्प्रत्ययः ॥ वशिष्ठेन कृताभ्यनुज्ञः कृतानुमतिः सन् । वत्सस्य हुतस्य चावशेषं पीतहुतावशिष्टं नन्दिन्याः स्तन्यं क्षीरम् । शुभ्रं मूर्तं परिच्छिन्नं यश इव । अतितृष्णः सन्पपौ ॥

७० ॥ प्रातरिति । वशी वशिष्ठः प्रातः । यथोक्तस्य पूर्वोक्तस्य व्रतस्य गोसेवारूपस्याङ्गभूता या पारणा तस्या अन्ते प्रास्थानिकं प्रस्थाने भवम् । तत्कालोचितमित्यर्थः ॥ " कालाट्ठञ् " इति ठञ्प्रत्ययः ॥ " यथा कथंचिद्गुणवृत्त्यापि काले वर्तमानत्वात्प्रत्यय इष्यते " इति वृत्तिकारः ॥ ईयते प्राप्यतेऽनेनेत्ययनं स्वस्त्ययनं शुभावहमाशीर्वादं प्रयुज्य । तौ दंपती स्वां राजधानीं पुरीं प्रति प्रस्थापयामास ॥

७१ ॥ प्रदक्षिणीकृत्येति । नृपो हुतं तर्पितम् । हुतमश्नातीति हुताशोऽग्निः ॥ " कर्म-

69. Having obtained the permission of Vasistha, the king, of unblemished soul and who was kind to the virtuous, drank with great eagerness such milk of Nandini, that remained after feeding the young calf and also after supplying (the requisite amount) for the offerings of the sacrifice, as if, it were, his own white fame in the material form.

70. In the next morning after having ordered the dinner, suited to the concluding ceremony of the aforesaid fasting-vow, Vasistha, who had restrained his self, pronounced on them an auspicious benediction proper at the time of departure and dismissed the royal couple to return to their capital.

71. Having gone round the satiated holy fire, the sage, afterwards अरुन्धती and then the sacred cow with her calf, the king

69. D. होमविधिश्च शेषं, B. C. F. I. R. with Cha., Din., Val., and Su., वत्सनिपानशेषं for वत्सहुतावशेषं. Charitravardhana notices the reading of Mallinatha as well as of D. Ms. B. C. F. I. R. with Cha., Din., Val., and Su., शुद्धम् for शुभ्रं. D. भूयः, B. I. R. with Val., and Su., भूयः for मूर्तम्. Charitravardhana notices the reading of Vallabha and others. B. C. I. R. with Val., and Su., अधितृष्णः for अतितृष्णः.

70. C. D. F. I. P. with Val., संप्रेषयामास for प्रस्थापयामास.

71. B. C. F. I. with Su., ततश्च होतारम् for अनंतरं भर्तुः (C. F. I. with Su., च, B. तु). A. D. F. समङ्गलोदग्रतरानुभावः for सन्मङ्गलोदग्रतरप्रभावः. Vallabha's text reads "सन्मङ्गलोदग्रतरानुभावः" while his commentary explains the following text:—सन्मङ्गलोदग्रतरप्रभावः.

श्रोत्राभिरामध्वनिना रथेन स धर्मपत्नीसहितः सहिष्णुः ।
ययावनुद्घातसुखेन मार्गं स्वेनेव पूर्णेन मनोरथेन ॥ ७२ ॥
तमाहितौत्सुक्यमदर्शनेन प्रजाः प्रजार्थव्रतकर्शिताङ्गम् ।
नेत्रैः पपुस्तृप्तिमनाप्नुवद्भिर्नवोदयं नाथमिवौषधीनाम् ॥ ७३ ॥
पुरन्दरश्रीः पुरमुत्पताकं प्रविश्य पौरैरभिनन्द्यमानः ।
भुजे भुजंगेन्द्रसमानसारे भूयः स भूमेर्धुरमाससञ्ज ॥ ७४ ॥

ण्यण् " ॥ तं भर्तुर्मुनेरनन्तरम् । प्रदक्षिणानन्तरमित्यर्थः । अरुंधतीं च सवत्सां धेनुं च प्रदक्षिणीकृत्य । प्रगतो दक्षिणं प्रदक्षिणम् ॥ " तिष्ठद्गुप्रभृतीनि च " इत्यव्ययीभावः ॥ ततश्च्विः ॥ अप्रदक्षिणं प्रदक्षिणं संपद्यमानं कृत्वा प्रदक्षिणीकृत्य ॥ सद्भिर्मङ्गलैः प्रदक्षिणादिभिर्मङ्गलाचारैरुदग्रतरप्रभावः सन् । प्रतस्थे ॥

७२ ॥ श्रोत्रेति । धर्मपत्नीसहितः सहिष्णुर्व्रतादिदुःखसहनशीलः स नृपः श्रोत्राभिरामध्वनिना कर्णाह्लादकरस्वनेनानुद्घातः पाषाणादिप्रतिघातरहितः । अत एव सुखयतीति सुखः । तेन रथेन । स्वेन पूर्णेन सफलेन मनोरथेनेव । मार्गमध्वानं ययौ ॥ मनोरथपक्षे ध्वनिः श्रुतिः । अनुद्घातः प्रतिबन्धनिवृत्तिः ॥

७३ ॥ तमिति । अदर्शनेन प्रवासनिमित्तेनाहितौत्सुक्यं जनितदर्शनोत्कण्ठम् । प्रजार्थेन संतानार्थेन व्रतेन नियमेन कर्शितं कृशीकृतमङ्गं यस्य स तम् । नवोदयं नवाभ्युदयं प्रजास्तृप्तिमनाप्नुवद्भिरतिगृध्नुभिर्नेत्रैः । ओषधीनां नाथं सोममिव । तं राजानं पपुः । अत्यास्थया ददृशुरित्यर्थः ॥ चन्द्रपक्षे । अदर्शनं कलाक्षयनिमित्तम् । प्रजार्थं लोकहितार्थम् । व्रतं देवताभ्यः कलादाननियमः ॥ " तं च सोमं पपुर्देवाः पर्यायेणानुपूर्वशः " इति व्यासः ॥ उदय आविर्भावः । अन्यत्समानम् ॥

७४ ॥ पुरन्दरेति । पुरः पुरीरसुराणां दारयतीति पुरंदरः शक्रः ॥ " पूःसर्वयोर्दारिसहोः " इति खच्प्रत्ययः ॥ " वाचंयमपुरंदरौ च " इति मुमागमो निपातितः ॥ तस्य श्रीरिव श्रीर्यस्य सः । स नृपः पौरैरभिनन्द्यमानः । उत्पताकमु-

whose power was now made more invincible (than before) by the auspicious rites performed at his departure, set out on his journey.

72. By the car whose music was agreeable to the ear and which afforded ease on account of its being free from joltings, the patient monarch took the way in company with his lawful queen as if he was carried [not by a heavy car of wood, but] on the wings of his successful desire.

73. Him, who, by his absence, had made the people eager (to have his sight), and whose body had become lean from the effects of his vow for issue, his subjects began to drink, as it were, with their eyes not getting satiety, as they do the newly rising lord of herbs (the moon).

74. The king, who enjoyed the lustre of the town-destroying Indra and who was welcomed back by the citizens, entered his

72. B. I. R. with Val., स्वेनैव for स्वेनेव.

73. B. D. R. with Cha., and Din., तमाहितोत्कण्ठमदर्शनेन for तमाहितौत्सुक्यमदर्शनेन. A. D. प्रजार्थे व्रतकर्शिताङ्गम् for प्रजार्थव्रतकर्शिताङ्गम्.

अथ नयनसमुत्थं ज्योतिरत्रेरिव द्यौः सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्ठ्यूतमैशम्।
नरपतिकुलभूत्यै गर्भमाधत्त राज्ञी गुरुभिरभिनिविष्टं लोकपालानुभावैः॥७५॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कविश्रीकालिदासकृतौ
नन्दिनीवरप्रदानो नाम द्वितीयः सर्गः ॥

च्छ्रितध्वजम् ॥ "पताका वैजयन्ती स्यात्केतनं ध्वजमस्त्रियाम्" इत्यमरः ॥ पुरं प्रविश्य भुजंगेन्द्रेण समानसारे तुल्यबले ॥ "सारो बले स्थिरांशे च न्याय्ये क्लीबं वरे त्रिषु" इत्यमरः ॥ भुजे भूयो भूमेर्धुरमाससञ्जार्पितवान् ॥

७५ ॥ अथेति । अथ द्यौः सुरवर्त्म ॥ "द्यौः स्वर्गसुरवर्त्मनोः" इति विश्वः ॥ अत्रेर्महर्षेर्नयनयोः समुत्थमुत्पन्नं नयनसमुत्थम् ॥ "आतश्चोपसर्गे" इति कप्रत्ययः ॥ ज्योतिरिव । चन्द्रमिवेत्यर्थः ॥ "ऋक्षेशः स्यादत्रिनेत्रप्रसूतः" इति हलायुधः ॥ चन्द्रस्यात्रिनेत्रोद्भूतत्वमुक्तं हरिवंशे—"नेत्राभ्यां वारि सुस्राव दशधा द्योतयन्दिशः । तं गर्भं दशधा दृष्ट्वा दिशो देव्यो दधुस्ततः । समेत्य धारयामासुर्न चैतास्तमशक्नुवन् । स ताभ्यः सहसैवाथ दिग्भ्यो गर्भः प्रभान्वितः । पपात भावयँल्लोकाञ्छीतांशुः सुरभावनः" इति ॥ सुरसरिद्गङ्गा वह्निना निष्ठ्यूतं विक्षिप्तम् ॥ "च्छ्वोः शूडनुनासिके च" इत्यनेन निपूर्वात्ष्ठीवतेर्वकारस्य ऊठ् ॥ "नून्नुत्तास्तनिष्ठ्यूताविद्धक्षिप्तेरिताः समाः" इत्यमरः ॥ ऐशं तेजः स्कन्दमिव ॥ अत्र रामायणम्—"ते गत्वा पर्वतं राम कैलासं धातुमण्डितम् । अग्निं नियोजयामासुः पुत्रार्थं सर्वदेवताः । देवकार्यमिदं देव समाधत्स्व हुताशन । शैलपुत्र्यां महातेजो गङ्गायां तेज उत्सृज । देवतानां प्रतिज्ञाय गङ्गामभ्येत्य पावकः । गर्भं धारय वै देवि देवतानामिदं प्रियम् । इत्येतद्वचनं श्रुत्वा दिव्यं रूपमधारयत् । स तस्या महिमां दृष्ट्वा समन्तादवकीर्य च । समन्ततस्तदा देवीमभ्यसिञ्चत पावकः । सर्वस्रोतांसि पूर्णानि गङ्गाया रघुनन्दन" इति ॥ राज्ञी सुदक्षिणा नरपतेर्दिलीपस्य कुलभूत्यै संततिलक्षणायै गुरुभिर्महद्भिर्लोकपालानामनुभावैस्तेजोभिरभिनिविष्टमनुप्रविष्टं गर्भमाधत्त । दधावित्यर्थः ॥ अत्र मनुः—"अष्टानां लोकपालानां वपुर्धारयते नृपः" इति ॥ 'अत्र आधत्त' इत्यनेन स्त्रीकर्तृकधारणमात्रमुच्यते । तथा मन्त्रे च दृश्यते—"यथेयं पृथिवीमह्युत्ताना गर्भमादधे । एवं त्वं गर्भमाधेहि दशमे मासि सूतवे" इत्याश्वलायनानां सीमन्तमन्त्रे स्त्रीव्यापारधारण आधानशब्दप्रयोगदर्शनादिति ॥ मालिनीवृत्तमेतत् । तदुक्तम्—"ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः" इति लक्षणात् ।

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमच्छपाच्छयसूरिविरचितायां रघुवंशटीकायां संजीविनीसमाख्यायां द्वितीयः सर्गः॥

---

capital in which were raised the flags and once more placed the yoke of the earth on his shoulders, equal in strength to the lord of the serpents.

75. As the heavens, the luminary sprung from the eyes of Atri, and as the river of the gods (*i. e.* the Gangá), the lustre of Is'a deposited by Agni, so the queen bore the embryo, which contained the heavy essences of the Lokapálas (or endowed with the great splendour of the lords of different quarters of the sky) for the prosperity of the king's race.

। तृतीयः सर्गः ।

अथेप्सितं भर्तुरुपस्थितोदयं सखीजनोद्वीक्षणकौमुदीमुखम् ।
निदानमिक्ष्वाकुकुलस्य सन्ततेः सुदक्षिणा दौर्हृदलक्षणं दधौ ॥ १ ॥
शरीरसादादसमग्रभूषणा मुखेन सालक्ष्यत लोध्रपाण्डुना ।
तनुप्रकाशेन विचेयतारका प्रभातकल्पा शशिनेव शर्वरी ॥ २ ॥

उपाधिगम्योऽप्यनुपाधिगम्यः समावलोक्योऽप्यसमावलोक्यः ।
भवोऽपि योऽभूदभवः शिवोऽयं जगन्त्यपायादपि नः स पायात् ॥

१ ॥ राज्ञी गर्भमाधत्तेत्युक्तम् । संप्रति गर्भलक्षणानि वर्णयितुं प्रस्तौति ॥ अथेति । अथ गर्भधारणानन्तरं सुदक्षिणा । उपस्थितोदयं प्राप्तकालं भर्तुरीप्सितं मनोरथम् ॥ भावे क्तः ॥ पुनः सखीजनस्योद्वीक्षणानां दृष्टीनां कौमुदीमुखं चन्द्रिकाप्रादुर्भावम् ॥ यद्वा कौमुदी नाम दीपोत्सवतिथिः ॥ तदुक्तं भविष्योत्तरे—" कौ मोदन्ते जना यस्यां तेनासौ कौमुदी मता " इति ॥ तस्या मुखं प्रारम्भः ॥ इक्ष्वाकुकुलस्य संततेरविच्छेदस्य निदानं मूलकारणं ॥ " निदानं त्वादिकारणम् " इत्यमरः ॥ एवं विधं दौर्हृदलक्षणं गर्भचिह्नं वक्ष्यमाणं दधौ ॥ स्वहृदयेन गर्भहृदयेन च द्विहृदया गर्भिणी । यथाह वाहटः—" मातृजं ह्यस्य हृदयं मातुश्च हृदयेन तत् । सम्बद्धं तेन गर्भिण्याः श्रेष्ठं श्रद्धाभिमाननम् " इति ॥ तत्सम्बन्धित्वाद्गर्भो दौर्हृदमित्युच्यते । सा च तद्योगाद्दौर्हृदिनीति ॥ तदुक्तं संग्रहे—" द्विहृदयां नारीं दौर्हृदिनीमाचक्षते " इति ॥ अत्र दौर्हृदलक्षणस्येप्सितत्वेन कौमुदीमुखत्वेन च निरूपणाद्रूपकालंकारः ॥ अस्मिन्सर्गे वंशस्थं वृत्तम्—" जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ " इति लक्षणात् ॥

२ ॥ संप्रति क्षामताख्यं गर्भलक्षणं वर्णयति ॥ शरीरेति । शरीरस्य सादात्का-

1. In time सुदक्षिणा began to show signs of pregnancy, which was, as it were, the desire of the husband with its fulfilment approaching, which was the prime cause (or source) of the continuation of the family of इक्ष्वाकु, and which was but the beginning of the moonlight to the eyes of her female friends (or which was the beginning of the कौमुदी festivals to the sight of her female friends).

2. Wearing a few (*i. e.* a limited number of) ornaments on

1. B. C. I. J. K R. with Chá., Din., Val., and Su., °कौमुदीमुखं, A. °कौमुदीमहं, also noticed by Mallinâtha who says:—" अत एव कश्चित्कौमुदीमहमिति पाठं पठति ". D. G. K. P. कौमुदीमुखं, also noticed by Cháritravardhana and Dinakara. B. G. I. K. P. R. with Chá., Din., Val., and Su., दोहद° for दौहृद°. Cháritravardhana and Dinakara notice the reading. Between 1-2. D. I. with Val., read :—" ततो विशांपत्युरनन्यसन्ततेर्मनोरथं किञ्चिदिवोदयोन्मुखम् । अनन्यसौहार्दरसस्य दोहदं प्रिया प्रपेदे प्रकृतिप्रियंवदा " ॥ But I. reads this verse after the 2nd verse of our text, so does Vallabha.

2. B. C. I. K. R. with Din., and Val., रोध्र° for लोध्र°. B. C. G.

तदाननं मृत्सुरभि क्षितीश्वरो रहस्युपाघ्राय न तृप्तिमाययौ ।
करीव सिक्तं पृषतैः पयोमुचां शुचिव्यपाये वनराजिपल्वलम् ॥ ३ ॥

इयाद्समग्रभूषणा परिमिताभरणा लोध्रपुष्पवत्पाण्डुना मुखेनोपलक्षिता सा सुदक्षिणा । विचेया मृग्यास्तारका यस्यां सा तथोक्ता । विरलनक्षत्रेत्यर्थः । तनुप्रकाशेनाल्पकान्तिना शशिनोपलक्षितेषद्समाप्तप्रभाता प्रभातकल्पा । प्रभातादीषन्न्यूनेत्यर्थः ॥ "तसिलादिष्वा कृत्वसुचः" इति प्रभातशब्दस्य पुंवद्भावः ॥ शर्वरी रात्रिरिव । अलक्ष्यत ॥ शरीरसादादिगर्भलक्षणे वाहटः—"क्षामता गरिमा कुक्षेर्मूर्च्छा छर्दिररोचकम् । जृम्भा प्रसेकः सदनं रोमराज्याः प्रकाशनम्" इति ॥

३ ॥ तदिति । क्षितीश्वरो रहसि मृत्सुरभि मृदा सुरभि सुगन्धि तस्या आननमुपाघ्राय तृप्तिं नाययौ ॥ कथमिव । शुचिव्यपाये ग्रीष्मावसाने ॥ "शुचिः शुद्धेऽनुपहते शृङ्गाराषाढयोः सिते । ग्रीष्मे हुतवहेऽपि स्यादुपधौ शुद्धमन्त्रिणि" इति विश्वः ॥ पयोमुचां मेघानां पृषतैर्बिन्दुभिः ॥ "पृषन्ति बिन्दुपृषताः" इत्यमरः ॥ सिक्तमुक्षितं वनराज्याः पल्वलमुपाघ्राय करी गज इव ॥ अत्र करिवनराजिपल्वलानां कान्तकामिनीवदनसमाधिरनुसंधेयः । गर्भिणीनां मृद्भक्षणं लोकप्रसिद्धमेव ॥ एतेन दोहदाख्यं गर्भलक्षणमुच्यते ॥

---

account of the attenuation of her frame and with countenance pale as the लोध्र flower, सुदक्षिणा looked like the night bordering on morn, in which the stars require a search, owing to the moon having pale light.

3. The lord of the earth, like an elephant smelling a pond in the forest-groves (made fragrant) being sprinkled over with drops of water from the clouds at the close of summer, was not (in the least) contented with smelling in private her mouth fragrant with earth.

I. K. R. with Din., Val., and Su., विभातकल्पा for प्रभातकल्पा. Châritravardhana reads this verse in the following way:—"शरीरसादादसमग्रभूषणा मुखेन सा लक्ष्यत लोध्रपाण्डुना । स्थितान्पतारां करुणेन्दुमण्डलां विभातकल्पां रजनीं व्यडम्बयत्" ॥ Between 2-3 B. I. R. with Val., and Su., read :—"मुखेन सा केतकपत्रपाण्डुना कृशाङ्गयष्टिः परिमेयभूषणा । स्थितान्पतारां करुणेन्दुमण्डलां विभातकल्पां रजनीं व्यडम्बयत्" ॥ But R. reads this verse before the 2nd verse of our text. B., however, has :—स्थितान्पतारा करुणेन्दुमण्डला । विभातवत्यां &c.

3. D. R. with Chà., Val., and Din., रहः समाघ्राय for रहस्युपाघ्राय. I. reads it thus :—"तदाननं रसाविर्मार्तिकात्वं । नृपः समाघ्राय &c., but this reading violates the metre of the verse.

दिवं मरुत्वानिव भोक्ष्यते भुवं दिगन्तविश्रान्तरथो हि तत्सुतः ।
अतोऽभिलाषे प्रथमं तथाविधे मनो बबन्धान्यरसान्विलङ्घ्य सा ॥ ४॥
न मे ह्रिया शंसति किंचिदीप्सितं स्पृहावती वस्तुषु केषु मागधी ।
इति स्म पृच्छत्यनुवेलमादृतः प्रियासखीरुत्तरकोशलेश्वरः ॥ ५ ॥
उपेत्य सा दोहददुःखशीलतां यदेव वव्रे तदपश्यदाहृतम् ।
न हीष्टमस्य त्रिदिवेऽपि भूपतेरभूदनासाद्यमधिज्यधन्वनः ॥ ६ ॥

४ ॥ दोहदहेतुके मृद्भक्षणे हेत्वन्तरमुत्प्रेक्षते ॥ दिवमिति । हि यस्माद्दिगन्तविश्रान्तरथश्चक्रवर्ती तस्याः सुतस्तत्सुतः । मरुत्वानिन्द्रः ॥ "इन्द्रो मरुत्वान्मघवा" इत्यमरः ॥ दिवं स्वर्गमिव । भुवं भोक्ष्यते ॥ "भुजोऽनवने" इत्यात्मनेपदम् ॥ अतः प्रथमं सा सुदक्षिणा तथाविधे भूविकारे मृद्रूपे । अभिलष्यत इत्यभिलाषो भोग्यवस्तु । तस्मिन् ॥ कर्मणि घञ्प्रत्ययः ॥ रस्यन्ते स्वाद्यन्त इति रसा भोग्यार्थाः । अन्ये च ते रसाश्च तान् । विलङ्घ्य विहाय । मनो बबन्ध निदधावित्यर्थः ॥ दोहदहेतुकस्य मृद्भक्षणस्य पुत्रभूभोगसूचनार्थत्वमुत्प्रेक्षते ॥

५ ॥ नेति । मगधस्य राज्ञोऽपत्यं स्त्री मागधी सुदक्षिणा ॥ "द्व्यञ्मगधकलिङ्गसूरमसादण्" इत्यण्प्रत्ययः ॥ ह्रिया किंचित्किमपीप्सितमिष्टं मे मह्यं न शंसति नाचष्टे । केषु वस्तुषु स्पृहावतीत्यनुवेलमनुक्षणमादृत आदृतवान् ॥ कर्तरि क्तः ॥ "आदृतौ सादरार्चितौ" इत्यमरः ॥ प्रियायाः सखीः सहचरीरुत्तरकोशलेश्वरो दिलीपः पृच्छति स्म पप्रच्छ ॥ "लट्स्मे" इति भूतार्थे लट् ॥ सखीनां विश्रम्भभूमित्वादिति भावः ॥

६ ॥ उपेत्येति । दोहदं गर्भिणीमनोरथः ॥ "दोहदं दौर्हृदं श्रद्धा लालसं च समं स्मृतम्" इति हलायुधः ॥ सा सुदक्षिणा दोहदेन दुःखशीलतां दुःखस्वभावतामुपेत्य प्राप्य यद्वस्तु वव्रे आचकाङ्क्ष तदाहृतमानीतम् । भर्त्रेति शेषः । अप-

---

4. As the lord of the Maruts is the master of the heavens so is her son, whose (conquering) chariot would not stop until it shall have reached the furthest ends of the quarters, destined to rule over the earth ; was it from this that she first evinced such sort of desire (for eating the earth) in preference to all other things of taste.

5. " Out of modesty the Magadha princess tells nothing about the things she likes or whatever her desired objects. " In this way did the lord of the Uttara Kosalas constantly make inquiries of her loved companions through politeness.

6. Having got to the painful temperament consequent upon the qualms of pregnancy, she saw that very thing supplied to her

---

4. D. G. K. R. with Chà., Din., Val., and Su., महीं for भुवं. A. D. with Chà., Din., and Su., मत्सुतः for तत्सुतः.

6. B. C. G. K. I. P. R. with Chà., Din., Val., and Su., अस्याः for अस्य. A. D. with Su., बभूव दुष्प्राप्यं for अभूदनासाद्यम्.

क्रमेण निस्तीर्य च दोहदव्यथां प्रचीयमानावयवा रराज सा ।
पुराणपत्त्रापगमादनन्तरं लतेव संनद्धमनोज्ञपल्लवा ॥ ७ ॥
दिनेषु गच्छत्सु नितान्तपीवरं तदीयमानीलमुखं स्तनद्वयम् ।
तिरश्चकार भ्रमराभिलीनयोः सुजातयोः पङ्कजकोशयोः श्रियम् ॥ ८ ॥

इयदेव ॥ अलभतेत्यर्थः ॥ कुतः । हि यस्मादस्य भूपतेस्त्रिदिवेऽपि स्वर्गेऽपीष्टं वस्त्वनासाद्यमनवाप्यं नाभूत् । किं याच्ञया । नेत्याह—अधिज्यधन्वनः इति । न हि वीरपत्नीनामलभ्यं नाम किंचिदस्तीति भावः ॥ अत्र वाहटः—"पादशोफो विदाहोऽन्ते श्रद्धा च विविधात्मिका" इति ॥ एतच्च पत्नीमनोरथपूरणाकरणे दृष्टदोषसंभवात् । न तु राज्ञः स्त्रीलौल्यात् । तदुक्तम्—"देयमप्यहितं तस्यै हिताय हितमल्पकम् । श्रद्धाविघाते गर्भस्य विकृतिश्च्युतिरेव वा" । अन्यच्च—"दोहदस्याप्रदानेन गर्भो दोषमवाप्नुयात्" इति ॥

७ ॥ क्रमेणेति । सा सुदक्षिणा क्रमेण दोहदव्यथां च निस्तीर्य प्रचीयमानावयवा पुष्यमाणावयवा सती । पुराणपत्त्राणामपगमान्नाशादनन्तरं संनद्धाः संजाताः प्रत्यग्रत्वान्मनोज्ञाः पल्लवा यस्याः सा लतेव । रराज ॥

८ ॥ लक्षणान्तरं वर्णयति ॥ दिनेष्विति । दिनेषु दोहददिवसेषु गच्छत्सु सत्सु नितान्तपीवरमतिस्थूलम् । आ समन्तान्नीले मुखे चूचुके यस्य तत् । तदीयं स्तनद्वयम् । भ्रमरैरभिलीनयोरभिव्याप्तयोः सुजातयोः सुन्दरयोः पङ्कजकोशयोः

---

which she desired, for there was nothing that he desired, even in heavens, which was unobtainable by the lord of the earth, when he put the string to his bow.

7. As a creeper which after the disappearance of old leaves puts forth beautiful sprouts (*lit.* appears to have been clad in a charming foliage), so she, gradually getting over the painful condition of pregnancy, looked bright with her limbs growing in developed form.

8. As days rolled on her full and plumpy breasts, with dark nipples, put to shame, as it were, the loveliness of two charming lotus-buds surmounted by black bees.

---

7. R. संबद्ध° for संनद्ध°. D. with Chá., उपोढगात्रोपचया for प्रचीयमानावयवा. K. P. with Val., and Su., read first the 8th and then the 7th verse of our text.

8. D. I. मधूकपाण्डुरं for नितान्तपीवरं. D. I. आश्याममुखं for आनीलमुखं. D. G. K. P. with Chá., Din., and Su., भ्रमरावलीढयोः, I. भ्रमरावलीनयोः for भ्रमराभिलीनयोः. F. with Val., and Su., first commenting upon this stanza, comment also upon a slightly different reading of the same, "दिनेषु गच्छत्सु मधूकपाण्डुरं तदीयमाश्याममुखं स्तनद्वयं समुद्गयोर्वारणदन्तकोशयोः । बभार कान्तिं गवलापिधानयोः" । [F. has समुद्गमो for समुद्गयोः and °पिधान्ययोः for °पिधानयोः, and Sumativijaya has आनीलमुखं for आश्याममुखं.] I. R. with Dinakara read this verse after the 9th of our text.

निधानगर्भामिव सागराम्बरां शमीमिवाभ्यन्तरलीनपावकाम् ।
नदीमिवान्तःसलिलां सरस्वतीं नृपः ससत्त्वां महिषीममन्यत ॥ ९ ॥
प्रियानुरागस्य मनःसमुन्नतेर्भुजार्जितानां च दिगन्तसम्पदाम् ।
यथाक्रमं पुंसवनादिकाः क्रिया धृतेश्च धीरः सदृशीर्व्यधत्त सः ॥ १० ॥
सुरेन्द्रमात्राश्रितगर्भगौरवात्प्रयत्नमुक्तासनया गृहागतः ।
तयोपचाराञ्जलिखिन्नहस्तया ननन्द पारिप्लवनेत्रया नृपः ॥ ११ ॥

पद्ममुकुलयोः श्रियं तिरश्चकार ॥ अत्र वाहटः—" अम्लेष्टता स्तनौ पीनौ सस्तन्यौ कृष्णचूचुकौ " इति ॥

९ ॥ निधानेति । नृपः ससत्त्वामापन्नसत्त्वाम् । गर्भिणीमित्यर्थः । महिषीम् । निधानं निधिर्गर्भे यस्यास्तां सागराम्बरां समुद्रवसनाम् । भूमिमित्यर्थः । तामिव । अभ्यन्तरे लीनः पावको यस्यास्तां शमीमिव ॥ शमीतरौ वह्निरस्तीत्यत्र लिङ्गं शमीगर्भादग्निं मन्थतीति ॥ अन्तःसलिलामन्तर्गतजलां सरस्वतीं । नदीमिव । अमन्यत ॥ एतेन गर्भस्य भाग्यवत्त्वतेजस्वित्वपावनत्वानि विवक्षितानि ॥

१० ॥ प्रियेति । धीरः स राजा प्रियानुरागस्य । मनसः समुन्नतेरौदार्यस्य । भुजेन भुजबलेनार्जितानाम् । न तु वाणिज्यादिना । दिगन्तेषु संपदाम् । धृतेः पुत्रो मे भविष्यतीति संतोषस्य च ॥ " धृतिर्योगान्तरे धैर्ये धारणाध्वरतुष्टिषु " इति विश्वः ॥ सदृशीरनुरूपाः । पुमान्सूयतेऽनेनेति पुंसवनम् । तदादिर्यासां ताः क्रिया यथाक्रमं क्रममनतिक्रम्य व्यधत्त कृतवान् ॥ आदिशब्देनानवलोभनसीमन्तोन्नयने गृह्येते ॥ अत्र । " मासि द्वितीये तृतीये वा पुंसवनं यदहः पुंसा नक्षत्रेण चन्द्रमा युक्तः स्यात् " इति पारस्करः ॥ " चतुर्थेऽनवलोभनम् " इत्याश्वलायनः ॥ " षष्ठेऽष्टमे वा सीमन्तोन्नयनम् " इति याज्ञवल्क्यः ॥

११ ॥ सुरेन्द्रेति । गृहागतो नृपः सुरेन्द्राणां लोकपालानां मात्राभिरंशैराश्रितस्यानुप्रविष्टस्य गर्भस्य गौरवाद्भारात्प्रयत्नेन मुक्तासनया । आसनादुत्थितये-

9. The king at last concluded that the queen was (big) with child, resembling in that respect the ocean-garmented Earth with treasures lying in her bowels, or the शमी tree with the fire latent in its interior, or the river सरस्वती with its (stream of) water hidden under sand.

10. The wise monarch ordered the पुंसवन and other ceremonies to be duly performed, in a manner suited to the love he bore to his beloved to the magnanimity of his heart, to the immense wealth acquired from the furthest ends of the quarters by the valour of his arms, and also to the great joy (he felt at the happy prospect of getting a son).

11. On his coming to her apartments, the king was delighted to see her, with swimming eyes, with her hands fatigued by fold-

10. D. धृतेः for धृतेः. Cháritravardhana and Dinakara also notice the reading.

11. R. छिन्नहस्तया for खिन्नहस्तया.

कुमारभृत्याकुशलैरनुष्ठिते भिषग्भिराप्तैरथ गर्भभर्मणि ।
पतिः प्रतीतः प्रसवोन्मुखीं प्रियां ददर्श काले दिवमभ्रितामिव ॥ १२ ॥
ग्रहैस्ततः पञ्चभिरुच्चसंश्रयैरसूर्यगैः सूचितभाग्यसम्पदम् ।
असूत पुत्रं समये शचीसमा त्रिसाधना शक्तिरिवार्थमक्षयम् ॥ १३ ॥

त्यर्थः। उपचारस्याञ्जलावञ्जालिकरणे खिन्नेहस्तयौ पारिप्लवनेत्रया तरलाक्ष्या ॥ " चञ्चलं तरलं चैव पारिप्लवपरिप्लवे " इत्यमरः ॥ तया सुदक्षिणया ननन्द ॥ " सुरेन्द्रमात्राश्रित-" इत्यत्र मनुः—" अष्टाभिश्च सुरेन्द्राणां मात्राभिर्निर्मितो नृपः " इति ॥

१२ ॥ कुमारेति । अथ । कुमारभृत्या बालचिकित्सा ॥ " संज्ञायां समजनिषद-" इत्यादिना क्यप् ॥ तस्यां कुशलैराप्तैर्हितैर्भिषग्भिर्वैद्यैः । गर्भस्य भर्मणि भरणे ॥ " भरणं पोषणं भर्म " इति हैमः ॥ " भृतिर्भर्म " इति शाश्वतः ॥ भृञो मनिच्प्रत्ययः ॥ अनुष्ठिते कृते सति । काले दशमे मासि । अन्यत्र ग्रीष्मावसाने । प्रसवस्य गर्भमोचनस्योन्मुखीम् । आसन्नप्रसवामित्यर्थः ॥ " स्यादुत्पादे फले पुष्पे प्रसवो गर्भमोचने " इत्यमरः ॥ प्रियां । अभ्राण्यस्याः संजातान्यभ्रिता ताम् ॥ " तदस्य संजातं तारकादिभ्य इतच् " इतीतच्प्रत्ययः ॥ दिवमिव । पतिः प्रतीतस्तुष्टः सन् ॥ " ख्याते तुष्टे प्रतीतः " इत्यमरः ॥ ददर्श दृष्टवान् ॥

१३ ॥ ग्रहैरिति । ततः शच्येन्द्राण्या समा ॥ " पुलोमजा शचीन्द्राणी " इत्यमरः ॥ सा सुदक्षिणा समये प्रसूतिकाले सति । दशमे मासीत्यर्थः ॥ " दशमे मासि जायते " इति श्रुतेः ॥ उच्चसंस्थितैस्तुङ्गस्थानगैरसूर्यगै-

---

ing together to bid the customary salutations, leave her seat with difficulty on account of the weight of her embryo, which was made up of the portions of the Surendras (*i. e.* the ruling gods).

12. In the course of time after the (measures of) nourishment of the fœtus had been properly taken by the competent physicians skilled in the treatment of infants, the king, like the sky beclouded at the close of summer, was pleased to see his queen approaching the time of delivery (or confinement).

13. At last, as the three-fold kingly power brings on an undecaying store of wealth, so the queen, who resembled शची, brought forth in time a son, whose exalted fortune (*lit.* wealth of prosper

---

12. B. C. K. I. P. R. with Châ., Val., Din., and Su., अधिष्ठिते for अनुष्ठिते. D. with Din., गर्भकर्मणि, B. C. G. K. I. P. R. with Châ., Val., and Su., गर्भवेश्मनि for गर्भभर्मणि. Châritravardhana and Mallinâtha notice the reading of Dinakara and others, where the latter who says,—' गर्भकर्मणि ' इति पाठे गर्भाधानप्रतानावैचित्र्यभङ्गः. A. C. निरत्ययाय प्रसवाय तस्थुषीं for पतिः प्रतीतः प्रसवोन्मुखीं प्रियां. Châritravardhana notices the reading.

13. C. D. K. with Châ., °संस्थितैः for °संश्रयैः. C. D. K. I. P. R. सूनुं for पुत्रं. A. D. अक्षतं for अक्षयं.

दिशः प्रसेदुर्मरुतो ववुः सुखाः प्रदक्षिणार्चिर्हविरग्निराददे ।
बभूव सर्वं शुभशंसि तत्क्षणं भवो हि लोकाभ्युदयाय तादृशाम् ॥१४॥
अरिष्टशय्यां परितो विसारिणा सुजन्मनस्तस्य निजेन तेजसा ।
निशीथदीपाः सहसा हतत्विषो बभूवुरालेख्यसमर्पिता इव ॥ १५ ॥

रनस्तमितैः कैश्चिद्यथासंभवं पञ्चभिर्ग्रहैः सूचिता भाग्यसंपद्यस्य तं पुत्रम् । त्रीणि प्रभावमन्त्रोत्साहात्मकानि साधनान्युत्पादकानि यस्याः सा त्रिसाधना शक्तिः ॥ " शक्तयस्तिस्रः प्रभावोत्साहमन्त्रजाः " इत्यमरः ॥ अक्षयमर्थमिव । असूत ॥ " षूङ्प्राणिगर्भविमोचने " इत्यदादिषु पठ्यते । तस्माद्धातोः कर्तरि लङ् ॥ अत्रेदमनुसंधेयम्– " अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा झषवणिजौ च दिवाकरादितुङ्गाः । दशशिखिमनुयुक्तिथीन्द्रियांशैस्त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः " इति ॥ सूर्यादीनां सप्तानां ग्रहाणां मेषवृषभादयो राशयः श्लोकोक्तक्रमविशिष्टा उच्चस्थानानि । स्वस्वतुङ्गापेक्षया सप्तमस्थानानि नीचानि । तत्रोच्चेष्वपि दशमाद्यंशराशित्रिंशांशा यथाक्रममुच्चेषु परमोच्चा नीचेषु परमनीचा इति जातकश्लोकार्थः ॥ अत्रांशस्त्रिंशो भागः ॥ यथाह नारदः—" त्रिंशद्भागात्मकं लग्नम् " इति ॥ सूर्यप्रत्यासत्तिर्ग्रहाणामस्तमयो नाम ॥ तदुक्तं लघुजातके—" रविणास्तमयो योगो वियोगस्तूदयो भवेत् " इति ॥ ते च स्वोच्चस्थाः फलन्ति नास्तगा नापि नीचगाः ॥ तदुक्तं राजमृगाङ्के —" स्वोच्चे पूर्णं स्वर्क्षमर्धं सुहृद्भे पादं द्विड्भेऽल्पं शुभं खेचरेन्द्रः । नीचस्थायी नास्तगो वा न किंचित्पादं न्यूनं स्वत्रिकोणे ददाति " इति ॥ तदिदमाह कविः । उच्चसंस्थितैरसूर्यगैरिति च । एवं सति यस्य जन्मकाले पञ्चप्रभृतयो ग्रहाः स्वोच्चस्थाः स एव तुङ्गो भवति ॥ तदुक्तं कूटस्थीये—" सुखिनः प्रकृष्टकार्या राजप्रतिरूपकाश्च राजानः । एकद्वित्रिचतुर्भिर्जायन्तेऽतः परं दिव्याः " इति ॥ तदिदमाह पञ्चभिरिति ॥

१४ ॥ दिश इति । तत्क्षणं तस्मिन्क्षणे ॥ " कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे " इति द्वितीया ॥ दिशः प्रसेदुः प्रसन्ना बभूवुः ॥ मरुतो वाताः सुखा मनोहरा ववुः ॥ अग्निः प्रदक्षिणार्चिः सन्हविराददे स्वीचकार ॥ इत्थं सर्वं शुभशंसि शुभसूचकं बभूव ॥ तथाहि । तादृशां रघुप्रकाराणां भवो जन्म लोकाभ्युदयाय । भवतीति शेषः ॥ ततो देवा अपि संतुष्टा इत्यर्थः ॥

१५ ॥ अरिष्टेति ॥ " अरिष्टं सूतिकागृहम् " इत्यमरः ॥ अरिष्टे शय्या तां परितः

ous fortune) was presaged (or betokened) by five auspicious stars that were in the ascendant (*i. e.* occupied the highest apexes of their orbits) and did not set.

14. That very moment the quarters became fair ; the breeze began to blow in a pleasant manner ; and the sacrificial fire, with an encircling flame on the right, received the offerings ; in short, everything had an augury of good ; since it is for the good of the world that these great ones are born.

15. The midnight lamps suddenly lost their lustre and looked

14. C. G. K$_3$. P. with Châ., Din., and Su., हुतं for हविः. D. G. and Su., तत्क्षणे for तत्क्षणं.

जनाय शुद्धान्तचराय शंसते कुमारजन्मामृतसंमिताक्षरम् ।
अदेयमासीत्त्रयमेव भूपतेः शशिप्रभं छत्रमुभे च चामरे ॥ १६ ॥
निवातपद्मस्तिमितेन चक्षुषा नृपस्य कान्तं पिबतः सुताननम् ।
महोदधेः पूर इवेन्दुदर्शनाद्गुरुः प्रहर्षः प्रबभूव नात्मनि ॥ १७ ॥

सर्वतः ॥ "अभितः परितः समयानिकषाहाप्रतियोगेषु दृश्यते" इति द्वितीया ॥ विसारिणा । सुजन्मनस्तस्य शिशोर्निजेन नैसर्गिकेण तेजसा सहसा हतत्विषः निशीथदीपा अर्धरात्रप्रदीपाः ॥ "अर्धरात्रनिशीथौ द्वौ" इत्यमरः ॥ आलेख्ये चित्रे समर्पिता इव बभूवुः ॥ निशीथशब्दो दीपानां प्रभाधिक्यसंभावनार्थः ॥

१६ ॥ जनायेति । भूपतेरमृतसंमिताक्षरममृतसमानाक्षरम् ॥ "सरूपसमसंमिताः" इत्याह दण्डी ॥ कुमारजन्म पुत्रोत्पत्तिं शंसते कथयते शुद्धान्तचरायान्तःपुरचारिणे जनाय त्रयमेवादेयमासीत् ॥ किं तत् । शशिप्रभं छत्रं । उभे चामरे च ॥ छत्रादीनां राज्ञः प्रधानाङ्गत्वादिति भावः ॥

१७ ॥ निवातेति । निवातो निर्वातप्रदेशः ॥ "निवातावाश्रयावातौ" इत्यमरः ॥ तत्र यत्पद्मं तद्वत्स्तिमितेन निष्पन्देन चक्षुषा कान्तं सुताननं पिबतस्तृष्णया पश्यतो नृपस्य गुरुरुत्कटः प्रहर्षः । कर्ता । इन्दुदर्शनाद्गुरुर्महोदधेः पूरो जलौघ इव । आत्मनि शरीरे न प्रबभूव स्थातुं न शशाक । अन्तर्न माति स्मेति यावत् । नह्यल्पाधारेऽधिकं मीयत इति भावः ॥ यद्वा हर्ष आत्मनि स्वस्मिन्विषये न प्रबभूव । आत्मानं नियन्तुं न शशाक । किं तु बहिर्निर्जगामेत्यर्थः ॥

---

as if transferred to pictures on account of the well-born infant's own splendour spreading around the bed in the lying-in-chamber.

16. There were only three things, which the lord of the earth could not give away as presents to the attendant of the ladies' inner-apartments, when he announced him of the birth of his son in words which sounded to him sweet as nectar,—his imperial umbrella splendid like the moon and the two *Chauries.*

17. Looking intently (*lit.* drinking up) at the lovely (little) face of his son, with eyes, motionless like a lotus in a breezeless place, the king could not control his great joy within himself (*i. e.* his joy overflew all its bounds), as the great ocean its flood at the sight of the moon.

---

16. Between 16-17 B. R. with Chā., Val., and Su., read and comment upon the following—" मर्मास्य पुत्रस्य चिरान्मुखं पिता निधानकुम्भस्य युवेव दुर्गतः । मुदा शरीरे प्रबभूव नात्मनः पयोधिरिन्दूदयमूर्छितो यथा " ॥ [R. has स वीक्ष्य for समीक्ष्य, पिता मुखं for मुखं पिता and मुदः for मुदा.] R. with Chā., and Din., read this verse after the 17th of our text; and call it a spurious stanza. Vallabha calls it पाठान्तरं.

17. A. D. निर्वात°, G. निर्वात for निवात . B. C. K. I. P. R. with Vallabha च for न.

स जातकर्मण्यखिले तपस्विना तपोवनादेत्य पुरोधसा कृते ।
दिलीपसूनुर्मणिराकरोद्भवः प्रयुक्तसंस्कार इवाधिकं बभौ ॥ १८ ॥
सुखश्रवा मङ्गलतूर्यनिस्वनाः प्रमोदनृत्यैः सह वारयोषिताम् ।
न केवलं सद्मनि मागधीपतेः पथि व्यजृम्भन्त दिवौकसामपि ॥ १९ ॥
न संयतस्तस्य बभूव रक्षितुर्विसर्जयेद्यं सुतजन्महर्षितः ।
ऋणाभिधानात्स्वयमेव केवलं तदा पितॄणां मुमुचे स बन्धनात् ॥२० ॥

१८ ॥ स इति । स दिलीपसूनुः । तपस्विना पुरोधसा वशिष्ठेन । तपस्वित्वात्तदनुष्ठितं कर्म सवीर्यं स्यादिति भावः । तपोवनादित्यागत्य । अखिले जातकर्मणि जातस्य कर्तव्यसंस्कारविशेषे कृते सति । प्रयुक्तः संस्कारः शाणोल्लेखनादिर्यस्य स तथोक्तः । आकरोद्भवः खनिप्रभवः ॥ "खनिः स्त्रियामाकरः स्यात्" इत्यमरः ॥ मणिरिव । अधिकं बभौ ॥ वशिष्ठमन्त्रप्रभावात्तेजिष्ठोऽभूदित्यर्थः ॥ अत्र मनुः—"प्राङ्नाभिवर्धनात्पुंसो जातकर्म विधीयते" इति ॥

१९ ॥ सुखश्रवा इति । सुखः श्रवः श्रवणं येषां ते सुखश्रवाः । श्रुतिसुखा इत्यर्थः । मङ्गलतूर्यनिस्वना मङ्गलवाद्यध्वनयो वारयोषितां वेश्यानाम् ॥ "वारस्त्री गणिका वेश्या रूपाजीवा" इत्यमरः ॥ प्रमोदनृत्यैः सह मागधीपतेर्दिलीपस्य सद्मनि केवलं गृह एव न व्यजृम्भन्त ॥ किं तु । द्यौरोको येषां ते दिवौकसो देवाः ॥ पृषोदरादित्वात्साधुः ॥ तेषां पथ्याकाशेऽपि व्यजृम्भन्त । तस्य देवांशत्वाद्देवोपकारित्वाच्च देवदुन्दुभयोऽपि नेदुरिति भावः ॥

२० ॥ नेति । रक्षितुः सम्यक्पालनशीलस्य तस्य । अत एव चोराद्यभावात् । संयतो बद्धो न बभूव नास्ति स्म ॥ किं तेनात आह—विसर्जयेदिति । सुतजन्मना हर्षितस्तोषितः सन् । यं बद्धं विसर्जयेद्विमोचयेत् ॥ किं तु स राजा तदा पित-

---

18. After all the जातकर्म ceremonies had been performed by the family priest Vasistha, the observer of asceticism, who came from the penance-grove (for that purpose), the son of दिलीप shone forth with an additional lustre like a jewel dug out of (*lit.* produced from) a mine, when it undergoes the process of polish.

19. The sounds, pleasing to the ear, of auspicious musical instruments (drums) accompanied by the delightful dancing of the courtezans, could be heard not only in the palace of the king—the husband of the Magadha-princess but also in the path of the gods (*lit.* those whose abode is heaven).

20. The protector, finding no prisoners whom, delighted at the birth of a son, he might liberate, only freed himself from the bond of his forefathers, that went under the name of a debt.

---

19. A. D. प्रमोदनृत्तैः for प्रमोदनृत्यैः.

20. D. G. P. with Val., विमोचयेत् for विसर्जयेत्. Vallabha in his text reads विमोचयेत्, but in his commentary he comments upon विसर्जयेत् by giving a synonym "विमोचयेत्" for the same.

श्रुतस्य यायादयमन्तमर्भकस्तथा परेषां युधि चेति पार्थिवः ।
अवेक्ष्य धातोर्गमनार्थमर्थविच्चकार नाम्ना रघुमात्मसंभवम् ॥ २१ ॥
पितुः प्रयत्नात्स समग्रसंपदः शुभैः शरीरावयवैर्दिने दिने ।
पुपोष वृद्धिं हरिदश्वदीधितेरनुप्रवेशादिव बालचन्द्रमाः ॥ २२ ॥
उमावृषाङ्कौ शरजन्मना यथा यथा जयन्तेन शचीपुरंदरौ ।
तथा नृपः सा च सुतेन मागधी ननन्दतुस्तत्सदृशेन तत्समौ ॥ २३ ॥

णामृणाभिधानाद्बन्धनात्केवलमेकं यथा तथा। स्वयमेव। एक एवेत्यर्थः॥ "केवलः कृत्स्न एकश्च केवलश्चावधीरितः" इति शाश्वतः॥ मुमुचे॥ कर्मकर्तरि लिट्॥ स्वयमेव मुक्त इत्यर्थः॥ अस्मिन्नर्थे—"एष वा अनृणो यः पुत्री" इति श्रुतिः प्रमाणम्॥

२१॥ श्रुतस्येति। अर्थविच्छब्दार्थज्ञः पार्थिवः। अयमर्भकः श्रुतस्य शास्त्रस्यान्तं पारं यायात्। तथा युधि परेषां शत्रूणामन्तं पारं यायात्। यातुं शक्नुयादित्यर्थः॥ "शकि लिङ् च" इति शक्यार्थे लिङ्॥ इति हेतोर्धातोः "अघिवघिलघि गत्यर्थाः" इति लघिधातोर्गमनाख्यमर्थमर्थवित्त्वादवेक्ष्यालोच्य। आत्मसंभवं पुत्रं नाम्ना रघुं चकार॥ "लङ्घिबंह्योर्नलोपश्च" इत्युप्रत्यये बालमूललघ्वलमङ्गुलीनां वा लो रत्वमापद्यत इति वैकल्पिके रेफादेशे रघुरिति रूपं सिद्धम्॥ अत्र शङ्खः—"अशौचे तु व्यतिक्रान्ते नामकर्म विधीयते" इति॥

२२॥ पितुरिति। स रघुः समग्रसंपदः पितुः प्रयत्नाच्छुभैर्मनोहरैः शरीरावयवैः। हरिदश्वदीधितेः सूर्यस्य रश्मेरनुप्रवेशाद्बालचन्द्रमा इव। दिने दिने प्रतिदिनम्॥ "नित्यवीप्सयोः" इति द्विर्वचनम्॥ वृद्धिं पुपोष॥ अत्र वराहसंहितावचनम्—"सलिलमये शशिनि रवेर्दीधितयो मूर्छितास्तमो नैशम्। क्षपयन्ति दर्पणोदरनिहिता इव मन्दिरस्यान्तः" इति॥

२३॥ उमेति। उमावृषाङ्कौ शरजन्मना। कुमारेण यथा ननन्दतुः। शचीपुरंदरौ जयन्तेन जयन्ताख्येन सुतेन॥ "जयन्तः पाकशासनिः" इत्यमरः॥ यथा ननन्दतुः। तथा तत्समौ ताभ्यामुमावृषाङ्काभ्यां शचीपुरंदराभ्यां च समौ सा मागधी नृपश्च तत्सदृशेन ताभ्यां कुमारजयन्ताभ्यां सदृशेन सुतेन ननन्दतुः॥ मागधी प्राग्व्याख्याता॥

---

21. Thinking that the boy was destined to go to the other ends of learning and (also of martial proficiency) in his wars with his enemies, the king, skilled in the art of wordiness, called him *Raghu*—a word formed from a root meaning the act of going.

22. As by the reflection of the sun's rays, the young moon waxes (larger and larger) every day, so the little prince throve in all his handsome limbs of the body, under the care of his sire who had all the treasures at his command.

23. As Parvati and *S*ankara, on whose flag was the sign of a bull, were delighted to have Kumára (*lit.* one born in the reeds),

---

21. R. वेति for चेति.

रथाङ्गनाम्नोरिव भावबन्धनं बभूव यत्प्रेम परस्पराश्रयम् ।
विभक्तमप्येकसुतेन तत्तयोः परस्परस्योपरि पर्यचीयत ॥ २४ ॥

उवाच धात्र्या प्रथमोदितं वचो ययौ तदीयामवलम्ब्य चाङ्गुलिम् ।
अभूच्च नम्रः प्रणिपातशिक्षया पितुर्मुदं तेन ततान सोऽर्भकः ॥ २५ ॥

२४ ॥ रथाङ्गेति । रथाङ्गनाम्नी च रथाङ्गनामा च रथाङ्गनामानौ । चक्रवाकौ ॥ "पुमान्स्त्रिया" इत्येकशेषः ॥ तयोरिव तयोर्दंपत्योर्भावबन्धनं हृदयाकर्षकं परस्पराश्रयमन्योन्यविषयं यत्प्रेम बभूव तदेकेन केवलेन ताभ्यामन्येन वा ॥ "एके मुख्यान्यकेवलाः" इत्यमरः ॥ सुतेन विभक्तमपि कृतविभागमपि परस्परस्योपरि पर्यचीयत ववृधे ॥ कर्मकर्तरि लङ् ॥ अकृत्रिमत्वात्स्वयमेवोपचितमित्यर्थः ॥ यदेकाधारं वस्तु तदाधारद्वये विभज्यमानं हीयते । अत्र तु तयोः प्रागेकैकविषयं प्रेम संप्रति द्वितीयविषयलाभेऽपि नाहीयत । प्रत्युतोपचितमेवाभूदिति भावः ॥

२५ ॥ उवाचेति । सोऽर्भकः शिशुः ॥ "पोतः पाकोऽर्भको डिम्भः पृथुकः शावकः शिशुः" इत्यमरः ॥ धात्र्योपमात्रा ॥ "धात्री जनन्यामलकीवसुमत्युपमातृषु" इति विश्वः ॥ प्रथममुदितमुपदिष्टं वच उवाच । तदीयामङ्गुलिमवलम्ब्य ययौ च । प्रणिपातस्य शिक्षयोपदेशेन नम्रोऽभूच्च । इति यत्तेन पितुर्मुदं ततान ॥

---

and as Indra and *S*achi, his wife, were delighted to have Jayanta, as their son, so the king and the Magadha-princess no way inferior to either of them were delighted to have the little prince (as their heir) of equal footing both with Kumāra and Jayanta.

24. The affection which subsisted between them and which had fettered their hearts increased in its intensity toward each other though divided by their only son, like that of the male and female Chakravaka birds.

25. That little prince began to lisp out the words first taught by his nurse, and to walk by holding her proffered fingers and also gently lowered his head on being taught to make salutations and thus heightened the joy of his sire.

---

24. D. with Val., एकसुतं न for एकसुतेन. C. with Val., पर्यहीयत, B. G. I. K. with Chā., Din., and Su., न व्यहीयत for पर्यचीयत. Chāritravardhana notices the reading of Vallabha and others.

25. C. with Chā., यदाह for उवाच. B. D. with Val., शिशुस्ततान सः for ततान सोऽर्भकः. But Vallabha agrees with Mallinātha in his text. I. R. with Chā., and Val., °शिष्यया for °शिक्षया.

तमङ्कमारोप्य शरीरयोगजैः सुखैर्निषिञ्चन्तमिवामृतं त्वचि ।
उपान्तसंमीलितलोचनो नृपश्चिरात्सुतस्पर्शरसज्ञतां ययौ ॥ २६ ॥
अमंस्त चानेन परार्ध्यजन्मना स्थितेरभेत्ता स्थितिमन्तमन्वयम् ।
स्वमूर्तिभेदेन गुणाग्र्यवर्तिना पतिः प्रजानामिव सर्गमात्मनः ॥ २७ ॥
स वृत्तचूलश्चलकाकपक्षकैरमात्यपुत्रैः सवयोभिरन्वितः ।
लिपेर्यथावद्ग्रहणेन वाङ्मयं नदीमुखेनेव समुद्रमाविशत् ॥ २८ ॥

२६ ॥ तमिति । शरीरयोगजैः सुखैस्त्वचि त्वगिन्द्रियेऽमृतं निषिञ्चन्तं वर्षन्तमिव तं पुत्रमङ्कमारोप्य मुदाविर्भावादुपान्तयोः प्रान्तयोः संमीलितलोचनः सन् । नृपश्चिरात्सुतस्पर्शरसज्ञतां ययौ ॥ रसः स्वादः ॥

२७ ॥ अमंस्तेति । स्थितेरभेत्ता मर्यादापालकः । स नृपः परार्ध्यजन्मनोत्कृष्टजन्मनानेन रघुणान्वयं वंशम् । प्रजानां पतिर्ब्रह्मा । गुणाः सत्त्वादयः । तेष्वग्र्येण मुख्येन सत्त्वेन वर्तते व्याप्रियत इति गुणाग्र्यवर्ती । तेन स्वस्य मूर्तिभेदेनावतारविशेषेण विष्णुनात्मनः सर्गं सृष्टिमिव । स्थितिमन्तं प्रतिष्ठावन्तममंस्त मन्यते स्म ॥ मन्यतेरनुदात्तत्वादिट्प्रतिषेधः ॥ अत्रोपमानोपमेययोरितरेतरविशेषणानीतरेतरत्र योज्यानि । तत्र रघुपक्षे गुणा विद्याविनयादयः ॥ " गुणोऽप्रधाने रूपादौ मौर्व्यां सूदे वृकोदरे । स्तम्भे सत्त्वादिसंध्यादिविद्यादिहरितादिषु " इति विश्वः ॥ शेषं सुगमम् ॥

२८ ॥ स इति । " चूडा कार्या द्विजातीनां सर्वेषामेव धर्मतः । प्रथमेऽब्दे तृतीये वा कर्तव्या श्रुतिचोदनात् " इति मनुस्मरणात्तृतीये वर्षे वृत्तचूलो निष्पन्नचूडाक-

---

26. Infusing, as it were, nectar into his skin through thrilling sensation of pleasure produced from the touch of his body, the monarch, with his eyes closed at their corners, placed his infant son on his lap and went to the state of enjoying for a long time the deliciousness derived from the touch of his own child.

27. As the lord of all creatures considers the preservation of his creation secured by the incarnation (*lit* modification) of his own self (in the shape of Vish*n*u) possessed of the principal quality, so did the preserver of the hereditary traditions and customs feel the continuance of his line certain by reason of this prince of noble descent.

28. After the tonsure had been performed (when the Chaula ceremony was over) Raghu, attended by the sons of his father's courtiers of the same age with him, and wearing flowing locks, learnt his letters and entered thereby, as if through the mouth of a river, into the great ocean of learning.

---

26. A. with Chà., and Din., त्रिभाग for उपान्त .

28. A. P. with Din., वृत्तचौलः. D. G. K. R. with Chá., वृत्तचूडः for वृत्तचूलः. Also supported by Vallabha and Sumativijaya.

अथोपनीतं विधिवद्विपश्चितो विनिन्युरेनं गुरवो गुरुप्रियम् ।
अवन्ध्ययत्नाश्च बभूवुरत्र ते क्रिया हि वस्तूपहिता प्रसीदति ॥ २९ ॥
धियः समग्रैः स गुणैरुदारधीः क्रमाच्चतस्रश्चतुरर्णवोपमाः ।
ततार विद्याः पवनातिपातिभिर्दिशो हरिद्भिर्हरितामिवेश्वरः ॥ ३० ॥

र्मा सन् ॥ डलयोरभेदः ॥ स रघुः ॥ " प्राप्ते तु पञ्चमे वर्षे विद्यारम्भं च कारयेत्" इति वचनात्पञ्चमे वर्षे चलकाकपक्षकैश्चञ्चलशिखण्डकैः ॥ " बालानां तु शिखा प्रोक्ता काकपक्षः शिखण्डकः " इति हलायुधः ॥ सवयोभिः स्निग्धैः ॥ " स्निग्धो वयस्यः सवयाः " इत्यमरः ॥ अमात्यपुत्रैरन्वितः सन् । लिपेः पञ्चाशद्वर्णात्मिकाया मातृकाया यथावद्ग्रहणेन सम्यग्बोधेनोपायभूतेन वाङ्मयं शब्दजातम् । नद्या मुखं द्वारम् ॥ " मुखं तु वदने मुख्यारम्भे द्वाराभ्युपाययोः " इति यादवः ॥ तेन कश्चिन्मकरादिः समुद्रमिव । आविशत्प्रविष्टः । ज्ञातवानित्यर्थः ॥

२९ ॥ अथेति । "गर्भाष्टमे प्रकुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम् । गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भाच्च द्वादशे विशः " इति मनुस्मरणादथ गर्भैकादशेऽब्दे विधिवदुपनीतं गुरुप्रियमेनं रघुं विपश्चितो विद्वांसो गुरवो विनिन्युः शिक्षितवन्तः ॥ ते गुरवोऽत्रास्मिन्रघाववन्ध्ययत्नाश्च बभूवुः ॥ तथा हि । क्रिया शिक्षा ॥ " क्रिया तु निष्कृतौ शिक्षाचिकित्सोपायकर्मसु " इति यादवः ॥ वस्तुनि पात्रभूत उपहिता प्रयुक्ता प्रसीदति फलति ॥ " क्रिया हि द्रव्यं विनयति नाद्रव्यम् " इति कौटिल्यः ॥

३० ॥ धिय इति । अत्र कामन्दकः–" शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा । ऊहापोहोऽर्थविज्ञानं तत्त्वज्ञानं च धीगुणाः " इति ॥ " आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्च शाश्वती । एता विद्याश्चतस्रस्तु लोकसंस्थितिहेतवः " इति च ॥ उदारधीरुत्कृष्टबुद्धिः स रघुः समग्रैर्धियो गुणैः । चत्वारोऽर्णवा उपमा यासां ताश्चतुरर्णवोपमाः ॥ " तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च " इत्युत्तरपदसमासः ॥ चतस्रो विद्याः । हरितां दिशामीश्वरः सूर्यः पवनातिपातिभिर्हरिद्भिर्निजाश्वैः ॥ " हरित्ककुभि वर्णे च तृणवाजिविशेषयोः " इति विश्वः ॥ चतस्रो दिशः इव । क्रमात्ततार ॥ चतुरर्णवोपमत्वं दिशामपि द्रष्टव्यम् ॥

---

29. Subsequently to the thread-ceremony, performed in accordance with the precepts, the learned preceptors who liked him much trained him carefully and found their attempts not unsuccessful here :—for efforts when directed to proper objects bear fruit, *i. e.* seldom fail.

30. Raghu, of sublime genius, by dint of all his intellectual faculties gradually got across the four lores resembling the four oceans, as the lord of the quarters (the sun) passes over the (four) directions by means of his bay horses, surpassing the Wind (in speed).

---

29. B. C. G. I. K. P. R. with Chà., Din., Su., and the text only of Val., अथैत्र for अत्र ते. K. अपसीदति for प्रसीदति.

30. B. C. पवनातिवर्तिभिः for पवनातिपातिभिः.

त्वचं स मेध्यां परिधाय रौरवीमशिक्षतास्त्रं पितुरेव मन्त्रवत् ।
न केवलं तद्गुरुरेकपार्थिवः क्षितावभूदेकधनुर्धरोऽपि सः ॥ ३१ ॥
महोक्षतां वत्सतरः स्पृशन्निव द्विपेन्द्रभावं कलभः श्रयन्निव ।
रघुः क्रमाद्यौवनभिन्नशैशवः पुपोष गाम्भीर्यमनोहरं वपुः ॥ ३२ ॥
अथास्य गोदानविधेरनन्तरं विवाहदीक्षां निरवर्तयद्गुरुः ।
नरेन्द्रकन्यास्तमवाप्य सत्पतिं तमोनुदं दक्षसुता इवाबभुः ॥ ३३ ॥

३१ ॥ त्वचमिति । स रघुः ॥ "कार्ष्णरौरवबास्तानि चर्माणि ब्रह्मचारिणः। वसीरन्नानुपूर्व्येण शाणक्षौमादिकानि च" इति मनुस्मरणान्मेध्यां शुद्धां रौरवीं रुरुसंबन्धिनीम् ॥ "रुरुर्महाकृष्णसारः" इति यादवः ॥ त्वचं चर्म परिधाय वसित्वा मन्त्रवत्समन्त्रकमस्त्रमाग्नेयादिकं पितुरेवोपाध्यायादशिक्षताभ्यस्तवान् ॥ "आख्यातोपयोगे" इत्यपादानसंज्ञा ॥ पितुरेवेत्यवधारणमुपपादयति—नेति । तद्गुरुरेकोऽद्वितीयः पार्थिवः केवलं पृथिवीश्वर एव नाभूत् । किं तु क्षितौ स एक धनुर्धरोऽप्यभूत् ॥

३२ ॥ महोक्षतामिति । रघुः क्रमाद्यौवनेन भिन्नशैशवो निरस्तशिशुभावः सन् । महानुक्षा महोक्षो महर्षभः ॥ "अचतुर--" आदिसूत्रेण निपातनादकारान्तत्वम् ॥ तस्य भावस्तत्ता । तां स्पृशन्गच्छन्वत्सतरो दम्य इव ॥ "दम्यवत्सतरौ समौ" इत्यमरः ॥ द्विपेन्द्रभावं महागजत्वं श्रयन्भजन्कलभः करिपोत इव । गाम्भीर्येणाचापलेन मनोहरं वपुः पुपोष ॥

३३ ॥ अथेति ॥ "गौर्नादित्ये बलीवर्दे क्रतुभेदर्षिभेदयोः । स्त्री तु स्याद्दिशि भारत्यां भूमौ च सुरभावपि । पुंस्त्रियोः स्वर्गवज्राम्बुरश्मिदृग्बाणलोमसु" इति केशवः ॥ गावो लोमानि दीयन्ते खण्ड्यन्तेऽस्मिन्निति व्युत्पत्त्या गोदानं नाम ब्राह्मणादीनां षोडशादिषु वर्षेषु कर्तव्यं केशान्ताख्यं कर्मोच्यते ॥ तदुक्तं मनुना—

---

31. Clad in the sacred skin of the *ruru* deer, he learnt the art of missiles charged with all its mysterious incantations from his father himself; for his royal sire was not only the sole sovereign of the earth but also the sole archer on it.

32. As the young calf grows (in time) into the big bull, and a young elephant attains the state of a prince of elephants, so Raghu, who had broken up from his boyhood by means of his youth, maintained a body charming on account of his gravity.

33. Then after the ceremony of cropping the hair (गोदान), his royal father celebrated his marriage ceremony; and the pretty

---

31. R. with Val., अशिष्यतास्त्रं, D. and Su., प्रशिक्षितास्त्रः for अशिक्षितास्त्रं. A. C. K. I. with Val., and Su., मंत्रवित for मंत्रवत्.

32. D. with Val., गम्भीरमनोहरं for गाम्भीर्यमनोहरं. But the text of Vallabha agrees with Mallinátha.

33. B. C. G. K. I. P. R. with Chá., Din., Val., and Su., तमोपहं for तमोनुदम्.

युवा युगव्यायतबाहुरंसलः कपाटवक्षाः परिणद्धकन्धरः ।
वपुःप्रकर्षादजयद्गुरुं रघुस्तथापि नीचैर्विनयाददृश्यत ॥ ३४ ॥
ततः प्रजानां चिरमात्मना धृतां नितान्तगुर्वीं लघयिष्यता धुरम् ।
निसर्गसंस्कारविनीत इत्यसौ नृपेण चक्रे युवराजशब्दभाक् ॥ ३५ ॥

" केशान्तः षोडशे वर्षे ब्राह्मणस्य विधीयते । राजन्यबन्धोर्द्वाविंशे वैश्यस्य द्व्यधिके ततः " इति ॥ अथ गुरुः पिता ॥ " गुरुर्गीष्पतिपित्रादौ " इत्यमरः ॥ अस्य गोदानविधेरनन्तरं विवाहदीक्षां निरवर्तयत् । कृतवानित्यर्थः ॥ अथ नरेन्द्रकन्यास्तं रघुं । दक्षस्य सुता रोहिण्याद्यस्तमोनुदं चन्द्रमिव ॥ " तमोनुदोऽग्निचन्द्रार्काः " इति विश्वः ॥ सत्पतिमवाप्याभूः । रघुरपि तमोनुत् ॥ अत्र मनुः– " वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम् । अविप्लुतब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममाविशेत् " इति ॥

३४ ॥ संप्रति यौवराज्ययोग्यतामाह ॥ युवेति । युवा । युगो नाम धुर्यस्कन्धगः सच्छिद्रप्रान्तो यानाङ्गभूतो दारुविशेषः ॥ " यानाद्यङ्गे युगः पुंसि युगं युग्मे कृतादिषु " इत्यमरः ॥ युगवद्व्यायतौ दीर्घौ बाहू यस्य सः । अंसावस्य स्त इत्यंसलो बलवान् । मांसलश्चेति वृत्तिकारः ॥ " बलवान्मांसलोंऽसलः " इत्यमरः ॥ "वत्सांसाभ्यां कामबले" इति लच्प्रत्ययः॥ कपाटवक्षाः परिणद्धकंधरो विशालग्रीवः ॥ " परिणाहो विशालता " इत्यमरः ॥ रघुर्वपुषः प्रकर्षादाधिक्याद्यौवनकृताद्गुरुं पितरमजयत् । तथापि विनयान्नम्रत्वेन नीचैरल्पकोऽदृश्यत । अनौद्धत्यं च विवक्षितम् ॥

३५ ॥ संप्रति तस्य यौवराज्यमाह ॥ तत इति । तत आत्मना चिरं धृतां नितान्तगुर्वीम् ॥ " वोतो गुणवचनात् " इति ङीष् ॥ प्रजानां धुरं पालनप्रयासं लघयिष्यता लघुं करिष्यता ॥ " तत्करोति तदाचष्टे " इति लघुशब्दाण्णिच् ॥ ततो " लृटः सद्वा " इति शतृप्रत्ययः ॥ नृपेण दिलीपेनासौ रघुर्निसर्गेण स्वभावेन संस्कारेण शास्त्राभ्यासजनितवासनया च विनीतो नम्र इति हेतोः । युवराज इति

---

princesses obtaining him for their virtuous husband, looked as though they were the daughters of Daksha married to the moon (*lit.* the remover of darkness).

34. The youthful prince Raghu, possessed of arms long as a pole, with ample shoulders, with a chest broad as a board and of a large neck, excelled even his father in bodily excellence. Yet he looked lowly on account of humility (*i. e.* natural modesty).

35. Then the king, desirous of lightening the very heavy yoke of governing his subjects, which he had borne so long, made Raghu the holder of the title of young king, seeing that he was gentle by nature and by education.

---

34. D. with Chā., and Su., वपुः प्रहर्षात् for वपुः प्रकर्षात्. Dinakara too appears to have read वपुः प्रहर्षात्, but the text is corrupt.

नरेन्द्रमूलायतनादनन्तरं तदास्पदं श्रीर्युवराजसंज्ञितम् ।
अगच्छदंशेन गुणाभिलाषिणी नवावतारं कमलादिवोत्पलम् ॥ ३६ ॥
विभावसुः सारथिनेव वायुना घनव्यपायेन गभस्तिमानिव ।
बभूव तेनातितरां सुदुःसहः कटप्रभेदेन करीव पार्थिवः ॥ ३७ ॥
नियुज्य तं होमतुरंगरक्षणे धनुर्धरं राजसुतैरनुद्रुतम् ।
अपूर्णमेकेन शतक्रतूपमः शतं क्रतूनामपविघ्नमाप सः ॥ ३८ ॥

शब्दं भजतीति तथोक्तः ॥ "भजो ण्विः" इति ण्विप्रत्यय ॥ चक्रे कृतः ॥ "द्विविधो विनयः स्वाभाविकः कृत्रिमश्च" इति कौटिल्यः ॥ तदुभयसंपन्नत्वात्पुत्रं युवराजं चक्रेरित्यर्थः ॥ अत्र कामन्दकः—"विनयोपग्रहान्भूत्यै कुर्वीत नृपतिः सुतान् । अविनीतकुमारं हि कुलमाशु विशीर्यते । विनीतमौरसं पुत्रं यौवराज्येऽभिषेचयेत्" इति ॥

३६ ॥ नरेन्द्रेति । गुणान्विनयादीन्सौरभ्यादींश्चाभिलषतीति गुणाभिलाषिणी श्री राज्यलक्ष्मीः पद्माश्रया च नरेन्द्रो दिलीप एव मूलायतनं प्रधानस्थानं तस्मात् । अपादानात् । अनन्तरं संनिहितम् । युवराज इति संज्ञास्य संजाता युवराजसंज्ञितम् ॥ तारकादित्वादितच्प्रत्ययः ॥ आत्मनः पदं स्थानमास्पदम् ॥ "आस्पदं प्रतिष्ठायाम्" इति निपातः ॥ स रघुरित्यास्पदं तदास्पदम् । कमलाचिरोत्पन्नान्नवावतारमचिरोत्पन्नमुत्पलमिव । अंशेनागच्छत ॥ "स्त्रियो हि यूनि रज्यन्ते" इति भावः ॥

३७ ॥ विभावसुरिति । सारथिना सहायभूतेन । एतद्विशेषणमुत्तरवाक्येष्वप्यनुषञ्जनीयम् । वायुना विभावसुर्वह्निरिव ॥ "चित्रभानुर्विभावसुः" इत्यमरः ॥ घनव्यपायेन शरत्समयेन सारथिना गभस्तिमान्सूर्य इव । कटो गण्डः ॥ "गण्डः कटो मदो दानम्" इत्यमरः ॥ तस्य प्रभेदः स्फुटनम् । मदोदय इत्यर्थः । तेन करीव । पार्थिवो दिलीपस्तेन रघुणातितरामत्यन्तं सुदुःसहः सुष्ठुसह्यो बभूव ॥

३८ ॥ नियुज्येति । शतक्रतुरिन्द्र उपमा यस्य स शतक्रतूपमः स दिलीपः ॥ "शतं वै तल्या राजपुत्रा देवा आशापालाः" इत्यादिश्रुत्या ॥ राजसुतैरनुद्रुतमनु-

36. S'ri (the goddess of royalty) seeking (or predilecting) excellence, passed, in part, from her original (*i. e.* central) abode, the king, over to that seat, next beside, with the title 'Reigning Prince' accrued thereto, as from a lotus to a lotus in new bloom.

37. As fire by its associate (*lit.* charioteer) the wind, as by dispersion of clouds the sun, so the king became mightily unconquerable on account of him, like an elephant by the opening of his temples.

38. Having appointed him who was a great warrior (*lit.* a

---

36. B. I. read संज्ञकं for संज्ञितं.
37. D. दुरासहः, B. दुरुत्सहः for सुदुःसहः.
38. R. with Din., and the text only of Val., अनुद्रुतं for अनुद्रुतं.

ततः परं तेन मखाय यज्वना तुरंगमुत्सृष्टमनर्गलं पुनः ।
धनुर्भृतामग्रत एव रक्षिणां जहार शक्रः किल गूढविग्रहः ॥ ३९ ॥
विषादलुप्तप्रतिपत्ति विस्मितं कुमारसैन्यं सपदि स्थितं च तत् ।
वशिष्ठधेनुश्च यदृच्छयागता श्रुतप्रभावा ददृशेऽथ नन्दिनी ॥ ४० ॥

गतं धनुर्धरं तं रघुं होमतुरंगाणां रक्षणे नियुज्य । एकेन क्रतुनापूर्णमेकोनं क्रतूना-मश्वमेधानां शतमपविघ्नमपगतविघ्नं यथा तथाप ॥

३९॥ तत इति । ततः परमेकोनशतक्रतुप्राप्त्यनन्तरं यज्वना विधिनेष्टवता तेन दि-लीपेन पुनः पुनरपि मखाय मखं कर्तुम् ॥ "क्रियार्थोपपदस्य–" इत्यादिना चतुर्थी ॥ उत्सृष्टं मुक्तमनर्गलमप्रतिबन्धम् । अव्याहतस्वैरगतिमित्यर्थः ॥ " अपर्यावर्तयन्तो-ऽश्वमनुचरन्ति " इत्यापस्तम्बस्मरणात् ॥ तुरंगं धनुर्भृतां रक्षिणां रक्षकाणामग्रत एव शक्रो गूढविग्रहः सन् । जहार किल । किलेत्यैतिह्ये ॥

४० ॥ विषादेति । तत्कुमारस्य सैन्यं सेना सपदि । विषाद इष्टनाशकृतो मनो-भङ्गः ॥ तदुक्तम्–"विषादश्चेतसो भङ्ग उपायाभावनाशयोः" इति ॥ तेन लुप्ता प्रतिपत्तिः कर्तव्यज्ञानं यस्य तत्तथोक्तम् । विस्मितमश्वनाशस्याकस्मिकत्वादाश्च-र्याविष्टं सत् । स्थितं तस्थौ ॥ अथ श्रुतप्रभावा यदृच्छया स्वेच्छयागता नन्दिनी नाम वशिष्ठधेनुश्च ददृशे । रघोः स्वप्रसादलब्धत्वादनुजिघृक्षयेति भावः । द्वौ च-कारावविलम्बसूचकौ ॥

---

great bowman) to the protection of the sacrificial steed, followed by other princes, Dilipa, who was second only to Him of one hundred intellects, completed ninety-nine sacrifices without any hinderance.

39. After this, it is said that Sakra, with his person invisible, carried away even in the presence of the archers, his guards, the sacred steed which was let loose unrestrained again by him the sacrificer with a view to perform the last sacrifice.

40. Scarcely the prince's army remained astounded, being instantly deprived of all actions on account of the deep dejection (consequent on the loss of the steed) when it beheld Vas'ishtha's cow—Nandini by name—of celebrated power, come accidentally (by the way).

---

39. A. D. I. K. R. with Châ., Din., Val., and Su., अत: for ततः B. पश्यतां, C. G. I K. P. R, with Châ., Din., Val., and Su., रक्षताम् for रक्षिणाम्. G. मूर्तविग्रहः for गूढविग्रहः.

40. R. विस्मृतं for विस्मितं. K. with Châ., यत् for तत्. Between 40-41 R. with Val., read — "स्वेदाम्बुना मार्जय पुत्र लोचने । ममैव यनेह तुरङ्ग-मोक्षणे । श्रुत्वा निशम्येति वचः समीरितं । मुदं परामाप दिलीपनन्दनः" ॥ But R. reads it after the 41st verse of our text.

तदङ्गनिस्पन्दजलेन लोचने प्रमृज्य पुण्येन पुरस्कृतः सताम् ।
अतीन्द्रियेष्वप्युपपन्नदर्शनो बभूव भावेषु दिलीपनन्दनः ॥ ४१ ॥
स पूर्वतः पर्वतपक्षशातनं ददर्श देवं नरदेवसंभवः ।
पुनः पुनः सूतनिषिद्धचापलं हरन्तमश्वं रथरश्मिसंयतम् ॥ ४२ ॥
शतैस्तमक्ष्णामनिमेषवृत्तिभिर्हरिं विदित्वा हरिभिश्च वाजिभिः ।
अवोचदेनं गगनस्पृशा रघुः स्वरेण धीरेण निवर्तयन्निव ॥ ४३ ॥

४१ ॥ तदिति । सतां पुरस्कृतः पूजितो दिलीपनन्दनो रघुः पुण्येन तस्या नन्दिन्या यदङ्गं तस्य निस्पन्दो द्रवः स एव जलम् । मूत्रमित्यर्थः । तेन लोचने प्रमृज्य शोधयित्वा । अतीन्द्रियेष्विन्द्रियाण्यतिक्रान्तेषु ॥ "अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया" इति समासः ॥ द्विगुप्राप्तापन्नालंपूर्वगतिसमासेषु परवल्लिङ्गताप्रतिषेधाद्विशेष्यनिघ्नत्वम् ॥ भावेष्वपि वस्तुषूपपन्नदर्शनः संपन्नसाक्षात्कारशक्तिर्बभूव॥
४२ ॥ स इति ॥ नरदेवसंभवः स रघुः पुनः पुनः सूतेन निषिद्धचापलं निवारितौद्धत्यं रथस्य रश्मिभिः प्रग्रहैः ॥ "किरणप्रग्रहौ रश्मी" इत्यमरः ॥ संयतं बद्धमश्वं हरन्तं पर्वतपक्षाणां शातनं छेदकं देवमिन्द्रं पूर्वतः पूर्वस्यां दिशि ददर्श ॥
४३ ॥ शतैरिति । रघुस्तमश्वहर्तारमनिमेषवृत्तिभिर्निमेषव्यापारशून्यैरक्ष्णां शतैर्हरिभिर्हरिद्वर्णैः ॥ "हरिर्वाच्यवदाख्यातो हरित्कपिलवर्णयोः" इति विश्वः ॥ वाजिभिरश्वैश्च हरिमिन्द्रं विदित्वा ॥ "हरिर्वातार्कचन्द्रेन्द्रयमोपेन्द्रमरीचिषु" इति विश्वः ॥ एनमिन्द्रं गगनस्पृशा व्योमव्यापिना धीरेण गभीरेण स्वरेण ध्वनिनैव निवर्तयन्निव । अवोचत् ॥

---

41. The son of Dilipa, adorable to the good, cleansed his eyes with the sacred water trickling down from her body (*i. e.* her urine), and thus he became endued with the power of seeing objects that were beyond the reach of his senses (mortal eyes).

42. He, sprung from the lord of men, then beheld in the orient, the great god, the clipper of the wings of the mountains, carrying off the sacred steed which was tethered by the slender cords to his chariot, and whose restiveness was ever and anon repressed by the charioteer.

43. Knowing him to be the god Indra, by his hundred eyes that were in an untwinkling condition, as also by his bay horses, Raghu, with a deep and sonorous voice that reached the sky, addressed him, as if arresting his progress (at once).

---

41. K_2. °निष्यन्द°, P. with Din., °निष्पन्द° for निस्पन्द.

42. G. °शातिनं for °शातनं. K. I. R. with Din., Su., and the text only of Val., °संयुतं for °संयतं. So Sumativijaya's text agrees with that of Mallinātha

43. D. and the text only of Su., गगनस्पृशा, R. गगनं स्पृशा for गगनस्पृशा. Sumativijaya agrees with Mallinātha.

मखांशभाजां प्रथमो मनीषिभिस्त्वमेव देवेन्द्र सदा निगद्यसे ।
अजस्रदीक्षाप्रयतस्य मद्गुरोः क्रियाविघाताय कथं प्रवर्तसे ॥ ४४ ॥
त्रिलोकनाथेन सदा मखद्विषस्त्वया नियम्या ननु दिव्यचक्षुषा ।
स चेत्स्वयं कर्मसु धर्मचारिणां त्वमन्तरायो भवसि च्युतो विधिः ॥४५॥
तदङ्गमग्र्यं मघवन्महाक्रतोरमुं तुरंगं प्रतिमोक्तुमर्हसि ।
पथः श्रुतेर्दर्शयितार ईश्वरा मलीमसामाददते न पद्धतिम् ॥ ४६ ॥

४४ ॥ मखेति । हे देवेन्द्र मनीषिभिस्त्वमेव मखांशभाजां यज्ञभागभुजां प्रथमः सदा निगद्यसे कथ्यसे ॥ तथाप्यजस्रदीक्षायां नित्यदीक्षायां प्रयतस्य मद्गुरोः क्रियाविघाताय । क्रियां विहन्तुमित्यर्थः ॥ "तुमर्थाच्च भाववचनात्" इति चतुर्थी ॥ कथं प्रवर्तसे ॥

४५ ॥ त्रिलोकेति । त्रयाणां लोकानां नाथस्त्रिलोकनाथः ॥ "तद्धितार्थ—" इत्यादिनोत्तरपदसमासः ॥ तेन त्रैलोक्यनियामकेन दिव्यचक्षुषातीन्द्रियार्थदर्शिना त्वया मखद्विषः क्रतुविघातकाः सदा नियम्या ननु शिक्ष्याः खलु । स त्वं धर्मचारिणां कर्मसु क्रतुषु स्वयमन्तरायो विघ्नो भवसि चेत् । विधिरनुष्ठानं च्युतः क्षतः ॥ लोके सत्कर्मकथैवास्तमियादित्यर्थः ॥

४६ ॥ तदिति । हे मघवन् । तत्तस्मात्कारणान्महाक्रतोरश्वमेधस्याग्र्यं श्रेष्ठमङ्गं साधनममुं तुरंगं प्रतिमोक्तुं प्रतिदातुमर्हसि ॥ तथा हि । श्रुतेः पथो दर्शयितारः

---

44. Ever art thou, O lord of the gods, called by the sages, the first of those that enjoy the sacrificial share; how is it then that thou seemest to be bent upon obstructing the sacrificial work of my sire who is constantly engaged in such sacrificial vows?

45. You, possessed of divine vision the lord of the three worlds, ought indeed always to check the haters of the sacrifices; (but instead of that) if you yourself prove an obstacle to the deeds of the righteous, then all rites must necessarily perish!

46. Be pleased, therefore, O Indra, to set free this steed which is the most essential factor to the great sacrifice. Great ones

---

44. D. R. देवश for देवेन्द्र. B. C. G. I. K. R. with Chà., Din., Val., and Su., यतः for सदा. B. R. with Chà., क्रियाभिघाताय for क्रियाविघाताय.

45. B. D. I. R. with Chà., Din., and Val., सता, C. G. K. with Su., सताम् for सदा. R. मखत्विषः, A. C. with Chà., मघद्विषः for मखद्विषः. B. D. I. K. R. with Chá., Val., and Su., अन्तरायी for अन्तरायः. So also noticed by Dinakara. R. च्युतोऽवधिः for च्युतो विधिः.

46. B. C. G. I. J. K_2. R. with Chá., Val., and Su., शुचेः for श्रुतेः.

इति प्रगल्भं रघुणा समीरितं वचो निशम्याधिपतिर्दिवौकसाम् ।
निवर्तयामास रथं सविस्मयः प्रचक्रमे च प्रतिवक्तुमुत्तरम् ॥ ४७ ॥
यदात्थ राजन्यकुमार तत्तथा यशस्तु रक्ष्यं परतो यशोधनैः ।
जगत्प्रकाशं तदशेषमिज्यया भवद्गुरुर्लङ्घयितुं ममोद्यतः ॥ ४८ ॥
हरिर्यथैकः पुरुषोत्तमः स्मृतो महेश्वरस्त्र्यंबक एव नापरः ।
तथा विदुर्मां मुनयः शतक्रतुं द्वितीयगामी न हि शब्द एष नः ॥ ४९ ॥

सन्मार्गप्रदर्शका ईश्वराः महान्तो मलीमसां मलिनां पद्धतिं नाददते न स्वीकुर्वते । असन्मार्गं नावलम्बन्त इत्यर्थः ॥ "मलीमसं तु मलिनं कचरं मलदूषितम्" इत्यमरः ॥

४७ ॥ इतीति । इति रघुणा समीरितं प्रगल्भं वचो निशम्याकर्ण्य । दिवौकसः स्वर्गौकसः ॥ "दिवं स्वर्गेऽन्तरिक्षे च" इति विश्वः ॥ तेषामधिपतिर्देवेन्द्रो रघुप्रभावात्सविस्मयः सन् । रथं निवर्तयामास । उत्तरं प्रतिवक्तुं प्रचक्रमे च ॥

४८ ॥ यदिति । हे राजन्यकुमार क्षत्रियकुमार ॥ "मूर्धाभिषिक्तो राजन्यो बाहुजः क्षत्रियो विराट्" इत्यमरः ॥ यद्वाक्यमात्थ ब्रवीषि ॥ "ब्रुवः पञ्चानाम्-" इत्यादिनाहादेशः ॥ तत्तथा सत्यम् । किं तु यशोधनैरस्मादृशैः परतः शत्रुतो यशो रक्ष्यम् ॥ ततः किमत आह । भवद्गुरुस्त्वत्पिता जगत्प्रकाशं लोकप्रसिद्धमशेषं सर्वं मम तद्यश इज्यया यागेन लङ्घयितुं तिरस्कर्तुमुद्यत उद्युक्तः ॥

४९ ॥ किं तद्यश इत्याह । हरिरिति ॥ पुरुषेषूत्तम इति सप्तमीसमासः ॥ "न निर्धारणे" इति षष्ठीसमासनिषेधात् ॥ कर्मधारये तु-"सन्महत्परमोत्तमोत्कृष्टाः पूज्यमानैः" इत्युत्तमपुरुष इति स्यात् ॥ यथा हरिर्विष्णुरेक एव पुरुषोत्तमः स्मृतः । यथा च त्र्यम्बकः शिव एव महेश्वरः स्मृतः । नापरोऽपरः पुमान्न । तथा मां मुनयः शतक्रतुं विदुर्विदन्ति ॥ "विदो लटो वा" इति झेर्जुसादेशः ॥ नोऽस्माकम् । हरिहरयोर्मम चेत्यर्थः । एष त्रितयोऽपि शब्दो द्वितीयगामी न हि ॥ द्वितीयाप्रकरणे गमिगम्यादीनामुपसंख्यानात्समासः ॥

(like yourself) who are the guides of the paths of the Vedas do not themselves take to the filthy (*i. e.* dark) ways.

47. When the ruler of the gods heard this bold speech thus delivered by Raghu, his wonder was great, and he turned back his car and began to return the following reply.

48. What thou sayest, O thou son of a Kshatriya, is true, but those, who consider their fame as their wealth must needs strive to protect it from the enemy. Consider how thy sire is bent upon eclipsing the whole of my world-wide renown.

49. As by the word "*Purushottama*" none other than the great Hari alone is meant; and as by the word "*Mahes'vara*" the great three-eyed god alone is implied, so the sages know me by the epithet of *S'atakratu*, for these epithets of ours do not belong to a second.

---

48. D. यथा for यत्.

अतोऽयमश्वः कपिलानुसारिणा पितुस्त्वदीयस्य मयापहारितः ।
अलं प्रयत्नेन तवात्र मा निधाः पदं पदव्यां सगरस्य संततेः ॥ ५० ॥
ततः प्रहस्यापभयः पुरंदरं पुनर्बभाषे तुरगस्य रक्षिता ।
गृहाण शस्त्रं यदि सर्ग एष ते न खल्वनिर्जित्य रघुं कृती भवान् ॥ ५१ ॥

५० ॥ अत इति । यतोऽहमेव शतक्रतुरतस्त्वदीयस्य पितुरयं शततमोऽश्वः कपिलानुसारिणा कपिलमुनितुल्येन मयापहारितोऽपहृतः ॥ अपहारित इति स्वार्थे णिच् ॥ तवात्राश्वे प्रयत्नेनालम् । प्रयत्नो मा कारीत्यर्थः ॥ निषेध्यस्य ॥ निषेधं प्रति करणत्वात्तृतीया ॥ सगरस्य राज्ञः संततेः संतानस्य पदव्यां पदं मा निधा न निधेहि ॥ निपूर्वाद्धाधातोर्लुङ् ॥ "न माङ्योगे" इत्यडागमप्रतिषेधः ॥ महदास्कन्दनं ते विनाशमूलं भवेदिति भावः ॥

५१ ॥ तत इति ॥ ततस्तुरगस्य रक्षिता रघुः प्रहस्य प्रहासं कृत्वा । अपभयो निर्भीकः सन् । पुनः पुरंदरं बभाषे ॥ किमिति—हे देवेन्द्र एषोऽश्वामोचनरूपस्ते तव सर्गो निश्चयो यदि ॥ "सर्गः स्वभावनिर्मोक्षनिश्चयाध्यायसृष्टिषु" इत्यमरः ॥ तर्हि शस्त्रं गृहाण ॥ भवान्रघुं मामनिर्जित्य । कृतमनेनेति कृती । कृतकृत्यो न खलु ॥ "इष्टादिभ्यश्च" इतीनिप्रत्ययः ॥ रघुग्रहणादात्मनो दुर्जयत्वं सूचयति ॥

---

50. Accordingly, following the example of Kapila, I have taken away this steed of thy father. There is no need of any effort on your part in this attempt. Do not you set foot upon the path of the sons of Sagara.

51. Then the fearless protector of the sacred steed laughed (at these words) and again gave a reply to the town-destroying Indra. —" If that be thy resolve, then take up thy arms, thou must not consider thyself successful until thou hast really conquered Raghu."

---

50. B. D. I. R. with Chà., Val , and Su., कपिलानुकारिणा for कपिलानुसारिणा. This reading appears to be oldest and authentic, though none of our best Mss. read it. B. I. with Chà., Din., Val., and Su., मा कृथाः, C. G. K. P. R. with Su., and the text only of Val., मा नुगाः for मा निधाः. B. C. G. I. K. P. R. and the texts only of Chà., Val., and Su., पदव्याः for पदव्यां.

51. B. with Chà., अतः for ततः. A. D. आह पुनः for अपभयः. A. D. व्यपेतभीर्भूमिपुरंदरात्मजः for पुनर्बभाषे तुरगस्य रक्षिता. B. C. K. I. R. with Chá., Val , and Su., गर्वः for सर्गः. Cháritravardhana notices this and says :—सर्ग इति वा पाठस्तत्रैवं व्याख्या। यदि ते एष सर्गो निश्चयः &c., Dinakara also notices the reading गर्वः. Vallabha's text reads भवेत् for भवान्, while in his commentary he explains भवान्.

स एवमुक्त्वा मघवन्तमुन्मुखः करिष्यमाणः सशरं शरासनम् ।
अतिष्ठदालीढविशेषशोभिना वपुःप्रकर्षेण विडम्बितेश्वरः ॥ ५२ ॥
रघोरवष्टम्भमयेन पत्त्रिणा हृदि क्षतो गोत्रभिदप्यमर्षणः ।
नवाम्बुदानीकमुहूर्तलाञ्छने धनुष्यमोघं समधत्त सायकम् ॥ ५३ ॥
दिलीपसूनोः स बृहद्भुजान्तरं प्रविश्य भीमासुरशोणितोचितः ।
पपावनास्वादितपूर्वमाशुगः कुतूहलेनेव मनुष्यशोणितम् ॥ ५४ ॥

५२ ॥ स इति। स रघुरुन्मुखः सन्। मघवन्तमिन्द्रमेवमुक्त्वा शरासनं चापं सशरं करिष्यमाणः । आलीढेनालीढाख्येन स्थानभेदेन । विशेषशोभिनातिशयशोभिना वपुःप्रकर्षेण देहौन्नत्येन विडम्बितेश्वरोऽनुकृतपिनाकी सन् । अतिष्ठत् ॥ आलीढलक्षणमाह यादवः—"स्थानानि धन्विनां पञ्च तत्र वैशाखमस्त्रियाम् । त्रिवितस्त्यन्तरौ पादौ मण्डलं तोरणाकृति । अन्वर्थं स्यात्समपदमालीढं तु ततोऽग्रतः । दक्षिणे वाममाकुञ्च्य प्रत्यालीढविपर्ययः" इति ॥

५३ ॥ रघोरिति । रघोरवष्टम्भमयेन स्तम्भरूपेण ॥ "अवष्टम्भः सुवर्णे च स्तम्भप्रारम्भयोरपि" इति विश्वः ॥ पत्त्रिणा बाणेन हृदि हृदये क्षतो विद्धः । अत एवामर्षणोऽसहनः । क्रुद्ध इत्यर्थः। गोत्रभिदिन्द्रोऽपि ॥ "संभावनीये चौरेऽपि गोत्रः क्षौणीधरे मतः" इति विश्वः ॥ नवाम्बुदानामनीकस्य वृन्दस्य मुहूर्तं क्षणमात्रं लाञ्छने चिह्नभूते धनुषि । दिव्ये धनुषीत्यर्थः । अमोघमवन्ध्यं सायकं बाणं समधत्त संहितवान् ॥

५४ ॥ दिलीपेति । भीमानां भयंकराणामसुराणां शोणिते रुधिर उचितः परिचितः स इन्द्रमुक्त आशुगः सायको दिलीपसूनो रघोर्बृहद्भुजान्तरं वक्षः प्रविश्य । अनास्वादितपूर्वं पूर्वमनास्वादितम् ॥ सुप्सुपेति समासः ॥ मनुष्यशोणितं कुतूहलेनेव पपौ ॥

---

52. Thus he said to Maghavan and as he stood, with his face turned upwards, equipping his bow with an arrow, his manly frame with its full height was extremely beautiful in the attitude of आलीढ posture and by virtue of which he resembled the great god ईश्वर himself.

53. The mountain-splitting god, being wounded in the breast by Raghu's arrow consisting of his defiance (challenge, bold front), became indignant and put an arrow, that was sure of its mark, on his bow which became for a short time the standard of new clouds.

54. That (swift-going) arrow, used to (*lit.* accustomed to drink) the blood of grim demons plunged deep into the broad bosom (*lit.* space between the two arms) of Dilipa's son and drank

---

52. B. C. with Chá., and Su., उन्मुखः for उन्मुखः. D. with Su., वपुःप्रहर्षेण for वपुःप्रकर्षेण.

53. B. C. K. I. with Chá., and Su., मार्गणं for सायकं. Dinakara probably must have read सायकं.

54. A. D. with Din., नरेन्द्रसूनोः for दिलीपसूनोः.

हरेः कुमारोऽपि कुमारविक्रमः सुरद्विपास्फालनकर्कशाङ्गुलौ ।
भुजे शचीपत्रविशेषकाङ्किते स्वनामचिह्नं निचखान सायकम् ॥ ५५॥
जहार चान्येन मयूरपत्रिणा शरेण शक्रस्य महाशनिध्वजम् ।
चुकोप तस्मै स भृशं सुरश्रियः प्रसह्य केशव्यपरोपणादिव ॥ ५६ ॥
तयोरुपान्तस्थितसिद्धसैनिकं गरुत्मदाशीविषभीमदर्शनैः ।
बभूव युद्धं तुमुलं जयैषिणोरधोमुखैरूर्ध्वमुखैश्च पत्रिभिः ॥ ५७ ॥

५५ ॥ हरेरिति । कुमारस्य विक्रम इव विक्रमो यस्य स तथोक्तः ॥ "सप्तम्युपमानपूर्वस्य—" इत्यादिना समासः ॥ कुमारोऽपि रघुरपि सुरद्विपस्यैरावतस्यास्फालनेन कर्कशा अङ्गुलयो यस्य सः । तस्मिन् । शच्याः पत्रविशेषकैरङ्किते शचीपत्रविशेषकाङ्किते हरेरिन्द्रस्य भुजे स्वनामचिह्नं स्वनामाङ्कितं सायकं निचखान निखातवान् ॥ निष्कण्टकराज्यमाप्तस्यायं महानभिभव इति भावः ॥

५६ ॥ जहारेति । अन्येन मयूरपत्रिणा मयूरपत्रवता शरेण शक्रस्येन्द्रस्य महाशनिध्वजं महान्तमशनिरूपं ध्वजं जहार । स शक्रः । सुरश्रियः प्रसह्य बलात्कृत्य केशानां व्यपरोपणादवतारणाच्छेदनादिव । तस्मै रघवे भृशमत्यर्थं चुकोप । तं हन्तुमियेषेत्यर्थः ॥ "क्रुधद्रुह–" इत्यादिना संप्रदानाच्चतुर्थी ॥

५७ ॥ तयोरिति । जयैषिणोरन्योन्यजयाकाङ्क्षिणोस्तयोरिन्द्ररघ्वोः । गरुत्मन्तः पक्षवन्तः ॥ "गरुत्पक्षच्छदाः पत्रम्" इत्यमरः ॥ आशीविषाः । आशिषि

out of curiosity, as it were, the blood of a human being, never tasted before.

55. The prince too who resembled कुमार in valour, planted an arrow, bearing his own name, on the arm of Indra, whose fingers were hardened by the constant goading of the celestial elephant ऐरावत and on which शची, his wife, had cast many leaf-like-figures, in paint, (as a token of her love).

56. And with another arrow to which the feathers of peacock were set, he cut down the great thunderbolt-banner of Indra's chariot ; whereupon Indra was greatly enraged at him (Raghu), as if he had forcibly plucked the hair of the Goddess presiding over the fortunes of the celestial.

57. Then ensued a fierce fight, with the Siddhas and the

55. B. C. G. K. I. R. with Chá., Val., and Din., शचीपत्रलताक्रियाचिते for शचीपत्रविशेषकाङ्किते. B. and the text only of Val., मार्गणं for सायकं. K. reads first the 56th verse and then the 55th of our text.

56. B. C. G. K. I. R. with Chá., Val., and Su., °पक्ष्मणा for °पत्त्रिणा.

57. A. C. K. I. R. with Chá., Din., Val., and Su., गुरुत्मत् for गरुत्मत. A. C. K. I. R. with Chá., Din., Val., and Su., तुमलं for तुमुलं.

अतिप्रबन्धप्रहितास्त्रवृष्टिभिस्तमाश्रयं दुष्प्रसहस्य तेजसः ।
शशाक निर्वापयितुं न वासवः स्वतश्च्युतं वह्निमिवाद्भिरम्बुदः ॥ ५८ ॥
ततः प्रकोष्ठे हरिचन्दनाङ्किते प्रमथ्यमानार्णवधीरनादिनीम् ।
रघुः शशाङ्कार्धमुखेन पत्त्रिणा शरासनज्यामलुनाद्बिडौजसः ॥ ५९ ॥
स चापमुत्सृज्य विवृद्धमत्सरः प्रणाशनाय प्रबलस्य विद्विषः ।
महीध्रपक्षव्यपरोपणोचितं स्फुरत्प्रभामण्डलमस्त्रमाददे ॥ ६० ॥

दंष्ट्रायां विषं येषां त आशीविषाः सर्पाः ॥ पृषोदरादित्वात्साधुः ॥ "आशीरुरगदंष्ट्रायां" इत्यमरः ॥ त इव भीमदर्शनाः सपक्षाः सर्पा इव । द्रष्टॄणां भयावहा इत्यर्थः । तैरधोमुखैरूर्ध्वमुखैश्च । धन्विनोरुपर्यधोदेशावस्थितत्वादिति भावः । पत्त्रिभिर्बाणैरुपान्तस्थितास्तटस्थाः सिद्धा देवा इन्द्रस्य सैनिकाश्च रघोर्यस्मिंस्तत्तथोक्तं तुमुलं संकुलं युद्धं बभूव ॥

५८ ॥ अतीति । वासवोऽतिप्रबन्धेनातिसातत्येन प्रहिताभिः प्रयुक्ताभिरस्त्रवृष्टिभिर्दुष्प्रसहस्य तेजसः प्रतापस्याश्रयं तं रघुम् । अम्बुदोऽद्भिः स्वतश्च्युतं निर्गतं वह्निमिव । निर्वापयितुं शमयितुं न शशाक । रघोरपि लोकपालात्मकस्येन्द्रांशसंभवत्वादिति भावः ॥

५९ ॥ तत इति । ततो रघुर्हरिचन्दनाङ्किते प्रकोष्ठे मणिबन्धे प्रमथ्यमानार्णव इव धीरं गम्भीरं नदतीति तां तथोक्ताम् । वेवेष्टि व्याप्नोतीति विड् व्यापकमोजो यस्य स तस्य बिडौजस इन्द्रस्य ॥ पृषोदरादित्वात्साधुः ॥ शरासनज्यां धनुर्मौर्वीम् । शशाङ्कस्यार्धः खण्ड इव मुखं फलं यस्य तेन पत्त्रिणालुनादच्छिनत् ॥

६० ॥ स इति । विवृद्धमत्सरः प्रवृद्धवैरः स इन्द्रश्चापमुत्सृज्य प्रबलस्य विद्विषः

---

princely army stood beside, between the two bent upon victory with arrows having points flying upwards and downwards, like so many fierce-looking winged serpents.

58. Even with his ceaseless showers of missiles, Vâsava could not extinguish him the receptacle of unbearable energy (spirit), just as a cloud fails to extinguish, with waters, the fire of lightning, emitted from itself.

59. At last Raghu, with a crescent-shaped arrow, cut through the bow-string of India, which was terribly roaring, at his wrist, bedecked with yellow sandle, as roared the ocean during the churning process.

60. Highly enraged, and resolved to destroy his powerful adversary, he (Indra) laid aside his bow and took up the

---

58. A. B. I. J. K. P. R. with Châ., Din., Val, and Su., दुःप्रसहस्य for दुष्प्रसहस्य.

59. B. with Châ., and Din., घोरनादिनीं for °धीरनादिनीं. C. with Châ., and Su., ततः प्रकोष्ठाद्धरिचन्दनाङ्कितात् for ततः प्रकोष्ठे हरिचन्दनाङ्किते.

60. B. C. I. K. R. with Châ., Din., Val., and Su., °व्यपरोपणोद्धतं, D. °व्यपरोपणोऽद्भुतं for °व्यपरोपणोचितं.

रघुर्भृशं वक्षसि तेन ताडितः पपात भूमौ सह सैनिकाश्रुभिः ।
निमेषमात्रादवधूय तद्व्यथां सहोत्थितः सैनिकहर्षनिस्वनैः ॥ ६१ ॥
तथापि शस्त्रव्यवहारनिष्ठुरे विपक्षभावे चिरमस्य तस्थुषः ।
तुतोष वीर्यातिशयेन वृत्रहा पदं हि सर्वत्र गुणैर्निधीयते ॥ ६२ ॥
असङ्गमद्रिष्वपि सारवत्तया न मे त्वदन्येन विसोढमायुधम् ।
अवेहि मां प्रीतमृते तुरंगमात्किमिच्छसीति स्फुटमाह वासवः ॥ ६३ ॥

शत्रोः प्रणाशनाय वधाय । महीं धारयन्तीति महीध्राः पर्वताः ॥ मूलविभुजादित्वात्कप्रत्ययः ॥ तेषां पक्षव्यपरोपणे पक्षच्छेदे उचितं स्फुरत्प्रभामण्डलमस्त्रं वज्रायुधमाददे जग्राह ॥

६१ ॥ रघुरिति । रघुस्तेन वज्रेण भृशमत्यर्थं वक्षसि ताडितो हतः सन् । सैनिकानामश्रुभिः सह भूमौ पपात । तस्मिन्पतिते ते रुरुदुरित्यर्थः । निमेषमात्रात्तद्व्यथां दुःखमवधूय तिरस्कृत्य सैनिकानां हर्षेण ये निस्वनाः क्ष्वेडाः । तैः सहोत्थितश्च ॥ तस्मिन्नुत्थिते हर्षात्सिंहनादांश्चक्रुरित्यर्थः ॥

६२ ॥ तथापीति । तथापि वज्रघातेऽपि शस्त्राणां व्यवहारेण व्यापारेण निष्ठुरे विपक्षभावे शात्रवे चिरं तस्थुषः स्थितवतोऽस्य रघोर्वीर्यातिशयेन । वृत्रं हतवान्वृत्रहा ॥ "ब्रह्मभ्रूणवृत्रेषु क्विप्" ॥ तुतोष । स्वयं वीर एव वीरं जानातीति भावः ॥ कथं शत्रोः संतोषोऽत आह—गुणैः सर्वत्र शत्रुमित्रोदासीनेषु पदमङ्घ्रिर्निधीयते । गुणैः सर्वत्र संक्रम्यत इत्यर्थः ॥ गुणाः शत्रूनप्यावर्जयन्तीति भावः ॥

६३ ॥ असङ्गमिति । सारवत्तयाद्रिष्वप्यसङ्गमप्रतिबन्धं मे ममायुधं वज्रं त्वद-

---

thunder-arm, encircled with the tremulous orb of brightness, and (long) used to the clipping of the wings of mountains.

61. Greatly struck on the chest thereby, Raghu fell down on the ground along with the tears of the soldiers ; shaking off that pain in a moment, he (once more) rose up with the joyous shouts of his soldiers.

62. However Indra, the killer of Vritra, was exceedingly pleased with the superiority in heroism of him who was standing long in the state of hostility, terrible on account of the use of weapons ; for virtues set foot everywhere.

63. " The power of my mighty weapon which did not receive

---

61. B. D. K. with Chā., Din., Val., and Su., च व्यथां for तद्व्यथां.

62. C. with Val., स्थिरं for चिरं. Vallabha's text agrees with that of Mallinātha. D. विधीयते for निधीयते.

63. A. असङ्गं, C. G. K_2. with Su., असह्यं for असङ्गं. B. with Su., अवेहि for अवेहि. B. किमिच्छसीति स्मितमाह वासवः, C. G. I. K_2. P.R. with Chā., Din., Su., and the text only of Val., वरं वृणीष्वेति तमाह वासवः,

ततो निषङ्गादसमग्रमुद्धृतं सुवर्णपुङ्खद्युतिरञ्जिताङ्गुलिम् ।
नरेन्द्रसूनुः प्रतिसंहरन्निषुं प्रियंवदं प्रत्यवदत्सुरेश्वरम् ॥ ६४ ॥
अमोच्यमश्वं यदि मन्यसे प्रभो ततः समाप्ते विधिनैव कर्मणि ।
अजस्रदीक्षाप्रयतः स मद्गुरुः क्रतोरशेषेण फलेन युज्यताम् ॥ ६५ ॥

न्येन न विसोढम् ॥ अतो मां प्रीतं संतुष्टमवेहि । तुरंगमादृते तुरंगं वर्जयित्वा ॥ "अन्यारादितरर्ते—" इत्यादिना पञ्चमी ॥ किमिच्छसीति स्फुटं वासव आह ॥ तुरंगमादन्यद्देयं नास्तीति भावः ॥

६४ ॥ तत इति । ततो नरेन्द्रसूनू रघुर्निषङ्गात्तूणीगादसमग्रं यथा तथोद्धृतं सुवर्णपुङ्खद्युतिभी रञ्जिता अङ्गुलयो येन तमिषुं प्रतिसंहरन्निवर्तयन् । नाप्रहरन्तं प्रहरेदिति निषेधादिति भावः । प्रियं वदतीति प्रियंवदः ॥ "प्रियवशे वदः खच्" इति खच्प्रत्ययः ॥ "अरुर्द्विष--" इत्यादिना मुमागमः ॥ तं सुरेश्वरं प्रत्यवदत् । न तु प्राहरदिति भावः ॥

६५ ॥ अमोच्यमिति । हे प्रभो इन्द्र । अश्वममोच्यं मन्यसे यदि ततस्तर्ह्यजस्रदीक्षायां प्रयतः स मद्गुरुर्मम पिता विधिनैव कर्मणि समाप्ते सति क्रतोर्यत्फलं तेन फलेनाशेषेण कृत्स्नेन युज्यतां युक्तोऽस्तु ॥ अश्वमेधफललाभे किमश्वेनेति भावः ॥

---

a check even from mountains. has never been withstood by a second being but thyself. Know that I am pleased with thy valour. Apart from this steed, ask of me any other favour, " said Vásava plainly to the prince.

64. Thereupon the son of the great king withdrawing the arrow which was not entirely drawn out of the quiver and with the reflections of whose golden feathers his fingers had been adorned, returned an answer to the sweet-speaking king of the gods.

65. " If, O lord, thou considerest the steed unreleasable, then be my sire, pure amidst unceasing vows, blessed with the entire

---

C. G. I. K_2. P. R. with Chá., Din., Su., and the text only of Val., वरं वृणीष्वेति तमाह वासवः, D. वरं वृणीष्वेति तमादिदेश सः, D_2. K. वरं वृणीष्वेति तमाह वृत्रहा for किमिच्छसीति स्फुटमाह वासवः.

64. B. C. G. I. K. P. with Chá., Din., and Su., असमग्रनिःसृतं for असमग्रमुद्धृतं. Vallabha's text gives this reading, but his commentary explains the reading as given in our text. B. D. with Chá., दिलीपसूनुः for नरेन्द्रसूनुः. A. D. J. K_2. R. with Din., and Su , प्रियंवद. for प्रियंवदं. C. R. पुरन्दरं for सुरेश्वरं.

65. D. with Chá., अजस्रदीक्षानिरतः, R. with Su., and the text only of Vallabha, अजस्रदीक्षाप्रयतस्य for अजस्रदीक्षाप्रयतः. They construe it with क्रतोः and omit स. B. C. I. with Din., and Val., स मे गुरुः, D. च मे गुरुः, R. with Su., मद्गुरुः for स मद्गुरुः.

यथा च वृत्तान्तमिमं सदोगतस्त्रिलोचनैकांशतया दुरासदः ।
तवैव संदेशहराद्विशांपतिः शृणोति लोकेश तथा विधीयताम् ॥ ६६ ॥
तथेति कामं प्रतिशुश्रुवान्रघोर्यथागतं मातलिसारथिर्ययौ ।
नृपस्य नातिप्रमनाः सदोगृहं सुदक्षिणासूनुरपि न्यवर्तत ॥ ६७ ॥
तमभ्यनन्दत्प्रथमं प्रबोधितः प्रजेश्वरः शासनहारिणा हरेः ।
परामृशन्हर्षजडेन पाणिना तदीयमङ्गं कुलिशव्रणाङ्कितम् ॥ ६८ ॥

६६ ॥ यथेति । सदोगतः सदो गृहं गतस्त्रिलोचनमास्यैकांशतयाष्टानामन्यतममूर्तित्वात् । दुरासदो मादृशैर्दुष्प्रापो विशांपतिर्यथेमं वृत्तान्तं तव संदेशहराद्वार्ताहरादेव शृणोति च हे लोकेशेन्द्र तथा विधीयताम् ॥

६७ ॥ तथेति । मातलिसारथिरिन्द्रो रघोः संबन्धिनं कामं मनोरथं तथेति । तथास्त्विति प्रतिशुश्रुवान् ॥ " भाषायां सदवसश्रुवः " इति क्वसुप्रत्ययः ॥ यथागतं ययौ । सुदक्षिणासूनू रघुरपि नातिप्रमना विजयलाभेऽप्यश्वनाशान्नातिहृष्टः सन् ॥ नञर्थस्य नशब्दस्य सुप्सुपेति समासः ॥ नृपस्य सदोगृहं प्रति न्यवर्तत ॥

६८ ॥ तमिति । हरेरिन्द्रस्य शासनहारिणा पुरुषेण प्रथमं प्रबोधितो ज्ञापितः । वृत्तान्तमिति शेषः । प्रजेश्वरो दिलीपो हर्षजडेन हर्षशिशिरेण पाणिना कुलिशव्रणाङ्कितम् । तस्य रघोरिदं तदीयम् । अङ्गं शरीरं परामृशंस्तं रघुमभ्यनन्दत् ॥

---

fruit of the sacrifice as if the work had been completed (accomplished) just in due form. "

66. " Also be it so arranged, O lord of the worlds, that the ruler of men, sitting in (sacred) council, unapproachable by reason of his being a form (or portion) of the three-eyed god, may hear this news from a message-bearer of thine own. "

67. " So be it, "—with these words Indra, whose charioteer was Mâtali, promised to grant Raghu's desire and went away as he had come; the son of सुदक्षिणा too, not quite happy in his mind (for what had happened), repaired to the council-room of the king.

68. The king of men, already enlightened by the messenger of Hari, warmly received him, gently touching his body marked with the scars made by weapons of Indra with his hands benumbed with joy.

---

66. A. D. and the text only of Su., इदम् for इमम्. B. G. I. K. P. R. with Val., and Su., देवेश, C. with Din., देवेन्द्र. for लोकेश.

68. B. C. I. K. P. R. with Châ., Din., Val., and Su., हर्षचलेन for हर्षजडेन.

इति क्षितीशो नवतिं नवाधिकां महाक्रतूनां महनीयशासनः।
समारुरुक्षुर्दिवमायुषः क्षये ततान सोपानपरंपरामिव ॥ ६९ ॥
अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधि सूनवे
नृपतिककुदं दत्त्वा यूने सितातपवारणम्।
मुनिवनतरुच्छायां देव्या तया सह शिश्रिये
गलितवयसामिक्ष्वाकूणामिदं हि कुलव्रतम् ॥ ७० ॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कालिदासकृतौ रघुराज्याभिषेको नाम तृतीयः सर्गः ॥

६९ ॥ इतीति। महनीयशासनः पूजनीयाज्ञः क्षितीश इति महाक्रतूनामश्वमेधानां नवभिरधिकां नवतिमेकोनशतमायुषः क्षये सति दिवं स्वर्गं समारुरुक्षुरारोढुमिच्छुः सोपानानां परंपरां पङ्क्तिमिव ततान ॥

७० ॥ अथेति। अथ विषयेभ्यो व्यावृत्तात्मा निवृत्तचित्तः स दिलीपो यथाविधि यथाशास्त्रं यूने सूनवे नृपतिककुदं राजचिह्नम् ॥ "ककुत्ककुदं श्रेष्ठे वृषाङ्के राजलक्ष्मणि" इति विश्वः ॥ सितातपवारणं श्वेतच्छत्रं दत्त्वा तया देव्या सुदक्षिणया सह मुनिवनतरोश्छायां शिश्रिये श्रितवान् ॥ वानप्रस्थाश्रमं स्वीकृतवानित्यर्थः ॥ तथा हि। गलितवयसां वृद्धानामिक्ष्वाकूणामिक्ष्वाकोर्गोत्रापत्यानाम् ॥ तद्राजसंज्ञकत्वादणो लुक् ॥ इदं वनगमनं कुलव्रतम्। देव्या सहेत्यनेन सपत्नीकवानप्रस्थाश्रमपक्ष उक्तः ॥ तथा च याज्ञवल्क्यः—"सुतविन्यस्तपत्नीकस्तया वानुगतो वसन्। वानप्रस्थो ब्रह्मचारी साग्निः सोपासनो व्रजेत्" इति ॥ हरिणी वृत्तमेतत्। तदुक्तम्—"रसयुगहयैर्न्सौ म्रौ स्लौ गौ यदा हरिणी तदा" इति ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमल्लिनाथसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां तृतीयः सर्गः ॥

---

69. Thus did the Lord of the earth, of honoured behest, desirous of ascending heaven at the close of his life, construct (spread), as a flight of steps, ninety increased by nine of the great sacrifice.

70. And now he with his mind disengaged from worldly pleasures having entrusted to his youthful son the royal insignia consisting of the white umbrella, betook himself in company with his queen to the shade of the trees of the forest suitable for a Muni ; for such was the family vow of the Ikshvaku princes, in the closing days of their lives.

---

69. D. K. इत्थं for इति.

। चतुर्थः सर्गः ।

स राज्यं गुरुणा दत्तं प्रतिपद्याधिकं बभौ ।
दिनान्ते निहितं तेजः सवित्रेव हुताशनः ॥ १ ॥
दिलीपानन्तरं राज्ये तं निशम्य प्रतिष्ठितम् ।
पूर्वं प्रधूमितो राज्ञां हृदयेऽग्निरिवोत्थितः ॥ २ ॥
पुरुहूतध्वजस्येव तस्योन्नयनपङ्क्तयः ।
नवाभ्युत्थानदर्शिन्यो ननन्दुः सप्रजाः प्रजाः ॥ ३ ॥

शारदा शारदाम्भोजवदना वदनाम्बुजे ।
सर्वदा सर्वदास्माकं सन्निधिं संनिधिं क्रियात् ॥

॥ १ ॥ स इति । स रघुर्गुरुणा पित्रा दत्तं राज्यं राज्ञः कर्म प्रजापरिपालनात्मकम् ॥ " पुरोहितादिभ्यो यक् " ॥ प्रतिपद्य प्राप्य । दिनान्ते सायंकाले सवित्रा सूर्येण निहितं तेजः प्रतिपद्य हुताशनोऽग्निरिव । अधिकं बभौ ॥ " सौरं तेजः सायमग्निं संक्रमते । आदित्यो वा अस्तं यन्नग्निमनुप्रविशति । अग्निं वा आदित्यः सायं प्रविशति " इत्यादि श्रुतिप्रमाणात् ॥

२ ॥ दिलीपेति । दिलीपानन्तरं राज्ये प्रतिष्ठितमवस्थितं तं रघुं निशम्याकर्ण्य पूर्वं दिलीपकाले राज्ञां हृदये प्रकर्षेण धूमोऽस्य संजातः प्रधूमितोऽग्निः संतापाग्निरुत्थित इव प्रज्वलित इव । पूर्वाभ्यधिकः । संतापोऽभूदित्यर्थः ॥ राजकर्तृकस्यापि निशमनस्याग्नावुपचारान्न समानकर्तृकत्वविरोधः ॥

३ ॥ पुरुहूतेति । पुरुहूतध्वज इन्द्रध्वजः ॥ स किल राजभिर्वृष्ट्यर्थं पूज्यत इ-

1. Having received the kingly office (*lit.* kingdom), made over by his sire, he shone more brilliantly (than ever before), like fire, the devourer of offerings, on receiving the lustrous heat imparted to it by the sun at the close of the day.

2. Having heard him established on the throne after Dilipa, the fire of jealousy that was long smoking in the bosoms of rival princes rose up, as it were, in a flame.

3. His subjects with their children were pleased to see the

---

1. Between the 1st and the 2nd B. I. P. R. with Chá., Val., and Su., read " न्यस्तशस्त्रं दिलीपं च तं च शुश्रूषां प्रभुं ॥ राज्ञामुद्धृतनाराचे हृदि शल्यमिवार्पितम् " ॥ [P. श्रुत्वा विशांपतिं, I. R. with Val., शुश्रूषां पतिं for शुश्रूषां प्रभुं. B. उद्धृतनाराचे, Chá., उत्खातनाराचे for उद्धृतनाराचे. B. अरितं for अर्पितं].

2. B. C. H. I. R. with Chá., Val., Din., and Su., प्रधूमितं for प्रधूमितः. All of them construe it with हृदये. I. R. read the 2nd and the 4th after the 7th verse of our text.

3. D. G. H. K, I. with Chá., Din., Val., and Su., सुप्रजाः for सप्रजाः.

सममेवं समाक्रान्तं द्वयं द्विरदगामिना ।
तेन सिंहासनं पित्र्यमखिलं चारिमण्डलम् ॥ ४ ॥
छायामण्डललक्ष्येण तमदृश्या किल स्वयम् ।
पद्मा पद्मातपत्रेण भेजे साम्राज्यदीक्षितम् ॥ ५ ॥

त्युक्तं भविष्योत्तरे—" एवं यः कुरुते यात्रामिन्द्रकेतोर्युधिष्ठिर । पर्जन्यः कामवर्षी स्यात्तस्य राज्ये न संशयः" इति ॥ पुरुहूतध्वजस्येव तस्य रघोर्नवमभ्युत्थानमभ्युन्नतिमभ्युदयं च पश्यन्तीति नवाभ्युत्थानदर्शिन्यः । उद्गूर्ध्वं प्रस्थिता उल्लसिताश्च नयनपङ्क्तयो यासां ताः सप्रजाः ससंतानाः प्रजा जनाः ॥ " प्रजा स्यात्संततौ जने " इत्युभयत्राप्यमरः ॥ ननन्दुः ॥

४ ॥ सममिति । द्विरद इव द्विरदैश्च गच्छतीति द्विरदगामिना ॥ " कर्तर्युपमाने " इति " सुप्यजातौ—" इति च णिनिः ॥ तेन रघुणा समं युगपदेव द्वयं समाक्रान्तमधिष्ठितम् ॥ किं तद्वयम् । पितुरागतं पित्र्यम् ॥ " पितुर्यत् " इति यत्प्रत्ययः ॥ सिंहासनम् । अखिलमरीणां मण्डलं राष्ट्रं च ॥

५ ॥ अथ सिंहासनारोहणानन्तरं तस्य लक्ष्मीसंनिधानमाह ॥ छायेति । अत्र रघोस्तेजोविशेषेण स्वयं संनिहितया लक्ष्म्या छत्रधारणं कृतमित्युत्प्रेक्षते ॥ पद्मा लक्ष्मीः ॥ " लक्ष्मीः पद्मालया पद्मा कमला श्रीर्हरिप्रिया " इत्यमरः ॥ सा स्वयमदृश्या किल । किलेति संभावनायाम् । सती छायामण्डललक्ष्येण कान्तिपुञ्जानुमेयेन । न तु स्वरूपतो दृश्येन ॥ छायामण्डलमित्यनेनानातपज्ञानं लक्ष्यते ॥ " छाया सूर्यप्रिया कान्तिः प्रतिबिम्बमनातपः " इत्युभयत्राप्यमरः ॥ तेन पद्मातपत्रेण । पद्ममेवातपत्रम् । तेन कारणभूतेन साम्राज्यदीक्षितं साम्राज्ये साम्राज्यकर्मणि मण्डलाधिपत्ये दीक्षितमभिषिक्तं तं भेजे ॥ अन्यथा कथमेतादृशी कान्तिसंपत्तिरिति भावः ॥

---

new rise of the young monarch, as men longingly look with upturned eyes on the fresh manifestation of इन्द्रध्वज, (literally the standard of Indra.)

4. Raghu, whose movements were like those of an elephant (or who rode on an elephant), exercised his power over two things at one and the same time—first, the throne bequeathed to him by his father ; secondly, the whole territory of his enemies.

5. Him, enthroned universal sovereign, served Lakshmi, as it seemed, herself invisible, by holding up a Lotus-umbrella whose presence was to be inferred from the halo of radiance that circled him.

---

4. A. D. with Su., पैत्र्यं for पित्र्यं. Vallabha and Sumativijaya read this verse after the 7th of our text.

परिकल्पितसांनिध्या काले काले च बन्दिषु ।
स्तुत्यं स्तुतिभिरर्थ्याभिरुपतस्थे सरस्वती ॥ ६ ॥
मनुप्रभृतिभिर्मान्यैर्भुक्ता यद्यपि राजभिः ।
तथाप्यनन्यपूर्वेव तस्मिन्नासीद्वसुंधरा ॥ ७ ॥
स हि सर्वस्य लोकस्य युक्तदण्डतया मनः ।
आददे नातिशीतोष्णो नभस्वानिव दक्षिणः ॥ ८ ॥

६ ॥ संप्रति सरस्वतीसांनिध्यमाह ॥ परिकल्पितेति । सरस्वती च काले काले सर्वेष्वपि योग्यकालेषु ॥ "नित्यवीप्सयोः" इति वीप्सायां द्विर्वचनम् ॥ बन्दिषु परिकल्पितसांनिध्या कृतसंनिधाना सती स्तुत्यं स्तोत्रार्हं तं रघुम् । अर्थ्याभिरर्थादनपेताभिः ॥ "धर्मपथ्यर्थन्यायादनपेते" इति यत्प्रत्ययः ॥ स्तुतिभिः स्तोत्रैरुपतस्थे । देवताबुद्ध्या पूजितवतीत्यर्थः ॥ देवतात्वं च "ना विष्णुः पृथिवीपतिः" इति वा लोकपालात्मकत्वाद्वेत्यनुसंधेयम् ॥ एवं च सति "उपाद्देवपूजासंगतिकरणमित्रकरणपथिषु" इति वक्तव्यादात्मनेपदं सिध्यति ॥

७ ॥ मन्विति । वसुंधरा मनुप्रभृतिभिर्मन्वादिभिर्मान्यैः पूज्यै राजभिर्भुक्ता यद्यपि । भुक्तैवेत्यर्थः ॥ यद्यपीत्यवधारणे ॥ "अप्यर्थे यदिवार्थे स्यात्" इति केशवः ॥ तथापि तस्मिन्राज्ञि । अन्यः पूर्वो यस्याः सान्यपूर्वा । अन्यपूर्वा न भवतीत्यनन्यपूर्वा । अनन्योपभुक्तेवासीत् ॥ तत्प्रथमपतिकेवानुरक्तवतीत्यर्थः ॥

८ ॥ अत्र कारणमाह ॥ सहीति । हि यस्मात्कारणात्स रघुर्युक्तदण्डतया यथापराधदण्डतया सर्वस्य लोकस्य मन आददे जहार । कथमिव । अतिशीतोऽत्युष्णो वा न भवतीति नातिशीतोष्णः ॥ नञर्थस्य न शब्दस्य सुप्सुपेति समासः ॥ दक्षिणो दक्षिणदिग्भवो नभस्वान्वायुरिव । मलयानिल इवेत्यर्थः ॥ युक्तदण्डतयेत्यत्र कामन्दकः—"उद्वेजयति तीक्ष्णेन मृदुना परिभूयते । दण्डेन नृपतिस्तस्माद्युक्तदण्डः प्रशस्यते" इति ॥

---

6. The goddess of learning too, by her presence, in all appropriate seasons, in the vicinity of the musical panegyrists, served the praiseworthy prince by significant praises.

7. Though (the sovereignty of) the earth had been (previously) enjoyed by estimable princes, commencing from Manu, yet when it came to him, it seemed as if it had never known any other master.

8. On account of his just punishments he, like the southern breeze which is neither too hot nor too cold, won the hearts of all his peoples.

---

7. A. C. with Chá., तस्मिन्नासीद्धि मेदिनी for तस्मिन्नासीद्वसुंधरा.

8. C. with Chá., यादृग्दण्डतया for युक्तदण्डतया. I. R. and Su., read this verse after the 9th of our text.

मन्दोत्कण्ठाः कृतास्तेन गुणाधिकतया गुरौ ।
फलेन सहकारस्य पुष्पोद्गम इव प्रजाः ॥ ९ ॥
नयविद्भिर्नवे राज्ञि सदसच्चोपदर्शितम् ।
पूर्व एवाभवत्पक्षस्तस्मिन्नाभवदुत्तरः ॥ १० ॥
पञ्चानामपि भूतानामुत्कर्षं पुपुषुर्गुणाः ॥
नवे तस्मिन्महीपाले सर्वं नवमिवाभवत् ॥ ११ ॥
यथा प्रह्लादनाच्चन्द्रः प्रतापात्तपनो यथा ।
तथैव सोऽभूदन्वर्थो राजा प्रकृतिरञ्जनात् ॥ १२ ॥

९ ॥ मन्देति । तेन रघुणा प्रजा गुरौ दिलीपे विषये । सहकारोऽतिसौरभश्चूतः ॥ "आम्रश्चूतो रसालोऽसौ सहकारोऽतिसौरभः" इत्यमरः ॥ तस्य फलेन पुष्पोद्गमे पुष्पोदय इव । ततोऽपि गुणाधिकतया हेतुना मन्दोत्कण्ठा अल्पौत्सुक्याः कृताः ॥ गुणोत्तरश्चोत्तरो विषयः पूर्वं विस्मारयतीति भावः ॥

१० ॥ नयविद्भिरिति । नयविद्भिर्नीतिशास्त्रज्ञैर्नवे तस्मिन् राज्ञि विषये । तमधिकृत्येत्यर्थः । सद्धर्मयुद्धादिकम् । असत्कूटयुद्धादिकं चोपदर्शितम् ॥ तस्मिन्राज्ञि पूर्वः पक्ष एवाभवत् । संक्रान्त इत्यर्थः ॥ उत्तरः पक्षो नाभवत् । न संक्रान्त इत्यर्थः ॥ तत्र सदसतोर्मध्ये सदेवाभिमतं नासत् । तदुद्भावनं तु ज्ञानार्थमेवेत्यर्थः ॥ पक्षः साधनयोग्यार्थः ॥ "पक्षः पार्श्वगरुत्साध्यसहायबलभित्तिषु" इति केशवः ॥

११ ॥ पञ्चानामिति । पृथिव्यादीनां पञ्चानां भूतानामपि गुणा गन्धादय उत्कर्षमतिशयं पुपुषुः ॥ अत्रोत्प्रेक्षते—तस्मिन्रघौ नाम नवे महीपाले सति सर्वं वस्तुजातं नवमिवाभवत् ॥ तदेव भूतजातमिदानीमपूर्वगुणयोगादपूर्वमिवाभवदिति भावः ॥

१२ ॥ यथेति । यथा चन्दयतीत्याह्लादयतीति चन्द्र इन्दुः ॥ चदिधातोरौणा-

---

9. By him, with his transcending virtues, the keen feeling for his sire entertained by the people was lessened, as that at the bursting forth of the mango-blossoms is made (*i. e.* lessened) by its fruit.

10. Men skilled in state politics pointed out to the new king both fair and unfair ways of warfare ; but in his case the former became the plan, not the latter.

11. When that new king became the ruler of the earth every thing had a renewed life as it were,—even the properties of the five primary elements, received (an unusual) development.

12. He became king in the real sense of the word on account of his pleasing disposition towards the subjects, as the moon (veri-

---

10. G. H. with Val., and Din., नयवद्भिः for नयविद्भिः. R. सदसच्चोपदर्शनं for सदसच्चोपदर्शितं.

12. R. प्रह्लादनश्चन्द्रः for प्रह्लादनाच्चन्द्रः. E. प्रतपात् for प्रतापात्. R. राज्यप्रकृति° for राजा प्रकृति°.

कामं कर्णान्तविश्रान्ते विशाले तस्य लोचने ।
चक्षुष्मत्ता तु शास्त्रेण सूक्ष्मकार्यार्थदर्शिना ॥ १३ ॥
लब्धप्रशमनस्वस्थमथैनं समुपस्थिता ।
पार्थिवश्रीर्द्वितीयेव शरत्पङ्कजलक्षणा ॥ १४ ॥

द्रिको रप्रत्ययः ॥ प्रह्लादनाशाह्लादकरणादन्वर्थोऽनुगतार्थनामकोऽभूत् । यथा च तपतीति तपनः सूर्यः ॥ नन्द्यादित्वाल्ल्युप्रत्ययः ॥ प्रतापात्संतापजननादन्वर्थः । तथैव स राजा प्रकृतिरञ्जनादन्वर्थः सार्थकराजशब्दोऽभूत् ॥ यद्यपि राजशब्दो राजतेर्दीप्त्यर्थात्कनिन्प्रत्ययान्तो न तु रञ्जेस्तथापि धातूनामनेकार्थत्वाद्रञ्जनाद्राजेत्युक्तं कविना ॥

१३ ॥ काममिति । विशाले तस्य रघोर्लोचने कामं कर्णान्तयोर्विश्रान्ते कर्णप्रान्तगते ॥ चक्षुष्मत्ता तु । चक्षुःफलं त्वित्यर्थः । सूक्ष्मान् कार्यार्थान्कर्तव्यार्थान् दर्शयति प्रकाशयतीति सूक्ष्मकार्यार्थदर्शिना शास्त्रेणैव ॥ " शास्त्रं दृष्टिर्विवेकिनाम् " इति भावः ॥

१४ ॥ लब्धेति । अथ लब्धस्य राज्यस्य प्रशमनेन परिपन्थिनामनुरञ्जनप्रतीकाराभ्यां स्थिरीकरणेन स्वस्थं समाहितचित्तमेनं रघुं पङ्कजलक्षणा पद्मचिह्ना । श्रियोऽपि विशेषणमेतत् । शरत । द्वितीया पार्थिवश्री राजलक्ष्मीरिव । समुपस्थिता प्राप्ता ॥

---

fies the signification of its name) on account of its power to please and the sun on account of its scorching brightness.

13. Granted that his large eyes extended up to the extremities of his ears (*lit.* rested at the borders of his ears); the possession of an eye, however, was through the S'ástra, showing subtle purposes to be achieved.

14. Autumn heralded by the lotus flowers, made her appear-

Malli.'s order.	Chá.'s order.	Val. and Su.'s order.
8. स हि सर्वस्य &c.	8. स हि सर्वस्य &c.	8. नयविद्भिः &c.
9. मन्दोत्कण्ठाः &c.	9. काम &c.	9. मन्दोत्कण्ठाः &c.
10. नयविद्भिः &c.	10. यथा प्रह्लादनात् &c.	10. स हि सर्वस्य &c.
11. पश्चानां &c.	11. नयविद्भिः &c.	11. पश्चानां &c.
12. यथा प्रह्लादनात् &c.	12. मन्दोत्कण्ठाः &c.	12. यथा प्रह्लादनात् &c.
13. कामं &c.	13. पश्चानां &c.	13. कामं &c.

I. R. read first " नयविद्भिः &c., " and then " मन्दोत्कण्ठाः &c., " and further these Mss. do not differ.

13. B. D. with Chá., कामं कमलपत्राणां नेत्रे तस्यानुकारिणी for कामं कर्णान्तविश्रान्ते विशाले तस्य लोचने. D. R. च for तु. C. E. K. I. R. with Chá., Val., and Su., सूक्ष्मकार्यार्थदर्शिनः for सूक्ष्मकार्यार्थदर्शिना. And every one of these construe it with तस्य.

14. B. C. E. H. K. I. R. with Val., and Su., °प्रशमनं स्वस्थं for °प्रशमनस्वस्थं.

निर्वृष्टलघुभिर्मेघैर्मुक्तवर्त्मा सुदुःसहः ।
प्रतापस्तस्य भानोश्च युगपद्व्यानशे दिशः ॥ १५ ॥
वार्षिकं संजहारेन्द्रो धनुर्जैत्रं रघुर्दधौ ।
प्रजार्थसाधने तौ हि पर्यायोद्यतकार्मुकौ ॥ १६ ॥

१५ ॥ निर्वृष्टेति । निःशेषं वृष्टा निर्वृष्टाः । कर्तरि क्तः । अत एव लघवः । तैर्मेघैर्मुक्तवर्त्मा त्यक्तमार्गः । अत एव सुदुःसहः । तस्य रघोर्भानोश्च । प्रतापः पौरुषमातपश्च ॥ " प्रतापौ पौरुषातपौ " इति यादवः ॥ युगपद्दिशो व्यानशे व्याप ॥

१६ ॥ वार्षिकमिति । इन्द्रः । वर्षासु भवं वार्षिकम् । वर्षानिमित्तमित्यर्थः ॥ " वर्षाभ्यष्ठक् " इति ठक्प्रत्ययः ॥ धनुः संजहार ॥ रघुर्जैत्रं जयशीलम् ॥ जेतृशब्दात्तृन्नन्तात् " प्रज्ञादिभ्यश्च " इति स्वार्थेऽण्प्रत्ययः ॥ धनुर्दधौ ॥ हि यस्मात्ताविन्द्ररघू प्रजानामर्थस्य प्रयोजनस्य वृष्टिविजयलक्षणस्य साधने विषये पर्यायेणोद्यते कार्मुके याभ्यां तौ पर्यायोद्यतकार्मुकौ ॥

---

ance, like a second goddess of kingly power, to him, whose heart was, at ease by reason of the secure possession of his acquisitions (or kingdom).

15. The conquering power of the king and the scorching heat of the sun, extremely unendurable on account of its path having been cleared by the clouds which were light by reason of emptying themselves, simultaneously spread themselves in all directions.

16. Indra withdrew his great annual rain-bow, Raghu took up his victorious one; thus they both used their bows by turn for accomplishing the interests of the people.

---

15. C. I. सदुःसहः, R. with Val., दुरुत्सहः for सुदुःसहः. For " निर्वृष्टलघुभिः " &c., D. reads-" निर्वृष्टलघुभिर्मेघैः सवितुस्तस्य चोभयोः । वर्धिष्णवो दिशां भागान्प्रतापा यत्र रुचिरोः " ।

16. D. पर्यायोद्यमविश्रमौ for पर्यायोद्यतकार्मुकौ. Also noticed by Dinakara. Mallinātha also notices this and says :—" पर्यायोद्यमविश्रमौ " इति पाठान्तरे पर्यायेणोद्यमो विश्रमश्च ययोस्तौ पर्यायोद्यमविश्रमौ ॥ द्वयोः पर्यायकरणादक्लेश इति भावः ॥ Between 15—16, B. E. I. P. with Val., and Su., read—" अधिज्यमायुधं कर्तुं समयोऽयं रघोरिति । स्वं धनुः शङ्कितेनेव संजह्रे शतमन्युना " ॥ [B. संहृतं for संजह्रे. P. स्वधनुः for स्वं धनुः] Chāritravardhana also appears to have read this spurious verse for his प्रतीक is " अधिज्यमिति ", but further on the commentary of the 17th verse is given. The scribe must have inadvertantly forgot to put down the commentary of this. Vallabha calls it पाठान्तरं, although he comments on it.

पुण्डरीकातपत्रस्तं विकसत्काशचामरः ।
ऋतुर्विडम्बयामास न पुनः प्राप तच्छ्रियम् ॥ १७ ॥
प्रसादसुमुखे तस्मिंश्चन्द्रे च विशदप्रभे ।
तदा चक्षुष्मतां प्रीतिरासीत्समरसा द्वयोः ॥ १८ ॥
हंसश्रेणिषु तारासु कुमुद्वत्सु च वारिषु ।
विभूतयस्तदीयानां पर्यस्ता यशसामिव ॥ १९ ॥

१७ ॥ पुण्डरीकेति । पुण्डरीकं सिताम्भोजमेवातपत्रं यस्य स तथोक्तः । विकसन्ति काशानि काशाख्यतृणकुसुमान्येव चामराणि यस्य स तथोक्तः । ऋतुः शरदृतुः पुण्डरीकनिभातपत्रं काशनिभचामरं तं रघुं विडम्बयामासानुचकार ॥ तस्य रघोः श्रियं पुनः शोभां तु न प्राप ॥ " शोभासंपत्तिपद्मासु लक्ष्मीः श्रीरिव दृश्यते " इति शाश्वतः ॥

१८ ॥ प्रसादेति । प्रसादेन सुमुखे तस्मिन्रघौ विषदप्रभे निर्मलकान्तौ चन्द्रे च द्वयोर्विषये तदा चक्षुष्मतां प्रीतिरनुरागः समरसा समस्वादा । तुल्यभोगेति यावत् ॥ " रसो गन्धे रसः स्वादे " इति विश्वः ॥ आसीत् ॥

१९ ॥ हंसेति । हंसानां श्रेणिषु पङ्क्तिषु । तारासु नक्षत्रेषु । कुमुदानि येषु सन्तीति कुमुद्वन्ति तेषु । कुमुदप्रायेष्वित्यर्थः ॥ " कुमुद्वान्कुमुदप्रायः " इत्यमरः ॥ " कुमुदनडवेतसेभ्यो ड्मतुप् " ॥ वारिषु च तदीयानां रघुसंबन्धिनां यशसां विभूतयः संपदः पर्यस्ता इव प्रसारिताः किम् । इत्युत्प्रेक्षा ॥ अन्यथा कथमेषां धवलिमेति भावः ॥

---

17. The season of autumn with its umbrella of white lotus flowers and with its *châmaras* (chowries) made of the blooming *kâs'a* grass, only faintly imitated his splendour but could not attain it.

18. At that time the attachment of those that had eyes was of equal savour (or fervour) towards the two, *viz.*, towards him delightful-faced in benignity and towards the moon of clear lustre.

19. Might it be that the properties of his fame were scattered in the rows of swans, in stars, and also in waters marked by कुमुद flowers.

---

17. B. C. E. G. H. K. I. P. R. with Châ., विलसत्° for विकसत्°.

18. B. D. I. प्रसादाभिमुखे, R. प्रसादसन्मुखे for प्रसादसुमुखे. Vallabha reads °सुमुखे. C. with Châ., समद्रवा for समरसा.

19. B. C. E. G. H. K. I. P. R. with Châ., Din., Val., and Su., हंसश्रेणीषु for हंसश्रेणिषु.

इक्षुच्छायनिषादिन्यस्तस्य गोप्तुर्गुणोदयम् ।
आकुमारकथोद्धातं शालिगोप्यो जगुर्यशः ॥ २० ॥
प्रससादोदयादम्भः कुम्भयोनेर्महौजसः ।
रघोरभिभवाशङ्कि चुक्षुभे द्विषतां मनः ॥ २१ ॥

२० ॥ इक्ष्विति । इक्षूणां छायेक्षुच्छायम् ॥ "छाया बाहुल्ये" इति नपुंसकत्वम् ॥ तत्र निषण्णा इक्षुच्छायनिषादिन्यः ॥ शालीन्गोपायन्ति रक्षन्तीति शालिगोप्यः शस्यपालिकाः स्त्रियः ॥ "कर्मण्यण्" ॥ "टिड्ढाणञ्-" इत्यादिना ङीप् । गोप्तू रक्षकस्य तस्य रघोः । गुणेभ्य उदयो यस्य तद्गुणोदयं गुणोत्पन्नमाकुमारं कुमारादारभ्य कथोद्धातः कथारम्भो यस्य तत् । कुमारैरपि स्तूयमानमित्यर्थः । यशो जगुर्गायन्ति स्म ॥ अथ वा कुमारस्य सतो रघोर्याः कथा इन्द्रविजयादयस्तत आरभ्याकुमारकथम् ॥ तत्राप्यभिविधावव्ययीभावः ॥ आकुमारकथमुद्धातो यस्मिन्कर्मणि । गानक्रियाविशेषणमेतत् ॥ "स्यादभ्यादानमुद्धात आरंभः" इत्यमरः॥

२१ ॥ प्रससादेति । महौजसः कुम्भयोनेरगस्त्यस्य ॥ "अगस्त्यः कुम्भसंभवः"

---

20. Women appointed to watch the crops of शालि corn, sheltering themselves under the deep shade of sugarcanes, sang the glory recounting the protector's virtues, beginning with the period describing the heroic actions of his childhood.

21. At the rise of the Pitcher-born sage of great splendour the water became clear; at the rise of Raghu the hearts of his enemies apprehending defeat got muddled (roiled).

---

20. B. C. E. H. K. I. P. R. with Chá., Val., and Su., इक्षुच्छाया° for इक्षुच्छाय°. Cháritravardhana also notices the reading of our text. Dinakara notices इक्षुच्छाया°, so does Mallinátha who says :—"इक्षुच्छाया°" इति स्त्रीलिङ्गपाठे इक्षोश्छायेति विग्रहः । अन्यथा बहुत्वे नपुंसकत्वप्रसङ्गात् ॥ D. with Din., आकुमारकथोद्भूतं, K. आकुमारकथोद्गाथं, G. with Su., आकुमारकथोद्भूतं, also noticed by Dinakara and Mallinátha, the latter observes—"आकुमारकथोद्भूतं" इति पाठे कुमारस्य सतस्तस्य कथाभिश्चरितैरुद्भूतं यद्यशस्तद्यश आरभ्य यशो जगुरिति व्याख्येयं, this is, word for word the same, in the commentary of Dinakara. K_2. with Vallabha's text only आकुमारकथोद्गीतं for आकुमारकथोद्घातं. Vallabha's commentary reads with us. For "इक्षुच्छाय°" &c., B. R. with Val., and Su., read :—"तस्य गोप्तुर्द्विरेफाणां कर्णोत्पलनिपातिनां । स्वरसंवादिभिः कण्ठैः शालिगोप्यो जगुर्गुणान्" ॥ [R. विपातिनां for निपातिनां. R. with Val., and Su., यशः for गुणान्. R. calls it पाठान्तरं.]

21. B. C. E. G. H. K. P. with Val., परिभवाशङ्कि, I. R. त्वभिभवाशङ्कि, D. with Su., पराभवाशङ्कि for अभिभवाशङ्कि. Also supported by Chàritravardhana and Dinakara.

मदोदग्राः ककुद्मन्तः सरितां कूलमुद्रुजाः ।
लीलाखेलमनुप्रापुर्महोक्षास्तस्य विक्रमम् ॥ २२ ॥
प्रसवैः सप्तपर्णानां मदगन्धिभिराहताः ।
असूययेव तन्नागाः सप्तधैव प्रसुस्रुवुः ॥ २३ ॥
सरितः कुर्वती गाधाः पथश्चाश्यानकर्दमान् ।
यात्रायै चोदयामास तं शक्तेः प्रथमं शरत् ॥ २४ ॥

इत्यमरः ॥ उदयादम्भः प्रससाद प्रसन्नं बभूव ॥ महौजसो रघोरुदयादभिभवाशङ्कि द्विषतां मनश्चक्षुभे कालुष्यं प्राप ॥ "अगस्त्योदये जलानि प्रसीदन्ति" इत्यागमः ॥

२२ ॥ मदेति । मदोदग्रा मदोद्धताः । ककुदेषामस्तीति ककुद्मन्तः । महाककुद इत्यर्थः ॥ यवादित्वान्मकारस्य वत्वाभावः ॥ सरितां कूलान्युद्रुजन्तीति कूलमुद्रुजाः ॥ "उदि कूले रुजिवहोः" इति खश्प्रत्ययः ॥ "अरुर्द्विष—" इत्यादिना मुमागमः ॥ महान्त उक्षाणो महोक्षाः ॥ "अचतुर–" इत्यादिना निपातनादकारान्तत्वम् ॥ लीलाखेलं विलाससुभगं तस्य रघोरुत्साहवतो वपुष्मतः परभञ्जकस्य विक्रमं शौर्यमनुप्रापुरनुचक्रुः ॥

२३ ॥ प्रसवैरिति । मदस्येव गन्धो येषां तैर्मदगन्धिभिः ॥ "उपमानाच्च" इति समासान्त इकारः ॥ सप्तपर्णानां वृक्षविशेषाणाम् ॥ "सप्तपर्णो विशालत्वक्शारदो विषमच्छदः" इत्यमरः ॥ प्रसवैः पुष्पैराहतास्तस्य रघोर्नागा गजाः ॥ "गजेऽपि नागमातङ्गौ" इत्यमरः ॥ असूययेवाहतनिमित्तया स्पर्धयेव सप्तधैव प्रसुस्रुवुर्मदं ववृषुः । प्रतिगजगन्धाभिमानादिति भावः ॥ "करात्कटाभ्यां मेढ्राच्च नेत्राभ्यां च मदस्रुतिः" इति पालकाप्ये । करान्नासारंध्राभ्यामित्यर्थः ॥

२४ ॥ सरित इति । सरितो गाधाः सुप्रतराः कुर्वती । पथो मार्गांश्चाश्यानकर्दमाञ्छुष्कपङ्कान्कुर्वती ॥ "संयोगादेरातो धातोर्यण्वतः" इति श्यतेर्निष्ठातस्य नत्वम् ॥ शरच्छरदृतुस्तं रघुं शक्तेरुत्साहशक्तेः प्रथमं प्राग्यात्रायै दण्डयात्रायै चोदयामास ॥ प्रभुमन्त्रशक्तिसंपन्नस्य शरत्स्वयमुत्साहमुत्पादयामासेत्यर्थः ॥

---

22. Mighty bulls of ample humps, wild with excitement battering down the banks of rivers imitated his prowess, imposing (playful) in its ease.

23. Stricken (or excited) by the ichor-scented flowers of Saptaparna trees, his elephants, in emulation as it were, discharged ichor through all the seven outlets (*i. e.* in seven ways).

24. The शरद् season, which had made the rivers fordable and the roads mud-dried, incited him to start on an expedition of conquest, prior to his own enterprising energy (*i. e.* before his energy inspired him to do so).

---

23. R. with Su., आहिताः for आहताः.

24. B. C. E. G. H. I. K_2. P. R. with Chá., Val., and Su., प्रेरयामास, D. with Din., नोदयामास for चोदयामास.

तस्मै सम्यग्घुतो वह्निर्वाजिनीराजनाविधौ ।
प्रदक्षिणार्चिर्व्याजेन हस्तेनेव जयं ददौ ॥ २५ ॥
स गुप्तमूलप्रत्यन्तः शुद्धपार्ष्णिरयान्वितः ।
षड्विधं बलमादाय प्रतस्थे दिग्जिगीषया ॥ २६ ॥
अवाकिरन्वयोवृद्धास्तं लाजैः पौरयोषितः ।
पृषतैर्मन्दरोद्धूतैः क्षीरोर्मय इवाच्युतम् ॥ २७ ॥

२५ ॥ तस्मा इति । वाजिनामश्वानां नीराजनाविधौ नीराजनाख्ये शान्तिकर्मणि सम्यग्विधिवद्धुतो होमसमिद्धो वह्निः । प्रगतो दक्षिणं प्रदक्षिणम् ॥ तिष्ठद्गुप्रभृतित्वादव्ययीभावः ॥ प्रदक्षिणं यार्चिर्ज्वाला तस्या व्याजेन हस्तेनेव तस्मै जयं ददौ ॥ उक्तञ्च महायात्रायाम्—" इद्धः प्रदक्षिणगतो हुतभुङ्नृपस्य । धात्रीं समुद्ररशनां वशगां करोति " इति ॥ वाजिग्रहणं गजादीनामप्युपलक्षणं तेषामपि नीराजनाविधानात् ॥

२६ ॥ स इति । गुप्तो मूलं स्वनिवासस्थानं प्रत्यन्तः प्रान्तदुर्गं च येन स गुप्तमूलप्रत्यन्तः । शुद्धपार्ष्णिरुद्धृतपृष्ठशत्रुः सेनया रक्षितपृष्ठदेशो वा । अयान्वितः ॥ " अयः शुभावहो विधिः " इत्यमरः ॥ स रघुः षड्विधं मौलभृत्यादिरूपं बलं सैन्यम् ॥ " मौलं भृत्यः सुहृच्छ्रेणी द्विषदाटविकं बलम् " इत्यमरः ॥ आदाय दिशां जिगीषया जेतुमिच्छया प्रतस्थे ॥

२७ ॥ अवाकिरन्निति । वयोवृद्धाः पौरयोषितस्तं रघुं प्रयान्तं लाजैराचारलाजैः । मन्दरोद्धूतैः पृषतैर्बिन्दुभिः क्षीरोर्मयः क्षीरसमुद्रोर्मयोऽच्युतं विष्णुमिव । अवाकिरन्पर्यक्षिपन् ॥

---

25. The sacrificial fire, duly (well or full) fed (*lit.* sacrificed) in the lustration ceremony (called नीराजना) of his horses, gave victory to him with his hand as it were, under the pretext of his flame turning towards the right.

26. Thus attended with good luck he, having his metropolis and the frontier fortresses guarded (by garrisons) and having taken with him forces of six kinds, with the rear cleared of his foes, set out with intent to conquer the quarters.

27. The women of the city, advanced in age, deluged him with the Lâjâs (fried grains), as the waves of the milky ocean did अच्युत with their vapoury mists tossed up by the Mandâra mountain.

---

25. A. D. R. सम्यक्तस्य, C. with Val., सम्यक्तस्मै for तस्मै सम्यक्. D. H. K. with Din., and Su., एव for इव.

26. B. C. E. G. H. I. K_2. P. R. with Châ., Din., Val., and Su., °मूलपर्यंतः for °मूलप्रत्यंतः. G. reads स प्रतस्थे जिगीषया for प्रतस्थे दिग्जिगीषया.

स ययौ प्रथमं प्राचीं तुल्यः प्राचीनबर्हिषा ।
अहिताननिलोद्धूतैस्तर्जयन्निव केतुभिः ॥ २८ ॥
रजोभिः स्यन्दनोद्धूतैर्गजैश्च घनसंनिभैः ।
भुवस्तलमिव व्योम कुर्वन्व्योमेव भूतलम् ॥ २९ ॥
प्रतापोऽग्रे ततः शब्दः परागस्तदनन्तरम् ।
ययौ पश्चाद्रथादीति चतुःस्कन्धेव सा चमूः ॥ ३० ॥

२८ ॥ स इति । प्राचीनबर्हिर्नाम कश्चिन्महाराज इति केचित् ॥ प्राचीनबर्हिरिन्द्रः ॥ "पर्जन्यो मघवा वृषा हरिहयः प्राचीनबर्हिस्तथा" इति हलायुधाभिधानात् ॥ तेन तुल्यः स रघुः । अनिलेनानुकूलवातेनोद्धूतैः केतुभिर्ध्वजैरहितान्रिपूंस्तर्जयन्निव ॥ तर्जिभर्त्स्योरनुदात्तेत्त्वेऽपि चक्षिङो ङित्करणेनानुदात्तेत्त्वनिमित्तस्यात्मनेपदस्यानित्यत्वज्ञापनात्परस्मैपदमिति वामनः ॥ प्रथमं प्राचीं दिशं ययौ ॥

२९ ॥ रजोभिरिति । किं कुर्वन् । स्यन्दनोद्धूतै रजोभिर्घनसंनिभैर्वर्णतः क्रियातः परिमाणतश्च मेघतुल्यैर्गजैश्च यथाक्रमं व्योमाकाशं भुवस्तलमिव भूतलं च व्योमेव कुर्वन् । ययाविति पूर्वेण संबन्धः ॥

३० ॥ प्रताप इति । अग्रे प्रतापस्तेजोविशेषः ॥ "स प्रभावः प्रतापश्च यत्तेजः कोशदण्डजम्" इत्यमरः ॥ ततः शब्दः सेनाकलकलः । तदनन्तरं परागो धूलिः ॥

---

28. He, equal to Indra in his valour, marched first of all towards the east, menacing his enemies as it were, with his flags unfurled in the air.

29. Covering the sky with the dust thrown up by the chariots, and the earth with dark cloud-like elephants, Raghu changed the sky into the earth, and the earth into the sky.

30. Prowess in the van, next uproar, thereafter dust, and at last (or in the rear) chariots &c.—thus four-divisioned (four-corpsed) as it were, did that army march forward.

---

28. E. reads प्रशमं for प्रथमं. E. G. कम्पयन् for तर्जयन्.

29. A. H. स्यन्दनोत्कीर्णैः, D. I. P. with Su., तुरगोत्कीर्णैः for स्यन्दनोद्धूतैः. Between 29-30 B. E. I. R. with Chá., Val., and Su., read:—"पुरोगैः कलुषास्तस्य सहप्रस्थायिभिः कृशाः । पश्चात्प्रयायिभिः पङ्काश्चक्रिरे मार्गनिम्नगाः"॥ I. R. read this spurious stanza between 30-31; but Vallabha and Sumativijaya read it between 31-32.

30. B. C. E. H. I. K. P. R. with Chá., Val., and Su., पुरोगाः for परागः. B. C. E. H. I. K. P. R. with Chá., Val., and Su., रथानीकं for रथादीति. Also Mallinátha notices this and says :—'रथानीकं' 'इति पाठे इति शब्दाध्याहारेण योज्यं.' K. चतुःस्कन्धेव for चतुःस्कन्धेव. Cháritravardhana also notices this reading. K. R. with Val., and Su., read "मरुत्पृष्टान्" &c., first and then "प्रतापोऽग्रे &c." Cháritravardhana first reads "मरुत्पृष्टान्" &c., then "स सेनां &c.," and then "प्रतापोग्रे &c.".

मरुपृष्ठान्युदम्भांसि नाव्याः सुप्रतरा नदीः ।
विपिनानि प्रकाशानि शक्तिमत्त्वाच्चकार सः ॥ ३१ ॥
स सेनां महतीं कर्षन्पूर्वसागरगामिनीम् ।
बभौ हरजटाभ्रष्टां गङ्गामिव भगीरथः ॥ ३२ ॥
त्याजितैः फलमुत्खातैर्भग्नैश्च बहुधा नृपैः ।
तस्यासीदुल्वणो मार्गः पादपैरिव दन्तिनः ॥ ३३ ॥

" परागः पुष्परजसि धूलिस्नानीययोरपि " इति विश्वः ॥ पश्चाद्रथादि रथाश्वादिकं चतुरङ्गबलम् । इत्थं चतुःस्कन्धेव चतुर्व्यूहेव ॥ " स्कन्धः प्रकाण्डे कायेंऽशे विज्ञानादिषु पञ्चसु । नृपे समूहे व्यूहे च " इति हैमः ॥ सा चमूर्ययौ ॥

३१ ॥ मर्विति । स रघुः शक्तिमत्त्वात्समर्थत्वान्मरुपृष्ठानि निर्जलस्थानानि ॥ " समानौ मरुधन्वानौ " इत्यमरः ॥ उदम्भांस्युद्भूतजलानि चकार । नाव्या नौभिस्तार्या नदीः ॥ " नाव्यं त्रिलिङ्गं नौतार्ये " इत्यमरः ॥ " नौवयोधर्मविषमूल "- इत्यादिना यत्प्रत्ययः ॥ सुप्रतरः सुखेन तार्याश्चकार । विपिनान्यरण्यानि ॥ " अटव्यरण्यं विपिनम् " इत्यमरः ॥ प्रकाशानि निर्वृक्षाणि चकार ॥ तस्यागम्यं किमपि नासीदिति भावः ॥

३२ ॥ स इति । महतीं सेनां पूर्वसागरगामिनीं कर्षन्स रघुः । हरस्य जटाभ्यो भ्रष्टां गङ्गां कर्षन् ॥ सापि पूर्वसागरगामिनी ॥ भगीरथ इव । बभौ । भगीरथो नाम कश्चित्कपिलदग्धानां सागराणां नप्ता तत्पावनाय हरकिरीटाद्गङ्गां प्रवर्तयिता राजा । यत्संबन्धाद्गङ्गा च भागीरथीति गीयते ॥

३३ ॥ त्याजितैरिति । फलं लाभम् । वृक्षपक्षे प्रसवं च । त्याजितैः ॥ त्यजेर्णिजन्ताद्विकर्मकादप्रधाने कर्मणि क्तः॥ उत्खातैः स्वपदाच्चयावितैः । अन्यत्रोत्पाटितैः । बहुधा भग्नै रणे जितैः । अन्यत्र छिन्नैः । नृपैः । पादपैर्दन्तिनो गजस्येव ।

---

31. By means of his being possessed of power he made the tracts of sandy deserts abound with water, the rivers only accessible by boats, easily fordable, and also (made) the large forests cleared of trees.

32. He, leading with him his great army going toward the eastern sea, looked like Bhagîratha who led the Gangà fallen from the matted hair of Hara.

33. His way, like that of a mighty elephant cleared of trees which were plucked of their fruits, up-rooted and broken down in various ways, was clear (*i. e.* free from obstacles at the hands) of princes who were compelled to surrender their acquisitions, dethroned and vanquished in various ways.

---

31. E. मरुपृष्ठाश्युदम्भांसि, R. with Val., and Su., मरुपृष्ठान्युदम्भांसि for मरुपृष्ठान्युदम्भांसि.

33. B. D. G. K_2. with Din., उल्बणः for उल्वणः.

पौरस्त्यानेवमाक्रामंस्तांस्तान्जनपदाञ्जयी ।
प्राप तालीवनश्याममुपकण्ठं महोदधेः ॥ ३४ ॥
अनम्राणां समुद्धर्तुस्तस्मात्सिन्धुरयादिव ।
आत्मा संरक्षितः सुह्मैर्वृत्तिमाश्रित्य वैतसीम् ॥ ३५ ॥
वङ्गानुत्खाय तरसा नेता नौसाधनोद्यतान् ।
निचखान जयस्तम्भान्गङ्गास्रोतोन्तरेषु सः ॥ ३६ ॥

तस्य रथोर्मार्ग उल्वणः प्रकाश आसीत् ॥ "प्रकाशं प्रकटं स्पष्टमुल्वणं विशदं स्फुटम्" इति यादवः ॥

३४ ॥ पौरस्त्यानिति । जयी जयनशीलः ॥ "जिदृक्षिविश्री-" इत्यादिनेनिप्रत्ययः ॥ स रघुरेवम् । पुरो भवान्पौरस्त्यान्प्राच्यान् ॥ "दक्षिणापश्चात्पुरसस्त्यक्" इति त्यक्प्रत्ययः ॥ तांस्तान् । सर्वानित्यर्थः ॥ वीप्सायां द्विरुक्तिः ॥ जनपदान्देशानाक्रामंस्तालीवनैः श्यामं महोदधेरुपकण्ठमन्तिकं प्राप ॥

३५ ॥ अनम्राणामिति । अनम्राणाम् ॥ कर्मणि षष्ठी ॥ समुद्धर्तुरुन्मूलयितुस्तस्माद्रघोः सकाशात् ॥ "भीत्रार्थानां भयहेतुः" इत्यपादानत्वात्पञ्चमी ॥ सिन्धुरयान्नदीवेगादिव सुह्मैः सुह्मदेशीयैः ॥ सुह्मादयः शब्दा जनपदवचनाः क्षत्रियमाचक्षते ॥ वैतसीं वेतससंबन्धिनीं वृत्तिम् । प्रणतिमित्यर्थः । आश्रित्य । आत्मा संरक्षितः ॥ अत्र कौटिल्यः—"बलीयसाभियुक्तो दुर्बलः सर्वत्रानुप्रणतो वैतसं धर्ममातिष्ठेत्" इति ॥

३६ ॥ वङ्गानिति । नेता नायकः स रघुर्नौभिः साधनैरुद्यतान्संनद्धान्वङ्गान्राज्ञस्तरसा बलेन ॥ "तरसी बलरंहसी" इति यादवः ॥ उत्खायोन्मूल्य गङ्गायाः स्रोतसां प्रवाहाणामन्तरेषु द्वीपेषु जयस्तम्भान्निचखान । स्थापितवानित्यर्थः ॥

---

34. Traversing all the eastern countries in this manner, the conqueror at last reached the shores of the great ocean verdant with the forests of Talí-trees (palm-trees).

35. From him, extirpator of the unyielding, the Suhmas saved their lives by adopting the course of the cane plant, as if from the torrent of a river.

36. Having ousted by his prowess the Vanga princes, who were ready for encounter on account of their fleet (*lit.* means) of ships, that leader erected the triumphal columns in the intervening space within the streams of the Ganga.

---

35. B. E. H. with Su., आस्थाय for आश्रित्य. Vallabha's text, not his commentary, reads अस्मात् for तस्मात्. Sumativijaya reads वेतसीं for वैतसीं.

36. Vallabha's text reads उद्धृत्य, but he comments upon उत्खाय. B. C. E. G. H. I. J. K_2. P. R. with Val., °साधनोद्धताम् for °साधनोद्यतान्. I. असौ for सः.

आपादपद्मप्रणताः कलमा इव ते रघुम् ।
फलैः संवर्धयामासुरुत्खातप्रतिरोपिताः ॥ ३७ ॥
स तीर्त्वा कपिशां सैन्यैर्बद्धद्विरदसेतुभिः ।
उत्कलादर्शितपथः कलिङ्गाभिमुखो ययौ ॥ ३८ ॥
स प्रतापं महेन्द्रस्य मूर्ध्नि तीक्ष्णं न्यवेशयत् ।
अङ्कुशं द्विरदस्येव यन्ता गम्भीरवेदिनः ॥ ३९ ॥

३७ ॥ आपादेति । आपादपद्ममाङ्घ्रिपद्मपर्यन्तं प्रणताः । अत एवोत्खाताः पूर्वमुद्धृता अपि प्रतिरोपिताः पश्चात्स्थापितास्ते वङ्गाः । कलमा इव शालिविशेषा इव॥ तेऽप्यापादपद्मं मूलपद्मपर्यन्तं प्रणाताः ॥ "पादो बुध्ने तुरीयांशे" इति विश्वप्रकाशः ॥ उत्खातप्रतिरोपिताश्च । रघुं फलैर्धनैः । अन्यत्र शस्यैः । संवर्धयामासुः ॥ "फलं फले धने बीजे निष्पत्तौ भोगलाभयोः । शस्ये" इति केशवः ॥

३८ ॥ स इति । स रघुर्बद्धा द्विरदा एव सेतवो यैस्तैः सैन्यैः कपिशां नाम नदीं तीर्त्वा । उत्कलै राजभिरादर्शितपथः संदर्शितमार्गः सन् । कलिङ्गाभिमुखो ययौ ॥

३९ ॥ स इति । स रघुर्महेन्द्रस्य कुलपर्वतविशेषस्य ॥ "महेन्द्रो मलयः सह्यः शक्तिमानृक्षपर्वतः । विन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तैते कुलपर्वताः" इति विष्णुपुराणात् ॥ मूर्ध्नि तीक्ष्णं दुःसहं प्रतापम् । यन्ता सारथिर्गम्भीरवेदिनो द्विरदस्य गजविशेषस्य मूर्ध्नि तीक्ष्णं निशितमङ्कुशमिव । न्यवेशयन्निक्षिप्तवान् ॥ "त्वग्भेदाच्छोणितस्रावान्मांसस्य क्रथनादपि । आत्मानं यो न जानाति स स्याद्गम्भीरवेदिता" इति राजपुत्रीये ॥ "चिरकालेन यो वेत्ति शिक्षां परिचितामपि । गम्भीरवेदी विज्ञेयः स गजो गजवेदिभिः" इति मृगचर्मीये ॥

---

37. They, who lowly bowed down to his lotus-like feet and who (therefore) were reinstated after having been ousted, honoured Raghu by presenting him with their wealth like Kalama plants which are bent down to their roots and which present fruit (corn) when they are transplanted after having been first uprooted.

38. He crossed the river कपिशा with his army on a bridge made of his elephants, and being shown the way by the princes of Utkala (Orissa), bent his course towards Kalinga.

39. He planted his unbearable prowess in the head (crown, summit) of the Mahendra, just as the elephant driver does his sharp

---

37. B. C. E. I. R. with Val., °प्रवणाः for °प्रणताः.

38. D. H. करभां for कपिशां. Mallinātha also notices this and says, "करभां" इति केचित्पठन्ति. Dinakara also notices it and says :— "कलभां" इति केचित्पठन्ति. B. E. I. P. उत्कलादेशित°, D. K. with Cha., and Val., उत्कलैर्दर्शित°, C. with Din., उत्कलैर्दर्शित for उत्कलादर्शित.
D. with Su., कलिङ्गाभिमुखं for कलिङ्गाभिमुख..

प्रतिजग्राह कालिङ्गस्तमस्त्रैर्गजसाधनः ।
पक्षच्छेदोद्यतं शक्रं शिलावर्षीव पर्वतः ॥ ४० ॥
द्विषां विषह्य काकुत्स्थस्तत्र नाराचदुर्दिनम् ।
सन्मङ्गलस्नात इव प्रतिपेदे जयश्रियम् ॥ ४१ ॥
ताम्बूलीनां दलैस्तत्र रचितापानभूमयः ।
नारिकेलासवं योधाः शात्रवं च पपुर्यशः ॥ ४२ ॥

४० ॥ प्रतीति । गजसाधनः सन्कालिङ्गः कलिङ्गानां राजा ॥ " वृद्धेत्कोसलाजादाञ्ञ्यङ् " इत्यादिनाऽण्प्रत्ययः ॥ अस्त्रैरायुधैस्तं रघुम् । पक्षाणां छेदे उद्यतमुद्युक्तं शक्रं शिलावर्षी पर्वत इव । प्रतिजग्राहाभियुक्तवान् ॥

४१ ॥ द्विषामिति । काकुत्स्थो रघुस्तत्र महेन्द्राद्रौ द्विषां नाराचदुर्दिनं नाराचानां बाणविशेषाणां दुर्दिनम् । लक्षणया वर्षमुच्यते । विषह्य सहित्वा सद्यथाशास्त्रं मङ्गलस्नात इव विजयमङ्गलार्थमभिषिक्त इव । जयश्रियं प्रतिपेदे ॥ " यत्तु सर्वौषधिस्नानं तन्माङ्गल्यमुदीरितम् " इति यादवः ॥

४२ ॥ ताम्बूलीनामिति । तत्र महेन्द्राद्रौ । युध्यन्त इति योधाः ॥ पचाद्यच् ॥ रचिताः कल्पिता आपानभूमयः पानयोग्यप्रदेशा यैस्ते तथोक्ताः सन्तो नारिकेलासवं नारिकेलमद्यं ताम्बूलीनां नागवल्लीनां दलैः पपुः । तत्र विजहुरित्यर्थः॥ शात्रवं यशश्च पपुः । शत्रोर्देशाक्रमणेन तदीयं यशोऽपि तत्र जहुरित्यर्थः ॥

---

goad in that of an unweildy elephant (that does not mind the pricking of the goad).

40. The king of the Kalingas, who had a large number of, elephants (forming a part of his army), received (opposed) him with missiles, just as a mountain would Indra, prepared to cut off its wings, with showers of stones.

41. After having endured the enemies' shower of iron-darts, the descendant of Kakutstha, duly washed in (by way of) an auspicious ablution, gained (appropriated) the goddess of victory.

42. There his war-like-soldiers, having constructed their drinking grounds, drank up, in betel leaves, the ale produced from the cocoanut trees and also the glory of their enemies.

41-42. Between these B. D. E. I. P. R. with Châ., Val., Su., and Dharm., read, " वायव्यास्त्रविनिर्धूतात्पक्षविद्धान्महोदधेः । गजानीकात्स कालिङ्गं तार्क्ष्यः सर्पमिवाददे " । [B. D. पक्षविद्धात्, E. P. R. with Châ., Val., and Su., पक्षाविद्धात्]. After this verse I. with Vallabha read 56th verse of our text.

42. B. C. E. G. I. J. K. R. with Châ., Val., Su., and Dharm., नालिकेरासवं, H. नालिकेलासवं for नारिकेलासवं. C. with Val., यशः पपुः for पपुर्यशः.

गृहीतप्रतिमुक्तस्य स धर्मविजयी नृपः ।
श्रियं महेन्द्रनाथस्य जहार न तु मेदिनीम् ॥ ४३ ॥
ततो वेलातटेनैव फलवत्पूगमालिना ।
अगस्त्याचरितामाशामनाशास्यजयो ययौ ॥ ४४ ॥
स सैन्यपरिभोगेन गजदानसुगन्धिना ।
कावेरीं सरितां पत्युः शङ्कनीयामिवाकरोत् ॥ ४५ ॥

४३ ॥ गृहीतेति । धर्मविजयी धर्मार्थं विजयशीलः स नृपो रघुः । गृहीतश्चासौ प्रतिमुक्तश्च गृहीतप्रतिमुक्तः । तस्य महेन्द्रनाथस्य कालिङ्गस्य श्रियं जहार । धर्मार्थमिति भावः । मेदिनीं तु न जहार । शरणागतवात्सल्यादिति भावः ॥

४४ ॥ तत इति । ततः प्राचीविजयानन्तरं फलवत्पूगमालिना फलितक्रमुकश्रेणीमता ॥ व्रीह्यादित्वादिनिप्रत्ययः ॥ वेलायाः समुद्रकूलस्य तटेनोपान्तेनैवागस्त्येनाचरितामाशां दक्षिणां दिशमनाशास्यजयः । अयत्नसिद्धत्वादप्रार्थनीयजयः सन् । ययौ ॥ " अगस्त्यो दक्षिणामाशामाश्रित्य नभसि स्थितः । वरुणस्यात्मजो योगी विन्ध्यवातापिमर्दनः " इति ब्रह्मपुराणे ॥

४५ ॥ स इति । स रघुः । गजानां दानेन मदेन सुगन्धिना सुरभिगन्धिना ॥ "गन्धस्य" इत्यादिनेकारादेशः समासान्तः ॥ यद्यपि गन्धस्येत्वे तदेकान्तग्रहणं कर्तव्यमिति नैसर्गिकगन्धविवक्षायामेवेकारादेशः । तथापि निरङ्कुशाः कवयः । तथा माघकाव्ये-" ववुरयुक्छदगुच्छसुगन्धयः सततगास्ततगानगिरोऽलिभिः " (६।५०) ॥ नैषधे च-" अपां हि तृप्ताय न वारिधारा स्वादुः सुगन्धिः स्वदते तुषरा " (३।९३) इति ॥ न कर्मधारयान्मत्वर्थीय इति निषेधादिनिप्रत्ययपक्षोऽपि जघन्य एव ॥ " सेनायां समवेता ये सैन्यास्ते सैनिकाश्च ते " इत्यमरः ॥ " सेनाया वा " इति ण्यप्रत्ययः॥ तेषां परिभोगेन कावेरीं नाम सरितं सरितां पत्युः समुद्रस्य शङ्कनीयामविश्वसनीयामिवाकरोत् ॥ संभोगलिङ्गदर्शनाद्भर्तुरविश्वासो भवतीति भावः॥

---

43. The righteous conqueror took away the wealth but not the territory of the lord of Mahendra, captured but (subsequently) released.

44. Thence he moved towards the direction resorted to by the star Agastya along the side of the sea-shore covered with the rows of forests of fruit-bearing पूग trees, scarcely obstructed in his course of conquest.

45. By reason of the enjoyments in the waters of the army, bearing the sweet smell of the elephantine juice in it, he made the river Kāverī, suspectable as it were, to the lord of the rivers.

---

43. D. has माहेन्द्रनाथस्य for महेन्द्रनाथस्य.

44. D. K. आगस्त्यचरितां for अगस्त्याचरितां.

45-46. Between these B. C. D. I. R. with Châ., Val., Su., and

बलैरध्युषितास्तस्य विजिगीषोर्गताध्वनः ।
मारीचोद्भ्रान्तहारीता मलयाद्रेरुपत्यकाः ॥ ४६ ॥
ससञ्जुरश्वक्षुण्णानामेलानामुत्पतिष्णवः ।
तुल्यगन्धिषु मत्तेभकटेषु फलरेणवः ॥ ४७ ॥
भोगिवेष्टनमार्गेषु चन्दनानां समर्पितम् ।
नास्रसत्करिणां ग्रैवं त्रिपदीछेदिनामपि ॥ ४८ ॥

४६॥ बलैरिति । विजिगीषोर्विजेतुमिच्छोर्गताध्वनस्तस्य रघोर्बलैः सैन्यैः ॥ "बलं शक्तिर्बलं सैन्यम्" इति यादवः ॥ मारीचेषु मरीचवनेषूद्भ्रान्ता हारीताः पक्षिविशेषा यासु ताः ॥ "तेषां विशेषा हारीतो मद्गुः कारण्डवः प्लवः" इत्यमरः ॥ मलयाद्रेरुपत्यका आसन्नभूमयः ॥ "उपत्यकाद्रेरासन्ना भूमिरूर्ध्वमधित्यका" इत्यमरः ॥ "उपाधिभ्यां त्यकन्" इत्यादिना त्यकन्प्रत्ययः ॥ अध्युषिताः । उपत्यकास्तूषितमित्यर्थः ॥ "उपान्वध्याङ्वसः" इति कर्मत्वम् ॥

४७ ॥ ससञ्जुरिति । अश्वैः क्षुण्णानामेलानामेलालतानामुत्पतिष्णव उत्पतनशीलाः ॥ "अलंकृञ्" इत्यादिनेष्णुच्प्रत्ययः ॥ फलरेणवः फलरजांसि तुल्यगन्धिषु समानगन्धेषु ॥ सर्वधनीतिवदिन्नन्तो बहुव्रीहिः ॥ मत्तेभानां करेषु ससञ्जुः सक्ताः ॥ "गजगण्डकटौ कटौ" इत्यमरः ॥

४८ ॥ भोगीति । चन्दनानां चन्दनद्रुमाणां भोगिवेष्टनमार्गेषु सर्पवेष्टनान्निम्नेषु

---

46. The army of him who was desirous of conquest and who had therefore travelled a long way, encamped in the valleys of the Malaya mountains covered with the pepper forests, where flocks of green pigeons were flying about.

47. Trodden by hoops of horses, the dust of एला (cardamom) fruits rose up and clung to the sweating temples of the infuriated elephants, having a similar odour.

48. Fastened (secured) round the lines (marks) of (hol-

Dharm., read "भयोत्सृष्टविभूषाणां तेन केरलयोषितां । अलकेषु चमूरेणुश्चूर्णप्रतिनिधीकृतः" ।

46. D. E. K. P. with Val., मरीचोद्भ्रान्तहारीताः, B. C. I. R. with Dharm., and Vija., मरिचोद्भ्रान्तहारीताः, D_2. with Châ., and Su., हारीतोत्सृष्टमारीचाः for मारीचोद्भ्रान्तहारीताः. Dharmameru notices the reading of Châritravardhana and others.

47. A. with Châritravardhana appears to have read फलधूतयः for फलरेणवः. Between 47-48. B. D. E. I. R., with Châ., Val., Su., Dharm., and Vija., read :— "आजानेयखुरक्षुण्णपक्कैलाक्षेत्रसंभवं । व्यानशे सपदि व्योम कीटकोशाविलं रजः ॥" R. and Vallabha read it between 47-48, but Dinakara reads it after "ताम्रपर्णी &c."

48. C. I. with Su., भोग° for भोगि°. B. D. K. I.P. R. with Châ.,

दिशि मन्दायते तेजो दक्षिणस्यां रवेरपि ।
तस्यामेव रघोः पाण्ड्याः प्रतापं न विषेहिरे ॥ ४९ ॥
ताम्रपर्णीसमेतस्य मुक्तासारं महोदधेः ।
ते निपत्य ददुस्तस्मै यशः स्वमिव संचितम् ॥ ५० ॥
स निर्विश्य यथाकामं तटेष्वालीनचन्दनौ ।

समर्पितं सञ्जितं त्रिपदीछेदिनां। पादशृङ्खलच्छेदकानामपि ॥ "त्रिपदी पादबन्धनम्" इति यादवः ॥ करिणाम् । ग्रीवासु भवं ग्रैवं कण्ठबन्धनम् ॥ "ग्रीवाभ्योऽण्च" इत्यण्प्रत्ययः ॥ नास्रसन्न स्रस्तमभूत् ॥ "द्युद्भ्यो लुङि" इति परस्मैपदम् ॥ पुषादित्वा दङ् ॥ "अनिदिताम्—" इति नकारलोपः ॥

४९ ॥ दिशीति । दक्षिणस्यां दिशि रवेरपि तेजो मन्दायते मन्दं भवति ॥ लोहितादित्वात्क्यष्प्रत्ययः ॥ "वा क्यषः" इत्यात्मनेपदम् ॥ दक्षिणायने तेजोमान्द्यादिति भावः । तस्यामेव दिशि पाण्ड्याः । पाण्डूनां जनपदानां राजानः पाण्ड्याः॥ पाण्ड्योर्ड्यण्वक्तव्यः ॥ रघोः प्रतापं न विषेहिरे न सोढवन्तः ॥ सूर्यविजयिनोऽपि विजितवानिति नायकस्य महानुत्कर्षो गम्यते ॥

५० ॥ ताम्रपर्णीति । ते पाण्ड्यास्ताम्रपर्ण्या नद्या समेतस्य संगतस्य महोदधेः संबन्धि संचितं मुक्तासारं मौक्तिकवरम् ॥ सारो बले स्थिरांशे च न्याय्ये क्लीबं वरे त्रिषु " इत्यमरः ॥ स्वं स्वकीयं संचितं यश इव । तस्मै रघवे निपत्य प्रणिपत्य ददुः ॥ यशसः शुभ्रत्वादौपम्यम् ॥ ताम्रपर्णीसंगमे मौक्तिकोत्पत्तिरिति प्रसिद्धम् ॥

---

lows, depressions made by the) coilings of serpents on sandle trees, the neck-chains of elephants, bursting their foot-chains, slipped not out.

49. In the southern quarter even the scorching rays of the sun become dim; in that same quarter the Pândya princes withstood not the power of Raghu.

50. Those princes bowing down to him offered him presents of the best of pearls collected from that part of the great ocean, where the river Tâmraparnî falls into it : (thus giving him), as it were, their accumulated glory.

Din., Val., Su., and Dharm., नास्रंसत् for नास्रसत्. Chăritravardhana proposes to read, नालानं करिणां सस्रे for नास्रसत्करिणां ग्रैवं, for he says—इति युक्तो पाठः. K. P. with Din., त्रिपदि° for त्रिपदी°.

49. E. मंजायते for मंदायते. E. रघोऽपाण्ड्याऽप्रतापं for रघोः पाण्ड्याः प्रतापं.

50. I. reads सिञ्चितं for संचितं.

स्तनाविव दिशस्तस्याः शैलौ मलयदुर्दुरौ ॥ ५१ ॥
असह्यविक्रमः सह्यं दूरान्मुक्तमुदन्वता ।
नितम्बमिव मेदिन्याः स्रस्तांशुकमलङ्घयत् ॥ ५२ ॥
तस्यानीकैर्विसर्पद्भिरपरान्तजयोद्यतैः ।
रामास्त्रोत्सारितोऽप्यासीत्सह्यलग्न इवार्णवः ॥ ५३ ॥

५१-५२ ॥ स इति । असह्येति च । युग्ममेतत् ॥ असह्यविक्रमः स रघुस्तटेषु सानुष्वालीनचन्दनौ व्याप्तचन्दनद्रुमौ ॥ स्तनपक्षे प्रान्तेषु व्याप्तचन्दनानुलेपौ । तस्या दक्षिणस्या दिशः स्तनाविव स्थितौ मलयदुर्दुरौ नाम शैलौ यथाकामं यथेच्छं निर्विश्योपभुज्य ॥ निर्वेशो "भृतिभोगयोः" इत्यमरः ॥ उदकान्यस्य सन्तीत्युदन्वानुदधिः ॥ " उदन्वानुदधौ च " इति निपातः ॥ उदन्वता दूरान्मुक्तं दूरतस्त्यक्तम् ॥ "स्तोकान्तिकदूरार्थकृच्छ्राणि क्तेन " इति समासः ॥ " पञ्चम्याः स्तोकादिभ्यः " इत्यलुक् ॥ स्रस्तांशुकं मेदिन्या नितम्बमिव स्थितं सह्यं सह्याद्रिमलङ्घयत्प्राप्तोऽतिक्रान्तो वा ॥

५३ ॥ संप्रति प्रतीचीं दिशमभिययावित्याह ॥ तस्येति । अपरान्तानां पाश्चात्यानां जय उद्यतैरुद्युक्तैः ॥ " अपरान्तास्तु पाश्चात्यास्ते च सूर्परिकादयः " इति यादवः ॥ विसर्पद्भिर्गच्छद्भिस्तस्य रघोरनीकैः सैन्यैः ॥ " अनीकं तु रणे सैन्ये " इति विश्वः ॥ अर्णवो रामस्य जामदग्न्यस्यास्त्रैरुत्सारितः परिसारितोऽपि सह्यलग्न इवासीत् ॥ सैन्यं द्वितीयोऽर्णव इवादृश्यतेतिभावः ॥

51—52. Having enjoyed to his heart's content the two mountains Malaya and Durdura, both of which were covered with sandle forests, on their summits, as if they were the two breasts of that quarter, with their surface besmeared with yellow sandle, he of irresistible valour crossed the mountain Sahya, left afar by the ocean (far away from it) as if it were the rump of the earth, the woven garments on which are slipped out.

53. The sea, though pushed afar by the missiles of Paraśuráma, appeared as if touching the mountain Sahya on account of his extensive army (or moving troops), prepared to conquer the kings of the western coast (the Kaunkaṇas).

---

51. C. G. K. P. R. with Din., आलीढचन्दनौ, B. E. I. with Chà., Val., Su., Dharm., and Vija., आधीनचन्दनौ for आलीनचन्दनौ. A. B. K. P. with Chà., Su., and Din., °दर्दुरौ, C. I. R. and the texts of Val., and Su., °दुर्दरौ for °दुर्दुरौ.

52. B. C. E. H. I. K. P. R. with Chà., Val., Su., Dharm. and Vija., दूरमुक्तं for दूरान्मुक्तं.

53. A. D. with Su., and Dharm., प्रसर्पद्भिः for विसर्पद्भिः. B. D. with, Chà., and Su , रामपूत्सारितः for रामास्त्रोत्सारितः.

भयोत्सृष्टविभूषाणां तेन केरलयोषिताम् ।
अलकेषु चमूरेणुश्चूर्णप्रतिनिधीकृतः ॥ ५४ ॥
मरुलामारुतोद्भूतमगमत्कैतकं रजः ।
तद्योधवारबाणानामयत्नपटवासताम् ॥ ५५ ॥
अभ्यभूयत वाहानां चरतां गात्रशिञ्जितैः ।
वर्मभिः पवनोद्भूतराजतालीवनध्वनिः ॥ ५६ ॥

५४ ॥ भयेति । तेन रघुणा भयेनोत्सृष्टविभूषाणां परिहृतभूषणानां केरलयोषितामलकेषु चमूरेणुः सेनारजश्चूर्णस्य कुङ्कुमादिरजसः प्रतिनिधीकृतः ॥ एतेन योषितां पलायनं चमूनां च तदनुधावनं ध्वन्यते ॥

५५ ॥ मरुलेति । मरुला नाम केरलदेशेषु काचिन्नदी । तस्या मारुतेनोद्भूतमुत्थापितं । कैतकं केतकसम्बन्धि रजस्तद्योधवारबाणानां रघुभटकञ्चुकानाम् ॥ " कञ्चुको वारबाणोऽस्त्री " इत्यमरः ॥ अयत्नपटवासतामयत्नसिद्धवस्त्रवासनाद्रव्यत्वमगमत् ॥ " पिष्टातः पटवासकः " इत्यमरः ॥

५६ ॥ अभ्यभूयतेति । चरतां गच्छतां वाहानां वाजिनाम् ॥ " वाजिवाहार्वगन्धर्वहयसैन्धवसप्तयः " इत्यमरः ॥ गात्रशिञ्जितैर्गात्रेषु शब्दायमानैः ॥ कर्तरि क्तः ॥ वर्मभिः कवचैः । पवनेनोद्भूतानां कम्पितानां राजतालीवनानां ध्वनिरभ्यभूयत तिरस्कृतः ॥

---

54. By him, the clouds of dust raised by the army was made a substitute for the saffron powder in the hair of the women of Kerala country who had, through fear, flung aside their ornaments.

55. The pollen of Ketaka flowers, wafted by the breezes of the Marulá, attained to the condition (discharged the function) of a vesture-perfumer, secured without effort, for (unto) the armour of his soldiers.

56. The sounds of the Ràjatàli forests, shaken by the breeze, were quite drowned by the junglings of the armours, (which were) on the bodies of the horses strutting along.

---

54. B. C. D. I. with Chá., Val., and Dharm., read this verse between 45-46 of our text.

55. A. with Chá., Din., and the text only of Su., मुरला°, also noticed by Dharmameru, and the northern Mss. of Mallinàtha's commentary also read मुरला°, D. with Dharm., and Vija., मुसेना°, D_2. मुरवी°, so also noticed by Mallinàtha and Dinakara who say :— " मुरवी° " इति केचित्पठन्ति, B. पुरोयन्° for मुरला°. R. reads वारवाहानां for वारबाणानां.

56. B. C. E. I. J. K. P. with Din., °सिञ्जितैः, D. G. H. R. with Chà., Val., Su., Dharm., and Vija., °सञ्जितैः for °शिञ्जितैः. So also

खर्जूरीस्कन्धनद्धानां मदोद्गारसुगन्धिषु ।
कटेषु करिणां पेतुः पुन्नागेभ्यः शिलीमुखाः ॥ ५७ ॥
अवकाशं किलोदन्वान्रामायाभ्यर्थितो ददौ ॥
अपरान्तमहीपालव्याजेन रघवे करम् ॥ ५८ ॥
मत्तेभरदनोत्कीर्णव्यक्तविक्रमलक्षणम् ॥
त्रिकूटमेव तत्रोच्चैर्जयस्तम्भं चकार सः ॥ ५९ ॥

५७ ॥ खर्जूरीति । खर्जूरीणां तृणद्रुमविशेषाणाम् ॥ "खर्जूरः केतकी ताली खर्जूरी च तृणद्रुमाः" इत्यमरः ॥ स्कन्धेषु प्रकाण्डेषु ॥ "अस्त्री प्रकाण्डः स्कन्धः स्यान्मूलाच्छाखावधेस्तरोः" इत्यमरः ॥ नद्धानां बद्धानां करिणां मदोद्गारेण मदस्रावेण सुगंधिषु ॥ "गन्धस्य" इत्यादिनेकारः ॥ कटेषु गण्डेषु पुन्नागेभ्यो नागकेशरेभ्यः पुन्नागपुष्पाणि विहाय ॥ ल्यब्लोपे पञ्चमी ॥ शिलीमुखा अलयः पेतुः ॥ "अलिबाणौ शिलीमुखौ" इत्यमरः ॥ ततोऽपि सौगन्ध्यातिशयादिति भावः ॥

५८ ॥ अवकाशमिति । उदन्वानुदधी रामाय जामदग्न्याय । अभ्यर्थितो याचितः सन् । अवकाशं स्थानं ददौ किल । किलेति प्रसिद्धौ । रघवे त्वपरान्तमहीपालव्याजेन करं बलिं ददौ ॥ "बलिहस्तांशवः कराः" इत्यमरः ॥ अपरान्तानां समुद्रमध्यदेशवर्तित्वात्तैर्दत्ते करे समुद्रदत्तत्वोपचारः ॥ करदानं भीत्या । न तु याच्ञयेति रामाद्रघोरुत्कर्षः ॥

५९ ॥ मत्तेति । तत्र स रघुर्मत्तानामिभानां रदनोत्कीर्णानि दन्तक्षतान्येव ॥ भावे

---

57. The sting mouthed black bees fell from the पुन्नाग flowers on the temples which were fragrant on account of the emission of ichor of elephants that were tied to the trunks of खर्जूर trees.

58. Being pressed, it is said, did the ocean give space to (make room for) Râma; to Raghu he paid tribute under the disguise of the princes of the western coast.

59. There he made the *Trikûta* itself his lofty pillar of victory,--the Trikûta where the incision of the tusks of his infuriated elephants were a clear record of his prowess.

Mallinàtha and Dinakara notice this and say :—" गात्रसञ्जितैः " इति वा पाठः । सञ्ज्यर्न्तात्कर्मणि क्तः ॥ C. E. K. R. with Chá., Val., Su., Dharm., and Vija., मर्मरः, B. I. मुर्मुरः for वर्मभिः. So also Mallinátha notices this and says:—" मर्मरः " इति पाठे वाहानां गात्रशिञ्जितैर्गोत्रध्वनिभिरित्यर्थः । मर्मरो मर्मरायमाणः इति ध्वनेर्विशेषणम् ॥ B. I. with Su., पवनोद्धतैः for पवनोद्धूत°. B. I. with Vallabha read this stanza between 41-42 of our text.

57. D. G. with Chà., Su., and Dharm., °बद्धानां for नद्धानां. Vallabha reads it after the 61st verse of our text.

59. I. R. °वदनोत्कीर्ण°, C. with Su., °दशनोत्कीर्ण° for रदनोत्कीर्ण°. I. R. त्रिजूटं for त्रिकूटं.

पारसीकांस्ततो जेतुं प्रतस्थे स्थलवर्त्मना ।
इन्द्रियाख्यानिव रिपूंस्तत्त्वज्ञानेन संयमी ॥ ६० ॥
यवनीमुखपद्मानां सेहे मधुमदं न सः ।
बालातपमिवाब्जानामकालजलदोदयः ॥ ६१ ॥
सङ्ग्रामस्तुमुलस्तस्य पाश्चात्त्यैरश्वसाधनैः ।
शार्ङ्गकूजितविज्ञेयप्रतियोधे रजस्यभूत् ॥ ६२ ॥

क्तः ॥ व्यक्तानि स्फुटानि विक्रमलक्षणानि पराक्रमचिह्नानि विजयवर्णावलिस्थानानि यस्मिंस्तं तथोक्तं त्रिकूटमेवोच्चैर्जयस्तम्भं चकार ॥ गाढप्रहारस्त्रिकूटोऽद्रिरेवोत्कीर्णवर्णस्तम्भ इव रघोर्जयख्यापकोऽभूदित्यर्थः ॥

६० ॥ पारसीकानिति । ततः स रघुः । संयमी योगी तत्त्वज्ञानेनेन्द्रियाख्यानिन्द्रियनामकान्रिपूनिव । पारसीकान्राज्ञो जेतुं स्थलवर्त्मना प्रतस्थे । न तु नेदिष्ठेनापि जलपथेन । समुद्रयानस्य निषिद्धत्वादिति भावः ॥

६१ ॥ यवनीति । स रघुर्यवनीनां यवनस्त्रीणाम् ॥ "जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्" इति ङीष् ॥ मुखानि पद्मानीव मुखपद्मानि ॥ उपमितसमासः ॥ तेषां मधुना मद्येन यो मदो मदरागः ॥ कार्यकारणयोरभेदेन निर्देशः ॥ तं न सेहे ॥ कथमिव । अकालेप्रावृड्व्यतिरिक्ते काले जलदोदयः प्रावृषि पद्मविकाशस्याप्रसक्तत्वादब्जानां संबन्धिनं बालातपमिव ॥ अब्जहितत्वादब्जसंबन्धित्वं सौरातपस्य ॥

६२ ॥ सङ्ग्राम इति । तस्य रघोरश्वसाधनैर्वाजिसैन्यैः पश्चाद्भवैः पाश्चात्त्यैर्यवनैः सह ॥ "दक्षिणापश्चात्पुरसस्त्यक्" ॥ सहार्थे तृतीया ॥ शृङ्गाणां विकाराः शार्ङ्गाणि धनूंषि । तेषां कूजितैः शब्दैः ॥ अथ वा शार्ङ्गैः शृङ्गसंबन्धिभिः कूजितैर्विज्ञेया अनुमेयाः प्रतियोधाः प्रतिभटा यस्मिंस्तस्मिन्रजसि तुमुलः सङ्ग्रामः संकुलं युद्धमभूत् ॥ "तुमुलं रणसंकुलं" इत्यमरः ॥

---

60. Thence he set out by an inland route to conquer the Persians, as proceeds an ascetic to conquer, by the knowledge of truth the enemies called *Senses*.

61. He could not bear the flush caused by wine in the lotus-faces of the Yavana-women (the famles of the Ionians), just as the gathering of unseasonable clouds (does not bear, *i. e.*, is jealous of, destroys) the young sun, (the friend) of the water-lotuses.

62. Fierce was the battle that took place between him and the inhabitants of the western coast, with their cavalry for an army, in the midst of dust in which the contending combatants on both sides could recognise each other only by the twangs of their bows.

---

60. K. with Chà., पारशीकान्, I. परासीकान् for पारसीकान्.

61. C. with Val., युवती for यवनी.

62. B. C. E. G. H. I. K. R. with Val., Su., and Vija., °प्रतियोधः for °प्रतियोधे.

भल्लापवर्जितैस्तेषां शिरोभिः श्मश्रुलैर्महीम् ।
तस्तार सरघाव्याप्तैः स क्षौद्रपटलैरिव ॥ ६३ ॥
अपनीतशिरस्त्राणाः शेषास्तं शरणं ययुः ।
प्रणिपातप्रतीकारः संरम्भो हि महात्मनाम् ॥ ६४ ॥
विनयन्ते स्म तद्योधा मधुभिर्विजयश्रमम् ।
आस्तीर्णाजिनरत्नासु द्राक्षावलयभूमिषु ॥ ६५ ॥

६३ ॥ भल्लेति ॥ स रघुर्भल्लापवर्जितैर्बाणविशेषकृत्तैः ॥ " स्नुहीदलफलो भल्लः " इति यादवः ॥ श्मश्रुलैः प्रवृद्धमुखरोमवद्भिः ॥ " सिध्मादिभ्यश्च " इति लच्प्रत्ययः ॥ तेषां पाश्चात्यानां शिरोभिः। सरघाभिर्मधुमक्षिकाभिर्व्याप्तैः ॥ "सरघा मधुमक्षिका " इत्यमरः ॥ क्षुद्राः सरघाः ॥ " क्षुद्रा व्यङ्गा नटी वेश्या सरघा कण्टकारिका " इत्यमरशाश्वतौ ॥ क्षुद्राभिः कृतानि क्षौद्राणि मधूनि ॥ " क्षौद्रं मधुनि पानीये " इति विश्वः ॥ " क्षुद्राभ्रमरवटरपादपादञ् " इति संज्ञायामञ्प्रत्ययः ॥ तेषां पटलैस्तबकैरिव । महीं तस्ताराच्छादयामास ॥

६४ ॥ अपनीतेति । शेषा हतावशिष्टा अपनीतशिरस्त्राणा अपसारितशीर्षण्याः सन्तः ॥ शरणागतलक्षणमेतत् । तं रघुं शरणं ययुः ॥ तथा हि । महात्मनां संरम्भः संक्षोभः । प्रणिपातः प्रणतिरेव प्रतीकारो यस्य स हि ॥ महतां परकीयमौद्धत्यमेवासह्यं न तु जीवितमिति भावः ॥

६५ ॥ विनयन्त इति । तस्य रघोर्योधा भटा आस्तीर्णान्यजिनरत्नानि चर्मश्रेष्ठानि यासु तासु द्राक्षावलयानां भूमिषु ॥ " मृद्वीका गोस्तनी द्राक्षा स्वाद्वी मधुरसेति च " इत्यमरः ॥ मधुभिर्द्राक्षाफलप्रकृतिकैर्मद्यैर्विजयश्रमं युद्धखेदं विनयन्ते स्मापनीतवन्तः ॥ " कर्तृस्थे चाशरीरे कर्मणि " इत्यात्मनेपदम् ॥ " लट् स्मे " इति भूतार्थे लट् ॥

---

63. He covered the earth with their bearded heads, severed by his भल्ल arrows, as with fly-covered heaps of honey-combs.

64. The survivors, putting off their helmets, sought his protection (yielded to Raghu) ; for submission is the only remedy to assuage the wrath of the magnanimous.

65. His warriors (*i. e.* soldiers) removed the fatigue of victory by means of wine in vineyards (the grounds surrounded by the bowers of vine), where the choicest of deerskin were laid (spread).

---

63. B. क्षौद्रैः पटलैः for क्षौद्रपटलैः.

65. K. °चर्मसु for °रत्नासु. D. °वलजभूमिषु for °वलयभूमिषु. So also noticed by Cháritravardhana who says :—क्वचित् " द्राक्षावलजभूमिषु " इति पाठस्तत्र वलजं क्षेत्रं ॥ " वलजं क्षेत्रमूर्द्धारं " इत्यमरः ॥

ततः प्रतस्थे कौबेरीं भास्वानिव रघुर्दिशम् ।
शरैरुस्रैरिवोदीच्यानुद्धरिष्यन्रसानिव ॥ ६६ ॥
विनीताध्वश्रमास्तस्य सिन्धुतीरविचेष्टनैः ।
दुधुवुर्वाजिनः स्कन्धाँल्लग्नकुङ्कुमकेसरान् ॥ ६७ ॥
तत्र हूणावरोधानां भर्तृषु व्यक्तविक्रमम् ।
कपोलपाटलादेशि बभूव रघुचेष्टितम् ॥ ६८ ॥

६६ ॥ तत इति । ततो रघुर्भास्वान्सूर्य इव शरैर्बाणैरुस्रैः किरणैरिव ॥ "किरणोस्रमयूखांशुगभस्तिघृणिधृष्णयः" इत्यमरः ॥ उदीच्यानुदग्भवान्नृपान्रसानुदकानीवोद्धरिष्यन्कौबेरीं । कुबेरसंबन्धिनीं दिशमुदीचीं प्रतस्थे ॥ अनेकेवशब्देनेयमुपमा ॥ यथाह दण्डी-- " एकानेकेवशब्दत्वात्सा वाक्यार्थोपमा द्विधा " इति ॥

६७ ॥ विनीतेति । सिन्धुर्नाम काश्मीरदेशेषु कश्चिन्नदविशेषः ॥ " देशे नदविशेषेऽब्धौ सिन्धुर्ना सरिति स्त्रियाम् " इत्यमरः ॥ सिन्धोस्तीरे विचेष्टनैरङ्गपरिवर्तनैर्विनीताध्वश्रमास्तस्य रघोर्वाजिनोऽश्वा लग्नाः कुङ्कुमकेसराः कुङ्कुमकुसुमकिञ्जल्का येषां तान् । यद्वा लग्नकुङ्कुमाः केसराः सटा येषां तान् । स्कन्धान्दुधुवुः कम्पयन्ति स्म ॥

६८ ॥ तत्रेति । तत्रोदीच्यां दिशि भर्तृषु व्यक्तविक्रमम् । भर्तृवधेन स्फुटपराक्रममित्यर्थः । रघुचेष्टितं रघुव्यापारः । हूणा जनपदाः । तत्र राजानः । तेषामवरो-

66. Thence Raghu, like the sun taking up the sap (of the earth) by his rays, careered towards the direction of Kubera (*i. e.* the northern direction) extirpating the northerns with his arrows.

67. His horses, which had lessened their fatigues of the road by turning from side to side on the banks of the river Sindhu, shook their shoulders to which were clung the filaments of saffron.

68. There the exploits of Raghu, the power of which was

---

66. D. I. औदीच्यान् for उदीच्यान्. Between 66-67. D. E. I. P. R with Chá., Val., Su., Dharm., and Vija., read :—" जितानजय्यस्तानेव कृत्वा रथपुरःसरान् । महार्णवमिवौर्वाग्निः प्रविवेशोत्तरापथं ॥ [D. E. I. with Chá., Dharm., and Vija., काकुत्स्थः, P. R. with Val., and Su., तानेव. I. P. R. with Chá., Val., and Su., °पथं, D. E. with Dharm., and Vija., °पथः]. I. reads this spurious verse between 65-66.

67. P. सिन्धोस्तीरे विचेष्टनैः, E. G. H. I. R. with Din.., Dharm., and Vija., वंक्षुतीरविचेष्टनैः, B. with Chá., and Val., वंक्षणतीरविचेष्टनैः, C. with Su., वंक्षूतीरविचेष्टनैः, D. मंक्षूतीरविचेष्टनैः for सिन्धुतीरविचेष्टनैः. E. has वारिणः स्कन्धान् for वाजिनः स्कन्धान्.

68. A. D., हूना° for हूणा°. C. D. E. H. I. R. with Chá., Val., Su., and Dharm., °पाटनादेशि for °पाटलादेशि.

काम्बोजाः समरे सोढुं तस्य वीर्यमनीश्वराः ।
गजालानपरिक्लिष्टैरक्षोटैः सार्धमानताः ॥ ६९ ॥
तेषां सदश्वभूयिष्ठास्तुङ्गद्रविणराशयः ।
उपदा विविशुः शश्वन्नोत्सेकाः कोशलेश्वरम् ॥ ७० ॥

धा अन्तःपुरस्त्रियः' ॥ तासां कपोलेषु पाटलस्य पाटलिम्नस्ताडनादिकृतारुण्यस्या-देश्युपदेशकं बभूव ॥ अथ वा । पाटल आदिश्यादिष्टा यस्य तद्वभूव । स्वयं लेख्या-प्यत इत्यर्थः ॥

६९ ॥ काम्बोजा इति । काम्बोजा राजानः समरे तस्य रघोर्वीर्यं सोढुमनीश्वरा अशक्ताः सन्तः । गजानामालानं बन्धनम् ॥ भावे ल्युटि "विभाषा लीयतेः" इत्यात्वम् ॥ तेन परिक्लिष्टैः परिक्षतैरक्षोटैर्वृक्षविशेषैः सार्धमानताः ॥

७० ॥ तेषामिति । तेषां काम्बोजानां सद्भिरश्वैर्भूयिष्ठास्तुङ्गा द्रविणानां हि-रण्यानाम् ॥ "हिरण्यं द्रविणं द्युम्नम्" इत्यमरः ॥ राशय एवोपदा उपायनानि ॥ "उपायनमुपग्राह्यमुपहारस्तथोपदा" इत्यमरः ॥ कोशलेश्वरं कोशल-

---

clearly seen in (the slaughter of) the husbands of young women in the inner-apartments of the Hûṇa kings, proved a teacher of ruddiness in their cheeks.

69. The Kâmboja princes unable to stand his valour in battle, bowed down along with Ankola trees, overpressed (overtasked) by the fastening chains of his elephants.

70. Their stupendous heaps of gold, abounding with (abundantly accompanied with) fine horses, repeatedly found their way to (*i. e.* reached) the king of Kosala as presents, but conceit did not (reach his soul).

---

69. G. K_2. P. with Châ., and Su., अक्षोटैः, so also noticed by Mallinâtha who says :—अक्षोटैर्वृक्षविशेषैः, B. H. I. R. with Din., Val., Dharm., and Vija., अक्षोडैः for अङ्कोलैः. B. C. D. with Châ., Su., and Dharm., तरुजालानतां प्राप्तैः for गजालानपरिक्लिष्टैः.

70. A. D. with Val., and Su., तुङ्गा द्रविण,° for तुङ्गद्रविण°. Mallinátha also notices this reading. B. C. I. with Val., नोत्सेकः for नोत्सेकाः. D. P. कोसले° for कोशले°. A. K. विविशुस्तं कोशलेशमुदन्वन्तमिवापगाः, C. उपदा विविशुः शश्वत्समुद्रमिव निम्नगाः, this is also noticed by Châritravardhana, D. G. H. R. विविशुस्तं विशांनाथमुदन्वन्तमिवापगाः, D_2. with Châ., and Su., विविशुस्तं विशांनाथं महार्णवमिवापगाः, E. उपदा विविशुस्तं च नोत्सेकाः कोशलेश्वरं for the second Pâda. G. H. also notice the reading of our text. Mallinâtha notices the reading of D. G. E. R. and says:—"विविशुस्तं विशांनाथमुदन्वन्तमिवापगाः" इति पाठान्तरे आपगा नद्य उदन्वन्तं समुद्रमिव विशांनाथं न रघुं विविशुः &c.

ततो गौरीगुरुं शैलमारुरोहाश्वसाधनः ।
वर्धयन्निव तत्कूटानुद्धूतैर्धातुरेणुभिः ॥ ७१ ॥
शशंस तुल्यसत्त्वानां सैन्यघोषेऽप्यसंभ्रमम् ।
गुहाशयानां सिंहानां परिवृत्यावलोकितम् ॥ ७२ ॥
भूर्जेषु मर्मरीभूताः कीचकध्वनिहेतवः ।
गङ्गाशीकरिणो मार्गे मरुतस्तं सिषेविरे ॥ ७३ ॥

देशाधिपतिं तं रघुं शश्वदसकृद्विविशुः ॥ " मुहुर्मुहुः पुनः शश्वदभीक्ष्णमसकृत्समाः" इत्यमरः ॥ तथाप्युत्सेका गर्वास्तु न विविशुः । सत्यपि गर्वकारणे न जगर्वेत्यर्थः ॥

७१ ॥ तत इति । ततोऽनन्तरमश्वसाधनः सन्गौर्या गुरुं पितरं शैलं हिमवन्तम् । उद्धूतैश्वखुरोद्धूतैर्धातूनां गैरिकादीनां रेणुभिस्तत्कूटांस्तस्य शृङ्गाणि ॥ " कूटोऽस्त्री शिखरं शृङ्गम् " इत्यमरः ॥ वर्धयन्निव । आरुरोह । उत्पतद्धूलिदर्शनाद्गिरिशिखरवृद्धिभ्रमो जायत इति भावः ॥

७२ ॥ शशंसेति । तुल्यसत्त्वानां सैन्यैः समानबलानाम् ॥ गुहासु शेरत इति गुहाशयाः ॥ " अधिकरणे शेतेः " इत्यच्प्रत्ययः ॥ तेषां सिंहानां संबन्धि परिवृत्य परावृत्यावलोकितं शयित्वैव ग्रीवाभङ्गेनावलोकनम् ॥ कर्तृ ॥ सैन्यघोषे सेनाकलकले संभ्रमकारणे सत्यप्यसंभ्रममन्तःक्षोभविरहम् ॥ नञः प्रसज्यप्रतिषेधेऽपि समास इष्यते ॥ शशंस कथयामास । सैन्येभ्य इत्यर्थाल्लभ्यते ॥ बाह्यचेष्टितमेव मनोवृत्तेरनुमापकमिति भावः ॥ असंभ्रान्तत्वे हेतुस्तुल्यसत्वानामिति । न हि समबलः समबलाद्बिभेतीति भावः ॥

७३ ॥ भूर्जेष्विति । भूर्जेषु भूर्जपत्त्रेषु ॥ " भूर्जपत्त्रो भुजो भूर्जो मृदुत्वक्चर्मिका

---

71. Then he, with his army of horses, ascended the mountain (Himavat), the sire of Gaurî, extending his peaks, as it were, by the dust of minerals raised up (by the hoofs of the horses).

72. The gaze, (after) turning round, of the lions, of equal strength, lying in dens, bespoke lack of fear (fearlesssness) even at (though there was) the army din.

73. The breezes, rustled on among the dry leaves of burch trees, the source of resounding of the wild bamboos, and charged with the particles of water of the river Gangâ, refreshed (*lit.* served) him on the way.

---

71. D. R. with Din., उद्धूतैः for उद्धूतैः.

72. A. D. °घोषेष° for °घोषेऽपि. A. गुहागतानां, D. with Châ., गुहाश्रयाणां for गुहाशयानां. Châritravardhana also notices the reading of our text.

73. C. with Su., भूर्येषु for भूर्जेषु. H. मर्मरीभूत° for मर्मरीभूताः. G. I. K_2. P. R. with Val., °सीकरिणः for °शीकरिणः. P. with Châ., and Su., शिषेविरे for सिषेविरे.

विशश्रमुर्नमेरूणां छायास्वध्यास्य सैनिकाः ।
दृषदो वासितोत्सङ्गा निषण्णमृगनाभिभिः ॥ ७४ ॥
सरलासक्तमातङ्गग्रैवेयस्फुरितत्विषः ।
आसन्नोषधयो नेतुर्नक्तमस्नेहदीपिकाः ॥ ७५ ॥
तस्योत्सृष्टनिवासेषु कण्ठरज्जुक्षतत्वचः ।
गजवर्ष्म किरातेभ्यः शशंसुर्देवदारवः ॥ ७६ ॥

मता " इति यादवः ॥ मर्मरः शुष्कपर्णध्वनिः ॥ " मर्मरः शुष्कपर्णानाम् " इति यादवः ॥ अयं च शुक्लादिशब्दवद्गुणिन्यपि वर्तते प्रयोज्यते च मर्मरैरगुरुधूपगन्धिभिरिति ॥ अतो मर्मरीभूताः । मर्मरशब्दवन्तो भूता इत्यर्थः । कीचकानां वेणुविशेषाणां ध्वनिहेतवः । श्रोत्रसुखाश्चेति भावः । गङ्गाशीकरिणः शीतला इत्यर्थः । मरुतो वाता मार्गे तं सिषेविरे ॥

७४ ॥ विशश्रमुरिति । सैनिकाः ॥ सेनायां समवेताः ॥ प्राग्वहतीयष्ठक्प्रत्ययः ॥ नमेरूणां सुरपुन्नागानां छायासु निषण्णानां मृगाणां कस्तूरीमृगाणां नाभिभिर्वासितोत्सङ्गाः सुरभिततला दृषदः शिला अध्यास्याधिष्ठाय ॥ " अधिशीङ्स्थासां कर्म " इति कर्म ॥ दृषत्स्वधिरुह्येत्यर्थः ॥ विशश्रमुर्विश्रान्ताः ॥

७५ ॥ सरलेति । सरलेषु देवदारुविशेषेष्वासक्तानि यानि मातङ्गानां गजानाम् - ग्रीवासु भवानि ग्रैवेयाणि । कण्ठशृङ्खलानि ॥ " ग्रीवाभ्योऽण्च " इति चकाराड्ढञ्प्रत्ययः॥ तेषु स्फुरितत्विषः प्रतिफलितभास ओषधयो ज्वलन्तो ज्योतिर्लताविशेषा नक्तं रात्रौ नेतुर्नायकस्य रघोरस्नेहदीपिकास्तैलनिरपेक्षाः प्रदीपा आसन् ॥

७६ ॥ तस्येति । तस्य रघोरुत्सृष्टेषूज्झितेषु निवासेषु सेनानिवेशेषु कण्ठरज्जु-

74. The soldiers reposed (rested) in the shade of Nameru trees, seated on stone slabs the surface whereof was perfumed with the navel (musk) of the recumbent deer.

75. The herbs that were near and the lustre of which was reflected on the neck-tie-chains of elephants tied to the Sarala-trees, served the purpose of lamps without oil at night to the leader of the army.

76. In his abandoned halting stations, the देवदारु trees, with

74. Vallabha's text reads छायां for छायासु; but his commentary agrees with us. Sumativijaya reads this verse after the 76th stanza of our text.

75. Vallabha's text reads °ग्रैवेयोपचित° for °ग्रैवेयस्फुरित,° but his commentary with us. E. H. J. K. P. with Chá., and Val., औषधयः for ओषधयः. Vallabha's text, but not his commentary, तस्य for नेतुः.

76. B. I. R. with Vallabha's text only, °क्षित° for °क्षत°. A. D. E. गजवर्म, R. गजवर्त्म for गजवर्ष्म.

तत्र जन्यं रघोर्घोरं पर्वतीयैर्गणैरभूत् ।
नाराचक्षेपणीयाश्मनिष्पेषोत्पतितानलम् ॥ ७७ ॥
शरैरुत्सवसंकेतान्स कृत्वा विरतोत्सवान् ।
जयोदाहरणं बाह्वोर्गापयामास किंनरान् ॥ ७८ ॥
परस्परेण विज्ञातस्तेषूपायनपाणिषु ।
राज्ञा हिमवतः सारो राज्ञः सारो हिमाद्रिणा ॥ ७९ ॥

भिर्गजग्रैवैः क्षता निष्पिष्टास्त्वचो येषां ते देवदारवः किरातेभ्यो वनचरेभ्यो गजानां वर्ष्म प्रमाणम् ॥ " वर्ष्म देहप्रमाणयोः " इत्यमरः ॥ शशंसुः कथितवन्तः ॥ देवदारुस्कन्धत्वक्क्षतैर्गजानामौन्नत्यमनुमीयत इत्यर्थः ॥

७७ ॥ तत्रेति । तत्र हिमाद्रौ रघोः । पर्वते भवैः पर्वतीयैः ॥ " पर्वताच्च " इति छप्रत्ययः ॥ गणैरुत्सवसंकेताख्यैः सप्तभिः सह ॥ " गणानुत्सवसंकेतानजयत्सप्त पाण्डवः " इति महाभारते ॥ नाराचानां बाणविशेषाणां क्षेपणीयानां भिन्दिपालानामश्मनां च निष्पेषेण संघर्षेणोत्पतिता अनला यस्मिंस्तत्तथोक्तम् ॥ " क्षेपणीयो भिन्दिपालः खड्गो दीर्घो महाफलः " इति यादवः ॥ घोरं भीमं जन्यं युद्धमभूत् ॥ " युद्धमायोधनं जन्यम् " इत्यमरः ॥

७८ ॥ शरैरिति । स रघुः शरैर्बाणैरुत्सवसंकेतान्नाम गणान्विरतोत्सवान् कृत्वा । जित्वेत्यर्थः ॥ किंनरान्बाह्वोः स्वभुजयोर्जयोदाहरणं जयख्यापकं प्रबन्धविशेषं गापयामास ॥ " गतिबुद्धि—" इत्यादिना किंनराणां कर्मत्वम् ॥

७९ ॥ परस्परेति । तेषु गणेषूपायनयुक्ताः पाणयो येषां तेषु सत्सु परस्परेणा-

---

their barks torn by neck-tie-ropes, declared to the Kirâtas the stature of his elephants.

77. There a fierce battle ensued between Raghu and the mountain-tribes, in which fire flashed forth by the concussion of Nârâcha darts, and the stones flung by means of slings.

78. After having caused with his arrows the Utsavasanktas to be of splendid gayeties, he made the Kinnaras chant a declaratory song of his victory won by dint of his arms.

79. When they came with presents in their hands to the king

---

77. C. G. K. युद्धं, B. संग्रामः for जन्यं. B. D. E. G. H. I. J. K. P. R. पार्वतीयैः for पर्वतीयैः. C. with Chà., and Val., गुणैः for गणैः. B. reads संग्रामः सह तैस्तत्र पार्वतीयैरभूद्रघोः for the first Páda. D. विमर्दः सह तैस्तत्र निष्पेषोत्पतितानलः for the second Páda. K. °निष्पेषोत्पादितानलं, R. °निक्षेपोत्पतितस्थलं, C. with Vallabha's text only, °निष्पेषोत्पतितानलः for °निष्पेषोत्पतितानलम्. Vallabha's commentary reads " शरैः &c., " first and then " तत्र जन्यं &c. "

78. A. I. R. उच्छिन्न,° D. with Din., उत्सन्न° for उत्सव°.

79. B. C. E. I. P. R. with Val., Su., Dharm., and Vija., परस्परस्य for परस्परेण.

तत्राक्षोभ्यं यशोराशिं निवेश्यावरुरोह सः ।
पौलस्त्यतुलितस्याद्रेरादधान इव ह्रियम् ॥ ८० ॥
चकम्पे तीर्णलौहित्ये तस्मिन्प्राग्ज्योतिषेश्वरः ।
तद्गजालानतां प्राप्तैः सह कालागुरुद्रुमैः ॥ ८१ ॥
न प्रसेहे स रुद्धार्कमधारावर्षदुर्दिनम् ।
रथवर्त्मरजोऽप्यस्य कुत एव पताकिनीम् ॥ ८२ ॥

न्योन्यं राज्ञा हिमवतः सारो धनरूपो विज्ञातः । हिमाद्रिणापि राज्ञः सारो बलरूपो विज्ञातः ॥ एतेन तत्रत्यवस्तूनामनर्घ्यत्वं गणानामभूतपूर्वश्च पराजय इति ध्वन्यते ॥

८० ॥ तत्रेति । स रघुस्तत्र हिमाद्रावक्षोभ्यमधृष्यं यशोराशिं निवेश्य निधाय । पौलस्त्येन रावणेन तुलितस्य चालितस्याद्रेः कैलासस्य ह्रियमादधानो जनयन्निव । अवरुरोहावततार ॥ कैलासमगत्वैव प्रतिनिवृत्त इत्यर्थः ॥ न हि शूराः परेण पराजितमभियुञ्जत इति भावः ॥

८१ ॥ चकम्प इति । तस्मिन्रघौ । तीर्णा लौहित्या नाम नदी येन तस्मिंस्तीर्णलौहित्ये सति प्राग्ज्योतिषाणां जनपदानामीश्वरस्तस्य रघोर्गजानामालानतां प्राप्तैः कालागुरुद्रुमैः कृष्णागुरुवृक्षैः सह चकम्पे कम्पितवान् ॥

८२ ॥ नेति । स प्राग्ज्योतिषेश्वरो रुद्धार्कमावृतसूर्यम् । अधारावर्षं च तद्दुर्दिनं च धारावृष्टिं विना दुर्दिनीभूतम् । अस्य रघो रथवर्त्मरजोऽपि न प्रसेहे । पताकिनीं सेनां तु कुत एव प्रसेहे । न कुतोऽपीत्यर्थः ॥

---

his strength (prowess) became known to the great mountain Himavat, and its strength (consisting of wealth) to the king mutually .

80. After having established there an irrefragable mass of glory, he descended, causing shame, as it were, to (hurling shame, as it were, upon) the mountain uplifted (moved, dislodged) by the son of पुलस्त्य.

81. When he crossed the river Lauhityá, the lord of the Prag-jyotishas (or the land of the Eastern stars) began to tremble with fear along with the black sandle-trees got to the condition of tying posts to his elephants.

82. He could not bear even the dust raised in the way by his chariots, which obscured the sun and by which the day became rainy without showers, how could he, pray, the army ?

---

80. D. P. with Chá., Val., and Su., श्रियं for ह्रियं.

81. B. C. E. G. H. J. K_2. with Val., and Su., °लोहित्ये for °लौहित्ये. A. H. J. K. P. कालागरु° for कालागुरु.°

82. B. C. E, G. H. I. with Val., अधारावर्षि for अधारावर्ष.°

तमीशः कामरूपाणामत्याखण्डलविक्रमम् ।
भेजे भिन्नकटैर्नागैरन्यानुपरुरोध यैः ॥ ८३ ॥
कामरूपेश्वरस्तस्य हेमपीठाधिदेवताम् ।
रत्नपुष्पोपहारेण छायामानर्च पादयोः ॥ ८४ ॥
इति जित्वा दिशो जिष्णुर्न्यवर्तत रथोद्धतम् ।
रजो विश्रामयन्राज्ञां छत्रशून्येषु मौलिषु ॥ ८५ ॥
स विश्वजितमारेभे यज्ञं सर्वस्वदक्षिणम् ।
आदानं हि विसर्गाय सतां वारिमुचामिव ॥ ८६ ॥

८३ ॥ तमिति । कामरूपाणां नाम देशानामीशोऽत्याखण्डलविक्रममतीन्द्रपराक्रमं तं रघुम् । भिन्नाः स्रवन्मदाः कटा गण्डा येषां तैर्नागैर्गजैः । साधनैः । भेजे ॥ नागान्दत्वा शरणं गत इत्यर्थः ॥ कीदृशैः । यैर्नागैरन्यान्रघुव्यतिरिक्तान्नृपानुपरुरोध ॥ शूराणामपि शूरो रघुरिति भावः ॥

८४ ॥ कामरूपेश्वर इति । कामरूपेश्वरो हेमपीठस्याधिदेवतां तस्य रघोः पादयोश्छायां कनकमयपादपीठव्यापिनीं कान्तिं रत्नान्येव पुष्पाणि तेषामुपहारेण समर्पणेनानर्चार्चयामास ॥

८५ ॥ इतीति । जिष्णुर्जयशीलः ॥ "ग्लाजिस्थश्च ग्स्नुः" इति ग्स्नुप्रत्ययः ॥ स रघुरितीत्थं दिशो जित्वा रथैरुद्धतं रजश्छत्रशून्येषु । रघोरेकच्छत्रकत्वादिति भावः । राज्ञां मौलिषु विश्रामयन् । संक्रामयन्नित्यर्थः । न्यवर्तत निवृत्तः ॥

८६ ॥ स इति । स रघुः सर्वस्वं दक्षिणा यस्य तं सर्वस्वदक्षिणम् ॥ "विश्वजित्सर्वस्वदक्षिणः" इति श्रुतेः ॥ विश्वजितं नाम यज्ञमारेभे । कृतवानित्यर्थः ॥ युक्तं चैतदित्याह-सतां साधूनाम् । वारिमुचां मेघानामिव । आदानमर्जनं विसर्गाय त्यागाय हि । पात्रविनियोगायेत्यर्थः ॥

---

83. The lord of the Kâmarúpas, who had encountered other conquerors with his elephants, paid, by means of those elephants of ichor-discharging temples, homage to him who excelled Indra in valour.

84. The king of the Kâmarúpas worshipped the shadow of his feet, the presiding deity of the golden footstool, with the offering of flowers consisting of precious stones.

85. Having thus conquered the quarters, the victorious one returned home causing the dust raised by his chariots to settle on the crowns of kings deprived of their umbrellas.

86. He began to spread the Vis vajit sacrifice of which the gifts (or Dakshiná) were all that a man might possess ; for of the good, as of clouds, acquisition is for bestowal.

---

84. G. हेमपुष्पोप° for रत्नपुष्पोप°. I. reads first "इति जित्वा &c.," and then "कामरूपेश्वरः &c."

85. E. I. R. रथोद्धूतं J. रथोद्धतं for रथोद्धतं. B. C. E. H. I. J. P. R. with Chá., Val., and Dharm., विश्रमयन्, K. विनमयन् for विश्रामयन्.

86. A. D. J. आजह्रे for आरेभे.

सत्रान्ते सचिवसखः पुरस्क्रियाभिर्गुर्वीभिः शमितपराजयव्यलीकान् ।
काकुत्स्थश्चिरविरहोत्सुकावरोधान्राजन्यान्स्वपुरनिवृत्तयेऽनुमेने ॥ ८७ ॥
ते रेखाध्वजकुलिशातपत्रचिह्नं सम्राजश्चरणयुगं प्रसादलभ्यम् ।
प्रस्थानप्रणतिभिरङ्गुलीषु चक्रुर्मौलिस्रक्च्युतमकरन्दरेणुगौरम् ॥ ८८ ॥
॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कालिदासकृतौ रघुदिग्विजयो नाम चतुर्थः सर्गः ॥

८७ ॥ सत्रान्त इति । काकुत्स्थो रघुः सत्रान्ते यज्ञान्ते ॥ " सत्रमाच्छादने यज्ञे सदादाने धनेऽपि च " इत्यमरः ॥ सचिवानां सखेति सचिवसखः सन् । तेषामत्यन्तानुसरणद्योतनार्थं राज्ञः सखित्वव्यपदेशः ॥ " राजाहःसखिभ्यष्टच् " ॥ गुर्वीभिर्महतीभिः पुरस्क्रियाभिः पूजाभिः शमितं पराजयेन व्यलीकं दुःखं वैलक्ष्यं वा येषां तान् ॥ "दुःखे वैलक्ष्ये व्यलीकम्" इति यादवः ॥ चिरविरहेणोत्सुका उत्कण्ठिता अवरोधा अन्तःपुराङ्गना येषां तान् । राज्ञोऽपत्यानि राजन्याः क्षत्रियाः । तान् ॥ " राजश्वशुराद्यत् " इत्यपत्यार्थे यत्प्रत्ययः ॥ " मूर्धाभिषिक्तो राजन्यो बाहुजः क्षत्रियो विराट् " इत्यमरः ॥ स्वपुरं प्रति निवृत्तये प्रतिगमनायानुमेनेऽनुज्ञातवान् ॥ प्रहर्षणीवृत्तमेतत् । तदुक्तम्–" म्नौ ज्रौगस्त्रिदशयतिः प्रहर्षणीयम् " इति ॥

८८ ॥ त इति । ते राजानः । रेखा एव ध्वजाश्च कुलिशानि चातपत्राणि च । ध्वजाद्याकाररेखा इत्यर्थः । तानि चिह्नानि यस्य तत्तथोक्तम् । प्रसादेनैव लभ्यं प्रसादलभ्यम् । सम्राजः सार्वभौमस्य रघोश्चरणयुगं प्रस्थाने प्रयाणसमये याः प्रणतयो नमस्कारास्ताभिः ॥ करणैः ॥ अङ्गुलीषु केशबन्धेषु याः स्रजो माल्यानि ताभ्यश्च्युतैर्मकरन्दैः पुष्परसै रेणुभिः परागैश्च गौरं गौरवर्णं चक्रुः ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमच्छपाच्छयसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां चतुर्थः सर्गः ॥

---

87. At the close of the sacrifice, the descendant of ककुत्स्थ, who was well disposed, like a friend, towards his ministers, permitted the क्षत्रिय princes to return to their capitals, whose sense of grief (or shame) on their defeat had been mitigated (to some extent) by the great honours (conferred on them by him), and whose ladies of the harem were anxiously longing for them owing to long separation.

88. The universal Emperor's pair of feet, obtainable by grace, and the marks whereof were banners, thunderbolts, and umbrellas in (the shape of) lines, they, by salutations at their parting, rendered red, at the toes, with the honey and the pollen dropped down from the garlands round their hair-knots.

---

88. B. C, with Su., रेषा° for रेखा°. After this verse B. D. E. R. with Val., and Su., read :—" यज्ञान्ते नमवभृथाभिषेकपूतं । सत्कारैः शमितपराजयव्यलीकाः । आमंत्र्यात्मकवनितानिरुद्धचित्ताः । स्वानि स्वान्यवनिभुजः पुराणि जग्मुः " ॥ [B. युक्तं for पूतं. D. संस्कारैः for सत्कारैः. E. with Val., °व्यलीकान् for °व्यलीकाः. D. वनितावरुद्धचित्तान्, B. वनितानिरुद्धचित्ताः, R. with Val., वनितान्यनिविष्टाः for वनितानिरुद्धचित्ताः]. D. with Val., read this verse between 87-88.

। पंचमः सर्गः ।

तमध्वरे विश्वजिति क्षितीशं निःशेषविश्राणितकोशजातम् ।
उपात्तविद्यो गुरुदक्षिणार्थी कौत्सः प्रपेदे वरतन्तुशिष्यः ॥ १ ॥
स मृण्मये वीतहिरण्मयत्वात्पात्रे निधायार्घ्यमनर्घशीलः ।
श्रुतप्रकाशं यशसा प्रकाशः प्रत्युज्जगामातिथिमातिथेयः ॥ २ ॥

इन्दीवरदलश्याममिन्दिरानन्दकन्दलम् ।
वन्दारुजनमन्दारं वन्देऽहं यदुनन्दनम् ॥

१ ॥ तमिति । विश्वजिति विश्वजिन्नाम्न्यध्वरे यज्ञे ॥ "यज्ञः सवोऽध्वरो यागः" इत्यमरः ॥ निःशेषं विश्राणितं दत्तम् ॥ श्रण दाने चुरादिः ॥ कोशानामर्थराशीनां जातं समूहो येन तं तथोक्तम् ॥ "कोशोऽस्त्री कुड्मले दिव्ये शास्त्रेऽर्थौघे गृहे ततौ" इति यादवः ॥ "जातं जनिसमूहयोः" इति शाश्वतः ॥ एतेन कौत्सस्यानवसरप्राप्तिं सूचयति । तं क्षितीशं रघुमुपात्तविद्यो लब्धविद्यो वरतन्तोः शिष्यः कौत्सः ॥ "ऋष्यन्धक-" इत्यण् ॥ इञोऽपवादः ॥ गुरुदक्षिणार्थी ॥ "पुष्करादिभ्यो देशे" इत्यत्रार्थाच्चासंनिहिते तदन्ताच्चेतीनिः ॥ अप्रत्याख्येय इति भावः । प्रपेदे प्राप ॥ अस्मिन्सर्गे वृत्तमुपजातिः ॥ तल्लक्षणं तु-"स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः । उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ । अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः" इति ॥

२ ॥ स इति । अनर्घशीलोऽमूल्यस्वभावः । असाधारणस्वभाव इत्यर्थः ॥ "मूल्ये पूजाविधावर्घः" इति ॥ "शीलं स्वभावे सद्वृत्ते" इति चामरशाश्वतौ ॥ यशसा कीर्त्या । प्रकाशत इति प्रकाशः ॥ पचाद्यच् ॥ अतिथिषु साधुरातिथेयः ॥ "पथ्यतिथिवसतिस्वपतेर्ढञ्" इति ढञ् ॥ स रघुः । हिरण्यस्य विकारो हिरण्मयम् ॥ "दाण्डिनायन-" आदिसूत्रेण निपातः ॥ वीतहिरण्मयत्वादपगतसुवर्णपात्रत्वात् । यज्ञस्य सर्वस्वदक्षिणाकत्वादिति भावः । मृण्मये मृद्विकारे पात्रे । अर्घार्थमिदम-

---

1. Kautsa, the disciple of Varatantu, who had by this time completed the course of study and who was now seeking means for the remuneration to his preceptor, got to the lord of the earth, who had already given away in charity the whole lot of his treasure during the Vis'vajit sacrifice.

2. Lacking gold-vessels he, the hospitable one, of inestimable character and of brilliant renown, having put into an earthen-pot the materials of worship, went forth to receive the guest possessed of the lustre of sacred knowledge.

---

1. C. D. कोषजातं for कोशजातं.

2. B. C. E. H. I. J. K. L. P. R. with Hem., Chà., Su., Dharm., and Vija., अनर्घ्यशीलः for अनर्घशीलः. Vallabha with us.

तमर्चयित्वा विधिवद्विधिज्ञस्तपोधनं मानधनाग्रयायी ।
विशांपतिर्विष्टरभाजमारात्कृताञ्जलिः कृत्यविदित्युवाच ॥ ३ ॥
अप्यग्रणीर्मन्त्रकृतामृषीणां कुशाग्रबुद्धे कुशली गुरुस्ते ।
यतस्त्वया ज्ञानमशेषमाप्तं लोकेन चैतन्यमिवोष्णरश्मेः ॥ ४ ॥

र्घ्यम् ॥ "पादार्घाभ्याञ्च" इति यत् ॥ पूजार्थं द्रव्यं निधाय श्रुतेन श्रूयत इति श्रुतं शास्त्रम् । तेन प्रकाशं प्रसिद्धम् ॥ "श्रुतं शास्त्रावधृतयोः" इत्यमरः ॥ अतिथिमभ्यागतं कौत्सम ॥ "अतिथिर्ना गृहागते" इत्यमरः ॥ प्रत्युज्जगाम ॥

३ ॥ तमिति । विधिज्ञः शास्त्रज्ञः । अकरणे प्रत्यवायभीरुरित्यर्थः । मानधनानामग्रयाय्यग्रेसरः । अपयशोभीरुरित्यर्थः । कृत्यवित्कार्यज्ञो विशांपतिर्मनुजेश्वरः ॥ "द्वौ विशौ वैश्यमनुजौ" इत्यमरः ॥ विष्टरभाजमासनगतम् । उपविष्टमित्यर्थः ॥ "विष्टरो विटपी दर्भमुष्टिः पीठाद्यमासनम्" इत्यमरः ॥ "वृक्षासनयोर्विष्टरः" इति निपातः ॥ तं तपोधनं विधिवद्विध्यर्हम् । यथाशास्त्रमित्यर्थः ॥ "तदर्हम्" इति वतिप्रत्ययः ॥ अर्चयित्वारात्समीपे ॥ "आराद्दूरसमीपयोः" इत्यमरः ॥ कृताञ्जलिः सन्निति वक्ष्यमाणप्रकारेणोवाच ॥

४ ॥ अप्यग्रणीरिति । हे कुशाग्रबुद्धे सूक्ष्मबुद्धे ॥ "कुशाग्रीयमतिः प्रोक्तः सूक्ष्मदर्शी च यः पुमान्" इति हलायुधः ॥ मन्त्रकृतां मन्त्रस्रष्टृणाम् ॥ "सुकर्मपापमन्त्र—" इत्यादिना क्विप् ॥ ऋषीणामग्रणीः श्रेष्ठस्ते तव गुरुः कुशल्यपि । क्षेम-

---

3. Learned in rituals (regulations), marching ahead of those to whom self-respect was (is) wealth, and conversant with proprieties, the lord of men, honouring that sage to whom asceticism was wealth, according to prescribed rules, with a folding of his hands formed (folding his hands), spoke thus to him, occupying a seat close by.

4. Oh, you of an acute intellect ! is it well with your preceptor who is the foremost of those sages who were the authors of

---

3. D. with Chá., विशांपतिर्विष्टरभाजमाह कृताञ्जलिः कृत्यविदित्युवाच, C. with Su., विशांपतिर्विष्टरभाजमाह कृताञ्जलिः कृत्यविचारदक्षः for the second Páda.

4. B. D. E. H. I. J. K. L. R. with Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., अग्रि for अपि. Hemádri notices अग्रि and Cháritravardhana notices अपि. C. with Hem., and Chá., यतस्त्वयाः for यतस्त्वया, all of them take it as a verb, यतः तु अयाः, where Hemádri says :— यतस्तु गुरोरशेषं समग्रं आप्तं हितं ज्ञानमयाः अगच्छः, Cháritravardhana has :— अयाः इति या प्रापणे अस्माच्छङ्. Hemádri also notices the reading त्वया, he says, त्वया इत्येकं पदं इति केचित्. R. ज्ञानविशेषं for ज्ञानमशेषं. Hemádri notices this, B. C. E. I. K. L. R. with Chá., and Val., चैतन्यमुग्रादिव दीक्षितेन, Hemádri also notices this, D. with Din., आलोकमर्कादिव

कायेन वाचा मनसापि शश्वद्यत्संभृतं वासवधैर्यलोपि ।
आपाद्यते न व्ययमन्तरायैः कच्चिन्महर्षेस्त्रिविधं तपस्तत् ॥ ५ ॥
आधारबन्धप्रमुखैः प्रयत्नैः संवर्धितानां सुतनिर्विशेषम् ।
कच्चिन्न वाय्वादिरुपप्लवो वः श्रमच्छिदामाश्रमपादपानाम् ॥ ६ ॥

वान्किम् ॥ अपि प्रश्ने ॥ "गर्हासमुच्चयप्रश्नशङ्कासंभावनास्वपि" इत्यमरः ॥ यतो यस्माद्गुरोः सकाशात्त्वयाशेषं ज्ञानम् । लोकेनोष्णरश्मेः सूर्याच्चैतन्यं प्रबोध इव । आप्तं स्वीकृतम् ॥

५ ॥ कायेनेति । कायेनोपवासादिकृच्छ्रचान्द्रायणादिना वाचा वेदपाठेन मनसा गायत्रीजपादिनापि ॥ करणेन ॥ वासवस्येन्द्रस्य धैर्यं लुम्पतीति वासवधैर्यलोपि । स्वपदापहारशङ्काजनकमित्यर्थः । यत्तपः शश्वदसकृत् ॥ "मुहुर्मुहुः पुनः शश्वदभीक्ष्णमसकृत्समाः" इत्यमरः ॥ संभृतं संचितं महर्षेर्वरतन्तोस्त्रिविधं वाङ्मनःकायजं तत्तपोऽन्तरायैर्विघ्नैरिन्द्रप्रेरिताप्सरःशापैर्व्ययं नाशं नापाद्यते कच्चित् । न नीयते किम् ॥ "कच्चित्कामप्रवेदने" इत्यमरः ॥

६ ॥ आधारेति । आधारबन्धप्रमुखैरालवालनिर्माणादिभिः प्रयत्नैरुपायैः ॥ "आधार आलवालेऽम्बुबन्धेऽधिकरणेऽपि च" इति विश्वः ॥ सुतेभ्यो निर्गतो विशेषो यस्मिन्कर्मणि तत्तथा। संवर्धितानां श्रमच्छिदां व आश्रमपादपानां वाय्वादिः । आदिशब्दाद्दावानलादिः । उपप्लवो बाधको न कच्चिन्नास्ति किम् ॥

---

hymns, and from whom you have derived complete knowledge, as the world obtains consciousness (life) from the hot-rayed one (sun).

5. I hope no temptations (*lit.* obstructions) are able to diminish the three-fold asceticism of the great sage, which has been accumulated by constant exercises of the body, speech and mind, and which disturbs the peace of Indra's mind.

6. I hope the storm and other calamities have not befallen the trees round your hermitage which beguile fatigue and which have been reared up by you with a care not exceeding that bestowed upon a son, by digging water-basins and performing other like operations.

जीवलोकः, Chàritravardhana also notices this, D_2. with Hem., and Su., चैतन्यमर्कादिव जीवलोकः, A_2. चैतन्यमुग्रादिव यायजूकं for लोकेन चैतन्यमिवोष्णरश्मेः. Hemádri too notices the reading.

5. B. C. E. H. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Dharm., and Vija., च for अपि. B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., यद्वत्रिगो धैर्यविलोपि तनं for यत्संभृतं वासवधैर्यलोपि. D. अन्तरायं for अन्तरायैः. Hemádri also notices this.

6. D. with Su., °वृक्षकाणां for °पादपानां.

क्रियानिमित्तेष्वपि वत्सलत्वादभग्नकामा मुनिभिः कुशेषु ।
तदङ्कशय्याच्युतनाभिनाला कच्चिन्मृगीणामनघा प्रसूतिः ॥ ७ ॥
निर्वर्त्यते यैर्नियमाभिषेको येभ्यो निवापाञ्जलयः पितॄणाम् ।
तान्युञ्छषष्ठाङ्कितसैकतानि शिवानि वस्तीर्थजलानि कच्चित् ॥ ८ ॥
नीवारपाकादि कडङ्गरीयैरामृश्यते जानपदैर्न कच्चित् ।
कालोपपन्नातिथिकल्प्यभागं वन्यं शरीरस्थितिसाधनं वः ॥ ९ ॥

७ ॥ क्रियेति । क्रियानिमित्तेष्वप्यनुष्ठानसाधनेष्वपि कुशेषु मुनिभिर्वत्सलत्वान्मृगस्नेहादभग्नकामाप्रतिहतेच्छा । तेषां मुनीनामङ्का एव शय्यास्तासु च्युतानि नाभिनालानि यस्याः सा तथोक्ता मृगीणां प्रसूतिः संततिरनघाव्यसना कच्चित् । अनपायिनी किमित्यर्थः ॥ "दुःखैनोव्यसनेष्वघम्" इति यादवः ॥ ते हि व्यालभयाद्दारात्रमङ्क एव धारयन्ति ॥

८ ॥ निर्वर्त्यत इति । यैस्तीर्थजलैर्नियमाभिषेको नित्यस्नानादिर्निर्वर्त्यते निष्पाद्यते । येभ्यो जलेभ्यः । उद्धृत्येति शेषः । पितॄणां निवापाञ्जलयस्तर्पणाञ्जलयः ॥ "पितृदानं निवापः स्यात्" इत्यमरः ॥ निर्वर्त्यन्ते । उञ्छानां प्रकीर्णोद्धृतधान्यानां षष्ठैः षष्ठभागैः पालकत्वाद्राजग्राह्यैरङ्कितानि सैकतानि पुलिनानि येषां तानि तथोक्तानि वो युष्माकं तानि तीर्थजलानि शिवानि भद्राणि कच्चित् । अनुपप्लवानि किमित्यर्थः ॥ "उञ्छो धान्यांशकादानं कणिकांशार्जनं शिलम्" इति यादवः ॥ "षष्ठाष्टमाभ्यां ञ च" इति षष्ठशब्दाद्भागार्थेऽन्प्रत्ययः॥ अत एवापूरणार्थत्वात् । "पूरणगुण—" इत्यादिना न षष्ठीसमासप्रतिषेधः ॥ सिकता येषु सन्ति सैकतानि ॥ "सिकताशर्कराभ्यां च" इत्यण्प्रत्ययः ॥

९ ॥ नीवारेति । कालेषु योग्यकालेषूपपन्नानामागतानामतिथीनां कल्प्या भागा यस्य तत्तथोक्तम् । वने भवं वन्यम् । शरीरस्थितेर्जीवनस्य साधनं वो युष्मा-

---

7. I hope that the fawns of female-deer are safe (or unhurt), whom the sages through extreme affection indulge in the desire of feeding even upon the Kusa-grass, required in their ceremonial rites, and who drop down the umbilical cords on their laps, which formed, as it were, their beds.

8. I hope it fares well with your holy waters, by means of which the necessary rites of daily ablutions are performed and from which handful of watery libations are offered to the manes and whose sandy shores are marked by the sixth part of gleanings (gathered corn.)

9. I hope your ripe Nivàra corn, fruits, &c.,—the sylvan source of subsistence of your body, and portions whereof are to be

---

9. D. कडंकरीयैः for कडंगरीयैः. D. E. °भागधेयं, also noticed by Hemádri, B. C. H. I. with Hem., Chá., Val., Su., Dharm., and Vija., °कल्प्यभागं, R. कल्पभाजं for कल्प्यभागं. Dinakara and Vijayagani with us.

अपि प्रसन्नेन महर्षिणा त्वं सम्यग्विनीयानुमतो गृहाय ।
कालो ह्ययं संक्रमितुं द्वितीयं सर्वोपकारक्षममाश्रमं ते ॥ १० ॥
तवार्हतो नाभिगमेन तृप्तं मनो नियोगक्रिययोत्सुकं मे ।
अप्याज्ञया शासितुरात्मना वा प्राप्तोऽसि संभावयितुं वनान्माम् ॥ ११ ॥

कम् । पच्यत इति पाकः फलम् । धान्यमिति यावत् । नीवारपाकादि । आदिशब्दाच्छ्यामाकादिधान्यसंग्रहः । जनपदेभ्य आगतैर्जानपदैः ॥ "तत आगतः" इत्यण् ॥ कडंगरीयैः । कडंगरं बुसमर्हन्तीति कडंगरीयाः ॥ "कडंगरो बुसं क्लीबे धान्यत्वचि तुषः पुमान्" इत्यमरः ॥ "कडंगरदक्षिणाच्छ च" इति छप्रत्ययः ॥ तैर्गोमहिषादिभिर्नाभिमृश्यते कश्चित् । न भक्ष्यते किमित्यर्थः ॥

१० ॥ अपीति । किं च त्वं प्रसन्नेन सता महर्षिणा सम्यग्विनीय शिक्षयित्वा । विद्यामुपदिश्येत्यर्थः । गृहाय गृहस्थाश्रमं प्रवेष्टुम् ॥ "क्रियार्थोपपद–" इत्यादिना चतुर्थी ॥ अनुमतोऽप्यनुज्ञातः किम् ॥ हि यस्मात्ते तव सर्वेषामाश्रमाणामुपकारे क्षमं शक्तम् ॥ "क्षमं शक्ते हिते त्रिषु" इत्यमरः ॥ द्वितीयमाश्रमं गार्हस्थ्यं संक्रमितुं प्राप्तुमयं कालः ॥ विद्याग्रहणानन्तर्यात्तस्येति भावः ॥ "कालसमयवेलासु तुमुन्" इति तुमुन् ॥ सर्वोपकारक्षममित्यत्र मनुः—"यथा मातरमाश्रित्य सर्वे जीवन्ति जन्तवः । वर्तन्ते गृहिणस्तद्वदाश्रित्येतर आश्रमाः" इति ॥

११ ॥ कुशलप्रश्नं विधायागमनप्रयोजनप्रश्नं चिकीर्षुराह ॥ तवेति । अर्हतः पूज्यस्य प्रशंस्यस्य ॥ "अर्हः प्रशंसायाम्" इति शतृप्रत्ययः ॥ तवाभिगमेनागमनमात्रेण मे मनो न तृप्तं न तुष्टम् । किं तु नियोगक्रिययाज्ञाकरणेनोत्सुकं सोत्कण्ठम् ॥ "प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया च" इति सप्तम्यर्थे तृतीया ॥ शासितुर्गुरोराज्ञयाप्यात्मना स्वतो वा ॥ "प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम्" इति तृतीया ॥ मां संभावयितुं वनात्प्राप्तोऽसि ॥ गुर्वर्थे स्वार्थे वागमनमित्यर्थः ॥

---

set apart for guests coming in time,—is never eaten up by country cattle that feed upon chaff.

10. Has not the great sage, being pleased to see you properly instructed given you his permission to enter on the life of a householder ? For it is now time (proper) for you to enter on the second stage of life, capable of service (help) to all.

11. With the mere arrival of your meritorious self my heart is not content ; it longs to execute your commands. Is it by your preceptor's order or of your own accord that you have come to do me the honour of a visit from the forest ?

---

10. B. C. E. H. I. J. K. L. P. R. with Hem., Chà., Din., Val., Su., Dharm., Vija. and Vijay., अयि for अपि.

11. D. अनुग्रहणाभिगमस्थितेन तवार्हतस्तृप्यति मे न चेतः for the first Pàda. Hemàdri also notices this reading. [D. तृप्यति, Hem., तृप्यति] B. E. H. I. J. L. P. R. with Hem., Chà., Din., Val., Su., Dharm., Vija., and Vijay., अयि for अपि.

इत्यर्घ्यपात्रानुमितव्ययस्य रघोरुदारामपि गां निशम्य ।
स्वार्थोपपत्तिं प्रति दुर्बलाशस्तमित्यवोचद्वरतन्तुशिष्यः ॥ १२ ॥
सर्वत्र नो वार्तमवेहि राजन्नाथे कुतस्त्वय्यशुभं प्रजानाम् ।
सूर्ये तपत्यावरणाय दृष्टेः कल्पेत लोकस्य कथं तमिस्रा ॥ १३ ॥
भक्तिः प्रतीक्ष्येषु कुलोचिता ते पूर्वान्महाभाग तयातिशेषे ।
व्यतीतकालस्त्वहमभ्युपेतस्त्वामर्थिभावादिति मे विषादः ॥ १४ ॥

१२ ॥ इतीति । अर्घ्यपात्रेण मृण्मयेनानुमितो व्ययः सर्वस्वत्यागो यस्य तस्य रघोरित्युक्तप्रकारामुदारामौदार्ययुक्तामपि गां वाचम् ॥ " मनो नियोगक्रिययोत्सुकं मे " इत्येवं रूपाम् ॥ " स्वर्गेषुपशुवाग्वज्रदिङ्नेत्रघृणिभूजले । लक्ष्यदृष्ट्या स्त्रियां पुंसि गौः " इत्यमरः ॥ निशम्य श्रुत्वा वरतन्तुशिष्यः कौत्सः स्वार्थोपपत्तिं स्वकार्यसिद्धिं प्रति दुर्बलाशः सन्मृण्मयपात्रदर्शनाच्छिथिलमनोरथः संस्तं रघुमिति वक्ष्यमाणप्रकारेणावोचत् ॥

१३ ॥ सर्वत्रेति । हे राजंस्त्वं सर्वत्र । नोऽस्माकं वार्त्तं स्वास्थ्यमवेहि जानीहि ॥ " वार्त्तंवल्गुन्यरोगे च " इत्यमरः ॥ " वार्त्तं पाटवमारोग्यं भव्यं स्वास्थ्यमनामयम् " इति यादवः ॥ न चैतदाश्चर्यमित्याह—नाथ इति । त्वयि नाथ ईश्वरे सति प्रजानामशुभं दुःखं कुतः ॥ तथा हि । अर्थान्तरं न्यस्यति सूर्य इत्यादिना । सूर्ये तपति प्रकाशमाने सति तमिस्रा तमस्ततिः ॥ "तमिस्रं तिमिरं रोगे तमिस्रा तु तमस्ततौ । कृष्णपक्षे निशायां च " इति विश्वः ॥ लोकस्य जनस्य ॥ "लोकस्तु भुवने जने " इत्यमरः ॥ दृष्टेरावरणाय कथं कल्पेत संपद्येत । न कल्पत इत्यर्थः ॥ क्लृपेः संपद्यमाने चतुर्थी ॥

१४ ॥ तवाहत इत्यादिनोक्तं यत्तन्न चित्रमित्याह ॥ भक्तिरिति । प्रतीक्ष्येषु

12. On hearing these words, though noble, of Raghu, whose earthen pot which contained the materials of worship clearly showed that he had disposed of the whole of his wealth in charity, Vartantu's disciple despairing of gaining his object, addressed him in the following words :—

13. Know, Oh king, it is well with us, in every particular. How can evil happen to subjects who have you for their protector? How could darkness (a mass of darkness) obscure the sight of men, the sun shining ?

14. Reverence for the worthy is hereditary in your family

12. A. I. K. R. with Hem., Din., Val., Su., and Vijay., तं प्रत्यवोचत् for तमित्यवोचत्. D. with Dharm., and Vija., प्रत्याह कौत्सस्तमपेतकुत्सम् for तमित्यवोचद्वरतन्तुशिष्यः.

13. D. K. with Chā., and Su., तमिस्रं for तमिस्रा. So also noticed by Hemādri and Mallinātha who observe :—" तामिस्रं " इति पाठे तमिस्रं तिमिरं ॥ " तमिस्रं तिमिरं तमः " इत्यमरः ॥

14. C. E. with Din., Su., and the text only of Vijay., महाभागतया, D_2. with Vijay., and the text only of Val., महाभाग्यतया for

शरीरमात्रेण नरेन्द्र तिष्ठन्नाभासि तीर्थप्रतिपादितर्द्धिः ।
आरण्यकोपात्तफलप्रसूतिः स्तम्बेन नीवार इवावशिष्टः ॥ १५ ॥
स्थाने भवानेकनराधिपः सन्नकिंचनत्वं मखजं व्यनक्ति ।
पर्यायपीतस्य सुरैर्हिमांशोः कलाक्षयः श्लाघ्यतरो हि वृद्धेः ॥ १६ ॥

पूज्येषु ॥ " पूज्यः प्रतीक्ष्यः " इत्यमरः ॥ भक्तिरनुरागविशेषस्ते तव कुलोचिता कुलाभ्यस्ता ॥ " अभ्यस्तेऽप्युचितं न्याय्यम् " इति यादवः ॥ हे महाभाग सार्वभौम तया भक्त्या पूर्वानतिशेषेऽतिवर्तसे ॥ किं तु सर्वत्र वार्त्ते चेत्तर्हि कथं खेदखिन्न इव दृश्यसेऽत आह–व्यतीतेति । अहं व्यतीतकालोऽतिक्रान्तकालः सन्नर्थिभावात्त्वामभ्युपेतः इति मे मम विषादः ॥

१५ ॥ शरीरेति । हे नरेन्द्र तीर्थे सत्पात्रे प्रतिपादिता दत्तर्द्धिर्येन स तथोक्तः ॥ " योनौ जलावतारे च मन्त्र्याद्यष्टादशस्वपि । पुण्यक्षेत्रे तथा पात्रे तीर्थं स्याद्दर्शनेष्वपि " इति हलायुधः ॥ शरीरमात्रेण तिष्ठन् । आरण्यका अरण्ये भवा मनुष्या मुनिप्रमुखाः ॥ " अरण्यान्मनुष्ये " इति वुञ्प्रत्ययः ॥ तैरुपात्ता फलमेव प्रसूतिर्यस्य स स्तम्बेन काण्डेनावशिष्टः ॥ प्रकृत्यादित्वात्तृतीया ॥ नीवार इव । आभासि शोभसे ॥

१६ ॥ स्थान इति । भवानेकनराधिपः सार्वभौमः सन् । मखजं यज्ञजन्यम् । न विद्यते किंचन यस्येत्यकिंचनः ॥ मयूरव्यंसकादित्वात्तत्पुरुषः ॥ तस्य भावस्तत्त्वं निर्धनत्वं व्यनक्ति प्रकटयति स्थाने युक्तम् ॥ " युक्ते द्वे सांप्रतं स्थाने " इत्यमरः ॥ तथा हि । सुरैर्देवैः पर्यायेण क्रमेण पीतस्य हिमांशोः कलाक्षयो वृद्धेरुपचयाच्छ्लाघ्यतरो हि वरः खलु ॥ " मणिः शाणोल्लीढः समरविजयी हेतिनिहतो मदक्षीणो नागः शरदि सरितः श्यानपुलिनाः । कलाशेषश्चन्द्रः सुरतमृदिता बालवनिता तनिम्ना शोभन्ते गलितविभवाश्चार्थिषु नृपाः " इति भावः ॥ अत्र कामन्दकः– " धर्मार्थे क्षीणकोशस्य क्षीणत्वमपि शोभते । सुरैः पीतावशेषस्य कृष्णपक्षे विधोरिव " इति ॥

---

and, Oh fortunate king, you excel your ancestors thereby. It pains me, however, that I have come to you in the capacity of a suitor when it is too late.

15. Standing in body only, with your wealth given away to worthy recipients, you shine forth, Oh lord of people, like a Nivára plant,—its produce of crops appropriated by foresters,—left with (in) its stem.

16. The poverty which you though a paramount emperor betray as essentially resulting from the performance of the विश्वजित् sacrifice, does you cerdit. The waning of the digits of the moon drunk one after another by the gods makes her more praiseworthy than waxing.

महाभाग तया. Hemádri and Cháritravardhana also notice the reading महाभागतया. D. E. वितर्कः for विषाद. K. reads " शरीरमात्रेण " &c., first and then " भक्तिः &c. "

तदन्यतस्तावदनन्यकार्यो गुर्वर्थमाहर्तुमहं यतिष्ये ।
स्वस्त्यस्तु ते निर्गलिताम्बुगर्भं शरद्घनं नार्दति चातकोऽपि ॥ १७ ॥
एतावदुक्त्वा प्रतियातुकामं शिष्यं महर्षेर्नृपतिर्निषिध्य ।
किं वस्तु विद्वन्गुरवे प्रदेयं त्वया कियद्वेति तमन्वयुङ्क्त ॥ १८ ॥
ततो यथावद्विहिताध्वराय तस्मै स्मयावेशविवर्जिताय ।
वर्णाश्रमाणां गुरवे स वर्णी विचक्षणः प्रस्तुतमाचचक्षे ॥ १९ ॥

१७ ॥ तदिति । तत्तस्मात्तावदनन्यकार्यः ॥ " यावत्तावच्च साकल्येऽवधौ मानेऽवधारणे " इति विश्वः ॥ प्रयोजनान्तररहितोऽहमन्यतो वदान्यान्तराद्गुर्वर्थं गुरुधनमाहर्तुमर्जयितुं यतिष्ये उद्योक्ष्ये । ते तुभ्यं स्वस्ति शुभमस्तु ॥ " नमःस्वस्ति-" इत्यादिना चतुर्थी ॥ तथा हि । चातकोऽपि ॥ " धरणीपतितं तोयं चातकानां रुजाकरम् " इति हेतोरनन्यगतिकोऽपीत्यर्थः ॥ निर्गलितोऽम्बुरम्भ इव गर्भो यस्य तं शरद्घनं नार्दति न याचते ॥ " अर्द गतौ याचने च " इति धातुः ॥ " याचनार्थे रणेऽर्दनम् " इति यादव ॥

१८ ॥ एतावदिति । एतावद्वाक्यमुक्त्वा प्रतियातुं कामो यस्य तं प्रतियातुकामं गन्तुकामम् ॥ " तुम्काममनसोरपि " इति मकारलोपः ॥ महर्षेर्वरतन्तोः शिष्यं कौत्सं नृपती रघुर्निषिध्य निवार्य हे विद्वन् त्वया गुरवे प्रदेयं वस्तु किं किमात्मकं कियत्किंपरिमाणं वा । इत्येवं तं कौत्समन्वयुङ्क्तापृच्छत् ॥ " प्रश्नोऽनुयोगः पृच्छा च " इत्यमरः ॥

१९ ॥ तत इति । ततो यथावद्यथार्हम् ॥ अर्हार्थे वतिः ॥ विहिताध्वराय विधिवदनुष्ठितयज्ञाय । सदाचारायेत्यर्थः । स्मयावेशविवर्जिताय गर्वाभिनिवेशशून्याय ।

---

17. Therefore being determined not to do anything till I reward my preceptor I will try to procure, from some other source, the money which I want to pay him. Hail to you ! even the Chátaka bird does not implore the autumnal cloud that has lost all the water inside (*lit.* the watery contents of whose interior has been showered out.)

18. But the king prevented the great sage's disciple, who, after saying this was about to depart (*lit.* who had the desire to return), and said 'Learned Sir ! what thing do you mean to give to your preceptor and how much of it ? '

19. Whereupon the learned ascetic explained his object to the ruler of (the several) castes and states of life, who had performed

---

17. B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., Vijay., and Vija., स्वत् for तत्. D. with Hem., and Vija.. आनेतुं for आहर्तुं. C. D. नेदति for नार्दति. Vallabha also notices this reading.

18. A. B. E. H. I. K L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., Vijay., and Vija., किंवस्तु for किं वस्तु.

19. C. with Châ., ब्रह्मा for वर्णी.

समाप्तविद्येन मया महर्षिर्विज्ञापितोऽभूद्गुरुदक्षिणायै।
स मे चिरायास्खलितोपचारां तां भक्तिमेवागणयत्पुरस्तात्॥ २०॥
निर्बन्धसंजातरुषार्थकार्श्यमचिन्तयित्वा गुरुणाहमुक्तः।
वित्तस्य विद्यापरिसंख्यया मे कोटीश्चतस्रो दश चाहरेति॥ २१॥
सोऽहं सपर्याविधिभाजनेन मत्वा भवन्तं प्रभुशब्दशेषम्।
अभ्युत्सहे संप्रति नोपरोद्धुमल्पेतरत्वाच्छ्रुतनिष्क्रयस्य॥ २२॥

अनुद्धतायेत्यर्थः॥ वर्णानां ब्राह्मणादीनामाश्रमाणां ब्रह्मचर्यादीनां च गुरवे नियामकाय॥ "वर्णाः स्युर्ब्राह्मणादयः" इति॥ "ब्रह्मचारी गृही वानप्रस्थो भिक्षुश्चतुष्टये। आश्रमोऽस्त्री" इति चामरः॥ सर्वकार्यनिर्वाहकायेत्यर्थः। तस्मै रघवे विचक्षणः विद्वान्वर्णी ब्रह्मचारी॥ "वर्णिनो ब्रह्मचारिणः" इत्यमरः॥ "वर्णाद्ब्रह्मचारिणि" इतीनिप्रत्ययः॥ सः कौत्सः प्रस्तुतं प्रकृतमाचचक्षे॥

२०॥ समाप्तेति। समाप्तविद्येन मया महर्षिर्गुरुदक्षिणायै गुरुदक्षिणास्वीकारार्थं विज्ञापितोऽभूत्। स च गुरुश्चिरायास्खलितोपचारां तां दुष्करां मे भक्तिमेव पुरस्तात्प्रथममगणयत्संख्यातवान्। भक्त्यैव संतुष्टः किं दक्षिणयेत्युक्तवानित्यर्थः। अथ वा भक्तिमेव तां दक्षिणामगणयदिति योज्यम्॥

२१॥ निर्बन्धेति। निर्बन्धेन प्रार्थनातिशयेन संजातरुषा संजातक्रोधेन गुरुणा। अर्थकार्श्यं दारिद्र्यमचिन्तयित्वाविचार्याहम्। वित्तस्य धनस्य चतस्रो दश च कोटीश्चतुर्दशकोटीर्मे मह्यमाहरानय। इति विद्यापरिसंख्यया विद्यापरिसंख्यानुसारेणैवोक्तः॥ अत्र मनुः—"अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः। पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्या ह्येताश्चतुर्दश" इति॥

२२॥ सोऽहमिति। सोऽहं सपर्याविधिभाजनेनार्घ्यपात्रेण भवन्तं प्रभुशब्द एव शेषो यस्य तं मत्वा। निःस्वं निश्चित्येत्यर्थः। श्रुतनिष्क्रयस्य विद्यामूल्यस्याल्पेतरत्वादतिमहत्त्वात्संप्रत्युपरोद्धुं निर्बन्धुं नाभ्युत्सहे॥

---

the sacrifice as enjoined by the rite, and who was free from the influence of vanity.

20. When I completed my course of study I humbly asked the great sage as to the remuneration to be made to him. But he already considered my undeviating and faithful service of long standing as the best possible recompense.

21. Enraged at my importunities the preceptor heedless to the scantiness of my means said, "get me four and ten crores of money in accordance with the number of several lores".

22. Knowing you, from the earthen-pot containing the provisions of worship, to be one of whom the only remaining portion is

---

20. D. with Val., अवाप्तविद्येन for समाप्तविद्येन. Vallabha's text agrees with Mallinātha.

22. H. प्रभुशक्तिशेषं for प्रभुशब्दशेषं. E. H. I. L. with Su., and Vallabha's text only °निःक्रयस्य for °निष्क्रयस्य. R. omits this verse.

इत्थं द्विजेन द्विजराजकान्तिरावेदितो वेदविदां वरेण ।
एनोनिवृत्तेन्द्रियवृत्तिरेनं जगाद भूयो जगदेकनाथः ॥ २३ ॥
गुर्वर्थमर्थी श्रुतपारदृश्वा रघोः सकाशादनवाप्य कामम् ।
गतो वदान्यान्तरमित्ययं मे मा भूत्परीवादनवावतारः ॥ २४ ॥
स त्वं प्रशस्ते महिते मदीये वसंश्चतुर्थोऽग्निरिवाग्न्यगारे ।
द्वित्राण्यहान्यर्हसि सोढुमर्हन्यावद्यते साधयितुं त्वदर्थम् ॥ २५ ॥

२३ ॥ इत्थमिति । द्विजराजकान्तिश्चन्द्रकान्तिः । चन्द्रसमकान्तित्वेन तदर्थावाप्तिवैराग्यं वारयति ॥ "द्विजराजः शशधरो नक्षत्रेशः क्षपाकरः" इत्यमरः ॥ "तस्मात्सोमो राजा नो ब्राह्मणानाम्" इति श्रुतेः ॥ एनसो निवृत्तेन्द्रियवृत्तिर्यस्य स जगदेकनाथो रघुर्वेदविदां वरेण श्रेष्ठेन द्विजेन कौत्सेनेत्थमावेदितो निवेदितः सन् । एनं कौत्सं भूयः पुनर्जगाद ॥

२४ ॥ गुर्वर्थमिति । श्रुतस्य पारं दृष्टवाञ्छ्रुतपारदृश्वा ॥ "दृशेः क्वनिप्" इति क्वनिप् ॥ गुर्वर्थं गुरुदक्षिणार्थं यथा तथार्थी याचकः । विशेषणद्वयेनाप्यस्याप्रत्याख्येयत्वमाह । रघोः सकाशात्कामं मनोरथमनवाप्याप्राप्य वदान्यान्तरं दात्रन्तरं गतः ॥ "स्युर्वदान्यस्थूललक्ष्यदानशौण्डा बहुप्रदे" इत्यमरः ॥ इत्येवंरूपोऽयं परीवादस्यापवादस्य नवो नूतनः प्रथमोऽवतार आविर्भावो मे मा भून्मास्तु ॥ रघोरिति स्वनामग्रहणं संभावितत्वद्योतनार्थम् ॥ तथा च—"संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते" इति भावः ॥

२५ ॥ स इति । स त्वं महिते पूजिते प्रशस्ते प्रसिद्धे मदीयेऽग्न्यगारे त्रेताग्निशालायां चतुर्थोऽग्निरिव वसन्द्वित्राणि द्वे त्रीणि वाहानि दिनानि ॥ "संख्ययाव्य-

---

the title 'ruler', I, thus circumstanced, dare not press you just now, the price of my learning being far from small.

23. Thus informed by the twice-born one, foremost among those versed in the Vedas, the sole lord of the world, fair as the moon and the propensities of whose mind were averse to sin, again spoke to him.

24. Asking wealth for his preceptor, a certain suitor who had seen the other ends of the learning went to another donor, not obtaining his object of wish from Raghu. Let there not be this new (first) rise of a reproach about me!

25. It behoves you, thus circumstanced, to sojourn, Oh worthy (adorable) one, like a fourth Agni, in my reputed and revered

---

23. I. R. with Su., निवेदितः for आवेदितः.

24. D. with Chà., Din., Su., and Dharm., अनवाप्तकामः for अनवाप्य कामं.

25. B. H. I. R. with Val., Su., and Vijay., महितः for महिते. C. with Chà., तदर्थं for त्वदर्थं.

तथेति तस्यावितथं प्रतीतः प्रत्यग्रहीत्संगरमग्रजन्मा ।
गामात्तसारां रघुरप्यवेक्ष्य निष्क्रष्टुमर्थं चकमे कुबेरात् ॥ २६ ॥
वसिष्ठमन्त्रोक्षणजात्प्रभावादुदन्वदाकाशमहीधरेषु ।
मरुत्सखस्येव बलाहकस्य गतिर्विजघ्ने न हि तद्रथस्य ॥ २७ ॥

यासन्नादूराधिकसंख्याः संख्येये " इति बहुव्रीहिः ॥ "बहुव्रीहौ संख्येये डजबहुगणात् " इति डच्प्रत्ययः समासान्तः ॥ सोढुमर्हसि । हे अर्हन्मान्य त्वदर्थं तव प्रयोजनं साधयितुं यावद्यते यतिष्ये ॥ " यावत्पुरानिपातयोर्लट् " इति भविष्यदर्थे लट् ॥

२६ ॥ तथेतीति । अग्रजन्मा ब्राह्मणः प्रतीतः प्रीतः संस्तस्य रघोरवितथममोघं संगरं प्रतिज्ञाम् ॥ " अथ प्रतिज्ञाजिसंविदापत्सु संगरः " इत्यमरः ॥ तथेति प्रत्यग्रहीत् । रघुरपि गां भूमिमात्तसारां गृहीतधनामवेक्ष्य कुबेरादर्थं निष्क्रष्टुमाहर्तुं चकमे इयेष ॥

२७ ॥ वशिष्ठेति । वशिष्ठस्य यन्मन्त्रेणोक्षणमभिमन्त्र्य प्रोक्षणं तज्जात्प्रभावात्सामर्थ्याद्धेतोः । उदन्वदाकाशमहीधरेषूदन्वत्युदधावाकाशे महीधरेषु वा । मरुत्सखस्य ॥ मरुतः सखेति तत्पुरुषो बहुव्रीहौ समासान्ताभावात् ॥ ततो वायुसहायस्येति लभ्यते ॥ वारीणां वाहको बलाहकः ॥ पृषोदरादित्वात्साधुः ॥ तस्येव मेघस्येव । तद्रथस्य गतिः संचारो न विजघ्ने न विहता हि ॥

(hallowed) fire-sanctuary, and to wait there for two or three days while I endeavour to accomplish your object.

26. With the words " so be it " the Bráhman being greatly pleased with him accepted his unfailing promise ; Raghu too finding the earth with her resources drained, intended to wrench money from Kubera.

27. By virtue of the influence produced by Vasistha's holy sprinkling accompanied by the Mantras (of course at the time of coronation), the course of his car like that of a cloud with the wind for its ally, was not (to be) impeded in sea, sky, or mountain.

---

26. B. C. E. H. I. L. P. with Chá., Din., Dharm., Vija., and the text only of Val., अवितथां प्रतीतः, also noticed by Vijay., D. K. अवितथप्रयत्नः, R. with Su., and Vijay., अवितथप्रतीतः, L. with Val., अवितथप्रतिज्ञः for अवितथं प्रतीतः. B. C. D. E. H. I. K. L. P. R. with Chá., Din., Val., Su., Dharm., Vija., and Vijay., तां गिरं for संगरं, Hemádri and Mallinátha also notice this, the latter says :—" तां गिरं " इति केचित्पठन्ति. H. आत्मजन्मा for अग्रजन्मा. B. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., निःक्रष्टुं for निष्क्रष्टुं.

27. E. बलाहकस्य for बलाहकस्य.

अथाधिशिश्ये प्रयतः प्रदोषे रथं रघुः कल्पितशस्त्रगर्भम् ।
सामन्तसंभावनयैव धीरः कैलासनाथं तरसा जिगीषुः ॥ २८ ॥
प्रातः प्रयाणाभिमुखाय तस्मै सविस्मयाः कोशगृहे नियुक्ताः ।
हिरण्मयीं कोशगृहस्य मध्ये वृष्टिं शशंसुः पतितां नभस्तः ॥ २९ ॥
तं भूपतिर्भासुरहेमराशिं लब्धं कुबेरादभियास्यमानात् ।
दिदेश कौत्साय समस्तमेव पादं सुमेरोरिव वज्रभिन्नम् ॥ ३० ॥

२८ ॥ अथेति । अथ प्रदोषे रजनीमुखे । तत्काले यानाधिरोहणविधानात् । प्रयतो धीरो रघुः । समन्ताद्भवः सामन्तः । राजमात्रमिति संभावनयैव कैलासनाथं कुबेरं तरसा बलेन जिगीषुर्जेतुमिच्छुः सन् । कल्पितं सज्जितं शस्त्रं गर्भे यस्य तं रथमधिशिश्ये । रथे शयितवानित्यर्थः ॥ "अधिशीङ्स्थासां कर्म" इति कर्मत्वम् ॥

२९ ॥ प्रातरिति । प्रातः प्रयाणाभिमुखाय तस्मै रघवे कोशगृहे नियुक्ता अधिकृता भाण्डागारिकाः सविस्मयाः सन्तः कोशगृहस्य मध्ये नभस्तो नभसः ॥ पञ्चम्यास्तसिल्प्रत्ययः ॥ पतितां हिरण्मयीं सुवर्णमयीम् ॥ "दाण्डिनायन-", इत्यादिना निपातनात्साधुः ॥ वृष्टिं शशंसुः कथयामासुः ॥

३० ॥ तमिति । भूपती रघुः । अभियास्यमानादभिगमिष्यमाणात्कुबेराल्लब्धम् । वज्रेण कुलिशेन भिन्नं सुमेरोः पादं प्रत्यन्तपर्वतमिव स्थितम् ॥ "पादाः प्रत्यन्तपर्वताः" इत्यमरः ॥ तं भासुरं भास्वरम् ॥ "भञ्जभासमिदो घुरच्"–इति घुरच् ॥ हेमराशिं समस्तं कृत्स्नमेव कौत्साय दिदेश ददौ । न तु चतुर्दशकोटिमात्रमित्येवकारार्थः ॥

---

28. At length the sedate (firm-minded) Raghu, desirous of subduing the lord of Kailása by force, regarding him merely as a feudatory prince, slept, purified, in the evening, in his chariot with weapons properly arranged inside.

29. At dawn, officers employed in the treasury reported, full of wonderment, to him, about to start, a shower of gold fallen from above into the treasury house.

30. The heap of burnished gold, which resembled a skirt-hill of the Sumeru struck down by Indra's thunderbolt, obtained from Kubera who was about to be marched against, the king gave Kautsa one and all.

---

29. H. with Chà., तत्रपदे. A. C. H., कोषगृहे for कोशगृहे.

30. C. K. प्राप्तं for लब्धं. D. P. समग्रं for समस्तं. D. P. कौत्सस्य for कौत्साय. B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Chà., Din., Val., Su. Dharm., Vija., and Vijay., शृङ्गं, D. शैलं for पादं. Hemádri and Mallinàtha notice the reading of Chàritravardhana and others and say, "शृङ्गं" इति क्वचित्पाठः. Hemàdri also notices the reading of D. Mss.

जनस्य साकेतनिवासिनस्तौ द्वावप्यभूतामभिनन्द्यसत्त्वौ ।
गुरुप्रदेयाधिकनिःस्पृहोऽर्थी नृपोऽर्थिकामादधिकप्रदश्च ॥ ३१ ॥
अथोष्ट्रवामीशतवाहितार्थं प्रजेश्वरं प्रीतमना महर्षिः ।
स्पृशन्करेणानतपूर्वकायं संप्रस्थितो वाचमुवाच कौत्सः ॥ ३२ ॥
किमत्र चित्रं यदि कामसूर्भूर्वृत्ते स्थितस्याधिपतेः प्रजानाम् ।
अचिन्तनीयस्तु तव प्रभावो मनीषितं द्यौरपि येन दुग्धा ॥ ३३ ॥

३१ ॥ जनस्येति । तावर्थिदातारौ द्वावपि साकेतनिवासिनोऽयोध्यानिवासिनः॥ "साकेतं स्यादयोध्यायां कोशला नन्दिनी च सा" इति यादवः ॥ जनस्याभिनन्द्यसत्त्वौ स्तुत्यव्यवसायावभूताम॥ "द्रव्यासुव्यवसायेषु सत्त्वमस्त्री तु जन्तुषु" इत्यमरः॥ कौ द्वौ। गुरुप्रदेयादधिकेऽतिरिक्ते द्रव्ये निःस्पृहोऽर्थी । अर्थिकामादर्थिमनोरथादधिकं प्रददातीति तथोक्तः ॥ "प्रे दाज्ञः" इति कप्रत्ययः ॥ नृपश्च ॥

३२ ॥ अथेति । अथ प्रीतमना महर्षिः कौत्सः संप्रस्थितः प्रस्थास्यमानः सन् ॥ "आशंसायां भूतवच्च" इति भविष्यदर्थे क्तः ॥ उष्ट्राणां क्रमेलकानां वामीनां वडवानां च शतैर्वाहितार्थं प्रापितधनमानतपूर्वकायम् । विनयनम्रमित्यर्थः प्रजेश्वरं रघुं करेण स्पृशन्वाचमुवाच ॥

३३ ॥ किमिति । वृत्ते स्थितस्य ॥ "न्यायेनार्जनमर्थस्य वर्धनं पालनं तथा । सत्पात्रे प्रतिपत्तिश्च राजवृत्तं चतुर्विधम्" इति कामन्दकः ॥ तस्मिन्वृत्ते स्थितस्य प्रजानामधिपतेर्नृपस्य भूः कामान्सूत इति कामसूर्यदि ॥ "सत्सूद्वि-

---

31. Among the people living in Sâketa the conduct of both of them produced merited applauds; of the suitor because he was unwilling to take more than was due to his preceptor; of the king because he gave more than the suitor asked for.

32. Now the great sage Kautsa, with his heart lighted, departed (going to depart), addressed these words to the ruler of men, touching him with his hand, who had bent the fore-part of his body and who had made hundreds of camels and mares convey the treasure.

33. What wonder is there if the earth be a bringer forth of desires to a ruler of men, adhering to his line? Incomprehensible, however, is your power, by whom *Heaven* itself has been made to yield (*lit.* milked) your wish.

---

32. C. D. L. R. with Hem., Vijay., and the text only of Val., हारितार्थं for वाहितार्थं. Vijay.'s text agrees with Mallinâtha. B. C. D. E. H. I. K. L. R. with Din., Val., Su., Dharm., Vija., and Vijay., मनीषी for महर्षिः. D. E. H. I. K. R. with Châ., and Vijay., वाक्यं for वाचं. Châritravardhana also discusses the reading given in our text.

आशास्यमन्यत्पुनरुक्तभूतं श्रेयांसि सर्वाण्यधिजग्मुषस्ते ।
पुत्रं लभस्वात्मगुणानुरूपं भवन्तमीड्यं भवतः पितेव ॥ ३४ ॥
इत्थं प्रयुज्याशिषमग्रजन्मा राज्ञे प्रतीयाय गुरोः सकाशम् ।
राजापि लेभे सुतमाशु तस्मादालोकमर्कादिव जीवलोकः ॥ ३५ ॥
ब्राह्मे मुहूर्ते किल तस्य देवी कुमारकल्पं सुषुवे कुमारम् ।
अतः पिता ब्रह्मण एव नाम्ना तमात्मजन्मानमजं चकार ॥ ३६ ॥

षद्गुह-" इत्यादिना क्विप् ॥ अत्र कामप्रसवने किं चित्रम् । न चित्रमित्यर्थः । किं तु तव प्रभावो महिमा त्वचिन्तनीयः । येन त्वया द्योरपि मनीषितमभिलषितं दुग्धा ॥ दुहेर्द्विकर्मकत्वादप्रधाने कर्मणि क्तः ॥ "प्रधानकर्मण्याख्येये लादीनाहुर्द्विकर्मणाम् । अप्रधाने दुहादीनां ण्यन्ते कर्तुश्च कर्मणः " इति स्मरणात् ॥

३४ ॥ आशास्यमिति । सर्वाणि श्रेयांसि शुभान्यधिजग्मुषः प्राप्तवतस्ते तवान्यत्पुत्रातिरिक्तमाशास्यमाशीः साध्यं पुनरुक्तभूतम् । सर्वं सिद्धमित्यर्थः ॥ किं त्वीड्यं स्तुत्यं भवन्तं भवतः पितेवात्मगुणानुरूपम् । त्वत्तुल्यगुणमित्यर्थः । पुत्रं लभस्व प्राप्नुहि ॥

३५ ॥ इत्थमिति । अग्रजन्मा ब्राह्मणः ॥ "अग्रजन्मा द्विजे श्रेष्ठे भ्रातरि ब्रह्मणि स्मृतः " इति विश्वः ॥ इत्थं राज्ञ आशिषं प्रयुज्य गुरोः सकाशं समीपं प्रतीयाय प्राप ॥ राजापि । जीवलोको जीवसमूहः ॥ "जीवः प्राणिनि गीष्पतौ " इति विश्वः ॥ अर्कादालोकं प्रकाशमिव । तस्माद्दृषेराशु सुतं लेभे प्राप ॥

३६ ॥ ब्राह्म इति । तस्य रघोर्देवी महिषी ब्राह्मे ॥ " तस्येदम् " इत्यण् ॥ ब्रह्मदेवताकेऽभिजिन्नामके मुहूर्ते किलेषदसमाप्तं कुमारं कुमारकल्पं स्कन्दसदृशम् ॥

---

34. To you that have attained all blessings, any other benediction would be repetition itself. May you, therefore, obtain a son befitting your excellences as your sire obtained in you an adorable son !

35. Having thus pronounced a blessing on the king, the Bráhma*n*a (*lit.* the first born) returned to his preceptor's side. The king too soon after obtained a son from him (through the potency of his blessing) as the world of the living receives light from the sun.

36. At a time presided over by Brahmá, his queen, they say gave birth to a son who very nearly resembled *Kumára*; so the father made that child of his *Aja* after the name of Brahmá himself.

---

34. B. C. E. I. K. L. R. with Hem., Val., Dharm., Vija., and Vijay., ईड्यः for ईड्यं. Sumativijaya reads भवांस्तत्वमीड्यं for भवन्तमीड्यं.

35. D. with Vija., चैतन्यं, so also noticed by Mallinátha who says:—" चैतन्यं " इति पाठं जानमिव, Vijay.'s text only प्रकाशं for आलोकं.

36. E. L. with Su., मुखुवे for सुषुवे. B. E. I. J. K. L. with Din., Vijay., Dharm., and Vija., अग्रजन्मानं, C. with Chá., Val., and Su.,

रूपं तदोजस्वि तदेव वीर्यं तदेव नैसर्गिकमुन्नतत्वम् ।
न कारणात्स्वाद्बिभिदे कुमारः प्रवर्तितो दीप इव प्रदीपात् ॥ ३७ ॥
उपात्तविद्यं विधिवद्गुरुभ्यस्तं यौवनोद्भेदविशेषकान्तम् ।
श्रीः साभिलाषापि गुरोरनुज्ञां धीरेव कन्या पितुराचकाङ्क्ष ॥ ३८ ॥

" ईषदसमाप्तौ—" इत्यादिना कल्पप्प्रत्ययः ॥ कुमारं पुत्रं सुषुवे ॥ " कुमारो बालके स्कंदे " इति विश्वः ॥ अतो ब्राह्ममुहूर्तोत्पन्नत्वात्पिता रघुर्ब्रह्मणो विधेरेव नाम्ना तमात्मजन्मानं पुत्रमजमजनामकं चकार ॥ " अजो हरौ हरे कामे विधौ छागे रघोः सुते " इति विश्वः ॥

३७ ॥ रूपमिति । ओजस्वि तेजस्वि बलिष्ठं वा ॥ " ओजस्तेजसि धातूनामवष्टम्भप्रकाशयोः । ओजो बले च दीप्तौ च " इति विश्वः ॥ रूपं वपुः ॥ " अथ रूपं नपुंसकम् । स्वभावाकृतिसौन्दर्यवपुषि श्लोकशब्दयोः " इति केशवः ॥ तदेव पैतृकमेव । वीर्यं शौर्यं तदेव । नैसर्गिकम् स्वाभाविकमुन्नतत्वं तदेव । तादृगेवेत्यर्थः ॥ कुमारो बालकः । प्रवर्तित उत्पादितो दीपः प्रदीपात्स्वोत्पादकदीपादिव । स्वात्स्वकीयात् ॥ " पूर्वादिभ्यो नवभ्यो वा " इति स्माद्भावो वैकल्पिकः ॥ कारणाज्जनकान्न बिभिदे भिन्नो नाभूत् ॥ सर्वात्मना तादृश एवाभूदित्यर्थः ॥

३८ ॥ उपात्तेति । गुरुभ्यो विधिवद्यथाशास्त्रमुपात्तविद्यं लब्धविद्यम् । यौवनस्योद्भेदादाविर्भावाद्धेतोर्विशेषेण कान्तं सौम्यं तमजं प्रति साभिलाषापि श्रीः । धीरा स्थिरोन्नतचित्ता ॥ " स्थिरा चित्तोन्नतिर्या तु तद्धैर्यमिति संज्ञितम् " इति भूपालः ॥ कन्या पितुरिव । गुरोरघोरनुज्ञामाचकाङ्क्षेयेष । यौवराज्यार्होऽभूदित्यर्थः ॥ अनुज्ञाशब्दात्पितृपारतन्त्र्यमुपमासामर्थ्यात्पाणिग्रहणयोग्यता च ध्वन्यते ॥

---

37. His majestic figure the same, just the same his strength (valour), self-same too his natural tallness ; the child did not differ, from his generating cause (his father) as the light does not differ from the lamp from which it springs.

38. Royalty though deeply in love with the Prince who had received education in a due course from his tutors, and who (now) appeared more handsome by reason of his budding youth, did but wait for (*lit.* wished for) her master's consent like a discreet daughter waiting for that of her father.

अग्रजन्मानं, R. उग्रजन्मानं for आत्मजन्मानं. Hemâdri also notices अग्रजन्मानं; one of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण, No. 161 of 1882-83 Deccan College also reads अग्रजन्मानं.

37. H. K. R. with Châ., and the text only of Vijay., तथैव, for तदेव.

38. H. विशेषरम्यं for विशेषकान्तं. C. E. H. I. L. P. R. with Hem. Val., Su., Dharm., Vija., and the text only of Vijay., गंतुकामा, D. with Châ., and Din., कामयाना for साभिलाषा. Also noticed by Hemâdri; one of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुहितैषिणी, No. 45 of 1872-73 D. C. also agrees with Hemâdri and others.

अथेश्वरेण क्रथकैशिकानां स्वयंवरार्थं स्वसुरिन्दुमत्याः ।
आप्तः कुमारानयनोत्सुकेन भोजेन दूतो रघवे विसृष्टः ॥ ३९ ॥
तं श्लाघ्यसंबन्धमसौ विचिन्त्य दारक्रियायोग्यदशं च पुत्रम् ।
प्रस्थापयामास ससैन्यमेनमृद्धां विदर्भाधिपराजधानीम् ॥ ४० ॥
तस्योपकार्यारचितोपचारा वन्येतरा जानपदोपदाभिः ।
मार्गे निवासा मनुजेन्द्रसूनोर्बभूवुरुद्यानविहारकल्पाः ॥ ४१ ॥

३९ ॥ अथेति । अथ स्वसुर्भगिन्या इन्दुमत्याः स्वयंवरार्थं कुमारस्याजस्यानयन उत्सुकेन क्रथकैशिकानां विदर्भदेशानामीश्वरेण स्वामिना भोजेन राज्ञाप्तो हितो दूतो रघवे विसृष्टः प्रेषितः ॥ क्रियामात्रयोगेऽपि चतुर्थी ॥

४० ॥ तमिति । असौ रघुस्तं भोजं श्लाघ्यसंबन्धमनूचानत्वादिगुणयोगात्स्पृहणीयसम्बन्धं विचिन्त्य विचार्य पुत्रं च दारक्रियायोग्यदशं विवाहयोग्यवयसं विचिन्त्य ससैन्यमेनं पुत्रमृद्धां समृद्धां विदर्भाधिपस्य भोजस्य राजधानीं पुरीं प्रति प्रस्थापयामास ॥ धीयतेऽस्यामिति धानी ॥ "करणाधिकरणयोश्च" इत्यधिकरणे ल्युट्प्रत्ययः ॥ राज्ञां धानीति विग्रहः ॥

४१ ॥ तस्येति । उपकार्यासु राजयोग्येषु पटभवनादिषु ॥ "सौधोऽस्त्रीराजसदनमुपकार्योपकारिका" इत्यमरवचनव्याख्याने क्षीरस्वामी ॥ उपक्रियत उपकरोति च पटमण्डपादि राजसदनमिति ॥ रचिता उपचाराः शयनाद्यो येषु ते तथोक्ताः । जानपदानां जनपदेभ्य आगतानामुपदाभिरुपायनैः । वन्या वने भवा इतरे येषां ते वन्येतराः । अवन्या इत्यर्थः ॥ "न बहुव्रीहौ" इति सर्वनामसंज्ञानिषेधः । तत्पुरुषे सर्वनामसंज्ञा दुर्वारैव ॥ तस्य मनुजेन्द्रसूनोरजस्य मार्गे नि-

39. Soon after this Bhoja, the king of the country of the Krathakaisikas, being anxiously desirous of fetching the prince Aja, for the ceremony of self-electing-marriage of his sister Indumati, sent a faithful messenger to Raghu.

40. Thinking him to be one with whom an alliance was covetable and considering his son in a proper state of marrying a wife, he sent him with an escort to the flourishing metropolis of the king of the country of the Vidarbhas.

41. The prince's halts on the way, during which comforts of all kinds were provided in tents of royal state and which by the help of the presents made by the villagers appeared the reverse of sylvan, resembled rambles in a pleasure garden.

39. C. with Chà., and Din., क्रथकौशिकानां, D. कृथकौशिकानां, K. कृथकैशकानां, R. with Hem., Val., and Vijay., क्रथकैशकानां, for क्रथकैशिकानां.

41. D. with Val., रचितोपकाराः for रचितोपचाराः. A. with Su., कीर्णान्तरा, D. with Dharm., and Vija., वन्येतरा for वन्येतरा. Also noticed by Hemàdri. C. D. with Su., निवेशाः for निवासाः.

स नर्मदारोधसि सीकरार्द्रैर्मरुद्भिरानर्तितनक्तमाले ।
निवेशयामास विलङ्घिताध्वा क्लान्तं रजोधूसरकेतु सैन्यम् ॥ ४२ ॥
अथोपरिष्टाद्भ्रमरैर्भ्रमद्भिः प्राक्सूचितान्तःसलिलप्रवेशः ।
निर्धौतदानामलगण्डभित्तिर्वन्यः सरित्तो गज उन्ममज्ज ॥ ४३ ॥
निःशेषविक्षालितधातुनापि वप्रक्रियामृक्षवतस्तटेषु ।
नीलोर्ध्वरेखाशबलेन शंसन्दन्तद्वयेनाश्मविकुण्ठितेन ॥ ४४ ॥

वासा वासनिका उद्यानान्याक्रीडाः ॥ "पुमानाक्रीड उद्यानम्" इत्यमरः ॥ तान्येव विहारा विहारस्थानानि तत्कल्पाः । तत्सदृशा इत्यर्थः ॥ "ईषदसमाप्तौ—" इति कल्पप्प्रत्ययः ॥ बभूवुः ॥

४२ ॥ स इति । विलङ्घिताध्वातिक्रान्तमार्गः सोऽजः सीकरार्द्रैः शीतलैरित्यर्थः । मरुद्भिर्वातैरानर्तिताः कम्पितानक्तमालाश्चिरबिल्वाख्यवृक्षभेदाः ॥ "चिरबिल्वो नक्तमालः करजश्च करञ्जके" इत्यमरः ॥ यस्मिंस्तस्मिन् । निवेशार्हे इत्यर्थः । नर्मदाया रोधसि रेवायास्तीरे क्लान्तं श्रान्तं रजोभिर्धूसराः केतवो ध्वजा यस्य तत्सैन्यं निवेशयामास ॥

४३ ॥ अथेति । अथोपरिष्टादूर्ध्वम् ॥ "उपर्युपरिष्टात्" इति निपातः ॥ भ्रमद्भिः । मदलोभादिति भावः । भ्रमरैः प्रागुन्मज्जनात्पूर्वं सूचितो ज्ञापितोऽन्तःसलिले प्रवेशो यस्य स तथोक्तः । निर्धौत दाने क्षालितमदे अत एवामले गण्डभित्ती यस्य स तथोक्तः ॥ "दानं गजमदे त्यागे" इति शाश्वतः ॥ वन्यो गजः सरित्तो नर्मदायाः सकाशात् ॥ पञ्चम्यास्तसिल्प्रत्ययः ॥ उन्ममज्जोत्थितः ॥

४४ ॥ निःशेषेति । कथंभूतो गजः । निःशेषविक्षालितधातुनापि धौतगैरिका-

---

42. After having travelled some way he encamped his army which was fatigued and which had its banners soiled with dust, on the banks of the Narmadá where the Naktamála trees were made to dance (*i. e.* to shake) by the breezes moist with drops of water.

43. Just then emerged from that river a wild elephant whose plunging in (*lit.* entrance into) the water had been indicated before by the bees that were hovering above the watery surface and whose ample temples were rendered clean on account of the ichor having been washed off.

44. Indicating his playful butting against the sides of the

---

42. E. नक्तमालैः for नक्तमाले. D. with Su., and Dharm., सैन्यं श्रमोत्फेनवनायुजाश्वं for the last Páda. L. with Chá., क्रान्तं for क्लान्तं. Sumativijaya also notices the reading of our text.

43. A. I. K. with Chá., Din., Vijay., and Vija., निर्धूतदानामलगण्डभित्तिः, C. E. L. R. with Val., निर्धूतदानामलगल्लभित्तिः, D. with Su., and Dharm., निर्धूतदानामलगण्डलेखः for निर्धौतदानामलगण्डभित्तिः. Hemádri notices the reading of Vallabha.

44. D. R. with Chá., and Dharm., ऋष्यवतः for ऋक्षवतः. E. with

संहारविक्षेपलघुक्रियेण हस्तेन तीराभिमुखः सशब्दम् ।
बभौ स भिन्दन्बृहतस्तरंगान्वार्यर्गलाभङ्ग इव प्रवृत्तः ॥ ४५ ॥

दिनापि । नीलाभिरूर्ध्वाभी रेखाभिस्तटाभिघातजनिताभिः शबलेन कर्बुरेण ॥ "चित्रं किर्मीरकल्माषशबलैताश्च कर्बुरे" इत्यमरः ॥ अश्मभिः पाषाणैर्विकुण्ठितेन कुण्ठीकृतेन दन्तद्वयेन । ऋक्षवान्नाम कश्चित्तत्रत्यः पर्वतः । तस्य तटेषु वप्रक्रियां वप्रक्रीडाम् । उत्खातकेलिमित्यर्थः ॥ "उत्खातकेलिः शृङ्गाद्यैर्वप्रक्रीडा निगद्यते" इति शब्दार्णवः ॥ शंसन्कथयन् । सूचयन्नित्यर्थः ॥ युग्मम् ॥

४५ ॥ संहारेति । संहारविक्षेपयोः संकोचनप्रसारणयोर्लघुक्रियेण क्षिप्रव्यापारेण ॥ "लघु क्षिप्रतरं द्रुतम्" इत्यमरः ॥ हस्तेन शुण्डादण्डेन ॥ "हस्तो नक्षत्रभेदे स्यात्करेभकरयोरपि" इति विश्वः ॥ सशब्दं सघोषं बृहतस्तरगान्भिन्दन्विदारयंस्तीराभिमुखः स गजः । वारी गजबन्धनस्थानम् ॥ "वारी तु गजबन्धनी" इति यादवः ॥ वार्या अर्गलाया विष्कम्भस्य भङ्गे भञ्जने प्रवृत्त इव बभौ ॥

---

*R*ikshavat mountain by means of his two tusks which though completely cleansed of all mineral dust still appeared spotted with blue lines on them and which appeared to be impeded (*i. e.* blunted) by stones.

45. And splitting with (loud) noise the large billow by means of his trunk, expert in drawing-in and protrusion, the elephant that now faced the riverside appeared as though trying to break through some chains that tied him (Mallinàtha, as if breaking the bolts of his stable) .

Vijay., and the text only of Val., °रेषा° for °रेखा°. E. विकुंचितेन for विकुंटितेन.

45. C. D. with Su., सशब्दः for सशब्दम्. E. I. J. K. L. with Val., and Vijay., बृहतः, D. with Chá., Din., Su., and Dharm., सहसा for बृहतः. Between 45-46 B. with Dharm., read :—" स भोगिभोगाधिकपीवरेण संवेष्टितार्धप्रसृतेन दीर्घान् । प्रतिक्षिपंस्तीरमुखः सशब्दं हस्तेन वारीपरिघानिवोर्मीन्" ॥ L. R. with Hem., Chà., Din., and Val., read :—" स भोगिभोगाधिकपीवरेण हस्तेन तीराभिमुखः सशब्दम् । संवर्धितार्धप्रहितेन दीर्घान् चिक्षेप वारीपरिघानिवोर्मीन्" ॥

{ R. and Chà., संवेष्टितार्धप्रसृतेन, B. संवेष्टितार्धप्रहरेण, Hem., संवेष्टितार्धप्रयुतेन, L. संवर्धितार्धप्रहितेन. }
{ B. प्रतिक्षिपंस्तीरमुख·, Dharm., चिक्षेप तीराभिमुखः. }
{ B. ऊर्वीन्, L. R. Hem., Châ., Val., Din., Dharm., ऊर्मीन्. }
{ L. सभोगि°, [स भोगि. Val., स भोग°, Hem., Cha., Din., L. सशब्दः, Hem., Chà., Val., सशब्दं. }

L. R. with Hem., Chà., Din., Val., and Dharm., consider this as पाठान्तरं. Hemàdri and Vallabha do not comment upon this verse.

शैलोपमः शैवलमञ्जरीणां जालानि कर्षन्नुरसा स पश्चात् ।
पूर्वं तदुत्पीडितवारिराशिः सरित्प्रवाहस्तटमुत्ससर्प ॥ ४६ ॥
तस्यैकनागस्य कपोलभित्त्योर्जलावगाहक्षणमात्रशान्ता ।
वन्येतरानेकपदर्शनेन पुनर्दिदीपे मददुर्दिनश्रीः ॥ ४७ ॥

४६ ॥ शैलेति । शैलोपमः स गजः शैवलमञ्जरीणां जालानि वृन्दान्युरसा कर्षन्पश्चात्तटमुत्ससर्प । पूर्वं तेन गजेनोत्पीडितो नुन्नो वारिराशिर्यस्य स सरित्प्रवाहस्तटमुत्ससर्प ॥

४७ ॥ तस्येति । तस्यैकनागस्यैकाकिनो गजस्य कपोलभित्त्योर्जलावगाहेन क्षणमात्रं शान्ता निवृत्ता मददुर्दिनश्रीर्मदवर्षलक्ष्मीर्वन्येतराणां ग्राम्याणामनेकपानां द्विपानां दर्शनेन पुनर्दिदीपे ववृधे ॥

---

46. That mountain-like elephant drawing with him by his bosom the clusters of mass reached the bank afterwards, but the current of the river, volume of waters of which was propelled by him, rushed up to the bank before.

47. The splendour of the stream of ichor-juice flowing from the solitary elephant's spacious temples, that was stopped for a while by his plunging into the water, again began to flow profusely at the sight of other than sylvan elephants.

---

46. B. C. E. H. I. J. K. L. P. R. with Chà., Din., Val., Su., Vijay., and Dharm., तरसा for उरसा. Hemàdri also notices this reading. C. with Val., °वल्लरीणां for °मंजरीणां. But Vallabha's text agrees with that of Mallinàtha. Between 46-47. D. H. L. R. with Hem., Chà., Val., Su., Vija., Vijay., and Dharm., read :—" कारण्डवोत्सृष्टमृदुप्रवालाः पुलिन्दयोषाम्बुविहारकाञ्चीः । कर्षन्स सेवाललता नदीष्णः प्रौहावलग्नास्तटमुत्ससर्प " ॥

D. Su., °प्रवालाः,
H. °प्रतान्ताः,
R. L. Hem., Châ., Val., and Vijay., प्रतानाः.
{ L. R. Hem., Su., सेवाल°,
D. H. Val., Châ., शैवाल°. }
H. Hem., Vijay., प्रौहाव°,
R. Châ., प्रोहाव°,
L. Su , प्रवाह°,
D. Val., स्कन्धाव°.

L. R. Hem., °उत्सृष्ट°,
H. °उपात्त°,
D. Chà., Su., and Vijay., °उच्छिष्ट°.
{ L. Val., Chà., Su., and Vijay., नदीष्णः,
D. H. नदीष्टः,
R. नदीनां. }
D. Su., ससर्ज, L. R. Hem., Châ., Val., and Vijay., ससर्प.

Three Mss. and almost all commentators consider this as a पाठान्तरं.

47. B. C. E. I. K. L. R. with Chà., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., द्रवाव° for जलाव°. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Chàritravardhana and others.

सप्तच्छदक्षीरकटुप्रवाहमसह्यमाघ्राय मदं तदीयम् ।
विलङ्घिताधोरणतीव्रयत्नाः सेनागजेन्द्रा विमुखा बभूवुः ॥ ४८ ॥
स च्छिन्नबन्धद्रुतयुग्यशून्यं भग्नाक्षपर्यस्तरथं क्षणेन ।
रामापरित्राणविहस्तयोधं सेनानिवेशं तुमुलं चकार ॥ ४९ ॥
तमापतन्तं नृपतेरवध्यो वन्यः करीति श्रुतवान्कुमारः ।
निवर्तयिष्यन्विशिखेन कुम्भे जघान नात्यायतकृष्टशार्ङ्गः ॥ ५० ॥

४८ ॥ सप्तच्छदेति । सप्तच्छदस्य वृक्षविशेषस्य क्षीरवत्कटुः सुरभिः प्रवाहः प्रसारो यस्य तम् ॥ " कटुतिक्तकषायास्तु सौरभ्येऽपि प्रकीर्तिताः " इति यादवः॥ असह्यं तदीयं मदमाघ्राय सेनागजेन्द्राः । विलङ्घितस्तिरस्कृत आधोरणानां हस्तिपकानां तीव्रो महान्यत्नो यैस्ते तथोक्ताः सन्तः ॥ " आधोरणा हस्तिपका हस्त्यारोहा निषादिनः " इत्यमरः ॥ विमुखाः पराङ्मुखा बभूवुः ॥

४९ ॥ स इति । स गजः । छिन्ना बन्धा यैस्ते छिन्नबन्धा द्रुताः पलायिताः । युगं वहन्तीति युग्या वाहा यस्मिन्सः । स चासौ शून्यश्च तम् । भग्ना अक्षा रथावयवदारुविशेषाः ॥ " अक्षो रथस्यावयवे पाशकेऽप्यक्षमिन्द्रियम् " इति शाश्वतः ॥ येषां ते भग्नाक्षा अत एव पर्यस्ताः पतिता रथा यस्मिंस्तम् । रामाणां स्त्रीणां परित्राणे संरक्षणे विहस्ता व्याकुलाः ॥ " विहस्तव्याकुलौसमौ " इत्यमरः ॥ योधा यस्मिंस्तं सेनानिवेशं शिबिरं क्षणेन तुमुलं संकुलं चकार ॥

५० ॥ तमिति । नृपते राज्ञो वन्यः करयवध्य इति श्रुतवाञ्छास्त्राज्ज्ञातवान्कुमार आपतन्तमभिधावन्तं तं गजं निवर्तयिष्यन्न तु प्रहरिष्यन् । अत एव नात्या-

---

48. On smelling his unbearable ichor the flow whereof was as ill-smelling as the milk-juice of the Saptachchhada tree, the huge elephants in the army defying the strenuous efforts of their drivers turned away their faces.

49. The animal in a moment threw the whole camp into confusion which became empty of the chariot-horses which broke through their reins and took to flight, in which the chariots were overturned with their axles broken and in which the warriors were unable to protect their wives.

50. The prince who knew (from the *S*âstras) that a king should not kill a sylvan elephant, drawing his bow not very forcibly,

---

48. B. C. E. H. I. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., Vijay., and Vija., विमुखी° for विमुखाः. C. D. with Chá., तीक्ष्ण° for तीव्र°.

49. A. L. with Dharm., चपलं, D. with Hem., शिथिलं, E. I. K. R. with Val., and Vijay., तुमलं for तुमुलं.

50. D. E. H. L. R. with Hem., Chà., Val., Din., and Su., विशिषेण for विशिखेन. B. C. E. I. K. L. P. R. with Hem., Su., Val., and Vijay., °कृष्टचापः for °कृष्टशार्ङ्गः.

स विद्धमात्रः किल नागरूपमुत्सृज्य तद्विस्मितसैन्यदृष्टः।
स्फुरत्प्रभामण्डलमध्यवर्ति कान्तं वपुर्व्योमचरं प्रपेदे ॥ ५१ ॥
अथ प्रभावोपनतैः कुमारं कल्पद्रुमोत्थैरवकीर्य पुष्पैः।
उवाच वाग्मी दशनप्रभाभिः संवर्धितोरःस्थलतारहारः ॥ ५२ ॥
मतङ्गशापादवलेपमूलादवाप्तवानस्मि मतङ्गजत्वम्।
अवेहि गन्धर्वपतेस्तनूजं प्रियंवदं मां प्रियदर्शनस्य ॥ ५३ ॥

यतमनतिदीर्घम्॥ नञर्थस्य नशब्दस्य सुप्सुपेति समासः॥ कृष्टशार्ङ्ग ईषदाकृष्टचापः सन्निवृशिखेन बाणेन कुम्भे जघान ॥ अत्र चाक्षुषः—" लक्ष्मीकामो युद्धादन्यत्र करिवधं न कुर्यात्। इयं हि श्रीर्ये करिणः " इति ॥ अत एव " युद्धादन्यत्र " इति द्योतनार्थमेव वन्यग्रहणं कृतम् ॥

५१ ॥ स इति। स गजो विद्धमात्रस्ताडितमात्रः किल । न तु प्रहृतस्तथापि नागरूपं गजशरीरमुत्सृज्य तेन वृत्तान्तेन विस्मितैस्तद्विस्मितैः सैन्यैर्दृष्टः सन्। स्फुरतः प्रभामण्डलस्य मध्यवर्ति कान्तं मनोहरं व्योमचरं वपुः प्रपेदे प्राप ॥

५२ ॥ अथेति। अथ प्रभावेनोपनतैः प्राप्तैः कल्पद्रुमोत्थैः कल्पवृक्षोत्पन्नैः पुष्पैः कुमारमजमवकीर्याभिवृष्य दशनप्रभाभिर्दन्तकान्तिभिः संवर्धिता उरःस्थले ये तारहाराः स्थूलमुक्ताहारास्ते येन स तथोक्तः। वाचोऽस्य सन्तीति वाग्मी वक्ता ॥ " वाचो ग्मिनिः " इति ग्मिनिप्रत्ययः॥ स पुरुष उवाच ॥

५३ ॥ मतङ्गेति। अवलेपमूलाद्गर्वहेतुकात् ॥ " अवलेपस्तु गर्वे स्याल्लेपने द्वेष

shot an arrow at his frontal globe while trying to turn back the animal that was about to make a furious rush.

51. It is reported that the moment the animal had been wounded by the shot of an arrow it gave up the form of an elephant and assumed a beautiful heavenly form standing in the midst of a flashing circle of radiance, being looked at by the soldiers who wondered at the curious incident.

52. Then having showered on the prince the flowers of (*lit.* produced from) Kalpadruma (celestial trees) which were brought to him by his supernatural power, the eloquent one, whose garland of big pearls pendant on his bosom was brightened by the light of his teeth, addressed the following to the prince.

53. " Through the curse of the sage Matanga incurred by my own insolence I was reduced to this state of an elephant.

---

51. A. C. D. with Châ., and Din., रम्यं for कान्तं.

52. E. has वाङ्मी for वाग्मी. A. D. R. with Dharm., °चारुहारः for °तारहारः.

53. R. with Hem., and Su., अवैहि for अवेहि. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha.

स चानुनीतः प्रणतेन पश्चान्मया महर्षिर्मृदुतामगच्छत् ।
उष्णत्वमग्न्यातपसंप्रयोगाच्छैत्यं हि यत्सा प्रकृतिर्जलस्य ॥ ५४ ॥
इक्ष्वाकुवंशप्रभवो यदा ते भेत्स्यत्यजः कुम्भमयोमुखेन ।
संयोक्ष्यसे स्वेन वपुर्महिम्ना तदेत्यवोचत्स तपोनिधिर्माम् ॥ ५५ ॥
संमोचितः सत्त्ववता त्वयाहं शापाच्चिरप्रार्थितदर्शनेन ।
प्रतिप्रियं चेद्भवतो न कुर्यां वृथा हि मे स्यात्स्वपदोपलब्धिः ॥ ५६ ॥

णेऽपि च " इति विश्वः ॥ मतङ्गस्य मुनेः शापान्मतङ्गजत्वमवाप्तवानस्मि ॥ मां प्रियदर्शनस्य प्रियदर्शनाख्यस्य गन्धर्वपतेर्गन्धर्वराजस्य तनूजं पुत्रं प्रियंवदं प्रियंवदाख्यमवेहि जानीहि । प्रियं वदतीति प्रियंवदः ॥ " प्रियवशे वदः खच् " इति खच्प्रत्ययः ॥

५४ ॥ स इति । स महर्षिश्च प्रणतेन मयानुनीतः सन्पश्चान्मृदुतां शान्तिमगच्छत् ॥ तथा हि । जलस्योष्णत्वमग्नेरातपस्य वा संप्रयोगात्संपर्कात् । न तु प्रकृत्योष्णत्वम् । यच्छैत्यं सा प्रकृतिः स्वभावः ॥ विधेयप्राधान्यात्सेति स्त्रीलिङ्गनिर्देशः॥ महर्षीणां शान्तिरेव स्वभावो न क्रोध इत्यर्थः ॥

५५ ॥ इक्ष्वाक्विति । इक्ष्वाकुवंशः प्रभवो यस्य सोऽजो यदा ते कुम्भमयोमुखेन लोहाग्रेण शरेण भेत्स्यति विदारयिष्यति तदा स्वेन वपुषो महिम्ना पुनः संयोक्ष्यसे सङ्गंस्यस इति स तपोनिधिर्मामवोचत् ॥

५६ ॥ संमोचित इति । चिरं प्रार्थितं दर्शनं यस्य तेन सत्त्ववता बलवता त्वयाहं शापात्संमोचितो मोक्षं प्रापितः । भवतः प्रतिप्रियं प्रत्युपकारं न कुर्यां चेन्मे स्वपदोपलब्धिः स्वस्थानप्राप्तिः ॥ " पदं व्यवसितत्राणस्थानलक्ष्माङ्घ्रिवस्तुषु " इत्यमरः ॥ वृथा स्याद्धि ॥

Know me, therefore, to be Priyamvada, son of Priyadarsana the king of the demi-gods."

54. "But the great sage, being propitiated by me prostrate, gradually got to leniency (took compassion on me); because the heat of water is owing to the application of fire or heat, what is coolness is but the nature of water."

55. Then that repository of asceticism spoke thus to me, "when Aja sprung from the family of Ikashváku will pierce your frontal globe by his iron-pointed arrow, then you shall unite your body with that of your splendour."

56. "I have been relieved from my curse by you of great might

---

54. C. D. and the text only of Val., नाम for यत्सा.

55. L. संयोज्यसे for संयोक्ष्यसे.

56. C. D. L. R. with Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vijay., म मोचितः for संमोचितः. Vallabha's text, but not his commentary, reads प्रतिक्रियं for प्रतिप्रियं. D. and the text only of Vijay., यत् for चेत्.

संमोहनं नाम सखे ममास्त्रं प्रयोगसंहारविभक्तमन्त्रम् ।
गान्धर्वमादत्स्व यतः प्रयोक्तुर्न चारिहिंसा विजयश्च हस्ते ॥ ५७ ॥
अलं ह्रिया मां प्रति यन्मुहूर्तं दयापरोऽभूः प्रहरन्नपि त्वम् ।
तस्मादुपच्छन्दयति प्रयोज्यं मयि त्वया न प्रतिषेधरौक्ष्यम् ॥ ५८ ॥
तथेत्युपस्पृश्य पयः पवित्रं सोमोद्भवायाः सरितो नृसोमः ।
उदङ्मुखः सोऽस्त्रविदस्त्रमन्त्रं जग्राह तस्मान्निगृहीतशापात् ॥ ५९ ॥

५७ ॥ संमोहनमिति । हे सखे प्रयोगसंहारयोर्विभक्तमन्त्रं गान्धर्वं गंधर्वदेवताकम् । संमोह्यतेऽनेनेति संमोहनं नाम ममास्त्रमादत्स्व गृहाण । यतोऽस्त्रात्प्रयोक्तुरस्त्रप्रयोगिणोऽरिहिंसा न च विजयश्च हस्ते ॥ हस्तगतो विजयो भवतीत्यर्थः॥

९८ ॥ वधलज्जितः कथमस्त्रग्रहणपरः स्यामिति चेत्तत्राह ॥ अलमिति । किंच । मां प्रति ह्रिया प्रहारनिमित्तयालम् । कुतः । यद्यतो हेतोस्त्वं मां प्रहरन्नपि मुहूर्तं दयापरः कृपालुरभूः । तस्मादुपच्छन्दयति प्रार्थयमाने मयि त्वया । प्रतिषेधः परिहारः । स एव रौक्ष्यं पारुष्यम् । तन्न प्रयोज्यं न कर्तव्यम् ॥

९९ ॥ तथेति । ना सोमश्चन्द्र इव नृसोमः॥उपमितसमासः॥ "सोम ओषधिचन्द्रयोः" इति शाश्वतः ॥ पुरुषश्रेष्ठ इत्यर्थः । अस्त्रविदस्त्रज्ञः सोऽजस्तथेति सोम उ-

---

whose sight had long been prayed for by me. If I do not confer on you any good in return, the restoration to my present position is all to no purpose."

57. "Therefore my friend, accept this missile of mine by name *Sammohana* which may be discharged and drawn back by different incantations and whose presiding god is a certain Gandharva and by virtue of which victory is within the reach of the shooter without destroying his enemy."

58. "Do not be ashamed, for though striking me for a moment you have proved very kind to me. Therefore do not use the harshness of a refusal towards me who am beseeching you.

59. 'So be it,' with these words, the moon-like hero who was versed in the use of weapons, sipped the hallowing water of

---

57. I. प्रयोक्त° for प्रयोग . D. J. R. with Val., आधत्स्व for आदत्स्व. Vallabha's text with us. D. L. प्रहर्तुः for प्रयोक्तुः. Also noticed by Hemádri. B. C. K. with Su., स्वहस्ते for च हस्ते. B. H. P. R. read :—"गान्धर्वमस्त्रं तदितः प्रतीच्छ प्रयोगसंहारविभक्तमंत्रं । प्रस्वापनं नाम यतः प्रहर्तुर्न चारिहिंसा विजयः स्वहस्ते" between 57-58. [R. प्रतीष्य for प्रतीच्छ. P. R. च हस्ते for स्वहस्ते] And all of them call it क्षेपक.

58. C. D. I. K. R. with Châ., Din., Su., Vijay., and the tex only of Vallabha, रूक्षम् for रौक्ष्यम्.

59. R. with Su., and Vija., शस्त्रविद् for अस्त्रविद्. Also noticed by Hemádri, who says :—'गान्धर्वास्त्रादितरास्त्रविद्'. D. विगृहीतशापा for

एवं तयोरध्वनि दैवयोगादासेदुषोः सख्यमचिन्त्यहेतु ।
एको ययौ चैत्ररथप्रदेशान्सौराज्यरम्यानपरो विदर्भान् ॥ ६० ॥
तं तस्थिवांसं नगरोपकण्ठे तदागमारूढगुरुप्रहर्षः ।
प्रत्युज्जगाम क्रथकैशिकेन्द्रश्चन्द्रं प्रवृद्धोर्मिरिवोर्मिमाली ॥ ६१ ॥

द्भवो यस्याः सा तस्याः सोमोद्भवायाः सरितो नर्मदायाः ॥ " रेवा तु नर्मदा सोमोद्भवा मेखलकन्यका " इत्यमरः ॥ पवित्रं पय उपस्पृश्य पीत्वा । आचम्येत्यर्थः ॥ उदङ्मुखः सन्निगृहीतशापान्निवर्तितशापात् । उपकृतादित्यर्थः । तस्मात्प्रियंवदादस्त्रमन्त्रं जग्राह ॥

६० ॥ एवमिति । एवमध्वनि मार्गे दैवयोगाद्दैववशादचिन्त्यहेत्वनिर्धार्यहेतुकं सख्यं सखित्वम् ॥ " सख्युर्यः " इति यप्रत्ययः ॥ आसेदुषोः प्राप्तवतोस्तयोर्मध्य एको गन्धर्वश्चैत्ररथस्य कुबेरोद्यानस्य प्रदेशान् ॥ " अस्योद्यानं चैत्ररथम् " इत्यमरः ॥ अपरोऽजः सौराज्येन राजन्वत्तया रम्यान्विदर्भान्विदर्भदेशान्ययौ ॥

६१ ॥ तमिति । नगरस्योपकण्ठे समीपे तस्थिवांसं स्थितं तमजं तस्याजस्यागमेनागमनेनारूढ उत्पन्नो गुरुः प्रहर्षो यस्य स क्रथकैशिकेन्द्रो विदर्भराजः । प्रवृद्धोर्मिरूर्मिमाली समुद्रश्चन्द्रमिव । प्रत्युज्जगाम ॥

---

the river sprung from the moon, with his face turned to the north and then accepted the Mantra of the missile from him with his curse averted (terminated).

60. Thus of them two contracting accidentally on the way a friendship (originating) from an unknown cause, one repaired to the regions of Chitraratha and the other to the kingdom of Vidarbha, smiling (delightful) in the possession of a good king.

61. The lord of the Krathakais'ikas, transported with great joy at his arrival, went forth to receive him who had encamped in the outskirts of the city, as the ocean rising with swelling waves does the moon.

निगृहीतशापात्. Also noticed by Hemádri, Chàritravardhana and Dinakara where Hemadri says:—' विगृहीतशास्तीति पाठे विशेषेण विद्यादिना गृहीतं शास्तीति । यद्वा विगृहीतान्विरुद्धान् शास्तीति. ' Chàritravardhana says:– ' विशेषेण गुरोः सकाशाद्गृहीतविद्यादि शास्ति रक्षतीति स तथा '.

60. B. C. L. R. with texts only of Val., and Su., आसेदुखोः for आसेदुषोः. L. with the text of Vijay., अचिन्त्यहेतुं, H. J. R. अचिन्त्यहेतुः for अचिन्त्यहेतु. R. with Su., चैत्ररथान्प्रदेशान् for चैत्ररथप्रदेशान्. Sumativijaya's text with us.

61. R. with Hem., and the text of Vijay., क्रथकेशकेन्द्रः, C. with Chà., क्रथकौशिकेन्द्रः, D. with Val., क्रथकेशकेन्द्रः for क्रथकैशिकेन्द्रः.

प्रवेश्य चैनं पुरमग्रयायी नीचैस्तथोपाचरदर्पितश्रीः ।
मेने यथा तत्र जनः समेतो वैदर्भमागन्तुमजं गृहेशम् ॥ ६२ ॥
तस्याधिकारपुरुषैः प्रणतैः प्रदिष्टां प्राग्द्वारवेदिविनिवेशितपूर्णकुम्भाम् ।
रम्यां रघुप्रतिनिधिः स नवोपकार्यां बाल्यात्परामिव दशां मदनोऽध्युवास॥६३॥
तत्र स्वयंवरसमाहृतराजलोकं कन्याललाम कमनीयमजस्य लिप्सोः ।
भावावबोधकलुषा दयितेव रात्रौ निद्रा चिरेण नयनाभिमुखी बभूव ॥ ६४ ॥

६२ ॥ प्रवेश्येति । एनमजमग्रयायी । सेवाधर्मेण पुरो गच्छन्नित्यर्थः । नीचैर्नम्रः पुरं प्रवेश्य प्रवेशं कारयित्वा प्रीत्यार्पितश्रीस्तथा तेन प्रकारेणोपाचरदुपचरितवान् । यथा येन प्रकारेण तत्र पुरे समेतो मिलितो जनो वैदर्भं भोजमागन्तुं प्राघूर्णिकं मेने । अजं गृहेशं गृहपतिं मेने ॥

६३ ॥ तस्येति । रघुप्रतिनिधी रघुकल्पः ॥ रघुतुल्य इत्यर्थः ॥ उक्तं च दण्डिना सादृश्यवाचकप्रस्तावे—" कल्पदेशीयदेश्यादि प्रख्यप्रतिनिधी अपि " इति॥ सोऽजः प्रणतैर्नमस्कृतवद्भिः ॥ कर्तरि क्तः ॥ तस्य भोजस्याधिकारो नियोगस्तस्य पुरुषैः । अधिकृतैरित्यर्थः । प्रदिष्टां निर्दिष्टां प्राग्द्वारस्य वेद्यां विनिवेशितः प्रतिष्ठापितः पूर्णकुम्भो यस्यास्ताम् । स्थापितमङ्गलकलशामित्यर्थः । रम्यां रमणीयां नवोपकार्यां नूतनं राजभवनम् ॥ " उपकार्या राजसद्मन्युपचारचितेऽन्यवत् " इति विश्वः ॥ मदनो बाल्यात्परां शैशवादनन्तरां दशामिव । यौवनमिवेत्यर्थः । अध्युवासाधिष्ठितवान् । तत्रोषितवानित्यर्थः ॥ "उपान्वध्याङ्वसः" इति कर्मत्वम् ॥

६४ ॥ तत्रेति । तत्रोपकार्यायाम् । स्वयंवरनिमित्तं समाहृतः संमेलितो राज-

62. And having made him enter the city, he who led the way and by whom the prince was invested with royal splendour, bowing down humbly waited upon him in such a manner that the people assembled there thought the king of the Vidarbhas to be the guest and Aja the real lord of the palace.

63. He, the representative of Rughu, occupied, as Madana does the state (age) next to boyhood, a delectable new pavilion in the porch of the front door of which were placed pitchers full of water and into which he was shown by the officers (of Bhoja) who were attentive to give proper salutes.

64. There, at night, Sleep, like a loved-companion doubtful

62. D. R. पौरजनः for तत्र जनः. A. L. with Dharm., and Vija., समस्तः, D. with Châ., Din., Su., and Vijay., समग्रः for समेतः.

63. B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., Vija., and the text of Vijay., अधिकारो° for अधिकार°. Sumativijaya's text with us. B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., Vijay., and Vija., °हेमकुंभां for °पूर्णकुंभां.

64. R. °कलुखा for °कलुषा. C. D. with Châ., वनितेव for दयितेव.

तं कर्णभूषणनिपीडितपीवरांसं शय्योत्तरच्छदविमर्दकृशाङ्गरागम् ।
सूतात्मजाः सवयसः प्रथितप्रबोधं प्राबोधयन्नुषसि वाग्भिरुदारवाचः ॥ ६५ ॥
रात्रिर्गता मतिमतां वर मुञ्च शय्यां धात्रा द्विधैव ननु धूर्जगतो विभक्ता ।
तामेकतस्तव बिभर्ति गुरुर्विनिद्रस्तस्या भवानपरधुर्यपदावलम्बी ॥ ६६ ॥

लोको येन तत्कमनीयं स्पृहणीयं कन्याललाम कन्यासु श्रेष्ठम् ॥ " ललामोऽस्त्री ललामापि प्रभावे पुरुषे ध्वजे । श्रेष्ठभूषापुण्ड्रशृङ्गपुच्छचिह्नाश्वलिङ्गिषु " इति यादवः ॥ लिप्सोर्लब्धुमिच्छोः ॥ लभेः सन्नन्ताद्रुप्रत्ययः ॥ अजस्य भावावबोधे पुरुषस्याभिप्रायपरिज्ञाने कलुषासमर्था इयितेव । रात्रौ निद्रा चिरेण नयनाभिमुखी बभूव ॥ "राजानं कामिनं चोरं प्रविशन्ति प्रजागराः" इति भावः ॥ अभिमुखीशब्दो ङीषन्तश्च्यन्तो वा ॥

६५ ॥ तमिति । कर्णभूषणाभ्यां निपीडितौ पीवरौ पीनावंसौ यस्य तम् । शय्याया उत्तरच्छदस्योपर्यास्तरणवस्त्रस्य विमर्देन घर्षणेन कृशो विमलोऽङ्गरागो यस्य तम् । न त्वङ्गनासङ्गादिति भावः । प्रथितप्रबोधं प्रकृष्टज्ञानं तमेनमजं सवयसः समानवयस्का उदारवाचः प्रगल्भगिरः सूतात्मजा वन्दिपुत्राः । वाग्भिः स्तुतिपाठैरुषसि प्राबोधयन्प्रबोधयामासुः ॥

६६ ॥ रात्रिरिति । हे मतिमतां वर ॥ निर्धारणे षष्ठी ॥ रात्रिर्गता । शय्यां मुञ्च । विनिद्रो भवेत्यर्थः । विनिद्रत्वफलमाह—धात्रेति । धात्रा ब्रह्मणा जगतो धूर्भारः ॥

(uncertain) in the interpretation of mental attitude (mood), came, after a long while, to be bound for (to be standing in the way of) the eye of him, longing to win that covetable jewel among maidens, by whom an assemblage of princes had been brought together for her self-electing marriage.

65. At dawn the sons of bards, of the same age and of fluent speech awakened, with verses, him, who was of celebrated talents whose ample shoulders were pressed against his ear-rings and the scented unguent on whose body was almost removed on account of his rolling on the surface-sheets of his bed.

66. ' The night is spent (over), O thou foremost among the intelligent, quit thy bed. Into two portions (between too) only,

---

65. R. with Su., °हृतांगरागं for °कृशांगरागं. B. C. वैतालिकाः for सूतात्मजाः, also observed by Mallinâtha, who says :—' वैतालिकाः ' इति वा पाठः । " वैतालिकाः बोधकराः " इत्यमरः ॥ D_2. प्रतिबोधहेतोः for प्रथितप्रबोधं, also noticed by Hemádri. D. वैतालिकाः स्फुटपदप्रकटार्थबन्धं. Also noticed by Hemâdri. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Vijay., Dharm., and Vija., वैतालिका ललितबन्धमनोहराभिः for सूतात्मजाः सवयसः प्रथितप्रबोधं. P. also notices this. C. with Vijay., उदारवाचं for उदारवाचः.

66. B. C. E. H. I. K. L. P. with Chá., Din., Su., Dharm.,

निद्रावशेन भवताप्यनवेक्षमाणा पर्युत्सुकत्वमबला निशि खण्डितेव।
लक्ष्मीर्विनोदयति येन दिगन्तलम्बी सोऽपि त्वदाननरुचिं विजहाति चन्द्रः॥६७॥

" धूः स्याद्यानमुखे भारे " इति यादवः॥ द्विधैव। द्वयोरेवेत्यर्थः। एवकारस्त्रितीयनिषेधार्थः। विभक्ता ननु विभज्य स्थापिता खलु॥ तत्किमत आह—तां धुरमेकत एककोटौ तव गुरुः पिता विनिद्रः सन्बिभर्ति। तस्या धुरो भवान्॥ धुरं वहतीति धुर्यो भारवाही॥ तस्य पदं वहनस्थानम्। अपरं यद्धुर्यपदं तदवलम्बी। ततो विनिद्रो भवेत्यर्थः॥ न ह्युभयवाह्यमेको वहतीति भावः॥

६७॥ निद्रेति। चन्द्रारविन्दराजवदनादयो लक्ष्मीनिवासस्थानानीति प्रसिद्धिमाश्रित्योच्यते। निद्रावशेन निद्राधीनेन। रत्यन्तरासङ्गोऽत्र ध्वन्यते। भवता पर्युत्सुकत्वमपि। त्वय्यनुरक्तत्वमपीत्यर्थः॥ " प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया च " इति सप्तम्यर्थे तृतीया॥ अपिशब्दस्तद्विषयानुरागस्यानपेक्ष्यत्वद्योतनार्थः॥ निशि खण्डिता भर्तुरन्यासङ्गज्ञानकलुषिताबलेव नायिकेव॥ " ज्ञातेऽन्यासङ्गविकृते खण्डितेर्ष्या कषायिता " इति दशरूपके॥ अनवेक्षमाणाविचारयन्ती सती। उपेक्षमाणेत्यर्थः। लक्ष्मीर्येन चन्द्रेण सह। त्वदाननसदृशत्वादिति भावः। विनोदयति विनोदं करोति॥ विनोदशब्दात् " तत्करोति

mark thou, has the burden of the world been divided by the Creator. Thy father sustains it, sleepless, at one end, and thou art the holder of the position of its other supporter.'

67. 'The moon, in whom Lakshmí, disregarding, like a jealous woman at night, her very yearning after thee (that art) under the sway of Sleep, finds solace—he too, sliding down to the (western) horizon (furthest limit of space), parts with the beauty of thy face.

Vijay., and the text only of Val., यां for तां. D. with Chá., and Din., वितन्द्रः for विनिद्रः. Hemádri notices the reading.

67. I. षण्डिता for खण्डिता. A. J. with Din., अप्यनपेक्षमाणा, P. अप्यनपेक्ष्यमाणा, also noticed by Hemádri, D_2. with Hem., Chá., and Vija., अप्यनवेक्ष्यमाणा, A_2. with Dharm., ह्यनपेक्ष्यमाणा, E. I. with Vijay., ह्यनवेक्षमाणा, B. C. H. K. L. R. with Val., and Su., ह्यनवेक्ष्यमाणा for अप्यनवेक्षमाणा. Hemádri notices the reading. Mallinátha also comments upon the reading " अनवेक्ष्यमाणा " and says :—अथ वा। निद्रावशेन भवतानवेक्ष्यमाणानिरीक्ष्यमाणा॥ कर्मणि शानच्॥ लक्ष्मीः। प्रयोजककर्त्री। येन। प्रयोज्येन चन्द्रेण पर्युत्सुकत्वं त्वद्विरहवेदनाम्॥ " कालाक्षमत्वमौत्सुक्यं मनस्तापज्वरादिकृत् " इत्यलंकारे॥ विनोदयति निरासयतीति योजना। शेषं पूर्ववत्॥ नाथस्त्वर्थोपपत्तिमपश्यन्निमं पक्षमुपेक्षिष्ट॥ Between 67-68. D. with Su., read :—" निद्रावशं त्वयि गतं शशिना कथंचिदात्मानमाननरुचा भवतो वियुज्य। लक्ष्मीर्विभातसमयेऽपि हि दर्शनेन पर्युत्सुका प्रणयिनि निशि खण्डितेव "॥

{D. °रुचा, / Su., °रुचिः.} {D. वियुज्य, / Su., विनीय.} {D. विहि, / Su., °प्रिय°.} {D. प्रणयिनी, / Su., प्रणयनी.}

तद्वल्गुना युगपदुन्मिषितेन तावत्सद्यः परस्परतुलामधिरोहतां द्वे ।
प्रस्पन्दमानपरुषेतरतारमन्तश्चक्षुस्तव प्रचलितभ्रमरं च पद्मम् ॥ ६८ ॥
वृन्ताच्छ्लथं हरति पुष्पमनोकहानां संसृज्यते सरसिजैररुणांशुभिन्नैः ।
स्वाभाविकं परगुणेन विभातवायुः सौरभ्यमीप्सुरिव ते मुखमारुतस्य ॥ ६९ ॥

तदाचष्टे " इति णिच्प्रत्ययः॥ सादृश्यदर्शनाद्यो हि विरहिणां विनोदस्थानानीति भावः । स चन्द्रोऽपि दिगन्तलम्बी पश्चिमाशां गतः सन् । अस्तं गच्छन्नित्यर्थः ॥ अत एव त्वदाननरुचिं त्वन्मुखसादृश्यं विजहाति । त्यजतीत्यर्थः । अतो निद्रां विहाय तां लक्ष्मीमनन्यशरणां परिगृहाणेत्यर्थः ॥

६८ ॥ तदिति । तत्तस्माल्लक्ष्मीपरिग्रहणाद्वल्गुना मनोज्ञेन ॥ " वल्गुस्थाने मनोज्ञे च वल्गु भाषितमन्यवत् " इति विश्वः ॥ युगपत्तावदुन्मिषितेन युगपदेवोन्मीलनेन सद्यो द्वे अपि परस्परतुलामन्योन्यसादृश्यमधिरोहतां प्राप्नुताम् ॥ " प्रार्थनायां लोट् " ॥ द्वे के । अन्तः प्रस्पन्दमाना चलन्ती परुषेतरा स्निग्धा तारा कनीनिका यस्य तत्तथोक्तम् ॥ " तारकाक्ष्णः कनीनिका " इत्यमरः ॥ तव चक्षुः । अन्तः प्रचलितभ्रमरं चलद्भृङ्गं पद्मं च । युगपदुन्मिषिते सति संपूर्णसादृश्यलाभ इति भावः ॥

६९ ॥ वृन्तादिति । विभातवायुः प्रभातवायुः स्वाभाविकं नैसर्गिकं ते तव मुखमारुतस्य निःश्वासपवनस्य सौरभ्यम् । तादृक्सौगन्ध्यमित्यर्थः । परगुणेनान्यदीयगुणेन । सांक्रामिकगन्धेनेत्यर्थः । ईप्सुराप्तुमिच्छुरिव ॥ "आप्ज्ञप्यृधामीत्" इतीकारादेशः ॥ अनोकहानां वृक्षाणां श्लथं शिथिलं पुष्पं वृन्तात्प्रसवबन्धनात् ॥ " वृन्तं प्रसवबन्धनम् " इत्यमरः ॥ हरत्यादत्ते । अरुणांशुभिन्नैस्तरणिकिरणोद्बोधितैः सरसि

---

68. ' Let therefore the two obtain at once mutual similitude by their sweet simultaneous opening—the two, namely, your eye with the pupil, far from rough, rolling about within, and the lotus with a black bee moving inside. '

69. ' The morning breeze wishing to secure as it were, through another's property the sweet smell that is natural to the breath of thy mouth, takes away from the foot-stalk the loose flowers of the trees, and unites itself with the lotuses full blown by the rays of Aru*n*a. '

---

68. L. उन्मिखितेन for उन्मिषितेन.

69. B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., वृन्तश्लथं for वृन्ताच्छ्लथं. D. E. I. J. R. with Hem., Val., Vijay., and Vija., अनोकुहानां for अनोकहानां. D. with Chá., and Din., संयुज्यते for संसृज्यते. E. अरुणांकभिन्नैः for अरुणांशुभिन्नैः. E. शुभातवायुः for विभातवायुः. Between 69–70 D. with Su., read:—" मन्दं विवाति हिमसंभृतशीतभावः । संसृज्यते सरसिजैररुणांशुभिन्नैः । सौरभ्यमीप्सुरिव ते मुखमारुतस्य । यन्नो गुणान्प्रति निशापरिणामवायुः " ॥ The latter half of this stanza is also noticed by Hemádri, who reads आप्तुं for ईप्सुः.

ताम्रोदरेषु पतितं तरुपल्लवेषु निर्धौतहारगुलिकाविशदं हिमाम्भः ।
आभाति लब्धपरभागतयाधरोष्ठे लीलास्मितं सदशनार्चिरिव त्वदीयम् ॥७०॥
यावत्प्रतापनिधिराक्रमते न भानुरह्नाय तावदरुणेन तमो निरस्तम् ।
आयोधनाग्रसरतां त्वयि वीर याते किं वा रिपूंस्तव गुरुः स्वयमुच्छिनत्ति ॥७१॥

जातैः सरसिजैः कमलैः सह ॥ " तत्पुरुषे कृति बहुलम् " इति सप्तम्या अलुक् ॥ संसृज्यते सङ्गच्छते ॥ सृजेर्दैवादिकात्कर्तरि लट् ॥

७० ॥ ताम्रेति । ताम्रोदरेष्वरुणाभ्यन्तरेषु । तरुपल्लवेषु पतितं निर्धौता या हारगुलिका मुक्तामणयस्तद्वद्विशदं हिमाम्भो लब्धपरभागतया लब्धोत्कर्षतया ॥ "परभागो गुणोत्कर्षे " इति यादवः ॥ अधरोष्ठे त्वदीयं सदशनार्चिर्दन्तकान्तिसहितं लीलास्मितमिवाभाति शोभते ॥

७१ ॥ यावदिति । प्रतापनिधिस्तेजोनिधिर्भानुर्यावन्नाक्रमते नोद्गच्छति ॥ " आङ उद्गमने " इत्यात्मनेपदम् ॥ तावत् । भानावनुदित एवेत्यर्थः । अह्नाय झटिति ॥ " द्राग्झटित्यञ्जसाह्नाय " इत्यमरः ॥ अरुणेनानूरुणा ॥ " सूर्यसूतोऽरुणोऽनूरुः " इत्यमरः ॥ तमो निरस्तम् ॥ तथा हि । हे वीर त्वय्यायोधनेषु युद्धेष्वग्रसरतां पुरःसरतां याते सति । तव गुरुः पिता रिपून्स्वयमुच्छिनत्ति किं वा ॥ नोच्छिनत्त्येवेत्यर्थः ॥ न खलु योग्यपुत्रन्यस्तभाराणां स्वामिनां स्वयं व्यापारखेद इति भावः ॥

---

70. 'The dew-drops that are fallen on the sprouts of trees, whose interior is red, white as the bright pearls of a garland, look like thy playful smile, brightened by the splendour of thy teeth, shines brightened in its excellence on account of its falling on thy lower lip.'

71. 'While the sun, the receptacle of intense splendour, does not yet (is yet to) rise, darkness has in the meanwhile been dispelled in haste by Aruṇa ; thou, O hero, having taken the lead among warriors, why, then, does thy sire extirpate his enemies himself ?'

---

70. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Val., Su., Dharm., Vijay., and Vija., द्रुम°, E. नग° for तरु°. Dinakara with us. D. निर्धूतहारगुटिका°, C. with Châ., निर्धौतहारगुटिका, I. K. with Hem , Val., Su., Dharm., Vija., and the text only of Vijay., निर्धूतहारगुलिका for निर्धौतहारगुलिका. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण with us. E. P. त्वदीयं for त्वदीयं, and construe it with °अधरोष्ठे. R. with Vijay., read:—"संलक्ष्यते दशनचन्द्रिकयानुविद्धं विम्बाधरलब्धपरभागमिव स्मितं ते," for the second Pâda; also observed by Vallabha. Vijay., calls the second Pâda of our stanza as पाठान्तरं.

शय्यां जहत्युभयपक्षविनीतनिद्राः स्तम्बेरमा मुखरशृङ्खलकर्षिणस्ते ।
येषां विभान्ति तरुणारुणरागयोगाद्भिन्नाद्रिगैरिकतटा इव दन्तकोशाः ॥७२॥
दीर्घेष्वमी नियमिताः पटमण्डपेषु निद्रां विहाय वनजाक्ष वनायुदेश्याः ।
वक्त्रोष्मणा मलिनयन्ति पुरोगतानि लेह्यानि सैन्धवशिलाशकलानि वाहाः॥७३

७२ ॥ शय्यामिति । उभाभ्यां पक्षाभ्यां पार्श्वाभ्यां विनीतापनीता निद्रा येषां त उभयपक्षविनीतनिद्राः ॥ अत्र समासविषय उभशब्दस्थान उभयशब्दप्रयोग एव साधुरित्यनुसंधेयम् ॥ यथाह कैयटः—" उभादुदात्तो नित्यं " इति नित्यग्रहणस्येदं प्रयोजनं वृत्तिविषय उभशब्दस्य प्रयोगो मा भूत् ॥ उभयशब्दस्यैव यथा स्यात् ॥ उभयपुत्र इत्यादि भवति " इति ॥ मुखराण्युत्थानचलनाच्छब्दायमानानि शृङ्खलानि निगडानि कर्षन्तीति तथोक्तास्ते तव स्तम्बे रमन्त इति स्तम्बेरमा हस्तिनः॥ " स्तम्बकर्णयो रमिजपोः " इत्यच्प्रत्ययः ॥ " हस्तिसूचकयोः " इति वक्तव्यात् ॥ " इभः स्तम्बेरमः पद्मी " इत्यमरः ॥ " तत्पुरुषे कृति बहुलम् " इति सप्तम्या अलुक् ॥ शय्यां जहति त्यजन्ति । येषां स्तम्बेरमाणाम् । दन्ताः कोशा इव दन्तकोशाः । दन्तकुड्मलास्तरुणारुणरागयोगाद्बालार्कारुणसंपर्काद्धेतोर्भिन्नाद्रिगैरिकतटा इव विभान्ति । धातुरक्ता इव भान्तीत्यर्थः ॥

७३ ॥ दीर्घेष्विति । हे वजनाक्ष नीरजाक्ष ॥ " वनं नीरं वनं सत्वम् " इति शाश्वतः ॥ दीर्घेषु पटमण्डपेषु नियमिता बद्धा वनायुदेश्या वनायुदेशे भवाः ॥ " पारसीका वानायुजाः " इति हलायुधः ॥ अमी वाहा अश्वा निद्रां विहाय पुरोगतानि लेह्यान्यास्वाद्यानि सैन्धवशिलाशकलानि ॥ " सैन्धवोऽस्त्री सितशिवं माणिमन्थं च सिन्धुजे " इत्यमरः ॥ वक्त्रोष्मणा मलिनयन्ति मलिनानि कुर्वन्ति ॥ उक्तं च सिद्धयोगसंग्रहे—" पूर्वाह्णकाले चाश्वानां प्रायशो लवणं हितम् । शूलानाहविबन्धघ्नं लवणं सैन्धवं वरम् " इत्यादि ॥

---

72. 'Thy elephants, with their slumbers shaken off on either side and dragging their chanking clains, quit their beds,—the elephants whose budlike-tusks look as if they had broken asunder the red mineral-sides of a mountain, on account of their having come in contact with the red-coloured light of the young sun.'

73. 'These chariot-horses of the country of the Vanāyus which are tied in the stables made of the extensive tents, have given up their sleep, and are soiling, O lotus-eyed one, with the vapour of their mouths (with their warm breath) the pieces of rock-salt, put before them to lick.'

---

72. D. with Su., सेनागजाः for स्तम्बेरमाः. D. with Dharm., °कान्तियोगात् for °रागयोगात्.

73. I. R. with Val., वनजाक्ष वनायदेश्याः, A. with Su., वनजाक्ष वनायुजास्ते, D. H. with Dharm., वनजेक्षण वाह्लिदेश्याः for वनजाक्ष वनायुदेश्याः. Vijayānandasūricharaṇasevaka notices the reading of Sumativijaya and the A. Ms.

भवति विरलभक्तिर्म्लानपुष्पोपहारः स्वकिरणपरिवेषोद्भेदशून्याः प्रदीपाः।
अयमपि च गिरं नस्त्वत्प्रबोधप्रयुक्तामनुवदति शुकस्ते मञ्जुवाक्पञ्जरस्थः॥७४॥
इति विरचितवाग्भिर्बन्दिपुत्रैः कुमारः सपदि विगतनिद्रस्तल्पमुज्झांचकार।
मदपटुनिनदद्भिर्बोधितो राजहंसैः सुरगज इव गाङ्गं सैकतं सुप्रतीकः॥ ७५ ॥

७४॥ भवतीति। म्लानः पुष्पोपहारः पुष्पपूजा म्लानत्वादेव विरलभक्तिर्विरलरचनो भवति। प्रदीपाश्च स्वकिरणानां परिवेषस्य मण्डलस्योद्भेदेन स्फुरणेन शून्या भवन्ति। निस्तेजस्का भवन्तीत्यर्थः। अपि चायं मञ्जुवाङ्मधुरवचनः पञ्जरस्थस्ते तव शुकस्त्वत्प्रबोधे निमित्ते प्रयुक्तामुच्चारितां नोऽस्माकं गिरं वाणीमनुवदति। अनुकृत्य वदतीत्यर्थः॥ इत्थं प्रभातलिङ्गानि वर्तन्ते। अतः प्रबोद्धव्यमिति भावः॥

७५॥ इतीति। इतीत्थं विरचितवाग्भिर्बन्दिपुत्रैर्वैतालिकैः॥ पुत्रग्रहणं समानवयस्कत्वद्योतनार्थम्॥ सपदि विगतनिद्रः कुमारः॥ तल्पं शय्याम्॥ "तल्पं शय्याट्टदारेषु" इत्यमरः॥ उज्झांचकार विससर्ज॥ "इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः" इत्याम्प्रत्ययः॥ कथमिव। मदेन पटु मधुरं निनदद्भी राजहंसैर्बोधितः सुप्रतीकाख्यः॥ सुरगज ईशानदिग्गजः। गङ्गाया इदं गाङ्गम्। सैकतं पुलिनमिव॥ "तोयोत्थितं तत्पुलिनं सैकतं सिकतामयम्" इत्यमरः॥ "सिकताशर्कराभ्यां च" इत्यण्प्रत्ययः॥ सुप्रतीकग्रहणं प्राशयः कैलासवासिनस्तस्य नित्यं गङ्गातटविहारसंभवादित्यनुसंधेयम्॥

---

74. 'The withered offering of flowers is getting loose-textured and the lamps devoid of the diffusion of their own circle of rays; this sweet-voiced parrot too of thine, resting in his cage, is mimicking (imitating) our words addressed for thy awakening.'

75. His sleep dispelled by the sons of bards (minstrels), with songs (or ditties) composed as above (in this strain), the prince forthwith quitted his couch, just as Supratika, an elephant of the gods roused by swans, warbling sweetly for joy, does the sandy beach of the Gangá.

---

74. H. °हारः for °हारः. E. सकिरण° for स्वकिरण.

75. A. E. K. R. with Din., विहित, one of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण and Vallabha also read this, B. with Dharm., गलित°, D. I. L. with Chá., विहत°, D_2. विहत for विगत. Also noticed by Sumativijaya. One of the three Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी also reads this. Between 75-76 D_2. with Chá., and Din., read:—"इति स विहतनिद्रस्तल्पमल्पेतरांसः सुरगज इव गंगासैकतं सुप्रतीकः। परिजनवनितानां पादयोर्न्यस्तानां वलयमणिविदिष्टं प्रच्छदान्तं मुमोच"॥

अथ विधिमवसाय्य शास्त्रदृष्टं दिवसमुखोचितमञ्चिताक्षिपक्ष्मा ।
कुशलविरचितानुकूलवेषः क्षितिपसमाजमगात्स्वयंवरस्थम् ॥ ७६ ॥
॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कालिदासकृतावजस्वयंवराभिगमनो नाम पञ्चमः सर्गः समाप्तः ॥

७६ ॥ अथेति । अथोत्थानानन्तरमञ्चितानि रुचिराण्यक्षिपक्ष्माणि यस्य सोऽजः शास्त्रे दृष्टमवगतं दिवसमुखोचितं प्रातःकालोचितं विधिमनुष्ठानमवसाय्य समाप्य ॥ स्यतेर्ण्यन्ताल्ल्यप् ॥ कुशलैः प्रसाधनदक्षैर्विरचितोऽनुकूलः स्वयंवरोचितो वेषो नेपथ्यं यस्य स तथोक्तः सन्स्वयंवरस्थं क्षितिपसमाजं राजसमूहमगादगमत् ॥ "इणो गा लुङि" इति गादेशः ॥ पुष्पिताग्रावृत्तमेतत् ॥ तल्लक्षणम्–"अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा" इति ॥
॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमल्लिनाथसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां पञ्चमः सर्गः ॥

---

76. At length, finishing the rites, meet for the dawn of day, as seen (enjoined) in S'ástras, he, of beautiful eye-lashes, put on a suitable attire with the help of his skilful adepts, and repaired to the assembly of the princes, seated in the hall of the self-electing marriage.

---

76. B. C. E. H. I. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Vijay., Dharm., and Vija., °अनुरूपवेषः, D. K., °अनुरूपवेशः for अनुकूलवेषः, D. अञ्जित° for अञ्चित°. Hemádri and Chàritravardhana notice the reading.

। षष्ठः सर्गः ।

स तत्र मञ्चेषु मनोज्ञवेषान्सिंहासनस्थानुपचारवत्सु ।
वैमानिकानां मरुतामपश्यदाकृष्टलीलान्नरलोकपालान् ॥ १ ॥
रतेर्गृहीतानुनयेन कामं प्रत्यर्पितस्वाङ्गमिवेश्वरेण ।
काकुत्स्थमालोकयतां नृपाणां मनो बभूवेन्दुमतीनिराशम् ॥ २ ॥

जान्हवी मूर्ध्नि पादे वा कालः कण्ठे वपुष्यथ ।
कामारिं कामतातं वा कंचिदेकं भजामहे ॥

१ ॥ स इति । सोऽजस्तत्र स्थाने उपचारवत्सु राजोपकरणवत्सु मञ्चेषु पर्यङ्केषु सिंहासनस्थान्मनोज्ञवेषान्मनोहरनेपथ्यान्वैमानिकानां विमानैश्चरताम् ॥ " चरति " इति ठक्प्रत्ययः ॥ मरुताममराणाम् ॥ " मरुतौ पवनामरौ " इत्यमरः ॥ आकृष्टलीलानात्तसौभाग्यान् । आकृष्टमरुल्लीलानित्यर्थः ॥ सापेक्षत्वेऽपि गमकत्वात्समासः ॥ नरलोकं पालयन्तीति नरलोकपालाः ॥ कर्मण्यण्प्रत्ययः ॥ तान्भूपालानपश्यत् ॥ सर्गेऽस्मिन्नुपजातिश्छन्दः ॥

२ ॥ रतेरिति । " रतिः स्मरप्रियायां च रागे च सुरते स्मृता " इति विश्वः ॥ रतेः । कामप्रियाया गृहीतानुनयेन स्वीकृतप्रार्थनेन । गृहीतरत्यनुनयेनेत्यर्थः ॥ सापेक्षत्वेऽपि गमकत्वात्समासः ॥ ईश्वरेण हरेण प्रत्यर्पितस्वाङ्गकाममिव स्थितं काकुत्स्थमजमालोकयतां नृपाणां मन इन्दुमतीनिराशं वैदर्भीनिःस्पृहं बभूव ॥ इन्दुमती सत्पतिमेनं विहाय नास्मान्वरिष्यतीति निश्चिक्युरित्यर्थः ॥ सर्वातिशयसौन्दर्यमस्येति भावः ॥

---

1. The prince Aja saw there the rulers of the human world of agreeable attire, seated on thrones over decorated dais, and exhibited the charms of the gods who wandered about in balloons.

2. The minds of the princes looking at *Kākutstha* who resembled the god of love himself, his body restored to him by *S*iva, who had, as it were, accepted the importunities of Rati, became hopeless of (obtaining) the princess Indumati.

---

1. E. K. read मनोज्ञवेशान् for मनोज्ञवेषान् ; and correctly. D. with Chā., read:—" स तत्र मञ्चेषु विमानकल्पेष्वाकल्पसंमूर्छितकल्पशोभान् । सिंहासनस्थानुपर्तानपश्यत् नृपान् प्रशस्तानिव हैमवेदान् " ॥ And omit the first verse of our text. H. with Su., and Vijay., read it between the 1-2 of our text and call it पाठान्तरं. [D. ददर्श for अपश्यत्. D. हैमवेदाः for हैमवेदान्.]

वैदर्भनिर्दिष्टमसौ कुमारः क्लृप्तेन सोपानपथेन मञ्चम् ।
शिलाविभङ्गैर्मृगराजशावस्तुङ्गं नगोत्सङ्गमिवारुरोह ॥ ३ ॥
परार्ध्यवर्णास्तरणोपपन्नमासेदिवान्रत्नवदासनं सः ।
भूयिष्ठमासीदुपमेयकान्तिर्मयूरपृष्ठाश्रयिणा गुहेन ॥ ४ ॥
तासु श्रिया राजपरंपरासु प्रभाविशेषोदयदुर्निरीक्ष्यः ।
सहस्रधात्मा व्यरुचद्विभक्तः पयोमुचां पङ्क्तिषु विद्युतेव ॥ ५ ॥

३ ॥ वैदर्भेति । असौ कुमारो वैदर्भेण भोजेन निर्दिष्टं प्रदर्शितं मञ्चं पर्यङ्कं क्लृप्तेन सुविहितेन सोपानपथेन । मृगराजशावः सिंहपोतः ॥ " पोतः पाकोऽर्भको डिम्भः पृथुकः शावकः शिशुः " इत्यमरः ॥ शिलानां विभङ्गैर्भङ्गीभिस्तुङ्गमुन्नतं नगोत्सङ्गं शैलाग्रमिव । आरुरोह ॥

४ ॥ परार्ध्येति । परार्ध्याः श्रेष्ठा वर्णा नीलपीतादयो यस्य तेनास्तरणेन कम्बलादिनोपपन्नं सङ्गतं रत्नवद्रत्नखचितमासनं सिंहासनमासेदिवानधिष्ठितवान्सोऽजः । मयूरपृष्ठाश्रयिणा गुहेन सेनान्या सह ॥ " सेनानीरग्निभूर्गुहः " इत्यमरः ॥ भूयिष्ठमत्यर्थमुपमेयकान्तिरासीत् ॥ मयूरस्य चित्ररूपत्वात्तत्साम्यं रत्नासनस्य । तद्द्वारा तदारूढयोरपीति भावः ॥

५ ॥ तास्विति । तासु राजपरंपरासु श्रिया लक्ष्म्या ॥ कर्त्र्या ॥ पयोमुचां मेघानां पङ्क्तिषु विद्युतेव सहस्रधा विभक्तः । तरंगेषु तरणिरिव स्वयमेक एव प्रत्येकं संक्रामित इत्यर्थः । प्रभाविशेषस्योदयेनाविर्भावेन दुर्निरीक्ष्यो दुर्दर्शन आत्मा श्रियः स्वरूपं व्यरुचद्व्यद्योतिष्ट ॥ " द्युद्भ्यो लुङि " इति परस्मैपदम् ॥ द्युतादित्वादङ्प्रत्ययः ॥ तस्मिन्समये प्रत्येकं संक्रान्तलक्ष्मीकतया तेषां किमपि दुरासदं तेजः प्रादुरासीदित्यर्थः ॥

---

3. That youthful prince mounted by means of a well-constructed stair to the dais pointed out to him by the king of the Vidarbhas; just as a young cub of the lord of beasts (lion) mounts upon a lofty peak of a mountain by passing through fractures of the rock.

4. Seated on the throne of jewels furnished with costly carpets of excellent colours, he looked mostly comparable in beauty with *Guha* riding on the peacock's back.

5. In those rows of princes, there appeared Lakshmî's own self hard to be looked at because of the appearance of peculiar effulgence; as the self of lightning appears to be divided by itself in thousand parts in the rows of clouds.

---

3. B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Vijay., Dharm., and Vija., असौ for असौ. Vijay.'s text with us.

5. D. with Châ., Din., Su., and Vija., सहस्रधामा, also noticed by Hemâdri and Vijay, who say:—" सहस्रधामा " इति पाठे पयोमुचां पंक्तिषु विद्युता सहस्रधामा अर्क इव, R. सहस्रधाम्ना for सहस्रधात्मा. Châritra vardhana also notices the reading of our text.

तेषां महार्हासनसंस्थितानामुदारनेपथ्यभृतां स मध्ये ।
रराज धाम्ना रघुसूनुरेव कल्पद्रुमाणामिव पारिजातः ॥ ६ ॥
नेत्रव्रजाः पौरजनस्य तस्मिन्विहाय सर्वान्नृपतीन्निपेतुः ।
मदोत्कटे रेचितपुष्पवृक्षा गन्धद्विपे वन्य इव द्विरेफाः ॥ ७ ॥
अथ स्तुते वन्दिभिरन्वयज्ञैः सोमार्कवंश्ये नरदेवलोके ।
संचारिते चागुरुसारयोनौ धूपे समुत्सर्पति वैजयन्तीः ॥ ८ ॥

६ ॥ तेषामिति । महार्हासनसंस्थितानां श्रेष्ठसिंहासनस्थानाम् । उदारनेपथ्यभृतामुज्ज्वलवेषधारिणां तेषां राज्ञां मध्ये । कल्पद्रुमाणां मध्ये पारिजात इव सुरद्रुमविशेष इव ॥ "पञ्चैते देवतरवो मन्दारः पारिजातकः । सन्तानः कल्पवृक्षश्च पुंसि वा हरिचन्दनम" इत्यमरः ॥ स रघुसूनुरेव धाम्ना तेजसा रराज ॥ अत्र कल्पद्रुमशब्दः पञ्चान्यतमविशेषवचनः । उपकल्पयन्ति मनोरथानिति व्युत्पत्त्या सुरद्रुममात्रोपलक्षकतया प्रयुक्त इत्यनुसंधेयम् ॥ कल्पा इति द्रुमाः कल्पद्रुमा इति विग्रहः ॥

७ ॥ नेत्रेति । पौरजनस्य नेत्रव्रजाः सर्वान्नृपतीन्विहाय तस्मिन्नजे निपेतुः । स एव सर्वोत्कर्षेण ददृश इत्यर्थः ॥ कथमिव । मदोत्कटे मदेनोद्भिन्नगण्डे निर्भरमदे वा वन्ये गन्धद्विपे गन्धप्रधाने द्विपे गजे । रेचिता रिक्तीकृताः पुष्पाणां वृक्षा यैस्ते । त्यक्तपुष्पवृक्षा इत्यर्थः । द्विरेफा भृङ्गा इव ॥ द्विपस्य वन्यविशेषणं द्विरेफाणां पुष्पवृक्षत्यागसंभावनार्थं कृतम् ।

८ ॥ अथेति । त्रिभिर्विशेषकमाह । अथान्वयज्ञै राजवंशाभिज्ञैर्वन्दिभिः स्तुतिपाठकैः ॥ "वन्दिनः स्तुतिपाठकाः" इत्यमरः ॥ सोमार्कवंश्ये सोमसूर्यवंशभवे

---

6. Among them seated on the most excellent thrones and dressed in the most noble attires the son of Raghu alone shone by his majestic glory, as does Pârijâta among the heavenly trees.

7. Leaving all (other) princes, the rows of the eyes of citizens fell (directly) on him ; as the bees clearing the flowery trees of themselves fall upon a wild scented elephant infuriated under the influence of ichor.

8. Then the assembly of princes sprung from the moon and the sun (of the lunar and solar lines) having been praised by

---

6. D. J. K. with Vijay., संश्रितानां for संस्थितानां. A. D. with Hem., भूम्ना for धाम्ना. Hemâdri notices the reading of our text. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण reads धाम्ना and notices भूम्ना through ignorance of the scribe. *Vide* comm. Mallinâtha also notices this and says:— 'भूम्ना' इति पाठे अतिशयेनेत्यर्थः.

8. A. D. E. G. H. K. P. R. with Vijay., चागरु for चागुरु. C. धूपे शिखायोतितकेतुमाले, also noticed by Hemâdri, A. with Din., धूमे शिखाभावितकेतुमाले, Hemâdri and Châritravardhana also notice this, D. धूपे शिखाभावितकेतुमाले, H. L. धूपे शिखावासितकेतुमाले for धूपे समुत्सर्पति वैजयन्तीः.

पुरोपकण्ठोपवनाश्रयाणां कलापिनामुद्धतनृत्यहेतौ ।
प्रध्मातशङ्खे परितो दिगन्तांस्तूर्यस्वने मूर्छति मङ्गलार्थे ॥ ९ ॥

मनुष्यवाह्यं चतुरस्रयानमध्यास्य कन्या परिवारशोभि ।
विवेशमञ्चान्तरराजमार्गं पतिंवरा क्लृप्तविवाहवेषा ॥ १० ॥

नरदेवलोके राजसमूहे स्तुते सति ॥ विवेशेत्युत्तरेण सम्बन्धः । एवमुत्तरत्रापि योज्यम् । संचारिते समन्तात्प्रसारिते । अगुरुसारो योनिः कारणं यस्य तस्मिन्धूपे च वैजयन्तीः पताकाः समुत्सर्पति सति । अतिक्रम्य गच्छति सति ॥

९ ॥ पुरोपकण्ठेति । किं च । पुरस्योपकण्ठे समीप उपवनान्याश्रयो येषां तेषां कलापिनां बर्हिणामुद्धतनृत्यहेतौ । मेघध्वनिसादृश्यात्ताण्डवकारणे । प्रध्माताः पूरिताः शङ्खा यत्र तस्मिन् । मङ्गलार्थे मङ्गलप्रयोजनके । तूर्यस्वने वाद्यघोषे परितः सर्वतो दिगन्तान्मूर्छति व्याप्नुवति सति ॥

१० ॥ मनुष्यवाह्यमिति । पतिं वृणोतीति पतिंवरा स्वयंवरा ॥ "अथ स्वयंवरा । पतिंवरा च वर्या च" इत्यमरः ॥ "संज्ञायां भृतॄवृजि--" इत्यादिना खच्प्रत्ययः ॥ क्लृप्तविवाहवेषा कन्येन्दुमती मनुष्यैर्वाह्यं परिवारेण परिजनेन शोभि चतुरस्रयानं चतुरस्रवाहनं । शिबिकामध्यास्यारुह्य । मञ्चान्तरे मञ्चमध्ये यो राजमार्गस्तं विवेश ॥

---

minstrels versed in the histories of their families and the fume of (burning) sandle wood of excellent quality spreading around and rising above the banners,—

9. All around, auspicious trumpet-sounds, having extended to the end of the cardinal points swelled by the blowing of the conch, the cause of the wild dance of the peacocks dwelling in the gardens on the skirts of the city,—

10. The maiden-princess, who was about to choose a husband and was, therefore, decked in wedding dress, took her seat in the palanquin borne by men and looking beautiful by the train of attendants and entered the royal road made between the rows of the dais.

---

9. D. I. L. °श्रितानां for °श्रयाणां. B. C. H. I. K. L. P. with Hem., Châ., Din., Val., and Vijay., शिखण्डिनां for कलापिनां. Vallabha's text, however, agrees with Mallinâtha. I. पुरतः for परितः.

10. B. C. R. with Vijay., चतुरन्तयानं, D. चतुरं च यानं, H. with Val., चतुरङ्गयानं for चतुरस्रयानं. A. B. H. कौतुकशुद्धवेषा for क्लृप्तविवाहवेषा.

तस्मिन्विधानातिशये विधातुः कन्यामये नेत्रशतैकलक्ष्ये ।
निपेतुरन्तःकरणैर्नरेन्द्रा देहैः स्थिताः केवलमासनेषु ॥ ११ ॥
तां प्रत्यभिव्यक्तमनोरथानां महीपतीनां प्रणयाग्रदूत्यः ।
प्रवालशोभा इव पादपानां शृङ्गारचेष्टा विविधा बभूवुः ॥ १२ ॥
कश्चित्कराभ्यामुपगूढनालमालोलपत्राभिहतद्विरेफम् ।
रजोभिरन्तःपरिवेषबन्धि लीलारविन्दं भ्रमयाश्चकार ॥ १३ ॥

११ ॥ तस्मिन्निति । नेत्रशतानामेकलक्ष्ये एकदृश्ये कन्यामये कन्यारूपे तस्मिन्विधातुर्विधानातिशये सृष्टिविशेषे नरेन्द्रा अन्तःकरणैर्निपेतुः । आसनेषु देहैः केवलं देहैरेव स्थिताः ॥ देहानपि विस्मृत्य तत्रैव दत्तचित्ता बभूवुरित्यर्थः ॥ अन्तःकरणकर्तृके निपतने नरेन्द्राणां कर्तृत्वव्यपदेश आदरातिशयार्थः ॥

१२ ॥ तामिति । तामिन्दुमतीं प्रति । अभिव्यक्तमनोरथानां प्ररूढाभिलाषाणां महीपतीनां राज्ञां प्रणयाग्रदूत्यः । प्रणयः प्रार्थना प्रेम वा ॥ " प्रणयास्त्वमी । विस्रम्भयाच्ञाप्रेमाणः " इत्यमरः ॥ प्रणयेष्वग्रदूत्यः प्रथमदूतिकाः ॥ प्रणयप्रकाशकत्वसाम्याद्दूतीत्वव्यपदेशः ॥ विविधाः शृङ्गारचेष्टाः शृङ्गारविकाराः पादपानां प्रवालशोभाः पल्लवसम्पद इव बभूवुरुत्पन्नाः ॥ अत्र शृङ्गारलक्षणं रससुधाकरे— " विभावैरनुभावैश्च स्वोचितैर्व्यभिचारिभिः ॥ नीतासदस्यरस्यत्वं रतिः शृङ्गार उच्यते " ॥ रतिरिच्छाविशेषः ॥ तच्चोक्तं तत्रैव—" यूनोरन्योन्यविषयस्थायिनीच्छा रतिः स्मृता " इति ॥ चेष्टाशब्देन तदनुभावविशेषा उच्यन्ते ॥ तेऽपि तत्रैवोक्ताः—" भावं मनोगतं साक्षात्स्वहेतुं व्यञ्जयन्ति ये । तेऽनुभावा इति ख्याता भ्रूविक्षेपस्मितादयः । ते चतुर्धा चित्तगात्रवाग्बुद्ध्यारम्भसंभवाः " इति ॥ तत्र गात्रारम्भसम्भवांश्चेष्टाशब्दोक्ताननुभावान् " कश्चित्—" इत्यादिभिः श्लोकैर्वक्ष्यति ॥ शृङ्गाराभासश्चायम् । एकत्रैव प्रतिपादनात् । तदुक्तम्-" एकत्रैवानुरागश्चेत्तिर्यक्म्लेच्छगतोऽपि वा । योषितांबहुसक्तिश्चेद्रसाभासस्त्रिधा मतः " इति ॥

१३ ॥ शृङ्गारचेष्टा बभूवुरित्युक्तम् । ता एव दर्शयति ॥ कश्चिदिति । कश्चिद्राजा कराभ्यां पाणिभ्यामुपगूढनालं गृहीतनालम् । आलोलैश्चञ्चलैः पत्त्रैरभिहतास्ता-

---

11. The kings fell as it were by means of their hearts in that creator's master-piece of creation of a maiden-princess, the sole mark of thousands of eyes; while they remained firm in their seats only by means of their bodies.

12. The love-gestures of various kinds that of course being the first confidants of true love, were seen among those kings who had betrayed their passion for her, like unto the beauty of young shoots among the trees.

13. A certain king began to turn round a pleasure-lotus, the

---

11. D. E. K. L. P. with Châ., Din., Su., and Vijay., नेत्रसहस्रलक्ष्ये for नेत्रशतैकलक्ष्ये. Vijay.'s text with us.

12. D. प्रवात° for प्रवाल°. Hemâdri notices the reading.

13. K. with Vija., °परिवेशबन्धि, A. E. G. H. L. P. R. with

विस्रस्तमंसादपरो विलासी रत्नानुविद्धाङ्गदकोटिलग्नम् ।
प्रालम्बमुत्कृष्य यथावकाशं निनाय साचीकृतचारुवक्त्रः ॥ १४ ॥
आकुञ्चिताग्राङ्गुलिना ततोऽन्यः किंचित्समावर्जितनेत्रशोभः ।
तिर्यग्विसंसर्पिनखप्रभेण पादेन हैमं विलिलेख पीठम् ॥ १५ ॥

डिता द्विरेफा भ्रमरा येन तत्तथोक्तम् । रजोभिः परागैरन्तःपरिवेषं मण्डलं बध्नातीत्यन्तःपरिवेषबन्धि । लीलारविन्दं भ्रमयांचकार ॥ करस्थलीलारविन्दवत्त्वयाहं भ्रमयितव्य इति नृपाभिप्रायः । हस्तघूर्णकोऽयमपलक्षणक इतीन्दुमत्यभिप्रायः ॥

१४ ॥ विस्रस्तमिति । विलसनशीलो विलासी ॥ "वौ कषलसकत्थस्रम्भः" इति घिनुण्प्रत्ययः ॥ अपरो राजांसाद्विस्रस्तं रत्नानुविद्धं रत्नखचितं यदङ्गदं केयूरं तस्य कोटिलग्नं प्रालम्बमृजुलम्बिनीं स्रजम् ॥ "प्रालम्बमृजुलम्बि स्यात्कण्ठात्" इत्यमरः ॥ उत्कृष्योद्धृत्य साचीकृतं तिर्यक्कृतं चारु वक्त्रं यस्य स तथोक्तः सन्यथावकाशं स्वस्थानं निनाय ॥ प्रावारोत्क्षेपणच्छलेनाहं त्वामेवं परिरप्स्य इति नृपाभिप्रायः । गोपनीयं किंचिदङ्गेऽस्ति ततोऽयं प्रावृणुत इतीन्दुमत्यभिप्रायः ॥

१५ ॥ आकुञ्चितेति । ततः पूर्वोक्तादन्यो राजा किंचित्समावर्जितनेत्रशोभ ईषदर्वाक्पातितनेत्रशोभः सन् । आकुञ्चिता आभुग्ना अग्राङ्गुलयो यस्य तेन तिर्यग्विसंसर्पिण्यो नखप्रभा यस्य तेन च पादेन हैमं हिरण्मयं पीठं पादपीठं

---

stem of which he held in his hands, which with its revolving petals warded off the bees and which formed a circle in its interior by means of pollens.

14. Another voluptuary, with his beautiful face obliquely turned aside, having taken up, set to its proper place, the garland that had slipped from his shoulder and which was stuck to the ends of the shoulder-ornaments which were set with jewels.

15. Then another king having his beautiful eyes a little cast

---

Vija., and the text only of Vijay., °परिवेषशोभि, Hemâdri notices this, D. with Dharm., °परिवारबन्धि for °परिवेषबन्धि.

14. A. C. D. H. L. केयूरकोटिक्षणजातसंगम्, P. रत्नानुबद्धांगदकोटिलग्नं for रत्नानुविद्धांगदकोटिलग्नम्. B. C. E. G. H. I. K. L. P. R. with Châ., Din., Val., Su., Vijay., and Vija., प्रावारं for प्रालम्बं. Also Mallinâtha notices this and says :—"प्रावारं" इति पाठे तूत्तरीयं वस्त्रं, so also noticed by Hemâdri. B. C. E. G. H. I. K. P. with Val., Din., Su., Vijay., and Vija., उत्क्षिप्य for उत्कृष्य. B. C. E. G. H. I. K. L. P. with Hem., Châ., Din., Val., Vija., and the text only of Vijay., यथाप्रदेशं for यथावकाशं.

15. B. C. I. नृपः. D. L. with Châ., तथा for ततः. L. आकुण्ठिता for आकुञ्चिता. B. C. E. I. K. P_2. R. with Hem., Val., Su., Vijay., and Vija., नेत्रशोभी for नेत्रशोभः. C. H. L. R. with Din., रत्नांशुसंसक्त°, D. with Châ., and Dharm., रत्नांशुसंसर्पि for तिर्यग्विसंसर्पि°.

निवेश्य वामं भुजमासनार्धे तत्संनिवेशादधिकोन्नतांसः।
कश्चिद्विवृत्तत्रिकभिन्नहारः सुहृत्समाभाषणतत्परोऽभूत् ॥ १६ ॥

विलासिनीविभ्रमदन्तपत्त्रमापाण्डुरं केतकबर्हमन्यः।
प्रियानितम्बोचितसंनिवेशैर्विपाटयामास युवा नखाग्रैः ॥ १७ ॥

लिलेख लिखितवान् ॥ पादाङ्गुलीनामाकुञ्चनेन त्वं मत्समीपमागच्छेति नृपाभिप्रायः ॥ भूमिविलेखकोऽयमपलक्षणक इतीन्दुमत्याशयः। भूमिविलेखनं तु लक्ष्मीविनाशहेतुः ॥

१६ ॥ निवेश्येति ॥ कश्चिद्राजा वामं भुजमासनार्धे सिंहासनैकदेशे निवेश्य संस्थाप्य तत्संनिवेशात्तस्य वामभुजस्य संनिवेशात्संस्थापनादधिकोन्नतोऽसो वामांस एव यस्य स तथोक्तः सन्। विवृत्ते परावृत्ते त्रिके त्रिकप्रदेशे भिन्नहारो लुण्ठितहारः सन् ॥ "पृष्ठवंशाधरे त्रिकम्" इत्यमरः ॥ सुहृत्समाभाषणतत्परोऽभूत्। वामपार्श्ववर्तिनैव मित्रेण संभाषितुं प्रवृत्त इत्यर्थः ॥ अत एव निवृत्तत्रिकत्वं घटते। त्वया वामाङ्गे निवेशितया सहैवं वार्त्तां करिष्य इति नृपाभिप्रायः। परं दृष्ट्वा पराङ्मुखोऽयं न कार्यकर्तेतीन्दुमत्याकूतम् ॥

१७ ॥ विलासिनीति। अन्यो युवा विलासिन्याः प्रियाया विभ्रमार्थं दन्तपत्त्रं दन्तपत्त्रभूतमापाण्डुरं केतकबर्हं केतकदलम् ॥ "दलेऽपि बर्हम्" इत्यमरः ॥ प्रियानितम्ब उचितसंनिवेशैरभ्यस्तनिक्षेपणैर्नखाग्रैर्विपाटयामास ॥ अहं तव नितम्ब एवं नखव्रणादीन्दास्यामीति नृपाशयः। तृणच्छेदकवत्पत्त्रपाटकोऽयमपलक्षणक इतीन्दुमत्याशयः ॥

---

behind, was scratching the golden foot-stool with his foot, the tips of the toes of which were a little contracted and the lustre of whose nails had spread obliquely.

16. Resting his left arm on one half of his seat and having in consequence of it his shoulder raised up a little, a certain king, whose garland was loosened on account of his back-bone being turned, became intent on discoursing with his friend (on the left side).

17. Another prince tore with the extremities of his nails that are fit to be set on the hips of his beloved, the yellow leaf of Ketaka flower which served the purpose of the ear-ring for the amorous gestures of coquettish woman.

---

17. C. D. H. L. कनकगर्भम्, P. with Cha., Din., Val., and the text only of Vijay., केतकपत्रम् for कनकबर्हम्.

कुशेशयाताम्रतलेन कश्चित्करेण रेखाध्वजलाञ्छनेन ।
रत्नाङ्गुलीयप्रभयानुविद्धानुदीरयामास सलीलमक्षान् ॥ १८ ॥
कश्चिद्यथाभागमवस्थितेऽपि स्वसंनिवेशाद्व्यतिलङ्घिनीव ।
वज्रांशुगर्भाङ्गुलिरन्ध्रमेकं व्यापारयामास करं किरीटे ॥ १९ ॥
ततो नृपाणां श्रुतवृत्तवंशा पुंवत्प्रगल्भा प्रतिहाररक्षी ।
प्राक्संनिकर्षं मगधेश्वरस्य नीत्वा कुमारीमवदत्सुनन्दा ॥ २० ॥

१८ ॥ कुशेशयेति । कश्चिद्राजा कुशेशयं शतपत्त्रमिवाताम्रं तलं यस्य तेन ॥ " शतपत्त्रं कुशेशयम् " इत्यमरः ॥ रेखारूपो ध्वजो लाञ्छनं यस्य तेन करेण । अङ्गुलिषु भवान्यङ्गुलीयान्यूर्मिकाः ॥ " अङ्गुलीयकमूर्मिका " इत्यमरः ॥ " जिह्वामूलाङ्गुलेश्छः " इति छप्रत्ययः ॥ रत्नानामङ्गुलीयानि तेषां प्रभयानुविद्धान्व्याप्तानक्षान्पाशान् ॥ " अक्षास्तु देवनाः कितवाश्च ते " इत्यमरः ॥ सलीलमुदीरयामासोच्चिक्षेप ॥ अहं त्वया सहैवं रंस्य इति नृपाभिप्रायः ॥ अक्षचातुर्ये कापुरुषोऽयमितीन्दुमत्यभिप्रायः ॥ " अक्षैर्मा दीव्य " इति श्रुतिनिषेधात् ॥

१९ ॥ कश्चिदिति । कश्चिद्यथाभागं यथास्थानमवस्थितेऽपि स्वसंनिवेशाद्व्यतिलङ्घिनीव स्वस्थानाच्चलित इव किरीटे वज्राणां किरीटगतानामंशवो गर्भे येषां तान्यङ्गुलिरन्ध्राणि यस्य तमेकं करं व्यापारयामास ॥ किरीटवन्मम शिरसि स्थितामपि त्वां भारं न मन्य इति नृपाभिप्रायः । शिरसि न्यस्तहस्तोऽयमपलक्षण इतीन्दुमत्यभिप्रायः ॥

२० ॥ तत इति । ततो नृपाणां श्रुतवृत्तवंशा । श्रुतनृपवृत्तवंशेत्यर्थः ॥ सापेक्ष-

---

18. A certain king, sportively cast up the dice enveloped with the splendour of his diamond rings, with his hand, the palm of which was red like a lotus flower and marked with the lines of banners.

19. Another king kept his hand, the intervals between the fingers of which were internally illumined with the rays of the diamonds, busy with his crown, as if it had slipped off from its proper place.

20. At last the maid-servant Sunandâ, the keeper of the door

---

18. H. लेखा°, P_3. with Val., and the text only of Vijay., रेषा°, for रेखा°. L. हेमांगुलीय° for रत्नांगुलीय°.

19. D. H. L. with Chà., and Vija., यथास्थानं for यथाभागं. A. H. L. with Hem., Chà., Din., Val., Vijay., and Dharm., स्वसंनिवेशव्यतिलंघिनि, D. with Su., स्वसंनिवेशाद्व्यतिलंघति, K. with Vija., स्वसंनिवेशाद्व्यनतिलंघिनि for स्वसंनिवेशाद्व्यतिलंघिनि. C. E. K. P_3., with Vija., and the texts of Val., and Vijay., वज्रांशुभिन्नाङ्गुलिरन्ध्रं, one of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also reads this, G. H. रत्नांशुभिन्नाङ्गुलिरन्ध्रं, R. वज्रांशुविद्धाङ्गुलिरन्ध्रं for वज्रांशुगर्भाङ्गुलिरन्ध्रं. Hem., Chà., Din., Su., and Vijay. with us.

20. H. श्रुतवंशवृत्ता, R. श्रुतवीर्यवंशा for श्रुतवृत्तवंशा. One of the three

असौ शरण्यः शरणोन्मुखानामगाधसत्त्वो मगधप्रतिष्ठः ।
राजा प्रजारञ्जनलब्धवर्णः परंतपो नाम यथार्थनामा ॥ २१ ॥
कामं नृपाः सन्तु सहस्रशोऽन्ये राजन्वतीमाहुरनेन भूमिम् ।
नक्षत्रताराग्रहसंकुलापि ज्योतिष्मती चन्द्रमसैव रात्रिः ॥ २२ ॥

त्वेऽपि गमकत्वात्समासः ॥ प्रगल्भा वाग्मिनी सुनन्दा सुनन्दाख्या प्रतिहारं रक्षतीति प्रतिहाररक्षी द्वारपालिका ॥ कर्मण्यण्प्रत्ययः ॥ " टिड्ढाणञ् " इत्यादिना ङीप् ॥ प्राक्प्रथमं कुमारीमिन्दुमतीं मगधेश्वरस्य संनिकर्षं समीपं नीत्वा पुंवत्पुंसा तुल्यम् ॥ " तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः " इत्यादिना वतिप्रत्ययः ॥ अवदत् ॥

२१ ॥ असाविति । असौ राजा ॥ असाविति पुरोवर्तिनो निर्देशः ॥ एवमुत्तरत्रापि द्रष्टव्यम् ॥ शरणोन्मुखानां शरणार्थिनां शरण्यः शरणे रक्षणे साधुः ॥ " तत्र साधुः " इति यत्प्रत्ययः ॥ शरणं भवितुमर्हतीति शरण्य इति नाथनिरुक्तिर्निर्मूलैव ॥ अगाधसत्त्वो गम्भीरस्वभावः ॥ " सत्त्वं गुणे पिशाचादौ बले द्रव्यस्वभावयोः " इति विश्वः ॥ मगधा जनपदाः । तेषु प्रतिष्ठास्पदं यस्य स मगधप्रतिष्ठः ॥ " प्रतिष्ठा कृत्यमास्पदम् " इत्यमरः ॥ प्रजारञ्जने लब्धवर्णो विचक्षणः । यद्वा प्रजारञ्जनेन लब्धोत्कर्षः ॥ पराञ्छत्रूंस्तापयतीति परंतपः । परंतपाख्यः ॥ " द्विषत्परयोस्तापेः " इति खच्प्रत्ययः ॥ " खचि ह्रस्वः " इति ह्रस्वः ॥ " अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम् " इति मुमागमः । नामेति प्रसिद्धौ । यथार्थनामा । शत्रुसंतापनादिति भावः ॥

२२ ॥ काममिति । अन्ये नृपाः कामं सहस्रशः सन्तु । भूमिमनेन राजन्वतीं शोभनराजवतीमाहुः । नैतादृक्कश्चिदस्तीत्यर्थः ॥ " सुराज्ञि देशे राजन्वान्स्यात्ततोऽन्यत्र राजवान् " इत्यमरः ॥ " राजन्वान्सौराज्ये " इति निपातनात्साधुः ॥

---

of the harem, who was as bold as a male and who had known the exploits achieved by, and the pedigrees of, the kings, first led the virgin princess to the lord of the Magadhas, and then addressed the following words :—

21. This is a king by name Parantapa and rightly so named, the refuge of those who look up to him for protection, of a spirit unfathomable, a resident of the country of the Magadhas, and one who has obtained fame by ever pleasing his subjects.

22. Granted that there are other kings by thousands, yet they say that the earth has, in him alone, a good sovereign; the night

---

Mss. of Hemâdri's दर्पण also reads 'भूतवंशवृत्ता.' but the way in which the Ms. explains this, it does not appear that Hemâdri had before him this text for his commentary. E. with Val., and Su., प्रतिहाररक्षा for प्रतिहाररक्षी. Vallabha's text with us.

21. C. D. and the text only of Vijay., °उन्मुकानां for °उन्मुखानां.

22. B. D. E. G. H. I. K. L. P. R. with Hem., Val., Su., **Dharm., Vijay., and Vija.,** सन्ति for सन्तु. The latter reading is also

क्रियाप्रबन्धादयमध्वराणामजस्रमाहूतसहस्रनेत्रः ।
शच्याश्चिरं पाण्डुकपोललम्बान्मन्दारशून्यानलकांश्चकार ॥ २३ ॥
अनेन चेदिच्छसि गृह्यमाणं पाणिं वरेण्येन कुरु प्रवेशे ।
प्रासादवातायनसंश्रितानां नेत्रोत्सवं पुष्पपुराङ्गनानाम् ॥ २४ ॥
एवं तयोक्ते तमवेक्ष्य किंचिद्विस्रंसिदूर्वाङ्कमधूकमाला ।
ऋजुप्रणामक्रिययैव तन्वी प्रत्यादिदेशैनमभाषमाणा ॥ २५ ॥

तथा हि । नक्षत्रैरश्विन्यादिभिस्ताराभिः साधारणैर्ज्योतिर्भिर्ग्रहैर्भौमादिभिश्च संकुलापि रात्रिश्चन्द्रमसैव ज्योतिरस्या अस्तीति ज्योतिष्मती । नान्येन ज्योतिषेत्यर्थः ॥

२३ ॥ क्रियेति । अयं परंतपोऽध्वराणां क्रतूनां क्रियाप्रबन्धादनुष्ठानसातत्यात् । अविच्छिन्नादनुष्ठानादित्यर्थः । अजस्रं नित्यमाहूतसहस्रनेत्रः संश्चिरं शच्या अलकान् पाण्डुकपोलयोर्लम्बान्स्रस्तान् ॥ पचाद्यच् ॥ मन्दारैः कल्पद्रुमकुसुमैः शून्यांश्चकार ॥ प्रोषितभर्तृका हि केशसंस्कारं न कुर्वन्ति ॥ "प्रोषिते मलिना कृशा" इति स्मरणादिति भावः ॥

२४ ॥ अनेनेति । वरेण्येन वरणीयेन ॥ वृणोतेरौणादिक एण्यप्रत्ययः ॥ अनेन राज्ञा गृह्यमाणं पाणिमिच्छसि चेत् । पाणिग्रहणमिच्छसि चेदित्यर्थः । प्रवेशे प्रवेशकाले प्रासादवातायनसंश्रितानां राजभवनगवाक्षस्थितानां पुष्पपुराङ्गनानां पाटलिपुराङ्गनानां नेत्रोत्सवं कुरु ॥ सर्वोत्तमानां तासामपि दर्शनीया भविष्यसीति भावः ॥

२५ ॥ एवमिति । एवं तया सुनन्दयोक्ते सति तं परंतपमवेक्ष्य किंचिद्विस्रंसिनी

though crouded with constellations, stars and planets, is yet illuminated only by the moon.

23. This king, in his unremitted course of sacrificial ceremonies, perpetually invited the thousand-eyed god (Indra), and thus made the hair of S'achi, which were pendent on her pale cheeks, long destitute of Mandára flowers.

24. If you wish your hand to be taken in marriage by this king worth choosing, then on your entrance, you will certainly become an object of delight to the eyes of the females of Pushpapura, seated in the windows of their respective mansions.

25. When Sunandá said this to her, the thin and delicate

observed by Hemádri. D. H. with Dharm., Vija., and the text only of Vijay., सहस्रसंख्याः for सहस्रशोऽन्यैः. D. with Dharm., and Vija., चन्द्रमसेव for चन्द्रमसैव. Hemádri also notices this.

24. D. with Su., and Dharm., °संश्रयाणां, A. G. H. I. K. P. R. with Hem., Val., Vija., and the text of Vijay., °संस्थितानां for संश्रितानां. Cháritravardhana and Sumativijaya notice the reading.

25. E. H. I. L. P. R. with Val., and the text only of Su., °विभ्रंसि° for °विस्रंसि.° C. D. and the text only of Vijay., इव for एव.

तां सैव वेत्रग्रहणे नियुक्ता राजान्तरं राजसुतां निनाय ।
समीरणोत्थेव तरंगलेखा पद्मान्तरं मानसराजहंसीम् ॥ २६ ॥
जगाद चैनामयमङ्गनाथः सुराङ्गनाप्रार्थितयौवनश्रीः ।
विनीतनागः किल सूत्रकारैरैन्द्रं पदं भूमिगतोऽपि भुङ्क्ते ॥ २७ ॥

दूर्वाङ्का दूर्वाचिह्ना मधूकमाला गुडपुष्पमाला यस्याः सा ॥ "मधूके तु गुडपुष्पमधुद्रुमौ" इत्यमरः ॥ वरणे शिथिलप्रयत्नेति भावः । तन्वीन्दुमत्येनं नृपमभाषमाणऋज्वीं भावशून्यया प्रणामक्रिययैव प्रत्यादिदेश परिजहार ॥

२६ ॥ तामिति । सैव नान्या । चित्तज्ञत्वादिति भावः । वेत्रग्रहणे नियुक्ता दौवारिकी सुनन्दा तां राजसुतां राजान्तरमन्यराजानं निनाय ॥ नयतिर्द्विकर्मकः ॥ कथमिव । समीरणोत्था वातोत्पन्ना तरंगलेखोर्मिपङ्क्तिर्मानसे सरसि या राजहंसी तां पद्मान्तरमिव ॥

२७ ॥ जगादेति । एनामिन्दुमतीं जगाद । किमिति । अयमङ्गनाथोऽङ्गदेशाधीश्वरः सुराङ्गनाभिः प्रार्थिता कामिता यौवनश्रीर्यस्य स तथोक्तः ॥ पुरा किलैनमिन्द्रसाहाय्यार्थमिन्द्रपुरगामिनमकामयन्ताप्सरस इति प्रसिद्धिः ॥ किं च । सूत्रकारैर्गजशास्त्रकृद्भिः पालकाप्यादिभिर्महर्षिभिर्विनीतनागः शिक्षितगजः । किलेत्यैतिह्ये । अत एव भूमिगतोऽप्यैन्द्रं पदमैश्वर्यं भुङ्क्ते । भूलोक एव स्वर्गसुखमनुभवतीत्यर्थः । गजाप्सरोदेवर्षिसेव्यत्वमैन्द्रपदशब्दार्थः ॥ पुरा किल कुतश्चिच्छापकारणाद्भुवमवतीर्णं दिग्गजवर्गमालोक्य स्वयमशक्तैरिन्द्राभ्यनुज्ञया नीतिर्देवर्षिभिः प्रणीतेन शास्त्रेण गजान्वशीकृत्य भुवि संप्रदायं प्रावर्तयदिति कथा गीयते ॥

---

princess, whose garland of Madhûka flowers, inter-strung with the Dûrvas, had fallen a little aside, first gazed at him without speaking a word, and then rejected him simply by making a straight bow (making a straight bow without much bending her head).

26. As a row of waves, raised by the wind, carries a female swan of the lake Mânasa from one to another lotus flower, so that very person (Sunandâ) who was employed to hold a golden cane, the sign of her office, took the princess to another king,

27. And spoke the following words to her:—" This is the king of the Angas whose loveliness of full youth had been sought by celestial damsels, whose elephants were trained by the professors of elephantine science and who enjoys the position of Indra even though living on the earth."

---

26. C. I. हेम° for सैव. Hemâdri and Vijay., notice the reading. D. L. with Châ., Din., and Dharm., °माला, A. with Val., °लेषा, B. K. P. °रेखा for लेखा. Vallabha's text with us.

27. A. L. उवाच for जगाद. D. with Châ., Din., and Vijay., सैनां for चैनां. D. with Châ., Din., and Val., अंगराजः for अंगनाथः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Châritravardhana and others. C. H. L. with Hem., विनीतभागः किल सूत्रकारैः, also noticed

अनेन पर्यासयताश्रुबिन्दून्मुक्ताफलस्थूलतमान्स्तनेषु ।
प्रत्यर्पिताः शत्रुविलासिनीनामुन्मुच्य सूत्रेण विनैव हाराः ॥ २८ ॥
निसर्गभिन्नास्पदमेकसंस्थमस्मिन्द्वयं श्रीश्च सरस्वती च ।
कान्त्या गिरा सूनृतया च योग्या त्वमेव कल्याणि तयोस्तृतीया ॥ २९॥
अथाङ्गराजादवतार्य चक्षुर्याहीति जन्यामवदत्कुमारी ।
नासौ न काम्यो न च वेद सम्यग्द्रष्टुं न सा भिन्नरुचिर्हि लोकः ॥ ३० ॥

२८ ॥ अनेनेति । शत्रुविलासिनीनां स्तनेषु मुक्ताफलस्थूलतमानश्रुबिन्दून् ॥ "अस्रमश्रुणि शोणिते" इति विश्वः ॥ पर्यासयता प्रस्तारयता । भर्तृवधादिति भावः । अनेनाङ्गनाथेनोन्मुच्याक्षिप्य सूत्रेण विना हारा एव प्रत्यर्पिताः । अविच्छिन्नाश्रुबिन्दुप्रवर्तनादुत्सूत्रहारार्पणमेव कृतमिवेत्युत्प्रेक्षा गम्यते ॥

२९ ॥ निसर्गेति । निसर्गतः स्वभावतो भिन्नास्पदं भिन्नाश्रयम् । सहावस्थानविरोधीत्यर्थः । श्रीश्च सरस्वती चेति द्वयमस्मिन्नङ्गनाथ एकत्र संस्था स्थितिर्यस्य तदेकसंस्थम् । उभयमिह संगतमित्यर्थः । हे कल्याणि ॥ "बह्वादिभ्यश्च" इति ङीष् ॥ कान्त्या सूनृतया सत्यप्रियया गिरा च योग्या संसर्गार्हा त्वमेव तयोः श्रीसरस्वत्योस्तृतीया । समानगुणयोर्युवयोर्दांपत्यं युज्यत एवेति भावः ॥ दक्षिणनायकत्वं चास्य ध्वन्यते ॥ तदुक्तं ॥ "तुल्योऽनेकत्र दक्षिणः" इति ॥

३० ॥ अथेति । अथ कुमार्यङ्गराजाच्चक्षुरवतार्यापनीय । जन्यां मातृ-

28. "In causing the beautiful wives of his enemies to shed on their bosoms the drops of tears, as big as pearls, he returned to them as it were, their pearl garlands, without strings, that had been already taken off."

29. "Both the Goddesses S'ri (wealth) and Sarasvatî (learning), whose abodes by nature are different, live together in him. And you, O fortunate girl, are by your charming loveliness and a true pleasing address, fit for their third fellow companion."

30. Then having removed her eyes from the king of the

by Cháritravardhana and Vijay., B. I. K. R. with Val., Vijay., and Su., विनीतभागः किल सन्त्रकारः, D. with Dharm., विनीतनागः किल सूत्रधारैः for विनीतनागः किल सूत्रकारैः. Hemádri notices the reading of Mallinâtha. Hemâdri also notices the reading of Dharmameru and others. H. सुखं for पदं.

28. A. D. I. with the text only of Val., पर्याश्रयता, R. पर्यासयिता for पर्यासयता. All commentators with us. R. with Hem., Val., and Vijay., उन्मोच्य, A. B. D. E G. H. I. K. L. P_2. with Chá., Din., Su., and the text only of Vijay., आक्षिप्य for उन्मुच्य. Vallabha also notices the reading of Chấritravardhana and others. Hemádri notices the reading " आक्षिपसूत्रेण विनैव हाराः " and says :—इति पाठे आक्षिप्यते आकृष्यंत अनेनेति आक्षेपः स च तन्सूत्रं च आक्षेपसूत्रं तेन &c.

30. D. H. अंगनाथात् for अंगराजात्. One of the three Mss. of He-

ततः परं दुःप्रसहं द्विषद्भिर्नृपं नियुक्ता प्रतिहारभूमौ ।
निदर्शयामास विशेषदृश्यमिन्दुं नवोत्थानमिवेन्दुमत्यै ॥ ३१ ॥

सखीं सुनन्दां याहि गच्छेत्यवदत् ॥ अथ वा—"यातेति जन्यानवदत्" इति पाठे—जनीं वधूं वहन्तीति जन्या वधूबन्धवः । तान्यात गच्छतेत्यवदत् ॥ "जन्या मातृसखीमुदोः" ॥ "जन्यो वरवधूज्ञातिप्रियतुल्यहितेषु च" इति पक्षद्वयेऽपि विश्वः ॥ अथ वा जन्या वधूभृत्याः ॥ "भृत्याश्चापि नवोढायाः" इति केशवः ॥ "संज्ञायां जन्या" इति यत्प्रत्ययान्तो निपातः ॥ यदत्राह वृत्तिकारः—"जनीं वधूं वहन्तीति जन्या जामातुर्वयस्याः" इति ॥ यच्चामरः—"जन्याः स्निग्धा वरस्य ये" इति ॥ तत्सर्वमुपलक्षणार्थमित्यविरोधः ॥ न चायमङ्गराजनिषेधो दृश्यदोषान्नापि द्रष्टृदोषादित्याह—नेत्यादिना ॥ असावङ्गराजः काम्यः कमनीयो नेति न । किं तु काम्य एवेत्यर्थः । सा कुमारी च सम्यग्द्रष्टुं विवेक्तुं न वेदेति न । वेदेत्यर्थः । किं तु लोको जनो भिन्नरुचिर्हि रुचिरमपि किंचित्कस्मैचिन्न रोचते ॥ किं कुर्मो न हीच्छा नियन्तुं शक्यत इति भावः ॥

३१ ॥ तत इति । ततोऽनन्तरं प्रतिहारभूमौ द्वारदेशे नियुक्ता दौवारिकी ॥ "स्त्री द्वार्द्वारं प्रतीहारः" इत्यमरः ॥ द्विषद्भिः शत्रुभिर्दुःप्रसहं दुःसहम् । शूरमित्यर्थः । विशेषेण दृश्यं दर्शनीयम् । रूपवन्तमित्यर्थः । परमन्यं नृपम् । नवोत्थानं नवोदयमिन्दुमिव । इन्दुमत्यै निदर्शयामास ॥

Angas 'proceed,' said the maiden to her friend. Not that he was not attractive, nor that she was not a good judge of herself; but because different persons have different tastes.

31. Then she, who was appointed to keep guard over the gate, pointed out to Indumati another prince, whom his enemies dared not withstand and who was remarkably beautiful like the moon newly risen.

---

mādri's दर्पण also reads this. D. H. L. with Chā., and Val., यातेति जन्यानवदत्, also noticed by Hemādri and Dinakara, B. C. E. I. K. P_2. R. with Hem., Din., Su., Vijay., and the text only of Val., यातेति जन्यानवदत् for याहीति जन्यामवदत्. Also noticed by Chāritravardhana and commented upon by Mallinātha, *vide* commentary.

31. D. G. H. I P_3. with Val., परेषां for द्विषद्भिः. Also noticed by Vijay., and Chāritravardhana who says:—"परेषां" इति पाठे—"न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्" II. 3. 69. इत्यादिना षष्ठीयोग षष्ठीनिषेधे ॥ 'आक्षिपन्त्यरविन्दानि मुग्धे तव मुखश्रियं । कोशदण्डसमग्राणां किमेषामस्ति दुष्करं' ॥ इत्यादेर्लोकैरादृतत्वान्न दोषः । उक्तं हि सरस्वतीकण्ठाभरणे ॥ "इदं हि शास्त्रमाहात्म्यं दर्शनालसचेतसां । अपशब्दपदाभाति न च सौभाग्यमुज्झति" ॥ एके त्वेवं सम्बन्धे षष्ठी तस्याश्चानिषिद्धत्वात् । अथ वा । परेषां विशेषदृश्यत्वमित्यन्वयः । B. D. L. प्रयुक्ता for नियुक्ता. A. D. E. G. H. P_4. with Val., विशेषकान्तं for विशेषदृश्यं. Vallabha's text with us.

अवन्तिनाथोऽयमुदग्रबाहुर्विशालवक्षास्तनुवृत्तमध्यः ।
आरोप्य चक्रभ्रममुष्णतेजास्त्वष्ट्रेव यत्नोल्लिखितो विभाति ॥ ३२ ॥
अस्य प्रयाणेषु समग्रशक्तेरग्रेसरैर्वाजिभिरुत्थितानि ।
कुर्वन्ति सामन्तशिखामणीनां प्रभाप्ररोहास्तमयं रजांसि ॥ ३३ ॥
असौ महाकालनिकेतनस्य वसन्नदूरे किल चन्द्रमौलेः ।
तमिस्रपक्षेऽपि सह प्रियाभिर्ज्योत्स्नावतो निर्विशति प्रदोषान् ॥ ३४ ॥

३२ ॥ अवन्तीति । उदग्रबाहुर्दीर्घबाहुर्विशालवक्षास्तनुवृत्तमध्यः कृशवर्तुलमध्योऽयं राजावंतिनाथोऽवन्तिदेशाधीश्वरः । त्वष्ट्रा विश्वकर्मणा । भर्तुस्तेजोवेगमसहमानया दुहित्रा संज्ञादेव्या प्रार्थितेनेति शेषः । चक्रभ्रमं चक्राकारं शस्त्रोत्तेजनयन्त्रम् ॥ " भ्रमोऽम्बुनिर्गमे भ्रान्तौ कुण्डाख्ये शिल्पियन्त्रके " इति विश्वः ॥ आरोप्य यत्नेनोल्लिखित उष्णतेजाः सूर्य इव । विभाति ॥ अत्र मार्कण्डेयः— " विश्वकर्मा त्वनुज्ञातः शाकद्वीपे विवस्वता । भ्रममारोप्य तत्तेजः शातनायोपचक्रमे " इति ॥

३३ ॥ अस्येति । समग्रशक्तेः शक्तित्रयसंपन्नस्यास्यावन्तिनाथस्य प्रयाणेषु जैत्रयात्रास्वग्रेसरैर्वाजिभिरश्वैरुत्थितानि रजांसि सामन्तानां समन्ताद्भवानां राज्ञां ये शिखामणयश्चूडामणयस्तेषां प्रभाप्ररोहास्तमयं तेजोङ्कुरनाशं कुर्वन्ति ॥ नासीरैरेवास्य शत्रवः पराजीयन्त इति भावः ॥

३४ ॥ असाविति । असाववन्तिनाथः । महाकालं नाम स्थानविशेषः । तदेव निकेतनं स्थानं यस्य तस्य चन्द्रमौलेरीश्वरस्यादूरे समीपे वसन् । अत एव हे-

---

32. " This long-armed, broad-breasted and slender-and-round-waisted lord of Avantî looks like the effulgent luminary trimmed off with care by Tvash*tri*, who placed him for the purpose on his round lathe."

33. " In the marches of this all-powerful king, the dust, raised by the vanguard of horses, effects the disappearance of the shooting rays of the crest jewels of the tributary princes. "

34. " Residing not far from the moon-crested *S*iva, whose

---

32. H. I. L. P. चक्रभ्रमिं for चक्रभ्रमं. G. H. J. L. P_4. यंत्रोल्लिखितः, R. with Vallabha's text only, यत्नोल्लिखितः for यत्नोल्लिखितः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण reads with R. Ms. R. अवभाति for विभाति.

33. E. I. R. with Hem., Su., Vjiay., and the text only of Val., उद्धृतानि. G. H. K. P. with Châ., Din., and Val., उद्धतानि, one of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also reads this, L. उद्गतानि for उत्थितानि. Vijay.'s text with us. D. L. R. with Dharm., °शिरोमणीनां for शिखामणीनां. Châritravardhana also notices this. Vallabha's text शिखामणीनां.

34. I. चन्द्रमूलेः, P. and the text only of Val., चन्द्रमौलं, D. H. L. with Châ., Su., and Din., चन्द्रार्धमौलिनिवसन्नदूरे for वसन्नदूरे किल चन्द्रमौलेः.

अनेन यूना सह पार्थिवेन रम्भोरु कच्चिन्मनसो रुचिस्ते ।
सिप्रातरंगानिलकम्पितासु विहर्तुमुद्यानपरंपरासु ॥ ३५ ॥
तस्मिन्नभियोतितबन्धुपद्मे प्रतापसंशोषितशत्रुपङ्के ।
बबन्ध सा नोत्तमसौकुमार्या कुमुद्वतीभानुमतीव भावम् ॥ ३६ ॥

तोस्तमिस्रपक्षे कृष्णपक्षेऽपि प्रियाभिः सह ज्योत्स्नावतः प्रदोषान्रात्रीर्निर्विशत्यनुभवति किल ॥ नित्यज्योत्स्नाविहारत्वमेतस्यैव नान्यस्येति भावः ॥

३५ ॥ अनेनेति । रम्भे कदलीस्तम्भाविवोरू यस्याः सा रम्भोरूस्तस्याः संबुद्धिः। हे रम्भोरु॥ "उरूत्तरपदादौपम्ये" उत्यूङ्प्रत्ययः ॥ नदीत्वाद्ध्रस्वः ॥ यूनानेन पार्थिवेन सह । सिप्रा नाम तत्रत्या नदी । तस्यास्तरंगाणामनिलेन कम्पितासूद्यानानां परंपरासु पङ्क्तिषु विहर्तुं ते तव मनसो रुचिः कच्चित् । स्पृहास्ति किमित्यर्थः ॥ "अभिष्वङ्गे स्पृहायां च गभस्तौ च रुचिः स्त्रियाम्" इत्यमरः ॥

३६ ॥ तस्मिन्निति । उत्तमसौकुमार्योत्कृष्टाङ्गमार्दवा सेन्दुमती । अभियोतितान्युल्लसितानि बन्धव एव पद्मानि येन तस्मिन् । प्रतापेन तेजसा संशोषिताः

---

abode is Mahákála, this king, it is said, enjoys the moonlight evenings in company with his beloveds even in the dark fortnight."

35. "I hope you entertain a desire, O beautiful-thighed princess, to amuse yourself with this young prince, in the rows of gardens, the trees whereof are shaken by the breeze from the rippling water of the river Siprâ."

36. As the moon-lotus does not bloom in the scorching rays of the sun, so that exquisitely delicate princess did not fix her heart on him, who by his valour illuminated the lotuses in the form of his friends and dried the mud in the form of his enemies.

Sumativijaya's text with us. D_2. L. "दिवापि जालान्तरचन्द्रिकायां नारीसखः स्पर्शसुखानि भुंक्ते" for the last two Pádas. Hemádri and Cháritravardhana notice this reading and the latter condemns it in the following way :— "दिवापि" इत्यादि पाठे यद्यपि अतिशयोक्तिर्विद्यते तथापि दिवा चन्द्रिकावर्णनस्य कालविरुद्धत्वाद्दुष्टः पाठः । अतः "तमिस्रपक्षेऽपि सह प्रियाभिर्ज्योत्स्नावतो निर्विशति प्रदोषान्" इति साधुः पाठः ॥ [L. with Hem., °चन्द्रिकायां, D_2. चन्द्रिकाणां]. D. तामिस्रपक्षे for तमिस्रपक्षे. A_2. प्रदोषाम् for प्रदोषान्, which is also condemned by Cháritravardhana, who says :—"कृष्णपक्षेऽपिप्रदोषामित्यत्र चन्द्रिकाप्रादुर्भावात्प्रदोषानित्युचितं पदं" ॥ Dinakara probably does the same.

35. D. E. G. H. P. क्षिप्रा°, I. J. P_2. R. with Chá., and the text only of Vijay., शिप्रा° for सिप्रा°. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Cháritravardhana and others.

36. D. C. with Hem., and Dharm., समुद्योतितबन्धुपद्मे for अभियोतितबन्धुपद्मे.

तामग्रतस्तामरसान्तराभामनूपराजस्य गुणैरनूनाम् ।
विधाय सृष्टिं ललितां विधातुर्जगाद भूयः सुदतीं सुनन्दा ॥ ३७ ॥
सङ्ग्रामनिर्विष्टसहस्रबाहुरष्टादशद्वीपनिखातयूपः ।
अनन्यसाधारणराजशब्दो बभूव योगी किल कार्तवीर्यः ॥ ३८ ॥

शत्रव एव पङ्काः कर्दमा येन तस्मिन् । तस्मिन्नवन्तिनाथे कुमुद्वती ॥ "कुमुदनडवेतसेभ्यो ड्मतुप्" इति ड्मतुप्प्रत्ययः ॥ भानुमत्यंशुमतीव । भावं चित्तं न बबन्ध । न तत्रानुरागमकरोदित्यर्थः ॥ बन्धूनां पद्मत्वेन शत्रूणां पङ्कत्वेन च निरूपणं राज्ञः सूर्यसाम्यार्थम् ॥

३७ ॥ तामिति । सुनन्दा तामरसान्तराभां पद्मोदरतुल्यकान्तिम् । कनकगौरीमित्यर्थः । गुणैरनूनाम् । अधिकामित्यर्थः । शोभना दन्ता यस्यास्तां सुदतीं ॥ "वयसि दन्तस्य दतृ" इति दत्रादेशः ॥ "उगितश्च" इति ङीप् ॥ तां प्रकृतां प्रसिद्धां वा विधातुर्ललितां सृष्टिम् । मधुरनिर्माणां स्त्रियमित्यर्थः । अनुगता आपो येषु तेऽनूपा नाम देशाः ॥ "ऋक्पूरब्धूः पथामानक्षे" इत्यादिनाप्रत्ययः ॥ "ऊदनोर्देशे" इत्यूदादेशः ॥ तेषां राज्ञोऽनूपराजस्याग्रतो विधाय व्यवस्थाप्य भूयः पुनर्जगाद ॥

३८ ॥ संग्रामेति । सङ्ग्रामेषु युद्धेषु निर्विष्टा अनुभूताः सहस्रं बाहवो यस्य स तथोक्तः । युद्धादन्यत्र द्विभुज एव दृश्यत इत्यर्थः । अष्टादशसु द्वीपेषु निखाताः स्थापिता यूपा येन स तथोक्तः । सर्वक्रतुयाजी सार्वभौमश्चेति भावः । जरायुजादिसर्वभूतरञ्जनादनन्यसाधारणो राजशब्दो यस्य स तथोक्तः । योगी ब्रह्मविद्वानित्यर्थः ॥ स किल भगवतो दत्तात्रेयाल्लब्धयोग इति प्रसिद्धिः । कृतवीर्यस्यापत्यं पुमान्कार्तवीर्यो नाम राजा बभूव किलेति ॥ अयं चास्य महिमा सर्वोऽपि दत्तात्रेयवरप्रसादलब्ध इति भारते दृश्यते ॥

---

37. Then Sunandá took the princess to the presence of the king of the Anúpas and began to address her again, who was as bright as the interior of a white lotus, who had a beautiful set of teeth, who was undiminished in good qualities, and who was the most elegant of the creator's creation.

38. "It is reported that in former times there was a Yogin by name Kártvirya who showed, as it were, a thousand arms in many of his fights who had fixed sacrificial posts in eighteen continents and whose title of 'Rája' was not common to other kings."

---

37. C. D. with Hem., and Dharm., निधाय for विधाय. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha. C. D. नूनमं for सुदतीं. Hemádri also notices the reading.

38. H. °निर्दिष्ट°, D. with Su., and the text only of Vijay., °निर्वृत्त°, P. °निर्विण्ण° for °निर्विष्ट°. L. P_3. R. with Chá., Val., and Su., °निषात° for °निखात°.

अकार्यचिन्तासमकालमेव प्रादुर्भवंश्चापधरः पुरस्तात् ।
अन्तः शरीरेष्वपि यः प्रजानां प्रत्यादिदेशाविनयं विनेता ॥ ३९ ॥
ज्याबन्धनिष्पन्दभुजेन यस्य विनिःश्वसद्वक्त्रपरंपरेण ।
कारागृहे निर्जितवासवेन लङ्केश्वरेणोषितमा प्रसादात् ॥ ४० ॥
तस्यान्वये भूपतिरेष जातः प्रतीप इत्यागमवृद्धसेवी ।
येन श्रियः संश्रयदोषरूढं स्वभावलोलेत्ययशः प्रमृष्टम् ॥ ४१ ॥

३९ ॥ अकार्येति । विनेता शिक्षको यः कार्तवीर्यः । अकार्यस्यासत्कार्यस्य चिन्तया । अहं चौर्यादिकं करिष्यामीति बुद्ध्या । समकालमेककालमेव यथा तथा पुरस्तादग्रे चापधरः प्रादुर्भवन्सन् । प्रजानां जनानाम् ॥ "प्रजा स्यात्संततौ जने" इत्यमरः ॥ अन्तःशरीरेष्वन्तःकरणेषु । शरीरशब्देनेन्द्रियं लक्ष्यते । अविनयमपि प्रत्यादिदेश ॥ मानसापराधमपि निवारयामासेत्यर्थः । अन्ये तु वाक्कायापराधमात्रप्रतिकर्तार इति भावः ॥

४० ॥ ज्याबन्धेति । ज्याया मौर्व्या बन्धेन निष्पन्दा निश्चेष्टा भुजा यस्य तेन विनिःश्वसती ज्याबन्धोपरोधाद्दीर्घं निःश्वसती वक्त्रपरंपरा दशमुखी यस्य तेन निर्जितवासवेनेन्द्रविजयिना । अत्रेन्द्रादयोऽप्यनेन जितप्राया एवेति भावः । लङ्केश्वरेण दशास्येन यस्य कार्तवीर्यस्य कारागृहे बंधनागारे ॥ "कारा स्याद्बन्धनालये" इत्यमरः ॥ आ प्रसादादनुग्रहपर्यन्तमुषितं स्थितम् ॥ "नपुंसके भावे क्तः" ॥ एतत्प्रसाद एव तस्य मोक्षोपायो न तु क्षात्त्रमिति भावः ॥

४१ ॥ तस्येति । आगमवृद्धसेवी श्रुतवृद्धसेवी प्रतीप इति । ख्यात इति शेषः । एष भूपतिस्तस्य कार्तवीर्यस्यान्वये वंशे जातः । येन प्रतीपेन संश्रयस्य पुंसो दोषैर्व्यसनादिभी रूढमुत्पन्नं श्रियः सम्बन्धि स्वभावलोला प्रकृतिचञ्चलेत्येवं रूपम-

---

39. "The very moment that any evil desire entered into the inner organs (minds) of his subjects, this chastiser presenting himself before them, bow in hand, prevented them from doing those immoral actions."

40. "In his (Kartavîrya's) prison stayed the lord of Lankâ, who had vanquished Vâsava, whose arms were made motionless being bound up by bow-strings and consequently whose row of mouths was breathing hard, until he was favourably disposed to release him."

41. "And this king named Pratîpa was born in Kârtavîrya's line, who is known for his reverential regard for profoundly learn-

---

40. L. ज्याघातनिर्विष्टभुजेन for ज्याबन्धनिष्पन्दभुजेन. A. B. E. G. H. I. K. P_2. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., निस्पन्द for °निष्पन्द°. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण agrees with Mallinâtha. H. दशाननेन for लङ्केश्वरेण. R. उक्षितं for उषितं.

41. A. D. प्रदीप: for प्रतीपः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with A. D. Mss.

आयोधने कृष्णगतिं सहायमवाप्य यः क्षत्रियकालरात्रिम् ।
धारां शितां रामपरश्वधस्य संभावयत्युत्पलपत्त्रसाराम् ॥ ४२ ॥
अस्याङ्कलक्ष्मीर्भव दीर्घबाहोर्माहिष्मतीवप्रनितम्बकाञ्चीम् ।
प्रासादजालैर्जलवेणिरम्यां रेवां यदि प्रेक्षितुमस्ति कामः ॥ ४३ ॥

यशो दुष्कीर्तिः प्रमृष्टं निरस्तम् ॥ दुष्टाश्रयत्यागशीलायाः श्रियः प्रकृतिचापलप्रवादो मूढजनपरिकल्पित इत्यर्थः ॥ अयं तु दोषराहित्यान्न कदाचिदपि श्रिया त्यज्यत इति भावः ॥

४२ ॥ आयोधन इति । यः प्रतीप आयोधने युद्धे कृष्णगतिं कृष्णवर्त्मानमग्निं सहायमवाप्य क्षत्रियाणां कालरात्रिम् । संहाररात्रिमित्यर्थः । रामपरश्वधस्य जामदग्न्यपरशोः ॥ "द्वयोः कुठारः स्वधितिः परशुश्च परश्वधः" इत्यमरः ॥ शितां तीक्ष्णां धारां मुखम् ॥ "खड्गादीनां च निशितमुखे धारा प्रकीर्तिता" इति विश्वः ॥ उत्पलपत्त्रस्य सार इव सारो यस्यास्तां तथाभूतां संभावयति मन्यते ॥ एतन्नगरजिगीषया गतान्रिपूंस्त्वयमेव धक्ष्यामीति भगवता वैश्वानरेण दत्तवरोऽयं राजा । दह्यन्ते च तथागताः शत्रव इति भारते कथानुसंधेया ॥

४३ ॥ अस्येति । दीर्घबाहोरस्य प्रतीपस्याङ्के लक्ष्मीर्भव । एनं वृणीष्वेत्यर्थः ॥ अनेनायं विष्णुतुल्य इति ध्वन्यते ॥ माहिष्मती नामास्य नगरी । तस्या वप्रः प्राकार एव नितम्बः । तस्य काञ्चीं रशनाभूतां जलानां वेण्या प्रवाहेण रम्याम् ॥ "ओघः प्रवाहो वेणी च" इति हलायुधः ॥ रेवां नर्मदां प्रासादजालैर्गवाक्षैः ॥ "जालं समूह आनायो गवाक्षक्षारकावपि" इत्यमरः ॥ प्रेक्षितुं काम इच्छास्ति यदि ॥

---

ed men, and who has wiped off the stain of the Goddess of fortune as being naturally fickle—the stain that arises from the faults of those to whom she is firmly attached."

42. "He, it is reported, obtained the God of fire (*lit.* he who leaves a dark track behind him) for his ally in war affairs, and thus looked down upon the sharp edge of Ràma's axe, the destruction-night of the Kshatriya race, as having the strength of a smooth lotus-leaf."

43. "Be thou, therefore, the लक्ष्मी in the lap of this long-armed king, if thou, O fair one, entertainest a desire of looking at the river Revá from the windows of his palace, charming on account of the curling ripples of water, and looking like a girdle on the hips in the form of the ramparts of the city of माहिष्मती."

---

42. H. L. कृष्णमर्सि for कृष्णगतिं. L. क्षत्रियकालरात्रे for क्षत्रियकालरात्रिम्. D. E. K. R. with Chà., Din., Val., Vijay., and the text only of Su., सितां for शितां. D. E. R. °सारं for °सारां.

तस्याः प्रकामं प्रियदर्शनोऽपि न स क्षितीशो रुचये बभूव ।
शरत्प्रमृष्टाम्बुधरोपरोधः शशीव पर्याप्तकलो नलिन्याः ॥ ४४ ॥
सा शूरसेनाधिपतिं सुषेणमुद्दिश्य लोकान्तरगीतकीर्तिम् ।
आचारशुद्धोभयवंशदीपं शुद्धान्तरक्ष्या जगदे कुमारी ॥ ४५ ॥
नीपान्वयः पार्थिव एष यज्वा गुणैर्यमाश्रित्य परस्परेण ।
सिद्धाश्रमं शान्तमिवैत्य सत्त्वैर्नैसर्गिकोऽप्युत्ससृजे विरोधः ॥ ४६ ॥

४४ ॥ तस्या इति। प्रकामं प्रियं प्रीतिकरं दर्शनं यस्य सोऽपि। दर्शनीयोऽपीत्यर्थः ॥ स क्षितीशः । शरदा प्रमृष्टाम्बुधरोपरोधो निरस्तमेघावरणः पर्याप्तकलः पूर्णकलः शशी नलिन्या इव। तस्या इन्दुमत्या रुचये न बभूव ॥ रुचिं नाजीजनदित्यर्थः ॥ लोको भिन्नरुचिरिति भावः ॥

४५ ॥ सेति। लोकान्तरे स्वर्गादावपि गीतकीर्तिमाचारेण शुद्धयोरुभयोर्वंशयोर्मातापितृकुलयोर्दीपं प्रकाशकम् ॥ उभयवंशेत्यत्रोभयपक्षवन्निर्वाहः ॥ शूरसेनानां देशानामधिपतिं सुषेणं नाम नृपतिमुद्दिश्याभिसंधाय शुद्धान्तरक्ष्यान्तःपुरपालिकया ॥ "कर्मण्यण्" ॥ "टिड्ढाणञ्–" इति ङीप् ॥ सा कुमारी जगदे ॥

४६ ॥ नीपेति। यज्वाविधिवदिष्टवान् ॥ "सुयजोर्ङ्वनिप्" इति ङ्वनिप्प्रत्ययः॥ एष पार्थिवः। नीपानामन्वयोऽस्येति नीपान्वयो नीपवंशजः। यं सुषेणमाश्रित्य

---

44. But that ruler of the earth, though of a lovely appearance, did not sufficiently come up to her taste, like the full moon even when freed from the covering of the clouds in autumn, to the taste of the lotus-pond.

45. Whereupon the keeper of the harem spoke to that maiden princess with reference to Sushe*n*a, the lord of the S'ûrasenas, whose fame was sung even in the next world, and who by his conduct became the light (or ornament) of both of the pure lines (paternal and maternal).

46. "This king, a performer of sacrificial ceremonies, is sprung from the race of the Nîpas; having taken refuge in him even the natural opposition to each other has been given up by the

---

44. L. R. संक्षितीशः for स क्षितीशः.

45 I. J. K. L. P. R. with Hem., Chá., Val., Su., and Vijay., सूर° for शूर°. E. K. L. R. with Hem., Chà., Su., and the text only of Val., सुखेणं for सुषेणं. B. C. E. G. H. I. K. L. P. R. with Hem., Chà., Din., Val., Su., Dharm., Vija., and Vijay., देशान्तर° for लोकान्तर°. Cháritravardhana notices the reading of our text. P_2. °दीपः for °दीपं. R. with Val., and Su., कुमारिं for कुमारी.

46. C. I. with Chà., अवाप्य for इवैत्य. D. with Su., शान्तमिवोपसत्त्वैः for शान्तमिवैत्य सत्त्वैः.

यस्यात्मगेहे नयनाभिरामा कान्तिर्हिमांशोरिव संनिविष्टा ।
हर्म्याग्रसंरूढतृणाङ्कुरेषु तेजोऽविषह्यं रिपुमन्दिरेषु ॥ ४७ ॥
यस्यावरोधस्तनचन्दनानां प्रक्षालनाद्वारिविहारकाले ।
कलिंदकन्या मथुरां गतापि गङ्गोर्मिसंसक्तजलेव भाति ॥ ४८ ॥

गुणैर्ज्ञानमौनादिभिः । शान्तं प्रसन्नं सिद्धाश्रममृष्याश्रममेत्य प्राप्य सत्त्वैर्गजसिंहादिभिः प्राणिभिरिव । नैसर्गिकः स्वाभाविकोऽपि परस्परेण विरोध उत्ससृजे त्यक्तः ॥

४७ ॥ यस्येति । हिमांशोः कान्तिश्चन्द्रकिरणा इव नयनयोरभिरामा यस्य सुषेणस्य कान्तिः शोभात्मगेहे स्वभवने संनिविष्टा संक्रान्ता । अविषह्यं विसोढुमशक्यं तेजः प्रतापस्तु । हर्म्याग्रेषु धनिकमन्दिरप्रान्तेषु ॥ " हर्म्यादि धनिनां वासः " इत्यमरः ॥ संरूढास्तृणाङ्कुरा येषां तेषु । शून्येष्वित्यर्थः । रिपुमन्दिरेषु शत्रुनगरेषु ॥ " मन्दिरं नगरे गृहे " इति विश्वः ॥ संनिविष्टम् । स्वजनाह्लादको द्विषंतपश्चेति भावः ॥

४८ ॥ यस्येति । यस्य सुषेणस्य वारिविहारकाले जलक्रीडासमयेऽवरोधानामन्तःपुराङ्गनानां स्तनेषु चन्दनानां मलयजानां प्रक्षालनाद्धेतोः । कलिंदो नाम शैलस्तत्कन्या यमुना ॥ " कालिन्दी सूर्यतनया यमुना शमनस्वसा " इत्यमरः ॥ मथुरां नामास्य राज्ञो नगरीं गतापि । गङ्गाया विप्रकृष्टापीत्यर्थः । गङ्गाया भागीरथ्या ऊर्मिभिः संसक्तजलेव भाति ॥ धवलचन्दनसंसर्गात्प्रयागादन्यत्राप्यत्र गङ्गासंगतेव भातीत्यर्थः ॥ " सितासिते हि गङ्गायमुने " इति घण्टापथः ॥

---

qualities ; as by the beasts of forest on reaching a hermit's peaceful dwelling. "

47. " His graceful loveliness in his own palace, becomes delightful to the eyes like that of the cool-rayed moon, but his unbearable energy of valour is seen in the cities of his enemies, where the tops of mansions are over-grown with grassy-blades. "

48. " By the washing of the sandle paste on the bosoms of the females of his inner-apartment at the time of sporting in the water, the daughter of Kalinda, though flowing by Mathurá, appears to have mixed her waters with the ripples of the Gangà. "

---

47. B. C. H. I. L. R. with Châ., Din., Val., Su., Dharm., Vija., and Vijay., आत्मदेहे for आत्मगेहे. Hemâdri also notices the reading of Châritravardhana and others.

48. D. मथुरागतापि for मथुरां गतापि. L. महोर्मि° for गङ्गोर्मि°. B. C. G. H. I. K. L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., Vija., and Vijay., °संसक्त°, E. °संश्लिष्ट° for °संसक्त°. R. °जलैर्विभाति for °जलेव भाति.

त्रस्तेन तार्क्ष्यात्किल कालियेन मणिं विसृष्टं यमुनौकसा यः ।
वक्षःस्थलव्यापिरुचं दधानः सकौस्तुभं ह्रेपयतीव कृष्णम् ॥ ४९ ॥
संभाव्य भर्तारममुं युवानं मृदुप्रवालोत्तरपुष्पशय्ये ।
वृन्दावने चैत्ररथादनूने निर्विश्यतां सुन्दरि यौवनश्रीः ॥ ५० ॥
अध्यास्य चाम्भःपृषतोक्षितानि शैलेयगन्धीनि शिलातलानि ।
कलापिनां प्रावृषि पश्य नृत्यं कान्तासु गोवर्धनकन्दरासु ॥ ५१ ॥

४९ ॥ त्रस्तेनेति । तार्क्ष्याद्गरुडात्त्रस्तेन । यमुनौकः स्थानं यस्य तेन । कालियेन नाम नागेन विसृष्टं किलाभयदानविष्क्रयत्वेन दत्तम् ॥ किलेत्यैतिह्ये ॥ वक्षःस्थलव्यापिरुचं मणिं दधानो यः सुषेणः सकौस्तुभं कृष्णं विष्णुं ह्रेपयतीव व्रीडयतीव ॥ "अर्तिह्री—" इत्यादिना पुगागमः ॥ कौस्तुभमणेरप्युत्कृष्टोऽयं मणिरिति भावः ॥

५० ॥ संभाव्येति । युवानममुं सुषेणं भर्तारं संभाव्य मत्वा । पतित्वेनाङ्गीकृत्येत्यर्थः । मृदुप्रवालोत्तरोपरिप्रस्तारितकोमलपल्लवा पुष्पशय्या यस्मिंस्तत्र चैत्ररथात्कुबेरोद्यानादनूने वृन्दावने वृन्दावननामक उद्याने हे सुन्दरि यौवनश्रीर्यौवनफलं निर्विश्यतां उपभुज्यताम् ॥

५१ ॥ अध्यास्येति । किं च । प्रावृषि वर्षासु कान्तासु गोवर्धनस्याद्रेः कन्दरासु दरीषु ॥ "दरी तु कन्दरो वा स्त्री" इत्यमरः ॥ अम्भसः पृषतैर्बिन्दुभिरुक्षितानि

---

49. "They say that he puts K*r*ish*n*a to shame along with his Kaustubha by his wearing a diamond, the lustre of which covers the surface of his chest, and which had been given to him by the snake Kâliya, whose abode was the river Yamunâ and who was very much afraid of Garu*d*a."

50. "For these reasons honour this youthful prince by accepting him for your husband and then you may, O charming princess, enjoy your loveliness of youth on a flowery couch over-spread with tender sprouts, in the gardens of वृन्दावन not inferior to चैत्ररथ."

51. "Seated on the plane surface of marble slabs sprinkled with drops of water and fragrant with benzoin, you may look at

---

49. C. B. E. G. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., Vija, and Vijay., त्रसित, L. अंसित for त्रस्तेन. Hemâdri notices the reading of Mallinâtha. D. H. K. with Châ., and Din., तार्क्ष्यात् for तार्क्ष्यात्. B. C. E. G. I. J. K. P. R. with Hem., Val., Su., Dharm., Vija., and Vijay., विष्णुं for कृष्णं.

50. P. यस्य for पश्य.

51. B. C. E. G. H. I. K. P. R. with Val., Din., Su., Dharm., Vija., and the text only of Vijay., नद्धानि, Vijay., also notices this reading, D. with Hem., Châ., and Din., बद्धानि for गन्धीनि. Hemâdri also notices the reading of our text.

नृपं तमावर्तमनोज्ञनाभिः सा व्यत्यगादन्यवधूर्भवित्री ।
महीधरं मार्गवशादुपेतं स्रोतोवहा सागरगामिनीव ॥ ५२ ॥
अथाङ्गदाश्लिष्टभुजं भुजिष्या हेमाङ्गदं नाम कलिङ्गनाथम् ।
आसेदुषीं सादितशत्रुपक्षं बालामबालेन्दुमुखीं बभाषे ॥ ५३ ॥
असौ महेन्द्राद्रिसमानसारः पतिर्महेन्द्रस्य महोदधेश्च ।
यस्य क्षरत्सैन्यगजच्छलेन यात्रासु यातीव पुरो महेन्द्रः ॥ ५४ ॥

सिक्तानि । शिलायां भवं शैलेयम् ॥ " शिलाजतु च शैलेयम् " इति यादवः ॥ यद्वा शिलापुष्पाख्य ओषधिविशेषः ॥ " कालानुसार्यवृद्धाश्मपुष्पशीतशिवानि तु । शैलेयम् " इत्यमरः ॥ " शिलाया ढः " इत्यत्र शिलाया इति योगविभागादिवार्थे ढञ्प्रत्ययः ॥ तद्गन्धवन्ति शैलेयगन्धीनि शिलातलान्यध्यास्याधिष्ठाय कलापिनां बर्हिणां नृत्यं पश्य ॥

५२ ॥ नृपमिति ॥ " स्यादावर्तोऽम्भसां भ्रमः " इत्यमरः ॥ आवर्तमनोज्ञा नाभिर्यस्याः सा । इदं च नदीसाम्यार्थमुक्तम् । अन्यवधूरन्यपत्नी भवित्री भाविनी सा कुमारी तं नृपम् । सागरगामिनी सागरं गन्त्री स्रोतोवहा नदी मार्गवशादुपेतं प्राप्तं महीधरं पर्वतमिव । व्यत्यगादतीत्य गता ॥

५३ ॥ अथेति । अथ भुजिष्या किंकरी सुनन्दा ॥ " भुजिष्यः किंकरो मतः " इति हलायुधः ॥ अङ्गदाश्लिष्टभुजं केयूरनद्धबाहुं सादितशत्रुपक्षं विनाशितशत्रुवर्गं हेमाङ्गदं नाम कलिङ्गनाथमासेदुषीमासन्नामबालेन्दुमुखीं पूर्णेन्दुमुखीं बालामिन्दुमतीं बभाषे ॥

५४ ॥ असाविति । महेन्द्राद्रेः समानसारस्तुल्यबलोऽसौ हेमाङ्गदो महेन्द्रस्य

---

the dance of peacocks, in the beautiful caves of the mountain Govardhana in the rainy season."

52. After this, she, who was destined to become the wife of another, with a beautiful navel resembling a whirlpool, passed by that king ; as a river, bent on going to the ocean, passes by a mountain accidently coming across its course.

53. Then the maid-servant spoke to the young damsel with a face like that of the full moon when she came, near the lord of the Kalingas, Hemángada by name, on whose arm was fastened the shoulder ornament and who had destroyed the host of his enemies.

54. "This king whose strength is equal to that of the mountain Mahendra, is the lord of Mahendra and the great ocean ; in

---

52. P_2. आलोक्य for आवर्त°.

53. C. with Su., and the text only of Val., आसेदुषीं, K. आसेदुषं for आसेदुषीं. K. P_3. अबालेन्दुमुखी, C. and the text only of Val., अबालेन्दुमुखीं for अबालेन्दुमुखीं.

54. L. reads first " ज्याघातरेखे &c., " and then " असौ &c. "

ज्याघातरेखे सुभुजो भुजाभ्यां बिभर्ति यश्चापभृतां पुरोगः।
रिपुश्रियां साञ्जनबाष्पसेके बन्दीकृतानामिव पद्धती द्वे ॥ ५५ ॥

नाम कुलपर्वतस्य महोदधेश्च पतिः स्वामी ॥ " महेन्द्रमहोदधी एवास्य गिरिजलदुर्गे " इति भावः ॥ यस्य यात्रासु क्षरतां मदस्राविणां सैन्यगजानां छलेन महेन्द्रो महेन्द्राद्रिः पुरोऽग्रे यातीव ॥ अद्रिकल्पा अस्य गजा इत्यर्थः ॥

५५ ॥ ज्याघातेति। सुभुजश्चापभृतां पुरोगो धनुर्धराग्रेसरो यः। बन्दीकृतानां प्रगृहीतानाम् ॥ " प्रग्रहोपग्रहौ बन्द्याम् " इत्यमरः ॥ रिपुश्रियां साञ्जनो बाष्पसेको ययोस्ते। कज्जलमिश्राश्रुसिक्ते इत्यर्थः। पद्धती, इव। द्वे ज्याघातानां मौर्वीकिणानां रेखे राजी भुजाभ्यां बिभर्ति ॥ द्विवचनात्सव्यसाचित्वं गम्यते। रिपुश्रियां भुजाभ्यामेवाहरणात्तद्गतरेखयोस्तत्पद्धतित्वेनोत्प्रेक्षा। तयोः श्यामत्वात्साञ्जनाश्रुसेकोक्तिः ॥

---

his marches the mountain Mahendra itself walks as it were, in front, in the semblance of the army of sweat-streaming elephants."

55. "This Hemàngada, the chief of all the bow-men, has an elegant pair of hands, and bears on his shoulders two marks of lines caused by the strokes of the bow-strings, the two footpaths, as it were, moist with tears mixed with collyrium, of the Fortune of

---

55. E. G. H. K. L. P. R. with Hem., Chà., Din., Su., and the text only of Vijay., °लेखे, C. with Val., °रेषे for °रेखे. P. R. रिपुश्रियं, D. with Din., रिपुश्रियाः, C. E. H. I. K. L. P_3. with Hem., Chà., Val., Dharm., Vija., and the text only of Vijay., रिपुश्रियः, D_2. with Su., रिपुस्त्रियः for रिपुश्रियां. L. °सिक्ते for °सेके. I. P. बन्दीकृतायां, C. E. H. I. K. L. P_2. with Hem., Chà., Din., Val., Su., Dharm., Vija., and the text only of Vijay., बन्दीकृतायाः for बन्दीकृतानां. Between 55-56 D_2. L. with Hem., Val., Chà., and Din., read :— " रणेऽभ्यमित्रीणतया प्रकाशः शरासनज्यानिकषौ भुजाभ्यां। विस्पष्टरेखौ रिपुविक्रमाग्नेर्निर्वाणमार्गाविव यो बिभर्ति " ॥ Hemâdri calls it पाठान्तरं. Vallabha does not comment upon it ; but Châ., and Din., explain it thus :—रणे अमित्रं शत्रुमभिमुखं गच्छतीत्यभ्यमित्रीणस्तस्य भावस्तत्ता। तया शत्रोरभिमुखगामितया। प्रकाशः प्रसिद्धो यो नृपो रिपुविक्रमाग्नेर्वैरिणां प्रतापानलस्य निर्वाणमार्गाविव प्रशमनस्य पंथानाविव विस्पष्टरेखौ शरासनज्यानिकषौ धनुःप्रत्यश्चाकिणौ भुजाभ्यां बिभर्ति। एतस्य बाहुयुगलं प्राप्य रिपूणां प्रतापानलो निर्वाणतामापत्यर्थः ॥

D_2. L. with Hem., and Chà., अभ्यमित्रीणतया,
Din., and Val., अमितत्रीणतया.

L. °निकर्णौ,
Hem., °निकखौ,
Chá., Din., D_2. °निकषौ.

L. विसृष्टलेखौ,
Val., विशिष्टरेषौ,
D_2. Hem., Chà., विस्पष्टरेखौ.

L. Chà., Val., रिपुविक्रमाग्नेः,
D_2. Hem., Din., रिपुविक्रमस्य.

Hemâdri only explains the word अभ्यमित्रीणतया.

यमात्मनः सद्मनि संनिकृष्टो मन्द्रध्वनित्याजितयामतूर्यः ।
प्रासादवातायनदृश्यवीचिः प्रबोधयत्यर्णव एव सुप्तम् ॥ ५६ ॥
अनेन सार्धं विहराम्बुराशेस्तीरेषु तालीवनमर्मरेषु ।
द्वीपान्तरानीतलवङ्गपुष्पैरपाकृतस्वेदलवा मरुद्भिः ॥ ५७ ॥
प्रलोभिताप्याकृतिलोभनीया विदर्भराजावरजा तयैवम् ।
तस्मादपावर्तत दूरकृष्टा नीत्येव लक्ष्मीः प्रतिकूलदैवात् ॥ ५८ ॥

५६ ॥ यमिति । आत्मनः सद्मनि सुप्तं यं हेमाङ्गदं संनिकृष्टः समीपस्थोऽत एव प्रासादवातायनैर्दृश्यवीचिर्मन्द्रेण गम्भीरेण ॥ "मन्द्रस्तु गम्भीरे" इत्यमरः ॥ ध्वनिना त्याजितो विवर्जितो यामस्य तूर्यः प्रहारावसानसूचकं वाद्यं येन स तथोक्तः ॥ "द्वौयामप्रहरौ समौ" इत्यमरः ॥ अर्णव एव प्रबोधयति ॥ अर्णवस्यैव तूर्यकार्यकारित्वात्तद्वैयर्थ्यमित्यर्थः । समुद्रस्यापि सेव्यः किमन्येषामिति भावः ॥

५७ ॥ अनेनेति । अनेन राज्ञा सार्धं तालीवनैर्मर्मरेषु मर्मरेति ध्वनत्सु ॥ "अथ मर्मरः । स्वनिते वस्त्रपर्णानाम्" इत्यमरवचनाद्गुणपरस्यापि मर्मरशब्दस्य गुणिपरत्वं प्रयोगादवसेयम् ॥ अम्बुराशेः समुद्रस्य तीरेषु द्वीपान्तरेभ्य आनीतानि लवङ्गपुष्पाणि देवकुसुमानि यैस्तैः ॥ "लवङ्गं देवकुसुमम्" इत्यमरः ॥ मरुद्भिर्वातैरपाकृताः प्रशमिताः स्वेदस्य लवा बिन्दवो यस्याः सा तथाभूता सती त्वं विहर क्रीड ॥

५८ ॥ प्रलोभितेति । आकृत्या रूपेण लोभनीयाकर्षणीया । न तु वर्णनमात्रे-

---

the enemies, when taken prisoner (*i. e.* when seized and carried off by Hemângada in his arms)."

56. "The ocean itself, the waves of which are seen from the windows of his palace, and the deep resounding roars of which surpass the sound of the watch-drum being close at hand, awakes him as it were, when slept in his palace-room."

57. "Sport, O princess, with this king on the seashore where the palm tree groves make a rustling noise, and where you will have your drops of perspiration removed by breezes that bring with them the sweet scent of the clove flowers from other islands."

58. At last the younger sister of the king of the Vidarbhas, who was of a most attractive figure and who though tempted in

---

56. D. संनिकृष्टं, L. सिद्धियुक्तं, C. with Hem., शुद्धियुक्ते, B. I. K. P_3. R. with Val., Su., and Vijay., संनिविष्टं, D_2. E. G. P. संनिविष्टः for संनिकृष्टः. D. H. with Châ., and Din., read :—"यमात्मनः सद्मनि सौधजालैरालोक्य वेलातटपूगमाली । मन्द्रध्वनित्याजितयामतूर्यः प्रबोधयत्यर्णव एव सुप्तम्" ॥ Hemâdri also notices आलोक्य वेलातटपूगमालः.

57. D. with Su., and the text only of Val., तटेषु for तीरेषु.

58. I. विलोभिता for प्रलोभिता. D. H. L. प्रलोभिता सत्यपि सन्नतभ्रूः for प्रलोभिताप्याकृतिलोभनीया. This reading of these three Mss. is also notic-

अथोरगाख्यस्य पुरस्य नाथं दौवारिकी देवसरूपमेत्य ।
इतश्चकोराक्षि विलोकयेति पूर्वानुशिष्टां निजगाद भोज्याम् ॥ ५९ ॥

णेत्यर्थः । विदर्भराजावरजा भोजानुजेन्दुमती तया सुनन्दयैवं प्रलोभितापि प्रचोदितापि । नीत्या पुरुषकारेण दूरकृष्टा दूरमानीता लक्ष्मीः प्रतिकूलं दैवं यस्य तस्मात्पुंस इव । तस्माद्धेमाङ्गदादपावर्तत प्रतिनिवृत्ता ॥

५९ ॥ अथेति । अथ द्वारे नियुक्ता दौवारिकी सुनन्दा ॥ "तत्र नियुक्तः" इति ठक्प्रत्ययः ॥ "द्वारादीनां च" इत्यौ आगमः ॥ आकारेण देवसरूपं देवतुल्यम् । उरगाख्यस्य पुरस्य पाण्ड्यदेशे कान्यकुब्जतीरवर्तिनागपुरस्य नाथमेत्य प्राप्य । हे चकोराक्षि । इतो विलोकय । इति पूर्वानुशिष्टां पूर्वमुक्तां भोजस्य राज्ञो गोत्रापत्यं स्त्रियं भोज्यामिन्दुमतीम् ॥ "क्रौड्यादिभ्यश्च" इत्यत्र भोजात्क्षत्रियादित्युपसंख्यानात्ष्यङ्प्रत्ययः ॥ "यङश्चाप्" इति चाप् ॥ निजगाद ॥ इतो विलोकयेति पूर्वमुक्त्वा पश्चाद्वक्तव्यं निजगादेत्यर्थः ॥

---

this way by her (*i. e.* Sunandâ), did turn away from him, as the goddess of Fortune turns away from an unfortunate fellow though brought from a distance by his manly exertions.

59. After this the door-keeper सुनन्दा came to the lord of the city called नागपुर, who resembled a god (in bodily frame), and spoke to the princess of Bhoja who had been previously addressed

---

ed by Hemâdri. R. °वरजां तथैवं for °वरजा तयेवं. Vallabha's text reads उपावर्तित for अपावर्तत. Between 58-59 L. with Hem., and Val., read :— "अथाधिगम्योरगराजकल्पं पतिं पुरस्योरगपूर्वनाम्नः । आचारपूतोभयवंशदीपं शुद्धान्तरक्ष्या जगदे कुमारी" ॥ Vallabha does not comment upon this and calls it a क्षेपक, so does Hemâdri and yet he explains this in the following manner :—"क्षेपकोऽपि व्याख्यायते ॥ अथेति । अथ शुद्धान्तरक्ष्या सुनन्दया कुमारी जगदे ॥ कर्मणि ॥ आचारेण पूतयोरुभयोर्वंशयोर्दीपं । उरगराजकल्पं ॥ ईषदपरिसमाप्तौ कल्पः ॥ उरगपूर्वनाम्नः पुरस्य नागपुरस्य पतिमधिगम्य ॥ अधिगत्येति पाठे "वा ल्यपीति" अनुनासिकलोपः ॥

{ L. Val., Hem., अधिगम्य, Hem., notices अधिगत्य. } { L. Hem., उरगराजकल्पं, Val., अभुवराजकल्पं. }
{ L. पुरस्योरगपूर्वनाथं, Hem., पुरस्यारगपूर्वनाम्नः, Val., पुरस्योरुगपूर्वनाम्नः. } { L. °शुद्धोभय°, Hem., Val., ° पूतोभय°. }

59. E. with Val., उरगाक्षस्य, I. L. P_3. R. with the text only of Val., उरुगाख्यस्य for उरगाख्यस्य. One of the three Mss of Hemâdri's दर्पण reads उरुगाख्यस्य. E. कवारिका for दौवारिकी. D. with Vijay., देवस्वरूपं, B. C. E. G. H. K. P. R. with Hem., Châ., Val., Din., Su., and the text only of Vijay., देवसमानं for देवसरूपं. B. E. नागाङ्गनाभां, L. P. पूर्वानुशिष्टा, C. with Châ., पूर्वानुसृष्टां for पूर्वानुशिष्टां. P. अभिजगाद for निजगाद. H. has भोगान् for भोज्याम्.

पाण्ड्योऽयमंसार्पितलम्बहारः क्लृप्ताङ्गरागो हरिचन्दनेन ।
आभाति बालातपरक्तसानुः सनिर्झरोद्गार इवाद्रिराजः ॥ ६० ॥
विन्ध्यस्य संस्तम्भयिता महाद्रेर्निःशेषपीतोज्झितसिन्धुराजः ।
प्रीत्याश्वमेधावभृथार्द्रमूर्तेः सौस्नातिको यस्य भवत्यगस्त्यः ॥ ६१ ॥

६० ॥ पाण्ड्य इति । अंसयोरर्पिताः । लम्बन्त इति लम्बाः । हारा यस्य सः । हरिचन्दनेन गोशीर्षाख्येन चन्दनेन ॥ " तैलपर्णी तु गोशीर्षं हरिचन्दनम् " इत्यमरः ॥ क्लृप्ताङ्गरागः सिद्धानुलेपनोऽयं पाण्डूनां जनपदानां राजा पाण्ड्यः ॥ " पाण्डोर्जनपदशब्दात्क्षत्रियाड्ड्यण्वक्तव्यः " इति ड्यण्प्रत्ययः ॥ तस्य राजन्यपत्यवदितिवचनात् ॥ बालातपेन रक्ता अरुणाः सानवो यस्य स सनिर्झरोद्गारः प्रवाहस्पन्दनसहितः ॥ " प्रवाहो निर्झरो झरः " इत्यमरः ॥ अद्रिराज इवाभाति ॥

६१ ॥ विन्ध्यस्येति । विन्ध्यस्य नाम्नो महाद्रेः । तपनमार्गनिरोधाय वर्धमानस्येति शेषः । संस्तम्भयिता निवारयिता निःशेषं पीत उज्झितः पुनस्त्यक्तः सिन्धुराजः समुद्रो येन सोऽगस्त्योऽश्वमेधस्यावभृथे दीक्षान्ते कर्मणि ॥ " दीक्षान्तोऽवभृथो यज्ञः " इत्यमरः ॥ आर्द्रमूर्तेः । स्नातस्येत्यर्थः । यस्य पाण्ड्यस्य प्रीत्या स्नेहेन । न तु दाक्षिण्येन । सुस्नातं पृच्छतीति सौस्नातिकः । भवति ॥ " पृच्छतौ सुस्नातादिभ्यः " इत्युपसंख्यानाट्ठक् ॥

---

in the following manner :—" O you with eyes like those of the चकोर bird, please, look this way. "

60. " Here sits the king of the Pâṇḍus, who has applied scented paste of red sandle to his body from whose shoulders hang down the pearl-garlands and who looks like the king of the mountains whose summits are reddened with the rays of the morning sun and which has rivulets flowing downwards. "

61. " The sage Agastya, the subduer of the great mountain Vindhya, and by whom the ocean was drunk up to a drop and poured forth again, became, through affection, the catechiser on holy ablutions of him whose person was wet with the concluding holy baths of the As'vamedha sacrifice. "

---

60. B. C. E. I. K. P_2. R. with Val., Vija., and the text only of Vijay., 'लम्बि' for 'लम्ब'. Vallabha's text with us. A. D. H. with Hem., कृतांगरागः for क्लृप्तांगरागः.

61. A. C. D. with Hem., and Val., वन्ध्यस्य for विन्ध्यस्य. B. C. E. with Châ., Din., Val.,and the text only of Su., सिन्धुनाथः for सिन्धुराजः. Vallabha's text with us. D. अगस्तिः for अगस्त्यः. Hemâdri also notices the reading.

अस्त्रं हरादाप्तवता दुरापं येनेन्द्रलोकावजयाय दृप्तः ।
पुरा जनस्थानविमर्दशङ्की संधाय लङ्काधिपतिः प्रतस्थे ॥ ६२ ॥
अनेन पाणौ विधिवद्गृहीते महाकुलीनेन महीव गुर्वी ।
रत्नानुविद्धार्णवमेखलाया दिशः सपत्नी भव दक्षिणस्याः ॥ ६३ ॥
ताम्बूलवल्लीपरिणद्धपूगास्वेलालतालिङ्गितचन्दनासु ।
तमालपत्त्रास्तरणासु रन्तुं प्रसीद शश्वन्मलयस्थलीषु ॥ ६४ ॥

६२ ॥ अस्त्रमिति । पुरा पूर्वं जनस्थानस्य खरालयस्य विमर्दशङ्की दृप्त उद्धतो लङ्काधिपती रावणो दुरापं दुर्लभमस्त्रं ब्रह्मशिरोनामकं हरादाप्तवता येन पाण्ड्येन संधाय । इन्द्रलोकावजयायेन्द्रलोकं जेतुं प्रतस्थे ॥ इन्द्रविजयिनो रावणस्यापि विजेतेत्यर्थः ॥

६३ ॥ अनेनेति । महाकुलीनेन महाकुले जातेन ॥ " महाकुलादञ्खञौ " इति खञ्प्रत्ययः ॥ अनेन पाण्ड्येन पाणौ त्वदीये विधिवद्यथाशास्त्रं गृहीते सति गुर्वी गुरुः ॥ " वोतो गुणवचनात् " इति ङीष् ॥ महीव रत्नैरनुविद्धो व्याप्तोऽर्णव एव मेखला यस्यास्तस्याः ॥ इदं विशेषणं मह्यामिन्दुमत्यां च योज्यम् ॥ दक्षिणस्या दिशः सपत्नी भव ॥ अनेन सपत्न्यन्तराभावो ध्वन्यते ॥

६४ ॥ ताम्बूलेति । ताम्बूलवल्लीभिर्नागवल्लीभिः परिणद्धाः परिरब्धाः पूगाः क्रमुका यासु तासु ॥ " ताम्बूलवल्ली ताम्बूली नागवल्ल्यपि " इति ॥ " घोण्टा तु

62. " In former times the haughty king of लंका, fearing the destruction of जनस्थान, made peace with this king who had obtained from S'iva a missile which was hard to be overcome, and then set out for the conquest of the regions of Indra. "

63. " When this prince of an illustrious race has taken your hand in marriage according to the rule, you may, like the great earth, become a fellow-wife to the southern quarter having for its girdle the ocean abounding in jewels. "

64. " Be pleased, O princess, to sport often-times in the dales of the Malaya mountain, over-spread with Tamâla leaves, where

62. B. C. E. I. K. R. with Châ., Din., Su., Dharm., Vijay., and the text of Val., °लोकाविजयाय for °लोकावजयाय. A. C. D. E. दृष्टः for दृप्तः. Hemâdri notices this reading and says :—दृष्टः इति पाठे उद्युक्तः । दृष्टो ब्राह्मणविरोधं इतिवत् । One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण reads here ब्राह्मण वधं &c.

63. L. महीकुलीनेन, Vallabha's text महाकुलीतेन for महाकुलीनेन. Hemâdri notices the reading of L. Ms. K. P. गुर्वां for गुर्वी. C. with Val., °मेघलायाः for °मेखलायाः. D. with Vijay., दक्षिणायाः for दक्षिणस्याः. Vallabha's text also reads this.

64. Vijayânandasûricharaṇasevaka's text reads °पर्णी° for °वल्ली.° Vijay., शश्वत्प्रसीद रन्तुं for रन्तुं प्रसीद शश्वन्.

इन्दीवरश्यामतनुर्नृपोऽसौ त्वं रोचनागौरशरीरयष्टिः ।
अन्योन्यशोभापरिवृद्धये वां योगस्तडित्तोयदयोरिवास्तु ॥ ६५ ॥
स्वसुर्विदर्भाधिपतेस्तदीयो लेभेऽन्तरं चेतसि नोपदेशः ।
दिवाकरादर्शनबद्धकोशे नक्षत्रनाथांशुरिवारविन्दे ॥ ६६ ॥
संचारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा ।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः ॥ ६७ ॥

पूगः क्रमुकः " इति चामरः ॥ एलालताभिरालिङ्गिताश्चन्दना मलयजा यासु तासु ॥ " गन्धसारो मलयजो भद्रश्रीश्चन्दनोऽस्त्रियाम् " इत्यमरः ॥ तमालस्य तापिच्छस्य पत्त्राण्येवास्तरणानि यासु तासु ॥ " कालस्कन्धस्तमालः स्यात्तापिच्छोऽपि " इत्यमरः ॥ मलयस्थलीषु शश्वन्मुहुः सदा वा रन्तुं प्रसीदानुकूला भव ॥

६५ ॥ इन्दीवरेति । असौ नृप इन्दीवरश्यामतनुः । त्वं रोचना गोरोचनेव गौरी शरीरयष्टिर्यस्याः सा । अतस्तडित्तोयदयोर्विद्युन्मेघयोरिव वां युवयोर्योगः समागमोऽन्योन्यशोभायाः परिवृद्धयेऽस्तु ॥

६६ ॥ स्वसुरिति । विदर्भाधिपतेर्भोजस्य स्वसुरिन्दुमत्याश्चेतसि तदीयः सुनन्दासंबन्ध्युपदेशो वाक्यम् । दिवाकरस्यादर्शनेन बद्धकोशे मुकुलितेऽरविन्दे नक्षत्रनाथांशुश्चन्द्रकिरण इव । अन्तरमवकाशं न लेभे ॥

६७ ॥ संचारिणीति । पतिंवरा सेन्दुमती रात्रौ संचारिणी दीपशिखेव यं यं

---

the sandle trees are encircled (*lit.* embraced) with cardamom creepers, and where the betel trees are enclosed within a ring of ताम्बूल creepers. "

65. " This prince has a body dark like the blue lotus, and your bodily frame is as fair as the yellow-pigment. May the union of both of you set off each other's beauty, like that of lightning and cloud. "

66. But Sunandâ's address did not find footing in the heart of the sister of the lord of the Vidarbhas, as the rays of the lord of stars (the moon) find no room in the daylotus with its receptacle closed in consequence of the disappearance of the sun.

67. Whatsoever king, she who was bent on choosing a husband, passed by, every one of them was turned pale (*lit.* got

---

65. C. H. °श्यामरुचिः for °श्यामतनुः. D. L. with Châ., and Din., अयं for असौ. P_2. °परिवृत्तयेव for °परिवृद्धये वां. C. with Hem., दृष्टिः, D. with Vijay., कान्तिः for यष्टिः. Vijay., notices the reading of Mallinâtha.

66. D. G. H. L. with Châ., and Din., तारापतेरंशुः for नक्षत्रनाथांशुः. Between 67-68 Vijay.'s text reads :—" यदा यदा राजकुमारिकासौ न पूर्वपूर्वं गणयाश्चकार । तदा तदा नामितरफरषामाशालता पल्लविनी बभूव " ॥

67. C. D. with Vallabha's text, °शिषेव for °शिखेव.

तस्यां रघोः सूनुरुपस्थितायां वृणीत मां नेति समाकुलोऽभूत् ।
वामेतरः संशयमस्य बाहुः केयूरबन्धोच्छ्वसितैर्नुनोद ॥ ६८ ॥
तं प्राप्य सर्वावयवानवद्यं व्यावर्ततान्योपगमात्कुमारी ।
न हि प्रफुल्लं सहकारमेत्य वृक्षान्तरं काङ्क्षति षट्पदाली ॥ ६९ ॥

भूमिपालं व्यतीयायातीत्य गता स स भूमिपालः । स सर्व इत्यर्थः ॥ "नित्यवीप्सयोः" इति वीप्सायां द्विर्वचनम् ॥ नरेन्द्रमार्गे राजपथेऽट्टाख्यो गृहभेद इव ॥ "स्यादट्टः क्षौममस्त्रियाम्" इत्यमरः ॥ विवर्णभावं विच्छायत्वम् । अट्टस्तु तमोवृतत्वम् । प्रपेदे ॥

६८ ॥ तस्यामिति । तस्यामिन्दुमत्यामुपस्थितायामासन्नायां सत्यां रघोः सूनुरजो मां वृणीत न वेति समाकुलः संशयितोऽभूत् ॥ अथास्याजस्य वामेतरो वामादितरो दक्षिणो बाहुः । केयूरं बध्यतेऽत्रेति केयूरबन्धोऽङ्गदस्थानम् । तस्योच्छ्वसितैः स्फुरणैः संशयं नुनोद ॥

६९ ॥ तमिति । कुमारी । सर्वेष्ववयवेष्वनवद्यमदोषं तमजं प्राप्य । अन्योपगमाद्राजान्तरोपगमाद्व्यावर्तत निवृत्ता ॥ तथा हि । षट्पदाली भृङ्गावलिः ॥ प्रफुल्लतीति प्रफुल्लं विकसितम् । पुष्पितमित्यर्थः ॥ प्रपूर्वात्फुल्लतेः पचाद्यच् ॥ फलतेस्तु प्रफुल्तमिति पठितव्यम् ॥ "अनुपसर्गात्—" इति निषेधात् ॥ इत्युभयथापि न काचिदनुपपत्तिरित्युक्तं प्राक् ॥ सहकारं चूतविशेषमेत्य ॥ "आम्रश्चूतो रसालोऽसौ सहकारोऽतिसौरभः" इत्यमरः ॥ वृक्षान्तरं न काङ्क्षति ॥ न हि सर्वोत्कृष्टवस्तुलाभेऽपि वस्त्वन्तरस्याभिलाषः स्यादित्यर्थः ॥

---

into a state of pale-facedness) ; like a buttress on the royal-road when the moving flame of a light (or torch) goes beyond it at night.

68. When she came near, the son of Raghu became doubtful as to whether she would choose him or not. But the throbbing of his right arm, which had loosened the bands of his shoulder-ornaments, completely removed his doubt.

69. At last the princess approached Aja who was faultless in all his limbs and gave up the idea of going to any other prince ; as a row of bees does not long for any other tree when it reaches a full blossomed mango tree.

---

68. D. E. K. with Chá., and Din., मा for मां. L. केयूरकोटिच्छ्वसितैर्नुनोद for केयूरबन्धोच्छ्वसितैर्नुनोद. D. आश्वासितस्तत्क्षणमंसकूटे वामेतरेण स्फुरता भुजेन ॥ for the last two Pádas. Hemádri also notices the reading.

69. L. न्यवर्तत for व्यावर्तत. G. P. षट्पदालिः for षट्पदाली.

तस्मिन्समावेशितचित्तवृत्तिमिन्दुप्रभामिन्दुमतीमवेक्ष्य ।
प्रचक्रमे वक्तुमनुक्रमज्ञा सविस्तरं वाक्यमिदं सुनन्दा ॥ ७० ॥
इक्ष्वाकुवंश्यः ककुदं नृपाणां ककुत्स्थ इत्याहितलक्षणोऽभूत् ।
काकुत्स्थशब्दं यत उन्नतेच्छाः श्लाघ्यं दधत्युत्तरकोसलेन्द्राः ॥ ७१ ॥

७० ॥ तस्मिन्निति । तस्मिन्नजे समवेशिता संक्रामिता चित्तवृत्तिर्यस्यास्ताम् । इन्दोः प्रभेव प्रभा यस्यास्ताम् ॥ आह्लादकत्वादिन्दुसाम्यम् ॥ इन्दुमतीमवेक्ष्यानुक्रमज्ञा वाक्यपौर्वापर्याभिज्ञा सुनन्देदं वक्ष्यमाणं सविस्तरं सप्रपञ्चम् ॥ " प्रथने वावशब्दे " इति घञो निषेधात्—" ऋदोरप् " इत्यप्प्रत्ययः ॥ " विस्तारो विग्रहो व्यासः स तु शब्दस्य विस्तरः " इत्यमरः ॥ वाक्यं वक्तुं प्रचक्रमे ॥

७१ ॥ इक्ष्वाकिति । इक्ष्वाकोर्मनुपुत्रस्य वंश्यो वंशे भवः । नृपाणां ककुदं श्रेष्ठः ॥ " ककुच्च ककुदं श्रेष्ठे वृषांसे राजलक्ष्मणि " इति विश्वः ॥ आहितलक्षणः प्रख्यातगुणः ॥ " गुणैः प्रतीते तु कृतलक्षणाहितलक्षणौ " इत्यमरः ॥ ककुदि वृषांसे तिष्ठतीति ककुत्स्थ इति प्रसिद्धः कश्चिद्राजाभूत् । यतः ककुत्स्थादारभ्योन्नतेच्छा महाशयाः ॥ " महेच्छस्तु महाशयः " इत्यमरः ॥ उत्तरकोसलेन्द्रा राजानो दिलीपादयः श्लाघ्यं प्रशस्तम् । ककुत्स्थस्यापत्यं पुमान्काकुत्स्थ इति शब्दं संज्ञां दधति बिभ्रति ॥ तन्नामसंस्पर्शोऽपि वंशस्य कीर्तिकर इति भावः ॥ पुरा किल पुरंजयो नाम साक्षाद्भगवतो विष्णोरंशावतारः कश्चिदैक्ष्वाको राजा देवैः सह समयबन्धेन देवासुरयुद्धे महोक्षरूपधारिणो महेन्द्रस्य ककुदि स्थित्वा पिनाकिलीलया निखिलमसुरकुलं निहत्य ककुत्स्थसंज्ञां लेभे । इति पौराणिकी कथानुसंधेया ॥ वक्ष्यते चायमेवार्थ उत्तरश्लोके ॥

---

70. Sunandá, versed in the art (*lit.* proper order) of speech, having observed Indumatí, possessed of the splendour of the moon, to have fixed her heart (*lit.* to have fixed her tendency of mind) on him proceeded to make the following observation in detail.

71. And said,—" they say that there was a king named Kakustha, descended from the race of Ikshvâku,—the king who was the foremost of all the kings, and noted for his good qualities ; and from whom the lords of the Uttarakosalas of noble aspirations inherit the dignified title of Kákustha. "

---

70. H. I. L. R. with Chá., Din., Su., and the text only of Val., अवेत्य for अवेक्ष्य. K. L. P_2. सुविस्तरं, R. सविस्मयं for सविस्तरं.

71. P_2. ककुदां for ककुदं. The texts of Su., and Vijay., read आहतलक्षणः for आहितलक्षणः, and not for better. A. C. D. E. G. H. I. J. K. L. P_2. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vijay., कोशलेन्द्राः for कोसलेन्द्राः. P_2. P_3 first read " महेन्द्रमास्थाय " and then " इक्ष्वाकुवंश्यः &c. "

महेन्द्रमास्थाय महोक्षरूपं यः संयति प्राप्तपिनाकिलीलः ।
चकार बाणैरसुराङ्गनानां गण्डस्थलीः प्रोषितपत्त्रलेखाः ॥ ७२ ॥
ऐरावतास्फालनविश्लथं यः संघट्टयन्नङ्गदमङ्गदेन ।
उपेयुषः स्वामपि मूर्तिमग्र्यामर्धासनं गोत्रभिदोऽधितष्ठौ ॥ ७३ ॥
जातः कुले तस्य किलोरुकीर्तिः कुलप्रदीपो नृपतिर्दिलीपः ।
अतिष्ठदेकोनशतक्रतुत्वे शक्राभ्यसूयाविनिवृत्तये यः ॥ ७४ ॥

७२ ॥ महेन्द्रमिति । यः ककुत्स्थः संयति युद्धे । महानुक्षा महोक्षः ॥ "अचतुर—" इत्यादिना निपातः ॥ तस्य रूपमिव रूपं यस्य तं महेन्द्रमास्थायारुह्य । अत एव प्राप्ता पिनाकिन ईश्वरस्य लीला येन स तथोक्तः सन्बाणैरसुराङ्गनानां गण्डस्थलीः प्रोषितपत्त्रलेखा निवृत्तपत्त्ररचनाश्चकार ॥ तद्भर्तॄनसुरानवधीदित्यर्थः ॥ न हि विधवाः प्रसाध्यन्त इति भावः ॥

७३ ॥ ऐरावतेति । यः ककुत्स्थ ऐरावतस्य स्वर्गजस्यास्फालनेन ताडनेन विश्लथं शिथिलमङ्गदमैन्द्रमङ्गदेन स्वकीयेन संघट्टयन्संघर्षयन्स्वामग्र्यां श्रेष्ठां मूर्तिमुपेयुषोऽपि प्राप्तस्यापि । गोत्रभिद इन्द्रस्यार्धमासनस्यार्धासनम् ॥ "अर्धं नपुंसकम्" इति समासः ॥ अधितष्ठावधिष्ठितवान् ॥ स्थादिष्वभ्यासेन चाभ्यासस्येत्यभ्यासेन व्यवायेऽपि षत्वम् ॥ न केवलं महोक्षरूपधारिण एवेन्द्रस्य ककुदमारुक्षत् । किं तु निजरूपधारिणोऽपीन्द्रस्यार्धासनमित्यपिशब्दार्थः । अथ वा । अर्धासनमपीत्यपेरन्वयः ॥

७४ ॥ जात इति । उरुकीर्तिर्महायशाः ॥ कुलप्रदीपो वंशप्रदीपको दिलीप इति

---

72. "Playing the Pinâkin in battle by mounting upon the great Indra in the form of a great bull, he by means of his arrows rendered the cheeks of the Asura females, devoid of amorous paintings."

73. "Causing his own armlet to rub against that of Indra, loosened by the blows inflicted on the celestial elephant, this king पुरंजय occupied half the seat of the Destroyer of the mountains, even when Indra had assumed his original excellent form."

74. "It is said that in his race was born the king Dilipa of wide fame, the light of his family, who stood in the position of a

---

72. C. with Su., and Vijay., माहेन्द्रं for महेन्द्रं. And explain:—माहेन्द्रं पर्वतमास्थायारुह्य. H. P₂. with the text only of Vallabha °पिनाकलीलः for °पिनाकिलीलः. C. E. P₂. with Val., and Vijay., गल्लस्थलीः for गण्डस्थलीः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Vallabha and others.

73. C. H. with Châ., Su., Vija., Dharm., and Vijay., ऐरावणास्फालन° for ऐरावतास्फालन°. H. L. स्वामिव for स्वामपि. C. D. L. °कर्कशं for °विश्लथं. C. D. L. अन्यां for अग्र्यां. B. C. E. H. I. J. K. P_2. R

यस्मिन्महीं शासति वाणिनीनां निद्रां विहारार्धपथे गतानाम् ।
वातोऽपि नास्रंसयदंशुकानि को लम्बयेदाहरणाय हस्तम् ॥ ७५ ॥
पुत्रो रघुस्तस्य पदं प्रशास्ति महाक्रतोर्विश्वजितः प्रयोक्ता ।
चतुर्दिगावर्जितसंभृतां यो मृत्पात्रशेषामकरोद्विभूतिम् ॥ ७६ ॥

नृपतिस्तस्य ककुत्स्थस्य कुले जातः किल । यो दिलीपः शक्राभ्यसूयाविनिवृत्तये । न त्वशक्त्येति भावः । एकेनोनाः शतं क्रतवो यस्य स एकोनशतक्रतुः । तस्य भावे तत्त्वेऽतिष्ठत् ॥ इन्द्रप्रीतये शततमं क्रतुमवशेषितवानित्यर्थः ॥

७५ ॥ यस्मिन्निति । यस्मिन्दिलीपे महीं शासति साति । विहरन्त्यत्रेति विहारः क्रीडास्थानम् । तस्यार्धपथे निद्रां गतानां वाणिनीनां मत्ताङ्गनानाम् ॥ " वाणिनी नर्तकीमत्ताविदग्धवनितासु च " इति विश्वः ॥ " वाणिन्यौ नर्तकीमत्ते " इत्यमरश्च ॥ अंशुकानि वस्त्राणि वातोऽपि नास्रंसयन्नाकम्पयत् । आहरणायापहर्तुं को हस्तं लम्बयेत् ॥ तस्याज्ञासिद्धत्वादकुतोभयसंचाराः प्रजा इत्यर्थः ॥ अर्धश्चासौ पन्थाश्चेति विग्रहः । समप्रविभागे प्रमाणाभावान्नैकदेशिसमासः ॥

७६ ॥ पुत्र इति । विश्वजितो नाम महाक्रतोः प्रयोक्तानुष्ठाता तस्य दिलीपस्य

---

performer of ninety-nine sacrificial ceremonies in order to desist from the spite of *S*akra."

75. "When he was reigning over the earth, even the breeze did not disturb the garments of drunken women fallen asleep on half the way to the pleasure-ground. Who could then stretch forth his hand to take them away?"

76. "His son Raghu, the performer of the great sacrifice called Vis'vajit, now reigns in his place, who turned his wealth, amassed by the sweeping of the four quarters, into the residue of an earthen pot."

---

with Chá., Din., Val., Su., Dharm., Vija., and Vijay., अधितस्थौ, D. L. अधितस्थे for अधितष्ठौ. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Chàritravardhana and others.

75. A. L. कामिनीनां, D. पाणिनीनां for वाणिनीनां. Also noticed by Hemádri, who says :—"पाणिनीनां" इति पाठे पणन्ते व्यवहरन्ते तच्छीलाः । दध्यादिक विक्रेयं कल्यन्तासां. D. विहारार्धपथे for विहारार्धपथे. A. C. I. वाहयेत् for लम्बयेत्. These Mss. also notice the reading of Mallinâtha. B. C. E. G. H. I. K. L. P. R. with Hem., Val., Su., Dharm., Vija., and Vijay., आभरणाय for आहरणाय. Hemádri notices the reading of Mallinàtha. Chàritravardhana and Dinakara notice the reading of Hemádri and others. They read with Mallinátha.

76. B. चतुर्दिगावर्जनसंभृतायां, D. with Val., and Vija., चतुर्दिगावर्जनसंभृतानां, E. I. K. R. with Chá., Din., Su., Dharm., Vijay., and the text only of Val., चतुर्दिगावर्जनसंभृतां यः for चतुर्दिगावर्जितसंभृतां यः.

आरूढमद्रीनुदधीन्वितीर्णं भुजंगमानां वसतिं प्रविष्टम् ।
ऊर्ध्वं गतं यस्य न चानुबन्धि यशः परिच्छेत्तुमियत्तयालम् ॥ ७७ ॥
असौ कुमारस्तमजोऽनुजातस्त्रिविष्टपस्येव पतिं जयन्तः ।
गुर्वीं धुरं यो भुवनस्य पित्रा धुर्येण दम्यः सदृशं बिभर्ति ॥ ७८ ॥

पुत्रो रघुः पदं पैत्र्यमेव प्रशास्ति पालयति । यो रघुश्चतसृभ्यो दिग्भ्य आवर्जिताहृता संभृता सम्यग्वर्धिता च या तां चतुर्दिगावर्जितसंभृतां विभूतिं संपदं मृत्पात्रमेव शेषो यस्यास्तामकरोत् ॥ विश्वजिद्यागस्य सर्वस्वदक्षिणाकत्वादित्यर्थः ॥

७७ ॥ आरूढमिति । किं च । अद्रीनारूढम् । उदधीन्वितीर्णमवगाढम् । सकलभूगोलव्यापकमित्यर्थः । भुजंगमानां वसतिं पातालं प्रविष्टम् । ऊर्ध्वं स्वर्गादिकं गतं व्याप्तम् । इत्थं सर्वदिग्व्यापीत्यर्थः । अनुबध्नातीत्यनुबन्धि चाविच्छेदि । कालत्रयव्यापकं चेत्यर्थः । अत एवैवं भूतं यस्य यशः इयत्तया देशतः कालतो वा केनचिन्मानेन परिच्छेत्तुं परिमातुं नालं न शक्यम् ॥

७८ ॥ असाविति । असावजाख्यः कुमारः । त्रिविष्टपस्य स्वर्गस्य पतिमिन्द्रं जयन्त इव ॥ " जयन्तः पाकशासनिः " इत्यमरः ॥ तं रघुमनुजातः । तस्माज्जात इत्यर्थः ॥ तज्जातोऽपि तदनुजातो भवति जन्यजनकयोरानन्तर्यात् ॥ " गत्यर्थाकर्मकश्लिषशीङ्स्थासवसजनरुहजीर्यतिभ्यश्च " इति क्तः ॥ सोपसृष्टत्वात्सकर्मकत्वम् ॥ आह चात्रैव सूत्रे वृत्तिकारः—" श्लिषादयः सोपसर्गाः सकर्मका भवन्ति " इति ॥ दम्यः शिक्षणीयावस्थः । योऽजो गुर्वीं भुवनस्य धुरं धुर्येण चिरनिरूढेन पित्रा सदृशं तुल्यं यथा तथा बिभर्ति ॥ यथा कश्चिद्वत्सतरोऽपि धुर्येण महोक्षेण समं वहतीत्युपमालंकारो ध्वन्यते ॥ " दम्यवत्सतरौ समौ " इत्यमरः ॥

---

77. " His fame had ascended to the mountains, had plunged into the oceans (*i. e.* had reached as far as the ocean), had entered Pàtâla, the abode of serpents, had gone up to the skies, was eternal (*i. e.* and yet extensive enough to occupy more space) and too much to be measured by any standard. "

78. " This prince Aja is born of him, as Jayanta is born of the lord of the heavens ; he bears the weighty yoke of the world equally with his father, like as a young bull with one broken to the yoke. "

---

77. B. C. E. G. H. K. L. P. R. with Hem., Chà., Din , Val., Su., Dharm., Vija., and Vijay., प्रतीर्णं, D. I. च तीर्णं for वितीर्णं. C. with Hem., निलयं, L. वसतीः for वसतिं.

78. C. D. with Chá., and Su., अजोऽनु जातः for अजोऽनुजातः. Cháritravardhana and Sumativijaya construe अनु with पतिं in the sense of कर्मप्रवचनीय, for they say :—त्रिविष्टपस्य पतिमनु त्रिविष्टपपतिना शक्रेण जयन्त इव॥ " अनुर्लक्षणे " इति कर्मप्रवचनीयसंज्ञा तद्योगे द्वितीया । लक्षणं हेतुरित्यर्थः ॥ Vallabha also notices this. B. C. E. H. I. P. R. with Val., Su., and Vijay., सदृशीं for सदृशं.

कुलेन कान्त्या वयसा नवेन गुणैश्च तैस्तैर्विनयप्रधानैः ।
त्वमात्मनस्तुल्यममुं वृणीष्व रत्नं समागच्छतु काञ्चनेन ॥ ७९ ॥
ततः सुनन्दावचनावसाने लज्जां तनूकृत्य नरेन्द्रकन्या ।
दृष्ट्या प्रसादामलया कुमारं प्रत्यग्रहीत्संवरणस्रजेव ॥ ८० ॥
सा यूनि तस्मिन्नभिलाषबन्धं शशाक शालीनतया न वक्तुम् ।
रोमाञ्चलक्ष्येण स गात्रयष्टिं भित्त्वा निराक्रामदरालकेश्याः ॥ ८१ ॥
तथागतायां परिहासपूर्वं सख्यां सखी वेत्रभृदाबभाषे ।
आर्ये व्रजामोऽन्यत इत्यथैनां वधूरसूयाकुटिलं ददर्श ॥ ८२ ॥

७९ ॥ कुलेनेति । कुलेन कान्त्या लावण्येन नवेन वयसा यौवनेन विनयः प्रधानं येषां तैस्तैस्तैर्गुणैः श्रुतशीलादिभिश्चात्मनस्तुल्यं स्वानुरूपममुमजं त्वं वृणीष्व । किं बहुना । रत्नं काञ्चनेन समागच्छतु संगच्छताम् ॥ प्रार्थनायां लोट् ॥ रत्नकाञ्चनयोरिवात्यन्तमनुरूपत्वाद्युवयोः समागमः प्रार्थ्यत इत्यर्थः ॥

८० ॥ तत इति । ततः सुनन्दावचनस्यावसानेऽन्ते नरेन्द्रकन्येन्दुमती लज्जां तनूकृत्य संकोच्य । प्रसादेन मनःप्रसादेनामलया प्रसन्नया दृष्ट्या संवरणस्य स्रजा स्वयंवरणार्थं स्रजेव कुमारमजं प्रत्यग्रहीत्स्वीचकार ॥ सम्यक्सानुरागमपश्यदित्यर्थः ॥

८१ ॥ सेति । सा कुमारी यूनि तस्मिन्नजेऽभिलाषबन्धमनुरागग्रन्थिं शालीनतया धृष्टतया ॥ "स्यादधृष्टस्तु शालीनः" इत्यमरः ॥ "शालीनकौपीने अधृष्टकार्ययोः" इति निपातः ॥ वक्तुं न शशाक । तथाप्यरालकेश्याः सोऽभिलाषबन्धो रोमाञ्चलक्ष्येण पुलकव्याजेन ॥ "व्याजोऽपदेशो लक्ष्यं च" इत्यमरः ॥ गात्रयष्टिं भित्त्वा निराक्रामत् ॥ सात्त्विकाविर्भावलिङ्गेन प्रकाशित इत्यर्थः ॥

८२ ॥ तथेति । सख्यामिन्दुमत्यां तथागतायां तथाभूतायाम् । दृष्टानुरागायां

79. "Do you therefore elect him your equal in birth, in beauty, youth, and in all (other) good qualities with modesty at their head; and let the jewel (thus) be mated with gold."

80. Then at the conclusion of Sunandâ's address, the daughter of the great king lessened her feeling of maidenly bashfulness and took the prince for her husband by her glance brightened with joy as if with the garland used in the self-electing marriage.

81. At first the princess was unable to express her love to the prince through her maidenly shyness : but at last the love of that curled-haired damsel, having pierced through her bodily frame, rushed out by the mark of the hair-erection on her body.

82. The cane-holder सुनन्दा, her female companion, seeing her

80. B. H. with Hem., Chá., Din., Vijay., Dharm., Vija., and the texts only of Val., and Su., मृदूकृत्य for तनूकृत्य. Hemádri also notices the text of Mallinâtha. E. कुमारीं for कुमारं.

82. E. सख्याः for सख्यां. C. E. G. H. I. K. L. P. R. with Hem.,

सा चूर्णगौरं रघुनन्दनस्य धात्रीकराभ्यां करभोपमोरूः ।
आसञ्जयामास यथाप्रदेशं कण्ठे गुणं मूर्तमिवानुरागम् ॥ ८३ ॥
तया स्रजा मङ्गलपुष्पमय्या विशालवक्षःस्थललम्बया सः ।
अमंस्त कण्ठार्पितबाहुपाशां विदर्भराजावरजां वरेण्यः ॥ ८४ ॥

सत्यामित्यर्थः । सखी सहचरी ॥ " सख्यशिश्वीति भाषायाम् " इति निपातनान्ङीष् ॥ वेत्रभृत्सुनन्दा । हे आर्ये पूज्ये । अन्यतोऽन्यं प्रति व्रजाम । इति परिहासपूर्वमाबभाषे । अथ वधूरिन्दुमत्येनां सुनन्दामसूयया रोषेण कुटिलं ददर्श । अन्यगमनस्यासह्यत्वादिति भावः ॥

८३ ॥ सेति । करभः करप्रदेशविशेषः ॥ " मणिबन्धादाकनिष्ठं करस्य करभो बहिः " इत्यमरः ॥ करभ उपमा ययोस्तावूरू यस्याः सा करभोपमोरूः ॥ " ऊरूत्तरपदादौपम्ये " इत्यूङ्प्रत्ययः ॥ सा कुमारी चूर्णेन मङ्गलचूर्णेन गौरं लोहितं गुणं स्रजम् । मूर्तं मूर्तिमन्तमनुरागमिव । धात्र्या उपमातुः सुनन्दायाः कराभ्यां रघुनन्दनस्याजस्य कण्ठे यथाप्रदेशं यथास्थानमासञ्जयामासासक्तं कारयामास । न तु स्वयमाससञ्ज ॥ अनौचित्यात्॥

८४ ॥ तयेति । वरेण्यो वरणीय उत्कृष्टः ॥ वृञ एण्यः ॥ सोऽजो मङ्गलपुष्पमय्या मधूकादिकुसुमप्रकृतया विशाले वक्षःस्थले लम्बया लम्बमानया तया स्रजा विदर्भराजावरजामिन्दुमतीं कण्ठार्पितौ बाहू एव पाशौ ययाताममंस्त ॥ मन्यतेर्लुङ् ॥ बाहुपाशकल्पसुखमन्वभूदित्यर्थः ॥

---

friend in such plight spoke to her in jest as follows :—" Let us go, O noble lady, to another." Instantly the bride glanced at her with a frown of displeasure.

83. Then the princess, who had beautiful thighs comparable to the trunk of an elephant, assigned to the garland its proper place on the neck of Raghu's son, which was red with auspicious powder and which appeared, as it were, her love incarnate, by the hands of her nurse.

84. With that garland made of auspicious flowers and hanging over the surface of his broad chest, that eligible prince thought the younger sister of the king of the Vidarbhas to have thrown the cords of her arms round his neck.

Chá., Din., Vijay., and the text only of Su., वेत्रधरा for वेत्रभृत्. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण reads वेत्रवती. D. एनं for एनां.

83. D. with Vijay.'s text स्रजं for गुणं. C. D. with Chá., and Din., आयोजयामास for आसञ्जयामास.

84. E. °बाहुराशां for °बाहुपाशां. E. °वरजे for °वरजां.

शशिनमुपगतेयं कौमुदी मेघमुक्तं जलनिधिमनुरूपं जह्नुकन्यावतीर्णा ।
इति समगुणयोगप्रीतयस्तत्र पौराः श्रवणकटु नृपाणामेकवाक्यं विवव्रुः ॥८५॥
प्रमुदितवरपक्षमेकतस्तत्क्षितिपतिमण्डलमन्यतो वितानम् ।
उषसि सर इव प्रफुल्लपद्मं कुमुदवनप्रतिपन्ननिद्रमासीत् ॥ ८६ ॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कालिदासकृतौ स्वयंवरवर्णनो नाम षष्ठः सर्गः ॥

८५ ॥ शशिनमिति । तत्र स्वयंवरे समगुणयोस्तुल्यगुणयोरिन्दुमतीरघुनन्दनयोर्योगेन प्रीतिर्येषां ते समगुणयोगप्रीतयः पौराः पुरे भवा जनाः । इयमजसंगतेन्दुमती मेघैर्मुक्तं शशिनं शरच्चन्द्रमुपगता कौमुदी । अनुरूपं सदृशं जलनिधिमवतीर्णा प्रविष्टा जह्नुकन्या भागीरथी । तत्सदृशीत्यर्थः । इत्येवं नृपाणां श्रवणयोः कटु परुषमेकमविसंवादि वाक्यमेकवाक्यं विवव्रुः ॥

८६ ॥ प्रमुदितेति । एकत एकत्र प्रमुदितो हृष्टो वरस्य जामातुः पक्षो वर्गो यस्य तत्तथोक्तम् । अस्यतोऽन्यत्र वितानं शून्यम् । भग्नाशत्वादप्रहृष्टमित्यर्थः । तत्क्षितिपतिमण्डलम् । उषसि प्रभाते प्रफुल्लपद्मं कुमुदवनेन प्रतिपन्ननिद्रं प्राप्तनिमीलनं सर इव सरस्तुल्यम् । आसीत् ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमच्छपाच्छयसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां षष्ठः सर्गः ॥

---

85. The citizens, pleased with the union of like qualities, gave forth a unanimous utterance, unpleasant to the ears of the kings, that she was the moonlight united with the moon freed from clouds or the daughter of *Jahnu* gone down to the ocean (*lit.* the store of waters) who is equally fit for her.

86. The assembly of princes, having in one part, the delighted party of the bride-groom and in the other a gloomy mantle spread over the face of the circle of kings, resembled a lake at dawn, having in one part, the day-lotuses blooming and in the other the beds of moon-lotuses had gone to sleep.

---

85. L. जह्नुकन्यासमेता, I. जलनिधिमवतीर्णा जह्नुकन्यानुरूपं for जलनिधिमनुरूपं जह्नुकन्यावतीर्णा.

86. C. E. with Hem., Châ., Din., and Su., अहनि for उषसि. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinàtha. Both Chàritravardhana and Sumativijaya reading अहनि also give उषसि in their comments. It is difficult to find which text of Kâlidâsa they had for their comments. *Vide* their comments.

। सप्तमः सर्गः ।

अथोपयन्त्रा सदृशेन युक्तां स्कन्देनसाक्षादिव देवसेनाम् ।
स्वसारमादाय विदर्भनाथः पुरप्रवेशाभिमुखो बभूव ॥ १ ॥
सेनानिवेशान्पृथिवीक्षितोऽपि जग्मुर्विभातग्रहमन्दभासः ।
भोज्यां प्रति व्यर्थमनोरथत्वाद्रूपेषु वेषेषु च साभ्यसूयाः ॥ २ ॥

भजेमहि निपीयैकं मुहुरन्यं पयोधरं ।
मार्गन्तं बालमालोक्य श्वसन्तावादिदंपती ॥

१ ॥ अथेति । अथ विदर्भनाथो भोजः सदृशेनोपयन्त्रा वरेण युक्ताम् । अत एव साक्षात्प्रत्यक्षम् ॥ "साक्षात्प्रत्यक्षतुल्ययोः" इत्यमरः ॥ स्कन्देन युक्तां देवसेनामिव । देवसेना नाम देवपुत्री स्कन्दपत्नी । तामिव स्थितां स्वसारं भगिनीमिन्दुमतीमादाय गृहीत्वा पुरप्रवेशाभिमुखो बभूव ॥

२ ॥ सेनेति । भोजस्य राज्ञो गोत्रापत्यं स्त्री भोज्या । तामिन्दुमतीं प्रति व्यर्थमनोरथत्वाद्रूपेष्वाकृतिषु वेषेषु नेपथ्येषु च साभ्यसूया वृथेति निन्दन्तः । किं च । विभाते प्रातःकाले । ग्रहाश्चन्द्रादयः । त इव मन्दभासो नष्टकान्तयः पृथिवीक्षितो नृपा अपि सेनानिवेशाञ्छिबिराणि जग्मुः ॥

---

1. Then the lord of the Vidarbhas bent his steps towards the city, taking with him his sister, accompanied with a bride-groom equally qualified with her; like Devasená, with Skanda visibly present as it were.

2. The lords of the earth also, pale (dimmed in lustre) as stars at dawn, went to their respective encampments, indignant both with their personal beauty and apparel, on account of their hopes proving futile with respect to the sister of Bhoja.

---

1. D. J. K. P. R. with Châ., and the text only of Vallabha, °राजः for °नाथः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण agrees with Châritravardhana and others.

2. D. I. L. P. with Hem., Su., Vijay., Dharm., Vija., and the text only of Val., °भृतः for °क्षितः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण and the text only of Vijay., agree with Mallinátha. C. D. with Hem., प्रभातग्रह° for विभातग्रह.° One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण agrees with Mallinátha. A. B. E. H. J. K. L. P. वेशेषु for वेषेषु.

सांनिध्ययोगात्किल तत्र शच्याः स्वयंवरक्षोभकृतामभावः ।
काकुत्स्थमुद्दिश्य समत्सरोऽपि शशाम तेन क्षितिपाललोकः ॥ ३ ॥
तावत्प्रकीर्णाभिनवोपचारमिन्द्रायुधद्योतिततोरणाङ्कम् ।
वरः स वध्वा सह राजमार्गं प्राप ध्वजच्छायनिवारितोष्णम् ॥ ४ ॥
ततस्तदालोकनतत्पराणां सौधेषु चामीकरजालवत्सु ।
बभूवुरित्थं पुरसुन्दरीणां त्यक्तान्यकार्याणि विचेष्टितानि ॥ ५ ॥

३ ॥ ननु क्रुद्धाश्चेत्क्षुभ्यन्तां तत्राह ॥ सांनिध्येति । तत्र स्वयंवरमात्रे शच्या इन्द्राण्याः । संनिधिरेव सांनिध्यम् । तस्य योगात्सद्भावाद्धेतोः स्वयंवरस्य क्षोभकृतां विघ्नकारिणामभावः किल ॥ किलेति स्वयंवरविघातकाः शच्या विनाश्यन्त इत्यागमसूचनार्थः ॥ तेन हेतुना काकुत्स्थमजमुद्दिश्य समत्सरोऽपि सवैरोऽपि क्षितिपाललोकः शशाम नाक्षुभ्यत् ॥
४ ॥ तावदिति ॥ " यावत्तावच्च साकल्ये " इत्यमरः ॥ तावत्प्रकीर्णाः साकल्येन प्रस्तारिता अभिनवा उपचाराः पुष्पप्रकरादयो यस्य तं तथोक्तम् । इन्द्रायुधानीव द्योतितानि तोरणान्यङ्काश्चिह्नानि यस्य तम् । ध्वजानां छाया ध्वजच्छायम् ॥ " छाया बाहुल्ये " इति नपुंसकत्वम् ॥ तेन निवारितमुष्णमातपो यस्य तं तथा राजमार्गं स वरो वोढा वध्वा सह प्राप विवेश ॥
५ ॥ तत इति । ततश्चामीकरजालवत्सु सौवर्णगवाक्षयुक्तेषु । सौधेषु तस्याजस्यालोकने तत्पराणामासक्तानां पुरसुन्दरीणामित्थं वक्ष्यमाणप्रकाराणि त्यक्तान्यकार्याणि केशबन्धनादीनि येषु तानि विचेष्टितानि व्यापाराः ॥ नपुंसके भावे क्तः ॥ बभूवुः ॥

---

3. Owing no doubt to the presence of S'achî there was total absence of obstructers to the self-electing marriage in the hall, and hence the assemblage of the lords of the earth, though jealous of the descendant of Kâkutstha, remained quiet.

4. Meanwhile the bride-groom accompanied with his bride got to the royal road strewn with fresh offerings of flowers and decorated with the ornamental arches as brilliant as the rainbow and the heat whereof was kept off by the shade of banners.

5. Then, freed from other necessary engagements of the day

---

3. D. E. K. L. शच्या for शच्याः. C. D. and the text only of Val., आलोक्य for उद्दिश्य.

4. E. °चारादिन्द्रा° for °चारमिन्द्रा°. D. with Hem., °द्योतन°, Châritravardhana and Dinakara probably °भासित° for °द्योतित°. Hemâdri notices the reading of Mallinâtha. D. I. and the text only of Val., प्रापत् for प्राप. Hemâdri also notices this.

5. C. D. with Châ., °सत्वराणां for °तत्पराणां. C. I. °जालकेषु for जालवत्सु. D. L. with Dharm., सुर° for पुर°. D. with Dharm., युक्तान्य°, H. with Vijay., मुक्तान्य° for त्यक्तान्य°. Vijay.'s text with us.

आलोकमार्गं सहसा व्रजन्त्या कयाचिदुद्वेष्टनवान्तमाल्यः।
बन्द्धुं न संभावित एव तावत्करेण रुद्धोऽपि च केशपाशः ॥ ६ ॥
प्रसाधिकालम्बितमग्रपादमाक्षिप्य काचिद्द्रवरागमेव।
उत्सृष्टलीलागतिरागवाक्षादलक्तकाङ्कां पदवीं ततान ॥ ७ ॥

६ ॥ तान्येवाह पञ्चभिः श्लोकैः। आलोकेति। सहसालोकमार्गं गवाक्षपथं व्रजन्त्या कयाचित्कामिन्योद्वेष्टनवान्तमाल्यः। उद्वेष्टनेन बन्धविश्लेषेणोद्गीर्णमाल्यः। करेण रुद्धो गृहीतोऽपि च केशपाशः केशकलापः ॥ "पाशः पक्षश्च हस्तश्च कलापार्थाः कचात्परे" इत्यमरः ॥ तावद्दालोकमार्गप्राप्तिपर्यन्तं बन्द्धुं बन्धनार्थं न संभावितो न चिन्तित एव ॥

७ ॥ प्रसाधिकेति। काचित्। प्रसाधिकयालंकर्त्र्यालम्बितं रञ्जनार्थं धृतं द्रवरागमेवार्द्रालक्तकमेव ॥ अग्रं चासौ पादश्चेत्यग्रपाद इति समानाधिकरणसमासः ॥ "हस्ताग्राग्रहस्तयोर्गुणगुणिनोर्भेदाभेदाभ्याम्" इति वामनः ॥ तमाक्षिप्याकृष्य। उत्सृष्टलीलागतिस्त्यक्तमन्दगमना सती। आ गवाक्षाद्गवाक्षपर्यन्तं पदवीमलक्तकाङ्कां लाक्षारागचिह्नां ततान चकार ॥

---

the actions of the beautiful city-women, who were intent upon looking at him through the golden windows of their mansions, became as follows :—

6. A certain lady while suddenly hastening to the window (*lit.* a passage to look through) did not at all think of binding the braid of hair though she held it in her hand and from the folds of which the flowers were dropping down on account of its being made loose through her haste, till she has reached the door of the window.

7. Drawing aside her fore-foot previously held up by the decorating maid (helping maid) even when the colour on it was still wet, a certain lady having given up her sportive way of walking, spread as far as the window a row of foot-prints marked by the red lac.

---

6. D. °वीतमाल्यः for °वान्तमाल्यः. D. बन्धः, B. C. E. I. K. L. P. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., Vija., and Vijay., बद्धं for बन्द्धुं. R. with us. Hemádri also notices the reading of D. Ms. A. B. E. H. I. K. L. P. R. with Val., Su., and Vijay., हि, C. with Chá., and Din., न for च.

7. C. D. L. एवं for एव.

विलोचनं दक्षिणमञ्जनेन संभाव्य तद्वञ्चितवामनेत्रा ।
तथैव वातायनसंनिकर्षं ययौ शलाकामपरा वहन्ती ॥ ८ ॥
जालान्तरप्रेषितदृष्टिरन्या प्रस्थानभिन्नां न बबन्ध नीवीम् ।
नाभिप्रविष्टाभरणप्रभेण हस्तेन तस्थाववलम्ब्य वासः ॥ ९ ॥
अर्धाचिता सत्वरमुत्थितायाः पदे पदे दुर्निमिते गलन्ती ।
कस्याश्चिदासीद्रसना तदानीमङ्गुष्ठमूलार्पितसूत्रशेषा ॥ १० ॥

८ ॥ विलोचनमिति । अपरा स्त्री दक्षिणं विलोचनमञ्जनेन संभाव्यालंकृत्य तद्वञ्चितं तेनाञ्जनेन वर्जितं वामनेत्रं यस्याः सा सती तथैव शलाकामञ्जनकूचिकां वहन्ती सती वातायनसंनिकर्षं गवाक्षसमीपं ययौ ॥ दक्षिणग्रहणं संभ्रमाद्व्युत्क्रमकरणद्योतनार्थम् ॥ "सव्यमक्षि पूर्वं मनुष्या अञ्जते" इति श्रुतेः ॥

९ ॥ जालेति । अन्या स्त्री जालान्तरप्रेषितदृष्टिर्गवाक्षमध्यप्रेरितदृष्टिः सती प्रस्थानेन गमनेन भिन्नां त्रुटितां नीवीं वसनग्रन्थिम् ॥ "नीवी परिपणे ग्रन्थौ स्त्रीणां जघनवाससः" इति विश्वः ॥ न बबन्ध । किं तु नाभिप्रविष्टाभरणानां कङ्कणादीनां प्रभा यस्य तेन । प्रभैव नाभेराभरणमभूदिति भावः । हस्तेन वासोऽवलम्ब्य गृहीत्वा तस्थौ ॥

१० ॥ अर्धेति । सत्वरमुत्थितायाः कस्याश्चिदर्धाचिता मणिभिरर्धगुम्फिता दु-

---

8. Having adorned the right eye with collyrium, another lady with her left eye destitute of it, went forth just so to the window carrying with her the pencil (used in decoration).

9. Another lady with her eyes directed to the holes of the window did not tie up the knot (of her garment), made loose by her walking, and remained standing there holding her garment by her hand the lustre of the ornaments on which, had entered her navel.

10. The half-stringed girdle of some other lady risen up in haste, the jewels of which were dropping down at her every fal-

---

8. D. with Dharm., प्रासाद° for तथैव. E. I. with Hem., Val., Vijay., and the text only of Su., शिलाकां for शलाकां. E. पदंजी for वहन्ती. Between 8-9 D. E. I. L. with Vallabha read :—"स्तनन्धयन्तं तनयं विहाय विलोकनाय त्वरया व्रजन्ती। संप्रस्नुताभ्यां पदवीं स्तनाभ्यां सिषेच काचित्पयसागवाक्षात्"॥ [D. I. पतना, E. L. पदवीं. D. E. I. आगवाक्षं, L. with Val., आगवाक्षात्.] E. with Vallabha read this between 10-11.

9. A. R. with Dharm., °प्रेक्षित,° one of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also reads this, D. °प्रेरित° for °प्रेषित.° Hemâdri also notices the reading of the D. Mss.

10. A. J. with Su., अर्धाञ्चिता, D. L. अर्धार्चिता for अर्धाचिता. One

तासां मुखैरासवगन्धगर्भैर्व्याप्तान्तराः सान्द्रकुतूहलानाम् ।
विलोलनेत्रभ्रमरैर्गवाक्षाः सहस्रपत्त्राभरणा इवासन् ॥ ११ ॥
ता राघवं दृष्टिभिरापिबन्त्यो नार्यो न जग्मुर्विषयान्तराणि ।
तथा हि शेषेन्द्रियवृत्तिरासां सर्वात्मना चक्षुरिव प्रविष्टा ॥ १२ ॥

र्निमिते संभ्रमादुरुत्क्षिप्ते ॥ " डुमिञ्प्रक्षेपणे " इति धातोः कर्मणि क्तः ॥ पदे पदे प्रतिपदम् ॥ वीप्सायां द्विर्भावः ॥ गलन्ती गलद्रत्ना सती रसना मेखला तदानीं गमनसमयेऽङ्गुष्ठमूलेऽर्पितं गर्भितं सूत्रमेव शेषो यस्याः सासीत् ॥

११ ॥ तासामिति । तदानीं सान्द्रकुतूहलानां तासां स्त्रीणामासवगन्धो गर्भे येषां तैः । विलोलानि नेत्राण्येव भ्रमरा येषु तैः । मुखैर्व्याप्तान्तराश्छन्नावकाशा गवाक्षाः सहस्रपत्त्राभरणा इवासन् । कमलालंकृता इव स्थिता इत्यर्थः ॥

१२ ॥ ता इति । ता नार्यो रघोरपत्यं राघवमजम् ॥ " तस्यापत्यम् " इत्यण्प्रत्ययः ॥ दृष्टिभिरापिबन्त्योऽतितृष्णया पश्यन्त्यो विषयान्तराणि ततोऽन्यान्विषयान्न जग्मुः । न विविदुरित्यर्थः ॥ तथा हि । आसां नारीणां शेषेन्द्रियवृत्तिः श्रोत्रादीन्द्रियव्यापारः सर्वात्मना स्वरूपकार्त्स्न्येन चक्षुः प्रविष्टेव ॥ श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि स्वातन्त्र्येण ग्रहणाशक्तेश्चक्षुरेव प्रविश्य कौतुकात्स्वयमप्येनमुपलभन्ते किमु । अन्यथा स्वस्वविषयाधिगमः किं न स्यादिति भावः ॥

---

tering step, had at the time the string fastened only to the root of her foot-toe.

11. The lattices, whose apertures were crowded with the intensely curious faces of the young women, perfumed with wine,—while their bee-like eyes fluttered restlessly,—seemed as though they were adorned with lotuses.

12. Those ladies drinking, with their eyes the son of Raghu, did not mind the objects of other senses, because the functions of the rest of the organs of sense, had, as it were, by concentration entered the organ of sight.

---

of the three Mss. of Chāritravardhana's शिशुहितैषिणी agrees with Su., and A. J. Mss. C. J. L. P. with Chá., and Din., दुर्नमिते for दुर्निमिते. D. G. J. L. P. and one of the three Mss. of Hemādri's दर्पण read रशना for रसना.

11. A. D. प्रफुल्लपद्मा°, C. प्रयुक्तपद्मा° for सहस्रपत्त्रा°. Hemādri notices both these readings of A. D. as well as C. Mss.

12. C. R. with the text only of Val., तं for ताः. D. with Dharm., सर्वेन्द्रिय° for शेषेन्द्रिय.°

स्थाने वृता भूपतिभिः परोक्षैः स्वयंवरं साधुममंस्त भोज्या ।
पद्मेव नारायणमन्यथासौ लभेत कान्तं कथमात्मतुल्यम् ॥ १३ ॥
परस्परेण स्पृहणीयशोभं न चेदिदं द्वन्द्वमयोजयिष्यत् ।
अस्मिन्द्वये रूपविधानयत्नः पत्युः प्रजानां वितथोऽभविष्यत् ॥ १४ ॥
रतिस्मरौ नूनमिमावभूतां राज्ञां सहस्रेषु तथा हि बाला ।
गतेयमात्मप्रतिरूपमेव मनो हि जन्मान्तरसंगतिज्ञम् ॥ १५ ॥

१३ ॥ स्थान इति ॥ "शृण्वन्कथाः श्रोत्रसुखाः कुमारः" इति वक्ष्यति । ताः कथयति "स्थाने" इत्यादिभिस्त्रिभिः । भोज्येन्दुमती परोक्षैरदृष्टैर्भूपतिभिर्वृता ममैवेयं ममैवेयमिति प्रार्थितापि स्वयंवरमेव साधु हितममंस्त मेने । न तु परोक्षमेव कंचित्प्रार्थकं वव्रे । स्थाने युक्तमेतत् । कुतः । अन्यथा स्वयंवराभावेऽसाविन्दुमती । पद्ममस्या अस्तीति पद्मा लक्ष्मीः ॥ "अर्शआदिभ्योऽच्" इत्यच्प्रत्ययः ॥ नारायणमिव । आत्मतुल्यं स्वानुरूपं कान्तं पतिं कथं लभेत । न लभेतैव । सदसद्विवेकासौकर्यादिति भावः ॥

१४ ॥ परस्परेणेति । स्पृहणीयशोभं सर्वाशास्यसौन्दर्यमिदं द्वन्द्वं मिथुनम् ॥ "द्वन्द्वं रहस्य—" इत्यादिना निपातः ॥ परस्परेण नायोजयिष्यच्चेन्न योजयेद्यदि । प्रजानां पत्युर्विधातुरस्मिन्द्वये द्वन्द्वे रूपविधानयत्नः सौन्दर्यनिर्माणप्रयासो वितथो विफलोऽभविष्यत् । एतादृशानुरूपस्त्रीपुंसान्तराभावादिति भावः ॥ "लिङ्निमित्ते लृङ्क्रियातिपत्तौ" इति लृङ् ॥

१५ ॥ रतीति । रतिस्मरौ यौ । नित्यसहचरावित्यभिप्रायः । नूनं तावेवेयं चायं चेमौ दंपती अभूताम् । एतद्रूपेणोत्पन्नौ ॥ तथा हि । प्रसिद्धमेवैतद्यदियं बाला ।

---

13. As लक्ष्मी obtained नारायण who was equally worthy of her, so the sister of Bhoja, though ardently wished for by many kings who were not present for the ceremony, did well in thinking of self-electing marriage as the right course for her to follow; otherwise how could she have obtained a husband equally worthy of her ?

14. If Creator had not united this couple of enviable beauty one with the other, the efforts of creating beauty in this pair on the part of the Lord of living beings would have been fruitless !

15. Surely these two were Ratî and Smara respectively, for this maiden princess had chosen a counterpart of her own self from

---

13. D. परोक्षे for परोक्षैः. D. L. आर्या for असौ. K. omits this verse.

14. D. I. L. with Din., विफलः for वितथः.

15. D. L. with Chà., Din., and Dharm., जातिस्मरौ for रतिस्मरौ. Hemádri notices this and says:—जात्या जन्मना स्मरौ जातिस्मरौ । महीधरवत्॥ Cháritravardhana notices the reading of Mallinátha and others and explains:-स्मरश्च स्मरीच ॥ "पुमान्स्त्रिया" इत्येकशेषः ॥ अथ वा । स्मरतीति स्मरः । पचाद्यच् । जातेः स्मरौ जातिस्मरौ । महीधरवत् ॥ B. उभावभूताम्, D. H. K. R. with

इत्युद्गताः पौरवधूमुखेभ्यः शृण्वन्कथाः श्रोत्रसुखाः कुमारः ।
उद्भासितं मङ्गलसंविधाभिः संबन्धिनः सद्म समाससाद ॥ १६ ॥
ततोऽवतीर्याशु करेणुकायाः स कामरूपेश्वरदत्तहस्तः ।
वैदर्भनिर्दिष्टमथो विवेश नारीमनांसीव चतुष्कमन्तः ॥ १७ ॥

राज्ञां सहस्रेषु राजसहस्रमध्ये । सत्यपि व्यत्यासकारण इति भावः । आत्मप्रतिरूपं स्वरूपतुल्यमेव ॥ "तुल्यसंकाशनीकाशप्रकाशप्रतिरूपकाः" इत्याह दण्डी ॥ गता प्राप्ता ॥ तदपि कथं जातमत आह—मनो हि जन्मान्तरसंगतिज्ञं तद्वेदमिति प्रत्यभिज्ञाभावेऽपि वासनावशादनुभूतार्थेषु मनःप्रवृत्तिरस्तीत्युक्तम् ॥ जन्मान्तरसाहचर्यमेवात्र प्रवर्तकमिति भावः ॥

१६ ॥ इतीति ॥ इति "स्थाने वृता" इत्याद्युक्तप्रकारेण पौरवधूमुखेभ्य उद्गता उत्पन्नाः श्रोत्रयोः सुखा मधुराः । सुखशब्दो विशेष्यनिघ्नश्च ॥ "अथ त्रिषु द्रवे पुण्यं पापं सुखादि च" इत्यमरः ॥ कथा गिरः शृण्वन्कुमारोऽजो मङ्गलसंविधाभिर्मङ्गलरचनाभिरुद्भासितं शोभितं संबन्धिनः कन्यादायिनः सद्म समाससाद प्राप ॥

१७ ॥ तत इति । ततोऽनन्तरं करेणुकाया हस्तिन्याः सकाशादाशु शीघ्रमवतीर्य कामरूपेश्वरे दत्तो हस्तो येन सोऽजः । अथोऽनन्तरं वैदर्भेण निर्दिष्टं प्रदर्शितमन्तश्चतुष्कं चत्वरम् । नारीणां मनांसीव विवेश ॥

---

amongst thousands of kings; for the mind is cognisant of the association of the previous birth.

16. Thus hearing the words pleasing to the ear coming out from the mouths of the women of the city, the prince reached the palace of his relative, which was adorned with auspicious decorations.

17. Then the prince quickly alighted from the female-elephant and with his hand in that of the lord of the Kâmarûpas,

---

Dharm., इवावभूताम् for इमावभूताम्. B. I. with Val., and Dharm., याता for गता. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण agrees with Vallabha and others. H. I. संगतज्ञं, L. संगमीतं for संगतिज्ञं.

16. C. L. एवं कथा श्रोत्रनुषी कुमारं [C. °सुखी] for शृण्वन्कथाः श्रोत्रसुखाः कुमारः. R. श्रोत्रसुखाः for श्रोत्रसुखाः.

17. A. B. G. J. K. P. omit the verses 17-18-19, *i. e.* the eight of the best Mss. of Mallinâtha's commentary in our possession altogether omit these verses; only P.'s text reads these without of course the commentary of Mallinâtha. It appears that Mallinâtha might not have known these stanzas. K.'s text reads the 17th verse without commentary and omits the 20th verse. R. with Val., and the texts of K. P. तत्र for ततः. D. अथ for आशु. D. L. अजः, D_2. E. with Su., °पथः for अथो. L. चतुष्कमश्चः for चतुष्कमन्तः.

महार्हसिंहासनसंस्थितोऽसौ सरत्नमर्घ्यं मधुपर्कमिश्रम् ।
भोजोपनीतं च दुकूलयुग्मं जग्राह सार्धं वनिताकटाक्षैः ॥ १८ ॥
दुकूलवासाः स वधूसमीपं निन्ये विनीतैरवरोधरक्षैः ।
वेलासकाशं स्फुटफेनराजिर्नवैरुदन्वानिव चन्द्रपादैः ॥ १९ ॥
तत्रार्चितो भोजपतेः पुरोधा हुत्वाग्निमाज्यादिभिरग्निकल्पः ।
तमेव चाधाय विवाहसाक्ष्ये वधूवरौ संगमयांचकार ॥ २० ॥

१८ ॥ महार्हेति । महार्हसिंहासने संस्थितोऽसावजः । भोजेनोपनीतम् । रत्नैः सहितं सरत्नम् । मधुपर्कमिश्रं । अर्घ्यं पूजासाधनद्रव्यं दुकूलयोः क्षौमयोर्युग्मं च । वनिताकटाक्षैरन्यस्त्रीणामपाङ्गदर्शनैः सार्धम् । जग्राह गृहीतवान् ॥

१९ ॥ दुकूलेति । दुकूलवासाः सोऽजः । विनीतैर्नम्रैरवरोधरक्षैरन्तःपुराधिकृतैः । वधूसमीपं निन्ये । तत्र दृष्टान्तः—स्फुटफेनराजिरुदन्वान्समुद्रो नवैर्नूतनैश्चन्द्रपादैश्चन्द्रकिरणैः । वेलायाः सकाशं समीपमिव । पूर्णदृष्टान्तोऽयम् ॥

२० ॥ तत्रेति । तत्र सम्यगर्चितः पूजितोऽग्निकल्पोऽग्नितुल्यो भोजपतेः पुरोधाः पुरोहितः ॥ "पुरोधास्तु पुरोहितः" इत्यमरः ॥ आज्यादिभिर्द्रव्यैरग्निं हुत्वा

---

entered the inner-quadrangle of the palace shown by the lord of the Vidarbhas as if he entered the hearts of the palace women.

18. Seated on a rich throne, he accepted the offering with jewels, mixed with the Madhuparka and a pair of silkwoven garments presented to him by Bhoja, along with the lovely glances of the beautiful ladies.

19. He, dressed in silken-garments, was led near the bride by the humble keepers of the inner-apartments, as the ocean with its line of foam clearly displayed is led near the coast by the new rays of the moon.

20. There the revered priest of the lord of the Bhojas, himself like fire having offered to the fire the clarified butter and other

---

18. C. H. °शय्यासनसंस्थितः, D. with Hem., and Dharm., °सिंहासनसंश्रितः for °सिंहासनसंस्थितः. D_2. with one of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण read मधुमत्समिश्रं, D. E. R. with Val., and Dharm., and the text only of P. मधुमच्चगव्यं, L. मधुमयगन्ध्यं, C_2. with Châ., मधुपर्कयुक्तं for मधुपर्कमिश्रं. D. H. I. with Hem., Châ., Din., and the text only of Vallabha, अर्घं for अर्घ्यं. Hemâdri notices the reading of Mallinâtha.

19. D. °रक्ष्यैः, C. with Châ., °मुख्यैः for °रक्षैः.

20. C. D. I. with Val., आय्यादिभिः for आज्यादिभिः. E. रामकल्पः for अग्निकल्पः. E. I. L. P. R. with Val., वधूवरं for वधूवरौ. B. H. I. L. R. with Hem., Châ., Din., Su., Dharm., and Vija., संगमयांबभूव for संगमयाञ्चकार.

हस्तेन हस्तं परिगृह्य वध्वाः स राजसूनुः सुतरां चकासे ।
अनन्तराशोकलताप्रवालं प्राप्येव चूतः प्रतिपल्लवेन ॥ २१ ॥
आसीद्वरः कण्टकितप्रकोष्ठः स्विन्नाङ्गुलिः संववृते कुमारी ।
वृत्तिस्तयोः पाणिसमागमेन समं विभक्तेव मनोभवस्य ॥ २२ ॥

तमेवाग्निं विवाहसाक्ष्ये चाधाय । साक्षिणं च कृत्वेत्यर्थः । वधूवरौ संगमयांचकार योजयामास ॥

२१ ॥ हस्तेनेति । स राजसूनुर्हस्तेन स्वकीयेन वध्वा हस्तं परिगृह्य । अनन्तरायाः संनिहिताया अशोकलतायाः प्रवालं पल्लवं प्रतिपल्लवेन स्वीयेन प्राप्य चूत इव । सुतरां चकासे ॥

२२ ॥ आसीदिति । वरः कण्टकितः पुलकितः प्रकोष्ठो यस्य सोऽभूत् ॥ "सूच्यग्रे क्षुद्रशत्रौ च रोमहर्षे च कण्टकः" इत्यमरः ॥ कुमारी स्विन्नाङ्गुलिः संववृते बभूव ॥ अत्रोत्प्रेक्ष्यते—पाणिसमागमेन पाण्योः संस्पर्शेन । तयोर्वधूवरयोर्मनोभवस्य वृत्तिः स्थितिः समं विभक्तेव । समीकृतेवेत्यर्थः ॥ प्राक्सिद्धस्याप्यनुरागसाम्यस्य संप्रति तत्कार्यदर्शनात्पाणिस्पर्शकृतत्वमुत्प्रेक्षते ॥ अत्र वात्स्यायनः- "कन्या तु प्रथमसमागमे स्विन्नाङ्गुलिः स्विन्नमुखी च भवति । पुरुषस्तु रोमाञ्चितो भवति । एभिरनयोर्भावं परीक्षेत" इति ॥ स्त्रीपुरुषयोः स्वेदरोमाञ्चाभिधानं सात्त्विकमात्रोपलक्षणम् । न तु प्रतिनियमो विवक्षितः । एभिरिति बहुवचनसामर्थ्यात् ॥ एवं सति कुमारसंभवे—"रोमोद्गमः प्रादुरभूदुमायाः स्विन्नाङ्गुलिः पुंगवकेतुरासीत्" इति व्युत्क्रमवचनं न दोषायेति ॥

---

things, and having made the same fire a witness to the marriage, united the bride and the bride-groom in wedlock.

21. That prince shone still more bright on taking the hand of his bride with his own, as does the mango-tree after having received with its foliage the shoots of an As'oka-creeper clung to it.

22. The hair on the wrist of the bride-groom stood erect and the fingers of the princess became wet with perspiration; thus by the joining of their hands the action of love was, as it were, equally divided in them at that moment.

---

21. H. °पुत्रः for °सूनुः. B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Dharm., and Su., बभासे for चकासे. E. °शोकलग° for °शोकलता.° E. K. नूतः, R. भूतः for चूतः.

22. D. J. अभूत् for आसीत्. B. C E. H L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., तस्मिन्द्वये तत्क्षणमात्मवृत्तिः समं विभक्तेव मनोभवेन for the last two Pâdas. [E. L. अस्मिन् for तस्मिन्]. So also Mallinâtha, who says :—' इत्यपराधस्य पाठान्तरे व्याख्यानान्तरं । तस्मिन्द्वये मिथुने तत्क्षणमात्मवृत्तिः सात्त्विकोदयरूपा वृत्तिर्मनोभवेन कामेन समं विभक्तेव । पृथक्कृतेव ॥

तयोरपाङ्गप्रतिसारितानि क्रियासमापत्तिनिवर्तितानि ।
ह्रीयन्त्रणामानशिरे मनोज्ञामन्योन्यलोलानि विलोचनानि ॥ २३ ॥

प्रदक्षिणप्रक्रमणात्कृशानोरुदर्चिषस्तन्मिथुनं चकासे ।
मेरोरुपान्तेष्विव वर्तमानमन्योन्यसंसक्तमहस्त्रियामम् ॥ २४ ॥

२३ ॥ तयोरिति । अपाङ्गेषु नेत्रप्रान्तेषु प्रतिसारितानि प्रवर्तितानि क्रिययोर्निरीक्षणलक्षणयोः समापत्त्या यदृच्छासंगत्या निवर्तितानि प्रत्याकृष्टान्यन्योन्यस्मिँल्लोलानि सतृष्णानि ॥ " लोलश्चलसतृष्णयोः " इत्यमरः ॥ तयोर्दंपत्योर्विलोचनानि दृष्टयो मनोज्ञां रम्यां ह्रिया निमीलनेन यन्त्रणां संकोचमानशिरे प्रापुः ॥

२४ ॥ प्रदक्षिणेति । तन्मिथुनमुदर्चिष उद्गतज्वालस्य कृशानोः कृष्णप्रदक्षिणप्रक्रमणात्प्रदक्षिणीकरणाच्चकासे ॥ कथमिव । मेरोरुपान्तेषु वर्तमानमावर्तमानम् । मेरुं प्रदक्षिणीकुर्वदित्यर्थः । अन्योन्यं संसक्तं संगतम् । मिथुनस्याप्येतद्विशेषणम् । अहश्च त्रियामा चाहस्त्रियामं रात्रिंदिवमिव ॥ समाहारे द्वन्द्वैकवद्भावः ॥

---

23. The eyes of both of them had a lovely constraint of bashfulness,—the eyes which were insatiately coveting to see one another, the pupils whereof were moving towards the end of the corners (*i. e.* mutually exchanging sidelong glances), and which were withdrawn when by accident the gazes mutually encountered.

24. The royal couple now attached to one another (by the matrimonial alliance) looked resplendent by going round the blazing fire (always keeping the right side towards it), as the day and night come close together in their revolution round the axis of the Meru.

---

23. L. उपाङ्गप्रतिसारितानि, B. C. I. R. with Dharm., Vija., and the text only of Val., उपान्तप्रतिसारितानि, D. with Hem., अपाङ्गप्रतिचालितानि, D_2. with Chá., and Din., अपाङ्गप्रतिचारितानि, E. H. अपान्तप्रतिसारितानि for अपाङ्गप्रतिसारितानि. A. J. with Val., and Su., °पत्तिविवर्तितानि, one of the three Mss of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी also reads it, Hemàdri also notices this. C. I. L. R with Hem., and the text only of Val., °पत्तिषु कातराणि, one of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also reads it, E. किञ्चित्समापत्ति निवर्तितानि for क्रियासमपत्तिनिवर्तितानि. A_2. C_2. K. read :—तयोः समापत्तिषु कातराणि किञ्चिद्व्यवस्थापितसंहृतानि for the first two Padas. C. D. with Hem., ध्यानशिरे for आनशिरे.

24. D. E. and the text only of Su., °संगतम् for °संसक्तम्.

नितम्बगुर्वी गुरुणा प्रयुक्ता वधूर्विधातृप्रतिमेन तेन ।
चकार सा मत्तचकोरनेत्रा लज्जावती लाजविसर्गमग्नौ ॥ २५ ॥
हविःशमीपल्लवलाजगन्धी पुण्यः कृशानोरुदियाय धूमः ।
कपोलसंसर्पिशिखः स तस्या मुहूर्तकर्णोत्पलतां प्रपेदे ॥ २६ ॥
तदञ्जनक्लेदसमाकुलाक्षं प्रम्लानबीजाङ्कुरकर्णपूरम् ।
वधूमुखं पाटलगण्डलेखमाचारधूमग्रहणाद्बभूव ॥ २७ ॥

२५ ॥ नितम्बेति । नितम्बेन गुर्व्यलघ्वी ॥ "दुर्धरालघुनोर्गुर्वी" इति शाश्वतः ॥ विधातृप्रतिमेन ब्रह्मतुल्येन तेन गुरुणा याजकेन प्रयुक्ता जुहुधीति नियुक्ता । मत्तचकोरस्येव नेत्रे यस्याः सा लज्जावती सा वधूरग्नौ लाजविसर्गं चकार ॥

२६ ॥ हविरिति । हविष आज्यादेः शमीपल्लवानां लाजानां च गन्धोऽस्यास्तीति तथोक्तः ॥ "शमीपल्लवमिश्राँल्लाजानञ्जलिना वपति" इति कात्यायनः ॥ पुण्यो धूमः कृशानोः पावकादुदियाय ॥ कपोलयोः संसर्पिणी शिखा यस्य स तथोक्तः स धूमस्तस्या वध्वा मुहूर्तं कर्णोत्पलतां कर्णाभरणतां प्रपेदे ॥

२७ ॥ तदिति । तद्वधूमुखमाचारेण प्राप्ताद्धूमग्रहणात् । अञ्जनस्य क्लेदोऽञ्जनक्लेदः । अञ्जननिश्रबाष्पोदकमित्यर्थः । तेन समाकुलाक्षम् । प्रम्लानौ बीजाङ्कुरौ यवादिबीजाङ्कुर एव कर्णपूरोऽवतंसो यस्य तत्पाटलगण्डलेखमरुणगण्डस्थलं च बभूव ॥

---

25. That bashful bride, with heavy hips and eyes like those of the Chakora bird maddened with passion, when directed by that family preceptor, the very image of Brahmà, made an offering of the fried grain to the sacred fire.

26. There rose up from that fire the sacred smoke fragrant with the scent of oblations, S'ami-leaves and Làjas, which as its spire passed by her cheeks looked for a moment like a lotus on her ear.

27. Having to be exposed to the smoke (of the sacrificial ceremony) in accordance with the religious custom, the face of the bride had the eyes troubled with the moistened collyrium, the sprouts

---

25. C. D. L. with Hem., प्रतिमेन for प्रतिमेन. One of the three Mss. of Hemàdri's दर्पण also agrees with Mallinàtha. C. D. with Chà., and Din., नियुक्ता for प्रयुक्ता. B. C. D. with Hem., Chà., and Din., °विमोक्षम् for °विसर्गम्. One of the three Mss. of Hemàdri's दर्पण also agrees with Mallinàtha. Chàritravardhana says:-विसर्गमित्यसभ्यः पाठः ॥

26. C. D. E. H. I. K. P. R. with Val., लाजगन्धिः for °लाजगन्धी. H. R. with Su., °शिखः for °शिखः. C. D. तन्यां for तस्याः.

27. H. I. अञ्जनक्षोभ° for अञ्जनक्लेद°. E. R. with Val., गल्ललेखम्, or गल्ललेपम्, L. गण्डरेखम् for गण्डलेखम्. One of the three Mss. of Hemàdri's दर्पण also reads this. Vallabha's text reads with Mallinàtha.

तौ स्नातकैर्बन्धुमता च राज्ञा पुरंध्रिभिश्च क्रमशः प्रयुक्तम् ।
कन्याकुमारौ कनकासनस्थावार्द्राक्षतारोपणमन्वभूताम् ॥ २८ ॥
इति स्वसुर्भोजकुलप्रदीपः संपाद्य पाणिग्रहणं स राजा ।
महीपतीनां पृथगर्हणार्थं समादिदेशाधिकृतानधिश्रीः ॥ २९ ॥
लिङ्गैर्मुदः संवृतविक्रियास्ते ह्रदाः प्रसन्ना इव गूढनक्राः ।
वैदर्भमामन्त्र्य ययुस्तदीयां प्रत्यर्प्य पूजामुपदाछलेन ॥ ३० ॥

२८ ॥ ताविति । कनकासनस्थौ तौ कन्याकुमारौ स्नातकैर्गृहस्थविशेषैः ॥ " स्नातकस्त्वाप्लुतो व्रती " इत्यमरः ॥ बन्धुमता । बन्धुपुरःसरेणेत्यर्थः । राज्ञा च पुरंध्रिभिः पतिपुत्रवतीभिर्नारीभिश्च क्रमशः प्रयुक्तं स्नातकादीनां पूर्वपूर्ववैशिष्ट्याक्रमेण कृतमार्द्राक्षतानामारोपणमन्वभूतामनुभूतवन्तौ ॥

२९ ॥ इतीति । अधिश्रीरधिकसंपन्नो भोजकुलप्रदीपः स राजा । इति स्वसुः पाणिग्रहणं विवाहं संपाद्य । महीपतीनां पृथगेकैकशोऽर्हणार्थं पूजार्थमधिकृतानधिकारिणः समादिदेशाज्ञापयामास ॥

३० ॥ लिङ्गैरिति । मुदो लिङ्गैरारोपितसंतोषचिह्नैः संवृतविक्रिया निगूहितमत्सराः । अत एव प्रसन्ना बहिर्निर्मला गूढनक्रा अन्तर्लीनग्रहा ह्रदा इव स्थितास्ते नृपा वैदर्भं भोजमामन्त्र्यापृच्छ्य तदीयां वैदर्भीयां पूजामुपदाछलेनोपायनमिषेण प्रत्यर्प्य ययुः ॥

---

hat formed the ear-rings faded, and the expanse of the cheeks became ruddy.

28. The prince and princess seated on a seat of gold received on their heads the showers of the wet Akshatás thrown in regular order by the householders, the king with relatives and the matrons (having their husbands and sons alive) .

29. At last that excessively prosperous king, the light of the Bhoja family, having thus completed the marriage of his sister, gave orders to his officers for separate reception of the other kings.

30. Those kings who had suppressed all outward feeling of dissatisfaction under the garb of joy, like pleasant (*i. e.* clear) lakes with alligators lurking in them, bade goodbye to the lord of the Vidarbhas, and went away, having repaid the (same kind of) honour under the pretext of marriage presents.

---

29. D. E. I. with Su., इत्थं for इति. D. with Su., अधिकृतां for अधिकृतान्. Sumativijaya says :–" अन्येषां अधिकृतामधिकारिणां महीपतीनां पृथगर्हणार्थं प्रत्येकं समादिदेश ॥ "

स राजलोकः कृतपूर्वसंविदारम्भसिद्धौ समयोपलभ्यम् ।
आदास्यमानः प्रमदामिषं तदावृत्य पन्थानमजस्य तस्थौ ॥ ३१ ॥
भर्तापि तावत्क्रथकैशिकानामनुष्ठितानन्तरजाविवाहः ।
सत्त्वानुरूपाहरणीकृतश्रीः प्रास्थापयद्राघवमन्वगाच्च ॥ ३२ ॥

३१ ॥ स इति । आरम्भसिद्धौ कार्यसिद्धौ विषये । पूर्वं कृता कृतपूर्वा ॥ सुप्सुपेति समासः । कृतपूर्वा संवित्संकेतो मार्गविरोधरूपविषयो येन स तथोक्तः ॥ " संविद्युद्धे प्रतिज्ञायां संकेताचारनामसु " इति केशवः ॥ स राजलोकः समयोपलभ्यमजप्रस्थानकाले लभ्यम् । तदा तस्यैकाकित्वादिति भावः ॥ तत्प्रमदैवामिषं भोग्यवस्तु प्रमदामिषम् ॥ " आमिषं त्वस्त्रियां मांसे तथा स्याद्भोग्यवस्तुनि " इति केशवः ॥ आदास्यमानो ग्रहीष्यन्नजस्य पन्थानमावृत्यावरुध्यतस्थौ ॥
३२ ॥ भर्तेति । अनुष्ठितः संपादितोऽनन्तरजाया अनुजाया विवाहो येन स तथोक्तः । क्रथकैशिकानां भर्ता विदर्भेश्वरोऽपि तावत्तदा सत्त्वानुरूपमुत्साहानुरूपं यथा तथा । हरणं कन्यादेयं धनम् ॥ " यौतकादि तु यद्देयं सुदायो हरणं च तत् " इत्यमरः ॥ आहरणीकृतश्रीः सन्राघवमजं प्रास्थापयत्प्रस्थापितवान्स्वयमन्वगाच्च ॥

---

31. That multitude of kings, who had previously formed a plot for the accomplishment of their object, and who were thus bent on snatching away that bait of a young damsel obtainable at the time (of his departure) stood obstructing the way of Aja.

32. Meanwhile the lord of the Krathakais'ikas too who had performed the marriage of his younger sister and who had presented him his wealth as a dowery according to his own position, dismissed Rághava and accompanied him.

---

31. H. reads :—कृतपूर्वसन्धिः संरम्भसिद्धौ for कृतपूर्वसंविदारम्भसिद्धौ. B. C. आरम्भसिद्ध्यै, D_2. with Su., प्रारम्भसिद्धौ, D. उदारसिद्धौ for आरम्भसिद्धौ. Also noticed by Cháritravardhana who says :—" उदारसिद्धौ " इति पाठे सिद्धत्यनयेति सिद्धिरुपायस्तस्मिन्सति ॥ B. C. E. I. K. with Val., and Su., समरेण लभ्यं, one of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Vallabha and Sumativijaya, D. H. L. R. with Hem., and the texts only of Val., and Su., समरोपलभ्यं, this too is noticed by Cháritravardhana, Dinakara and Mallinátha the former says :—" क्वचित् समरोपलभ्यमिति तत्र समरेण संग्रामेणोपलभ्यं, and the latter who says : —" समरोपलभ्यम् " इति पाठे युद्धसाध्यमित्यर्थः " ॥ C_2. समराक्षलभ्यं for समयोपलभ्यं. This is also noticed by Cháritravardhana who says :—" समराक्षलभ्यं " इति पाठे समरः संग्रामः स एवाक्षो द्यूतं तेन लभ्यं ॥ Hemádri also notices the reading of Mallinátha.

32. D. अनन्तरजो for अनन्तरजा°. D. L. with Din., and Dharm., सत्वानुरूपाभरणीकृतश्रीः, B. C. I. K. R. with Val., and Su., शक्त्यानुरूपाभरणीकृतश्रीः, one of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with this, E. शक्त्यानुरूपाहरणीकृतश्रीः for सत्त्वानुरूपाहरणीकृतश्रीः.

तिस्रस्त्रिलोकप्रथितेन सार्धमजेन मार्गे वसतीरुषित्वा ।
तस्मादपावर्तत कुण्डिनेशः पर्वात्यये सोम इवोष्णरश्मेः ॥ ३३ ॥
प्रमन्यवः प्रागपि कोशलेन्द्रे प्रत्येकमात्तस्वतया बभूवुः ।
अतो नृपाश्चक्षमिरे समेताः स्त्रीरत्नलाभं न तदात्मजस्य ॥ ३४ ॥
तमुद्वहन्तं पथि भोजकन्यां रुरोध राजन्यगणः स दृप्तः ।
बलिप्रदिष्टां श्रियमाददानं त्रैविक्रमं पादमिवेन्द्रशत्रुः ॥ ३५ ॥

३३ ॥ तिस्र इति ।कुण्डिनं विदर्भनगरम् । तस्येशो भोजस्त्रिषु लोकेषु प्रथितेनाजेन सार्धं मार्गे तिस्रो वसती रात्रीरुषित्वा स्थित्वा ॥ "वसती रात्रिवेश्मनोः" इत्यमरः ॥ "कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे" इति द्वितीया ॥ पर्वात्यये दर्शान्त उष्णरश्मेः सूर्यात्सोमश्चन्द्र इव । तस्मादजादपावर्तत । तं विसृज्य निवृत्त इत्यर्थः ॥

३४ ॥ प्रमन्यव इति । नृपाः प्रागपि प्रत्येकमात्तस्वतया दिग्विजये हृतधनत्वेन कोशलेन्द्रे रघौ प्रमन्यवो रूढवैरा बभूवुः । अतः कारणात्समेताः संगताः सन्तस्तदात्मजस्य रघुसूनोः स्त्रीरत्नलाभं न चक्षमिरे न सेहिरे ॥

३५ ॥ तमिति । दृप्त सवर्गः स राजन्यगणो राजसंघातः । भोजकन्यामुद्वहन्तं नयन्तं तमजम् । बलिना वैरोचनेन प्रदिष्टां दत्तां श्रियमाददानं स्वीकुर्वाणम् । त्रिविक्रमस्येमं त्रैविक्रमम् । पादमिन्द्रशत्रुः प्रह्लाद इव । पथि रुरोध ॥ तथा च वामनपुराणे—"वैरोचनविरुद्धोऽपि प्रह्लादः प्राक्तनं स्मरन् । विष्णोस्तु क्रममाणस्य पादाम्भोजं रुरोध ह" इति ॥

---

33. Having halted at three stages on the way with Aja renowned in three worlds, the lord of Kundina turned back from him, as at the end of the conjunction, the moon departs from the sun.

34. Every one of them had already become irritated against the lord of the Kos'alas (*i. e.* Raghu) on account of having been deprived of his wealth (by Raghu), and hence the kings who were assembled there for conspiracy could not endure the acquisition of that jewel-of-a woman by his son.

35. That haughty host of kings arrested him (*i. e.* Aja) on his way as he was taking with him the Bhoja princess, as the enemy of Indra had intercepted the third foot of Trivikrama receiving the wealth granted to him by Bali.

---

33. D. I. L. त्रिलोकी° for त्रिलोक°.

35. D. R. with Val., °प्रतिष्टां for °प्रदिष्टां. Hemâdri notices this and says :—" प्रलिप्रतिष्टां " इति पाठे बलिप्रतिष्टा आश्रयो यस्याः सा तां ॥ " प्रतिष्टाकृत्यमास्पदं " ॥ R. दृष्टः for दृप्तः.

तस्याः स रक्षार्थमनल्पयोधमादिश्य पित्र्यं सचिवं कुमारः ।
प्रत्यग्रहीत्पार्थिववाहिनीं तां भागीरथीं शोण इवोत्तरंगः ॥ ३६ ॥
पत्तिः पदातिं रथिनं रथेशस्तुरंगसादी तुरगाधिरूढम् ।
यन्ता गजस्याभ्यपतद्गजस्थं तुल्यप्रतिद्वन्द्वि बभूव युद्धम् ॥ ३७ ॥
नदत्सु तूर्येष्वविभाव्यवाचो नोदीरयन्ति स्म कुलोपदेशान् ।
बाणाक्षरैरेव परस्परस्य नामोर्जितं चापभृतः शशंसुः ॥ ३८ ॥

३६ ॥ तस्या इति । स कुमारोऽजस्तस्या इन्दुमत्या रक्षार्थमनल्पयोधं बहुसुभटम् । पितुरागतं पित्र्यम् । आप्तमित्यर्थः । सचिवमादिश्याज्ञाप्य तां पार्थिववाहिनीं राजसेनाम् ॥ " ध्वजिनी वाहिनी सेना " इत्यमरः ॥ भागीरथीमुत्तरंगः शोणः शोणाख्यो नद इव । प्रत्यग्रहीदभियुक्तवान् ॥

३७ ॥ पत्तिरिति । पत्तिः पादचारी योद्धा पदातिं पादचारमभ्यपतत् ॥ पदाभ्यामततीति पदातिः ॥ पादस्य पदित्यादिना पदादेशः ॥ " पदातिपत्तिपदगपादातिकपदाजयः " इत्यमरः ॥ रथेशो रथिनं रथारोहमभ्यपतत् । तुरंगसाद्यश्वारोहस्तुरगाधिरूढमश्वारोहमभ्यपतत् ॥ " रथिनः स्यन्दनारोहा अश्वारोहास्तु सादिनः " इत्यमरः ॥ गजस्य यन्ता हस्त्यारोहो गजस्थं पुरुषमभ्यपतत् । इत्थं तुल्यप्रतिद्वन्द्व्येकजातिसुभटं युद्धमभूत् ॥ अन्योन्यं द्वन्द्वं कलहोऽस्त्येषामिति प्रतिद्वन्द्विनो योधाः ॥ " द्वन्द्वं कलहयुग्मयोः " इत्यमरः ॥

३८ ॥ नदत्स्विति । तूर्येषु नदत्स्वविभाव्यवाचोऽनवधार्यगिरश्चापभृतो धानुष्काः ।

---

36. That prince first ordered his hereditary minister to keep guard over her with an army consisting of innumerable host of warlike soldiers, and then himself received that army of kings in a hostile spirit, as the S'ona with its swollen waves receives the contents of the Bhágîrathî.

37. Then the infantry fell on foot-soldiers, the warrior in the chariot on one fighting in the car, the horse-man on the rider on horse, and the elephant-driver on one on elephant, thus the battle ensued between the warriors of equal-footing.

38. While the martial drums were resounding, the bowmen

---

36. B. I. and the text only of Val., ज्योतिरथां, D. E. H. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vija., ज्योतीरथां for भागीरथीं. Hemádri though notices almost all the readings, does not seem to have even known the reading of Mallinâtha ; only Châritravardhana notices his reading and says :—कुत्रापि " भागीरथीं " इति पाठस्तत्र गंगामिव. Hemádri's reading appears to be the oldest and the genuine text of Kálidàsa.

37. I P. R. with Val., अभ्युपतत for अभ्यपतत.

38. D. J. with Hem., Chá., Din., and Dharm., कुलापदेशान् for

उत्थापितः संयति रेणुरश्वैः सान्द्रीकृतः स्यन्दनवंशचक्रैः ।
विस्तारितः कुञ्जरकर्णतालैर्नेत्रक्रमेणोपरुरोध सूर्यम् ॥ ३९ ॥
मत्स्यध्वजा वायुवशाद्विदीर्णैर्मुखैः प्रवृद्धध्वजिनीरजांसि ।
बभुः पिबन्तः परमार्थमत्स्याः पर्याविलानीव नवोदकानि ॥ ४० ॥

कुलमुपदिश्यते प्रख्याप्यते यैस्ते कुलोपदेशास्तान्कुलनामानि नोदीरयन्ति स्म नोच्चारयामासुः । श्रोतुमशक्यत्वाद्वाचो नाब्रुवन्नित्यर्थः ॥ किं तु बाणाक्षरैर्बाणेषु लिखिताक्षरैरेव परस्परस्योर्जितं प्रख्यातं स्वनाम शशंसुरूचुः ॥

३९ ॥ उत्थापित इति । संयति संग्रामेऽश्वैरुत्थापितः । स्यन्दनवंशानां रथगणानां चक्रैः सान्द्रीकृतो घनीकृतः ॥ "वंशः पृष्ठास्थिन गेहोर्ध्वकाष्ठे वेणौ गणे कुले" इति केशवः ॥ कुञ्जरकर्णानां तालैस्ताडनैर्विस्तारितः प्रसारितो रेणुर्नेत्रक्रमेणांशुकपरिपाट्या । अंशुकेनेवेत्यर्थः ॥ "स्याज्जटांशुकयोर्नेत्रम्" इति ॥ "क्रमोऽङ्घ्रौ परिपाट्यां च" इति च केशवः ॥ सूर्यमुपरुरोधाच्छादयामास ॥

४० ॥ मत्स्येति । वायुवशाद्विदीर्णैर्विवृतैर्मुखैः प्रवृद्धानि ध्वजिनीरजांसि सैन्यरेणून्पिबन्तो गृह्णन्तो मत्स्यध्वजा मत्स्याकारा ध्वजाः । पर्याविलानि परितः कलुषाणि नवोदकानि पिबन्तः परमार्थमत्स्याः सत्यमत्स्या इव । बभुर्भान्ति स्म ॥

---

whose voices were made inaudible in the din of battle did not utter the names of their families ; but they simply pronounced the high names of each other only by means of letters engraven on their arrows.

39. The dust, raised in the battle by horses, thickened by the wheels of a number of chariots and spread around by the flapping ears of elephants, covered the sun as if with a cloth.

40. The fish-banners with their mouths opened by the force of the wind, and receiving in the increased dust of the army, looked like real fishes drinking the new turbid waters.

कुलोपदेशान्. Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha. Between 38-39 H. reads :—" ललाटबद्धभृकुटीतरङ्गैस्तनुत्यजां दन्तनिपीडितोष्ठैः । आतस्तरे भल्लनिकृन्तकण्ठैर्हुङ्कारगर्भैर्द्विषतां शिरोभिः " ॥

39. B. with Val., स्यन्दनवृन्दचक्रैः, A. स्यन्दनवंशतालैः, H. स्यन्दनचक्रचक्रैः, D. with Su., and Dharm., स्यन्दनपुञ्जचक्रैः, D_2. with Châ., and Din., स्यन्दननेमिचक्रैः for स्यन्दनवंशचक्रैः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Vallabha and B. Ms. B. C. E. I. K. L. R. with Hem., Val., and Su., अनुक्रमेण, D. H. इति क्रमेण for नेत्रक्रमेण. Châritravardhana also notices the reading.

40. K. विकीर्णैः for विदीर्णैः. D. वनोदकानि for नवोदकानि.

रथो रथाङ्गध्वनिना विजज्ञे विलोलघण्टाक्वणितेन नागः ।
स्वभर्तृनामग्रहणाद्बभूव सान्द्रे रजस्यात्मपरावबोधः ॥ ४१ ॥
आवृण्वतो लोचनमार्गमाजौ रजोऽन्धकारस्य विजृम्भितस्य ।
शस्त्रक्षताश्वद्विपवीरजन्मा बालारुणोऽभूद्रुधिरप्रवाहः ॥ ४२ ॥
स च्छिन्नमूलः क्षतजेन रेणुस्तस्योपरिष्टात्पवनावधूतः ।
अङ्गारशेषस्य हुताशनस्य पूर्वोत्थितो धूम इवाबभासे ॥ ४३ ॥
प्रहारमूर्छापगमे रथस्था यन्तॄनुपालभ्य निवर्तिताश्वाः ।
यैः सादिता लक्षितपूर्वकेतूंस्तानेव सामर्षतया निजघ्नुः ॥ ४४ ॥

४१ ॥ रथ इति । सान्द्रे रजसि रथो रथाङ्गध्वनिना चक्रध्वनिना विजज्ञे ज्ञातः। नागो हस्ती विलोलघण्टाक्वणितेन घण्टानादेन विजज्ञे । आत्मपरावबोधः परस्परविवेकः । योधानामिति शेषः । स्वभर्तॄणां स्वस्वामिनां नामग्रहणान्नामोच्चारणाद्बभूव । रजोऽन्धतया स्वं परं च शब्ददेवानुमाय प्रहरन्तीत्यर्थः ॥

४२ ॥ आवृण्वत इति । लोचनमार्गमावृण्वतो दृष्टिपथमुपरुन्धतः । आजौ विजृम्भितस्य । रज एवान्धकारं तस्य । शस्त्रक्षतेभ्योऽश्वद्विपवीरेभ्यो जन्म यस्य स रुधिरप्रवाहो बालारुणो बालार्कोऽभूत् ॥ "अरुणो भास्करेऽपि स्यात्" इत्यमरः ॥ बालविशेषणं रुधिरसावर्ण्यार्थम् ॥

४३ ॥ स इति । क्षतजेन रुधिरेण छिन्नमूलः । त्याजितभूतलसंबन्ध इत्यर्थः ॥ तस्य क्षतजस्योपरिष्टात् । पवनावधूतो वाताहतः स रेणुः । अङ्गारशेषस्य हुताशनस्य पूर्वोत्थितो धूम इव । आबभासे ॥

४४ ॥ प्रहारेति । रथिनः । प्रहारेण या मूर्छा तस्या अपगमे सति । रथस्था रथ

41. The chariot was recognized by the rattling of its wheels, the elephant by the tinkling sound of his moving bells, while the distinct knowledge of one's own party and that of his enemy was, in the thick dust, made only by uttering the names of their respective masters.

42. The stream of blood gushing out from the wounds made by weapons on the bodies of warriors, elephants and horses proved (*lit.* became) as it were the newly risen sun to the all-pervading darkness consisting of dust that obstructed the range of sight in the battle-field.

43. That column of dust separated from the surface of the earth (*lit.* cut asunder from its root) by blood and wafted by the current of the wind over it, looked like the smoke, that is raised before, of the fire which has now embers remaining.

44. When the swoon caused by the strokes (of weapons)

42. H. विकुम्भितस्य, J. विलम्भितस्य for विजृम्भितस्य.

44. B. C. R. with Chá., Din., Val., and Su., रथस्थान for रथस्थाः. K. विवर्तिताश्वाः, D$_2$. with Din., निवर्तिताश्वान्, E. H. I. L. R. with

अप्यर्धमार्गे परबाणलूना धनुर्भृतां हस्तवतां पृषत्काः ।
संप्रापुरेवात्मजवानुवृत्त्या पूर्वार्धभागैः फलिभिः शरव्यम् ॥ ४५ ॥
आधोरणानां गजसंनिपाते शिरांसि चक्रैर्निशितैः क्षुराग्रैः ।
हृतान्यपि श्येननखाग्रकोटिव्यासक्तकेशानि चिरेण पेतुः ॥ ४६ ॥

एव स्थिताः । संरक्षिता इत्यर्थः । मूर्छितानामन्यत्र नीत्वा संरक्षणं सारथिधर्मः । यन्तृन्सारथीनुपालभ्यासाधु कृतमित्यधिक्षिप्य । निवर्तिताश्वाः सन्तः पूर्वं यैः स्वयं सादिता हताः । लक्षितपूर्वकेतून् । पूर्वदृष्टैः केतुभिः प्रत्यभिज्ञातानित्यर्थः । तानेव सामर्षतया निजघ्नुः प्रजह्रुः ॥

४५ ॥ अपीति । अर्धश्चासौ मार्गश्च तस्मिन्नर्धमार्गे परेषां बाणैर्लूनाश्छिन्ना अपि हस्तवतां कृतहस्तानां धनुर्भृतां पृषत्काः शरा आत्मजवानुवृत्त्या स्ववेगानुबन्धेन हेतुना फलिभिर्लोहाग्रवद्भिः ॥ " सस्यबाणाग्रयोः फलम् " इति विश्वः ॥ पूर्वार्धभागैः । शृणातीति शरुः । तस्मै हितं शरव्यं लक्ष्यम् ॥ " उगवादिभ्यो यत् " इति यत्प्रत्ययः ॥ " लक्षं लक्ष्यं शरव्यं च " इत्यमरः ॥ संप्रापुरेव । न तु मध्ये पतिता इत्यर्थः ॥

४६ ॥ आधोरणानामिति । गजसंनिपाते गजयुद्धे निशितैरत एव क्षुराग्रैः क्षुरस्याग्रमिवाग्रं येषां तैश्चक्रैरायुधविशेषैर्हृतानि छिन्नान्यपि । श्येनानां पक्षिविशेषाणां नखाग्रकोटिषु व्यासक्ताः केशा येषां तानि । आधोरणानां हस्त्यारो-

---

was over, the warriors, who (on that account) were kept secure in their chariots, severely reproved the charioteers, and after having turned the horses to the battle-field, killed, through excessive rage, those enemies alone who had wounded them before and whose flags they had previously marked.

45. The arrows of dexterous warriors though cut down in half the way by the arrows of enemies, reached their very marks (aims) with their iron-headed fore-halves, by following their own speed.

46. In the elephant fight the heads of their drivers though severed off by the sharp discuses (the sharp circular missile weapons) with razor-like edges, fell down after a long time, because the hair on them being stuck to the sharp points of the nails of hawks.

Hem., Châ., Val., Su., and Dharm., विवर्तिताश्वान्, B. C. विनर्तिताश्वान् for निवर्तिताश्वाः. B. C. with Su., आहताः for सादिताः.

46. D. मुक्तैः for चक्रैः. B. C. D. I. K. L. R. with Hem., Val., Su., and Dharm., क्षुरप्रैः for क्षुराग्रैः. H. with Châ., and Din., निशितानाग्रधारैः for निशितैः क्षुराग्रैः. D. J. with Châ., and Din., हतानि, C. with Su., कृत्तानि for हृतानि. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Sumativijaya.

पूर्वं प्रहर्ता न जघान भूयः प्रतिप्रहाराक्षममश्वसादी ।
तुरंगमस्कन्धनिषण्णदेहं प्रत्याश्वसन्तं रिपुमाचकाङ्क्ष ॥ ४७ ॥
तनुत्यजां वर्मभृतां विकोशैर्बृहत्सु दन्तेष्वसिभिः पतद्भिः ।
उद्यन्तमग्निं शमयांबभूवुर्गजा विविग्नाः करशीकरेण ॥ ४८ ॥
शिलीमुखोत्कृत्तशिरःफलाढ्या च्युतैः शिरस्त्रैश्चषकोत्तरेव ।
रणक्षितिः शोणितमद्यकुल्या रराज मृत्योरिव पानभूमिः ॥ ४९ ॥

हाणाम् ॥ "आधोरणा हस्तिपका हस्त्यारोहा निषादिनः" इत्यमरः ॥ शिरांसि चिरेण पेतुः पतितानि ॥ शरव्यपातात्प्रागेवारुह्य पश्चादुत्पततां पक्षिणां नखेषु केशसङ्गश्चिरपातहेतुरिति भावः ॥

४७ ॥ पूर्वमिति । पूर्वं प्रहर्ता प्रथमं प्रहर्ताश्वसादी तौरंगिकः प्रतिप्रहारेऽक्षममशक्तं तुरंगमस्कंधे निषण्णदेहम् । मूर्च्छितमित्यर्थः । रिपुं भूयो न जघान पुनर्न प्रजहार । किं तु प्रत्याश्वसन्तं पुनरुज्जीवन्तमाचकाङ्क्ष ॥ "नायुधव्यसनं प्राप्तं नार्तं नातिपरिक्षतम्" इति निषेधादिति भावः ॥

४८ ॥ तनुत्यजामिति । तनुत्यजाम् । तनुषु निस्पृहाणामित्यर्थः । वर्मभृतां कवचिनां संबन्धिभिर्बृहत्सु दन्तेषु पतद्भिरत एव विकोशैः पिधानादुद्धृतैः ॥ "कोशोऽस्त्री कुड्मले खड्गपिधानेऽर्थौघदिव्ययोः" इत्यमरः ॥ असिभिः खड्गैरुद्यन्तमुत्थितमग्निं विविग्ना भीता गजाः करशीकरेण शमयांबभूवुः ॥

४९ ॥ शिलीमुखेति । शिलीमुखैर्बाणैरुत्कृत्तानि शिरांस्येव फलानि तैराढ्या संपन्ना । च्युतैर्भ्रष्टैः । शिरांसि त्रायन्त इति शिरस्त्राणि शीर्षण्यानि ॥ "शीर्षण्यं च शिरस्त्रं च" इत्यमरः ॥ तैश्चषकोत्तरा चषकः पानपात्रमुत्तरं यस्यां सेव ॥

---

47. The warrior on horse, who had first dealt a blow at his enemy who had his body reclining on the shoulder-joint of his horse and who was unable to strike at his enemy in return, did not strike him again, but wished that he would revive.

48. The terrified elephants quenched, with the watery drops thrown out of their trunks, the fire that arose from the unsheathed swords of the desperate warriors in armour falling directly on their formidable tusks.

49. There the battle-field appeared like the drinking room of Death rich in fruits made of the heads of warriors severed by

---

48. B. वर्मवतां, C. with Val., and Su., चर्मभृतां for वर्मभृतां. Vallabha also notices the reading of Mallinātha. D. उद्वृत्तं, J. उद्भूतं for उद्यन्तं.

49. D. 'उत्क्षिप्त' for 'उत्कृत्त'. One of the three Mss. of Hemādri's दर्पण also agrees with D. So does one of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुहितैषिणी. C. with Hem., and Val., चखकोत्तरा for चषकोत्तरा. Vallabha's text with us.

उपान्तयोर्निष्कुषितं विहंगैराक्षिप्य तेभ्यः पिशितप्रियापि ।
केयूरकोटिक्षततालुदेशा शिवा भुजच्छेदमपाचकार ॥ ५० ॥
कश्चिद्द्विषत्खड्गहृतोत्तमाङ्गः सद्यो विमानप्रभुतामुपेत्य ।
वामाङ्गसंसक्तसुराङ्गनः स्वं नृत्यत्कबन्धं समरे ददर्श ॥ ५१ ॥
अन्योन्यसूतोन्मथनादभूतां तावेव सूतौ रथिनौ च कौचित् ।
व्यश्वौ गदाव्यायतसंप्रहारौ भग्नायुधौ बाहुविमर्दनिष्ठौ ॥ ५२ ॥

"चषकोऽस्त्री पानपात्रम्" इत्यमरः ॥ शोणितान्येव मद्यं तस्य कुल्याः प्रवाहा यस्यां सा ॥ "कुल्याल्पा कृत्रिमा सरित्" इत्यमरः ॥ रणक्षितिर्मृत्योः पानभूमिरिव रराज ॥

५० ॥ उपान्तयोरिति । उपान्तयोः प्रान्तयोर्विहंगैर्निष्कुषितं खण्डितम् ॥ "इण्निष्ठायाम्" इतीडागमः ॥ भुजच्छेदं भुजखण्डं तेभ्यो विहंगेभ्य आक्षिप्याच्छिद्य पिशितप्रिया मांसप्रियापि शिवा क्रोष्ट्री ॥ "शिवः कीलः शिवा क्रोष्ट्री" इति विश्वः ॥ केयूरकोट्या क्षतस्तालुदेशो यस्याः सा सती। अपाचकारापसारयामास ॥ किरतेः करोतेर्वा लिट् ॥

५१ ॥ कश्चिदिति । द्विषतः खड्गेन हृतोत्तमाङ्गश्छिन्नशिराः कश्चिद्वीरः सद्यो विमानप्रभुतां विमानाधिपत्यमुपेत्य वामाङ्गसंसक्ता सव्योत्सङ्गसङ्गिनी सुराङ्गना यस्य स तथोक्तः सन्समरे । नृत्यन्स्वं निजं कबन्धमशिरस्कं कलेवरं ददर्श ॥ "कबन्धोऽस्त्री क्रियायुक्तमपमूर्धकलेवरम्" इत्यमरः ॥

५२ ॥ अन्योन्येति । कौचिद्वीरावन्योन्यस्य सूतयोः सारथ्योरुन्मथनान्निध-

arrows, abounding in drinking cups made of the dropped helmets and flowing with liquor of blood.

50. There a female jackal, though she was very fond of eating flesh, but being wounded in the roof of her palate by the points of the armlet. threw away a piece of a severed arm previously snatched away from vultures and which was torn off all around the edge by them.

51. A certain warrior whose head was severed off by the sword of his enemy, having instantly obtained the mastery of a celestial vehicle with a heavenly damsel clung to him on his left side saw his own trunk dancing in the battle-field.

52. Two other chariot-warriors, on account of their killing

---

50. R अपान्तयोः for उपान्तयोः. D. निर्घुषितं, K. L. with Châ., Din., and Val., निःकुषितं for निष्कुषितं. R. and the texts only of Val., and Su., दपाचकार for अपाचकार.

51. I. L. and the text only of Val., °खड्ग° for °खड्ग°. H. °सुराङ्गणः for सुराङ्गनः.

52. E. K. P. R. and the text only of Val., °विमर्दनष्टौ for विमर्द-

परस्परेण क्षतयोः प्रहर्त्रोरुत्क्रान्तवाय्वोः समकालमेव ।
अमर्त्यभावेऽपि कयोश्चिदासीदेकाप्सरःप्रार्थितयोर्विवादः ॥ ५३ ॥
व्यूहावुभौ तावितरेतरस्माद्भङ्गं जयं चापतुरव्यवस्थम् ।
पश्चात्पुरोमारुतयोः प्रवृद्धौ पर्यायवृत्त्येव महार्णवोर्मी ॥ ५४ ॥

नाशाविव सूतौ रथिनौ चाभूताम्। तावेव व्यश्वौ नष्टाश्वौ सन्तौ गदाभ्यां व्यायतो दीर्घः संप्रहारो युद्धं ययोस्तावभूताम्। ततो भग्नायुधौ भग्नगदौ सन्तौ बाहुविमर्दनिष्ठौ बाहुयुद्धसक्तावभूताम् ॥

५३ ॥ परस्परेणेति। परस्परेण क्षतयोः प्रहृतयोः समकालमेककालं यथा तथोत्क्रान्तवाय्वोर्युगपद्गतप्राणयोः। एकैवाप्सराः प्रार्थिता याभ्यां तयोरेकाप्सरःप्रार्थितयोः। प्रार्थितैकाप्सरसोरित्यर्थः ॥ "वाहिताग्न्यादिषु" इति परनिपातः ॥ अथ वा। एकस्यामप्सरसि प्रार्थितं प्रार्थना ययोरिति विग्रहः ॥ "स्त्रियां बहुष्वप्सरसः" इति बहुत्वाभिधानं प्रायिकम् ॥ कयोश्चित्प्रहर्त्रोर्योधयोरमर्त्यभावेऽपि देवभावेऽपि विवादः कलह आसीत् ॥ एकामिषाभिलाषो हि महद्वैरबीजमिति भावः ॥

५४ ॥ व्यूहाविति। तावुभौ व्यूहौ सेनासंघातौ ॥ "व्यूहस्तु बलविन्यासः" इत्यमरः ॥ पश्चाच्च पुरश्च यौ मारुतौ तयोः पर्यायवृत्त्या क्रमव्यापारेण प्रवृद्धौ महान्तावर्णवोर्मी इव। इतरेतरस्मादन्योन्यस्मादव्यवस्थं व्यवस्थारहितमनियतं जयं भङ्गं पराजयं चापतुः प्राप्तवन्तौ ॥

---

each other's charioteers, became themselves the charioteers and being both without horses maintained a prolonged contest with their maces, and those weapons too when broken down resumed at once the hand-fighting that would bring on them inevitable destruction.

53. There arose a quarrel between two other combatants even in their immortal state of soul, who, on earth, were wounded by each other and who had thus given up their breath at one and the same time in the battle-field, for both of them being asked for by one and the same celestial damsel.

54. Both the armies arrayed together for battle suffered defeats from and obtained victories over each other consequent on mutual ill-regulation, like two waves of the great ocean swollen by two winds behind and before successively.

निर्ण. One of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with Vallabha's text.

54. B. C. E. I. K. P. R. with Val., and Su., इतरतरोऽर्थं for इतरेतरस्मात्. Vallabha also notices the reading of Mallinâtha.

परेण भग्नेऽपि बले महौजा ययावजः प्रत्यरिसैन्यमेव ।
धूमो निवर्त्येत समीरणेन यतो हि कक्षस्तत एव वह्निः ॥ ५५ ॥
रथी निषङ्गी कवची धनुष्मान्दृप्तः स राजन्यकमेकवीरः ।
निवारयामास महावराहः कल्पक्षयोद्वृत्तमिवार्णवाम्भः ॥ ५६ ॥
स दक्षिणं तूणमुखेन वामं व्यापारयन्हस्तमलक्ष्यताजौ ।
आकर्णकृष्टा सकृदस्य योद्धुर्मौर्वीव बाणान्सुषुवे रिपुघ्नान् ॥ ५७ ॥

५५ ॥ परेणेति । बले स्वसैन्ये परेण परबलेन भग्नेऽपि महौजा महाबलोऽजोऽरिसैन्यं प्रत्येव ययौ ॥ तथा हि । समीरणेन वायुना धूमो निवर्त्येत कक्षादपसार्येत ॥ वर्ततेर्ण्यन्तात्कर्मणि संभावनायां लिङ् ॥ वह्निस्तु यतो यत्र कक्षस्तृणम् ॥ "कक्षौ तु तृणवीरुधौ" इत्यमरः ॥ तत एव तत्रैव । प्रवर्तत इति शेषः ॥ सार्वविभक्तिकस्तसिः ॥

५६ ॥ रथीति । रथारूढो निषङ्गी तूणीरवान् ॥ "तूणोपासङ्गतूणीरनिषङ्गा इषुधिर्द्वयोः" इत्यमरः ॥ कवची वर्मधरो धनुष्मान्धनुर्धरो दृप्तो रणदृप्त एकवीरोऽसहायशूरः । सोऽजो राजन्यकं राजसमूहम् ॥ "गोत्रोक्ष—" इत्यादिना वुञ्प्रत्ययः ॥ महावराहः कल्पक्षये कल्पान्तकाल उद्वृत्तमुद्वेलमर्णवाम्भ इव । निवारयामास ॥

५७ ॥ स इति । सोऽजः । आजौ संग्रामे दक्षिणं हस्तं तूणमुखेन निषङ्गविवरेण

55. Though his army was routed by his enemy the most powerful Aja fell directly on the enemy's army ; for the smoke may be driven away by the wind but the fire remains in that spot only where there is grass.

56. He, the sole warrior, confident in his own furious martial spirit, riding on a chariot equipped with a quiver, putting on an armour and wielding a bow, kept off the host of the kings, as the Great Boar did the waters of the ocean swollen at the end of the Kalpa.

57. The prince was seen in the battle beautifully moving his

---

55. C. D. महोक्षाः for महौजाः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with C. D. Mss. B. C. E. H. I. J. K. L. P. R. with Hem., Val., Châ., and Dharm., निवर्तेत for निवर्त्येत. A. D. E. J. L. तु for हि. Almost all commentators with Mallinâtha.

56. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., दृप्ते for दृप्तः. B. C. E. I. K. L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su , Dharm., and Vija., विलोडयामास, H. विलोलयामास for निवारयामास. D. P. कल्पक्षयोद्धूतं for कल्पक्षयोद्वृत्तं.

57. B. C. E. I. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., तूणमुखे न for तूणमुखेन. C. D. with Val., सुखुवे for सुषुवे.

स रोषदष्टाधिकलोहितोष्ठैर्व्यक्तोर्ध्वरेखा भ्रुकुटीर्वहद्भिः ।
तस्तार गां भल्लनिकृत्तकण्ठैर्हुंकारगर्भैर्द्विषतां शिरोभिः ॥ ५८ ॥
सर्वैर्बलाङ्गैर्द्विरदप्रधानैः सर्वायुधैः कङ्कटभेदिभिश्च ।
सर्वप्रयत्नेन च भूमिपालास्तस्मिन्प्रजह्रुर्युधि सर्व एव ॥ ५९ ॥

वाममतिसुन्दरम् ॥ " वामं सव्ये प्रतीपे च द्रविणे चातिसुन्दरे " इति विश्वः ॥ व्यापारयन्नलक्ष्यत । शरसंधानादयस्तु दुर्लक्ष्या इत्यर्थः । सकृदाकर्णकृष्टा योद्धुरस्याजस्य मौर्वी ज्या । रिपून् घ्नन्तीति रिपुघ्नाः । तान् ॥ " अमनुष्यकर्तृके च " इति टक्प्रत्ययः ॥ बाणान्सुषुव इव सुषुवे किमु ॥

५८ ॥ स इति । सोऽजः । रोषेण दष्टा अत एवाधिकलोहिता ओष्ठा येषां तैः । व्यक्ता ऊर्ध्वा रेखा यासां ताः ! भ्रुकुटीर्भ्रूभङ्गान्वहद्भिः । भल्लनिकृत्ता बाणविशेषच्छिन्नाः कण्ठा येषां तैः । हुंकारगर्भैः सहुंकारैः । हुंकुर्वद्भिरित्यर्थः । द्विषतां शिरोभिर्गां भूमिं तस्तार छादयामास ॥

५९ ॥ सर्वैरिति । द्विरदप्रधानैर्गजमुख्यैः सर्वैर्बलाङ्गैः सेनाङ्गैः ॥ " हस्त्यश्वरथपादातं सेनाङ्गं स्याच्चतुष्टयम् " इत्यमरः ॥ कङ्कटभेदिभिः कवचभेदिभिः ॥ " उरश्छदः कङ्कटको जगरः कवचोऽस्त्रियाम् " इत्यमरः ॥ सर्वायुधैश्च । बाह्यं बलमुक्त्वान्तरमाह—सर्वप्रयत्नेन च सर्व एव भूमिपाला युधि तस्मिन्नजे प्रजह्रुः । तं प्रजह्रुरित्यर्थः ॥ सर्वत्र सर्वकारकशक्तिसंभवात्कर्मणोऽप्यधिकरणविवक्षायां सप्तमी ॥ तदुक्तं—" अनेकशक्तियुक्तस्य विश्वस्यानेककर्मणः । सर्वदा सर्वथाभावात्किंचित्किंचिद्विवक्ष्यते " इति ॥

---

right hand about the mouth of the quiver (so great was his agility) but it seemed that the warrior's bow-string drawn up to his ear at once produced as it were arrows destructive of his enemies.

58. He strewed the ground with the heads of his enemies which were cut at the throats by the Bhalla arrows which had their lips still more reddened when bitten with rage, which had their frowning eye-brows with visible lines rising upwards and which were full of defiant sounds (or war-cries).

59. With all the constituents of their armies of which elephants formed the chief element and with all the weapons piercing through even armour, and with every possible effort, even all the kings (even all of them) fell upon him in the fight.

---

58. C. H. E. I. K L. R. with Hem., and Val., रोषदष्टाधरलोहिताक्षैः, A. with Su., रोषदष्टाधरलोहितोष्ठैः, D. with Dharm., रोषदष्टाधरलोहिताक्षैः for रोषदष्टाधिकलोहितोष्ठैः. Sumativijaya notices the reading of Hemâdri and Vallabha. C. D. with Val., °रेषा for °रेखा. D. with Vija., and the text only of Su., °कङ्कैः for °कण्ठैः. A. C. D. हुंकारगर्भैः for हुंकारगर्भैः. Almost all commentators with us.

59. D. बलौघैः for बलाङ्गैः.

सोऽस्त्रव्रजैश्छन्नरथः परेषां ध्वजाग्रमात्रेण बभूव लक्ष्यः ।
नीहारमग्नो दिनपूर्वभागः किंचित्प्रकाशेन विवस्वतेव ॥ ६० ॥
प्रियंवदात्प्राप्तमसौ कुमारः प्रायुङ्क्त राजस्वधिराजसूनुः ।
गान्धर्वमस्त्रं कुसुमास्त्रकान्तः प्रस्वापनं स्वप्ननिवृत्तलौल्यः ॥ ६१ ॥
ततो धनुष्कर्षणमूढहस्तमेकांसपर्यस्तशिरस्त्रजालम् ।
तस्थौ ध्वजस्तम्भनिषण्णदेहं निद्राविधेयं नरदेवसैन्यम् ॥ ६२ ॥

६० ॥ स इति । परेषां द्विषामस्त्रव्रजैश्छन्नरथः सोऽजः । नीहारैर्हिमैर्मग्नो दिनपूर्वभागः प्रातःकालः किंचित्प्रकाशेनषल्लक्ष्येण विवस्वतेव । ध्वजाग्रमात्रेण लक्ष्यो बभूव । ध्वजाग्रादन्यत्र किंचिल्लक्ष्यते स्मेत्यर्थः ॥

६१ ॥ प्रियंवदादिति । अधिराजसूनुर्महाराजपुत्रः कुसुमास्त्रकान्तो मदनसुन्दरः स्वप्नान्निवृत्तलौल्यः स्वप्नवितृष्णः । जागरूक इत्यर्थः । असौ कुमारः प्रियंवदात्पूर्वोक्ताद्गन्धर्वात्प्राप्तं गान्धर्वं गंधर्वदेवताकम् ॥ " साम्य देवता " इत्यण् ॥ प्रस्वापयतीति प्रस्वापनं निद्राजनकमस्त्रं राजसु प्रायुङ्क्त प्रयुक्तवान् ॥

६२ ॥ तत इति । ततो धनुष्कर्षणे चापकर्षणे मूढहस्तमव्यापृतहस्तम् । एकस्मिन्नंसे पर्यस्तं स्रस्तं शिरस्त्रजालं यस्य तत् । ध्वजस्तम्भेषु निषण्णा अवष्टब्धा देहा

---

60. He whose car was covered with multitudes of missiles of the enemies could only be distinguished by the uppermost top of his banner ; as the early part of the day (the dawn) obscured by the mist is discovered by the sun with its partial light.

61. That prince, the son of the Emperor, who was as handsome as the flower-armed god (Kàma) and who was disinclined to sleep (wide awake) employed against the kings, the Gandharva-missile which he had previously obtained from Priyamvada and which had the quality of causing slumber.

62. Then that army of the kings whose hands were incapaci-

---

60. D. L. and the text only of Vallabha, छिन्नरथः for छन्नरथः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with D. L. and Vallabha's text. D. K. लक्ष्यं for लक्ष्यः. Vallabha's text, and not his commentary, reads first " ततो धनुः कर्षण° &c., " and then " प्रियंवदात् &c. "

61. E. आप्तम् for प्राप्तम्. D. H. with Hem., Chà., Din., and Val., अथो कुमारः, B. E I. R. with Su., and the text only of Val., अथ प्रियार्हः, one of the three Mss. of Hemàdri's दर्पण also agrees with Sumativijaya and the text of Vallabha, C. K. with Vija., अथ प्रियार्हैः, D_2. with Dharm., अथ प्रियार्थः for असौ कुमारः. D. °विवृत्त° for °निवृत्त°. Hemàdri also notices this.

62. L. R. with Hem., Val., and Su., धनुःकर्षण° for धनुष्कर्षण°.

ततः प्रियोपात्तरसेऽधरोष्ठे निवेश्य दध्मौ जलजं कुमारः।
येन स्वहस्तार्जितमेकवीरः पिबन्यशो मूर्तमिवाबभासे ॥ ६३ ॥
शङ्खस्वनाभिज्ञतया निवृत्तास्तं सन्नशत्रुं ददृशुः स्वयोधाः।
निमीलितानामिव पङ्कजानां मध्ये स्फुरन्तं प्रतिमाशशाङ्कम् ॥ ६४ ॥
सशोणितैस्तेन शिलीमुखाग्रैर्निक्षेपिताः केतुषु पार्थिवानाम्।
यशो हृतं संप्रति राघवेण न जीवितं वः कृपयेति वर्णाः ॥ ६५ ॥

यस्य तत्। नरदेवानां राज्ञां सेनैव सैन्यम्॥ चातुर्वर्ण्यादित्वास्वार्थे ष्यञ्प्रत्ययः॥ निद्राविधेयं निद्रापरतन्त्रं तस्थौ॥

६३॥ तत इति। ततः कुमारः प्रिययेन्दुमत्योपात्तरस आस्वादितमाधुर्ये। अतिश्लाघ्य इति भावः। अधरोष्ठे जलजं शङ्खं निवेश्य॥ "जलजं शङ्खपद्मयोः" इति विश्वः॥ दध्मौ मुखमारुतेन पूरयामास। येनौष्ठनिविष्टेन शङ्खेनैकवीरः स स्वहस्तार्जितं मूर्तं मूर्तिमद्यशः पिबन्निवाबभासे॥ यशसः शुभ्रत्वादिति भावः॥

६४॥ शङ्खेति। शङ्खस्वनस्याजशङ्खध्वनेरभिज्ञतया प्रत्यभिज्ञानत्वान्निवृत्ताः प्राक्पलाय्य संप्रति प्रत्यागताः स्वयोधाः सन्नशत्रुं निद्राणशत्रुं तमजम्। निमीलितानां मुकुलितानां पङ्कजानां मध्ये स्फुरन्तं प्रतिमा चासौ शशाङ्कश्च तं प्रतिमाशशाङ्कं प्रतिबिम्बचन्द्रमिव। ददृशुः॥

६५॥ सशोणितैरिति। संप्रति राघवेण रघुपुत्रेण। पूर्वं रघुणेति भावः। हे

---

tated for drawing in the bow-string whose clusters of helmets slipped on one of their shoulders, stood with the bodies of its soldiers leaning upon the staffs of their banners, being greatly overpowered by sleep.

63. At last that prince having put the conch to his lips the flavour of which has been tasted by his beloved, blew it; and he appeared thereby a sole hero drinking, as it were, fame embodied obtained by his own hands.

64. By the recognition of the sound of his conch, his warriors returned and saw him with his enemies overwhelmed with sleep, like the tremulous reflection of the moon in the midst of lotuses that are closed.

65. By him were impressed on the banners of the kings by

°जातं for °जालं. Sumativijaya reads first "ततः प्रियोपात्तरसे" &c., and then "ततो धनुष्कर्षण" &c."

63. A. D. H. अधरोष्ठे for अधरोष्ठे. B. I. K. L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., and Su., तेन for येन. D. with Val., °वीरशब्दः for एकवीरः.

64. D. शान्तशत्रुं for सन्नशत्रुं. Châritravardhana also notices this.

65. B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Dharm., संयति for संप्रति.

स चापकोटीनिहितैकबाहुः शिरस्त्रनिष्कर्षणभिन्नमौलिः ।
ललाटबद्धश्रमवारिबिन्दुर्भीतां प्रियामेत्य वचो बभाषे ॥ ६६ ॥
इतः परानर्भकहार्यशस्त्रान्वैदर्भि पश्यानुमता मयासि ।
एवंविधेनाहवचेष्टितेन त्वं प्रार्थ्यसे हस्तगता ममैभिः ॥ ६७ ॥

राजानो वो युष्माकं यशो हृतं जीवितं तु कृपया न हृतम् । न त्वशक्त्येति भावः । इत्येवं रूपा वर्णाः । एतदर्थप्रतिपादकं वाक्यमित्यर्थः । सशोणितैः शोणितदिग्धैः शिलीमुखाग्रैर्बाणाग्रैः साधनैस्तेनाजेन । प्रयोजककर्त्रा । पार्थिवानां केतुषु निक्षेपिताः प्रयोज्यैरन्यैर्निवेशिताः । लिखिता इत्यर्थः ॥ क्षिपतेर्ण्यन्तात्कर्मणि क्तः ॥

६६ ॥ स इति । चापकोट्यां निहित एको बाहुर्येन सः । शिरस्त्रस्य निष्कर्षणेनापनयनेन भिन्नमौलिः श्लथकेशबन्धः । ललाटे बद्धाः श्रमवारिबिन्दवो यस्य सः । सोऽजो भीतां प्रियामिन्दुमतीमेत्यासाद्य वचो बभाषे ॥

६७ ॥ इत इति । हे वैदर्भि इत इदानीमर्भकहार्यशस्त्रान्बालकापहार्यायुधान्परान्छत्रून्पश्य । मयानुमतासि । द्रष्टुमिति शेषः ॥ एभिर्नृपैरेवंविधेन निद्रारूपेणाहवचेष्टितेन रणकर्मणा मम हस्तगता । हस्तगतवद्दुर्ग्रहेत्यर्थः । त्वं प्रार्थ्यसे । अपजिहीर्ष्यसे इत्यर्थः ॥ एवंविधेनेत्यत्र स्वहस्तनिर्देशेन सोपहासमुवाचेति द्रष्टव्यम् ॥

---

means of the points of his arrows besmeared with blood the following letters :—" Your glory has once more been taken away by the son of Raghu but not your life through mercy ! "

66. He, who had rested one of his hands on the extreme point of his bow and whose hair-band was loosened as he dropped his helmet and on whose forehead where formed drops of perspiration arising from fatigue, having come to his terrified beloved spoke thus to her :—

67. I can permit you, dear princess of Vidarbha, to look here at these enemies whose weapons may now easily be snatched away even by a child: by such warlike deeds you, secure as you are in my possession, are sought after by these.

---

66. D. L. चापकोटौ for चापकोटी°. K. L. R. with Châ., °निःकर्षण° for °निष्कर्षण.° R. मूर्लिः for °मौलिः. L. reads first " इतः परान् &c., " and then " स चापकोटी° &c. "

67. H. मयैतान् for मयासि. C. and the text only of Val., प्रार्थ्यसे for प्रार्थ्यसे.

तस्याः प्रतिद्वन्द्विभवाद्विषादात्सद्यो विमुक्तं मुखमाबभासे ।
निःश्वासबाष्पापगमात्प्रपन्नः प्रसादमात्मीयमिवात्मदर्शः ॥ ६८ ॥
हृष्टापि सा ह्रीविजिता न साक्षाद्वाग्भिः सखीनां प्रियमभ्यनन्दत् ।
स्थली नवाम्भःपृषताभिवृष्टा मयूरकेकाभिरिवाभ्रवृन्दम् ॥ ६९ ॥
इति शिरसि स वामं पादमाधाय राज्ञामुदवहदनवद्यां तामवद्यादपेतः ।
रथतुरगरजोभिस्तस्य रूक्षालकाग्रा समरविजयलक्ष्मीः सैव मूर्ता बभूव ॥७०॥

६८ ॥ तस्या इति । प्रतिद्वन्द्विभवाद्रिपूत्थाद्विषादाद्दैन्यात्सद्यो विमुक्तं तस्या मुखम् । निःश्वासस्य यो बाष्प उष्मा ॥ " बाष्पे नेत्रजलोष्मणोः " इति विश्वः ॥ तस्यापगमाद्धेतोरात्मीयं प्रसादं नैर्मल्यं प्रपन्नः प्राप्तः । आत्मा स्वरूपं दृश्यतेऽनेनेत्यात्मदर्शः । दर्पण इव । आबभासे ॥

६९ ॥ हृष्टेति । सेन्दुमती हृष्टापि पत्युः पौरुषेण प्रमुदितापि ह्रिया विजिता यतोऽतः प्रियमजं साक्षात्स्वयं नाभ्यनन्दन्न प्रशशंस । किं तु नवैरम्भःपृषतैः पयोबिन्दुभिरभिवृष्टाभिषिक्ता स्थल्यकृत्रिमा भूमिः ॥ " जानपदकुण्डगोणस्थल "— इत्यादिनाकृत्रिमार्थे ङीष् ॥ अभ्रवृन्दं मेघसंघं मयूरकेकाभिरिव । सखीनां वाग्भिरभ्यनन्दत् ॥

७० ॥ इतीति । नोद्यते नोच्यत इत्यवद्यं गर्ह्यम् ॥ " अवद्यपण्य " इत्यादिना निपातः ॥ " कुपूयकुत्सितावद्यखेटगर्ह्याणकाः समाः " इत्यमरः ॥ तस्मादपेतः । निर्दोष इत्यर्थः । सोऽज इति राज्ञां शिरसि वामपादमाधायानवद्यामदोषां तामि-

---

68. Suddenly her face shone bright being at once relieved from the fear arising from the enemies, as a looking-glass (mirror) which by the removal of the moisture produced by the breath, restores its natural clearness.

69. Being overcome by bashfulness that princess, though exceedingly delighted, could not herself openly congratulate her beloved lord upon his success, but through the mouth (*lit.* words) of her female friends ; as a dry land showered with fresh drops of water does the assemblage of clouds through the medium of the notes of peacocks.

70. At last the prince himself free from faults, having in this manner placed his left foot on the heads of the kings conducted

---

68. H. with Chá., and Din., बाष्पापगमं for बाष्पापगमात्. D. प्रपन्नं for प्रपन्नः. D. K. with Din., स्वच्छं for प्रसादं.

69. B. I. पतिं for प्रियं. D. H. with Su., and the text only of Val., °पृषताभिषिक्ता for पृषताभिवृष्टा. B. C. E. H. K. with Chá., Din., Val., and Su., अभ्रजालं for अभ्रवृन्दं. Vallabha's text with us.

70. C. L. रूक्षालकान्ता. E. R. with Val., and Su., रूक्षालकान्ता, A. B. H. I. J. K. with Chá., and Din., रूक्षालकाग्रा for रूक्षालकाग्रा.

प्रथमपरिगतार्थस्तं रघुः संनिवृत्तं विजयिनमभिनन्द्य श्लाघ्यजायासमेतम् ।
तदुपहितकुटुम्बः शान्तिमार्गोत्सुकोऽभून्न हि सति कुलधुर्ये सूर्यवंश्या गृहाय॥७१॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कविश्री कालिदासकृतावजपाणिग्रहणो नाम सप्तमः सर्गः ॥

न्दुमतीमुद्वहद्दुपानयत् । आत्मसाचकारेत्यर्थः ॥ अयमर्थः—" तमुद्वहन्तं पथि भोजकन्याम् " इत्यत्र न श्लिष्टः ॥ तस्याजस्य रथतुरगाणां रजोभी रूक्षाणि परुषाण्यलकाग्राणि यस्याः सा सेन्दुमत्येव मूर्ता मूर्तिमती समरविजयलक्ष्मीर्बभूव ॥ एतल्लाभादन्यः को विजयलक्ष्मीलाभ इत्यर्थः ॥

७१ ॥ प्रथमेति । प्रथममजागमनात्प्रागेव परिगतो ज्ञातोऽर्थो विवाहविजयरूपो येन स प्रथमपरिगतार्थो रघुर्विजयिनं विजययुक्तं श्लाघ्यजायासमेतं संनिवृत्तं प्रत्यागतं तमजमभिनन्द्य । तस्मिन्नज उपहितकुटुम्बः सन् । शान्तिमार्गे मोक्षमार्ग उत्सुकोऽभूत ॥ तथा हि । कुलधुर्ये कुलधुरंधरे सति सूर्यवंश्या गृहाय गृहस्थाश्रमाय न भवन्ति ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमच्छपाच्छयसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां सप्तमः सर्गः ॥

---

that faultless one. And she herself became the goddess of martial victory incarnate with the ends of her hair soiled with the dust raised by his horses and chariots.

71. Raghu, who already knew all what had happened in the way, having greeted him who had come back a victor united to a worthy wife and having devolved the cares of the family on him, became eager to lead a peaceful life ; for when there is one able to bear the yoke of the family the descendants of the solar race do no longer cling to home.

One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Cháritravardhana, Dinakara and others.

71. C. D. चरमाश्रमेच्छुः for शान्तिमार्गोत्सुकोऽभूत्. Hemádri also notices the reading of C. D. Mss.

। अष्टमः सर्गः ।

अथ तस्य विवाहकौतुकं ललितं बिभ्रत एव पार्थिवः ।
वसुधामपि हस्तगामिनीमकरोदिन्दुमतीमिवापराम् ॥ १ ॥
दुरितैरपि कर्तुमात्मसात्प्रयतन्ते नृपसूनवो हि यत् ।
तदुपस्थितमग्रहीदजः पितुराज्ञेति न भोगतृष्णया ॥ २ ॥
अनुभूय वशिष्ठसंभृतैः सलिलैस्तेन सहाभिषेचनम् ।
विशदोच्छ्वसितेन मेदिनी कथयामास कृतार्थतामिव ॥ ३ ॥

हेरम्बमवलम्ब्य यस्मिन्पातालकेलिषु ।
दन्तेनोद्धरति क्षोणीं विश्राम्यन्ति फणीश्वराः ॥

१ ॥ अथेति । अथ पार्थिवो रघुर्ललितं सुभगं विवाहकौतुकं विवाहमङ्गलं विवाहहस्तसूत्रं वा बिभ्रत एव ॥ " कौतुकं मङ्गले हर्षे हस्तसूत्रे कुतूहले " इति शाश्वतः ॥ तस्याजस्य । अपरामिन्दुमतीमिव । वसुधामपि हस्तगामिनीमकरोत् ॥

२ ॥ दुरितैरिति । नृपसूनवो राजपुत्रा यद्राज्यं दुरितैरपि विषप्रयोगादिनिषिद्धोपायैरप्यात्मसात्स्वाधीनम् ॥ " तदधीनवचने " इति सातिप्रत्ययः ॥ कर्तुं प्रयतन्ते हि । प्रवर्तन्त एवेत्यर्थः ॥ " हि हेताववधारणे " इत्यमरः ॥ उपस्थितं स्वतः प्राप्तं तद्राज्यमजः पितुराज्ञेति हेतोरग्रहीत्स्वीचकार । भोगतृष्णया तु नाग्रहीत् ॥

३ ॥ अनुभूयेति । मेदिनी मही । महिषी च ध्वन्यते । वशिष्ठेन संभृतैः सलिलैस्तेनाजेन सहाभिषेचनमनुभूय विशदोच्छ्वसितेन स्फुटमुद्बृंहणेन । आनन्दनिर्मलोच्छ्व-

---

1. After this the king Raghu delivered also the earth into his hands, as if it were another इन्दुमती, even while he wore (round his wrist) the elegant marriage-thread-ring.

2. Aja accepted the kingdom, which descended to him, not out of thirst for enjoyment but out of regard to the command of his father,—the kingdom which the sons of kings indeed strive to come by even by foul means.

3. Having enjoyed the bath of coronation in his company, with holy waters brought together and poured by the priest Vas'-

---

1. L. विहाय for विवाह . L. बिभ्रतपूर्वपार्थिवः for बिभ्रत एव पार्थिवः. C. K. R. with Hem., Chá., and Din., अपरं for अपरां.

3. D. H. with Chá., and Din., तस्य for तेन. H. R. with Chá., and Din., महाभिषेचनं for सहाभिषेचनं. Cháritravardhana also notices the reading of our text and says :—क्वापि " तेन " इति पाठस्तत्र तेनाजेन सहेति व्याख्या.

स बभूव दुरासदः परैर्गुरुणाथर्वविदा कृतक्रियः ।
पवनाग्निसमागमो ह्ययं सहितं ब्रह्म यदस्त्रतेजसा ॥ ४ ॥
रघुमेव निवृत्तयौवनं तममन्यन्त नरेश्वरं प्रजाः ।
स हि तस्य न केवलां श्रियं प्रतिपेदे सकलान्गुणानपि ॥ ५ ॥

सितेन चेति ध्वन्यते । कृतार्थतां गुणवद्भर्तृलाभसाफल्यं कथयामासेव ॥ न चैतावता पूर्वेषामपकर्षः । प्रशंसापरत्वात् ॥ "सर्वत्र जयमन्विच्छेत्पुत्रादिच्छेत्पराजयम्" इत्यङ्गीकृतत्वाच्च ॥

४ ॥ स इति । अथर्वविदाथर्ववेदाभिज्ञेन गुरुणा वशिष्ठेन कृतक्रियः । अथर्वोक्तविधिना कृताभिषेकसंस्कार इत्यर्थः । सोऽजः परैः शत्रुभिर्दुरासदो दुर्धर्षो बभूव ॥ तथा हि । अस्त्रतेजसा क्षत्रतेजसा सहितं युक्तं ब्रह्म ब्रह्मतेजो यदयं पवनाग्निसमागमो हि । तत्कल्प इत्यर्थः ॥ पवनाग्नीत्यत्र पूर्वनिपातशास्त्रस्यानित्यत्वात् । "द्वन्द्वे घि" इति नाग्निशब्दस्य पूर्वनिपातः ॥ तथा च काशिकायाम् ॥ "अयमेकस्तु लक्षणहेत्वोरिति निर्देशः पूर्वनिपातव्यभिचारचिह्नम्" इति ॥ क्षात्त्रेणैवायं दुर्धर्षः किमयं पुनर्वसिष्ठमन्त्रप्रभावे सतीत्यर्थः ॥ अत्र मनुः—"नाक्षत्त्रं ब्रह्म भवति क्षत्त्रं नाब्रह्म वर्धते । ब्रह्मक्षत्त्रे तु संयुक्ते इहामुत्र च वर्धते" इति ॥

५ ॥ रघुमिति । प्रजा नरेश्वरं तमजं निवृत्तयौवनं प्रत्यावृत्तयौवनं रघुमेवामन्यन्त । न किंचित्ततोऽत्र भेदोऽस्तीत्यर्थः ॥ कुतः । हि यस्मात्सोऽजस्तस्य रघोः केवलामेकां श्रियं न प्रतिपेदे । किं तु सकलान्गुणाञ्छौर्यदाक्षिण्यादीनपि प्रतिपेदे ॥ अतस्तद्गुणयोगात्तद्बुद्धिर्युक्तेत्यर्थः ॥

---

ishtha, the Earth as if expressed her complete satisfaction by her manifest (or white because vaporous) exhalations.

4. Now the prince Aja, the ceremony of whose coronation was duly performed by his preceptor versed in the knowledge of the Atharva Veda, became unassailable to his enemies, for it is like the union of fire and wind that the Brahmanical power is associated with that of missiles.

5, The subjects looked upon him their sovereign lord as Raghu himself returned to youth, for he inherited not only his (Raghu's) royal fortune but also all his good qualities.

---

4. H. I. read दुरासदोऽरिभिः for दुरासदः परैः. C. and the text only of Su., °समागतः for समागमः.

5. D. नवेश्वरं for नरेश्वरं. Fifteen Mss. and all other commentators read with Mallinâtha.

अधिकं शुशुभे शुभंयुना द्वितयेन द्वयमेव संगतम् ।
पदमृद्धमजेन पैतृकं विनयेनास्य नवं च यौवनम् ॥ ६ ॥
सदयं बुभुजे महाभुजः सहसोद्वेगमियं व्रजेदिति ।
अचिरोपनतां स मेदिनीं नवपाणिग्रहणां वधूमिव ॥ ७ ॥
अहमेव मतो महीपतेरिति सर्वः प्रकृतिष्वचिन्तयत् ।
उदधेरिव निम्नगाशतेष्वभवन्नास्य विमानना क्वचित् ॥ ८ ॥

६ ॥ अधिकमिति । द्वयमेव शुभं युना शुभवता ॥ "शुभंयुस्तु शुभान्वितः" इत्यमरः ॥ "अहंशुभमोर्युस्" इति युस्प्रत्ययः ॥ द्वितयेन संगतं युतं सदधिकं शुशुभे ॥ किं केनेत्याह—पदमिति । पैतृकं पितुरागतम् ॥ "ऋतष्ठञ्" इति ठञ्प्रत्ययः ॥ ऋद्धं समृद्धं पदं राज्यमजेन । अन्यदाजस्य नवं यौवनं विनयेनेन्द्रियजयेन च ॥ "विजयो हीन्द्रियजयस्तद्युक्तः शास्त्रमर्हति" इति कामन्दकः ॥ राज्यस्थोऽपि प्राकृतवन्न दृप्तोऽभूदित्यर्थः ॥

७ ॥ सदयमिति । महाभुजः । सोऽजोऽचिरोपनतां नवोपगतां मेदिनीम् । नवं पाणिग्रहणं विवाहो यस्यास्तां नवोढां वधूमिव । सहसा बलात्कारेण चेत् ॥ "सहो बलं सहा मार्गः" इत्यमरः ॥ इयं मेदिनी वधूर्वोद्वेगं भयं व्रजेदिति हेतोः । सदयं सकृपं बुभुजे भुक्तवान् ॥ "भुजोऽनवने" इत्यात्मनेपदम् ॥

८ ॥ अहमिति । प्रकृतिषु प्रजासु मध्ये सर्वोऽपि जनः ॥ अथ वा प्रकृतिष्वित्यस्याहमित्यनेनान्वयः । व्यवधानं तु सह्यम् ॥ सर्वोऽपि जनः प्रकृतिष्वहमेव महीपतेर्मतो महीपतिना मन्यमानः ॥ "मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च" इति वर्तमाने क्तः ॥ "क्तस्य च वर्तमाने" इति षष्ठी ॥ इत्यचिन्तयदमन्यत ॥ उदधेर्निम्नगाशतेष्विवास्य नृपस्य ॥ कर्तुः ॥ "कर्तृकर्मणोः कृति" इति कर्तरि षष्ठी ॥ क्वचिदपि जनविषये विमाननावगणना नाभवत् ॥ यतो न कश्चिदवमन्यतेऽतः सर्वोऽप्यहमेवास्य मत इत्यमन्यतेत्यर्थः ॥

---

6. In this way only two things being joined to two other things respectively looked more beautiful by their combination: viz. the prosperous kingdom inherited from his father, by its union with Aja, and his youth by its union with moral discipline.

7. Then like a newly married bride, that king though powerful, enjoyed the Earth, lately brought under his sway, with kindness, lest through violence she would fall into a state of terror.

8. "I alone am favoured by the lord of the earth," so thought every one of his subjects. There was no disrespect from him to any of his subjects, as among hundreds of rivers there is no disrespect to any from the ocean.

---

6. H. शुभेयुना, R. and the text only of Val., शुभंजनाः for शुभंयुना. P. संयुतं for संगतं.

8. D. with Chā., अस्य भूपतेः for महीपतेः.

न खरो न च भूयसा मृदुः पवमानः पृथिवीरुहानिव ।
स पुरस्कृतमध्यमक्रमो नमयामास नृपाननुद्धरन् ॥ ९ ॥
अथ वीक्ष्य रघुः प्रतिष्ठितं प्रकृतिष्वात्मजमात्मवित्तया ।
विषयेषु विनाशधर्मसु त्रिदिवस्थेष्वपि निःस्पृहोऽभवत् ॥ १० ॥

९ ॥ नेति । स नृपो भूयसातिशयेन खरस्तीक्ष्णो न । भूयसा मृदुरतिमृदुरपि न । किं तु पुरस्कृतमध्यमक्रमः सन्मध्यमपरिपाटीमवलम्बयन् । पवमानो वायुः पृथिवीरुहानिव । नृपाननुद्धरन्ननुत्पाटयन्नेव नमयामास ॥ अत्राहुः—" मृदुश्चेदवमन्येत तीक्ष्णादुद्विजते जनः । तीक्ष्णश्चैव मृदुश्चैव प्रजानां सरसो मतः " इति ॥

१० ॥ अथेति । अथ रघुरात्मजं पुत्रं प्रकृतिषु प्रजासु प्रतिष्ठितं रूढबलं वीक्ष्य ज्ञात्वा विनाशो धर्मो येषां तेषु विनाशधर्मसु । अनित्येष्वित्यर्थः ॥ " धर्मादनिच्केवलात् " इत्यनिच्प्रत्ययः समासान्तः ॥ त्रिदिवस्थेषु स्वर्गस्थेष्वपि विषयेषु शब्दादिष्वात्मवित्तयात्मज्ञत्वेन निःस्पृहोऽभवत् ॥

---

9. Neither too severe nor yet too mild he who had adopted a middle course of policy, subdued the vassal kings without rooting them out of their thrones, and so resembled the wind that simply bends down the trees without rooting them up.

10. Then Raghu seeing his son firmly established among his subjects became indifferent even to heavenly objects of sense perishable by nature in consequence of his knowledge of the soul.

---

9. D. °क्रियः for °क्रमः. A. B. C. E. I. K. L. R. with Hem., Val., and Su., अनन्तरान् for अनुद्धरन्. L. reads first "अथ वीक्ष्य &c.," and then "न खरो &c." Between 9–10 B. H. with Châritravardhana read the following verse and call it मूलपाठः । " अथ वीक्ष्य गुणैः प्रतिष्ठितं प्रकृतिष्वात्मजमाभिगामिकैः । पदवीं परिणामदेशिनीं रघुरादत्त वनान्तगामिनीं " ॥ अथानन्तरमाभिगामिकैः स्ववंशोचितैर्गुणैः । औदार्यादिभिः । प्रकृतिषु प्रतिष्ठितं स्थापितमात्मजं पुत्रं वीक्ष्य रघुः परिणामे वृद्धावस्थायां देशितां (appears to be his reading) कथितां वनान्ते वनमध्यगामिनीं गमनशीलां पदवीं वनस्थाश्रममादत्त जग्राह ॥ विषयेषु रघुः किमिति निःस्पृहोऽभूदित्याह ॥ चा० ॥ [B. H. °देशिनीं, Chá., °देशितां] H. omits the commentary of this verse.

10. Cháritravardhana omits this verse. B. C. E. K. L. R. with Hem., Val., Din., Dharm., Su., and Vija., आत्मवत्तया for आत्मवित्तया. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha. So also Mallinátha who says :—" आत्मवत्तया " इति पाठे निर्विकारमनस्कतयेत्यर्थः ॥ " उदयादिष्वविकृतिर्मनसः सत्त्वमुच्यते " ॥ " आत्मवान्सत्त्ववानुक्तः " इत्युत्पलमालायां ॥ B. with Val., विनाशिधर्मिषु, D. E. I. K. P. R. with Hem., and the text only of Val., विनाशधर्मिषु for विनाशधर्मसु.

गुणवत्सुतरोपितश्रियः परिणामे हि दिलीपवंशजाः ।
पदवीं तरुवल्कवाससां प्रयताः संयमिनां प्रपेदिरे ॥ ११ ॥
तमरण्यसमाश्रयोन्मुखं शिरसा वेष्टनशोभिना सुतः ।
पितरं प्रणिपत्य पादयोरपरित्यागमयाचतात्मनः ॥ १२ ॥
रघुरश्रुमुखस्य तस्य तत्कृतवानीप्सितमात्मजप्रियः ।
न तु सर्प इव त्वचं पुनः प्रतिपेदे व्यपवर्जितां श्रियम् ॥ १३ ॥
स किलाश्रममन्त्यमाश्रितो निवसन्नावसथे पुराद्बहिः ।
समुपास्यत पुत्रभोग्यया स्नुषयेवाविकृतेन्द्रियः श्रिया ॥ १४ ॥

११ ॥ कुलधर्मश्चायमस्येत्याह ॥ गुणवदिति । दिलीपवंशजाः परिणामे वार्द्धके गुणवत्सुतेषु रोपितश्रियः स्थापितलक्ष्मीकाः प्रयताश्च सन्तः । तरुवल्कान्येव वासांसि येषां तेषां संयमिनां यतीनां पदवीं प्रपेदिरे । यस्मात्तस्मादस्यापीदमुचितमित्यर्थः ॥

१२ ॥ तमिति । अरण्यसमाश्रयोन्मुखं वनवासायोद्युक्तं पितरं तं रघुं सुतोऽजः । वेष्टनशोभिनोष्णीषमनोहरेण शिरसा पादयोः प्रणिपत्य । आत्मनोऽपरित्यागमयाचत । मां परित्यज्य न गंतव्यमिति प्रार्थितवानित्यर्थः ॥

१३ ॥ रघुरिति । आत्मजप्रियो रघुः । अश्रूणि मुखे यस्य तस्याश्रुमुखस्याजस्य तदपरित्यागरूपमीप्सितमभिलषितं कृतवान् । किं तु सर्पस्त्वचमिव व्यपवर्जितां त्यक्तां श्रियं पुनर्न प्रतिपेदे न प्राप ॥

१४ ॥ स इति । स रघुः किलान्त्यमाश्रमं चतुर्थाश्रममाश्रितः पुराद्बहिरावसथे स्थाने निवसन्नविकृतेन्द्रियः । जितेन्द्रियः सन्नित्यर्थः । अत एव स्नुषया वध्वेव

---

11. For, the descendants of Dilipa, having transferred their royal fortune to their qualified sons, and themselves becoming self-subdued betook themselves in their old age to the life of ascetics whose garments are the barks of trees.

12. The son, with his head adorned with the royal tiara, having fallen at his father's feet who was eager to betake himself to a forest abode, implored him not to abandon him.

13. Raghu who was fond of his son acted up to the desire of him (Aja) whose face was streaming with tears, but did not resume the royal fortune which he had once abandoned, as a snake does not wear the slough which it had once cast.

14. It is said that Raghu whose senses were unaffected and

---

11. D. E. ककुत्स्थ° for दिलीप°. B. E. with Chá., Din., and Su., यमिनः संयमिनां, D. यमिनः संप्रियया for प्रयताः संयमिनां.

12. C. R. नृपः for सुतः.

14. C. H. with Chá., स किल क्षितिपालवेश्मनो निवसन्नावसथे यतिप्रियः

प्रशमास्थितपूर्वपार्थिवं कुलमभ्युद्यतनूतनेश्वरम् ।
नभसा निभृतेन्दुना तुलामुदितार्केण समारुरोह तत् ॥ १५ ॥

पुत्रभोग्यया श्रिया समुपास्यत शुश्रूषितः ॥ जितेन्द्रियस्य तस्य स्नुषात इव श्रियोऽपि पुष्पफलोदकाहरणादिशुश्रूषाव्यतिरेकेण न किंचिदपेक्षितमासीदित्यर्थः ॥ अत्र यद्यपि "ब्राह्मणाः प्रव्रजन्ति" इति श्रुतेः ॥ "आत्मन्यग्नीन्समारोप्य ब्राह्मणः प्रव्रजेद्गृहात्" इति मनुस्मरणात् ॥ "मुखजानामयं धर्मो यद्विष्णोर्लिङ्गधारणम् । बाहुजातोरुजातानामयं धर्मो न विद्यते" इति निषेधाच्च ब्राह्मणस्यैव प्रव्रज्या न क्षत्रियादेरित्याहुः ॥ तथापि "यदहरेव विरजेत्तदहरेव प्रव्रजेत्" इति श्रुतेस्त्रैवर्णिकसाधारण्यात् ॥ "त्रयाणां वर्णानां वेदमधीत्य चत्वार आश्रमाः" इति सूत्रकारवचनात् "ब्राह्मणः क्षत्रियो वापि वैश्यो वा प्रव्रजेद्गृहात्" इति स्मरणात् ॥ निषेधस्य च "मुखजानामयं धर्मो वैष्णवं लिङ्गधारणम् । बाहुजातोरुजातानां त्रिदण्डं न विधीयते" इति त्रिदण्डविषयत्वदर्शनात् ॥ क्वापि कस्यचिद्ब्राह्मणग्रहणस्योपलक्षणमाचक्षाणाः केचित्त्रैवर्णिकाधिकारं प्रतिपेदिरे ॥ तथा सति "स किलाश्रममन्त्यमाश्रितः" इत्यत्रापि कविनाप्ययमेव पक्षो विवक्षित इति प्रतीमः ॥ अन्यथा वानप्रस्थाश्रमपरतया व्याख्याने "विदधे विधिमस्य नैष्ठिकं यतिभिः सार्धमनग्निमग्निचित्" इति वक्ष्यमाणेनानग्निसंस्कारेण विरोधः स्यात् । अग्निसंस्काररहितस्य वानप्रस्थस्यैवाभावात् । इत्यलं प्रासङ्गिकेन॥

१५ ॥ प्रशमेति । प्रशमे स्थितः पूर्वपार्थिवो रघुर्यस्य तत् । अभ्युद्यतोऽभ्युदितो नूतनेश्वरोऽजो यस्य तत् । प्रसिद्धं तत्कुलं निभृतेन्दुनास्तमयासन्नचन्द्रेणोदितार्केण प्रकाशितसूर्येण च नभसा तुलां सादृश्यं समारुरोह प्राप ॥ न च नभसा तुलामित्यत्र "तुल्यार्थैः-" इत्यादिना प्रतिषेधस्तृतीयायाः ॥ तस्य सदृशवाचितुलाशब्दविषयत्वात् ॥ "कृष्णस्य तुला नास्ति" इति प्रयोगात् ॥ अस्य च सादृश्यवाचित्वात् ॥

---

who had betaken himself to the last stage in life (fourth order), took his abode in a place outside the city and was served by Royal Fortune, as by a daughter in-law who was everyway worthy to be enjoyed only by his son

15. That illustrious royal family of which the former king was in tranquillity imaginable, and which had a new lord risen to his place, resembled (*lit.* got to a footing of equality with) the sky in which the moon is almost set and the sun newly risen.

---

for स किलाश्रममन्त्यमाश्रितो निवसन्नावसथे पुराद्बहिः. R. पुत्रयोग्यया for पुत्रभोग्यया. [C. H. यतिप्रिय., Chā., पुराद्बहिः].

15. D. H. L. °पार्थिवः for °पार्थिवं. D. H. with Hem., Chā., Din., and Dharm., ऊर्जस्वल°, I. K. R. with Su., अभ्युद्युत° for अभ्युद्यत°. Hemádri also notices the text of Mallinātha.

यतिपार्थिवलिङ्गधारिणौ ददृशाते रघुराघवौ जनैः ।
अपवर्गमहोदयार्थयोर्भुवमंशाविव धर्मयोर्गतौ ॥ १६ ॥
अजिताधिगमाय मन्त्रिभिर्युयुजे नीतिविशारदैरजः ।
अनपायिपदोपलब्धये रघुराप्तैः समियाय योगिभिः ॥ १७ ॥

१६ ॥ यतीति । यतिर्भिक्षुकः । पार्थिवो राजा । तयोर्लिङ्गधारिणौ रघुराघवौ रघुतत्सुतौ । अपवर्गमहोदयार्थयोर्मोक्षाभ्युदयफलयोर्धर्मयोः ॥ निवृत्तप्रवृत्तधर्मयोरित्यर्थः । भुवं गतौ भूलोकमवतीर्णावंशाविव । जनैर्ददृशाते दृष्टौ ॥

१७ ॥ अजितेति । अजोऽजिताधिगमायाजितस्थलाभाय नीतिविशारदैर्नीतिज्ञैर्मन्त्रिभिर्युयुजे संगतः । रघुरनपायिपदोपलब्धये मोक्षोपलब्धये आप्तैः यथार्थदर्शिभिः यथार्थवादिभिश्च । योगिभिः समियाय संगतः । उभयत्राप्यनुतार्थचिन्तार्थमिति शेषः ॥

---

16. Raghu and his son wearing (respectively) a mark of asceticism and royalty appeared to the people like portions of two kinds of धर्म descended to the earth whose final ends were salvation and great rise.

17. In order to obtain what was (yet) unconquered Aja held a consultation with ministers well-versed in politics,—while

---

16. A. अपवर्गमहोदयार्थिनौ, B. विनिवृत्तमहोदयार्थयोः. D. E. H. with Val., and Din., अपवृत्तिमहोदयार्थयोः for अपवर्गमहोदयार्थयोः. Eight Mss. and five commentators read with Mallinātha; Vallabha's text also agrees with him.

17. D. with Chā., and Din., °विचक्षणैः for °विशारदैः. D. E. I. K. L. R. with Val., Su., Vija., and Dharm., अनपाय for अनपायि°. H. लंभये for लब्धये. Between 17-18 B. D_2. H. L with Hem., Chā., Din., Val., and Su., read the following verse :—" समपृच्यत भूपतिर्युवा सचिवैः प्रत्यहमर्थसिद्धये । अपुनर्जननोपपत्तये प्रवयाः संयमिभिर्मनीषिभिः " ॥ युवाजोऽर्थसिद्धये सचिवैरमात्यैः प्रत्यहं निरन्तरं समपृच्यत संपृक्तोऽभूत् । प्रगतं वयो यस्य स प्रवया वृद्धो राजा रघुरपुनर्जननस्याभवस्यावाप्तिः प्राप्तिस्तस्यै मनीषिभिर्विद्वद्भिः संयमिभिर्मुनिभिः समपृच्यत संपृक्तोऽभूत् ॥ " प्रवयाः स्थविरो जरन् " इत्यभिधानचिन्तामणिः ॥ समपृच्यतेति—पृचि संपर्के लङ् । क्षेपकोऽयं ॥ चा० ॥

B. H. Chá., Val., and Din., समपृच्यत,
L. and Vallabha's text समयुज्यत,
D_2. and Hemâdri समदृश्यत.

B. H. L. with Chá., Val., and Din., अपुनर्,
D_2. and Hemâdri न पुनर्.

B. H L. with Chá., Din, and Val., संयमिभिः,
D_2. with Hemâdri संयुयुजे.

Hemâdri also considers this verse to be spurious ; so does **Vallabha.**

नृपतिः प्रकृतीरवेक्षितुं व्यवहारासनमाददे युवा ।
परिचेतुमुपांशु धारणां कुशपूतं प्रवयास्तु विष्टरम् ॥ १८ ॥
अनयत्प्रभुशक्तिसंपदा वशमेको नृपतीननन्तरान् ।
अपरः प्रणिधानयोग्यया मरुतः पञ्च शरीरगोचरान् ॥ १९ ॥

१८ ॥ नृपतिरिति । युवा नृपतिरजः प्रकृतीः प्रजाः कार्यार्थिनीरवेक्षितुम् । दृष्टादृष्टपरिज्ञानार्थमित्यर्थः । व्यवहारासनं धर्मासनमाददे स्वीचकार । प्रवयाः स्थविरो नृपती रघुस्तु ॥ " प्रवयाः स्थविरो वृद्धः " इत्यमरः ॥ धारणां चित्तस्यैकाग्रतां परिचेतुमभ्यसितुमुपांशु विजने ॥ " उपांशु विजने प्रोक्तम् " इति हलायुधः ॥ कुशैः पूतं विष्टरमासनमाददे ॥ " यमादिगुणसंयुक्ते मनसः स्थितिरात्मनि । धारणा प्रोच्यते सद्भिर्योगशास्त्रविशारदैः " इति वशिष्ठः ॥

१९ ॥ अनयदिति । एकोऽन्यतमः । अज इत्यर्थः । अनन्तरान्स्वभूम्यनन्तरान्नृपतीन्यातव्यपार्ष्णिग्राहादीन्प्रभुशक्तिसंपदा कोशदण्डमहिम्ना वशं स्वायत्ततामनयत् ॥ " कोशो दण्डो बलं चैव प्रभुशक्तिः प्रकीर्तिता " इति मिताक्षरायाम् ॥ अपरो रघुः प्रणिधानयोग्यया समाध्यभ्यासेन ॥ " योग्याभ्यासार्कयोषितोः " इति विश्वः ॥ शरीरगोचराञ्छरीराश्रयान्पञ्च मरुतः प्राणादीन्वशमनयत् ॥ " प्राणोऽपानः समानश्चोदानव्यानौ च वायवः । शरीरस्थाः " इत्यमरः ॥

Raghu. for obtaining imperishable position (salvation), kept company with adepts in Yoga philosophy who never spoke but the truth.

18. The young king took the judgment seat in order to look into the cases of his subjects, but the aged king sat, in solitude, on a seat made holy by the Kus'a-grass to practise the abstract concentration of the mind.

19. The one (Aja) by the excellence of his sovereign power brought under his sway the neighbouring kings while the other (Raghu), by the practice of profound meditation subdued the five vital airs existing in the body.

---

18. H. omits the 18-19 verses of our text. Between 18–19 B. H. L. with Chá., Din., Val., and Dharm., read the following verse :– " अनुरञ्जयितुं प्रजाः प्रभुर्व्यवहारासनमाददे नवः । अपरः शुचिविष्टरस्थितः परिचेतुं यतते स्म धारणां " ॥

B. H. with Dharm., विष्टराश्रयः, L. विष्टरासनः, Chá., and Val., विष्टरस्थितः.

B. H. L. with Val., and Dharm., धारणाः, H. with Chá., धारणां.

Châritravardhana and Vallabha do not seem to have known the 18th verse of our text. L. reads this after the 18th verse of our text.

19. Between 19-20 B. E. I. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., and Dharm., read the following verse :—" नयचक्षुरजो दिदृक्षया पर-

अकरोदचिरेश्वरः क्षितौ द्विषदारम्भफलानि भस्मसात् ।
अपरो दहने स्वकर्मणां ववृते ज्ञानमयेन वह्निना ॥ २० ॥
पणबन्धमुखान्गुणानजः षडुपायुङ्क्त समीक्ष्य तत्फलम् ।
रघुरप्यजयद्गुणत्रयं प्रकृतिस्थं समलोष्टकाञ्चनः ॥ २१ ॥

२० ॥ अकरोदिति । अचिरेश्वरोऽजः क्षितौ द्विषतामारम्भाः कर्माणि तेषां फलानि भस्मसादकरोत्कात्स्न्येन भस्मीकृतवान् ॥ " विभाषा सातिकात्स्न्र्ये " इति सातिप्रत्ययः ॥ अपरो रघुर्ज्ञानमयेनात्मतत्त्वज्ञानरूपेण वह्निना पावकेन ॥ करणेन ॥ स्वकर्मणां भवबीजभूतानां दहने भस्मीकरणे ववृते । स्वकर्माणि दग्धुं प्रवृत्त इत्यर्थः ॥ " यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन । ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा " इति गीतायाम् ॥

२१ ॥ पणबन्धेति ॥ " पणबन्धः संधिः " इति कौटिल्यः ॥ अजः पणबन्धमुखान्संध्यादीन्षड्गुणान् ॥ " संधिर्ना विग्रहो यानमासनं द्वैधमाश्रयः । षड्गुणाः " इत्यमरः॥ तत्फलं तेषां गुणानां फलं समीक्ष्योपायुङ्क्त । फलिष्यन्तमेव गुणं प्रायुङ्क्तेत्यर्थः ॥ " प्रोपाभ्यां युजेरयज्ञपात्रेषु " इत्यात्मनेपदम् ॥ समं तुल्यतया भावितं लोष्टं मृत्पिण्डः काञ्चनं सुवर्णं च येन स समलोष्टकाञ्चनः । निस्पृह इत्यर्थः ॥

---

20. The new king completely frustrated the effects consequent on the enemy's undertakings on the earth, while the other was bent on the destruction (*lit.* burning) of his own actions by the fire consisting of knowledge.

21. Aja employed the six expedients beginning with peace after having scrutinized their results, Raghu too with whom gold and a clod were of equal value, overcame the three qualities (the Gu*n*as or attributes) inherent in Prak*ri*ti (or nature).

रन्ध्रस्य ततान मण्डले । हृदये समरोपयन्मनः परमं ज्योतिरवेक्षितुं रघुः " ॥ [B. मंडलं, Dharm., मंत्ररं for मण्डले] ॥ नयचक्षुरिति ॥ अजः परेषां वैरिणां रन्ध्रस्य व्यसनस्य दिदृक्षया द्रष्टुमिच्छया द्वादशनृपमण्डले नय एव चक्षुर्नीतिलोचनं ततान चिक्षेप । रघुः परममुत्कृष्टं ज्योतिर्ब्रह्म वीक्षितुं हृदये हृदि मनः समरोपयन्यधात् ॥ चा० ॥ Vallabha reads this after the 17th verse of our text, I. and Cháritravardhana after the 19th, and L. R. and Hemâdri after the 20th verse.

20. C. D. H. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Su., Dharm., Vija., and the text only of Val., इतरः for अपरः. E. ववृतः, R. ववृधे for ववृते. B. ज्ञानमयेन तेजसा, D. ध्यानमयेन चक्षुषा, L. ध्यानमयेन वाजिना, E. H. I. K. R. with Val., and Su., ध्यानमयेन वह्निना for ज्ञानमयेन वह्निना.

21. B. with Chá., Din., षट्प्रायुंक्त for षडुपायुंक्त. B. अभ्यगमत्, R. अभ्यनयत्, D. E. H. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., अभ्यगमत् for अभ्यजयत्. Hemâdri also notices the reading and says,–" इति पाठे गुणत्रयमपि क्रान्तवान् । यदुक्तं । " गुणानेतानतीत्य त्रीन् " ॥

न नवः प्रभुरा फलोदयात्स्थिरकर्मा विरराम कर्मणः ।
न च योगविधेर्नवेतरः स्थिरधीरा परमात्मदर्शनात् ॥ २२ ॥
इति शत्रुषु चेन्द्रियेषु च प्रतिषिद्धप्रसरेषु जाग्रतौ ।
प्रसितावुदयापवर्गयोरुभयीं सिद्धिमुभाववापतुः ॥ २३ ॥
अथ काश्चिदजव्यपेक्षया गमयित्वा समदर्शनः समाः ।
तमसः परमापदव्ययं पुरुषं योगसमाधिना रघुः ॥ २४ ॥

" लोष्टानि लेष्टवः पुंसि " इत्यमरः ॥ रघुरपि गुणत्रयं सत्त्वादिकम् ॥ " गुणाः सत्त्वं रजस्तमः " इत्यमरः ॥ प्रकृतौ साम्यावस्थायामेव तिष्ठतीति प्रकृतिस्थं पुनर्विकाररहितं यथा तथाजयत् ॥

२२ ॥ नेति । स्थिरकर्मा फलोदयकर्मकारी नवः प्रभुरज आफलोदयात्फलसिद्धिपर्यन्तं कर्मण आरम्भान्न विरराम न निवृत्तः ॥ जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसंख्यानम् " इत्यपादानात्पञ्चमी ॥ " व्याङ्परिभ्यो रमः " इति परस्मैपदम् ॥ स्थिरधीर्निश्चलचित्तो । नवेतरो रघुश्च परमात्मदर्शनात्परमात्मसाक्षात्कारपर्यन्तं योगविधेरैक्यानुसंधानान्न विरराम ॥

२३ ॥ इतीति । इत्येवं प्रतिषिद्धः प्रसरः स्वार्थप्रवृत्तिर्येषां तेषु शत्रुषु चेन्द्रियेषु च जाग्रतावप्रमत्तावुदयापवर्गयोरभ्युदयमोक्षयोः प्रसितावासक्तौ ॥ " तत्परे प्रसितासक्तौ " इत्यमरः ॥ उभावजरघू उभयीं द्विविधामभ्युदयमोक्षरूपाम् ॥ उभादुदात्तो नित्यं " इति तयप्प्रत्ययस्यायजादेशः ॥ " टिड्ढा–" इति ङीप् ॥ सिद्धिं फलमवापतुः । उभावुभे सिद्धी यथासंख्यमवापतुरित्यर्थः ॥

२४ ॥ अथेति । अथ रघुः समदर्शनः सर्वभूतेषु समदृष्टिः सन्नजव्यपेक्षयाजा-

---

22. Neither the new lord, who was steadfast in actions, ceased from his undertakings until the rise (attainment) of their results, nor the firm-minded old king desisted from the practice of profound meditation until the visitation (or vision) of the Supreme Soul.

23. In this way both of them, the one who was watchful of the enemies who were baffled in their hostile attempts and the other against the organs of sense, whose cravings were totally curbed, being devoted, the one to worldly prosperity and the other to the final beatitude (*i. e.*) the liberation of the soul from the body and exemption from future transmigration), obtained respectively the complete attainment of their desired objects.

24. Then Raghu, who looked upon all beings with an equal

---

22. D. with Hem., स्थितधीरा° for स्थिरधीरा°. Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha. D. परमार्थ° for परमात्म°.

23. B. C. with Val., प्रतिखिद्ध° for प्रतिषिद्ध°. B. C. E. H. I. K. R. with Chá., Din., Val., and Su., प्रसृतौ for प्रसितौ. D. E. K. P. and the text only of Su., उभयां for उभयीं.

श्रुतदेहविसर्जनः पितुश्चिरमश्रूणि विमुच्य राघवः ।
विदधे विधिमस्य नैष्ठिकं यतिभिः सार्धमनग्निमग्निचित् ॥ २५ ॥
अकरोच्च तदौर्ध्वदैहिकं पितृभक्त्या पितृकार्यकल्पवित् ।
न हि तेन पथा तनुत्यजस्तनयावर्जितपिण्डकाङ्क्षिणः ॥ २६ ॥

काङ्क्षानुरोधेन । काश्चित्समाः कतिचिद्वर्षाणि ॥ "समा वर्षे समं तुल्यम्" इति विश्वः ॥ गमयित्वा नीत्वा योगसमाधिनैक्यानुसंधानेन ॥ "संयोगो योग इत्युक्तो जीवात्मपरमात्मनोः" इति वसिष्ठः ॥ अव्ययमविनाशिनं तमसः परम् विद्यायाः परम् । मायातीतमित्यर्थः ॥ पुरुषं परमात्मानमापत्प्राप । सायुज्यं प्राप्त इत्यर्थः ॥

२५ ॥ श्रुतेति । पितुः श्रुतदेहविसर्जन आकर्णितपितृतनुत्यागो राघवश्चिरमश्रूणि बाष्पान्विमुच्य विसृज्यास्य पितुरनग्निम् । अग्निसंस्काररहितमित्यर्थः । निष्ठा मरणम् । तत्सम्बन्धिनं नैष्ठिकं विधिमाचारमन्त्येष्टिं यतिभिः संन्यासीभिः सार्धं सह विदधे चकार ॥ किंविधः । अग्निं चितवानाहितवानित्यग्निचित् ॥ "अग्नौ चेः" इति क्विप्प्रत्ययः ॥ स्वयमग्निचिदिति भावः ॥

२६ ॥ अकरोदिति । पितृकार्यस्य तातश्राद्धस्य कल्पविद्विधानज्ञः सोऽजः पितृभक्त्या पितरि प्रेम्णा । करणेन । न पितुः परलोकसुखापेक्षया । मुक्तत्वा-

---

eye, having passed some years with regard to the wishes of Aja, obtained by means of the profound meditation the eternal spirit that is beyond (or free from) darkness (ignorance).

25. The son of Raghu, who had consecrated the sacrificial fire and who had then heard of his father's resignation of body, shed tears for a long time, and celebrated his obsequies without fire in company with recluses.

26. He who knew the proceedings of the religious rites due to manes, performed the obsequies through filial devotion to his father; for those who quit the body in that way are not desirous of the rice-balls offered by their sons.

---

25. B. C. E. H. with Chá., Din., Su., and Vija., विसृज्य for विमुच्य. B. अग्निवित् for अग्निचित्. Vallabha also notices the reading of our text and agrees with B. Ms. H. with Val., विततान समं पुरोधसा क्रतुमन्त्यं पृथिवीशतक्रतोः for विदधे विधिमस्य नैष्ठिकं यतिभिः सार्धमनग्निमग्निचित्. Châritravardhana also notices this reading and remarks :—" विदधे विधिरस्य नैष्ठिकं यतिभिः सार्धमनग्निमग्निचित् " इति कविपाठः ॥ C. I. मुनिभिः for यतिभिः.

26. D. H. I. with Chá., and Din., विदधे for अकरोत्. I. K. R. and the text only of Su., ऊर्ध्वदैहिकं, L. ऊर्ध्वदैहिकं for और्ध्वदैहिकं. H. सः for च. Thirteen Mss. with five commentators read with Mallinâtha.

स परार्ध्यगतेरशोच्यतां पितुरुद्दिश्य सदर्थवेदिभिः ।
शमिताधिरधिज्यकार्मुकः कृतवानप्रतिशासनं जगत् ॥ २७ ॥
क्षितिरिन्दुमती च भामिनी पतिमासाद्य तमग्र्यपौरुषम् ।
प्रथमा बहुरत्नसूरभूदपरा वीरमजीजनत्सुतम् ॥ २८ ॥

इति भावः । तस्य रघोरौर्ध्वदेहिकम् । देहादूर्ध्वं भवतीति तथा तिलोदकपिण्डदानादिकमकरोच्च ॥ ननु कथं भक्तिरेव श्राद्धादिफलप्रेप्सापि कस्मान्नाभूदित्याशङ्क्याह—न हीति । तेन पथा योगरूपेण मार्गेण तनुत्यजः शरीरत्यागिनः पुरुषास्तनयैरावर्जितपिण्डकाङ्क्षिणो दत्तपिण्डाकाङ्क्षिणो न हि भवन्ति ॥

२७ ॥ स इति । परार्ध्यगतेः प्राप्तमोक्षस्य पितुरशोच्यतामशोचनीयत्वमुद्दिश्याधिकृत्य । शोको न कर्तव्य इत्युपदिश्येत्यर्थः । सदर्थवेदिभिः परमार्थज्ञैर्विद्वद्भिः शमिताधिर्निवारितमनोव्यथः ॥ "पुंस्याधिर्मानसी व्यथा" इत्यमरः ॥ सोऽजोऽधिज्यकार्मुकः । अधिज्यमारोपितमौर्वीकं कार्मुकं यस्य स तथोक्तः सन् । जगत्कर्मभूतमप्रतिशासनं द्वितीयाज्ञारहितम् । आत्माज्ञाविधेयमित्यर्थः । कृतवांश्चकार ॥

२८ ॥ क्षितिरिति । क्षितिर्मही भामिनीन्दुमती च ॥ "भामिनी कामिनी च" इति हलायुधः ॥ अग्र्यपौरुषं महापराक्रममुत्कृष्टभोगशक्तिं च तमजं पतिमासाद्य प्राप्य । तत्र प्रथमा क्षितिः । बहूनि रत्नानि श्रेष्ठवस्तूनि सूत इति बहुरत्नसूरभूत् ॥ "रत्नं स्वजातिश्रेष्ठेऽपि" इत्यमरः ॥ अपरेन्दुमती वीरं सुतमजीजनज्जनयामास ॥ सहोक्त्या सादृश्यमुच्यते ॥

---

27. Then that king, whose bow was strung, and whose mental grief was soothed by men versed in the knowledge of the highest truth (*i. e.* philosophers) on the ground of the unlamentable condition of his father who had attained the highest bliss, rendered the world destitute of a rival-command (ruled the sole master of the world).

28. Thus Earth and his wife Indumati, having obtained him for their husband who possessed the greatest valour, the former became the producer of many invaluable things and the latter gave birth to a brave son.

---

28. D. H. भाविनी for भामिनी. Hemādri as well as Chāritravardhana notice this reading. D. आजग्मतुः for आसाद्य तं. Chāritravardhana also notices this and says :—"पतिमाजग्मतुरग्र्यपौरुषं" इति श्रेष्ठः पाठः । तत्र क्षितिरिन्दुमती च भामिनीत्युभे पतिमाजग्मतुः प्राप्तवत्यौ ॥ A. D. उग्रपौरुषं for अग्र्यपौरुषं. A. D. बहुरत्नभूः for बहुरत्नसूः. A. इतरा for अपरा. H. धीरं for वीरं.

दशरश्मिशतोपमद्युतिं यशसा दिक्षु दशस्वपि श्रुतम् ।
दशपूर्वरथं यमाख्यया दशकण्ठारिगुरुं विदुर्बुधाः ॥ २९ ॥
ऋषिदेवगणस्वधाभुजां श्रुतयागप्रसवैः स पार्थिवः ।
अनृणत्वमुपेयिवान्बभौ परिधेर्मुक्त इवोष्णदीधितिः ॥ ३० ॥
बलमार्तभयोपशान्तये विदुषां संनतये बहु श्रुतम् ।
वसु तस्य विभोर्न केवलं गुणवत्तापि परप्रयोजना ॥ ३१ ॥

२९ ॥ स सुतः क इत्याशङ्क्याह ॥ दशेति । दश रश्मिशतानि यस्य स दशरश्मिशतः सूर्यः । तेनोपमीयत इति तदुपमा द्युतिर्यस्य स तथा तम् । यशसा दशसु दिक्ष्वाशास्वपि श्रुतं प्रसिद्धम् । दशकण्ठस्य रावणस्यारे रामचन्द्रस्य गुरुं पितरं यं विदुर्जानन्ति बुधाः ॥ दशेति पूर्वं पदं यस्य रथपदस्य स दशपूर्वः । स चासौ रथश्च दशरथश्चेति विग्रहः । बहुव्रीहिरत्र नेष्टः । तदर्थानुपपत्तेः । अनेककोटिरथत्वाच्च दशरथस्य । इत्याशयेन नामैव पूर्वपदं व्यवहितं प्रयुक्तम् ॥ एतदनुसारान्माघेऽपि–" हिरण्यपूर्वं कशिपुं प्रचक्षत " इति प्रयुक्तम् ॥

३० ॥ ऋषीति । श्रुतयागप्रसवैः स्वाध्याययजनसंतानैः । करणैः । यथासंख्यमृषिदेवगणस्वधाभुजामनृणत्वमुपेयिवान् । परिधेः परिवेशात् ॥ " परिवेशस्तु परिधिः " इत्यमरः ॥ मुक्तो निर्गतः । कर्मकर्ता । उष्णदीधितिः सूर्य इव । स पार्थिवोऽजो बभौ दिदीपे ॥

३१ ॥ बलमिति तस्य । विभोरजस्य केवलमेकं वसु धनं न परप्रयोजनम् । किंतु गुणवत्तापि गुणित्वमपि परप्रयोजना परेषामन्येषां प्रयोजनं यस्याः सा । पर-

---

29. Whom wise men knew by the name of " Ratha " with " Das'a " as its prefix and as the father of the enemy of the ten-necked demon, whose personal lustre was comparable to that of the thousand-rayed luminary (the sun) and who was known by his bright renown even in the ten quarters.

30. That king, having freed himself from the debts due to the sages, gods and the Svadha-eaters (*i. e.* manes) by means of the study of the Vedas, performance of the sacrificial ceremonies and issue (respectively), shone like the hot-rayed luminary (the sun) freed from his misty halo (or circle).

31. Thus his bodily strength as well as his profound knowledge were equally devoted to allay the fears of the distressed and to pay the respectful salutation to the learned; so that not only the

---

30. E. °गणस्तदाभुजां for गणस्वधाभुजां.

31. A. K. P. सत्कृतये, D. L. संमतये, C. with the text only of Val., संगतये for संनतये. Nine Mss. with six commentators read with Mallinātha. D. E. L. with Val., न केवलं विभोः for विभोर्न केवलं. K. बभौ for विभोः. B. C. E. H. I. K. P. R. with Hem., Val., Su., and Vija., परप्रयोजनं for परप्रयोजना. Vallabha's text with us.

स कदाचिदवेक्षितप्रजः सह देव्या विजहार सुप्रजाः ।
नगरोपवने शचीसखो मरुतां पालयितेव नन्दने ॥ ३२ ॥
अथ रोधसि दक्षिणोदधेः श्रितगोकर्णनिकेतमीश्वरम् ।
उपवीणयितुं ययौ रवेरुदगावृत्तिपथेन नारदः ॥ ३३ ॥

प्रधाना । विधेयांशत्वेन प्रधानतद्गुणविशेषणात् । एवं खलु केवलं नोहनीयम् । तथा हि । बलं सत्त्वमार्तानामापन्नानां भयस्योपशान्तये निषेधाय । न परपीडनाय । बहु बहुलं श्रुतं विद्या विदुषां संनतये नमस्काराय । न विद्वदवज्ञानाय ॥ बभूव । तस्य धनं परोपयोगीति किं वक्तव्यम् । बलश्रुतादयोऽपि गुणाः परोपयोगिन इत्यर्थः ॥

३२ ॥ स इति । अवेक्षितप्रजः पालितप्रजः । सुप्रजाः सुसंतानः स राजा कदाचिद्देव्या महिष्येन्दुमत्या सह नगरस्य पुरस्योपवने विजहार चिक्रीड ॥ किंभूतः कस्मिन्निव । शचीसखः सन्मरुतां देवानां पालयितेन्द्रो नन्दनवन इव ॥

३३ ॥ अथेति । अथ दक्षिणस्योदधेः समुद्रस्य रोधसि तटे श्रितगोकर्णनिकेतमधिष्ठितगोकर्णाख्यस्थानमीश्वरं महादेवमुपवीणयितुं वीणयोप समीपे गातुम् ॥ "सत्यापपाश"—इत्यादिना वीणाशब्दादुपगानार्थे णिच्प्रत्ययः ॥ ततस्तु मुनू ॥ नारदो मुनी रवेः सूर्यस्योदीच्च उत्तरस्या दिश आकाश आवृत्तिर्निवर्तनम् । तस्याः पन्था गतिप्रकारस्तेन । यथा रविरुत्तरस्या दिशो व्यावृत्य दक्षिणायनमागच्छति तद्वदित्यर्थः । ययौ जगाम ॥ सूर्योपमानेनास्यातितेजस्त्वमुच्यते ॥

---

wealth of that mighty king, but also his possession of virtues, was everyway useful for others.

32. Once upon a time this king, who had regard to his subjects and who had an excellent son, sported with his queen in the city garden; as does the lord of शची, the protector of the gods, in the नंदन garden.

33. At this time the sage Nárada was going by the path of the sun's return from the north to sing in harmony with his lute unto Îs'vara who had taken his abode in the temple of Gokar*n*a on the shores of the southern ocean.

---

32. C. with Hem., अवेक्षितप्रजाः for अवेक्षितप्रजः. K. R. सुप्रजः for सुप्रजाः. D. नन्दनं for नन्दने.

33. D. K. L. R. with Hem., and Val., श्रुत° for श्रित°. A. उपवर्णयितुं, E. उपवेणयितुं for उपवीणयितुं. B. C. E. H. I. K. L. R. with Val., and Su., उदयावृत्ति° for उदगावृत्ति°. So also Mallinátha, who says :—"उदयावृत्तिपथेन" इति पाठे सूर्यस्य सम्बन्धिनोदयावृत्तिपथेन आकाशमार्गेण ॥ Here Cháritravardhana says :—उपवीणयितुं रवेर्ययावुदगावृत्तिपथेन नारदः" इत्यत्र मुख्यः पाठः and notices "उपवीणयितुं मुनिः पथा पवमानस्य जगाम नारदः also supported by D. Hemádri also notices the reading of D.

कुसुमैर्ग्रथितामपार्थिवैः स्रजमातोद्यशिरोनिवेशिताम् ।
अहरत्किल तस्य वेगवानधिवासस्पृहयेव मारुतः ॥ ३४ ॥
भ्रमरैः कुसुमानुसारिभिः परिकीर्णा परिवादिनी मुनेः ।
ददृशे पवनावलेपजं सृजती बाष्पमिवाञ्जनाविलम् ॥ ३५ ॥
अभिभूय विभूतिमार्तवीं मधुगन्धातिशयेन वीरुधाम् ।
नृपतेरमरस्रगाप सा दयितोरुस्तनकोटिसुस्थितिम् ॥ ३६ ॥

३४ ॥ कुसुमैरिति । तस्य नारदस्यातोद्यस्य वीणावाद्यस्य शिरस्यग्रे निवेशितामपार्थिवैरभौमैर्दिव्यैः कुसुमैर्ग्रथितां गुम्फितां । स्रजं मालां वेगवान्मारुतः । अधिवासे संस्कारे । स्पृहयेव । अहरत्किल ॥ किलेत्यैतिह्ये ॥

३५ ॥ भ्रमरैरिति । कुसुमानुसारिभिः पुष्पानुवर्तिभिर्भ्रमरैरलिभिः परिकीर्णा परिवृता मुनेर्नारदस्य परिवादिनी वीणा । पवनस्य वायोरवलेपजं हरणरूपगर्वजातम् । अञ्जनेन कज्जलेनाविलं मलिनं बाष्पमश्रु सृजतीव मुञ्चतीव । ददृशे दृष्टा ॥ भ्रमराणां साञ्जनबाष्पबिन्दुसादृश्यं विवक्षितम् ॥ " वा नपुंसकस्य " इति वर्तमाने । " आच्छीनद्योर्नुम् " इति नुम्विकल्पः ॥

३६ ॥ अभिभूयेति । सामरस्रग्देवकुसुमावली । मधुनो मकरन्दस्य गन्धस्य सौरभ्यस्य चातिशयेन । वीरुधां करणेन । वल्लीनां नगरोपवनवर्तिनीनामार्तवीं वसन्तर्तुसंभवां विभूतिं संपदं पुष्पाणामभिभूय तिरस्कृत्य नृपतेरजस्य दयिताया इन्दुमत्या उर्वोः स्थूलयोः स्तनयोर्ये कोटी चूचुकौ तयोः सुस्थितिम् । गोप्यस्थाने पतितत्वात् । प्रशस्तां स्थितिमाप प्राप्ता ॥

---

34. It is said that a violent gust of wind took away a garland hung on the top of the वीणा, and was strung together with celestial flowers (*lit.* not produced on earth), as if with the desire of fragrance.

35. The वीणा of the sage, which was surrounded by black-bees moving after the flowers, was seen, as it were, to shed tears caused by the insult given by the Wind, and soiled with collyrium.

36. That celestial garland, which by its excessive fragrance and abundance of honey despised the vernal dignity of creepers, obtained a secure position between the nipples of the expansive breasts of the King's beloved.

---

34. P. एव for इव.

35. A. B. C. E. H. I. K. L. P. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., विनिकीर्णा for परिकीर्णा.

36. B. I. K. R. with Chá., Val., Su., Dharm., and Vija., दयितोरःस्थलकोटिषु स्थितिं, Hemádri notices this, C. दयितोरःस्थलकोटिसंस्थितिं, D. with Hem., दयितोरश्छदकोटिषु स्थितिं, D_2. दयितोरःस्थलकोटिरत्नयोः, Sumativijaya also notices this, E. L. and the text only of Val., दयितोरुस्थलकोटिषु स्थितं, H. दयितोरःस्थलरत्नकोटिषु for दयितोरुस्तनकोटिसुस्थितिं.

क्षणमात्रसखीं सुजातयोः स्तनयोस्तामवलोक्य विह्वला ।
निमिमील नरोत्तमप्रिया हृतचन्द्रा तमसेव कौमुदी ॥ ३७ ॥
वपुषा करणोज्झितेन सा निपतन्ती पतिमप्यपातयत् ।
ननु तैलनिषेकबिन्दुना सह दीपार्चिरुपैति मेदिनीम् ॥ ३८ ॥

३७ ॥ क्षणेति । सुजातयोः स्तनयोः । क्षणमात्रं सखीं सखीमिव स्थिताम् सुजातत्वसाधर्म्यात्स्रजः स्तनसखीत्वमिति भावः । तां स्रजमवलोक्येषद्दृष्ट्वा विह्वला विवशा नरोत्तमप्रियाजदयिता निमिमील मुमोह । ममारेत्यर्थः ॥ केव । तमसा राहुणा हृतचन्द्रा कौमुदी चन्द्रिकेव ॥ कौमुद्या निमीलनं प्रतिसंहारः ॥
३८ ॥ वपुषेति । सन्दुमती करणमिन्द्रियोपलक्षितं चैतन्यम् । तेनोज्झितेन मुक्तेन

37. That beloved wife of the most excellent of men, having seen that garland the momentary companion of her well-formed breasts, and being instantly delirious, closed her eyes in death like moonlight in which the moon is totally eclipsed by Râhu.

38. She falling down with her body forsaken by the organs

Hemâdri also notices this reading. Châritravardhana notices दयितोरःस्थलकोटिरत्नयोः. A₂. H. with Châ., स्रगसज्जत सा महीपतेः, R. नृपतेरमरस्रगाप्नजसा for नृपतेरमरस्रगाप सा. Hemâdri also notices the reading of Châritravardhana with a slight modification. He says :—" स्रगसज्जत सा महीपतेर्दयितोरःस्थलरत्नकोटिषु " इत्यपि पाठः ॥ Châritravardhana also notices our text and says :—अन्यत्र । " नृपतेरमरस्रगाप सा दयितोरःस्थलकोटिषु स्थितिं " इति पाठः ॥

37. B. D. E. I. L. P. with Hem., and the text only of Val., नरेश्वरप्रिया for नरोत्तमप्रिया. D₂. समसंस्था निमिमील सुंदरी for हृतचन्द्रा तमसेव कौमुदी. H. with Châ., and the text only of Hem., पुनरप्रतिबोधलब्धये निमिमील क्षितिपालसुन्दरी for निमिमील नरोत्तमप्रिया हृतचन्द्रा तमसेव कौमुदी. [H. लम्भये for लब्धये. H. निमिमीलक्षितिपाल° for निमिमील क्षितिपाल°] Châritravardhana notices " तमसा हृतचन्द्रचन्द्रिका समसंस्था निमिमील सुंदरी " for the second Pâda, and says :—तत्रैवमन्वयः । तमसा राहुणा हृतचन्द्रो यस्याः सा चासौ चन्द्रिका च तया समा तुल्या संस्था आकारो यस्याः सा सुंदरी निमिमील दीर्घनिद्रां प्राप ॥ " दीर्घनिद्रा निमीलनं " इत्यभिधानचिन्तामणिः ॥ Between 38-39 B. E. I. with Châ., Din., Val., and Su., read :—" सममेव नराधिपेन सा गुरुसंमोहविलुप्तचेतना । अगमत्सह तैलबिन्दुना नवदीपार्चिरिव क्षितेस्तलं " ॥ [H. I. and Su., चेतसा for चेतना]. " गुरुर्गरीयान् योऽसौ संमोहः संमूर्च्छा तेन विलुप्ता नष्टा चेतना ज्ञानं यस्याः सेन्दुमती नराधिपेनाजेन सममेव सहैव क्षितेर्भूमेस्तलमगमद्ययौ । केव तैलबिन्दुना समं नवमल्पीयो दीपस्यार्चिर्ज्वालेव शिखेव " ॥ क्षेपकोऽयं ॥ चा० ॥ Vallabha calls it as पाठान्तरं. I. reads this spurious verse between 37-38, and calls the text of the 38th verse as क्षेपक.

38. Hemâdri's text only reads :—दीपार्चिरिव क्षितेस्तलं for दीपार्चिरुपैति मेदिनीम्.

उभयोरपि पार्श्ववर्तिनां तुमुलेनार्तरवेण वेजिताः।
विहगाः कमलाकरालयाः समदुःखा इव तत्र चुक्रुशुः ॥ ३९ ॥
नृपतेर्व्यजनादिभिस्तमो नुनुदे सा तु तथैव संस्थिता।
प्रतिकारविधानमायुषः सति शेषे हि फलाय कल्पते ॥ ४० ॥
प्रतियोजयितव्यवल्लकीसमवस्थामथ सत्त्वविप्लवात्।
स निनाय नितान्तवत्सलः परिगृह्योचितमङ्कमङ्गनाम् ॥ ४१ ॥

वपुषा निपतन्ती पतिमपि अपातयदमूर्छयत् ॥ उपमानाभिप्रायेण निमित्तमाह। दीपार्चिर्दीपशिखार्चिस्तैलस्य निषेके स्रवणे सति यो बिन्दुस्तेन सह मेदिनी-मुपैति पतति ननु खलु ॥ इन्दुमत्या दीपार्चिरुपमानम्। अजस्य तैलबिन्दुः। तत एव तस्या जीवितसमाप्तिस्तस्य जीवितशेषश्च सूच्यते ॥

३९ ॥ उभयोरिति। उभयोर्द्वयोरपि पार्श्ववर्तिनां सेवकानां तुमुलेन संकीर्णेना-र्तरवेण रोदनेन। वेजितास्त्रासिताः कमलाकर आलयो येषां ते। विहगाः पक्षिण-स्तत्रोपवने समदुःखा इव। तत्पार्श्ववर्तिनां समानशोका इव। चुक्रुशुः क्रोशन्ति स्म ॥

४० ॥ नृपतेरिति। ततोऽनन्तरं व्यजनादिभिः। करणैः। पार्श्ववर्तिभिः। कर्तृभिः। आदिशब्देन जलसेककर्पूरक्षोदादयो गृह्यन्ते। नृपतेस्तमो मूर्च्छा नुनुदे निरस्तम्। सा त्विन्दुमती तथैव तेन मूर्च्छाप्रकारेणैव संस्थिता ॥ तथा हि। प्रतिकारस्य चिकित्साया विधानं करणमायुषो जीवितकालस्य शेषे सति फलाय सिद्ध्यै क-ल्पते समर्थं भवति हि ॥

४१ ॥ प्रतीति। अथ नितान्तवत्सलोऽतिस्निग्धः स राजा। सत्त्वस्य चैतन्यस्य

---

of sense made her lord also to drop down; for does not the flame of a lamp get to the ground together with the flaming drops of dripping oil?

39. Frightened by the confused shrieks of lamentations of the attendants even of both, the birds living in the repository of lotuses began to cry there as if they were equally grieved.

40. Then the swoon of the king was removed by fanning and other artificial means, but she remained in the same state of lifelessness; for the medical treatment produces some effect when there is a residue of life.

41. The king who was exceedingly devoted to his wife, hav-

---

39. B. C. I. with Cha., Din., and the text only of Val., परिता-र्श्ववर्तिनां, H. परितार्श्ववर्तिभि: for अपि पार्श्ववर्तिनां. One of the three Mss. of Hemadri's दर्पण also agrees with Charitravardhana and others. B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Hem., Cha., Din., Val., Su., Dharm., and Vija. °कराश्रयाः for °करालयाः.

40. E. I. R. and the text only of Val., च for तु. L. आयुषः for आयुषः.

41. D. विह्वलां पुनः for सत्त्वविप्लवात्. H. संप्लवात् for विप्लवात्. D. अङ्क

पतिरङ्कनिषण्णया तया करणापायविभिन्नवर्णया ।
समलक्ष्यत बिभ्रदाविलां मृगलेखामुषसीव चन्द्रमाः ॥ ४२ ॥
विललाप स बाष्पगद्गदं सहजामप्यपहाय धीरताम् ।
अभितप्तमयोऽपि मार्दवं भजते कैव कथा शरीरिषु ॥ ४३ ॥

विप्लवाद्विनाशात् । प्रतियोजयितव्याया अवस्रंसनानन्तरं पुनःसज्जाक्रियणयोग्याया वल्लक्या वीणायाः समावस्था यस्याः सा तथा । तामङ्गनां परिगृह्य परितो गृहीत्वा । भुजाभ्यामिति भावगतम् । उचितं योग्यं परिचितं चाङ्कमुत्सङ्गं निनाय प्रापयामास ॥ वल्लकीपक्षे तु सत्त्वं तन्त्रीणामवष्टम्भकः शलाकाविशेषः ॥

४२ ॥ पतिरिति । अङ्कनिषण्णयोत्सङ्गस्थितया करणानामिन्द्रियाणाम् । तदुपलक्षितस्य चैतन्यस्य वा । अपायेनापगमेन हेतुना विभिन्नवर्णया गतच्छायया प्रिययोपलक्षितः पतिरजः । उषसि प्रातःकाल आविलां मलिनां मृगलेखां लाञ्छनं मृगरेखारूपं बिभ्रद्धारयंश्चन्द्रमा इव । समलक्ष्यतादृश्यत ॥

४३ ॥ विललापेति । सहजां स्वाभाविकीं धीरतामप्यपहाय विप्रकीर्य बाष्पेण कण्ठगतेन गद्गदं विशीर्णाक्षरं यथा तथा ध्वनिमात्रानुकारिगद्गदशब्दैर्विललाप परिदेवनं चकार । धैर्यापहारे दुःखातिशयः कारणमित्याशयेनाह । अभितस्तप्तम-

---

ing held her up who through loss of consciousness was in a state similar to that of a वीणा the strings of which are to be put in tune, took her on his lap which was already familiar to her.

42. There the husband appeared, on account of her lying on his lap with her complexion totally faded by the loss of the organs of sense, like the moon at dawn wearing on the disc the dim streak of the deer.

43. Then the king having given up even his natural fortitude began to lament in accents choked with tears: even iron when heated by fire gets softness, what then need be said of those that have (frail) bodies ?

---

for अङ्कं. Between 41-42 B. D_2. L. with Hem., Châ., Din., Val., and Su., read :—" स निनाय नितान्तवत्सलः परिवृत्तप्रथमच्छविं क्षणात् । सलिलोद्धृतपद्मिनीनिभां दयितामङ्कमुदश्रुलोचनः " ॥ [D_2. with Hem., तुलां for निभां. D_2. with Hem., छलात् for क्षणात्. L. °मथाश्रुलोचनः for उदश्रुलोचनः]. नितान्तवत्सलः उद्गतं अश्रुणी बाष्पौ लोचने यस्य स नृपो दयितां भार्यामंकं निनाय । किं भूतां । परिवृत्तागता प्रथमा छविः कान्तिर्यस्याः सा तां तथोक्तां । तथा सलिलादुद्धृतोत्खाता या पद्मिनी कमलिनी तस्यास्तुल्यां ॥ अयमपि क्षेपकः ॥ चा० ॥ So do Hemádri and Vallabha.

42. D. विभ्रामाविलां for बिभ्रदाविलां. K. मृगरेखा for मृगलेखा. C. and the texts only of Val., and Su., °मुखसीव for °मुषसीव.

43. E. सहसां for सहजां. B. C. D. E. शरीरिणां for शरीरिषु. Hemádri also notices the reading.

कुसुमान्यपि गात्रसंगमात्प्रभवन्त्यायुरपोहितुं यदि ।
न भविष्यति हन्त साधनं किमिवान्यत्प्रहरिष्यतो विधेः ॥ ४४ ॥
अथ वा मृदु वस्तु हिंसितुं मृदुनैवारभते प्रजान्तकः ।
हिमसेकविपत्तिरत्र मे नलिनी पूर्वनिदर्शनं मता ॥ ४५ ॥
स्रगियं यदि जीवितापहा हृदये किं निहिता न हन्ति माम् ।
विषमप्यमृतं क्वचिद्भवेदमृतं वा विषमीश्वरेच्छया ॥ ४६ ॥

भितप्तमयो लोहमचेतनमपि मार्दवं मृदुत्वमवैरत्वं च भजते प्राप्नोति। शरीरिषु चेतनेषु कथैव वाद एव संदिग्धार्थनिर्णयरूपा का किंरूपा। इत्याक्षेपः ॥ संदिग्धे न्यायः प्रवर्तते हि ॥ प्रतप्तेष्वधैर्यप्राप्तिसंदेहो नास्त्येवेत्यर्थः ॥

४४ ॥ कुसुमानीति। कुसुमान्यपि गात्रस्य संगमात्संयोगात्। न तीव्राभिघाता-दिति भावः। आयुरपोहितुमपनेतुं यदि प्रभवन्ति समर्थानि भवन्ति हन्त विषादे ॥ "हन्त हर्षेऽनुकम्पायां वाक्यारम्भविषादयोः" इत्यमरः ॥ तर्हि प्रहरिष्यतो हन्तुमिच्छतो विधेर्दैवस्यान्यत्कुसुमेभ्यः किमिव वस्तु। साधनं प्रहरणं न भविष्यति न भवेत् ॥ सर्वं साधनं तदित्यर्थः ॥

४५ ॥ अथ वेति। अथ वा प्रजानामन्तको यमो मृदु वस्तु मृदुना वस्तुनैव हिंसितुं हन्तुमारभत उपक्रमते। अत्रार्थे हिमसेकस्तुषारवर्षमेव विपत्तिर्मृत्युर्यस्याः सा तथा नलिनी पद्मिनी। पूर्वनिदर्शनं प्रथमदृष्टान्तो मे मता संमता ॥ द्वितीयं निदर्शनं पुष्पमृत्युरिन्दुमतीति भावः ॥

४६ ॥ स्रगिति। इयं स्रग्जीवितमपहन्तीति जीवितापहा। यदि। हृदये वक्षसि "हृदयं वक्षसि स्वान्ते" इत्यमरः ॥ निहिता सती मां किं न हन्ति। ईश्वरेच्छया। क्वचित्प्रदेशे विषमप्यमृतं भवेत्क्वचिदमृतं वा विषं भवेत् ॥ दैवमेवात्र कारणमित्यर्थः ॥

---

44. If even flowers by their contact with the human body have the power of taking away life, then, alas! what other thing will not be an instrument to Fate when it is bent upon striking.

45. Or perhaps the destroyer of men (*i. e.* the god of death) undertakes to destroy a soft thing only by means of a soft instrument; and herein the first instance observed by *me* is the lotus-plant being subject to destruction by the showers of dew.

46. If this wreath of flowers has the power of destroying life, then why does it not kill me, when it is placed on my bosom? By the will of God even poison may sometimes turn out nectar and nectar poison.

---

45. C. D. E. I. K. P. with Hem., Val., and Su., गता, L. जनाः for मता.

46. A. C. J. K. P. omit this stanza. D. सन्निहिता for किं निहिता. Chá., Val., and Su., read this after the 47th verse of our text.

अथ वा मम भाग्यविप्लवादशनिः कल्पित एष वेधसा ।
यदनेन न पातितस्तरुः क्षपिता तद्विटपाश्रया लता ॥ ४७ ॥
कृतवत्यसि नावधीरणामपराद्धेऽपि यदा चिरं मयि ।
कथमेकपदे निरागसं जनमाभाष्यमिमं न मन्यसे ॥ ४८ ॥
ध्रुवमस्मि शठः शुचिस्मिते विदितः कैतववत्सलस्तव ।
परलोकमसंनिवृत्तये यदनापृच्छ्य गतासि मामितः ॥ ४९ ॥

४७ ॥ अथ वेति । अथ वा । मम भाग्यस्य विप्लवान्नाशान्निमित्ताद्वेधसा । कर्त्रा । एष कुसुमावलिरूपोऽशनिर्वज्रः कल्पितः । अपूर्वः कृत इत्यभिसन्धिः । अपूर्वत्वमेव स्पष्टयति । यद्यस्मात्कारणादनेन पुरोवर्तिना पुष्पाशनिना तरुराश्रयभूतो लतायाः न पातितो न प्रध्वंसितः । किं तु तद्विटपाश्रया तस्य तरोः शाखाधारा लता वल्ली क्षपिता प्रध्वंसिता ॥ तच्छब्देनात्मा ध्वन्यते लताशब्देनेन्दुमती ॥ लोके प्रसिद्धोऽशनिस्तरुं लतां च क्षपयति । अयं च लतामेव न तरुमित्यनेन प्रकारेणास्यापूर्वत्वमित्यभिप्रायः ॥

४८ ॥ कृतवतीति । यदा यस्माद्धेतोरपराद्धेऽपि कृतापराधेऽपि मयि विषये चिरमवधीरणामवज्ञां न कृतवत्यसि नाकार्षीस्तस्माद्धेतोरेकपदे युगपदेव । निरागसमनपराधमिमं जनं दासभूतमाभाष्यमामन्त्रणार्हं कथं कस्माद्धेतोर्न मन्यसे न चिन्तयसि ॥

४९ ॥ ध्रुवमिति । हे शुचिस्मिते धवलहसिते कैतवेन कपटेन वत्सलः स्निग्धः

---

47. Or perhaps through the evil turn of my fate this has been turned into the fire of lightning by the Creator, since the tree has not been struck down by it, but the creeper clung to its branches been consumed.

48. If you did not show disregard towards me even when I was exceedingly guilty; then, why don't you instantly consider this innocent person as one everyway worthy of being spoken to?

49. It is certain, O lady of pure smiles, that I am known to

---

47. D. H. with Hem., Chá., Din., Val., Dharm., and Vija., सुरमाल्यरूपभाक् for मम भाग्यविश्रवात्. D. H. with Hem., Chà., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., निर्मितः for कल्पितः. D. कर्मणा for वेधसा. A. H. तरुर्न पातितः for न पातितस्तरुः. Twelve Mss. and four commentators read with Mallinátha. C. with Su. निहता for क्षपिता. A. H. P. and the text only of Val., °विटपाश्रिता for °विटपाश्रया. Twelve Mss. and seven commentators read with Mallinàtha.

48. B. D. H. I. J. L. with Su., and Dharm., अपराधे for अपराद्धे. D. with Hem., प्रिये for यदा. Hemâdri's text with us. L. R. निरागमं for निरागसं. H. with Val., अमुं for इमं.

49. D. with Hem., Châ., and Din., अनामन्त्र्य for अनापृच्छ्य. One

दयितां यदि तावदन्वगाद्विनिवृत्तं किमिदं तया विना।
सहतां हतजीवितं मम प्रबलामात्मकृतेन वेदनाम् ॥ ५० ॥
सुरतश्रमसंभृतो मुखे ध्रियते स्वेदलवोद्गमोऽपि ते।
अथ चास्तमिता त्वमात्मना धिगिमां देहभृतामसारताम् ॥ ५१ ॥

शठो गूढाभिप्रायकृत्तव त्वया विदितो ज्ञातोऽसि ॥ "मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च-" इत्यादिना कर्तरि क्तः ॥ "क्तस्य च वर्तमाने" इति कर्तरि षष्ठी ॥ यद्यस्मात्कारणान्मामनापृच्छ्यानामन्त्र्यैतोऽस्माल्लोकादसंनिवृत्तयेऽप्रत्यागमनाय परलोकं गतासि ॥

५० ॥ दयितामिति । इदं मम हतजीवितं कुत्सितं जीवितं तावद्दादौ दयितामिन्दुमतीं यद्यन्वगादन्वधावत्तर्हि तया दयितया विना किं केन निमित्तेन विनिवृत्तं प्रत्यागतम् ॥ यदि प्रत्यागतं तर्ह्यात्मकृतेन स्वकर्मणा प्रबलामधिकां वेदनां दुःखं सहतां अनताम् ॥

५१ ॥ सुरतेति । सुरतेन निमित्तेन श्रमस्तेन संभृतः कल्पितः । स्वेदस्य लवानां कणानामुद्गमस्ते तव मुखे ध्रियते वर्तते । अथानन्तरं च त्वमात्मना स्वयमस्तमिता तिरोहिता ॥ देहभृतां प्राणिनामिमां प्रत्यक्षामसारतामस्थिरतां धिक् ॥

---

thee as a false husband with insincere love, since thou hast departed without bidding me adieu from this world to the next with an intention not to come here again!

50. Let therefore this wretched life of mine endure the overwhelming torments brought on by its own evil deeds! For why has it returned without her if it then went after my beloved!

51. The rise of the drops of perspiration brought on (*lit.* brought together) by सुरत labour still exists on thy face, while thou thyself art dead. Oh fie upon the frailty of human beings!

---

of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण reads with Mallinâtha. After this verse Hemâdri reads the 54th stanza of our text.

50. B. E. H. I. K. L. P. R. आत्मकृतां तु, C. with Hem., Val., Su., and Vija., आत्मकृतां नु, D. आत्मकृतान्त°, D_2. with Dharm., and the text only of Su., आत्मकृतां च for आत्मकृतेन. Two Mss. and three commentators read with Mallinâtha.

51. B. C. D. E. I. K. L. R. with Val., Su., Dharm., and the text only of Hemâdri, अथ वा for अथ च. I. देहवतां, L. देहभवाम् for देहभृतां. H. and Châritravardhana omit this verse. Vallabha calls it as मूलपाठः. Between 51-52 B. H. with Châ., Din., and Val., read the following :—"सुरतश्रमवारिबिन्दवो न तु तावद्विरमन्ति ते मुखे। स्वयमस्तमितास्यहो बत क्षयिणां देहभृतामसारता" ॥ [B. देहवतां for देहभृतां. H. असारतां for असारता.] भो इन्दुमति तव मुखे सुरतेन मोहनक्रीडया जनिताः श्रमवारि बिन्दवः स्वेदजलकणाः अपि तावन्न विरमन्ति नावसानं गच्छन्ति। त्वं तु स्वयमात्मनाऽस्तमितासि

मनसापि न विप्रियं मया कृतपूर्वं तव किं जहासि माम् ।
ननु शब्दपतिः क्षितेरहं त्वयि मे भावनिबन्धना रतिः ॥ ५२ ॥
कुसुमोत्कचितान्वलीमतश्चलयन्भृङ्गरुचस्तवालकान् ।
करभोरु करोति मारुतस्त्वदुपावर्तनशङ्कि मे मनः ॥ ५३ ॥

५२ ॥ आत्मनि कैतववत्सलत्वं शठत्वं चेन्दुमत्यभिप्रायेणैव यदारोपितं तदिदानीं निषेधयति ॥ मनसेति । मया । कर्त्रा । मनसा । करणेनापि । तव विप्रियं न कृतपूर्वं पूर्वं न कृतम् । मां किं केन निमित्तेन जहासि त्यजसि ॥ ननु मेदिनीपतिस्त्वं नातो विप्रियमस्तीत्याशङ्क्याह । ननु प्रियेऽहं क्षितेः शब्देन पतिः । नार्थेनेति भावः । पालयिता प्रियश्च पतिः । अतः शब्दशक्त्या पतित्वं नार्थशक्त्येत्याशयः ॥ तर्हि कुतस्तवार्थतः पतित्वमित्याकाङ्क्षायामाह । त्वयि मे भावनिबंधना स्वभावाश्रया न बाह्यकरणाश्रया रतिः प्रेम । अत एव मनसापि विप्रियकरणमकारणमित्यभिसंधिः ॥

५३ ॥ कुसुमेति । हे करभोरु करभसदृशोरु ॥ "मणिबन्धादाकनिष्ठं करस्य करभो बहिः" इत्यमरः ॥ मारुतः कुसुमोत्कचितान्पुष्पानुविद्धान्वलीमतस्तरंगितान् । कुटिलानित्यर्थः । भृङ्गरुचो भ्रमरवर्णास्तवालकांश्चलयन्मे मनः । कर्म । त्वदुपावर्तनशङ्कि तव प्रत्याश्वसनं शङ्कत इति तत्करोति ॥ अलकचलनाद्यादृच्छिकात्प्रत्याश्वसनमनुमीयत इत्यर्थः ॥ उपावर्तनं परिवर्तनं वा ॥

---

52. Dearest इन्दुमति, hitherto I have done nothing unpleasant to thee even in thought, why then dost thou abandon me in this way ? In sooth I am lord of the earth only in name while my love fettered by deep emotional feeling is centered only in thee.

53. The breeze, Oh beautiful thighed lady, shaking the curled hair dark as black bees and adorned with flowers makes my mind hopeful of thy revival.

परलोकं गतासि । क्षणयायिनः स्वेदकणास्त्वदाननेऽद्यापि संतिष्ठन्ते । त्वं तु स्थैर्यादिगुणयुक्ता स्वयं जग्मुषीत्यर्थः ॥ अहो आश्चर्यं सखेदं । क्षयिणां विनाशिनां देहभृतां प्राणभाजामसारता ॥ अहो आश्चर्यं । बत खेदे ॥ "सारो बले स्थिरांशे च" इत्यमरः ॥ चा० ॥

53. A. H. with Châ., Din., Su., and Vija., °उत्खचितान्, Mallinâtha also notices this reading and says :—"कुसुमैरुत्खचितानुत्कर्षेण रचितान् वलीभृतां भङ्गीयुक्तान् ॥ कुटिलानित्यर्थः ॥ C. and the text only of Val. °उद्ग्रथितान्, D. °उत्कलितान् for °उत्कचितान्. Eight Mss. with Hemádri and Vallabha read with Mallinâtha. A. D2. वलीभृतः, B. C. D. E. H. I. J. K. L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., वल्लीमतः for वलीमतः.

तदपोहितुमर्हसि प्रिये प्रतिबोधेन विषादमाशु मे ।
ज्वलितेन गुहागतं तमस्तुहिनाद्रेरिव नक्तमोषधिः ॥ ५४ ॥
इदमुच्छ्वसितालकं मुखं तव विश्रान्तकथं दुनोति माम् ।
निशि सुप्तमिवैकपङ्कजं विरताभ्यन्तरषट्पदस्वनम् ॥ ५५ ॥
शशिनं पुनरेति शर्वरी दयिता द्वन्द्वचरं पतत्त्रिणम् ।
इति तौ विरहान्तरक्षमौ कथमत्यन्तगता न मां दहः ॥ ५६ ॥
नवपल्लवसंस्तरेऽपि ते मृदु दूयेत यदङ्गमर्पितम् ।
तदिदं विषहिष्यते कथं वद वामोरु चिताधिरोहणम् ॥ ५७ ॥

५४ ॥ तदिति । तस्मात्कारणाद्धे प्रिये आशु प्रतिबोधेन मे विषादं दुःखमपोहितुं निरसितुमर्हसि ॥ का केन कस्य किमिव । नक्तं रात्रावोषधिर्विशिष्टलता ज्वलितेन प्रकाशेन तुहिनाद्रेर्हिमाचलस्य गुहासु गतं तमोऽन्धकारमिव ॥

५५ ॥ इदमिति । उच्छ्वसितालकं विकीर्णचूर्णकुन्तलं विश्रान्तकथं विगतसंलापं तवेदं मुखं मां दुनोति । किमिव । निशि रात्रौ सुप्तं मुकलितं विरताभ्यन्तरषट्पदस्वनमेकपङ्कजमद्वितीयं पद्ममिव ॥ निशीत्यनेनान्धकारं लक्ष्यते ॥ तदेवोच्छ्वसितानुमानमित्यूहनीयम् ॥

५६ ॥ शशिनमिति । शर्वरी रात्रिः शशिनं चन्द्रं पुनरेति । दयिता प्रिया । द्वन्द्वेन मिथुनेन चरतीति द्वन्द्वचरः । तं पतत्त्रिणं पक्षिणं तथा चक्रवाकं पुनरेति । इत्यनेन हेतुना तौ चन्द्रचक्रवाकौ विरहान्तराणि विरहभेदान्क्षमेते इति विरहान्तरक्षमौ । अत्यन्तं गतापुनरागमनाय गता त्वं मां कथं न दहेर्न संतापयेः ॥

५७ ॥ नवेति । हे वामोरु । नवपल्लवानां संस्तर आस्तरणेऽप्यर्पितं मृदु यदङ्गं ते दूयेत परितप्येत । तदिदमङ्गं चितायामधिरोहणं कथं विषहिष्यते वद ॥

---

54. For this reason, O my beloved queen, you ought quickly to dispel my sorrow by coming to life, as the herbs at night dispel by their light the darkness existing in the caves of the snowy mountain (the Himálaya).

55. This face of yours with its dishevelled curly hair and with speech altogether ceased, like a solitary (or single) lotus closed at night with the humming of the bees in the inside silenced, torments me, my dear.

56. The night again goes back to the moon, and the Chakraváka-mate joins her consort that wanders about in pair: and in this way are those two able to bear the interval of separation ; but how canst thou, gone for ever, not burn me ?

57. O beautiful-thighed-lady, that tender body of thine which

---

54. E. K. L. R. with Hem., Val., and Su., ओषधिः for ओषधिः.

55. K. °षट्पदावलीः for °षट्पदस्वनम्.

56. E. I. L. R. and the text only of Hemâdri पतत्त्रिणां for पतत्त्रिणं. E. °क्षणे for °क्षमौ.

57. L. with Su., °अधिरोपणं for °अधिरोहणं.

इयमप्रतिबोधशायिनीं रसना त्वां प्रथमा रहःसखी ।
गतिविभ्रमसादनीरवा न शुचा नानुमृतेव लक्ष्यते ॥ ५८ ॥
कलमन्यभृतासु भाषितं कलहंसीषु मदालसं गतम् ।
पृषतीषु विलोलमीक्षितं पवनाधूतलतासु विभ्रमः ॥ ५९ ॥
त्रिदिवोत्सुकयाप्यवेक्ष्य मां निहिताः सत्यममी गुणास्त्वया ।
विरहे तव मे गुरुव्यथं हृदयं न त्ववलम्बितुं क्षमाः ॥ ६० ॥

५८ ॥ इयमिति । प्रथमाद्या रहसि सुरते सखी सहचरीयं रसना मेखला गतिविभ्रमाणां चंक्रमणविलासानां सादान्नाशान्नीरवा निःशब्दा सती । अप्रबोधाय शायिनीं स्वप्नशीलां त्वां शुचा शोचननिमित्तेनानुमृतेव अनुगतेव न लक्ष्यत इति न। लक्ष्यत एवेत्यर्थः ॥

५९—६० ॥ युग्मेनाह ॥ कलमिति ॥ त्रिदिवेति । उभयोरेकान्वयः । अन्यभृतासु परभृतासु कोकिलासु कलं मधुरं भाषितं वचनम् । कलहंसीषु विशिष्टहंसीषु मदेनालसं मन्दं गतं गमनम् । पृषतीषु हरिणीषु विलोलं चपलमीक्षितं दर्शनम् । पव-

---

when laid even on a bed of fresh sprouts would suffer pain, tell me then how can that same body now suffer the mounting on the funeral pile ?

58. This girdle thy first loved-companion in privacy but now made noiseless in consequence of the cessation of thy sportive gait, does not seem, by sorrow, as if not to have died after thee who art sleeping a sleep that knows no waking.

59—60. Sweet music of words in the cuckoo, gait slow in consequence of youthfulness in female swans, the loving tremulous glances in the hinds and sportiveness in the creepers shaken by the

---

58. B. घनचारुनितम्बसंस्थिता रसना त्वां प्रतिबोधशायिनीं, H. with Châ., and Din., घनचारुनितम्बगोचरा रसनेयं मुखरा तवाधुना for the first Pâda. E. रहःसखीं for रहःसखी. K. अनुमृतेन for अनुमृतेव.

59. B. C. I. K. L. P. with Hem., Val., Su., and Vija., गतं मदालसं, H. गतं मनोहरं, L. R. गतं सदासनं for मदालसं गतं. D. I. and the text only of Hemâdri, हरिणीषु for पृषतीषु. A. C. I. L. R. with Val., and Dharm., विभ्रमाः, Mallinâtha also notices this reading and says:— "विभ्रमाः" इति पाठे विभ्रमाः विलासाः । One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with this, D. विभ्रमा, D_2. with Châ., and Din., चेष्टितं for विभ्रमः. Seven Mss. with three commentators and the text only of Vallabha read with Mallinâtha. B. C. I. K. L. R. with Val., पवनोद्धत° for पवनाधूत°. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण agrees with Vallabha. E. omits this verse.

60. R. क्षमं for क्षमाः. H. omits this verse.

मिथुनं परिकल्पितं त्वया सहकारः फलिनी च नन्विमौ ।
अविधाय विवाहसत्क्रियामनयोर्गम्यत इत्यसांप्रतम् ॥ ६१ ॥
कुसुमं कृतदोहदस्त्वया यदशोकोऽयमुदीरयिष्यति ।
अलकाभरणं कथं नु तत्तव नेष्यामि निवापमाल्यताम् ॥ ६२ ॥
स्मरतेव सशब्दनूपुरं चरणानुग्रहमन्यदुर्लभम् ।
अमुना कुसुमाश्रुवर्षिणा त्वमशोकेन सुगात्रि शोच्यसे ॥ ६३ ॥

नाधूनलतासु विभ्रमो विलासः । इत्यमी गुणास्त्वया त्रिदिवे स्वर्ग उत्सुकयापि मामवेक्ष्योद्दिश्य निहिताः स्थापिताः सत्यं ध्रुवम् । तव विरहे गुरुव्यथमधिकदुःखं मे हृदयं मनोऽवलम्बितुं तु न क्षमा न समर्थाः ॥

६१ ॥ मिथुनमिति । ननु प्रिये । त्वयेमौ फलिनी सहकारश्च प्रियंगुचूतौ मिथुनं परिकल्पितं समर्थितम् । अनयोः फलिनीसहकारयोर्विवाहाख्यां सत्क्रियां संभावनामविधायाकृत्वा गम्यते त्वयेत्यसांप्रतमयुक्तमानं त्वयेत्थं व्रतं प्रयुक्तम् ॥

६२ ॥ कुसुममिति । त्वया कृतदोहदः संपादितेच्छाविशेषोऽयमशोको यत्कुसुममुदीरयिष्यत्युद्गमयिष्यति तत्तवालकाभरणं कुसुमं कथं नु केन प्रकारेण निवापस्य माल्यतां दाहाञ्जलेरर्घ्यतां नेष्यामि ॥

६३ ॥ स्मरतेति । हे सुगात्रि । सशब्दं ध्वनियुक्तं नूपुरं मञ्जीरं यस्मिन्स तम् । अन्यैः सहकारादिभिर्दुर्लभं चरणेन पादेनानुग्रहं स्वीकरणं ताडनम् । त्वदीयमिति भावस्थम् । स्मरता चिन्तयतेव कुसुमाश्रुवर्षिणा पुष्पबाष्पमुचामुना पुरोवर्तिना पूर्वोक्तादन्येनाशोकेन त्वं शोच्यसे ॥ उत्तमाङ्गं तव चरणताडनेन तरुपोषश्लेहादानेन श्लेषे स्पष्टीकृतः ॥

wind,—these qualities have been indeed deposited by thee for my sake though thou wert then eager for heaven; but I think they are not able to bear up my mind against the heavy grief produced from thy separation.

61. The mango tree and the Priyangu creeper have been indeed once designed by you for a marriageable couple ; for this reason it is improper for you to depart without having celebrated the auspicious ceremonies of their nuptials.

62. How can I, my dearest love, *use* these flowers which should have, were you living, adorned your hair, *for the funeral offering* !—the flowers which the yonder अशोक tree whose desire before budding had been accomplished by you will soon put forth.

63. O thou of lovely form, thou art bewailed by this As'oka tree that sheds tears in the form of flowers remembering as it were

---

62. C. D. E. L. and the text only of Vallabha °दोहदः for °दोहदः.

63. E. reads चरणानुग्रहदुर्लभं तव for चरणानुग्रहमन्यदुर्लभं. Charitravardhana calls this verse as क्षेपकोऽयं.

तव निश्वसितानुकारिभिर्बकुलैरर्धचितां समं मया ।
असमाप्यविलासमेखलां किमिदं किन्नरकण्ठि सुप्यते ॥ ६४ ॥
समदुःखसुखः सखीजनः प्रतिपच्चन्द्रनिभोऽयमात्मजः ।
अहमेकरसस्तथापि ते व्यवसायः प्रतिपत्तिनिष्ठुरः ॥ ६५ ॥
धृतिरस्तमिता रतिश्च्युता विरतं गेयमृतुर्निरुत्सवः ।
गतमाभरणप्रयोजनं परिशून्यं शयनीयमद्य मे ॥ ६६ ॥

६४॥ तवेति । हे किन्नरकण्ठि । कण्ठशब्देनात्र तज्जः स्वरो लक्ष्यते । किन्नराणां देवगायकविशेषाणां कण्ठ इव कण्ठो यस्याः सा तथा ॥ "अङ्गगात्रकण्ठेभ्यश्च" इति ङीप् ॥ तव निःश्वसितानुकारिभिः । सौरभ्यादिभिरिति भावगतम् ॥ बकुलैर्बकुलकुसुमैः करणैर्मया समं सहार्धे चितामर्धस्यूतां विलासाय मेखलामसमाप्यापूरयित्वेदं पूर्ववर्ति यथा तथा किं कस्मै प्रयोजनाय सुप्यते निद्रा क्रियते ॥ "वचिस्वपि—" इत्यादिना संप्रसारणम् ॥

६५ ॥ समेति । अयं सखीजनः समदुःखसुखः । अयमात्मजश्च प्रतिपदि शुक्लपक्षे प्रतिपच्चन्द्रस्तन्निभस्तत्सदृशः ॥ दर्शनीयो वर्धिष्णुश्चेत्यर्थः ॥ अयमहमेकरसोऽनन्यरागः । समानप्रेमेत्यर्थः । तथापि ते व्यवसाय उद्योगः प्रतिपत्त्या निश्चयेनाकस्मिकगमनव्यञ्जितेन निष्ठुरः क्रूरः ॥

६६ ॥ धृतिरिति । अद्य मे धृतिः प्रीतिरस्तमिता । रतिः क्रीडा च्युता । गेयं

---

the favour of thy feet adorned with ringing anklets, and which is very difficult to be obtained by any other tree.

64. O sweet-voiced किन्नरि, (*lit.* whose song resembling that of the celestial songsters) why have you closed your eyes in death without having completed the fancy zone which, along with me, was half set with Bakula flowers imitating your breath ?

65. These your friends are partakers of your joys and sorrows ; this your son is young and hopeful like the moon of the first day; I love you exclusively; and yet you have made a resolve opposed to all affection.

66. All patience (or love) is at an end, pleasures are no

---

64. B. D. E. I. K. L. with Hem., Val., and Su., °वादिभिः for °कारिभिः. D. विकल्पमेखलां for विलासमेखलां. Also noticed by Hemâdri, who says :—" विकल्पमेखलां " इति पाठे प्रतिनिधिरूपां मेखलामित्यर्थः. R. omits this verse.

65. H. °निष्ठुरं, K. R. and the texts of Val., and Hem., °निष्ठुरः for व्यवसायः प्रतिपत्तिनिष्ठुरः. C_2. with Châ., and Din., °मुखोऽयं for °निभोऽयं. D_2. and the texts of Val., and Hem., आत्मनः, C. with Hem., अर्भकः for आत्मजः.

66. K. रतिरस्तमिता धृतिश्च्युता for धृतिरस्तमिता रतिश्च्युता. C. and the

गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ ।
करुणाविमुखेन मृत्युना हरता त्वां वद किं न मे हृतम् ॥ ६७ ॥
मदिराक्षि मदाननार्पितं मधु पीत्वा रसवत्कथं नु मे ।
अनुपास्यसि बाष्पदूषितं परलोकोपनतं जलाञ्जलिम् ॥ ६८ ॥

गानं विरतम् । ऋतुर्वसंतो निरुत्सवः । आभरणानां प्रयोजनं गतमपगतम् । शयनीयं शयनं परिशून्यं परितः शून्यं जातं ॥

६७ ॥ तत्र हेतुं प्रकाशयति ॥ गृहिणीति । त्वां हरताऽत एव करुणाविमुखेन कृपायाः पराङ्मुखेन मृत्युना मे मम सम्बन्धि किं वस्तु न हृतम् । सर्वं हृतमित्याकूतम् । तदेव विवृणोति । गृहिणी हृता । अनेन सर्वं कुटुम्बं त्वदाश्रयमिति भावः ॥ सचिवो हृतः । सर्वो हितोपदेशस्त्वदायत्त इत्यनेनोच्यते ॥ मिथो रहसि सखी हृता । सर्वोपभोगस्त्वदाश्रय इत्यमुना प्रकटितम् ॥ ललिते सुकुमारे कलानां गीतादीनां विधावनुष्ठानविषये प्रियशिष्या हृता । प्रियत्वं प्राज्ञत्वादित्यभिसंधिः ॥ सर्वानन्दोऽनेन त्वन्निबन्धन इत्युद्घाटितम् ॥

६८ ॥ मदिरेति । हे मदिराक्षि मत्तलोचने । प्रसङ्गोचितेयं सम्बुद्धिः । मदाननार्पितं मन्मुखे संभृतं रसवत्सुगन्धमाधुर्यं मधु मद्यं पीत्वेदानीं परलोके उपनतं प्राप्तं मे बाष्पैरश्रुभिर्दूषितं कलुषितं जलाञ्जलिं तिलोदकाञ्जलिं कथं न्वनुपास्यसि ॥ मदाननार्पितस्य परलोकोपनतस्य च रसवतो बाष्पबिन्दुदूषितस्य मधुनो जलाञ्जलेश्च महदन्तरमिति विवक्षा ॥

---

more, music has ceased. the season is now without festivities (or has lost all its charms), there is no use of ornaments, and my bed has become all empty to-day.

67. Thou wert my only wife, thou my counsellor, thou my companion in solitude, my beloved pupil in the fine arts; in short, by taking thee away, say, what things of mine has not death, averse to pity, robbed me of ?

68. O thou of intoxicated eyes, having at first drunk the luscious wine passed from my mouth to that of thine, how wilt thou drink after that the offering of watery oblation soiled by my tears and presented to thee in the next world ?

---

text only of Hem., निरुत्सुकः for निरुत्सवः. D. with Cha., Din., and Val., चिरशून्यं for परिशून्यं. Vallabha's text with us.

67. C. D. with Hem., Cha., and Din., मिथः सखी for सखी मिथः. E. प्रियाशिक्षा, R. प्रियशिष्या for प्रियशिष्या. C. D_2. with Cha., and Din., बत for वद.

68. B. परलोकोपनतं, Hemadri also notices this. L परलोकोपगतं, D. with Su., परलोकोपनतां for परलोकोपनतं. Eleven Mss. and six commentators read with Mallinatha.

विभवेऽपि सति त्वया विना सुखमेतावदजस्य गण्यताम् ।
अहृतस्य विलोभनान्तरैर्मम सर्वे विषयास्त्वदाश्रयाः ॥ ६९ ॥
विलपन्निति कोसलाधिपः करुणार्थग्रथितं प्रियां प्रति ।
अकरोत्पृथिवीरुहानपि स्रुतशाखारसबाष्पदुर्दिनान् ॥ ७० ॥
अथ तस्य कथंचिदङ्कतः स्वजनस्तामपनीय सुन्दरीम् ।
विससर्ज कृतान्त्यमण्डनामनलायागरुचन्दनैधसे ॥ ७१ ॥

६९ ॥ विभव इति । त्वया विना विभवे सत्यप्यजस्य सुखमेतावदियदवधिकं गण्यताम् ॥ तथा हि । विलोभनान्तरैरन्यैर्विशेषेण लोभजनकवस्तुभिरैश्वर्यादिभिरहृतस्यानाकृष्टस्य मम सर्वे विषया भोगास्त्वदाश्रयास्त्वमेवाश्रयोऽधिकरणं येषां ते तथा ॥

७० ॥ विलपन्निति । कोसलानामधिपोऽजः प्रियां प्रतीन्दुमतीमुद्दिश्य । करुणः करुणाजनकः स चासावर्थश्च तेन ग्रथितमनुस्यूतं यथा तथा विलपन्पृथिवीरुहान्वृक्षानपि स्रुतशाखारसबाष्पदुर्दिनान् । स्रुतो गलितः शाखानां विटपानां रसो निर्यासः स एव बाष्पोऽश्रु स दुर्दिनं दुर्वर्षं येषां ते । तथाभूतानकरोत् ॥ किमुत मनुष्यानिति भावगतम् ॥

७१ ॥ अथेति । अथ तस्याङ्कत उत्सङ्गात्स्वजनः । स्वश्चासौ जनश्चेति विग्रहः । ज्ञातिवर्गः कथंचित्तां सुन्दरीमपनीय । कृतान्त्यमण्डनां सतीम् । अगरुः कालागरुश्चन्दनः श्रीखण्ड एवैधांसीन्धनानि यस्मिन् । इति मन्त्रसंस्कारोऽपि सूचितः । तस्मा अनलायाग्नये विससर्ज ददौ ॥

---

69. Even when there is abundance of wealth the pleasures of Aja without you, my loved-companion, may be counted of such extent; for unattracted by any other temptations all my objects of enjoyments solely depended upon you.

70. Lamenting in this manner for his beloved in expressions consisting of the sentiment of grief the Lord of the Kosalas made even the trees heavily shower the tears of exudation dripping down from their branches.

71. Then his relations, having with great difficulty removed that beautiful lady from his lap, consigned her, who was then

---

70. C. D. with Su., कोशलेश्वरः for कोसलाधिपः. A. स्रुतशाखारसबाष्पदुर्दिनान्, also Mallinátha notices this and says :—स्रुताः शाखारसा मकरन्दा एव बाष्पास्तैर्दुर्दिनान्, C. and the text only of Val., च्युतशाखारसबाष्पदुर्दिनान्, D. स्रुतशालारसबाष्पदुर्दिनान्, B. E. H. I. J. K. L. P. R. with Hem.. Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., स्रुतशाखारसबाष्पदुर्दिनान्.

71. D. अवतार्य for अपनीय. B. E. H. I. K. R. with Val., Dharm., Vija., Su., and the text only of Hemádri, तदन्त्य° for कृतान्त्य°. Nine Mss. with Hem., Chá., and Din., read with Mallinátha. Chá.,

प्रमदामनु संस्थितः शुचा नृपतिः सन्निति वाच्यदर्शनात् ।
न चकार शरीरमग्निसात्सह देव्या न तु जीविताशया ॥ ७२ ॥
अथ तेन दशाहतः परे गुणशेषामपदिश्य भामिनीम् ।
विदुषा विधयो महर्द्धयः पुर एवोपवने समापिताः ॥ ७३ ॥

७२ ॥ प्रमदामिति । नृपतिरजः सन्विद्वांस्तथापि शुचा शोकेन हेतुना प्रमदां स्त्रियमनु संस्थितो मृत इति वाच्यस्य निन्दाया दर्शनाद्विमर्शाद्देव्येन्दुमत्या सह शरीरमग्निसादग्न्यधीनं न चकार । जीविताशया तु नेति ॥

७३ ॥ अथेति । अथ तेन विदुषा शास्त्रज्ञेन राज्ञा । गुणा एव शेषा रूपादयो यस्याः सा तथा भामिनीमिन्दुमतीमपदिश्योद्दिश्य दशाहतः । दशानामह्नां समाहारो दशाहः ॥"तद्धितार्थ-" इत्यादिना समाहारार्थे तत्पुरुषः ॥ समाहारस्य चैकत्वादेकवचनम् ॥ " राजाहःसखिभ्यष्टच् " इति टच्प्रत्ययः ॥ " रात्राह्नाहाः पुंसि " इति पुलिङ्गता ॥ " अह्नोह्न एतेभ्यः "-इत्यकारादेशो न ॥ " न संख्यादेः समाहारे "

---

adorned with that celestial flower as her last funeral decoration, to fire having black aloe wood for its fuel.

72. He did not consign his body to flames with his queen not because he cared for his life but because he apprehended the scandal that the king, knowing as he was, died after his queen from grief.

73. Then after ten days the ceremonies attended with great magnificence in honour of his beautiful queen whose virtues were the only residue, were finished by that learned king in the very garden of his capital.

Din., and Malli., also notice this reading, and Mallinátha says :— " तद्दिव्यकुसुममेवान्त्यं मण्डनमलंकारो यस्यास्ताम् " ॥ A. B. C. E. H. I. J. P. R. with Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., अगुरु° for अगरु°.

72. H. P. with Chá., Din., and the text only of Hemádri, क्षितिपः for नृपतिः. E. J. न च for न तु. E. जीवितेच्छया for जीविताशया.

73. A. with Chá., Din., and the text only of Val., परं. D. K. परा for परे. B. E. I. K. L. R. with Val., Su . and Dharm., उपदिश्य for अपदिश्य. Nine Mss. with Hem., Chá., Din., and Vija., read with our scholiast. Mallinátha also notices this and says :— " उपदिश्योद्दिश्य ". C. E. I. J. K. L. with Val., and Vija., गेहिनीं, Mallinátha also notices this and says :—" गेहिनीं गृहस्वामिनीं, " H. P. सुन्दरीं for भामिनीं. Vallabha's text with us. B. C. E. L. R. with Chá.,

स विवेश पुरीं तया विना क्षणदापायशशाङ्कदर्शनः ।
परिवाहमिवावलोकयन्स्वशुचः पौरवधूमुखाश्रुषु ॥ ७४ ॥
अथ तं सवनाय दीक्षितः प्रणिधानाद्गुरुराश्रमस्थितः ।
अभिषङ्गजडं विजज्ञिवानिति शिष्येण किलान्वबोधयत् ॥ ७५ ॥

इति निषेधात ॥ ततस्तसिल् ॥ तस्माद्दशाहतः पर ऊर्ध्वं कर्तव्या महर्द्धयो विधयः क्रियाः पुरः पुर्या उपवन उद्यान एव समापिताः । संपूर्णमनुष्ठिता इत्यर्थः ॥ "शुध्येद्विप्रो दशाहेन द्वादशाहेन भूमिपः । वैश्यः पञ्चदशाहेन शुध्यति " इति मनुवचनविरोधो नाशङ्कनीयः॥ तस्य निर्गुणक्षत्रियविषयत्वात्। गुणवत्क्षत्रियस्य तु दशाहतः शुद्धिमाह पराशरः-" क्षत्रियश्च दशाहेन स्वधर्मनिरतः शुचिः " इति ॥ सूच्यते चास्यापि गुणवत्त्वं विदुषेत्यनेन ॥

७४ ॥ स इति । तयेन्दुमत्या विना । क्षणदाया रात्रेरपायेऽपगमे यः शशाङ्कश्चन्द्रः स इव दृश्यत इति क्षणदापायशशाङ्कदर्शनः। प्रातःकालीनचन्द्र इव दृश्यमान इत्यर्थः ॥ दृश्यत इति कर्मार्थे ल्युट् ॥ सोऽजः पौरवधूमुखाश्रुषु स्वशुचः स्वशोकस्य परिवाहं जलोच्छ्रासमिवावलोकयन् ॥ " जलोच्छ्रासाः परीवाहाः " इत्यमरः ॥ स्वदुःखपूरातिशयमिव पश्यन्पुरीं विवेश ॥ वधूग्रहणात्तस्यामिन्दुमत्यां सख्याभिमानादजसमानदुःखसूचनात्परिवाहो निर्वहति ॥

७५ ॥ अथेति । अथ सवनाय यागाय दीक्षितो गुरुर्वशिष्ठ आश्रमस्थितस्तमजमभिषङ्गजडं दुःखमोहितं प्रणिधानाद्ध्यानाद्विजज्ञिवाञ्ज्ञातवान् ॥ " क्वसुश्च-" इति क्वसुप्रत्ययः ॥ इति वक्ष्यमाणप्रकारेण शिष्येणान्वबोधयत्किल ॥ बुधेर्ण्यन्ताण्णिचि लङ् ॥

74. The king looking like the moon at the close of night, entered his capital without her, beholding, as it were, the outburst of his sorrow in the tears streaming on the faces of the city women.

75. It is said that his preceptor who had then under gone an initiative ceremony of a sacrifice and who, therefore, remained in his hermitage, having known him, by reason of his profound religious meditation, to be stupefied by the overwhelming misfortune, exhorted him through his disciple in the following way :—

Din., and Val , विनेनिरे, one of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also reads this, D_2. with Su., समर्पिताः for समापिताः. C_3. H. I. K. P. with Hem., Su., Dharm., Vija., and the text only of Val., विदुषा विधयः समापिताः पुर एवोपवने महर्द्धयः for the last Pâda.

74. E. पुरं for पुरीं. K. पौरवधूमिवाश्रुषु for पौरवधूमुखाश्रुषु.

75. D. H. I. with Hem., Chá., Din., and Su., तमवेक्ष्य मखाय for अथ तं सवनाय. B. C. I. K. R. with Hem., and Val., आश्रमाश्रितः, D. H. P. with Chá., Din., and Su., आश्रमाश्रयः for आश्रमस्थितः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Cháritravardhana

असमाप्तविधिर्यतो मुनिस्तव विद्वानपि तापकारणम् ।
न भवन्तमुपस्थितः स्वयं प्रकृतौ स्थापयितुं ततश्च्युतम् ॥ ७६ ॥
मयि तस्य सुवृत्त वर्तते लघुसंदेशपदा सरस्वती ।
शृणु विश्रुतसत्त्वसार तां हृदि चैनामुपधातुमर्हसि ॥ ७७ ॥

७६ ॥ वसिष्ठशिष्य आह ॥ असमाप्तेति । यतो हेतोर्मुनिरसमाप्तविधिरसमाप्तक्रतुस्ततो हेतोस्तव तापकारणं दुःखहेतुं कलत्रनाशरूपं विद्वाञ्जानन्नपि ॥ "विदेः शतुर्वसुः" इति वस्वादेशः ॥ "न लोक—" इत्यादिना षष्ठीप्रतिषेधः ॥ ततश्च्युतं भवन्तं प्रकृतौ स्वभावे स्थापयितुम् । समाश्वासयितुमित्यर्थः ॥ स्वयं नोपस्थितो नागतः ॥

७७ ॥ मयीति । हे सुवृत्त सदाचार । संदिश्यत इति संदेशः संदेष्टव्यार्थः । तस्य पदानि वाचकानि लघूनि संक्षिप्तानि संदेशपदानि यस्यां सा लघुसंदेशपदा तस्य मुनेः सरस्वती वाङ्मयि वर्तते । हे विश्रुतसत्त्वसार प्रख्यातधैर्यातिशय तां सरस्वतीं शृणु । त्वमेनां वाचं हृद्युपधातुं धर्तुं चार्हसि ॥

---

76. Knowing as he does the cause of your distress, the sage has not come personally to restore you to your natural state from which you have fallen, because he has not yet finished the rites of the sacrificial ceremony.

77. O virtuous king, his words brief in their message are confided to me. Hear them, O thou of a well-known powerful energy, worthy as thou art to treasure them in thy heart.

---

and others. D. H. P. with Chá., Din., and Su., अभिपत्निगताश्रं विशां C. and the text only of Hemádri, अभितापजडं विजज्ञिवान् for अभिषङ्गजडं विजज्ञिवान्.

76. A. C. with Hem., तपोनिधिः, H. मुनिर्यतः for यतो मुनिः. A. C. and the text only of Val., शोककारणं for तापकारणम्. A. यथश्च्युतं, D₂. स्वतश्च्युतं, B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Hem., Chá., Val., Su., and Dharm., कृतस्थितिः for ततश्च्युतं. "कृता यस्य यादृशा प्रकृतिस्तस्यामेव स्थितिः स्थापनं येन सः । यद्वा । कृतस्थितिः विहितमर्यादः" । Hemádri. "कृता स्थितिर्यावन्मखं करोमि तावद्बहिर्न निःसरामीति मर्यादा येन सः ।" Cháritravardhana. "कृतस्थितिः विहितमर्यादः" । Vallabha. "कृता स्थितिर्मर्यादा येन स कृतस्थितिः । Dinakara. "कृता स्थितिर्यावद्यज्ञः परिपूर्णो भवति तावद्बहिर्न गच्छामि इति मर्यादा येन सः" । Sumativijaya.

77. D. लघुसंदेशहरा, B. K. with Hem., Val., and Su., स्फुटसंदेशपदा for लघुसंदेशपदा. Ten Mss. with Chá., Din., Vija., and the texts only of Hem., and Val., read with Mallinátha. D. अवधातुं for उपधातुं.

पुरुषस्य पदेष्वजन्मनः समतीतं च भवच्च भावि च ।
स हि निष्प्रतिघेन चक्षुषा त्रितयं ज्ञानमयेन पश्यति ॥ ७८ ॥
चरतः किल दुश्चरं तपस्तृणबिन्दोः परिशङ्कितः पुरा ।
प्रजिघाय समाधिभेदिनीं हरिरस्मै हरिणीं सुराङ्गनाम् ॥ ७९ ॥
स तपःप्रतिबन्धमन्युना प्रमुखाविष्कृतचारुविभ्रमाम् ।
अशपद्भव मानुषीति तां शमवेलाप्रलयोर्मिणा मुनिः ॥ ८० ॥

७८ ॥ वक्ष्यमाणार्थदृढार्थं मुनेः सर्वज्ञत्वं तावदाह ॥ पुरुषस्येति । अजन्मनः पुरुषस्य पुराणपुरुषस्य भगवतस्त्रिविक्रमस्य पदेषु विक्रमेषु । त्रिभुवनेष्वपीत्यर्थः । समतीतं भूतं च भवद्वर्तमानं च भावि भविष्यच्चेति त्रितयं निष्प्रतिघेनाप्रतिबन्धेन ज्ञानमयेन चक्षुषा ज्ञानदृष्ट्या स मुनिः पश्यति हि । अतस्तदुक्तिषु न प्रमादयितव्यमित्यर्थः ॥

७९ ॥ चरत इति । पुरा किल दुश्चरं तीव्रं तपश्चरतस्तृणबिन्दोस्तृणबिन्दुनामकात्कस्माच्चिदृषेः परिशङ्कितो भीतः ॥ कर्तरि क्तः ॥ " भीत्रार्थानां भयहेतुः " इत्यपादानात्पञ्चमी ॥ हरिरिन्द्रः समाधिभेदिनीं तपोविघातिनीं हरिणीं नाम सुराङ्गनामस्मै तृणबिन्दवे प्रजिघाय प्रेरितवान् ॥

८० ॥ स इति । स मुनिः । शमः शान्तिरेव वेला मर्यादा । तस्याः प्रलयोर्मिणा प्रलयकालतरंगेण । शमविघातकेनेत्यर्थः ॥ " अब्ध्यम्बुविकृतौ वेला कालमर्यादयोरपि " इत्यमरयादवौ ॥ तपसः प्रतिबन्धेन विघ्नेन यो मन्युः क्रोधस्तेन हेतुना । प्रमुखेऽग्र आविष्कृतचारुविभ्रमां तां हरिणीं भूलोके मानुषी मनुष्यस्त्री भवेत्यशपच्छशाप ॥

---

78. Indeed with his unimpeded eye of knowledge, the sage sees the triad,—the past, the present and the future—in the three strides of the god त्रिविक्रम who knows no birth.

79. In olden times, it is said that Indra being afraid of the sage T*rin*abindu who was practising the hard religious austerities sent against him a celestial damsel by name Hari*n*i capable of interrupting his profound meditation.

80. That sage, through rage which arose from the obstacle to his asceticism, and which was a destructive wave breaking down the barriers of the coast of peacefulness, cursed her, who mani-

---

78. E. K. सह for स हि. I. निःप्रतिखेन, P. निःप्रतिघेन, C. with Chà., अप्रतिघेन. K. L. R. with Hem., Val., and Su., निःप्रतिघेन for निष्प्रतिघेन. Vallabha's text reads निःप्रतिमेन. D. L. अवितथं for त्रितयं. H. reads त्रिषु धामसु शार्ङ्गधन्वनः for पुरुषस्य पदेष्वजन्मनः.

79. E. H. स्तृणाबिन्दोः for स्तृणबिन्दोः.

80. A. तपसा प्रतिघात°, D. with Hem., Su., and the text only of Val., स तपःप्रतिघात for स तपःप्रतिबन्ध°. Ten Mss. with Chà., Din., Val., Dharm., and Vija., read with Mallinàtha. One of the

भगवन्परवानयं जनः प्रतिकूलाचरितं क्षमस्व मे ।
इति चोपनतां क्षितिस्पृशं कृतवाना सुरपुष्पदर्शनात् ॥ ८१ ॥
क्रथकैशिकवंशसंभवा तव भूत्वा महिषी चिराय सा ।
उपलब्धवती दिवश्च्युतं विवशा शापनिवृत्तिकारणम् ॥ ८२ ॥

८१ ॥ भगवन्निति । हे भगवन्महर्षे । अयं जनः । परोऽस्यास्तीति स्वामित्वेन परवान् । पराधीनः । अयमित्यस्यात्मनिर्देशादहं पराधीनेत्यर्थः । मे मम प्रतिकूलाचरितमपराधं क्षमस्व । इत्यनेन प्रकारेणोपनतां च हरिणीमा सुरपुष्पदर्शनात्सुरपुष्पदर्शनपर्यन्तम् । क्षितिं स्पृशतीति क्षितिस्पृक्तां क्षितिस्पृशं मानुषीं कृतवानकरोत् ॥ दिव्यपुष्पदर्शनं शापावधिरित्यनुगृहीतवानित्यर्थः ॥

८२ ॥ क्रथेति । क्रथकैशिकानां राज्ञां वंशे संभवो यस्याः सा हरिणी तव महिषी भूत्वा चिराय दिवः स्वर्गाच्च्युतं पतितं शापनिवृत्तिकारणं सुरपुष्परूपमुपलब्धवती विवशा । अभूदिति शेषः । मृतेत्यर्थः ॥

---

fested before him her bewitching graces of love, in the following way :—"Be thou a mortal female on earth."

81. "Venerable sir ! this person, you know, is solely dependent on Indra ; forgive me, therefore, my offensive action" when thus humbled, he made her an earthly being until she could see the celestial flowers.

82. Thus born in the family of the Krathakais'ikas, she having become your crowned queen obtained at last the cause of the cessation of her curse fallen after a long time from the sky and subjected herself to death.

---

three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with him. D. with Su., मदना॰ for मनुष्या॰. B. C. E. K. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Dharm., ॰वि:कृत॰ for ॰विष्कृत॰. A. D. प्रलयोभिवान for प्रलयोभिणा. A. D. भुवि for मुनि:. Ten Mss. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., read with Mallinátha.

81. D. E. J. with Chá., and Din., ॰चरणं for ॰चरितं. D. सहस्व for क्षमस्व. D. H. with Chá., and Din., ॰माल्यदर्शनात् for ॰पुष्पदर्शनात्.

82. R. अपलब्धवती for उपलब्धवती. D. उपलब्धवती तनुं जहौ सुखतः शापनिवृत्तिकारणं for the last two Pádas. H. reads मुनिशापनिवृत्तिकारणं श्रुतमात्राशु यतस्तनुं जहौ for उपलब्धवती दिवश्च्युतं विवशा शापनिवृत्तिकारणं.

तदलं तदपायचिन्तया विपदुत्पत्तिमतामुपस्थिता ।
वसुधेयमवेक्ष्यतां त्वया वसुमत्या हि नृपाः कलत्रिणः ॥ ८३ ॥
उदये मदवाच्यमुज्झता श्रुतमाविष्कृतमात्मवत्तया ।
मनसः समुपस्थिते ज्वरे पुनरक्लीबतया प्रकाश्यताम् ॥ ८४ ॥

८३ ॥ तदिति । तत्तस्मात्तस्या अपायचिन्तयालम् । तस्या मरणं न चिन्त्यमित्यर्थः ॥ निषेधक्रियां प्रति करणत्वाच्चिन्तयेति तृतीया ॥ ननु कुतो न चिन्त्यम् । अत आह—उत्पत्तिमतां जन्मवतां विपद्विपत्तिरुपस्थिता सिद्धा । जातस्य हि ध्रुवो मृत्युरेवेत्यर्थः ॥ तथापि कलत्ररहितस्य किं जीवितेन । तत्राह-त्वयेयं वसुधा भूमिरवेक्ष्यतां पाल्यताम् । हि यस्मान्नृपा वसुमत्या पृथिव्या कलत्रिणः कलत्रवन्तः । अतो न शोचितव्यमित्यर्थः ॥

८४ ॥ उदय इति । उदयेऽभ्युदये सति मदेन यद्वाच्यं निन्दादुःखं तदुज्झता परिहरता सत्यपि मदहेतावमाद्यता त्वयात्मवत्तयाविकृतचित्ततया लिङ्गेन श्रुतं शास्त्रजनितं ज्ञानमाविष्कृतं प्रकाशितम् ॥ तच्छ्रुतं मनसो ज्वरे संतापे समुपस्थिते प्राप्तेऽक्लीबतया धैर्येण लिङ्गेन पुनः प्रकाश्यताम् ॥ विदुषा सर्वास्ववस्थास्वपि धीरेण भवितव्यमित्यर्थः ॥

---

83. Cease, therefore, any further, to think of her death, because the beings that have been born have death near at hand. Let this Earth be now protected by you, for kings have a wife in the Earth.

84. Good Fortune having fallen to your lot, you avoided the censure of becoming and being called self-conceited and thus by your self-restraint exhibited the effects of your sacred knowledge; now that (instead of good fortune) distress has befallen your soul, boldly exhibit the same again.

---

83. E. I. K. L. P. with Châ., Din., and the text only of Hemâdri, अवस्थिता, C. with Su., and the text only of Vallabha, व्यवस्थिता. H. उपास्थिता for उपस्थिता.

84. B. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., यदवाच्यं, C. वद वाक्यं, P. मदकार्यं for मदवाच्यं. B. C. K. with Châ., Din., and Su., आविःकृतं for आविष्कृतं. B. C. E. H. I. K. L. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., आत्मनस्त्वया. D. आत्मवत्त्वया for आत्मवत्तया. Mallinâtha also notices the reading and says :—' आत्मवत् अध्यात्मप्रचुरं. " B. C. E. H. I. K. L. P. with Hem., Châ., Din , Val., Su., and Dharm., तदुपस्थिते for समुपस्थिते. R. पुनरस्थायितया for पुनरक्लीबतया.

रुदता कुत एव सा पुनर्भवता नानुमृतापि लभ्यते ।
परलोकजुषां स्वकर्मभिर्गतयो भिन्नपथा हि देहिनाम् ॥ ८५ ॥
अपशोकमनाः कुटुम्बिनीमनुगृह्णीष्व निवापदत्तिभिः ।
स्वजनाश्रु किलातिसंततं दहति प्रेतमिति प्रचक्षते ॥ ८६ ॥

८५ ॥ अतोऽपि न रोदितव्यमित्याह—रुदतेति । रुदता भवता सा कुत एव लभ्यते । न लभ्यत एव ॥ अनुम्रियत इत्यनुमृत् ॥ क्विप् ॥ तेनानुमृतानुमृतवतापि भवता पुनर्न लभ्यत इति ॥ नन्वनुमृतेन परत्र लभ्यते । तत्रापि नेत्याह—परलोकजुषां लोकान्तरभाजामपि देहिनाम् । गम्यन्त इति गतयो यो-न्यन्तस्थानानि स्वकर्मभिः पूर्वाचरितपुण्यपापैर्भिन्नपथाः पृथक्कृतमार्गा हि ॥ यत्त्रापि स्वस्वधर्मानुरूपफलभोगाय भिन्नदेशगमनान्न मृतेनापि लभ्यत इत्यर्थः ॥

८६ ॥ अपेति । किं त्वपशोकमना निर्दुःखचित्तः सन्कुटुम्बिनीं पत्नीं निवापद-त्तिभिः पिण्डोदकादिदानैरनुगृह्णीष्व । तर्पयेत्यर्थः । अन्यथा दोषमाह—अतिसंतत-मविच्छिन्नं स्वजनानां बन्धूनामश्रु प्रेतं मृतं दहतीति प्रचक्षते मन्वादयः किल ॥ **अत्र याज्ञवल्क्यः—" श्लेष्माश्रु बन्धुभिर्मुक्तं प्रेतो भुङ्क्ते यतोऽवशः । अतो न रोदि-तव्यं हि क्रिया कार्या स्वशक्तितः " इति ॥**

---

85. How can you, thus weeping for her, obtain her now? You will not be able to reclaim her again, even if you die after her. For the ways of those who enjoy the other world lie along different roads according to their respective actions.

86. Relieving your mind of sorrow do you favour your wife with offerings of water. For it is said with certainty that the uninterrupted flow of tears shed by relatives burn (*i. e.* torment) the departed soul.

---

85. A. with Su., नानुमृतेन, B. नानुमृतः, D. and the text only of Val., नानुमृतं च, R. नानुमृतोऽपि for नानुमृतापि. Nine Mss. with Hem., Val., Chá., Din., Dharm., and Vija. read with Mallinatha. B. अवाप्यते for लभ्यते. A. C. with Su , परलोकयुषां for परलोकजुषां. D2. I. with Su., हि देहिना, H. P. शरीरिणां for हि देहिनां. I. calls this stanza to be spurious. Between 85-86. D2. I. with Chá., Din., Val., and Su., read the following:— " रुदितेन न सा निवर्तते नृप तत्तावदनर्थकं तव । न भवाननुसंस्थितोऽपि तां लभते कर्म-वशा हि देहिनः " ॥ [D2. च तत् for तव. I. अपार्थकं for अनर्थकं.] " पाठान्त-रं ॥ हे नृप सन्दुमर्ता रुदितेन न निवर्तते । तावत्प्रथमं तव तद्रुदितं अनर्थकं निरर्थकं ॥ भवान् अनुसंस्थितोऽपि तां न लभते । हि निश्चितं । देहिनः प्राणिनः कर्मवशा कर्मानुगामि-नः ॥ उक्तं च ॥ " प्राप्यते मरणं यत्र बन्धनं धनमुत्तं वधूः । स तत्र नीयते तेन कर्मणा गलहस्तिभः " ॥ व० ॥ Chàritravardhana also ealls this to be spurious. I. reads it between 84–85.

86. E. किलातिविचितं, C. and the text only of Hemadri, किलानि-पातितं for किलातिसंततं. C. and the text only of Hemadri, प्रवक्ष्यते for प्रचक्षते.

मरणं प्रकृतिः शरीरिणां विकृतिर्जीवितमुच्यते बुधैः ।
क्षणमप्यवतिष्ठते श्वसन्यदि जन्तुर्ननु लाभवानसौ ॥ ८७ ॥
अवगच्छति मूढचेतनः प्रियनाशं हृदि शल्यमर्पितम् ।
स्थिरधीस्तु तदेव मन्यते कुशलद्वारतया समुद्धृतम् ॥ ८८ ॥
स्वशरीरशरीरिणावपि श्रुतसंयोगविपर्ययौ यदा ।
विरहः किमिवानुतापयेद्वद बाह्यैर्विषयैर्विपश्चितम् ॥ ८९ ॥

८७ ॥ मरणमिति। शरीरिणां मरणं प्रकृतिः स्वभावः । ध्रुवमित्यर्थः । जीवितं विकृतिर्यादृच्छिकं बुधैरुच्यते ॥ एवं स्थिते जन्तुः प्राणी क्षणमपि ॥ "अत्यंतसंयोगे च " इति द्वितीया ॥ श्वसञ्जीवन्नवतिष्ठते यद्यसौ क्षणजीवी लाभवान्ननु । जीवने यथालाभं संतोष्टव्यम् । अलभ्यलाभात् । मरणे तु न शोचितव्यम् । अस्य स्वाभाव्यादिति भावः ॥

८८ ॥ अवेति । मूढचेतनो भ्रान्तबुद्धिः प्रियनाशमिष्टनाशं हृद्यर्पितं निखातं शल्यं शङ्कुमवगच्छति मन्यते ॥ स्थिरधीर्विद्वांस्तु तदेव शल्यं समुद्धृतमुत्खातं मन्यते । प्रियनाशे सतीति शेषः ॥ कुतः । कुशलद्वारतया । प्रियनाशस्य मोक्षोपायतयेत्यर्थः ॥ विषयलाभविनाशयोर्यथासंख्यं हिताहितसमानत्वाभिमानः पामराणाम् । विपरीतं तु विपश्चितामिति भावः ॥

८९ ॥ स्वेति । स्वस्य शरीरशरीरिणौ देहात्मानावपि यदा यतः श्रुतौ श्रुत्यवगतौ संयोगविपर्ययौ संयोगवियोगौ ययोस्तौ तथोक्तौ । तदा बाह्यैर्विषयैः पुत्रकलत्रादिभिर्विरहो विपश्चितं विद्वांसं किमिवानुतापयेत्त्वं वद । न किंचिदित्यर्थः ॥ अथ वा स्वशब्दस्य शरीरेणैव सम्बन्धः ॥

---

87. Wise men say that death is but the nature of the sentient beings, and life is a mere deviation from that natural state; if a creature remains breathing even for a moment, he is assuredly a gainer.

88. The stupid-minded consider the loss of a dear person as a dart fixed in the heart, but the firm-minded regard the same as a dart extracted on account of its serving as a door leading to blessedness.

89. Since the connection and separation of our own body and soul are so well known, tell me, O king, why separation from external objects should at all distress a wise man?

---

87. H. with Chá., and Din., जीवनं for जीवितं.

88. D. I. अथ गच्छति for अवगच्छति. H. इतस्तु, C. with Su., स्थिरधीश्च for स्थिरधीस्तु.

89. D. E. I. K. L. R. and the text only of Hemádri, स्मृत°, D₂. with Dharm., स्मृति°, C. H. P. with Hem., and the text only of Vallabha, क्षण°, A₂. with Chá, and Din., श्रित°, B. with Su.,

न पृथग्जनवच्छुचो वशं वशिनामुत्तम गन्तुमर्हसि ।
द्रुमसानुमतां किमन्तरं यदि वायौ द्वितयेऽपि ते चलाः ॥ ९० ॥
स तथेति विनेतुरुदारमतेः प्रतिगृह्य वचो विससर्ज मुनिम् ।
तदलब्धपदं हृदि शोकघने प्रतियातमिवान्तिकमस्य गुरोः ॥ ९१ ॥
तेनाष्टौ परिगमिताः समाः कथंचिद्बालत्वादवितथसूनृतेन सूनोः ।
सादृश्यप्रतिकृतिदर्शनैः प्रियायाः स्वप्नेषु क्षणिकसमागमोत्सवैश्च ॥ ९२ ॥

९० ॥ नेति । हे वशिनामुत्तम जितेन्द्रियवर्य । पृथग्जनवत्पामरजनवच्छुचः शोकस्य वशं गन्तुं नार्हसि ॥ तथा हि । द्रुमसानुमतां तरुशिखरिणां किमन्तरं को विशेषः । वायौ सति द्वितयेऽपि द्विप्रकारा अपि ॥ "प्रथमचरम-" इत्यादिना जसि विभाषया सर्वनामसंज्ञा ॥ ते द्रुमसानुमन्तश्चलाश्चञ्चला यदि ॥ द्रुमवत्सानुमतामपि चलने तेषामचलसंज्ञा न स्यादित्यर्थः ॥

९१ ॥ स इति । सोऽज उदारमतेर्विनेतुर्गुरोर्वसिष्ठस्य वचस्तच्छिष्यमुखेरितं तथेति प्रतिगृह्याङ्गीकृत्य मुनिं वसिष्ठशिष्यं विससर्ज ॥ किं तु तद्वचः शोकघने दुःखसान्द्रेऽस्याजस्य हृद्यलब्धपदमप्राप्तावकाशं सद्गुरोर्वसिष्ठस्यान्तिकं प्रतियातमिव प्रतिनिवृत्तं किमु ॥ तोटकवृत्तमेतत्—"इह तोटकमम्बुधिसैः प्रथितम्" इत्युक्तम् ॥

९२ ॥ तेनेति । अवितथं यथार्थं सूनृतं प्रियवचनं यस्य तेनाजेन । सूनोः पुत्रस्य बालत्वात् । राज्याक्षमत्वादित्यर्थः । प्रियाया इन्दुमत्याः सादृश्यं वस्त्वन्तरगतमाकारसाम्यम् । प्रतिकृतिः चित्रम् । तयोर्दर्शनैः स्वप्नेषु क्षणिकाः क्षणभङ्गुरा ये समागमोत्सवास्तैश्च । कथंचित्कृच्छ्रेण । अष्टौ समा वत्सराः परिगमिता अतिवाहिताः ॥ उक्तं च गुणपताकायाम्–"वियोगे योगे वा प्रियजनसदृक्षानुभवनं

---

90. O thou, the best of the self-controlled, it is not proper for thee to become a prey to sorrow like an ordinary man ; tell me, what difference is there between a tree and a mountain even if both of them begin to quake in the wind ?

91. "So be it," with these words he accepted the consolatory words of his highly intelligent preceptor (imparted to him through his disciple Vámadeva), and dismissed the sage : but that consolatory advice not having gained scope in his mind excessively given up to grief, returned, as it were, to his preceptor.

92. Owing to the childhood of his son, that king of agreeable and true speech, passed eight years with great difficulty, sometimes of course looking at the exact picture of his beloved and at others enjoying the pleasures of her momentary company in dreams.

कृत°, C_2. with Val., धृत° for श्रुत°. C. D. with Val., स्मृतौ, R. यदि for यदा. C. with Hem., and Val., कं, B. with Chá., and Din., कः for किं. Twelve Mss. with Su., Dharm., Vija. and the text only of Val., read with Mallinátha.

90. A. C. D. and the text only of Val., चापलाः for ते चलाः

तस्य प्रसह्य हृदयं किल शोकशङ्कुः प्लक्षप्ररोह इव सौधतलं बिभेद ।
प्राणान्तहेतुमपि तं भिषजामसाध्यं लाभं प्रियानुगमनत्वरया स मेने ॥ ९३ ॥
सम्यग्विनीतमथ वर्महरं कुमारमादिश्य रक्षणविधौ विधिवत्प्रजानाम् ।
रोगोपसृष्टतनुदुर्वसतिं मुमुक्षुः प्रायोपवेशनमतिर्नृपतिर्बभूव ॥ ९४ ॥

तदाश्रितं कर्म स्वपनसमये दर्शनमपि । तदङ्गस्पृष्टानामुपगतवतां स्पर्शनमपि प्रतीकारः कामव्यथितमनसां कोऽपि कथितः " इति ॥ प्रकृते सादृश्यादि त्रितयाभिधानं तदङ्गस्पृष्टपदार्थस्पृष्टेरप्युपलक्षणम् ॥

९३ ॥ तस्येति । शोक एव शङ्कुः कीलः ॥ " शङ्कुः कीले शिवेऽस्त्रे च " इति विश्वः ॥ तस्याजस्य हृदयम् । प्लक्षप्ररोहः सौधतलमिव । प्रसह्य बलात्किल बिभेद ॥ सोऽजः प्राणान्तहेतुं मरणकारणमपि भिषजामसाध्यमप्रतिसमाधेयं तं शोकशङ्कुं रोगपर्यवसितं प्रियाया अनुगमने त्वरयोत्कण्ठया लाभं मेने ॥ तद्विरहस्यातिदुःसहत्वात्तन्निवृत्तिकारणं मरणमेव वरमित्यमन्यतेत्यर्थः ॥

९४ ॥ सम्यगिति । अथ नृपतिरजः सम्यग्विनीतं निसर्गसंस्काराभ्यां विनयवन्तं वर्म हरतीति वर्महरस्तम् । कवचधारिणमित्यर्थः ॥ " वयसि च " इत्यच्प्रत्ययः ॥ कुमारं दशरथं प्रजानां रक्षणविधौ रक्षणे विधिवद्विध्यर्हम् । यथाशास्त्रमित्यर्थः ॥ " तदर्हम् " इति वतिप्रत्ययः ॥ आदिश्य नियोज्य रोगेणोपसृष्टाया व्याप्तायास्तनोः शरीरस्य दुर्वसतिं दुःखावस्थितिं मुमुक्षुर्जिहासुः सन् । प्रायोपवेशनेऽनशनावस्थाने मतिर्यस्य स बभूव ॥ " प्रायश्चानशने मृत्यौ तुल्यबाहुल्ययोरपि " इति विश्वः ॥ अत्र पुराणवचनम्—" समासक्तो भवेद्यस्तु पातकैर्महदादिभिः । दुश्चिकित्स्यैर्महारोगैः पीडितो वा भवेत्तु यः । स्वयं देहविनाशस्य काले प्राप्ते महामतिः । आब्रह्माणं वा स्वर्गादिमहाफलजिगीषया । प्रविशेज्ज्वलनं दीप्तं भृगुतः पतनं तथा । एतेषामधिकारोऽस्ति नान्येषां सर्वजन्तुषु । नराणामथ नारीणां सर्ववर्णेषु सर्वदा " इति ॥

---

93. They say that the dart of grief, forcibly broke his heart, as the offshoot of a fig-tree breaks down the terrace of a palace. In his haste to follow his beloved, he looked upon even that cause which was sure to terminate his life and which was incurable by physicians as a gain.

94. Then having charged the prince who was well educated and who was able to wear an armour, with the duty of protecting his subjects, according to the rules, the king desirous of giving up his residence in a body affected by a disease, became intent on starving himself to death.

---

93. C. D. K. and the text only of Hemādri, प्रविश्य for प्रसह्य. A. D. with Dharm., and Vija., °गमन, B. H. R. and the text only of Su., °गमनं, L. °गमनः, C. E. I. K. P. with Hem., Chā., Din., Val., and Su., °गमन.°

94. D. J. L. वर्मधरं for वर्महरं. A. with Chā., and Din., शोकोपसृष्ट°, B. C. and the text only of Hemādri, भोगोपसृष्ट,° P. शोकोपविष्ट° for रोगोपसृष्ट°.

तीर्थे तोयव्यतिकरभवे जह्नुकन्यासरय्वो-
र्देहत्यागादमरगणनालेख्यमासाद्य सद्यः ।
पूर्वाकाराधिकचतुरया संगतः कान्तयासौ
लीलागारेष्वरमत पुनर्नन्दनाभ्यन्तरेषु ॥ ९५ ॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कविश्रीकालिदासकृतावजविलापो नामाष्टमः सर्गः ॥

९५ ॥ तीर्थ इति । असावजो जह्नुकन्यासरय्वोस्तोयानां जलानां व्यतिकरेण संभेदेन भवे तीर्थे गङ्गासरयूसंगमे देहत्यागात्सद्य एवामरगणनायां लेख्यं लेखनम् ॥ "तयोरेव कृत्यक्तखलर्थाः" इति भावार्थे ण्यत्प्रत्ययः ॥ आसाद्य प्राप्य । पूर्वस्मादाकारादधिकं चतुरया सुभगया कान्तया रमण्या संगतः सन् । नन्दनस्येन्द्रोद्यानस्याभ्यन्तरेष्वन्तर्वर्तिषु लीलागारेषु क्रीडाभवनेषु पुनररमत ॥ " यथा कथंचित्तीर्थेऽस्मिन्देहत्यागं करोति यः । तस्यात्मघातदोषो न प्राप्नुयादीप्सितान्यपि " इति स्कान्दे ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायामष्टमः सर्गः ।

---

95. At last giving up his body at the sacred place formed by the confluence of the waters of the daughter of Jahnu and the Sarayû and having immediately secured an enlisting in the number of the immortals, the king, being united to his favourite queen now of a loveliness surpassing her former figure, sported again in the pleasure-houses within the gardens of the Nandana forest.

---

95. D. तोये तीर्थे° for तीर्थे तोय . A. D. E. J. K. P. with Val., Din., Su., and Vija., चतुरया, B. C. H. I. L. P. with Hem., Châ., and Dharm., °तररुचा for °चतुरया. Eight Mss. with Val., Din., Su., and Vija., read with Mallinâtha. Also our scholiast who says:—"पूर्वस्मादाकारादधिकतरा रुच्यस्यास्तया " &c.

। नवमः सर्गः ।

पितुरनन्तरमुत्तरकोसलान्समधिगम्य समाधिजितेन्द्रियः ।
दशरथः प्रशशास महारथो यमवतामवतां च धुरि स्थितः ॥ १ ॥
अधिगतं विधिवद्यदपालयत्प्रकृतिमण्डलमात्मकुलोचितम् ।
अभवदस्य ततो गुणवत्तरं सनगरं नगरन्ध्रकरौजसः ॥ २ ॥

एकलोचनमेकार्धे मार्धलोचनमन्यतः ।
नीलार्धं नीलकण्ठार्धं महः किमपि मन्महे ॥

१ ॥ पितुरिति । समाधिना संयमेन जितेन्द्रियो यमवतां संयमिनामवतां रक्षतां राज्ञां च धुर्यग्रे स्थितो महारथो दशरथः ॥ "एको दश सहस्राणि योधयेद्यस्तु धन्विनाम् । शस्त्रशास्त्रप्रवीणश्च स महारथ उच्यते" ॥ पितुरनन्तरमुत्तरकोसलाञ्जनपदान्समधिगम्य प्रशशास ॥ अत्र मनुः--"क्षत्त्रियस्य परो धर्मः प्रजानां परिपालनम्" इति ॥ द्रुतविलम्बितमेतद्वृत्तम् । तल्लक्षणम्—"द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ" इति ॥

२ ॥ अधिगतमिति । अधिगतं प्राप्तमात्मकुलोचितं स्वकुलागतं सनगरं प्रकृतिमण्डलं नगरजनसहितं जानपदमण्डलम् । अत्र प्रकृतिशब्देन प्रजामात्रवाचिना नगरशब्दयोगाद्गोबलीवर्दन्यायेन जानपदमात्रमुच्यते । यद्यस्माद्विधिवद्यथाशास्त्रमपालयत् । ततो हेतोः । रन्ध्रं करोतीति रन्ध्रकरः । रन्ध्रहेतुरित्यर्थः ॥ "कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु" इति टप्रत्ययः ॥ नगस्य रन्ध्रकरो नगरन्ध्र

---

1. After the death of his father, Das'aratha, who had subdued his senses by abstract meditation, who was a great chariot-warrior, and who stood at the head both of devotees and kings, ruled over the Uttarakosalas after having first brought them under his sway.

2. As the king, whose prowess was equal to that of Kumára, the render of the Krauncha mountain, protected the circle of provinces inherited from his father together with the people of his capital according to the rule, it became more virtuous (than before).

---

1. D. C. कोशलां for कोसलान्. So also Chàritravardhana and Vallabha notice this, and the former says,—"°कोशलां" इति पाठेऽयोध्यामित्यर्थः, the latter who says,—" 'कोशलां " इति स्त्रीलिङ्गपाठे । कोशलास्य नगरी । पुंल्लिंगपाठस्तु शंसनः ।

2. B. C. E. I. J. K. P. R. with Hem., Din., Val., Su., and Dharm., गुणतत्परं for गुणवत्तरं. Five Mss. with Chá., and Vija., read with Mallinatha. Hemádri says:—" गुणतत्परं हितैकनिष्ठमभवत् । धार्मिके

उभयमेव वदन्ति मनीषिणः समयवर्षितया कृतकर्मणाम् ।
बलनिषूदनमर्थपतिं च तं श्रमनुदं मनुदण्डधरान्वयम् ॥ ३ ॥
जनपदे न गदः पदमादधावभिभवः कुत एव सपत्नजः ।
क्षितिरभूत्फलवत्यजनन्दने शमरतेऽमरतेजसि पार्थिवे ॥ ४ ॥

करः कुमारः ॥ "कुमारः श्रीवद्वारणः" इत्यमरः ॥ तदा जननस्तुल्यबलस्यास्य दशरथस्य गुणवत्तरमभवत् । तयोर्जानपदमण्डलं नितरामनुरक्तमभूदित्यर्थः ॥

३ ॥ उभयमिति । मनस ईषिणो मनीषिणो विद्वांसः ॥ पृषोदरादित्वात्साधुः ॥ बलनिषूदनमिन्द्रम् । दण्डस्य धरो राजा मनुरिति यो दण्डधरः स एवान्वयः कूटस्थो यस्य तमर्थपतिं दशरथं च । इत्युभयमेव । समयेऽवसरे जलं धनं च वर्षतीति समयवर्षी । तस्य भावः समयवर्षिता । तया हेतुना कृतकर्मणां स्वकार्यकारिणाम् । नुदतीति नुदम् ॥ "इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः" इति कप्रत्ययः ॥ अनन्यनुदं अननुदम् ॥ क्विबन्तत्वे नपुंसकलिङ्गेनोभयशब्देन सामानाधिकरण्यं न स्यात् ॥ इति वदन्ति ॥

४ ॥ जनपद इति । शमरते शान्तिपरेऽमरतेजस्यजनन्दने दशरथे पार्थिवे पृथिव्या ईश्वरे सति ॥ "तस्येश्वरः" इत्यञ्प्रत्ययः ॥ जनपदे देशे गदो व्याधिः ॥ "रोगव्याधिगदामयाः" इत्यमरः ॥ पदं नादधौ । न चक्रामेत्यर्थः ॥ सपत्नजः शत्रुजन्योऽभिभवः कुत एव ॥ असंभावित एवेत्यर्थः ॥ क्षितिः फलवत्यभूत् ॥

---

3. Wise men speak of two only as rewarding the labours of those who have done their duty, by timely showers of rains as well as timely gifts of wealth, *viz.*, the destroyer of the demon Bala and that Lord of wealth sprung from the line of the batoon-holder Manu.

4. When the son of Aja whose might was like that of the immortals and who was in the full enjoyment of mental peace, was the lord of the earth, it yielded abundance of crops, no plague stepped into his country, much less were the ravages caused by the enemies.

हि प्रभौ सर्व एवानुरागाद्धितकारिणो भवन्ति." Vallabha, गुणतत्परं हितकनिष्ठमभवत्। सावधाने हि प्रभौ सर्व एव मंत्रिणः सानुरागाः प्रियकारिणो भवन्ति." Hemádri also notices the reading of our text.

4. D. with Su., परिभवः for अभिभवः. B. C. E. I. K. with Hem., Val., Chá., Din., Su., Dharm., and Vija., कृषिः for क्षितिः.

दशदिगन्तजिता रघुणा यथा श्रियमपुष्यदजेन ततः परम् ।
तमधिगम्य तथैव पुनर्बभौ न न महीनमहीनपराक्रमम् ॥ ५ ॥
समतया वसुवृष्टिविसर्जनैर्नियमनादसतां च नराधिपः ॥
अनुययौ यमपुण्यजनेश्वरौ सवरुणावरुणाग्रसरं रुचा ॥ ६ ॥
न मृगयाभिरतिर्न दुरोदरं न च शशिप्रतिमाभरणं मधु ।
तमुदयाय न वा नवयौवना प्रियतमा यतमानमपाहरत् ॥ ७ ॥

५ ॥ दशेति । मही । दशदिगन्ताञ्जितवानिति दशदिगन्तजित् । तेन रघुणा यथा श्रियं कान्तिमपुष्यत् । ततः परं रघोरनन्तरमजेन च यथा श्रियमपुष्यत् । तथैवाहीनपराक्रमं न हीनः पराक्रमो यस्य तमन्यूनविक्रमं तं दशरथमिनं स्वामिनमधिगम्य पुनर्न बभाविति न ॥ बभावेवेत्यर्थः ॥ द्वौ नञौ प्रकृतमर्थं गमयतः ॥

६ ॥ समतयेति । नराधिपो दशरथः समतया समवर्तित्वेन । मध्यस्थत्वेनेत्यर्थः । वसुवृष्टेर्धनवृष्टेर्विसर्जनैः । असतां दुष्टानां नियमनान्निग्रहाच्च । सवरुणौ वरुणसहितौ यमपुण्यजनेश्वरौ यमकुबेरवरुणान्यथासंख्यमनुययावनुचकार । रुचा तेजसारुणाग्रसरमरुणसारथिं सूर्यमनुययौ ॥

७ ॥ तस्य व्यसनासक्तिर्नासीदित्याह—नेति ॥ उदयाय यतमानमभ्युदयार्थं व्याप्रियमाणं तं दशरथं मृगयाभिरतिराखेटव्यसनं नापाहरन्नाचकर्ष ॥ "आक्षोदनं मृगव्यं स्यादाखेटो मृगया स्त्रियाम्" इत्यमरः ॥ दुष्टमासमन्तादुदरमस्येति दुरोदरं द्यूतं च नापाहरत् ॥ "दुरोदरो द्यूतकारे पणे द्यूते दुरोदरम्" इत्यमरः ॥ शशिनः प्रतिमा प्रतिबिम्बमाभरणं यस्य तन्मधु नापाहरत् । न चेति पदच्छेदः ॥ वाशब्दः समुच्चये ॥ नवयौवना नूतनवयस्का प्रियतमा वा स्त्री नापाहरत् ॥ जातावेकवचनम् ॥ अत्र मनुः—"पानमक्षः स्त्रियश्चैव मृगया च यथाक्रमम् । एतत्कष्टतमं विद्याच्चतुष्कं कामजे गणे" इति ॥

---

5. The earth, as it had maintained its splendour by the help of Raghu, the conqueror of the ten quarters, and after him by Aja, so now having obtained him for a lord not inferior in prowess, did not but shine just the same again.

6. The lord of the people imitated Yama in equal dealing of justice: followed the Lord of the Pu*n*ya-janas (Kubera) in raining showers of wealth; Varu*n*a, in chastising the wicked; and the Sun before whom goes Aru*n*a, in his bright splendour.

7. Neither pleasure in hunting, nor gambling, nor yet wine ornamented with the reflection of the moon, nor his beloved in the bloom of her youth diverted him from striving for the prosperity of his kingdom.

---

7. I. with Val., and Su., नवयौवना प्रियतमाः for नवयौवना प्रियतमा. I. with Val., and Su., अपाहरन् for अपाहरत्.

न कृपणा प्रभवत्यपि वासवे न वितथा परिहासकथास्वपि ।
न च सपत्नजनेष्वपि तेन वागपरुषा परुषाक्षरमीरिता ॥ ८ ॥
उदयमस्तमयं च रघूद्वहादुभयमानशिरे वसुधाधिपाः ।
स हि निदेशमलङ्घयतामभूत्सुहृदयोहृदयः प्रतिगर्जताम् ॥ ९ ॥
अजयदेकरथेन स मेदिनीमुदधिनेमिमधिज्यशरासनः ।
जयमघोषयदस्य तु केवलं गजवती जवतीव्रहया चमूः ॥ १० ॥

८ ॥ नेति । तेन राज्ञा प्रभवति प्रभौ सति वासवेऽपि कृपणा दीना वाङ्नेरिता नोक्ता । परिहासकथास्वपि वितथानृता वाङ्नेरिता । किं चापरुषा रोषशून्येन तेन सपत्नजनेष्वपि शत्रुजनेष्वपि परुषाक्षरं निष्ठुराक्षरं यथा तथा वाङ्नेरिता । किमुतान्यत्रेति । सर्वत्रापिशब्दार्थः ॥ किं त्वदीना सत्या मधुरैव वागुक्तेति फलितार्थः ॥

९ ॥ उदयमिति । वसुधाधिपा राजानः । उद्वहतीत्युद्वहो नायकः ॥ पचाद्यच् ॥ रघूणामुद्वहो रघुनायकः । तस्माद्रघुनायकादुदयं वृद्धिम् । अस्तमयं नाशं च । इत्युभयमानशिरे लेभिरे ॥ कुतः । हि यस्मात्स दशरथो निदेशमाज्ञामलङ्घयताम् । शोभनं हृदयमस्येति सुहृन्मित्रमभूत् ॥ सुहृद्दुर्हृदौ मित्रामित्रयोरिति निपातः ॥ प्रतिगर्जतां प्रतिस्पर्धिनाम् । अय इव हृदयं यस्येत्ययोहृदयः कठिनचित्तोऽभूत् ॥ स्वाज्ञाकारिणो रक्षति । अन्यान्मारयतीत्यर्थः ॥

१० ॥ अजयदिति । अधिज्यशरासनः स दशरथ उदधिनेमिं समुद्रवेष्टनां मेदिनी-

---

8. He never uttered a pitiable (*i. e.* flattering) word before वासव though he (*i. e.* Vāsava) had power over him, nor a falsehood even in tales of mirth, nor yet any abusive language even to his enemies,—because his nature was far from being angry.

9. The vassal kings, experienced both rise and set at the hands of (*lit.* from) the head of the family of Raghu, for he had a kind heart to those who did not violate his commands but to his defiants he had a heart made of steel.

10. He, who had strung his bow, conquered the Earth en-

---

8. B. C. E. H. I. K. P. R. with Val., Su., Dharm., and the text only of Hemadri, अपि सपत्नजनेन च for न च सपत्नजनेष्वपि.

9. After the 8th verse of our text I. R. read the 11th and then 10th and then the spurious stanza, *viz.* " जघननिर्विषया &c.," I. omits the 9th verse of our text. After the 9th verse of our text, Chāritravardhana reads the 11th, 12th, and then the 10th verse: Vallabha, after the 9th verse of our text, reads the 11th, 10th, and then the spurious verse, " जघन &c." Hemādri reads the spurious verse between 9-10, and after which he reads the 11th, and then the 10th verse, and this verse he pronounces to be क्षेपक.

10. B. C. E. H. I. K. P. R. with Hem., Val., Chā., Din., Su.,

अवनिमेकरथेन वरूथिना जितवतः किल तस्य धनुर्भृतः ।
विजयदुन्दुभितां ययुरर्णवा घनरवा नरवाहनसंपदः ॥ ११ ॥
शमितपक्षबलः शतकोटिना शिखरिणां कुलिशेन पुरन्दरः ।
स शरवृष्टिमुचा धनुषा द्विषां स्वनवता नवतामरसाननः ॥ १२ ॥

मेकरथेनाजयत । स्वयमेवैकरथेनाजैषीदित्यर्थः ॥ गजवती गजयुक्ता । जवेन तीव्रा जवाधिका हया यस्यां सा चमूस्तस्य नृपस्य केवलं जयमेवाघोषयत्प्रथयत् । स्वयमेकवीरस्य चमूरुपकरणमात्रमित्यर्थः ॥

११ ॥ अवनिमिति । वरूथिना गुप्तिमता ॥ "वरूथो रथगुप्तिर्या तिरोधत्ते रथस्थितम्" इति सज्जनः ॥ एकरथेनाद्वितीयरथेनावनिं जितवतो धनुर्भृतो नरवाहनसंपदः कुबेरतुल्यश्रीकस्य तस्य दशरथस्य घनरवा मेघसमघोषा अर्णवा विजयदुन्दुभितां ययुः किल ॥ अर्णवान्तविजयीत्यर्थः ॥

१२ ॥ शमितेति । पुरन्दर इन्द्रः शतकोटिना शताश्रिणा कुलिशेन वज्रेण

---

circled by the ocean with but a single car, while his army with elephants and horses dashing forth with great speed only proclaimed his victory.

11. To him conquering the earth by means of a single car furnished with a protecting plank, wielding a ready bow and possessing wealth like that of Kubera, the cloud-like-thundering seas assuredly served him for the kettle drums of victory.

12. Town-destroying Indra humbled the force of the wings of mountains with his thunderbolt having but a hundred sharp points

---

Dharm.. and Vija., ह्रि for तु. Châritravardhana considers this verse as क्षेपक. Between 10-11. B. D. E. I. R. with Hem., Châ., Din., Val., and Su., read:—" जघननिर्विपर्याकृतमेखलाननुचिताश्रुविलुप्तविशेषकान् । स रिपुदारगणानकरोद्बलादनलकानलकाधिपविक्रमः" ॥ [B. उचिता for अनुचिता°]. "जघनेति ॥ अलकाधिपो धनदस्तत्तुल्यविक्रमः स नृपो रिपुदारगणाञ् शत्रुस्त्रीणां गणान्बलादेवं विधानकरोत् । जघने निर्विपर्याकृता मेखला येषां तान् । अनुचितेनानभ्यस्तेन दुःखोत्पन्नेन वाष्पेण विलुप्तविशेषकानष्टतिलकान् ॥ "तमालपत्रतिलकचित्रकाणि विशेषकं" ॥ न अलका येषां तानलकान्केशरहितान्" ॥ हे० ॥ " जघनेति ॥ स राजा रिपुदाराणां वैरिस्त्रीणां गणान्समूहान्बलादनलकानलकरहितानकरोत् ॥ वन्याः पार्थिवपत्नीनां वैधव्यं प्रापयदित्यर्थः । किंभूतान् । जघनेभ्यो निर्विपर्याकृता निरस्ता मेखलाः काञ्च्यो येषां ते तान् । तथानुचितमयोग्यं यदश्रु शोकजनितमश्रु तेन विलुप्तं विशेषकं कपोलपत्रावली येषां तान् । कीदृशो नृपः । अलकाधिपस्य कुबेरस्येव विक्रमो यस्य सः" ॥ चा० ॥

12. B. C. E. I. K. R. with Cha., Din., Val., and Su., शितकोटिना for शतकोटिना. Hemâdri notices the reading and says:—शितकोटिनेति पाठ शिते तीक्ष्णे । E. with Val., and Su., शिखरिणां for शिखरिणां. D₂. स्फुरितकोटिसहस्रमरीचिना for शमितपक्षबलः शतकोटिना. Hemâdri and Châritravardha-

चरणयोर्नखरागसमृद्धिभिर्मुकुटरत्नमरीचिभिरस्पृशन् ।
नृपतयः शतशो मरुतो यथा शतमखं तमखण्डितपौरुषम् ॥ १३ ॥
निववृते स महार्णवरोधसः सचिवकारितबालसुताञ्जलीन् ।
समनुकम्प्य सपत्नपरिग्रहाननलकानलकानवमां पुरीम् ॥ १४ ॥

शिखरिणां पर्वतानां शमितपक्षबलो विनाशितपक्षसारः ॥ नवतामरसाननो नवपङ्कजाननः ॥ " पङ्केरुहं तामरसम् " इत्यमरः ॥ स दशरथः शरवृष्टिमुचा स्वनवता धनुषा द्विषां शमितो नाशितः पक्षः सहायो बलं च येन स तथोक्तः ॥ " पक्षः सहायेऽपि " इत्यमरः ॥

१३ ॥ चरणयोरिति । शतशो नृपतयोऽखण्डितपौरुषं तं दशरथम् । मरुतो देवाः शतमखं यथा शतक्रतुमिव । नखरागेण चरणनखकान्त्या समृद्धिभिः सम्पादितर्द्धिभिर्मुकुटरत्नमरीचिभिश्चरणयोरस्पृशन् ॥ तं प्रणेमुरित्यर्थः ॥

१४ ॥ निववृत इति । स दशरथः सचिवैः संप्रयोजितैः कारिता बालसुतानामञ्जलयो यैस्तान् । स्वयमसंमुखागतानित्यर्थः । अनलकान्हृतभर्तृकतयालकसं-

---

but the king दशरथ with his face resembling a fresh lotus, destroyed the party force of his enemies by means of his twanging bow that sent forth showers of arrows.

13. The kings by hundreds touched him of undaunted valour on his feet with rays proceeding from the diamonds in their crowns brightened by the red lustre of his toe-nails, as the gods bowed to him of one hundred sacrifices (Indra) .

14. Then the king returned from the shores of the great ocean to his capital not any way inferior to Alakā, having taken

---

na also notice this and say:--आदि। "स्फुरितकोटिसहस्रमरीचिना" इति पाठस्तत्र स्फुरिता देदीप्यमानाः कोटीनां धाराणां सहस्रेषु मरीचयः किरणा यस्य तेन । केचिद्वज्रस्य सहस्रकोटित्वमाहुः ॥ Between 12-13. B. D₂. E. I. R. with Val.. and Su., read :—" स्फुरितकोटिसहस्रमरीचिना समचिनोत्कुलिशेन हरिर्यशः । स धनुषा युधि सायकवर्षिणा स्वनवता नवतामरसाननः " ॥ स्फुरितेति ॥ हरिरिन्द्रः । कुलिशेन वज्रेण यशः समचिनोत् । कीर्तिं संचिकाय । । किंभूतेन कुलिशेन स्फुरितकोटिसहस्राणां मरीचिना स्फुरिता उल्लसिताः कोटिसहस्राणां मरीचयो यस्य स राजा युधि संग्रामे सायकवर्षिणा धनुषा बाणवृष्टिमुचा कार्मुकेण यशः समचिनोत । किंभूतेन कुलिशेन धनुषा स्वनवतादयुक्तेन । किंभूतो नृपो नवतामरसाननः सरसकमलवदनः ॥ ४२ ॥ [D₂. दह for युधि.] E. I. R. read the second Pāda as स शरवृष्टिमुचा धनुषा युधि स्वनवता नवतामरसाननः ॥ [R. धनुषांधिपां for धनुषा युधि.] I. R read this spurious verse between 11-12. I. considers our text of the 12th verse to be spurious. R. considers the above verse as पाठान्तरं. Sumativijaya reads the above spurious verse between 11-12 and then " जघन &c. "

13. R. स ततो for मरुतो.

14. R. बाहु° for बाल°. Hemādri :—" जघननिर्विषयोस्यनेन यमकसा-

उपगतोऽपि च मण्डलनाभितामनुदितान्यसितातपवारणः ।
अजितमस्ति नृपास्पदमित्यभूदनलसोऽनलसोमसमद्युतिः ॥ १५ ॥

स्कारशून्यान्सपत्नपरिग्रहाञ्छत्रुपत्नीः ॥ “ पत्नीपरिजनादानमूलशापाः परिग्रहाः ” इत्यमरः ॥ समनुकम्प्यानुगृह्यालकानवमामलकानगरादन्यूनां पुरीमयोध्यां प्रति महार्णवानां राघवः पर्यन्तान्निववृते ॥ शरणागतवत्सल इति भावः ॥ १४ ॥ उपगत इति । अनुदितमनुच्छ्रितमन्यत्स्वच्छत्त्रातिरिक्तं सितातपवारणं श्वेतच्छत्त्रं यस्य सः । अनलसोमयोरग्निचन्द्रयोः समे द्युती तेजःकान्ती यस्य स तथोक्तः । स दशरथो मण्डलस्य नाभितां द्वादशराजमण्डलस्य प्रधानमहीपतित्वमुपगतोऽपि । चक्रवर्ती सन्नपीत्यर्थः ॥ “ अथ नाभिस्तु जन्त्वङ्गे यस्य संज्ञा प्रतानिका । रथचक्रस्य मध्यस्थपिण्डिकायां च ना पुनः । आद्यक्षत्त्रियभेदे तु मतो मुख्यमहीपतौ ” इति केशवः ॥ अजितं नृपास्पदमस्तीति बुद्ध्यानलसोऽप्रमत्तोऽभूत । विजितनिखिलजनस्योऽपि पुनर्जेतव्यान्तरवानिव जागरूक एवावतिष्ठेत्यर्थः ॥ द्वादशराजमण्डलं तु कामन्दकेनोक्तम्—“ अरिर्मित्रमरेर्मित्रं मित्रमित्रमतः परम् । तथारिमित्रमित्रं च विजिगीषोः पुरःसराः । पार्ष्णिग्राहस्ततः पश्चादाक्रन्दस्तदनन्तरम् । आसारावनयोश्चैव विजिगीषोस्तु पृष्ठतः । अरेश्च विजिगीषोश्च मध्यमो भूम्यनन्तरः । अनुग्रहे संहतयोः समस्तव्यस्तयोर्वधे । मण्डलाद्बहिरेतेषामुदासीनो बलाधिकः । अनुग्रहे संहतानां व्यस्तानां च वधे प्रभुः ” इति ॥ “ अरिमित्रादयः पञ्च विजिगीषोः पुरःसराः । पार्ष्णिग्राहाक्रन्दपार्ष्णिग्राहासाराक्रन्दासाराः ” इति पृष्ठतश्चत्वारः ॥ मध्यमोदासीनौ द्वौ विजिगीषुरेक इत्येवं द्वादशराजमण्डलम । तत्रोदासीनमध्यमोत्तरश्चक्रवर्ती ॥ दशरथश्चैतादृगिति तात्पर्यार्थः ॥

---

compassion on the wives of his enemies, who were then destitute of hair decorations and who had requested their ministers to join the hands of their infant-sons before him as a token of their supplication.

15. Though got to the position of the chief of the circle of twelve kings, that universal monarch, whose personal bright splendour was equal to that of fire and the moon and besides whose white umbrella, no other white umbrella could be raised on the earth, was ever vigilant thinking that the dignity of a Monarch is ever to conquer what still remains unconquered.

स्यार्कंचिदमुं न पठन्ति. ” Vallabha :—“ जघननिर्विषयीकृतेत्यनेन यमकसाम्यादिरत्नोऽस्य पातः. ”

15. B. with Chā., Din., and Su., अनुचिता° for अनुदिता°. C. with Val., तपचारणः for तपवारणः. B. C. E. H. I. R. with Val., Su., and the texts only of K. P. and Hemādri, श्रियमवेक्ष्य स रन्ध्रचलाम् for अजितमस्ति नृपास्पदम्. Also Mallinātha, who says :—“ श्रियं लक्ष्मीं रन्ध्रेऽन्यायालस्यादिरूपे छले चलां चञ्चलामवेक्ष्यावलोक्य ॥ श्रीर्हि केनचिन्मिषेण पुमांसं परिहरति ”।

क्रतुषु तेन विसर्जितमौलिना भुजसमाहृतदिग्वसुना कृताः ।
कनकयूपसमुच्छ्रयशोभिनो वितमसा तमसासरयूतटाः ॥ १६ ॥
अजिनदण्डभृतं कुशमेखलां यतगिरं मृगशृङ्गपरिग्रहाम् ।
अधिवसंस्तनुमध्वरदीक्षितामसमभासमभासयदीश्वरः ॥ १७ ॥

१६ ॥ क्रतुष्विति । क्रतुष्वश्वमेधेषु विसर्जितमौलिनावरोपितकिरीटेन ॥ " यावद्यज्ञमध्वर्युरेव राजा भवति " इति राज्ञश्चिह्नत्यागविधानादित्यभिप्रायः ॥ " मौलिः किरीटे धम्मिल्ले " इति विश्वः ॥ भुजसमाहृतदिग्वसुना भुजार्जितदिगन्तसंपदा ॥ अनेन क्षत्त्रियस्य विजितत्वमुक्तम् । नियमार्जितधनत्वं सद्विनियोगकारित्वं च सूच्यते ॥ वितमसा तमोगुणरहितेन तेन दशरथेन । तमसा च सरयूश्च नद्यौ । तयोस्तटाः कनकयूपानां समुच्छ्रयेण समुन्नमनेन शोभिनः कृताः ॥ " कनकमयत्वं च यूपानां शोभार्थं विध्यभावात् " ॥ " हैमयूपस्तु शोभिकः " इति यादवः ॥

१७ ॥ अजिनेति । ईश्वरो भगवानष्टमूर्तिरजिनं कृष्णाजिनं दण्डमौदुम्बरं च बिभर्तीति तामजिनदण्डभृतम् ॥ " कृष्णाजिनं दीक्षयति । औदुम्बरं दीक्षितदण्डं यजमानाय प्रयच्छति " इति वचनात् ॥ कुशमयी मेखला यस्यास्तां कुशमेखलाम् ॥ " शरमयी मौञ्जी वा मेखला । तया यजमानं दीक्षयति " इति विधानात् ॥ प्रकृते कुशग्रहणं क्वचित्प्रतिनिधिदर्शनात्कृतम् ॥ यतगिरं वाचंयमाम् ॥ " वाचं यच्छति " इति श्रुतेः ॥ मृगशृङ्गं परिग्रहः कण्डूयनसाधनं यस्यास्ताम् ॥ " कृष्णविषाणया कण्डूयते " इति श्रुतेः ॥ अध्वरदीक्षितां संस्कारविशेषयुक्तां तनुं दाशरथिमधिवसन्नधितिष्ठन्सन् । असमा भासो दीप्तयो यस्मिन्कर्मणि तद्यथा तथा । अभासयद्भासयति स्म ॥

---

16. Laying aside his crown during the performance of sacrificial ceremonies he, who had amassed the wealth of quarters by dint of his arms, and who was exempt from the quality of ignorance, made the banks of the Tamasá and the Sarayú embellished by erecting golden sacrificial columns on them.

17. The god ईश्वर presiding over (*lit.* dwelling in) his body that had undergone the initiative ceremony of the sacrifices, with his speech restrained, holding the antelope hide and a staff, wearing a waist-band of Kus'a-grass and furnished with the horn of a deer, made it shine with matchless splendour.

---

16. Some of the Mss. as well as some commentators including Hemádri have a different order from this verse; but the order given by Mallinátha appears genuine and also supported by Chàritravardhana, Vallabha, Dinakara and Sumativijaya.

17. D. °भृता for °भृतं. C. E. I. K. R. with Val., जित for यत°. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Vallabha and others.

अवभृथप्रयतो नियतेन्द्रियः सुरसमाजसमाक्रमणोचितः ।
नमयति स्म स केवलमुन्नतं वनमुचे नमुचेररये शिरः ॥ १८ ॥
तमपहाय ककुत्स्थकुलोद्भवं पुरुषमात्मभुवं च पतिव्रता ।
नृपतिमन्यमसेवत देवता सकमला कमलाघवमर्थिषु ॥ १९ ॥
स किल संयुगमूर्ध्नि सहायतां मघवतः प्रतिपद्य महारथः ।
स्वभुजवीर्यमगापयदुच्छ्रितं सुरवधूरवधूतभयाः शरैः ॥ २० ॥

१८ ॥ अवभृथेति । अवभृथेन प्रयतो नियतेन्द्रियः सुरसमाजसमाक्रमणोचितो देवसभाधिष्ठानार्हः स दशरथ उन्नतं शिरो वनमुचे जलवर्षिणे ॥ " जलं नीरं वनं सत्त्वम् " इति शाश्वतः ॥ नमुचेररये केवलमिन्द्रायैव नमयति स्म ॥ न कस्मैचिदन्यस्मै मानुषायेत्यर्थः ॥

१९ ॥ तमिति । पत्यौ व्रतं नियमो यस्याः सा पतिव्रता सकमला कमलहस्ता देवता लक्ष्मीरर्थिषु विषयेऽलाघवं लघुत्वरहितम् । अपराङ्मुखमित्यर्थः । ककुत्स्थकुलोद्भवं तं दशरथमात्मभुवं पुरुषं विष्णुं चापहाय त्यक्त्वा । अन्यं कं नृपतिमसेवत ॥ कमपि नासेवतेत्यर्थः ॥ विष्णाविव विष्णुतुल्ये तस्मिन्नपि श्रीः स्थिराभूदित्यर्थः ॥

२० ॥ स इति । महारथः स दशरथः संयुगमूर्ध्नि रणाङ्गणे मघवत इन्द्रस्य सहायतां प्रतिपद्य प्राप्य शरैरवधूतभया निवर्तितत्रासाः सुरवधूरुच्छ्रितं स्वभुजवीर्यमगापय

---

18. He, who was purified by the ablutions at the end of the sacrificial ceremonies, who had controlled his senses, who was every way worthy to move in the assembly of the gods, bowed his high head only to the enemy of Namuchi, the showerer of rains.

19. Except the self-existent person and that king who was born in the line of Kakutstha, who were both liberal (*lit.* not niggardly) to supplicants, what other prince could, the devoted and virtuous Goddess of Wealth with a lotus in her hand, go to serve ?

20. It is said that this great warrior having become the associate of Indra in the van of battle, relieved the celestial damsels

---

18. C. E. H. K. R. with Su., Dharm., and Vija., विजितेन्द्रियः, D. with Val., अपि जितेन्द्रियः for नियतेन्द्रियः.

19. C. °कुलोद्वहं for °कुलोद्भवं. A. D. E. H. P. आत्मभवं for आत्मभुवं. Eight Mss. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., read with Mallinátha.

20. D. महायशाः for महारथः. C. with Vallabha's text ऊर्जितं for उच्छ्रितं.

असकृदेकरथेन तरस्विना हरिहयाग्रसरेण धनुर्भृता ।
दिनकराभिमुखा रणरेणवो रुरुधिरे रुधिरेण सुरद्विषाम् ॥ २१ ॥
तमलभन्त पतिं पतिदेवताः शिखरिणामिव सागरमापगाः ।
मगधकोसलकेकयशासिनां दुहितरोऽहितरोपितमार्गणम् ॥ २२ ॥
प्रियतमाभिरसौ तिसृभिर्बभौ तिसृभिरेव भुवं सह शक्तिभिः ।
उपगतो विनिनीषुरिव प्रजा हरिहयोऽरिहयोगविचक्षणः ॥ २३ ॥

त्किल खलु ॥ गायतेः शब्दकर्मत्वात् ॥ "गतिबुद्धि—" इत्यादिना सुरवधूनामपि कर्मत्वम् ॥

२१ ॥ असकृदिति । एकरथेनाद्वितीयरथेन तरस्विना बलवता हरिहयस्येन्द्रस्याग्रसरेण धनुर्भृता दशरथेनासकृद्बहुशो दिनकरस्याभिमुखाः । अभिमुखोच्छ्रिता इत्यर्थः । रणरेणवः सुरद्विषां दैत्यानां रुधिरेण रुरुधिरे वारिताः ॥

२२ ॥ तमिति । पतिरेव देवता यासां ताः पतिदेवताः पतिव्रताः । मगधाश्च कोसलाश्च केकयाश्च तान्जनपदाञ्छासतीति तच्छासिनः । तेषां राज्ञां दुहितरः पुत्र्यः । सुमित्राकौसल्याकैकेय्य इत्यर्थः । अत्र क्रमो न विवक्षितः । अहितरोपितमार्गणं शत्रुनिखातशरम् ॥ "कलम्बमार्गणशराः" इत्यमरः ॥ तं दशरथं शिखरिणां क्ष्माभृतां दुहितरः ॥ आ समन्तादपगच्छन्तीति । अथ वा । "आपेनाप्संबन्धिना वेगेन गच्छन्तीत्यापगाः" इति क्षीरस्वामी ॥ नद्यः सागरमिव । पतिं भर्तारमलभन्त ॥

२३ ॥ प्रियतमाभिरिति । अरीन्घ्नन्तीत्यरिहणो रिपुघ्नाः । हन्तेः क्विप् ॥ "ब्रह्मभ्रूणवृत्रेषु क्विप्" इति नियमस्य प्रायिकत्वात् ॥ यथाह न्यासकारः—" प्रायि-

from fears by means of his arrows, and thus made them chant the sublime might of his arms.

21. Thus that single-chariot-warrior, the mighty bowman, having taken the lead of Indra often suppressed the dust, raised in the battle-field, and which was going upwards in the direction of the sun so as to obscure it, by the stream of blood of the god's enemies.

22. Daughters of the rulers of the Magadhas, the Kosalas and the Kekayas, who looked upon their husband as their god, obtained him for their husband who had levelled his darts against his enemies, as streams of mountains obtain the ocean.

23. The king with his three loving wives, himself skilful in devising means of destroying his enemies, looked like Indra, the

21. B. C. E. I. R. with Hem., Chā., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., एव हितेन for एकरथेन.

22. A. H. J. P. with Hem., Chā., Din., and the text only of Val., मगधकोशलकेकय°, D. मगधकोशलकेकय°, B. C. E. I. K. R. with Val., Su., Dharm., and Vija., मलयकोशलकेकय° for मगधकोसलकेकय.°

अथ समाववृते कुसुमैर्नवैस्तमिव सेवितुमेकनराधिपम् ।
यमकुबेरजलेश्वरवज्रिणां समधुरं मधुराञ्चितविक्रमम् ॥ २४ ॥
जिगमिषुर्धनदाध्युषितां दिशं रथयुजा परिवर्तितवाहनः ।
दिनमुखानि रविर्हिमनिग्रहैर्विमलयन्मलयं नगमत्यजत् ॥ २५ ॥

कश्चायं नियमः " ॥ क्वचिदन्यस्मिन्नप्युपपदे दृश्यते ॥ मधुहा ॥ " प्रायिकत्वं च वक्ष्यमाणस्य बहुलग्रहणस्य पुरस्तादपकर्षाल्लभ्यते " इति ॥ तेषु योगेषूपायेषु विचक्षणो दक्षः ॥ " योगः संनहनोपायध्यानसंगतियुक्तिषु " इत्यमरः ॥ इन्द्रेऽपि योज्यमेतत् । असौ दशरथस्तिसृभिः प्रियतमाभिः सह । प्रजा विनिनीषुर्विनेतुमिच्छुस्तिसृभिः शक्तिभिः प्रभुमन्त्रोत्साहशक्तिभिरेव सह भुवमुपगतो हरिहय इन्द्र इव । बभौ ॥

२४ ॥ अथेति । अथ यमकुबेरजलेश्वरवज्रिणां धर्मराजधनदवरुणामरेन्द्राणां समा धूर्भारो यस्य स समधुरः । माध्यस्थ्यवितरणसंनियमनैश्वर्यैस्तुल्यकक्ष इत्यर्थः ॥ " ऋक्पूरब्धूः—" इत्यादिना समासान्तोऽप्रत्ययः ॥ तं समधुरम् । अञ्चितविक्रमं पूजितपराक्रममेकनराधिपं तं दशरथं सेवितुमिव । मधुर्वसन्तः ॥ " अथ पुष्परसे मधुः । दैत्ये चैत्रे वसन्ते च मधुः " इति विश्वः ॥ नवैः कुसुमैरुपलक्षितः सन्समाववृते समागतः ॥ " रिक्तहस्तेन नोपेयाद्राजानं देवतां गुरुम् " इति वचनात्पुष्पसमेतो राजानं सेवितुमागत इति भावः ॥

२५ ॥ जिगमिषुरिति । धनदाध्युषितां कुबेराधिष्ठितां दिशं जिगमिषुर्गन्तुमिच्छुः । रथयुजा सारथिनानूरुणा परिवर्तितवाहनो निवर्तिताश्वो रविः । हिमस्य

God with the bay horses, come down to the earth in bodily form accompanied only by the three powers, as if with the desire of ruling over the mortals.

24. And now with fresh flowers came the Spring to do honour as it were, to that sole sovereign of the people (*i. e.* Universal Emperor) of adorable prowess and having equal burden (of governing and dignity) with Yama, Kubera, Varu*n*a and Indra.

25. Desirous of going to the quarter presided over by the Lord of wealth (Kubera), the Sun, having his horses turned

---

24. D. E. with Chá., and Dharm., °वज्रिणं for °वज्रिणां. Between 24-25. B. C. D. E. I. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., read :—" हिमविवर्णितचन्दनपल्लवं विरहयन्मलयाद्रिमुदङ्मुखः । विहगयोः कृपयेव शनैर्ययौ रविरहर्विरहध्रुवभेदयोः " ॥ हिमेति ॥ हिमेन विवर्णिताः पाण्डूकृताश्चन्दनपल्लवा यस्मिस्तं मलयाद्रिं विरहयन्दूरीकुर्वन्नुदङ्मुखो रविः शनैर्ययौ ॥ उत्तरायणे रविर्हि शनैर्याति ॥ तत्र हेतुमाह । अह्नि विरहे दिनान्ते ध्रुवो निश्चितो भेदो वियोगो ययोर्विहगयोश्चक्रवाकयोः कृपयेव ॥ " गोऽसुपि " इत्यहर्नो रेफः ॥ हे० ॥ Hemádri reads this between 25-26. Chháritravardhana considers this as spurious.

25. D. हिमनिर्ग्रहैः for हिमनिग्रहैः.

कुसुमजन्म ततो नवपल्लवास्तदनु षट्पदकोकिलकूजितम् ।
इति यथाक्रममाविरभून्मधुर्द्रुमवतीमवतीर्य वनस्थलीम् ॥ २६ ॥
उपहितं शिशिरापगमश्रिया मुकुलजालमशोभत किंशुके ।
प्रणयिनीव नखक्षतमण्डनं प्रमदया मदयापितलज्जया ॥ २७ ॥

निग्रहैर्निराकरणैर्दिनमुखानि प्रभातानि विमलयन्विशदयन् । मलयं नगं मलयाचलमत्यजत् । दक्षिणां दिशमत्याक्षीदित्यर्थः ॥

२६ ॥ कुसुमेति । आदौ कुसुमजन्म । ततो नवपल्लवाः । तदनु ॥ " अनुर्लक्षणे " इति कर्मप्रवचनीयत्वाद्द्वितीया ॥ यथासंख्यं तदुभयानन्तरं षट्पदानां कोकिलानां च कूजितम् । इत्येवंप्रकारेण यथाक्रमं क्रमनतिक्रम्य । द्रुमवतीं द्रुमभूयिष्ठां वनस्थलीमवतीर्य मधुर्वसन्त आविरभूत ॥ केषांचिद्द्रुमाणां पल्लवप्राथम्यात्केषांचित्कुसुमप्राथम्यान्नोक्तक्रमस्य दृष्टविरोधः ॥

२७ ॥ उपहितमिति । शिशिरापगमश्रिया वसन्तलक्ष्म्या किंशुके पलाशवृक्षे ॥ " पलाशः किंशुकः पर्णः " इत्यमरः ॥ उपहितं दत्तं मुकुलजालं कुड्मलसंहतिः । मदेन यापितलज्जयापसारितत्रपया प्रमदया प्रणयिनि प्रियतम उपहितं नखक्षतमेव मण्डनं तदिव । अशोभत ॥

---

back by his charioteer, left the Malaya mountain brightening the dawn by removing the frost.

26. There was first the blowing (*lit.* birth) of flowers ; then there were sprouts of fresh leaves ; then there were heard the humming of bees and the notes of the cuckoos : in this order did मधु (*i. e.* the vernal season), who descended incarnate to the forest ground that was abounding in trees, exhibit himself.

27. The multitude of opening buds with which the Palás a tree was vested by the Vernal Beauty at the departure of winter, looked like the ornament of nail-scratches of a young woman whose bashfulness has been removed under the influence of intoxication, on the body of her lover.

---

26. B. C. E. H. I. R. with Hem., Chá., Din., Val., Vija., and the texts only of K. P. तदनुषट्पदको° for तदनु षट्पदको°.

27. B. C. E. I. K. with Hem., अरोचत for अशोभत. B. I. read this verse after the 33rd stanza of our text ; so do almost all commentators. Between 26-27. B. D. E. I. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Dharm., read :— " सुरभिसंगमजं वनमालया नवपलाशमधार्यत भंगुरं ॥ रमणदत्तमिवार्द्रनखक्षतं प्रमदया मदयापितलज्जया " ॥ सुरभीति । वनमालया वनपंक्त्या सुरभेर्वसन्तस्य संगमजं भंगुरं वक्रं नवं पलाशपुष्पमधार्यत ॥ " सुरभिर्भवके

व्रणगुरुप्रमदाधरदुःसहं जघननिर्विषयीकृतमेखलम् ।
न खलु तावदशेषमपोहितुं रविरलं विरलं कृतवान्हिमम् ॥ २८ ॥
अभिनयान्परिचेतुमिवोद्यता मलयमारुतकम्पितपल्लवा ।
अमदयत्सहकारलता मनः सकलिका कलिकामजितामपि ॥ २९ ॥

२८ ॥ व्रणेति । व्रणैर्दन्तक्षतैर्गुरुभिर्दुर्धर्षैः प्रमदानामधरैरधरोष्ठैर्दुःसहं हिमस्य व्यथाकरत्वादसह्यम् । जघनेषु निर्विषयीकृता निरवकाशीकृता मेखला येन तत् । शैत्यात्स्त्रीजनैर्नखलमित्यर्थः । एवंभूतं हिमं रविस्तावद्वसन्तादशेषं निःशेषं यथा तथापोहितुं निरसितुं नालं खलु न शक्तो हि । किं तु विरलं कृतवांस्तनू-चकार ॥

२९ ॥ अभिनयानिति । अत्र चूतलताया नर्तकीसमाधिरभिधीयते । अभिनया-नर्थव्यञ्जकान्व्यापारान् ॥ "व्यञ्जकाभिनयौ समौ" इत्यमरः ॥ परिचेतुमभ्य-

28. Though the sun could lessen the frost then unbearable to the lower lip of young women, sore with marks of teeth and by reason of which the waist-band found no place on their loins, he was indeed not thoroughly able as yet to dissipate it entirely.

29. The new-budded mango-creeper, whose sprouts were

स्वर्णे जातीफलवसन्तयोः" इति विश्वः ॥ पलाशस्य पुष्पं पलाशं ॥ "तस्य विकारः" इत्यण् ॥ "पुष्पमूलेषु बहुलं" इति लुप् ॥ वार्तिकं ॥ भंगुरं ॥ "भञ्जभासमिदो घुरच्" इति घुरच् ॥ त्वजोरिति कुत्वं ॥ मदेन यापिता नाशिता लज्जा यस्यास्तया प्रमदया कामिन्या रमणेन प्रियेण दत्तमात्रं नखक्षतमिव ॥ हे० ॥ Between 27-28. B. E. I. R. with Hem., Châ., Din., Val., and Su., read :—" परभृता मदनक्षतचेतसां प्रियसखी लघुवागिव योषितां प्रियतमानकरोत्कलहान्तरे मृदुरवा दुरवापसमागमान् " ॥ परभृतेति ॥ मृदुरवा कोमलशब्दा परैः काकादिभिर्भृता पुष्टा कोकिला कलहान्तरे व्यवधाने सति मदनक्षतचेतसां योषितां स्त्रीणां प्रियतमान् न दुरवापः समागमो येषां तांस्तथोक्तान् सुलभसमागमानकरोत ॥ कामार्ता हि कोकिलकूजितं श्रुत्वा कोपं त्यजन्ति ॥ लघुवाक् प्रियसखीव । सा हि प्रियसमागमं कुरुते ॥ "लघुर्मनोज्ञनिःसारागुरुषु प्रथितो लघु । कृष्णागुरुणि शीघ्रे च" इति विश्वः ॥ हे० ॥ [E. I. with Su., °चेतसः for °चेतसां. B. E. विरहान्तरे for कलहान्तरे. Châ., दुरवापत° for दुरवाप. B. परभृतां for परभृता] Between 28-29. B. E. I. R. with Hem., Châ., Din., Val. and Su., read :—" विशदचन्द्रकरं सुखमारुतं कुसुमितद्रुममुन्मदकोकिलं । तदुपभोगरसं हिमवर्षिणः परमृतोरमृतामतां ययौ " ॥ विशदेति ॥ हिमवर्षिणो हेमन्तादृतोर्वसन्तस्य तत्सर्वं चेष्टितं । उदितं सवितरि परमत्यर्थं । अमृतापमतां ययौ । अमृतप्रियं बभूव । किंभूतं तत् । विशदचन्द्रकरं निर्मलद्युति । अपरं किंभूतं । कुसुमितद्रुमं पुष्पितपादपं । अपरं किंभूतं । उदन्मदकोकिलं समदपरभृतं । अपरं उपभोगरसं । उपभोग एव रसोऽपरं यस्य तत्परं ॥ तदिति सामान्यापेक्षया नपुंसकं श्रूयमाणेऽपि विभिन्नलिंगे पादान्तरे सामान्योपक्रमो नपुंसकं प्रयुज्यते ? ॥ व० ॥ [ययुः for ययौ] After this I. reads " सुरभिसंगमजं &c. "

29. R. इवोदिता for इवोद्यता.

नयगुणोपचितामिव भूपतेः सदुपकारफलां श्रियमर्थिनः ।
अभिययुः सरसो मधुसंभृतां कमलिनीमलिनीरपतत्त्रिणः ॥ ३० ॥
कुसुममेव न केवलमार्तवं नवमशोकतरोः स्मरदीपनम् ।
किसलयप्रसवोऽपि विलासिनां मदयिता दयिताश्रवणार्पितः ॥ ३१ ॥

सितुमुद्यतेव स्थिता ॥ कुतः । मलयमारुतेन कम्पितपल्लवा । पल्लवशब्देन हस्तो गम्यते । सकलिका सकोरका ॥ " कलिका कोरकः पुमान् " इत्यमरः ॥ सहकारलता । कलिः कलहो द्वेष उच्यते ॥ " कलिः स्यात्कलहे शूरे कलिरन्त्ययुगे युधि " इति विश्वः ॥ कामो रागः । तज्जितामपि । जितरागद्वेषाणामपीत्यर्थः ॥ मनोऽमदयत् ॥

३० ॥ नयेति । नयो नीतिरेव गुणः । तेन । अथ वा नयेन गुणैः शौर्यादिभिश्चोपचिताम् । सतामुपकारः फलं यस्यास्तां सदुपकारफलां भूपतेर्दशरथस्य श्रियमर्थिन इव । मधुना वसन्तेन संभृतां सम्यक्पुष्टां सरसः संबन्धिनीं कमलिनीं पद्मिनीमलिनीरपतत्त्रिणः । अलयो भृङ्गाः । नीरपतत्त्रिणो जलपतत्त्रिणो हंसादयश्च । अभिययुः ॥

३१ ॥ कुसुममिति । ऋतुरस्य प्राप्त आर्तवम् ॥ " ऋतोरण् " इत्यण् ॥ नवं प्रत्यग्रमशोकतरोः केवलं कुसुममेव स्मरदीपनमुद्दीपनं न । किं तु विलासिनां मदयिता मादको दयिताश्रवणार्पितः किसलयप्रसवोऽपि पल्लवसंतानोऽपि स्मरदीपनोऽभवत् ॥

---

shaken by the breeze from the mountain Malaya, being intent on, as it were, to practise theatrical gesticulations fascinated the minds even of those who had conquered rage and love.

30. As the needy flock about the king's wealth which is acquired by proper course of action in politics, and the object of which is to help the virtuous, so did the bees and the water-fowls repair to the cluster of lotuses of the lake full blown on account of the advance of the spring.

31. Not only the fresh vernal flower of the As'oka tree alone became the object of exciting love, but also the young sprouts of leaves, which are put on the ears of beloved women and which madden their lovers with passion.

---

30. H. अनुययुः for अभिययुः. Between 30-31. B. D_2. E. I. R. with Hem., Cha., Din., Val., and Su., read :—" दशनचन्द्रिकया व्यवभासितं हसितमासवगन्धि मधोरिव । बकुलपुष्पमसेव्यत षट्पदैः शुचिरसं चिरसंचितमीप्सुभिः "॥ दशनेति ॥ दशनचन्द्रिकया व्यवभासितं दशनकान्त्या विशेषेण शोभितं मधोर्वसन्तस्य हसितमिव बकुलपुष्पं षट्पदैर्भृङ्गैरसेव्यत । किंविधं हास्यं पुष्पं च । आसवगन्धोऽस्त्यस्य

विरचिता मधुनोपवनश्रियामभिनवा इव पत्त्रविशेषकाः ।
मधुलिहां मधुदानविशारदाः कुरबका रवकारणतां ययुः ॥ ३२ ॥
सुवदनावदनासवसंभृतस्तदनुवादिगुणः कुसुमोद्गमः ।
मधुकरैरकरोन्मधुलोलुपैर्बकुलमाकुलमायतपङ्क्तिभिः ॥ ३३ ॥
प्रथममन्यभृताभिरुदीरिताः प्रविरला इव मुग्धवधूकथाः ।
सुरभिगन्धिषु शुश्रुविरे गिरः कुसुमितासु मिता वनराजिषु ॥ ३४ ॥

३२ ॥ विरचितेति । मधुना वसन्तेनोपवनश्रियां विरचिता अभिनवाः पत्त्रविशेषकाः पत्त्ररचना इव स्थिता मधूनां मकरन्दानां दाने विशारदाश्चतुराः कुरबकास्तरवो मधुलिहां मधुपानां रवकारणतां ययुः ॥ भृङ्गाः कुरबकाणां मधूनि पीत्वा जगुरित्यर्थः ॥ दानशौण्डार्थिजनाः स्तुवन्तीति भावः ॥

३३ ॥ सुवदनेति । सुवदनावदनासवेन कान्तामुखमद्येन संभृतो जनितः ॥ तत्तस्य दोहदमिति प्रसिद्धिः ॥ तस्यासवस्यानुवादी सदृशो गुणो यस्य तदनुवादिगुणः कुसुमोद्गमः । कर्ता । मधुलोलुपैरायतपङ्क्तिभिर्दीर्घपङ्क्तिभिर्मधुकरैर्मधुपैः । करणैः । बकुलं बकुलवृक्षमाकुलमकरोत् ॥

३४ ॥ प्रथममिति । सुरभिर्गन्धो यासां तासु सुरभिगन्धिषु ॥ "गन्धस्य–" इत्यादिनेकारः ॥ कुसुमान्यासां संजातानि कुसुमिताः ॥ तासु वनराजिषु वनपङ्क्तिषु ।

32. The Kurabakas, which appeared like ornamental leaves painted in amatory sports on the person of the Vernal Beauty by her lover the Spring, and which were liberal in giving nectar to the bees became the cause of their humming.

33. The blowing of flowers caused by wine from the mouths of ladies wearing beautiful faces, and having the like quality, made the Bakula tree full of bees in long rows ardently longing for honey.

34. There in the rows of forests fragrant with sweet scent and abounding in flowers were heard the measured cooings first

---

तत् । इन्नन्तः । आमवस्येव गन्धो यस्य तत् ॥ "उपमानाच" इतीकारः ॥ किंविधैर्भृङ्गैश्चिरं संचितं शुचिश्चासौ रसश्च तमीप्सुभिः "आप्ज्ञप्यृधामीत्" ॥ "शुचिः शुद्धेऽनुपहते" इति विश्वः ॥ रसबाहुल्येन चिरसंचितत्वोत्प्रेक्षा ॥ हे० ॥ [B. E. तिलकपुष्पं for बकुलपुष्पं.]

32. D. with Hem., मधुकृतां for मधुलिहां.

33. D R. with Hem., कुसुमोत्करः for कुसुमोद्गमः. Between 33-34 B. E. R. with Hem., Cha., Din., Val., and Su., read :—" गमयितुं प्रभुरेष सुखेन मां न महतीं बत पान्थवधूजनः । इति दयात इवाभवदायता न रजनी रजनीशवती मधौ " ॥ गमयितुमिति ॥ मधौ वसन्ते पान्थानां प्रवासिनां वधूजनः स्त्रीलोको महतीं दीर्घां मां [रात्रिं] सुखेन गमयितुमतिवाहयितुं न प्रभुर्न समर्थ इति दयात इव कृपावशादिव रजनीशवती चन्द्रयुक्ता रजनी रात्रिरायता विस्तीर्णा न बभूव ॥ क्षेपोऽयं ॥ चा० ॥

श्रुतिसुखभ्रमरस्वनगीतयः कुसुमकोमलदन्तरुचो बभुः ।
उपवनान्तलताः पवनाहतैः किसलयैः सलयैरिव पाणिभिः ॥ ३५ ॥
ललितविभ्रमबन्धविचक्षणं सुरभिगन्धपराजितकेसरम् ।
पतिषु निर्विविशुर्मधुमङ्गनाः स्मरसखं रसखण्डनवर्जितम् ॥ ३६ ॥

क्लिष्ठु । अन्यभृताभिः कोकिलाभिः प्रथमं प्रारम्भेषूदीरिता उक्ता अत एव मिताः परिमिता गिर आलापाः । प्रविरला मौग्ध्यात्स्तोकोक्ता मुग्धवधूनां कथा वाच इव । शुश्रुविरे श्रुताः ॥

३५ ॥ श्रुतीति । श्रुतिसुखाः कर्णमधुरा भ्रमरस्वना एव गीतयो यासां ताः । कुसुमान्येव कोमला दन्तरुचो दन्तकान्तयो यासां ताः ॥ अनेन स्मितत्वं विवक्षितम् ॥ उपवनान्तलताः ॥ पवनेनाहतैः कम्पितैः किसलयैः सलयैः साभिनयैः ॥ लयशब्देन लयानुगतोऽभिनयो लक्ष्यते । उपवनान्ते पवनाहतैरिति सक्रियत्वाभिधानात् ॥ पाणिभिरिव बभुः ॥ अनेन लतानां नर्तकीसाम्यं गम्यते ॥

३६ ॥ ललितेति । अङ्गना ललितविभ्रमबन्धविचक्षणं मधुरविलासघटनापटुतरम् । सुरभिणा मनोहरेण गन्धेन पराजितकेसरं निर्जितबकुलपुष्पम् ॥ " अथ केसरे बकुलः " इत्यमरः ॥ स्मरस्य सखायं स्मरसखम् ॥ स्मरोद्दीपकमित्यर्थः ॥ मधुं मद्यम् ॥ " अर्धर्चाः पुंसि च " इति पुंलिङ्गता ॥ उक्तं च—" मकरन्दस्य मद्यस्य माक्षिकस्यापि वाचकः । अर्धर्चादिगणे पाठात्पुंनपुंसकयोर्मधुः " इति ॥ पतिषु विषये रसखण्डनवर्जितमनुरागभङ्गरहितं यथा तथा निर्विविशुः ॥ परस्परानुरागपूर्वकं पतिभिः सह पपुरित्यर्थः ॥

---

uttered by the cuckoos, like the moderate expressions given out by bewitching bashful females.

35. With song consisting of the humming of bees charming to the ear, and with pleasing splendour of teeth in the form of flowers, the creepers of the planted forest looked beautiful with their sprouts shaken by the breeze, as if they were hands gesticulating (in consonance with the song.)

36 The women enjoyed the drink of wine, the friend of the god of Love, which surpassed the Bakula flower in sweet smell and which highly tended to produce graceful amorous actions without interrupting their love towards their husbands.

---

35. P. श्रुतिसुखा for श्रुतिसुख°. R. with Hem., and Su , °स्वरगीतयः for स्वनगीतयः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also reads with Mallinátha.

36. D. with Hem., °हाम° for °बन्ध°. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha. D. H. K. R. with Val., and Su., मदं for मधुं. Also Hemádri notices this. C. with Su., रसषण्डन° for रसखण्डन°. Between 36-37. B. C. D. E. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., read :—" तिलकमस्तक-

शुशुभिरे स्मितचारुतराननाः स्त्रिय इव श्लथशिञ्जितमेखलाः ।
विकचतामरसा गृहदीर्घिका मदकलोदकलोलविहंगमाः ॥ ३७ ॥
उपययौ तनुतां मधुखण्डिता हिमकरोदयपाण्डुमुखच्छविः ।
सदृशमिष्टसमागमनिर्वृतिं वनितयानितया रजनीवधूः ॥ ३८ ॥

३७ ॥ शुशुभिरे इति । विकचतामरसा विकसितकमलाः । मदेन कला अव्यक्तमधुरं ध्वनन्त उदकलोलविहंगमा जलप्रियपक्षिणो हंसादयो यासु ता मदकलोदकलोलविहंगमा गृहेषु दीर्घिका वाप्यः । स्मितेन चारुतराण्याननानि यासां ताः ॥ श्लथाः शिञ्जिता मुखरा मेखला यासां ताः ॥ शिञ्जितेति कर्तरि क्तः ॥ स्त्रिय इव । शुशुभिरे ॥

३८ ॥ उपययाविति । मधुना मधुसमयेन खण्डिता ह्रासं गमिता ॥ क्षीयन्ते खलूत्तरायणे रात्रयः ॥ खण्डिताख्या च नायिका ध्वन्यते ॥ हिमकरोदयेन

37 The artificial house-ponds with lotuses full blown, with birds fond of water and uttering indistinct notes through intoxication, looked charming like women having faces the more bewitching by their smiles, and zones jingling because they were loosened.

38. The Night-damsel, the lustre of whose face was rendered pale on account of the rise of the cool-rayed moon being cut short

हर्म्यकृतास्पदैः कुसुममध्वनुषंगसुगन्धिभिः । कलमगायत भृंगविलासिनां स्मरयुतैरयुतैरबलासखैः " ॥ [C. D. °विलासिभिः for °विलासिनां] ॥ तिलकेति । भृंगविलासिनामयुतैः कलमगायत । अयुतं दशसहस्राणि ॥ अनेन बाहुल्यं लक्ष्यते । किंविधैः । तिलकास्तरुभेदास्तेषां मस्तकान्येव शिरांस्येव हर्म्याणि तेषु कृतमास्पदं स्थानं यैस्तैः । कुसुमानां मधुनोऽनुषंगेण सम्बन्धेन सुगन्धिभिः ॥ " आगंतुकस्यैकवचनान्तस्य वा " इति इत्वं ॥ स्मरयुतैः स्मरेण कामेन युतैः । अबलानां सखाय इति अबलासखानि तैः ॥ हे० ॥
After this verse I. reads " गमयितुं प्रभुरेव &c. "

37. D. J. °चारुविलोचनाः, R. °चारुवराननाः for °चारुतराननाः. Between 37-38. A_2. B. D_2. E. I. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Dharm., read :—" लघयति स्म न पत्यपराधजं न सहकारतरुस्तरुणीधृतं । कुसुमितो नमितोऽलिभिरुन्मदैः स्मरसमाधिसमाधिकरोपितं " ॥ [A_2. °धृतिं, B. कृतां D_2. °भृतां for धृतं. B. E. स्मरसमाधिकरोऽधिकरोपितां for स्मरसमाधिसमाधिकरोपितं] ॥ लघयतीति । सहकारतरुः पतीनामपराधाज्जातं तरुणीधृतं तरुणीभिर्धृतं धैर्यं न लघयति स्म इति न । अपि तु लघयति स्म ॥ लघुकरोतीति लघयति ॥ अलमत्यर्थं कुसुमितः ॥ " तारकादिः " ॥ किंभूतः । सहकारतरुरुन्मदैरलिभिर्नमितो नम्रः कृतः । कीदृशं धृतं । स्मरसमाधिसमाधिकरोपितं । स्मरेण समाधिर्ध्यानं ॥ भर्तृविषयमित्यर्थः ॥ तेन सम्यगाधिः समाधिर्मनोव्यथा ॥ " पुंस्याधिर्मानसीव्यथा " इत्यमरः ॥ तं करोतीति तच्छीलं ॥ स्मरसमाधिसमाधिकरं । तच्च तदुपितं चिरास्थितमित्यर्थः ॥ कृञो हेतु–" इति टः ॥ " समाधिर्नियमे ध्याने " इति विश्वः ॥ क्षेपकः ॥ हे० ॥

38. C. with Val., मधुषण्डिता for मधुखण्डिता. D. गमयितुं प्रियसंजनितां व्यथामसहया सह यामवती स्त्रिया for the last two Pâdas. Hemádri also

अपतुषारतया विशदप्रभैः सुरतसङ्गपरिश्रमनोदिभिः ।
कुसुमचापमतेजयदंशुभिर्हिमकरो मकरोर्जितकेतनम् ॥ ३९ ॥
हुतहुताशनदीप्ति वनश्रियः प्रतिनिधिः कनकाभरणस्य यत् ।
युवतयः कुसुमं दधुराहितं तदलके दलकेसरपेशलम् ॥ ४० ॥

चन्द्रोदयेन पाण्डुर्मुखस्य प्रदोषस्य वक्त्रस्य च छविर्यस्याः सा रजन्येव वधूः । इष्टसमागमनिर्वृतिं प्रियसंगमसुखमनितयाप्राप्तया ॥ "इण्गतौ" इति धातोः कर्तरि क्तः ॥ वनितया सदृशीं तुल्यं तनुतां न्यूनतां कार्श्यं चोपययौ ॥

३९ ॥ अपेति । हिमकरश्चन्द्रः ॥ अपतुषारतयापगतनीहारतया विशदप्रभैर्निर्मलकान्तिभिः सुरतसङ्गपरिश्रमनोदिभिः सुरतसङ्गखेदहारिभिरंशुभिः किरणैः । मकरोर्जितकेतनम् । मकर ऊर्जितं केतनं ध्वजो यस्य तम् ॥ लब्धावकाशत्वादुच्छ्रितध्वजमित्यर्थः ॥ कुसुमचापमतेजयदशातयत् ॥ "तिज निशाने" इति धातोर्ण्यन्ताल्लङ् ॥ सहकारिलाभात्कामोऽपि तीक्ष्णोऽभूदित्यर्थः ॥

४० ॥ हुतेति । हुतहुताशनदीप्त्याज्यादिप्रज्वलिताग्निप्रभं यत्कुसुमम् । कर्णिकारमित्यर्थः ॥ वनश्रिय उपवनलक्ष्म्याः कनकाभरणस्य प्रतिनिधिः ॥ अभूदिति शेषः ॥ दलेषु केसरेषु च पेशलम् ॥ सुकुमारपत्त्रकिञ्जल्कमित्यर्थः ॥ आहितम् ॥ प्रियैरिति शेषः ॥ तत्कुसुमं युवतयोऽलके कुन्तले दधुः ॥

---

by the Spring, grew thin like a female that is denied the happiness of her wished-for lover's company.

39. The cool-rayed moon caused the god of Love to sharpen his flowery bow by means of his rays which relieve the fatigue of सुरत enjoyment and whose light was now clear on account of the removal of the frosty weather.

40. The young ladies wore that flower having tender petals and filaments, which was stuck by their lovers in their hair, which was to Vernal Beauty in the place of an ornament made of gold and which was as bright as fire blazing with oblations.

---

notices this and says :---" यामवती निशा प्रियनिमित्तां संजनितां व्यथां गमयितुमतिवाहयितुमसहया वियुक्तया स्त्रिया सह तनुतामुपययौ " ॥ A_2. with Val., read it as, शमयितुं प्रियसंजनितां शुचमसहया सह यामवती स्त्रिया, where Vallabha says, 'प्रियसंजनितां शुचं शमयितुं न सहया प्रियविरहपीडां शमयितुमसहयाऽक्षमया'. And considers our text as, पाठान्तरं or another reading for the same.

39. R. अपतुखारतया for अपतुषारतया. B. C. E. I. J. K. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su , Dharm., and Vija., सुरतराग° for सुरतसङ्ग°. After this R. reads " गमयितुं &c., " and then " अनलसा &c. "

अलिभिरञ्जनबिन्दुमनोहरैः कुसुमपङ्क्तिनिपातिभिरङ्कितः ।
न खलु शोभयति स्म वनस्थलीं न तिलकस्तिलकः प्रमदामिव ॥ ४१ ॥
अमदयन्मधुगन्धसनाथया किसलयाधरसंततया मनः ।
कुसुमसंभृतया नवमल्लिका स्मितरुचा तरुचारुविलासिनी ॥ ४२ ॥

४१ ॥ अलिभिरिति । अञ्जनबिन्दुमनोहरैः कज्जलकणसुन्दरैः । कुसुमपङ्क्तिषु निपतन्ति ये तैः । अलिभिरङ्कितश्चिह्नितस्तिलकः श्रीमान्नाम वृक्षः ॥ "तिलकः क्षुरकः श्रीमान्" इत्यमरः ॥ वनस्थलीम् । तिलको विशेषकः ॥ "तमालपत्त्रतिलकचित्रकाणि विशेषकम् । द्वितीयं च तुरीयं च न स्त्रियाम्" इत्यमरः ॥ प्रमदामिव । न शोभयति स्मेति न खलु । अपि त्वशोभयदेवेत्यर्थः ॥ "लट् स्मे"—इति स्मशब्दयोगाद्भूतार्थे लट् ॥
४२ ॥ अमदयदिति । तरुचारुविलासिनी तरोः पुंसश्चारुविलासिनी नवमल्लिका सप्तलाख्या लता ॥ "सप्तला नवमल्लिका" इत्यमरः ॥ मधुनो मकरन्दस्य मद्यस्य च गन्धेन सनाथया गन्धप्रधानयेत्यर्थः । किसलयमेवाधरस्तत्र संततया । प्रसृतयेत्यर्थः । कुसुमैः संभृतया संपादितया । कुसुमरूपयेत्यर्थः । स्मितरुचा हासकान्त्या मनः । पश्यतामिति शेषः । अमदयत् ॥

---

41. Verily it is not that the तिलक tree did not decorate the sylvan site,—the tree marked as it was with bees alighting on rows of flowers and hence looking beautiful like spots of collyrium, as decorates a young woman the mark of musk painting.

42. The creeper Navamallikâ, the pretty consort of trees, gladdened the mind (of beholders) with her smiling beauty put forth by the (blooming) flowers, spreading over the sprouts as her lower lip, and accompanied by the fragrance of honey as her wine.

---

41. P. अन्वितः for अङ्कितः.

42. H. reads first the 43rd verse of our text and then the 42nd. A. B. H. I. J. P. with Châ., Din., Su., and Vija., °धरसंगतया मनः, C. E. K. R. with Hem., and Val., °धरसंगतरागया for °धरसंततया मनः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also reads °धरसंततरागया. D. with Hem., Châ., and Din., नवमालिका for नवमल्लिका. C. H. I. K. R. with Hem., and Val., °विलासिनः, B. with Su., °विलासिनीं, E. °विलासिनीः for °विलासिनी. Six Mss. with Châ., read with Mallinâtha. K. कुसुमसंगतया for कुसुमसंभृतया. Between 42-43. A_2. B. D_2. E. I. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Dharm., read :---" अनलसान्यभृतानलसान्मनः कमलधूलिभृता मरुतेरिता ॥ कुसुमभारनताध्वगयोषितामसमशोकमशोकलताकरोत् " ॥ [E. रेणुभृता for धूलिभृता. A_2. D_2. with Châ., मदेरिता for मरुतेरिता] ॥ अनलसेति ॥ अशोकलता अध्वगयोषितां मनः अनलसादकरोत् ॥ " विभाषा साति: कार्त्स्न्ये " ॥ किंविधां मनः । अस-

अरुणरागनिषेधिभिरंशुकैः श्रवणलब्धपदैश्च यवाङ्कुरैः ।
परभृताविरुतैश्च विलासिनः स्मरबलैरबलैकरसाः कृताः ॥ ४३ ॥
उपचितावयवा शुचिभिः कणैरलिकदम्बकयोगमुपेयुषी ।
सदृशकान्तिरलक्ष्यत मञ्जरी तिलकजालकजालकमौक्तिकैः ॥ ४४ ॥
ध्वजपटं मदनस्य धनुर्भृतश्छविकरं मुखचूर्णमृतुश्रियः ।
कुसुमकेसररेणुमलिव्रजाः सपवनोपवनोत्थितमन्वयुः ॥ ४५ ॥

४३ ॥ अरुणेति । विलासिनो विलसनशीलाः पुरुषाः ॥ " वीकषलस—" इत्यादिना घिनुण्प्रत्ययः ॥ अरुणस्यानूरोः रागमारुण्यं निषेधन्ति तिरस्कुर्वन्तीत्यरुणरागनिषेधीनि । तैः ॥ कुसुम्भादिरञ्जनात्तत्सदृशैरित्यर्थः ॥ " ननन्वेत्यनुबध्नाति तच्छीलं तन्निषेधति । तस्यैवानुकरोतीति शब्दाः सादृश्यवाचकाः " इति दण्डी ॥ अंशुकैरम्बरैः । श्रवणेषु लब्धपदैः । निवेशितैरित्यर्थः । यवाङ्कुरैश्च । परभृताविरुतैः कोकिलाकूजितैश्च । इत्येतैः स्मरबलैः कामसैन्यैः । अबलास्वेक एव रसो रागो येषां तेऽबलैकरसाः स्त्रीपरतन्त्राः कृताः ॥

४४ ॥ उपचितेति । शुचिभिः शुभ्रैः कणै रजोभिरुपचितावयवा पुष्टावयवा । अलिकदम्बकयोगमुपेयुषी प्राप्ता । तिलकजा तिलकवृक्षोत्था मञ्जरी । अलकेषु यज्जालकमाभरणविशेषस्तस्मिन्मौक्तिकैः सदृशकान्तिः । अलक्ष्यत ॥ भृङ्गसङ्गिनी शुभ्रा तिलकमञ्जरी नीलालकसक्तमुक्ताजालमिवालक्ष्यतेति वाक्यार्थः ॥

४५ ॥ ध्वजेति । अलिव्रजाः । मदनस्य कामस्य धनुर्भृतो धानुष्कस्य ध्वजपटं पताकाभूतम् । ऋतुश्रियो वसन्तलक्ष्म्याश्छविकरं शोभाकरं मुखचूर्णं मुखालं-

---

43. By garments surpassing the red colour of Aruṇa, by shoo's of Yavagrass having secured a position on the ear, and by the cooings of cuckoos, by such other troops of the God of Love, the voluptuous gallants were made subject to the all-pervading sentiment of love for young women (*i. e.* whose sole feeling consisted in thinking of young women).

44. A cluster of blossoms of Tilaka-tree, fully developed in its parts by white pollens and coming in contact with swarms of bees, appeared equal in beauty with the net-like ornament of pearls worn in the hair.

45. The swarms of bees flew after the dust of the filaments of

---

मा बहुतरः शोको यस्य तत् । किंविधा अशोकलता न अलसाः अनलसाः अन्यभृताः कोकिलाः यस्यां सा । कमलधूलिं बिभर्तीति तेन मरुता वायुना ईरिता आन्दोलिता कुसुमानां भारेण नता ॥ सानुप्रासयमकं ॥ ३० ॥ Sumativijaya reads this verse and the verse " लघयति &c.. " after the 43 stanza of our text.

43. A. D. E. I. K. with Val., Chi., Din., and Su., निषेविभिः for °निषेधिभिः. Hemadri also notices the reading and says :---अरुणरागं निषेवन्त इत्यरुणरागनिषेविनस्तैः.

अनुभवन्नवदोलमृतूत्सवं पटुरपि प्रियकण्ठजिघृक्षया ।
अनयदासनरज्जुपरिग्रहे भुजलतां जलतामबलाजनः ॥ ४६ ॥
त्यजत मानमलं बत विग्रहैर्न पुनरेति गतं चतुरं वयः ।
परभृताभिरितीव निवेदिते स्मरमते रमते स्म वधूजनः ॥ ४७ ॥

कारचूर्णभूतं । सपवनं यदुपवनं तस्मिन्नुत्थितं । कुसुमानां केसरेषु किञ्जल्केषु यो रेणुस्तम । अन्वयुरन्वगच्छन् ॥ यातेर्लङ् ॥

४६ ॥ अनुभवन्निति । नवा दोला प्रेङ्खा यस्मिंस्तं नवदोलमृतूत्सवं वसन्तोत्सवमनुभवन्नबलाजनः पटुरपि निपुणोऽपि । प्रियकण्ठस्य जिघृक्षया ग्रहीतुमालिङ्गितुमिच्छयासनरज्जुपरिग्रहे पीठरज्जुग्रहणे भुजलतां बाहुलतां जलतां जडतां शैथिल्यम् ॥ डलयोरभेदः ॥ अनयत् ॥ दोलाक्रीडासु पतनभयनाटितकेन प्रियकण्ठमाश्लिष्यदित्यर्थः ॥

४७ ॥ त्यजतेति । बतेत्यामन्त्रणे ॥ "खेदानुकम्पासंतोषविस्मयामन्त्रणे बत" इत्यमरः ॥ बत अङ्गना मानं कोपं त्यजत ॥ तदुक्तम्—"स्त्रीणामीर्ष्याकृतः कोपो मानोऽन्यासङ्गिनि प्रिये" इति ॥ विग्रहैर्विरोधैरलम् । विरोधो न कार्य इत्यर्थः । गतमतीतं चतुरमुपभोगक्षमं वयो यौवनं पुनर्नैति नागच्छति । इत्येवंरूपे स्मरमते स्मराभिप्राये ॥ नपुंसके भावे क्तः ॥ परभृताभिः कोकिलाभिर्निवेदिते सतीव वधूजनो रमते स्म रेमे ॥ कोकिलाकूजितोद्दीपितस्मरः स्त्रीजनः कामशासनभयादिवोच्छृङ्खलमखेलदित्यर्थः ॥

---

flowers, raised by the breeze blowing in the pleasure garden,—the dust being as it were the banner-cloth of मदन armed with his bow or the beautifying face-wash of the Vernal Beauty.

46. Enjoying the spring festivals in which there were the new swings, the young women though naturally clever yet in their eagerness of embracing the necks of their loving husbands, feigned looseness of their tender arms in catching hold of the ropes of their seats (in the swing).

47. " Give up, ye damsels, your indignation excited by jealousy, away with your quarrels, the age (*i. e.* youth) so fit for enjoyment when once departed will never reappear, " in words like these the intention of the God of Love being as it were communicated to them by the cuckoos, the ladies resumed their sports.

---

46. C. पटुरभि°, D. पटुमपि° for पटुरपि. Hemádri notices the reading of D. and remarks,---" पटुम " इति पाठे । भुजलताविशेषणं ॥ " वोतां गुणवैर्चैर्नीतं " इति डाम्बिकल्पः । C. E. H. I. K. P. R. with Hem., Val., and Su., जडतां for जलतां.

47. D. with one of the three Mss. of Châritravardhana एति for एति. Hemádri says,---" स्मरमतेरमते स्म " इति वा ॥ " बहुलं " इति बहुलग्रहणादन्यत्रापि द्वितीयादिविभक्तीनां प्रयोगवशात्समासो ज्ञेयः.

अथ यथासुखमार्तवमुत्सवं समनुभूय विलासवतीसखः ।
नरपतिश्चकमे मृगयारतिं स मधुमन्मधुमन्मथसंनिभः ॥ ४८ ॥
परिचयं चललक्ष्यनिपातने भयरुषोश्च तदिङ्गितबोधनम् ।
श्रमजयात्प्रगुणां च करोत्यसौ तनुमतोऽनुमतः सचिवैर्ययौ ॥ ४९ ॥
मृगवनोपगमक्षमवेषभृद्विपुलकण्ठनिषक्तशरासनः ।
गगनमश्वखुरोद्धतरेणुभिर्नृसविता स वितानमिवाकरोत् ॥ ५० ॥

४८ ॥ अथेति । अथानन्तरम् । मधुं मथ्नातीति मधुमद्विष्णुः ॥ संपदादित्वात्क्विप् ॥ मधुर्वसन्तः । मथ्नातीति मथः ॥ पचाद्यच् ॥ मनसो मथो मन्मथः कामः । तेषां संनिभः सदृशो मधुमन्मधुमन्मथसंनिभः स नरपतिर्दशरथो विलासवतीसखः स्त्रीसहचरः सन् ॥ ऋतुः प्राप्तोऽस्यार्तवः ॥ तमुत्सवं वसन्तोत्सवं । यथासुखं समनुभूय । मृगयारतिं मृगयाविहारं चकमे आचकाङ्क्ष ॥

४९ ॥ व्यसनासङ्गदोषं परिहरन्नाह ॥ परिचयमिति । असौ मृगया । चललक्ष्याणि मृगगवयादीनि । तेषां निपातने परिचयमभ्यासं करोति ॥ भयरुषोर्भयक्रोधयोस्तदिङ्गितबोधनं तेषां चललक्ष्याणामिङ्गितस्य चेष्टितस्य भयादिलिङ्गभूतस्य बोधनं ज्ञानं च करोति ॥ तनुं शरीरं श्रमस्य जयान्निरासात्प्रगुणां प्रकृष्टलाघवादिगुणवतीं च करोति ॥ अतो हेतोः सचिवैरनुमतोऽनुमोदितः सन्ययौ ॥ सर्वं चैतद्युद्धोपयोगीत्यतस्तदपेक्षया मृगयाप्रवृत्तिः । न तु व्यसनितयेति भावः ॥

५० ॥ मृगेति । मृगाणां वनं तस्योपगमः प्राप्तिः । तस्य क्षममर्हं वेषं बिभर्तीति स तथोक्तः । मृगयाविहारानुगुणवेषधारीत्यर्थः । विपुलकण्ठे निषक्तशरासनो लग्नधन्वा । ना सवितेव नृसविता पुरुषश्रेष्ठः ॥ उपमितसमासः ॥ स राजाश्वखुरोद्धतरे-

---

48. Having to his heart's content enjoyed the festivities of the spring season in company with wanton women, the king, who resembled the Destroyer of मधु, the spring and the mind tormenting god of love, longed for the pleasures of hunting.

49. Hunting makes one intimate with the art of throwing down the moving mark; it gives an understanding of their signs of fear and ferocity; and it makes the body endowed with excellent qualities on account of a conquest over fatigue; on these principles, being permitted by his ministers, the king went a hunting.

50. That mighty king, on account of the dust raised by the hoofs of his horses, made the sky as if a mere void (or made the

---

49. D. K. with Châ., Din., Su., Dharm., and Vija., तदङ्गित°, A. with Val., तदङ्कित° for तदिङ्गित. B. C. E. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vija., सा for असौ.

50. B. H. I. °खुरोद्धत°, C. with Val., °पुरोद्धर°, E. °खुरोद्धृत° for °खुरोद्धत°. B. C. E. H. I. K. P. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., सवितानं for स वितानं. Châritravardhana notices the reading of our text.

ग्रथितमौलिरसौ वनमालया तरुपलाशसवर्णतनुच्छदः ।
तुरगवल्गनचञ्चलकुण्डलो विरुरुचे रुरुचेष्टितभूमिषु ॥ ५१ ॥
तनुलताविनिवेशितविग्रहा भ्रमरसंक्रमितेक्षणवृत्तयः ।
ददृशुरध्वनि तं वनदेवताः सुनयनं नयनन्दितकोसलम् ॥ ५२ ॥

णुभिर्गगनं वितानं तुच्छमसदिवाकरोत् । गगनं नालक्ष्यतेत्यर्थः ॥ "वितानं तुच्छमन्दयोः" इति विश्वः ॥ अथ वा सवितानमित्येकं पदम् । सवितानमुल्लोचसहितमिवाकरोत् ॥ "अस्त्री वितानमुल्लोचः" इत्यमरः ॥

५१ ॥ ग्रथितेति । वनमालया वनपुष्पस्रजा ग्रथितमौलिर्बद्धधम्मिल्लः । तरूणां पलाशैः पत्रैः सवर्णः समानस्तनुच्छदो वर्म यस्य स तथोक्तः । इदं च वर्मणः पलाशसावर्ण्याभिधानं मृगादीनां विश्वासार्थम् । तुरगस्य वल्गनेन गतिविशेषेण चञ्चलकुण्डलोऽसौ दशरथो रुरुभिर्मृगविशेषैश्चेष्टिताश्चरिता या भूमयस्तासु विरुरुचे विदिद्युते ॥

५२ ॥ तन्विति । तनुषु लतासु विनिवेशितविग्रहाः संक्रमितात्मानः । भ्रमरेषु संक्रमिता ईक्षणवृत्तयो दृग्व्यापारा यासां ता वनदेवताः सुनयनं सुलोचनं नयेन नीत्या नन्दितास्तोषिताः कोसला येन तं दशरथमध्वनि ददृशुः ॥ प्रसन्नपावनतया ते देवता अपि गूढवृत्त्या ददृशुरित्यर्थः ॥

---

sky as if having an awning of the dust raised by the hoofs of his horses),--the king putting on a dress suitable for the purpose of going to the forest abounding in the animals, with a bow hung round his full neck.

51. The king with his hair tied up with a sylvan garland, with a mail on his body of the same colour with leaves of trees, and with the ear-rings set in motion by the gallop of his horse, looked bright on those grounds which were trodden by the *ruru* deer.

52. There the dryads with their bodies entered into slender creepers, with their function of sight transferred to bees, saw on the path, that beautiful-eyed king who, by his just rule, gave happiness to the people of Kosala.

---

51. B. I. with Hem., and the text only of Vallabha, तनु°, D. K. R. with Chá., Din., and Su., नव for तरु.° Seven Mss. with Vallabha read with Mallinátha. Hemádri also notices the reading. I. °परिच्छदः for तनुच्छदः.

52 B. C. E. H. P. R. with Hem., and Val., तरुलता° for तनुलता°. Vallabha's text with us. Hemadri also notices the reading of our text and says,—'तनुलता°' इति वा पाठः. E. जयनन्दित° for नयनन्दित°.

श्वगणिवागुरिकैः प्रथमास्थितं व्यपगतानलदस्यु विवेश सः ।
स्थिरतुरंगमभूमि निपानवन्मृगवयोगवयोपचितं वनम् ॥ ५३ ॥
अथ नभस्य इव त्रिदशायुधं कनकपिङ्गतडिद्गुणसंगतम् ।
धनुरधिज्यमनाधिरुपाददे नरवरो रवरोषितकेसरी ॥ ५४ ॥

५३ ॥ श्वगणीति । स दशरथः । शुनां गणः स एषामस्तीति श्वगणिनः श्वग्राहिणः । तैः । वागुरा मृगबन्धनरज्जवः ॥ "वागुरा मृगबन्धनी" इत्यमरः ॥ तया चरन्तीति वागुरिका जालिकाः ॥ "चरति" इति ठक्प्रत्ययः ॥ "द्वौ वागुरिकजालिकौ" इत्यमरः ॥ तैश्च प्रथममास्थितमधिष्ठितम् । व्यपगता अनला दावाग्नयो दस्यवस्तस्कराश्च यस्मात्तथोक्तम् ॥ "दस्युतस्करमोषकाः" इत्यमरः ॥ "कारयेद्वनविशोधनमादौ मातुरन्तिकमपि प्रविविक्षुः । आप्तशस्त्र्यनुगतः प्रविशेद्वा संकटे च गहने च न तिष्ठेत्" इति कामन्दकः ॥ स्थिरा दृढा पङ्कादिरहिता तुरंगमयोग्या भूमिर्यस्य तत् । निपानवदाहाववयुक्तम् ॥ "आहावस्तु निपानं स्यादुपकूपजलाशये" इत्यमरः ॥ मृगैर्हरिणादिभिर्वयोभिः पक्षिभिर्गवयैर्गोसदृशैररण्यपशुविशेषैश्चोपचितं समृद्धं वनं विवेश ॥

५४ ॥ अथेति । अथानाधिर्मनोव्यथारहितः । नरेषु वरो नरश्रेष्ठः । रवेण धनुष्टंकारेण रोषिताः केसरिणः सिंहा येन स राजा । कनकमिव पिङ्गः पिशङ्गो यस्तडिदेव गुणो मौर्वी तेन संगतं संयुक्तं त्रिदशायुधमिन्द्रचापं नभस्यो भाद्रपदमास इव ॥ "स्युर्नभस्यप्रौष्ठपदभाद्रभाद्रपदाः समाः" इत्यमरः ॥ अधिज्यमधिकृतमौर्वीकं धनुरुपाददे जग्राह ॥

---

53. The king then entered a forest which was already occupied by persons who carried with them nets and packs of dogs, which was cleared of forest-conflagration and robbers, in which the ground was made solid for horses, which had many pools of water and which was full of antelopes, birds and the Gayals (or the yaks).

54. Then that excellent king, free from any anxiety, took up his strung bow whose twangs made the lions ferocious, as the month of Bhādra-pada takes up the weapon of the thrice-ten gods (*i. e.* the rainbow of Indra) set with the string of lightning as yellow as gold.

---

53. B. K. with Val., and Su., श्वगण°, C. E. I. P. R. with Hemdri and the text only of Vallabha, श्वगणि° for श्वगणि°. D. E. K. P. with Val., प्रथमाश्रितं, H. प्रथमस्थितं for प्रथमास्थितं.

54. A. D. E. H. I. J. K. P. with Hem., Chā., Din., and Val., °संयुतं for °संगतं.

तस्य स्तनप्रणयिभिर्मुहुरेणशावैर्व्याहन्यमानहरिणीगमनं पुरस्तात् ।
आविर्बभूव कुशगर्भमुखं मृगाणां यूथं तदग्रसरगर्वितकृष्णसारम् ॥५५॥
तत्प्रार्थितं जवनवाजिगतेन राज्ञा तूणीमुखोद्धृतशरेण विशीर्णपङ्क्ति ।
श्यामीचकार वनमाकुलदृष्टिपातैर्वातेरितोत्पलदलप्रकरैरिवार्द्रैः ॥ ५६ ॥

५५ ॥ तस्येति । स्तनप्रणयिभिः स्तनप्रार्थिभिरेणशावैर्हरिणशिशुभिः ॥ "पृथुकः शावकः शिशुः" इत्यमरः ॥ मुहुर्व्याहन्यमानं हरिणीनां गमनं गतिर्यस्य तत् । कुशा गर्भे येषां तानि मुखानि यस्य तत्कुशगर्भमुखम । तस्य यूथस्याग्रसरो गर्वितो दृप्तश्च कृष्णसारो यस्य तत् । मृगाणां यूथं कुलम् ॥ "सजातीयैः कुलं यूथं तिरश्चां पुंनपुंसकम्" इत्यमरः ॥ तस्य दशरथस्य पुरस्तादग्र आविर्बभूव ॥
५६ ॥ तदिति । जवनो जवशीलः ॥ "जुचंक्रम्य—" इत्यादिना युच्प्रत्ययः ॥ "तरस्वी त्वरितो वेगी प्रजवी जवनो जवः" इत्यमरः ॥ तं वाजिनमश्वं गतेनारूढेन । तूर्णीषुधिः ॥ "बह्वादिभ्यश्च" इति स्त्रियां ङीष् ॥ तस्या मुखाद्विवरादुद्धृतशरेण राज्ञा प्रार्थितमभियातम् ॥ "याच्ञायामभियाने च प्रार्थना कथ्यते बुधैः" इति केशवः ॥ अत एव विशीर्णा पङ्क्तिः संघीभावो यस्य तत् । मृगयूथं । कर्तृ । आर्द्रैर्भयादश्रुसिक्तैराकुला भयचकिता ये दृष्टिपातास्तैः । वातेरितैः पवनप्रेरितैरुत्पलदलप्रकरैरिन्दीवरदलबृन्दैरिव । वनं श्यामीचकार ॥

---

55. Before him appeared a herd of deer the motion of hinds in which was now and then impeded by the fawns eager to suck their udders, with mouths having Kus'a-grass in them, and at the head of which was a proud black-antelope.

56. Pursued by the king who rode on a fleet horse and who had drawn an arrow out of the mouth of his quiver, that herd of the deer the lines of which were now dispersed over the plain, blackened the forest with the casting of their frightened eyes wet with tears, as if with clusters of petals of blue-lotuses scattered by the breeze.

---

55. B. C. D. with Hemâdri, कृष्णशारं for कृष्णसारं.

56. B. C. I. K. R with Vallabha, वातेरितोत्पल° for °वातेरितोत्पल°. B. C. E. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., अम्भः for आर्द्रैः. Hemâdri and Châritravardhana also notice the reading of our text. "वातेनेरितैः कम्पितैरुत्पलदलप्रकरैरिन्दीवरपत्रबृन्दैरम्भस्तोयमिव" । Hemâdri. "कैः किमिव । यथांभः पानीयं । कर्तृ । वातकम्पितानामुत्पलदलानां दलप्रकरैः पत्रसमूहैः किमपि श्यामं करोति तथेत्यर्थः". And further remarks, "उत्पलदलप्रकरैः कर्तृभिर्यथांभः श्यामीक्रियते तद्वदिति कश्चित् । तदसत् । वचनलिंगयोरभेदेनोपमादोषात् । वातीति वातो वायुः स यथा तैरम्भः श्यामीकरोति । तद्वदिति पक्षे लिंगमात्रभेददोषः ॥ पुंनपुंसकयोः प्रयोग इति वामनोक्तेः ॥ अक्लेद्रगं [?] न धीमतामिति दण्डिवचनाद्वा समर्थनीयः" Châritravardhana. "यथाम्भः । कर्तृ । वातकम्पितानां नीलोत्पलानां पत्रसमूहैः किमपि श्यामं करोति तथेत्यर्थः"

लक्ष्यीकृतस्य हरिणस्य हरिप्रभावः प्रेक्ष्य स्थितां सहचरीं व्यवधाय देहम् ॥
आकर्णकृष्टमपि कामितया स धन्वी बाणं कृपामृदुमनाः प्रतिसंजहार ॥ ५७ ॥
तस्यापरेष्वपि मृगेषु शरान्मुमुक्षोः कर्णान्तमेत्य बिभिदे निबिडोऽपि मुष्टिः ।
त्रासातिमात्रचटुलैः स्मरयत्सु नेत्रैः प्रौढप्रियानयनविभ्रमचेष्टितानि ॥ ५८ ॥
उत्तस्थुषः शिशिरपल्वलपङ्कमध्यान्मुस्ताप्ररोहकवलावयवानुकीर्णम् ।
जग्राह स द्रुतवराहकुलस्य मार्गं सुव्यक्तमार्द्रपदपङ्क्तिभिरायताभिः ॥ ५९ ॥

५७ ॥ लक्ष्यीकृतेति । हरिरिन्द्रो विष्णुर्वा । तस्येव प्रभावो यस्य स तथोक्तः । धन्वी धनुष्मान्स नृपः । लक्ष्यीकृतस्य वेद्धुमिष्टस्य हरिणस्य स्वप्रेयसो देहं व्यवधायानुरागादन्तर्धाय स्थिताम् ॥ चरतीति चरी ॥ पचादिषु चरेष्टित्करणान्ङीप् ॥ यथाह वामनः–“ अनुचरतीति चरेष्टित्त्वात् ” इति ॥ सह भूतां चरीं सहचरीं हरिणीं प्रेक्ष्य कामितया स्वयं कामुकत्वात् । कृपामृदुमनाः करुणार्द्रचित्तः सन् । आकर्णकृष्टमपि । दुष्प्रतिसंहरमपीत्यर्थः । बाणं प्रतिसंजहार । निपुणत्वादित्यर्थः ॥ नैपुण्यं तु धन्वीत्यनेन गम्यते ॥

५८ ॥ तस्येति । त्रासाद्भयादतिमात्रचटुलैरत्यन्तचञ्चलैः नेत्रैः प्रौढप्रियानयनविभ्रमचेष्टितानि चतुरकान्ताविलोचनविलासव्यापारान्स्मरयत्सु । सादृश्यात् । अपरेष्वपि मृगेषु शरान्मुमुक्षोस्तस्य नृपस्य कर्णान्तमेत्य प्राप्य निबिडो दृढोऽपि मुष्टिर्बिभिदे ॥ स्वयमेव भिद्यते स्म ॥ भिदेः कर्मकर्तरि लिट् ॥ कामिनस्तस्य प्रियाविभ्रमस्मृतिजनितकृपातिरेकान्मुष्टिभेदः । न त्वनैपुण्यादिति तात्पर्यार्थः ॥

५९ ॥ उत्तस्थुष इति । स नृपः । मुस्ताप्ररोहाणां मुस्ताङ्कुराणां कवला ग्रासाः ।

---

57. That skilful bowman resembling Hari (Indra or Vishnu) in might, having seen the mate of the antelope that was aimed at intervening between its body (and himself), being softened (in mind) with compassion by reason of his being himself a lover, withdrew his arrow though drawn to the ear.

58. Though desirous of levelling darts at other antelopes also, his clenching fist though firm, having brought to the end of the ear, became loose, because their eyes excessively trembling through fear put him in mind of the workings of the sportive plays of the eyes of his youthful loved-companions.

59. Then that king took the way of a herd of wild-boars which

---

Dinakara. “ किमिव । अम्भ इव । यथांभ उदकं वार्य्यीरितोत्पलदलप्रकरैः पवनान्दोलितैर्न्दीवरनिकरैः श्यामीक्रियते ” Vallabha. “ वनं किमिव । अंभो जलमिव । यथांभो वातेरितोत्पलदलप्रकरैः कमलपर्णसमूहैः श्यामीक्रियते । तद्वद्वनं पत्यापि आकुलदृष्टिप्रसरैरित्यन्वयः ” Sumativijaya.

57. D. with Vallabha, कायं for देहं. Vallabha's text with us.

58. A. B. D. E. H. I. K. R. with Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., स्मरतः मृनेत्रैः for स्मरयत्सु नेत्रैः. Hemâdri with us.

59. A. D. H. I, सपदि for शिशिर°. D. K. with Val., and Din.,

तं वाहनादवनतोत्तरकायमीषाद्विध्यन्तमुद्धतसटाः प्रतिहन्तुमीषुः ।
नात्मानमस्य विविदुः सहसा वराहा वृक्षेषु विद्धमिषुभिर्जघनाश्रयेषु ॥ ६० ॥
तेनाभिघातरभसस्य विकृष्य पत्त्री वन्यस्य नेत्रविवरे महिषस्य मुक्तः ।
निर्भिद्य विग्रहमशोणितलिप्तपुंखस्तं पातयां प्रथममास पपात पश्चात् ॥ ६१ ॥

नैरामवयवैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः शकलैरनुकीर्णं व्याप्तम्। आयताभिर्दीर्घाभि-राद्रपदपङ्क्तिभिः सुव्यक्तम्। शिशिरपल्वलपङ्कमध्यादुत्तस्थुष उत्थितस्य द्रुतवराहकुलस्य पलायितवराहयूथस्य मार्गं जग्राहानुससार ॥

६० ॥ तमिति। वराहाः। वाहनादश्वादीषदवनतोत्तरकायं किंचिदानतपूर्वकायं विध्यन्तं प्रहरन्तं तं नृपम्। उद्धतसटा ऊर्ध्वकेसराः सन्तः ॥ "सटा जटाकेसरयोः" इति केशवः ॥ प्रतिहन्तुमीषुः प्रतिहर्तुमैच्छन् ॥ अस्य नृपस्येषुभिः सहसा जघनानामाश्रयेष्ववष्टम्भेषु वृक्षेषु विद्धमात्मानं न विविदुः ॥ एतेन वराहाणां मनस्वित्वं नृपस्य हस्तलाघवं चोक्तम् ॥

६१ ॥ तेनेति। अभिघाते रभस औत्सुक्यं यस्य तस्य। अभिहन्तुमुद्यतस्येत्यर्थः। वन्यस्य वने भवस्य महिषस्य नेत्रविवरे नेत्रमध्ये तेन नृपेण विकृष्याकृष्य मुक्तः पत्त्री शरो विग्रहं महिषदेहं निर्भिद्य विदार्य। शोणितलिप्तो न भवतीत्य-

---

had previously run away from the midst of the cold mire in the ponds,—the way, which had been strewn with the bits of the mouthfuls of मुस्ता blades, and hence clearly indicated the long line of their wet foot-prints.

60. The wild boars with bristles erect wished to strike him in return when he was piercing them with the forepart of his body a little bent downwards from the horse ; but they did not know themselves (so) suddenly transfixed by his arrows to the trees against which their loins were leaning.

61. The king drew and shot an arrow in the hollow of the eye of a wild bison that was about to make a furious rush on him,

---

गुञ्जाप्ररोह , the latter "गुञ्जाप्ररोहाणां मुस्ताङ्कुराणां ये कवलाः &c., B. C. E. I. R. with Chá., Su., and the texts only of Hemâdri and Vallabha, गुन्द्राप्ररोह°, the former "गुन्द्राप्ररोहाणां मुस्ताङ्कुराणां ये कवला ग्रासास्तेषां" &c. for मुस्ताप्ररोह°. Hemâdri also notices the reading and says,—"गुन्द्राप्ररोह° " इति पाठे ॥ "स्याद्भद्रमुस्तको गुन्द्रा" ॥ B. E. with Su., °अवकीर्ण for °अनुकीर्ण.

60. D. न for तं. A. D. H. उद्धतमटाः for उद्धतसटाः. Ten Mss. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., read with Mallinâtha. K. P. with Val., and Su., जघनाश्रितेषु for जघनाश्रयेषु.

61. B. E. I. K. R. with Hem., Val., and Din., °लिप्तशल्यः for °लिप्तपुङ्खः.

प्रायो विषाणपरिमोषलघूत्तमाङ्गान्खड्गांश्चकार नृपतिर्निशितैः क्षुरप्रैः ।
शृङ्गं स दृप्तविनयाधिकृतः परेषामत्युच्छ्रितं न ममृषे न तु दीर्घमायुः ॥ ६२ ॥
व्याघ्रानभीरभिमुखोत्पतितान्गुहाभ्यः फुल्लासनाग्रविटपानिव वायुरुग्णान् ।
शिक्षाविशेषलघुहस्ततया निमेषात्तूणीचकार शरपूरितवक्त्ररन्ध्रान् ॥ ६३ ॥

शोणितलिप्तः पुङ्खो यस्य स तथोक्तः सन् । तं महिषं प्रथमं पातयामास । स्वयं पश्चात्पपात ॥ "कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि" इत्यत्रानुशब्दस्य व्यवहितविपर्यस्त-प्रयोगनिवृत्त्यर्थत्वात् । "पातयां प्रथममास" इत्यपप्रयोग इति पाणिनीयाः ॥ यथाह वार्तिककारः—"विपर्यासनिवृत्त्यर्थं व्यवहितनिवृत्त्यर्थं च" इति ॥

६२ ॥ प्राय इति । नृपतिर्निशितैः क्षुरप्रैः शरविशेषैः खड्गान्खड्गाख्यान्मृगान् ॥ "गण्डके खड्गखड्गिनौ" इत्यमरः ॥ प्रायो बाहुल्येन विषाणपरिमोषेण शृङ्ग-भङ्गेन लघून्यगुरूण्युत्तमाङ्गानि शिरांसि येषां तांश्चकार । न त्ववधीदित्यर्थः ॥ कुतः । दृप्तविनयाधिकृतो दृप्तनिग्रहनियुक्तः स राजा परेषां प्रतिकूलानामत्युच्छ्रि-तमुन्नतं शृङ्गं विषाणं प्राधान्यं वा ॥ "शृङ्गं प्राधान्यसान्वोश्च" इत्यमरः ॥ न ममृषे न सेहे ॥ दीर्घमायुर्जीवितकालम् ॥ "आयुर्जीवितकालो ना" इत्यमरः ॥ न ममृष इति न । किं तु ममृष एवेत्यर्थः ॥

६३ ॥ व्याघ्रानिति । अभीर्निर्भीकः सन् ॥ गुहाभ्योऽभिमुखमुत्पतितान्वायुना रुग्णान्भग्नान् । फुल्ला विकसिता येऽसनस्य सर्जकस्याग्रविटपास्तानिव स्थितान् । इषुधिभूतानित्यर्थः । व्याघ्राणां चित्ररूपत्वादुपमाने फुल्लविशेषणम् ॥ "अनुप-

—the arrow which having pierced through its body with its feathers unsoiled with blood, first threw the animal down and then dropped itself.

62. The king by means of his sharp arrows made the rhinoceroses mostly lighter in the head by relieving them of (the burden of) their horns ; for engaged as he was in subduing the wicked, he could not endure the supremacy (or towering horns) of his enemies ; but it is not that he could not endure their long life.

63. By reason of the activity of hand acquired by long practice the fearless king made the tigers, as they rushed against him

62. A. H. J. P. with Hemâdri परिमोक्ष for °परिमोष°. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण agrees with Mallinâtha, so do six other commentators. I. R. with Châ., and Val., पङ्गान् for °खड्गान्. B. C. E. I. K. R. with Val., and Su., अभ्युच्छ्रितं for अत्युच्छ्रितं. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also reads with Vallabha and others. D. with Châ., Din., Dharm., and Vija., च for तु.

63. B. D. I. R. with Val., वायुभग्नान्. one of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Vallabha, C. with Châ., and Din., वातरुग्णान् for वायुरुग्णान्. R. with Val., शिष्या° for शिक्षा°. R. निमेखात् for निमेषात्. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with R.

निर्घातोग्रैः कुञ्जलीनाञ्जिघांसुर्ज्यानिर्घोषैः क्षोभयामास सिंहान् ।
नूनं तेषामभ्यसूयापरोऽभूद्वीर्योदग्रे राजशब्दे मृगेषु ॥ ६४ ॥
तान्हत्वा गजकुलबद्धतीव्रवैरान्काकुत्स्थः कुटिलनखाग्रलग्नमुक्तान् ।
आत्मानं रणकृतकर्मणां गजानामानृण्यं गतमिव मार्गणैरमंस्त ॥ ६५ ॥

सर्गात्फुल्लश्रीवृक्षशाखायाः " इति निष्ठानकारस्य लत्वनिपातः ॥ " सर्जकासन-बन्धूकपुष्पप्रियकजीवकाः " इत्यमरः ॥ शरैः पूरितानि वक्त्ररन्ध्राणि येषां तान्व्याघ्रान् । शिक्षाविशेषेणाभ्यासातिशयेन लघुहस्ततया निमेषात्तूणीचकार ॥ तूणीरिव शरपूरितानित्यर्थः ॥

६४ ॥ निर्घातेति । कुञ्जेषु लीनान् ॥ " निकुञ्जकुञ्जौ वा क्लीबे लतादिपिहितोदरे " इत्यमरः ॥ सिंहाञ्जिघांसुर्हन्तुमिच्छुः । निर्घातो व्योमोत्थित औत्पातिकः शब्दविशेषः । तद्वदुग्रै रौद्रैर्ज्यानिर्घोषैर्मौर्वीशब्दैः क्षोभयामास ॥ अत्रोत्प्रेक्षते—तेषां सिंहानां संबन्धिनि वीर्येणोदग्र उन्नते मृगेषु विषये यो राजशब्दस्तस्मिन्नभ्यसूयापरोऽभून्नूनम् । अन्यथा कथमेतानन्विष्य हन्यादित्यर्थः ॥ शालिनीवृत्तम्—" शालिन्युक्ता म्तौ तगौ गोऽब्धिलोकैः " इति लक्षणात् ॥

६५ ॥ तानिति । काकुत्स्थो दशरथः । गजकुलेषु बद्धं तीव्रं वैरं येषां तान् । कुटिलेषु नखाग्रेषु लग्ना मुक्ता गजकुम्भमौक्तिकानि येषां तान्सिंहान्हत्वा । आत्मानं रणेषु कृतकर्मणां कृतोपकाराणां गजानामानृण्यमनृणत्वं मार्गणैः शरैः ॥ " मार्गणो याचके शरे " इति विश्वः ॥ गतं प्राप्तवन्तमिवामंस्त मेने ॥

---

out of caves, the quivers (for his arrows) by filling in a moment the hollows of their mouths with arrows, like the fore-branches of the flowering Asana trees broken down by the wind.

64. Desirous of killing the lions lurking in their arbour-caves, the king chafed them by means of the twangs of his bow-string, sounding as terrible as the noise of contending vapors in the sky. (In doing so) doubtless he was actuated by jealousy of their title of king of beasts, dignified by their supreme prowess.

65. Having killed them who bore an implacable animosity towards the race of elephants and who had pearls stuck to the forepoints of their crooked claws, the descendant of Kakutstha considered himself to have paid off with his arrows the debt of elephants that assisted him in battles.

---

64. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Chá., Val., and Su., मृगाणां for मृगेषु. So also Mallinátha, who says,—' मृगाणां ' इति पाठे । समासे गुणभूतत्वाद्राजशब्देन सम्बन्धो दुर्घटः.

65. D. गतिमिव for गतमिव. Chàritravardhana also notices this and says,—' गतिमिव ' इति पाठे न काप्युत्पत्तिः.

चमरान्परितः प्रवर्तिताश्वः क्वचिदाकर्णविकृष्टभल्लवर्षी ।
नृपतीनिव तान्वियोज्य सद्यः सितवालव्यजनैर्जगाम शान्तिम् ॥ ६६ ॥
अपि तुरगसमीपादुत्पतन्तं मयूरं न स रुचिरकलापं बाणलक्ष्यीचकार ।
सपदि गतमनस्कश्चित्रमाल्यानुकीर्णे रतिविगलितबन्धे केशपाशे प्रियायाः॥६७॥

६६ ॥ चमरानिति । क्वचिच्चमरान्परितः ॥ "अभितः परितः समया—" इत्यादिना द्वितीया ॥ प्रवर्तिताश्वः प्रधाविताश्वः । आकर्णं विकृष्टान्भल्लानिषुविशेषान्वर्षतीति स तथोक्तः स नृपो नृपतीनिव तांश्चमरान्सितवालव्यजनैः शुभ्रचामरैर्वियोज्य विरहय्य सद्यः शान्तिं जगाम ॥ शूराणां परकीयमैश्वर्यमेवासह्यम् । न तु जीवितमिति भावः ॥ औपच्छन्दसिकं वृत्तम् ॥

६७ ॥ अपीति । स नृपस्तुरगसमीपादुत्पतन्तमपि । सुप्रहारमपीत्यर्थः । रुचिरकलापं भासुरबर्हम् । मह्यामतिशयेन रौतीति मयूरो बर्हो ॥ पृषोदरादित्वात्साधुः ॥ तं चित्रेण माल्येनानुकीर्णे रत्यां विगलितबन्धे प्रियायाः केशपाशे सपदि गतमनस्कः प्रवृत्तचित्तः ॥ "उरःप्रभृतिभ्यः कप्" इति कप्प्रत्ययः ॥ न बाणलक्ष्यीचकार । न प्रजहारेत्यर्थः ॥

---

66. In some places, spurring his horse round the Chamara yaks and showering on them the भल्ल arrows drawn to the ear, the king दशरथ, depriving them of their white chowry-tails like other kings, immediately became contented.

67. Having at that moment been put in mind of the braided hair of his beloved queen interspersed with variegated flowers and the knot of which was made loose in amatory sports, the king did not aim his arrow at the peacock though hopping about his horse, and wearing a beautiful plumage.

---

66. B. C. E I K. P. with Hem., Chà., Din., Val., Dharm., and Vija., विवर्तिताश्वः for प्रवर्तिताश्वः. C. R. with Val., °निकृष्ट°, D. K. °निशक्त° for °विकृष्ट. B. D. with Val., and Su., read the latter half, "नृपतीनिव तान्विनाय शान्तिं सितवालव्यजनैर्वियोज्य सद्यः"। Vallabha's comements are "काकुत्स्थः क्वचित्प्रदेशे तान् चमरान् सद्यः तत्क्षणादेव शान्तिं निनाय शममनयत । किं कृत्वा । सितवालव्यजनैर्वियोज्य श्वेतपुच्छचामरैर्विजयित्वा [?] विधाय." He may have probably meant संत्याज्य or विरय्य. Vallabha also gives a variant for this; he says,—पाठान्तरं । "द्रुतमन्वयत कश्चित् यूथं चमराणां शरलग्नबालधीनां । नृपतीनिव तान्विनाय शान्तिं सितवालव्यजनैर्वियोज्य सद्यः"। And says,—स राजा क्वचित्कस्मिंश्चित्प्रदेशे चमराणां यूथं द्रुतं शीघ्रं अन्वयत अनुययौ । ननु चमरा रंगवाहिनः कथं तेनासादिताः । किंभूतानां । शरलग्नबालधीनां शरेषु काण्डगहनेषु लग्ना बालधयः पुच्छा येषां ते तेषां । पुच्छबालत्वाच्च ते मरणं दूरीक्रियन्ते न तु भंगं । पुच्छं दसकं" [?] ॥

67. C. D. मुकेशयाः for प्रियायाः. Hemâdri also notices the reading

तस्य कर्कशविहारसंभवं स्वेदमाननविलग्नजालकम् ।
आचचाम सतुषारशीकरो भिन्नपल्लवपुटो वनानिलः ॥ ६८ ॥
इति विस्मृतान्यकरणीयमात्मनः सचिवावलम्बितधुरं नराधिपम् ।
परिवृद्धरागमनुबन्धसेवया मृगया जहार चतुरेव कामिनी ॥ ६९ ॥
स ललितकुसुमप्रवालशय्यां ज्वलितमहौषधिदीपिकासनाथाम् ।
नरपतिरतिवाहयांबभूव क्वचिदसमेतपरिच्छदस्त्रियामाम् ॥ ७० ॥

६८ ॥ तस्येति । कर्कशविहारादतिव्यायामात्संभवो यस्य तम् । आनने विलग्नजालकं बद्धकदम्बकं तस्य नृपस्य स्वेदम् । सतुषारशीकरः शिशिराम्बुकणसहितः । भिन्ना निर्दलिताः पल्लवानां पुटाः कोशा येन सः । वनानिल आचचाम ॥ जहारेत्यर्थः ॥ रथोद्धता वृत्तमेतत् ॥

६९ ॥ इतीति । इति पूर्वोक्तप्रकारेणात्मनो विस्मृतमन्यत्करणीयं कार्यं येन तम् । विस्मृतान्यकार्यान्तरमित्यर्थः । सचिवैरवलम्बिता धृता धूर्यस्य तम् ॥ "ऋक्पूरब्धूःपथामानक्षे " इत्यच्प्रत्ययः समासान्तः ॥ अनुबन्धसेवया संततसेवया परिवृद्धो रागो यस्य तं नराधिपम् ॥ मृग्यन्ते यस्यां मृगा इति मृगया ॥ " परिचर्यापरिसर्यामृगयाटाट्यादीनामुपसंख्यानम् " इति शप्रत्ययान्तो निपातः ॥ चतुरा विदग्धा कामिनीव । जहाराचकर्ष ॥ " न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति । हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते " इति भावः । मञ्जुभाषिणी वृत्तं ॥

७० ॥ स इति । स नरपतिः । ललितानि कुसुमानि प्रवालानि पल्लवानि शय्या

68. Charged with dew drops the forest-breeze, which had opened the folds of the sprouting leaves, kissed away the sweat which was produced by his hard exercise and which collected in drops on his face.

69. Hunting, like an artful damsel, thus captivated that lord of the people, forgetful of his other regal duties, who had entrusted the burden of administration of kingdom to his ministers and whose love (or passion for hunting) had increased by its constant application.

70. Somewhere. without any attendants, did that king pass

---

and says,—'सुकञ्याः' इति पाठः साभिप्रायः । पाशशब्दः प्रशंसायां ॥ " प्रशंसावचनैश्च " इति समासः " ॥

68. B. C. E. I. J. K. P. R. with Hem., Val., and Din., सतुषारशीतलः, D. सुतुषारशीतलः for सतुषारशीकरः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinatha. H. °पल्लवयुगं for °पल्लवपुटं.

69. D. J. K. °वाविलम्बित° for °वावलम्बित.° C. E. with Su., धराधिपं for नराधिपं. Four commentators and twelve Mss. agree with us.

70. C. E. H. P. R. with Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., सुललित° for स ललित.° Hemádri with us.

उषसि स गजयूथकर्णतालैः पटुपटहध्वनिभिर्विनीतनिद्रः ।
अरमत मधुराणि तत्र शृण्वन्विहगविकूजितवन्दिमङ्गलानि ॥ ७१ ॥
अथ जातु रुरोर्गृहीतवर्त्मा विपिने पार्श्वचरैरलक्ष्यमाणः ।
श्रमफेनमुचा तपस्विगाढां तमसां प्राप नदीं तुरंगमेण ॥ ७२ ॥
कुम्भपूरणभवः पटुरुच्चैरुच्चचार निनदोऽम्भसि तस्याः ।
तत्र स द्विरदबृंहितशङ्की शब्दपातिनमिषुं विससर्ज ॥ ७३ ॥

यस्यास्ताम् । ज्वलिताभिर्महौषधिभिरेव दीपिकाभिः सनाथाम् ॥ तत्प्रधानामित्यर्थः ॥ त्रियामां रात्रिं कश्चित्समेतपरिच्छदः । परिहृतपरिजनः सन्नित्यर्थः ॥ अतिवाहयांबभूव गमयामास ॥ पुष्पिताग्रावृत्तम् ॥

७१ ॥ उषसीति । उषसि प्रातः पटूनां पटहानामिव ध्वनिर्येषां तैर्गजयूथानां कर्णैरेव तालैर्वाद्यभेदैर्विनीतनिद्रो विगतनिद्रः सन् । स नृपस्तत्र वने मधुराणि विहगानां विहंगानां विकूजितान्येव वन्दिनां मङ्गलानि मङ्गलगीतानि शृण्वन्नरमत ॥

७२ ॥ अथेति । अथ जातु कदाचिद्रुरोर्मृगस्य गृहीतवर्त्मा स्वीकृतरुरुमार्गो विपिने वने पार्श्वचरैरलक्ष्यमाणः ॥ तुरगवेगादित्यर्थः ॥ श्रमेण फेनमुचा ॥ सफेनं स्विद्यतेत्यर्थः ॥ तुरंगमेण तपस्विभिर्गाढामवगाढां सेवितां तमसां नाम नदीं सरितं प्राप ॥

७३ ॥ कुम्भेति । तस्यास्तमसाया अम्भसि कुम्भपूरणेन भवतीति भव उत्पन्नः ॥

---

away the night furnished with lights of luminous herbs of wonderful power, and with beddings of tender leaves and flowers.

71. Being roused at dawn from his slumbers by the flappings of the ears of an elephant-herd resembling the sound of loud-sounding drums, he amused himself there listening to the agreeable notes of birds (supplying the place of) the auspicious verses of bards.

72. Then once upon a time taking the path of a deer in the forest unobserved by his side-walkers, he got to the river Tamasà crowded by ascetics, with his horse foaming through fatigue.

73. From the waters of that river arose a deep agreeable sound

---

71. B. C. I. K. with Hem., Val., and Su., च for स. Hemádri says,—" च शब्दोऽसमेतपरिच्छेदानुवृत्त्यर्थः. " D. E. I. R. with Chá., Din., Su., and Vija., विधूतनिद्रः for विनीतनिद्रः. B. C. E. H. I. K. P. R. with Hem., Val., Chà., Din., Su., Dharm., and Vija., मधुरस्वराणि for मधुराणि तत्र.

नृपतेः प्रतिषिद्धमेव तत्कृतवान्पङ्क्तिरथो विलङ्घ्य यत् ।
अपथे पदमर्पयन्ति हि श्रुतवन्तोऽपि रजोनिमीलिताः ॥ ७४ ॥
हा तातेति क्रन्दितमाकर्ण्य विषण्णस्तस्यान्विष्यन्वेतसगूढप्रभवं सः ।
शल्यप्रोतं प्रेक्ष्य सकुम्भं मुनिपुत्रं तापादन्तःशल्य इवासीत्क्षितिपोऽपि ॥७५॥

पचाद्यच् ॥ पटुर्न धुरः ॥ उच्चैर्गम्भीरो निनदो ध्वनिरुच्चचारोदियाय ॥ तत्र निनदे स नृपः । द्विरदबृंहितं शङ्कत इति द्विरदबृंहितशङ्की सन् । शब्देन शब्दानुसारेण पततीति शब्दपातिनमिषुं विससर्ज ॥ स्वागता वृत्तम् ॥

७४ ॥ नृपतेरिति । तत्कर्म नृपतेः क्षत्रियस्य प्रतिषिद्धमेव निषिद्धमेव यदेतत्कर्म गजवधरूपं पङ्क्तिरथो दशरथो विलङ्घ्य ॥ " लक्ष्मीकामो युद्धादन्यत्र करिवधं न कुर्यात् " । इत्येवं शास्त्रमुल्लङ्घ्य कृतवान् ॥ ननु विदुषस्तस्य कथमीदृग्विचेष्टितमत आह—अपथ इति । श्रुतवन्तोऽपि विद्वांसोऽपि रजोनिमीलिता रजोगुणावृताः सन्तः ॥ न पन्था इत्यपथम् ॥ " पथो विभाषा " । इति वा समासान्तः ॥ " अपथं नपुंसकम् " इति नपुंसकत्वम् ॥ " अपन्थास्त्वपथं तुल्यम् " इत्यमरः॥ तस्मिन्नपथेऽमार्गे पदमर्पयन्ति हि निक्षिपन्ति हि ॥ प्रवर्तन्त इत्यर्थः ॥ वैतालीयं वृत्तम् ॥

७९ ॥ हा तातेति । हेत्यार्तौ । तातो जनकः ॥ " हा विषादशुगर्तिषु " इति ॥ " तातस्तु जनकः पिता " इति चामरः ॥ हा तातेति । क्रन्दितं क्रोशनमाकर्ण्य विषण्णो भग्नोत्साहः सन् । तस्य क्रन्दितस्य वेतसगूढं वेतसैश्छन्नम् । प्रभवत्यस्मादिति प्रभवः कारणम् । तमन्विष्यञ्छल्येन शरेण प्रोतं स्यूतम् ॥ " शल्यं शङ्कौ शरे वंशकम्बिकायां च तोमरे " इति विश्वः ॥ सकुम्भं मुनिपुत्रं प्रेक्ष्य स क्षितिपोऽपि तापाद्दुःखादन्तःशल्यं यस्य सोऽन्तःशल्य इवासीत् ॥ मत्तमयूरं वृत्तम ॥

---

produced by the filling of a jar ; there (in the direction of that sound) he discharged an arrow that fled with a sound, suspecting it to be the roar of an elephant.

74. What Das'aratha did transgressing the rule was indeed strictly forbidden to a king ; for even learned men when blinded by passion step into a wrong path.

75. Immediately hearing a cry, " Oh father " being alarmed and seeking its cause concealed among the reeds, and finding there a son of a Muni pierced with his arrow, with a jar (by his side), the king also became like one with an arrow fixed in his heart from grief.

---

74. B. D. E. H. I. K. P. with Hem., Chá., Din.. Val., Su., Dharm., and Vija., यत्-तत् for तत्-यत्. Sumativijaya's text with us. B. C. I. with Chá., and Din., विशंक्य for विलंघ्य.

75. A. B. D. E. I. K. P. R. वेतसगूढं प्रभवं for वेतसगूढप्रभवं. Also Mallinátha. D. R. वीक्ष्य for प्रेक्ष्य.

तेनावतीर्य तुरगात्प्रथितान्वयेन पृष्टान्वयः स जलकुम्भनिषण्णदेहः ।
तस्मै द्विजेतरतपस्विसुतं स्खलद्भिरात्मानमक्षरपदैः कथयांबभूव ॥ ७६ ॥
तच्चोदितश्च तमनुद्धृतशल्यमेव पित्रोः सकाशमवसन्नदृशोर्निनाय ।
ताभ्यां तथागतमुपेत्य तमेकपुत्रमज्ञानतः स्वचरितं नृपतिः शशंस ॥ ७७ ॥

७६ ॥ तेनेति । प्रथितान्वयेन प्रख्यातवंशेन ॥ एतेन पापभीरुत्वं सूचितम् ॥ तेन राज्ञा तुरगादवतीर्य पृष्टान्वयो ब्रह्महत्याशङ्कया पृष्टकुलः । जलकुम्भे निषण्णदेहः स मुनिपुत्रस्तस्मै राज्ञे स्खलद्भिः । अशक्तिवशादर्धोच्चारितैरित्यर्थः । अक्षरप्रायैः पदैरक्षरपदैरात्मानं द्विजेतरश्चासौ तपस्विसुतश्च तं द्विजेतरतपस्विसुतं कथयांबभूव ॥ न तावत्त्रैवर्णिक एवाहमस्मि किं तु करणः ॥ "वैश्यात्तु करणः शूद्रायाम्" इति याज्ञवल्क्यः ॥ कृता ब्रह्महत्येत्यर्थः ॥ तथा च रामायणे—"ब्रह्महत्याकृतं पापं हृदयादपनीयताम् । न द्विजातिरहं राजन्मा भूत्ते मनसो व्यथा । शूद्रायामस्मि वैश्येन जातो जनपदाधिप" इति ॥

७७ ॥ तदिति । तच्चोदितस्तेन पुत्रेण चोदितः पितृसमीपं प्रापयेत्युक्तः स नृपतिरनुद्धृतशल्यमनुत्पाटितशल्यमेव तं मुनिपुत्रम् । अवसन्नदृशोर्नष्टचक्षुषोः । अन्धयोरित्यर्थः । पित्रोर्मातापित्रोः ॥ "पिता मात्रा" इत्येकशेषः ॥ सकाशं समीपं निनाय ॥ इदं च रामायणविरुद्धम् । तत्र—"अथाहमेकस्तं देशं नीत्वा तौ भृशदुःखितौ । अस्पर्शयमहं पुत्रं तं मुनिं सह भार्यया" इति नदीतीर एव मृतं पुत्रं प्रति पित्रोरानयनाभिधानात् ॥ तथागतं वेतसगूढम् । एकश्चासौ पुत्रश्च तमेकपुत्रम् ॥ एकग्रहणं पित्रोरनन्यगतिकत्वसूचनार्थम् ॥ तं मुनिपुत्रमुपेत्य संनिकृष्टं गत्वा । अज्ञानतः करिभ्रान्त्या स्वचरितं स्वकृतं ताभ्यां मातापितृभ्याम् ॥ क्रियाग्रहणाच्चतुर्थी ॥ शशंस कथितवान् ॥

---

76. Being asked his race by the king of a celebrated lineage who had then got down from his horse, he, with his body resting on the water jar, declared himself in faltering syllables to be the son of an ascetic belonging to a caste other than the twice-born one.

77. And being urged by him the lord of people took him even with the arrow unextracted (from his bosom) to his parents who had lost their sight, and advancing towards their only son, who was in that condition (enveloped in Vetasa plants), narrated to them his rash act, committed through ignorance.

---

76. E. स्व° for स. B. C. E. I. K. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vija., °सुतः for °सुतं. E. अक्षयपदैः for अक्षरपदैः.

77. B. तेन + उदितः, C. E. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., नोदितः for चोदितः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण agrees with Mallinátha. D. स: for च.

तौ दंपती बहु विलप्य शिशोः प्रहर्त्रा शल्यं निखातमुदहारयतामुरस्तः ।
सोऽभूत्परासुरथ भूमिपतिं शशाप हस्तार्पितैर्नयनवारिभिरेव वृद्धः ॥ ७८ ॥
दिष्टान्तमाप्स्यति भवानपि पुत्रशोकादन्त्ये वयस्यहमिवेति तमुक्तवन्तम् ।
आक्रान्तपूर्वमिव मुक्तविषं भुजंगं प्रोवाच कोसलपतिः प्रथमापराद्धः॥ ७९॥

७८ ॥ ताविति । तौ जाया च पतिश्च दंपती ॥ राजदन्तादिषु जायाशब्दस्य दम्भावो जम्भावश्च विकल्पेन निपातितः ॥ " दंपती जंपती जायापती भार्यापती च तौ " इत्यमरः ॥ बहु विलप्य भूयिष्ठं परिदेव्य । शिशोरुरस्तो वक्षसः ॥ " पञ्चम्यास्तसिल् " ॥ निखातं शल्यं शरं प्रहर्त्रा राज्ञोदहारयतामुद्धारयामासतुः ॥ स शिशुः परासुर्मृतोऽभूत् ॥ अथ वृद्धो हस्तेऽर्पितैर्नयनवारिभिरेव शापदानस्य जलपूर्वकत्वात्तैरेव भूमिपतिं शशाप ॥

७९ ॥ दिष्टेति । हे राजन् । भवानप्यन्त्ये वयस्यहमिव पुत्रशोकाद्दिष्टान्तं कालावसानम् । मरणमित्यर्थः ॥ " दिष्टः काले च दैवे स्याद्दिष्टम् " इति विश्वः ॥ आप्स्यति प्राप्स्यति । इत्युक्तवन्तम् । आक्रान्तः पादाहतः पूर्वमाक्रान्तपूर्वः ॥ सुप्सुपेति समासः ॥ प्रथममपकृतमित्यर्थः । मुक्तविषमपकारिणि पश्चादुत्सृष्टविषं भुजंगमिव स्थितं तं वृद्धं प्रथमापराद्धः प्रथमापराधी ॥ कर्तरि क्तः ॥ इदं च सहने कारणमुक्तम् ॥ शापदानात्पश्चादपराधी कोसलपतिर्दशरथः प्रोवाच ॥

---

78 That couple, having lamented bitterly, bade the murderer of their young son extract the infixed arrow from his bosom ; this being done he became lifeless. Then the old man cursed that Lord of the earth with the very waters from his eyes gathered in his hands.

79. The Lord of the Kos'alas, who was the first to commit a sin thus addressed him who, like a snake that on being first trodden under foot emits poison, uttered the following imprecation,—' thou shalt also like myself meet a death in thy old age through grief for thy son. '

---

78. C. D. प्रहर्तुः for प्रहर्त्रा. Chāritravardhana notices the reading and says,—" कुत्रापि । ' प्रहर्तुः ' इति पाठस्तत्र्व्याख्या । तौ दम्पती बहु विलप्य शिशोरुरसः [उरस्तः] सकाशात् प्रहर्तुर्नृपस्य निखातं बाणं तेन प्रहर्त्रा राज्ञोदहारयतां । प्रहर्तुरिति बाणसम्बन्धे षष्ठी " ॥ R. with Val., and Su., निषात° for निखात.°

79. B. C. E. I. K. R. with Hem., and Val., दिष्ट्यान्त° for दिष्टान्त° One of the three Mss. of Chāritravardhana's शिशुहितैषिणी agrees with Hemādri and Vallabha. H. अश्यति for आप्स्यति. C. E. I. K. P. R. with Hem., Chā., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., अन्ते for अन्त्ये. D. मुक्तविषं, Hemādri मुक्तमुखं, and says,—इति पाठे । अपकारिणां मुखादुत्सृष्टविषं, for मुक्तविषं. B. C. E. H. K. P. R. with Hem., Val., and Su., प्रथमापराधः, A. with Chā., प्रथमापकारः, J. प्रथमापराधी for प्रथमापराद्धः.

शापोऽप्यदृष्टतनयाननपद्मशोभे सानुग्रहो भगवता मयि पातितोऽयम् ।
कृष्यां दहन्नपि खलु क्षितिमिन्धनेद्धो बीजप्ररोहजननीं ज्वलनः करोति ॥८० ॥
इत्थं गते गतघृणः किमयं विधत्तां वध्यस्तवेत्यभिहितो वसुधाधिपेन ।
एधान्हुताशनवतः स मुनिर्ययाचे पुत्रं परासुमनुगन्तुमनाः सदारः ॥ ८१ ॥

८० ॥ शाप इति । अदृष्टा तनयाननपद्मशोभा येन तस्मिन्नपुत्रके मयि भगवता पातितः ॥ वज्रप्रायत्वात्पातित इत्युक्तम् ॥ अयं पुत्रशोकान्म्रियस्वेत्येवंरूपः शापोऽपि सानुग्रहः । वृद्धकुमारीवरन्यायेनेष्टावाप्तेरन्तरीयकत्वात्सोपकार एव ॥ निग्राहकस्याप्यनुग्राहकत्वमर्थान्तरन्यासेनाह—कृष्यामिति । इन्धनैः काष्ठैरिद्धः प्रज्वलितो ज्वलनोऽग्निः कृष्यां कर्षणार्हाम् ॥ " ऋदुपधाचाक्लृपिचृतेः " इति क्यप् ॥ क्षितिं दहन्नपि बीजप्ररोहाणां बीजाङ्कुराणां जननीमुत्पादनक्षमां करोति ॥

८१ ॥ इत्थमिति । इत्थंगते प्रवृत्ते सति । वसुधाधिपेन राज्ञा । गतघृणो निष्करुणः । हन्तृत्वान्निष्कृप इत्यर्थः । अत एव तव वध्यो वधार्होऽयं जनः ॥ अयमिति राज्ञो निर्वेदादनादरेण स्वात्मनिर्देशः ॥ किं विधत्तामित्यभिहित उक्तः । तया किं विधेयमिति विज्ञप्त इत्यर्थः । स मुनिः सदारः सभार्यः परासुं गतासुं पुत्रमनुगन्तुं मनो यस्य सोऽनुगन्तुमनाः सन् ॥ " तुं काममनसोरपि " इति मकारलोपः ॥ हुताशनवतः साग्नीनेधान्काष्ठानि ययाचे ॥ न चात्रात्मघातनदोषः—" अनुष्ठानासमर्थस्य वानप्रस्थस्य जीर्यतः । भृग्वग्निजलसंपातैर्मरणं प्रविधीयते " इति वचनात् ॥

---

80. To me who have not yet seen the loveliness of a son's lotus-like face, even the curse itself inflicted by your divine self is attended with a blessing. Indeed fire inflamed by fuel makes the arable soil the producer of shoots from seed, though it burns (the soil) .

81. So circumstanced the sage, being addressed by the Lord of the earth in the following words—" what shall this cruel man, who deserves death at thy hands, do for thee ? " begged for fuel kindled by fire wishing in company with his wife to follow his deceased son.

---

80. D. E. अथ for अपि. H. पद्मभोग for पद्मशोभे. D. हि भवता for भगवता. D. with Vallabha's text कक्षां for कृष्यां. D. दहनः for ज्वलनः.

81. E. इद्दंगते for इत्थंगते. B. C. E. H. I. J. K. R. with Val., अभिहिते for अभिहितः.

प्राप्तानुगः सपदि शासनमस्य राजा संपाद्य पातकविलुप्तधृतिर्निवृत्तः ।
अन्तर्निविष्टपदमात्मविनाशहेतुं शापं दधज्ज्वलनमौर्वमिवाम्बुराशिः ॥८२॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कविश्रीकालिदासकृतौ
मृगयावर्णनो नाम नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

८२ ॥ प्राप्तेति । प्राप्तानुगो राजा सपद्यस्य मुनेः शासनं काष्ठसंभरणरूपं प्रागेकोऽपि संप्रति प्राप्तानुचरत्वात्संपाद्य पातकेन मुनिवधनिमित्तेन विलुप्तधृतिर्नष्टोत्साहः । अन्तर्निविष्टपदमन्तर्लब्धस्थानमात्मविनाशहेतुं शापम् । अम्बुराशिरौर्वं ज्वलनं वडवानलमिव ॥ "और्वस्तु वाडवो वडवानलः " इत्यमरः ॥ दधद्धृतवान्सन् । निवृत्तो वनादिति शेषः ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमच्छपाच्छयसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां नवमः सर्गः ॥

---

82. The king who (by this time) got his followers, having immediately executed his order, returned (to his capital) the peace of his mind being destroyed by the sinful act, carrying with him the curse,—the cause of his own destruction that had stepped into his heart, like the ocean bearing the Aurva fire.

---

82. After this verse D. reads,—" तदर्थमर्थज्ञगते गतत्रपः किमेष ते वध्यजनोऽनुतिष्ठतु । स वह्निसंस्कारमयाचतात्मनः सदारसूनोर्विदधे च तन्नृपः " ॥ and " समेयिवान्रघुवृषभः स्वसैनिकैः स्वमन्दिरं शिथिलधृतिर्निवर्तितः । मनोगतं गुरुमृषिशापमुद्वहन्क्षयानलं जलधिरिवान्तकास्पदं " ॥ [D. निवृत्तः for निवर्तितः. D. अन्तकं पदं for अन्तकास्पदं. D. अन्यसैनिकैः for स्वसैनिकैः.] These verses are also noticed by Hemādri and Vallabha. The latter who says-"समेति । रघुवृषभः स्वमन्दिरं निवर्तितः स्वनगरं प्रतिनिवृत्तः । किं कृतवान् । स्वसैनिकैः समेयिवान् निजानुचरैः सह संयोगं प्राप्तवान् । अपरं किंभूतः । शिथिलधृतिः श्लथसंतोष । किं कुर्वन् । मनोगतं चेतसि स्थितं गुरुतरं ऋषिशापमुद्वहन् । क इव । जलधिरिव । यथा जलधिः समुद्रः क्षयानलं बिभर्ति । किं भूतं क्षयानलं । अन्तकास्पदं कालनिलयम् ॥ प्रभातावृत्तं ॥ उपमालंकारः ॥

। दशमः सर्गः ।

पृथिवीं शासतस्तस्य पाकशासनतेजसः ।
किंचिदूनमनूनर्द्धेः शरदामयुतं ययौ ॥ १ ॥
न चोपलेभे पूर्वेषामृणनिर्मोक्षसाधनम् ।
सुताभिधानं स ज्योतिः सद्यः शोकतमोपहम् ॥ २ ॥

आशंसे नित्यमानन्दं रामनामकथामृतम् ।
सद्भिः स्वश्रवणैर्नित्यं पेयं पापं प्रणोदितुम् ॥

१. ॥ पृथिवीमिति । पृथिवीं शासतः पालयतः पाकशासनतेजस इन्द्रवर्चसः । अनूनर्द्धेर्महासमृद्धेस्तस्य दशरथस्य किंचिदूनमीषन्न्यूनं शरदां वत्सराणामयुतं दशसहस्रं ययौ ॥ "एक दशशतसहस्राण्ययुतं नियुतं तथा प्रयुतम् । कोट्यर्बुदं च पद्मं स्थानात्स्थानं दशगुणं स्यात्" इत्यार्यभट्टः ॥ इदं च मुनि शापात्परं वेदितव्यं न तु जननात् ॥ "षष्टिवर्षसहस्राणि जातस्य मम कौशिक । दुःखेनोत्पादितश्चायं न रामं नेतुमर्हसि" इति रामायणविरोधात् ॥ नाप्यभिषेकात्परं तस्यापि "सम्यग्विनीतमथ वर्महरं कुमारमादिश्य रक्षणविधौ विधिवत्प्रजानाम्" इति कौमारानुष्ठितत्वाभिधानात्स एव विरोध इति ॥

२ ॥ न चेति । स दशरथः पूर्वेषां पितॄणामृणनिर्मोक्षसाधनम् ॥ "एष वा अनृणो यः पुत्री" इति श्रुतेः ॥ पितॄणामृणनिर्मुक्तिकारणम् । सद्यः शोक एव तमस्तदपहन्तीति शोकतमोपहम् ॥ अत्राभयंकर इति वदुपपदेऽपि तदन्तविधिमाश्रित्य ॥ "अपे क्लेशतमसोः" इति डप्रत्ययः ॥ सुताभिधानं सुताख्यं ज्योतिर्नोपलेभे न प्राप च ॥

---

1. While he (*i. e.* the king दशरथ) who was as resplendent as Indra (the destroyer of पाक) and who had immense wealth (at his disposal) was ruling over the earth, little less than a myriad of autumns passed away.

2. And yet he did not obtain that light whose another name is son (which comes in the shape of a son) which is the means of relieving himself of the debt of his forefathers and which instantly dispels the darkness of grief.

---

2. C. D. E. H. I. R. सज्ज्योतिः for स ज्योतिः. Between 2-3 B. E. I. with Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., read,—"मनोर्वंशभिरं तस्मिन्ननभिव्यक्तसन्ततिः । निमज्य पुनरुत्थास्यन्नदः शोण इवाभवत्" [E. उत्थाय, Su., उत्थानात् for उत्थास्यन्. E. ह्रदः for नदः.] Only one Ms. out of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण reads this and says,—"मनोर्वंशेति । तस्मिन्राजनि अनभिव्यक्ता अप्रकटा सन्ततिः पुत्रो यस्य सः ; तादृशो मनोर्वंशो निमज्य पुनरुत्थास्यन् । किञ्चिदप्रकटः शोणाख्यो नद इवाभवत् ॥ "सन्ततिस्तंतुवाये स्यात्पारंपर्ये सुतेऽपि च" इति वैजयन्ती ॥ तत्र रत्नोपमानं (?)

आतिष्ठत्प्रत्ययापेक्षसंततिः स चिरं नृपः ।
प्राङ्मन्थादनभिव्यक्तरत्नोत्पत्तिरिवार्णवः ॥ ३ ॥
ऋष्यशृङ्गादयस्तस्य सन्तः संतानकाङ्क्षिणः ।
आरेभिरे जितात्मानः पुत्रीयामिष्टिमृत्विजः ॥ ४ ॥
तस्मिन्नवसरे देवाः पौलस्त्योपप्लुता हरिम् ।
अभिजग्मुर्निदाघार्ताश्छायावृक्षमिवाध्वगाः ॥ ५ ॥

३ ॥ आतिष्ठदिति । प्रत्ययं हेतुमपेक्षत इति प्रत्ययापेक्षा संततिर्यस्य स तथोक्तः ॥ " प्रत्ययोऽधीनशपथज्ञानविश्वासहेतुषु " इत्यमरः ॥ स नृपः । मन्थात्प्राङ्मन्थनात्पूर्वमनभिव्यक्तादृष्टा रत्नोत्पत्तिर्यस्य सोऽर्णव इव । चिरमतिष्ठत् ॥ सामग्र्यभावाद्विलम्बो न तु वन्ध्यत्वादिति भावः ॥

४ ॥ ऋष्यशृङ्गेति । य ऋष्यशृङ्गादयः । ऋष्यशृङ्गो नाम कश्चिदृषिः । तदादयः । ऋतुमृतौ वा यजन्तीत्यृत्विजो याज्ञिकाः ॥ " ऋत्विग्दधृक्- " इत्यादिना क्विन्प्रत्ययान्तो निपातः ॥ जितात्मानो जितान्तःकरणाः सन्तः संतानकाङ्क्षिणः पुत्रार्थिनस्तस्य दशरथस्य पुत्रीयां पुत्रनिमित्ताम् ॥ " पुत्राच्छ च " इति छप्रत्ययः ॥ इष्टिं यागमारेभिरे प्रचक्रमिरे ॥

५ ॥ तस्मिन्निति । तस्मिन्नवसरे पुत्रकामेष्टिप्रवृत्तिसमये देवाः । पुलस्त्यस्य गोत्रापत्यं पुमान्पौलस्त्यो रावणः । तेनोपप्लुताः पीडिताः सन्तः । निदाघार्ता घर्मातुराः । अध्वानं गच्छन्तीत्यध्वगाः पान्थाः ॥ " अन्तात्यन्ताध्वदूरपारसर्वानन्तेषु डः " इति डप्रत्ययः ॥ छायाप्रधानं वृक्षं छायावृक्षमिव ॥ शाकपार्थिवादित्वात्समासः ॥ हरिं विष्णुमभिजग्मुः ॥

---

3. That king waited long, having his progeny dependent on some formal cause, and therefore appearing like the ocean with its produce of gems undisplayed before its churning.

4. Then ऋष्यशृंग and other holy priests becoming self-subdued began to perform the sacrifice that would secure the birth of a son to him who was anxious to have issue.

5. At this juncture the gods being oppressed by the son of पुलस्त्य (*i. e.* Râva*n*a) went over to Hari, as do travellers oppressed by heat to an umbrageous tree.

But Châritravardhana says—(उत्तरत्र तु) रामचन्द्रादिसंभवात्प्राकट्यं ॥ हे० ॥. Hemâdri after commenting this pronounces it to be a spurious verse. Some commentators read this after the 3rd verse and some after the 4th verse of our text.

3. E. सुचिरं for स चिरं. E. नृपं for नृपः.

4. C. with Châ, and Din., प्रारेभिरे for आरेभिरे. B. H. J. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Dharm., and Vija., यतात्मानः for जितात्मानः.

ते च प्रापुरुदन्वन्तं बुबुधे चादिपूरुषः ।
अव्याक्षेपो भविष्यन्त्याः कार्यसिद्धेर्हि लक्षणम् ॥ ६ ॥
भोगिभोगासनासीनं ददृशुस्तं दिवौकसः ।
तत्फणामण्डलोदार्चिर्मणिद्योतितविग्रहम् ॥ ७ ॥
श्रियः पद्मनिषण्णायाः क्षौमान्तरितमेखले ।
अङ्के निक्षिप्तचरणमास्तीर्णकरपल्लवे ॥ ८ ॥

६ ॥ त इति । ते देवाश्चोदन्वन्तं समुद्रम् ॥ " उदन्वानुदधौ च " इति निपातः ॥ प्रापुः ॥ आदिपूरुषो विष्णुश्च बुबुधे । योगनिद्रां जहावित्यर्थः ॥ गमनप्रतिबोधयोरविलम्बार्थौ चकारौ ॥ तथा हि । अव्याक्षेपो गम्यस्याव्यासङ्गः । अविलम्ब इति यावत् । भविष्यन्त्याः कार्यसिद्धेर्लक्षणं लिङ्गं हि ॥ उक्तं च- " अनन्यपरता चास्य कार्यसिद्धेस्तु लक्षणम् " इति ॥

७ ॥ भोगीति । द्यौरोको येषां ते दिवौकसो देवाः ॥ पृषोदरादित्वात्साधुः ॥ भोगिनः शेषस्य भोगः शरीरम् ॥ " भोगः सुखे स्त्र्यादिभृतावहेश्च फणकाययोः " इत्यमरः ॥ स एवासनं सिंहासनम् । तत्रासीनमुपविष्टम् ॥ आसेः शानच् ॥ " ईदासः " इतीकारादेशः ॥ तस्य भोगिनः फणामण्डले य उदर्चिष उद्गमयो मणयस्तैर्द्योतितविग्रहं तं विष्णुं ददृशुः ॥

८ ॥ श्रिय इति । कीदृशं विष्णुम् । पद्मे निषण्णाया उपविष्टायाः श्रियः क्षौमान्तरिता दुकूलव्यवहिता मेखला यस्य तस्मिन् । आस्तीर्णौ करपल्लवौ पाणिपल्लवौ यस्मिन् ॥ विशेषणद्वयेनापि चरणयोः सौकुमार्यात्कटिमेखलास्पर्शासहत्वं सूच्यते ॥ तस्मिन्नङ्के निक्षिप्तचरणम् ॥

---

6. No sooner did they reach the ocean than Vishnu, the primeval spirit (first being) awoke. Absence of delay is certainly the sign of future success in an undertaking.

7. The denizens of heaven saw him reclining on a seat (or throne) made up of the body of the serpent, and whose body was illuminated by the luminous gems on its expansive hood—

8. Him who had his feet resting on the thigh (lap) of the goddess Lakshmi seated as she was on a lotus,—the thigh which had its zone covered by the silk-woven garment, and on which were spread her tendril-like palms—

---

6. B. I. R. °पौरुषः for °पूरुषः.

7. D. ते for तम्.

8. C. with the text only of Val., °मेचले for °मेखले.

प्रबुद्धपुण्डरीकाक्षं बालातपनिभांशुकम् ।
दिवसं शारदमिव प्रारम्भसुखदर्शनम् ॥ ९ ॥
प्रभानुलिप्तश्रीवत्सं लक्ष्मीविभ्रमदर्पणम् ।
कौस्तुभाख्यमपां सारं बिभ्राणं बृहतोरसा ॥ १० ॥
बाहुभिर्विटपाकारैर्दिव्याभरणभूषितैः ।
आविर्भूतमपां मध्ये पारिजातमिवापरम् ॥ ११ ॥

९ ॥ प्रबुद्धेति । पुनः कीदृशम् । प्रबुद्धं विकसितं यत्पुण्डरीकं तदिवाक्षिणी यस्य तम् । दिवसे तु पुंडरीकमेवाक्षि यस्येति विग्रहः । बालातपेन निभं सदृशमंशुकं यस्य तम् । पीताम्बरधरमित्यर्थः । अन्यत्र बालातपव्याजांशुकमित्यर्थः ॥ " निभो व्याजसदृक्षयोः " इति विश्वः ॥ प्रारम्भाः प्रकृष्टोद्योगा योगिनः । तेषां सुखदर्शनम् । अन्यत्र प्रारम्भ आदौ सुखदर्शनं शारदं शरत्संबन्धिनं दिवसमिव स्थितम् ॥

१० ॥ प्रभेति । पुनः किंविधम् । प्रभयानुलिप्तमनुरञ्जितं श्रीवत्सं नाम लाञ्छनं येन तम् । लक्ष्म्या विभ्रमदर्पणं कौस्तुभ इत्याख्या यस्य तम् । अपां समुद्राणां सारं स्थिरांशम् । अम्नयमणिमित्यर्थः ॥ बृहतोरसा बिभ्राणम् ॥

११ ॥ बाहुभिरिति । विटपाकारैः शाखाकारैर्दिव्याभरणभूषितैर्बाहुभिरुपलक्षितम् । अत एवापां सैन्धवानां मध्य आविर्भूतमपरं द्वितीयं पारिजातमिव स्थितम् ॥

---

9. Him whose eyes were like full-blown lotuses, whose garment resembled the young sun, and whose sight was pleasant to those who had devoted themselves to best meditations and who was therefore like autumnal day, whose blooming lotuses are its eyes, whose morning sun is its garment and which is agreeable to look at in its beginning—

10 Him wearing on his broad breast the quintessence of the oceans named Kaustubha, which was the mirror for Lakshmî's toilet (*lit.* graces of her face) and which enveloped in its lustre the S'rivatsa mark—

11. Him who was, as it were, another Pârijâta that had ap-

---

9. D. प्रफुल्ल° for प्रबुद्ध°. C. with Vijay., °मुख° for °सुख°. B. I. °दर्शनं for °दर्शनम्.

10. B. C. E. H. I. K. R. with Val., Din., Su., Vijay., and Dharm., बिभ्रतं, Hemâdri notices the reading and says,—' बिभ्रतं ' इति पाठे । " नाभ्यस्ताच्छतुः " ॥ One of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुहितैषिणी also reads this, D. with Châ., बिभ्रन्तं for बिभ्राणं.

11. C. D. with Su., हेमाभरण° for दिव्याभरण°. B. R. with Su., and

दैत्यस्त्रीगण्डलेखानां मदरागविलोपिभिः ।
हेतिभिश्चेतनावद्भिरुदीरितजयस्वनम् ॥ १२ ॥

मुक्तशेषविरोधेन कुलिशव्रणलक्ष्मणा ।
उपस्थितं प्राञ्जलिना विनीतेन गरुत्मता ॥ १३ ॥

१२ ॥ दैत्येति । दैत्यस्त्रीगण्डलेखानामसुराङ्गनागण्डस्थलीनां यो मदरागस्तं विलुम्पन्ति हरन्तीति मदरागविलोपिनः । तैश्चेतनावद्भिः सजीवैर्हेतिभिः सुदर्शनादिभिः शस्त्रैः ॥ "हेतिः शस्त्रेऽर्चिरस्त्रयोः" इति केशवः ॥ उदीरितजयस्वनम् ॥ जयशब्दमुद्घोषयन्तीभिर्मूर्तिमतीभिरस्त्रदेवताभिरुपास्यमानमित्यर्थः ॥

१३ ॥ मुक्तेति । मुक्तो भगवत्संनिधानात्त्यक्तः शेषेणाहीश्वरेण सह विरोधः सहजमपि वैरं येन तेन । कुलिशव्रणा अमृताहरणकाले इन्द्रयुद्धे ये वज्रप्रहारास्त एव लक्ष्माणि यस्य स तेन । प्रबद्धोऽञ्जलिर्येन तेन प्राञ्जलिना । कृताञ्जलिनेत्यर्थः । विनीतेनानुद्धतेन गरुत्मतोपस्थितमुपासितम् ॥ पुरा किल मातलिप्रार्थितेन भगवता तद्दुहितुर्गुणकेश्याः पत्युः कस्यचित्सर्पस्य गरुडादभयदाने कृते स्वविपक्षरक्षणक्षुभितं पक्षिराजं त्वद्वोढाहं त्वत्तो बलाढ्य इति गर्वितं स्ववामतर्जनीभारेणैव भङ्क्त्वा भगवान्विनिनायेति महाभारतीयां कथां सूचयति विनीतेनेत्यनेन ॥

---

peared in the midst of waters by reason of his arms as large as branches of a tree, decorated with celestial ornaments—

12. Him whose victory was proclaimed by his sentient arms destroying the ruddy flush caused by wine on the cheeks of the wives of demons—

13. Him who was waited on with folded arms by humbled Garu*d*a, who bore (on his body) the scars of the wounds made by the thunder-bolt, and who had therefore left the natural antipathy for the serpent Shesha—

Vijay., अपां मध्यात्, C. पयो मध्ये, D. E. H. I. K. with Cha., Din., and Val., पयो मध्यात् for अपां मध्ये. Three Mss. with Hem., Vija., and Dharm., read with Mallinátha.

12. C. D. and the text only of Val., गल्लखानां for गण्डलेखानां. C. R. and the text only of Val., मदोदार॰ for मदराग॰. C. D. with Su., and Vijay, आयुधेश्चेतनावद्भिः, H. मूर्तिमद्भिः प्रहरणैः for हेतिभिश्चेतनावद्भिः.

13. B. I. K. R. with Val., Su., and Vijay., गरुत्मना for गरुत्मता.

योगनिद्रान्तविशदैः पावनैरवलोकनैः ।
भृग्वादीननुगृह्णन्तं सौखशायनिकानृषीन् ॥ १४ ॥
प्रणिपत्य सुरास्तस्मै शमयित्रे सुरद्विषाम् ।
अथैनं तुष्टुवुः स्तुत्यमवाङ्मनसगोचरम् ॥ १५ ॥
नमो विश्वसृजे पूर्वं विश्वं तदनु बिभ्रते ।
अथ विश्वस्य संहर्त्रे तुभ्यं त्रेधास्थितात्मने ॥ १६ ॥

१४ ॥ योगेति । योग एव मनसो विषयान्तरव्यावृत्तिसाम्यान्निद्रा । तस्या अन्तेऽवसाने विशदैः प्रसन्नैः पावनैः शोधनैरवलोकनैः । सुखशयनं पृच्छन्तीति सौखशायनिकास्तान् ॥ " पृच्छतौ सुस्नातादिभ्यः " इत्युपसंख्यानाट्ठक्प्रत्ययः ॥ भृग्वादीनृषीननुगृह्णन्तम् ॥

१५ ॥ प्रणिपत्येति । अथ दर्शनानन्तरं सुराः सुरद्विषामसुराणां शमयित्रे विनाशकाय तस्मै विष्णवे प्रणिपत्य स्तुत्यं स्तोत्रार्हम् ॥ " एतिस्तुशास्वृदृजुषः क्यप् " इति क्यप्प्रत्ययः ॥ वाक्च मनश्च वाङ्मनसे ॥ " अचतुर-" इत्यच्प्रत्ययान्तो निपातः ॥ तयोर्गोचरो विषयो न भवतीत्यवाङ्मनसगोचरः । तमेनं विष्णुं तुष्टुवुरस्तुवन् ॥

१६ ॥ नम इति । पूर्वमादौ विश्वसृजे विश्वस्रष्ट्रे तदनु सर्गानन्तरं विश्वं बिभ्रते पुष्णते । अथ विश्वस्य संहर्त्रे । एवं त्रेधा सृष्टिस्थितिसंहारकर्तृत्वेन स्थित आत्मा स्वरूपं यस्य तस्मै ब्रह्मविष्णुहरात्मने तुभ्यं नमः ॥

---

14. Him who was favouring Bhrigu and other Munis who had been there to enquire about the soundness of his sleep, with his purifying glances that looked bright at the end of the contemplation sleep.

15. Then the gods having paid their obeisance to Him the destroyer of their enemies, began to offer prayers unto Him who is worthy of praise and who does not come within the scope of either words or mind (who baffles all description and who is incomprehensible).

16. A bow to thee, O Lord, who remainest in three-fold form—being the Creator of universe in the beginning, afterwards the upholder of it and last of all being its destroyer.

---

14. B. I. with Vijay., and the text only of Val., अवलोकितैः for अवलोकनैः. C. J. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., सौख्य°. for सौख°.

16. E. त्रेधात्मने नमः for त्रेधास्थितात्मने.

रसान्तराण्येकरसं यथा दिव्यं पयोऽश्नुते ।
देशे देशे गुणेष्वेवमवस्थास्त्वमविक्रियः ॥ १७ ॥
अमेयो मितलोकस्त्वमनर्थी प्रार्थनावहः ।
अजितो जिष्णुरत्यन्तमव्यक्तो व्यक्तकारणम् ॥ १८ ॥

१७ ॥ रसान्तराणीति । एकरसं मधुरैकरसं दिवि भवं दिव्यं पयो वर्षोदकं देशे देश ऊषरादिदेशेऽन्यान्रसान्रसान्तराणि लवणादीनि यथाऽश्नुते प्राप्नोति । एवमविक्रियो निर्विकारः । एकरूप इत्यर्थः । त्वं गुणेषु सत्त्वादिष्ववस्थाः ब्रह्मत्वादिरूपा अश्नुषे ॥

१८ ॥ अमेय इति । हे देव त्वममेयो लोकैरियत्तया न परिच्छेद्यः । मितलोकः परिच्छिन्नलोकः । अनर्थी निःस्पृहः । आवहतीत्यावहः ॥ पचाद्यच् ॥ प्रार्थनाना-

---

17. As the water from heaven (rain-water) which has but originally one taste obtains a diversity of flavours (assumes different tastes) in different parts of the countries, so thou who art immutable, assumest different conditions when connected with different qualities of Satva, Rajas and Tamas.

18. O Lord ! immeasurable as thou art, thou hast measured all the worlds ; indifferent to all the desires, thou grantest the desires of all ; unconquered thyself, thou art conquering ; thyself imperceptible thou art the cause of the perceptible world.

---

17. D. R. पयो दिव्यं यथाश्नुते for यथा दिव्यं पयोऽश्नुते. After this R reads the 21st stanza and then 18th and so on. I. omits this verse. Between 17-18 C. D. E. H. I. K. R. with Malli., Hem., Châ., Din., Val., Su., Vijay., Dharm., and Vija., read,—" एकः कारणतस्तां तामवस्थां प्रतिपद्यसे । नानात्वं रागसंयोगात्स्फाटिकस्येव दृश्यते " ॥ Mallinâtha: ' एक इति । एक एकरूपस्त्वं कारणत उपाधितः । तां तामवस्थां प्रतिपद्यसे । तस्माच्च नानात्वं ॥ रज्यतेऽनेनेति रागो रागद्रव्यं । जपाकुसुमादि । तस्य संयोगात्स्फाटिकस्येव । प्रक्षिप्तमनङ्गनार्थश्च ॥ " Hemâdri: हे प्रभो । त्वमेकः कारणतः कार्यतस्तां तां ब्रह्मविष्णुमहेश्वर [रुद्र Ms.] लक्षणां मत्स्यकूर्मादिकां वावस्थां प्रतिपद्यसे प्राप्नोषि ॥ दिवादिः ॥ रागसंयोगात्स्फटिकस्य नानात्वमिव दृश्यते ॥ क्षेपकः ॥ [C. E. with Hem., स्फटिकस्य, D. H. with Val., and Su., स्फुटिकस्य for स्फाटिकस्य. C. D. ते स्थितं also noticed by Hemâdri, E. H. I. K. R. with Val., Su., and Vijay., ते स्मृतं for दृश्यते.] R. with Su., Val., and Vijay., read it between 16-17, others between 18-19 [H. तत् for ते.]

18. C. D. with Hemâdri अनर्थः for अनर्थी. Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha. B. with Châ., Din., and Su., प्रार्थितावहः, E. I. and the text only of Vijay., प्रार्थनावहं for प्रार्थनावहः. D. with Châ., अत्यर्थं for अत्यन्तं. B. R. व्यक्ति° for व्यक्त°.

हृदयस्थमनासन्नमकामं त्वां तपस्विनम् ।
दयालुमनघस्पृष्टं पुराणमजरं विदुः ॥ १९ ॥
सर्वज्ञस्त्वमविज्ञातः सर्वयोनिस्त्वमात्मभूः ।
सर्वप्रभुरनीशस्त्वमेकस्त्वं सर्वरूपभाक् ॥ २० ॥

मावहः कामदः । अजितोऽन्यैर्न जितः । जिष्णुर्जयशीलः । अत्यन्तमव्यक्तोऽतिसूक्ष्मरूपः । व्यक्तस्य स्थूलरूपस्य कारणम् ॥

१९ ॥ हृदयेति । हे देव त्वां हृदयस्थं सर्वान्तर्यामितया नित्यसंनिहितं तथाप्यनासन्नमगम्यरूपत्वाद्विप्रकृष्टं च विदुः । संनिकृष्टस्यापि विप्रकृष्टत्वमिति विरोधः । तथाकामम् । न कामोऽभिलाषोऽस्य तं परिपूर्णत्वान्निष्कामम् । तथापि तपस्विनं तापसं विदुः । अनिच्छोस्तप एवेति विरोधः ॥ दयालुं परदुःखप्रहरणेच्छुं । तथाप्यनघस्पृष्टं नित्यानन्दरूपित्वाद्दुःखिनं विदुः ॥ " अघं दुरितदुःखयोः " इति विश्वः ॥ दयालुरदुःखी चेति विरोधः ॥ " ईर्ष्यी घृणी त्वसंतुष्टः क्रोधनो नित्यशङ्कितः । परभाग्योपजीवी च षडेते नित्यदुःखिताः " इति महाभारते ॥ पुराणमनादिमजरं निर्विकारत्वादजरं विदुः । चिरंतनं न जीर्यत इति विरोधालंकारः ॥ उक्तं च-" आभासत्वे विरोधस्य विरोधालंकृतिर्मता " इति ॥ विरोधेन चालौकिकमहिमत्वं व्यज्यते ॥

२० ॥ सर्वज्ञ इति । त्वं सर्वस्य ज्ञः ॥ " इगुपध-" इति कप्रत्ययः ॥ अविज्ञातः । न केनापि ज्ञात इत्यर्थः ॥ त्वं सर्वस्य योनिः कारणम् । त्वमात्मन एव भवतीत्यात्मभूः ॥ न ते किंचित्कारणमस्तीत्यर्थः ॥ त्वं सर्वस्य प्रभुः । त्वमनीशः ॥ त्वमेकः सर्वरूपभाक् । त्वमेक एव सर्वात्मना वर्तस इत्यर्थः ॥

---

19. O Lord ! the sages declare thee to be present in the heart (of all) and yet not near (to the comprehension) ; free from desires yet thou art an ascetic, compassionate yet not affected by grief, old, yet not subject to decay.

20. Though omniscient thou art thyself unknown, though the source of all thou art self-existent (thyself uncreate), thou the Lord of all, art thyself without any superior, thou art one and yet assumest all forms.

---

19. C. D. कामदं for अकामं. Hemâdri also notices this and says,—' कामदं ' इति पाठे कामशब्देन स्मरस्यापि ऽवन्यमानत्वाद्विरोधाभासः. B. C. E. H. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Vijay., Dharm., and Vija., अदयास्पृष्टं for अनघस्पृष्टं. Hemâdri : " अदयास्पृष्टं निष्कृपं । दुष्टे जनार्दनत्वात्संहारकत्वाद्वा. " Châritravardhana : " अदयास्पृष्टं क्रूरं. "

20. H. omits this verse.

सप्तसामोपगीतं त्वां सप्तार्णवजलेशयम् ।
सप्तार्चिर्मुखमाचख्युः सप्तलोकैकसंश्रयम् ॥ २१ ॥
चतुर्वर्गफलं ज्ञानं कालावस्था चतुर्युगा ।
चतुर्वर्णमयो लोकस्त्वत्तः सर्वं चतुर्मुखात् ॥ २२ ॥
अभ्यासनिगृहीतेन मनसा हृदयाश्रयम् ।
ज्योतिर्मयं विचिन्वन्ति योगिनस्त्वां विमुक्तये ॥ २३ ॥

२१ ॥ सप्तेति । हे देव त्वां सप्तभिः सामभी रथंतरादिभिरुपगीतम् ॥ " तद्धितार्थ—" इत्युत्तरपदसमासः ॥ सप्तानामर्णवानां जलं सप्तार्णवजलम् ॥ पूर्ववत्समास ॥ तत्र शेते यः स सप्तार्णवजलेशयः । तम् ॥ " शयवासवासिष्वकालात् " इत्यलुक् ॥ सप्तार्चिर्मुखं यस्य तम ॥ " अग्निमुखा वै देवाः " इति श्रुतेः ॥ सप्तानां लोकानां भूर्भुवःस्वरादीनामेकसंश्रयम् । एवंभूतमाचख्युः ॥

२२ ॥ चतुरिति । चतुर्णां धर्मार्थकाममोक्षाणां वर्गश्चतुर्वर्गः ॥ " त्रिवर्गो धर्मकामार्थैश्चतुर्वर्गः समोक्षकैः " इत्यमरः ॥ तत्फलकं यज्ज्ञानम् । चत्वारि युगानि कृतत्रेतादीनि यस्यां सा चतुर्युगा कालावस्था कालपरिमाणम् । चत्वारो वर्णाः प्रकृता उच्यन्ते यस्मिन्निति चतुर्वर्णमयः ॥ चातुर्वर्ण्यप्रचुर इत्यर्थः ॥ तत्प्रकृतवचने मयट् ॥ " तद्धितार्थ "—इत्यादिना तद्धितार्थे विषये तत्पुरुषसमासः ॥ स लोकः । इत्थंरूपं सर्वं चतुर्मुखाच्चतुर्मुखरूपिणस्त्वत्तः । जातमिति शेषः ॥ " इदं सर्वमसृजत यदिदं किंचित् " इति श्रुतेः ॥

२३ ॥ अभ्यासेति । अभ्यासेन निगृहीतं विषयान्तरेभ्यो निवर्तितम् । तेन मनसा योगिनो हृदयाश्रयं हृत्पद्मस्थं ज्योतिर्मयं त्वां विमुक्तये मोक्षार्थं विचिन्वन्त्यन्विष्यन्ति । ध्यायन्तीत्यर्थः ॥

---

21. They have declared thee, O Lord ! to be the sole refuge (or one support) of the seven worlds, resting in the waters of seven oceans : thou hast been sung in the seven Sâmans and hast (seven-flamed) fire for thy mouth (introduction to thee is through Agni alone).

22. From thee, having four mouths, have sprung the knowledge resulting in the group of four ends (purposes) of life, the arrangement (division) of time into the four cycles, and the people consisting of the four castes.

23. With minds checked by practice from the external object

---

21. E. H. I. K. R. with Val., and the text only of Vijay., आचक्षुः for आचख्युः.

22. A. C. E. H. R. with Hem., Val., and Vija., कालावस्थाः for कालावस्था. A. C. E. H. R. with Hem., Val., and Vija., चतुर्युगाः for चतुर्युगा. C. D. त्वत्तः सर्गः for त्वत्तः सर्वं. Hemádri also notices this and says,—" त्वत्तः सर्गः " इति पाठे सुज्यत इति सर्गः.

अजस्य गृह्णतो जन्म निरीहस्य हतद्विषः ।
स्वपतो जागरूकस्य याथात्म्यं वेद कस्तव ॥ २४ ॥
शब्दादीन्विषयान्भोक्तुं चरितुं दुश्चरं तपः ।
पर्याप्तोऽसि प्रजाः पातुमौदासीन्येन वर्तितुम् ॥ २५ ॥
बहुधाप्यागमैर्भिन्नाः पन्थानः सिद्धिहेतवः ।
त्वय्येव निपतन्त्योघा जाह्नवीया इवार्णवे ॥ २६ ॥

२४ ॥ अजस्येति । न जायत इत्यजः ॥ " अन्येष्वपि दृश्यते " इति डप्रत्ययः ॥ तस्याजस्य जन्मशून्यस्यापि जन्म गृह्णतः । मत्स्यादिरूपेण जायमानस्य । निरीहस्य चेष्टारहितस्यापि हतद्विषः । शत्रून्हतवत इत्यर्थः ॥ जागरूकस्य सर्वसाक्षितया नित्यप्रबुद्धस्यापि स्वपतो योगनिद्रामनुभवतः । इत्थं विरुद्धचेष्टस्य तव याथात्म्यं को वेद वेत्ति ॥ " विदो लटो वा " इति णलादेशः ॥

२५ ॥ शब्देति । किं च कृष्णादिरूपेण शब्दादीन्विषयान्भोक्तुम् ॥ नरनारायणादिरूपेण दुश्चरं तपश्चरितुम् । तथा दैत्यमर्दनेन प्रजाः पातुम् । औदासिन्येन ताटस्थ्येन वर्तितुं च पर्याप्तः समर्थोऽसि ॥ भोगतपसोः पालनौदासीन्ययोश्च परस्परविरुद्धयोराचरणे त्वदन्यः कः समर्थ इत्यर्थः ॥

२६ ॥ बहुधेति । आगमैस्त्रयीसांख्यादिभिर्दर्शनैर्बहुधा भिन्ना अपि सिद्धिहेतवः पुरुषार्थसाधकाः पन्थान उपायाः । जाह्नव्या इमे जाह्नवीया गाङ्गाः ॥ " वृद्धाच्छः " इति छप्रत्ययः ॥ ओघाः प्रवाहाः । तेऽप्यागमैरागतिभिर्बहुधा भिन्नाः सिद्धिहेतवश्च । अर्णव इव । त्वय्येव निपतन्ति प्रविशन्ति ॥ येन केनापि रूपेण त्वामेवोपयान्तीत्यर्थः ॥ यथाहुराचार्याः—" किं बहुना कारवोऽपि विश्वकर्मेत्युपासते " इति ॥

---

the Yogins (or devotees) seek thee for emancipation (release from life), who thou full of light abidest in their hearts.

24. Who knows thy real nature ? Though unborn thou takest birth. Though without action yet thou hast destroyed the enemies, and though sleeping (enjoying the contemplation-sleep) thou art yet vigilant (*i. e.* wide awake) .

25. Thou art (alone) able to enjoy the objects of sense such as sound and others, and (at the same time) also to practise austere asceticism. Thou art able to protect the people and yet to live in indifference.

26. The ways that accomplish the object of human pursuit (*i. e.* which lead to the path of supreme felicity) though many ways differently laid down in the different S'ástras, all meet, O Lord ! in thee alone, as the streams of the जाह्नवी, though running in different courses, fall at last into the ocean.

---

24. A. D. H. J. with Chá., Din., and Su., याथार्थ्यं for याथात्म्यं. We with Hemâdri and four other commentators and eight Mss.

त्वय्यावेशितचित्तानां त्वत्समर्पितकर्मणाम् ।
गतिस्त्वं वीतरागाणामभूयःसंनिवृत्तये ॥ २७ ॥
प्रत्यक्षोऽप्यपरिच्छेद्यो मह्यादिर्महिमा तव ।
आप्तवागनुमानाभ्यां साध्यं त्वां प्रति का कथा ॥ २८ ॥
केवलं स्मरणेनैव पुनासि पुरुषं यतः ।
अनेन वृत्तयः शेषा निवेदितफलास्त्वयि ॥ २९ ॥

२७ ॥ त्वयीति । त्वय्यावेशितं निहितं चित्तं येषां तेषां । तुभ्यं समर्पितानि कर्माणि येषां तेषां ॥ " मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु । मामेवैष्यसि कौन्तेय प्रतिजाने प्रियोऽसि मे " इति भगवद्वचनात् ॥ वीतरागाणां विरक्तानामभूयःसंनिवृत्तये । मोक्षायेत्यर्थः । त्वमेव गतिः साधनम् ॥ " तमेवं विद्वानमृत इह भवति । नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय " इति श्रुतेरित्यर्थः ॥

२८ ॥ प्रत्यक्ष इति । प्रत्यक्षः प्रत्यक्षप्रमाणगम्योऽपि तव मह्यादिः पृथिव्यादिर्महिमैश्वर्यमपरिच्छेद्यः । इयत्तया नावधार्यः ॥ आप्तवाग्वेदः ॥ " यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते " इत्यादि श्रुतेः ॥ अनुमानं क्षित्यादिकं सकर्तृकं कार्यत्वाद्घटवदित्यादिकम् । ताभ्यां साध्यं गम्यं त्वां प्रति का कथा ॥ प्रत्यक्षमपि त्वत्कृतं जगदपरिच्छेद्यम् । तत्कारणमप्रत्यक्षस्त्वमपरिच्छेद्य इति किमु वक्तव्यमित्यर्थः ॥

२९ ॥ केवलमिति । स्मरणेन केवलं कृत्स्नम् ॥ " केवलः कृत्स्न एकश्च " इति शाश्वतः ॥ पुरुषं स्मर्तारं जनं पुनासि । यतः । यदित्यर्थः । अनेन स्मृतिकार्येणैव त्वयि त्वद्विषये याः शेषा अवशिष्टा वृत्तयो दर्शनस्पर्शनाद्या व्यापारास्ता निवेदितफला विज्ञापितकार्याः ॥ तव स्मरणस्येदं फलम् । दर्शनादीनां तु कियदिति नावधारयाम इति भावः ॥

---

27. To persons, whose desires for worldly enjoyments are completely gone, and who have devoted their hearts and consigned their actions to thee, Thou art the refuge for obtaining absolution (not to return again in this world).

28. Thy greatness, which consists in earth and other elements, though perceptible by senses is yet undefinable; how can then one talk of defining thee, O Lord, who art simply inferrible (knowable) by inference and the Vedas.

29. Since thou purifiest a person simply when he only remembers thee the remaining functions of senses with reference to

---

27. B. C. E. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Vijay., Dharm., and Vija., त्वदावेशित° for त्वय्यावेशित°.

29. D. R. स्मरणात् for स्मरणेन. B. C. E. H. I. K. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Vijay., Dharm., and Vija., अपि for एव. K. पवनं for पुरुषं. B. C. E. H. I. K. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., यदा for यतः.

उदधेरिव रत्नानि तेजांसीव विवस्वतः ।
स्तुतिभ्यो व्यतिरिच्यन्ते दूराणि चरितानि ते ॥ ३० ॥
अनवाप्तमवाप्तव्यं न ते किंचन विद्यते ।
लोकानुग्रह एवैको हेतुस्ते जन्मकर्मणोः ॥ ३१ ॥
महिमानं यदुत्कीर्त्य तव संह्रियते वचः ।
श्रमेण तदशक्त्या वा न गुणानामियत्तया ॥ ३२ ॥

३० ॥ उदधेरिति । उदधे रत्नानीव । विवस्वतस्तेजांसीव । दूराण्यवाङ्मनसगोचराणि ते चरितानि स्तुतिभ्यो व्यतिरिच्यन्ते ॥ निःशेषं स्तोतुं न शक्यन्त इत्यर्थः ॥

३१ ॥ अनवाप्तमिति । अनवाप्तमवाप्तम् । अवाप्तव्यं प्राप्तव्यं ते तव किंचन किंचिदपि न विद्यते । नित्यपरिपूर्णत्वादिति भावः ॥ तर्हि किंनिबन्धने जन्मकर्मणी । तत्राह—लोकेति । एको लोकानुग्रह एव ते तव जन्मकर्मणोर्हेतुः ॥ परमकारुणिकस्य ते परार्थैव प्रवृत्तिः ॥

३२ ॥ महिमानमिति । तव महिमानमुत्कीर्त्य वचः संह्रियत इति यत् । तद्वचःसंहरणं श्रमेण वाग्व्यापारश्रान्त्या । अशक्त्या कार्त्स्न्येन वक्तुमशक्यत्वाद्वा । गुणानामियत्तयैतावत्त्वेन न ॥ तेषामानन्त्यादिति भावः ॥

---

thee, by this act, do declare their effects (*i. e.* become at once known).

30. As the jewels of the ocean are beyond enumeration, as the rays of the sun baffle description, so thy inscrutable (*i. e.* incomprehensible) nature transcends all praise.

31. There is nothing which thou hast not attained and therefore requirest to obtain it. It is an act of favour to the people that Thou dost condescend to take birth and act like human beings.

32. That the speech is cut short after having praised thy glories—is due to exhaustion or inability and not on account of the limited nature of thy qualities.

---

30. A. C. K. तोयानि for रत्नानि. D. रूपेण, B. C E. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Vijay., Dharm., and Vija., दूरेण for दूराणि.

31. B. C. I. R. with Val., and Su., न ते किंचित्र विद्यते for न ते किंचन विद्यते.

32. E. तदशक्तं for तदशक्त्या.

इति प्रसादयामासुस्ते सुरास्तमधोक्षजम् ।
भूतार्थव्याहृतिः सा हि न स्तुतिः परमेष्ठिनः ॥ ३३ ॥
तस्मै कुशलसंप्रश्नव्यञ्जितप्रीतये सुराः ।
भयमप्रलयोद्वेलादाचख्युर्नैर्ऋतोदधेः ॥ ३४ ॥
अथ वेलासमासन्नशैलरन्ध्रानुवादिना ।
स्वरेणोवाच भगवान्परिभूतार्णवध्वनिः ॥ ३५ ॥

३३ ॥ इतीति । इति ते सुरास्तमधोक्षजम् । अधोभूतमक्षजमिन्द्रियजं ज्ञानं यस्मिंस्तमधोक्षजम् । विष्णुं प्रसादयामासुः प्रसन्नं चक्रुः ॥ हि यस्मात्परमेष्ठिनः सर्वोत्तमस्य सा देवैः कृता व्याहृतिर्भूतार्थव्याहृतिः । भूतस्य सत्यस्यार्थस्योक्तिः ॥ "युक्ते क्ष्मादावृते भूतम्" इत्यमरः ॥ न स्तुतिर्न प्रशंसामात्रम् ॥ महान्तो हि यथार्थवचनतुलभा इति भावः ॥

३४ ॥ तस्मा इति । सुरा देवाः । कुशलस्य संप्रश्नस्तेन व्यञ्जिता प्रकटीकृता प्रीतिर्यस्य तस्मै ॥ लब्धिनप्रसादायेत्यर्थः । अन्यथा अनवसरविज्ञप्तिर्भुखराणामिव निष्फला स्यादिति भावः ॥ नर्ऋत्र्णवे प्रलये । प्रलयाभावेऽप्युद्वेलादुल्लङ्घिताद् । नैर्ऋता राक्षसः । स एवोदधिः । तस्माद्भयमाचख्युः कथितवन्तः ॥

३५ ॥ अथेति । अथ वेलायामब्धिकूले समासन्नानां संनिकृष्टानां शैलानां रन्ध्रेषु गह्वरेष्वनुवादिना प्रतिध्वनिमता स्वरेण परिभूतार्णवध्वनिस्तिरस्कृतसमुद्रघोषो भगवानुवाच ॥

---

33. Thus those gods propitiated Him who baffles the perception of senses, for it was no praise of the Supreme Being but a mere exposition of truthful facts.

34. The gods mentioned to him whose favour was clearly manifested (expressed) by his enquiry after their welfare, the danger arising from the ocean of the Rákshasas that had overflowed its banks at a time other than that of final dissolution.

35. Then the Divine Being began to address them in a voice that resounded in the caverns of the mountains situated on the sea-shore—a voice in which the sound of the ocean itself was drowned.

---

33. D. K. सुरास्ते for ते सुराः.

34. E. K. R. with Val., आचक्षुः for आचख्युः.

35. A. J. अनुनादिना, C. अनुकारिणा for अनुवादिना. We with eight commentators and nine Mss. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण and the text only of Vallabha agree with A. J.

पुराणस्य कवेस्तस्य वर्णस्थानसमीरिता ।
बभूव कृतसंस्कारा चरितार्थैव भारती ॥ ३६ ॥
बभौ सदशनज्योत्स्ना सा विभोर्वदनोद्गता ।
निर्यातशेषा चरणाद्गङ्गेवोर्ध्वप्रवर्तिनी ॥ ३७ ॥
जाने वो रक्षसाक्रान्तावनुभावपराक्रमौ ।
अङ्गिनां तमसेवोभौ गुणौ प्रथममध्यमौ ॥ ३८ ॥

३६ ॥ पुराणस्येति । पुराणस्य चिरंतनस्य कवेस्तस्य भगवतो वर्णस्थानेषूरःकण्ठादिषु समीरिता सम्यगुच्चारिता । अत एव कृतः संपादितः संस्कारः साधुत्वस्पष्टतादिप्रयत्नो यस्याः सा भारती वाणी चरितार्था कृतार्था बभूवैव ॥ एवकारस्त्वसंभावनाविपरीतभावनाव्युदासार्थः ॥

३७ ॥ बभाविति । विभोर्विष्णोर्वदनादुद्गता निःसृता । सदशनज्योत्स्ना दन्तकान्तिसहिता ॥ इदं च विशेषणं धावल्यातिशयार्थम् ॥ अत एव सा भारती । चरणाद्गङ्गेर्निर्याता चासौ शेषा च निर्यातशेषा । निःसृतावशिष्टेत्यर्थः ॥ " स्त्रियाः पुंवत्—" इत्यनुवर्त्य " पुंवत्कर्मधारय—" इति पुंवद्भावः ॥ निर्यातशब्दस्य या निर्याता सावशेषा सा गङ्गेवेति सामानाधिकरण्यनिर्वाहः ॥ निर्यातायाः शेषेति विग्रहे पुंवद्भावो दुर्घट एव ॥ ऊर्ध्वप्रवर्तिन्यूर्ध्वप्रवाहिणी गङ्गेव । बभौ ॥ इत्युत्प्रेक्षा ॥

३८ ॥ यदाह भगवांस्तदाह ॥ जाने इति । हे देवा वो युष्माकमनुभावपराक्रमौ महिमपुरुषकारौ रक्षसा रावणेन । अङ्गिनां शरीरिणां प्रथममध्यमावुभौ गुणौ सत्त्वरजसी तमसेव तमोगुणेनेव आक्रान्तौ जाने ॥ वाक्यार्थः कर्म ॥

---

36. The speech of that Primeval Bard pronounced (articulated) from (by the help of) the different organs of speech and therefore becoming distinct and correct was certainly successful (had gained its end).

37. That speech proceeding from the mouth of Lord mixed with the lustre of his teeth looked like a stream of the Gangâ—the residue of what had flown from his feet, flowing in an upward direction.

38. I know your authority and prowess to have been superseded by the demon (Râva*n*a), as the first and the middle (*i. e.* second) qualities (Satva and Rajas) of embodied beings (animals) are overpowered by the quality of darkness (the third or Tamas).

---

36. B. I. R. पदसंस्कारात्, C. E. H. K. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., पदसंस्कारा for कृतसंस्कारा. Châritravardhana: " विहितव्याकरणालंकारादिसंस्कारो यस्याः सा. " Vallabha : " वाक्यलक्षणयुक्ता. "

37. K. R. बभौ सुदर्शन°, C. and the text only of Vallabha, बभासे दशन° for बभौ सदशन°. Hemâdri also notices the reading. K. निर्यातचरणाशेषा for निर्यातशेषाचरणात्.

विदितं तप्यमानं च तेन मे भुवनत्रयम् ।
अकामोपनतेनेव साधोर्हृदयमेनसा ॥ ३९ ॥
कार्येषु चैककार्यत्वादभ्यर्थ्योऽस्मि न वज्रिणा ।
स्वयमेव हि वातोऽग्नेः सारथ्यं प्रतिपद्यते ॥ ४० ॥
स्वासिधारापरिहृतः कामं चक्रस्य तेन मे ।
स्थापितो दशमो मूर्धा लभ्यांश इव रक्षसा ॥ ४१ ॥

३९ ॥ विदितमिति । किं च । अकामेनानिच्छयोपनतेन प्रमादादागतेनैनसा पापेन साधोः सज्जनस्य हृदयमिव । तेन रक्षसा तप्यमानं संताप्यमानम् ॥ तपेर्भौवादिकात्कर्मणि शानच् ॥ भुवनत्रयं च मे विदितम् । मया ज्ञायत इत्यर्थः ॥ "मतिबुद्धि—" इत्यादिना वर्तमाने क्तः ॥ "क्तस्य च वर्तमाने" इति षष्ठी ॥

४० ॥ कार्येष्विति । किं च । एककार्यत्वादावयोरेकार्थाद्धेतोः । कार्येषु कर्तव्येषु विषये वज्रिणेन्द्रेणाभ्यर्थ्यः । इदं कुर्विति प्रार्थनीयः । नास्मि ॥ तथा हि । वातः स्वयमेवाग्नेः सारथ्यं प्रतिपद्यते प्राप्नोति । न तु वह्निप्रार्थनया । इत्येवकारार्थः ॥ प्रेक्षावतां हि स्वार्थे स्वत एव प्रवृत्तिः । न तु परप्रार्थनया ॥ स्वार्थो नश्चायमेव य इन्द्रस्येत्यर्थः ॥

४१ ॥ स्वेति । पुरा किल त्रिपुरारिप्रीणनाय स्वशिरांसि छिन्दता दशकन्धरेण यद्दशमं शिरोऽवशेषितं तन्मच्चक्रार्थमित्याह ॥ स्वासिधारया स्वखड्गधारया परिहृतः । अच्छिन्न इत्यर्थः । दशमो मूर्धा मे चक्रस्य कामं पर्याप्तो लभ्यांशः छेद्यभाग इव तेन रक्षसा स्थापितः । तत्सर्वथा तमहं हनिष्यामीत्यर्थः ॥

---

39. And it is known to me that the three worlds have been oppressed by him, as the heart of a good man by the sin unconsciously committed.

40. Owing to the sameness of business no request to me in these affairs on the part of Indra is needed. For the wind, of itself, assumes the office of a helper to fire.

41. The tenth head of the demon which has been spared from the edge of his own sword has been, as it were, reserved by him as a worthy tribute to my disc (as a full portion fit to be severed by my quoit).

---

39. I. with Val., तु for च. E. omits this verse.

41. D. °परिवृतः for °परिहृतः. D. with Chá., and Din., ननं for कामं. D. J. लभ्यांशः, B. R. with Hem., Chá., Din., Su., and Vijay., लभ्यांशः. H. लभ्यांगः for लभ्यांशः. Also Mallinátha, who says,—"लभ्यांशः" इति पाठे लभ्यांशः प्राप्तव्यभाग इत्यर्थः"।

स्रष्टुर्वरातिसर्गाच्च मया तस्य दुरात्मनः ।
अत्यारूढं रिपोः सोढं चन्दनेनेव भोगिनः ॥ ४२ ॥
धातारं तपसा प्रीतं ययाचे स हि राक्षसः ।
दैवात्सर्गादवध्यत्वं मर्त्येष्वास्थापराङ्मुखः ॥ ४३ ॥
सोऽहं दाशरथिर्भूत्वा रणभूमेर्बलिक्षमम् ।
करिष्यामि शरैस्तीक्ष्णैस्तच्छिरःकमलोच्चयम् ॥ ४४ ॥
अचिराद्यज्वभिर्भागं कल्पितं विधिवत्पुनः ।
मायाविभिरनालीढमादास्यध्वे निशाचरैः ॥ ४५ ॥

४२ ॥ तर्हि किं प्रागुपेक्षितमत आह ॥ स्रष्टुरिति । किं तु स्रष्टुर्ब्रह्मणो वरातिसर्गाद्वरदानाद्धेतोः । मया तस्य दुरात्मनो रिपो रावणस्यात्यारूढमत्यारोहणम् । अतिवृद्धिरित्यर्थः॥ नपुंसके भावे क्तः ॥ भोगिनः सर्पस्यात्यारूढं चन्दनेनेव । सोढम् ॥ चन्दनद्रुमस्यापि स्रष्टैव नियन्तेति । द्रष्टव्यम् ॥

४३ ॥ संप्रति व्रतस्वरूपमाह ॥ धातारमिति । स राक्षसस्तपसा प्रीतं संतुष्टं धातारं ब्रह्माणम् । मर्त्येषु विषये आस्थापराङ्मुख आदरविमुखः सन् । मर्त्याननादृत्येत्यर्थः । दैवात्सर्गादिष्टविधाया देवसृष्टेरवध्यत्वं ययाचे हि ॥

४४ ॥ तर्हि का गतिरित्याशङ्क्य मनुष्यावतारेण हनिष्यामीत्याह ॥ सोऽहमिति । सोऽहम् । दशरथस्यापत्यं पुमान्दाशरथिः ॥ "अत इञ्" इति इञ्प्रत्ययः ॥ रामो भूत्वा तीक्ष्णैः शरैस्तस्य रावणस्य शिरांस्येव कमलानि तेषामुच्चयं राशिं रणभूमेर्बलिक्षमं पूजार्हं करिष्यामि ॥ पुष्पानिष्पाद्या हि पूजेति भावः ॥

४५ ॥ अचिरादिति । यज्वभिर्याज्ञिकैर्विधिवत्कल्पितमुपहृतं भागं हविर्भागं

---

42. I have borne the audacious insolence of that wicked enemy in consequence of a boon granted to him by Brahmá as a sandal tree bears annoyance caused by a snake.

43. That demon averse to any regard (regardless) for mortals asked of the Creator (Brahmá) who was pleased with his asceticism immunity from death at the hands of a divine creature.

44. Such as I am taking birth as the son of Das'aratha, I shall make the heap of his lotuslike heads a fit oblation for the battle-field with my sharp arrows.

45. In a short time, O Gods, you shall again receive the

---

42. A. D. J. with Chá., Din, Su., and Vijay., तु for च. Nine Mss. with Hem., Val., and Dharm., read with Mallinátha. B. C. E H. I. K. R. with Hem., Val., Su., Din., and Vijay., सह्यं for सोढं. Also Mallinátha, who says,—"सह्यम्" इति पाठे स एवार्थः"।

45. H. आदास्यथ्वं for आदास्यध्वे.

वैमानिकाः पुण्यकृतस्त्यजन्तु मरुतां पथि ।
पुष्पकालोकसंक्षोभं मेघावरणतत्पराः ॥ ४६ ॥
मोक्ष्यध्वे स्वर्गबन्दीनां वेणीबन्धानदूषितान् ।
शापयन्त्रितपौलस्त्यबलात्कारकचग्रहैः ॥ ४७ ॥
रावणावग्रहक्लान्तमिति वागमृतेन सः ।
अभिवृष्य मरुत्सस्यं कृष्णमेघस्तिरोदधे ॥ ४८ ॥

मायाविभिर्मायावद्भिः ॥ "अस्मायामेधास्रजो विनिः" इति विनिप्रत्ययः ॥ निशाचरै रक्षोभिरनालीढमनाक्रान्तं यथा तथाचिरात्पुनराशास्यध्वे ग्रहीष्यथ ॥

४६ ॥ वैमानिका इति । मरुतां देवानां पथि व्योम्नि । वैमानिका विमानैश्चरन्तः ॥ "चरति" इति ठक्प्रत्ययः ॥ मेघावरणतत्परा रावणभयान्मेघेष्वन्तर्धानतत्पराः पुण्यकृतः सुकृतिनः पुष्पकालोकेन यदृच्छया रावणविमानदर्शनेन यः संक्षोभस्तं त्यजन्तु ॥

४७ ॥ मोक्ष्यध्व इति । हे देवा यूयम् ! शापेन नलकूबरशापेन यन्त्रिताः प्रतिबद्धाः पौलस्त्यस्य रावणस्य बलात्कारेण ये कचग्रहाः केशाकर्षास्तैरदूषिताननुपहतान्स्वर्गबन्दीनां बन्दीकृतस्वर्गाङ्गनानां वेणीबन्धान्मोक्ष्यध्वे ॥ पुरा किल नलकूबरेणात्मानमभिसरन्त्या रम्भाया बलात्कारेण संभोगात्क्रुद्धेन दुरात्मा रावणः शप्तः । स्त्रीणां बलाद्ग्रहणे मूर्धा ते शतधा भविष्यतीति भारतीया कथानुसंधेया ॥

४८ ॥ रावणेति । स कृष्णो विष्णुः स एव मेघो नीलमेघश्च । विश्रवसोऽपत्यं पुमान्रावण इति विग्रहः ॥ विश्रवःशब्दाच्छिवादित्वादणि विश्रवसो "विश्रवणरवणौ" इत्यन्तर्गणसूत्रेण विश्रवःशब्दस्य वृत्तिविषये रवणादेशे रावण इति सि-

portion (of the offerings) properly offered to you by the sacrificers and untasted (or undefiled) by the night-rangers possessing magical powers.

46. Let the gods (*i. e.* पुण्यकृतः), riding on their heavenly balloons, hitherto driven to conceal themselves in the clouds, lay aside their dread at the sight of the Pushpaka in the path of the winds (*i. e.* the sky).

47. You shall, O gods, set free the undefiled braids of hair of the captive damsels of heaven—the braids preserved from the forcible seizing of (the hair by) Paulastya by the imprecation (of Nalakubara).

48 He, like a dark watery cloud, disappeared after having showered the water of speech on the crop-like gods dried up by the draught of Râva*n*a.

47. D. with Su., मोक्ष्येऽहं for मोक्ष्यध्वे. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Val., Su., Vijay., Dharm., and Vija., सुरबन्दीनां for स्वर्गबन्दीनां. Châritravardhana and Dinakara distinctly with Mallinâtha.

48. D. K. R. अभिषिच्य for अभिवृष्य.

पुरुहूतप्रभृतयः सुरकार्योद्यतं सुराः ।
अंशैरनुययुर्विष्णुं पुष्पैर्वायुमिव द्रुमाः ॥ ४९ ॥
अथ तस्य विशांपत्युरन्ते काम्यस्य कर्मणः ।
पुरुषः प्रबभूवाग्नेर्विस्मयेन सहर्त्विजाम् ॥ ५० ॥
हेमपात्रगतं दोर्भ्यामादधानः पयश्चरुम् ।
अनुप्रवेशादाद्यस्य पुंसस्तेनापि दुर्वहम् ॥ ५१ ॥

द्धम् ॥ स एवावग्रहो वर्षप्रतिबन्धः । तेन क्रान्तं शुष्यमाणं मरुतो देवा एव सस्यं तत् । इत्येवंरूपेण वागमृतेन वाक्सलिलेन ॥ "अमृतं यज्ञशेषे स्यात्पीयूषे सलिलेऽमृतं" इति विश्वः ॥ अभिवृष्याभिषिच्य तिरोदधेऽन्तर्दधे ॥

४९ ॥ पुरुहूतेति । पुरुहूतप्रभृतय इन्द्राद्याः सुराः सुरकार्ये रावणवधरूप उद्यतं विष्णुमंशैर्मात्राभिः । द्रुमाः पुष्पैः स्वांशैर्वायुमिव । अनुययुः ॥ सुग्रीवादिरूपेण वानरयोनिषु जाता इत्यभिप्रायः ॥

५० ॥ अथेति । अथ तस्य विशांपत्युर्दशरथस्य संबन्धिनः काम्यस्य कर्मणः पुत्रकामेष्टेरन्तेऽवसानेऽग्नेः पावकात्पुरुषः कश्चिद्दिव्यः पुमानृत्विजां विस्मयेन सह प्रबभूव प्रादुर्भूत ॥ तदाविर्भावात्तेषामपि विस्मयोऽभूदित्यर्थः ॥

५१ ॥ तमेव पुरुषं विशिनष्टि ॥ हेमपात्रेति । आद्यस्य पुंसो विष्णोरनुप्रवेशादधिष्ठानाद्धेतोस्तेनापि दिव्यपुरुषेणापि दुर्वहम् । चतुर्दशभुवनोदरस्य भगवतो हरेर्गतिगरीयस्त्वाद्वोढुमशक्यम् । हेमपात्रगतं पयसि पक्वं चरुं पयश्चरुं पायसान्नं दोर्भ्यामादधानो वहन् ॥ "अनवस्रावी निरूष्मपक्व ओदनश्चरुः" इति याज्ञिकाः ॥

---

49. The gods Indra and others followed Vishnu who was about to do (undertake) the commission of the gods (work for the interest of gods) with their portions, as trees follow the wind with flowers (their own portions.)

50. Then arose out of the fire a being (along) with wonder of the officiating priests, at the close of the sacrifice of that Lord of men, which was performed for a particular object (*viz.*, that of obtaining issue).

51. That being held in his hands some food consisting of rice boiled in milk, put in a golden vessel, difficult to be borne even by him by reason of its being charged with the portion of the First Being (*lit.* on account of the entrance of the Primeval Being into it)

---

51. B. E. H. I. K. R. with Val., and Vijay., हेमपात्रीकृतं, one of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with this, C. with Châ., Din., and Su., हेमपात्रकृतं for हेमपात्रगतं. Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha. C. D. E. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., and Val., आददानः for आदधानः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. H. with Su., अतिदुर्वहं for अपि दुर्वहं.

प्राजापत्योपनीतं तदन्नं प्रत्यग्रहीन्नृपः ।
वृषेव पयसां सारमाविष्कृतमुदन्वता ॥ ५२ ॥
अनेन कथिता राज्ञो गुणास्तस्यान्यदुर्लभाः ।
प्रसूतिं चकमे तस्मिंस्त्रैलोक्यप्रभवोऽपि यत् ॥ ५३ ॥
स तेजो वैष्णवं पत्न्योर्विभेजे चरुसंज्ञितम् ।
द्यावापृथिव्योः प्रत्यग्रमहर्पतिरिवातपम् ॥ ५४ ॥

५२ ॥ प्राजापत्येति । नृपो दशरथः प्राजापत्येन प्रजापतिसंबन्धिना पुरुषेणोपनीतं न तु वशिष्ठेन ॥ " प्राजापत्यं नरं विद्धि मामिहाभ्यागतं नृप " इति रामायणात् ॥ तदन्नं पायसान्नम् । उदन्वतोदधिनाविष्कृतं प्रकाशितं पयसां सारममृतं वृषा वासव इव ॥ " वासवो वृत्रहा वृषा " इत्यमरः ॥ प्रत्यग्रहीत्स्वीचकार ॥
५३ ॥ अनेनेति । तस्य राज्ञो दशरथस्यान्यैर्दुर्लभा असाधारणा गुणा अनेन कथिता व्याख्याताः । यद्यस्मात्त्रयो लोकास्त्रैलोक्यम् ॥ चातुर्वर्णादित्वात्स्वार्थे ष्यञ् ॥ तस्य प्रभवः कारणं विष्णुरपि तस्मिन्राज्ञि प्रसूतिमुत्पत्तिं चकमे कामितवान् ॥ त्रिभुवनकारणस्यापि कारणमिति परमावधिर्गुणसमुदाय इत्यर्थः ॥
५४ ॥ स इति । स नृपः । चरुसंज्ञास्य संजाता चरुसंज्ञितम् । वैष्णवं तेजः पत्न्योः कौसल्याकैकेय्योः । द्यौश्च पृथिवी च द्यावापृथिव्यौ ॥ " दिवसश्च पृथिव्याम् " इति चकाराद्दिव्शब्दस्य द्यावादेशः ॥ तयोर्द्यावापृथिव्योः । अह्नः पतिरहर्पतिः ॥ " अहरादीनां पत्यादिषु वा रेफः " इत्युपसंख्यानाद्वैकल्पिको रेफस्य रेफादेशो विसर्गापवादः ॥ प्रत्यग्रमातपं बालातपमिव । विभेजे ॥ विभज्य ददावित्यर्थः ॥

---

52. The king accepted the food presented to him by that being of Prajâpati, as Indra took the essence of waters (*i. e.* ambrosia) disclosed by the ocean.

53. That that king was possessed of qualities unattainable by any other was proved from the fact that even He who was the source of the three worlds wanted to be born as a son to him.

54. He divided the lustre (energy) of Vishnu called by the name of चरु between his two wives, as the lord of the day (the sun) divides his morning rays between heaven and the earth.

---

52. C. D. with Hem., Chà., Din., Su., and Vijay., आविःकृतं for आविष्कृतं.

53. C. E. H. I. K. with Châ., Din., and Vija., प्रवृत्तिं. B. R. with Val., Su., and Vijay., निवृत्तिं for प्रसूतिं. Châritravardhana: " प्रवृत्तिं प्रसूतिं. " Vallabha :—" निवृत्तिं रामादिरूपेणोत्पत्तिमर्चाकमत्. " D. यः for यत्.

54. I. with Châ., and Din., चरुसंज्ञकं for चरुसंज्ञितं. I. K. R. अह्न्पति for अहर्पतिः.

अर्चिता तस्य कौसल्या प्रिया केकयवंशजा ।
अतः संभावितां ताभ्यां सुमित्रामैच्छदीश्वरः ॥ ५५ ॥
ते बहुज्ञस्य चित्तज्ञे पत्न्यौ पत्युर्महीक्षितः ।
चरोरर्धार्धभागाभ्यां तामयोजयतामुभे ॥ ५६ ॥
सापि प्रणयवत्यासीत्सपत्न्योरुभयोरपि ।
भ्रमरी वारणस्येव मदनिस्यन्दलेखयोः ॥ ५७ ॥

५५ ॥ पत्नीत्रये सति द्वयोरेव विभागकारणमाह ॥ अर्चितेति । तस्य राज्ञः ॥ कोसलस्य राज्ञोऽपत्यं स्त्री कौसल्या ॥ "वृद्धेत्कोसलाजादाञ्ञ्यङ्" इति ञ्यङ् ॥ "यङश्चाप्" इति चाप् ॥ अर्चिता ज्येष्ठा मान्या । केकयवंशजा कैकेयी प्रियेष्टा । अतो हेतोरीश्वरो भर्ता नृपः सुमित्रां ताभ्यां कौसल्याकैकेयीभ्यां संभावितां भागदानेन मानितामैच्छदिच्छति स्म ॥ एवं च सामान्यं तिसृणां च भागप्रापणमिति राज्ञ्युचितज्ञता कौशलं च लभ्यते ॥

५६ ॥ ते इति । बहुज्ञस्य सर्वज्ञस्य । उचितज्ञस्येत्यर्थः । पत्युर्महीक्षितः क्षितीश्वरस्य ॥ विशेषणत्रयेण राज्ञोऽनुसरणीयतामाह ॥ चित्तज्ञे अभिप्रायज्ञे ते उभे पत्न्यौ कौसल्याकैकेय्यौ । चरोर्ये अर्धे समभागौ तयोर्यावर्धौ तौ च तौ भागौ चेत्यर्धभागावेकदेशौ । ताभ्यामर्धार्धभागाभ्याम् ॥ "पुंस्यर्धोऽर्धं समेंऽशके" इत्यमरः ॥ तां सुमित्रामयोजयतां युक्तां चक्रतुः ॥ अयं च विभागो न रामायणसंवादी । तत्र चरोरर्धं कौसल्याया अवशिष्टार्धं कैकेय्यै शिष्टं पुनः सुमित्राया इत्यभिधानात् ॥ किं तु पुराणान्तरसंवादो द्रष्टव्यः ॥ उक्तं च नारसिंहे—" ते पिण्डप्राशने काले सुमित्रायै महीपतेः । पिण्डाभ्यामल्पमल्पं तु स्वभगिन्यै प्रयच्छतः " इति ॥ एवमन्यत्रापि विरोधे पुराणान्तरात्समाधातव्यम् ॥

५७ ॥ न चैवं सत्यपीर्षा स्यादित्याह ॥ सापीति । सा सुमित्राप्युभयोरपि । समान एकः पतिर्ययोस्तयोः सपत्न्योः ॥ " नित्यं सपत्न्यादिषु " इति ङीप् ॥ न-

---

55. To him Kausalyá was one whom he honoured (being the eldest wife) and the other who was born of the line of Kekaya kings was his beloved wife. Hence the king wished Sumitrá to be honoured with a share by them both.

56. Both the wives of that lord of the earth who knew all (that was proper) knowing that to be the intention of their husband, gave her each a half of her own portion of that Charu.

57. She too was tenderly attached even to both of her rivals (the fellow-wives of the king), as a female black-bee equally loves

---

56. B. I. K. with Val., महीक्षितां, R. महीभृतां, C. with Dharm., महीभुजां, D. E. H. with Su., महीभृतः for महीक्षितः. We with five commentators and three Mss. B. with Su., and Vijay., भागेन for भागाभ्याम्.

57. A. C. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and

ताभिर्गर्भः प्रजाभूत्यै दध्रे देवांशसंभवः ।
सौरीभिरिव नाडीभिरमृताख्याभिरम्मयः ॥ ५८ ॥
सममापन्नसत्त्वास्ता रेजुरापाण्डुरत्विषः ।
अन्तर्गतफलारम्भाः सस्यानामिव संपदः ॥ ५९ ॥

कारश्च ॥ भ्रमरी भृङ्गाङ्गना । वारणस्य गजस्य मदनिस्यन्दलेखयोरिव । गण्डद्वयगतयोरिति भावः । प्रणयवती प्रेमवत्यासीत् ॥ सपत्न्योरित्यत्र समासान्तर्गतस्यैं पत्युरुपमानं वारणस्येति ॥

५८ ॥ ताभिरिति । ताभिः कौसल्यादिभिः प्रजानां भूत्या अभ्युदयाय । देवस्य विष्णोरंशः संभवः कारणं यस्य स गर्भः ॥ सूर्यस्येमाः सौर्यः ॥ ताभिः सौरीभिः ॥ "सूर्यतिष्य—" इत्यादिनोपधायकारलोपः ॥ अमृता इत्याख्या यासां ताभिः । जलवहनसाम्यान्नाडीभिरिव । नाडीभिर्वृष्टिविसर्जनीभिर्दीधितिभिरपां विकारोऽम्मयो जलमयो गर्भ इव । दध्रे धृतः ॥ जातावेकवचनम् ॥ गर्भो दधिर इत्यर्थः ॥ अत्र यादवः---"तासां शतानि चत्वारि रश्मीनां वृष्टिसर्जने । शतत्रयं हिमोत्सर्गे तावद्गर्भस्य सर्जने । आनन्दाश्च हि मेध्याश्च नूतनाः पूतना इति । चतुःशतं वृष्टिवाहास्ताः सर्वा अमृताः स्त्रियः " इति ॥

५९ ॥ सममिति । समं युगपदापन्ना गृहीताः सत्त्वाः प्राणिनो याभिस्ता आपन्नसत्त्वा गर्भिण्यः ॥ "आपन्नसत्त्वा स्याद्गुर्विण्यन्तर्वत्नी च गर्भिणी " इत्यमरः ॥ अत एवापाण्डुरत्विष ईषत्पाण्डुरवर्णास्ता राजपत्न्यः । अन्तर्गता गूढाः फलारम्भाः फलप्रादुर्भावाः यासां ताः । सस्यानां संपद इव । रेजुर्बभुः ॥

---

both the streams of ichor flowing from the two cheeks of an elephant.

58. A fœtus sprung from the portion of the Supreme Being was borne (in their womb) by them (queens) for the good of the people, as a watery embryo by the name Am*ri*ta is borne (in their womb) by the solar rays.

59. The queens who conceived all at the same time and whose appearance (therefore) became pale shone like the thriving crop (*lit.* the thriving of the crop) with the appearance of the fruits hidden within.

Vijay., हि for अपि. A. J. निस्यन्दरेखयोः, B. C. E. H. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., निष्य [स्प] न्दलेखयोः for °निस्यन्दलेखयोः. Five Mss. with Hemâdri read with Mallinâtha.

58. I. सूरीभिः for सौरीभिः.

59. A. C. with Hem., Châ., Din., and Dharm., बभुः for रेजुः.

गुप्तं ददृशुरात्मानं सर्वाः स्वप्नेषु वामनैः ।
जलजासिगदाशार्ङ्गचक्रलाञ्छितमूर्तिभिः ॥ ६० ॥
हेमपक्षप्रभाजालं गगने च वितन्वता ।
उह्यन्ते स्म सुपर्णेन वेगाकृष्टपयोमुचा ॥ ६१ ॥
बिभ्रत्या कौस्तुभं न्यासं स्तनान्तरविलम्बिनम् ।
पर्युपास्यन्त लक्ष्म्या च पद्मव्यजनहस्तया ॥ ६२ ॥

६० ॥ संप्रति तासां स्वप्नदर्शनान्याह ॥ गुप्तमिति । सर्वास्ताः स्वप्नेषु । जलजः शङ्खः । जलजासिगदाशार्ङ्गचक्रैर्लाञ्छिता मूर्तयो येषां तैर्वामनैर्ह्रस्वैः पुरुषैर्गुप्तं रक्षितमात्मानं स्वरूपं ददृशुः ॥

६१ ॥ हेमेति । किं चेति चार्थः । हेम्नः सुवर्णस्य पक्षाणां प्रभाजालं कान्तिपुञ्जं वितन्वता विस्तारयता । वेगेनाकृष्टाः पयोमुचो मेघा येन तेन । सुपर्णेन गरुत्मता गरुडेन गगने ता उह्यन्ते स्मोढाः ॥

६२ ॥ बिभ्रत्येति । किं च । स्तनयोरन्तरे मध्ये विलम्बिनं लम्बमानम् । न्यस्यत इति न्यासः । कौस्तुभ एव न्यासस्तम् । पत्या कौतुकान्न्यस्तम् । कौस्तुभमित्यर्थः । बिभ्रत्या पद्ममेव व्यजनं हस्ते यस्यास्तया लक्ष्म्या पर्युपास्यन्तोपासिताः ॥

---

60. They all saw in dreams that their own shapes were guarded by dwarfs whose persons were furnished with (*lit.* marked with) conches, swords, maces, S'ârnga bows and quoits (Chakras).

61. (They also saw that) they were being borne on Garuda in the sky, who displayed the mass of splendour of his golden wings and who on account of his great speed dragged the clouds in his train.

62. (They saw that) they were waited upon by Lakshmî with a fan of a lotus in her hand, bearing the Kaustubha-jewel that suspended between her breasts, and which was deposited with her by her husband.

---

60. D. जलजासिखड्गगदाचक्र°, D_2. जलजासिशंखगदाचक्र°, K. असिखड्गगदाशार्ङ्गचक्र°, B. C. R. with Hem., Châ., Din., and Vija., असिशंखगदाशार्ङ्गचक्र° for जलजासिगदाशार्ङ्गचक्र°. We with four commentators and five Mss. Châritravardhana also notices the reading of Mallinâtha.

61. B. C. E. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., Vijay., Dharm., and Vija., हेमपत्र°, H. हेमपात्रं for हेमपक्ष°. D. K. विचिन्वता for वितन्वता. D. उह्यमानं for उह्यन्ते स्म. A. C. वेगाविद्ध,° D. H. वेगात्कृष्ट° for वेगाकृष्ट°. Châritravardhana also notices this and says,—"कुत्रापि ' वेगाविद्धपयोमुचा ' इति पाठस्तत्र विद्धाः क्षिप्ताः पयोमुचो यस्य [यत्र]".

62. B. C. E. I. J. R. with Hem., Châ., Din., Val., Vijay., and the text only of Su., कौस्तुभन्यासं for कौस्तुभं न्यासं. A. D. E. I. with

कृताभिषेकैर्दिव्यायां त्रिस्रोतसि च सप्तभिः ।
ब्रह्मर्षिभिः परं ब्रह्म गृणद्भिरुपतस्थिरे ॥ ६३ ॥
ताभ्यस्तथाविधान्स्वप्नाञ्छ्रुत्वा प्रीतो हि पार्थिवः ।
मेने परार्ध्यमात्मानं गुरुत्वेन जगद्गुरोः ॥ ६४ ॥
विभक्तात्मा विभुस्तासामेकः कुक्षिष्वनेकधा ।
उवास प्रतिमाचन्द्रः प्रसन्नानामपामिव ॥ ६५ ॥

६३ कृतेति ॥ किं च । दिवि भवायां दिव्यायां त्रिस्रोतस्याकाशगङ्गायां कृताभिषेकैः कृतावगाहैः । परं ब्रह्म वेदरहस्यं गृणद्भिः पठद्भिः सप्तभिर्ब्रह्मर्षिभिः कश्यपप्रभृतिभिरुपतस्थिरे उपासांचक्रिरे ॥

६४ ॥ ताभ्य इति । पार्थिवो दशरथस्ताभ्यः पत्नीभ्यः ॥ " आख्यातोपयोगे " इत्यपादानत्वात्पञ्चमी ॥ तथाविधानुक्तप्रकारान्स्वप्नाञ्छ्रुत्वा प्रीतः सन् । आत्मानं जगद्गुरोर्विष्णोरपि गुरुत्वेन पितृत्वेन हेतुना परार्ध्यं सर्वोत्कृष्टं मेने हि ॥

६५ ॥ विभक्तेति । एक एकरूपो विभुर्विष्णुस्तासां राजपत्नीनां कुक्षिषु गर्भेषु । प्रसन्नानां निर्मलानामपां कुक्षिषु प्रतिमाचन्द्रः प्रतिबिम्बचन्द्र इव । अनेकधा विभक्तात्मा सन् । उवास ॥

---

63. (They moreover saw that) they were worshipped by the seven Brahmanical sages who had performed their ablutions in the celestial triple-streamed river गंगा and who were reciting the hymns of the Vedas.

64. Having heard from them, dreams such as these, the king being greatly pleased, thought himself most excellent on account of his being (in the position of) the sire of the Lord of the Universe.

65. The all-pervading-Being, himself one, lived in their wombs dividing his self into manifold forms, as the reflected image of the moon though one displays itself (in manifold forms) in clear water.

Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., विलंबितं for विलंबिनं. D. उपास्यमानं for पर्युपास्यन्त. A. C. K. with Chá., and Din., लक्ष्म्या च पर्युपास्यन्त पद्मव्यजनहस्तया for पर्युपास्यन्त लक्ष्म्या च पद्मव्यजनहस्तया.

63. B. K. R. and the text only of Val., महर्षिभिः for ब्रह्मर्षिभिः. D. समुपस्थितं for उपतस्थिरे.

64. B. K. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., अथ, C. H. I. अपि for हि. D. कृतार्थं for परार्ध्यं.

65. D. K. प्रभुः for विभुः.

अथाग्रमहिषी राज्ञः प्रसूतिसमये सती ।
पुत्रं तमोपहं लेभे नक्तं ज्योतिरिवौषधिः ॥ ६६ ॥
राम इत्यभिरामेण वपुषा तस्य चोदितः ।
नामधेयं गुरुश्चक्रे जगत्प्रथममङ्गलम् ॥ ६७ ॥
रघुवंशप्रदीपेन तेनाप्रतिमतेजसा ।
रक्षागृहगता दीपाः प्रत्यादिष्टा इवाभवन् ॥ ६८ ॥

६६ ॥ अथेति । अथ राज्ञो दशरथस्य सती पतिव्रता । अग्रं चासौ महिषी चाग्रमहिषी । कौसल्या प्रसूतिसमये प्रसवकाले ओषधिर्नक्तं रात्रिसमये । तमोऽपहन्तीति तमोपहम् । ज्योतिरिव । तमोपहं तमोनाशकरं पुत्रं लेभे प्राप ॥

६७ ॥ राम इति । अभिरमन्तेऽत्रेत्यभिरामं मनोहरम् ॥ अधिकरणार्थे घञ्प्रत्ययः ॥ तेन वपुषा चोदितः प्रेरितो गुरुः पिता दशरथस्तस्य पुत्रस्य जगतां प्रथममङ्गलं राम इति नामधेयं चक्रे ॥ अभिरामत्वमेव रामशब्दप्रवृत्तिनिमित्तमित्यर्थः ॥

६८ ॥ रघ्विति । रघुवंशस्य प्रदीपेन प्रकाशकेन । अप्रतिमतेजसा तेन रामेण रक्षागृहगताः सूतिकागृहगता दीपाः प्रत्यादिष्टाः प्रतिबद्धा इवाभवन् ॥ महादीपसमीपे नाल्पाः स्फुरन्तीति भावः ॥

---

66. Then the Queen-consort who was faithful to her husband obtained at the proper time of delivery, a son that removed the darkness of grief, like herbs (phospherent plants) obtaining at night the light that dispels darkness.

67. Induced by his charming form the fat her gave him the name Râma—a name which was most auspicious in the world.

68. By him who was the light of the race of Raghus and of unrivalled splendour, the lamps in the lying-in-chamber were, as it were, despised (were eclipsed or out-shone) .

---

66. D. J. with Hemádri, अग्र्यमहिषी for अग्रमहिषी. We with five commentators and eleven Mss.

67. B. C. E. H. I. K. R. with Chà., Din., Val., Su., and Vijay., नोदितः for चोदितः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Châritravardhana and others.

68. E. रघुवंशे for रघुवंश°. C. D. with Hemádri and Vallabha, अभिमततेजसा for अप्रतिमतेजसा. The former "अभिमतं असंख्यातं तेजो यस्य तेन. The latter "अनुपमवर्चसा." Hemádri also notices the reading of Mallinâtha. D. K. with Su., शय्यागृह° for रक्षागृह°.

शय्यागतेन रामेण माता शातोदरी बभौ ।
सैकताम्भोजबलिना जाह्नवीव शरत्कृशा ॥ ६९ ॥
कैकेय्यास्तनयो जज्ञे भरतो नाम शीलवान् ।
जनयित्रीमलंचक्रे यः प्रश्रय इव श्रियम् ॥ ७० ॥
सुतौ लक्ष्मणशत्रुघ्नौ सुमित्रा सुषुवे यमौ ।
सम्यगागमिता विद्या प्रबोधविनयाविव ॥ ७१ ॥
निर्दोषमभवत्सर्वमाविष्कृतगुणं जगत् ।
अन्वगादिव हि स्वर्गो गां गतं पुरुषोत्तमम् ॥ ७२ ॥

६९ ॥ शय्येति । शातोदरी गर्भमोचनात्कृशोदरी माता शय्यागतेन रामेण । सैकते पुलिने योऽम्भोजबलिः पद्मोपहारस्तेन शरदि कृशा जाह्नवी गङ्गेव । बभौ ॥
७० ॥ कैकेय्या । केकयस्य राज्ञोऽपत्यं स्त्री कैकेयी ॥ " तस्यापत्यम् " इत्यणि कृते ॥ " केकयमित्रयुप्रलयानां यादेरियः " इतीयादेशः ॥ तस्या भरतो नाम शीलवांस्तनयो जज्ञे जातः ॥ यस्तु नयः । प्रश्रयो विनयः श्रियमिव । जनयित्रीं मातरमलंचक्रे ॥
७१ ॥ सुताविति । सुमित्रा लक्ष्मणशत्रुघ्नौ नाम यमौ युग्मजातौ सुतौ पुत्रौ । सम्यगागमिता स्वभ्यस्ता विद्या । प्रबोधविनयौ तत्त्वज्ञानेन्द्रियजयाविव । सुषुवे ॥
७२ ॥ निर्दोषमिति । सर्वं जगल्लोको निर्दोषं दुर्भिक्षादिदोषरहितम् । आविष्कृतगुणं प्रकटीकृतारोग्यादिगुणं चाभवत् ॥ अत्रोत्प्रेक्ष्यते-गां भुवं गतमवतीर्णं

69. The mother with the size of her womb reduced looked beautiful on account of Ráma lying in her bed, as does the stream of the Jáhnavi reduced in autumn, with the offering of the lotuses on the sandy bank.

70. A son Bharata by name of transcending qualities was born to Kaikeyi, who adorned his mother (her who gave him birth) as humility does riches.

71. Sumitrá gave birth to two sons who were twins named Lakshm*a*n*a* and S'atrughna, as does science well studied to knowledge and humility (restraint over the senses).

72. The whole world became free from calamities and dis-

69. D. I. J. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., बलिना for वलिना.

70. C. R. with Val., and Su., वीर्यवान् for शालिवान्. Vallabha: " बलसंपत्तियुक्तः ".

71. A. with Hemádri, अभ्यसिता, C. आवर्जिता, D. आराधिता for आगमिता.

72. A. प्राविष्कृत°, K. with Hem., Chá., Din., Su., and Vijay., आविःकृत° for आविष्कृत.° E. गुणोदयं for गुणं जगत्.

तस्योदये चतुर्मूर्तेः पौलस्त्यचकितेश्वराः ।
विरजस्कैर्नभस्वद्भिर्दिश उच्छ्वसिता इव ॥ ७३ ॥
कृशानुरपधूमत्वात्प्रसन्नत्वात्प्रभाकरः ।
रक्षोविप्रकृतावास्तामपविद्धशुचाविव ॥ ७४ ॥
दशाननकिरीटेभ्यस्तत्क्षणं राक्षसश्रियः ।
मणिव्याजेन पर्यस्ताः पृथिव्यामश्रुबिन्दवः ॥ ७५ ॥

पुरुषोत्तमं विष्णुं स्वर्गोऽप्यन्वगादिव ॥ स्वर्गो हि गुणवान्निर्दोषश्चेत्यागमः ॥ स्वर्गतुल्यमभूदित्यर्थः ॥

७३ ॥ तस्येति । चतुर्मूर्ते रामादिरूपेण चतूरूपस्य सतस्तस्य हरेरुदये सति । पौलस्त्याद्रावणाच्चकिता भीता ईश्वरा नाथा इन्द्रादयो यासां ता दिशश्चतस्रो विरजस्कैरपगतधूलिभिर्नभस्वद्भिर्वायुभिः । निमेण । उच्छ्वसिता इव । इत्युत्प्रेक्षा ॥ श्वसेः कर्तरि क्तः ॥ स्वनाथशरणलाभसंतुष्टानां दिशामुच्छ्वासवाता इव वाता वबुरित्यर्थः ॥ चतुर्दिगीशरक्षणं मूर्तिचतुष्टयप्रयोजनमिति भावः ॥

७४ ॥ कृशानुरिति । रक्षसा रावणेन विप्रकृतावपकृतौ । पीडितावित्यर्थः । कृशानुरग्निः प्रभाकरः । सूर्यश्च यथासंख्यमपधूमत्वात्प्रसन्नत्वाच्चापविद्धशुचौ निरस्तदुःखाविवास्तामभवताम् ॥

७५ ॥ दशाननेति । तत्क्षणं तस्मिन्क्षणे रामोत्पत्तिसमये राक्षसश्रियोऽश्रुबिन्दवो दशाननकिरीटेभ्यो मणीनां व्याजेन मिषेण पृथिव्यां पर्यस्ताः पतिताः ॥ रामोदये सति तद्वध्यस्य रावणस्य किरीटमणिभ्रंशलक्षणं दुर्निमित्तमभूदित्यर्थः ॥

---

played many blessings ; for heaven itself, as it were, followed the Supreme Being who had come to the earth .

73. At the advent of that four-fold incarnation (of him in the four forms) the (four) quarters, whose tutelarly deities were made to tremble by Paulastya, breathed a breath of relief as it were by means of the breezes which were free from dust.

74. The fire and the sun both of whom were oppressed by the Rakshasa, became, as it were, freed from their grief—the one on account of its smokelessness and the other on account of his clearness.

75. At that moment the Goddess of Fortune of the demon shed on earth drops of tears in the form of jewels from the diadems of the ten-mouthed demon (Râva*n*a) .

---

74. C_2. with Hemádri, च भास्करः, D. I. K. with Vijay., and Dharm., and the text only of Val., दिवाकरः, B. with Chà., and Din., क्षपाकरः for प्रभाकरः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinátha. C. D. I. with Su., **अपनीत° for अपविद्ध°. E. omits this verse.**

पुत्रजन्मप्रवेश्यानां तूर्याणां तस्य पुत्रिणः ।
आरम्भं प्रथमं चक्रुर्देवदुन्दुभयो दिवि ॥ ७६ ॥
संतानकमयी वृष्टिर्भवने चास्य पेतुषी ।
सन्मङ्गलोपचाराणां सैवादिरचनाभवत् ॥ ७७ ॥
कुमाराः कृतसंस्कारास्ते धात्रीस्तन्यपायिनः ।
आनन्देनाग्रजेनेव समं ववृधिरे पितुः ॥ ७८ ॥

७६ ॥ पुत्रेति । पुत्रिणो जातपुत्रस्य तस्य दशरथस्य पुत्रजन्मनि प्रवेश्यानां प्रवेशयितव्यानाम् । वादनीयानामित्यर्थः । तूर्याणां वाद्यानामारम्भमुपक्रमं प्रथमं दिवि देवदुन्दुभयश्चक्रुः ॥ साक्षात्पितुर्दशरथादपि देवा अधिकं प्रहृष्टा इत्यर्थः ॥

७७ ॥ सन्तानकेति । अस्य राज्ञो भवने संतानकानां कल्पवृक्षकुसुमानां विकारः संतानकमयी वृष्टिश्च पेतुषी पपात ॥ " कसुश्च " इति कसुप्रत्ययः ॥ " उगितश्च " इति ङीप् ॥ सा वृष्टिरेव सन्तः पुत्रजन्मन्यावश्यका ये मङ्गलोपचारास्तेषामादिरचना प्रथमक्रिया । अभवत् ।

७८ ॥ कुमारा इति । कृताः संस्कारा जातकर्मादयो येषां ते । धात्रीणामुपमातॄणां स्तन्यानि पयांसि पिबन्तीति तथोक्ताः । ते कुमारा अग्रजातेनाग्रजेन ज्येष्ठेनेव स्थितेन पितुरानन्देन समं ववृधिरे ॥ कुमारवृद्ध्या पिता महान्तमानन्दमवापेत्यर्थः ॥ कुमारजन्मनः प्रागेव जातत्वादग्रजत्वोक्तिरानन्दस्य ॥

---

76. First in the heavens, the drums of the gods made a beginning of the musical instruments that were to be sounded at the time of the birth of a son to him who (now) got a son.

77. The shower of संतानक flowers that fell on his palace became the first display of auspicious ceremonies (*i. e.* the auspicious rejoicings that followed).

78. The princes whose birth (or natal) ceremonies were performed and who were sucking the breasts of their nurses, grew up together with the delight of their royal father, which was, as it were, their elder brother.

---

76. C. E. K. R. with Vijay., °प्रवेशानां for प्रवेश्यानां. Seven commentators read with Mallinâtha. D. प्रारंभं for आरंभं.

77. B. C. E. K. R. with Châ., Din., Val., and Vijay., तस्य for चास्य. Vallabha's text with Mallinâtha. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Châritravardhana and others. H. शोभाद्रिगुण्यमादधे for सैवादिरचनाभवत्.

78. D. H. I. J. with Hem., Châ., Din., Val., and Vijay., °स्तनपायिनः for °स्तन्यपायिनः. Vallabha's text with Mallinâtha. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha and notices the other reading.

स्वाभाविकं विनीतत्वं तेषां विनयकर्मणा ।
मुमूर्छ सहजं तेजो हविषेव हविर्भुजाम् ॥ ७९ ॥
परस्परविरुद्धास्ते तद्रघोरनघं कुलम् ।
अलमुद्द्योतयामासुर्देवारण्यमिवर्तवः ॥ ८० ॥
समानेऽपि हि सौभ्रात्रे यथोभौ रामलक्ष्मणौ ।
तथा भरतशत्रुघ्नौ प्रीत्या द्वन्द्वं बभूवतुः ॥ ८१ ॥

७९ ॥ स्वाभाविकमिति । तेषां कुमाराणां संबन्धि स्वाभाविकं सहजं विनीतत्वं विनयकर्मणा शिक्षया । हविर्भुजामग्नीनां सहजं तेजो हविषाऽऽज्यादिकेनेव । मुमूर्च्छ ववृधे ॥ निसर्गसंस्काराभ्यां विनीता इत्यर्थः ॥

८० ॥ परस्परेति । परस्परमविरुद्धा अविद्विष्टाः । सौभ्रात्रगुणवन्त इत्यर्थः । ते कुमारास्तत्प्रसिद्धमनघं निष्पापं रघोः कुलम् । ऋतवो वसन्तादयो देवारण्यं नन्दनमिव ॥ सहजविरोधानामप्यृतूनां सहावस्थानसंभावनार्थं देवविशेषणम् ॥ अलमत्यन्तमुद्द्योतयामासुः प्रकाशयामासुः ॥ सौभ्रात्रवन्तः कुलभूषणायन्त इति भावः ॥

८१ ॥ समान इति । शोभनाः स्निग्धा भ्रातरो येषां ते सुभ्रातरः ॥ " नद्यृतश्च " इति कप्न भवति ॥ वन्दिते भ्रातुरिति निषेधात् ॥ तेषां भावः सौभ्रात्रम् ॥ युवादित्वादण् ॥ तस्मिन्समाने चतुर्णां तुल्येऽपि यथोभौ रामलक्ष्मणौ प्रीत्या द्वन्द्वं बभूवतुः । तथा भरतशत्रुघ्नौ प्रीत्या द्वन्द्वं द्वौ द्वौ साहचर्येणाभिव्यक्तौ बभूवतुः ॥ " द्वन्द्वं रहस्यमर्यादावचनव्युत्क्रमणयज्ञपात्रप्रयोगाभिव्यक्तिषु " इत्यभिव्यक्तार्थे निपातः ॥ कश्चित्कस्यां चत्स्नेहो नातिरिच्यत इति भावः ॥

---

79 The natural modesty of these princes improved (lit. was increased) by means of the method of education (or discipline which they under-went), as the natural splendour of fire is augmented by the oblations (of ghee thrown into it).

80. Those brothers who were well-disposed towards one another, greatly illuminated (glorified) that unblemished (pure) family of Raghu, as the seasons adorn the garden of the gods (the Nandana forest).

81. Though the fraternal love existing among all the brothers was equal, still as Ráma and Lakshma*n*a formed a pair (became constant companions) with affection so did Bharata and S'atrughna.

---

79. C. K. R. with Su., विनयकर्मणां for विनयकर्मणा. D. K. अमूर्च्छत् for मुमूर्छ.

80. A. C. D. with Su., देवोद्यानं for देवारण्यं. K. omits this verse.

तेषां द्वयोर्द्वयोरैक्यं बिभिदे न कदाचन ।
यथा वायुविभावस्वोर्यथा चन्द्रसमुद्रयोः ॥ ८२ ॥
ते प्रजानां प्रजानाथास्तेजसा प्रश्रयेण च ।
मनो जह्रुर्निदाघान्ते श्यामाभ्रा दिवसा इव ॥ ८३ ॥
स चतुर्धा बभौ व्यस्तः प्रसवः पृथिवीपतेः ।
धर्मार्थकाममोक्षाणामवतार इवाङ्गभाक् ॥ ८४ ॥

८२ ॥ तेषामिति । तेषां चतुर्णां मध्ये द्वयोर्द्वयोः । रामलक्ष्मणयोर्भरतशत्रुघ्नयोश्चेत्यर्थः । वायुविभावस्वोर्यथा वातवह्न्योरिव । चन्द्रसमुद्रयोरिव च । ऐक्यमैकमत्यं कदाचन न बिभिदे । एककार्यत्वं समानसुखदुःखत्वं च कदाचिन्नाहीयाल्लभ्यते ॥ सहजः सहकारी हि वह्नेर्वायुः । चन्द्रवृद्धौ हि वर्धते सिन्धुस्तत्क्षये च क्षीयत इति ॥

८३ ॥ त इति । प्रजानाथास्ते कुमारास्तेजसा प्रभावेण । प्रश्रयेण विनयेन च । निदाघान्ते ग्रीष्मान्ते । श्यामान्यभ्राणि मेघा येषां ते श्यामाभ्राः । नातिशीतोष्णा इत्यर्थः । दिवसा इव । प्रजानां मनो जह्रुः ॥

८४ ॥ स इति । चतुर्धा व्यस्तो विभक्तः पृथिवीपतेर्दशरथस्य स प्रसवः संतानः चतुर्धाङ्गभाङ्मूर्तिमान्धर्मार्थकाममोक्षाणामवतार इव । बभौ ॥

---

82. The unity of ideas existing between the members of each of these two couples (of brothers) was never broken like that between fire and wind or the moon and ocean.

83. Those princes who were lords of men attracted the minds of their subjects with their power (prowess or lustre) and humility (good discipline), as do the dark cloudy days at the close of summer (the hot season).

84. The issue of the lord of the earth divided as it was into four parts, looked like the embodied incarnation of धर्म, अर्थ, काम and मोक्ष.

---

83. A. C. with Chá., Din., and Su., प्रणयेन, E. J. प्रश्रयेन for प्रश्रयेण. A. C. श्यामलाः for श्यामाभ्राः. Hemádri also notices this and says, —" श्यामलाः " इति पाठः ॥ " विच्छादिः ॥ " &c.

84. E. with Su., व्यस्तप्रसवः for व्यस्तः प्रसवः. B. E. H. I. J. K R. with Chá., Din., Val., and Su., अङ्गवान् for अङ्गभाक्. Hemádri and three other commentators with Mallinátha. The first " अंगवान् शरीरी धर्मार्थकाममोक्षाणामवतार इव " &c. The second " अङ्गवान् देही धर्मादीनामवतार इव " &c. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Châritravardhana and others. A. C. with Hemádri, पृथिवीक्षितः for पृथिवीपतेः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha.

गुणैराराधयामासुस्ते गुरुं गुरुवत्सलाः ।
तमेव चतुरन्तेशं रत्नैरिव महार्णवाः ॥ ८५ ॥

सुरगज इव दन्तैर्भग्नदैत्यासिधारैर्नय इव पणबन्धव्यक्तयोगैरुपायैः ।
हरिरिव युगदीर्घैर्दोर्भिरंशैस्तदीयैः पतिरवनिपतीनां तैश्चकाशे चतुर्भिः ॥ ८६ ॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कविश्रीकालिदासकृतौ
रामावतारो नाम दशमः सर्गः ॥

८५ ॥ गुणैरिति । गुरुवत्सलाः पितृभक्तास्ते कुमारा गुणैर्विनयादिभिर्गुरुं पितरम् । चतुर्णामन्तानां दिगन्तानामीशं चतुरन्तेशम् ॥ "तद्धितार्थ—" इत्यादिनोत्तरपदसमासः ॥ तं दशरथमेव महार्णवाश्चत्वारो रत्नैरिव आराधयामासुरानन्दयामासुः ॥

८६ ॥ सुरगज इति । भग्ना दैत्यानामसिधारा यैस्तैश्चतुर्भिर्दन्तैः सुरगज ऐरावत इव । पणबन्धेन फलसिद्ध्या व्यक्तयोगैरनुमितप्रयोगैरुपायैश्चतुर्भिः सामादिभिर्नयो नीतिरिव । युगवद्दीर्घैश्चतुर्भिर्दोर्भिर्भुजैर्हरिर्विष्णुरिव । तदीयैर्हरिसंबन्धिभिरंशैरंशभूतैश्चतुर्भिस्तैः पुत्रैरवनिपतीनां पती राजराजो दशरथश्चकाशे विदिद्युते ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलाचलमल्लिनाथमच्छपाच्छयसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां दशमः सर्गः ॥

---

85. Those princes who were devoted to their sire propitiated him by their good qualities, as the four great oceans did that same lord of the extremities of the four quarters by their jewels.

86. The lord of kings on account of the four princes who were portions of Vishnu, appeared like the celestial elephant ऐरावत with his four tusks that had blunted the edge of demons' swords, like Vishnu himself with his four arms as long as a yoke and like politics accompanied by four political expedients, the use or adoption of which is inferred from the success attained.

---

86. D. H. फलबन्ध° for पणबन्ध°. Hemâdri and Châritravardhana also notice the reading. A. B. C. E. H. J. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., चकासे for चकाशे. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha.

। एकादशः सर्गः ।

कौशिकेन स किल क्षितीश्वरो राममध्वरविघातशान्तये ।
काकपक्षधरमेत्य याचितस्तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते ॥ १ ॥
कृच्छ्रलब्धमपि लब्धवर्णभाक्तं दिदेश मुनये सलक्ष्मणम् ।
अप्यसुप्रणयिनां रघोः कुले न व्यहन्यत कदाचिदर्थिता ॥ २ ॥

रामचन्द्रचरणारविन्दयोरन्तरङ्गचरभृङ्गलीलया ।
तत्र सन्ति हि रसाश्चतुर्विधास्तान्यथारुचि सदैव निर्विश ॥

१ ॥ कौशिकेनेति ॥ कौशिकेन कुशिकापत्येन विश्वामित्रेणेत्यागत्य स क्षितीश्वरो दशरथः । अध्वरविघातशान्तये यज्ञविघ्नविध्वंसाय । काकपक्षधरो बालकोचितशिखाधरः ॥ "बालानां तु शिखा प्रोक्ता काकपक्षः शिखण्डकः" इति हलायुधः ॥ तं रामं याचितः किल प्रार्थितः खलु ॥ याचेर्द्विकर्मकादप्रधाने कर्मणि क्तः ॥ अप्रधाने दुहादीनामिति वचनात् ॥ नायं बालोऽधिकारीत्याशङ्क्याह—तेजसां तेजस्विनां वयो बाल्यादि न च समीक्ष्यते हि । अप्रयोजकमित्यर्थः ॥ अत्र सर्गे वृत्तं रथोद्धता । उक्तं च—"रान्नराविह रथोद्धता लगौ" इति ॥

२ ॥ कृच्छ्रलब्धमिति । लब्धा वर्णाः प्रसिद्धयो यैस्ते लब्धवर्णा विचक्षणाः ॥ "लब्धवर्णो विचक्षणः" इत्यमरः ॥ तान्भजत इति लब्धवर्णभाग्विद्वत्सेवी । अत एव विवेकी स राजा कृच्छ्रलब्धमपि सलक्ष्मणं तं रामं मुनये दिदेशातिसृष्टवान् ॥ तथा हि । असुप्रणयिनां प्राणार्थिनामप्यर्थिता याच्ञा रघोः कुले कदाचिदपि न व्यहन्यत न विहता । अविफलीकृतेत्यर्थः ॥ यैरर्थिभ्यः प्राणा अपि समर्प्यन्ते तेषां पुत्रादित्यागो न विस्मयावह इति भावः ॥

---

1. Once upon a time the son of Kus'ika went to the lord of the earth and begged of him Râma who (yet) wore his side-locks of hair, for the removal of the obstacles to his sacrificial ceremonies; for age is of no consideration in the case of the powerful.

2. The king who was a patron to the learned, ordered him though obtained with great difficulty, to go with the Muni together

---

1. C. I. J. न हि for हि न. D. with Vallabha read the following verse first and then our text :—"सोऽभिगम्य किल गाधिसूनुना राममध्वरविघातशान्तये । याचितः शिशुमपि प्रजेश्वरस्तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते" ॥ [Hem., अधिगम्य for अभिगम्य] Hemâdri speaks of this as पाठान्तरं or a variant. Vallabha considers this verse as genuine and speaks of the text of Mallinâtha as पाठान्तरं or a variant.

2. B. E. H. I. K. R. with Val., and Vijay., मेदिनीपतिः, Hemâdri also notices this. D. सोऽविचक्षणः for लब्धवर्णभाक्. Five Mss. with

यावदादिशति पार्थिवस्तयोर्निर्गमाय पुरमार्गसत्क्रियाम् ।
तावदाशु विदधे मरुत्सखैः सा सपुष्पजलवर्षिभिर्घनैः ॥ ३ ॥

तौ निदेशकरणोद्यतौ पितुर्धन्विनौ चरणयोर्निपेततुः ।
भूपतेरपि तयोः प्रवत्स्यतोर्नम्रयोरुपरि बाष्पबिन्दवः ॥ ४ ॥

३ ॥ यावदिति । पार्थिवः पृथिवीश्वरस्तयो रामलक्ष्मणयोर्निर्गमाय निष्क्रमणाय पुरमार्गसत्क्रियां धूलिसंमार्जनगन्धोदकसंचनपुष्पोपहाररूपसंस्कारं यावदादिशत्याज्ञापयति । तावन्मरुत्सखैर्वायुसखैः । अनेन धूलिसंमार्जनं गम्यते । सपुष्पजलवर्षिभिः पुष्पसहितजलवर्षिभिर्घनैः सा मार्गसत्क्रियाशु विदधे विहिता ॥ एतेन देवकार्यप्रवृत्तयोर्दैवानुकूल्यं सूचितम् ॥

४ ॥ ताविति । निदेशकरणोद्यतौ पित्राज्ञाकरणोद्युक्तौ धन्विनौ धनुष्मन्तौ तौ कुमारौ पितुश्चरणयोर्निपेततुः । प्रणतावित्यर्थः । भूपतेरपि बाष्पबिन्दवः प्रवत्स्यतोः प्रवासं करिष्यतोः । अत एव नम्रयोः प्रणतयोः ॥ "नमिकम्पि-" इति रप्रत्ययः ॥ तयोरुपरि निपेतुः पतिताः ॥

---

with Lakshma*n*a ; never did a petition even of those who asked for (one's) life, go for nothing in the family of the Raghus.

3. No sooner had the king ordered the decorations of the streets of the city for their departure than were they instantly done by the clouds, assisted by the winds, raining down water mixed with flowers.

4. Those two (brothers) armed with bows and ready to do the bidding of their sire fell at his feet ; the tear-drops of the king also dropped upon them, who were about to go abroad, as they knelt (before him).

Hem., Chà., Din., Su., and Dharm., read with Mallinàtha. Vallabha also notices the reading of Mallinàtha. Hemàdri also notices the reading of D. Ms.

3. E. सुरमार्ग for पुरमार्ग°. C. संस्क्रियां for सत्क्रियां. We with eight commentators and thirteen Mss. D. K. तावता for तावद्. A. D. H. K. P. R. with Hem., Chà., Din., Su., Vijay., and the text only of Val., विहिता for विदधे. B. E. H. I. K. P. R. with Hem., Chà., Din., Val., Su., and Vijay., सान्द्रपुष्प° for सा सपुष्प .

4. C. D. H. K. प्रयास्यतोः for प्रवत्स्यतोः.

तौ पितुर्नयनजेन वारिणा किंचिदुक्षितशिखण्डकावुभौ ।
धन्विनौ तमृषिमन्वगच्छतां पौरदृष्टिकृतमार्गतोरणौ ॥ ५ ॥
लक्ष्मणानुचरमेव राघवं नेतुमैच्छदृषिरित्यसौ नृपः ॥
आशिषं प्रयुयुजे न वाहिनीं सा हि रक्षणविधौ तयोः क्षमा ॥ ६ ॥
मातृवर्गचरणस्पृशौ मुनेस्तौ प्रपद्य पदवीं महौजसः ।
रेजतुर्गतिवशात्प्रवर्तिनौ भास्करस्य मधुमाधवाविव ॥ ७ ॥

५ ॥ ताविति । पितुर्नयनजेन वारिणा किंचिदुक्षितशिखण्डकावीषत्सिक्तचूडौ ॥ " शिखाचूडा शिखण्डः स्यात् " इत्यमरः ॥ " शेषाद्विभाषा " इति कप्प्रत्ययः ॥ धन्विनौ तावुभौ । पौरदृष्टिभिः कृतानि मार्गतोरणानि कुवलयादिसंपाद्यानि ययोस्तौ तथोक्तौ । संवशां निरीक्ष्यमाणावित्यर्थः । तमृषिमन्वगच्छताम् ॥
६ ॥ लक्ष्मणेति । ऋषिर्लक्ष्मणानुचरमेव लक्ष्मणमात्रानुचरं तं राघवं नेतुमैच्छदिति हेतोरसौ नृप आशिषं प्रयुयुजे प्रयुक्तवान् । वाहिनीं सेनां न प्रयुयुजे न प्रेषितवान् ॥ हि यस्मात्साशीरेव तयोः कुमारयो रक्षणविधौ क्षमा शक्ता ॥
७ ॥ मातृवर्गेति । मातृवर्गस्य चरणान्स्पृशत इति मातृवर्गचरणस्पृशौ । कृत-

---

5. Both the princes armed with bow, with their locks of hair a little drenched with the tears that had flown from the eyes of their father, followed that sage, the glances of the citizens serving as decoration-arches to the street.

6. Seeing that the sage wished to take with him Ràghava accompanied by Lakshma*n*a alone that king sent (*lit.* pronounced) benedictions with them instead of an army ; for that benediction alone was quite efficient for the task of their protection.

7. The two princes, who had touched the feet of their mothers,

---

5. C. E. H. I. K. R. with Val., Su., and Vijay., शिखण्डिकौ for °शिखण्डकौ. One of the three Mss. of Chàritravardhana's शिशुहितैषिणी agrees with Vallabha. E. H. I. with Vallabha read " लक्ष्मणानु &c., " first and then " तौ पितुः " &c.

6. Between 6—7 D. I. R. with Hem., Chà., Din., Val., and Su., read,—" रेजतुश्च सुतरां महौजसः कौशिकस्य पदवीमनुद्रुतौ । उत्तरां प्रति दिशं विवस्वतः प्रस्थितस्य मधुमाधवाविव " ॥ रेजतुरिति । महौजसः कौशिकस्य पदवीं मार्गं अनुद्रुतौ अनुगतौ रामलक्ष्मणौ सुतरामतिशयेन रेजतुश्च ॥ " किमिन्निद " इत्याम् ॥ उत्तरां दिशं प्रस्थितस्य विवस्वतो रवेः पदवीमनुद्रुतौ मधुमाधवौ चैत्रवैशाखा इव ॥ इति तेजस्वितोक्तिः ॥ वसन्ते हि सूर्यगतिवशान्स्वाचिह्नान्वितौ तौ वर्तेते ॥ ६० ॥ All these commentators consider this verse as the genuine text of Kàlidàsa.

7. B. with Hem. and Vijay., गतिवशा , C. with Su., गतिवशं for ·गतिवशात्. R. with Chà., and Din., omit this verse. Hemàdri and Vallabha consider this as पाठान्तरं, I. calls it as spurious or क्षेपक.

वीचिलोलभुजयोस्तयोर्गतं शैशवाच्चपलमप्यशोभत ।
तोयदागम इवोद्ध्यभिद्ययोर्नामधेयसदृशं विचेष्टितम् ॥ ८ ॥
तौ बलातिबलयोः प्रभावतो विद्ययोः पथि मुनिप्रदिष्टयोः ।
मम्लतुर्न मणिकुट्टिमोचितौ मातृपार्श्वपरिवर्तिनाविव ॥ ९ ॥

मातृवर्गनमस्काराविवित्यर्थः ॥ "स्पृशोऽनुदके क्विन्" इति क्विन्प्रत्ययः ॥ तौ महौजसो मुनेः पदवीं प्रपद्य । महौजसो भास्करस्य गतिवशान्मेषादिराशिसंक्रान्त्यनुसारात्प्रवर्तिनौ मधुमाधवाविव चैत्रवैशाखाविव रेजतुः ॥ "फणां च सप्तानाम्" इति वैकल्पिकावित्वाभ्यासलोपौ ॥ "स्याच्चैत्रे चैत्रको मधुः" "वैशाखे माधवो राधः" इति चामरः ॥

८ ॥ वीचीति । वीचिलोलभुजयोस्तरंगचञ्चलबाह्वोः ॥ इदं विशेषणं नद्योपमानसिद्ध्यर्थं वेदितव्यं ॥ तयोश्चपलं चञ्चलमपि गतं गतिः शैशवाद्धेतोरशोभत ॥ किमिव । तोयदागमे वर्षासमये ॥ उज्झत्युदकमित्युद्ध्यः ॥ भिनत्ति कूलमिति भिद्यः ॥ "भिद्योद्ध्यौ नदे" इति क्यबन्तौ निपातितौ ॥ उद्ध्यभिद्ययोर्नदविशेषयोर्नामधेयसदृशं नामानुरूपं विचेष्टितमिव । उदकोज्झनकूलभेदनरूपव्यापार इव ॥ समयोत्पन्नं चापलमपि शोभत इति भावः ॥

९ ॥ तावित्ति । मणिकुट्टिमोचितौ मणिबद्धभूमिसंचारोचितौ तौ मुनिप्रदिष्टयोः कौशिकेनोपदिष्टयोर्बलातिबलयोर्विद्ययोर्मन्त्रयोः प्रभावतः सामर्थ्यान्मातृपार्श्वपरिवर्तिनौ मातृसमीपवर्तिनाविव पथि न मम्लतुः । न म्लानावित्यर्थः ॥ अत्र रामायणश्लोकः—"क्षुत्पिपासे न ते राम भविष्येते नरोत्तम । बलामतिबलां चैव पठतः पथि राघव" इति ॥

---

having taken (or followed) the track of the Muni of great powers shone like the months Chaitra and Vais'ákha moving in obedience to the course of the sun of great lustre.

8. Like the workings of the rivers Uddhya and Bhidya suitable to their names at the advent of the rainy season, the gait (of walking) of the princes whose arms were as unsteady as the waves, though wanton and rude, looked beautiful on account of their tender years.

9. By the po wer of the two magical spells called Balá and Atibalá which they were taught by the Muni, the two princes felt no more fatigue on the way (*i. e.* felt no fatigue of the journey) though accustomed to a pavement set with precious stones than if they had been running about near their mothers.

---

9. A. C. D. with Chá., Din., and Su., तदुपदिष्टयोः पथि for पथि मुनिप्रदिष्टयोः. A. C. with Vallabha, 'परिवर्तिताविव for 'परिवर्तिनाविव.

पूर्ववृत्तकथितैः पुराविदः सानुजः पितृसखस्य राघवः ।
उह्यमान इव वाहनोचितः पादचारमपि न व्यभावयत् ॥ १० ॥
तौ सरांसि रसवद्भिरम्बुभिः कूजितैः श्रुतिसुखैः पतत्रिणः ।
वायवः सुरभिपुष्परेणुभिश्छायया च जलदाः सिषेविरे ॥ ११ ॥
नाम्भसां कमलशोभिनां तथा शाखिनां न च परिश्रमच्छिदाम् ।
दर्शनेन लघुना यथा तयोः प्रीतिमापुरुभयोस्तपस्विनः ॥ १२ ॥

१० ॥ पूर्वेति । वाहनोचितः सानुजो राघवः । पुराविदः पूर्ववृत्ताभिज्ञस्य पितृसखस्य मुनेः पूर्ववृत्तकथितैः पुरावृत्तकथाभिरुह्यमान इव वाहनेन प्राप्यमाण इव ॥ वहेर्धातोः कर्मणि शानच् ॥ पादचारमपि न व्यभावयन्न ज्ञातवान् ॥

११ ॥ ताविति । तौ राघवौ । कर्मभूतौ । सरांसि । कर्तॄणि । रसवद्भिर्मधुरैरम्बुभिः सिषेविरे । पतत्रिणः पक्षिणः ॥ सुखयन्तीति सुखानि ॥ पचाद्यच् ॥ श्रुतीनां सुखानि । तैः कूजितैः । वायवः सुरभिपुष्परेणुभिः । जलदाश्छायया च । सिषेविर इति सर्वत्र संबध्यते ॥

१२ ॥ नेति । तप एषामस्तीति तपस्विनः ॥ "तपः सहस्राभ्यां विनीनी" इति विनिप्रत्ययः ॥ लघुनेष्टेन ॥ "त्रिष्विष्टेऽल्पे लघुः" इत्यमरः ॥ तयोरुभयोः । कर्मभूतयोः । दर्शनेन यथा प्रीतिमापुः । तथा कमलशोभिनामम्भसां दर्शनेन नापुः । परिश्रमच्छिदां शाखिनां दर्शनेन च नापुः ॥

---

10. Ràghava accustomed to move about in vehicles with his brother, did not feel the toils of the journey though on foot, being borne, as it were, on the recitations of old tales, made by him who was versed in legendary lore and who was their father's friend.

11. The tanks served them with sweet water, the birds with their notes pleasing to the ear, the breeze with the pollen of sweet-scented flowers and clouds with shade.

12. The ascetics did not feel so much delight at the sight of waters rendered beautiful by lotuses or of trees that removed their fatigue (of journey), as they did at the desirable sight of them both.

---

10. D. उद्यमानः for उह्यमानः. Also Mallinàtha, who says,—"उद्यमानः" इत्यत्र दीर्घादिरपपाठः । दीर्घस्याप्यभावात् "।

11. A. C. with Val., वासितैः for कूजितैः. R. with Su., सिसेविरे for सिषेविरे.

12. A. D. with Chà., and Din., विकचपद्मशोभिनां for कमलशोभिनां तथा. D. with Chà., and Din., वीरुधां फलभृतां न वा तथा for शाखिनां न च परिश्रमच्छिदां. Hemàdri also notices the reading of Chàritravardhana and Dinakara. A. D. J. with Chà., and Din. च न for न च. Ten Mss. with Hem., Val., Su., and Vijay., read with Mallinàtha.

स्थाणुदग्धवपुषस्तपोवनं प्राप्य दाशरथिरात्तकार्मुकः ।
विग्रहेण मदनस्य चारुणा सोऽभवत्प्रतिनिधिर्न कर्मणा ॥ १३ ॥
तौ सुकेतुसुतया खिलीकृते कौशिकाद्विदितशापया पथि ।
निन्यतुः स्थलनिवेशिताटनी लीलयैव धनुषी अधिज्यताम् ॥ १४ ॥
ज्यानिनादमथ गृह्णती तयोः प्रादुरास बहुलक्षपाछविः ।
ताडका चलकपालकुण्डला कालिकेव निबिडा बलाकिनी ॥ १५ ॥

१३ ॥ स्थाण्विति । स आत्तकार्मुकः । दशरथस्यापत्यं पुमान्दाशरथी रामः ॥ "अत इञ्" इतीञ्प्रत्ययः ॥ स्थाणुर्हरः ॥ "स्थाणुः कीले हरे स्थिरे" इति विश्वः ॥ तेन दग्धवपुषो मदनस्य तपोवनं प्राप्य चारुणा विग्रहेण कायेन ॥ "विग्रहः समरे काये" इति विश्वः ॥ प्रतिनिधिः प्रतिकृतिः सदृशोऽभवत्कर्मणा न पुनः ॥ देहेन मदनसुन्दर इति भावः ॥

१४ ॥ ताविति । अत्र रामायणवचनम्—"अगस्त्यः परमः क्रुद्धस्ताडकामभिशप्तवान् । पुरुषादी महायक्षी विकृता विकृतानना । इदं रूपमपाहाय दारुणं रूपमस्तु ते" इति ॥ तदेवाह—विदितशापयेति । कौशिकादाख्यातुः ॥ "आख्यातोपयोगे" इत्यपादानात्पञ्चमी ॥ विदितशापया सुकेतुसुतया ताडकया खिलीकृते पथि ॥ "खिलमप्रहतं स्थानम्" इति हलायुधः ॥ तौ रामलक्ष्मणौ । स्थले निवेशिते अटनी धनुःकोटी याभ्यां तौ तथोक्तौ ॥ "कोटिरस्याटनिः" इत्यमरः ॥ लीलयैव धनुषी ॥ अधिकृते ज्ये मौर्व्यौ ययोस्ते अधिज्ये ॥ "ज्या मौर्वीमातृभूमिषु" इति विश्वः ॥ तयोर्भावमधिज्यतां निन्यतुर्नीतवन्तौ ॥ नयतिर्द्विकर्मकः ॥

१५ ॥ ज्येति । अथ तयोर्ज्यानिनादं गृह्णती जानती । शृण्वतीत्यर्थः ॥ बहुलक्षपाछविः कृष्णपक्षरात्रिवर्णा ॥ "बहुलः कृष्णपक्षे च" इति विश्वः ॥ चले

---

13. Having got to the penance-grove of Madana whose body had been burnt by Sthá*n*u, that son of Das'aratha with a bow in his hand became his representative in (*lit.* by means of) his captivating form and not in his actions.

14. On the road that had been turned into a desert by the daughter of Suketu, the story of whose curse was made known to them by Kaus'ika, those two little warriors easily stringed their bows the ends of which were placed on the ground.

15. Then catching the twanging sound of their bow-string Tà*d*akà whose complexion resembled the appearance of a night

---

13. D. with Chá., and Din., omit this verse.

14. C. °निवेशनाटनी, D. E. H. I. K. P. R. with Hem., Su., and Vijay., निवेशिताटनी for निवेशिताटनी. We with five commentators and five Mss.

15. B. E. with Vallabha, अभिगृह्णती, C. H. I. K. P. R. with Hem., Su., and Vijay., अनुगृह्णती, A. D. with Châ., Din., and Dharm.,

तीव्रवेगधुतमार्गवृक्षया प्रेतचीवरवसा स्वनोग्रया ।
अभ्यभावि भरताग्रजस्तया वात्ययेव पितृकाननोत्थया ॥ १६ ॥
उद्यतैकभुजयष्टिमायतीं श्रोणिलम्बिपुरुषान्त्रमेखलाम् ।
तां विलोक्य वनिता वधे घृणां पत्रिणा सह मुमोच राघवः ॥ १७ ॥

कपाले एव कुण्डले यस्याः सा तथोक्ता ताडका । निबिडा सान्द्रा बलाकिनी बलाकावती ॥ "व्रीह्यादिभ्यश्च" इतीनिः ॥ कालिकेव घनावलीव ॥ "कालिका योगिनीभेदे कार्ष्ण्ये गौर्यां घनावलौ" इति विश्वः ॥ प्रादुरास प्रादुर्बभूव ॥

१६ ॥ तीव्रेति । तीव्रवेगेन धुताः कम्पिता मार्गवृक्षा यया तथोक्तया । प्रेतचीवराणि वस्ते सा प्रेतचीवरवाः । तया प्रेतचीवरवसा ॥ वसरोच्छादनार्थात्क्विप् ॥ स्वनेन सिंहनादेनोग्रया तया ताडकया । पितृकानने श्मशान उत्थोत्पन्ना ॥ "आतश्चोपसर्गे" इत्युत्पूर्वात्तिष्ठतेः कर्तरि कप्रत्ययः ॥ तया वात्ययेव वातसमूहेनेव ॥ "पाशादिभ्यो यः" इति यः ॥ भरताग्रजो रामोऽभ्यभाव्यभिभूतः ॥ कर्मणि लुङ् ॥ तीव्रवेगेत्यादिविशेषणानि वात्यायामपि योज्यानि ॥

१७ ॥ उद्यतेति । उद्यतोन्नमितैको भुज एव यष्टिर्यस्यास्ताम् । आयतीमायान्तीम् ॥ इणो धातोः शतरि "उगितश्च" इति ङीप् ॥ श्रोणिलम्बिनी पुरुषाणामन्त्राण्येव मेखला यस्यास्ताम् ॥ इति विशेषणद्वयेनास्याततायित्वं सूचितम् ॥ अत एव तां विलोक्य राघवो वनितावधे स्त्रीवधनिमित्ते घृणां जुगुप्सां करुणां वा ॥ "जुगुप्साकरुणे घृणे" इत्यमरः ॥ पत्रिणेषुणा सह ॥ "पत्री रोप इषुर्द्वयोः" इत्यमरः ॥ मुमोच मुक्तवान् ॥ आततायिवधे मनुः—"आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन् । नाततायिवधे दोषो हन्तुर्भवति कश्चन" इति ॥

---

of the dark-fortnight and whose ear-rings made of human skulls were dangling, appeared before them like a thick row of clouds interspersed with flocks of cranes (flying beneath it).

16. The elder brother of Bharat was confronted by her who was screaming terribly who wore the tattered clothes of dead bodies and who shook the trees on the road by her furious speed, as if by (as if she were) a whirlwind rising from a cremation-ground.

17. Rághava, having seen her who had raised one of her staff-like arms and who had worn a zone of human intestines (entrails) pendant on her waist, advancing towards him, let go an arrow (shot a dart at her) along with his aversion (*i. e.* the feeling of abhorrence) for killing a woman.

अथ शृण्वती for अथ गृह्णती. B. H. R. with Hemádri and the text only of Val., °क्षिपा° for °क्षपा.° D. नाटका for ताडका. R. with Hem., and Vijay., °कपोल° for °कपाल.°

16. A. C. D. with Val., वेगविप्रकृतमार्गवृक्षया for तीव्रवेगधुतमार्गवृक्षया. Vallabha: "रयान्मूलितमार्गद्रुमया." C. D. उग्रगन्धया for स्वनोग्रया.

17. A. C. with Val., मेखलां for मेखलाम्.

यच्चकार विवरं शिलाघने ताडकोरसि स रामसायकः ।
अप्रविष्टविषयस्य रक्षसां द्वारतामगमदन्तकस्य तत् ॥ १८ ॥
बाणभिन्नहृदया निपेतुषी सा स्वकाननभुवं न केवलाम् ।
विष्टपत्त्रयपराजयस्थिरां रावणश्रियमपि व्यकम्पयत् ॥ १९ ॥
राममन्मथशरेण ताडिता दुःसहेन हृदये निशाचरी ।
गन्धवद्रुधिरचन्दनोक्षिता जीवितेशवसतिं जगाम सा ॥ २० ॥

१८ ॥ यदिति । स रामसायकः शिलावद्घने सान्द्रे ताडकोरसि यद्विवरं रन्ध्रं चकार तद्विवरं रक्षसामप्रविष्टविषयस्य । अप्रविष्टरक्षोदेशस्येत्यर्थः ॥ सापेक्षत्वेऽपि गमकत्वात्समासः ॥ " विषयः स्यादिन्द्रियार्थे देशे जनपदेऽपि च " इति विश्वः ॥ अन्तकस्य यमस्य द्वारतामगमत् ॥ इयं प्रथमा रक्षोमृतिरिति भावः ॥

१९ ॥ बाणेति । बाणभिन्नहृदया निपेतुषी निपतिता सती ॥ " क्वसुश्च " इति क्वसुप्रत्ययः ॥ " उगितश्च " इति ङीप् ॥ सा केवलामेकाम् ॥ " निर्णीते केवलमिति । त्रिलिङ्गं त्वेककृत्स्नयोः " इत्यमरः ॥ स्वकाननभुवं न व्यकम्पयत् । किं तु विष्टपत्त्रयस्य लोकत्रयस्य पराजये स्थिरां रावणश्रियमपि व्यकम्पयत् ॥ ताडकावधश्रवणेन रावणस्यापि भयमुत्पन्नमिति भावः ॥

२० ॥ अत्र ताडकाया अभिसारिकासमाधिरभिधीयते ॥ रामेति । सा । निशासु चरतीति निशाचरी राक्षसी । अभिसारिका च । दुःसहेन सोढुमशक्येन । राम एव मन्मथः । अन्यत्राभिरामो मन्मथः । तस्य शरेण हृदय उरसि मनसि च ॥

---

18. The hole which that dart of Ráma made on the breast of Tá*d*aká, solid as a stone, became an entrance to death who had not till then penetrated the territories of the Ràkshasas.

19. She who dropped (on the ground) with her heart split (torn to pieces) by the arrow, not only shook the land (sites) of her own forest but also the fortune of Ràva*n*a, which had been stable by his conquest of the three worlds.

20. Being smitten in the heart by the insufferable dart of Râma the night-roaming demoness weltering in stinking blood went to the residence of Death (*lit.* lord of life) as an Abhisârikà (a woman that goes to her lover at an appointed place at night) struck by the unbearable arrow of Cupid and anointed with fragrant saffron and sandle paste goes to the residence of her lover (*lit.* the lord of her life).

---

18. A. C. and Chàritravardhana first read the 19th verse and then the 18th. D. ताटकोरसि for ताडकोरसि. K. अप्रदिष्ट° for अप्रविष्ट.°

19. B. C. E. H. I. K. P. R. with Hem., Chà., Din., Val., Su., and Vijay., केवलं for केवलां.

20. A. C. D. कुङ्कुमोक्षिता for चन्दनोक्षिता. Hemâdri also notices the reading.

नैर्ऋतघ्नमथ मन्त्रवन्मुनेः प्रापदस्त्रमवदानतोषितात् ।
ज्योतिरिन्धननिपाति भास्करात्सूर्यकान्त इव ताडकान्तकः ॥ २१ ॥
वामनाश्रमपदं ततः परं पावनं श्रुतमृषेरुपेयिवान् ।
उन्मनाः प्रथमजन्मचेष्टितान्यस्मरन्नपि बभूव राघवः ॥ २२ ॥
आससाद मुनिरात्मनस्ततः शिष्यवर्गपरिकल्पितार्हणम् ।
बद्धपल्लवपुटाञ्जलिद्रुमं दर्शनोन्मुखमृगं तपोवनम् ॥ २३ ॥

" हृदयं मानसोरसोः " इति विश्वः ॥ ताडिता विद्धाङ्गा गन्धवद्दुर्गन्धि यद्रुधिरमसृक्तदेव चन्दनं तेनोक्षिता लिप्ता । अपरत्र गन्धवती सुगन्धिनी ये रुधिरचन्दने कुङ्कुमचन्दने ताभ्यामुक्षिता ॥ रुधिरं कुङ्कुमासृजोः " इत्युभयत्रापि विश्वः ॥ जीवितेशस्यान्तकस्य प्राणेश्वरस्य च वसतिं जगाम ॥

२१ ॥ नैर्ऋतेति । अथानन्तरं ताडकान्तको रामः । अवदानं पराक्रमः ॥ "पराक्रमोऽवदानं स्यात् " इति भागुरिः ॥ तेन तोषितान्मुनेः । नैर्ऋतान्राक्षसान्हन्तीति नैर्ऋतघ्नम् ॥ " अमनुष्यकर्तृके च " इति टक् ॥ मन्त्रवन्मन्त्रयुक्तमस्त्रम् । सूर्यकान्तो मणिविशेषो भास्करादिन्धनानि निपातयतीतीन्धननिपाति काष्ठदाहकं ज्योतिरिव । प्रापत्प्राप्तवान् ॥

२२ ॥ वामनेति । ततः परं राघवः । ऋषेः कौशिकादाख्यातुः श्रुतं पावनं शोधनं वामनस्य स्वपूर्वावतारविशेषस्याश्रमपदमुपेयिवानुपगतः सन् ॥ " उपेयिवाननाश्वाननूचानश्च " इति निपातः ॥ प्रथमजन्मचेष्टितानि रामवामनयोरैक्यात्स्मृतियोग्यान्यपि रामस्याज्ञानावतारत्वेन संस्कारदौर्बल्यादस्मरन्नपि । उन्मना उत्सुको बभूव ॥

२३ ॥ आससादेति । ततो मुनिः । शिष्यवर्गेण परिकल्पिता सज्जिताऽर्हणा पूजासामग्री यस्मिंस्तत्तथोक्तम् । बद्धाः पल्लवपुटा एवाञ्जलयो यैस्ते तथाभूता

---

21. Then the destroyer of Tâdakâ received from the Muni who was pleased with his exploits a missile capable of destroying the Râkshasas together with its Mantra (spells), as the sun-gem, receives from the sun the light that consumes fuel.

22. After this the descendant of Raghu having reached the purifying hermitage of Vâmana (the dwarf, the fifth incarnation of Vishnu) of which he had heard from the sage, became abstracted (thoughtful, absent-minded) even though he did not recollect the acts done in his former life.

23. Then the Muni got to his own penance-grove where the provisions of worship had been collected by the groups of his

---

21. After this verse Châritravardhana and Vallabha read " स्थाणुदग्ध " &c., the 13th verse of our text. D. ताटकान्तकः, E. ताडकान्तकं for ताडकान्तकः.

23. E. °पुटाञ्जलिद्रुमं, I. °पुटाञ्जलिद्रुमः for °पुटाञ्जलिद्रुमं. B. D. H. I. P. with Châ., Din., Su., and Vijay., दर्शनोत्सुक° for दर्शनोन्मुख°.

तत्र दीक्षितमृषिं ररक्षतुर्विघ्नतो दशरथात्मजौ शरैः ।
लोकमन्धतमसात्क्रमोदितौ रश्मिभिः शशिदिवाकराविव ॥ २४ ॥
वीक्ष्य वेदिमथ रक्तबिन्दुभिर्बन्धुजीवपृथुभिः प्रदूषिताम् ।
संभ्रमोऽभवदपोढकर्मणामृत्विजां च्युतविकङ्कतस्रुचाम् ॥ २५ ॥

ट्टता यस्मिंस्तत्तथोक्तम् । दर्शनेन मुनिदर्शनेनोन्मुखा मृगा यस्मिंस्तत । आत्मनस्तपोवनमाससाद ॥ एतेन विशेषणत्रयेणातिथिसत्कारताच्छील्यविनयशान्तयः सूचिताः ॥

२४ ॥ तत्रेति । तत्र तपोवने दशरथात्मजौ दीक्षितं दीक्षासंस्कृतमृषिं शरैर्विघ्नतो विघ्नेभ्यः । क्रमेण पर्यायेण रात्रिन्दिवसयोरुदितौ शशिदिवाकरौ रश्मिभिरन्धतमसाद्गाढध्वान्तात ॥ "ध्वान्ते गाढेऽन्धतमसम्" इत्यमरः ॥ "अवसमन्धेभ्यस्तमसः" इति समासान्तोऽच्प्रत्ययः ॥ लोकमिव । ररक्षतुः ॥ रक्षणप्रवृत्तावभूतामित्यर्थः ॥

२५ ॥ वीक्ष्येति । अथ बन्धुजीवपृथुभिर्बन्धूककुसुमस्थूलैः ॥ " रक्तकस्तु बन्धूको बन्धुजीवकः " इत्यमरः ॥ रक्तबिन्दुभिः प्रदूषितामुपहतां वेदिं वीक्ष्य ॥ अपोढकर्मणां त्यक्तव्यापाराणाम् ॥ च्युता विकङ्कतस्रुचो येभ्यस्तेषामृत्विजां याजकानां संभ्रमोऽभवत् ॥ विकङ्कतग्रहणं खदिराद्युपलक्षणं ॥ स्रुगादीनां खदिरादिप्रकृतिकत्वात् । स्रुगादिपात्रस्यैव विकङ्कतप्रकृतिकत्वात् ॥ "विकङ्कतः स्रुवो वृक्षः" इत्यमरः ॥ यद्वा स्रुक्त्वस्य विकङ्कतप्रकृतिकत्वमस्तु । उभयत्रापि शास्त्रसंभवात् ॥ यथाह भगवानापस्तम्बः—"खादिरस्रुचः पर्णमयीर्जुहुयाद्वैकङ्कतीः स्रुचो वा " इति ॥

disciples, where the trees had formed cavities (in the shape) of the folds of leaves and where the deer were standing with their faces raised up to look at him.

24. There the two sons of Das'aratha protected (each in his turn) from obstacles the sage who had entered upon the initiatory ceremonies of a sacrifice by means of their arrows, as the Sun and the Moon rising in turns rescue people from deep darkness by means of their rays.

25. Then having seen the sacrificial altar defiled with drops of blood as large as बन्धुजीव flowers, the holy priests who left their sacrificial work and from whose hands the sacrificial ladles made of विकंकत wood dropped down, were struck with fear.

24. B. C. E. I. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Dharm., नृपसुतौ शितैः शरैः for दशरथात्मजौ शरैः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. I. K. R. with Vallabha, क्रमोयतौ for क्रमोदितौ.

25. D. with Hemâdri and the texts only of Val., and Su., °उपोढ° for °अपोढ°. Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha.

उन्मुखः सपदि लक्ष्मणाग्रजो बाणमाश्रयमुखात्समुद्धरन् ।
रक्षसां बलमपश्यदम्बरे गृध्रपक्षपवनेरितध्वजम् ॥ २६ ॥
तत्र यावधिपती मखद्विषां तौ शरव्यमकरोत्स नेतरान् ।
किं महोरगविसर्पिविक्रमो राजिलेषु गरुडः प्रवर्तते ॥ २७ ॥
सोऽस्त्रमुग्रजवमस्त्रकोविदः संदधे धनुषि वायुदैवतम् ।
तेन शैलगुरुमप्यपातयत्पाण्डुपत्त्रमिव ताडकासुतम् ॥ २८ ॥

२६ ॥ उन्मुख इति । सपदि लक्ष्मणाग्रजो रामो बाणमाश्रयमुखात्तूणीरमुखात्समुद्धरन् । उन्मुख ऊर्ध्वमुखोऽम्बरे । गृध्रपक्षपवनैरीरिताः कम्पिता ध्वजा यस्य तत्तथोक्तम् ॥ रक्षसां दुर्निमित्तसूचनमेतत् ॥ तदुक्तं शकुनार्णवे—"आसन्नमृत्योर्निकटे चरन्ति गृध्रादयो मूर्ध्नि गृहोर्ध्वभागे" इति ॥ रक्षसां बलमपश्यत् ॥

२७ ॥ तत्रेति । स रामस्तत्र रक्षसां बले यौ मखद्विषामधिपती तौ सुबाहुमारीचौ शरव्यं लक्ष्यमकरोत् ॥ "वेध्यं लक्ष्यं शरव्यं च" इति हलायुधः ॥ इतरान्नाकरोत् ॥ तथा हि । महोरगविसर्पिविक्रमो गरुडो गरुत्मान्राजिलेषु जलव्यालेषु प्रवर्तते किम् । न प्रवर्तत इत्यर्थः॥ "अलगर्दो जलव्यालः । समौ राजिलडुण्डुभौ" इत्यमरः ॥

२८ ॥ स इति । अस्त्रकोविदोऽस्त्रज्ञः स राम उग्रजवमुत्कटजवं वायुदैवतं वायुर्देवता यस्य तद्वायव्यमस्त्रं धनुषि संदधे संहितवान् ॥ कर्तरि लिट् ॥ तेनास्त्रेण शैलवद्गुरुमपि ताडकासुतं मारीचम् । पाण्डुपत्त्रमिव । परिणतपर्णमिवेत्यर्थः । अपातयत्पातितवान् ॥

---

26. Instantly the elder brother of Lakshma*n*a, taking out an arrow from the mouth of the quiver with his face turned upward saw in the sky a legion of demons whose flags were shaken by the wind set in motion by the flapping of the wings of vultures.

27. Then he aimed his arrow at those two who were the chiefs of the haters of sacrifices, but at nobody else. Does Garu*d*a whose prowess affects (*lit.* extends over) large serpents go (or engage himself) against the watersnakes ?

28. He who was skilled in the use of missiles fixed on his bow an arrow of great speed which had the god of wind for its presiding deity. By that he brought down (felled) the son of Tâ*d*akâ

---

26. A. and the text only of Su., उन्मुखः for उन्मुखः. C. and the text only of Vijay., °मुषात् for °मुखात्. A. C. with Châritravardhana गृध्रपत्र° for गृध्रपक्ष°. I. °ध्वजाम् for °ध्वजम्.

27. R. with Vijay., मखद्विषाम् for मखद्विषाम्. Sumativijaya reads this verse after the 29th of our text.

28. B. C. E. H. I. K. R. with Hemâdri पाण्डु पत्रमिव for पाण्डुपत्रमिव. Hemâdri : "पाण्डु जीर्णं पत्रमिव ॥ एकं वा पदं ॥ पुराणं हि पत्रं पाण्डु भवति" । D. ताटका° for ताडका.°

यः सुबाहुरिति राक्षसोऽपरस्तत्र तत्र विससर्प मायया ।
तं क्षुरप्रशकलीकृतं कृती पत्त्रिणां व्यभजदाश्रमाद्बहिः ॥ २९ ॥
इत्यपास्तमखविघ्नयोस्तयोः सांयुगीनमभिनन्द्य विक्रमम् ।
ऋत्विजः कुलपतेर्यथाक्रमं वाग्यतस्य निरवर्तयन्क्रियाः ॥ ३० ॥
तौ प्रमाणचलकाकपक्षकौ भ्रातरावचभृथाप्लुता मुनिः ।
आशिषामनुपदं समस्पृशद्दर्भपाटिततलेन पाणिना ॥ ३१ ॥

२९ ॥ य इति । सुबाहुरिति योऽपरो राक्षसस्तत्र तत्र मायया शम्बरविद्यया विससर्प संचचार । क्षुरप्रैः शकलीकृतं खण्डीकृतं तं सुबाहुं कृती कुशलो रामः ॥ " कृती च कुशलः समौ " इत्यमरः ॥ आश्रमाद्बहिः पत्त्रिणां पक्षिणाम् ॥ " पत्त्रिणौ शरपक्षिणौ " इत्यमरः ॥ व्यभजत । विभज्य दत्तवानित्यर्थः ॥

३० ॥ इतीति । इत्यपास्तमखविघ्नयोस्तयो राघवयोः । संयुगे रणे साधुः सांयुगीनः ॥ " प्रतिजनादिभ्यः खञ् " इति खञ्प्रत्ययः ॥ " सांयुगीनो रणे साधुः " इत्यमरः ॥ तं विक्रममभिनन्द्य । ऋत्विजो याजकाः । वाचि यतो वाग्यतो मौनी तस्य कुलपतेर्मुनिकुलेश्वरस्य क्रियाः क्रतुक्रिया यथाक्रमं निरवर्तयन्निष्पादितवन्तः ॥

३१ ॥ ताविति । अवभृथे दीक्षान्त आप्लुतः स्नातो मुनिः ॥ " दीक्षान्तोऽवभृतो यज्ञः " इत्यमरः ॥ प्रमाणेन चलकाकपक्षकौ चञ्चलचूडौ तौ भ्रातरावाशिषामनु-

---

though heavy as a mountain, as if he were a faded (*iit.* white) leaf.

29. The skilful warrior cut to pieces by means of क्षुरप्र weapon the other demon named सुबाहु who through magical powers moved now here and now there in the sky, and apportioned his flesh to birds outside the hermitage.

30. The priests congratulated the two princes upon their chivalrous valour, who had thus removed the obstacles to the sacrifice and completed in due order the sacrificial rites of that lord of his clan who had observed his vow of silence.

31. The Muni who had finished his Avabh*r*itha ablutions (necessary at the end of a sacrifice) passed his hand, the surface

---

29. B. विजहार, D. K. विससर्ज for विससर्प. B. C. E. H. I. K. P. R. with Châ., Val., Su., and Vijay., पक्षिणां for पत्त्रिणां. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Châritravardhana and others.

30. R. विक्रियां for विक्रमम्. A. D. E. R. with Su., and the text only of Val., वाग्जितस्य for वाग्यतस्य.

31. B. E. H. I. K. P. R. with Val., Su., and Vijay., अवभृथ-स्नुतः for अवभृथाप्लुतः.

तं न्यमन्त्रयत संभृतक्रतुर्मैथिलः स मिथिलां व्रजन्वशी ।
राघवावपि निनाय बिभ्रतौ तद्धनुःश्रवणजं कुतूहलम् ॥ ३२ ॥
तैः शिवेषु वसतिर्गताध्वभिः सायमाश्रमतरुष्वगृह्यत ।
येषु दीर्घतपसः परिग्रहो वासवक्षणकलत्रतां ययौ ॥ ३३ ॥
प्रत्यपद्यत चिराय यत्पुनश्चारु गौतमवधूः शिलामयी ।
स्वं वपुः स किल किल्बिषच्छिदां रामपादरजसामनुग्रहः ॥ ३४ ॥

पदमन्वगा दर्भपाटिततलेन कुशक्षतान्तःप्रदेशेन । पवित्रेणेत्यर्थः । पाणिना समस्पृशत्संस्पृष्टवान् । संतापादिति भावः ॥

३२ ॥ तमिति । संभृतक्रतुः संकल्पितसंभारो मिथिलायां भवो मैथिलो जनकस्तं विश्वामित्रं न्यमन्त्रयताहूतवान् ॥ वशी स मुनिर्मिथिलां जनकनगरीं व्रजंस्तस्य जनकस्य यद्धनुस्तच्छ्रवणजं कुतूहलं बिभ्रतौ राघवावपि निनाय नीतवान् ॥

३३ ॥ तैरिति । गताध्वभिस्तैस्त्रिभिः सायं शिवेषु रम्येष्वाश्रमतरुषु वसतिः स्थानमगृह्यत । येष्वाश्रमतरुषु दीर्घतपसो गौतमस्य परिग्रहः पत्नी ॥ " पत्नीपरिजनादानमूलशापाः परिग्रहाः " इत्यमरः ॥ अहल्येति यावत् । वासवस्येन्द्रस्य क्षणकलत्रतां ययौ ॥

३४ ॥ प्रत्यपद्यतेति । शिलामयी भर्तृशापाच्छिलात्वं प्राप्ता गौतमवधूरहल्या चारु स्वं वपुश्चिराय पुनः प्रत्यपद्यत प्रापितवती यत । स किल्बिषच्छिदां पापहारिणाम् ॥ " पापं किल्बिषकल्मषम् " इत्यमरः ॥ रामपादरजसामनुग्रहः किल प्रसादः । किलेति श्रूयते ॥

---

of which was wounded (made rough) by the Darbha-grass, over the body of the two brothers upon whom he had first pronounced benedictions, and who had their side-locks of hair shaken in the act of bowing down to him.

32. The king of Mithilâ who had made preparations for a sacrifice invited the sage to be present there. He the self-restrained hermit, while going to Mithilâ also took with him the two descendants of Raghu whose curiosity was aroused from hearing about the bow of जनक.

33. Going on their way they accepted residence (halted) in the evening under those beautiful trees of the hermitage where the wife of गौतम of long asceticism became wife to वासव for a moment (temporary wife.)

34. It is said that it was through the favour of the dust of Râma's feet which destroyes sin, that the wife of Gautama

---

32. H. with Châ., Din., and Su., संभृतक्रतुं for संभृतक्रतुः.

34. A. C. D. with Hemâdri, चिरस्य for चिराय. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. D. सा for

राघवान्वितमुपस्थितं मुनिं तं निशम्य जनको जनेश्वरः ।
अर्थकामसहितं सपर्यया देहबद्धमिव धर्ममभ्यगात् ॥ ३५ ॥
तौ विदेहनगरीनिवासिनां गां गताविव दिवः पुनर्वसू ।
मन्यते स्म पिबतां विलोचनैः पक्ष्मपातमपि वञ्चनां मनः ॥ ३६ ॥
यूपवत्यवसिते क्रियाविधौ कालवित्कुशिकवंशवर्धनः ।
राममिष्वसनदर्शनोत्सुकं मैथिलाय कथयांबभूव सः ॥ ३७ ॥

३५ ॥ राघवेति । राघवाभ्यामन्वितं युक्तमुपस्थितमागतं तं मुनिं जनको जनेश्वरो निशम्य । अर्थकामाभ्यां सहितं देहबद्धं बद्धदेहं । मूर्तिमन्तमित्यर्थः ॥ वाहिताग्न्यादित्वात्साधुः ॥ धर्ममिव । सपर्ययाभ्यगात्प्रत्युद्गतवान् ॥

३६ ॥ ताविति । तौ । दिवः सुरवर्त्मन आकाशात् ॥ "द्यौः स्वर्गसुरवर्त्मनोः" इति विश्वः ॥ गां भुवं गतौ ॥ "स्वर्गेषुपशुवाग्वज्रदिङ्नेत्रघृणिभूजले । लक्ष्यदृष्ट्योः स्त्रियां गौः" इत्यमरः ॥ पुनर्वसू इव तन्नामकनक्षत्राधिदैवते इव स्थितौ । तौ राघवौ विलोचनैः पिबतां । अत्यास्थया पश्यतामित्यर्थः । विदेहनगरी मिथिला । तन्निवासिनां मनः पक्ष्मपातं निमेषमपि तद्दर्शनप्रतिबन्धकत्वाद्वञ्चनां विडम्बनां मन्यते स्म मेने ॥ "लट् स्मे" इति भूतार्थे लट् ॥

३७ ॥ यूपेति । यूपवति क्रियाविधौ कर्मानुष्ठाने । क्रतावित्यर्थः । अवसिते समाप्ते सति कालविदवसरज्ञः कुशिकवंशवर्धनः स मुनी रामम् । अस्यतेऽनेनेत्यसनम् इषूणामसनमिष्वसनं चापम् । तस्य दर्शने उत्सुकं मैथिलाय कथयांबभूव कथितवान् ॥

---

changed to stone, did, after a long time again, obtain (was restored to) her own beautiful form.

35. Having heard that the Muni had come with the two princes of the family of Raghu, Janaka the lord of the people came forward with offerings to receive him who was, as it were, virtue incarnate accompanied by Wealth and Desire.

36. The minds of the residents of Mithilà who were drinking with their eyes those two princes who appeared like the two (stars of) Punarvasus come down to earth from heaven, considered even the twinkling of their eyes to be a troublesome inconvenience.

37. When the sacrificial ceremony consisting of the use of यूप was completed, the sage, who had raised the dignity of the race

---

यत्. B. H. R. स किल कल्मषच्छिदां, C. D. E. I. K. P. with Chà., Din., Val., and the text only of Vijay., सकलकल्मषच्छिदां for स किल किल्बिषच्छिदां. Three Mss. with Hem., Su., and Vijay., read with Mallinàtha. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with B. H. R.

35. D. कपिं for मुनिं. D. °सहितः for °सहितं. D. सपर्ययात् for सपर्यया.

36. E. I. R. with Hem., Su., Vijay., पश्यतां नृपसुतौ स्म मन्यते पक्ष्मपातं for मन्यते स्म पिबतां विलोचनैः पक्ष्मपातं. [E. पक्षपातं for पक्ष्मपातं].

तस्य वीक्ष्य ललितं वपुः शिशोः पार्थिवः प्रथितवंशजन्मनः ।
स्वं विचिन्त्य च धनुर्दुरानमं पीडितो दुहितृशुल्कसंस्थया ॥ ३८ ॥
अब्रवीच्च भगवन्मतंगजैर्यद्बृहद्भिरपि कर्म दुष्करम् ।
तत्र नाहमनुमन्तुमुत्सहे मोघवृत्ति कलभस्य चेष्टितम् ॥ ३९ ॥
ह्रेपिता हि बहवो नरेश्वरास्तेन तात धनुषा धनुर्भृतः ।
ज्यानिघातकठिनत्वचो भुजान्स्वान्विधूय धिगिति प्रतस्थिरे ॥ ४० ॥

३८ ॥ तस्येति । पार्थिवो जनकः । प्रथितवंशे जन्म यस्य तस्य तथोक्तस्य । एतेन वरसंपत्तिरुक्ता । शिशोस्तस्य रामस्य ललितं कोमलं वपुर्वीक्ष्य । स्वं स्वकीयं दुरानममानमयितुमशक्यम् ॥ नमेर्ण्यन्तात्खल् ॥ धनुर्विचिन्त्य च । दुहितृशुल्कं कन्यामूल्यं जामातृदेयम् ॥ "शुल्कं घट्टादिदेये स्याज्जामातुर्धनकेऽपि च" इति विश्वः ॥ तस्य धनुर्भङ्गरूपस्य संस्थया स्थित्या ॥ "संस्था स्थितौ शरे नाशे" इति विश्वः ॥ पीडितो बाधितः ॥ शिशुना रामेण दुष्करमेतदिति दुःखित इति भावः ॥

३९ ॥ अब्रवीदिति । अब्रवीच्च । मुनिमिति शेषः ॥ किमिति । हे भगवन्मुने । बृहद्भिर्मतंगजैर्महागजैरपि दुष्करं यत्कर्म तत्र कर्मणि कलभस्य बालगजस्य ॥ "कलभः करिशावकः" इत्यमरः ॥ मोघवृत्ति व्यर्थव्यापारं चेष्टितं साहसमनुमन्तुमहं नोत्सहे ॥

४० ॥ ह्रेपिता इति । हे तात तेन धनुषा बहवो धनुर्भृतो नरेश्वरा ह्रेपिता ह्रियं प्रापिता हि ॥ जिह्रेतेर्धातोर्ण्यन्तात्कर्मणि क्तः ॥ "अर्तिह्री--" इत्यादिना पुगागमः॥

---

of Kus'ika, knew that to be the favourable opportunity and informed the king of Mithila about Rāma's being eager to behold the bow.

38. The king, seeing the delicate form of that child born in a celebrated family, and considering that his own bow was difficult to be bent, became sorry for his having fixed such a price for his daughter.

39. And replied to the sage, saying, O venerable sage, I cannot give my consent to the futile attempt of a cub of an elephant in an undertaking which is difficult to be accomplished even by huge elephants.

40. For, many a king, O Father, who wield bows, being put to shame by that bow, have gone away despising their own arms,

---

38. D. and the text only of Val., धनुर्दुरासदं, R. दुरानमं धनुः for धनुर्दुरानमं.

39. A. C. D. with Chā., and Su., यन्महद्भिरपि for यद्बृहद्भिरपि. Sumativijaya's text agrees with Mallinātha. A. D. with Chā., and Su., दुःकरं for दुष्करं. A. D. H. I. J. K. P. R. with Din., Su., and Vijay., साहसं for चेष्टितं. Vijay.'s text agrees with Mallinātha.

40. K. धनुर्भृतां for धनुर्भृतः.

प्रत्युवाच तमृषिर्निशम्यतां सारतोऽयमथ वा कृतं गिरा ।
चाप एव भवतो भविष्यति व्यक्तशक्तिरशनिर्गिराविव ॥ ४१ ॥
एवमाप्तवचनात्स पौरुषं काकपक्षकधरेऽपि राघवे ।
श्रद्दधे त्रिदशगोपमात्रके दाहशक्तिमिव कृष्णवर्त्मनि ॥ ४२ ॥

ते नरेश्वरा ज्यानिघातैः कठिनत्वचः स्वान्भुजान्धिगिति विधूयावमत्य प्रतस्थिरे प्रस्थिताः ॥

४१ ॥ प्रतीति । ऋषिस्तं प्रत्युवाच ॥ किमिति । अयं रामः सारतो बलतो निशम्यतां श्रूयताम् । अथ वा गिरा सारवर्णनया कृतमलम् । गीर्न वक्तव्येत्यर्थः ॥ " युक्तपर्याप्तयोः कृतम् " इत्यमरः ॥ अव्ययं चैतत् ॥ " कृतं निवारणनिषेधयोः " इति गणव्याख्याने ॥ गिरेति करणे तृतीया निषेधक्रियां प्रति करणत्वात् ॥ किं त्वशनिर्वज्रो गिराविव । चापे धनुष्येव भवतस्तव व्यक्तशक्तिर्दृष्टसारो भविष्यति ॥

४२ ॥ एवमिति । एवमाप्तस्य मुनेर्वचनात्स जनकः काकपक्षकधरे बालेऽपि राघवे पुरुषस्य कर्म पौरुषं पराक्रमम् ॥ " हायनान्तयुवादिभ्योऽण् " इति युवादित्वादण् ॥ " पौरुषं पुरुषस्योक्तं भावे कर्मणि तेजसि " इति विश्वः ॥ त्रिदशगोप इन्द्रगोपकीटः प्रमाणमस्य त्रिदशगोपमात्रः ॥ " प्रमाणे द्वयसच् —" इत्यादिना मात्रच्प्रत्ययः ॥ ततः स्वार्थे कप्रत्ययः ॥ तन्मात्रके कृष्णवर्त्मनि वह्नौ दाहशक्तिमिव । श्रद्दधे विश्वस्तवान् ॥

---

the skin of which was hardened by the (constant) smart friction of bow-strings, crying shame to our arms !

41. The sage replied, know him to be possessed of great strength——or enough with a description of it (*lit.* no need of words). He will show his power in testing the strength of your bow itself, as the thunderbolt on a mountain.

42. Thus from these words of the sage, who could be relied on, he believed that power in (became assured of) the descendant of Raghu though wearing sidelocks of hair, as one can believe burning power in (a spark of) fire (*lit.* one that leaves behind a black path) even though it be as small as an Indragopa worm.

---

41. B. D. E. H. I. with Hem., Châ., Din , Su., Vijay., and the text only of Val., वीर्यत: for सारत:. A. C. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Dharm., गिरा कृतं for कृतं गिरा. D. with Chá., and Din., नराविव for गिराविव. Hemâdri also notices the reading of these commentators.

42. A. D. E. P. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., इत्थं for एवं. D. K. °गोपलाञ्छने for गोपमात्रके.

व्यादिदेश गणशोऽथ पार्श्वगान्कार्मुकाभिहरणाय मैथिलः।
तैजसस्य धनुषः प्रवृत्तये तोयदानिव सहस्रलोचनः ॥ ४३ ॥
तत्प्रसुप्तभुजगेन्द्रभीषणं वीक्ष्य दाशरथिराददे धनुः।
विद्रुतक्रतुमृगानुसारिणं येन बाणमसृजद्वृषध्वजः ॥ ४४ ॥
आततज्यमकरोत्स संसदा विस्मयस्तिमितनेत्रमीक्षितः।
शैलसारमपि नातियत्नतः पुष्पचापमिव पेशलं स्मरः ॥ ४५ ॥

४३ ॥ व्यादिदेशेति । अथ मैथिलः पार्श्वगान्पुरुषान्कार्मुकाभिहरणाय कार्मुकमानेतुम् ॥ "तुमर्थाच्च--" इति चतुर्थी ॥ सहस्रलोचन इन्द्रस्तैजसस्य तेजोमयस्य धनुषः प्रवृत्तय आविर्भावाय तोयदान्मेघानिव गणशः ॥ "संख्यैकवचनाच्च वीप्सायाम्" इति शस्प्रत्ययः ॥ व्यादिदेश प्रजिघाय ॥

४४ ॥ तदिति । दाशरथी रामः प्रसुप्तभुजगेन्द्र इव भीषणं भयंकरं तद्धनुर्वीक्ष्याददे जग्राह । वृषो ध्वजश्चिह्नं यस्य स शिवो येन धनुषा । क्रतुरेव मृगः । विद्रुतं पलायितं क्रतुमृगमनुसरति ॥ ताच्छील्ये णिनिः ॥ तं विद्रुतक्रतुमृगानुसारिणं बाणमसृजन्मुमोच ॥

४५ ॥ आततेति । स रामः संसदा सभया विस्मयेन स्तिमिते नेत्रे यथा स्यात्तथेक्षितः सन् । शैलस्येव सारो यस्य तच्छैलसारमपि धनुः । स्मरः पेशलं मृदु पुष्पचापमिव । नातियत्नतो नातियत्नात् ॥ नञर्थस्य नशब्दस्य सुप्सुपेति समासः ॥ आततज्यमधिज्यमकरोत् ॥

---

43. Then the king of Mithilá deputed several groups of his attendants to fetch the bow, as the thousand-eyed god (Indra) directs the clouds for the display of the bow made up of light.

44. Having seen that bow terrible like the king of serpents in his sleep—the bow with which the bull-bannered God (S'iva) discharged the dart that followed the sacrifice in the form of a fleet antelope, the son of Das'aratha took it up.

45. He strung that bow with no great effort even though it possessed the strength of a mountain, as the God of Love strings

---

43. B. E. J. with Hem., and Val., आदिदेश for व्यादिदेश. D. सः for अथ. A. D. K. कार्मुकस्य हरणाय for कार्मुकाभिहरणाय. Between 43-44 P. reads,—"तेऽपि तूर्णमवगम्य शांभवमासमाहरणकर्मतत्पराः। स्वां सक्षिततिकर्कशां हि तांचिक्षिपुर्दशरथात्मजाग्रतः" ॥

44. B. D. E. H. I. K. P. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., प्रेक्ष्य for वीक्ष्य.

45. D. आनमज्जं for आततज्यं. B. C. E. H. I. K. P. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., च for सः. B. P. and the texts only of Val., and Vijay., कोमलं, D. with Hem., Chá., and Din., पेलवं for पेशलं. H. संसदि for संसदा.

भज्यमानमतिमात्रकर्षणात्तेन वज्रपरुषस्वनं धनुः ।
भार्गवाय दृढमन्यवे पुनः क्षत्त्रमुद्यतमिव न्यवेदयत् ॥ ४६ ॥
दृष्टसारमथ रुद्रकार्मुके वीर्यशुल्कमभिनन्द्य मैथिलः ।
राघवाय तनयामयोनिजां पार्थिवः श्रियमिव न्यवेदयत् ॥ ४७ ॥
मैथिलः सपदि सत्यसंगरो राघवाय तनयामयोनिजाम् ।
संनिधौ द्युतिमतस्तपोनिधेरग्निसाक्षिक इवातिसृष्टवान् ॥ ४८ ॥

४६ ॥ भज्यमानमिति । तेन रामेणातिमात्रकर्षणाद्भज्यमानमत एव वज्रपरुषस्वनम् । वज्रमिव परुषः स्वनो यस्य तत् । धनुर्दृढमन्यवे दृढक्रोधाय ॥ " मन्युः क्रोधे क्रतौ दैन्ये " इति विश्वः ॥ भार्गवाय क्षत्त्रं क्षत्त्रकुलं पुनरुद्यतमिति न्यवेदयदिव ज्ञापयामासेव ॥

४७ ॥ दृष्टेति । अथ मैथिलः पार्थिवो रुद्रकार्मुके दृष्टः सारः स्थिरांशो यस्य तद्दृष्टसारम् ॥ " सारो बले स्थिरांशे च " इति विश्वः ॥ वीर्यमेव शुल्कम् । धनुर्भङ्गरूपमभिनन्द्य राघवाय रामायायोनिजां देवयजनसंभवां तनयां सीतां श्रियमिव साक्षाल्लक्ष्मीमिव न्यवेदयदर्पितवान् ॥ वाचेति शेषः ॥

४८ ॥ उक्तमेवार्थं सोपस्कारमाह ॥ मैथिल इति । सत्यसंगरः सत्यप्रतिज्ञः ॥

---

his delicate bow of flowers, being gazed at by the assembled people, in a manner in which their eyes were fixed in amazement.

46. The bow while breaking on account of its being drawn too much by him and therefore producing a noise as shrill as the crash of a thunderbolt as it were proclaimed to Bhârgava of inveterate hatred that the Kshatriya race had again risen up.

47. Then the king of मिथिला being delighted at Râghava's strength in the form of शुल्क (a price fixed for his daughter), the essence of which was tested in that bow of रुद्र, promised to him his daughter who was not born from the womb, and who was as it were the goddess of fortune.

48. The मैथिल of truthful promise instantly gave his daughter

---

46. K. R. with Châ., and Din., तत्स्वनेन गगनस्पृशा for तेन वज्रपरुषस्वनं. B. I. इत्थितं for उद्यतं.

47. B. C. D. E. H. I. K. R. रूपिणीं for पार्थिवः. D. इति for इव. D. K. with Châ., Din., and Val., स्वां ददौ श्रियमिवामरद्युतिः for the last Pâda. A. C. with Hemâdri and Vallabha first read 48th verse and then the 47th. For the latter half Hemâdri reads thus,—" ऊर्जिताश्च तनयां स पार्थिवीं रूपिणीं श्रियमिवन्यवेदयत्. " B. E. H. I. R. with Su., and Vijay., omit this stanza ; so does the Ms. लक्ष्मीसिन of the Kolhâpur collection.

48. B. C. E. I. K. with Hem., Val., Su., and Vijay., °साक्षिकं for साक्षिकः. H. with Châ., and Din., omit this verse.

प्राहिणोच्च महितं महाद्युतिः कोसलाधिपतये पुरोधसम् ।
भृत्यभावि दुहितुः परिग्रहाद्दिश्यतां कुलमिदं निमेरिति ॥ ४९ ॥
अन्वियेष सदृशीं स च स्नुषां प्राप चैनमनुकूलवाग्द्विजः ।
सद्य एव सुकृतां हि पच्यते कल्पवृक्षफलधर्मि काङ्क्षितम् ॥ ५० ॥

" अथ प्रतिज्ञाजिज्ञासा संविदापत्सु सगरः " इत्यमरः । मैथिलो राघवायायोनिजां तनयां द्युतिमतस्तेजस्विनस्तपोनिधेः कौशिकस्य संनिधौ अग्निः साक्षी यस्य सोऽग्निसाक्षिकः ॥ " शेषाद्विभाषा " इति कप्प्रत्ययः ॥ स इव । सपद्यतिसृष्टवान्दत्तवान् ॥

४९ ॥ प्राहिणोदिति । महाद्युतिर्जनको महितं पूजितं । पुरोधसं पुरोहितं कोसलाधिपतये दशरथाय प्राहिणोत्प्रहितवांश्च ॥ किमिति । निमिर्नाम जनकानां पूर्वजः कश्चित् । इदं निमेः कुलं दुहितुः सीतायाः परिग्रहात्स्नुषात्वेन स्वीकाराद्धेतोः । भृत्यस्य भावो भृत्यत्वम् । सोऽस्यास्तीति भृत्यभावि दिश्यतामनुमन्यतामिति ॥

५० ॥ अन्वियेषेति । स दशरथश्च सदृशीमनुरूपां स्नुषामन्वियेष । रामविवाहमाचकाङ्क्षेत्यर्थः ॥ अनुकूलवाक्स्नुषासिद्धिरूपानुकूलार्थवादी द्विजो जनकपुरोधाश्चैनं दशरथं प्राप ॥ तथा हि । कल्पवृक्षफलस्य । यो धर्मः सद्यःपाकरूपः सोऽस्या-

---

not born of the womb, to the descendant of Raghu in marriage, in the presence of the resplendent sage who was a treasure of asceticism, and therefore having as it were the God of fire for his witness to the ceremony.

49. And the resplendent king deputed his revered family-priest to the lord of the Kosalas, with the following message. " Please allow this family of Nimi to do the service of a servant (be laid under a deep obligation) to your family by the favour of accepting my daughter for your daughter-in-law.

50. No sooner did he wish a suitable daughter-in-law to himself than the Bráhma*n*a went to him with a message just such a one

---

49. A. with Hemádri, महामतिः, B. C. महाद्युतिं. D. H. I. with Su., and Vijay., महारथः for महाद्युतिः. A. C. with Chá., and Dharm., पुरोहितं for पुरोधसं. A D. with Hemádri, वाञ्छ्यतां. B. C. I. K. P. R. with Chá., Val., Su., and Vijay., इष्यतां for दिश्यतां. Cháritravardhana, " इष्यतामुरीक्रियतां, " Su., " अंगीक्रियताम् ", Vijay., " अनुगृह्यताम् ", Val., " वाञ्छ्यताम्. "

50. Between 49–50. B. E. H. I. with Vallabha read,—" उत्सुकश्च सुतदारकर्मणा सोऽभवद्गुरुरुपागतश्च तं । गौतमस्य तनयोऽनुकूलवाक्प्रार्थितं हि सुकृतामकालहृत् " ॥ [B. स्व for च. B. वांछितं for प्रार्थितं.] उत्सुक इति ॥ द्वौ चकारौ तुल्यकालापेक्षां गमयतः ॥ यावत्स राजा दशरथश्च सुतदारकर्मणा पुत्रविवाहकर्मणि उत्सुकोऽभवत् ॥ अत्राधिकरणे तृतीया ॥ तथा—" दधतो रथे तेनैव भृशमुत्सुकतां " ॥

तस्य कल्पितपुरस्क्रियाविधेः शुश्रुवान्वचनमग्रजन्मनः ।
उच्चचाल बलभित्सखो वशी सैन्यरेणुमुषितार्कदीधितिः ॥ ५१ ॥
आससाद मिथिलां स वेष्टयन्पीडितोपवनपादपां बलैः ।
प्रीतिरोधमसहिष्ट सा पुरी स्त्रीव कान्तपरिभोगमायतम् ॥ ५२ ॥

स्तीति कल्पवृक्षफलधर्मि । अतः सुकृतां पुण्यकारिणां काङ्क्षितं मनोरथः सद्य एव पच्यते हि ॥ कर्मकर्तरि लट् ॥ स्वयमेव पक्वं भवतीत्यर्थः ॥ "कर्मवत्कर्मणा तुल्यक्रियः" इति कर्मवद्भावात् "भावकर्मणोः" इत्यात्मनेपदम् ॥

५१ ॥ तस्येति । बलभित्सख इन्द्रसहचरो वशी स्वाधीनतावान् ॥ "वश आयत्ततायां च" इति विश्वः ॥ कल्पितपुरस्क्रियाविधेः कृतपूजाविधेस्तस्याग्रजन्मनो द्विजस्य । वचनं जनकेन संदिष्टं शुश्रुवाञ्छ्रुतवान् ॥ शृणोतेः क्वसुः ॥ सैन्यरेणुमुषितार्कदीधितिः । सन्नुच्चचाल प्रतस्थे ॥

५२ ॥ आससादेति । स दशरथो बलैः सेनाभिः पीडितोपवनपादपां मिथिलां वेष्टयन्परिधीकुर्वन् । आससाद ॥ सा पुरी । स्त्री युवतिरायतमतिप्रसक्तं कान्तपरिभोगं प्रियसंभोगमिव । प्रीत्या रोधं प्रीतिरोधमसहिष्ट सोढवती ॥ द्वेषरोधं तु न सहत इति भावः ॥

---

as he liked ; for the desire of the virtuous which partakes of the nature of the fruit of an all-yielding tree, is ripe (attains fulfilment) quite at once.

51. That self-restrained friend of Indra having heard the words of the Brâhma*n*a the rite of hospita lity towards whom had been (previously) arranged, set out eclips ing the rays of the sun with the (clouds of) dust raised by his fo rces (on their march).

52. He reached Mithilâ and surroun ded it with his soldiers who caused injuries to the trees in the g ardens outside the city. That city endured the siege of love as a w oman suffers the coveted संभोग of her lover.

तावद् गौतमस्य तनयो गुरुश्च ते राजानं उपागतः । किंभूतो गुरुः अनुकूलवाक् । हि निश्चितं । सुकृतां पुण्यवतां प्रार्थितं वांछितं अकालहृद्भवति । सद्य एव फलति । शोभनं करोतीति सुकृत् ॥ वल्लभः ॥ D. सत्यं for सद्यः. B. C. विपच्यते for हि पच्यते. D. C. H. P. R. with Su., Vijay., and the text only of Val., °समधर्मि, B. K. °समधर्म°, A. with Hemâdri, °फलधर्म° for °फलधर्मि.

51. B. C. E. H. I. K. with Val., Su., and Vijay., बली for वशी. R. मुषिता° for मुषिता°. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with R.

52. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., °पादपैः for °पादपां.

तौ समेत्य समयस्थितावुभौ भूपती वरुणवासवोपमौ ।
कन्यकातनयकौतुकक्रियां स्वप्रभावसदृशीं वितेनतुः ॥ ५३ ॥
पार्थिवीमुदवहद्रघूद्वहो लक्ष्मणस्तदनुजामथोर्मिलाम् ।
यौ तयोरवरजौ वरौजसौ तौ कुशध्वजसुते सुमध्यमे ॥ ५४ ॥
ते चतुर्थसहितास्त्रयो बभुः सूनवो नववधूपरिग्रहाः ।
सामदानविधिभेदनिग्रहाः सिद्धिमन्त इव तस्य भूपतेः ॥ ५५ ॥

५३ ॥ ताविति । समयस्थितावाचारनिष्ठौ ॥ " समयाः शपथाचारकालसिद्धान्तसंविदः " इत्यमरः ॥ वरुणवासवावुपमोपमानं ययोस्तौ तथोक्तौ । तावुभौ भूपती जनकदशरथौ स्वप्रभावसदृशीमात्ममहिमानुरूपां । कन्यकानां सीतादीनां तनयानां रामादीनां च कौतुकक्रियां विवाहोत्सवं समेत्य वितेनतुर्विस्तृतवन्तौ ॥ तनोतेर्लिट् ॥

५४ ॥ पार्थिवीमिति ॥ उद्वहतीत्युद्वहः ॥ पचाद्यच् ॥ रघूणामुद्वहो रघूद्वहो रामः । पृथिव्या अपत्यं स्त्री पार्थिवी । तां सीतामुदवहत्परिणीतवान् ॥ अथ लक्ष्मणस्तस्याः सीताया अनुजां जनकस्यौरसीमूर्मिलामुदवहत् ॥ यौ वरौजसौ तयो रामलक्ष्मणयोरवरजावनुजौ भरतशत्रुघ्नौ तौ सुमध्यमे कुशध्वजस्य जनकानुजस्य सुते कन्यके माण्डवीं श्रुतकीर्तिं चोदवहताम् ॥ नात्र व्युत्क्रमविवाहदोषो भिन्नोदरत्वात् ॥ तदुक्तम्— " पितृव्यपुत्रे सापत्ने परनारीसुतेषु च । विवाहाधानयज्ञादौ परिवेत्त्राद्यदूषणम् " इति ॥

५५ ॥ त इति । ते चतुर्थसहितास्त्रयः । चत्वार इत्यर्थः । वृत्तानुसारादेवमुक्तम् । सूनवो नववधूपरिग्रहाः । सिद्धिमन्तः फलसिद्धियुक्तास्तस्य भूपतेर्दशरथस्य

---

53. The two kings who were observant of the usages and customs and who were like Varu*n*a and Vâsava respectively, having come together, celebrated the marriage ceremonies of their sons and daughters in accordance with their dignity.

54. The leader of the family of Raghu married the daughter of the Earth and then Lakshma*n*a married Urmilâ her younger sister (*lit.* born after her). The other two powerful ones who were younger brothers of them (two) accepted in marriage the two daughters of Kus'adhvaja, who were of beautiful waist.

55. The three sons, being accompanied by their fourth, appeared on account of their accepting new brides, like the four poli-

---

53. A. D. E. H. I. J. K R. with Hem., Vijay., and the text only of Val., समये स्थितौ for समयस्थितौ.

54. B. C. I. with Vijay., and the text only of Val., मैथिलीं for पार्थिवीं. D. with Châ., Din., and Vijay., ललितवाचमूर्मिलां for तदनुजामथोर्मिलां.

55. P. with Su., and Vijay., read first 56th verse and then

ता नराधिपसुता नृपात्मजैस्ते च ताभिरगमन्कृतार्थताम् ।
सोऽभवद्वरवधूसमागमः प्रत्ययप्रकृतियोगसन्निभः ॥ ५६ ॥
एवमात्तरतिरात्मसंभवांस्तान्निवेश्य चतुरोऽपि तत्र सः ।
अध्वसु त्रिषु विसृष्टमैथिलः स्वां पुरीं दशरथो न्यवर्तत ॥ ५७ ॥
तस्य जातु मरुतः प्रतीपगा वर्त्मसु ध्वजतरुप्रमाथिनः ।
चिक्लिशुर्भृशतया वरूथिनीमुत्तटा इव नदीरयाः स्थलीम् ॥ ५८ ॥

सामदानविधिभेदनिग्रहाश्चत्वार उपाया इव । बभुः ॥ विधीयत इति विधिः दानमेव विधिः । निग्रहो दण्डः । सूनूनामुपायैर्वधूनां सिद्धिभिश्चौपम्यमित्यनुसंधेयम् ॥

५६ ॥ ता इति । ता नराधिपसुता जनककन्यका नृपात्मजैर्दशरथपुत्रैः कृतार्थतां कुलशीलवयोरूपादिसाफल्यमगमन् । ते च ताभिस्तथा ॥ किं च । स वराणां वधूनां च समागमः । प्रत्ययानां प्रकृतीनां च योग इव । संनिभातीति संनिभः । अभवत् ॥ पचाद्यच् ॥ प्रत्ययाः सनादयो येभ्यो विधीयन्ते ताः प्रकृतयः ॥ यथा प्रकृतिप्रत्यययोः सहैकार्थसाधकत्वं तद्वदत्रापीति भावः ॥

५७ ॥ एवमिति । एवमात्तरतिरनुरागवान्स दशरथस्तांश्चतुरोऽप्यात्मसंभवान्पुत्रांस्तत्र मिथिलायां निवेश्य विवाह्य ॥ "निवेशः शिबिरोद्वाहविन्यासेषु प्रकीर्तितः" इति विश्वः ॥ त्रिष्वध्वसु प्रयाणेषु सत्सु विसृष्टमैथिलः सन् । स्वां पुरीं न्यवर्तत ॥ उद्देशक्रियापेक्षया कर्मत्वं पुर्याः ॥

५८ ॥ तस्येति । जातु कदाचिद्वर्त्मसु ध्वजा एव तरवस्तान्प्रमथ्नन्ति ये ते

---

tical crafts (expedients) of that lord of the earth, *viz.*, Sâman (peace-making), Dánavidhi (act of bribing), Bheda (attempt to produce civil dissension) and Nigraha (punishing, war) accompanied by Siddhi (success).

56. Those daughters of the lord of people in company with the sons of the king and they (the sons) with them (the daughters) attained their end (object or success). That union of the brides and bride-grooms was like the union of Pratyaya (terminations, affixes) and Prak*ri*ti (base).

57. The king Das'aratha having thus married all those four sons there (at Mithilâ), and having dismissed the king of Mithilâ after three journeys (at the third stage) began to return with great pleasure to his own capital.

58. Now it so happened that strong gales of wind blowing in

---

the 55th. A. C. J. P. R. with Hemâdri °परिग्रहात् for °परिग्रहाः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha.

56. C. K. च पार्थिवसुताः for नराधिपसुताः. I. अपि for च.

58. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., वर्त्मनि for वर्त्मसु. E. उद्धताः for उत्तटाः.

लक्ष्यते स्म तदनन्तरं रविर्बद्धभीमपरिवेशमण्डलः ।
वैनतेयशमितस्य भोगिनो भोगवेष्टित इव च्युतो मणिः ॥ ५९ ॥
श्येनपक्षपरिधूसरालकाः सांध्यमेघरुधिरार्द्रवाससः ।
अङ्गना इव रजस्वला दिशो नो बभूवुरवलोकनक्षमाः ॥ ६० ॥
भास्करश्च दिशमध्युवास यां तां श्रिताः प्रतिभयं ववासिरे ।
क्षत्रशोणितपितृक्रियोचितं चोदयन्त्य इव भार्गवं शिवाः ॥ ६१ ॥

ध्वजतरुप्रमाथिनः प्रतीपगाः प्रतिकूलगामिनो मरुतः । उन्नता नदीरयाः स्थलीम- कृत्रिमभूमिमिव ॥ " जानपदकुण्ड-" इत्यादिना ङीप् ॥ तस्य वरूथिनीं सेनां भृशतया भृशं चिक्लिशुः क्लिश्यन्ति स्म ॥

५९ ॥ लक्ष्यत इति । तदनन्तरं प्रतीपपवनानन्तरं बद्धं भीमं परिवेशस्य परिधे- र्मण्डलं यस्य सः ॥ " परिवेशस्तु परिधिरुपसूर्यकमण्डले " इत्यमरः ॥ रविः । वैनतेयशमितस्य गरुडहतस्य भोगिनः सर्पस्य भोगेन कायेन ॥ " भोगः सुखे स्त्र्यादिभृतावहेश्च फणकाययोः " इत्यमरः ॥ वेष्टितश्च्युतः शिरोभ्रष्टो मणिरिव । लक्ष्यते स्म ॥

६० ॥ श्येनेति । श्येनपक्षा एव परिधूसरा अलका यासां तास्तथोक्ताः सांध्य- मेघा एव रुधिरार्द्राणि वासांसि यासां तास्तथोक्ताः । रजो धूलिरासामस्तीति रजस्वलाः ॥ " रजः कृष्यासुतिपरिषदो वलच् " इत्यादिना वलच्प्रत्ययः ॥ दिशः । रजस्वला ऋतुमत्योऽङ्गना इव ॥ " स्याद्रजः पुष्पमार्तवम् " इत्यमरः ॥ अवलोकनक्षमा दर्शनार्हा नो बभूवुः ॥ एकत्रादृष्टदोषादपरत्र शास्त्रदोषादिति वि- ज्ञेयम् ॥ अत्र रजोवृष्टिरुत्पात उक्तः ॥

६१ ॥ भास्कर इति । भास्करो यां दिशमध्युवास च यस्यां दिश्युषितः ॥

an opposite direction and destroying the tree like banners on the roads, harassed his army in a great degree, as the swelling currents of a river overflowing the banks devastate the dry land (*i. e.* the country lying along the banks).

59. After that, the sun with a formidable ring formed around it, appeared like the gem dropped down (from the hood) and encircled by the body of a cobra when killed by the son of Vinatā (Garuda.)

60. The quarters having their locks of hawk's wings rough and of grey colour, with their clothes of evening clouds steeped in (wet with) blood, and therefore like women in their menses, with their grey locks of hair, and garments wet with blood, were not fit to be looked at.

61. And resorting to the quarter, which the sun had occupied,

59. B. C. E. H. I. P. R. with Hem., Chā., Din., Val.. Su., and Vijay., °परिवेष° for °परिवेश°. D. °वेष्टनः for °वेष्टितः.

60. P. सान्द्रमेघ° for सान्ध्यमेघ°.

61. R. °पितुः क्रियोचितं for °पितृक्रियोचितं. B. E. H. R. with Chā.,

तत्प्रतीपपवनादि वैकृतं प्रेक्ष्य शान्तिमधिकृत्य कृत्यवित् ।
अन्वयुङ्क्त गुरुमीश्वरः क्षितेः स्वन्तमित्यलघयत्स तद्व्यथाम् ॥ ६२ ॥
तेजसः सपदि राशिरुत्थितः प्रादुरास किल वाहिनीमुखे ।
यः प्रमृज्य नयनानि सैनिकैर्लक्षणीयपुरुषाकृतिश्चिरात् ॥ ६३ ॥

" उपान्वध्याङ्वसः " इति कर्मत्वम् ॥ तां दिशं श्रिताः शिवा गोमायवः ॥ " स्त्रियां शिवा भूरिमायुगोमायुमृगधूर्तकाः " इत्यमरः ॥ क्षत्रशोणितेन या पितृक्रिया पितृतर्पणं तत्रोचितं परिचितं भार्गवं चोदयन्त्य इव प्रतिभयं भयंकरं ववासिरे रुरुवुः ॥ " वाशृ शब्दे " इति धातोर्लिट् ॥ " तिरश्चां वासितं रुतम् " इत्यमरः ॥

६२ ॥ तदिति । तत्प्रतीपपवनादि वैकृतं । दुर्निमित्तं प्रेक्ष्य कृत्यवित्कार्यज्ञः क्षितेरीश्वरः शान्तिमनर्थनिवृत्तिमधिकृत्योद्दिश्य गुरुं वशिष्ठमन्वयुङ्क्तापृच्छत् ॥ " प्रश्नोऽनुयोगः पृच्छा च " इत्यमरः ॥ स गुरुः स्वन्तं शुभोदर्कं भावीति तस्य राज्ञो व्यथामलघयल्लघूकृतवान् ॥

६३ ॥ तेजस इति । सपद्युत्थितस्तेजसो राशिर्वाहिनीमुखे सेनाग्रे प्रादुरास किल खलु ॥ यः सैनिकैर्नयनानि प्रमृज्य चिराल्लक्षणीया पुरुषाकृतिर्यस्य स तथोक्तः । अभूदिति शेषः ॥

---

the female-jackals began to howl terribly, urging, as it were, the son of Bh*ri*gu who was accustomed to worship the manes of his father by means of the blood of the Kshatriyas.

62. Having seen the ill-omen of the gales of winds blowing in opposite directions and of such other things, the lord of the earth knowing what was proper to be done (under such circumstances) asked the spiritual adviser regarding its pacification, but he lessened his anxiety by assuring him that it would produce good results in the end.

63. It is said that a heap of light arose and appeared in front of the army all on a sudden ; which after a long time became visible in a human form to the soldiers when they had rubbed their eyes (*lit.* they having rubbed their eyes).

Din., Val., Su., and Vijay., नोदयन्त्यः, one of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Chàritravardhana and others, I. with Hemádri, बोधयन्त्यः, C. K. प्रेरयन्त्यः for चोदयन्त्यः. Hemádri also notices the reading of C. K. Mss.

62. C. D. K. मरुतादि for पवनादि. B. E. H. I. R. with Din., Val , and Vijay., क्षिप्रशान्तं, C. क्षिप्रशान्ति, D. K. क्षिप्रशान्त्यं, P. with Hem., and Chà., प्रेक्ष्य शान्तं for प्रेक्ष्य शान्ति. Hemádri also notices the reading of Mallinàtha. E. with Chà., अधिगम्य for अधिकृत्य.

63. B. R. with Vijay., उच्छ्रितः, C. E. H. I. and the text only of Vijay., उच्छ्रितः for उत्थितः.

पित्र्यमंशमुपवीतलक्षणं मातृकं च धनुरूर्जितं दधत् ।
यः ससोम इव घर्मदीधितिः सद्विजिह्व इव चन्दनद्रुमः ॥ ६४ ॥
येन रोषपरुषात्मनः पितुः शासने स्थितिभिदोऽपि तस्थुषा ।
वेपमानजननीशिरश्छिदा प्रागजीयत घृणा ततो मही ॥ ६५ ॥
अक्षबीजवलयेन निर्बभौ दक्षिणश्रवणसंस्थितेन यः ।
क्षत्रियान्तकरणैकविंशतेर्व्याजपूर्वगणनामिवोद्वहन् ॥ ६६ ॥

६४ ॥ पित्र्यमिति । उपवीतं लक्षणं चिह्नं यस्य तम् । पितुरयं पित्र्यः ॥ "वाय्वृतुपित्रुषसो यत्" इति यत्प्रत्ययः ॥ तमंशम् । धनुषोर्जितं धनुरूर्जितम् । मातुरयं मातृकः ॥ "ऋतष्ठञ्" इति ठञ्प्रत्ययः ॥ तमंशं च दधद्यो भार्गवः । ससोमश्चन्द्रयुक्तो घर्मदीधितिः सूर्य इव । सद्विजिह्वः ससर्पश्चन्दनद्रुम इव । स्थितः ॥
६५ ॥ येनेति । रोषेण परुष आत्मा बुद्धिर्यस्य सः ॥ "आत्मा जीवे धृतिर्बुद्धिः" इत्यमरः ॥ तस्य रोषपरुषात्मनः स्थितिभिदोऽपि मर्यादालंङ्घिनोऽपि पितुः शासने तस्थुषा स्थितेन वेपमानजननीशिरश्छिदा येन प्राग्घृणाजीयत। ततोऽनन्तरं मह्यजीयत ॥ मातृहन्तुः क्षत्त्रवधात्कुतो जुगुप्सेति भावः ॥
६६ ॥ अक्षेति । यो भार्गवो दक्षिणश्रवणे संस्थितेनाक्षबीजवलयेनाक्षमालया क्षत्त्रियान्तकरणानां क्षत्त्रियवधानामेकविंशतेरेकविंशतिसंख्याया व्याजोऽक्षमालारूपः पूर्वो यस्यास्तां गणनामुद्वहन्निव निर्बभौ ॥

64- Bearing a father's portion characterised by an Upavita (sacred thread) and also his mother's portion mighty and powerful on account of the bow, he appeared like the sun (hot-rayed) united with the moon or like a sandal tree with a two-tongued-animal (a snake) on it.

65. By whom abiding by the command of his father, whose mind became stern in rage, and who broke through the limit of propriety of conduct, first was subdued the feeling of kindness (aversion for sinful deeds) in cutting off the head of his trembling mother and then the earth was overcome (*i. e.* after which the earth was brought under his sway).

66. Who by reason of the rosary of Rudráksha seeds placed on his right ear (hanging from his right ear), appeared bearing, as it were, in a disguised form on his person, the number twenty one, that being the number of times he had destroyed the Kshatriyas.

64. A. D. H. R. पित्र्यवंशं for पित्र्यमंशं.
65. R. तस्थुषा for तस्थुषा. B. C. K. with Vijay., क्षितिः for मही.
66. A. C. and the text only of Val., संश्रयेण for संस्थितेन. B. C. I. K. सः for यः. A. with Val., read this verse after the 68th stanza of our text.

तं पितुर्वधभवेन मन्युना राजवंशनिधनाय दीक्षितम् ।
बालसूनुरवलोक्य भार्गवं स्वां दशां च विषसाद पार्थिवः ॥ ६७ ॥
नाम राम इति तुल्यमात्मजे वर्तमानमहिते च दारुणे ।
हृद्यमस्य भयदायि चाभवद्रत्नजातमिव हारसर्पयोः ॥ ६८ ॥
अर्घ्यमर्घ्यमिति वादिनं नृपं सोऽनवेक्ष्य भरताग्रजो यतः ।
क्षत्रकोपदहनार्चिषं ततः संदधे दृशमुदग्रतारकाम् ॥ ६९ ॥

६७ ॥ तमिति । पितुर्जमदग्नेर्वधभवेन क्षत्रियकर्तृकवधोद्भवेन मन्युना कोपेन राजवंशानां निधनाय नाशार्थम् ॥ "निधनं स्यात्कुले नाशे" इति विश्वः ॥ दीक्षितम् । प्रवृत्तमित्यर्थः । तं भार्गवं स्वां दशां चावलोक्य बालाः सूनवो यस्य स पार्थिवो विषसाद ॥ स्वस्यातिदौर्बल्याच्छत्रोश्चातिक्रौर्यात्कांदिशीकोऽभवदित्यर्थः ॥

६८ ॥ नामेति । आत्मजे पुत्रे दारुणे घोरेऽहिते शत्रौ च तुल्यमविशेषेण वर्तमानं राम इति नाम । हारसर्पयोर्वर्तमानं रत्नजातं रत्नजातिरिव । अस्य दशरथस्य हृद्यं हृदयंगमं भयदायि भयंकरं चाभवत ॥

६९ ॥ अर्घ्यमिति । स भार्गवः । अर्घ्यमर्घ्यमिति वादिनं नृपमनवेक्ष्य । यतो यत्र भरताग्रजस्ततस्तत्र ॥ "इतराभ्योऽपि दृश्यन्ते" इति सार्वविभक्तिकस्तसिः ॥

---

67. The king whose sons were yet of a tender age, having seen that son of Bh*r*igu who had taken the Dîkshâ (the initiatory vow of a sacrifice) for the destruction of the families of the kings in consequence of his anger aroused (excited) by the death (murder) of his father and having thought of his own condition at the time, became dejected in spirit (was at a loss to know as to what should be done).

68. The name Râma which was equally applicable both to his own son as well as to that formidable foe, became to him dear to heart (pleasing) and at the same time fear-inspiring, as a jewel in a necklace and that on the hood of a serpent inspire joy and fear simultaneously.

69. Not minding the king who exclaimed 'offering oh ! offering,' he directed his eyes of terrible pupils towards that quarter

---

67. D. with Su., विव्यथे दशरथो दशाच्युतः for स्वां दशां च विषसाद पार्थिवः. Sumativijaya, "दशरथो नृपो विव्यथे । किं कृत्वा भार्गवं परशुराममवलोक्य दृष्ट्वा । कथंभूतो दशरथो दशाच्युतः स्वदशा वृद्धावस्था तस्याश्च्युतो भ्रष्टः" &c.

68. D. E. H. I. J. K. P. R. with Hem., Val., Din., and Su., राम नाम for नाम राम. H. R. अपि for च.

69. C. D. R. with Chá., and Su., क्षत्रवंश° for क्षत्रकोप°. K. R. with Vallabha, °तारकं for °तारकां. They take the whole compound in an adverbial sense.

तेन कार्मुकनिषक्तमुष्टिना राघवो विगतभीः पुरोगतः ।
अङ्गुलीविवरचारिणं शरं कुर्वता निजगदे युयुत्सुना ॥ ७० ॥

क्षत्त्रजातमपकारवैरि मे तन्निहत्य बहुशः शमं गतः ।
सुप्तसर्प इव दण्डघट्टनाद्रोषितोऽस्मि तव विक्रमश्रवात् ॥ ७१ ॥

क्षत्त्रे क्षत्त्रकुले विषये यः कोपदहनो रोषाग्निस्तस्यार्चिषं ज्वालामिव स्थिताम् ॥ " ज्वालाभासोर्नपुंस्यर्चिः " इत्यमरः ॥ उदग्रा तारका कनीनिका यस्यास्ताम् ॥ " तारकाऽक्ष्णः कनीनिका " इत्यमरः ॥ दृशं संदधे ॥

७० ॥ तेनेति । कार्मुकनिषक्तमुष्टिना । शरमङ्गुलीविवरचारिणं कुर्वता । योद्धुमिच्छता युयुत्सुना । तेन भार्गवेण । कर्त्रा । विगतभीर्निर्भीकः सन् । पुरोगतोऽग्रगतो राघवो निजगदे उक्तः ॥ कर्मणि लिट् ॥

७१ ॥ क्षत्त्रेति । क्षत्त्रजातं क्षत्त्रजातिर्मेऽपकारेण पितृवधरूपेण वैरि द्वेषि । तत्क्षत्त्रजातं बहुश एकविंशतिवारान्निहत्य शमं गतोऽस्मि ॥ तथापि सुप्तसर्पो दण्डघट्टनादिव तव विक्रमस्य श्रवाद्आकर्णनाद्रोषितो रोषं प्रापितोऽस्मि ॥

---

where was the eldest brother of Bharata,—eyes that looked like a flame of that fire of anger (which burned) against Kshatriyas.

70. By him who desirous to do battle had placed his fist round a bow (held a bow in his clenched fist) and who was making an arrow enter the intervening space between his fingers, was addressed the descendant of Raghu who was standing before him and who was undaunted.

71. " The whole race of Kshatriyas is my enemy for the injury it has done to me. Having destroyed it many a time I was pacified. I am incensed (provoked) by the report of your exploits as a sleeping snake is aroused when stirred with a club (or by receiving a blow from a club). "

---

70. A. C. and the text only of Val., नियुक्त°, E. J. विषक्त° for निषक्त°. B. C. °विवरसारिणं, D. R. °विवरवर्तिनं for °विवरचारिणं.

71. C. D. E. H. I. P. R. with Hem , Val., Su., and Vijay., अपकारि वैरि for अपकारवैरि. R. श्रमं गतः for शमं गतः. B. K. P. with Hem., Chā., and the text only of Vijay., दयितः, C. H. I. R. with Din., Val., Su., Vijay., उत्थितः, E. दुःखितः for रोषितः. One of the three Mss. of Hemādri's दर्पण also agrees with Vallabha and others. A. C. with Su., धामविश्रवात् for विक्रमश्रवात्.

मैथिलस्य धनुरन्यपार्थिवैस्त्वं किलानमितपूर्वमक्षणोः ।
तन्निशम्य भवता समर्थये वीर्यशृङ्गमिव भग्नमात्मनः ॥ ७२ ॥
अन्यदा जगति राम इत्ययं शब्द उच्चरित एव मामगात् ।
व्रीडमावहति मे स संप्रति व्यस्तवृत्तिरुदयोन्मुखे त्वयि ॥ ७३ ॥
बिभ्रतोऽस्त्रमचलेऽप्यकुण्ठितं द्वौ रिपू मम मतौ समागसौ ।
धेनुवत्सहरणाच्च हैहयस्त्वं च कीर्तिमपहर्तुमुद्यतः ॥ ७४ ॥

७२ ॥ मैथिलस्येति । अन्यैः पार्थिवैः । अनमितपूर्वं पूर्वमनमितम् ॥ सुप्सुपेति समासः ॥ अस्य मैथिलस्य धनुस्त्वमक्षणोः क्षतवान् । किलेति वार्तायाम् ॥ "वार्ता संभाव्ययोः किल " इत्यमरः ॥ तद्धनुर्भङ्गं निशम्याकर्ण्य भवतात्मनो मम वीर्यमेव शृङ्गं भग्नमिव समर्थये मन्ये ॥

७३ ॥ अन्यदेति । अन्यदान्यस्मिन्काले जगति राम इत्ययं शब्द उच्चरितः सन्मामेवागात् ॥ संप्रति त्वय्युदयोन्मुखे सति व्यस्तवृत्तिर्विपरीतवृत्तिः । अन्यगामीति यावत् । स शब्दो मे व्रीडमावहति लज्जां करोति ॥

७४ ॥ बिभ्रत इति । अचले क्रौञ्चाद्रावप्यकुण्ठितमस्त्रं बिभ्रतो मम द्वौ समागसौ तुल्यापराधौ रिपू मतौ । धेनोः पितृहोमधेनोर्वत्सस्य हरणाद्धेतोर्हैहयः कार्तवीर्यश्च । कीर्तिमपहर्तुमुद्यत उद्युक्तस्त्वं च ॥ वत्सहरणे भारतश्लोकः--" प्रमत्तश्चाश्रमात्तस्य होमधेन्वास्ततो बलात् । जहार वत्सं क्रोशन्त्या बभञ्ज च महाद्रुमान् " इति ॥

---

72. " It is reported that thou hast broken the bow of the king of Mithilâ,—a bow which was never before bent by any other king. Hearing this I consider that my supremacy in (*lit.* horn of) prowess has, as it were, been destroyed (*lit.* broken) by thee (I am robbed of my glory). "

73. " At other times than the present the epithet Râma being pronounced in the world was applicable to (signified) me alone. Now that you are rising to importance the same name with its signification being changed (*i. e.* proper force or meaning being divided) puts me to shame ! "

74. "To me bearing a missile unimpeded even in the mountain of Krauncha there are two enemies of equal offence, the one is the

---

72. B. C. D. H. I. P. R. with Hem., Châ., Din., Su., and the text only of Val., अक्षिगोः for अक्षणोः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण, as well as Châritravardhana's शिशुहितैषिणी also agreeing with Mallinâtha.

73. C. D. जयति for जगति. Hemâdri also notices this. **A. C.** नयति मां for मामगात्. Hemâdri also notices the reading.

74. H. J. with Hem., Châ., and Din., समागसौ मतौ for मतौ समा-

क्षत्रियान्तकरणोऽपि विक्रमस्तेन मामवति नाजिते त्वयि ।
पावकस्य महिमा स गण्यते कक्षवज्ज्वलति सागरेऽपि यः ॥ ७५ ॥
विद्धि चात्तबलमोजसा हरेरैश्वरं धनुरभाजि यत्त्वया ।
खातमूलमनिलो नदीरयैः पातयत्यपि मृदुस्तटद्रुमम् ॥ ७६ ॥
तन्मदीयमिदमायुधं ज्यया संगमय्य सशरं विकृष्यताम् ।
तिष्ठतु प्रधनमेवमप्यहं तुल्यबाहुतरसा जितस्त्वया ॥ ७७ ॥

७५ ॥ क्षत्रियेति । तेन कारणेन । क्रियते येनासौ करणः । क्षत्रियान्तस्य करणोऽपि विक्रमः । त्वय्यजिते । मां नावति न प्रीणाति ॥ तथा हि । पावकस्याग्नेर्महिमा स गण्यते यः कक्षवत्कक्ष इव ॥ "तत्र तस्येव" इति सप्तम्यर्थे वतिः । सागरेऽपि ज्वलति ॥

७६ ॥ विद्धीति । किं च । ऐश्वरं धनुर्हरेर्विष्णोरोजसा बलेनात्तबलं हृतसारं च विद्धि यद्धनुस्त्वयाभाज्यभञ्जि ॥ "भञ्जेश्च चिणि" इति विभाषया नलोपः ॥ तथा हि । नदीरयैः खातमूलमवदारितपादं तटद्रुमं मृदुरप्यनिलः पातयति ॥ ततः शिशुरपि रौद्रं धनुरभाङ्क्षीमिति मा गर्वीरिति भावः ॥

७७ ॥ तदिति । तत्तस्मान्मदीयमिदमायुधं कार्मुकं ज्यया संगमय्य संयोज्य ॥ "ल्यपि लघुपूर्वात्" इति णेरयादेशः ॥ सशरं यथा तथा त्वया विकृष्यताम् ॥

---

king of the Haihayas on account of his having carried the calf of my (father's sacred) cow and the other yourself ready to deprive me of my fame (glory). "

75. " Therefore as long as you are not subdued, my prowess, even though it has brought about the destruction of the Kshatriyas, does not give me (enough) satisfaction ; that only is accounted to be the true greatness of fire, if it can burn in the ocean, as in a heap of dry-grass. "

76. " Know that the bow of Îs'vara that has been broken by thee, had been deprived of its strength by the power of Hari ; for even a gentle breeze throws down a tree on the bank where its roots are undermined by the (forcible) currents of a river. "

77. " Please put the string to this bow of mine, and applying

---

गतौ. K. with Val., द्वौ मतौ मम रिपू for द्वौ रिपू मम मतौ. D. E. I. K. P. with Val., Din., Su., and the text only of Vijay., तातधेनुहरणात्, H. कामधेनुहरणात्, C. with Vijay., होमधेनुहरणात्, R. वत्सधेनुहरणात् for धेनुवत्सहरणात्. Hemádri and Chàritravardhana distinctly with Mallinátha.

76. B. C. E. H. I. K. P. R. with Hem., Chá., Din., Su., Vijay., and the text only of Val., आत्तरसं for आत्तबलं. All of them explain as, "आत्तरसं = आत्तसारं."

77. C. D. with Châ., and Din., read, "तन्मदीयमिदमाततज्यतां

कातरोऽसि यदि वोद्गतार्चिषा तर्जितः परशुधारया मम ।
ज्यानिघातकठिनाङ्गुलिर्वृथा बध्यतामभययाचनाञ्जलिः ॥ ७८ ॥
एवमुक्तवति भीमदर्शने भार्गवे स्मितविकम्पिताधरः ।
तद्धनुर्ग्रहणमेव राघवः प्रत्यपद्यत समर्थमुत्तरम् ॥ ७९ ॥
पूर्वजन्मधनुषा समागतः सोऽतिमात्रलघुदर्शनोऽभवत् ।
केवलोऽपि सुभगो नवाम्बुदः किं पुनस्त्रिदशचापलाञ्छितः ॥ ८० ॥

प्रधनं रणास्तिष्ठतु । प्रधनं तावदास्तामित्यर्थः ॥ " प्रधनं मारणे रणे " इति विश्वः ॥ एवमपि मद्धनुःकर्षणेऽप्ययं तुल्यबाहुतरसा समबाहुबलेन ॥ " तरसी बलरंहसी " इत्यमरः ॥ त्वया जितः ॥

७८ ॥ कातर इति । यदि वोद्गतार्चिरुद्गतत्विषा मम परशुधारया तर्जितः कातरोऽसि भीतश्चेत् । वृथा ज्यानिघातेन कठिना अङ्गुलयो यस्य स तथोक्तोऽभययाचनाञ्जलिरभयप्रार्थनाञ्जलिर्बध्यताम् ॥ " तौ युतावञ्जलिः पुमान् " इत्यमरः ॥

७९ ॥ एवमिति । भीमदर्शने भार्गवे एवमुक्तवति सति । राघवः स्मितेन हासेन विकम्पिताधरः सन् । तद्धनुर्ग्रहणमेव समर्थमुचितमुत्तरं प्रत्यपद्यताङ्गीचकार ॥

८० ॥ पूर्वेति । पूर्वजन्मनि नारायणावतारे यद्धनुस्तेन समागतः संगतः स

---

an arrow draw it (*i. e.* discharge); let the fighting remain for the present. Even if you do this much, (*lit.* if you can do this even, then) I shall consider myself defeated by you, possessed of strength of arms equal to that of mine. "

78. " But if you have lost heart (if your courage fails) terrified by the edge of my battle-axe which puts forth a flame of lustre, then form a cavity of your hands in request of safety and protection—the cavity of hands whose fingers have in vain been hardened by the strokes of the bow-string. "

79. When the son of Bh*ri*gu who was terrible (or gigantic) in appearance spoke these words, the descendant of Raghu with his lower lip quivering in smile, considered the very acceptance of his bow to be the best reply, and took it up.

80. Being joined with the bow which belonged to him in one

नीयतां विजयसाधनं धनुः " for the former half. Hemádri also notices th reading and says, " इति पूर्वार्धपाठान्तरं." [D. विषय° for विजय]. A. with Su., read first the 78th verse and then the 77th.

78. D. H. I. K. R. with Hem , Chá., Din., and Su., यदि च for यदि वा. B. D. with Hem., Chá., Din., and the text only of Vijay., ज्याविमर्द° for ज्यानिघात°. D. and the text only of Su., तथा for वृथा.

79. C. R. °विकंपितो हरः for °विकंपिताधरः.

80. B. C. E. H. I. K. P. R. with Val., and the texts only of Su., and Vijay., शुभ° for लघु°. D. लाञ्छनः for लाञ्छितः.

तेन भूमिनिहितैककोटि तत्कार्मुकं च बलिनाधिरोपितम् ।
निष्प्रभश्च रिपुरास भूभृतां धूमशेष इव धूमकेतनः ॥ ८१ ॥
तावुभावपि परस्परस्थितौ वर्धमानपरिहीनतेजसौ ।
पश्यति स्म जनता दिनात्यये पार्वणौ शशिदिवाकराविव ॥ ८२ ॥

रामोऽतिमात्रलघुदर्शनोऽत्यन्तप्रियदर्शनोऽभवत् ॥ तथा हि । नवाम्बुदः केवलो रिक्तोऽपि सुभगः । त्रिदशचापेनेन्द्रधनुषा लाञ्छितश्चिह्नितः किं पुनः ॥ सुभग एवेति भावः ॥

८१ ॥ तेनेति । बलिना तेन रामेण भूमिनिहितैका कोटिर्यस्य तत् । कर्मणे प्रभवतीति कार्मुकं धनुश्च ॥ "कर्मण उकञ्" इत्युकञ्प्रत्ययः ॥ अधिरोपितम् ॥ भूभृतां रिपुर्भार्गवश्च । धूमशेषो धूमकेतनोऽग्निरिव । निष्प्रभो निस्तेजस्क आस बभूव ॥ आसेति तिङन्तप्रतिरूपकमव्ययम् । दीप्त्यर्थकस्यास्ते रूपं वा ॥

८२ ॥ तावितिं । परस्परस्थितावन्योन्याभियुक्तौ ॥ वर्धमानं च परिहीनं चेति द्वन्द्वः ॥ वर्धमानपरिहीने तेजसी ययोस्तौ तावुभौ राघवभार्गवावपि । दिनात्यये

---

of his former states of existence he became exceedingly charming to the sight ; if a fresh cloud is beautiful even when alone, how much more should it be when it is marked by the bow of Indra (the rainbow)?

81. The moment that the bow, the one end of which was placed on the ground, was strung by that powerful prince, the enemy of kings turned blank (pale) like fire having its smoke only left to it.

82. The multitude of people looked upon them both, who had

---

81. A. D. H. I. K. P. R. with Hem., Chà., Din., Val., Su., and Vijay., °निहितैककोटिना, C. °निहतैककोटि तत् for °निहितैककोटि तत्. A. C. with Hem., and Val., तत्क्षणं for भूभृतां. B. C. E. H. I. K. P. R. with Chà., Din., Val., Su., and Vijay., read, "प्राप वर्णविकृतिं च भार्गवो वृष्टिधौत इव वासवध्वजः" for the latter half. Hemâdri also notices this and says, "इति उत्तरार्धे पाठान्तरं." Vallabha: "तावद् भार्गवः स्ववर्णविकृतिं प्राप जामदग्न्यश्च मालिन्यमवाप । क इव वासवध्वज इव । यथा वासवध्वज इन्द्रमहोत्सवो वृष्टिधौतः सन् आसारक्षालितः सन्वर्णविकृतिं प्राप्नोति" &c., Châritravardhana:— "भार्गवः परशुरामश्च वर्णविकृतिं वैवर्ण्यं प्राप ॥ उभावपि चकारौ समानकालद्योतकौ ॥ यथा संधुक्षितो धूमशेषोऽग्निर्वैवर्ण्यं निर्ज्वालत्वं लभते &c., Vijay., repeats the above remark of Châritravardhana and says, "इति चारित्रवर्द्धनः." Dinakara word for word the same with Châritravardhana. Vallabha considers the latter half as a different reading for the above.

82. B. E. H. I. K. with Hem., Val., Su., and Vijay., परस्परं स्थितौ for परस्परस्थितौ. C. D. I. with Hem., and Chà., °परिहाण° for °परिहीन.°

तं कृपामृदुरवेक्ष्य भार्गवं राघवः स्खलितवीर्यमात्मनि ।
स्वं च संहितममोघमाशुगं व्याजहार हरसूनुसंनिभः ॥ ८३ ॥
न प्रहर्तुमलमस्मि निर्दयं विप्र इत्यभिभवत्यपि त्वयि ।
शंस किं गतिमनेन पत्त्रिणा हन्मि लोकमुत ते मखार्जितम् ॥ ८४ ॥
प्रत्युवाच तमृषिर्न तत्त्वतस्त्वां न वेद्मि पुरुषं पुरातनम् ।
गां गतस्य तव धाम वैष्णवं कोपितो ह्यसि मया दिदृक्षुणा ॥ ८५ ॥

सायंकाले पर्वणि भवौ पार्वणौ शशिदिवाकराविव । जनता जनसमूहः ॥ "ग्राम-जनबन्धुसहायेभ्यस्तल्" इति तल्प्रत्ययः ॥ पश्यति स्मापश्यत् ॥ अत्र राघवस्य शशिना भार्गवस्य भानुनौपम्यं द्रष्टव्यम् ॥

८३ ॥ तमिति । हरसूनुसंनिभः स्कन्दसमः कृपामृदू राघवः । आत्मनि विषये स्खलितवीर्यं कुण्ठितशक्तिं तं भार्गवं स्वं स्वकीयं संहितममोघमाशुगं बाणं चावेक्ष्य । व्याजहार बभाषे ॥

८४ ॥ नेति । अभिभवत्यपि त्वयि । विप्र इति हेतोः । निर्दयं प्रहर्तुमलं शक्तो नास्मि ॥ किं त्वनेन पत्त्रिणा शरेण ते गतिं गमनं हन्मि । उत मखार्जितं लोकं स्वर्गं हन्मि शंस ब्रूहि ॥

८५ ॥ प्रतीति । ऋषिर्भार्गवस्तं रामं प्रत्युवाच । किमिति । तत्त्वतः स्वरूपतस्त्वां पुरातनं पुरुषं पुराणपुरुषं न वेद्मीति न । किं तु वेद्म्येवेत्यर्थः । किं तु गां गतस्य

encountered each other (*lit.* who were standing face to face)—the one having his splendour increased, and the other his glory diminished, as if they were the sun and the moon in the evening at the time of their opposition.

83. Râghava who resembled the son of Hara (स्कन्द), being moved with feelings of compassion, and seeing that the son of भृगु got his power baffled (in its effect) against him, and also considering that the arrow he had fixed on the bow was not to go in vain, addressed him in the following manner.

84. " Although you are an aggressor, I cannot (*lit.* I am not disposed &c.,) ruthlessly strike you, because you are a Bráhma*n*a. Tell me then if I am to destroy your locomotion by this arrow, or to bar your way to the regions which you have acquired by sacrificial ceremonies. "

85. The sage replied to him " It is not that I do not know thee to be the Primeval Being from thy real nature (real appear-

83. E. H. R. संधितं for संहितं. B. C. R. with Hem., Din., Su., and Vijay., अवन्ध्यम् for अमोघम्.

84. B. C. E. H. I. K. P. with Hem., Chà., Din., Val., Su., and Vijay., अथ, R. अपि for उत.

भस्मसात्कृतवतः पितृद्विषः पात्रसाच्च वसुधां ससागराम्।
आहितो जयविपर्ययोऽपि मे श्लाघ्य एव परमेष्ठिना त्वया ॥ ८६ ॥
तद्गतिं मतिमतां वरेप्सितां पुण्यतीर्थगमनाय रक्ष मे।
पीडयिष्यति न मां खिलीकृता स्वर्गपद्धतिरभोगलोलुपम् ॥ ८७ ॥
प्रत्यपद्यत तथेति राघवः प्राङ्मुखश्च विससर्ज सायकम्।
भार्गवस्य सुकृतोऽपि सोऽभवत्स्वर्गमार्गपरिघो दुरत्ययः ॥ ८८ ॥

भुवमवतीर्णस्य तव वैष्णवं धाम तेजो दिदृक्षुणा द्रष्टुमिच्छता मया कोपितो ह्यसि ॥

८६ ॥ भस्मसादिति। पितृद्विषः पितृवैरिणो भस्मसात्कृतवतः कोपेन भस्मीकर्वतः ॥ "विभाषा सातिः कार्त्स्न्ये" इति सातिप्रत्ययः ॥ ससागरां वसुधां च पात्रसात् ॥ पात्राधीनं देयं कृतवतः ॥ "देये त्रा च" इति चकारात्सातिः ॥ कृतकृत्यस्य मे परमेष्ठिना। परमपुरुषेण त्वयाहितः कृतो जयविपर्ययः पराजयोऽपि श्लाघ्य आशास्य एव ॥

८७ ॥ तदिति। तत्तस्मात्कारणाद्धे मतिमतां वर पुण्यतीर्थगमनायाप्तुमिष्टामीप्सितां मे गतिं रक्ष पालय। किं तु खिलीकृता दुर्गमीकृतापि स्वर्गपद्धतिरभोगलोलुपं भोगनिःस्पृहं मां न पीडयिष्यति ॥ अतस्तामेव जहीत्यर्थः ॥

८८ ॥ प्रत्यपद्यतेति। राघवस्तथेति प्रत्यपद्यताङ्गीकृतवान्। प्राङ्मुख इन्द्रदिङ्मुखः सायकं विससर्ज च ॥ स सायकः सुकृतोऽपि साधुकारिणोऽपि ॥ करोतेः क्विप् ॥ भार्गवस्य दुरत्ययो दुरतिक्रमः स्वर्गमार्गस्य परिघः प्रतिबन्धोऽभवत् ॥

---

ance). But with a desire to see thy वैष्णव power, descended on earth, as thou art, I have provoked thee."

86. "To me who have reduced to ashes the haters (enemies) of my father, and have given away the earth bounded by the oceans to deserving persons, even the reverse of victory (defeat) made (or caused) by thee—the Supreme Being is certainly commendable."

87. "Therefore, Oh you the best of the intelligent, spare my coveted power of locomotion for going to holy places. Me who I am free from cravings for sensuous enjoyments, the course to heaven if barred (made impassable) shall not affect."

88. The descendant of Raghu complied with his request saying "so be it" and with his face towards the east, discharged the

---

86. B. C. E. H. I. K. P. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., विप्रसात् for पात्रसात्. Chāritravardhana and Dinakara distinctly with Mallinātha.

88. C. R. एव for इति. B. C. E. H. I. K. R. with Chā., Din., Val., Su., and Vijay., प्राङ्मुखं for प्राङ्मुखः. One of the three Mss. of Hemādri's दर्पण also agrees with Chāritravardhana and others. E. सुपि-

राघवोऽपि चरणौ तपोनिधेः क्षम्यतामिति वदन्समस्पृशत् ।
निर्जितेषु तरसा तरस्विनां शत्रुषु प्रणतिरेव कीर्तये ॥ ८९ ॥
राजसत्वमवधूय मातृकं पित्र्यमस्मि गमितः शमं यदा ।
नन्वनिन्दितफलो मम त्वया निग्रहोऽप्ययमनुग्रहीकृतः ॥ ९० ॥
साधयाम्यहमविघ्नमस्तु ते देवकार्यमुपपादयिष्यतः ।
ऊचिवानिति वचः सलक्ष्मणं लक्ष्मणाग्रजमृषिस्तिरोदधे ॥ ९१ ॥

८९ ॥ राघव इति । राघवोऽपि क्षम्यतामिति वदंस्तपोनिधेर्भार्गवस्य चरणौ समस्पृशत्प्रणनाम ॥ तथा हि । तरस्विनां बलवतां तरसा बलेन निर्जितेषु शत्रुषु प्रणतिरेव कीर्तये ॥ भवतीति शेषः ॥

९० ॥ राजसत्वमिति । यदा मातुरागतं मातृकं राजसत्वं रजोगुणप्रधानत्वमवधूय पितुरागतं पित्र्यं शमं गमितोऽस्मि । तदा त्वया ममापेक्षितत्वादनिन्दितमगर्हितं फलं स्वर्गहानिलक्षणं यस्य सोऽयं निग्रहोऽपकारोऽप्यनुग्रहीकृतो ननूपकारीकृतः खलु ॥

९१ ॥ साधयामीति । अहं साधयामि गच्छामि । देवकार्यमुपपादयिष्यतः संपादयिष्यतस्तेऽविघ्नमस्तु विघ्नाभावोऽस्तु ॥ "अव्ययं विभक्ति-" इत्यादिनार्थाभावेऽव्ययीभावः ॥ सह लक्ष्मणेन सलक्ष्मणः । तम् ॥ "तेन सहेति तुल्ययोगे"

---

arrow which became, to the son of Bh*r*igu, though he had done virtuous deeds, an impassable barrier to his path to heaven.

89. The descendant of Raghu also touched the feet of that repository of asceticism saying, "please excuse me." Submission itself on the part of the powerful to enemies conquered by force, is for (leads to) glory.

90. "Thou hast indeed made even my defeat bearing an irreproachable fruit a favour to me since thou having shaken off (from my nature) the condition of being influenced by the Rajogu*n*a (the principle of action and passion) inherited (by me) from my mother, hast brought me to peacefulness, the proper quality of my paternal descent "

91. "I am going ; may you have no impediment (thrown on your way) born, as you are, to effect the business of the gods ",—

तोऽपि, A. with Su., सुकृतस्य for सुकृतोऽपि. D. with Vijay., दुरन्वयः for दुरन्ययः.

89. D. H. K. with Hem., Chá., Din., and Val., अथ for अपि. R. तपस्विनां for तरस्विनां. B. D with Chá., Din.. and Su., शोभते for कीर्तये.

90. I. with Su., पैत्र्यं for पित्र्यं. C. D. I. with Val., पदं for शमं. D. यतः for यदा. D. K. °फले for °फलः. C. D. E. H. I. K. P. with Val., and Vijay., मयि for मम. C. D. E. with Chá., अनुग्रहः कृतः for अनुग्रहीकृतः.

91. A. B. C. with Val., शाधि यामि, Vallabha: "शाधि आदेशं देहि । अहं यामि." Hemádri also notices this. "शाधि यामि" इति पाठे ॥ "शास्यनुशिष्टौ" ॥ शाधि । शाभावस्यासिद्धत्वात् ॥ "हुझल्भ्यो हेर्धिः" इति हेर्धिः" ॥ D.

तस्मिन्गते विजयिनं परिरभ्य रामं स्नेहादमन्यत पिता पुनरेव जातम् ।
तस्याभवत्क्षणशुचः परितोषलाभः कक्षाग्निलङ्घिततरोरिव वृष्टिपातः ॥९२॥
अथ पथि गमयित्वा क्लृप्तरम्योपकार्ये कतिचिदवनिपालः शर्वरीः शर्वकल्पः ।
पुरमविशदयोध्यां मैथिलीदर्शनीनां कुवलयितगवाक्षां लोचनैरङ्गनानाम् ॥९३॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कविश्रीकालिदासकृतौ भार्गवविजयो नामैकादशः सर्गः ॥

इति बहुव्रीहिः ॥ लक्ष्मणाग्रजं राममिति वच ऊचिवानुक्तवान् ॥ ब्रूमः क्वसुः ॥ ऋषिस्तिरोदधेऽन्तर्दधे ॥

९२ ॥ तस्मिन्निति । तस्मिन्भार्गवे गते सति । विजयिनं रामं पिता स्नेहात्परिरभ्य पुनर्जातमेवामन्यत ॥ क्षणं शुग्यस्येति विग्रहः ॥ क्षणशुचस्तस्य दशरथस्य परितोषलाभः संतोषप्राप्तिः । कक्षाग्निना दावानलेन ॥ " कक्षः शुष्ककाननवीरुधोः" इति विश्वः ॥ लङ्घितस्याभिहतस्य तरोर्वृष्टिपात इव । अभवत् ॥

९३ ॥ अथेति । अथ । ईषदसमाप्तः शर्वः शर्वकल्पः ॥ " ईषदसमाप्तौ-" इति कल्पप्प्रत्ययः ॥ अवनिपालः क्लृप्ता रम्या नवा उपकार्या यस्मिन्स तस्मिन्पथि कतिचिच्छर्वरी रात्रीर्गमयित्वा मैथिलीदर्शनीनामङ्गनानां लोचनैः कुवलयानि येषां संजातानि कुवलयिताः ॥ " तदस्य संजातं तारकादिभ्य इतच्" इतीतच्प्रत्ययः ॥ कुवलयिता गवाक्षा यस्यास्तां पुरमयोध्यामविशत्प्रविष्टवान् ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमल्लिनाथसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायामेकादशः सर्गः ॥

---

saying these words to लक्ष्मण and to his elder brother, the sage disappeared (vanished from the sight).

92. After his departure, the father having embraced Ráma who was victorious, thought through affection that he was surely born again. To him who for a moment had to suffer grief the gain of satisfaction became like a shower of rain to a tree attacked by the wild fire

93. Then the lord of the earth who resembled S'iva, having passed some nights in the way, where beautiful new tents were pitched, entered the city of Ayodhyá where the windows (of the mansions) were full of lotuses on account (or in the form) of the eyes of the women anxious to behold the daughter of Mithilá-king.

E. H. I. J. R. with Hem., Su., Vijay., and the text only of Val., साधुयामि for साधयामि. K. R. पुनः for वचः. Between 91-92 A. B. C. and the text only of Vallabha, read the following :—" स्वं निवेश्य किल धाम राघवे वैष्णवं विदितविष्णुतेजसि । स्वस्तिदानमभिकृत्य चाक्षयं भार्गवोऽथ निजमाश्रमं ययौ " ॥

93. A. C. and the text only of Val., इति for अथ. A. D. K. R. with Chá., and Din., दर्शिनीनां for दर्शनीनां. Nine Mss. with Hem., Val., Su., and Vijay., read with Mallinátha. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Cháritravardhana and Dinakara.

। द्वादशः सर्गः ।

निर्विष्टविषयस्नेहः स दशान्तमुपेयिवान् ।
आसीदासन्ननिर्वाणः प्रदीपार्चिरिवोषसि ॥ १ ॥

तं कर्णमूलमागत्य रामे श्रीर्न्यस्यतामिति ।
कैकेयीशङ्कयेवाह पलितच्छद्मना जरा ॥ २ ॥

वन्दामहे महोद्दण्डदोर्दण्डौ रघुनन्दनौ ।
तेजोनिर्जितमार्तण्डमण्डलौ लोकनन्दनौ ॥

१ ॥ निर्विष्टेति । स्नेहयन्ति प्रीणयन्ति पुरुषमिति स्नेहाः ॥ पचाद्यच् ॥ स्निह्यन्ति पुरुषा येष्विति वा स्नेहाः ॥ अधिकरणार्थे घञ् ॥ विषयाः शब्दादयस्त एव स्नेहा निर्विष्टा भुक्ता विषयस्नेहा येन स तथोक्तः ॥ " निर्वेशो भृतिभोगयोः " इति विश्वः ॥ दशा जीवनावस्था तस्या अन्तं वार्द्धकमुपेयिवान्स दशरथः । उषसि प्रदीपार्चिरिव दीपज्वालेव । आसन्नं निर्वाणं मोक्षो यस्य स तथोक्तः । आसीत् । अर्चिःपक्षे तु विषयो देश आश्रयः । भाजनमिति यावत् ॥ " विषयः स्यादिन्द्रियार्थे देशे जनपदेऽपि च " इति विश्वः ॥ स्नेहस्तैलादिः ॥ " स्नेहस्तैलादिकरसे द्रवे स्यात्सौहृदेऽपि च " इति विश्वः ॥ दशा वर्तिका ॥ " दशा वर्ताववस्थायाम् " इति विश्वः ॥ निर्वाणं विनाशः ॥ " निर्वाणं निर्वृतौ मोक्षे विनाशे गजमज्जने " इति यादवः ॥

२ ॥ तमिति । जरा कैकेयीशङ्कयेव पलितस्य केशादिशौक्ल्यस्य छद्मना मिषेण ॥ " पलितं जरसा शौक्ल्यं केशादौ " इत्यमरः ॥ कर्णमूलं कर्णोपकण्ठमागत्य रामे श्री राज्यलक्ष्मीर्न्यस्यतां निधीयतामिति तमाह ॥ दशरथो वृद्धोऽहमिति विचार्य रामस्य यौवराज्याभिषेकं कर्तुं चकाङ्क्षेत्यर्थः ॥

---

1. He (Das'aratha) who had enjoyed all pleasures (arising from the objects) of senses (*i. e.* worldy pleasures), who had reached the declining years of life, with his absolution drawing near, was like a flame of a lamp at dawn which was about to be extinguished, with its oil consumed, and which has reached to the very end of the wick.

2. Under the pretext of grey hairs, Old Age, as it were, came close to the root of his ears and, as if, from the fear of कैकेयी whispered to him, saying " Place the Royal Fortune (insignia or sovereignty) upon Râma.

---

1. H. reads आसन्ननिर्वाणप्रदीपार्चिः for आसन्ननिर्वाणः प्रदीपार्चिः.

2. D. with Châ., and Din., कर्णजाहं for कर्णमूलं. The three Mss. of Châritravardhana's शिशुहितैषिणी have the following remark on this reading :—" कर्णमूलमिति व्याधिवाचकत्वादसभ्यः पाठः " कर्णजाहं " इति समीचीनः पाठः । 'तस्य पाकमूले पील्वादिकर्णादिभ्यः कुणब्जाहचौ' इत्यनेन जाहप्रत्ययः

सा पौरान्पौरकान्तस्य रामस्याभ्युदयश्रुतिः ।
प्रत्येकं ह्लादयांचक्रे कुल्येवोद्यानपादपान् ॥ ३ ॥
तस्याभिषेकसंभारं कल्पितं क्रूरनिश्चया ।
दूषयामास कैकयी शोकोष्णैः पार्थिवाश्रुभिः ॥ ४ ॥
सा किलाश्वासिता चण्डी भर्त्रा तत्संश्रुतौ वरौ ।
उद्ववामेन्द्रसिक्ता भूर्बिलमग्नाविवोरगौ ॥ ५ ॥

३ ॥ सेति । सा पौरकान्तस्य रामस्याभ्युदयश्रुतिरभिषेकवार्ता । कुल्या कृत्रिमा सरित् ॥ "कुल्याल्पा कृत्रिमा सरित्" इत्यमरः ॥ उद्यानपादपानिव । पौरान्प्रत्येकं ह्लादयांचक्रे ॥

४ ॥ तस्येति । क्रूरनिश्चया कैकेयी तस्य रामस्य कल्पितं संभृतमभिषेकस्य संभारमुपकरणं शोकोष्णैः पार्थिवाश्रुभिर्दूषयामास ॥ स्वैवमुख्यमूलेन राजशोकेन प्रतिबबन्धेत्यर्थः ॥

५ ॥ सेति । चण्ड्यतिकोपना ॥ "चण्डस्त्वत्यन्तकोपनः" इत्यमरः ॥ सा किल भर्त्राश्वासितानुनीता सती तेन भर्त्रा संश्रुतौ प्रतिज्ञातौ वरौ । इन्द्रेण सिक्ताभिवृष्टा भूर्बिले वल्मीकादौ मग्नावुरगाविव । उद्ववामोज्जगार ॥

---

3. That report of installation (coronation or rise) of Rama who was the darling of all the citizens, delighted every one of them, as an irrigating channel blooms (all) the trees in a garden

4. Kaikeyi of cruel resolve defiled the preparations made for his installation with the tear-drops of the king, hot on account of grief.

5. That lady of violent disposition being kindly addressed with a view to pacification by her husband, gave out (expressed of) the two boons that had been promised to her (*i. e.* demanded their fulfilment), as the ground showered upon by Indra (*i. e.* rain) throws out a pair of serpents, lurking within its holes.

---

3. A. °च्छविः for °श्रुतिः. D. H. and the text only of Val., ह्लादयामास for ह्लदयाञ्चक्रे.

4. C. K. कैकर्या दूषयामास for दूषयामास कैकयी. A. अश्रुबिन्दुभिः, D. नयनाश्रुभिः, K. बाष्पबिन्दुभिः for पार्थिवाश्रुभिः.

5. A. C. with Su., भर्त्रा चण्डी for चण्डी भर्त्रा. B. I. K. प्राक्संश्रुतौ, C. and the text only of Vijay., प्राक्संश्रितौ, R. with Hem., and Val., तत्संश्रितौ for तत्संश्रुतौ.

तयोश्चतुर्दशैकेन रामं प्राव्राजयत्समाः ।
द्वितीयेन सुतस्यैच्छद्वैधव्यैकफलां श्रियम् ॥ ६ ॥
पित्रा दत्तां रुदन्रामः प्राङ्महीं प्रत्यपद्यत ।
पश्चाद्वनाय गच्छेति तदाज्ञां मुदितोऽग्रहीत् ॥ ७ ॥
दधतो मङ्गलक्षौमे वसानस्य च वल्कले ।
ददृशुर्विस्मितास्तस्य मुखरागं समं जनाः ॥ ८ ॥
स सीतालक्ष्मणसखः सत्याद्गुरुमलोपयन् ।
विवेश दण्डकारण्यं प्रत्येकं च सतां मनः ॥ ९ ॥

६ ॥ तयोरिति । सा तयोर्वरयोर्मध्य एकेन वरेण रामं चतुर्दश समाः संवत्सरान् ॥ अत्यंतसंयोगे द्वितीया ॥ प्राव्राजयत्प्रावासयत् । द्वितीयेन सुतस्य भरतस्य वैधव्यैकफलां वैधव्यमात्रफलां श्रियमैच्छदियेष ॥ न तूपभोगफलामिति भावः ॥

७ ॥ पित्रेति । रामः प्राक्पित्रा दत्तां महीं रुदन्प्रत्यपद्यताङ्गीचकार । स्वत्यागदुःखादिति भावः । पश्चाद्वनाय गच्छेत्येवंरूपां तदाज्ञां पित्राज्ञां मुदितोऽग्रहीत् ॥ पित्राज्ञाकरणलाभादिति भावः ॥

८ ॥ दधत इति । मङ्गलक्षौमे दधतो वल्कले वसानस्याच्छादयतश्च तस्य रामस्य सममेकविधं मुखरागं मुखवर्णं जना विस्मिता ददृशुः ॥ सुखदुःखयोरविकृत इति भावः ॥

९ ॥ स इति । स रामो गुरुं पितरं सत्याद्वरदानरूपादलोपयन्नभ्रंशयन् ॥ सीतालक्ष्मणयोः सखेति विग्रहः ॥ ताभ्यां सहितः सन्दण्डकारण्यं विवेश ॥ सतां मनश्च प्रत्येकं विवेश ॥ पितृभक्त्या सर्वे सन्तः संतुष्टा इति भावः ॥

---

6. By one of these two boons she sent Râma into exile for fourteen years, and with the other she wished the Royal Fortune for her son—the Fortune the sole result of which was her own widowhood.

7. Râma at first with tears took charge of the earth offered to him by his father. But afterwards accepted his behest " Repair to the forest," with great delight.

8. The people were astonished, to observe the same tinge on his countenance at the time when he put on the two bark-garments, as was at the time when he was clad in the auspicious suit of silk (at the time of installation).

9. Not causing his father to fall (stray or deviate) from his truthfulness (*i. e.* that of conferring boons) he accompanied by

---

6. B. रामप्रव्राजनं वने for रामं प्राव्राजयत्समाः.

8. A. C. with Su., चीरे च परिगृह्णतः for वसानस्य च वल्कले. D. मुखरागसमञ्जसं for मुखरागं समं जनाः.

9. D. अलोकयन् for अलोपयन्.

राजापि तद्वियोगार्तः स्मृत्वा शापं स्वकर्मजम् ।
शरीरत्यागमात्रेण शुद्धिलाभममन्यत ॥ १० ॥

विप्रोषितकुमारं तद्राज्यमस्तमितेश्वरम् ।
रन्ध्रान्वेषणदक्षाणां द्विषामामिषतां ययौ ॥ ११ ॥

अथानाथाः प्रकृतयो मातृबन्धुनिवासिनम् ।
मौलैरानाययामासुर्भरतं स्तम्भिताश्रुभिः ॥ १२ ॥

१० ॥ राजेति । तद्वियोगार्तः पुत्रवियोगदुःखितो राजापि स्वकर्मणा मुनिपुत्रवधरूपेण जातः स्वकर्मजस्तं शापं पुत्रशोकजमरणात्मकं स्मृत्वा शरीरत्यागमात्रेण देहत्यागेनैव शुद्धिलाभं प्रायश्चित्तममन्यत ॥ मृत इत्यर्थः ॥

११ ॥ विप्रोषितेति । विप्रोषिताः कुमारा यस्मात्तत्तथोक्तमस्तमितेश्वरं मृतदशरथं तद्राज्यं रन्ध्रान्वेषणदक्षाणां द्विषामामिषतां भोग्यवस्तुतां ययौ ॥ "आमिषं भोग्यवस्तुनि" इति केशवः ॥

१२ ॥ अथेति । अथानाथाः प्रकृतयोऽमात्याः ॥ "प्रकृति सहजे योनावमात्ये परमात्मनि" इति विश्वः ॥ मातृबन्धुषु निवासिनं भरतं स्तम्भिताश्रुभिः । पितृमरणगुप्त्यर्थमिति भावः ॥ मौलैरामैः सचिवैरानाययामासुरागमयांचक्रुः ॥

Sîtâ and Lakshma*n*a entered the Da*n*d*a*ká forest and at the same time entered the hearts of every good man (endeared himself to all).

10. The king also afflicted by the grief of separation from his son, remembered the curse to him brought on by his own deeds, and considered that by death only there shall be sufficient atonement for his acts (or regarded it a cheap retribution to be allowed to solve the curse by giving up his own life).

11. That kingdom, from which the princes were banished (or absent), and the lord of which was dead, became a prey (fell a victim) to the enemies who are vigilant in seeking openings (*i. e.* vulnerable points in it).

12. Then the principal administrators who were then helpless caused Bharata who was at the time living with his mother's relatives, to be brought by means of the hereditary ministers who kept their tears in check.

---

12. A. D. °वर्ग°, E. °वंश° for °बन्धु°.

श्रुत्वा तथाविधं मृत्युं कैकेयीतनयः पितुः ।
मातुर्न केवलं स्वस्याः श्रियोऽप्यासीत्पराङ्मुखः ॥ १३ ॥

ससैन्यश्चान्वगाद्रामं दर्शितानाश्रमालयैः ।
तस्य पश्यन्ससौमित्रेरुदश्रुर्वसतिद्रुमान् ॥ १४ ॥

चित्रकूटवनस्थं च कथितस्वर्गतिर्गुरोः ।
लक्ष्म्या निमन्त्रयांचक्रे तमनुच्छिष्टसंपदा ॥ १५ ॥

१३ ॥ श्रुत्वेति । कैकेयीतनयो भरतः पितुस्तथाविधं स्वमातृमूलं मृत्युं मरणं श्रुत्वा स्वस्या मातुः केवलं मातुरेव न किं तु श्रियोऽपि पराङ्मुख आसीत् ॥

१४ ॥ ससैन्य इति । ससैन्यो राममन्वगाच्च ॥ किं कुर्वन् । आश्रमालयैर्वनवासिभिर्दर्शितानेते रामनिवासा इति कथितान्ससौमित्रेर्लक्ष्मणसहितस्य तस्य रामस्य वसतिद्रुमान्निवासवृक्षान्पश्यन्नुदश्रू रुदन् ॥

१५ ॥ चित्रेति । चित्रकूटवनस्थं तं रामं च गुरोः पितुः कथितस्वर्गतिः । कथितपितृमरणः सन्नित्यर्थः । अनुच्छिष्टाननुभूतशिष्टा संपद्गुणोत्कर्षो यस्याः सा । "संपद्गुणोत्कर्षे" इति केशवः ॥ तया लक्ष्म्या करणेन निमन्त्रयांचक्र आहूतवान् ॥

---

13. Having heard of his father's death (brought on) in that manner the son of Kaikeyi became averse (*lit.* turned his face away from) not only to his mother but also to the Royal Fortune (*i. e.* Kingdom).

14. And with an army he followed (or went in search of) Rama viewing with tears the trees beneath which he (Ráma) had lived with Lakshma*n*a and which were pointed out to him (Bharata) by the dwellers of hermitages.

15. And having acquainted him (Ráma) who was residing in the forest of the Chitrakúta, with his father's departure to heaven (death), he invited him to return (to his kingdom) on account of the Goddess of the royal fortune whose essence (youthful bloom or virginity) had not yet been enjoyed by him.

---

13. A. C. R. with Val., and Su., तस्याः for स्वस्याः.

14. C. E. I. J. K. R. with Hem., Châ., Din., Su., Vijay., and the text only of Val., कथितान् for दर्शितान्.

15. B. R. चित्राकूटाचलस्थं च. C. with Hemádri, चित्रकूटाद्रिवनस्थं, A. चित्रकूटस्थितं रामं for चित्रकूटवनस्थं च. D. with Su., स for च. A. C. D. with Vallabha, गदित for कथित. B. C. R. with Hem., Châ., and Din., पितुः for गुरोः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. D. अनुपहत for अनुच्छिष्ट.

स हि प्रथमजे तस्मिन्नकृतश्रीपरिग्रहे ।
परिवेत्तारमात्मानं मेने स्वीकरणाद्भुवः ॥ १६ ॥
तमशक्यमपाक्रष्टुं निदेशात्स्वर्गिणः पितुः ।
ययाचे पादुके पश्चात्कर्तुं राज्याधिदेवते ॥ १७ ॥
स विसृष्टस्तथेत्युक्त्वा भ्रात्रा नैवाविशत्पुरीम् ।
नन्दिग्रामगतस्तस्य राज्यं न्यासमिवाभुनक् ॥ १८ ॥

१६ ॥ स इति । स हि भरतः प्रथमजेऽग्रजे तस्मिन्रामेऽकृतश्रीपरिग्रहे सति स्वयं भुवः स्वीकरणादात्मानं परिवेत्तारं मेने ॥ "परिवेत्तानुजोऽनूढे ज्येष्ठे दारपरिग्रहात्" इत्यमरः ॥ भूपरिग्रहोऽपि दारपरिग्रहसम इति भावः ॥

१७ ॥ तमिति । स्वर्गिणः पितुर्निदेशादपाकर्तुं निवर्तयितुमशक्यं तं रामं पश्चाद्राज्याधिदेवते स्वामिन्यौ कर्तुं पादुके ययाचे ॥

१८ ॥ स इति । स भरतो भ्रात्रा रामेण तथेत्युक्त्वा विसृष्टः सन् । पुरीमयोध्यां नाविशदेव । किं तु नन्दिग्रामगतस्तस्य रामस्य राज्यं न्यासं निक्षेपमिवाभुनगपालयत् । न तूपभुक्तवानित्यर्थः ॥ अन्यथा "भुजोऽनवने" इत्यात्मनेपदप्रसङ्गात् ॥ भुजेर्लङ् ॥

---

16. For, he would consider himself, he thought, to be a परिवेत्ता (one who commits the sin of marrying before his elder brother's choosing a wife) by his accepting the earth (*i. e.* kingdom) when his elder brother had not accepted (*lit.* made the acceptance of) the Royal Fortune.

17. Afterwards he asked of Ráma who could not be made to swerve from the command of his father who had gone to heaven for a pair of his wooden slippers in order to make it the presiding deity of the kingdom during his absence (*lit.* after him).

18. Being dismissed by his brother with the words "so be it," he did not at all enter the city of अयोध्या, but living at Nandigráma, he protected the kingdom, as if it were a deposit of his brother (lodged with him.)

---

17. A. C. with Vijay., आदेशात, B. D. J. with Hem., Val., Su., and the text only of Vijay., निर्देशात for निदेशात्. One of the three Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with Hemádri and others.

18. A. C. D. with Hem., Chá., Din., and Su., नन्दिग्रामं गतस्तस्य for नन्दिग्रामगतस्तस्य.

दृढभक्तिरिति ज्येष्ठे राज्यतृष्णापराङ्मुखः ।
मातुः पापस्य शुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमिवाकरोत् ॥ १९ ॥
रामोऽपि सह वैदेह्या वने वन्येन वर्तयन् ।
चचार सानुजः शान्तो वृद्धेक्ष्वाकुव्रतं युवा ॥ २० ॥
प्रभावस्तम्भितच्छायमाश्रितः स वनस्पतिम् ।
कदाचिदङ्के सीतायाः शिश्ये किंचिदिव श्रमात् ॥ २१ ॥

१९ ॥ दृढेति । ज्येष्ठे दृढभक्ती राज्यतृष्णापराङ्मुखोभरत इति पूर्वोक्तानुष्ठानेन मातुः पापस्य शुध्यर्थं प्रायश्चित्तं तदपनोदकं कर्माकरोदिव । इत्युत्प्रेक्षा ॥ दृढभक्तिरित्यत्र दृढशब्दस्य "स्त्रियाः पुंवत् " इत्यादिना पुंवद्भावो दुर्घटः ॥ "अप्रियादिषु" इति निषेधात् ॥ भक्तिशब्दस्य प्रियादिषु पाठात् ॥ अतो दृढं भक्तिरस्येति नपुंसकपूर्वपदो बहुव्रीहिरिति गणव्याख्याने दृढभक्तिरित्येवमादिषु पूर्वपदस्य नपुंसकत्वस्य विवक्षितत्वात्सिद्धमिति समाधेयम्॥ वृत्तिकारश्च-दीर्घनिवृत्ति मात्रपरो दृढभक्तिशब्दो लिङ्गविशेषस्यानुपकारत्वात्स्त्रीत्वमविवक्षितमेव ॥ तस्मादस्त्रीलिङ्गत्वाद्दृढभक्तिशब्दस्यायं प्रयोग इत्यभिप्रायः ॥ न्यासकारोऽप्येवम् ॥ भोजराजस्तु——कर्मसाधनस्यैव भक्तिशब्दस्य प्रियादिपाठाद्भवानीभक्तिरित्यादौ कर्मसाधनत्वात्पुंवद्भावप्रतिषेधः। दृढभक्तिरित्यादौ तु भावसाधनत्वात्पुंवद्भावसिद्धिः पूर्वपदस्येत्याह ॥

२० ॥ राम इति । सानुजः शान्तो रामोऽपि वैदेह्या सह वने वन्येन वनभवेन कन्दमूलादिना वर्तयन्वृत्तिं कुर्वञ्जीवन् । वृद्धेक्ष्वाकूणां व्रतं वनवासात्मकं युवा यौवनस्थ एव चचार ॥

२१ ॥ प्रभावेति । स रामः कदाचित्प्रभावेण स्वमहिम्ना स्तम्भिता स्थिरीकृता छाया यस्य तं वनस्पतिमाश्रितः सन् । किंचिदीषच्छ्रमादिव सीताया अङ्के शिश्ये सुष्वाप ॥

---

19. Firm in devotion to his elder brother and averse to the desire for (*lit.* thirst for) the kingdom, he made an expiation in this manner for the purification of the sin (or crime) committed by his mother.

20. Ráma also who was an abode of peace subsisting with his brother and the princess of the Videhas on the wild produce of the forest, observed, though he was young, the vow that had been practised by the descendants of Ikshváku in their old age.

21. He every now and then fell asleep from some slight fatigue on Sitá's lap, resting under a tree whose shadow was motionless through his divine power.

---

19. B. E. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., भरतः for शुद्ध्यर्थम्.

20. D. वृत्ति for वनं. R. चकार for चचार.

ऐन्द्रिः किल नखैस्तस्या विददार स्तनौ द्विजः ।
प्रियोपभोगचिह्नेषु पौरोभाग्यमिवाचरन् ॥ २२ ॥
तस्मिन्नास्थदिषीकास्त्रं रामो रामावबोधितः ।
भ्रान्तश्च मुमुचे तस्मादेकनेत्रव्ययेन सः ॥ २३ ॥
रामस्त्वासन्नदेशत्वाद्भरतागमनं पुनः ।
आशङ्क्योत्सुकसारङ्गां चित्रकूटस्थलीं जहौ ॥ २४ ॥

२२ ॥ ऐन्द्रिरिति । ऐन्द्रिरिन्द्रस्य पुत्रो द्विजः पक्षी काकस्तस्याः सीतायाः स्तनौ । प्रियस्य रामस्योपभोगचिह्नेषु । तत्कृतनखक्षतेष्वित्यर्थः ॥ पुरोभागिनो दोषैकदर्शिनः कर्म पौरोभाग्यम् ॥ "दोषैकदृक्पुरोभागी" इत्यमरः ॥ दुःश्लिष्टदोषघातमाचरन्कुर्वन्निव । नखैर्विददार विलिलेख ॥ किलेत्यैतिह्ये ॥

२३ ॥ तस्मिन्निति । रामया सीतयावबोधितो रामस्तस्मिन्काक इषीकास्त्रं काशास्त्रम् ॥ "इषीका काशमुच्यते" इति हलायुधः ॥ आस्थदस्यति स्म ॥ "असु क्षेपणे" इति धातोर्लुङ् ॥ "अस्यतिवक्तिख्यातिभ्योऽङ्" इत्यङ्प्रत्ययः ॥ "अस्यतेस्थुक्" इति थुगागमः ॥ स काकश्च भ्रान्तः सन्नेकनेत्रस्य व्ययेन दानेन तस्मादस्त्रादात्मानं मुमुचे मुक्तवान् ॥ मुचेः कर्तरि लिट् ॥ "धेनुं मुमोच" इतिवत्प्रयोगः ॥

२४ ॥ राम इति । रामस्त्वासन्नदेशत्वाद्धेतोः पुनर्भरतागमनमाशङ्क्योत्सुकसारङ्गामुत्कण्ठितहरिणां चित्रकूटस्थलीं जहौ तत्याज ॥ आसन्नश्चासौ देशश्चेति विग्रहः ॥

---

22. A crow, the son of Indra, it is said, tore with his nails her breasts exhibiting, as it were, his fault-finding with regard to the marks of enjoyment made by her husband.

23. Râma at once awakened by his beloved darted a reed missile at the bird, which careering round and round protected itself from it by parting with one of its eyes (allowed one eye to be destroyed for saving its life).

24. Râma left the region of the Chitrakûta mountain, where the deer looked anxious for him, and where on account of the proximity to the country, he feared lest Bharata might come again.

---

22. A. D. आचरत् for आचरन्. Between 22-23. D. E. I. R. with Su., and the texts only of Val., and Vijay., read,—"मृगमांसं ततः सीतां रक्षन्तीमातपे धृतं । पक्षतुण्डनखाघातैर्बबाधे वायसो बलात् " ॥ Hemádri also notices this. [E. I. R. with Hem., Su., शठः, Vijay.'s text शिवः for धृतं.] I. considers this to be a spurious stanza.

23. R. इषीकास्त्र for इषीकास्त्रं. A. H. J. with Su., आत्मानं, D. with Châ., and Din., भ्रान्तः सः, D_2. K. भ्रान्तस्तु, C. R. with Hem., Val., and Vijay., भ्रान्तः सन्, A_2. भीतः सन् for भ्रान्तश्च. D. with Châ., and Din., च for सः.

24. K. उत्सुकसारङ्गो for उत्सुकसारङ्गां.

प्रययावातिथेयेषु वसन्नृषिकुलेषु सः ।
दक्षिणां दिशमृक्षेषु वार्षिकेष्विव भास्करः ॥ २५ ॥
बभौ तमनुगच्छन्ती विदेहाधिपतेः सुता ।
प्रतिषिद्धापि कैकेय्या लक्ष्मीरिव गुणोन्मुखी ॥ २६ ॥
अनुसूयातिसृष्टेन पुण्यगन्धेन काननम् ।
सा चकाराङ्गरागेण पुष्पोच्चलितषट्पदम् ॥ २७ ॥
संध्याभ्रकपिशस्तस्य विराधो नाम राक्षसः ।
अतिष्ठन्मार्गमावृत्य रामस्येन्दोरिव ग्रहः ॥ २८ ॥

२५ ॥ प्रययाविति । स रामः । अतिथिषु साधून्यातिथेयानि ॥ " पथ्यतिथिवसतिस्वपतेर्ढञ् " इति ढञ्प्रत्ययः ॥ तेष्वृषिकुलेष्वृष्याश्रमेषु ॥ " कुलं कुल्ये गणे देहे गेहे जनपदेऽन्वये " इति हैमः ॥ वर्षासु भवानि वार्षिकाणि ॥ " वर्षाभ्यष्ठक् " इति ठक्प्रत्ययः ॥ तेष्वृक्षेषु नक्षत्रेषु राशिषु वा भास्कर इव वसन्दक्षिणां दिशं प्रययौ ॥

२६ ॥ बभाविति । तं राममनुगच्छन्ती विदेहाधिपतेः सुता सीता कैकेय्या प्रतिषिद्धा निवारितापि गुणोन्मुखी गुणोत्सुका लक्ष्मी राजलक्ष्मीरिव बभौ ॥

२७ ॥ अनुसूयेति । सा सीतानुसूययात्रिभार्ययातिसृष्टेन दत्तेन पुण्यगन्धेनाङ्गरागेण काननं वनं पुष्पेभ्य उच्चलिता निर्गताः षट्पदा यस्मिंस्तत्तथाभूतं चकार ॥

२८ ॥ सन्ध्येति । संध्याभ्रकपिशो विराधो नाम राक्षसः । ग्रहो राहुरिन्दोरिव तस्य रामस्य मार्गमावृत्यावरुध्यातिष्ठत् ॥

---

25. Halting at the hermitages of hospitable sages he proceeded towards the southern quarter, as the sun after residing in the autumnal lunar mansions (*i. e.* the ten asterisms) goes down to the south.

26. The daughter of the lord of the Videhas going behind him, appeared like Royal Fortune who is fond of good qualities following him, though prevented by Kaikeyî (denied to him by).

27. She made the forest so, with the cosmetics of sanctifying fragrance given to her by अनुसूया, that the black bees abandoned the flowers.

28. A demon by name Virâdha tawny in colour like that of

---

25. H. पक्षेषु for ऋक्षेषु.

26. D. कैकय्या for कैकेय्या. A. C. with Chà., and Din., श्रीरिव सन्मुखी गुणान् for लक्ष्मीरिव गुणोन्मुखी. The former, " रामगुणान्सन्मुखी श्रीरिव. "

27. B. C. E. I. with Su., अनसूया for अनुसूया. We with five commentators and ten Mss. B. R. with Su., °विसृष्टेन for अतिसृष्टेन. B. C. I. K. R. with Vallabha, पुष्पोज्झलित°, D. with Vijay., and the text only of Val., पुष्पोल्लसित° for पुष्पोच्चलित°.

28. B. C. I. K. with Vijay., कपिलः for कपिशः. B. H. I. with

स जहार तयोर्मध्ये मैथिलीं लोकशोषणः ।
नभोनभस्ययोर्वृष्टिमवग्रह इवान्तरे ॥ २९ ॥
तं विनिष्पिष्य काकुत्स्थौ पुरा दूषयति स्थलीम् ।
गन्धेनाशुचिना चेति वसुधायां निचख्नतुः ॥ ३० ॥
पञ्चवट्यां ततो रामः शासनात्कुम्भजन्मनः ।
अनपोढस्थितिस्तस्थौ विन्ध्याद्रिः प्रकृताविव ॥ ३१ ॥

२९ ॥ स इति । लोकस्य शोषणः शोषकः स राक्षसस्तयो रामलक्ष्मणयोर्मध्ये मैथिलीम् । नभोनभस्ययोः श्रावणभाद्रपदयोरन्तरे मध्ये वृष्टिमवग्रहो वर्षप्रतिबन्ध इव । जहार ॥ " वृष्टिर्वर्षं तद्विघातेऽवग्राहावग्रहौ समौ " इत्यमरः ॥

३० ॥ तमिति । ककुत्स्थस्य गोत्रापत्ये पुमांसौ काकुत्स्थौ रामलक्ष्मणौ तं विराधं विनिष्पिष्य हत्वा । अशुचिनापवित्रेण गन्धेन स्थलीमाश्रमभुवं पुरा दूषयति दूषयिष्यतीति हेतोः ॥ " यावत्पुरानिपातयोर्लट् " इति भविष्यदर्थे लट् ॥ वसुधायां निचख्नतुः खनित्वा भुवि निक्षिप्तवन्तौ च ॥

३१ ॥ पञ्चवट्यामिति । ततो रामः कुम्भजन्मनोऽगस्त्यस्य शासनात् ॥ पञ्चानां वटानां समाहारः पञ्चवटी ॥ " तद्धितार्थ–" इति तत्पुरुषः ॥ " संख्यापूर्वो द्विगुः "

---

the evening clouds stood obstructing the way of Ráma, likeRáhu obstructing the path of the Moon.

29. He, the destroyer of the people, took off Maithilí from between them, as draught destroys (takes off) rain between the months of S'râva*n*a and Bhádrapada.

30. The two descendents of Kakutstha crushed him to death but fearing lest the unholy smell of his body should contaminate (infect) the locality interred him under the ground.

31. Then Ráma dwelt in Panchava*t*í by the advice (or order) of the Pitcher-born sage (Agastya), without transcending the

---

Hem., Chá., Din., and Val., तत्र for तस्य. One of the three Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with Mallinátha. C. J. K. R. with Chá., Din., Su., and Vijay., विरोधं for विराधं. One of the three Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with Mallinátha.

29. H. and the text only of Vijay., संजहार for स जहार. D. K. with Vallabha, मध्यात् for मध्ये. I. R. इवाम्बरे for इवान्तरे.

30. K. विनिःपिष्य for विनिष्पिष्य. D. with Su., पुरीं for पुरा. R. पूरयति for दूषयति.

31. B. H. K. with Val., and Su., अथो for ततः. The former, " अथोऽनन्तरम्. " K. कुम्भशासनः for कुम्भजन्मनः. B. R. with Val., and Vijay., वन्ध्याद्रिः for विन्ध्याद्रिः.

रावणावरजा तत्र राघवं मदनातुरा ।
अभिपेदे निदाघार्ता व्यालीव मलयद्रुमम् ॥ ३२ ॥
सा सीतासंनिधावेव तं वव्रे कथितान्वया ।
अत्यारूढो हि नारीणामकालज्ञो मनोभवः ॥ ३३ ॥
कलत्रवानहं बाले कनीयांसं भजस्व मे ।
इति रामो वृषस्यन्तीं वृषस्कन्धः शशास ताम् ॥ ३४ ॥

इति द्विगुसंज्ञायां " द्विगोः " इति ङीप् ॥ " द्विगुरेकवचनम् " इत्येकवचनम् ॥ तस्यां पञ्चवट्याम् । विन्ध्याद्रिः प्रकृतौ वृद्धेः पूर्वावस्थायामिव । अनपोढस्थितिरनतिक्रान्तमर्यादस्तस्थौ ॥

३२ ॥ रावणावरजेति । तत्र पञ्चवट्यां मदनातुरा रावणावरजा शूर्पणखा ॥ " पूर्वपदात्संज्ञायामगः " इति णत्वम् ॥ राघवम् । निदाघार्ता घर्मतप्ता व्याकुला व्याली भुजंगी मलयद्रुमं चन्दनद्रुममिव । अभिपेदे प्राप ॥

३३ ॥ सेति । सा शूर्पणखा सीतासंनिधावेव कथितान्वया कथितस्ववंशा सती तं रामं वव्रे वृतवती ॥ तथा हि । अत्यारूढोऽतिप्रवृद्धो नारीणां मनोभवः कामः कालज्ञोऽवसरज्ञो न भवतीत्यकालज्ञो हि ॥

३४ ॥ कलत्रवानिति । वृषः पुमान ॥ " वृषः स्याद्वासवे धर्मे सौरभेये च शुक्रले । पुंराशिभेदयोः शृङ्ग्यां मूषकश्रेष्ठयोरपि " इति विश्वः ॥ वृषं पुरुषमात्मार्थमिच्छतीति वृषस्यन्ती कामुकी ॥ " वृषस्यन्ती च कामुकी " इत्यमरः ॥ " सुप आत्मनः क्यच् " इति क्यच्प्रत्ययः ॥ " अश्वक्षीरवृषलवणानामात्मप्रीतौ क्यचि " इत्यसुगागमः ॥ ततो लटः शत्रादेशः ॥ " उगितश्च " इति ङीप् ॥ अक्षरार्थस्तु— वृषस्कन्धो रामो वृषस्यन्तीं तां राक्षसीं हे बाले अहं कलत्रवान्मे कनीयांसं कनिष्ठं भजस्वेति शशासाज्ञापितवान् ॥

---

limits of virtue, as the mountain Vindhya acting up to the command of the sage remained in his normal condition.

32. There the younger sister of Rávaṇa being smitten with love came up to the descendant of Raghu, as a female snake when oppressed by heat goes to a sandle tree.

33. She declaring her lineage made advances of love to (*lit.* wooed) Ráma even in the very presence of Sitá ; for the lust of women when grown to excess does not take account of proper times for expressing their love.

34. " I have got a wife, young girl, do thou (therefore) choose my younger brother: " thus Ráma whose shoulders were as

---

32. D. H. K. and the texts only of Val., and Vijay., प्रतिपेदे for अभिपेदे.

33. I. इत्यारूढः, R. अथारूढः for अत्यारूढः.

34. B. and the text only of Vijay., यवीयांसं, A. D. and Su.,

ज्येष्ठाभिगमनात्पूर्वं तेनाप्यनभिनन्दिता ।
साभूद्रामाश्रया भूयो नदीवोभयकूलभाक् ॥ ३५ ॥
संरम्भं मैथिलीहासः क्षणसौम्यां निनाय ताम् ।
निवातस्तिमितां वेलां चन्द्रोदय इवोदधेः ॥ ३६ ॥
फलमस्योपहासस्य सद्यः प्राप्स्यसि पश्य माम् ।
मृग्याः परिभवो व्याघ्र्यामित्यवेहि त्वया कृतम् ॥ ३७ ॥

३५ ॥ ज्येष्ठेति । पूर्वं ज्येष्ठाभिगमनात्तेन लक्ष्मणेनाप्यनभिनन्दिता नाङ्गीकृता भूयो रामाश्रया सा राक्षसी । उभे कूले भजतीत्युभयकूलभाक् । नदीवाभूत् ॥ सा हि यातायाताभ्यां पर्यायेण कूलद्वयगामिनी नदीसदृश्यभूदित्यर्थः ॥

३६ ॥ संरम्भमिति । मैथिलीहासः क्षणं सौम्यां सौम्याकारां तां राक्षसीम् । निवातेन स्तिमितां निश्चलामुदधेर्वेलामम्बुविकृतिम् । अम्बुपूरमित्यर्थः ॥ "अब्ध्यम्बुविकृतौ वेला" इत्यमरः ॥ चन्द्रोदय इव । संरम्भं संक्षोभं निनाय ॥

३७ ॥ फलमिति । श्लोकद्वयेनान्वयः । अस्योपहासस्य फलं सद्यः संप्रत्येव प्राप्स्यसि । मां पश्य । त्वया । कर्त्र्या । कृतमुपहासरूपं करणं । व्याघ्र्यां विषये मृग्याः । कर्त्र्याः । परिभव इत्यवेहि ॥

---

developed as those of a bull, commanded that voluptuous woman (lustful girl).

35. Not being accepted by him even, on account of her having sought the love of his elder brother at first, she again went to Râma, like the current of a river touching (in turns) both of its banks.

36. The loud laughter of the Mithila-princess enraged her (or precipitated her into wild rage) who had assumed for a time a gentle appearance, as the rising of the moon ruffles the surface (*lit.* the waves) of the ocean, steady (or calm) on account of there being no gale.

37. Look here, ere long you shall get the fruit of this ridicule to me. Know that this act of yours is like an insult offered by a doe to a tigress.

लघीयांसं for कनीयांसं. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with B.

35. B. with Châ., and Din., न तेनाप्यभिनन्दिता for तेनाप्यनभिनन्दिता.

36. A. D. क्षणं सौम्यां for क्षणसौम्यां.

37. B. C. E. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., मृगी° for मृग्याः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. Châritravardhana also notices the reading of Hemâdri and others and remarks,—" अथ वा । व्याघ्र्यां मृगीपरिभवस्त्वया मृत्यवे कृतः

इत्युक्त्वा मैथिलीं भर्तुरङ्कं निर्विशतीं भयात् ।
रूपं शूर्पणखा नाम्नः सदृशं प्रत्यपद्यत ॥ ३८ ॥
लक्ष्मणः प्रथमं श्रुत्वा कोकिलामञ्जुभाषिणीम् ।
शिवाघोरस्वनां पश्चाद्बुबुधे विकृतेति ताम् ॥ ३९ ॥

३८ ॥ इतीति । भयाद्भर्तुरङ्कं निर्विशतीमालिङ्गन्तीं मैथिलीमित्युक्त्वा शूर्पणखा नाम्नः सदृशम् । शूर्पाकारनखयुक्तमित्यर्थः ॥ रूपमाकारं प्रत्यपद्यत स्वीचकार ॥ अदर्शयदित्यर्थः ॥

३९ ॥ लक्ष्मण इति । लक्ष्मणः प्रथमं कोकिलावन्मञ्जुभाषिणीं पश्चाच्छिवावद्घोरस्वनां तां शूर्पणखां श्रुत्वा । तस्याः स्वनं श्रुत्वेत्यर्थः ॥ सुस्वनः शङ्खः श्रूयत इति वत्प्रयोगः ॥ विकृता मायाविनीति बुबुधे बुद्धवान् ॥ कर्तरि लिट् ॥

---

38. So saying to the Maithila-princess who in terror sought refuge in the lap of her husband, S'ûrpa*n*akhâ resumed her (natural) form that was true to her epithet (assumed the form that would agree with her name शूर्पणखा).

39. लक्ष्मण, first hearing her speech, as sweet as that of a cuckoo, and afterwards terribly howling like a jackal, knew her to be a deceitful spirit.

इत्युक्तेति अग्रिमेण श्लोकेन सम्बन्धः " ॥ B. C. E. H. I. K. R. with Châ., Val., Su., and Vijay., मृत्यवे हि for इत्यवेहि. Dinakara also notices the reading. B. C. E. I. K. R. with Châ., Val., Su., and Vijay., कृतः for कृतं. Hemâdri and Dinakara notice the reading. A. reads " मृगापरिभवो व्याघ्रचामवेहीति कृतं त्वया " for the latter half. Hemâdri also notices this reading.

38. A. अंक निर्विशतीं, A_2. R. with Val., अंकं निविशतीं, K. with Hemâdri अंकं प्रविशतीं, B. with Châ., and Din., अंगानि विशतीं, D. प्राप निर्विशतीं, Hemâdri also notices the reading, D_2. J. with Vijay., अंके निर्विशतीं for अंकं निर्विशतीं. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. We with Sumativijaya and five other Mss. C. D. H. R. with Hem., नाम्ना, J. नाम्नी, E. नाम for नाम्नः.

39. R. with Hemâdri, कोकिलां for कोकिला°. A. B. D. E. I. J. with Hem., Châ., Din., Val., and Su., °वादिनीं for °भाषिणीं. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. I. शिवां for शिवा°. A. D. E. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., °स्वरां for °स्वनां.

पर्णशालामथ क्षिप्रं विवृतासिः प्रविश्य सः ।
वैरूप्यपौनरुक्त्येन भीषणां तामयोजयत् ॥ ४० ॥
सा वक्रनखधारिण्या वेणुकर्कशपर्वया ।
अङ्कुशाकारयाङ्गुल्या तावतर्जयदम्बरे ॥ ४१ ॥
प्राप्य चाशु जनस्थानं खरादिभ्यस्तथाविधम् ।
रामोपक्रममाचख्यौ रक्षःपरिभवं नवम् ॥ ४२ ॥

४० ॥ पर्णशालामिति । अथ स लक्ष्मणो विवृतासिः कोशोद्धृतखड्गः सन्क्षिप्रं पर्णशालां प्रविश्य । भीषयतीति भीषणाम् ॥ नन्द्यादित्वाल्ल्युट् कर्तरि ॥ तां राक्षसीं वैरूप्यस्य पौनरुक्त्यं द्वैगुण्यलक्षणं । तेनायोजयद्योजितवान् । स्वभावत एव विकृतां तां कर्णादिच्छेदेन पुनरतिविकृतामकरोदित्यर्थः ॥

४१ ॥ सेति । सा वक्रनखं धारयतीति वक्रनखधारिणी । तया वेणुवत्कर्कशपर्वया । अत एवाङ्कुशस्याकार इवाकारो यस्याः सा तया । अङ्गुल्या तौ राघवावम्बरे व्योम्नि स्थिता ॥ "अम्बरं व्योम्नि वाससि" इत्यमरः ॥ अतर्जयदभर्त्सयत् ॥ "तर्ज भर्त्स तर्जने" इति तर्जभर्त्स्योश्चौरादिकयोरनुदात्तेत्त्वेऽपि चक्षिङो ङित्करणेनानुदात्तेत्त्वनिमित्तस्यात्मनेपदस्यानित्यत्वज्ञापनात्परस्मैपदमित्यूह्यम् ॥ इदमेवाभिप्रेत्योक्तं भट्टमल्लेनाख्यातचन्द्रिकायाम् ॥ तर्जयते भर्त्सयते ॥ तर्जयतीत्यपि च दृश्यते कविभिरिति ॥

४२ ॥ प्राप्येति । साशु जनस्थानं प्राप्य खरादिभ्यो राक्षसेभ्यस्तथाविधं स्वाङ्गच्छेदात्मकम् । उपक्रम्यत इत्युपक्रमः ॥ कर्मणि घञ्प्रत्ययः ॥ रामस्य कर्तुरुपक्रमः ।

40. Then he, with a drawn sword (in hand) immediately entered the leaf-hut and attached to her terrible form a repetition (or superfluity) of hideousness (*i. e.* made her more ugly than before).

41. Going up and making her footing in the air she threatened them (two) with her finger which bore curved nails, and whose joints (knots) were as tough and hard as those of a bamboo, and which therefore looked like ((*lit.* had the form of) a goad (or hook) of an elephant-driver.

42. And soon reaching Janasthána she informed Khara and

40. K. अथो for अथ. A. H. J. विकृष्टासिः. D. R. with Hem., Val., and Su., विधृतासि for विवृतासिः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha. B. C. E. I. K. with Val., and the text only of Vijay., वैरूप्यपुनरुक्तेन, D. R. with Su., वैरूप्ये पुनरुक्तेन for वैरूप्यपौनरुक्त्येन. Hemádri notices this reading and says,—"वैरूप्यपुनरुक्तेन" इति पाठे कर्मधारयः ".

41. R. with Val., चक्रनख for वक्रनख. A. C. with Su., अम्बरगत for अम्बरे.

42. C. D. E. K. R. with Chá., Din., Val., and Su., तथाविधा,

मुखावयवलूनां तां नैर्ऋता यत्पुरो दधुः ।
रामाभियायिनां तेषां तदेवाभूदमङ्गलम् ॥ ४३ ॥
उदायुधानापततस्तान्दृप्तान्प्रेक्ष्य राघवः ।
निदधे विजयाशंसां चापे सीतां च लक्ष्मणे ॥ ४४ ॥
एको दाशरथिः कामं यातुधानाः सहस्रशः ।
ते तु यावन्त एवाजौ तावांश्च ददृशे स तैः ॥ ४५ ॥

रामोपक्रमम् । रामेणादावुपक्रान्तमित्यर्थः ॥ " उपज्ञोपक्रमं तदाद्याचिख्यासायाम् " इति क्लीबत्वम् ॥ तन्नवं रक्षसां कर्मभूतानां परिभवमाचख्यौ च ॥

४३ ॥ मुखेति । नैर्ऋता राक्षसाः ॥ " नैर्ऋतो यातुरक्षसी " इत्यमरः ॥ मुखावयवेषु कर्णादिषु लूनां छिन्नां तां पुरो दधुरग्रे चक्रुरिति यत्तदेव रामाभियायिनां राममभिद्रवतां तेषाममङ्गलमभूत् ॥

४४ ॥ उदिति । उदायुधानुद्यतायुधानापतत आगच्छतो दृप्तांस्तान्खरादीन्प्रेक्ष्य राघवश्चापे विजयस्याशंसामाशां लक्ष्मणे सीतां च निदधे ॥ सीतारक्षणे लक्ष्मणं नियुज्य स्वयं युद्धाय संनद्ध इति भावः ॥

४५ ॥ एक इति । दाशरथी राम एकोऽद्वितीयः । यातुधानाः कामं सहस्रशः । सन्तीति शेषः । तैर्यातुधानैस्तु स राम आजौ ते यातुधाना यावन्तो यावत्संख्याका एव तावांस्तावत्संख्याकश्च ददृशे ॥

---

others of the insult of that sort (given) to her which was a new (unprecedented) discomfiture of the Rákshasas instituted by Ráma.

43. That the demons posted her in the van who was mutilated in the portions of her face (nose and ears) was by itself an ill-omen to them as they started against Ráma (leading an expedition against, &c.).

44. The descendant of Raghu seeing these haughty Ràkshasas making a rush on him with weapons ready to be flung, placed his hope of victory on his bow and सीता to the care of लक्ष्मण.

45. Granted that the son of Das'aratha was all alone and the Ràkshasas were (counted) by thousands, nevertheless they saw

---

Vijay's text तथाभिधं for तथाविधं. A. C. with Vallabha, रक्षःपरिभवागमम् for रक्षःपरिभवं नवं. Vallabha : " किंभूतं रामोपक्रमं रक्षःपरिभवागमं राक्षसाभिभवारंभम्. "

43. C. D. with Chàritravardhana, मुखेऽवयवलूनां for मुखावयवलूनां. Cháritravardhana : " लूनाश्छिन्ना अवयवा नासादयो यस्याः सा तां राक्षसीं मुखे प्रथमतो यत्पुरो दधुः " &c. A. and the text only of Val., रामाभिगामिनां for रामाभियायिनां. D. K. आसीत् for अभूत्.

44. A. C. with Hemâdri, वीक्ष्य for प्रेक्ष्य.

45. D. रामः for कामं. B. with Hemàdri, आसंस्तावद्धा, C. D. E. I. J. K. R. with Chà., Din., Val., Su., and Vijay., आजौ तावद्धा for

असज्जनेन काकुत्स्थः प्रयुक्तमथ दूषणम् ।
न चक्षमे शुभाचारः स दूषणमिवात्मनः ॥ ४६ ॥
तं शरैः प्रतिजग्राह खरत्रिशिरसौ च सः ।
क्रमशस्ते पुनस्तस्य चापात्सममिवोद्ययुः ॥ ४७ ॥
तैस्त्रयाणां शितैर्बाणैर्यथापूर्वविशुद्धिभिः ।
आयुर्देहातिगैः पीतं रुधिरं तु पतत्रिभिः ॥ ४८ ॥

४६ ॥ असदिति । अथ शुभाचारो रणे साधुचारी सद्वृत्तश्च स काकुत्स्थोऽसज्जनेन दुर्जनेन रक्षोजनेन च प्रयुक्तं प्रेषितमुच्चारितं च दूषणं दूषणाख्यं राक्षसमात्मनो दूषणं दोषमिव न चक्षमे न सेहे । प्रतिकर्तुं प्रवृत्त इत्यर्थः ॥

४७ ॥ तमिति । स रामस्तं दूषणं खरत्रिशिरसौ च शरैः क्रमशः प्रतिजग्राह । प्रतिजहारेत्यर्थः । ते शराः पुनस्तस्य चापात्समं युगपदिवोद्ययुः । अतिलघुहस्त इति भावः ॥

४८ ॥ तैरिति । देहमतीत्य भित्त्वा गच्छन्तीति देहातिगाः । तैर्यथास्थिता पूर्वविशुद्धिर्येषां तैः । अतिवेगत्वेन देहभेदात्प्रागिव रुधिरलेपरहितैरित्यर्थः । शीतैस्तीक्ष्णैस्तैर्बाणैस्त्रयाणां खरादीनामायुः पीतं रुधिरं तु पतत्रिभिः पीतम् ॥

---

him in the battle to be just as numerous as they themselves were.

46. Then the descendant of Kakutstha who fought righteously (in obedience to the code of honour) did not excuse the demon Dúsha*n*a who was urged (sent) to fight by the wicked demons, as he being of a fair conduct would not tolerate any censure against himself uttered by the wicked people.

47. He assailed him as well as the demons Khara and Tris'iras with his arrows, which though discharged from his bow in succession, appeared to be flung as it were at one and the same moment.

48. The sharp-pointed arrows that pierced through the bodies

आजौ तावांश्च. Hemádri : "तावद्धा तावत्प्रकारः ॥ ' संख्याया विधार्थे धा ' ॥ ' अधिकरणविचाले च ' इति वा ॥ अधिकरणं द्रव्यं । विचालः संख्यान्तरापादनं । एकस्यानेकीकरणं । एकं राशिं पञ्चधा कुरु इति वामनः काशिकावृत्तिः " ॥ Cháritravardhana : " तावद्धा तावत्संख्याकों दृष्टः ॥ इति ' संख्याया विधार्थे धा ' ॥ Vallabha " तावद्धा तावन्मात्र एव ददृशे " ॥ H. आ for च.

46. D. अपि for अथ. D. with Su., सदाचारः for शुभाचारः. A. D. H. K. R. सदूषणं, Hemádri also notices this, B. E. असद्दूषणं for स दूषणं. B. D. आत्मनि for आत्मनः.

47. R. तौ for तम्.

48. D. I. and the text only of Val., शतैः for शितैः. C. D. R. with Hem., Chá., and Din., यथापूर्वं for यथापूर्व. I. R. च for तु.

तस्मिन्रामशरोत्कृत्ते बले महति रक्षसाम् ।
उत्थितं ददृशेऽन्यच्च कबन्धेभ्यो न किंचन ॥ ४९ ॥
सा बाणवर्षिणं रामं योधयित्वा सुरद्विषाम् ।
अप्रबोधाय सुष्वाप गृध्रच्छाये वरूथिनी ॥ ५० ॥
राघवास्त्रविदीर्णानां रावणं प्रति रक्षसाम् ।
तेषां शूर्पणखैवैका दुष्प्रवृत्तिहराभवत् ॥ ५१ ॥

४९ ॥ तस्मिन्निति । तस्मिन्रामशरैरुत्कृत्ते छिन्ने महति रक्षसां बल उत्थितमुत्थानक्रियाविशिष्टं प्राणिकबन्धेभ्यः शिरोहीनशरीरेभ्यः ॥ " कबन्धोऽस्त्री क्रियायुक्तमपमूर्धकलेवरम् " इत्यमरः ॥ अन्यच्चान्यत्किंचन न ददृशे ॥ कबन्धेभ्य इत्यत्र " अन्यारात् "—इति पञ्चमी ॥ निःशेषं हतमित्यर्थः ॥

५० ॥ सेति । सा सुरद्विषां वरूथिनी सेना बाणवर्षिणं रामं योधयित्वा युद्धं कारयित्वा । गृध्राणां छाया गृध्रच्छायम् ॥ " छाया बाहुल्ये " इति नपुंसकत्वम् । तस्मिन्नप्रबोधायापुनर्बोधाय सुष्वाप । ममारेत्यर्थः ॥ अत्र सुरतश्रान्तकान्तासमाधिर्ध्वन्यते ॥

५१ ॥ राघवेति । एका शूर्पवन्नखानि यस्याः सा शूर्पणखा ॥ " पूर्वपदात्संज्ञायाम्—" इति णत्वं ॥ " नखमुखात्संज्ञायाम् " इति ङीप्प्रतिषेधः ॥ सैव रावणं प्रति राघवास्त्रैर्विदीर्णानां हतानां तेषां रक्षसां खरादीनां दुष्प्रवृत्तिं दुर्वार्तां हरति प्रापयतीति दुष्प्रवृत्तिहराभवत् ॥ " हरतेरनुद्यमनेऽच् " इत्यच्प्रत्ययः ॥

---

of those three, remaining as clean as before, drank off (destroyed) their life, but it was the birds which drank off their blood.

49. In that vast army of Rákshasas which was cut to pieces by the arrows of Ráma, nothing was seen to rise up except the headless trunks (nothing was seen standing except bodies of warriors with their heads cut off).

50. That army of the enemies of the gods, causing Ráma who was showering arrows to fight with it, fell asleep under the shade of vulture (carrion birds) never to wake again.

51. Of (all) those Rákshasas who were torn to pieces by the

---

49. R. शिरोत्कृत्ते for शरोत्कृत्ते. B. C. E. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., उद्भितं for उत्थितं. A_2. and the text only of Vijay., अन्यत्तु, D. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., चान्यत्, A. I. J. K. R with Hemádri and the text only of Val., अन्यत्र for अन्यच्च. Hemádri : " कबन्धेभ्योऽन्यत्र कबन्धान्वर्जयित्वा ॥ ' ऋते त्वन्यत्र वर्जने ' इत्यव्ययः पाठः " ॥.

50. R. बाणवर्षिणी for बाणवर्षिणं.

51. B. D. with Chá., and Din., राघवास्त्राग्निदग्धानां, Hemádri notices the reading, H. with Vijay., राघवास्त्रविशीर्णानां for राघवास्त्रविदी-

निग्रहात्स्वसुराप्तानां वधाच्च धनदानुजः ।
रामेण निहितं मेने पदं दशसु मूर्धसु ॥ ५२ ॥
रक्षसा मृगरूपेण वञ्चयित्वा स राघवौ ।
जहार सीतां पक्षीन्द्रप्रयासक्षणविघ्नितः ॥ ५३ ॥
तौ सीतान्वेषिणौ गृध्रं लूनपक्षमपश्यताम् ।
प्राणैर्दशरथप्रीतेरनृणं कण्ठवर्तिभिः ॥ ५४ ॥

५२ ॥ निग्रहादिति । स्वसुः शूर्पणखाया निग्रहाद्दण्डच्छेदादाप्तानां बन्धूनां खरादीनां वधाच्च कारणाद्धनदानुजो रावणो रामेण दशसु मूर्धसु पदं पादं निहितं मेने ॥

५३ ॥ रक्षसेति । स रावणो मृगरूपेण रक्षसा मारीचेन राघवौ वञ्चयित्वा प्रतार्य । पक्षीन्द्रस्य जटायुषः प्रयासेन युद्धरूपेण क्षणं विघ्नितः संजातविघ्नः सन् । सीतां जहार ॥

५४ ॥ ताविति । सीतान्वेषिणौ तौ राघवौ लूनपक्षं रावणेन छिन्नपक्षं कण्ठवर्तिभिः प्राणैर्दशरथप्रीतेर्दशरथसख्यस्यानृणमृणैर्विमुक्तं गृध्रं जटायुषमपश्यतां दृष्टवन्तौ ॥ दृशेर्लङि रूपम् ॥

---

missiles of Rághava, S'úrpa*n*akhá alone became (survived to be) the bearer of the evil tidings to Ráva*n*a.

52. On account of the outrage done to his sister, and the slaughter of his kinsmen, the younger brother of Kubera (Ráva*n*a) considered that Ráma had planted a foot on his ten heads.

53. Deluding the two descendants of Raghu by means of a demon (*i. e.* Márícha) in the form of an antelope, he took off Sítá being obstructed for a moment only, by a great attempt on the part of the lord of vultures.

54. They searching for Sítá saw the vulture with his wings lopped off, and who with his life about to depart (*lit.* with his vital breath clinging to his throat) had paid off his debt of friendship with Das'aratha.

प्तानां. Hemâdri also notices this reading. A. C. D. with Vallabha, शूर्पणषा for शूर्पणखा. C. D. E. H. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., दुःप्रवृत्ति for दुष्प्रवृत्ति.

52. A. C. D. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., निहितं, R. विहितं for निहतं.

54. D. K. आनृण्यं for अनृणं.

स रावणहृतां ताभ्यां वचसाचष्ट मैथिलीम् ।
आत्मनः सुमहत्कर्म व्रणैरावेद्य संस्थितः ॥ ५५ ॥
तयोस्तस्मिन्नवीभूतपितृव्यापत्तिशोकयोः ।
पितरीवाग्निसंस्कारात्परा ववृतिरे क्रियाः ॥ ५६ ॥
वधनिर्धूतशापस्य कबन्धस्योपदेशतः ।
मुमूर्छ सख्यं रामस्य समानव्यसने हरौ ॥ ५७ ॥

५५ ॥ स इति । स जटायुः रावणहृतां मैथिलीं ताभ्यां रामलक्ष्मणाभ्यां ॥ " क्रियाग्रहणमपि कर्तव्यम् " इति संप्रदानाच्चतुर्थी ॥ वचसा वाग्वृत्त्याचष्ट । आत्मनः सुमहत्कर्म युद्धरूपं व्रणैरावेद्य संस्थितो मृतः ॥

५६ ॥ तयोरिति । व्यापत्तिर्मरणम् । नवीभूतः पितृव्यापत्तिशोको ययोस्तौ तयो राघवयोस्तस्मिन्गृध्रे पितरीवाग्निसंस्काराद्ग्निसंस्कारमारभ्य परा उत्तराः क्रिया ववृतिरेऽवर्तन्त । तस्य पितृवदौर्ध्वदैहिकं चक्रतुरित्यर्थः ॥

५७ ॥ वधेति । वधेन रामकृतेन निर्धूतशापस्य देवभुवं गतस्य कबन्धस्य रक्षोविशेषस्योपदेशतो रामस्य समानव्यसने समानापदि । सख्यार्थिनीत्यर्थः । हरौ कपौ सुग्रीवे ॥ " शुकाहिकपिभेकेषु हरिर्ना कपिले त्रिषु " इत्यमरः ॥ सख्यं मुमूर्छ ववृधे ॥

---

55. The vulture informed them in words that the princess of Mithilâ had been carried off by Râva*n*a, and having made known to them by means of wounds of his great deeds (extraordinary achievements), gave up his breath.

56. They two whose grief for the death of their father was renewed, performed all the after-life-ceremonies, commencing with the rite of burning (the dead body) in honour of him, in the same way, as they would do in honour of their royal sire.

57. Through the advice of Kabandha who had his curse shaken (removed) by his death (at the hands of Râma), Râma's

---

55. D. E. H. I. K. R. with Val., Din., and Vijay., आख्याय for आचष्ट. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Vallabha and others. B. D. R. with Val., and Su., आत्मनस्तु महत् for आत्मनः सुमहत्.

56. B. H. I. K. with Val., and Su., °दुःखयोः for °शोकयोः. B. E. H. I. R. with Chà., Su., Vijay., and the text only of Val., °संस्कारानन्तरा ववृते क्रिया, C. K. with Hem., and Val., °संस्कारात्पुनराववृते क्रिया, D. °संस्कारात्परा निववृतिरे क्रियाः for °संस्कारात्परा ववृतिरे क्रियाः.

57. B. D. R. with Hemádri and Dinakara निर्धौत° for निर्धूत°. R. °पापस्य for °शापस्य.

स हत्वा वालिनं वीरस्तत्पदे चिरकाङ्क्षिते ।
धातोः स्थान इवादेशं सुग्रीवं संन्यवेशयत् ॥ ५८ ॥
इतस्ततश्च वैदेहीमन्वेष्टुं भर्तृचोदिताः ।
कपयश्चेरुरार्तस्य रामस्येव मनोरथाः ॥ ५९ ॥
प्रवृत्तावुपलब्धायां तस्याः संपातिदर्शनात् ।
मारुतिः सागरं तीर्णः संसारमिव निर्ममः ॥ ६० ॥

५८ ॥ स इति । वीरः स रामो वालिनं सुग्रीवाग्रजं हत्वा चिरकाङ्क्षिते तत्पदे वालिस्थाने । धातोः स्थान आदेशमिव । आदेशभूतं धात्वन्तरमिवेत्यर्थः । सुग्रीवं संन्यवेशयत्स्थापितवान् ॥ यथा " अस्तेर्भूः " इत्यस्तिधातोः स्थान आदेशो भूधातुरस्ति कार्यमशेषं समभिधत्ते तद्वदिति भावः ॥ आदेशो नाम शब्दान्तरस्थाने विधीयमानं शब्दान्तरमभिधीयते ॥

५९ ॥ इतस्ततश्चेति । वैदेहीमन्वेष्टुं मार्गितुं भर्त्रा सुग्रीवेण चोदिताः प्रयुक्ताः कपयो हनुमत्प्रमुखाः । आर्तस्य विरहातुरस्य रामस्य मनोरथाः कामा इव । इतस्ततश्चेरुर्नानादेशेषु बभ्रमुश्च ॥

६० ॥ प्रवृत्ताविति । संपातिर्नाम जटायुषो ज्यायान्भ्राता । तस्य दर्शनात् ।

---

friendship grew strong with the monkey (Sugriva) who was labouring under a similar misfortune.

58. That warrior having killed Válin established Sugriva on his throne, which he wished for a long time, like an A'des'a (substitute) in the place of a root (Dhátu).

59. The monkeys commissioned by their lord wandered here and there (over many countries) in quest of the Videha-princess like so many thoughts (*lit.* mental-chariots) of Râma who was pining for her.

60. Intelligence about her having been obtained from an

---

58. A. C. with Su., तं हत्वा for स हत्वा. A. D. E. H. I. K. R. with Chá., Din., Su., Vijay., and the text only of Val., वारं for वीरः. D. and the text only of Vijay., स्वपदे for तत्पदे. A. C. with Su., स न्यवेशयत् for संन्यवेशयत्.

59. D. with Val., अथ for च. D_2. आक्रम्य for वैदेहीं. Hemádri notices the reading. B. C. E. H. I. K. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., °नोदिताः, A. C. with Hemádri, °प्रेषिताः for चोदिताः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Cháritravardhana and others. A. C. with Chá., Din., and Val., चेरुः for चेरुः. D. H. I. K. R. with Vijay., and the text only of Val., उत्कस्य for आर्तस्य. E. एव for इव.

दृष्टा विचिन्वता तेन लङ्कायां राक्षसीवृता ।
जानकी विषवल्लीभिः परीतेव महौषधिः ॥ ६१ ॥
तस्यै भर्तुरभिज्ञानमङ्गुलीयं ददौ कपिः ।
प्रत्युद्गतमिवानुष्णैस्तदानन्दाश्रुबिन्दुभिः ॥ ६२ ॥
निर्वाप्य प्रियसंदेशैः सीतामक्षवधोद्धतः ।
स ददाह पुरीं लङ्कां क्षणसोढारिनिग्रहः ॥ ६३ ॥

तन्मुखादिति भावः । तस्याः सीतायाः प्रवृत्तौ वार्त्तायाम् ॥ "वार्त्ता प्रवृत्तिर्वृत्तान्तः"-इत्यमरः ॥ उपलब्धायां ज्ञातायां सत्याम् । मारुतस्यापत्यं पुमान्मारुतिः । हनुमान्सागरम् । ममेत्येतदव्ययं ममतावाचि । तद्रहितो निर्ममो निःस्पृहः । संसारमविद्याबन्धमिव । तीर्णस्ततार ॥ तरतेः कर्तरि क्तः ॥

६१ ॥ दृष्टेति । लङ्कायां रावणराजधान्यां विचिन्वता मृगयमाणेन तेन मारुतिना राक्षसीभिर्वृता जानकी । विषवल्लीभिः परीता परिवृता महौषधिः संजीविनीलतेव । दृष्टा ॥

६२ ॥ तस्या इति । कपिर्हनुमान्भर्तू रामस्य संबन्ध्यभिज्ञानं प्रत्यभिज्ञानसाधकमङ्गुलीयमूर्मिकाम् ॥ "अङ्गुलीयकमूर्मिका" इत्यमरः ॥ "जिह्वामूलाङ्गुलेश्छः" इति छप्रत्ययः ॥ तस्यै जानक्यै ददौ । किंविधमङ्गुलीयम् । अनुष्णैः शीतलैस्तस्या आनन्दाश्रुबिन्दुभिः प्रत्युद्गतमिव स्थितम् ॥ भर्त्रभिज्ञानदर्शनादानन्दबाष्पो जात इत्यर्थः ॥

६३ ॥ निर्वाप्येति । स कपिः । प्रियस्य रामस्य संदेशैर्वाचिकैः सीतां निर्वाप्य सुखयित्वा । अक्षस्य रावणकुमारस्य वधेनोद्धतो दृप्तः सन् । क्षणं सोढोऽरेरिन्द्रजितः । कर्तुः । निग्रहो बाधो ब्रह्मास्त्रबन्धनरूपो येन स तथोक्तः सन् । लङ्कां पुरीं ददाह भस्मीचकार ॥

---

interview with Sampâti, Mâruti crossed the ocean, as a person with no desire for worldly objects crosses the ocean of worldly life (frees from the necessity of another birth).

61. Making his search at Lankâ (the capital of Râva*n*a) he found the daughter of Janaka surrounded by Rákshasis (demonesses). She appeared like the great medicinal plant (life-reviving plant) entertwined by poisonous creepers.

62. The monkey handed over to her a ring (as a token) of recognition from her husband, which was, as it were, received (welcomed) by her with cool tears of joy.

63. Having comforted Sitâ with the messages from her dear husband he, who was emboldened by the destruction of Aksha (the

---

62. B. C. E. H. I. K R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., हरिः for कपिः. D. °वारिभिः for °बिन्दुभिः.

63. A. C_2. with Hemádri, रक्षोवधूद्धतां, D. रक्षोवधोद्धतां, K. अक्षवधोद्धुरः, A_2. D_2. with Val., रक्षोवधोद्धुरः, Vallabha: "राक्षसवधोत्कटः" ॥ B.

प्रत्यभिज्ञानरत्नं च रामायादर्शयत्कृती ।
हृदयं स्वयमायातं वैदेह्या इव मूर्तिमत् ॥ ६४ ॥
स प्राप हृदयन्यस्तमणिस्पर्शनिमीलितः ।
अपयोधरसंसर्गां प्रियालिङ्गननिर्वृतिम् ॥ ६५ ॥
श्रुत्वा रामः प्रियोदन्तं मेने तत्संगमोत्सुकः ।
महार्णवपरिक्षेपं लङ्कायाः परिखालघुम् ॥ ६६ ॥

६४ ॥ प्रत्यभीति । कृती कृतकृत्यः कपिः स्वयमायातं मूर्तिमद्वैदेह्या हृदयमिव स्थितं तस्या एव प्रत्यभिज्ञानरत्नं च रामायादर्शयत् ॥

६५ ॥ स इति । हृदये वक्षसि न्यस्तस्य धृतस्य मणेरभिज्ञानरत्नस्य स्पर्शेन निमीलितो मोहितः स रामोऽविद्यमानः पयोधरसंसर्गः स्तनस्पर्शो यस्यास्तां तथोक्तां प्रियाया आलिङ्गनेन या निर्वृतिरानन्दस्तां प्राप ॥

६६ ॥ श्रुत्वेति । प्रियाया उदन्तं वार्त्ताम् ॥ " उदन्तः साधुवार्त्तयोः " इति विश्वः ॥ श्रुत्वा तस्याः सीतायाः संगम उत्सुको रामो लङ्कायाः संबन्धी यो महार्णव एव परिक्षेपः परिवेष्टस्तं परिखालघुं दुर्गवेष्टनवस्तुनरं मेने ॥

---

son of Râva*n*a), and who for a moment suffered capture at the hands of his enemies , set the city of Lankâ on fire.

64. The monkey who succeeded in his undertaking, showed the jewel of recognition to Râma, which was, as it were, the very heart of the princess of the Videhas that had come to him of its own free will in a material form.

65. He with his eyes closed on account of the delighting sensation of touch caused by the jewel placed on his breast, realized the pleasure of embracing his beloved without the contact with her breasts.

66. On hearing the (happy) news of his beloved, Râma became so anxious for her union that he considered the great ocean which surrounded Lankâ (*lit.* which was its encircling belt) as an ordinary fordable ditch around a fort.

C. I. R. with Chá., Din.. Su., and Vijay., अक्षवधोद्धुरः for अक्षवधोद्धतः Hemádri also notices the reading and says, " अक्षस्य रावणसुतस्य वधेनोद्धुरः प्रचण्डः &c. " Châritravardhana : " ऊद्धुरः उद्धटः " &c. B. with Châ., विभीः for पुरीं. A. with Chá., and Din., क्षणं सोढारिनिग्रहः, K. R. क्षणं सोढारिविग्रहः, D. with Vijay., क्षणसोढारिविग्रहः, A_2. C. with Hemádri, क्षणेनाहितविक्रमः for क्षणसोढारिनिग्रहः. Hemádri : "रक्षसां वधूभिर्वृतां सीतां प्रियस्य संदेशैर्निर्वाप्य प्रीणयित्वा आहितविक्रमः धृतरोषः स हनूमान्क्षणेन लंकां पुरीं ददाह &c."

65. A. D. E. °संसर्ग for °संसर्गां.

66. **E. K. with Chá., and the text only of Vijay., परिषा° for परिखा°.**

स प्रतस्थेऽरिनाशाय हरिसैन्यैरनुद्रुतः ।
न केवलं भुवः पृष्ठे व्योम्नि संबाधवर्त्मभिः ॥ ६७ ॥
निविष्टमुदधेः कूले तं प्रपेदे बिभीषणः ।
स्नेहाद्राक्षसलक्ष्म्येव बुद्धिमादिश्य चोदितः ॥ ६८ ॥
तस्मै निशाचरैश्वर्यं प्रतिशुश्राव राघवः ।
काले खलु समारब्धाः फलं बध्नन्ति नीतयः ॥ ६९ ॥

६७ ॥ स इति । केवलमेकं भुवः पृष्ठे भूतले न किं तु व्योम्नि च संबाधवर्त्मभिः संकटगामिभिर्हरिसैन्यैः कपिबलैरनुद्रुतोऽन्वितः सन्स रामोऽरिनाशाय प्रतस्थे ॥

६८ ॥ निविष्टमिति । उदधेः कूले निविष्टं तं रामम् । बिभीषयति शत्रूनिति बिभीषणो रावणानुजः । राक्षसलक्ष्म्या स्नेहाद्बुद्धिं कर्तव्यज्ञानमादिश्योपदिश्य चोदितः प्रेरित इव । प्रपेदे प्राप ॥

६९ ॥ तस्मा इति । राघवस्तस्मै बिभीषणाय ॥ "प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः पूर्वस्य कर्ता" इति संप्रदानत्वाच्चतुर्थी ॥ निशाचरैश्वर्यं राक्षसाधिपत्यं प्रतिशुश्राव प्रतिज्ञातवान् ॥ तथा हि । कालेऽवसरे समारब्धाः प्रक्रान्ता नीतयः फलं बध्नन्ति गृह्णन्ति ॥ जनयन्तीत्यर्थः । खलु ॥

---

67. He set out for the destruction of his enemy followed by the legions of monkeys, crowding their passage not only on the surface of the earth but (even) in the sky.

68. Him who had encamped on the coast of the ocean approached Bibhîsha*n*a as if urged on out of affection by the Fortune of Rakshasa who first inspired him with wisdom.

69. Râghava promised to him the sovereignty over the Râkshasas. Political expedients made use of at a proper time are sure to put forth fruits (*i. e.* bear fruits).

---

67. A. C. D. with Vallabha, हरिसैन्यसमर्पितः for हरिसैन्यैरनुद्रुतः. Vallabha also notices the reading of Mallinâtha. D. धरापृष्ठे for भुवः पृष्ठे. B. C. E. H. I. K. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., खेऽपि for व्योम्नि. B. C. R. with Val., °वर्त्मनि, D. °वर्तिभिः for °वर्त्मभिः.

68. D. R. with Su., निर्विष्टं for निविष्टं. B. C. E. H. I. J. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and the text only of Vijay., आविश्य for आदिश्य. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., नोदितः for चोदितः.

69. C. D. I. with Châ., Din., and Vijay., प्रतिजज्ञे रघूद्वहः for प्रतिशुश्राव राघवः.

स सेतुं बन्धयामास प्लवगैर्लवणाम्भसि ।
रसातलादिवोन्मग्नं शेषं स्वप्नाय शार्ङ्गिणः ॥ ७० ॥
तेनोत्तीर्य पथा लङ्कां रोधयामास पिङ्गलैः ।
द्वितीयं हेमप्राकारं कुर्वद्भिरिव वानरैः ॥ ७१ ॥
रणः प्रववृते तत्र भीमः प्लवगरक्षसाम् ।
दिग्विजृम्भितकाकुत्स्थपौलस्त्यजयघोषणः ॥ ७२ ॥

७० ॥ स इति । स रामो लवणं क्षारमम्भो यस्यासौ लवणाम्भास्तस्मिँल्लवणाब्धौ प्लवगैः प्रयोज्यैः ॥ शार्ङ्गिणो विष्णोः स्वप्नाय शयनाय रसातलात्पातालादुन्मग्नमुद्गतं शेषमिव स्थितम् । सेतुं बन्धयामास ॥
७१ ॥ तेनेति । तेन सेतुना पथोत्तीर्य । समुद्रमिति शेषः । पिङ्गलैः सुवर्णवर्णैरत एव द्वितीयं हेमप्राकारं कुर्वद्भिरिव स्थितैर्वानरैर्लङ्कां रोधयामास ॥
७२ ॥ रण इति । तत्र लङ्कायां प्लवगानां रक्षसां च भीमो भयंकरो दिग्विजृम्भिताः काकुत्स्थपौलस्त्ययो रामरावणयोर्जयघोषणा जयशब्दा यस्मिन्स तथोक्तो रणः प्रववृते प्रवृत्तः ॥ " अस्त्रियां समरानीकरणाः कलहविग्रहौ " इत्यमरः ॥

---

70. He caused a bridge to be constructed by the monkeys over the briny ocean—a bridge that appeared like the snake S'esha that rose from the nether regions in order to become the bed of Vish*n*u (*i. e.* for S'âr*n*gin to lie down upon).

71. Having crossed the ocean by that path he caused Lankâ to be besieged by the yellow coloured monkeys, who formed, as it were, another golden rampart around it.

72. There (at Lankâ) a terrible conflict ensued between the monkeys and the demons, in which the acclamations (war-cries) of victory to Kâkutstha and Paulastya spread over all quarters.

---

70. D. K. यं वर्भौ, I. and the text only of Val., प्लवंगैः for प्लवगैः. C. with Châ., Din., and Val., लवणोदधौ for लवणाम्भसि. C. E. H. with Hemâdri and the text only of Val., उत्तीर्ण. D. K. R. with Châ., Din., and Vijay., उत्तीर्णः, D_2. with Su , उद्दीर्णः, B. I. with Vallabha, उन्मग्नः for उन्मग्नं. B. D. I. K. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., शेषः for शेषं. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Châritravardhana and others in reading उत्तीर्णः and शेषः. A. D. K. with Vallabha, स्वापाय for स्वप्नाय.

71. A. C. with Hemâdri, उत्तीर्णः for उत्तीर्य. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. A. C. D. with Châritravardhana, वेष्टयामास for रोधयामास.

72. E. प्रववृते रणं तत्र., J. रणः प्रववृधे तत्र for रणः प्रववृते तत्र. D. घोरः for भीमः. A. C. with Su., °पौलस्त्यकाकुत्स्थ° for °काकुत्स्थपौलस्त्य°. D. E. H. I. and the text only of Val., °घोषिणः for °घोषणः.

पादपाविद्धपरिघः शिलानिष्पिष्टमुद्गरः ।
अतिशस्त्रनखन्यासः शैलरुग्णमतंगजः ॥ ७३ ॥
अथ रामशिरश्छेददर्शनोद्भ्रान्तचेतनाम् ।
सीतां मायेति शंसन्ती त्रिजटा समजीवयत् ॥ ७४ ॥
कामं जीवति मे नाथ इति सा विजहौ शुचम् ।
प्राङ्मत्वा सत्यमस्यान्तं जीवितास्मीति लज्जिता ॥ ७५ ॥

७३ ॥ पादपेति । किंविधो रणः । पादपैर्वृक्षैराविद्धा भग्नाः परिघा लोहबद्धकाष्ठानि यस्मिन्स तथोक्तः ॥ "परिघः परिघातनः" इत्यमरः ॥ शिलाभिर्निष्पिष्टाश्चूर्णिता मुद्गरा अयोघना यस्मिन्स तथोक्तः ॥ "द्रुघणे मुद्गरघनौ" इत्यमरः॥ अतिशस्त्राः शस्त्राण्यतिक्रान्ता नखन्यासा यस्मिन्स तथोक्तः । शैलै रुग्णा भग्ना मतंगजा यस्मिन्स तथोक्तः ॥

७४ ॥ अथेति । अथानन्तरम् । छिद्यत इति छेदः खण्डः । शिर एव छेद इति विग्रहः ॥ रामशिरश्छेदस्य विद्युज्जिह्वाख्यराक्षसमायानिर्मितस्य दर्शनेनोद्भ्रान्तचेतनां गतसंज्ञां सीतां त्रिजटा नाम काचित्सीतापक्षपातिनी राक्षसी मायाकल्पितं न त्वेतत्सत्यमिति शंसन्ती ब्रुवाणा ॥ "शश्यनोर्नित्यम्" इति नित्यं नुमागमः ॥ समजीवयत् ॥

७५ ॥ काममिति । सा सीता मे नाथो जीवतीति हेतोः शुचं शोकं कामं विजहौ किं तु प्राक्पूर्वमस्य नाथस्यान्तं नाशं सत्यं यथार्थं मत्वा जीविता जीवितवत्यस्मीति हेतोर्लज्जिता लज्जितवती ॥ कर्तरि क्तः ॥ दुःखादपि दुःसहो लज्जाभर इति भावः ॥

---

73. It was a battle in which clubs studded with iron were broken down by the trees; hammers were crushed to pieces by means of stones; the wounds inflicted by the nails were deeper than those inflicted by weapons and the war-elephants were destroyed by means of rocks.

74. Then Trijaṭā restored Sitā to life, who had lost her senses at the sight of the decapitation of Rāma by telling her that it was a mere delusion (*i. e.* a fraud practised by the demon Vidyujjihva).

75. She gave up (forgot) her grief with the thought that her lord was certainly alive, but she felt ashamed that she was

---

73. K. with Vallabha, °निःपिष्ट° for निष्पिष्ट°. B. with Châ., and Din., °रुग्न°, C. E. H. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., °भग्न° for °रुग्ण.° Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha. R. °नय° for °नख°.

74. E °शिरोच्छेद°, H. with Vijay., °शरच्छेद° for °शिरच्छेद°. A. D. R. with Châ., Din., Su., and the text only of Vijay., °दर्शने भ्रान्त° for °दर्शनोद्भ्रान्त°. B. चेतसं, D. E. H. K. R. with Hem., Châ., Din., and the text only of Val., °चेतसां for °चेतनां.

गरुडापातविश्लिष्टमेघनादास्त्रबन्धनः ।
दाशरथ्योः क्षणक्लेशः स्वप्नवृत्त इवाभवत् ॥ ७६ ॥
ततो बिभेद पौलस्त्यः शक्त्या वक्षसि लक्ष्मणम् ।
रामस्त्वनाहतोऽप्यासीद्विदीर्णहृदयः शुचा ॥ ७७ ॥
स मारुतिसमानीतमहौषधिहृतव्यथः ।
लङ्कास्त्रीणां पुनश्चक्रे विलापाचार्यकं शरैः ॥ ७८ ॥

७६ ॥ गरुडेति । गरुडस्तार्क्ष्यः । तस्यापातेनागमनेन विश्लिष्टं मेघनादस्येन्द्रजितोऽस्त्रेण नागपाशेन बन्धनं यस्मिन्स तथोक्तः क्षणक्लेशो दाशरथ्यो रामलक्ष्मणयोः स्वप्नवृत्तः स्वप्नावस्थानुभूत इवाभवत् ॥

७७ ॥ तत इति । ततः पौलस्त्यो रावणः शक्त्या कासूनामकेनायुधेन ॥ "कासूसामर्थ्ययोः शक्तिः" इत्यमरः ॥ लक्ष्मणं वक्षसि बिभेद विदारयामास ॥ रामस्त्वनाहतोऽपि शुचा शोकेन विदीर्णहृदय आसीत् ॥

७८ ॥ स इति । स लक्ष्मणो मारुतिना मरुत्पुत्रेण हनुमता समानीतया महौष-

---

still living, even after she had thought of (the fact of) his death to be true.

76. The sufferings of the two sons of Das'aratha became short-lived, as if having occurred in a dream, when their binding (imprisonment) with a serpent missile discharged by Meghanâda gave way at the approach of Garu*d*a.

77. Then the descendant of Pulastya struck Lakshma*n*a on his breast with the S'akti weapon ; while Râma, though not struck, had his heart broken by grief.

78. Lakshma*n*a, having his pain removed by the great medicinal plant brought (to him) by Mâruti, again performed the

---

76. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., °विश्लिष्ट and °बन्धनं for °विश्लिष्ट° and बन्धनः. B. C. E. H. I. K. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., क्षणक्लेश for क्षणक्लेशः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Châritravardhana and others. B. I. K. with Su., वृत्ति, C. E. H. with Hem., Châ., Din., Val., and the text only of Vijay., °वृत्तं, D. R. °वृत्तिः for °वृत्तः.

77. C. D. विशीर्ण° for विदीर्ण°. One of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुहितैषिणी agrees with these Mss.

78. C. D. with Hemâdri and the text only of Vijay., मारुतसुतानीत° for मारुतिसमानीत°. A. °हतव्यथः, D. with Châ., and Din., °गतव्यथः for °हतव्यथः.

नादं स मेघनादस्य धनुश्चेन्द्रायुधप्रभम् ।
मेघस्येव शरत्कालो न किंचित्पर्यशेषयत् ॥ ७९ ॥
कुम्भकर्णः कपीन्द्रेण तुल्यावस्थः स्वसुः कृतः ।
रुरोध रामं शृङ्गीव टङ्कच्छिन्नमनःशिलः ॥ ८० ॥

ध्या संजीविन्या हतव्यथः सन्पुनः शरैर्लङ्कास्त्रीणां विलापे परिदेवन ॥ "विलापः परिदेवनम्" इत्यमरः ॥ आचार्यकमाचार्यकर्म ॥ "योपधाद्गुरूपोत्तमाद्वुञ्" इति वुञ्प्रत्ययः ॥ चक्रे ॥ पुनरपि राक्षसाञ्जघानेति व्यज्यते ॥

७९ ॥ नादमिति । स लक्ष्मणः । शरत्कालो मेघस्येव मेघनादस्येन्द्रजितो नादं सिंहनादम् । अन्यत्र गर्जितं च । इन्द्रायुधप्रभं शक्रधनुःप्रभं धनुश्च किंचिदल्पमपि न पर्यशेषयन्नावशेषितवान् । अवधीदित्यर्थः ॥

८० ॥ कुम्भकर्ण इति । कपीन्द्रेण सुग्रीवेण स्वसुः शूर्पणखायास्तुल्यावस्थो नासाकर्णच्छेदेन सदृशः कृतः कुम्भकर्णष्टङ्केन शिलाभेदकशस्त्रेण छिन्ना मनःशिला रक्तवर्णधातुविशेषो यस्य स तथोक्तः ॥ "टङ्कः पाषाणभेदनः" इति ॥ "धातुर्मनःशिलाद्यद्रेः" इति चामरः ॥ शृङ्गी शिखरीव । रामं रुरोध ॥

---

duty of a tutor in teaching lamentation to the women of Lanká by means of his arrows (*i. e.*, caused the women of Lanká to bewail the death of their husbands.)

79. He allowed to remain naught of either the war-cries of Meghanâda or his bow resplendant as the rain-bow (weapon of Indra), as the autumnal season completely annihilates the thunders of clouds and the rain-bow.

80. Reduced to a condition similar to that of his sister by the lord of the monkeys, Kumbhakar*n*a made an onslaught towards Râma, like a mountain having its red arsenic (Manass'ila) cut down by the stone-cutting instrument.

---

79. D. H. स नादं for नादं स. Between 79-80. D. H. I. with Su., Vijay., and the text only of Val., read—" क्लेशेन महता निद्रां त्याजितं रणदुर्जयं । रावणः प्रेषयामास युद्धायानुजमात्मनः ॥ स जघान तदादेशात्कपीनुग्राननेकशः । विवेश च पुरीं लङ्कां समादाय हरीश्वरं ॥ [H. with Su., and the text only of Val., जघान सः for स जघान. H. with Su., महतीं for महता.] I. reads only the first and omits the second. On these spurious stanzas Vijayánandasúris'varacharan*a*sevaka remarks, " इति जनार्दनटीकायां श्लोकद्वयमधिकमेतत् . "

अकाले बोधितो भ्रात्रा प्रियस्वप्नो वृथा भवान्।
रामेषुभिरितीवासौ दीर्घनिद्रां प्रवेशितः ॥ ८१ ॥
इतराण्यपि रक्षांसि पेतुर्वानरकोटिषु।
रजांसि समरोत्थानि तच्छोणितनदीष्विव ॥ ८२ ॥
निर्ययावथ पौलस्त्यः पुनर्युद्धाय मन्दिरात्।
अरावणमरामं वा जगदद्येति निश्चितः ॥ ८३ ॥
रामं पदातिमालोक्य लङ्केशं च वरूथिनम्।
हरियुग्यं रथं तस्मै प्रजिघाय पुरंदरः ॥ ८४ ॥

८१ ॥ अकाल इति। प्रियस्वप्न इष्टनिद्रो भवान्वृथा भ्रात्रा रावणेनाकाले बोधित इतीवासौ कुम्भकर्णो रामेषुभी रामबाणैर्दीर्घनिद्रां मरणं प्रवेशितो गमितः ॥ यथा लोकेऽभिष्टवस्तुविनाशदुःखितस्य ततोऽपि भूयिष्ठमुपपाद्यते तद्वदिति भावः ॥

८२ ॥ इतराणि। इतराणि रक्षांस्यपि वानरकोटिषु। समरोत्थानि रजांसि तेषां रक्षसां शोणितनदीषु रक्तप्रवाहेष्विव पेतुः। निपत्य मृतानीत्यर्थः ॥

८३ ॥ निर्ययाविति। अथ पौलस्त्यो रावणः। अद्य जगदरावणं रावणशून्यमरामं रामशून्यं वा भवेदिति निश्चितो निश्चितवान् ॥ कर्तरि क्तः ॥ विजयमरणयोरन्यतरनिश्चयवान्पुनर्युद्धाय मन्दिरान्निर्ययौ निर्जगाम ॥

८४ ॥ राममिति। पादाभ्यामततीति पदातिः। तं पादचारिणं रामम्। वरूथी

---

81. "Fond of sleep as you are, you have been in vain aroused from sleep by your brother out of time"—with these words of consolation, as it were, he was made to enter into long sleep (death) by the arrows of Râma.

82. Other demons also fell on the crores of monkeys. They appeared like dust raised from the battle-field falling upon the streams of their blood.

83. Let the world to-day be either destitute of Râvana or of Râma, thus resolved he the son of Pulastya then came out from his palace to fight again.

84. Observing Râma standing on foot, and the lord of Lankâ seated in a chariot, Indra sent him his chariot furnished with bay horses.

---

81. B. E. H. I. K. R. with Hem., Val., and Vijay., वृथानुजः, D. with Châ., and Din., निशाचरः, A. C. with Su., वृथाऽभवत् for वृथा भवान्.

82. A. D. with Su., तच्छ्रोणित° for तच्छोणित°.

83. D. K. and the text only of Vijay., निश्चितं, H. R. निश्चियः for निश्चितः.

तमाधूतध्वजपटं व्योमगङ्गोर्मिवायुभिः ।
देवसूतभुजालम्बी जैत्रमध्यास्त राघवः ॥ ८५ ॥
मातलिस्तस्य माहेन्द्रमामुमोच तनुच्छदम् ।
यत्रोत्पलदलक्लैब्यमस्त्राण्यापुः सुरद्विषाम् ॥ ८६ ॥
अन्योन्यदर्शनप्राप्तविक्रमावसरं चिरात् ।
रामरावणयोर्युद्धं चरितार्थमिवाभवत् ॥ ८७ ॥

रथगुप्तिः ॥ " रथगुप्तिर्वरूथो ना " इत्यमरः ॥ अत्र वरूथेन रथो लक्ष्यते। वरूथिनं रथिनं लङ्केशं चालोक्य पुरंदर इन्द्रः । युग वहन्तीति युग्या रथाश्वाः ॥ " तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम् " इति यत्प्रत्ययः ॥ हरियुग्यं कपिलवर्णाश्वम् ॥ " शुकाहिकपिभेकेषु हरिर्ना कपिले त्रिषु " इत्यमरः ॥ रथं तस्मै रामाय प्रजिघाय प्रहितवान् ॥

८५ ॥ तमिति । राघवो व्योमगङ्गोर्मिवायुभिराधूतध्वजपटम् । भार्गवशादिति भावः । जेतैव जैत्रो जयशीलः । तं जैत्रम् ॥ जेतृशब्दात्तृन्नन्तात् " प्रज्ञादिभ्यश्च " इति स्वार्थेऽण्प्रत्ययः ॥ तं रथं देवसूतभुजालम्बी मातलिहस्तावलम्बः सन्नध्यास्ताधिष्ठितवान् ॥ आसेर्लङ् ॥

८६ ॥ मातलिरिति । मातलिरिन्द्रसारथिर्माहेन्द्रम् । तनुश्छाद्यतेऽनेनेति तनुच्छदो वर्म ॥ " पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण " इति घः ॥ तं तस्य रामस्यामुमोचासञ्जयामास। यत्र तनुच्छदे सुरद्विषामस्त्राण्युत्पलदलानां यत्क्लैब्यं नपुंसकत्वं निरर्थकत्वं तदापुः ॥

८७ ॥ अन्योन्येति । चिरादन्योन्यदर्शनेन प्राप्तविक्रमावसरं रामरावणयोर्युद्धं योधनं चरितार्थं सफलमभवदिव ॥ प्राक्पराक्रमावसरदौर्लभ्याद्विफलस्याद्य तल्लाभात्साफल्यमुत्प्रेक्ष्यते ॥

---

85. Râghava supporting himself on the hand of the charioteer of the gods took his seat in that victorious chariot, the banner-cloth of which was shaken by the breezes coming over the waves of the celestial Gangá.

86. Mâtali accoutred him with the armour that belonged to great Indra on which the missiles of the haters of gods obtained the impotency of lotus leaves (*i. e.* proved as weak as lotus leaves).

87. The fight between Ràma and Râva*n*a in which each of them found after a long time an opportunity of showing his prowess at the sight of the other (*i. e.* showing their might in their mutual rencounter), became as it were successful.

---

85. R. मनाधूत° for तमाधूत°. K. °वारिभिः for °वायुभिः.

86. D. with Su., शस्त्राणि for अस्त्राणि.

87. A. C. with Châritravardhana चिरं for चिरात्. B. C. D. E H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., वैरं for युद्धं. C. E. R. तदा for इव. J. omits this verse.

भुजमूर्धोरुबाहुल्यादेकोऽपि धनदानुजः ।
ददृशे सोऽयथापूर्वो मातृवंश इव स्थितः ॥ ८८ ॥
जेतारं लोकपालानां स्वमुखैरर्चितेश्वरम् ।
रामस्तुलितकैलासमरातिं बह्वमन्यत ॥ ८९ ॥

८८ ॥ भुजेति । यथा भूतः पूर्वं यथापूर्वः ॥ सुप्सुपेति समासः ॥ यथापूर्वो न भवतीत्ययथापूर्वः । निहतबन्धुत्वाद्रक्षःपरिवारशून्य इत्यर्थः । अत एवैकोऽपि सन्धनदानुजः स रावणः । भुजाश्च मूर्धानश्चोरवः पादाश्च भुजमूर्धोरु ॥ प्राण्यङ्गत्वाद्द्वन्द्वैकवद्भावः ॥ तस्य बाहुल्याद्बहुत्वाद्धेतोः । तद्बहुत्वं यादवः—" दशास्यो विंशतिभुजश्चतुष्पान्मातृमन्दिरे । लंकेश्वरो यातुपतिः सन्नाहोऽस्य विलोचकः " इति ॥ मातृवंशे मातृसंबन्धिनि वर्गे स्थित इव ददृशे दृष्टो हि ॥ " वंशो वेणौ कुले वर्गे " इति विश्वः ॥ अत्र रावणमातुः केशिन्या रक्षोजातित्वात्तद्वर्गो रक्षोवर्ग इति लभ्यते । अतश्चैकोऽप्यनेकरक्षःपरिवृत इवालक्ष्यतेत्यर्थः ॥

८९ ॥ जेतारमिति । लोकपालानामिन्द्रादीनां जेतारम् ॥ " कर्तृकर्मणोः कृति " इति कर्मणि षष्ठी ॥ स्वमुखैः स्वशिरोभिरर्चितेश्वरं तुलितकैलासमुत्क्षिप्तरुद्राद्रिं तमेवं शौर्यधैर्यसत्त्वसंपन्नं महावीरमरातिं शत्रुं रामो गुणग्राहित्वाज्जेतव्योत्कर्षस्य जेतुः स्वोत्कर्षहेतुत्वाच्च बह्वमन्यत ॥ साधु मद्विक्रमस्यायं पर्याप्तो विषय इति बहुमानमकरोदित्यर्थः ॥ बह्विति क्रियाविशेषणम् ॥

---

88. The younger brother of the lord of wealth though alone not being surrounded by attendants as before, appeared on account of his many arms, heads and thighs, as if standing in the midst of his kinsmen by mother's side (Râkshasas).

89. Râma thought highly of that enemy who had conquered the guardians of the quarters (Indra and others), who had worshipped the god S'iva by offering his own heads and who had raised up the Mount Kailâsa.

---

88. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., भुजानमांग° for भुजमूर्धोरु°. Châritravardhana and Dinakara also notice the reading. Hemâdri notices the reading of Mallinâtha. D. E. हि for सः. We with eight Mss. D. अयथापूर्वं, E. हि यथापूर्वं for अयथापूर्वः. Hemâdri, Châritravardhana and Dinakara read with Mallinâtha. B. C. H. I. K. R. with Val., Su., and Vijay., स यथापूर्वं for सोऽयथापूर्वः. Hemâdri, Châritravardhana and Dinakara also notice this reading. A. C. D. with Châ., Din., and Su., मातृवंशः for मातृवंशे. A. C. with Châ., and Din., इवास्थितः for इव-स्थितः.

89. R. सर्वसैन्यानां for लोकपालनां. R. with Vallabha, मुखैरभ्यर्चितेश्वरं for स्वमुखैरर्चितेश्वरं. B. with Châ., तमरिं, E. समरे for अरातिं.

तस्य स्फुरति पौलस्त्यः सीतासंगमशंसिनि ।
निचखानाधिकक्रोधः शरं सव्येतरे भुजे ॥ ९० ॥
रावणस्यापि रामास्तो भित्त्वा हृदयमाशुगः ।
विवेश भुवमाख्यातुमुरगेभ्य इव प्रियम् ॥ ९१ ॥
वचसैव तयोर्वाक्यमस्त्रमस्त्रेण निघ्नतोः ।
अन्योन्यजयसंरम्भो ववृधे वादिनोरिव ॥ ९२ ॥
विक्रमव्यतिहारेण सामान्याभूद्द्वयोरपि ।
जयश्रीरन्तरा वेदिर्मत्तवारणयोरिव ॥ ९३ ॥

९० ॥ तस्येति । अधिकक्रोधः पौलस्त्यः स्फुरति स्पन्दमानेऽत एव सीतासंगमशंसिनि तस्य रामस्य सव्य इतरो यस्मात्सव्येतरे दक्षिणे ॥ "न बहुव्रीहौ" इतीतरशब्दस्य सर्वनामसंज्ञाप्रतिषेधः ॥ भुजे शरं निचखान निखातवान् ॥

९१ ॥ रावणस्येति रामेणास्तः क्षिप्त आशुगो बाणः ॥ विश्रवसोऽपत्यं पुमान्रावणः ॥ विश्रवःशब्दादपत्येऽर्थेऽण्प्रत्यये सति "विश्रवसो विश्रवणरवणौ" इति रवणादेशः ॥ तस्य रावणस्यापि हृदयं वक्षो भित्त्वा । उरगेभ्यः पातालवासिभ्यः प्रियमाख्यातुमिव । भुवं विवेश ॥

९२ ॥ वचसेति । वाक्यं वचसैवास्त्रमस्त्रेण निघ्नतोः प्रतिकुर्वतोस्तयो रामरावणयोः । वादिनोः कथकयोरिव । अन्योन्यस्य जयविषये संरम्भो ववृधे ॥

९३ ॥ विक्रमेति । जयश्रीर्विक्रमस्य व्यतिहारेण पर्यायकरणेन तयोर्द्वयोरपि । अन्तरा मध्ये । अव्ययमेतत् । वेदिर्वेद्याकारा भित्तिर्मत्तवारणयोरिव । सामान्या-

---

90. The son of Pulastya being greatly incensed, drove deep an arrow in his right arm, which was throbbing and which, therefore, prognosticated his union with Sitā.

91. An arrow discharged by Rāma also having pierced through the breast of Rāva*n*a entered into the earth, with a view as it were, to convey that happy news to the serpents.

92. Each of them who met with words the strife of words of the other, and who with missiles met other's missiles, had their impetuous zeal for obtaining victory over the other, increased like that of two disputants.

93. As a wall between two infuriated elephants is common

---

90. H. निचपान for निचखान. D. अधिकक्रोधात् for अधिकक्रोधः.

91. B. H. with Su., रामास्त्रं for रामास्तः. B. H. with Su., आशुगं for आशुगः.

92. A. D. H. I. J. K. with Chā., Din., Val., and Su., एव for इव. A. C. with Su., शस्त्रं शस्त्रेण for अस्त्रमस्त्रेण. R. with Vijay., read first the 93rd verse and then the 92nd.

93. H. omits this verse.

कृतप्रतिकृतप्रीतैस्तयोर्मुक्तां सुरासुरैः ।
परस्परशरव्राताः पुष्पवृष्टिं न सेहिरे ॥ ९४ ॥
अयःशङ्कुचितां रक्षः शतघ्नीमथ शत्रवे ।
हृतां वैवस्वतस्येव कूटशाल्मलिमाक्षिपत् ॥ ९५ ॥

साधारणाभूत् ॥ न त्वन्यतरनियतेत्यर्थः ॥ अत्रमत्तवारणयोरित्यत्र द्वयोरित्यत्र च "अन्तरान्तरेणयुक्ते" इति द्वितीया न भवति ॥ अन्तराशब्दस्योक्तरीत्यान्यत्रान्वयात् ॥ मध्ये कामपि भित्तिं कृत्वा गजौ योधयन्तीति प्रसिद्धिः ॥

९४ ॥ कृतेति । स्वयमस्त्रप्रयोगः कृतं प्रतिकृतं परकृतप्रतीकारस्ताभ्यां प्रीतैः सुरासुरैर्यथासंख्यं तयो रामरावणयोर्मुक्तां पुष्पवृष्टिम् । द्वयोरिति शेषः । परस्परं शरव्राता न सेहिरे ॥ अहमेवालं किं त्वयेति चान्तराल एवेतरेतरबाणवृष्टिरितरेतरपुष्पवृष्टिमवारयदित्यर्थः ॥

९५ ॥ अथ इति । अथ रक्षो रावणोऽयसः शङ्कुभिः कीलैश्चितां कीर्णां शतघ्नीम् ॥ "शतघ्नी तु चतुस्ताला लोहकण्टकसंचिता । यष्टिः" इति केशवः ॥ हृतां विजयलक्ष्मीं वैवस्वतस्यान्तकस्य कूटशाल्मलिमिव शत्रवे राघवायाक्षिपत्क्षिप्तवान् ॥ कूटशाल्मलिरिव कूटशाल्मलिरिति व्युत्पत्त्या वैवस्वतगदाया गौणी संज्ञा । कूटशाल्मलिर्नाम मूलप्रकृतिः कण्टकीवृक्षविशेषः ॥ "रोचनः कूटशाल्मलिः" इत्यमरः ॥ तत्सादृश्यं च गदाया अयःशङ्कुचितत्वादनुसंधेयम् ॥

---

to both, so the fortune of victory become common to them both (*i. e.* sometimes sided with the one, sometimes with the other), on account of the display of valour which each of them made in succession.

94. The groups of arrows of one another did not allow the shower of flowers to be poured over them two (*i. e.* Râma and Râvana) by the gods and the demons pleased with the advance of their own and repulse of the opposite party (*i. e.* intercepted the shower of flowers).

95. Then the Râkshasa threw a club (*i. e.* शतघ्नी) against his enemy provided with pointed iron spikes, which he had obtained in war and was like the कूटशाल्मलि of the god of death.

---

94. D. E. H. I. J. R. with Hem., Su., Vijay., and the text only of Val., परस्परं for परस्पर°. A. with Vallabha reads first the 95th verse and then the 94th.

95. C. D. with Châ., Din., Su., and Vijay., शक्तिं, A. गदां for हृतां. B. C. D. H. वैवस्वतात्पूर्वं for वैवस्वतस्येव. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with these Mss.

राघवो रथमप्राप्तां तामाशां च सुरद्विषाम् ।
अर्धचन्द्रमुखैर्बाणैश्चिच्छेद कदलीसुखम् ॥ ९६ ॥
अमोघं संदधे चास्मै धनुष्येकधनुर्धरः ।
ब्राह्ममस्त्रं प्रियाशोकशल्यनिष्कर्षणौषधम् ॥ ९७ ॥
तद्व्योम्नि दशधा भिन्नं ददृशे दीप्तिमन्मुखम् ।
वपुर्महोरगस्येव करालफणमण्डलम् ॥ ९८ ॥

९६ ॥ राघव इति । राघवो रथमप्राप्तां तां शतघ्नीं सुरद्विषां रक्षसामाशां विजयतृष्णां च ॥ "आशा तृष्णादिशोः प्रोक्ता" इति विश्वः ॥ अर्धचन्द्र इव मुखं येषां तैर्बाणैः कदलीवत्सुखं यथा तथा चिच्छेद ॥ अथ वा कदल्यामिव सुखमक्लेशो यस्मिन्कर्मणि तदिति विग्रहः ॥

९७ ॥ अमोघमिति । एकोऽद्वितीय एकधनुर्धरो रामः प्रियायाः शोक एव शल्यं तस्य निष्कर्षणमुद्धारकं यदौषधं तदमोघं ब्राह्मं ब्रह्मदेवताकमस्त्रमभिमन्त्रितं बाणमस्मै रावणाय च । तद्वधार्थमित्यर्थः । धनुषि संदधे ॥

९८ ॥ तदिति । व्योम्नि दशधा भिन्नं प्रसृतं दीप्तिमन्ति मुखानि यस्य तद्ब्राह्मास्त्रम् । करालं भीषणं तुङ्गं वा फणमण्डलं यस्य तत्तथोक्तम् ॥ "करालो दन्तुरे तुङ्गे करालो भीषणेऽपि च" इति विश्वः ॥ महोरगस्य शेषस्य वपुरिव । ददृशे दृष्टम् ॥

96. With crescent-faced arrows Rághava cut it off—and along with it the hope of the enemies of the gods—before it had reached his chariot as easily as he would lop off a plantain tree.

97. And that unrivalled archer (*lit.* the sole archer) fixed on his bow the unerring missile presided over by Brahmá, which was (as it were) the physic of extracting from his heart the dart of grief for his beloved.

98. That missile with its blazing points being divided into ten splinters in the sky appeared like the body of the great serpent (*i. e.* S'esha) wearing the ring of his formidable hood.

---

96. B. C. E. H. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., सुरद्विषः for सुरद्विषां. A. D. with Chá., Din., and Su., कदलीमुखं, G. with Hem., and Val., कदलीमिव for कदलीसुखं. Vijay., notices the reading of Hemádri and Vallabha. Hemádri also notices the reading of Mallinátha. Cháritravardhana: "कदलीमुखं कदलीस्तंभमिव."

97. B. with Chá., Din., and the text only of Vijay., रामः, D. R. with Su., चास्मिं, E. तस्मै for चास्मै. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण agrees with Cháritravardhana and others and notices the reading चास्मै. I. K. with Hem., and Su., °निःकर्षणौषधं for °निष्कर्षणौषधं.

98. A. D. J. शतधा for दशधा. All commentators read with Mallinátha. Some of the Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary also read with these three Mss.

तेन मन्त्रप्रयुक्तेन निमेषार्धादपातयत् ।
स रावणशिरःपङ्क्तिमज्ञातव्रणवेदनाम् ॥ ९९ ॥
बालार्कप्रतिमेवाप्सु वीचिभिन्ना पतिष्यतः ।
रराज रक्षःकायस्य कण्ठच्छेदपरंपरा ॥ १०० ॥
मरुतां पश्यतां तस्य शिरांसि पतितान्यपि ।
मनो नातिविशश्वास पुनः सन्धानशङ्किनाम् ॥ १०१ ॥

९९ ॥ तेनेति । स रामो मन्त्रप्रयुक्तेन तेनास्त्रेणाज्ञातव्रणवेदनामतिशैघ्र्यादननुभूतव्रणदुःखां रावणशिरःपङ्क्तिं निमेषार्धादपातयत्पातयामास ॥

१०० ॥ बालेति । पतिष्यत आसन्नपातस्य रक्षःकायस्य रावणकलेवरस्य। छिद्यन्त इति छेदाः खण्डाः । कण्ठानां ये छेदास्तेषां परंपरा पङ्क्तिः । वीचिभिर्भिन्ना नानाकृताप्सु बालार्कस्य प्रतिमा प्रतिबिम्बमिव । रराज ॥ अर्कस्य बालविशेषणमारुण्यसिद्ध्यर्थमिति भावः ॥

१०१ ॥ मरुतामिति । पतितानि तस्य रावणस्य शिरांसि पश्यतामपि पुनःसंधानशङ्किनाम् । पूर्वं तथादर्शनादिति भावः । मरुताममराणाम् ॥ “ मरुतौ पवनामरौ ” इत्यमरः ॥ मनो नातिविशश्वासातिविश्वासं न प्राप ॥

---

99. With that missile charged with its appropriate spell (Mantras) he caused within half a second the row of Rávana's heads to fall—the heads which did not (even) feel the pain of the wound.

100. The series of necks severed from the demon's body which was about to drop down, shone (appeared) like the image of the young (new) sun reflected in water broken by the ripples.

101. The mind of the gods who though saw his heads drop down, fearing their re-union did not completely believe the fact of his death.

---

99. A. C. with Val., अपाहरत्, B. D. with Hem., Châ., and Din., अशातयत् for अपातयत्. Hemádri also notices the reading of Mallinâtha. B. C. H. with Châ., Din., and Vijay., रामो रिपु°, D. रावणस्य for स रावण°. Hemádri, Vallabha and Sumativijaya read with Mallinâtha.

100. D. °प्रतिमेयाः स्युः for °प्रतिमेवाप्सु.

अथ मदगुरुपक्षैर्लोकपालद्विपानामनुगतमलिवृन्दैर्गण्डभित्तीर्विहाय ।
उपनतमणिबन्धे मूर्ध्नि पौलस्त्यशत्रोः सुरभि सुरविमुक्तं पुष्पवर्षं पपात ॥१०२॥
यन्ता हरेः सपदि संहृतकार्मुकज्यमापृच्छ्य राघवमनुष्ठितदेवकार्यम् ।
नामाङ्करावणशराङ्कितकेतुयष्टिमूर्ध्वं रथं हरिसहस्रयुजं निनाय ॥ १०३ ॥

१०२ ॥ अथेति । अथ मदेन गजगण्डसंचारसंक्रान्तेन गुरुपक्षैर्भारायमाणपक्षैरलिवृन्दैर्लोकपालद्विपानामैरावतादीनां गगनवर्तिनां गण्डभित्तीर्विहायानुगतमनुसृतं सुरभि सुगन्धि सुरविमुक्तं पुष्पवर्षमुपनत आसन्नो मणिबन्धो राज्याभिषेकसमयभावी यस्य तस्मिन्पौलस्त्यशत्रो रामस्य मूर्ध्नि पपात ॥ इदमेव राज्याभिषेकसूचकमिति भावः ॥

१०३ ॥ यन्तेति । हरेरिन्द्रस्य यन्ता मातलिः सपदि संहृतकार्मुकज्यमनुष्ठितं देवकार्यं रावणवधरूपं येन तं राघवमापृच्छ्य साधयामीत्यामन्त्र्य । नामाङ्कैर्नामाक्षरचिह्नै रावणशरैरङ्किता चिह्निता केतुयष्टिर्ध्वजदण्डो यस्य तम् । हरीणां वाजिनां सहस्रेण युज्यत इति हरिसहस्रयुक् । तम् ॥ " यमानिलेन्द्रचन्द्रार्कविष्णुसिंहांशुवाजिषु । हरिः " इत्युभयत्राप्यमरः ॥ रथमूर्ध्वं निनाय नीतवान् ॥

---

102. Then on the head of the enemy of the son of Pulastya the placing of the crown on which was soon to take place there fell a shower of fragrant flowers poured down by gods and followed (or attended) by the swarms of black bees which had left the specious temples (*lit.* wall-like cheeks) of the elephants of the guardians of quarters and which had wings rendered heavy by their temporal ichor.

103. The charioteer of Indra bidding adieu to Râghava who had at once laid aside his bow having slackened its string and who had executed his commission of the gods, took his chariot above (*i. e.* to heaven), the banner staff of which was marked with the arrows of Râva*n*a impressed with his name and to which were harnessed one thousand horses.

---

102. K. R. गुरुमदपक्षैः for मदगुरुपक्षैः. B. C. E. H. K. R. with Vallabha, °गन्धभित्तीः for °गण्डभित्तीः. C. अपगत° for उपनत°.

103. A. C. D. with Hemâdri, सन्नत° for संहृत°. One of the three Mss. of Hemàdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. A. C. with Hemâdri अनुष्ठितदेवकार्यः for अनुष्ठितदेवकार्यं. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. K. R. °शिराङ्कित° for °शराङ्कित°. A. D. with Châ., Din., Val., and Su., °युतं, E. R. °युग्मं for °युजं.

रघुपतिरपि जातवेदोविशुद्धां प्रगृह्य प्रियां
प्रियसुहृदि विभीषणे संगमय्य श्रियं वैरिणः ।
रविसुतसहितेन तेनानुयातः ससौमित्रिणा
भुजविजितविमानरत्नाधिरूढः प्रतस्थे पुरीम् ॥ १०४ ॥

इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कविश्रीकालिदासकृतौ रावणवधो नाम द्वादशः सर्गः ॥

१०४ ॥ रघुपतिरिति । रघुपतिरपि जातवेदस्यग्नौ विशुद्धां जातशुद्धिं प्रियां सीतां प्रगृह्य स्वीकृत्य । प्रियसुहृदि विभीषणे वैरिणो रावणस्य श्रियं राज्यलक्ष्मीं संगमय्य संगतां कृत्वा ॥ गमेर्ण्यन्तात्क्त्वो ल्यप्प्रत्ययः ॥ “ मितां ह्रस्वः ” इति ह्रस्वः ॥ “ ल्यपि लघुपूर्वात् ” इति णेरयादेशः ॥ रविसुतसहितेन सुग्रीवयुक्तेन ससौमित्रिणा सलक्ष्मणेन तेन विभीषणेनानुयातोऽनुगतः सन् ॥ विमानं रत्नमिव विमानरत्नमित्युपमितसमासः ॥ भुजविजितं यद्विमानरत्नं पुष्पकं तदारूढः पुरीमयोध्यां प्रतस्थे ॥ “ समवप्रविभ्यः स्थः ” इत्यात्मनेपदम् ॥ अत्र प्रस्थानक्रियाया अकर्मकत्वेऽपि तदङ्गभूतोद्देशक्रियापेक्षया सकर्मकत्वम् । अस्ति च धातूनां क्रियान्तरोपसर्जनकस्वार्थभिधायकत्वम् । यथा कुसूलात्पचतीत्यादावादानक्रियागर्भः पाको विधीयत इति ॥

इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमच्छपाच्छयसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनी समाख्यायां द्वादशः सर्गः ॥

---

104. The lord of the Raghus also having accepted his beloved, purified by fire and having united Bibhishana his dear friend to the royal fortune (sovereignty) of the enemy, took his seat in that best of celestial cars which he had acquired by the force of his arms, and set out for his capital accompanied by Bibhíshana, Sugríva and the son of Sumitrá.

---

104. B. C. I. K. R. with Chá., Din., Val., and Vijay., संक्रमय्य for संगमय्य. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Cháritravardhana and others. So also one of the three Mss. of Cháritravardhana's शिर्शाहतविर्णा agrees with Mallinátha.

त्रयोदशः सर्गः ॥

अथात्मनः शब्दगुणं गुणज्ञः पदं विमानेन विगाहमानः ।
रत्नाकरं वीक्ष्य मिथः स जायां रामाभिधानो हरिरित्युवाच ॥ १ ॥
वैदेहि पश्या मलयाद्विभक्तं मत्सेतुना फेनिलमम्बुराशिम् ।
छायापथेनेव शरत्प्रसन्नमाकाशमाविष्कृतचारुतारम् ॥ २ ॥

त्रैलोक्यशल्योद्धरणाय सिन्धोश्चकार बन्धं मरणं रिपूणाम् ।
पुण्यप्रणामं भुवनाभिरामं रामं विरामं विपदामुपासे ॥

१ ॥ अथेति । अथ जानातीति ज्ञः ॥ "इगुपध-" इत्यादिना कप्रत्ययः ॥ गुणानां ज्ञो गुणज्ञः ॥ रत्नाकरादिवर्ण्यैश्वर्यगुणाभिज्ञ इत्यर्थः । स रामाभिधानो हरिर्विष्णुः शब्दो गुणो यस्य तच्छब्दगुणमात्मनः पदं विष्णुपदम् । आकाशमित्यर्थः ॥ "वियद्विष्णुपदम्" इत्यमरः ॥ "शब्दगुणमाकाशं" इति तार्किकाः ॥ विमानेन पुष्पकेण विगाहमानः सन् । रत्नाकरं वीक्ष्य मिथो रहसि ॥ "मिथोऽन्योन्यं रहस्यपि" इत्यमरः ॥ जायां सीतामिति वक्ष्यमाणप्रकारेणोवाच ॥ रामस्य हरित्वाभिधानं निरङ्कुशमहिमद्योतनार्थम् ॥ मिथोग्रहणं गोष्ठीविश्रम्भसूचनार्थम् ॥

२ ॥ वैदेहीति । हे वैदेहि सीते । आ मलयान्मलयपर्यन्तम् ॥ "पञ्चम्यपाङ्परिभिः" इति पञ्चमी ॥ पदद्वयं चैतत् ॥ मत्सेतुना विभक्तं द्विधाकृतम् । अत्यायतः सेतुरित्यर्थः । दर्पातिरेकाच्च मद्ग्रहणम् । फेनिलं फेनवन्तम् ॥ "फेनादिलच्" इतीलच्प्रत्ययः ॥ क्षिप्रकारी चायमिति भावः । अम्बुराशिम् । छायापथेन विभक्तं शरत्प्रसन्नमाविष्कृतचारुतारमाकाशमिव । पश्य । मम दृश्यतां महानयं

---

1. Then that meritorious Hari called by the name of Râma, entering on his celestial car, into that region which had been covered by his own foot and whose quality was sound, looked at the ocean and thus spoke to his wife in private.

2. Dear Vaidehi, look at the foaming ocean divided as far as the Malaya mountain by means of the bridge, built by me, as the

---

2. C. H. with Châ., Din., Su., and Vijay., आविःकृतचारुतारं, B. आविःकृतचारुवादं, D. with Hemâdri, आपूरितशुद्धतारं, R. आविष्कृतचारुशोभं for आविष्कृतचारुतारं. Hemâdri notices the reading of Châritravardhana and others. Vallabha agrees with Mallinâtha. Hemâdri: "आपूरिताः शुद्धास्तारा यत्र तदाकाशमिव."

गुरोर्यियक्षोः कपिलेन मेध्ये रसातलं संक्रमिते तुरंगे ।
तदर्थमुर्वीमवदारयद्भिः पूर्वैः किलायं परिवर्धितो नः ॥ ३ ॥
गर्भं दधत्यर्कमरीचयोऽस्माद्विवृद्धिमत्राश्नुवते वसूनि ।
अबिन्धनं वह्निमसौ बिभर्ति प्रह्लादनं ज्योतिरजन्यनेन ॥ ४ ॥

प्रयासस्त्वदर्थ इति हृदयम् ॥ छायापथो नाम ज्योतिश्चक्रमध्यवर्ती कश्चिन्निरभ्रीनोऽवकाशः ॥

३ ॥ गुरोरिति । यियक्षोर्यष्टुमिच्छोः ॥ यजेः सन्नन्तादुप्रत्ययः ॥ गुरोः सगरस्य मेध्ये मेधार्हे तुरंगे हये कपिलेन मुनिना रसातलं पातालं संक्रमिते सति तदर्थमुर्वीमवदारयद्भिः खनद्भिर्नोऽस्माकं पूर्वैर्वृद्धैः सगरसुतैरयमब्धिः परिवर्धितः किल ॥ किलेत्यैतिह्ये ॥ अतो नः पूज्य इति भावः । यद्यपि तुरंगहारी शतक्रतुस्तथापि तस्य कपिलसमीपे दर्शनात्स एवेति तेषां भ्रान्तिः । तन्मत्यैव कविना कपिलेनेति व्यपदिष्टम् ॥

४ ॥ गर्भमिति । अर्कमरीचयोऽस्मादब्धेरपादानाद्गर्भमम्मयं दधति । वृष्ट्यर्थमित्यर्थः । अयमर्थो दशमसर्गे "ताभिर्गर्भः—" इत्यत्र स्पष्टीकृतः । अयं लोकोपकारीति भावः । अत्राब्धौ वसूनि धनानि ॥ "धनि रत्ने वसु स्मृतम्" इति विश्वः ॥ विवृद्धिमश्नुवते प्राप्नुवन्ति । संपद्यन्त इत्यर्थः । असावाप इन्धनं दाह्यं यस्य तद्दाहकं वह्निं बिभर्ति । अपकारेऽप्याश्रितं न त्यजतीति भावः । अनेन प्रह्लादनमाह्लादकं ज्योतिश्चन्द्रोऽजनि जनितम् ॥ जनेर्ण्यन्तात्कर्मणि लुङ् ॥ सौम्य इति भावः ॥

---

clear autumnal sky displaying beautiful stars, appears divided by the galaxy (or the milky way).

3. This, it is said, was enlarged (to its present size) by our ancestors who had excavated the earth in search of the sacrificial steed of their father, anxious to complete the Horse-sacrifice, when it had been taken down to the nether regions by the sage Kapila.

4. From this the rays of the sun hold a watery fœtus ; here the marine treasures get an increase. He bears the (Vâ*dava*) fire whose fuel is water and by him was produced the gladdening light (*i. e.* the moon).

---

3. B. K. R. with Dinakara, पूर्वं रसातलं, A. C. D. with Hemâdri and the text only of Val., मध्येरसातलं for मेध्ये रसातलं. Hemâdri: "पारे मध्ये षष्ठ्या वा" इत्यव्ययीभावः". Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha, "मेध्ये रसातलं" इति पाठे मेध्ये यज्ञार्हे इत्यर्थः.

तां तामवस्थां प्रतिपद्यमानं स्थितं दश व्याप्य दिशो महिम्ना ।
विष्णोरिवास्यानवधारणीयमीदृक्तया रूपमियत्तया वा ॥ ५ ॥
नाभिप्ररूढाम्बुरुहासनेन संस्तूयमानः प्रथमेन धात्रा ।
अमुं युगान्तोचितयोगनिद्रः संहृत्य लोकान्पुरुषोऽधिशेते ॥ ६ ॥
पक्षच्छिदा गोत्रभिदात्तगन्धाः शरण्यमेनं शतशो महीध्राः ।
नृपा इवोपप्लविनः परेभ्यो धर्मोत्तरं मध्यममाश्रयन्ते ॥ ७ ॥

५ ॥ तां तामिति । तां तामनेकाम् ॥ " नित्यवीप्सयोः " इति वीप्सायां द्विरुक्तिः ॥ अवस्थामक्षोभाद्यवस्थाम् । विष्णुपक्षे सत्त्वाद्यवस्थाम् । प्रतिपद्यमानं भजमानं महिम्ना दश दिशो व्याप्य स्थितं विष्णोरिवास्य रूपमुक्तरीत्यादिबहुप्रकारत्वाद्व्यापकत्वाच्चेदृक्तयेयत्तया वा प्रकारतः परिमाणतश्चानवधारणीयं दुर्निरूपम् ॥

६ ॥ नाभीति । युगान्ते कल्पान्त उचिता परिचिता योगाः स्वात्मनिष्ठैव निद्रेव निद्रा यस्य स पुरुषो विष्णुर्लोकान्संहृत्य । नाभ्यां प्ररूढं यदम्बुरुहं तदासनेन तन्नाभिकमलाश्रयेण प्रथमेन धात्रा दक्षादीनामपि स्रष्ट्रा पितामहेन संस्तूयमानः सन् । अमुमधिशेते । अमुष्मिञ्छेत इत्यर्थः । कल्पान्तेऽप्यस्तीति भावः ॥

७ ॥ पक्षेति । पक्षच्छिदा गोत्रभिदेन्द्रेण ॥ उभयत्र " सत्सूद्विष-" इत्यादिना क्विप् ॥ आत्तगन्धा हतगर्वाः । अभिभूता इत्यर्थः ॥ " गन्धो गन्धक आमोदे लेशे संबन्धगर्वयोः " इति विश्वः ॥ " आत्तगन्धोऽभिभूतः स्यात् " इत्यमरः ॥ महीं धारयन्तीति महीध्राः पर्वताः ॥ मूलविभुजादित्वात्कप्रत्ययः ॥ शतं शतं

---

5. The form of this ocean which obtains various states, and which on account of its vast expanse, extends over the ten quarters, cannot be defined with reference either to its nature or its measure, as the form of Vishnu which attains different states (by सत्त्वः, रजः and तमः) and in majestic splendour remains occupying the ten quarters, is impossible to be defined as to its nature or its measure.

6. On which Purusha (the Supreme Being) who practises Yoganidrá (*i. e.* the contemplation-repose) at the end of each quaternian of Yugas takes repose, after having annihilated the worlds, and being praised by the first Creator seated on a lotus sprung from his own navel.

7. Under which as a place of shelter the mountains by hundreds, having their pride humbled down by Indra (*lit.* the breaker of mountains) who cut off their wings, took refuge, as

---

7. B. C. E. H. I. K. R. with Val., and Vijay., पक्षच्छिदः for पक्षच्छिदा. B. C. E. H. I. K. R. with Val., and Vijay., गोत्रभिदः, D. गोत्रभिनः for गोत्रभिदा. B. C. E. H. K. with Val., and Vijay, भयार्ताः,

रसातलादादिभवेन पुंसा भुवः प्रयुक्तोद्वहनक्रियायाः।
अस्याच्छमम्भः प्रलयप्रवृद्धं मुहूर्तवक्त्त्रावरणं बभूव ॥ ८ ॥
मुखार्पणेषु प्रकृतिप्रगल्भाः स्वयं तरंगाधरदानदक्षः।
अनन्यसामान्यकलत्रवृत्तिः पिबत्यसौ पाययते च सिन्धूः ॥ ९ ॥

शतशः शरण्यं रक्षणसमर्थमेनं समुद्रम्। परेभ्यः शत्रुभ्य उपप्लविनो भयवन्तो नृपा धर्मोत्तरं धर्मप्रधानं मध्यमं मध्यमभूपालमिव। आश्रयन्ते ॥ " अरेश्च विजिगीषोश्च मध्यमो भूम्यनन्तरः। अनुग्रहे संहतयोः समर्थो व्यस्तयोर्वधे " इति कामन्दकः ॥ आर्तबन्धुरिति भावः ॥

८ ॥ रसातलादिति। आदिभवेन पुंसादिवराहेण रसातलात्प्रयुक्तोद्वहनक्रियायाः। विवाहक्रिया च व्यज्यते। भुवो भूदेवतायाः प्रलये प्रवृद्धमस्याब्धेरच्छमम्भो मुहूर्तं वक्त्त्रावरणं लज्जारक्षणार्थं मुखावगुण्ठनं बभूव ॥ तदुक्तम्—" उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना " इति ॥

९ ॥ मुखेति। अन्येषां पुंसां सामान्या साधारणा न भवतीत्यनन्यसामान्या कलत्रेषु वृत्तिर्भोगरूपा यस्य स तथोक्तः। इमंमेवार्थं प्रतिपादयति—तरंग एवाधरस्तस्य दाने समर्पणे दक्षश्चतुरोऽसौ समुद्रो मुखार्पणेषु प्रकृत्या सख्यादिप्रेषणं विना प्रगल्भा धृष्टाः सिन्धूर्नदीः ॥ " सिन्धुः समुद्रे नद्यां च " इति विश्वः ॥ स्वयं पिबति पाययते च। तरंगाधरमिति शेषः ॥ " न पादम्याङ्यम—" इत्या-

kings harassed by their enemies solicit a pre-eminently just and neutral monarch.

8. The clear waters of this ocean which swelled at the time of deluge served as a momentary veil to the face of the earth, which was being raised from the nether regions by the first being created (*i. e.* the Great Boar).

9. This ocean whose mode of enjoying a wife is different from that of others, and who is clever in offering his lips of waves,

D. I. with Hem., Châ., Din., and Su., आत्तगर्वाः, R. अनुरुद्धः for आत्तगन्धाः. D. R. एतं for एनं. D. E. H. K. R. with Su., and Vijay., धर्मोत्तमं for धर्मोत्तरं. Hemádri also notices the reading. R. आश्रयन्ति f आश्रयन्ते.

8. D. यस्य for अस्य. B. C. E. H. J. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., वक्त्राभरणं for वक्त्रावरणं. Châritravardhana also notices the reading of Mallinâtha and says,—" वक्त्रावरणं " इति पाठे वक्त्रतिरोधानं। तस्मिन्पाठे यथा पुरुषेण संपादितकरग्रहणक्रियाया योषाया विवाहकाले सूक्ष्मवस्त्रेण मुखावगुंठनं भवतीति ध्वन्यर्थः. " H. प्रपेदे for बभूव.

9. A. C. with Vallabha, मुखार्पणेषु for मुखार्पणेषु.

ससत्त्वमादाय नदीमुखाम्भः संमीलयन्तो विवृताननत्वात् ।
अमी शिरोभिस्तिमयः सरन्ध्रैरूर्ध्वं वितन्वन्ति जलप्रवाहान् ॥ १० ॥
मातंगनक्रैः सहसोत्पतद्भिर्भिन्नान्द्विधा पश्य समुद्रफेनान् ।
कपोलसंसर्पितया य एषां व्रजन्ति कर्णक्षणचामरत्वम् ॥ ११ ॥
वेलानिलाय प्रसृता भुजंगा महोर्मिविस्फूर्जथुनिर्विशेषाः ।
सूर्यांशुसंपर्कसमृद्धरागैर्व्यज्यन्त एते मणिभिः फणस्थैः ॥ १२ ॥

दिना पिबतेर्ण्यन्तान्नित्यं परस्मैपदनिषेधः ॥ "गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थ—" इत्यादिना सिन्धूनां कर्मत्वम् ॥ दंपत्योर्युगपत्परस्पराधरपानमनन्यसाधारणमिति भावः ॥

१० ॥ ससत्त्वमिति । अमी तिमयो मत्स्यविशेषाः ॥ तदुक्तम्—"अस्ति मत्स्यस्तिमिर्नाम शतयोजनमायतः" इति ॥ विवृताननत्वाद्व्यात्तमुखत्वाद्धेतोः । आननानि विवृत्येत्यर्थः । ससत्त्वं मत्स्यादिप्राणिसहितं नदीमुखाम्भ आदाय संमीलयन्तश्चञ्चुपुटानि संघट्टयन्तः । सरन्ध्रैः शिरोभिर्जलप्रवाहानूर्ध्वं वितन्वन्ति ॥ जलयन्त्रक्रीडासमाधिर्व्यज्यते ॥

११ ॥ मातंगेति । सहसोत्पतद्भिर्मातंगनक्रैर्मातंगाकारैर्ग्राहैर्द्विधा भिन्नान्समुद्रफेनान्पश्य । ये फेना एषां जलमातंगनक्राणां कपोलेषु संसर्पितया संसर्पणेन हेतुना कर्णेषु क्षणं चामरत्वं व्रजन्ति ॥

१२ ॥ वेलेति । वेलानिलाय । वेलानिलं पातुमित्यर्थः ॥ "क्रियार्थोपपदस्य—"

---

drinks the rivers himself, which are naturally bold in offering their mouths, and also causes them to drink himself.

10. Look here, these whales on account of their mouths being open having taken in the water at the mouths of the rivers, together with the aquatic creatures in it, toss upwards by closing their jaws the streams of water through their perforated heads.

11. Look at the foam of the ocean severed into two parts by the Hippopotamuses that jump up all of a sudden above the surface of water,—the foams that on account of their gliding by their cheeks go to the state of (become) their ear-chowries for a time.

12. These serpents which have stretched themselves on the

---

10. B. D. I. with Chá., and Din , सरिन्मुखाम्भः for नदीमुखाम्भः. D. संमीलयन्त्यः for संमीलयन्तः. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., विवृताननत्वं for विवृताननत्वात्. All of these construe it with समीलयन्तः *i. e.*, प्रसारितमुखत्वं संकोचयन्तः. B. प्रतन्वन्ति, I. विचिन्वंति for वितन्वन्ति. E. सरित्प्रवाहान् for जलप्रवाहान्.

11. B. C. R. with Chá., Din., Su., Vijay., and the text only of Val., कर्ण for कर्ण°.

12. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and

तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु पर्यस्तमेतत्सहसोर्मिवेगात् ।
ऊर्ध्वाङ्कुरप्रोतमुखं कथंचित्क्लेशादपक्रामति शङ्खयूथम् ॥ १३ ॥
प्रवृत्तमात्रेण पयांसि पातुमावर्तवेगाद्भ्रमता घनेन ।
आभाति भूयिष्ठमयं समुद्रः प्रमथ्यमानो गिरिणेव भूयः ॥ १४ ॥

इत्यादिना चतुर्थी ॥ प्रसृता निर्गता महोर्मीणां विस्फूर्जथुरुद्रेकः ॥ " द्वितोऽथुच् " इत्यथुच्प्रत्ययः ॥ तस्मान्निर्विशेषा दुर्ग्रहभेदा एते भुजंगाः सूर्यांशुसंपर्केण समृद्धरागैः प्रवृद्धकान्तिभिः फणस्थैर्मणिभिर्व्यज्यन्ते । उन्नीयन्ते ॥

१३ ॥ तवेति । तवाधरस्पर्धिषु । अधरसदृशेष्वित्यर्थः । विद्रुमेषु प्रवालेषु सहसोर्मिवेगात्पर्यस्तं क्षिप्तमूर्ध्वैरङ्कुरैर्विद्रुमप्ररोहैः प्रोतमुखं स्यूतबिलमेतच्छङ्खानां यूथं वृन्दं कथंचित्क्लेशादपक्रामति । विलम्बादपसरतीत्यर्थः ॥

१४ ॥ प्रवृत्तेति । पयांसि पातुं प्रवृत्त एव प्रवृत्तमात्रो न तु पीतवांस्तेनावर्तवेगात् ॥ " स्यादावर्तोऽम्भसां भ्रमः " इत्यमरः ॥ भ्रमता घनेनायं समुद्रो भूयः पुनरपि गिरिणा मन्दरेण प्रमथ्यमान इव भूयिष्ठमत्यन्तमाभाति ॥

---

beach, in order to breathe the sea-breeze, and which do not differ from the swelling appearance of the large waves, can (only) be distinguished by the jewels on their hoods the lustre of which is enhanced by their contact with the rays of the sun (shining upon them).

13. The shoals of conch-shells with their heads transfixed at their jutting points, being dashed at once by the force of the billows against the reefs (rocks) of corals that vie with thy lips, glide away with great difficulty.

14. This ocean on account of the cloud which as soon as it begins to drink water from it is made to turn round (and round) by the force of the whirpool, appears in a great way to be, as it were, churned again by the mountain (Ma*n*d*á*ra).

Vijay., °विस्फूर्जित° for °विस्फूर्जथु°. B. H. °समृद्धि°, C. with Châ., Din., and Vijay., °समिद्ध°, D. E. K. R. and the text only of Vijay., °विवृद्ध° for °समृद्ध°. We with Hemâdri, Vallabha, Sumativijaya and four other Mss.

13. C. °प्रोत° for °प्रोत.° B. R. कृच्छ्रात्, D. K. कष्टात् for क्लेशात्. B. E. I. with Hem., and Su., अपाक्रामति for अपक्रामति.

14. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., इव: for अयं.

51

दूरादयश्चक्रनिभस्य तन्वी तमालतालीवनराजिनीला ।
आभाति वेला लवणाम्बुराशेर्धारानिबद्धेव कलङ्करेखा ॥ १५ ॥
वेलानिलः केतकरेणुभिस्ते संभावयत्याननमायताक्षि ।
मामक्षमं मण्डनकालहानेर्वेत्तीव बिम्बाधरबद्धतृष्णम् ॥ १६ ॥
एते वयं सैकतभिन्नशुक्तिपर्यस्तमुक्तापटलं पयोधेः ।
प्राप्ता मुहूर्तेन विमानवेगात्कूलं फलावर्जितपूगमालम् ॥ १७ ॥

१५ ॥ दूरादिति । अयश्चक्रनिभस्य लवणाम्बुराशेर्दूरात्तन्व्यल्पत्वेनावभासमाना तमालतालीवनराजिभिर्नीला वेला तीरभूमिर्धारानिबद्धा चक्राश्रिता कलङ्करेखा मालिन्यरेखेव । आभाति ॥ " मालिन्यरेखां तु कलङ्कमाहुः " इति दण्डी ॥

१६ ॥ वेलेति । हे आयताक्षि । वेलानिलः केतकरेणुभिस्त आननं संभावयति ॥ किमर्थमित्यत्रेआयामुत्प्रेक्ष्यते—बिम्बाधरे बद्धतृष्णं मां मण्डनेन प्रसाधनक्रियया कालहानिर्विलम्बस्तस्या अक्षममसहमानम् ॥ कर्मणि षष्ठी ॥ कालहानिमसहमानं वेत्तीव वेत्ति किम् । नोचेत्कथं संभावयेदित्यर्थः ॥

१७ ॥ एत इति । एते वयं सैकते भिन्नाभिः स्फुटिताभिः शुक्तिभिः पर्यस्तानि

15. The strand of the briny ocean resembling an iron-wheel which is dark on account of the row of Tamála and Táli forests, and which appeared like a slender line owing to distance, looks like a thin coating of rust formed on the edge of a steel-wheel.

16. O long-eyed lady ! the breeze blowing over the sea-coast decorates thy face with the pollen of Ketaka-flowers. It knows, as it were, that I who have fixed my longing upon thy Bimba-like-lips, cannot brook the delay caused by decorations.

17. Here we are, who in consequence of the speed of the celestial car, have reached in a moment the coast of the sea, where heaps of pearls are lying scattered being thrown out from the

---

15. D. दूरादरालभ्रु विभाति for दूरादयश्चक्रनिभस्य. Hemâdri also notices the reading. A. C. with Su., हि खङ्गरेखा, E. H. I. R. with Hem., Val., and Vijay., कलंकलेखा for कलंकरेखा. Between 15-16 B. E. R. with Charitravardhana read the following :—" निस्त्रिंशकल्पस्य निर्धर्जलानामेषा तमालद्रुमराजिनीला । दूरादरालभ्रु विभाति वेला कलंकलेखामलिनेव धारा " ॥ R. reads it between 14-15 and calls it a क्षेपक. " निस्त्रिंशेति । अराले कुटिले भ्रुवौ यस्यास्तत्सम्बुद्धौ अरालभ्रु निस्त्रिंशकल्पस्य जलानां निधेरब्धेः कलंकलेखयाग्रुधदोषेण मलिना धारा । अवशेषं व्याख्यातप्रायम् । क्षेपकोऽयम् । अरालभ्रु इत्यस्य सम्बुद्धौ ह्रस्वत्वमिति कश्चित् ॥ चा० ॥

16. B. C. E. H. I. R. with Cha., Din., Val., Su., and Vijay., आयताक्षं for आयताक्षि. D. with Su., वृद्धतृष्णं for बद्धतृष्णं.

कुरुष्व तावत्करभोरु पश्चान्मार्गे मृगप्रेक्षिणि दृष्टिपातम् ।
एषा विदूरीभवतः समुद्रात्सकानना निष्पततीव भूमिः ॥ १८ ॥
क्वचित्पथा संचरते सुराणां क्वचिद्घनानां पततां क्वचिच्च ।
यथाविधो मे मनसोऽभिलाषः प्रवर्तते पश्य तथा विमानम् ॥ १९ ॥
असौ महेन्द्रद्विपदानगन्धी त्रिमार्गगावीचिविमर्दशीतः ।
आकाशवायुर्दिनयौवनोत्थानाचामति स्वेदलवान्मुखे ते ॥ २० ॥

परितः भिन्नानि मुक्तानां पटलानि यस्मिंस्तत्तथोक्तं फलभारावर्जिता आनमिताः पूगमाला यस्मिंस्तत्पयोधेः कूलं विमानवेगान्मुहूर्तेन प्राप्ताः ॥

१८ ॥ कुरुष्वेति । "मणिबन्धादाकनिष्ठं करस्य करभो बहिः" इत्यमरः ॥ करभ इवोरू यस्याः सा करभोरूः ॥ "ऊरूत्तरपदादौपम्ये" इत्यूङ्प्रत्ययः ॥ तस्याः संबुद्धिः ॥ हे करभोरु । मृग इव प्रेक्षत इति विग्रहः । हे मृगप्रेक्षिणि । तावत्पश्चान्मार्गे लङ्घिताध्वनि दृष्टिपातं कुरुष्व ॥ एषा सकानना भूमिर्विदूरीभवतः समुद्रान्निष्पतति निष्क्रामतीव ॥ विदूरशब्दादभूततद्भावे च्विः ॥

१९ ॥ क्वचिदिति । हे देवि । विमानं पुष्पकं मे मनसोऽभिलाषो यथाविधस्तथा प्रवर्तते पश्य ॥ क्वचित्सुराणां पथा संचरते । क्वचिद्घनानां । क्वचित्पततां पक्षिणां च पथा संचरते ॥ "समस्तृतीयायुक्तात्" इति संपूर्वाच्चरतेरात्मनेपदम् ॥

२० ॥ असाविति । महेन्द्रद्विपदानगन्धी ऐरावतमदगन्धी । त्रिभिर्मार्गैर्गच्छतीति

---

oysters, that have opened their shells (or broken) on the strand, and where the rows of betel-nut trees are bent down under the weight of their fruits.

18. O deer-eyed lady with plantain-like (tapering) thighs, meanwhile cast thy glance upon the way (we have left) behind. This piece of land together with forest emerges out, as it were, from the ocean which is becoming more and more distant.

19. Mark, this celestial car is moving sometimes in the path of the gods, sometimes in the regions of the clouds, at others in that of birds. In fact it moves about exactly in accordance with the inclination of my mind.

20. This sky-breeze charged with (breathing out) the fra-

---

18. D. R. दृष्टिपातान for दृष्टिपातं. B. C. with Charitravardhana, पुरो हि दूरीभवतः for एषा विदूरीभवतः. Charitravardhana "हि यतः सकानना वनसहितैव भूमिः पुरः पुरोगमनेन दूरीभवतः समुद्रान्निष्पतति." B. R. with Val., and Vijay., निःसरति, C. J. with Hem., Cha., Din., Su., and the text only of Vijay., निःपतति for निष्पतति.

19. C. I. K. R. with Val., and Su., मरुतां for पततां. Hemādri notices the reading.

20. C. E. K. with Su., and the text only of Val., सुरेन्द्र—ग-

करेण वातायनलम्बितेन स्पृष्टस्त्वया चण्डि कुतूहलिन्या ।
आमुञ्चतीवाभरणं द्वितीयमुद्भिन्नविद्युद्वलयो घनस्ते ॥ २१ ॥
अमी जनस्थानमपोढविघ्नं मत्वा समारब्धनवोटजानि ।
अध्यासते चीरभृतो यथास्वं चिरोज्झितान्याश्रममण्डलानि ॥ २२ ॥

त्रिमार्गगा गङ्गा ॥ "तद्धितार्थ–" इत्यादिनोत्तरपदसमासः ॥ तस्या वीचीनां विमर्देन संपर्केण शीतोऽसावाकाशवायुर्दिनयौवनोत्थान्मध्याह्नसंभवांस्ते मुखे स्वेदलवानाचामति हरति । अनेन सुरपथसंचारो दर्शितः ॥

२१ ॥ करेणेति । हे चण्डि कोपने कुतूहलिन्या विनोदार्थिन्या त्वया वातायने गवाक्षे लम्बितेनावस्रंसितेन करेण स्पृष्ट उद्भिन्नविद्युद्वलयो घनस्ते द्वितीयमाभरणं वलयमामुञ्चतीवार्पयतीव ॥ चण्डीत्यनेन कोपनशीलत्वाद्भीतः क्षिप्रं त्वामुपचरति मेघ इति व्यज्यते ॥

२२ ॥ अमी इति । अमी चीरभृतस्तापसा जनस्थानमपोढविघ्नमपास्तविघ्नं मत्वा ज्ञात्वा समारब्धा नवोटजाः पर्णशाला येषु तानि चिरोज्झितानि ॥ राक्षसभयादित्यर्थः । आश्रममण्डलान्याश्रमविभागान् ॥ यथास्वं स्वं स्वमनतिक्रम्याध्यासतेऽधितिष्ठन्ति ॥

---

grance of the ichor of the elephant of great Indra, and cool by its contact with the waves of the three-streamed river (the Ganges) sips the drops of perspiration on thy face produced at this hour of noon.

21. O sensitive lady ! touched by thee with thy hand stretched out from the windows of the car through curiosity the cloud with its bracelet of lightning put forth, appears to give thee another ornament to put on round thy wrist.

22. These hermits clad in red garments, knowing Janasthâna to be rid of obstacles, are occupying their long forsaken sites of hermitages, each his own, where they have commenced to raise new huts.

न्धिः, D. सुरेन्द्र—गन्धी, A. H. I. R. with Hem., Val., and Vijay., महेन्द्र—गन्धिः for महेन्द्र—गन्धी. Hemâdri notices the reading of Mallinâtha and makes the following remark:—" महेन्द्र—गन्धी" इत्यत्र गन्धशब्दस्याल्पपर्यायत्वादल्पस्य दानस्य ग्रहणाद्वायोर्मान्द्यम्. "

21. B. with Châritravardhana, निःसृतेन for लम्बितेन.

22. C. दृष्ट्वा for मत्वा.

सैषा स्थली यत्र विचिन्वता त्वां भ्रष्टं मया नूपुरमेकमुर्व्याम् ।
अदृश्यत त्वच्चरणारविन्दविश्लेषदुःखादिव बद्धमौनम् ॥ २३ ॥
त्वं रक्षसा भीरु यतोऽपनीता तं मार्गमेताः कृपया लता मे ।
अदर्शयन्वक्तुमशक्नुवन्त्यः शाखाभिरावर्जितपल्लवाभिः ॥ २४ ॥
मृग्यश्च दर्भाङ्कुरनिर्व्यपेक्षास्तवागतिज्ञं समबोधयन्माम् ।
व्यापारयन्त्यो दिशि दक्षिणस्यामुत्पक्ष्मराजीनि विलोचनानि ॥ २५ ॥

२३ ॥ सैषेति । सा पूर्वानुभूता स्थल्येषा । दृश्यत इत्यर्थः । यत्र स्थल्यां त्वां विचिन्वतान्विष्यता मया । त्वच्चरणारविन्देन यो विश्लेषो वियोगस्तेन यद्दुःखं तस्मादिव बद्धमौनं निःशब्दम् । उर्व्यां भ्रष्टमेकं नूपुरं मञ्जीरः ॥ " मञ्जीरो नूपुरोऽस्त्रियाम् " इत्यमरः ॥ अदृश्यत दृष्टम् ॥ हेतूत्प्रेक्षा ॥

२४ ॥ त्वमिति । हे भीरु भयशीले ॥ " ऊङुतः " इत्यूङ् ॥ ततो नदीत्वात्संबुद्धौ ह्रस्वः ॥ त्वं रक्षसा रावणेन यतो येन मार्गेण ॥ सार्वविभक्तिकस्तसिः ॥ अपनीतापहृता तं मार्गं वागिन्द्रियाभावाद्वक्तुमशक्नुवन्त्य एता लता वीरुध आवर्जिता नमिताः पल्लवाः पाणिस्थानीया याभिस्ताभिः शाखाभिः स्वावयवभूताभिः कृपया मेऽदर्शयन् ॥ हस्तचेष्टया सूचयन्नित्यर्थः ॥ "शाखा वृक्षान्तरं भुजे" इति विश्वः ॥ लतादीनामपि ज्ञानमस्त्येव ॥ तदुक्तं मनुना—" अन्तःसंज्ञा भवन्त्येते सुखदुःखसमन्विताः " इति ॥

२५ ॥ मृग्यश्चेति । दर्भाङ्कुरेषु भक्ष्येषु निर्व्यपेक्षा निस्पृहा मृग्यो मृगाङ्गनाश्चोत्पक्ष्मराजीनि विलोचनानि दक्षिणस्यां दिशि व्यापारयन्त्यः प्रवर्तयन्त्यः सत्यस्तवागतिज्ञं गत्यनभिज्ञं मां समबोधयन् ॥ दृक्चेष्टया त्वद्गतिमबोधयन्नित्यर्थः ॥

---

23. This is the very spot where searching for thee I saw one anklet which had dropped down upon the ground—an anklet which kept silent through grief of separation, as it were, from thy lotus-like feet.

24. O timid lady ! these creepers, unable to speak, pointed out to me, out of compassion, with their branches the leaves of which had lowered down, the way to the place where you had been carried off by the demon.

25. The female antelopes also feeling disinclined to eat the sprouts of Darbha-grass, informed me (of your where-abouts) who knew no trace of you by directing their eyes towards the southern quarters with the rows of eye-lashes raised upwards.

---

24. B. D. मार्गं तं for तं मार्गं. D. ते for मे. A. C. with Val., and Su., शाषाभिः for शाखाभिः.

25. A. C. D. with Châ., and Din., उत्पक्ष्मपंक्तीनि for उत्पक्ष्मराजीनि.

एतद्गिरेर्माल्यवतः पुरस्तादाविर्भवत्यम्बरलेखि शृङ्गम् ।
नवं पयो यत्र घनैर्मया च त्वद्विप्रयोगाश्रु समं विसृष्टम् ॥ २६ ॥
गन्धश्च धाराहतपल्वलानां कादम्बमर्धोद्गतकेसरं च ।
स्निग्धाश्च केकाः शिखिनां बभूवुर्यस्मिन्नसह्यानि विना त्वया मे ॥२७॥
पूर्वानुभूतं स्मरता च यत्र कम्पोत्तरं भीरु तवोपगूढम् ।
गुहाविसारीण्यतिवाहितानि मया कथंचिद्घनगर्जितानि ॥ २८ ॥

२६ ॥ एतदिति । माल्यवतो नाम गिरेरम्बरलेख्यभ्रंकषं शृङ्गमेतत्पुरस्तादग्र आविर्भवति । यत्र शृङ्गे घनैर्मेघैर्नवं पयो मया त्वद्विप्रयोगेण यदश्रु तच्च समं युगपद्विसृष्टम् ॥ मेघदर्शनाद्वर्षतुल्यमश्रु विमुक्तमिति भावः ॥
२७ ॥ गन्धश्चेति । यस्मिञ्छृङ्गे धाराभिर्वर्षधाराभिराहतपल्वलानां गन्धश्च । अर्धोद्गतकेसरं कादम्बं नीपकुसुमं च । स्निग्धा मधुराः शिखिनां बर्हिणाम् ॥ "शिखिनौ वह्निबर्हिणौ" इत्यमरः ॥ केकाश्च । त्वया विना मेऽसह्यानि बभूवुः ॥ "नपुंसकमनपुंसकेन-" इति नपुंसकैकशेषः ॥
२८ ॥ पूर्वेति । किं च । हे भीरु । यत्र शृङ्गे पूर्वानुभूतं कम्पोत्तरं कम्पप्रधानं त-

---

26. Yonder appears that sky-touching (*i. e.* lofty) peak of the mount Malyavat, upon which clouds poured down new showers along with me, who poured down tear-drops caused by your separation.

27. Where the fragrance of pools lashed by the showers of rain, the flower of Kadamba with its filaments half come out, and the charming notes of peacocks, became intolerable to me without thy company.

28. And where, O timid lady ! remembering your embraces

---

26. A. D. with Hemádri, अम्बरलेढि for अम्बरलेखि. A. C. with Vallabha. घनं for नवं. Vallabha: यत्र यस्मिञ्शृङ्गे घनैर्मेघैर्घनं सान्द्रं पयः &c." D. E. विमुक्तं for विसृष्टं. H. omits this verse.

27. C. H. K. °पञ्चवानां for °पल्वलानां. Hemádri notices the reading. D. अर्धोदित for अर्धोद्गत. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with D. Ms. E. वा for च. B. C. E. I. R. with Châ., and the text only of Vijay., त्वया मे, D. H. K. with Hem., Val., Su., and Vijay., अभूवन् for बभूवुः. B. C. E. I. R. with Châ., and the text only of Vijay., विना दुःप्रसहान्यभूवन् for असह्यानि विना त्वया मे. Hemádri notices the reading: " विना दुःप्रसहान्यभूवन् " इति वा पाठः । तत्र दुःप्रसहश्च दुःप्रसहश्च दुःप्रसहा चेत्यर्थः."

28. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., रात्रौ for यत्र.

आसारसिक्तक्षितिबाष्पयोगान्मामक्षिणोद्यत्र विभिन्नकोशैः ।
विडम्ब्यमाना नवकन्दलैस्ते विवाहधूमारुणलोचनश्रीः ॥ २९ ॥
उपान्तवानीरवनोपगूढान्यालक्ष्यपारिप्लवसारसानि ।
दूरावतीर्णा पिबतीव खेदादमूनि पम्पासलिलानि दृष्टिः ॥ ३० ॥
अत्रावियुक्तानि रथाङ्गनाम्नामन्योन्यदत्तोत्पलकेसराणि ।
द्वन्द्वानि दूरान्तरवर्तिना ते मया प्रिये सस्पृहमीक्षितानि ॥ ३१ ॥

वेपथुमदुपगूहनं स्मरता मया गुहाविसारीणि घनगर्जितानि कथंचिदतिवाहितानि ॥ स्मारकत्वेनोद्दीपकत्वात्क्लेशेन गमितानीत्यर्थः ॥

२९ ॥ आसारेति । यत्र शृङ्गे विभिन्नकोशैर्विकसितकुड्मलैर्नवकन्दलैः कन्दलीपुष्पैररुणवर्णैरासारसिक्तायाः क्षितेर्बाष्पस्य धूम्रवर्णस्य योगाद्धेतोर्विडम्ब्यमानानुक्रियमाणा ते विवाहधूमेनारुणलोचनश्रीः । स्मारकत्वेनेति शेषः । मामक्षिणोदपीडयत् ॥

३० ॥ उपान्तेति । उपान्तवानीरवनोपगूढानि पर्यन्तवञ्जुलवनच्छन्नान्यालक्ष्या ईषद्दृश्याः पारिप्लवाश्चञ्चलाः सारसा येषु तान्यमूनि पम्पासलिलानि पम्पासरोजलानि दूरादवतीर्णा मे दृष्टिरत एव खेदात्पिबतीव ॥ न विहातुमुत्सहत इत्यर्थः ॥

३१ ॥ अत्रेति । अत्र पम्पासरस्यन्योन्यस्मै दत्तोत्पलकेसराण्यवियुक्तानि र-

---

accompanied with tremor (*i. e.* remembering how you rushed in my arms being terrified by the thundering, &c.), which I had enjoyed before, with great difficulty did I pass (with complacency) the roar of clouds that rolled in the caves of the mountain.

29. Where the beauty of your eyes red with nuptial smoke, being imitated by the new flowers of Kandali the buds of which had fully opened by reason of their coming in contact with the vapours of the earth drenched by torrents of rains, pained me.

30. My sight descending from a great height drinks, as it were, with pain these waters of the Pampâ, which are covered by the thickets of cane plants grown on its banks, and where brisk Sârasa birds (cranes) are discernible to some extent.

31. Here, my dear, couples of unseparated *Chakravâka* birds

---

29. B. च भिन्न° for विभिन्न°. C. I. K. with Hem., Val., and Vijay., अक्षणोत् for अक्षिणोत् . A. C. with Hemâdri, विडम्बमाना for विडम्ब्यमाना. B. C. I. °धूमाकुल° for °धूमारुण°.

30. K. गृहोपगूढानि for वनोपगूढानि. R. with Val., and Vijay., वे- दात् for खेदात्.

इमां तटाशोकलतां च तन्वीं स्तनाभिरामस्तबकाभिनम्राम् ।
त्वत्प्राप्तिबुद्ध्या परिरब्धुकामः सौमित्रिणा साश्रमहं निषिद्धः ॥ ३२ ॥
अमूर्विमानान्तरलम्बिनीनां श्रुत्वा स्वनं काञ्चनकिङ्किणीनाम् ।
प्रत्युद्व्रजन्तीव खमुत्पतन्त्यो गोदावरीसारसपङ्क्तयस्त्वाम् ॥ ३३ ॥

थाङ्गनाम्नां द्वन्द्वानि चक्रवाकमिथुनानि ते तव दूरान्तरवर्तिना मया हे प्रिये सस्पृहं साभिलाषमीक्षितानि ॥ तदानीं त्वामस्मार्षमित्यर्थः ॥

३२ ॥ इमामिति । किं च । स्तनवदभिरामाभ्यां स्तबकाभ्यामभिनम्रां तन्वीमिमां तटाशोकस्य लतां शाखां त्वत्प्राप्तिबुद्ध्या त्वमेव प्राप्तेति भ्रान्त्या परिरब्धुमालिङ्गितुं कामो यस्य सोऽहं सौमित्रिणा लक्ष्मणेन सास्रं निषिद्धः ॥ नेयं सीतेति निवारितः ॥ परिरब्धुकाम इत्यत्र "तुं काममनसोरपि" इति वचनान्मकारलोपः ।

३३ ॥ अमूरिति । विमानस्यान्तरेष्ववकाशेषु लम्बन्ते यास्तासां काञ्चनकिङ्किणीनां स्वनं श्रुत्वा स्वयूथशब्दभ्रमात्खमाकाशमुत्पतन्त्योऽमूर्गोदावरीसारसपङ्क्तयस्त्वां प्रत्युद्व्रजन्तीव ॥

---

who interchanged lotus fibres among themselves (who gave stalks of lotus to each other) were wistfully gazed at by me, situated as I was at a place far off from thee.

32. This is that slender As'oka-branch on the bank, which bent down under (the weight of) a pair of beautiful cluster of flowers appearing like breasts, and which I desired to embrace, under the impression, that you had been found out (mistaking it for yourself), but I was prevented by the son of Sumitrá with tears in his eyes !

33. On hearing the sound of small golden bells hanging from the hollow spaces of the celestial car, these troops of Sárasa birds of the river Godávari flying up to the sky are, as it were, coming forward to receive you.

---

32. B. C. H. I. K. R. with Hem., Val., and Vijay., अवनम्रां for अभिनम्रां. A. परिरप्स्यमाणः, B. C. H. I. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., परिरिप्समानः for परिरब्धुकामः. Hemádri notices the reading of A. Ms. He also notices the reading of Mallinâtha. B. C. E. H. with Su., and Vijay., साश्रुः for साश्रम्. C. R. निषिद्धं for निषिद्धः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also reads साश्रुः [अश्रुभिः सहवर्तमानः] and notices साश्रमहं निषिद्धं.

33. C. R. with Chá., Din., Su., and Vijay., विमानान्तविलम्बिनीनां for विमानान्तरलम्बिनीनां. Châritravardhana : "कीदृश्यो विमानस्य पुष्पकस्यान्तं नैकट्यं तत्र विलम्बिनीनां लम्बमानानाम्" &c. A. D. अमुं for अमूः.

एषा त्वया पेशलमध्ययापि घटाम्बुसंवर्धितबालचूता ।
आह्लादयत्युन्मुखकृष्णसारा दृष्टा चिरात्पञ्चवटी मनो मे ॥ ३४ ॥
अत्रानुगोदं मृगयानिवृत्तस्तरंगवातेन विनीतखेदः ।
रहस्त्वदुत्सङ्गनिषण्णमूर्धा स्मरामि वानीरगृहेषु सुप्तः ॥ ३५ ॥

३४ ॥ एषेति । पेशलमध्ययापि । भारक्षमयापीत्यर्थः । त्वया घटाम्बुभिः संवर्धिता बालचूता यस्याः सा । उन्मुखा अस्मदभिमुखाः कृष्णसारा यस्यां सा चिराद्दृष्टैषा पञ्चवटी मे मन आह्लादयत्यानन्दयति ॥

३५ ॥ अत्रेति । अत्र पञ्चवट्याम् । गोदा गोदावरी । तस्याः समीपेऽनुगोदम् ॥ " अनुर्यत्समया " इत्यव्ययीभावः ॥ मृगयाया निवृत्तस्तरंगवातेन विनीतखेदो रहो रहसि ॥ अत्यन्तसंयोगे द्वितीया ॥ त्वदुत्सङ्गनिषण्णमूर्धा सन्नहं वानीरगृहेषु सुप्तः स्मरामि ॥ वाक्यार्थः कर्म । सुप्त इति यत्तत्स्मरामीत्यर्थः ॥

---

34. This Panchavati, where the young mango-trees were reared up with jarfuls of water poured by yourself, though of slender waist, and where the black-antelopes are looking towards us with their heads raised, being seen after a long time, gladdens my mind.

35. Here in the arbours of reeds, on the banks of the Godávarî I remember to have slept, resting my head upon your lap in

---

34. A. J. with Chá., Din., and Su., पेलव°, D. E. H. with Val., and the text only of Vijay., कोमल° for पेशल°. D. बालचूतान् for बालचूता. A. J. आनन्दयति, B. with Chá., and Din., आक्रन्दयति for आह्लादयति. Cháritravardhana: " आक्रन्दयन्त्युत्कण्ठयति." B. with Val., and Su., उन्मदकृष्णसारा, A. C. D. with Chá., and Din., उन्मुखनीलकण्ठा for उन्मुखकृष्णसारा. Cháritravardhana : " तथोन्मुखा नीलकण्ठा मयूरा यस्यां सा ॥ नीलोत्पलदलाभिरामं रामं विलोक्य जामृतोऽयमिति भ्रान्तैर्मयूराणामुन्मुखत्वमिति भावः ॥ उक्तञ्चान्यत्र ॥ " वाक्ष्य राघवमुपात्तकार्मुकं सन्दधानमवमेघशंकया । तत्र तत्र ननृतुः शिखण्डिनो दर्शनादुपरि वाहनोन्मुखाः " ॥ Hemádri has almost the same : " नीलश्यामारामावलोकनेन शब्दवद्भयोन्मुख्यात्कृष्णसारा मयूरा इति वा. " So do Sumativijaya and Vijayânandasúris'varacharaṇasevaka. One of the three Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with Mallinátha in reading आह्लादयति.

35. K. मृगयानुवृत्तः for मृगयानिवृत्तः. A. C. D. with Chá., and Din., निवृत्तखेदः for विनीतखेदः. Cháritravardhana : " निवृत्तो गतः खेदो यस्य सः". A. D. with Val., and Din., °निषद्र°. C. I. with Chá., निषक्त° for °निषण्ण°. Cháritravardhana : " निषक्तो निहितो मूर्धोत्तमाङ्गं येन स तथा. " B. C.

भ्रूभेदमात्रेण पदान्मघोनः प्रभ्रंशयां यो नहुषं चकार ।
तस्याविलाम्भःपरिशुद्धिहेतोर्भौमो मुनेः स्थानपरिग्रहोऽयम् ॥ ३६ ॥
त्रेताग्निधूमाग्रमनिन्द्यकीर्तेस्तस्येदमाक्रान्तविमानमार्गम् ।
घ्रात्वा हविर्गन्धि रजोविमुक्तः समश्नुते मे लघिमानमात्मा ॥ ३७ ॥

३६ ॥ भ्रूभेदेति । यो मुनिर्भ्रूभेदमात्रेण भ्रूभङ्गेणैव नहुषं राजानं मघोनः पदादिन्द्रत्वात्प्रभ्रंशयांचकार प्रभ्रंशयति स्म । आविलाम्भःपरिशुद्धिहेतोः कलुषजलप्रसादहेतोस्तस्य मुनेरगस्त्यस्य । अगस्त्यस्योदये शरदि जलं प्रसीदतीत्युक्तं प्राक् । भूमौ भवो भौमः । स्थानपरिग्रह आश्रमोऽयम् । दृश्यत इति शेषः । भौम इत्यनेन दिव्योऽप्यस्तीति भावः ॥ परिगृह्यत इति परिग्रहः । स्थानमेव परिग्रह इति विग्रहः ॥

३७ ॥ त्रेतेति । अनिन्द्यकीर्तेस्तस्यागस्त्यस्याक्रान्तविमानमार्गम् । हविर्गन्धोऽस्यास्तीति हविर्गन्धि । त्रेताग्निरग्नित्रयम् ॥ "अग्नित्रयमिदं त्रेता" इत्यमरः ॥ त्रेताग्नेर्धूमाग्रमिदं घ्रात्वाघ्राय रजसो गुणाद्विमुक्तो मे आत्मा लघिमानं लघुत्वं समश्नुते प्राप्नोति ॥

---

solitude, on returning from the chase, and my fatigue was lessened by the breeze blowing over the waves of that river.

36. This is the place which has been accepted for an earthly abode by that Muni (Agastya), who with a mere frown caused Nahusha to fall down from the place of Indra, and who is the cause of clearness to the turbid water.

37. Having smelt this spire of the smoke rising up from the

E. H. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., सुप्तं for सुप्तः. Cháritravardhana and Dinakara notice this reading :— "सुप्तं" इति पाठे स्मरामीति वर्तमानप्रयोगे मृगयां इत्यादिभूतप्रयोगानां सम्बन्धासम्भवात् । "सुप्तः" इति समीचीनः पाठः । अथ वा । स्म इतिपदं पृथक् क्रियते रामीति पृथक् सुप्तं शयनं रामि स्म । रा आदानेऽस्मान्मिप् । गृहीतवानस्मीत्यर्थः." Also Hemadri, "वानीर गृहेषु सुप्तं स्म रामि" इति वा.

36. B. E. H. K. R. with Hem., Chá., Din., Su., Vijay., and the text only of Val., भ्रूभंग° for भ्रूभेद°. C. D. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., नघुषं for नहुषं. A. C. D. with Chá., and Su., प्राभ्रंशयद्यो नघुषं for प्रभ्रंशयां यो नहुषं चकार. A. C. D. with Chá., and Din., वर्षाविलाम्भःपरिशुद्धिहेतोः for तस्याविलाम्भःपरिशुद्धिहेतोः. Cháritravardhana :— "कीदृशस्य वर्षाकालीनानामम्भसां जलानां परिशुद्धिर्नैर्मल्यं तस्य हेतुः कारणं तस्य." C. I. भूमौ for भौमः.

37. B. C. E. I. R. with Hem., Chá., and Din., उदग्र° for अ-

एतन्मुनेर्मानिनि शातकर्णेः पञ्चाप्सरो नाम विहारवारि ।
आभाति पर्यन्तवनं विदूरान्मेघान्तरालक्ष्यमिवेन्दुबिम्बम् ॥ ३८ ॥
पुरा स दर्भाङ्कुरमात्रवृत्तिश्चरन्मृगैः सार्धमृषिर्मघोना ।
समाधिभीतेन किलोपनीतः पञ्चाप्सरोयौवनकूटबन्धम् ॥ ३९ ॥

३८ ॥ एतदिति । हे मानिनि । शातकर्णेर्नाम मुनेः संबन्धि पञ्चाप्सरो नाम पञ्चाप्सर इति प्रसिद्धम् । पञ्चाप्सरसो यस्मिन्सन्तीति विग्रहः । पर्यन्तेषु वनानि यस्य तत्पर्यन्तवनमेतद्विहारवारि क्रीडासरो विदूरान्मेघानामन्तरं मध्य आलक्ष्यमीषद्दृश्यम् ॥ " आ ईषदर्थेऽभिव्याप्तौ " इत्यमरः ॥ इन्दुबिम्बमिव । आभाति ॥

३९ ॥ पुरेति । पुरा दर्भाङ्कुरमात्रवृत्तिस्तन्मात्राहारो मृगैः सार्धं सह चरन्स ऋषिः समाधेस्तपसो भीतेन मघोनेन्द्रेण पञ्चानामप्सरसां यौवनम् ॥ "तद्धितार्थ-" इत्यादिनोत्तरपदसमासः ॥ तदेव कूटबन्धं कपटयन्त्रमुपनीतः ॥ " उन्माथः कूटबन्धः स्यात् " इत्यमरः ॥ किलेत्यैतिह्ये ॥ मृगसाहचर्यान्मृगवदेव बद्ध इति भावः ॥

---

three fires—the smoke which has reached the path of celestial vehicles (the sky), and which is charged with the fragrance of oblations of that sage who is of an unstained fame, my soul being freed from *Rajoguṇa* (all impurity) enjoys lightness (feels light).

38. O lady of exalted mind, this is the pleasure-lake named, *Panchāpsaras* of the sage S'ātakarṇi (a tank where the Muni used to sport), and which environed by woods looks from a great distance like the disk of the moon slightly visible from among the clouds.

39. It is said that formerly roaming in company with the deer and maintaining himself only upon the shoots of Darbha-grass

---

नित्य " A. C. D. with Su., महिमानं for लघिमानं. Sumativijaya : " महिमानं महत्त्वं समश्नुते. "

38. B. C. H. I. J. K. R. with Val., Su., and Vijay., शातकर्णेः, D. शातकीर्णेः, D₂. with Chāritravardhana. माण्डकर्णेः. A. with Hemādri and Dinakara, माण्डकर्णेः. Sumativijaya notices the reading of Chāritravardhana.

39. B. °भेदेन for भीतेन. B. C. K. with Chā., Din., Val., Su., and Vijay., अभिनीतः for उपनीतः. D. and the text only of Vijay., यंत्रबन्धं for कूटबन्धं.

तस्यायमन्तर्हितसौधभाजः प्रसक्तसंगीतमृदङ्गघोषः ।
वियद्गतः पुष्पकचन्द्रशालाः क्षणं प्रतिश्रुन्मुखराः करोति ॥ ४० ॥
हविर्भुजामेधवतां चतुर्णां मध्ये ललाटंतपसप्तसप्तिः ।
असौ तपस्यत्यपरस्तपस्वी नाम्ना सुतीक्ष्णश्चरितेन दान्तः ॥ ४१ ॥
अमुं सहासप्रहितेक्षणानि व्याजार्धसंदर्शितमेखलानि ।
नालं विकर्तुं जनितेन्द्रशङ्कं सुराङ्गनाविभ्रमचेष्टितानि ॥ ४२ ॥

४० ॥ तस्येति । अन्तर्हितसौधभाजो जलान्तर्गतप्रासादगतस्य तस्य शातकर्णेरयं प्रसक्तः संततः संगीतमृदङ्गघोषो वियद्गतः सन्पुष्पकस्य चन्द्रशालाः शिरोगृहाणि ॥ " चन्द्रशाला शिरोगृहम् " इति हलायुधः ॥ क्षणं प्रतिश्रुद्भिः प्रतिध्वानैर्मुखरा ध्वनन्तीः करोति ॥ " स्त्री प्रतिश्रुत्प्रतिध्वाने " इत्यमरः ॥

४१ ॥ हविरिति । नाम्ना सुतीक्ष्णः सुतीक्ष्णनामा चरितेन दान्तः सौम्योऽसावपरस्तपस्वी । एधवतामिन्धनवताम् ॥ "काष्ठं दार्विन्धनं त्वेधः" इत्यमरः ॥ चतुर्णां हविर्भुजामग्नीनां मध्ये । ललाटं तपतीति ललाटंतपः ॥ " असूर्यललाटयोर्दृशितपोः " इति खश्प्रत्ययः ॥ " अरुर्द्विषत्--" इत्यादिना मुमागमः ॥ ललाटंतपः सप्तसप्तिः सप्ताश्वः सूर्यो यस्य स तथोक्तः सन् । तपस्यति तपश्चरति ॥ " कर्मणो रोमन्थतपोभ्यां वर्तिचरोः " इति क्यङ् ॥ " तपसः परस्मैपदं च " इति वक्तव्यम् ॥

४२ ॥ अमुमिति । जनितेन्द्रशङ्कम् । तपसेति शेषः । अमुं सुतीक्ष्णं सहासं प्रहितानीक्षणानि दृष्टयो येषु तानि । व्याजेन केनचिन्निमेषेण । अर्धमीषत्संदर्शिता

---

that sage was enticed into (*lit.* brought to) the snare of the youth of five nymphs by Indra, afraid of his (Muni's) asceticism.

40. This sound of tabour at the continuous music for him who lives in a palace underneath (hidden under) the waters reaching the skies makes the rooms on the top of Pushpaka car resound, for a time, with echoes.

41. Here is another ascetic by name Sutikshna but self-restrained in his actions, who is practising asceticism standing in the midst of four fires fed with fuel, and having the seven-horsed sun scorching his forehead.

42. Him who had aroused a suspicion in Indra, the blandishments (*lit.* graceful gestures) of the celestial damsels in which they

---

40. C. I. अस्य for तस्य. A. B. E. R. with Vallabha, प्रयुक्त° for प्रसक्त°. B. with Su., °शब्दः, D. with Vallabha, °नादः for °घोषः.

41. D. इति तप्स्यति for तपस्यति.

42. D. प्रहास° for सहास°. Hemādri notices the reading.

एषोऽक्षमालावलयं मृगाणां कण्डूयितारं कुशसूचिलावम् ।
सभाजने मे भुजमूर्ध्वबाहुः सव्येतरं प्राध्वमितः प्रयुङ्क्ते ॥ ४३ ॥
वाचंयमत्वात्प्रणतिं ममैष कम्पेन किंचित्प्रतिगृह्य मूर्ध्नः ।
दृष्टिं विमानव्यवधानमुक्तां पुनः सहस्रार्चिषि संनिधत्ते ॥ ४४ ॥

मेखला येषु तानि सुराङ्गनाभिरिन्द्रप्रेषिताभिः विभ्रमा विलासा एव चेष्टितानि विकर्तुं स्खलयितुमलं समर्थानि न । बभूवुरिति शेषः ॥

४३ ॥ एष इति । ऊर्ध्वबाहुरेषः सुतीक्ष्णोऽक्षमाला वलयो यस्य तं मृगाणां कण्डूयितारम् । कुशा एव सूचयस्ता लुनातीति कुशसूचिलावस्तम् ॥ ॥ "कर्मण्यण्" इत्यण् ॥ एभिर्विशेषणैर्जपशीलत्वं भूतदया कर्तृत्वं च द्योत्यते । सव्यादितरं दक्षिणं भुजं मे मम सभाजने संमाननिमित्ते ॥ "निमित्तात्कर्मयोगे" इति सप्तमी ॥ इतः प्राध्वं प्रकृतानुकूलबन्धं प्रयुङ्क्ते । "आनुकूल्यार्थकं प्राध्वम्" इत्यमरः ॥ अव्ययं चैतत् ॥

४४ ॥ वाचंयमेति । एष सुतीक्ष्णः । वाचं यच्छतीति वाचंयमो मौनव्रती ॥ "वाचि यमो व्रते" इति खच्प्रत्ययः ॥ तस्य भावस्तत्त्वात्मम प्रणतिं किंचिन्मूर्ध्नः कम्पेन प्रतिगृह्य विमानेन व्यवधानं तिरोधानं तस्मान्मुक्ताम् ॥ "अपेतापोढमुक्तपतित—" इत्यादिना पञ्चमीसमासः ॥ दृष्टिं पुनः सहस्रार्चिषि सूर्ये संनिधत्ते । सम्यग्धत्त इत्यर्थः ॥ अन्यथाकर्मकत्वप्रसङ्गात् ॥

---

cast (on him) glances attended with smiles and under some pretext or other partially manifested their zones, were not able to corrupt.

43. Here he with one of his arms (*i. e.* left), always raised up directs his right arm this way (*i. e.* in the direction of the car) so as to greet me (*i. e.* in a manner suitable to greeting me)—the arm that has the rosary of रुद्राक्ष for its bracelet, and which scratches the deer and cuts the sharp ends of the Kus'a-grass.

44. This sage having accepted of my salutation with a slight nod of the head on account of his vowed taciturnity again directs his eyes freed from the obstruction caused by my celestial car towards the thousand-rayed sun.

---

43. B. with Su., संभावयन for सभाजने. Sumativijaya : "संभावयन्कथयन् ." D. उग्रतजाः for ऊर्ध्वबाहुः. B. C. E. H. I. K. R. with Val., Su., and Vijay., प्रांशु for प्राध्वं. A. C. इति for इतः. Hemâdri notices the reading. A. C. with Châ., Su., and Vijay., first read the 44th verse and then the 43rd.

44. A. E. H. with Vijay., कंपेन मूर्ध्नः प्रतिगृह्य किंचित् for कंपेन किंचित्प्रतिगृह्य मूर्ध्नः. B. I. with Châ., and Val., मुक्त for मुक्तां. And construe it with सहस्रार्चिषि. K. स च for पुनः.

अदः शरण्यं शरभङ्गनाम्नस्तपोवनं पावनमाहिताग्नेः ।
चिराय संतर्प्य समिद्भिरग्निं यो मन्त्रपूतां तनुमप्यहौषीत् ॥ ४५ ॥
छायाविनीताध्वपरिश्रमेषु भूयिष्ठसंभाव्यफलेष्वमीषु ।
तस्यातिथीनामधुना सपर्या स्थिता सुपुत्रेष्विव पादपेषु ॥ ४६ ॥
धारास्वनोद्गारिदरीमुखोऽसौ शृङ्गाग्रलग्नाम्बुदवप्रपङ्कः ।
बध्नाति मे बन्धुरगात्रि चक्षुर्दृप्तः ककुद्मानिव चित्रकूटः ॥ ४७ ॥

४५ ॥ अद इति । शरणे रक्षणे साधु शरण्यम् । पावयतीति पावनम् । अदो दृश्यमानं तपोवनमाहिताग्नेः शरभङ्गनाम्नो मुनेः संबन्धि ॥ यः शरभङ्गश्चिराय चिरमग्निं समिद्भिः संतर्प्य ततो मन्त्रैः पूतां शुद्धां तनुमप्यहौषीद्धुतवान् ॥ जुहोतेर्लुङ् ॥

४६ ॥ छायेति । अधुनास्मिन्काले तस्य शरभङ्गस्य संबन्धिन्यतिथीनां सपर्यातिथिपूजा ॥ " पूजा नमस्यापचितिः सपर्यार्चार्हणाः समाः " इत्यमरः ॥ छायाभिर्विनीतोऽपनीतोऽध्वपरिश्रमो येष्वेषु भूयिष्ठानि बहुतमानि संभाव्यानि श्लाघ्यानि फलानि येषां तेष्वमीषु पादपेषु सुपुत्रेष्विव स्थिता ॥ तत्पुत्रैरिव पादपैरनुष्ठीयत इत्यर्थः ॥

४७ ॥ धारेति । धारा निर्झरधाराः । यद्वा धारया सातत्येन स्वनोद्गारिदर्य एव मुखं यस्य सः । शृङ्गं शिखरं विषाणं च । तस्याग्रे लग्नोऽम्बुद एव वप्रपङ्को वप्रक्रीडासक्तपङ्को यस्य सः । असौ चित्रकूटो हे बन्धुरगात्रि उन्नतानताङ्गि ॥ " बन्धुरं तून्नतानतम् " इत्यमरः ॥ दृप्तः ककुद्मान्वृषभ इव मे चक्षुर्बध्नात्यत्यन्तासक्तं करोति ॥

45. This purifying penance-grove before us which is a place of refuge (which offers protection to all) belongs to the sage named Sarabhanga who had kept a sacred fire and who having propitiated it with the sacred fuel for a long time, at last offered his body consecrated with Mantras to that fire.

46. At present, the duty of reception (or hospitality) of the guests has devolved upon these trees which are, as it were, the virtuous sons of the sage, which remove the fatigue of journey by offering their shade and which abound with fruits worthy of praise.

47. O thou of un-even limbs, yonder the mount Chitrakū*t*a with its mouth of caves resounding with the sound of rivulets, and having the clouds resting on its peaks and hence appearing like a

47. E. H. and the text only of Vijay., °वप्रकंपः for °वप्रपंकः. A. C. with Chá., Din., Su., and Vijay., दृष्टः for दृप्तः. A. C. with Vallabha first read the 48th verse and then the 47th.

एषा प्रसन्नस्तिमितप्रवाहा सरिद्विदूरान्तरभावतन्वी ।
मन्दाकिनी भाति नगोपकण्ठे मुक्तावली कण्ठगतेव भूमेः ॥ ४८ ॥
अयं सुजातोऽनुगिरं तमालः प्रवालमादाय सुगन्धि यस्य ।
यवाङ्कुरापाण्डुकपोलशोभी मयावतंसः परिकल्पितस्ते ॥ ४९ ॥

४८ ॥ एषेति । प्रसन्नो निर्मलः स्तिमितो निःस्पन्दः प्रवाहो यस्याः सा विदूरस्यान्तरस्य मध्यवर्त्यवकाशस्य भावात्तन्वी दूरदेशवर्तित्वात्तनुत्वेनावभासमाना मन्दाकिनी नाम काचिच्चित्रकूटनिकटवर्तिन्येषा सरिन्नगोपकण्ठे भूमेः कण्ठगता मुक्तावलीव भाति ॥ अत्र नगस्य शिरस्त्वं तदुपकण्ठस्य कण्ठत्वं च गम्यते ॥

४९ ॥ अयमिति । गिरेः समीपेऽनुगिरम् ॥ " गिरेश्च सेनकस्य " इति समासान्तष्टच्प्रत्ययः ॥ सुजातः स तमालोऽयं दृश्यते । यस्य तमालस्य । शोभनो गन्धो यस्य तत्सुगन्धि ॥ " गन्धस्य-- " इत्यादिनेकारः समासान्तः ॥ प्रवालं पल्लवमादाय मया ते यवाङ्कुरवदापाण्डौ कपोले शोभी शोभते यः सोऽवतंसः परिकल्पितः ॥

---

wild bull whose cave-like (yawning) mouth emits a thundering sound (bellowing) with mud sticking to the points of its horns on account of वप्रक्रीडा (*i. e.* playfully butting against a rock or mound), rivets my eyes.

48. Yonder is the river Ma*n*dakini with its limpid and serene currents of water, appearing thin on account of the intervention of a long distance looks like a pearl-necklace hanging from the neck of the earth near the mountain.

49. There stands by the side of the mountain the noble Tamála tree having taken a fragrant blossom of which I made for you an ear-ornament which shone like the sprout of Yavas on your slightly pale cheeks.

---

49. A. C. and the text only of Val., श्रियं. D. with Su., असौ for अयं. D. with Su., प्ररूढः, B. R. with Chá., and the text only of Val., सुरूढः for सुजातः. I. K. R. अनुगिरि for अनुगिरं. D. with Su., नवप्रवालोपचयेन, B. नव प्रवालावचयेन, E. R. and the text only of Val., नव प्रवालोपचयेन for प्रवालमादाय सुगन्धि. B. E. R. and the text only of Vallabha read कर्णार्पितेनाकरवं कपोलमप्रार्थ्यकालागरुपत्रलेखं for the latter half. [E. and Vallabha's text अप्राप्य for अप्रार्थ्य]. E. K. with Chāritravardhana, °लम्बि for °शोभि. R. and the Vallabha's text read the whole verse

अनिग्रहत्रासविनीतसत्त्वमपुष्पलिङ्गात्फलबन्धिवृक्षम् ।
वनं तपःसाधनमेतदत्रेराविष्कृतोदग्रतरप्रभावम् ॥ ५० ॥
अत्राभिषेकाय तपोधनानां सप्तर्षिहस्तोद्धृतहेमपद्माम् ।
प्रवर्तयामास किलानुसूया त्रिस्रोतसं त्र्यम्बकमौलिमालाम् ॥ ५१ ॥
वीरासनैर्ध्यानजुषामृषीणाममी समध्यासितवेदिमध्याः ।
निवातनिष्कम्पतया विभान्ति योगाधिरूढा इव शाखिनोऽपि ॥ ५२ ॥

५० ॥ अनिग्रहेति । अनिग्रहत्रासा दण्डभयरहिता अपि विनीताः सत्त्वा जन्तवो यस्मिंस्तत् । अपुष्पलिङ्गात्पुष्परूपनिमित्तं विनैव फलबन्धिनः फलग्राहिणो वृक्षा यस्मिंस्तत् । अत एवाविष्कृतोदग्रतरप्रभावमत्रेर्मुनेस्तपःसाधनं वनमेतत् ।

५१ ॥ अत्रेति । अत्र वनेऽनुसूयात्रिपत्नी । सप्त च त ऋषयश्च सप्तर्षयः ॥ " दिक्संख्ये संज्ञायाम् " इति तत्पुरुषः ॥ तेषां हस्तैरुद्धृतानि हेमपद्मानि यस्यास्तां त्र्यम्बकमौलिमालां हरशिरःस्रजं त्रिस्रोतसं भागीरथीं तपोधनानामृषीणामभिषेकाय स्नानार्थं प्रवर्तयामास प्रवाहयामास ॥ किलेत्यैतिह्ये ॥

५२ ॥ वीरेति । वीरासनैर्जयसाधनैः । ध्यानं जुषन्ते सेवन्त इति ध्यानजुषः ।

---

50. This is the holy grove of Atri, a means of accomplishing asceticism, the wild animals in which have been tamed without the fear of chastisement, where the trees have been bearing fruits without having put forth flowers the cause (of fruits) and which therefore displays the mighty power of the sage.

51. Here for the ablutions of the ascetics (*lit.* those whose wealth is their asceticism) Anusúyá is said to have caused the three-streamed river (the Gangá) to flow—the river that serves as a chaplet on the crown of the three-eyed god (S'iva), the golden lotuses in which are plucked by the hands of the seven sages.

52. Even these trees in the middle of the Vedis of the sages

---

thus :—" प्रियं सुहृद्दोऽनुगिरं तमालस्तव प्रवालोपचयेन यस्य । कर्णार्पितेनाकरवं कपोलमभार्ध्यकालागुरुपत्रलेखम् " ॥

50. D. अपुण्यलिङ्गान्यमपुण्य°, B. अपुष्पहिंसाफलबन्धि for अपुष्पलिङ्गात्फलबन्धि. I. उदग्रतपः° for उदग्रतर.° D. K. °प्रवाहं for °प्रभावं.

51. I. with Cháritravardhana, अनसूया for अनुसूया.

52. C. D. R. ध्यानभृतां for ध्यानजुषां. B. C. R. with Chá., Din., and

त्वया पुरस्तादुपयाचितो यः सोऽयं वटः श्याम इति प्रतीतः ।
राशिर्मणीनामिव गारुडानां सपद्मरागः फलितो विभाति ॥ ५३ ॥
क्वचित्प्रभालेपिभिरिन्द्रनीलैर्मुक्तामयी यष्टिरिवानुविद्धा ।
अन्यत्र माला सितपङ्कजानामिन्दीवरैरुत्खचितान्तरेव ॥ ५४ ॥

तेषां तैरुपविश्य ध्यायतामृषीणां संबन्धिनः समभ्यासितवेदिमध्याः । इदं वीरासनस्थानीयम् । अमी शाखिनोऽपि निवाते निष्कम्पतया योगाधिरूढा इव ध्यानभाज इव विभान्ति । ध्यायन्तो निश्चलाङ्गा भवन्ति ॥ वीरासनं वसिष्ठः—" एकपादमथैकस्मिन्विन्यस्योरुणि संस्थितम् । इतरस्मिंस्तथा चान्यं वीरासनमुदाहृतम् " ॥

५३ ॥ त्वयेति । त्वया यः पुरस्तात्पूर्वमुपयाचितः प्रार्थितः ॥ तथा च रामायणे—" न्यग्रोधं तमुपस्थाय वैदेही वाक्यमब्रवीत् । नमस्तेऽस्तु महावृक्ष पालयेन्मे व्रतं पतिः " इति ॥ श्याम इति प्रतीतः स वटोऽयं फलितः सन् । सपद्मरागो गारुडानां हरिन्मणीनां मरकतानां राशिरिव । विभाति ॥

५४--५७ ॥ " क्वचित्—" इत्यादिना चतुर्भिः श्लोकैः प्रयागे गङ्गायमुनासंगमं

---

who devote themselves to meditation in the Vîrâsana posture, appear, absorbed in (Yoga) meditation, as it were, on account of the stillness caused by the absence of breeze.

53. This is the same Banian tree known by the name of S'yâma, whose help was solicited by you on some former occasion. Covered with fruits it appears like a heap of emeralds mixed with rubies.

54–57. Look here, O lady of faultless limbs, here is the stream

---

Su., मुनीनां for ऋषीणां. B. C. E. H. I. K. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., समाध्यासित for समभ्यासित. B. C with Hem., Châ., Din., Su., Vijay., and the text only of Val., °बन्धाः for °मध्याः. Châritravardhana and Sumativijaya : " वेदिबन्धो मूलवेदिका येषां." One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. A. निवातनिष्कम्पितया, B. निवातनिष्पन्दतया. D. E. निर्वातनिष्पन्दतया. C. with Su., and Vijay., निवातनिःकम्पतया, K. निवातनिःकम्पितया for निवातनिष्कम्पतया. A. C with Val., and Su., शाखिनोऽपि for शाखिनोऽपि.

53. A. C. D. with Hemâdri, उपपोषितः for उपयाचितः. Hemâdri : " उपपोषितो वर्द्धितः. Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha and remarks : " उपयाचितः" इति पाठे ॥ " दीयते यत्तु देवेभ्यो मनोराज्यस्य सिद्धये । उपयाचितकं दिव्यं दोहदं [दोहनं Ms.] तद्विदुर्बुधाः ॥ " C₂. with Hemâdri, प्रसिद्धः, B. C. E. H. I. K. R with Val., Su., and Vijay., प्रकाशः for प्रतीतः

54. E. °लोपिभिः, H. °सर्पिभिः for °लेपिभिः. D. उद्ग्रथिता°, C. I. R. with Hem., Val., and Vijay., उत्कचिता° for उत्खचिता°.

क्वचित्खगानां प्रियमानसानां कादम्बसंसर्गवतीव पङ्क्तिः ।
अन्यत्र कालागरुदत्तपत्त्रा भक्तिर्भुवश्चन्दनकल्पितेव ॥ ५५ ॥
क्वचित्प्रभा चान्द्रमसी तमोभिश्छायाविलीनैः शबलीकृतेव ।
अन्यत्र शुभ्रा शरदभ्रलेखा रन्ध्रेष्विवालक्ष्यनभःप्रदेशा ॥ ५६ ॥
क्वचिच्च कृष्णोरगभूषणेव भस्माङ्गरागा तनुरीश्वरस्य ।
पश्यानवद्याङ्गि विभाति गङ्गा भिन्नप्रवाहा यमुनातरंगैः ॥ ५७ ॥

वर्णयति । हे अनवद्याङ्गि पश्य यमुनातरङ्गैर्भिन्नप्रवाहा व्यामिश्रौघा गङ्गा जाह्नवी विभाति । केव । क्वचित्प्रदेशे प्रभया लिम्पन्ति संनिहितमिति प्रभालेपिभिरिन्द्रनीलैरनुविद्धा सह गुम्फिता मुक्तामयी यष्टिरिव हारावलिरिव ॥ अन्यत्र प्रदेशे इन्दीवरैर्नीलोत्पलैरुत्खचितान्तरा सह ग्रथिता सितपङ्कजानां पुण्डरीकाणां मालेव । विभातीति सर्वत्र संबन्धः ॥ क्वचित्कादम्बसंसर्गवती नीलहंससंसृष्टा प्रियं मानसं नाम सरो येषां तेषां खगानां राजहंसानां पङ्क्तिरिव ॥ "राजहंसास्तु ते चञ्चुचरणैर्लोहितैः सिताः" इत्यमरः ॥ अन्यत्र कालागरुणा दत्तपत्त्रा रचितमकरिकापत्त्रा भुवश्चन्दनकल्पिता भक्तिरिव ॥ क्वचिच्छायासु विलीनैः स्थितैस्तमोभिः शबलीकृता कर्बुरीकृता चांद्रमसी प्रभा चन्द्रिकेव ॥ अन्यत्र रन्ध्रेष्वालक्ष्यनभःप्रदेशा शुभ्रा शरदभ्रलेखा शरन्मेघपङ्क्तिरिव ॥ क्वचित्कृष्णोरगभूषणा भस्माङ्गरागेश्वरस्य तनुरिव । विभाति ॥ शेषं व्याख्यातम् ॥

---

of the Gangá which with its current broken by the waves of the Yamuná appears at one place like a necklace full of pearls interwoven with emeralds covering them with splendour; at another place like a chaplet of white lotuses the interval of which is set with blue ones. In some place it looks like a row of birds (flamingoes) fond of the Mánasa-lake, coming in contact with the geese having dark grey wings; in another place it appears like a piece of ground ornamented with (white) sandle, and bearing on it ornamental leaves

---

56. B. J. with Chá., निलीनैः, C. H. K. R. with Val., अभिलीनैः, D. and the text only of Su., विमानैः for विलीनैः. One of the three Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with Mallinátha. E. शबलैः कृतेव for शबलीकृतेव.

57. A. D. with Hemadri, भीषणेव for भूषणेव. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण agrees with Mallinátha and notices भीषणा. Between 57-58 B. E. I. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., read the following verses :—" तमिस्रया शुक्लनिशेव भिन्ना कुन्दस्रगिन्दीवरमालयेव । क्वचिन्नरैः कृष्णमृगत्वचेव भूतिः स्मरारेरिव कण्ठभासा ॥ दृश्यार्द्रभासा शारदमेघलेखा निर्धौतनिस्त्रिंशरुचा दिवेव । गवाक्षकालागुरुधूमराज्या हर्म्यस्थलीलिप्तसुधा नवेव ॥ तुषारसंघातशिलाहिमाद्रेर्योग्यञ्जनप्रस्तरशोभयेव । पतत्त्रिणां मानसगोचराणां श्रेणीव कादम्बविहङ्गपंक्त्या ॥ नितान्तशुद्धस्फटिकाक्षयोगाद्वैदूर्यकान्त्या रसना-

समुद्रपत्न्योर्जलसंनिपाते पूतात्मनामत्र किलाभिषेकात् ।
तत्त्वावबोधेन विनापि भूयस्तनुत्यजां नास्ति शरीरबन्धः ॥ ५८ ॥

५८ ॥ समुद्रेति । अत्र समुद्रपत्न्योर्गङ्गायमुनयोर्जलसंनिपाते संगमेऽभिषे-कात्स्नानात्पूतात्मनां तनुत्यजां शुद्धात्मनां पुंसां तत्त्वावबोधेन तत्त्वज्ञानेन वि-नापि प्रारब्धशरीरत्यागानन्तरं भूयः पुनः शरीरबन्धः शरीरयोगो नास्ति किल । अन्यत्र ज्ञानादेव मुक्तिः । अत्र तु स्नानादेव मुक्तिरित्यर्थः ॥

---

painted with black sandie pa-te. Somewhere it appears like the splendour of the moon variegated by darkness lying in the shade at others it looks like a white streak of autumnal cloud through the openings in which the surface of the sky is little discernible. And in some others it looks like the body of Is vara (S iva) annointed with ashes and adorned with black snakes.

58. Persons with their souls purified by bathing at this confluence of the two wives of the ocean, are never indeed again confined in body even without obtaining the true knowledge of the Supreme Being after they have left their mortal frame.

वलीव । गंगा रवेरात्मजया समेता पुष्यत्युदारं परभागमेषा ॥ नभिन्नेति ॥ नभिन्नेव कृष्णया रात्र्या भिन्ना मिलिता शुक्लनिशा ज्योत्स्नारात्रिरिव । इन्दीवरनीलया नीलो-त्पलस्रजा कुन्दस्रगिव । कृष्णस्य मृगस्य सारंगस्य त्वक्तया इतः सितस्य कृत्तिरिव । स्मरारेः शंभोः कण्ठनाम्ना नीलकण्ठदीप्त्यानुलिप्तदेहभस्मेव । रवेः सूर्यस्यात्मजया पुत्र्या समेता मिलिता गंगा दाक्षिणकुष्टं परभागं गुणोत्कर्षं पुष्यति पुष्णाति चतुर्भिर्वाक्यैः ॥ दृश्यते । निर्धौतः शाणोत्कृष्टो निस्त्रिंशः खड्गस्तस्येव रूप्यस्यान्तया कृष्णस्य सन्ध्यान्त-दृश्या दिवाकीर्तिन शारदा शरत्कालीना मेघलेखेव । गवाक्षाविर्गतया कालागुरुधूमरा-ज्या कृष्णागरुधूमलेखया नवा नूतना हर्म्यस्थलस्याल्पसुधेव ॥ तुरंगेति । विमात्रेरिन्द्रनील-जात्यश्मनस्य साचागश्मनस्य प्रस्तरः शिला तस्य शोभा तया तुषारस्य सेघातो घनीभाव-स्तेन उत्पन्ना शिलेव । कादम्बविहङ्गपंक्त्या कलहंसश्रेण्या मानसगोचरणां पतत्रिणां हंसानां श्रेणी राजिरिव ॥ नितान्तेति । वैडूर्यमणिकान्त्या दीप्त्या नितान्तं शुभ्रस्य स्फटिकस्य योगात्स्मृतानां कान्तानां मालेव शोभते ॥ शेषं व्याख्यातप्रायम् ॥ चा ० ॥ I. R. with Su., read these verses between 53-54. [B. E. with Val., and Su., शुभ्रनिशेव for शुक्लनिशेव. B. R. with Val., and Su , निधूत for निर्धौत . I. R. with Val., and Su., विशेव for दिवेव. I. लेप for लेख. I. R. with Val., and Su., जात्यांजन for जात्यंजन. Val., मानससरोवराणां for मानसगोचराणां. B. R. with Val., and Su., स्फुटिकाश, E. स्फटिकाभ्य for स्फटिकाक्ष. I. R. समेत्य for समेता. B. with Su., पुष्णाति, I. R. पुष्पति for पुष्यति. R. with Val., परभागलेखा for परभागमेषा.]

58. D C. शरीरिणां for तनुत्यजां.

पुरं निषादाधिपतेरिदं तद्यस्मिन्मया मौलिमणिं विहाय ।
जटासु बद्धास्वरुदत्सुमन्त्रः कैकेयि कामाः फलितास्तवेति ॥ ५९ ॥
पयोधरैः पुण्यजनाङ्गनानां निर्विष्टहेमाम्बुजरेणु यस्याः ।
ब्राह्मं सरः कारणमाप्तवाचो बुद्धेरिवाव्यक्तमुदाहरन्ति ॥ ६० ॥
जलानि या तीरनिखातयूपा वहत्ययोध्यामनु राजधानीम् ।
तुरंगमेधावभृथावतीर्णैरिक्ष्वाकुभिः पुण्यतरीकृतानि ॥ ६१ ॥

५९ ॥ पुरमिति । निषादाधिपतेर्गुहस्य तत्पुरमिदम् । यस्मिन्पुरे मया मौलिमणिं विहाय जटासु बद्धासु रचितासु सतीषु सुमन्त्रो हे कैकेयि तव कामा मनोरथाः फलिताः सफला जाता इत्यरुदत् ॥ "रुदिरश्रुविमोचने" इति धातोर्लुङ् ॥

६० ॥ पयोधरैरिति । पुण्यजनाङ्गनानां यक्षस्त्रीणां पयोधरैः स्तनैर्निर्विष्ट उपभुक्तो हेमाम्बुजरेणुर्यस्य तत् । तत्र ताः क्रीडन्तीति व्यज्यते । ब्रह्मण इदं ब्राह्मम् ॥ " नस्तद्धिते " इति टिलोपः ॥ ब्राह्मं सरो मानसाख्यं यस्याः सरय्वाः । बुद्धेर्महत्तत्त्वस्याव्यक्तं प्रधानमिव कारणमाप्तस्य वाचो वेदाः । यद्वा बहुव्रीहिणा मुनयः । उदाहरन्त्याचक्षते ॥

६१ ॥ जलानीति । यूपः संस्कृतः पशुबन्धनार्हो दारुविशेषः । तीरनिखातयूपा या सरयूस्तुरंगमेधा अश्वमेधास्तेष्ववभृथार्थमेवावतीर्णैरवरूढैरिक्ष्वाकुभिरि-

---

59. Here is the town of the lord of the Nishádas in which when I tied my matted hair having first put aside the crown, Sumantra began to weep exclaiming " O Kaikeyi, your desires have been completely fulfilled. "

60. This is the river Sarayú whose source, persons of reliable testimony, declare to be the lake Bráhma, the pollen of whose golden lotuses is enjoyed by (has on account of their sporting in it adhered to) the breasts of the wives of the Puṇyajanas (the Yakshas), as the Invisible Principle (प्रकृति or productive principle) is the cause of intelligence, the great principle.

61. Which with the sacrificial posts erected on its banks

---

59. E. पुरस्तात् for इदं तत. D. E. K. with Din., and Vijay., °मणिम् for मणिम्. E. H. सुमंतुः, Vijay's text, सुमंत: for सुमंत्रः.

60. D. K. निर्घृष्ट° for निर्विष्ट°. A. D. with Cháritravardhana, बुद्धेरिवाव्यक्तमथामनन्ति for बुद्धेरिवाव्यक्तमुदाहरन्ति. Cháritravardhana: " आमनन्ति कथयन्ति. " After the 59th verse Vallabha reads the 63rd and then the 60th and so on.

61. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., °यूपः for °यूपा.

यां सैकतोत्सङ्गसुखोचितानां प्राज्यैः पयोभिः परिवर्धितानाम् ।
सामान्यधात्रीमिव मानसं मे संभावयत्युत्तरकोसलानाम् ॥ ६२ ॥
सेयं मदीया जननीव तेन मान्येन राज्ञा सरयूर्वियुक्ता ।
दूरे वसन्तं शिशिरानिलैर्मां तरंगहस्तैरुपगूहतीव ॥ ६३ ॥

क्ष्वाकुगोत्रापत्यैर्नृपैः पूर्वैः पुण्यतरीकृतान्यतिशयेन पुण्यकृतानि जलान्ययोध्यां राजधानीं नगरीमनु समीपे । तया लक्षितयेत्यर्थः ॥ अनुशब्दस्य "लक्षणेत्थंभूत—" इत्यादिना कर्मप्रवचनीयत्वात्तद्योगे द्वितीया ॥ वहति प्रापयति ॥

६२ ॥ यामिति । यां सरयूं मे मानसम् । सैकतं पुलिनम् । तदेवोत्सङ्गः । तत्र यत्सुखं तत्रोचितानां प्राज्यैः प्रभूतैः पयोभिरम्बुभिः क्षीरैश्च ॥ "पयः क्षीरं पयोऽम्बु च" इत्यमरः ॥ परिवर्धितानां पुष्टानामुत्तरकोसलानामुत्तरकोसलेश्वराणां सामान्यधात्रीं साधारणमातरमिव संभावयति ॥ "धात्री जनन्यामलकी वसुमत्युपमातृषु" इति विश्वः ॥

६३ ॥ सेयमिति । मदीया जननी कौशल्येव मान्येन पूज्येन तेन राज्ञा दशरथेन वियुक्ता सेयं सरयूर्दूरे वसन्तम् । प्रोष्यागच्छन्तमित्यर्थः । मां पुत्रभूतं शिशिरानिलैस्तरंगैरेव हस्तैरुपगूहतीवालिङ्गतीव ॥

---

propels her waters (flows) by the capital of Ayodhyâ,—the waters which are made more holy (than before) by Ikshvâku kings who entered into them for the sacred ablutions necessary for the अश्वमेध sacrifice.

62. Whom my mind honours as the common mother (or nurse) of the lords of the Uttarakosalas, who are familiar with the pleasure of moving on her lap of sandy banks, and who are nourished (or brought up) by the abundance of milk-like waters.

63. And this I say is the river Sarayû which like my mother being separated from the honourable king, my sire, as it were, embraces me being yet at a distance, with her arms of waves the breeze coming from which is cool.

---

62. E. I. with Su., and Vijay., पुण्यैः for प्राज्यैः. Hemâdri notices the reading. D. प्रभूतपुण्यैरिव for सामान्यधात्रीमिव.

63. B. D. जन्येन for मान्येन. Hemâdri notices the reading "जन्येन" इति पाठे जनयतीति जन्यः ॥ "अघ्न्यादय—" इति कर्तरि यत." D. K. and Vijay., विमुक्ता for वियुक्ता. One of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुर्हितैर्विणा also agrees with D. K. and others. B. C. E. H. I. K. R. with Cha., Din., Val., Su., and Vijay., अपि सन्तं for वसन्तं. Hemâdri distinctly with Mallinâtha.

विरक्तसंध्याकपिशं पुरस्ताद्यतो रजः पार्थिवमुज्जिहीते ।
शङ्के हनूमत्कथितप्रवृत्तिः प्रत्युद्गतो मां भरतः ससैन्यः ॥ ६४ ॥
अद्धा श्रियं पालितसंगराय प्रत्यर्पयिष्यत्यनघां स साधुः ।
हत्वा निवृत्ताय मृधे खरादीन्संरक्षितां त्वामिव लक्ष्मणो मे ॥ ६५ ॥
असौ पुरस्कृत्य गुरुं पदातिः पश्चादवस्थापितवाहिनीकः ।
वृद्धैरमात्यैः सह चीरवासा मामर्घ्यपाणिर्भरतोऽभ्युपैति ॥ ६६ ॥

६४ ॥ विरक्तेति । विरक्तातिरक्ता या संध्या तद्वत्कपिशं ताम्रवर्णम् । पृथिव्या इदं पार्थिवम् । रजो धूलिः पुरस्तादग्रतो यतो यस्मात्कारणादुज्जिहीत उद्गच्छति । तस्माद्धनूमत्कथितप्रवृत्तिर्भरतः ॥ हनुरस्यास्तीति हनूमान् ॥ "शरादीनां च" इति दीर्घः ॥ ससैन्यः सन्मां प्रत्युद्गत इति शङ्के तर्कयामि ॥

६५ ॥ अद्धेति । किं च । साधुः सज्जनः स भरतः ॥ "साधुर्वार्धुषिके चारौ सज्जने चापि वाच्यवत्" इति विश्वः ॥ पालितसंगराय पालितपितृप्रतिज्ञाय मे मह्यमनघामदोषां भोगाभावादनुच्छिष्टां किं तु संरक्षितां श्रियम् । मृधे युद्धे खरादीन्हत्वा निवृत्ताय मे लक्ष्मणः संरक्षितामनघां त्वामिव प्रत्यर्पयिष्यत्यद्धा सत्यम् ॥ "सत्ये त्वद्धाञ्जसा द्वयम्" इत्यमरः ॥

६६ ॥ असाविति । असौ पदातिः पादचारी चीरवासा वल्कलवसनो भरतः पश्चात्पृष्ठभागेऽवस्थापिता वाहिनी सेना येन स तथोक्तः सन् ॥ "नद्यृतश्च" इति कप् ॥ गुरुं वसिष्ठं पुरस्कृत्य वृद्धैरमात्यैः सहार्घ्यपाणिः सन्मामभ्युपैति ॥

---

64. Since the dust of the earth as ruddy as the crimson twilight, is rising up before me, I think Bharata to whom the news of my arrival has been communicated by Hanûmân is coming up to me with the army.

65. No doubt that good man will restore to me, who have kept the promise of my father, the royal Fortune (kingdom) well-protected (but not polluted by enjoyment), as Lakshma*n*a restored you well-protected and faultless to me when returned after having killed Khara and others in the battle.

66. Here is Bharata dressed in rags with अर्घ्य (provisions of

---

64. B. C. E. H. I R. with Hem., Chá., Din., Su., and the texts only of Val., and Vijay., °पटलं for °कपिशं. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., यथा. D. यस्मात्, D_2. एतत् for यतः. D. हनुमान् for हनूमत् .

65. B. C. E. H. I. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., अद्य for अद्धा. Cháritravardhana notices the reading of Mallinátha. E. with Hemádri रणे for मृधे.

66. B. C. E. H. I. J. K. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., अर्घं for अर्घ्यं .

पित्रा निसृष्टां मदपेक्षया यः श्रियं युवाप्यङ्कगतामभोक्ता ।
इयन्ति वर्षाणि तया सहोग्रमभ्यस्यतीव व्रतमासिधारम् ॥ ६७ ॥
एतावदुक्तवति दाशरथौ तदीयामिच्छां विमानमधिदेवतया विदित्वा ।
ज्योतिष्पथादवततार सविस्मयाभिरुद्वीक्षितं प्रकृतिभिर्भरतानुगाभिः ॥६८॥

६७ ॥ पित्रेति । यो भरतः पित्रा निसृष्टां दत्तामङ्कमन्तिकमुत्सङ्गं च गतामपि । यां श्रियं युवापि मदपेक्षया मयि भक्त्याभोक्ता तत् ॥ तृन्नन्तत्वात् " न लोक-" इत्यादिना षष्ठीप्रतिषेधः ॥ इयन्ति वर्षाण्येतावतो वत्सरान् ॥ " अत्यन्तसंयोगे च " इति द्वितीया ॥ तया श्रिया सह । स्त्रियेति च गम्यते । उग्रं दुश्चरमासिधारं नाम व्रतमभ्यस्यतीवावर्तयतीव ॥ " युवा युवत्या सार्धं यन्मुग्धभर्तृवदाचरेत् । अन्तर्निवृत्तसङ्गः स्यादासिधारव्रतं हि तत् " इति यादवः ॥ इदं चासिधाराचंक्रमणतुल्यत्वादासिधारव्रतमित्युक्तम् ॥

६८ ॥ एतावदिति । दाशरथौ रामे एतावदुक्तवति सति विमानं पुष्पकम् । तदीयां रामसंबन्धिनीमिच्छामधिदेवतया विदित्वा । तत्प्रेरितं सदित्यर्थः । सविस्मयाभिर्भरतानुगाभिः प्रकृतिभिः प्रजादिभिरुद्वीक्षितं सज्ज्योतिष्पथादाकाशादवततार ॥

---

worship) in his hand, advancing on foot accompanied by the old ministers, having placed Vasistha our family preceptor in front and stationed his army behind.

67. Who, though in youth out of regard for me, did not enjoy the fortune transmitted to him by our father. even though it was placed on his lap (thrust on him). It appears that he has been, as it were, practising with her the rigid vow of असिधारा for so many years (*i. e.* fourteen years).

68. When the son of Das'aratha said so, the celestial vehicle, having known his wish through (under the direction of) the presiding deity, alighted from the path of luminaries (the sky) being gazed at by the subjects who had come after Bharata in wonderment.

---

67. B. C. J. with Hemádri and Dinakara, अतिसृष्टां. A. D. K. with Su., विसृष्टां for निसृष्टां. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinàtha. One of the three Mss. of Chàritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with A. D. K. and Sumativiaya. D. अङ्गगतां for अङ्कगतां. A. C. D. अभुक्त्वा for अभोक्ता. Chàritravardhana also notices the reading. B. D. with Chàritravardhana and the text only of Val., नितान्तकष्टं for तया सहोग्रं.

68. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Cha., Din., Val., Su., and Vijay., ज्योतिःपथात् for ज्योतिष्पथात् .

तस्मात्पुरःसरविभीषणदर्शितेन सेवाविचक्षणहरीश्वरदत्तहस्तः ।
यानादवातरददूरमहीतलेन मार्गेण भङ्गिरचितस्फटिकेन रामः ॥ ६९ ॥
इक्ष्वाकुवंशगुरवे प्रयतः प्रणम्य स भ्रातरं भरतमर्घ्यपरिग्रहान्ते ।
पर्यश्रुरस्वजत मूर्धनि चोपजघ्रौ तद्भक्त्यपोढपितृराज्यमहाभिषेके ॥ ७० ॥
श्मश्रुप्रवृद्धिजनिताकृतिविक्रियांश्च प्लक्षान्प्ररोहजटिलानिव मन्त्रिवृद्धान् ॥
अन्वग्रहीत्प्रणमतः शुभदृष्टिपातैर्वार्तानुयोगमधुराक्षरया च वाचा ॥ ७१ ॥

६९ ॥ तस्मादिति । रामः सेवायां विचक्षणः कुशलो हरीश्वरः सुग्रीवस्तेन दत्तहस्तो दत्तावलम्बः सन् । स्थलज्ञत्वात्पुरःसरो बिभीषणस्तेन दर्शितेनादूरमासन्नं महीतलं यस्य तेन भङ्गिभिर्विच्छित्तिभी रचितस्फटिकेन बद्धस्फटिकेन सोपानपर्वणा मार्गेण तस्माद्यानात्पुष्पकादवातरदवतीर्णवान् ॥ तरतेर्लङ् ॥

७० ॥ इक्ष्वाकिति । प्रयतः स राम इक्ष्वाकुवंशगुरवे वशिष्ठाय प्रणम्यार्घ्यस्य परिग्रहः स्वीकारस्तस्यान्ते पर्यश्रुः परिगतानन्दबाष्पः सन् । भ्रातरं भरतमस्वजतालिङ्गत । तस्मिन्रामे भक्त्यापोढः परिहृतः पितृराज्यमहाभिषेको येन तस्मिन्मूर्धन्युपजघ्रौ च ॥

७१ ॥ श्मश्र्विति । श्मश्रूणां मुखरोम्णां प्रवृद्धिः । संस्काराभावनिबन्धना । तया जनिताकृतिविक्रियान्सतः । अत एव प्ररोहैः शाखावलम्बिभिरधोमुखैर्मूलैर्जटि-

---

69. Then Ráma supporting himself on the arm of the king of monkeys who was clever in his attendance, alighted from the vehicle by a way formed of a flight of steps that were made of marble not far from the surface of the earth, which was pointed out to him by Bibhishana advancing in front.

70. Pure in mind and body as he was, he having bowed down to the spiritual head of the Ikshváku family, after the acceptance of the provisions of worship (अर्घ्य), suffused with tears, embraced his brother Bharata and smelt his head which had been deprived, through his (Bharata's) attachment to him, of the great coronation-water conferring (on Bharata) the kingdom of his father.

71. By casting looks of favour and with a speech full of sweet (kind) words of inquiry about their well-being he received

---

69. E. K. with Val., and Su., स्फटिकेन for स्फटिकेन.

70. A. D. R. सभ्रातरं for स भ्रातरं. All other commentators and ten Mss. with us. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., अर्घ्य for अर्घ्य. A. C. D. with Chá., Din., and Su., पर्यश्रु for पर्यश्रुः. And construe it with भ्रातरं.

71. B. C. H. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., and Su., "आनन" for "आकृति." Hemádri also notices the reading of Mallinátha. B. C. with Chá., and Vijay., तान्; A. with Su., स for च. B. K. with

दुर्जातबन्धुरयमृक्षहरीश्वरो मे पौलस्त्य एष समरेषु पुरःप्रहर्ता ।
इत्यादृतेन कथितौ रघुनन्दनेन व्युत्क्रम्य लक्ष्मणमुभौ भरतो ववन्दे ॥ ७२ ॥
सौमित्रिणा तदनु संससृजे स चैनमुत्थाप्य नम्रशिरसं भृशमालिलिङ्ग ।
रूढेन्द्रजित्प्रहरणव्रणकर्कशेन क्लिश्यन्निवास्य भुजमध्यमुरःस्थलेन ॥ ७३ ॥

लाञ्जटावतः प्रक्षान्न्यग्रोधानिव स्थितान् । प्रणमतो मन्त्रिवृद्धांश्च शुभैः कृपार्द्र-दृष्टिपातैर्वार्त्तस्यानुयोगेन कुशलप्रश्नेन मधुराक्षरया वाचा चान्वग्रहीदनुगृहीत-वान् ॥

७२ ॥ दुर्जात इति । अयं मे दुर्जातबन्धुरापद्बन्धुः ॥ "दुर्जातं व्यसनं प्रोक्तं" इति विश्वः ॥ ऋक्षहरीश्वरः सुग्रीवः । एष समरेषु पुरःप्रहर्ता पौलस्त्यो विभीषणः । इत्यादृतेनादरवता ॥ कर्तरि क्तः ॥ रघूणां नन्दनेन रामेण कथितावुभौ विभीषण-सुग्रीवौ लक्ष्मणमनुजमपि व्युत्क्रम्यालिङ्गनादिभिरसंभाव्य भरतो ववन्दे ॥

७३ ॥ सौमित्रिणेति । तदनु सुग्रीवादिवन्दनानन्तरं स भरतः सौमित्रिणा संस-सृजे संगतः ॥ "सृज विसर्गे" दैवादिकात्कर्तरि लिट् ॥ नम्रशिरसं प्रणतमेनं सौमि-

---

the old ministers who were bowing down to him, and a change on whose bodily appearance was produced by the growth of hair, and who therefore appeared like the fig trees bushy with root-fibres (hanging down from their branches).

72. " This is the king of bears and monkeys who was my friend in adversity,—here is the sun of Pulastya who was foremost in dealing a blow in the battle-field, "—thus introduced by the descendant of Raghu with great regard, Bharata saluted them both passing over Lakshma*n*a (without greeting him).

73. Then he joined with the son of Sumitrá, and he (*i. e.* Lakshma*n*a) having made him rise who had his head bent down

---

Din., and Su., वृक्षान् for प्रक्षान्. D. C. with Hemâdri and Vallabha, मंत्रिपुत्रान् for मंत्रिवृद्धान्. D. R. प्रत्यग्रहीत् for अन्वग्रहीत्. B. C. E. H. K. R. with Vijay., and the text only of Val., दृष्टिदानैः for °दृष्टिपातैः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also reads मंत्रिवृद्धान् and दृष्टिदानैः and notices मंत्रिपुत्रान्.

72. B. C. E. H. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., दुःखैकबन्धुः, D. अज्ञातबन्धुः for दुर्जातबन्धुः. Hemádri and Cháritravardhana : " अंशहरत्वाद्दुःखे एको मुख्यो बन्धुः. " Hemádri notices the reading: "सूर्यपुत्रत्वेनास्माकं बान्धवोऽप्ययं भवद्भिर्न ज्ञायते इत्यर्थः". D. समरे च for समरेषु. A. D. with Hemádri, आदरेण for आदृतेन. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also reads with Mallinátha and notices आदरेण.

73. H. उरस्थलेन for उरःस्थलेन.

रामाज्ञया हरिचमूपतयस्तदानीं कृत्वा मनुष्यवपुरारुरुहुर्गजेन्द्रान् ।
तेषु क्षरत्सु बहुधा मदवारिधाराः शैलाधिरोहणसुखान्युपलेभिरे ते ॥ ७४ ॥
सानुप्लवः प्रभुरपि क्षणदाचराणां भेजे रथान्दशरथप्रभवानुशिष्टः ।
मायाविकल्परचितैरपि ये तदीयैर्न स्यन्दनैस्तुलितकृत्रिमभक्तिशोभाः ॥७५॥

त्रिमुत्थाप्य भृशं गाढमालिलिङ्ग च । किं कुर्वन् । रूढेन्द्रजित्प्रहरणव्रणैः कर्कशेनास्य सौमित्रेरुरःस्थलेन भुजमध्यं स्वकीयं क्लिश्यन्निव पीडयन्निव ॥ क्लिश्नातिरयं सकर्मकः ॥ "क्लिश्नाति भुवनत्रयम्" इति दर्शनात् ॥ ननु रामायणे—" ततो लक्ष्मणमासाद्य वैदेहीं च परंतपः । अभिवाद्य ततः प्रीतो भरतो नाम चाब्रवीत् " इति भरतस्य कानिष्ठ्यं प्रतीयते ॥ किमर्थं ज्यैष्ठ्यमवलम्ब्यानार्जवेन श्लोको व्याख्यातः । सत्यम् । किं तु रामायणश्लोकार्थष्टीकाकृतोक्तः श्रूयताम् ॥ " ततो लक्ष्मणमासाद्य—" इत्यादिश्लोक आसादनं लक्ष्मणवैदेह्योः । अभिवादनं तु वैदेह्या एव । अन्यथा पूर्वोक्तं भरतस्य ज्यैष्ठ्यं विरुध्येतेति ॥

७४ ॥ रामेति । तदानीं हरिचमूपतयो रामाज्ञया मनुष्यवपुः कृत्वा गजेन्द्रानारुरुहुः । बहुधा मदवारिधाराः क्षरत्सु वर्षत्सु तेषु गजेन्द्रेषु ते कपियूथनाथाः शैलाधिरोहणसुखान्युपलेभिरेऽनुबभूवुः ॥

७५ ॥ सानुप्लव इति । सानुप्लवः सानुगः ॥ " अभिसारस्त्वनुसरः सहायोऽनुप्लवोऽनुगः " इति यादवः ॥ क्षणदाचराणां प्रभुर्बिभीषणोऽपि । प्रभवत्यस्मादिति प्रभवः । जनको दशरथः प्रभवो यस्य स दशरथप्रभवो रामः । तेनानुशिष्ट आज्ञप्तः सन्रथान्भेजे ॥ तानेव विशिनष्टि—ये रथा मायाविकल्परचितैः संकल्प-

---

at his feet, embraced him closely with his chest (*lit.* the surface of his chest) hardened by the scars made by the weapons of Indrajit thereby paining as it were, his (Bharata's) breast.

74. Then the chiefs of the monkey legions having assumed human forms on the occasion at the order of Râma, mounted the back of huge elephants. Herein they enjoyed the pleasure of sitting on mountains since the streams of ichor were dripping down from the various parts of their bodies.

75. Even the lord of the night-rangers with his attendants ordered by the son of Das'aratha, took his seat upon the chariots which were not equalled in the beauty of their artificial construc-

---

74. B. C. E. H. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., येषु for तेषु. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinátha. K. with Vijay., मधुवारि° for मदवारि.°

75. B. C. E. H. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., रथं for रथान्. B. C. E. H. with Hem., Châ., Din , Su., and the text only of Vijay., अनुशिष्ट for अनुशिष्टः. And construe it with रथं. B. विकल्पितविधैः, D. with Châritravardhana , विकल्परचनैः for विकल्परचितैः.

भूयस्ततो रघुपतिर्विलसत्पताकमध्यास्त कामगति सावरजो विमानम् ।
दोषातनं बुधबृहस्पतियोगदृश्यस्तारापतिस्तरलविद्युदिवाभ्रवृन्दम् ॥ ७६ ॥
तत्रेश्वरेण जगतां प्रलयादिवोर्वीं वर्षात्ययेन रुचमभ्रघनादिवेन्दोः ।
रामेण मैथिलसुतां दशकण्ठकृच्छ्रात्प्रत्युद्धृतां धृतिमतीं भरतो ववन्दे ॥७७॥

विशेषनिर्मितैरपि तदीयैर्विभीषणीयैः स्यन्दनै रथैस्तुलितकृत्रिमभक्तिशोभास्तुलिता समीकृता कृत्रिमा क्रियया निर्वृत्ता भक्तीनां शोभा येषां ते तथोक्ता न भवन्ति। तेऽपि तत्साम्यं न लभन्त इत्यर्थः ॥ कृत्रिमेत्यत्र " ड्वितः क्त्रिः " इति क्त्रिप्रत्ययः ॥ " क्त्रेर्मम्नित्यम् " इति मबागमः ॥

७६ ॥ भूय इति । ततो रघुपतिः सावरजो भरतलक्ष्मणसहितः सन् । विलसत्पताकं कामेनेच्छानुसारेण गतिर्यस्य तद्विमानं भूयः पुनरपि । बुधबृहस्पतिभ्यां योगेन दृश्यो दर्शनीयस्तारापतिश्चन्द्रो दोषाभवं दोषातनम् ॥ " सायंचिरंप्राह्णे–" इत्यादिना दोषाशब्दादव्ययाट्ट्युप्रत्ययः ॥ तरलविद्युच्चञ्चलतडिदभ्रवृन्दमिव । अध्यास्ताधिष्ठितवान् ॥

७७ ॥ तत्रेति । तत्र विमाने । जगतामीश्वरेणादिवराहेण प्रलयादुर्वीमिव वर्षात्ययेन शरदागमेनाभ्रघनान्मेघसंघातादिन्दो रुचं चन्द्रिकामिव रामेण दशकण्ठ

---

tion even by his own (Bibhîsha*n*a's) chariots, though the latter were formed according to the designs formed in imagination.

76. Then the lord of the Raghus accompanied by his two younger brothers again took his seat upon the celestial vehicle with flags fluttering in air which moved at the will of the rider, as the lord of the stars (moon) beautiful in conjunction with Budha (Mercury) and Bṛihaspati (Jupiter) takes his place, in the midst of a cluster of clouds, displaying itself in the evening and having a tremulous flash of lightning.

77. There Bharata saluted the daughter of the Mithila king now happy who was rescued from the torments (or clutches) of the ten-headed demon by Râma, like the earth rescued from the

---

We with four commentators and nine Mss. B. C. E. H. K. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., यः for ये. C. K. R. with Vallabha, निःस्यन्दनैः for न स्यन्दनैः. B. C. E. H. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., °शोभः, K. °शोभां for °शोभाः.

76. A. D. E. H. K. R. with Vallabha, ताराधिपः for तारापतिः. B. E. H. K. with Hemâdri and Vallabha, अभ्रकूटं for अभ्रवृन्दं. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण reads ताराधिपः and अभ्रवृन्दं with Mallinâtha and notices अभ्रकूटं.

77. C. K. R. with Hem., and Châ., रुचिं for रुचं. B. D. K. with Châ., Din., Val., Su., and the text only of Vijay., अभ्युद्धृतां for प्रत्युद्धृतां. One of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with Mallinâtha.

लङ्केश्वरप्रणतिभङ्गदृढव्रतं तद्वन्द्यं युगं चरणयोर्जनकात्मजायाः ।
ज्येष्ठानुवृत्तिजटिलं च शिरोऽस्य साधोरन्योन्यपावनमभूदुभयं समेत्य ॥७८॥
क्रोशार्धं प्रकृतिपुरःसरेण गत्वा काकुत्स्थः स्तिमितजवेन पुष्पकेण ।
शत्रुघ्नप्रतिविहितोपकार्यमार्यः साकेतोपवनमुदारमध्युवास ॥ ७९ ॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कालिदासकृतौ दण्डकाप्रत्यागमनो नाम त्रयोदशः सर्गः ॥

एवं कृच्छ्रं संकटं तस्मात्प्रत्युद्धृतां धृतिमतीं संतोषवतीं मैथिलसुतां सीतां भरतो ववन्दे ॥

७८ ॥ लङ्केश्वरेति । लङ्केश्वरस्य रावणस्य प्रणतीनां भङ्गेन निरासेन दृढव्रतमखण्डितपातिव्रत्यमत एव वन्द्यं तज्जनकात्मजायाश्चरणयोर्युगं ज्येष्ठानुवृत्त्या जटिलं जटायुक्तं साधोः सज्जनस्यास्य भरतस्य शिरश्चेत्युभयं समेत्य मिलित्वान्योन्यस्य पावनं शोधकमभूत् ॥

७९ ॥ क्रोशेति । आर्यः पूज्यः काकुत्स्थो रामः प्रकृतयः प्रजाः पुरःसर्यो यस्य तेन स्तिमितजवेन मन्दवेगेन पुष्पकेण । क्रोशोऽध्वपरिमाणविशेषः । क्रोशार्धं क्रोशैकदेशं गत्वा शत्रुघ्नेन प्रतिविहिताः सज्जिता उपकार्याः पटभवनानि यस्मिंस्तदुदारं महत्साकेतस्यायोध्याया उपवनमध्युवासाधितष्ठौ ॥ "साकेतः स्यादयोध्यायां कोशला नन्दिनी तथा " इति यादवः ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमच्छपाच्छय सूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां त्रयोदशः सर्गः ॥

---

deluge of waters by the Lord of the worlds (three worlds), or like the moonlight rescued from a cluster of clouds by the departure of rainy season.

78. That adorable pair of feet of the daughter of Janaka, which had observed the firm vow of spurning the supplications of the lord of Lanká, and the head of the good man, the hair on which had become matted on account of his following the course of his elder brother, coming together, became mutually sanctifying.

79. The noble descendant of Kakutstha having gone over half a koss (or a part of koss) in his Pushpaka-car whose speed was gentle and in the front of which the people of अयोध्या were moving, made a halt in an extensive garden outside the city of Sáketa (Ayodhyá), where tents were pitched by order of S'atrughna.

---

78. A C. D. with Chàritravardhana, लंकेश्वरप्रणयभंग° for लंकेश्वरप्रणतिभंग.° Chàritravardhana: " लंकेश्वरस्य प्रणयः स्नेहस्तद्भंगे दृढं व्रतं यस्य तत्." A. D. °जटिलेन for °जटिलं च.

79. D. पुरःसरोऽपि for पुरःसरेण.

चतुर्दशः सर्गः ॥

भर्तुः प्रणाशादथ शोचनीयं दशान्तरं तत्र समं प्रपन्ने ।
अपश्यतां दाशरथी जनन्यौ छेदादिवोपघ्नतरोर्व्रतत्यौ ॥ १ ॥
उभावुभाभ्यां प्रणतौ हतारी यथाक्रमं विक्रमशोभिनौ तौ ।
विस्पष्टमस्रान्धतया न दृष्टौ ज्ञातौ सुतस्पर्शसुखोपलम्भात् ॥ २ ॥

संजीवनं मैथिलकन्यकायाः सौन्दर्यसर्वस्वमहानिधानम् ।
शशाङ्कपङ्केरुहयोः समानं रामस्य वन्देरमणीयमास्यम् ॥

१ ॥ भर्तुरिति । अथ दाशरथी रामलक्ष्मणौ । उपघ्नतरोराश्रयवृक्षस्य ॥ " उपघ्न आश्रये " इति निपातः ॥ तस्य छेदाद्व्रतत्यौ लते इव ॥ " वल्ली तु व्रततिर्लता " इत्यमरः ॥ भर्तुः प्रणाशाच्छोचनीयं दशान्तरमवस्थान्तरं प्रपन्ने प्राप्ते जनन्यौ कौसल्यासुमित्रे तत्र साकेतोपवने समं युगपदपश्यताम् ॥

२ ॥ उभाविति । यथाक्रमं स्वस्वमातृपूर्वकं प्रणतौ नमस्कृतवन्तौ हतारी हतशत्रू विक्रमशोभिनौ तावुभौ रामलक्ष्मणावुभाभ्यां मातृभ्यामस्रैरश्रुभिरन्धतया हेतुना ॥ " अस्रमश्रु च शोणितम् " इति यादवः ॥ विस्पष्टं न दृष्टौ किं तु सुतस्पर्शेन यत्सुखं तस्योपलम्भादनुभवाज्ज्ञातौ ॥

---

1. Then there the two sons of Das'aratha had together an interview with their mothers who had been reduced to a lamentable change of condition on account of their husband's death, like a pair of creepers at the destruction of the tree which gives them support.

2. These two who had killed their enemies and who appeared magnificent for their achievements when bowing down (saluting or paying obeisance) to their mothers in order were not distinctly seen by them (their mothers) in consequence of blindness caused by tears ; but were (simply) recognized by experiencing the agreeable sensation of the touch of a son.

---

1. B. L. अनु for अथ. Between 1-2 B. with Châ., Din., Su., and the text only of Vijay., read the following :—" प्रत्यागतौ तत्र चिरप्रवासादपश्यतां दाशरथी जनन्यौ । कुमुद्वतीं शीतमरीचिलेखे दिनेव रूपान्तरदुर्विभाव्ये " ॥ Châritravardhana commenting upon some part of this verse pronounces it to be spurious. Hemâdri also notices this and calls it a different reading.

2. A. सुतस्पर्शरसो°, D. L. मुखस्पर्शसुखो° for सुतस्पर्शसुखो°. H. and the text only of Vijay., विशिष्टमश्रान्ततया for विस्पष्टमस्रान्धतया.

आनन्दजः शोकजमश्रु बाष्पस्तयोरशीतं शिशिरो बिभेद ।
गङ्गासरय्वोर्जलमुष्णतप्तं हिमाद्रिनिस्यन्द इवावतीर्णः ॥ ३ ॥
ते पुत्रयोर्नैर्ऋतशस्त्रमार्गानार्द्रानिवाङ्गे सदयं स्पृशन्त्यौ ।
अपीप्सितं क्षत्रकुलाङ्गनानां न वीरसूशब्दमकामयेताम् ॥ ४ ॥
क्लेशावहा भर्तुरलक्षणाहं सीतेति नाम स्वमुदीरयन्ती ।
स्वर्गप्रतिष्ठस्य गुरोर्महिष्यावभक्तिभेदेन वधूर्ववन्दे ॥ ५ ॥

३ ॥ आनन्दज इति । तयोर्मात्रोरानन्दजः शिशिरो बाष्पः शोकजमशीतमुष्णमश्रु । उष्णतप्तं ग्रीष्मतप्तं गङ्गासरय्वोर्जलम् । कर्म । अवतीर्णो हिमाद्रेर्निस्पन्दो निर्झर इव । बिभेद ॥ आनन्देन शोकस्तिरस्कृत इत्यर्थः ॥

४ ॥ ते इति । ते मातरौ पुत्रयोरङ्गे शरीरे नैर्ऋतशस्त्राणां मार्गान्व्रणानार्द्रान्सरसानिव सदयं स्पृशन्त्यौ क्षत्रकुलाङ्गनानामीप्सितमिष्टमपि वीरसूर्वीरमातेति शब्दं नाकामयेताम् ॥ वीरप्रसवो दुःखहेतुरिति भावः ॥

५ ॥ क्लेशावहेति । आवहतीत्यावहा । भर्तुः क्लेशावहा क्लेशकारिण्यत एवालक्षणाहं सीतेति स्वं नामोदीरयन्ती स्वर्गः प्रतिष्ठास्पदं यस्य तस्य स्वर्गस्थितस्य गुरोः श्वशुरस्य महिष्यौ श्वश्वौ वधूः स्नुषा ॥ “ वधूः स्नुषा वधूर्जाया ” इत्यमरः ॥ अभक्तिभेदेन ववन्दे ॥ स्वर्गप्रतिष्ठस्येत्यनेन श्वश्रुवैधव्यदर्शनदुःखं सूचितम् ॥

---

3. As the flow of melted snow from the Himâlaya entering into the water of the गंगा and the सरयू heated in summer drives it off, so their cool tears of joy displaced the hot tears caused by grief.

4. They both compassionately passing their hands over the scars of wounds, caused by the weapons of the demons, on their body, as if they were still fresh, did not like for themselves the title of “ mother of heroes ” which is so eagerly coveted by the females of the Kshatriya race.

5. “ Here is the ill-omened Sitâ who brought misery to her lord ”—thus declaring her own name the daughter-in-law saluted

---

3. A. D. °निस्यन्दः for °निस्पदः or °निष्पदः. All commentators and eleven Mss. with us.

4. A. D. K. °घातान् for °मार्गान्. A. K. अकारयेतां, D. अपाकरोति for अकामयेतां. D_2. L. read this verse in a slightly different way :—“ ते पुत्रयोर्नैर्ऋतशस्त्रघातान स्थिरप्ररूढानपि वत्सलत्वात् । आर्द्रानिवाङ्गे सदयं स्पृशन्त्यौ भूयस्तयोर्जन्म समर्थयेताम् ” ॥ [D_2. °मार्गान् for °घातान्. L. चिरप्ररूढान् for स्थिरप्ररूढान्.]

5. B. I. K. L. with Chi., and Su., उदाहरन्ती for उदीरयन्ती. A. D. स्वर्गं प्रविष्टस्य, L. स्वर्गं प्रतिष्ठस्य for स्वर्गप्रतिष्ठस्य.

उत्तिष्ठ वत्से ननु सानुजोऽसौ वृत्तेन भर्ता शुचिना तवैव ।
कृच्छ्रं महत्तीर्ण इति प्रियार्हां तामूचतुस्ते प्रियमप्यमिथ्या ॥ ६ ॥
अथाभिषेकं रघुवंशकेतोः प्रारब्धमानन्दजलैर्जनन्योः ।
निर्वर्तयामासुरमात्यवृद्धास्तीर्थाहृतैः काञ्चनकुम्भतोयैः ॥ ७ ॥
सरित्समुद्रान्सरसीश्च गत्वा रक्षःकपीन्द्रैरुपपादितानि ।
तस्यापतन्मूर्ध्नि जलानि जिष्णोर्विन्ध्यस्य मेघप्रभवा इवापः ॥ ८ ॥

६ ॥ उत्तिष्ठेति । ननु वत्से । उत्तिष्ठ । असौ सानुजो भर्ता तवैव शुचिना वृत्तेन महत्कृच्छ्रं दुःखं तीर्णस्तीर्णवान् । इति प्रियार्हां तां वधूं प्रियमप्यमिथ्या सत्यं ते श्वश्र्वावूचतः ॥ उभयं दुर्वचमिति भावः ॥

७ ॥ अथेति । अथ जनन्योरानन्दजलैरानन्दबाष्पैः प्रारब्धं प्रक्रान्तं रघुवंशकेतो रामस्याभिषेकममात्यवृद्धास्तीर्थेभ्यो गङ्गाप्रमुखेभ्य आहृतैरानीतैः काञ्चनकुम्भतोयैर्निर्वर्तयामासुर्निष्पादयामासुः ॥

८ ॥ सरिदिति । रक्षःकपीन्द्रैः सरितो गङ्गाद्याः समुद्रान्पूर्वादीन्सरसीर्मानसादींश्च गत्वा । उपपादितान्युपनीतानि जलानि जिष्णोर्जयशीलस्य ॥ " ग्लाजिस्थश्च ग्स्नुः " इति ग्स्नुप्रत्ययः ॥ तस्य रामस्य मूर्ध्नि । विन्ध्यस्य विन्ध्याद्रेर्मूर्ध्नि मेघप्रभवा आप इव । अपतन् ॥

---

with no difference of respect both the queens of her father-in-law who was then dwelling in heaven.

6. " Rise, O daughter, why, was it not on the contrary by your own virtuous conduct that your husband got safe through the great calamity (trial) with his brother ? "—these pleasing and yet unfeigned words they spoke to her who deserved kind treatment.

7. Then with waters brought in golden jars from sacred water-places, the aged ministers performed the coronation-ceremony of the Banner of Raghu's race, which was already commenced by the tears of joy of the mothers.

8. On the head of that victorious Râma fell waters fetched by the chiefs of the demons and leaders of monkeys, who went to rivers, seas, and lakes, as waters poured down by clouds fall on the top of the Vindhya.

---

6. A. C. with Châ., and Val., कष्टं for कृच्छ्रं. One of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with Mallinâtha.

7. I. R. with Châritravardhana, प्रवर्तयामासुः, K. with Vallabha, निवर्तयामासुः for निर्वर्तयामासुः. H. तीर्थाभृतैः for तीर्थाहृतैः.

8. D. C. with Hem., Châ., Din., and Su., सरितः समुद्रान् for सरित्समुद्रान्. R. with Châritravardhana, वन्ध्यस्य for विन्ध्यस्य.

तपस्विवेशक्रिययापि तावद्यः प्रेक्षणीयः सुतरां बभूव ।
राजेन्द्रनेपथ्यविधानशोभा तस्योदितासीत्पुनरुक्तदोषा ॥ ९ ॥
स मौलरक्षोहरिभिः ससैन्यस्तूर्यस्वनानन्दितपौरवर्गः ।
विवेश सौधोद्गतलाजवर्षामुत्तोरणामन्वयराजधानीम् ॥ १० ॥
सौमित्रिणा सावरजेन मन्दमाधूतबालव्यजनो रथस्थः ।
धृतातपत्रो भरतेन साक्षादुपायसंघात इव प्रवृद्धः ॥ ११ ॥

९ ॥ तपस्वीति । यो रामस्तपस्विवेशक्रिययापि तपस्विवेशरचनयापि सुतरामत्यन्तं प्रेक्षणीयस्तावद्दर्शनीय एव बभूव । तस्य राजेन्द्रनेपथ्यविधानेन राजवेषरचनयोदिता या शोभा सा पुनरुक्तं नाम दोषो यस्याः सा पुनरुक्तदोषा द्विगुणासीत् ॥

१० ॥ स इति । स रामः ससैन्यस्तूर्यस्वनैरानन्दितपौरवर्गः सन् ॥ मूले भवा मौला मन्त्रिवृद्धास्तै रक्षोभिर्हरिभिश्च सह सौधेभ्य उद्गतलाजवर्षामुत्तोरणामन्वयराजधानीं विवेश प्रविष्टवान् ॥

११ ॥ सौमित्रिणेति । सावरजेन शत्रुघ्नयुक्तेन सौमित्रिणा मन्दमाधूते बालव्यजने चामरे यस्य स रथस्थो भरतेन धृतातपत्र एवं चतुर्व्यूहो रामः प्रवृद्धः साक्षादुपायानां सामादीनां संघातः समष्टिरिव । विवेशेति पूर्वेण संबन्धः ॥

---

9. In him who already appeared exceedingly beautiful even by putting on an ascetic's dress the beauty rising from wearing royal suit had a charge of repetition.

10. Accompanied by the aged ministers, demons and monkeys, he with his army, giving joy to the multitudes of citizens, by the sounds of the trumpets entered the capital of his forefathers, over the streets of which triumphal arches were raised, and (filled) with showers of Lâjas poured from the white-washed mansions.

11. He driving in a chariot gently fanned with two Châmaras by Saumitri with his younger brothers and with an umbrella held up

---

9. B. I. नरेन्द्र° for राजेन्द्र°. E. पुनरुक्तिदोषा for पुनरुक्तदोषा.

10. A_2. C_2. with Hemádri, मूलरक्षोहरिमिश्रसैन्यः, B. E. H. I. J. with Val., and Vijay., मौलरक्षोहरिमिश्रसैन्यः, C. K. R. with Dinakara, मौलिरक्षोहरिमिश्रसैन्यः, D. L. with Châ., and Su., पौररक्षोहरिमिश्रसैन्यः, D_2. मौलिरक्षोहरिभिः ससैन्यः for मौलरक्षोहरिभिः ससैन्यः. B. C. I. K. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., °पौरवर्गा, E R. °पौरवर्गं, D. L. °राजमार्गं for °पौरवर्गः.

11. B. H. K. R. with Hem., Su., and Vijay., प्रसिद्धः, C. E. with Vallabha, प्रवृत्तः for प्रवृद्धः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinâtha and notices प्रसिद्धः.

प्रासादकालागुरुधूमराजिस्तस्याः पुरो वायुवशेन भिन्ना ।
वनान्निवृत्तेन रघूद्वहेन मुक्ता स्वयं वेणिरिवाबभासे ॥ १२ ॥
श्वश्रूजनानुष्ठितचारुवेशां कर्णीरथस्थां रघुवीरपत्नीम् ।
प्रासादवातायनदृश्यबन्धैः साकेतनार्योऽञ्जलिभिः प्रणेमुः ॥ १३ ॥
स्फुरत्प्रभामण्डलमानुसूयं सा बिभ्रती शाश्वतमङ्गरागम् ।
रराज शुद्धेति पुनः स्वपुर्यै संदर्शिता वह्निगतेव भर्त्रा ॥ १४ ॥

१२ ॥ प्रासादेति । वायुवशेन भिन्ना प्रासादे यः कालागुरुधूमस्तस्य राजी रेखा । वनान्निवृत्तेन रघूद्वहेन रामेण स्वयं मुक्ता तस्याः पुरः पुर्या वेणिरिव । आबभासे ॥ पुरोऽपि पतिव्रतासमाधिरुक्तः ॥ " न प्रोषिते तु संस्कुर्यान्न वेणीं च प्रमोचयेत् " इति हारीतः ॥

१३ ॥ श्वश्रूजनेति । श्वश्रूजनेनानुष्ठितचारुवेशां कृतसौम्यनेपथ्याम ॥ " आकल्पवेशौ नेपथ्यम् " इत्यमरः ॥ कर्णीरथः स्त्रीयोग्योऽल्परथः ॥ " कर्णीरथः प्रवहणं डयनं रथगर्भकः " इति यादवः ॥ तत्रस्थां रघुवीरपत्नीं सीतां साकेतनार्यः प्रासादवातायनेषु दृश्यबन्धैर्लक्ष्यपुटैरञ्जलिभिः प्रणेमुः ॥

१४ ॥ स्फुरदिति । स्फुरत्प्रभामण्डलमानुसूयमनुसूयया दत्तं शाश्वतं सदातनमङ्गरागं बिभ्रती सा सीता भर्त्रा स्वपुर्यै शुद्धेति संदर्शिता पुनर्वह्निगतेव रराज ॥

---

by Bharata over his head, appeared like a visibly living collection of the four political expedients.

12. The line of smoke of the incense of Kálágaru issuing from the palace, being dispersed a little by the wind, appeared like the braid of hair of the city, set free by the best of the Raghus himself who had returned from the forest.

13. With folded hands the folding of which was visible through the windows of the palaces the women of Sáketa made a bow to the wife of the bravest of the Raghus, driving in a lady's vehicle and in a beautiful apparel adjusted by her mothers-in-law.

14. Bearing the eternal cosmetic given to her by Anasúyá, which flashed forth in a halo of light, she appeared, as it were,

---

12. A. D. K. °धूपराजिः for °धूमराजिः. A. C. D. H. with Chá., and Din., वायुवशाच्च for वायुवशेन. A. B. K. with Hemádri, विभिन्ना, C. विदीर्णा, D. विलुप्ता for भिन्ना. A. D. L. and the text only of Val., रघूत्तमेन for रघूद्वहेन. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha in reading वायुवशेन भिन्ना.

13. A. C. D. with Cháritravardhana, श्वश्रूजनैः कल्पितचारुवेशां for श्वश्रूजनानुष्ठितचारुवेशां. B. I. K. R. and the texts only of Val., and Vijay., विमान°, A. C. D. with Vijay., विशाल° for प्रासाद°.

14. B. C. I. with Vijay., आनसूयं for आनुसूयं. We with five

वेश्मानि रामः परिबर्हवन्ति विश्राण्य सौहार्दनिधिः सुहृद्भ्यः ।
बाष्पायमाणो बलिमन्निकेतमालेख्यशेषस्य पितुर्विवेश ॥ १५ ॥
कृताञ्जलिस्तत्र यदम्ब सत्यान्नाभ्रश्यत स्वर्गफलाद्गुरुर्नः ।
तच्चिन्त्यमानं सुकृतं तवेति जहार लज्जां भरतस्य मातुः ॥ १६ ॥
तथा च सुग्रीवविभीषणादीनुपाचरत्कृत्रिमसंविधाभिः ।
संकल्पमात्रोदितसिद्धयस्ते क्रान्ता यथा चेतसि विस्मयेन ॥ १७ ॥

१५ ॥ वेश्मानीति । सुहृदां भावः सौहार्दं सौजन्यम् ॥ "हृद्भगसिन्ध्वन्ते पूर्वपदस्य—" इत्युभयपदवृद्धिः ॥ सौहार्दनिधी रामः सुहृद्भ्यः सुग्रीवादिभ्यः परिबर्हवन्त्युपकरणवन्ति वेश्मानि विश्राण्य दत्त्वालेख्यशेषस्य चित्रमात्रशेषस्य पितुर्बलिमत्पूजायुक्तं निकेतं गृहं बाष्पायमाणो बाष्पमुद्वमन्विवेश ॥ "बाष्पोष्माभ्यामुद्वमने" इति क्यङ्प्रत्ययः ॥

१६ ॥ कृताञ्जलिरिति । तत्र निकेतने कृताञ्जलिः सन्रामः । हे अम्ब नो गुरुः पिता स्वर्गः फलं यस्य तस्मात्सत्यान्नाभ्रश्यत न भ्रष्टवानिति यदभ्रंशनं तच्चिन्त्यमानं विचार्यमाणं तव सुकृतम् । इत्येवं प्रकारेण भरतस्य मातुः कैकेय्या लज्जां जहारापानयत् ॥ राज्ञां प्रतिज्ञापरिपालनं स्वर्गसाधनमित्यर्थः ॥ भरतग्रहणं तदपेक्षयापि कैकेय्यनुसरणमिति द्योतनार्थम् ॥

१७ ॥ तथेति । सुग्रीवविभीषणादीन् । संविधीयन्त इति संविधा भोग्यवस्तूनि । कृत्रिमसंविधाभिस्तथा तेन प्रकारेणैवोपाचरच्च । यथा संकल्पमात्रेणेच्छामात्रेणोदितसिद्धयस्ते सुग्रीवादयश्चेतसि विस्मयेन क्रान्ता व्याप्ताः ॥

---

again standing in the flames of fire being shown by her husband to the people of his capital that she was pure.

15. Having allotted to his friends well-furnished houses, Râma the abode of good-heartedness with tears in the eyes entered the palace containing materials of worship of his sire of whom a portrait was all that remained in it.

16. There he lessened the embarrassment of Bharata's mother, saying with palms folded "Mother, the fact that our sire did not swerve from truth the fruit of which is Heaven (salvation) when properly considered was *your* own good act."

17. And he entertained Sugriva, Bibhisha*n*a and others with materially created things, in such a way, that they with whom all

---

other commentators and ten Mss. E. अंगरंगम् for अंगरागम्. E. स्वपुर्याः for स्वपुर्यै.

17. B. H. L. तथा स, E. I. K. with Su., तथैव, A. C. with Val., तत्रैव for तथा च. E. °उचित°, A. C. with Hemâdri, °उदय° for °उदित°. Hemâdri: "संकल्पमात्रेणोदयो यासां ताः सिद्धयः." One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha.

सभाजनायोपगतान्स दिव्यान्मुनीन्पुरस्कृत्य हतस्य शत्रोः ।
शुश्राव तेभ्यः प्रभवादि वृत्तं स्वविक्रमे गौरवमादधानम् ॥ १८ ॥
प्रतिप्रयातेषु तपोधनेषु सुखादविज्ञातगतार्धमासान् ।
सीतास्वहस्तोपहृताग्र्यपूजान्रक्षःकपीन्द्रान्विससर्ज रामः ॥ १९ ॥
तच्चात्मचिन्तासुलभं विमानं हृतं सुरारेः सह जीवितेन ।
कैलासनाथोद्वहनाय भूयः पुष्पं दिवः पुष्पकमन्वमंस्त ॥ २० ॥

१८ ॥ सभाजनायेति । स रामः सभाजनायाभिनन्दनायोपगतान्दिवि भवान्मुनीनगस्त्यादीन्पुरस्कृत्य हतस्य शत्रो रावणस्य प्रभवादि जन्मादिकं स्वविक्रमे गौरवमुत्कर्षमादधानं वृत्तं तेभ्यो मुनिभ्यः शुश्राव ॥ विजितोत्कर्षादर्जेतुरुत्कर्ष इत्यर्थः ॥

१९ ॥ प्रतीति । तपोधनेषु मुनिषु प्रतिप्रयातेषु प्रतिनिवृत्य गतेषु सत्सु सुखादविज्ञात एव गतोऽर्धमासो येषां ताननन्तरं सीतायाः स्वहस्तेनोपहृता दत्ताग्र्यपूजोत्तमसंभावना येभ्यस्तान् । एतेन सौहार्दातिशय उक्तः । रक्षःकपीन्द्रान्रामो विससर्ज विसृष्टवान् ॥

२० ॥ तच्चेति । तच्चात्मचिन्तासुलभं स्वेच्छामात्रलभ्यं सुरारे रावणस्य जीवितेन सह हृतं दिवः पुष्पं पुष्पवदाभरणभूतं पुष्पकं विमानं भूयः पुनरपि कैला-

---

attainments were ready with the mere desire, were in mind struck with wonder.

18. Having paid respect to the celestial sages who had come to congratulate him, he heard from them the story beginning with the birth of the foe he had slain, which reflected greatness on his own exploits.

19. When the sages who prize their asceticism as their best wealth were gone, Rāma dismissed the leaders of the demons and monkeys who in the midst of pleasures had unconsciously allowed to pass half a month having been presented with highest gifts at the hands of Sītā herself.

20. He permitted the Pushpaka car, which might be said to

---

18. D. K. सुदिव्यान्, R. सदिव्यः for स दिव्यान्. C. I. नमस्कृत्य for पुरस्कृत्य. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chā., Din., Val., Su. and Vijay., आदधानः for आदधानं.

19. C. D. L. इति प्रयातेषु for प्रतिप्रयातेषु. B. H. with Vijay., °वृ-ताग्र्य° for °हताग्र्य.

20. C. R. तदात्मचिन्ता°, A. D. with Hemâdri, अथात्मचिन्ता° for तच्चात्मचिन्ता°. A. C. with Vallabha, पूतं for हृतं. E. H. K. अन्वयुङ्क्त for अन्वमंस्त.

पितुर्नियोगाद्वनवासमेवं निस्तीर्य रामः प्रतिपन्नराज्यः ।
धर्मार्थकामेषु समां प्रपेदे यथा तथैवावरजेषु वृत्तिम् ॥ २१ ॥
सर्वासु मातृष्वपि वत्सलत्वात्स निर्विशेषप्रतिपत्तिरासीत् ।
षडाननापीतपयोधरासु नेता चमूनामिव कृत्तिकासु ॥ २२ ॥
तेनार्थवाँल्लोभपराङ्मुखेन तेन घ्नता विघ्नभयं क्रियावान् ।
तेनास लोकः पितृमान्विनेत्रा तेनैव शोकापनुदेन पुत्री ॥ २३ ॥

सनाथस्य कुबेरस्योद्वहनायान्वमंस्तानुज्ञातवान् ॥ मन्यतेर्लुङ् ॥ भूयोग्रहणेन पूर्वमप्ययनत्कौबेरमेवेति सूच्यते ॥

२१ ॥ पितुरिति । राम एवं पितुर्नियोगाच्छासनाद्वनवासं निस्तीर्यानन्तरं प्रतिपन्नराज्यः प्राप्तराज्यः सन् । धर्मार्थकामेषु यथा तथैवावरजेष्वनुजेषु समां वृत्तिं प्रपेदे । अवैषम्येण व्यवहृतवानित्यर्थः ॥

२२ ॥ सर्वास्विति । स रामो वत्सलत्वात्स्निग्धत्वात् । न तु लोकप्रतीत्यर्थम् ॥ "स्निग्धस्तु वत्सलः" इत्यमरः ॥ सर्वासु मातृष्वपि निर्विशेषप्रतिपत्तिस्तुल्यसत्कार आसीत् ॥ कथमिव । चमूनां नेता षण्मुखः षड्भिराननैरापीताः पयोधराः स्तना यासां तासु कृत्तिकास्विव ॥

२३ ॥ तेनेति । लोको लोभपराङ्मुखेन वदान्येन तेन रामेणार्थवान्धनिक आस

---

be a flower of heaven, which could be had the moment a desire for it was entertained, and of which he had deprived the enemy of gods together with his life, again to become the means of conveyance to the lord of Kailâsa.

21. Thus, having obtained the kingdom after having passed the period of exile in the forests by the command of his father, Râma carried on an even dealing as well with his younger brothers as with Virtue, Wealth and Desire.

22. On account of being naturally affectionate, he showed the same respect to all the mothers, as the leader of the army of gods does to the Krittikâs whose breasts he had sucked with his six mouths.

23. He being averse to avarice the people became wealthy, he

---

21. C. E. इत्थं, D. H. L. with Dinakara, दुःखं for एवं. C. D. H. I. K. L. R. with Su., Vijay., and the text only of Val., समं for समां.

22. A. D. with Châ., and Su., अति° for अपि. Hemâdri also notices the reading.

स पौरकार्याणि समीक्ष्य काले रेमे विदेहाधिपतेर्दुहित्रा ।
उपस्थितश्चारु वपुस्तदीयं कृत्वोपभोगोत्सुकयेव लक्ष्म्या ॥ २४ ॥
तयोर्यथाप्रार्थितमिन्द्रियार्थानासेदुषोः सद्मसु चित्रवत्सु ।
प्राप्तानि दुःखान्यपि दण्डकेषु संचिन्त्यमानानि सुखान्यभूवन् ॥ २५ ॥
अथाधिकस्निग्धविलोचनेन मुखेन सीता शरपाण्डुरेण ।
आनन्दयित्री परिणेतुरासीदनक्षरव्यञ्जितदोर्हृदेन ॥ २६ ॥

बभूव ॥ तिङन्तप्रतिरूपकमव्ययमेतत् ॥ विघ्नेभ्यो भयं घ्नता नुदता तेन क्रियावाननुष्ठानवानास । विनेत्रा नियामकेन तेन पितृमानास । पितृवन्नियच्छतीत्यर्थः । शोकमपनुदतीति शोकापनुदो दुःखस्य हर्ता तेन ॥ " तुन्दशोकयोः परिमृजापनुदोः " इति कप्रत्ययः ॥ तेन पुत्री पुत्रवानास । पुत्रवदानन्दयतीत्यर्थः ॥

२४ ॥ स इति । स रामः कालेऽवसरे पौराणां कार्याणि प्रयोजनानि समीक्ष्य विदेहाधिपतेर्दुहित्रा सीतया । उपभोगोत्सुकयात एव तदीयं सीतासंबन्धि चारु वपुः कृत्वा स्थितया लक्ष्म्येव । उपस्थितः संगतः सन् । रेमे ॥ " उपस्थानं तु संगतिः " इति यादवः ॥

२५ ॥ तयोरिति । चित्रवत्सु वनवासवृत्तान्तालेख्यवत्सु सद्मसु यथाप्रार्थितं यथेष्टमिन्द्रियार्थानिन्द्रियविषयाञ्शब्दादीनासेदुषोः प्राप्तवतोस्तयोः सीतारामयोर्दण्डकेषु दण्डकारण्येषु प्राप्तानि दुःखान्यपि विरहविलापान्वेषणादीनि संचिन्त्यमानानि स्मर्यमाणानि सुखान्यभूवन् ॥ स्मारकं तु चित्रदर्शनमिति द्रष्टव्यम् ॥

२६ ॥ अथेति । अथ सीताधिकस्निग्धविलोचनेनात्यन्तमसृणलोचनेन शरवत्तृ-

---

dispelling the fear of obstacles they performed religious rites, he being their ruler they were blessed with a father in him and he removing their grief they were blessed with a son.

24. After having punctually attended to the affairs of the citizens he diverted himself in the company of the daughter of the lord of the Videhas, as if attended by लक्ष्मी desirous of enjoying his company having transformed herself into Sitá's beautiful form.

25. Even the miseries of the two enjoying the objects of sense in pictured drawing-rooms, which they suffered in the Da*nd*aká, when recalled to mind, became pleasures.

26. Then Sitá with her face pale like S'ara grass having eyes

---

24. A. C. with Hemádri, समाप्य, D. and the text only of Val. विलोक्य for समीक्ष्य. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha. D. L. उपस्थितं for उपस्थितः.

25. C. with Vallabha, इन्द्रियार्थं for इन्द्रियार्थान्. B. C. E. H. I. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., सुखानि बभूवुः for सुखान्यभूवन्.

26. B_2. I. with Vallabha, °स्नेह° for °स्निग्ध°. A. O. with Vijay.,

तामङ्कमारोप्य कृशाङ्गयष्टिं वर्णान्तराक्रान्तपयोधराग्राम् ।
विलज्जमानां रहसि प्रतीतः पप्रच्छ रामां रमणोऽभिलाषम् ॥ २७ ॥
सा दष्टनीवारबलीनि हिंस्रैः संबद्धवैखानसकन्यकानि ।
इयेष भूयः कुशवन्ति गन्तुं भागीरथीतीरतपोवनानि ॥ २८ ॥
तस्यै प्रतिश्रुत्य रघुप्रवीरस्तदीप्सितं पार्श्वचरानुयातः ।
आलोकयिष्यन्मुदितामयोध्यां प्रासादमभ्रंलिहमारुरोह ॥ २९ ॥

णविशेषवत्पाण्डुरेणानन एवानक्षरमवाग्व्यापारं यथा भवति तथा व्यञ्जितं दौ-र्हृदं गर्भो येन तेन मुखेन परिणेतुः पत्युरानन्दयित्र्यासीत् ॥

२७ ॥ तामिति । प्रतीतो गर्भज्ञानात्प्रीतः । रमयतीति रमणः । प्रियां कृशाङ्ग-यष्टिं वर्णान्तरेण नीलिम्नाक्रान्तपयोधराग्रां विलज्जमानां तां रामां रहस्यङ्क-मारोप्य । अभिलाषं मनोरथं पप्रच्छ ॥ एतच्च—"दोहदस्याप्रदानेन गर्भो दोषम-वाप्नुयात्" इति शास्त्रात् ॥ न तु लौल्यादित्यनुसंधेयम् ॥

२८ ॥ सेति । सा सीता । हिंस्रैर्दष्टा नीवारा एव बलयो येषु तानि । तिर्यग्भिक्षु-कादिदानं बलिः । संबद्धाः कृतसख्या वैखानसानां कन्यका येषु तानि कुशव-न्ति भागीरथीतीरतपोवनानि भूयः पुनरपि गन्तुमियेषाभिललाष ॥

२९ ॥ तस्या इति । रघुप्रवीरो रामस्तस्यै सीतायै तत्पूर्वोक्तमीप्सितं मनोरथं

---

more amiable and glowing than before which indicated without words her being pregnant, became the delighter of her lord.

27. Having seated her on his lap, whose bodily frame had become lean and the nipple of whose breasts had undergone a change of colour, the husband was delighted and asked her in private who felt bashful, if she had any particular desires about anything.

28. She desired once more to go to the penance-groves on the banks of the Bhâgirathî covered with Kus'a-grass; the offerings of wild rice in which were eaten by wild animals and in which young female hermits were joined in friendship with her.

29. Having promised her the object of her desire, the heroic

परिपाण्डुरेण for शरपाण्डुरेण. Vijayânandasûris'varacharaṇasevaka reads for his text परिपाण्डुरेण and observes "शरपाण्डुरेण" इति मूलपाठः. B. H. L. R. with Châ., Val., and Su., °दोहदेन for °दौर्हृदेन.

27. R. first reads the 28th verse and then the 27th.

28. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., °फलानि for °बलीनि. B. D. H. with Hem., Châ., Su., and Vijay., हंसैः for हिंस्रैः. A. C. with Châ., Din., and Su., संवृद्ध°, D. L. with Vallabha, समृद्ध° for सम्बद्ध°. Vallabha : "समृद्धाः सुस्थिता वैषानसानां वानप्रस्थानां कन्यका यत्र तानि." R. with Val., and Su, °वैषानस° for वैखानस°.

29. A. C. with Sumativijaya, विलोकयिष्यन् for आलोकयिष्यन्. Su-

ऋद्धापणं राजपथं स पश्यन्विगाह्यमानां सरयूं च नौभिः ।
विलासिभिश्चाध्युषितानि पौरैः पुरोपकण्ठोपवनानि रेमे ॥ ३० ॥
स किंवदन्तीं वदतां पुरोगः स्ववृत्तमुद्दिश्य विशुद्धवृत्तः ।
सर्पाधिराजोरुभुजोपसर्पं पप्रच्छ भद्रं विजितारिभद्रः ॥ ३१ ॥

प्रतिश्रुत्य । पार्श्वचरैस्तत्कालोचितैरनुयातः सन्मुदितामयोध्यामालोकयिष्यन् ॥ अभ्रं लेढीत्यभ्रंलिहमभ्रंकषं प्रासादमारुरोह ॥ "वहाभ्रे लिहः" इति खश्प्रत्ययः॥ "अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्" इति मुमागमः ॥

३० ॥ ऋद्धापणमिति । स रामः । ऋद्धाः समृद्धा आपणाः पण्यभूमयो यस्मिंस्तं राजपथम् । नौभिः समुद्रवाहिनीभिर्विगाह्यमानां सरयूं च । पौरैर्विलासिभिरध्युषितानि पुरोपकण्ठोपवनानि च पश्यन्रेमे ॥ विलासिन्यश्च विलासिनश्च विलासिनः ॥ "पुमान्स्त्रिया" इत्येकशेषः ॥

३१ ॥ स इति । वदतां वाग्मिनां पुरोगः श्रेष्ठो विशुद्धवृत्तः । सर्पाधिराजः शेषः । तद्वदुरू भुजौ यस्य स विजितारिभद्रो विजितारिश्रेष्ठः स रामः स्ववृत्तमुद्दिश्य भद्रं भद्रनामकमपसर्पं चरं किंवदन्तीं जनवादं पप्रच्छ ॥ "अपसर्पश्चरः स्पशः" इति ॥ "किंवदन्ती जनश्रुतिः" इति चामरः ॥

---

descendant of Raghu ascended to the top of his sky-licking palace, followed by his attendants, with a desire to have a view of Ayodhyà which was happy under his rule.

30. He was delighted to see the royal street with rich shops, the Sarayù sailed by ships, and the gardens on the skirts of the city resorted to by the gallant citizens in company with young women.

31. He the foremost among the eloquent, of pure conduct, having arms long as the serpent-king, and who had conquered the most powerful of enemies asked his spy Bhadra as to any rumour about his own conduct.

---

mativijaya's text reads ध्युषितां for मुदितां. It runs thus :—विलोकयिष्यन्ध्युषितामयोध्यां for आलोकयिष्यन्मुदितामयोध्यां ; but in his comments, he says, "कथंभूतामयोध्यां मुदितां हर्षितां वा ध्युषितां जनैः सेवितां &c." It is difficult to assert what text he had before him for his commentary; he might have probably read मुदितां.

30. B. with Châritravardhana and the text only of Val., विगायमानां for विगाह्यमानां. Châritravardhana : "विगायमानामवगाह्यमानां" &c.

31. A. C. with Hemâdri. पुरोगं for पुरोगः. Hemâdri construes it with भद्रं, his comments run thus :—"स रामः स्ववृत्तं स्वाचरणमुद्दिश्य वदतां

निर्बन्धपृष्टः स जगाद सर्वं स्तुवन्ति पौराश्चरितं त्वदीयम् ।
अन्यत्र रक्षोभवनोषितायाः परिग्रहान्मानवदेव देव्याः ॥ ३२ ॥
कलत्रनिन्दागुरुणा किलैवमभ्याहतं कीर्तिविपर्ययेण ।
अयोघनेनाय इवाभितप्तं वैदेहिबन्धोर्हृदयं विदद्रे ॥ ३३ ॥
किमात्मनिर्वादकथामुपेक्षे जायामदोषामुत संत्यजानि ।
इत्येकपक्षाश्रयविक्लवत्वादासीत्स दोलाचलचित्तवृत्तिः ॥ ३४ ॥

३२ ॥ निर्बन्धेति । निर्बन्धेनाग्रहेण पृष्टः सोऽपसर्पो जगाद । किमिति । हे मानवदेव रक्षोभवन उषिताया देव्याः सीतायाः परिग्रहात्स्वीकारादन्यत्रेतरांशे । तं वर्जयित्वेत्यर्थः । त्वदीयं सर्वं चरितं पौराः स्तुवन्ति ॥

३३ ॥ कलत्रेति । एवं किल कलत्रनिन्दया गुरुणा दुर्वहेण कीर्तिविपर्ययेणापकीर्त्याभ्याहतं वैदेहिबन्धोर्वैदेहिवल्लभस्य ॥ " ङ्यापोः संज्ञाछन्दसोर्बहुलम् " इति ह्रस्वः ॥ कालिदास इतिवत् ॥ हृदयम् । अयोघनेनाभ्याहतमभितप्तमय इव । विदद्रे विदीर्णम् ॥ कर्तरि लिट् ॥

३४ ॥ किमिति । आत्मनो निर्वादोऽपवाद एव कथा तां किमुपेक्षे । उत अदोषां साध्वीं जायां संत्यजानि ॥ उभयत्रापि प्रश्ने लोट् ॥ इत्येकपक्षाश्रयेऽन्यतरपक्षपरिग्रहे विक्लवत्वादपरिच्छेत्तृत्वात्स रामो दोलाचला चित्तवृत्तिर्यस्य स आसीत् ॥

---

32. Being hard-pressed he replied, " The citizens praise every act in your life save, O king of men, your acceptance of the queen who had dwelt in the palace of the Rākshasa. "

33. The heart of the consort of Vaidehī being thus smitten by the contrary of fame, that was unbearable on account of the scandal regarding his wife, broke, like heated iron beaten by a hammer.

34. Am I to overlook this slanderous tale affecting myself or am I to abandon my innocent wife ; thus being distracted as to which alternative to adopt he was in a condition of mind similar to the oscillation on a swing.

पुरोगं भद्रामिधमपसर्पमनुचरं किं वदन्ती वार्ता पप्रच्छ " &c. B. H. निहत°, D. with Chā., and Din., विहत° for विजित°. Vallabha distinctly with Mallinātha.

32. D. K with Chā., and Din., वृत्तं for सर्वं. I. रक्षोभुवनो° for रक्षोभवनो°.

34. B. C. E. H. I. J. K. L. R. with Val., Su., and Vijay., उपेक्ष, D. अपेक्षे for उपेक्षे. B. अथ for उत. B. C. E. H. I. J. K. L. R. with Val., Su., and Vijay., संत्यजामि for संत्यजानि.

निश्चित्य चानन्यनिवृत्ति वाच्यं त्यागेन पत्न्याः परिमार्ष्टुमैच्छत् ।
अपि स्वदेहात्किमुतेन्द्रियार्थाद्यशोधनानां हि यशो गरीयः ॥ ३५ ॥
स संनिपात्यावरजान्हतौजास्तद्विक्रियादर्शनलुप्तहर्षान् ।
कौलीनमात्माश्रयमाचचक्षे तेभ्यः पुनश्चेदमुवाच वाक्यम् ॥ ३६ ॥
राजर्षिवंशस्य रविप्रसूतेरुपस्थितः पश्यत कीदृशोऽयम् ।
मत्तः सदाचारशुचेः कलङ्कः पयोदवातादिव दर्पणस्य ॥ ३७ ॥

३५ ॥ निश्चित्येति । किं च । वाच्यमपवादम् । नास्त्यन्येन त्यागातिरिक्तोपायेन निवृत्तिर्यस्य तदनन्यनिवृत्ति । निश्चित्य पत्न्यास्त्यागेन परिमार्ष्टुं परिहर्तुमैच्छत् ॥ तथा हि । यशोधनानां पुंसां स्वदेहादपि यशो गरीयो गुरुतरम् । इन्द्रियार्थात्स्रक्चन्दनवनितादेरिन्द्रियविषयाद्गरीय इति किमुत वक्तव्यम् ॥ " पञ्चमी विभक्ते " इत्युभयत्रापि पञ्चमी ॥ सीता चेन्द्रियार्थ एव ॥

३६ ॥ स इति । हतौजा निस्तेजस्कः स रामस्तस्य रामस्य विक्रियादर्शनेन लुप्तहर्षानवरजान्संनिपात्य समागमय्यात्माश्रयं स्वविषयकं कौलीनं निन्दां तेभ्य आचचक्षे । पुनरिदं वाक्यमुवाच च ॥

३७ ॥ राजर्षीति । रवेः प्रसूतिर्जन्म यस्य तस्य राजर्षिवंशस्य सदाचारशुचेः सद्वृत्तशुद्धान्मत्तो मत्सकाशात् । दर्पणस्य पयोदवातादिव । साम्भःकणादित्यर्थः ॥ कीदृशोऽयं कलङ्क उपस्थितः प्राप्तः पश्यत ॥

---

35. Convinced that the slander (infamy) could not be averted by any other means than by abandoning his wife, he wished to avoid it (wipe off) by adopting the measure. Those who prize their fame above all, value their own good name even above their own body, far less than an object of sensuous enjoyment.

36. With his spirits depressed having called together his younger brothers whose cheerfulness was blighted by the sight of that change in him, he made known to them the evil report about himself and then addressed them in the following manner :—

37. " Look here, what a stain is caused on account of me to the family of the Royal Sages sprung from the Sun, and unblemished with its pure conduct, like the one caused to a mirror by the wind surcharged with watery vapour. "

---

36. A. C. with Hemâdri, क्षतौजाः, D. L. महौजाः for हतौजाः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. B. I. पुरश्च for पुनश्च.

37. A. D. with Hemâdri, मनुप्रसूतेः for रविप्रसूतेः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha and notices मनुप्रसूतेः. D. पयोदवाहात for पयोदवातात्. Hemâdri notices the reading and says, " पयोदान्वहतीति पयोदवाहो वातः &c."

पौरेषु सोऽहं बहुलीभवन्तमपां तरंगेष्विव तैलबिन्दुम् ।
सोढुं न तत्पूर्वमवर्णमीशे आलानिकं स्थाणुमिव द्विपेन्द्रः ॥ ३८ ॥
तस्यापनोदाय फलप्रवृत्तावुपस्थितायामपि निर्व्यपेक्षः ।
त्यक्ष्यामि वैदेहसुतां पुरस्तात्समुद्रनेमिं पितुराज्ञयेव ॥ ३९ ॥
अवैमि चैनामनघेति किं तु लोकापवादो बलवान्मतो मे ।
छाया हि भूमेः शशिनो मलत्वेनारोपिता शुद्धिमतः प्रजाभिः ॥ ४० ॥

३८ ॥ पौरेष्विति । सोऽहम् । अपां तरंगेषु तैलबिन्दुमिव । पौरेषु बहुलीभवन्तं प्रसरन्तम् । तदेव पूर्वं यस्य तम् । तत्पूर्वमवर्णमपवादम् ॥ "अवर्णाक्षेपनिर्वादपरीवादापवादवत्" इत्यमरः ॥ द्विपेन्द्रः । आलानमेवालानिकम् ॥ विनयादित्वात्स्वार्थे ठक् ॥ अथ वालानं बन्धनं प्रयोजनमस्येत्यालानिकम् ॥ "प्रयोजनम्" इति ठक् ॥ स्थाणुं स्तम्भमिव ॥ चूतवृक्ष इतिवत्सामान्यविशेषभावादपौनरुक्त्यं द्रष्टव्यम् ॥ सोढुं नेशे न शक्नोमि ॥

३९ ॥ तस्येति । तस्यावर्णस्यापनोदाय फलप्रवृत्तावपत्योत्पत्तावुपस्थितायां सत्यामपि निर्व्यपेक्षो निःस्पृहः सन् । वैदेहसुताम् । पुरस्तात्पूर्वं पितुराज्ञया समुद्रनेमिम् । समुद्रो नेमिरिव नेमिर्यस्याः सा भूमिः । तामिव । त्यक्ष्यामि ॥

४० ॥ ननु सर्वथा साध्वी न त्याज्येत्यत्राह ॥ अवैमीति । एनां सीतामनघा साध्वीति चावैमि । किं तु मे मम लोकापवादो बलवान्मतः ॥ कुतः । हि यस्मात्प्र-

---

38. "Such a one as I am not able to endure the scandal the first of its kind, which is spreading among the people, like a drop of oil on waves of water, just as a mighty elephant does not bear its tying post."

39. "In order to avert this calumny I will abandon the daughter of the lord of Videha, being regardless of the consideration that the birth of a child is near at hand, as formerly I did the ocean-girded earth at my sire's behest."

40. "I know her to be innocent. Public reproach, however, weighs higher in my consideration; for people declare the shadow of the earth to be a stain on the pure moon."

---

38. H. विपुलीभवन्तं for बहुलीभवन्तं. A. C. D. with Hemádri, व्यालानिकं for आलानिकं. A. D. with Chá., Din., and Vijay., स्तम्भं for स्थाणुं.

39. A. C. with Hemâdri, त्यजामि for त्यक्ष्यामि. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Mallinâtha. I. अस्य for तस्य. I. निर्व्यपेक्ष्यः for निर्व्यपेक्षः. A. C. with Su., साम्राज्यराज्यं for समुद्रनेमिं. Sumativijaya : "साम्राज्ययुक्तं तद्राज्यं" &c.

40. B. लोकमवादः for लोकापवादः. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., मलत्वे निरूपिता for मलत्वेनारोपिता.

रक्षोवधान्तो न च मे प्रयासो व्यर्थः स वैरप्रतिमोचनाय ।
अमर्षणः शोणितकाङ्क्षया किं पदा स्पृशन्तं दशति द्विजिह्वः ॥ ४१ ॥
तदेष सर्गः करुणार्द्रचित्तैर्न मे भवद्भिः प्रतिषेधनीयः ।
यद्यर्थिता निर्हृतवाच्यशल्यान्प्राणान्मया धारयितुं चिरं वः ॥ ४२ ॥
इत्युक्तवन्तं जनकात्मजायां नितान्तरूक्षाभिनिवेशमीशम् ।
न कश्चन भ्रातृषु तेषु शक्तो निषेद्धुमासीदनुवर्तितुं वा ॥ ४३ ॥

आभिर्भूमेश्छाया प्रतिबिम्बं शुद्धिमतो निर्मलस्य शशिनो मलत्वेन कलङ्कत्वेनारोपिता । अतो लोकापवाद एव बलवानित्यर्थः ॥

४१ ॥ रक्ष इति । किं च । मे रक्षोवधान्तः प्रयासो व्यर्थो न । किं तु स वैरप्रतिमोचनाय । तथा हि । अमर्षणोऽसहनो द्विजिह्वः सर्पः पदा पादेन स्पृशन्तं पुरुषं शोणितकाङ्क्षया दशति किम् । किं तु वैरनिर्यातनायेत्यर्थः ॥

४२ ॥ तदिति । तत्तस्मादेष मे सर्गो निश्चयः ॥ "सर्गः स्वभावनिर्मोक्षनिश्चयाध्यायसृष्टिषु" इत्यमरः ॥ करुणार्द्रचित्तैर्भवद्भिर्न प्रतिषेधनीयः । निर्हृतं वाच्यमेव शल्यं येषां तान्प्राणान्मया चिरं धारयितुं धारणं कारयितुं वो युष्माकमर्थितार्थित्वमिच्छा यदि । अस्तीति शेषः ॥

४३ ॥ इतीति । इत्युक्तवन्तं जनकात्मजायां विषये नितान्तरूक्षाभिनिवेशमतिक्रूराग्रहमीशं स्वामिनं तेषु भ्रातृषु मध्ये कश्चनापि निषेद्धुं निवारयितुमनुवर्तितुं वा शक्तो नासीत् । पक्षद्वयस्यापि प्रबलत्वादित्यर्थः ।

---

41. "My effort which ended in the destruction of that Rākshasa has not been in vain : for it was to avenge my wrongs. Does the wrathful snake bite a person who treads upon it with a thirst for his blood ?"

42. "This my resolve, therefore, should not be contradicted by you with minds softened by compassion for her, if you have the desire that I should live longer with the dart of scandal taken out."

43. To the lord who said thus with this very cruel and stern resolve against Janaka's daughter none among the brothers dared speak in contradiction nor could act up to it.

---

41. D₂. and the text only of Val., रक्षोवधार्थः for रक्षोवधान्तः. E. D. L. भयार्थः for व्यर्थः. A. C. with Vijay., वाञ्छया for काङ्क्षया.

42. B. C. J. K. L. R. with Chā., and Val., निर्गत°, A. with Vijay., निर्जित° for निर्हृत°. One of the three Mss. of Hemādri's दर्पण also agrees with Chāritravardhana and Vallabha. Sumativijaya also notices the reading of these two commentators. B. C. H. I. with Val., Su., and Vijay., धारयता for धारयितुं.

43. A. C. with Vallabha, अनुनादितुं, D. E. J. with Hem., Chā.,

स लक्ष्मणं लक्ष्मणपूर्वजन्मा विलोक्य लोकत्रयगीतकीर्तिः ।
सौम्येति चाभाष्य यथार्थभाषी स्थितं निदेशे पृथगादिदेश ॥ ४४ ॥
प्रजावती दोहदशंसिनी ते तपोवनेषु स्पृहयालुरेव ।
स त्वं रथी तद्व्यपदेशनेयां प्रापय्य वाल्मीकिपदं त्यजैनाम् ॥ ४५ ॥
स शुश्रुवान्मातरि भार्गवेण पितुर्नियोगात्प्रहृतं द्विषद्वत् ।
प्रत्यग्रहीदग्रजशासनं तदाज्ञा गुरूणां ह्यविचारणीया ॥ ४६ ॥

४४ ॥ स इति । लोकत्रयगीतकीर्तिर्यथार्थभाषी लक्ष्मणपूर्वजन्मा लक्ष्मणाग्रजः स रामो निदेशे स्थितमाज्ञाकारिणं लक्ष्मणं विलोक्य हे सौम्य सुभग इत्याभाष्य च पृथग्भरतशत्रुघ्नाभ्यां विनाकृत्यादिदेशाज्ञापयामास ॥

४५ ॥ प्रजावतीति । दोहदो गर्भिणीमनोरथः । तच्छंसिनी ते प्रजावती भ्रातृजाया ॥ " प्रजावती भ्रातृजाया " इत्यमरः ॥ तपोवनेषु स्पृहयालुरेव ॥ " स्पृहिगृहि—" इत्यादिनालुच्प्रत्ययः ॥ स त्वं रथी सन् । तद्व्यपदेशेन दोहदमिषेण नेयां नेतव्यामेनां सीतां वाल्मीकेः पदं स्थानं प्रापय्य गमयित्वा ॥ " विभाषापः " इत्ययादेशः ॥ त्यज ॥

४६ ॥ स इति । पितुर्जमदग्नेर्नियोगाच्छासनाद्भार्गवेण जामदग्न्येन । कर्त्रा ॥ " न लोक-" इत्यादिना षष्ठीप्रतिषेधः ॥ मातरि द्विषतीव द्विषद्वत् ॥ "तत्र तस्यैव"

---

44. That truthful elder brother of Lakshma*n*a, whose glories were sung in the three worlds cast his glance towards Lakshma*n*a who was obedient to him, and addressed him by the term 'gentle brother,' gave him separately the following order.

45. " Your sister-in-law has already expressed a desire for the penance-forests, when she informed me of the cravings of her heart pregnant as she is, so take her away under that pretence in your chariot and having brought her to the hermitage of Vâlmîki, abandon her there. "

46. He who had heard that Bhârgava had dealt a blow to his mother as to a foe at the command of his sire, accepted the

---

Din., Su., and Vijay., अनुमोदितुं for अनुवर्तितुं. Vallabha : " अनुनोदितुं नेरयितुं " &c.

44. B. D. H. I. R. with Val., and Vijay., °भाषः for °भाषी. One of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with Vallabha and others.

45. A. I. K. and the text only of Val., दौर्हद° for दोहद°. B. C. E. I. R. with Hem., Vijay., and the text only of Val., तपोवनेभ्यः for तपोवनेषु. H. L. with Châ., and Din., एषा for एव.

46. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Val., Su., and Vijay., निदेशात् for नियोगात्. B. C. E. L. R. with Hem., Din., and the

अथानुकूलश्रवणप्रतीतामत्रस्नुभिर्युक्तधुरं तुरङ्गैः ।
रथं सुमन्त्रप्रतिपन्नरश्मिमारोप्य वैदेहसुतां प्रतस्थे ॥ ४७ ॥
सा नीयमाना रुचिरान्प्रदेशान्प्रियंकरो मे प्रिय इत्यनन्दत् ।
नाबुद्ध कल्पद्रुमतां विहाय जातं तमात्मन्यसिपत्त्रवृक्षम् ॥ ४८ ॥

इति वतिप्रत्ययः ॥ प्रहृतं प्रहारं शुश्रुवाञ्श्रुतवान् ॥ "भाषायां सदवसश्रुवः" इति क्वसुप्रत्ययः ॥ स लक्ष्मणस्तदग्रजशासनं प्रत्यग्रहीत् ॥ हि यस्माद्गुरूणामाज्ञा अविचारणीया ॥

४७ ॥ अथेति । अथासौ लक्ष्मणः । अनुकूलश्रवणेन प्रतीतामिष्टाकर्णनेन तुष्टां वैदेहसुतामत्रस्नुभिरभीरुभिर्गर्भिर्णीवहनयोग्यैः ॥ "त्रसिगृधिधृषिक्षिपेः क्नुः" इति क्नुप्रत्ययः ॥ तुरङ्गैर्युक्तधुरं सुमन्त्रेण प्रतिपन्नरश्मिं गृहीतप्रग्रहं रथमारोप्य प्रतस्थे ।

४८ ॥ सेति । सा सीता रुचिरान्प्रदेशान्नीयमाना प्राप्यमाणा सती मे मम प्रियः प्रियंकरः प्रियकारीत्यनन्दत् ॥ "क्षेमप्रियमद्रेऽण्च" इति चकारात्खच्प्रत्ययः ॥ तं प्रियमात्मनि विषये कल्पद्रुमतां विहायासिपत्त्रवृक्षं जातं नाबुद्ध नाज्ञासीत् ॥ बुध्यतेर्लुङ् ॥ असिपत्त्रवृक्षः खड्गाकारदलो नारको नाम कोऽप्यपूर्वो वृक्षविशेषः ॥ "असिपत्त्रो भवेत्कोपाकारे च नरकान्तरे" इति विश्वः ॥ आसन्नघातुक इति भावः ॥

---

order of his elder brother; for the commands of elders are not to be questioned.

47. On this he set out having placed the daughter of Videha-king delighted at hearing the agreeable news, upon a chariot to which were yoked unshying horses and the reins of which were held up by Sumantra.

48. As she was carried across the beautiful regions, she was delighted with the thought that her dear husband always acted agreeably to her wishes, but she did not know that her lord had abandoned the nature of the all-yielding tree and had become one with swords for its leaves.

---

text only of Vijay., विशंके for द्विषद्वत्. C. and the text only of Su., व्यभिचारणीया, D. L. त्वविचारणीया, A. C. with Hemádri, न विचारणीया for ह्यविचारणीया.

47. A. C. with Su., °श्रवणे प्रतीतां, E. with Hemádri, °श्रवणप्रहृष्टां for °श्रवणप्रतीतां. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha. L. सुमन्त° for सुमंत्र°.

48. A. D. K. रुचिर° for रुचिरान्. E. मा for न.

जुगूह तस्याः पथि लक्ष्मणो यत्सव्येतरेण स्फुरता तदक्ष्णा ।
आख्यातमस्यै गुरु भावि दुःखमत्यन्तलुप्तप्रियदर्शनेन ॥ ४९ ॥
सा दुर्निमित्तोपगताद्विषादात्सद्यः परिम्लानमुखारविन्दा ।
राज्ञः शिवं सावरजस्य भूयादित्याशशंसे करणैरबाह्यैः ॥ ५० ॥
गुरोर्नियोगाद्वनितां वनान्ते साध्वीं सुमित्रातनयो विहास्यन् ।
अवार्यतेवोत्थितवीचिहस्तैर्जह्नोर्दुहित्रा स्थितया पुरस्तात् ॥ ५१ ॥

४९ ॥ जुगूहेति । पथि लक्ष्मणो यद्दुःखं तस्याः सीताया जुगूह प्रतिसंहृतवांस्तद्गुरु भावि भविष्यद्दुःखमत्यन्तलुप्तं प्रियदर्शनं यस्य तेन स्फुरता सव्येतरेण दक्षिणेनाक्ष्णास्यै सीताया आख्यातम् ॥ स्त्रीणां दक्षिणाक्षिस्फुरणं दुर्निमित्तमाहुः ॥

५० ॥ सेति । सा सीता दुर्निमित्तेन दक्षिणाक्षिस्फुरणरूपेणोपगतात्प्राप्ताद्विषादाद्दुःखात्सद्यः परिम्लानमुखारविन्दा सती सावरजस्य राज्ञो रामस्य शिवं भूयादित्यबाह्यैः करणैरन्तःकरणैराशशंसे ॥ करणैरिति बहुवचनं क्रियावृत्त्यभिप्रायम् ॥ पुनः पुनराशशंस इत्यर्थः ॥

५१ ॥ गुरोरिति । गुरोर्ज्येष्ठस्य नियोगात्साध्वीं वनिताम् । अत्याज्यामित्यर्थः ।

---

49. The great misfortune that was to befall her, which Lakshma*n*a kept concealed from her by the way was yet foreboded to her by her throbbing right-eye which was to loose for ever the delightful sight of her lord.

50. With her lotus-like face which had at once faded away in consequence of the dejection caused by that ill-omen she prayed within herself by means of her inner senses for the welfare of the king together with his younger brothers.

51. The son of Sumitrá who in obedience to his elder brother's

---

49. C. D. E. H. I. K. L. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., जगोप for जुगूह. Sumativijaya notices the reading of Mallinatha. B. अस्याः for अस्यै. A. H. I. with Su., and the texts only of Val., and Vijay., °चुम्बनेन, D. K. R. °चन्दनेन for °दर्शनेन. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Sumativijaya and other Mss. and notices °दर्शनेन.

50. C. E. I. K. R. with Vallabha, and the text only of Vijay., °उपगमात् for °उपगतात्. Hemâdri also notices the reading and says:—"°उपगमात्" इति पाठे उपगच्छतीत्युपगमः ॥ पचाद्यच् ॥" D. K. °विन्दं for °विन्दा. A. C. with Su., शुभं for शिवं. C_2. and the text only of Val., विशंकैः for अबाह्यैः.

51. B. C. I. R. with Val., and Su., भ्रातुः for गुरोः. C. D. I. K.

रथात्स यन्त्रा निगृहीतवाहात्तां भ्रातृजायां पुलिनेऽवतार्य ।
गङ्गां निषादाहृतनौविशेषस्ततार संधामिव सत्यसंधः ॥ ५२ ॥
अथ व्यवस्थापितवाक्कथंचित्सौमित्रिरन्तर्गतबाष्पकण्ठः ।
औत्पातिको मेघ इवाश्मवर्षं महीपतेः शासनमुज्जगार ॥ ५३ ॥

वनान्ते विहास्यंस्त्यक्ष्यन्सुमित्रातनयो लक्ष्मणः पुरस्तादग्रे स्थितया जह्नोर्दुहित्रा जाह्नव्योत्थितैर्वीचिहस्तैरवार्यतेव ॥ अकार्यं मा कुर्विति वारित इव । इत्युत्प्रेक्षा ॥
५२ ॥ रथादिति । सत्यसंधः सत्यप्रतिज्ञः स लक्ष्मणो यन्त्रा सारथिना निगृहीतवाहाद्बद्धाश्वाद्रथाद्भ्रातृजायां पुलिनेऽवतार्यारोप्य निषादेन किरातेनाहृतनौविशेष आनीतकृष्टनौकः सन् । गङ्गां भागीरथीम् । संधां प्रतिज्ञामिव । ततार ॥ " संधा प्रतिज्ञा मर्यादा " इत्यमरः ॥
५३ ॥ अथेति । अथ कथंचिद्व्यवस्थापिता प्रकृतिमापादिता वाग्येन सः । अन्तर्गतबाष्पः कण्ठो यस्य सः कण्ठस्तम्भितास्रुरित्यर्थः । सौमित्रिर्महीपतेः शासनम्

---

command was about to abandon in the forest the faithful wife of his brother, was prevented, as it were, by the daughter of Janhu flowing before him, with her hands of waves that were raised.

52. On the sandy shore having helped his sister-in-law down the chariot whose steeds were reined in by the charioteer he crossed the Gangā by means of an excellent boat being brought to him by the ferryman; as if he true to his word fulfilled the promise he had made to his brother.

53. Then Saumitri whose throat was choked with tears, hav-

---

with Hem., Chá., Val., and Vijay., निदेशात् for नियोगात्. B. C. H. I. J. with Hem., Chá., Val., and Vijay., अपि तां, D. K. L. R. with Su., and the text only of Val., दयितां for वनितां. C. D. E. H. I. J. K. R. with Hem., Su., Vijay., and the text only of Val., न्यवार्यत for अवार्यत. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha. B. C. E. L. R. with Hem.. Chá. and Vijay., उच्छ्रितवीचि°, D. I. K. and the text only of Val., उद्धृतवीचि , D . and the text only of Su., उत्थितवार्य° for उत्थितवीचि°.

52. B. E. H. I. K. R. and the text only of Vijay., सुमंत्रप्रतिपन्न°, D. L. with Chá., and Su., स यंतृप्रतिपन्न for स यंत्रा निगृहीत°. One of the three Mss. of Hemadri's दर्पण also agrees with Charitravardhana and others. A. C. नौविशेषां for नौविशेषः. Sumativijaya notices the reading.

53. R. चिरं for अथ. B. C. E. H. I. K. L. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., औत्पातिकं for औत्पातिकः.

ततोऽभिषङ्गानिलविप्रविद्धा प्रभ्रश्यमानाभरणप्रसूना ।
स्वमूर्तिलाभप्रकृतिं धरित्रीं लतेव सीता सहसा जगाम ॥ ५४ ॥
इक्ष्वाकुवंशप्रभवः कथं त्वां त्यजेदकस्मात्पतिरार्यवृत्तः ।
इति क्षितिः संशयितेव तस्यै ददौ प्रवेशं जननी न तावत् ॥ ५५ ॥

उत्पाते भव औत्पातिको मेघोऽश्मवर्षं शिलावर्षमिव । उज्जगारोद्गीर्णवान् । दारुणत्वेनावाच्यत्वादुज्जगारेत्युक्तम् ॥

५४ ॥ तत इति । ततोऽभिषङ्गः पराभवः ॥ " शापे त्वभिषङ्गः पराभवः " इत्यमरः ॥ स एवानिलस्तेन विप्रविद्धाभिहता । प्रभ्रश्यमानानि पतन्त्याभरणान्येव प्रसूनानि यस्याः सा सीता लतेव । सहसा स्वमूर्तिलाभस्य स्वशरीरलाभस्य स्वोपत्तेः प्रकृतिं कारणं धरित्रीं जगाम ॥ भूमौ पपातेत्यर्थः ॥ स्त्रीणामापदि मातैव शरणमिति भावः ॥

५५ ॥ इक्ष्वाक्विति । इक्ष्वाकुवंशप्रभवः । महाकुलप्रसूत इत्यर्थः । आर्यवृत्तः साधुचरितः पतिर्भर्ता त्वामकस्मादकारणात्कथं त्यजेत् । असंभावितमित्यर्थः । इति संशयितेव संदिहानेव तावत् । त्यागहेतुज्ञानावधेः प्रागित्यर्थः । जननी क्षितिस्तस्यै सीतायै प्रवेशम् । आत्मनीति शेषः । न ददौ ॥

---

ing anyhow settled his words gave utterance to the command of the king, like a portentous cloud pouring down the shower of stones.

54. When Sitá like a creeper violently shaken by the wind in the form of the outrage with the flowers in the form of ornament dropping down, fell at once on Earth, the cause of her bodily existence.

55. " How can thy lord of noble conduct and sprung from the race of Iksvákus have abandoned thee without any reason "— thus suspecting, as it were, Earth her mother did not at first give her entrance within herself. "

---

54. D. with Chá., Su., and Vijay., अभिषंगानिलविप्रवृद्धा, A. अभिषंगानलविप्रवृद्धा, K. अभिषंगानलविप्रविद्धा for अभिषंगानिलविप्रविद्धा. E. with Vijay., पपात for जगाम.

55. A. C. D. with Su., प्रथितार्यवृत्तः, H. with Vijay., पतिरार्यवृत्तिः for पतिरार्यवृत्तः. Sumativijaya : " प्रथितः आर्यः शोभनो वृत्तः चरितः यस्य स प्रसिद्धसच्चारित्रः &c. " D. L. इत्थं for इति. C. H. संशयाति, A. D. with Hemâdri, संशयिनी for संशयिता. Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha.

सा लुप्तसंज्ञा न विवेद दुःखं प्रत्यागतासुः समतप्यतान्तः ।
तस्याः सुमित्रात्मजयत्नलब्धो मोहादभूत्कष्टतरः प्रबोधः ॥ ५६ ॥
न चावदद्भर्तुरवर्णमार्या निराकरिष्णोर्वृजिनादृतेऽपि ।
आत्मानमेव स्थिरदुःखभाजं पुनः पुनर्दुष्कृतिनं निनिन्द ॥ ५७ ॥
आश्वास्य रामावरजः सतीं तामाख्यातवाल्मीकिनिकेतमार्गः ।
निघ्नस्य मे भर्तृनिदेशरौक्ष्यं देवि क्षमस्वेति बभूव नम्रः ॥ ५८ ॥

५६ ॥ सेति । लुप्तसंज्ञा नष्टचेतना मूर्छिता सा दुःखं न विवेद । प्रत्यागतासुर्लब्धसंज्ञा सत्यन्तः समतप्यत । दुःखेनादह्यतेत्यर्थः ॥ तपेः कर्मणि लङ् ॥ कर्मकर्तरीति केचित् । तन्न ॥ "तपस्तपः कर्मकस्यैव" इति यङ्नियमात् ॥ तस्याः सीतायाः सुमित्रात्मजयत्नलब्धः प्रबोधो मोहात्कष्टतरोऽतिदुःसहोऽभूत् । दुःखवेदनासंभवादिति भावः ॥

५७ ॥ न चेति । आर्या साध्वी सीता वृजिनादृत एनसो विनापि ॥ "कलुषं वृजिनैनोऽघम्" इत्यमरः ॥ "अन्यारादितरर्ते-" इत्यादिना पञ्चमी ॥ निराकरिष्णोर्निरासकस्य ॥ "अलंकृञ्-" इत्यादिनेष्णुच्प्रत्ययः ॥ भर्तुरवर्णमपवादं न चावदत् । किं तु स्थिरदुःखभाजमत एव दुष्कृतिनमात्मानं पुनः पुनर्निनिन्द ॥

५८ ॥ आश्वास्येति । रामावरजो लक्ष्मणः सतीं साध्वीं तामाश्वास्य । आख्यात उपदिष्टो वाल्मीकेर्निकेतस्याश्रमस्य मार्गो येन स तथोक्तः सन् । निघ्नस्य पराधीनस्य ॥ "अधीनो निघ्न आयत्तः" इत्यमरः ॥ मे भर्तृनिदेशेन स्वाम्यनुज्ञया हेतुना यद्रौक्ष्यं पारुष्यं तद्धे देवि क्षमस्व । इति नम्रः प्रणतो बभूव ॥

---

56. She did not feel her grief when she had lost her senses, but when restored to herself she burned within, her revival brought about by the endeavours of Sumitrá's son became more painful to her than her swoon.

57. That noble lady did not speak ill of her husband who had discarded her even without any fault ; but again and again condemned herself as a wicked woman consigned to everlasting misery (wedded to everlasting tortures).

58. The younger brother of Ráma consoled that lady who was faithful to her lord and having pointed out the way to Válmiki's

---

56. B. R. सुप्तसंज्ञा for सा लुप्तसंज्ञा. A. C. and the text only of Val., समदह्यतान्तः for समतप्यतान्तः. B. लब्ध्यः for लब्धः. D. and the text only of Su., प्रबुद्धः for प्रबोधः.

57. B. पदे पदे for पुनः पुनः. B. C. D. E. H. I. L. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., दुःकृतिनं for दुष्कृतिनं. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Cháritravardhana and other commentators.

58. I. समीपम् for सतीं ताम्, B. C. E. H. K. L. R. with Hem.,

सीता तमुत्थाप्य जगाद वाक्यं प्रीतास्मि ते सौम्य चिराय जीव ।
बिडौजसा विष्णुरिवाग्रजेन भ्रात्रा यदित्थं परवानसि त्वम् ॥ ५९ ॥
श्वश्रूजनं सर्वमनुक्रमेण विज्ञापय प्रापितमत्प्रणामः ।
प्रजानिषेकं मयि वर्तमानं सूनोरनुध्यायत चेतसेति ॥ ६० ॥
वाच्यस्त्वया मद्वचनात्स राजा वह्नौ विशुद्धामपि यत्समक्षम् ।
मां लोकवादश्रवणादहासीः श्रुतस्य किं तत्सदृशं कुलस्य ॥ ६१ ॥

५९ ॥ सीतेति । सीता तं लक्ष्मणमुत्थाप्य वाक्यं जगाद । किमिति । हे सौम्य साधो ते प्रीतास्मि । चिराय चिरं जीव । यद्यस्मात् । बिडौजसेन्द्रेण विष्णुरुपेन्द्र इव । अग्रजेन ज्येष्ठेन भ्रात्रा त्वमित्थं परवान्परतन्त्रोऽसि ॥

६० ॥ श्वश्रूजनमिति । सर्वं श्वश्रूजनमनुक्रमेण प्रापितमत्प्रणामः सन् । मत्प्रणाममुक्त्वेत्यर्थः । विज्ञापय ॥ किमिति । निषिच्यत इति निषेकः । मयि वर्तमानं सूनोस्त्वपुत्रस्य प्रजानिषेकं गर्भं चेतसानुध्यायत शिवमस्त्विति चिन्तयतेति ॥

६१ ॥ वाच्य इति । स राजा त्वया मद्वचनान्मद्वचनमिति कृत्वा ॥ ल्यब्लोपे पञ्चमी ॥ वाच्यो वक्तव्यः । किमित्यत आह-वह्नावित्यादिभिः सप्तभिः श्लोकैः-अक्ष्णोः समीपे समक्षम् ॥ " अव्ययं विभक्ति—" इत्यादिनाऽव्ययीभावः ॥ "अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः" इति समासान्तष्टच्प्रत्ययः ॥ समक्षमग्रे वह्नौ विशुद्धामपि

residence, became prostrate before her saying " O queen, dependent as I am, forgive my cruelty in executing the order of the king. "

59. Having raised him up Sitá said the following words, " Gentle brother, I am pleased with you ; may you live long. As Vishnu is dependent on Indra so you are upon your elder brother."

60. " With my obeisance to all the mothers-in-law in due order, tell them that they should know the existence of a child in my womb by their son, and wish well of it. "

61. Say to that king as my representative, " Is it consistent with your noble birth or your knowledge of the S'ástras to abondon

Chá., Din., Val., Su., and Vijay., स मातां for सतां तां. A. C. with Hemádri, भर्तृ—गाढं, I. L. भ्रातृ—राज्यं, E. K. R. with Vallabha, भर्तृ—रूक्षं, B. D. H. with Chá., Din., and Vijay., भर्तृ—राक्षं for भर्तृ—राज्यं. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Châritravardhana and others. A. C. and the text only of Val., मातः for देवि.

59. A. E. L. with Val., and Vijay., वत्स, D. with Châ., Din., and Su., पुत्र for सौम्य.

60. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., विज्ञापयेः for विज्ञापय. K. प्रजाभिषेकं for प्रजानिषेकं.

61. D. K. ते for तत.

कल्याणबुद्धेरथ वा तवायं न कामचारो मयि शङ्कनीयः ।
ममैव जन्मान्तरपातकानां विपाकविस्फूर्जथुरप्रसह्यः ॥ ६२ ॥
उपस्थितां पूर्वमपास्य लक्ष्मीं वनं मया सार्धमसि प्रपन्नः ।
तदास्पदं प्राप्य तयातिरोषात्सोढास्मि न त्वद्भवने वसन्ती ॥ ६३ ॥
निशाचरोपप्लुतभर्तृकाणां तपस्विनीनां भवतः प्रसादात् ।
भूत्वा शरण्या शरणार्थमन्यां कथं प्रपत्स्ये त्वयि दीप्यमाने ॥ ६४ ॥

मां लोकवादस्य मिथ्यापवादस्य श्रवणाद्धेतोरहासीरिति यत्तच्छ्रुतस्य प्रख्यातस्य कुलस्य सदृशं किम् । न सदृशमित्यर्थः ॥ यद्वा । श्रुतस्य श्रवणस्य कुलस्य चेति योजना । कामचार्यसीति भावः ॥

६२ ॥ कल्याणेति । अथ वा कल्याणबुद्धेः सुधियस्तव । कर्तुः । मयि विषये-ऽयं त्यागो न कामचार इच्छया करणं न शङ्कनीयः। कामचारशङ्कापि न क्रियत इत्यर्थः । किं तु ममैव जन्मान्तरपातकानामप्रसह्यो विपच्यन्त इति विपाकः फलम्। स एव विस्फूर्जथुरशनिनिर्घोषः ॥ " स्फूर्जथुर्वज्रनिर्घोषे " इत्यमरः ॥

६३ ॥ उपस्थितामिति । पूर्वमुपस्थितां प्राप्तां लक्ष्मीमपास्य मया सार्धं वनं प्रपन्नोऽसि प्राप्तोऽसि । तत्तस्मात्तया लक्ष्म्यातिरोषात्त्वद्भवन आस्पदं प्रतिष्ठाम् ॥ " आस्पदं प्रतिष्ठायाम् " इति निपातः ॥ प्राप्य वसन्त्यहं सोढा नास्मि ॥

६४ ॥ निशाचरेति । निशाचरैरुपप्लुताः पीडिता भर्तारो यासां ता निशाचरो-पप्लुतभर्तृकाः ॥ " नद्यृतश्च " इति कप्प्रत्ययः ॥ तासां तपस्विनीनां भवतः प्रसा-

---

me, though purified in fire in your presence, through listening to the malicious report of the people."

62. "Or, rather, this should not be suspected as a wanton act on your part whose mind is bent upon doing good to others. It is nothing but the sad development of the sins committed by me in my former life, which is as intolerable as a thunder-stroke."

63. "Because on a former occasion when you went to the forests with me, you discarded the goddess of royal glory that came over to you, therefore now that I have got a place in your house, she out of great malice does not suffer me to dwell there."

64. "How should I, who at one time through your favour was

---

63. C. and the text only of Vijay., प्रयातः for प्रपन्नः. B. त्वमास्पदं, C E. H. I. K. L. with Hem., Châ., Din., Val., and Vijay., त्वय्यास्पदं, D. R. with Su., त्वदास्पदं for तदास्पदं. B. L. with Hem., Châ., Din., Val., and Vijay., तु रोषात्, D. E. I. K. R. and the texts only of Val., and Vijay., अनुरोषात् for अतिरोषात्. D. R. and the text only of Vijay., त्वद्गृहे for त्वद्भवने.

64. A. C. and Vallabha first read the 65th verse and then the

किं वा तवात्यन्तवियोगमोघे कुर्यामुपेक्षां हतजीवितेऽस्मिन् ।
स्याद्रक्षणीयं यदि मे न तेजस्त्वदीयमन्तर्गतमन्तरायः ॥ ६५ ॥
साहं तपः सूर्यनिविष्टदृष्टिरूर्ध्वं प्रसूतेश्चरितुं यतिष्ये ।
भूयो यथा मे जननान्तरेऽपि त्वमेव भर्ता न च विप्रयोगः ॥ ६६ ॥

दादनुग्रहाच्छरण्या शरणसमर्था भूत्वा । अद्य त्वयि दीप्यमाने प्रकाशमाने स-न्त्येव । शरणार्थमन्यां तपस्विनीं कथं प्रपत्स्ये प्राप्स्यामि ॥

६५ ॥ किं वेति । किं वा अथ वा तव संबन्धिनात्यन्तेन पुनःप्राप्तिरहितेन वियोगेन मोघे निष्फलेऽस्मिन्हतजीविते तुच्छजीविते उपेक्षां कुर्यां कुर्यामेव । रक्षणीयं रक्षणार्हमन्तर्गतं कुक्षिस्थं त्वदीयं तेजः शुक्रं गर्भरूपम् ॥ "शुक्रं तेजोरेतसी च बीजवीर्येन्द्रियाणि च" इत्यमरः ॥ मे ममान्तरायो विघ्नो न स्याद्यदि ॥

६६ ॥ सेति । साहं प्रसूतेरूर्ध्वं सूर्यनिविष्टदृष्टिः सती तथाविधं तपश्चरितुं यतिष्ये । यथा भूयस्तेन तपसा मे मम जननान्तरेऽपि त्वमेव भर्ता स्या विप्रयोगश्च न स्यात् ॥

---

capable of affording protection to the wives of ascetics oppressed by the night-rangers, now seek protection from others while you are yet alive."

65. "Or I would have despised this wretched life of mine which is fruitless on account of the perpetual separation from you, had not a child by you in my womb deserving of protection stood in my way."

66. "Thus circumstanced, as I am, I shall after the birth of the child so try to practise asceticism with my eyes fixed at the sun, that in the next life I may have *you* for my husband without separation."

64th. B. C. E. I. J. K. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., अन्यं for अन्यां. D L. वर्तमाने, R. जीव्यमाने for दीप्यमाने. E. प्रवत्स्ये for प्रपत्स्ये.

65. B. C. I. K. R. with Val., Su., and Vijay., अपेक्षां for उपेक्षां Hemádri and Cháritravardhana notice the reading; the former: "अपेक्षामिति पाठे किं वेति काकूक्तिः । यदि गर्भिणी न स्यां तर्हि म्रियेयेत्यर्थः" &c. A. C. and the text only of Val., अन्तर्हितं for अन्तर्गतं. I. R. अन्तरायं for अन्तरायः.

66. C. D. K. L. R. with Hemádri and Vallabha, °निबद्ध° for °निविष्ट°. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha. D. J. K. with Hem., Val., Su., and Vijay., तथा, L. भूयात् for भूयः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha. A. C. with Hemádri, जननान्तरेषु for जननान्तरेऽपि. H. नु for च.

नृपस्य वर्णाश्रमपालनं यत्स एव धर्मो मनुना प्रणीतः ।
निर्वासिताप्येवमतस्त्वयाहं तपस्विसामान्यमवेक्षणीया ॥ ६७ ॥
तथेति तस्याः प्रतिगृह्य वाचं रामानुजे दृष्टिपथं व्यतीते ।
सा मुक्तकण्ठं व्यसनातिभाराच्चक्रन्द विग्ना कुररीव भूयः ॥ ६८ ॥
नृत्यं मयूराः कुसुमानि वृक्षा दर्भानुपात्तान्विजहुर्हरिण्यः ।
तस्याः प्रपन्ने समदुःखभावमत्यन्तमासीद्रुदितं वनेऽपि ॥ ६९ ॥

६७ ॥ नृपस्येति । वर्णानां ब्राह्मणादीनामाश्रमाणां ब्रह्मचर्यादीनां च पालनं यत्स एव नृपस्य धर्मो मनुना प्रणीत उक्तः । अतःकारणादेवं त्वया निर्वासिता निष्कासिताप्यहं तपस्विभिः सामान्यं साधारणं यथा भवति तथावेक्षणीया ॥ कलत्रदृष्ट्यभावेऽपि वर्णाश्रमदृष्टिः सीतायां कर्तव्येत्यर्थः ॥

६८ ॥ तथेति । तथेति तस्याः सीताया वाचं प्रतिगृह्याङ्गीकृत्य रामानुजे लक्ष्मणे दृष्टिपथं व्यतीतेऽतिक्रान्ते सति सा सीता व्यसनातिभाराद्दुःखातिरेकान्मुक्तकण्ठं यथा स्यात्तथा । वाग्वृत्त्येत्यर्थः । विग्ना भीता कुररीवोत्क्रोशीव ॥ "उत्क्रोशकुररौ समौ" इत्यमरः ॥ भूयो भूयिष्ठं चक्रन्द चुक्रोश ॥

६९ ॥ नृत्यमिति । मयूरा नृत्यं विजहुस्त्यक्तवन्तः । वृक्षाः कुसुमानि । हरिण्य उपात्तान्दर्भान् । इत्थं तस्याः सीतायाः समदुःखभावं प्रपन्ने तुल्यदुःखत्वं प्राप्ते वनेऽप्यत्यन्तं रुदितमासीत् ॥ यथा रामगेहेऽपीत्यपिशब्दार्थः ॥

---

67. "The protection of the different castes and their stages of life, is the duty of a king laid down by Manu. Therefore even though I am thus banished by you, I deserve to be protected by you in common with other ascetics."

68. When the younger brother of Rāma consented to deliver her message and had gone beyond the range of her sight she, like a terrified osprey, again cried aloud under the weight of her grief, giving a full play to her voice.

69. The peacocks left their dance, the trees dropped flowers, and the female antelopes the Kus'a-grass taken in their mouths; thus there was great weeping even in the forest which shared equally with her in grief and joy.

---

67. D. K. with Vallabha, °रक्षणं for °पालनं.

68. H. दृष्टिपथात् for दृष्टिपथम्. D. समुक्तकण्ठं for सा मुक्तकण्ठं. D. K. त्यग्ना, A. O. with Chāritravardhana, भीता for विग्ना. Chāritravardhana: "भीतोद्विग्ना" &c.

69. D. H. K. नृत्तं for नृत्यं. D. K. with Hemādri, भृंगाः for वृक्षाः. One of the three Mss. of Hemādri's दर्पण also agrees with Mallinātha and notices भृंगाः. C. I. R. with Hem., Din., and Vijay., अत्यर्थं for अत्यन्तं. Between 69–70 R. reads :—" कथं वने लक्ष्मण लक्ष्मणेति दीनाक्षरं रोदिति योषिदुच्चैः आं ज्ञातमेषा जनकात्मजेति कांतारविन्यान्तिकमाजगाम " ॥

तामभ्यगच्छद्रुदितानुसारी कविः कुशेध्माहरणाय यातः।
निषादविद्धाण्डजदर्शनोत्थः श्लोकत्वमापद्यत यस्य शोकः ॥ ७० ॥
तमश्रु नेत्रावरणं प्रमृज्य सीता विलापाद्विरता ववन्दे।
तस्यै मुनिर्दोहदलिङ्गदर्शी दाश्वान्सुपुत्राशिषमित्युवाच ॥ ७१ ॥
जाने विसृष्टां प्रणिधानतस्त्वां मिथ्यापवादक्षुभितेन भर्त्रा ।
तन्मा व्यथिष्ठा विषयान्तरस्थं प्राप्तासि वैदेहि पितुर्निकेतम् ॥ ७२ ॥

७० ॥ तामिति । कुशेध्माहरणाय यातः कविर्वाल्मीकी रुदितानुसारी संस्तां सीतामभ्यगच्छत् ॥ अभिगमनं च कृपालुतयेत्याह—निषादेति । निषादेन व्याधेन विद्धस्याण्डजस्य क्रौञ्चस्य दर्शनेनोत्थ उत्पन्नो यस्य शोकः श्लोकत्वमापद्यत। श्लोकरूपेणाशोचदित्यर्थः ॥ स च श्लोकः पठ्यते—"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः । यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्" इति ॥ तिरश्चामपि दुःखं न सेहे। किमुतान्येषामिति भावः ॥

७१ ॥ तमिति । सीता विलापाद्विरता । सती नेत्रावरणं दृष्टिप्रतिबन्धकमश्रु प्रमृज्य तं मुनिं ववन्दे। दोहदलिङ्गदर्शी गर्भचिन्हदर्शी मुनिस्तस्यै सीतायै सुपुत्राशिषं तत्प्राप्तिहेतुभूतां दाश्वान्दत्तवानिति वक्ष्यमाणप्रकारेणोवाच ॥ "दाश्वान्साह्वान्मीढ्वांश्च" इति क्वस्वन्तो निपातः ॥

७२ ॥ जाने इति । त्वां मिथ्यापवादेन क्षुभितेन भर्त्रा विसृष्टां त्यक्तां । प्रणिधानतः समाधिदृष्ट्या जाने। हे वैदेहि विषयान्तरस्थं देशान्तरस्थं पितुर्जनकस्यैव निकेतं गृहं प्राप्तासि । तत्तस्मान्मा व्यथिष्ठा मा शोचीः ॥ व्यथेर्लुङ् ॥ "न माङ्योगे" इत्यडागमप्रतिषेधः ॥ भर्त्रोपेक्षितानां पितृगृहवास एवोचित इति भावः ॥

---

70. The poet who had gone out to collect Kus'a and holy fuel, and whose outburst of the feeling of grief caused at the sight of a bird struck by a fowler, took the form of a verse, went towards her following the direction of the sound of weeping.

71. Sitá refraining from lamentation and wiping off the tears that obstructed her eye-sight, saluted him. The sage seeing the signs of pregnancy pronounced benediction, that she might get a good son and said the following :—

72. "Through the power of meditation I know you to have

---

70. Hemádri appears to have read तामभ्यगात्तद्रुदितानुसारी for तामभ्यगच्छद्रुदितानुसारी. B. D. मुनिः for कविः. L. निखाद for निषाद.

71. B. प्रलापात् for विलापात्. C. E. H. I. K. R. दौहृद° for दोहद°. H. °लक्ष्म° for °लिङ्ग°. B. C. E. H. I. K. L. R. with Val., Vijay., and Su., दत्त्वा for दाश्वान्. Hemádri and Cháritravardhana notice the reading.

72. D. वने for जाने.

उत्खातलोकत्रयकण्टकेऽपि सत्यप्रतिज्ञेऽप्यविकत्थनेऽपि ।
त्वां प्रत्यकस्मात्कलुषप्रवृत्तावस्त्येव मन्युर्भरताग्रजे मे ॥ ७३ ॥
तवोरुकीर्तिः श्वशुरः सखा मे सतां भवोच्छेदकरः पिता ते ।
धुरि स्थिता त्वं पतिदेवतानां किं तन्न येनासि ममानुकम्प्या ॥ ७४ ॥
तपस्विसंसर्गविनीतसत्त्वे तपोवने वीतभया वसास्मिन् ।
इतो भविष्यत्यनघप्रसूतेरपत्यसंस्कारमयो विधिस्ते ॥ ७५ ॥

७३ ॥ उत्खातेति । उत्खातलोकत्रयकण्टकेऽपि । रावणादिकण्टकोद्धरणेन सर्वलोकोपकारिण्यपीत्यर्थः । सत्यप्रतिज्ञे सत्यसंधेऽपि । अविकत्थनेऽनात्मश्लाघिन्यपि । इत्थं स्नेहपात्रेऽपि त्वां प्रत्यकस्मादकारणात्कलुषप्रवृत्तौ गर्हितव्यापारे भरताग्रजे मे मन्युः कोपोऽस्त्येव ॥ सर्वगुणाच्छादकोऽयं दोष इत्यर्थः ॥ सीतानुनयार्थोऽयं रामोपलम्भः ॥

७४ ॥ तवेति । उरुकीर्तिस्तव श्वशुरो दशरथो मे सखा । ते पिता जनकः सतां विदुषां भवोच्छेदकरो ज्ञानोपदेशादिना संसारदुःखध्वंसकारी । त्वं पतिदेवतानां पतिव्रतानां धुर्यग्रे स्थिता ॥ येन निमित्तेन ममानुकम्प्यानुग्राह्या नासि तत्किम् । न किंचिदित्यर्थः ॥

७५ ॥ तपस्वीति । तपस्विसंसर्गेण विनीतसत्त्वे शान्तजन्तुकेऽस्मिंस्तपोवने वीतभया निर्भीका वस । इतोऽस्मिन्वनेऽनघप्रसूतेस्तेऽपत्यसंस्कारमयो जातकर्मादिरूपो विधिरनुष्ठानं भविष्यति ॥

---

been forsaken by your husband agitated by the calumnious slander of the people. Be not therefore grieved, princess of Videha, you have come to the house of your father, situated in a different country."

73. "I have my wrath against the elder brother of Bharata who has acted disgracefully towards you without any cause, although he pulled up the thorn of the three worlds (Rāvaṇa), although he is of truthful resolve and although he is free from boast."

74. "Your father-in-law of world-wide fame was my friend, your father was the rescuer of the virtuous from the misery of worldly life, and you stand at the head of those women to whom the husband is the only adorable deity, then what is there in you that does not command my sympathy?"

75. "Free from fear, dwell in this penance-grove where the

---

73. L. कलुषात्मवृत्तौ, R. कलुखप्रवृत्तौ for कलुषप्रवृत्तौ. A. and the text only of Val., अविकत्थमाने for अविकत्थनेऽपि.

74. C. E. J. K. with Val., Su., and Vijay., इन्दुकीर्तिः for उरुकीर्तिः. A. with Su., भयच्छेदकरः, D. J. with Hemádri, भवच्छेदकरः,

अशून्यतीरा मुनिसंनिवेशैस्तमोपहन्त्रीं तमसां विगाह्य ।
तत्सैकतोत्सङ्गबलिक्रियाभिः संपत्स्यते ते मनसः प्रसादः ॥ ७६ ॥
पुष्पं फलं चार्तवमाहरन्त्यो बीजं च बालेयमकृष्टरोहि ।
विनोदयिष्यंति नवाभिषङ्गामुदारवाचो मुनिकन्यकास्त्वाम् ॥ ७७ ॥

७६ ॥ अशून्येति । संनिविशन्ते येष्विति संनिवेशा उटजाः ॥ अधिकरणार्थे घञ्प्रत्ययः ॥ मुनीनां संनिवेशैरुटजैरशून्यतीरां पूर्णतीरां तमसः शोकस्य पापस्य वापहन्त्रीम् ॥ "तमस्तु क्लीबे पापं नरकशोकयोः" इत्यमरः ॥ तमसां नदीं विगाह्य तत्र स्नात्वा । तस्याः सैकतोत्संगेषु बलिक्रियाभिरिष्टदेवतापूजाविधिभिस्ते मनसः प्रसादः संपत्स्यते भविष्यति ॥

७७ ॥ पुष्पमिति । ऋतुरस्य प्राप्त आर्तवम् । स्वकालप्राप्तमित्यर्थः । पुष्पं फलं च । अकृष्टरोह्यकृष्टक्षेत्रोत्थम् । अकृष्टपच्यमित्यर्थः । बलये हितं बालेयं पूजायोग्यम् ॥ "छदिरुपधिबलेर्ढञ्" इति ढञ्प्रत्ययः ॥ बीजं नीवारादि धान्यं चाहरन्त्य उदारवाचः प्रगल्भगिरो मुनिकन्यका । नवाभिषङ्गां नूतनदुःखां त्वां विनोदयिष्यन्ति ॥

---

beasts of prey have become tamed in consequence of their association with the hermits. All the necessary ceremonies for the after-purification of your child's birth will take place here when you are safely brought to bed of a child."

76. "Having bathed in the river Tamasá the dispeller of sins, the banks of which are not desolate on account of the huts of the *Rishis* situated on them, thy mind will attain tranquillity by offering up oblations to the gods upon its sandy banks."

77. "Collecting for you such fruits and flowers as the season might afford and the oblation-grains that grow wild upon an uncultivated ground, the Muni's daughters of an agreeable (*lit* bold) conversation will offer consolation to you whose grief is fresh."

D. with Vijay., and Chá., भवच्छेदगुरुः, L. भयोच्छेदकरः for भवोच्छेदकरः One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha. Cháritravardhana : " भवस्य संसारस्य छेदे ध्वंसे गुरुर्ब्रह्मविद्योपदेष्टा."

76. A. C. D. वगाह्य for विगाह्य. We with all commentators and eleven Mss. A. प्रमोदः, C. अभिलाषः for प्रसादः. One of the three Mss of Hemádri's दर्पण also agrees with A.

77. A. बालेयमकृष्टपच्यं, C. E. H. K. L. R. with Val., and Vijay., कामं यदकृष्टरोहि for बालेयमकृष्टरोहि.

पयोघटैराश्रमबालवृक्षान्संवर्धयन्ती स्वबलानुरूपैः ।
असंशयं प्राक्तनयोपपत्तेः स्तनंधयप्रीतिमवाप्स्यसि त्वम् ॥ ७८ ॥

अनुग्रहप्रत्यभिनन्दिनीं तां वाल्मीकिरादाय दयार्द्रचेताः ।
सायं मृगाध्यासितवेदिपार्श्वं स्वमाश्रमं शान्तमृगं निनाय ॥ ७९ ॥

७८ ॥ पय इति । स्वबलानुरूपैः स्वशक्त्यनुसारिभिः पयसामम्भसां घटैः । स्तन्यैरिति च ध्वन्यते । आश्रमबालवृक्षान्संवर्धयन्ती त्वं तनयोपपत्तेः प्राक्पूर्वमसंशयं यथा तथा । स्तनं धयति पिबतीति स्तनंधयः शिशुः ॥ " नासिकास्तनयोर्ध्माधेटोः " इति खश्प्रत्ययः ॥ " अरुर्द्विषत्—" इत्यादिना मुमागमः ॥ तस्मिन्या प्रीतिस्तामवाप्स्यसि ॥ ततः परं सुलभ एव विनोद इति भावः ॥

७९ ॥ अनुग्रहेति । दयार्द्रचेता वाल्मीकिः । अनुग्रहं प्रत्यभिनन्दतीति तथोक्तां तां सीतामादाय सायं मृगैरध्यासितवेदिपार्श्वमधिष्ठितवेदिप्रान्तं शान्तमृगं स्वमाश्रमं निनाय ॥

---

78. " Rearing up young plants in the hermitage with water-jars proportioned to your strength you will without doubt experience a mother's love for her infant child before a son is born to you. "

79. Vâlmiki, with a heart wet with pity having taken her with him, who thanked him for the favour (or who hailed with delight the favour thus shown to her) conducted her to his own hermitage where, in the evening, the deer were sitting by the side of the altars and the wild animals were in a state of peace and tranquillity.

---

78. A. C. D. with Hemâdri, पयोधरैः for पयोघटैः. E. and the text only of Vijay., सुतनिर्विशेषं, A. with Châ., Din., and Su., स्वबलानुरूपं for स्वबलानुरूपैः. A. C. with Hemâdri, स्तनंधयप्रीतिमिवाप्स्यसि, D. स्तनंधयप्रीतिमवाप्स्यसि for स्तनंधयप्रीतिमवाप्स्यसि. Hemâdri " स्तनंधयप्रीतिमिव शिशुदर्शमिव " &c. Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha.

79. D. K. R. with Hemâdri, अनुग्रहं for अनुग्रह°. A. C. with Su., °नन्दितां for °नन्दिनीं. Sumativijaya : " प्रमोदनतोषितां &c. " A. L. शान्तमुखीं, B. शान्तमुखं, D. with Hemâdri, शान्तमुखं. H. and the text only of Vijay., शान्तमूर्तिं for शान्तमृगं.

तामर्पयामास च शोकदीनां तदागमप्रीतिषु तापसीषु ।
निर्विष्टसारां पितृभिर्हिमांशोरन्त्यां कलां दर्श इवौषधीषु ॥ ८० ॥
ता इङ्गुदीस्नेहकृतप्रदीपमास्तीर्णमेध्याजिनतल्पमन्तः ।
तस्यै सपर्यानुपदं दिनान्ते निवासहेतोरुटजं वितेरुः ॥ ८१ ॥
तत्राभिषेकप्रयता वसन्ती प्रयुक्तपूजा विधिनातिथिभ्यः ।
वन्येन सा वल्कलिनी शरीरं पत्युः प्रजासंततये बभार ॥ ८२ ॥

८० ॥ तामिति । शोकदीनां तां सीतां तस्याः सीताया आगमेन प्रीतिर्यासां तासु तापसीषु । पितृभिरग्निष्वात्तादिभिर्निर्विष्टसारां भुक्तसारां हिमांशोरन्त्यामवशिष्टां कलां दर्शोऽमावास्याकाल ओषधीष्विव । अर्पयामास च ॥ अत्र पराशरः—" पिबन्ति विमलं सोमं विशिष्टा तस्य या कला । सुधामृतमयीं पुण्यां तामिन्दोः पितरो मुने " इति ॥ व्यासश्च—" अमायां तु सदा सोम ओषधीः प्रतिपद्यते " इति ॥

८१ ॥ ता इति । तास्तापस्यस्तस्यै सीतायै सपर्यानुपदं पूजानन्तरं दिनान्ते सायंकाले निवास एव हेतुस्तस्य निवासहेतोः । निवासार्थमित्यर्थः ॥ " षष्ठी हेतुप्रयोगे " इति षष्ठी ॥ " इङ्गुदी तापसतरुः " इत्यमरः ॥ इङ्गुदीस्नेहेन कृतप्रदीपमन्तरास्तीर्णं मेध्यं शुद्धमजिनमेव तल्पं शय्या यस्मिंस्तमुटजं पर्णशालां वितेरुर्ददुः ॥

८२ ॥ तत्रेति । तत्राश्रमेऽभिषेकेण स्नानेन प्रयता नियता वसन्ती विधिना

---

80. He entrusted her afflicted with grief as she was to the care of the female-ascetics who were rejoiced at her arrival, just as the time of Dars'a consigns the last digit of the moon whose essence has been enjoyed by the Pitris to the care of herbs.

81. After her first reception a cottage was given her to lodge in at the close of the day, in which there was a lamp fed by Ingudi-oil and a bedding of a holy hide spread out for her.

82. Dressed in barks, purified by baths, and offering hospitality to guests according to the precepts, she fed her body with

---

80. D. H. with Chá., and Vijay., समर्पयामास for तामर्पयामास. D. H. with Hem., Chá., Din., Su., and Vijay., स for च. D. L. समागम° for तदागम°. D. °सारा for °सारां. D. अन्त्या for अन्त्यां. D. कला for कलां.

81. A. C. D. with Chá., Din., and Vijay., इंगुदीतैलकृतप्रदीपं for इंगुदीस्नेहकृतप्रदीपं. D. L. विभेजुः, E. वितेनुः for वितेरुः.

82. B. K. L. with Châ., Din., Su., and Vijay., विविधा°, D. L.

अपि प्रभुः सानुशयोऽधुना स्यादित्युत्सुकः शक्रजितोऽपि हन्ता ।
शशंस सीतापरिदेवनान्तमनुष्ठितं शासनमग्रजाय ॥ ८३ ॥
बभूव रामः सहसा सबाष्पस्तुषारवर्षीव सहस्यचन्द्रः ।
कौलीनभीतेन गृहान्निरस्ता न तेन वैदेहसुता मनस्तः ॥ ८४ ॥

शास्त्रेणातिथिभ्यः प्रयुक्तपूजा कृतसत्कारा वल्कलिनी सा सीता पत्युः प्रजासंतनये संतानाविच्छेदाय वन्येन कन्दमूलादिना शरीरं बभार पुपोष ॥

८३ ॥ अपीति । प्रभू राजाधुना सानुशयः स्यादपि सानुतापः स्यात्किमित्युत्सुकः शक्रजित इन्द्रजितो हन्ता लक्ष्मणोऽपि सीतापरिदेवनान्तं सीताविलापान्तमनुष्ठितं शासनमग्रजाय शशंस ॥

८४ ॥ बभूवेति । सहसा सबाष्पो रामः । तुषारवर्षी सहस्यचन्द्र इव । बभूव । अत्यश्रुपातात्तुषारवर्षिणा पौषचन्द्रेण तुल्योऽभूत् ॥ " पौषे तैषसहस्यौ द्वौ " इत्यमरः ॥ युक्तं चैतदित्याह—कौलीनाल्लोकापवादाद्भीतेन तेन रामेण वैदेहसुता सीता गृहान्निरस्ता । न मनस्तो मनसश्चित्तान्न निरस्ता ॥ पञ्चम्यास्तसिल् ॥

---

the sylvan food while residing there for the propagation of her husband's progeny.

83. Being anxious to see whether the king had been penitent by this time the destroyer of Indrajit also informed his elder brother that his command had been executed together with everything up to the lamentation of Sitâ.

84. Râma at once had burst into tears like the moon of Pausha shedding dew. Afraid of the calumny he had cast her out of his house, but not of his heart.

R. with Val., and the text only of Vijay., विबुधा for विधिना. Vallabha : " देवब्राह्मणेभ्यो विहिता पूजा यया सा. "

83. D. यथा for अधुना. Hemâdri notices the reading. B. C. E. H. I. J. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., इति, A. D. किं. H. शत्रुजितः for शक्रजितः. A. D. K. R. with Val., Su., and the text only of Vijay., निहन्ता, H. अभिहन्ता for अपि हन्ता. One of the three Mss. of Hemadri's दर्पण also agrees with H. Ms. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., and Vijay., देविनान्तं for °देवनान्तं.

84. C. D. I. L. R. with Hem., Val., Din., and Vijay., सपदि for सहसा. C. E. I. L. with Hem., Din., Vijay., and the text only of Val., प्रबाष्पः for सबाष्पः. One of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुहिमवर्षी also agrees with Hemâdri and others.

निगृह्य शोकं स्वयमेव धीमान्वर्णाश्रमावेक्षणजागरूकः ।
स भ्रातृसाधारणभोगमृद्धं राज्यं रजोरिक्तमनाः शशास ॥ ८५ ॥
तामेकभार्यां परिवादभीरोः साध्वीमपि त्यक्तवतो नृपस्य ।
वक्षस्यसंघट्टसुखं वसन्ती रेजे सपत्नीरहितेव लक्ष्मीः ॥ ८६ ॥
सीतां हित्वा दशमुखरिपुर्नोपयेमे यदन्यां
तस्या एव प्रतिकृतिसखो यत्क्रतूनाजहार ॥

८५ ॥ निगृह्येति । धीमान्वर्णानामाश्रमाणां चावेक्षणेऽनुसंधाने जागरूकोऽप्रमत्तः॥ "जागरूकः—" इत्यूकप्रत्ययः ॥ रजोरिक्तमना रजोगुणशून्यचित्तः स रामः स्वयमेव शोकं निगृह्य निरुध्य भ्रातृभिः साधारणभोगं शरीरस्थितिमात्रोपयुक्तमृद्धं राज्यं शशास ॥

८६ ॥ तामिति । परिवादभीरोर्निन्दाभीरोरत एवैकभार्यामपि साध्वीमपि तां सीतां त्यक्तवतो नृपस्य वक्षस्यसंघट्टसुखमसंभाव्यसुखं वसन्ती लक्ष्मीः सपत्नीरहितेव रेजे दिदीपे । तस्य स्त्र्यन्तरपरिग्रहो नाभूदिति भावः ॥

८७ ॥ सीतामिति । दशमुखरिपू रामः सीतां हित्वा त्यक्त्वान्यां स्त्रियं नोपयेमे न परिणीतवानिति यत् ॥ "उपाद्यमः स्वकरणे" इत्यात्मनेपदम् ॥ किं च । तस्याः सीताया एव प्रतीकृतेः प्रतिमाया हिरण्मय्याः सखा प्रतिकृतिसखः सन्क्रतूनाजहाराहृतवानिति । यत्तेन श्रवणविषयप्रापिणा श्रोत्रदेशगामिना भर्तुर्वृत्तान्तेन

---

85. That wise monarch who was vigilant in superintending the castes and their modes of life himself restrained his grief and ruled with a mind free from the effects of Rajoguṇa over his rich domain which he enjoyed in common with his brothers.

86. The Goddess of Fortune now living in complete happiness on the bosom of the king who afraid of the calumny of the people had abandoned her (Sitâ) his only wife though chaste, now shone bright as if she were rid of a rival.

87. That the enemy of the ten-headed demon did not marry a second wife after he had abandoned Sitâ, and that he performed sacrifices being accompanied by the image of herself. When this

---

85. E. R. वर्णाश्रमान्वेषण° for वर्णाश्रमावेक्षण°. A. D. K. °योगं, R. एकं for °भोगं. H. राजा for राज्यं.

86. B. C. E. H. I. L. R. with Hem , Châ., Din., Val., Su., and the text only of Vijay., तस्य for तां. B. with Vallabha, असंबाध° for असंघट्ट°. Vallabha : " असंबाधसुखं अनुपदसुखं " &c. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., रेमे for रेजे. K. °सहितेव for °रहितेव.

87. B. C. with Hemádri and the text only of Vijay., °मुख° for

वृत्तान्तेन श्रवणविषयप्रापिणा तेन भर्तुः
सा दुर्वारं कथमपि परित्यागदुःखं विषेहे ॥ ८७ ॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कालिदासकृतौ सीतापरित्यागो नाम चतुर्दशः सर्गः ॥

वार्तया हेतुना सा सीता दुर्वारं दुर्निरोधं परित्यागेन यद्दुःखं तत्कथमपि विषेहे विसोढवती ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमच्छपाच्छयसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां चतुर्दशः सर्गः ॥

---

account of her lord reached her ears, she with great difficulty endured the irresistible grief of her repudiation.

°मुख°. A. D. and the text only of Val., आजुहाव for आजहार. B. °विषयव्यापिना, D. °विषयं प्रापिणा, C. and the text only of Vijay., °विषये प्रापिणा for °विषयप्रापिणा. B. D. H. I. K. L. R. with Châ., Din, Val., Su., and Vijay., दुर्वारव्यथं for दुर्वारं कथं. Hemádri notices the reading: "दुर्वारव्यथमिति पाठे दुःखमित्यनेन पौनरुक्त्यं स्याद्विशिष्टविशेषत्वात्पौनरुक्त्यदोषः इत्येके" &c.

। पंचदशः सर्गः ।

कृतसीतापरित्यागः स रत्नाकरमेखलाम् ।
बुभुजे पृथिवीपालः पृथिवीमेव केवलाम् ॥ १ ॥
लवणेन विलुप्तेज्यास्तामिस्रेण तमभ्ययुः ।
मुनयो यमुनाभाजः शरण्यं शरणार्थिनः ॥ २ ॥
अवेक्ष्य रामं ते तस्मिन्न प्रजह्रुः स्वतेजसा ।
त्राणाभावे हि शापास्त्राः कुर्वन्ति तपसो व्ययम् ॥ ३ ॥

अरण्यकं गृहस्थानं श्वशुरो यज्ञजःकणाः (?)
स्वयमौद्वाहिकं गेहं तस्मै रामाय ते नमः (?)

१ ॥ कृतेति । कृतसीतापरित्यागः स पृथिवीपालो रामो रत्नाकर एव मेखला यस्यास्ताम् । सार्णवामित्यर्थः । केवलाम् । एकामित्यर्थः । पृथिवीमेव बुभुजे भुक्तवान् । न तु पार्थिवीमित्यर्थः ॥ सापि रत्नखचितमेखला । पृथिव्याः कान्तासमाधर्म्यं द्योत्यते ॥ रामस्य स्त्र्यन्तरपरिग्रहो नास्तीति श्लोकाभिप्रायः ॥
२ ॥ लवणेनेति । लवणेन लवणाख्येन तामिस्रेण तमिस्राचारिणा । रक्षसेत्यर्थः ॥ विलुप्तेज्या लुप्तयागक्रिया अत एव शरणार्थिनो रक्षणार्थिनो यमुनाभाजो यमुनातीरवासिनो मुनयः शरण्यं शरणार्हं रक्षणसमर्थं तं रामं रक्षितारमभ्ययुः प्राप्ताः ॥ यातेर्लङ् ॥
३ ॥ अवेक्ष्येति । ते मुनयो राममवेक्ष्य । रक्षितारमिति शेषः । तस्मिंल्लवणे स्वतेजसा शापरूपेण न प्रजह्रुः । तथा हि । त्रायत इति त्राणं रक्षकम् ॥ कर्तरि ल्युट् ॥

---

1. That protector of the earth who had abandoned Sitá enjoyed the mere earth alone which had for its zone the ocean the abode of pearls.

2. Hermits residing on the banks of the Yamuná having had their sacrificial rites destroyed by a night-ranger named Lavaṇa came to him who was the universal refuge asking for protection.

3. Knowing that Ráma would protect them, they did not strike down that demon with their own power of asceticism ; for

---

1. H. परित्यागी for परित्यागः. A. C. with Vijay. पृथिवीनाथः for पृथिवीपालः. D. कोवलं, L. with Hemádri and the texts only of Val., and Vijay., केवलं for केवलां. Cháritravardhana notices Hemádri's reading.

2. A. with Su., अभ्यगुः, D. E. I. R. with Hemádri, अन्वयुः for अभ्ययुः. R. शरणार्थिनं for शरणार्थिनः.

प्रतिशुश्राव काकुत्स्थस्तेभ्यो विघ्नप्रतिक्रियाम् ।
धर्मसंरक्षणार्थैव प्रवृत्तिर्भुवि शार्ङ्गिणः ॥ ४ ॥
ते रामाय वधोपायमाचख्युर्विबुधद्विषः ।
दुर्जयो लवणः शूली विशूलः प्रार्थ्यतामिति ॥ ५ ॥
आदिदेशाथ शत्रुघ्नं तेषां क्षेमाय राघवः ।
करिष्यन्निव नामास्य यथार्थमरिनिग्रहात् ॥ ६ ॥

तदभावे शाप एवास्त्रं येषां ते शापास्त्राः सन्तस्तपसो व्ययं कुर्वन्ति ॥ शापदानात्तपःक्षयः प्रसिद्धः ॥

४ ॥ प्रतीति । काकुत्स्थो रामस्तेभ्यो मुनिभ्यो विघ्नप्रतिक्रियां लवणवधरूपां प्रतिशुश्राव प्रतिजज्ञे ॥ तथा हि ॥ भुवि शार्ङ्गिणो विष्णोः प्रवृत्ती रामकृष्णाद्यवतारेण धर्मसंरक्षणमेवार्थः प्रयोजनं यस्याः सा तथैव ॥

५ ॥ त इति । ते मुनयो रामाय विबुधद्विषः सुरारेर्लवणस्य वधोपायमाचख्युः ॥ लुनातीति लवणः । नन्द्यादित्वाल्ल्युः । तत्रैव निपातनाण्णत्वम् ॥ लवणः शूली शूलवान्दुर्जयः । किं तु विशूलः शूलरहितः प्रार्थ्यतामभिगम्यताम् ॥ " याच्ञायामभियाने च प्रार्थना कथ्यते बुधैः " इति केशवः ॥

६ ॥ आदिदेशेति । अथ तेषां मुनीनां क्षेमाय क्षेमकरणाय राघवो रामः शत्रुघ्नमादिदेश ॥ अतोऽस्येत्यर्थे—अस्य शत्रुघ्नस्य नामारिनिग्रहाच्छत्रुहननाद्धेतोः ।

---

in the absence of a protector only do the curse-armed ones (sages who have curses for their arms) expend their ascetic virtue.

4. The descendant of Kakutstha promised them the removal of obstacles to sacrifices : for the appearance of the wielder of S'ar*ng*a on earth has for its object only the protection of righteousness.

5. They mentioned to Ráma the means of killing that enemy of the gods, saying " Lava*n*a armed with his trident is invincible therefore let him be surprised when he is without it. "

6. Then Rághava ordered S'atrughna to give them peace and security (weal) intending as it were, to make his name, by the destruction of the enemy, accord (or true) to its meaning.

---

4. B. C. H. I. L. with Su., and the texts only of Val., and Vijay., °रक्षणार्थेव, D. K. °रक्षणार्थाय for रक्षणार्थैव. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण agrees with Sumativijaya in reading रक्षणार्थेव. Vallabha agrees with Mallinatha. B. विद्युतः, D. K. प्रस्थानं for प्रवृत्तिः.

5. A. C. with Hem. and Cha., आचक्षुः for आचख्युः. I. K. and the text only of Vijay., प्रार्थिताम् for प्रार्थ्यताम्. Probably a wrong reading. **B. first reads the 6th verse and then the 5th.**

यः कश्चन रघूणां हि परमेकः परंतपः ।
अपवाद इवोत्सर्गं व्यावर्तयितुमीश्वरः ॥ ७ ॥
अग्रजेन प्रयुक्ताशीस्ततो दाशरथी रथी ।
ययौ वनस्थलीः पश्यन्पुष्पिताः सुरभीरभीः ॥ ८ ॥
रामादेशादनुगता सेना तस्यार्थसिद्धये ।
पश्चादध्ययनार्थस्य धातोरधिरिवाभवत् ॥ ९ ॥

यथाभूतोऽर्थो यस्य तद्यथार्थं करिष्यन्निव ॥ शत्रून्हन्तीति शत्रुघ्नः ॥ " अमनुष्यकर्तृके च " इति चकारात्कृतघ्नशत्रुघ्नादयः सिद्धा इति दुर्गसिंहः ॥ पाणिनीयेऽपि बहुलग्रहणाद्यथेष्टसिद्धिः ॥ " कृत्यल्युटो बहुलम् " इति ॥

७ ॥ रामस्य स्वयमप्रयाणे हेतुमाह । य इति । पराञ्छत्रूंस्तापयतीति परंतपः ॥ " द्विषत्परयोस्तापेः " इति खच्प्रत्ययः ॥ " खचि ह्रस्वः " इति ह्रस्वः ॥ हि यस्माद्रघूणां मध्ये यः कश्चनेकः । अपवादो विशेषशास्त्रमुत्सर्गं सामान्यशास्त्रमिव । परं शत्रुं व्यावर्तयितुं बाधितुमीश्वरः समर्थः ॥ अतः शत्रुघ्नमेवादिदेशेति पूर्वेणान्वयः ॥

८ ॥ अग्रजेनेति । ततोऽग्रजेन रामेण प्रयुक्ताशीः कृताशीर्वादो रथी रथिकोऽभीर्निर्भीको दाशरथिः पुष्पाण्यासां संजातानि पुष्पिताः सुरभीरामोदमाना वनस्थलीः पश्यन्ययौ ॥

९ ॥ रामेति । रामादेशानुगता सेना तस्य शत्रुघ्नस्य । अध्ययनमर्थोऽभिधेयो यस्य तस्य धातोः ॥ " इङ्ध्ययने " इत्यस्य धातोः पश्चादधिरध्युपसर्ग इव ॥ अर्थसिद्धये प्रयोजनसाधनायत्येकत्र । अन्यत्राभिधेयसाधनाय । अभवत् ॥ "अर्थोऽभिधेयरैवस्तुप्रयोजननिवृत्तिषु " इत्यमरः ॥ यथा " इङिकावध्युपसर्गं न व्यभिचरते " इति न्यायेनाध्युपसर्गः स्वयमेवार्थसाधकस्य धातोः संनिधिमात्रेणोपकरोति ॥ सेनापि तस्य तद्वदिति भावः ॥

---

7. For any one of the descendants of Raghu being a scourge to his enemies is able to obstruct them, as a special rule is able to oppose a general one.

8. The intrepid son of Das'aratha having had benedictions pronounced upon him by his eldest brother and being seated on a chariot went on enjoying the view of the forest land where the trees were in blossom and which diffused fragrance around.

9. The army which followed him in obedience to the command of Râma was as useful to him for the accomplishment of his

---

7. B. विवर्तयितुं, D. with Châ., and Din., निर्वर्तयितुं for व्यावर्तयितुं.

8. A. D. तदा for ततः. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with A. D.

9. B. C. H. I. K. L. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., अनुपदं सेनांगं तस्य सिद्धये for अनुगता सेना तस्यार्थसिद्धये.

आदिष्टवर्त्मा मुनिभिः स गच्छंस्तपतां वरः ।
विरराज रथपृष्ठैर्वालखिल्यैरिवांशुमान् ॥ १० ॥
तस्य मार्गवशादेका बभूव वसतिर्यतः ।
रथस्वनोत्कण्ठमृगे वाल्मीकीये तपोवने ॥ ११ ॥
तमृषिः पूजयामास कुमारं क्लान्तवाहनम् ।
तपः प्रभावसिद्धाभिर्विशेषप्रतिपत्तिभिः ॥ १२ ॥

१० ॥ आदिष्टेति । रथपृष्ठै रथस्याग्रगामिभिः ॥ "पृष्ठोऽग्रगामिनि" इति निपातः ॥ मुनिभिः पूर्वोक्तैरादिष्टवर्त्मा निर्दिष्टमार्गो गच्छंस्तपतां देदीप्यमानानां मध्ये वरः श्रेष्ठः स शत्रुघ्नः । वालखिल्यैर्मुनिभिरंशुमान्सूर्य इव । विरराज ॥ तेऽपि रथपृष्ठा इत्यनुसंधेयम् ॥

११ ॥ तस्येति । यतो गच्छतः ॥ इण्धातोः शतृप्रत्ययः ॥ तस्य शत्रुघ्नस्य मार्गवशाद्रथस्वन उत्कण्ठा उद्ग्रीवा मृगा यस्मिंस्तस्मिन्वाल्मीकीये वाल्मीकिसंबन्धिनि ॥ "वृद्धाच्छः" इति छप्रत्ययः ॥ तपोवन एका वसती रात्रिर्बभूव । तत्रैकां रात्रिमुषित इत्यर्थः ॥ "वसती रात्रिवेश्मनोः" इत्यमरः ॥

१२ ॥ तमिति । क्लान्तवाहनं श्रान्तयुग्यं तं कुमारं शत्रुघ्नमृषिर्वाल्मीकिस्तपःप्रभावसिद्धाभिर्विशेषप्रतिपत्तिभिरुत्कृष्टसंभावनाभिः पूजयामास ॥

---

intended object as the prefix अधि to the root इ, meaning, 'to study,' is to convey its meaning.

10. That most resplendant S'atrughna while advancing, his way being shown by the sages who went before his chariot, appeared like the sun having the Valakhilyas walking in front of his car.

11. On account of his road (which lay by the side of the hermitage), he in the course of his journey made a sojourn for one night at the penance-grove of Valmiki where the deer raised their necks at the sound of the chariot.

12. The sage honourably received the prince whose horses were fatigued with the means of special arrangement of things, prepared by the efficacy (potency) of his asceticism.

---

10. A. K. स गच्छन्वदतां, C. with स गच्छंस्तपसां, D. L. गच्छन्मानिमतां for स गच्छंस्तपतां. D. वरैः for वरः. I. वालखिल्यैः for वालखिल्यैः.

11. B. C. E. H. I. K. with Chá., Din., Val., Su., and the text only of Vijay., °स्वनोत्कर्णमृग, D. L. R with Vijay., स्वनोत्कीर्णमृग for °स्वनोत्कण्टमृगे.

12. C. K. L. R. and the text only of Vijay., श्रान्त° for क्लान्त°. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with C. and others. A. C. with Chá., and Din., शत्रुघ्नं for कुमारं. B. C. E. H. I. K.

तस्यामेवास्य यामिन्यामन्तर्वत्नी प्रजावती ।
सुतावसूत संपन्नौ कोशदण्डाविव क्षितिः ॥ १३ ॥
संतानश्रवणाद्भ्रातुः सौमित्रिः सौमनस्यवान् ।
प्राञ्जलिर्मुनिमामन्त्र्य प्रातर्युक्तरथो ययौ ॥ १४ ॥
स च प्राप मधूपघ्नं कुम्भीनस्याश्च कुक्षिजः ।
वनात्करमिवादाय सत्त्वराशिमुपस्थितः ॥ १५ ॥
धूमधूम्रो वसागन्धी ज्वालाबभ्रुशिरोरुहः ।
क्रव्याद्गणपरीवारश्चिताग्निरिव जङ्गमः ॥ १६ ॥

१३ ॥ तस्यामिति । तस्यामेव यामिन्यां रात्रावस्य शत्रुघ्नस्य । अन्तरस्या अस्तीत्यन्तर्वत्नी गर्भिणी ॥ " अन्तर्वत्नी च गर्भिणी " इत्यमरः ॥ " अन्तर्वत्पतिवतोर्नुक् " इति ङीप् ॥ नुगागमश्च ॥ प्रजावती भ्रातृजाया सीता । क्षितिः संपन्नौ समग्रौ कोशदण्डाविव । सुतावसूत ॥

१४ ॥ संतानेति । भ्रातुर्ज्येष्ठस्य संतानश्रवणाद्धेतोः सौमनस्यवान्प्रीतिमान्सौमित्रिः शत्रुघ्नः प्रातर्युक्तरथः प्राञ्जलिः कृताञ्जलिर्मुनिमामन्त्र्यापृच्छ्य ययौ ॥

१५ ॥ स चेति । स शत्रुघ्नश्च मधूपघ्नं नाम लवणपुरं प्राप । कुम्भीनसी नाम रावणस्वसा । तस्याः कुक्षिजः पुत्रो लवणश्च वनात्करं बलिमिव सत्त्वानां प्राणिनां राशिमादायोपस्थितः प्राप्तः ॥

१६ ॥ धूमेति । किंभूतो लवणः । धूम इव धूम्रः कृष्णलोहितवर्णः ॥ " धूम्रधूमलौ कृष्णलोहिते " इत्यमरः ॥ वसागन्धो हृन्मेदोगन्धः । सोऽस्यास्तीति वसागन्धी ॥

13. On that very night his sister-in-law who was quick with child gave birth to illustrious twins (sons), as the earth produces a complete treasure and a complete army.

14. The son of Sumitrá was delighted to hear of the birth of children to his brother, and on the following morning took leave of the sage with folded hands and getting his chariot ready (harnessing the horses to it) resumed his march.

15. As soon as he reached Madhúpaghna, the demon who was produced from the womb of Kumbhinasi returned there from the forest taking with him a heap of (killed) animals as if it were a tribute exacted from the forest.

16. Grey as smoke, giving out stink of fat, having hair tawny like flames of fire and surrounded by a crowd of devourers of

---

L. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., विषय° for विशेष°. Hemádri agrees with Mallinátha and notices this reading.

13. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., संपन्ना, J. समग्रौ for संपन्नौ. B. क्षतिः for क्षितिः.

15. B. C. E. उपादाय for इवादाय.

अपशूलं तमासाद्य लवणं लक्ष्मणानुजः ।
रुरोध संमुखीनो हि जयो रन्ध्रप्रहारिणाम् ॥ १७ ॥
नातिपर्याप्तमालक्ष्य मत्कुक्षेरद्य भोजनम् ।
दिष्ट्या त्वमसि मे धात्रा भीतेनेवोपपादितः ॥ १८ ॥
इति संतर्ज्य शत्रुघ्नं राक्षसस्तज्जिघांसया ।
प्रांशुमुत्पाटयामास मुस्तास्तम्बमिव द्रुमम् ॥ १९ ॥

"मेदस्तु वपा वसा" इत्यमरः ॥ ज्वाला इव बभ्रवः पिङ्गलाः शिरोरुहाः केशा यस्य स तथोक्तः ॥ "विपुले नकुले विष्णौ बभ्रुः स्यात्पिङ्गले त्रिषु" इत्यमरः ॥ क्रव्यं मांसमदन्तीति क्रव्यादो राक्षसाः । तेषां गण एव परीवारो यस्य स तथोक्तः । अत एव जङ्गमः श्मशानाग्निरिव स्थितः ॥ कृशानुपक्षे धूमैर्धूम्रवर्णः ॥ ज्वाला एव शिरोरुहाः । क्रव्यादो गृध्रादयः । इत्यनुसंधेयम् ॥

१७ ॥ अपशूलमिति । लक्ष्मणानुजः शत्रुघ्नोऽपशूलं शूलरहितं तं लवणमासाद्य रुरोध ॥ तथा हि । रन्ध्रप्रहारिणां रन्ध्रप्रहारशीलानाम् । अपशूलत्वमेवात्र रन्ध्रम् । जयः संमुखीनो हि । संमुखदृश्यो हि ॥ "यथामुखसंमुखस्य दर्शनः खः" इति खप्रत्ययः ॥ अधिकरणलक्षणोऽयं तु दुर्लभ एव ॥

१८—१९ ॥ नेति । इतीति ॥ युग्मम् ॥ राक्षसो लवणः । अद्य मत्कुक्षेः । भुज्यत इति भोजनम् ॥ भोज्यं मृगादिकं नातिपर्याप्तमनतिसमग्रमालक्ष्य दृष्ट्वा भीतेनेव धात्रा

---

raw flesh (demons), he appeared as if he were a moving funeral fire which (also) is grey on account of its smoke, with its tawny hair in the form of flames, surrounded by a crowd of vultures, &c.

17. Finding him without his pike, the younger brother of Lakshma*n*a assailed him; for, success attends those who strike at the vulnerable (weak) points of an enemy.

18-19. " The creator seeing that the food, I have acquired is not over sufficient for my appetite today and therefore being afraid,

---

17. E. with Chá., and Din., समासाद्य for तमासाद्य. D. L. सांयुगीनः for संमुखीनः.

18. D. नाभिपर्याप्तं for नातिपर्याप्तं. One of the three Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with D. Ms. C. E. I. K. R. with Hem., Val., and Vijay., आलोक्य for आलक्ष्य. Sumativijaya notices the reading. B. C. E. H. I. K. L. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., वेतनं for भोजनं. Chāritravardhana: " वेतनं भोजनं. " so do others. One of the three Mss. of Hemādri's दर्पण also reads वेतनं and comments " वेतनं भोजनं " like other commentators.

19. C. संत्यज्य, D. with Su., संतर्प्य for संतर्ज्य. Hemādri notices the reading of C.

सौमित्रेर्निशितैर्बाणैरन्तरा शकलीकृतः ।
गात्रं पुष्परजः प्राप न शाखी नैर्ऋतेरितः ॥ २० ॥
विनाशात्तस्य वृक्षस्य रक्षस्तस्मै महोपलम् ।
प्रजिघाय कृतान्तस्य मुष्टिं पृथगिव स्थितम् ॥ २१ ॥
ऐन्द्रमस्त्रमुपादाय शत्रुघ्नेन स ताडितः ।
सिकतात्वादपि परां प्रपेदे परमाणुताम् ॥ २२ ॥

दिष्ट्या भाग्येन मे त्वमुपपादितः कल्पितोऽसि । इति शत्रुघ्नं संतर्ज्य तस्य शत्रुघ्नस्य जिघांसया हन्तुमिच्छया प्रांशुमुन्नतं द्रुमम् । मुस्तास्तम्बमिव । अक्लेशेनोत्पाटयामास ॥

२० ॥ सौमित्रेरिति । नैर्ऋतेरितो राक्षसेरितः शाख्यन्तरा मध्ये निशितैर्बाणैः शकलीकृतः सन्सौमित्रेः शत्रुघ्नस्य गात्रं न प्राप । किं तु पुष्परजः प्राप ॥

२१ ॥ विनाशादिति । रक्षो लवणस्तस्य वृक्षस्य विनाशाद्धेतोः । महोपलं महान्तं पाषाणम् । पृथक्स्थितं कृतान्तस्य यमस्य मुष्टिमिव ॥ मुष्टिशब्दो द्विलिङ्गः ॥ तस्मै शत्रुघ्नाय प्रजिघाय प्रहितवान् ॥

२२ ॥ ऐन्द्रमिति । स महोपलः शत्रुघ्नेनैन्द्रमिन्द्रदेवताकमस्त्रमुपादाय ताडितोऽभिहतः सन् । सिकतात्वात्सिकताभावादपि परां परमाणुतां प्रपेदे ॥ यतोऽणुर्नास्ति स परमाणुरित्याहुः ॥

---

as it were, has fortunately sent you to me," threatening S'atrughna with these words, the demon with a desire of killing him pulled up a tall tree from its root as if it were a stalk of Mustâ grass.

20. The tree hurled by the demon against S'atrughna being mid-way cut to pieces with the sharp arrows of that son of Sumitrâ did not reach his person, but the pollen of its flowers did.

21. At the destruction of that tree the demon flung against him a huge stone which was, as it were, the fist of the God of Death set apart from his hand.

22. Being struck by S'atrughna who took up a missile presided over by Indra, it (*i. e.* the piece of a rock) was reduced to the state of atoms smaller than the particles of fine sand.

---

20. D. K. शकलीकृतं for शकलीकृतः. K. शाषी for शाखी.

21. B. C. E. H. K. with Châ., Su., and Vijay., निशानं स्वस्य शूलस्य, I. R. निशानं तस्य शूलस्य, D. L. with Val., and Din., विशानं स्वस्य शूलस्य for विनाशात्तस्य वृक्षस्य. Hemâdri with Mallinâtha. Châritravardhana : " निशानं तीक्ष्णीकरणं महोपलं तस्मै शत्रुघ्नाय प्रजिघाय ". D. K. with Val., and Din., तं च for तस्मै.

22. B. C. E. H. I. K. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., सिकताभ्यः, D. L. सिकताधात् for सिकतात्वात्. B. with Châ., and Din.,

तमुपाद्रवदुद्यम्य दक्षिणं दोर्निशाचरः ।
एकताल इवोत्पातपवनप्रेरितो गिरिः ॥ २३ ॥
कार्ष्णेन पत्त्रिणा शत्रुः स भिन्नहृदयः पतन् ।
आनिनाय भुवः कम्पं जहाराश्रमवासिनाम् ॥ २४ ॥
वयसां पङ्क्तयः पेतुर्हतस्योपरि रक्षसः ।
तत्प्रतिद्वन्द्विनो मूर्ध्नि दिव्याः कुसुमवृष्टयः ॥ २५ ॥

२३ ॥ तमिति । निशाचरो राक्षसो दक्षिणं दोः ॥ " ककुद्दोषणी " इति भगवतो भाष्यकारस्य प्रयोगाद्दोषशब्दस्य नपुंसकत्वं द्रष्टव्यम् ॥ " भुजबाहू प्रवेष्टो दोः " इति पुंलिङ्गसाहचर्यात्पुंस्त्वं च ॥ तथा च प्रयोगः—" दोषं तस्य तथाविधस्य भजते " इति ॥ सव्येतरं बाहुमुद्यम्य । एकस्तालस्तालवृक्षो यस्मिन्स एकतालः । उत्पातपवनेन प्रेरितो गिरिरिव । तं शत्रुघ्नमुपाद्रवदभिद्रुतः ॥

२४ ॥ कार्ष्णेनेति । कार्ष्णेन वैष्णवेन ॥ उक्तं च रामायणे—" एवमेष प्रजानितो विष्णोस्तेजोमयः शरः " इति ॥ " विष्णुर्नारायणः कृष्णः " इत्यमरः ॥ स शत्रुर्लवणः कार्ष्णेन पत्त्रिणा बाणेन भिन्नहृदयः पतन्भुवः कम्पमानिनायानीतवान् । देहभारादित्यर्थः ॥ आश्रमवासिनां कम्पं जहार । तन्नाशादकुतोभया बभूवुरित्यर्थः ॥

२५ ॥ वयसामिति । हतस्य रक्षस उपरि वयसां पक्षिणां पङ्क्तयः पेतुः । तत्प्रतिद्वन्द्विनः शत्रुघ्नस्य मूर्ध्नि दिव्याः कुसुमवृष्टयः पेतुः ॥

---

23. The night-ranger raising his right arm and therefore appearing like a mountain with a solitary palm tree growing upon it, moving under the force of portenous storm, rushed towards him.

24. The fall of the enemy whose heart was split by the arrow presided over by Vishnu, shook the ground, while it put an end to the trembling of the hermits.

25. On the head of the demon who was killed, fell multitudes of birds of prey but on the head of his adversary fell showers of heavenly flowers.

अपि परमां, C. E. H. I. R. with Su., and Vijay., अपि हि परां, D. with Val., हि परां, D_2. अपरमां for अपि परां.

23. A. K. तमुपाद्रवदुद्यम्य राक्षसो दक्षिणं करं. C. L. तमुपाद्रवदुद्यम्य दोषं रक्षोऽथ दक्षिणं, Hem., Chá., Din., Su., and Vijay., notice the reading. D. J. दक्षिणं दोषमुद्यम्य राक्षसस्तमुपाद्रवत् for तमुपाद्रवदुद्यम्य दक्षिणं दोर्निशाचरः. Our reading is supported by seven Mss. and six commentators.

24. D. E. H. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., शत्रोः for शत्रुः. D. with Hemâdri वनवासिनां for आश्रमवासिनां

25. C. D. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., रक्षसः, A. B. विद्विषः.

स हत्वा लवणं वीरस्तदा मेने महौजसः।
भ्रातुः सोदर्यमात्मानमिन्द्रजिद्वधशोभिनः ॥ २६ ॥
तस्य संस्तूयमानस्य चरितार्थैस्तपस्विभिः ।
शुशुभे विक्रमोदग्रं व्रीडयावनतं शिरः ॥ २७ ॥
उपकूलं स कालिन्द्याः पुरीं पौरुषभूषणः ।
निर्ममे निर्ममोऽर्थेषु मथुरां मधुराकृतिः ॥ २८ ॥

२६ ॥ स इति । स वीरः शत्रुघ्नो लवणं हत्वा तदात्मानं महौजसो महाबलस्येन्द्रजिद्वधशोभिनो भ्रातुर्लक्ष्मणस्य समानोदरे शयितं सोदर्यमेकोदरं मेने ॥ "सोदराद्यः" इति यप्रत्ययः ॥

२७ ॥ तस्येति । चरितार्थैः कृतार्थैः कृतकार्यैस्तपस्विभिः संस्तूयमानस्य तस्य शत्रुघ्नस्य विक्रमेणोदग्रमुन्नतं व्रीडया लज्जयावनतं नम्रं शिरः शुशुभे ॥ विक्रान्तस्य लज्जैव भूषणमिति भावः ॥

२८ ॥ उपेति । पौरुषभूषणः । अर्थेषु विषयेषु निर्ममो निस्पृहः । मधुराकृतिः सौम्यरूपः । स शत्रुघ्नः कालिन्द्या यमुनाया उपकूलं कूले ॥ विभक्त्यर्थेऽव्ययीभावः ॥ मथुरां नाम पुरीं निर्ममे निर्मितवान् ॥ निर्ममो व्याख्यातः ॥

---

26. After having killed Lava*n*a the heroic S'atrughna thought that he was really born of the same mother with his highly powerful brother (लक्ष्मण) whose glories have shone forth for having killed Indrajit.

27. While he was being extolled by the hermits who had now gained their object, his head which was raised high (dignified) on account of his heroic action but drooping down in modesty looked graceful (imparted an air of gracefulness to his person).

28 S'atrughna of amiable appearance indifferent to worldly possession, whose valour was his ornament, built a city named Mathurá on the bank of the Kálindi.

---

26. C. I. K. वीरं for वीरः. B. with Chá., महामनाः for महौजसः. A. B_2. with Hemâdri सोदरं, H. I. K. R. with Châ., Su., and Vijay., सौदर्यं for सोदर्यं. One of the three Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी agrees with Mallinátha.

27. D विक्रमोदयं for विक्रमोदग्रं. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with D.

28. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Val., Su., and the text only of Vijay., पुरं for पुरीं. D. R. with Hem., Chá., and Vijay., मधुरां for मथुरां. Hemâdri notices the reading of Mallinâtha.

या सौराज्यप्रकाशाभिर्बभौ पौरविभूतिभिः ।
स्वर्गाभिष्यन्दवमनं कृत्वेवोपनिवेशिता ॥ २९ ॥
तत्र सौधगतः पश्यन्यमुनां चक्रवाकिनीम् ।
हेमभक्तिमतीं भूमेः प्रवेणीमिव पिप्रिये ॥ ३० ॥
सखा दशरथस्यापि जनकस्य च मन्त्रकृत् ।
संचस्कारोभयप्रीत्या मैथिलेयौ यथाविधि ॥ ३१ ॥

२९ ॥ येति । या पूः । शत्रुघ्नः शोभनो राजा यस्याः पुरः सा सुराज्ञी । सुराज्ञ्या भावः सौराज्यम् । तेन प्रकाशाभिः प्रकाशमानाभिः पौराणां विभूतिभिरैश्वर्यैः । स्वर्गस्याभिष्यन्दोऽतिरिक्तजनः । तस्य वमनमाहरणं कृत्वोपनिवेशितेवान्यत्रापितेव बभौ ॥ अत्र कौटिल्यः—"भूतपूर्वमभूतपूर्वं वा जनपदं परदेशप्रवाहेण स्वदेशाभिष्यन्दवमनेन वा निवेशयेत्" इति ॥

३० ॥ तत्रेति । तत्र मथुरायां सौधगतो हर्म्यारूढः स चक्रवाकिनीं चक्रवाकवतीं यमुनाम् । हेमभक्तिमतीं सुवर्णरचनावतीं भूमेः प्रवेणीं वेणीमिव ॥ "वेणी प्रवेणी" इत्यमरः ॥ पश्यन्पिप्रिये प्रीतः ॥ "प्रीङ् प्रीणने" इति धातोर्दैवादिकाल्लिट् ॥

३१ ॥ संप्रति रामसंतानवृत्तान्तमाह ॥ सखेति । दशरथस्य जनकस्य च सखा मन्त्रकृन्मन्त्रद्रष्टा स वाल्मीकिरपि ॥ "सुकर्मपापमन्त्रपुण्येषु कृञः" इति क्विप् ॥

---

29. On account of the prosperity of the citizens caused by his benign rule, the city looked like a colony planted with the surplus population of heaven.

30. There having taken his seat on his palace, he enjoyed the view of the Yamunâ, on the banks of which were sitting Chakravâka birds, and which therefore appeared like a braid of Earth's hair decorated with hangings of gold.

31. On the other hand the sage *Vâlmîki* who was a seer of Mantras (to whom the Mantras were revealed) and who was a

---

29. A. D. L. सा for या. A. D. K. °समृद्धिभिः for °विभूतिभिः. B. C. E. H. I. J. K. L. R. with Hem., Châ., Val., Su., and Vijay., अभिस्यन्द° for अभिष्यन्द°. B. C. H. I. K. L. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., विनिवेशिता for उपनिवेशिता.

30. A. C. with Hemâdri कालिन्दीं for यमुनां. A. with Hem., Châ., and Val., °भक्तिमयीं, D. with Vijay., °पंक्तिमतीं, D₂. K. °पंक्तिमयीं for °भक्तिमतीं. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., स वेणीं for प्रवेणीं.

31. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., अथ for अपि. D. K. मंत्रवित् for मंत्रकृत्. A. C. with Hemâdri, उभयप्रीत्यै for उभयप्रीत्या.

स तौ कुशलवोन्मृष्टगर्भक्लेदौ तदाख्यया ।
कविः कुशलवावेव चकार किल नामतः ॥ ३२ ॥
साङ्गं च वेदमध्याप्य किंचिदुत्क्रान्तशैशवौ ।
स्वकृतिं गापयामास कविप्रथमपद्धतिम् ॥ ३३ ॥

उभयोर्दशरथजनकयोः प्रीत्या स्नेहेन मैथिलेयो मैथिलीपुत्रौ यथाविधि यथाशास्त्रं संचस्कार संस्कृतवान् । जातकर्मादिभिरिति शेषः ॥

३२ ॥ स इति । स कविर्वाल्मीकिः कुशैर्दर्भैर्लवैर्गोपुच्छलोमभिः ॥ "लवो लवणकिञ्जल्कपक्ष्मगोपुच्छलोमसु" इति वैजयन्ती ॥ उन्मृष्टौ गर्भक्लेदौ गर्भोपद्रवो ययोस्तौ कुशलवोन्मृष्टगर्भक्लेदौ तौ मैथिलेयौ तेषां कुशानां लवानां चाख्यया नामतो नाम्ना यथासंख्यं कुशलवावेव चकार किल ॥ कुशोन्मृष्टः कुशः । लवोन्मृष्टो लवः ॥

३३ ॥ साङ्गमिति । किंचिदुत्क्रान्तशैशवावतिक्रान्तबाल्यौ तौ साङ्गं च वेदमध्याप्य कवीनां प्रथमपद्धतिम् । कवितावीजमित्यर्थः । स्वकृतिं काव्यं रामायणाख्यं गापयामास ॥ गापयतेर्लिटि शब्दकर्मत्वात् "गतिबुद्धि—" इत्यादिना द्विकर्मकत्वम् ॥

---

friend to both Das'aratha and Janaka, performed the sacraments according to the rules of the S'astras of the sons of Maithilî out of his love to both of them.

32. Assuredly that poet named the twins Kus'a and Lava inasmuch as the moisture of their embryo or uteris was removed (cleared) by means of Kus'a grass and the hair of a cow's tail those (*i. e.* Kus'a and Lava) being their respective names.

33. When they had come a little out (*i. e.* had passed some years) of their childhood he taught them the Vedas with their subordinate subjects and made them chant his own composition, which was the first foot-step of the poets (*i. e.* which was the first of its kind) in the world.

---

32. D. E. H. R. with Hem., Val., Su., and the text only of Vijay., सुतौ for स तौ. A. D. I. L. with Hem., Val., and Vijay., उन्मृष्ट° for उन्मृष्ट°.

33. B. E. H. I. K. R. with Chá., Val., Su., and Vijay., कविः for कवि°.

रामस्य मधुरं वृत्तं गायन्तौ मातुरग्रतः ।
तद्वियोगव्यथां किंचिच्छिथिलीचक्रतुः सुतौ ॥ ३४ ॥
इतरेऽपि रघोर्वंश्यास्त्रयस्त्रेताग्नितेजसः ।
तद्योगात्पतिवत्नीषु पत्नीष्वासन्द्विसूनवः ॥ ३५ ॥
शत्रुघातिनि शत्रुघ्नः सुबाहौ च बहुश्रुते ।
मथुराविदिशे सून्वोर्निदधे पूर्वजोत्सुकः ॥ ३६ ॥
भूयस्तपोव्ययो मा भूद्वाल्मीकेरिति सोऽत्यगात् ।
मैथिलीतनयोद्गीतनिःस्पन्दमृगमाश्रमम् ॥ ३७ ॥

३४ ॥ रामस्येति । तौ सुतौ रामस्य वृत्तं मातुरग्रतो मधुरं गायन्तौ तद्वियोगव्यथां रामविरहवेदनां किंचिच्छिथिलीचक्रतुः ॥

३५ ॥ इतरेऽपीति । रघोर्वंश्या वंशे भवाः । त्रेतत्यग्नित्रयस्त्रेताग्नयः । तेषां तेज इव तेजो येषां ते त्रेताग्नितेजसः । इतरे रामादन्ये त्रयो भरतादयोऽपि तद्योगात्तेषां योगाद्भरतादीनां संबन्धात्पतिवत्नीषु भर्तृमतीषु जीवत्पतिकासु । ख्यातिमतीष्वित्यर्थः ॥ " पतिवत्नी सभर्तृका " इत्यमरः ॥ " अन्तर्वत्पतिवतोर्नुक् " इति ङीप्प्रत्ययो नुगागमश्च ॥ पत्नीषु द्विसूनव आसन् ॥ द्वौ द्वौ सूनू येषां ते द्विसूनव इति विग्रहः ॥ क्वचित्संख्याशब्दस्य वृत्तिविषये वीप्सार्थत्वं सप्तपर्णादिवत् ॥

३६ ॥ शत्रुघातिनीति । पूर्वजोत्सुको ज्येष्ठप्रियः शत्रुघ्नो बहुश्रुते शत्रुघातिनि सुबाहौ च तन्नामकयोः सून्वोर्मथुरा च विदिशा च ते नगर्यौ निदधे । निधाय गत इत्यर्थः ॥

३७ ॥ भूय इति । स शत्रुघ्नो मैथिलीतनययोः कुशलवयोरुद्गीतेन निःस्पन्द-

---

34. Chanting the pleasant sequel of Ráma's life before their mother the two sons lessened to some extent her grief of separation from him.

35. The other three descendants of Raghu also, who were as powerful as the three sacred fires became each the father of two sons begotten in their wives who were pre eminent as wives by their connection with them.

36. Being anxious to join his eldest brother, S'atrughna bestowed the sovereignty of Mathurá and Vidis'á on his two sons named S'atrughátin and Subáhu of great learning.

37. Wishing that there should be no further expense of asce-

---

34. A. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., omit this verse.

35. D. सद्योगात् for तद्योगात्. Cháritravardhana notices the reading.

36. K. मधुरा° for मथुरा°. D. K. निदधत for निदधे.

37. A. C. I. L. R. with Val., °निस्पन्द°, D. K. °निष्पन्द° for °निःस्पन्द°.

वशी विवेश चायोध्यां रथ्यासंस्कारशोभिनीम् ।
लवणस्य वधात्पौरैरीक्षितोऽत्यन्तगौरवम् ॥ ३८ ॥
स ददर्श सभामध्ये सभासद्भिरुपस्थितम् ।
रामं सीतापरित्यागादसामान्यपतिं भुवः ॥ ३९ ॥
तमभ्यनन्दत्प्रणतं लवणान्तकमग्रजः ।
कालनेमिवधात्प्रीतस्तुराषाडिव शार्ङ्गिणम् ॥ ४० ॥

मृगंगीतप्रियतया निश्चलहरिणं वाल्मीकेराश्रमम् । भूयः पुनरपि तपोव्ययः संविधानकरणार्थं तपोहानिर्मा भूदिति हेतोः । अत्यगात् । अतिक्रम्य गतः इत्यर्थः ॥

३८ ॥ वशीति । वशी स लवणस्य वधाद्धेतोः पौरैः पौरजनैरत्यन्तं गौरवं यस्मिन्कर्मणि तत्तथेक्षितः सन् । रथ्यासंस्कारैस्तोरणादिभिः शोभते या तामयोध्यां विवेश च ॥

३९ ॥ स इति । स शत्रुघ्नः सभामध्ये सभासद्भिः सभ्यैरुपस्थितं सेवितं सीतापरित्यागाद्भुवोऽसामान्यपतिमसाधारणपतिं रामं ददर्श ॥

४० ॥ तमिति । अग्रजो रामो लवणस्यान्तकं हन्तारं प्रणतं तं शत्रुघ्नम् । कालनेमिर्नाम राक्षसः । तस्य वधात्प्रीतः । तुरं वेगं सहत इति तुराषाडिन्द्रः ॥ "छन्दसि सहः" इति ण्विप्रत्ययः ॥ भाषायामपि प्रयुज्यते ॥ "अन्येषामपि दृश्यते" इति पूर्वपदस्य दीर्घः ॥ "सहेः साडः सः" इति षत्वम् ॥ यद्वा सहतेर्णिचि कृते साहयतेः क्विप् ॥ शार्ङ्गिणमुपेन्द्रमिव । अभ्यनन्दत् ॥

---

tic merits of Vâlmíki he passed by his hermitage where the deer remained motionless hearing the songs recited by the sons of Maithili.

38. And the self-restrained S'atrughna entered the city of Ayodhyà made beautiful by the decorations of the streets, and was gazed at by the citizens with deep respect on account of his having slain Lava*n*a.

39. He saw Râma in the midst of the council-hall attended on by his courtiers. As he had repudiated Sitâ he appeared to be the lord of the earth alone.

40. As Indra delighted at the destruction of Kálanemi congratulated Vish*n*u, so Ráma joyfully received him the destroyer of Lava*n*a while he bowed down to him.

---

38. A. ततः, D. L. कृती, D_2. with Din., वली for वशी. B. C. H. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., अधिगौरवमीक्षितः, I. इति गौरवमीक्षितः, D. E. अतिगौरवमीक्षितः for ईक्षितोऽत्यन्तगौरवं.

39. B. D. with Chá., Val., and Su., उपासितं for उपस्थितं. Châritravardhana : "उपासितं सेवितं."

40. E. प्रथमं for प्रणतं.

स पृष्टः सर्वतो वार्त्तमाख्यद्राज्ञे न संततिम् ।
प्रत्यर्पयिष्यतः काले कवेराद्यस्य शासनात् ॥ ४१ ॥
अथ जानपदो विप्रः शिशुमप्राप्तयौवनम् ।
अवतार्याङ्कशय्यास्थं द्वारि चक्रन्द भूपतेः ॥ ४२ ॥
शोचनीयासि वसुधे या त्वं दशरथाच्च्युता ।
रामहस्तमनुप्राप्य कष्टात्कष्टतरं गता ॥ ४३ ॥

४१ ॥ स इति । शत्रुघ्नः पृष्टः सन् । सर्वतो वार्त्तं कुशलमाख्यत् । आख्यातवान् ॥ चक्षिङो लुङ् । "चक्षिङः ख्याञ्" इति ख्याञादेशः "अस्यतिवक्ति—" इत्यङ् । "आतो लोप इटि च" इत्याकारलोपः । ख्यातेर्वा लुङ् । संततिं कुशलवोत्पत्तिं राज्ञे रामाय नाख्यत् ॥ कुतः । कालेऽवसरे प्रत्यर्पयिष्यत आद्यस्य कवेर्वाल्मीकेः शासनात् ॥

४२ ॥ अथेति । अथ जनपदे भवो जानपदो विप्रः । कश्चिदिति शेषः । अप्राप्तयौवनं शिशुम् । मृतमिति शेषः । भूपते रामस्य द्वार्यङ्कशय्यास्थं यथा तथावतार्याङ्कस्थत्वेनैवावरोप्य चक्रन्द चुक्रोश ॥

४३ ॥ शोचनीयेति । हे वसुधे दशरथाच्च्युता या त्वं रामहस्तमनुप्राप्य कष्टात्कष्टतरं गता सती शोचनीयासि ॥

---

41. Being asked he informed the king that he enjoyed welfare in every thing ; but he did not inform him about the birth of his children in obedience to the command of the primeval poet who was to restore them to him at the proper time.

42. Then a certain Bráhma*n*a a resident of a village who carried in his arms a dead infant child, and who took it down on his lap at the gate of the palace, began to lament.

43. " O Earth, your state is deplorable. Deprived of the benign rule of Das'aratha you have passed into the hands of Ráma, and have thereby reached a condition which is most miserable. "

---

41. A. D. L. R. with Val., Vijay., and the text only of Su., वार्ता for वार्त्तं. C. E. H. I. K. L. आख्यात् for आख्यत्. B. C. R. आख्यापयिष्यतः, D. E. H. I. K. L. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., प्रत्यापयिष्यतः for प्रत्यर्पयिष्यतः.

42. B. E. H. R. with Hem., Val., Su., and the text only of Vijay., अथ कश्चिन्मृतं for अथ जानपदः. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Mallinátha. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., पुत्रं for शिशुं. A. D. K. with Val., and Vijay., शय्यायाः, C. with Hemádri, शय्यायां for शय्यास्थं.

43. D. K. अनु for च्युता. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., अनुप्राप्ता for अनुप्राप्य. D. कृता for गता.

श्रुत्वा तस्य शुचो हेतुं गोप्ता जिह्राय राघवः ।
न ह्यकालभवो मृत्युरिक्ष्वाकुपदमस्पृशत् ॥ ४४ ॥
स मुहूर्तं सहस्वेति द्विजमाश्वास्य दुःखितम् ।
यानं सस्मार कौबेरं वैवस्वतजिगीषया ॥ ४५ ॥
आत्तशस्त्रस्तदध्यास्य प्रस्थितः स रघूद्वहः ।
उच्चचार पुरस्तस्य गूढरूपा सरस्वती ॥ ४६ ॥
राजन्प्रजासु ते कश्चिदपचारः प्रवर्तते ।
तमन्विष्य प्रशमयेर्भवितासि ततः कृती ॥ ४७ ॥

४४ ॥ श्रुत्वेति । गोप्ता रक्षको राघवस्तस्य विप्रस्य शुचः शोकस्य हेतुं पुत्रमरणरूपं श्रुत्वा जिह्राय लज्जितः ॥ कुतः । हि यस्मादकालभवो मृत्युरिक्ष्वाकूणां पदं राष्ट्रं नास्पृशत् ॥ वृद्धे जीवति यवीयान्न म्रियत इत्यर्थः ॥

४५ ॥ स इति । स रामो दुःखितं द्विजं मुहूर्तं सहस्वेत्याश्वास्य वैवस्वतस्यान्तकस्य जिगीषया जेतुमिच्छया कौबेरं यानं पुष्पकं सस्मार ॥

४६ ॥ आत्तेति । स रघूद्वहो राम आत्तशस्त्रः सन् । तत्पुष्पकमध्यास्य प्रस्थितः । अथ तस्य पुरो गूढरूपा सरस्वत्यशरीरा वागुच्चचाराद्बभूव ॥

४७ ॥ राजन्निति । हे राजन् । ते प्रजासु कश्चिदपचारो वर्णधर्मव्यतिकरः प्रवर्तते । तमपचारमन्विष्य प्रशमयेः । ततः कृती कृतकृत्यो भवितासि भविष्यसि ॥

44. Râghava, the protector hearing the cause of his lamentation became ashamed, for untimely death did never touch the kingdom of the descendants of Ikshvâku.

45. Consoling the bereaved Brâhma*n*a with the words " have patience for a moment," he thought of the vehicle of Kubera with a desire of conquering the son of Vivasvat (*i. e.* the God of death).

46. That eminent descendant of Raghu took his seat in the car and being armed set out. There arose (was heard) before him the words of the Goddess of speech with her form concealed (*i. e.* there arose an aerial speech before him).

47. " O king, a certain evil practice (*i. e.* some transgression

44. C. वचः for शुचः. H. with Vijay., °कुलं for °पदं.

45. A. D. L. with Hem., and Vijay., क्षमस्व for सहस्व. D. L. °जिघांसया for °जिगीषया.

46. B. with Châritravardhana प्रतस्थे for प्रस्थितः. D. E. H. I K. R. with Hem., and Val., च for सः. C. D. with Su., रघूत्तमः for रघूद्वहः. B. H. I. L. with Hem., Val., Su., and Vijay., चास्य for तस्य.

47. H. व्यभिचारः for अपचारः. D. अन्विष्यत् for अन्विष्य. B. कृतार्थस्ततः for ततः कृती.

इत्याप्तवचनाद्रामो विनेष्यन्वर्णविक्रियाम् ।
दिशः पपात पत्त्रेण वेगनिष्कम्पकेतुना ॥ ४८ ॥
अथ धूमाभिताम्राक्षं वृक्षशाखावलम्बिनम् ।
ददर्श कंचिदैक्ष्वाकस्तपस्यन्तमधोमुखम् ॥ ४९ ॥
पृष्टनामान्वयो राज्ञा स किलाचष्ट धूमपः ।
आत्मानं शंबुक नाम शूद्रं सुरपदार्थिनम् ॥ ५० ॥

४८ ॥ इतीति । इत्याप्तवचनाद्रामो वर्णविक्रियां वर्णापचारं विनेष्यन्नपनेष्यन्वेगेन निष्कम्पकेतुना पत्त्रेण वाहनेन पुष्पकेण ॥ "पत्त्रं वाहनपक्षयोः" इत्यमरः ॥ दिशः पपात धावति स्म ॥

४९ ॥ अथेति । अथेक्ष्वाकुवंशे भव ऐक्ष्वाको रामः ॥ "कोपधादण्" इत्यणि कृते "दाण्डिनायन—" इत्यादिनोकारलोपनिपातः ॥ धूमेन पीयमानेनाभिताम्राक्षं वृक्षशाखावलम्बिनमधोमुखं तपस्यन्तं तपश्चरन्तं कंचित्पुरुषं ददर्श ॥

५० ॥ पृष्टेति । राज्ञा नाम चान्वयश्च तौ पृष्टौ नामान्वयौ यस्य स तथोक्तः । धूमं पिबतीति धूमपः ॥ "सुपि" इति योगविभागात्कप्रत्ययः ॥ स पुरुष आ-

---

of the rules of caste) is set on foot among your subjects, search it out and put a stop to it, and then you shall gain your object."

48. Being assured in words on which he could rely he travelled long distances in different quarters in his car, the flag of which stood motionless on account of its speed, in order to restrain (put a stop to) the improper conduct on the part of a member of a caste.

49. Then the descendant of Ikshvâku found a certain person practising asceticism, with his head downwards and hanging from the branch of a tree, his eyes made red with the smoke of fire.

50. And being asked by the king his name and lineage, that smoke breathing (drinking) person declared himself to be a

---

48. D. L. विमृश्यन् , B. विचिन्वन् for विनेष्यन्. B. D. K. L. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., निःकम्प° for निष्कम्प°.

49. C. I. धूमाति, K. धूमानि for धूमाभि . A. D. K. R. with Su., °विलम्बिनं for °वलम्बिनं. B. ऐक्ष्वाकिः, C. E. I. R. with Val., Su., and the text only of Vijay., इक्ष्वाकुः. H. with Vijay., काकुत्स्थः for ऐक्ष्वाकः.

50. A. D. with Châ., and Din., नामकर्मान्वयान्पृष्टः स राजाचष्ट धूमपः for the first half. Hemâdri notices the reading. H. धूमिपे for धूमपः. Sumativijaya omits this verse.

तपस्यनधिकारित्वात्प्रजानां तमघावहम् ।
शीर्षच्छेद्यं परिच्छिद्य नियन्ता शस्त्रमाददे ॥ ५१ ॥
स तद्वक्त्रं हिमक्लिष्टकिञ्जल्कमिव पङ्कजम् ।
ज्योतिष्कणाहतश्मश्रु कण्ठनालादपातयत् ॥ ५२ ॥
कृतदण्डः स्वयं राज्ञा लेभे शूद्रः सतां गतिम् ।
तपसा दुश्चरेणापि न स्वमार्गविलङ्घिना ॥ ५३ ॥

त्मानं सुरपदार्थिनम् । अनेन प्रयोजनभाजि पृष्ट इति ज्ञेयम् । शंबुकं नाम शूद्रमाचष्ट बभाषे किल ॥

५१ ॥ तपसीति । तपस्यनधिकारित्वात्प्रजानामघावहं दुःखावहं तं शूद्रं शीर्षच्छेद्यम् ॥ " शीर्षच्छेदाद्यच्च " इति यत्प्रत्ययः ॥ परिच्छिद्य निश्चित्य नियन्ता रक्षको रामः शस्त्रमाददे जग्राह ॥

५२ ॥ स इति । स रामो ज्योतिष्कणैः स्फुलिङ्गैराहतानि दग्धानि श्मश्रूणि यस्य तत्तस्य वक्त्रम् । हिमक्लिष्टकिञ्जल्कं पङ्कजमिव । कण्ठ एव नालं तस्मादपातयत् ॥

५३ ॥ कृतेति । शूद्रः शंबुको राज्ञा स्वयं कृतदण्डः कृतशिक्षः सन् । सतां गतिं लेभे । दुश्चरेणापि स्वमार्गविलङ्घिना । अनधिकारदुष्टेनेत्यर्थः । तपसा न लेभे ॥ अत्र मनुः--" राजभिः कृतदण्डास्तु कृत्वा पापानि मानवाः । निर्मलाः स्वर्गमायान्ति सन्तः सुकृतिनो यथा " इति ॥

S'ûdra by name S'ambûka who was wishing to secure the position of a god.

51. The king (ruler) knowing that he deserved to be beheaded being the cause of calamity to the people as he had no right to practise asceticism, took up his weapon.

52. He caused his head with beard singed by sparks of fire which therefore resembled a lotus with its filaments destroyed by the frost. to be separated from his stalk-like throat.

53. The S'ûdra by the punishment inflicted upon him by the king himself, obtained the position of the virtuous, a position which he could not secure even by his severe austerity, being as it was in violation of the rules of caste.

---

51. R. शीर्षच्छेद्यं for शीर्षच्छेद्यं. I. R. परिज्ञाय, H. परिच्छेद्य, L. पतिमंत्वा for परिच्छिद्य.

52. B. E. H. I. J. K. L. R. with Hem., Châ., Val., Su., and Vijay., ज्योतिःकणाह° for ज्योतिष्कणाह°. B. H. I. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., अपाहरत् for अपातयत्.

53. K. L. स्वर्गमार्गविलंघिना, I. न स्वमार्गातिलंघिना for न स्वमार्गविलंघिना.

रघुनाथोऽप्यगस्त्येन मार्गसंदर्शितात्मना ।
महौजसा संयुयुजे शरत्काल इवेन्दुना ॥ ५४ ॥
कुम्भयोनिरलंकारं तस्मै दिव्यपरिग्रहम् ।
ददौ दत्तं समुद्रेण पीतेनेवात्मनिष्क्रयम् ॥ ५५ ॥
तं दधन्मैथिलीकण्ठनिर्व्यापारेण बाहुना ।
पश्चान्निववृते रामः प्राक्परासुर्द्विजात्मजः ॥ ५६ ॥
तस्य पूर्वोदितां निन्दां द्विजः पुत्रसमागतः ।
स्तुत्या निवर्तयामास त्रातुर्वैवस्वतादपि ॥ ५७ ॥

५४ ॥ रघुनाथ इति । रघुनाथोऽपि । मार्गसंदर्शितात्मना महौजसागस्त्येन । इन्दुना शरत्काल इव । संयुयुजे संगतः । इन्दावपि विशेषणं योज्यम् ॥ रघुनाथेत्यत्र क्षुभ्नादित्वाण्णत्वाभावः ॥

५५ ॥ कुम्भेति । कुम्भयोनिरगस्त्यः पीतेन समुद्रेणात्मनिष्क्रयमिवात्ममोचनमूल्यमिव दत्तम् । अत एव परिगृह्यत इति व्युत्पत्त्या दिव्यपरिग्रहः । दिव्यानां परिग्राह्य इत्यर्थः । तमलंकारं तस्मै रामाय ददौ ॥

५६ ॥ तमिति । मैथिलीकण्ठनिर्व्यापारेण बाहुना तमलंकारं दधद्रामः पश्चान्निववृते निवृत्तः । परासुर्मृतो द्विजात्मजः प्राग्रामात्पूर्वं निववृते ॥

५७ ॥ तस्येति । पुत्रसमागतः पुत्रेण संगतो द्विजो वैवस्वतादन्तकादपि त्रातु

54. The chief of the descendants of Raghu on the other hand fell in with the most powerful Agastya who made his appearance in the way like the autumn joining the most brilliant moon.

55. The pitcher-born sage presented to him the ornament, which was given to him by the ocean that he had quaffed off, as a ransom for its deliverance and which was fit for the acceptance of a celestial being.

56. The dead child of the Brāhmaṇa had returned (restored) to life before Rāma returned to his capital bearing the ornament on his arm which had ceased to entertwine round the neck of Maithilī.

57. The Brāhmaṇa who was reunited to his son undid the

54. I. रघूद्वहोऽप्य° for रघुनाथोऽप्य°. A. D. L. with Hemādri मार्गे for मार्ग°. A. C. with Su., संसृजे for संयुयुजे. Sumativijaya: " संसृजे मिलितः " &c. Sumativijaya also notices the reading of Mallinātha.

55. I. भीतेनेव for पीतेनेव. B. C. I. L. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., निःक्रयं for निष्क्रयं.

56. B. D. दध्यात् for दधत्. I. प्राप चायुः, K. स परासुः for प्राक्परासुः.

57. A. D. L. पुत्रसमन्वितः, E. पुत्रसमागते, H. पुत्रेण संगतः, K. पुत्रसमागमः for पुत्रसमागतः.

तमध्वराय मुक्ताश्वं रक्षःकपिनरेश्वराः ।
मेघाः सस्यमिवाम्भोभिरभ्यवर्षन्नुपायनैः ॥ ५८ ॥
दिग्भ्यो निमन्त्रिताश्चैनमभिजग्मुर्महर्षयः ।
न भौमान्येव धिष्ण्यानि हित्वा ज्योतिर्मयान्यपि ॥ ५९ ॥
उपशल्यनिविष्टैस्तैश्चतुर्द्वारमुखी बभौ ।
अयोध्या सृष्टलोकेव सद्यः पैतामही तनुः ॥ ६० ॥
श्लाघ्यस्त्यागोऽपि वैदेह्याः पत्युः प्राग्वंशवासिनः ।
अनन्यजानेः सैवासीद्यस्माज्जाया हिरण्मयी ॥ ६१ ॥

रक्षकस्य ॥ "भीत्रार्थानां भयहेतुः" इत्यपादानात्पञ्चमी ॥ तस्य रामस्य पूर्वोदितां पूर्वोक्तां निन्दां स्तुत्या निवर्तयामास ॥

५८ ॥ तमिति । अध्वरायाश्वमेधाय मुक्ताश्वं तं रामं रक्षःकपिनरेश्वराः सुग्रीवविभीषणादयो राजानश्च । मेघा अम्भोभिः सस्यमिव । उपायनैरभ्यवर्षन् ॥

५९ ॥ दिग्भ्य इति । निमन्त्रिता आहूता महर्षयश्च भूम्याः संबन्धीनि भौमानि धिष्ण्यानि स्थानान्येव न ॥ "धिष्ण्यं स्थानं गृहे भेऽग्नौ" इत्यमरः ॥ किं तु ज्योतिर्मयानि नक्षत्ररूपाणि धिष्ण्यान्यपि हित्वा दिग्भ्य एनं राममभिजग्मुः

६० ॥ उपेति । चत्वारि द्वाराण्येव मुखानि यस्याः सा चतुर्द्वारमुख्ययोध्या । उपशल्येषु ग्रामान्तेषु निविष्टैः ॥ "ग्रामान्त उपशल्यं स्यात्" इत्यमरः ॥ तैर्महर्षिभिः । सद्यः सृष्टलोका पितामहस्येयं पैतामही तनुर्मूर्तिरिव । बभौ ॥

६१ ॥ श्लाघ्य इति । वैदेह्यास्त्यागोऽपि श्लाघ्यो वर्ण्य एव । कुतः । यस्मात्।

---

censure which he had first passed, by bestowing praises upon him who was a protector even from the god of death.

58. As the clouds pour down rain upon the crops, so the leaders of the Rákshasas and the monkeys as well as the kings poured many presents upon him who had allowed his steed to move freely for the sacrifice.

59. Being invited great sages came to him from several quarters, leaving behind not only their earthly residences but even the starry (luminous) ones.

60. Ayodhyá with its four gates like so many mouths appeared owing to the sages having been quartered in the open space outside the city, like the form of Bramhá, with the newly created beings around it.

61. His repudiation of Vaidehí was also commendable for

---

59. E. उपजग्मुः for अभिजग्मुः.

60. A. C. D. with Hemádri चतुर्द्वारवती for चतुर्द्वारमुखी. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण agrees with Mallinàtha and notices चतुर्द्वारवती.

61. D. with Vijay., °जन्मनः for °वासिनः. B. C. E. H. L. R.

विधेरधिकसंभारस्ततः प्रववृते मखः ।
आसन्यत्र क्रियाविघ्ना राक्षसा एव रक्षिणः ॥ ६२ ॥
अथ प्राचेतसोपज्ञं रामायणमितस्ततः ।
मैथिलेयौ कुशलवौ जगतुर्गुरुचोदितौ ॥ ६३ ॥

प्राग्वंशः प्राचीनस्थूणो यज्ञशालाविशेषः । तद्वासिनः । नास्त्यन्या जाया यस्य तस्यानन्यजानेः ॥ " जायाया निङ् " इति समासान्तो निङादेशः ॥ पत्यू रामस्य हिरण्मयी सौवर्णी ॥ " दाण्डिनायन "—आदिसूत्रेण निपातः ॥ सा निजैव जाया पत्न्यासीत् ॥ कविवाक्यमेतत् ॥

६२ ॥ विधेरिति । ततो विधेः शास्त्रादधिकसंभारो निरिच्यमानपरिकरो मखः प्रववृते प्रवृत्तः । यत्र मखे । विहन्यन्त एभिरिति विघ्नाः प्रत्यूहाः ॥ " घञर्थे कविधानम् " इति कः ॥ अत्र कर्तृत्वलक्षणायाः क्रियाया विघ्ना अनुष्ठानविघातका राक्षसा एव रक्षिणो रक्षका आसन् ॥

६३ ॥ अथेति । अथ मैथिलेयौ मैथिलीतनयौ ॥ " स्त्रीभ्यो ढक् " इति ढक्प्रत्ययः ॥ कुशलवौ गुरुणा वाल्मीकिना चोदितौ प्रेरितौ सन्तौ । प्राचेतसो वाल्मीकिः । उपज्ञायत इत्युपज्ञा ॥ " आतश्चोपसर्गे " इति कर्मण्यङ्प्रत्ययः ॥ प्राचेतसस्योपज्ञा प्राचेतसोपज्ञम् । प्राचेतसेनादौ ज्ञातमित्यर्थः ॥ " उपज्ञा ज्ञानमाद्यं स्यात् " इत्यमरः ॥ " उपज्ञोपक्रमं तदाद्याचिख्यासायाम् " इत्यादिना नपुंसकत्वम् ॥ अयने ज्ञायतेऽनेनेत्ययनम् । रामस्यायनं चरितं रामायणं रामायणाख्यं काव्यम् ॥ " पूर्वपदात्संज्ञायामगः " इति णत्वम् ॥ इतस्ततोऽयणमितित्वन् ॥ इतस्ततो जगतुः ॥ गायतेर्लिट् ॥

---

while residing in the shed of sacrifice the golden image of Sitá was a wife to him who did not take another wife.

62. Then sacrifice was begun with preparations larger and more grand than those laid down in the S'astras as necessary. In this sacrifice the Rákshasas who are naturally its obstructors became themselves its protectors.

63. Meanwhile, being directed by their preceptor the two sons of Maithilí Kus'a and Lava, went about chanting the Rámáya*na*, first known by the son of Prachetas, in different parts of the world (*lit.* here and there).

---

with Chá., Din., Val., and Vijay., यस्यामास्तैव. D. with Su., आसीद्यस्तैव, D_2. I. K. with Hemádri, तस्यामासीत्सैव for सैवासीद्यस्मात्.

62. I. तत्र for ततः. A. C. क्रियारंभे for क्रियाविघ्नाः. Sumativijaya notices the reading.

63. D_2. and the text only of Vijay., कलगिरौ for कुशलवौ. B. C. E. H. I. K. R. with Val., Su., and Vijay., गुरुनोदितौ. L. गुरुणोदितौ for गुरुचोदितौ. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Vallabha and others.

वृत्तं रामस्य वाल्मीकेः कृतिस्तौ किंनरस्वनौ ।
किं तद्येन मनो हर्तुमलं स्यातां न शृण्वताम् ॥ ६४ ॥
रूपं गीतं च माधुर्यं तयोस्तज्ज्ञैर्निवेदितम् ।
ददर्श सानुजो रामः शुश्राव च कुतूहली ॥ ६५ ॥
तद्गीतश्रवणैकाग्रा संसदश्रुमुखी बभौ ।
हिमनिष्यन्दिनी प्रातर्निर्वातेव वनस्थली ॥ ६६ ॥

६४ ॥ वृत्तमिति । रामस्य वृत्तं वर्ण्यम् । वस्त्विति शेषः । वाल्मीकेः कृतिः काव्यम् । गेयमिति शेषः । तौ कुशलवौ किंनरस्वनौ किंनरकण्ठौ गायकौ । पुनरिति शेषः ॥ अत एव तत्किं येन निमित्तेन तौ शृण्वतां मनो हर्तुमलं शक्तौ न स्याताम् । सर्वं सरसमित्यर्थः ॥

६५ ॥ रूपमिति । ते जानन्तीति तज्ज्ञाः । तैस्तज्ज्ञैरभिज्ञैर्निवेदितं तयोः कुशलवयो रूपं आकारं गीतं च माधुर्यं रामणीयकं सानुजो रामः कुतूहली सानन्दः सन्यथासंख्यं ददर्श शुश्राव च ॥

६६ ॥ तदिति । तयोर्गीतश्रवणे एकाग्रासक्ताश्रुमुखी । आनन्दादिति भावः । संसत्सभा । प्रातर्हिमनिष्यन्दिनी निर्वाता वातरहिता वनस्थलीव । बभौ शुशुभे ॥ आनन्दबाष्पवत्त्वान्निष्पन्दत्वाच्च इत्यर्थः ॥

---

64. With the incidents of Rāma's life——the composition of Vālmiki——their voice like Kinnar's——why should they not be able to captivate the hearts of the hearers ?

65. Being informed of the charming beauty and the fascinating power of music of the two boys, by persons able to appreciate them he with his brothers feeling curious saw their personal beauty and heard their ravishing songs.

66. The assembly, closely listening to their singing, with their faces streaming forth tears (of joy), appeared like a forest-ground unshaken by the breeze—dripping dews in the morning.

---

64. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Chā., Din., Val., Su., and Vijay., किंनरस्वरौ, L. किंनरेश्वरौ for किंनरस्वनौ.

65. A. C. with Vijay., and the text only of Chā., सौन्दर्यं for माधुर्यं. B. C. K. R. with Vijay., तज्ज्ञनिवेदितं for तज्ज्ञैर्निवेदितं.

66. B. C. E. H. I. K. L. R. with Chā., Din., Val., Su., and Vijay., निस्यन्दिनी for निष्यन्दिनी. D. R. निवाता for निर्वाता. Hemādri notices the reading.

वयोवेषविसंवादि रामस्य च तयोस्तदा ।
जनता प्रेक्ष्य सादृश्यं नाक्षिकम्पं व्यतिष्ठत ॥ ६७ ॥
उभयोर्न तथा लोकः प्रावीण्येन विसिष्मिये ।
नृपतेः प्रीतिदानेषु वीतस्पृहतया यथा ॥ ६८ ॥
गेये केन विनीतौ वां कस्य चेयं कृतिः कवेः ।
इति राज्ञा स्वयं पृष्टौ तौ वाल्मीकिमशंसताम् ॥ ६९ ॥

६७ ॥ वय इति । जनता जनानां समूहः ॥ "ग्रामजनबन्धुभ्यस्तल्" इति तल्प्रत्ययः ॥ वयोवेषाभ्यामेव विसंवादि विलक्षणं तदा तयोः कुशलवयोः रामस्य च सादृश्यं प्रेक्ष्य । नास्त्यक्षिकम्पो यस्मिन्कर्मणि तद्यथा तथा ॥ नञर्थस्य नशब्दस्य बहुव्रीहिः ॥ व्यतिष्ठतातिष्ठत ॥ "समवप्रविभ्यः स्थः" इत्यात्मनेपदं ॥ विस्मयादनिमिषमद्राक्षीदित्यर्थः ॥

६८ ॥ उभयोरिति । लोको जन उभयोः कुमारयोः प्रावीण्येन नैपुण्येन तथा न विसिष्मिये न विस्मितवान्यथा नृपतेः प्रीतिदानेषु वीतस्पृहतया नैःस्पृह्येण विसिष्मिये ॥

६९ ॥ गेय इति । गेये को नु विनेता वामिति वा पाठः ॥ वामिति युष्मदर्थप्रतिपादकमव्ययं द्रष्टव्यम् । तथा चायमर्थः—केन पुंसा वां युवां गेये गीतविषये विनीतौ शिक्षितौ ॥ कर्मणि निष्ठाप्रत्ययः ॥ इयं च कस्य कवेः कृतिरिति राज्ञा स्वयं पृष्टौ तौ कुशलवौ वाल्मीकिमशंसतामुक्तवन्तौ । विनेतारं कविं चेत्यर्थः ॥

---

67. The people observing their resemblance to Rama in everything except age and dress stood gazing with unwinking eyes.

68. The people were astonished not so much at their proficiency in the art of music as at *their indifference* (*i. e.* disregard) to the generous gifts which the king was freely making to them.

69. "By whom you (two) are instructed in the art of music, and of what poet is this the composition ?"—these queries

---

67. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., च मा for तदा. B. H. with Din. and Su., वीक्षापन्ना, C. I. K. R. with Val., and Vijay., वीक्ष्यापन्ना. D. वाड्यापन्ना, A_2. L. with Chá., विस्मयेन. D_2. निनिमेषां, E. व्याक्षकं for नाक्षिकं. Hemadri and Châritravardhana notice the reading of Vallabha and others. Hemádri: "वीक्षापन्नेति पाठे विलक्षा व्यतिष्ठत ॥ "वीक्षापन्ना विलक्षोऽथ" इत्यभिधानचिन्तामणिः." Châritravardhana has also the same; so has Sumativijaya and others.

68. A. D. K. R. with Vallabha, प्रीतिदानेन for प्रीतिदानेषु.

69. A. गेये केन विनीतिवां, A_2. गेये केन विनीतं वां. C_2. D. गेये को नु विनेता वां, Mallinátha notices the reading and says,—गेये गीतविषये को नु वां

अथ सावरजो रामः प्राचेतसमुपेयिवान् ।
उरीकृत्यात्मनो देहं राज्यमस्मै न्यवेदयत् ॥ ७० ॥
स तावाख्याय रामाय मैथिलेयौ तदात्मजौ ।
कविः कारुणिको वव्रे सीतायाः संपरिग्रहम् ॥ ७१ ॥

७० ॥ अथेति । अथ सावरजो रामः प्राचेतसं वाल्मीकिमुपेयिवान्प्राप्तः सन् । देहमात्मानमुरीकृत्य । आत्मन आत्मार्थं स्थापयित्वेत्यर्थः ॥ राज्यमस्मै प्राचेतसाय न्यवेदयत्समर्पितवान् ॥

७१ ॥ स इति । करुणा प्रयोजनमस्य कारुणिको दयालुः ॥ "प्रयोजनम्" इति ठञ् ॥ "स्याद्दयालुः कारुणिकः" इत्यमरः ॥ स कवी रामाय तौ मैथिलेयौ तदात्मजौ रामसुतौ व्याख्याय सीतायाः संपरिग्रहं स्वीकारं वव्रे ययाचे ॥

---

being asked by the king himself they declared (the name of) Vâlmiki.

70. Then Râma together with his younger brothers went to Prâchetasa and offered to him the kingdom and everything with the exception of his person.

71. Mentioning to Râma that the two sons of Maithilî were his (Râma's) own sons, that tender-hearted poet requested him to take Sitâ back (*lit.* for the acceptance of Sitâ).

युवां युवयोर्विनेता शिक्षकः । नुशब्दः प्रश्ने ॥ "नु पृच्छायां वितर्के च" इत्यमरः ॥ D_2. गेये कोऽत्र विनेता वां for गेये केन विनीता वां. Hemádri notices the reading of D_2. Sumativijaya notices the reading of A_2. Ms. Our reading is supported by eleven Mss. and all commentators. B. D. E. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su , and Vijay., कवेः कृतिः for कृतिः कवेः. E. with Su., वाल्मीकिं तौ for तौ वाल्मीकिं.

70. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., दूरीकृत्य for उरीकृत्य. Cháritravardhana: "दूरीकृत्य वर्जयित्वा."

71. B. D. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., रामस्य for रामाय. B. C. E. H. I. J. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., तवात्मजौ for तदात्मजौ. D. J. तं परिग्रहं, L. च परिग्रहं for संपरिग्रहं. Between 71-72. D. I. with Su., read—" तदाकर्ण्य मुनेर्वाक्यं रामो राजीवलोचनः । समं हर्षविषादाभ्यां युयुजे नीतिकोविदः " [D. तदाकर्ण्य वचस्तस्य, Su., तदाकर्ण्य कर्णाभ्यां. D. सह for समं. D. युक्तस्तं प्रोक्तवान्मुनिं for युयुजे नीतिकोविदः]. Sumativijaya reads this between 72-73, but not for better.

तात शुद्धा समक्षं नः स्नुषा ते जातवेदसि ।
दौरात्म्याद्रक्षसस्तां तु नात्रत्याः श्रद्दधुः प्रजाः ॥ ७२ ॥
ताः स्वचारित्रमुद्दिश्य प्रत्याययतु मैथिली ।
ततः पुत्रवतीमेनां प्रतिपत्स्ये त्वदाज्ञया ॥ ७३ ॥
इति प्रतिश्रुते राज्ञा जानकीमाश्रमान्मुनिः ।
शिष्यैरानाययामास स्वसिद्धिं नियमैरिव ॥ ७४ ॥
अन्येद्युरथ काकुत्स्थः संनिपात्य पुरौकसः ।
कविमाह्वाययामास प्रस्तुतप्रतिपत्तये ॥ ७५ ॥

७२ ॥ तातेति । हे तात । ते स्नुषा सीता नोऽस्माकमक्ष्णोः समीपं समक्षम् ॥ "अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः" इति समासान्तष्टच् ॥ जातवेदसि वह्नौ शुद्धा । नास्माकमविश्वास इत्यर्थः । किं तु रक्षसो रावणस्य दौरात्म्यादत्रत्याः प्रजास्तां न श्रद्दधुर्न विशश्वसुः ॥

७३ ॥ ता इति । मैथिली स्वचारित्रमुद्दिश्य ताः प्रजाः प्रत्याययतु विश्वासयतु ॥ विश्वासस्य बुद्धिरूपत्वात् ॥ "णौ गमिरबोधने" इति इणो गम्यादेशो नास्ति ॥ ततोऽनन्तरं पुत्रवतीमेनां सीतां त्वदाज्ञया प्रतिपत्स्ये स्वीकरिष्ये ॥

७४ ॥ इतीति । राज्ञेति प्रतिश्रुते प्रतिज्ञाते सति मुनिराश्रमाज्जानकीं शिष्यैः प्रयोज्यैः । स्वसिद्धिं स्वार्थसिद्धिं नियमैस्तपोभिरिव । आनाययामास ॥

७५ ॥ अन्येद्युरिति । अथ काकुत्स्थो रामः । अन्येद्युरन्यस्मिन्नहनि प्रस्तुतप्रतिपत्तये प्रकृतकार्यानुसंधानाय पुरौकसः पौरान्संनिपात्य मेलयित्वा कविं वाल्मीकिमाह्वाययामासाकारयामास ॥

---

72. Worthy Sire ! thy daughter-in-law was proved to be pure in fire (*i. e.* tested in fire) in our very presence, but people of this place did not believe in her purity (or fidelity) on account of the wicked nature of the demon.

73. Let therefore Maithili produce confidence in the minds of the people in respect of her conduct, then in obedience to your command I will take her and her sons back.

74. When the king made this promise, the sage caused Jānakī to be brought from the hermitage by his disciples, as his success was brought about by means of his austerities.

75. Then on the next day, calling together (assembling) the citizens to introduce to them the matter in hand, the descendant of Kakutstha sent for the poet.

---

73. L. तवाज्ञया for त्वदाज्ञया.
74. D. K. आह्वाययामास for आनाययामास.
75. A. C. K. with Vijay., संनिमंत्र्य for संनिपात्य.

स्वरसंस्कारवत्यासौ पुत्राभ्यामथ सीतया ।
ऋचेवोदर्चिषं सूर्यं रामं मुनिरुपस्थितः ॥ ७६ ॥
काषायपरिवीतेन स्वपदार्पितचक्षुषा ।
अन्वमीयत शुद्धेति शान्तेन वपुषैव सा ॥ ७७ ॥
जनास्तदालोकपथात्प्रतिसंहृतचक्षुषः ।
तस्थुस्तेऽवाङ्मुखाः सर्वे फलिता इव शालयः ॥ ७८ ॥

७६ ॥ स्वरेति । अथ । स्वर उदात्तादिः । संस्कारः शब्दशुद्धिः । तद्वत्या ऋचा सावित्र्योदर्चिषं सूर्यमिव । पुत्राभ्यामुपलक्षितया सीतया करणेनोदर्चिषं राममसौ मुनिरुपस्थित उपतस्थे ॥

७७ ॥ काषायेति । कषायेण रक्तं काषायम् ॥ " तेन रक्तं रागात् " इत्यण् ॥ तेन परिवीतेन संवृतेन स्वपदार्पितचक्षुषा शान्तेन प्रसन्नेन वपुषैव सा सीता शुद्धा साध्वीत्यन्वमीयतानुमिता ॥

७८ ॥ जना इति । तस्याः सीतायाः कर्मण आलोकपथाद्दर्शनमार्गात्प्रतिसंहृतचक्षुषो निवर्तितदृष्टयः सर्वे जनाः । फलिताः शालय इव । अवाङ्मुखा नम्रमुखास्तस्थुः ॥

---

76. Then the Muni attended on (came to) the resplendant Ráma together with Sitá accompanied by her two sons, as on the refulgent sun with the Vedic verse (Sávitrî) accompanied by proper intonation and purity.

77. That she was chaste (pure) was inferred from her very form that was peaceful and clad in red garments, with the eyes directed towards her feet (as a sign of modesty).

78. All people withdrawing their eyes from the range of her sight stood with their heads downcast like paddy plants with the burden of fruits.

---

76. B. C. E. H. J. K. R. with Val., and Vijay., इव, D. I. L. with Su., च for असौ. C. E. H. I. L. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., सह for अथ. C. K. सा तथा for सीतया. B. वह्नि for सूर्यं. D. इत्यस्थित: for रुपस्थित: Hemádri notices the reading.

77. 1. स्वपादार्पित° for स्वपदार्पित . R. omits this verse.

78. B. H. L. with Chá., Din., and Val., दर्शमुखाः, C. E. R. अधोमुखाः, D. K. with Hem., and Vijay., अवाङ्मुखाः for तेऽवाङ्मुखाः. Sumativijaya notices the reading of Cháritravardhana and others.

तां दृष्टिविषये भर्तुर्मुनिरास्थितविष्टरः ।
कुरु निःसंशयं वत्से स्ववृत्ते लोकमित्यशात् ॥ ७९ ॥
अथ वाल्मीकिशिष्येण पुण्यमावर्जितं पयः ।
आचम्योदीरयामास सीता सत्यां सरस्वतीम् ॥ ८० ॥
वाङ्मनःकर्मभिः पत्यौ व्यभिचारो यथा न मे ।
तथा विश्वंभरे देवि मामन्तर्धातुमर्हसि ॥ ८१ ॥
एवमुक्ते तया साध्व्या रन्ध्रात्सद्योभवाद्भुवः ।
शातह्रदमिव ज्योतिः प्रभामण्डलमुद्ययौ ॥ ८२ ॥

७९ ॥ तामिति । आस्थितविष्टरोऽधिष्ठितासनो मुनिः । हे वत्से भर्तुर्दृष्टिविषये समक्षं स्ववृत्ते स्वचरिते विषये लोकं निःसंशयं कुरु । इति तां सीतामशाच्छास्ति स्म ॥

८० ॥ अथेति । अथ वाल्मीकिशिष्येणावर्जितं दत्तं पुण्यं पय आचम्य सीता सत्यां सरस्वतीं वाचमुदीरयामासोच्चारयामास ॥

८१ ॥ वाङ्मन इति । वाङ्मनःकर्मभिः वाङ्मनःकायैः पत्यौ विषये मे व्यभिचारः स्खालित्यं न यथा नास्ति यदि तथा तर्हि । विश्वं बिभर्तीति विश्वंभरा भूमिः ॥ "संज्ञायां भृतॄवृजि—" इत्यादिना खच्प्रत्ययः ॥ "अरुर्द्विषत्-" इत्यादिना मुमागमः ॥ हे विश्वंभरे देवि मामन्तर्धातुं गर्भे वासयितुमर्हसि ॥

८२ ॥ एवमिति । साध्व्या पतिव्रतया तया सीतयैवमुक्ते सति सद्योभवाद्भुवो रन्ध्राच्छातह्रदं वैद्युतं ज्योतिरिव प्रभामण्डलमुद्ययौ ॥

---

79. The Muni sitting in his seat ordered her, saying "Dear child, make the people free from doubt concerning your own conduct in the presence of your husband."

80. Then sipping the holy water poured on her hand by a disciple of Vâlmiki, Sitâ gave utterance to these truthful words.

81. "If there is no violation of duty from me towards my husband whether in words, thought or action, O divine Earth! the supporter of universe! please to hide me in thy womb."

82. No sooner were these words uttered by the chaste Sitâ than there rose up a halo of light like that of lightning from a chasm in the earth that manifested itself at once.

---

79. E. वृत्ते स्वे for स्ववृत्ते. K. L. लोकमन्वशात् for लोकमित्यशात्.

81. B. विश्वंभरा देवी for विश्वंभरे देवि. B. अर्हति for अर्हसि.

82. A. C. with Hemâdri रन्ध्रं सद्योऽभवद्भुवः for रन्ध्रात्सद्योभवाद्भुवः. D. ततः for भुवः.

तत्र नागफणोत्क्षिप्तसिंहासननिषेदुषी ।
समुद्ररशना साक्षात्प्रादुरासीद्वसुंधरा ॥ ८३ ॥
सा सीतामङ्कमारोप्य भर्तृप्रणिहितेक्षणाम् ।
मा मेति व्याहरत्येव तस्मिन्पातालमभ्यगात् ॥ ८४ ॥
धरायां तस्य संरम्भं सीताप्रत्यर्पणैषिणः ।
गुरुर्विधिबलापेक्षी शमयामास धन्विनः ॥ ८५ ॥

८३ ॥ तत्रेति । तत्र प्रभामण्डले नागफणोत्क्षिप्ते सिंहासने निषेदुष्यासीना समुद्ररशना समुद्रमेखला साक्षात् । वसूनि धारयतीति वसुंधरा भूमिः ॥ "खित्यनव्ययस्य ह्रस्वः" इति ह्रस्वः ॥ प्रादुरासीत् ॥

८४ ॥ सेति । सा वसुंधरा भर्तरि प्रणिहितेक्षणां दत्तदृष्टिं सीतामङ्कमारोप्य तस्मिन्भर्तरि रामे मा मेति मा हरेति व्याहरति वदत्येव । व्याहरन्तमनादृत्येत्यर्थः ॥ "षष्ठी चानादरे" इति सप्तमी ॥ पातालमभ्यगात् ॥

८५ ॥ धरायामिति । सीताप्रत्यर्पणमिच्छतीति तथोक्तस्य धन्विन आत्तधनुष्कस्य रामस्य धरायां विषये संरम्भं विधिबलापेक्षी दैवशक्तिदर्शी गुरुर्ब्रह्मा शमयामास ॥ अवश्यंभावी विधिरिति भावः ॥

---

83. In the centre of that halo of light there appeared the Goddess Earth herself having for her girdle the ocean, seated on a throne held up on the expanded hood of the snake Shesha.

84. She placed on her lap Sitá whose eyes were directed towards her husband and took her away to the nether world, before her husband had time to exclaim "Oh, do not; please do not."

85. Brahma knowing that fate is powerful appeased Râma whose anger was excited against the earth and who had taken up the bow, wishing for the restoration of Sitá.

---

83. R. °क्षिप्ता for क्षिप्त. B. D. L. R. with Châ., and Val., °निषादिनी for °निषेदुषी. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., °वसना for °रसना.

84. A. D. with Hemádri, भर्तरि प्रणिहित°, E. H. I. J. L. R. with Châ., and Din., भर्तरि प्रहित°, C₂. with Su., स्वभर्तृप्रहित° for भर्तृप्रणिहित°. Sumativijaya notices the reading of Châritravardhana and others. R. एवं for इति. K. L. व्याहरन्त्येव for व्याहरत्येव. B. अभ्ययात्, D. सम्यगात् for अभ्यगात्.

85. B. C. E. H. I. K. L. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., रसायां for धरायां. D. सीताभ्युद्धरणैषिणः for सीताप्रत्यर्पणैषिणः. A. C. with Châ., and Din., मुनिः for गुरुः.

ऋषीन्विसृज्य यज्ञान्ते सुहृदश्च पुरस्कृतान् ।
रामः सीतागतं स्नेहं निदधे तदपत्ययोः ॥ ८६ ॥
युधाजितश्च संदेशात्स देशं सिन्धुनामकम् ।
ददौ दत्तप्रभावाय भरताय धृतप्रजः ॥ ८७ ॥
भरतस्तत्र गन्धर्वान्युधि निर्जित्य केवलम् ।
आतोद्यं ग्राहयामास समत्याजयदायुधम् ॥ ८८ ॥
स तक्षपुष्कलौ पुत्रौ राजधान्योस्तदाख्ययोः ।
अभिषिच्याभिषेकार्हौ रामान्तिकमगात्पुनः ॥ ८९ ॥

८६ ॥ ऋषीनिति । रामो यज्ञान्ते पुरस्कृतान्पूजितानृषीन्सुहृदश्च विसृज्य सीतागतं स्नेहं तदपत्ययोः कुशलवयोर्निदधे ॥

८७ ॥ युधाजित इति । किं च । धृतप्रजः स रामो युधाजितो भरतमातुलस्य संदेशात्सिन्धुनामकं देशं दत्तप्रभावाय दत्तैश्वर्याय । रामेणेति शेषः । भरताय ददौ ॥

८८ ॥ भरत इति । तत्र सिन्धुदेशे भरतोऽपि युधि गन्धर्वान्निर्जित्य केवलमेकमातोद्यम् ॥ " ततं वीणादिकं वाद्यमानद्धं मुरजादिकम् । वंशादिकं तु सुषिरं कांस्यतालादिकं घनम् । चतुर्विधमिदं वाद्यं वादित्रातोद्यनामकम् " इत्यमरः ॥ ग्राहयामास । आयुधं समत्याजयत्त्याजितवान् ॥ ग्रहित्यजोर्ण्यन्तयोर्द्विकर्मकत्वं नित्यमित्यनुसंधेयम् ॥

८९ ॥ स इति । स भरतः । अभिषेकार्हौ तक्षपुष्कलौ नाम पुत्रौ तदाख्ययोः ।

---

86. At the end of the sacrifice Ráma dismissed the sages and his friends duly honoured and centred his affection for Sita in her sons.

87. Ráma who supported his subjects gave at the request of Yudhájit the country named Sindhu to Bharata to whom he also made over a part of the wealth he possessed.

88. There Bharata having conquered the Gandharvas in a battle forced them simply to take up their lute and to forego their arms.

89. Having installed his two sons, Taksha and Pushkala, who

---

86. B. D. with Val., and Su., विदधे for निदधे.

87. D. I. J. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., and Su., युधाजितस्य, E. युधायुतस्य for युधाजितश्च. A. C. with Chá., सिन्धुकूलजं [सिन्धुकूलनं Ms.] for सिन्धुनामकं. Cháritravardhana: " सिन्धुकूलजं सिन्धुनामकं. " D. L. दिष्टप्रभावाय, A. with Chá., दृष्टप्रभावाय. C. E. R. with Val., Su., and Vijay., जेतुं सुतत्राय for दत्तप्रभावाय. A. D. L. with Hem., and Su., भृतप्रजः for धृतप्रजः. B. omits this verse.

88. D. K. with Vijay., आयुधानि for आयुधं.

89. A. D. I. L. with Hem , Chá., Din., Val., and Su., तक्षपुष्करौ for तक्षपुष्कलौ.

अङ्गदं चन्द्रकेतुं च लक्ष्मणोऽप्यात्मसंभवौ ।
शासनाद्रघुनाथस्य चक्रे कारापथेश्वरौ ॥ ९० ॥
इत्यारोपितपुत्रास्ते जननीनां जनेश्वराः ।
भर्तृलोकप्रपन्नानां निवापान्विदधुः क्रमात् ॥ ९१ ॥
उपेत्य मुनिवेषोऽथ कालः प्रोवाच राघवम् ।
रहःसंवादिनौ पश्येदावां यस्तं त्यजेरिति ॥ ९२ ॥

तक्षपुष्कलाख्ययोरित्यर्थः । पुष्कलं पुष्कलावत्यां तक्षं तक्षशिलायामिति राजधान्योर्नगर्योरभिषिच्य पुना रामान्तिकमगात् ॥

९० ॥ अङ्गदमिति । लक्ष्मणोऽपि रघुनाथस्य रामस्य शासनादङ्गदं चन्द्रकेतुं च तदाख्यावात्मसंभवौ पुत्रौ । कारापथो नाम देशः । तस्येश्वरौ चक्रे ॥

९१ ॥ इतीति । इत्यारोपितपुत्रास्ते जनेश्वरा रामादयो भर्तृलोकप्रपन्नानां स्वर्यातानां जननीनां क्रमान्निवापाञ्श्राद्धादीन्विदधुश्चक्रुः ॥

९२ ॥ उपेत्येति । अथ कालोऽन्तको मुनिवेषः सन्नुपेत्य राघवं प्रोवाच । किमित्याह—हरस्येकान्ते संवादिनौ संभाषिणावावां यः पश्येत् । रहस्यभङ्गं कुर्यादित्यर्थः । तं त्यजेरिति ॥

---

deserved the coronation (on the thrones) in the capitals named after them (Takshas'ilâ and Pushkalâvatî), he again went to Râma.

90. Lakshma*n*a also in obedience to the command of his brother made his two sons named Angada and Chandraketu the lords of the country called Kârâpatha.

91. The lords of men having thus settled their sons on the throne performed, in due order, the funeral obsequies of their mothers who had departed to the region of their husband.

92. Once upon a time Death in the disguise of a hermit came to Râghava and said " you should abandon him who will see us conversing together in private. "

---

90. E. रामचन्द्रस्य for रघुनाथस्य. A. कारुपथेश्वरौ, B. कारपथेश्वरौ, D. तारपथेश्वरौ, D_2. तारापथेश्वरौ, A_2. with Hemâdri उत्तरापथेश्वरौ for कारापथेश्वरौ.

91. B. R. इति रोपित°, A. C. with Su., and Vijay., समारोपित° for इत्यारोपित°. A. C. with Su., स्वर्गलोक°, R. भर्तृलोकं for भर्तृलोक°.

92. C. E. I. K. L. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., मुनिवेषेण for मुनिवेषोऽथ. One of the three Mss. of Hemâdri's दर्पण also agrees with Châritravardhana and others. K. यः संत्यजेः for यस्तं त्यजेः.

तथेति प्रतिपन्नाय विवृतात्मा नृपाय सः ।
आचख्यौ दिवमध्यास्व शासनात्परमेष्ठिनः ॥ ९३ ॥
विद्वानपि तयोर्द्वाःस्थः समयं लक्ष्मणोऽभिनत् ।
भीतो दुर्वाससः शापाद्रामसंदर्शनार्थिनः ॥ ९४ ॥
स गत्वा सरयूतीरं देहत्यागेन योगवित् ।
चकारावितथां भ्रातुः प्रतिज्ञां पूर्वजन्मनः ॥ ९५ ॥
तस्मिन्नात्मचतुर्भागे प्राङ्नाकमधितस्थुषि ।
राघवः शिथिलं तस्थौ भुवि धर्मस्त्रिपादिव ॥ ९६ ॥

९३ ॥ तथेति । स कालस्तथेति प्रतिपन्नाय नृपाय रामाय विवृतात्मा प्रकाशितनिजस्वरूपः सन् । परमेष्ठिनो ब्रह्मणः शासनाद्दिवमध्यास्व । इत्याचख्यौ ॥
९४ ॥ विद्वानिति । द्वाःस्थो द्वारि नियुक्तो लक्ष्मणो विद्वानपि पूर्वश्लोकोक्तं जानन्नपि रामसंदर्शनार्थिनो दुर्वाससो मुनेः शापाद्भीतः सन् । तयोः कालरामयोः समयं संवादमभिनाद्भिभेद ॥
९५ ॥ स इति । योगविद्योगमार्गवेदी स लक्ष्मणः सरयूतीरं गत्वा देहत्यागेन पूर्वजन्मनो भ्रातुः प्रतिज्ञामवितथां सत्यां चकार ॥
९६ ॥ तस्मिन्निति । चतुर्थो भागश्चतुर्भागः ॥ संख्याशब्दस्य वृत्तिविषये पूरणार्थत्वं शतांशवत् ॥ आत्मचतुर्भागे तस्मिँल्लक्ष्मणे प्राङ्नाकमधितस्थुषि पूर्वं स्वर्गं

---

93. Then to the king who assented to his proposal by saying, "so be it" he disclosed himself and told him to return to heaven in obedience to the command of the Creator.

94. Lakshma*n*a who stood at the gate afraid of being cursed by Durvâsas who wanted an immediate interview with Râma, interrupted them in their discourse, though he was aware of the agreement made between them.

95. He who was conversant with the art of Yoga practice going over to the bank of the river Sarayû made the promise of his elder brother true by abandoning his body.

96. When that fourth part of his own self (*i. e.* of Râma)

---

93. D. L. आरोढुं for अध्यास्व. Between 94-95 A. D. E. I. R. and Hemâdri read,—" गच्छ लक्ष्मण शीघ्रं त्वं माभूद्धर्मविपर्ययः । त्यागो वापि वधो वापि साधूनामुभयं समं ॥ " [I. परित्यागो for त्यागो वापि.]

94. A. C. with Châ., and Din., रामसंदर्शितात्मनः for रामसंदर्शनार्थिनः.

95. A. C. with Su., सरयूतीरे for सरयूतीरं. D. with Su., वितथां for अवितथां. A. with Vijay., पूर्वजन्मनि for पूर्वजन्मनः.

96. C. शिथिलः for शिथिलं.

स निवेश्य कुशावत्यां रिपुनागाङ्कुशं कुशम् ।
शरावत्यां सतां सूक्तैर्जनिताश्रुलवं लवम् ॥ ९७ ॥
उदक्प्रतस्थे स्थिरधीः सानुजोऽग्निपुरःसरः ।
अन्वितः पतिवात्सल्याद्गृहवर्जमयोध्यया ॥ ९८ ॥
जगृहुस्तस्य चित्तज्ञाः पदवीं हरिराक्षसाः ।
कदम्बमुकुलस्थूलैरभिवृष्टां प्रजाश्रुभिः ॥ ९९ ॥

जग्मुषि सति राघवो रामः । भुवि त्रिपाद्धर्म इव । शिथिलं तस्थौ । पादविकलो हि शिथिलं तिष्ठतीति भावः ॥ त्रेतायां धर्मस्त्रिपादित्याहुः । पादश्चतुर्थांशः । अङ्घ्रिश्च ध्वन्यते ॥ " पादा रश्म्यङ्घ्रितुर्यांशाः " इत्यमरः ॥ त्रयः पादा यस्यासौ त्रिपात् ॥ " संख्यासु पूर्वस्य " इत्यकारलोपः समासान्तः ॥

९७-९८ ॥ स इति ॥ उदगिति ॥ युग्मम् ॥ स्थिरधीः स रामः । रिपव एव नागा गजास्तेषामङ्कुशं निवारकं कुशं कुशावत्यां पुर्यां निवेश्य स्थापयित्वा । सूक्तैः सतां जनिता अश्रुलवा अश्रुलेशा येन तं लवं लवाख्यं पुत्रम् ॥ " लवो लेशे विलासे च छेदने रामनन्दने " इति विश्वः ॥ शरावत्यां पुर्याम् ॥ " शरादीनां च " इति शरकुशशब्दयोर्दीर्घः ॥ निवेश्य । सानुजोऽग्निपुरःसरः सन् । पत्यौ भर्तरि वात्सल्यादनुरागात् । गृहान्वर्जयित्वा गृहवर्जम् ॥ " द्वितीयायां च " इति णमुल् ॥ अयं क्वचिदपरीप्सायामपीष्यते ॥ " अनुदात्तं पदमेकवर्जम् " इत्येकाचः शेषतया व्याख्यानत्वात् ॥ परीप्सा त्वरा ॥ अयोध्ययान्वितोऽनुगत उदक्प्रतस्थे ॥

९९ ॥ जगृहुरिति । चित्तज्ञा हरिराक्षसाः कदम्बमुकुलस्थूलैः प्रजाश्रुभिरभिवृष्टां तस्य रामस्य पदवीं मार्गं जगृहुः । तेऽप्यनुजग्मुरित्यर्थः ॥

---

preceded him to heaven, Rághava like the three-legged virtue remained on earth with his hold slackened.

97—98. Having placed Kus'a on the throne of Kus'âvatí who was to his enemies like a goad to an elephant, and Lava on the throne of S'arâvati who by his wise sayings caused good men to shed tears, he who was of steady mind accompanied by his younger brothers placed the fire-pan before himself and proceeded towards the north. All the people of Ayodhyá leaving their homes followed him on account of their great love for him.

99. The monkeys and the demons who knew his intentions

---

97. A. C. R. with Hemâdri संनिवेश्य for स निवेश्य. B. with Châ., Val., and Vijay., श्रावस्त्यां च, C. H. I. K. R. with Hem., and Su., श्रावस्त्यां च, D. L. सरावत्यां for शरावत्यां. One of the Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with Hemádri and others.

98. D. स्थितधीः for स्थिरधीः. Hemádri notices the reading.

99. B. C. H. I. L. with Hem., Chá., Su., and Vijay., वृत्तज्ञाः,

उपस्थितविमानेन तेन भक्तानुकम्पिना ।
चक्रे त्रिदिवनिःश्रेणिः सरयूरनुयायिनाम् ॥ १०० ॥
यद्गोप्रतरकल्पोऽभूत्संमर्दस्तत्र मज्जताम् ।
अतस्तदाख्यया तीर्थं पावनं भुवि पप्रथे ॥ १०१ ॥
स विभुर्विबुधांशेषु प्रतिपन्नात्ममूर्तिषु ।
त्रिदशीभूतपौराणां स्वर्गान्तरमकल्पयत् ॥ १०२ ॥

१०० ॥ उपस्थितेति । उपस्थितं प्राप्तं विमानं यस्य तेन । भक्ताननुकम्पत इति भक्तानुकम्पिना । तेन रामेणानुयायिनां सरयूस्त्रिदिवनिःश्रेणिः स्वर्गाधिरोहणी चक्रे ॥ " निःश्रेणिस्त्वधिरोहणी " इत्यमरः ॥

१०१ ॥ यदिति । यद्यस्मात्तत्र सरय्वां मज्जतां संमर्दः । गोप्रतरो गोप्रतरणम् । तत्कल्पोऽभूत् । अतस्तदाख्यया गोप्रतराख्यया पावनं शोधकं तीर्थं भुवि पप्रथे ॥

१०२ ॥ स इति । विभुः प्रभुः । स रामो विबुधानामंशेषु सुग्रीवादिषु प्रतिपन्नात्ममूर्तिषु सत्सु त्रिदशीभूता देवभवनं गता ये पौरास्तेषां नूतनसुराणां स्वर्गान्तरमकल्पयत् ॥

---

followed his track which was drenched by the tear drops of the people as large as buds of Kadamba-tree.

100. Then Râma who was kindly disposed towards persons devoted to him and on whom a celestial car had attended made the river Sarayû a staircase for his followers to ascend to heaven.

101. Because the concourse of the people who swam there was very great like that of cows swimming, therefore the place became celebrated as a holy spot on earth by the name of Gopratara.

102. When Sugriva and others who were portions of gods resumed their original forms, the lord of the universe created a separate heaven for his citizens who had attained divinity.

D. K. वर्मजाः for चित्तजाः. Châritravardhana : " वृत्तज्ञाभिन्नाभिप्रायवेदिन &c. " A. D. कपिराक्षमाः for हरिराक्षसाः. B. K. अभिवृष्टं for अभिवृष्टां.

100. R. उपस्थितं for उपस्थित°. A. B. E. H. R with Su., निःश्रेणी for निःश्रेणिः.

101. A. B. D. L. विमर्दः for संमर्दः. A. D. तत्र for भुवि.

102. B. C. E. H. I. K. R. with Hem., Val., Châ , Din., Su., and Vijay., °पौरार्थं for °पौराणां.

निर्वर्त्यैवं दशमुखशिरच्छेदकार्यं सुराणां
विष्वक्सेनः स्वतनुमविशत्सर्वलोकप्रतिष्ठाम् ।
लङ्कानाथं पवनतनयं चोभयं स्थापयित्वा
कीर्तिस्तम्भद्वयमिव गिरौ दक्षिणे चोत्तरे च ॥ १०३ ॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कालिदासकृतौ श्रीरामस्वर्गारोहणो नाम पञ्चदशः सर्गः ॥

१०३ ॥ निर्वर्त्येति । विष्वक्सेनो विष्णुरेवं सुराणां दशमुखशिरश्छेदकार्यं निर्वर्त्य निष्पाद्य । लङ्कानाथं बिभीषणं पवनतनयं हनूमन्तं चोभयं कीर्तिस्तम्भद्वयमिव । दक्षिणे गिरौ चित्रकूटे । चोत्तरे गिरौ हिमवति च स्थापयित्वा । सर्वलोकप्रतिष्ठां सर्वलोकाश्रयभूतां स्वतनुं स्वमूर्तिमविशत् ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमच्छपाच्छयसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां पञ्चदशः सर्गः ॥

---

103. Vishnu having thus accomplished the object (commission) of the gods by cutting off the heads of the ten-headed demon and established the lord of Lanká (Bibhíshana) and the son of Wind on the northern and southern mountains like two pillars as a monument of his deeds, entered into that form of himself which serves as a refuge to all created beings.

---

103. B. C. E. with Chá., Su., and Vijay., °भयच्छेदि कार्यं, D. with Hemádri °भयच्छेदकार्यं, D_2. H. I. with Val., and Din., °भयोच्छेदि कार्यं, K. L. °शिरच्छेदि कार्यं, R. °भुजच्छेदि कार्यं for °शिरश्छेदकार्यं. R. स तनुं for स्वतनुं. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., सप्तलोक° for सर्वलोक°. I. चोभयौ for चोभयं.

। षोडशः सर्गः ।

अथेतरे सप्त रघुप्रवीरा ज्येष्ठं पुरोजन्मतया गुणैश्च ॥
चक्रुः कुशं रत्नविशेषभाजं सौभ्रात्रमेषां हि कुलानुसारि ॥ १ ॥
ते सेतुवार्त्तागजबन्धमुख्यैरभ्युच्छ्रिता कर्मभिरप्यवन्ध्यैः ।
अन्योन्यदेशप्रविभागसीमां वेलां समुद्रा इव न व्यतीयुः ॥ २ ॥

वृन्दारका यस्य भवन्ति भृङ्गा मन्दाकिनी यन्मकरन्दबिन्दुः ।
तवारविन्दाक्ष पदारविन्दं वन्दे चतुर्वर्गचतुष्पदं तत् ॥

१ ॥ अथेति । अथ रामनिर्वाणानन्तरमितरे लवादयः सप्त रघुप्रवीराः । पुरः पूर्वं जन्म यस्य तस्य भावस्तत्ता । तया गुणैश्च ज्येष्ठं कुशं रत्नविशेषभाजं तत्तच्छ्रेष्ठवस्तुभागिनं चक्रुः ॥ तदुक्तम्–" जातौ जातौ यदुत्कृष्टं तद्रत्नमभिधीयते " इति ॥ तथा हि । सुभ्रातॄणां भावः सौभ्रात्रम् ॥ " हायनान्त--" इत्यादिना युवादित्वादण्प्रत्ययः ॥ एषां कुशलवादीनां कुलानुसारि वंशानुगतं हि ॥

२ ॥ त इति । सेतुर्जलबन्धः । वार्त्ता कृषिगोरक्षणादिः ॥ " वार्त्ता कृष्यादुदन्तयोः " इति विश्वः ॥ गजबन्ध आकरेभ्यो गजग्रहणम् । ते मुख्यं प्रधानं येषां तैरवन्ध्यैः सफलैः कर्मभिरभ्युच्छ्रिताः । अतिसमर्था अपीत्यर्थः । ते कुशादयः । प्रविभज्यन्त इति प्रविभागाः । अन्योन्यदेशप्रविभागानां या सीमा ताम् । वेलां समुद्रा इव । न व्यतीयुर्नातिचक्रमुः ॥ अत्र कामन्दकः—" कृषिर्वणिक्पथो दुर्गं सेतुः कुञ्जरबन्धनम् । खन्याकरवनादानं शून्यानां च निवेशनम् । अष्टवर्गमिमं साधुः स्वयं वृद्धोऽपि वर्धयेत् " इति ॥

---

1. Then the seven other (*viz.* other than Kus'a) heroic princes of the family of Raghu made Kus'a, the eldest both in point of birth and personal qualities, the sharer of every thing best of its kind ; for good brotherly feeling was a hereditary virtue in their family.

2. Though they were greatly distinguished for their successful undertakings the chief of which were the constructions of bridges , agriculture (including the protection of cows, &c.), and the taming of elephants, yet they never transgressed the boundary of the portion of land allotted to each, as the seas do not go beyond their coasts.

---

2. B. अत्युच्छ्रिताः for अभ्युच्छ्रिताः. D. L. and the text only of Vijay., °प्रतिभाग° for °प्रविभाग°.

चतुर्भुजांशप्रभवः स तेषां दानप्रवृत्तेरनुपारतानाम् ।
सुरद्विपानामिव सामयोनिर्भिन्नोऽष्टधा विप्रससार वंशः ॥ ३ ॥
अथार्धरात्रे स्तिमितप्रदीपे शय्यागृहे सुप्तजने प्रबुद्धः ।
कुशः प्रवासस्थकलत्रवेषामदृष्टपूर्वां वनितामपश्यत् ॥ ४ ॥
सा साधुसाधारणपार्थिवर्द्धेः स्थित्वा पुरस्तात्पुरुहूतभासः ।
जेतुः परेषां जयशब्दपूर्वं तस्याञ्जलिं बन्धुमतो बबन्ध ॥ ५ ॥

३ ॥ चतुर्भुजेति । चतुर्भुजो विष्णुः । तस्यांशा रामादयः । ते प्रभवाः कारणानि यस्य स तथोक्तः । दानं त्यागो मदश्च ॥ "दानं गजमदे त्यागे" इति विश्वः ॥ प्रवृत्तिर्व्यापारः । प्रवाहश्च । दानप्रवृत्तेरनुपारतानां तेषां कुशलवादीनां स वंशः । सामयोनिः सामयोनिप्रभवो दानप्रवृत्तेरनुपारतानां सुरद्विपानां दिग्गजानां वंश इव । अष्टधा भिन्नः सन् । विप्रससार विस्तृतोऽभूत् ॥ सामयोनिरित्यत्र पालकाप्यः–"सूर्यस्याण्डकपाले द्वे समानीय प्रजापतिः । हस्ताभ्यां परिगृह्याथ सप्त सामान्यगायत । गायतो ब्रह्मणस्तस्मात्समुत्पेतुर्मतङ्गजाः" इति ॥

४ ॥ अथेति । अथ । अर्धं रात्रेरर्धरात्रः ॥ "अर्धं नपुंसकम्" इत्येकदेशसमासः॥ "अहःसर्वैकदेशसंख्यातपुण्याच्च रात्रेः" इत्यादिना समासान्तोऽच्प्रत्ययः ॥ "रात्राह्नाहाः पुंसि" इति नियमात्पुंलिङ्गत्वम् ॥ अर्धरात्रे निशीथे स्तिमितप्रदीपे सुप्तजने शय्यागृहे प्रबुद्धः । न तु सुप्तः । कुशः प्रवासस्थकलत्रवेषां प्रोषितभर्तृकावेषाम् । अदृष्टा पूर्वमित्यदृष्टपूर्वा ताम् ॥ सुप्सुपेति समासः । वनितामपश्यत् ॥

५ ॥ सेति । सा वनिता साधुसाधारणपार्थिवर्द्धेः सज्जनसाधारणराज्यश्रियः पुरुहूतभास इन्द्रतेजसः परेषां शत्रूणां जेतुर्बन्धुमतस्तस्य कुशस्य पुरस्तात्स्थित्वा जयशब्दपूर्वं यथा तथाञ्जलिं बबन्ध ॥

---

3. That family of theirs sprung from the portions of Vishnu (the four-armed god), who never desisted from the act of liberality being divided into eight branches, spread widely like the race of celestial elephants sprung from the Sámans, the flows of whose ichor are uninterrupted.

4. Once at mid-night Kus'a who was wide awake saw a female, never seen before, dressed like one whose husband is gone on travel, in his bed-chamber where attendants were asleep and the lights were steadily burning.

5. "May victory attend on you!" with these words first uttered, she folded her hands and stood before him, the conqueror of his enemies, whose lustre was like that of Indra, whose royal fortune was common to the good (virtuous) and who had good brothers.

---

4. A. D. with Su., स्तिमित for स्तिमित°. B. विबुद्धः for प्रबुद्धः.

अथानपोढार्गलमप्यगारं छायामिवादर्शतलं प्रविष्टाम् ।
सविस्मयो दाशरथेस्तनूजः प्रोवाच पूर्वार्धविसृष्टतल्पः ॥ ६ ॥
लब्धान्तरा सावरणेऽपि गेहे योगप्रभावो न च लक्ष्यते ते ।
बिभर्षि चाकारमनिर्वृतानां मृणालिनी हैममिवोपरागम् ॥ ७ ॥
का त्वं शुभे कस्य परिग्रहो वा किं वा मदभ्यागमकारणं ते ।
आचक्ष्व मत्वा वशिनां रघूणां मनः परस्त्रीविमुखप्रवृत्ति ॥ ८ ॥
तमब्रवीत्सा गुरुणानवद्या या नीतपौरा स्वपदोन्मुखेन ।
तस्याः पुरः संप्रति वीतनाथां जानीहि राजन्नधिदेवतां माम् ॥ ९ ॥

६ ॥ अथेति । अथ सविस्मयः पूर्वार्धेन शरीरपूर्वभागेण विसृष्टतल्पस्त्यक्तशय्यो दाशरथेस्तनूजः कुशः । अनपोढार्गलमनुद्घाटितविष्कम्भमपि ॥ " तद्विष्कम्भेऽर्गलं न ना " इत्यमरः ॥ अगारम् । आदर्शतलं छायामिव । प्रविष्टां तां वनितां प्रोवाच ॥

७—८ ॥ लब्धेति ॥ का त्वमिति । युग्मम् । सावरणेऽपि गेहे लब्धान्तरा लब्धावकाशा । त्वमिति शेषः । योगप्रभावश्च ते न लक्ष्यते । मृणालिनी हैमं हिमकृतमुपरागमुपद्रवमिव ॥ अनिर्वृतानां दुःखितानामाकारं बिभर्षि च । न हि योगिनां दुःखमस्तीति भावः ॥ किं च । हे शुभे त्वं का कस्य वा परिग्रहः पत्नी । ते तव मदभ्यागमकारणं वा किम् । वशिनां जितेन्द्रियाणां रघूणां मनः परस्त्रीषु विषये विमुखा प्रवृत्तिर्यस्य । तत्तथाभूतं मत्वाचक्ष्व ॥

९ ॥ तमिति । सा वनिता तं कुशमब्रवीत् । अनवद्याऽदोषा या पूः स्वपदोन्मुखेन

---

6. Whereupon the astonished son of Ráma raised his upper half (*lit.* left the bed by the upper half) from the couch and began to address her who had entered the palace, though the doors of it were not unbolted, as a reflection does the surface of a mirror.

7—8. " You got an entrance into the palace though its door was bolted and yet I do not see that you possess any power of Yoga. You wear an appearance of the distressed as a lotus suffers damage caused by frost. Gentle lady ! who are you and whose wife are you ? or what is your object in coming to me ? Mention all this to me, first remembering that the mind of the self-restraining Raghus possesses a propensity totally turned away from the love towards the wives of other men. "

9. That faultless lady replied and said ' know me, O king, to

---

6. B. I. L. R. with Chá., and Din., तां सोऽनपोढा°, H. तां चानपोढा° for अथानपोढा°.

7. D. with Dinakara योगप्रवेशः for योगप्रभावः. H. R. with Hem., Val., and the text only of Vijay., दृश्यते for लक्ष्यते.

9. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su.,

वस्वौकसारामभिभूय साहं सौराज्यबद्धोत्सवया विभूत्या ।
समग्रशक्तौ त्वयि सूर्यवंश्ये सति प्रपन्ना करुणामवस्थाम् ॥ १० ॥
विशीर्णतल्पाट्टशतो निवेशः पर्यस्तशालः प्रभुणा विना मे ।
विडम्बयत्यस्तनिमग्नसूर्यं दिनान्तमुग्रानिलभिन्नमेघम् ॥ ११ ॥

विष्णुपदोन्मुखेन गुरुणा त्वत्पित्रा नीतपौरा हे राजन्मां संप्रति वीतनाथामनाथां ॥ तस्याः पुरो नगर्या अयोध्याया अधिदेवतां जानीहि ॥

१० ॥ वस्वौकसारामिति । साहं सौराज्येन राजन्वत्तया हेतुना बद्धोत्सवया विभूत्या । वस्वौकसाराऽलकापुरी ॥ " अलकापुरी वस्वौकसारा स्यात् " इति यादवः ॥ अथ वा मानसोत्तरशैलशिखरवर्तिनी शक्रनगरी ॥ " वस्वौकसारा शक्रस्य " इति विष्णुपुराणात् ॥ तामभिभूय तिरस्कृत्य समग्रशक्तौ सूर्यवंश्ये त्वयि सति करुणामवस्थां दीनां दशां प्रपन्ना प्राप्ता ॥

११ ॥ विशीर्णेति । तल्पानि अट्टालकाः ॥ " तल्पं शय्याट्टदारेषु " इत्यमरः ॥ अट्टानि गृहभेदाः ॥ " अट्टं भक्ते च शुष्के च क्षौमेऽत्यर्थे गृहान्तरे " इति विश्वः ॥ विशीर्णानि तल्पानामट्टानां च शतानि यस्य स तथोक्तः । पर्यस्तशालः स्रस्तप्राकारः ॥ " प्राकारो वरणः शालः " इत्यमरः ॥ प्रभुणा स्वामिना विनैवंभूतो मे निवेशो निवेशनम् । अस्तनिमग्नसूर्यमस्ताद्रिलीनार्कमुग्रानिलेन भिन्नमेघं दिनान्तं विडम्बयत्यनुकरोति ॥

---

be the lordless presiding deity of that city the people of which were carried to heaven by your sire with him when he went to his regions.

10. Such a one as I, having eclipsed the city of Alakâ by my prosperity manifested in the festivals which continuously took place by reason of the excellent rule, am (now) reduced to a pitiful condition, even when thou, a scion of the solar race, art reigning here with all thy power.

11. Without a king, my situation with hundreds of broken turrets and terraces and with dilapidated ramparts resembles the close of the day the sun in which has gone down to the setting mountain and which has clouds dispersed by fierce wind.

---

and Vijay., नव यां for अनवया. Both Hemâdri and Châritravardhana notice the reading, the former says,—'अनवया' इति रामत्यागेन दोषः 'स्वपदोन्मुखेन' इति कारणम् ; the latter observes,—'गुरुणानवया' इति पाठे त्वन्नारित्यागे दोषाभावोक्तिः. A. D. पुरदेवतां for अधिदेवतां. Hemâdri notices the reading of A. D. Mss.

11. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., and Vijay., विशीर्णतल्पो गृहसंनिवेशः, D. with Su., विस्तीर्णतल्पो गृहसंनिवेशः, D_2. विशीर्णकल्पाट्टशतो निवेशः for विशीर्णतल्पाट्टशतो निवेशः. Mallinâtha notices the reading of D_2. and observes,—अथ वा विशीर्णकल्पेति पाठः ॥ अट्टाः सौ-

निशासु भास्वत्कलनूपुराणां यः संचरोऽभूदभिसारिकाणाम् ।
नदन्मुखोल्काविचितामिषाभिः स वाह्यते राजपथः शिवाभिः ॥ १२ ॥
आस्फालितं यत्प्रमदाकराग्रैर्मृदङ्गधीरध्वनिमन्वगच्छत् ।
वन्यैरिदानीं महिषैस्तदम्भः शृङ्गाहतं क्रोशति दीर्घिकाणाम् ॥ १३ ॥

१२ ॥ निशास्विति । निशासु भास्वन्ति दीप्तिमन्ति कलान्यव्यक्तमधुराणि नूपुराणि यासां तासामभिसारिकाणाम् ॥ " कान्तार्थिनी तु या याति संकेतं साभिसारिका " इत्यमरः ॥ यो राजपथः । संचरत्यनेनेति संचरः । संचारसाधनमभूत् ॥ " गोचरसंचर—" इत्यादिना घप्रत्ययान्तो निपातः ॥ स राजपथो नदत्सु मुखेषु या उल्कास्ताभिर्विचितामिषाभिरन्विष्टमांसाभिः शिवाभिः क्रोष्टुभिर्वाह्यते गम्यते ॥ वहेरन्यो वहिधातुरस्तीत्युपदेशः ॥

१३ ॥ आस्फालितमिति । यदम्भः प्रमदाकराग्रैरास्फालितं ताडितं सत् । जलक्रीडास्विति शेषः । मृदङ्गानां यो धीरध्वनिस्तमन्वगच्छदन्वकरोत् । तद्दीर्घिकाणामम्भ इदानीं वन्यैर्महिषैः । कर्तृभिः । शृङ्गैर्विषाणैराहतं सत्क्रोशति । न तु मृदङ्गध्वनिमनुकरोतीत्यर्थः ॥

---

12. That royal road which had been once the resort of the Abhisárikás with bright jingling anklets, during the nights, is now frequented by female jackals who seek carrion by the aid of the light emitted from their howling mouths.

13. Those waters of the lakes which once stirred gently by the forepart of the hands of young ladies at the time of sporting imitated the deep resounding of a drum now bewail (produce a mournful or bewailing sound) being struck violently with horns by wild buffaloes.

माः ॥ " स्यादट्टः क्षौममस्त्रियाम् " इत्यमरः ॥ ईषदसमाप्तं विशीर्णानि विशीर्णकल्पान्यट्टशतानि यस्य स तथोक्तः ॥ Hemâdri also notices the reading of Mallinátha. D. L. अर्धनिमग्न° for अन्तनिमग्न°.

12. B. E. संवरः for संचरः. A. E. with Su., and the text only of Vijay., नदन्मुखोल्काविचिता°, D. L. ज्वलन्मुखोल्काविचिता°, I. ज्वलन्मुखोल्काविदिता° for नदन्मुखोल्काविचिता°. H. L. संवाह्यते for स वाह्यते. After this stanza R. reads the 10th verse of our text.

13. A. D. E. R. with Hem., and the text only of Vijay., °ध्वनितामगच्छत् for °ध्वनिमन्वगच्छत्. B. L. with Châ., Din., and Val., दीर्घिकासु for दीर्घिकाणाम्.

वृक्षेशया यष्टिनिवासभङ्गान्मृदङ्गशब्दापगमादलास्याः ।
प्राप्ता दवोल्काहतशेषबर्हाः क्रीडामयूरा वनबर्हिणत्वम् ॥ १४ ॥
सोपानमार्गेषु च येषु रामा निक्षिप्तवत्यश्चरणान्सरागान् ।
सद्यो हतन्यङ्कुभिरस्रदिग्धं व्याघ्रैः पदं तेषु निधीयतेऽद्य ॥ १५ ॥
चित्रद्विपाः पद्मवनावतीर्णाः करेणुभिर्दत्तमृणालभङ्गाः ।
नखाङ्कुशाघातविभिन्नकुम्भाः संरब्धसिंहप्रहृतं वहन्ति ॥ १६ ॥

१४ ॥ वृक्षेशया इति । यष्टिरेव निवासः स्थानं तस्य भङ्गात् । वृक्षे शेरत इति वृक्षेशयाः ॥ "अधिकरणे शेतेः" इत्यच्प्रत्ययः ॥ "शयवासवासिष्वकालात्" इत्यलुक्सप्तम्याः ॥ मृदङ्गशब्दानामपगमादभावादलास्या नृत्यशून्याः । दवोऽरण्यवह्निः ॥ "दवदावौ वनारण्यवह्नी" इत्यमरः ॥ तस्योल्काभिः स्फुलिङ्गैर्हतेभ्यः शेषाणि बर्हाणि येषां ते क्रीडामयूरा वनबर्हिणत्वं वनमयूरत्वं प्राप्ताः ॥

१५ ॥ सोपानेति । किं च । येषु सोपानमार्गेषु रामा रमण्यः सरागाँल्लाक्षारसार्द्राश्चरणान्निक्षिप्तवत्यः । तेषु मार्गेष्वद्य सद्यो हतन्यङ्कुभिर्मारितमृगैर्व्याघ्रैरस्रदिग्धं रुधिरलिप्तं पदं निधीयते ॥

१६ ॥ चित्रेति । पद्मवनमवतीर्णाः प्रविष्टाः । तथा लिखिता इत्यर्थः । करेणुभिः करिणीभिः । चित्रगताभिरेव ॥ "करेणुरिभ्यां स्त्री नेभे" इत्यमरः ॥ दत्तमृणालभङ्गाश्चित्रद्विपा आलेख्यमातङ्गाः । नखा एवाङ्कुशाः । तेषामाघातैर्विभिन्नकुम्भाः सन्तः संरब्धसिंहप्रहृतं कुपितसिंहप्रहारं वहन्ति ॥

---

14. The pet peacocks (*lit.* pleasure-peacocks) lying (now) on trees their abodes of perching sticks being broken to pieces, devoid of their (usual) dance on account of the absence of tabor-sound and possessing a remnant of their plumes that are destroyed by the flames of forest-conflagration, are reduced to the state of wild ones.

15. And on those flights of steps (*lit.* stair-cases) where fair ladies used to plant their feet dyed in lac, tigers that have just killed deer do now place their paws besmeared with blood.

16. The elephants (painted) in the pictures (on the walls) as entered into lotus-beds and as being presented with pieces of

---

14. A. C. यष्टिनिवेशभङ्गात् for यष्टिनिवासभङ्गात्. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with A. C.

15. D. L. चरणाङ्गरागान् for चरणान्सरागान्. B. C. E. H. I. K. L. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., मे for अद्य.

16. C. D. and the text only of Vijay., विदीर्ण° for विभिन्न°. R. सरोषसिंहप्रसृतं for संरब्धसिंहप्रहृतं.

स्तम्भेषु योषित्प्रतियातनानामुत्क्रान्तवर्णक्रमधूसराणाम् ।
स्तनोत्तरीयाणि भवन्ति सङ्गान्निर्मोकपट्टाः फणिभिर्विमुक्ताः ॥ १७ ॥
कालान्तरश्यामसुधेषु नक्तमितस्ततो रूढतृणाङ्कुरेषु ।
त एव मुक्तागुणशुद्धयोऽपि हर्म्येषु मूर्छन्ति न चन्द्रपादाः ॥ १८ ॥
आवर्ज्य शाखाः सदयं च यासां पुष्पाण्युपात्तानि विलासिनीभिः ।
वन्यैः पुलिन्दैरिव वानरैस्ताः क्लिश्यन्त उद्यानलता मदीयाः ॥ १९ ॥

१७ ॥ स्तम्भेष्विति । उत्क्रान्तवर्णक्रमा विशीर्णवर्णविन्यासास्ताश्च धूसराश्च यास्तासां स्तम्भेषु योषित्प्रतियातनानां स्त्रीप्रतिकृतीनां दारुमयीणां फणिभिर्विमुक्ता निर्मोकाः कञ्चुका एव पट्टाः ॥ "समौ कञ्चुकनिर्मोकौ" इत्यमरः ॥ सङ्गात्सक्तत्वात्स्तनोत्तरीयाणि स्तनाच्छादनवस्त्राणि भवन्ति ॥

१८ ॥ कालेति । कालान्तरेण कालभेदवशेन श्यामसुधेषु मलिनचूर्णेष्वितस्ततो रूढतृणाङ्कुरेषु हर्म्येषु गृहेषु नक्तं रात्रौ मुक्तागुणानां शुद्धिरिव शुद्धिः स्वाच्छ्यं येषां तादृशाः । अत एव पूर्वं ये मूर्छन्ति स्म त एव चन्द्रपादाश्चन्द्ररश्मयः ॥ "पादा रश्म्यङ्घ्रितुर्यांशाः" इत्यमरः ॥ न मूर्छन्ति । न प्रतिफलन्तीत्यर्थः ॥

१९ ॥ आवर्ज्येति । किं च । विलासिनीभिः सदयं शाखा लतावयवानावर्ज्यानमय्य यासां लतानां पुष्पाण्युपात्तानि गृहीतानि । ता मदीया उद्यानलताः । वन्यैः

---

lotus-stalks by female elephants (now) bear the blows of the enraged lions with their temples shattered by the stroke of their goad-like-nails.

17. The slough-strips left by cobras become, on account of their contact (with the breasts), a covering on the breasts of the images of woman (engraved) on posts which have a dusky appearance and the lines of colour (painting) on which have been disfigured.

18. Those very rays of the moon though white like pearl-necklaces (once reflecting) now do not take effect (reflect) at night on the mansions, on (the surface of) which are grown here and there, shoots of grass, and the plaster on which is turned black by lapse of time.

19. Those garden-creepers of mine, the flowers of which were once plucked by the sportive women bending their boughs with com-

---

17. B. D. I. with Hem., Chā., Din., Val., and Su., तनूत्तरीयाणि for स्तनोत्तरीयाणि. Hemādri notices the reading of Mallinātha. D. E. with Su., °पट्टयः for °पट्टाः.

18. I. मुक्तामणिशुद्धयः for मुक्तागुणशुद्धयः.

19. D. with Su., पुलिन्द्रैः for पुलिन्दैः.

रात्रावनाविष्कृतदीपभासः कान्तामुखश्रीवियुता दिवापि ।
तिरस्क्रियन्ते कृमितन्तुजालैर्विच्छिन्नधूमप्रसरा गवाक्षाः ॥ २० ॥
बलिक्रियावर्जितसैकतानि स्नानीयसंसर्गमनाप्नुवन्ति ।
उपान्तवानीरगृहाणि दृष्ट्वा शून्यानि दूये सरयूजलानि ॥ २१ ॥
तदर्हसीमां वसतिं विसृज्य मामभ्युपैतुं कुलराजधानीम् ।
हित्वा तनुं कारणमानुषीं तां यथा गुरुस्ते परमात्ममूर्तिम् ॥ २२ ॥

पुलिन्दैर्म्लेच्छविशेषैरिव वानरैः । उभयैरपीत्यर्थः । क्लिश्यन्ते पीड्यन्ते ॥ क्लिश्नातेः कर्मणि लट् ॥ "भेदाः किरातशबरपुलिन्दा म्लेच्छजातयः" इत्यमरः ॥

२० ॥ रात्राविति । रात्रावनाविष्कृतदीपभासः । दीपप्रभाशून्या इत्यर्थः । दिवापि दिवसेऽपि कान्तामुखानां श्रिया कान्त्या वियुता रहिता विच्छिन्नो नष्टो धूमप्रसरो येषां ते गवाक्षाः कृमितन्तुजालैर्लूतातन्तुवितानैस्तिरस्क्रियन्ते छाद्यन्ते॥

२१ ॥ बलिक्रियेति ॥ "बलिः पुजोपहारः स्यात्" इति शाश्वतः ॥ बलिक्रियावर्जितानि सैकतानि येषां तानि । स्नानीयानि स्नानसाधनचूर्णादीनि ॥ "कृत्यल्युटो बहुलम्" इति करणेऽनीयर्प्रत्ययः ॥ स्नानीयसंसर्गमनाप्नुवन्ति सरयूजलानि शून्यानि रिक्तान्युपांतेषु वानीरगृहाणि च दृष्ट्वा दूये परितप्ये ॥

२२ ॥ तदिति । तत्तस्मादिमां वसतिं कुशावतीं विसृज्य कुलराजधानीमयोध्यां मामभ्युपैतुमर्हसि ॥ कथमिव । ते गुरुः पिता रामस्तां प्रसिद्धां कारणवशान्मानुषीं तनुं मानुषमूर्तिं हित्वा परमात्ममूर्तिं यथा विष्णुमूर्तिमिव ॥

---

passion (*i. e.* gently), are now being destroyed by the monkeys of the forest as well as by savages.

20. The windows displaying no light of lamps at night and bereft of the splendour of the faces of beautiful women during day time are now covered over with the cob-webs of spiders with the lines of smokes (completely) destroyed.

21. I am grieved to behold the waters of the Sarayû not obtaining the contact of the perfumed powders (used in ablutions), with the sandy beds bereft of the rites of Bali offering and on whose banks are huts made of live canes (now) deserted.

22. Therefore, it is proper for you to leave this abode and to repair to me, your hereditary capital ; just as your sire abandoned

---

20. B. C. L. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., अनाविःकृत° for अनाविष्कृत°. A. D. E. H. I. K. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., विच्छिन्नधूप,° C. विभिन्नधूम° for विच्छिन्नधूम.°

21. A. D. with Châ., and Din., °वानीरवनानि, B. °वानीरगृहेषु for °वानीरगृहाणि. A. D. L. सरयूतटानि for सरयूजलानि.

22. L. कारणमानुर्षी for कारणमानुर्षीं.

तथेति तस्याः प्रणयं प्रतीतः प्रत्यग्रहीत्प्राग्रहरो रघूणाम् ।
पूरप्यभिव्यक्तमुखप्रसादा शरीरबन्धेन तिरोबभूव ॥ २३ ॥
तदद्भुतं संसदि रात्रिवृत्तं प्रातर्द्विजेभ्यो नृपतिः शशंस ।
श्रुत्वा त एनं कुलराजधान्या साक्षात्पतित्वे वृतमभ्यनन्दन् ॥ २४ ॥
कुशावतीं श्रोत्रियसात्स कृत्वा यात्रानुकूलेऽहनि सावरोधः ।
अनुद्रुतो वायुरिवाभ्रवृन्दैः सैन्यैरयोध्याभिमुखः प्रतस्थे ॥ २५ ॥

२३ ॥ तथेति । रघूणां प्राग्रहरः श्रेष्ठः कुशस्तस्याः पुरः प्रणयं याञ्चां प्रतीतो हृष्टः संस्तथेति प्रत्यग्रहीत्स्वीकृतवान् ॥ पूः पुराधिदेवताप्यभिव्यक्तमुखप्रसादा सती । इष्टलाभादिति भावः । शरीरबन्धेन शरीरयोगेन । करणेन । तिरोबभूव । अन्तर्दधे इत्यर्थः ॥

२४ ॥ तदिति । नृपतिः कुशस्तदद्भुतं रात्रिवृत्तं रात्रिवृत्तान्तं प्रातः संसदि सभायां द्विजेभ्यः शशंस । ते द्विजाः श्रुत्वैनं कुशं कुलराजधान्या साक्षात्स्वयमेव पतित्वे विषये वृतमभ्यनन्दन् । पतित्वेन वृतोऽसीत्यपूजयन् । आशीर्भिरिति शेषः ॥ अत्र गार्ग्यः—" दृष्ट्वा स्वप्नं शोभनं नैव सुप्यात्पश्चाद्दृष्टो यः स पाकं विधत्ते । शंसेदिष्टं तत्र साधुर्द्विजेभ्यस्ते चाशीर्भिः प्रीणयेयुर्नरेन्द्रम् " ॥ इदमपि स्वप्नतुल्यमिति भावः ॥

२५ ॥ कुशावतीमिति । स कुशः कुशावतीं श्रोत्रियेषु छान्दसेष्वधीनां श्रोत्रियसात् ॥ " तदधीनवचने " इति सातिप्रत्ययः ॥ " श्रोत्रियश्छन्दोऽधीते " इति निपातः ॥ " श्रोत्रियच्छान्दसौ समौ " इत्यमरः ॥ कृत्वा यात्रानुकूलेऽहनि सावरोधः सान्तःपुरः सन् । वायुरभ्रवृन्दैरिव । सैन्यैरनुद्रुतोऽनुगतः सन्नयोध्याभिमुखः प्रतस्थे ॥

---

the human form assumed on purpose and resorted to the form of the Supreme Soul (*i. e.* Vish*n*u).

23. The illustrious of the descendants of Raghu being pleased with her accepted her request saying " so be it. " The presiding deity of the city too on whose countenance a brightness was visible disappeared from the sight with her bodily frame.

24. In the next morning the king told that unprecedented occurrence of the night to Bráhma*n*as in his court, at which they congratulated him on his having been chosen as a husband by the hereditary capital herself (*lit*. in person).

25. Having consigned Kus'ávati to the Bráhma*n*as versed in the Vedas, the king with females of his inner-apartment set out,

---

23. D. प्राग्रसरः for प्राग्रहरः. L. अभिव्यक्तमुखं प्रसादा for अभिव्यक्तमुखप्रसादा. A. C. with Hem., Chá., and Din., तिरोबभूवे for तिरोबभूव.

25. H. कलावतीं for कुशावतीं. E. H. च for स.

सा केतुमालोपवना बृहद्भिर्विहारशैलानुगतेव नागैः ।
सेना रथोदारगृहा प्रयाणे तस्याभवज्जङ्गमराजधानी ॥ २६ ॥

तेनातपत्रामलमण्डलेन प्रस्थापितः पूर्वनिवासभूमिम् ।
बभौ बलौघः शशिनोदितेन वेलामुदन्वानिव नीयमानः ॥ २७ ॥

तस्य प्रयातस्य वरूथिनीनां पीडामपर्याप्तवतीव सोढुम् ।
वसुंधरा विष्णुपदं द्वितीयमध्यारुरोहेव रजश्छलेन ॥ २८ ॥

२६ ॥ सेति । सा केतुमालैवोपवनानि यस्याः सा । बृहद्भिर्नागैर्गजैर्विहारशैलैरनुगतेव स्थिता । रथा एवोदारगृहा यस्याः सा सेना तस्य कुशस्य प्रयाणे जङ्गमराजधानी संचारिणी नगरीवाभवत् ॥

२७ ॥ तेनेति । आतपत्रेणेवामलं मण्डलं बिम्बं यस्य तेन तेन कुशेन पूर्वनिवासभूमिमयोध्यां प्रति प्रस्थापितो बलौघः । आतपत्रवदमलमण्डलेनोदितेन शशिना वेलां नीयमानः प्राप्यमाण । उदकमस्यास्तीत्युदन्वान् । उदधिरिव । बभौ ॥ " उदन्वानुदधौ च " इति निपातनात्साधुः ॥

२८ ॥ तस्येति । प्रयातस्य प्रस्थितस्य तस्य कुशस्य वरूथिनीनां सेनानाम् । कर्त्रीणाम् ॥ " कर्तृकर्मणोः कृति " इति कर्तरि षष्ठी ॥ पीडां सोढुमपर्याप्तवतीवाशक्तेव वसुंधरा रजश्छलेन द्वितीयं विष्णुपदमाकाशमध्यारुरोहेव । इत्युत्प्रेक्षा ॥

---

on a day favourable to the journey, for Ayodhyá, being followed by his armies, as the wind by clusters of clouds.

26. On his march his army became his moving capital, having the lines of flags as gardens, as if accompanied by pleasure-hills by means of the huge elephants; and having the chariots as splendid buildings.

27. The flood of the forces taken to settle on the land of their former abode by him who had on him the umbrella resembling a white disc, appeared like the ocean made to start for the shores—its original dwelling-palace, by the rising moon with its disc as bright as the (white) umbrella.

28. The earth as if unable (not sufficiently able) to bear the tread of his forces who was marching onwards mounted, as it were, on the second foot of Vishnu (*i. e.* the sky) under the appearance of dust.

---

27. B. C. H. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., उद्गतेन for उदितेन.

28. B. L. with Su., विसोढुं for इव सोढुं.

उद्यच्छमाना गमनाय पश्चात्पुरो निवेशे पथि च व्रजन्ती ।
सा यत्र सेना ददृशे नृपस्य तत्रैव सामग्र्यमतिं चकार ॥ २९ ॥
तस्य द्विपानां मदवारिसेकात्खुराभिघाताच्च तुरंगमाणाम् ।
रेणुः प्रपेदे पथि पङ्कभावं पङ्कोऽपि रेणुत्वमियाय नेतुः ॥ ३० ॥
मार्गैषिणी सा कटकान्तरेषु वैन्ध्येषु सेना बहुधा विभिन्ना ।
चकार रेवेव महाविरावा बद्धप्रतिश्रुन्ति गुहामुखानि ॥ ३१ ॥

२९ ॥ उद्यच्छमानेति । पश्चात्कुशावत्याः सकाशाद्गमनाय प्रयाणाय तथा पुरोऽग्रे निवेशे निमित्ते । अग्रे निवेष्टुं चेत्यर्थः । उद्यच्छमानोद्यमं कुर्वती ॥ "समुदाङ्भ्यो यमोऽग्रन्थे" इत्यस्य सकर्मकाधिकारत्वादात्मनेपदम् ॥ पथि च व्रजन्ती सा नृपस्य सेना यत्र पश्चात्पुरो मध्ये वा ददृशे तत्रैव सामग्र्यमतिं कृत्स्नताबुद्धिं चकार । अपरिमिता तस्य सेनेत्यर्थः ॥

३० ॥ तस्येति । नेतुस्तस्य कुशस्य द्विपानां मदवारिभिः सेकात्तुरंगमाणां खुराभिघाताच्च यथासंख्यं पथि रेणू रजः पङ्कभावं पङ्कतां प्रपेदे । पङ्कोऽपि रेणुत्वमियाय ॥ तस्य तावद्दस्तीत्यर्थः ॥

३१ ॥ मार्गेति । वैन्ध्येषु विन्ध्यसंबन्धिषु कटकान्तरेषु नितम्बावकाशेषु ॥ "कटकोऽस्त्री नितम्बोऽद्रेः" इत्यमरः ॥ मार्गैषिणी मार्गविलोकिनी । अत एव बहुधा विभिन्ना महाविरावा सा सेना । रेवेव नर्मदेव ॥ "रेवा तु नर्मदा सोमोद्भवा मेखलकन्यका" इत्यमरः ॥ गुहामुखानि बद्धप्रतिश्रुन्ति प्रतिध्वानवन्ति चकाराकरोत् ॥

---

29. That army of the protector of men, wherever it was seen made one conclude it to be the complete whole, whether preparing behind to march or in advance to be encamped, or moving on its way (the battalions separated made one think to be the complete armies, so numerons were his forces).

30. On account of the flow of ichor of elephants and the strokes of hoofs of horses of that leader (general), the dust on the road was turned into mud and the mud also into dust.

31. That army looking for a way through the valleys of (space between) the slopes of the Vindhya mountain, being divided into many squadrons, made the mouths of the caves full of echoes like the roaring Reva (*i. e.* the Narmada).

---

29. D. उद्गच्छमाना for उद्यच्छमाना. B. with Hem., Val., and the text only of Vijay., वा for च. A. D. गतिं, B L. गदं for मतिं.

30. A. C. with Su., मदागमसेकात् for मदवारिसेकात्. A. C. with Hemādri भुवः for नेतुः.

31. A. D. H. with Hem., Val., Su., and Vijay., मार्गैषिणी for मार्गैषिणी. D. H. K. L. विन्ध्यस्य, E. वन्ध्यस्य, B. वन्ध्येषु, C. R. with Hem.,

स धातुभेदारुणयाननेमिः प्रभुः प्रयाणध्वनिमिश्रतूर्यः ।
व्यलङ्घयद्विन्ध्यमुपायनानि पश्यन्पुलिन्दैरुपपादितानि ॥ ३२ ॥
तीर्थे तदीये गजसेतुबन्धात्प्रतीपगामुत्तरतोऽस्य गङ्गाम् ।
अयत्नबालव्यजनीबभूवुर्हंसा नभोलङ्घनलोलपक्षाः ॥ ३३ ॥
स पूर्वजानां कपिलेन रोषाद्भस्मावशेषीकृतविग्रहाणाम् ।
सुरालयप्राप्तिनिमित्तमम्भस्त्रैस्रोतसं नौलुलितं ववन्दे ॥ ३४ ॥

३२ ॥ स इति । धातूनां गैरिकादीनां भेदेनारुणा यानस्य नेमी रथचक्रधारा । यस्य प्रयाणे ये ध्वनयः क्ष्वेडहेषादयः । तन्मिश्राणि तूर्याणि यस्यैवं विधः स प्रभुः । पुलिन्दैः किरातैरुपपादितानि समर्पितान्युपायनानि पश्यन् । विन्ध्यं व्यलङ्घयत् ॥

३३ ॥ तीर्थ इति । तदीये वैन्ध्ये तीर्थेऽवतारे । गजा एव सेतुस्तस्य बन्धाद्धेतोः प्रतीपगां पश्चिमवाहिनीं गङ्गामुत्तरतोऽस्य कुशस्य नभोलङ्घनेन लोलपक्षा हंसा अयत्नेन बालव्यजनीबभूवुश्चामराण्यभूवन् ॥ अभूततद्भावे च्विः ॥

३४ ॥ स इति । स कुशः कपिलेन मुनिना रोषाद्भस्मावशेषीकृता विग्रहा देहा येषां तेषां पूर्वजानां वृद्धानां सागराणां सुरालयस्य स्वर्गस्य प्राप्तौ निमित्तं नौभिर्लुलितं क्षुभितम् । त्रिस्रोतस इदं त्रैस्रोतसम् । गाङ्गमम्भो ववन्दे ॥

---

32. That king the circumference of the wheels of whose vehicle was red on account of their pounding the minerals and the trumpet-sound of whose army was mingled with the noise of marches, crossed the mountain Vindhya gracing merely with a look the presents brought to him by the Pulindas (*i. e.* the Kirátas).

33. In its holy water-place, while he crossed the river running in a reverted direction on account of the construction of a bridge of elephants, the swans whose wings fluttered to mount on the sky became Chámars without efforts for him.

34. He bowed to the water of the three-streamed river (*i. e.* Gangá), which was undulating by the motion of ships and which was the means of getting the abode of the immortals (*i. e.* the Svarga) to his ancestors whose bodies were, through wrath, made to remain in the form of ashes by Kapila.

Din., and Val., विन्ध्येषु for वैन्ध्येषु. One of the three Mss. of **Cháritra**-vardhana's शिशुहितैषिणी agrees with B.

32. B. प्रताप°, R. प्रयातः for प्रयाण°.

34. A. D. L. सोत्रसितं, B. सोल्लसितं for नौलुलितं.

इत्यध्वनः कैश्चिदहोभिरन्ते कूलं समासाद्य कुशः सरय्वाः ।
वेदिप्रतिष्ठान्विततांध्वराणां यूपानपश्यच्छतशो रघूणाम् ॥ ३५ ॥
आधूय शाखाः कुसुमद्रुमाणां स्पृष्ट्वा च शीतान्सरयूतरङ्गान् ।
तं क्लान्तसैन्यं कुलराजधान्याः प्रत्युज्जगामोपवनान्तवायुः ॥ ३६ ॥
अथोपशल्ये रिपुमग्नशल्यस्तस्याः पुरः पौरसखः स राजा ।
कुलध्वजस्तानि चलध्वजानि निवेशयामास बली बलानि ॥ ३७ ॥

३५ ॥ इतीति । इति कैश्चिदहोभिरध्वनोऽन्तेऽवसाने कुशः सरय्वाः कूलं समासाद्य विततांध्वराणां विस्तृतमखानां रघूणाम् । वेदिः प्रतिष्ठास्पदं येषां तान् । यूपाञ्छतशोऽपश्यत् ॥

३६ ॥ आधूयेति । कुलराजधान्या उपवनान्तवायुः कुसुमद्रुमाणां शाखा आधूयेषद्धूत्वा । सुरभिर्मन्दश्चेत्यर्थः । शीतान्सरयूतरंगांश्च स्पृष्ट्वा ॥ अनेन शैत्योक्तिः ॥ क्लान्तसैन्यं तं कुशं प्रत्युज्जगाम ॥

३७ ॥ अथेति । अथ रिपुषु मग्नं शल्यं शङ्कुः शरो वा यस्य सः ॥ " शल्यं शङ्कौ शरे वंशे " इति विश्वः ॥ पौराणां सखा पौरसखः । कुलस्य ध्वजश्चिह्नभूतो । बली स राजा चलाश्चलन्तो वा ध्वजा येषां तानि तानि बलानि सैन्यानि तस्याः पुरः पुर्या उपशल्ये ग्रामान्ते ॥ " ग्रामान्त उपशल्यं स्यात् " इत्यमरः ॥ निवेशयामास ॥

---

35. Thus at the end of his journey after some days, Kus'a came to the bank of the Sarayū and saw hundreds of sacrificial posts with square-pavements for their pedestals of the Raghus who had spread sacrifices.

36. The breeze that blowed from the interior of the garden of his hereditary capital, having gently shaken the branches of the flowery trees and having touched the cool waves of the Sarayū, went forth (advanced) to receive him whose army was fatigued.

37. Then that powerful king who was the standard of the family of the Raghus, who had planted an arrow in the heart of his enemies, and who was a friend to his people, encamped those forces with their fluttering flags on the out-skirts of that city.

---

35. C. K. R. with Hem., Val., and the text only of Vijay., तीरं for कूलं.

36. R. शाखा: for शाखाः. H. with Vijay., अतिशीतान for च शीतान. B. C. I. L. with Châ., Val., Su., and Vijay., °वातः for °वायुः.

तां शिल्पिसंघाः प्रभुणा नियुक्तास्तथागतां संभृतसाधनत्वात् ।
पुरं नवीचक्रुरपां विसर्गान्मेघा निदाघग्लपितामिवोर्वीम् ॥ ३८ ॥
ततः सपर्यां सपशूपहारां पुरः परार्ध्यप्रतिमागृहायाः ।
उपोषितैर्वास्तुविधानविद्भिर्निर्वर्तयामास रघुप्रवीरः ॥ ३९ ॥
तस्याः स राजोपपदं निशान्तं कामीव कान्ताहृदयं प्रविश्य ।
यथार्हमन्यैरनुजीविलोकं संभावयामास यथाप्रधानम् ॥ ४० ॥

३८ ॥ तामिति । प्रभुणा नियुक्ताः शिल्पिनां तक्षादीनां संघाः संभृतसाधनत्वान्मिलितोपकरणत्वात्तां तथागताम् । शून्यामित्यर्थः । पुरमयोध्याम् । मेघा अपां विसर्गाज्जलसेकान्निदाघग्लपितां ग्रीष्मतप्तामुर्वीमिव । नवीचक्रुः परिपूरयांचक्रुः॥

३९ ॥ तत इति । ततो रघुप्रवीरः कुशः प्रतिमा दैवतप्रतिकृतयः । अर्च्या इत्यर्थः । परार्ध्यप्रतिमागृहायाः । प्रशस्तदेवतायतनायाः पुर उपोषितैर्वास्तुविधानविद्भिः प्रयोज्यैः सह पशूपहारैः सपशूपहारां सपर्यां निर्वर्तयामास कारयामास ॥ अत्र ण्यन्ताण्णिच्पुनरित्यनुसंधेयम् । अन्यथा वृतेरकर्मकस्य करोत्यर्थत्वे कारयत्यर्थाभावप्रसङ्गात । भवितव्यं वृतेरण्यन्तकर्त्रा प्रयोज्यत्वेन तन्निर्देशात्प्रयोगान्तरस्यापेक्षितत्वात् ॥

४० ॥ तस्या इति । स कुशस्तस्याः पुरः संबन्धि राजोपपदं राजशब्दपूर्वं नि-

38. Multitudes of artists employed by the king made that city which had gone to the state of delapidation altogether a new one by reason of their being furnished with the necessary materials as, by pouring waters, the clouds do the earth scorched by the heat of summer.

39. After which the hero of the descendant of Raghu performed the worship (the Vástu-ceremony, a ritual for entering a new or repaired dwelling-place) attended with the offerings of animals of the capital containing splendid temples (*lit.* abodes of images) by the priests versed in the rites of Vástu-ceremony and who had observed fasts (previously to officiating at it).

40. He, like a lover in the heart of his beloved, entered his

---

38. D. प्रयुक्ताः for नियुक्ताः. D. K. तथाविधां for तथागतां. B. C. H. I. K. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., पुनः for पुरं. C. D. and the text only of Val., अपां निसर्गैः for अपां विसर्गात्. H. with Val., ज्वलितां for ग्लपितां.

39. D. H. with Val., and Vijay., °नतायाः for °गृहायाः. A. D. E. H. K. L. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., निवर्तयामास for निर्वर्तयामास. One of the three Mss. of Hemádri's दर्पण also agrees with Cháritravardhana and others.

40. A. D. with Châ., and Din., अनुजीविलोकान् for अनुजीविलोकम्.

सा मन्दुरासंश्रयिभिस्तुरंगैः शालाविधिस्तम्भगतैश्च नागैः ।
पूराबभासे विपणिस्थपण्या सर्वाङ्गनद्धाभरणेव नारी ॥ ४१ ॥
वसन्स तस्यां वसतौ रघूणां पुराणशोभामधिरोपितायाम् ।
न मैथिलेयः स्पृहयांबभूव भर्त्रे दिवो नाप्यलकेश्वराय ॥ ४२ ॥

शान्तम् । राजभवनमित्यर्थः ॥ " निशान्तं भवनोपसोः " इति विश्वः ॥ कामी कान्ताहृदयमिव । प्रविश्य । अन्यैर्निशान्तैरनुजीविलोकममात्यादिकं यथाप्रधानं मान्यानुसारेण । यथार्हं यथोचितम् । तत्तदुचितगृहैरित्यर्थः । संभावयामास ॥

४१ ॥ सेति । विपणिस्थानि पण्यानि क्रयविक्रयार्हवस्तूनि यस्याः सा । सा पूरयोध्या मन्दुरासंश्रयिभिरश्वशालासंश्रयणशीलैः ॥ " वाजिशाला तु मन्दुरा " इत्यमरः ॥ " जिदृक्षि— " इत्यादिनेनिप्रत्ययः ॥ तुरंगैरश्वैः । शालासु ये विधिना स्थापिताः स्तम्भास्तान्गतैः प्राप्तैर्नागैश्च । सर्वाङ्गेषु नद्धान्याभरणानि यस्याः सा नारीव । आबभासे ॥

४२ ॥ वसन्निति । स मैथिलेयः कुशः पुराणशोभां पूर्वशोभामधिरोपितायां तस्यां रघूणां वसतावयोध्यायां वसन् । दिवो भर्त्रे देवेन्द्राय तथालकेश्वराय कुबेरायापि न स्पृहयांबभूव । तावपि न गणयामासेत्यर्थः ॥ " स्पृहेरीप्सितः " इति संप्रदानत्वाच्चतुर्थी ॥ एतेनायोध्याया अन्यनगरातिशायित्वं गम्यते ॥

---

palace with the attribute " royal," prefixed to it and honoured his followers with other mansions according to their rank (*lit.* according as they deserved).

41. That city with wares arranged in its shops, with the horses resting in its stables, with the elephants fastened to the posts fixed in the stables according to the rule, looked like a young female with ornaments arranged in their proper places on all her limbs.

42. That son of Mithilâ residing in that abode of the descendants of Raghu (*i. e.* the capital Ayodhyâ) which was restored to its former splendour, did not wish even for the capital of either the lord of heavens (Indra) or the lord of Alakâ.

L. संप्रेषयामास for संभावयामास. B. C. D. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Val., Su., and Vijay., गृहैस्तदर्हैः for यथाप्रधानम्.

41. H. °गृहं स्तंभगतैः, B. C. D. I. K. L. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., °गृहस्तंभगतैः. D. with Châ., and Din., °वधिस्तंभगतैः, D_2., °गृहः स्तंभगतैश्च for °विधिस्तंभगतैः. B. D. H. I. L. with Su., Vijay., and the text only of Val., °पण्यैः for °पण्या.

42. A. D. L. अधिरोहितायाम् for अधिरोपितायाम् . A. C. with Vallabha स्पृहयाञ्चकार for स्पृहयाम्बभूव.

अथास्य रत्नग्रथितोत्तरीयमेकान्तपाण्डुस्तनलम्बिहारम् ।
निःश्वासहार्यांशुकमाजगाम घर्मः प्रिया वेशमिवोपदेष्टुम् ॥ ४३ ॥
अगस्त्यचिह्नादयनात्समीपं दिगुत्तरा भास्वति संनिवृत्ते ।
आनन्दशीतामिव बाष्पवृष्टिं हिमस्रुतिं हैमवतीं ससर्ज ॥ ४४ ॥
प्रवृद्धतापो दिवसोऽतिमात्रमत्यर्थमेव क्षणदा च तन्वी ।
उभौ विरोधक्रियया विभिन्नौ जायापती सानुशयाविवास्ताम् ॥ ४५ ॥

४३ ॥ कुशस्य कुमुद्वतीसमागमं प्रस्तौति ॥ अथेति । अथास्य कुशस्य प्रियाः । रत्नैर्मुक्तामणिभिर्ग्रथितान्युत्तरीयाणि यस्मिंस्तम् । एकान्तमत्यन्तं पाण्ड्वोः स्तनयोर्लम्बिनो हारा यस्मिंस्तम । निःश्वासहार्याण्यतिसूक्ष्माण्यंशुकानि यत्र तम् । एवं शीतलप्रायं वेशं नेपथ्यमुपदेष्टुमिव ॥ श्रुविसमानार्थत्वाद्विकर्मकत्वम् ॥ घर्मो ग्रीष्म आजगाम ॥

४४ ॥ अगस्त्येति । अगस्त्यश्चिह्नं यस्य तस्मादयनान्मार्गाद्दक्षिणायनाद्भास्वति समीपं संनिवृत्ते सति । उत्तरा दिक् । आनन्दशीतां बाष्पवृष्टिमिव । हैमवतीं हिमवत्संबन्धिनीं हिमस्रुतिं हिमनिष्यन्दं ससर्ज ॥ अत्र प्रोषितप्रियासमागमसमाधिर्गम्यते ॥

४५ ॥ प्रवृद्धेति । अतिमात्रं प्रवृद्धतापो दिवसः । अत्यर्थमेवानल्पं तन्वी कृशा क्षणदा च । इत्येतावुभौ । विरोधक्रियया प्रणयकलहादिना विरोधाचरणेन वि-

---

43. Then came (set in) the hot season, as it were, to give his beloveds instructions in point of dress in which the upper garment was interwoven with jewels, garlands were pendant on extremely pale breasts, and the silk garments were so fine as to be capable of being blown away even by the breath.

44. The sun having come near from that side of the equator which is marked by Agastya, the northern quarter began to produce the oozing of snow on the mountain Himâlaya, as though it were a flow of tears cool with joy.

45. The day with its heat excessively increased and the

---

43. A. B. C. E. H. K. R. with Hem., Cha., Din., Val., Su., and the text only of Vijay., निश्वासहार्यांशुकम् for निःश्वासहार्यांशुकम्. D. E. H. and the text only of Vijay., प्रिया वेषम्, A. I. J. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., प्रियावेषम् for प्रिया वेशम्. Hemâdri notices the reading of D. E. H. Mss. and observes,—" प्रिया इति पदभंगो वा. "

44. E. बाष्पवृद्धिं for बाष्पवृष्टिं.

45. D. and the text only of Su., विवृद्ध° for प्रवृद्ध°. L. विरुद्ध° for विरोध°.

दिने दिने शैवलवन्त्यधस्तात्सोपानपर्वाणि विमुञ्चदम्भः।
उद्दण्डपद्मं गृहदीर्घिकाणां नारीनितम्बद्वयसं बभूव ॥ ४६ ॥
वनेषु सायंतनमल्लिकानां विजृम्भणोद्गन्धिषु कुड्मलेषु।
प्रत्येकनिक्षिप्तपदः सशब्दं संख्यामिवैषां भ्रमरश्चकार ॥ ४७ ॥
स्वेदानुविद्धार्द्रनखक्षताङ्के भूयिष्ठसंदष्टशिखं कपोले।
च्युतं न कर्णादपि कामिनीनां शिरीषपुष्पं सहसा पपात ॥ ४८ ॥

भिन्नौ सानुशयौ सानुतापौ जायापती दंपती इव। आस्ताम्। तयोरपि तापकार्श्यसंभवात्तत्सदृशावभूतामित्यर्थः॥

४६॥ दिने दिने इति। दिने दिने प्रतिदिनं शैवलवन्त्यधस्ताद्यानि सोपानानां पर्वाणि भङ्गयस्तानि विमुञ्चत्। अत एवोद्दण्डपद्मं गृहदीर्घिकाणामम्भः। नारीनितम्बः प्रमाणमस्य नारीनितम्बद्वयसं बभूव। विहारयोग्यमभूदित्यर्थः॥ "प्रमाणे द्वयसच्–" इति द्वयसच्प्रत्ययः॥

४७॥ वनेष्विति। वनेषु विजृम्भणेन विकासेनोद्गन्धिषूत्कटसौरभेषु॥ "गन्धस्य—" इत्यादिना समासान्त इकारादेशः॥ सायंतनमल्लिकानां कुड्मलेषु सशब्दं यथा तथा प्रत्येकमेकैकस्मिन्निक्षिप्तपदः। मकरन्दलोभादित्यर्थः। भ्रमर एषां कुड्मलानां संख्यां गणनां चकारेव॥

४८॥ स्वेदेति। स्वेदानुविद्धमार्द्रं नूतनं नखक्षतमङ्को यस्य तस्मिन्। कामिनीनां

---

night excessively attenuated, both looked like husband and wife estranged by contrary behaviour consequent upon their love-quarrel and afterwards filled with remorse.

46. The water of the artificial house-ponds gradually (*lit.* every day) sinking down from the downward rows of steps covered over with moss and therefore the lotuses in which had their stalks rising up, was only so deep as to reach the hips of a woman.

47. In the forests the black bee, with its humming placed its foot upon each of the buds of the evening-blooming-jasmine-creepers emitting fragrance through its opening folds and began to count as it were their number.

48. The S'irisha flower, which had its filaments stuck fast to the cheek marked with recent nail-scratches filled with sweat,

---

46. D. L. व्यमुञ्चत for विमुञ्चत्.

47. E. I. K. L. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., नवेषु for वनेषु. B. °मल्लिकायाः for °मल्लिकानाम्. A. D. विजृम्भितोद्गन्धिषु for विजृम्भणोद्गन्धिषु. D. J. L. with Chá., and Vijay., कुड्मलेषु for कुड्मलेषु. A. C. with Chá., and Din., सशब्दः for सशब्दं. D. L. शय्याम् for संख्याम्.

48. B. °विद्धं सुनख° for °विद्धार्द्रनख°. B. C. with Hem., Chá., Vijay., and the text only of Val., संदष्टभूयिष्ठशिखं, A_2. with Din., भूयिष्ठ॰

यन्त्रप्रवाहैः शिशिरैः परीतान्रसेन धौतान्मलयोद्भवस्य ।
शिलाविशेषानधिशय्य निन्युर्धारागृहेष्वातपमृद्धिमन्तः ॥ ४९ ॥
स्नानार्द्रमुक्तेष्वनुधूपवासं विन्यस्तसायंतनमल्लिकेषु ।
कामो वसन्तात्ययमन्दवीर्यः केशेषु लेभे बलमङ्गनानाम् ॥ ५० ॥
आपिञ्जरा बद्धरजःकणत्वान्मञ्जर्युदारा शुशुभेऽर्जुनस्य ।
दग्ध्वापि देहं गिरिशेन रोषात्खण्डीकृता ज्येव मनोभवस्य ॥ ५१ ॥

कपोले भूयिष्ठमत्यर्थं संदष्टशिखं संश्लिष्टकेसरम् । अत एव कर्णाच्च्युतमपि शिरीषपुष्पं सहसा न पपात ॥

४९ ॥ यन्त्रेति । ऋद्धिमन्तो धनिका धारागृहेषु यन्त्रधारागृहेषु शिशिरैर्यन्त्रप्रवाहैर्यन्त्रसंचारितसलिलपूरैः परीतान्व्याप्तान्मलयोद्भवस्य रसेन चन्दनोदकेन धौतान्क्षालितान्शिलाविशेषान्मणिमयान्यासनान्यधिशय्य तेषु शयित्वातपं निन्युरातपं परिहारयांचक्रुः ॥

५० ॥ स्नानेति । वसन्तस्यान्तककारिणोऽत्ययेनातिक्रमेण मन्दवीर्योऽतिदुर्बलः कामः स्नानार्द्राश्च ते मुक्ताश्च । धूपसंचारणार्थमित्यर्थः । तेषु । अनुधूपवासं धूपवासानन्तरं विन्यस्ता सायंतनमल्लिका येषु तेषु । अङ्गनानां केशेषु बलं लेभे ॥ तैर्दीपित इत्यर्थः ॥

५१ ॥ आपिञ्जरेति । बद्धरजःकणत्वाद्बद्धरजःकणत्वादापिञ्जरा उदारा द्राघीयस्यर्जुनस्य ककुभवृक्षस्य ॥ " इन्द्रद्रुः ककुभोऽर्जुनः " इत्यमरः ॥ मञ्जरी । देहं

---

though dropped from the ear of young women, did not fall down at once.

49. The rich men passed away the heat of the summer days lying on seats of costly stones washed with sandle paste and surrounded by the cool watery sprays thrown out by means of machines in houses furnished with artificial showers.

50. The God of love whose strength was diminished owing to the departure of Vasanta (the spring) again acquired it in the hair of young ladies, which were unbraided on account of their being wet by bathing and in which evening-Jasmine-flowers were woven after making them (*i. e.* hair) perfumed.

51. The long sprout of Arjuna tree, a little ruddy on account

---

संसृष्टशिखम्, B_2. L. संबद्धभूयिष्ठशिखम्, D. I. भूयिष्ठसंदिष्टशिखम्, D_2. with Su, भूयिष्ठसंलग्नशिखम्, H. भूयिष्ठसंदष्टशिखम् for भूयिष्ठसंदष्टशिखम्. Vallabha with Mallinátha. E. H. I. K. R. with Hem., and the text only of Vijay., शरीषं for शिरीषं.

49. D. L निक्तान् for धौतान्.

50. D. E. with Chá., and Din., अनुधूपवासात्, C. with Su., अनुधूपवासम् for अनुधूपवासम्. A. D. with Hemádri, पदं for बलं.

51. B. K. L. with Chá., Vijay., and the text only of Val., स्-

मनोज्ञगन्धं सहकारभङ्गं पुराणशीधुं नवपाटलं च ।
संबध्नता कामिजनेषु दोषाः सर्वे निदाघावधिना प्रमृष्टाः ॥ ५२ ॥
जनस्य तस्मिन्समये विगाढे बभूवतुर्द्वौ सविशेषकान्तौ ।
तापापनोदक्षमपादसेवौ स चोदयस्थौ नृपतिः शशी च ॥ ५३ ॥

दग्ध्वापि रोषाद्गिरिशेन ॥ गिरिरस्त्यस्य निवासत्वेन गिरिशस्तेन ॥ लोमादित्वाच्छप्रत्ययः ॥ गिरौ शेत इति विग्रहे तु "गिरौ शेतेर्डः" इत्यस्य छन्दसि विधानाल्लोके प्रयोगानुपपत्तिः स्यात् ॥ तस्मात्पूर्वोक्तमेव विग्रहवाक्यं न्याय्यम् ॥ खण्डीकृता मनोभवस्य ज्या मौर्वीव । शुशुभे ॥

५२ ॥ मनोज्ञेति । मनोज्ञगन्धमिति सर्वत्र संबध्यते । सहकारभङ्गं चूतपल्लवखण्डम् । पुराणं निर्वासितं शेरतेऽनेनेति शीधुः पक्वेक्षुरसप्रकृतिकं मद्यं तत् ॥ "शीङो धुक्" इत्यौणादिको धुक्प्रत्ययः ॥ "रक्तैरिक्षुरसैरत्र्यौ शीधुः पक्वरसः शिवः" इति यादवः ॥ नवं पाटलायाः पुष्पं पाटलं च संबध्नता संघटयता निदाघावधिना ग्रीष्मकालेन ॥ "अवधिस्त्ववधाने स्यात्सीम्नि काले बिलेऽपि च" इति विश्वः ॥ कामिजनेषु विषये । सर्वे दोषास्तापादयः प्रमृष्टाः परिहृताः ॥

५३ ॥ जनस्येति । तस्मिन्समये ग्रीष्मे विगाढे कठिने सति जनस्य द्वौ सविशेषं सातिशयं यथा तथा कान्तौ बभूवतुः । कौ द्वौ । तापापनोदे क्षमा समर्था पादयोरङ्घ्र्योः पादानां रश्मीनां च सेवा ययोस्तावुदयस्थावभ्युदयस्थः स च नृपतिरुदयस्थः शशी च ॥

---

of its bearing the pollen, looked like the bow-string of fancy-born God broken through rage by S iva even after he had burnt his body.

52. The time of summer that brought together the odoriferous piece of mango-blossom, the odoriferous old wine, and the odoriferous fresh Pat*a*la, (thereby) made amends for all its sins against the tribe of lovers.

53. In that excessively hot time of summer two things became (were) greatly agreeable to the people, *viz.*, that king and the moon,—both standing in their rise—the one, the service of whose feet was able to remove misery, the other, the enjoyment of whose rays was able to banish heat (caused by summer).

रुचे for शुशुभे. B. I. with Chā., and Vijay., कोपात् for रोषात्. D. K. खंडीकृतज्या, A. B. C. with Su., and the text only of Vijay., षंडीकृता ज्या for खंडीकृता ज्या.

52. A. C. H. I. K. L. R. with Hem., Chā., Din., Val., Su., and Vijay., °सीधुम् for °शीधुम्. K. वा for च. K. संबध्नकामान् जनेषु for संबध्नता कामिजनेषु. A. C. with Chā., and Din., कामिजने स्वदोषाः for कामिजनेषु दोषाः.

53. D. तौ for द्वौ. B. C. K. L. R. with Val., Su, and the text

अथोर्मिलोलोन्मदराजहंसे रोधोलतापुष्पवहे सरय्वाः ।
विहर्तुमिच्छा वनितासखस्य तस्याम्भसि ग्रीष्मसुखे बभूव ॥ ५४ ॥
स तीरभूमौ विहितोपकार्यामानायिभिस्तामपकृष्टनक्राम् ।
विगाहितुं श्रीमहिमानुरूपं प्रचक्रमे चक्रधरप्रभावः ॥ ५५ ॥
सा तीरसोपानपथावतारादन्योन्यकेयूरविघट्टिनीभिः ।
सनूपुरक्षोभपदाभिरासीदुद्विग्नहंसा सरिदङ्गनाभिः ॥ ५६ ॥

५४ ॥ अथेति । अथोर्मिषु लोलाः सतृष्णा उन्मदा राजहंसा यस्मिंस्तस्मिन् ॥ "लोलश्चलसतृष्णयोः" इत्यमरः ॥ रोधोलतापुष्पाणां वहे प्रापके ॥ पचाद्यच् ॥ ग्रीष्मे सुखे सुखकरे सरय्वा अम्भसि तस्य कुशस्य वनितासखस्य । वनिताभिः सहेत्यर्थः । विहर्तुमिच्छा बभूव ॥

५५ ॥ स इति । चक्रधरप्रभावः स कुशस्तीरभूमौ विहितोपकार्या यस्यास्ताम् । आनायो जालमेषामस्तीत्यानायिनो जालिकाः ॥ "जालमानायः" इति निपातः ॥ "आनायः पुंसि जालं स्यात्" इत्यमरः ॥ तैरपकृष्टनक्रामपनीतग्राहां तां सरयूं श्रीमहिम्नोः संपत्प्रभावयोरनुरूपं विगाहितुं प्रचक्रमे ॥ अत्र कामन्दकः– "परितापिषु वासरेषु पश्यंस्तटलेखास्थितमाप्तसैन्यचक्रम् । सुविशोधितनक्रमीनजालं व्यवगाहेत जलं सुहृत्समेतः" इति ॥

५६ ॥ सेति । सा सरित्सरयूस्तीरसोपानपथेनावतारादवतरणादन्योन्यं केयूरविघट्टिनीभिः संनद्धाङ्गदसंघर्षिणीभिः सनूपुरक्षोभाणि नूपुरक्षोभेण सहितानि पदानि यासां ताभिरङ्गनाभिर्हेतुभिरुद्विग्नहंसा भीतहंसासीत् ॥

---

54. Once he took a fancy to sport with young women in the water of the Sarayū, which was pleasant in the hot season, which carried with it flowers of the creepers on its banks and which had intoxicated swans anxious to swim in its waves.

55. He, whose valour (lustre) was like that of Vishṇu, began to sport in a way befitting his wealth and greatness in that river on whose banks tents were pitched and the alligators (crocodiles) in which were taken out by fishermen.

56. That river had its swans disturbed by young ladies whose steps were accompanied by the tumultuous noise of the anklets and who were striking against each other's armlets on account of their descending the flight of steps on the bank.

---

only of Vijay., °पादसंवः for °पादसंवौ. B. C. with Vallabha, स चोदयस्थः, A_2. with Hemādri, मदानुपस्थौ, B_2. with Chā., Din., and Su., सदोदयस्थः, D. E. H. and the text only of Val., नवोदयस्थः, D_2. with Vijay., नवोदयस्थौ, K. स नोदयस्थौ for स चोदयस्थौ.

54. L. अथोर्मिमालोन्मद° for अथोर्मिलोलोन्मद°. A. with Vallabha ग्रीष्मसुखे for ग्रीष्मसुखे.

55. D. I. विहृतो° for विहितो°. I. अवकृष्टनक्राम् for अपकृष्टनक्राम्.

56. A. C. with Chāritravardhana, विघर्षिणीभिः for विघट्टिनीभिः.

परस्पराभ्युक्षणतत्पराणां तासां नृपो मज्जनरागदर्शी ।
नौसंश्रयः पार्श्वगतां किरातीमुपात्तबालव्यजनां बभाषे ॥ ५७ ॥
पश्यावरोधैः शतशो मदीयैर्विगाह्यमानो गलिताङ्गरागैः ।
सन्ध्योदयः साभ्र इवैष वर्णं पुष्यत्यनेकं सरयूप्रवाहः ॥ ५८ ॥
विलुप्तमन्तःपुरसुन्दरीणां यदञ्जनं नौलुलिताभिरद्भिः ।
तद्बध्नतीभिर्मदरागशोभां विलोचनेषु प्रतिमुक्तमासाम् ॥ ५९ ॥

५७ ॥ परस्परेति । नौसंश्रयः परस्परमभ्युक्षणे सेचने तत्पराणामासक्तानां तासां स्त्रीणां मज्जने रागोऽभिलाषस्तद्दर्शी नृपः पार्श्वगतामुपात्तबालव्यजनां गृहीतचामरां किरातीं चामरग्राहिणीं बभाषे ॥ "किरातस्तु द्रुमान्तरे । स्त्रियां चामरवाहिन्यां मत्स्यजात्यन्तरे द्वयोः" इति केशवः ॥

५८ ॥ पश्येति । गलिताङ्गरागैर्मदीयैः शतशोवरोधैरविगाह्यमानो विलोड्यमान एष सरयूप्रवाहः । साभ्रः समेघः संध्योदयः संध्याविर्भाव इव । अनेकं नानाविधं वर्णं रक्तपीतादिकं पुष्यति पश्य ॥ वाक्यार्थः कर्म ॥

५९ ॥ विलुप्तमिति । नौलुलिताभिर्नौभिः क्षुभिताभिरद्भिरन्तःपुरसुन्दरीणां यदञ्जनं कज्जलं विलुप्तं हृतं तदञ्जनं विलोचनेषु नेत्रेषु मदेन या रागशोभा तां बध्नतीभिर्घटयन्तीभिरद्भिरासां प्रतिमुक्तं प्रत्यर्पितम् ॥ प्रतिनिधिदानमपि तत्कार्यकारित्वात्प्रत्यर्पणमेवेति भावः ॥

---

57. The king took his seat in the boat with a desire to see their eagerness in merging into the water who were engaged in sprinkling water over each other, and began to address the female Kiráta who waited on him by his side with a Chámara (in her hand).

58. Mark the stream of the Sarayú being stirred by hundreds of females of my inner-apartment the sandle paste on whose body has been washed off in it, unfolds (spreads out) various colours like the rise of the twilight inter-spersed with clouds.

59. The collyrium of the beautiful ladies of my inner-apartment that was washed away by the water stirred by the boats, is restored to them by the water giving the beauty of the flush of intoxication to their eyes.

B. H. I. R. with Chá., Din., and Su., विक्षिप्त°, D. with Vallabha, विलम्र°, K. विवग्र° for उद्विग्न°.

57. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., °आक्षेपण° for अभ्युक्षण . A. D पार्श्वगतं किरातमुपात्तबालव्यजनम् ,. B. पार्श्वगतान् किरातानुपात्तबालव्यजनान् for पार्श्वगतां किरातीमुपात्तबालव्यजनाम्. Hemádri notices the reading of A. D. Mss.

58. A. with Vijay., वगाह्यमानः for विगाह्यमानः.

59. L. में लुलिताभिरद्भिः for नौलुलिताभिरद्भिः. A. C. with Hemádri बध्नन्तीभिः for तद्बध्नतीभिः.

एता गुरुश्रोणिपयोधरत्वादात्मानमुद्वोढुमशक्नुवत्यः ।
गाढाङ्गदैर्बाहुभिरप्सु बालाः क्लेशोत्तरं रागवशात्प्लवन्ते ॥ ६० ॥
अमी शिरीषप्रसवावतंसाः प्रभ्रंशिनो वारिविहारिणीनाम् ।
पारिप्लवाः स्रोतसि निम्नगायाः शैवाललोलांश्छलयन्ति मीनान् ॥ ६१ ॥
आसां जलास्फालनतत्पराणां मुक्ताफलस्पर्धिषु शीकरेषु ।
पयोधरोत्सर्पिषु शीर्यमाणः संलक्ष्यते न च्छिदुरोऽपि हारः ॥ ६२ ॥

६० ॥ एता इति । गुरु दुर्वहं श्रोणिपयोधरं यस्यात्मन इति विग्रहः । गुरुश्रोणिपयोधरत्वादात्मानं शरीरमुद्वोढुमशक्नुवत्य एता बाला गाढाङ्गदैः श्लिष्टाङ्गदैर्बाहुभिः क्लेशोत्तरं दुःखप्रायं यथा तथा रागवशात्क्रीडाभिनिवेशपारतन्त्र्यात्प्लवन्ते तरन्ति ॥

६१ ॥ अमी इति । वारिविहारिणीनामासां प्रभ्रंशिनो भ्रष्टा निम्नगायाः स्रोतसि पारिप्लवाश्चञ्चलाः ॥ " चञ्चलं तरलं चैव पारिप्लवपरिप्लवे " इत्यमरः ॥ अमी शिरीषप्रसवा एवावतंसा कर्णभूषाः शैवाललोलाञ्जलनीलिप्रियान् ॥ " जलनीली तु शैवालम् " इत्यमरः ॥ मीनांश्छलयन्ति प्राडुर्भावयन्ति । शैवालप्रियत्वाच्छिरीषेषु शैवालभ्रमात्प्रादुर्भवन्तीत्यर्थः ॥

६२ ॥ आसामिति । जलस्यास्फालने तत्पराणामासक्तानामासां स्त्रीणां मुक्ताफलस्पर्धिषु मौक्तिकानुकारिषु पयोधरेषु स्तनेषूत्सर्पन्त्युत्पतन्ति ये तेषु शीकरेषु शीकराणां मध्ये शीर्यमाणो गलन्हारोऽत एव छिदुरः स्वयं छिन्नोऽपि न संलक्ष्यते ॥ " विदिभिदिच्छिदेः कुरच् " इति कुरच्प्रत्ययः ॥ शीकरसंसर्गाच्छिन्न इति न ज्ञायत इति भावः ॥

---

60. These young damsels unable to support their bodies on account of the heaviness of their hips and breasts, swim with difficulty in water with their arms having armlets fastened to them, (simply on account of) being under the influence of passion for sport.

61. These ear-ornaments made of the S'irisha blossom of the females sporting in water, falling into the current of the river and therefore moving to and fro deceive the fish that swim towards them and that are anxious to devour moss.

62. The garland of these females who were deeply engaged in striking the water with their hands, though on the point of being broken, was not observed by them being unstrung among the sprays that vie with pearls and spread over their breasts.

---

60. B. H. J. K. L. with Chá., Din., Val., and Su., अशक्नुवन्त्यः for अशक्नुवत्यः.

61. E. H. K. R. with Val., and Vijay., शरीष° for शिरीष.° D. ज्ञनयन्ति for छलयन्ति. Hemádri notices the reading. B. हंसान् for मीनान्.

62. D. L. करा° for जला.° Hemádri first reads the 63rd stanza and then the 62nd of our text.

आवर्तशोभा नतनाभिकान्तेर्भङ्ग्यो भ्रुवां द्वन्द्वचराः स्तनानाम् ।
जातानि रूपावयवोपमानान्यदूरवर्तीनि विलासिनीनाम् ॥ ६३ ॥
तीरस्थलीबर्हिभिरुत्कलापैः प्रस्निग्धकेकैरभिनन्द्यमानम् ।
श्रोत्रेषु संमूर्च्छति रक्तमासां गीतानुगं वारिमृदङ्गवाद्यम् ॥ ६४ ॥
संदष्टवस्त्रेष्वबलानितम्बेष्विन्दुप्रकाशान्तरितोडुतुल्याः ।
अमी जलापूरितसूत्रमार्गा मौनं भजन्ते रशनाकलापाः ॥ ६५ ॥

६३ ॥ आवर्तेति । विलासिनीनां विलसनशीलानां स्त्रीणाम् ॥ " वौ कषलसकत्थस्रम्भः " इति विनुण्प्रत्ययः ॥ रूपावयवानामुपमेयानां यान्युपमानानि लोकप्रसिद्धानि तान्यदूरवर्तीन्यन्तिकगतानि जातानि । कस्य किमुपमानमित्यत्राह—नतनाभिकान्तेर्निम्ननाभिशोभाया आवर्तशोभा ॥ " स्यादावर्तोऽम्भसां भ्रमः " इत्यमरः ॥ भ्रुवां भङ्ग्यस्तरंगाः । स्तनानां द्वन्द्वचराश्चक्रवाकाः । उपमानमिति सर्वत्र संबध्यते ॥

६४ ॥ तीरेति । उत्कलापैरुच्चबर्हैः प्रस्निग्धा मधुराः केका येषां तैस्तीरस्थलीषु स्थितैर्बर्हिभिर्मयूरैरभिनन्द्यमानं रक्तं श्राव्यं गीतानुगं गीतानुसार्यासां स्त्रीणां संबन्धि वार्येव मृदङ्गस्तस्य वाद्यं वाद्यध्वनिः श्रोत्रेषु संमूर्च्छति व्याप्नोति ॥

६५ ॥ संदष्टेति । संदष्टवस्त्रेषु जलसेकात्संश्लिष्टांशुकेष्वबलानां नितम्बेष्वधिकरणेष्विन्दुप्रकाशेन ज्योत्स्नयान्तरितान्याच्छन्नानि यान्युडूनि नक्षत्राणि तत्तुल्याः । मुक्तामयत्वादित्यर्थः । अमी जलापूरितसूत्रमार्गाः । निश्चला इत्यर्थः । रशना एव कलापा भूषाः । ॥ " कलापो भूषणे बर्हे " इत्यमरः ॥ मौनम् । निःशब्दतामित्यर्थः । भजन्ते ॥

---

63. Those things which are the standards of comparison of beauty and parts of the body are at hand in the case of these sportive women, *viz.*, the beauty of the whirl-pool may be compared with the beauty of the deep naval, the waves with the eyebrows, and the couples of Chakravákas with their breasts.

64. The agreeable sound of the water in the form of tabour being in consonance with their singing and hailed with delight by the sweet-cooing peacocks on the slope of the bank with their plumages erect, fills the ears (has a pleasing effect on the ears).

65. These circles of waist-band, the intervals in the (woven) thread of which are filled with water and which, on the women's

---

63. L. नतनाभिरन्ध्रे for नतनाभिकान्ते . D. with Su., भङ्गा भ्रुवां, A. J. L. with Vijay., भङ्गा भ्रुवां, K. भङ्ग्योयत्र for भङ्ग्यो भ्रुवां.

64. D. L. मूर्च्छत्यनुरक्तम् for संमूर्च्छति रक्तम्.

65. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val.,

एताः करोत्पीडितवारिधारा दर्पात्सखीभिर्वदनेषु सिक्ताः ।
वक्रेतराग्रैरलकैस्तरुण्यश्चूर्णारुणान्वारिलवान्वमन्ति ॥ ६६ ॥
उद्बन्धकेशश्च्युतपत्त्रलेखो विश्लेषिमुक्ताफलपत्त्रवेष्टः ।
मनोज्ञ एव प्रमदामुखानामम्भोविहाराकुलितोऽपि वेषः ॥ ६७ ॥

६६ ॥ एता इति ॥ दर्पात्सखीजनं प्रति करैरुत्पीडिता उत्सारिता वारिधारा याभिस्ताः स्वयमपि पुनस्तथैव सखीभिर्वदनेषु सिक्ता एतास्तरुण्यो वक्रेतराग्रैर्जलसेकादृज्वग्रैरलकैः करणैश्चूर्णैः कुङ्कुमादिभिररुणान्वारिलवानुदकबिन्दून्वमन्ति वर्षन्ति ॥

६७ ॥ उद्बन्धेति । उद्बन्धा उद्भ्रष्टाः केशा यस्मिन्सः । च्युतपत्त्रलेखः क्षरितपत्त्ररचनः । विश्लेषिणौ विस्रंसिनौ मुक्ताफलपत्त्रवेष्टौ मुक्तामयताडङ्कौ यस्मिन्सः । एवमम्भोविहाराकुलितोऽपि प्रमदामुखानां वेषो नेपथ्यं मनोज्ञ एव ॥ "रम्याणां विकृतिरपि श्रियं तनोति" इति भावः ॥

---

hips closely adhered on by the (white) silk-garments, appear like stars dimmed (*lit.* hidden) by moon-light, have become noiseless (*lit.* kept silence).

66. These young ladies, striking upwards with their hands showers of water in pride and receiving on their faces the showers thrown by their friends, rain down drops of water red with Kunkuma (*i. e.* red-powder) by means of their straight tresses of hair.

67. The decoration on the face of the young female, though disordered by the sport in water, is yet most charming,—the decoration in which the hair are loosened, the amorous paintings are washed away and the pearl-ear-rings (Patravesh*t*a) are loosely hanging down.

Su., and Vijay., °टङ्कल्पाः for °टङ्कतुल्याः. D. आसां, J. अमूः for अमी. A. with Chá., and Din., °रन्ध्रभागाः, D. E. with Su., रन्ध्रमार्गाः, L. रन्ध्रमार्ग for मूत्रमार्गाः. Vijayânandasûris'varacharan*a*s'evaka notices the reading of Sumativijaya and D. E. Mss. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., रसना° for रशना°.

66. B. I. R. with Hem., Val., and the text only of Vijay., °दण्डधारम्, C. K. with Su., °दण्डधाराः, A_2. with Vijay., °यंत्रधाराः, D. °गन्धधारम्, D_2. °गन्धधाराः, H. L. °यंत्रधारम् for °वारिधाराः. B. C. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and the text only of Vijay., हर्षात्, D. L. with Vijay., आरात् for दर्पात्. E. वमन्ते, L. वहन्ति for वमन्ति.

67. A. D. I. K. with Val., Su., and Vijay., उद्बद्ध° for उद्बन्ध°.

स नौविमानादवतीर्य रेमे विलोलहारः सह ताभिरप्सु ।
स्कन्धावलग्नोद्धृतपद्मिनीकः करेणुभिर्वन्य इव द्विपेन्द्रः ॥ ६८ ॥
ततो नृपेणानुगताः स्त्रियस्ता भ्राजिष्णुना सातिशयं विरेजुः ।
प्रागेव मुक्ता नयनाभिरामाः प्राप्येन्द्रनीलं किमुतोन्मयूखम् ॥ ६९ ॥

६८ ॥ स इति । स कुशो नौर्विमानमिव नौविमानम् ॥ उपमितसमासः ॥ तस्मादवतीर्य विलोलहारः संस्ताभिः स्त्रीभिः सह करेणुभिः सह स्कन्धावलग्नोद्धृतपद्मिन्युत्पाटितनलिनी यस्य स तथोक्तः सन् ॥ "नद्यृतश्च" इति कप्रत्ययः ॥ वन्यो द्विपेन्द्र इव । अप्सु रेमे ॥

६९ ॥ तत इति । ततो भ्राजिष्णुना प्रकाशनशीलेन ॥ "भुवश्च" इति चकाराद्रिष्णुच् ॥ नृपेणानुगताः संगतास्ताः स्त्रियः सातिशयं यथा तथा विरेजुः । प्रागेव । इन्द्रनीलयोगात्पूर्वमेव । केवला अपीत्यर्थः । मुक्ता मणयो नयनाभिरामाः । उन्मयूखमिन्द्रनीलं प्राप्य किमुत ॥ अभिरामा इति किमु वक्तव्यमित्यर्थः ॥

---

68. The king with his garland moving to and fro alighted from the balloon-shaped boat, and began to sport with them in the water, as a huge wild elephant with an up-rooted lotus-plant clung to the shoulder sports with female elephants in water.

69. Then those females in company with the resplendent king appeared exceedingly beautiful. Already games are charming to the eye, what to say then when they are united with a sapphire shooting forth its rays.

C. R. with Vijay., °जालवेष्टः, D. K. °जालशोभः, D. with Châ., Din., Val., and Su., °कर्णवेष्टः, B. with Hemâdri °दन्तपत्रः for °पत्रवेष्टः. Hemâdri: "विश्लिष्यन्त्यवश्यमिति विश्लेषि विश्लेषिमुक्ताफलानि दन्तपत्राणि यस्य सः." Hemâdri also notices '°पत्रवेष्टम्' and observes :—"विश्लेषिमुक्ताफलपत्त्रवेष्टमिति पाठेऽपि कर्णपत्रम्" । D. K. with Hemâdri वेशः for वेषः. A correct reading.

68. B. C. E. H. L. R. with Hem., Din., Val, Su., and Vijay., विलोलमाल्यः, D. I. with Châ., विलोलमालः for विलोलहारः. C. and the text only of Val, स्कन्धावलम्बो° for स्कन्धावलग्नो°. B. °दन्नत°, D. L. °टन्नत° for °द्धृत°.

69. B. C. K. R. with Hem., Châ., Din., and Val., अभिगताः, D. H. I. L. with Su., Vijay., and the text only of Val., अधिगताः for अनुगताः. A. D. H. K. with Hem., Châ., and Din., उन्मयूखं किमुतेन्द्रनीलम् for इन्द्रनीलं किमुतोन्मयूखम् .

वर्णोदकैः काञ्चनशृङ्गमुक्तैस्तमायताक्ष्यः प्रणयादसिञ्चन् ।
तथागतः सोऽतितरां बभासे सधातुनिष्यन्द इवाद्रिराजः ॥ ७० ॥
तेनावरोधप्रमदासखेन विगाहमानेन सरिद्वरां ताम् ।
आकाशगङ्गारतिरप्सरोभिर्वृतो मरुत्वाननुयातलीलः ॥ ७१ ॥
यत्कुम्भयोनेरधिगम्य रामः कुशाय राज्येन समं दिदेश ।
तदस्य जैत्राभरणं विहर्तुरज्ञातपातं सलिले ममज्ज ॥ ७२ ॥

७० ॥ वर्णोदकैरिति । तं कुशमायताक्ष्यः काञ्चनस्य शृङ्गैर्मुक्तानि तैर्वर्णोदकैः कुङ्कुमादिवर्णद्रव्यसहितोदकैः प्रणयात्स्नेहादसिञ्चन् ॥ तथागतस्तथास्थितः । वर्णोदकासिक्त इत्यर्थः । स कुशः सधातुनिष्यन्दो गैरिकद्रव्ययुक्तोऽद्रिराज इव । अतितरां बभासेऽत्यर्थं चकासे ॥

७१ ॥ तेनेति । अवरोधप्रमदासखेनान्तःपुरसुन्दरीसहचरेण तां सरिद्वरां सरयूं विगाहमानेन तेन कुशेनाकाशगङ्गायां रतिः क्रीडा यस्य सोऽप्सरोभिर्वृत आवृतो मरुत्वानिन्द्रोऽनुयातलीलोऽनुकृतश्रीः । अभूदिति शेषः ॥ इन्द्रमनुकृतवानित्यर्थः ॥

७२ ॥ यदिति । यदाभरणं रामः कुम्भयोनेरगस्त्यादधिगम्य प्राप्य कुशाय राज्येन समं दिदेश । राज्यसममूल्यमित्यर्थः । सलिले विहर्तुः क्रीडितुरस्य कुशस्य तज्जैत्राभरणं जयशीलमाभरणमज्ञातपातं सन्ममज्ज ॥

70. The long-eyed damsels sprinkled him through love with coloured waters ejected through syringes made of gold. In that position he looked extremely beautiful like the king of mountains washed down by streams containing mettalic earth.

71. The king bathing in that best of rivers in company with the young ladies of his inner-apartment imitated the grace of Indra sporting in the heavenly Ganges surrounded by celestial damsels.

72. That victorious ornament, which Râma having obtained from the pitcher-born sage (Agastya) had made over to Kus'a along with the kingdom, dropped into water while he was sporting in it without his knowing of its fall

70. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., संस्थैः for मुक्तैः. B. C. H. I. L. R. with Hem., Val., Su., and the text only of Vijay., °निस्यन्द, E. K. with Chá., Din., Vijay., and the text only of Su., °निष्यन्द, D. J. °निस्यन्द for °निष्यन्द.

71. B. D. जितः for वृतः. B. L. with Chá., and Su., अनुजातलीलः for अनुयातलीलः.

स्नात्वा यथाकाममसौ सदारस्तीरोपकार्यां गतमात्र एव ।
दिव्येन शून्यं वलयेन बाहुमपोढनेपथ्यविधिर्ददर्श ॥ ७३ ॥
जयश्रियः संवननं यतस्तदामुक्तपूर्वं गुरुणा च यस्मात् ।
सेहेऽस्य न भ्रंशमतो न लोभात्स तुल्यपुष्पाभरणो हि धीरः ॥ ७४ ॥
ततः समाज्ञापयदाशु सर्वानानायिनस्तद्विचये नदीष्णान् ।
वन्ध्यश्रमास्ते सरयूं विगाह्य तमूचुरम्लानमुखप्रसादाः ॥ ७५ ॥

७३ ॥ स्नात्वेति । असौ कुशः सदारः सन्यथाकामं यथेच्छं स्नात्वा विगाह्य । तीरे योपकार्या पूर्वोक्ता तां गतमात्रो गत एवापोढनेपथ्यविधिरकृतप्रसाधन एव दिव्येन वलयेन शून्यं बाहुं ददर्श ॥

७४ ॥ जयेति । यतः कारणात्तदाभरणं जयश्रियः संवननं वशीकरणम् ॥ "वशक्रिया संवननम्" इत्यमरः ॥ यस्माच्च गुरुणा पित्रामुक्तपूर्वं पूर्वमामुक्तम् । धृतमित्यर्थः ॥ सुप्सुपेति समासः ॥ अतो हेतोरस्याभरणस्य भ्रंशं नाशं न सेहे । लोभान्न । कुतः । हि यस्माद्धीरो विद्वान्स कुशस्तुल्यानि पुष्पाण्याभरणानि च यस्य सः पुष्पेष्विवाभरणेषु धृतेषु निर्माल्यबुद्धिं करोतीत्यर्थः ॥

७५ ॥ तत इति । ततः । नद्यां स्नान्ति कौशलेनेति नदीष्णाः । तान् ॥ " सुपि " इति योगविभागात्कप्रत्ययः ॥ " निनदीभ्यां स्नातेः कौशले " इति षत्वम् ॥ सर्वानानायिनो जालिकांस्तस्याभरणस्य विचयेऽन्वेषणे निमित्त आशु समाज्ञापयत् ॥

---

73. He, in company with his wife, having bathed to his heart's content, found his arm without its celestial armlet before he had put on his dress, the moment he had gone to the tent pitched on the shore.

74. The king did not endure its loss because it was a charm of victory and was worn before by his father and not because he was greedy ; for, with the wise king ornaments and flowers were equal.

75. Then he instantly ordered all the fishermen skilful in diving for its search. Having dived in the Sarayu, they finding

---

73. B. I. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., ऽपोढनेपथ्यविधिः, D. J. L. with Cha., Din., and the text only of Val., अपोढनेपथ्यविधिम् for अपोढनेपथ्यविधिः.

74. A. D. I. K. L. with Hemádri संजननम् for संवननम्. Hemádri " संजननं वशीकरणं. " D. आमुक्तमनम् for आमुक्तपूर्वम्. H. च पश्चात् for च यस्मात्. C. L. with Hemádri स तुल्यपुष्पाभरणः for स तुल्यपुष्पाभरणो. Vallabha notices the reading. A. D. I. K. R. with Hem., Val., and Vijay., वीरः for धीरः.

75. I. आम्लान for अम्लान. A. E. J. R. with Hem., and Su., °अरविन्दा. D. K. with Cha., and Din., °प्रसादम्, D_2. L. °अरविन्दम् for

कृतः प्रयत्नो न च देव लब्धं मग्नं पयस्याभरणोत्तमं ते ।
नागेन लौल्यात्कुमुदेन नूनमुपात्तमन्तर्ह्रदवासिना तत् ॥ ७६ ॥
ततः स कृत्वा धनुराततज्यं धनुर्धरः कोपविलोहिताक्षः ।
गारुत्मतं तीरगतस्तरस्वी भुजंगनाशाय समाददेऽस्त्रम् ॥ ७७ ॥
तस्मिन्ह्रदः संहितमात्र एव क्षोभात्समाविद्धतरंगहस्तः ।
रोधांसि निघ्नन्नवपातमग्नः करीव वन्यः परुषं ररास ॥ ७८ ॥

त आनायिनः सरयूं विगाह्य विलोड्य वन्ध्यश्रमा विफलप्रयासास्तथापि तद्गतिं ज्ञात्वाम्लानमुखप्रसादाः सश्रीकमुखाः सन्तस्तं कुशमूचुः ॥

७६ ॥ कृत इति । हे देव प्रयत्नः कृतः । पयसि मग्नं त आभरणोत्तमं न च लब्धम् । किं तु तदाभरणमन्तर्ह्रदवासिना कुमुदेन कुमुदाख्येन नागेन पन्नगेन लौल्याल्लोभादुपात्तं गृहीतम् । नूनमिति वितर्के ॥

७७ ॥ तत इति । ततो धनुर्धरः कोपविलोहिताक्षस्तरस्वी बलवान्स कुशस्तीरगतः सन्धनुराततज्यमधिज्यं कृत्वा भुजंगस्य कुमुदस्य नाशाय गारुत्मतं गरुत्मद्देवताकमस्त्रं समाददे ॥

७८ ॥ तस्मिन्निति । तस्मिन्नस्त्रे संहितमात्रे सत्येव ह्रदः क्षोभाद्धेतोः समाविद्धाः संवर्धितास्तरंगा एव हस्ता यस्य स रोधांसि निघ्नन्पातयन् । अवपाते गजग्रहणगर्ते मग्नः पतितः ॥ “ अवपातस्तु हस्त्यर्थे गर्तश्छन्नस्तृणादिना ” इति यादवः ॥ वन्यः करीव । परुषं घोरं ररास दध्वान ॥

---

their labours unsuccessful addressed him with the brightness of their faces not faded.

76 Your Majsty, we tried our best but we did not obtain your Majesty's excellent ornament dropped into the water ; perhaps it must have been taken through greed by the snake Kumuda whose abode is below this deep pool.

77. Then that mighty bow-man, with his eyes red with anger stringing his bow and advancing to the bank, took up the missile presided over by the Great Eagle for the destruction of the snake.

78 No sooner was it fitted than the deep pool of water with its wavy hands moved about through agitation, broke down the

---

°प्रसादाः. Vallabha and Vijayânandasûris'varacharaṇasevaka notice the reading of Châritravardhana and others.

76. D K. नागेन नूनं कुमुदेन लौल्यात् for नागेन लौल्यात्कुमुदेन नूनम्.

77. E. J. गुरुत्मतं for गारुत्मतं. K. तपस्वी for तरस्वी. D. with Hem., Val., and Su., समादधे for समाददे.

78. A. C. with Hemâdri सन्धितमात्रे for संहितमात्रे. D. with Su., एवं for एव. And construe it with परुषं. B. C. D. I. with Hemâdri

तस्मात्समुद्रादिव मथ्यमानादुद्वृत्तनक्रात्सहसोन्ममज्ज ।
लक्ष्म्येव सार्धं सुरराजवृक्षः कन्यां पुरस्कृत्य भुजंगराजः ॥ ७९ ॥
विभूषणप्रत्युपहारहस्तमुपस्थितं वीक्ष्य विशांपतिस्तम् ।
सौपर्णमस्त्रं प्रतिसंजहार प्रह्वेष्वनिर्बन्धरुषो हि सन्तः ॥ ८० ॥
त्रैलोक्यनाथप्रभवं प्रभावात्कुशं द्विषामङ्कुशमस्त्रविद्वान् ।
मानोन्नतेनाप्यभिवन्द्य मूर्ध्ना मूर्धाभिषिक्तं कुमुदो बभाषे ॥ ८१ ॥

७९ ॥ तस्मादिति । मथ्यमानात्समुद्रादिव । उद्वृत्तनक्रात्क्षुभितग्राहात्तस्माद्ध्रदात् । लक्ष्म्या सार्धं सुरराजस्येन्द्रस्य वृक्षः पारिजात इव । कन्यां पुरस्कृत्य भुजंगराजः कुमुदः सहसोन्ममज्ज ॥

८० ॥ विभूषणेति । विशांपतिर्मनुजपतिः कुशः ॥ "द्वौ विशौ वैश्यमनुजौ" इत्यमरः ॥ विभूषणं प्रत्युपह्रियते प्रत्यर्प्यत इति विभूषणप्रत्युपहारः ॥ कर्मण्यण् ॥ विभूषणप्रत्युपहारो हस्तो यस्य तम् । उपस्थितं प्राप्तं तं कुमुदं वीक्ष्य सौपर्णं गारुत्मतमस्त्रं प्रतिसंजहार ॥ तथा हि । सन्तः प्रह्वेषु नम्रेष्वनिर्बन्धरुषोऽनियतकोपा हि ॥

८१ ॥ त्रैलोक्येति । अस्त्रं विद्वानस्त्रविद्वान् ॥ "न लोक" इत्यादिना षष्ठीसमासनिषेधः । "द्वितीया श्रिता—" इत्यत्र गम्यादीनामुपसंख्यानाद्द्वितीयेति यो-

---

banks, and began to roar terribly like a wild elephant fallen in a pit (made for hunting the beast).

79. Instantly out of the pool, the alligators in which were agitated, rose up the king of serpents leading before him a maiden, as the tree of the king of the gods (Indra's Parijâta) sprang up with Lakshmi from the ocean that was in the process of being churned.

80. The lord of the people saw him approach bearing in his hand the ornament that he brought with him to present again to him, and withdrew the Suparna missile. For good men are not inexorable in their anger towards those that bend themselves before them.

81. Kumuda, who had known the strength of the missile, having with his head though elevated with honour saluted Kusa

---

क्रोधात for क्षोभात्. B. C. I. with Val., and Su., अभिघ्नन. D. E. H. J. K. L. R. with Hem., Chà., Din., and Vijay., निघ्नन् for निघ्नन्. L. अतिपातमग्नः for अवपातमग्नः. B नत. for वन्यः.

79. D. E. with Vijay., उद्विग्ननक्रात for उद्वृत्तनक्रात्.

81. C. E. H. I. K. R. with Val., Su., and Vijay., अङ्कुशमाह्य वि-

अवैमि कार्यान्तरमानुषस्य विष्णोः सुताख्यामपरां तनुं त्वाम् ।
सोऽहं कथं नाम तवाचरेयमाराधनीयस्य धृतेर्विघातम् ॥ ८२ ॥
कराभिघातोत्थितकन्दुकेयमालोक्य बालातिकुतूहलेन ।
जवात्पतज्ज्योतिरिवान्तरिक्षादादत्त जैत्राभरणं त्वदीयम् ॥ ८३ ॥

गविभागाद्वा समासः ॥ गरुडास्त्रमहिमाभिज्ञ इत्यर्थः । कुमुदः । त्रयो लोकास्त्रैलोक्यम् ॥ चातुर्वर्ण्यादित्वात्स्वार्थे ष्यञ्प्रत्ययः ॥ त्रैलोक्यनाथो रामः प्रभवो जनको यस्य तम् । अत एव प्रभावाद्द्विषामङ्कुशं मूर्धाभिषिक्तं राजानं कुशं मानोन्नतेनापि मूर्ध्नाभिवन्द्य प्रणम्य बभाषे ॥

८२ ॥ अवैमीति । त्वाम् । ओदनान्तरस्तण्डुल इतिवत्कार्यान्तरः कार्यार्थः ॥ "स्थानात्मीयान्यतादर्थ्यरन्ध्रान्तर्येषु चान्तरम्" इति शाश्वतः ॥ स चासौ मानुषश्चेति तस्य विष्णो रामस्य सुताख्यां पुत्रसंज्ञामपरां तनुं मूर्तिमवैमि ॥ "आत्मा वै पुत्रनामासि" इति श्रुतेरित्यर्थः ॥ स जानन्नहमाराधनीयस्योपास्यस्य तव धृतेः प्रीतेः ॥ "धृ प्रीतौ" इति धातोः स्त्रियां क्तिन् ॥ विघातं कथं नामाचरेयम् । असंभावितमित्यर्थः ॥

८३ ॥ करेति । कराभिघातेनोत्थित ऊर्ध्वं गतः कन्दुको यस्याः सा । कन्दुकार्थमूर्ध्वं पश्यन्तीत्यर्थः । इयं बाला जवादन्तरिक्षाज्ज्योतिर्नक्षत्रमिव ॥ "ज्यो

---

the son of the Lord of three worlds, who was the goad to his enemies on account of his prowess and whose head had received on it the pouring of coronation-water, began to address him in the following manner.

82. "I know thee to be another image, under the name of a son of Vishnu who had assumed on purpose the human form. Such a one as I am, how shall I bring destruction on thy good pleasure, adorable as thou art?"

83. "This young girl, whose ball had gone up by the stroke of her hand and hence looking up for it, saw this victorious orna-

---

द्वान्, D. L. अंकुशवद्विदित्वा for अंकुशमस्त्रविद्वान्. Hemádri notices the reading of Vallabha and others. B. कुशावसिक्तम् for मूर्धाभिषिक्तम्.

82. E. तां for त्वां.

83. B. with Val., Su., and the text only of Vijay. °दञ्चित° for °दुत्थित°. B. L. with Chá., and Din., बाला तु for बालाति°. B. C. with Chá., and Din., कुतूहलात्सा for कुतूहलेन. D. H. with Hem., Val., and Su., अत्यातिकम्, A. C. I. K. L. R. with Châ., Din., and Vijay., द्रुदान्यतत् for जवात्पतत्.

तदेतदाजानुविलम्बिना ते ज्याघातरेखास्थिरलाञ्छनेन ।
भुजेन रक्षापरिघेण भूमेरुपैतु योगं पुनरंसलेन ॥ ८४ ॥
इमां स्वसारं च यवीयसीं मे कुमुद्वतीं नार्हसि नानुमन्तुम् ।
आत्मापराधं नुदतीं चिराय शुश्रूषया पार्थिव पादयोस्ते ॥ ८५ ॥

निर्भर्योतद्वृष्टिषु " इत्यमरः ॥ पतत्त्वदीयं जैत्राभरणमालोक्यातिकुतूहलेनादत्ता-गृह्णात् ॥

८४ ॥ तदिति । तदेतदाभरणमाजानुविलम्बिना दीर्घेण । ज्याघातेन या रेखा रेखाकारा ग्रन्थयः । ते स्थिरलाञ्छनं यस्य तेन । भूमे रक्षायाः परिघेण रक्षार्गलेन ॥ "परिघो योगभेदास्त्रमुद्गरेऽर्गलघातयोः" इत्यमरः ॥ अंसलेन बलवता ते भुजेन पुनर्योगं संगतिमुपैतु ॥ एतैर्विशेषणैर्महाबाहुत्वशौर्यधुरंधरत्वबलवत्त्वादि गम्यते ॥

८५ ॥ इमामिति । किं च । हे पार्थिव ते तव पादयोश्चिराय शुश्रूषया परिचर्यया ॥ "शुश्रूषा श्रोतुमिच्छायां परिचर्याप्रसादयोः" इति विश्वः ॥ आत्मापराधमाभरणग्रहणरूपं नुदतीम् । परिजिहीर्षन्तीमित्यर्थः ॥ "आशंसायां भूतवच्च" इति चकाराद्वर्तमानार्थे शतृप्रत्ययः ॥ "आच्छीनद्योर्नुम्" इत्यस्य वैकल्पिकत्वान्नुमभावः॥ इमां मे यवीयसीं कनिष्ठां स्वसारं भगिनीं कुमुद्वतीमनुमन्तुं नार्हसीति न । अर्हस्येवेत्यर्थः ॥

---

ment of thine falling down with great force like a meteor from the sky, and took it up with great curiosity. "

84. "Let then this ornament again obtain the contact with thy sinewy-arm, reaching down to the knees, which bears a steady (*i. e.* permanent) mark of the lines made by the strokes of the bow-string and which is the protecting iron bar for locking the gates of the earth. "

85. "And moreover, O king, it is not that you do not deserve to accept this younger sister of mine, named Kumudvati who wishes to atone for her own offence (committed against you) by long devoting herself to the service of your feet. "

---

84. B. H. L. with Hem., Cha., Din., Val., Su., and Vijay., °लेखास्थिर°, I. °रेखास्थित°, E. [illegible], D. °रेखाकिण° for °रेखास्थिर°. **Mallinatha** also notices the reading of D. and says,—"रेखा ग्रंथयस्तासां किणं चिह्नं तदेवलाञ्छनं यस्य तेन । "

85. D. L. निजापराधम् for आत्मापराधम्.

इत्यूचिवानुपहृताभरणः क्षितीशं श्लाघ्यो भवान्स्वजन इत्यनुभाषितारम् ।
संयोजयां विधिवदास समेतबन्धुः कन्यामयेन कुमुदः कुलभूषणेन ॥ ८६ ॥

तस्याः स्पृष्टे मनुजपतिना साहचर्याय हस्ते
माङ्गल्योर्णावलयिनि पुरः पावकस्योच्छिखस्य ।
दिव्यस्तूर्यध्वनिरुदचरद्व्यश्नुवानो दिगन्ता-
न्गन्धोदग्रं तदनु ववृषुः पुष्पमाश्चर्यमेघाः ॥ ८७ ॥

८६ ॥ इतीति । इति पूर्वश्लोकोक्तमूचिवानुक्तवान् ॥ ब्रुवः क्वसुः ॥ उपहृताभरण-प्रत्यर्पिताभरणः कुमुदः । हे कुमुद भवाञ्श्लाघ्यः स्वजनो बन्धुः । इत्यनुभाषितार-मनुवक्तारं क्षितीशं कुशं समेतबन्धुर्युक्तबन्धुः सन्कन्यामयेन कन्यारूपेण कुल-योर्भूषणेन विधिवत्संयोजयामास ॥ न केवलं तदीयमेव किं तु स्वकीयमपि भूषणं तस्मै दत्तवानिति ध्वनि ॥ आम्प्रत्ययानुप्रयोगयोर्व्यवधानं तु प्रागेव समाहितम् ॥

८७ ॥ तस्या इति । मनुजपतिना कुशेन साहचर्याय । सहधर्मचरणायेत्यर्थः । माङ्गल्या मङ्गले साधुर्योर्णा मेषादिलोम ॥ "ऊर्णा मेषादिलोम्नि स्यात्" इत्य-मरः ॥ अत्र लक्षणया तन्निर्मितं सूत्रमुच्यते । तया वलयिनि वलयवति तस्याः कुमुद्वत्या हस्ते पाणावुच्छिखस्योदर्चिषः पावकस्य पुरोऽग्रे स्पृष्टे गृहीते सति दिगन्तान्व्यश्नुवानो व्याप्नुवन्दिव्यस्तूर्यध्वनिरुदचरदुत्थितः । तदन्वाश्चर्या अ-द्भुता मेघा गन्धेनोदग्रमुत्कटं पुष्पं पुष्पाणि ॥ जात्यभिप्रायेणैकवचनम् ॥ ववृषुः ॥ आश्चर्यशब्दस्य "रौद्रं तूग्रममी त्रिषु । चतुर्दश" इत्यमरवचनात्त्रिलिङ्गत्वम् ॥

86. With these words, Kumuda who had made over the ornament, formed relation, in company with his kinsmen, with the lord of the earth who replied "you are my honoured relation" by presenting to him the ornament of his family consisting of an unmarried maiden, in accordance with the rule.

87. When her (Kumudvati's) hand having on it the auspicious wrist-let of wool was held by the lord of the people for connubial companionship before the holy fire flaring upwards, there arose a sound of celestial trumpets pervading the extremities of

86. A. उपचिताभरणः, K. उपचिताभरणं, B. E. H. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., उपहृताभरणं, D. L. उपहिताभरणः for उपहृता-भरणः. A. C. R. with Vijay., इति भाषितारं, B. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., and the text only of Vijay., अभिभाषितारं for अनुभा-षितारं. D. तमकबन्धुम् for समेतबन्धुः.

87. B. L. with Châritravardhana मङ्गल्योर्णा° for माङ्गल्योर्णा°. E. L. R. with Hem., Val., Su., and the text only of Vijay., उच्छिषस्य for उच्छिखस्य.

इत्थं नागस्त्रिभुवनगुरोरौरसं मैथिलेयं
लब्ध्वा बन्धुं तमपि च कुशः पञ्चमं तक्षकस्य ।
एकः शङ्कां पितृवधरिपोरत्यजद्वैनतेया-
च्छान्तव्यालामवनिमपरः पौरकान्तः शशास ॥ ८८ ॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कालिदासकृतौ कुमुद्वतीपरिणयो नाम षोडशः सर्गः ॥

८८ ॥ इत्थमिति । इत्थं नागः कुमुदः । त्रयाणां भुवनानां समाहारस्त्रिभुवनम् ॥ " तद्धितार्थ— " इत्यादिना तत्पुरुषः ॥ " अदन्तद्विगुत्वेऽपि पात्राद्यन्तत्वान्नपुंसकत्वम् " ॥ " पात्राद्यन्तैरनेकार्थो द्विगुर्लक्ष्यानुसारतः " इत्यमरः ॥ तस्य गुरू रामः । तस्यौरसं धर्मपत्नीजं पुत्रम् ॥ " औरसो धर्मपत्नीजः " इति याज्ञवल्क्यः ॥ मैथिलेयं कुशं बन्धुं लब्ध्वा । कुशोऽपि च तक्षकस्य पञ्चमं पुत्रं तं कुमुदं बन्धुं लब्ध्वा । एकस्तयोरन्यतरः कुमुदः पितृवधेन रिपोर्वैनतेयाद्गरुडात् ॥ गरुडाद्वैष्णवांशेन कुशेन त्याजितक्रौर्यादिति भावः ॥ शङ्कां भयमत्यजत् । अपरः कुशः शान्तव्यालां कुमुदाज्ञया वीतसर्पभयामवनिमत एव पौरकान्तः पौराणां प्रियः सन् शशास ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलाचलमल्लिनाथसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां षोडशः सर्गः ॥

---

the quarters ; after which, wonderful clouds poured down flowers richly endowed with sweet scent.

88. In this manner the Naga got the son of Mithila-princess, the legitimate child of the Lord of the three worlds, for his kinsman and Kus'a on his part got him, the fifth descendant of Takshaka, for his kinsman, the one left off the fear arising from the son of Vinata who had become his enemy on account of the death of his father, and the other who was the joy of his people ruled the earth where serpents (now) were made harmless.

---

88. A. D. H. K. with Hem., Val., Su., and the text only of Vijay., विषधररिपोः, B. I. L. R. अहिकुलरिपोः for पितृवधरिपोः. Hemádri simply notices the reading of Mallinátha but Vijayánandasúris'varacharanasevaka agrees with our scholiast in his explanation of the verse. B. भद्रव्यालाम् for शान्तव्यालाम्.

। सप्तदशः सर्गः ।

अतिथिं नाम काकुत्स्थात्पुत्रं प्राप कुमुद्वती ।
पश्चिमाद्यामिनीयामात्प्रसादमिव चेतना ॥ १ ॥
स पितुः पितृमान्वंशं मातुश्चानुपमद्युतिः ।
अपुनात्सवितेवोभौ मार्गावुत्तरदक्षिणौ ॥ २ ॥
तमादौ कुलविद्यानामर्थमर्थविदां वरः ।
पश्चात्पार्थिवकन्यानां पाणिमग्राहयत्पिता ॥ ३ ॥

नमो रामपदाम्भोजरेणवे यत्र संततम् ।
कुर्वन्ति कुमुदानीनिनग्न्यनूनसंधिनः ॥

१ ॥ अतिथिमिति । कुमुद्वती काकुत्स्थात्कुशादतिथिं नाम पुत्रम् । चेतना बुद्धिः पश्चिमादन्तिमाद्यामिन्या रात्रेर्यामात्प्रहरात् ॥ " द्वौ यामप्रहरौ समौ " इत्यमरः ॥ प्रसादं वैशद्यमिव । प्राप ॥ ब्राह्मे सर्वेषां बुद्धिवैशद्यं भवतीति प्रसिद्धिः ॥

२ ॥ स इति । पितृमान् ॥ प्रशंसायां मतुप् ॥ सुशिक्षित इत्यर्थः ॥ अनुपमद्युतिः सवितुश्चेदं विशेषणम् । सोऽतिथिः पितुः कुशस्य वंशं मातुः कुमुद्वत्याश्च वंशम् । सवितोत्तरदक्षिणावुभौ मार्गाविव । अपुनात्पवित्रीकृतवान् ॥

३ ॥ तमिति । अर्थाञ्छब्दार्थान्दारसंग्रहादिक्रियाप्रयोजनानि विदन्तीत्यर्थविदः । तेषां वरः श्रेष्ठः पिता कुशस्तमतिथिमादौ प्रथमं कुलविद्यानामान्वीक्षिकीत्रयीवार्तादण्डनीतीनामर्थमभिधेयमग्राहयदबोधयत् । पश्चात्पार्थिवकन्यानां पाणिमग्राहयत्स्वीकारितवान् । उदवाहयदित्यर्थः ॥ ग्रहेर्ण्यन्तस्य सर्वत्र द्विकर्मकत्वमस्तीत्युक्तं प्राक् ॥

---

1. Kumudvati got from Kākutstha (*i. e.* Kus'a) a son named Atithi, as the intellectual faculties get clearness from (become clear in) the last quarter of the night.

2. He of incomparable lustre, blessed with a good father (who was eminent as son *i. e.* well bred up), purified his father's as will as his mother's family, as the sun with his incomparable splendour purifies both the north and the south paths.

3. His father, the best of the sensible people, first bade him (Atithi) receive the instructions in the hereditary lores (*i. e.*, the principal sciences requisite for a Kshatriya) and afterwards made him accept the hands of the daughters of kings.

---

1. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chà., Din., Val., Su., and Vijay., आप for प्राप.

3. A. D. with Sumativijaya °पुरः for °वरः.

जात्यस्तेनाभिजातेन शूरः शौर्यवता कुशः ।
अमन्यतैकमात्मानमनेकं वशिना वशी ॥ ४ ॥
स कुलोचितमिन्द्रस्य साहायकमुपेयिवान् ।
जघान समरे दैत्यं दुर्जयं तेन चावधि ॥ ५ ॥
तं स्वसा नागराजस्य कुमुदस्य कुमुद्वती ।
अन्वगात्कुमुदानन्दं शशाङ्कमिव कौमुदी ॥ ६ ॥

४ ॥ जात्य इति । जातौ भवो जात्यः कुलीनः शूरो वशी कुशोऽभिजातेन कुलीनेन ॥ "अभिजातः कुलीनः स्यात्" इत्यमरः ॥ शौर्यवता वशिना तेनातिथिना । करणेन । एकमात्मानम् । एको न भवतीत्यनेकस्तम् । अमन्यत ॥ सर्वगुणसाम्यादात्मजमात्मन एव रूपान्तरममंस्तेत्यर्थः ॥

५ ॥ स इति । स कुशः कुलोचितं कुलाभ्यस्तमिन्द्रस्य साहायकं सहकारित्वम् ॥ "योपधात्—" इत्यादिना वुञ् ॥ उपेयिवान्प्राप्तः सन्समरे नामतोऽर्थतश्च दुर्जयं दैत्यं जघानावधीत् । तेन दैत्येनावधि हतश्च ॥ "लुङि च" इति हनो वधादेशः ॥

६ ॥ तमिति । कुमुदस्य नाम नागराजस्य स्वसा कुमुद्वती कुशपत्नी । कुमुदानन्दं शशाङ्कं कौमुदी ज्योत्स्नेव । तं कुशमन्वगात् ॥ कुमुदस्तु । कुः पृथ्वी । तस्या मुत्प्रीतिः । सैवानन्दो यस्येति कुमुदानन्दः । परानन्देन स्वयमानन्दतीत्यर्थः ॥

---

4. The noble and brave Kus a who had controlled himself, thought his single self as more than one by means of that noble, brave and self-restraining son.

5. He (Kus a) went to the assistance of Indra in obedience to the custom of (*lit.* as was customary with) his family and killed, in a battle the demon Durjaya and was himself slain by him.

6. Him who took great delight in the satisfaction of the earth, followed Kumudvati the sister of Kumuda, the king of serpents, as moonlight takes delight in the moon, the joy of the lotuses.

---

4. B. D. I. जन्य: for जात्य:. Chāritravardhana, Dinakara and Sumativijaya notice the reading and say,—" जन्य: इति पाठे जन्यो जनक: ". D. L. with Su., शौर्यवता for शौर्यवता. D. वशिना for वशिना.

5. B. D. I. K. with Val., Su., and Vijay., सहायकं for साहायकं. A. D. K. with Din., अजय्यं, C. H. and Vijay., महाशं for दुर्जयं. Chāritravardhana and Sumativijaya notice the reading and say,—" कुत्रचित्पाठे अजय्यं इति तत्र अजय्यनामानं. " D. स: for च.

तयोर्दिवस्पतेरासीदेकः सिंहासनार्धभाक् ।
द्वितीयापि सखी शच्याः पारिजातांशभागिनी ॥ ७ ॥
तदात्मसंभवं राज्ये मन्त्रिवृद्धाः समादधुः ।
स्मरन्तः पश्चिमामाज्ञां भर्तुः सङ्ग्रामयायिनः ॥ ८ ॥
ते तस्य कल्पयामासुरभिषेकाय शिल्पिभिः ।
विमानं नवमुद्वेदि चतुःस्तम्भप्रतिष्ठितम् ॥ ९ ॥
तत्रैनं हेमकुम्भेषु संभृतैस्तीर्थवारिभिः ।
उपतस्थुः प्रकृतयो भद्रपीठोपवेशितम् ॥ १० ॥

७ ॥ तयोरिति । तयोः कुशकुमुद्वत्योर्मध्य एकः कुशो दिवस्पतेरिन्द्रस्य सिंहासनार्धं सिंहासनैकदेशः । तद्भागासीत् । द्वितीया कुमुद्वत्यपि शच्या इन्द्राण्याः पारिजातांशस्य भागिनी ग्राहिणी ॥ " संपृच—" इत्यादिना भजेर्घिनुण्प्रत्ययः॥ सख्यासीत् ॥ कस्कादित्वाद्दिवस्पतिः साधुः ॥

८ ॥ तदिति । सङ्ग्रामं यायिनो यास्यतः ॥ आवश्यकार्थे णिनिः ॥ " अकेनोर्भविष्यदाधमर्ण्ययोः " इति षष्ठीनिषेधः ॥ भर्तुः स्वामिनः कुशस्य पश्चिमामन्तिमामाज्ञां विपर्यये पुत्रोऽभिषेक्तव्य इत्येवंरूपां स्मरन्तो मन्त्रिवृद्धास्तदात्मसंभवमतिथिं राज्ये समादधुर्निदधुः ॥

९ ॥ त इति । ते मन्त्रिणस्तस्यातिथेरभिषेकाय शिल्पिभिरुद्वेद्युन्नतवेदिकं चतुःस्तम्भप्रतिष्ठितं चतुर्षु स्तम्भेषु प्रतिष्ठितं नवं विमानं मण्डपं कल्पयामासुः कारयामासुः ।

१० ॥ तत्रेति । तत्र विमाने भद्रपीठे पीठविशेष उपवेशितमेनमतिथिं हेमकुम्भेषु संभृतैः संगृहीतैस्तीर्थवारिभिः । करणैः । प्रकृतयो मन्त्रिण उपतस्थुः ॥

---

7. One of them (Kus'a) became a sharer of half the throne of the Lord of heavens (Indra) and the other (Kumudvati) too became a friend of S'achi, sharing with her a portion of Parijâta.

8. The old ministers remembering the last command of their king when going to the battle placed his son on the throne (*lit.* kingdom).

9. They with the help of the artists erected a new pavilion supported on four pillars with a raised *tapis* in it for the ceremony of his (Atithi's) coronation.

10. There in that pavilion the ministers attended on him who

---

7. D. च for अपि. C. H. I. K. R. with Val., Su., and Vijay., °भाजिनी for °भागिनी.

9. R. शालिभिः for शिल्पिभिः. D. L. वितानं for विमानं. Hemâdri notices the reading.

10. Hemâdri first reads the 11th verse and then the 10th of

नदद्भिः स्निग्धगम्भीरं तूर्यैराहतपुष्करैः ।
अन्वमीयत कल्याणं तस्याविच्छिन्नसंतति ॥ ११ ॥
दूर्वायवाङ्कुरप्लक्षत्वगभिन्नपुटोत्तरान् ।
ज्ञातिवृद्धैः प्रयुक्तान्स भेजे नीराजनाविधीन् ॥ १२ ॥
पुरोहितपुरोगास्तं जिष्णुं जैत्रैरथर्वभिः ।
उपचक्रमिरे पूर्वमभिषेक्तुं द्विजातयः ॥ १३ ॥

११ ॥ नदद्भिरिति । आहतं पुष्करं मुखं येषां तैः ॥ " पुष्करं करिहस्ताग्रे वाद्यभाण्डमुखेऽपि च " इत्यमरः ॥ स्निग्धं मधुरं गम्भीरं च नदद्भिस्तूर्यैस्तस्यातिथेरविच्छिन्नसंतत्यविच्छिन्नपारंपर्यं कल्याणं भावि शुभमन्वमीयतानुमितम् ॥

१२ ॥ दूर्वेति । सोऽतिथिः । दूर्वाश्च यवाङ्कुराश्च प्लक्षत्वचश्चाभिन्नपुटा बालपल्लवाश्चोत्तराणि प्रधानानि येषु तान् ॥ अभिन्नपुटानि मधूकपुष्पाणीति केचित् । कमलानीत्यन्ये ॥ ज्ञातिषु ये वृद्धास्तैः प्रयुक्तान्नीराजनाविधीन् । भेजे ॥

१३ ॥ पुरोहितेति । पुरोहितपुरोगाः पुरोहितप्रमुखा द्विजातयो ब्राह्मणा जिष्णुं

---

had taken his seat on a splendid throne with holy waters filled in the golden jars.

11. Happiness in a continuous train (unbroken continuation of happiness) with respect to him was inferred from the trumpets with their mouths blown making a deep and agreeable sound.

12. He enjoyed the rites of lustration of arms (Nirájaná ceremonies) consisting chiefly of young sprouts, the barks of banian trees, the sprouts of Yava-grass and Dúrvá shoots offered to him by his old kinsmen.

13. The Bráhmanas headed by the family priest, began to

---

our text. A. with Chá., भर्तृपीठोपवेशिनं, Cháritravardhana: " पितृसिंहासनस्थितं. " B. भद्रपीठ निवेशिनं, C. भद्रपीठप्रतिष्ठितं, D. भद्रपीठोपशोभितं, D_2. with Hem , Val., and Su., भद्रपीठनिवेशितं. E. H. K. R. with Vijay., भद्रपीठोपवेशिनं for भद्रपीठोपवेशितं.

11. B. D. प्रहत° for आहत°. B. व्युच्छिन्नसन्ततेः, D. E. H. K. with Val., Su., and the text only of Vijay., अविच्छिन्नसन्ततः for अविच्छिन्नसन्तति.

12. B. C. R. with Hem., Chá., Din., and Vijay., पुटोत्तरम्, D. °पटोत्तरान्, K. °पुटोत्तमान् for °पुटोत्तरान्. Cháritravardhana notices the reading of D. Ms. B. C. R. with Hem., Chá., Din., and the text only of Vijay., °वृद्धप्रयुक्तम्, D.E. H. I. L. with Su., and Vijay., °वृद्धप्रयुक्तान् for °वृद्धैः प्रयुक्तान्. D. च for सः. B. C. R. with Hem., Chá., Din., and Vijay., °विधिम् for °विधीन्.

13. A. D. with Hemádri द्विजोत्तमाः for द्विजातयः.

तस्यौघमहती मूर्ध्नि निपतन्ती व्यरोचत ।
सशब्दमभिषेकश्रीर्गङ्गेव त्रिपुरद्विषः ॥ १४ ॥
स्तूयमानः क्षणे तस्मिन्नलक्ष्यत स बन्दिभिः ।
प्रवृद्ध इव पर्जन्यः सारङ्गैरभिनन्दितः ॥ १५ ॥
तस्य सन्मन्त्रपूताभिः स्नानमद्भिः प्रतीच्छतः ।
ववृधे वैद्युतस्याग्नेर्वृष्टिसेकादिव द्युतिः ॥ १६ ॥

जलशीलं तमभिषिंचैर्जयशीलैरथर्वभिर्मन्त्रविशेषैः । करणैः । पूर्वमभिषेक्तुमुपचक्रमिरे ॥

१४ ॥ तस्येति । तस्यातिथेर्मूर्ध्नि सशब्दं निपतन्त्योघमहती महाप्रवाहा । अभिषिच्यतेऽनेनेत्यभिषेको जलम् । स एव श्रीः । यद्वा तस्य श्रीः समृद्धिस्त्रिपुरद्विषः शिवस्य मूर्ध्नि निपतन्ती गङ्गेव । व्यरोचत ॥ त्रयाणां पुराणां द्वेष्टीति विग्रहः ॥

१५ ॥ स्तूयमान इति । तस्मिन्क्षणेऽभिषेककाले बन्दिभिः स्तूयमानः सोऽतिथिः प्रवृद्धः प्रवृद्धवान् ॥ कर्तरि क्तः ॥ अत एव सारङ्गैश्चातकैरभिनन्दितः पर्जन्यो मेघ इव । अलक्ष्यत ॥

१६ ॥ तस्येति । सन्मन्त्रैः पूताभिः शुद्धाभिरद्भिः स्नानं प्रतीच्छतः कुर्वतस्तस्य । वृष्टिसेकात् । विद्युतोऽयं वैद्युतः । तस्याग्निरिन्धनस्याग्नेरिव । द्युतिर्ववृधे ॥

---

inaugurate by sprinkling with sacred water on him who was destined to achieve victories first with Atharva Mantras which effect victory.

14. The glorious coronation-water (*lit.* the splendour or abundance of the coronation water) which streamed abundantly while falling on his head accompanied by a noise shone like the Ganga big with its torrents, falling on the head of the enemy of the demon Tripura (S'iva).

15. At that time he appeared to have attained greatness being praised by panegyrists, like a cloud which is hailed by Chatakas.

16. The lustre of the king who was performing ablutions with waters purified by excellent (*i. e.* efficacious) Mantras, was

---

14. E. with Hemadri व्यराजत for व्यरोचत. A. अद्रेरघापहा for त्रिपुरद्विषः.

15. E. स्तूयमाने for स्तूयमानः. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Cha., Din., Val., Su., and Vijay., प्रवृद्धः for प्रवृद्धः. A. D. J. K. with Hemadri and the text only of Vijay., चातकैः for सारङ्गैः.

16. A. B. तन्मंत्रपूताभिः, K. सन्मंत्रपूजाभिः for सन्मंत्रपूताभिः.

स तावदभिषेकान्ते स्नातकेभ्यो ददौ वसु ।
यावत्तेषां समाप्येरन्यज्ञाः पर्याप्तदक्षिणाः ॥ १७ ॥
ते प्रीतमनसस्तस्मै यामाशिषमुदैरयन् ।
सा तस्य कर्मनिर्वृत्तैर्दूरं पश्चात्कृता फलैः ॥ १८ ॥
बन्धच्छेदं स बद्धानां वधार्हाणामवध्यताम् ।
धुर्याणां च धुरो मोक्षमदोहं चादिशद्गवाम् ॥ १९ ॥

१७ ॥ स इति । सोऽतिथिरभिषेकान्ते स्नातकेभ्यो गृहस्थेभ्यस्तावत्तावत्परिमाणं वसु धनं ददौ यावता वसुना तेषां स्नातकानां पर्याप्तदक्षिणाः समग्रदक्षिणा यज्ञाः समाप्येरन् । तावद्ददावित्यन्वयः ॥

१८ ॥ त इति । प्रीतमनसस्ते स्नातकास्तस्मा अतिथये यामाशिषमुदैरयन्नुदाहरन्साशीस्तस्यातिथेः कर्मनिर्वृत्तैः पूर्वपुण्यनिष्पन्नैः फलैः साम्राज्यादिभिर्दूरं दूरतः पश्चात्कृता । स्वफलदानस्य तदानीमनवकाशात्कालान्तरापेक्षणं न चकारेत्यर्थः ॥

१९ ॥ बन्धेति । सोऽतिथिर्बद्धानां बन्धच्छेदं वधार्हाणामवध्यताम् । धुरं वहन्तीति धुर्या बलीवर्दादयः । तेषां धुरो भारान्मोक्षं गवामदोहं वत्सानां पानार्थं दोहनिवृत्तिं चादिशदादिदेश ॥

---

enhanced like that of the lightning-fire from receiving the showers of rain.

17. At the conclusion of the inauguration ceremony he gave to the Snâtakâs as much wealth as would enable them to complete their own sacrificial ceremonies including liberal gifts (Dakshiná).

18. The blessing which they being greatly pleased in their mind pronounced on him, was kept aside as unnecessary by the fruits obtained by means of his own good deeds achieved in the former state of existence.

19. He ordered the cutting down of the fetters of prisoners to set them at liberty, freedom from death (inviolability) for those who deserved the scaffold, release from yoke to the beasts of burden and freedom from being milked for the cows.

---

17. C. E. H. K. R with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., यावत्तेषां, D. L. यावद्देषां for यावत्तेषां.

18. B. C. E. H. I. J. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and the text only of Vijay., उदैरयन् for उदैरयत. D. कर्मनिर्वृत्तै for कर्मनिर्वृत्तैः. H. पश्चाद्दूरं for दूरं पश्चात्.

19. A. B. C. with Hemâdri अशिषत् for अदिशत्.

क्रीडापतत्त्रिणोऽप्यस्य पञ्जरस्थाः शुकादयः ।
लब्धमोक्षास्तदादेशाद्यथेष्टगतयोऽभवन् ॥ २० ॥
ततः कक्ष्यान्तरन्यस्तं गजदन्तासनं शुचि ।
सोत्तरच्छदमध्यास्त नेपथ्यग्रहणाय सः ॥ २१ ॥
तं धूपाश्यानकेशान्तं तोयनिर्णिक्तपाणयः ।
आकल्पसाधनैस्तैस्तैरुपसेदुः प्रसाधकाः ॥ २२ ॥
तेऽस्य मुक्तागुणोन्नद्धं मौलिमन्तर्गतस्रजम् ।
प्रत्यूपुः पद्मरागेण प्रभामण्डलशोभिना ॥ २३ ॥

२० ॥ क्रीडेति । पञ्जरस्थाः शुकादयोऽस्यातिथेः क्रीडापतत्त्रिणोऽपि । किमुतान्ये इत्यपिशब्दार्थः । तदादेशात्तस्यातिथेः शासनाल्लब्धमोक्षाः सन्तो यथेष्टं गतिर्येषां ते स्वेच्छाचारिणोऽभवन् ॥

२१ ॥ तत इति । ततः सोऽतिथिर्नेपथ्यग्रहणाय प्रसाधनस्वीकाराय । कक्ष्यान्तरं हर्म्याङ्गणविशेषः ॥ " कक्ष्यां प्रकोष्ठे हर्म्यादेः " इत्यमरः ॥ तत्र न्यस्तं स्थापितं शुचि निर्मलं सोत्तरच्छदमास्तरणसहितं गजदन्तस्यासनं पीठमध्यास्त । तत्रोपविष्ट इत्यर्थः ॥

२२ ॥ तमिति । तोयेन निर्णिक्तपाणयः क्षालितहस्ताः प्रसाधका अलंकर्तारो धूपेन गन्धद्रव्यधूमेनाश्यानकेशान्तं शोषितकेशपाशान्तं तमतिथिं तैस्तैराकल्पस्य नेपथ्यस्य साधनैर्गन्धमाल्यादिभिरुपसेदुरुपतस्थुः ॥

२३ ॥ त इति । ते प्रसाधका मुक्तागुणेन मौक्तिकसरेणोन्नद्धमुद्बद्धमन्तर्गतस्रज-

---

20. Even pet birds such as parrots and others that were confined in cages (for his amusement or pleasure), being at once set at liberty by his order, became free to fly at their will.

21. Then he took his seat on a clean ivory stool arranged in the court-yard of his palace, with a cover (table cloth) on it, that he might receive his royal suit (that he might be decorated and dressed by his valets).

22. Valets-de-chamber, with the palms of their hands washed with water, attended on him who had the extremities of his hair somewhat dried by fumigations of incense, with various articles (means or objects) of decorations.

23. They adorned his crest-hair, fastened with pearl necklac-

---

21. C. D. H. I. K. L. R. with Hem., Cha., Din., Val., Su., and Vijay., कक्षान्तर°, E. and the text only of Su., कक्षान्तरं for कक्ष्यान्तर°.

22. E. H. धूमाश्यान° for धूपाश्यान°. I. K. R. with Val., and Su., प्रसाधिकाः for प्रसाधकाः. L. omits this verse.

23. C. D. H. I. K. R. with Hem., Val., Din., Su., and the

चन्दनेनाङ्गरागं च मृगनाभिसुगन्धिना ।
समापय्य ततश्चक्रुः पत्त्रं विन्यस्तरोचनम् ॥ २४ ॥
आमुक्ताभरणः स्रग्वी हंसचिह्नदुकूलवान् ।
आसीदतिशयप्रेक्ष्यः स राज्यश्रीवधूवरः ॥ २५ ॥

मस्यातिथेर्मौलिं धम्मिल्लं प्रभामण्डलशोभिना पद्मरागेण माणिक्येन प्रत्युपुः प्रत्युप्तं चक्रुः ॥

२४ ॥ चन्दनेनेति । किं च । मृगनाभ्या कस्तूर्या सुगन्धिना चन्दनेनाङ्गरागमङ्गविलेपनं समापय्य समाप्य ततोऽनन्तरं विन्यस्ता रोचना गोरोचना यस्मिंस्तत्पत्त्रं पत्त्ररचनं चक्रुः ॥

२५ ॥ आमुक्तेति । आमुक्ताभरण आसञ्जिताभरणः । स्रजोऽस्य सन्तीति स्रग्वी ॥ " अस्मायामेधास्रजो विनिः " इति विनिप्रत्ययः ॥ हंसाश्चिह्नमस्येति हंसचिह्नं यद्दुकूलं तद्वान् ॥ अत्र बहुव्रीहिणैवार्थसिद्धेर्मतुबानर्थक्येऽपि सर्वधनीत्यादिवत्कर्मधारयादपि मत्वर्थीयं प्रत्ययमिच्छन्ति । एवमन्यत्रापि द्रष्टव्यम् ॥ राज्यश्रीरेव वधूर्नवोढा तस्या वरो वोढा ॥ " वधूः स्नुषा नवोढा स्त्री वरो जामातृषिड्गयोः " इति विश्वः ॥ सोऽतिथिरतिशयेन प्रेक्ष्यो दर्शनीय आसीत् । वरोऽप्येवंविशेषणः ॥

---

es and interwoven with garlands, with rubies shining with an orb of bright splendour.

24. Then they finished the application of cometics to his body with sandle perfumed with musk and painted figures of leaves streaked with yellow pigment on his body.

25. With ornaments arranged on his person, bearing a chaplet and wearing a silk garment into which were woven figures of flamingoes, he who was the bridegroom of the bride-like Royal Fortune, looked very handsome.

---

text only of Vijay., तस्य for तस्य. B. C. E. H. with Hem., Val., Su., and Vijay., मुक्तागुणानद्धं, R. मुक्तागुणैर्नद्धं for मुक्तागुणानद्धं. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., अभ्यन्तरस्रजं for अन्तर्गतस्रजं. B. R. °वर्षिणा, C. with Hemádri °वर्तिना, D. L. with Vijay., °वर्द्धिना, D_2. I. °बन्धिना for °शोभिना.

24. A. C. with Cháritravardhana विरचय्य, E. R. समाराय for समापय्य. Cháritravardhana: " विरचय्य संराय. "

25. L. R. with Chá., and Din., आमुक्ताभरणं for आमुक्ताभरणः. And take it as an adverb. B. L. R. with Chá., and Din., °दुकूलभृत्, A. D. H. K. °दुकूलभाक् for °दुकूलवान्.

नेपथ्यदर्शिनश्छाया तस्यादर्शे हिरण्मये ।
विरराजोदिते सूर्ये मेरौ कल्पतरोरिव ॥ २६ ॥
स राजककुदव्यग्रपाणिभिः पार्श्ववर्तिभिः ।
ययावुदीरितालोकः सुधर्मानवमां सभाम् ॥ २७ ॥
वितानसहितं तत्र भेजे पैतृकमासनम् ।
चूडामणिभिरुद्घृष्टपादपीठं महीक्षिताम् ॥ २८ ॥

२६ ॥ नेपथ्येति । हिरण्मये सौवर्णे आदर्शे दर्पणे नेपथ्यदर्शिनो वेशं पश्यतस्तस्यातिथेश्छाया प्रतिबिम्बम् । उदिते सूर्ये दर्पणकल्पे मेरौ यः कल्पतरुस्तस्य छायेव । विरराज ॥ तस्य सूर्यसंक्रान्तबिम्बत्वासंभवान्मेरावित्युक्तम् ॥

२७ ॥ स इति । सोऽतिथी राजककुदानि राजचिह्नानि छत्त्रचामरादीनि ॥ “ प्राधान्ये राजलिङ्गे च वृषाङ्गे ककुदोऽस्त्रियाम् ” इत्यमरः ॥ तेषु व्यग्राः पाणयो येषां तैः पार्श्ववर्तिभिर्जनैरुदीरितालोक उच्चारितजयशब्दः । “ आलोको जयशब्दः स्यात् ” इति हलायुधः ॥ सुधर्माया देवसभाया अनवमामन्यूनां सभामास्थानीं ययौ ॥ “ स्यात्सुधर्मा देवसभा ” इत्यमरः ॥

२८ ॥ वितानेति । तत्र सभायां वितानेनोल्लोचेन सहितम् ॥ “ अस्त्री वितानमुल्लोचे ” इत्यमरः ॥ महीक्षितां राज्ञां चूडामणिभिः शिरोरत्नैरुद्घृष्टमुल्लेख्यं पादपीठं यस्य तत् । पितुरिदं पैतृकम् ॥ “ ऋतष्ठञ् ” इति ठञ्प्रत्ययः ॥ आसनं सिंहासनं भेजे ॥

---

26. When he examined his decorations, his image shone in the mirror that was made of gold, as does that of the Kalpa tree in the disc of the newly risen sun on mount Meru.

27. The king on whom the panegyric of praise was pronounced by the attendants walking at a distance round him, with their hands engaged in bearing the signs of Royalty, went to the court which was not inferior to the court of the immortals.

28. Then he took his seat on the imperial throne of his ancestors, furnished with a canopy and the footstool of which was rubbed over by the crest jewels of other kings.

---

26. B. C. D. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., नवे for उदिते. B. with Hemâdri मेरु° for मेरौ.

28. C. R. with Hemádri महीभुजाम्. D. K. with Val., and Su., महीभृताम् for महीक्षिताम्.

शुशुभे तेन चाक्रान्तं मङ्गलायतनं महत् ।
श्रीवत्सलक्षणं वक्षः कौस्तुभेनेव कैशवम् ॥ २९ ॥
बभौ भूयः कुमारत्वादाधिराज्यमवाप्य सः ।
रेखाभावादुपारूढः सामग्र्यमिव चन्द्रमाः ॥ ३० ॥
प्रसन्नमुखरागं तं स्मितपूर्वाभिभाषिणम् ।
मूर्तिमन्तममन्यन्त विश्वासमनुजीविनः ॥ ३१ ॥

२९ ॥ शुशुभ इति । तेन चाक्रान्तम् । श्रीवत्सो नाम गृहविशेषः । तल्लक्षणं श्रीवत्सरूपम् ॥ " श्रीवत्सनन्द्यावर्तादिविच्छन्दा बहवो द्वयोः " इति सज्जनः ॥ महदधिकं मङ्गलायतनं मङ्गलगृहं सभारूपम् । कौस्तुभेन मणिनाक्रान्तं श्रीवत्सलक्षणम् । केशवस्येदं कैशवम् । वक्ष इव । शुशुभे ॥

३० ॥ बभाविति । सोऽतिथिः कुमारत्वाद्भूयो यौवराज्यादनन्तरम् । अधिराजस्य भाव आधिराज्यं महाराज्यमवाप्य । रेखाभावादर्धेन्दुत्वमप्राप्यैव सामग्र्यमुपारूढः पूर्णतां गतश्चन्द्रमा इव । बभौ इति व्याख्यानम् । तदपि यौवराज्याभावनिश्चये ज्याय एव ॥

३१ ॥ प्रसन्नेति । प्रसन्नो मुखरागो मुखकान्तिर्यस्य तं स्मितपूर्वं यथा तथाभिभाषिणमाभाषणशीलं तमतिथिमनुजीविनो मूर्तिमन्तं विग्रहवन्तं विश्वासं विस्रम्भममन्यन्त ॥ " समौ विस्रम्भविश्वासौ " इत्यमरः ॥

---

29. And occupied by him the great auspicious hall (*i. e.* the hall containing auspicious things) of the palace called S'rivatsa shone even as the broad bosom of Kes'ava the seat of all auspicious things, conspicuous with S'rivatsa by the gem Kaustubha.

30. He having attained supreme power immediately after boyhood, shone very much even as would the moon who should become full immediately after the crescent.

31. The retinue thought him to be confidence in flesh and blood, the colour on whose face was brightened and who always addressed with a smile (*lit.* who spoke in a manner in which his words were preceded by a smile).

---

29. B. I. R. with Hem., Chā., Din., Val., Su., and Vijay., first read the 30th verse and then the 29th of our text. C. I. K. मण्डलायतनम् for मङ्गलायतनम्. E. K. with Val., and Su., केशवं for कैशवं.

30. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chā., Din., Val., Su., and Vijay., अधिराज्यं for आधिराज्यं. B. C. H. K. L. with Chā., Din., Su., and Vijay., लेखाभावात् for रेखाभावात्.

31. A. D. K. with Hem., Val., Din., and Su., भाषणं for भाषिणं. E. H. K. उपजीविनः for अनुजीविनः.

स पुरं पुरुहूतश्रीः कल्पद्रुमनिभध्वजाम् ।
क्रममाणश्चकार द्यां नागेनैरावतौजसा ॥ ३२ ॥
तस्यैकस्योच्छ्रितं छत्रं मूर्ध्नि तेनामलत्विषा ।
पूर्वराजवियोगौष्म्यं कृत्स्नस्य जगतो हृतम् ॥ ॥ ३३
धूमादग्नेः शिखाः पश्चादुदयादंशवो रवेः ।
सोऽतीत्य तेजसां वृत्तिं सममेवोत्थितो गुणैः ॥ ३४ ॥

३२ ॥ स इति । पुरुहूतश्रीः सोऽतिथिः कल्पद्रुमाणां निभाः समाना ध्वजा यस्यास्तां पुरमयोध्यामैरावतस्य ओज इवौजो बलं यस्य तेन नागेन कुञ्जरेण क्रममाणश्चरन् ॥ "अनुपसर्गाद्वा" इति वैकल्पिकमात्मनेपदम् ॥ द्यां चकार । स्वर्गलोकसदृशीं चकारेत्यर्थः ॥ "द्यौः स्वर्गसुरवर्त्मनोः" इति विश्वः ॥

३३ ॥ तस्येति । तस्यैकस्य मूर्ध्नि छत्रमुच्छ्रितमुन्नमितम् । अमलत्विषा तेन छत्रेण कृत्स्नस्य जगतः पूर्वराजस्य कुशस्य वियोगेन यदौष्म्यं संतापस्तद्धृतं नाशितम् । अत्र छत्रोन्नमनसंतापहरणलक्षणयोः कारणकार्ययोर्भिन्नदेशत्वादसंगतिरलंकारः । तदुक्तम्—"कार्यकारणयोर्भिन्नदेशत्वे सत्यसंगतिः" इति ॥

३४ ॥ धूमादिति । अग्नेर्धूमात्पश्चादनन्तरं शिखा ज्वालाः । रवेरुदयात्पश्चादनन्तरमंशवः । उत्तिष्ठन्त इति शेषः । सोऽतिथिस्तेजसामग्न्यादीनां वृत्तिं स्वभावमतीत्य गुणैः समं सहैवोत्थित उदितः ॥ अपूर्वमिदमित्यर्थः ॥

---

32. He whose bodily splendour was like that of Indra and who was parading on an elephant equal in strength with Airàvata through the capital the flags in which resembled the Kalpa trees, made it a second heaven.

33. The white umbrella was raised on the head of him alone; and by that umbrella the splendour of which was bright was removed the heat of affliction of the entire world consequent on the separation of the former king.

34. The flames rise from fire after smoke; the rays shoot forth after the sun's rise but he transcending the nature of luminous bodies rose up with all his qualities at once.

---

32. B. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., °ध्वजं for °ध्वजां. And construe it with पुरम्. B. with Châ., and the text only of Vijay., ऐरावणौजसा, D. L. नागनामिततेजसा for ऐरावतौजसा.

33. C. D. with Su., and Vijay., उद्धृतं for उच्छ्रितं. One of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुहितैषिणी also agrees with Sumativijaya and others. B. I. K. °गौष्मा, C. H. I. R. with Su., and Vijay., °गौष्णं for °गौष्म्यं. A. हतः, B. K. हृतः, D. J. and the text only of Vijay., हतं for हृतं.

34. B. धूमस्य for धूमात्. B. C. E. H. I. K. L, R. with Hem.,

तं प्रीतिविशदैर्नेत्रैरन्वयुः पौरयोषितः ।
शरत्प्रसन्नैर्ज्योतिर्भिर्विभावर्य इव ध्रुवम् ॥ ३५ ॥
अयोध्यादेवताश्चैनं प्रशस्तायतनार्चिताः ।
अनुदध्युरनुध्येयं सांनिध्यैः प्रतिमागतैः ॥ ३६ ॥
यावन्नाश्यायते वेदिरभिषेकजलाप्लुता ।
तावदेवास्य वेलान्तं प्रतापः प्राप दुःसहः ॥ ३७ ॥
वसिष्ठस्य गुरोर्मन्त्राः सायकास्तस्य धन्विनः ।
किं तत्साध्यं यदुभये साधयेयुर्न संगताः ॥ ३८ ॥

३५ ॥ तमिति । पौरयोषितः प्रीत्या विशदैः प्रसन्नैर्नेत्रैः करणैस्तमतिथिमन्वयुरनुजग्मुः । सदृष्टिप्रसारमद्राक्षुरित्यर्थः ॥ कथमिव । शरदि प्रसन्नैर्ज्योतिर्भिर्नक्षत्रैर्विभावर्यो रात्रयो ध्रुवमिव ॥ ध्रुवपाशबद्धत्वात्कालचक्रस्येत्यर्थः ॥

३६ ॥ अयोध्येति । प्रशस्तेष्वायतनेष्वालयेष्वर्चिता अयोध्यादेवताश्चानुध्येयमनुग्राह्यमेनमतिथिं प्रतिमागतैरर्चासंक्रान्तैः सांनिध्यैः संनिधानैरनुदध्युरनुजगृहुः ॥ "अनुध्यानमनुग्रहः" इत्युत्पलमालायाम् ॥ तदनुग्रहबुद्ध्या संनिदधुरित्यर्थः ॥

३७ ॥ यावदिति । अभिषेकजलैराप्लुता सिक्ता वेदिरभिषेकवेदिर्यावन्नाश्यायते न शुष्यति ॥ कर्तरि लट् ॥ तावदेवास्य राज्ञो दुःसहः प्रतापो वेलान्तं वेलापर्यन्तं प्राप ॥

३८ ॥ वसिष्ठस्येति । गुरोर्वसिष्ठस्य मन्त्राः ॥ धन्विनस्तस्यातिथेः सायकाः ।

35. The females of the citizens followed him with their eyes beaming with love, as the autumnal nights that are brightened by the shining stars follow the polar star.

36. And the deities of Ayodhyâ that were worshipped in spacious temples received him with favour, who so richly deserved that favour by means of their presence in the images.

37. Before the Vedi wet with the waters of inauguration was dried, his unbearable prowess (or valour) got to the extremity of the sea-shore (reached as far as the sea coast).

38. What attainable object would there be that the counsels

Châ., Din., Val., Su., and Vijay., शिष्या for शिष्या. B. C. K. with Su., तेजसः, L. R. with Hem., and Val., तेजसा for तेजसां.

35. D. K. प्रीतिविशदं for प्रीतिविशदैः. B. C. H. I. K. L. R. with Châ., Din., Su., Vijay., and the text only of Val., उडुपं for ध्रुवं.

37. B. भूमिः for वेदिः. B. C. E. I. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., and Vijay., °जलप्लुता, D. with Su., °परिप्लुता for जलाप्लुता.

38. H. with Vijay., यास्य for तस्य.

स धर्मस्थसखः शश्वदर्थिप्रत्यर्थिनां स्वयम् ।
ददर्श संशयच्छेद्यान्व्यवहारानतन्द्रितः ॥ ३९ ॥
ततः परमभिव्यक्तसौमनस्यनिवेदितैः ।
युयोज पाकाभिमुखैर्भृत्यान्विज्ञापनाफलैः ॥ ४० ॥
प्रजास्तद्गुरुणा नद्यो नभसेव विवर्धिताः ।
तस्मिंस्तु भूयसीं वृद्धिं नभस्ये ता इवाययुः ॥ ४१ ॥

इत्युभये संगताः सन्तो यत्साध्यं न साधयेयुस्तत्तादृक्साध्यं किम् । न किंचिदित्यर्थः ॥ तेषामसाध्यं नास्तीति भावः ॥

३९ ॥ स इति । धर्मे तिष्ठन्तीति धर्मस्थाः सभ्याः ॥ "राज्ञा सभासदः कार्या रिपौ मित्रे च ये समाः" इत्युक्तलक्षणाः ॥ तेषां सखा धर्मस्थसखः । तत्सहित इत्यर्थः । अतन्द्रितोऽनलसः स नृपः शश्वत् । अन्वहमित्यर्थः । अर्थिनां साध्यार्थवतां प्रत्यर्थिनां तद्विरोधिनां च संशयच्छेद्यान्संशयाद्धेतोश्छेद्यान्परिच्छेद्यान् । संदिग्धत्वादवश्यनिर्णेयानित्यर्थः । व्यवहारानृणादानादीन्विवादान्स्वयं ददर्शानुसंदधौ । न तु प्राड्विवाकमेव नियुक्तवानित्यर्थः ॥ अत्र याज्ञवल्क्यः—"व्यवहारान्स्वयं पश्येत्सभ्यैः परिवृतोऽन्वहम्" इति ॥

४० ॥ तत इति । ततः परं व्यवहारदर्शनानन्तरं भृत्याननुजीविनः । अभिव्यक्तं मुखप्रसादादिलिङ्गैः स्फुटीभूतं यत्सौमनस्यं स्वामिनः प्रसन्नत्वं तेन निवेदितैः सूचितैः पाकाभिमुखैः सिद्ध्युन्मुखैर्विज्ञापनानां विज्ञप्तीनां फलैः प्रेप्सितार्थैर्युयोज योजयामास ॥ अत्र बृहस्पतिः—"नियुक्तः कर्मनिष्पत्तौ विज्ञप्तौ च यदृच्छया । भृत्यान्धनैर्मानयंस्तु नवोऽप्यक्षोभ्यतां व्रजेत्" इति ॥ कविश्च वक्ष्यति—"अक्षोभ्यः—" इति । अत्र सौमनस्यफलयोजनादिभिर्नृपस्य वृक्षसमाधिर्ध्वन्यत इत्यनुसंधेयम् ॥

४१ ॥ प्रजा इति । प्रजास्तस्यातिथेर्गुरुणा पित्रा कुशेन । नभसा श्रावणमासेन

---

of his preceptor Vasistha and the unfailing arrows of that mighty bowman when united together could not attain (achieve) ?

39. He, the friend of the righteous, *himself* every day looked with great vigilance into those intricate cases of plaintiffs and defendants, which owing to their doubtful nature, necessarily deserved a prompt and careful decision.

40. After which, he conferred on his retinue the fruits of their requests which were soon to ripen and which were anticipated on account of (their lord's) cheerfulness manifesting itself.

41. The subjects that were aggrandised (increased) by his

---

39. B. L. with Châ. and Din., धर्मज्ञसखः for धर्मस्थसखः. B. H. I. K. R. with Val., and Vijay., °च्छेद्यान्. C. with Su., °च्छेदात्, D. L. with Châ. and Din., °च्छ्या, D. °च्छेदि for °च्छेद्यान्. Hemâdri notices the reading of Châritravardhana and others. B. अतन्द्रियः for अतन्द्रितः.
41. L. नभस्य इव तां ययुः for नभस्ये ता इवाययुः. D. K. च for तु.

यदुवाच न तन्मिथ्या यद्ददौ न जहार तत् ।
सोऽभूद्भग्नव्रतः शत्रूनुद्धृत्य प्रतिरोपयन् ॥ ४२ ॥
वयोरूपविभूतीनामेकैकं मदकारणम् ।
तानि तस्मिन्समस्तानि न तस्योत्सिषिचे मनः ॥ ४३ ॥
इत्थं जनितरागासु प्रकृतिष्वनुवासरम् ।
अक्षोभ्यः स नवोऽप्यासीद्दृढमूल इव द्रुमः ॥ ४४ ॥

नद्य इव । विवर्धिताः । तस्मिन्नतिथौ तु नभस्ये भाद्रपदे मासे ता इव नद्य इव भूयसीं वृद्धिमत्युच्छ्रयमाययुः । प्रजापोषणेन पितरमतिशायितवानित्यर्थः ॥

४२ ॥ यदिति । सोऽतिथिर्यद्वाक्यं दानत्राणादिविषयमुवाच तन्न मिथ्या । अनृतं नाभूत् । यद्वस्तु ददौ तन्न जहार न पुनरादत्ते ॥ किं तु शत्रूनुद्धृत्योत्खाय प्रतिरोपयन्पुनः स्थापयन्भग्नव्रतो भग्ननियमोऽभूत् ॥

४३ ॥ वय इति । वयोरूपविभूतीनां यौवनसौन्दर्यैश्वर्याणां मध्य एकैकं मदकारणं मदहेतुः । तानि मदकारणानि तस्मिन्राज्ञि समस्तानि । मिलितानीति शेषः । तथापि तस्यातिथेर्मनो नोत्सिषिचे न जगर्व ॥ सिञ्चतेः स्वरितेत्त्वादात्मनेपदम् ॥ अत्र वयोरूपादीनां गर्वहेतुत्वान्मदस्य च मदिराकार्यत्वेनातत्कारकत्वान्मदशब्देन गर्वो लक्ष्यत इत्याहुः ॥ उक्तं च—"ऐश्वर्यरूपतारुण्यकुलविद्याबलैरपि । इष्टलाभादिनान्येषामवज्ञा गर्व ईरितः ॥ मदस्त्वानन्दसंमोहः संभेदो मदिराकृतः" इति ॥ अत एव कविनापि "नोत्सिषिचे" इत्युक्तं न तु "न ममाद" इति ॥

४४ ॥ इत्थमिति । इत्थमनुवासरमन्वहं प्रकृतिषु प्रजासु जनितरागासु सतीषु स राजा नवोऽपि । दृढमूलो द्रुम इव । अक्षोभ्योऽप्रधृष्य आसीत् ॥

Sire, like rivers by the month of Srâvana, attained a greater prosperity under him as do the same rivers in Bhâdrapada.

42. What he spoke was never false; whatever he gave he did not take back; but he broke his vow by re-establishing his enemies after having rooted them up.

43. Any one of youth, beauty and wealth becomes a sufficient cause for pride. His mind, however, was not elate though all of these above mentioned things were perfectly united in him.

44. As a newly planted tree fixes its roots firm in the ground so this king, though new, began to fix day by day the roots (of

---

42. B. R. with Châ., Din., Val., and Su., उत्खाय for उद्धृत्य.

43. A. D. with Châ., and Su., तस्मिंस्तानि for तानि तस्मिन्. D. H. with Châ., and Din., समेतानि for समस्तानि. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., चास्य for तस्य. C. D. E. H. I. K. L. with Hem., Val., Su., and Vijay., उत्सिषिचुः for उत्सिषिचे.

44. D. H. R. बद्धमूलः for दृढमूल.

अनित्याः शत्रवो बाह्या विप्रकृष्टाश्च ते यतः ।
अतः सोऽभ्यन्तरान्नित्यान्षट्पूर्वमजयाद्रिपून् ॥ ४५ ॥
प्रसादाभिमुखे तस्मिंश्चपलापि स्वभावतः ।
निकषे हेमरेखेव श्रीरासीदनपायिनी ॥ ४६ ॥
कातर्यं केवला नीतिः शौर्यं श्वापदचेष्टितम् ।
अतः सिद्धिं समेताभ्यामुभाभ्यामन्वियेष सः ॥ ४७ ॥

४५ ॥ अनित्या इति । यतो बाह्याः शत्रवः प्रतिनृपा अनित्याः । द्विषन्ति स्निह्यन्ति चेत्यर्थः । किं च ते बाह्या विप्रकृष्टा दूरस्थाश्च । अतः सोऽभ्यतरानन्तर्वर्तिनो नित्याऽषड्रिपून्कामक्रोधादीन्पूर्वमजयत् ॥ अन्तःशत्रुजये बाह्या अपि न दुर्जया इति भावः ॥

४६ ॥ प्रसादेति । स्वभावतश्चपला चञ्चलापि श्रीः प्रसादाभिमुखे तस्मिन्नृपे । निकषे निकषोपले हेमरेखेव । अनपायिनी स्थिरासीत् ॥

४७ ॥ कातर्यमिति । केवला शौर्यवर्जिता नीतिः कातर्यं भीरुत्वम् । शौर्यं केवलमित्यनुषञ्जनीयम् । केवलं नीतिरहितं शौर्यं श्वापदचेष्टितम् । व्याघ्रादिचेष्टाप्रायमित्यर्थः ॥ "व्याघ्रादयो वनचराः पशवः श्वापदा मताः" इति हलायुधः ॥ अतो हेतोः सोऽतिथिः समेताभ्यां संगताभ्यामुभाभ्यां नीतिशौर्याभ्यां सिद्धिं जयप्राप्तिमन्वियेष गवेषितवान् ॥

---

his policy) deep into the hearts of his subjects who had engendered good-will for him; and in this way he became unassailable (to his enemies).

45. Since external enemies are not constant and dwell in a distant land, he conquered first the six constant internal enemies (*i. e.* the evil passions).

46. The Goddess of Fortune though naturally fickle was steady in him who was bent towards bestowing favors, like the streak of gold upon a touch-stone.

47. Politics (without bravery) is simply timidity; bravery (by itself without politics) resembles (*lit.* is) the conduct of beasts; for this reason he sought success by means of these political expedients united together.

---

45. I. मे for ते. D. I. K. with Chà., Din., and Val., सदा for यतः. E. अन्तर्गतान् for अभ्यन्तरान्.

46. C. K. L. with Hem., Val., Su., and Vijay., प्रसादसुमुखे, R. प्रसादसन्मुखे, D. I. प्रमादविमुखे for प्रसादाभिमुखे. Sumativijaya notices the reading. B. H. चटुलापि, C. K. चञ्चलापि for चपलापि. I. निकखे for निकषे. B. C. E. H. K. L. R. with Hem., Val., and Su., हेमलेखा, I. हेमलेषा for हेमरेखा. For 45th verse Chá., Din., and Vijay., read the following ;

न तस्य मण्डले राज्ञो न्यस्तप्रणिधिदीधितेः ।
अदृष्टमभवत्किंचिद्व्यभ्रस्येव विवस्वतः ॥ ४८ ॥
रात्रिंदिवविभागेषु यदादिष्टं महीक्षिताम् ।
तत्सिषेवे नियोगेन स विकल्पपराङ्मुखः ॥ ४९ ॥

४८ ॥ न तस्येति । न्यस्ताः सर्वतः प्रहिताः प्रणिधयश्चरा एव दीधितयो रश्मयो यस्य तस्य ॥ "प्रणिधिः प्रार्थने चरे" इति शाश्वतः ॥ तस्य राज्ञः । व्यभ्रस्य निर्मेघस्य विवस्वतः सूर्यस्येव । मण्डले स्वविषये किंचिदल्पमप्यदृष्टमज्ञातं नाभवन्नास्ति स्म ॥ स चारचक्षुषा सर्वमपश्यदित्यर्थः ॥

४९ ॥ रात्रिंदिवेति । रात्रौ च दिवा च रात्रिंदिवम् ॥ "अचतुर—" इत्यादिनाधिकरणार्थे द्वन्द्वेऽच्प्रत्ययान्तो निपातः । अव्ययान्तत्वादव्ययत्वम् । अत्र षष्ठ्यर्थलक्षणया रात्रिंदिवमिति । अहोरात्रयोरित्यर्थः ॥ तयोर्विभागा अंशाः प्रहरादयः । तेषु महीक्षितां राज्ञां यदादिष्टमिदमस्मिन्काले कर्तव्यमिति मन्वादिभिरुपदिष्टं तत्स राजा विकल्पपराङ्मुखः संशयरहितः सन् । नियोगेन निश्चयेन सिषेवे । अनुष्ठितवानित्यर्थः ॥ अत्र कौटिल्यः—" कार्याणां नियोगविकल्पसमुच्चया भवन्ति । अनेनैवोपायेन नान्येनेति नियोगः । अनेन वान्येन वेति विकल्पः । अनेन चेति समुच्चयः " इति ॥

---

48. Nothing in his territory was unseen by the king who threw rays (of political light) in the shape of spies all over country, as the sun that sees everything when free from the mist of clouds.

49. Whatever is ordained to be done to the rulers of the earth in the different divisions of the day and night, he, averse to hesitation, observed with a rigid resolve (with a firm determination).

" प्रमदाक्षादिविमुखं चपलापि स्वभावतः । निकषे हेमलेखेव श्रीरस्मिन्ननपायिनी " ॥ Chāritravardhana's comments run thus :—" प्रमदाः स्त्रियः अक्षा मृगयादयः सप्तव्यसनानि तद्विमुखं रहितं तस्मिन्राजनि स्वभावतः प्रकृतेश्चपलापि श्रीर्लक्ष्मीर्निकषे घर्षणपाषाणे हेम्नः स्वर्णस्य लेखेवानपायिनी स्थिरीभूता बभूव ॥ उक्तञ्च ॥ " स्त्रियोऽक्षा-मृगयापानं वाक्पारुष्यं च पञ्चमं । महच्च दण्डपारुष्यमर्थदूषणमेव च " इति सप्तप्रमादाः इति " ॥ Sumativijaya also notices this spurious verse.

48. B. C. H. K. L. with Chá., Din., and Su., राज्ञां for राज्ञः R. अदृश्यम् for अदृष्टम्. D. K. नभस्य for व्यभ्रस्य.

49. B. K. °दिनविभागेन, D. with Val., Su., and Vijay., दिवविभागेन for °दिवविभागेषु. D. K. R. with Su., महाभृतां for महीक्षितां. C. with Vijay., °मुखः for °मुखः.

मन्त्रः प्रतिदिनं तस्य बभूव सह मन्त्रिभिः ।
स जातु सेव्यमानोऽपि गुप्तद्वारो न सूच्यते ॥ ५० ॥
परेषु स्वेषु च क्षिप्तैरविज्ञातपरस्परैः ।
सोऽपसर्पैर्जजागार यथाकालं स्वपन्नपि ॥ ५१ ॥
दुर्गाणि दुर्ग्रहाण्यासंस्तस्य रोद्धुरपि द्विषाम् ।
न हि सिंहो गजास्कन्दी भयाद्गिरिगुहाशयः ॥ ५२ ॥

५० ॥ मन्त्र इति । तस्य राज्ञः प्रतिदिनं मन्त्रिभिः सह मन्त्रो विचारो बभूव । स मन्त्रः सेव्यमानोऽप्यन्वहमावर्त्यमानोऽपि ॥ जातु कदाचिदपि न सूच्यते न प्रकाश्यते ॥ तत्र हेतुर्गुप्तद्वार इति ॥ संवृतेङ्गिताकारादिज्ञानमार्ग इत्यर्थः ॥

५१ ॥ परेष्विति । यथाकालमुक्तकालानतिक्रमेण स्वपन्नपि सोऽतिथिः परेषु शत्रुषु स्वेषु स्वकीयेषु च । मन्त्र्यादितीर्थेष्विति शेषः । क्षिप्तैः प्रहितैरविज्ञाताः परस्परं येषां तैः । अन्योन्याविज्ञातैरित्यर्थः । अपसर्पैश्चरैः ॥ “ अपसर्पश्चरः स्पशः ” इत्यमरः ॥ जजागार बुद्धवान् । चारमुखेन सर्वदा सर्वमज्ञासीदित्यर्थः ॥ अत्र कामन्दकः—“ चारांश्च चारयेत्तीर्थेष्वात्मनश्च परस्य च । पाषण्डयादीनविज्ञातानन्योन्यमितरैरपि ” इति ॥

५२ ॥ दुर्गाणीति । द्विषां रोद्धृ रोधकस्यापि । न तु स्वयं रोध्यस्येत्यर्थः । तस्य राज्ञो दुर्ग्रहाणि परैर्दुर्धर्षाणि दुर्गाणि महीदुर्गादीन्यासन् । न च निर्भीकस्य किं दुर्गैरिति वाच्यमित्यर्थान्तरन्यासमुखेनाह—न हीति । गजानास्कन्दति हिन-

50. Every day he held a consultation with his ministers and although it was cogitated every day, never was it divulged, having its passages well-secured.

51. Though sleeping at the proper time he was kept awake by means of his spies, who were ignorant of each other's office and who were specially deputed to move among his enemies and his friends.

52. Though confronting his enemies, his forts were difficult to be assailed; for a lion, the destroyer of the elephants, does not

50. B. न जातु for स जातु. H. गुप्ताचारः for गुप्तद्वारः. B. with Hemádri स्म for न. One of the three Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी agrees with Hemádri and others.

51. D. H. J. निक्षिप्तैः for च क्षिप्तैः. D. K. यथाकालस्वपन्नपि for यथाकालं स्वपन्नपि.

52. D. with Hemádri दुर्गमाणि for दुर्ग्रहाणि. B. I. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., first read the 53rd verse and then the 54th and finally the 52nd verse of our text.

भव्यमुख्याः समारम्भाः प्रत्यवेक्ष्या निरत्ययाः ।
गर्भशालिसधर्माणस्तस्य गूढं विपेचिरे ॥ ५३ ॥
अपथेन प्रववृते न जातूपचितोऽपि सः ।
वृद्धौ नदीमुखेनैव प्रस्थानं लवणाम्भसः ॥ ५४ ॥

स्तीति गजास्कन्दी सिंहो भयाद्भीतः । गिरिगुहासु शेत इति । गिरिगुहाशयो न हि । किं तु स्वभावत एवेति शेषः ॥ " अधिकरणे शेतेः " इत्यच्प्रत्ययः ॥ अत्र मनुः—" धन्वदुर्गं महीदुर्गमब्दुर्गं वार्क्ष्यमेव वा । नृदुर्गं गिरिदुर्गं वा समाश्रित्य वसेद्बुधः " इति ॥

॥ ५३ ॥ भव्येति । भव्यमुख्याः कल्याणप्रधानाः । न तु विपरीताः । प्रत्यवेक्ष्या एतावत्कृतमेतावत्कर्तव्यमित्यनुसंधानेन विचारणीयाः । अत एव निरत्यया निर्बाधा गर्भेऽभ्यन्तरे पच्यन्ते ये शालयस्तेषां सधर्माणः । अतिनिगूढा इत्यर्थः ॥ " धर्मादनिच्केवलात् " इत्यनिच्प्रत्ययः समासान्तः ॥ तस्य राज्ञः समारभ्यन्त इति समारम्भाः कर्माणि गूढमप्रकाशं विपेचिरे । फलिता इत्यर्थः ॥ " फलानुमेयाः प्रारम्भाः " इति भावः ॥

५४ ॥ अपथेनेति । सोऽतिशयितमुपचितोऽपि वृद्धिं गतोऽपि सन् । जातु कदाचिदप्यपथेनोन्मार्गेण न प्रववृते न प्रवृत्तः । मर्यादां न जहावित्यर्थः ॥ तथा हि । लवणाम्भसो लवणसागरस्य वृद्धौ पूरोत्पीडे सत्यां नदीमुखेनैव नदीप्रवेशमार्गेणैव प्रस्थानं निःसरणम् । न त्वन्यथेत्यर्थः ॥

---

lie in a mountain-cave through fear (*i. e.* as a lion lies in a cave not through any fear, so he retired to his castles not because he was afraid of his enemies).

53. His actions, which were aimed at the acquisition of prosperity, which were full of mature judgment (*lit.* to be taken care of) and hence free from any calamity, and which therefore had the nature of S'áli rice which become ripe in the interior, bore fruit unobserved.

54. Though grown powerful he did not at all proceed by a wrong path; the ocean though in its full tide has a discharge only through the mouth of a river.

---

53. C. R. शालिगर्भसधर्माणः for गर्भशालिसधर्माणः.

54. A. with Su., अपथेन प्रवृत्तोऽभूत्, D. K. and the texts only of Val., and Vijay., अपथेन प्रवृत्तेन for अपथेन प्रववृते. E. स for न. E. सन् for सः. D. H. K. L. with Hem., and Val., इव for एव. D. with Hem., and Chà., सरितांपतेः for लवणाम्भसः.

कामं प्रकृतिवैराग्यं सद्यः शमयितुं क्षमः ।
यस्य कार्यः प्रतीकारः स तन्नैवोदपादयत् ॥ ५५ ॥
शक्येष्वेवाभवद्यात्रा तस्य शक्तिमतः सतः ।
समीरणसहायोऽपि नाम्भःप्रार्थी दवानलः ॥ ५६ ॥
न धर्ममर्थकामाभ्यां बबाधे न च तेन तौ ।
नार्थं कामेन कामं वा सोऽर्थेन सदृशस्त्रिषु ॥ ५७ ॥

५५ ॥ काममिति ॥ प्रकृतिवैराग्यं प्रजापरागम् । दैवादुत्पन्नमपीति शेषः । सद्यः कामं सम्यक्शमयितुं प्रतिकर्तुं क्षमः शक्तः स राजा यस्य प्रकृतिवैराग्यस्य प्रतीकारः कार्यः कर्तव्यः । अनर्थहेतुत्वादित्यर्थः । तद्वैराग्यं नोदपादयत् । उत्पन्नप्रतीकारादनुत्पादनं वरमिति भावः ॥ अत्र कौटिल्यः—“ क्षीणाः प्रकृतयो लोभं लुब्धा यान्ति विरागताम् । विरक्ता यान्त्यमित्रं वा भर्तारं घ्नन्ति वा स्वयम् ” ॥ तस्मात्प्रकृतीनां विरागकारणानि नोत्पादयेदित्यर्थः ॥

५६ ॥ शक्येष्विति । शक्तिमतः शक्तिसंपन्नस्यापि सतस्तस्य राज्ञः शक्येषु शक्तिविषयेषु स्वस्माद्धीनबलेष्वेव विषये यात्रा दण्डयात्राभवत् । न तु समधिकेष्वित्यर्थः ॥ तथा हि । समीरणसहायोऽपि दवानलोऽम्भःप्रार्थी जलान्वेषी न दग्धुमिति शेषः । किं तु तृणकाष्ठादिकमेवान्विष्यतीत्यर्थः ॥ अत्र कौटिल्यः— “ समज्यायोभ्यां संदधीत हीनेन विगृह्णीयात् ” इति ॥

५७ ॥ न धर्ममिति । स राजार्थकामाभ्यां धर्मं न बबाधे न नाशितवान् । तेन धर्मेण च तावर्थकामौ न । अर्थं कामेन कामं वार्थेन न बबाधे ॥ एकत्रैवासक्तो नाभूदित्यर्थः । किं तु त्रिषु धर्मार्थकामेषु सदृशस्तुल्यवृत्तिः । अभूदिति शेषः ॥

---

55. Although he was able to suppress immediately any disaffection among his subjects, he did not, at all, occasion that for which a remedy would have to be called forth (or devised).

56. Although this king was powerful his expeditions were especially on those only who were in the reach of his power ; for, a forest-conflagration though it has the wind for its companion does not seek for burning water.

57. He did not violate duty for the sake of wealth and desire; nor these two for the sake of that duty ; neither did he overlook

---

55. A. D. E. H. I. K. L. R. with Su., and Vijay., उपपादयेत् for उदपादयत्. Hemâdri first reads the 56th verse and then the 55th of our text.

56. D. K. दवो ऽनलः for दवानलः. One of the three Mss. of Châritravardhana's शिशुहितैषिणी agrees with D. K.

57. D. J. L. with Val., Su., and Vijay., च for वा. K. सोऽर्थेषु for सोऽर्थेन.

हीनान्यनुपकर्तॄणि प्रवृद्धानि विकुर्वते ।
तेन मध्यमशक्तीनि मित्राणि स्थापितान्यतः ॥ ५८ ॥
परात्मनोः परिच्छिद्य शक्त्यादीनां बलाबलम् ।
ययावेभिर्बलिष्ठश्चेत्परस्मादास्त सोऽन्यथा ॥ ५९ ॥
कोशेनाश्रयणीयत्वमिति तस्यार्थसंग्रहः ॥
अम्बुगर्भो हि जीमूतश्चातकैरभिनन्द्यते ॥ ६० ॥

५८ ॥ हीनानीति । मित्राणि हीनान्यतिक्षीणानि चेदनुपकर्तॄण्यनुपकारीणि ; प्रवृद्धान्यतिसमृद्धानि चेद्विकुर्वते विरुद्धं चेष्टन्ते । अपकुर्वत इत्यर्थः ॥ " अकर्मकाच्च " इत्यात्मनेपदम् ॥ अतःकारणात्तेन राज्ञा मित्राणि सुहृदः ॥ " मित्रं सुहृदि मित्रोऽर्के " इति विश्वः ॥ मध्यमशक्तीनि नातिक्षीणोच्छ्रितानि यथा तथा स्थापितानि ॥

५९ ॥ " शक्येष्वेवाभवद्यात्रा " इत्यादिनोक्तमर्थं सोपस्करमाह ॥ परेति । सोऽतिथिः परात्मनोः शत्रोरात्मनश्च शक्त्यादीनां शक्तिदेशकालादीनां बलाबलं न्यूनाधिकभावं परिच्छिद्य निश्चित्य । एभिः शक्त्यादिभिः परस्माच्छत्रोर्बलिष्ठः स्वयमतिशयेन बलवांश्चेत् ॥ बलशब्दान्मतुबन्तादिष्ठन्प्रत्ययः ॥ " विन्मतोर्लुक् " इति मतुपो लुक् ॥ ययौ यात्रां चक्रे । अन्यथा न बलिष्ठश्चेदास्त अतिष्ठत् । न ययावित्यर्थः॥ अत्र मनुः—" यदा मन्येत भावेन हृष्टं पुष्टं बलं स्वकम् । परस्य विपरीतं चेत्तदा यायाद्रिपून्प्रति । यदा तु स्यात्परिक्षीणो वाहनेन बलेन च । तदासीत प्रयत्नेन शनकैः सान्त्वयन्नरीन् " इति ॥

६० ॥ कोशेनेति । कोशेनार्थचयेनाश्रयणीयत्वं भजनीयत्वम् । भवतीति शेषः ।

---

wealth for the sake of desire, nor desire for the sake of wealth ; for he was just in his dealings with these three objects of world.

58. Friends when kept in low position can never return favours; when kept in high rank they begin to act in a hostile way towards him; for this reason he placed his friends in an intermediate position (*lit.* power).

59. Having formed a just estimate of the military power, circumstances, time and others of his own and as well as that of his enemy, he made an invasion on him if he thought himself more powerful than him (his enemy), if otherwise he remained silent.

60. " A man becomes adorable (worthy of worship) on ac-

---

58. D. I. and the text only of Vijay., अनुपकारीणि for अनुपकर्तॄणि. **C.** विवृद्धानि for प्रवृद्धानि.

59. L. व्यतिच्छिद्य for परिच्छिद्य. A. R. अतिविशिष्टः, I. अभिविशिष्टः, B. with Val., and Vijay., अरिं विशिष्टः, D. H. K. L. with Hem., and Su., अरीन् विशिष्टः for एभिर्बलिष्ठः.

60. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Cha., Din., Val., Su.,

परकर्मापहः सोभूदुद्यतः स्वेषु कर्मसु ।
आवृणोदात्मनो रन्ध्रं रन्ध्रेषु प्रहरन्रिपून् ॥ ६१ ॥
पित्रा संवर्धितो नित्यं कृतास्त्रः सांपरायिकः ।
तस्य दण्डवतो दण्डः स्वदेहान्न व्यशिष्यत ॥ ६२ ॥

इति हेतोस्तस्य राज्ञः । कर्तुः । अर्थसंग्रहः । न तु लोभादित्यर्थः ॥ तथा हि । अम्बु गर्भे यस्य सोऽम्बुगर्भः । जीवनस्य जलस्य मूतः पुटबन्धो जीमूतो मेघः ॥ "मूङ् बन्धने" ॥ पृषोदरादित्वात्साधुः ॥ न तु कर्तरि क्तः ॥ चातकैरभिनन्द्यते सेव्यते ॥ अत्र कामन्दकः—"धर्महेतोस्तथार्थाय भृत्यानां रक्षणाय च । आपदर्थं च संरक्ष्यः कोशो धर्मवता सदा" इति ॥

६१ ॥ परकर्मेति । स राजा परेषां कर्माणि सेतुवार्त्तादीन्यपहन्तीति परकर्मापहः सन् ॥ "अन्येष्वपि दृश्यते" इत्यपिशब्दसामर्थ्याद्धन्तेर्डप्रत्ययः ॥ स्वेषु कर्मसूद्यत उद्युक्तोऽभूत् । किं च । रिपून्रन्ध्रेषु प्रहरन्नात्मनो रन्ध्रं व्यसनादिकमावृणोत्संवृतवान् ॥ अत्र मनुः—"नास्य च्छिद्रं परो विद्याद्विद्याच्छिद्रं परस्य तु । गूहेत्कूर्म इवाङ्गानि रक्षेद्विवरमात्मनः" इति ॥

६२ ॥ पित्रेति । दण्डो दमः सैन्यं वा । तद्वतो दण्डवतो दण्डसंपन्नस्य तस्य राज्ञः पित्रा कुशेन नित्यं संवर्धितः पुष्टः कृतास्त्रः शिक्षितास्त्रः । संपरायो युद्धम् ॥ "युद्धायत्योः संपरायः" इत्यमरः ॥ तमर्हतीति सांपरायिकः ॥ "तदर्हति" इति ठक्प्रत्ययः ॥ दण्डः सैन्यम् ॥ "दण्डो यमे मानभेदे लगुडे दमसैन्ययोः" इति

---

count of his possessing treasury of wealth," with this thought he amassed immense wealth; for a cloud when its interior is filled with water is hailed with joy by Chátaka birds (and not otherwise).

61. He destroying the enterprises of his enemies was intent on the performance of his own actions. He striking his enemies in their weak points, concealed his own defects with great care.

62. The vast army of that king who had curbed his senses, which was constantly increased by his father, which had a perfect training in the art of missile and which was only living upon war,

---

and Vijay., कोशात् for कोशेन. A. B. with Vijay., अतः for इति. A. I. L. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., अभिगम्यते, D. अनुगम्यते, E. K. अभिनिंद्यते for अभिनंद्यते.

61. A. D. and the text only of Vijay., आत्मनो ह्यावृणोत् for आवृणोदात्मनः. B. C. L. with Hem., Val., and Su., रन्ध्रं च for रन्ध्रेषु. B. C. H. I. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., प्राहरत् for प्रहरन्. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., द्विषां for रिपून्.

62. D. पितृ॰ for पित्रा. D. K. सांपरायणः for सांपरायिकः. A. D. K. नातिशिष्यत for न व्यशिष्यत.

सर्पस्येव शिरोरत्नं नास्य शक्तित्रयं परः ।
स चकर्ष परस्मात्तदयस्कान्त इवायसम् ॥ ६३ ॥
वापीष्विव स्रवन्तीषु वनेषूपवनेष्विव ।
सार्थाः स्वैरं स्वकीयेषु चेरुर्वेश्मस्विवाद्रिषु ॥ ६४ ॥
तपो रक्षन्स विघ्नेभ्यस्तस्करेभ्यश्च संपदः ।
यथास्वमाश्रमैश्चक्रे वर्णैरपि षडंशभाक् ॥ ६५ ॥

विश्वः ॥ स्वदेहान्न व्यशिष्यत नाभिद्यत ॥ स्वदेहेऽपि विशेषणानि योज्यानि । मूलबलं स्वदेहमिवारक्षदित्यर्थः ॥

६३ ॥ सर्पस्येति । सर्पस्य शिरोरत्नमिवास्य राज्ञः शक्तित्रयं परः शत्रुर्न चकर्ष । स तु परस्माच्छत्रोस्तच्छक्तित्रयम् । अयस्कान्तो मणिविशेष आयसं लोहविकारमिव । चकर्ष ॥

६४ ॥ वापीष्विति । स्रवन्तीषु नदीषु वापीष्विव दीर्घिकास्विव वनेष्वरण्येषूपवनेष्वारामेष्विव ॥ "वापी तु दीर्घिका" । "आरामः स्यादुपवनम्" इति चामरः ॥ अद्रिषु स्वकीयेषु वेश्मस्विव । सार्था वणिक्प्रभृतयः स्वैरं स्वेच्छया चेरुश्चरन्ति स्म ॥

६५ ॥ तप इति । विघ्नेभ्यस्तपो रक्षन् । तस्करेभ्यः संपदश्च रक्षन् । स राजा आश्रमैर्ब्रह्मचर्यादिभिर्वर्णैरपि ब्राह्मणादिभिश्च यथास्वं स्वमनतिक्रम्य षडंशभाक्चक्रे ॥ यथाक्रममाश्रमैस्तपसो वर्णैः संपदां च षष्ठांशभाक्कृत इत्यर्थः ॥ षष्ठोंऽशः षडंशः ॥ संख्याशब्दस्य वृत्तिविषये पूरणार्थत्वमुक्तं प्राक् ॥

---

did not differ from his own body which was constantly brought up by his sire, which was trained in the art of missile and which was looking upon war as its principle of life.

63. The enemy could not take away from him his three-fold power, as no one can take away the hood-jem of a serpent; but he took away that three-fold power from his enemy, as a loadstone (the magnet) draws away iron.

64. The caravans wandered at ease over mountains as if they were their own houses, over rivers as if they were wells and over forests as if they were gardens.

65. Protecting asceticism from obstacles and wealth from robbers that king was made the enjoyer of one-sixth of their earnings

---

63. R. परस्थं for परस्मात्.

64. H. with Hemâdri च for इव. D. L. स्वैरं सार्थाः for सार्थाः स्वैरं. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Cha., Din., Val., Su., and Vijay., नदीयेषु for स्वकीयेषु.

65. A. B. C. H. K. L. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., इव for अपि.

खनिभिः सुषुवे रत्नं क्षेत्रैः सस्यं वनैर्गजान् ।
दिदेश वेतनं तस्मै रक्षासदृशमेव भूः ॥ ६६ ॥
स गुणानां बलानां च षण्णां षण्मुखविक्रमः ।
बभूव विनियोगज्ञः साधनीयेषु वस्तुषु ॥ ६७ ॥
इति क्रमात्प्रयुञ्जानो राजनीतिं चतुर्विधाम् ।
आ तीर्थादप्रतीघातं स तस्याः फलमानशे ॥ ६८ ॥

६६ ॥ खनिभिरिति । भूर्भूमिस्तस्मै राज्ञे रक्षासदृशं रक्षणानुरूपमेव वेतनं भृतिं दिदेश ददौ ॥ कथम् । खनिभिराकरैः ॥ "खनिः स्त्रियामाकरः स्यात्" इत्यमरः ॥ रत्नं माणिक्यादिकं सुषुवेऽजीजनत् । क्षेत्रैः सस्यम् । वनैर्गजान्हस्तिनः सुषुवे ॥

६७ ॥ स इति । षण्मुखविक्रमः स राजा षण्णां गुणानां संधिविग्रहादीनां बलानां मूलभृत्यादीनां च साधनीयेषु वस्तुषु साध्येष्वर्थेषु विनियोगं जानातीति विनियोगस्य ज्ञ इति वा विनियोगज्ञः ॥ कर्मविवक्षायामुपपदसमासः ॥ "आतोऽनुपसर्गे कः" इति कप्रत्ययः ॥ शेषविवक्षायां षष्ठीमासः ॥ "इगुपध-" इत्यादिना कप्रत्ययः ॥ बभूव ॥ "इदमत्र प्रयोक्तव्यम्" इत्याद्यज्ञासीदित्यर्थः ॥

६८ ॥ इतीति । इति चतुर्विधाम् । सामाद्युपायैरिति शेषः । राजनीतिं दण्डनीतिं क्रमात्सामादिक्रमादेव प्रयुञ्जानः स राजा आ तीर्थान्मन्त्राद्यष्टादशात्मकतीर्थपर्यन्तम् ॥ "योनौ जलावतारे च मन्त्र्याद्यष्टादशस्वपि । पुण्यक्षेत्रे तथा पात्रे तीर्थं स्यात्" इति हलायुधः ॥ तस्या नीतेः फलमप्रतीघातमप्रतिबन्धं यथा तथा-

---

respectively by the As'ramas as he was by the different castes according to their respective capacities.

66. The earth gave him remuneration in proportion to its protection by him; it produced for him jewels from mines, corn from Ꮛ rn-fields and elephants from forests.

67. He whose prowess was like that of Kàrtikeya knew how to utilize the six political expedients as well as the six kinds of forces towards objects that were to be secured.

68. In this way employing the four-fold administration of government necessary to a king in its due order, as far as the eighteen Tirthas, he obtained its uninterrupted fruit (advantage).

---

66. H. खनिभ्यः for खनिभिः. E. I. R. with Hemàdri सुखुवे for सुषुवे. B. R. गजाः for गजान्.

67. B. R. with Chà., and Din., स बलानां गुणानां च, D. गुणानां च बलानां च for स गुणानां बलानां च. D. and the text only of Vijay., षण्मुष° for षण्मुख.° D. with Su., कर्मसु for वस्तुषु.

68. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Chà., Din., Val., and Vijay., दण्डनीतिं for राजनीतिं.

कूटयुद्धविधिज्ञेऽपि तस्मिन्सन्मार्गयोधिनि ।
भेजेऽभिसारिकावृत्तिं जयश्रीर्वीरगामिनी ॥ ६९ ॥
प्रायः प्रतापभग्नत्वादरीणां तस्य दुर्लभः ।
रणो गन्धद्विपस्येव गन्धभिन्नान्यदन्तिनः ॥ ७० ॥
प्रवृद्धौ हीयते चन्द्रः समुद्रोऽपि तथाविधः ।
स तु तत्समवृद्धिश्च न चाभूत्ताविव क्षयी ॥ ७१ ॥

वशे प्राप्तवान् ॥ " मंत्रादिषु यमुद्दिश्य य उपायः प्रयुज्यते । स तस्य फलति " इत्यर्थः ॥

६९ ॥ कूटेति । कूटयुद्धविधिज्ञेऽपि कपटयुद्धप्रकाराभिज्ञेऽपि सन्मार्गेण योधिनि धर्मयोद्धरि तस्मिन्नतिथौ वीरगामिनी जयश्रीरभिसारिकावृत्तिं भेजे ॥ "कान्तार्थिनी तु या याति संकेतं साभिसारिका " इत्यमरः ॥ जयश्रीस्तमनन्यगामिन्यागच्छदित्यर्थः ॥

७० ॥ प्राय इति । अरीणां सर्वेषामपि प्रतापेनातिनिजसैव भग्नत्वात्तस्य राज्ञः गन्धेन मदगन्धेनैव भिन्ना भग्ना अन्ये दन्तिनो येन तस्य गन्धद्विपस्येव । प्रायः प्रायेण रणो दुर्लभः ॥ खलर्थयोगेऽपि शेषविवक्षायां षष्ठीमिच्छन्तीत्युक्तम् ॥

७१ ॥ प्रवृद्धाविति । प्रवृद्धौ सत्यां चन्द्रो हीयते समुद्रोऽपि तथाविधश्चन्द्रवदेव प्रवृद्धौ हीयते । स राजा तु ताभ्यां चन्द्रसमुद्राभ्यां समा वृद्धिर्यस्य स तत्समवृद्धिश्चाभूत् । तौ चन्द्रसमुद्राविव क्षयी ॥ " जिदृक्षि— " इत्यादिनेनिप्रत्ययः ॥ नाभूत् ॥

---

69. The Goddess of victory, that always resorts to a hero, attended in the capacity of an Abhisáriká (a female who goes to a lover by stealth) on him who fought always in the right way though he was skilful in the art of fraudulent warfare.

70. The enemies being destroyed by his valour, he had generally no opportunity to go to a fight, as a Gandha elephant discomfits other elephants by means of the smell of his ichor exuding from his temples.

71. The moon decays as does the sea after having attained growth ; but he was one whose growth was like that of theirs and not decaying like them.

---

69. B. °विकत्थे for °विधिज्ञे. Hemádri notices the reading. C. H. I. K. L. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., वीरकामिनी B. वीरकांक्षिणी for वीरगामिनी.

70. D. L. आसीत् for प्रायः. A. C. L. with Hemádri रणं for रणः. B. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., °भग्नानि for °भिन्नानि.

71. C. I. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay.,

सन्तस्तस्याभिगमनादत्यर्थं महतः कृशाः ।
उदधेरिव जीमूताः प्रापुर्दातृत्वमर्थिनः ॥ ७२ ॥
स्तूयमानः स जिह्राय स्तुत्यमेव समाचरन् ।
तथापि ववृधे तस्य तत्कारिद्वेषिणो यशः ॥ ७३ ॥
दुरितं दर्शनेन घ्नंस्तत्त्वार्थेन नुदंस्तमः ।
प्रजाः स्वतन्त्रयांचक्रे शश्वत्सूर्य इवोदितः ॥ ७४ ॥

७२ ॥ सन्त इति । अत्यर्थं कृशा दरिद्रा अत एवार्थिनो याचनशीलाः सन्तो विद्वांसो महतस्तस्य राज्ञोऽभिगमनात् । उदधेरभिगमनाज्जीमूता इव । दातृत्वं प्रापुः ॥ अर्थिभ्यो दानभोगपर्याप्तं धनं प्रयच्छन्तीत्यर्थः ॥

७३ ॥ स्तूयमान इति । स राजा स्तुत्यं स्तोत्रार्हमेव यत्तदेव समाचरन्नत एव स्तूयमानः सन् जिह्राय ललज्ज । तथापि ह्रीणत्वेऽपि तत्कारिणः स्तोत्रकारिणो द्वेष्टीति तत्कारिद्वेषिणस्तस्य राज्ञो यशो ववृधे ॥ " गुणाढ्यस्य सतः पुंसः स्तुतौ लज्जैव भूषणम् " इति भावः ॥

७४ ॥ दुरितमिति । स राजा । उदितः सूर्य इव । दर्शनेन दुरितं घ्नन्निवर्तयन् ॥ तथा च स्मर्यते—" अग्निश्चित्कपिला सत्त्री राजा भिक्षुर्महोदधिः । दृष्टमात्राः

---

72. Learned men, who had been extremely poor and hence were expectants, came to the position of a donor on account of their going to that great king, as do the clouds by their going to the ocean.

73. Doing nothing but what was praise-worthy he was abashed on being praised ; however the fame of that king who disliked those that did it (praised him) did increase.

74. Destroying sin by his mere sight and removing ignorance

प्रवृद्धः for प्रवृद्धाः. Mallinátha notices the reading and says: " प्रवृद्धः " इति वा पाठः. B. with Hemádri स च for स तु. C. I. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and the text only of Vijay., °वृत्तिश्च for °वृद्धिश्च. D. H. I. K. L. R with Hem., Su., Vijay., and the text only of Val., न ययौ तावित क्षयं; A. न ययौ तावदक्षयं for न चाभूत्ताविव क्षयी.

72. D. K. जनाः for सन्तः. A. K. R. अन्यर्थमहतः, D. with Hemádri अत्यन्तं महिमाः for अत्यर्थं महतः. A. L. अर्थिषु, D. H. R. with Hem., and Val., अर्थिनां for अर्थिनः.

73. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., ववृधे for ववृधे. D. तत्कार्यद्वेषिणः for तत्कारिद्वेषिणः.

74. A. D. L. with Hemádri दर्शने निघ्नन् for दर्शनेन घ्नन्. B. नक्तं चापनुदंस्तमः for तत्त्वार्थेन नुदंस्तमः. A. with Hem., Chá., Din., and Vijay., नयद्वयाश्चक्रे, B. स तेजयाश्चक्रे, C. स पालयाश्चक्रे, D. E. R. and the text only Vijay., स रञ्जयाश्चक्रे, D. H. I. K. L. with Val., and Su., वितमसश्चक्रे

इन्दोरगतयः पद्मे सूर्यस्य कुमुदेंऽशवः ।
गुणास्तस्य विपक्षेऽपि गुणिनो लेभिरेऽन्तरम् ॥ ७५ ॥
पराभिसंधानपरं यद्यप्यस्य विचेष्टितम् ।
जिगीषोरश्वमेधाय धर्म्यमेव बभूव तत् ॥ ७६ ॥
एवमुद्यन्प्रभावेण शास्त्रनिर्दिष्टवर्त्मना ।
वृषेव देवो देवानां राज्ञां राजा बभूव सः ॥ ७७ ॥

पुनन्त्येते तस्मात्पद्येत नित्यशः " इति ॥ तत्त्वस्य वस्तुतत्त्वस्यार्थेन समर्थनेन प्रकाशनेन च तमोऽज्ञानं ध्वान्तं च नुदञ्शश्वत्प्रजाः स्वतन्त्रयांचक्रे स्वाधीनाश्चकार ॥

७५ ॥ इन्दोरिति । इन्दोरंशवः पद्मेऽगतयः । प्रवेशरहिता इत्यर्थः । सूर्यस्यांशवः कुमुदेऽगतयः । गुणिनस्तस्य गुणास्तु विपक्षे शत्रावप्यन्तरमवकाशं लेभिरे प्रापुः॥

७६ ॥ परेति । अश्वमेधाय जिगीषोरस्य पराभिसंधानपरं शत्रुवञ्चनप्रधानं यद्यपि विचेष्टितं दिग्विजयरूपं तथापि तद्धर्म्यं धर्मादनपेतमेव ॥ "धर्मपथ्यर्थन्यायादनपेते" इति यत्प्रत्ययः ॥ बभूव ॥ "मन्त्रप्रभावोत्साहशक्तिभिः परानभिसंदध्यात्" इति कौटिल्यः ॥

७७ ॥ एवमिति । एवं शास्त्रनिर्दिष्टवर्त्मना शास्त्रोपदिष्टमार्गेण प्रभावेण कोश-

---

(or darkness) by establishing truth (or light) he made his people perpetually independent, like the sun when risen.

75. The rays of the moon have no access to the sun-lotus, in the same manner those of the sun have no admission to the moon-lotus; but the qualities of this king, the receptacle of virtues, found scope even in (the heart of) his enemy.

76. The enterprises of him who wished to conquer the quarters for the As'vamedha sacrifice though contributing to deceive his enemies, were nevertheless quite consistent with duty.

77. Thus rising in his power the way to which was directed

---

for स्वतंत्रयाश्चक्रे. Vallabha : " तमोगुणविरहिताश्चक्रे. " Sumativijaya : " निष्पापाश्चक्रे. "

75. D. L. with Vijay., गमनय: for अगतयः.

76. B. C. I. R. परानभिसन्धानपरं for पराभिसन्धानपरं. D. with Vijay., and the text only of Val., यदपि for यद्यपि. D. L. R. with Hem., Chā., and Din., अश्वमेधाय for अश्वमेधाय. B. I. with Chā., and Din., धर्मः, A. L धर्माय, D. K. R with Val., Su., and Vijay., धर्म for धर्म्यं. A. L. इव for एव.

77. B. C. E. H. I. K. R. with Val., Su., and Vijay., राजा राज्ञां for राज्ञां राजा.

पञ्चमं लोकपालानामूचुः साधर्म्ययोगतः ।
भूतानां महतां षष्ठमष्टमं कुलभूभृताम् ॥ ७८ ॥
दूरापवर्जितच्छत्रैस्तस्याज्ञां शासनार्पिताम् ।
दधुः शिरोभिर्भूपाला देवाः पौरंदरीमिव ॥ ७९ ॥
ऋत्विजः स तथानर्च दक्षिणाभिर्महाक्रतौ ।
तथा साधारणीभूतं नामास्य धनदस्य च ॥ ८० ॥

दण्डजेन तेजसा ॥ "स प्रभावः प्रतापश्च यत्तेजः कोशदण्डजम्" इत्यमरः ॥ उद्यन्नुद्यञ्जानः सः । वृषा वासवो देवानां देवो देवदेव इव । राज्ञां राजा राजराजो बभूव ॥

७८ ॥ पञ्चममिति । तं राजानं साधर्म्ययोगतो यथाक्रमं लोकसंरक्षणपरोपकारभूधारणरूपसमानधर्मत्वबलाल्लोकपालानामिन्द्रादीनां चतुर्णां पञ्चममूचुः । महतां भूतानां पृथिव्यादीनां पञ्चानां षष्ठमूचुः । कुलभूभृतां कुलाचलानां महेन्द्रमलयादीनां सप्तानामष्टमूचुः ॥

७९ ॥ दूरेति । भूपालाः शासनेषु पत्रेष्वर्पितामुपन्यस्तां तस्य राज्ञ आज्ञाम् । देवाः पौरंदरीमैन्द्रीमाज्ञामिव । दूरापवर्जितच्छत्रैर्दूरात्परिहृतातपत्रैः शिरोभिर्दधुः ॥

८० ॥ ऋत्विज इति ॥ स राजा महाक्रतावश्वमेधेर्त्विजो याजकान्दक्षिणाभिस्तथानर्चार्चयामास ॥ अर्चतेर्भौवादिकाल्लिट् ॥ यथास्य राज्ञो धनदस्य च नाम साधारणीभूतमेकीभूतम् ॥ उभयोरपि धनदसंज्ञा यथा स्यात्तथेत्यर्थः ॥

---

by (keeping in with) the S'ástras he became the king of kings, as Indra became the god of gods.

78. By reason of the similarity of the duties (or office) people called him the fifth of the guardians of the world, the sixth of the great elements and the eighth of Kula mountains (those that spread in vast chains).

79. Other kings accepted his behest committed to paper with a low bow of their heads the umbrellas on which were kept at a distance, as do the gods the order of Indra (*lit.* the mountain-tearing god).

80. That king at the close of the great sacrifice so honoured the holy priests with munificent presents that his name and that of Kubera became identical.

---

78. B. C. E. H. R. with Chá., Din., and Vijay., तमूचुः साम्ययोगतः for ऊचुः साधर्म्ययोगतः. E. and the text only of Vijay., कुलभृततं, I. कुलपर्वतं for कुलभूभृतां.

79. E. दूराय for दूराप°. B. C. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., शेषां for देवाः.

इन्द्राद्वृष्टिर्नियमितगदोद्रेकवृत्तिर्यमोऽभू-
यादोनाथः शिवजलपथः कर्मणे नौचराणाम् ।
पूर्वापेक्षी तदनु विदधे कोषवृद्धिं कुबेर-
स्तस्मिन्दण्डोपनतचरितं भेजिरे लोकपालाः ॥ ८१ ॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कालिदासकृतावतिथिवर्णनो नाम सप्तदशः सर्गः ॥

८१ ॥ इन्द्रादिति । इन्द्राद्वृष्टिरभूत । यमो नियमिता निवारिता गदस्य रोगस्योद्रेक एव वृत्तिर्येन सोऽभूत् । यादोनाथो वरुणो नौचराणां नाविकानां कर्मणे संचाराय शिवजलपथः सुचरजलमार्गोऽभूत् । तदनु पूर्वापेक्षी रघुप्रमादिमहिमाभिज्ञः कुबेरः कोषवृद्धिं विदधे । इत्थं लोकपालास्तस्मिन्राज्ञि विषये दण्डोपनतस्य शरणागतस्य चरितं वृत्तिं भेजिरे ॥ " दुर्बलो बलवत्सेवी विरुद्धाच्छङ्कितादिभिः । वर्तेत दण्डोपनतो भर्तर्येवमवस्थितः " इति कौटिल्यः ॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमच्छयाच्छयसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीविनीसमाख्यायां सप्तदशः सर्गः ॥

---

81. Indra sent showers of rain; Yama checked the rising tendency of diseases; Varu*n*a had his watery paths safe for the work of mariners; Kubera too having a regard to the predecessors (of Atithi's Royal race) increased his treasury; thus the guardians of the quarters assumed the character of those who were made humble by his forces.

---

81. A. C. पूर्वावेक्षी for पूर्वापेक्षी. Hemâdri notices the reading and observes:—" पूर्वावेक्षी इति पाठे । पूर्वं कुबेरेण रघोश्चरितमवेक्षितं. " B. C. E. H. I. J. K. L. R. with Hem., Châ. Din., Val., Su., and Vijay. कोशवृद्धिं for कोषवृद्धिं. A correct reading.

। अष्टादशः सर्गः ।

स नैषधस्यार्थपतेः सुतायामुत्पादयामास निषिद्धशत्रुः ।
अनूनसारं निषधान्नगेन्द्रात्पुत्रं यमाहुर्निषधाख्यमेव ॥ १ ॥
तेनोरुवीर्येण पिता प्रजायै कल्पिष्यमाणेन ननन्द यूना ।
सुवृष्टियोगादिव जीवलोकः सस्येन संपत्तिफलात्मकेन ॥ २ ॥

यत्पादपांसुसंपर्कादहल्यासीदपांसुला ।
कारुण्यसिन्धवे तस्मै नमो वैदेहिबन्धवे ॥

१ ॥ स इति । निषिद्धशत्रुर्निवारितरिपुः सोऽतिथिर्नैषधस्य निषधदेशाधीश्वरस्यार्थपते राज्ञः सुतायां निषधान्निषधाख्यान्नगेन्द्रात्पर्वतादनूनसारमन्यूनबलं पुत्रमुत्पादयामास । यं पुत्रं निषधाख्यं निषधनामकमेवाहुः ॥

२ ॥ तेनेति । उरुवीर्येणातिपराक्रमेणात एव प्रजायै लोकरक्षणार्थं कल्पिष्यमाणेन तेन यूना निषधेन पितातिथिः । सुवृष्टियोगात्संपत्तिफलात्मकेन पाकोन्मुखेन सस्येन जीवलोक इव । ननन्द जहर्ष ॥

---

1. The king Atithi who had discomfited enemies got from (*lit.* begot in) his queen who was the daughter of Arthapati, the king of the Nishadhas, a son not inferior in strength to the Nishadha, the lord of the mountains, and whom they called Nishadha after the name of that mountain.

2. The father was greatly pleased with the youth of great valour, who was every way capable of protecting his subjects; as the human-world is satisfied with the corn on the eve of (*lit.* facing towards or ready for) its perfect development consequent on timely showers.

---

1. D. सुतायाः for सुतायां. L. R. नरेन्द्रात् for नगेन्द्रात्. H. निषधाक्षं for निषधाख्यं.

2. B. C. H. I. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., उरुकार्येण for उरुवीर्येण. R. with Vallabha करिष्यमाणेन for कल्पिष्यमाणेन. C. with Vallabha सद्वृष्टियोगात् for सुवृष्टियोगात्. C. संपत्तिफलोन्मुखेन, D. with Hemâdri संपन्नफलात्मकेन for संपत्तिफलात्मकेन. A. K. L. with Châ., and Jin., omit this verse.

शब्दादि निर्विश्य सुखं चिराय तस्मिन्प्रतिष्ठापितराजशब्दः ।
कौमुद्वतेयः कुमुदावदातैर्द्यामर्जितां कर्मभिरारुरोह ॥ ३ ॥
पौत्रः कुशस्यापि कुशेशयाक्षः ससागरां सागरधीरचेताः ।
एकातपत्त्रां भुवमेकवीरः पुरार्गलादीर्घभुजो बुभोज ॥ ४ ॥
तस्यानलौजास्तनयस्तदन्ते वंशश्रियं प्राप नलाभिधानः ।
यो नड्वलानीव गजः परेषां बलान्यमृन्दान्नलिनाभवक्त्रः ॥ ५ ॥
नभश्चरैर्गीतयशाः स लेभे नभस्तलश्यामतनुं तनूजम् ।
ख्यातं नभःशब्दमयेन नाम्ना कान्तं नभोमासमिव प्रजानाम् ॥ ६ ॥

३ ॥ शब्दादीति । कुमुद्वत्या अपत्यं पुमान्कौमुद्वतेयोऽतिथिः शब्दादि शब्द-स्पर्शादि सुखं सुखसाधनं विषयवर्गं निर्विश्योपभुज्य चिराय तस्मिन्निषधाख्ये पुत्रे प्रतिष्ठापितराजशब्दो दत्तराज्यः सन् । कुमुदावदातैर्निर्मलैः कर्मभिरश्वमेधा-दिभिरर्जितां संपादितां द्यां स्वर्गमारुरोह ॥

४ ॥ पौत्र इति । कुशेशयाक्षः शतपत्त्रलोचनः ॥ "शतपत्त्रं कुशेशयम्" इत्य-मरः ॥ सागरधीरचेताः समुद्रगम्भीरचित्त एकवीरोऽसहायशूरः । पुरस्यार्गला कपाटविष्कम्भः ॥ "तद्विष्कम्भेऽर्गलं न ना" इत्यमरः ॥ तद्वद्दीर्घभुजः कुशस्य पौत्रो निषधोऽपि ससागरामेकातपत्त्रां भुवं बुभोज पालयामास ॥ "भुजोऽनवने" इति नियमात्परस्मैपदम् ॥

५ ॥ तस्येति । अनलौजा नलाभिधानो नलाख्यस्तनस्य निषधस्य तनयस्तस्य निषधस्यान्तेऽवसाने वंशश्रियं राज्यलक्ष्मीं प्राप । नलिनाभवक्त्रो यो नलः । गजो नड्वलानि नडप्रायस्थलानीव ॥ "नडशादाड्ड्वलच्" इति ड्वलच्प्रत्ययः ॥ परेषां ब-लान्यमृद्नान्ममर्द ॥

६ ॥ नभ इति । नभश्चरैर्गन्धर्वादिभिर्गीतयशाः स नलो नभस्तलश्यामतनुं नभः-

3. After having enjoyed the pleasures consisting of sound and others the son of Kumudvatî (*i. e* Atithi) transferred the title of king to his son Nishadha for a long time and then ascended to heavenly regions acquired by his own deeds pure as white lotuses.

4. The grand-son of Kus'a whose eyes resembled the lotus, whose mind was deep like ocean, who was the sole warrior on earth, and whose arms were long like the bolts of the gates of a city, protected the earth with oceans having but one imperial white umbrella on it.

5. After his death his son named Nala of the splendour of fire inherited the royal fortune (kingdom) of his family, who with his face having the beauty of a lotus, destroyed the forces of his enemies as an elephant destroys reed-beds.

6. That king whose fame was sung by the roamers in the

5. D. with Sumativijaya अमृदन् for अमृद्नात्.
6. K. न for सः. K. नभःस्थल° for नभस्तल°.

तस्मै विसृज्योत्तरकोसलानां धर्मोत्तरस्तत्प्रभवे प्रभुत्वम् ।
मृगैरजर्यं जरसोपदिष्टमदेहबन्धाय पुनर्बबन्ध ॥ ७ ॥
तेन द्विपानामिव पुण्डरीको राज्ञामजय्योऽजनि पुण्डरीकः ।
शान्ते पितर्याहृतपुण्डरीका यं पुण्डरीकाक्षमिव श्रिता श्रीः ॥ ८ ॥

शब्दमयेन नाम्ना ख्यातम् । नभःशब्दसंज्ञकमित्यर्थः । नभोमासमिव श्रावणमासमिव ॥ प्रजानां कान्तं प्रियं तनूजं पुत्रं लेभे ॥

७ ॥ तस्मा इति ॥ धर्मोत्तरो धर्मप्रधानः स नलः प्रभवे समर्थाय तस्मै नभसे तदुत्तरकोसलानां प्रभुत्वमाधिपत्यं विसृज्य दत्त्वा जरसा जरयोपदिष्टम् । वार्द्धके चिकीर्षितमित्यर्थः । मृगैरजर्यं तैः सह संगतम् ॥ " अजर्यं संगतम् " इति निपातः ॥ पुनरदेहबन्धाय पुनर्देहसंबंधनिवृत्तये बबन्ध । मोक्षार्थं वनं गत इत्यर्थः ॥ अदेहबन्धायेत्यत्र प्रसज्यप्रतिषेधेऽपि नञ्समास इष्यते ॥

८ ॥ तेनेति । तेन नभसा । द्विपानां पुण्डरीको दिग्गजविशेष इव । राज्ञामजय्यो जेतुमशक्यः ॥ " क्षय्यजय्यौ शक्यार्थे " इति निपातनात्साधुः ॥ पुण्डरीकः पुण्डरीकाख्यः पुत्रोऽजनि जनितः । पितरि शान्ते स्वर्गं गते सति आहृतपुण्डरीका गृहीतश्वेतपद्मा श्रीर्यं पुण्डरीकं पुण्डरीकाक्षं विष्णुमिव श्रिता ॥

---

skies (the Gandharvas) obtained a son whose body was dark-blue like the surface of the sky, who was known by the name consisting of the word Nabhas and who was dear to his people as the month of S'rávana.

7. That supremely righteous king consigned the sovereignty of the Uttarakosalas to the care of his mighty son and went away to keep company recommended by his oldage with the deer that he might not see the bodily tie again.

8. A son named Pundarîka was born to the king Nabhas who was invincible to kings as the elephant Pundarika is to other elephants. When his father was dead the Royal Fortune taking with her a white lotus went over to him, as she went to the lotus-eyed god (Vishnu).

---

7. C. H. I. K. R. with Hem., Val., and Vijay., तस्मिन् for तस्मै. O. with Hemádri नियोज्य for विसृज्य. H. धर्मोत्तमः for धर्मोत्तरः. B. C. H. I. K. L. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., तत्प्रभवः, D. स प्रभवः, D_2. तत्प्रसवः for तत्प्रभवे. D. K. अजर्य for अजर्यं. D. L. with Chá., Din., and Val., मनः for पुनः. See notes.

8. H. अजेयः for अजय्यः. A. H. L. and the text only of Vijay., आहितपुण्डरीकं, B. आहितपुण्डरीक्षं, D. E. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su, and Vijay., आहृतपुण्डरीकं for आहृतपुण्डरीका. See Notes. C. E. H. I. J. K. L. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., आश्रिता for श्रिता. A. C. with Hemádri पुण्डरीकाख्यं for पुण्डरीकाक्षं.

स क्षेमधन्वानममोघधन्वा पुत्रं प्रजाक्षेमविधानदक्षम् ।
क्ष्मां लम्भयित्वा क्षमयोपपन्नं वने तपः क्षान्ततरश्चचार ॥ ९ ॥
अनीकिनीनां समरेऽग्रयायी तस्यापि देवप्रतिमः सुतोऽभूत् ।
व्यश्रूयतानीकपदावसानं देवादि नाम त्रिदिवेऽपि यस्य ॥ १० ॥
पिता समाराधनतत्परेण पुत्रेण पुत्री स यथैव तेन ।
पुत्रस्तथैवात्मजवत्सलेन स तेन पित्रा पितृमान्बभूव ॥ ११ ॥

९ ॥ स इति । अमोघं धनुर्यस्य सोऽमोघधन्वा ॥ " धनुषश्च " इत्यनङादेशः समासान्तः ॥ स पुण्डरीकः प्रजानां क्षेमविधाने दक्षं क्षमयोपपन्नं क्षान्तियुक्तं क्षेमं धनुर्यस्य तं क्षेमधन्वानं नाम पुत्रम् ॥ " वा संज्ञायाम् " इत्यनङादेशः ॥ क्ष्मां लम्भयित्वा प्रापय्य ॥ लभेर्गत्यर्थत्वाद्विकर्मकत्वम् ॥ क्षान्ततरोऽत्यन्तसहिष्णुः सन्वने तपश्चचार ॥

१० ॥ अनीकिनीनामिति । तस्य क्षेमधन्वनोऽपि समरेऽनीकिनीनां चमूनामग्रयायी देवप्रतिम इन्द्रादिकल्पः सुतोऽभूत् । अनीकपदावसानमनीकशब्दान्तं देवादि देवशब्दपूर्वं यस्य नाम देवानीक इति नामधेयं त्रिदिवे स्वर्गेऽपि व्यश्रूयत विश्रुतम् ॥

११ ॥ पितेति । स पिता क्षेमधन्वा समाराधनतत्परेण शुश्रूषापरेण तेन पुत्रेण यथैव पुत्री बभूव तथैव स पुत्रो देवानीक आत्मजवत्सलेन तेन पित्रा पितृमान्बभूव ॥ लोके पितृत्वपुत्रत्वयोः फलमनयोरेवासीदित्यर्थः ॥

---

9. The king Pundarika whose bow was never ineffectual. qade his son Kshemadhanvâ to accept the sovereignty of the earth, who too was ever vigilant in securing the welfare of his subjects, himself being endowed with the quality of forgiveness, and began to practise asceticism in a forest because he was capable of enduring every thing with extraordinary patience.

10. He too had a god-like son who stood always at the head of his armies in battles and whose name which was beginning with the word Deva and ending with the suffix Anika (*i. e.* Devânika) was famous even in heaven.

11. As that father became one who was rightly possessed of an excellent son on account of that prince who was entirely devoted

---

9. D. L. दत्तं for दक्षं. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., क्षमतनुः, E. क्षान्ततनुः for क्षान्ततरः. A. C. with Châ., and Din., क्षमयोपपन्नः for क्षमयोपपन्नं. B. ससाद, C. I. K. L. R. with Vijay., चकार for चचार.

10. A. D. with Hemadri व्यज्ञायत for व्यश्रूयत.

11. D. I. तथैव for यथैव. B. C. I. K. L. R. with Hem., Châ., Val., Su., and Vijay., अधिकवत्सलेन for आत्मजवत्सलेन. Dinakara omits this verse.

पूर्वस्तयोरात्मसमे चिरोढामात्मोद्भवे वर्णचतुष्टयस्य ।
धुरं निधायैकनिधिर्गुणानां जगाम यज्वा यजमानलोकम् ॥ १२ ॥
वशी सुतस्तस्य वशंवदत्वात्स्वेषामिवासीद्द्विषतामपीष्टः ।
सकृद्विविग्नानपि हि प्रयुक्तं माधुर्यमीष्टे हरिणान्ग्रहीतुम् ॥ १३ ॥
अहीनगुर्नाम स गां समग्रामहीनबाहुद्रविणः शशास ।
यो हीनसंसर्गपराङ्मुखत्वाद्युवाप्यनर्थैर्व्यसनैर्विहीनः ॥ १४ ॥

१२ ॥ पूर्व इति । गुणानामेकनिधिर्यज्वा विधिवदिष्टवांस्तयोः पितृपुत्रयोर्मध्ये पूर्वः पिता क्षेमधन्वात्मसमे स्वतुल्य आत्मोद्भवे पुत्रे देवानीके चिरोढां चिरं धृतां वर्णचतुष्टयस्य धुरं रक्षाभारं निधाय यजमानलोकं यज्वलोकं नाकं जगाम ॥

१३ ॥ वशीति । तस्य देवानीकस्य वशी समर्थः सुतोऽहीनगुर्नामेति वक्ष्यमाणनामकः । वशं वशाकरं मधुरं वदतीति वशंवदः ॥ "प्रियवशे वदः खच्" इति खच्प्रत्ययः ॥ तस्य भावस्तत्त्वम् ॥ तस्मादिष्टवादित्वात्स्वेषामिव द्विषतामपीष्टः प्रिय आसीत । अर्थादेवानीकनिर्धारणं लभ्यते ॥ तथा हि । प्रयुक्तमुच्चारितं माधुर्यं सकृदेकवारं विविग्नान्भीतानपि हरिणान्ग्रहीतुं वशीकर्तुमीष्टे शक्नोति ॥

१४ ॥ अहीनगुरिति । अहीनबाहुद्रविणः समग्रभुजपराक्रमः ॥ "द्रविणं काञ्चनं वित्तं द्रविणं च पराक्रमः" इति विश्वः ॥ हीनसंसर्गपराङ्मुखत्वान्नीचसंसर्गरहितत्वाद्धेतोर्युवाप्यनर्थैरनर्थकैर्व्यसनैः पानद्यूतादिभिर्विहीनो रहितो योऽहीनगुर्नाम स पूर्वोक्तो देवानीकसुतः समग्रां सर्वां गां भुवं शशास ॥

---

to win his favour, so that son too became one who should rightly be considered to have had an excellent father on account of that royal father who was kind to his son.

12. The former of them (क्षेमधन्वा) who was the sole repository of virtues and who was himself a great sacrificer, placed the long-borne yoke of the four castes on his son who was also equal to himself and went to the world of sacrificers (the Svarga).

13. His son who had controlled his own self was a beloved object even of his enemies as he was of his own men on account of his agreeable speech; for sweetness (of sound) when chanted in a sweet manner is able to entrap the antelopes though once frightened.

14. The son of Devánika named Ahínagu, who was endowed with full strength of arms and who though a youth was destitute

---

13. H. R. इष्ट for ईष्ट.

14. D. with Hem., and Vijay., महीं for स गां. C. H. K. L. R. with Vijay., अनर्थव्यसनैः, D. अनार्यव्यसनैः for अनर्थैर्व्यसनैः.

गुरोः स चानन्तरमन्तरज्ञः पुंसां पुमानाद्य इवावतीर्णः ।
उपक्रमैरस्खलितैश्चतुर्भिश्चतुर्दिगीशश्चतुरो बभूव ॥ १५ ॥
तस्मिन्प्रयाते परलोकयात्रां जेतर्यरीणां तनयं तदीयम् ।
उच्चैःशिरस्त्वाज्जितपारियात्रं लक्ष्मीः सिषेवे किल पारियात्रम् ॥१६॥

१५ ॥ गुरोरिति । पुंसामन्तरज्ञो विशेषज्ञश्चतुरो निपुणः सोऽहीनगुश्च गुरोः पितुरनन्तरम् । अवतीर्णो भुवं प्राप्त आद्यः पुमान्विष्णुरिव । अस्खलितैरप्रतिहतैश्चतुर्भिरुपक्रमैः सामाद्युपायैः ॥ " सामादिभिरुपक्रमैः " इति मनुः ॥ चतुर्दिगीशश्चतसृणां दिशामीशो बभूव ॥

१६ ॥ तस्मिन्निति । अरीणां जेतरि तस्मिन्नहीनगौ परलोकयात्रां प्रयाते प्राप्ते सति । उच्चैःशिरस्त्वादुन्नतशिरस्कत्वाज्जितः पारियात्रः कुलशैलविशेषो येन तं पारियात्रं पारियात्राख्यं तदीयं तनयं लक्ष्मी राज्यलक्ष्मीः सिषेवे किल ॥

---

of vices producing evils on account of his being averse to the association of lowmen, ruled all over the earth.

15. After the death of his father that clever king Ahínagu, who had the knowledge of various phases of human nature, became the ruler of the four quarters with the help of his four unfailing political expedients, like the First Being descended to the earth.

16. On that conqueror of his enemies having gone on the journey of the next world, it is reported that the Goddess of Fortune began to serve his son named Páriyátra who had vanquished the lofty mountain of Páriyátra by reason of carrying his head high.

---

15. E. सुतरां for चतुरां.

16. B D. I. R. with Val., Su., and Vijay., यातरि. K. L. with Chá., and Din., येतरि for जेतरि. One of the three Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी agrees with Mallinatha. D. with Su., उच्चैस्तरत्वात् for उच्चै शिरस्त्वात्. A. D. with Chá., Din., Su., and the text only of Vijay., पारिजातं for पारियात्रं. Between 16–17 B. D. E. I. L. R. with Chá., Din., Su., and Vijay., read the following :—" तस्मादभूवाथ दलाभिधानो दमान्वितः पद्मदलाभदृष्टिः । कुन्दान्तदन्तो रिपुदन्तिसिंहः पतिः पृथिव्याः कुलकैरवेन्दुः " ॥ [B. I. L. with Chá., Din., and Su., दयान्वितः for दमान्वितः. D. with Chá., पद्मदलाक्षदृष्टिः. E. L with Su., पद्मदलाभदृष्टः for पद्मदलाभदृष्टिः. E. R. कुन्दाग्रदन्तो, B. with Su., कुन्दाभदन्तो. D. कुन्दावदातो for कुन्दान्तदन्तो. L. कुन्दावदातैररिनिर्विशुद्धः for कुन्दान्तदन्तो रिपुदन्तिसिंहः]. E. considers this to be a spurious verse.

तस्याभवत्सूनुरुदारशीलः शिलः शिलापट्टविशालवक्षाः ।
जितारिपक्षोऽपि शिलीमुखैर्यः शालीनतामव्रजदीड्यमानः ॥ १७ ॥
तमात्मसंपन्नमनिन्दितात्मा कृत्वा युवानं युवराजमेव ।
सुखानि सोऽभुङ्क्तसुखोपरोधि वृत्तं हि राज्ञामुपरुद्धवृत्तम् ॥ १८ ॥

१७ ॥ तस्येति । तस्य पारियात्रस्योदारशीलो महावृत्तः ॥ "शीलं स्वभावे सद्वृत्ते" इत्यमरः॥ शिलापट्टविशालवक्षाः शिलः शिलाख्यः सूनुरभवत् । यः सूनुः शिलीमुखैर्बाणैः ॥ "अलिबाणौ शिलीमुखौ" इत्यमरः ॥ जितारिपक्षोऽपीड्यमानः स्तूयमानः सन् । शालीनतामधृष्टतां लज्जामव्रजदगच्छत् ॥ "स्यादधृष्टे तु शालीनः" इत्यमरः ॥ "शालीन कौपीने अधृष्टाकार्ययोः" इति निपातः ॥

१८ ॥ तमिति । अनिन्दितात्माऽगर्हितस्वभावः स पारियात्र आत्मसंपन्नं बुद्धिसंपन्नम् ॥ "आत्मा जीवो धृतिर्बुद्धिः स्वभावो ब्रह्म वर्ष्म च" इत्युभयत्राप्यमरः ॥ युवानं तं शिलं युवराजं कृत्वैव सुखान्यभुङ्क्त । न त्वकृत्वेत्येवकारार्थः ॥ किमर्थं युवराजत्वाङ्गीकरणमित्याशङ्क्यान्यथा सुखोपभोगो दुर्लभ इत्याह—सुखोपरोधीति । हि यस्माद्राज्ञां वृत्तं प्रजापालनादिरूपं सुखोपरोधि बहुलत्वात्सुखप्रतिबन्धकम् । अत एवोपरुद्धवृत्तम् ॥ उपरुद्धसदृशमित्यर्थः ॥ उपरुद्धः कारादिबद्धः । स्वयमूढभारस्य सुखं नास्तीति भावः ॥

---

17. He had a son named S ila of a noble disposition with a broad chest resembling a marble slab ; and though he had vanquished a host of his enemies by means of arrows nevertheless he was greatly abashed on being praised for that.

18. Of an unblemished self he enjoyed pleasures simply by making his young talented son a crown prince for the life of kings, resembling the life of those in bonds, is opposed to the enjoyment of pleasures.

---

17. B. C. H. with Châ., Din., and Vijay., शलः, D. I. L. with Hemâdri and the text only of Vijay., शीलः, D₂. with Su., शैलः for शिलः. D. °पाट° for °पट्ट°.

18. B. C. E. H. with Vallabha अयुवानं for युवानं. See Notes. A. D. with Val., and Su., सुखपरोधि for सुखोपरोधि. B. C. H. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., वार्तं for वृत्तं. A. उपरुद्धवृत्ति, L. अपरुद्धवृत्ति, D. H. K. R. with Châ., Din., Su., and Vijay., अपरुद्धवृत्तं for उपरुद्धवृत्तं. Hemâdri notices the reading and observes :—अपरुद्धवृत्तमिति पाठे ॥ "परेष्वक्षिप्तकार्यो यः कर्माण्यारभते स्वयं । सोऽपरुद्ध इति ख्यातो न राजा सुखभाग्भवेत् " इति । अपरुद्धस्य वृत्तमिति षष्ठीसमासः ॥ Vijayânandasûris'varacharaṇasevaka notices the reading of Mallinâtha. Hemâdri appears to have borrowed this quotation from the commentary of Châritravardhana or vice versâ.

तं रागबन्धिष्ववितृप्तमेव भोगेषु सौभाग्यविशेषभोग्यम्।
विलासिनीनामरतिक्षमापि जरा वृथा मत्सरिणी जहार ॥ १९ ॥
उन्नाभ इत्युद्गतनामधेयस्तस्यायथार्थोन्नतनाभिरन्ध्रः।
सुतोऽभवत्पङ्कजनाभकल्पः कृत्स्नस्य नाभिर्नृपमण्डलस्य ॥ २० ॥

१९ ॥ तमिति। रागं बध्नन्तीति रागबन्धिनः। रागप्रवर्तका इत्यर्थः। तेषु भोगेषु विषयेष्ववितृप्तमेव सन्तं किं च विलासिनीनां भोक्त्रीणां सौभाग्यविशेषेण सौन्दर्यातिशयेन हेतुना भोग्यं भोगार्हम्॥ "चजोः कुघिण्ण्यतोः" इति कुत्वम्॥ तं पारियात्रं रतिक्षमा न भवतीत्यरतिक्षमाप्यत एव वृथा मत्सरिणी रतिक्षमासु। विलासिनीष्वित्यर्थः। जरा जहार वशीचकार॥

२० ॥ उन्नाभ इति। तस्य शिलाख्यस्योन्नाभ इत्युद्गतनामधेयः प्रसिद्धनामायथार्थं यथा तथोन्नतं नाभिरन्ध्रं यस्य सः। गम्भीरनाभिरित्यर्थः॥ तदुक्तं –"स्वरः सत्त्वं च नाभिश्च गाम्भीर्यं त्रिषु शस्यते"॥ पङ्कजनाभकल्पो विष्णुसदृशः कृत्स्नस्य नृपमंडलस्य नाभिः प्रधानम्॥ "नाभिः प्रधाने कस्तूरीमदेऽपि क्वचिदीरितः" इति विश्वः॥ सुतोऽभवत्। "अच्प्रत्यन्ववपूर्वात्सामलोम्नः" इत्यत्राजिति योगविभागादुन्नाभवज्जणाभपद्मनाभादयः सिद्धाः॥

---

19. Old age, though itself incapable of enjoyment and hence jealous for nothing, took him away who was not at all satisfied with the enjoyments exciting passions and who was yet able to enjoy the surpassing loveliness of coquettish women.

20. He had a son celebrated by the name of Unnâbha, the space of whose naval was really deep, and who, looking like Vishnu, became the supreme ruler of the entire circle of kings.

---

19. B. C. I. R. रागवृद्धिषु, D. with Vijay., रागधर्मेषु for रागबन्धिषु. Vijayánandasûris'varacharanasevaka notices the reading of Mallinátha. A. C. with Hemâdri अवितृष्णं for अवितृप्तं. I. °विशेषभाग्यम् for °विशेषभोग्यम्. Between 19-20 B. D. E. I. R. with Hem., Su., and Vijay., read the following :—" हित्वोपभोगांस्तपसोत्तमेन त्रिविष्टपं प्रापवति क्षितीशे। तदात्मजः सागरधीरचेताः शशास पृथ्वीं सकलां नृसोमः "॥ [B. C. हित्वाथ भोगान् for हित्वोपभोगान्].

20. H. with Hemâdri उन्नत° for उद्गत°.—Hemâdri : " उन्नतं प्रसिद्धं नामधेयं यस्य सः. " A. C. with Hemâdri and Su., अयथार्थः and नतनाभिरन्ध्रः for the whole compound अयथार्थोन्नतनाभिरन्ध्रः. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., आसीत्सुतः for सुतोऽभवत्. D. L. with Châ., and Din., पङ्कजनाभतुल्यः, E. J. R. and the text only of Vijay., पङ्कजनाभिकल्पः for पङ्कजनाभकल्पः.

ततः परं वज्रधरप्रभावस्तदात्मजः संयति वज्रघोषः।
बभूव वज्राकरभूषणायाः पतिः पृथिव्याः किल वज्रणाभः॥ २१ ॥
तस्मिन्गते द्यां सुकृतोपलब्धां तत्संभवं शङ्खणमर्णवान्ता।
उत्खातशत्रुं वसुधोपतस्थे रत्नोपहारैरुदितैः खनिभ्यः॥ २२ ॥
तस्यावसाने हरिदश्वधामा पित्र्यं प्रपेदे पदमश्विरूपः।
वेलातटेषूषितसैनिकाश्वं पुराविदो यं व्युषिताश्वमाहुः॥ २३ ॥

२१॥ तत इति। ततः परं वज्रधरप्रभाव इन्द्रतेजाः संयति सङ्ग्रामे वज्रघोषोऽशनितुल्यध्वनिर्वज्रणाभो नाम तस्योन्नाभस्यात्मजो वज्राणां हीरकाणामाकराः खनय एव भूषणानि यस्यास्तस्याः पृथिव्याः पतिर्बभूव किल खलु॥ "वज्रं त्वस्त्री कुलिशशस्त्रयोः। मणिवेधे रत्नभेदेऽप्यशनावासनान्तरे" इति केशवः॥

२२॥ तस्मिन्निति। तस्मिन्वज्रणाभे सुकृतोपलब्धां सुधर्मार्जितां द्यां स्वर्गं गते सति। उत्खातशत्रुमुद्धृतारिं शङ्खणं नाम तत्संभवं तदात्मजमर्णवान्ता वसुधा खनिभ्य आकरेभ्य उदितैरुत्पन्नै रत्नोपहारैरुत्कृष्टवस्तुसमर्पणैरुपतस्थे सिषेवे॥ "जातौ जातौ यदुत्कृष्टं तद्रत्नमभिधीयते" इत्युक्तम्॥

२३॥ तस्येति। तस्य शङ्खणस्यावसानेऽन्ते हरिदश्वधामा सूर्यतेजाः। अश्विनोरिव रूपमस्येत्यश्विरूपोऽतिसुन्दरः। तत्पुत्र इति शेषः। पित्र्यमिति संबन्धिपद-

---

21. It is said that after him his son Vajranâbha whose valour was like that of Indra (*lit.* the thunder-bearer) and whose war-cry resembled the din of thunder-bolt in a battle, became the lord of the earth the ornaments of which were the mines of jewels.

22. When he had gone to heaven acquired by the merits of his virtuous deeds, the earth, having the oceans for its extremities, attended on his son named S'ankha*n*a who had up-rooted his enemies, with presents of jewels produced from mines.

23. At his death his son whose lustre was like that of the

---

21. D. E. L. with Châ., and Din., तस्यात्मजः for तदात्मजः. R. रत्नाकर° for वज्राकर.° D. R. with Hem., Châ., and Din., °मेखलायाः for °भूषणायाः. B. C. E. H. I. J. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., वज्रानाभः, D. वज्रनामा for वज्रणाभः.

22. D. L. with Hem., Châ., and Din., स्वः for द्यां. D. L. with Hem., Châ., and Din., °लब्धं for °लब्धां. B. C. E. H. K. with Hem., Châ., Din., Su., and Vijay., खण्डनं, D. R. with Val., षण्डनं, I. खञ्जनं, L. शङ्खलं for शङ्खणम्. D. खनितैः for उदितैः.

23. D. °नामा for °धामा. D. I. K. and the texts only of Su., and

आराध्य विश्वेश्वरमीश्वरेण तेन क्षितेर्विश्वसहो विजज्ञे ।
पातुं सहो विश्वसखः समग्रां विश्वंभरामात्मजमूर्तिरात्मा ॥ २४ ॥
अंशे हिरण्याक्षरिपोः स जाते हिरण्यनाभे तनये नयज्ञः ।
द्विषामसह्यः सुतरां तरूणां हिरण्यरेता इव सानिलोऽभूत् ॥ २५ ॥

सामर्थ्यात् ॥ पित्र्यं पदं प्रपेदे ॥ वेलातटेषूषिता निविष्टाः सैनिका अश्वाश्च यस्य तम् । अन्वर्थनामाननित्यर्थः । यं पुत्रं पुराविदो वृद्धा व्युषिताश्वमाहुः ॥

२४ ॥ आराध्येति । तेन क्षितेरीश्वरेण व्युषिताश्वेन विश्वेश्वरं काशीपतिमाराध्योपास्य विश्वसहो नाम विश्वसखः समग्रां सर्वां विश्वंभरां भुवं पातुं रक्षितुं सहत इति सहः क्षमः ॥ पचाद्यच् ॥ आत्मजमूर्तिः पुत्ररूप्यात्मा स्वयमेव ॥ "आत्मा वै पुत्रनामासि" इति श्रुतेः ॥ विजज्ञे सुषुवे ॥ विपूर्वो जनिर्गर्भविमोचने वर्तते ॥ यथाह भगवान्पाणिनिः—"समां समां विजायते" इति ॥

२५ ॥ अंश इति । नयज्ञो नीतिज्ञः स विश्वसहः । हिरण्याक्षरिपोर्विष्णोरंशे हिरण्यनाभे नाम्नि तनये जाते सति । तरूणां सानिलो हिरण्यरेता हुतभुगिव । द्विषां सुतरामसह्योऽभूत् ॥

---

sun and who had the form of the As'vins obtained the throne of his father. The historians (men versed in ancient or legendary accounts) call him Vyushitâs va on account of his having quartered his soldiers and horses on the shores of the sea.

24. That ruler of the earth propitiated Vis'ves vara and brought forth his own self in the shape of a son named Vis'vasaha, the friend of the universe, who was capable of protecting the entire earth.

25. When a son named Hiranyanâbha, a portion of the enemy of the demon Hiranyâksha (*i. e.* Vishnu) had been born

---

Vijay., अश्वत्व: for अभिन्नत:. B. D. E. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., व्युषिताश्वं for व्युषिताश्वं. This reading of the Mss. and commentators is also corroborated by most of the Purânas.

24. B. H. I. K. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., विश्वसम:, C. विश्वसख:, D. L. विष्णुसम: for विश्वसह:. B. I with Châ., Din., Su., and Vijay., अधिजग्मे, C. H. K. L. R. with Hem., Val., and the text only of Vijay., अधिजज्ञे for विजज्ञे. I. समं for सहो. B. C. H. I. L. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., विश्वसह:, D. K. विश्वसृज: for विश्वसख:.

25. B. K. with Hem., and Vijay., हिरण्याख्यरिपो: for हिरण्याक्षरिपो:. A. D. L. with Hemâdri प्रजाते for स जाते.

पिता पितॄणामनृणस्तमन्ते वयस्यनन्तानि सुखानि लिप्सुः ।
राजानमाजानुविलम्बिबाहुं कृत्वा कृती वल्कलवान्बभूव ॥ २६ ॥
कौशल्य इत्युत्तरकोसलानां पत्युः पतङ्गान्वयभूषणस्य ।
तस्यौरसः सोमसुतः सुतोऽभून्नेत्रोत्सवः सोम इव द्वितीयः ॥ २७ ॥
यशोभिराब्रह्मसभं प्रकाशः स ब्रह्मभूयं गतिमाजगाम ।
ब्रह्मिष्ठमाधाय निजेऽधिकारे ब्रह्मिष्ठमेव स्वतनुप्रसूतम् ॥ २८ ॥

२६ ॥ पितेति । पितॄणामनृणः । निवृत्तपितृऋण इत्यर्थः ॥ " प्रजया पितृभ्यः " इति श्रुतेः ॥ अत एव कृती । कृतकृत्य इत्यर्थः । पिता विश्वसहोऽन्ते वयसि वार्द्धकेऽनन्तान्यविनाशानि सुखानि लिप्सुः । मुमुक्षुरित्यर्थः । आजानुविलम्बिबाहुं दीर्घबाहुम् । भाग्यसंपन्नमिति भावः । तं हिरण्यनाभं राजानं कृत्वा वल्कलवान्बभूव । वनं गत इत्यर्थः ॥

२७ ॥ कौशल्य इति । उत्तरकोसलानां पत्युः पतङ्गान्वयभूषणस्य सूर्यवंशाभरणस्य सोमसुतः सोमं सुतवतः । यज्वन इत्यर्थः ॥ " सोमे सुञः " इति क्विप् ॥ तस्य हिरण्यनाभस्य द्वितीयः सोमश्चन्द्र इव । नेत्रोत्सवो नयनानन्दकरः कौशल्य इति प्रसिद्ध औरसो धर्मपत्नीजः सुतोऽभूत् ॥

२८ ॥ यशोभिरिति । आ ब्रह्मसभाया आब्रह्मसभं ब्रह्मसदनपर्यन्तम् । अभिविधावव्ययीभावः ॥ यशोभिः प्रकाशः प्रसिद्धः स कौशल्योऽतिशयेन ब्रह्मवन्तं

---

to him, he who had the knowledge of politics, became greatly unbearable to his enemies, as fire (when) in the company of the wind becomes unbearable to the trees.

26. Freed from the debt of his forefathers and hence thinking himself fortunate his father Vis'vasaha with a desire to obtain eternal pleasures made his son the emperor of the earth, whose arms were hanging as far as his knees, and invested himself in his declining years with the bark-garments.

27. He who was the ornament of the solar race and the lord of the Uttarakosalas and who extracted the Soma juice in the performance of sacrifices, had a legitimate son named Kaus'alya who was the festival to the eyes of his father as if he was a second moon

28. The king Kaus'alya who was celebrated for his fame as far as the court of Brahmá established on the regal post of govern-

---

26. B. D. and the text only of Vijay., अन्त्ये for अन्ते. B. D. with Chá., and Din., वल्कधरः for वल्कलवान्.

28. C. with Val., and Su., पद for सभं. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., ब्रह्मभूयां, D. ब्रह्मभूयात् for ब्रह्मभूयं.

तस्मिन्कुलापीडनिभे विपीडं सम्यग्महीं शासति शासनाङ्काम् ।
प्रजाश्चिरं सुप्रजसि प्रजेशे ननन्दुरानन्दजलाविलाक्ष्यः ॥ २९ ॥
पात्रीकृतात्मा गुरुसेवनेन स्पष्टाकृतिः पत्त्ररथेन्द्रकेतोः ।
तं पुत्रिणां पुष्करपत्त्रनेत्रः पुत्रः समारोपयदग्रसंख्याम् ॥ ३० ॥

ब्रह्मिष्ठम् । ब्रह्मविदमित्यर्थः ॥ ब्रह्मशब्दान्मतुबन्तादिष्ठन्प्रत्यये "विन्मतोर्लुक्" इति मतुपो लुक् ॥ "नस्तद्धिते" इति टिलोपः ॥ ब्रह्मिष्ठं ब्रह्मिष्ठाख्यं स्वतनुप्रसूतं स्वात्मजमेव निजे स्वकीयेऽधिकारे प्रजापालनकृत्य आधाय निधाय । ब्रह्मणो भावो ब्रह्मभूयं ब्रह्मत्वं तदेव गतिः । तामाजगाम । मुक्तोऽभूदित्यर्थः ॥ "स्याद्ब्रह्मभूयं ब्रह्मत्वम्" इत्यमरः ॥ "भुवो भावे" इति क्यप् ॥

२९ ॥ तस्मिन्निति । कुलापीडनिभे कुलशेखरतुल्ये ॥ "वैकक्षकं तु तत् । यत्तिर्यक्क्षिप्तमुरसि शिखास्वापीडशेखरौ" इत्यमरः ॥ सुप्रजसि सत्संतानवति ॥ "नित्यमसिच्प्रजामेधयोः" इत्यसिच्प्रत्ययः समासान्तः ॥ तस्मिन्प्रजेशे प्रजेश्वरे ब्रह्मिष्ठे शासनाङ्कां शासनचिह्नां महीं विपीडं निर्बाधं यथा तथा सम्यक्शासति सत्यानन्दजलाविलाक्ष्य आनन्दबाष्पाकुलनेत्राः प्रजाश्चिरं ननन्दुः ॥

३० ॥ पात्रीकृतेति । गुरुसेवनेन पित्रादिशुश्रूषया पात्रीकृतात्मा योग्यीकृतात्मा ॥ "योग्यभाजनयोः पात्रम्" इत्यमरः ॥ पत्त्ररथेन्द्रकेतोर्गरुडध्वजस्य स्पष्टाकृतिः स्पष्टवपुः । तत्सरूप इत्यर्थः ॥ "आकृतिः कथिता रूपे सामान्यवपु-

---

ing his people, his only son named Brahmishtha, a philosopher in the science of metaphysics (or the science of the divine essence of Brahman) and went to the condition (or state) that becomes one with Brahman.

29. While that lord of the people, who was, as it were, the crest-garland of his family and who had a virtuous son, was ruling without any oppression over the earth which bore the mark of his command, in the best possible way, the people with their eyes filled with tears of joy were long contented with him.

30. A son named Putra having eyes resembling a lotus-leaf, who had made his self worthy by serving his father and whose

---

Hemâdri also notices the reading of D. manuscripts. B. आगमद् for आजगाम.

29. B. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., read 32nd verse after the 29th of our text. B. with Vijay., विपीडाः, C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., and Su., विपीडां for विपीडं. D. K. शासनाङ्कं for शासनाङ्काम्. B. क्षितीशे for प्रजेशे. B. I. °जलाक्षिताक्ष्यः, D. L. °जलाकुलाक्ष्यः for °जलाविलाक्ष्यः.

30. R. reads the 31st verse after the 34th of our text. B. E. H. I. K. R. with Chá., Din., Val., and the text only of Vijay., स्पृष्टाकृतिः for स्पष्टाकृतिः. H. पुत्रः for पुत्रः.

वंशस्थितिं वंशकरेण तेन संभाव्य भावी स सखा मघोनः ।
उपस्पृशन्स्पर्शनिवृत्तलौल्यस्त्रिपुष्करेषु त्रिदशत्वमाप ॥ ३१ ॥
तस्य प्रभानिर्जितपुष्परागं पौष्यां तिथौ पुष्यमसूत पत्नी ।
तस्मिन्नपुष्यन्नुदिते समग्रां पुष्टिं जनाः पुष्य इव द्वितीये ॥ ३२ ॥

घोरपि " इति विश्वः ॥ पुष्करपत्त्रनेत्रः पद्मदलाक्षः पुत्रः पुत्राख्यो राजा ॥ यद्वा पुत्रशब्द आवर्तनीयः । पुत्रः पुत्राख्यः पुत्रः सुतः । तं ब्रह्मिष्ठं पुत्रिणामग्रसंख्यां समारोपयत् । अग्रगण्यं चकारेत्यर्थः ॥

३१ ॥ वंशेति । स्पृश्यन्त इति स्पर्शा विषयाः । तेभ्यो निवृत्तलौल्यो निवृत्ततृष्णः । अत एव मघोन इन्द्रस्य सखा मित्रं भावी भविष्यन् । स्वर्गं जिगमिषुरित्यर्थः ॥ स ब्रह्मिष्ठो वंशकरेण वंशप्रवर्तकेन तेन पुत्रेण वंशस्थितिं कुलप्रतिष्ठां संभाव्य संपाद्य त्रिषु पुष्करेषु तीर्थविशेषेषु ॥ " दिक्संख्ये संज्ञायाम् " इति समासः ॥ उपस्पृशन्स्नानं कुर्वंस्त्रिदशत्वं देवभूयमाप ॥

३२ ॥ तस्येति । तस्य पुत्राख्यस्य पत्नी पौष्यां पुष्यनक्षत्रयुक्तायां पौर्णमास्यां तिथौ ॥ " पुष्ययुक्ता पौर्णमासी पौषी " इत्यमरः ॥ " नक्षत्रेण युक्तः कालः " इत्यण्प्रत्ययः ॥ " टिड्ढाणञ्-" इत्यादिना ङीप् ॥ प्रभया निर्जितः पुष्परागो मणिविशेषो येन तं पुष्यं पुष्याख्यमसूत । द्वितीये पुष्ये पुष्यनक्षत्र इव तस्मिन्नुदिते सति जनाः समग्रां पुष्टिं वृद्धिमपुष्यन् ॥

---

beauty was like that of the Garuda-bannered god (i. e. Vishnu) made his sire Brahmishtha accept the first rank among those who were blessed with good sons.

31. He who abstained from the enjoyment of the objects of sense and who therefore was destined to become a friend of Indra, made sure the continuance of his family through him the continuer of it and got to the condition of the thrice-ten (gods) by bathing himself in the three Pushkaras.

32. His queen gave birth to a son named Pushya who with his lustre eclipsed a topaz on the day on which is seen the lunar mansion of Pushya. When he like a second Pushya Nakshatra (the lunar mansion) rose in powers the people enjoyed entire prosperity.

---

31. D. with Su., वंशधरेण for वंशकरेण. C. H. R. with Hemādri अपः स्पृशन्, D. E. I. K. with Val., Su., and Vijay., अपस्पृशन् for उपस्पृशन्.—Hemādri: अपः स्पृशन्स्नानं कुर्वन् ॥ " अपः स्पर्शः स्नानमात्रे स्नानाचमनयोरपि " इति विश्वः ॥ B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Chā., Din., Val., Su., and Vijay., त्रिषु शान्ति for त्रिदशत्वं.

32. C. H. K. L. R. with Val., Su., and the text only of Vijay., पद्मरागं for पुष्परागं. D. पुण्यां for पौष्याम्. B. C. H. L. with Chā.

महीं महेच्छः परिकीर्य सूनौ मनीषिणे जैमिनयेऽर्पितात्मा ।
तस्मात्सयोगादधिगम्य योगमजन्मनेऽकल्पत जन्मभीरुः ॥ ३३ ॥
ततः परं तत्प्रभवः प्रपेदे ध्रुवोपमेयो ध्रुवसंधिरुर्वीम् ।
यस्मिन्नभूज्ज्यायसि सत्यसंधे संधिर्ध्रुवः संनमतामरीणाम् ॥ ३४ ॥

३३ ॥ महीमिति । महेच्छो महाशयः ॥ " महेच्छस्तु महाशयः " इत्यमरः ॥ जन्मभीरुः संसारभीरुः स पुष्यः सूनौ महीं परिकीर्य विक्षिप्य मनीषिणे ब्रह्मविद्याविदुषे जैमिनये मुनयेऽर्पितात्मा । शिष्यभूतः सन्नित्यर्थः । सयोगाद्योगिनस्तस्माज्जैमिनेर्योगं योगविद्यामधिगम्याजन्मने जन्मनिवृत्तये मोक्षायाकल्पत समपद्यत ॥ क्लृपेः संपद्यमाने चतुर्थी वक्तव्या ॥ मुक्तोऽभूदित्यर्थः ॥

३४ ॥ तत इति । ततः परं स पुष्यः प्रभवः कारणं यस्य स तत्प्रभवः । तदात्मज इत्यर्थः । ध्रुवेणोत्तानपादिनोपमेयः ॥ " ध्रुव औत्तानपादिः स्यात् " इत्यमरः ॥ ध्रुवसंधिरुर्वीं प्रपेदे । ज्यायसि श्रेष्ठे सत्यसंधे सत्यप्रतिज्ञे यस्मिन्ध्रुवसंधौ संनमताम् । अनुद्धतानामित्यर्थः । अरीणां संधिर्ध्रुवः स्थिरोऽभूत् ॥ ततः सार्थनामेत्यर्थः॥

33. After having devolved the sovereignty of the earth on his son, that noble-minded king being afraid of the worldly existence devoted his self to the service of the sage Jaimini, the philosopher of the science of the Supreme Spirit of the universe. He learned the system of the Yoga philosophy from that sage who was the master of that science and helped himself in obtaining the freedom from further births.

34. After this event Pushya's son named Dhruvasandhi, who was rightly comparable to Dhruva, obtained the kingdom of the earth. The peaceful policy of this king towards his enemies who had bowed themselves down to him was ever steady in him who was their superior and who was true to his word.

Din., Val., Su., and Vijay., पुत्रं for पुष्यं. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chā., Din., Val, Su, and Vijay., यस्मिन् for तस्मिन्. C. E. H. L. R. with Val., Su., and Vijay, पुत्रं for पुष्यं.

33. B. L. सयोग्यात्, A. C. with Vijay., सुयोगात् for सयोगात्.—Vijayânandasûris'varacharaṇasevaka: "सुष्टु योगो यस्य सः सुयोगस्तस्मात्."

34. R. reads the 31st verse after the 34th stanza of our text. C. H. I. L. with Val., and Vijay., तत्प्रभवं for तत्प्रभव. C. H. I. with Val, and Vijay., ध्रुवोपमेयं. for ध्रुवोपमेयः. C. H. I. with Val., and Vijay., ध्रुवसंधिं for ध्रुवसंधिः. C. E. H. with Val., and Vijay., ऊर्वी for ऊर्वीं. D. K. R. सत्यसन्धिः for सत्यसन्धे. B. L. सन्धिमतां for संनमतां. B. C. I. K. L. R. with Hem., Chā., Din., Val., Su., and Vijay., नृपाणां for अरीणां.

सुते शिशावेव सुदर्शनाख्ये दर्शात्ययेन्दुप्रियदर्शने सः ।
मृगायताक्षो मृगयाविहारी सिंहादवापद्विपदं नृसिंहः ॥ ३५ ॥
स्वर्गामिनस्तस्य तमैकमत्यादमात्यवर्गः कुलतन्तुमेकम् ।
अनाथदीनाः प्रकृतीरवेक्ष्य साकेतनाथं विधिवच्चकार ॥ ॥३६ ॥
नवेन्दुना तन्नभसोपमेयं शावैकसिंहेन च काननेन ।
रघोः कुलं कुड्मलपुष्करेण तोयेन चाप्रौढनरेन्द्रमासीत् ॥ ३७ ॥

३५ ॥ सुत इति । मृगायताक्षो नृसिंहः पुरुषश्रेष्ठः स ध्रुवसंधिर्दर्शात्ययेन्दुप्रियदर्शने प्रतिपच्चन्द्रनिभे सुदर्शनाख्ये सुते शिशौ सत्येव मृगयाविहारी सन्सिंहाद्विपदं मरणमवापत् ॥ व्यसनासक्तिरनार्थावहेति भावः ॥

३६ ॥ स्वरिति । स्वर्गामिनः स्वर्यातस्य तस्य ध्रुवसंधेरमात्यवर्गः । अनाथा नाथहीना अत एव दीनाः शोच्याः प्रकृतीः प्रजा अवेक्ष्य । कुलतन्तुं कुलावलम्बनमेकमद्वितीयं तं सुदर्शनमैकमत्याद्विधिवत्साकेतनाथमयोध्याधीश्वरं चकार ॥

३७ ॥ नवेति । अप्रौढनरेन्द्रं तद्रघोः कुलं नवेन्दुना बालचन्द्रेण नभसा व्योम्ना । शावः शिशुरेकः सिंहो यस्मिन् ॥ " पृथुकः शावकः शिशुः " इत्यमरः ॥ तेन काननेन च । कुड्मलं कुड्मलावस्थं पुष्करं पङ्कजं यस्मिंस्तेन तोयेन चोपमेयमुपमातुमर्हमासीत् । नवेन्द्वाद्युपमानेन तस्य वर्धिष्णुताशौर्यश्रीमत्त्वानि सूचितानि ॥

---

35. He who was a lion among men and whose eyes were long like those of a deer while amusing himself with a chase obtained death from a lion even while his son named Sudars'ana whose sight was agreeable like that of the moon at the departure of the black fortnight, was yet a child.

36. The group of ministers of that king who had gone to heaven saw the deplorable condition of the subjects without their master and unanimously made him who was the solitary fibre (thread) of the family, the lord of Sâketa, according to the rule.

37. The family of Raghu with that young king was rightly comparable to the sky having the new moon in it, or to a forest having a single cub of a lion in it, or to the water having a single lotus which is in the state of a bud.

---

35. E. has " सुतेऽथ मन्येव सुदर्शनाख्यो दर्शात्ययेन्दुप्रतिमे शिशौ सः " for the first half. H. °दर्शनेन for दर्शने सः. D. नृसोमः for नृसिंहः.

36. R. गुरोर्निदेशादमात्यवर्गः for तमैकमत्यादमात्यवर्गः. A. with Val. Su., and Vijay., एकमत्याः, D. H. K. and the text only of Vijay., एकपुत्रं for एकमत्यात्. B. °तन्तुशेषं for °तन्तुमेकं.

37. A. पुष्करकुड्मलेन, B. C. with Vijay., कुड्मलपुष्करेण. D. E. J. कुड्मलपङ्कजेन for कुड्मलपुष्करेण.

लोकेन भावी पितुरेव तुल्यः संभावितो मौलिपरिग्रहात्सः।
दृष्टो हि वृण्वन्कलभप्रमाणोऽप्याशाः पुरोवातमवाप्य मेघः ॥ ३८ ॥
तं राजवीथ्यामधिहस्ति यान्तमाधोरणालम्बितमग्र्यवेशम्।
षड्वर्षदेशीयमपि प्रभुत्वात्प्रैक्षन्त पौराः पितृगौरवेण ॥ ३९ ॥

३८ ॥ लोकेनेति। स बालो मौलिपरिग्रहात्किरीटस्वीकाराद्धेतोः पितुस्तुल्यः पितृसदृश एव भावी भविष्यति लोकेन जनेन संभावितस्तर्कितः ॥ तथा हि। कलभप्रमाणः कलभमात्रोऽपि मेघः पुरोवातमवाप्याशाः दिशो वृण्वन्दृष्टो हि ॥

३९ ॥ तमिति। राजवीथ्यां राजमार्गेऽधिहस्ति हस्तिनि ॥ विभक्त्यर्थेऽव्ययीभावः॥ यान्तं गच्छन्तम्। हस्तिनमारुह्य गच्छन्तमित्यर्थः। आधोरणालम्बितं शिशुत्वात्सादिना गृहीतमग्र्यवेशमुदारनेपथ्यं षड्वर्षाणि भूतः षड्वर्षः ॥ "तद्धितार्थ—" इत्यादिना समासः ॥ तमधीष्टो भृतो भूतो भावीत्यधिकारे चित्तवति नित्यमिति तद्धितस्य लुक् ॥ ईषदसमाप्तः षड्वर्षः षड्वर्षदेशीयः ॥ "ईषदसमाप्तौ—" इत्यादिना देशीयप्रत्ययः ॥ तं षड्वर्षदेशीयमपि बालमपि तं सुदर्शनं पौराः प्रभुत्वात्पितृगौरवेण प्रैक्षन्त ॥ पितरि यादृग्गौरवं तादृशेनैव ददृशुरित्यर्थः ॥

---

38. On account of his accepting the responsibility of the crown he was thought by the people as destined to be equal to his father himself; for a cloud though as small as an young one of an elephant (*lit.* measured with the cub of an elephant) having come in contact with the wind blowing in front appears to occupy all the quarters.

39. Now that he became their king the people of the city looked upon him though then only six years old with the same respect as they showed to his father, while he was passing on an elephant by the royal road in his best royal suit which was held up by a rider of an elephant.

---

38. D. with Su., मूलपरिग्रहात्. B. C. I. with Hem., and Val., मौल्यपरिग्रहात् for मौलिपरिग्रहात्. A. C. with Vijay., अभिवर्धन् for हि वृण्वन्. See notes.

39. B. C. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., अतिहस्तयन्तम्, E. L. अधिहस्ति यन्तम् for अधिहस्ति यान्तम्.—Châritravardhana : "हस्तिनातिक्रामन्तमतिहस्तयन्तम्." Sumativijaya : "हस्तिना अतिक्रामति अतिहस्तयति अतिहस्तयतीति अतिहस्तयन् तं तथोक्तं अतिहस्तयन्तम्." This is the way in which almost all other commentators explain the present participle of the denominative form अतिहस्तयति. A. with Vijay., °मध्यकायं, C. °मध्यदेहं, D. K. with Val., and Din., °पूर्वकायं, B. E. H. I. L. R. with Hem., Châ., Su., and the text only of Vijay., °मध्यदेशं for अग्र्यवेशं.

कामं न सोऽकल्पत पैतृकस्य सिंहासनस्य प्रतिपूरणाय ।
तेजोमहिम्ना पुनरावृतात्मा तद्व्याप चामीकरपिञ्जरेण ॥ ४० ॥
तस्मादधः किंचिदिवावतीर्णावसंस्पृशन्तौ तपनीयपीठम् ।
सालक्तकौ भूपतयः प्रसिद्धैर्ववन्दिरे मौलिभिरस्य पादौ ॥ ४१ ॥
मणौ महानील इति प्रभावादल्पप्रमाणेऽपि यथा न मिथ्या ।
शब्दो महाराज इति प्रतीतस्तथैव तस्मिन्युयुजेऽर्भकेऽपि ॥ ४२ ॥

४० ॥ काममिति । स सुदर्शनः पैतृकस्य सिंहासनस्य कामं सम्यक्प्रतिपूरणाय नाकल्पत । बालत्वाद्व्याप्तुं न पर्याप्त इत्यर्थः ॥ चामीकरपिञ्जरेण कनकगौरेण तेजोमहिम्ना पुनस्तेजःसंपदा त्वावृतात्मा विस्तारितदेहः संस्तत्सिंहासनं व्याप व्याप्तवान् ॥

४१ ॥ तस्मादिति । तस्मात्सिंहासनादधोऽधोदेशं प्रति किंचिदिवावतीर्णावीषल्लम्बौ तपनीयपीठं काञ्चनपीठमसंस्पृशन्तावल्पकत्वादप्राप्तौ सालक्तकौ लाक्षारसावसिक्तावस्य सुदर्शनस्य पादौ भूपतयः प्रसिद्धैरुन्नतैर्मौलिभिर्मुकुटैर्ववन्दिरे प्रणेमुः ॥

४२ ॥ मणाविति । अल्पप्रमाणेऽपि मणाविन्द्रनीले प्रभावात्तेजिष्ठत्वाद्धेतोर्महानील इति शब्दो यथा मिथ्या निरर्थको न तथैवार्भके शिशावपि तस्मिन्सुदर्शने प्रतीतः प्रसिद्धो महाराज इति शब्दो न मिथ्या युयुजे ॥

---

40. Although he could not occupy fully his father's throne, yet being as it were multiplied (*lit.* repeated) as to his bulk by the greatness of his splendour that was as bright as gold, he did so occupy it.

41. The kings with their highly ornamented crowns saluted his feet besmeared with the dye of lac, which were hanging down only a little from that throne and hence not reaching even the golden foot-stool.

42. As the title 'Mahánila' is not a false epithet to a sapphire though of a small dimension on account of its bright splendour, so the well-known title of Mahàràja was rightly applied to that prince though he was then a mere child.

---

40. C. K. प्रतिपूर्णतायाः for प्रतिपूरणाय. C. °आवितानात्, D. H. I. K. L. R. with Chà., Din., Val., and Vijay., आवितानम्, D_2. with Su., आयतेन, B. with Hemàdri आचितेन for आवृतात्मा.—Hemàdri: "आचितेन सर्वाभूतेन." See Notes.

41. A. C. with Chà., and Din., सालंकृतौ, D. सकुङ्कुमौ for सालक्तकौ Chàritravardhana : "सालंकृतौ लाक्षारसरंजितौ."

42. D. with Vallabha प्रसिद्धः. B. C. H. I. L. R. with Hem., Chà., Din., Su., and Vijay., प्रयुक्तः for प्रतीतः. K. omits this verse.

पर्यन्तसंचारितचामरस्य कपोललोलोभयकाकपक्षात् ।
तस्याननादुच्चरितो विवादश्चस्खाल वेलास्वपि नार्णवानाम् ॥ ४३ ॥
निर्वृत्तजाम्बूनदपट्टबन्धे न्यस्तं ललाटे तिलकं दधानः ।
तेनैव शून्यान्यरिसुन्दरीणां मुखानि स स्मेरमुखश्चकार ॥ ४४ ॥
शिरीषपुष्पाधिकसौकुमार्यः खेदं स यायादपि भूषणेन ।
नितान्तगुर्वीमपि सोऽनुभावाद्धुरं धरित्र्या विभरांबभूव ॥ ४५ ॥

४३ ॥ पर्यन्तेति । पर्यन्तयोः पार्श्वयोः संचारिते चामरे यस्य तस्य बालस्य संबन्धिनः कपोलयोर्लोलावुभौ काकपक्षौ यस्य तस्मादाननादुच्चरितो विवादो वचनमर्णवानां वेलास्वपि न चस्खाल । क्वचिदपि तस्याज्ञाभङ्गो नासीदित्यर्थः ॥ चपलसंसर्गेऽपि महान्तो न चलन्तीति ध्वनिः ॥ उभयकाकपक्षादित्यत्र "वृत्तिविषये उभयपुत्र इतिवदुभशब्दस्थाने उभयशब्दप्रयोगः" इत्युक्तं प्राक् ॥

४४ ॥ निर्वृत्तेति । निर्वृत्तो जाम्बूनदपट्टबन्धो यस्य तस्मिन्कृतकनकपट्टबन्धे ललाटे न्यस्तं तिलकं दधानः स्मेरमुखः स्मितमुखः स राजारिसुन्दरीणां मुखानि तेनैव तिलकेनैव शून्यानि चकार । अखिलमपि शत्रुवर्गमवधीदिति भावः ॥

४५ ॥ शिरीषेति । शिरीषपुष्पाधिकसौकुमार्यः । कोमलाङ्ग इत्यर्थः । अत एव स राजा भूषणेनापि खेदं श्रमं यायाद्गच्छेत् । एवंभूतः स नितान्तगुर्वीमपि धरित्र्या धुरं भुवो भारमनुभावात्सामर्थ्याद्विभरांबभूव बभार । "भीह्रीभृहुवां श्लुवच्च" इति विकल्पादाम्प्रत्ययः ॥

---

43. The word command uttered from the mouth on the cheek of which were flowing both the side-locks of hair of that prince on whose sides were waving the Chowries never fell down (disobeyed or neglected) even on the shores of oceans.

44. Wearing a Tilaka-mark painted on his fore-head crowned (*lit.* bound) with a fillet (or tiara) made of gold and of a smiling face he made the faces of the beautiful women of his enemies destitute of that very Tilak-mark.

45 He with a tenderness of limbs surpassing that of the S'irisha flower would feel fatigue even by wearing ornaments.

---

43. A. D. with Châ., and Su., °लोलाभय° for °लोलोभय.° D. L. with Hem., Châ., Din., and Vijay., अविवादः for विवादः.

44. A. J. निर्वृत्त—पट्टशोभे, B. C. I. L. with Din., Su., and Vijay., निर्वृत्त—पट्टबन्धे, D. E. H. K. R. with Hem., Châ., and Val., निवृत्त—पट्टबन्धे. We with four Mss. and three commentators. A. C. with Hemâdri सस्मेरमुखः for स स्मेरमुखः.

45. I. R. शरीष° for शिरीष°. B. C. I. L. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., °पुष्पांयत° for °पुष्पाधिक°. C. H. I. K. L. with Hem., Val., Su., and Vijay., अथ for अपि. B. कङ्कणेन for भूषणेन. B. E. H. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., चानुभावात्, C. व्यानुभावात् for सोऽनुभावात्. B. D. H. I. K. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., बिभराश्चकार for बिभराम्बभूव.

न्यस्ताक्षरामक्षरभूमिकायां कार्त्स्न्येन गृह्णाति लिपिं न यावत् ।
सर्वाणि तावच्छ्रुतवृद्धयोगात्फलान्युपायुङ्क्त स दण्डनीतेः ॥ ४६ ॥
उरस्यपर्याप्तनिवेशभागा प्रौढीभविष्यन्तमुदीक्षमाणा ।
संजातलज्जेव तमातपत्रच्छायाच्छलेनोपजुगूह लक्ष्मीः ॥ ४७ ॥
अनश्नुवानेन युगोपमानमबद्धमौर्वीकिणलाञ्छनेन ।
अस्पृष्टखड्गत्सरुणापि चासीद्रक्षावती तस्य भुजेन भूमिः ॥ ४८ ॥

४६ ॥ न्यस्तेति । अक्षरभूमिकायामक्षरलेखनस्थले न्यस्ताक्षरां रचिताक्षरपङ्क्तिरेखान्यासां लिपिं पञ्चाशद्वर्णात्मिकां मातृकां कार्त्स्न्येन यावन्न गृह्णाति स सुदर्शनस्तावच्छ्रुतवृद्धयोगाद्विद्यावृद्धसंसर्गात्सर्वाणि दण्डनीतेर्नीतिशास्त्रस्य फलान्युपाययुङ्क्तान्वभूत् । प्रागेव बद्धफलस्य तस्य पश्चादभ्यस्यमानं शास्त्रं संवादार्थमिवाभवदित्यर्थः ॥

४७ ॥ उरसीति । उरस्यपर्याप्तो निवेशभागो निवासावकाशो यस्याः सा । अत एव प्रौढीभविष्यन्तं वर्धिष्यमाणमुदीक्षमाणा प्रौढवपुष्मान्भविष्यतीति प्रतीक्षमाणा लक्ष्मीः संजातलज्जेव साक्षादालिङ्गितुं लज्जितेव तं सुदर्शनमातपत्रच्छायाच्छलेनोपजुगूहालिलिङ्ग ॥ छत्रच्छाया लक्ष्मीरूपेति प्रसिद्धिः ॥ प्रौढाङ्गनायाः प्रौढपुरुषालाभे लज्जा भवतीति ध्वनिः ॥

४८ ॥ अनश्नुवानेनेति । युगोपमानं युगसादृश्यमनश्नुवानेनाप्राप्नुवता । अबद्धं मौर्वीकिणो ज्याघातग्रन्थिरेव लाञ्छनं यस्य तेन । अस्पृष्टः खड्गत्सरुः खड्गमुष्टि-

---

Though he was made of such a stuff yet he upheld the yoke of governing the earth, though excessively heavy, by reason of his natural greatness.

46. No sooner did he entirely know the characters written on a tablet than he enjoyed all the fruits (advantages) of the system of the administration of justice obtained from the association with men old in knowledge.

47. The Goddess of Royal Glory seeing insufficient room (scope) for lying on his breast and hence waiting for the full development of his body embraced him uuder the disguise of the shade of his umbrella as if ashamed (of her union with a consort much younger than herself).

48 The earth had an able protection from his arm though as yet not deserving to be compared with a yoke, having on it no mark of the strokes of the bow-string, and having as yet not touched the handle of a sword.

---

46. B. C. E. H. K. R. with Val., and Su., तावत्फलानि, D. I. L. and Vijay., तावत्क्षितीशः for सर्वाणि तावत्. B. C. H. R. with Val., and Su., पक्वानि, D. K. वृद्धानि for फलानि.

47. B. I. J. with Vijay., °भोगा, L. °भावात्, C. H. K. R. with Val., Din., and the text only of Vijay., °भोगात्, D. °भागम् for °भागा. A. उदीक्षमाणं, D. L. उपेक्षमाणा for उदीक्षमाणा.

48. I. °मूर्वी° for °मौर्वी°.

न केवलं गच्छति तस्य काले ययुः शरीरावयवा विवृद्धिम्।
वंश्या गुणाः खल्वपि लोककान्ताः प्रारम्भसूक्ष्माः प्रथिमानमापुः॥४९॥
स पूर्वजन्मान्तरदृष्टपाराः स्मरन्निवाक्लेशकरो गुरूणाम्।
तिस्रस्त्रिवर्गाधिगमस्य मूलं जग्राह विद्याः प्रकृतीश्च पित्र्याः ॥ ५० ॥
व्यूह्य स्थितः किंचिदिवोत्तरार्धमुन्नद्धचूडोऽञ्चितसव्यजानुः।
आकर्णमाकृष्टसबाणधन्वा व्यरोचतास्त्रे स विनीयमानः ॥ ५१ ॥

येन तेन ॥ " त्सरुः खड्गादिमुष्टौ स्यात् " इत्यमरः ॥ एवंविधेनापि च तस्य सुदर्शनस्य भुजेन भर्त्री रत्नावत्यासीत् ॥ शिशोरपि तस्य तेजस्वाद्गुरित्यर्थः ॥

४९ ॥ नेति । काले गच्छति सति तस्य केवलं शरीरावयवा एव विवृद्धिं प्रसारं न ययुः । किंतु वंशे भवा वंश्या लोककान्ता जनप्रियाः प्रारम्भ आदौ सूक्ष्मास्तस्य गुणाः शौर्यौदार्यादयोऽपि प्रथिमानं पृथुत्वमापुः खलु ॥

५० ॥ स इति । स सुदर्शनः पूर्वस्मिञ्जन्मान्तरे जन्मविशेषे दृष्टपाराः स्मरन्निव गुरूणामक्लेशकरः सन् । त्रयाणां धर्मार्थकामानां वर्गस्त्रिवर्गः । तस्याधिगमस्य प्राप्तेर्मूलं तिस्रो विद्यास्त्रयीवार्त्तादण्डनीतीः पित्र्याः पितृसंबन्धिनीः प्रकृतीः प्रजाश्च जग्राह स्वायत्तीचकार ॥ अत्र कौटिल्य —" धर्माधर्मौ त्रय्यामर्थानर्थौ वार्त्तायां नयानयौ दण्डनीत्याम् " इति ॥ अत्र दण्डनीतिनिर्णयद्वारा काममूलमिति द्रष्टव्यम् ॥ आन्वीक्षिक्या अनुपादानं त्रय्यन्तर्भावपक्षमाश्रित्य ॥ यथाह कामन्दकः—" त्रयी वार्त्ता दण्डनीतिस्तिस्रो विद्या मनोर्मताः । त्रय्या एव विभागोऽयं येन सान्वीक्षिकी मता " इति ॥

५१ ॥ व्यूह्येति । सोऽस्त्रे धनुर्विद्यायां विनीयमानः शिक्ष्यमाणोऽत एवोत्तरार्धं पूर्वकायं किंचिदिव व्यूह्य विस्तार्य स्थितः । उन्नद्धचूड ऊर्ध्वमुत्कृष्य बद्धकेशः । अञ्चितमाकुञ्चितं सव्यं जानु यस्य स आकर्णमाकृष्टं सबाणं धनुर्धन्व वा येन स तथोक्तः सन्व्यरोचताशोभत ॥

---

49. As days rolled on not only did the limbs of his body attain development but also his hereditary qualities which were indeed pleasing to his people and which also were minute in the beginning attained perfect growth.

50 As if simply recollecting them the other ends of which he had seen in his former birth he learnt the three sciences. the basis of the attainment of the triad of धर्म. अर्थ and काम. causing of course no vexation to his tutors ; so also he brought under his power the ancestral ministry.

51. Being trained in the art of missiles he shone brightly while standing with the forepart of his body a little streched, with the hair of his crest tied up, with his left knee contracted, and with his bow to which an arrow is applied drawn as far as his ear.

---

49. C. E. R. and the text only of Vijay., ईयुः for आपुः.

51. A. व्यूह्यस्थितः, D. with Hem., and the text only of Vijay., व्यूहास्थितः for व्यूह्य स्थितः. A. L. उत्तराङ्गम्, D. उन्नतांसः, D₂. with Hemâdri उन्नतासम् for उत्तरार्धम्. I. °चूलोऽञ्चित° for °चूडोऽञ्चित°. B. C. E J. K. with Châ., Din., Val., and Vijay., अस्त्रे सः, I. अस्त्र सः A. with Su., अस्त्रैः सः, D. H. L. R. with Hemâdri अस्त्रेषु.

अथ मधु वनितानां नेत्रनिर्वेशनीयं मनसिजतरुपुष्पं रागबन्धप्रवालम् ।
अकृतकविधि सर्वाङ्गीणमाकल्पजातं विलसितपदमाद्यं यौवनं स प्रपेदे ॥५२॥
प्रतिकृतिरचनाभ्यो दूतिसंदर्शिताभ्यः समधिकतररूपाः शुद्धसंतानकामैः ।
अधिविविदुरमात्यैराहृतास्तस्य यूनः प्रथमपरिगृहीते श्रीभुवौ राजकन्याः ॥५३॥

इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कालिदासकृतौ वंशानुक्रमो नामाष्टादशः सर्गः ॥

५२ ॥ अथेति । अथ स सुदर्शनो वनितानां नेत्रैर्निर्वेशनीयं भोग्यम् । नेत्रपेय[illegible] ॥ " निर्वेशो भृतिभोगयोः " इत्यमरः ॥ मधु क्षौद्रम् । रागबन्धोऽनुरा[illegible] [illegible] तम् । [illegible] पुष्पं पुष्पस्तनम् । [illegible] सर्वाङ्गीणम् [illegible] सर्वाङ्गीणम् [illegible] तत्सर्वाङ्गेः " [illegible] ॥ [illegible] अलङ्कृतम् ॥ आद्यं विलासनपदं [illegible] यत्राप्य [illegible] ॥

५३ ॥ [illegible] दूतिभिः संदर्शिताभ्यो दूति[illegible] प्रतिमानां रचनाभ्यो विन्या[illegible] समधिकतररूपाः । [illegible] रूपिणः [illegible] आनीता राजकन्याः [illegible] श्रीभुवौ [illegible] अधिवि[illegible] ॥ [illegible] यर्थः ॥ " कृतसापत्निकाध्यू[illegible] " इत्यमरः ॥

इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलम-
ल्लिनाथसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां
संजीविनीसमाख्यायामष्टादशः सर्गः ॥

---

52 Then he attained youth which was the honey to be enjoyed by the eyes of young women, a flower of the Fancy-Born-tree having a sprout in the shape of tie of love, an assemblage of inartificial ornaments pervading all limbs, and the seat of amorous sports.

53. Young princesses, brought by the ministers desirous of pure progeny, and more beautiful than the painting of their likenesses shown to him by the female messengers, superseded the two wives of the young prince already married, *viz.* the Royal Glory and the Earth.

---

52. B. C. H. I. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., °निर्वेशपेयं for निर्वेशनीयं. Hemádri notices the reading of Mallinátha.—Charitravardhana: " नेत्रनिर्वेशेन विस्तारेण पेयं पातुं योग्यं &c. " B. C. E. H. I. K. L. R. with Val., and Vijay., रागबन्धिप्रवालम्, D. with Chá., Din., and Su., रागवल्लीप्रवालम् for रागबन्धप्रवालम्. Vijayânandasûris'varacharanasevaka notices the reading of Châritravardhana. A. C. with Châ., and Din., आकल्पयातं for आकल्पजातं.

53. B. I. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., दूतसंदर्शिताभ्यः for दूतिसंदर्शिताभ्यः. B. D. नेतुः for यूनः.

॥ एकोनविंशः सर्गः ॥

अग्निवर्णमभिषिच्य राघवः स्वे पदे तनयमग्नितेजसम् ।
शिश्रिये श्रुतवतामपश्चिमः पश्चिमे वयसि नैमिषं वशी ॥ १ ॥
तत्र तीर्थसलिलेन दीर्घिकास्तल्पमन्तरितभूमिभिः कुशैः ।
सौधवासमुटजेन विस्मृतः संचिकाय फलनिःस्पृहस्तपः ॥ २ ॥
लब्धपालनविधौ न तत्सुतः खेदमाप गुरुणा हि मेदिनी ।
भोक्तुमेव भुजनिर्जितद्विषा न प्रसाधयितुमस्य कल्पिता ॥ ३ ॥

[illegible] ।
[illegible] ।

१ ॥ अग्निवर्णमिति । श्रुतवतामपश्चिमः प्रथमो वशी यतेन्द्रियो राघवः सुदर्शनः पश्चिमे वयसि वार्धके स्वे पदे स्थाने [illegible] तनयमग्निवर्णमभिषिच्य नैमिषं नैमिषारण्यं शिश्रिये शिश्रितवान् ॥

२ ॥ तत्रेति । तत्र नैमिषे तीर्थसलिलेन दीर्घिका विहारवापीरन्तरितभूमिभिः कुशैस्तल्पं शय्यामुटजेन पर्णशालया सौधवासं विस्मृतो विस्मृतवान्सः ॥ कर्तरि क्तः ॥ फले स्वर्गादिफले निःस्पृहस्तपः संचिकाय संचितवान् ॥

३ ॥ लब्धेति । तत्सुतः सुदर्शनपुत्रोऽग्निवर्णो लब्धपालनविधौ लब्धस्य राज्यस्य

---

1. The self-subdued descendant of Raghu who was the first of those who were instructed in sacred learning installed on his throne his son Agnivarṇa whose lustre was like that of fire and betook himself in his declining years to the forest of Naimisha.

2. Forgetting there the artificial pleasure-ponds by means of water of the sacred bathing-places, the couch by the Kus'a grass spread over the ground, the residence in the palace by a hut he accumulated asceticism without aiming at any fruit.

3. His son felt no pain in his duty of protecting the kingdom he had inherited from his father ; for the sovereignty of the

---

1. A. D. L. सुतवतां for श्रुतवतां. A. B. नैमिशम् for नैमिषम्. Hemâdri also notices the reading. See notes.

2. D H. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., उटजैः स, J. उटजे स for उटजेन. R. स्वल्पमन्तरित for तल्पमन्तरित°. B. C. H. I. K. L. R. with Val., Su., and Vijay., विस्मरन् for विस्मृतः. Hemâdri, Châritravardhana and Dinakara notice the reading of Vallabha and others ; but they distinctly read with Mallinâtha.

3. A. D. तन्सुते for तत्सुतः. Châritravardhana notices the read-

सोऽधिकारमभिकः कुलोचितं काश्चन स्वयमवर्तयत्समाः ।
संनिवेश्य सचिवेष्वतःपरं स्त्रीविधेयनवयौवनोऽभवत् ॥ ४ ॥
कामिनीसहचरस्य कामिनस्तस्य वेश्मसु मृदङ्गनादिषु ।
ऋद्धिमन्तमधिकर्द्धिरुत्तरः पूर्वमुत्सवमपोहदुत्सवः ॥ ५ ॥

पालनकर्मणि खेदं नाप । अक्लेशेनापालयदित्यर्थः ॥ कुतः । हि यस्माद्भुजनिर्जितद्विषा गुरुणा पित्रा मेदिन्यस्याग्निवर्णस्य भोक्तुमेव कल्पिता । प्रसाधयितुं न ॥ प्रसाधनं कण्टकशोधनम् । अलंकृतिर्ध्वन्यते ॥ तथा च । यथालंकृत्य नीता युवतिः केवलमुपभुज्यते तद्वदिति भावः ॥

४ ॥ स इति । अभिकः कामुकः ॥ ‘‘ अनुकाभिकाभीकः कमिता ’’ इति निपातः ॥ ‘‘ कम्रः कामयिताभीकः कमनः कामनोऽभिकः ’’ इत्यमरः ॥ सोऽग्निवर्णः कुलोचितमधिकारं प्रजापालनं काश्चन समाः कतिचिद्वत्सरान्स्वयमवर्तयदकरोत् ॥ अतः परं सचिवेषु संनिवेश्य निधाय स्त्रीविधेयं स्त्र्यधीनं नवयौवनं यस्य सोऽभवत् । स्त्र्यासक्तोऽभूदित्यर्थः ॥

५ ॥ कामिनीति । कामिनीसहचरस्य कामिनस्तस्य मृदङ्गनादिषु मृदङ्गनादवत्सु वेश्मस्वधिकर्द्धिः पूर्वस्मादधिकसंभार उत्तर उत्सवः ऋद्धिमन्तं साधनसंपन्नं पूर्वमुत्सवमपोहदपानुदत् ॥ उत्तरोत्तराधिका तस्योत्सवपरंपरा वृत्तेत्यर्थः ॥

---

earth was designed by his father who had destroyed his foes by the force of his arms purely for his enjoyment and not for suppressing a source of disturbances.

4. That royal voluptuary conducted the regal affairs indispensable to his family for some years in person, and then having consigned them to the care of his ministers, had his prime of youth solely devoted to the service of young women.

5. Of him, cupidinous, and living in company of women, each succeeding festivity richer than its predecessor, superseded the latter rich in its preparations, in palaces resounding with the sound of the tabour.

---

ing and says,—“ क्वचित् । तत्सुते । इति पाठः । तत्रैवं व्याख्या । लब्धः पालनविधिर्येन तादृशे तत्सुते सति मेदिनी भूः खेदं नापेति ” ।

4. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., अधिपः, E. अधिकः for अभिकः. C. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Su., and Vijay., तं निवेश्य for संनिवेश्य.

5. D. R. and the text only of Vijay., मृदंगवादिषु for मृदंगनादिषु. R. उत्तमः for उत्तरः. E. reads “ ऋद्धिमन्तमधिकर्द्धिरुत्सवः पूर्वमुत्सवमपोहदुत्तरः ” for the second half.

इन्द्रियार्थपरिशून्यमक्षमः सोढुमेकमपि स क्षणान्तरम् ।
अन्तरेव विहरन्दिवानिशं न व्यपेक्षत समुत्सुकाः प्रजाः ॥ ६ ॥
गौरवाद्यदपि जातु मंत्रिणां दर्शनं प्रकृतिकाङ्क्षितं ददौ ॥
तद्गवाक्षविवरावलम्बिना केवलेन चरणेन कल्पितम् ॥ ७ ॥
तं कृतप्रणतयोऽनुजीविनः कोमलात्मनखरागरूषितम् ।
भेजिरे नवदिवाकरातपस्पृष्टपङ्कजतुलाधिरोहणम् ॥ ८ ॥

६ ॥ इन्द्रियेति । इन्द्रियार्थपरिशून्यं शब्दादिविषयरहितमेकमपि क्षणान्तरं क्षणभेदं सोढुमक्षमोऽशक्तः सोऽग्निवर्णो दिवानिशमन्तरेव विहरन्समुत्सुका दर्शनाकाङ्क्षिणीः प्रजा न व्यपेक्षत नापेक्षितवान् ॥

७ ॥ गौरवादिति । जातु कदाचिन्मन्त्रिणां गौरवाद्गुरुत्वाद्धेतोः । मन्त्रिवचनानुरोधादित्यर्थः । प्रकृतिभिः प्रजाभिः काङ्क्षितं यदपि दर्शनं ददौ तदपि गवाक्षविवरावलम्बिना केवलेन चरणेन चरणमात्रेण कल्पितं संपादितम् । न तु मुखावलोकनप्रदानेनेत्यर्थः ॥

८ ॥ तमिति । कोमलेन मृदुलेनात्मनखानां रागेणारुण्येन रूषितं छुरितम् । अत एव नवदिवाकरातपेन स्पृष्टं व्याप्तं यत्पङ्कजं तस्य तुलां साम्यतामधिरोहति प्राप्नोतीति तुलाधिरोहणम् । तं चरणमनुजीविनः कृतप्रणतयः कृतनमस्काराः सन्तो भेजिरे सिषेविरे ॥

---

6. Unable to bear even the interval of a single moment destitute of the enjoyment of the object of senses, and amusing himself day and night in the interior of his palace, he did not pay regard to his subjects anxious to have an interview with him.

7. If ever out of regard to his ministers he allowed himself to be shown so anxiously covetted by his subjects, it was done merely by means of a foot hung down from (shown out of) the space of a window.

8. The attendants having made obeisance to his foot began to serve it which was bespread with the red lustre of its own tender nails and which hence attained the similitude of a lotus overspread with the morning lustre of the sun.

---

6. C. L. अन्तरेषु, D. H. K. with Chá., Din., Val., and Vijay., अन्तरे च, E. अन्तरं च for अन्तरेव. D. K. with Su., व्यपेक्षत for व्यपेक्षत. One of the three Mss. of Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी agrees with Sumativijaya and others. D. समुत्सवाः for समुत्सुकाः.

8. B. with Cháritravardhana कोमलाग्रनखरागभूषितं, L. कोमलांशुनखरागरूषितं, C. H. I. K. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., कोमलांशुनखरागभूषितं, D. केवलांशुनखरागरूषितं, D_2. with Din., कोमलाग्रनखरागरूषितं for कोमलात्मनखरागरूषितं.

यौवनोन्नतविलासिनीस्तनक्षोभलोलकमलाश्च दीर्घिकाः ।
गूढमोहनगृहास्तदम्बुभिः स व्यगाहत विगाढमन्मथः ॥ ९ ॥
तत्र सेकहृतलोचनाञ्जनैर्धौतरागपरिपाटलाधरैः ॥
अङ्गनास्तमधिकं व्यलोभयन्नर्पितप्रकृतिकान्तिभिर्मुखैः ॥ १० ॥
घ्राणकान्तमधुगन्धकर्षिणीः पानभूमिरचनाः प्रियासखः ।
अभ्यपद्यत स वासितासखः पुष्पिताः कमलिनीरिव द्विपः ॥ ११ ॥

९ ॥ यौवनेति । विगाढमन्मथः प्रौढमदनः सोऽग्निवर्णो यौवनेन हेतुनोन्नतानां विलासिनीस्तनानां क्षोभणाद्घट्टनेन लोलानि चञ्चलानि कमलानि यासां ताः । तदम्भुभिस्तासां दीर्घिकाणामम्बुभिर्गूढान्यन्तर्हितानि मोहनगृहाणि सुरतभवनानि यासु ताश्च दीर्घिका व्यगाहत ॥ क्रीडितुं ताः दीर्घिकासु विजहारेत्यर्थः ॥

१० ॥ तत्रेति । तत्र दीर्घिकास्वङ्गनाः सेकेन हृतं लोचनाञ्जनं नेत्रकज्जलं येषां तैः । रज्यतेऽनेनेति रागो लाक्षादिः । रागस्य परिपाटलोऽङ्गगुणः ॥ "श्वेतरक्तस्तु पाटलः" इत्यमरः ॥ धौतो रागपरिपाटलो येषां ते तथोक्ता अधरा येषां तैः । निवृत्तसांक्रमिकरागैरित्यर्थः । अतएवार्पितप्रकृतिकान्तिभिः । अभिव्यक्तस्वाभाविकशोभैरित्यर्थः । मुखैः कर्तृभिस्तमग्निवर्णमधिकं व्यलोभयन्प्रलोभितवत्यः ॥

११ ॥ घ्राणेति । प्रियासखः सोऽग्निवर्णो घ्राणकान्तेन घ्राणतर्पणेन मधुगन्धेन कर्षन्तीत्याकर्षिणीः । रच्यन्त इति रचनाः । पानभूमय एव रचनाः ॥ रचिताः पानभूमय इत्यर्थः ॥ वासितासखः करिणीसहचरः ॥ "वासिता स्त्रीकरिण्योश्च" इत्यमरः ॥ द्विपः पुष्पिताः कमलिनीरिव । अभ्यपद्यताभिगतः ॥

---

9. That king of impetuous love sported in the artificial pleasure-ponds where the lotuses were unsteady on account of the agitation of the waters caused by the breasts of the wanton women, right-erect by reason of their youthfulness, and where the rooms for amorous pleasure were hidden beneath their waters.

10. There the young females exceedingly amused him, with their faces the collyrium in the eyes on which was removed by throwing water on each other, the red paint on whose lower lips was washed away, and which hence restored to them their natural colour.

11. He in company of his wanton women drew near the newly

---

9. A. C. with Chā., and Din., यौवनोद्धत° for यौवनोन्नत.° B. D. °कुच° for °स्तन°. E. °लोभ° for °लोल.°

10. A. D. K. °लोचनाञ्जनं for °लोचनाञ्जनैः. D. व्यलम्भयन् for व्यलोभयन्. A. D. °प्रकृत° for °प्रकृति°.

11. A. with Su., घ्राणकाम—कर्षिणीः, C. L. R. with Hem., घ्राणकान्त—वर्षिणीः, D. घ्राणकान्त—वाहिनीः for घ्राणकान्त—कर्षिणीः. B. C. I.

सातिरेकमदकारणं रहस्तेन दत्तमभिलेषुरङ्गनाः ।
ताभिरप्युपहृतं मुखासवं सोऽपिबद्बकुलतुल्यदोहदः ॥ १२ ॥
अङ्कमङ्कपरिवर्तनोचिते तस्य निन्यतुरशून्यतामुभे ।
वल्लकी च हृदयंगमस्वना वल्गुवागपि च वामलोचना ॥ १३ ॥

१२ ॥ सातिरेकेति । अङ्गना रहो रहसि सातिरेकस्य सातिशयस्य मदस्य कारणं तेनाग्निवर्णेन दत्तं मुखासवमभिलेषुः । बकुलेन तुल्यदोहदस्तुल्याभिलाषः ॥ "अथ दोहदम् । इच्छाकाङ्क्षा स्पृहेहा तृट्" इत्यमरः ॥ बकुलद्रुमस्याङ्गनामद्याथित्वात्तुल्याभिलाषत्वम् ॥ सोऽपि ताभिरङ्गनाभिरुपहृतं दत्तं मुखासवमपिबत् ॥

१३ ॥ अङ्कमिति । अङ्कपरिवर्तनोचिते उत्सङ्गविहारार्हे उभे तस्याग्निवर्णस्याङ्कमशून्यतां पूर्णतां निन्यतुः ॥ के उभे । हृदयंगमस्वना मनोहरध्वनिर्वल्लकी वीणा

---

constructed little drinking-grounds inviting on account of the sweet odour of wine agreeable to the sense of smell, as an elephant, the friend of its mate, resorts to the blooming lotus-beds.

12. The young women ardently desired the rinsing-wine from his mouth, the cause of excessive intoxication, which was given to them in secret by him. He too whose longing was equal to that of the Bakula-tree drank the rinsing-wine from their mouths presented to him by them.

13. The following two things did not allow his lap to remain vacant (*i. e.* were ever busy with it) ; *viz.* the Vinâ lute which sent forth notes that thrilled the cords of his heart and also his beautiful-eyed loved-companion of sweet voice, both of whom were ever accustomed to play on it (*i. e.* his lap).

K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., प्रियाद्वृतः for प्रियासखः. Châritravardhana notices the reading of Mallinâtha. C. and the text only of Vijay., प्रत्यपद्यत, D. with Su., अभ्युपद्यत for अभ्यपद्यत. D. K. हस्तिनीसखः, A. with Su., सद्वशासखः for वासितासखः.—Sumativijaya : "सत् शोभना वशेव हस्तिनी सैव सखा यस्य स सद्वशासखः" K. कमलिनीमिव for कमलिनीरिव.

12. B. सातिरेकमदगन्धिनम्, D. with Châ., Din., Su., and Vijay., सातिरेकमधुगन्धिनम् for सातिरेकमदकारणम्. R. अभिलेखुः. for अभिलेषुः A. with Hemâdri, °तुल्यदोहदं, C. I. R. with Vijay., °तुल्यदोहदः, D. °बकुसौहृदं, H. K. तुल्यसौहृदः, L. कल्पदोहदं for तुल्यदोहदः. Hemâdri notices the reading of the D. Mss.

13. K. वल्लकीव for वल्लकी च. A. D. K. हृदयंगमस्वनां, H. हृदयंगमस्वरा for हृदयंगमस्वना. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., मञ्जुवाक् for वल्गुवाक्.

स स्वयं प्रहतपुष्करः कृती लोलमाल्यवलयो हरन्मनः ।
नर्तकीरभिनयातिलङ्घिनीः पार्श्ववर्तिषु गुरुष्वलज्जयत् ॥ १४ ॥

चारु नृत्यविगमे च तन्मुखं स्वेदभिन्नतिलकं परिश्रमात् ।
प्रेमदत्तवदनानिलः पिबन्नत्यजीवदमरालकेश्वरौ ॥ १५ ॥

च । वल्गुवाङ्मधुरभाषिणी वामलोचना कामिन्यपि च । हृदयं गच्छतीति हृदयंगमः ॥ खच्प्रकरणे गमेः सुप्युपसंख्यानात्खच्प्रत्ययः ॥ अङ्काधिरोपितयोर्वीणावामाक्ष्योर्वाद्यगीताभ्यामरंस्तेत्यर्थः ॥

१४ ॥ स इति । कृती कुशलः स्वयं प्रहतपुष्करो वादितवाद्यमुखो लोलानि माल्यानि वलयानि च यस्य स तथोक्तो मनो हरन् । नर्तकीनामिति शेषः । सोऽग्निवर्णोऽभिनयातिलङ्घिनीः । अभिनयेषु स्खलन्तीरित्यर्थः । नर्तकीर्विलासिकाः ॥ "शिल्पिनि ष्वुन्" इति ष्वुन्प्रत्ययः ॥ "षिद्गौरादिभ्यश्च" इति ङीष् ॥ "नर्तकीलासिके समे" इत्यमरः ॥ गुरुषु नाट्याचार्येषु पार्श्ववर्तिषु समीपस्थेषु सत्स्वेवालज्जयल्लज्जामगमयत् ॥

१५ ॥ चार्विति । किं च । चारु सुन्दरं नृत्यविगमे लास्यावसाने परिश्रमान्नर्तनप्रयासात्स्वेदेन भिन्नतिलकं विशीर्णतिलकं तन्मुखं नर्तकीमुखं प्रेम्णा दत्तवदनानिलः प्रवर्तितमुखमारुतः पिबन् । अमराणामलकायाश्चेश्वराविन्द्रकुबेरावत्यजीवदतिक्रम्याजीवत् । ततोऽप्युत्कृष्टजीवित आसीदित्यर्थः ॥ इन्द्रादेरपि दुर्लभमीदृशं सौभाग्यमिति भावः ॥

---

14. Himself playing upon Pushkara with garlands and bracelets unsteady and in this manner captivating their minds he inspired the dancing girls with shame who erred in their gesticulations even when the dancing masters were standing by their sides.

15. At the close of the dance he drinking up (*i. e.* kissing) their lovely faces the Tilaka marks on which were deranged (*lit.* disjoined or unsettled) by the perspiration caused by the fatigue of

---

14. E. स्वनं for स्वयं. A. D. लोलमान° for लोलमाल्य°. Hemâdri notices the reading. D L. with Vallabha अहरत् for हरन्. B. अभिलङ्घिनीः for अतिलङ्घिनीः. D. अमज्जयत for अलज्जयत्.

15. B. with Chà., and Din., चारुनृत्तविरमे च, C. and the text only of Vijay., चारुनृत्यविगमेषु, B₂. with Hemâdri चारुनृत्तविगमे च, D. with Su., चारुनृत्यविरमे च for चारु नृत्यविगमे च. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., °अनिलं for °अनिलः. Châritravardhana notices the reading of Hemâdri and others. B. C. E. H. I. J. K. L. R. with Chà., Din., Val., Su., and Vijay., अन्वजीवत् for अत्यजीवत्.

तस्य सावरणदृष्टसंधयः काम्यवस्तुषु नवेषु सङ्गिनः ।
वल्लभाभिरुपसृत्य चक्रिरे सामिभुक्तविषयाः समागमाः ॥ १६ ॥
अङ्गुलीकिसलयाग्रतर्जनं भ्रूविभङ्गकुटिलं च वीक्षितम् ॥
मेखलाभिरसकृच्च बन्धनं वञ्चयन्प्रणयिनीरवाप सः ॥ १७ ॥
तेन दूतिविदितं निषेदुषा पृष्ठतः सुरतवाररात्रिषु ॥
शुश्रुवे प्रियजनस्य कातरं विप्रलम्भपरिशङ्किनो वचः ॥ १८ ॥

१६ ॥ तस्येति । उपसृत्यान्यत्र गत्वा नवेषु नूतनेषु काम्यवस्तुषु शब्दादिष्विन्द्रियार्थेषु सङ्गिन आसक्तिमतः सतस्तस्य सावरणाः प्रच्छन्ना दृष्टाः प्रकाशाश्च संधयः साधनानि येषु ते समागमाः संगमा वल्लभाभिः प्रेयसीभिः सामिभुक्तविषया अर्धोपभुक्तेन्द्रियार्थाश्चक्रिरे ॥ अत्र गोनर्दीयः—"संधिर्द्विविधः सावरणः प्रकाशश्च । सावरणो भिक्षुक्यादिना प्रकाशः स्वयमुपेत्य केनापि" इति ॥ "इतः स्वयमुपसृत्य विशेषार्थी तत्र स्थितोऽनुपजापं स्वयं संधयः" इति वात्स्यायनः ॥ अन्यत्र गतं तं कथंचित्संधाय पुनरप्युपगमायार्धोपभोगेनानिवृत्ततृष्णं चक्रुरित्यर्थः ॥

१७ ॥ अङ्गुलीति । सोऽग्निवर्णः प्रणयिनीः प्रेयसीर्वञ्चयन्नन्यत्र गच्छन्नङ्गुल्यः किसलयानि तेषामग्राणि तैस्तर्जनं भर्त्सनं भ्रूविभङ्गेन भ्रूभेदेन कुटिलं वक्रं वीक्षितं वीक्षणं चासकृन्मेखलाभिर्बन्धनं चावाप । अपराधिनां दण्डया इति भावः ॥

१८ ॥ तेनेति । सुरतस्य वारो वासरः । तस्य रात्रिषु दूतीनां विदितं यथा तथा

---

dancing, and to which he was giving the breath from his mouth through great affection for them, surpassed the lords of Amará and Alaká in their modes of living.

16. As he was addicted to new girls, the means of gratifying the object of senses, his enjoyments with them, the preliminary negotiations for which were arranged sometimes by proxy and sometimes personally, were made half-enjoyed by his old mistresses who surprised him with their presence.

17. He trying to practise frauds with his mistresses received in return threatening by the extremity of their sprout-like fore-finger, a gazing crooked on account of a frown of their eye-brows, and the repeated fettering by means of their waist-bands.

18. By him who had kept his seat behind them in a manner

---

16. B. C. I. R. with Vijay., °दृष्टि for दृष्ट. A. D. with Su., °बन्धयः for °सन्धयः. K. उपसृज्य for उपसृत्य. D. K. सामिमुक्त° for सामिभुक्त°.

18. A. दूतिकथितं, L. दूतिविषयं, D. with Su., दूतविदितं for दूति-

लौल्यमेत्य गृहिणीपरिग्रहान्नर्तकीष्वसुलभासु तद्वपुः ॥
वर्तते स्म स कथंचिदालिखन्नङ्गुलीक्षरणसन्नवर्तिकः ॥ १९ ॥

प्रेमगर्वितविपक्षमत्सरादायताच्च मदनान्महीक्षितम् ॥
निन्युरुत्सवविधिच्छलेन तं देव्य उज्झितरुषः कृतार्थताम् ॥ २० ॥

पृष्ठतः प्रियजनस्य पश्चाद्भागे निषेदुषा तेनाग्निवर्णेन विप्रलम्भपरिशङ्किनो विरहशङ्किनः । प्रियश्चासौ जनश्च प्रियजनः । तस्य कातरं वचः प्रियानयनेन मां पाहीत्येवमादि दीनवचनं शुश्रुवे ॥

१९ ॥ लौल्यमिति । गृहिणीपरिग्रहाद्राज्ञीभिः सनागमाद्धेतोर्नर्तकीषु वेश्यास्वसुलभासु दुर्लभासु सतीषु लौल्यमौत्सुक्यमेत्य प्राप्य । अङ्गुल्याः क्षरणेन स्वेदनेन सन्नवर्तिको विगलितशलाकः सोऽग्निवर्णस्तासां नर्तकीनां वपुस्तद्वपुरालिखन्कथंचिद्वर्तते स्मावर्तत ॥

२० ॥ प्रेम्णेति । प्रेम्णा स्वविषयेण प्रियस्यानुरागेण हेतुना गर्विते विपक्षे सपत्नजने मत्सराद्वैरादायतात्प्रवृद्धान्मदनाच्च हेतोर्देव्यो राज्ञ्य उज्झितरुषस्त्यक्तरोषाः सत्यस्तं महीक्षितमुत्सवविधिच्छलेन महोत्सवकर्मव्याजेन । कृतोऽर्थः प्रयोजनं येन स कृतार्थः । तस्य भावं कृतार्थतां निन्युः ॥ मदनमहोत्सवव्याजानीतेन तेन स्वमनोरथं कारयामासुरित्यर्थः ॥

---

known only to their female messenger on nights appointed for amorous pleasure, were heard the melancholy words of his beloved mistresses apprehensive of separation from their lover.

19. Being detained by his queens the king who was anxious to beguile the time in company of the dancing girls who were difficult of attainment, remained somehow with them drawing of course the likenesses of their bodily frames with the pen slipping down owing to the perspiration of the fingers.

20. On account of their jealousy towards their fellow-wives who were inflate with pride by reason of the king's affection for them, and also on account of their violent passion for him the queens who had left off their anger brought that lord of the earth to the accomplishment of their object under the pretext of their having to celebrate some festive ceremony.

विदितं. K. कातरां for कातरं. A. D. °परिशङ्कितं for °परिशङ्किनः. K. वचा for वचः.

19. B. D. लौल्यमन्य°, E. R. with Su., लोलमेत्य for लौल्यमेत्य. K. नर्त्तकीषु सुलभासु for नर्त्तकीष्वसुलभासु.

20. K. ते for तं. D. K. उज्झितरुषा for उज्झितरुषः.

प्रातरेत्य परिभोगशोभिना दर्शनेन कृतखण्डनव्यथाः ।
प्राञ्जलिः प्रणयिनीः प्रसादयन्सोऽदुनोत्प्रणयमन्थरः पुनः ॥ २१ ॥
स्वप्रकीर्तितविपक्षमङ्गनाः प्रत्यभैत्सुरवदन्त्य एव तम् ।
प्रच्छदान्तगलिताश्रुबिन्दुभिः क्रोधभिन्नवलयैर्विवर्तनैः ॥ २२ ॥
क्लृप्तपुष्पशयनाँल्लतागृहानेत्य दूतिकृतमार्गदर्शनः ।
अन्वभूत्परिजनाङ्गनारतं सोऽवरोधभयवेपथूत्तरम् ॥ २३ ॥

२१ ॥ प्रातरिति । सोऽग्निवर्णः प्रातरेत्यागत्य परिभोगशोभिना दर्शनेन हेतुना ॥ दृशेर्ण्यन्ताल्ल्युट् ॥ कृता खण्डनव्यथा यासां तास्तथोक्ताः । खण्डिता इत्यर्थः ॥ तदुक्तम्-" ज्ञातेऽन्यासङ्गविकृते खण्डितेर्ष्याकषायिता " इति ॥ प्रणयिनीः प्राञ्जलिः प्रसादयंस्तथापि प्रणयमन्थरः प्रणयेन नर्तकीगतेन मन्थरो जडः । अत्र शिथिलप्रयत्नः सन्नित्यर्थः । पुनरदुनोत्पर्यतापयत ॥

२२ ॥ स्वप्नेति । स्वप्ने प्रकीर्तितो विपक्षः सपत्नजनो येन तं तमग्निवर्णम् । अवदन्त्य एव । त्वया गोत्रस्खलनं कृतमित्यनुपालम्भमाना एव । प्रच्छदस्यास्तरणपटस्यान्ते मध्ये गलिता अश्रुबिन्दवो येषु तैः क्रोधेन भिन्नानि भग्नानि वलयानि येषु तैर्विवर्तनैः पराग्विलुण्ठनैः प्रत्यभैत्सुः प्रतिचक्रुः । तिरश्चक्रुरित्यर्थः ॥

२३ ॥ क्लृप्तेति । सोऽग्निवर्णो दूतिभिः कृतमार्गदर्शनः सन् । क्लृप्तपुष्पशयनाँल्लतागृहानेत्यावरोधादन्तःपुरजनाद्भयेन यो वेपथुः कम्पस्तदुत्तरं तत्प्रधानं यथा तथा

21. He who was cold in his love towards his mistresses, having come to them in the morning began to reconcile them with folded hands—the mistresses whom he had vexed by the disappointment consequent on his infidelity to be inferred from his eye-sight which looked beautiful on account of the debaucheries of the previous nights, and pained them again.

22. The mistresses without speaking even a word with him disowned him who had uttered their rivals' names in his dream by means of their rolling backwards from him in the bed, in which they turned the back on him, in which they shed drops of tears on the covering sheet of the bed, and in which they broke their bracelets with anger.

23. He came to the bowers of creepers where flowery couches were arranged for his reception and the way to which was pointed

21. A. C. with Vijay., परिभोगशंसिना for परिभोगशोभिना. A. C. मण्डलव्यथाः, H. and the text only of Vijay., खण्डनव्यथः. K. मण्डनव्यथः for खण्डनव्यथाः. B. C. I. K. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., प्रश्रयमन्थरः, D. द्विगुणमन्थरः, L. द्विगुणमन्मथः for प्रणयमन्थरः.— Cháritravardhana "प्रणयेन आलिङ्गनादावपि मन्थरः स्वस्थः सन् &c."

22. C. with Hemádri निवर्तनैः for विवर्तनैः.

नाम वल्लभजनस्य ते मया प्राप्य भाग्यमपि तस्य काङ्क्ष्यते ॥
लोलुपं बत मनो ममेति तं गोत्रविस्खलितमूचुरङ्गनाः ॥ २४ ॥
चूर्णबभ्रु लुलितस्रगाकुलं छिन्नमेखलमलक्तकाङ्कितम् ॥
उत्थितस्य शयनं विलासिनस्तस्य विभ्रमरतान्यपावृणोत् ॥ २५ ॥

परिजनाङ्गनारतं दासीरतमन्वभूत् । परिजनश्चासावङ्गना चेति विग्रहः ॥ अत्र ङी-बन्तस्यापि दूतीशब्दस्य छन्दोभङ्गभयाद्ध्रस्वत्वं कृतम् ॥ "अपि माषं मषं कुर्याच्छन्दोभङ्गं त्यजेद्गिराम्" इत्युपदेशात् ॥

२४ ॥ नामेति । मया ते वल्लभजनस्य प्रियजनस्य नाम प्राप्य तन्नाम्नाह्वानं लब्ध्वा तस्य त्वद्वल्लभजनस्य यद्भाग्यम् । तत्परिहासकारणमिति शेषः । तदपि काङ्क्ष्यते ॥ बत हन्त मम मनो लोलुपं गृध्नु । इत्यनेन प्रकारेण गोत्रे नाम्नि विस्खलितं स्खलितवन्तं तमग्निवर्णमूचुः ॥ "गोत्रं नाम्नि कुलेऽचले" इति यादवः ॥ तन्नामलाभे सति तद्भाग्यमपि काङ्क्षति नो मनः । अहो तृष्णा । इति सोल्लुण्ठमुपालम्भन्तेत्यर्थः ॥

२५ ॥ चूर्णेति । चूर्णबभ्रु चूर्णैर्व्यानतकरणेऽधोमुखावस्थितायाः स्त्रियाश्चिकुरगलितैः कुङ्कुमादिभिर्बभ्रु पिङ्गलम् ॥ "बभ्रुः स्यात्पिङ्गले त्रिषु" इत्यमरः ॥ लुलितस्रगाकुलं करिपदाख्यबन्धे स्त्रिया भूमिगतमस्तकतया पतिताभिर्लुलितस्रग्भिराकुलम् । छिन्नमेखलं हरिविक्रमकरणे स्त्रिया उच्छ्रितैकचरणत्वाच्छिन्नमेखलम् । गलितमेखलमित्यर्थः । अलक्तकाङ्कितं धैनुकबन्धे भूतलनिहितकान्ताचरणत्वाल्लाक्षारागरूषितं शयनम् ॥ कर्तृ ॥ उत्थितस्य । शयनादिति भावः । विलासिनस्तस्याग्निवर्णस्य विभ्रमरतानि लीलारतानि । सुरतबन्धविशेषानित्यर्थः । अपावृणोत्स्फुटीचकार । व्यानतादीनां लक्षणं रतिरहस्ये—"व्यानतं रतमिदं प्रिया यदि

---

to him by the female messengers and took pleasure in the रत intercourse with the female-attendants, his body all the while trembling with fear from the females of his inner-apartment.

24. 'Because you addressed me by the name of your beloved I also wish to share her good fortune equally with you; Oh! my mind ardently longs for it!' In this manner every one of his mistresses addressed him who was still blundering in addressing them by their correct names.

25. The couch looking tawny with Kunkuma powder (powdered saffron), over it were seen loose garlands, having on it the broken waist-bands and marked with red lac displayed the sportful debaucheries of this libidinous king when he got up from it.

---

24. K. कांक्षितः, R. कांक्षित, B. I. with Hem., Chà., Din., Val., and Su., कांक्षते for कांक्ष्यते. A. D. J. ननु for बत.

25. B. K. with Su., ललितं स्रगाकुलं, A. and the text only of Vijay., लुलितपत्राकुलं, D. H. L. R. with Vijay., लुलितं स्रगाकुलम्, E. J. ललितस्रगाकुलम् for लुलितस्रगाकुलम्. E. °मेषल° for °मेखल°.

स स्वयं चरणरागमादधे योषितां न च तथा समाहितः ॥
लोभ्यमाननयनः श्लथांशुकैर्मेखलागुणपदैर्नितम्बिभिः ॥ २६ ॥
चुम्बने विपरिवर्तिताधरं हस्तरोधि रशनाविघट्टने ॥
विघ्नितेच्छमपि तस्य सर्वतो मन्मथेन्धनमभूद्वधूरतम् ॥ २७ ॥

स्यादधोमुखचतुष्पदाकृतिः। तत्कटिं समधिरुह्य वल्लभः स्याद्वृषादिपशुसंस्थितस्थिरः ॥ भूगतस्तनभुजास्यमस्तकामुन्नतस्फिचमधोमुखीं स्त्रियम्। क्रामति स्वकरकृष्टमेहने वल्लभे करिपदं तदुच्यते। योषिदेकचरणे समुत्थिते जायते हि हरिविक्रमाह्वयः ॥ न्यस्तहस्तयुगला निजे पदे योषिदेति कटिरूढवल्लभा। भ्रमतो यदि शनैरधोमुखी धेनुकं वृषवदुन्नते प्रिये " इति ॥

२६ ॥ स इति। सोऽग्निवर्णः स्वयमेव योषितां चरणयो रागं लाक्षारसमादधेऽर्पयामास ॥ किं च। श्लथांशुकैः। प्रियाङ्गस्पर्शादिति भावः। नितम्बिभिर्नितम्बवद्भिर्मेखलागुणपदैर्जघनैः ॥ " पश्चान्नितम्बः स्त्रीकट्याः क्लीबे तु जघनं पुरः " इत्यमरः ॥ लोभ्यमाननयन आकृष्यमाणदृष्टिः सन्। तथा समाहितोऽवहितो नादधे। यथा सम्यग्रागरचना स्यादिति शेषः ॥

२७ ॥ चुम्बन इति। चुम्बने प्रवृत्ते सति विपरिवर्तिताधरं परिहृतोष्ठम्। रशनाया विघट्टने ग्रन्थिविस्रंसने प्रसक्ते सति हस्तं रुणद्धि वारयतीति हस्तरोधि। इत्थं सर्वतः सर्वत्र विघ्नितेच्छं प्रतिहतमनोरथमपि वधूनां रतं सुरतं तस्याग्निवर्णस्य मन्मथेन्धनं कामोद्दीपनमभूत् ॥

---

26. He in person began to arrange streaks of lac on the feet of his mistresses but his eyes being attracted by their beautiful hips, the proper place of the girdle, having loose silk garments on them he was not so attentive (in arranging the streaks as he could otherwise have been).

27. His amorous pleasures with young girls, in which they turned their lips away from him when he began to kiss them, in which they held back his hand when he began to loosen the knot of their waist-band and in which they tried to throw an obstacle to his desires in every way, became itself fuel for kindling his carnal appetite.

---

26. B. C. H. I. R. with Val., and Su., न तु, D. E. K. with Hem., and Vijay., न नु, D_2. L. तु न for न च. B. L. समाहितं for समाहितः.

27. A. K. चुम्बने च परिवर्तिताधरं, B. चुम्बनेऽपि परिवर्तिताधरं, D. with Hemádri चुम्बनेषु परिवर्तिताधरं, D_2. चुम्बनेषु परिवर्तिताननं for चुम्बने विपरिवर्तिताधरं. B. C. I. L. R. with Chá., Din., Val., Su., and Vijay., रसना° for रशना°. D. L. मन्मथोत्तरं for मन्मथेन्धनं.

दर्पणेषु परिभोगदर्शिनीर्नर्मपूर्वमनुपृष्ठसंस्थितः ॥
छायया स्मितमनोज्ञया वधूर्ह्रीनिमीलितमुखीश्चकार सः ॥ २८ ॥
कण्ठसक्तमृदुबाहुबन्धनं न्यस्तपादतलमग्रपादयोः ॥
प्रार्थयन्त शयनोत्थितं प्रियास्तं निशात्ययविसर्गचुम्बनम् ॥ २९ ॥
प्रेक्ष्य दर्पणतलस्थमात्मनो राजवेषमतिशक्रशोभिनम् ।
पिप्रिये न स तथा यथा युवा व्यक्तलक्ष्म परिभोगमण्डनम् ॥ ३० ॥

२८ ॥ दर्पणेष्विति । सोऽग्निवर्णो दर्पणेषु परिभोगदर्शिनीः संभोगचिह्नानि पश्यन्तीर्वधूर्नर्मपूर्वं परिहासपूर्वमनुपृष्ठं तासां पृष्ठभागे संस्थितः सन् । स्मितेन मनोज्ञया छायया दर्पणगतेन स्वप्रतिबिम्बेन ह्रीनिमीलितमुखीर्लज्जावनतमुखीश्चकार ॥ तमागतं दृष्ट्वा लज्जिता इत्यर्थः ॥

२९ ॥ कण्ठेति । प्रियाः शयनादुत्थितं तमग्निवर्णं कण्ठसक्तं कण्ठार्पितं मृदुबाहुबन्धनं यस्मिंस्तत् । अग्रपादयोः स्वकीययोर्न्यस्ते पादतले यस्मिंस्तत् । निशात्यये विसर्गो विसृज्य गमनं तत्र यच्चुम्बनं तत्प्रार्थयन्त ॥ "दुह्याच्—" इत्यादिना द्विकर्मकत्वम् ॥ अत्र गोनर्दीयः—" रतावसाने यदि चुम्बनादि प्रयुज्य यायान्मदनोऽस्य वासः " इति ॥

३० ॥ प्रेक्ष्येति । युवा सोऽग्निवर्णोऽतिशक्रं यथा तथा शोभमानमतिशक्रशोभिनं दर्पणतलस्थं दर्पणसंक्रान्तमात्मनो राजवेषं प्रेक्ष्य तथा न पिप्रिये न तुतोष यथा व्यक्तलक्ष्म प्रकटचिह्नं परिभोगमण्डनं प्रेक्ष्य पिप्रिये ॥

---

28. Standing behind a youthful damsel by way of jest he by means of his reflection charming on account of his sweet smiling made her hung down her face with shame while she was looking at the marks of enjoyment on her body in a mirror.

29. When he left the couch the mistresses requested of him a kiss at his separation at the col-e of the night,—a kiss for which they entwined their tender arms close round his neck with the soles of their feet rested on the forepart of his toes.

30. That youthful king seeing his own royal costume surpassing in beauty that of Indra reflected on the surface of a mirror was not so much pleased with it as he was with his embellishment of enjoyment clearly characterised.

---

28. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Su., and Vijay., अनुप्रष्ठसंस्थः. D. अनुप्रष्ठसंथितः for अनुपृष्ठसंस्थितः. Hemádri notices the reading of D. Manuscripts. B. C. I. K. R. with Hem., Val., and Vijay., °हृताः for °मर्त्ता..

29. B. I. L. शयनोत्थिताः. E. शयने स्थितं for शयनोत्थितं. A. and the text only of Vijay.. निसर्गचुम्बनं. B. °विसर्गचुम्बितं, C. °विशेषचुम्बनं. D. K. विरोधचुम्बनं. D. I. L. वियोगचुम्बनं for विसर्गचुम्बनं.

30. K. दर्पणतलस्थलात्मनो for दर्पणतलस्थमात्मनो. E. L. राजवेशं, K.

मित्रकृत्यमपदिश्य पार्श्वतः प्रस्थितं तमनवस्थितं प्रियाः ।
विद्म हे शठ पलायनच्छलान्यञ्जसेति रुरुधुः कचग्रहैः ॥ ३१ ॥
तस्य निर्दयरतिश्रमालसाः कण्ठसूत्रमपदिश्य योषितः ।
अध्यशेरत बृहद्भुजान्तरं पीवरस्तनविलुप्तचन्दनम् ॥ ३२ ॥

३१ ॥ मित्रेति । मित्रकृत्यं सुहृत्कार्यमपदिश्य व्याजीकृत्य पार्श्वतः प्रस्थितमन्यतो गन्तुमुद्युक्तमनवस्थितमस्वथातुमक्षमं तमभिवर्ण प्रिया हे शठ हे गूढविप्रियकारिन् ॥ " गूढविप्रियकृच्छठः " इति दशरूपके ॥ तव पलायनस्य छलान्यञ्जसा तत्त्वतः ॥ " तत्त्वे त्वद्धाञ्जसा द्वयम् " इत्यमरः ॥ विद्म जानीमः ॥ " विदो लटो वा " इति वैकल्पिको नादेशः ॥ इति । उक्त्वेति शेषः । कचग्रहैः केशाकर्षणै रुरुधुः ॥ अत्र गोनर्दीयः—" ऋतुस्नाताभिगमने मित्रकार्ये तथापदि । त्रिष्वेतेषु प्रियतमः क्षन्तव्यो वारगम्यया " इति ॥ विरक्तलक्षणप्रस्तावे वात्स्यायनः—" मित्रकृत्यं चापदिश्यान्यत्र शेते " इति ॥

३२ ॥ तस्येति । निर्दयरतिश्रमेणालसा निश्चेष्टा योषितः कण्ठसूत्रमालिङ्गनविशेषमपदिश्य व्याजीकृत्य पीवरस्तनाभ्यां विलुप्तचन्दनं प्रमृष्टाङ्गरागं तस्याभिवर्णस्य बृहद्भुजान्तरमध्यशेरत वक्षःस्थले शेरते स्म ॥ कण्ठसूत्रलक्षणं तु—" यत्कुर्वते वक्षसि वल्लभस्य स्तनाभिघातं निबिडोपगूहनम् । परिश्रमार्थं शनकैर्विदग्धास्तत्कण्ठसूत्रं प्रवदन्ति सन्तः " ॥ इदमेव रतिरहस्ये स्तनालिङ्गनमित्युक्तम् । तथा च— " उरसि कान्तमुच्चैरादिशन्ती वराङ्गी स्तनयुगमुपधत्ते यत्स्तनालिङ्गनं तत् " इति ॥

---

31. " In truth we know you, Oh rogue, your tricks of escape from our clutches " with these words the courtezans by catching hold of his hair prevented him from going away from them, who was thus excited and who was about to go to some other place under the pretext of doing some business for a friend.

32. The young damsels weary on account of the fatigue caused by the excessive amorous pleasures slept on the broad interval of his arms where the sandle paste was removed by the friction of their plumpy breasts under the pretence of कण्ठसूत्र embrace.

राजवंशं for राजवेषं. K. अतिशक्ति° for अतिशक्त°. B. C. °शोभितं, D. K. with Su., °शोभनं for °शोभितं. B. C. E. I. L. with Hem., Châ., Din., Su., and Vijay., स न for न स. K. यथा तथा for तथा यथा. L. पुरा for युवा. H. L. with Châ., Din., and the text only of Vijay., °मण्डलं for °मण्डनं.

31. C. I. K. R. with Val., Su., and the text only of Vijay., उपदिश्य, D. with Châ., and Din., व्यपदिश्य for अपदिश्य. D. K. पार्थिवं for पार्श्वतः. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., विद्म ते, D. विद्यते for विद्म हे.

32. B. D. H. I. L. with Vijay., °रत° for °रति°. B. C. I. K. L. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., अपविद्धय for अपदिश्य.—Hemâdri:

संगमाय निशि गूढचारिणं चारदूतिकथितं पुरोगताः ।
वञ्चयिष्यसि कुतस्तमोवृतः कामुकेति चकृषुस्तमङ्गनाः ॥ ३३ ॥
योषितामुडुपतेरिवार्चिषां स्पर्शनिर्वृतिमसाववाप्नुवन् ।
आरुरोह कुमुदाकरोपमां रात्रिजागरपरो दिवाशयः ॥ ३४ ॥

३३ ॥ संगमायेति । संगमाय सुरतार्थं निशि गूढमज्ञातं चरतीष्टगृहं प्रति गच्छतीति गूढचारी । तं चारदूतिकथितम् । चरन्तीति चारा गूढचारिण्यः ॥ "ज्वलिति कसन्तेभ्यो णः" इति णप्रत्ययः ॥ चाराश्च ता दूत्यश्च चारदूतयः । ताभिः कथितं निवेदितं तमग्निवर्णमङ्गनाः पुरोऽग्रे गताः । अवरुद्धमार्गाः सत्य इत्यर्थः । हे कामुक तमसा वृतो गूढः सन्कुतो वञ्चयिष्यसि । इति । उपालभ्येति शेषः चकृषुः ॥ स्ववासं निन्युरित्यर्थः ॥

३४ ॥ योषितामिति । उडुपतेरिन्दोरर्चिषां भासामिव ॥ "ज्वाला भासो न पुंस्यर्चिः" इत्यमरः ॥ योषितां स्पर्शनिर्वृतिं स्पर्शसुखमवाप्नुवन् । किं च । रात्रिषु जागरपरः । दिवा दिवसेषु शेते स्वपितीति दिवाशयः ॥ "अधिकरणे शेतेः" इत्यच्प्रत्ययः ॥ असावग्निवर्णः कुमुदाकरस्योपमां साम्यमारुरोह प्राप ॥

---

33. "Surrounded as you are with darkness, how will you, O lover, try to deceive us ?" with these words his mistresses who had gone ahead of him so as to prevent him from going any farther drew him to their abodes who was previously detected and reported by their female servants employed as spies and who was proceeding secretly to some other place for amorous pleasures at night.

34. Feeling the highest happiness from the touch of his mistresses like that arising from the touch of the rays of the lord of stars (*i. e.* the moon) he got to the comparison of a pond abounding in white water-lilies on account of his wakefulness (or opening) at night and sleeping (or shutting) at day.

"अपविद्धच त्यक्त्वा आश्लिष्य वा । अन्यत्र गमिष्यतीति शंकया." B. I. K. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., °कुङ्कुमम् for °चन्दनम्.

33. D. H. L. R. with Hem., Su., and Vijay., चारु°, I. चौरि° for चार°.—Hemâdri: "चारुभिः कुशलाभिः &c.," Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha. A. D. L. पुरोगमाः for पुरोगताः. B. I. K. L. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., न नः, H. नु नः for कुतः. H. K. R. with Hem., Val., Su., and the text only of Vijay., तमोवृताः, D. with Châ., Din., and Vijay., तमोवृतं for तमोवृतः. D. and the text only of Vijay., जगृहुः for चकृषुः.

34. A. D. L. °निर्वृतसुखानि for °निर्वृतिमसौ. B. H. I. K. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., अनाप्नुवन् for अवाप्नुवन्. D. with Su., °करोपमम् for °करोपमाम्.

वेणुना दशनपीडिताधरा वीणया नखपदाङ्कितोरवः ।
शिल्पकार्य उभयेन वेजितास्तं विजिह्मनयना व्यलोभयन् ॥ ३५ ॥
अङ्गसत्त्ववचनाश्रयं मिथः स्त्रीषु नृत्यमुपधाय दर्शयन् ॥
स प्रयोगनिपुणैः प्रयोक्तृभिः संजघर्ष सह मित्रसंनिधौ ॥ ३६ ॥

३५ ॥ वेणुनेति । दशनैः पीडिताधरा दष्टौष्ठाः । नखपदैर्नखक्षतैरङ्कितोरवश्चिह्नितोरुसङ्गाः । व्रणिताधरोरुत्वादक्षमा इत्यर्थः । तथापि वेणुना वीणया चेत्युभयेन, अधरोरुपीडाकरेणेत्यर्थः । वेजिताः पीडिताः शिल्पं वेणुवीणावाद्यादिकं कुर्वन्तीति शिल्पकार्यो गायिकाः ॥ " कर्मण्यण् " इत्यण् ॥ " टिड्ढाणञ् - " इत्यादिना ङीप् ॥ तं विजिह्मनयनाः कुटिलदृष्टयः सत्यः । स्वं चेष्टितं जानन्नपि वृथा नः पीडयतीति साभिप्रायं पश्यन्त्य इत्यर्थः । व्यलोभयन् ॥ तथाविधालोकनमपि तस्याकर्षकमेवाभूदिति भावः ॥

३६ ॥ अङ्गेति । अङ्गं हस्तादि । सत्त्वमन्तःकरणम् । वचनं गेयं चाश्रयः कारणं यस्य तदङ्गसत्त्ववचनाश्रयम् । आङ्गिकसात्त्विकवाचिकरूपेण त्रिविधमित्यर्थः ॥ यथाह भरतः—" सामान्याभिनयो नाम ज्ञेयो वागङ्गसत्त्वजः " इति ॥ नृत्यमभिनयं मिथो रहसि स्त्रीषु नर्तकीषूपधाय निधाय दर्शयन् । स मित्रसंनिधौ सहचरसमक्षं प्रयोगेऽभिनये निपुणैः कृतिभिः प्रयोक्तृभिरभिनयाचार्यैः सह संजघर्ष संघर्षं कृतवान् ॥ संघर्षः पराभिभवेच्छा ॥

---

35. Practising themselves in fine arts the young damsels who were pained both by the flute because their lower lips were bitten in the amorous play by him with his teeth and by the Vi*n*a lute because their laps were marked by the impressions of his nails, charmed him with their crooked glances (*i. e.* sidelong glances of love).

36. Having privately instructed the girls in the dance depending on singing, inward feelings and the limbs, he, exhibiting it in the presence of his friends, contended for superiority with the dancing-masters proficient in the art of representation.

---

35. B. C. H. J. L. R. with Hem., Val., Su., and Vijay., °रसः for °रवः. B. C. E. with Su., शिल्पिकार्यः, D. I. K. with Vijay., शिल्पिकार्ये for शिल्पकार्यः. E. वेजिताः for वेजिताः. B. C. I. K. L. R. with Hem., Châ., Din., Val., Su., and Vijay., व्यलोकयन् for व्यलोभयन्. Hemâdri also notices the reading of Mallinâtha.

36. A. with Vijay., °वचनाश्रियम्, C. °वचनाश्रितम्, D. K. L. °रचनाश्रयम् for °वचनाश्रयम्. B. D. J. with Châ., and Din., नृत्तम् for नृत्यम्. A. K. उपधार्य दर्शयन्, B. with Châ., and Din., अवधार्य दर्शयन्, D. L. उपदर्शयन्नृपः, I. अवधाय दर्शयन् for उपधाय दर्शयन्. B. D. L. with Vijay., प्रयोगनिपुणः for प्रयोगनिपुणैः. D. K. नियोक्तिभिः for प्रयोक्तृभिः. B. C. E. H. I. K. L. R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., संजहर्ष for संजघर्ष. Châritravardhana : " संजहर्ष स्पर्धां चक्रे " &c.

अंसलम्बिकुटजार्जुनस्रजस्तस्य नीपरजसाङ्गरागिणः ॥
प्रावृषि प्रमदबर्हिणेष्वभूत्कृत्रिमाद्रिषु विहारविभ्रमः ॥ ३७ ॥
विग्रहाच्च शयने पराङ्मुखीर्नानुनेतुमबलाः स तत्वरे ॥
आचकाङ्क्ष घनशब्दविक्लवास्ता विवृत्य विशतीर्भुजान्तरम् ॥ ३८ ॥
कार्त्तिकीषु सवितानहर्म्यभाग्यामिनीषु ललिताङ्गनासखः ॥
अन्वभुङ्क्त सुरतश्रमापहां मेघमुक्तविशदां स चन्द्रिकाम् ॥ ३९ ॥

३७ ॥ इतः प्रभृति तस्य तत्तदृतूचितविहारप्रकारमाह ॥ अंसेति । प्रावृष्यंसलम्बिन्यः कुटजानामर्जुनानां कुकुभानां च स्रजो यस्य तस्य । नीपानां कदम्बकुसुमानां रजसाङ्गरागिणोऽङ्गरागवतस्तस्याग्निवर्णस्य प्रमदबर्हिणेषून्मत्तमयूरेषु कृत्रिमाद्रिषु विहारविभ्रमोऽभूदभवत् ॥ विहार एव विभ्रमो विलासः ॥

३८ ॥ विग्रहादिति । प्रावृषीत्यनुषज्यते । सोऽग्निवर्णो विग्रहात्प्रणयकलहाच्छयने पराङ्मुखीरबला अनुनेतुं न तत्वरे त्वरितवान् । किं तु घनशब्देन घनगर्जितेन विक्लवा भीता अत एव विवृत्य स्वयमेवाभिमुखीभूय भुजान्तरं विशतीः प्रविशन्तीः । "आच्छीनद्योर्नुम्" इति नुमागमविकल्पः ॥ ता अबला आचकाङ्क्ष । स्वयं ग्रहादेव सांमुख्यमैच्छदित्यर्थः ॥

३९ ॥ कार्त्तिकीष्विति । कार्त्तिकस्येमाः कार्त्तिक्यः ॥ "तस्येदम्" इत्यण् ॥ तासु यामिनीषु । शरद्रात्रिष्वित्यर्थः । सवितानान्युपरिवस्त्रावृतानि हर्म्याणि

37 He whose garlands of Ku*t*aja and Arjuna flowers were hanging down from his shoulders and who had smeared his body with the scented cosmetics of the Nipa pollens commenced his libidinous sports in the season of Autumn on the artificial pleasure-mountains abounding in the amorous peacocks.

38. On account of the love-quarrel he did not hasten to coax the young women who had turned aside their face on the couch; but he eagerly wished them to turn and enter the space between his arms when they were frightened by the thundering of the clouds.

39. Living in mansions overcovered with an awning he in company of the beautiful mistresses enjoyed the moon-light removing the fatigue of amorous pleasures and clear on account of the removal of clouds during the nights of the month of Kârtika.

---

37. B. R. अंसलम्बिकुट्जार्जुन°, D. L. अंसलग्नकुटजार्जुन° for अंसलम्बिकुटजार्जुन°. D. K. विहारसंभ्रमः for विहारविभ्रमः.

39. B. च विमानहर्म्यभाक्, D. L. सविमानहर्म्यभाक् for सवितानहर्म्यभाक्. Hemâdri notices the reading of D. L. manuscripts. B. H. I. with Hem., Châ., Din., Val., and Su., सुरतक्रमापहाम्, C. K. L. R. with Vi-

सैकतं च सरयूं विवृण्वतीं श्रोणिबिम्बमिव हंसमेखलम् ॥
स्वप्रियाविलसितानुकारिणीं सौधजालविवरैर्व्यलोकयत् ॥ ४० ॥
मर्मरैरगुरुधूपगन्धिभिर्व्यक्तहेमरशनैस्तमेकतः ॥
जह्रुराग्रथनमोक्षलोलुपं हैमनैर्निवसनैः सुमध्यमाः ॥ ४१ ॥

भजतीति सवितानहर्म्यभाक् ॥ भजेर्ण्विप्रत्ययः ॥ हिमनिवारणार्थं सवितानमुक्तम् । ललिताङ्गनासखः सोऽभ्रिवर्णः सुरतश्रमापहां मेघमुक्ता चासौविशदा च ताम् ॥ बहुलग्रहणात्सविशेषणसमासः ॥ चन्द्रिकामन्वभुङ्क्त ॥

४० ॥ सैकतमिति । किं च । हंसा एव मेखला यस्य तत्सैकतं पुलिनं श्रोणिबिम्बमिव विवृण्वतीम् । अत एव स्वप्रियाविलसितान्यनुकरोतीति तद्विधां सरयूम् । सौधस्य जालानि गवाक्षाः । त एव विवराणि । तैर्व्यलोकयत् ॥

४१ ॥ मर्मरैरिति । मर्मरैः संस्कारविशेषाच्छब्दायमानैः ॥ " अथ मर्मरः । स्वनिते वस्त्रपर्णानाम् " इत्यमरः ॥ अगुरुधूपगन्धिभिर्व्यक्तहेमरशनैर्लौल्याल्लक्ष्यमाणकनकमेखलागुणैर्हैमनैर्हेमन्ते भवैः ॥ " सर्वत्राण्च तलोपश्च " इति हेमन्तशब्दादण्प्रत्ययस्तलोपश्च ॥ निवसनैरंशुकैः सुमध्यमाः स्त्रिय एकतो नितम्बैकदेशे आग्रथनमोक्षयोर्नीवीबन्धविस्रंसनयोर्लोलुपतासक्तं तं जहुराचकृषुः ॥

40. He saw through the holes of the windows of his palace the river Sarayû displaying its sandy-banks resembling the hip and loins with rows of flamingoes for its waist-bands and thus imitating the graceful and wanton gestures of his own beloveds.

41. The young damsels with beautiful waists attracted him who was eager to tie and untie the knots of their garments on a part of their hip and loins, by means of their rustling silk-woven garments suitable for winter which were made fragrant with the fumes of agallochum and which displayed the golden waist-bands (from within).

---

jay., सुरतक्रमापहाः for सुरतश्रमापहाम्. B. I. मेघमुक्तिविशदाम्, C. K. R. with Val., and Vijay., मेघमुक्तविशदाः for मेघमुक्तविशदाम्. C. K. R. with Val., and Vijay., चन्द्रिकाः for चन्द्रिकाम्.

40. K. इह for इव. H. L R. with Châ., Din., Val., Su., and Vijay., हंसमेखलाम् for हंसमेखलं. L. सप्रिया° for स्वप्रिया°. R. विलोकयत् for व्यलोकयत्.

41. B. D. with Val., and Su., अगुरुधूमधूपितैः, E. H. J. R. with Hem., and Vijay., अगरुधूपगन्धिभिः for अगुरुधूपगन्धिभिः. C. I. K. R. with Hemâdri त्यक्तहेमरशनैः for व्यक्तहेमरशनैः. B. D. °मोक्षलोलुभम् for °मोक्षलोलुपम्.

अर्पितस्तिमितदीपदृष्टयो गर्भवेश्मसु निवातकुक्षिषु ॥
तस्य सर्वसुरतान्तरक्षमाः साक्षितां शिशिररात्रयो ययुः ॥ ४२ ॥
दक्षिणेन पवनेन संभृतं प्रेक्ष्य चूतकुसुमं सपल्लवम् ॥
अन्वनैषुरवधूतविग्रहास्तं दुरुत्सहवियोगमङ्गनाः ॥ ४३ ॥
ताः स्वमङ्कमधिरोप्य दोलया प्रेङ्खयन्परिजनापविद्धया ॥
मुक्तरज्जु निबिडं भयच्छलात्कण्ठबन्धनमवाप बाहुभिः ॥ ४४ ॥

४२ ॥ अर्पितेति । निवाता वातरहिताः कुक्षयोऽभ्यन्तराणि येषां तेषु गर्भवेश्मसु गृहान्तर्गृहेष्वर्पिता दत्ताः स्तिमिता निवातत्वान्निश्चला दीपा एव दृष्टयो याभिस्ताः ॥ अत्रानिमिषदृष्टित्वं च गम्यते ॥ सर्वसुरतान्तरक्षमास्तापस्वेदापनोदत्वाद्दीर्घकालत्वाच्च सर्वेषां सुरतान्तराणां सुरतभेदानां क्षमाः क्रियार्हाः शिशिररात्रयस्तस्याग्निवर्णस्य साक्षितां ययुः ॥ विविक्तकालदेशत्वाद्यथेच्छं विजहारेत्यर्थः ॥

४३ ॥ दक्षिणेनेति । अङ्गना दक्षिणेन पवनेन मलयानिलेन संभृतं जनितं सपल्लवं चूतकुसुमं प्रेक्ष्यावधूतविग्रहास्त्यक्तविरोधाः सत्यो दुरुत्सहवियोगं दुःसहविरहं तमन्वनैषुः ॥ तद्विरहमसहमानाः स्वयमेवानुनीतवत्य इत्यर्थः ॥

४४ ॥ ता इति । ता अङ्गना स्वमङ्कं स्वकीयमुत्सङ्गमधिरोप्य परिजनेनापविद्धया प्रेषितया दोलया मुक्तरज्जु त्यक्तदोलासूत्रं यथा तथा प्रेङ्खयंश्चालयन्भयच्छलात्पतनभयमिषाद्बाहुभिरङ्गनाभुजैर्निबिडं कण्ठबन्धनमवाप प्राप ॥ स्वयं महाश्लेषसुखमन्वभूदित्यर्थः ॥

42. In the boudoirs the interior of which was free from the wind, the wintry Nights, which stared with their eyes (in the shape) of steady lamps and which were capable of giving scope to every other mode of amorous pleasures, were witnesses to his night debaucheries.

43. The mistresses seeing the mango blossoms with the foliage put forth by the southern breeze gave up the love-quarrels with him and won him over to their side, whose separation they thought, would be unbearable to them.

44. Placing them on his own lap and enjoying with them a swing on a swinging-cot which was set in motion by the servants

---

42. B. D. H. L. दीपदीतयः for दीपदृष्टयः. B. L. प्रेक्ष्यताम्, D. K. साक्षताम् for साक्षिताम्.

43. B. C. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su. and Vijay., अवकीर्ण° for अवधूत°.—Hemádri: "अवकीर्णविग्रहास्त्यक्तकलहाः" &c. K. मृदुत्सह° for दुरुत्सह°.

44. B. D. L. with Chà., काश्चित् for ताः स्वम्. A. C. with Su., अवरोप्य for अधिरोप्य. A. with Su., प्रेरयन्, D. L. R. with Hem., प्रेष-

तं पयोधरनिषिक्तचन्दनैर्मौक्तिकग्रथितचारुभूषणैः ॥
ग्रीष्मवेषविधिभिः सिषेविरे श्रोणिलम्बिमणिमेखलैः प्रियाः ॥ ४५ ॥
यत्स भग्नसहकारमासवं रक्तपाटलसमागमं पपौ ॥
तेन तस्य मधुनिर्गमात्कृशश्चित्तयोनिरभवत्पुनर्नवः ॥ ४६ ॥

४५ ॥ तमिति । प्रियाः पयोधरेषु स्तनेषु निषिक्तमुक्षितं चन्दनं येषु तैः । मौक्तिकैर्ग्रथितानि प्रोतानि चारुभूषणानि येषु तैः । मुक्ताप्रायाभरणैरित्यर्थः । श्रोणिलम्बिन्यो मणिमेखला मणिप्रचुररशना येषु तैर्ग्रीष्मवेषविधिभिरुष्णकालोचितनेपथ्यकरणैः । शीतलोपायैरित्यर्थः । तमग्निवर्णं सिषेविरे ॥

४६ ॥ यदिति । सोऽग्निवर्णो भग्नः सहकारश्चूतपल्लवो यस्मिंस्तं रक्तपाटलस्य पाटलकुसुमस्य समागमो यस्य तमासवं मद्यं पपौ । इति यत्तेनासवपानेन मधुनिर्गमाद्वसन्तापगमात्कृशो नन्दवीर्यस्तस्य चित्तयोनिः कामः पुनर्नवः प्रबलोऽभवत् ॥

---

in a manner in which they let off its ropes he under the pretext of the fear of falling down received a close embrace (*lit.* binding of the neck) by means of their arms.

45. His beloveds served him with the arrangements of summer-suiting toilets in which their breasts were besmeared with sandal paste, in which the beautiful ornaments were stringed with pearls, and in which the pearl-waist-bands hung as far as their hip and loins.

46. He drank wine mixed with the small bits of mango-sprouts squeezed together and perfumed by receiving the contact of the red Pàtala flowers ; by virtue of such acts his Fancy Born god who was emaciated by the departure of the spring again became fresh.

यन्, K. with Val., and the texts only of Su., and Vijay., प्रेरयन् for प्रेङ्खयन्. B. C. °प्रविद्धया, D. I. L. °प्रवृत्तया, D_2. H. K. with Hem., Su., and Vijay., °प्रवृद्धया, R. with Val., and the text only of Su., °प्रबद्धया for °अपविद्धया.

45. B. C. L. with Vallabha °मेखलाः for मेखलैः. B. D. स्त्रियः for प्रियाः.

46. B. C. लग्न° for भग्न°. B. C. with Hemàdri °असेवतासकृत्, E. H. I. L. R. with Chá., Din., and Vijay., °समागतं पपौ for °समागमं पपौ.

एवमिन्द्रियसुखानि निर्विशन्नन्यकार्यविमुखः स पार्थिवः ॥
आत्मलक्षणनिवेदितानृतूनत्यवाहयदनङ्गवाहितः ॥ ४७ ॥
तं प्रमत्तमपि न प्रभावतः शेकुराक्रमितुमन्यपार्थिवाः ॥
आमयस्तु रतिरागसंभवो दक्षशाप इव चन्द्रमक्षिणोत् ॥ ४८ ॥
दृष्टदोषमपि तन्न सोऽत्यजत्सङ्गवस्तु भिषजामनाश्रवः ॥
स्वादुभिस्तु विषयैर्हृतस्ततो दुःखमिन्द्रियगणो निवार्यते ॥ ४९ ॥

४७ ॥ एवमिति । एवमनङ्गवाहितः कामप्रेरितोऽन्यकार्यविमुखः स पार्थिव इन्द्रियाणां सुखानि सुखकराणि शब्दादीनि निर्विशन्ननुभवन्नात्मनो लक्षणैः कुटजलधारणादिचिह्नैर्निवेदितान् । अयमृतुरिदानीं वर्तत इति ज्ञापितान् । ऋतून्वर्षादीनत्यवाहयदगमयत् ॥

४८ ॥ तमिति । प्रमत्तं व्यसनासक्तमपि तं नृपं प्रभावतोऽन्यपार्थिवा आक्रमितुमभिभवितुं न शेकुर्न शक्ताः ॥ रतिरागसंभव आमयो व्याधिस्तु । क्षयरोग इत्यर्थः । दक्षस्य दक्षप्रजापतेः शापश्चन्द्रमिव । अक्षिणोदकर्शयत् ॥ शापोऽपि रतिरागसंभव इति । अत्र दक्षः किलान्याः स्वकन्या उपेक्ष्य रोहिण्यामेव रममाणं राजानं सोमं शशाप । स शापश्चाद्यापि क्षयरूपेण तं क्षिणोतीत्युपाख्यायते ॥

४९ ॥ दृष्टेति । भिषजां वैद्यानामनाश्रवो वचसि न स्थितः ॥ "वचने स्थित आश्रवः" इत्यमरः ॥ अविधेय इत्यर्थः । स दृष्टदोषमपि । रोगजननादिति शेषः । तत्सङ्गस्य वस्तु सङ्गवस्तु । स्त्रीमद्यादिकं सङ्गजनकं वस्तु नात्यजत् ॥ तथा हि । इन्द्रियगणः स्वादुभिर्विषयैर्हृतस्तु हृतश्चेत्ततस्तेभ्यो विषयेभ्यो दुःखं कृच्छ्रेण निवार्यते । यदि वार्येतेति शेषः ॥ दुस्त्यजाः खलु विषया इत्यर्थः ॥

---

47. Thus enjoying the pleasures of the object of senses that king who was impelled by the object of desire and so was made incapaciated to look to other regal affairs, passed away the seasons indicated by their signs on his own body.

48. Other kings were not able to vanquish him though addicted to vice by reason of his superior sovereign power; but a disease produced from a passion for amorous pleasures began gradually to consume him, as does the curse of Daksha the moon.

49. Not listening to the advice of his physicians he did not give up those tempting objects to which he was so much addicted, even though they were found out to be of evil consequence, for the

---

47. C. D. E. H. I. K. R. with Hem., Châ., Din., Val., and Su., °मोहितः, D_2. and the text only of Vijay., °नोदितः for °वाहितः.

48. R. स्वभावतः for प्रभावतः. R. सुरतराग° for तु रतिराग°. H. I. J. R. with Su., and the text only of Vijay., अक्षणोत् for अक्षिणोत्.

49. B. D. E. J. L. च for सः. R. अत्यगात् for अत्यजत्. L. सङ्गमं तु, R. सङ्गतस्तु for सङ्गवस्तु. B. C. L. R. with Hem., Châ., Din., and

तस्य पाण्डुवदनाल्पभूषणा सावलम्बगमना मृदुस्वना ॥
राजयक्ष्मपरिहानिराययौ कामयानसमवस्थया तुलाम् ॥ ५० ॥
व्योम पश्चिमकलास्थितेन्दु वा पङ्कशेषमिव घर्मपल्वलम् ॥
राज्ञि तत्कुलमभूत्क्षयातुरे वामनार्चिरिव दीपभाजनम् ॥ ५१ ॥

५० ॥ तस्येति । तस्य राज्ञः पाण्डुवदना । अल्पभूषणा परिमिताभरणा । सावलम्बं दासादिहस्तावलम्बसहितं गमनं यस्यां सा सावलम्बगमना । मृदुस्वना हीनस्वरा । राज्ञः सोमस्य यक्ष्मा राजयक्ष्मा क्षयरोगः । तेन या परिहानिः क्षीणावस्था सा । कामयते विषयानिच्छति कामयानः कामयमानः ॥ कर्तरि णिङन्ताच्छानच् ॥ "अनित्यमागमशासनम्" इति मुमागमाभावः ॥ एतदेवाभिप्रेत्योक्तं वामनेनापि—"कामयानशब्दः सिद्धोऽनादिश्च" इति ॥ तस्य समवस्थया कामुकावस्थया तुलां साम्यमाययौ प्राप । कालकृतो विशेषोऽवस्था ॥ "विशेषः कालिकोऽवस्था" इत्यमरः ॥

५१ ॥ व्योमेति । राज्ञि क्षयातुरे सति तत्कुलं रघुकुलं पश्चिमकलायां स्थित इन्दुर्यस्मिंस्तत्कलावशिष्टेन्दु व्योम वा व्योमेव ॥ वाशब्द इवार्थे ॥ यथाह दण्डी—"इववद्वायथाशब्दौ" इति ॥ पङ्कशेषं घर्मपल्वलमिव । वामनार्चिरल्पशिखं दीपभाजनमिव दीपपात्रमिवाभूत् ॥

---

assemblage of the organs of sense when once led away by temptations of world is with difficulty (or hardly) kept off from them.

50. His decay caused by the consumption which was bringing pallor on his face, making him put on few ornaments on his body, forcing him to walk out supported by servants and depressing his voice, got to the similitude of the state of a lover.

51. The king suffering from consumption his family appeared like the sky having the moon in her last digit, or like a puddle in

---

the text only of Vijay., अनास्पदं, D. H. K. with Val., and Su., अनाश्रयं, D. E. I. with Vijay., अनाश्रयः for अनाश्रयः.—Hemádri : "न विद्यते आस्पदं कृत्यं यत्र तत् ॥ 'आस्पदं तु पदे कृत्ये' इति विश्वः" । B. E. L. सः, C. H. K. with Val., Su., and Vijay., च. D. with Hemádri हि for तु. B. D. E. J. L. R. with Val., Su., and the text only of Vijay., हि वार्यते for निवार्यते.

50. D. मृदुस्वर्ना, H मृदुस्वरा for मृदुस्वना. A. with Hemádri यक्ष्मणस्तु परिहानिः, C. with Ch., Din., and Su. यक्ष्मणा मर्पादि हानिः, B. I. L. with Val., Vijay., and the text only of Su., यक्ष्मणापि परिहानिः, H. K. R. यक्ष्मणात्मपरिहानि, E. राजयक्ष्मपरिहाणिः for राजयक्ष्मपरिहानि.

51. A. C. with Hemádri धाम for व्योम. A. K. with Val., °स्थितेन्दुवत्, C. I. R. with Su., and Vijay., °स्थितेन्दुना, D. L. with Din., °स्थितेन्दुमत् for °स्थितेन्दु वा.

बाढमेषु दिवसेषु पार्थिवः कर्म साधयति पुत्रजन्मने ।
इत्यदर्शितरुजोऽस्य मन्त्रिणः शश्वदूचुरघशङ्किनीः प्रजाः ॥ ५२ ॥
स त्वनेकवनितासखोऽपि सन्पावनीमनवलोक्य संततिम् ।
वैद्ययत्नपरिभाविनं गदं न प्रदीप इव वायुमत्यगात् ॥ ५३ ॥
तं गृहोपवन एव संगताः पश्चिमक्रतुविदा पुरोधसा ।
रोगशान्तिमपदिश्य मन्त्रिणः संभृते शिखिनि गूढमादधुः ॥ ५४ ॥

५२ ॥ बाढमिति । बाढं सत्यमेषु दिवसेषु पार्थिवः पुत्रजन्मने पुत्रोदयार्थं कर्म इष्ट्यादिकं साधयति । इत्येवमदर्शितरुजो निगूहितरोगाः सन्तोऽस्य राज्ञो मन्त्रिणोऽघशङ्किनीर्व्यसनशङ्किनीः प्रजाः शश्वदूचुः ॥

५३ ॥ स इति । स त्वग्निवर्णोऽनेकवनितासखः सन्नपि । पावनीं पित्रृणमोचनीं सन्ततिमनवलोक्य । पुत्रमनवाप्येत्यर्थः । वैद्ययत्नपरिभाविनं गदं रोगम् । प्रदीपो वायुमिव । नात्यगान्नातिचक्राम । ममारेत्यर्थः ॥

५४ ॥ तमिति । पश्चिमक्रतुविदान्त्येष्टिविधिज्ञेन पुरोधसा संगताः समेता मन्त्रिणो गृहोपवन एव गृहाराम एव ॥ "आरामः स्यादुपवनम्" इत्यमरः ॥ रोगशान्तिमपदिश्य शान्तिकर्म व्यपदिश्य तमग्निवर्णं संभृते समिद्धे शिखिन्यग्नौ गूढमप्रकाशमादधुर्निदधुः ॥

---

the summer season having but mud for its residuum, or like a lamp-stand having a minute jet of a pointed flame.

52. "Assuredly the lord of the earth now-a-days is performing a sacrificial ceremony in order to secure the birth of a son," with these words his ministers who kept the matter of his disease concealed always addressed his subjects who suspected some calamity impending over the king

53. Without seeing any purifying progeny he though a husband of (*lit.* a friend to) many wives could not escape the fate brought into jeopardy by the formidable disease which baffled the efforts of skilful physicians, as a flame of a lamp cannot outlive the wind.

54. The ministers in company of the family-priest who had the knowledge of the last rite consigned him secretly to the flaming fire in the very garden of his palace under pretext of performing a ceremony for averting evil producing from the disease.

---

52. B. C. E. H. I. K. L. R. with Hem., Chá., Din., Val., Su., and Vijay., गूढं for बाढं. B. C. एषः for एषु. D. L. पुत्रसाधनं for पुत्रजन्मने. C. with Din., अघशंसिनीः for अघशङ्किनीः.

53. K. सन्ततीः for सन्ततिम् . D L. प्राप्य दीपः for न प्रदीपः.

54. K. एवमागताः for एव संगताः. C. D. E. H. I. K. R. with Val., Su., and Vijay., उपदिश्य for अपदिश्य. L. omits this verse.

तैः कृतप्रकृतिमुख्यसंग्रहैराशु तस्य सहधर्मचारिणी ।
साधु दृष्टशुभगर्भलक्षणा प्रत्यपद्यत नराधिपश्रियम् ॥ ५५ ॥

तस्यास्तथाविधनरेन्द्रविपत्तिशोका-
दुष्णैर्विलोचनजलैः प्रथमाभितप्तः ।
निर्वापितः कनककुम्भमुखोज्झितेन
वंशाभिषेकविधिना शिशिरेण गर्भः ॥ ५६ ॥

५५ ॥ तैरिति । आशु शीघ्रं कृतः प्रकृतिमुख्यानां पौरजानपदप्रधानानां संग्रहः सन्निपातनं यैस्तादृशैस्तैर्मन्त्रिभिः साधु निपुणं दृष्टशुभगर्भलक्षणा परीक्षितशुभगर्भचिह्ना तस्याग्निवर्णस्य सहधर्मचारिणी नराधिपश्रियं प्रत्यपद्यत राज्यलक्ष्मीं प्राप ॥

५६ ॥ तस्या इति । तथाविधया नरेन्द्रविपत्त्या यः शोकस्तस्मादुष्णैर्विलोचनजलैः प्रथममभितप्तस्तस्या गर्भः कनककुम्भानां मुखैर्धारैरुज्झितेन शिशिरेण शीतलेन वंशाभिषेकविधिना लक्षणयाभिषेकजलेन निर्वापित आप्यायितः ॥

---

55. His legitimate queen whose signs of auspicious pregnancy were clearly seen on her body obtained the Royal Glory of the king with the help of those ministers who instantly convoked a gathering of the chief persons from amongst his subjects.

56. Her embryo (fœtus) being first heated by the hot water (tears) from her eyes consequent on the grief at the king's death in that lamentable condition was calmed by the cold water poured on her head from the mouths of the golden jars at the inaugural ceremony, in consonance with the propagation of his family.

---

55. D. दृष्ट° for दृष्ट°.

56. K. पृथगाभितप्तः for प्रथमाभितप्तः. D. with Val., and Su., मुखोत्थितेन, J. मुखोद्गतेन for मुखोज्झितेन. C. H. L. with Chá., and Din., राज्याभिषेकपयसा, D. E. K. R. with Val., and Vijay., वंशाभिषेकपयसा, D_2. and the text only of Vijay., स्नानाभिषेकविधिना, I. वंश्याभिषेकविधिना, J. with Su., वंश्याभिषेकपयसा for वंशाभिषेकविधिना.

तं भावाय प्रसवसमयाकाङ्क्षिणीनां प्रजाना-
मन्तर्गूढं क्षितिरिव नभोबीजमुष्टिं दधाना ।
मौलैः सार्धं स्थविरसचिवैर्हेमसिंहासनस्था
राज्ञी राज्यं विधिवदशिषद्भर्तुरव्याहताज्ञा ॥ ५७ ॥

॥ इति श्रीरघुवंशे महाकाव्ये कालिदासकृतावग्निवर्णशृङ्गारो नामैकोनविंशः सर्गः ॥

५७ ॥ तमिति। प्रसवो गर्भविमोचनम्। फलं च विवक्षितम्॥ "स्यादुत्पादे फले पुष्पे प्रसवो गर्भमोचने" इत्यमरः॥ तस्य यः समयस्तदाकाङ्क्षिणीनां प्रजानां भावाय भूतये॥ भावार्थमित्यर्थः॥ "भावो लीलाक्रियाचेष्टाभूत्यभिप्रायजन्तुषु" इति यादवः॥ क्षितिरन्तर्गूढं नभोबीजमुष्टिमिव। श्रावणमासन्युप्तो बीजमुष्टिरिति भावः। मुष्टिशब्दो द्विलिङ्गः॥ "अस्त्रीबो मुष्टिमुस्तकौ" इति यादवः॥ अन्तर्गूढमन्तर्गतं तं गर्भं दधाना हेमसिंहासनस्थाव्याहताज्ञा राज्ञी मौलैर्मूले भवैर्मूलादागतैर्वा। आप्तैरित्यर्थः॥ स्थविरसचिवैर्वृद्धामात्यैः सार्धं भर्तू राज्यं विधिवद्विध्यर्हम्। यथाशास्त्रमित्यर्थः॥ अर्हार्थे वतिप्रत्ययः॥ अशिषच्छास्ति स्म॥ "सर्तिशास्त्यर्तिभ्यश्च" इति च्लेरङादेशः॥ "शास इदङ्हलोः" इतीकारः॥

॥ इति श्रीपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणमहामहोपाध्यायकोलचलमल्लिनाथमखिसूरिविरचितायां रघुवंशव्याख्यायां संजीवनीसमाख्यायामेकोनविंशः सर्गः ॥

---

57. Bearing the fœtus lying concealed in her womb, as the earth does the handful of seeds sown in its interior beds in the month of S'rávaṇa, for the prosperity of her subjects who were ardently waiting for the time of her delivery, the queen, seated as she was on a golden throne with her command never disputed, ruled over the kingdom of her husband according to the rules laid down by the S'ástras with the assistance rendered her by the hereditary old ministers.

---

57. A. तं भावार्थे. C. E. H. I. K. R. with Val.. Din., and the text only of Vijay., तं भूत्यर्थे. D. with Su., सन्तानाय, D_2. L. तं सन्तान° for तं भावाय. R. °सत्वया° for °समया°. A. D. अन्तर्गर्भा for अन्तर्गूढं. B. H. I. K. L. R. with Val., Su., and Vijay., वमौ, C. ततो for नभो. D. with Su., मूलैः for मौलैः. D. स्वचिर° for स्थविर°. A. D. K. अवशात् for अशिषत्. A. and the text only of Vijay., आज्ञेव गुर्वी, D. with Su., अव्याहताख्या for अव्याहताज्ञा.

समाप्तोऽयं ग्रन्थः ।
शुभं भूयादध्येतुरध्यापकस्य च

The Sûrya-vans'a or Solar race.

इक्ष्वाकुः

Dynasty of Ayodhyâ.

१ विकुक्षिः (or शशादः)
२ ककुत्स्थः
३ अनेनाः
४ पृथुः
५ वृषदः
६ अन्ध्रः
७ युवनाश्वः
८ श्रावस्तः
९ बृहदश्वः
१० कुवलयाश्वः (or धुन्धुमारः)
११ दृढाश्वः (or धौं-न्धनाभिः)
१२ हर्यश्वः
१३ निकुम्भः
१४ संहताश्वः
१५ कृशाश्वः
१६ प्रसेनजित्
१७ युवनाश्वः
१८ मान्धाता
१९ पुरुकुत्सः
२० त्रसदस्युः
२१ संभूतः
२२ अनरण्यः
२३ त्रसदश्वः
२४ हर्यश्वः
२५ वसुमतः (or सुमनाः)
२६ त्रिधन्वा
२७ त्रय्यारुणः
२८ सत्यव्रतः (or त्रिशंकुः)
२९ हरिश्चन्द्रः
३० रोहितः
३१ हरितः
३२ चञ्चुः
३३ विजयः
३४ रुरुकः
३५ धृतकः
३६ बाहुः
३७ सगरः
३८ असमञ्जः
३९ अंशुमान्
४० दिलीपः
४१ भगीरथः
४२ श्रुतः
४३ नाभागः
४४ अम्बरीषः
४५ सिंधुद्वीपः
४६ आयुतायुः
४७ ऋतपर्णः
४८ सर्वकामः
४९ सुदासः (or हंसमग्न.)
५० सौदासः (or कल्माषपादः)
५१ अश्मकः
५२ उरुकामः
५३ मूलकः (or नारीकवचः)
५४ शतरथः
५५ ऐडविडः
५६ विश्वमहान्
५७ दिलीपः (or खट्वांगदः)
५८ दीर्घबाहुः
५९ रघुः
६० अजः
६१ दशरथः
६२ रामः
६३ कुशः
६४ अतिथिः
६५ निषधः
६६ नलः
६७ नभः
६८ पुण्डरीकः
६९ क्षेमधन्वा
७० देवानीकः
७१ अहीनगुः
७२ पारियात्रः (or पारियात्रः)
७३ दलः
७४ बलः (or सलः)
७५ औक्थः
७६ वज्रनाभः
७७ शंखनः
७८ ध्युषिताश्वः
७९ विश्वसहः
८० हिरण्यनाभः (or कौशल्यः or वशिष्ठः)
८१ पुष्यः
८२ ध्रुवसन्धिः
८३ सुदर्शनः
८४ अग्निवर्णः
८५ शीघ्रः
८६ मनुः (or मरुः)
८७ प्रसुश्रुतः
८८ सुसन्धिः
८९ अमर्षः (or सहस्वान्)
९० विश्रुतवान
९१ बृहद्बलः

Dynasty of Mithilâ.

१ निमिः
२ जनकः(or मिथिः)
३ उदावसुः
४ नन्दिवर्धनः
५ सुकेतुः
६ देवरातः
७ बृहदुक्थः (or बृहदुक्थः)
८ महावीर्यः
९ सुधृतिः
१० धृष्टकेतुः
११ हर्यश्वः
१२ मरुः
१३ प्रतित्वकः (or प्रतिन्धकः)
१४ कीर्तिरथः
१५ देवमीढः

[*Turn over.*

The Sûrya-vans'a or Solar race,

इक्ष्वाकुः

Dynasty of Ayodhyâ.

Dynasty of Mithilâ.

१६ विबुधः
१७ धृतिः (महाधृतिः)
१८ कीर्तिराजः (or कीर्तिरातः)
१९ महारोमा
२० स्वर्णरोमा
२१ ह्रस्वरोमा
२२ सीरध्वजः (or जनकः) The father of Sitá.
२३ भानुमान्
२४ प्रद्युम्नः
२५ मुनिः (or सुतश्वा)
२६ ऊर्जवहः
२७ सुतद्वाजः
२८ शकुनिः
२९ स्वागतः
३० सुवर्चाः
३१ श्रुतः
३२ सुश्रुतः
३३ जयः
३४ विजयः
३५ ऋतः (or कृतः)
३६ सुनयः
३७ वीतहव्यः
३८ धृतिः
३९ बहुलाश्वः
४० कृतिः

NOTES.

CANTO I.

P. 1. St. 1.—**रघुवंशम्**, explain रघूणां वंशो वर्ण्यते यस्मिन्तत्काव्यं. *i. e.* रघुवंशमधिकृत्य कृतं काव्यं रघुवंशम्, 'making the history of the kings of the solar line the subject of his poem.' *Cf.* Pâ*n*ini, "अधिकृत्य कृते ग्रन्थे" IV. 3. 87, and the *Vârtika* "लुबाख्यायिकाभ्यो बहुलम्" for the elimination of the *taddhita* affix अण्. A celebrated classical poem in nineteen cantos by Kálidása. It is one of the five Mahâkâvyas. It contains the sequel of Râma's life including his predecessors and successors—from Dilîpa to Agnivar*n*a. The first nine cantos treat of the nearest four ancestors of Râma—Dilîpa, his son Raghu, his son Aja and his son Das'aratha. Cantos ten to fifteen narrate the adventures of Râma in Da*nd*akâ and other noteworthy places of Râmâya*n*a, and the remaining four cantos treat of the descendants of Râma down to Agnivar*n*a—where the poem closes abruptly with the placing of the widowed and *pregnant* queen of Agnivar*n*a on the vacant throne. The propriety of the name of the poem can also be explained from the following statement: "कवेर्वृत्तस्य वा नाम्ना नायकस्येतरस्य वा" ॥ The Kâvya is thus defined, "वाक्यं रसात्मकं काव्यं." or "तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि" ॥ Kâvyaprakâs'a, p. 12. But this being a Mahâkâvya can come under the following. "सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायकः सुरः । सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्तगुणान्वितः । एकवंशभवा भूपाः कुलजा बहवोऽपि वा शृङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गी रस इष्यते । * * * इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयम् ॥ See also Kâvyâdars'a, Bibli. Ind. series. p. 16 verses 14-19.—**वागर्थाविव.** *Cf.* "तमर्थमिव भारत्या सुतया योक्तुमर्हसि." Ku. VI. 79. Mallinâtha under स्मरण quotes the following from Mîmânsakas: "नित्यः शब्दार्थसंबन्धः." वागर्थाविव should be taken as one word, *i. e.* the epithet should not be taken as two words वागर्थौ and इव. This is, according to Mallinâtha, an instance of what is called a नित्यसमास which is thus defined, "अविग्रहोऽस्वपदविग्रहो वा नित्यसमासः" *i. e.* a compound which cannot be dissolved so as to convey the sense of the compound or the meaning of which cannot be expressed by its constituent members used separately. But as the compound has no name it may be classed under a केवल or सुप्सुपासमास *viz.*, a compound of a word ending in a case-affix with another, not grouped under any one of the

four principal divisions of compounds. Out of the eleven Mss. collated for three editions only one Ms. (J.) omits **नित्य** after **समासः** *i. e.* इवेन सह समासो विभक्त्यलोपश्च and *this* appears to be the correct version of Mallinátha. All the remaining Mss. and even the printed copies give a wrong reading of the *Vártika*.—**जगतः**, dervied from the root गम्+अतिः=अत् then गम् is changed into जग् by "वर्तमाने पृषद्बृहन्महज्जगच्छतृवच्च" । U*n*ádi Sûtra, 241. S. K. page 327, thus गम्+अतिः= जग्+अत् =जगत्. Some orientalists say that the word जगत् is a reduplicated form derived from the root गम् ; but this view seems rather untenable. —**पार्वतीपरमेश्वरौ**, Vijayaga*n*i analyses the word परमेश्वर in the following way: "परा उत्कृष्टा मा शक्तिर्यस्यासौ परमः । ईष्टेऽसौ ईश्वरः । परमश्चासावीश्वरश्च परमेश्वरः ". Also "ईशे एवाहमत्यर्थं न च मामीशते परे । ददामि च सदैश्वर्यमीश्वरस्तेन कीर्तितः. " The word पार्वती is put first in this द्वन्द्व compound because it commands pre-eminence and also contains fewer syllables than the word परमेश्वर. *Cf.* Pá*n*ini, II. 2. 34. and further the *Vártika* "अभ्यर्हितश्च" on the same. Compare also Manu, "उपाध्यायान्दशाचार्य आचार्याणां शतं पिता । सहस्रं तु पितॄन्माता गौरवेणातिरिच्यते." II. 145. Cháritravardhana quotes याज्ञवल्क्य, "एते मान्या यथापूर्वमेभ्यो माता गरीयसी." Vijayaga*n*i discusses the point after a polemical fashion, "उभयोः किमिति नमस्कारः कृतः । तच्च । 'शिवा शब्दमयी प्रोक्ता शंभुश्चार्थमयः स्मृतः । अतः शब्दार्थनिष्पत्तिसिद्ध्यै तौ नतो मया ' । नन्वन्येषु गणेशादिदेवेषु सत्सु मामहेश्वरयोर्नमस्कारं कथं कृतवांस्तत्राह । 'ईश्वराज्ज्ञानमन्विच्छेन्मुक्तिमिच्छेज्जनार्दनादारोग्यं भास्करादिच्छेद्धनमिच्छेद्धुताशनात् ' । अत एव पार्वतीनमस्कारेण ग्रन्थस्य सौभाग्यं स्यात् । ईश्वरनमस्कारेण च शास्त्रस्य निर्विघ्नसिद्धिः स्यात् । नन्वादौ परमेश्वरपदं विहाय पूर्वं पार्वतीपदं कथमग्रहीत् । पार्वती तु जगत्सृष्टिकर्त्र्यस्ति । अतः सा पूज्यैव । यतः । 'पतिता गुरवस्त्याज्या नैव माता कदाचन । गर्भधारणपोषाभ्यां तेन माता गरीयसी ' । तर्हि परशुरामेण जननी कथं हता । तदाह । 'कृतं परशुरामेण हता माता च रेणुका । मानुषैस्तन्न कर्तव्यं न देवचरितं चरेत् ' । अतो माता सदैव पूज्यैव तस्मात्पार्वतीपदमादौ गृहीतं । यद्वा । कवेर्देवीनाम्ना प्रसिद्धत्वात्पार्वत्याः प्रथमं ग्रहणं । यतः कालिदास इति कविनाम । सन्तानसिध्यर्थं वा । पार्वतीनमस्कारेण सन्ततेः सिद्धिः स्यात् । अत्रादौ वागर्थाविविप्रहणादेतस्याध्येतुर्वागर्थयोः सिद्धिः स्यात् । अन्यच्च । कालिदासोक्तकाव्यादौ भूदेवताकस्य सर्वगुरोर्मगणस्य प्रयोगाच्छुभलाभः सूच्यते । तदुक्तं । 'शुभदो मो भूमिमयः 'इति वकारस्यामृतबीजत्वात् । 'कं वं ज्ञः पः हः' इति पञ्चामृतबीजानीति । Some commentators including Vijayaga*n*i, Sumativijaya, and others dissolve the compound in a fanciful manner, they say, अथवा । पार्वतीं पाति रक्षतीति पार्वतीपो रुद्रः ॥ "लक्ष्मीः पद्मा रमाया मा " इति हैमः कोषः ॥ रमाया लक्ष्म्या ईश्वरो रमेश्वरः पार्वतीपश्च रमेश्वरश्च पार्वतीपरमेश्वरौ तौ हरिहरौ । यद्वा । पार्वतीं पिपर्ति पालयतीति पार्वतीपरः शिवः ॥ "पॄ पालनपूरणयोः " इति धातुत्वात् ॥ मायाः पद्मायाः ईश्वरो मेश्वरो विष्णुस्तौ वन्दे इत्यस्मिन्पक्षे वागर्थाविवेत्युपमाया भिन्नलिङ्गत्वं न दोषाय । 'न लिंगवचनं भिन्नं ' इत्यादि. Chāritravardhana under अरे quotes the same. Dinakara too slavishly follows in his

footsteps. Compare also the दिव्यसूरिचरितम्, Canto I. 1. "प्रभाकरीविव सम्प्रक्तौ भवर्मातितिरिवृत्तये। रक्षितारौ त्रिजगतां लक्ष्मीनारायणौ भजे."

P. 2. St. 2.—क्व, "द्वौ क्वशब्दौ प्रयुज्येते अत्यन्तासम्भवे सदा." Châritravardhana explains it by "उभावपि क्वशब्दौ सूर्यवंशस्य कविबुद्धेश्चात्यन्तासंगतिव्यञ्जकौ ज्ञेयौ," *i. e.* Where is the suitability or congruity between the one and the other? What has the one to do with the other? How great a contrast or difference is there between the one and the other! The repetition of क्व to express great contrast or unsuitability between two things is not uncommon with Kâlidâsa. *Cf.* Sa. I. 10. "क्व बत" &c., "क्व वयं क्व" &c., II. 52. Meghadûta I. 5. Mv. III. "क्व रुजा" &c., Compare also the दिव्यसूरिचरित, canto I. 2. "क्व दिव्यसूरिचरितं क्व च मे मन्दशेमुषी। नियन्तुकामोऽस्मि गजं साहसाद्बिसतन्तुना" ॥ —सूर्य°, सरति गच्छत्याकाशे इति सूर्यः, derived from the root सृ + क्यप् = सृ + य, the ऋ being changed to उर् by "राजसूयसूर्यमृषोद्य °—Panini, III. 1. 114, or it may be derived from the root षू 6 *conj.* P. 'to drive onwards, to urge or press forwards;' explain 'सुवति प्रेरयति कर्मणि लोकान्। क्यपो रुट्।' Kshirasvâmin also agrees with this.—अल्पविषया, Châritravardhana comments °विषय by ग्राह्यभाग &c.—उडुपेन, explain उडुनो जलात्पातीति उडुपं तेन तृणादिनिर्मितेन &c., उडु means 'water'; hence उडुप, 'anything that protects on or carries safely through water,' generally a ship or boat, and then a small raft. उडु also means 'a star,' and उडुप, 'the lord of stars,' hence 'the moon.' Some lexicons derive this sense from the resemblance the crescent moon bears to the shape of a boat. But the derivation appears to us rather fanciful; it is neither satisfactory nor convincing.—सागरम्, explain, गरेण विषेण सह जातः इति सगरः सगरेण निर्वृत्तः इति सागरः. *Cf.* Vâyu Purâna Vol. II. Cha. 26. 122. "सगरस्तु सुतो बाहोर्जज्ञे सह गरेण वै। भृगोराश्रममासाद्य त्वौर्वेण परिरक्षितः" । And further "पत्नी तु यादवी तस्य सगर्भा पृष्ठतोऽन्वगात्। सपत्न्या तु गरस्तस्यै दत्तो गर्भजिघांसया" ॥ Sagara was born of Yâdavî by Bâhu, a king of the solar line. *Cf.* Also Padma Purâna, स्वर्गखण्ड, Cha. 15. "व्यजायत महाबाहुर्गरेणैव सह द्विज। सगरो नाम तेनाभूद्बालकोऽतिमनोहरः." Sagara's wife Sumati gave birth to sixty thousand sons, who dug out the earth to find out the sacrificial steed which was let loose to wander about the earth by their father who had spread a sacrifice and which was taken to the nether regions by Indra. The chasm which they had made was thenceforward known as Sâgara or Ocean.—सूर्यप्रभवो वंशः &c. See the genealogical table of the solar kings prepared from the Vâyu Purâna, Vol. II. Chapters 26th and 27th, and compare it with the list from the Vishnu Purâna given in Prof. Dowson's classical Dictionary of Hindu Mythology, p. 313.

P. 3. St. 3.—कवियशः प्रार्थी. Seeking the fame of the poets who wrote the historical poem of the kings born in the solar line previous to the Raghuvams'a of Kâlidâsa, such poets, observes Châritravardhana. were Vâlmiki and others, "वाल्मीकिप्रभृतानाम्." Among others who wrote the history of the solar race is found the name of the sage च्यवन, who after the composition of the Râmâyana is said to have written a poem describing the dynasty of the solar kings; compare As'vaghosha's Buddhacharita, canto I. 48. "वाल्मीकिनादश्च ससर्ज पद्यं जग्रन्थ यन्न च्यवनो महर्षिः। चिकित्सितं यच्च चकार नात्रिः पश्चात्तदात्रेयऋषिर्जगाद." —यशः is derived from the root अश् 'to pervade,' अश्+असुन् Explain, अश्नुते व्याप्नोतीति यशः. The अ is changed to य by "अशेर्देवने युट् च." Unâdi Sûtra, 630. S. K. p. 338. Thus : अश् = यश् + असुन् = अस् = यशस्.

P. 3. St. 4—अथ वा कृतवाग्द्वारे. Mark the use of the alliterative recurrence of identical syllables, of which we shall meet with many stanzas further in the Kâvya. On अथ वा, Châritravardhana observes, "अथ वेति 'पक्षान्तरे' इति वर्धमानमिश्राः".—पूर्वसूरिभिः, such as by Vâlmiki, Chyavana, and by the authors and compilers of the Purânas and Upa-Purânas. See our note to the second stanza.—वज्रसमुत्कीर्णे, वज्र is the steel instrument pointed with a diamond pin, by means of which precious stones are bored through. उत्कीर्ण literally means 'that from which the diamond dust or crumbs are *thrown up*', *i. e.* into which a hole is made. वज्र is derived from the root वज् 1. P. 'to go,' 'to roam about.' वज्+रन्=वज्+र=वज्र. *Cf.* "ऋज्रेन्द्राग्रवज्रविप्र°." Unâdi Sûtra, 186. S. K. p. 326.—सूत्रस्य, Châritravardhana observes; "अत्र भिन्नलिङ्गत्वौपम्यं न दुष्टं। 'इष्टं पुन्नपुंसकयोः प्रायेण' इति वामनोक्तेः". Châritravardhana also gives a तात्पर्यार्थ, "पूर्वसूरिग्रथितग्रन्थपर्यालोचनया ममापि ज्ञानमस्तीति नोपहासो भविष्यतीति तात्पर्यार्थः."

P. 4. St. 5.—सोऽहं, '*that* I,' *i. e.*, I as I am described above. योऽहं is required to complete the sense; but it is to be inferred from the preceding stanzas; Mammata says, "प्रक्रान्तप्रसिद्धानुभूतार्थविषयस्तच्छब्दो यच्छब्दोपादानं नापेक्षते *i. e.*, The word तद् implying intimation of something mentioned before or renown or appreciation does not require यद् to be preceded or followed." आनाक° &c., *Cf.* "गर्तविजन्मे नहि तस्थस्य." R. V. 27. Analyse न अकं यत्र स नाकः and not अनकः, *Cf.* "नाको नवेदा नकुलश्च नक्रो नासत्यनक्षत्रनपाच्च नभ्राट् । नपुंसकं वै नमुचिर्नखं च नादेशमेतेषु वदन्ति धीराः." *Cf.* also Pânini, VI. 3. 75. The preposition आ in this and the following compounds expresses the limit inceptive (अभिविधि). It may elsewhere also express the limit exclusive or conclusive (मर्यादा).

P. 4. St. 6.—**यथाविधि**° &c., *Cf.* Manu, IV. 25. "अग्निहोत्रं च जुहुयादाद्यन्ते द्युनिशोः सदा । दर्शेन चार्धमासान्ते पौर्णमासेन चैव हि" । On this Vidhi or precept, see Manu IV. 21–32 and other Smṛitis. विधि is thus defined. "चिकीर्षाकृतिसाध्यत्वेष्टसाधनताविषयो विधिः. Chāritravardhana and Vijayagaṇi dissolve the compound in the following way, "यथाविधि हुतमग्निर्येषां ते वा । वैयधिकरण्येऽपि गमकत्वात् समासः".—**यथाकाल**° &c., Vijayagaṇi analyses "यथाकालमुत्कालवर्जं ब्राह्मे मुहूर्ते प्रबोधो जागरणं येषां तेषां &c." and Chāritravardhana has, "यथाकालो ब्राह्मो मुहूर्तः । तमनतिक्रम्य प्रबोधो निद्राराहित्यं येषां ते तेषां तथोक्तानाम्."

P. 4. St. 7.—**गृहमेधिन्**, means here one who spreads the domestic sacrifices or is the object of them, the house-holder who performs the domestic rites, the married Brāhmaṇa who has a house-hold &c. Mallinātha gives "गृहैर्दारैर्मेधन्ते संगच्छन्त इति गृहमेधिनः." Chāritravardhana, Dinakara and Sumativijaya have, "गृहमेधो विवाहः सोऽस्त्यस्ति येषां." Vallabha however has, "गृहं कलत्रं मेधन्ते सेवन्ते इति गृहमेधिनः". Vijayagaṇi explaining the word exactly like Mallinātha gives also the following : अथ वा । गृहमेधो विवाहो विद्यन्ते येषां ते गृहमेधिनस्तेषां । यद्वा । गृहे गृहस्थधर्मे मेधा बुद्धिर्येषां ते &c., मेध is derived from मेधृ 1. P. A. (= मिधृ or मिथृ according to Svāmi, see S. K. धातुपाठ p. 80) 'to meet,' 'associate,' 'accompany'; 'to kill,' 'immolate,' and means the association or a sacrifice. गृहमेध, a kind of domestic sacrifice to be performed in a house by a householder; and it also means the domestic rites to be observed by a householder in company with his सहधर्मचारिणी. And गृहमेधिन् is he who in company with his wife, performs the household rites and leads a religious life, in contradistinction to a ब्रह्मचारिन् who is not required to undergo such household ceremonials. All the commentators including Mallinātha have derived the word in this sense; and the derivation is not purely imaginary as Pandit supposes. *Cf.* "पञ्चसूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युपस्करः । कण्डनी चोदकुम्भश्च बध्यते यास्तु वाहयन् ॥ तासां क्रमेण सर्वासां निष्कृत्यर्थं महर्षिभिः । पञ्च कॢप्ता महायज्ञाः प्रत्यहं गृहमेधिनां ॥ अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणं । होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनं ॥ पञ्चैतान्यो महायज्ञान्न हापयति शक्तितः । स गृहेऽपि वसन्नित्यं सूनादोषैर्न लिप्यते" ॥ Manu, III. 68–71.

P. 5. St. 8.—**शैशवे**, *Cf.* Pāṇini, V. 1. 129. "प्राणभृज्जातिवयोवचनोद्गात्रादिभ्योऽञ् ॥ Words implying the class of animals, age or such words as उद्गात्र (औद्गात्रं, औन्नेत्रं, सौष्ठवं, दौष्ठवं &c.) have अञ् added on to them to render these as abstract nouns. "—**विषयैषिणां**, analyse विषयमिच्छन्तीति तेषां, Upapada Tatpurusha. Chāritravardhana analyses, "विषया रूपरसादयस्तानेषितुं कामयितुं शीलं येषां ते तेषां "—**मुनिवृत्तीनां**, मुनि is derived from मन् + इन्, the अ of मन् is changed to उ by "मनेरुच"

U*n*ádi Sútra, 561. S. K. p. 336.—**योगेन**, Cháritravardhana and Sumativijaya explain it by "ध्यानेन चित्तनिरोधेन वा." Vijayaga*n*i, "अनशनेन समाधिना वा." Vallabha identically the same with Mallinátha. On this verse Vijayaga*n*i remarks, "आद्ये वयसि नाधीतं द्वितीये नार्जितं धनं। तृतीये न तपस्तप्तं चतुर्थे किं करिष्यसि" ॥ The four epithets in this stanza respectively imply the four stages of the life of a twice-born, *i. e.* ब्रह्मचर्य (the life of a student), गार्हस्थ्य (the life of a householder) वानप्रस्थ (the life of an anchorite or hermit), and सन्यास (the life of a भिक्षु or mendicant). When the sense is not completed within the limit of five or more verses the whole couplet of so many stanzas comes under what is known as कुलक. Compare, "द्वाभ्यां युग्ममिति प्रोक्तं त्रिभिः श्लोकैर्विशेषकं कलापकं चतुर्भिः स्यात्तदूर्ध्वं कुलकं स्मृतं" ॥

P. 5. St. 9.—**अन्वयम्**, *lit.* 'a connection', hence a connected line, a line of descendants, a race, lineage, family and finally a genealogy of kings.—**तनुवाग्विभवोऽपि**, 'though possessed of scanty powers of speech,' *i. e.* a limited power of speech.—**चापलाय कर्णमागत्य**, Cháritravardhana: "अन्योऽपि चापलं कर्तुं कर्णमागत्य प्रेरयति." *Cf.* Pá*n*ini, II. 3. 14. "क्रियार्थोपपदस्य च कर्मणि स्थानिनः। The fourth case-affix is employed in denoting the object (कर्म) of that verb, which is suppressed (स्थानिन्) in a sentence, and which has in construction (उपपद) therewith another verb, denoting an action, performed for the sake of the future action (क्रियार्थे III. 3, 10)." In other words, when the sense of an infinitive of purpose formed by 'तुमुन्' and 'ण्वुल्' (III. 3. 10.) is suppressed in a sentence, the object of this infinitive is put in the Dative case. See Apte's Guide, 65 (*a*) p. 49, third edition.

P. 6. St. 10.—**सदसद्व्यक्तिहेतवः**. For nearly a repetition of the same idea, *Cf.* Mv. II. 10. "उपदेशं विदुः शुद्धं सन्तस्तमुपदेशिनः। श्यामायते न युष्मासु यः काञ्चनमिवाग्निषु."—**हेम्नः**, derived from हि 5. P. *i e.* हि + मनिन्, explain, 'हिनोत्याघातेन वर्धते.' *Cf.* "सर्वधातुभ्यो मनिन्." U*n*ádi Sútra. 584. S. K. p. 337.—**अग्नौ**, explain, अङ्गत्यूर्ध्वं गच्छतीति from अग् 1. P. (or अङ्ग् 1. P.) with the affix निः.—**श्यामिका**, 'impurity,' 'alloy', derived from श्यै 1. A. with the affix मक्.—**वा**. Cháritravardhana explains it by "वा समुच्चये। कश्चिदिवार्थे इत्याह."

P. 6. St. 11.—**वैवस्वतः मनुः**, the word विवस्वत् *lit.* 'the brilliant one' derived from वि-वस् (see also the roots वस्, उष् and व्युष्) 6 *conj.* P. व्युच्छति &c., Ved. 'to shine forth,' 'to dawn, shine' &c. Vijayaga*n*i derives it as, "विवसः किरणा विद्यन्ते यस्यासौ विवस्वान्." Some derive it as, "विविधं वस्ते आच्छादयति" or "विवो रश्मिरस्यास्तीति" or "वि + वस् + क्विप् इति विवस् तदस्त्यस्येति विवस्वत्." This Manu is the seventh of the

fourteen Manus. They are. (1) स्वायंभुव. (2) स्वारोचिष. (3) औत्तमि, (4) तामस, (5) रैवत, (6) चाक्षुष. (7) वैवस्वत, (8) सावर्णि, (9) दक्षसावर्णि, (10) ब्रह्मसावर्णि. (11) धर्मसावर्णि. (12) रुद्रसावर्णि, (13) रोच्यसावर्णि or देवसावर्णि and (14) इन्द्रसावर्णि. See Vayu Purána, Adh. 10. p. 91. Bibli. Ind. series also Markandeya Purána. Adh. 61. p. 338. Bibli. Ind. series.—सर्वविद्यागम, Vijayagaṇi explains it as, "सर्वाणि शास्त्रोत्था बुद्धिविषयं येषां ते" &c. See commentary of Mallinátha.—महीक्षितः, महीं क्षयन्तीति. and not क्षियन्ति. *Cf.* "इष्टं वा गच्छतीत्यर्थे क्षयतीत्यादिकं भवेत् । पृथिव्यां क्षियतीत्यादौ निवासार्थः प्रकीर्तितः ॥ सर्वं क्षिणोति लोकोऽसौ विनाशार्थः क्षिणुर्मतः" ॥ See com.—**प्रणव** is the mystic syllable ओं (ओम्), so called from its being first sung in the beginning of Vedic verses (प्र, before. and नु. to chant, to praise). According to some accounts the mystical प्रणव was the source of all the Vedas. *Cf.* Manu, II. 76. "अकारं चाप्युकारं च मकारं च प्रजापतिः । वेदत्रयान्निरदुहद्भूर्भुवःस्वरितीति च" ॥ अश्च उश्च मश्च तेषां समाहारः । त्रिगुणेश्वरब्रह्मरूपत्वात् &c. Compare ऐतरेयब्राह्मण, V. 32. "तेभ्योऽभितप्तेभ्यस्त्रयो वर्णा अजायन्ताकार उकारो मकार इति तानेकधा समभरत्तदेतदोमिति । तस्मादोमोमिति प्रणौत्योमिति वै स्वर्गो लोक ओमित्यसौ योऽसौ तपति. He heated these luminaries again, and three sounds came out of them अ, उ, and म्. By putting them together he made the syllable ओम्. Therefore he (*i. e* the priest) repeats 'ओम्! ओम्!' for ओम् is the heaven-world, and ओम् is that one who burns (आदित्य)".

P. 6. St. 12.—**शुद्धिमत्तरः**, *Cf.* Pánini, V. 3. 57. "द्विवचनविभज्योपपदे &c." The comparative terminations तरप् (तर) and ईयसुन् (ईयस्) are applied to adjectives &c., when the objects between whom the comparison is made, are mentioned expressly or implied. —**राजेन्दुः**, *Cf.* Pánini, II. 1. 56. "उपमितं व्याघ्रादिभिः सामान्याप्रयोगे. A noun denoting subject of comparison is compounded with the words व्याघ्र &c., the latter being the standard of comparison, and in construction with the former; and the compound is तत्पुरुष; provided that any word expressing the common characteristic (सामान्य) as explained above, is not employed." Also Cháritravardhana, who says, "उक्तश्चामरसिंहेन । सिंहशार्दूलनागाद्याः पुंसि श्रेष्ठार्थगोचराः".—**इन्दुः**, derived from the root उन्द् (or उद्) 7. P. 'to wet, bathe,' with the affix उ, the उ of the root is changed to इ by "उन्देरिच्चादेः." Unâdi Sûtra, 12. S. K. p. 320, explain, उनत्ति समुद्रस्फीत्या भुवं क्लिन्नां करोतीति इन्दुः. The allusion here is to the moon's having been born from the milky ocean at the time of churning.

P. 7. St. 13.—**व्यूढोरस्कः**, *Cf.* Pánini, V. 4. 151. In the Bahuvrihi compound क is necessarily added to the words पुंस्, अनडुह्,

धयः, नौ and लक्ष्मा in their singular number only and optionally when they are in dual or plural.—शालप्रांशुः. The word S'âla here may mean 'the Sal tree' or 'a tree in general.' Vijayaga*n*i explains it by "सालवृक्ष इति लोके." The Northern and the Bengal Mss. of Mallinátha's commentary, after having given the authority for प्रांशु from the यादवकोश, also give an additional one from Amara, "उच्चप्रांशून्नतोदग्रोच्छ्रितास्तुङ्गे" इत्यमरः। but the Southern and the Deccan Mss. in our possession omit it.—महाभुजः, Cháritravardhana, Sumativijaya and Vijayaga*n*i analyse as, "महान्तौ जानुपर्यन्तौ भुजौ यस्य सः." —धर्मः, is defined as, "श्रुतिस्मृतिभ्यामुदितं यत्स धर्म इति स्मृतः" or "विहितक्रियया साध्यो धर्मः पुंसां गुणो मतः &c."

P. 7. St. 14.—सारेण, the Northern and the Bengal Mss. of Mallinátha's commentary cite for सार the following authority from Amara, "सारो बले स्थिरांशे च" इत्यमरः। But all the Southern and the Deccan Mss. omit it—मेरुरिव. On this Cháritravardhana has the following note, he says,—"मेरोरपि कनकमयत्वात्सर्वतेजोऽभिभावित्वं." The word मेरु is derived from the root मि 5. P. A. Ved. 'to fix or fasten in the earth', with the affix रुः. Compare "मिपीभ्यां रुः". U*n*ádi Sútra. 540. S. K. p. 335.

P. 7. St. 15—सदृशागमः. *Cf.* बहवोऽप्यागमैर्भिन्नाः पन्थानः सिद्धिहेतवः" R. X. 26. also, "प्रतीप इत्यागमवृद्धसेवी". R. VI. 41. आगम is thus defined. "सिद्धं सिद्धैः प्रमाणैस्तु हितं चात्र परत्र वा। आगमः शास्त्रमाप्तानामाप्तास्तत्त्वार्थवेदिनः" ॥ compare Devi Purá*n*a. "शृण्वतां जायते भक्तिस्ततो गुरुमुपासते। स च विद्यागमात्वक्ति विद्यायुक् स्वाश्रितो नृप" ॥ In the sense of Mantras, *Cf.* Bhágavat, 12. Cha. 11. "सर्ववेदः क्रियामूलमृषिभिर्बहुधोदितः। कालो देशः क्रियाकर्ता कारणं कार्यमागमः &c."—प्रज्ञया, *Cf.* "तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्यां तृतीयाऽन्यतरस्यां. Pá*n*ini, II. 3. 72. The Instrumental or the Genitive may optionally be employed, when the word is joined with another word meaning 'like to, or resemblance'; excepting तुला and उपमा."

P. 8. St. 16.—अधृष्यश्चाभिगम्यश्च &c., On the two epithets Cháritravardhana has the following: "तेजो बलं सत्त्ववत्ता प्रभावः प्रातकान्तता। अधृष्यस्य गुणानेतान्नृपस्य मुनयो विदुः" इति बृहस्पतिः। And also, "कुलं शीलं दया दानं धर्मः सत्यं कृतज्ञता। सूक्ष्मदर्शित्वमुत्साह औचित्यं स्थूललक्षता। विनीतता धार्मिकता गुणाश्चैवाभिगामिकाः" इति कामन्दकः. Dinakara copies down the same from Cháritravardhana's शिशुहितैषिणी, omitting of course, the source from which he draws these quotations.—अर्णवः, Cháritravardhana explains it by "अर्णो जलं तदस्यास्तीत्यर्णवः। "अर्णसो लोपश्च" Pá*n*ini, V. 2. 109. Vijayaga*n*i has, "अर्णांसि जलानि विद्यन्ते यस्मिन्नसावर्णवः".

P. 8. St. 17.—रेखामात्रमपि. *lit.* 'even as much as a line has for its measure,' *i. e.* even to the extent of a line or even to what can be measured by a line.—क्षुण्णात्. Chāritravardhana and Sumativijaya explain it by " प्रसिद्धात्. " Vijayagaṇi. ' धर्मशास्त्रैः शोधितात् वाहितात्. " And Vallabha gives " आचरितात्. "—आ मनोः. Here आ is a separable preposition ; it governs the ablative case.

P. 8. St. 18.—रसमादत्ते. Chāritravardhana, Sumativijaya and Vijayagaṇi have the following :—" सूर्यो जलानि चादत्ते पुनस्त्वा वर्षति च- र्षतीत्यागमः ॥ " अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते । आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः " इति मनुः ॥ एतेन किमुक्तं स प्रजाभ्यो गृह्णाति करेण यज्ञादिकं ततस्तेन तुष्टैरिन्द्रादिभिर्वृष्टिस्तयान्नं तेन प्रजापुष्टिरिति परम्परया बलेर्भूयस्त्वम्" Vallabha explains much the same way with these commentators. Dinakara gives identically the same as Chāritravardhana. Compare also, " अष्टौ मासान्यथादित्यस्तोयं हरति रश्मिभिः । तथा हरेत्करं राष्ट्रान्नित्यमर्कव्रतं हि तत्.—रविः Explain. रवते गच्छतीति रविः, derived from the root रु 1. P. with the affix इ by " अच इः " Uṇādi Sūtra, 578. S. K. p. 337. अजन्ताद्धातोरि- त्यादिति इः, compare the words, पविः, तरिः, कविः, अरिः, अविः &c. The figure is प्रतिवस्तूपमा. Def. " सामान्यस्य द्विरेकस्य यत्र वाक्यद्वये स्थितिः ", 'Two sentences having one common property, but expressed in different words.'

P. 9 St. 19.—सेना, consisting of elephants, war-chariots, cavalry and infantry. Explain सह इनेन प्रभुणा वर्तते इति.—परिच्छदः Para- pherna-lia, such as छत्र, चामर &c.—द्वयम् means, proficiency in diplomacy and military skill and valour. द्वय is here an adjective.—बुद्धिः &c., An intellect that had comprehended all sciences, especially the science of politics. The poet means to say, that his personal valour combined with his profound knowledge of tactics, &c., received from the S'āstras, was so great, that he did not find it necessary to engage his army for the attainment of his objects.

P. 9. St. 20.—संवृतमंत्रस्य, Compare Chāritravardhana : " मंत्र- बीजमिदं यक्तं रक्षणीयं प्रयत्नतः "—गूढाकारेङ्गितस्य, आकार means, attitude &c.,explain आक्रियते आविष्क्रियते हृद्गतो भावोऽनेन. इङ्गित means inward feel- ings expressive of involuntary gestures &c., compare Chāritravardha- na : " आकारोऽन्तर्विकारसूचको भ्रकुटिललाटादिः । इङ्गितं चित्तगतविस्फूर्तिः " They are both essentially and designedly expressive. The object of both is to hold forth and represent the emotions. Chāritravardha- na and Sumativijaya analyse, " यद्वा । गूढाकारं गुप्तस्वरूपं इङ्गितं यस्य स तथा. Dinakara is identical with Chāritravardhana. For इङ्गित compare " अगूढसद्भावमितीङ्गितज्ञया निवेदितो नैष्ठिकसुन्दरस्तया " ॥ Ku. V. 62.

—संस्काराः प्राक्तना इव, 'like the merit of actions done in former lives.' संस्कार is an impression that remains unconsciously on the mind from past actions whether good or evil. *Cf.* "सृज्यमानप्राणिधर्माधर्मापेक्षा हि सुखदुःखादिविषमा सृष्टिः, the nature of the creation is unequal on account of pleasure and pain; it being dependent on the merit and demerit of the living beings created." Pandit says, 'Such merit is called संस्कार, because it is supposed to cling to the soul of the individual who performed the work, like the smell (वासना, see the commentary) of a thing like musk, which, though itself separated, yet leaves of its some fragrance on the body of the person who bore it.'

P. 10. St. 21.—जुगोपात्मानं, compare Chàritravardhana: "विधाय रक्षान्परितः परेतरान्." Ki. I. 14.—अत्रस्तः, Chàritravardhana remarks, "अत्रस्त इत्यादौ प्रसज्यप्रतिषेधे नञ्समासश्चिन्त्यः। 'तत्सादृश्यमभावश्च तदन्यत्वं तदल्पता। अप्राशस्त्यं विरोधश्च नञर्थाः षट् प्रकीर्तिताः'॥ तस्य पर्युदास एवेष्टत्वात्। यद्वा। क्वचित्प्रसज्य प्रतिषेधेऽपीष्टत्वादव्यक्तत्वं [व्यक्तत्वं Ms.] त्यादिवन्न दोषः। नाव्ययीभावादितोऽमन्यतश्चमया इति ज्ञापकाद्वा। यद्वा। नत्रिच युक्तत्वेत्यादिवक्रमन्यसदृश इति नञस्तत्सदृशत्वात्तस्य इवेत्यार्थे पर्युदासो युक्तः"।? One of the three Mss. of Chàritravardhana's शिशुहितैषिणी omits the verse and rightly; because it is not necessary here.—भेजे &c. "he practised virtue even when he was not ill," as interpreted by S'ankara Pandit appears better than Mallinàtha. Compare, "रोगी च देवताभक्तः." When a man enjoys full health and is not affected by any disease, he does not generally practise धर्म, *i. e.* he neglects it or becomes indifferent to it.—अर्थमाददे, Compare Chàritravardhana: "न्यायेनार्जनमर्थस्य" इति। "वसूनि वांछन्न वशी न मन्युना" इति च. Ki. I. 13.—सुखमन्वभूत, Chàritravardhana remarks, "न तु तत्परः इत्यत्रारिषड्वर्गजय उक्तः। 'सेवेत विषयान्काले मुक्त्वा तत्परतां वशी' इति कामन्दकः." धर्म, अर्थ and काम are the three objects (त्रिवर्ग) of worldly existence.

P. 10. St. 22.—क्षमा शक्तौ &c., compare Chàritravardhana: "शक्तानां भूषणं क्षमा." Also *Cf.* Shak. 'The rarer action lies in virtue than in vengeance.'—गुणाः &c., 'virtues, from their association (in him) with virtues (of an opposite kind), seemed to be derived from one common source,' (though really they are not). P. —त्यागे &c., Chàritravardhana remarks, "न दत्वा परिकीर्तयेत्."

P. 10. St. 23.—अनाकृष्टस्य, Chàritravardhana and Vallabha remark "वैराग्यवृद्धत्वं." The Northern Mss. of Mallinâtha's commentary cite the following authority for विषय, "रूपं शब्दो गन्धरसस्पर्शाश्च विषया अमी" इत्यमरः। But the Southern and the Deccan Mss. omit it.—विद्यानां &c., According to some, the Vidyás or lores

are four, "आन्वीक्षिकी त्रयीवार्ता दण्डनीतिश्च शाश्वती," *i. e.* logic and metaphysics ; the triad of the Vedas ; the practical arts, such as agriculture, commerce, medicine ; the science of government &c. The usual number, however, is stated to be fourteen. "षडङ्गमिश्रिता वेदा धर्मशास्त्रं पुराणकम् । मीमांसा तर्कमपि च एता विद्याश्चतुर्दश." The Vedangas are, "शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषम्." शिक्षा, the science of proper articulation and pronunciation, कल्प ceremonial, व्याकरण grammar, निरुक्त etymology, छन्दस् prosody and ज्योतिष् astronomy.—विद्यानां पारदृश्वनः, Châritravardhana and Vallabha remark "विद्यावृद्धत्वं." पारदृश्वन्, ' one who has seen the other end of. ' *Cf.* Pāṇini III. 2. 94. "दृशेः क्वनिप्, " ' the suffix वन् is added to the root दृश्, at the end of कृदन्ततत्पुरुष compound in the sense of the past tense and denotes the doer or agent.'—धर्मरतेः &c., Châritravardhana and Vallabha remark, "शीलवृद्धत्वं."—वृद्धत्वमासीत्, On this Châritravardhana has, "विशेषणत्रित्वम ." *Cf.* Manu, II. 156. "न तेन वृद्धो भवति येनास्य पलितं शिरः । यो वै युवाप्यधीयानस्तं देवाः स्थविरं विदुः."

P. 11. St. 24.—विनयाधानात्, ' from his giving instructions in morals , ' *i. e.* from imparting moral training, or instructions in duties.—पिता. Châritravardhana observes "जनकः पुत्रानपि एतन्विनयं कुरुते." On this verse Châritravardhana has, "एतेन तस्य प्रजानुरञ्जनमुक्तम् ." The Northern Mss. of Mallinâtha's commentary cite the following authority for प्रजाः, "प्रजा स्यात्सन्ततौ जने " इत्यमरः । But the Southern and the Deccan Mss. omit it.

P. 11. St. 25.—स्थित्यै, ' for the preservation of society,' *i. e.* for the stability of his kingdom. Compare Châritravardhana: "स्थित्यै प्रणयतो दण्डम्."—परिणेतुः प्रसूतये. *Cf.* "प्रजायै गृहमेधिनाम्." R. I. 7. – अर्थकामौ, on this Pandit remarks, ' To him the attainment of two out of the three objects (धर्म, अर्थ, काम), at which a living man should aim, became also the attainment of the third ; that is, he ruled his kingdom and lived a married man in such a (virtuous) way that the third object, though requiring separate and different means, was attained as a matter of course along with the two, to which alone the good administration of the laws and the state of marriage legitimately give birth as their results.'—धर्म एव &c., एव means, "अयोगमन्ययोगं च अत्यन्तायोगमेव च व्यवच्छिनत्ति धर्मस्य एवकारस्त्रिधा मतः". The Northern Mss. of Mallinâtha's commentary cite the the following authority for मनीषिण , "दोषज्ञः सूरि पण्डितः । " विद्वान्विपश्चिद्दोषज्ञः सन्सुधीः कोविदो बुधः । धीरो मनीषी " इत्यमरः । " But the Southern and Deccan Mss. omit it.

P. 12. St. 26.—**दुदोह**, 'he drained the earth of its contents,' *i. e.* amassed wealth. On this Châritravardhana remarks, "दुह प्रपूरणे इत्यसौ धातुः प्रवासप्रस्थानादिवत् पूरणे विपरीतश्चार्थेण वर्तते । उक्तश्च क्षीरतरंगिण्याम् ॥ ' प्रपूरणं रिक्तीकरणम् ' इति." —**इधतुः**, here also Châritravardhana says, "अन्योन्यमेकक्रियासम्बन्धो व्यतिहारस्तस्य च विनिमयशब्देनोक्तत्वादिधतुरित्यत्र" "कर्तरि कर्मव्यतिहारे" Pâ*n*ini, I. 3. 14. इत्यात्मनेपदप्राप्तावपि "इतरेतरान्योन्योपपदाच्च" Pâ*n*ini, I. 3. 16. इति निषेधार्थवाक्यप्रसंगान्न भवति." Translate the aphorisms, "In denoting the agent, when reciprocity of action is to be expressed, the affixes of the Atmanepada are employed," *i. e.* the active or कर्तृवाच्य verbs when denoting reciprocal action (or interchange of action) are Atmanepadi. As, व्यतिपचन्ते, 'they cook for each other', व्यतिलुनीते, 'he performs cutting of wood which was the appropriate office of another.' "And after the verbs which take the words इतरेतर 'each other,' and अन्योन्य 'one another,' as उपपद (or dependent qualifying words), the affixes of Atmanepada are not used, though reciprocity of action be denoted." Thus इतरेतरस्य व्यतिलुनन्ति 'they cut each other.' अन्योन्यस्य व्यतिलुनन्ति 'they cut one another.' *Vârtika* "परस्परोपपदाच्चेति वक्तव्यम् ।" This rule must also be applied when the word परस्पर is in composition with the verb, as an उपपद. As, परस्परस्य व्यतिलुनन्ति.

P. 12. St. 27.—**रक्षितुः**, 'guardian of the people.'—**तस्करता श्रुतौ स्थिता** &c., Theft, not being practised anywhere resided only in the word expressive of itself. There was no theft and therefore the word was meaningless as far as the action of theft went. The word remained only as the name of a supposed entity which had no real existence, *i. e.*, it ceased to represent an actually existing thing. *Cf.* Sumativijaya : अन्येषु राजसु वसुधां रक्षत्सु तस्करता परधनेषु स्थितिं चकार । अस्मिंस्तु परस्वं विहाय स्ववाचकं शब्दमेवाश्रयत." For a similar turn of thought, *Cf.* Nai. I. 15. "अयं दरिद्रो भवितेति वैधसीं लिपिं ललाटेऽर्थिजनस्य जाग्रतीं । मृषा न चक्रेऽल्पितकल्पपादपः प्रणीय दारिद्र्यदरिद्रतां नृपः" ॥ Or it may mean that the word theft remained in the code of laws, श्रुतौ दण्डनीतिशास्त्रे एव तस्कर शब्द आसीन्न तु कार्यतः &c., *Cf.* Châritravardhana: "श्रुतौ वेदे स्थिता न तु लोके इत्यर्थः ॥ श्रुतिर्वेदश्रवणस्यापीति वैजयन्ती."

P. 12. St. 28. – **द्वेष्यः** is here equivalent to द्विषत्, an enemy.—**संमतः**, 'prized,' 'esteemed.'—**शिष्टः**, explain हिताहितं विशिनष्टि विवेचयतीति, *lit.* 'disciplined,' 'trained,' hence 'good,' 'excellent.' *Cf.* Manu, XII. 109. "धर्मेणाधिगतो यैस्तु वेदः सपरिबृंहणः । ते शिष्टा ब्राह्मणा ज्ञेयाः श्रुतिप्रत्यक्षहेतवः" ॥—**दुष्टः**, explain हितं दूषयतीति &c.—**आर्तस्य** 'for a patient.'

P. 13. St. 29.—**महाभूतसमाधिना.** Chāritravardhana explains it by " परप्रयोजनघटनैकबुद्धीनि पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशानि तेषां समाधिः सृष्टिकाले नियमविशेषः ". Vallabha has, " महाभूतानां पृथिव्यप्तेजोवाय्वादीनां समाधिः स्वास्थ्यं महाभूतसमाधिः तेन &c. As the qualities of these elements are to benefit others and not themselves, so, the qualities of the king Dilipa were for the benefit of others and not for his own.

P. 13. St. 30.—**उर्वी,** ' the broad one, ' *i e.*, the earth. From the root वृ 5 P. A. ' to cover,' to spread.'—**पृथ्वी**. On this epithet Chāritravardhana has the following, " इत्यनेन सकलमहीमण्डलपालनमनायासेन द्योत्यते. "

P. 13. St. 31.—**पत्नी,** analyse पतिरस्या अस्तीति.—**दक्षिणा.** A gift to Brāhma*n*as at the completion of a religious ceremony or sacrifice, and it is regarded as the daughter of प्रजापतिः and the wife of अध्वर or sacrifice personified.—**दाक्षिण्यरूढेन नाम्ना.** ' bearing a name which was known for civility, politeness, high-breeding &c., ' दाक्षिण्य from दक्षिण, 'civil,' 'polite,' 'gentle' &c.—**मगधवंशजा.** ' born in the family of the Magadha kings'. Magadha was the ancient name of Behar, extending as far as Kāshmir or Panjab. Magadha was also called Kika*t*a. Among other places of Magadha should be noted Vihāra or Behar, near which there is a solitary hill, covered with ruins which Gen. Cunningham considers to be the ruins of the Vihāra of अवलोकितेश्वर. Nalanda is also noted as Buddhistic place of pilgrimage where Hiouen-Thsang studied Sanskrit for several years. Magadha was once the seat of several most celebrated dynasties of ancient Indian kings. It was also here that Buddism first took its origin. Pâ*t*aliputra, the capital of Magadha, was situated near the confluence of the So*n*a with the Ganges. About seven miles south of Nalanda or Baragaon is the town called Rājgir, which may safely be identified with Rāj*a*g*r*iha, once the capital of Magadha. For the full account see Anandoram Boorooah's ancient geography of India. Paras 100-105, p. 94.—अध्वर. Ved. literally it means, 'that which ought to be unbroken or uninterrupted,' because it is most essential for the proper performance of a sacrifice that it should be finished without any obstacle or interruption.

P. 14. St. 32.—**कलत्रवन्तम्** . कलत्र = कडत्र is derived from the root गड् 1. P. 'to distil or drop,' 'to sprinkle as water.' Explain गडति सिञ्चतीति कलत्रं,by " गडेरादेश्च कः " U*n*adi Sutra. 386. S. K. p. 331, the root गड् is changed to कड् and with affix अत्रन् we get कडत्र and डलयोरैक्यस्मर-

णात्कलत्रम्.—**तया मनस्विन्या** &c., *Cf.* S'a. III. 73. " परिग्रहबहुत्वेऽपि द्वे प्रतिष्ठे कुलस्य मे । समुद्ररसना चोर्वी सखी च युवयोरियम् . "

P. 14. St. 33.—**आत्मजन्मसमुत्सुकः**, *Cf.* Aitareya Upanishad, " सा अस्यै तमात्मानमत्र गतं भावयति स यत्कुमारं जन्मनोऽग्रे अधिभावयति आत्मानमेव तद्भावयति एषां लोकानां सन्तत्यै । सोऽस्यायमात्मा पुण्येभ्यः कर्मभ्यः प्रतिधीयते तदस्य द्वितीयं जन्म । अथास्यायमितर आत्मा कृतकृत्यो वयो गतः प्रैति स इतः प्रयन्नेव पुनर्जायते तदस्य तृतीयं जन्म &c."

P. 14. St. 34.—**अवतारिता**. On this epithet Châritravardhana has a curious note. he says, " इति कविसमयेनोक्तं."—**धूः**, *lit.* ' a yoke,' here used figuratively for the burden, *i. e.* the responsibility of administration.

P. 15. St. 35.—**विधातारमभ्यर्च्य**. The god Brahmâ is worshipped by those that wish for progeny, because he is represented as the lord of creation (प्रजापतिः). Compare also. " आत्मार्थे चात्मजत्वात् लोककर्तृत् पितामहः । विश्वे प्रजानां पतयो येभ्यो लोका विनिःसृताः. "—**दंपती**, *i. e.* ' the two masters of the house', the husband and the wife. The word is derived from दम (in comp.) = दम *m. n.*, Ved. a house, home, and पति a lord; the master or lord of the house. (See Monier Willian's Sans. Dictionary. p. 402. col. I) In this sense the word is found in the singular number in Vaidic literature. But Panini and the later grammarians explain that दम and जन् are substituted for जाया or rather stand for जाया. *Cf.* Panini II. 2. 31.—**आश्रमम्**, explain, आश्राम्यन्त्यत्रेत्याश्रमः. आ+श्रम+घञ=आश्रम.

P. 15. St. 36.—**ऐरावतौ**. Châritravardhana explains it as, " मेघस्योपरि संचरिष्णुर्मेघश्चैरावतः" and further "मेघस्योपरि यो मेघः स ऐरावत उच्यते इति दक्षिणावर्तः. " Vallabha also quotes the same; " यद्वा । ऐरावतो नभःसंचरिष्णुरत्र ऐरावणोऽभ्रमातंगनामा शक्रमातंगः. and further discusses, विद्युदैरावते इति पाठे त्वैरावतमित्यत्र नपुंसकत्वस्य लिङ्गस्यानिष्टत्वादुपमादूषणं चिन्तनीयं ॥ " ऐरावतोऽभ्रमातंगनागेन्द्रकुचादिषु ऐरावतं महेन्द्रस्य ऋजुदीर्घं शरासनं । ऐरावती स्यात्तडिति नदीभेदेऽपि लक्ष्यते " इति विश्वः ॥ Explain, इरावान्समुद्रः तस्माज्जातः ऐरावतः. The Northern Mss. of Mallinâtha's commentary cite the following for ऐरावत. " ऐरावतोऽभ्रमातङ्गैरावणाभ्रमुवल्लभाः " इत्यमरः । But the Southern and the Deccan Mss. omit it.

P. 15. St. 37.—**मा भूदाश्रमपीडेति** &c., *Cf.* S'a. I. " तपोवनवासिनामुपरोधो मा भूत् । अत्रैव तावद्रथं स्थापय । यावदवतरामि । विनीतवेषेण प्रवेष्टव्यानि तपोवनानि नाम &c.—**अनुभाव** means the peculiar majesty of his mien or bearing.

P. 16. St. 38.—**पुष्पस्पर्शैः** On this Châritravardhana observes, " वने दाम्यमान्य सौरभ्याणि कविसमयविशेषणैः " ।—**उत्किरैः**, ' gently waving, '

'wafting,' 'scattering.' *Cf.* Ku. V. 26. "निनाय सात्यन्तहिमोत्किरानिलाः." उत्कर means a cluster, a collection; Châritravardhana also notices the reading उत्कर and quotes the following: "तथा हेमाचार्यः। वृन्दे चक्रकदम्बके समुदयः पुंजोत्करौ संहतिः"। Sumativijaya says, "एतेन सौगंध्यमुक्तं."—आघ्रात, Châritravardhana remarks, "एतेन मान्द्यम्." On this Vijayagaṇi has the following: "अस्मिन् वार्या शैत्यं सौरभ्यं मांद्यं च विवक्षितं."

P. 16. St. 39.—**षड्जसंवादिनी**: &c., षड्ज is the first of the seven primary notes of the Indian gamut. षड्ज is of two sorts, one form comes under शुद्ध (distinct), the other under विकृत (indistinct). The षड्ज is called शुद्ध, when it has four S'rutis (tones or vibrations, तंत्रीजातो नादः श्रुतिरुच्यते). These are "तीव्रा कुमुद्वती मंदा छंदोवत्यस्तु षड्जगाः", namely तीव्रा, कुमुद्वती, मंदा and छंदोवती. When षड्ज exclusively consists of these four S'rutis, it comes to be called शुद्ध, otherwise **विकृत**. It is also further subdivided into two parts, the one is called च्युत (broken), the other is अच्युत (unbroken). *Cf.* "च्युतोऽच्युतो द्विधा षड्जो द्विश्रुतिर्विकृतो भवेत्," The sound which appears in its last component part (छंदोवती) is said to be अच्युत, when otherwise it is called च्युत. च्युतो यस्यां चतुर्थो श्रुतौ स्थायितस्तस्याः सकाशात् प्रच्युतः। मन्दासंस्थितः=द्विश्रुतिकः। अच्युतस्तस्यामेव श्रुतौ अवस्थितः। छंदोवतीस्थः द्विश्रुतिकः. On द्विधाभिन्नाः Châritravardhana has the following note, "महाजनदर्शनजनितविस्मयभयाभ्यां स्निग्धदीनभेदेन द्विधाभिन्नाः। "विस्मयाद्भवति स्निग्धो भयाद्दीन उदाहृतः"। इति दंतिलः." Compare also

षड्जं वदति मयूरः पुनः स्वरमृषभं चातको ब्रूते।
गान्धाराख्यं छागो निगदति च मध्यमं क्रौञ्चः॥
गदति पञ्चममञ्चितवाक्पिको।
रटति धैवतमुन्मददर्दुरः॥
शृणि समाहतमस्तककुञ्जरो।
गदति नासिकया स्वरमंतिमं॥

Châritravardhana rightly observes, "श्रोतृसंभेदेन द्विधाभिन्नाः"

P. 17. St. 40.—**परस्पर**,° Châritravardhana observes, "परस्परमिति कर्मव्यतिहारे सर्वनाम्नः समासवच्च बहुलमिति भावः". That is, Dilipa saw the resemblance of the eyes of the does to those of Sudakshiṇâ and she beheld the resemblance of the eyes of the male-deer to those of her lord.—**स्यन्दनाबद्धदृष्टिषु**, *Cf.* S'â. I 7. "ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्धदृष्टिः।" The Northern Mss. of Mallinâtha's commentary cite the following authority for दृष्टि, "दृग्दृष्टिर्नेत्रलोचनचक्षुर्नयनाम्बकेक्षणाक्षीणि" इति हलायुधः। But the Southern and the Deccan Mss. omit it.

P. 17. St. 41.—तोरणस्रजम्, 'a garland suspended across a gateway or door.' Châritravardhana calls it वन्दनमालाम्.—कलनिर्ह्रादैः, 'uttering notes sweat but unintelligible.'

P. 17. St. 42.—अनुकूलत्वात्, Châritravardhana observes, "शुभगंधे च शब्दे च सानुकूले च मारुते । प्रस्थिते सर्वकार्याणां सर्वसिद्धिर्ध्रुवं भवेत्" इति पालकाप्यः ।

P. 18. St. 43.—सरसीषु, Châritravardhana explains it as, "महांति सरांसि सरस्यः" इति जिनेन्द्रबुद्धिः ।

P. 18. St. 44.—यूपचिह्नेषु, 'that were conspicuous with their sacrificial posts,' thus showing that the villages were made free grants to the S'rotriyas, who constantly performed sacrifices according to the S'âstra or the Vedic precepts.

P. 18. St. 45.—हैयंगवीनम्, explain ह्योगोदोहस्य विकारो हैयङ्गवीनम्, 'clarified butter prepared from the preceding day's milk,' *i. e.* fresh ghee. *Cf.* Pâ*n*ini, V. 2. 23.

P. 19. St. 47.—तत्तत्, 'that and that,' 'that and this,' *i. e.*, this thing and that thing, one thing after another, now this and now that; when thus repeated तद् has the force of 'several,' 'various.'.—बुधोपमः, Châritravardhana remarks "प्रियदर्शनः अपूर्ववस्तुद्रष्टा बुधश्चन्द्रपुत्रो ग्रहस्तेन तुल्योऽपि न बुबुधे" इति विरोधाभासोऽलंकारः ।

P. 19. St. 48 —महिषीसखः. On this epithet Pandit observes 'A *Tatpurusha compound*, according to the prescribed and existing rules of grammar. *Cf.* Pân., V. 4. 91. Accordingly the solution is, महिष्याः सखा महिषीसखा. But were it not for this technical necessity of grammar for thus dissolving the compound, we should certainly and at once understand it to be a Bahuvrihi one. All that the poet wants to say by the adjective महिषीसखः is, that the king was accompanied by his wife. This being his meaning, he would not use a compound which meant that the king was the friend of his wife, but one that would mean, the king had his queen for his friend (companion). Even our commentator sees the desirability of taking the compound to be a Bahuvrîhi one and adds "सहायान्तरनिरपेक्ष इत्यर्थः". Besides, every other compound of similar import is always rendered as a Bahuvrîhi. *Cf.* "प्रयतपरिग्रहद्वितीयः" I. 95; "गृहिणीसहायः" II. 24. The figure is अनुप्रास.

P. 19. St. 49.—वनान्तरात्, *lit.* 'from another forest,' *i. e.* from another part of the forest. अन्तरं is added to denote that the place the Rishis lived in was also a forest. *Cf.* Châritravardhana,

" आश्रमवनच्छेदस्यायुक्तत्वाद्वनान्तरादुपावृत्तैरित्युक्तं । "—पूर्यमाणं, 'that (the hermitage) was then being filled up by the sages &c.,' *i. e.* when the royal couple came to it.—°प्रत्युद्यातैः, on this Châritravardhana has the following " प्रत्युत्थानं त्वेनं हवाग्नयः प्रत्याधावन्ति " । इत्यापस्तम्बोक्तेः । *Cf.* Sumativijaya, " आहिताग्नीनामग्नयः स्वयं प्रत्युद्गमं कुर्वन्तीति पौराणिकाः. " According to the Vedas the sacrificial fires are said to welcome the Munis, when they return from the forests fetching flowers, sacred fuel, Kus'a grass &c.

P. 20. St. 50.—अपत्यैः, explain, न पतति कुलं येन इति. अपत्य is derived from पत् to fall with the negative particle अ. The word would thus mean, one who does not allow the family to fall. Pandit says, 'that the real origin seems, however, to be the preposition अप with the termination त्य,' 'one that descends from the stock,' 'a descendant.' *Cf.* नित्य, उपत्यका, अधित्यका.—नीवारभागधेयोचितैर्मृगैः, 'by antelopes that were accustomed to get a part of the नीवार corn,' which formed the usual food of the sages that lived in the forests.

P. 20. St. 51.—विहंगानां, explain विहायसा गच्छतीति विहंगः, derived from गम् 1. P. with विहायस् and the termination खच्. *Cf.* the *Vártikas*, " विहायसो विह इति वाच्यं " । " खच डिद्वा वाच्यः " ।—वृक्षकम्. Here वृक्षक means 'a young tree.' The *Taddhita* affix क expresses 'diminution.' It is added to nouns and adjectives, mostly to the former also in the sense of contempt, similarity, endearment, or sometimes to express the original meaning of the word itself. As अश्वक 'a bad horse,' or 'like a horse,' or 'a horse itself,' and बालक, पुत्रक 'dear, chap.'

P. 21. St. 52.—वर्तित, Châritravardhana observes " कर्मणो रोमन्थतपोभ्यां वर्तिचरोः " । इत्यत्र सूत्रे यो वर्तिधातुस्तदनुसारेण वर्तित इति प्रयोगः.

P. 21. St. 53.—अतिथिः, explain, " न विद्यते तिथिर्द्वितीया अस्य. " *Cf.* Manu, " एकरात्रन्तु निवसन्नतिथिर्ब्राह्मणः स्मृतः । अनित्यं हि स्थितो यस्मात्तस्मादतिथिरुच्यते. " The figure according to Châritravardhana is विरोधाभास.

P. 22. St. 55.—सभ्याः, 'hospitable,' 'kind &c.'

P. 22. St. 56.—स्वाहयेव हविर्भुजम्, स्वाहा is the exclamation used at the time when an offering is thrown into Agni, in order that it may be received by a deity in whose name it is thrown. This word like वौषट् and श्रौषट् has lost its etymology. स्वाहा is also personified into a wife of the Fire-God Agni. On this Châritravardhana observes, अंगिरोपम्येन वशिष्ठस्य तेजस्वित्वं पावनत्वं चोक्तं. "

P. 22. St 57.—प्रतिनन्दितुः, 'received with honour,' 'welcomed &c.' *Cf.* Châritravardhana. " दृष्ट्वा दम्पत्यसादेव प्रतिनन्देव सर्वशः " । इति

मनुः. Châritravardhana reads पादौ instead of पादान् and discusses in the following manner. " ननु पादानिति वक्तव्ये पादाविति कथं द्विवचनप्रयोगः। पादजातौ द्वित्वविवक्षितत्वात्। स्त्रीणां चक्षुरित्यादिवन्न दोषः "। उक्तं च वामनेन " स्तनादौ द्वित्वं द्वित्वाविष्टा जातिः प्रायेण " इति। यथा माघे " स्तनौ दधानास्तरुण्यः " इति। मागधीपदेन विशिष्टवंशत्वं ज्ञाप्यते। तेन च गुरुजनचरणप्रणामौचित्यं द्योत्यते। ननु कथं राजा राज्ञीत्यादीनामेकवचनानां जगृहतुः प्रतिननन्दतुरिति द्विवचनक्रियाभिः सम्बन्धः। " द्वयोर्नाम्नोर्बहूनां वा यदि वाक्यं समुच्चये। अङ्गवचाश्रिता संख्या पद्यादौ वा विशेषिता " इति विकल्पविधानान्न दोषः। The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. for पादान्, " पादः पदंघ्रिश्चरणोऽस्त्रियाम् " इत्यमरः।

P. 23. St. 58.—**रथक्षोभपरिश्रमम्** &c., 'the fatigue caused by or due to the jolting of the car.'—**कुशलं पप्रच्छ** &c., *Cf.* Manu, II. 127. " ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत्क्षत्रबन्धुमनामयम्। वैश्यं क्षेमं समागम्य शूद्रमारोग्यमेव च." Here Châritravardhana, after quoting the above verse from Manu, observes, " अतोऽनामयं परित्यज्य कुशलप्रश्ने हेतुमाह । राज्याश्रममुनिमिति. "

P. 23. St. 59.—**अथर्वनिधेः** should be taken to refer to Vasistha's complete knowledge of the rites and ceremonials of the Atharva Veda. *Cf.* Châritravardhana : अथर्वनिधे " अथर्ववेदविदः.........अथर्वनिधिपदेन दुरितोपशमनिमित्तशान्तिकपौष्टिकम् " इति कामन्दकः, Dinakara adds, प्रवीणत्वं पौरोहित्योचितत्वं द्योत्यते. " Vallabha has, " अथर्वणां वेदद्वाराणां निधिरथर्वनिधिस्तस्य &c., Vijayagani remarks, " वशिष्टश्चतुर्दशविद्यानिधानं तथाथर्ववेदस्य कर्माणि कुर्वन्नथर्वनिधिः कथ्यते &c., " Compare also, अथर्वविहितं कुर्यान्नित्यं शान्तिकपौष्टिकम्. " That the Purohita or the family priest of a king should be deep read in the Atharva Veda is confirmed by following from Mitákshará, Achár. 12. 5. " पुरोहितं च कुर्वीत दैवज्ञमुदितोदितम्। दण्डनीत्यां च कुशलमथर्वाङ्गिरसे तथा. " *Cf.* R. VIII. 4. " स बभूव दुरासदः परैर्गुरुणाथर्वविदा कृतक्रियः " &c.

P. 24. St. 60.—**उपपन्नं ननु शिवम्**. 'Patent indeed is prosperity to &c.,' 'that prosperity is sure to reign in &c.'—**यस्य मे**, 'since my.'—**दैवीनामापदाम्**, calamities caused by deities are such as, fire, water, disease, famine and death.—**मानुषीणामापदां**, calamities caused by men, are such as, ministers, thieves, enemies, favourites] of kings and excessive greediness of monarchs. They are also called ईतयः, 'calamities of the seasons.' " अतिवृष्टिरनावृष्टिः शलभाः मूषिकाः खगाः प्रत्यासन्नाश्च राजानः षडेता ईतयः स्मृताः. " *Cf.* R. I. verse 63.

P. 24. St. 61.—**प्रत्यादिश्यन्ते**, 'are thrown back,' 'ordered back,' *i. e.*, rejected as being superfluous or useless. प्रति has the sense here of negation or contrariety, and not of repetition. *Cf.* also VI. 39, X. 69.—**तव मंत्रैः**. *Cf.* V. 27, " वसिष्ठमंत्रोक्षणजात्प्रभावात् &c. "—**इव**, Châritravardhana observes, " इव शब्देनात्मनः पौरुषं संभावयति. "

P. 25. St. 63.—पुरुषायुषजीविन्य: &c., *Cf.* Vijayagaṇi "कृते लक्षं सहस्राणां त्रेतायामयुतं तथा । द्वापरे तु सहस्रैकं कलौ वर्षशतं मतं."—निरातङ्का:, analyse "निर्गत आतङ्को भयं याभ्यस्ता: ", 'free from danger, or distress.' आतङ्क is derived from the root तञ्च् 7. P. 'to contract,' with the prefix आ, which gives it the special signification of *coagulating.* Hence आतङ्क originally meant *bodily distress, torment. Cf.* आतञ्चन, तक्र, as derived from the same root.—ब्रह्मवर्चसं analyse ब्रह्मणो वर्च:. The word वर्चस् coming after ब्रह्मन् and हस्तिन् is changed to वर्चस, *i. e.* a noun ending in अ.

P. 25. St. 64.—ब्रह्मयोनिना, Châritravardhana analysing the compound like Mallinâtha has also the following ; "अथ वा ब्रह्मणस्तपसो योनि: कारणं तेन." And further he has, 'संवीतस्य हि लोकेऽस्मिन्नदोषान्वेषणं क्षमं । शिवलिंगस्य संस्थाने कस्यासमत्वभावना" इत्युक्तत्वाद्योनिशब्दस्यासभ्यत्वं । *Cf.* also Matsyapurâṇa "मनस: पूर्वसृष्टा वै जाता ये तेन मानसा: ".

P. 25 St. 65.—अदृष्टसदृशप्रजं, Châritravardhana remarks, "सदृशप्रजमित्यनेन सर्वथा सन्तानाभावो नास्ति ।" Perhaps according to him the king Dilîpa had progeny but not so worthy of his name &c.—न मामवति, &c., 'the earth though producing gems does not gratify, or content me'; the root अव् means originally 'to be pleased with,' 'to be glad,' 'to rejoice'; it then acquires the force of a transitive verb, and means 'to please,' 'to gratify.' The more frequent signification of the root met with in classical Sanskrit, *viz.*, that of protecting or defending is only a secondary derivative.—*Cf.* R. XI. 75. "क्षत्रियान्तकरणोऽपि विक्रमस्तेन मामवति नो जिते त्वयि."—सद्वीपा &c., analyse द्विर्गता आप: अत्रेति द्वीपास्तै: सह वर्तते इति. *Cf.* Pâṇini, VI. 3. 97. "द्व्यन्तरुपसर्गेभ्योऽप ईत." By this the word अप् is changed to ईप् &c., compare समीपं, अंतरीपं.—रत्नसू:, explain रत्नानि सूयते इति. *Cf.* "जातौ जातौ यदुत्कृष्टं तद्रत्नमिति कथ्यते," often cited by our scholiast.—मेदिनी, explain मेदोऽस्या अस्तीति. The earth is called so because it was overspread with the fat of the demons मधु and कैटभ whom Vishṇu put to death.

P. 26. St. 66.—स्वधासंग्रहतत्परा:, 'intent upon to the laying up of the obsequial food offered to them'; that is, fearing that after Dilîpa, there would be none in the family to perform the S'râddha ceremony for them, they do not consume all that is offered to them by Dilîpa, but they eat sparingly, and lay by the rest for the future. *Cf.* S'â. VI. 157. "अस्मात्परं बत यथाश्रुतिसंभृतानि । को न: कुले निवपनानि नियच्छतीति । नूनं प्रसूतिविकलेन मया प्रसिक्तं । धौताश्रुशेषमुदकं पितर: पिबन्ति" ॥ स्वधा is derived from स्वद् 1. A 'to eat', 'to taste'; by पृषोदरादि the

द् being changed to ध with the affix आ it becomes स्वधा. Some derive it from the root धा 3 P. A. but this view does not appear convincing.

P. 26. St. 67.—कवोष्णं, Châritravardhana remarks, "दिलीपानन्तरं पयो न लप्स्याम इति शोकावेशान्निर्गच्छद्भिर्निःश्वासैरीषदुष्णं पितरः स्वीकुर्वते इति."

P. 26. St. 68 लोकालोक, is the name of a mythical mountain, dividing the visible world from the regions of darkness. The लोकालोक called also चक्रवाल, is really the wall of clouds that bounds our horizon, all around us. The word literally means 'that which has the world of beings and also the world of no beings.' The name has reference to the mythical conception that the लोकालोक is a round chain of mountains surrounding like a wall, the earth conceived to be flat like a disk, within which wall the sun and all the heavenly bodies move about, and beyond which pervades entire darkness. *Cf.* Matsyapurâna Chap. 122; "परेण पुष्करस्याथ आवृत्यावस्थितो महान् । स्वादूदकः समुद्रस्तु स समन्तादवेष्टयत् । स्वादूदकस्य परितः शैलस्तु परिमंडलः । प्रकाशश्चाप्रकाशश्च लोकालोकस्स उच्यते । आलोकस्तत्र चार्वाक्च निरालोकस्ततः परं ।"

P. 27. St. 70—वन्ध्यमाश्रमवृक्षकं, mark the appropriateness of the simile, as being drawn from the daily scenes of, and as perfectly familiar to, the person addressed.—आश्रम &c., Châritravardhana observes, "आश्रमशब्देन स्नेहाधिक्यं"।

P. 27. St. 71.—ऋणमन्त्यम्, 'the last debt' *i. e.* the debt to be paid to the *manes.* Every one that is born has three debts to pay off. He, who learns the Vedas, pays off the debt to sages ; he, who sacrifices, pays off the debt to gods ; and he, who begets a son, pays off the debt to the *manes.*—अरुंतुदमिव &c. 'like a sharp chain to an elephant that has had no plunge or bath.' Explain अरूंषि मर्माणि तुदतीति, cutting or wounding the vital parts ; hence 'corrosive.' —आलान means a chain by which the elephant is tied. In this verse आलान does not mean the post, but simply a rope or chain. Our Scholiast renders it in the sense of a post. *Cf.* R IV. 69. "गजालानपरिक्लिष्टैरक्षोटैस्सार्धमानताः"। The word also means a tying-post. *Cf.* R. IV. 81. "तरुजालानतां प्राप्तैः सह कालागुरुद्रुमैः"। Here आलान cleary means the tying-post; compare also R. XIV. 38. "सोढुं न तत्पूर्वमवर्णमीशे । आलानिकं स्थाणुमिव द्विपेंद्रः"।

P. 28. St. 72.—तात is a term of affection, endearment or pity applied to any person, but usually to inferiors, or juniors, pupils and children ; it is also a term of respect applied to elders or other

venerable persons as here. *Cf.* Manu II. 125. " वृद्धं तातेति चेतरः । "—**इक्ष्वाकूणां**, A subjective genitive. In the singular and dual this word is declined like nouns ending in अ and in the plural like a word that ends in उ *i. e.* ऐक्ष्वाकः, ऐक्ष्वाकौ, इक्ष्वाकवः. *Cf.* औडुलोमि. On this Châritravardhana has the following note, " इक्ष्वाकूणां दुराप इति सम्बन्धे ॥ " न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम् " Pánini, II. 3. 69. इति षष्ठी निषेधात्कथं कर्तरि षष्ठी । " आक्षिपन्त्यरविन्दानि मुग्धे तव मुखश्रियं । कोशदण्डसमग्राणां किमेषामस्ति दुष्करं "। इत्यादावलंकारिकैरादृतत्वान्न दोषः । यदाह च भोजः । " इदं हि शास्त्रमाहात्म्यदर्शनालसचेतसामपशब्दवदाभाति न च सौभाग्यमुज्झति " इति । यद्वा सम्बन्धविवक्षायां षष्ठी । न कृद्योगे तस्यास्त्वनिषिद्धत्वात् । "

P. 28. St. 73.—**सुप्तमीनः**, analyse सुप्ताः निद्रां प्राप्ता अत एव निश्चला मीना मत्स्या यत्र स तथोक्तः.

P. 28. St. 74.—**प्रणिधानेन**, Cháritravardhana renders it by " योगसमाधिना. "—**भावितात्मा**, Vijayaga*n*i analyses " भावितो ज्ञानमय आत्मा जीवो यस्य सः. "

P. 29. St. 75.—**पुरा शक्रमुपस्थाय** &c. The kings of the solar race are noted for their having repeatedly gone to the assistance of Indra, whenever he was in danger from the Asuras *Cf.* R. VI. 73. "अर्धासनं गोत्रभिदोऽधितष्ठौ." Vijayaga*n*i explains the word शक्र by, " शंकते भयं प्राप्नोति नमस्विभ्योऽपीति " शक्रः । *Cf.* also Sumativijaya: "सूर्यवंश्याः सर्वेऽपि शक्रस्याराधनार्थे दिवि गच्छन्तो भुवनत्रयेऽस्खलितगतयः आसन् "।—**कल्पतरुच्छायां**. *Cf.* Pá*n*ini II. 4. 22. "छायाबाहुल्ये" An inflectional Tatpurusha compound ending in छाया is neuter, if the preceding member denotes plurality of objects. But here कल्पतरु is in the singular number and therefore the compound is कल्पतरुच्छाया and not कल्पतरुच्छायं.

P. 29. St. 76.—**ऋतुस्नातां** &c, ' a woman who has bathed after menstruation, and who is therefore fit for performing the household business in company with her husband.' On this Cháritravardhana, Sumativijaya and Vijayaga*n*i have the following, " ऋतुस्नातां च यो भार्यां सन्निधौ नोपगच्छति । घोरायां भ्रूणहत्यायां युज्यते नात्र संशयः. "—**स्मरन्**, the root स्मृ governing accusative and genitive; see Apte's guide, 113. (*b*) p. 81.—**साधु** is here used as a noun in the sense of ' respect. '

P. 30. St. 78.—**आकाशगङ्गायाः** &c., ' the celestial Ganges,' *i. e.* the Ganges before it descends into the plains of India.—**राजन्**, *Cf.* " पृथुं वैन्यं प्रजा दृष्ट्वा रक्ताः स्मेति यदब्रुवन् । ततो राजेति नामास्य अनुरागादजायत " । Compare also R. IV. 12. " तथैव सोऽभूदन्वर्थो राजा प्रकृतिरञ्जनात् । "

P. 30. St. 79.—**श्रेयः प्रतिबध्नाति**, *Cf.* Sumativijaya : " उक्तञ्च । अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूज्यापूज्यव्यतिक्रमः । दुर्भिक्षं मारिरोगाश्च भवन्त्येवं न संशयः " ।

P. 31. St. 80.—दीर्घ सत्रस्य &c., 'On this सत्र sacrifice see आश्वलायनसूत्र, chap. XII. The length of time required for a सत्र sacrifice varies between one year and a thousand years. The peculiarities of a दीर्घसत्र sacrifice, as distinguished from a common यज्ञ, is, that whereas in the latter the merit resulting from the sacrifice belongs wholly to the Yajamâna, and the only advantage gained by the sixteen priests is the dakshiṇá they receive,–in the former the merit is divided among the sixteen priests and the sacrificer or the Yajamâna.' P. –भुजंगपिहितद्वारं, 'the approach whereto is blocked up by the serpents.' Bhujangas are imaginary beings of unparalleled loveliness, belonging to the serpent kind, and inhabiting the Pátála or the nether world. *Cf.* Padmapurâṇa, "एते समधिकसुखा बिलस्वर्गाः प्रकीर्तिताः"।

P. 31. St. 82.—इति वादिन एव, 'while he was yet speaking thus.' The genitive is here used for the more usual locative absolute.—अस्य होतुः may also be taken, and perhaps more correctly, with वादिनः, and be construed as its subject, rather than with the phrase 'आहुति साधनं'।

P. 31. St. 83.—आगुल्मम्. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following "आविद्धं कुटिलं भुग्नं वेल्लितं वक्रमित्यपि" इत्यमरः। This is cited by the Northern Mss.

P. 32. St. 84.—कुण्डोध्नी is properly derived from कुण्ड, explain कुण्डयते रक्ष्यते जलं वह्निर्वा। अत्र जलाधारपात्रविशेषं 'a pitchure,' and ऊधन्, with the affix ई. ऊधन् has originally, like अहन्, two crude bases, *viz.*, ऊधन् and ऊधर् (sometimes ऊधस्). The न् in कुण्डोध्नी is, therefore, radical and not extraneous, as the grammarians have it (*vide* commentary). *Cf.* also ऊधन्य, 'milk.'—मेध्य *lit.* 'that which has to be killed or sacrificed'; hence holy or sacred.—अवभृथ is the ceremony of ablution performed on a river-bank at the close of a sacrifice, by the sacrificers with Yajamâna. See note to stanza 18 canto IX.

P. 32. St. 85.—गात्रं, here it means 'the body.' Usually it means 'a limb of the body.'—अन्तिकात् *ind.* 'closely' or 'from near.' It governs the accusative.

P. 33. St. 86.—आशंसितावन्ध्य°, Châritravardhana discusses as follows: "ननु अभीष्टसिद्धेरुत्पत्स्यमानत्वादिदानीं कथमाशंसितां वन्ध्यमिति। अत्यासन्नसिद्धत्वेनोक्तत्वान्न दोषः"।

P. 33. St. 88.—आत्मानुगमनेन, 'by constant attendance on their own part,' *i. e.* by your own personal attendance upon her.

P. 34. St. 91.—**पुत्रिणां**. explain, सुपुत्राणामिति पर्याप्तिः.—**स्थेयाः**, Châritravardhana has the following on this epithet : " यथान्यः पुत्रवान् भारं वहति तथा त्वमपि भूयाः इत्यर्थः। त्वया यथा न पिता पुत्रांस्तथा त्वमपि भूयाः "।

P. 34 St. 92.—**प्रतिजग्राह**, on this epithet Châritravardhana writes the following. "देशकालज्ञत्वेन गोरक्षणप्रवृत्तिकरणत्वं सूच्यते"।—**सपरिग्रहः**, here परिग्रह means ' wife. ' Note the alliteration in this and in the following verse.

P. 35. St. 93.—**सूनुत्वाक्**, Vashistha's assurance of the birth of a son was one of undoubted truth, yet extremely gratifying to the king.—**ऊर्जितश्रियं**, explained as ' radiant with joy ' at the assurance, might also mean *of distinguished fortune.*—अथ, has here, the force of a partical introducing a change of subject.

P. 35. St. 94.—**वन्यां संविधां कल्पयामास**, ' supplied him with a rural accommodation. ' *i. e.* arranged but a sylvan ministration for him. *Cf.* Châritravardhana ; " यद्यपि तपोमाहात्म्यान्नानाविधानि भक्ष्यभोज्यानि सुकराणि तथापि शास्त्रप्रतिपादितप्रयोगाभिज्ञो मुनिर्नृपस्य व्रतविपर्यानियमार्थं वन्यामेव वृत्तिं कृतवानिति "।

P. 35. St 95.—**कुलपतिना**, कुलपति means a sage who feeds and teaches 10,000 disciples.' *Cf.* " मुनीनां दशसाहस्रं योऽन्नदानादिपोषणात्। अध्यापयाति विप्रर्षिरसौ कुलपतिः स्मृतः"—**कुशशयने**. Châritravardhana analyses, " कुशैर्दर्भैः परिकल्पितं शयनं तस्मिन्। शाकपार्थिवादिसमासः "।

———

CANTO II.

P. 36. St. 1.—**जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम्**, 'with perfumes and garlands caused by his mate to be accepted by her (the sage's cow).' According to Bopadeva, जायया प्रतिग्राहिते गन्धमाल्ये याम् or जायया प्रतिग्राहिता गन्धमाल्ये या would be preferrable, since the roots ग्रह्, त्यज् &c., according to the use of classical poets, come under those roots which take double accusative.—**पीतप्रतिबद्धवत्साम्**, 'with her calf sucked and tied up to a post.' Explain पीतं (*i. e.* पानं) अस्यास्तीति, 'having its fill of drink.' पीत is the past passive participle from पा, used in an intransitive sense. On प्रतिग्राहित &c., Châritravardhana has the following explanation; "प्रतिग्राहयित्री सुदक्षिणा प्रतिग्रहित्री धेनुः। स्त्रीदत्तपुष्पग्रहणेनानुकूल्याद्वाविकार्यसिद्धिः."—**यशोधनः**. On this epithet Châritravardhana remarks, "यशोधनपदेन स्वदेहदानाद्रक्ष्यमाणधेनुमोचनं सूच्यते"।

P. 36 St. 2.—**धर्मपत्नीं**, On this epithet Châritravardhana has the following, "उक्तञ्च । पतिं धर्मरतं पत्नी साध्वी शुश्रूषते तु या। नित्यं त्वनन्यहृदया धर्मपत्नीं तु तां विदुः" इति। See also commentary.—**श्रुतेरिवार्थं** &c., the poet refers to the doctrine that the Sm*r*itis contain such injunctions only as the S'rutis originally laid down. If a Sm*r*iti has a precept which finds no authority in the Veda, the difficulty is explained by having recourse to a supposition, that the portion of the Veda which once authorized the Sm*r*iti in question is now extinct. *Cf.* Manu II. 10. "श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः। ते सर्वार्थेष्वमीमांस्ये ताभ्यां धर्मो हि निर्बभौ"। Sm*r*iti is also stated as, "अनुमेयश्रुतिमूलं मन्वादिशास्त्रं"। 'the laws of Manu and others whose source is a revelation the existence of which must be inferred.' Kumârila observes "शाखानां विप्रकीर्णत्वात्पुरुषाणां प्रमादतः। नानाप्रकरणस्थत्वात्स्मृतेर्मूलं न दृश्यते"। And again "पूर्वविज्ञानविषयं विज्ञानं स्मृतिरुच्यते। पूर्वज्ञानाद्विना तस्याः प्रामाण्यं नावधार्यते"। *Cf.* Jábáli, "श्रुतिस्मृतिविरोधे तु श्रुतिरेव गरीयसी। अविरोधे सदा कार्यं स्मार्तं वैदिकवत्सता"। Also Jaimini, "विरोधे त्वनपेक्षं स्यादसति ह्यनुमानं" S'ábarabháshya I. 33. Vallabha observes, "वेदाधिरूढो ह्यर्थः स्मृतिषूक्तः". The simile of this verse is not so very happy. Pandit says, 'It is not very easy to see what the appropriateness of the simile is here. Notwithstanding the proverbial appropriateness of our poet's similies, one may yet venture to state that now and then he uses similes which seem to be objectionable on this ground that the object to which any thing is compared is less intelligible or vivid than the thing itself. We shall meet with many more in-

stances of this kind of simile further on. '—अपांसुलानां. Note here that the affix ल (लच्) denotes ' possession. ' *Cf.* अंसल, मांसल &c.

P. 37. St. 3.—दयितां, ' his beloved,' ' his queen.'—पयोधरीभूत Mark the double meaning of the word पयः, which means 'water,' as well as 'milk.' In its other acceptation analyse, पयसा इन्धेन अन्यत्र जलेन अधरीभूताः तिरस्कृताः । पराजिता इत्यर्थः । चत्वारः समुद्रा यस्यास्तादृशीं धरित्रीं &c. —गोरूपधरां, Formerly the king Anga had a son named Vena; when he came to the throne he issued this proclamation ; ' Men must not sacrifice or give gifts or present oblations. Who else but myself is the enjoyer of sacrifices ? I am forever the lord of offerings.' The sages remonstrated respectfully with him, but in vain ; they admonished him in stronger terms ; but when nothing availed, they slew him with blades of consecrated grass. After his death the sages beheld clouds of dust, and on inquiry found that they arose from bands of men who had taken to plundering because the country was left without a king. As Vena was childless, the sages, after consultation, rubbed the thigh (or, according to the Hari-vansa, the right arm) of the dead king to produce a son. From it there came forth " a man like a charred log, with flat face and extremely short. " The sages told him to sit down (Nishida). He did so, and thus became a Nishâda, from whom sprang the Nishâdas dwelling in the Vindhya mountains, distinguished by their wicked deeds. ' The Brâhmanas then rubbed the right hand of Vena, and from it " sprang the majestic Prithu, Vena's son, resplendent in body, glowing like the manifested Agni." *Cf.* Ku. I. 2. " भास्वन्ति रत्नानि महौषधीश्च पृथूपदिष्टां दुदुहुर्धरित्रीम् " । —दयालुः. Here the termination आलु (आलुच्) shows 'disposition' or 'tendency,' as निद्रालु, श्रद्धालु ; but sometimes it shows ' inability to bear,' as in उष्णालु, शीतालु &c., the affix एलु (एलुच्) has also a similar sense. *Cf.* हिमेलु.

P. 37. St, 5.—अव्याहतैः स्वैरगतैः, ' by unimpeded rovings at will, ' analyse स्व+ईरम्, the vowel takes Vriddhi by the *Vârtika* "स्वादीरेरिणोः,"—सम्राट्, explain " सम्यग्राजते इति सम्राट्, " ' a paramount sovereign, ' especially one who rules over vassal kings and has spread the Râjasûya sacrifice. *Cf.* येनेष्टं राजसूयेन मण्डलस्येश्वरश्च यः । शास्ति यश्चाज्ञया राज्ञः स सम्राडभिधीयते " इत्यमरः । This authority of Amara is omitted by the Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary ; but preserved by the Northern Mss.

P. 38. St. 6.—आसनबन्धधीरः, ' Sticking fast to the tie of his seat,' i. e. sticking fast to his seat as if he had been tied to it. The

original sense of "धीर" appears clearly in this phrase; the other senses of this word are metaphorical.—निषेदुषीम्, here the perfect participle is used in the sense of the Aorist. Properly it ought to be used in the sense of the perfect tense, but such deviation is frequently found in Kâlidâsa's poem. *Cf.* तं तस्थिवांसं नगरोपकण्ठे; " "श्रेयांसि सर्वाण्यधिजग्मुषस्ते" &c.—छायेव तां &c., the simile here is very appropriate. Compare Châritravardhana: "छायाप्युक्तलक्षणा लौकिक्युपमा तेन भेदोऽपि नास्ति। यदाह वामनः। "न लिङ्गवचने भेदो लौकिक्यामुपमायां"।

P. 38. St. 7.—अन्तर्मदावस्थः. On this epithet Vallabha quotes the following: "भद्रो मन्दो मृगश्चेति संकीर्णश्चेति जातयः। चतस्रः करिणां तासां भद्रोऽन्तर्मद एव यः"। —द्विपेन्द्र इव, 'like an elephant, the king of his race.' Indra is added to enable the word द्विप to be better comparable with Dilîpa, who was himself a मनुजेन्द्र. द्विप, 'one who drinks with two,' *viz.* first with the proboscis and then with the mouth. *Cf.* अनेकप.

P. 38. St. 8.—लताप्रतानोद्ग्रथितैः, 'with his hair tied up into a knot by means of the tendrils of wild creepers.'—दावं 'the forest.' It may also mean forest-conflagration.

P. 39. St. 9—विसृष्टपार्श्वानुचरस्य, *Cf.* above 4. II.—पार्श्वानुचर, is a follower or servant, 'who walks by the side.' पार्श्व appears to be derived from पर्शु, a 'rib.' पर्शु or परशु is also 'a hatchet,' which sense it probably acquired from a sharp croocked rib-bone being once used as a hatchet.—पाशभृता, On this Châritravardhana observes, "असतां नियमनात्." The Northern Mss. of Mallinâtha's commentary cite the following authority, "प्रचेता वरुणः पाशी" इत्यमरः and also "आलोको जयशब्दः स्यात्" इति विश्वः। But the Southern and the Deccan Mss. omit these verses.—उदीरयामासुः, *Cf.* Châritravardhana "एतेन सेवाचाटूक्तिः"। —आलोकशब्दम्, here आलोक means a formula of praise; आलोकशब्दः is a noise which conveyed as it were a panegyric. *Cf.* Vallabha: "आलोकस्य दर्शनस्य शब्दः आलोकशब्दस्तं। जय जीवेत्यालोकशब्दः। जय जय महाराज प्रभो स्वामिन् पादमवधार्यताम्" इति आलोकशब्दः। In the lustrous appearance of his body he resembled Varu*n*a, the god of waters. His bow too duly strung, passed for Varu*n*a's noose. The trees, it seems, mistook him for Varu*n*a, and the birds they had given shelter to, carolling aloud in joyous excitement, did, though unconsciously, what Dilîpa's attendants would have done, *viz.,* shout forth, 'Victory to the king Dilîpa; lo! here comes he.'

P. 39. St. 10.—मरुत्सखाभं, Châritravardhana analysing the word like Mallinâtha, has, "यद्वा। मरुतां देवानां सखा इंद्रस्तत्तुल्या आभा

तेजो यस्य तं तथोक्तं." Here Châritravardhana observes, " युक्तं महत्त्वस्य मंगलप्रेरणमिति छाया. "—आरादभिवर्तमानं, 'As they saw him coming up at a distance.'—आचार°. On this Vallabla remarks, " पुरप्रवेशे हि राजा कुमारीभिः (लाजाप्रक्षेपणैः) अवकीर्यते " इत्याचारः. It is a custom among the Aryas to shower fried grain upon a king or other important personage as a mark of honour (as, when he passes through the streets of his capital). All forms of honour due to a king were shown to Dilîpa, although he was in the guise of a forester. Not only did the trees on the way-side do duty for a shouting retinue, but young creepers also, under the sway of the wind plucking their flowers, acted the part of citizen damsels showering fried grain. Methinks the firy glow of Dilipa made Wind mistake him for his friend Fire, and when Dilipa, so worthy of honour, came sufficiently near for the purpose, the young creepers, urged by the Wind, hastened to honour his distinguished guest and friend with showers of flowers, much the same as showers of fried grain from the hands of citizen damsels.

P. 39. St. 11.—दयार्द्रभावमाख्यातमन्तःकरणैर्विशङ्कैः, On this epithet Vallabha observes, " विमलं कलुषीभवच्च चेतः । कथयत्येव हितैषिणं रिपुं च । न मृगं खलु कोऽप्ययं जिघांसुः । स्खलति ह्यत्र तथा भृशं मनो मे."—धनुर्भृतोऽपि, Châritravardhana explains it as धानुष्कमप्येनं दृष्ट्वा चेतसां निर्भयत्वेन कृपालुत्वं ज्ञायते इत्यर्थः । " चित्तमेव कथयत्यनुरागं " इति.—वपुः explain. उप्यन्ते जन्मान्तरभोगसाधनानि बीजान्यत्रेति वपुः, derived from the root वप्, 1 P. A. 'to sow seeds,' with the affix उसि. This affix is deduced from " अर्तिपृवपियजितनिधनितपिभ्यो नित् " U*n*âdi Sûtra, 274. S. K. p. 328. Construe, दयार्द्रभावमिति विशंकैरन्तःकरणैराख्यातं वपुः विलोकयन्त्यः &c., analyse अन्तःकरण, अन्तर्गतानि करणानि इति, मध्यपदलोपी कर्मधारयः । or अन्तः अन्तःस्थितो जीवस्तस्य करणानि इति षष्ठीतत्पुरुषः.—विलोकयन्त्यः. The rows of eagerly gazing eyes are fixed upon the king, when going after the sacred cow of the sage.—अक्ष्णाम् , explain, अश्नुते आनोतीति अक्षि, derived from the root अश् , 5. A. with the affix क्सि from " अशेर्नित . " U*n*âdi Sûtra, 52. S. K. p. 321.—°फलमापुः, Châritravardhana observes " अतिसौन्दर्यात्. "

P. 40. St. 12.—वनदेवताभिः Châritravardhana remarks " राज्ञो महानुभावतया वनदेवता यशो गायन्ति स्म इत्यर्थः. " The driads or wood-nymphs played the part of eulogizing minstrels.

P. 40. St. 13.—आचारपूतं, 'who was purified by his devotional acts.'—सिषेवे. Châritravardhana observes, " वृक्षादयो राज्ञोऽपचारं चक्रुः . " The wind was both cool and fragrant, and the word आकम्पित shows that it was gentle to boot. The first epithet of Dilipa expresses his

need and the second his want of refreshing agencies, while the third establishes his title to ministration even by the purifying element पवन. Pavana himself fanned him and was in charge of his perfumery.—अनोकहा°, explain, अनसः शकटस्य अकं गतिं इन्तीति. It means 'a tree.'

P. 41. St. 14.—न बबाधे, Sumativijaya observes, "एतेन राज्ञो महापौरुषत्वमुक्तं."

P. 41. St. 15.—दिगन्तराणि. 'The quarters of the world,' *i. e.*, all the space contained within the forest and the universe in which the cow and the sun had respectively wandered during the day. —गन्तुं प्रचक्रमे &c., *i. e.* the cow began to return home as the sun was going to set.—निलयाय, means 'to the house,' when applied to the cow, and 'for setting' or 'disappearance,' when applied to the Sun.

P. 41. St. 16.—तामन्वग्ययौ, 'went after her,' *i. e.* followed her. अन्वक्, an indeclinable, governs तां.—मध्यमलोकपालः, on this epithet Châritravardhana quotes the following, "भुवो मध्यमत्वं तु स्वर्गपातालापेक्षया । उक्तं च वासवदत्तायां । अवततार मध्यमलोकमंशुमाली." This earth of mortals is called मध्यमलोक because it is said to be situated between the Svarga above and Pàtála below.—श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपपन्ना, 'Like faith visibly present (साक्षात्), when accompanied by the performance of religious works.' विधि is properly a scriptural precept, *i. e.* विहितकर्मादिकरणं. Some scholars interprete विहितकर्मादिकरण by 'direction for the performance of a rite as given in the Brâhma*n*a portion of the Veda, which consists of three parts, *viz.*, विधि or commandment, मंत्र or the instrument of thought, *i. e.* the text, and अर्थवाद, explanatory statements, as to the origin of rites and use of the Mantras, mixed up with legends and illustrations.' But this explanation of Mîmânsâ is unnecessary here. On the simile see note on 2. II. above.

P. 42. St. 17.—स पल्वलोत्तीर्ण &c., Mallinâtha understands that the obscuration of the forests was caused by the dark colour of the boars, the peacocks and the deer. This explanation is unnecessary. The woods darkened up with the shadows of evening. Almost all commentators agree with Mallinâtha in their explanations of the verse. *Cf.* R. IX. 56. "श्यामीचकार वनमाकुलदृष्टिपातैः"

P. 42. St. 18.—आपीनभारोद्वहनप्रयत्नात्, 'On account of her effort to bear the burden of her udders.' आपीन may have meant originally the udder, as it is fattened on all sides.—तपोवनावृत्तिपथं, 'The way by

which they returned from the sacred forest to the hermitage. ' तपस् has no particular force in तपोवन here, except that of sacredness. All that the poet meant seems to have been, that the forest into which Dilipa followed Vashishtha's cow, was one of those sacred places, which, the sages might use as their habitations, not implying however, that that particular forest was actually used then for such purposes.—**गृष्टिः**, A cow which has had only one calf.

P. 43. St. 19.—**निमेषालसपक्ष्मपङ्क्तिः**, Vallabha explains it as, "निमेषेषु अलसा मन्थरा पक्ष्मपङ्क्तिः अक्षिलोममाला यस्यास्सा."—**पपौ**, Châritravardhana observes. " सादरमालोकनं पानमुच्यते. "

P. 43. St. 20.—**दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या.** The king representing the blaze of day, and the queen the softness of night, the three resembled night at the head with evening and day in the rear, *i. e.* the poet compares the bright lustre of the king to the brightness of the day, and the soft beauty of the queen to the star-fangled night decorated by the moon; and the tawny colour of the cow to the reddish and rosy appearance of the twilight. *Cf.* Châritravardhana, " धेनोरपि लोहितत्वात् । समासे लिङ्गभेदात्प्रतीतेर्दिनशब्दस्य नोपमादोषः । यदाह । इष्टः पुंनपुंसकयोः प्रायेण " इति. सन्ध्या is defined as " अहोरात्रस्य यस्सन्धिः सूर्यनक्षत्रवर्जितः । सा च सन्ध्या समाख्याता " &c.

P. 43. St. 21.—**प्रदक्षिणीकृत्य**, analyse, प्रगता दक्षिणामिति प्रदक्षिणम्, Prâdi compound, and then च्वि.—**पयस्विनी**, analyse, पयोदुग्धमस्यास्तीति पयस्विनी तां तथोक्तां.—**साक्षतपात्रहस्ता**, 'taking in her hand a vessel containing Akshatas,' *i. e.*, entire grains of unhusked and pounded rice washed with water. 'अक्षता' means grains of unhusked and pounded rice, entire and washed with water; they form one of the several things, the offering of which with Mantras uttered, constitutes worship. Whether offered to an image or to a living object, they are always thrown on the image or the particular parts of a living object, that is worshipped. Therefore in the present case 'अक्षताः' does not stand for 'barley' given to the cow to eat, but simply forms part or whole of the provision of worship. Whatever may have been the original purpose for which such rice was offered to an image, the above is the sense in which the word 'अक्षता ' is understood in India, both as occuring in the present verse as well as every where else. *Cf.* " अक्षताश्च यवाः प्रोक्ताः, " also " अक्षतैर्नार्चयेद्विष्णुं. " This word is used only in the plural; हस्त is derived from the root हसु 1. P. with affix तन्. *Cf.* " हसिमृग्रिण्वामिदमिलूपूधुर्विभ्यस्तन्. " Unádi Sútra, 366. S. K. p. 331.—**शृङ्गान्तरमर्थसिद्धेर्द्वारम्** &c, On this epithet Cháritravar-

dhana remarks "तदर्चने पुत्रलाभभावात्." The horns resembled pillars on either side of the door that led to the fulfilment of her object.

P. 43. St. 22.—**वत्सोत्सुकापि,** 'though anxious for her calf.' Explain "वदति स्नेहमाहात्म्यमिति वत्सः" derived from the root वद् 1. P. 'to speak' with the affix स. *Cf.* "वृतॄवदिहनिकमिकषिभ्यः सः." U*n*âdi Sûtra, 342. S. K. p. 330.—**सपर्याम्,** derived from the root सपर् or सप्. 1. P. Ved. 'to worship' or 'to honour' with the affix यक् and अस्. *Cf.* Pànini, III. 1. 27. "कण्ड्वादिभ्यो यक्."—**प्रसादचिह्नानि,** 'Indications of their being pleased with the worshipper.'—**पुरः फलानि,** 'having the fruit before them,' *i. e.* the reward of their service conspicuously before them. This means, that as soon as indications are seen that "venerable objects of the kind," are gratified with the worship, its reward is sure to follow the indications.

P. 44. St. 23.—**सदारस्य,** The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâlha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. "भार्या जायाथ पुंभूम्नि दाराः" इत्यमरः ।—**पुनरेव**=अन्ययोगव्यवच्छेदे, seems simply to mean "पुनरपि," 'a second time also.' Our scholiast takes एव with दोग्ध्रीं not for the better.—**भेजे,** *viz.* 'by providing her with palatable grass, rubbing over her back &c.'—**भुजोच्छिन्नरिपुः,** analyse "भुजाभ्यां बाहुभ्यां उच्छिन्नाः उन्मूलिता विनाशिता वा रिपवः शत्रवो येन स तथोक्तः."

P. 44. St. 24.—**क्रमेण सुतामनु,** there is no rhetorical error of repetition in the use of the words क्रम and अनु having the same meaning in the same sentence. Because the word क्रम shows the succession of actions of the cow herself, while अनु denotes that of the actions of both the cow and the king. See commentary.

P. 44. St. 25—**महिष्या** &c., the word महिषी is derived from the root मह् 1. P. 'to honour.' 'to revere' &c. with the affix टिषच्. *Cf.* "अविमह्योष्टिषच्." U*n*ádi Sútra, 45. S. K. p. 321.—**त्रिगुणानि,** 'three-fold'. गुण means 'a string'; hence, that part of a string, which forms its *fold* when doubled. Thus त्रिगुण means 'having three folds,' 'three-fold.'—**महनीयकीर्तेः,** On this epithet Châritravardhana observes "क्लेशसहिष्णुत्वात्".

P. 45. St. 26.—**अन्येद्युः,** 'in the following day,' on the 22nd day; not "*on a day*" as some scholars suppose. *Cf.* Pànini V. 3. 22. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinàtha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss., "अथात्राह्नाय पूर्वेद्युरन्येद्युः पूर्वोत्तरापरात् । तथाधरान्यान्यतरेतरात्पूर्वेद्युरादयः" इत्य-

मर: । —विरूढशष्प, On this. Châritravardhana observes, " विरूढशष्पं तत्र गमनहेतु:. "—गह्वरम्, derived from the root गाह् 1. A. ' to enter ' with the affix ष्वरच्. It was no matter of wonder and it aroused no suspicion in the king's mind that the cow entered it.—गौरीगुरो:, The father of Gaurî (Pàrvatî) that is, the mountain Himàlaya.

P. 45. St. 27.—अद्रिशोभा ' beauty of the mountain ' *i. e.,* the Himàlaya. The word अद्रि is derived from अद् 2. P. with the affix क्रिन्. *Cf.* " अदिशदिभूशुभिभ्य: क्रिन्. " U*n*àdi Sûtra, 504. S. K. p. 334. Some derive it from the root दृ with the negative prefix अ, *viz.* अ ' not ' and दृ ' to split,' ' not liable to be split.'—सिंह:. Chàritravardhana derives it as, " हिनस्ति मारयतीति सिंह: । तृहहिंसिहिंसायामित्यस्य प्रयोग: । हिंसेर्वर्णविपर्यय:." *Cf.* also " भवेद्वर्णागमाद्धंस: सिंहो वर्णविपर्ययात् । गूढोत्मा वर्णविकृतेर्वर्णलोपात्पृषोदरं. "—किल, The word expresses a feigned action. Hence चकर्ष किल means ' feigned to drag. '

P. 46. St. 28.—आर्तसाधो:, ' kind to the distressed. ' *i. e.* dutifu to the distressed.—गुहानिबद्धप्रतिशब्ददीर्घम्, ' prolonged by echoes confined in the cavern.' On this epithet Châritravardhana remarks, " इत्यन्यचित्तस्याप्याकर्षणहेतु: "—रश्मिष्विवादायेव, ' pulling with ropes as it were.' On this Sumativijaya remarks, " ल्यादृदाने चतुर्थी स्याद्दर्शने कथनेऽपि च । आदायकरणे योगे सप्तमी कैश्चिदुच्यते. " Châritravardhana too observes the same and says, " यथा प्रग्रहै: कश्चित्पुरुषो घोटकायन्यतो यातमाकृष्य निवारयति तथा गोक्रांदितं राज्ञो दृष्टिं निवारितवादिति भाव:. " रश्मि is derived from the root अश्, 5. A. with the affix मि; the अ of this root is changed to र by " अश्नोते रश्च. " U*n*àdi Sûtra, 485. S. K. p. 334.

P. 46. St. 29.—अधित्यकायाम्. On this epithet Chàritravardhana remarks, " सानुमतो ग्रहणेन पौनरुक्त्यं तथा च भट्टिकाव्ये । " समुद्रोपत्यका हैमी पर्वताधित्यका पुरी. "—लोध्रद्रुमं, On this Chàritravardhana observes, " केसरिपदेन प्रफुल्लत्वात्साम्यं. " द्रुम is explained as द्रवन्त्यूर्ध्वं गच्छन्तीति द्रु:, ' a branch, ' द्रव: सन्त्यस्यासौ द्रुम:, derived from द्रु with the affix म: by " द्युद्रुभ्यां म:. " Pà*n*ini, V. 2. 108.

P. 46. St. 30.—जाताभिषंग:, ' being thus humbled in his pride, ' ' humiliated. ' *Cf.* Sumativijaya : " अथोऽजाताभिमाननिकृति: सञ्जातत्रकोप:."—नृपति:, On this Châritravardhana observes: " एतेन सामर्थ्योक्ति:."—निषङ्गात्, explain " नितरां सज्यन्ति अस्मिन् शरा इति निषङ्ग:, " derived from the root सञ्ज् with नि and the affix घञ्.

P. 47. St. 31.—चित्रार्पितारंभ इव, ' like an action committed, as it were, to painting.' The poet means that Dilipa, with his hand held fast involuntarily to the root of the arrow, looked like a picture and not a reality—so motionless was he, through the action of a superhuman will. आरंभ is frequently used by Kàlidàsa

in the sense of doing or act. *Cf.* R. I. 15. Meghadûta, 55.—°कङ्कपत्रे • Warriors of ancient times used to furnish their arrows with heron's feathers in order that the arrows might dart swiftly.

P. 47. St. 32.—स्वतेजोभिरदह्यत, On this Châritravardhana observes: "अधिक्षेपात्समानादेः प्रयुक्तस्य परेण यत् । प्राणत्यागेऽप्यसहनं तत्तेजः समुदाहृतम् " इति भरतः.—भोगीव मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः, Pandit says 'Referring to the common belief that it is by virtue of the incantations and the using of the root of certain plants, which is supposed to be a specific against snake-poison, that the cobra is made by snake-charmers to stand still, involuntarily, as it would appear, balancing in the air the fore-part of his body. The secret would appear to lie in the music of the flute, of which the snake is wonderfully fond, and in the natural unwillingness of the reptile to attack any one without provocation. It is quite a fact, however, that a cobra can actually be reduced to the somewhat helpless condition to which the poet alludes.'—आगस्कृतम्, explain सहसा एति आगच्छतीति आगः derived from इ with the affix असुन्. *Cf.* "इण आगोऽपराधे च," Unâdi Sûtra, 651. S. K. p. 338.—अभ्यर्णे, 'standing very near.'

P. 47. St. 33.—आर्यगृह्यम्, 'Friendly (or an ally) to the good' *i. e.* he who always stood by the venerable, such as Vasish*t*ha's cow in the present example. Compare Châritravardhana: "आर्यगृह्यत्वं सिंहसमानबलत्वं च संभाषणहेतुः." *Cf.* a similar compound, अर्जुनगृह्य of the side of Arjuna, &c. compare also, "वृत्तेन हि भवेदार्यो न धनेन न विद्यया."—मनुवंशकेतुम्, 'The standard or the foremost of the race of Manu.'—विस्माययन्, *Cf.* Pâ*n*ini I. 3. 68. "भीस्म्योर्हेतुभये." After the causatives of the verbs भी 'to fear', स्मि 'to wonder,' even the fruit of the action accrues not to the agent, the Atmanepada is employed, when the fear is produced directly by the causative agent. Here the amazement or wonder is caused by the instrumentality of मनुष्यवाच् and not directly by सिंह, and so there should be विस्माययन् instead of विस्मापयमानः. Durgâdâsa explains the reading "विस्मापयन्" in the following way: "विस्मापयते इति विस्मापः", "विस्मापं करोतीति विस्मापि," (a denominative form). And hence the present participle विस्मापयन्. The reading विस्मापयन् adopted by Châritravardhana, Vallabha, Sumativijaya and others cannot at all be used.—अस्मवृत्तौ, Châritravardhana explains it by "क्षात्रकर्मणि."—निजगाद, 'addressed.' The preposition नि here possesses no special meaning. It would appear to be used merely for the sake of metre. The prepositions, in general, being similarly treated in Sanskrit, the bulk of whose literature is written in verse, have come almost to lose their meanings.

P. 48. St. 34.—**तव भ्रमेण**. Some scholars hold that भ्रमेण has the case instrumental and is connected with the verb साध्य which transpires from अलम् which expresses शक्ति. See commentary.—**स्यात्**, the potential, because another potential or contingent action underlies " प्रयुक्तमपि, " as this is equal to " यद्यप्यस्त्रं प्रयुञ्ज्याः "—**रंहः** derived from the root रम् 1. A. 'to remain,' 'stay,' 'pause,' with the affix असुन्. *Cf.* " रंहेश्च " Unâdi Sûtra, 653. S. K. p. 338. Dhâtupradipa derives it from the root रह् with असुन्, because it gives the following Sûtra " सर्वधातुभ्योऽसुन्. "—**मूर्छति**, 'to prevail against,' 'to have power against,' *Cf.* R. VI. 9. IX. 79. XII. 57.—**महीपाल**, derived from मह् 1. P. 'to be great,' 'to increase,' 'to gladden,' &c., with the affix इन्. *Cf.* "महतिः स्यात् पूजायां दीप्तौ मंहयतिर्भवेत् । वृद्धौ तु मंहते पूजासमाने महयत्यपि. "

P. 48. St. 35.—**अष्टमूर्तेः**, *Cf.* the benedictory stanzas of the S'ákuntala and the Mâlavikâgnimitra. They are, " जलं वह्निस्तथा यष्टा सूर्याचन्द्रमसौ तथा । आकाशं वायुरवनी मूर्तयोऽष्टौ पिनाकिनः "—**निकुम्भमित्रं**. It is not clear whether this निकुम्भ is the son of Kumbhakarna or one of the class of celestial beings to which कुम्भोदर himself belongs. In the former case निकुम्भमित्रं would mean 'like (in strength) to निकुम्भ.' *Cf.* Châritravardhana: " निकुम्भो गणभेदः कुम्भकर्णपुत्रो वा. " Also Vallabha: " निकुम्भेन पार्वतीवाहनेन सिंहेन तुल्यो निकुम्भतुल्यस्तम्. " *Cf.* Harivans'a, " पार्श्वे तिष्ठन्तमाहूय निकुम्भमिदमब्रवीत् । राक्षसेन पुरीं गत्वा शून्यां वाराणसीं पुरीं. "

P. 49. St. 36.—**अमुं** &c., Pandit says: 'Some commentators take the first Pâda to be a question. It does not, however, appear quite necessary, especially as in Sanskrit interrogatory sentences are generally indicated by interrogative particles, and as Kumbhodara merely wishes to call attention to the Devadâru, which can be done without a question as well.' I have with me seven commentaries besides that of Mallinâtha; but none of these commentators interprete the first pâda interrogatively. Only three commentators including Mallinátha, have, at the end of the explanation of the first line इति काकुः, which means 'emphasis or stress &c.'—**स्कन्दस्य**, explain, " स्कन्दनात्पतनात्कङ्ग्रायामिति स्कन्दः. " *Cf.* " स्कन्नत्वात्स्कन्दतां प्राप्तो गुहावासाद्गुहोऽभवत्. " On this epithet Châritravardhana remarks: " स्कन्दमातृग्रहणेन कार्तिकेयसाम्यं. "—**वृषभध्वजेन**. The word वृषभ is derived from वृष् 1. P. 'to strive,' 'to hurt' with the affix अभच्. *Cf.* " ऋषिवृषिभ्यां कित्. " Unâdi Sútra, 403. S. K. p. 332. Skanda has known the taste of his mother's milk (पयः) issuing forth from her breast, which resembles a golden jar. The Devadâru tree also has received waters (पयांसि) flowing out of her gold-

on pitchers, her breast as it were. The Devadâru tree thus is as much her child as Skanda himself.

P. 49. St. 37.—**आलीढं**, literally, 'licked out,' hence bitten or wounded. Châritravardhana translates it by "व्यात्तं."

P. 49. St. 38.—**त्रासार्थं**, 'For the purpose of scaring away.'—**व्यापारितः**, On this epithet Sumativijaya remarks: "मम समीपे ये जीवा आगच्छन्ति तान्भक्षित्वा जीवामि इति भावः."—**अद्रिकुक्षौ**, the word कुक्षि (*lit.* belly) here means 'interior.'—°अङ्क° here means 'proximity,' 'vicinity.'

P. 50. St. 39.—**तस्य** &c., Construe "तस्य क्षुधितस्य मे तृप्तै परमेश्वरेण प्रदिष्टकाला उपस्थिता एषा शोणितपारणा अलम् चान्द्रमसी सुधा सुरद्विष इव." Vallabha takes अलम् to be an adverb qualifying क्षुधितस्य, and उपस्थिता as the predicate. *Cf.* "हे राजन् तस्य मे मम। एषा गौः शोणितपारणा उपस्थिता। शोणितशरीरवृत्तिः प्राता। रुधिरदेहयात्रा अपतत्। किमर्थं। तृप्त्यै तृप्तिहेतवे। किंभूतस्य मे अलमत्यर्थं क्षुधितस्य। किंभूता गौः। परमेश्वरेण संदिष्टकाला विधिनोपदिष्टमरणवेला। देवेन प्रेरिता" इत्यर्थः &c., are his comments. पारणा is a dinner or a feast after the end of a fast, as, for example, the first dinner on the twelfth lunar day of each half of a month, the previous day being a day of fast. *Cf.* ब्रह्मवैवर्तपुराण, "पारणं पावनं पुंसां सर्वपापप्रणाशनं उपवासाङ्गभूतश्च फलदं शुद्धिकारणं."—**प्रदिष्टकाला**, *Cf.* Châritravardhana "कालोऽवसरो मृत्युर्वा यस्याः सेयं शोणितपारणा उपोषितस्य भोजनं तृप्त्यै अलं पूर्णा."—**सुरद्विषः**, the root द्विष् takes शतृ or the present participle termination (Parasmai.) when it only expresses enmity. As, सुरद्विषन् and not पितरंद्विषन्. In the latter case it will be पितरं द्वेष्टि.—**चान्द्रमसी सुधेव**, *i. e.*, 'the moon herself.' The enemy of the gods (*i. e.* राहु) also gets his meal-after-fast at long intervals, *i. e.* his fasts last very long, because eclipses of the moon do not occur every day. The word सुधा alludes to the legend of the churning of the nectar out of the ocean and the betrayal of राहु and केतु by the moon and the sun. On this verse Châritravardhana quotes the following: "भोजनहेतुत्वाद्वैरेव पारणादिष्टमृत्युरिति कश्चित्."

P. 50. St. 40.—**स त्वं** &c., 'thou, thus circumstanced,' 'thou who art thus made helpless,' '*thou therefore.*'—**शस्त्रेण** &c., Construe: "यद्रक्ष्यं शस्त्रेण अशक्यरक्षं तद् (रक्ष्यं) शस्त्रभृतां यशो न क्षिणोति." 'that a thing to be protected is of impracticable protection by means of weapons —this does not impare the reputation of wielders of arms.' रक्ष्य is 'any thing given in the charge of a man for protection.' *Cf.* "यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः."

P. 50. St. 41.—**पुरुषाधिराजः**, Châritravardhana analyses : "अधिको राजा अधिराजः प्रादिसमासः । पुरुषाणामधिराजः पुरुषाधिराजः."—**गिरिशप्रभावात्**, Châritravardhana analyses: गिरिरस्यास्तीति "लोमादिभ्यश्छः" अथ वा गिरिं श्यति उपभोगेन तनूकरोतीति । शोतनूकरणेऽस्माद्धातोरातोनुपसर्गे कः" । "गिरौ डश्छन्दसि" इति छान्दसाभिभाषायां प्रयुज्यन्ते आशुषु क्षणिवदिति क्षीरस्वामिनोक्तत्वात्." It may also be analysed thus "गिरौ शेत इति."—**प्रगल्भ**, *Cf*. Ku. V. 30. "अथाजिनाषाढधरः प्रगल्भवाग्ज्वलन्निव ब्रह्ममयेन तेजसा."

P. 51. St. 42.—**तत्पूर्वसङ्गे वितथप्रयत्नः** &c. Unsuccessful in his effort to discharge an arrow, which (effort) then for the first time knew what hinderance was. ' Châritravardhana, Vallabha, Sumativijaya and Dinakara agree in their reading with Mallinâtha and Châritravardhana explains it in the following way: "स एव पूर्वः सङ्गोऽसामर्थ्यं यस्य तादृशे इषुप्रयोगे." Vallabha has "तदेव पूर्वसङ्गो रोधो यस्य स तस्मिन्" &c. Four manuscripts of Mallinâtha's commentary read तत्पूर्वभङ्गे &c., the reading does not appear preferrable because भङ्ग means ' discomfiture ' or ' defeat '; while, at the time of discharging the arrow, Dilipa's hand was held fast to the root of the arrow by some unknown supernatural power; and the king never sustained any defeat in his duty to protect the cow. See readings.—**इषु** derived from the root ईष् 1. A. ' to strike,' 'to hurt &c.,' with the affix उः, explain "ईषते हिनस्तीति इषुः." *Cf*. "इषेः किच्च." U*n*âdi Sûtra, 13. S. K. p. 320. Here the vowel of the word is shortened by the above Sûtra.—**वज्रपाणिः** &c., The three cities (आयसं राजतं सौवर्णं च) in the sky of the oppressive demons त्रिपुर were, at the request of the gods, burnt down by S'iva, who, in the form of a child in Pârvatî's arms, proceeded to witness the burning. Indra, unable to endure the child's splendour, thought of discharging his thunderbolt, but he was benumbed by a glance of the child. The gods, with Brahmá at their head, hastened to propitiate S'iva by interceding in Indra's behalf. From this time, it is said, that Indra received the epithet of *Vajrapâni or* Vajrahasta.

P. 51. St. 43.—**हि**, ' because ' though the usual sense of the partical is ' for. '—**भवान्वेद**, *i. e.*, thou seest that my object is not to overreach thee with false professions.

P. 52. St. 44.—**सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुः**, this attribute is here applied to S'iva in imitation of the usual way in which a devotee or a worshipper praises his own particular deity, howsoever inferior in the theogony of his religion. The proper part of S'ankara as represented by Purâ*n*as is प्रत्यवहार ' universal destruction'. And the first two respectively given to Brahmá and Vish*n*u.—**अपि** is

equivalent to ‘as—so,’ *Cf.* “ देवदेवस्यादेशो यथा पालनीयो गुरोरपि गोधनं तथा रक्षणीयं.”

P. 52. St. 45.—**सत्वं**, ‘thou therefore.’—**शरीरवृत्ति**, the word शरीर is derived from शॄ 9. A. with the affix ईरन्, explain “शीर्यते इति शरीरं.”—धेनुः, derived from धे 1. P. ‘to suck’ with the affix नु, explain “धयति तामिति धेनुः.”—**विसृज्यतां**, Châritravardhana remarks, “उत्सुकबालवत्सत्वेन द्वयोरपि नाशः सूचितः.”

P. 52. St. 46.—**गिरिगह्वराणामन्धकारं शकलानि कुर्वन्.** A very odd, but quite a pregnant construction. The poet means to say that when the lion opened his mouth to smile, the rays of light shooting from his snow-white teeth shone forth and split into pieces the total darkness of the cave, which was so thick as to be like a mass of lampsoot, that is the glowing appearance of his teeth shining in the midst of darkness, seemed to divide it into so many portions. The explanation of our scholiast, “निरस्यन्नित्यर्थः” is not so lucid. The poet's language would have been more apparent, though certainly less expressive, had he but said “अन्धकारं शकलीकुर्वन्.”—**दंष्ट्रामयूखैः**, explain “दश्यते अनया इति दंष्ट्रा” derived from दंश् 1. P. with the affix ष्ट्रन् (करणे). मयूख is derived from the root मा with the affix ऊखः, *Cf.* “माङ ऊखो मयश्च” U*n*âdi Sûtra, 703. S. K. p. 339.

P. 53. St. 47.—**एकातपत्रं**, ‘because there was no rival to king Dilipa, who could enjoy the use of the white imperial umbrella, *i. e.* showing universal sovereignty. Explain, “आतपात्त्रायते यत्तदातपत्रं” derived from the root त्रै 1. A. with the prefix आतप and the termination क.—**जगतः प्रभुत्वं**, On this Châritravardhana observes, “भूपान्तराभावात्.”—**वयः** derived from the root वी 2. P. ‘to go apart,’ with the affix असुन्. *Cf.* ‘वयः कालकृतावस्था.’—**अल्पस्यहेतोः**, ‘For the sake of a trifle.’ In this sense of the phrase हेतु is used in all cases except the nominative and the vocative.—**बहु**, ‘the universal or greater good.’ *Cf.* Vallabha: “सार्वभौमत्वादनेकान्यूत्कृष्टानि वस्तूनि त्यक्तुकामः। प्राज्ञो हि तुच्छं त्यजन् बहु जिघृक्षति इति विचारमूढस्त्वं.”

P. 53. St. 48.—**स्वस्तिमती**, ‘saved’, *lit.* ‘possessing well-being’ or ‘safety.’ This is an instance of the affix मतुप् being used after an indeclinable or अव्यय. Vallabha remarks: “स्वस्तिशब्दोऽयं श्रेयार्थः.” —**जीवन्पुनः**, ‘but if alive,’ ‘living on the other hand.’ पुनः means ‘whereas,’ ‘on the other hand,’ ‘but,’ when it introduces as an enclitic the second member of a sentence embodying a contrast. —**त्वदन्ते**, ‘when you die.’

P. 53. St. 49.—**शक्योऽस्य मन्युर्भवता विनेतुं**, this is equivalent to अस्य मन्युं विनेतुं भवता शक्यं. But as what the poet wishes to say, refers chiefly to the wrath (मन्युः) of the king's preceptor Vasish*t*ha, that word is allowed to change the natural order of the thought. See Apte's guide 178, 179 p. 132.—**कृशानुः**, explain कृशयति तनूकरोतीति, derived from कृश् with the affix अ निक्.—**कोटिशः** The *Taddhita* affix शस् when thus added to nouns, es pecially numerals, form adverbs in the sense of quantity (प्रमाण).

P. 54. St. 51.—**अभाषतेव**, On this epithet Mallinátha cites the following Kárika from Patanjali's Mahâbháshya, " दुहियाचिरुधिप्रच्छिभिक्षिचिञामुपयोगनिमित्तमपूर्वविधौ । ब्रुविशासिगुणेन च यत्सचते तदकीर्तितमाचरितं कविना. " Explain, दुहादीनामेकव्यापारार्थकतया पूर्वेणाप्राप्ते अपूर्वविधानमितरेषां तु द्विव्यापारार्थकतया पूर्वेण सिद्धत्वान्नाकथितत्वमिति । उपयोगनिमित्तमिति प्रधानकर्मोपयोगीत्यर्थः । [उपयुज्यते इति उपयोगः पयःप्रभृति तस्य निमित्तं गवादि वस्तोपयुज्यमानपयःप्रभृतिनिमित्तस्य गवादेः कर्मसंज्ञा विधीयते] । ब्रुविशासिगुणेन ब्रुविशास्योः निरुक्तार्थे गुणीभूतज्ञानेन यत्सचते संबध्नाति तज्ज्ञानवत्त्वेनोद्देश्यं यत्तदकथितं कर्म इत्युक्तं कविना (सूत्रकारेण) इति । that is, दुह्याच्पचित्यादिकन्तु भाचामनुरोधेनोक्तं । एष्वनेकेषां द्विव्यापारार्थबोधकतया ईप्सिततमत्वेनैव द्विकर्मकत्वसिद्धेरेकव्यापारार्थका एव भाष्ये गृहीताः &c.

P. 55. St. 52.—**मनुष्यदेवः**, ' the king of men. ' देव means god as well as king.—**सुतरां दयालुः**, ' even much more compassionate than before, ' because he was तदध्यासितकातराक्ष्या धेन्वा निरीक्ष्यमाणः. Here अध्यासित is a noun. See Apte's guide, 153 p. 113. Analyse, " तेन सिंहेन अध्यासिता अत एव कातराक्षी कातरे अक्षिणी यस्यास्सा. " Vallabha's reading is " तदध्यासनकातराक्ष्या, " (तस्य सिंहस्य धेनौ यदध्यासनं तेन कातरे अक्षिणी यस्याः सा तया) सिंहाक्रमेण क्षपितनेत्रया &c.

P. 55. St. 53.—**रूढः**, ' Well-known,' ' celebrated. ' When said of words they are केवलरूढ or रूढ meaning ' conventional, ' ' not to be etymologically resolved ;' ' having a special meaning or one not depending directly on the etymology ;' and योगरूढ, ' having a special as well as an etymological and general meaning, *i. e.* पङ्कज means ' growing in mud ' and a ' lotus-flower.' The English word *parasol* is an example of a similar kind.—**राज्येन किं**, ' what with the empire ? ' ' of what use is the empire ? '—**क्षतात्किल** *Cf.* Mahâbhârata: " ब्राह्मणानां क्षतत्राणात्ततः क्षत्रिय उच्यते. "—°**मलीमसः**, derived from मल with the affix ईमसः a possessive termination. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss., " मलीमसं तु मलिनं कच्चरं मलदूषितम् " इत्यमरः ।

P. 55 St. 54.—**शक्योऽनुनयः** &c., Here Châritravardhana notices a reading "शक्यानुनयः," and explains it in the following way, "शक्यो ऽनुनयो यस्येति सः."—**विश्राणनाच्च,** Here च has the force of वा अपि 'even by.' The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss., "त्यागो वितरणं दानमुत्सर्जनविसर्जने । विश्राणनं वितरणं" इत्यमरः ।

P. 56. St 55.—**न पारणा स्याद्विहता,** 'In this way your dinner-after-fast would not be obstructed, and the requirements of the sage's observances would remain unhampered.' The पारणा is just as much an enjoined duty as the fast itself which precedes it.

P. 56. St. 56.—**परवान्,** The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. "परतंत्रः पराधीनः परवान्नाथवानपि" इत्यमरः ।—**अवैति** is the predicate of भवान्.

P. 57. St. 57.—**किमप्यहिंस्यः,** किमपि, 'some how or other,' 'for some indefinable cause,' 'very much.' This is the sense of किमपि when used as an adverb. Here किमपि qualifies अहिंस्यः.—**यशः शरीरे भव मे दयालुः,** *Cf.* Sumativijaya: "अतो देहभक्षणेन यशो रक्षणीयं मम" इति तात्पर्यं. *Cf.* also Hitopades'a "यदि नित्यमनित्येन निर्मलं मलवाहिना यशः-कायेन लभ्येत तन्नलब्धं भवेन्नु किम्." The Southern and Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. "स्याद्दयालुः कारुणिकः" इत्यमरः ।—**भौतिकेषु पिण्डेष्वनास्था खलु.** This indifference does not arise from a metaphorical point of view as in भगवद्गीता, II. 13. "देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा । तथा देहान्तरप्राप्तिः धीरस्तत्र न मुह्यति." But from a worldly point of view as is clear from the first line *vide* II. 34. "अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम् । सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते." 'All beings too will tell of your everlasting infamy, and to one who has been honoured, infamy is a greater evil than death.'

P. 57. St. 58.—**वनान्ते** = वनप्रदेशे or simply 'a forest.' The word अन्त has no special meaning here. It may mean प्रदेश or it may be added to strengthen the force of the locative termination. *Cf.* Châritravardhana: "अन्तशब्दः स्वरूपे."—**प्रणयं,** Châritravardhana translates it by "स्नेहं."

P. 57, St. 59.—**तथेति,** Compare Châritravardhana: "तथेत्यङ्गीकृत्य गां धेनुं उन्मुक्तवते हरये सिंहाय &c.," Vallabha, Sumativijaya and other commentators agree with Mallinâtha in interpreting this epithet. And Châritravardhana observes: "गां वाचमुक्तवते इति कश्चित्."—**प्रतिष्टम्भ-**

विमुक्तबाहुः, Here Châritravardhana observes: " प्रतिष्टम्भात्प्रतिबन्धान्मुक्तो बाहुर्यस्य सः । मुक्तप्रतिबन्धोऽपि शस्त्रमन्याक्षादिति सम्यक्त्वं. "

P. 58. St. 60.—**पालयितुः प्रजानां**. A paraphrastic epithet for the usual प्रजाप or प्रजापति, ' protector ' or ' lord of people, ' *i. e.* a king. This way of replacing condenced epithets by means of paraphrastic eircumlocutions is but too common in the Kâvyas and other elaborate writings in Sanskrit.—**विद्याधरहस्तमुक्ता**, ' A shower of flowers discharged by the hands of Vidyâdharas.' Explain: धरन्तीति धराः । विद्याया गुडिकाञ्जनादिकाया धराः । they are जीमूतवाहन, पुष्पदन्त and other wanderers in the sky.—**उग्रं सिंहनिपातं**. On this epithet Châritravardhana remarks: " उग्रे सिंहनिपाते शंकितस्योपरि कोमला पुष्पवृष्टिः पपातेति वैचित्र्यं. "—**अवाङ्मुखस्य**, analyse अवाग् मुखं यस्य सः तस्य, ' with his face bent downwards. '

P. 58. St. 61.—**अमृतायमानं**, explain, " अमृतमिवाचरन्तीति," a denominative present participle. *Cf.* " कृष्णायते or कृष्णति, यशायते or यशस्यते " &c. On this Vallabha remarks: " अमृतायमानममृतोपममिति विधिव्यापारवैचित्र्यं। यो मरणमाङ्कते स कथमभ्युदयमानोति दैवानुकूलतया इत्यमृतमयं " &c.—**प्रस्रविर्णी**, ' From whose udder the milk was dripping down on the ground. ' analyse "प्रस्रवः क्षीरस्रावोऽस्ति यस्यास्तां. " On this Châritravardhana observes, " प्रस्रवस्तु स्नेहवशाज्जनन्या अपि स्यादिति गवां न जातिः."—**राजा**, *Cf.* Vishnupurâna. " पृथुं वैणं प्रजा दृष्ट्वा रक्ताः स्मेति तमब्रुवन् । ततो राजेति नामास्यानुरागादजायत " &c.

P. 58. St. 62.—**विस्मितं**. On this epithet Châritravardhana remarks : " विस्मयस्तु केसरिणोऽदर्शनात्."—**मायां मयोद्भाव्य परीक्षितोऽसि**, ' Thou hast been simply tried by me by producing an illusion or a delusive phantom.' The phrase is equal to " अहं, मायामुद्भाव्य, त्वां परीक्षाञ्चक्रे. " Like the infinitive the gerund can also be used in the passive.—**किमुतान्यहिंस्राः**, Châritravardhana and Vallabha say " सिंहादयः," and Sumativijaya observes: " सन्मुखं विलोकयितुमपि न समर्थाः किमुत प्रहर्तुं पुरे आसतामिति."

P. 59. St. 63.—**प्रीतास्मि**, *i. e.* प्रसन्नास्मि.—**वरं वृणीष्व**. On this epithet Châritravardhana has, " पुत्ररूपं वरं वा. "—**न केवलानां**, Châritravardhana notes, " गोः पयोदाने सामर्थ्यं न तु वरदाने इत्याह. "

P. 59. St. 64.—**स्वहस्तार्जितवीरशब्दः**, ' And by whom the appellation hero had been earned by his own arms. ' On this verse Châritravardhana remarks, मानितातिथित्वेन स्वहस्तार्जितवीरशब्दत्वेन चेतनानपेक्षया याञ्चाविरोधध्वनिः सूच्यते.

P. 59. St. 65.—**प्रतिश्रुत्य**, ' Having granted, ' ' having promised.' —**सन्तानकामाय**, explain: " सन्तानं कामयते इति सन्तानकामः "

P. 60. St. 66.—**शष्ठांशभागमिव,** On this Châritravardhana quotes "राजा हि फलमाप्नोति रक्षितायाः क्षितेरपीति मनुः." *Cf.* Manu "पञ्चाशद्भाग आदेयो राज्ञा पशुहिरण्ययोः। धान्यानामष्टमो भागः षष्ठो द्वादश एव वा। आददीताथ षड्भागं द्रुमांसमधुसर्पिषाम्। गन्धौषधिरसानाञ्च पुष्पमूलफलस्य च। पत्रशाकतृणानाञ्च वैदलस्य च चर्मणां। मृण्मयानाञ्च भाण्डानां सर्वस्याश्ममयस्य च &c." Here Châritravardhana notices a different reading. It is thus "वत्साग्निकार्यव्यतिरिक्तमन्यत्। कषेरनुज्ञामधिगम्य मातः। स्तन्यं रसं वश्मि तवोपभोक्तुं। षष्ठांशमुर्व्या इव रक्षितायाः"। रसस्य नपुंसकत्वाभावान्मत्वर्थीयाकारकल्पनं वा। अन्यदुपभोक्तुमिच्छामि न तु भवदुक्तं पत्रपुटस्थमिति वाक्यभेदो वा."

P. 60. St. 67.—**अश्रमेण,** 'Without fatigue or difficulty' *i. e.* joyously.

P. 60. St. 68.—°**मुखः प्रसादं,** On this epithet Châritravardhana has the following: "मुखप्रसादानुमितं ज्ञानमिति पौनरुक्त्यहेतुः। स्थूलो देवदत्तो दिवा न भुङ्क्ते। इत्याद्यपि पौनरुक्त्यमिति व्यक्तिविवेकः"—**गुरुर्नृपाणां,** *i. e.* नरेन्द्रः. See note to verse 60, II.

P. 61. St. 69.—**अनिन्दितात्मा,** 'He, of unimpeachable character.' This epithet is used, it seems, for the purpose of an alliteration.—**शुभ्रं यशः.** On this Pandit observes, 'That renown or good fame should be conceived to be as white, *i. e.,* clear or bright, as the shine of the full moon, free from all approach of obscuring clouds, or as any other perfectly white substance, as pure milk, is intelligible enough. But when things of actual existence and of established whiteness like milk, snow, &c., are compared to renown, we leave the region of metaphor or simile as such and step into the region of what may, perhaps, be called unreal similes. The objection is that a real object, *i. e.* स्तन्य is compared here to an unreal one *i. e.* यशः which is a fault; because in an उपमा the उपमान must be "साधारणधर्मवत्त्वेन प्रसिद्धेन पदार्थः". It is based (1) either on a misunderstanding of the word इव, which is taken in the sense of साधर्म्यवाचक, (2) or on an ignorance of the real nature of उत्प्रेक्षा refutation. (1) इव is here सम्भावनापर and not साधर्म्यवाचक as is clearly shown by the presence of the word मूर्त in the line. For if the object is to point out only resemblance between स्तन्य and यशः, it is served even though यशः is not मूर्त, as when we compare यशः to स्तन्य or चन्द्र. (2) उत्प्रेक्षा requires that the उपमान *should be* unreal. What is a fault in उपमा is an essential condition of, and beauty in उत्प्रेक्षा, *vide* Kâvyaprakás'a. *Cf.* Chakravartin, "यदायमुपमानांशो लोकतः सिद्धिमृच्छति तदौपम्यमेव एनेव शब्दः साधर्म्यवाचकः॥ यदा पुनरयं लोकादसिद्धः कविकल्पितः। तदोत्प्रेक्षैव एनेव शब्दस्सम्भावनापरः।" "साधर्म्यमुपमा," *Cf.* "सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्," *i. e.* "उत्कटैककोटिः संशयः सम्भावनं &c." *Cf.* "यशांसि

धवलता वर्ण्यते हासकीर्त्योः." This circumstance would further redound to his fame, and a spotless fame it was. Methinks, therefore, to drink a quantity of white milk was for him to receive a fresh accession of spotless fame.

P. 61. St. 70.—**प्रास्थानिकं**, The affix इक may also be added to a word even if it expresses time secondarily *vide* Kás'iká. इक् = भवार्थे, as in मासिकं.—**स्वस्त्ययनं**, 'Benediction of a Bráhma*n*a after presentation of offerings' derive "ईयते प्राप्यते अनेनेति अयनं" (करणे ल्युट्) with the prefix स्वस्ति.

P. 61. St. 71.—**सन्मङ्गलोदग्रतरप्रभावः**, 'whose majesty (or power) was now made more resplendent on account of excellent auspicious ceremonies performed at his departure.' But Châritravardhana explains the epithet thus, सतां मंगलेन प्रणीताग्निप्रदक्षिणादिना मङ्गलद्रव्येण वा । उदग्रतरोऽधिकः प्रभावो यस्य स तथा &c.," Dinakara explains it as "सतां मङ्गलेन प्रीतवह्निगोब्राह्मणप्रदक्षिणीकरणेन उदग्रतरो महीयान् प्रभावो यस्य सः &c.," and Vallabha refers सन्मङ्गलं (he explains सन्मंगलेनोदग्रतरः &c.,) to the appearance, at the departure of Dilipa, of auspicious birds or the manifestation of other fortunate signs from the assurance that he was now going to get a son &c.

P. 62. St. 72.—**सहिष्णुः**, 'of an ending nature.' The कृत् affix इष्णु (इष्णुच्) shows 'tendency' or 'disposition.' *Cf.* रोचिष्णु, भ्राजिष्णु. On this epithet Cháritravardhana observes: "सहिष्णुरिति पदेन तादृशस्यैव कार्यसिद्धिर्युक्तेति ध्वनिः । यदि वा दूरागमनेऽपि क्लेशराहित्यमित्यन्यः."—**अनुद्धातसुखेन**, On this epithet Sumativijaya observes: "दूरतो दर्शनेन दुःखानिवर्तकं."—**स्वेनेव पूर्णेन मनोरथेन**, 'as if he had been conveyed [not by a heavy chariot of wood, but] by his desire [मनो रथ] itself which had now been fulfilled.'

P. 62. St. 73.—**ओषधीनां नाथं**, 'The lord of plants, *i. e.*, the moon.' Kshîrasvâmin explains it as, "किरणेनाप्यायकत्वात्." *Cf.* Vish*n*u Purâ*n*a: "नक्षत्रग्रहविप्राणां वीरुधां चाप्यशेषतः । सोमं राज्ये ददौ ब्रह्मा यज्ञानां तपसामपि," also Vyása, "अमायान्तु सदा सोम ओषधीः प्रतिपद्यते । तमोषधिगतं गावः पिबन्त्यमृतवत्तथा," and "तञ्च सोमं पपुर्देवाः पर्यायेणानुपूर्वशः," and "कलाः षोडश सोमस्य शुक्ले वर्धयते रविः । अमृतेनामृतं कृष्णे पीयते दैवतैः क्रमात्." See also Vâyu Purá*n*a, Chap. 28. p. 292, verses 15, 16. "तस्य यथापि तत्तेजः पृथिवीमन्वपद्यत । ओषध्यस्ताः समुद्भूतास्तेजसा सञ्ज्वलन्त्युत । ताभिर्धार्यत्ययं लोकाः प्रजाश्चापि चतुर्विधाः । पोष्टा हि भगवान्सोमो जगतो हि द्विजोत्तमाः" । *vide* ऋग्वेद, Ma*n*dala X. 85. 2 "सोमेनादित्या बलिनः सोमेन पृथिवी मही । अथो नक्षत्राणामेषामुपस्थे सोम आहितः" where Sáya*n*a explains, "अमृतसेकेन औषध्यभिवृद्ध्या पृथिव्या बलवत्त्वं." *Cf.* R. V. 16., XIV, 80. On

this Pandit has the following note; 'Properly speaking औषधीनां नाथ: or 'the king of plants,' is the Soma plant, which, being largely used in sacrifices, naturally came to be regarded as the highest plant, and be styled 'the king of plants.' The key to the fact of ओषधीपति: meaning both the Soma plant and the Moon seems to lie in the word इन्दु. This word is frequently found in the *Rig*veda, but always in the sense of (1) a drop of the Soma juice, and (2) the Soma juice itself. It appears that the word इन्दु, coming then to signify a globule, or a round little body, very naturally became a name of the full Moon. Now according to a very common principle that has had such a prominent influence on the development of the Sanskrit vocabulary,—*viz.*, that whenever a vocable that signifies two things, has other synonymes, those other synonymes also become each expressive of the same two things,—the word Soma acquired the additional sense of *Moon*. Then, as is very common in the growth of mythology, the conceptions, attributes &c., connected with the original personified or rather deified concept Soma, viz., that of the plant, became attached to the new concept viz., that of the Moon. Thus the whole derivation may be put in the following pseudo-logical form. The word इन्दु meant both a drop of the juice of the sacrificial plant, (or the juice itself) and the Moon; a synonym of इन्दु in the first sense is the word सोम; therefore सोम meant both the plant and the Moon. Now because Soma, *the plant*, was developed into a personification by certain attributes, therefore, Soma, *the Moon*, acquired also the same attributes. And thus it is that the Moon also came to be described as 'the king or lord of the plants.' But इन्दु *i. e.* Soma may mean the Moon, etymologically and therefore more directly than by the above theory of Pandit इन्दु: explain उन्नति चन्द्रिकया क्लिन्नाङ्करोति भुवमिति। सोम: explain सूतेऽमृतं. *Cf.* S'ruti, "सूयते नवो नवो भवति जायमान:" &c. नेत्रैः पपु: &c., *Cf.* S'i. XIII. 40. "मदविभ्रमा सकलया पपे पुनः स पुरस्त्रियैकतमयैकयादृशा." And Châritravardhana says, "सादरमवलोकनं पानमुच्यते."

P. 62. St. 74.—**पुरन्दरश्रीः**, 'Having the splendour of Indra.' पुरन्दर or 'the destroyer of the town,' is a name of Indra because he is described in the hymns of the *Rig*veda, as having destroyed the towns of his enemies, *i. e.* the clouds. The epithet पुरन्दरश्रीः is used by the poet for the alliteration with पुरं, which immediately follows it.—**आसमुद्र**, On this epithet Châritravardhana remarks, "शेषेण हि भू ध्रियते इति साम्यमुचितं."—**भुजंगेंद्र°**, means आदिशेष the lord of serpents, who is said to support the whole of the world on his thousand heads; hence the comparison.

P. 63. St. 75.—**अत्रेर्नयनसमुत्थम्**. Referring to the legend that Attri a celebrated *R*ishi was the father of the Moon, and that this latter was produced from his eyes. The sage is described as the author of many Vedic hymns. He is also one of the seven patriarches, who were all sons of Brahmà, and represents, in Astronomy, one of the stars of the Great Bear (सप्तर्षिमण्डलं) situated in the north. He is said to have produced the Moon from his eye while he was practising severe asceticism. See Wilson's Vish*n*u Purá*n*a page 392.—**लोकपालानां गुरुभिरनुभावैरभिनिविष्टम्**, 'Instinct (or inspired) with the mighty (heavy) essence of the Lokapâlas'. The Lokapâlas are: " इन्द्रो वह्निः पितृपतिर्नैर्ऋतो वरुणो मरुत् । कुबेर ईशः पतयः पूर्वादीनां दिशां क्रमात्," as given by Amarasinha.—**अनुभाव**, here means "अंश, or मात्रा " 'portion, ' as used in R. III. 11. Vallabha however quotes the following verse on अनुभावैरभिनिविष्टम्, " इन्द्रात्प्रभुत्वं ज्वलनात्प्रतापं क्रोधं हराद्वैश्रवणाच्च वित्तं । आल्हादकत्वश्च निशाधिनाथादादाय राज्ञः क्रियते शरीरं." *Cf.* Manu, V. 96. " सोमाग्न्यर्कानिलेन्द्राणां वित्ताप्पत्योर्यमस्य च । अष्टानां लोकपालानां वपुर्धारयते नृपः."—**आधत्त**. आधान has the following meanings; (1)' imparting or instructing, ' *vide* R. I. 24, 85. (2) 'producing, ' *vide* Meghadúta, I. 9 . (3) 'keeping sacred fire, ' *vide* Manu, V. 168. (4) 'appointing, ' *vide*. R. VII. 20. On this verse Châritravardhana has the following: " यौश्चन्द्रं गङ्गेशं शुक्रं इति वाच्ये नयनसमुत्थायुक्तं व्याससगुणाय । यदाह वामनः । अल्पं बह्वक्षरविन्यासो व्यासः " इति.—**वह्निनिष्ठ्यूतमैशं तेजः**, the seed of S'iva secreted by Agni, that is, the god Skanda or Kârtikeya. The myth is this:—S'iva cast his seed into the fire, seeing Párvati unable to bear it, and the god Agni in his turn, cast it into the Gangà. The Gangà then cast it into a thicket of reeds where the god Skanda was born. He was then nursed by the six K*r*ittikàs for whose sake he took six heads and twelve hands and eyes. He then became the leader of the gods and protected them from the demon Táraka. For the full account see our note to verse 47. Meghadúta. First edition. The two similes contain in them the promise of tender and masculine virtues in the child, besides complimenting the greatness and sanctity of the king and the queen.

CANTO III.

P. 64. St. 1.—**उपस्थितोदयं,** Châritravardhana analyses: "उपस्थितः प्राप्तः उदयः पुत्रोत्पत्तिलक्षणो यस्य यस्माद्वा." "—**दौर्हृदलक्षणमुपस्थितोदयं भर्तुरीप्सितं,** 'bore signs of pregnancy which were as it were the longings of her lord with their fulfillment approached.' भर्तुरीप्सितम् means 'dear to her lord.' ईप्सितं *adj.* to दौहृदलक्षणं ; but according to our scholiast who takes ईप्सितं (as in stanza 5) as a neuter abstract noun in opposition to दौर्हृदलक्षणं, it would mean 'which were the desire of her lord' in which case उपस्थितोदयं may be taken as an adjective to ईप्सितं in the sense above referred to. Vallabha however explains भर्तुरीप्सितं better by "कान्ताभिमतं," than either Mallinàtha or Chàritravardhana. Châritravardhana analyses दौर्हृदलक्षणं in the following way : "दोहदस्य गर्भस्य लक्षणं चिह्नं मुखपाण्डुरादि। (He seems to have read दोहद) अथ वा दोहदस्य लक्षणं चिह्नं यस्मिन्निति वैय्यधिकरण्यबहुव्रीहिमाश्रित्य तादृशं मुखं दधौ इति कश्चन। तन्न सुन्दरं । 'मुखेन सालक्षत लोध्रपाण्डुना' इति वक्ष्यमाणत्वात् । गर्भस्य कुलहेतुत्वात्तच्चिह्नेऽप्युपचारः। द्विहृदो भावो दौहृदं द्विहृदया नारी दौहृदिनीत्याचख्यते इति संग्रहे । हेतुत्वात्तच्चिह्नेऽप्युपचारः । गर्भिणी स्वहृदयेन गर्भहृदयेन च द्विहृदया चेति निर्वचनं कुर्वन्ति। दौर्हृद (from हृद् with दुर्) seems originally to have meant the aversion to certain things felt by pregnant women.—°**कौमुदीमुखं,** On this epithet Chàritravardhana referring to the reading कौमुदीमहं observes: "कौमुदीमहमिति पाठे । कुशब्देन मही ज्ञेया मुदहर्षे च पठ्यते । कौ मोदन्तां नरा यस्मात्तेन सा कौमुदी स्मृता । कौमुदी दीपोत्सवा पौर्णमासी तत्र महः उत्सवः । दीपावल्युत्सवतुल्यामिति कश्चित् । कौमुदीति सुदक्षिणा विशेष्या दोहदलक्षणा इत्यन्यः (?) । सुखामिति पाठे सुखयतीति सुखं । पचाद्यच् ।

P. 64. St. 2.—**लोध्रपाण्डुना,** On this epithet Mallinàtha quotes "वाहट." On the signs and symptoms of a pregnant woman &c., *vide* Playfair's midwifery chap. IV. छर्दि means (1) nausea or vomitting called the 'morning sickness' ; (2) depraved cravings for strange articles of diet, due to derangements of the digestive functions, known as longings दोहद or श्रद्धा ; (3) प्रसेक, may be excessive secretions from salivary glands. (4) सदन, an undue degree of despondency. (5) मूर्च्छा, a tendency to syncope, rarely proceeding to actual fainting called 'Lypothemia.' (6) दुःखस्वभावता, fractions and imitable disposition. (7) स्तनपीनत्व, enlargement of the breasts. (8) कृष्णचूचुक, turgidity of the nipples and discolouration (darkening) of the areolae. (9) गरिमा कुक्षेः, progressive enlargement of the abdomen. (10) अरोचक, loss of appetite &c.—°**सालसा,**

derived from the root सद् with the affix घञ् and by the necessary *vriddhi* we get साद.—प्रभातकल्पा शर्वरीव, 'like night, well nigh terminated.' The suffix कल्प (कल्पप्) is added to nouns and adjectives in the sense of 'a little less than,' 'about like,' 'nearly equal to.' *Cf.* St. 36, canto V. "कुमारकल्पं सुषुवे कुमारम् &c."

P. 65. St. 3.—मृत्सुरभि, 'smelling of earth.'—वनराजि पल्वलं, 'A pond (dried up) in a forest grove.' वनराजि here seems to mean 'a grove.'—पयोमुचां पृषतैः सिक्तं &c., Kâlidâsa in several places refers to the fragrance of the earth issuing forth from a dry ground on receiving the first shower after the close of the summer and elephants attracted by this earthly fragrance rising up from dry ponds come and smell them over and over again. Sudakshi*n*â also ate earth—as is usual with pregnant women—and so had an earthly fragrance about her mouth, which was attractive to her lord. *Cf.* Châritravardhana "शुष्कसरसि जलपाते सौरभ्यमिति पल्वलोक्तिः."

P. 66. St. 4.—मरुत्वान् is the name of Indra, because he is invariably followed by the Maruts, the gods of the tempests.—दिगन्तविश्रान्तरथः, analyse दिगन्ते दिशां प्रान्ते विश्रांतो रथः स्यन्दनो यस्य सः. On this epithet Châritravardhana observes: "सार्वभौमत्वात्."

P. 66. St. 5.—अनुवेलं, 'From time to time,' 'constantly.'—उत्तरकोशलेश्वरः. The kingdom of Kos'ala, accordingly, to the Râmâya*n*a, was situated along the banks of the Sarayû, the river Gogrâ of the present day. Its capital Ayodhyâ is described in the fifth chapter of the Adikâ*n*da and said to have extended forty eight miles in length and twelve miles in breadth. It was also called Sâketa, and one of its principal suburbs was नन्दिग्राम, where Bharata governed the kingdom during the absence of Râma. We know from the Ayodhyâkâ*n*da that it lay to the east of the capital. My opinion as to its situation, observes Anundoram Boorooah, is based on several passages of the Mahâbhârata and the Mâtsyapurâ*n*a which show not only that it was about the Gomatî, but also that it was about its confluence with the Gangâ. There is a celebrated place of pilgrimage called Dhopapura on the right bank of this river 18 miles South-East of Sultânpura (formerly known as Kus'abhavanapura), which is probably the रामतीर्थ of the Mahâbhârata. From a look at the map it will appear that it lies in a line from Ayodhyâ to Prayâga—the route taken by Râma in his exile, and the name signifies 'where sins are washed away.' At the time of Râma's death, his two sons Kus'a and Lava reigned res-

pectively at Kus'âvati, in southern Kos'ala in the defiles of the Vindhyas and at S'râvastî in northern Kos'ala. In the Matsya Purána, the last province is called गण्ड, a district still known by the same name and occurring in the Mahábhárata after Pânchála among the conquests of भीम. There can be no doubt, therefore, that the country north of Ayodhyà comprising गण्ड and Baraitch was known as Uttara-Kos'ala. For the full account see Anandoram Boorooah's ancient geography of India, paras 93-96. pp. 86-90.—**मागधी**, On this Cháritravardhana observes: स्वयमुत्तरकोशलजत्वमन्यदेशजायेति ज्ञापनाय मागधीत्युक्तिः. "

P. 66. St. 6.—**दोहदुःखशीलतामुपेत्य**, ' having come to the langanor consequent upon the qualms of pregnancy. ' Châritravardhana analyses: " दोहदेन गर्भेण तज्जनितेच्छया वा यद्दुःखं तदनुभूतिशीलत्वमुपेत्य. " Sumativijaya has: " दोहदेन गर्भेण यद्दुःखं तत्."—**यद्देव** &c., construe: " यद्वै तदाहृतमपश्यदेव, " ' she saw that every thing brought to her which she desired.'—**अधिज्यधन्वनः**, On this epithet Châritravardhana observes: " अधिज्यधन्वनः इति हेतुगर्भं विशेषणं. "

P. 67. St. 8.—**दिनेषु गच्छत्सु**, ' As days rolled on,' 'in the course of time, ' *i. e.*, as she advanced in the course of her pregnancy. —**स्तनद्वयं**, On this Châritravardhana remarks: " गर्भिण्याः कुचयुगमीदृक् सिद्धं.

P. 68. St. 9.—**सागराम्बरां**, On this Vallabha observes: " इति गर्भस्य सार्वभौमोक्तिः, " and Châritravardhana has: " एतेन प्रियत्वोक्तिः. " The Southern and the Deccan Mss. of Mallinàtha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. " भूतधात्री रत्नगर्भा विपुला सागराम्बरा " इति कोशः ।—**नदीमिव**, On this epithet Châritravardhana observes: " एतेन पीडनत्वोक्तिः, " and Vallabha has, " इति गर्भस्य पुण्यप्रतिपादनं. "—**शमीमिव**, ' fire is said to be latent in the S'amî wood, a rod of which is used for producing fire by friction for sacred purposes. Cháritravardhana says, " इति तेजस्वितोक्तिः. " *Cf.* S'a. 4.—**सरस्वतीं**, The river Sarasvatî flows near Thânesvara (स्थाण्वीश्वर). Its modern name is Sarsuti or Caggar. Anandoram Boorooah observes : ' Two other junctions are mentioned which are borne out by the map, *viz.*, of the कौशिकी and the दृषद्वती on the west and of the Arunà with the Sarasvatî below Thânes'vara. Near the first is व्यासस्थली the modern Basthali. Not far from the junction of the two combined streams (सरस्वती and दृषद्वती) is the modern Kaithal, which is probably कपिस्थल of the Vanaparvan. The Sarasvatî which loses itself in the sandy-desert is supposed by the poet to flow under the surface of the earth,

and join ultimately the ocean.' *Cf.* Vallabha. " म्लेच्छदेशेषु सान्तर्धाय भूयः पुण्यप्रदेशेषूद्भवतीति पुराणवार्ता." Compare also Châritravardhana : " सरस्वत्या ऊर्ध्वं वालुकाः पातालान्तर्गतं जलमिति वार्तामात्रं. " In the *Rigveda* it is represented as flowing into the sea : but later legends make it disappear under ground and join the Gangâ and Yamuná at Prayága. It is said that Varu*n*a forcibly carried off Bhadrá the beautiful spouse of a Bráhma*n*a named उतथ्य and would not give her up. The Bráhma*n*a then addressed himself to countries and to the river Sarasvati, saying " O goddess Sarasvati, disappear into the deserts and let this land, deserted by trees, become impure. " After the country had thus become dried up, Varu*n*a submitted and brought back the wife of उतथ्य. Mahabhárata. —ससत्त्वां, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. " आपन्नसत्त्वा स्याद्गुर्विण्यन्तर्वत्नी च गर्भिणी " इत्यमरः । The figure according to Châritravardhana is " मालोपमा. "

P. 68. St. 10.—धीरः, Cháritravardhana explains: " धियं रातीति धीरः. "—पुंसवनादिका, पुंसवन is the first of the purificatory Sanskáras. It is a ceremony performed on a woman's perceiving the first signs of a living conception with a view to the birth of a male child. *Cf.* S'aunaka, " व्यक्ते गर्भे तृतीये तु मासि पुंसवनं भवेत् । गर्भेऽव्यक्ते तृतीये चेच्चतुर्थे मासि वा भवेत् । and also Vasis*th*a, कुर्यात्पुंसवनं व्यक्ताव्यक्ते गर्भे तृतीयेऽथवा । मासि स्फीततनौ तुषारकिरणे पुंस्येऽथवा वैष्णवे. "

P. 68. St. 11.—सुरेन्द्रमात्राश्रितगर्भगौरवात्, *Cf.* R. II. 75.—उपचाराञ्जलिखिन्नहस्तया, Cháritravardhana analyses the compound in the following way " उपचारो विनयस्तदर्थं योऽञ्जलिस्तद्विषये खिन्नौ हस्तौ यस्यास्तया. " This means that Sudakshi*n*a had grown so delicate that her hands felt an exertion, even in their joining together to bid salutation to the king.—कुशलैः, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. " कृती कुशलः " इत्यमरः ।

P. 69. St. 12.—कुमारभृत्याकुशलैः . On this Charitravardhana remarks: " कुमारभृत्या बालचिकित्सा तत्सम्बन्धि कौमारभृत्यमायुर्वेदाङ्गमुच्यते । शल्यं शालाक्यं कायचिकित्सा भूतविद्या कौमारभृत्यमगदतन्त्रं वाजीकरणमित्यष्टावङ्गानीति सुश्रुते. " Those enumerated, however, make up seven only.—अनुष्ठित &c. On this epithet Charitravardhana observes: अज्ञातेऽपि कुमारे कुमारभृत्याप्रयोगो न दोषाय कुमारभृत्या गर्भकर्माणि भजनं च क्रियते इति कौटिल्येनोक्तत्वात्. " —गर्भभर्मणि, *lit.* it means ' the nourishment of the fœtus.' —अभ्रितां. The suffix इत (इतच्) forms adjectives which denote

'containing' that which is expressed by the nouns to which इत is added.—प्रतीतः, 'pleased,' 'delighted.' It also means 'convinced,' 'known,' 'trusted,' 'proved,' 'famous' &c.

P. 69. St. 13.—**उच्चसंश्रयैः**, Mallinâtha's reading does not appear to be उच्चसंश्रयैः but उच्चसंस्थितैः, as also read by Chàritravardhana and others; for the majority of southern manuscripts of Mallinâtha's commentary read, "उच्चसंस्थितैस्तुङ्गस्थानगैः, excepting one manuscript which has the following, "उच्चसंश्रयैरुच्चसंस्थितैस्तुङ्गस्थानगैः" &c, but here the expression उच्चसंस्थितैः is useless or redundant when the expression तुङ्गस्थानगैः is expressly stated in the commentary along with the word उच्चसंश्रयैः (if it is the reading at all). Whenever Mallinâtha gives a third expression he generally repeats it along with the phrase इत्यर्थः, and does not give two synonymous words for a single epithet. And further in the commentary we find "तदिदमाह कविः। उच्चसंस्थितैरसूर्यगैरिति च." This clearly shows that Mallinátha had before him the text उच्चसंस्थितैः for his commentary and not उच्चसंश्रयैः. The Northern and the Bengal Mss. have उच्चसंश्रयैरुच्चसंस्थैस्तुङ्गस्थानगैः &c., here also the word उच्चसंस्थैः appears superfluous. On this epithet Chàritravardhana has the following note: "कीदृशं ग्रहाणां द्विविधमुच्चत्वं राशीकृतं भागकृतं च तत्र प्रथमराशौ सूर्यस्योच्चता दशभागेषु । वृषे शीतगोस्त्रिषु भागेषु। हरौ कुजस्याष्टाविंशेषु । कन्यायां बुधस्य पंचदशसु भागेषु। कर्के गुरोः पंचसु भागेषु। मीने शुक्रस्य सप्तविंशतिभागेषु । तुलायां शनेर्विंशति भागेषु । तथा च जोतिश्शास्त्रे । अजवृषमृगाङ्गनाकर्कमीनवणिजांशकाविनाद्युच्चाः । दशशिष्यष्टाविंशतिथींद्रियत्रिधनाविंशेषु । एवमुच्चस्थानानि तत्रस्थितैः पंचभिर्ग्रहैः सूचिता भाग्यसंपद्यस्य तं । उक्तं च। एकेन सुखी। द्वाभ्यां श्रेष्ठः। त्रिभिर्नृपतुल्यः। चतुर्भिर्नृपः पंचभिर्देवतुल्यः। इति भाग्यसंपत्.—**असूर्यगैः** &c., Union with the sun (*i. e.* merging into the sun) forms the *setting* (अस्तमयः) of the planets and separation from the sun forms their *rising* (उदयः). On this epithet Chàritravardhana remarks: असूर्यगैरनस्तैः सर्वे ग्रहाः सूर्यराशिगता अस्तङ्गता उच्यन्ते। उक्तश्च। क्रूराक्रांतः क्रूरगतः क्रूरदृष्टस्तु यो ग्रहो विरश्मितां प्रपन्नश्च स विनष्टो बुधैः स्मृतः। अत एवार्क न प्रोक्तः। पुत्रस्य पंचग्रहोच्चसूचितदेवसादृश्यात्सुदक्षिणायाः शच्चीसमा इत्युचितं विशेषणं." Both these adjectives have been fully explained in the commentary. The five planets रवि, मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र, and शनि are said to be उच्चसंश्रय or occupying a high position ('तुङ्ग,' high, is the technical word) when they each enter respectively the following zodiacal signs: मेष (aries), मृग (capricorn), कर्क (cancer), मीन (pisces), and तुला (libra). Dilípa's son was foreshown by five such to be a divine man. One such would promise happiness, two great achievements, three kinglike position, four royalty, and five divine position.—**त्रिसाधनाशक्तिः**, 'The royal power that consists of three factors,'

viz., " प्रभुशक्ति or प्रभावशक्ति. " 'the majesty of the king himself, ' *i. e.* prestige, authority, मंत्रशक्ति, 'the power of good counsel,' उत्साहशक्ति, 'the power of energy ', *i. e.*, earnestness. These three factors are also each called a power (शक्तयः).

P. 70. St. 14.—**दिशः प्रसेदुः**, &c. These being signs that are exhibited only, when a great benefactor of the world is born, Kálidása says " भवो हि लोकाभ्युदयाय तादृशाम्. " *Cf.* Buddha-Charita, Canto XIII. 73. " तथापि पार्थायसि निर्जिते गते । दिशः प्रसेदुः प्रबभौ निशाकरः । दिवो निपेतुर्भुवि पुष्पवृष्टयः । रराज योषेव विकल्मषा निशा. "

P. 70. St. 15.—**अरिष्टशय्यां परितः**, 'around the bed in the lying-in-chamber. ' अरिष्ट is one of those many words in Sanskrit, which have senses quite opposed to each other. अरिष्ट *adj.* originally meant 'unhurt,' 'unharmed,' 'secure,' 'safe,' and then it means in classical Sanskrit 'bad,' 'ill-luck,' 'misfortune' (अरिष्ट). *Cf.* आरात् near, at a distance ; यु to join, to disjoin ; असती a chaste, and an unchaste woman. Many more may be added to this. 'It is quite possible,' observes Pandit, 'that this should arise from a later generation misunderstanding the language of their ancestors, especially in regard to words which, though once clear as day-light, have become somewhat obscure to them.' The word अरिष्ट is derived from the root रिष् 1. 4. P. 'to hurt,' 'to harm,' 'to kill' &c., with the negative particle अ, and त, the termination of the past participle.—**सुजन्मनः**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. " जनुर्जननजन्मानि जनिरुत्पत्तिरुद्भवः " इत्यमरः ।

P. 71. St. 16.—**उभे चामरे** 'the two chowries, ' *viz.*, one for each side. One waved to the right, and the other to the left.

P. 71. St. 17.—**निवातपद्म** &c., for similar expressions, *Cf.* R. V. 61. VII. 19; X. 82; XII. 36; XVI. 27; and also Ku. III. 67. —**निवात**, Cháritravardhana analyses: " वातस्याभावो निवातं."—**आत्मनि**, *Cf.* " भवत्संभावनोत्थाय परितोषाय मूर्च्छते । अपि व्याप्तदिगन्तानि नांगानि प्रभवन्ति मे " ॥

P. 72. St. 18.—**जातकर्म**, is a ceremony at the birth of a child, when the navel-string is divided. It consists in touching the infant's tongue thrice with ghee after appropriate Mantras. On this epithet Pandit observes : 'This, like many other ceremonies, is an unmeaning rite in most of its parts. The following is an abridgement of it. The moment the birth of a son is announced the father shall see his face, and shall bathe in a river with his face

turned towards the east, or if that is not possible, shall bathe at home in cold water mixed with hot water, brought from a river during day time, and purified by a bit of gold being thrown in it. Then having sipped water, he shall besmear himself with sandal and wear garlands of flowers, and before the scission of the navel-stalk, and before the baby is touched by any one except the mid-wife, he shall cause it to be placed on the lap of its mother, with its face turned towards the east, and say ममास्य कुमारस्य गर्भाम्बुपानजनितसकलदोषनिर्हरणायुर्मेधाभिवृद्धिबीजगर्भसमुद्भवैनोनिवर्हणद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं जातकर्म करिष्ये. He then shall perform a S'ráddha to the nine ancestors, and shall throw oblations of clarified butter into the sacred fire, kindled for the purpose, in honour of Agni, Indra, Prajápati, the Vis'vedevas, and Brahmá. He shall then mix a little honey and clarified butter together, in unequal proportions, and put the compound on a flat piece of stone, and shall rub a bit of gold on it till some portion of it shall have been mixed with the honey and clarified butter, and with the same bit of gold he shall take the mixed honey and put it in the baby's mouth, with this Mantra: ओम् प्र ते ददामि मधुनो घृतस्य वेदं सवित्रा प्रसूतं मघोनाम् । आयुष्मान्गुप्तो देवताभिः शतं जीव शरदो लोके अस्मिन् । He shall then wash clean the bit of gold and putting it on the right ear of the baby, he shall bring his own mouth close to the baby's and shall say: ओम् मेधां ते देवः सविता मेधां देवी सरस्वती । मेधां ते अश्विनौ देवा वाधत्तां पुष्करस्रजौ । Putting again the piece of gold on the left ear of the baby he shall repeat the same verse. He shall then lightly touch with the span of his right hand both the shoulders of the baby at the same moment, and repeat thus: अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्तृतं भव । वेदो वै पुत्रनामासि स जीव शरदः शतम् । ओम् इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे । पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम् । ओम् अस्मे प्रयन्धि मघवन्नृजीषिन्निन्द्र रायो विश्ववारस्य भूरेः । अस्मे शतं शरदो जीवसे धा अस्मे वीराञ्छश्वत इन्द्र शिप्रिन् ॥ Then, to secure well-being and long life for the new born, he shall say: अङ्गादङ्गात्संभवसि हृदयादधिजायसे । आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरदः शतम् । And with this he shall thrice smell the head of the baby. And having returned to the sacrifice, he shall complete it. Then with cold water, he shall wash the right breast of the mother, and shall make her suckle the babe with this Mantra: ओम् इमां कुमारोजरां धयतु दीर्घमायुः प्रजीवसं । अस्मै स्तनौ प्रयुञ्जाना आयुर्वर्चो यशो बलम् । He shall then give cows, lands, *tila* corn, and gold to Bráhmaṇas as presents. See *Náráyaṇa Bhatta's Prayoga Ratna*, under जातकर्म.—**अखिले**, on this epithet Cháritravardhana observes: "अखिलपदेन घृतप्राशनादिरित्यंके."—**पुरोधसा**. On this epithet Cháritravardhana remarks: "पुरोधसा पदे कर्तव्यातिशयोक्तिः."

—प्रयुक्तसंस्कार आकरोद्भवो मणि:. *Cf.* R. VI. 32 "आरोप्य चक्रभ्रममुष्णतेजास्त्वष्ट्रेव शाणोल्लिखितो विभाति."

P. 72. St. 19.—दिवौकसां. 'of the gods whose abodes are heavens.' Better to analyse दिवमोको येषां तेषां than the way in which Mallinátha analyses. The word दिव *n.* is also generally used.—मागधीपते:, The rejoicings were an honour to the queen. The king's delight was all the more intense on account of his child being Sudakshi*n*a's as well.

P. 72. St. 20.—न संयतस्तस्य बभूव, 'On the custom of setting free the prisoners, when a son and heir to the throne is born, *Cf.* the following as quoted by Vallabha: "युवराजाभिषेके च परचक्रावमर्दने । पुत्रजन्मनि वा मोक्षो बद्धस्य हि विधीयते."—रक्षितु:, explains the absence of prisoners.—पितृणामृणाभिधानात्, *Cf.* Sumativijaya: "यथा सुते जाते जनक: पितृणामृणान्मुच्यते इत्यागम:." Because a man remains indebted to his ancestors as long as he has not begotten a son: hence the compulsory character of the rite of marriage among Hindus. A man is said to be born with three debts or obligations. The first ऋषिऋण is discharged by the study of the Vedas; the second देवऋण, by performance of sacrifices; and the third पितृऋण, by begetting a son. *Cf.* R. I. 71.

P. 73. St. 21.—अर्थवित्. On this Cháritravardhana observes: "अर्थविदिति विवेकत्वोक्ति:." On the figure Cháritravardhana has, "उत्प्रेक्षा व्यंग्या."

P. 73. St. 22.—अनुप्रवेशात्. On this epithet Vallabha has the following note; "श्रीसूर्यस्य सुषुम्ना [अमा Ms.] नाम कला तस्या: प्रवेशाद्वृद्धिं पुष्णाति । चन्द्रमा: किल सूर्यस्य सुषुम्ना नाम नाडिकामनुप्रविश्य वर्धते."—वृद्धिं पुपोष, On this Cháritravardhana remarks: "अमावास्यायां चन्द्रो रवौ गच्छति प्रतिपदि नि:सरति तत उदयं प्राप्य यथा दिने दिने वर्धते तथायमपि ववृधे इत्यर्थ:."—हरिदश्वदीधिते:, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. "भास्वद्विवस्वत्सप्ताश्वहरिदश्वोष्णरश्मय:" इत्यमर: ।

P. 73. St. 23.—शरजन्मना. The god S'iva, in company with his wife Párvatí, cast his seed into Agni, who being unable to bear it cast it into the Ganges; she accordingly was delivered of the deity, Skanda; who was afterwards received and reared, among thickets of शर reeds, by the six daughters of a king, named कृत्तिका; whence he is called शरजन्मा. He was the commander of the army of the gods with Táraka whom he slew in a battle. See our note to st. 75. II. and verse 57, Meghadúta. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority

cited by the Northern Mss. " कार्तिकेयो महासेनः शरजन्मा षडाननः " इत्यमरः । —तत्सदृशेन तत्समौ, on this Cháritravardhana observes: " अत्रोपमाबलादेव भवानीशचीश्वरेन्द्रसादृश्ये लब्धे । तत्समाविति व्यर्थमिति । व्यक्तिविवेकः । तत्सदृशेनत्यायनुक्तौ हर्षमात्रेणेव साम्यं प्रतीयते । न तु तेषामिन्द्रादिसाम्यं । अतो विशेषणद्वयं सार्थकमित्यन्ये. "

P. 74. St. 24.—भावबन्धनं प्रेम, 'affection to which true love was tied,' *i. e.* of which real love was the cause. Vallabha explains it by " चेतोवृत्तिगुम्फनं, " and Cháritravardhana by " चित्तवृत्तिबन्धनस्थानं मैत्रीकरणं. " प्रेमन् is kind and tender behaviour towards one whom we love. भाव is the mind, the feeling, which in the present passage is equivalent to 'love.' This sense of भाव seems better suited to the present passage than that given by Mallinâtha ; *Cf.* R. VI. 36. III. 4.—एकतुतेन पर्यचीयत, *Cf.* Uttar. " आनन्दग्रन्थिरेकोऽयमपत्यमिति कथ्यते. "—रथाङ्गनामन्, *lit.* having the same name as that of a *carriage-wheel.* It is a notion with poets that though the male चक्रवाक and its mate are separated from each other by night, yet their mutual love is all the stronger for their separation.

P. 75. St. 26.—शरीरयोगजैः, 'arising from his contact with the body of his son.'—चिरात्, 'acquired, after a long while,' *i. e.* after a period of unsatisfied longings, the knowledge (or realization) of the deliciousness of the touch of a son. It may also mean 'attained, for a long while, to the condition of enjoying, &c ' or 'acquired (*i. e.* recovered) after a long while (so benumbed was he with joy), the consciousness of the pleasure of a contact with his son. —उपान्तसंमीलितलोचनः, 'with his eyes closed at the extremities,' as if to concentrate powers of all his senses to receive the pleasure, which otherwise could be received only by the sense of touch.

P. 75. St. 27.—स्थितेरभेत्ता, 'No transgressor of the order,' *i. e.* preserver of the traditions and customs handed down from his ancestors. *Cf.* Cháritravardhana: " एतेन स्वाचारनिष्ठत्वोक्तिः, "—स्वमूर्तिभेदेन =विष्णुना. On this epithet Cháritravardhana remarks: " यथा सत्वं प्रधानं दाक्षिण्यादि दृष्ट्वा सर्गं स्थितिमन्तं ब्रह्मा मेने तद्वत्स्रष्टृचुपमयान्वयस्यानन्यमुक्तं." *Cf.* Dinakara: " ब्रह्मत्वे सृजते लोकान्विष्णुत्वे पालयत्यपि रुद्रत्वे संहरत्येव तिस्रोऽवस्थाः स्वयंभुवः इत्युक्तत्वान्मूर्तिभेदत्वम्." *Cf.* **St. 16. canto X.**

P. 75. St. 28.—वृत्तचूलः, 'After the ceremony of tonsure had been performed.' चूडाकर्म is the ceremony of cutting off all the hair on the head of a child, three years old, except one lock on the crown ; for the ceremony see Nârâya*n*a Bhatta's प्रयोगरत्न, under that section.—काकपक्षकैः, Locks round the ears, so called, perhaps, from their dark colour and their position on the sides of the head,

like the two wings of a crow. Side-locks also are left especially among boys of the क्षत्र race.—अमात्यपुत्रैः 'Attended by sons of Ministers.' अमात्य is derived from अमा *ind.* 'at home,' 'in the house,' and the affix त्य (*Cf.* नित्य, तत्रत्य &c..) and means originally a companion at home, a follower, and hence a counsellor, a minister. *Cf.* Pánini, IV. 2. 104.—सवयोभिः, Cháritravardhana explains this by "समानवयस्कचलकाकपक्षकैः."—समुद्रं, Here Cháritravardhana notes "समुद्रस्य दृष्टान्तेन वाङ्मयस्यापारत्वमुक्तं," and further observes, "वृत्तचूडकमालिपिसंख्यानां चाथ युञ्जीत इति चाणक्यः."

P. 76. St. 29.—उपनीतं, उपनयन is a ceremony of investiture with a sacred thread.—क्रियाहि वस्तूपहिता प्रसीदति, 'for instruction bears fruit if it is imparted to a distinguished pupil.' On क्रिया *Cf.* Mv. I. 15. "शिष्टा क्रिया &c." Compare also Hi. "नाद्रव्ये निहिता काचित् क्रिया फलवती भवेत् । न व्यापारशतेनापि शुकवत्पाठ्यते बकः." Note its proverbial nature.

P. 76. St. 30.—चतुर्णवोपमाः, On this epithet Cháritravardhana observes : "एतेन विद्यानां महत्त्वं"—विद्याः, Vallabha, like Mallinátha, quoting कामन्दक adds the following "आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्च तत्सां राजविद्याः" *i. e.* आन्वीक्षिकी 'Logic and Metaphysics,' त्रयी 'the triple Veda,' वार्ता 'practical arts such as agriculture, commerce, medicine &c.,' दण्डनीति 'the science of government.' And says, आन्वीक्षातर्कविज्ञानं धर्माधर्मौ त्रयी स्मृतौ । पाशुपाल्यं वणिज्या च कृषिवार्ता समाश्रयं दण्डनीत्यास्तु राज्यस्य व्यवस्था परिरुच्यते" (?).—धियः गुणैः On this Vallabha remarks,—"शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा । ऊहापोहार्थविज्ञानं तत्त्वज्ञानं च धीगुणाः" । श्रोतुमिच्छा शुश्रूषा । श्रवणमाकर्णनं । ग्रहणं शास्त्रायुपादानं । धारणमधीतस्याविस्मरणं । ऊहः पूर्वपक्षः । अपोहः समचनस्योगादिव्यानं (?) तत्त्वज्ञानं परमार्थस्वरूपम्." These are (1) earnestness, (2) hearing, (3) acceptance, (4) digestion, (5) thoughtful discussion and selection, (6) thoughtful rejection, (7) comprehension, (8) knowledge of truth.

P. 77. St. 31.—त्वचं स मेध्यां परिधाय, *Cf.* Uttar. "धत्ते त्वचं रौरवीं."

P. 77. St. 32.—यौवनभिन्नशैशवः, 'who had broken up from his boyhood by means of his youth,' *i. e.* who had just ceased to be a boy and arrived at the period of youth. Here Pandit observes, 'The poet seems to have had in his mind the growth of a bamboo, that shoots up in its growth by breaking open one knot after another.'—कलभः 'A young elephant.' Here Cháritravardhana quotes the following from हेम, "कलभः करशावकः"—गाम्भीर्यमनोहरं, *lit.* 'charming to behold on account of his dignified bearing.'

P. 77. St. 33.—**गोदान**, is the ceremony of cutting the hair. In this ceremony the *mustache* of a youth of 16 or 18 is shaved for the first time shortly before marriage. On this Chàritravardhana has the following: " गोदानं षोडशवर्षनिष्पाद्यं व्रतं, " and analyses, " गवां रोम्णां दानं खण्डनं यत्रेति । एव निरुक्तिः । ब्रह्मचर्यमाषोडशात् ततो गोदानानन्तरं दारकर्म इति चाणक्यः, " and Sumativijaya observes: " गोप्रशंसापूर्वकं तद्दानप्रकारः. " On this Pandit remarks and says: ' गोदान, originally whiskers. This ceremony differs from the चूडाकर्म in that it is performed when mustache is shaved for the first time. See Nàrâya*n*a Bhatta's *Prayoga-Ratna*. After all, those scholars that derive the word from गो a cow, and दान a gift, meaning a cow gift, from cows being given as presents on the occasion of the Godána ceremony, may be nearer the truth than Mallinâtha.' See commentary. —**विवाहदीक्षां निरवर्तयत्**, 'caused the marriage vow to be performed.' दीक्षा is the assumption of a particular observance or rules during the performance of a ceremony. A sacrificer is said to take the यज्ञदीक्षा, *i. e.* the vow to observe particular rules of conduct, till the close of the sacrifice. In the same manner the young prince, taking up the विवाहदीक्षा, binds himself to live in the condition of a married man until he should enter the वानप्रस्थाश्रम.—**दक्षसुताः**, *viz.*, the twenty-seven, out of the whole number of fifty, that married the moon. They are the twenty seven asterisms. दक्ष was the son of Brahman and one of the Prajâpatis or patriarches.

P. 78. St. 34.—**अंसलः**, Sumativijaya translates it by " मनोज्ञस्कन्धः. " The suffix ल (लच्) denotes *strength*.—**कपाटवक्षाः**, analyse " कपाटवद्विशालं विस्तीर्णं वक्षो हृदयं यस्य सः. "—**परिणद्धकन्धरः**, analyse " परिणद्धा दृढा कन्धरा ग्रीवा यस्य सः. "

P. 78. St. 35.—**नितान्तगुर्वी**. On this epithet Chàritravardhana observes: " चिरकालधारणमतिगुरुत्वं."—**लघयिष्यता**, 'intending or wishing to lighten.'—**इति**, the particle denotes *cause*.—**निसर्गसंस्कारविनीतः**, 'modest by nature and educated by the perfection of arts.' *Cf.* Chàritravardhana: " निसर्गेण स्वभावेन शास्त्रशुश्रूषाग्रहणाभिनिवेशादिना वा । ग्रन्थबोधजन संस्कारेण वा विनीतो नम्रः । सहजसंस्कारवासनायुक्तः इत्यन्यः । " भ्रातरं वा सुतं वापि यौवनेन निवेशयेत् " इति कामन्दकः. Here Pandit observes, ' There is a zeugma here in the word विनीत, as it means both modest when taken with निसर्ग, and educated or instructed when construed with संस्कार. *Cf.* also कामन्दकः " विनयोपग्रहान्भूत्यै कुर्वीत नृपतिः सुतान् । अविनीतकुमारं हि कुलमाशु विशीर्यते । विनीतमौरसं पुत्रं यौवराज्येऽभिषेचयेत्. "

P. 79. St. 36.—**अनन्तरं**, 'next.' 'after this,' 'not distant from.' —**श्रीरंगेनागच्छत**. On this Cháritravardhana notes: "प्रभावः सचिता मैत्री त्यागः सत्यं क्षमार्जवं । कुलं शीलं दमश्चेति गुणाः संपत्तिहेतवः" इति कामन्दकः.

P. 79. St. 37.—**घनव्यपायेन**, analyse "घनानां मेघानां व्यपायो नाशो यत्र तेन." 'By the dispersion of clouds.' *i. e.* by the setting in of शरद् season.—**विभावसुः** explain विभा प्रभा सैव वसु वित्तं यस्य सः. 'One whose wealth is its light,' hence fire.

P. 79. St. 38.—**शतक्रतूपमः**, 'With Indra for his counterpart,' and शतक्रतु means 'having, or honoured by, a hundred sacrifices.' Indra is represented as obstructing any mortal trying to spread a hundred sacrifices, fearing lest he himself should be superseded by his mortal rival. A hundred अश्वमेध sacrifices generally elevates the sacrificer to the position or rank of Indra. This will explain verses 39, 48, 49 and 50. On this Pandit observes: 'who was like or second only to *Him of one hundred intellects.*' शतक्रतु is a very frequent epithet of Indra in the Veda, and western scholars generally translate it by *possessed of one hundred, i. e. of many intellects.* It is quite possible that the Vedic epithet शतक्रतु may have been misunderstood by the prosaic minds of the post-Vedic ages, and may have given rise to the current myth of Indra having performed one hundred sacrifices before he became the leader of the gods.' In Vaidic literature क्रतु means both कर्म as well as प्रज्ञा, and hence, शतक्रतु means one who has performed hundreds of great deeds.—**तुरंगरक्षणे**, explain "तुरेण त्वरया वा गच्छतीति तुरंगः or तुरंगमः."

P. 80. St. 39.—**गूढविग्रहः** = गुप्तकायः, 'with his body concealed,' *i. e.* without being seen by Raghu.—**जहार**, Indra is always represented as being very jealous of the success of any mortal, in the aquisition of the merit arising from asceticism, fearing lest he should himself be superseded by his mortal rival. See R. III. 38.

P. 80. St. 40.—The repetition of च in the 2nd and 3rd line denotes *simultaneous occurrence* of two events. *Cf.* St. 6. Canto **X.** On the repetition of च, Vallabha remarks "द्वौ चकारौ तुल्यकालापेक्षां गमयेत," and Charitravardhana says "चकारौ तुल्यकालत्वद्योतकौ [प्रतिबाधकौ Ms.]."—**विषादलुप्तप्रतिपत्ति**, 'with their presence of mind (discrimination or judgment) destroyed by dejection,' *i. e.* they were reduced, by the sudden disappearance of the sacrificial steed, to such a state of dejection that they were at a loss to know what to do further.—**यदृच्छयागता**, 'accidently came across the way.'—**श्रुतप्रभावा**,

' of well known power. ' *Cf.* Châritravardhana : " आकर्णितमाहात्म्या, " also Dinakara : " श्रुतः प्रभावो रघूत्पत्तिवरप्रदानलक्षणो यस्याः सा धेनुः. "

P. 81. St. 41.—**तदङ्गनिस्पन्दजलेन,** Mallinâtha translates निस्पन्द by " द्रव ," and Châritravardhana by " स्वेद." Vallabha also agrees with Châritravardhana in his explanation of the above epithet. —**सतां**, subjective genitive.—**अतीन्द्रियेषु भावेष्वप्युपपन्नदर्शनो बभूव,** ' came to be of power of vision grown even with regard to objects transcending the organs of sense.' Châritravardhana translates भाव by " प्रमेय, " and Vallabha by " पदार्थ. " This gift of a divine sight to prince Raghu is one of such things as the " प्रभाव " of Vasis*t*ha's cow could accomplish.

P. 81. St; 42.—**पर्वतपक्षशातनं,** explain " शातयति नाशयतीति शातनः पर्वतपक्षाणां शातनः छेदकः पर्वतपक्षशातनस्तं. " पर्वत is derived from पर्व् 1. P. 'to fill,' with the affix अतच् . *Cf.* " भृमृदृशियजिपर्विपच्यमितमिनामिहर्येभ्योऽतच् " U*n*âdi Sûtra, 390. S. K. p. 331. ' The destroyer of the wings of the mountains,' *i. e.* of the clouds. Indra is said to have destroyed the wings of the mountains that once flew about to the great annoyance of the people. Only mount Mainâka escaped. Compare also the following : It is said that the demon Hira*n*yâksha endowed the mountains by the power of his magical art (माया), with wings. Possessed of wings the mountains began to torment the world and people in general. But when Indra saw this he lopped off the wings of the mountains and fixed them in their respective positions. See note to 73. VI.

P. 81. St. 43.—**शतैः,** *Cf.* Indra's other name is " सहस्राक्ष. " ' the thousand-eyed god,' which refers us to the well-known story of his illicit love with अहल्या, Gautama's spouse. Indra once ravished Ahalyâ the wife of the sage Gautama. The Muni's curse on this account produced a thousand sores in the body of the Lord of gods; but these were afterwards changed into so many eyes.—**अनिमेषवृत्तिभिः,** ' by his eyes free from winking operations,' because it is one of the characteristic attributes of the gods that their eyes always remain open —**हरिभि,:** Sumativijaya translates it by " **नीलवर्णैः** " ; but Châritravardhana and Vallabha agree with Mallinâtha. —**वाजिभिः,** explain " वाजो वेगोऽस्त्येषामिति वाजिनः. "—**गगनस्पृशा,** On this epithet Châritravardhana remarks : " गगनस्पृशा धीरत्वेन भीत्यभावोक्तिः."

P. 82. St. 44.—**क्रियाविघाताय,** ' for the obstruction of sacrificial works,' क्रिया here stands for sacrifices and other ceremonies connected therewith.

P. 82. St. 45.—**त्रिलोकनाथेन**, Châritravardhana analyses this in the following way, " त्रयाणां लोकानां समाहारस्त्रिलोकं तस्य नाथस्तेन अथवा त्रयश्च ते लोकाश्चेति त्रिलोकाः इति द्विगोरित्यत्र समाहारद्विगोरेव ग्रहणात् । ङीपोऽभावः प्रकृतैव परवल्लिङ्गता । तेषां नाथस्तादृशेन. "—**च्युतः**, *Cf.* Bhatti, " अच्योष्ट सत्वान् नृपतिश्च्युताशः. "—**नियम्याः** &c., On this epithet Dinakara holds the following discussion. " ननु नियम्या 'इत्यत्र गदमदचरयमश्चानुपसर्गे' Pâ*n*ini, III. 1. 100. इत्यादिनोपसर्गाभावे विहितत्वात्कथं यत्प्रत्ययः । उच्यते । पदसंस्कारपक्षे केवलायमेर्यत्प्रत्ययः । पश्चान्निशब्देन समासः । यद्वा । 'तत्र न भवेद्विनियम्यम्' इति कात्यायनप्रयोगज्ञापकात्साधुः । यद्वा । उपसर्गप्रतिरूपको निशब्दो निपातः । यद्वा । नियमे साधवो नियम्याः । 'तत्र साधुः' Pâ*n*ini, IV. 4. 98. इति यत्प्रत्ययः । यद्वा । नियममर्हतीति यत् ।

P. 82. St. 46.—**श्रुतेः पथो दर्शयितारः**, 'the guides of the path of the Veda,' *i. e.*, the teachers of the precept given by the Veda. Here Kâlidâsa includes Indra, among the upholders of the Vaidic rites, in conformity with the theory that the Vedas are eternal and thus older than Indra. Châritravardhana, Vallabha, Dinakara and Sumativijaya, however, read शुचेः for श्रुतेः, and explain it by " शुद्धस्य पथः, " " निर्मलस्य मार्गस्य " &c. See readings.—**पद्धतिम्**, explain " पद्भ्यां हन्ति गच्छन्तीति पद्धतिस्तां &c. " Mark the instance of the root हन् signifying 'the act of going.'—**मघवन्**, this epithet is usually derived as मह्यते 'one who is worshipped,' though the view taken in the translation (according to one of the interpretations of the commentary on Amara) seems more suited to the context. Note the proverbial nature of the second half of the verse.

P. 83. St. 47.—**प्रगल्भं**, on this epithet Châritravardhana observes: " प्रगल्भमिति विस्मयहेतुः. "—**दिवौकसां**, analyse, दिवं स्वर्गः ओको निवासस्थानमेषान्ते तथोक्तानां. "—**निशम्य**, 'having heard,' as distinguished from निशाम्य 'having seen.'

P. 83. St. 48.—**यशोधनैः**, on this epithet Châritravardhana observes: " यशो धनैरिति सोल्लुण्ठं. "—**राजन्यकुमार**, The word राजन्य is derived from राजन् with the affix यत्.—**इज्या**, derived from the root यज् with the affix क्यप्. *Cf.* Châritravardhana, " व्रजयजोर्भावे क्यप् " Pâ*n*ini, III. 3. 98.

P. 83. St. 49.—**शतक्रतुं**, Châritravardhana analyses the word in the following way. " शतं क्रतवो यज्ञा यस्य स तं तथोक्तं &c. "

P. 84. St. 50.—**अपहारितः**, On this epithet Châritravardhana remarks, " हरन्तमपि हरणोन्कावपि रूढ्यभिमानेन हारितः इत्युक्तं. "—**कपिलानुसारिणा**, कपिल was a famous sage of ancient times. He was the founder of the Sânkhya system of philosophy. He is often identi-

fied with Vishnu himself. For the story of Kapila taking away the sacrificial horse and burning the sons of Sagara, who on a long search after the stolen horse, traced it to the sage, see Vishnu Purâna. Vol., II. Chapter 26th. verses 146-147. *Cf.* Châritravardhana, "पुरा यज्ञाश्वमन्वेषयमाणास्तुरगापहार्ययमिति वदन्तः कपिलमुनिना व्यापादितास्तथा मयापि त्वमपि नाश्यसे इति कपिलानुकृत्या सूचयति."—**सगरस्य सन्ततेः** Sagara a king of Ayodhyâ of the solar race and son of king Bâhu who was driven out of his kingdom by the Haihayas. A rival wife gave Sagara's mother a poisonous drug to prevent her delivery. This poison confined the child in the womb for seven years. After this Bâhu died; and his wife gave birth to a prince who was named Sagara by the sage और्व. He made the Yavanas shave their heads entirely &c., *Cf.* Vâyu Purâna, Vol. II. Chap. 26.

P. 84. St. 51.—**यदि सर्ग एषते,** *Cf.* Dinakara "सगरसुतपदवीं नेष्यामीत्येवं मतः सर्गो निश्चयः." Châritravardhana, Vallabha and Sumativijaya read गर्वः instead of सर्गः, see readings.

P. 85. St 52.—**आलीढविशेषशोभिना,** 'Appearing more graceful by the *âlidha.*' आलीढ is one of the eight attitudes or postures in the art of archery, in which the right leg is stretched forward, and the left retracted or bent down. *Cf.* Vallabha, "पुरा किल भगवान् त्रिपुरदिधक्षया ऊर्ध्वं दिव्यं वर्षशतमालीढविशेषेण स्थानाधिक्येन ऊर्ध्वमुखस्तिष्ठन् शरं ससायकं करिष्यमाण आस्ते । उक्तश्च । "आलीढं प्रथमं स्थानं । प्रत्यालीढं द्वितीयकं । वैशाखन्तु त्रितीयं स्याच्चतुर्थं समपादकं । पञ्चमं चापि कूर्माख्यं । षष्ठं पद्मासनं तथा । सप्तमं च दुराकारं । अष्टमं गरुडक्रमं" इत्यष्टावासनानि । Also Châritravardhana: "नामिता पूर्वजंघा च पश्चिमा प्रगुणा भवेत् । असमो मध्यकायः स्यादालीढस्य तु लक्षणम्" इति कश्चित्. Compare Agni Purâna: "अङ्गुष्ठगुल्फपार्ष्ण्यंघ्रिश्लिष्टाः स्युः सहिता यदि । दृष्टं समपदं स्फातमेतल्लक्षणतस्तथा । बाह्याङ्गुलिस्थितौ पादौ स्तब्धजानुकमायतौ । त्रिवितस्त्यन्तरे स्थानमेतद्वैशाखमुच्यते । हंसपंक्त्याकृतिसमे दृश्येते यत्र जानुनी । चतुर्वितस्त्याविच्छिन्ने तदिदं मण्डलं स्मृतं । भुग्नवामपदं पश्चात्स्तब्धजानूरुदक्षिणं । वितस्त्यः पञ्चविस्तारे तदालीढं प्रकीर्तितं । एतदेव विपर्यस्तं प्रत्यालीढं प्रकीर्तितं." *Cf.* "पायात्त्रीलोत्पलाभा रविशशिविलसत्कुण्डलालीढपादा &c.," also Ku. III. 70. "स दक्षिणापाङ्गनिविष्टमुष्टिं नतां समाकुञ्चितसव्यपादम् । ददर्श चक्रीकृतचारुचापं प्रहर्तुमभ्युद्यतमात्मयोनिम्" which Mallinâtha explains as "आलीढाख्यस्थानकं स्थितमित्यर्थः." The five postures are (1) वैशाख, where the legs are half a cubit apart; (2) मण्डल, in the form of a gateway; (3) समपदं, both the legs in the same position; (4) आलीढ, the right leg advanced with the left bent behind; (5) and प्रत्यालीढ, the reverse. On the occasion of burning त्रिपुर.—**विडम्बितेश्वरः,** *Cf.*

Chāritravardhana, " विडम्बितोऽनुकृतः ईश्वरो येन सः । त्रिपुरदाहोद्यत ईश्वर इव स्थित इत्यर्थः. "

P. 85. St. 53.—**अवष्टम्भमयेन पत्त्रिणा**, ' With an arrow consisting of his defiance,' *i. e.* challenge, or bold front. अवष्टम्भ does not mean here, as Pandit takes it, ' with an arrow consisting of a post ' *i. e.* as large as a post. But it would be more heroic for Raghu to have contented himself with a mere challenge and waited to see his enemy Indra open fire. It was impossible on the part of Raghu to have discharged an arrow which was as large as a post or pillar. Mallinātha's meaning does not appear clear. Chāritravardhana interpretes it in a better way when he says, स्थैर्येणेन ' with the firmness of his mind ,' *i. e.* to wait patiently with a defiant attitude and thus to give a mere challenge or breathe defiance. Mallinātha's स्तम्भ may also mean ' firmness of mind ' *i. e.* the act of waiting patiently. And hence to stand in such an attitude so as to breathe defiance or challenge. The word अवष्टम्भ also means resoluteness or self-confidence so as to give a clear sense of the act of breathing defiance or challenge. अवष्टम्भमयेन पत्त्रिणा may also mean ' function-stopping arrow,' ' paralyzing arrow.' *i. e.*, all functions of Indra stopped or paralyzed, as it were, when he was wounded on the breast by that arrow of the prince Raghu. It would be better to understand Mallinātha in the senses suggested above so as to arrive at a definite sense of the word. Chāritravardhana also translates it by " काञ्चनमयेन वा " and quotes : " प्रथमं स्वर्णबाणताडनं कविसमयविरुद्धमिति कश्चित् " ; but was there ever an arrow made of gold ? Dinakara explains it by " अवष्टम्भः सुवर्णं तस्य विकारोऽवष्टम्भमयस्तादृशेन रघोः शरेण. " Vallabha says : " अवष्टम्भप्रधानोऽवष्टम्भमयस्तेन रघोरभिमानमयेन पत्त्रिणा &c., " this appears better. Sumativijaya renders " अवष्टम्भमयेन by " पराक्रममयेन, वेगमयेन and further on says किंविशिष्टेन पत्त्रिणा अवष्टम्भमयेन सुवर्णमयेन."—**नवाम्बुदानीकमुहूर्तलाञ्छने**. ' On his bow, which became for a moment *the standard or mark of a set of fresh clouds,* ' *i. e.* which resembled for some time the rainbow, which appears when fresh clouds gather in the skies in the beginning of the monsoons. *The standard of fresh clouds* is the rainbow, which is also called इन्द्रधनुः.

P 86. St. 55.—**कुमारविक्रमः**. On this Chāritravardhana observes: " अनेन इन्द्रेण सह संग्रामं हतुः. "—**कर्कशाङ्गुली**. On this epithet Chāritravardhana notes· " इति वज्रकाठिन्योक्तिः । संस्माद्दनन्तु योग्जातिः. "—**पत्त्रविशेषकाङ्किते**, ' Conspicuous with,' *i. e.* ornamented with the leaflike marks of sandal besmearing painted by S'achi,' *i. e.* the left

rm, S'achi's pillow, marked by impressions received from her painted cheecks. पत्रविशेषक is the same as पत्रलेखा or पत्रावली, used elsewhere by the poet. *Cf.* Châritravardhana : " अनेन दुःखानभिज्ञत्वम् . "—सुरद्विपास्फालनकर्कशाङ्गुली, ' the fingers whereof were rough with the goading of the elephant of the gods. ' *Cf.* Ku. III. 22. " ऐरावतास्फालनकर्कशेन हस्तेन पस्पर्श तदङ्गमिन्द्रः. " On this epithet Dinakara notes, "सुरद्विपेत्यादिविशेषणद्वयेन शक्रस्य वीरत्वं सुकुमारत्वश्चोक्तं. "

P. 86. St. 56.—मयूरपत्त्रिणा, [Châritravardhana explains it as, " मह्यामतिशयेन रौतीति मयूरः । पृषोदरादित्वात्साधुः." But, "मीनातेरूरन् " U*n*âdi Sútra, 67. S. K. p. 322 is the rule from which the word is derived ; the root मी 9. P. with affix ऊरन्. "—जहार, On this Châritravardhana observes, " एतेन पूर्वोक्तकुमारवासनत्वोक्तिः" (?).

P. 86. St. 57.—सिद्ध, On this Pandit says : " This word appears to be used in the present passage in the sense of ' gods ' generally. The Siddhas are, properly, certain beings, eighty-eight thousand in number, of subdued senses, continent and pure, undesirous of progeny and victorious over death, exempt from covetousness and concupiscence, love and hatred. ' See Wilson's Vish*n*u Purâ*n*a, p. 227.—जयैषिणोः, Châritravardhana notes, इति शक्तिकथनं. "

P. 87. St. 58.—स्वतश्च्युतं, See above, II. 75. III. 11.—अम्बुद: On this Châritravardhana notes, " अम्बुदपदोक्त्या जलवर्षेण निवारणोक्तिः."

P. 87. St. 59.—बिडौजसः, Châritravardhana analyses, " बिडं भेदकमोजो यस्य स तस्येन्द्रस्य, " and further observes : " विट् व्यापकमोजो यस्येति विग्रहे वर्णस्य व्यत्ययः. " See commentary.—प्रमथ्यमानार्णव° &c. the gods and the demons under the direction of Vish*n*u once churned the ocean of milk with mount Mandára for the churning-handle and the serpent Vasukî as a rope and Vish*n*u (in the form of a tortoise) as the pivot. Ambrosia, the Goddess Lakshmî and various other precious things came out of the churning. See Rámâya*n*a Sundarakâ*n*da.—शरासनज्यां, On this Châritravardhana observes, " शरासनपदेन दृश्च्छेदनत्वं. "—हरिचंदनाङ्किते, On this Châritravardhana quotes the following : " गोशीर्षे कुंकुमे देववृक्षःर्थाहरिचन्दन इत्यर्धनारीश्वरः" and further observes, " एतेन पराभिभावनानभिज्ञतोक्ता. "

P. 87. St. 60.—स्फुरत्प्रभामण्डलं, ' with a blazing circle of radiance.' *Cf.* " त्रिशूलं चापिरुद्रस्य वज्रमिन्द्रस्य चाधिकं । दैत्यदानवसंहर्तुः सहस्रकिरणात्मकं. "

P. 88. St. 61.—सैनिकाश्रुभिः, Tears trickled down on account of his fall, and shouts of joy greeted him when upon his legs again.

But effect fallowed cause without a perceptible interval between, so that one might be led to presume simultaneity. So devotedly loving were the soldiers to prince Raghu.

P. 88. St. 62.—**वृत्रहा**, 'The destroyer of V*ri*tra.' On this epithet Pandit remarks, 'V*ri*tra is the name of the cloud that conceals the cows of heaven (rain waters) within its caves, and for killing whom by his thunderbolt and for the consequent liberation of the cows, Indra is so often praised by the poets of the hymns of the *Ri*gveda.'—**पदं हि सर्वत्र गुणैर्निधीयते**, 'Virtues set foot everywhere,' *i. e.* virtues prevail everywhere. *Cf.* Châritravardhana, " यत्र च गुणास्तत्र तोषः । स्वसमर्पितपदेन रघुपराक्रमेण तोषो युक्त इति वीर्यातिशयेन साम्यं [°शये निशाम्यं Ms.]. " Vallabha observes, " वैराणि कार्योपनिबन्धनानि । निर्मत्सरा एव गुणेषु सन्तः. " *Cf.* Uttar, " गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः," also Kirâta, " गुणाः प्रियत्वेऽधिकृता न संस्तवः. "

P. 88. St. 63.—**स्फुटं**, 'openly.' For at first he felt only pleased secretly at the show of valour by the Prince, but had not given expression to his feeling.

P. 89. St. 64.—**प्रतिसंहरन्निषुं**, *Cf.* Manu, " नायुधव्यसनप्राप्तं नार्तं नातिपरिक्षितं । न भीतं न परावृत्तं सतां धर्ममनुस्मरन् . "

P. 90. St. 66.—**त्रिलोचनैकांशतया दुरासदः**, On this epithet Châritravardhana has the following, " दीक्षितस्याष्टमूर्तित्वं, " and Vallabha has, " अष्टमूर्तित्वाद्यजमानलक्षणांशभावाद्दुरभिभवो दुराकलनीयः । दीक्षितं ह्युग्रः प्रविशतीत्यागमः ", and Dinakara remarks, " दीक्षितत्वात्त्रिलोचनस्यैकांशत्वेन दुरधिगमः." Also compare, " पृथिवीसलिलं तेजो वायुराकाशमेव च । सूर्याचन्द्रमसौ सोमयाजी चेत्यष्टमूर्तयः. " —**सदोगतः**, *i. e.* " सभास्थितः." *Cf.* Dinakara, " सदोगतः इति पदेन बहुषु लोकेषु सत्स्वपि वचनं न घटते इति द्योत्यते." This refers to the custom that the sacrificer or यजमान, when initiated into the sacrificial दीक्षा, is on no account to leave his allotted seat, and look to any other affair, except that enjoined by the sacrifice ; and hence Raghu found it difficult to announce personally his own success to the king surrounded as he was by a large assembly of sages.—**विशांपतिः**, 'the lord of the people.' —**शृणोति**, is here equivalent to शृणुयात्.

P. 90. St. 67.—**यथागतं**, *i. e.* 'as he had come.' Indra suddenly vanished (disappeared) from the mortal sight as he was, when the sacrificial steed was lost all of a sudden. Châritravardhana, however, has the following on this, ' यथा आगतं तथैव ययौ गतः । न तु रघुं जित्वा । मातलिसारथित्वेन शीघ्रगमनध्वनिः ", and Vallabha has,

" येन मार्गेणायातस्तेनैव गत इत्यर्थः." Dinakara identically the same with Châritravardhana.—**सदोगृहं**, Châritravardhana renders it by " दीक्षामण्डपं." and Vallabha by " यज्ञमण्डपं. "—**नातिप्रमनाः**, because though successful, he had not recovered the sacrificial steed. A compound word like नैकधा belonging to the species called **नसमास**, but not नञ्समास.

P. 90. St. 68.—**कुलिशत्रणाङ्कितं**, analyse, " कुलिशस्य वज्रस्य व्रणैः प्रहारैरङ्कितं चिह्नितं. "—**हर्षजडेन**, Châritravardhana, Vallabha, Sumativijaya and Dinakara read हर्षचलेन instead of हर्षजडेन. Vallabha: " हर्षचलेन आनंदचपलेन. " Châritravardhana: " आनंदास्थिरेण, " and Dinakara has " हर्षवशात्सकम्पेन."—**अभ्यनन्दत्**, 'congratulated,' 'hailed with joy.'

P. 91. St. 69.—**सोपानपरंपरामिव.** Probably suggested by आरुरुक्षुः.—**ततान**, 'stretched out.' 'constructed,' '*made* or *formed.*' This verse illustrates how तन्, which means originally to *spread, stretch*, has also acquired the sense of *to perform, to make.*—**इति**, The Southern and the Deccan Mss. omit the following authority cited by the Northern Mss. " इति हेतुप्रकरणप्रकर्षादिसमाप्तिषु " इत्यमरः।

P. 91. St. 70.—**नृपतिककुदं सितातपवारणं**, 'The royal insignia consisting of the white umbrella.' नृपतिककुदं is in the same case by opposition with सितातपवारणं.—**शिश्रिये**, 'entered,' 'betook himself to &c.'—**तरुच्छायां**, On this epithet Dinakara has the following note: " छत्राभावेऽपि छायासंपादनार्थं छायापदप्रयोग."—**देव्या सह**, *Cf.* Manu, VIII. " संत्यज्य ग्राम्यमाहारं सर्वं चैव परिच्छदम्। पुत्रेषु भार्यां निक्षिप्य वनं गच्छेत्सहैव वा॥ "

CANTO IV.

P. 92. St. 1.—**सवित्रा निहितं तेजो हुताशनः**, 'fire receiving the lustre imparted to it by the sun.' The seven rays of the sun termed सुषुम्णा, हरिकेश, विश्वकर्मन् , विश्वकार्य, संयद्वसु, अर्वावसु and स्वराज् supply heat severally to the Moon, the stars, and to Mercury, Venus, Mars, Jupitar and Saturn. *Cf.* Vâyu Purâna. Vol. II. chap. 53. verses 7, 11. 12, 13. "चतुर्भूतावशिष्टेऽस्मिन् पार्थिवः सोऽग्निरुच्यते । यश्चासौ तपते सूर्यं शुचिराग्निस्तु स स्मृतः । प्रभा हि सौरी पादेन ह्यस्तं याति दिवाकरे । अग्निमाविशते रात्रौ तस्माद्दूरात्प्रकाशते । उद्यन्तश्च पुनः सूर्यमौष्ण्यमाग्नेयमाविशत् । पादेन पार्थिवस्याग्नेस्तस्मादग्निस्तपत्यसौ । प्रकाशश्च तथौष्ण्यश्च सौराग्नेये तु तेजसी । परस्परानुप्रवेशादाप्याययेते दिवानिशं." *Cf.* Vallabha, "अन्योन्यमधित्तु तेजो निधाय रविरस्तं यातीत्यागमः." Pandit observes, 'सवितृ literally means the 'producer,' as the Vedic poets called the great luminary, because, when he arose in the morning, he produced afresh the creation that had been swallowed up by the night.

P. 92. St. 2.—**अग्निरिवोत्थितः**, Agni, 'fire' here denotes the feeling of jealousy and anger in the minds of other kings who had been conquered by Dilîpa. The prince Raghu was credited with greater valour than his sire; so the uneasiness caused by him was to the jealous fear inspired by the king Dilîpa what a fully blazing flame is to a smoke-enveloped fire. Or it may mean that the prince's advancement to the position of युवराज to strengthen the hands of the king had already been consuming the hearts of other vassal kings with the fire of jealous dread; but as numerous accidents (such as death and the like) might be conceived to stand in the way of his becoming full emperor, that fire was rather smoky with the moisture of hope. When, however, he succeeded his sire to reign in his own person, all hope was lost, and there was quite a burning flame of fire in their hearts. On this epithet Charitravardhana holds the following discussion, "सधूमं ऽभ्युत्थानं । स्थितानामित्यध्याहारादेककर्तृकत्वं । अन्यथा थोता नृप इत्थितोऽग्निरिति संघटना [असंभवात्] । भोजस्त राजन्त इति राजान इति व्युत्पत्तिकार्थो व्यवहितोऽप्यपेक्षते । तेनायमर्थः । तं भूत्वापि राज्ञां राजतामपि राजाभिधानमुद्वहतामित्यर्थः । इति व्याख्यानात्." See also commentary.

P. 92. St. 3.—**पुरुहूतध्वजस्य**, *Cf.* Charitravardhana, "पुरुहूतध्वजो नाम कश्चिद्राजपूज्यः [रामपूज्यः Ms.] इन्द्रकेतुः." and further he remarks: "पुरुहूतो मघो वेति कश्चित्." Compare also Vallabha: "पुरुहूतध्वजस्य इन्द्रमहोत्सवस्य," and he quotes: "गजाकारं चतुःस्तम्भं पुरद्वारे प्रति-

ष्ठितं । पौराः कुर्वन्ति शरदि पुरुहूतमहोत्सवं." Dinakara too appears to have quoted the same with a slight difference : "चतुःस्तम्भं गजाकारं पुरद्वारे प्रतिष्ठितं । पौराः शरदि कुर्वन्ति स शक्रध्वज उच्यते." Some have a different reading of this, "चतुरस्रं ध्वजाकारं राजद्वारे प्रतिष्ठितं । आहुः शक्रध्वजं नाम पौरलोकसुखावहम्" ॥ It appears that पुरुहूतध्वज originally meant (इन्द्रधनुः), which, being the banner of fresh or retiring clouds, was duly worshipped, to do honor to Indra, the god of rain. The custom of worshipping पुरुहूतध्वज alluded to by Kâlidâsa and in the couplet quoted by Vallabha, is no longer observed, at least, in this part of the country. —**नवाभ्युत्थानदर्शिन्यः**, On this Vallabha remarks : "नवाभ्युत्थानं गजारोहणादि पश्यन्ति एवंशीलाः । अभिषिक्तो हि राजा गजेन्द्रमारुह्य स्वपुरं प्रदक्षिणीकुर्यादित्याचारः." Soon after corronation, a king goes in procession on an elephant, attended by all the paraphernalia of royalty.

P. 93. St. 4.—**द्विरदगामिना**, *Cf.* Châritravardhana, "द्वौ रदौ यस्यासौ द्विरदस्तेन गन्तुं शीलमस्य सः । यद्वा द्विरदवद्गच्छतीत्युपमाने णिनिः । एतादृशेन तेन." And adds this, "अभिषिक्तो राजा हस्तिनमारुह्य पुरे भ्रमतीति वृद्धाचारः." Dinakara says, "द्विरद इव द्विरदेर्वा गच्छतीति द्विरदगामिना." Vallabha : "द्विरद इव गच्छतीति द्विरदगामी तेन द्विरदमारुह्य पुरं प्रदक्षिणीकृतवता (च)." All these commentators more or less refer to the sense given by Mallinâtha as a possible interpretation.

P. 93. St. 5.—**पद्मातपत्रेण**, 'The poet does not mean that there was any thing in the appearance of Raghu, which suggested that the umbrella which लक्ष्मी held over his head was made of lotuses, but that when लक्ष्मी is made to serve the king with the umbrella, the only umbrella she could use was a lotus-umbrella, the lotus being her special favourite,' says Pandit. Châritravardhana adds : "लक्ष्मीर्हि पद्मातपत्रेण सम्राजं सेवते इत्यागमः । तत्र द्युतिभराविशेषा छाया आतपाभावो यत्रैव छत्रं तत्रैवातपाभावः संभवतीति । अतः छायासमूहेन छत्रमनुमितमतस्त्वलक्ष्याया लक्ष्म्याः सेवनमपीति चरितार्थः." Dinakara identically the same with Châritravardhana. Châritravardhana gives the substance in following words, "विनापि छत्रेण शिरसि तच्छायामालोक्य नूनमनुरागहृता कमलास्य मूर्ध्नि कमलछत्रमधत्तेति तदालोक ऊहांचक्रिरे इति भावार्थः."—**साम्राज्यदीक्षितं**, see note on विवाहदीक्षा, R. III. 33.—**अदृश्या**, On this epithet Vallabha remarks: "चक्रवर्तिनां मूर्ध्नि पद्माकारा छाया भवति."—**छायामण्डल**° &c., the splendour that surrounded Raghu is attributed by the poet to the invisible lotus-umbrella held over his head by the Goddess Lakshmî who was also invisible. In short such was the splendour of his court that one is led to think that the Goddess Lakshmî was as it were visibly present there. In fact the Goddess of Fortune was not

visible to any one, but as the holding of an umbrella over head is established by its circle of shadow on the ground, so her presence, lotus in hand, was to be inferred from the halo of radiance that was there. The Royal umbrella held over Raghu was rendered superfluous by that lotus. With पद्म and आतपत्र, the छाया means *beauty* and *shadow* respectively.

P. 94. St. 6.—**उपतस्थे**, On this Châritravardhana remarks: "अत्रापि वाणीभिर्भारत्याः सेवनमनुमितं."—**परिकल्पितसांनिध्या**, On this Vallabha observes: "न हि पुरुषमात्रे तादृशं वागर्थकौशलं भवतीति भावः."

P. 94. St. 7.—**मनु**°, Fourteen Manus or rulers of the earth are mentioned, each ruling for 4,320,000 years. The Manu of the present age is the seventh, named वैवस्वत son of Vivasvat or the sun. His son was इक्ष्वाकु from whom the solar kings trace their origin.—**वसुंधरा अनन्यपूर्वेव तस्मिन्नासीत्**, On this Vallabha remarks: "अक्षीणकौशल्वात्."

P. 94. St. 8.—**दक्षिणोः नभस्वानिव**. On this Châritravardhana remarks, "मलयानिलोऽपि सर्वेषां मनो गृह्णाति."—**नातिशीतोष्णा**, On this Vallabha remarks, "मृदुमथावमन्यन्ते तीक्ष्णादुद्विजते जनः। एवं ज्ञात्वा महाराज मा तीक्ष्णो मा मृदुर्भव."

P. 95. St. 9.—**मन्दोत्कण्ठाः कृताः**, 'were rendered of slackened yearning after his father', *i. e.* made less felt.

P. 95. St. 10.—**उत्तरः**, On this epithet Châritravardhana holds the following discussion; "यद्यपि पूर्वशब्दः प्रथमनिर्दिष्टसच्छब्दपरामर्शी तथापि प्रतिनिर्दिष्टपक्षशब्दे कृत्वापादनार्थं पुल्लिङ्गे प्रयुक्तः."

P. 95. St. 11.—**पञ्चानां भूतानां गुणाः**, The five qualities of the five primary elements.' *viz.*, (1) आकाश 'ether' has शब्द (sound), (2) वायु 'air' has शब्द and स्पर्श (tangibility), (3) तेजस 'light' has शब्द, स्पर्श and रूप (shape), (4) अप् 'water' has शब्द, स्पर्श, रूप and रस (flavour), and (5) पृथिवी 'earth' has गन्ध (smell) in addition to the above. Vallabha, however, quotes the following: "पृथ्वी पञ्चगुणा तोयं चतुर्गुणमथानलः। त्रिगुणो द्विगुणो वायुर्वियदेकगुणं भवेत्."

P. 95. St. 12.—**प्रह्लादनाच्चन्द्रः**, explain "चन्दति आह्लादयतीति चन्द्रः," derived from the root चन्द् 1. P. 'to shine', 'brighten,' with the affix रक्. *Cf.* "स्फायितञ्चिवञ्चि &c." Uṇâdi Sûtra. 170. S. K. p. 325; and चन्द्र, originally, is an adjective meaning '*shining*', 'of a bright colour.'—**अन्वर्थः**, on this Châritravardhana observes, "अर्थमनुगतोऽन्वर्थ इति कैयटाः."—**राजा प्रकृतिरञ्जनात्**, the word राजन् is derived from the root राज् 1. P. A. 'to shine' and has nothing to do with the

root रञ्ज् 'to please &c.'; or it may perhaps have sprung from the root रंज् since roots have several meanings. On this Châritravardhana holds the following discussion, "ननु कथं रञ्जनादिति। यावता 'रजकरजनरजःसूपसंख्यानं' इत्यनेन अनुनासिकलोपेन भाव्यं। अत्रोच्यते। रजःसाहचर्याद्रञ्जनशब्दस्यौणादिकस्य तत्र ग्रहणं अत्र तु रञ्जनशब्दो ल्युट्प्रत्ययान्तोऽतो न दोषपोषः। अथवा रञ्जनाद्राजा इति पौराणिकी व्युत्पत्तिः। आयतनास्तु राजृदीप्तावित्यस्य व्युत्पत्तिं प्रतिपन्नाः"।—प्रकृति°. On this epithet Vallabha quotes the following: "दुर्गाध्यक्षो धनाध्यक्षो धर्माध्यक्षश्च भूपतिः। दूतः पुरोधा दैवज्ञः सप्त प्रकृतयः स्मृताः."

P. 96. St. 13.—**चक्षुष्मत्ता**, analyse "चक्षुर्विद्यते यस्यासौ चक्षुष्मान् तस्य भावः."

P. 96. St. 14.—**लब्धप्रशमन**, Three of our Northern manuscripts add the following after "ज्ञाता" in the commentary of Mallinâtha; "रक्षा पौरजनस्य देशनगरग्रामेषु गुप्तिस्तथा योधानामपि संग्रहोऽपि तुलया मानव्यवस्थापनम्। साम्यं लिङ्गिषु दानवृत्तिकरणं त्यागः समानेऽर्चनं कार्याण्येव महीभुजां प्रशमनान्येतानि राज्ये नवे." But the Southern and the Deccan Mss. in our possession omit it. *Cf.* Vallabha: "लब्धे राज्ये राज्ञः पौरजनपदयोधानामनुग्रहः। गुप्तिरक्षणेष्वप्रमादः। तुलामानं भाण्डवृद्धिः। सम्यग्यथोचितप्रवृत्तिः। अनुचितनिवृत्तिः। सत्करणमर्थव्यवस्थापनञ्चेति षट्प्रशमनान्यत एव स्वस्थं धीरामिति." Compare also Châritravardhana: "अथवा पौरजनपदयोधानामनुग्रहः। गुप्तिरक्षा। अनालस्यं तुलाभाण्डवृद्धिः [तुलाभीरभाण्डशुद्धिः Ms.] अर्थव्यवस्थापनं सम्यक्येते (?) वृत्तिः। सत्करणन्तु लब्धप्रशमनं इति कश्चित्." Note the various characteristics of Autumn as described in the stanzas from 15 to 21.

P. 97. St. 15.—**निर्वृष्ट** &c., the epithets मुक्तवर्त्मा and सुदुःसहः can both be applied also to प्रताप 'valour' or 'glory' of the king Raghu. The meaning would be that the valour of Raghu caused fear to his enemies, now that the passing off of winter opened his way for expeditions of conquest.

P. 97. St. 16.—**वार्षिकं धनुः**, Vallabha: "तैजसं धनुः" *i. e.* the rainbow. During the autumn, Indra with his rainbow produces rain and thereby prosperity to the people; and the king could not go out on his expedition on account of the rainy season. Autumn over, Raghu began his expedition of conquest which brought wealth and prosperity to the people. and enabled him by the wealth acquired thereby to propitiate the gods with sacrifices. *Cf.* Canto I. St. 26.—**संजहार**, 'contracted,' 'withdrew.'—**रघुर्जैत्रं धनुर्दधौ**, 'Raghu took up the victorious bow,' *i. e.* he started on an expedition of the conquest of quarters.—**पर्यायोद्यतकार्मुकौ**, 'with bows wielded by turns.'

P. 98. St. 17.—काशचामरः, On this Châritravardhana observes: "राजाप्येवंभूतः."

P. 98. St. 18.—विशदप्रभे, On this Vallabha observes: "एतेन कार्यसिद्धिहेतुभूतः प्रजानुराग उक्तः."

P. 98. St. 19.—हंसश्रेणिषु, here Kâlidâsa poetically attributes the whiteness of flamingoes, stars and lakes to Raghu's fame, fame being described as white by Sanskrit poets. White flamingoes, bright stars and lotus-abounding waters marked, as usual the advent of autumn. Whence if not from Raghu's spotless fame, did they derive their white hue?

P. 99. St. 20—आकुमारकथोद्घातं, 'commencing the tale (of their song) from his boy-hood. *Cf.* Vallabha: "शैशवक्रीडाप्रथमारभ्य जगादौ यदासौ शौर्यमतनोत । तदन्यस्याजीविनादपि दुष्करं । अथ वा । आकुमाराद्बाल्यात्प्रभृति कथोद्घातः कथाप्रस्तावः । इन्द्रविजयेच्छादिः स विद्यते यस्य तत्." Dinakara explaining the epithet like Mallinâtha has also the following, "अथवा। आकुमारस्य सतो रघोर्या कथा इन्द्रविजयादय इति तत आरभ्य." This epithet is taken adverbially to जगुः, or it may also be taken as an adjective to यशः when the meaning would be 'the commencement of the history of which was made even by boys,' *i. e.*, (the king's) fame of which even boys began to sing.—इक्षुच्छायनिषादिन्यः, the word छाया is changed at the end of Tatpurush-compounds into छाय only when बाहुल्य or thickness of shade is meant.—गुणोदयं, Châritravardhana and Vallabha translate गुणेभ्यः by "सौन्दर्यादिभ्यः."

P. 99. St. 21.—कुम्भयोनेः, 'of the pitcher-born.' On this Pandit has the following note; 'of the star Canopus belonging to the constellation Argo Navis, otherwise and properly called अगस्त्य. Agastya is a celebrated Vedic *Ri*shi, who, together with Vasish*th*a, is described as having been begotten by the two gods Mitrâvaru*n*au, when these happened to see the celestial nymph Urvas'î. As part of the semen fell into a pitcher, Agastya was produced in it at once. The whole myth is given by Sâya*n*âchârya in his commentary on *Ri*gveda, VII. 33, 11. The star Canopus being afterwards identified with Agastya, the Vedic sage, all the epithets, attributes &c., of the latter came naturally to be applied to the former.'—उदयात्, the time of the rising of the Canopus or Agastya falls between the latter half of श्रावण and the first half of भाद्रपद, *i. e.*, about August. The turbidity of waters in the rainy season disappeared at the approach of autumn; methinks it was transferred to the hearts of Raghu's foes who trembled to think that the season for his conquering expedition had arrived.

P. 100. St. 22.—**लीलाखेलं विक्रमं**, *Cf.* Cháritravardhana "लीलया खेलं निरायासेन विमन्थरं तादृशं तस्य रघोर्विक्रममनुप्रापुरनुययुः । वृषपक्षे लीलया अन्यवृषभावज्ञया खेला क्रीडा यत्र तथाभूतं विक्रमं गमनविशेषमित्यर्थः । नृपविक्रमोऽपि मदोदयः ककुद्राजलक्षणं तत्सहितः प्रयातो यात्रायां हस्त्यश्वादिखुराग्रभिघातेन नदीनां तटभेत्ता भवति." But Vallabha renders the epithet simply by "विलासमन्थरं."

P. 100. St. 23.—**मदगन्धिभिः**, On this epithet Cháritravardhana remarks, "मदवद्गन्धो येषान्तैः। एव शब्द इवार्थे। अन्यथा साक्षात्सतधाक्षरणं गजानामनिरंजोवित्वसूचकं दुष्टं स्यात."—**प्रसुस्रुवुः**, Here Vallabha observes, "शरदि मदकालः". *Cf.* also Sumativijaya : "तालुवक्षःकपोलेभ्यः शंखकुम्भकरे तथा । रोमकुम्भकटिभ्यश्च दानं प्रक्षरति द्विपः." The seven parts of the body of an elephant from which ichor exudes are : the two nostrils, the two temples, the sexual organ and the two eyes. It is in autumn that elephants are ruttish.

P. 100. St. 24.—**यात्रायै**, 'to an expedition of conquest.'—**आदूवान**°, Here आ implies *diminution*.

P. 101. St. 25.—**वाजिनीराजनाविधौ**, Nirájana is a military and religious ceremony held by kings or generals on the nineteenth of As'vina before taking the field. It consists in purifying the Purohita or chaplain, the kings ministers ; and various component parts of the army during the recitations of sacred texts ; waving lights before an idol, as an act of adoration, (this may also be performed with a lotus, clean cloth, or the leaves of various sacred plants ; prostration is considered as a fifth kind of adoration). *Cf.* Cháritravardhana, "उक्तं च । "द्वादश्यामष्टम्यां कार्तिकशुक्लस्य पंचदश्यां वा । अश्वगजस्य हि कुर्यान्नीराजमसंज्ञितां शांतिं." *Cf.* Nai. "नीराजनां जनयतां निजबान्धवानां." *Cf.* also Devi Purâ*n*a, "यवपिष्टप्रदीपाद्यैश्चूताश्वत्थादिपल्लवैः । औषधीभिश्च मध्याभिः सर्वबीजैर्यवादिभिः । नवम्यां पर्वकाले तु यात्राकाले विशेषतः । यः कुर्याच्छ्रद्धया वीर देव्या नीराजनं नरः । शंखभेर्यादिनिनदैर्जयशब्दैश्च पुष्कलैः । यावतो दिवसान्वीर देव्या नीराजनं कृतं । तावत्कल्पसहस्राणि दुर्गालोके महीयते । यस्तु कुर्यात्प्रदीपेन सूर्यलोके महीयते" । and further "पञ्चनीराजनं कुर्यात्प्रथमं दीपमालया । द्वितीयं सोदकाब्जेन तृतीयं धौतवाससा । चूताश्वत्थादिपत्रैश्च चतुर्थं परिकीर्तितं । पंचमं प्रणिपातेन साष्टाङ्गेन यथाविधि." See also Padma Purâ*n*a, Vol. II, Cha. 107. and Agni Purâ*n*a, Cha. 267. Vol. II. Compare also Sumativijaya: "नीरस्य शांत्युदकस्य अजनं क्षेपः अत्र नीराजनं आरात्रिकामित्यर्थः । गजाश्वमंगलाय राजानः प्रयाणसमये नीराजनां विधिं कुर्वन्तीत्यागमः"

P. 101. St. 26.—**अयान्वितः**, explain "अयेन शुभावहविधिना अन्वितो युक्तः," 'followed by good fortune.'—**गुप्तमूलप्रत्यन्तः**, *Cf.* Manu, कृत्वाभिधानं मूलं तु यात्रिकं च यथाविधि । उपगृह्यास्पदं चैव चारान्सम्याग्विधाय च संशोध्य त्रिविधं मार्गं षड्विधं च बलं स्वकं साम्परायिककल्पेन यायादरिपुरं प्रति."

Compare also Châritravardhana, " तत्र मौले क्रमागतं । भृतकं नवं धार्यमाणं । मित्रं प्रसिद्धं । अमित्रं बलाद्वशीकृतं । आटविकं कार्यवशात्कृतं । कार्यवशादस्थिरमागतमिति । हस्त्यश्वरथपादातिनाविकाटविकाश्चेति कश्चित । तथा चोक्तं । " देवानभ्यर्च्य विप्रांश्च गुरूंश्च शुभवासरं षड्विधं तु बलं व्यूह्य द्विषतोऽभिमुखं व्रजेत."

P. 101. St. 27.—**अवाकिरन्**, On this epithet Châritravardhana has : " इति यात्राकालस्याचारः."—**क्षीरोर्मय इव**, 'as the milky waves with their vapoury mists tossed up by the Mandâra'—when the ocean was churned with that mountain, to recover what the deluge had swallowed.—**अच्युतं**, 'Vishnu.' *Cf.* " यस्मान्न च्युतपूर्वोऽहमच्युतस्तेन कर्मणा ".

P. 102. St. 28.—**तर्जयन्निव**, On this epithet Châritravardhana observes : " अन्योऽन्यमङ्गुल्यादिना तर्जयति." The roots तर्ज्, भर्त्स् &c. are अनुदात्तेत् and therefore according to the rule " अनुदात्तङित आत्मनेपदम्. " Pânini, I. 3. 12, they ought to be of Atm. but from the root चक्षिङ् which has both इ = अनुदात्त and ङ् = ङित्, Vâmana says that mere अनुदात्तेत् (as in तर्जिभर्त्सि which have इ at their ends) does not make a root necessarily Atmanepadi ; therefore here तर्जयन्.

P. 102. St. 30.—**प्रतापः**, On this Vallabha has, " शत्रूणां भयजननवार्ता प्रतापः ". –**चमूः**. The army generally consists of 729 elephants, as many chariots, 2187 horse and 3645 foot. It also consists of four divisions, *viz.*, chariot, elephant, horse and foot. But the military renown of Raghu would, long before his arrival, set his enemy's heart trembling with fear, a fear heightened by the army din, announcing his march, and by dust showing that he was not far off. Thus prowess, uproar and dust were three army divisions in themselves by contributing to the enemy's faintness of heart, the fourth division being the ordinary four divisions considered as one. Otherwise the number of divisions in his army would be seven.

P. 103. St. 31.—**शक्तिमत्वात्**, 'by means of his supernatural power,' *i. e.* without having had to use human efforts such as digging out wells, building bridges, &c.

P. 103. St. 32.—**गङ्गामिव भगीरथः**, It is said that in former times a king named Bhagiratha of the solar line practised severe austerities in order to save his ancestors (सगराः) who had been burned to ashes by the wrath of the sage Kapila. The god Brahmâ pleased with his austerities commanded him to propitiate S'iva. S'iva too being greatly satisfied with his penance promised him to hold on his own matted hair the furious current of the Gangâ. Thus the Gangâ issuing forth from the ब्रह्मकमण्डलु fell violently on the head of

S'iva, and thence she began to flow on the mountain Himâlaya, and after which she followed the king Bhagîratha as far Sagara Ku*nda* at Vârânas'i. In this way Bhagîratha saved his ancestors. *See* Râmâya*na*, I. 44.

P. 103. St. 33.—**फलम्**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss., " फलं फले धने बीजे निष्पत्तौ भोगलाभयोः " इति केशवः । —**उल्बण**ः, ' free from obstacles, ' ' clear. '

P. 104. St. 35.—**आत्मा संरक्षितः**, On this Sumativijaya observes: " यथा नदीवेगाद्रतमा वृक्षा नम्रवृत्तिं कृत्वात्मानं रक्षयन्ति तद्वत्तैः सुह्मैरात्मा रक्षितः. " —**सुह्मैः**, West of Vanga (समतत *i. e.* Eastern Bengal) was Suhma Des'a with its capital ताम्रलिप्त, called also तामलिप्त, दामलिप्त, ताम्रलिप्ती, तमालिनी (*Cf.* हेमचंद्र IV. 45.) In the time of Mahâbhârata, Suhma Des'a seems to have included Western Midnâpur only, as it is separately mentioned after Tâmralipta (Bhârata, II. 30, 24, 26.), but there can be no doubt that in after times its extent was greater, as Tâmralipta is distinctly mentioned by several writers as the capital of Suhma Des'a. (*Cf.* D. K. VI. people, with the sirname Som are common in Western Bengal.) The commentator in explaining the text of Mahâbhârata in one place calls the Suhmas Râ*dh*as (Bhârata, II. 30, 16), and we know that Râ*dha* is the name of Western Bengal, from which the Râ*dhi* Brâhmans take their name. It is impossible to describe accurately the limits of this province. It did not extend to the left bank of the Bhâgîrathî as Na*d*iyâ (Navadvipa) was the residence of the later kings of Gaura. But it probably included Bardwan (Virdhamâna) Bankoora (Mallabhûmí), Beerbhoom (Vîrabhûmi), as no separate mention is made of these districts in early works. The Vardhamâna of the Kathâ Sâgara was evidently a town in Central India North of the Vindhya. This is clear from the description of a journey in the 25th Taranga and confirmed by a copper plate found at Ujjayanî. Tâmralipta has been long identified with modern Tumlook on the right bank of the Cossya here called Rûpanârâya*na*. This is the Kapis'â of Kâlidâsa. It is celebrated for a temple of Kâli, which is spoken of even by Dandin. In former days, it was situated closer to the sea than at present and a place of considerable maritime trade. Its people were known as Tâmraliptakas. Vallabha and Sumativijaya explain सुह्मैः by ब्रह्मदेशीयै राजभिः.

P. 104. St. 36.—**वङ्गान्**, ' West of Tipperah lay Vanga or Eastern Bengal. It is often mistaken for Gaura or Northern

Bengal. The existence of such different castes as Gaurades'iya Sháhá and Vangades'iya Sháhá is convincing proof that the two names do not convey the same province. In so late a work as Mádhava Champú, the two countries are clearly distinguished and Vanga is described to be the country through which the Padmá and the Brahmaputrá flow. To understand this passage clearly, we should remember that the main channel of the Brahmaputrá originally flowed through Maymensing, where it is still known by that name. The passage is interesting for the introduction of the word Vangála from which Bengal is derived and which is now applied by Calcutta people as a nickname for the people of Eastern Bengal. In connection with Vanga, Kálidása speaks of the estuaries of the Ganges. It, therefore, included the sea-coast of Bengal. In the Bhishma Parvan Cha. 90, the king of Vanga is said to have fought with big elephants. As elephants are not found in the plains, but in Tippera and Garo hills, it is probable that Vanga at one time extended to these limits. Vanga is a name of tin, which is not found in Bengal, but "in Malaya, Pegu, China, and especially the island of Banca in the East Indies." It is probably so called because it was known to the Indians from Vanga or Eastern Bengal, in which case, it must have had a considerable coasting trade from the earliest times, as the word in the sense of tin is mentioned by so early a writer as S'us'ruta. Vanga was probably also called "Samatata" or "Plains." The word occurs in Várâhi Sanhitâ XIV. 6 along with Odra (Orissa and Prágjyotisha (Kamroop), but without any indication of its position. Hiouen Thsang does not speak of Vanga, but in its place we find Samatata south of Kámarúpa. I have already shewn that the Gangetic Doab (Kuru Panchâla) was known by a similar name Samasthalî. I have, therefore, little doubt that Samatata was Vanga. The principal old towns of this province are the early Mahomedan capital Suvar*n*agrama (Sonârgaum) or the golden village near Painam and Vikramapura or the capital of Vikrama, which is now the name of a Purgunah, in which the residence of Hindu kings is still pointed out at Rampal south of Dacca. This (Bikrampur) was the place to which the kings of Gaura, as we know from copper grants, carried their victorious arms and this fact is confirmed by local tradition that when the Sens were reigning at Bikrampur, Páls were reigning north of the Buri Ganga, the remains of whose fort Darduriya near Eksdálá exists till this day. Jessor (Yas'ohara) on the Bhairab (Bhairava) is said to have been founded by another Vi-

krama in the beginning of the 16th century. In that case, it cannot be the town visited by Hiouen Thsang. On the north-eastern frontier of Maimensing is Durgápura on the Somesari river—the seat of the Mahârâja of Susang. who is considered to be of a very old family and who is now so well-known for his action against Government for his rights over the Garo Hills.—**जयस्तंभान् निचखान,** On this Sumativijaya observes, " नगराणि जित्वा तत्र स्तम्भाः क्रियन्ते इत्यागमः. "

P. 105. St 37.—**उत्खातप्रतिरोपिताः कलमा इव,** the adjective उत्खातप्रतिरोपिताः is to be taken both with " ते " and with " कलमाः. " कलमाः are plants of rice grown thickly in a burnt piece of land early in the wet season and then transplanted to another soil, of a softer nature, and full of water, about July and August. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. " शालयः कलमाद्याश्च षष्ठिकाद्याश्च पुंस्यमी " इत्यमरः ।— **प्रणताः,** On this epithet Cháritravardhana observes, " क्षेत्रे पङ्कस्यापि संभवात्पादमूले यत्पङ्कं तदवधि मञ्जरीभारेण नम्रा बहु फलन्ति तथेत्यर्थः । तदुक्तं भारविणा । तुतोष पश्यन् कलमस्य सोऽधिकं सवारिजे वारिणि रामणीयकमिति. " Ki. IV. 4.

P. 105. St. 38.—**कपिशां,** See above our note to verse 35th.—**उत्कल,** To the south of Támralipta lay Odra or Utkala (Orissa) which, from the verse of Kálidása, extended up to the Kapis'á. Odra is probably the older name, representing the aboriginal tribes of the country. It occurs in the Mahábhárata in the list of Indian provinces along with Videha and Támralipta and in the list of southern conquests of Sahadeva. The chief town of this province—Cuttak (Ka*t*aka = encampment) is said to have been founded by N*ri*pa Kesari in the tenth century. It was probably better known as Padmâvati, as, according to the Mâdhava Champú, this was the capital of Mukunda Sena Deva, who, according to the Aini-Akbári, built a place with nine courts within the fort of Cuttak. Jájpur (Yagnapura) on the borders of the Balasor (Bales'vara) district and the city of the celebrated temple of Bhuvanes'vara in the Puri district are said to be the older capitals of the province. In the Kathà Sâgara, there is a mention of a town Karko*t*aka on the coast of the eastern ocean, by which it meant the Bay of Bengal, as it also places Tâmralipta or Tumlook near it. It is said that the hill Udayagiri was near this town and that it took more than seven days to reach it from Tumlook. I believe by Udayagiri, it meant the hill of that

name in the district of Cuttack, whose foot, according to local tradition, used to be washed by the ocean. But the most important place from a Hindu point of view is Puri (the city) on the South of Kataka with its widely known temple of Jagannátha. Its celebrity, however, dates from comparatively recent times, as no notice of it is found in the Mahábhárata or the earlier Purá*n*as. Its great exponent is the Utkala Khanda of the Skanda Purá*n*a, which is probably not more than five hundred years old. On this Châritravardhana remarks " उत्कलदेशीयास्तु संग्रामदिने एव रघुचरणयोर्न्यस्तनिन्यर्थे:. " This proves the subjugation of Orissa.—कलिङ्गाभिमुखः, To the South of Odra, lay Kalinga, which extended to the mouths of the Godâvari. In the time of the Mahábhárata, it included Odra, for the river Vaitar*n*i, which runs by Jaipur, is expressly mentioned in one place to be in Kalinga. It did not generally extend beyond the Godávari, as its mouths in a verse already quoted are said to have been in the possession of Andhras. In the Days of Dandin, its capital Kalinganagara was at some distance from the sea-coast, as he says the king of Kalinga went out to pass some days at the sea-side, when he was taken captive with his daughter by the neighbouring king of Andhra. The capital was, therefore, not at Kalingapattana, on the north nor probably at Vizigapattana (Vijayapattana), but at Râja Mahendri on the south, as it is at some distance from sea-side and at the same time bordered on Andhra Des a.

P. 105. St. 39.—महेन्द्रस्य, By this is meant the chain of mountains that extends from Utkala or Orissa and the Northern Circars to Go*nd*avana. General Cunningham in his Ancient geography of India, p. 516 identifies Mahendra mountain with Mahendra Mále, " which divides Ganjám from the valley of the Mahánadi. " I think it included the whole of the eastern Ghâts between the Mahânadi and the Godávari. Kálidása calls the king of Kalinga " Lord of Mahendra " and Kalinga was not limited to the country about Ganjâm, but extended up to the Godávari. So in the कथासरित्सागर. The existing town of Rája Mahendri on the Godávari probably originally meant nothing more than the capital of the monarch of Mahendra. See Anundoram Boorooah's ancient geography of India, page 127, para 132. See also Wilson's Vish*n*u Purâ*n*a, page 174.—गम्भीरवेदिनः, ' of a restive elephant, that does not mind the pricking of the goad. ' *Cf.* Châritravardhana : " त्वग्भेदादुधिरस्रावान्मांसस्य गलनादपि । संज्ञां न लभते यस्तु वियाद्गम्भीरवेदिनमिति पालकाप्यः."

Vallabha reads the same with a slight difference : "त्वक्छेदाच्छ्रोणितस्रावान्मांसस्य व्यथनादपि । संज्ञां न लभते यस्तमाहुर्गम्भीरवेदिनं." See also commentary.

P. 106. St. 41.—**काकुत्स्थः**, 'The descendant of ककुत्स्थ.' In the त्रेता age, a violent war broke out between the Gods and the Asuras, in which the former were vanquished. They then went to Vishnu for assistance, and propitiated him. Vishnu told them to secure the aid of the king Puranjaya, who was then ruling at Ayodhyâ. The Gods went to the prince and requested him to fight against the demons. The prince replied : 'let this your Indra consent to carry me upon his shoulders, and I will wage battle with your foes, as your ally.' Indra consented to this and assumed the shape of bull, the prince mounted upon his shoulder and destroyed all the enemies of the Gods. He thence obtained the appellation of Kakutstha (seated on the hump or ककुद्).—**नाराचदुर्दिनं**, 'A shower of iron arrows.' Here, however, दुर्दिन means a shower, not a cloudy day.—**जयश्रियं प्रतिपेदे**, Châritravardhana explains this as, "वैरिबाणवारवर्षणसहनानन्तरं नृपोऽरीन् व्यजेष्टेत्यर्थः । यद्यपि दुर्दिनं मेघछन्नं एवाह्नि मुख्योर्थस्तथापि लक्षणया वृष्ट्यर्थोऽवगंतव्यः । उक्तञ्च । 'यत्तु सर्वौषधिस्नानं तन्मङ्गल्यमलोदकं' इति वैजयन्ती । अङ्गस्थानकथनेन संग्रामसहनस्य व्याधिनिर्मोकत्वसूचनं पुष्यादिनक्षत्रे जटामांस्यादिना मङ्गलस्नानं तेन जयसिद्धिरित्येकं । करग्रहणार्थं स्नानं राज्याभिषेकस्नानञ्चेत्यन्यं." Before possessing himself of such a prize as जयश्री, Raghu need have his auspicious bath. It appears that the shower of darts, meant to overwhelm him. did duty for the necessary ablutions.

P. 106. St. 42.—**ताम्बूलीनां दलैः**, 'In betel-leaves,' *i. e.*, drinking vessels made of the betel-leaves. The warriors of Raghu did not spread betel-leaves on the ground and prepare soft rural seats to sit upon ; but they made of these leaves the drinking vessels in order to drink liquor.—**आपानभूमि**, explain "आ संभूय पिबन्त्यत्रेति आपानं," 'a place for drinking in company,' technically so called. Vallabha translates it by "कृतपानगोष्ठीभुवः." That the warriors could afford the luxury of a carousal in itself proved the extinction of the enemy's glory by a crushing defeat. The liquor they drank was, it appears, the enemy's glory liquified. On this Châritravardhana remarks, "तद्दशोचितापानोक्तिः."

P. 107. St. 43.—**धर्मविजयी**, On this Vallabha remarks: "धर्मविजयी लोभविजयी असुरविजयी चेति त्रिविधो राजा । यः शत्रुं निर्जित्य तदीयां श्रियं नीत्वा शत्रुं तस्मिन्नेव स्थाने स्थापयति स धर्मविजयी । यः शत्रुं निर्जित्य तदीयां श्रियं

मेदिनीं च गृहीत्वा प्राणैर्नविकुरुते स लोभविजयी । यः शत्रुं हत्वा तदीयां श्रियं मेदिनीं च गृह्णाति स असुरविजयीति." 'A righteous conqueror vanquishes his enemy but reinstates him, a covetous conqueror appropriates to himself all the enemy's possessions but spares his life. A devilish conqueror spares nothing, not even life.'

P. 107. St. 44.—**अनाशास्यजयः**, 'to whom victory was nothing to be yearned after.' Because acquired with ease. This contains in it the promise of future success. The epithet may also mean (1) 'a triumph over whom was not to be hoped for,' or (2) 'whose (he being the subject of जय) victories (*i. e.* victories like whose) were not to be looked for by others.' Cháritravardhana and Sumativijaya explain it as, "अनाशास्यो ऽन्यैर्दुरधिगम्यो जयो यस्य सः." Vallabha by "अनभिलषणीयजयः." On this Chāritravardhana holds the following discussion: "ननु कथमनाशास्येति । 'पतिस्तुशास् —' इति क्यप्प्रत्यये । 'शास इदङ्हलोः' इतीत्वप्रसंगात् । अत्रोच्यते । शासनं शासस्ततस्तत्करोतीति णिच् । अथ वा । शसु हिंसायां । 'हन्त्यर्थाश्च' इति चुरादिपाठाण्णिच् ।—**वेलातटेन**, Cháritravardhana explains, वेलातटेनेति । "प्रकृत्यादित्वात्तृतीया" । एवकारः कठिनमार्गेऽप्यप्रतिहतत्वसूचनार्थः."—**अगस्त्याचरितां**, explain "अगं पर्वतं विन्ध्यमिति यावत् स्त्यायति स्तम्भयतीति तेन अगस्त्येन आचरितामवलम्बितामाशां दिशं." *Cf.* Cháritravardhana: "अगस्त्यो दक्षिणामाशामाश्रित्य नभसि स्थितः । वरुणस्यात्मजो योगी विन्ध्यवातापिमर्दनः ॥ इति ब्रह्मपुराणे." See commentary. The southern part of India, occupied by people speaking Tamil. Some say that the sage अगस्त्य had a principal share in the formation of the Tamil language and its literature.

P. 107. St. 45.—**सैन्यपरिभोगेण**, On this epithet Cháritravardhana remarks, "सैन्यस्य परिभोगो जलक्रीडनादिस्तेन." and Dharmameru by "सैन्यपरिभोगः स्नानादिक्रिया तेन." and Vallabha by, "सेनाजलावगाहेन."

P. 108. St. 46.—**मारीचोद्भ्रान्तहारीताः**, *Cf.* Dharmameru: "मारीचानां गन्धेन भक्षणेन वा उद्भ्रान्तास्तस्मा इतस्ततश्चलिता हारीताः पक्षिविशेषा अर्थाच्छुका यासु ताः," also Vallabha: "मरीचेभ्यः (appears to be his reading) उड्डीन्या हारीताः पक्षिणो यासु ताः."—**मलयाद्रेः**, the mountains bordering Malabar, abounding in aloe trees; the southern part of the Western Gháts. See note to 51 below.—**उपत्यकाः**, Sumativijaya translates it by "अधोभूमयः," Dharmameru, by "तटभुवः," but Cháritravardhana agrees with Mallinátha.

P. 108. St. 48.—**त्रिपदीछिदिनामपि**. On this Vallabha observes: "त्रिपदीं छिन्दन्तीति त्रिपदीछिदिनस्तेषां सुखावस्थात्यागिनामपि । सुखावस्थितस्य गजस्य पदत्रयावस्था त्रिपदीत्युच्यते," and Cháritravardhana has: "त्रिपदी

चरणबन्धनं तत्त्रोटनसमर्थानामपि."—**भोगिवेष्टनमार्गेषु समर्पितं**, 'fastened round the lines (marks) of (hollows, depressions made by the) coilings of serpents on sandal trees.' 'The poet means that the elephants, who were so strong that they would have broken their foot-chains, were kept on their spots by the mere ropes fastened round their necks, because the ropes were very firmly tied to the Sandals on account of the grooves being so well adapted to them : and because the odoriferous exhalations given out by the sandal trees were so charming to the elephants that they did not tear off the neck-ropes.' says Pandit. —**नात्रसत्**, here Châritravardhana discusses the reading, "ननु सत्रे (appears to be his reading) इत्यात्मने पदं चिन्त्यं। "न गतिहिंसार्थेभ्यः" Pâ*n*ini, I. 3. 15. इति निषेधात्र कर्मव्यतिहारेऽप्यात्मनेपदं सम्भवति। यद्वा। कर्मकर्तरिरूपं। नात्रसत्करिणां ग्रैवमिति। "युद्धयो लुङि" इति संस्रतेर्न तङ्। ग्रैवमिति "ग्रीवाभ्योऽण्च" इत्यण्प्रत्ययः। अस्मिन्पाठे तत्र ग्रैवस्य समर्पणं नोचितमित्यतो "नालानं करिणां सस्रे" इति पाठो युक्तः."

P. 109. St. 49.—**दक्षिणस्यां दिशि**, The meaning is—when in दक्षिणायन 'winter solstice' the sun moves from north to south, rains set in and the sun becomes dim; but when Raghu came to the south, his power was irresistible and not dimmed like that of the sun.—**पाण्ड्याः**, On the south-west of Chola Des'a, in the extreme south of India, lay the country of Pândyas. The mountain Malaya and the river Tâmrapar*n*i fix its position undisputably. In the time of Kâlidása, it must have extended from the banks of the Kâveri to the Indian ocean, as he calls its capital "Serpent-town" (R. VI. 59 to 64), which must be Negapatam (Nâgapa*tt*ana) 160 miles south of Madras. The town of Madhurâ (Madura) was founded some centuries after by king Kulas'ekhara. The holy island of Râmes'vara belonged to this kingdom. It appears to me to be the same as the celebrated Gokar*n*a of ancient writers. Both are in the southern ocean. Both are sacred to S'iva. Both have holy lakes. To these should be added the fact that while Gokar*n*a occurs so frequently among old writers, no notice is found of Râmes'vara. Beyond it is the Adam's bridge, called Nala Setu in the Râmâya*n*a, but more commonly known as Setubandha. Beyond the Adam's bridge is the island of Sinhala (Ceylon) called Lankâ in the Râmâya*n*a with its mount Roha*n*a or Adam's peak. The Mahâbhârata speaks of Kumâris in this kingdom (Pândya). These evidently refer to Cape Comorin and shew that the principality at one time included part of the Malabar Coast, as independently testified by a Greek writer. The

same work also speaks of a mount *Ri*shabha in it. It is very likely a summit of the Malaya mountains.

P. 109. St. 50.—ताम्रपर्णी, is a river well-known for its pearly treasures. Though enjoying a very celebrated name, it is a very small stream flowing past Pallamacotta, and falling into the Gulf of Manar. See our note to the above verse.—मुक्तासारम्, may also mean 'the weath of pearls.'—यशः स्वमिव, 'as if it were their glory.' The ground of comparison is the snowy whiteness of the pearls resembling the supposed whiteness of glory.

P. 109. St. 51.—आलीनचन्दनौ, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "गन्धसारो मलयजो भद्रश्रीश्चन्दनोऽस्त्रियाम्" इत्यमरः । —दिशस्तस्याः, *viz.* 'of the south.'—मलयदर्दुरौ, These are the mountain chains in the country of Pândyas. They are the southern portion of the Western-ghats. Malaya is also one of the seven Kula Parvatas or chains of mountains. The slopes of Malaya, we read in the Vira-charitra, are encircled by the river Káveri and a similar statement is found in the Raghuvans'a. In the Bâla Râmáya*n*a, the mountain is said to teem in cardamoms and pepper and sandal and betelnut trees, which are all abundant in most southerly India. I have, therefore, no hesitation in identifying it with the southern portion of the Ghâts, running from the south of Mysore and forming the eastern boundary of Travancore. Kálidása calls the mountains Malaya and Dardura the breasts of India. Dandin calls southerly wind "cool with the embrace of sandals on the sides of the mountain Dardura." In the Márka*nd*eyapurâ*n*a, Malaya and Dardura are spoken of in one connection. I am therefore inclined to think that Dardura meant that portion of the Ghats which form the southern boundary of Mysore. The sources of four rivers are placed in this chain: K*r*itamálá, Támrapar*n*i; Pushpaja, Utpalávati. Támrapar*n*î is the most celebrated of these rivers. It runs through the ancient kingdom of Pándya and is well described by Raja S'ekhara. It is evidently the Tambaravari of the present days, which rises in the eastern declivity of the western (some call eastern) Ghats, runs through the district of Tinnevelly and falls into the Gulf of Manar near the small town of Punakail.

P. 110. St. 52.—असह्यविक्रमः, analyse "सोढुमशक्योऽसह्यो विक्रमः पौरुषातिरेको यस्य."

P. 110. St. 53.—अनीक is originally the face; and meaning then the edge or point of any sharp weapon, it signifies the sharp edge or edge-like appearance of an army in march, *i. e.* a row. In classical Sanskrit the word only bears one signification derived from the last, *viz.*, that of 'multitude' or *army.*—अपरान्त°, Vallabha interpretes it by "अपरान्ताः = कौङ्कणाः," and he is right. Konka*n*a (अपरान्ता) is still the name of the sea-coast from Daman on the north to a few miles north of Goa, comprising the districts of Thana and Ratnágiri. The Ma*d*guras of the Harivans'a chapter 95 may have been the general name of the inhabitants of this tract.—विसर्पिद्भः, Châritravardhana translates it by "प्रसरणशीलैः" and very correctly.—रामास्त्रोत्सारितः, His vast army extended from side to side over the whole distance between the sea and the foot of the Sahya mountain, and rolling forward in billows, presented a sea-like appearance. Kás'yapa, going to spread a sacrifice, received, as a gift from his disciple, Paras'uráma, the whole of the earth conquered by his valour. As it would ill become the disciple to use any part of his gift, he reclaimed an abiding place from the unwilling sea, forced by an arrow to recede. See also Vish*n*u Purâ*n*a Vol. IV. p. 23.

P. 111. St. 54.—भयोत्सृष्टविभूषणानां, 'By whom ornaments (or decorations) were flung aside for fear,' *i. e.* they had not made their decorations, such as combing the hair and ornamenting them with saffron powder, &c. The भय was the terror with which the Keral women were struck at the sudden appearance of the enemy before whom they fled in disorder.—केरलयोषितां, Keral was the ancient name of the whole tract comprising the districts of Travancore, Cochin, and Canara. Travancore on the west of Pândya Des'a is said to be the country of the Cheras. I do not know the evidence on which this opinion was based. Without denying the existence of the word in the vernacular, I must say, I do not remember meeting it in any Sanskrit work. Dr. Kern reads Cherya in Vàrâhî Sanhitâ XIV. 15, as a possible Sanskrit form of Chera, but none of the manuscripts he consulted countenanced that opinion. In the 8th Uchchhvàsa of the Das'akumâra, the king of As'maka or Hilly country is said to have fomented the kings of Kuntala, Konka*n*a, Vanavási. Murala, *Ri*ch·ka and Nâsikya in a general rise against the king of Vidarbha. It will be presently shown that Murala is another name of Kerala. The position of all these countries except As'maka are definitely known to us and cover all southern India except

Travancore. As'maka must therefore be the old name of Travancore. This is confirmed by the fact that some Mahomedan writers called it Kú*t*a which conveys the same thing as As'maka. In the third act of the Uttara Râmacharita, Bhavabhûti introduces two obscure rivers Tamasâ and Muralâ. The first has been already mentioned. The second is the principal river of Kerala. This is clear from the account in the Raghuvans'a. Hence the people were sometimes called Muralas, of which an instance has been already noticed. From the description in the Raghuvans'a and the Kathâsâgara, it is clear that Kelara meant the strip of land between the Western Ghâts and the sea north of the Kâveri. This is also the popular opinion, which fixes its northern boundary on the South of Konka*n*a. The principal rivers in this tract are the Netravati on which Manglore is situated, the S'arâvati on which Hunawar is situated, and the Kâli Nadi on which Sadâs'ivaga*d*a is situated. As the first two rivers have distinctive names, I believe the last is the Muralá of our poets. Kálidása speaks of the Punnága trees in this country (Kerala). Dr. Roxbury says it is a native of the coromondal coast. I believe it is also a native of the opposite coast. In the Hemachandra Kosha, Urga is given as a synonym of Kerala.

P. 111. St. 55.—**मुरला**, see note to the above verse.—**पटवासतां**, a Pa*t*avâsa, as the name signifies, is any powder for scenting garments, like our बुक्का &c. The components described by Varáha, however, are ; "त्वगुशीरपत्रभागैः सूक्ष्मैलार्धेन संयुतैश्चूर्णः । पटवासः प्रवरोऽयं मृगकर्पूरप्रबोधेन." Varáh. B*ri*. San. adh. 77. 12. Bibli. Indi. series.

P. 112. St. 57.—**शिलीमुखाः**, 'the bees', *lit.* the sting-mouthed.

P. 112. St. 58.—**अपरान्तमहीपालव्याजेन**, On this epithet Vallabha remarks, "अपरान्ताः पश्चिमसागरसमीपवासिनो राजानः".

P. 112. St. 59.—**मत्तेभरदनोत्कीर्ण** , Or 'where a record of his valour was charactered by incisions of the tusks of his infuriated elephants,' or 'which was engraved by the tusks of his frantic elephants and where there was (thus) a clear record of his valour.' —**त्रिकूटमेव**, त्रिकूट 'Having three peaks,' is the name of several ranges of mountains. It may be a mountain in the territories of Travancore with three peaks. Kú*t*a or As'maka is the ancient name of Travancore. And hence त्रिकूट may have been a mountain or a mountain range in that country. Vallabha, however, explains it by "सुवेलं गिरिमेव." But this cannot be the त्रिकूटाचल of Travancore. Ramáya*n*a assigns a position to this mountain in Lanká.

P. 113. St. 60.—**पारसीकान्**, These are supposed to be the ancient Persians, or inhabitants of that part of Persia, that lies nearest to the Indus. Châritravardhana explains this by " यवनान्", Dharmameru by " पारसीकदेश नृपान्, and Vallabha by " पश्चिमदेशीयाश्वान् ". See Wilson's Vish*n*u Purâ*n*a Vol. II. page 136. Compare also Sumativijaya, " सिन्धुतटवासिनो म्लेच्छराजान्. "

P. 113. St. 61.—**यवनीमुखपद्मानां** &c. 'he suffered not the flush of wine as belonging to the lotus-like faces of the Yavana women.' The expression *as belonging to* may be preferred to *on*, because मुखपद्मानां and अब्जानां are emphatically possessive, not locative. Sunlight being favourable to lotuses, the latter are invested with the possessorship of the former. On this epithet Dharmameru has " यवनदेशीयक्षत्रियस्त्रीणामथॉत्तुरुष्किणीस्त्रीणाम्. " 'The Yavanas,' observes Wilson, 'may be either the Ionians or Greeks of Bactria and the Panjab—to whom there can be little doubt the term was applied by the Hindus—or the Mohamedans, who succeeded them in a later period, and to whom it is now applied.' The history of the dark Yavana (कालयवन) is a sufficient refutation of the opinion that the Yavanas were Ionians or Greeks as its latest advocate puts. In the Mahàbhàrata, we have not only western Yavanas who went with the Kàmboja prince to fight on the side of Suyodhana, but also eastern Yavanas who came to the Râjasûya festival with the chief of Kâmarûpa, and southern Yavanas who were subjected by Sahadeva. Kàlidàsa applies the term unmistakably to the ancient Persians and Dandin a few centuries later very probably to the Arabian navigators. There is, therefore, no doubt whatever that the term Yavana was never restricted to the Greeks—an opinion, which was so far as I can see, rests on mere sermises and no evidence whatever. In the U*n*âdi Sûtras (II. 74.) the word is derived from यु meaning (says Ujjvaladatta) " to mix, " in which case it would mean " mixed *i. e.* mixed race. " *Cf.* also Sumativijaya : " तासां यवनीनां पतयो बन्दिग्राहं गृहीता अथवा प्राणैर्वियोजिता येन तन्मुखपद्मरागो विनश्येदिति भावः, "—**बालातपमिवाब्जानामकालजलदोदयः**, 'as the rise, out of season, of clouds does not endure the lotuses' early sun-beams.' बाल is added, because it is the morning sun that gives the reddish bloom to the lotus.—**अकाल** means not in the rainy season, when lotuses do not bloom. Raghu's advent too the Yavana women cursed as altogether out of season. They had never expected to become widows so soon.

P. 113. St. 62.—अश्वसाधनैः, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " साधनं सिद्धिसैन्ययोः " इति हैमः ।—रजस्य°, ' in the midst of dust.'—शार्ङ्गकूजितविज्ञेयप्रतियोधे, ' where the opponents (rival combatants) were to be made out from (by) the twang of his bow.' The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " शार्ङ्गं पुनर्धनुषि शार्ङ्गिणः । जये च शृङ्गविहिते चापेऽप्याद् विशेषतः " इति केशवः ।

P. 114. St. 63.—भल्लापवर्जितैः, Chăritravardhana translates this by " अर्धचन्द्राकृतिभिः ".—श्मश्रुलैः, On this Chăritravardhana remarks, " पाश्चात्याः श्मश्रूणि स्थापयित्वा केशान्वपन्तीति तद्देशाचारोक्तिः ".—पटलैः, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " पटलं तिलके नेत्ररोगे छर्दिषि संचये । पिटके परिवारे च " इति हैमः ।

P. 114. St. 64.—संरम्भः, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " संरम्भः संभ्रमे कोपे " इति विश्वः. ।—प्रणिपातप्रतीकारः, A proverbial saying.

P. 114. St. 65.—विनयन्ते, नी with वि becomes Atm. when it takes an object which denotes not an organ or limb (as in " गडुं विनयति," गडु *i. e.*, hump) but something connected with the कर्तृ.—भूमिषु, Sumativijaya translates it by " मण्डपेषु ".

P. 115. St. 66.—ततः प्रतस्थे, &c., ' Raghu proceeded to the quarter presided over by Kubera to extirpate the Northern princes with his arrows, as the sun does to draw up moisture with his rays.'—भास्वानिव, It is supposed that in the Summer Solstice (उत्तरायण) the Sun goes northward to drink up the water with his rays, and in the Winter Solstice the sun moves from North to South to pour down the absorbed water in the form of rain. See note to verse 49.

P. 115. St. 67.—विनीताध्वश्रमाः, analyse, " विनीताः स्फोटिताः अध्वनो मार्गस्य श्रमाः खेदा यस्ते. "—तीरविचेष्टनैः, for this Chăritravardhana, Vallabha, Sumativijaya, Dinakara and Dharmameru read either वङ्क्षु or वङ्क्षुतीरविचेष्टनैः, where Chăritravardhana : " वङ्क्षु नाम काश्मीरा ह्रदस्ततीरे यानि विचेष्टितानि वेल्लनादिभिः ".—स्कन्धान्, This epithet may be interpreted in two ways (1) ' bodies to which filaments of कुंकुम flowers were clung ; ' or (2) ' bodies to the manes of which कुंकुम or saffron powder adhered.' The Southern and the Deccan Mss.

of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " स्कन्धः प्रकाण्ड कायेंऽसे विज्ञानादिषु पञ्चसु । नृपे समूहे व्यूहे च " इति हैमः ।—कुङ्कुमकेसरान्, On this Châritravardhana observes: " काश्मीरदेशे कुङ्कुमक्षेत्रबाहुल्यात्तत्र विचेष्टनेन लोठनेन लग्नकुङ्कुमः केसरत्वं युक्तं " इति. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " अथ कुङ्कुमम् । काश्मीरजन्म " इत्यमरः । " केसरो नागकेसरे । तुरंगसिंहयोः स्कन्धकेशेषु बकुलद्रुमे । पुन्नागवृक्षे किञ्जल्के स्यात् " इति हैमः ।

P. 115. St 68.—हूणावरोधानां. Châritravardhana explains हूणाः by " तुरुष्कभेदाः, " हूणाः, The white Huns or Indo-Scythians, who were established in the Panjab and along the Indus at the commencement of the Christian era. See Wilson's Vishnu Purána. Vol. II. p. 135. The Húnas are evidently the nomadic tribe of the Huns, who dwelt for some centuries in the plains of Tartary and were a great scourge to the Chinese and Roman possessions. From the Raghuvans'a (IV. 67. 68), they appear to have once occupied the banks of the Upper Indus. The bearded Pahlavas were probably the Parthians and the Páradas with long hair (V. P. IV. 3. 21.) some of the Paropamisadae, who dwelt in the south slopes of the Hindukúsha. They all followed the train of the celebrated Kala or Dark Yavana (evidently a Sythian ruler), when he marched against Mathurá just before it was evacuated by Krishna. —व्युचेष्टितं कपोलपाटलादेशि बभूव, It may also be interpreted as, ' came to have for a record the ruddiness of the cheeks of the wives of the Huns, ' *i. e.* they slapped their faces red in grief ; or ' the cause of the redness of the cheek &c.,' (through the marks inflicted by themselves in their ecstasy of grief). *Cf*. Châritravardhana and Sumativijaya: " हूणयोषितः कुचकपोलविदारणपूर्वं रुदन्तीति तद्देशाचारः. "

P. 116. St. 69.—काम्बोजाः. Kámboji is a name of the Máshaparni (Glycine debilis) and if our botanists had given a fuller information, we should have had very good evidence of the habitation of the Kámbojas. But they are satisfied with the remark that " it is a native of India but scarce. " From Kálidása we know that their country abounded in walnut trees, which says Dr. Roxburgh, are common in " the mountainous countries immediately to the north and north-east of Hindustan. " In the Sabhá Parvan, the Kámbojas are said to have been conquered by Arjuna along with the Daradas after the subjugation of Balkh (27. 22-3). I have already said that the Daradas now inhabit the valley of the Gilgit, which is separated from Balkh by the Hindoo Koosh. The

Kámbojas must have inhabited this mountain and the adjoining country, as its Káfirs, says Elphinstone, still call themselves Kamoj. But the Kámbojas, like the Daradas, probably extended up to little Thibet and Ládak. Their country was famous not only for handsome horses, but also for shawls made of "goats' wool, rats' wool, and dogs' wool" (Sabhá Parvan 51. 3-4.). The wool of Cashmere shawls is obtained not only from the tame goat but also from the fleece of the wild goat and wild sheep, the Yak, the Thibet dog, and other animals and is principally supplied from the north of Cashmere. The Kámbojas are said to have fought on the side of Duryodhana in the great battle of Kurukshetra (Udyoga Parvan 18. 21.)—**वीर्यं**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "वीर्यं तेजःप्रभावयोः" इति हैमः. The figure, according to Cháritravardhana, is "सहोक्तिः."

P. 116. St. 70.—**उपदा विविशुः शश्वन्नोत्सेकाः**, It may also be interpreted as, 'repeatedly found their way to the king of Kosala as presents, *not as pride,' i. e.*, he never felt proud or conceited.

P. 117. St. 72.—**गुहाशयानां सिंहानां**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "दरी तु कन्दरो वा स्त्री देवखातबिले गुहा" इत्यमरः, and also "सिंहो मृगेन्द्रः पञ्चास्यो हर्यक्षः केसरी हरिः" इत्यमरः। Châritravardhana, Dinakara and Vallabha interpret this verse in a different way. Châritravardhana's comments run thus: "प्रकरणात्स इत्यध्याह्रियते । स रघुस्तुल्यसत्वानामात्मसमानबलानां गुहाश्रयाणां (appears to be his reading ; he also notices the reading of Mallinátha) कन्दरास्थितानां सिंहानां सैन्यघोषेऽपि कटककोलाहलेऽप्यसंभ्रमं सधैर्यं यथास्यात्तथा परिवृत्यावलोकितं शशंसास्तौषीत्." Vallabha likewise takes the passage in the same way as Châritravardhana, only he construes असंभ्रमं as an adjective to "अवलोकितं." These commentators take शशंस as predicate of सः (Raghu) understood, having अवलोकितं for its object. In that case the meaning would be 'Raghu admired the fearless looking on of the lions &c.' *i. e.*, he applauded the fearless gaze, turning round, in spite of the army din, of lions &c.

P. 117. St. 73.—**मर्मरैरगुरुः**, *Cf.* R. VI. 57. The epithets of मरुत: suggest their fragrance, gentleness and coolness. *i. e.*, the breezes were gentle, melody-wafting, cool, and sanctifying.

P. 118. St. 75.—**अस्नेहदीपिकाः**, *Cf.* Ku. I. 10. "भवन्ति यत्रौषधयो रजन्यामतैलपूराः सुरतप्रदीपाः" Some herbs are believed to be endowed with a natural lustre shining at night like the flame of a lamp.

P. 118. St. 76—**किराताः**, The word किरात is derived from the root कॄ 6. P. explain, "किरं पर्यंतं अततीति किरातः." *Cf.* Rat. II 29. "पर्यन्ताश्रयिभिर्निजस्य सदृशं नाम्नः किरातैः कृतं." The Mátsya says there were born outcast or barbarous races, Mlechchhas, as black as collyrium. The Bhágavata describes an individual of dwarfish stature, with short arms and legs, of a complexion as black as a cow, with projecting chin, broad flat nose, red eyes, and tawny hair ; whose descendants were mountaineers and foresters. The Padma (Bhûmi Khanda) has a similar description ; adding to the dwarfish stature and black complexion, a wide mouth, large ears, and a protuberant belly. It also particularizes his posterity as Nishádas, Kirátas, Bhillas, Bahanakas, Bhrahmaras, Pulindas, and other barbarians or Mlechchhas, living in woods and on mountains. These passages, intend and do not much exaggerate, the uncouth appearance of the Gonds, Koles, Bhils and other uncivilized tribes, scattered along the forests and mountains of Central India, from Behar to Khandesh, and who are, not improbably, the predecessors of the present occupants of the cultivated portions of the country. They are always very black, illshapen, and dwarfish, and have countenances of a very African character. Anundoram Booroooah says, 'Beyond Hardwar and therefore in Eastern Gurwal lay the kingdom of Subáhu peopled by Kirátas, Tanga*n*âs, and Pulindas. Kirátas are mentioned in other parts of the Mahábhárata. In the Sabhá Parvan, Bhíma is said to have conquered seven Kiráta chiefs from Videha, which, as will be shown here-after, comprised Darbhángá and part of eastern Nepal. In another passage, Kirâtas are said to be ferocious bowmen clad in leather and living on roots and fruits. In the Amarakosha, Kirâtatikta or the bitter (plant) of Kirátas is given as a synonym of Cherata and modern botanists affirm this plant "is indigenous to the mountainous regions of Northern India from Simla through Kumaon to the Morung district in Eastern Nepal." There can, therefore, be no doubt the Kirátas were a tribe of mountaineers inhabiting the Sub-Himâlayan regions. The Bhutias, who inhabit not only Bhutan but also parts of Nepal and Kumaon probably belong to this tribe. The word Bhotta occurs in the Râjataranginí more than once and probably refers to the Bhutias near Káshmere.

They are comparatively a fair race which is an additional argument in favour of my view as Kiráta maids formed a part of the tribal presents to Yudhisthira. *Cf.* Dharmameru: " भिल्लैभ्यः. "—**गजवर्ष्म**, *Cf.* S'i. XII. 64., " वर्ष्म द्विपानां विरुवन्त उच्चैर्वनेचरेभ्यश्चिरमाचचक्षिरे । गण्डस्थलाघर्षगलन्मदोदकद्रवद्रुमस्कन्धनिलायिनोऽलयः. " The barks were torn so high up.

P. 119. St. 77.—**पर्वतीयैर्गणैः**, ' with the mountain tribes.'—**नाराचैः**, Cháritravardhana translates it by " लोहबाणाः, " ' iron shafts.'

P. 119. St. 78.—**उत्सवसंकेतान्**. Háṭaka is the Sanskrit name for Ladak. This is the mythological abode of Kimpurushas or Kinnaras, Utsavasanketas and other semi-divine beings. The place was celebrated for piebald horses and seems to have been peopled by the Tangaṇas mentioned in other parts of the Mahábhárata. Utsavasanketas, therefore, lived in Ladak north of Cáshmere or in the north-east region of Ladak which is watered by the Kooner, and thence crossing the Himálaya, Raghu must have reached the country of the Prâgjyotishas. Cháritravardhana also quotes the following from Mahâbhârata, " गणानुत्सवसंकेतानजयत्सप्त पाण्डवः. " Dinakara however reads " उत्सवसंकेतान्. "—**जयोदाहरणं**, *Cf.* Pratáparudra under " क्षुद्रप्रबन्ध, " " येन केनापि तालेन गद्यपद्यसमन्वितम् । जयत्युपक्रमं मालिन्यादिप्रासविचित्रितम । तदुदाहरणं नाम विभक्त्यष्टाङ्गसंयुतं. " जयोदाहरण is a declaratory song, a sort of panegyric beginning with words like जयति, &c., full of alliteration. Cháritravardhana translates this word simply by यशः, and adds " यशो जयोदाहरणमिति कोशः. "—**किन्नरान्**, the name of a mythical being, half man and half beast, *viz.*, with the head of a horse on the body of a man. See Wilson's Vishṇu Purâṇa Vol. I. p. 82, 87. *Cf.* R. XV. 33.—**पौलस्त्य**°, Thinking it beneath his dignity to attack mount Kailása which had already been moved by the son of पुलस्त्य *i. e.* Rávaṇa.

P. 120. St. 81.—**तीर्णलौहित्ये तस्मिन्**, ' when he crossed the Lauhityâ. ' The ancient capital of Kámarúpa was at Prágjyotisha or Prágjyotishapura on the Lauhityá, by which the Brahmaputrâ is generally known to the people of Upper Assam. Local tradition identifies it with modern Gauháti, latterly the seat of the Lieutenant of the Assam-kings. About two miles west of the town rises the hill of Nilâchala with its celebrated temple of Kámákhya, which is visited by crowds of pilgrims from different parts of India. Cháritravardhana says, " लौहित्या नाम ह्रदो । लौहित्या नदी वा

समुद्रो वा." Vallabha has, "तार्णलौहित्ये साति विलङ्घितशोणनदे साति." He is evidently wrong. Compare also लोहितात्सरसो जातो लौहित्यस्तु ततोऽभवत्."—प्राग्ज्योतिषेश्वरः, 'the lord of the Prâgjyotisha or *the land of the eastern stars.*' Prâgjyotisha is identified with the eastern-most part of India comprising Western Bhotan and Eastern Assam; the people of which country under the leadership of their king Bhagadatta, play a conspicuous part in the Mahábhârata. *Cf.,* "अत्रैव हि स्थितो ब्रह्मा प्राङ्नक्षत्रं ससर्ज ह । ततः प्राग्ज्योतिषाख्येयं पुरी शक्रपुरीसमा."—कालागुरुद्रुमैः, On this epithet Cháritravardhana observes: "कालागुरवो हि तत्रोत्पद्यन्ते."

P. 120. St. 82.—आधारावर्षदुर्दिनम्, a cloudy day has a chance of clearing up by a heavy downpour. The cloud of dust had no such prospect to hold out.

P. 121. St. 83.—ईशः कामरूपाणाम्, To the North-East of Pun*d*ra Des a lay the important kingdom of Kàmarùpa, which is said to have extended from the banks of the Karatoyá to the extremities of Assam. Its king Bhagadatta is an important character in the Mahâbhârata. In the Sabhá Parvan, he is said to have fought with Arjuna for eight days with "Kirátas, Chînas, and dwellers on the sea-coast." In the Udyoga Parvan he is said to have assisted Suyodhana with an army of "Kirâtas and Chînas." It is, therefore, clear that his territories extended up to the Himàlaya on the north and the borders of China on the east. This may also be inferred from his presents to Yudhis*th*ira in the great Ràjasûya festival, *viz.,* fine horses, jewelled ornaments, and swords with hilts of pure ivory. Horses are not indigenous to Assam, but a fine breed of ponies is found in Bhootan. Elephants also are not common in Lower Assam, but still caught in the Dooars and the jungles of Upper Assam. In speaking of this province, Kálidása speaks of black aloe-wood and we learn from Dr. Roxburgh that it is a tree of the eastern frontier.—अत्याखण्डलविक्रमम्, analyse "अतिक्रान्तः अखण्डलस्येन्द्रस्य विक्रमः पराक्रमो येन तं तथोक्तम्."

P. 121. St. 84.—हेमपीठाधिदेवताम, Raghu's feet were placed on a golden foot-stool and jems and pearls were presented thereto as flowers and other provisions of worship are to a god or goddess.

P. 121. St. 85.—छत्रशून्येषु, 'they having lost it along with their independence.'—मौलिषु, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. "मौलिः किरीटे धम्मिल्ले चूडाकङ्केलिमूर्धसु" इति हैमः ।

P. 121. St. 86.—**विश्वजितं**, The Vis'vajit is a kind of sacrifice in which the Yajamána or the sacrificer gives all his wealth to the priests and in which the immolation consists either of five or two goats.—**आदानं**, A proverbial saying.—**विसर्गाय**, *Cf.* Sumativijaya, " यथा जलदानां समुद्राज्जलग्रहणं विसर्गाय वृष्ट्यै भवति तथा सज्जनानामपि इति. "

P. 122. St. 87.—**सचिवसखः**. This epithet suggests that the king Raghu did all things on consulation with his ministers. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " सचिवो मन्त्रिकऽमात्ये " इति हैमः. ।—**गुर्वीभिः**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " गुरुर्महत्याङ्गिरसे पित्रादौ धर्मदर्शके " इति हैमः ।

P. 122. St. 88.—**रेखाध्वजकुलिशातपत्रचिह्नं**. *Cf.* Sámudrika, " यस्य पादतले पद्मं चक्रं वाप्यथतोरणं । अंकुशं कुलिशं छत्रं स सम्राड्भवति ध्रुवं. "—**सम्राजः**, सम्राज् is one who rules over other vassal kings and has performed the Rájasúya sacrifice.—**मकरन्दरेणुगौरम्**. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " मकरन्दः पुष्परसः " इत्यमरः । and also " परागः सुमनोरजः " इत्यमरः । That he permitted the princes to touch his feet proved that he was graciously disposed towards them.

CANTO V.

P. 123. St. 1.—**कौशजातं**, On this epithet Hemádri observes, "जातशब्देन वस्त्रायपि दत्तं भवति." The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. "कोशोऽस्त्री कुड्मले खड्गपिधानेऽर्थौघदिव्ययोः" इत्यमरः। But produce one from the Yâdava instead.—**उपात्तविद्यः**, analyse, "उपात्ता अधिगताश्चतुर्दश विद्या येन स तथोक्तः." *Cf.* Hemádri, "पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्रांगमिश्रिताः। वेदाः &c., । "शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषम्" इति षडंगानि । एवं चतुर्दश विद्याः."—**गुरुदक्षिणार्थी**, analyse, गुरवे दक्षिणा चतुर्दशकोटिरूपा तस्या अर्थः प्रयोजनं यस्य स तथोक्तः."—**अध्वरे**, explain, "अध्वानं मन्त्रार्थं रातीति." The metre is उपजाति, and the verse begins with the syllable त. *Cf.* महाजान of Brihaspati, "तकारे अर्थसिद्धिश्च प्राप्यते विपुलं धनं। सर्वश्रेयो भवेत्तस्य सुस्थिरं चोपजायते."

P. 123. St. 2.—**अर्घ्यं**, *i. e.*, 'provisions of worship, taken collectively, *viz.*, sandal-paste, flowers, Akshatás &c.' It consists of the following ingredients, "आपः क्षीरं कुशाग्रं च दधि सर्पिः सतण्डुलं। यवः सिद्धार्थकश्चैव अष्टांगोऽर्घः प्रकीर्तितः." See our note to 21. II.—**अनर्घ्यशीलः**, 'of priceless (matchless) character,' *i. e.* sure to honour such a guest.—**यशसा प्रकाशः**, 'radiant with glory,' *i. e.* omission to honour कौत्स would have tarnished that glory.—**श्रुतप्रकाशं**, 'illustrious in his learning,' *i. e.* a fit person to honour.—हिरण्मयत्वात् हिरण्य is derived from the root हर्य 1. P. 'to desire,' 'to love,' 'to take &c.,' with the affix कन्यन् and the substitute हिर. *Cf.* "हर्यतेः कन्यन्हिरच" Unádi Sútra, 722. S. K. p. 322.—**अतिथिम्**, explain "अतति गच्छतीति," derived from the root अत् 1. P. 'to go,' 'to walk,' with the affix इथिन्. *Cf.* "ऋतन्यञ्जिवन्यर्प्यर्ति &c." Unádi Sútra, 442. S. K. p. 333. *Lit.* A traveller.

P. 124. St. 3.—**विशांपतिः**, It is not a compound word. Some think it to be अलुक्, but the assertion appears doubtful.—**विष्टरभाजम्**, the word विस्तर becomes विष्टर in the sense of a tree, and a seat. *Cf.* Pánini, VIII. 3. 93.—**कृत्यवित्**, 'learned in regulations.' The epithets in this stanza are significant. *Vide* Mallinátha. Kâlidása is a perfect master of the figure.—**कृताञ्जलिः**, analyse कृतो बद्धोऽञ्जलिर्हस्तसंपुटं येन तादृशः.

P. 124. St. 4.—**अपि**, All commentators including Cháritravardhana read अयि instead of अपि, where Cháritravardhana: "अयीति कोमलामन्त्रणे."—**कुशाग्रबुद्धेः**, Cháritravardhana analyses: "कुशस्याग्रं

तद्वत्तीक्ष्णा बुद्धिर्यस्य तत्संबुद्धिः."—गुरुः, Yádnyavalkya defines: "स गुरुर्यः क्रियां कृत्वा वेदमस्मै प्रयच्छति," they are eleven says Devala, "आचार्यश्च पिता ज्येष्ठो भ्राता चैव महीपतिः। मातुलः श्वशुरस्त्राता मातामहपितामहौ। वर्णज्येष्ठः पितृव्यश्च पुंस्येते गुरवो मताः." Vallabha reads: "चैतन्यमुग्रादिव दीक्षितेन." Hemádri noticing this says, "यथोग्राद्दीक्षितेन यजमानेन चेतना प्राप्यते । दीक्षितो हि प्रथमं चेतनां जुहोति। पुनरुग्रादनुवेशनां भजते इत्यागमः। अष्टमूर्तेः स्वमूर्तिभेदेन नामविभागः। तद्यथा। सूर्ये रुद्रः। जले भवः। भूमौ शर्वः। वायौ ईशानः। अग्नौ पशुपतिः। आकाशे भीमः। दीक्षिते उग्रः। चन्द्रमसि महादेवः। इति दीक्षितस्य उग्रः इति संज्ञा." *Cf.* also Vallabha : "यथा दीक्षितेन याज्ञिकेनोग्रादीश्वराच्चैतन्यमाप्यते ज्ञानं प्राप्यते। 'भवो जले क्षितौ शर्वो रुद्रोऽर्केऽग्नौ पशोः पतिः। दीक्षिते उग्र इत्युक्तो महादेवो निशाकरे। आकाशे भीमनामा च ईशानाख्यः समीरणे। इत्यष्टौ रुद्रनामानि कथ्यन्तेऽष्टसु मूर्तिषु'। "क्षितिजलपवनहुताशनसोमसूर्याकाशयजमानलक्षणाः अष्टौ शंकरमूर्तयः."

P. 125. St. 5.—वासवधैर्यलोपि, explain the word वासव, "वसुरेव इति वासवः। अथ वा वसूनि सन्त्यस्यासौ वासवः." *Cf.* Hemádri, "शक्रो हि तपस्विभ्यो राज्यापहरणाशङ्कमानो बिभेति। तद्ब्रह्मसायुज्यं फलं वियोनि। "स्याद्ब्रह्मभूयं ब्रह्मत्वं ब्रह्मसायुज्यमित्यपि"। वियोनि जन्मरहितं मुनेस्तपः." Vallabha identically the same with Hemádri.—कच्चित्, a particle of interrogation expecting either a negative or an affirmative reply; it is often translated by 'I hope,' 'I wish.' From कद्, neuter of कः, and चित्, a particle. Vallabha says "कच्चिदिति प्रियप्रश्ने." Compare also Cháritravardhana and Sumativijaya, where Cháritravardhana says "कच्चिदिष्टप्रियप्रश्ने इत्यभिदानचिंतामणिः." Sumativijaya : "कोमलामन्त्रणे." *Cf.* Buddhacharitra. I. 69., "अपि स्थिरायुर्भगवन्कुमारः कच्चिन्न शोकाय मम प्रसूतः। लब्धः कथंचित्सलिलांजलिर्मे न खल्विमं पातुमुपैति कालः."

P. 125. St. 6.—उपप्लवः, On this epithet Hemádri remarks "दवगजवायुकुलिशपातादिनिरुपद्रवः." and Cháritravardhana has : "वाय्वादिमूषकादिकृतः उपद्रवः." And Vallabha remarks: "दवदहनगजकुलिशपातादिरुपद्रवः."—कच्चित्, On this Vallabha has : "कच्चिदिति प्रियालापे." *Cf.* Buddhacharitra I. 70. "अप्यक्षयं मे यशसो निधानं कच्चिद्ध्रुवो मे कुलहस्तसारः। अपि प्रयास्यामि सुखं परत्र सुप्तेऽपि पुत्रेऽनिमिषैकचक्षुः."

P. 126. St. 7.—क्रियानिमित्तेष्वपि कुशेष्वभग्नकामा. 'Not disturbed by the sages even if it (young one of the deer) sat upon the very Kus'a grass gathered for being used in their sacred rites.'—तदङ्कशय्याच्युतनाभिनाला, 'evidently because the *Ri*shis allowed through fear of serpents, the fawns to sit on their laps.' *Cf.* Hemâdri : "ते हि व्यालभयादृशरात्रमङ्क एव धारयन्तीति शान्तिदयोक्तिः." Vallabha says : कच्चिदिति कोमलामन्त्रणे.—वत्सलत्वात्, explain "वत्सं हृदयं लाति गृह्णातीति वत्सलः," and the word वत्स is derived from the root वद् I. P. with the affix सः. *Cf.* वृतृवदिहनिकमिकषिभ्यः सः" U*n*ádi Sútra, 342. S. K. p. 330. Also "वदतीति वत्सं."

P. 126. St. 8.—**उञ्छषष्ठाङ्कितसैकतानि**, On this epithet Hemâdri remarks: “ एकैकस्य त्यक्तस्य कणस्योपादानमुञ्छः इति विज्ञानेश्वरः । उञ्छस्य षष्ठभागेन अङ्कितानि सैकतानि येषां तानि । मुनयो हि नृपाय षष्ठांशं नदीतीरे निक्षिपन्ति । यदुक्तं । ‘ यस्मादारण्यका अपि उञ्छषड्भागं निर्वापयन्ति ’ इति श्रुतेः । योऽस्मान्पालयतीति । ‘कुशूलकुम्भी धान्यो वा त्र्यहिकोऽश्वस्तनोऽपि वा । जीवेद्वापि शिलोञ्छेन श्रेयानेषां परःपरः ’ इति याज्ञवल्क्यः. ” *Cf.* Châritravardhana, “ ते ह्युञ्छवृत्त्या धान्यमर्जयित्वा राजभागं तत्र त्यजन्ति, ” also Vallabha: “ मुनयो हि नृपोद्देशेन षष्ठं भागं तीरे क्षिपन्ति । योऽस्मान्पालयति तस्मै षष्ठोऽयं विभागः. ” The Munis offer in the king's name their tribute consisting of a sixth of the rice gleaned by them.—**कच्चित्**, “ कच्चिदिति प्रियालापे ” Vallabha. *Cf.* Buddhacharitra I. 71. “ कच्चिन्न मे जातमफुल्लमेव कुलप्रवालं परिशोषभागि । क्षिप्रं विभो ब्रूहि न मेऽस्ति शान्तिः स्नेहं सुते वेत्सि हि बान्धवानां. ”

P. 126. St. 9.—**नीवारपाकादि**, Nivâra means ‘ rice growing with or without cultivation. ’ On this epithet Hemâdri remarks, “ नीवारस्य पाकः पचनं फलं वा आदिर्यस्य तत् । ‘ तस्य पाकमूले पील्वादिकर्णादिभ्यः कुणब्जाहचौ ” Pâ*n*ini. V. 1. 24. इत्यत्र पीलोः पाकः पीलुकुणः फलमिति दर्शनात् । यद्वा । नीवारेषु तृणधान्येषु पाका अन्याः । अगुरुत्वात् । ते आदिर्यस्य तत् । अथ वा । प्रशस्ता नीवारपाकास्ते आदिर्यस्य तत् । पाकाः प्रशस्ताः पवित्रत्वात् । “ प्रशंसावचनैश्च ” Pâ*n*ini, II. 1. 66. इति समासः । पाकशब्दोऽल्पार्थः प्रशंसार्थश्च तथा । त्रयः पाकयज्ञाः इत्यत्राश्वलायनगृह्यनारायणीयवृत्तौ । पाकयज्ञाः अल्पयज्ञाः प्रशस्तयज्ञाश्च अल्पप्रशंसयोरुभयत्र पाकशब्दो योऽस्मात्पाकतर इत्यत्राल्पत्वे पाकशब्दः । ‘ तं पाकेन मनसापश्यमिति ’ । “ यो मा पाकेन मनसेति अत्र प्रशंसायामिति. ” On this Châritravardhana observes: “ पाकः श्यामाकः इत्यन्यः. ” —**कडङ्गरीयैः**, the word कडङ्गरीय signifies ‘ any animal fed with straw, such as a cow or a buffalo. ’ —**साधनं**, Châritravardhana and Sumativijaya render it by “ प्राणयात्रानिदानं. ”

P. 127. St. 10.—**सर्वोपकारक्षमं**, On this Vallabha observes: “ ब्रह्मचारियतीनामुपजीवित्वात्. ”

P. 127. St. 11.—**उत्सुकं**, The Southern and the Deccan Mss. omit the following authority cited by the Northern Mss. “इष्टार्थोद्युक्त उत्सुकः ’ इत्यमरः । —**मां संभावयितुं**, ‘to do me the honour of a visit.’ The figure according to Hemâdri is “ प्रेयः ” and says, “ तथा काव्यादर्शे । प्रेयः प्रियतराख्यानं. ” K. D. II. verse 275. This verse may also be interpreted as, ‘ my mind, not content with the advent of thee, worthy (adorable) one, is anxious &c.’ or ‘ my mind, eager as it is for the execution of a commission (issue of a command), is not content with the advent of thee, adorable one. A clear proof of kindness.

P. 128. St. 13.—**सर्वत्र**, “ गुर्वाश्रमद्रुमप्रभृतिषु ” Châritravardhana. —**आवरणाय तमिस्रा कथं कल्पेत**, ‘ How may the night be able to

obscure. ' तमिस्रा or तमिस्रं (both meaning the same) is a dark night without the moon and the stars. *Cf.* Hemádri " यथा किरातार्जुनीये । " उज्झतीं शुचमिवाथ तमिस्रामन्तिकं व्रजति तारकराजे । दिक्प्रसादगुणमण्डनमूहे रश्मिहासविशदं मुखमैन्द्री. " Ki. IX. 18.—**सूर्ये**, &c., A proverbial saying.

P. 128. St. 14.—**महाभागतया**. On this Hemâdri observes, " महाभागतयेत्येकं पदं वा. " And also notices the reading " महाभाग्यतया. " And Chháritravardhana observes: " अथ वा महाभागतयोत्कृष्टभाग्यत्वेन । समस्तं पदं. "

P. 129. St. 15.—**तीर्थे**. Sumativijaya renders it by, " यज्ञ. " The figure, according to Sumativijaya, is " उपमा. "—**शरीरमात्रेण**, analyse : " शरीरमेव शरीरमात्रं तेन केवलेन वपुषा. "

P. 129. St. 16.—**स्थाने**, used as an adverb in the sense of ' It is quite proper that. '—**पर्यायपीतस्य सुरैर्हिमांशोः**. The order here referred to is given by Hemádri in the following way : " प्रथमां पिबते वह्निर्द्वितीयां पिबते रविः । विश्वेदेवास्तृतीयां तु चतुर्थीं सलिलाधिपः । पञ्चमीं तु वषट्कारः षष्ठीं पिबति वासवः । सप्तमीमृषयो दिव्या अष्टमीमज एकपात् । नवमीं कृष्णपक्षस्य यमः प्राश्नाति वै कलां । दशमीं पिबते वायुः पिबत्येकादशीमुमा । द्वादशीं पितरः सर्वे समं प्राश्नन्ति भागशः । त्रयोदशीं धनाध्यक्षः कुबेरः पिबते कलां । चतुर्दशीं पशुपतिः पञ्चदशीं प्रजापतिरित्यादिक्रमेण चन्द्रपानं प्रसिद्धं. " *Cf.* also Sumativijaya : " शुक्लप्रतिपदि सर्वे क्षीणमपि चन्द्रं नमस्कुर्वन्ति । यदुक्तं किराते । प्रणमन्त्यनपायमुत्थितं । प्रतिपच्चन्द्रमिव प्रजा नृपम् ," Ki. II. 11.

P. 130. St. 17.—**अनन्यकार्यः**. ' with no other business, ' ' with nothing else to do, ' *i. e.* with single-minded zeal.—**स्वस्त्यस्तु ते**. ' be it well with (good luck to) thee. ' *i. e.* you need not apprehend my displeasure —**निर्गलिताम्बुगर्भं**, ' with its contents of water showered all out, ' *i. e.* For the benefit of the world—a purpose as noble as they own.—**अपि**. On this Hemadri observes : " अपिशब्दस्तदेकशरणत्वसूचनार्थः, " and Cháritravardhana remarks : " अपिशब्देन चातकस्य जलदैकशरणत्वं द्योत्यते. "।—**शरद्घनं**. A proverbial saying.—**चातकः**, ' even the *Chátaka*, ' *i. e.* more helpless, the cloud being his only resort. This bird is supposed to live only on rain-drops.—**नार्दति**. On this Hemádri remarks : " किं पुनः विद्यमानोपायोऽहं स्यामित्यर्थः. " On this Vallabha notices a reading " शरद्घनं नार्दति चातकोऽपि. " The figure, according to Sumativijaya, is अर्थान्तरन्यास.

P. 130. St. 18.—**किं वस्तु**. Both Hemádri and Charitravardhana take किंवस्तु as one word, not as a compound ; and explain it as ; " गुरवे किंवस्तु किंजातीयं वा कियत् किंसंख्याकं देयं. " Charitravardhana has word for word the same.—**अन्वयुङ्क्त**. Here Charitravardhana says, " अनूपसर्गसहितो युजिः पृच्छार्थः. "—**प्रतियातुकामं** ' who had the de-

sire of returning, ' *i. e.* who desired to return. The infinitive with its म् dropped is used with the words काम and मनस् in the sense of 'having a mind to.' Pandit gives the following, 'प्रतियातु is properly a substantive, from प्रतिया with the affix तु. What is used in classical Sanskrit as the infinitive mood is only the accusative singular of a masc. substantive ending in तु. In the Veda we meet with the abl, gen. and dat. sing. of the so-called infinitive : *e. g.*, गन्तवे, गन्तोः &c.

P. 130. St. 19.—**यथावद्विहिताध्वराय**, ' by whom the sacrifice had been duly performed, ' *i. e.* sure to render pious service. Analyse स्मयस्य गर्वस्य संरंभस्य चावेशस्तेन विवर्जितस्तस्मै. On this epithet Hemâdri observes : " यथावत्कृतयागत्वेनाचारोक्तिः. " and Châritravardhana has " यथावत्कृतयजनत्वेनादरोक्तिः. "—**स्मयावेशविवर्जिताय**, ' who was free from all trace (or from the possession) of vanity, ' *i. e* lending a willing ear and serving with unostentatious devotion. On this Hemâdri observes : " अनौद्धत्यं सूचितं. " Châritravardhana has the same. —**वर्णाश्रमाणां गुरवे**, ' the master of the castes and stages of life, ' *i. e.* benefactor to the sage as well. On this Hemâdri remarks : " तद्धर्मप्रतिष्ठापकत्वात्. " Châritravardhana too has the same. Hemâdri renders " विचक्षण " by " कुशल. " But Mallinâtha renders it by विद्वान् 'learned,' *i. e.* competent to give utterance to his thoughts.—**प्रस्तुतमाचचक्षे**, 'broached the thing in question (laid the matter) before him.' Pandit has the following note on this ; ' प्रस्तुत is properly that which is propounded, put forth, a proposition, a *thesis*; the subject of a discussion or conversation, that to which one directs his discourse. *Cf.* Mâlavikâgnimitra, act. 1. speech 81. " मौद्गल्य अमुं प्रस्तावं निवेद्य ......आहूयतां देवी." Also *ib.* 98, " तेन हि प्रस्तूयतां विवादवस्तु." Also *ib.* Act I. Stanza 14. Hence प्रस्तुत as opposed to ' that which is not the subject of a disputation,' *i. e.* to अप्रस्तुत, means *pertinent, to the point.* '

P. 131. St. 20.—**समाप्तविद्येन**, analyse समाप्ताः परिपूर्णाश्चतुर्दश विद्या येन तेन तथोक्तेन.—**चिरायास्खलितोपचारां मे भक्तिं**, ' that loving regard (devotion) of mine which had been of unfailing operation for a long period. ' It may also be interpreter as, ' he at first bethought himself of my devotion alone, of unfailing operation for a long period;' or ' he accounted my loving regard, which had been of unfailing operation for a long period, pre-eminently as such (fee). ' Or ' he at first accounted as such my loving regard, which had been of unfailing operation for a long period. ' According to Hemâdri, Châritravardhana and Dinakara उपचार here is equivalent to

"पादप्रक्षालनादि." —पुरस्तात्, in predic. combination with भक्तिम्.—गुरुदक्षिणार्थै, Hemádri explains it as, "गृणाति हितमुपदिशतीति गुरुः."

P. 131. St. 21.—निर्बन्धसंजातरुषा, analyse: "निर्बन्धेन संजाता रुट् यस्य तेन."—विद्यापरिसंख्यया. On this Cháritravardhana remarks: "षडङ्गा वेदाश्चत्वारो मीमांसान्वीक्षिकी तथा। धर्मशास्त्रं पुराणं च विद्या एताश्चतुर्दश." and Vallabha has the following, "पुराणन्यायमीमांसा धर्मशास्त्राङ्गमिश्रिताः। वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश"। 'शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छंदो ज्योतिषं' इति षडङ्गानि। इति चतुर्दशविद्याः."

P. 131. St. 22.—प्रभुशब्दशेषम्, 'of whom the only remaining portion is the title ruler,' *i. e.* penniless as thou art.—सोऽहम्, 'I, thus circumstanced,' *i. e.* requiring to procure my preceptor's fee.

P. 132. St. 23.—द्विजराजकान्तिः, 'Fair as the moon.' The reason why the moon is called द्विजराज, or the king of Bráhma*n*as, seems to lie in the S'ruti quoted by Mallinátha, the word "सोमो" being there most likely originally applied to the Soma plant. The moon after having received the light from the sun illumines, at night, the world so Raghu too is able to extort money from others and give it him. And hence the propriety of the adjective. *Cf.* Hemádri: "द्विजराजकान्तित्वेन तदर्थप्राप्त्या वैराग्यं." And further he observes, "चन्द्रसमानकान्तित्वेन पापनिवृत्तेन्द्रियत्वेन धार्मिकत्वं." And Cháritravardhana says: "पापनिवृत्तित्वेन धार्मिकत्वं." The figure, according to Hemádri and Cháritravardhana, is अनुप्रास. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. "द्विजराजः शशधरो नक्षत्रेशः क्षपाकरः" इत्यमरः।

P. 132. St. 24.—परीवादनवावतारः, On this Hemádri observes: "अवतारावतरयोर्दीर्घह्रस्वव्यत्यासौ वाल्मिकानामिति वामनः। 'अवे तृस्त्रोर्घञ्.' Pá*n*ini, III. 3. 120. इति करणाधिकरणयोर्विधानान्मार्गपरत्वेनात्र निर्वाहः." Cháritravardhana remarks: "नवशब्देन प्रथममेव रघोः सकाशाद्याचका न गता इति भावः"—काममनवाप्य, On this Hemádri observes: "निःस्वेभ्यो दानं विद्यानुरूपतः इति मनुनया अपन्याक्ष्येयं [अपन्याक्षियपीति Ms.] पापनिन्दाप्रतिषेधात्र रघोरात्मस्तुतिर्दोषः" *Cf.* Vallabha: "न ह्यर्थिनः कार्यवशादुपेताः। काकुत्स्थगोत्रे विमुखाः प्रयान्ति."

P. 132. St. 25.—स त्वं, 'thou, therefore.'—चतुर्थोऽग्निरिव, 'like the fourth Agni.' *Cf.* Manu, II. 231. "पिता वै गार्हपत्योऽग्निर्माताग्निर्दक्षिणः स्मृतः। गुरुराहवनीयस्तु साग्नित्रेता गरीयसी." They are आहवनीय, 'sacrificial fire,' गार्हपत्य, 'household fire,' and दक्षिण 'southern fire.'—द्वित्राण्यहानि, On this Hemádri holds the following discussion:

"द्वे वा त्रीणि वा । इति समासे । 'बहुव्रीहौ संख्येये डजबहुगणात्,' Pāṇini, V. 4. 73. इति डच् । बहुत्वं तु संशयस्योभयपक्षावलम्बित्वेन पञ्चवस्तुविषयत्वात् " । तथा च भाष्यकारः । " सेषा पञ्चाधिष्ठाना वाक् तत्र युक्तं बहुवचनं" Pāṇini, II. 2. 25. " And Chāritravardhana has the following: " बहुत्वं तु संशयस्य [शासंयस्य and शसंयस्य Mss.] उभयपक्षावलम्बित्वेन पञ्चविषयत्वात् । तथा च महाभाष्यकारः । " सेषा पञ्चाधिष्ठाना वाक् तत्र युक्तं बहुवचनं" Pāṇini, II. 2. 25. —**यावद्यते**. with the words पुरा and यावत् (*adv.*) the Present has the sense of the Future and shows *certainty.*

P. 133. St. 26.—**अवितथं संगरं**, ' unfailing promise, ' *i. e.* a fact contributing largely to his delight.—**गाम्**, Note the various meanings of गो.

P. 133. St. 27,—**वसिष्ठमन्त्रोक्षणजात्प्रभावात्**, The उक्षण or sprinkling here referred to is that which the prince underwent from Vasishtha's hands at the time of his coronation. For a similar idea *Cf.* R. I. 61, VIII. 4, XVII. 13.—**मरुत्सखस्येव बलाहकस्य,** 'like that of the cloud with the wind for its ally.' मरुत्सख when taken as a Bahuvrîhi compound gives a beautiful sense generally suited to the poetic composition. But it is just going against the rule of Pâṇini, " राजाहःसखिभ्यष्टच् " (V. 4. 91.). The Sûtra tells us that the compound should be taken as Tatpurusha, for in Bahuvrîhi no टच् *i. e.*, अ is possible. The sense of Tatpurusha in the passage is perfectly out of place when we look to the context. Kálidàsa, when he used the epithet in the sense of Bahuvrihi, may have drawn his authority from other grammarians than Pàṇini. In the Kàlidâsian literature we find there are some words and expressions, especially in his Meghadúta, that are supported even by our scholiast on the authority of other grammarians, such as Aindra, Chândramasa &c. Such occasional deviation from Páṇini is not uncommon with Kálidàsa, and with other poets also. Cháritravardhana, Hemádri and Dinakara also notice the difficulty. Cháritravardhana adds, ' मेघेन गमनार्थं मरुदपेक्षितत्वान्मरुत्सखा यस्येति समासोऽभिमतो न स्यात् । " राजाहः सखिभ्यष्टच् " इति टच् न स्यात् । तस्य तत्पुरुषाभिधानात् । ततश्चिन्त्यमिदं." Hemádri also the same. *Cf.* also the compound महिर्षासख in I. 48.

P. 134. St. 28.—**प्रयतः**, ' purified, ' because under a solemn vow.—**प्रदोषे**, explain, " प्रक्रान्ता दोषा रात्रिरत्र काले इति प्रदोषः." प्रादि compound.—**सामन्तसंभावनयैव**, ' looking upon him (the lord of Kailása) merely as a feudatory prince.' *i. e.*, considering him to be inferior to him in strength and hence easily conquerable. Hemádri translates the word सामन्त by " कतिपयग्रामपतिः." —**कैलासनाथं**, On this epithet Hemádri observes: " इति पर्वतदुर्गिकः."

P. 134. St. 29.—**प्रयाणाभिमुखाय,** Analyse, " अभिगतं मुखं यस्य सोऽभिमुखः प्रयाणस्य अभिमुखः तस्मै. "

P. 134. St. 30.—**पादं सुमेरोः,** ' As a skirt-hill of the Sumeru. ' In quality and in quantity. Sumeru is the same as Meru, which is supposed to consist of one solid mass of gold.—**पादं,** Châritravardhana, Vallabha, Sumativijaya, Dinakara and Dharmameru read " शृङ्गं." They do not seem to have noticed any other reading. Both Hemâdri and Mallinâtha notice *their* reading.—**समस्तमेव,** This epithet may also be interpreted as, ' that entire glittering heap of gold &c. ' or ' that glittering heap of gold &c., the ruler of the earth assigned, in its entirety, to कौत्स. '

P. 135. St. 32.—**वाचम्,** On this Hemádri holds the following fastidious discussion : " विशेषणं विना वाक्शब्दप्रयोगश्चिन्त्यः । यद्वामनः । विशेषणस्य च विशेष्यप्रतिपत्त्यर्थमुक्तार्थस्य प्रयोगः । यद्वा । काव्येषु संक्षेपानादरः । तथा काव्यादर्शे । " अलंकृतमसंक्षिप्तं काव्यम् " इति वक्ष्यमाणेन संबंधः । काशिकावृत्तौ च । समुच्चये सामान्यवचनस्येत्यत्र लौकिकशब्दव्यवहारे लाघवं नाद्रियत इति । " येनांगविकारः " इत्यत्र पाणिनीयमतदर्पणे च । ' अक्षादिशब्देन विनापि देहः स्यादेव काणादिगुणप्रतीतेः । तथापि लोके गुरुलाघवं प्रत्यनादराच्छब्दमपि प्रयुंक्त ' इति. " And Châritravardhana has the following : " शुचिस्मितां वाचमवोचदच्युतः " S'i. I. 25. इत्यादौ यथा विशेषणं तद्वदत्रापि वाचो विशेषणायोगाद्वाचमुवाचेति चिन्तनीयं. And Dinakara identically the same with Cháritravardhana.

P. 135. St. 33.—**वृत्ते स्थितस्य,** ' adhering to his line. ' His track of fourfold duty, *viz.* righteous earning, accumulation, preservation, and employment in well directed charity. On this Hemádri remarks : " गुरुपूजा घृणा शौचं सत्यमिन्द्रियनिग्रहः । प्रवर्तनं हितानां च तत्सर्वं वृत्तमुच्यते " इति.—**प्रभावः,** On this Hemâdri holds the following discussion: "सोपसर्गत्वात् । " श्रिणीभुवोऽनुपसर्गे " Pâṇini, III. 3. 24. इति घञोऽप्राप्तेः प्रकृष्टो भावः प्रभावः इति प्रादिसमासो भविष्यतीति काशिकावृत्तौ । प्रभावो बाहुलकादिति क्षीरतरंगिण्यां. " And Chàritravardhana has : " प्रकृष्टो भावः प्रभावः इति साधुः । अन्यथा । ' श्रिणीभुवोऽनुपसर्गे ' इति सोपसर्गस्य भवतेः प्रत्ययाभावः. "

P. 136. St. 34.—**आत्मगुणानुरूपं,** On this Hemádri holds the following discussion : " आत्मशब्देन राजा विवक्षितः अन्तरात्मा वा । " श्रुतशौर्यादयो ह्यात्मगुणाः " इति । अनुरूपमिति । " अव्ययं विभक्ति " इत्यादिना अव्ययीभावे क्लीवता स्यात् । अथ—"कुगतिप्रादयः" इति । अनुगतः रूपमित्यनुरूपः इति तत्पुरुषे कृतेऽपि परवल्लिंगं " द्वन्द्वतत्पुरुषयोः " इति स एव दोषः इति चेन्न । " द्विगुप्राप्तापन्नालंपूर्वगतिसमासेषु निषेधो वक्तव्यः " इति परवल्लिंगता निषेधान्निष्कौशाम्बिरिव पुलिंगता भवति । तथा हि कुमारसंभवे । " आत्मानुरूपां विधिनोपयेमे " । मेघदूते च । " मार्गं तावच्छृणु कथयतस्त्वत्प्रयाणानुरूपं " इति.—**पुनरुक्तभूतं,** On this Châ-

ritravardhana observes : " इवार्थे भूतशब्दः मातृभूतः पितृभूतः इत्यत्र भूतशब्दस्यैवोपमानार्थत्वमिति कैयटकारेण प्रत्यपादि. "

P. 136, St. 35.—**तस्मात्**, *i. e.* आशीर्वादात्, to be understood from आशिषं. *Cf.* Hemâdri, " आशिषः प्रयोगात् । न तु मुनेर्ग्राम्योक्तिप्रसंगात्. " Vallabha says " तस्मादाशिषः प्रभावात्. " Also Châritravardhana:" केचन तस्माद्विजादिति व्याचक्षते तन्न । ग्राम्यत्वात्. "

P. 136. St. 36.—**देवी,** Hemâdri gives the name of the queen " पट्टराज्ञी प्रभावती. "—**ब्राह्मे मुहूर्ते,** On this Hemâdri has the following note: " अष्टमो मुहूर्तो ब्राह्मः । ननु । "ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय चिन्तयेदात्मनो हितं " इति । रात्रेः पश्चिमयामे रूढिः । " पूर्वरात्रो महारात्रस्ततश्चापररात्रकः । ब्राह्मोऽप्येते क्रमाद्यामाः" इति यादवप्रकाशः । तत्र हि ब्रह्मणो देवस्याध्ययनप्रवृत्तिं निमित्तीकृत्य ब्रह्मशब्दः प्रयुक्तः । नाडिकाद्वयवाचिनो हि मुहूर्तस्य यामवाचकत्वे दोषः । स च मुहूर्तो ब्रह्मादिदैवतश्च न भवतीति तन्न । ते च मुहूर्ताः ज्योतिषरत्नमालायां । "रुद्राहिमित्रपितरो वसुवारिविश्वे । वेधा विधिः शतमखः पुरुहूतवह्नी । नक्तंचरश्च वरुणार्यमयो नयश्च । प्रोक्ता दिने दश च पञ्च तथा मुहूर्ताः" । " निशामुहूर्ता गिरिशाजपादाहिर्बुध्न्यपूषाश्वियमाग्नयश्च । विधातृचन्द्रादितिजीवविष्णुस्तिग्मद्युतित्वाष्ट्रसमीरणाश्च " इति । दैवज्ञवल्लभोऽपि । " ब्राह्मो मुहूर्तोऽभिजिदष्टमो यस्तास्मिन्नपाचीं ककुभं विहाय । प्रशस्यते यानमशेषदिक्षु सर्वाणि कार्याणि च यांति सिद्धिं " । यद्यपि दिवा निशि च ब्राह्ममुहूर्तसद्भावस्तथाप्यत्र दिवैव प्रासोष्टेति मंतव्यं । " नक्तंबुधो भौमशशांकमंदा गुर्वर्कशुक्रा दिनशक्तयः स्युः " इति श्रीपतिपद्धत्युक्तेः । प्रकाशकग्रहसूर्यस्य शुभग्रहगुरुशुक्रयोश्च दिवा बलीयस्त्वात् । बलिषु श्रेष्ठग्रहेषु महाभाग्यता स्यात् । नारदीयसंहितायां च । " मध्यंदिनगते भानौ मुहूर्तोऽभिजिदाह्वयः । नाशयत्यखिलान् दोषान् पिनाकी त्रिपुरं यथा." Châritravardhana has the following: " रजन्या उत्तरघटिकाचतुष्टये." Sumativijaya has : "पश्चिमरात्रघटिकाद्वये. "—**एव,** rejecting all other, and less exalted, names.—**किल,** a particle of *emphasis.*

P. 137 St. 37.—**नैसर्गिकमुन्नतत्वम्,** ' his natural tallness or majesty. ' The description herein contained is of the physical man. —**वीर्यं,** meaning strength.—**ओजस्वि,** to avoid repetition, is *resplendent* rather than *mighty.*

P. 137 St. 38.—**गुरुभ्यः,** On this Hemâdri observes : " इति बहुनद्या नानाविद्यावाप्तिः. " Education and youthful vigour made him no less fit for government than for matrimony.

P. 138. St. 39.—**क्रथकैशिकानां.** A race of people said to be derived originally from Kratha and Kais'ika, who were the sons of Vidarbha, so that the name of क्रथकैशिकाः is used synonymously with विदर्भ. "—**भोजेन,** ' with the Bhoja. ' The Bhojas were a branch of the Yâdavas. They were one of the greatest and mightiest peoples of ancient India. At different times they are represented to have occupied different parts of Central and Southern India.

See note to 60th verse.—**स्वयंवरार्थं,** On this Hemâdri observes, " पित्रादिदात्रभावे याज्ञवल्क्येन स्वयंवरकालः उक्तः. "—**कुमार**°, Hemâdri defines it thus: " शीलवान् गुणसंपन्नो राजपुत्रः कुमारकः. "—**आप्तः**, Hemâdri renders it by " स्वकीयः. "

P. 138. St. 40.—**असौ,** ' this, last named. ' *viz.* Raghu.—**विदर्भाधिपराजधानीं.** The capital of the Vidarbhas was कुण्डिनपुरं, the modern Kun*d*apura.

P. 138. St. 41.—**उपकार्या,** explain " उप अधिकं क्रियते इति उपकार्या, " "उपकरोतीति उपकारिका," this means a tent or a movable house prepared for the reception or residence of persons of royal family in the course of their journey or when they go out on pleasure excursions. —**मार्गे निवासाः,** Hemâdri interprets the passage in two different ways, when he says, उपकार्याः पटवेश्मानि । कर्त्र्यः । मार्गे निवासा बभूवुः । रचित उपचारो यासु ताः । * * * * वनेभ्य इतराः । स्त्रीलिङ्गं । * * * * मार्गेनिवासाः इत्येकं पदं । " तत्पुरुषे कृति बहुलम्, " Pâ*n*ini, VI. 3. 14. इत्यलुक् । यद्वा । मार्गेनिवासाः कर्तारः । उद्यानविहारकन्या बभूवुः । अस्मिन्पक्षे उपकार्यायां रचितः [उपकारो Ms.] उपचारो येषु ते । अस्मिन्पक्षे निवासशब्दस्य पुलिंगत्वाद्वन्येतरे इति भाव्यं । तत्र । वन्यान्निवासानितरयन्ति ते वन्येतराः । ण्यन्तात्पचाद्यच् । इतरयन्तीति सुब्धातुः । निवासा नगरस्था एव जाता इत्यर्थः । यद्वा वन्या इतरे एषां निवासानां इति बहुव्रीहिः । " न बहुव्रीहौ " Pâ*n*ini. I. 1. 29. इति सर्वनामत्वाभावाद्वन्येतरा इति स्यात्. " Châritravardhana has, " वन्येतरा इत्यत्र सर्वनामसंज्ञाया अभावः । यद्वा । वन्यानितरयन्ति पृथक्कुर्वन्ति वन्येतराः । यद्वा एवंविधा उपकार्या एव निवासा बभूवुः. " And Vallabha has, " किं भूता निवासाः उपकारो रचितोपकारिका विहितपुष्पप्रकाराः " &c. (?) Hemâdri interpretes उपचार by " स्रक्चंदनादि. "—**वन्येतराः,** which were so different from sylvan stations. When taken as a Tatpurusha compound the form would be वन्येतरं, where सर्वनामता is retained. There are other compounds where सर्वनामता is not at all retained as : कालेन अवरस्मै = कालावराय. By " तृतीयासमासे. " Pâ*n*ini I. 1. 30. ' In instrumental determinative compounds the words सर्व &c., are not सर्वनामन्. ' and साधवश्च अन्ये च = साध्वन्याः. By " द्वन्द्वे च. " Pâ*n*ini, I. 1. 31. And in collective compound, (II. 2. 26) the words सर्व &c., are not सर्वनामन्. Or by taking as Bahuvrihi वन्या इतरे येभ्यः.—**उद्यान,**° explain, " उद्यान्त्यत्रेति उद्यानं. "

P. 139. St. 42.—**क्रान्तं.** " इति निर्वशंकतुः " Hemâdri.—**रजोभूसरकेतु,** On this epithet Hemâdri remarks, " इति सैन्यबाहुल्यं सूचितं. " And Châritravardhana has " गतमार्गत्वेन रजो धूसरत्वं क्रान्तत्वञ्च व्यज्यते. " and further observes: " नक्तमालश्चिरबिल्व इत्यन्यः. "—°**नक्तमाल,** Only two of the Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary cite

in support of this the authority from Amara; but the majority of the Mss. omit it. We are not quite sanguine of *their* genuineness.

P. 139. St. 43.—**निर्धौतदानामलगण्डभित्तिः**, 'whose broad (huge) cheeks, with their ichor washed all off, were stainless (clear).' Or 'whose broad cheeks were stainless with (on account of) their ichor washed all off.' Hemâdri analyses, "निर्धौतदानश्चासौ अमलगण्डभित्तिश्च । यद्वा । निर्धौतदानेन अमलगण्डभित्तिर्यस्य."—°**सलिलप्रवेशः** the word सलिल is derived from the root सल् 1. P. 'to send' with the affix इलच्. *Cf.* "सलिलकल्यनिमहिभडिभण्डि &c.," U*n*âdi Sûtra, 54. S. K. p. 321. On this Châritravardhana and Sumativijaya remark, "इति मदजलाधिक्योक्तिः."—**भ्रमरैः**, the word भ्रमर is derived from the root भ्रम् 1. 4. P. A. 'to wander.' with the affix अरच्. It contains two Rephas or रs, compare द्विरेफ.

P. 139. St. 44.—**ऋक्षवतः**, ऋक्ष or ऋक्षवत् is one of the seven Kulaparvatas or mountain chains of India. It has been identified with the mountains of Gon*d*avana. The Kulaparvatas are: "महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षपर्वतः । विन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तैते कुलपर्वताः."—**वप्रक्रियां**, *Cf.* Meghadûta I. 5. "वप्रक्रीडापरिणतगजप्रेक्षणीयं ददर्श." The word 'वप्र' is derived from the root वप् 1. A. P., 'to shear,' 'to cut,' with the affix रन्. *Cf.* "वृद्भिवपिभ्यां रन्" U*n*âdi Sûtra, 185. S. K. p. 326.

P. 140. St. 45.—**लघुक्रियेण**, Châritravardhana explains लघुक्रिया by "कुशलता."—**वारी** is here used evidently in the sense of गजबन्धनी and not गजबन्धनस्थानं. The Mss. are unanimous in reading the commentary as it is given here, but it is easy to see that वारी गजबन्धनस्थानं does not suit well with what follows. Châritravardhana has "वारी गजबन्धनं सेवार्गला तस्या भङ्गे प्रवृत्त इव." And Hemâdri says, "वारी गजबन्धनस्थानं तस्यां बहिर्गमनरोधार्थं दत्ता अर्गला विष्कम्भस्तस्या भंगे त्रोटने प्रवृत्तः इव । यद्वा । वार्येव जलमेवार्गला." Dinakara has "वारी गजबन्धनी सेवार्गला । तस्या भङ्गे" &c. It is better to take the expression in the sense given by Châritravardhana and correctly suggested by Hemâdri. Vallabha evidently agrees with Mallinâtha.—**तीराभिमुखः**, the word तीर is derived from the root तीर् 10. P. with the affix अच्.

P. 141 St. 47.—**तस्यैकनागस्य**, On this epithet Hemâdri and Châritravardhana have an explanation, "एकः शब्दः संख्यार्थो मुख्यार्थो वा । 'एके मुख्यान्यकेवलाः' इति." एक may be taken to mean either 'lonely' or 'peerless.' *viz.*, with no occasion for jealous excitement ere now. And further Châritravardhana has, "श्रेष्ठत्वेन तस्यैकनागत्वं."—**दुर्दिनश्रीः**, On this Hemâdri observes: "दुर्दिनशब्दे-

न वर्षणमुच्यते. "—अनेकप, explain "अनेकाभ्यां (मुखशुण्डाभ्यां) पिबतीति, *i. e.*, 'drinking with the mouth and the trunk'; hence an elephant is also called द्विप.

P. 142. St. 49.—अश्राः, Chàritravardhana renders this by "युगकीलकाः."—तुमुलं, तुमुल is derived from the root तु 2. P., 'to injure,' 'to hurt,' 'to kill,' with the affix मुलक्.

P. 142. St. 50.—विशिखेन, analyse, "विशिष्टा शिखा यस्य सैः तेन." —कुम्भे, the word कुम्भ is derived from the root उंभ् 6. 9. 7. P., 'to confine,' 'to cover over' 'to fill with,' with कु and the affix अच्, by शकन्ध्वादिः. Explain कुं भुवं उम्भति.—वन्यः करीति, it is said in the S'àstras that no tame elephant should be killed except in war; hence the propriety of the epithet वन्यः.—अवध्यः, 'not deserving of death. Elephants are not to be killed except in battle, and wild elephants, never being brought to battle, come under the exception.

P. 143. St. 51.—तत्, *viz.*, 'his assuming the celestial form.' —विद्धमात्रः, analyse "विद्ध एव विद्धमात्रः। सुप्सुपेति समासः." Chàritravardhana and Hemàdri analyse विद्ध एव विद्धमात्रः। ज्ञापकान्मात्रप्रत्ययः। —किल, "इत्यागमे" Hemàdri. But Vallabha explains to mean "संभावनायां." But here it implies *tradition*.—वपुः, explain "उप्यन्ते देहान्तरभोगसाधनानि बीजान्यत्रेति," derived from the root वप् 1. P. A. 'to cut,' 'to shear' &c., with the affix उसि.

P. 143. St. 52.—वाग्मी, is a compliment.—दशनप्रभाभिः, 'by the lustre of his teeth.' Because his teeth were pearl-like.—तारहारः, On this Chàritravardhana quotes the following : "तारस्तु मुक्ताशौतमुक्तफलविदीनी तारः इति विक्रमादित्योक्तिकस्तत्र तारो हारो यस्य सः."—कल्पद्रुमः, explain "द्रवन्त्यूर्ध्वं गच्छन्तीति द्रवः शाखास्ताः सन्त्यस्यासौ द्रुमः," derived from the root द्रु with the affix म. *Cf.* Pàṇini, V. 2. 108.—पुष्पैः, explain "पुष्यंति विकसतीति पुष्पं, derived from the root पुष् 4. P. 'to blossom,' 'to bloom.'

P. 143. St. 53.—प्रियंवदं, On this Chàritravardhana and Sumativijaya have the following note: "पुरा किलेश्वरसेवागमनेऽखर्वगर्वसंतापितेन जातमन्युना गजो भवेति शप्तः इति वार्ता."—मतङ्गजत्वम्, explain "मतङ्गा मेघः इव जायते इति मतङ्गजः", derived from the root जन् with the affix डः. —गन्धर्व°, derived from the root अर्व् 1. P. 'to hurt,' 'to kill' with गन्ध and the affix अण्. *Cf.* Pàṇini, III. 2. 1.—तनूजं, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinàtha's commentary omit the following authority cited by the Northern Mss. "स्त्रियां मूर्तिस्तनुस्तनूः" इत्यमरः। तन्वादेर्वेत्यूङिति केचित्।

P. 144. St. 54. For a parallel idea *Cf.* S'a. " स्पर्शानुकूला इव सूर्यकान्तास्तदन्यतेजोऽभिभवाद्वमन्ति. "—उष्णत्वं, &c., A proverbial saying.

P. 144. St. 56.—**वृथा हि मे स्यात्स्वपदोपलब्धिः**, Here Vallabha quotes the following: " सप्रोञ्चवनदग्धस्य [?] । पुत्राधीनधनस्य च । प्रतिकर्तुमशक्तस्य । जीवितान्मरणं वरं. " And Cháritravardhana has " उपकर्तुमशक्तस्य जीवनाधारणा वृथा. "

P. 145. St. 57.—**प्रयोगसंहारविभक्तमंत्रं**, analyse प्रयोगे प्रेरणे संहारे संक्षेपे च विभक्तौ भिन्नौ मंत्रौ यस्य तथोक्तं ।—**संमोहनं नाम**, Cháritravardhana and Vallabha have an explanation: " प्रस्वापनं वा नामास्त्रं."—**न चारिहिंसा**, अरिहिंसा, *i. e.* अरेर्हिंसा, अरेः is the objective genitive. Here Hemádri remarks : " न हिंस्यात्सर्वभूतानि " इति श्रुतिदर्शनात् .—**विजयश्च हस्ते**, A proverbial saying. Hemádri remarks: " इति लोकोक्तिः । यथा किराते । " जटाधरः सन् जुहुधीह पावकं " Ki. I. 44. मेघदूते च । " शेषान्मासान्गमय चतुरो लोचने मिलयित्वा. "—**सखे**, Here Hemádri has the following: " सखिशब्देन समप्राणतोक्ता । तथोक्तं रसाकरे । "अत्यागः सहनो बन्धुः सदैवानुमतः [सदैवायमितः Ms.] सुहृत् । एकक्रियो भवेन्मित्रं समप्राणः सखा मतः " इति.

P. 145. St. 58.—**मां प्रति**, '(adopted) by thee unto me. ' Chȃritravardhana with greater correctness takes मां प्रति with दयापरोऽभूः, when he says: "प्रहरन्नपि त्वं प्रहारं ददन्नपि मां प्रति मुहूर्तं दयापरोऽभूः कृपावानासीः" &c.—**मुहूर्तं**, ' for a moment, ' *i. e.* for the time being. This expression is taken by Mallinȃtha with दयापरोऽभूः, the meaning would then be ' though you struck me at last, you wished for a little time to deal kindly towards me. '—**न प्रतिषेधरौक्ष्यं प्रयोज्यं**, ' the rudeness of a refusal is not to be employed. ' The principle here laid down is ' once kind, always kind. ' Here Hemȃdri and Chȃritravardhana explain: " गन्धर्वास्त्रं न गृह्णामीति प्रतिषेधः ".—**उपछन्दयति**, On this Hemȃdri holds the following discussion: " उपछन्दनं प्रार्थना । छदि वर्णे असुन् । ' छन्दः पयेऽभिलाषे च ' । छन्दसा उपसान्त्वयन्नुपछन्दयन् । कर्तृकरणार्थे णिजिति क्षीरतरङ्गिण्यां । णाविष्ठवदिति टिलोपः. "—**अलंह्रिया**, ' No need of shame, ' *i. e.* no need of delicacy with me. On this Hemȃdri and Sumativijaya hold the following discussion: " नमःस्वस्तिस्वाहास्वधालंवषड्योगाच " Pȃnini, II. 3. 16, " इत्यत्र पर्याप्त्यर्थस्यालमो ग्रहणान्नात्र चतुर्थी । वारणार्थालंयोगे तृतीयैव. "

P. 145. St. 59.—**नृसोमः**, On this Cháritravardhana observes : सोम इव ना नृसोमोऽतिमनोहरत्वादानन्दकारित्वाच. " And Hemádri says : " नृषु सोमो ना सोम इवेति वा । तदा उपमितसमासः । अनेनास्त्रप्राप्तौ सत्यामपि लोकानां सुभग इत्युक्तं भवति. "—**सोमोद्भवायाः सरितः**, On this Hemȃdri observes : " नर्मदाशब्देन सुखदातृत्वं व्यज्यते. "—**उदङ्मुखः**, On this Hemȃdri has the following note: " इति विघ्नायुपशान्तये," and holds the following discus-

sion, उदीचीशब्दात् । 'दिक्शब्देभ्यः' Pâ*n*ini, V. 3. 27. इत्यस्तातिः । तस्य । 'अञ्चेर्लुक्' Pâ*n*ini, V. 3. 30. इति लुक् । 'लुक्तद्धितलुकि' Pá*n*ini, I. 2. 49. इति स्त्रीप्रत्ययस्य लुक् । तन्निवृत्तौ भसंज्ञाया अभावादुदर्यत्वमपि निवर्तते । तसिलादिस्तद्धितः इत्यव्ययत्वं । "उदङ्मुखस्तु गृह्णीयात्" इति स्मृतेः यद्वा । उदङ्मुखः उपस्पृश्य । "अन्तर्जानु शुचौ देशे उपविष्ट उदङ्मुखः । प्राग्वा ब्राह्मेण तीर्थेन द्विजो नित्यमुपस्पृशेत्" इति याज्ञवल्क्यः."

P. 146. St. 60.—**सौराज्यरम्यान्**, analyse, "शोभनो राजा सुराजा तस्य कर्म सौराज्यं."—**अचिन्त्यहेतु**, 'accidental, strange, of wonderful origin.' *Cf.* Dinakara "अचिन्त्यो ज्ञातुमशक्या हेतुर्यस्य तत्तथा."—**चैत्ररथ**. The garden of Kubera so called from its being cultivated by the Gandharva called Chitraratha.—**विदर्भान्**, On the north of Kuntala, lay the great kingdom of Vidarbha, which seems to have extended from the banks of the K*r*ish*n*à to near the banks of the Narmadà. On account of its size it was also called Mahàràsh*t*ra or Great Province. This will appear from the passage quoted in Bàla R. X. 74, where the two names are applied to the same country. So also in the Anargha Râghava. It lay to the south of Narmadá, as Aja crossed the river before entering it. The people were also called Kratha Kais'ikas from two chiefs Kratha and Kais'ika, according to the Vish*n*u Purá*n*a, sons of king Vidarbha. The ancient capital was at Ku*n*dina, sometimes called Vidarbha, which is probably the modern Beder. It was the seat of Bhima, father of Damayanti, and of Bhîma, father of Rukmi*n*î. Rukma, son of Bhîma, is said to have transferred the capital to Bhojaka*ta*, which must be looked for further north as he went up to Narmadá to avenge the insult of his sister's abduction and did not like to return to Ku*n*dina as he could not kill his foe. In the Mâlavikâgnimitra, it is stated that Agnimitra divided Vidarbha into two parts, lying north and south of the Varadà river (Warda), which, in its Payne Gangá branch separates the assigned districts of Berar from the Nizam's dominions. Amarâvatî (Oomrawati) in Berar appears to have been the capital of the northern division and Pratish*th*àna (Paithan) on the Godàvarî was for a long time the chief place in the southern division. Kalyâ*n*i (Kalianee) west of Hyderabad was also an important town. Vidarbha has given name to the Vaidarbhi or graceful style, which is found in so old a writer as Vàmana. Mahâràsh*t*ra is not so old and its Prâk*r*ita dialect Mahàràsh*t*rî is not specifically mentioned by Vararuchi. This was the land of the Bhojas, who are said to be descendants of Druhyu. They were not, however,

confind to this province, as there are several Bhojapuras in different parts of India. They had different clans such as the Kuntî Bhojas to whom Kuntî belonged and the Mârtikâvatas or Bhojas of Mrittikâvata whose chief fought at Kurukshetra on the side of Duryodhana. The celebrated king Bhojarâja, who reigned at Dhârà (Dhar) in the beginning of the eleventh century, evidently belonged to these Bhojas.

P. 146. St. 61.—**क्रथकैशिकेन्द्रः**, see note above.—**ऊर्मिमाली**, On this both Hemâdri and Châritravardhana quote the following: "रत्नाकरो जलनिधिरूर्मिमाली महाशयः" इति विन्ध्यवासी. For the similar idea, *Cf.* R. III. 17 ; VII. 19 ; X. 82 ; XII. 36; XVI. 27. and also Ku. III. 67.

P. 147 St. 62.—**अर्पितश्रीः**, analyse " अर्पिता दत्ता अजाय श्रीः छत्रचामरादिशोभा येन सः तथोक्तः"—**तत्र**, Mallinâtha explains it by " पुरे," but Hemâdri by " स्वयंवरे."

P. 147 St. 63.—**प्राग्द्वारवेदिविनिवेशितपूर्णकुम्भां**, Vedi is a quadrangular raised spot in the court-yard of a temple or palace. Châritravardhana's explanation on this appears better than that of Mallinâtha. " प्राग् द्वारं यस्याः सा प्राग्द्वारा सा चासौ वेदिश्च तस्यां विनिवेशितः स्थापितो हैमः पूर्णकुम्भो यस्यां सा तां " &c. The meeting with a pitcher full of water on the occasion of entering, or setting out from, a house is still considered auspicious.—**नवोपकार्यां**, ' a new pavilion,' erected in order to receive the royal guest.

P. 147. St. 64.—**भावावबोधकलुषा**, and **कन्याललाम** (in its more usual acceptation) would seem to be in favour of a different rendering, *viz.*, ' clouded by her divination of (jealous at reading) the mood of mind (*viz.* affection for a rival)'. Both Hemâdri and Châritravardhana interprete it in a different way, they say, "अन्यत्रानुसक्तोयमिति अभिप्रायवेदनेन कलुषा अप्रसन्ना दयितेव. " *i. e.* ' like a beloved who is dissatisfied with her husband by her knowledge of his infidelity.' कलुषा is derived from the root कल् 10. P. ' to observe, ' ' to regard,' ' to consider ' &c., with the affix उषच् . *Cf.* Unâdi Sûtra, " पृनहिकलिभ्यउषच् " 514. S. K. p. 334.—**कन्याललाम लिप्सोः**, ' longing to win that covetable jewel among maidens ' *i. e.* wishing to gain the hand of the lovely paragon of maidens.—**स्वयंवरसमाहृतराजलोकं**, ' her graces had attracted a vast troop of princes and, pitted against such a band, Aja's heart might well misgive him. ' The epithet expresses the covetableness of Indumatî and the difficulty of gaining her. Vallabha says: " कन्या चासौ ललाम च । तदेव ग्राह्यत्वात्कमनीय-

मिति । मयूरव्यंसकादिसमासः ". Hemâdri too has the same.—**निद्रा चिरेण नयनाभिमुखी बभूव**, On this Hemâdri observes: " बहुषु स्थितेषु मां वृणीत नवेत्याकुलत्वाच्चिरेण निद्रामगमदित्यर्थः. " And Chăritravardhana has the following: " केचित्तु निद्राकथनं शृंगारपोषकं न भवतीत्याहुः. " *Cf*. also, " यदा तु मनसि क्लान्ते कर्मात्मानः क्रमान्विताः । विषयेभ्यो निवर्तन्ते तदा स्वपिति मानवः. "

P. 148. St. 65.—**कर्णभूषणनिपीडितपीवरांसं**. 'his huge shoulders pressed (impressed) with his ear-ornaments.' On this Hemádri remarks: " अनेन चिन्ताप्रकाशनं. कर्णभूषण means the कुण्डल, a long and heavy ornament of gold worn round the ear, and quite likely to leave a deep impression on the shoulder when the head is bent sufficiently either side in a posture of anxiety and care.—**शय्यान्तर**° &c. On this both Hemádri and Chăritravardhana remark: " अनेनास्य ब्रह्मचर्यं द्योत्यते. "—**च्छद**° &c., here Hemâdri discusses, छाद्यते अनेनेति छदः । " पुंसि संज्ञायाम् " Pánini, III. 3. 118. इति घः । " छादेर्घे " Pánini, VI. 4. 96. इति ह्रस्वः । उत्तरः उपरितनः श्रेष्ठो वा छदश्च शय्याया उत्तरच्छदः.—**सूत**, the proper duty of a सूत is either to be a bard or a charioteer.—**प्राबोधयन्**. Hemádri quotes the following: " मधुरगानेन हि प्रभूणां बोधः क्रियते " । तथाहि भोजः । " मृदुनिर्मर्दनैः पादे शांतिर्व्यजनकैस्तथा । श्रुतो वा मधुरैर्गानैर्निद्रातो बोधयेत्प्रभुं. "

P. 148. St. 66.—**भवानपरधुर्यपदावलम्बी**, 'thou art the holder of the position of its other supporter.' On this Hemádri observes: " युवराजत्वात्. " On this verse Pandit remarks: 'These awakening verses have no special reference to the present time and place, but form what the bards used to recite in the princes' own capital.'

P. 149. St. 67.—Chăritravardhana pronounces this stanza to be spurious, and according to his usual way he gives a full commentary on it. It is not customary with these commentators to look to the genuine merit and the internal evidence of the verses they comment upon; but if the text on which they comment has at its end the words " क्षेपकं &c., " they generally retain the same at the close of their commentary. No doubt they occasionally discuss some readings, but such verses, if accurately marked, do not exceed even to a dozen throughout the whole kávya. Taking into account the style of the verse in question, we may perhaps, well believe that there is little, indeed altogether nothing in it that would justify its condemnation on purely irresponsible evidence. Mallinátha, according to all our Mss. considers it to be the genuine production of Kálidása.—**अनवेक्षमाणा**. The stanza presents no difficulty whatever if one were to understand thoroughly the commentary of Mallinâtha. It is not even necessary to construe

अपि with भवता as suggested by Pandit, but if construed with पर्युत्सुकत्वं it gives a clear sense. Mallinátha's rendering of this passage is perfectly elear and satisfactory. The gist of what he says is this : Lakshmi (Beauty personified) is described as the wife of Aja. Aja enjoyed sleep (निद्रा personified as another female) and neglected Lakshmi. She parting from him (in sorrow), whiles away her time in company of the Moon who by his lustre reminds her of her husband's face. Even this Moon who consoled her for a time was about to take leave; hence the appeal of the bards to Aja to get up and make her glad. All commentators including Hemádri have not, it may be presumed, attempted to interpret it well. Most of them have construed अपि with भवता, and have, in their own way, attempted to give different meanings of the passage in question (see their commentaries). If Vallabha's reading be adopted, ' the particle हि,' observes Pandit, 'should be taken to refer to मुञ्च शय्यां in the preceding stanza, the present stanza being an additional reason why the prince should wake up, and leave his bed '; if this is the reason to connect the particle हि, every following stanza up to the 75th verse, also requires one हि, which is unwarranted. Vallabha's comments run thus : " हे मतिमतां वर सोऽपि चन्द्रस्त्वदाननरुचिं तव मुखकान्ति विजहाति परित्यजति । अस्तं व्रजन्निच्छायो भवतीत्यर्थः । कोऽसावित्याह । हि निश्चितं (his usual way of rendering the eonjunction) लक्ष्मीः श्रीर्भवता त्वया अनवेक्ष्यमाणा असेव्यमाना सती निशि रात्रौ येन चन्द्रमसा सह पर्युत्सुकत्वं विडम्बयति रणरणकत्वमतिवाहयति । किंभूतेन त्वया । निद्रावशेन निद्रया वशीकृतेन । किंभूतश्चन्द्रः । दिगन्तलम्बी पश्चिमाचलविलम्बी । केव । खंडिता अवला इव । यथा खण्डिता अवला निशि रात्रौ नार्यन्तरसंगाद्भर्त्रा अनवेक्ष्यमाणा सती कापि तत्प्रतिनिधिसुहृत्संनिधाने औत्सुक्यं विनोदयति &c., " ' the moon by means of whom Lakshmi, though slighted by thee, devoted to sleep, appeases her yearning like a jealousy-stricken mistress at night, &c.' Hemádri says : " अपिशब्दो लक्ष्मीवाङ्गम्यं सूचयति ", this appears sensible but when he further says, " निद्रावशेन भवता अनवेक्ष्यमाणा अपि उपलालन तावदास्ताम् । अवलोकनमपि नास्तीत्यपि शब्दार्थः," this appears rather unconnected.—खण्डिता, On this Hemádri and Vallabha observe, " अन्यच्च । " निद्राकषायमुकुलीकृतताम्रनेत्रो नारीनखव्रणविशेषविचित्रिताङ्गः । यस्याः कुतोऽपि गृहमेति पतिः प्रभाते सा खंडितेति कथिता कविभिः पुराणैः". And Châritravardhana has : " प्रयोगादुचिते यस्या वासके नागतः प्रियः । तदनागमनार्त्ता तु खंडितेत्यभिसंज्ञिता" इति त्रिलोचनदासः. And further he has : " अतः शयनं परित्यज्य स्वकीयां आननलक्ष्मीं स्वीकुरु" । यतः । " सद्यः प्रणयमुज्झन्ति म्रियन्ते [प्रीयन्ते Ms.] चाति कोपनाः मानिन्यः खंडिताश्चैव तत्क्षणादप्रसादिताः " इति. *Cf.* also, " पार्श्वमेति प्रियो यस्या अन्यसंभोगचिह्नितः सा खंडितेति कथिता धीरैरीर्षाकषायिता." For विनोदयति *Cf.* R. XIV. 77. S'a. VI. " लतासु दृष्टिं विनोदयामि &c. " **For पर्युत्सुक,**

Cf. Ku. IV. 28. " स्मर पर्युत्सुक एष माधवः. Vik. II. 16. " पर्युत्सुकां कथयसि प्रियदर्शनां तां. "

P. 150. St. 68.—सद्यः परस्परतुलां, &c., 'just acquire resemblance with each other at once.' The fresh-blown lotus can have no counterpart so long as the eye is not opened.

P. 150. St. 69.—अनोकहानां, explain " अनसः शकटस्य अकं गतिं घ्नन्तीति अनोकहाः, " derived from the root हन् 2. P. with the affix डः. *lit.* 'of those which obstruct the course of a carriage.'

P. 151 St. 70.—लब्धपरभागतयाधरोष्ठे, Construe अधरोष्ठे either with आभाति or with लब्धपरभागतया. Vallabha gives a पाठान्तर, "संलक्ष्यते दशनचंद्रिकयानुविद्धं। बिम्बोष्ठलब्धपरभागमिवस्मितं ते " for the latter half.

P. 151 St. 71.—आयोधनाग्रसरतां याते त्वयि, 'thou, having taken the lead (leadership) among warriors.' " त्वयि संग्रामाग्रणित्वं प्राप्ते सति " Vallabha. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " युद्धमायोधनं जन्यम " इत्यमरः ।—अग्रसरतां, On this both Hemádri and Cháritravardhana hold the following discussion, " पुरोऽग्रतोऽग्रेषु सर्तेः " Pâṇini, III. 2. 18. " इति सूत्रे न्यासकृत्। अग्रेसरः इत्येतद्रूपं सप्तम्या अलुकापि सिध्यत्येव। अग्रं सरतीत्यसप्तम्यन्त उपपदे अग्रेसर इत्येतद्रूपं यथा स्यादित्येवमर्थं अग्रेशब्दस्य एकारान्तत्वनिपातनमिति विज्ञेयं इति। अग्रसर इति प्रयोगाश्चिन्त्यः। तथा 'पुरोगाऽग्रेसरप्रष्ठाग्रतसरपुरःसराः' इत्यमरः। यथात्रैव षष्ठे सर्गे 'अग्रेसरैर्वाजिभिरुद्धतानि' भर्तृहरिश्च 'किंजीर्णं तृणमत्ति मानमहतामग्रेसरः केसरी' इति। अग्रेसरन्तः गच्छन्तः अग्रसरन्तः। मध्ये वीर इति वा। तदा त्वयि रिपूनं यातं इति। सरतीति सरः 'पचाद्यच्' इति विशेषणसमासे साधुत्वमिति वा। 'यङोऽचि च' Páṇini, II. 4. 74. इति सूत्रे सर्वे धातवः पचाद्यन्तः पातिनः इति न्यासकृत्। तथात्रैव नवमे सर्गे 'सवरुणा वरुणाग्रसरं रुचा'। 'हरिहयाग्रसरेण धनुर्भृता'। 'यूथं तदग्रसरगर्वितकृष्णसारं' इति. "

P. 152. St. 72.—उभयपक्षविनीतनिद्रा. 'with their slumbers shaken off (dispelled) on either side. Châritravardhana renders विनीता by " त्यक्ता, " and Dinakara by " विहिता ".—भिन्नाद्रिगैरिकतटाः &c., analyse, " भिन्नाऽद्रेः पर्वतस्य गैरिकधातुतटो यैस्ते तथा भूताः ". The tusks resembled mountain-ridges in point of hugeness, and, tinged with red, acquired similarity in point of colour as well. Or 'whose bud-like tusks appear to have had mountain-ridges, formed of red mineral, cleft by them.' The tusks, forcing their way into the ridges, obtained a red coating therefrom.—उभय, Hemâdri, quoting in support of his arguments कैय्यट (also quoted by Mallinâtha), quotes also from his विवरण the following: " उभादुदात्तोनित्यमित्यत्रास्वरि-

तत्वाद्वेत्येतन्नानुवर्तते इति । तन्निवृत्यर्थं नित्यग्रहणं इति भावः. " उभ is used only in the dual. उभयं though dual in sense is used in the singular and plural only. From उभ we get उभय, by the addition of अयच् instead of तयप् as in the case of द्वितय. It is an आद्युदात्तवृत्ति, *i. e.*, 'a complex formation requiring resolution or explana-tion.'—**मुखर**°, explain "मुखं मुखव्यापारं वचनं रात्यादत्ते इति".—**स्तम्बेरमाः**, अ is added on to the roots रम् and जप् when preceded by the words स्तम्ब and कर्ण and when the compounds signify an elephant, and an informer respectively.

P. 152. St. 73.—**वनायुदेश्याः**, The Vanâyus were a people of the North-West of India, celebrated for their horse-breed.—**लेह्यानि** &c. These solid pieces of rock-salt (सैन्धव) were made to be licked by the horses in order that these might be strengthened. *Cf.* Châritra-vardhana: "पुष्ट्यर्थं लेढव्यानि." Also Hemâdri, "उक्तं च । शालिहोत्रेण सिन्धुयोगसंग्रहे । पूर्वाह्णकाले चाश्वानां प्रायशो लवणं हितं." See also commentary. Vallabha says: "श्लेष्मनिवारणार्थं आस्वाद्यानि."—**वनजाक्ष**, Châritra-vardhana analyses, "वनं पानीयं तस्माज्जातं वनजं कमलं तद्वदक्षिणी यस्य स तथा तत्सम्बुद्धिः."

P. 153. St. 74.—**स्वकिरणपरिवेषोद्भेदशून्याः प्रदीपाः**, 'and the lamps devoid of the diffusion of their own circle of rays,' *i. e.*, the lamps had the expansion of their rays impeded by the stronger light of the sun and hence they became dim though not altogether extinct.—**म्लानपुष्पोपहारः**, 'the withered offering of flowers.' The word म्लान here expresses reason, therefore, it should have been used as a noun instead of an adjective. The sentence should stand thus: "पुष्पोपहारो म्लानत्वाद्विरलभक्तिर्भवति &c."

P. 153. St. 75.—**सैकतं**, explain "सिकताः सन्ति अस्मिन्निति सैकतं". *Cf.* Pâṇini, V. 2. 104.—**राजहंसैः**, analyse "हंसानां राजानस्तैः". राजहंस is a sort of white flamingo with red legs and bill.

P. 154. St. 76.—**अश्वितास्ति**°, On this Châritravardhana remarks "अश्वितेत्यनेन सुलक्षणत्वोक्तिः । उक्तं च । "मुखमर्धं शरीरस्य सर्वं वा मुखमुच्यते । तत्रापि नासिका श्रेष्ठा नासिकायाश्च लोचने."

CANTO VI.

P. 155. St. 1.—**तत्र**, Both Hemâdri and Chậritravardhana interpret it by "समाजे", which rendering appears better than Mallinâtha, who simply says "स्थाने".—**उपचारवत्सु**, 'furnished with a canopy and other articles necessary for decorations.' *Cf.* Vallabha "पुष्पप्रकरादिविच्छित्तियुक्तेषु," also *Cf.* Hemâdri, "वितानादिषु," and Sumativijaya, "चित्रादिरुपचारो विद्यते येषु तेषु तथोक्तेषु."—**मञ्चेषु**, Sumativijaya interpretes the epithet by "सिंहासनस्योपरिसिंहासनं मञ्चकं कथ्यते."

P. 155. St. 2.—**प्रत्यर्पितस्वाङ्गं**, 'to whom his body was restored,' *i. e.* restored to his original form. Referring to the myth of S'iva having burnt the God of Love. Analyse "प्रत्यर्पितं पुनर्दत्तं स्वांगं मन्मथशरीरं यस्मै स तं तथोक्तं." It is said that God of Love (काम) attempted to inspire S'iva with love for Pârvatî in the midst of his asceticism and so he was burnt to ashes by the fire issuing forth from his third eye. Relenting afterwards through the entreaties of Rati the god moved with compassion restored him to life. स्वाङ्ग means a limb of the human body, as distinguished from अङ्ग which signifies a member of any thing, animate or otherwise.—**काकुत्स्थं**, see our note to st. 41. IV.—**ईश्वरेण**, On this epithet Hemâdri remarks, "ईश्वरपदेन दानसामर्थ्यं."

P. 156. St. 3.—**मृगराजशावः**. On this Hemâdri observes: "कुमार इत्युक्तत्वाच्छावः इति पदं."

P. 156. St. 4.—**उपमेयकान्तिः**, analyse "उपमातुं योग्या कान्तिर्वपुः शोभा यस्य स तादृशः".—**परार्ध्यवर्ण°** &c., Vallabha explains to mean "प्रशस्तपञ्चवर्णाच्छादनपटयुक्तं."

P. 156. St. 5.—**विभक्तः**, Hemâdri says, "अखण्डत्वेऽपि विभक्तशब्दे यथा-चैत्र। 'विभक्तात्मा विभुस्तासामेकः कुक्षिष्वनेकधा' इति."—**आत्मा**, On this Hemâdri and Châritravardhana make the following remark, "विद्युत्स्वरूपमिव विद्युत्पक्षे प्रभाविशेषो वर्णभेदः। वाताय कपिला विद्युदातपायातिलोहिनी। पीता शस्याय विज्ञेया दुर्भिक्षाय सिता भवेत."—**प्रभाविशेषस्य**, Hemâdri and Châritravardhana interpret as, "प्रतापस्य विद्युत्पक्षे वर्णभेदस्य."—**पयोमुचां**, On this Hemâdri observes: "मेघोपमा राज्ञां मालिन्यार्थं." Royal splendour personified as Lakshmi though regarded as one is here said to shine reflected in every one of the kings and princes that assembled there in the marriage-hall as a single streak of lightning is seen as many streaks when it is reflected by different sets of clouds.

P. 157. St. 6.—**महार्हासनसंस्थितानां**, analyse "महानर्हो मौल्यं येषां तेषु सिंहासनेषु संस्थितानां."—**उदारनेपथ्यभृतां**, 'elegantly dressed.'

Analyse "उदाराणि च तानि नेपथ्यानि वेषविशेषाणि तानि बिभ्रतीति उदारनेपथ्यभृतस्तेषां तथोक्तानां."—**कल्पद्रुमाणामिव पारिजातः**, Hemâdri explains in the following way: "कल्पयति मनोरथं कल्पः स चासौ द्रुमश्च तेषां मध्ये। पारमस्यास्तीति पारी पारिण्यब्धौ जातः पारिजातः इव। पञ्चानां मध्ये एकस्य कल्पद्रुमस्य शब्दवाच्यत्वं यद्यपि प्रतीयते तथापि प्रवृत्तिनिमित्तस्य संकल्पार्थस्य कल्पशब्दार्थस्य पूरणेन पञ्चानामपि साधारण्यात्कल्पद्रुमाणामिति बहुवचनं । तथा माघकाव्ये। "कल्पद्रुमैः सह विचित्रफलैर्विरेजुः."" The tree produced at the churning of the ocean and regarded as the best of the five all-yielding trees of heaven. The figure according to Sumativijaya is उपमा.

P. 157. St. 7.—**गन्धद्विपे**, An elephant of the best class, very much feared by other elephants, and supposed to emit a peculiar smell of ichor. On this Hemâdri and Châritravardhana quote the following. "यस्य गन्धं समाघ्राय न तिष्ठन्ति प्रतिद्विपाः। तं गन्धहस्तिनं प्राहुर्नृपतेर्विजयावहं" इति पालकाप्यः says Hemâdri, and गजशास्त्रकाराः says Châritravardhana.—**वन्यं**, Hemâdri observes, "पुण्ययुक्तवृक्षपरित्यागो वन एव सम्भवतीत्यभिप्रायेण वन्य इत्युक्तं."

P. 157. St. 8.—**अगुरुसारयोनौ धूपे**, 'The fume of burning sandal wood of best quality.' The fumigation here spoken of was given as a means of perfuming the marriage-hall. The smoke arising from the burning sandal wood rose high and reached the flags that were tied to the pillars of the hall for the sake of ornament. The use of flags as an ornament is still common in marriage-halls (मण्डप) and similar places of joy and solemnity. The text commented upon by Dinakara is "धूमे शिखाभावितकेतुमाले."—**सोमार्कवंश्ये**, On this Hemâdri holds the following discussion : "इत्यत्र अजाद्यदन्तत्वेति पूर्वनिपाताभावस्तु शब्दार्थौ चंद्रार्काविव राजदन्तादित्वात् ज्ञेयः। तथा गणदर्पण। धर्मार्थौ कामार्थौ शब्दार्थौ चैव चन्द्रार्काविति। महिम्नस्तुतौ च "रथाङ्गे चन्द्रार्कौ" इति। हलायुधेऽपि "सोमार्कावेकवाक्येन पुष्पदन्तौ प्रकीर्तितौ." And further observes : "सोमार्कवंश्ये साधवः सोमार्कवंश्याः न तु तत्र भवाः। तथा वामनः। राजवंश्याः सूर्यवंश्याः इत्यादयः साध्वर्थे यो यत्तत्र साधुरिति तस्मिन्सम्भवंतीति । भवार्थे पुनर्दिगादिपाठेऽपि वंशशब्दस्य वंशशब्दादिव तत्र प्रत्ययः। ग्रहणवता प्रातिपदिकेन तदन्तविधेः प्रतिषेधादिति."

P. 158. St. 9.—°**शङ्खे**, On this Hemádri observes : "शमयन्त्यमङ्गलमिति शंखाः। "शमं खः" U*n*âdi Sûtra, 102. S. K. p. 322. इत्यौणादिके खेकृते बाहुल्यकादिनादेशो न। "पायात्स वः कुमुदकुन्दमृणालगौरः शंखो हरेः करतलाम्बरपूर्णचन्द्रः। नादेन यस्य सुरशत्रुविलासिनीनां नीव्यो भवन्ति शिथिला जघनस्थलीषु."

P. 158. St. 10.—**चतुरस्रयानं**, 'a palanquin.' Hemádri analyses, "चतस्रः अस्रयः कोणाः यस्य तच्चतुरस्रम्। 'सुप्रातसुश्वसुदिव' ' Pâ*n*ini, V. 4. 120. इति बहुव्रीहावच्प्रत्ययान्तो निपातः." Vallabha reads "चतुरश्च यानं," and paraphrases चतुरं by "मनोज्ञं."—**मञ्चान्तरराजमार्गं**, 'the royal road in the midst of the dais.' Hemâdri and Cháritravardhana explain the

epithet in the following way : " मञ्चानामन्तरमेव राजमार्गस्तं तथोक्तं इति, " Dinakara identically the same with Cháritravardhana.—**कन्या परिवारशोभि**, 'magnificent (*i. e.* attended) by an escort.' Hemâdri takes it to be one compound word and says, "कन्यानां परिवारेण शोभते तत् ।, ताच्छीलिको णिनिः । यथा वामनः । चतुरस्रशोभीति णिनौ । व्रीह्यादौ शोभाशब्दपाठेऽपि तदन्तविधिप्रतिषेधात्. "—**क्लृप्तविवाहवेषा**, 'attired in wedding garments. Analyse "क्लृप्तो रचितो विवाहसम्बन्धी वेषो यस्याः सा तथोक्ता."

P. 159. St. 11.—**विधानातिशये**, 'the wonderful creation.' Cháritravardhana paraphrases by "निर्माणकौशले."—**अन्तःकरणैः निपेतुः**, Hemâdri gives the substance of this in the following words : "दर्शनमात्रेण तेषां मनः आचकर्ष इति वाक्यार्थः, and Cháritravardhana has the following, " इन्दुमतीदर्शनमात्रेण निखिला राजानः समतृप्यन्निति तात्पर्य. "

P. 159. St. 12.—**तां प्रति**, 'towards her.'—**अभिव्यक्तमनोरथानां** 'who had manifested their passion for her.' Cháritravardhana and Sumativijaya analyse this in the following way, " अभिव्यक्तः प्रकटः मनोरथः एषां तथोक्तानां ".—**प्रवालशोभाः**, on this Hemadri remarks: "प्रवालोपमया शृङ्गारचेष्टानामभिनवत्वं सूचितं."—**शृंगारचेष्टाः**, Both Cháritravardhana and Hemâdri quote the following " अन्योन्यानुरक्तयोः स्त्रीपुंसयोश्चेष्टाविशेषः शृंगारः " इति रुद्रटः । यथा । 'स्वामन्द्रियाणां प्रवृत्तो वाङ्मनःसुखाभिमानः शृंगारः ' इति भोजः । यदाह । 'चेष्टा भवन्ति पुरुषार्थयोरन्यथातिरक्तयोः । सम्भोगो विप्रलम्भश्च शृङ्गारो द्विविधो मतः ' । 'ऋतुमाल्यालङ्कारैः प्रियजनगान्धर्वसेवाभिः । उपवनगमनविहारैः शृङ्गाररसः समुद्भवति । नयनवदनप्रसादैः स्मितमधुरवचोधृतिप्रमोदैश्च । ललितैश्चाङ्गविहारैस्तदाभिनयः संप्रयोक्तव्यः' इति भरतः । चेष्टा आहुः.

P.159. St. 13.—**कश्चित्**, On this Hemâdri observes, " अस्माकन्ये तु चिचनप्रायः किं वृत्तात्पराविति क्षीरस्वामी । 'श्लाघ्यैर्विशेषणैर्युक्तमुदारं कैश्चिदिष्यते'। यथा लीलाम्बुजक्रीडासरो हेमाङ्गदादयः इति दण्डी, " Kávyádars'a I. 79 verse. Châritravardhana does not perceive any hidden lover's meaning in this, he simply says : " इच्छासूचिकेयं चेष्टा । 'विभक्तं व्यक्तमनसां यूनां मङ्गितकांक्षिणां । आवर्जननमन्योन्यमभिलापांगदर्शनं ' इति [रति] रहस्यं." In this as well as in the following verses containing various indications of love by different princes and kings, Cháritravardhana. Vallabha and Dinakara (who is merely a copyist of Cháritravardhana) do not attempt to make Indumati put any constructions, right or wrong, upon the actions of her various suitors. Only Hemâdri and Mallináthа detect Indumati's hidden intentions or motives whenever she goes near a different prince. It is a fortuitous coincidence that both these commentators have word for word the same on these various " अभिप्रायाः " intentions or motives of Indumatí.

P. 160. St. 14.—**विलासी,** On this Hemâdri quotes the following from Bhárata. " धीरसंचारिणी दृष्टिर्गतिर्गोवृषभाञ्चिता । स्मितपूर्वमयालापो विलास इति कीर्तितः." Chàritravardhana's remarks on the hidden sense of this passage are, " वदनस्य साचीकरणं वाससो (his reading is प्रावारं for प्रालम्बं) यथा प्रदेशनयनं शृंगारसूचनं । अन्यासक्तत्वेनाकारगुप्त्या भावस्य प्रकाशनं । यदाह । " वदति हि संवृतिरेव कामितं." Vallabha likewise reads प्रावारं. See readings.—**केयूरं,** Sumativijaya renders this by " बाहुरक्षकं."

P. 160. St. 15.—**तिर्यक्.** Cháritravardhana reads " रत्नांशुसंसर्पिनखप्रभेण," *i. e.*, " रत्नांशुभिः किरणैः संसर्पिणी सङ्गच्छमाना नखानां प्रभा यस्य तादृशेन." On the passage generally he remarks, " अनेनेन्दुमतीदर्शने विभ्रमप्रकाशनं संवृतावपि विलासप्रकाशनं नागरता."—**अग्राङ्गुलिना,** Hemàdri analyses " अङ्गुलीनामग्राणि अग्राङ्गुलयः " वाहिताग्न्यादिषु " Pànini, II. 2. 27. अग्राश्च ताः अङ्गुलयश्च इति वा. "—**विलिलेख,** Hemádri quotes the following, "भूमिविलेखनं च लक्ष्मीनाशहेतुः । तथा । "रेखानिर्माणमुर्व्यां छदतृणलवनं पादयोश्चाप्यपूजा । दन्तानामप्यशौचं वसनमलिनता [मलिनवसनता Ms.] रूक्षता मूर्द्धजानां । सन्ध्यायुग्मे [°काले Ms.] च निद्रा विवसनशयनं ग्रासहास्यातिरेकः । स्वाङ्गे वाद्यं च पुंसो [पुंसां Ms.] निधनमुपनयेत्केशवस्यापि लक्ष्मीं."

P. 161. St. 16.—**सुहृत्समाभाषणतत्परः** &c., Chàritravardhana's remark on the hidden sense of this passage is, " मित्रसम्भाषणेन इन्दुमत्यासक्तिं गोपितवानिति भावः", and Hemàdri remarks, " कथान्तरासक्त्या स्वगौरवं प्रगटितवानित्यर्थः." His substance is identically the same with Mallinâtha.—**त्रिक** &c., on this Hemádri observes : " त्रिकं कण्ठभागे इत्येके. " *Cf.* also " स्फिग्मस्थ्नोः पृष्ठवंशास्थ्नोर्यः सन्धिस्तत्त्रिकं स्मृतं " इति सन्धिभेदं.

P. 161. St. 17.—**प्रियानितम्बोचितसंनिवेशैः** &c., On this Vallabha remarks : " शृङ्गारक्रियं." And Chàritravardhana has, " एतेन स्वस्य कामशास्त्रपाविण्यमसूचि इत्यर्थः", and Hemâdri gives " एतेनाप्यनासक्त्या स्वचातुरी सूचिता."

P. 162. St. 18.—**कुशेशय°** &c., Hemádri and Cháritravardhana analyse the epithet in the following way, "कुशे जले शेते तत्कुशेशयं । " अधिकरणे शेतेः" Pánini, III. 2. 15. इत्यच् " शय वास " Pânini, VI. 3. 18. इत्यलुक् । " शरं वनं कुशं नीरं " इति धनंजयः." Hemàdri remarks, "इति सौन्दर्य.—**रेखाध्वज°,** On this Hemâdri and Cháritravardhana remark, " इति महाराजचिह्नं."—**रत्नाङ्गुलीय°** &c., On this Hemàdri and Châritravardhana observe " इति ऐश्वर्यं. "

P. 162. St. 19.—**किरीटे करं व्यापारयामास,** On this both Hemádri and Cháritravardhana have the following, " आत्मप्रकाशनपरा चेष्टा चपलतोच्यते इति, " and Hemàdri further says, " चपलताख्योऽलंकारः. " Cháritravardhana has the following on this passage, " भोजस्तु समस्तमप्येतत्स-

तच्छ्लोकोक्तं संचारिभावेनाह." Bhoja then appears to be one of the commentators on the Raghuvans'a.

P. 162. St. 20.—**नृपाणां श्रुतवृत्तवंशा,** 'who knew the exploits achieved by, and the pedigrees of, the kings.'—**पुंवत्**, Hemádri, Chăritravardhana and Vallabha refer it to प्रगल्भा, *Cf.* Vallabha, " पुंवत्प्रगल्भा पुरुषवदुदारा सप्रतिभा &c. " also Chăritravardhana, " पुंवत्पुरुषवत्प्रगल्भा चतुरा " &c., and Hemádri, " पुंवत्प्रगल्भा " and further he observes : "पुंसा तुल्यं वर्तते इति पुंवत् । " पुंवदित्यत्र । " स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्स्नञौ भवनात् " Pánini, IV. 1. 87. इति वत्यर्थेऽपि स्नञि प्राप्ते स्त्रियाः पुंवदिति ज्ञापकाद्वत्यर्थे नञ्स्नञौ न स्तः । तथा च काशिकावृत्तौ । स्त्रियाः पुंवदिति ज्ञापकाद्वत्यर्थे न भवतीति. " All these commentators construe it in a better way than Mallinátha who refers it to अवदत्.

P. 163. St. 21.—**अगाधसत्त्वः,** Chăritravardhana and Sumativijaya analyse this in the following way : " अगाधमधिकं सत्त्वं बलं यस्य सः. "—**परंतपः,** Hemádri's remarks are, " अत्र परंतपत्वेन व्यग्रता वैराग्यहेतुः, " and Chăritravardhana's remarks are " परंतपत्वेन क्रूरत्वं लोकरक्षणव्यग्रत्वं चेन्दुमत्या वैरस्यसूचनं । अजव्यतिरिक्तेषु भूपेषु स्तुतिनिन्दापरत्वात्सर्वत्र लेशालंकारोऽवगंतव्यः । उक्तं च दण्डिना । " लेशमेके विदुर्निन्दां स्तुतिं वा लेशतः कृतां " इति. K. D. II, 268. The figure according to Hemádri is अनुप्रास.

P. 163. St. 22.—**राजन्वती.** distinguish this from राजवता.—**नक्षत्रताराग्रहसंकुलापि,** On this Hemádri gives the following: " अश्विन्यादीनि नक्षत्राणि तदितरास्तारा: । तथाध्यात्मप्रकरणे । " तारानक्षत्रसंचारैः " इत्यत्र विज्ञानेश्वरः । तारा अश्विन्यादिव्यतिरिक्तानि ज्योतींषि नक्षत्राण्यश्वयुक्प्रभृतीनि भौमादयो ग्रहास्तेः । यद्वा । तारा ग्रहा भौमादयः पञ्च । तथा मुहूर्तदर्पणे । " प्रकाशकौ द्वौ प्रथमौ ग्रहाणां तारा ग्रहाः पञ्च ततोऽपरौ द्वौ । तमोग्रहौ तेषु शुभास्तु मध्ये त्रयो बलीन्दुश्च परे तु पापाः. " Vallabha gives the following, " नक्षत्राणि अश्विनीप्रमुखानि । तारा ग्रहाः सूर्यादयः । चन्द्रादित्यौ बिम्बग्रहौ । अन्ये तारा ग्रहाः. " —**कामं,** Hemádri quotes the following, " कामं प्रकामं पर्याप्तं " प्रायः क्रियाविशेषणान्येतानीति क्षीरस्वामी. "

P. 164. St. 23.—This verse suggests that the mighty king Parantapa, ever engaged as he was in sacrifices, was not a desirable companion and mate for the princess Indumatı.—**मन्दाग्रश्च्रुन्यानलकांश्चकार,** On this Chăritravardhana remarks, " अनेन यज्ञकर्मत्ववर्णनेन [करणेन Ms.] कुमार्यो वैराग्यहेतुतासूचि । कर्मधन्द्वाजडोऽयमिति निन्दा, " and Hemádri has " अरिमन्वृते भोगाभावो ध्वन्यते " । तथा वृद्धपराशरः । " दूरस्थानामविद्यानां मोक्षधर्मा [°मार्गा Ms.] नुयायिनां । शूराणां निर्धनानां च न देया कन्यका बुधैः. " The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following verse produced under स्मरण by the Northern

Mss. " क्रीडां शरीरसंस्कारं समाजोत्सवदर्शन । हास्यं परगृहे यानं त्यजेत्प्रोषितभर्तृका " इति च स्मरणात्.—पाण्डु°, On this Hemàdri remarks: " पाण्डुत्वं च भर्तृविरहात्. " Indra and other gods were supposed to come down *in person* to accept their portions in the sacrificial ceremonies. Indra's absence makes his wife S'achî indifferent to her personal decoration and toilet.

P. 164. St. 24.—पुष्पपुर, the same as Pâ*t*aliputra. See our note to I. 31, III. 5.—चेत्, On this particle Hemádri observes, "चेदिति स्वस्याऽसंमतिरुक्ता," and Châritravardhana has, " अनेनात्मनोऽनंगीकारः सुनन्दया सूचितः. "

P. 164. St. 25.—दूर्वाङ्कमधूकमाला, 'a garland of Madhûkas interwoven with Dûrvas,' such a garland is generally considered as auspicious and hence used on the marriage occasions. *Cf.* Sumativijaya, " विवाहसमये कन्याः मङ्गलार्थं दूर्वांकमधूकमालां कण्ठे बिभ्रति." Also Hemàdri observes, " मधुमतीभिरौषधीभिर्मधूकानि [मधूकाः Ms.] बध्नातीति शांबव्यगृह्ये [शांबव्यगृह्यते Ms.] । ? सौभाग्यंहतुत्वाद्वा दूर्वा मङ्गलार्था. "—ऋजुप्रणामक्रिययैव, 'simply by making a bow without bending her head,' implying that she did not like him. Châritravardhana, however, renders it thus, " ऋजुः सरला विलासरहिता नमस्क्रिया तयैव."—अभाषमाणा, On this Hemâdri observes, " यायजूकोऽयं ब्रह्मचारित्वेन वन्द्यः. "

P. 165. St. 26.—सैव, On this Hemádri observes, " सुनन्दायाः इन्दुमतीबुध्यनुसरणं सूचयत्येवकारः," and Châritravardhana remarks, " सैवेत्येवकारेण सुनंदायाः इन्दुमत्यभिप्रायाभिज्ञत्वं."—मानसराजहंसी, On this Hemádri remarks " राजहंस्युपमया सारासारविवेकित्वं । पद्मोपमया राज्ञः श्रीनिवासत्वं " [श्रीविनाशकत्वं Ms.]." The lake Mánasa is said to be the native place of flamingoes, which described as migrating to its shores every year at the commencement of the breeding season or the monsoon. See our note to St. 11, Meghadûta, p. 15.

P. 165. St. 27.—अङ्ग, On the south of Kaus'ikî Kachchha and evidently on the right bank of the Ganges lay the important kingdom of Anga with its capital Champá, sometimes called Angapurî or capital of Anga, Lomapádapuri or capital of king Lomapáda, Kar*n*apuri or capital of king Kar*n*a, and Mâlini. Hiouen Thsang says it stood on the Ganges about 24 miles west of a rocky island. General Cunningham has shown that this description applies to the hill opposite Pâthargbá*t*a, that it is 24 miles east of Bhágalpur, and that there are villages called Champápur and Champánagar adjoining the last. According to Sanskrit accounts, the town was situated on the Bhâgirathi east (properly south-east) of Mithilá and near the confluence of the Kaus'ikî. It is, therefore, beyond doubt

that Champâ stood at or about Bhágalpur. Champá is the flower of the Michelia Champaca and the name of the town seems to have derived from its abundance, at all events, we read in the Mahâbhârata of a Champaka wood near the Kaus'iki of which I have already spoken. In the Raghuvans'a, there is an allusion to elephants in the dominions of the ruler of Anga. As elephants are not found in the hills south and east of Bhágalpur but common in the Himâlayan regions on the north, it is probable that Anga at one time included Kaus'ikî Kachchha. This is also apparent from the description of the journey of *Ri*shyas'*ri*nga's father to search out his son. There is a conical hill called Ma*nd*âra about 25 miles S. S. E. of Champâ, which Bishop Heber assures us is considered by the people to be the churning-rod of gods described in the Mahábhárata. But that it cannot be the same Ma*nd*âra, is clear from several passages of that work.—**सुराङ्गना**, On this epithet Hemádri gives the following account, " पुरा किल इन्द्रसहाय्यार्थमिन्द्रलोकगामिनमकामयन्ताप्सरस: इति प्रसिद्धि: । अतोऽप्सरोदेवर्षिसेव्यत्वं. " Both Hemádri and Vallabha read विनीतभागः = कल्पितयज्ञांशः, " and remark " इन्द्रोऽप्यप्सरोभिः प्रार्थ्यते यज्ञांशं च लभते, " and Vallabha has " इन्द्रः किल यज्ञभागं लभते सुराङ्गनोपभुक्ततारुण्यश्च. " And Cháritravardhana has, " पुरा याज्ञिकैः कल्पितयज्ञभागः अप्सरःप्रार्थितयौवनत्वं मुनिसेव्यत्वं स्वर्गानुभवः इति ज्ञेयं । भङ्ग्यन्तरेण संग्रामप्रियोक्तिरिति कश्चित्. " Hemâdri notices the reading विनीतनागः and says : " इति पाठे सूत्रकाराः राजपुत्रमृगचर्मादयो गजशास्त्रप्रवक्तारः । पालकाप्ये कथाप्यस्ति । अङ्गराजः प्रथमं कुतोऽपि देशाद्दिवोऽवतीर्णमुन्मत्तं पालकाप्येन पालितं दिग्गजानां कुलमवलोक्य [कुमारमवलोक्य Ms.] विस्मितस्तद्ग्रहणोत्सुकः स्वयमशक्तः सन्निन्द्रमुपेत्य तदनुज्ञातैर्मृगचर्मादिभिर्महर्षिभिस्तद्गजकुलं प्रार्थयित्वा शास्त्राणि कारयित्वा च शिक्षयामास । तदादिभूमौ गजसन्तानः प्रवर्तते । अनेन कविसेव्यत्वमुक्तं । भङ्ग्या रणप्रियतोक्ता वा, " he also notices " विनीतनागः किलसूत्रधारैः, " and says इति पाठे गजदशाप्रवर्तकैर्विनीतसर्पः । अनेन पातालाधिपत्यमुक्तं. "—**सूत्रकारैः** Cháritravardhana paraphrases this by " सूत्रं कारिशास्त्रं कुर्वन्तीति सूत्रकाराः । पालकाप्यगौतमादयः. " On this Hemâdri discusses, " न शब्दश्लोक " Pá*n*ini. III. 2. 23. इति हेत्वादौ कृत्रष्टा न." It is said that the lord of the Angas saw an elephant which had strayed into this world, which was till then devoid of elephants. Unable to bring it under control, he proceeded to Indra by whose order some scientific sages (such as पालकाप्य, राजपुत्र, मृगचर्म and others) composed the science of training elephants and taught it to him.—**किल**, implies *tradition*

P. 166. St. 28.—**मुक्ताफलस्थूलतमानर्घबिन्दून्**, Hemádri observes " मुक्तासाम्यात्कज्जलाभावः सूच्यते । अनेनाशुभ्रा मदा यानः. " Vallabha has, " तु-

तेन अश्रुकणानामनवरतपातः सूच्यते." Châritravardhana's substance of this verse is, "अतिवीररसवर्णनं वैराग्यसूचनं." Hemâdri interpretes "पर्यासयता" by "पातयता." The figure according to Châritravardhana is "विशेषोक्तिः," where he says, "लोके तु हाराः सूत्रसहिता इह तु सूत्ररहिता इति."

P. 166. St. 29.—**एकसंस्थं,** On this both Hemâdri and Châritravardhana have the following, "प्रायेण हीश्वराः मूर्खा पण्डिता अपि निर्धनाः," and "प्रायेण हि लोके विद्वांसो दौर्गत्यभाजो धनिकास्तु मूर्खाः सन्ति" respectively. —**तृतीया,** On this Hemâdri observes, "अनेन प्रायस्तृतीया पत्नी न शुभावहा इत्युक्तं। तृतीयविवाहे ऽर्कविवाहस्य शौनकेनोक्तत्वात्। सपत्नीसद्भावो वा इति," and Châritravardhana has, "लक्ष्मीसरस्वतीरूपसपत्नीसंभवादस्य त्यागः सूचितः." These verses are supposed by Hemâdri and Châritravardhana, to hint the undesirability of electing him as he is always bent on war and as she would have to become a third wife to him (an unenviable position), Lakshmi and Saraswati being considered to be already his wives.

P. 166. St. 30.—**याहीति जन्यामवदत्कुमारी,** The epithet जन्यां is also taken to mean 'the friend of her mother.' The text of the second Páda as commented upon by Hemádri and Dinakara is "यातेति जन्यानवदत्कुमारी," 'Proceed, said she, to her servants.' This reading is already noticed by Mallinátha. Hemádri says, "जनं वधूं वहन्तीति जन्यास्तान्," referring to the bearers of her palanquin, and further he observes, "जन्याः स्निग्धा वरस्य ये इत्युपलक्षणमित्यविरोधः इति क्षीरस्वामी." Chàritravardhana and Vallabha read, "यातेति यान्यानवदत्कुमारी," 'Proceed, said she, to her litter bearers.' The former interpretes यान्यान् by "यानवाहिनः," and the latter by "वाहान्."—**भिन्नरुचिर्हि लोकः,** 'But because different persons have different tastes.' A proverbial saying. On this Hemádri observes, "लोको भिन्नरुचिः"। यदुक्तं किरातार्जुनीये। "विचित्ररूपाः खलु चित्तवृत्तयः." Ki. I. 37. The position of the sentence भिन्नरुचिर्हि लोकः slightly alters the ordinary sense of the particle हि in this verse. Construe: "याहीति जन्यामवदत्कुमारी। भिन्नरुचिर्हि लोकः। नासौ न काम्यः। न च सा द्रष्टुं सम्यक् वेद."

P. 167. St. 31.—**इन्दुमत्यै निदर्शयामास.** The root दृश् is construed with the accusative in the causal; but in classical literature it is found used with the Dative. See Apte's guide, 45. (*e.*), and Châritravardhana remarks, "आक्षिपन्त्यरविन्दानि मुग्धे तव मुखश्रियं। कोशदण्डसमग्राणां किमेषामस्ति दुष्करं" इत्यादिलौकिकग्राहकत्वान्न दोषः। उक्तं हि कण्ठाभरणे। "इदं हि शास्त्रमाहात्म्यदर्शनात्सचेतसां। अपशब्दवदाभाति न च सौभाग्यमुज्झति" इति.

P. 168. St. 32.—**अवन्ति,** On the north of the Narmadá lay Avanti with its capital Ujjayini, called from the province also Avantipuri or Avanti and Vis'álá "the great (city)." Its posi-

tion on the Siprâ and similarity of name at once identify it with Oojain. Its temple of Mahákála was widely known all over India. Hemachandra gives Málava as a synonym of Avanti. This is not, however, quite correct as Málava (Malwa), as at present, covered a greater area than Avanti and Bá*n*a Bha*tt*a applies it to a neighbouring kingdom on the east, whose capital was Vidis'á on the Vetravati (Betwa) river. We know from Kálidása that Das'ár*n*a was the name of this country, through which the Das'ár*n*á (Dasan) flows. I identify this town with Bhilsá which agrees in name and position, four miles from which there is a detached hill with vast remains of antiquity. This is probably the " low hill " (नीचैः) of Kálidása. According to the Uttara Ká*n*da, it was made over to the second son of S'atrughna about the time of Ráma's death. The province of Avanti in the time of the Mahábhárata extended on the south to the banks of the Narmadá and on the west probably to the banks of the Myhe (Mahi). On the north of Avanti, there was another principality with its capital Das'apura on the Charma*n*vati river. This may be the modern Dholpur. This was the capital of Rantideva, whose hospitality is twice described in the Mahábhárata. On the south-west of this kingdom there was another small principality, whose position is fixed by the Par*n*ás'á (Punass) river. See note to the 38th verse of our edition of the Meghadúta. Hemádri and Sumativijaya paraphrase अवन्तिनाथ by " मालवदेशाधिपतिः. " It is one of tho seven holy cities. *Cf.* "अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्चिरवन्तिका । पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः "—आरोप्य &c.. ' like the effulgent luminary trimmed off with care by त्वष्टृ who placed him for the purpose on his round lathe.' *Cf.* Hemádri, " त्वष्टा संज्ञाभिधायाः दुहितुरादित्यपत्न्यास्तत्तेजोऽसहमानायाः कृते रविं यंत्रमुल्लिख्यादित्यागमः " । " निकृष्टाक्षमनन्तं वपुः श्रुतिकटु त्वष्टुं । एकाग्रमनसा मन्ये त्वष्ट्रेयं निर्मिता यथा " इति वाग्भटः, " and Charitravardhana has " पूर्वं सूर्यस्य तेजोऽसहमानाया रविपत्न्याः कृते त्वष्ट्रा सूर्यः शस्त्रमार्जनयंत्रे रोपितः इति भ्रमणकर्मणीति कश्चित् ."—चक्रभ्रमं, Sumativijaya interpretes this by " अर्जुनयंत्रं. " The wife of the Sun was संज्ञा daughter of विश्वकर्मन् or त्वष्टृ. His effulgence was so overpowering that his wife gave him छाया (shade) for a hand maid and retired into the forest to devote herself to religion. Súrya found her in the form of a mare and brought her back, and her father विश्वकर्मन् placed him on his round lathe and cut away one-eighth of his effulgence, trimming him in every part except his feet.—यत्नेन, because with all his skill, the architect of the gods only succeeded in reducing the sun's splendour by one-eighth.

P. 168. St. 33.—अस्तमयं कुर्वन्ति. On this Hemâdri observes, "अनेन परदेशयात्राभिनिवेशः उक्तः," and Cháritravardhana has, "अतितेजस्विताववर्णनं वैराग्यहेतुः."—सामन्त, Cháritravardhana renders this by "मण्डलेश्वराणां," and Hemádri has "द्वित्रिग्रामार्धीशः सामन्तः."

P. 168. St. 34.—महाकाल, is one of the forms or Lingas of S'iva at Ujjayini. *Cf.* Hemádri "उज्जयिन्यां हि महाकालरूपो हरो वसतीति प्रसिद्धिः." Cháritravardhana and Hemádri interprete निकेतनं by "गृहं."—प्रियाभिस्सह, On this Hemádri remarks. "अनेन बहुस्त्रीकता सूचिता." This implies his ineligibility as he has already many wives. Some of our manuscripts read "दिवापि जालान्तरचन्द्रिकाणां नारीसखः स्पर्शसुखानि भुङ्क्ते." Both Hemâdri and Cháritravardhana notice the reading and Cháritravardhana condemns it with the following remark, "यद्यपि अस्मिन्पाठेऽतिशयोक्तिर्विद्यते तथापि दिवा चन्द्रिकावर्णनस्य कालविरुद्धत्वाद्दुष्टः पाठः."—प्रदोषान्, literally it means 'the fore-part of the night.'

P. 169. St. 35.—कच्चिन्मनसो रुचिस्ते, 'how do you like the idea,' *i. e.* I hope your mind entertains the thought. On this Hemâdri remarks, "एतेन स्वासंमतिरुक्ता," and Cháritravardhana has "कच्चिदित्यनेन सुनन्दायाः असंमतित्वे."—सिप्रा, "a river near Ujjayini, being a tributary of the Chambal. See our note to 38th verse Meghadúta.

P. 169. St. 36.—भावं न बबन्ध, 'did not fixed her heart,' *i. e.* was not favourably disposed towards &c. On this both Hemádri and Cháritravardhana have, "अनेन कुमार्याः सौकुमार्यं राज्ञस्तैक्ष्ण्यं सूचितं," and "अतिक्रूरत्वं वैराग्यकारणं" says the latter.

P. 170. St. 37.—गुणैः, Hemádri interpretes this by "विनयादिभिः," and Cháritravardhana by "सौन्दर्यादिभिः."—सुदती, On this Châritravardhana holds the following discussion, "ननु कथं सुदतीति नात्रावयो गम्यते अतोच्यते इयमिन्दुमती तत्र बालापदेन विशेषिता। "बाला च गीयते नारी यावत्षोडशवत्सरं" इति नागरसर्वस्वात्। एवं च तत्रापि यौवनं वयो गम्यत एव। अतो "वयसि दन्तस्यदतृ" Pánini, V. 4. 141. इति सुपूर्वस्य दंतशब्दस्य दतादेशः। शोभना दन्ता यस्याः इति विग्रहः." But Hemádri has a different way of discussing the grammatical point. He says, "अग्रान्त०" Pânini, V. 4. 145. इत्यत्र चकारस्यानुक्तसमुच्चयार्थत्वादत्रादेशः। "वयसि दन्तस्य" इत्यत्र सख्यामुपूर्वस्येत्यनुवृत्तेरिति चेत्। तत्र। सुदत्यादयश्चर्याभिधायिनो योगरूढाः शब्दाः। तेन "स्त्रियां संज्ञायाम्" Pânini, V. 4. 143. इति तत्रादेशे "उगितश्च" Pânini, IV. 1. 6. इति ङीप्."

P. 170. St. 38.—कार्तवीर्यः = सहस्रार्जुनः Hemâdri. Vish*nu* Pura*n*a gives the following account:—This king was the son of K*r*itavirya, king of the Haihayas. This is his patronymic, by which he is best known; his real name was Arjuna. "Having worshipped

a portion of the divine being called Dattatreya, sprung from the race of Atri, he sought and obtained these boons, *viz.*, a thousand arms and a golden chariot that went wheresoever he willed it to go; the power of restraining wrong by justice; the conquest of the earth and the disposition to rule it righteously; invincibility by enemies, and death at the hands of a man renowned over the whole world. By him this earth was perfectly governed, " and of him it is said.—" No other king shall ever equal Kartavirya in regard to sacrifices, liberality, austerities, courtesy and self-restraint. " Thus he ruled for 85,000 years with unbroken health, prosperity, strength, and valour. " He visited the hermitage of Jamadagni, and was received by that sage's wife with all respect; but he made an ill-return for her hospitality, and carried off by violence " the calf of the milch-cow of the sacred oblation. " For this outrage Paras'uráma cut off his thousand arms and killed him. In another place a different character is given to him, and more in accordance with his behaviour at Jamadagni's hut. " He oppressed both men and gods, " so that the latter appealed to Vish*n*u for succour. That god then came down to the earth as Paras'uráma for especial purpose of killing him. Kártavirya was the contemporary of Ráva*n*a, and when that demon monarch came " in the course of his campaign of conquest to Máhishmati (the capital of Kártavirya), he was captured without difficulty, and was confined like a wild beast in a corner of his city. " The statement of the Vâyu Purá*n*a is that Kártavirya invaded Lanká and there took Râva*n*a prisoner. The Vish*n*u Purá*n*a gives the following character of Kârtavirya: " न नूनं कार्तवीर्यस्य गतिं यास्यन्ति पार्थिवाः । यज्ञैर्दानैस्तपोभिर्वा प्रश्रयेण श्रुतेन वा." IV. 11.—**अष्टादशद्वीप**. On this Hemádri remarks, " इति धार्मिकत्वम्." and further he quotes the following " तथा च विष्णुपुराणे । " जंबूप्लक्षाह्वयौ द्वीपौ शाल्मलश्चापरो द्विज । कुशः क्रौञ्चस्तथा शाकः पुष्करश्चैव सप्तमः " इति । " इन्द्रद्वीपः कशेरुमांस्ताम्रवर्णो गभस्तिमान् । नागद्वीपस्तथा सौम्यो गन्धर्वो वारुणस्तथा । इलावृत्तं तथा सर्वं चन्द्रादित्यसमप्रभं । इलावृत्तस्य मध्ये यो मेरुः कनकपर्वतः । इत्थमष्टादश द्वीपाः समाख्याता मनीषिभिः " । जम्बुद्वीपान्तर्गतसिंहलाद्यवान्तरगणनयाष्टादशत्वं । तथा नैषधे । " अगाहताष्टादशतां जिगीषया नवद्वयद्वीपपृथग्जयश्रियां " Nai. I. 5. इति. *Cf.* also Vallabha: " किलागमे । प्रायेणोक्त्यां सप्तद्वीपत्वमवान्तरगणनायामष्टादशद्वीपता." —**संग्रामनिर्विष्टसहस्रबाहुः**, ' became possessed of a thousand arms in battles. ' On this Hemádri remarks " इति पौरुषोक्तिः. "—**योगी**, Cháritravardhana explains: " योगश्चित्तवृत्तिनिरोधस्तद्युक्तो योगी. "

P. 171. St. 39.—**चापधरः**, ' with bow in hand. ' Hemádri analyses, " धरतीति धरश्चापस्य धनुषो धरश्चापधरः । तथा वामनः । ब्रह्मविदादयः ।

" कृदन्तवृत्त्या तैर्महीधरादयो व्याख्याताः इति. " On this passage Sumativijaya remarks, " यदा कोऽपि कस्योपरि विरुद्धं चिन्तयति तदा चापं गृहीत्वा समये एव प्रकटीभवति । कार्तवीर्ये राज्यं कुर्वाणे केनापि चित्तेऽपि अन्यायं चिन्तयितुं न शक्यते किमुत बहिः. "

P. 171. St. 40.—**आप्रसादात्कारागृहे उषितं,** On this Hemâdri has the following: " जललोलविलासिनीसनाथार्जुनं [°र्जुन Ms.] प्रति रुद्धरेवाप्रवाहप्रतिषिद्ध [प्रहत Ms.] शिवलिङ्गार्चारुषितं रणरसागतं रावणं कार्तवीर्यार्जुनो निजगृहे [ज्यया Ms.] बबन्धेत्यागमः," and Vallabha has, " पूर्वं हि जलकेलिलोलविलासिनीसनाथार्जुनभुजपरिघरुद्धरेवाप्रवाहप्रहतशिवलिङ्गार्चारुषितं रणरसागतं रावणमुद्धे रणे जित्वा कार्तवीर्यो निजचापज्यया बबन्धेत्यागमः." Once sporting in the Narmadá with young women, Arjuna surnamed Kârtavîrya happened to cause damage to a शिवलिंग which Rávana was then worshipping on its banks. In the combat that ensued, Arjuna bound Râvana by his bowstring and took him prisoner.

P. 172. St. 41.—**संश्रयदोषरूढं,** 'a stain due to the faults of her associates.' Cháritravardhana and Sumativijaya render दोष by " द्यूतक्रीडादिः. "—**स्वभावलोला.** 'fickle by nature.' On this Hemâdri remarks: " नृपाणां चापल्यानयाः लोलत्वमस्य पुनः सन्मार्गवर्तित्वादचला इति, " and Cháritravardhana has " यतोऽयं विद्यावृद्धसेवी अत एव लक्ष्मीर्नाशकदोषाभावात्स्थिराभूदित्यर्थः."

P. 172. St. 42.—**कृष्णगति.** 'that which leaves a dark track behind it' *i. e.* a wild fire ; hence *fire* generally. It is said in the Mahâbhârata that the king Pratipa propitiated Agni who gave him a promise that he would burn his enemies in the battle fields.—**सहायं,** On this Hemádri quotes the following: " वरेण तोषयामास तं नृपं स्विष्टकृत्तदा " इति भारते सहायत्वहेतुः.—**कालरात्रि,** 'the night at the end of a कल्प, when every thing is destroyed.' *Cf.* Châritravardhana, " प्रभग्निर्नाशकारणशीला. " —**संभावयत्युत्पलपत्रसाराम्** , On this Cháritravardhana remarks, " अतिसाहसिकत्वं वैराग्यहेतुः."

P. 172. St. 43.—**माहिष्मती-रेवा,** The Narmadá was also known as Revá or " roaring," by Indujá, Somodbhavá, and similar names meaning " Moon-born," as Púrvagangâ or Eastern Ganges, by Mekhalakanyaká, Mekhaládrijá, and similar names meaning " flowing from mount Mekhala." The last evidently refers to mount Amarakantaka the source of the river. Its valley was the seat of two important kingdoms, *viz.* of the Chedis and the Haihayas. The first were also called Dáhalas and Traipuras from their chief town Tripurí or Tripura. It is clear from the Bala-Râmáyana that the Chedis occupied the banks of the Narmadâ, as it calls its chief

"master of the province adorned by the Narmadá" and "ruler of Mekhala." From the same work, I am led to think that their chief city Tripurí (or three towns) occupied the same site as old Tripura alleged to have been burnt by S'iva. General Cunningham identifies it with Tewar six miles from Jabbalpur, but I believe it lay further west somewhere about Hushungabad as Tewar is too near Máhishmati, which, according to the Mahábhárata, was the seat of Nala in southern India whereas the Chedis with the Das'árnas are placed in Eastern India, *i. e.*, I believe north of the Narmadá. The Chedis are also mentioned in the story of Nala, where Damayantí is said to have taken refuge with their queen—her aunt. The upper Narmadá was the seat of the great Haihaya kings K*ri*tavírya and his son Arjuna. According to the Harivans'a, its capital Máhishmati was founded by Muchuku*n*da. Whether this be correct or not, the extract given in Anandoram Boorooah's geography is exceedingly interesting as showing its precise position between the Vindhya and *Ri*ksha mountains, *i. e.* about Bhera Ghar below Jabbalpur, where the channel of the Narmadá "is contracted between two high perpendicular cliffs of magnesian limestones, white as snow." Popular tradition connects it with Mundlá (Ma*n*dala), but it does not agree with this description. Kálidása also speaks of it but not so specifically. At one time the Kalachuris—a branch of the Chedis—ruled this kingdom. Hence I believe a modern writer calls Máhishmatí the capital of the Chedis.—**दीर्घबाहुः**, On this Hemádri remarks, "अंकस्थायास्त-याल्गिनमेव स्यादिति दीर्घबाहुत्वं । अनेनास्य विष्णुतुल्यता."—**अङ्कलक्ष्मीमेव**, On this Cháritravardhana remarks, "एतेन तस्य कृष्णसादृश्यं सूच्यते."

P. 173. St. 44.—**पर्यस्तकलः**, On this both Hemâdri and Châritravardhana have the following: "नृत्याद्याश्चतुःषष्टिः कलाः"—**नलिन्याः**, On this Hemâdri observes, "नलिन्युपमानेन पद्मिनीजातित्वं."

P. 173. St. 45.—**शूरसेनाधिपतिं**, These were the people of Mathurá.—**लोकान्तरं**, Cháritravardhana interpretes this by "योगादिना."—**उद्दिश्य**, Hemádri explains it thus : "नाममात्रेण संकीर्तनमुद्देशः."—**सुषेणम्**. On this Hemádri holds the following discussion, सुषेणमित्यन्वर्था संज्ञा । शोभना सेना यस्य स सुषेणः । "सुषामादिषु" Pa*n*ini, VIII. 3. 98. इत्यत्र । काशिकावृत्तौ "एति संज्ञायामगात्" Pá*n*ini. VIII. 3. 99. इत्यस्य च विवरणं । एकारपरस्य सकारस्य मूर्धन्यादेशो भवति इण्कोरुत्तरस्यागकारात्परस्य संज्ञायां विषये इति."

P. 173. St. 46.—**यज्वा**, On this Hemádri remarks: "इति वैराग्यहेतुः."—**गुणैः**, Hemâdri interpretes this by "क्षमाशौर्यादिभिः."—**नी-**

पान्वयः 'of the family of the Nipás.' These were a subdivision of the southern Pánchálas. Their principal towns were Kámpilya and Mâkandi on the Ganges. From the name of the capital, it was also called Kámpilya Des'a and it probably included Kányakubja, as the girls from whom the place is said to have derived its name were according to Adikán*da* married to a king of Kámpilya and Kányakubja as a separate principality is not mentioned in the Mahábhárata. Kampil to the N. W. of Kányakubja has been identified with the old Kámpilya, but Mákandi's position is not yet ascertained; although there can be no doubt that it stood somewhere about Farakâbád. It is mentioned in latter works *e. g.* Kathásaritságara. The kingdom of southern Pânchála seems to have been merged in the kingdom of Hastinâpura after the fall of Drupada and his sons in the battles of Kurukshetra. Kalidása it appears to have assigned a proper place to his Sushe*n*a of the Nipa race.

P. 174. St. 47.—On the rejection of the prince by the princess Cháritravardhana observes : "एतेनातिक्रूरत्वं वैराग्यकारणं."—हर्म्याग्र° &c., He destroys his enemies and so their mansions are ruined and overgrown with grassy blades. Thus the mansions of his enemies overgrown with grass declare his irresistible valour.

P. 174. St. 48.—**कलिन्दकन्या**, The black Yamuná rising from the mountain of Kalinda flows past Mathurá and joins the white Gangá later down at Prayága.—**मथुरां गतापि** is simply equivalent to "मथुरावर्तिन्यपि," 'though as yet flowing by Mathurá and not yet joining with the Ganges.' Here Hemâdri observes : "मथुरायां गङ्गाभावं सूचयन्त्यपिशब्दः । कालिंदीतीरे मथुरा लवणासुरवधकाले शत्रुघ्नेन निर्मास्यत इति वक्ष्यति । तत्कथमधुना मथुरासंभव इति चिन्त्यम् । "मथुरा मधुरापुरि" इति शब्दभेदप्रकाशे । यद्वा । सा अन्या पुरीति । बहुलश्चाकत्वाद्राम्यं." And Châritravardhana has the following : "प्रयागे किल यमुनायाः सुरसरित्सङ्गमः स्यादिह तु मथुरायामपीति साश्चर्यं विरोधोऽपिशब्दः । एतेनान्तःपुराधिकत्ववर्णनमनिच्छाहेतुः."

P. 175. St. 49.—**त्रस्तेन**, Hemádri, Cháritravardhana, Vallabha, Sumativijaya, Dinakara, Vijayaga*n*i, Dharmameru and one who calls himself the servant of Vijayánandasúri read "त्रातेन." This reading appears better as the gem given was a price for protection from Garu*d*a and not simply through terror of that enemy of Káliya; but the best manuscripts of Mallinâtha's commentary in our possession unanimously give this reading which we have chosen

for our text.—**कालियेन,** This was a terrible large serpent who dwelt at the bottom of the Yamuná. This place was forbidden to Garuda, the enemy of serpents, owing to the curse of the sage Saubhari under which he was labouring. He was subdued by Krishna when he was but a child.—**वक्षस्थलव्यापिरुचं,** Hemádri analyses: "वक्षःस्थलं उरःस्थलं व्यापिनी रुक् यस्य तं तथोक्तं," and he further observes "स्थलशब्दः प्रशस्तार्थस्तथा गगनतलमहोदधी" । "प्रकाण्डस्थलभित्तयः" इति.—**सकौस्तुभं,** Kaustubha is the gem worn by Vishnu on his breast. It is one of the fourteen jewels churned out of the *ocean* (कुस्तुभ).

P. 175. St. 50.—**वृन्दावने.** Hemádri's remarks are "यद्वा । वृन्दस्य वनं वृन्दावनं । "वनगिर्योः संज्ञायां कोटरकिंशुलुकादीनाम्" Pánini, VI. 3. 117. इति दीर्घः."—**चैत्ररथात्,** On this Hemádri observes: "चैत्ररथस्वरूपन्तु शंभुरहस्ये । "अलकाया बहिश्चान्यद्वनं चैत्ररथं प्रिये । योजनायुतविस्तीर्णं सर्वकल्पद्रुमाकुलं."—**मृदुप्रवालोत्तरपुष्पशय्ये,** Hemádri analyses, "मृदुप्रवालैरुत्तरा श्रेष्ठा पुष्पशय्या यस्मिंस्तस्मिन्," and Cháritravardhana dissolves, "मृदुप्रवालोत्तरा कोमलकिशलयादिका पुष्पशय्या यत्र तस्मिन् । उपवनवर्णनमुद्दीपनविभावः । अत एव सुन्दर्यास्युचितं पदं," and Vallabha has, "कोमलकिसलयाधिककुसुमशयनाये." The same commentator further observes, "उत्तरशब्द आधिक्यं ब्रुवाणः सम्मिश्रत्वमाह । यथा । "दूर्वायवाङ्कुरप्लक्षत्वगभिन्नपुटोत्तरं । ज्ञातिवृद्धैः प्रयुक्तं स भोजनीयाजनाविधिः । तथा च । "निनाय सात्यर्थहिमोत्तरानिलाः" हिममिश्रा इत्यर्थः.

P. 175. St. 51.—**शैलेयगन्धीनि,** may also be taken to mean 'emitting the smell of moss and such other plants growing on rocks.' Cháritravardhana, Vallabha, Sumativijaya, Dinakara and three other expositors read शैलेयनद्धानि. Vallabha renders it by "शिलोत्पन्नवृक्षव्याप्तानि शिलाकुसुमव्याप्तानि," and Cháritravardhana has "शिलाभवं शैलेयं तेन नद्धानि व्याप्तानि" &c.; if it was the reading of Kálidása, it is very likely that he meant by it: 'softened by moss and such other plants growing on rocks.' Hemádri's reading appears to be "शैलेयबद्धानि." For he says: "शिलायां भवं शैलेयं शिलाकुसुमं तेन बद्धानि; " and further he says, "तत्र मयूरसंचारेण सर्पाभावात्संभोगे निःशंकता । तत्कतृत्यतः कौतुकाभावो ध्वन्यते," and Cháritravardhana has, "तत्र मयूरसंचारेण सर्पाद्युपद्रवनिरासत्वेन सुरतनिःशंकता सूच्यते."

P. 176. St. 52.—**महीधरं,** On this Hemádri observes: "शैलोपमया राज्ञ उन्नतिः । यद्वा । तत्पर्योभिरुपमया विदरणध्वनिः । सागरोपमया भाविनः पत्युर्गाम्भीर्यं ध्वनितं । काव्यप्रकाशे । "इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्ये वाच्याद्ध्वनिर्बुधैः कथितः," and Cháritravardhana remarks: "शैलदृष्टान्तेनातिक्रान्तस्य राज्ञस्तत्परित्यागे हृदयभिदा सूच्यते."

P. 176. St. 53.—**अङ्गदाश्लिष्टभुजं,** On this Cháritravardhana remarks, "अङ्गदाश्लिष्टबाहुत्वेन मांसलत्वमाभरणप्रियत्वं वा." Hemádri has the

same.—बाला, On this Hemâdri says: "बाला षोडशवार्षिकी" इति रतिरहस्यं, and Chàritravardhana observes: "बाला स्यात्षोडशाब्देति रतिरहस्यं."

P. 176. St. 54.—महेन्द्राद्रिसमानसारः, *Cf.* Vallabha: "महेन्द्रः इन्द्रः अद्रिस्सूर्यस्तयोः समानबलः."—महेन्द्रस्य. See note to 39. IV.—महोदधि. 'The sea of the Coromandal coast.'—पतिर्महेन्द्रस्य महोदधेश्च, that is, his power extended from the eastern sea to the Mahendra chain of mountains, both included. *Cf.* Chàritravardhana, "पर्वतसमुद्रस्वामित्वेन दुर्गकथनं." Sumativijaya paraphrases यात्रासु by "दिग्विजयप्रयाणेषु। कटकचलनसमयेषु वा."

P. 177. St. 55.—साञ्जन°, On this Chàritravardhana remarks: "सांजनत्वेन श्यामतात्पर्यता."—भुजाभ्यां, On this Hemàdri remarks: "इन्द्वयस्यचातुर्यमुक्तं."—रिपुश्रियां, Hemàngada is said to have seized the Fortune (श्री personified as a female) of his enemies and to have carried her off in his arms, who, in her grief, sheds tears down his shoulders; and the lines on his arms caused by the friction of the bow-string are poetically described as due to the flow of her pigment-mingled tears. Hemâdri's reading appears better than Mallinâtha. See readings.

P. 178. St. 56.—यमात्मनः, On this Chàritravardhana remarks: "यमात्मन इति दुःश्लिष्टं चिन्तनीयं." 'It is true,' observes Pandit, 'that as आत्मन् is a reflexive pronoun, it may seem to mislead by referring to the subject of the verb, *i. e.*, to अर्णव. But as it is evident that the object यम् is more prominent in the passage than the subject अर्णव, the use of आत्मनः as a reflexive referring to यम् need not be considered as constituting any difficulty. In fact while writing in the active voice the poet seems to have had the passive voice in his mind: so that the apparent difficulty is easily explained by supposing that the poet meant to say: यः सुप्त आत्मनः सद्मनि अर्णवेन प्रबोध्यते.' Hemâdri has: "यमात्मन इति पदसंहितायां ग्राम्यं यमस्वरूपप्रतीतिः। काव्यादर्शे पदसन्धानवृत्त्या वाक्यार्थत्वेन वा पुनः दुष्प्रतीतिकरं ग्राम्यं। यथा। या भवतः प्रीतये." The verse as beginning with यम 'death' indirectly suggests the undesirability of choosing him for her husband.—°दृश्यवीचिः, On this Hemàdri remarks: "अतिसमीपवासप्रसंगादेतत्कथनं। यद्वा। योऽन्यस्य कम्पहेतुः सोऽप्युदधिस्तस्या हर्षं करोतीति धैर्योक्तिः। समुद्रस्यापि सत्यः किमन्येषामिति। वैतालिकभावश्चोक्तः." Hemâdri also notices the reading "आलोक्यवेलातटपूगमालः" इति पाठे आलोकयितुमर्हं वेलातटं पूगान्मलति बिभर्ति। "आवश्यकाधमर्ण्ययोर्णिनिः" Pànini, III. 3. 170. इति णिनिर्वा.

P. 178. St. 57.—मर्मरेषु, On this Hemâdri remarks, "इति मणितादीनां निःशङ्कप्रयोगः स्यादित्युक्तं। अनेनोद्यानाभावश्चोक्तः," and Chàritravar-

dhana has, "अनेन सुरतजनितमणितेऽपि शान्तता ध्वन्यते." —अपाकृतस्वेदलवा, Chàritravardhana interpretes अपकृताः by "अपहृताः सुरतक्रीडाजनिताः स्वेदलवा यस्यास्सा." Hemádri gives the substance of the passage in the following words: "द्वीपान्तराञ्लवङ्गपुष्पाण्यादाय मुक्तामर्गानिव विहारोद्भवान्स्वेदलवानपहरिष्यन्तीति भावः."

P. 178. St. 58.—आकृतिलोभनीया, On this Cháritravardhana remarks: "यादृशेन रूपेणयं लोभ्यते तादृशं रूपममुष्मिन्राजनि नास्तीत्यर्थः."

P. 179. St. 59.—अथोरगाख्यस्य पुरस्य नाथं, Hemádri interpretes this by "नागपुरस्य नाथं." But he is evidently wrong; the town alluded to here is नागपट्टन or नागपट्टण (Negapattam) in the Rájamahendri district of the Madras presidency.—चकोराक्षि, On this Hemâdri observes: "रक्तत्वाच्चकोरस्य अक्षिणीवाक्षिणी यस्याः सा। "चकितमृगदृशाभि प्रान्तरक्ते च नेत्रे" इति रतिरहस्योक्तेः पद्मिनीत्वं."

P. 180. St. 60.—Hemádri interpretes हरिचन्दन by पर्णेण कुंकुमच्छायं चंदनं हरिचन्दनं" इति तेन कृताङ्गरागः। "समालम्भोऽङ्गरागश्च प्रसादनविलेपनं" इति धनंजयः." On the figure Hemádri observes: "अत्र वाक्यार्थवृत्तिरुपमा। यद्वामनः। "तद्विधं पदवाक्यार्थवृत्तिभेदात्" इति.—पाण्ड्यः. See note on 49, Canto IV.

P. 180. St. 61.—सौस्नातिकः. Sumativijaya explains this as: सुखेन स्नानः इति पृच्छति यः स सौस्नातिकः." Here Cháritravardhana observes: "अगस्त्यः सौस्नातिकः इत्यनेन नायकोत्कर्षः," and Hemádri has: "अगस्त्यमहत्त्वेन पाण्ड्यमहिमा युक्तो भवति."—विन्ध्यस्य संस्तम्भयिता, The mountains which stretch across India, and divide what Manu calls the मध्यदेश or 'middle land,' the land of the Hindus, from the south, that is, they divide Hindustan from the Deccan. The mountain is personified, and according to a legend he was jealous of the Himâlaya, and called upon the sun to revolve round him as he did round Meru. When the sun refused the mountain began to raise its head to obstruct that luminary, and to tower above Himálaya and Meru. The gods invoked the aid of Agastya, the spiritual guide of Vindhya. That sage called upon the mountain to bow down before him, and afford him an easy passage to and from the south. It obeyed, and Agastya passed over. But he never returned, and so the mountain remains in its humbled condition, far inferior to the Himálaya. The story, as given in the Kas'ikhanda Ad. V, however, is somewhat different.—निःशेषपीतोज्झितसिन्धुराजः. The legend says that on the destruction by Indra of Vritra, the demon, his friends and dependents, known by the name of Káleyas, began to wreak their vengeance upon the creation of Brahmá by

slaying the learned Bráhma*n*as at night, and concealing themselves in the waters of the ocean during day-time. The gods knowing through Vish*n*u, the residence of the treacherous enemy, prevailed upon Agastya to drink up the waters of the ocean and enable them to kill the Káleyas. Agastya drank up the whole ocean and laid bare the Kâleyas, who were then slain by the gods. Agastya then refilled the ocean *mejendo*, whence the brackishness of the oceanic waters. The Mahâbhârata says, however, that the ocean was filled afterwards by the river Gangâ being brought down from heaven by Bhagiratha, and being led into the ocean cavity. See *Mahábhárata, Vana Parvan, Adh.* 102 *and seqq.* —**आर्द्रमूर्तेः**, 'of him when he was (emerging) wet.' Analyse "आर्द्रा जलकणयुक्ता मूर्तिः शरीरं यस्य तस्य तथोक्तस्य."

P. 181. St. 62.—**दुरापमस्त्रमाप्तवता.** On this Châritravardhana has the following note: "पुरा रावणाद्भीतः पाण्ड्यः शिवप्रसादाद्ब्रह्मास्त्रं प्राप्तवानिति लंकेश्वरस्तं शङ्कते इति प्रसिद्धिः."—**अस्त्रं**, Vallabha renders this by "बाणादिक्ष्यास्त्रं पाशुपतास्त्रं."

P. 181. St. 63.—**महाकुलीनेन**, Sumativijaya explains, "यद्वा । महती या कुः पृथ्वी तत्र लीनेन."—**सपत्नी**, On this Hemádri has a grammatical note: "इति पिण्डगन्धलोहितकुक्षिवर्णापक्षेऽवर्णीति कश्चित्," and further he says: "इति वैराग्यहेतुः." and Châritravardhana has the following: "सापत्न्यं तु योषितां वैराग्यकारणं."—**दिशः**. On this Hemádri remarks: "दक्षिणशब्देन सिद्धे दिक्शब्दो लाघवानादरात्।" A choice expression.

P. 181. St. 64.—**परिणद्धपूगासु**. On this Hemádri remarks: "इति शैत्यं."—°**चन्दनासु**, On this Hemádri has: "इति सौरभ्यं."—**तमालपत्त्रास्तरणासु**, Here Hemádri observes: "इति मार्दवं."—**शश्वत्**, On this Châritravardhana observes: "शश्वच्छब्देन ताम्बूलललनादीनामुद्दीपनविभावनानामाधिक्यं सूच्यते."

P. 182. St. 65.—**इन्दीवरश्यामतनुः**, 'with a person black as the blue lotus.' Analyse "इन्दीवरं नीलोत्पलं तद्वत् श्यामा तनुः शरीरं यस्य सः." —**नाडसौ नायदयोर्योगोऽस्तु**. Indumati's reason for rejecting the Pá*n*dya according to Cháritravardhana is "मेघविद्युतोः क्षणिकयोगाद्वैराग्योक्तिः । राज्ञो नीलत्वं तोयदपदेन," *i. e.*, the comparison suggests a short-lived union between the pair as the lightning dis ppears almost instantaneously. —**अन्योन्यशोभापरिवृद्धये**, On this Hemádri remarks: "अनेन परस्परमेव शोभा नान्यथामित्युक्तं क्षणिकत्वं वा." —**शरीरयष्टिः** On this Cháritravardhana remarks: "यष्टिशब्दः श्रेष्ठार्थः."

P. 182. St. 66.—**ततोऽन्तरं** &c., A choice expression.—**दिवाकरादर्शनबद्धकोशे**, On this Cháritravardhana gives the following note:

" इति विशेषणस्य यद्यप्युपमानवैयर्थ्यं तथापि येन दिवसकरकमलयोरिवेन्दुमत्यभीष्टस्याजकुमारस्य मनसश्च स्नेहाधिक्यं सूच्यते, " and Hemadri has : " अनेनाजस्य सूर्यनिभत्वमुक्तं. " —तदीय, On this Chāritravardhana discusses, " त्यदादीनि च " Pānini, I. 1. 74. वृद्धसंज्ञानि । " वृद्धाच्छः " Pānini, IV. 2. 114. इति छप्रत्ययेन तदीयमिति.

P. 182. St. 67.—**संचारिणी दीपशिखेव**, 'like a burning torch carried past a row of tall houses in a public street.' Analyse " संचरतीति संचारः सोऽस्याः अस्तीति संचारिणी । पुरुषगृहीतत्वात्. " *Cf.* Chāritravardhana, " यद्यप्यचेतनत्वात्प्रदीपशिखायां संचरणं न संभवति । तथापि मनुष्यगतमुपचर्यते । मञ्चाः क्रोशन्तीत्यादिवत् । इन्दुमत्या मुक्तानां राज्ञां वैवर्ण्यकथनेनाभिलष्यमाणस्य कुमारस्य सौभाग्यातिशयः सूचितः. " —अट्ट इव, Hemádri paraphrases by " पण्यगृहमिव, " and Chāritravardhana by " क्षौमाल्यां मंदिरभेद इव. " —**विवर्णभावं प्रपेदे** &c., A choice expression.

P. 183. St. 68.—**वामेतरः बाहुः संशयं नुनोद**, Chāritravardhana : " पुंसां हि दक्षिणभुजस्फुरणं कान्तालिंगनं कथयति । अत एवेन्दुमती लप्स्येऽहमित्यस्य चित्तवृत्तिरभूदिति तात्पर्य. " *Cf.* also Hemádri : " वामभागश्च नारीणां श्रेष्ठः पुंसां तु दक्षिणः । दाने देवादिपूजायां स्पन्दे शृंगारणेऽपि [शृङ्करणे Ms.] च " इति निमित्तनिदाने । तथा । " अङ्गविस्फुरणं नृणां दक्षिणं सर्वकामदं । तदेव शस्यते सद्भिर्नारीणामप्रदक्षिणं." The palpitation of the right arm or the right eye of a male is said to signify union with one's beloved. —**केयूरबन्धोच्छ्वसितैः**, Hemâdri explains this in the following way : " केयूरं बध्यतेऽनेनेति केयूरबन्धो बाहुप्रदेशस्तस्योच्छ्वसितैः स्फुरणैः संशयं नुनोद, " and Chāritravardhana has : केयूरस्याङ्गदस्य बन्धो ग्रंथिस्तस्य भुजस्फुरणवशाद्यानि उच्छ्वसितानि तैः कृत्वा संशयं नुनोद. " These explanations appear better: Mallinâtha too takes it in the same sense. The armlet called अङ्गद or केयूर is usually fastened round the half way between the elbow and the shoulder.

P. 183. St. 69.—**सहकारमेत्य वृक्षान्तरं कांक्षति** &c., A choice expression.

P. 184. St. 71.—**ककुत्स्थ इत्याहितलक्षणः**, 'distinguished by the title of Kakutstha.' See our note to St. 41, IV.—**ककुद्**, Hemádri interpretes this by " प्रधानं " and says : " प्रधानमेव प्राधान्यमिति क्षारस्वामी. "

P. 185. St. 72.—**प्राप्तपिनाकिलीलः**, 'displaying the graceful manner of Pinákin,' who is also mounted on a bull. Pináka is the bow of S'iva. Hemádri gives the following account : " पुरा किल इक्ष्वाकुवंश्यः पुरंजयो नाम राजा इन्द्रमाहात्म्याच्च वृषरूपमिन्द्रमारुह्य [वृषमारुह्य Ms.] वृषपर्वनामानमसुरं हतवान् । ततः प्रभृति ककुत्स्थ इत्यागमः । ककुदशब्दोऽप्यस्तीति क्षारस्वामी." Vallabha also gives the same account.

P. 185. St. 73.—**गोत्रभिदः**, 'Of the destroyer of the mountains.' Pandit gives the following derivation of the word गोत्र ; 'more

literally गोत्र is a place where cows are kept, a cow-pen, hence a place where the cows of heaven were concealed, *i. e.*, a cave of the mountain or cloud. Indra is everywhere praised in the hymns of the Veda for his having broken asunder the mountains (*i. e.* the clouds) by his thunderbolt (*i. e.* lightning) and liberated the heavenly cows (the rain-waters).'—**उपेयुषः**, On this Hemâdri discusses : " उपेयाय इति उपेयिवान् । तस्य उपेयुषः । " उपेयिवाननाश्वान् " Pâ*n*ini, III. 2, 109. इति साधुः । न चात्रोपसर्गस्तंत्रं । तथा हि किराते । " गुणानुरागादिवसख्यमीयिवान्न बाधतेऽस्य त्रिगणः परस्परं." Ki. I. 11.

P. 186. St. 75.—**विहारार्धपथे**, ' On half their way to pleasure-gardens.' Hemâdri explains this epithet in the following way : " यद्वा विहारस्य राजमार्गस्योपवनस्य वा पंथाः," and Châritravardhana renders अर्धपथे by " संकेतपथे ".—**वाणिनीनां**, Hemâdri explains it by " दूतीनां " and notices the reading पाणिनीनां which he explains thus : " इति पाठे पणन्ते व्यवहरन्ते तच्छीलाः दध्यादिविक्रेत्र्यस्तासां कौतुककन्यायामाह." (?) —**कोलम्बयेत्** &c., A choice expression.

P. 186. St. 76.—**महाक्रतोः**, On this Hemâdri observes : "सर्वदाक्षिणत्वान्क्रतोर्महत्वं. " —**चतुर्दिगावर्जित**, On this Hemâdri quotes the following from वाग्भट, " चतस्रः कीर्तयेद्राष्टौ दश वा ककुभः क्वचित्. " —**तस्य**, Here Châritravardhana remarks : " तस्येति पदं काकाक्षिगोलकन्यायेनोभयत्र योज्यं."

P. 187. St. 77.—**यशः**, On this Hemâdri observes : "यशसः कर्मत्वविवक्षायां कश्चिदिति कर्तृपदाध्याहारो वा, " and Châritravardhana has " यश इयत्तया परिच्छेत्तुं नियमितुं कश्चन नालं न समर्थः । कश्चनेति कर्तृपदमध्याहार्यं. " —**चानुबन्धि**, Vallabha, Châritravardhana and Sumativijaya explain this epithet in the following words : " अथापि प्रसरणशीलं, " ' and yet extensive enough to occupy more space. ' —**इयत्तया**, Analyse " इदं परिमाणमस्य इयान् इयतो भावः इयत्ता तया."

P. 187. St. 78.—**अनुजातः**, On this Hemâdri gives the following note : " अनुजननं यद्यपि भ्रातृविषयं प्रसिद्धं । तथापि इह प्रकरणवशाज्जन्यजनकविषयमित्यवगंतव्यमिति । तस्माज्जात इत्ययमर्थोऽवतिष्ठते. " अनु is used as a separable preposition with accusative, and regarded as a कर्मप्रवचनीय. This term is employed to denote certain prepositions, particles or adverbs when they are not connected with verbs and govern a noun in some cases; *e. g.*, आ in आ मुक्तेः संसारः is a कर्मप्रवचनीय. See readings.

P. 188. St. 79.—**आत्मनस्तुल्यं**, On this Hemâdri quotes the following : " ययोरेव समं वित्तं ययोरेव समं श्रुतं [कुलं Ms.] । तयोर्विवाहो मैत्री च नोत्तमाधमयोः क्वचित . " Hemâdri defines the figure : " वस्तु किंचिदुपन्यस्य न्यसनात्तत्सधर्मणः साम्यप्रतीतिरस्तीति प्रतिवस्तूपमा यथा" इति काव्यादर्शे. K. D. II. 4?. —**समागच्छतु**, Hemâdri discusses here the Atmanepada form of

संगम् . He says, आङा व्यवधानात् । " समो गम्यृच्छिभ्याम् " Pâ*n*ini, I. 3. 29. इति न तङ् । After the verbs गम् 'to go,' ऋच्छ् 'to become hard,' प्रच्छ् 'to ask', स्वर् 'to find fault,' ऋ 'to go,' श्रु 'to hear' and विद् 'to know,' when used intransitively and preceded by the preposition सम्, the Atmanepada affix is employed. *Cf.* also the *Vàrtika* "विदिप्रच्छिस्वरतीनामुपसंख्यानम्." Between the root and सम् the preposition आ intervenes and hence the use of Parasmaipada. *Cf.* also Sumativijaya: " त्वं तावत्क्षीरत्नमयं महानुभावस्तु सुवर्णमता रत्नस्य काञ्चनेन योगः. "

P. 188. St. 81.—**अरालकेश्याः**, Hemàdri analyses " अराला कुटिलाः अत एव सुन्दराः केशा यस्यास्तस्यास्तथोक्तायाः. "

P. 188. St. 82.—**सखी**, Hemàdri explains the epithet in the following words: " भृत्ये सखीशब्दव्यवहारो दृश्यते । तथा कुमारसंभवे । " सर्वं सखे त्वय्युपपन्नमेतत् " इति । तथा च किराते । " स किंसखा साधु न शास्ति योऽधिपम् " इति. Ki. I. 5.—**वधूः**, Hemâdri gives season " कन्यायां वधूशब्दः पुंसि वध्वाः प्रसिद्धाभिलाषत्वात्. "

P. 189. St. 83.—**चूर्णगौरं**, Chàritravardhana explains this in the following words: " काश्मीरजातिमाङ्गल्यद्रव्येण गौरं पीतं," and Hemâdri has कुङ्कुमादिक्षोदारुणं हरिद्राचूर्णपीतं वा."—**करभोपमोरूः**, The epithet करभ means 'the back of the hand from the wrist to the root of the fingers.' Another meaning of करभ is 'the trunk of an elephant,' according to which the epithet means 'one whose thighs resemble the trunk of an elephant.'—**गुणं**, Châritravardhana interpretes it by " मधूकमालां," and Hemádri has the following: " गुणस्तंतुस्तेन माला लक्ष्यते स्त्रक्शब्दं विहाय अनुरागोपमार्थं गुणशब्दः प्रयुक्तः । मूर्तमिवत्यनुरागाख्योऽपि गुणस्त्रहमालायामोतत्वात्तस्मिन्नर्पितः इति भावः । यद्वा । मूर्तः समुच्छ्रितः, " and discusses the epithet मूर्च्छामोहसमुच्छ्राययोः । निष्ठायां " राल्लोपः " Pá*n*ini, VI, 4. 21. इति छलोपः । " आदितश्च " Pá*n*ini, VII. 2. 16. इतीट्प्रतिषेधः ॥ " अचोरहाभ्यां द्वे " Pâ*n*ini, VIII. 4. 46. । " नध्याख्या—" Pá*n*ini, VIII. 2. 57. इति निष्ठाया न नत्वम्."

P. 189. St. 84.—**विशालवक्षःस्थल** &c., Hemádri explains this in the following way: " स्थलशब्दः नञ्शरत्नार्थः. "

P. 190. St. 85.—**शशिनमुपगता**, On this Hemádri remarks, " इति आह्लादकारित्वं."—**जह्नुकन्या**, On this Hemádri observes: " इति पवित्रत्वं । उपमानोपमेययोरभेदोक्तिः." The river Gangá when brought down by Bhagiratha was forced to flow over earth to follow him to the lower regions. In its course it inundated the sacrificial ground of king Janhu who in his anger drank up its waters. But the gods, the sages, and particularly Bhagiratha appeased his anger and he loosed the waters of the river from his ears. Hence the sacred river is regarded as his daughter.

CANTO VII.

P. 191. St. 1.—**स्कन्देन साक्षादिव देवसेनां**, "Skanda or otherwise called Kârtikeya was the general of the army of the celestials. Devasenâ, the army of the gods, was hence personified to be his spouse. *Cf*. Hemâdri: "देवसेना दैत्यसेनेन्द्रकन्ये अभूताम् । तयोः पूर्वस्याः पतित्वे स्कन्दोऽभिषिक्तः इत्यागमः, " and also "अथो कुमारो गाङ्गेयगौरेयब्रह्मचारिणः । स्वामी महौजा एषश्च देवसेनान्य योषिदित्यमरशेषे, " and further he remarks: "तत्कथं ब्रह्मचारीति । ब्रह्मशब्देन वेदार्थं व्रतमुच्यते । ब्रह्म चरतीति ब्रह्मचारी । "व्रते" Pânini, III. 2. 8. इति णिनिः । इत्यमरपेदिभट्टयां. " Compare also Vallabha: "पूर्वं हि ब्रह्मणा निर्मिते देवसेनादैत्यसेने कन्यके अभूताम् । ततः पूर्वस्याः पतित्वे कुमारोऽभिषिक्त इत्यागमः. " Châritravardhana and Sumativijaya paraphrase देवसेना by "इन्द्रपुत्री । देवसेना इन्द्रपुत्री स्कन्दस्य भार्या । यद्वा । देवचमूरित्यन्यः. "

P. 191. St. 2.—**साभ्यसूयाः**, Hemâdri explains it in the following way: "किमेभिरनर्थकैरिति साभ्यसूयाः सक्रोधाः, " and Vallabha by "सरोषाः. " But Châritravardhana interpretes the epithet by "ईर्ष्यालवः. "

P. 192. St. 3.—**शच्याः सान्निध्ययोगात्स्वयंवरक्षोभकृतामभावः**, *Cf*. Châritravardhana: "एवं हि श्रूयते इन्द्राण्याः सामीप्यान्निष्प्रत्यूहं करग्रहणपरिसमाप्तिर्भवतीति, " *Cf*. also Hemâdri: "शचीसन्निधौ ये विघ्नमुपजनयन्ति ते त्वचिरात्प्रलीयन्ते इति प्रवादः । विवाहे शचिपूजनं नारदीय संहितायां । "संपूज्य प्रार्थयित्व ताँ शचीदेवीं [शचीं देवीं Ms.] गुणाश्रयां. " At the beginning of the Hindu marriage ceremonies the presence of S'achî and her husband Indra is invariably invoked. The object of the presence of S'achî being prayed for might perhaps originally be to secure eternal freedom from widowhood, which is specially enjoyed by that goddess. The mythological notion being that whoever be S'akra or king of the celestials S'achî remains the same, queen of Indra for the time being. Nârâya*n*a Bha*tt*a says: "ततो दाता (*i. e.* father or elder brother of the bride) "पात्रस्थसिततण्डुलपुञ्जे शचीमावाह्य षोडशोपचारैः पूजयेत्तां च कन्यैवं प्रार्थयेत् । "देवेन्द्राणि नमस्तुभ्यं देवेन्द्रप्रियभामिनि । विवाहं भाग्यमारोग्यं पुत्रलाभं च देहि मे. " *Prayoga Ratnâkara, Vâgdânavidhi*. In the तैत्तिरीयसंहिता Indrâ*n*î is represented as the best of wives, as one than whom nothing is more excellent, and whose husband never dies by age: "इन्द्राणीमासु नारिषु सुपत्नीमहमश्रवम् । न ह्यस्या अपरं च न जरसा मरते पतिः." Taittirîya Sanhitâ 1, 7, 13.—Again in the Taittirîya Brâhma*n*a she is represented as ever free from widowhood and as the mother, like Aditi, of virtuous sons: "**इन्द्राणीवाविधवा अदितिरिव सुपुत्रा.**" **Kâ*n*da., III, Prap.**

7, An. 5, Das'. 10.—उद्दिश्य, Vallabha construes it with समत्सरः and not with शशाम. But all other commentators including Mallinâtha construe it with शशाम.

P. 192. St. 4.—तावत्, Mallinátha interpretes this in the sense of 'all,' "यावत्तावच्च साकल्ये." But it would be better to translate it, 'meanwhile,' *i. e.*, while the disappointed princes were starting from their encampments. *Cf.* Hemâdri: "यावत्ते गतास्तावत्स वरः &c.," also Chàritravardhana: "यावत्ते राजानः सेनानिवेशाञ्जग्मुस्तावद्वरोऽजोऽपि &c.," also Vallabha: "यावत्ते राजानो गतास्तावदेव स वरः &c.."—इन्द्रायुधद्योतिततोरणाङ्कम्, Hemádri reads "इन्द्रायुधद्योततनतोरणाङ्कं." *Cf.* Chàritravardhana and Sumativijaya: "इन्द्रायुधैर्हरिकमणिनिर्मितभासमानं तोरणमेवाङ्कश्चिह्नं यस्य स तथा," also Hemâdri: "इन्द्रायुधवद् द्योतनं [appears to be his reading ; he also notices the reading of Mallinátha] तोरणमेवाङ्कश्चिह्नं यत्र । द्योतते तच्छीलं द्योतनं । "अनुदात्तेतश्च" Pànini, III. 2. 149. And further he says: "नानारत्नदीप्तिसमूहः इन्द्रायुधमिति कविप्रसिद्धिः." Both Chàritravardhana and Sumativijaya have not quoted any authority in support of their interpretation of Indrâyudha. Probably Kàlidása means that the triumphal arches, resembling the rainbow in their shape, with variegated colours, are fastened to the upper part of the gate or door of the marriage-hall. And it is generally called वन्दनमाला. Hemâdri quotes the following from Halâyudha "बुधैर्वन्दनमाला तु तोरणं परिकीर्त्यते."—तोरणाङ्कं, equivalent to "तोरणाङ्कितं," 'marked by, distinguished for, decorated with.' *Cf.* "अलक्तकाङ्कां पदवीं ततान" in stanza 7 below.—ध्वजच्छाय° &c. the flags were those that the citizens had raised in honour of the prince Aja. The victories of Vikramâditya and other celebrated kings are, according to popular belief, still celebrated on the वर्षप्रतिपदा or new year's day by the raising of flags and *toranas* in front of houses. *Cf.* "प्राप्ते नूतनवत्सरे प्रतिगृहं कुर्याद्ध्वजारोपणं &c."—अभिनवोपचारं, Chàritravardhana renders it by "पूर्णकुम्भादयः". And Vallabha by "रचितनूतनपुष्पप्रकरं," and Hemádri has "अभिनवः उपचारः चंदनसेकः पुष्पविक्षेपादिर्यत्र तं."

P. 192. St. 5.—चामीकरजालवत्सु, 'furnished with golden windows.' जाल originally means 'a net' and hence 'a window,' because the windows of old houses consisted of wooden frames of net-work with small air-holes in them. *Cf.* गवाक्ष, meaning 'a window.' Open windows with shutters are probably a modern invention. चामीकरजाल means that the network boards containing holes were either inlaid or guilt with gold.—विचेष्टितानि, Sumativijaya renders it by "स्वस्थानादित्वचालनं चेष्टाः." The verses 5-12 have a striking parallel in the third canto of the Buddhacharita, verses

13-24, where the young prince makes his first entry into his father's capital,—that expedition, during the course of which he is to make his first acquaintance with old age as the inevitable shadow which dogs the steps of youth. See preface, page 75, to our edition of the Meghadûta.

P. 193. St. 6.—**आलोकमार्गं**, *i. e.* "यतोऽवलोकनं भवति तत्र स्थले." Hemâdri renders it by "गवाक्षपथं."—**उद्वेष्टनवान्तमाल्यः**, analyse "उद्गतं च तद्वेष्टनं च तेन वान्तानि माल्यानि येन सः"। "टुवम उद्गिरणे। "द्वैवायोऽमुण्डबन्धोप्स्योः" इति कविकल्पद्रुमः ? । अनुनासिकस्य क्वीति दीर्घः । उद्गिरणं भुक्तस्योर्ध्वगतिः । मुख्यार्थं परित्यज्य गौणार्थेऽप्येवं वर्तमानो वान्तशब्दो न ग्राम्यः । यथा काव्यादर्शे । "निष्ठ्यूतोद्गीर्णवान्तादिगौणवृत्तिव्यपाश्रयात् । अतिसुन्दर मन्यत्र ग्राम्यकक्षां विगाहते." K. D. I. 95. Hemâdri.—**तावत्**, On this epithet Hemâdri oberves: "तावदेवशब्दाभ्यां बन्धस्य दूरावस्थोच्यते । यत्र करेण रोधमात्रमपि नास्ति तत्र बन्धस्तावद्दूरापास्तः इत्यर्थः". Châritravardhana interpretes the last two lines of the verse in the following way: "केशपाशः केशकलापो बंधुं तावन्न संभावित एव न गणित एव । नापि करेण रुद्धः । यस्य हस्तेनापि न रोधस्तस्य बन्धो न संभवतीति तात्पर्यं । एतेन कुतूहलातिशयोऽसूचि । अपिशब्दः प्रशंसार्थः । "करेण रुद्धोऽपि न केशपाशः" इति बन्धवृत्त्यविरोधे पाठं न मन्यमानस्य कौतुकातिशयं प्रतिपादितवान् । "पाशःपक्षश्च हस्तश्च कलापार्थाः कचात्परे"। "निष्ठ्यूतोद्गीर्णवान्तादिगौणवृत्तिव्यपाश्रयं &c."

P. 193. St. 7.—**अग्रपादं**, Hemâdri interpretes it thus: "पादस्याग्रं अग्रपादः । वाहिताग्न्यादिषु" Pâṇini, II. 2. 37. Like Mallinâtha he too quotes Vámana and gives the following: "गुणोऽवयवो गुणी अवयवी । लक्षणयाऽभेदः । अग्रश्चासौ पादश्चेति "विशेषणं विशेष्येण बहुलम्" Pâṇini, II. 1. 57. इतिसमासः । भेदपक्षे पादस्याग्रं इति षष्ठीसमासः".—**एव**, On this Hemâdri remarks: "एवकारेण कदाचिदपि अवस्थाया गत्यभाव उक्तः," and Châritravardhana has "एवकारेण कदाचिदपि त्वरागपादमपकृष्य स्त्रियो न यन्तीत्यर्थः."

P. 194. St. 8.—**विलोचनं दक्षिणं**, On this epithet Hemâdri remarks: "दक्षिणशब्देन संभ्रमात्क्रमभङ्गः सूचितः," and further he quotes, like Mallinátha, the S'ruti, and gives the following from निमित्तनिदान: "वामभागस्तु नारीणां श्रेष्ठः पुंसां तु दक्षिणः । दाने देवादिपूजायां शृंगारकरणेऽपि च." And Châritravardhana has the following: "प्रथमं मनुष्याणां शास्त्राद्वृद्धाचाराच्च वामनेत्राञ्जनं युक्तं । अत्र कौतुकदर्शनत्वराभावात्तथा करोतीति न दोषपोषः."

P. 194. St. 9.—**जालान्तरप्रेषितदृष्टिः**, analyse "जालान्तरे गवाक्षमध्ये प्रेषिता प्रेरिता दृष्टिर्लोचनं यया सा." Both Hemâdri and Châritravardhana supply "गलितनीवीत्वात् । नाभिप्रविष्टाभरणप्रभेण हस्तेन वासोऽवलम्ब्य तस्थौ."

P. 194. St. 10.—**अङ्गुष्ठमूलार्पितसूत्रशेषा**, *Cf.* Châritravardhana and Sumativijaya: "अङ्गुष्ठमूले सूत्रमारोप्य मेखलादि ग्रथ्यते इति स्त्रीणां जातिः." A certain lady attached one end of the band while it was being strung

with the beads to the foretoe of her foot; but no sooner she heard of the procession than she ran up to the window, without securing that portion of the band which was already strung and so all the beads dropped down and the string only remained hanging from her toe.

P. 195. St. 11.—**आसवगन्धगर्भैः**, Châritravardhana analyses it in the following way : " आसवस्य मद्यस्य गन्धो गर्भो येषां । यद्वा । आसवस्य गन्धस्तत्प्रधानो गर्भो येषां तैः."—**सान्द्रकुतूहलानां**, Châritravardhana: " सान्द्रं निविडं कुतूहलं यासां स्त्रीणां &c.," and further he observes " नेत्राणां भृङ्गत्वेन सान्द्रकुतूहलत्वेन बहुकालस्थित्यशक्तिः," and Hemâdri remarks : " सान्द्रकौतुकत्वेन [कुतूहलत्वेन Ms.] मुखविकासान्मद्यगन्धाविर्भावः. " Hemâdri also notices the reading "प्रयुक्तपत्राभरणाः" instead of "सहस्रपत्राभरणाः."—**गवाक्षाः**, Here Hemâdri discusses in the following way: " गवामक्षीणीव गवाक्षाः । " अक्ष्णोऽदर्शनात् " Pânini, V. 4. 76. इत्यच् । अचक्षुःपर्यायोऽदर्शनशब्दः । " अवङ् स्फोटायनस्य" Pânini, III. 1. 123. इत्यत्र व्यवस्थितविभाषेति नित्यमवङ् । "

P. 195. St. 12.—**शेषेन्द्रियवृत्तिः**, analyse " शेषाणि यानि श्रवणादीनि इन्द्रियाणि तेषां वृत्तिराकर्णनादिव्यापारः." 'The action of the rest of their senses.'—**नार्यः**, Hemâdri holds the following discussion : " इत्यत्र " अचोरहाभ्यां द्वे " Pânini, VIII. 4. 46. इति प्राप्तस्य द्वित्वस्य " दीर्घादाचार्याणाम् " Pânini, VIII. 4. 52. इति निषेधः । आचार्यग्रहणं पूजार्थं इति न्यासकृत्. " —**विषय°**, Hemâdri and Vallabha render this by " शब्दादि. "—**चक्षुः प्रविश्य**, Hemâdri gives the substance of the verse in the following words : " इन्द्रियान्तरव्यापारं त्यक्त्वा तद्विलोकनमेव चक्षुरिति वाक्यार्थः, " and Châritravardhana has the following : " संभाषणादि विमुच्य तद्दर्शनैकरसा अभूवन्निति भावः. "—**दृष्टिभिरापिबन्त्यः**, Vallabha remarks : " सादरमवलोकनं पानमुच्यते. "

P. 196. St. 13.—**स्थाने**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " युक्ते द्वे सांप्रतं स्थाने " इत्यमरः ।—**परोक्षैः**, *i. e.* "अदृष्टैः. " परोक्ष is derived from परः 'beyond' and अक्ष deduced from अक्षि, so that it means, 'beyond the eye,' what is beyond the range of the sight, hence, 'absent.' *Cf.* Hemâdri : अक्षिभ्यां परे इति परोक्षास्तैरस्तोकैः । " प्रतिपरसमनुभ्योऽक्ष्णः " Gana Sûtra. इति अक्षिशब्दाट्टच्. "—**लभेत**, Hemâdri observes " विभाषा कथमि लिङ् च " Pânini, III. 3. 143. इति कालत्रयेऽपि लिङ्."

P. 196. St. 14.—**परस्परेण स्पृहणीय शोभं**, On this Hemâdri remarks : यद्वा । इन्दुमत्याः शोभा अजेनैव स्पृहणीया अजस्य शोभा इन्दुमत्यैव स्पृहणीयेति । शोभेत्यत्र वामनः । शोभेति निपातनादिति शुभशुंभशोभार्थाविति शुभेर्भिदादेराकृतिगणत्वादङ् सिद्ध एव । गुणप्रतिषेधाभावस्तु निपात्यते इति."

P. 196. St. 15.—**रतिस्मरौ**, Chāritravardhana and Dinakara read जातिस्मरौ, for Chāritravardhana explains : " जात्या जन्मना स्मरौ जातिस्मरौ । स्मरश्च स्मरी च । " पुमान्स्त्रिया " Pāṇini, I. 2. 67. इत्येकशेषः । अथ वा । स्मरतीति स्मरः । पचाद्यच् । जातिः स्मरौ जातिस्मरौ । महीधरवत् । रतिस्मराविति रतिकामौ. " 'A word in the masculine gender, similarly spoken along with the same word, but ending with the feminine affix, becomes एकशेष, and the latter is dropped.' Hemádri also notices the reading जातिस्मरौ and explains exactly like Cháritravardhana. —**बाला**, On this epithet Hemádri remarks : " बालेति अज्ञत्वसूचकं." Both Hemádri and Cháritravardhana have to say the following on these verses : " यद्यप्येते श्लोकाः कुमारोत्पत्तावपि विद्यन्ते तथाप्येककर्तृकत्वान्न दोषः."

P. 197. St. 16.—**मङ्गलसंविधाभिः**, Hemádri renders it by " पताकादिसामग्रीभिः", and Chāritravardhana by " पूर्णकलशकुसुममालादिभिः ", and Sumativijaya by " गीतवादित्रशोभनस्तवनादिभिः " And Vallabha has कल्याणचित्ररचनाभिः, *i. e.* 'by auspicious decorations,' such as placing earthen jars filled with water near the entrance, by hanging garlands of flowers, leaves &c. along the walls, &c. As for some of the auspicious decorations to be made on such occasions, *Cf.* the Bhâgavata Purâṇa Sk. X. Adh. 41, St. 22 *seqq.* " संसिक्तरथ्यापणमार्गचत्वरां प्रकीर्णमाल्याङ्कुरलाजतण्डुलाम् । आपूर्णकुम्भैर्दधिचन्दनोक्षितैः प्रसूनदीपावलिभिः सपल्लवैः । संवृत्तरम्भाक्रमुकैः सकेतुभिः स्वलंकृतद्वारगृहां सपट्टिकैः । तां [मथुरां] संप्रविष्टौ वसुदेवनन्दनौ, " &c., &c. Where the commentator says : " चत्वराणि अङ्गणानि संसिक्तानि रथ्यादीनि यस्यां तां प्रकीर्णा माल्यादयो यस्यां ताम् । २२ । तथा स्वलंकृतानि द्वाराणि येषां ते गृहा यस्यां तां । करापूर्णैः कुम्भैर्दध्ना चन्दनेनोक्षितैः सिक्तैः प्रसूनानां दीपानां चावल्यो येषु तैर्वृन्तैः फलगुच्छैरुपलक्षिता रम्भाः क्रमुकाश्च तत्सहितैः सकेतुभिः पट्टिकावितस्तिविस्तारपट्टवस्त्राणि तत्सहितैः । तत्रेयं रीतिः । द्वारेषूभयतस्तण्डुलानामुपरि कुम्भास्तत्परितः प्रसूनावल्यः कण्ठे पट्टिका मुखे चूतादिपल्लवास्तदुपरि पात्रान्तरे दीपावल्यस्तत्सन्निधौ रम्भाः क्रमुकाः केतवस्तोरणानि चेति । "

P. 197. St. 17.—**करेणुकायाः अवतीर्य**, On this epithet Hemádri remarks: " वरारोहणार्थमश्वः । राज्ञामिभश्च इति लोकाचारः [नीतिः Ms.]. " —**नारीमनांसीव**, On this Hemádri observes: इति सर्वप्रियत्वोक्तिः ".—**कामरूपेश्वरदत्तहस्तः**, Hemádri renders it in the following way: " कामरूपेश्वरेण दत्तो हस्तो यस्य," this appears better. Chāritravardhana also takes it in the same sense.—**इव**, Sumativijaya renders it thus: "इव शब्दार्थोऽत्र सहार्थे व्याख्यायते नारीमनोभिः सह चतुष्कमध्ये प्राविशत् । नारीमनांस्यपि विवेशेत्यर्थः."

P. 198. St. 18.—**महार्हसिंहासनसंस्थितः**, analyse महानर्हो मौल्यं यस्य । यद्वा । महच्च तदर्हश्च महार्हं तच्च सिंहासनं तत्र संस्थितः. "—**मधुपर्कमिश्रं**, Hemâdri renders it in the following way: " मधुना पृच्यते इति मधुपर्कस्तेन मिश्रं युतं पश्चामृतमिश्रं । "अलंकृतः सितच्छत्रोऽपदातिज्ञातिबान्धवैः । वृतो वधूगृहं गत्वा मधुपर्केण

पूजितः " इत्याश्वलायनकारिकायां. मधुपर्क means a respectful offering generally made to a distinguished guest or to a bridegroom on his arrival at the entrance of the marriage-hall of the bride's father. Its usual ingredients are curds, charified butter, honey, sugar and water. Hemádri interpretes अर्घ्य by " पूजार्थमुदकादि. "

P. 198. St. 19.—**उदन्वान्**, analyse, " उदकमस्यास्तीति उदन्वान्. " On the figure Sumativijaya observes: " अजस्य समुद्रोपमानमिन्दुमत्याः वेलोपमानमधरोधरक्षाणां चन्द्रपादोपमानं. "

P. 198. St. 20.—**संगमयांचकार**, On this Hemádri gives the following Káriká from आश्वलायन । "सनमे क्रामिते नस्याः [तस्थः Ms.] शिरस्थां [शिरसी Ms.] संनिधाय च. "—**आज्याहिभिः**, Cháritravardhana renders the epithet by "घृतशमीपत्रलाजैः. "—**साक्ष्य**, On this Hemádri remarks, साक्षिणः कर्म साक्ष्यं । " ब्राह्मणादित्वात् " गुणवचन° " Pánini, V. I. 124. इति ष्यञ् । राशिकूटादौ वध्वाः प्रथमं गण्यत्वेन प्राधान्यात्पूर्वनिपातः," on the epithet वधूवरौ.

P. 199. St. 21.—**हस्तं परिगृह्य**, On this epithet Hemádri quotes the following Káriká from आश्वलायन, " अंगुष्ठादेव [ति Ms.] गृह्णीयाद्भ्णामीत्येकया ततः. "

P. 199. St. 22.—**वृत्तिस्तयोः** &c., construe : "पाणिसमागमेन मनोभवस्य वृत्तिस्तयोः समं विभक्तेव, ' by the touching together of their hands the action or the existence of the mind-born-god was as it were equally divided in them. '—**तयोः**, Loc. dual. Hemádri, Cháritravardhana, Vallabha, Dinakara, Sumativijaya, Dharmameru and Vijayagaṇi read the 3rd and 4th lines thus : " तस्मिन्द्वये तत्क्षणमात्मवृत्तिः समं विभक्तेव मनोभवेन. " Hemádri explains : "तस्मिन्द्वये तत्क्षणं मनोभवेन स्मरेण आत्मनो वृत्तिः समं विभक्तेव. " । and Cháritravardhana explains : "तस्मिन्नजेन्दुमतीलक्षणे मिथुने तत्क्षणं तत्काले स्मरेणात्मवृत्तिः स्वावस्था समं विभक्तेव विभागीकृतेव. " If we take a logical view of the sentence it would not be quite proper to say that the spirit of the God of love entered two individuals simultaneously, the poet fancies that that spirit divided itself into two equal parts and inspired the couple with each of the halves. None of these commentators notices the genuine reading of the poet given in our text and commented upon by Mallinátha. On this epithet Hemádri remarks, " सात्त्विकाविर्भावादनुराग उक्तः । सात्त्विकाश्च भावा भरतेनोक्ताः । " स्तम्भः प्रलयरोमाञ्चौ स्वेदो वैवर्ण्यवेपथू । अश्रु वैस्वर्यमित्यष्टौ स्तम्भादिरिवतः क्रियां गतः । प्रलयो नष्टचेष्टत्वं शेषास्तु व्यक्तलक्षणाः " । and further he, like Mallinátha, quotes वात्स्यायन with further remarks and the quotation from Kumárasambhava. Cháritravardhana has the following, " इवशब्दोऽवधारणे

पुलकस्वेदस्तम्भादयो हि सात्त्विका भावाः कामोद्रेकमन्तरेण न प्रादुर्भवन्तीति । इतरथा कन्दर्पेणात्मभूतेः प्रकटीकृतत्वादिवार्थभूतोत्प्रेक्षा न संभवति । अपरे तु तुल्यत्वमुत्प्रेक्षितमिति व्याचक्षते. " See readings.

P. 200. St. 23.—°**निर्वर्तितानि**, Hemâdri reads °विवर्तितानि and remarks, "अनेन रत्याख्यो भाव उक्तः । तथा । " परस्परस्योपरि दृष्टिपातं रतिप्रकर्षास्पदलिङ्गमाहुः" इति.—°**समापत्ति**,° Châritravardhana explains: "समापत्तिर्विलोकनीयवस्तु विलोकनपर्यन्तं [पर्यन्त- Ms.] समापत्तिस्ततो निवर्तितानि &c. "

P. 200. St. 24.—**उदर्चिषः**, Hemádri interpretes it by "उत्कृष्टदीप्तेर्वा."—**प्रदक्षिणप्रक्रमणात्** , On this Hemádri quotes the following Kârikâ from आश्वलायन, " हविर्भुगम्भः कुम्भौ तु [हविर्भुजं सकुम्भं च Ms.] दृशदृर्जं [दृशदृर्पं Ms.] प्रदक्षिणं वधूं परिणयेन्मंत्र-[परिणयन्मंत्र- Ms.] ममोहमिति वै जपन् [जपेत् Ms.]"—**अन्योन्यसंसक्तं**, On this Hemâdri observes : " इत्युभयविशेषणं."—**अहस्त्रियामम्**, Hemâdri discusses in the following way: " त्रयो यामा यस्याः सा त्रियामा । आद्यन्तयोरर्धप्रहरयोर्दिनव्यवहारात् । अहश्च त्रियामा च । सर्वो द्वन्द्वो विभाषैकवद्भवतीति । यद्वा । अद्रव्यवाचित्वात् । " विप्रतिषिद्धं चानधिकरणवाचि " Pâṇini, II. 4. 13. इति विभाषैकवद्भावः । शीतोष्णस्यैव सहानवस्थानलक्षणेनाभिधेन विप्रतिषिद्धत्वात् । " Translate the aphorism : ‘ A Dvandva compound of words of contrary significations, but not being the names of concrete substances, is optionally singular. ’ So शीतोष्णम् or शीतोष्णे ‘ cold and heat ’; सुखदुःखं or सुखदुःखे ‘ pleasure and pain ’; जीवितमरणं or जीवितमरणे ‘ life and death. ’ The term विप्रतिषिद्धं means ‘ words of contrary significations. ’

P. 201. St. 25.—**नितम्बगुर्वी**, On this Hemádri observes : " इति प्रदक्षिणायामसंगतिः सूचिता."—**लाजविसर्गमग्नौ**, ‘ The offering or oblation of Laj'as or rice parched while the husks are yet unremoved—which husks disappear in the process of parching and the grain is swollen to a considerable magnitude—is enjoined by the most ancient authorities on marriage rites.’ *Cf.* Hiraṇyakes'i Sûtra XIX., 6, 2. " इमान् लाजानावपामि समृद्धिकरणान्मम तुभ्यं च " [*i. e.* अग्नये] " संवननं तदग्निरनुमन्यतामयम् । इत्यभिधार्येयं नार्युपब्रूतेऽग्नौ लाजानावपन्ती । दीर्घायुरस्तु मे पतिरेधन्तां ज्ञातयो मम । स्वाहा."—**मत्तचकोरनेत्रा**, ‘ whose eyes were as red as those of the चकोर bird maddened with love.’ Châritravardhana says the redness was caused by the smoke issuing up from the sacrificial fire. *Cf.* " कीदृशी धूमसंबन्धादत्यरुणत्वान्मत्तो योऽसौ चकोरो जीवंजीवस्तस्य नेत्रे इव नेत्रे यस्याः सा. " He reads लाजविमोक्षमग्नौ and observes: " विसर्गमित्यसभ्यः पाठः. "

P. 201. St. 26.—**हविःशमीपल्लवलाजगन्धी**, Hemâdri explains, "लाजाञ्जलिं विसृज्य धूमाग्रं समाजिघ्रेदिति प्रयोगवृत्तिकारोक्त आचारो द्रष्टव्यः । कीदृशं । " शस्तं चाथ त्रिषु द्रव्ये पापं पुण्यं सुखादिव "। तथा । " पापा ऋतुमती कन्या पापो

राजान्यरक्षकः । पापं व्याधकुलं हिंस्रं पण्याश्री पण्य आश्रमः, " and Chāritravardhana observes : " गन्धशब्दात् " उपमानाच्च " Pánini, V. 4. 137. इति समासान्तः इति कश्चित् । तदवयमुपमानाभावात्. "

P. 201. St. 27.—**आचारधूमग्रहणात्** , On this Cháritravardhana and Sumativijaya observe : " लाजाञ्जलिं विसृज्य धूमं समाजिघ्रेदिति गृह्यसूत्रं । अनादिपरंपरासिद्धो व्यवहार आचार इत्यन्ये, " and Vallabha observes : " अञ्जलिना वधूर्धूममाजिघ्रतीति लोकाचारः. "—**बीजाङ्कुर**, &c. " बीजान्निर्गता अङ्कुरा बीजाङ्कुराः " says Cháritravardhana, who goes on to say " प्रम्लानो विशाणो बीजाङ्कुराणां कर्णपूरोऽवतंसो यस्य तत्। पाटलागण्डलेखा गण्डभित्तिर्यस्य तत् ." &c. बीजाङ्कुर is, observes Pandit, 'what is known in Maráthi, at least in Konkan, by the name of उगवण or रुजवण, young sprouts of corn generally of rice or wheat artificially grown under shade and watered with any dye that the young blades are required to take. The blades assume the desired colour and after they grow to the height of five or six inches, they are put by women in their hair like flowers. It is also known by the name of सरवर or धान्य. On the Dasará holiday it is worn by men of the lower classes on their turbans. '

P. 202. St. 28.—**स्नातकैः**, Hemâdri interpretes it by : "कृतसमावर्तनैर्गृहस्थैरित्यर्थः," and further Hemádri and Cháritravardhana quote the following: "त्रिविधाः स्नातकाः । विद्यास्नातको व्रतस्नातको विद्याव्रतस्नातकश्चेति । तथा हि याज्ञवल्क्यः। " गुरवे तु वरं दत्वा स्नायीत तदनुज्ञया । वेदव्रतानां वा पारं नीत्वा ह्युभयमेव वा " इति. —**राज्ञा पुरंध्रिभिश्च प्रयुक्तमार्द्राक्षतारोपणमन्वभूताम्** , On this Cháritravardhana observes : " आर्द्राक्षतारोपणं वृद्धाचारः, " and Vallabha has : " यथानुक्रमेण प्रयुक्तं दत्तं । एष हि लोकाचारः. "

P. 202. St. 29.—**अधिश्रीः**, analyse " अधिगता प्राप्ता श्रीः संपत्तिर्येन Cháritravardhana analyses "अधिका श्रीर्यस्य सः," and remarks: "इत्यनेन पूजासामर्थ्य," and discusses the following, "अधिश्रीरिति । नेयङुवङुस्थानावस्त्री Pánini, I. 4. 4. इति नदीसंज्ञानिषेधात् " नद्यृतश्च Pánini, V. 4. 153. इति कप्प्रत्ययनिरासः. "

P. 202. St. 30.—**गूढनकाः**, Here Châritravardhana observes: "गूढनका हि वहिः प्रसन्नाः."—**पूजां**, Châritravardhana interpretes it by "वस्त्रतुरंगमादिकां. "

P. 203. St. 31.—**समयोपलभ्यं प्रमदाभिषं**, Cháritravardhana explains it to mean " समयेन शपथेनोत्सवस्थानकालेन वोपलभ्यं प्रमदेवाभिषं स्त्रीणाहार्यं वस्तु भोग्यवस्तु वा । सर्वोपादेयवस्तु वा लाघवं वा, " and further he observes: " उपपूर्वस्य लभेर्लब्धिमात्रेऽपि प्रवृत्तिः । " न चोपलेभे वणिजां पणायाः " इति भट्टिकाव्येऽपि प्रयोगात् ".—**कृतपूर्वसंवित्** , Châritravardhana renders it by " प्रति-

ज्ञा । सङ्केतो वा, " and Vallabha by " विहितपूर्वमन्त्रः "—**आरम्भसिद्धौ**, Hemâdri renders it thus: " वधूहरणारंभरूपायां. " See readings.

P. 203. St. 32.—**सत्त्वानुरूपाहरणीकृतश्रीः**, On this Hemâdri quotes the following from Kâtyâyana: " ऊढया कन्यया वापि पत्युः पितृगृहेऽपि वा । भ्रातुः सकाशात्पित्रोर्वा लब्धं सौदायिकं स्मृतं. " Châritravardhana and Sumativijaya notice the reading " अनुष्ठितानन्तरजो विवाहः " and say " इति चिन्त्यमसत्यं " (?)—**तावत्**, ' meanwhile. ' See readings.

P. 204. St. 33 —**उष्णरश्मेः**, On this Hemâdri remarks: " अजस्य तिग्मरश्मित्वं ध्वन्यते. "

P. 204. St. 34.—**आत्तस्वतया**, analyse " आत्तं गृहीतं स्वं धनं येभ्यस्तेषां भावस्तया. "—**बभूवुः**, ' had become. ' Sumativijaya gives the substance of this verse in the following words: " इन्दुमतीमादायैनं कुमारं मारयाम इति भावः. "

P. 204. St. 35.—**इन्द्रशत्रुः**, Prahlâda is not generally known as an enemy of Indra. Hemâdri explains इन्द्रशत्रुः by "वृत्रासुरो वा," and Vallabha and Sumativijaya by "नमुचिदानवः." Both Hemâdri and Châritravardhana quote Vâmana like Mallinâtha. Do they borrow from Mallinâtha or *vice versa* ? In quoting the Purâ*n*a Hemâdri reads " प्राग्वधं " instead of प्राक्तनं, but Charitravardhana closely follows Mallinâtha.

P. 205. St 36.—**भागीरथीं शोण इवोत्तरंगः**, Hemâdri, Châritravardhana, Vallabha, Dinakara and Vijayaga*n*i read ज्योतिरथां for भागीरथीं. Three northern manuscripts of Mallinâtha's commentary also read with these commentators. But the Southern and the Deccan manuscripts in our possession invariably read भागीरथीं. Supposing Mallinâtha's text had भागीरथीं for ज्योतिरथा then we should have to translate, as Mallinâtha does, प्रत्यग्रहीत् by ' attacked,' a sense that ग्रह् with प्रति does not perhaps bear, as it simply means to *receive*, in a friendly or hostile manner. The latter meaning is applicable here. And as it is the Jyotirathâ and not the भागीरथी that the S'o*n*a receives, it would be perferable to read with the three northern manuscripts, as supported by these commentators.

P. 205. St. 37.—**तुल्यप्रतिद्वन्द्वि बभूव युद्धं**, Hemâdri explains it by द्वन्द्वं कलहो येषामस्तीति द्वन्द्विनो योद्धारः । तुल्याः प्रतिद्वन्द्विनो यस्मिंस्तत्, " and further quotes the Vratakha*nd*a from the चतुर्वर्गचिंतामणिः । " रथी च रथिना सार्द्धं पदातिश्च पदातिना । कुंजरस्थो गजस्थेन योद्धव्यो भृगुनन्दन," and Châritravardhana has the following: " यस्य यथायोग्यं युद्धं समभूदित्यर्थः."

P. 205. St. 38.—**नोदीरयन्ति स्म कुलोपदेशान्**, It appears that there was a custom with the warriors of the Hindu epics to refer

to their genealogy and to describe vauntingly the deeds or chivalrous actions of their own ancestors and to speak disparagingly of those oft heir enemies, before they resumed a combat.—बाणाक्षरैः, 'The names of their respective masters were engraved on arrows,' says Sumativijaya. Cháritravardhana interpretes ऊर्जितं by "स्फुटाहंकारं."

P. 206. St. 39.—कुञ्जरकर्णतालैः, Hemâdri renders तालः by "ताडनं" and says "इलयोरैक्यत्वात्," and Chăritravardhana interpretes it by "चपेटैः."—नेत्रक्रमेण, 'in the manner of a cloth,' *i. e.*, the dust covered the sun as completely as if it were a thick veil of cloth. *Cf.* Chăritravardhana, "यथा अंशुकेन निरोधः क्रियते तथा रेणुनापि कृतः इत्यर्थः। चक्षुर्निरोधप्रकारेण वा."

P. 206. St. 40.—नवोदकानि, On this Cháritravardhana observes: "नवोदकत्वं रजःसामर्थ्यं," and Sumativijaya gives the substance of the verse in the following words: "कृत्रिमवस्त्रमन्यं दृष्ट्वेत्युत्प्रेक्षा क्रियते किमु एते कलुषाणि नवोदकानि विवर्तानि भावः."

P. 207. St. 41.—विलोलघण्टाक्वणितेन, On this Hemádri remarks: "इति युद्धराभासिकता," *i. e.* signifying the tumult and roar of the battle.—आत्मपरावबोधः, On this epithet Hemádri observes: "आत्मशब्देन आत्मीया उच्यन्ते."

P. 207. St. 42.—विजृम्भितस्य, Hemádri and Cháritravardhana interprete it by "विस्तृतस्य."—बालारुणः, On this Hemádri gives the following note: "अर्कोऽनूरुर्वा ताभ्यां हि तमो निवार्यते," and Chăritravardhana and Sumativijaya have the following: "यथा बालारुणेनान्धकारो ध्वस्यते तथा रुधिरप्रवाहेण संग्रामरेणुर्ध्वस्त इत्यर्थः." It means 'as the rising sun dispels the darkness of the night so the overflowing streams of blood removed the darkness caused by dust (by wetting it).'

P. 207. St. 43.—स छिन्नमूलः, The lower part of the column of dust being wet with blood settled itself on the ground and separated itself from the upper one. The lower part is, therefore, compared to the fire consisting of embers only while the upper part of the column of dust is compared to smoke which merely hangs over it when it ceases to burn. There is of course a slight change in the figure.—तस्योपरिष्टात्, On this Hemádri remarks: "उपर्युपरिष्टात्" Pânini, V. 3. 31. इति साधुः." Cháritravardhana has a curious note on this verse: "इह धूम इत्युक्त्या धूमकालिदास इति विख्यातिः." Dinakara too, as might be expected, has the same remark "इह धूम इत्युक्त्या लोके धूमकालिदास इति प्रसिद्धिः."—अंगारशेषस्य, analyse "अंगारो निर्धूतात्मकं शेषोऽवशिष्टं यस्य तथोक्तस्य."

P. 207. St. 44.—**लक्षितपूर्वकेतुं**, Cháritravardhana analyses: "पूर्वं प्रहारसमये लक्षिता लक्षितपूर्वास्तादृशाः केतवो येषां तांस्तथोक्तान् ," 'seeing first' *i. e.*, as soon as they saw their flags.—**यन्तृनुपालभ्य**, Hemádri says: "भवद्भिरयं पराभव आनीत इत्युपलभ्य &c."—**निवर्तिताश्वाः**, analyse "निवर्तिताः पश्चाद्वलिता अश्वास्तुरगा यैस्ते तथोक्ताः."

P. 208. St. 45.—**पूर्वार्धभागैः**, Hemádri analyses: "पूर्वे च ते अर्धभागाश्च तैः." —**हस्तवतां**, Hemádri explains: "प्रशस्तौ अभ्यासयुक्तौ हस्तौ येषां तेषां। प्रशंसायामतुप्," and Chàritravardhana interpretes it by "लघुहस्तानां." 'skilful,' 'dexterous'.—**शरव्यं संप्रापुः**, On this Châritravardhana gives the following note: "यदवाचि भगवता काश्यपेन। "नोदनायमिषोः [°मिषो Ms.] कर्म कर्मकारित्वाच्च संस्काराद्धतोत्तरकर्म इति."

P. 208. St. 46.—**क्षुराग्रैः** &c., Hemâdri, Vallabha and Sumativijaya read क्षुरप्रैः, where Hemádri supports it by quoting Dhana*n*jaya, "इषुकाण्डे क्षुरप्रे च" इति. Châritravardhana gives the substance of this verse in the following words: "कृत्तानि मस्तकानि यावद्भूमौ निपतन्ति तावत्प्रथमत एव श्येनैर्गृहीतानीत्यर्थः."—**श्येन**°, the Southern and the Deccan Mss. of Mallinàtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "पक्षी श्येनः" इत्यमरः।

P. 209. St. 47.—**अश्वसादी**, Cháritravardhana renders it by "अश्वारः." —**प्रत्याश्वसन्तमाचकाङ्क्ष**, Hemádri gives the following note on this: "यथा प्राणिति तथा आचकाङ्क्ष येन पुनर्युद्धं भवति," and Châritravardhana gives the substance of this verse in the following words: "जीवत्वयं वराक इति पुनर्मारयितुं नोत्सुकोऽभूदित्यर्थः", and Vallabha has: "यथा पुनरायोधनं भवति। युद्धधर्मोऽयं दर्शितः."

P. 209. St. 48.—**तनुत्यजाम्**, Hemádri explains as, "देहमुत्सृज्य गजैः सह योद्धॄणां." Vallabha notices the following reading "धर्मभृतां इति केचित्पठन्ति."

P. 209. St. 49.—**चषकोत्तरा**, 'Excelling or surpassing in drinking cups' *i. e.* abounding in drinking vessels.—**पानभूमिः** "is a place for drinking in." *Cf.* Cháritravardhana: "अन्यापि पानभूमिः फलाढ्या चषकयुक्ता मद्यवती च स्यात् ." See our note to 42. IV. *Cf.* Ràmáya*n*a Sundara Kà*n*da, Canto XIV.—**शिरस्त्रैः**, Hemâdri renders शिरस्त्रैः by "टोपैः"—**मृत्योः**, Hemádri quotes अमरशेष in support of his authority: "तपनात्मभवो मृत्युः."

P. 210. St. 50.—**उपान्तयोर्निष्कुषितं**, Hemâdri and Châritravardhana explain it to mean, "उपान्तयोः पार्श्वयोर्विहंगैर्गृध्राद्यैः पक्षिभिर्निष्कुषितं निःसारीकृतं," 'from the extremities of which the vultures had been tearing away the flesh." *Cf.* "काकैर्निष्कुषितं श्वभिः कवलितं गोमायुभिर्लुण्ठितं".—**पिशितप्रिया**, analyse "प्रियं पिशितं यस्याः सा । वा प्रियस्येति पूर्वनिपातः Hemâ-

dri.—**शिवा**, The Northern Mss. of Mallinátha's commentary produce the following authority instead of one given in our text : "शिवा झाटामलोषधी । अभयाऽमलकी गौरी क्रोष्ट्री सक्तुफलासु च " इति विश्वः । " शिवः कीलः शिवः क्रोष्टा भवेदामलकी शिवा" इत्यनेकार्थध्वनिमञ्जरी ।—**भुजच्छेदमपाचकार** &c., Châritravardhana gives the substance of this in the following words: विहंगैर्गृहीतसारत्वात्केयूरधारया क्षततालुत्वाच मांसलोलुपापि शिवा भुजखण्डं तत्याजेत्यर्थः. " Greedly of flesh, the female jackal wrested from the vultures the severed piece of arm, which they had been tearing, but being wounded in the palate, in the act of devouring it, threw it away.

P. 210. St. 51.—**वामाङ्गसंसक्तसुराङ्गनः**, On this Hemádri has the following : " चतुर्वर्गचिंतामणौ व्रतखण्डे वह्निपुराणात् । वराप्सरःसहस्राणि शूर- [भूप- Ms.] मायोधने हतं । त्वरितान्यभिधावन्ति [उपधावन्ति Ms.] मम भर्ता ममेति [भर्तायमेति Ms.] च" इति, and Chàritravardhana has the following: " पुरुषस्य वामप्रदेशे स्त्रीस्थितिरिति वृद्धाचारः."—**कबन्धं ददर्श**, On this Châritravardhana gives the following note : "यत्र रणे वीराणां सहस्रं पतति तत्रैव कबन्धो नृत्यतीत्यागमः । उक्तं च । " अन्यात्मनो विनाशं न परः परव्यसनहृष्टः । प्रायः सहस्रनाशे समरमुखे नृत्यति कबन्धं " इति । एतेनात्र तादृशं युद्धमजनिष्टेति व्यज्यते. " *Cf.* also " मनुष्याणां सहस्रेषु हतेषु हतमूर्धसु । तदावेशात्कबन्धस्यादेको ऽमूर्धा क्रियान्वितः."

P. 210. St. 52.—**अन्योन्य**. Warriors were all versed in every kind of fighting. *Cf.* Vallabha : " अत्राप्यखिलयुद्धवेदित्वमुक्तं, " and Hemádri has : "अखिलायुधवेदितोक्तिः."—**तावेव सूतौ अभूतां**, On this Hemâdri observes " स्वरथचोदनात् । युद्धायोभयरूपत्वं. "—**बाहुविमर्दनिष्ठौ**, Hemádri renders निष्ठा by " अवसान. " The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " निष्ठा निष्पत्तिनाशान्ता " इत्यमरः ।

P. 211. St. 53.—**एकाप्सरःप्रार्थितयोः**, It should be supposed here that the heavenly nymphs do not choose two lovers at one and the same time. Kálidâsa means that as both the heroes died at the same moment, the celestial damsel who was watching them while engaged in fighting in the battle-field, did not know which of the heroes she should choose for herself, and so she offered to choose both, or perhaps, which is a little better, hesitated in her choice now accepting the one and now the other : whence arose the dispute. Mallinátha's interpretation appears objectionable on the ground that the hero, who dies and assuming a divine form enters the Svarga, has not to seek for the heavenly damsels, but these of their own free will come forward to receive him as their lover.

Chāritravardhana says : " यत एकस्यामप्सरस्सु प्रार्थितं यावा ययोरेकयाप्सरोभिः प्रार्थितयोर्वा । यस्तु संग्रामे हन्यते स्वर्गगामिनं देवत्वमुपगतं तमनुग्रहीतुमप्सरसः समायान्ति । इह तु समकालं मरणमुपगतयोरेकस्यामेव समायातायां देवाङ्गनायां कामुकयोरनयो रणमभूदित्यर्थः । " स्त्रियां बहुष्वप्सरसः " इति क्षीरस्वामी प्रत्यूचे । प्रायिकमेतत् । तथा च । " काचिदप्सरा भूत्वा प्राञ्जलिर्व्यजिज्ञपत् " इति दशकुमारे । कुत्रापि । " आपः सुमनसो वर्षा अप्सरः सिकताः समाः । एते स्त्रियां बहुत्वेस्युरेकत्वेऽप्युत्तरत्रयं " इति. And Hemâdri says : " एकया अप्सरसा प्रार्थितयोः । यद्वा । प्रार्थितकाप्सरसोः । " वाहिताग्न्यादिषु " Pâ*n*ini, II. 2. 37; इति परनिपातः । " स्त्रियां बहुष्वप्सरसः " । एकस्यामपि बहुवचनमस्तीति ज्ञापयितुं बहुष्वित्युक्तं । न नियमार्थं । अप्सरा इत्येकवचनान्तस्यापि प्रयोगदर्शनादिति सुबोधिनीकारः । यथा नलोदये । " तुल्येऽप्सरसा देहि प्रभवो मग्नाप्सरः [मग्नाः स्मर-Ms.] प्रसरसा देहि । तानभिसरसा देहि स्रजं च नाकात्सुखं च सरसा देहि " इति (one of the three Mss. of Hemâdri's Darpa*n*a omits the 2nd line of this verse) । एकवचनान्तोऽप्यस्तीति क्षीरस्वामी । नाविराजश्चैतदेव मनसि निधायाह । तथा प्रतापमार्तण्ड इति । " स्त्रियामप्सरसः स्वर्गगणिकामेनकादयः " इति तूष्णीमुक्तवान्नबहुष्विति । " अप्सरसस्त्वप्सरा प्रोक्ता " इति शब्दभेदप्रकाशेऽपि । तथा । " आपः सुमनसो वर्षा अप्सरःसिकताः समाः । एते स्त्रियां बहुत्वेस्युरेकत्वेप्युत्तरत्रिकं [त्रयं Ms.]. "

P. 211. St. 54.—**मारुतयोः**, On this Châritravardhana observes: "द्वन्द्वान्ते श्रूयमाणः शब्दः प्रत्येकमभिसंबध्यते इति न्यायान्मारुतशब्दस्योभयत्र प्रवृत्तिः," and Sumativijaya remarks : " यदा प्रतीच्यो वायुर्वर्धते तदा वीचिकल्लोलाः प्रेर्यन्ते यदा च पौरस्त्यो वायुर्वर्धते तदा प्रतीच्या भंगं प्राप्नुवन्तीति भावः."—**अव्यवस्थं**, Vallabha explains as " धर्मव्यवस्थारहितं । " यतो धर्मस्ततो जयः " । इति धर्मव्यवस्था. "

P. 212. St. 55.—**कक्षः**, On this epithet Hemâdri remarks : " सैन्यस्य तृणसामान्येनाजस्य महाशक्तितोक्ता," and Châritravardhana renders it by " तृणकाष्ठादिसमूहः, " and has the following : " यथाग्नेः कक्षोज्ज्वालने निरायासता तथा कुमारस्य वैरिसेनायामित्यर्थः, " and Sumativijaya gives the substance in the following words: " वह्निसदृशोऽजः शत्रुकक्षं त्यक्त्वा न क्वापि यातीति भावः."—**परेण**, Châritravardhana observes : " इति जातावेकवचनं."

P. 212. St. 56.—**धनुष्मान्**, 'wielding a bow,' *i. e.* a bowman. Explain प्रशस्तं धनुरस्यास्तीति धनुष्मान् . —**एकवीरः**, On this Hemâdri holds the following discussion : "पूर्वापरप्रथमचरमजघन्य &c." Pá*n*ini, II. 1. 58. इति कर्मधारयः । " राजदन्तादिषु परम् " Pâ*n*ini, II. 2. 31. इति परनिपातः । " पूर्वकालैकसर्व &c. " Pâ*n*ini, II. 1. 49. इति समासः । इति केचित् । तत्र । विप्रतिषेधत्वात्. " On these epithets Hemádri remarks : " एभिर्विशेषणैः सावधानतोच्यते. "—**महावराहः**, the story related in the Bhâgavata Purá*n*a is different from that here alluded to. There the waters do not rise. Bhag. III, 18. Also St. 3. Adh. 13. St. 46.

P. 212. St. 57.—दक्षिणं हस्तं &c. The interpretation of the first half of this verse as given by Hemádri, Cháritravardhana, Vallabha, Dinakara, Sumativijaya, Dharmameru and Vijayagaṇi certainly seems to be more logical than that of Mallinátha, since, it agrees so well with the second half. All of them read " स दक्षिणं तूणमुखे न वामं &c.," and Hemádri explains " सोऽजः आजौ रणे दक्षिणं वामं च हस्तं तूणमुखे निषङ्गवक्त्रे व्यापारयन्नालक्ष्यत अदृश्यत. " Châritravardhana too explains in very much the same way, when he says: " स आजौ संग्रामे दक्षिणं हस्तं व्यापारयन्नालक्ष्यत न दृष्टः । न च वामं प्रसारयन् दृष्टः." And Vallabha says: "सोऽजः आजौ संग्रामे दक्षिणं वामं च हस्तं तूणमुखे निषङ्गवदने व्यापारयन्प्रसारयन्नालक्ष्यत नादृश्यत." It is not necessary, however, to understand, as does Châritravardhana with Vallabha, Sumativijaya, Dinakara and others, "प्रसारयन्" as a participle to govern "वामं हस्तं." The construction may be arranged in the following way: " दक्षिणं हस्तं तूणमुखे व्यापारयन्नालक्ष्यत । वामं हस्तं च तूणीरमुखे व्यापारयन्नालक्ष्यत. " The prince was seen putting neither the right nor the left hand into the mouth of the arrow-case, so great was his activity ; the arrows that shot forth from his bow were not taken out from the quiver and put to the bow-string, but his bow itself seemed to produce and discharge the arrows. The quiver being hung on the back with its broad mouth reaching the shoulders, its contents could be taken out as well by the right as by the left hand. Moreover the instrumental तूणीरमुखेन must go against Mallinâtha's explanation. And also it is not certain that Kâlidâsa would use the word " वामं " in a sense that is likely to be misunderstood. And the word is not generally used in a sense that it would seem to bear when found in a phrase like the present.—सकृदाकर्णकृष्टा मौर्वी, though in point of fact the bow-string was drawn tight up to the car each time that arrows were taken out from the quiver. It is next to certainty that the reading of the first half of the stanza *was* the oldest and the original reading of Kálidâsa and not that commented upon by Mallinátha.—बाणान्सुषुवे, On this Cháritrávardhana remarks: " किं तूणीराद्बाणानादत्त उत धनुराकृष्य मुञ्चतीति हस्तलाघवं दृढप्रहारत्वं चोक्तं. "

P. 213. St. 58.—व्यस्तौर्ध्वरेखा, On this epithet Cháritravardhana has the following : " अनेन छिन्नमस्तकरेखात्रयं संपद्यते इत्युक्तं. "—भल्ल°, A kind of crescent-shaped arrow or missile, generally made of steel.

P. 213. St. 59.—तस्मिन्प्रजह्रुः, Cháritravardhana explains it as : " तमजं प्रहृतवन्तः इत्यर्थः । कर्मण एवाधारविवक्षायां सप्तमी. " See also commentary. Hemádri explains exactly like Mallinátha.

P. 214. St. 61.—**अधिराजसूनुः**, Hemâdri explains : " अधिकं राजते इति अधिराजो रघुस्तस्य सूनुः। अथवा अधिकश्चासौ राजा च तस्य सूनुः."—**स्वप्ननिवृत्तलौल्यः**, Hemâdri analyses : " स्वप्नेऽपि निवृत्तं लौल्यं यस्य सः. " Here Vallabha observes : " परान्सुस्वापयितापि स्वयं विगतनिद्रः. "

P. 214. St. 62.—**ततः**, Hemâdri renders this by : " अस्त्रसामर्थ्यात्. " On this stanza Châritravardhana remarks: " एभिर्विशेषणैर्निद्रितजातिकथनं. "

P. 215. St. 63.—**प्रियोपात्तरसे**, On this Hemâdri gives the following note : " इति शृङ्गारिस्वोक्तिः । " ऊर्ध्वं त्रिरात्रमथवा द्वादशाहं भवेद्व्रती " इति ब्रह्मचर्यविधानाद्विशेषतोऽप्रगल्भया नवोढया कुतोऽधरपानं । अत्राभूतमप्यधरपानं भूतत्वेन विवक्षितं । यथा । " वृष्टश्चेद्देवः संपन्नाः शालयः " इति । यद्वा । अन्या भूतपूर्वा प्रिया ज्ञेया, " and Châritravardhana gives the following : " एतेन अनुरागातिशयः सूचितः। " विवाहानन्तरं द्वादशरात्रमन्ततः " इति वचनं। त्रिरात्रानन्तरमपि रतसंभवात्प्रियोपात्तरसेति युज्यते। ननु नूतनपरिणीतायाः कथं स्वयमधरपानं संभवेत् । उच्यते । चिरकालाभिकांक्षितकान्तनवसंमोहनरसनिमग्नतया विगतलज्जत्वात्स्वयंवरेण प्राप्तप्रौढित्वाच्च कोककामन्दप्रमुखकन्दर्पशास्त्रप्रावीण्याच्च नवपरिणीताया अपि युक्तं, " and Vallabha has : " प्रियोपात्तरसे कान्तात्तसारे । नन्वासन्नविवाहविधानात्कुतोऽधरपानं। त्र्यहं सप्तरात्रं वा ब्रह्मचर्यमुक्तं। अनुरागातिशयात्कथितं। यथा यदा वृष्टिस्तदैव संपन्नाः शालयः । भाविनि भूतवदुपचारः । अथवा । विजयचिह्नयुक्तमुखत्वेनाधररसः पीत एव भवति। यदि वा। अन्या काचिद्भूतपूर्वा प्रिया तत्प्रियोपात्तरसे। " These commentators have given various interpretations of the epithet, but it is not clear what is the propriety of this adjective here. It may be that the lip that was thought worthy of a kiss by such a fascinating maiden as Indumati should be too delicate to blow the conch. It cannot also be imagined that the victorious prince, after he saw his enemies lulled to sleep by the संमोहन missile, hastily went and kissed his wife and then blew the conch, because that would not agree well with her natural maidenly bashfulness that is described below, much less can it be supposed that she came up of her own accord and received the prince with a kiss. —**जलजं दध्मौ**, On this Châritravardhana observes : " एतेन वीरजातिः, " and further he says : " शङ्खधमनं श्वेतत्वाद्यशःपानोत्प्रेक्षा युक्ता. "—**पिबन्यशः**, A proverbial saying.

P. 215. St. 64.—**तं सन्नशत्रुं ददृशुः स्वयोधाः**, Mark the use of स्व here, which though a reflexive pronominal adjective is nevertheless not so reflexive in its character. The poet would, however, have used the word more in conformity to its sense, if he had said, " स सन्नशत्रुर्ददृशे स्वयोधैः." Hemâdri interpretes सन्नशत्रुं by " नष्टरिपुं."—**पङ्कजानां**, is equivalent to सरसि स्थितानां.

P. 215. St. 65.—यशो हृतं, &c., A proverbial saying.—राघवेण, On this Chāritravardhana remarks : "राघवपदेनाभिजात्यान्कृतावत्वं."

P. 216. St. 66.—चापकोटीनिहितैकबाहुः, On this Chāritravardhana observes : "इति धनुर्धरजातिः."—भिन्नमौलिः, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinātha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss., "चूडाकिरीटं केशाश्च संयता मौलयस्त्रयः" इत्यमरः।—वचो बभाषे, On this Hemādri observes: "संक्षेपानादर इति वचोग्रहणं। तथा दण्डी। "अलंकृतमसंक्षिप्तं [न संक्षिप्तं Ms.]," and Chāritravardhana has : "इति पौनरुक्त्यः."

P. 216. St. 67.—वैदर्भि पश्यानुमतासि, Cf. Chāritravardhana : "भो वैदर्भि इन्दुमति...पराञ्शत्रून्पश्य विलोकय । परपुरुषान्कथमहं पश्यामीत्यताह । मया त्वमनुमतानुज्ञातासि । मदनुज्ञया विलोकयेत्यर्थः." And Hemādri has : "हे वैदर्भि पराञ्शत्रून्पश्य । अननुज्ञाता कथमन्यान्पुरुषान्पश्यामीति चेन्मया त्वमनुमतास्यनुज्ञातासि." Sumativijaya has very much the same. Since मयानुमतासि does not appear capable of bearing any other sense than that given by these commentators, it may be inferred that in the time of our poet there prevailed, as does now, the notion that women should not see the faces of other persons than their husbands.—हस्तगता, Chāritravardhana remarks : "हस्तगता इति लोकोक्तिः। अग्रे किमेते करिष्यन्तीति तात्पर्यार्थः." A proverbial saying.

P. 217. St. 69.—मयूरकेकाभिः, On this Hemādri remarks: केकाग्रहणे सिद्धे मयूरग्रहणं प्रशंसार्थं । लोभद्रुमवत्." And Chāritravardhana and Sumativijaya have the following: "यद्यपि केकाशब्देनैव मयूरध्वनिर्लभ्यते तथापि मयूरशब्दस्य कोकिलभादिवदुक्तिपोषकत्वान्न दोषोऽत्र."

P. 217. St. 70.—इति शिरसि वामं पादमाधाय, A proverbial saying. इति is not to be understood as referring to only what Aja did after he left the capital of the Vidarbhas and during the action between him and the other kings, but generally to every thing that he did including his victory over them; and so वामपादं शिरस्याधाय should not be taken literally but only in the sense of 'having completely defeated.' Chāritravardhana, Sumativijaya and Dinakara in vain attempt to justify the use of उदवहत् in this verse, taking as they do the first line to refer simply to Aja's victory over the kings in the battle. Chāritravardhana and Sumativijaya say "ननु विवाहस्य पूर्वमेव निष्पन्नत्वात्कथमिदानीमुदवहदिति प्रयोग । कथ्यते अन्यर्थबलाद्विवारविजयात्संप्रतमिवेन्दुमतिलाभाद्विवाहोऽभवत । यदि तान्प्रत्यर्थिनो नाजेष्यत् । तदा तैरिन्दुमत्यपहारे कृते करग्रहणमप्यकृतमेव भवेदिति."

P. 218. St. 71.—सुतन्यस्तकुटुम्ब:, 'who has transferred the responsibility of the family (*i. e.* kingdom) on his son, ' *i. e.* the responsibility of Government. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced under स्मरण by the Northern Mss. "सुतविन्यस्तपत्नीकः" इति याज्ञवल्क्यस्मरणात्.—कुलधुर्ये, The epithet कुलधुर्य means 'a son who is able to support his family &c. '—The figure, according to Hemádri, is अर्थान्तरन्यास.

CANTO VIII.

P. 219. St. 1.—**विवाहकौतुकं बिभ्रत एव तस्य,** Hemâdri renders वि-वाहकौतुक by "विवाहसूत्र" or हर्ष, and Vallabha by "मङ्गलकङ्कण" and Châritravardhana and Sumativijaya explain it by "कङ्कणसूत्र". कौतुक is the name of the thread-ring worn by the bride-groom round the wrist before the beginning of the marriage ceremony. *Cf.* आश्वलायनगृह्यपरिशिष्ट, Bib. Ind. series, p. 287. "अथ वधूवरौ स्वशेखरपुष्पं क्षीरघृतेनाभ्यज्य परस्परतिलकं कुरुतः कण्ठे स्रजश्चामुञ्चतः कौतुकसूत्रं च करे बध्नीयाताम्." *Cf.* also Nârâyana Bhatta's प्रयोगरत्न under कौतुकविधिः, Poona, edi. p. 23. No express injunctions are prescribed as to the number of days that it should be worn after the marriage ceremony. It is generally taken away after the third day since the celebration of marriage. It might, however, be worn for three or twelve days or even for a year, which is the longest term prescribed for the married couple to observe ब्रह्मचर्य or celebacy after the marriage rite. *Cf* As'valâyana Grihya Sûtra, I, Adh. 8, Kandikâ, 10, 11, 12. "अक्षारालवणाशिनौ ब्रह्मचारिणावलंकुर्वाणावधःशायिनौ स्याताम्" ॥ १० ॥ "अत ऊर्ध्वं त्रिरात्रं द्वादशरात्रं" ॥११॥ "संवत्सरं वैक ऋषिर्जायत इति" ॥ १२ ॥ 'From that time they should eat no saline food, they should be chaste, wear ornaments, sleep on the ground three nights or twelve nights;' 'or one year, (according to) some (teachers); thus, they say, a *Ri*shi will be born (as their son)'. In the present verse विवाहकौतुकं बिभ्रत एव is simply meant to denote that the prince was invested with the administrative power of his father's empire almost immediately after his marriage with the Bhoja princess. *Cf.* Hemâdri, Châritravardhana and Sumativijaya: 'राज्यं तमभ्यषिञ्चदित्यर्थः."—**अपराम्,** On this epithet Hemâdri remarks: "इति अनन्यसाधारणत्वेन सार्वभौमिकत्वं सूचितं," and Châritravardhana has, "अनेन साधारणभोग्यत्वमुक्तं."

P. 219. St. 2.—**दुरितैरपि,** Hemâdri remarks:—"अपिशब्दो निषिद्धसूचकः."—**आत्मसात्कर्तुं प्रयतन्ते,** A proverbial saying. On this Hemâdri quotes the following from Kâmandaka: "राजपुत्रा मदोद्वृत्ता गजा इव निरंकुशाः । भ्रातरं पितरं वापि निघ्नन्त्येवाभिमानिनः [भ्रातरं वापि निघ्नन्ति पितरं वाभिमानिनः Ms.]." — **हि,** On this particle Hemâdri remarks: "हिशब्दः प्रातिकूल्येऽत्र". प्रातिकूल्येन प्रयतन्ते इति भावः । "हि च," Pânini, VIII. 1. 34. प्रातिलोम्यवाचकत्वं दृष्टं "अङ्गाप्रातिलोम्ये," Pânini, VIII. 1. 33. इत्यतः । हि निश्चये वा.

P. 219. St 3.—**सहाभिषेचनं,** Châritravardhana reads महाऽभिषेचनं and explains thus:—"महाऽभिषेचनं राज्याभिषेकं &c." Two other Mss. of

his शिशुहितैषिणी read महाभिषेचनं. Dinakara also reads the same. See readings.—**विशदोच्छ्वसितेन**, On this both Hemâdri and Chá-ritravardhana have the following note :—" अन्यापि स्त्री प्रियसंगममनुभूयो-च्छ्वसितेन संभोगनिर्वृतिं कथयति, " and " अन्यापि रमणीभर्तृसंगममनुभूयानन्दजोच्छ्व-सितेन संभोगनिर्वृतिं कथयति. "—**कृतार्थतां कथयामास**, On this Hemàdri observes : " दिलीपे रघौ च सति कृतार्था परं तु तस्योत्कृष्टताभिहिता," and Chàritravardhana has : " एतेन पूर्वेभ्यो नृपेभ्योऽस्य महत्त्वमुक्तं." And Sumativijaya remarks : " वशिष्ठमंत्रजलाभिषेके क्रियमाणे मही सिक्ता सती उच्छ्वसितच्छ-लेन कृतार्था जातेवेति भावः."

P. 220. St. 4.—**अथर्वविदा गुरुणा**, The following verses illustrate the coronation ceremony of a king. They are, " शतच्छिद्रेण पात्रेण सौ-वर्णेन यथाविधि । अभिषिञ्चेत धर्मज्ञः सम्यग्वेदविशारदः ॥ या ओषधीरोषधिभिः शृता-भिः सुसमाहिताः । रथे तिष्ठेति गन्धश्च आब्रह्मन् ब्राह्मणेति च ॥ बीजैः पुष्पैस्तथासीमं रा-मपुष्पवतीति च । तेनैव चैव मंत्रेण फलैस्तमभिषेचयेत् ॥ आशुः शिशान इत्येवं सर्वरत्नैश्च भार्गव । ये देवाः पुरःसदेति कुशाद्भिः परिमार्जयेत् ॥ ऋग्वेदवित्ततो राज्ञो रोचनया यथा-विधि । मूर्द्धानं च तथा कण्ठं गन्धद्वारेति संस्पृशेत् " ॥ And further, " ध्रुवाद्यौरिति मंत्रेण सोऽपवेश्यः पुरोधसा । वृषस्य वृषदंशस्य द्वीपिनश्च मृगद्रुह ॥ तेषामुपरि सिंहस्य व्याघ्रस्य च ततः परं । तत्रोपविष्टस्य तदा प्रतीहारः प्रदर्शयेत् ॥ " See Devî Purâ*n*a under Abhisheka. After the necessary performance of sacrificial rites connected with the coronation ceremony and of a number of others accessory and subordinate to these, verses from *Rik* and Atharva are chanted, which pray for a long life to the newly crowned king, solicit prosperity to his kingdom and finally pray for his safety, invincibility and freedom from danger and calamities. The verses bearing upon the last begin with यः सपत्नो योऽसपत्नो यश्च द्विषच्छपाति नः देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु. ' Whoever, whether friend or foe or whether a hater, surpasses us, may all the gods destroy him. ' See Ràjanîtimayûkha, Rájàbhishekaprayoga, by Nilakan*th*abhat*t*a son of S'ankarabhat*t*a.

P. 220. St. 5. Some of the Mss. of Mallinátha's commentary read नवेश्वरं for नरेश्वरं. This reading appears better when viewed with निवृत्तयौवनं.—**गुणान्प्रतिपेदे**, On this Hemàdri remarks : " तथा हि । " प्रोक्षितायां व्रजत्यस्तं प्रजाधर्मो यशःसुखं । निवृत्तं च निवृत्तायां महाबन्धुं [महाबन्धुः Ms.] कुलांगना " इति ? And Chàritravardhana and Sumativijaya have the following : " यथा प्रजा रघौ प्रीतिमत्योऽभूवन् तथाजेऽपि आसन्निति तात्पर्यार्थः."

P. 221. St. 6.—**द्वयमेव**, Here Hemâdri remarks: " **एवकारस्तु शुभंयु-**विशेषणमाक्रष्टुं । यथा । विदुषा देवदत्तेन यज्ञदत्त एव संगत इति यज्ञदत्तस्यापि विद्वत्ता प्रतीयते । अन्ययोगव्यवच्छेदार्थो वा । नैवेत्यन्यः," and **Cháritravardhana has the**

following : " विनयेन नीत्या अस्यैवाजस्य नवं नूतनं च यौवनं । यौवने विनयस्तु दुर्लभः । असौ तु प्राप्तविभवो यौवनेऽपि विनयवानभूत्." And Sumativijaya has : " प्राप्तराज्यलक्ष्मीकोऽप्यजो विनयवान्." The force of एव is, that no union of two other things ever appeared so charming as that of Raghu's empire with Aja, except the union of his (Aja's) youth with his virtue : or *vice versá*, no union of two other things appeared so charming as that of Aja's youth with his virtue, except the union of his sire's empire with himself.—**शुभंयु**, On this Hemâdri holds the following discussion : " शुभं विद्यते यस्य तत्," and after giving the aphorism of Pánini he further remarks, " अनुनासिकाभावात् " युवोरनाकौ," Pânini, VII, 1. 1. इति न भवति। तत्राह पदमञ्जरीकारः। इदितोर्युवोर्ग्रहणादस्योदित्वं नास्तीति कृत्वा तत्रापि दूषणं । नन्दनेत्यत्र ङीप् प्राप्नोति । अयमेव सिद्धान्त अनुनासिक इति." And Vallabha quotes the following': " अहंयु स्यादहंकारी शुभंयुः शुभयुक्तवान् ".

P. 221. St. 7.—**बुभुजे**, On this Hemâdri remarks : " इति भूमिजपदार्थोपभोग [°योग Ms.] विवक्षया [विवक्षायां Ms.] अनवन इति निषेधाभावात्तङ् । यथा । " इह हि भुवनान्यन्ये धीराश्चतुर्दश भुञ्जते " इति भर्तृहरिः. " Vallabha has the same remark with the same quotation. "भुजोऽनवने, " Pánini, I. 3. 66. 'After the verb भुज्, the Atmanepada is used, except in the sense of protecting, *i. e.* the root भुज् when it does not mean to protect is Atmanepadi. This root (7. P. A.) has several meanings, as, 'to feed,' 'to cherish,' 'to preserve,' 'to eat' and 'to enjoy.' As भुंक्ते 'He eats or enjoys,' but पुत्रान् भुनक्ति पिता. The father cherishes the sons.' The root भुज् also belongs to the 6. P., as, विभुजति पाणिं 'He bends the hand.'—**महाभुजः**, 'Although powerful.' On this Hemâdri remarks : " इति सम्राड्लक्षणं तारुण्यं चोक्तं. "—**वधूमिव**, Here Hemâdri and Châritravardhana quote : " मुग्धामर्जयन्त्येष मृदूपायेन सान्त्वयन् " इति रुद्रटः। रतिरहस्येऽपि । " सौम्यैरालिंगनैर्वाक्यैश्चुम्बनैश्चापि सान्त्वयेत् " इति.

P. 221. St. 8.—**प्रकृतिषु**, Châritravardhana and Sumativijaya render it by " अमात्यादिषु, " but Hemâdri agrees in his explanation with Mallinâtha.—**निम्नगाशतेषु**, Here Hemâdri rightly observes : " नदीषु सिन्धोः समवर्तित्वं प्रसिद्धं." —**महीपतेर्मतः**, On this Châritravardhana has the following note : "अयं ममायत्त इति युक्ता सर्वस्य लोकस्य प्रियमतिरासीदिति भावः इति. See Apte's Guide, 115. P. 82. *Third edi.*

P. 221. St. 9.—**न खरो**, Here both Hemâdri and Châritravardhana quote the following from Bhârata : "तीक्ष्णादुद्विजते लोको मृदुः सर्वत्र बाध्यते। एवं बुध्वा महाराज मा तीक्ष्णो मा मृदुर्भव " इति. *Cf.* Mu. III. 5. "तीक्ष्णादुद्विजते मृदौ परिभवत्रासान्न संतिष्ठते " &c. Vallabha also quotes the same

with a slight difference. He says: "उक्तं च । मृदुमप्यवमन्यन्ते तीक्ष्णादुद्विजते जनः (?) । एवं ज्ञात्वा महाराज मा तीक्ष्णो मा मृदुर्भव. "—पुरस्कृतमध्यमक्रमः, Châritravardhana analyses : "पुरस्कृतोऽङ्गीकृतो मध्यमः ईषत्तीव्रत्वमृदुत्वरूपः क्रमो येन सः." Compare also Mv. I. 8. "अचिराधिष्ठितराज्यः शत्रुः प्रकृतिष्वरूढमूलत्वात् । नवसंरोहणशिथिलस्तरुरिव सुकरः समुद्धर्तुं ॥

P. 222. St. 10.—प्रकृतिषु, Châritravardhana, Sumativijaya and the northern Mss. of Mallinâtha's commentary also render the epithet by "प्रजासु वा".—प्रकृतिष्वात्मजं प्रतिष्ठितं A proverbial saying.

P. 223. St. 11.—गुणवत्सुतरोपितश्रियः. Châritravardhana explains: "गुणाः शौर्यधैर्यादय आभिगामिका वा ते विद्यन्ते येषां ते गुणवन्तस्तेषु सुतेषु." —पदवीं, Châritravardhana renders it by "वनाश्रमं," and Hemâdri by "मार्गं," and further the latter observes : "वानप्रस्थो जटिलश्चीराजिनवासा इत्यत्र चीरं वस्त्रखण्डो वल्कलं वेति विज्ञानेश्वरः." For a similar idea compare R. III. 70, XIX. 1, Uttar. I. 22. पुत्रसंक्रान्त लक्ष्मीकैर्यद्वृद्धेक्ष्वाकुभिर्धृतं । धृतं बाल्ये तदार्येण पुण्यमारण्यकं व्रतं ॥—पदवीं प्रपेदिरे, A proverbial saying.

P. 223. St. 12.—अरण्यसमाश्रयोन्मुखं, On this Hemâdri quotes the following from Manu: "गृहस्थस्तु यदा पश्येद्वलीपलितमात्मनः । सापत्यो निरपत्यो वा तदारण्यं समाश्रयेत्" इति—शिरसा वेष्टनशोभिना, Here Hemâdri gives the following note: "तेन पट्टबन्धेन चाभिषेको लक्ष्यते । उष्णीषं वेष्टनं च पादयोः केशस्पर्शनं माभूदिति वा । and further analyses शिरसा अवेष्टनशोभिना इत्यकारप्रश्लेषो वा । उष्णीषं त्यक्त्वा ननामेत्यर्थः." And Châritravardhana has the following : "वेष्टनेनोष्णीषेण शोभत इति वेष्टनशोभि तेन वेष्टनशोभिना मुनेस्तस्य पादयोः केशमाल्यादिसंस्पर्शपरिहारोक्तिः."

P. 223. St. 13.—आत्मजप्रियः, Châritravardhana analyses : "प्रियोऽभीष्ट आत्मजः पुत्रो यस्य सः," and Hemâdri quotes the following Vârtika : "वा प्रियस्य" इति परनिपातः. —न प्रतिपेदे, On this Hemâdri remarks : "तत्रौदासीन्येन स्थित इत्यर्थः."

P. 223. St. 14.—अविकृतेन्द्रियः, On this epithet Hemâdri remarks : "इति निरभिलाषता." And Châritravardhana has : "श्रियं परित्यज्यौदासीन्येन तत्र स्थित इत्यर्थः." "And Vallabha observes : "यतोऽसौ यतिस्ततो यमनियमाद्यष्टाङ्गयोगयुक्तः."

P. 224. St. 15.—तुलां समारुरोह, A proverbial saying. Here Châritravardhana quoting, like Mallinâtha, the aphorism of Pânini, also gives the following : "तुल्यार्थैः" इत्यत्र तुल्यार्थकस्य तुलाशब्दस्य योगे तृतीया निषिद्धत्वादत्र तुलाशब्दस्य मानवाचकत्वान्न दोषपोषः । सदृशवाचकं योगे निषेधः । 'सदृवाचिनः प्रयोग इष्यत एव' भोजस्त्वाह । वल्लभस्तु सहार्थे इत्याह । "वृद्धो यूना" Pânini, I. 2. 65. इति सहप्रयोगेऽपि ज्ञापितत्वात्." Translate the aphorism :—

'The word Vriddha (or patronymic Gotra word) becomes एकशेष, and is retained, when compounded with a patronymic word called युवन्, provided that the specific difference in form between them be in their signs (affix) only.' And Hemâdri has "तुल्यार्थैः" इति तुल्यशब्दनिर्देशात् सहार्थे तृतीया । किं तु "तुल्यार्थे षष्ठी च" इत्युक्तं नन्वतुलोपमाभ्यामिति." Cf. R. XIX. 50. In commenting upon the 69th stanza of the 15th canto, Châritravardhana too alludes to the names of दक्षिणावर्त and विस्तरकार. Is this विस्तरकार or विस्तरकृत्, a commentator or author of a grammatical work? Or is विस्तर a work on grammar?

P. 225. St. 16.—**यतिपार्थिवलिङ्गधारिणौ**, The emblems of royalty are: the Sceptre, the Chámara, the Fan, the Conch, the white umbrella, the crown, the throne &c., &c., and those of a recluse or Yati: the staff, the कमण्डलु, the कौपीन, the red garments, want of the usual crown-hair and of the Brahmanical thread. *Cf.* Hemâdri: "जितेन्द्रियत्वेनात्र यतिशब्दप्रयोगः."—**धर्मयोः**, On this Hemádri and Châritravardhana remark: "धर्मादेव मोक्षोऽर्थश्चेति प्रसिद्धं." And further Hemádri observes: "धर्मो हि द्विविधः । प्रवर्तको निवर्तकश्च । यदाह कणादः [कात्यायनः Ms.] । 'यतोऽभ्युदयो निःश्रेयसहेतुः स धर्मः इति.' Hemâdri appears to have quoted this Vais'eshika Sûtra from memory: the words अभ्युदयो and हेतुः are not found in the Sútra. And Châritravardhana has: "तत्र धर्मोऽपि द्विविधः । प्रवर्तको निवर्तकश्चेति । यदाह कणभक्षः । "यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः" इति । 'Merit is that from which result attainment of elevation and of the highest good.' And further he discusses, ननु "आत्मन्यग्नीन् समाधाय ब्राह्मणः प्रव्रजेद्वनात्" इति वाक्यतो ब्राह्मणस्यैव संन्यासकथना कथमिह यतिचिह्नधारित्वं । अत्र समाधीयते । "मुखजानामयं धर्मो यद्विष्णोर्लिङ्गधारणं । बाहुजातोरुजातानां नैव धर्मः सनातनः" इति प्रकाशनाय ब्राह्मण इत्युपलक्षणं वा । ब्राह्मणस्यैव किं वा संन्यास इति यन्या विरुद्धयते । "लिंगसंन्यासरहितं प्रमाणं नावकल्पते" इति सुरेश्वराचार्यैः संन्यासे त्रैवर्णिकाधिकारस्य दर्शितत्वाद्द्वयोरपि."

P. 225. St. 17.—**नीतिविशारदैः**, 'Well versed in political science.'—**अजिताधिगमाय**, On this Châritravardhana observes "अजितानां शत्रूणामधिगमाय वशमानेतुमभिमुखप्रस्थानार्थं ज्ञानार्थं वा."—**अनपायिपदोपलब्धये**, Châritravardhana explains: "अनपायिपदमात्मसाक्षात्कारं तस्मातै."—**रघुराघवौ**, On this Hemádri observes: "यद्यपि रघुः पूर्वमुक्तान्तस्तथापि प्राधान्यादादौ अजव्यापारवर्णनं । रघुस्तु प्रासंगिकः । अल्पाच्तरत्वाद्रघुशब्दस्य पूर्वनिपातः."

P. 226. St. 18—**व्यवहारासनमाददे**, On this Hemádri gives the following note: "व्यवहारान्नृपः पश्येत्" इति धर्मशास्त्रोक्तौ । "विना नार्थेन संदेहहरणं हार उच्यते । नानासंदेहहरणाद्व्यवहारः प्रकीर्तितः" इति. And Châritravardhana has:—"उक्तं च याज्ञवल्क्येन" । "व्यवहारान्नृपः पश्येत्" इति । यदि राजा

प्रजानां कार्यार्थिनानां व्यवहारान्नावलोकयेत्तर्हि मात्स्यन्यायवत् बलवताऽबलो बाध्येत." —**धारणां**, Hemádri explains it by: "योगशास्त्रनिर्दिष्टां धारणां योगविशेषं। धारणालक्षणं विज्ञानेश्वरेणोक्तं। " संभ्राम्य छोटिकां दद्यात्कराग्रं जानुमण्डले। मात्राभिः पंचदशभिः प्राणायामोऽधमः स्मृतः। मध्यमो द्विगुणः श्रेष्ठः त्रिगुणो धारणा तथा।" इति। योगयाज्ञवल्क्यस्तु। " यमादिगुणयुक्तस्य मनसः स्थितिरात्मनि। धारणेत्युच्यते सद्भिः शास्त्रतात्पर्यवेदिभिः " इति. And Cháritravardhana has: " देशबन्धश्चित्तस्य धारणा " इति.

P. 226. St. 19.—**वशमनयत्**, A proverbial saying. On this Hemádri remarks: " कोशदुर्गदण्डसंपत्प्रभुशक्तिः। विज्ञानसंपन्मंत्रशक्तिः। पराक्रमसंपदुत्साहशक्तिः " इति शक्तित्रयं.—**प्रणिधानयोग्यया**, Hemádri renders it by " ध्यानाभ्यासेन. "—**मरुतः पञ्च शरीरगोचरान्**, Hemádri explains: "मारुतान्मरुतां स्थाने मनसेव समन्विते। धारयेत्पञ्चघटिका ह्यवश्यास्तेन्तरानिलाः " इति योगवासिष्ठः। "योगाभ्यासउपासना " इत्यमरशेषं। तथा नैषधेऽपि। " योग्यामुपास्तेनुयुजां [नुयुवां Ms.] युयुक्षुः" ? । पञ्चग्रहणं प्राणादीनामजय्यत्वसूचकं। तथा चामरशेषेऽपि। " देहगा दश वायवः। प्राणापान- [प्राणोऽपानं Ms.] समानश्चोदानव्यानौ च वायवः। नागः ककरकूर्मौ च देवदत्तो धनंजयः " इत्याद्याः। " हृदि प्राणो गुदेऽपानः समानो नाभिसंस्थितः। उदानः कण्ठदेशे स्याद्व्यानः सर्वशरीरगः। घोषे धनंजयो ज्ञेयः क्रंदने ककरस्तथा [स्मृतः Ms.]। जृंभायां देवदत्तः स्यादुद्गारे नागनामकः। उन्मीलने भवेत्कूर्मो दशैवं मरुतो मताः". Cháritravardhana also quotes the same from Yoga Vásistha.

P. 227. St. 20.—**अचिरेश्वरः**, Hemádri thinks that the word अचिर is not an indeclinable. *Cf.*, " अचिरशब्दो नाव्ययं. "—**दहने स्वकर्मणां**, ' For if the actions or rather their effects be not annihilated, transmigration of the soul would be necessary for the purpose of enjoying the good and suffering bad results of them.' *Cf.*, Cháritravardhana and Sumativijaya: " कर्मशब्देन लक्षणया तदुपार्जितौ धर्मौ गृह्येते." Hemádri renders स्वकर्मणां by " पुण्यपापानां, " and further he and Cháritravardhana observe: " उक्तं च वशिष्ठेन। " ज्ञानमात्मस्वरूपस्य वेदनं मनसैव हि " इति.—**भस्मसादकरोत्**, A proverbial saying.

P. 227. St. 21.—**प्रकृतिस्थं गुणत्रयमजयत्**, On this Cháritravardhana observes: " सांख्यमतं हि। प्रधानाश्रिता गुणाः पुरुषस्तु निर्गुणः इति ज्ञानमपवर्ग इति."—**पणबन्धमुखान्**, Hemádri analyses: " पणो बध्यतेऽस्मिन्निति पणबन्धः सन्धिर्मुखं प्रधानं येषां तान् &c."

P. 228. St. 22.—**योगविधेः** 'From the practise of abstract meditation.' *Cf.* Vallabha: "अष्टांगे योगाभ्यासात्." *Cf.* also Hemádri: "संयोगो योग इत्युक्तो जीवात्मपरमात्मनोः " इति योगवासिष्ठः। योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः इति वा." And Cháritravardhana has: "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधस्तस्य विधिः संपादनं तस्माद्योगविधेः &c.," and further he remarks: "जीवात्मपरमात्मनोः संयोगो योगः इत्यन्ये. " —**न विरराम**, Hemádri makes the following remark, "अनेन महापुरुषलक्षणं। यदुक्तं। " आफलोदयकर्मणां. " *Cf.* Mu. II. 17. and also भर्तृहरि.—**स्थिरधीः**, On

this epithet Hemâdri makes the following remark : " दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः । वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते " इति गीतासु । " स्थिता प्रतिष्ठिता अहमस्मि परं ब्रह्मेति धीर्यस्य " इति गीताभाष्ये. On this Vallabha quotes the following : " उक्तं च । " प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ मनोगतान् । आत्मन्येव च सन्तुष्टः स्थितधीर्मुनिरुच्यते " अत्र श्लोकसततवाचोक्ति शास्त्रं योगं विधिश्च पदक्षोदः (?) श्रुतलवमात्रप्रकाशनपरो ग्रंथविस्तरभयादस्माभिर्न व्यधायि केवलवस्तुव्याख्यानमात्रमकारि. "

P. 228. St. 23.—**प्रतिषिद्धप्रसरेषु**, On this epithet Hemâdri, Châritravardhana and Sumativijaya make the following remark : " देशातिक्रमणं विषयासंगश्च."

P. 228. St. 24.—**तमसः परं पुरुषं**, 'The spirit that is beyond or free from darkness, ' *i. e.* union with the supreme spirit. *Cf.* Hemâdri "अविद्यातीतं । अनित्यत्वेनात्मसुखविपरीतज्ञानमविद्या । ......तदुक्तं । " महतस्तमसः पारे पुरुषं ज्वलनप्रभं [ज्वलनसन्निभं Ms.] । ज्ञात्वा मृत्युमत्येति &c."—**योगसमाधिना**, Hemâdri renders it as : " जीवात्मपरमात्मनोर्योगविषयेण समाधिना ध्यानविशेषेण. "—**समदर्शनः**, Here Hemâdri makes the following remark, " मानापमानयोः सुखदुःखयोश्च समदर्शी. "—**समाः**, Hemâdri explains : " समाशब्दो बहुवचनान्त एकवचनान्तो वा । तथा प्रतापमार्तण्डे । शरत्स्त्रियां समा च स्त्री [समास्त्रीत्वे Ms.] भूम्न्येकत्वे च दृश्यते. "

P. 229. St. 25.—**यतिभिः सार्धं नैष्ठिकं विधिं विदधे**, On this Châritravardhana makes the following remark : " वसुधातलस्थापनरूपं विधिं," and further he observes : " यथा संन्यासिनामन्त्येष्टिरभिहिता तथा तैरेव समं विहितवानिति भावः." It is doubtful whether there exists any express authority which may prescribe the obsequies of a recluse in company with or by the aid of other recluses.—**अनग्नि**, *i. e*, He buried and did not burn the body. It is a practice among the Hindus, especially among the Brâhma*n*as to bury the dead bodies of ascetics or Sanyásins and not to burn them. Cháritravardhana discusses the reading : " विततान समं पुरोधसा " इति वा पाठः and says : " विदधे विधिरस्य [विधिमस्य Ms.] नैष्ठिकं । यतिभिः सार्धमनग्निमग्निचित्" इति कविपाठः । " सर्वसंगनिवृत्तस्य ध्यानयोगरतस्य च । न तस्य दहनं कार्यं नैव पिण्डोदकक्रियाः " । इत्युक्तत्वान्नाग्निसंस्कारः. This authority of शौनक, is also cited by Hemâdri, Sumativijaya, Dinakara &c.

P. 229. St. 26.—**पितृकार्यकल्पवित्**, Hemâdri explains : " पितॄणां कार्याणि तेषां कल्पाः प्रतिपादनग्रंथास्तान् वेत्तीति. "—**और्ध्वदैहिकं**, Here Châritravardhana observes : " न परं यतीनामन्त्येष्टिं चक्रे किं तु गार्हस्थ्योचितमप्याचचार." —**हि**, This explains " पितृभक्त्या. "—**तनयार्वाजितापण्डकाङ्क्षिणा न**, Here Vallabha quotes the following : " न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः । यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम. "

P. 230. St. 27.—**परार्धगतेः पितुरशोच्यतामुद्दिश्य,** 'On the ground that his sire's death was not an event to be lamented, because that he had attained the highest state.' उद्दिश्य, 'as regards,' 'regarding,' should here be construed with "शमिताधिः." Here both Hemádri and Cháritravardhana quote मनु in the following way : "परिव्राजि विपन्ने तु पतिते चात्मवेश्मनि [चात्मवेदिभिः Cháritravardhana.] कार्यो न शोको ज्ञातीनामन्यथा दोषभागिनः."—**परार्धगतेः**, Here Hemádri observes : "मोक्षगामित्वात्."—**अप्रतिशासनं,** analyse : "न विद्यते प्रतिशासनं प्रतिनृपतेराज्ञा यत्र तत्."

P. 230. St. 28.—**वीरं,** Cháritravardhana explains : "विशेषेण शत्रूनारयतीति वीरस्तं."—**भामिनी,** On this Hemádri gives the following note: "कोपना सैव भामिनी". "भामिनीशब्देन भुवः सपत्न्याः [सापत्न्यात् Ms.] स्पर्धयेव पुत्रमसूतेति भावः। भाविनीति पाठे भावाः शृङ्गारचेष्टाः". Cháritravardhana considers : "पतिमाजग्मतुरग्र्यपौरुषं" इति श्रेष्ठः पाठः। तत्र क्षितिरिन्दुमती च भामिनीत्युभे पतिमाजग्मतुः प्राप्तवत्यौ." Vallabha says : "भामिनी प्रणयकुपिता क्षितेः सापत्न्यत्वात्." See readings.

P. 231. St. 29.—**दशपूर्वरथं यमाख्यया,** On this Hemádri makes the following remark : "दशरथशब्दस्यार्थपरत्वे शब्दपरत्वे वा विवक्षितस्यार्थस्य कष्टकल्पनया प्रतीतौ [प्रतीतिः Ms.] अलंकारज्ञा नानुमन्यन्ते । प्रयोगश्च। "हिरण्यपूर्वं कशिपुं प्रचक्षते" इति माघे, S'i. I. 42.। "धनुरुपपदमस्मै वेदमभ्यादिदेश" इति किरातार्जुनीये। and on यमाख्यया he says, यमाख्ययेति ग्राम्यं यमप्रतीतेः". And Châritravardhana and Sumativijaya have the following : "कविः स्वसमयापेक्षया दशकण्ठेत्यादि प्रायुंक्त। अथ वा। प्रवाहरूपत्वाज्जगतोऽनादित्वाद्रामपरम्पराया अप्यनादित्वान्न दोषः। अस्मिन् वृत्ते दशरथेति प्रयोक्तुमशक्यत्वाद्दशपूर्वरथेत्यादिप्रयोगे कविभिरादृतत्वान्न दोषः" and further they quote the above verse from Mâgha. The figure according to Hemâdri is अनुप्रास.

P. 231. St. 30.—**स्वधाभुजां,** Cháritravardhana analyses "स्वधापूर्वं यद्दत्तं कव्यादि तद्भुंजते इति स्वधाभुजस्तेषां."—**अनृणत्वमुपेयिवान्**, A proverbial saying. On this Cháritravardhana makes the following remark : "वेदपाठब्रह्मचर्यादिना ऋषीणामृणान्मुक्तः स्याद्यजनेन देवर्णतः। पुत्रोत्पादनैः पितॄणामृणात् । तथा चोक्तं। "ऋणं देवस्य यज्ञेन पितॄणां दानकर्मणा। संतत्या पितृलोकानां धावयित्वा परिव्रजेत्."—**परिधेः,** Five of our Southern and Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the authority of Amara in support of the epithet.

P. 231. St. 31.—**परप्रयोजना,** On this Hemádri makes the following remark : "निर्णीते केवलं" इति त्रिलिङ्गत्वं [त्रिलिङ्गत्वेन Ms.] कृत्स्नयोः [कार्त्स्न्ययोः Ms.] (?)। कुमारसंभवे । अकालसंध्यामिव धातुमत्तां" धातुरित्यर्थः। तथात्रैव गुणवत्तायाः प्रयोजनं पूर्वार्धेनाह.

P. 232. St. 32.—**नगरोपवने,** Here Hemádri cites the following : "उपवनलक्षणं वृक्षोदये [वृक्षारोपे Ms.]। "उद्यानोपवनारामा वनं प्रमदपू-

वेकं । पञ्चधा निष्कुटं चेति वृक्षवाटी [वृक्षवारि Ms.] प्रशस्यते । राज्ञामेवोपभोग्यं यदुद्यानं तदुदाहृतं । पुरबाह्ये तु [पुरोपबाह्ये Ms.] सामान्यं भवेदुपवनं नृणां । आरामस्त्वेकभोग्योऽथ वनं प्रमदपूर्वकं । अन्तःपुरैकभोग्यं स्यान्निष्कुटं तु गृहे कृतं । अमात्यगणिकादीनां सर्वं नानातरूज्ज्वलं । अत्रारामं त्रिधा ग्रामं शाकं पौष्पं [शाकं पुष्पं Ms.] विदुर्बुधाः " इति.—**मरुतां पालयिता,** The subjective genetive. Pandit says, ' In the hymns of the *R*igveda, the oldest part of the Sanskrit literature, the Maruts are not gods in general, but the name is restricted to a particular class of them, the storm gods. They are there represented as independent of Indra, whom they sometimes assist in the achievement of his exploits over the Cloud and are his friends but are not ruled over by him. Later writers applied the name Maruts to the gods in general, and as Indra was made the king of the gods, he very easily came to be called मरुतां पालयिता.'

P. 232. St. 33.—**रवेरुदगावृत्तिपथेन,** ' By the path of the sun's return from the north,' *i. e.*, from north to south, and in the sky, not along the ground. *Cf.* Hemádri : " अनेनाकाशेन दक्षिणदिङ्मार्गेण ययावित्यर्थः." And Cháritravardhana has : " स्निग्धत्वभयेन घनपथं परित्यज्य सूर्यमार्गेण गमनमित्यर्थः."—**नारदः,** Both Hemâdri and Cháritravardhana analyse the proper name in the following way : " नराणां समूहो नारं तत् यति खण्डयति कलिजननात् [कलिदानात् Ms.] इति नारदः. "

P. 233. St. 34—**अधिवासस्पृहयेव,** *Cf.* Châritravardhana : " अधिवासः सुगन्धमाल्याद्यैः कृतः संस्कारस्तत्स्पृहयेव वाञ्छयेव । एतया माल्याहमपि संस्कृतो भवामीत्याशयं कृत्वेव."—**आतोद्यशिरोनिवेशिताम,** On this epithet Hemâdri quotes the following: "चतुर्विधमिदं वाद्य वादित्रातोद्यनामकं । ततं चैवानुविद्धं च घनं शुषिरमेव च । चतुर्विधं तु विज्ञेयमातोद्यलक्षणान्वितं । ततं तंत्रिगतं तेयमनुविद्धं च पुष्करं । घनं कांस्यमयं ज्ञेयं । शुषिरं वंश उच्यते" । आतोद्यशब्दो यद्यपि अविशेषेण वाद्यमात्राभिधायी तथाप्यत्रोपवीणयितुमित्युक्तत्वात् वीणैव । यद्वा समुदायेषु हि प्रवृत्ताः शब्दा अवयवेष्वपि वर्तन्ते इति । अतएव वीणायां वर्तते. " and Châritravardhana has the following: " यद्यपि आतोद्यपदं चतुष्टये वाद्ये वियते तदप्यत्रप्रकरणाद्वीणावाचि तदुक्तं । " शब्दात्प्रकरणाल्लिङ्गादौचित्याद्देशकालयोः । शब्दादर्थं विजानीयान्न शब्दादेव केवलात् " इति.

P. 233. St. 35.—**परिवादिनी,** On this epithet Hemádri cites the following authority : " विश्वावसोस्तु बृहती तुम्बरोस्तु कलावती । महती नारदस्य स्यात्सरस्वत्यास्तु कच्छपी" । "and quote the following from Hemachandra: "शिवस्य वीणा नालम्बी गणानां तु प्रभावती " इति हेमचन्द्रः । " महता शततंत्री " इति क्षीरस्वामी. Vallabha says, " महती नारदस्य वीणा &c., " The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " वीणा तु वल्लकी । विपञ्ची सा तु तंत्रीभिः सप्तभिः परिवादिनी " इत्यमरः ॥—**सृजती बाष्पमिवाञ्जनाविलम्,** On

this Hemâdri and Sumativijaya have the following note : "अन्याप्यवमानिता साञ्जनमश्रु त्यजति." And Hemâdri renders अञ्जनाविलं by "कज्जलनीलं"—पवनावलेपजं, Vallabha says: "वातपराभवभवं." —कुसुमानुसारिभिः, Here Hemâdri discusses : "कुसुमानुसारिभिरिति तच्छीलको णिनि सुपि इत्यनुवर्तमाने पुनः सुब्ग्रहणमुपसर्गस्य निवृत्त्यर्थं। केवलस्योपसर्गस्य निवृत्त्यर्थं द्रष्टव्यमिति जयमङ्गलाकारः । तथा भट्टिकाव्ये। "स कर्मठः कर्मसुतानुबन्धी" इति। तथात्रैव। "तामभ्यगच्छद्रुदितानुसारी" इति. *Cf.* R. XIV. 70.

P. 234. St. 37.—**सुजातयोः**, In order to support this epithet Hemâdri quotes the following from Trivikrama : "सुजातं सुन्दरे प्रोक्तं सम्यग्जाते च वस्तुनि" इति.—**स्तनयोः**, On this Hemâdri makes the following remark : "सखीत्वन्तु कुचालिंगनात्। स्तनयोरिति षष्ठासप्तमी वा."—**निमिमील**, A proverbial saying. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Halâyudha produced by the Northern Mss. "निमीलनं दीर्घनिद्रा च" इति हलायुधः।—**तमसा**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Amara produced by the Northern Mss. "तमस्तु राहुः स्वर्भानुः" इत्यमरः।

P. 234. St. 38.—**करणोज्झितेन**, 'Forsaken by the senses,' *i. e.* insensible. Hemâdri appears to be more correct than Mallinâtha : "करणैरिन्द्रियैरुज्झितेन त्यक्तेन." Châritravardhana : "करणैरिन्द्रियैरुज्झितं त्यक्तं तेन वपुषा शरीरेण." The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Amara produced by the Northern Mss. "करणं साधकतमं क्षेत्रगात्रेन्द्रियेष्वपि" इत्यमरः। —**ननु**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Amara produced by the Northern Mss. "प्रश्नावधारणानुज्ञानुनयामंत्रणे ननु" इत्यमरः।—**सह दीपार्चिरुपैति मेदिनीं**, Châritravardhana explains : "तैलस्य निषेक आवर्जनं तत्समनंतरमेव निपतता बिन्दुना साकं दीपार्चिर्दीपज्वाला मेदिनीं भूमिमुपैति ननु एवं। सापीति भावः."

P. 235. St. 39. —**कमलाकरालयाः**, Analyse : "कमलानां आकरः एव आलयः एषां ते तथोक्ताः." —**चक्रुशुः**, Sumativijaya remarks : "तद्दीनस्वरं श्रुत्वा पक्षिणोऽपि रुरुदुरिति भावः."

P. 235. St. 40.—**प्रतिकारविधानं**, 'The application of a remedy.' —**तथैव संस्थिता**, On this epithet Hemâdri, Châritravardhana and Sumativijaya have the following to say : "तुल्येऽपि करणेऽजः कथं बुद्धः सा मृतेति हेतुमाह." —**आयुषः**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Amara produced by the Northern Mss. "आयुर्जीवितकालो ना" इत्यमरः।

P. 235. St. 41.—**प्रतियोजयितव्यवल्लकीसमवस्थां**, On this both Hemâdri and Châritravardhana hold the following discussion : "प्रोपाभ्यां

समर्थाभ्याम्, " Pânini, I, 3, 42. इत्यत्र संशब्दस्य समानार्थत्वं। तद्वत्समवस्थामिति। "वष्टि भागुरिरल्लोपमवाप्योरुपसर्गयोः " इति अकारलोपो वा। 'After the verb क्रम्, the Atmanepada is employed when it is preceded by the prepositions प्र and उप, both conveying the same sense, *viz.*, that of 'beginning an action.'—सत्त्वविप्लवात्, The Southern and Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority of Amara produced by the Northern Mss. " द्रव्यासुव्यवसायेषु सत्त्वम् " इत्यमरः।

P. 236. St. 42.—करणापायविभिन्नवर्णया, Here Hemâdri says, "इत्थंभूतलक्षणे, " Pânini II. 3. 21. इति तृतीया। 'Any mark or attribute, by which is indicated the existence of a particular state or condition, is put in the instrumental case to express this relation.' As, जटाभिस्तापसः 'He is an ascetic by (the fact of his having) matted hair.' अपि भवान् कमण्डलुना छात्रमद्राक्षीत् 'Your honour might see the student by the fact of his having a कमण्डलु.' So also छात्रेणोपाध्यायं 'A teacher by the fact of his having students.' शिखया परिव्राजकं 'A Parivrâjaka by a tuft of hair.' But not so here, कमण्डलुपाणिश्छात्रः 'A student has कमण्डलु in his hand.' Because here in the compound कमण्डलुपाणि is hidden the mark.

P. 236. St. 43.—विललाप, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Amara produced by the Northern Mss. "विलापः परिदेवनं " इत्यमरः। —कैव, Here एव does not turn the sentence from an interrogative into an affirmative one, but simply strengthens का.—स बाष्पगद्गदं, &c., A proverbial saying. All other commentators than Mallinâtha read सबाष्पगद्गदं where Hemadri explains : " स इति पदभङ्गो वा। तदा बाष्पगद्गदं। " अर्श आदि-" Pânini, V. 2. 127. On the latter half of the verse both Hemâdri and Chàritravardhana make the following remark : " धीरस्य कुतः शोक इति चेदत आह. "—अभितप्तमयोऽपि मार्दवं भजते, A proverbial saying.

P. 237. St. 44.—किमिव, The same as किम्, strengthened by इव in its inclusive force which it has in the present verse.—प्रहरिष्यतः, 'wishing to strike.' The future participles in Sanskrit are often used in a desiderative sense.—साधनं न भविष्यति, Hemâdri, Chàritravardhana and Sumativijaya explain it as : " असाधनं पुष्पमपि साधनं जातमन्यत्किमुतेत्यर्थः " । and " यत्र पुष्पमालैव साधनमासीत्तत्र शस्त्रादि कथं न साधनं भविष्यतीति भावः " &c.

P. 237. St. 45.—प्रजान्तकः, On this Chàritravardhana has the following note : " प्रजाग्रहणं कृतान्तस्य सर्वसाधारण्येन जीवनापहर्तृसूचनार्थं प्रकटार्थं वा." And Hemádri has : " प्रजाग्रहणं विस्पष्टार्थं."—मे, On this Hemâdri remarks : ते मे शब्दौ निपातेषु द्रष्टव्यौ। " त्वया मयेत्यस्मिन्नर्थे " इति वामनः.—अत्र, 'In the case of Indumati's death.'

P. 237. St. 46.—**स्रगियं**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary, unanimously omit this verse (excepting of course the D Mss.). But the Bengal, Rajputáná and some manuscripts of the Gujaratha province produce it. From the internal evidence it does not lead one to conclude that the stanza in question to be an interpolation. It must have evidently come from the pen of Kâlidása since it chimes in so well with the preceding as well as foregoing context. Other commentators including Hemàdri do not pronounce it to be spurious or क्षेपक. It is difficult to know on what ground these Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary have omitted this genuine verse of Kálidâsa.—**विषमप्यमृतं क्वचिद्भवेदमृतं वा विषमीश्वरेच्छया**, Hemâdri renders: ईश्वरेच्छया by "देवस्येच्छया" and has the following : "अत्रेन्दुमतिनाशादमृतरूपाया मालाया विषत्वं। सिद्धविषत्वायाश्च तस्या नृपाहननादमृतत्वं." And Vallabha has the following : "ईश्वरेच्छया देवप्रेरणया अमृतं विषं भवेत्। उक्तं च । "प्राप्यते मरणं यत्र बन्धनं श्रीः सुखं वधूः। स तत्र नीयते स्वेन कर्मणा गलहस्तितः."—**जीवितापहा**, On this Hemâdri holds the following discussion : इत्ययं शब्दः चिन्त्यः । "अपे क्लेशतमसोः" Pâṇini, III. 2. 50. इति डस्य विधानात्। "क्लेशरागतमोदर्पदुःखरोगज्वरादिषु । डः कर्मस्वपहन्तेः स्याद्व्यातः पापापहः शिवः" इति गणदर्पणोक्तेर्घटते। यथात्र सप्तदशसर्गे। "परकर्मापहः सोऽभूत्" १७-६१। एकोनविंशे सर्गेऽपि। "अन्वभुंक्त सुरतक्लमापहां" १९-३९ इति. And Châritravardhana has : "जीवितापहेति चिन्त्यं। कथं। "आशिषि हनः" Pāṇini, III. 2. 49. इत्यस्याप्राप्तेर्डप्रत्ययस्य। एके तु। "अपे क्लेशतमसोः' इति नियमाद्यद्यपि डप्रत्ययाभावास्तथाप्यन्येभ्योऽपि दृश्यते इति प्रयोगानुसरणाद्दाशि ग्रहणाच्च साधुत्वं ब्रुवते"। Translate the aphorisms:—'The affix ड comes after the verb हन् 'to kill,' when it is compounded with the preposition अप, and when the object in composition with it, is the word क्लेश 'pain,' or तमस् 'darkness.' This aphorism has its scope when the sense is not that of benediction. 'The affix ड comes after the verb हन् 'to kill,' when the object is in composition with it, and when benediction is intended.'

P. 238. St. 47.—**वेधसा**, Châritravardhana renders it by "दैवेन."—**अशनिः**, Hemâdri, Chàritravardhana and Sumativijaya explain it by "वज्रं", where Hemàdri has the following : "अशनेः प्रायेणैष स्वभावो यदुपरिशाखातरोर्नाशयति न स्तम्भं." The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Amara produced by the Northern Mss. "दम्भोलिरशनिर्द्वयोः" इत्यमरः।—**तरुः**, Hemàdri explains : "तरुरत्राजा लतेन्दुमती."—**अथवा**, Hemàdri, Châritravardhana and Sumativijaya explain it as : "इति पूर्वापेक्षायां पक्षान्तरे."

P. 238. St. 48.—**कृतवत्यसि,** On this Hemâdri holds the following discussion : " मयि अपराद्धेऽपि कृतवति अवधीरणामवज्ञां नासि । अव्ययानामनेकार्थत्वात् । असीत्यव्ययं । तथा पाणिनीयमतदर्पणे । " अस्यस्मि मन्ये शङ्के ब्रूमाह चहकर्षकौ इति [टूब्रूहमाहय चकर्थकाविति, and ब्रूमासाहवलर्थकाविति Mss.] ? । अथ वा । असीति वर्तमानसामीप्ये भूतार्थे लट्." —**यद्वा,** The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. यदेति हेत्वर्थः । "स्वरादौ पठ्यते यदेति हेतौ" इति गणव्याख्यानात् । —**एकपदे,** The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Vis'va produced by the Northern Mss. " एकपदं स्यात्तत्क्षणे पदव्यामेकपद्यपि " इति विश्वः ।—**आभाष्यं न मन्यसे,** Hemádri gives the substance in the following words : " कथं प्रलपतो मम वचनं न ददासीत्यर्थः, " and Châritravardhana gives : " एवं विलापं कुर्वाणं मल्लक्षणं जनं कथं न संभावयसि " इति.

P. 238. St. 49.—**शठः,** Châritravardhana defines: " प्रियं वक्ति पुरोऽन्यत्र विप्रियं कुरुते भृशम् " इत्यादिधूर्तलक्षणं रुद्रटालंकारादवसेयं, " and Hemádri has: " गूढविप्रियकृच्छठः" इति दशरूपके.—**ध्रुवं,** Châritravardhana explains: " निश्चये उत्प्रेक्षायां वा. "—**परलोकमसंनिवृत्तये गतासि,** A proverbial saying.

P. 239. St. 50.—**यदि अन्वगात्,** Aja does not know that it did, as he fell insensible and was restored to his senses afterwards. —**आत्मकृतेन,** construe with प्रबलां.

P. 239. St. 51.—**अपि,** Hemâdri remarks : " अपिशब्देन लवस्य क्षणविनाशित्वं [क्षणविलासित्वं Ms.] सूचितं."—**असारतां,** Hemâdri explains as : " असारताशब्देन यद्यपि निन्दा प्रतीयते तथापि धिग्जाल्ममितिवत्र पौनरुक्त्यं । " उभसर्वतसोः कार्या धिगुपर्यादिषु त्रिषु । द्वितीयाम्रेडितान्तेषु ततोऽन्यत्रापि दृश्यते " इति द्वितीया.—**स्वेदलवोद्गमः** equivalent to उद्गतस्वेदलवाः.

P. 240. St. 52.—**ननु शब्दपतिः क्षितेरहं,** A play upon the word पतिः. —**कृतपूर्वं,** Hemádri analyses : " पूर्वं कृतं इति कृतपूर्वं " वाहिताग्न्यादिषु " Pânini, II, 2. 37. ' In the compounds आहिताग्नि and the like, the निष्ठा formed-word (the past passive participle) may optionally be placed first.' Thus अग्न्याहितः or आहिताग्निः ' One who has consecrated fire.' But Châritravardhana, like Mallinâtha, takes it to be a सुप्सुप compound, *i. e.*, the केवल or न compound. See our note to St. 1, Canto I. —**त्वयि मे भावनिबन्धना रतिः,** A proverbial saying.

P. 241. St. 54.—**गुहागतं तमः,** ' The darkness that is in the caves in which those creepers stand.'—**नक्तं,** *Cf.* Châritravardhana: " हिमाद्रौ नक्तमोषधयः सप्रकाशा भवन्तीति प्रसिद्धिः." *Cf.* Ku. I. 10. " भवन्ति यत्रौषधयो रजन्यामतैलपूराः सुरतप्रदीपाः."

P. 241. St. 55.—**निशि**, On this Hemádri makes the following remark : "निशीत्यनेनालकस्थाने तमः सम्बन्धः सूचितः." On this passage Hemádri, Chāritravardhana and Sumativijaya make the following remark : "प्राणिनां संयोगवियोगौ विलोक्येते तत्त्वया किमर्थमेवं संतप्यते इत्याशंक्याह."—For the second half compare Buddha. V canto, 57 verse "अपरा न बभुर्निमीलिताक्ष्यो विपुलाक्ष्योऽपि शुभभ्रुवोऽपि सत्यः। प्रतिसंकुचितारविन्दकोशाः सवितर्यस्तमिते यथा नलिन्यः॥

P. 241. St. 56.—**विरहान्तरक्षमौ**, Hemádri explains it as : "विरहलक्षणं रसाकरे। "विप्रलम्भस्तु सामान्ये वियोगे विरहोऽन्यथा। यावज्जीववियोगे स्यादीर्ष्याख्योऽहर्निशं भवेत्" इति। "मृतप्रियाणामत्यंतं यावज्जीवार्तिदायिनां [दायिनं Ms]। वियोगं विरहं प्राहुर्दुस्सहं पूर्वसूरयः" इति शब्दार्णवे। कथमत्र कोकयोर्विरहः "समानधर्मार्थनिर्देशे तद्रूपं" इति साहित्यमीमांसासूत्रात्। "उपमानाद्यदन्यस्य व्यतिरेकः स एव च" इति काव्यप्रकाशे। "व्यतिरेक आधिक्यं." Chāritravardhana's explanation appears to be better than that of Mallinātha. He says : "विरहस्य वियोगस्यान्तरमवधिं क्षमेते इति तादृशौ। चक्रवाकादयस्तु संयोगो भविष्यतीत्याशाबन्धेन विरहेऽपि धीरत्वमवलम्बन्ते इत्यर्थः." And Hemádri explains : "वियोगनिमित्तकालव्यवधानक्षमौ," 'able to bear the interval of separation.' The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Amara produced by the Northern Mss. "अन्तरमवकाशावधिपरिधानान्तर्द्धिभेदतादर्थ्ये" इत्यमरः।—**दयिता द्वन्द्वचरं पतत्त्रिणं**, The poets say that the चक्रवाक, though he has his mate all night beside him, can never, as long as the night lasts, come in close contact with her. *Cf.* Mv. II. 9. "अहं रथाङ्गनामेव प्रिया सहचरीव मे."—**अत्यन्तगता**, 'Altogether gone,' *i. e.*, gone forever. On this stanza Chāritravardhana remarks : "पुरा किल दशरथात्मजस्य रामचन्द्रस्य शापाद्रात्रौ चक्रवाकयोर्विरहः। रामस्तूत्पत्स्यतेऽतः। कथमत्राजविलापे चक्रवाकविरहं रचयाञ्चकार। कवेरयतनत्वाद्विलोक्यमानस्य वर्णनत्वान्न दूषणमत्र। अथ वा। संसारस्यानादित्वाद्रामपरम्पराया अप्यनादित्वायुक्तमेवोक्तं."—**कथमत्यन्तगता न मां दहेः**, A proverbial saying.

P. 241. St. 57.—**नवपल्लवसंस्तरे**, On this Chāritravardhana remarks : "पल्लवानां नवशब्दोऽतिकोमलत्वसूचनार्थः" इति.—**कथं विषहिष्यते वद**, On this Hemádri observes : "तस्य दुःसहत्वात्."—**वामोरु**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinātha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "वामं स्यात्सुन्दरे सव्ये" इति केशवः।

P. 242. St. 58. —**प्रथमा**, Hemâdri renders it by "प्रवरा वा."—**रहःसखी**, Hemádri explains : "रहस्येकान्ते सखी। सुरतेऽपि निबन्धनाद्रहःसखी."

P. 242. St. 59-60.—**निहिताः**, Chāritravardhana explains as : "गणगणकलितां मामन्तरेणासावजो दुःखवान् कथं भविष्यतीति मामाश्वासयितुं परपुष्टा-

दिष्ट स्वगुणा निहिता इत्यर्थः। परं ते गुणाः &c. —**अवलम्बितु न क्षमाः**, On this Hemádri makes the following remark : " नचोपारि दोषो नास्ति । गुणा एव न शक्ता इत्यर्थः."

P. 243. St. 61. —**मिथुनं परिकल्पितं त्वया सहकारः फलिनी च**, Here Hemádri : " विवाहकरणं प्रयोगरत्नावल्यां । " विवाहमङ्गलाचार-[°मङ्गलाचारा Ms] गीतनेपथ्यसंयुता । वृक्षेणोद्वाहिता श्यामा जायते कुसुमाकुला [कुसुमान्विता Ms.]." The matching of a tree with a creeper, and even the celebration of a sham marriage between them is a favourite idea with the poets. Compare also the affecting scene where S'akuntalâ bids farewell to her favourite creepers and the reply that the sage कण्व makes. S'a. IV. " सङ्कल्पितं प्रथममेव मया तवार्थे भर्तारमात्मसदृशं सुकृतैर्गता त्वम् । चूतेन संश्रितवती नवमालिकेयमस्यामहं त्वयि च संप्रति वीतचिन्तः."

P. 243. St. 62—**कुतदोहदस्त्वया**, Hemádri gives the following note : " तथा च प्रयोगरत्नावल्यां । " नूपुरान्वितपादेन तरुण्या ताडितो भृशं । अशोकः केसरो वक्त्रसीधुसिक्तश्च फुल्लति " इति । and further " तरुगुल्मलतादीनामकाले कुशलैः कृतं । पुष्पाद्युत्पादकं द्रव्यं दोहलं स्यात्तु तत्क्रिया " इति शब्दार्णवे. And Châritravardhana and Sumativijaya have : " स्त्रीणां चरणप्रहारेण अशोकतरुः पुष्प्यतीति प्रसिद्धिरतः पादप्रहार एवाशोकस्य दोहद इति भावः." *Cf.* also Mv. III. 17. " अनेन तनुमध्यया मुखरनूपुराराविणा । नवाम्बुरुहकोमलेन चरणेन संभावितः । अशोक यदि सद्य एव कुसुमैर्न संपत्स्यसे । वृथा वहसि दोहलं ललितकामिसाधारणम्."—**अलकाभरणं**, ' which should have, were you living, decorated your hair.'—**निवापमाल्यताम्**. On this compare the following from As'valâyana Grihya Sûtra , 4, Adh. 8 Ka*n*dikâ, Bibli. Indi. series " एतस्मिन्काले गन्धमाल्यधूपदीपाच्छादनानां प्रदानम् " ॥ १ ॥ ' In that moment the gifts of perfumes, garlands, incense, lights, and, clothes are offered (to the Brâhma*n*as). ' The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Amara produced by the Northern Mss. " निवापः पितृदानं स्यात् " इत्यमरः ।

P. 243. St. 63.—**अन्यदुर्लभम्** , Hemádri, Châritravardhana and Sumativijaya make the following remark : " अन्यस्याः । सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे पुंवद्भावः । यद्वा । अन्येन वृक्षेण दुर्लभं " ।—**त्वं शोच्यसे**, Here Hemádri says, शोच्यसे इत्यत्र इवशब्दसंबंधो वा."—**चरणानुग्रहं**, Here Hemádri discusses, " शेषत्वाविवक्षया, " अधीगर्थ." Pâ*n*ini, II. 3. 52. इति न षष्ठी. Translate the aphorism :—"Of the verbs having the sense of ' remembering ' (अधीक्) and of दय् ' to give,' ' to pity,' ' to protect,' ' to move,' and of ईश् ' to rule or be master of,' the object takes the genitive case-affix." See Apte's Guide p. 81. *Third Edi.*

P. 244. St. 64.—**विलासमेखलां**, 'A fancy zone,' *i. e.*, a zone or girdle made of various flowers to be worn in the place of the usual one of gold set with diamonds &c.

P. 244. St. 65.—**प्रतिपच्चन्द्रनिभः**, Châritravardhana reads °चन्द्रमुखः instead of °चन्द्रनिभः and explains, "प्रतिपच्चन्द्र इव मुखं यस्य स तादृशः। वर्धनशीलत्वात्समस्तजनैरुत्कण्ठया विलोक्यमानत्वाच्च"। He goes on to say : "प्रतिपच्चन्द्र इत्यत्र प्रतिपत्सान्निध्यलक्षणया द्वितीयाचन्द्रो विवक्षितः। यद्यपि प्रतिपदि चन्द्रकलास्ते तथाप्यदृश्यमानत्वान्न युज्यते। तथा चोक्तं किराते। "प्रतिपच्चन्द्रमिव प्रजा नृपं" इति. Mallinâtha explains "प्रतिपत्तिनिष्ठुरः as the predicate of व्यवसायः, and interprets the whole passage as, 'although there are reasons why the व्यवसायः should not be प्रतिपत्तिनिष्ठुरः, still it is so.' Hemâdri, Châritravardhana and Vallabha also take प्रतिपत्तिनिष्ठुरः predicatively. Hemâdri says, "तथापि ते व्यवसायो मरणोद्यमः प्रतिपत्त्या दुराग्रहेण निष्ठुरः। इदमेव मयावश्यं कार्यमिति प्रतिपत्तिरभ्युपगमस्तेन क्रूरः। Châritravardhana says, "इत्येतच्चितयं यद्यपि जीवितालम्बनमस्ति। तथापि ते व्यवसायो मरणोद्योगः प्रतिपत्तौ प्रीतौ निष्ठुरः कर्कशः पराङ्मुख इति भावः" Vallabha says, "तथापि ते तव व्यवसायः प्रतिपत्तिनिष्ठुरः स्वभावनिर्दयः." What Aja means, however, appears to be different. He says that 'although there were reasons why Indumati should not be in haste to leave her friends, her promising son and himself who loved her so dotingly, still her action (of leaving them forever) was irreconcilable with love.' Sumativijaya interprets the passage in the same way as these commentators do.—**एकरसः**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "शृंगारादौ विषे वीर्ये गुणे रागे द्रवे रसः" इत्यमरः। —**प्रतिपत्ति**°, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "प्रतिपत्तिः पदप्राप्तौ प्रवृत्तौ गौरवेऽपि च। प्रागल्भ्ये च प्रबोधे च" इति विश्वः।

P. 244. St. 66.—**धृतिरस्तमिता रतिश्च्युता**, 'All love is at an end, pleasures are no more.' Hemâdri renders रति by "सुरतं रमणं च." The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "धृतिर्योगान्तरे धैर्ये धारणाध्वरतुष्टिषु" इति विश्वः। —**आभरणप्रयोजनं गतं**, Châritravardhana explains "शृङ्गारादिकं गतं। "नाकामी मण्डनप्रियः" इत्युक्तत्वात्."

P. 245. St. 67.—**प्रियशिष्या**, Châritravardhana enumerates some of these sixty four arts or accomplishments as they are otherwise called, "गीतनृत्यवादित्रचित्रचुम्बनाश्वपुष्पसंदर्भसारिक्रीडालिपिज्ञानादीनां चतुःषष्टिसंख्याकानां च विद्याध्ययने प्रियाभिमता शिष्यान्तेवासिनीति"। And gives the substance of the passage in the following words, "एकस्यास्तवा-

हरणे धृतिरत्यादीनां राज्यालम्बनभूतसचिवादीनां च हरणमित्यर्थः."—**हरता त्वां** &c., A choice expression. Here Hemádri explains it as, "एते वांनावादय अदिशा अनन्वादेशे वा वक्तव्याः." And giving this Vártika, he goes on quoting the following : "त्वामौ द्वितीयायाः" Pâṇini, VIII. 1. 23. इति न । तथा मेघदूते । "जानामि त्वां प्रकृतिपुरुषं कामरूपं मघोनः." He gives the substance of the passage in the following words : "सचिवस्त्वमेव । सखापि त्वमेव । प्रियशिष्यापि त्वमेव । शासितुमर्हा शिष्या."

P. 215. St. 68.—**मदिराक्षि,** Châritravardhana gives reason for the epithet, and says, "मदिरे हर्षदायिनी प्रान्तशोणे वा पद्मिनीजातित्वादक्षिणी नेत्रे यस्यास्तत्सम्बुद्धौ ।" 'मदयतीति मदिरं' इति । "इषिमदिमुदिखिदिछिदिभिदि°–" &c., Unádi Sútra, 51, S. K. p. 321. "इति मदिहर्षग्लपनयोरित्यस्मादौणादिकः किरच्प्रत्ययः" । And remarks "मदिरावदक्षिणी यस्यास्तत्सम्बुधाविति कश्चित् । "प्रांतरक्ते च नेत्रे" इति रतिरहस्योक्तौ । Hemádri has the following : "मदिराभिधमक्षि दृष्टिर्यस्याः सा तत्सम्बोधनं । यथा संगीतकलिकायां । 'स्निग्धार्द्धमुकुला कान्ता लम्भिता मदिरा तथा । पञ्चैवात्र प्रतिज्ञाताः शौर्यादित्येन दृष्टयः । सौष्टवेनापरित्यक्ता स्मेरापांगमनोहरा । वेपमानान्तरा दृष्टिर्मदिरा परिकीर्तिता" इति । यद्वा । माद्यन्ति आभ्यामिति मदिरे अक्षिणी यस्याः सा । इषिमदान्यौणादिकः किरच्प्रत्ययः । "बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात्षच्," Pâṇini, V. 4. 113. इति षच् । ततो ङीप् । वामनस्तु । "इतो मनुष्यजातेः" Pâṇini, IV. 1. 65. इत्यत्र मनुष्यजातेर्विवक्षा च लक्ष्यानुसारतः इति ङीपं शास्ति । "अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः," Pâṇini, VII. 3. 112. इति ह्रस्वः. Vallabha says : "मदिरा दृष्टिविशेषा" । उक्तं च । "ईषत्कम्पितपक्ष्माग्रा विवृतपद्मलोचना । दृष्टिर्विकसितापाङ्गा मदिराक्षिरुणे मदे." [मदिराक्ष्यरुणा मता ?] —**मदाननार्पितं,** Hemádri and Châritravardhana analyse : "मदाननेन मन्मुखेनार्पितं." It should rather be interpreted "मदानने अर्पितं" than in the manner of Mallinátha. Hemádri and Cháritravardhana interpret it better. The wine was taken by Aja in his mouth and was thence directly transferred into that of Indumati. This was how she usually drank (मधु) when she was here; but that she is dead and gone the drink that she would now obtain was merely the watery oblation, soiled by his tears, and that too unlike the luscious wine poured by her husband directly into her mouth, would now be sent from this world to the next where she resides. —**अनुपास्यसि,** 'When alive, Indumati used to *drink after* (अनु पा) Aja.' *Cf.* Hemádri : "न हि सुरसं वस्तु भुक्त्वा नीरसं रोचते । यद्वा । मधुपानानन्तरं वैयशाश्लोकमनुपानं सूचितं । मधुपानानन्तरं जलपानं निषिद्धं । परलोकोपनतमित्यनुपानस्य विलंबः सूचितः." Also Châritravardhana : "ननु क्त्वाप्रत्ययादेव जलाञ्जलिपानस्य पश्चाद्भावो लब्धोऽतः किमर्थोऽनुप्रयोग । अत्रोच्यते । मधुपानानन्तरं कार्यमनुपानमित्यगदकाराणां भाषणानुरोधाददोषः इति । मधुपानापेक्षया पश्चात्पानस्य विवक्षितत्वादित्यन्यः." The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern

Mss. यथाह मल्लभट्टः । "अनुपानं हिमजलं यवगोधूमनिर्मिते । दध्नि मद्ये विषे द्राक्षे पिष्टे मिष्टमयेऽपि च " इति । तच्च इहैव युज्यते । इदं तूष्णं लोकान्तरोपयोगि चेत्यायुर्वेदविरोधात्कथमनुपास्यसीति भावः ।

P. 246. St. 69.—**विभवेऽपि सति,** Hemâdri says : " यद्वा । सति प्रशस्ते विभवेऽपि. "—**विलोभनान्तरैः,** Hemâdri explains : " विलोभ्यन्ते प्राणिनः एभिरिति विलोभना विषयास्तैरहतस्याप्यनाकृष्टस्य । यद्वा । विलोभनान्तरैरन्याभिः स्त्रिभिरहतस्येति प्रीतिकारणं. "—**त्वदाश्रयाः,** On this Hemâdri remarks : " त्वयि मृतायां त्वां विना किमपि सुखं नानुभवामीत्यर्थः. "

P. 246. St. 70.—**करुणार्थग्रथितं,** Hemâdri explains : "करुणोऽर्थोऽभिधेयो वाच्यो यस्य रसस्य तेन ग्रथितं गुम्फितं । करुणश्चासावर्थश्चेति वा । यथा तथा. " —**अपि,** Here Châritravardhana remarks: "अपिशब्देनाचेतनत्वं द्योत्यते. "

P. 246. St. 71.—**स्वजनः,** Hemâdri analyses : " स्वासां ज्ञातीनां जनः इति वा. "—**कथंचित्,** 'With difficulty.' " बलात्कारेण " says Châritravardhana.—**कृतान्त्यमण्डनां,** Vallabha reads तदन्त्यमण्डनां and interprets: तदेव कृतमण्डनं [कृतं मण्डनं ?] यस्याः सा तां. " Châritravardhana appears to have read with Vallabha. For he says : " तदा क्रियमाणमन्त्यं प्रेतोचितं मण्डनं यस्याः सा तां । अथ वा । सैव सुरस्रगन्त्यं मण्डनं यस्यास्तामिन्दुमतीं." Hemâdri agrees distinctly with Mallinâtha. The final decorations alluded to in the text were those which a Suvâsinî (a woman whose husband is alive) is entitled to receive even after her death. As Indumatî died a Suvâsinî she was every way entitled to receive all honours and decorations which her husband offered to her after her demise. The funeral decorations of the dead body prescribed by As'valâyana are as follows : " प्रेतं स्नापयित्वा नलदेनानुलिप्य नलदमालां जपामालां वा प्रतिमुच्य मूलतोऽहतवाससा पादमात्रमवच्छाद्य शेषेण प्रत्यगग्रेण प्राक्शिरसमाविःपादमाच्छादयेयुः परिधानं चान्यद्दयुरवच्छेदं कर्ता संगृह्णीयात् . " Grihya Paris'ishtha, Adh. III. Kandikâ I. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " क्रियाग्रहणमपि कर्तव्यम् " इति क्रियामात्रप्रयोगे संप्रदानत्वाच्चतुर्थी ।

P. 247. St. 72.—**वाच्यदर्शनात्,** Here Hemâdri quotes the following from Pratâpamârtanda : " उपक्रोशश्च निर्वादो विज्ञेयं वाच्यमद्वयोः " इति. —**अनु संस्थितः,** On this Châritravardhana remarks : "अथ वा अनुसंस्थितः इत्येकमेव पदं । अनुमृतः इत्यर्थः ".—**अग्निसात्,** The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " तदधीनवचने " इति सातिप्रत्ययः । —**न चकार शरीरमग्निसात्,** A proverbial saying.

P. 247. St. 73.—**दशाहतः परे**, 'After the ten days' *Cf.* Hemádri, "विद्वान क्षत्रियश्चेद्दशाहे" इति विष्णुस्मृतिः । अन्यस्य तु । "दशाहाच्छुध्यते विप्रो द्वादशाहात्तु बाहुजः । वैश्यः पञ्चदशाहेन शूद्रो मासेन शुध्यति" इति. And discusses दशाह exactly like Mallinàtha and adds the following : "अमरश्च" । "अह्वाहान्ताः क्रतुभेदाः" इति । "दशाहं शावमाशौचं सपिण्डेषु विधीयते" इत्यादौ द्वितीयान्तं." And Chàritravardhana has : "भूमिदक्षिणाविषय एकादशाहादिश्राद्धादयः," and adds the following : "क्षत्रियस्तु दशाहेन स्वधर्मनिरतः शुचिः" इति पराशरवाक्यात् । क्षत्रियस्तु दशाहमाशौचं तदपि स्वधर्मनिरतत्वे चेत् । यद्वा । दशाहो विधिविशेषो नत्वशौचावधिः । यतो द्वादशाहेन क्षत्रियस्य शुद्धिः सर्वस्मृतिषु स्मर्यते." And Vallabha adds : "दशाहोऽत्र विधिविशेषो न तु दश दिनानि." The explanation of Mallinàtha, as well as Hemâdri, appears to be correct. It is not clear what is the particular rite called दशाह, if any so called, that is referred to by Chàritravardhana and Vallabha.—**पुर एवोपवने**, There are two kinds of ceremonies constituting what is called the 'अन्त्येष्टिः' or the funeral rites. The first class of ceremonies are those that are performed during the period of ten days of mourning. These, as a rule, should be performed in the burning ground. The other class of ceremonies are performed after the tenth day and these are the ceremonies, it appears, here referred to. These ceremonies may be performed at home, in a cow-shed or a garden attached to the house. And the poet means that though Aja could have returned to the city and celebrated the ceremonies, to be performed after the mourning period, at home, he nevertheless performed these rites in the very garden where Indumatî died, and returned home after everything had been done. So great was his sorrow and reluctance to return alone to that house whence he had departed with Indumatî, and where he would now have to perform her funeral obsequies.

P. 248. St. 74.—**तया विना**. Hemâdri gives reason in the following words : "निष्प्रभत्वात्".—**परिवाहमिवावलोकयन्**, 'Seeing as it were the outflow of his grief.' Hemâdri remarks : "तस्य शोकस्य तत्र मार्गीकृतत्वात्." परिवाह means the flow of water that passes through a sluice, and the poet means that the suppressed sorrow of Aja found its way out like water, that being dammed into a collection finds its way out through a sluice.

P. 248. St. 75.—**सवनाय दीक्षितः**, One who has taken **दीक्षा** or has undergone the initiative ceremony of a sacrifice is not at all allowed to leave the place of sacrifice until it is completed. The sacrificer should remain in his seat every day at sun-rise and

sun-set : "मा त्वान्यत्र दीक्षितविमितादादित्योऽभ्युदियाद्वाऽभ्यस्तमियाद्वा." Baudhâyana Sûtra, Somaprakara*n*a.—**शिष्येण किलान्वबोधयत्**, Hemádri remarks : "अन्तेवासिना वामदेवेन." And Châritravardhana has the following : "स्वयं गृहीतदीक्षत्वाद्वशिष्ठः शिष्यं प्राहिणोदित्यर्थः".

P. 249. St. 76.—**न भवन्तमुपस्थितः स्वयं**, Hemádri gives the reason for Vas*is*tha's not coming personally to see the king : "दीक्षितेन न किल गन्तव्यमिति." And Chàritravardhana and Sumativijaya have the following : "विहितसंकल्पः क्वापि न व्रजेदिति." And Vallabha says : "दीक्षितेन किल नागन्तव्यमिति । यदि वा । दुःखिताः आश्वासनीयाः इति कृताचारः." —**प्रकृतौ स्थापयितुं ततश्युतं**, A proverbial saying.

P. 249. St. 77.—**विश्रुतसत्त्वसार**, Hemâdri explains it as : "विश्रुत विख्यातं सत्त्वं सारो यस्य तस्य संबोधनं । हर्षविषादयोरेकरूपा बुद्धिः सत्त्वं."—**हृदि चैनामुपधातुमर्हसि**, A proverbial saying.

P. 250. St. 78.—**अजन्मनः पुरुषस्य पदेषु**, Chàritravardhana : "अजन्मनो जन्मरहितस्य पुरुषस्य विष्णोः पदेषु भूम्यन्तरिक्षस्वर्गेषु." And Hemàdri has : "स्वर्गमर्त्यपातालेषु." And Vallabha gives the following : "भूर्भुवस्स्वर्लक्षणेषु."—**ज्ञानमयेन पश्यति**, Sumativijaya gives the substance of the passage in the following words : "भुवनत्रये कालत्रयस्य वार्ता गुरुर्वशिष्ठो ज्ञानेन जानातीति भावः."

P. 250. St. 79.—**तृणबिन्दोः**, Hemàdri explains : "अत्रिवंश्यात्स्वर्गराज्यहरणे परिशङ्कितः."—**हरिणीं सुराङ्गनाम्**, Hemádri explains it as : "यद्वा । किंविशिष्टां सुराङ्गनां हरिणीं सुवर्णप्रतिमामतितेजस्विनीमित्यर्थः," and supports it by citing the following : "हरिणी स्यान्मृगी हेमप्रतिमा हरिता च या" । "वृद्धिरादैच" Pâ*n*ini, I. 1. 1. इति सूत्रे न्यासे तुल्यविभक्तिकानां तद्गुणसमारोपो दृष्टो यथा सिंहो माणवक इति."

P. 250. St. 80.—**शमवेलाप्रलयोर्मिणा**, *Cf.* Chàritravardhana and Sumativijaya : "कल्पान्तकालकल्लोलसदृशेन." प्रलय means the final destruction of the world brought about by a deluge as predicted by the several Purâ*n*as ; and a प्रलयोर्मि is a wave that will, according to the theory of the Purà*n*as, rise at that time. वेलाप्रलयोर्मि is a 'destructive wave breaking the barriers of the coasts.'—**प्रमुखाविष्कृतचारुविभ्रमाम्**, Hemâdri analyses : "यद्वा । प्रकृष्टेन चारुणामुखेन आविष्कृतः प्रकटीकृतश्चारुर्मनोहरो विभ्रमो विलासो यया तां तथोक्तां."

P. 251. St. 81.—**परवान्**, Châritravardhana and Sumativijaya render it by "शक्राधीन इत्यर्थः."

P. 251. St. 82.—**क्रथकैशिकवंशसंभवा**, The Krathakais'ikas are the same as the Vaidarbhas. See our note to stanza 39, Canto V. *Cf.*

Vallabha : "विदर्भवंशसंभूता," and Châritravardhana says : "क्रथकैशिकयोर्विदर्भेश्वरयोर्वंशसमुद्भवा."—महिषी, Châritravardhana explains it by "पट्टराज्ञी." The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Amara produced by the Northern Mss. "कृताभिषेका महिषी" इत्यमरः । See readings.

P. 252. St. 83.—अपायचिन्तयालं, Hemâdri and Châritravardhana render it as : "नाशचिन्तयालं,"—उपस्थिता, Hemadri. Châritravardhana and Sumativijaya explain it by : "नित्या."—कलत्रिणः, Châritravardhana remarks : "राज्ञां भूरेव प्रिया" इत्यर्थः.

P. 252. St. 84.—मदवाच्यम्. Is equivalent to "मदेन यद्वाच्यं तत्." 'any thing censurable done through arrogance,' the arrogance being in the present case that which good fortune was likely to produce. *Cf.*, Châritravardhana and Sumativijaya : "राज्याभिगमेन यत्तवापयशो नासीत्तेन तच्छ्रुतं प्रादुर्भूतं । संप्रति त्वदधिगतदुःखपरित्यागेन तच्छ्रुतमत्यंतं प्रकटय."

P. 253. St. 85.—भिन्नपथाः, On this both Châritravardhana and Sumativijaya make the following remark : "केचिन्मर्त्याः केचित्पशवः केचिद्देवाः केचिद्रक्षांसीति." 'Of those that dwell in heaven the conditions are different;' literally, 'the ways of those who enjoy the other world differ according to their respective actions.' The above explanation of Châritravardhana and Sumativijaya does not properly bring out what the poet means. Souls are nowhere described as entering into bodies of different species while they live in heaven, but they do so only on earth.—अनुमृता, Châritravardhana says : "अथ वा । अनुमृतेन्दुमती विशेषणं । मृङ् प्राणत्यागे । सोपसर्गस्यास्य सकर्मकत्वात्कर्मणि क्तः । त्वयानुमृता यस्यास्मा पश्चात्त्वयानुमृतं सा इत्यर्थः । अथ वा । भावे क्तः । अनुमृतं मरणं यस्यास्सेति." And Hemâdri has : "अनुमृतं यस्या गतिं प्रथमान्ता वा."—परलोकजुषां, Vallabha remarks : "प्राप्यते मरणं यत्र बन्धनं यथाः सुखं वधूः । स तत्र नीयते स्तेनकर्मणा गच्छस्तितः."

P. 253. St. 86.—अपशोकमनाः, Analyse, "अपगतः शोको यस्मात्तदपशोकं गतदुःखं मनो यस्य सः."—स्वजनाश्रु, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "बन्धुस्वस्वजनाः समाः" इत्यमरः ।

P. 254. St. 87.—मरणं. Both Hemâdri and Châritravardhana explain it as : "नित्यत्वात्." And further Châritravardhana says : "अत्र मरणशब्देन स्थूलशरीरपरित्यागोऽवगन्तव्यः शरीरिणः स्वात्मनो नित्यत्वात्." *Cf.* Buddha. Canto III. verses 58-59. "किं केवलस्यैव जनस्य धर्मः सर्वप्रजानामयमीदृशोऽत्र." । and "हीनस्य मध्यस्य महात्मनो वा सर्वस्य लोके नियतो विना-

श:"।—विकृतिः, Hemâdri, Chàritravardhana and Sumativijaya render it by "विकारः."—क्षणमप्यवतिष्ठते श्वसन्, Hemâdri gives the following reason: "विनाशित्वात्पिण्डस्य."

P. 254. St. 88.—कुशलद्वारतया, 'Regarding it (*i. e.* प्रियनाशं) as the door which leads to blessedness.' *Cf.* Hemâdri: "न चेष्टजनविरहसन्तापो युक्त एवेत्याह."

P. 254. St. 89.—स्वशरीरशरीरिणौ &c., Here स्व is contrasted with "बाह्यैः."—विरहः किमिवानुतापयेद्वद &c., On this Hemâdri gives the following note: "सदा संयुक्तयोर्देहात्मनोरपि वियोगोऽवश्यंभावी किं पुनर्बाह्यानामन्येषामिति। तदुक्तं। "सहजीवितयोर्नास्ति सम्बन्धः कायजीवयोः। पुत्रमित्रकलत्रेषु सम्बन्धः केन हेतुना" इति. And Chàritravardhana has the following: "यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्धं तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रैः। पृथक् च ते चर्मणि रोमकूपाः कुतो हि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये" इति.—श्रुतसंयोगविपर्ययौ, *Cf.* Buddha. Canto VI. verse 20 "भवन्ति ह्यर्थदायादाः पुरुषस्य विपर्यये"

P. 255. St. 90.—शुचां वशं गन्तुं नार्हसि, A proverbial saying. On this Hemâdri quotes the following from Gitâ: "जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च। तस्मादपरिहार्येऽर्थे नानुशोचितुमर्हसि."—द्वितयेऽपि, Hemâdri: "द्वौ अवयवौ येषां द्रुमाणां ते। वातीति शेषो वा। द्वितये इति बहुत्वं [बहुवचनं Ms.] अवयवभेदेन। "प्रथमचरमतया°—" Pâ*n*ini, I. 1. 33. इति सर्वनामता. Translate the aphorism:—" And also the words प्रथम 'first,' चरम 'last,' words ending with the affix तय, अल्प 'few,' अर्ध 'half,' कतिपय 'some,' and नेम 'half,' are optionally सर्वनाम, before the *nom. plu.* termination."—चलाः, Sumativijaya gives the substance of the passage in the following words. "पवनेन वृक्षाः किल कम्पन्ते न गिरयः। तथा नीचाः शोकेनाभिभूयन्ते न तु त्वादृशा अतः शोकं दूरीकुरु इति भावः."

P. 255. St. 91.—प्रतिगृह्य वचो &c., For a parallel expression in the same sense compare Buddha. Canto V. verse 71. "प्रतिगृह्य ततः स नरराजा &c."—मुनि, Hemâdri says, "वामदेवं."—शोकघने, 'filled with grief' The grief was so overwhelmingly great that it occupied the whole of the space and left no room in it for the advice of Vâmadeva.—अस्य, Hemâdri makes the following remark, "अस्येति हृदीत्यनेन सम्बध्यते."—हृदि नदलब्धपदं, A proverbial saying.

P. 255. St. 92.—अवितथसूनृतेन तेन, 'By him whose words were not only agreeable but also true.' This epithet seems to be employed here to show that in surviving some years after Indumati's death Aja did not act contrary to his express desires contained in his lamentation. Although he lived eight years after her death he was yet अवितथसूनृत, for he passed those years because his son was still

an infant, ' स्तनंधयत्वात्.'—सादृश्यप्रतिकृति, As for the द्वन्द्व compound see commentary.—स्वप्नेषु, On this epithet Hemádri gives the following note : " स्वप्नस्वरूपं तु जाग्रद्दशायामदृष्टवशादात्मा सुखदुःखभोगमुपभुंक्ते [° भोगं भुंक्ते Ms.] । तथा स्वप्नावस्थायामपि पूर्वकर्मवशादात्मा नाडीभिर्निगत्य [नाडीतो निर्गत्य Ms.] तत्र देशे नवं देहं निर्माय पूर्व शरीरं [पूर्वशरीरं Ms.] तत्रैव देशे प्राणवायुना रक्षन् स्वप्नभोगान् भुंक्त्वा पुनरपि पूर्वशरीरं प्रविशति । तत्रार्थे शातातपी श्रुतिः । " प्राणेन रक्षन्नवरं कुलायं । बहिः कुलायादमृतश्चरित्वा । स ईयते अमृतो यत्र-कामो हिरण्मयः पौरुष [पुरुष Ms.] एकहंसः । स्वप्नान्त उच्चावचमीयमानो । रूपाणि देव [देव Ms.] कुरुते बहूनि " इति.—समाः, Hemádri remarks " हायनो श्चा शरत्समा " । रूपनिर्देशाभावाच्च । समाशब्दः एकवचनान्तो बहुवचनान्तो वा । तथा प्रतापमार्तण्डः । " शरत्स्त्रियां समा श्चान्वे भूम्न्येकत्वे च दृश्यते. " The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " संवत्सरो वत्सरोऽब्दो हायनोऽस्त्री शरत्समाः " इत्यमरः ।

P. 256. St. 93.—प्लक्षप्ररोह इव सौधतलं बिभेद, On this Hemádri remarks : " प्लक्षस्यधो गच्छति मूलैरिति क्षीरस्वामी । महाराष्ट्रभाषा । पारिवियांचा पिंपरी [पिंपरि Ms.]. " From this Marathi synonym it appears that Hemádri was a Maráthâ Bráhmaṇa or at least one thoroughly conversant with Marathi. His father's name was, it appears from the colophon given at the end of each canto, Íśvarasúri. If Súri were no objection his father appears to have been a native of Karnátak, or that part of Karnátak which is near the Mahárāshṭra territory. His son Hemádri must have settled in Mahárāshṭra from his childhood. The name Íśvara is generally found among the Karnatic Bráhmins. On this passage Chāritravardhana remarks : " चोत्स्ये तदा प्रियां स्वर्ये इति मरणं साधमेवाजार्मादित्यर्थः "—भिषजां, Subjective Genetive, Chāritravardhana : " कर्तरि षष्ठी । अमात्यमचिकित्सितं " ।

P. 256. St. 94.—प्रायोपवेशनमतिः, ' Desirous of starving himself to death. ' प्राय or प्रायोपवेशन means ' refusing food and awaiting death.' *Cf.* Hemádri : " संन्यासवत्यनशने पुमान्प्रायः इति तत्र संन्यसनं सर्वत्यागो मरणाध्यवसायः इति क्षीरस्वामी । क्षत्रियाणां संन्यासस्य निषिद्धत्वात्. "

P. 257. St. 95.—लीलागारेष्वरमत, Hemádri gives the following note on this : " मरणं किन्त्वसौ [कृत्वासौ Ms.] दनयो कीश्चत्र बध्यते [न बध्यते Ms.] इति शृङ्गारतिलके (?) । " मरणान्यागवस्थापि मरणं नाभिनंदितं [मरणमनुमोदितं Ms.] । शृङ्गारे मरणादूर्ध्वं पुनर्योगो विधीयते " इति काव्यादर्शे.—आमात्य, Hemádri explains it by : " दिवस्यन्तं प्राप्येत्यर्थः. " One of the three manuscripts of Hemadri's Darpaṇa gives : आदित्यन्तं प्राप्येत्यर्थः. "—संगतः, Chāritravardhana says " हरिणानाम्न्या सुरस्त्रिया मिलितः

सन्. '—जह्नुकन्या. Jahnu was a descendant of Purûravas, and son of Suhotra This prince, 'whilst performing a sacrifice, saw the whole of the place overflowed by the waters of the Ganges. Highly offended at this intrusion, his eyes red with anger, he united the spirit of sacrifice with himself, by the power of his devotion and drank up the river. The gods and sages, upon this, (came to him, and) appeased his indignation, and re-obtained Gangâ from him, in the capacity of his daughter; (whence she is called Jâhnavi). ' Wilson's Vishnu Purâna, Vol. IV. p. 14. See our note on Meghadûta stanza 54. See also our note to verse 85, Canto VI. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following definition produced by the Northern Mss. मन्दाक्रान्ताच्छन्दः । तल्लक्षणम्—" मन्दाक्रान्ता जलधिषडगैर्म्भौ नतौ ताद्गुरू चेत् " इति ।

CANTO IX.

P. 258. St. 1. Hemadri gives a general note on this and says, "इदानीं यमकं दर्शयिष्यन् दशरथव्यापारं वर्णयति."—उत्तरकोसलान्. Two Kosalas are generally mentioned, the उत्तरकोसलाः and the प्राक्कोसलाः. The former was the country which formed the kingdom of Raghu and his descendants. See our note to stanza 5 Canto III.—समाधिगम्य &c., *Cf.* Buddha, Canto V. stanza 11.' "अधिगम्य ततो विवेकजं &c."—समाधिजितेन्द्रियः, Hemâdri renders it by "समाधिश्चित्तैकाग्र्यं तेन." Châritravardhana by "नियमेन," and Vallabha by "धर्मार्थकामानामेकत्वतया । अविरोधेन । संयमेन वा," and goes on saying: "अष्टांगयोगसमाधिना यतानि (appears to be his reading) इन्द्रियाणि येन स यमनियमप्राणायामप्रत्याहारगुणसमन्वितः । ध्येयध्यानधारणा समाधिः." The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "समाधिर्नियमे ध्याने" इति कोषः । And Hemâdri observes: "जितेन्द्रियस्य नृपतेर्नीतिशास्त्रानुसारिणः । भवन्ति ज्वलिता लक्ष्म्यः कीर्तयश्च नभः स्पृशाः" इति कामन्दकः.—प्रशशास, Hemâdri remarks "लब्धपालनं हि राजधर्मः."—महारथः, Hemâdri says: "इति युद्धकौशलं । यद्वा । धनुर्वेदस्य तत्त्वज्ञः सर्वशास्त्रविशारदः । सहस्रं योधयत्येकः स महारथ उच्यते" । "महारथाद्दशगुणो विज्ञेयोऽतिरथो बुधैः." Vallabha also quotes the same.—यमवतां. Hemâdri explains: "यमा विद्यन्ते येषां तेषां," and quotes the following from Yâjnavalkya. "ब्रह्मचर्यं दया क्षान्तिर्दानं सत्यमकल्कता । अहिंसास्तेयमाधुर्ये दमश्चेति यमाः स्मृताः." And Châritravardhana, Vallabha and Sumativijaya have the following. "अहिंसासत्यमस्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः" इत्यादयो यमाः. Both Hemâdri and Châritravardhana define the यमक as, "स्यात्पादपदवर्णानामावृत्तिः संयुतायुता । यमकं भिन्नवाच्यानामादिमध्यान्तगोचरं" इति वाग्भटः ।—यमवतामवतां च धुरि स्थितः. A proverbial saying.

P. 258. St. 2.—नगरन्ध्रकरौजसः. 'Mahishâsura, flying from the battle in which Târaka had been slain by Kârtikeya, took refuge in a cave in the Kraunch mountain. A dispute arising between Kârtikeya and Indra as to their respective prowess, they determined to decide the question by circumambulating the mountain the palm to be given to him who should first go round it. Disagreeing about the result, they appealed to the mountain, who untruly decided in favour of Indra. Kârtikeya, to punish his injustice, hurled his lance at the mountain Kraunch, and pierced, at once, it and the demon Mahisha.' Wilson's Vishnu Purana, Vol. II. p. 119 note. See also Dowson's Hindu Mythology, p. 159

See our note on Meghadûta, Stanza 61. Châritravardhana says : "नगस्य क्रौञ्चाद्रेः रन्ध्रकरः परशुरामः स्कन्दो वा," and Vallabha has : "नगो क्रौञ्चः क्रौञ्चो तयोः रन्ध्रकरौ भार्गवकुमारौ परशुरामकार्तिकेयौ तद्वदोजो बलं यस्य &c." And Hemâdri has: "नगस्य क्रौञ्चाद्रेः रन्ध्रकरः स्कन्दो भार्गवो वा," and quotes the following : "हंसद्वारं भृगुपतियशोवर्त्म यत्क्रौञ्चरन्ध्रं" इति मेघदूते.—**गुणवत्तरं,** Châritravardhana renders it as : "गुणा दयादाक्षिण्यादयस्तैरधिकं."—**अस्य,** construe this with सनगरं प्रकृतिमण्डलं गुणवत्तरमभवत् .

P. 259. St. 3.—**बलनिषूदनं,** Hemâdri discusses the following: "बलं दैत्यविशेषं निषूदयति मारयतीति । "अनुदात्तेतश्च हलादेः" Pâṇini, III. 2. 149. इति युचि प्राप्ते "सूददीपदीक्षश्च" Pâṇini, III. 2. 153. इति प्रतिषिद्धे [प्रतिषेधः Ms.] कथं मधुसूदनः बलनिषूदनः । अनित्योऽयं प्रतिषेधः । प्रतिषेध इति योगविभागाद्भ्रायते । अथ वा । नंद्यादिषु मधुसूदनादयो द्रष्टव्याः [वक्ष्यन्ते Ms.] इति काशिकावृत्तौ." Translate the aphorisms :—'The affix युच् comes in the same sense after such intransitive verbs as are Atmanepadi and begin with a consonant and are अनुदात्तेत् *i. e.* have a gravely accented vowel as indicatory.' 'The affix युच् does not come after the verbs 'सूद् to strike,' 'दीप् to shine,' and 'दीक्ष् to initiate.' Pandit gives the following note, 'this should properly be read वलनिषूदन, the killer of *Vala,* or the *coverer* of the heavenly cows, *i. e.* the rain waters, from वृ to cover. In numerous passages of the *R*igveda Indra is mentioned as having broken or destroyed Vala and thereby set free the cows: *e. g.* "इन्द्रो यद्वज्री धृष्यमाणो अन्धसाभिनद्वलस्य परिधीन्" I, 52, 5. Also, "यो हत्वा अहिमरिणात्सप्त सिन्धून् यो गा उदाजदपधा वलस्य" II, 12, 3. And "इन्द्रो वलं रक्षितारं दुघानां करेणेव वि चकर्ता रवेण" X. 67, 6. Vala was subsequently personified into a demon, the son of Anáyushá and brother of V*ri*ttra. See Harivams'a, Bhavishya Par. Adh. 241. See our note to verse 62, Canto III.—**मनुदण्डधरान्वयं,** Hemâdri explains it as: "मनोर्दण्डस्य आज्ञाया धरोऽन्वयो वंशो यस्य नृपस्य तं । यद्वा । दण्डधरो राजा मनुश्चासौ दण्डधरश्च तस्यान्वयो यस्य तं." Manu is the name of the first king of Ayodhyâ, which, it is said, was built by him. He was the son of Sûrya and brother to Yama. See Râmâya*n*a, Bâlaká*nd*a 5. 6.—**श्रमनुदं,** On this Hemâdri makes the following note: "नृपः कृतकार्यस्य भृत्यादेरर्थं दत्त्वा [अर्थदानेन Ms.] खेदं निरस्यति । इन्द्रोऽपि काले वर्षणात्कृतकर्मणः कर्षकादेः [कर्षुकादेः Ms.] श्रमनुत् । इन्द्रो हि वर्षति । and goes on saying, यद्वा । नृपः कर्षुकादेः [कर्षुकादेः Ms.] । इन्द्रः कृतयज्ञादेः श्रमनुत्." And Châritravardhana has: "समये प्रस्तावे या वर्षिता वृष्टिदानं तेन । द्वितीये पक्षे । समये यागान्ते या वर्षिता दक्षिणा तया कृतं यत्कर्म कृष्यादि यज्ञादि च येस्तै कृतकर्मणः कार्षुका ऋत्विजश्च तेषां श्रमं क्रमं नुदति दूरीकरोतीति श्रमनुत्तं," and goes on saying, "इन्द्रः कृतकर्मणां कार्षुकाणां श्रमनुत् । दशरथस्तु ऋत्विजां श्रमनुत् ."

P. 259. St. 4.—**सपत्नजोऽभिभवः कृत एव**, Châritravardhana and Sumativijaya give the substance of this in the following words: "दैवकृतस्य रोगाशुपद्रवस्याभावे वैरिविहितो मानवोऽभिभवः कृतो भवेदिति भावः." —**क्षितिरभूत्फलवती**, On this epithet both Hemâdri and Dinakara make the following remark: "एतेन देवानुकूल्यं."—**शमरते**. Châritravardhana remarks: "एतेन देवानुकूलत्वमुक्तं."

P. 260. St. 5.—**इशदिगन्तजिता**, Hemâdri here quotes the following from वाग्भट. "चनलः कीर्तियद्वादोदश वा ककुभः क्वचित्" इति.—**अहीनपराक्रमं**, Hemâdri analyses: "यद्वा । अहीनां सर्पाणां इनस्य शेषस्येव पराक्रमः पौरुषं यस्येति वा । "इनः स्वामिनि सूर्ये च तथैव विपर्यिण्यपि" इति विश्वप्रकाशः । यद्वा । अहीनेषु शूरेषु पराक्रमो यस्येति । यद्वा । "हि गतौ वृधौ च"। हिन्वन्ति भंगं प्राप्नुवन्ति रणे इति हयः । न हयः अहयो राजानस्तेषां इना प्रभवस्तेषु पराक्रमो यस्य सः । यद्वा । अः गरुडः हिः सर्पः तयोः इनः स्वामी विष्णुः तस्य पराक्रमो यस्य तं "अः कृष्णे विनतासूनौ अः विधातरि मन्मथे" इति अनेकार्थः । यद्वा । अहिः शेषः सर्पः इनः सूर्यः तयोः पराक्रम इव पराक्रमो यस्य सः । यद्वा । अहीनां इनः स्वामी शंभुः । तद्भूषणधारित्वात् । तस्येव पराक्रमो यस्येति । अहानां इनाः स्वामिनः महासर्पास्तान् विवर्तान्यहीनपो गरुडः तस्येव रः तोक्ष्णः आक्रमो यस्येति वा । अहीनान् पातीति अहीनपाः महत्तराः तेषु रस्येव वह्नेरिव आक्रमो यस्येति वा." These explanations appear very pedantic. Mallinâtha generally avoids such a laboured attempt of explanation. Châritravardhana says "अथ वा । अहयो भुजङ्गमास्तेषामिनः स्वामी शेषनागस्तद्वत्पराक्रमो यस्य स तं शेषस्य अमुष्य च भूमिधारित्वायुक्तं विशेषणं." This explanation is also laboured and far fetched.

P. 260. St. 6.—**यमपुण्यजनेश्वरौ सवरुणौ अनुययौ**. Hemâdri: "वसुवृष्ट्या धनदं । रुचा रविं । असतां नियमनाद्वरुणं । यमं समतया । वरुणो हि पाशमहस्तेणासतो नियमयति । तथा च श्रुतिः । " अक्तेन [अनृतं Ms.] खलु वै क्रियमाणं वरुणो निगृह्णाति " इति. And further discusses, यमपुण्यजनेश्वराविन्यत्र आनङभावे "देवताद्वन्द्वे च" Pânini, VI. 3. 26. इन्यत्र काशिकावृत्तिः "आनङतो द्वन्द्वे", Pânini, VI. 3. 45. इति वर्तमाने पुनर्द्वन्द्वग्रहणं प्रसिद्धसाहचर्यार्थं । अत्यन्तसहचारिते लोकविज्ञाते द्वन्द्व इति निपात्यते । तत्र लोके प्रसिद्धसाहचर्याः वेदे च सहचरितत्वनिर्देशस्तेषामिह ग्रहणं भवति । तेन शिववैश्रवणाविन्यादौ नेति । तथा हरिविष्णुवृषाकपीति ।" Varu*n*a is a Vedic deity. Among other qualities the deity is represented as a judge who punishes sin and seizes the wicked. The following passages (quoted from the German *Wörterbuch*) give Varu*n*a's character as a judge: "अनृतं क्रियमाणं वरुणो गृह्णाति." Tai. Brâh. I. 7, 2, 6. "ईशो दण्डस्य वरुणो राज्ञां दण्डधरो हि सः ॥" 'Varu*n*a is the lord of punishment, for he holds the sceptre even over kings.' Manu. 9. 245. "वरुणो वा एतं गृह्णाति पाप्मना गृहीतो भवति," S'at. Brâh. XII. 7, 2, 17. "द्वौ संनिषद्य यन्मन्त्रयेते राजा तद्वेद वरुणस्तृतीयः" Atharva Veda IV. 16. For the functions and duties of Varu*n*a and Yama, see also Muir's Sanskrit Texts Vol. V.

—**पुण्यजनेश्वर**, 'Lord of the Pu*n*yajanas,' a race of demi-gods, named along with certain other kinds of them as in the following passage from the Atharva Veda, "गन्धर्वाप्सरसः सर्पाः देवाः पुण्यजनाः पितरः" Athar. Veda VIII. 8, 15.—**समतया**, Châritravardhana renders as, "समलोचनप्रतिपादनेन."—**नियमनात्**, Châritravardhana explains: "निजमार्गस्थापनाच्च.—**अरुणाग्रसरम्**, Châritravardhana discusses the epithet in the following way, ननु। "पुरोऽग्रतोऽग्रेषु सर्तेः", Pá*n*ini, III. 2, 18. इति क्विप्प्रत्यये एकारान्निपातादरुणाग्रसरमिति कथं। सत्यं। पुरोऽग्रतोऽग्रेषु सर्तेरिति सप्तमीबहुवचनार्थमकारान्तत्वं न निपातमिति वदन्ति साधुत्वं । तत्र प्रामाण्यधुरमधिगच्छति । काशिकान्यासकारमहाभाष्यादिविचारविरुद्धत्वात् । वयं च सरतीति सरः इति । पचाद्यच् । अग्रस्य सरोऽग्रसरः इति समाधानं कुर्मः । किं च । पदद्वये तृतीयाकरणान्नियमनादित्यत्र पञ्चमीकरणात्प्रक्रमभंगः इति काव्यप्रकाशः । यमादिविशेषणत्वेन सवरुणावित्यस्याप्राधान्यत्वाद्रात्निसूचकत्वेऽपि यमकतात्पर्यत्वाददुष्टमन्यत्." Translate the aphorism :—The affix ट comes after the verb सृ 'to move', when the words in composition with it, are पुरः, अग्रतः and अग्रे, all meaning 'in front of or before.' As पुरः सरति=पुरःसरः 'who goes in front, a harbinger.' So also अग्रतः सरः and अग्रसरः 'going in front, a leader.'

P. 260. St. 7.—**शशिप्रतिमाभरणम्**, Hemádri makes the following remark, "शशिप्रतिमत्वं मद्यस्य रात्रौ प्रायेण सेवनात्," and Châritravardhana has the following, "निशि मदिरास्वादनं हि चन्द्रप्रतिमाभरणत्वं युक्तं."—**नवाः**, Châritravardhana takes it to be one word, and makes the following remark, "नूतनाः स्त्रियो हि लोभनीया भवन्तीति." Hemâdri takes it like Mallinátha, but he also makes the following remark, "नवेति वा पदं ॥ वा समुच्चये ॥ नवा नूतना तदा नवयौवनं विशेषणं तस्य"।—**दुरोदरं**, Hemádri remarks, "चत्वारि कामज्यान्येतानि व्यसनानि क्रोधजानि त्रीणि एवं सप्त"। "स्त्रियोऽक्षा मृगया पानं वाक्पारुष्यं च पंचमं । महच्च दण्डपारुष्यमर्थदूषणमेव च " इति । क्रोधजान्यग्रे वक्ष्यति ।

P. 261. St. 8.—**प्रभवति**, Chàritravardhana renders it by "स्वामिनि".—**वागपरुषा परुषाक्षरमीरिता**, Châritravardhana makes the following remark: "शत्री च कर्कशवाक्यः। असौ तु न तथेत्युत्कर्षातिशयोक्तिः। न क्षरन्त्यक्षराणीति."—**न वितथा परिहासकथास्वपि**, Hemâdri remarks: "तथा शब्दः सत्यार्थेऽव्ययं । विगतं तथा सत्यमत्रेति । अत्र । सुबोधिनीकारः । "ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य " Pánini, I. 2. 47. इति ह्रस्वता । सर्वत्र वाग्भेदास्तु त्रिसूत्रे इत्यनुवर्तते । अत्र ह्रस्वत्वे टाप् । अन्यथा टापाभावाद्विसर्गः श्रूयेत."

P. 261. St. 9.—**रघूद्वहात्**, Hemádri quotes here the authority of Dhananjaya in support of the synonym he uses, and says: "उद्वहस्तनयः पोतः" इति धनञ्जयः।—**अयोद्वृयोऽभूत्**, On this Hemâdri quotes the following from Kámandaka. अर्थदूषणपारुष्ययोरभावादुक्तः। "दूष्यस्य दूषणार्थं तु परित्यागो महीयसः। अर्थस्य नाततत्त्वज्ञरर्थदूषणमुच्यते। महत्स्वप्यपराधेषु दण्डं प्राणा

न्तिकं त्यजेत् । कृते राज्यापहारात् तत्र दण्डः प्रशस्यते [प्रणश्यते Ms.] " इति । मनुना तु व्यसनान्यष्टादशोक्तानि । " मृगयाक्षा दिवा स्वप्नः परिवादः स्त्रियो मदः । तौर्यत्रिकं वृथाट्या च (?) कामजो दशमो गणः । पैशुन्यं साहसं द्रोहमीर्ष्यासूयार्थदूषणं । वाग्दण्डजं च पारुष्यं क्रोधजेऽपि गणोऽष्टकः " इति । तत्र सप्त कष्टतमानि । यथाह । " पानमक्षाः स्त्रियश्चैव मृगया च यथाक्रमं । एतत्कष्टतमं विद्याच्चतुष्कं कामजे गणे । दण्डस्य पातनं चैव वाक्पारुष्यार्थदूषणे । क्रोधजेऽपि गणे विद्यात्कष्टमेतत्त्रिकं सदा " इति. And explains, " अयो लोहं हृदयं यस्य सोऽभूत् । रूपकसमासः । अयोरूपं कठिनं हृदयं यस्येत्यर्थः । गौर्वाहीक इतिवत् । " उपमैव तिरोभूतभेदा रूपकमुच्यते " इति काव्यादर्शे II. 66. । अय इव हृदयं यस्येति वा " । On this and the following verse Hemádri. Châritravardhana and Sumativijaya make the following remark: " इतः सप्तभिः श्लोकैर्दिग्विजयवर्णनं. "

P. 261. St. 10.—**अजयदेकरथेन**, On the latter half of this verse both Hemádri and Châritravardhana make the following remark. " तर्हि किमर्थं सेनामग्रहीदित्याह."—**जयतीत्रिहया चमूः**, On this Vallabha remarks: " एतेनात्मशौर्यगुणसंपदं निजसेनासमृद्धिं च दर्शयति. "

P. 262. St. 12.—**शमितपक्षबलः**, पक्षबल is the name of a mountain, and the epithet शमितपक्षबल refers to the legend that Indra lopped off the wings with which mountains, in former ages, used to fly about and torment the inhabitants of the world. These later legends are based upon the earlier legends or allusions in the Vedas where Indra is represented as having destroyed the mountains with his Vajra, the words expressing which idea are also used in the sense of clouds. See Dowson's Hindu Mythology. p. 125 under Indra. *Cf.* Hemadri and Cháritravardhana: " कश्चिदिन्द्रस्य सहत्वकांदित्यमाहुः ".

P. 263. St. 13.—**शतमख**. or **शतक्रतु**. ' Possessed of a hundred intelligences or wisdoms. ' शतक्रतु is a very old word, and क्रतु literally meant handiness, art, skill. wisdom. क्रतु also meant a sacrifice. as being an act done with skill or art. The legend that Indra became the lord of the gods by spreading one hundred sacrifices took its origin in a misunderstanding of the real sense of the epithet शतक्रतु in those passages of the Veda where it occurs.—**चरणयोरस्पृशत** . Hemádri observes: " चरणयोरस्पृशत्रिति सतम्यन्तं वा ", and thus construes it with चरणयोर्नखराग &c.

P. 263. St. 14.—**समनुकम्प्य**. Here Cháritravardhana observes. " राज्यादिकदानेन समनुकंप्य. "—**अनलकान**, Cháritravardhana says, " सम्भवादनलकानलकर्राहितान."—**अलकानवमां पुरीं**. Hemádri explains: " अलति भूषयति स्वस्थानमित्यलका । संज्ञायां वुन् । क्षिपकादित्वादित्वं न " । See our note on Meghadúta I. stanza. 7. Alaká is the capital of the lord of the Yakhas

and is situated on the mount Kailasa a snowy peak of the Himâlaya. It also forms the residence of his dependent deities. It is also called वसुधारा, वसुस्थली and प्रभा.

P. 264. St. 15.—**मण्डलनाभितां**. Hemadri, like Mallinátha, quotes Kámandaka and also gives the list of the twelve Ma*nd*alas. They are as follows: १ अरिः, २ मित्रं, ३ अरिमित्रं, ४ मित्रमित्रं, ५ अरिमित्रमित्रं, ६ पार्ष्णिग्राहः, ७ पार्ष्णिग्राहसारः, ८ आक्रन्दः, ९ आक्रन्दसारः, १० मध्यमः, ११ उदासीनः, and १२ विजिगीषुः, and quotes the following: "विजिगीषुररिर्मित्रं पार्ष्णिग्राहोऽथ मध्यमः। उदासीनः पुरोमेन्द्रौ षट्कं मण्डलमुच्यते। उदासीनो मध्यमश्च विजिगीषोस्तु मण्डलं। उशना मण्डलमिदं प्राह द्वादशराजकं " इति. Vallabha also quotes the same verses from Kámandaka. So does Chāritravardhana. The circle consists of twelve kings. They are, विजिगीषु or the central monarch. the five kings (अरिः, मित्रं, अरिमित्रं, मित्रमित्रं, and अरिमित्रमित्रं) whose territories are in front, the four kings (पार्ष्णिग्राहः, आक्रन्दः, पार्ष्णिग्राहासारः and आक्रन्दसारः) whose territories are in the rear of his kingdom, the मध्यम or intermediate and finally the उदासीन or indifferent king.

P. 265. St. 16.—**विसर्जितमौलिना**, On this epithet Hemádri remarks: " दीक्षितेन मुण्डितेन भाव्यं। त्यक्तमुकुटेन वा । भूपा हि यज्ञेषु वपनस्थाने मौलिं विसर्जयन्ति. " And Chāritravardhana has, " यावद्यज्ञमध्यर्यू राजा भवनीत्यादिशास्त्रोक्त्या विसर्जितस्वौलिः । यद्वा । "आधाने काले सोमे च वपनं " इत्यादिस्मरणान्मुण्डितशिरस्त्वं."—**भुजसमाहृतदिग्वसुना**, On this Hemádri remarks : " अनेन पवित्रत्वोक्तिः."—**वितमसा**, Hemádri says : " इति यज्ञाधिकारः."—**कनकयूपसमुच्छ्रयशोभिनः**, On this epithet both Hemádri and Chāritravardhana remark : " उदग्रत्वेन यूपा भवन्तीति भूत्युक्तत्वात्कनकयूपेन्युक्तिः शोभार्था। न तु वेधा । "हैमयूपस्तु शोभिकः" इति यादवप्रकाशेनोक्तत्वात् । On समुच्छ्रय Hemádri discusses, " उदिश्रयति?." Pā*n*ini, III. 3. 49. इति सूत्रे पाचे वक्ष्यमाणं विभाषाग्रहणं सिंहावलोकितन्यायेन इह सम्बध्यते । " कृत्यल्युटो बहुलं ", Pā*n*ini, III. 3. 113. इति वा । Translate the aphorisms :—" The affix ' घञ् ' comes after the verbs श्रि, यु, पू, and द्रु when the preposition उत् is in composition. " This debars the affix अच् (III. 3. 56). Thus उच्छ्रायः ' rising of a planet '; उद्यावः ' mixing '; उत्पावः ' purifying ghee '; and उद्रावः ' flight. ' How, do you then explain the form समुच्छ्रयः ? The word विभाषा ' optionally ' in the next Sūtra exerts a retrospective effect on this Sūtra, and the form is an optional one. This is a most unusual thing and is called सिंहावलोकनन्यायः ' the maxim of the lion's backward glance. ' It is used when one casts a retrospective glance at what he has left behind, while at the same time he is proceeding, just as the lion, while going onward in search of prey, now and then bends his neck backwards to see

if any thing be within its reach. "The affixes called 'कृत्य' (III. 1. 95.) and the affix 'ल्युट्,' are diversely applicable and have other senses than those taught before." It is said that Lakshmî serves two persons only, *viz.*, the god Vishnu and a virtuous king.—**तमसा**, is the name of a river that empties itself into the Gangâ below Pratish*th*âna.

P. 265. St. 17.—**असमभासम्**. Either from भास् *f.*, in which case it should be taken, with Châritravardhana, as an objective accusative governed by अभासयत्, or from भास *m.*, in which case it should be taken, with Mallinâtha, as an adverb.—**अजिनदण्डभृतं**, On this Hemâdri makes the following remark: "दीक्षितर्मीश्वरोऽनुगविशतीत्यागमः"—**मृगशृङ्गपरिग्रहाम्**, Hemâdri: "यथा भारते कुशलवोपाख्याने। "मृतशोभास्तु ये योधास्ते गत्वा राममब्रुवन्। समासीनं दीक्षितञ्च मृगशृङ्गपरिग्रहं। त्वचं हरोविसानञ्च दण्डधारं सुमेखलं" इति.

P. 266 St. 18.—°**प्रयतः**, Hemádri explains प्रयतः by "पवित्रः."—**वनमुचे**, On this both Cháritravardhana and Sumativijaya make the following remark: "लोकरक्षार्थं वृष्टेरपेक्षितत्वादिन्द्रमेव नमश्चक्रे" इति.—**अवभृथप्रयतः**, "अवभृथे यज्ञान्तस्नानं," says Cháritravardhana. Avabh*r*itha is the name given to a ceremony performed by the sacrificer with sixteen other officiating priests at the end of a Soma sacrifice. That ceremony consists chiefly in collecting the articles, the sacrificial implements, and the refuse of the principal sacrifice, such as the Soma plant or its pieces after the juice has been extracted from them (then called ऋजीष), and in taking them down to the bank of a river or a stream, and there throwing them into the water after offering oblations to the god Varu*n*a. The sacrificer and his wife are enjoined to bathe there rubbing each other back to back. That is the first bathing that the sacrificer and his wife can enjoy from the time of the दीक्षा or initiatory vow, for from that time to the time of the अवभृथ they can neither bathe nor change their clothes, whether the interval be short or long, extending over several days, or, as in some cases, over several months. Though after the performance of the अवभृथ three more ceremonies (called the उदयनीय, the आनुबन्ध्य, and the उदवसानीय) have to be performed before the sacrifice can be said to be complete, yet, as the अवभृथ is the most important of the final ceremonies, it is usual to speak of a sacrifice as finished as soon as that is performed. See *Baudhâyana's Agnishtoma Sûtra*, Pras'na 5, Sût. 62, 63. Sacrificers fresh from the Avabh*r*itha are full of sanctity, and blessings given by them

immediately after, are supposed to be peculiarly efficacious.—**नमुचेररये**, *Cf.* Vallabha : " यज्ञे समागताय. " Namuchi is the name of a demon with whom Indra waged war. *Cf.* *Ri*gveda, I, 53, 7. " इन्द्र निबर्हयो नमुचिं नाम मायिनं." " It is said that this demon was slain by Indra with foam of water. The legend of Namuchi first appears in the *Ri*gveda, where it is said that Indra ground " the head of the slave Namuchi, like a sounding and rolling cloud, " but it is amplified by the commentator and also in the शतपथब्राह्मण and Mahàbhârata. When Indra conquered the Asuras there was one Namuchi who resisted so strongly that he overpowered Indra and held him. Namuchi offered to let Indra go on promise not to kill him by day or by night, with wet or with dry. Indra gave the promise and was released, but he cut off Namuchi's head at twilight, between day and night, and with foam of water, which was, according to the authorities, neither wet nor dry. The Mahàbhârata adds that the dissevered head followed Indra calling out " O wicked slayer of thy friend."

P. 266. St. 19.—**तमपहाय**, 'Leaving him'.—**अलाघवं**, ' Liberal. ' —**पतिव्रता**, Hemâdri explains : "पतिरेव व्रतं यस्याः सा."—**सकमला**, Hemâdri explains : " आलयत्वेन पाणिपद्मत्वेन वा कमलेन सह वर्तमाना."—**पुरुषं**, Both Hemâdri and Châritravardhana derive it as, " पुरि शरीरे उषतीति पुरुषः."—**अन्यं कमसेवत**, Hemâdri observes : "नाविष्णुः पृथिवीपतिरिति व्रतभंगाभावः," and says : " नादेवांशो ददात्यन्नं नारुद्रो रुद्रमर्चयेत् । नानृषिः कुरुते काव्यं नाविष्णुः पृथिवीपतिः. "

P. 266. St. 20.—**अवधूतभयाः**, On this Hemâdri, Châritravardhana and Sumativijaya make the following remark, " असुरहननान्निर्भया इत्यर्थः. "

P. 267. St. 21.—**रुरुधिरे**, ' Were suppressed. '

P. 267. St. 22.—**मगधकोसलकेकयशासिनां**. On Magadha, see our note to stanza 31, Canto I.—**केकय°**, Bordering on Sindhu Des'a lay the country of the Kekayas, which may be inferred from their conquest of Gandharvas and is clear from the routes to the capital of Yudhâjit described in the Ayodhyâ Kâ*nd*a of the Râmâya*n*a. Anandoram Boorooah after having given the full account of Bharata's journey and identifying the places he travelled over comes to the following conclusion and says, ' In these journeys, not a word is mentioned about the great Sindhu river. There cannot, therefore, be any doubt that Girivrâja—the capital of the Kekayas—lay beyond the Jhelum on this side of the Indus. The word means " a

collection of hills " and the town must be looked for somewhere in the Salt Range, which runs from the Jhelum to the Indus and beyond it. If a line were drawn, say, from Jalâlpur at the base of this range to Ayodhyâ on the Sarayú, it will be seen that Vâlmiki's description is exceedingly accurate and the old towns of Hastinâpura and Ahisthala will pretty nearly lie on it. Near this place (Jalâlpur), there is an old fort called Girjhak, which has the same meaning as Girivrâja, said to have been founded by Râjâ Bharata, who is so much associated with Girivrâja, and shewing unmistakable antiquity by yielding coins, I say on the authority of General Cunningham, reaching back to the times of Alexander's successors. I have, therefore, no hesitation in identifying it with our Girivrâja. The question remains ' who were the Kekayas ? ' The Greeks do not mention any such name, but speak of a people called Kathaei, whom they place to the east of the Chenaub and describe in terms analogous to the Sauviras. I have already shewn that the Greek account of the present of a tiger-like dog by Sophietes harmonizes with our poet's description of the ferocious dogs of the king of the Kekayas. Strabo says, they were a handsome race and we know from the Râmâya*n*a that the king of Ayodhayâ was exceedingly partial to his Kekaya wife. The modern Kattis of Kattywar are tall and robust with fair complexion and are said to have emigrated to their present abode from the banks of the Indus. I am, therefore, strongly inclined to believe that they are the Kekayas of Sanskrit literature. In the Mahâbhârata, if I remember right, the Kekayas are never mentioned with the Saindhavas. In the Vish*n*u Purâ*n*a (IV. 14. 10), one of K*r*ish*n*a's aunts is said to have married a Kekaya king and in the Udyoga Parvan the Kekayas are said to have fought with the V*r*ish*n*is on the side of Yudhish*th*ira (15. 3. 2. Roy's edition). Can it not be that K*r*ish*n*a's migration to Dváraká in Kattywar from Mathurá on the Jamunâ was owing to a grant from the Kekaya ruler of Kattywar ? '

P. 267. St. 23.—तिसृभिः शक्तिभिः, Cháritravardhana says ' प्रभावोत्साहमन्त्ररूपाभिः शक्तिभिः, " and further remarks: " एवकारः शक्तीनामपि त्रियतमन्वयांतननार्थः. " But the force of एव seems rather to be this that the God Indra (in the shape of Das'aratha) with the bay horses descended to the earth incarnate *accompanied* only by the three powers with the desire of ruling over the world.—अरिहयोग-विचक्षणः, should be taken to qualify both अमां and हरिहयः. Hemádri

discusses अरिहा in the following manner. "अरिहेति क्विप् चिन्त्यः। ब्रह्मादिषु हन्तेर्नियमादरिहाद्यसिद्धिरिति वामनः। "ब्रह्मभ्रूणवृत्रेषु क्विप्", Pâṇini, III. 2. 87. इत्यत्र ब्रह्मादिष्वेव हन्तेरेव भूत एव क्विबेवेति नियमचतुर्विधः। न्यासकृत्तु प्रायिकश्चायं नियमः इत्याह। यथा मधुहेति प्रयोगो दृश्यते। प्रायिकत्वं च पुरस्ताद्बहुलग्रहणाल्लभ्यते इति। तथा माघकाव्ये। "न हि महाहिमहानिकरोऽभवत्" इति S'i. VI. 63. And Châritravardhana has: "ब्रह्मभ्रूणवृत्रेषु क्विप्" इत्यत्र सूत्रे ब्रह्मादिष्वेव हन्तेरेव भूत एव काले क्विबेव भवतीति चतुर्विधनियमादरिहेति कथं। उक्तं च वामनेन। "ब्रह्मादिषु हन्तेर्नियमादरिहाद्यसिद्धिः"। केचित्तु ब्रह्मादिष्वेव हन्तेरेकमेव नियममङ्गीकुर्वते। तमपि च भूते मन्वते। ततः कालसामान्यविवक्षायामरीन् हन्तीत्यरिहा रिपुहा मित्रहा इत्यादि सिध्यति." Translate the aphorism :—The affix क्विप् comes after the verb हन् 'to kill' with the sense of past time, when the following words in the accusative case are in composition: ब्रह्म 'a Brâhmaṇa,' भ्रूण 'a foetus' and वृत्र 'Vritra.'

P. 268. 24.—**समावृत्ते**, 'Returned.'—**समधुरं**, Here Hemâdri explains :—"यमकुबेरजलेश्वरवज्रिभिः समा धूः कार्यनिर्वाहकत्वं यस्य."—**अश्वितविक्रमं**, Both Hemádri and Châritravardhana render it by "प्रशस्तपौरुषं"

P. 268. St. 25.—**धनदाध्युषितां दिशं**, *i. e.,* The North, which is presided over by Kubera, the god of wealth.

P. 269. St. 26.—**आविरभूत्**, This verb cannot be taken with कुसुमजन्म, नवपल्लवाः or षट्पदकूजितं, as the verb and the gerund must have the same nominative. See Apte's Guide 159, p. 120. *Third Edi.* Châritravardhana's comments on this verse are as follows: "मधुर्वसन्तः प्रशस्ता द्रुमा सन्त्यस्यामिति द्रुमवती वनस्थलीमवतीर्य इति वक्ष्यमाणप्रकारेणाविरभूत्प्रकटीबभूव। कथं प्रथमं कुसुमानां जन्माभवत्। ततस्तदनन्तरं नवपल्लवा नवकिसलयास्तदनु [कुसुमजन्मानन्तरं] षट्पदानां भ्रमराणां कोकिलानां च कूजितं। कुसुमप्रियाः षट्चरणाः किसलयाभिलाषुकाः कोकिलाश्च। अतो हेतोः पुष्पाणि पल्लवांश्च संप्राप्य शब्दायन्ते इत्यर्थः। शाल्मल्यादीनां पुष्पानन्तरं पल्लवानां जन्मेति प्रथमं पुष्पजन्मेति न दूषणमिति। क्वचिदन्यथापि। अङ्कुरिते पल्लविते कोरकिते कुसुमिते च सहकारे" इति. Hemádri's comments run thus :—"मधुर्वसन्तो द्रुमवतीं वनस्थलीमवतीर्य इति यथाक्रममाविरभूत्प्रादुरासीत्। तदेवाह। आदौ नवपल्लवास्ततः कुसुमजन्म तदनु षट्पदाश्च कोकिलाश्च तेषां कूजितं। पुष्पप्रियो भृङ्गः पल्लवप्रियः पिकः इति विक्रमोक्तेरभिप्रायः। यद्वा। शाल्मलीमधुककिंशुकाद्याः प्रथमं पुष्प्यन्ति। "पूरणगुण"—Pâṇini, II. 2. 11. इति समासनिषेधात्तदनुशब्दे समासो महाकविप्रयोगादेव साधुः। यथा अत्रैव। "विश्वं तदनु विश्वते"। मेघदूतेऽपि। "संदेशं मे तदनु जलद" इति। पञ्चमीसमासो वा। साहचर्यात्कृतोऽव्ययेन समासो निषिध्यते इति वा." Translate the aphorism :—'A word ending with a genitive case-affix is not compounded with a word having the sense of an ordinal, an attribute, or satisfaction, or with a participle ending in the

affix called 'सत्' (III. 2. 127) or an indeclinable, or ending with the affix तव्य, or with a word denoting the same object (*i. e.* when they are in apposition).' The word 'अर्थ' joins with all the first three words, as छात्राणां पञ्चमः 'fifth among the pupils'; काकस्य कार्ष्ण्यम् 'the blackness of the crow'; फलानां सुहितः 'satisfied of fruits.'

P. 269. St. 27.—**नखक्षतमण्डनं**, Hemâdri remarks : "अनेन पुरुषायितमुक्तं."—**प्रमदया मदयापितलज्जया**, On this epithet Hemâdri makes the following remark : "इति पुनरुक्तप्रायमिति व्यक्तिविवेके." व्यक्तिविवेक is a work on grammar.

P. 270. St. 28.—**जघननिर्विषयीकृतमेखलं**, Hemâdri remarks : "प्रायेण हेमन्ते मुक्तादिरत्नशैत्यान्मेखलां न बिभ्रति." And Châritravardhana and Sumativijaya have the following : "हेमन्ते स्त्रियो मेखलास्त्यजन्तीति प्रसिद्धिः." And Vallabha has : "अतिशीतत्वात् ."—**दुःसहं**, 'That could be borne with difficulty.' This should be taken in a passive sense. —**तावत्**, 'As yet,' 'just then.'

P. 270. St. 29.—**सहकारलता**, Hemâdri explains : "सहकारो लता इव । उपमितमिति समासः । लता चूतशाखा वा । समेखलान्तस्कन्धलता इति स्त्री व्यज्यते."—**अभिनयान्**, Hemâdri renders it by "नृत्यविशेषान्," and goes on saying : "हृदयसूचको व्यापारोऽभिनयः," and one of the three manuscripts of Hemadri's Darpa*n*a has the following : "अपरापि सुन्दरी हस्ताद्यभिनयान्हार्दसूचकान्व्यापारान्प्रकटयति चित्तान्युन्मादयतीति छायार्थः." And Châritravardhana explains : "अपरापि सुन्दरी हस्ताद्यभिनयान्प्रकटयन्ती यतिचित्तान्युन्मादयतीति छायार्थः".—**सकलिका कलिकामजिताम्**, Châritravardhana explains : "कलिः कलहः कामः कन्दर्पस्तौ जयन्तीति कलिकामजितो मुनीशास्तेषामपि मनोऽमदयत् । कलिकया कोरकेण सह वर्तते इति सकलिका । अथ वा । कलौ कलियुगे कामं जयन्तीति कलिकामजितः । कलिना कलहेन कामं जयतीति वा." And Hemâdri has : "कलिर्वैरं कामोऽभिलाषो मदनो वा । ये जयन्ति तेषामपि मनोऽमदयत् । कलौ कलियुगे इति वा."

P. 271. St. 30.—**अलिनीरपतत्रिणः**, "अलयो भृङ्गा नीरपतत्रिणो हंसादयः" Hemâdri. And Châritravardhana has : "नीरपतत्रिणो जलपक्षिणो राजहंसादयः" and goes on saying, "नीरपतत्रिणोऽन्यमकरन्दां स्थलकमलिनीं नाभिलषन्त्यतः सरोग्रहणं."—**मधुसंभृतां**, Châritravardhana explains : "मधुना मकरन्देन संभृतां निर्भरामिति." What the poet means to say is, that on the advent of Spring the lotus became rich in producing the nectar and the swans fed upon it. In saying this he pays a compliment to Das'aratha whose wealth, freely open to the needy, he compares with the richness of that plant.—**सरसः कमलिनीमभिययुः**, Hemâdri explains, सरसः संबन्धिनीं कमलिनीमभिययुः सरसः सकाशाद्वा."—**नयगुणोपचिताम्**, Hemâdri renders गुण by "सन्ध्यादिषड्गुणैः".

P. 271. St. 31.—**अशोकतरोः**, On this both Châritravardhana and Hemâdri make the following remark : "तरुपदेनाशोकस्य प्रौढत्वं । मध्यमपदलोपीसमासः".—**विलासिनां**, The objective genitive. The poet simply wishes to say that the flowers of the As'oka which blow only in Spring were used by women to adorn their hair, and tender sprouts of leaves, also a product of that season, to adorn their ears, and both the flowers and the tender sprouts of the leaves so used for decoration maddened their lovers with passion स्मरदीपन is predicated of both कुसुमम् and किसलयप्रसवः.

P. 272. St. 32.—**मधुलिहां**, Hemâdri reads मधुकृतां, and explains : "मधु मकरन्दं कृन्तन्तीति मधुकृतः," and goes on saying : "मधु माक्षिकं कुर्वन्तीति वा । भृङ्गा हि मधु कुर्वते । यन्मुनिः । 'माक्षिकं तैलवर्णं स्याद्घृतवर्णं तु पौतिकं [तु यौतिकं Ms.] । विज्ञेयं भ्रामरं श्वेतं क्षौद्रं तु कपिलं मतं.' On the ornamental leaves painted on a young woman's person, compare, Mv. III. 5. "रक्ताशोकरुचा विशेषितगुणो बिम्बाधरालक्तकः । प्रत्याख्यातविशेषकं कुरबकं श्यामावदातारुणं । आक्रान्ता तिलकक्रियापि तिलकैर्लीनद्विरेफाञ्जनैः । सावज्ञेव मुखप्रसाधनविधौ श्रीर्माधवी योषिताम् ."

P. 272. St. 33.—**सुवदनावदनासवसंभृतः**, It is a fancy with the poets that the Bakula tree after having received a mouthful of wine begins to put forth flowers. *Cf.* Hemâdri : "बकुलो ह्यङ्गनानां मद्यगण्डूषेण पुष्प्यतीति." The figure, according to Hemâdri, is अनुप्रास and यमक.—**°लोलुपैः** on this Hemâdri discusses. अतिशयेन लुम्पतीति यङ् । द्वित्वं । पचाद्यच् । "गुणो यङ्लुकोः" Pâṇini, VII. 4. 82. । "यङोचि च" Pâṇini, II. 4. 74. "न लुमता," Pâṇini, I. 1. 63. इत्यङ्गकार्याभावात् "पुगन्त–" Panini, VII. 3. 86. इति गुणे प्राप्ते "न धातु लोप°," Pâṇini, I. 1. 4. इति निषेधः । धात्वंशस्य यङोलुप्तत्वात् । "कृत्स्नस्य धातोर्लोपश्चेद्गुणोवृध्योः क आश्रयः । अतोंऽशलोपसामर्थ्याद्धातोर्लोप इतीष्यते । लोकेऽपि समुदायस्य व्यपदेशो हि दृश्यते । ग्रामो दग्धः पटोश्लिष्टेत्येकदेशाक्रियास्वपि" इति पाणिनीयमतदर्पणे ।

P. 273. St. 35.—**कुसुमकोमलदन्तरुचः**, Hemâdri analyses like Mallinâtha and yet has the following: "कुसुमकोमलैर्दन्तैरुगितिर्वा".—**उपवनान्तलताः**, Hemâdri remarks : "अन्तशब्दः स्वरूपवाची." —**सलयैरिव पाणिभिः**, 'As if with hands gesticulating in consonance with the song.' *Cf.* Châritravardhana : "नर्तक्योऽपि दृश्या भवन्तीति छायार्थः". And also Hemâdri : "गेये हि दन्तभासा साकाराभिनयेनेव भाव्यं । नृत्यगीतवाद्यैः समं हस्तक्रिया लयः । 'लयः साम्यमथास्त्रियां' । श्रीणामपि श्लेषः".

P. 273. St. 36.—**पतिषु**, Mallinâtha takes this locative with खण्डनवर्जितं, and interprets it to mean 'without interruption or

obstacle to their love towards their husbands.' Hemádri's explanation appears more correct, "रसस्य खण्डो विच्छेदस्तेन वर्जितं । संपूर्णस्वादुमित्यर्थः । अङ्गनाः पतिषु पतिनिमित्तं निर्विविशुः । निमित्तात्कर्मयोगे इति सप्तमी." And Chháritravardhana has: "अङ्गनाः। प्रशस्तमङ्गं यासां ताः । श्रियो मधु मद्यं रसखण्डनवर्जितं रसस्य खण्डनं भङ्गस्तद्रहितं यथा स्यात्तथा पतिषु रमणेषु निर्विविशुः । प्रियमुखस्थं पपुः." He immediately remarks, however, "अत एव रसखण्डनविवर्जितत्वं," the phrase अत एव, referring as it does to पतिषु निर्विविशुः or to प्रियमुखस्थ मद्यं पपुः, is made clear by the manner in which he interprets ललितविभ्रमबन्धविचक्षणं, which according to him is equivalent to कीदृशं ललितैर्मनोहरैर्विभ्रमबन्धैर्विलासबन्धैः स्मितकटाक्षादिभिर्विचक्षणं । उक्तं च माघे । "हावहारि हसितं वचनानां" इति S'i. X. 13. But it is likely by the epithet ललित &c., that the poet merely means, as Mallinâtha observes, 'highly tending to produce amatory sports'; and by रसखण्डनवर्जितं, 'not so excessively and intemparately as to make them unable to enjoy the company of each other.'

P. 274. St. 37.—**स्मितचारुतराननाः**, Châritravardhana, after making a remark that हास्यरस recognizes six kinds of smiling, quotes the following definition of स्मित from a work called नाट्यलोचनं "हास्यरसस्तु स्मितहासितादि भेदेन षोढा । तत्र स्मितलक्षणमुक्तं च नाट्यलोचने । ईषद्विकसितैर्गण्डैः कटाक्षैः सौष्ठवान्वितैः । अलक्षितं द्विजद्वारैः सूत्तमानां स्मितं भवेत्" इति --**मदकलोदकलोलविहंगमाः**, Hemâdri analyses: "मदकलाः मदोत्कटाः उदके लोलाश्चपला विहंगमाः हंसादयो यासु ताः."--**°दीर्घिकाः**, Châritravardhana explains it by "क्रीडावाप्यः."--**श्लथशिञ्जितमेखलाः**, The propriety of श्लथ is that if the मेखला or zone were not loosened they would not be ringing with the bells. The figure according to Sumativijaya is कल्पितोपमा.

P. 274. St 38.--**मधुखण्डिता**, The play is upon the word खण्डिता. *Cf.*, Châritravardhana and Sumativijaya: "अपरापि तत्र खण्डितवल्लभा पाण्डुवदना क्षीणा च स्यात्तथा चैत्रेण मुक्ता रजन्यपीत्यर्थः". Châritravardhana renders मधुना by "चैत्रेण."

P. 275. St. 39.—**सुरतसङ्गपरिश्रमनोदिभिः**, On this Hemâdri cites the following authority: "चन्दनं मृदुनालानि हरन्ति सुरतश्रमं" इति रतिरहस्ये. —**मकरोर्जितकेतनं**, On this Hemâdri remarks: "ऊर्जितकेतनोक्त्या स्मरस्य साम्राज्यध्वनिः."

P. 275. St. 40.--**दधुरात्हितं**, Mallinâtha has interpreted this passage (पतिभिरात्हितं दधुः) in an ingenious way. But his interpretation does not appear to be borne out by the text. Such a word as पति so important in the present verse can hardly be said to be left by

the poet to be understood. It is likely that the poet may perhaps mean केशपाशे आदधुर्दधुश्च, 'young women braided the flower in their hair and kept it there as an ornament.'—**प्रतिनिधिः कनकाभरणस्य,** 'That was to Vernal Beauty an ornament made of gold.'

P. 276. St. 41.—**तिलकः प्रमदामिव**, *Cf.* Châritravardhana : "कज्जलबिन्दुरम्यस्तिलकोऽपि श्रियं शोभयति," compare also Hemâdri : "तिलकेऽप्यञ्जनबिन्दवः शोभार्थं क्रियन्ते । तिलकशब्दस्य द्विरुपादाने भिन्नार्थतया न दोषः । तिलकप्रमदयोरेकतरस्मिन्वाक्ये यदुभयोर्वचनं तदवाच्यवचनं दोष इति व्यक्तिविवेके." And Sumativijaya has : "मस्तके कृतः तिलकः श्रियं शोभयति तथा सोऽपि तिलकवृक्षोऽञ्जनबिन्दुवन्मनोहरो भवति."

P. 276. St. 42.—**स्मितरुचा,** *i. e.* विकासकान्त्या. On the first line of this verse Hemâdri makes the following note : "कामिनीस्मितमपि मद्यगन्धमनाथं अधरसंगतरागं वा । यद्वा । कुसुमैः संपादितया नवमालिकास्मितरुचा तरुचारुविलासिनः पुरुषाः अमदयन् । स्वार्थे णिच्." See his reading.

P. 277. St. 43.—**अरुणरागनिषेधिभिः**, Hemâdri says : "अरुणं रागं निषेधन्ति जयंति तैः * * अंशुकैः कौसुम्भादिभिः । वसन्ते हि रक्तवस्त्रधारणं । "वासो वसाना तरुणार्करागं" इति कुमारसंभवे. And Châritravardhana has: "कुसुम्भलाक्षारक्तैरंशुकैः". Literally निषेधिभिः means प्रत्यादिशद्भिः, 'asking to stay behind or not to go ahead', 'surpassing.'—**यवाङ्कुरैः**. See note to St. 24, Canto VII.

P. 277. St. 44.—**मञ्जरी**, Hemâdri explains it by "कणिशं." —**अलकजालकमौक्तिकैः**, Hemâdri explains it by "केशसमूहमुक्ताभिः" and goes on saying, "मुक्तैव मौक्तिकमिति "विनयादिभ्यष्ठक्°" Pâ*n*ini, V. 4. 34. स्वार्थिकत्वाल्लिङ्गातिक्रमः । यद्वा । मुक्तानां समूहो मौक्तिकं । "अचित्तहस्तिधेनोष्ठक्–" Pâ*n*ini, IV. 2. 47. इति ठक्."

P. 277. St. 45.—**ध्वजपटं मदनस्य धनुर्भृतः**, 'The banner cloth of Madana armed with his bow, *i. e.* which serves as a cloth for Madana's banner when he sets out, bow-armed, on his expedition to conquer the world.' Dinakara renders धनुर्भृतः by अभिषिषेणयिषोः," and Vallabha by "अभिषेणयतः", *i. e.* 'when he wishes to march out on an expedition.' Dinakara's remarks on ध्वजपट, are "स्मरस्य ध्वजवस्त्रं, लोकवशीकरणात्." But Châritravardhana does not give this.—**मुखचूर्णं**, Châritravardhana and Sumativijaya explain it by "आननपरिमलार्थं सुगंधद्रव्यविशेषं." And Hemâdri explains : "मुखवासार्थं कर्पूरादिचूर्णं." The figure according to Hemâdri is रूपक, which he defines as, "उपमानेन यत्तत्त्वमुपमेयस्य रूप्यते । गुणानां समतां दृष्ट्वा रूपकं नाम तद्विदुः" इति.

P. 278. St. 46.—**पटुरपि**, Châritravardhana translates it by: "दोलारोहणे निपुणोऽपि." And Vallabha by : "धीरोऽपि । दोलाखेलनकुशलोऽपि,"

and explains नवदोलं in the following manner : " नवी दोला प्रिया यत्र तन्न-वदोलं."—जलतां, Hemâdri translates it by " अपाटवं " and rightly observes : " यमकश्लेषचित्रेषु बवयोर्डलयोर्न भिदा."

P. 278. St. 47.—स्मरमते, Hemâdri translates it by " कामसिद्धान्ते " and Châritravardhana and Sumativijaya by " कामतन्त्रे."

P. 279. St. 48.—विलासवतीसखः, 'Accompanied by his beloveds.' For the compound see our note to St. 48. Canto I.—नरपतिश्चकमे मृगयारतिं. A proverbial saying.—मधु. Madhu and Kai*t*abha were two horrible demons, who, according to the Mahâbhârata and the Purâ*n*as, sprang from the ear of Vish*n*u while he was asleep at the end of a Kalpa, and were about to kill Brahmâ. who was lying on the lotus springing from Vish*n*u's navel. Vish*n*u killed them, and hence he obtained the names of मधुसूदन and कैटभजित्. The Mârka*n*deya Purâ*n*a attributes the death of कैटभ to Umâ, and she bears the title of कैटभा. The Harivans'a states that the earth received its name of मेदिनी from the marrow (मेदः) of these demons. In one passage it says that their bodies, being thrown into the sea, produced an immense quantity of marrow or fat, which Nârâya*n*a used in forming the earth. In another place it says that the Medas quite covered the earth, and so gave it the name of मेदिनी. This is another of the many etymological inventions. *Cf.* Hemâdri : " शौर्ये विष्णुना । सौरभ्ये वसन्तेन । सौन्दर्ये अनङ्गेन सम इत्यर्थः ".

P. 279. St. 49.—परिचयं, On this passage Hemâdri quotes the following from Kâma*n*daka : " जितश्रमत्वं व्यायाम आममेदः कफक्षयः । चलस्थिरेषु लक्ष्येषु बाणसिद्धिरनुत्तमा । मृगयायां गुणानेतान् वदन्ति [विदन्ति Ms.] नयवित्तमाः". And goes on saying, "एतत्सर्वं युद्धोपयोगि न काकदन्तपरीक्षावन्निष्प्रयोजनं । तथा चाभाणकः श्रूयते । "काकस्य कति वा दन्ता मेषस्याण्डं कियत्पलं । गर्धभे कति रोमाणीत्येषा मूर्खविचारणा " इति. Vallabha says : " एतत्सर्वं समरोपयोगि". *Cf.* S'a. II 39. " मेदश्छेदकृशोदरं लघु भवत्युत्थानयोग्यं वपुः । सत्त्वानामपि लक्ष्यते विकृतिमच्चित्तं भयक्रोधयोः । उत्कर्षः स च धन्विनां यदिषवः सिध्यन्ति लक्ष्ये चले । मिथ्यैव व्यसनं वदन्ति मृगयामीदृग्विनोदः कुतः ।"—भयरुषोश्च तदिङ्गितबोधनं, " भीतिग्रस्तस्यैवं चेष्टा क्रुद्धस्यैवमिति ज्ञानं जायते इति भावः " says Châritravardhana. And Vallabha says : " भीतस्य जन्तोरित्थं चेष्टितं क्रुद्धस्येत्थमिति तच्चेष्टावगमनं कुरुते. "—श्रमजयात्, ' On account of the conquest of fatigue, ' *i. e.* by making the body hard by taking constant exercise, so that it may not give way under fatiguing circumstances.

P. 279. St. 50.—वेषभृत्, *Cf.* Châritravardhana : " कीदृशीं मृगप्रधानं वनं मृगवनं मृगवनमाखेटकभूमिस्तदुपगमः प्राप्तिस्तत्र श्रमो योग्यां यो वेषो लघुकृष्णकञ्चु-

कादिस्तं बिभर्ति धारयतीति स तथा । दीर्घवस्त्राद्धावनं न स्यात् । शुक्लवस्त्रावलोकनेन मृगादयो दूरत एव पलायन्ते । अतस्तथावेषरचनमेवाकरोत्."—**कण्ठनिषक्त** &c., The usual place of the bow is round the left shoulder, and it was so placed at this time, so that, according to Hemâdri and Châritravardhana, no time might be lost when the game had to be shot with an arrow. *Cf*. Hemâdri and Châritravardhana : "वधकाले विलम्बो मा भूदिति" says former and the latter remarks "अनेन धनुर्धरजातिः जंतूनां वधे विलम्बो मा भूदिति भावः."—**स वितानमिवाकरोत्**. The second meaning of Mallinâtha is preferable to the first. "सवितानमिवाकरोत्" 'Adorned, as it were, the sky with a canopy or ceiling' Both Hemâdri and Châritravardhana interpret it in this way of Mallinatha.—**नृसविता**, Once analysing with Mallinâtha, Hemâdri gives the following: "नृषु सविता सूर्यो नृपः."

P. 280. St. 51.—**वनमालया**, वनमाला is generally made of flowers and tender sprouts of trees. *Cf* Hemâdri : "पल्लवपुष्पवत्या स्रजा ग्रथितः" &c., and further he quotes : "वनमाला विधातव्या पल्लवैः कुसुमैरपि" इति विष्णुरहस्ये. And Châritravardhana has : "पुष्पैः पल्लवैश्च ग्रथिता माला वनमाला", and quotes the following : "पत्रपुष्पमयी माला वनमाला प्रकीर्तिता." Such a garland is sacred to K*r*ish*n*a, who is accordingly called वनमाली.—**तुरगवल्गन**°, &c., Hemâdri translates the epithet by "अश्वपरिवर्तनेन," and Châritravardhana and Sumativijaya by "अश्वनर्तनेन." —°**चञ्चलकुण्डलः**, *Cf*. Buddha. Canto V. Stanza 41. "चलकुण्डलचुम्बितानननाभिर्घननिःश्वासविकम्पितस्तनीभिः । वनिताभिरधीरलोचनाभिर्मृगशावाभिरिवाभ्युदीक्ष्यमाणः" ॥

P 280. St. 52.—**नयनन्दितकोसलं**, Vallabha explains: "नये न्यायमार्गे नन्दिताः समृद्धीकृताः कोशला देशा येन स तं." Sumativijaya too says the same. कोशलाः Châritravardhana explains it by "अयोध्या वा." Sumativijaya gives the substance of the passage in the following words: "किं नु लता एव वनदेवता भृङ्गरूपैर्नेत्रैः कृत्वा दशरथं पश्यन्ति स्मेति भावः."

P. 281. St. 53.—**श्वगणिवागुरिकैः**, Hemâdri explains. "श्वगणा विद्यन्ते येषां ते श्वगणिनः । वागुरया चरन्तीति वागुरिकाः । " चरति, " Pâ*n*ini, IV. 4. 8. इति ठक् । तैर्भमिजत्वात्प्रथममास्थितं ।"—**उपाश्रितं**, Châritravardhana explains it by "व्याप्तं" and has the following: "एतेन मृगयाचारिणामकुशलत्वं."

P. 281. St. 54.—**त्रिदशायुधं**, 'The weapon of the thrice-ten (gods)', *i. e.*, the rainbow, supposed to be the weapon of the gods and especially, of the god Indra. The usual number of the gods is thirty-three, and not thirty. *Cf*. Aitareya Brâhma*n*a, 2 Panchikâ 18. "त्रयस्त्रिंशद्वै देवाः सोमपास्त्रयस्त्रिंशदसोमपा अष्टौ वसव एकादश रुद्रा द्वादशादि-

त्याः प्रजापतिश्च वषट्कारश्चैते देवाः सोमपा एकादश प्रयाजा एकादशानुयाजा एकादशोपयाजा एतेऽसोमपाः " । 'There are thirty-three gods who drink Soma and thirty-three who do not drink Soma. The Soma-drinking gods are: eight Vasus, eleven Rudras, twelve Adityas, Prajâpati and वषट्कार' 'The not Soma-drinking gods are: eleven Prayâjas, eleven Anuyâjas, and eleven Upayâjas.' Authorities are at variance, however, as to the components of the number thirty-three. According to some authorities they are thus made up: the twelve Adityas, the eight Vasus, the eleven Rudras, and the two Asvins. See Muir's Sanskrit texts Vol. V. page 9. It is not clear how the number thirty is made up. The modern number of thirty-three crores, assigned to the gods, no doubt, took its origin in the number thirty-three mentioned in the Brâhmaṇas and other portions of the Vedas. —**रवरोषितकेसरी**, Châritravardhana and Sumativijaya render रव by "सिंहनाद." The figure according to Hemâdri is श्लेष.

P. 282. St. 55.—**कुशाग्रमुखं**, *Cf.* S'a. I. 7. "दर्भैरर्धावलीढैः श्रमाविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्मा."—**स्तनप्रणयिभिः**, Châritravardhana explains: "स्तने प्रणयः स्नेहो दुग्धपानार्थं येषां ते." And Hemâdri quotes Amara: "प्रणयास्त्वमी । विश्रम्भयाच्ञा प्रेमाणः." *Cf.* Buddha. Canto V. verse 41. "चलकुण्डलचुम्बिताननाभिर्घननिःश्वासविकम्पितस्तनीभिः । वनिताभिरधीरलोचनाभिर्मृगशावाभिरिवाभ्युदीक्ष्यमाणः ॥ See above stanza 51. **कृष्णसारम्**, Hemâdri says: "इति जात्युक्तिः" and further discusses: "कृष्णशार इति दन्त्यमध्यं पठन्ति तत्र । कृष्णेन शारः शबल इति क्षीरस्वामी । "शारः शबलवातयोः" इति विश्वः । तथा व्यवस्था तालव्येषु शब्दभेदप्रकाशे । "शौरिर्मुरारिः [मुरारौ Ms.] शिव एव शर्वः शूरः समर्थे भ्रम एव शालः । शमः प्रशान्तौ शकलं च खण्डे शकृत्पुरीषे शबले च शारः" इति.—**व्याहन्यमानहरिणीगमनं**, *Cf.* Vi. IV. 32. "अस्यान्तिकमायान्तीं शिशुना स्तनपायिना मृगीं रुद्धा । तामयमनन्यदृष्टिर्भ्रमीवो विलोकयति."

P. 282. St. 56 **जवनवाजिगतेन**, Hemâdri explains it as: "जवनेति मृगानुसरणे शक्तिः । अशीघ्रगतिवाहननिषेधश्च । तथा च वसन्तराजः । "हीनाधिकांगं क्षुधितं विनीतिरनाशुगत्याधितबालवृद्धैः । यानैर्न यायात्मनानभिज्ञैस्तथा खरैर्गोमहिषोष्ट्रकैश्च" इति.—**श्यामीचकार**, 'Blackened.' This refers to the proverbial blackness of the eyes of deer. On the image compare 46. II.

P. 283. St. 57.—**आकर्णकृष्टमपि**, Here Hemâdri gives the reason of the force of अपि and says: "आकर्णकृष्टेषोः प्रतिसंहारो दुष्करः इत्यपिशब्दार्थः".—**सहचरी**, Hemâdri discusses: "अधिकरणानुवृत्तेः सहचरीति "चरेष्टः" Pâṇini, III. 2. 16. इति टप्रत्ययः । पुंयोगविवक्षायां [विवक्षया Ms.] वा ङीष् । पचादौ चरडिति चरेष्टित्वादिति वा । तथा च वामनः । अनुचरीति चरेष्टित्वादिति." Translate the aphorism:—"The affix ट comes after the verb चर् 'to go' when a case-inflicted word in composition with it, de-

notes location '. Of the affix ट the real affix is अ, the letter ट being indicatory, showing that the feminine of these words is formed by the affix ङीप् (See IV. 1. 14), as कुरुचरी, मद्रचरी। And Châritravardhana has: "अधिकरणे चरेष्टविधानात्सहचरीति टप्रत्ययश्चिन्त्यः। अथवा भिक्षासेनादायेषु चकारस्यानुक्तसमुच्चयार्थत्वादनधिकरणेऽपि टप्रत्ययः इति दुर्घटवृत्तिकारः। "पुंयोगादाख्यायाम्," Pánini, IV. 1. 48. इति ङीष् गौरादित्वाद्ङीषित्यन्ये"।

P. 283 St. 59.—**मार्गं जग्राह**, A proverbial saying. Hemádri explains this as: "जिघांसया तदीयपदवीमनुययावित्यर्थः। ते हि शूकराः पंके आसते। तथा प्रागुक्तं "सपल्वलोत्तीर्णवराहयूथान्" इति.—**मुस्ताप्ररोह** &c., Hemádri makes the following remark: "क्रोडा हि मुस्ताप्रियाः। तथाभिज्ञानशाकुन्तले। "गाहन्तां महिषानिपानसलिलं शृङ्गैर्मुहुस्ताडितं। छायाबद्धकदम्बकं मृगकुलं रोमन्थमभ्यस्यतां। विश्रब्धैः क्रियतां वराहततिभिर्मुस्ताक्षतिः पल्वले विश्रामं लभतामिदं च शिथिलज्याबन्धमस्मद्धनुः" इति. And Cháritravardhana and Sumativijaya have the following: "पंकावगाहनं मुस्ताभक्षणं च दंष्ट्रिणां जातिस्वभावः".

P. 284. St. 60.—**जघनाश्रयेषु**, Chàritravardhana remarks: "शूकरा हि तरुषु जघनं घर्षयन्ति."—**विद्धमात्मानं न विविदुः**, Chàritravardhana remarks: "इच्छातः प्रागेवाविद्धयदिति राज्ञ हस्तलाघवोक्तिः". They did not know that they were pierced through by sharp arrows, which passing through their loins penetrated into the trees against which they leaned and to which they were thus fixed.

P. 284. St. 61.—**अभिघातरभसस्य**, *Cf.* Chàritravardhana: "अभिघातेन ताडनेन रभसस्य सोत्तालस्य वन्यस्य &c." And Vallabha says: "प्रतिहारोत्सुकस्य."—**तं पातयां प्रथममास**, Here Hemádri discusses: "कास्प्रत्ययादाममन्त्रे लिटि" Pànini, III. 1. 35. इत्याम्। "कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि" Pánini, III. 1. 40. इत्यत्रामप्रत्ययस्यैव पश्चात्कृञनुप्रयुज्यत इत्यवधारणत्वमिहाश्रितं। तेन व्यवधाने प्रयोगं निराकरोति। न हि व्यवधाने कृञनुप्रयुज्यमानः आम्प्रत्ययस्यैवानुप्रयुक्तो भवति। यथैव कृभ्वस्तयः क्रियासामान्यवाचकास्तथा विद्यतिरपीति तस्यानुप्रयोगः स्यात्। तस्मात्तन्निवृत्त्यर्थमिदमारब्धव्यं। व्यवहितप्रयोगनिवृत्त्यर्थं वारब्धव्यं। याचयां देवदत्तश्चकारेत्यत्र मा भूदिति। व्यवहितनिवृत्तिस्तु [°निवृत्तिररिति Ms.] अवधारणाल्लभ्यते। अवधारणं तु चकारस्यावधारणार्थत्वात्। विपर्ययनिवृत्त्यर्थं वारब्धव्यं। विपर्ययस्त्वनोः पश्चादर्थत्वाल्लभ्यत इति न्यासकृत्। कालिदासश्चेच्छति व्यवधानं। यथात्र नवमे सर्गे। "प्रभ्रंशयां यो नहुषं चकार" इति। षोडषे सर्गे च। "संयोजयां विधिवदास समेतबन्धुः" इति। सारस्वतटीकायां कासामित्यामन्तमव्ययं। क्त्वायन्तश्चेत्यत्र आमन्तमव्ययमित्युक्तत्वात्पृथक्पदं। चक्रे इति त्वनुप्रयोगः। तेन व्यवधानेऽपि प्रयोगो घटते। यस्य येनान्वययोग्यता तस्य तेन दूरस्थेनापि भवतीति न्यायात्। ततः प्रभ्रंशयां यो नहुषं चकारेत्यादि न विरुध्यते। केचित्तु पातं यातीति पातयास्तं विग्रहे आस चिक्षेप। असु क्षेपणे। पातयाः सोमपावत्। "आतो मनिन्क्वनिब्वनिपश्च" Pànini, III. 2. 74. इति

चकारादित्र् । अमन्तः. " Translate the aphorisms :—' आम् is the affix of the verb कास् ' to cough, ' and of those roots that are formed by affixes (*i. e.* the derivative verbs), when लिट् follows, except in the Mantra. ' ' After a verb which ends with आम्, the verb कृ ' to do', is annexed, when लिट् follows. ' ' The affixes मनिन (मन्), क्वनिप् (वन्), वनिप् (वन्), and विच् come in the Chhandas, after verbs which end in long आ, when a case-inflicted word or an उपसर्ग is in composition. ' And Cháritravardhana has, "पातयां प्रथममासेति व्यवहितोऽनुप्रयोगः कविप्रमादः। यद्वा । पातं यातीति पातयाः। छान्दसो विच् । तं पातयां। पातं गच्छन्तं महिषं शरः आस प्रातवान् । असगतिदीप्त्यादानेषु । यद्वा चिक्षेप । "अध्वर्युक्रतुरनपुंसकं" Pánini, II. 4. 4. इति यजुरिति वाच्यं । " क्याच्छन्दसि " Pánini, III. 2. 170. इत्युप्रत्ययान्तेनाध्वर्युग्रहणेनज्ञापितं । भाषायामपि छान्दसाः प्रयोगाः प्रयुज्यन्त इति ॥ यद्यप्येवं केचन समादधते तथापि कवेरियं रीतिस्तु न भवति । प्रथममित्यस्य क्रियाविशेषणत्वान्न व्यवधायकत्वमिति । यथोक्तं प्रचकारेति भट्टिकाव्ये । सत्यमुपसर्गैरव्यवधानमिति सुबोधकारो जयमंगलायां वक्ष्यते इत्युक्त्वा कर्मणि घञिराचान्तेन (?) व्याख्यातं । महाभाष्येऽपि व्यवहितप्रयोगनिरासार्थं तदित्युक्तत्वात् । असावसाधुरेव "। Translate the aphorisms :—' The names of sacrifices mentioned in the Yajurveda, not of neuter gender, constitute the Samahára Dvanda compound. ' ' The affix उ comes in the Chhandas, after the roots that have taken the Denominative affix क्य in the sense of ' the agent having such a habit &c. '

P. 285. St. 62.—क्षुरप्रैः, Hemádri renders it by "चंद्रार्धबाणैः," and supports it thus, " इषुः काण्डं क्षुरप्रं च " इति धनंजयः । " क्षके खुरं कवर्गाद्यखकारश्च [°पकारश्च Ms.] खुरप्रकं [क्षुरप्रकं Ms.] । नापितस्योपकरणे कप्रसंयोग इष्यते" इति शब्दभेदप्रकाशे.—प्रायः, Hemádri explaining प्रकृष्टः अयः शुभावहो विधिर्यस्य सः construes it with नृपतिः and gives the figure and quotes the definition from काव्यादर्श, " प्राय उत्प्रेक्षायां वा । तथा काव्यादर्शे । " मन्ये शङ्के ध्रुवं [ध्रुवं Ms.] प्रायो नूनमित्येवमादिभिः । उत्प्रेक्षा व्यज्यते शब्दैरिवशब्दोऽपि तादृशः " इति. K. D. II. 234.—अत्युच्छ्रितं शृङ्गं न ममृषे. On this Châritravardhana makes the following remark: " महान्तस्तु शत्रूणां जीवनमप्याल्यो न किन्तून्नतत्वं न सहन्ते. "

P. 285. St. 63.—फुल्लासनाग्रविटपान्. Dinakara's interpretation of the line is, " यथा वायुना नुन्नाः (appears to be his reading) प्रेरिताः फुल्लानामसनवृक्षाणामग्रवन्त्यः प्रांतशाखा भवन्ति तथोज्ज्वलसटत्वाद्वागपूरितमुखत्वाच्च व्याघ्रान् तूर्णीचकार. "—वायुरुग्णान्. ' Broken by the wind. ' The force of the epithet according to Mallinátha's interpretation lies in the similarity. A branch of the असन tree, when in full yellow blossoms, broken by the wind and falling down, appears like the rushing of a tiger against one's person. The reading वायुनुन्नान् also appears better. On the epithet रुग्णान् *Cf.* Mahabhárata Adi. Par. Adh. 19. verse

1170. " ततोऽसुराश्वक्रभिन्ना वमन्तो रुधिरं बहु । असिशक्तिगदारुग्णा निपेतुर्धरणीतले." *Cf.* also Sumativijaya: " शरैः पूरितमुखाः पतिता व्याघ्रजीवाः प्रफुल्लितबीजकवृक्षस्य शाखाग्रा इव शोभन्ते स्म."

P. 286. St. 64.—**निर्घातोग्रैः**, On this epithet Hemádri quotes the following definition : " वायुनाभिहतो वायुर्गगनोत्पतितः क्षितौ। यदा दीप्तः खगरुतः स निर्घातोऽतिदोषकृत्" इति.—**राजशब्दे मृगेषु**, On this epithet Hemâdri quotes the following : " नाभिषेको न संस्कारः [सत्कारः Ms.] सिंहस्य क्रियते मृगैः [वने Ms.]। विक्रमार्जितचित्तस्य [°सत्वानां Ms.] स्वयमेव मृगेन्द्रता " इति.

P. 286. St. 65.—**कुटिलनखाग्रलग्नमुक्तान्**, Hemâdri explains : " कुटिलेषु नखाग्रेषु लग्ना मुक्ता येषां ते तान्। करिकुम्भविदारणादित्यर्थः । करिकुम्भेषु हि मौक्तिकानि सन्ति। तथा रत्नपरीक्षायां। 'करीन्द्रजिमूतवराहशंखमत्स्याहिशुक्त्युद्भववेणुजानि। मुक्ताफलानि प्रथितानि लोके तेषां हि शुक्त्युद्भवमेव भूरि' इति." *Cf.* Ku. verse 6, Canto I. The sources of the pearls, according to the above verse are, (1) Elephants of superior species, (2) rain-water, (3) the wild boar, (4) the conch, (5) the fish—a species of it that contains pearl-like round globules of a stony nature in their heads, (6) the snake, (7) the pearl oyster, and (8) the bamboos. Châritravardhana explains : " कुटिलेषु नखाग्रेषु गजकुलकुम्भस्थलविपाटनवशाल्लग्ना मुक्ता येषां तान्."—**आत्मानं गजानामानृण्यं मार्गणैर्गतमिवामंस्त**, A proverbial saying.—**मार्गणैः**, Châritravardhana quotes in support of this the following from हैम. "रोपः कलम्बशरमार्गणचित्रपुंखाः."

P. 287. St. 66.—**सितबालव्यजनैर्वियोज्य**, 'Depriving them of their white chowry-tales.' *Cf.* Hemàdri: "न हि सितकेशव्यजनवन्तः." The white Chamara is a token of royalty. *Cf.* R. verse 47, Canto II. —**शान्ति जगाम**, 'Contented himself with.' *Cf.* Hemádri : " पुच्छानि चिच्छेदेत्यर्थः."

P. 287. St. 67.—**न स रुचिरकलापं बाणलक्ष्मीचकार**, A proverbial saying.—**प्रियायाः केशपाशे गतमनस्कः**, 'With his mind directed towards the braided-hair of his beloveds.' Hemâdri remarks: " प्रियासम्बंधानुकारोऽपि प्रिय एव." And Sumativijaya has : स्त्रीकेशपाशे मनो गतमतो मयूरं नृपो न जघानेति भावः". Hemádri notices the reading सुकेश्याः and says, " इति साभिप्रायं."

P. 288. 68.—**भिन्नपल्लवपुटो**, On this Hemâdri and Sumativijaya make the following remark : " इति मांससारंगादिः".

P. 288. St. 69.—**सचिवावलम्बितधुरं**, 'Who has transferred the responsibility of his Government to his ministers'. Here धुरं is equivalent to राजधुरं *i.e*, राज्यभारं 'the administration of his kingdom.' *Cf.* Hemàdri : "राज्ये विपक्षाभाव उक्तः."—**अनुबन्धसेवया**, "अत्यन्ताभ्यासेन," says

Hemâdri. And Châritravardhana has: "अत्यन्ततत्परतया." 'By a constant practice of enjoyment,' *i. e.* exclusive devotion to the chase. The epithet should be taken actively as regards नराधिपं. *Cf.* Sumativajaya : "यथानुबन्धसेवया रमण्यामुपरिरागो वर्द्धते तथा नृपस्य नित्यं गमनान्मृगयायां रागो वर्धितः."—चतुरेव कामिनी जहार. On this epithet Hemâdri makes the following remark: "व्यसनेषु हि सेवारसेन रूपणीयते । चतुरालक्षणं तु रमाकरं । "स्निग्धैरीक्षित एव दृष्टवनितैः कोकाशिताकुञ्चितैः । लज्जाकेकरविभ्रमैर्मुकुलितैरालोकनैर्नायकं । प्रौढैर्नागरिकं वयोभिरखिलैराभाषते पञ्चवं । दृष्टं मोहनदक्षिणैश्च चतुराचक्रवादिभिश्चापरान् " (?) । And Châritravardhana has the following : कामिनी स्वाधीनपतिका । "यस्या रतिगुणाकृष्टः प्रियः पार्श्वं न मुञ्चति । विचित्रविभ्रमासक्ता स्वाधीनपतिका स्मृता " इति रुद्रटः.

P. 288. St. 70.—त्रियामाम् , Analyse : त्रयो यामा यस्याः तां तथोक्ताम्.—ज्वलितमहौषधिदीपिकासनाथाम्, 'Furnished with the lamps of excellent creepers burning with light.' *Cf.* Ku. I. 2. 10. "भास्वन्ति रत्नानि महौषधीश्च," and " भवन्ति यत्रौषधयो रजन्यामतैलपूराः सुरतप्रदीपाः."

P. 289. St. 71.—पटुपटहध्वनिभिर्गजयूथकर्णतालैः, This seems to mean that the lobes of the ears of the elephants, beaten as they were at regular times on the large cavities of the ears, produced a sound which resembled that of a drum. There is perhaps not much to object to in the simile, as the cavities of the elephants' ears are large and the flat lobes flapping against them proportionately wide, they can produce a sound that to the poet's imagination may appear like that of a drum. By adopting Mallinâtha's interpretation of ताल, we compare the sounds of elephant's flappings to the time in music called ताल, which again appeared like that of a sonorous drum, *i. e.* a simile, in a simile, which is absurd.—बन्दिमङ्गलानि, such as those chanted by minstrels at the end of the Canto V.

P. 289. St. 72.—तपस्विगाढां, " मुनिजनप्रविष्टां " Hemâdri. And "मुनिभिर्व्याप्तां " Châritravardhana. And " मुनिनाक्रान्तां " Vallabha 'Crowded by ascetics.' On this epithet Hemâdri remarks : " इति वक्ष्यमाणऋषिसुतकथाबीजं, " and Châritravardhana says, अनेन वक्ष्यमाणकथाबीजं." —विपिने लक्ष्यमाणः, is equivalent to "तरुलतागुल्मगहने देशे मुनिभिर्लक्ष्यमाणः." तमसां प्राप नदीं तुरंगमेण, *Cf.* Buddha. VIII. 2. "जगाम मार्गं सह तेन वाजिना."।

P. 289. St. 73.—द्विरदबृंहितशङ्की, In support of his explanation Hemâdri quotes the following from अमरकोष. " गजबृंहितकृतबृंहिते. "

P. 290. St. 74.—प्रतिषिद्धं, Hemâdri says, " लक्ष्मीकामो युद्धादन्यत्र करिवधं न कुर्यादिति चाणक्यः ". Mallinâtha too quotes the same but does not give the source from which he borrows his authority. Châritravardhana remarks: " ननु विहितं । पण्डितः स कथमिदमकरोदित्यत्र कारण-

माह श्रुतवन्तोऽपीति "।—**विलङ्घ्य,** Vallabha explains it by "अविचार्य, अविमृश्य" 'Thoughtlessly,' 'carelessly.' And quotes the following: "सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदं । वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव संपदः." Ki. II, 30.—**रजोनिमीलिताः,** 'Blinded by passion.'

P. 290. St. 75.—**मुनिपुत्रं,** This was S'rávana. The names of his parents are not given in the Rámâyana. See Ayodhyá Kânda. Canto 66.—**अपि,** On this Hemâdri gives the following note: "तथा न्यासकृत् । अपिशब्दो विकल्पार्थः । अपिशब्दो न दृश्यते । तेन हा पितः हा मातः इत्यादि सिद्धं । हे तातेति । "उभसर्वतसोः कार्या धिगुपर्यादिषु त्रिषु । द्वितीयाम्रेडितान्तेषु ततोऽन्यत्रापि दृश्यते" इत्यभितः परितः इत्यादावपिशब्दस्य विकल्पार्थत्वाद्वितीयाभावः । तथा । "विभूषणं किं कुचमण्डलानां कीदृग्युमा चान्द्रमसी कुतो भा । सीता कथं रौति दशास्यनीता [°नीत्या Ms.] हा राम हा देवर तात मातः" । * * * तातेत्यत्र "दूराद्धूते च" Pânini, VIII. 2. 84. इति प्लुतत्वेऽपि "अप्लुतवदुपस्थिते" Pânini, VII. 1. 121. इत्यतिदेशात्प्लुतोक्ता इतिवत्प्रकृतिभावो न । तथा श्रीभागवते । "पुत्रेति तन्मयतया तरवोऽभिनेदुः [°भिनेषुः Ms.]" इति । उपस्थितो नाम अवैदिक इतिकारः"—**तस्यान्विष्यन्,** On this Hemâdri quotes the following: "गवेषस्तत्त्वमार्गणे" इति कामधेनुः—**तापादन्तः शल्य इवासीत्क्षितिपोऽपि,** *Cf.* Buddha. IX. 13. "तच्छोकशल्ये हृदयावगाढे मोहंगतो भूमितले मुहूर्तं । कुमार राजा नयनाम्बुवर्षी यत्त्वामवोचत्तदिदं निबोध" ।

P. 291. St. 76.—**द्विजेतरतपस्विसुतं,** 'The son of an ascetic belonging to none of the first three classes.' The word द्विज (twice born) includes, besides Bráhmanas, Kshatriyas and Vais'yas. The young ascetic who was accidently shot by the king was of a S'udra caste. *Cf.* Hemâdri: "विप्रक्षत्रियविट्शूद्रा वर्णास्त्वाद्यास्त्रयो द्विजाः" and goes on saying: "ब्राह्मणक्षत्रियवैश्येतरतपस्विपुत्रं करणजातीयं श्रवणाख्यं." This too is noticed by Châritravardhana and Sumativijaya, and further he adds: "शूद्राविशोस्तु करणोऽम्बष्ठो वैश्याद्विजन्मनोः" । "शूद्रायां करणो वैश्याद्विन्नामेष विधिः स्मृतः" इति.—**तेनावतीर्य तुरगात्प्रथितान्वयेन,** *Cf.,* Buddha. Canto V. 7. "अवतीर्य ततस्तुरंगपृष्ठाच्छनकैर्गां व्यचरच्छुचा परीतः" ।

P. 291. St. 77.—**ताभ्यां तथागतमुपेत्य तमेकपुत्रं,** Châritravardhana interprets: "तथागतं वेतसवनाच्छन्नं तमेकपुत्रमुपेत्योदिश्याज्ञानतो हस्तिधिया विद्धं स्वचरितं स्वकीयवृत्तं नृपतिस्ताभ्यां तन्मातापितृभ्यां शशंसावदत्." And Vallabha interprets: "ताभ्यां तथागतं मरणावस्थां प्राप्तं तमेकपुत्रमुपेत्य ज्ञापयित्वा अज्ञानतोऽकामतो नृपतिः स्वचरितं शशंस." And Hemâdri interprets: "पित्रोः सकाशं समीपमनुधृतशल्यमेव सुतं निनाय । आर्षे तु नदीतीर एव शरोद्धरणान्मृतः इत्युक्तं । अजानतः स्वचरितं तथागतं तामवस्थां प्राप्तं तमेकसुतं [तमेकपुत्रं Ms.] ताभ्यां पितृभ्यां शशंस । ब्रुवीत्यर्थग्रहणाद्विकर्मकता । एकग्रहणं पित्रोरनन्यगतिकत्वसूचनार्थं । पंगुत्वाचाभ्यामिति । क्रियया यमभिप्रैति सोऽपि संप्रदानमिति चतुर्थी ।

उपेत्येति वाक्यियोक्तिः ? [उपेत्येति वाधियोक्तिः Ms.] ? । I cannot understand in what sense the gerund उपेत्य is to be taken so as to arrive at the definite sense of the stanza. It is doubtful whether उपेत्य can be used in the sense of 'with respect to,' 'with regard to,' as interpreted by Cháritravardhana. It is also very doubtful whether उपेत्य can be correctly employed in the causal sense of अवगमय्य 'having informed,' 'having caused to understand,' as explained by Vallabha. Some scholars construe तथागतं तमकृतशल्यमुपेत्य, and interpret, 'having gone up to him (at the time of shooting an arrow) so as to bring the game (*i. e.* S'rávana the Muni's son who was, at the time, filling up his jar with water) within the reach of his arrow and then shot at him (of course the king took him for a wild elephant); and this rash act of his committed through ignorance he began to narrate to his parents. But this interpretation does not appear so convincing as to remove the difficulty of the sense of उपेत्य. It may be interpreted "And being urged by him the lord of people took (*i. e.* bid his followers to take) him even with the arrow unextracted (from his breast) to his parents who had lost their sight, and advancing towards their only son, who was in that condition (*i. e.* enveloped in Vetas plants), narrated to them his rash act, committed through ignorance." The manuscripts A₂. D. H. R. and the two other Mss. (No. 47 of 1873-74 and No. 25 of 1872-73 of the Deccan College Library) of Hemádri's दर्पण read उपेक्ष्य instead of उपेत्य, *i. e.* 'neglecting him who was in that condition (तामवस्थां प्राप्तं) the king began to narrate &c.' This reading is preferrable since it leaves no difficulty of interpretation. Pandit says, 'Mallinátha's interpretation appears to be correct.' But in what sense it is very difficult to make out.

P. 292. St. 78. बहु विलप्य. 'Having lamented much.' The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "विलापः परिदेवनम्" इत्यमरः । – हस्तार्पितैर्नयनवारिभिरेव. Here Hemádri remarks: "शापोऽपि जलदानपूर्वकः". And Cháritravardhana says, "पानीयेनैव शापो दीयते." A curse or imprecation, like a Dakshiná or a gift, is given with water in the hand let down as soon as the last word of the imprecation is uttered. *Cf.* Bhágavata Purána, I. 18. 36. "इत्युक्त्वा रोषताम्राक्षो वयस्यानृषिबालकान् । कौशिक्याप उपस्पृश्य वाग्वज्रं विससर्ज ह." Again *ibid.* IX. 9. 23. "सा व्यसर्पोऽञ्जलिनादाय गृहे शापं समुद्यता".

P. 292. St. 79.—आक्रान्तपूर्व. Hemádri analyses, "पूर्वमाक्रान्त आक्रान्तपूर्वः," and supports it by "राजदन्तादिषु परम्." Pánini, II. 2. 31.

' The उपसर्जन is to be put last in the words राजदन्त &c. ' Thus राजदन्तः (दन्तानां राजा) ' a chief of teeth ' (*i. e.*, an eye-tooth). It is not merely the उपसर्जन that is placed last in these examples ; but words which by some other rules would have stood first, stand in this list as second.

P. 293. St. 80.—कृष्यां दहन्नपि, On this Hemâdri, Chàritravardhana and Sumativijaya have the following : " शालिक्षेत्रभूमौ हि दाहं विना किंचिन्नोत्पद्यते इति कोंकणेषु प्रसिद्धिः ".

P. 293. St. 81.—इत्थं गते गतघृणः किमयं विधत्तां, ' What shall this cruel man, who deserves decapitation at your hands, do for you ? ' A proverbial saying. *Cf.* Hemàdri : " पुरुषवधे स्तेये भूम्यादाने चक्षुर्निरोधे ब्राह्मणस्य " इति आपस्तम्बवचनात् । ब्राह्मणस्यैवापकृष्टवर्णवधे [वृद्धवधे Ms.] वधनिषेधः इति वध्यस्तवेति. "—एधान्हुताशनवतः, *i. e.* he begged that a funeral pile should be made for him and fire set to it, in order that he and his wife might immolate themselves on it along with the body of their son.

P. 294. St. 82.—और्वमिवाम्बुराशिः, Wilson in his Vish*n*u Purâ*n*a Vol. III. p. 80, gives the following account : " Aurva was a sage the grandson of Bh*r*igu. When the sons of king K*r*itavîrya persecuted and slew the children of Bh*r*igu, to recover the wealth which their father had lavished upon them, they destroyed even the children in the womb. One of the women of the race of Bh*r*igu in order to preserve her embryo, secreted it in her thigh (Ûru), whence the child, on his birth, was named Aurva. From his wrath proceeded a flame, that threatened to destroy the world ; but, at the persuasion of his ancestors, he cast it into the ocean, where it abode, with the face of a horse. Aurva was, afterwards, a religious preceptor to Sagara, and bestowed upon him the आग्नेयास्त्र, or fiery weapon, with which he conquered the tribes of barbarians who had invaded his patrimonial possessions. " The legend of the Aurva fire residing in the interior of the ocean was probably invented to account for the constant ebullision of the oceanic waters.

CANTO X

P. 295. St. 1.—**पाकशासनतेजसः**, Analyse पाकशासन इन्द्रस्तस्य तेज इव तेजो यस्य 'Who shone forth like Indra.' Mallinátha takes तेजस् probably in the sense of 'splendour' or 'lustre', but if the epithet be taken in the sense of 'power or might' the propriety of the adjective becomes more evident. Pákas'ásana is a name of Indra and means 'one that disciplines or instructs the simple or ignorant,' and the word पाक being not properly understood in later times came to be applied to the name of a demon whom Indra destroyed. *Cf.* Châritravardhana: "पाकान् बालान् शास्तीति । शासिन्नृषीति युः । पुरुहूतोऽदितेर्गर्भं प्रविश्याच्छिनदिति कथा प्रसिद्धा." *Cf.* also Bhágavata Sk. VIII. Adh. 11. "उदयच्छद्रिपुं हन्तुं वज्रं वज्रधरो रुषा । स तेनैवाष्टधारेण शिरसि बलपाकयोः । ज्ञातीनां पश्यतां राजन् जहार जनयन्भयं." There is, so to speak, no propriety in the use of the epithet पाकशासनतेजसः in the present verse, but it appears to be used simply for the sake of alliteration it affords with शासनः in the previous word.—**पृथिवीं**, The name is derived from पृथु one of its earliest kings. *Cf.* Harivans'a, "ततोऽभ्युपगमाद्राज्ञः पृथोर्वैण्यस्य भारत । दुहितृत्वमनुप्राप्ता देवी पृथ्वीति चोच्यते."—**किंचिदूनम्**, is also repeated for alliteration in the following line.—**शरदामयुतं**, 'A myriad of autumns', *i. e.*, years. Varsha originally meaning the rains or the rainy seasons (शरद्) has in the same way acquired the sense of *year*. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority of Amara produced by the Northern Mss. "स्यादृतौ वत्सरः शरत्" इत्यमरः ।

P. 295. St. 2.—**न चोपलेभे**, 'And yet he did not obtain &c.' *Cf.* Chåritravardhana: "च शब्दस्त्वर्थे । न चेति समुदायो निषेधे वा." *Cf.* Sumativijaya: "एवं पुत्रार्थं दूयमानचित्तस्य तस्य बहुकालेनापि पुत्रो नाजनि येन स पितृऋणविमुक्तो भवेत । सुतस्याह्लादकत्वेन शोकान्धकारनाशकत्वाज्ज्योतिषा साम्यं."—**ऋणनिर्मोक्षसाधनं**, A descendant of Arya is born with three debts or obligations, the first called ऋषिऋण being discharged by the study of the Vedas, the second देवऋण by the performance of sacrifices, and the third पितृऋण by begetting a son to continue the family. *Cf.* The S'rutis quoted in दत्तकमीमांसा, "जायमानो ह वै ब्राह्मणस्त्रिभिर्ऋणैर्ऋणवान् जायते ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो यज्ञेन देवेभ्यः प्रजया पितृभ्यः । एष वा अनृणो यः पुत्री यज्वा ब्रह्मचारी च" also "ऋणं देवस्य यागेन ऋषीणां दानकर्मणा । सन्तत्या पितृलोकानां शोधयित्वा परिव्रजेत." *Cf.* Buddha. IX, 55. "नरः पितॄणामनृणः प्रजाभिर्वेदैर्ऋषीणां क्रतुभिः सुराणां । उत्पद्यते सार्धमृणैस्त्रिभिस्तैर्यस्यास्ति मोक्षः किल तस्य मोक्षः"

Cf. also note to St. 20, III; also St. 71, I.—**शोकतमोपहं**, Hemádri discusses : "भयाढ्यादीनां परिगणनस्योपलक्षणत्वात् " अपेक्लेशतमसोः " Pânini, III. 2. 50. इति सोपपदेऽपि डप्रत्ययः. " Translate the aphorism :—The affix ड comes after the verb हन् 'to kill,' when it is compounded with the preposition अप्, and when the object, in composition with it, is the word क्लेश 'pain' or तमस् 'darkness.' As, क्लेशापहः पुत्रः 'the pain-allayer *i. e.* the son.' तमोपहः सूर्यः 'the darkness-destroyer *i. e.* the sun.' This aphorism has its scope when the sense is not that of benediction. *Cf.* " संततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेह च शर्मणे. " Vallabha too notices this.

P. 296. St. 3.—**प्राङ्मन्थात्**, 'As did the ocean before the churning, the gems in its interior not yet having been brought forth'. See Bhâgavata Sk. VIII. Also Mahábhárata, Adi Parvan 17, or Râmâya*n*a Bálaká*n*da Canto 25.—**प्रत्ययापेक्षसंततिः**, Hemádri, Châritravardhana and Sumativijaya explain it as : " प्रत्ययो हेतुः पुत्रकामेष्ट्यादिः तादृशः."—**रत्नोत्पत्तिरिवार्णवः**, On this Hemâdri remarks : "अनेन पुत्रवाहुल्यमसूचि [अस्य राज्ञः सूचितं Ms.] । राज्ञो गांभीर्यं सन्ततेश्च रत्नरूपत्वं." And Cháritravardhana has : "अर्णवोपेक्षया राज्ञो गांभीर्यं सन्ततेश्च रत्नवद्गोप्यत्वं च "

P. 296. St 4.—**ऋष्यशृङ्गादयः**, *Cf.* " सुयज्ञं वामदेवं च जाबालिमथ काश्यपं । पुरोहितं वशिष्ठं च."—Invite these sages was the order of Das'aratha to Sumantra. The word आदि includes these Munis. *Cf.* Râmâya*n*a Bâlakâ*n*da canto 12. *Cf.* Hemádri : " ऋष्यस्य मृगभेदस्य शृङ्गमिव शृङ्गं यस्य तदादयः । आदिशब्दात्कात्यायनजाबालिवामदेवाः । 'गोकर्णपृषतैणर्ष्यः' इत्यमरः । सन्तो बुधाः".—**पुत्रीयामिष्टिम्**, This consists simply of पुरोडाश boiled in eight shreds of earthen vessels, given as an oblation to Agni the Father (अग्निः पुत्री) with the Mantra, " यस्मै त्वं सुकृते जातवेद उ लोकमग्ने कृणवः स्योनम् । अश्विनं स पुत्रिणं वीरवन्तं गोमन्तं रयिं न शते स्वस्ति." The following lines quoted in the दत्तकमीमांसा from तैत्तिरीयसंहिता, Ka*n*da II, Prap. 2, Anu. 4, explain the manner of performing a पुत्रेष्टि. " अग्नये पुत्रवते पुरोडाशमष्टाकपालं निर्वपेदिन्द्राय पुत्रिणे पुरोडाशमेकादशकपालं प्रजाकामोऽग्निरेवास्मै प्रजां जनयति वृद्धामिन्द्रः प्रयच्छति. " The difference between इष्टि, याग and क्रतु is given in the following verse quoted from भट्टोजिदीक्षितकृतचरुहोमाधिकार–" इष्टिस्तु चरुणा प्रोक्ता यागस्तु पशुना स्मृतः । एतच्छेषः क्रतुः प्रोक्तः होमान्यत्पूजनं स्मृतं." Hemádri says : " पुत्रसंयोगो निमित्तमस्येति विग्रहः । यद्वा । " ग्रहादिभ्यश्च " Pâ*n*ini, IV. 2. 138. इति शैषिकश्छः । —**संतानकांक्षिणः**, Hemádri reads संततिकांक्षिणः and remarks " इति राज्ञो विशेषणं वा."—**जितात्मानः**, " समस्तप्रशस्तकर्माधिकारिणः " says Cháritravardhana.

P. 286. St. 5.—For an account of पौलस्त्य, his birth &c., see Mahâbhârata Vanaparvan Adh. 275.—उपप्लुताः, For this epithet compare Buddha. Canto VIII. 35. "कृतः कुलस्यास्य महानुपप्लवः" । *Cf.* also Meghadûta I. 17. R. V. 6. XIV. 64. II. 48. Ku. II. 32.

P. 297. St. 6.—ते च प्रापुरुदन्वन्तं, This is the क्षीरसमुद्र, so often mentioned in the Purâ*n*as as the abode of Vish*n*u. The story given in the Raghuvans'a by Kâlidâsa regarding the resorting of the gods to that ocean and there awakening the Supreme Being to a knowledge of their danger must have been borrowed from other Râmâya*n*as than that of Vâlmiki, such as of the sage Chyavana and others. *Cf.* Buddh. Canto I. verse 48. "वाल्मीकिरादौ च ससर्ज पद्यं जग्रन्थ यन्न च्यवनो महर्षिः । Râmâya*n*a of Vâlmiki makes the gods relate their grievances to Brahmâ. While they were so relating, Vish*n*u went there. See Râmâya*n*a Bâlakâ*n*da. Canto 15.—बुबुधे चाद्रिपुरुषः, Hemâdri remarks : "द्वौ चकारौ तुल्यकालं गमयतः". See Apte's Guide 273. p. 196. *Third edi.*

P. 297. St. 7.—फणामण्डलोदर्चिर्मणिद्योतितविग्रहं, To the notion that the शेष contains a brilliant gem in his head there are numerous references in the Kâvyas. The higher the quality, in point of poison, of the snake, the more brilliant is his gem. As the Sesha forming the bedding of Vish*n*u was the king of serpents his gems must of course be "उदर्चि."

P. 297. St. 8.—क्षौमान्तरितमेखलेऽङ्के, Lakshmi put the skirts of her garment on the girdle lest the feet of Vish*n*u, coming in contact with it, should be hurt. The girdle is made of silver or gold, and, where possible, of precious stones. *Cf.* Hemâdri: "क्षुमाया विकारः क्षौमं दुकूलं तेनान्तरिता मेखला यस्य तस्मिन् । द्वयोश्चरणयोः कठिनकाञ्चीस्पर्शो माभूदित्याचारविषयः."—निक्षिप्तचरणं, *Cf.* Châritravardhana: "लक्ष्म्या विष्णोश्चरणसंवाहनं." Pandit says : 'This refers to the picture in which the Ádipurusha (or Vish*n*u ?) is represented in pictures, where Lakshmi presses and shampoos His feet (चरणसंवाहनम्), a service that every Hindu wife considers it her privilege to do to her husband even at the present day. If it is correct to say, with Mallinâtha, as doubtless it is, that the epithet क्षौमान्तरितमेखले is intended to refer to the extreme tenderness of Vish*n*u's feet, it will be quite safe to charge the poet in this passage with inexcusable effeminateness, since he represents the God's feet—one of the hardest parts of one's body—as more tender than that part of his wife's person on which the ornament was worn.' The epithet is no doubt used to express the tenderness

of Vish*n*u's feet ; but this tenderness is not the effeminacy Pandit speaks of but the tenderness which Lakshmî, like good wives, fancies her husband's feet to possess. See above Hemâdri.

P. 298. St. 9.—**बालातपनिभांशुकं**, On this epithet Hemâdri, Châritravardhana and Sumativijaya have the following: "अन्यत्र। बाला कन्याराशिस्तत्र तपतीत्यातपो बालातपः कन्याराशिस्थस्यादित्यस्य नितरां भासो दीप्तयस्ता एव अंशुकं वस्त्रं यस्य तं इति वा."—**प्रारम्भसुखदर्शनं**, Hemâdri explains. "प्रकृष्टः आरम्भः विष्णुसाक्षात्कारो येषां सनकसनन्दनादीनां सुखेन दर्शनं यस्य तं। अन्यत्र। आरम्भे प्रभाते सुखं दर्शनं यस्य स तं." Châritravardhana too explains this in the same way.

P. 298. St. 10.—**प्रभानुलिप्तश्रीवत्सं**, Hemádri explains: "प्रभया अनुलिप्तः श्रीवत्सः उरसि रोमावर्तो यस्य तं। श्रीर्वसति यस्मिन् स श्रीवत्सः." And Châritravardhana says, श्रीवत्साभिधानो वक्षस्थलः शुभावर्तो येन स तं." And Vallabha says, "श्रीवत्साख्यः उरस्थो लक्षणविशेषो येन स तं." S'rivatsa, literally the favourite of the Goddess of fortune. It is a mark or curl of hair on the chest of Vish*n*u said to be the mark of a kick given by the sage Bh*ri*gu. In Mahâbhârata S'ântiparvan its origin is described in the following words: Nara and Nârâya*n*a were practising asceticism on the mountain of गन्धमादन when the sacrifice of Daksha took place. S'iva not being invited in that sacrifice felt insulted and became incensed. He created the S'ûla which destroyed the sacrifice and which at last went to the mountain where the two sages were absorbed in abstract meditation and struck the breast of Nârâya*n*a. It was then sent back by a हूंकार to S'ankara who in consequence came thither and a tumultuous fight ensued between him and Nârâya*n*a. After a while they were reconciled and Nârâya*n*a said :—"अद्य प्रभृति श्रीवत्सः शूलाङ्को मे भवत्वयं। मम पाण्यङ्कितश्चापि श्रीकण्ठस्त्वं भविष्यसि." *Cf.* XVII. 29. Also compare S'is'ûpâlavadham III. 9. "तेनाम्भसां सारमयः पयोधेर्दध्रे मणिर्दीधितिदीपिताशः। अन्तर्वसन्बिम्बगतस्तदङ्गे साक्षादिवालक्ष्यत यत्र लोकः." See Bhâgavata Sk. X. Uttar. Adh. 89. verses 1—12. 'Bh*ri*gu the sage set out with a desire to find out which of the Trinity—Brahmâ, S'iva, and Vish*n*u—was the greatest. He went and insulted the first two, but they both resented the insult. He then went to Vish*n*u and found him in the company of his consort Lakshmî, and kicked him in the breast, but Vish*n*u bore the unprovoked insult with patience and regarded it as a favour of the sage. The scar or pit left by the injury inflicted by the kick is interpreted to be what is known by the name of S'rîvatsa : which in all probability originally meant simply an ornament, worn over the breast. The Bhâgavata elsewhere explains that the S'rîvatsa is in reality the

lustre of the Kaustubha. Sk. XII., Adh. 11., St. 10, " **कौस्तुभव्यपदेशेन स्वात्मज्योतिर्बिभर्त्यजः । तत्प्रभां व्यापिनीं साक्षात् श्रीवत्समुरसा विभुः."—लक्ष्मीविभ्रमदर्पणं**, Which Lakshmi used as a looking-glass whereby to adjust **the** graces of her face.—**कौस्तुभाख्यमपां सारं**, 'By name Kaustubha, **the** essence of the oceanic waters.' For it was one of the fourteen **gems** churned out of the ocean. *Cf.* Hemádri and Chāritravardhana: " कं भुवं स्तुभ्नाति व्याप्नोतीति कुस्तुभोऽब्धिः." See Mahábhárata Adiparvan Adh. 18.

P. 298. St. 11.—**बाहुभिर्विटपाकारैः**. On this epithet Hemádri remarks : " बाहुभिरिति चतुर्भुजत्वं."—**पारिजातमिवापरं**, 'Like a second Párijáta on earth.' The Párijáta is a heavenly tree being one of the fourteen gems churned out of the ocean. See Bhágavata Sk. X. Uttar. Adh. 59. From the ocean, thus churned by the gods and Dánavas, first up-rose the cow Surabhi. the fountain of milk and curds, worshipped by the divinities, and beheld by them and their associates with minds disturbed and eyes glistening with delight. Then, as the holy Siddhas in the sky wondered what this could be, appeared the goddess Váruṇi, her eyes rolling with intoxication. Next, from the whirlpool of the deep, sprang the celestial Párijáta tree, the delight of the nymphs of heaven; perfuming the world with it blossoms. The troop of Apsarasas, were then produced, of surprising loveliness, endowed with beauty and with taste. The cool-rayed moon next rose, and was seized by Mahádeva; and then poison was engendered from the sea, of which the snake-god took possession. Dhanvantari, robed in white, and bearing in his hand the cup of Amrita, next came forth; beholding which, the sons of Diti and of Danu, as well as the Munis, were filled with satisfaction and delight. Then, seated on a full-blown lotus, and holding a water-lily in her hand, the goddess Sri, radiant with beauty, rose from the waves." See Wilson's Vishṇu Puráṇa Vol. I. pp. 144-147. *Cf.* Hemádri : " पारोऽस्यास्तीति पारी पारिण्यब्धौ जातं पारिजातमिव । स हि स्वर्गाभरणः".—**अपां मध्ये**, Chāritravardhana reads **पयोमध्ये** and explains : " पयसां जलानां क्षीरसमुद्रस्यान्तिकेन दुग्धानां वा मध्ये &c."

P. 299. St. 12.—**मदरागविलोपिभिः** = " मदरागः श्रीवत्सं विलोपितुमतंघातेन शीलं येषां तैः" according to Chāritravardhana. *Cf.* St. 61 IV.—**चेतनावद्भिर्हेतिभिः**, On this Hemádri remarks : " आयुधाधिष्ठदेवताभिरित्यर्थः". The following are the arms of Vishṇu. The conch (जलज), **the** sword (असि), the scimitar (गदा), the bow (शार्ङ्ग), and the disc (**चक्र**). Here they are personified and represented as attending on **Vishṇu as his servants.** *Cf.* Rámayaṇa Bálakáṇḍa Canto 27. " **अप-**

नस्तु मुनेस्तस्य विश्वामित्रस्य धीमतः । उपतस्थुर्महार्हाणि सर्वाण्यस्त्राणि राघवं । ऊचुश्च मुदिता रामं सर्वे प्रांजलयस्तदा । इमे च परमोदार किंकरास्तव राघव &c. &c." *Cf.* also Uttar. "ब्रह्मादयो ब्रह्महिताय तप्त्वा." The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "स्वरचिश्च शस्त्रं च वह्निज्वाला च हेतयः" इत्यमरः ।—उदीरितजयध्वनं, 'Proclaiming the word *Jaya,*' जय विष्णो, जयति विष्णुः, or words of similar meaning.

P. 299. St. 13.—भुक्तशेषविरोधेन. Vallabha simply says, "भवत्सन्निधानान्निवारितेन अत एव मुक्तशेषविरोधेन यक्तशेषाहिवैरेण । गरुडोरगयोः शाश्वतिको विरोधः । मुक्तविषो विरोधिनोऽपि निनीता न वैरायन्ते." Cháritravardhana says, "मुक्तस्त्यक्तः शेषेण शेषाहिना सह स्वाभाविकोऽपि कृष्णतैकटचवर्तित्वाद्विरोधो येन तेन." Hemâdri, Cháritravardhana and Vallabha do not refer to the story in the Mahábhárata alluded to by Mallinátha. See Mahábhárata Adiparvan Adh. 33-34. See also Kás ikhan*d*a Adh. 50.—कुलिशव्रणलक्ष्मणा, 'Bearing the scars of wounds made by the Vajra.' *Cf.* Hemâdri "सुधाहरणकाले इन्द्रेण सह कृतयुद्धत्वात्." And Cháritravardhana has: इति वार्योक्तिः । "एष पत्रं त्यजाम्यंके यस्यान्तो नोपलप्स्यते । न हि मे वज्रपातेन वेदनास्ति काचन" इति महाभारते.—प्राञ्जलिना विनीतेन, Hemádri says: "विष्णुना शिक्षितत्वात्."

P. 300 St. 14.—योगनिद्रान्तविशदैः, 'The sleep of Vish*nu*, observes Pandit, is not the sleep to which mortals are liable, and in which all consciousness is lost and which is a form of death, but the sleep slept by Yogins in which there is consciousness accompanied by memory, and in which the sleeper enjoys communion with absent things and persons belonging to different ages, in which in fact the ordinary conditions and limits of knowledge are out-stripped.' *Cf.* Hemâdri: "योगोध्यानमात्मारामत्वमत्र स एव निद्रा तस्यान्ते." *Cf.* also Kás ikhan*d*a "संयोगस्त्वात्ममनसोर्योग इत्युच्यते बुधैः" इति.—भृग्वादीननुगृह्णन्तं, *i. e.* favouring them with a look at them immediately after he woke up from his Yoga sleep. On this epithet both Hemádri and Vallabha make the following remark: "आदिग्रहणात् "मरीचिमत्र्यङ्गिरसं पुलस्त्यं पुलहं क्रतुं । वशिष्ठं च महातेजाः सोऽसृजत्सप्त मानसान् । सप्त ब्रह्माण इत्येते पुराणे निश्चयं गताः". Bh*r*igu stands at the head of this list of patriarchs called Brahmarshis (primitive sages), who were the sons of Brahmá's mind (मानसपुत्राः). The Vish*nu* Purá*n*a mentions nine, *viz.,* भृगु, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, अङ्गिरः, मरीचि, दक्ष, अत्रि, and वशिष्ठ. They are according to the theory of Purá*n*as the original patriarchs of not only mankind but also other species of creatures. The following list is found in Is'vara K*r*ish*n*a's Sânkhya Kârika: "सनकश्च सनन्दनश्च तृतीयश्च सनातनः । आसुरिः कपिलश्चैव वोढुः पञ्चशिखस्तथा । इत्येते ब्रह्मणः पुत्राः सप्त प्रोक्ता महर्षयः ॥

P. 300. St. 15.—**अवाङ्मनसगोचरम्**. Cháritravardhana explains, "वाङ्मनसपथानां विषयातीतः । यदाह । " यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह" इति श्रुतिदर्शनात्.—**द्विषां**. Objective genitive.

P. 300. St. 16.—**विश्वसृजे**. Cháritravardhana says. " उक्तं च । " यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते " इति श्रुतिवचनं. "—त्रेधास्थितात्मने. Both Hemádri and Vallabha quote the following : " ब्रह्मत्वे सृजते लोकान् विष्णुत्वे पालयत्यपि रुद्रत्वे संहरत्येव तिस्रोऽवस्थाः स्वयंभुवः " इति. Cf. Cháritravardhana: " ब्रह्मविष्णुरुद्ररूप आत्मा यस्य स तस्मै. "—तद्नु. Cháritravardhana discusses: " पश्चाद्गुणमनुनिवार्थे. Pánini II. 2. 1.. इत्यादिना ... समास- निषेधात्तदनु इत्यत्र समासश्चिन्त्यः । किन्तवत्यान्तु ... समासमन्ये ... तदादित्वेन निर्वाहः. " The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following given at the end by the Northern Mss. " ननु कूटस्थस्य कथं त्रैलोक्यमित्याशंक्याह ... " ॥

P. 301. St. 17.—**अविक्रियः**, Cháritravardhana quotes the following: "असङ्गो ह्ययं पुरुषः" इत्यादिश्रुतेरविक्रियो विकारहीनः &c. 'Because this soul is [unassociated with any conditions or circumstances that could serve as its bonds, it is] absolute.' Sánkhya Sútra. 15 —गुणेष्वेवमवस्थाः, Hemádri explains : " ब्रह्मविष्णुरुद्रलक्षणाः सृष्टिस्थितिसंहाररूपा वा." Cf. also the following S'ruti. " आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीत् " and also " नमो रजोजुषे सृष्टौ स्थितौ सत्त्वमयाय च तमोमयाय संहारे त्रिगुणाय स्वयंभुवे." Cháritravardhana gives the substance of this in the following words " तत्त्वतो निरुपाधिकस्वरूपेऽपि त्वयि स्रष्टृत्वादिव्यवहारो गुणोपाधिनिबन्धनः इति भावः ".

P. 301. St. 18.—**अव्यक्तो व्यक्तकारणं**, Hemádri and Vallabha explain it as : " तदुक्तं । " अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे । रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके " इति. By the epithet व्यक्त is meant the external world which is but the manifestation of its primary cause the ब्रह्म which is not produced from any thing. अव्यक्त means 'undeveloped,' 'indiscreet,' *i. e.*, the primary cause of all, the मूलप्रकृति. According to Sánkhyas the effect is but the development of the cause not being essentially different from it. But प्रकृति being the primary cause of all is not a product of any. See Sánkhya Kariká verse 3 " मूलप्रकृतिरविकृतिर्महदाद्याः प्रकृतिविकृतयः सप्त । षोडशकस्तु विकारो न प्रकृतिर्न विकृतिः पुरुषः । " Nature (प्रकृतिः), the root (of material forms), is not produced. The Great One (महत् = बुद्धि or intellect) and the rest (which spring from it) are seven (substances), producing and produced. Sixteen are productions (only) ; Soul is neither producing nor produced. " बुद्धि means महत्तत्त्व. *Cf.* the S'ruti : " प्रकृतेर्महान्महतोऽहंकारः " इति. This also refers to Vedánta doctrine that cause and effect do not materially differ from each other. *Cf.*

Ku. Canto II. stanza 11. "व्यक्तो व्यक्तेतरश्चासि." Hemâdri renders व्यक्त by प्रपंच and quotes an authority from विश्व. "व्यक्तस्फुटमनीषिणोः." But two manuscripts of his Darpana read "अत्यन्तमव्यक्तो व्यक्तः प्रपञ्चस्तस्य कारणं हेतुः."—प्रार्थनावहः, Both Hemâdri and Châritravardhana render it by "प्रार्थनामावहति संपादयतीति." But Châritravardhana's reading is प्रार्थितावहः. See readings.—मितलोकः, Analyse "मितो लोको येन यस्माद्वा," Compare "एकावयवसूक्ष्मांश यस्यैतदखिलं जगत् । कल्पनावयवांशस्य तस्य स्तोष्यामि किंत्वहम्." And the world is the सूक्ष्मांश of this एकावयव. *Cf.* also the following Sruti: "पादोऽस्य विश्वाभूतानीति." This shows that our poet had a complete mastery over the philosophical systems of Vedânta and Sânkhya.

P. 302. St. 19.—तपस्विनम्, On this Hemádri and Vallabha make the following note: "परिपूर्णत्वादकामो लोकयात्रार्थं तपस्यति । तदुक्तं गीतासु । "न मे पार्थास्ति कर्तव्यं । त्रिषु लोकेषु किंचन । नानवाप्तमवाप्तव्यं । प्रवर्तेऽपि च कर्मणि" इति. See readings. And Vallabha remarks: "लोकव्यवहारार्थं तपस्यति । उक्तं च । यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवावरो जनः".—पुराणं, Hemâdri analyses: "पुरा भवः पुराणः"—अजरं, 'Not decaying by old age.' *Cf.* Buddha. Canto XII. stanza 103. "दुर्लभं शान्तमजरं परं तदमृतं पदं" ।—दयालुमनघस्पृष्टं, The epithet is defined as, "यत्नादपि परिक्लेशं हर्तुं या हृदि जायते । इच्छा भूमिसुरश्रेष्ठ सा दया परिकीर्तिता." The contrast here intended refers to the idea that one is kind because one is frail and may any day stand in need of commiseration at the hands of others.—अनासन्नं, On this epithet Châritravardhana quotes the following Sruti:—"तद्दूरे तदन्तिके" इति. And Vallabha says, "साक्षाद्दृष्टोऽसि न पुनर्विज्ञस्त्वां."

P. 302. St. 20.—सर्वज्ञः, Hemâdri renders it by "सर्वेश्वरत्वात्."—सर्वयोनिः, Hemâdri explains: "नित्यवात्," and remarks, "योनिरित्यसभ्यत्वं."—सर्वप्रभुः, Hemâdri says, "सर्गस्थितिप्रलयहेतुत्वात्."—सर्वरूपभाक्, Hemâdri says: "इति विश्वात्मकत्वात," and analyses, "सर्वेषां रूपाणि भजतीति."

P. 303. St. 21.—सप्तसामोपगीतं, Hemâdri gives the list of these Samans: "रथंतरं । बृहद्रथंतरं । वामदेव्यं । वैरूप्यं । पावमान्यं । वैजयं । चान्द्रमसं" इति सप्त सामानि गजोत्पत्तिकारणानि । "सूर्यस्याण्डकपाले द्वे समानीय प्रजापतिः । हस्ताभ्यां परिगृह्याथ सप्त सामान्यगायत । जपतो ब्रह्मणस्तस्मात्समुत्पन्ना मतंगजाः" इति पालकाप्यः. And Vallabha says, "इदं विष्णुर्विचक्रमे" इत्यादिभिः सप्तसामभिरुपगीतं." And Châritravardhana has: "रथंतरबृहत्सामवामदेववैरूप्यपावमानवैराजचान्द्रमसाभिधानैरिदंविष्णुरित्यादि विष्णोरराटमित्यन्तैर्वा उपगीतं."—सप्तार्णवजलेशयं, *Cf.* Hemâdri: "क्षारेक्षुरससुरादधिघृतक्षीरजलपूर्णाः सप्तार्णवाः," and Châritravardhana has: "क्षीरोदो लवणोदश्च दध्योदश्च घृतोदकः । स्वादूदकः सुरोदश्च तथैवेक्षुरसोदधिः" इति वायुपुराणे. And remarks: "ननु

हरिर्दुग्धाम्बुधावेव स्वपिति । तत्कथं सप्तार्णवजलेशयमिति । अत्रोच्यते । कल्पान्ते सप्तानामैक्येऽपि सप्तत्वप्रत्यभिज्ञानमस्तीत्यतः एवं युक्तिः. "—**सप्तार्चिर्मुखं**, On this Hemâdri gives the following note : "सप्तार्चींषि यस्य सोऽग्निर्मुखमस्य । "काली कराली धूमा च लोहिता च मनोजवा । स्फुलिङ्गिनी विश्वरुचिः सप्तजिह्वा प्रकीर्तिताः " इति गर्गः । यद्वा । "भवति हिरण्या कनका रक्ता कृष्णा च सुप्रभा चान्या । अतिरक्ता बहुरूपेति सप्त सप्तार्चिषो जिह्वाः" इति हलायुधः. " And Châritravardhana has, "हव्यकव्यभुगकस्त्वं " इति स्मृतेः. "—**सप्तलोकैकसंश्रयं**, On this epithet Hemâdri makes the following remark : "संश्रयत्येनमिति संश्रयः । सप्तानां लोकानां एकश्चासौ संश्रयश्च तं तथोक्तं । "भूर्भुवः स्वर्महर्जनस्तपःसत्यं " इति सप्तलोकः । "भुवनानि च वर्ष्मीयान्त्रीणि सप्त चतुर्दश " इति वाग्भटः. " The seven regions are, (1) भूः 'the Earth,' (2) भुवः 'the space between the Earth and the Sun, the region of the Munis, Sidhas, &c.', (3) स्वः 'the heaven of Indra above the sun or between the sun and the polar star,' (4) महः 'a region said to be one crore of *Yojanas* above the polar star, ["ध्रुवादूर्ध्वं महर्लोकः कोटियोजनविस्तृतः । कल्पाधिकारिणस्तत्र संस्थिताः द्विजपुङ्गवाः" इति कूर्मपुराणे], (5) जनः 'the abode of सनत्कुमार the son of Brahmâ.' By some it is supposed to be the residence of the *R*ishis and demi-gods during the night of Brahmá. (6) तपः 'the region of deified saints,' (7) सत्यं or Brahmaloka the abode of Brahmâ, translation to which world would exempt beings from further births. Vallabha also quotes the same list.

P. 303. St. 22.—**चतुर्मुखात्**, Here Vallabha quotes the following S'ruti : "त्वया सर्वमिदं सृष्टं." Hemâdri too quotes the same but he reads मया for त्वया.—**ज्ञानं**, Châritravardhana remarks : "ज्ञानमन्तरेण धर्मादिप्रवृत्त्यभावात्. "—**चतुर्वर्णमयः**, Châritravardhana remarks : "ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रावर्णाः " इति याज्ञवल्क्यः. Compare also the following S'ruti : "ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो ऽजायत." And also "जगद्योनिरयोनिस्त्वं जगदन्तो निरंतकः । जगदादिरनादिस्त्वं जगदीशो निरीश्वरः." —**चतुर्वर्गफलं** &c., The knowledge which secures the attainment of धर्म, अर्थ, काम, and मोक्ष.

P. 303. St. 23.—**अभ्यासनिगृहीतेन**, Hemâdri explains : "अभ्यस्यत इत्याभ्यासो योगस्तेन."—**ज्योतिर्मयं विचिन्वन्ति**, Hemâdri remarks, "यतो निर्यान्ति विषया यस्मिंश्चैतो निलीयते । हृदयं तद्विजानीयात् " इति हृदयमनसोर्भेदः. And Châritravardhana has : "अयं पुरुषः स्वयंज्योतिः " इति श्रुतेः ज्योतिर्मयत्वं.

P. 304. St. 24.—**निरीहस्य**, 'Though you have no end to serve, still you become incarnate and destroy the enemies of the world.' *Cf.* "धर्मसंरक्षणार्थैव प्रवृत्तिर्भुवि शार्ङ्गिणः". Hemâdri translates the epithet **by** : "निर्व्यापारस्य," Châritravardhana by "निस्पृहस्य," Sumativijaya

by "रागद्वेषादिरहितस्य," and Vallabha by "निरभिलाषस्य."—**अजस्य,** Châritravardhana explains: "मायावशाद्वराहादिरूपेण जन्म गृह्णतः".—**हत-द्विषः,** Châritravardhana remarks: "रागनिबन्धना प्रवृत्तिः। द्वेषनिबन्धना च ईर्ष्या निरीहस्य न घटते। दृश्यते कंसादिवधः."

P. 304. St. 25.—**शब्दादीन्विषयान्,** *Cf.* Vallabha, "शब्दस्पर्शरूप-रसगन्धान्विषयान्." For a similar expression compare Buddha. Canto III. verse 5. "यदा च शब्दादिभिरिन्द्रियार्थैरन्तःपुरे नैव सुतोऽस्य रेमे"।

P. 304. St. 26.—**बहुधाप्यागमैर्भिन्नाः,** *Cf.* महिम्नस्तोत्र—"त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च। रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव." Compare also [illegible]—"शैवाः सौराश्च गाणेशा वैष्णवाः शक्तिपूजकाः। मामेव प्राप्नुवन्ति वर्षापः सागरं यथा." And also Padma Purána Prayága Máhátmya Adh. 30. "य अद्रिप्रभवा नद्यः पर्जन्यापूरिताः परा। विशन्ति सर्वतः सिन्धुमध्वानस्त्वां तथाखिलाः." *Cf.* Hemádri: "आगमैः शास्त्रैः सांख्यन्यायवैशेषिकबौद्धलोकायतभाट्टादिनिर्देशैर्वा भिन्नाः", and he translates सिद्धि by "कार्यसिद्धिः पुण्यसिद्धिः तस्याः हेतवः".

P. 305. St. 27.—**गतिः,** Hemâdri renders it by "उपायः," and Châritravardhana and Sumativijaya by "प्राप्यः इत्यर्थः".—**त्वत्समर्पित-कर्मणां.** Both Hemâdri and Vallabha make the following remark: "ब्रह्मण्याधाय कर्माणि" इति वचनात्. It is those persons alone who feeling averse to worldly pleasures put their child-like reliance upon you that get absolution; compare Váyu Purâna Mâghamâhâtmya Adh. 15. "दिविनां याः प्रवर्तन्ते प्रातरारभ्य स्वाः क्रियाः। ताश्च विष्ण्वर्पणं कुर्वन् कर्मपाशाद्विमुच्यते."

P. 305. St. 28.—**महदादिः,** Châritravardhana remarks: "पंचभूतात्मकत्वात्." and further Hemâdri and Châritravardhana observe, "क्षित्यादिकं सकर्तृकं कार्यत्वाद्घटवदित्यनुमानं." See also commentary.—**आप्तवाक्,** Both Hemâdri and Châritravardhana quote here the following S'ruti: "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" इति.—**साध्यं,** Hemâdri explains it by "साधयितुं शक्यं," and Châritravardhana by "प्रतिपाद्यं."—**का कथा,** Châritravardhana and Vallabha explain: "यः प्रत्यक्षेण दुःसाध्यः स कथं प्रमाणान्तरैः साध्यः स्यादिति." And Sumativijaya has: "यः प्रत्यक्षप्रमाणेनापि ग्रहीतुमशक्यः। तदा प्रमाणान्तरैः कथं ज्ञातव्यो भवेत्." When it is impossible to know the real nature of the visible world, much more, would it be the case with you its author, about whose existence the proof we have is derived from inference and the Vedas. जगत्सकर्तृकं कार्यत्वात्. From this syllogism the existence of the author of the world is established.—**प्रत्यक्षः,** On this epithet Hemâdri holds the following discussion, अक्षि अक्षि प्रति वर्तते इति शरदादिषु "प्रतिपरसमनुभ्योऽक्ष्णः" इति टचि

कृते अव्ययीभावत्वात्क्लीबता स्यात् । अत एव समासान्तविधानादव्ययीभावसमासः । "अथ कुगतिप्रादयः" Pânini, II. 2. 18. इति प्रतिगतः अक्षमिति तत्पुरुषे कृतेऽपि "परवल्लिङ्गं–" Pânini, II. 4. 26. इति स एव दोषः इति चेत्र । "द्विगुप्राप्तापन्नालंपूर्वगतिसमासेषु निषेधो [प्रतिषेधो] वक्तव्यः" इति परवल्लिङ्गतानिषेधान्निष्कौशाम्बिवत्पुल्लिङ्गता भवति । प्रत्यक्षशब्दे अक्षशब्दो रूढ्या नेत्र वर्तते." Translate the aphorisms :—" The indeclinable word कु 'bad,' the particles called गति, and the prepositions प्र &c., are invariably compounded with other words with which they are in construction; and the resulting compound is Tatpurusha." "The gender of the final member, in case of Dvandva or Tatpurusha compound, becomes the gender of the whole compound."

P. 305. St. 29.—**वृत्तयः.** Hemâdri explains, "नयनचन्दनाद्याः." And Châritravardhana and Sumativijaya have : "नेत्रदर्शनस्मरणाद्याः दर्शनस्पर्शनादीन्द्रियवृत्तयो वा." and Vallabha explains : "वृत्तयो व्यापाराः." —**निवेदितफलास्त्वयि.** *Cf.* "यस्य चेतसि वर्तेथाः स तावत्कृतिनां वरः".

P. 306. St. 30.—**रत्नानि.** On this Hemâdri remarks: "इति रत्नतानन्तता च."—**तेजांसि,** On this Hemâdri remarks: "इति तेजस्वितानन्तता च । उदर्चिविवस्वतः इति षष्ठ्यन्तं वा." And Châritravardhana has: "एतेन श्रेष्ठत्वमूर्जस्वित्वमानन्त्यं चोक्तं." On this verse Hemâdri remarks: "इदानीं स्तुत्युपसंहारेणैव पूर्ववर्णनशङ्कां निरस्यति."—**स्तुतिभ्यो व्यतिरिच्यन्ते** &c., compare "अतीत्य वाचां मनसां च गोचरं स्थिताय ते तत्पतये नमो नमः" ।

P. 306. St. 31.—**लोकानुग्रहः.** Châritravardhana and Sumativijaya translate it by "प्रजारक्षणं."—**जन्मकर्मणोर्हेतु.** Here Châritravardhana quotes the following from Gita. "धर्मत्राणाय ते शरीरग्रहणं"। उक्तं च गीतायां : "यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत । अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहं." इति. *Cf.* also. "परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृतां । धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे."

P. 306. St. 32.—**इयत्तया.** Hemâdri analyses. "इदं परिमाणमस्य इयान् तस्य भावः इयत्ता तया." Châritravardhana and Sumativijaya give the substance of this passage in the following words: "इयत्तया परिच्छिन्नतया न । यावन्तो गुणास्तावन्तो वर्ण्यन्ते इति वाक्यनिवृत्तिर्नास्तीति भावः."

P. 307. St. 33.—**अधोक्षजं.** Hemâdri explains, "अधः कृतानि जितानि अक्षाणि इन्द्रियाणि यैस्ते अधोक्षा वसिष्ठादयस्तेभ्यो जायते कृष्णादिरूपेणेति । यद्वा । अधःकृतं अक्षजं इन्द्रियजं ज्ञानं येन सः । तत्परोक्षमित्यर्थः । "परोक्षप्रिया हि देवाः" इति श्रुतिश्च." The epithet also analysed as. "अक्षादिन्द्रियाज्जायते इत्यक्षजं प्रत्यक्षज्ञानं । अधोऽधस्तनमग्राहकत्वाद्धीनं तदस्य सः" । 'Him, who was born beneath the axle.' This is one of the many names of *Krishna,* who being identified with Vishnu, all the names and epi-

thets of the one are applied to the other. Harivans'a connects the word with the legend of S'akaṭâsura. See the following passage "प्रत्यक्षं शूरसेनानां श्रूयतां महदद्भुतं। अधोऽनेन शयानेन शकटान्तरचारिणा। राक्षसी निहता रौद्री शकुनी वेशधारिणी। पूतना नाम घोरा सा महाकाया महाबला। विषदिग्धं स्तनं क्षुद्रा प्रयच्छन्ती जनार्दने। ददृशुस्तां विनिहतां राक्षसीं ते वनौकसः। बलेः सुतां महाघोरां भीषणां विकृताननां। पुनर्जातोऽयमित्याहुरुक्तस्तस्मादधोक्षजः." Harivans'a Adh. 160, Sts. 87-90. The Bhâgavata Puráṇa narrates the cart-accident above alluded to in a different manner. Sk. X. Pûrv. Adh. 7.—**स्तुतिः**, Vallabha remarks: "न स्तुतिः। अविद्यमानगुणारोपणं स्तुतिः। सकलपरिपूर्णगुणस्य न चालीकवचोभिः प्रीतिरुपजायते," and Hemâdri says, "अध्यारोपितार्थवचनं स्तुतिः"।—**परमेष्ठी**, On this epithet Hemâdri discusses, "परमे लोके तिष्ठतीति परमेष्ठी। "परमे कित् Uṇádi Sûtra 450. S. K. p. 333. इति इनिः। "हलदन्तात्—" Pâṇini, VI. 3. 9. इत्यलुक्। "अम्बाम्ब—" Páṇini, VIII. 3. 97. इति सूत्रे स्थास्थिन्स्थूणामितिषत्वं."

P. 307. St. 34.—**अप्रलयोद्वेलात्**, Hemâdri says, "अब्धिस्तु प्रलयोद्वेलः स तु सदैव."—**नैर्ऋतोऽध्वेः**, Hemâdri explains:, "ऋगतौ। निर्ऋच्छतीति निर्ऋतिः निर्ऋतिरेव नैर्ऋतः निर्ऋतेरलक्ष्म्या वा अपत्यं। "स्यादलक्ष्मीस्तु निर्ऋतिः" इति."

P. 307. St. 35.—**भगवान्**, Chârítravardhana explains: "भगः ऐश्वर्यमस्यास्तीति। ऐश्वर्यस्य समग्रस्य रूपस्य यशसः श्रियः। ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीरणात्."—**परिभूतार्णवध्वनिः**, Analyse परिभूतः पराभवं प्रापितः अर्णवस्य समुद्रस्य ध्वनिरुद्घोषो येन सः।

P. 308. St. 36.—**चरितार्थेव**, Hemádri, Cháritravardhana and Vallabha read चरितार्थैव. The एव will better be taken after वर्णस्थानसमीरिता. 'Speech had then for the first time her existence justified when she was spoken from the different organs of speech of Him.'—**वर्णस्थानसमीरिता**, Hemâdri remarks: "अष्टौ स्थानानि वर्णानामुरः कण्ठः शिरस्तथा। जिह्वामूलं च दन्ताश्च नासिकोष्ठौ च तालु च." *Cf.* "पुराणस्य कवेस्तस्य चतुर्मुखसमीरिता। प्रवृत्तिरासीच्छब्दानां चरितार्था चतुष्टयी."—**कृतसंस्कारा**, Hemâdri explains: "प्रकृतिप्रत्ययनिर्वचनं। संवृतादिर्वा," and Châritravardhana has: "विहितव्याकरणालंकारादिसंस्कारः".

P. 308 St. 37.—**निर्यातशेषा**, Châritravardhana analyses: "निर्यातः शेषो यस्याः सा."

P. 308. St. 38.—**अनुभावपराक्रमौ**, Hemâdri explains: "अनुभावो महिमा पराक्रमः पौरुषं च."

P. 309. St. 39.—**अकामोपनतेन** &c., 'That a virtuous man happens to commit sin without a wish to commit it,' *i. e.*, unintentionally, that is the action is involuntary and the agent is not conscious of it at the time it takes place. *Cf.* Hemâdri: "अकामेनानिच्छया प्रमादा-

दुपनतेन &c."—मे, Hemâdri remarks: "ते मे शब्दौ निनातेषु त्वया मयेति तस्मिन्नर्थे" इति वामनः.—साधोर्ह्रदयमिव, On this epithet Hemâdri remarks: "इति दुःसहत्वं."

P. 309. St. 40.—सारथ्यं प्रतिपद्यते, *Cf.* Hemâdri and Vallabha: "तथा कुमारसंभवे। "समीरणः प्रेरयिता भवति। व्यादिश्यते केन हुताशनस्य" इति.

P. 309. St. 41.—स्वासिधारापरिहृतो मूर्धा, 'The head that his own sword (called चन्द्रहास) had spared.' In order to propitiate the god S'iva, Râva*n*a, it is said, sacrificed to him nine of his ten heads, and just as he was about to cut off the tenth and last, the god granted his prayer and also the desired fruit of his asceticism. The nine heads that were already sacrificed by him were also restored to him. See Râmâya*n*a Uttarkâ*n*da Canto X.—चक्रस्य मे लव्यांशः, Châritravardhana remarks: "चन्द्रहासेन नवशिरांसि छिन्दन् दशमं यन्नाच्छैत्सीत्तन्नूनं मे चक्रभागः इत्युत्प्रेक्षा." And Sumativijaya has the following: "पुरा महादेवस्याग्रे स्वस्य नवशिरांसि छित्वा पूजां कृत्वा यद्दशमं शिरो न छिन्नं तन्मया छेद्यं." *Cf.* also Râmâya*n*a: "दशवर्षसहस्रं तु निराहारो दशाननः। पूर्णे वर्षसहस्रे तु शिरश्चाग्नौ जुहाव सः। एवं वर्षसहस्राणि गतानि नियमात्मनः। दशवर्षसहस्रं तु निराहारो दशाननः। पूर्णे वर्षसहस्रे तु दशमे दशमं शिरः। छेत्तुकामे दशग्रीवे प्राप्तस्तत्र पितामहः। पितामहस्तु सुप्रीतः सार्धं देवैरुपस्थितः। तव तावद्दशग्रीव प्रीतोऽस्मीत्यभ्यभाषत."

P. 310. St. 42.—अत्यारूढं, Hemâdri renders it by "आक्रमोत्कर्षः." And Vallabha by "आक्रमणोत्कर्षत्वं," and Châritravardhana and Sumativijaya by दौष्ट्यं."—मया सोढं, Here Sumativijaya and Châritravardhana observe: "यथा चन्दनेन भोगिनः सर्पस्यारोहणं सह्यते तथा मयापि." See readings.

P. 310. St. 43.—मर्त्येष्वास्थापराङ्मुखः, Hemâdri explains: "आस्थायां पराङ्मुखः। आस्था तात्पर्यं संभावना वा." 'Averse to expect danger from mortals', *i. e.*, not expecting.—दैवात्सर्गात्, 'From divine beings', *i. e.*, from the gods as well as from demi-gods. *Cf.* Râmâya*n*a Uttarkâ*n*da. "सुपर्णनागयक्षाणां दैत्यदानवरक्षसां। अवध्योऽहं प्रजाध्यक्ष देवतानां च शाश्वत। न हि चिंता ममान्येषु प्राणिष्वमरपूजित। तृणभूता हि ते मन्ये प्राणिनो मानुषादयः." Also Adhyâtma Râmâya*n*a: "गन्धर्वदेवासुरतो यक्षराक्षसतस्तथा। सर्वकिन्नरभूतेभ्यो न मे भूयात्पराभवः."

P. 310. St. 45.—अचिराद्यज्वभिर्भागमाशम्यध्वे, Hemâdri observes: "मया रावणे हते [हते सति Ms.] लोके यज्ञा भविष्यन्तिः."—अनालीढं = अनास्वादितं according to Châritravardhana, Hemâdri and Sumativijaya. And अनुच्छिष्टं according to Vallabha.—विधिवत्, "वेदोक्तविधिना" Val-

labha. The Asuras with their various forms of disguise always watch to seize an opportunity of carrying off the oblations that are thrown into the fire for the gods. Means are also prescribed whereby the offerings thrown into the fire for gods may be prevented from being seized and misappropriated by the demons and whereby they may safely reach the gods. *Cf.* The following Hârita Sm*r*iti quoted in the Prayogaratna Pâribhâshâprakara*n*a, "जपहोमहरा ह्येते असुरा दिव्यचारिणः । पवित्रकृतहस्तस्य विद्रवन्ति दिशो दश." And also Mârka*n*deya Purâ*n*a (सावर्णिकमन्वन्तर, Adh. 6. p. 448.), "पुरा शुम्भनिशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शचीपतेः । त्रैलोक्यं यज्ञभागाश्च हृता मदबलाश्रयात्." And further on the Asura says, "मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः । यज्ञभागानहं सर्वानुपाश्नामि पृथक् पृथक्."

P. 311. St. 46.—वैमानिकाः, The following is the Châritravardhana's commentary on this verse. "मेघेषु घनेष्वावरणमात्मनो निलयं [निलयनं Ms.] तत्र तत्पराः । मरुतां वायूनां पथि नभसि विमानेन संचरन्तीति वैमानिकाः पुण्यकृतः स्वर्लोकगामिनः पुष्पकस्य विमानस्यालोके क्षोभं त्यजन्त । धनदं विजित्य तत्पुष्पकमधिरूढो रावणो देवविमानाभिग्रहीतुमाकाशे बभ्रमतीति प्रसिद्धिः । मरुतां देवानां पथीति व्याख्यायां मेघाच्छादनं न संभवति." It appears, however, that the epithet पुण्यकृत, which is the name of a species of gods included under the title of the विश्वेदेवाः, is here used to signify gods in general; just like Marutas, originally the storm gods, the companions of Indra are afterwards considered gods in general. Hemâdri says, "मरुतां देवानां पथि व्योम्नि । "अनन्तं सुरवर्त्म खं" । यद्वा । मरुतां वायूनां । "द्यौः स्वर्नभोऽन्तरिक्षं [खं नभोऽन्तरिक्षं Ms.] च मेघवायुपथोऽम्बरं" इति धनंजयः. And further on he says: "पुष्पकारूढाद्रावणात् गच्छतां रावणाद्भयं त्यजन्त्वित्यर्थः । तेन हि कुबेरस्य पुष्पकं विमानं बलाद्धृतं । मेघावरणमन्तर्धानं तत्र तत्पराः" Quite the contrary to what Châritravardhana says. But he agrees in his explanation with Mallinâtha and Vallabha.—संक्षोभं, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "संक्षोभो भयचकितम्" इति शब्दार्णवः ।

P. 311. St. 47.—शापयन्त्रित &c., *Cf.* Hemâdri : "अनिच्छन्त्या नार्याः पातिव्रत्यभङ्गात्तव मूर्धा शतधा विशीर्णः स्यादिति नलकूबरशापः [नलकूबरस्य शापः Ms.] तथा राघवाभ्युदये । "जोषमास्वरमयामि बलाचेन्मामहं [बलाचेन्वामहं Ms.] कथय कोऽत्र नियन्ता । पुण्यकाम इव [पुण्यपाक इव Ms.] सर्वसतीनामस्ति पापनलकूबरशापः." And Châritravardhana has : "पुरा कुबेरपुत्रं नलकूबरमभिसरन्तीं रम्भामवेक्ष्य काममोहितरावणो निजमदग्राहिलोऽग्रत एव केशेषु जग्राह । ततः सोऽशपत् । अद्य प्रभृत्यन्यां यत्कामयमानां कामपि स्त्रियं गृह्णासि ततस्तव मूर्धा शतधा दलिष्यतीति । अत एव तेन सुरगन्धर्वादीनां वर्णावधा अदूषिता इत्यर्थः". Although Râva*n*a imprisoned celestial women and other goddesses, nevertheless, they were safe from his violence ; because he was labouring under

an imprecation of Nalakûbara to the effect that if he should try to seize a woman by her hair his head should split into a thousand pieces. Nalakûbara was a son of Kubera. The hairs of Suvâsinîs while in imprisonment are uncombed, and are combed when they are set free and reunited to their husbands. Because according to the rules of the S'âstra women whose husbands are absent should not comb or decorate their hair. *Cf.* Yájnavalkya Smriti Adh. 1. "क्रीडां शरीरसंस्कारं समाजोत्सवदर्शनं । हास्यं परगृहे यानं त्यजेत्प्रोषितभर्तृका," *Cf.* also Hârita : "न प्रोषिते तु संस्कुर्यान्न वेणीं च प्रमोचयेत्."

P. 311. St. 48.—**कृष्णमेघस्तिरोदधे**, Hemâdri remarks : मेघो ह्यवग्रहेण क्रान्तं शस्यममृतेन जलेनाभिवृष्यान्तर्दधाति." And Châritravardhana has : "अन्योऽपि कृष्णवर्णो मेघोऽवग्रहक्रान्तं धान्यमभिवृष्य तिरोभवन इति." His speech was as refreshing to the gods who were oppressed by Rávana, as a shower is to the crops that are dried up for want of rain. See above note on St. 33.

P. 312. St. 49.—**पुरुहूतप्रभृतयः**, Hemâdri explains : "पुरु भूयिष्ठं हूतमाह्वानं यस्य । यज्ञेष्वाह्वानात्पुरुहूत इन्द्रप्रभृतिरादिर्येषां ते," and further observes : "प्रभ्रियते आदौ क्रियते प्रभृति नाव्ययं [अनव्ययं Ms.]". *Cf.* Mahâbhârata Vana Parvan Adh. 275. "पितामहस्ततस्तेषां सन्निधौ शक्रमब्रवीत् । सर्वैर्देवगणैः सार्धं सम्भव त्वं महीतले । विष्णोः सहायान् ऋक्षीषु वानरीषु च सर्वशः । जनयध्वं सुतान् वीरान् कामरूपबलान्वितान् । शक्रप्रभृतयश्चैव सर्वे ते सुरसत्तमाः । वानरर्क्षवरस्त्रीषु जनयामासुरात्मजान्."

P. 312. St. 50.—**काम्यस्य**, Hemâdri explains : "कामयितुमर्हस्य काम्यस्य." And Sumativijaya has : "पुत्रार्थं वांछितस्य." *i. e.*, "किञ्चिदुद्देश्यमभिसंधाय यत्कार्यं क्रियते तत्काम्यमित्यभिधीयते."—**अग्नेः**, *i. e.*, From the sacrificial fire in which Das'aratha was throwing offerings to the gods.

P. 312. St. 51.—**इत्थं**, Châritravardhana remarks, "इति द्विवचनेनातिगुरुत्वं सूच्यते." See readings.

P. 313. St. 52.—**प्राजापत्योपनीतं**, *Cf.* Hemâdri : "प्राजापत्यो यज्ञपुरुषो वशिष्ठो वा । तेनोपनीतं । 'प्राजापत्यं नरं विद्धि मामिहाभ्यागतं नृप' इति रामायणे." And Châritravardhana has : प्रजापतिर्ब्रह्मा तस्यापत्यं प्राजापत्यो वशिष्ठस्तेनोपनीतं." And Sumativijaya has, "वशिष्ठेन दिव्यपुरुषेण वा उपनीतं." Vallabha interprets like Mallinátha. The optional interpretations of Hemâdri and Sumativijaya and the explanation of Châritravardhana are not satisfactory. Because they evidently forget the import of the 50 and 51 verses. *Cf.* Rámâyana Bâlakánda Adh. 16. ततो वै यजमानस्य पावकादतुलप्रभं । प्रादुर्भूतं महद्भूतं महावीर्यं महाबलं । समेत्यास्यब्रवीदा-

क्यमिदं दशरथं नृपं । प्राजापत्यं नरं विद्धि मामिहाभ्यागतं नृप । इदं तु नरशार्दूल पायसं देवनिर्मितं प्रजाकरं गृहाण त्वं धनमारोग्यवर्धनं."—वृषेव, The अमृत was brought in a कमण्डलु by धन्वन्तरि, who rose from the ocean when it was in the process of being churned. Both the Vish*n*u Purâ*n*a (Vol. I. pp. 144-145.) and the Mahâbhârata (Adiparvan, Adh. 34.) say that the अमृत was appropriated by the gods, but do not say that Indra received it for them. Kâlidâsa, it appears, must have based his assertion on some other Purâ*n*as or other (than Valmîki's) composition of the Râmâya*n*a, which must have been in vogue in his times. *Cf.* Buddha-charita, Canto I, verse 48. " वाल्मीकिनादश्च ससर्ज पद्यं जग्रन्थ यन्न च्यवनो महर्षिः । चिकित्सितं यच्च चकार नात्रिः पश्चात्तदात्रेय ऋषिर्जगाद," and " सारस्वतश्चापि जगाद नष्टं वेदं पुनर्यं ददृशुर्न पूर्वे । व्यासस्तथैनं बहुधा चकार न यं वशिष्ठः कृतवानशक्तिः". And compare for a similar expression the following : " सा श्रद्धावर्धितप्रीतिर्विकसल्लोचनोत्पला । शिरसा प्रणिपत्यैनं ग्राहयामास पायसं." Buddhacharita. Canto XII. stanza 108. p. 106.—**अन्नं**, Hemâdri derives it as : " अद्यते इत्यन्नं."

P. 313. St. 53.—**त्रैलोक्यप्रभवोऽपि**, Hemâdri analyses: " त्रय एव लोकास्त्रैलोक्यं । चातुर्वर्ण्यादिः "।—**प्रभवः**, Châritravardhana and Sumativijaya translate it by " उत्पत्तिस्थानं. "—**चक्रमे**, Here Hemâdri says, " अयादय आर्धधातुके वा. " Pâ*n*ini, III. 1. 31. Translate the aphorism :—'The affixes आय and those that follow it, (*i. e.* आय, ईयङ् and णिङ्) are optionally added, when it is desired to express one's self with an आर्धधातुक affix.' As, गोपायिता or गोप्ता 'he will protect.' So also अर्तिता or ऋर्तायिता ; कमिता or कामयिता.

P. 313. St. 54.—**पत्न्योः**, On this Châritravardhana observes: "इति दानस्य विवक्षया षष्ठी " (?).

P. 314. St. 55.—**अर्चिता**, *Cf.* Hemâdri, " कौसल्याकैकेय्यौ क्षत्रियसुते । सुमित्रा संकरजा इति भट्टिकाव्ये जयमङ्गलाकारः. " On this Pandit says,—'If Das'aratha had given the whole of the pudding (चरु) to Kausalyâ, Kaikeyî would have been insulted since she was, though not his principal queen like Kausalyâ, his favourite wife. In case the whole had been given to Kaikeyî, Kausalyâ would have been offended. If he had distributed it among all the three, both Kausalyâ and Kaikeyî would have been offended since Sumitrâ was neither the senior queen nor the king's favourite wife. But it was proper that she should receive a portion of the food ; he therefore divided the whole between Kausalyâ and Kaikeyî and desired that bey should each share their portions with Sumitrâ. For the ap-

parent slight of Sumitrá by her not being given any part of the food by Das'aratha, amends seem to be made by the above arrangement under which she got twice as much as either of the other two.'—**प्रिया**, Chàritravardhana remarks: "इति प्रेमास्पदं."

P. 314, St. 56.—**चर्वोरर्धार्धभागाभ्यां**, 'Each with a half of her own portion of चरु.' Of the whole quantity of *Charu* Kausalyá ate one-fourth, Kaikeyi one-fourth and Sumitrá two-fourths or one-half. *Cf.* Adhyátma Rámáya*n*a Bálakà*nd*a Canto 4. "कौसल्यायै स कैकेय्या अर्धमर्धं प्रयत्नतः। ततः सुमित्रा संप्राप्ता जगृध्नुः पौत्रिकं चरुं। कौसल्या तु स्वभागार्धं ददौ तस्यै मुदान्विता। कैकेयी च स्वभागार्धं ददौ प्रीतिसमन्विता." See also the commentary of Rámavarman on the above. The king divided the *Charu* between Kausalyâ and Kaikeyi and desired them that they should share their own portions with Sumitrá. Mallinâtha points out the inconsistency of this fact with that related in the Râmáya*n*a and remarks that Kâlidása must have based his assertion upon some other Purá*n*a. *Cf.* Râmáya*n*a: "कौसल्यायै नरपतिः पायसार्धं ददौ तदा। अर्धादर्धं ददौ चापि सुमित्रायै नराधिपः। कैकेय्यै चावशिष्टार्धं ददौ पुत्रार्थकारणात्। प्रददौ चावशिष्टार्धं पायसस्यामृतोपमं। अनुचिन्त्य सुमित्रायै पुनरेव महामतिः." Rámánuja commenting on the above passage says, "अर्धशब्दोऽत्र समविभागवाची। अर्धादर्धं तुरीयांश इत्यर्थः। कैकेय्यपेक्षया ज्येष्ठत्वं कौसल्यापेक्षया कनिष्ठत्वं च सुमित्राया विचार्य पादोनांशार्धदानं। तस्यै कनिष्ठत्वाच्च अष्टमांशदानम्"। Then quoting the opinion of some other commentators he says "अपरे तु रामभरतौ प्रत्येकं त्र्यंशौ लक्ष्मणशत्रुघ्नौ च अष्टमांशौ। तथा हि कौसल्यायै दत्तार्धस्य अर्धादर्धं चतुर्थांशरूपं सुमित्रायै दत्तवान् कौसल्यया दापितवानित्यर्थः। एवं कैकेय्यै कौसल्यादत्तार्धावशिष्टं अर्धं ददौ। ततः कौसल्यादत्तावशिष्टस्य कैकेय्यै दत्तस्य यदर्धं तदर्धं विचार्य पुनरपि सुमित्रायै ददौ तथा दापयामास। अत्र अर्धपदावृत्तिर्बोध्या"। 'Whatever may be the unversality,' observes Pandit, 'of the rule "पुंस्यर्धोऽर्धं समेंऽशके," it is clear that the अर्ध of the portion of each of Kausalyá and Kaikeyi that was given to Sumitrá was not any portion not exactly a half (एकदेश), but a half. The poet means to assign to each quarter of the food the birth of a son, so that two sons shall be born to Sumitrá and one to each of the two other ladies.' See below verses 66, 70, and 71. *Cf.* Hemádri, Chàritravardhana and Sumativijaya: "निजांशस्यार्धमर्धं सुमित्रायै दत्तवत्यावित्ति भावः".—**तामर्पयांजयतां**, Charitravardhana discusses: "यजि क्रियाकर्तारौ भार्ये तेऽत्र प्रयोजककर्त्र्यौ। गतिबुद्ध्यादि नियमाद्ग्रन्थशब्दात् द्वितीया। भार्ये तां प्रापयतामित्यर्थः। यजि क्रियायाः कर्तृत्वं पत्युः। पत्न्योस्तु प्रयोजककर्तृत्वं। ते च विभक्तयोर्भर्तृकरस्थितयोरर्धमादाय सुमित्रायै दापयामासतुरित्यर्थं। एवं दक्षिणावर्तस्तु व्याचष्टे। तस्याभिप्रायो मृग्यः."—**बहुजन्य**, Hemádri remarks: "ज्येष्ठामुखेन कनिष्ठाया विभागाद्बहुजन्यं."

P. 314. St. 57.—**नेत्रयोः** equivalent to रेत्रयोः, 'one on either side.'—**भ्रमरी,** Châritravardhana says, "जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्" Pâṇini, IV. 1. 63. इति ङीष्."

P. 315. St. 58.—**प्रजाभूत्यै,** Hemâdri explains: "संततीनां लोकानां वा भूत्यै."—**सौरीभिरिव नाडीभिः,** Châritravardhana observes: "नाडीशब्दप्रयोगो रश्मिषु गौणो वृष्टिकारिणीनां रश्मीनाममृता इति नाम." And Hemâdri has: "नीरादानविसर्जनकारित्वान्नाडीति गौणः प्रयोगः". This refers to the fact that the rays of the sun are the cause of evaporation and rain—**अम्मयः,** Hemâdri remarks: "जलोपमया गर्भाणां लोकानंदकरत्वं."

P. 315. St. 59.—**सस्यानां संपदः,** Here Hemâdri remarks: "सस्यसंपदोऽस्याः पाण्डुरत्विष."

P. 316. St. 60.—**जन्मजासि,** &c., Hemâdri gives the names of these and says, "नंदकः शङ्खजन्यकौमोदकीशार्ङ्गधनुःसुदर्शनः".—**आत्मानं,** Hemâdri says, "जातावेकवचनं".

P. 316. St. 61.—**उह्यन्ते स्म,** Hemâdri observes: "स्वर्गेऽधिवत्यर्थः".

P. 316. St. 62.—**कौस्तुभं न्यासं,** Châritravardhana explains: "कादृश्या स्तनयोरन्तरे मध्ये विलम्बितं विलग्नं कौस्तुभमणेः (is his reading) न्यासमालिंगनवशात्कौस्तुभमणिमुद्रां बिभ्रत्या धारयन्त्या." Hemâdri explains: "पद्मं व्यजनं तालवृन्तकमिव हस्ते यस्यास्तया लक्ष्म्या च ताः स्त्रियः स्वर्गे पर्युपास्यन्त । कर्मणि संन्यसनं संन्यासो निक्षेपः स्तनयोरन्तरे विलम्बित इति तं कौस्तुभन्यासं (is his reading) बिभ्रत्या । भूलोके गच्छता विष्णुना भूलोके प्रयोजनमिति [प्रयोजनार्थमिति Ms.] श्रियो वक्षसि कौस्तुभः स्थापितः इत्यागमः". Both Hemâdri and Vallabha agree in their interpretation with Mallinâtha. But Châritravardhana differs. Dinakara, as might be expected, agrees with Châritravardhana. Mallinâtha's reading appears to be कौस्तुभन्यासं See com.

P. 317. St. 63.—**त्रिस्रोतसि,** 'In the triple-streamed river,' the Gangâ flowing down from Svarga on earth and descending thence to the lower world.—**दिव्यायां.** Here Hemâdri observes: "दिव्याशब्देन मंदाकिन्युच्यते."—**उपतस्थिरे.** On this Hemâdri discusses, कर्मणि । "उपान्मंत्रकरणे-" Pâṇini, I. 3. 25. इत्यनेनात्र तङ् न तस्य कर्तरि विहितत्वात् । Translate the aphorism :—'After the verb स्था, preceded by उप, when meaning 'to adore.' the Atmanepada affix is used.' As ऐन्द्र्या गार्हपत्यमुपतिष्ठते 'he approaches with prayers or worships the गार्हपत्य fire with ऐन्द्र hymns.' If it does not mean 'praising with hymns' the terminations which the verb takes, are those of the Parasmaipada, as भर्तारमुपतिष्ठति यौवनेन 'she approaches the husband through youth.' See also the *Vârtikas*: "उपाद्देवपूजासंगतिकरणमित्रीकरणपथिष्विति वाच्यम्" ॥ Also "वा लिप्सायामिति वक्तव्यम्" ।—**समाभिः** **ब्रह्म-**

र्षिभिः, Hemádri quotes from व्रतपमार्तण्ड the list of these Brahmarshis: "मरीचिरंगिरा अत्रिः पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः । वशिष्ठश्चेति सप्तर्षीनाहुर्भित्रशिखण्डिनः". The seven Brahmarshis are sometimes also identified with the seven *Ri*shis, who are: " कश्यपोऽत्रिर्भरद्वाजो विश्वामित्रोऽथ गौतमो । जमदग्निर्वशिष्ठश्च सप्तैते ऋषयः स्मृताः". see Wilson's Vish*nu* Purâ*n*a Vol. I. pp. 100-101.—परं ब्रह्म गृणद्भिः, Vallabha remarks: "सावित्र्याख्यरहस्यमुच्चरद्भिः". And Châritravardhana and Sumativijaya have: "परमात्मानं गृणद्भिः स्तुवद्भिः" इति.

P. 317. St. 64.—गुरुत्वेन, Hemádri says, "स्यात्पित्रे कादिकृद्गुरुः" इत्यमरः." And Sumativijaya has: "गच्छन्तीति जगन्ति तेषां जगतां गुरुर्जगद्गुरुस्तस्य भावो गुरुत्वं तेन."

P. 318. St. 66.—नक्तं ज्योतिरिवौषधि:, Hemádri remarks: "ओषो दाहो धीयते औषधिरिति जगद्धितत्वं देव्याः." And Sumativijaya has: "औषधिषु तेजः स्थापयित्वा रविरस्तं यातीत्यागमः." *Cf*. St. I. Canto IV: also our note to St. 70. Canto IX. Compare also the following S'rûtis: "सौरं तेजः सायमग्निं संक्रमते" । "आदित्यो वा अस्तं यन् अग्निमनुप्रविशति" । "अग्निं वा आदित्यः सायं प्रविशति" ।—तमोपहं, Châritravardhana makes the following remark on तमः and says, "अपुंस्त्वस्य लोका न सन्त्येव त्वं," and goes on saying, " पुत्रज्योतिषोर्भिन्नलिङ्गेऽपि दोषाभावः । पुत्रपुंसकयोः प्रायेणोक्तत्वात्." The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "अंहे क्रेशतमसोः" इति ड्प्रत्ययः ।—सती, Hemádri renders it by "साध्वी प्रशस्ता वा."

P. 318. St. 67.—गुरुः, Hemádri explains it as, "जनको वशिष्ठो वा."—जगत्प्रथममङ्गलं, 'The most auspicious for men to repeat.' *Cf*. Hemádri: प्रथमोक्त्या पश्चाच्छ्रावणादिव्यान्मङ्गलान्तरमपि । अन्वर्था चेयं संज्ञा । तथा शृङ्गारप्रकाशे । कर्मन्यवहारहेतुः संज्ञा । सा चतुर्विधा [चतुर्धा Ms.] । आन्वर्थिकी । पारिभाषिकी । नैमित्तिकी । यादृच्छिकी चेति । अर्थमनुगता आन्वर्थिकी । यथा । "परंतपो नाम यथार्थ नामा" इति । अनपेक्षितसंज्ञा पारिभाषिकी । यथा । "प्रतीप इत्यागमवृद्धसेवी" इति । निमित्तापेक्षा नैमित्तिकी । यथा । "तां पार्वतीत्याभिजनेन नाम्ना" इति । अविद्यमानव्युत्पत्तिर्यादृच्छिकी । यथा । "लाङ्गलोत्खिप्यमानाया यज्ञभूमेः समुद्गता । सीतियमूर्मिलेयं तु द्वितीया जनकात्मजा" इति. And Châritravardhana has: जगत्प्रथममङ्गलमित्युक्त्या पश्चाद्दशर्थादिवधेन मंगलांतरं सूच्यते."

P. 318. St. 68.—प्रत्यादिष्टा इवाभवन्, 'which were, as it were, outshone,' *i. e.*, were told not to burn, were surpassed in their lustre. *Cf*. Châritravardhana: "अतितेजस्त्वात." See our note to St. 61. Canto I.—दीपाः, Hemádri says, "ते तु दीपाः अयन्तु प्रदीपः इत्युत्कर्षः."

And further he observes : “ अरिष्टशय्यां परितः ” (III. 15.) इत्यत्रोक्तेः पराधीभावात्र चौर्यदोषः. ”—**रघुवंशप्रदीपेन**, Kálidása here alludes to his poem and rightly wishes us to understand that Ráma was the chief hero of his poem (of course the literal sense is not to be excluded).

P. 319. St. 69.—**सैकताम्भोजबलिना**, On this epithet Hemádri makes the following remark: “ सैकतोपमया शय्याप्रच्छदस्य धवलत्वसौभाग्यं । अम्भोजतल्पोपमया शिशोः सौकुमार्यं । गंगोपमया देव्याः स्वच्छता पवित्रता च. ” Hemádri, Cháritravardhana, Vallabha, and Sumativijaya interpret this verse in nearly the same manner as Mallinátha. Vallabha says, “ यथा जाह्नवी गङ्गा सैकताम्भोजबलिना भाति पुलिनस्थपद्मपूजोपहारेण गङ्गा शोभते ” &c. Cf. R St. 76. XIV.

P. 319 St. 70.—**जनयित्रीमलंचक्रे**, On this passage Hemádri observes: “ कैकेयी केकयात्मजेति ” इति शब्दभेदप्रकाशे । विनयोपमया भरतस्य जनवशीकरणत्वं । मंगलपमया भरतेन कैकेय्याः श्लाघ्यताम् । मलंचक्रे इत्यसभ्यं. ” And Cháritravardhana has: “ जनयित्रीमलंचक्रे इति दुष्प्रतीतिकरं चिन्त्यं. ”—**प्रश्रयः श्रियमिव**. Humility or want of haughtiness in the rich is a rare thing.—**कैकेय्याः**, On this Hemádri says ङसिङस्या, *i. e.* either ablative or genitive.

P. 319. St. 71.—यमौ. In order to support this epithet Hemádri quotes the following authority : “ यमो दण्डधरे ध्वाङ्क्षे संयमे यमजेऽपि च ” इति विश्वः ।—**सम्यगाराधिता**, Sumativijaya remarks, “ आगमोऽस्या जात इति आगमिता । तथ्यराम्यां कृताभ्यासा. ”

P. 319. St. 72.—आविष्कृतगुणं, On this Hemádri remarks, “ स्वर्गे हि निर्दोषता गुणाश्च सन्ति. ” Analyse, आविष्कृता गुणा यस्मिंस्तत्.

P. 320. St. 73.—विरजस्कैः &c., Analyse विगतं रजो येभ्यः. For a parallel idea *cf.* Ku. XI. 37. “ वाता ववुः सौख्यकराः प्रसेदुराशा विधूमो हुतभुग्दिदीपे । जलान्यभूवन् विमलानि नभो निर्मलं च विरेजे प्रससाद सद्यः ” Compare also R. III. 37. and also Buddha Canto I. Stanza 41. “ वाता ववुः स्पर्शसुखा मनोज्ञाः । दिव्यानि वासांस्यवपातयन्तः । सूर्यः स एवाभ्यधिकं चकाशे । जज्वाल सौम्यार्चिरनीरितोऽग्निः. ”—**तस्योदये चतुर्मूर्तेः**, ‘ At the birth of that fourfold incarnation. ’ Cháritravardhana analyses चतुर्मूर्तिः, “ चतस्रो रामादयो मूर्तयो यस्य तथा भूतस्य. ”—**पौलस्त्यचकितेश्वराः**, ‘ Whose tutelary deities were made to tremble by Paulastya. ’ The presiding deities of the different quarters are : इन्द्र, of the East ; वरुण, of the West ; कुबेर, of the North, and यम, of the South. The Vish*n*u Purá*n*a gives, however, a different set, thus : ‘ Brahmá made Sudhanvan, the son of the patriarch Vairája, the regent of the east ; S'ankhapada, the son of the patriarch Kardama, of the south ; Ketumat, the son of Rajas, regent of the west ; and Hira*n*yaroman, the

son of the patriarch Parjanya, regent of the north." Wilson's Vishnu PuránaVol. II. p. 86.—उच्छ्वसिता इव, The breeze is supposed here to be the breath of relief exhaled by the quarters at the birth of that great hero. They felt, as it were, a sort of relief at the prospect of Rávana's death.

P. 320. St. 74.—अनभ्रूस्त्वात्, Analyse. अनभ्रं भ्रंशो यस्मात्तस्य भावस्तस्मात्.—अपविद्धयुग्मादिव, Analyse अपविद्धा युग्मर्क्षो [illegible] Cháritravardhana remarks: "एवं सुराणां मंगलसूचनं दैत्यानाममंगलसूचनं चोक्तं."

P. 320. St. 75.—दशाननकिरीटेभ्यः, The plural signifies that each of Rávana's heads had a crown on it. Cf. Hemádri: "बहुवचनं मूर्ध्नां बाहुल्यात्."—राक्षसश्रियोऽश्रुबिन्दव: पर्यस्ता:, On this Hemádri, Cháritravardhana and Sumativijaya have the following note: "रक्षो लक्ष्मीं हरतीति भावः."

P. 321. St. 76.—तूर्यादि &c., For a parallel idea Cf. R. St. 19. III. And also: "[illegible] | [illegible] ".

P. 321. St. 77.—संतानकमयी वृष्टिः पेतुषी &c., Compare for a similar idea Buddhacharita Canto XIII. stanza 72. "[illegible] निर्जित पुष्पकेतौ जयाति जितमस्के [illegible] | [illegible] सुरभि च जलगर्भं [illegible]"—[illegible]. 'That itself became the beginning of the auspicious things that followed.' Cf. Hemádri: "[illegible]." And also Cháritravardhana and Sumativijaya: "[illegible] मंगलानां [illegible] &c.

P. 321. St. 78.—[illegible], Hemádri analyses: "[illegible] उपमातुः स्तनौ [illegible]."—कृतसंस्कारः. The Sanskáras are forty-eight in number and according to some ten or twelve. They are (1) गर्भाधान, (2) पुंसवन, performed to secure the birth of a male child, (3) सीमन्तोन्नयन, parting the hair of a pregnant woman, (4) जातकर्म, (5) नामकरण on the eleventh or twelfth day after birth. (6) निष्क्रमण, taking out the child to see the sun when three months' old, (7) अन्नप्राशन, (8) चूडाकरण, 'tonsure,' *i. e.* shaving the head all but one lock, (9) उपनयन the thread ceremony, (10) केशान्त, (11) समावर्तन, a rite performed on the student's return home after completing his studies, and (12) विवाह. For a detailed account of these see Asvaláyana Grihya Sútra, Kandiká. 13. Also Grihya Parisishta I. 25. also Manu. Chap. II. Náráyanabhatta in his Prayogaratna prescribes only eight out of forty-eight Sans-

kâras ; they are " गर्भाधानपुंसवनसीमन्तोन्नयनजातकर्मनामकरणान्नप्राशनचौलोपनयनानि " and says " अत्र गर्भाधानाद्या उपनयनान्ता एव सर्वेषां नियताः " *Godbole's Poona edi.* p. 1.

P. 322. St. 79.—**स्वाभाविकं**, On this Hemádri makes the following remark: " सहजमित्यधिकप्रायं । स्वाभाविकमित्यनेनैव प्रतीतत्वात् । यद्वा । अर्थावृत्त्यलंकाराभिप्रायेण कविनोक्तं । यथा काव्यादर्शे । " अर्थावृत्तिः पदावृत्तिरुभयावृत्तिरित्यपि । दीपकस्थान एवेष्टमलंकारत्रयं यथा " । " विकसन्ति कदम्बानि स्फुटन्ति कुटजोद्गमाः । उन्मीलन्ति च कुंदानि दलन्ति ककुभानि च " इति.—**हविर्भुजाम्**, Analyse हवींषि भुञ्जन्ते ते हविर्भुजस्तेषां.

P. 323. St. 80.—**इवारण्यनिवर्तव:**, On this Hemádri observes : " कल्पमया सर्वजनानन्दकरत्वं वृन्दावनोपमया बहुजनाधारत्वं. "

P. 323. St. 81.—**द्वन्द्वं बभूवतुः**. " एकपिण्डोत्पन्नत्वात् " says Cháritravardhana. *Cf.* Mal. Act. I. " व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोऽपि हेतुः".

P. 323. St. 82.—**वायुविभावस्वोः** &c., Hemádri remarks: " यत्राग्निस्तत्र वायुरिति सहचरत्वं. "—**चन्द्रसमुद्रयोः**, On this epithet Hemádri gives the following note. " चन्द्रदर्शने समुद्रस्यैव हर्षः इत्यर्थः. "

P. 323. St. 83.—**तेजसा**, Cháritravardhana renders it by " स्नातेन. "

P. 323. St. 84.—**चतुर्धा**. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " संख्याया विधार्थे धा " इत्यनेन धाप्रत्ययः ।—**धर्मार्थकाममोक्षाणां**, Hemádri remarks : " अनेन तेषां चतुर्विधपुरुषार्थसाधकत्वं. "

P. 324. St. 85.—**चतुरंतेशं**, Châritravardhana analyses, " चत्वारः अन्ताः यस्याः सा भूस्तस्या ईशं स्वामिनं. " Here Hemâdri remarks, " सार्वभौमत्वात्. "

P. 324. St. 86.—**पणबन्धव्यक्तयोगैरुपायैर्नय इव**, 'Like politics in which the use of the four expedients is inferred only from the attainment of the result sought.' The four means are **सामन्** or peace-making, दान or bribery ; दण्ड or punishment or **war** ; and भेद or creating dissension. *Cf.* Hemádri : " पणस्य धनस्य बन्धस्तस्मै व्यक्ता योगा येषां तैः । यद्वा । पणबन्धः सन्धिस्तत्र व्यक्तयोगैः. "—**दैत्यासिधारैः**, Hemádri explains : " हिरण्यकशिप्वादीनां. "—**सुरगजः**, Hemádri says, " ऐरावतो हि चतुर्दन्तः. " On this verse Hemâdri makes the following remarks : " आदावुपमानान्युक्त्वा पश्चाद्राज्ञां पतिरिति वक्तव्यं । नो चेत्तच्छब्दस्य पूर्वपरामर्शित्वात्तदीयैरिति न घटते । ऐरावतोपमया राज्ञो बलत्वं । दन्तोपमया तेषामभग्नत्वं." The figure according to Châritravardhana is मालोपमा.

CANTO XI.

P. 325. St. 1.—**कौशिकेन**, Hemádri explains, "अनुष्ठानार्थं कुशाः अस्य सन्तीति कुशिकः कुशिकस्यापत्यं कौशिको विश्वामित्रस्तेन"। "विदादिभ्योऽञ्" Pá*n*ini, IV. 1. 104. says Cháritravardhana. For an account of the family of Kus'ika see Rámáya*n*a Balaká*nd*a Canto XXXII or Harivans'a, Adh. 27.—**क्षितीश्वरः**, Hemádri discusses, "ननु क्षितीश्वर इत्यत्र प्रतिपदविधाना च षष्ठी न समस्यते । इति वचनान्यत्वात् षष्ठ्या न समासः। "स्वामीश्वराधिपतिदायादसाक्षिप्रतिभूप्रसूतैश्च" Pá*n*ini, II. 3. 39. इति विशेषलक्षणेन विहितत्वात् । नैष दोषः । अत्र हि शेषलक्षणैव षष्ठी । न हि स्वाम्यादिसूत्रेण षष्ठी विधीयते किं तर्हि सप्तमी । सा तु षष्ठीं मा बाधिष्ट इति चकारेण षष्ठ्याः प्रतिप्रसवः क्रियते इति न्यासकृत्। अप्रधानेदुग्धादीनामिति अप्रधानकर्मणि दुहादर्थे द्वितीयाभावः । प्रधानकर्मणस्त्वनभिहितत्वात्तदानीमिति भवत्येव." Translate the aphorism :—The genitive and the locative case-terminations are used after words when they are joined with स्वामिन्, 'master,' ईश्वर 'lord', अधिपति 'ruler,' दायाद 'an heir,' साक्षिन् 'witness,' प्रतिभू 'a surety,' and प्रसूत 'begotten.' As गवां गोषु वा स्वामी or ईश्वरः 'master of cows.' These words naturally would have governed the genitive: the present aphorism ordains locative as well.—**अध्वरविघातशान्तये**, Hemádri analyses, "विहन्यतेऽनेनेति विघातो विघ्नः । अध्वरविघातस्य यज्ञविघ्नस्य शान्त्यै रामं याचितः । विघातो नाशो वा."

—**काकपक्षधरं**, Hemádri explains, "काकपक्षाणां शिखण्डानां धरः। राजकुमाराणां हि पञ्च शिखा भवन्तीति बहुवचनं । तदुक्तं [बाल] रामायणे । " चूडापञ्चकमण्डनो ननु शिशुः खण्डः क चायं मुनिः इति । तथाचैवाष्टादशे सर्गे । " कपोललोलाभयकाकपक्षात्." And Vallabha has the following : " पञ्चदशाब्दवयसमपि यतः । " अजातव्यञ्जनो यस्तु युद्धकर्मविशारदः । ऊनषोडशवर्षश्च काकपक्षधरः स्मृतः". *Cf.* 43 XVIII; III. 28 ; XI. 31, 42.—**तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते**. *Cf.* Uttar. III. "गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः". And Bhr I. 38. "प्रकृतिरियं सत्त्ववतां न खलु वयस्तेजसो हेतुः." Compare also Buddhacharita, Canto I. verse 51. "तस्मात्प्रमाणं न वयो न कालः । कश्चित्क्वचिच्छ्रैष्ठ्यमुपैति लोके । राज्ञामृषीणां च हितानि तानि कृतानि पुत्रैरकृतानि पूर्वैः". Cháritravardhana explains : "तेजसामग्नीनां वय स्थूलिंगावस्था तेजस्विनां बाल्यावस्था नापेक्ष्यते । यतो बालोऽप्यद्भुतं कर्म कुरुते । तेजःशब्देन लक्षणया तेजस्विनोऽभिधीयन्ते."

P. 325. St. 2.—**कृच्छ्रलब्धमपि**, 'Though he had been obtained with difficulty,' referring to the long yearnings of Das'aratha after a son and to the पुत्रकामेष्टि and other sacrifices performed by him to obtain at least one. *Cf.* Cháritravardhana, "पुत्रेष्ट्यादिक्लेशेन लब्धमपि." And Hemádri discusses : कृच्छ्रशब्दात् " करणे च स्तोकाल्प " Pá*n*ini, II. 3. 33. इति तृतीयापञ्चम्यौ । कृच्छ्रलब्धमिति । "स्तोकान्तिकदूरार्थकृच्छ्राणि क्तेन" Pá*n*ini, *II. 1*

39. इति पञ्चमीसमासे "पञ्चम्याः स्तोकादिभ्यः" Pâṇini, VI. 3. 2. इत्यलुक् स्यात्." Translate the aphorisms :--'When expressing an instrumental-Kâraka, optionally after the words स्तोक 'little,' अल्प 'little,' कृच्छ्र 'difficulty' and कतिपय 'some,' the fifth case-affix is used, when they do not denote material objects.' As स्तोकात् स्तोकेन वा मुक्तः and अल्पान्मुक्तः or अल्पेन मुक्तः &c., 'he got off easily &c.' But स्तोकेन विषेण हतः, अल्पेन मधुना मत्तः &c. 'killed by a little poison.' No option allowed, as it qualifies a substance. So also स्तोकं मुंचति 'he loosens a little.' Here स्तोक is used as an adverb and not as an instrument (करण). 'Words with the sense of स्तोक 'a little,' अन्तिक 'near,' दूर 'far,' and also the word कृच्छ्र 'penance,' ending in the fifth case-affix are compounded with what ends in क्त (past participle), and the compound is Tatpurusha.' As कृच्छ्राल्लब्धः 'obtained with difficulty.' 'In the Ablative case, the words स्तोक, अन्तिक, दूर, and others having any of these meanings, and the word कृच्छ्र, followed by a past participle, retain the case termination.'

P. 326. St. 3.—यावन्न तावत्, 'No sooner than'.

P. 326. St. 4.—निदेशकरणोद्यतौ. Hemâdri explains: "निदेशस्य आज्ञायाः करणे उद्यतौ."—अपि. Hemâdri remarks, अपिशब्दस्त्वेककालद्योतनार्थः"—प्रणामविलम्ब्य &c.. On this Châritravardhana remarks : "प्रकृतचरितार्थेनाचार्येण विसर्जितौ".—प्रवत्स्यतोः. 'Because they were about to depart.'—नम्रयोः, 'As they stooped down to do obeisance to his feet.'

P. 327. St. 5.—पौरदृष्टिकृतमार्गतोरणौ, 'Whose progress was honoured by the gazing citizens with ornamental arches made of their eyes.' *Cf.* Châritravardhana : "इत्यनेन सावधानसानुरागवीक्षणं" *Cf.* Vallabha : "इत्यनेन लोकदृष्टिजातवशान्नागरिकलोकलोचननिहितवन्दनमालौ." And also Hemâdri : "बन्धैर्वन्दनमाला तु तोरणं परिकीर्त्यते." The Toraṇas or Vandanamâlâs are made of lotuses, tender sprouts &c., and are hung upwards across the arched-doors. Toraṇa also means 'any temporary and ornamental arch,' 'decoration of an outer door or the gate-post.' The proverbial comparison of the eye to the lotus made it necessary for the poet to say "पौरनयनकुवलयकृतमार्गतोरणौ" or something of that sort. As Râma and Lakshmaṇa passed through the street, people rushed to the outer doors of the houses on either side of it to see him. *Cf.* R. VII. 5—15. There is a striking parallel to this episode in the third book of Buddhacharita, where the young prince makes his first entry into his father's capital,–an entry during the course of which he is to make his first acquaintance with

old age as the inevitable shadow which dogs the steps of youth. *Cf.* Buddha. Canto. III. verses 13—24.—**किंचित्**. Hemádri remarks : "चित्राज्ञायां त्वरया प्रयाणमानंतरेण्ध्यानात्किंचिदिति । अमङ्गलमिति राज्ञः पततधुसंवरणाद्वा."

P. 327. St. 7.—मातृवर्गचरणस्पृशौ. 'After they had bowed down to the feet of their mothers.'—गतिवशात्. Hemádri observes: "इति तेजस्वितोक्तिः । वसन्ते हि सूर्यगतिवशात्स्वचिह्नान्वितौ तौ वर्तेते." And Vallabha remarks: "वसन्ते हि सूर्यगतिवशादुत्तरायणगतिवंशाखौ स्वचिह्नान्वितौ वर्तेते."

P. 328. St. 8.—उद्धप्रभिद्धयोः. 'Nothing is known,' observes Pandit, 'about the locality of these two rivers. The poets often allude to them as being very swift and torrent-like, and the grammarians Pâ*n*ini and Bopadeva have taken the trouble to notice their etymologies (Pá*n*. III., 1, 115. Bop. XXVI., 20). And probably our poet knew no more about them than what the grammarians and their commentators have made out of their names.'

P. 328. St. 9.—बलातिबलयोर्विद्ययोः प्रभावतः &c., 'By virtue of the two spells called बला and अतिबला that they were taught on the road by the sage.'—मणिकुट्टिमोचितौ. 'Accustomed to a floor set with precious stones.' *Cf.* Vallabha: "मणिबद्धभूमिविचरणयोग्यौ." And Hemádri quotes Amarakosha and says, "कुट्टिमोऽस्त्री निबद्धा भूः." Châritravardhana rightly quotes the same under Amara.

P. 329. St. 10.—कुशनाभसुताः. This is detailed in the Rámáyana. "कथानिरतिगमनानिर्दिशन्ताः सुताः ... I रमयामास धर्मात्मा कौशिको मुनिपुङ्गवः." Bálakánda Canto 23.—पादचारिणः पादचारिणौ. Hemádri remarks: "वाहनानि चरितोऽपि पादचारिणौ ...."—न ... , On this epithet Hemádri, Châritravardhana and Sumativijaya make the following remark "विश्वामित्रस्तुद् ... न ... न तुतुदे."

P. 329. St. 11.—तौ सरांसि सिषेविरे. *Cf.* Verses 9-31, Canto II. and also St. 73. Canto IV.—कुसुमरेणुभिः, Hemádri says, "कुसुमानां पुष्पाणां रेणुभिः । सरसीनां कुसुमानि वा."—श्रुतिसुखैः, Vallabha explains it as "कर्णसुखकारिभिः."

P. 329. St. 12.—स्वयुता. Hemádri renders it by "मन्दोत्तरा." and Châritravardhana by "नियत." And Vallabha by "नागरजनप्रियेण."—तपस्विनः, The ascetics who saw Ráma and Lakshma*n*a passing by their hermitages. *Cf.* Châritravardhana: "तपस्विनामुनयत्र युवयोरागमनतोऽप्येतयोराश्चिर्यमित्यर्थः".

P. 330. St. 13—स्थाणुदग्धवपुषः, On this Hemádri remarks: "न कर्मणा दग्धत्वस्येन । मुख्यसदृशः पर्तिर्निर्धिः." *Cf.* Rámáya*n*a Balakâ*n*da, Canto XXIII. "कन्दर्पो मूर्तिमानासीत्काम इत्युच्यते बुधैः । तपस्यन्तमिह स्थाणुं

नियमेन समाहितं । कृतोद्वाहं तु देवेशं गच्छन्तं समरुद्गणं । धर्षयामास दुर्मेधा हुंकृतश्च महात्मना । अवध्यातश्च रुद्रेण चक्षुषा रघुनन्दन । व्यशीर्यन्त शरीरात्स्वात् सर्वगात्राणि दुर्मतेः । तत्र गात्रं हतं तस्य निर्दग्धस्य महात्मनः । अशरीरः कृतः कामः क्रोधाद्देवेश्वरेण ह । अनंग इति विख्यातस्तदाप्रभृति राघव । स चांगविषयः श्रीमान्यत्रांगं स मुमोच ह " इति.

P. 330. St. 14.—**सुकेतुसुतया**, Hemádri observes: " सुकेतुर्नाम यक्षः तत्सुता अगस्त्यशापेन राक्षसी [रक्षा Ms.] रूपा तया. " And Chāritravardhana has the following: " पूर्वं किल तपोबलेन नागसहस्रबलमपत्यं सुकेतुः प्राप । ततो लोकोपद्रवान्मुनिनाभिः शप्ता ताडका जातेति भावः "—**स्थलनिवेशिताटनी**, Chāritravardhana explains: " स्थले निवेशिता अटनियोभ्यां इति रामलक्ष्मणविशेषणत्वेन निर्वाहः । अन्यथा धनुर्विशेषणे चात्र धनुषो नपुंसकत्वादटनिनी प्राप्तेः. " And further both Chāritravardhana and Hemádri observe: " स्थलनिवेशश्चात्र धानुष्कजातिः. " Hemádri also remarks: " धनुर्विशेषणे तु अटनिनी इति स्यात् । "—**लीलयैव**, Here Hemádri discusses, " इति " एवेचानियोगे," Vártika इति पररूपता स्यात् । तथा रूपमालायां । " वृद्धिप्रयोगस्तु प्रमादाल्लोकस्य " इति । मुग्धबोधप्रदीपे तु । " नियोगो नियमोऽवधारणं " इति यावत् । अनियोगे नियोगादन्यस्मिन्नर्थे वर्तमाने एवशब्दे परे इत्यर्थः । अयमेवेति नात्रावधारणं विवक्षितं । किं तु तद्भावः । अयमेवेति प्रत्युदाहरणं दृष्ट्वा प्रियनियोगार्थमाहुः । तन्मते यदैव पूर्वं जनने इत्यादयो विरुध्यन्त इति. "—**खिलीकृते** &c. *i e.* when they came to the land that had been reduced to a waste by the ravages of the daughter of the Gandharva called Suketu, and whose present life was the result of a curse given by Agastya, of which they were then made aware, they put their bows in readiness by applying the strings to them.

P. 330. St. 15.—**बलाकिनी**, Analyse : " बलाका सन्त्यस्यां सा बलाकिनी," 'interspersed with black cranes.'—**प्रादुरास**, On this Hemádri holds the following discussion : " आसेत्याख्यातप्रतिरूपकमव्ययं । अस्तेर्भूभावविधानात् । तथा पाणिनीयमतदर्पणे । " अस्यास्मिमन्ये शङ्के ब्रूह्यासाह च णलर्थकौ " इति । कारयामासेत्यत्र [कासामासेत्यत्र Ms.] तु विधानसामर्थ्यादस्तेर्भूभावो न । वामनस्तु । आसेत्यसतेः असर्गातकान्तिर्दानच्या दानेष्वित्यस्य । धातुप्रदीपेऽप्ययमेव धातुरुक्तः । सारस्वतकारमते तु भूभावस्याभावादासेत्यस्तेरेव । तथा असभुवि इत्यत्र आसेत्याद्युदाहृतं सारस्वतस्य नरेन्द्रटिप्पणे । " श्वेतकेतुर्ह्यारुणेय आस " इत्यादिश्रुतिपुराणयोर्बहुशः प्रयोगदर्शनात् । कुमारसंभवेऽपि । " तत्याज लावण्य [लावण्य तत्याज Ms.] इवास यत्नः " इति । रघौ । " प्रादुरास बहुलक्षपाच्छविः " इति । " प्रादुरास किल वाहिनीमुखे " इति । " निष्प्रभश्च रिपुरास तत्क्षणं " इति । " तेनास लोकः पितृमान्विनेत्रा " इति च । असतेस्तद्रूपमितिचेन्न । अर्थासंगतेः । अस्ति चादेशविधेरनियतत्वं इति । यथा । " चक्षिङः ख्याञादेशोऽसार्वधातुके विहितः । तस्य विचक्षण इति युप्रत्यये व्यभिचारः । तथा । ब्रूञो वचिरादेशस्य [वचादेशस्य Ms.] ब्राह्मणब्रुव इत्यत्राभावः । अजतेर्व्यादेशस्य समज्येत्यादाविति [समज्यादाविति Ms.] सारस्वतटीकायां । नन्वस्तेर्भूरसार्वधातुके इति शर्व-[शर्म-Ms.] वर्मणोक्तं । सत्यं । " लोकाच्छेषस्य सिद्धिः " इति सूत्रेण तदप्यस्माभिरङ्गीक्रियत एव । तथाप्यादेशविधेरनियतत्वं तैरवाङ्गीकृतं विचक्षणं इत्यादाविति ।

"जातिमात्रोपजीवी च कथ्यते ब्राह्मणब्रुवः" इति हलायुधः." And Chāritravardhana has, "आसंति विडम्बयतिस्म यत्रोऽत्ययः । अन्यथास्तंभूभावः स्यात् । अथ वा । असगतिदीप्तीत्यस्यानेकार्थत्वात्प्रयोगः."

P. 331. St. 16.—प्रेतचीवरवसा, 'Wearing the rags of dead bodies.' The pieces of cloth on dead bodies are not burnt or buried with them but are left on the burning or burial ground. *Cf.* Hemádri : "प्रेतानां चीवराणि वस्त्रखण्डानि वस्ते सा प्रेतचीवरवास्तया प्रेतचीवरवसा । वात्यापक्षे प्रेतानां चीवरैर्वसनं मांसं वसनेन स्वनेन चोग्रया." He takes the whole expression as one compound word.—पितृकाननोत्थया. It is not intended to be meant by this epithet that whirlwind rising from a burning or burying ground is stronger than one rising anywhere else, but it is used to complete the comparison between Tádaká and a whirlwind, which would not be प्रेतचीवरवसा unless it rose from or passed along a burning or burying ground.—अभ्यभावि, 'was attacked,' 'was made at.'

P. 331. St. 17.—उद्यतैकभुजयष्टिमायतीं, On this epithet Hemádri makes the following remark : "यष्टिग्रहणमाननायितान्यार्थं । "अन्निदो गरदश्चैव शस्त्रपाणिर्धनापहः । क्षेत्रदारापहर्ता च षडेते आततायिनः" । "आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन् । नाततायिवधे दोषो हन्तुर्भवति कश्चन." Chāritravardhana also gives the same.—पुरुषान्त्रमेखलां, On this Hemádri remarks : "अनेन पुरुषवधादवध्यत्वं सूचितं । 'पुरुषस्त्र्या स्त्रियो वध्याः' इति कात्यायनः". Chāritravardhana has also the same and gives the following : "पुरुषवदेन तद्वधात्कृत्यशक्त्या पराक्रमातिशयः."—घृणां गुरोश्च, Hemádri remarks, "घृणां वाणं च गुरोरित्यर्थः." And Chāritravardhana has the following: "न स्त्रीं हन्यात्" इति धर्मशास्त्रान्नारीवधे रामस्य बुद्धिं बाणमोचनादिव्यापारादित्यर्थः."

P. 332. St. 18.—शिलायते, Hemádri renders it by "शिलावद्धने कठिने."—अन्तकस्य द्वारतामगमत्, Hemádri explains : "द्वा प्रवेशनिर्गमौ रातीति द्वारं । पृषोदरादित्वात्साधु । "पुरा द्वारमिव शान्त्या यमः सायत्ने प्रविष्टो जातः । अन्यथा तदा दिने कृतान्तवश्यत्वं राक्षसानामभूदिति भावः." Chāritravardhana too has the same. 'It became an entrance to Death who had not till then penetrated the country of the Rákshasas.' Yama, the god presiding over death, could not hitherto seize the life of a Rákshasa because Rávana had imprisoned all the gods including Yama, and made them serve in his household. *Cf.* Vallabha "एतेन नाद्य यावत्परिनितं राक्षसा मृत्युवशमायान्ति भावः."

P. 332. St. 19.—नाथनाम्ययमपि व्यकम्पयत्. Chāritravardhana remarks : "अधुना नोद्योगवनमप्यस्तया जात इत्यर्थ".

P. 332. St. 20.—Mark the play upon the words ताडिता, निशाचरी, गन्धवत् and जीवितेश. The whole verse is written and is to be understood with reference to a comparison between the Yakshi*n*í named Tá*d*aká and an अभिसारिका or a young woman who, being smitten by the arrows of Madana, goes, at night, with perfumes sprinkled upon her person to an appointed place where her lover—*the lord of her life*—is to meet her.—**गन्धवत्**, Hemádri remarks: "यद्वा । गन्धवद्रुधिरमिव । चन्दनं हरिचन्दनमित्यर्थः । तस्य च रक्तत्वं । "पाण्ड्योऽयमंसार्पितलम्बहारः" इत्यत्रोक्तं"। And further notices "गन्धवद्रुधिरकुंकुमोक्षिता" इति वा पाठः । केचिदलंकारज्ञास्त्वेतन्न मन्यन्ते । अन्योन्यविरुद्धयोः शृङ्गाररसजुगुप्साभावयोः श्लिष्टत्वात् । "शृङ्गारहास्यकरुणा रौद्रवीरभयानकाः बीभत्साद्भुतशान्ताश्च नव नाट्ये रसाः स्मृताः" । एषां स्थायिभावाः । "रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा । जुगुप्साविस्मयशमाः [श्चेति Ms.] स्थायिभावाः प्रकीर्तिताः" काव्यप्रकाशे । विरुद्धत्वं तु शृङ्गारतिलके । "रसौ शृङ्गारबीभत्सौ तथा वीरभयानकौ । रौद्राद्भुतौ तथा हास्यकरुणौ वैरिणौ मिथः" इति । औचित्यालंकारे च । "यथा मधुरतिक्ताद्या रसाः कुशलयोजिताः । विचित्राः [विषयाः Ms.] स्वादतां यान्ति शृङ्गाराद्यास्तथा मिथः" इति । "तेषां परस्पराश्लेषे कुर्यादौचित्यलक्षणं । अनौचित्येन संसृष्टः कस्येष्टो रससंकरः" इति । अत्र बीभत्से शृङ्गारस्याङ्गभावान्न दोषः । तथा काव्यप्रकाशे । "अङ्गिन्यङ्गत्वमाप्तौ यौ तौ न दुष्टौ परस्परं" इति । यथा [तथा Ms.] क्षेमेन्द्रस्यौचित्यालंकारे । "क्षीबस्येव चलस्याहतहृदयतया जम्बुकी कण्ठसक्ता । रक्ताभिव्यक्तकामा किमपि नखनखोल्लेखमासूत्रयन्ती । आस्वाद्यास्वाद्य भूयः क्षणमधरदलं दत्तदन्तव्रणाङ्कं । लग्नानङ्गक्रियायामिव रतरभस--[इयमतिरभस--Ms.] सोत्कर्षमाविष्करोति" । अत्र श्लेषोपमया तुल्यकक्षारूढयोरपि परस्परं विरुद्धयोरर्थयोरंगांगिभावः । इयं जम्बुकी तरुणशवस्य तस्य आमवक्षोवस्येव निश्चलस्थितेः । आहतहृदयपक्षतयाकृष्टचित्तरतया वा कण्ठे सक्ता शोणितेऽभिव्यक्तस्पृहा । रक्ताभिव्यक्तकामा च । नखनखोल्लेखमासूत्रयन्ती । दन्तव्रणमधरं आस्वाद्यास्वाद्यांगच्छेदक्रियायां अनंगभोगक्रियायां वा । लग्ना रतरभसेन उत्कर्षणं रतकौशलोत्कर्षणं वा । प्रकाशयतीति समानयोर्बीभत्सशृङ्गारयोः कामिनीपदत्यागेन न केवलं जम्बुकयाः कर्तृत्वेन बीभत्सस्यैव प्राधान्यं शृंगारेऽङ्गतामुपागते नितंबिनीरतिविडम्बन [°रतविडम्बन Ms.] मौचित्यकविरतामादधातीति । ननु यद्यष्टौ रसास्तर्हि शान्ताद्यो ऽप्यस्ति रसः । तथा । "नव नाट्ये रसाः स्मृताः" इति हलायुधः । उदाहरणं चैतदस्य [चेदंमयाम्य Ms.] । "किं ना रतिर्भवति नन्दनभूमिकासु । स्वर्गाङ्गनाजघनघट्टशिलातलासु । या वाथमस्य [चाथमस्य Ms.] हरिणीगणमण्डितासु । निःसंगवाससुभगासु वनस्थलीषु" । इह शान्तः प्रकर्षगावस्थानात् । उच्यते वीरे चास्यान्तर्भावः । उत्साहप्रकृतित्वात् । उत्साहवर्धनो वीरः । यदाहुः । "युद्धवीरो धर्मवीरो दानवीर इति त्रिधा । वीरस्यैव च भेदोऽयं कथ्यते सूरिभिः परः" इति । तथा । "अर्थिनां मित्रवर्गस्य द्विषतां च पराङ्मुखः । यो न याति स वीरोऽत्र तेन माता च वीरसूः" इति. Vallabha remarks: "रुधिरकुंकुमेति सादृश्याद्गन्धशब्दः." And Cháritravardhana remarks: "वीरशृङ्गारयोः संकरोक्तिरयुक्तेति काव्यप्रकाशः । गन्धवदिति निंदाप्रशंसयोः संतुप."

P. 333. St. 21.—**अवदानतोषितात्**, *Cf.* Vallabha: "अद्भुतकर्मसंतोषि-

तात्." 'Who was pleased with his heroic exploit.' Sumativijaya translates अवदानेन by "ताडकामारणरूपेण."—**इन्धननिपाति ज्योतिः सूर्यकान्त इव**, 'As the sun-glass receives from the sun the flame that falls upon and destroys the wood', referring to the well-known fact that the rays of the sun received and transmitted by the sun-glass to any combustible substance or a piece of wood placed beneath them burn it. *Cf.* Hemádri: "इन्धनानि निपातयितुं शीलमस्येति." And also Châritravardhana: "तादृशं ज्योतिस्तेजोऽग्निं लभते. *Cf.* S'a. Act. II. verse 41. "शमप्रधानेषु तपोधनेषु गूढं हि दाहात्मकमस्ति तेजः। स्पर्शानुकूला इव सूर्यकान्तास्तदन्यतेजोऽभिभवाद्वमन्ति."

P. 333. St. 22.—**पदं**, Hemádri remarks: "पदमित्याश्रमविशेषणं वा."—**वामनाश्रमपदं श्रुतं**, Hemádri explains: "कथं कौशिकादत्र वामनाश्रमोऽभूदिति श्रुतं भूतपूर्वत्वात्पदशब्दः." तथानर्घ्यराघवे। "इह वने सकौतुकवामनो मुनिरतप्त तपांसि पुरातनः। तमिव वामवलोक्य तपस्विनो नयनमत्र ननन्दुदमीमिलन्" इति। प्रथमजन्मनि वामनावतारे चेष्टितान्यस्मरन्नपि उन्मना बभूव." And Châritravardhana has: "प्रथमजन्मचेष्टितानि बलिबन्धनादीन्यस्मरन्नपि पूर्वजन्मानुभवसंस्कारात्स्वकीयाश्रमविलोकनादुन्मना उत्कण्ठितोऽभूत्." For a similar expression compare Buddha. Canto VI. Stanza 1. "ततो मुहूर्ताभ्युदिते जगच्चक्षुषि भास्करे। भार्गवस्याश्रमपदं स ददर्श नृणां वरः॥—**प्रथमजन्मचेष्टितानि**, 'The heroic deeds achieved in his former birth.' प्रथम is used here in the sense of पूर्व. For the account of वामनाश्रम &c., see Rámáya*n*a Bâlakà*nd*a Canto XXXI, or Bhâgavata Purá*n*a Sk. VIII. Adh. 15.

P. 333. St. 23.—**शिष्यवर्गपरिकल्पितार्हणं**, Hemádri analyses "शिष्यवर्गैः परिकल्पिता कृता अर्हणा पूजा यस्मिंस्तत्." 'Where all his disciples worshipped him.'—**दर्शनोन्मुखमृगं तपोवनं**, *Cf.* Hemádri and Châritravardhana: "दर्शनोन्मुखमृगमिति शान्तिः। अचेतना अपि अञ्जलिं बध्नन्तीत्यादरः."

P. 334. St. 24.—**अन्धतमसात्** &c., On this epithet Hemádri makes the following remark: "अन्धकारोपमया शशिसूर्योपमया च रामलक्ष्मणयोर्निरन्तरराक्षसवैरम्। "अवसमन्धेभ्यस्तमसः"—Pá*n*ini V. 4. 79.—**तत्र**, Hemádri renders it by "आश्रमे."—**दीक्षितं**, 'On his having entered upon the initiatory ceremonies.' On commencing the sacrifice the sage Vis'vámitra required to be protected more than at other times, as he could not then leave the place nor engage himself in any other business, and because a sacrifice once begun *must* be completed in all its due forms on pain of incurring sin.

P. 334. St. 25.—**वेदीं**, Vallabha renders it by "यज्ञस्थलीं," 'The sacrificial compound.'—**अपोढकर्मणां**, Vallabha explains: "अपवादं अपोढं निकटं कर्म यज्ञरूपं येषामिति."—**स्खलितविकङ्कतस्रुचाम्** *i. e.* through ter-

tor. *Cf.* Hemádri "हव्यकव्ये देवपित्र्ये अन्ने पात्रं स्रुवादिकं । स्रुवोपभृज्जुहूर्ना तु स्रुवो भेदाः स्रुचः स्त्रियः " इत्यमरः। वैकङ्कतो लोके वीळू [वीकु Ms.] (can it be वेहळी ?) इति प्रसिद्धः."

P. 335. St. 26.—**गृध्रपक्षपवनेरितध्वजं**, 'whose flags were shaken by the wind caused by the wings of vultures.' The गृध्र or vulture is a very inauspicious bird and forebodes evil to an army, round whose flags it should fly or flutter. *Cf.* Hemádri : "इति रक्षसामुत्पातः." And Châritravardhana has : "अनेन रक्षसामशकुनसूचनं," and further repeats the quotation which is also given by Mallinâtha, see commentary. And Vallabha has : "अनेन राक्षसानामनिमित्तकथनं".

P. 335. St. 27.—**राजिलेषु**, Hemádri explains : "द्विमुखो निर्विषः सर्पो राजिलः" इति क्षीरस्वामी। आदिपर्वणि रुरोराख्याने च। "अन्ये ते भुजगा विप्र ये दशन्तीह मानवान्। डुण्डुभानहिगन्धेन न त्वं हिंसितुमर्हसि" इति.—**महोरगविसर्पिविक्रमः**, Châritravardhana analyses, "महोरगेषु महासर्पेषु वासुकिप्रभृतिषु विसर्पी प्रसरणशीलो विक्रमः पौरुषातिरेको यस्य सः".

P. 335. St. 28.—**अपानयत्**, Hemâdri remarks : "न तु जघान। तस्य किञ्चित्कर्मजन्यत्वात्." And Chàritravardhana has : "अनेनानायासोक्तिः". —**पांडुपत्रमिव**, 'Like a white (*i. e.* faded) leaf.' *Cf.* Hemâdri : "पांडुवर्णं पत्रमिव। पक्कं वा पत्रं। पुराणं हि पत्रं पाण्डु भवति."—**ताडकासुतं**, = मारीचं, a word that could not be accommodated in the metre of the present verse, and therefore the poet uses ताडकासुत instead of मारीच. We have also to remember that Kálidâsa does not give the story of Râmâya*n*a with any pretention to fulness or completeness of narration, but simply gives the barest outlines of it, with a supposition that his reader is already acquainted with all the episodes of the great epic.

P. 336. St. 29.—**क्रुर्ता**. Hemâdri explains, "कृतमनेनेति कृती विचक्षणः "इष्टादिभ्यश्च" Pá*n*ini, V. 2. 88. इति इनिः। यदि न हन्येत मायित्वादन्यत्रापि प्रसरेत। यदि न खण्ड्येत दक्षिणामसांकर्यं स्यात्। यदि आश्रमाद्बहिर्न विभज्येत यजियद्रव्याणां दुष्टता स्यात्। इत्येतच्चातुर्यं कृतीपदेन सूच्यते। "शफं खुरः कवर्गीयः खकारश्च खुरप्रके। नापितस्योपकरणे कथंयोग इष्यते" इति शब्दभेदप्रकाशे". Châritravardhana too has the same.—**तत्र तत्र विससर्प मायया**, 'Infested the hermitage, presenting himself, by his magical powers, now here and now there about it.'

P. 336. St. 30.—**कुलपते**, 'Of the lord of the clan.' The word is here used with reference to the thousands of Bráhmanical families who traditionally derive their origin from Kaus'ika, and not as one showing the relation between him and the priests who had come there to finish the sacrifice. कुलपति has also a technical sense, namely one who instructs ten thousand pupils by giving them food

&c. *Cf.* "मुनीनां दशसाहस्रं योऽन्नदानादिपोषणात् । अध्यापयति विप्रर्षिरसौ कुलपतिः स्मृतः."—**कथाक्रमं**, On this epithet both Hemâdri and Vallabha give the following note: "तत्र ब्रह्मा पश्यति । अध्वर्युः प्रचरति (Vallabha reads प्रेरयति) । होता मंत्रान् पठति । उद्गाता सामानि गायति इति यथाक्रमशब्दार्थः स्वच्छन्दता वा." And Châritravardhana has: "यथाक्रममिति भयाभावाद्राज्ञितोक्तिः । वाग्यतत्वेन वियमानोऽप्यानन्दो वाचा तदा न प्रकटितः इत्यर्थः."

P. 336. St. 31.—**अवभृताप्लुतः**, *Cf.* Hemâdri and Châritravardhana: "अवभृथे यज्ञान्ते आप्लुतः स्नातः &c." See our note to St. 18. Canto IX.—**दर्भपाटिततलेन**, *Cf.* Hemâdri: "कुशविशीर्णतलेन पाणिना करेण । इति सदाचारता." The epithet is employed to show that Vis'vâmitra was constantly engaged in performing sacrifices. The Kus'a-grass is extensively used in the performance of all sacrificial ceremonies and holy rites. So are used Samidhs of all sorts.

P. 337. St. 32.—**संभृतक्रतुः**, This epithet is interpreted by the commentators in various ways. Châritravardhana, Sumativijaya, Dinakara and others read संभृतक्रतुं an adjective qualifying the pronoun तं *i. e*, Vis'vâmitra, instead of संभृतक्रतुः. And Châritravardhana remarks, "संभृतः संचितः क्रतुर्येन क्रतुशब्देन क्रतुसमुत्पन्ना क्रियोच्यते । क्रतोर्विनश्वरत्वात्." Hemâdri's comments are "मैथिलो जनकस्तं कौशिकं न्यमंत्रयताजुहाव । संभृतः प्रारब्धः क्रतुर्येन स वशी इच्छाम्यास्तीति वशी स्वतंत्रो जितेंद्रियो वा स कौशिको मिथिलां जनकपुरीं व्रजन्गच्छन् [मत Ms.] राघवावपि निनाय । तस्य जनकस्य धनुःश्रवणजं कुतूहलं बिभ्रतौ ॥ Hemâdri construes the epithet with सः that is Vis'vâmitra. But this interpretation of his is objectionable on the ground that it has the fault of दूरान्वय or दूरान्वित *i. e.*, the remote connection. Vallabha's comments run thus, "मैथिलो जनकः । तं समागत्य मुनिं विश्वामित्रं न्यमंत्रयताजुहाव । किं भूतो मैथिलः संभृतक्रतुः समारब्धयज्ञः । स वशी यतेन्द्रियः कौशिको मिथिलां व्रजन् तौ राघवावपि रामलक्ष्मणावपि निनाय अनयत् किं कुर्वतौ राघवौ तद्धनुःश्रवणजं कुतूहलं बिभ्रतौ प्रख्यातकार्मुकाकर्णनोत्थं कौतुकं दधतौ । ताभ्यां हि जनकस्य दिव्यं धनुः पुरागमस्तीति श्रुतं ॥ Vallabha interprets that the sage Vis'vâmitra who had already completed his sacrifice went with the princes to the city of the king Janaka who was about to commence his own sacrifice &c.; this interpretation agrees well with the story of Râmâya*n*a (See Râmâya*n*a Bâlakâ*nd*a, Canto 65, verses 31-32. Nir*n*ayasâgara edition). Mallinâtha interprets it in the sense of संकल्पितसंभारः, which means Janaka who had made preparations. But what kind of preparations were these is rather doubtful. The epithet may either mean the preparations of marriage or of a sacrifice as well.

P. 337. St. 33. —**दीर्घतपसः**, Hemâdri explains: "अत्र दीर्घतपाः सान्तः । बौद्धायनीये महाप्रवरे गौतमगणे दीर्घतपसानां पंचार्षेयः प्रवरो भवतीति । कात्या-

यर्नाय दीर्घतपानामार्षः [आर्षेयः Ms.] प्रवरो [प्रश्नो Ms.] भवतीति । आश्वलायनीये तु दीर्घतपसामिति पाठः । त्रयमपि प्रमाणमार्षत्वात् । प्रवरमञ्जर्यां भृगुव्याख्याने [भृगुगण-व्याख्याने Ms.] पुरुषोत्तमपंडितश्च [पुरुषोत्तमश्च Ms.] । " एकदेशविकृतमनन्यवद्भवति " इति न्यायादिति. For a similar turn of expression compare " गौतमं दीर्घतपसं महर्षिं दीर्घजीविनं । योषित्संतोषयामास वर्णस्थानावरा सती ॥ —वसतिः. Châritravardhana quotes the following from वैजयन्ती. " वसतिस्तु निशि स्थित्यां जैनानामाश्रये गृहे " इति.—वासवक्षणकलत्रतां ययौ, See Râmâyana Bâlakânda, Canto 49, verses 17—20, Bom. *edi.* Pandit says, ' The legend of Indra having been the ravisher of Ahalyâ is a very old one, but it is doubtful whether we have any thing more than mere allusions to it in works older than the Râmâyana. In the Taittiriya Samhitâ of the Yajurveda and in the S'atapatha Brâhmana which comments upon it Indra is spoken of as the ravisher of Ahalyâ (अहल्याया जारः)'.

P. 337. St. 34.——अनुग्रहः किल, Châritravardhana remarks: "रामदर्शनेन सा शापान्मुक्तासीदित्यर्थः". *Cf.* also Padma Purâna : " गच्छतस्तस्य रामस्य पादस्पर्शान्महाशिला । काचिद्योषाभवत्सोऽपि विस्मितो मुनिरब्रवीत्."

P. 338. St. 35.—जनेश्वरो जनकः, ' king Janaka, ' *Cf.* निशांपतिः, प्रजानामधिपः &c. देहबद्धं, Hemâdri explains : " बद्धो देहो येन तं देहेन बद्धमिति वा."—सपर्यया, Hemâdri explains : " पूजया करणभूतया."—अभ्यगात्, Vallabha remarks : " अभिगमनं हि पूज्यपूजाकरं. "

P. 338. St. 36.—गां गताविव पुनर्वसू, Compare Buddha, Canto IX. verse 11. " कृताभ्यनुज्ञावभितस्ततस्तौ निषीदतुः शाक्यकुलध्वजस्य । विरेजतुस्तस्य च संनिकर्षे पुनर्वसू योगगताविवेन्दोः । *Cf.* Hemâdri, " पुनर्वसू आदिति भेदे " इत्यमरशेषे । एकस्यैव स्वरूपस्य अवयवत्वादित्यमुत्प्रेक्षा । अवयवत्वात्पुनर्वसू इति द्विवचनं । तथा । अमरपादिभट्ट्यां तस्या दाक्षायण्या द्वाववयवौ । अतो द्विवचनमिति । " छंदसि पुनर्वस्वोरेकवचनं " Pânini, I. 2. 61. इति ज्ञापकात । " पुनर्वसू नक्षत्र अदितिर्देवता " इति श्रुतेश्च । ज्योतिःशास्त्रे च चतस्रस्तारकाः । तथा नारदीयसंहितायां । " रामाग्निकतुबाणाग्निभूवेदाग्निशरश्वः" इति. Translate the aphorism:—' In the Vedas, the two stars, पुनर्वसू, may optionally be singular, (and connote a dual).' [In the Vedas, the star पुनर्वसू which is always dual in form, may be in the singular form and connote a dual meaning. As पुनर्वसुर्नक्षत्रं or पुनर्वसू नक्षत्रमदितिर्देवता. The option is only allowed in the Vedas and not in profane literature. In the latter it must be in the dual, that is, पुनर्वसू. Similarly when it is not the appellation of an asterism but of a man, there is no option. As. पुनर्वसू माणवकौ]. And Châritravardhana has: " तारकाद्वयापेक्षया पुनर्वसू इति द्विवचननिर्देशः. " The पुनर्वसू or the two stars Castor and Pollux contained in the constellation called *Gemini.* The poet's notion is that the sage Vis'vâmitra was hailed

with joy by the people of Mithilâ like the moon, and the two princes like the two stars of the पुनर्वसू that are always seen together in the sky—a simile common with the poets. *Cf.* Mahâbhârata Karnaparvan Adh. 49. verse 23-28. "तावुभौ धर्मराजस्य प्रवीरौ परिपार्श्वतः। रथाभ्यासे चकासेते चन्द्रस्येव पुनर्वसू."—**तौ पिबतां नगरीनिवासिनां**, *Cf.* R. II. 19. —**इव**, Hemâdri remarks: "इवशब्द उत्प्रेक्षायां । तथा काव्यादर्शे । "मन्ये शङ्के ध्रुवं प्रायो नूनमित्येवमादिभिः । उत्प्रेक्षा व्यज्यते शब्दैरिव शब्दोऽपि तादृशः" K. D. II. 234. इति । "अन्यथैव स्थिता वृत्तिश्चेतनस्येतरस्य वा । अन्यथोत्प्रेक्ष्यते यत्र तामुत्प्रेक्षां विदुर्बुधाः." K. D. II. 221.—**मनो वञ्चनां मन्यते स्म**, 'Their mind that drank them by their eyes, *i. e.* looked at them as if with hungry eyes, considered it a loss to them if they were obliged to wink, during which they could not see them.'

P. 338. St. 37.—**यूपवति**, Châritravardhana remarks: "औदुम्बराद्यनुयुक्ते."—**क्रिया**, Châritravardhana quotes the following anonymous authority in support of क्रिया. "क्रिया तु निष्कृतौ शिक्षा [शिष्या Ms.] चिकित्सोपायकर्मसु."—**यूपवत्यवसिते क्रियाविधौ**. 'The performance of that ceremony which is accompanied by a Yupa, having been completed.' That is, after the sacrifice was over.

P. 339. St. 38.—**दुहितृशुल्कसंस्थया**, 'by the condition of the शुल्क, or bride-money of his daughter.' *i. e.*, he was very sorry that he had fixed the breaking of the bow as the bride-money that the husband of his daughter should pay for marrying her. *Cf.* Châritravardhana: "जनकमनुजाधिपेन किल प्रागेवं प्रत्यज्ञायि यो गौरीरमणचूडामणेर्बाणासनं खलु भङ्क्ष्यति तस्मै सीतां दास्यामीत्येवंरूपः शुल्कः । अयं चैव पणितः स्यात्तर्हि रघुवंशवयःप्रमुखाणां गुणानां समुदायत्वादातुं शक्यते । वृथापणः कृतः इति चिन्तागतः इत्यर्थः."

P. 339. St. 39.—**भगवन्**, Hemâdri quotes the following authority from Halâyudha. "तत्रभवद्भगवंच्छब्दौ बुधे पूज्ये प्रयुज्येते." *Cf.* Bharata "देवाश्च लिङ्गिनश्चैव नाना स्मृतिधराश्च ये । भगवानिति ते वाच्याः पुरुषाः स्त्रिय एव च"। भवन्, अत्रभवत् and तत्रभवत् are the honourific terms. अत्रभवत् is used in speaking of a person who is present but not directly addressed; and तत्रभवत् is used in speaking of a person who is absent. —**मोक्षवृत्ति**, &c. compare Buddha. Canto IX. stanza 48. "केचित्स्वभावादिति वर्णयन्ति शुभाशुभं चैव भवाभवौ च । स्वाभाविकं सर्वमिदं च यस्मादतोऽपि मोघो भवति प्रयत्नः॥—**अनुमन्तुमुत्सहे**, 'I am unable to give my consent that a young elephant should endeavour to do what it is difficult even for grown-up elephants to accomplish.'

P. 339. St 40.—**तात**, Hemâdri quotes the following anonymous authority: "पुत्रे पितरि पूज्ये च तातशब्दो बुधैः स्मृतः".—**विधूय**. Hemâdri renders it by "कम्पयित्वा."—**प्रतस्थिरे**, On this epithet Châritravardhana makes the following remark: "अतो रामेण धनुर्भग्नं तोरत-

करोमीति भावः ".—**द्वेषिता** should be taken attributively and प्रतस्थिरे as the only predicate in the verse.

P. 340. St. 41.—**सारतः**, Hemâdri renders it by " वीर्यबलविषयः, " and Vallabha by " संक्षेपाद्बलेन वा. " Châritravardhana, Sumativijaya and Dinakara read वीर्यतः and render it as " सारतः ".—**व्यक्तशक्तिः**, Hemâdri explains भवतस्तव चापे एव धनुष्येव व्यक्ता शक्तिर्यस्य स रामो भविष्यति । यद्वा । भवतश्चाप एव धनुरेव व्यक्ता शक्तिर्यस्य स भविष्यति । रामो धनुर्भङ्गं करिष्यतीति वाक्यार्थः ".

P. 340. St. 42.—**राघवे पौरुषं श्रद्दधे**, ' believed prowess in Râghava ' *i. e.*, believed that Râma might have strength in him to bend the bow.—**आप्तवचनात्**, Châritravardhana explains, " यथादृष्टश्रुतवादिनो मुनेर्वचनात्, " and Vallabha has: "सत्यवादिनो मुनेरेवंविधाद्वाक्यात् ".—**त्रिदशगोपमात्रके कृष्णवर्त्मनि**, ' In a spark of fire though no longer than an Indragopa. ' *Cf.* Hemâdri, " त्रिदशगोप इन्द्रगोपो वार्षिको लोहितः कीटविशेषः ".

P. 341. St. 43.—**गणशः**, Hemâdri and Châritravardhana explain, " गणशः संघशः " बहुगणवतुडति संख्या " Pâ*n*ini, I. 1. 23. इति संख्यात्वे " संख्यैकवचनाच्च वीप्सायां " Pâ*n*ini, V. 4. 43 इति शस्. " Translate the Sûtras :—' The words बहु ' many, ' गण ' class,' and the words ending in the affix वतु (V. 2. 39.), and डति (V. 2. 4.) are called numerals, *i. e.* संख्या. ' ' The *Taddhita* affix शस् is appended to numerals and words denoting measure in a distributive sense (वीप्सा) '.

P. 341. St. 44.—**विद्रुतक्रतुमृगानुसारिणं**, Hemâdri and Vallabha explain: " विद्रुतश्चासौ क्रतुश्च स एव मृगस्तमनुसरतीति तं । विध्वंसनभयात्पलायमानं दक्षयज्ञान्ते येन च धनुषा हरोऽविध्यदित्यागमः," and discusses सुपीत्यनुवर्तमाने पुनः सुब्ग्रहणं केवलोपसर्गस्य निवृत्त्यर्थमिति "सुप्यजातौ–" Pâ*n*ini, III. 2. 78. इति णिनिः । Translate the aphorism :—' When habit is to be expressed, the affix णिनि comes after a verb, provided the word with a case-affix in composition with it, does not mean a genus.' As उष्णभोजी, शीतभोजी &c. Though the अनुवृत्ति of the word ' सुपि ' was understood in this Sûtra, its repetition here declares that Upasargas are not included. Not being invited to Daksha's celebrated sacrifice S'iva became so indignant that he suddenly presented himself there, destroyed the sacrifice, dispersed the gods many of whom he mutilated and, chasing यज्ञ who fled in the form of a fleet antelope overtook him whom he immediately beheaded. The story is given in Mahâbhârata S'ântiparvan Adh. 283. " ततः स यज्ञो नृपते वध्यमानः समन्ततः । आस्थाय मृगरूपं वै खमेवाभ्यगमत्तदा । तं तु यज्ञं तथारूपं गच्छन्तमुपलभ्य सः । धनुरादाय बाणेन तदान्वसरत प्रभुः, " also *Hem.* Sauktika Adh. 18. St. 13. Fgg. See also Râmâya*n*a Bâlakâ*n*da, Canto 66. " देवरात इति ख्यातो

निमेर्ज्येष्ठो महीपतिः । न्यासोऽयं तस्य भगवन् हस्ते दत्तो महात्मनः । दक्ष-यज्ञवधे पूर्वं धनुरानम्य वीर्यवान् । विध्वस्य त्रिदशान् रोषात् सलीलमिदमब्रवीत् । यस्माद्भागार्थिनो भागान् नाकल्पयत मे सुराः । वरांगाणि महार्हाणि धनुषा शातयामि वः । ततो विमनसः सर्वे देवा वै मुनिपुंगवाः । प्रसादयन्त देवेशं तेषां प्रीतोऽभवद्भवः । प्रीतियुक्तस्तु सर्वेषां ददौ तेषां महात्मनां । तदेतद्देवदेवस्य धनूरत्नं महात्मनः । न्यासभूतं तदा न्यस्तमस्माकं पूर्वजे विभो. " *Cf.* S'á. I. " मृगानुसारिणं साक्षात्पश्यामीव पिनाकिनम्."

P. 341. St. 45.—पुष्पचापमिव, Hemádri remarks : " इत्यक्लेशः." Châritravardhana, Dinakara, Vallabha, Sumativijaya and others read च for सः, where Cháritravardhana says : " चकारो ग्रहणाकर्षणयोस्तुल्यकालत्वद्योतनाय."

P. 342. St. 46.—अतिमात्रकर्षणात्, 'by (the string) being drawn too much.' मात्रामतिक्रान्तमतिमात्रं, 'beyond measure,' 'immoderate,' 'exceeding,' 'too much.'—भार्गवाय, Paras'uráma the descendant of भृगु and son of जमदग्नि was the mortal enemy of the Kshatriyas, whom he is said to have killed twenty-one times as each generation of them arose. The thunder-like sound produced from the breaking of the bow intimated to him, as it were, the resuscitation of the Kshatriya race which he had thought to be extinct forever.—न्यवेदयत्, Châritravardhana gives the substance of the passage in the following words : " प्राङ्निःशेषीकृताः क्षत्रियाः पुनरप्युद्विक्रमाः इति चापेन निवेदितमिति भावः ".

P. 342. St. 47.—अयोनिजां, Because Sitá was found imbedded in the ground and turned up by the plough of Janaka while he was preparing the ground for the sacrificial ceremony. *Cf.* Rámáya*n*a Bálakâ*n*da, Canto 66, verse 30. " अथ मे कृषतः क्षेत्रं लांगलादुत्थिता ततः । क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्ना सीतेति विश्रुता." *Cf.* also Uttaraká*n*da Canto 17. The Padma Purá*n*a gives the following account. " अथ लोकेश्वरी लक्ष्मीं जनकस्य पुरे स्वतः । शुभक्षेत्रे हलोत्खाते तारे चोत्तरफाल्गुने । अयोनिजा पद्मकरा बालार्कशतसंनिभा । सीतामुखे समुत्पन्ना बालभावेन सुंदरी । सीतामुखोद्भवात्सीता इत्यस्यै नाम चाकरोत्."

P. 342. St. 48.—अग्निसाक्षिक इव, Marriages take place in the presence of the sacred fire.

P. 343. St. 49.—महितं, Hemádri renders it by " अलंकृतं, " and Châritravardhana by " मान्यं, " and Vallabha by " प्रधानं पूज्यं. "—पुरोधसं प्राहिणोत्, *Cf.* Hemádri : " पुरोहितं शतानन्दाभिधानं." A family-priest or a Brâhma*n*a was generally sent for negotiating matches between princes and princesses in ancient times. The reader will recollect that a priest was sent by Rukmi*n*i to beseech K*r*ish*n*a to marry her, and Sudeva by Damayantî to negotiate with Nala.—भृत्यभावि कुल-

-मिदं निमेर्दृश्यताम्, 'let this family of Nimi be made subservient.' "भृत्यस्य भावो अस्यास्तीति" says Hemádri. And Cháritravardhana says, "भृत्यं भविष्यतीति भृत्यभावि भृत्यभावोऽस्यास्तीति तादृशं." For Janaka's genealogy see the genealogical table attached to the St. 2 Canto I. notes. See also Rámáyaṇa Bálakáṇḍa, Canto 71.—कोसलाधिपतये, On this Hemádri holds the following discussion. "क्रियया यमभिप्रैति सोऽपि संप्रदानं" Vártika.

P. 343. St. 50.—कल्पवृक्षफलधर्मि काङ्क्षितं, Hemádri explains: "कल्पयूरणो वृक्षः कल्पवृक्षः कल्पवृक्षफलस्येव धर्मः स्वभावो यस्यास्तीति। कल्पवृक्षफलधर्मः कालानपेक्षितत्वं। तथा कर्णामृते। "कल्पद्रुमोऽपि कालेन भवेयादि फलप्रदः। को विशेषस्तदा तस्य वन्येर्मर्दास्तैरिति." And Cháritravardhana has the following: "यथा कल्पवृक्षफलं कालायनपेक्षमेव पक्वं एवं पुण्यात्मतामर्यादामिति भावः." —च—च, Both Hemádri and Vallabha make the following remark "द्वौ चकारौ तुल्यकालयोतनार्थौ." See Apte's Guide, 273. p. 196. *Third edition.*

P. 344. St. 51—बलभित्सखः. It was the greatest distinction, it appears, to the kings of several ancient families, and especially that of the solar one to have rendered assistance to Indra in his battles with the Asuras. *Cf.* Hemádri: "परमार्थतया रक्षोवधात्."—वशी, Hemádri explains it as: "जितेंद्रिय इन्द्रशासनो वा."—अग्रजन्मनः, Cháritravardhana explains: "अग्रजन्मनो द्विजस्य गोतमस्य."

P. 344. St. 52.—पीडितोपवनपादपां, Hemádri says, "गजादिबन्धनात्," analyse, "पीडिता भग्ना उपवनानां वाद्योयानानां पादपास्तरवो यस्यास्तां तथोक्तां.—प्रीतिरोधं, Hemádri remarks: "प्रीत्या रोधः आलिंगनादि यत्र तं." —परिभोगं, Cháritravardhana remarks: "गाढाश्लेषनखक्षतादिप्रचुरं," and Vallabha has: "दशनाधरपीडननखक्षतादिकं."

P. 345. St. 53.—समयस्थितावुभौ, *Cf.* Vallabha: "मया कन्या देया त्वया ग्राह्येति लोकाचारमत्यजन्तौ." and Cháritravardhana has: "इयमस्मै देया अनेनेयं ग्राह्यायं ममत्वमत्र स्थितावनवलङ्घितमर्यादौ."—वरुणवासवोपमौ, On this Hemádri holds the following discussion: "विवाहे राशिकूटादौ कन्यायाः प्रथमं गण्यत्वेन प्राधान्यात्पूर्वनिपातः। वरुणवासवयोरुपमा ययोस्तौ। "प्रत्यङ्मुखा वरयन्ति प्रतिगृह्णन्ति प्राङ्मुखाः" इत्युक्तत्वात्। वरुणवासवयोरित्यत्र। "देवताद्वन्द्वे च" Pánini, VI. 3. 26. इत्यानङभावो "यमपुण्यजनेश्वरौ" इत्यत्र व्याख्यातः. Translate the Sútra:—'When the names of deities represented as being in constant association (*i. e.* being usually in pair) with each other are compounded, आ is substituted for the final vowel of the preceding word, except in the case of the word वायु.' Varuṇa and Vásava are among the chief of the Vedic pantheon.

P. 345. St. 54.—**पार्थिवीम्**. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " तस्यापत्यम् " इत्यणि " टिड्ढा-° " इति ङीप् ॥—**वरौजसौ**, Hemâdri renders it as " श्रेष्ठतेजसौ ", either an ornate epithet or used for the sake of alliteration.—**कुशध्वजसुते उद्वहताम्**; Châritravardhana discusses: " उद्वहताम् इति विभक्तिपरिणामो । ननु भरतस्यथमं कथं लक्ष्मणकरग्रहणोक्तिः । रामसहचरत्वेन । क्रमापेक्षया तद्वाच्ये तु परिवेत्तृत्व दोषो न तु कथने । अथवा कथयिष्यति त्रयोदशे सर्गे । ' ज्येष्ठस्य लक्ष्मणमुखो भरतो ववन्दे " इति ज्येष्ठस्य प्रतीयमानत्वान्न दोषः ".

P. 345. St. 55.—**चतुर्थसहितास्त्रयः**, This appears to be an awkward expression introduced for the sake of metre. It is a Tatpurusha compound. Sometimes we meet with Bahuvrihi compounds of uncommon characters as " दुःशासन चतुर्थास्ते मन्त्रयामासुरेकतः, " " मातृषष्ठाः पाण्डवाः, " " अधीते चतुरो वेदानाख्यानपञ्चकान्," " छाया द्वितीयो नलः" &c. *Cf.* Hemâdri: " चतुर्णां संख्यापूरकश्चतुर्थः शत्रुघ्नस्तेन सहिताः. "—**सामदानविधिभेदनिग्रहाः**, Here विधि is inserted probably for the sake of metre. See our note to St. 86, Canto X.

P. 346. St. 56.—**कृतार्थतामगमन्** = कृतार्था अभूवन् that is, they considered themselves happy and were so considered by their friends. —**प्रत्ययप्रकृतियोगसन्निभः**, ' Like the union of affixes and roots ' *i. e.*, as firm and permanent as that between the affix and the root, which assimilate as it were into one homogeneous whole. *Cf.* Hemâdri " प्रक्रियते आदौ क्रियते इति प्रकृतिः । प्रतीयते अर्थोऽनेनेति प्रत्ययः । प्रकृतियुताः प्रत्यया इव सार्थकत्वमापुरिति वाक्यार्थः । इयानित्यत्र प्रकृतिर्लोपे प्रत्यय एवार्थमाह । वेत्तीति विदित्यत्र प्रत्ययलोपे प्रकृतिरेवार्थमाह । उभयत्रापि योगसद्भाव एव. " Châritravardhana explains it as: " प्रत्ययाः सामादयः प्रकृतयो रामादयस्तेषां योगस्तत्सदृशोऽभूत् । अथ वा । प्रतीयते ऽर्थो येन स प्रत्ययः सुबादिः । प्रकृतिः प्रातिपदिकादिस्तयोर्योगस्तत्तुल्यो ऽभूत् । प्रकृतिप्रत्ययमिलनेनेव विशिष्टार्थप्रतिपादनात् . "

P. 346. St. 57.—**आप्तगतिः**. Construe this with न्यवर्तत and not with निवेश्य. Châritravardhana construes it with न्यवर्तत. He says: "तत्र तस्यां पुरि एवमुक्तप्रकारेण चतुरस्तानात्मसंभवान् पुत्रान्निवेश्य विवाह्यात एवाप्तरतिः प्राप्तप्रीतिस्तादृशो दशरथः स्वां पुरीमयोध्यां न्यवर्तत प्रत्यागतः. " But Hemâdri in his interpretation appears to have concurred with Mallinâtha, *i. e.*, they have not clearly explained it.—**न्यवर्तत**, Châritravardhana explains: " निवर्तनं प्रतिगमनमित्युक्तत्वात्सकर्मकत्वं ।—**निवेश्य**. " निवेशः स्याद्विवाहेऽपि " इति भागुरिः says Châritravardhana.—**अध्वसु त्रिषु विसृष्टमैथिलः**, ' Having dismissed the king of the Mithilas after three journeys or stages.' *Cf.* verses 29-30. Canto VII.

P. 346. St. 58.—**उत्तटाः**, Châritravardhana says, " तटादूर्ध्वगामिनः, " and उत्तटा नद्यः is equivalent to वेगवत्यस्तटादूर्ध्वगामिन्यो नद्यः.

—स्थलीं. 'The country lying along the banks.' The explanation of Mallinátha is given in the language of grammarians who define स्थली as अकृत्रिमभूमि in contradiction to स्थला which means ground artificially prepared. But Kálidása does not use the word स्थली in its special sense contrasted with that of स्थला, but simply in the general sense of स्थल 'land'. On this passages Hemâdri remarks: "पुरो भावि युद्धसूचकं." And Châritravardhana and Sumativijaya have. "इतश्चनन्तरैः प्रतिकूलवातादिदुःशकुनवर्णनं परशुरामागमनं सूच्यते."

P. 347. St. 59.—**च्युतो मणिः**, 'The poet,' observes Pandit, 'does not mean that every snake killed by the Garu*d*a throws up the gem in his head, but वैनतेयशमितस्य is used because the Garu*d*a is the most terrible enemy of the snakes, and no one but he would be able to kill such a snake as should contain in its head a precious stone that could be compared with the sun.'

P. 347. St. 60.—**सांध्यमेघ.** is an evening cloud *i. e.*, the picturesque phenomena seen often in the west before and at the time of sunset. *Cf.* verse 28. Canto XII. *Cf.* Hemâdri: "संध्यायां भवाः सांध्या मेघा इव रुधिरार्द्राणि वासांसि यासां ताः स्त्रीपक्षे।" compare Buddha. Canto VI, verse 65. "छन्दं ततः साश्रुमुखं विसृज्य काषायसंविद्वसनार्तिभृत्सः। येनाश्रमस्तेन ययौ महात्मा सन्ध्याभ्रसंवीत इवाद्रिराजः॥"—**रजस्वला**, Hemâdri remarks: "रजस्वला हि दर्शनयोग्या न स्युः। दिशोऽपि रजस्वलाः." And Châritravardhana has: "रजस्वला स्त्रियो विलोकनयोग्या न भवन्ति। "मलवद्वाससा न संवदेत्" इत्यादिनिषेधात्। रजस्यवलोकनमनायुष्यं। ता अपि धूसरालका रुधिरार्द्रवाससश्च स्युः."—**ताः**, Hemádri says, "अमानोना प्रतिषेधे."

P. 347. St. 61.—**क्षत्रशोणितपितृक्रियोचितं**, 'Accustomed to perform the obsequial rites to the manes of his father by means of the blood of the Kshatriyas.' पितृक्रिया is a ceremony accompanied by oblations of rice, Sakthu, ghee, sesamum &c., in honour of the departed. See Náráya*n*a Bha*tt*a's Prayogaratna under अन्त्येष्टिः p. 16. *Godbole's edition.* Also As'valáyana G*r*ihya Sútra Adh 3 Ka*nd*ikas 1-13 Bibli. Indi. series p. 318. *Cf.* Vallabha: "उक्तं च। "रामेण त्रिःसप्तकृत्वोह्रदानां चित्र्यं चक्रे पंचकं क्षत्रियास्त्रैः."—**भार्गवं चोदयन्त्य इव**, 'As if in order to provoke the son of Bh*r*igu,' *i. e.* as if with the intention of calling Bhárgava and requesting him to rebegin the slaughter of Kshatriyas.—**ववासिरे**, *Cf.* Hemâdri: "फूत्कारयुक्ता यदि पूर्वभागे प्रदोषकाले नृपतिप्रकोपः। शिवा न शस्ता नलसंविभागे नरेशवार्ता [अमरेशवार्ता Ms.] दिशि दक्षिणस्यां" इति वसंतराजः (?) Châritravardhana gives the substance in the following words: "क्षत्रिया इति गत्वा पितॄन् शोणितेन तर्पयति भावार्थः."

P. 348. St. 62.—तत्प्रतीपपवनादि &c., For a parallel idea compare Buddhacharita, Canto XIII. verse 29. "विश्वग्ववौ वायुरुदीर्णवेगस्तारा न रेजुर्न बभौ शशांकः । तमश्च भूयो विततार रात्रिः सर्वे च संचुक्षुभिरे समुद्राः" ॥—वैकृतं, Hemádri explains: विकृतिरेव वैकृतं । "प्रज्ञादिभ्यश्च" Pâṇini, V. 4. 38. इति वामनः । स्वार्थिकत्वाल्लिंगातिक्रमः."—कृत्यवित् Hemâdri remarks: "कृत्यविदिति गुरुविशेषणं वा."—शांतिमधिकृत्य, 'With reference to the pacification' of the inauspicious prodigies, *i. e.*, as to what he should do to avert the evil consequences foreboded by the ill omens. शांति is any ceremony or any auspicious act done to avert the effects of the wrath of a deity or the evil foreboded by an ill omen or a prodigy. There are many works in Sanskrit, such as the शांतिरत्न, शांतिसार, शांतिमयूख, and the अद्भुतसागर in which ceremonies are prescribed for averting the bad consequences of ill omens.

P. 348. St. 63.—यः सैनिकैर्नयनानि प्रमृज्य &c., 'which his outlying pickets, on looking out very carefully made out, after a long time, to be something in the human form.' नयनानि प्रमृज्य, literally means, 'after having washed or cleared their eyes' *i. e.*, after rubbing their eyes.—क्लिष्ट, Chāritravardhana remarks, "क्लिष्टस्यरुचां आगमे वा." On this and the following stanzas Chāritravardhana says, "इतः परशुरामवर्णनं."

P. 349. St. 64.—पित्र्यमंशं, The उपवीत or more commonly यज्ञोपवीत denoted that he was a Bráhmaṇa, and so he was, being the son of the sage Jamadagni. The heavy bow that he carried with him indicated that he was a Kshattriya, and that he partly was, being the son of Reṇuká, daughter of Prasenajit. (See Wilson's Vishṇu Purána, Vol. IV. p. 19.) In ancient times, however, the यज्ञोपवीत was the characteristic not only of the Bráhmaṇa but of Kshattriya and Vais'ya also. From Kálidása mentioning it as if it belonged to the Bráhmaṇas exclusively it is likely that in his time it was worn or at least was thought fit to be worn, as now, by the Bráhmaṇas alone. Since then, it appears, the restriction has gradually become loose and in times of the great S'iváji and the Peshawas, the higher classes of the Marathas and even the Suvarṇakáras were invested with Upavita. On this passage Hemádri makes the following remark: "सूर्योपमया तेजस्विता । सोमोपमया उपवीतित्वं च उत्कर्षं सर्पोपमया चन्दनोपमया भीषणत्वं चन्दनोपमया द्विजस्य तत्त्वच्छान्तिः."

P. 349. St. 65.—येनरोषपरुषात्मनः, The story of Jamadagni and his wife Reṇuká is related in the Mahábhárata. 'Once, when her sons were all absent to gather the fruits on which they fed, Reṇuká, who

was exact in the discharge of all her duties, went forth to bathe. On her way to the stream, she beheld Chitraratha, the Prince of Mrittikâvati, with a garland of lotuses on his neck, sporting with his queen, in the water; and she felt envious of their felicity. Defiled by unworthy thoughts, wetted, but not purified, by the stream, she returned, disquieted, to the hermitage; and her husband perceived her agitation. Beholding her fallen from perfection, and shorn of the lustre of her sanctity, Jamadagni reproved her, and was exceedingly wroth. Upon this, there came her sons from the wood; first the eldest, Rumanvat, then Sushena, then Vasu, and then Visvâvasu; and each, as he entered, was successively commanded, by his father, to put his mother to death: but, amazed, and influenced by natural affection, neither of them made any reply: therefore, Jamadagni was angry, and cursed them; and they became as idiots and lost all understanding, and were like unto beasts or birds. Lastly, Ráma returned to the hermitage, when the mighty and holy Jamadagni said unto him: 'Kill thy mother, who has sinned; and do it, son, without repining.' Ráma, accordingly, took up his axe, and struck off his mother's head; whereupon the wrath of the illustrious and mighty Jamadagni was assuaged, and he was pleased with his son, and said: 'Since thou hast obeyed my commands, and done what was hard to be performed, demand from me whatever blessings thou wilt, and thy desires shall be, all, fulfilled. Then Ráma begged of his father these boons: the restoration of his mother to life, with forgetfulness of her having been slain, and purification from all defilement; the return of his brothers to their natural condition; and, for himself, invincibility in single combat, and length of days. And all these did his father bestow.' See Wilson's Vishnu Puráṇa, Vol. IV. p. 19.—पितुः शासने तस्थुषा, Cf "आज्ञा गुरूणां ह्यविचारणीया."—स्थितिभिन्नैरपि, Referring to his becoming wroth and commanding Paras'uráma to kill Renuká. Hemádri translates 'आत्मनः by " स्वभावः".—अपि, Hemádri remarks: " अपिशब्दादाज्ञालंघने प्रत्यवायं दर्शयति."—वेपमानजननीशिरश्छिदा, Vallabha explains: " मरणभयकम्पमानस्वित्रीशीर्षच्छेदकेन."

P. 349. St. 66.—अक्षबीजवलयेन, In the shape of the rosary, hanging from his right ear, of the seeds of the Aksha. Aksha is what is more generally known by the name of Rudráksha. Rudrákshas are considered sacred and are still worn either singly or strung in rosaries.—उद्वहन्, On this Hemádri remarks: " रूढितश्रुतं । उत्पूर्वस्य वहेर्विवाहार्थत्वात्."—क्षत्रियान्त, &c., 'bearing, as it were, in a

disguised form (व्याजरूपम्). the number twenty-one expressive of the times that he killed the Kshattriyas.

P. 350. St. 67.—स्वां दशां चावलोक्य, Hemádri explains · "स्वां वृद्धत्वलक्षणां दशां चावलोक्य."—विषसाद, Hemâdri remarks : "अयं क्रूरो दृश्यते । अहं वृद्धः । एते बालाः इति खिन्नः."—पितुर्वधभवेन मन्युना, The myth regarding the death of Jamadagni is as follows : 'It happened. on one occasion, that, during the absence of the *Ri*shi's sons, the mighty monarch Kártavírya, (the sovereign of the Haihaya tribe, endowed, by the favour of Dattatreya, with a thousand arms, and a golden chariot that went wheresoever he willed it to go), came to the hermitage of Jamadagni, where the wife of the sage received him with all proper respect. The king, inflated with the pride of valour, made no return to her hospitality, but carried off with him, by violence, the calf of the milch-cow of the sacred oblation, and cast down the tall trees surrounding the hermitage. When Ráma returned, his father told him what had chanced; and he saw the cow in affliction ; and he was filled with wrath. Taking up his splendid bow, Bhârgava, the slayer of hostile heroes, assailed Kártavírya. who had. now, become subject to the power of death, and overthrew him in battle. With sharp arrows Ráma cut off his thousand arms ; and the king perished. The sons of Kârtavirya, to revenge his death, attacked the hermitage of Jamadagni, when Ráma was away, and slew the pious and unresisting sage, who called, repeatedly, but fruitlessly, upon his valiant son. They then departed ; and, when Ráma returned. bearing fuel from the thickets, he found his father lifeless, and thus bewailed his unmerited fate. He then made a vow, that he would extirpate the whole Kshattriya race. In fulfilment of this purpose, he took up his arms, and. with remorseless and fatal rage, singly destroyed, in fight, the sons of Kártavirya ; and, after them. whatever Kshattriyas he encountered, Ráma, the first of warriors. likewise slew. Thrice seven times did he clear the earth of the Kshattriya caste ; and he filled, with their blood, the five large lakes of Samantapanchaka, from which he offered libations to the race of Bh*ri*gu.' See Wilson's Vish*n*u Purá*n*a, Vol. IV. p. 21.See also Mahábhárata Vanaparvan Adh. 116.

P. 350. St. 68.—रत्नजातम् . On this epithet Cháritravardhana remarks : "जातिशब्दः प्राशस्त्ये."

P. 350. St. 69.—अर्घ्यमर्घ्यमिति, Hemâdri explains, "अर्घायेदमर्घ्यं ।" "पादार्घाभ्यां च" Pá*n*ini, V. 4. 25. And further observes : "संभ्रमेण प्रवृत्तौ द्वे वाच्ये" । And Cháritravardhana has : "संभ्रमे यावद्बोधद्वित्वं."

—क्षत्रकोपदहनार्चिषं, Hemádri explains : "क्षत्रियेषु कोपदहनस्य क्रोधाग्नेरर्चिषं ज्वालां भस्मंहेतुत्वात्."—अर्चि, Chàritravardhana says, "अर्चिः स्त्रीलिंगेऽपि." And Vallabha says, "अर्चिःशब्दः सर्वलिंगत्वात्स्त्रीलिंगेऽपि."

P. 351. St. 70.—अङ्गुलीविवरचारिणं शरं कुर्वता, Chàritravardhana remarks : "इत्यनेन धानुष्कजातिः."

P. 351. St. 71.—अपकारवैरि, opposed to जातवैरि.—दण्डघट्टनात्, 'By receiving a blow from a club.'—भुजगर्प इव, On this Hemâdri remarks : "इति दुःसहता." And Cháritravardhana has : "इत्यनेन दुःसहत्वं ।"—विक्रमश्रवात्, referring to the bending of the great bow by Ráma.

P. 352 St. 72.—वीर्यशृङ्गमिव भग्नमात्मनः. *Cf.* Hemâdri, "आत्मनो मम वीर्येण शृङ्गं प्राधान्यं भवता त्वया भग्नमिवाहं समर्थये प्रतिपादये। वीर्यशृङ्गमिति वा। भग्नशृङ्गो महिषोऽकिंचित्करः." And Cháritravardhana has, "यथा भग्नशृङ्गो महिषादिरकिंचित्करस्तद्वदहमपीत्यर्थः." and Sumativijaya has, "आत्मनः पौरुषाभिमानं खण्डितमिव संभावयामि." The poet, however, has in his mind the rage into which a wild beast is thrown and not to the helplessness it is reduced to, when its horn is broken. Hemádri's explanation of the epithet is different from that of Mallinátha and Châritravardhana; but his comparison is not happy.

P. 352. St. 73.—व्यस्तवृत्तिः, Chàritravardhana renders it by "भिन्नवृत्तिः", 'with its meaning divided,' *i. e.*, made to mean another person in addition. Hemádri says, "विभक्तवृत्तिः".—उचरित एव मामगात्, Hemàdri, explaining the expression once like Mallinâtha, gives also the following : "यद्वा उच्चारित एव मामगात्."—व्रीडमावहति, Hemádri discusses: "व्रीडशब्दोऽकारान्तोऽपि। "व्रीडायाश्च भवेद्व्रीडो लज्जामात्रेऽप्यपत्रपा" इति शब्दभेदप्रकाशे। "बाहुल्कार्व्रीड" इति क्षीरतरंगिण्यां। वामनोऽपि अविधौ गुरोः स्त्रियां बहुलं विवक्षा। अकारविधौ। "गुरोश्च हलः" Pánini, III. 3. 103. इति स्त्रियां भवेद्व्रीड इति बहुलं विवक्षेति। तथा माघकाव्ये । "व्रीडमेति न तत्र प्रियं वदन्" इति. Translate the aphorism :—' The affix अ comes after that verb which has a prosodially heavy vowel and ends in a consonant, when the word to be formed is feminine. ' And Châritravardhana has : "व्रीडमिति वामनसूत्रविधिना घञन्ताः पुंसीति महाभाष्यकारः".

P. 352. St. 74.—अचलेऽप्यकुण्ठितं, See Meghadúta, I. verse 59. —धेनुवत्सहरणाच्च हैहयः, See note to 67 verse above.—कीर्तिमपहर्तुमुद्यतः, On this epithet Hemádri notices : "धेनुहरणमपराधमहत्त्वार्थं। जीवन्मातृको हि वत्सां ह्रियमाणो धेनुं प्रभुं च दुःखाकरोति." And Châritravardhana has, "एतेनैव परभवेन कार्तवीर्यमार्गं नेष्यामीत्यर्थः".

P. 353. St. 75.—**कक्षवज्ज्वलति सागरेऽपि यः**, 'that it burns even in the watery ocean,' referring to वडवानल.—**न मामवति**, Châritravardhana remarks : "त्वज्जयं प्रीणयिष्यतीति भावः". On the following verse Châritravardhana says, "सांप्रतं दाशरथेः पराक्रममसहमानस्तत्रोपाधिमाह."

P. 353. St. 76.—**विद्धि चात्तबलं**, On this epithet Hemâdri makes the following remark : "पूर्वं किल विश्वकर्मणा दैत्यवधाय द्वे धनुषी कृत्वा हरिहरयोर्दत्ते तयोः स्वबलजिज्ञासया अन्योन्यं युध्यमानयोर्विष्णुना हुंकारेण शांभवं धनुर्निर्वीर्यं कृतमित्यागमः । हरेः सूर्यस्य तेजसेति वा." Vallabha also has the same Âgama. Compare also Paras'uráma's speech : "इमे द्वे धनुषी श्रेष्ठे दिव्ये लोकाभिपूजिते । दृढे बलवती मुख्ये सुकृते विश्वकर्मणा । अनुसृष्टं सुरैरेकं त्र्यम्बकाय युयुत्सवे । त्रिपुरघ्नं नरश्रेष्ठ भग्नं काकुत्स्थ यत्त्वया । इदं द्वितीयं दुर्धर्षं विष्णोर्दत्तं सुरोत्तमैः । तदिदं वैष्णवं राम धनुः परपुरंजय । समानसारं काकुत्स्थ रौद्रेण धनुषा त्विदं । तदा तु देवताः सर्वाः पृच्छन्ति स्म पितामहं । शितिकण्ठस्य विष्णोश्च बलाबलनिरीक्षया । अभिप्रायं तु विज्ञाय देवतानां पितामहः । विरोधं जनयामास तयोः सत्यवतां वरः । विरोधे तु महद्युद्धमभवद्रोमहर्षणं । शितिकण्ठस्य विष्णोश्च परस्परजयैषिणोः । तदा तु जृम्भितं शैवं धनुर्भीमपराक्रमं । हुङ्कारेण महादेवः स्तंभितोऽथ त्रिलोचनः । देवैस्तदा समागम्य सर्षिसंघैः सचारणैः । याचितौ प्रशमं तत्र जग्मतुस्तौ सुरोत्तमौ । जृम्भितं तद्धनुर्दृष्ट्वा शैवं विष्णुपराक्रमैः । अधिकं मेनिरे विष्णुं देवाः सर्षिगणास्तथा । धनू रुद्रस्तु संक्रुद्धो विदेहेषु महायशाः । देवरातस्य राजर्षेर्ददौ हस्ते ससायकम्" ॥ See Râmáyana Bâlakánda canto 75.—**नदीरयैः**, For a parallel expression compare Buddhacharita, Canto IX. verse 15. "नदेहि धर्मप्रिय मत्प्रियार्थं धर्मार्थमेव त्यज बुद्धिमेतां । अयं हि मा शोकरयः प्रवृद्धो नदीरयः कूलमिवाभिहन्ति ॥—**पातयति**, Châritravardhana says, "न तु वातस्य सामर्थ्यं."

P. 353. St. 77.—**जितस्त्वया**, On this Hemádri remarks : युद्धं विनापि धनुराकर्षणेन मे भङ्गः इत्यर्थः". And Châritravardhana has, "संग्रामं विना धनुरारोपणेन भङ्गप्रसङ्गः".—**एवमपि**, 'even by this means', 'even if you do this much.'

P. 354. St. 78.—**बध्यतामभययाचनाञ्जलिः**, On this Châritravardhana remarks : "एतेन दाशरथेः कोपोद्दीपनं." And Hemâdri has : "शत्रुपराभवो ह्यायुधाभ्यासफलं । ऊर्जस्व्यलंकारः । तथा काव्यादर्शे । "ऊर्जस्वि रूढाहंकारं" इति.

P. 354. St. 79.—**तद्धनुर्ग्रहणमेवोत्तरं प्रत्यपद्यत**, 'returned an answer by the very taking of his (Paras'uráma's) bow,' that is, the only answer he was pleased to give was the very seizing of the bow itself. *Cf.* Hemádri "धनुर्ग्रहणेत्यर्थः".—**स्मितविकम्पिताधरः**, Châritravardhana remarks "इत्यनेन धीरोदात्तत्वमुक्तं."

P. 354. St. 80.—**पूर्वजन्मधनुषा**, Châritravardhana interprets as follows : "इयोरपि विष्णुरूपत्वात्पूर्वं जन्म परशुरामरूपं तस्य धनुषा समागतो

मिलितः &c. ''—**अतिमात्रं**, Hemâdri explains : " मात्रां मर्यादामतिक्रान्तमतिमात्रं अतिवेलं ''.—**लघुदर्शनः**, Hemâdri explains : " लघु मनोज्ञं दर्शनं यस्य सोऽभूत्.''—**नवाम्बुदः**, Châritravardhana explains: " श्रावणकालीनो मेघः. '' Châritravardhana gives the substance of this verse in the following words : " नीलनीरुहश्यामो रामस्तद्धनुषा मेन्द्रचापो मेघ इव शुशुभे इत्यर्थः. ''

P. 355. St. 81.—**धूमशेष इव धूमकेतनः**, On this Châritravardhana remarks : " यथा संधुक्षितो धूमशेषोऽग्निर्वैवर्ण्यं निर्ज्वालत्वं लभते. '' This remark of Châritravardhana has also been quoted by Vijayánandasûris'varacharaṇasevaka " अथ वा । यथा संधुक्षितो धूमशेषो वह्निरिव वैवर्ण्यं निर्ज्वालत्वं भजते इति चारित्रवर्द्धनः''. See readings.—**च-च**, On this both Châritravardhana and Vallabha make the following remark : " इमावपि चकारौ समानकालयोतकौ ''.

P. 355. St. 82.—**पार्वणौ शशिदिवाकराविव**, like the moon and the sun respectively rising and setting at the same time, as for example, on the full-moon day.—**वर्धमानपरिहीनतेजसौ**, Hemâdri remarks, " वर्धमानतेजसं रामं परिहीनतेजसं भार्गवं.''—**परस्परस्थितौ**, On this epithet both Hemádri and Châritravardhana make the following remark : " यद्वा । परस्परं स्थितौ सप्रतिज्ञौ'' and quote the following from S'âs'vata. " स्थितमूर्ध्वं विजानीयात्सप्रतिज्ञो भवेत्स्थितः ''.

P. 356. St. 83.—**हरसूनुसंनिभः**, The son of S'iva, named Kártikeya or Skanda is the God of war, being the general of the celestial armies. See note to verse 1, Canto VII.—**आशुगं चाविश्य व्याजहार**, On this epithet Hemádri remarks : " आशुगो वायुविशेषो । कारुण्यान्मुनिं न जघानेत्यर्थः । " द्विः शरं नाभिसंधत्ते द्विः स्थापयति नाश्रितान् । द्विर्ददाति न चार्थिभ्यो रामो द्विर्नाभिभाषते '' इति । स्खलितवीर्यमित्यमर्थ. ''

P. 356. St. 84.—**न प्रहर्तुं** &c., ' Although you are insolent, I cannot cruelly kill you, because you are a Bráhmaṇa.' *Cf.* the S'ruti quoted by Hemâdri and Châritravardhana. " ब्राह्मणो न हन्तव्यः '' इति. Compare also Rámáyaṇa Bálakáṇḍa, Canto 76. " ब्राह्मणोऽसीति पूज्यस्त्वं विश्वामित्रकृतेन च । (विश्वामित्रभगिन्याः पौत्रोऽसीति पूज्यस्त्वं) । तस्माच्छक्तो न ते राम मोक्तुं प्राणहरं शरं । इमां वा त्वद्गतिं राम तपोबलसमार्जितां । लोकानप्रतिमान वापि हनिष्यामीति मे मतिः । न ह्ययं वैष्णवो दिव्यः शरः परपुरंजयः । मोघः पतति वीर्येण बलदर्पविनाशनः ''.

P. 356. St. 85.—**तत्त्वतः**, Hemádri interprets the expression by " ज्ञानात् , '' and Châritravardhana and Sumativijaya render it as " परमार्थतः ''.—**पुरुषं पुरातनं**. ' The ancient being,' referring to परमात्मन्, who is not only the most ancient but also the only Being that survives each periodical deluge (महाप्रलय) of the world.—**गां गतस्य तव**, ' Of you who have come down to the earth, *i. e.* incarnate. '

P. 357. St. 86.—**भस्मसात्कृतवतः**, Hemâdri remarks, "इति वीरोक्तिः".—**पात्रसात्** Châritravardhana explains, "पात्राय कश्यपाय देयां," and further remarks: "परशुरामो हि कश्यपादिभ्यो वसुधां प्रादाद्ब्राह्मणानपीपिडदिति," and Vallabha has: "भार्गवेण भूः कश्यपाय दत्तेत्यागमः". *Cf.* Râmâyana Bâlakânda, Canto 76. "काश्यपाय मया दत्ता यदा पूर्वं वसुंधरा। विषये मे न वस्तव्यमिति मां काश्यपोऽब्रवीत्। सोऽहं गुरुवचः कुर्वन् पृथिव्यां न वसे निशां। तदा प्रभृति काकुत्स्थ कृता मे काश्यपस्य ह। तामिमां मद्गतिं वीर हन्तुं नार्हसि राघव। मनोजवं गमिष्यामि महेन्द्रं पर्वतोत्तमं। लोकास्त्वप्रतिमा राम निर्जितास्तपसा मया। जहि तां शरमुख्येन मा भूत्कालस्य पर्ययः".—**परमेष्ठिना**, Hemâdri explains: "परमे लोके वैकुण्ठाख्ये तिष्ठतीति तेन."

P. 357. St. 87.—**मतिमतां वर**, Hemâdri remarks: "इति विवेकयोग्यता."—**गतिं**, Vallabha interprets it as: "चरणगतिं रक्ष."—**न मां पीडयिष्यति**, Hemâdri remarks: "मुमुक्षोर्न स्वर्गस्य स्पृहा। जितेन्द्रियत्वान्न विषयाभिलाषता वा."

P. 357. St. 88.—**प्राङ्मुखश्च विससर्ज सायकं**, Râma faced the east at the time of shooting the arrow, because that is the way to the Svarga or the region (लोक) presided over by Indra. It will be remembered that Indra is the लोकपाल guarding over the east *Cf.* Châritravardhana, "शक्रलोकस्य पूर्वदिग्भागवर्तित्वाच्छरस्य प्राङ्मुखं विक्षेपः." And Hemâdri has: "इन्द्रलोकस्य पौरस्त्यत्वाच्छरस्य प्राङ्मुखप्रक्षेपः."—**स्वर्गमार्गपरिघः**, Châritravardhana explains: "स्वर्गमार्गस्यार्गलादण्ड इवाभवत्".—**दुरत्ययः**, Hemâdri analyses, "दुःखेनात्ययो नाशो यस्य सः."

P. 358. St. 90.—**राजसत्वमवधूय**. *i. e.* by defeating him and thereby depriving him of his pride and haughtiness. The highest of the three qualities (सत्व) is supposed to belong to the highest of the castes, and the next to that (रजस्) to the next lower caste, the warrior caste.—**शमं गमितः**, 'reduced to humility,' so necessary in a Brâhmana. *Cf.* Hemâdri: "इतःपरं क्षत्रियेषु निर्वैरत्वात्.—**निग्रहोऽपि**, Hemâdri renders it by "पराजयोऽपि." Even the disgrace of defeat is a favour done to me. For by this I lose my fierce nature which I have inherited from my mother (she being a Kshattriya woman) and I resume that peacefulness and quiet which naturally belong to a Brâhmana.

P. 358. St. 91.—**साधयामि**, Hemâdri discusses: "धातूनामनेकार्थत्वात्। तथा क्षीरतरंगिण्यां। "क्रियावाचित्वमाख्यातुमेकोऽत्रार्थः प्रदर्शितः। प्रयोगतोऽनुमन्तव्या अनेकार्था हि धातवः" इति। प्रयोगश्चानर्घ्यराघवे। "वामदेवः। भगवन् कौशिक साधय। शिवाः सन्तु पन्थानो वत्सयो रामलक्ष्मणयोः"। तट्टीकायां साधय गच्छेत्यर्थः। गच्छेतिपदं परित्यज्य साधयेत्युक्तं तत्परुषत्वादितो परिहर्तुमिति। नैषधे च।

"अयि साधय साधयेप्सितं स्मरणीयाः समयं वयं वयः । तव वर्त्मनि वर्ततां शिवं पुनरस्तु त्वरितं [त्वयि तत् Ms.] समागमः" इति Nai. II. 62. । "राधसाधसंसिद्धौ" । यद्वा । षिधु संराद्धौ । गुण्यतार्थगमनार्थत्वात् । "सिध्यतेरपारलौकिके," Pâṇini, VI. 1. 49, इत्येवात्वं णौ । संराद्धिः फलनिष्पत्तिः । यद्वा । बाढमाचष्टे साधयति । "तत्करोति तदाचष्टे" इति णिच् । णाविष्ठवत्प्रातिपदिकस्येति इष्ठवद्भावे "अन्तिकबाढयोर्नेदसाधौ," Pâṇini, V. 3. 63. इति साधादेशः । "गाढबाढदृढानि च" इत्यमरः ।

P. 359. St. 93.—शर्वकल्पः, Appears to have used for the sake of alliteration.—पुरं कुवलयितगवाक्षां लोचनैरङ्गनानाम्, See verses 5-15. Canto VII. See also verse 36 of the present canto. See also Buddhacharita, verses 13-24, Canto III.

CANTO XII.

P. 360. St. 1.—**निर्विष्टविषयस्नेहः**, 'who had his appetite for the objects of sense *i. e.* worldly pleasures satisfied.' *Cf.* Hemádri: "निर्विष्ट उपभुक्तो विषयाणां रूपरसादीनां स्नेहः प्रीतिर्येन सः." And Cháritravardhana and Sumativijaya have: "कीदृशः निर्विष्टो भुक्तो विषयेषु प्रमदादिषु स्नेहः प्रेमरसो येन स तथा." And Vallabha has: "उपभुक्तविषयरसः." Hemádri, Cháritravardhana and Sumativijaya appear to interpret more correctly than Mallinâtha. And further Hemádri, Cháritravardhana, Vallabha and Sumativijaya have the following: "तथा प्रदीपपक्षे। यथा निर्विष्टः पीतः विषयस्नेहः दीपभाजनतैलं येन स तादृशो दशान्तं वर्तेः प्रांतं शिरोभागं वा प्राप्तः प्रदीप आसन्ननिर्वाणो मोक्षोन्मुखो भवति तथा सोऽपि जातो इति योजनीयं." The figure according to Châritravardhana and Sumativijaya is "श्लिष्टोपमा." The word निर्विष्ट as applicable to स्नेह is not a felicitous expression. Mallinâtha seems to have felt the difficulty in explaining the word.—**अर्चिः**, On this both Hemâdri and Cháritravardhana make the following remark "अर्चिरिकारान्तः पुंलिंगः इति कश्चित्."

P. 360. St. 2.—**कैकेयीशङ्कयेव**, 'as if [prompted] by a suspicion regarding Kaikeyî.' That is, Age, fearing lest Kaikeyî feeling jealous should prevent, in case of Das'aratha's death, the installation of Ráma, to which he was as the eldest son of the eldest queen entitled as of right, came in the form of Hoariness and whispered to Das'aratha that he should declare Ráma his successor to the throne. See readings, and *Cf.* Bha*tti*, "दधाना वलिभं मध्यं कर्णजाहविलोचना। वाक्त्वचेनातिसर्वेण चन्द्रलेखेव पक्षता" ॥ IV. 16.—**आह**, Hemádri takes it as an indeclinable compare, "आहेत्यव्ययं."

P. 361. St. 3.—**पौरकान्तस्य**, लोकप्रियस्य say Cháritravardhana and Vallabha. Analyse पौराणां लोकानां कान्तो मनोहरस्तस्य लोकाभिरामस्य.—**प्रत्येकं ह्लादयांचक्रे**, 'gladdened each of them as it spread.'—**अभ्युदयश्रुतिः**, Hemádri renders it by "राज्यप्राप्तिः."

P. 361. St. 4.—**क्रूरनिश्चया**, Hemádri explains, "रामं वनं प्रति निष्कासयामीति कृतनिश्चयक्रूरनिश्चया."—**शोकोष्णैः पार्थिवाश्रुभिः**, Hemádri remarks: "कैकेय्या वैमुख्येन राज्ञः शोकोऽभूत्." And Cháritravardhana has "अन्यदापि वस्तु बाष्पसङ्गाद्दूषितं भवति। किं पुनर्माङ्गल्यं राज्याभिषेकमिति भावः."—°**संभारं**, Hemádri interprets it by "साधनं," and Cháritravardhana by "पट्टशासनादिकं."

P. 361. St. 5.—**इन्द्रसिक्ता,** Hemâdri renders Indra by मेघ and cites the following authority from विश्व. " इन्द्रः फणिज्जके सान्द्रे घनकामनयोर्मेदो " इति.—**उरगाविवोद्रवाम,** Hemâdri remarks: " वरयोः क्रूरत्वात्सर्पोपमा ". And Châritravardhana has, " रामचन्द्रवननिवासराज्यभ्रंशरूपत्वाद्वरयोरुरगवत्क्रूरत्वं." *Cf.* Adhyátma Râmâya*n*a, Canto II. " पुरा देवासुरे युद्धे राजा दशरथः स्वयं । इन्द्रेण याचितो धन्वी सहायार्थं महारथः । जगाम सेनया सार्धं त्वया सह शुभानने । युद्धं प्रकुर्वतस्तस्य राक्षसैः सह धन्विनः । तदाक्षकीलो न्यपतच्छिन्नस्तस्य न वेद सः । त्वं तु हस्तं समावेश्य कीलरन्ध्रेऽतिधैर्यतः । स्थितवत्यसितापाङ्गी पतिप्राणपरीप्सया । ततो हत्वासुरान् सर्वान् ददर्श त्वामरिन्दमः । आश्चर्यं परमं लेभे त्वामालिंग्य मुदान्वितः । वृणीष्व यत्ते मनसि वाञ्छितं वरदो ह्यहं । वरद्वयं वृणीष्व त्वमेवं राजावदत्स्वयं । त्वयोक्तो वरदो राजन् यदि दत्तं वरद्वयं । त्वय्येव तिष्ठतु चिरं न्यासभूतं ममानघ । यदा मेऽवसरो भूयात्तदा देहि वरद्वयं. "

P. 362. St. 6.—**वैधव्यैकफलां,** Analyse वैधव्यमेवैकं फलं यस्यास्तां. The granting of the demand of Kaikeyî to declare Bharata her son as the successor to the throne brought death upon the king; and thus Kaikeyî became a widow. *Cf.* Hemâdri : " रामवियोगेन भर्तृमरणाद्भरतेन राज्याकरणाद्वैधव्यैकफलां. " And Châritravardhana has the following: " इत्यनेन रामविरहे भर्तृमरणं सूच्यते. " On the following verses Châritravardhana and Hemâdri observe, " अग्रिमश्लोकद्वयेन रामस्य महाशयत्वमाह. "

P. 362. St. 7.—**पित्रा दत्तां,** Hemâdri remarks: " ताते जीवत्यहं कथं प्रभुरिति रुदन्."—**तदाज्ञां मुदितोऽग्रहीत्** , On this Hemâdri makes the following remark : " तातस्तु सत्यसंध इति मुदितः । पितुर्निर्देशाद्वा मुदितः, " and Châritravardhana has : " वनं गतेऽपि मयि पिता राज्यं [न] त्यक्ष्यतीति तोषः। अथ वा । कैकेयीवरदानेन तातः सत्यप्रतिज्ञोऽभवदिति तोषः. "—**वनाय,** Both Hemâdri and Châritravardhana cite the following aphorism : " गत्यर्थकर्मणि द्वितीया चतुर्थ्यौ चेष्टायामनध्वनि, " Pá*n*ini, II. 3. 12. Translate the aphorism:—" In the case of roots implying motion, the place to which the motion is directed takes the affix of the accusative or the dative case in denoting the 'object,' when physical motion is meant and the object is not a word expressing 'road.' " As, ग्रामं or ग्रामाय गच्छति. But not so in मनसा हरिं व्रजति. Because the verb does not denote physical motion. अध्वानं गच्छति 'He goes over the way,' *i. e.*, the object being the 'way.' But not so in ओदनं पचति. Because the verb does not denote motion; nor in अश्वेन व्रजति the verb here does not denote 'the object'. The word अध्वन् includes the synonyms of road (I. 1. 68.). As पंथानं गच्छति, मार्गं गच्छति. The prohibition applies with regard to the going over or occupying the road; so that where a person from a wrong road goes to the right road, there the dative will be employed, as पथे गच्छति.

P. 362. St. 8.—**मुखरागं ददृशुः**, On this Hemâdri observes: " समत्वाद्विस्मितत्वं. " And further he goes on saying: " यत्र [तत्र Ms.] प्रभावादाकारः क्रोधहर्षभयादयः । भावस्थानोपलक्ष्यन्ते तद्गाम्भीर्यमुदाहृतं " इति काव्यादर्शे. —**दधतो मङ्गलक्षौमे**, *Cf.* Châritravardhana: " राज्याभिषेके दुकूले दधतो, " *i. e.* when he was about to ascend the throne. Vallabha explains: " कल्याणपट्टकूले बिभ्रतः. " Analyse मङ्गले च ते क्षौमे दुकूले च.—**वसानस्य च वल्कले**, *i. e.* when he was going to prepare for his relegation.—**विस्मिताः**, On this Châritravardhana remarks: " उभयोः संतापं प्रत्यकारणत्वाद्विस्मितत्वं. "

P. 362. St. 9.—**विवेश दण्डकारण्यं**, 'entered the Da*nd*akâ forest.' *Cf.* Hemâdri: " दण्डका नाम भार्गवकन्या तयोपलक्षितं वनं. " The forest of Da*nd*akâ commencing from the north (*i. e.* the southern portion of Bundelakha*nd*a) of the mountain chain of Vindhya extends on the south to the regions of the river K*ri*sh*n*â; comprising eastwards the districts of Chhotâ Nâgpur and extending as far as the borders of the Kalinga territories. And to the westward extending as far as the two divisions of the Vidarbhas. Setting out from Ayodhyâ on the Sarayû, Râma first arrived at the banks of the Tamasâ—the modern Tons—then passed through a fertile tract and crossing the borders of Kosala came to the Vedasm*ri*ti river (the modern Sot or Sati : a branch of the Tons)—then crossed the rivers Gomati and Sarpikâ or Syandikâ (Sai) and arrived at शृंगवेरपुर near the Bhâgîrathî—the capital of the Nishâda king Guha. Through his assistance, he crossed the Ganges and passed the night under a banian tree. The small tract between the Ganges and Yamunâ was then a forest dotted with hermitages of ascetics specially of the great Bharadvâja. Hence he crossed the Yamunâ on a raft and arrived at the foot of the hill Chitrakû*t*a by the river Mandâkinî or Mâlinî at a distance of 24 miles from the confluence of the rivers Yamunâ and Gangâ. In the way on the right bank of the Yamunâ he paid adoration to a celebrated banian tree—a representative of which is still regarded as the अक्षय or undecaying tree. The distance of Chitrakû*t*a noted above is certainly too short, as it is 50 miles S. E. of Bânda, which is 95 miles S. W. of Allâhâbâd. More than 100 years ago, Tieffenthaler, to quote from Thornton's Gazetteer, described it " as the resort of all India, being the residence of Râma and his wife Sitâ, after they had left Ayodhyâ. It is crowded with temples and shrines of Râma and his brother Lakshma*n*a. " It must, therefore, be recognized as the Chitrakû*t*a of Râmâya*n*a. It is situated on the clear river Pais'unî

which is therefore the Mandâkinî or Mâlinî of old days. 'The geography of Southern India as given in the Râmâya*n*a,' observes A. Boorooah, 'is very confusing. The whole country from the borders of the Vindhya mountain to the southern banks of the K*r*ish*n*â appears to have been a vast forest vaguely known by the general name of Da*n*d*a*kâ. Ráma entered into it after leaving Chitrakú*t*a and the hermitage of the sage Atri. This mountain may probably be traced in the Chhotà Nâgpur Districts. It was here he crossed the torrent river near a great mountain. This evidently refers to the river Narmadá. It was in this forest that he came to a tank called पंचाप्सर or five nymphs, which is probably situated within the Central Provinces below Chhotà Nâgpur Districts. It was in this forest that he passed some time at पंचवटी near the Godâvarî and mount प्रस्रवण. This part of Da*n*dakà was known as जनस्थान or Human habitation. These may probably be placed near Palaveram, where the Godâvarî rushes from the mountains as Ràma is said to have afterwards travelled westward in search of Sîtá.' See Indian Antiquary, Vol. II. p. 243. See also Anandoram Boorooah's Ancient Geography of India page 19 and also page 140.—**प्रत्येकं च सतां मनः**, On this epithet Cháritravardhana makes the following remark: "पितृवाक्याद्राज्यपरित्यागाद्वनगमनाच्च सतां संतोषः."

P. 363. St. 10.—**तद्वियोगार्त्तः**, 'Affected with grief from his separation.' Analyse तस्य रामस्य वियोगेन विरहेणार्त्तः पीडितः.—**स्मृत्वा शापं स्वकर्मजं**, *Cf.* also Rámáya*n*a: "पुत्रव्यसनजं दुःखं यदेतन्मम सांप्रतं । एवं त्वं पुत्रशोकेन राजन् कालं करिष्यसि." *Cf.* verse 79, Canto IX. —**शरीरत्यागमात्रेणैव शुद्धिलाभममन्यत**. That is, 'regarded it a cheap retribution to be allowed to solve the curse by giving up his own life.' So far as the wording of the curse went, it implied that his death might have been caused by the death of his son or sons. Therefore he thought that it was a cheap retribution that he himself should put an end to his existence.

P. 363. St. 11.—**विप्रोषितकुमारं**, Hemâdri explains: "विशेषेण प्रोषिताः स्थानान्तरं गताः कुमारा यत्र तत् । भरतशत्रुघ्नावपि मातुलगृहं गतौ । अत एव कुमारावपि."—**अस्तमितेश्वरं**, analyse, अस्तमितो मृत ईश्वरो राजा यस्य तच्चकोशं.—**रन्ध्रान्वेषणदक्षाणां**, Châritravardhana explains: "तद्राज्यं रन्ध्राणां दशरथमहीशयशःशेषादीनामन्वेषणे दक्षाणां द्विषां शत्रूणामामिषतां प्राप्तत्वं &c." And Sumativijaya has: रन्ध्रान्वेषणे छिद्रावलोकने दक्षास्तत्परा ये तेषां तथोक्तानां." And Vallabha also has the following: छिद्रविलोकनतत्पराणां." And Hemâdri explains: "तद्राज्यं रन्ध्रान्वेषणदक्षाणां यदूनां द्विषां रिपूणामामिषतामभिलषणीयतां" &c.

P. 363. St. 12.—मौलैः, Hemâdri explains : "मूलेभवैर्मौलैरातैः." Châritravardhana says, "कुलक्रमागतैः." And Vallabha has "कुलक्रमायातभृत्यैः," 'hereditary.'—प्रकृतयः, Hemâdri interprets it as: "पौरश्रेणयः." And Châritravardhana by "अमात्याः" like Mallinâtha.—स्तंभिताश्रुभिः, Hemâdri explains : "स्तंभितानि प्रतिरुद्धानि अश्रूणि बाष्पोदकानि यैस्तथोक्तैः। "यथावृत्तं ज्ञात्वैष भरतोऽपि प्रव्रजिष्यति" इति स्तंभिताश्रुभिः.

P. 364. St. 13.—तथाविधं, Hemâdri remarks, "रामवियोगादित्यर्थः."—श्रियोऽप्यासीत्पराङ्मुखः, Hemâdri explains, "श्रियोऽपि राज्यलक्ष्म्या अपि। कैकेय्यां तत्प्रार्थितलक्ष्म्यां च विमुखः."

P. 364. St. 14.—तस्य वसतिद्रुमान्पश्यन्, 'seeing the trees beneath which he had dwelt.' *Cf.* Hemâdri: "अत्र रामोऽवात्सीदिति निवेदिता वसतिः."—उदश्रुः, at the miserable condition of the princes having had to dwell under trees. *Cf.* Hemâdri: "उदश्रुत्वं दुःखामहत्वात्."

P. 364. St. 15.—चित्रकूटवनस्थं, 'who was in the forest of the Chitrakúta.' For Chitrakúta see note above on the 9 stanza.—अनुच्छिष्टसंपदा, Hemâdri explains, "अनुच्छिष्टा अभुक्ताशिष्टा अननुभूता संपदस्यास्तया." And Châritravardhana has : "अनुच्छिष्टा अननुभूता संपद्गुणोत्कर्षो यस्याः सा तया." And further he says, "पिता स्वरगमत्। राज्यं मया नोपभुज्यते । इति त्वमेवागत्य भुंक्ष्वेति राममवादीदित्यर्थः." 'Whose essence (*virginity*) had not yet been enjoyed,' *i. e.*, which had not yet been touched by him. उच्छिष्ट is what remains of anything eatable or drinkable, after one has eaten or drunk of it. *Cf.* Hemâdri: "राज्यमनुभवेत्याजुहावेत्यर्थः." On the following stanza Hemâdri says, "संपदोऽनुच्छिष्टत्वमाह."

P. 365. St. 16.—अकृतश्रीपरिग्रहे, Analyse अकृतः श्रियो राज्यलक्ष्म्याः परिग्रहः स्वीकारो येन तादृशे राज्यमशासति &c.—आत्मानं परिवेत्तारं मेने, Parivettâ is one who marries while his elder brother remains unmarried. A younger brother so marrying incurs a great sin. As राज्यलक्ष्मी is described as a wife, Bharata thought he would be a great sinner by accepting her. *Cf.* Hemâdri: "दाराग्निहोत्रसंस्कारं कुरुते योऽग्रजे स्थिते । परिवेत्ता स विज्ञेयः परिवित्तिस्तु पूर्वजः" । "परिवेत्ता परिवित्तिश्च तावुभौ पंक्तिगर्हितौ । हव्यं देवा न गृह्णन्ति कव्यं नैव पितामहाः" इति । स्मृतिश्च । "परिवेत्ता भवेद्ब्राह्मो विप्रद्विर्गदिनः सदा" इति । संस्कारो राज्यपरिग्रहः संस्कारः." And also Châritravardhana: "राज्यश्रीवं वधूस्थानमित्याशयेन परिवेत्तृत्वमित्युक्तं । अतोऽनुपहतराज्ये तं वरयामासेत्यर्थः." And Vallabha: "उक्तं च । दाराग्निहोत्रकर्माणि यः करोत्यग्रजे स्थिते । परिवेत्ता स विज्ञेयः परिवित्तिस्तथापरः । परिवेत्ता परिवित्तिश्च यथा च परिवियते । त्रयस्ते नरकं

यान्ति दातृयाचकपश्रमाः. " Compare also the following हारितस्मृति quoted in Târânatha's वाचस्पत्यं बृहदभिधानं:—" अकृतदाराग्न्याधानस्य ज्येष्ठस्य पूर्वं कृतदाराग्न्याधानः कनिष्ठः । " ज्येष्ठेऽनिर्विष्टे कनीयान् निर्विशन् परिवेत्ता भवति । परिविण्णो ज्येष्ठः । परिवेदनीया कन्या । परिदायी दाता परिकर्ता याजकः । ते सर्वे पतिताः " इति. It is said that the kingdom of S'antanu, who began to reign before his elder brother Devápi, was visited by a drought which lasted twelve years. *Cf.* Bhágavata, IX. 22, 12, fgg. देवापिः शन्तनुस्तस्य बाह्लीक इति चात्मजाः । पितृराज्यं परित्यज्य देवापिस्तु वनं गतः । अभवच्छन्तनू राजा .... । समा द्वादश तद्राज्ये न ववर्ष यदा विभुः । शन्तनुर्ब्राह्मणैरुक्तः परिवेत्ता त्वमग्रभुक् । राज्यं देह्यग्रजायाशु पुरराष्ट्रविवृद्धये " &c.

P. 365. St. 17.—**पश्चाद्राज्याधिदेवते कर्तुं**, 'that they might be made, during his absence, the presiding deities of the kingdom.' The Pâdukas (wooden slippers or the stone engravings of the Pâdukas) of saints, Sannyâsins, such as Dattátreya for instance, are up to this day worshipped in honour of them.—**स्वर्गिणः पितुः**, On this Hemâdri remarks, " इतीदानीमाज्ञान्तरासंभवः उक्तः. " And Châritravardhana has: " इत्यनेन जीवतस्तातस्य न केवलं दाक्षिण्यवशतो राज्येऽनभिलाषः किन्त्वात्मनो महाशयत्वं द्योत्यते. "

P. 365. St. 18.—**नन्दिग्रामगतः**, See Râmâya*n*a Ayodhyâkâ*nd*a Canto 127. " स वल्कलजटाधारी मुनिवेषधरः प्रभुः । नन्दिग्रामेऽवसद्वीरः ससैन्यो भरतस्तदा । सबालव्यजनं छत्रं धारयामास स स्वयं । भरतः शासनं सर्वं पादुकाभ्यां निवेदयन् । ततस्तु भरतः श्रीमानभिषिच्यार्यपादुके । तदधीनस्तदा राज्यं कारयामास सर्वदा. "

P. 366. St. 19.—**प्रायश्चित्तमिव**. Hemâdri explains, " प्रायश्चित्तमिति पारस्करादित्वात्साधुः । " प्रायो नाम तपः प्रोक्तं चित्तं निश्चय उच्यते । तपो निश्चयसंयोगात्प्रायश्चित्तमितीर्यते."—**दृढभक्तिः** On this Hemádri discusses, " भक्तिशब्दस्य प्रियादिपाठात्पुंवद्भावप्राप्तौ भज्यत इति भक्तिरिति कर्मसाधने एव भक्तिशब्दे पुंवद्भावनिषेधः । भजनं भक्तिरिति भावसाधने तु भवत्येव । तथा सरस्वतीकण्ठाभरणे भोजः । " भक्तौ तु कर्मसाधनायां " इति । काशिकायां च । दृढभक्तिरित्यादिषु स्त्रीपूर्वपदस्याविवक्षितत्वासिद्धमितिसमाधेयमिति । प्रक्रियाकौमुद्यां च । भजनादेर्दार्ढ्यमात्रं विवक्षितं न स्त्रीत्वमिति." And Châritravardhana has the following : " दृढा चासौ भक्तिश्चेति दृढभक्तिः । दृढभक्तिरिति ' पुंवत्कर्मधारयजातीयदेशीयेषु, ' Pâ*n*ini, VI. 3. 42. इति पुंवद्भावः । दृढा भक्तिर्यस्येति बहुव्रीहौ तु भक्तिशब्दस्य प्रियादिपाठात्पुंवद्भावश्चिन्त्यः । भज्यत इति भक्तिरिति कर्मसाधनोऽयमिति पुंवद्भावः इत्यपरे. "

P. 366. St. 20.—**वर्तयन्**, Hemâdri remarks and quotes the following : " यथा किरातार्जुनीये । " मदसिक्तमुखैर्मृगाधिपः करिभिर्वर्तयते स्वयं हतैः" II. 18.—**वृद्धेक्ष्वाकुव्रतं**, 'what the descendants of Ikshvâku were accustomed to do in their old age,' *viz.,* to renounce all interest in the world, and to practise religious austerity in the forests. *Cf.* verse

70, Canto III. Verse 11, Canto VIII. *Cf.* Uttar. I. "पुत्रसंक्रान्तलक्ष्मी-कैर्यद्वृद्धेक्ष्वाकुभिर्धृतं । धृतं बाल्ये तदार्येण पुण्यमारण्यकं व्रतं."

P. 366. St. 21.—वनस्पतिम्, Here Hemâdri discusses the following: "पारस्करादित्वात्सुट् । यद्यपि वृक्षवनस्पत्योर्भेदस्तथापि " विभाषौषधिवनस्पतिभ्यः", Pâṇini, VIII. 4. 6. इत्यत्र भेदे सत्यपि वृक्षवनस्पत्योरिहाभेदेन ग्रहणं द्रष्टव्यमिति काशिकावृत्तौ उक्तत्वाद्वृक्षमात्रेऽपि भवति." See preface to our edition of Meghadûta page 77.

P. 367. St. 22.—ऐन्द्रि किल &c., *Cf.* Vallabha: "धाराध्रौ [ध्याराध्यौ Ms.] नाम वायसः." This portion of the story of the text seems to agree well with Padma Purâṇa: "राघवश्चित्रकूटाद्रौ सानुजोऽरमत श्रिया । कदाचिदङ्के वैदेह्या निद्राणे रघुनन्दने । ऐन्द्रः काकः समागम्य जानकीं वीक्ष्य कामुकः । विददार नखैस्तीक्ष्णैः पीनोन्नतपयोधरं । तदृष्ट्वा राघवः क्रुद्धः कुशं जग्राह पाणिना । ब्राह्मेणास्त्रेण संयोज्य चिक्षेप ध्वाङ्क्षमारणे । तं दृष्ट्वा घोरसङ्काशं ज्वलत्कालानलोपमं । दृष्ट्वा काकः प्रदुद्राव निनदन् दारुणं स्वनं.........यत्र यत्र ययौ काकः शरणार्थी स वायसः । तत्र तत्र तदस्त्रं च प्रविवेश भयावहं............भो भो बलिभुजां श्रेष्ठ तमेव शरणं व्रज । स एव रक्षकः श्रीशः शरणागतवत्सलः । इत्युक्तः सोऽथ बलिभुग् ब्रह्मणा रघुनन्दनं । उपेत्य सहसा भूमौ निपपात भयातुरः । प्राणसंशयमापन्नं दृष्ट्वा सीता तु वायसं । त्राहि त्राहीति भर्तारमुवाच दयिता विभुं । ....ररक्षासौ निजास्त्राय तदेकाक्षि ददौ तदा." The Râmâyaṇa does not mention that crow was the son of Indra, nor that Râma was resting his head on the lap of Sitá, but that after the royal couple with Lakshmaṇa had partaken of the venison procured by Lakshmaṇa, Sitâ was asked by Râma to keep theremainder of the meat for the crows, when he beheld her attacked by a crow. See Râmâyaṇa Ayodhyákâṇda, Canto 95 *Nir. Sá. edi.* verse 38. —पौरोभाग्यमिवाचरन्, Hemâdri's note on this appears necessary to understand the verse. "प्रियस्य रामस्य उपभोगचिह्नेषु नखक्षतेषु अपर्याप्तित्वं दोषं दृष्ट्वा तत्परिहारं कर्तुकाम इव । नखक्षतादिदर्शनादस्याल्पविदारणं वा । वनवासे नखक्षतादिरसंभवादुत्प्रेक्षाप्ययुक्तेति । केचित्तदेतच्छ्लोकद्वयस्थानेऽमुं श्लोकं पठन्ति । " मृगमांसं ततः सीतां रक्षन्तीमातपे शठः । पक्षतुण्डनखाघातैर्बबाधे वायसो बलात् " । रामायणे हि । " शरनिहतमृगमांसमातपे शोषयन्ती " सा [सीता Ms.] वार्यमाणेन काकेन पश्यत्यपि पत्यौ उपद्रुतेत्युक्तम् ." Châritravardhana has the following: "स्तनयोर्हि काकपदाकारैर्नखपदैर्भाव्यं । सीतायाः स्तनयो रामेण दत्तानि नखपदानि तथा न सन्तीति दोषैकदर्शित्वं परिजिहीर्षुरिव स्तनौ विदारितवानिति भावः." Sumativijaya has also the same. This incident as related by our poet does not appear chaste, for Râmâyaṇa nowhere says that the crow attacked any particular portions of Sitá's person. Kálidása seems to have based this incident on a different version of Râmâyaṇa compare Buddhacharita Canto I, verse 48. See also above quotation.

P. 367. St. 23.—**इषीकास्त्रं**, 'a reed missile,' an arrow made of reed. *Cf.* Hemâdri : " इषगतिशब्दहिंसादानेष्वित्यत्र इषीकास्त्रमिति क्षीरतरंगिण्यां। ईषिकापीति क्षीरस्वामी । " इषीका स्यादीषिकापि वानायुज वनायुजौ । गुवाकोऽपि च गूवाकः कुचकूचौ स्तने भवेत् " इति शब्दभेदप्रकाशे. "—**एकनेत्रव्ययेन** &c., For the incidents see above note. *Cf.* Hemâdri : " स दूरतरं [दूरं Ms.] गत्वा भूयोऽप्यागत्य रामनिकटमगमदित्यागमः." And also Chåritravardhana : " काकोऽस्त्रं सोढुमशक्नुवन् । अपरिहार्यं ज्ञात्वा सर्वनाशाद्वरं नेत्रनाशः इति तत्परित्यागेनास्त्रमशमयदिति प्रसिद्धिः."—**मुमुचे**, On this Châritravardhana has the following : " कर्मकर्तरि आत्मनेपदं. "

P. 367. St. 24.—**उत्सुकसारङ्गां**, Hemâdri remarks : " उत्सुकमृगत्वं तु रक्षसामनागमनात्."

P. 368. St. 25.—**आतिथेयेषु ऋषिकुलेषु वसन्**, 'living in his journey in the hospitable families of the Munis.—**वार्षिकेषु**, these are the ten asterisms : आर्द्रा, पुनर्वसू, पुष्य, अश्लेषा, मघा, पूर्वा, उत्तरा, हस्त, चित्रा and स्वाति, which, when the sun enters them, pour rain (वर्षाः) on earth. *Cf.* Hemâdri, "वर्षासु भवेषु पुष्यादिषु ऋक्षेषु नक्षत्रेषु वसन्। यद्वा। ऋक्षेषु राशिषु कर्कटादिषु, " and remarks : " ऋक्षमिति राशितारा उभयोरिति स्मरणात्। ऋक्षेष्विति बहुत्वे सांवत्सरं । त्रिधा विभज्य हेमन्तग्रीष्मौ वर्षा इति पक्षाश्रयेण चत्वारो वार्षिका मासा गताः । " वर्षशतोपमाः " इति रामायणोक्तेः. And Châritravardhana has : " वर्षाभवेषु वार्षिकेषु ऋक्षेषु राशिषु नक्षत्रेषु वा वसन् ." And Vallabha has : " वार्षिकेषु वर्षाकालोद्भवेषु ऋक्षेषु वसन् ."

P. 368. St. 27.—**अनुसूयातिसृष्टेन**, On the stay of Râma with his brother Lakshma*n*a and Sitâ at the hermitages of the *R*ishis, who with Atri at their head lived at the entrance of the दण्डकारण्य, see Râmâya*n*a Âra*n*yakâ*n*da. Cantos 2-5. अनुसूया is the reading of all the manuscripts except B. C. E. which read अनसूया. This appears to be the correct reading. *Cf.* Râmâya*n*a Ayodhyâkâ*n*da Canto 118. " इदं दिव्यं वरं माल्यं वस्त्रमाभरणानि च। अङ्गरागश्च वैदेहि महार्हमनुलेपनं। मया दत्तमिदं सीते तव गात्राणि शोभयेत् । अनुरूपमसंक्लिष्टं नित्यमेव भविष्यति. " Compare on अनसूया the following : " न गुणान् गुणिनो हन्ति स्तौति चान्यगुणानपि । न हसेचान्यदोषांश्च सानसूया प्रकीर्तिता " इत्युक्तलक्षणं असूयाभावे । " एकमेव तु शूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत् । एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनसूयया " । " यत्किञ्चिदपि दातव्यं याचितेनानसूयया " इति च मनुः.—**पुष्पोच्चलितषट्पदं**, On this Hemâdri remarks : "पुष्पादुत्पतिसुरभित्वात्," and Sumativijaya says, " वनं त्यक्त्वा भ्रमराः सीतासमीपे समागता इति भावः".

P. 368. St. 28.—**सन्ध्याभ्रकपिशः**, 'whose colour was reddish brown like the evening cloud.' On सन्ध्याभ्र see our note to st. 60, Canto XI. *Cf.* Hemâdri, " सन्ध्याभ्रवत्कपिशः पिंगः". Also Châritravardhana and Sumativijaya " संध्याभ्रं सन्ध्याकालीनं यदभ्रं मेघस्तद्वत्कपिशोऽरुणः", and fur-

ther he observes, " चन्द्रावरोधकोऽन्यो ग्रहो न भवतीत्यर्थाद्ग्रहशब्देनात्र राहुः". Sumativijaya has also the same. And Vallabha has " सन्ध्याघनविशेषः."
For the account of Virádha see Rámáya*n*a Âra*n*yakâ*n*da, Cantos 2–4. For a similar expression compare Buddhacharita Canto I. verse 28. " सुरप्रधानैः परिधार्यमाणो देहांशुजालैरनुरञ्जयंस्तान् । सन्ध्याभ्रजालोपरि संनिविष्टं नवोडुराजं विजिगाय लक्ष्म्या " ॥

P. 369. St. 29.—**नभोनभस्ययोरन्तरेऽवग्रहो वृष्टिमिव,** 'as drought takes off the rain from between the months of S'rava*n*a and Bhádrapada.' On account of the certainty of the rainfall between those two months, Virádha seizing Sítá when Ráma and Lakshma*n*a were present, seemed to be as violent as drought that takes off, as it were, the rain between S'ráva*n*a and Bhádrapada. See Rámáya*n*a Âra*n*yaká*n*da , cantos 3–4. Nir*n*aya Sagara *edi*. *Cf*. Hemádri and Châritravardhana : " अवग्रहोऽपि लोकशोषणो भवति." And Vallabha has " अवग्रहो वृष्टिविष्कंभः." And Hemádri discusses, " अव ग्रहो वर्षप्रतिबन्धे " Pá*n*ini, III. 3. 51 इति घञो विकल्पितत्वात्पक्षे " ग्रहवृ-° " Pá*n*ini, III. 3. 58. इत्यप्. Translate the aphorisms :—'The affix ' घञ् ' is optionally employed after the root ' ग्रह् ,' when the word ' अव ' is in composition, the sense being witholding of rain.' The word ' optionally ' is understood here. The word वर्षप्रतिबन्ध means the absence of rain, from some cause or another, when the season has arrived. As अवग्राहः or अवग्रहो देवस्य ' the drought of rain.' The affix ' अप् ' comes after the verb 'ग्रह्', 'वृ', 'दृ', 'निश्चि', and 'गम्'. This debars घञ् ; and in the case of निश्च the affix अच् is debarred. As ग्रहः ' planet'; वरः 'a boon'; दरः 'tearing, a cave'; निश्चयः ' certainty'; गमः 'march'.—**लोकशोषणः,** Cháritravardhana renders it as, " जनसंतापकारी."

P. 369. St. 30.—**काकुत्स्थौ,** See note to verse 71, Canto VI. The reason given in the text why Virádha was buried appears to have originated with our poet. The Rámáya*n*a has the following: " अवटे चापि मां राम निक्षिप्य कुशली व्रज । रक्षसां गतसत्त्वानामेष धर्मः सनातनः । अवटे ये निधीयन्ते तेषां लोका महोदयाः ।.........तं समुद्यम्य मामिर्मिर्विराधं पर्वतोपमं गंभीरमवटे कृत्वा निचखान परंतपः. " Or Kálidása must have based the account of his text on a different version of Rámáya*n*a, such as of the sage Chyavana &c. See Buddhacharita, Canto I, verse 48. " वाल्मीकिनादश्च ससर्ज पद्यं जग्रन्थ यन्न च्यवनो महर्षिः । चिकित्सितं यच्च चकार नात्रिः पश्चात्तदात्रेय ऋषिर्जगाद " ।—**पुरा दूषयति,** ' will defile the locality in future.' पुरा ' in future,' ' subsequently.' Vallabha renders it by पश्चात्, but his rendering does not look happy.

P. 369. St. 31.—**पञ्चवट्यां,** *Cf*. Hemádri: " पञ्चानां वटानां समाहारः पञ्चवटी । आश्रमविशेषः. " Cháritravardhana says, " स्थानविशेष. "

Panchavati is the name of a part of the great forest called दण्डका. The five fig trees are अश्वत्थ, बिल्व, वट, धात्री, and अशोक.—**कुम्भजन्मनः**, See note to St. 21, Canto IV. *Cf.* Also Mahâbhârata Vanaparvan Adh. 96-107.—**विन्ध्याद्रिः**, *Cf.* Hemádri: "विवृद्धमानो हि विन्ध्योऽगस्त्यस्य शासनाच्छान्तः इति प्रसिद्धं."

P. 370. St. 32.—**व्यालीवमलयद्रुमं**, 'as a female snake goes to a sandal tree.' The ground of comparison appears to be the summer-heat (ताप) to the snake and of Madana to the demoness, and again the tenderness of Râma and also of the sandal tree. Hemádri has the following, "भयालिंगः शठे व्यालः पुंसि श्वापदसर्पयोः"। सर्पार्थः पुंस्येव। स्त्रियान्तु व्यालीति क्षीरस्वामी."—**शूर्पणखा**, Hemádri explains, "शूर्पणखा रावणस्य सापत्नस्वसा। आरण्यकपर्वणि। "पुष्पोत्कटाया जज्ञाते द्वौ पुत्रौ राक्षसेश्वरौ। कुंभकर्ण दशग्रीवौ बलेनाप्रतिमौ भुवि। मालिनी जनयामास पुत्रमेकं बिभीषणं। शंकायां मिथुनं जज्ञे खरः शूर्पणखा तथा."

P. 370. St. 33.—**तं वव्रे**, 'made proposals of marriage to him,' 'made advances to him.'

P. 370. St. 34.—**वृषस्कन्धः**, On this epithet Hemádri, Châritravardhana and Sumativijaya make the following remark: "वृषस्कंधेन सुलक्षणत्वं."

P. 371. St. 35.—**ज्येष्ठाभिगमनात्पूर्वं**, 'Because that she had first gone to his elder brother.' The reason of refusal by Lakshma*n*a was that as शूर्पणखा first desired to choose Ráma for her husband, she was, as far as he (लक्ष्मण) was concerned, as good as Ráma's wife, and hence stood in the relation of a sister or mother to him. Hemádri explains, सा ज्येष्ठाभिगमनात्तेनापि लक्ष्मणेनानभिनन्दिता नाङ्गीकृता। "ज्येष्ठः श्रेष्ठेऽतिवृद्धे च ज्येष्ठो मासान्तरेऽपि च" इति विश्वः। मासि तु चैत्रपौषवत्। ज्येष्ठ इति च भाष्यं। ज्येष्ठया युक्ता पौर्णमासी ज्येष्ठी। "नक्षत्रेण युक्तः कालः," Pá*n*ini, IV. 2. 3. इत्यण्। सा विद्यते तस्मिन् सः। "सास्मिन्पौर्णमासीति संज्ञायां" Pá*n*ini, IV. 2. 21. इत्यण्। "यस्येति च" Pá*n*ini, VI. 4. 148। "किर्मिरोऽपि च किर्मीरो हयनं हायनं समं। शौंडीर्यमपि शौंडीरं ज्येष्ठे ज्येष्ठोऽपि दृश्यते" इति शब्दभेदप्रकाशे.—**अनभिनन्दिता**, 'not received with due respect,' 'rejected.'—**उभयकूलभाक्**, Châritravardhana discusses: "इत्यत्र विग्रहवाक्यं चिन्त्यं। अथ वा। यद्यप्युभयशब्देन विग्रहस्तथापि "द्विवचनविषयादुभयोऽन्यत्र" इति वार्तिकादुदात्तो नित्यमिति नित्यग्रहणाच्च समासे उभयशब्दः प्रयोज्यः"। तथा च महाभाष्ये। "उभौ पुत्रावस्येत्युभयपुत्र इत्युदाहारि"। And Hemádri has the following, "उभे कूले भजते इति उभयकूलभाक्। एतच्चोभयपक्षविनीतनिद्रः इत्यत्र व्याख्यातं। यद्वा। उभयकूले भजते इति."

P. 371. St. 36.—**मैथिलीहासः**, On this Châritravardhana remarks: "उभयत्रापि गमनात्प्रोद्भूतः मैथिल्याः सीताया हासः" &c.—**क्षणसौम्यां**,

On this Hemádri observes: " क्षणे स्वल्पकाले सौम्यामिति सत्तर्मासमासो वा ", and Châritravardhana and Sumativijaya say "आत्मायत्तकरणार्थं शान्तां " &c.—**चन्द्रोदय इव**, The propriety of the simile here is the likeness of a young woman's smile to the rising moon, so often alluded to. —**निवातस्तिमितां**, Hemádri, Châritravardhana and Sumativijaya render " निवातेन " by " वाताभावेन. "

P. 371. St. 37.—**पश्य माम्**, Châritravardhana remarks "इति जनोक्तिः."—**मृग्याः परिभवः** &c. Châritravardhana explains: " हि यस्मान्मृग्या यः कार्यः परिभवः स त्वया मृत्यवे (is his reading) स्वनाशाय व्याघ्र्या कृतः । अथ वा । व्याघ्र्यां मृगीपरिभवस्त्वया मृत्यवे कृतः " ।

P. 372. St. 38.—**शूर्पणखा**, Both Châritravardhana and Vallabha analyse " शूर्पाकारा नखा यस्याः सा "; but Hemádri analyses " शूर्पाणीव नखानि यस्याः सा."—**रूपं प्रत्यपद्यत**, 'took her genuine form that was true to her name.' *Cf.* Hemádri, " स्वाकारमंदर्शयदित्यर्थः . "

P. 373. St. 39.—**प्रथमं श्रुत्वा**, On this epithet Châritravardhana remarks : श्रुत्वेति प्रयोगस्तु " निधानमश्रूयत पाञ्चजन्यः" इत्यादिवत्.—**विकृता**, Hemádri discusses, " विकृतेत्यत्र निपातेन इति शब्देन कर्मणोऽभिहितत्वान्निपातेनाप्यभिहिते कर्मणि न कर्मविभक्तिः परिगणनस्य प्रायिकत्वात् " । तथा माघकाव्ये " क्रमादमुं नारद इत्यबोधि सः " । S'i. I. 3.

P. 373. St. 40.—**विवृतासिः**, Analyse विवृतो विकृष्टोऽसिः खड्गो येन स तादृशः.—**वैरूप्य पौनरुक्त्येन तामयोजयत्**, 'Gave her a repetition or superfluity of hideousness or ugliness, *i. e.*, added to her original ugliness. पुनरुक्त is literally 'what is said again,' what is repeated; hence, doing that again which has already been done, which already exists.

P. 373. St. 41.—**वेणुकर्कशपर्वया**, Hemádri analyses : " वेणोः कर्कशपर्वाणि इव पर्वाणि यस्यास्तया " । " डाबुभाभ्यामन्यतरस्याम् " Pâ*n*ini, IV. 1. 13. इति डाप् ।

P. 373. St. 42.—**जनस्थानं**, 'Human habitation.' This was a part of दण्डकारण्य, where खर and दूषण lived. See our note to stanza 9th of this Canto. Vallabha says: " जनस्थानं रावणदेशसीमानं जनस्थानाख्यं नगरं. " Châritravardhana and Sumativijaya have : " जनस्थानाख्यं वनं प्राप्य. " But the Râmâya*n*a does not speak of Janasthána as a city or a forest.—**तथाविधं**, Hemádri renders it by " नासिकाच्छेदरूपं, " and Châritravardhana and Sumativijaya have " कृतकर्णनासादिच्छेदा, " they together with Vallabha read तथाविधा. See readings. And further Châritravardhana observes उपक्रममिति । " उपज्ञोपक्रमं तदाद्याचिख्यासायां " Pâ*n*ini, II. 4.

21. इति नपुंसकत्वमिति । कश्चित्. For an example of similar use of उपज्ञा which means invention, see Bha*tti*, "कैकेय्युपज्ञं बत बह्वनर्थ. " Translate the aphorism :—' A Tatpurusha compound ending with the words उपज्ञा ' invention, ' and उपक्रम ' commencement, ' is neuter in gender when it is intended to express the starting point of a work which is first invented or commenced. '

P. 374. St. 43.—**तदेवाभूदमङ्गलम्**, On this epithet Châritravardhana remarks : " जिगमिषूणां लूननासिकस्य विलोकनमशकुनं." The Asuras placed S'ûrpa*n*akhâ at their head as their guide and marched against Râma. Even the meeting with a person who has got his nose cut is a bad omen ; much more is the guidance of such a person, to those setting out on such an important invasion. The reader will mark the hurried manner in which the poet merely alludes to or touches upon the principal incidents of Râma's history as narrated at length in the Râmâya*n*a. See Râmâya*n*a Âra*n*yakâ*n*d*a*, Cantos 25-26.—**मुखावयवलूनां**, Hemâdri and Châritravardhana analyse " लूना मुखावयवो यस्यास्तां " as a Bahuvrihi compound.

P. 374. St. 44.—**सीतां च लक्ष्मणे निदधे**, On this Hemâdri remarks : " सीतारक्षणे लक्ष्मणं नियुज्य स्वयं युद्धासक्त इति भावः." And Châritravardhana has : " लक्ष्मण सीतामेतां त्वं पाहि योत्स्येऽहमित्युक्त्वा गतवानित्यर्थः. "

P. 374. St. 45.—**तावांश्च ददृशे** &c., Hemâdri observes : " अनेन शीघ्रगामित्वमुक्तं.—**सहस्रशः**, Hemâdri discusses : " संख्यैकवचनाच्च वीप्सायां " Pâ*n*ini, V. 4. 43. इति शस् । " संख्याया विधार्थे धा " Pâ*n*ini, V. 3. 42. " अधिकरणविचाले च " Pâ*n*ini, V. 3. 43. इति वा । " अधिकरणं । द्रव्यं । विचालः संख्यान्तरापादानं । एकस्यानेकीकरणं । एकं राशिं पञ्चधा कुरु इति वामनः काशिकावृत्तिः. "

P. 375. St. 46.—**असज्जनेन......शुभाचारः**, Mark the play upon these words. They look better when taken in conjunction with दूषण, ' censure,' than when construed, which it is also necessary to do, with दूषण, the demon. It is not always that language affords a full scope to childish puns. *Cf.* Hemâdri. दूषयतीति दूषणः । दुष वैकृत्ये [दुष वैकल्ये Ms.] । " दोषाणौ " Pâ*n*ini, VI. 4. 90. इत्युपधाया ऊत्वं " कृत्यल्युटो बहुलं, " Pâ*n*ini, III. 3. 113. इति ल्युट् च । " नंद्यादौ नन्दिवाशिमदिदूषिसाधिवर्धिशोभिरोचिभ्यो ण्यन्तेभ्यः संज्ञायाम् " इत्युक्तवात् स न प्रशस्तः । शुभाचारः आत्मनोदूषणमिव । शुभाचारपक्षे असज्जनेनेति पदद्वयं । असन्मिथ्याभिशंसनं. "

P. 375. St. 47.—**समसुद्ययुः**, On this Hemâdri remarks : " सममिति लाघवोक्तिः, " and Châritravardhana and Sumativijaya have " एतेन रामस्य लघुहस्तत्वं " *Cf.* St. 57, Canto VII. And also, " सकृद्विकृष्टादथ कार्मुकान्मुनेः शराः शरीरादिति तेऽभिमेनिरे ".

P. 375. St. 48.—**विशुद्धिभिः**, Châritravardhana explains : " विशुद्धिरशोणितलिप्तता येषां तैः".—**पतत्रिभिः** = पक्षिभिः, ' by birds. '

P. 376. St. 49.—**उत्थितं ददृशेऽन्यच्च**, ' Nothing was seen standing except bodies of warriors, with their heads cut off. ' च should be taken to connect ददृशे and यातं in the preceding verse.

P. 376. St. 50.—**अप्रबोधाय**, Hemâdri renders it by " अपुनरुत्थानाय सुप्ताय." Châritravardhana and Sumativijaya have, " अपुनर्जागरणाय ".

P. 377. St. 52.—**मूर्ध्नि पदं निहितं मेने**, On this epithet Hemádri makes the following remark : " अनेन महापरिभवमर्जीगणदित्यर्थः".—**निग्रहात्** = दण्डात्, ' From the outrage done to his sister '. निग्रह does not mean *amputation*, but simply punishment, subjugation, putting down &c. *Cf.* verse 55. Canto XI.—**धनदानुजः**, ' Râva*n*a was the younger brother to Kubera and son of Vis'ravas who was the son of the sage Pulastya. See Râmâya*n*a Uttarkâ*n*da, Canto I. Also Mahábhárata Vanaparvan Adh. 275.

P. 377. St. 53.—**मृगरूपेण वञ्चयित्वा**. Analyse मृगस्येव रूपं यस्य तेन. Cháritravardhana renders " मृगरूपेण " by " चित्रहरणरूपेण. " And Hemádri explains वञ्चयित्वा by दूरतोपसार्य. See Râmáya*n*a Âra*n*yakâ*n*da, Cantos 42-43, Nir*n*ayasâgara *Edi.*—**जहार**, See Râmâya*n*a Âra*n*yakân*d*a, Canto 49.—**पक्षीन्द्रप्रयासक्षणविघ्नितः**, See Râmayana Âra*n*yakâ*n*da. Canto 51. Châritravardhana discusses, " विघ्नः संजातोऽस्य विघ्नितः । " तदस्य संजातं तारकादिभ्य इतच् " Pá*n*ini, V. 2. 36. इति इतच्प्रत्ययः । चित्रमृगं विलोक्यैनमानयेति दयितायेरितो रामो निरगमत् । ततो हा लक्ष्मण इति वाक्यमाकर्ण्य लक्ष्मणमपि सीता प्रैषीत् । तदन्तरे द्वयोरप्यसन्निधानाद्दशग्रीवस्तामग्रहीदिति प्रसिद्धं । तन्मध्ये जटायुरागत्य रे रे दुराचार निशाचरापसद जीवति मयि रामप्रियां कथं हरिष्यसीति युध्यते स्म इति विघ्नितः " ।

P. 377. St 54.—**दशरथप्रितेरनृणम्**, Ja*t*âyus was a great friend of Das'aratha. *Cf.* Hemádri, " जटायुर्हि दशरथस्य सखा. "

P. 378. St. 56.—**पितृव्यापत्तिशोकः**, Hemádri analyses, " पितुर्दशरथस्य व्यापत्तेर्मरणस्य शोको ययोस्तौ तयोः पितृव्यापत्तिशोकयोः. "

P. 378. St. 57.—**वधनिर्धूतशापस्य**, Hemádri explains : " वधेन निर्धीतो (is his reading) नाशितः शापो यस्य तस्य," and Cháritravardhana has " वधेन निर्धूतो निराकृतः शापो यस्य तस्य."—**कबन्धस्योपदेशतः**, *Cf.* Hemádri, " मुनिशापात्तो हि श्रीदतनयः कबन्धत्वमागतो रामलक्ष्मणाभ्यां बाहुच्छेदेन हतः स्वमूर्तिं प्राप्य प्रत्युपकाराय ऋष्यमूकनिवासिनं समानं सुग्रीवमकथयदित्यागमः. " " O

mighty-armed Râma of great prowess, formerly my beauty, beyond conception, was known all over the three worlds, like unto the beauty of the sun, the moon and Indra. I used to frighten everywhere. the ascetics living in the forest by turning this my beauty into a terrific form. Once on a time assuming this terrible shape, I assailed and enraged the great ascetic Sthûlas'iras, collecting diverse wild fruits. Thereupon he imprecated curses upon me, saying, 'Do thou retain this ghastly shape, hated of all mankind.' Upon my praying unto that angry ascetic for my relief from that curse, he said: 'Thou shalt regain thy stalwart and beautiful shape, when thou shalt be burnt by Râma in a dense forest, having got thy arms dissevered by him.' O Lakshma*n*a, know me to be the beautiful son of Danu. Through Indra's curse in the battle-field I have been metamorphosed into my present shape. After I had pleased him with hard austerities, the Grand-father of the celestials conferred upon me a long life. And therefore I was inflamed with pride and assailed Indra in a conflict, thinking within me, 'I have gained a long life, what can Indra do me?' Thereupon by his thunder-bolt, having hundred edges, hurled off his hands, my thighs were shattered and my head thrusted into my body. Myself praying for the close of my life, he did not dispatch me to the abode of Yama. He only said, 'May the words of the Grand sire prove true.' Whereto I replied. 'How shall I live long without any food, being smitten by thee, having a thunder-bolt in thy hand, and having my head, thighs and mouth crushed down?' Thereat Indra made my hands extending over a *yojana* and placed my mouth, having sharpened teeth, on my belly. Thenceforth, stretching out my long arms, I used to devour all lions, tigers, wolves and deer ranging the forest. Indra said to me, 'Thou shalt attain to heaven, when Râma along with Lakshma*n*a, shall cut off thy arms in a battle.' Acting under the conviction that Râma, resolved to destroy my person, shall surely come within the compass of my arms, I do always assail with relish, O worshipful one, O thou best of kings, every animal I meet with in this forest. Thou art that Râma. May God betide thee, O Râghava. Verily did the great ascetic speak unto me that none should be able to assail me but Râma. Being cremated by you, I shall counsel you best, and tell you with whom you should contract friendship."—**सुमूर्छे सख्यं**, See Râmâya*n*a Âra*n*yakâ*n*da, Canto 72.
" गच्छ शीघ्रमितो वीर सुग्रीवं तं महाबलं । वयस्यं तं कुरु क्षिप्रमितो गत्वाद्य राघव."

P. 379. St. 58.—हत्वा वालिनं, &c., See Râmâyana Kishkindhâ Kânda, Canto 16. For the genesis of Vâlin see note to stanza 104 of this canto.

P. 379. St. 59.—इतस्ततश्चेरू रामस्य मनोरथाः, On this Hemâdri remarks : " अनेनास्खलितगतित्वं । "मनोरथानामगतिर्निवेद्यते. " And Vijayânandasûris'varacharanasevaka has the following, " अत्र हि मनोरथपदं श्लिष्टं दृश्यते चेरुरित्युत्तरपदस्य सम्यग्योजनया ध्वनिः पिशुनितः. "

P. 379. St. 60.—संपातिदर्शनात्प्रवृत्तावुपलब्धायाम्, The monkeys sent by Sugrîva in search of Sitâ having failed to get any news regarding the abode of Râvana, resolved to starve themselves to death rather than return home without having accomplished their mission. Sampâti, the lord of vultures, brother to Jatâyus, then informed them of the island of Lankâ, the capital of Râvana, and informed them that he had seen him carrying off Sitâ. Râmâyana Kishkindhâ Kânda, Cantos 58-59. " तरुणी रूपसंपन्ना सर्वाभरणभूषिता । ह्रियमाणा मया दृष्टा रावणेन दुरात्मना । क्रोशन्ती राम रामेति लक्ष्मणेति च भामिनी । भूषणान्यपविध्यन्ती गात्राणि च विधुन्वती । ....श्रूयतां मे कथयतो निलयं तस्य रक्षसः । पुत्रो विश्रवसः साक्षाद्भ्राता वैश्रवणस्य च । अध्यास्ते नगरीं लङ्कां रावणो नाम राक्षसः " &c. *Cf.* Châritravardhana : " सीता लंकायामस्तीति संपातिना कथिते सति हनूमान्स्वयं पारावारमतरदित्यर्थः. "—मारुतिः, On this Châritravardhana remarks : " मारुतिपदेन मारुतात्मजत्वेन समुद्रलंघनसामर्थ्यं सूच्यते. "—निर्ममः, Hemâdri explains : " ममत्वान्निर्गतो निर्ममः । ममेति विभक्तिप्रतिरूपकमव्ययं । तथा गणदर्पणे । " चिरराचाय चिराह्नायाकस्माच्चिरस्य मम. " And Châritravardhana has : " ममभावान्निर्गतो निर्ममो निःस्पृहो मुमुक्षुः. " Or it may be analysed निर्गतो ममकारः (ममत्वं) यमात्सः.

P. 380. St. 61.—दृष्टा विचिन्वता तेन, Search was made for Sitâ in Râvana's palace, where no trace was found of her ; whereupon Hanumân entered the forest of As'oka and here he found Sitâ surrounded by Râkshasîs who had been appointed by Râvana to keep guard over her. See Râmâyana Sundara Kânda. Cantos 14-15. अशोकवनिकामध्ये शोकसागरमाप्लुतां । ताभिः परिवृतां तत्र सग्रहामिव रोहिणीम् । ददर्श हनूमांस्तत्र लतामकुसुमामिव " &c.

P. 380. St. 62.—अनुष्णैस्तदानन्दाश्रुबिन्दुभिः, On this Châritravardhana makes the following remark ; " सीताया वक्रांगुलीयावलोकनसमुल्लसितप्रेमवशतो निर्गतैः । प्रत्युत्थानं प्रियागमनान्मुद्रिकावीक्षणानन्तरं प्रीत्या बाष्पं निर्गतं इति भावः । बिन्दुग्रहणेन रत्नमयस्य युक्तं मुक्तासादृश्यसूचनं. " And Hemâdri has the following: " अंगुलीयस्य रत्नैरिव प्रत्युद्गमनं युक्तमिति कविना बिन्दुषु मुक्ताफलस्य समाधिर्विवक्षितः । " अन्यधर्मस्ततोऽन्यत्र लोकसीमानुरोधिना । सम्यगाधीयते यत्र स समाधिः स्मृतो यथा " इति काव्यादर्शे ।

P. 380. St. 63.—**प्रियसन्देशैः**, The message was accompanied by a ring of Râma, with his name inscribed on it (**रामनामाङ्कितमङ्गुलीयकं**). Sitâ, in return, sent to Râma a jewel (**चूडामणिः**) worn by her in her hair. See Râmâya*n*a Sundarakâ*nd*a, Cantos 36-38.—**अक्षवधोद्धतः**, *Cf.* Hemâdri " तेन हि अक्षनामा विध्यमानो रावणकुमारो लंकादाहे हतः." See Râmâya*n*a Sundarakâ*nd*a, Canto 47.—**क्षणसोढारिनिग्रहः**, 'Having for a moment purposely allowed himself to be seized and disgraced by the enemies.' See Râmâya*n*a, Sundarakâ*nd*a, Canto 48.—**ददाह पुरीं लंकां**, 'The demons after they caught Hanûmân set fire to his tail, when he assumed a gigantic form, and jumping from house to house with his formidable tail, and turning it from side to side, set fire to the houses in Lankâ." See Râmâya*n*a Sundarakâ*nd*a, Cantos 53-54.

P. 381. St. 64.—**हृदयं स्वयमायातं**, The token sent by Sitâ with Mâruti, appeared, as if it were, her heart that came itself to Râma. *Cf.* Hemâdri : " स्वच्छत्वादुत्प्रेक्षा."—**प्रत्यभिज्ञानरत्नं**, Hemâdri says: " सीताचूडामणि ".—**कृती**, On this both Hemâdri and Châritravardhana have the following " इति सीताप्रत्यभिज्ञानानयने हेतुः."

P. 381. St. 65.—**अपयोधरसंसर्गां**, On this Châritravardhana says, " आश्लेषस्य स्तनस्पर्शस्यैव प्राधान्यादपयोधरसंसर्गामित्युक्तं." And Hemâdri explains: " आलिंगनसुखे स्तनयोरेव प्राधान्यं."

P. 382. St. 67.—**संबाधवर्त्मभिः**, Châritravardhana explains: "संबाधं संकटं वर्त्म येषां तादृशैः." Hemâdri too explains much the same as Châritravardhana and quotes the following from Mâgha : " संबाधं वहदपि तद्बभूव वर्त्म " Si. VIII. 2. । अतो धर्मिपरोऽप्यस्ति । अनेन कपिसैन्यबाहुल्योक्तिः " । Dinakara renders संबाधं by संकीर्णं. Sumativijaya has also the same.—**अनुद्रुतः**, Sumativijaya renders it by परिवृतः.

P. 382. St. 68.—**बुद्धिमाविश्य**, 'By inspiring him with wisdom.' Bibhisha*n*a advised the restoration of Sitâ to Râma, for which he incurred Râva*n*a's displeasure. See Adhyâtma Râmâya*n*a Yuddhakâ*nd*a, Canto 2. " हितमुक्तं मया देव तस्य चाविदितात्मनः । सीतां रामाय वैदेहीं प्रेषयेति पुनः पुनः । उक्तोऽपि न शृणोत्येष कालपाशवशं गतः । हन्तुं मां खड्गमादाय प्राद्रवद्राक्षसाधमः । " See readings.—**निविष्टमुदधेः कूले**, 'Encamped on the sea-shore.'—**स्नेहात्**, 'As if with affection for the family.' The goddess of Fortune of the demons, afraid lest the excesses of Râva*n*a should drive the prosperity and herself from his family, felt pity for it and inspired Bibhisha*n*a to run and submit to the enemy.

P. 382. St. 69.—**निशाचरैश्वर्यं,** Both Chāritravardhana and Sumativijaya explain it as, " निशाचरस्य रावणस्यैश्वर्यं राज्यं ".—**फलं बध्नन्ति,** Chāritravardhana explains : " फलिता भवन्तीति भावः ". And Vallabha says " सफला जायन्ते. "

P. 383. St. 70.—**रसातलादिवोन्मग्नं शेषं स्वप्नाय शार्ङ्गिणः,** 'As if it were the great snake. S'esha, that rose from the nether regions in order to become the bed of S'ārngin,' who was now on earth incarnate in the form of Rāma. On this Hemādri remarks " आयामवैफल्योक्तिः. "

P. 383. St. 71.—**द्वितीयं,** Hemādri explains : " द्वयोः पूरणो द्वितीयः. "—**हेमप्राकारं,** Sumativijaya explains, " यो नगरपर्यन्ते भवति स प्राकारः कोट्टविशेषः. " *Cf.* also the Brahmavaivarta Purāna. " ऊर्ध्वं विंशतिहस्तेभ्यः प्राकारं न शुभावहम् । प्रस्थे हस्तद्वयात्पूर्वं दीर्घे हस्तत्रयं तथा । न मध्यदेशे कर्तव्यं किंचिन्न्यूनाधिकं शुभं. "

P. 383. St. 72.—°**काकुत्स्थपौलस्त्यजयघोषणः,** In which were loudly uttered, acclamations of victory to काकुत्स्थ and of victory to पौलस्त्य by their respective warriors. Hemādri explains it by : " दिक्षु विजृम्भितयोर्विख्यातयोः प्रसिद्धयोः काकुत्स्थपौलस्त्ययो रामरावणयोर्जयस्य घोषणं यस्मिन्सः । यद्वा । दिक्षु श्रुतं रामरावणयोर्जयघोषणं यस्मिन् सः । श्रीरामस्य जयं पश्यन्तेति कपीनां घोषणा । रावणस्य जयं पश्यन्तेति रक्षसां घोषणा । "

P. 384. St. 73.—**पादपाविद्ध** &c. The weapons of the Vānaras were consisted of such things as they could with their superhuman power catch hold of at the time of the fight *viz.*, trees, rocks, hills, swings and the nails of their fingers. The words आविद्ध, निपिष्ट, अतिशस्त्र, रुग्ण being predicated of the weapons used by the demons show that the monkeys beat them down, and completely defeated. *Cf.* Vallabha : " वानरोत्कर्षकथनं. " And also Chāritravardhana : " एतेन कपीनां नीतिरुक्ता. " And Hemādri has : " एतेन जयः. "

P. 384. St. 74.—**उद्भ्रान्तचेतनाम्,** Analyse उद्भ्रान्तमस्वस्थं व्याकुलं वा चेतो मनो यस्यास्ताम् .—**त्रिजटासमजीवयत्,** See Rāmāyana Yuddhakānda, Canto 48. N. S. *edi. Cf.* also Hemādri : " त्रिजटा रावणानुजा रामशिरसश्छेददर्शनेनोद्भ्रान्तमस्वस्थं चेतो मानसं यस्यास्तां सीतां समजीवयत् । युद्धमध्ये रामो मारित इति मायाशिरो गृहीत्वा रावणः सीतां भाषितवान् प्रसिद्धेयं कथा । " *Cf.* also Agnives'a Rāmāyana : " आहूयाथ निशाचरान्दशमुखो मायाविनं चाब्रवीत् । सीताभर्तृशिरोऽनुजस्य च शिरः सीतापुरः प्रक्षिपत् (त ?) । मायां तेन समाश्रितेन च कृतं शीर्षद्वयं जानकी । दृष्ट्वा मोहमुपागता त्रिजटया भूयो विमोहीकृता. "

P. 384 St 75.—**लज्जिता,** Cháritravardhana quotes the following from Bha*tt*ikâvya : " मृतेऽपि त्वयि जीवन्त्या किं मयाणकभार्यया. " Canto XIV, verse 58.

P. 385. St. 76.—**गरुडापातविश्लिष्टमेघनादास्त्रबंधनः,** Meghanâda the most powerful of Râva*n*a's sons came off successful in binding the whole of the army of Râma with its foremost leaders including Râma and Lakshma*n*a, by means of arrows that poisoned their preys. These arrows were in truth snakes into which the wily demons, the followers of Indrajit, had transformed themselves. Garu*d*a then came to Râma's help, whose presence made all the snakes disappear in a moment. See Rámâya*n*a Yuddhakâ*nda*, Canto 50.—**स्वप्नवृत्तः,** &c. On this epithet Hemâdri remarks: "अल्पकालं दुःखदायित्वात्स्वप्न इति. "—**क्षणक्लेशः,** Analyse क्षणं क्षणमात्रं क्लेशो दुःखं यस्मात्सः.

P. 385. St. 77.—**बिभेद पौलस्त्यः शक्त्या वक्षसि लक्ष्मणं,** *Cf.* Agnives'a Râmâya*n*a : " शक्त्या रावणमुक्तया च हृदये भिन्नोऽपतल्लक्ष्मणः. " The S'akti is described as furnished with eight bells, as giving out a terrible roar, as made full of art and guile by the wily Mayásura, as sure of aim, as destructive to enemy's life, and as flying rapidly and leaving behind it a fiery track. See Râmâya*n*a Yuddhakâ*nda*, Canto 100. On the figure Hemâdri says : " असंगतिर्नामालंकारो वामनस्तु विरोधाभासत्वं विरोध इति । "सा बाला वयमप्रगल्भमनसः सा स्त्री वयं कातराः । सा पीनोन्नतिमत्पयोधरयुगं धत्ते सखेदा वयं । सा क्रान्ता जघनस्थलेन गुरुणा गन्तुं न शक्ता वयं दोषैरन्यजनाश्रयैरपटवो जाता स्म इत्यद्भुतं. "

P. 385. St. 78.—**मारुतिसमानीतमहौषधि°,** &c. Chȃritravardhana and Sumativijaya say, " विशल्या नाम्न्या. " And Hemâdri has the following : " मृतसंजीविनी मुख्या विशल्यकरणी परा । संधानकरणी चान्या सावर्ण्यकरिणी तथा." It was not the औषधि or the life-reviving plant but the mountain upon which it grew that Hanúmân brought. Lakshma*n*a having been wounded by the S'akti of Râva*n*a, Hanúmán was immediately sent by Sugriva the king of the monkeys to mount Gandhamádana, to bring the drug that grew luxuriantly there. Sushe*n*a the monkey-physician gave Hanúmán the proper signs whereby to distinguish the plant, but amongst the many battles that Hanúmán had to fight on his road and at the mountain he forgot the signs and so brought the mountain itself to the place where Lakshma*n*a was lying in deep trance. Sushe*n*a then discovered the plant and as soon as Lakshma*n*a was made to smell it, he was re-animated and rose up to fight with Râva*n*a and other demons in the field of battle. See Râmâya*n*a Yuddhakâ*nda*,

Canto 101.—**चक्रे विलापाचार्यकं शरैः**, *i. e.*, caused them to cry. आचार्यकं कृ means 'to be the tutor of,' 'to instigate to do a thing,' to cause to do &c.' *Cf.* Buddhacharita Canto VII. verse 57: "गम्भीरता या भवतस्त्वगाधा या दीनता यानि च लक्षणानि । आचार्यकं प्राप्स्यति तत्पृथिव्यां यदृषिभिः पूर्वयुगेऽप्यवाप्तम् " ॥

P. 386. St. 79.—**मेघस्येव शरत्कालः**, On this Hemâdri remarks: "शरत्कालो मेघस्येव नादं धनुश्च न सहते." And Châritravardhana and Sumativijaya have the following: "यथा शरत्काले मेघस्य नादं तथा शक्रधनुश्च नावशेषयति । कालग्रहणं तु प्रयोगार्थं । अन्यथा शरदा लक्ष्मणस्योपमानं स्यात्." And Vallabha gives the following: "मेघस्वनदेभ्यो नादं गर्जितं इन्द्रधनुश्च न किञ्चिदवशेषयति । वार्षिकं चेष्टितं सर्वं संहरति."

P. 386. St. 80.—**कपीन्द्रेण तुल्यावस्थः स्वसुः कृतः**, Sugriva, the monkey-chief, was caught and taken by Kumbhakar*n*a to Lankâ before he had recovered consciousness. As soon as he was restored to his senses, he cut off the nose and ears of Kumbhakar*n*a and managed with difficulty to escape from his powerful grasp. See Râmâya*n*a Yuddhakâ*n*da, Canto 67. "ततः कराग्रैः सहसा समेत्य राजा हरीणाममरेन्द्रशत्रोः । खरैश्च कर्णौ दशनैश्च नासां ददंश पादैर्विददार पार्श्वौ ॥"—**टङ्कच्छिन्नमनःशिलः**, *Cf.* Châritravardhana: "स्वसुः शूर्पणखायास्तुल्याकर्णनासाच्छेदतुल्यावस्था यस्य तादृशः कृतः । कुंभकर्णरुधिरावलिप्तत्वाट्टङ्कैश्छिन्ना मनःशिला यस्य तादृशः शृंगी शैल इव रामं रुरोध &c."

P. 387. St. 81.—**अकाले**, Châritravardhana explains: "असमयेऽसंपूर्णे मासषट्के." Hemâdri says: "अन्योऽप्यकाले बोधितोऽवश्यं निद्रां नीयते." —**प्रियस्वप्नः**, Hemâdri renders it by स्वप्नप्रियः and gives "वा प्रियस्य" इति पूर्वनिपातः.

P. 387. St. 82.—**पेतुर्वानरकोटिषु**, Hemâdri remarks: "इत्यपूर्वनिगमः । यथा तत्र पतितरजसामदर्शनं तथा रक्षसामपीत्यर्थः". And Châritravardhana has: "तत्र समरे रक्तनदीषु रजांसि पतितान्यदृश्यानि भवन्ति तथा कपिषु पतिता राक्षसा नावलोकिता इत्यर्थः".

P. 387. St. 83.—**पुनर्युद्धाय**, On this Hemâdri remarks: "पुनः शब्देनादावपि युद्धमाक्षिप्तं तस्मिन्पूर्वं एव पक्षोऽभवदुत्तरो नाभवत्."

P. 387. St 84.—**रामं पश्यन्निमालोक्य.** By the superhuman power of his माया, Râva*n*a made a chariot, that looked as bright as the fire, drawn by quick horses with men's heads, that went anywhere the mind of Râva*n*a directed. Having mounted it Râva*n*a assailed Râma with arrows as destructive as the thunderbolt. The gods in the sky seeing this declared that the fight was unequal, whereupon

Indra sent his own chariot with Mâtali as its driver to Râma. See Râmâya*n*a Yuddhakâ*n*da, Canto 102.

P. 388. St. 85.—**व्योमगङ्गोर्मिवायुभिः**, On this both Hemâdri and Châritravardhana make the following remark: "वियद्गङ्गावीचिसंमर्दशीतलैः सुखस्पर्शैर्मरुद्भिः प्रेङ्खत्केतनांशुकं । इत्युच्चत्वं."

P. 388. St. 86.—**माहेन्द्रं तनुच्छदं**, Vallabha says, "ऐन्द्रं कवचं." —**आमुमोच**. Hemâdri and Vallabha render it by "ददौ." And Châritravardhana by "अबध्नात्".—**क्लैब्यं**, Hemâdri renders it by "निर्वीर्यत्वं," and Châritravardhana by "असामर्थ्यं".

P. 388 St. 87.—**रामरावणयोर्युद्धं**, All commentators except Mallinâtha read वैरं instead of युद्धं. And Châritravardhana has the following remark: "यदि द्वयोः परस्परविलोकनं नाभविष्यत्तदा समराभावात्प्रोद्भूतमपि वैरं नाफलिष्यदित्यन्योन्यसंगात्सफलमिवासीदिति भावः."

P. 389. St. 88.—**भुजमूर्धोरुबाहुल्यादेकोऽपि** &c. Though not corrupt this couplet appears to have offered considerable difficulty to the commentators Hemâdri's commentary runs thus: "यथा पूर्वो न भवतीत्ययथापूर्वः। नष्टराक्षसपरिवार इत्यर्थः । एकोऽपि धनदानुजो रावणस्तस्य माता राक्षसी पुष्पोत्कटा नाम्नी तस्या वंशो राक्षसकुलं । तत्र स्थितः इव ददृशे इत्यर्थः । कस्मात् । भुजोत्तमांगबाहुल्यात् । भुजाश्च उत्तमांगानि च मूर्धानश्च तेषां बाहुल्यात् । भुजमूर्धोरुबाहुल्यादिति पाठे । भुजाश्च मूर्धानश्च ऊरवश्च तेषां बाहुल्यात् । भुजानां मूर्ध्नां च ऊरु महद्बाहुल्यमिति वा । तस्य हि विंशतिर्भुजा दश मूर्धानश्चत्वार ऊरवः । यदाह यादवप्रकाशः ॥ "दशास्यो विंशतिभुजश्चतुष्पान् मातृमन्दिरे । लंकेश्वरो यातुपतिः सन्नाहोऽस्य विलोचकः [विलोकनः Ms.] ॥" Châritravardhana's commentary is: "न यथापूर्वो राक्षससमूहरहितोऽप्येको धनदानुजो रावणो भुजानां शिरसां च बाहुल्यादास्थितः (he reads इवास्थितः for इव स्थितः)। मातृनिकशानाम्न्या राक्षस्या वंशः परिवार इवावलोकितो रामसैन्यैरिति शेषः । अथ वा वंश इति सप्तम्यन्तपाठे । मातृकुले स्थितः । स यथापूर्वमितिपाठे । स रावणो यथापूर्वं रामेण विनाशितो मातृवंश इव दृष्टः। यद्वा । यथापूर्वं शक्रादिसंग्रामवदित्यन्ये । तस्य स्वेच्छाचाररूपित्वादूरुबहुत्वं । भुजोत्तमांगानि वा पाठः । स रावणो यथापूर्वं मातुलगृहे क्रीडनादौ वा ददृशे तथा शिरोभुजबाहुल्यादेकोऽपि लीलां कुर्वन्ददृशे इत्यन्यः । Vallabha's comments are: "स धनदानुजो रावणः । एकोऽपि यथापूर्वं मातृवंशे स्थित इव ददृशे मातुरन्वये स्थित इवादृश्यत । कस्मात् । भुजोत्तमांगबाहुल्याद्बाहुमस्तकबाहुल्यात्." According to Mallinâtha मातृवंश इव स्थितः means 'as if he stood in the midst of, *i. e.* surrounded by people belonging to his mother's family'. Râva*n*a's paternal descent was Brahmanical, but his mother belonged to the family of Râkshasas. It would be preferrable to read स यथापूर्वं with Vallabha. For after the expression एकोऽपि in the first line, अयथापूर्वः appears superfluous. स यथापूर्वं मातृवंश इव स्थितः, would then mean 'surrounded *as before* by Râkshasas.'

P. 389. St. 89.—स्वमुखैरर्चितेश्वरं. *Cf.* St. 41, Canto X.—जेतारं लोकपालानां. On the Lokapâlas see our note to St. 75, Canto II. The word लोकपाल does not appear here to be equivalent to देवानां generally, though it might be so used like मरुत्. *Cf.* Hemâdri : इति विक्रमोक्तिः. " And Châritravardhana has " अनेन शरीरबलश्चोक्तं । एतेन प्रभावोत्कीर्तनात्संग्रामदुर्द्धर्षत्वं रावणस्याराणि. "—तुलितकैलासं, After defeating Kubera who had offended him by sending him a message to check his attrocious deeds, he went to see the place where Skanda was born. " धनदोऽपि ततः श्रुत्वा रावणस्याक्रमं प्रभुः । अधर्मं मा कुरुष्वेति दूतवाक्यैर्न्यवारयत् । ततः क्रुद्धो दशग्रीवो जगाम धनदालयम् । विनिर्जित्य धनाध्यक्षं जगाम शरजन्मनः " ॥ When he reached the mount Kailâsa and had a view of the golden reeds he found that the car Pushpaka which he had forcibly taken from Kubera would not proceed. As he was wondering at this sudden stoppage of the motion of the self-moving car, he met Nandin the vehicle of S'iva, who told him not to make any attempt of coming over to the mountain as the god S'iva was present there. At this he became wroth and raised up the mountain with his twenty arms. " एवमुक्त्वा ततो राम भुजान्विक्षिप्य पर्वते । तोलयामास तं शीघ्रं स शैलः समकम्पत. " The attendants of S'iva and even Pârvati herself were struck with terror. Then S'iva pressed the mountain with his toe and all the arms of Râva*n*a were crushed beneath it. After some years he was released. When crushed he made a terrible roar that shook the three worlds and for this reason he became known as Râva*n*a. See Râmâya*n*a Uttarakâ*n*da, Cantos 15-16. *Cf.* also Mâgha. " समुत्क्षिपन्यः पृथिवीभृतां वरं वरप्रदानस्य चकार शूलिनः । त्रसत्तुषाराद्रिसुतासंभ्रमस्वयंग्रहाश्लेषसुखेन निष्क्रयं ॥ " S'i. I. 50. Compare Hemâdri : " लोकपालजेतृत्वेन शौर्यं । तोर्चितेश्वरत्वेन वरप्रभावः । धुतकैलासत्वेन देहबलत्वं चोक्तं. "—भरातिं बहुमन्यत, Hemâdri says : " इति युद्धाभिज्ञत्वोक्तिः. "

P. 390. St 90.—स्फुरति, The palpitation of the right arm is said to forebode union with one's beloved. " वामेतरभुजस्पंदो वरस्त्रीलाभसूचकः." This is a very common superstition and is frequently alluded to in Sanskrit poetry. *Cf.* S'a. I. " शान्तमिदमाश्रमपदं स्फुरति च बाहुः कुतः फलमिहास्य. " And also Bha*tt*i, " अभिमतफलशंसी चारु पुस्फोर बाहुः." *Cf.* also Hemâdri : " दक्षिण बाहुस्फुरणं दृष्ट्वा भार्या सीता संगमसहमानस्तमेवाविन्दयदित्यर्थः।" " स्पन्दो भुजस्येष्टसमागमाय " इति वसन्तराजः ।

P. 390. St. 91.—आख्यातुमुरगेभ्य इव प्रियं, *Cf.*, Sumativijaya : रावणहृदयविदारणवार्तां बाणः पातालभुवां भुजगानां वक्तुं प्रविष्ट इति भावः. " The death of Râva*n*a was an event for rejoicing not only to the celestials but also to the Nâgas, or the snake inhabitants of the nether world, since he had robbed them too of their beautiful wives and daughters.

Cf. " ननागासुरदैत्यानां गन्धर्वाणां च योषितः । रक्षसां चाभवन्कन्याः स हि तस्य परिग्रहः ।" And also *ibid.* 13. 64. "रावणान्तःपुरं सर्वं दृश्यते न तु जानकी । देवगंधर्वकन्याश्च नागकन्यास्तथैव च । यक्षराक्षसकन्याश्च दृश्यन्ते न तु जानकी ॥" Rámáya*n*a Sundarakâ*n*da, Canto 13. St. 65. Gorr, *Edi.* Also Uttarakâ*n*da, Canto 24. "एवं पन्नगकन्याश्च राक्षसासुरमानुषीः । यक्षदानवकन्याश्च विमाने सोऽध्यरोपयत् ॥ "

P. 390. St. 92.—**वादिनोरिव,** Hemâdri explains: " वादिनावपि वचसैव वाक्यं निहतः । प्रमाणादिनियमेन पक्षप्रतिपक्षयोः परिग्रहो वादः". And Châritravardhana has the following: " प्रमाणतर्कसाधनोपालम्भः सिद्धान्ताविरुद्धः पञ्चावयवोपपन्नः पक्षप्रतिपक्षपरिग्रहो वादः इति स विद्यते ययोस्तौ तयोर्वादिनोरिव । तयोरपि किंभूतयोर्वचसैव वचनेनैव वाक्यं तिरस्कुर्वतोर्यथा विजयावेशः प्रवृद्धमानः स्यात्तद्वदित्यर्थः ".—**संरभः,** Hemâdri and Châritravardhana render it by " आवेशः".

P. 390. St. 93.—**वेदिमत्तवारणयोरिव,** On this both Hemâdri and Châritravardhana make the following remark : " अन्तरा मध्ये वेदिं पिण्डकाभित्तिं कृत्वा मध्ये गजौ योध्येते इति प्रसिद्धं । अन्तरा शब्देनासंबन्धाद्वारणशब्दे द्वितीया न."—**सामान्याभूद्वयोरपि,** On this Châritravardhana remarks : " कदाचिद्रामो विजयते कदाचिद्दशग्रीवो विजयते इव । उभयोरपि तुल्यत्वात्कथमंगीकरोमिति संदेहनिष्ठा जयश्रीर्मध्ये स्थिता इत्यर्थः". And he goes on saying " प्रसिद्ध एव समानोऽर्थोऽपि सामान्यशब्दोऽस्ति । " सामान्योऽयं धर्मसेतुर्नृपाणां " इत्यादिप्रयोगादिदर्शनात् ।

P. 391. St. 94.—**सुरासुरैः,** Hemâdri discusses, "सुरसहिताः असुराः सुरासुराः । शाकपार्थिवादिः । यद्वा । कार्यकृतो हि देवानां विरोधो न जातिकृत इति । शाश्वतिके वैराभावे नैकवद्भावः । तथा न्यासकृत । शाश्वतिको नित्य इति । शश्वदिति त्रैकाल्यमुच्यते । तत्र भवः शाश्वतिक इति । " मनुष्यजन्मापि सुरासुरान्गुणैः" इति माघकाव्ये S'i. I. 35. तथा च भारविः प्रयुक्तवान् । " देवासुरैरमृतमम्बुनिधिर्ममन्थे " Ki. V. 30. तर्कदीपिकायामपि " यत्पादाम्बुजभृङ्गालिच्छलादिव सुरासुराः" इति. And Châritravardhana has : " शाश्वतिकविरोधाभावात् " येषां च विरोधः शाश्वतिकः" Pâ*n*ini, II. 4. 9. इत्यनेन न द्वन्द्वैकत्वं । देवासुराणां कादाचित्को विरोधः । तथा च भारविः । " देवासुरैरमृतमम्बुनिधिर्ममन्थे." Translate the aphorism: ' A Dvandva compound of words signifying those animals only among whom there is permanent enmity *i. e.*, natural and eternal antipathy or quarrel, is singular.'—**न सेहिरे,** On this Hemâdri remarks : " **निरंतरापतनादित्यर्थः**".

P. 391. St. 95.—**वैवस्वतस्य कूटशाल्मलिम्,** Pandit gives the following note: 'The *S'âlmali* is the Marâthi Sâvarî or Sâvar, the thorny tree that bears pods producing the most exquisitely fine cotton. Sinners are supposed to be tormented in the kingdom of Yama by being mounted on the Kû*ta*-S'âlmali, an instrument of torture described as

studded with adamantine thorns. The sinner—especially one who has been guilty of an unnatural offence—is prescribed the punishment of the Sâlmali. See Bhâgavata Sk. V. Adh. 26, 20. " यस्त्विह वै सर्वाभिगमरतममुत्र निरये वर्तमानं वज्रकण्टकशाल्मलीमारोप्य निष्कर्षन्ति. " —शतघ्नीं, On this epithet Hemadri remarks: " शतानि हन्तीति व्युत्पत्तिः। शतघ्नीं चतुस्तालप्रमाणां गदां। "शतघ्नी च चतुस्तालालोहयष्टिः" इति केशवस्वामी। मदनादिनिघंटौ तु। "अयःकण्टकसंच्छिन्ना शतघ्नी महती शिला" इति। तत्र। शाल्मल्युपमानात्"। And he goes on saying "वैरोचनः कूटशाल्मलिः"। शाल्मलिर्वृक्षविशेषः। कूटशब्देन कुत्सितं द्योत्यते। दुर्गादौ हि परसैन्यदलनार्थं व्याक्षिप्यतेति क्षीरस्वामी. " And Châritravardhana has the following: " वैवस्वतो यमस्तस्य कूटशाल्मलिं यातनातरुविशेषमिव ". And further quoting, like Mallinâtha and Hemâdri, the authority of Kes'ava Svâmin, he observes : " शतं हन्तीति शतघ्नीति व्युत्पत्तिः. " *Cf.* also Râmâyaṇa Âraṇyakâṇḍa, Canto 53 " द्रक्ष्यसे शाल्मलीं तीक्ष्णामायसैः कण्टकैश्चितां " इति.

P. 392. St. 96.—रथमप्राप्तां तां. Hemâdri, Châritravardhana, and Sumativijaya explain it as: " चतुस्तालप्रमाणां लोहशक्तिं. "—आशां, Sumativijaya remarks: " मयैव रावणेन रामो जेतव्यः इत्येवंरूपां. "—कदलीसुखं. Hemâdri remarks: " इति आयामनिरासः. "—चिच्छेद, On this Châritravardhana observes: " शतघ्न्यां छिन्नायां रावणस्य विजयप्रत्याशापि नष्टा. "

P. 392. St. 97.—°निष्कर्षणौषधं, Hemâdri and Châritravardhana interpret it by " उपायभूतं. "

P. 392. St. 98.—दशधा भिन्नं, On this both Hemâdri and Châritravardhana have the following: " दशानां रावणशिरसां नाशाय दशधा भिन्नं दशशरीरं। छेद्यस्य दशसंख्यायोगात्। दशधा इत्युक्तं. "—वपुर्महोरगस्येव. On this Hemâdri observes : " महोरगत्वं रत्नयोगात् ". and Châritravardhana and Sumativijaya have the following : " महोरगत्वेन फणेषु मणयः सूच्यन्ते। तेन च दीप्तिवन्मुखं भवति. "

P. 393. St. 99.—निमेषार्धादपातयत्, On this Châritravardhana remarks : " एतेन रामस्य लघुहस्तता द्योत्यते."—अज्ञातव्रणवेदनां, Hemâdri explains : " अज्ञाता व्रणानां क्षतानां वेदना पीडा ययेति शास्त्रभेदात्. "

P. 393. St. 100.—बालार्कप्रतिमेव, On this Hemâdri remarks : " बालार्कत्वेन शिरसां सरुधिरत्वमाक्षिप्तं। कायग्रहणं तु पतनचलनद्योतनार्थं. "

P. 393. St. 101.—पुनः संधानशङ्किनां, *Cf.* Hemâdri, " पुनः संधानशङ्किनां मरुतां देवानां मनो नातिविशश्वास। कुतः पुनः संधानं शङ्कते। ईश्वरेण कृतानामपि पुनरुत्पत्तेः साधित्वाच्च रावणस्य." And Châritravardhana has the following : " ननु छिन्नेऽपि मस्तकेषु कथं विश्वासं नाभूदित्याह। यतः पुनः संधानं शङ्कन्त इति पुनः संधानशङ्किनस्तेषां। मंहशसंतुष्टये [मंहशतुष्टये Ms.] शिरांसि छिन्नानि पुनरपि

यथा पत्न्यानि तथाधुनापि भविष्यंतीति शङ्कया विश्वासाभावः इत्यर्थः." And Sumativijaya has : "छिन्नानामपि रावणमस्तकानां पुनर्मीलनं भविष्यतीति शङ्का देवानामतो न विश्वासः इति भावः."

P. 394. St. 102.—**लोकपालद्विपानां**, The eight elephants of the eight Lokapâlas are: "ऐरावतः पुण्डरीको वामनः कुमुदोऽञ्जनः पुष्पदन्तः सार्वभौमः सुप्रतीकश्च दिग्गजाः." See note to stanza 75 canto II. As to how the elephants came to be together, compare Châritravardhana: "राघवरक्षसराजद्दिदृक्षयागतानां लोकपालानामिन्द्रादीनां ये द्विपा ऐरावणादयस्तेषां गण्डभित्तीर्गण्डस्थलीर्विहाय परित्यज्य मदोदकेन गुरवः पक्षा येषां तादृशैरलिवृन्दैर्भ्रमरसमूहैः । सौगन्ध्यातिशयलोभादनुगतमन्वितं &c." The epithet गुरुपक्षैः is probably employed to show how they came down quickly along with the flowers, as they are provided with so small wings and their bodies are so light.—**उपनतमणिबन्धे मूर्ध्नि**. Hemâdri explains: "किंविधे मूर्ध्नि । मणयो बध्यन्तेऽत्रेति मणिबन्धो मुकुटः । उपनतोऽप्राप्तो मणिबन्धो यस्मिन्स तस्मिन् । आसन्नराज्याभिषेके इत्यर्थः । यद्वा । उपनतो संयुक्तो मणिबन्धो मकोटप्रदेशो यस्मिन् । कृताञ्जलावित्यर्थः । यदाभिषेकसमये दशरथेन दत्तो मणिरसो ऽस्मान्येके । तन्न । "पुरे निषादाधिपतेः" इत्यत्र मौलिविसर्जनं वक्ष्यति." And Châritravardhana has: "कीदृशे मूर्ध्नि उपनतः उपस्थितो मणिबन्धो राज्याभिषेकसमयसंबंधि शिरोरत्नं यस्य तत्रेति भद्रं." —**सुरभि**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "सुरभिश्चम्पके स्वर्णे जातीफलवसन्तयोः । गन्धोपले सौरभेय्यां सल्लकीमातृभेदयोः । सुगन्धौ च मनोज्ञे च वाच्यवत्सुरभि स्मृतम्" इति विश्वः ।—**पुष्पवर्षं पपात**, For a similar idea compare Buddhacharita Canto XIII. verse 72. "द्रवति मदरपक्षे निर्जिते पुष्पकेतौ जयति जितनमस्के नीरजस्के महर्षौ । युवतिरिव सहासा द्यौश्चकाशे सचन्द्रा सुरभि च जलगर्भं पुष्पवर्षं पपात ।"

P. 394. St. 103.—**हरिसहस्रयुजं**. The usual number of Indra's bay horses is seven. The number one thousand is not according to the legendary representation of Indra's character, but is merely a poetical exaggeration.—**ऊर्ध्वं**, is equivalent to स्वर्लोके.—**संहृतकार्मुकज्यं**, Hemâdri explains: "संहृतावरोपिता कार्मुकज्या धनुर्गुणो यस्य तं राघवमाहृच्छच रथमूर्ध्वमुपरि निनाय । कार्मुके आरूढा ज्या कार्मुकज्या । धनुःश्रुतिरारूढप्रतिपत्त्यै इति वामनः । यथा । "धनुर्ज्याकिणचिह्नेन दोष्णा विस्फुरितं तव" इति ।

P. 395. St. 104.—**जातवेदोविशुद्धां**, 'Purified by fire.' *Cf.* Hemâdri: "जातवेदास्तनूनपादित्यत्र पदिमहर्यां । "जाते जाते विद्यते" इति जातवेदाः । मनसोऽपदोषविव वर्ष्मा समासेनैव प्रतीता । जातं वेदोऽस्मादिति वा । अत्रैतत्साभिप्रायं । दिव्ये दृष्टादृष्टप्रकाशकत्वात्." In order to avoid the public scandal Râma addressed the following words to Sitâ and said :—'As the southern quarter, incapable of being got at by the people, was conquered by the self-controlled great ascetic Agastya, so for thee slaying Râ-

vana, I, (always) anxious to have honour, have removed my insult —as is the duty of a man. May good betide thee—do thou know that all my labour, in the battle-field, backed by the prowess of my friends, is for thee. To uphold the dignity of my well-known family, to remove the ignominy consequent upon thy being stolen alway as well as to wipe off my own insult I have encompassed this. I have suspected thy character; thou, (therefore) standing before me, art distressing me like unto a lamp before one who is subject to an eye-disease. Do thou therefore proceed, O daughter of king Janaka, wherever thou likest to one of these ten quarters. I permit thee, O gentle one. I have nothing to do with thee. What powerful man, born in a high family, take back his wife considering her as friend out of lust, who hath lived long in another's house? Thou wert taken by Râva*n*a on his lap, beheld by him with sinful eyes; how can I, taking thee back, bring disgrace upon my great family? The object with which I have gained thee back, hath been accomplished. I have got no attachment for thee—do thou go wherever thou wishest, O gentle one. I speak these words unto thee impelled by my sense of duty. If thou wishest thou mayest live with Lakshma*n*a, Bharata or S'atrughna or with Sugriva or Râkshasa Bibhisha*n*a. Do thou settle, O Sitâ, where thou mayest find thy own pleasure. O Sitâ, (I do not think) Râva*n*a hath overlooked thee, who lived in *his* house, beholding thee so graceful and beautiful.' Thereupon hearing those unpleasant words from her beloved, Sitâ began to weep shedding tears profusely and said, 'make a funeral pyre for me, O Saumitri, that is the only remedy for this disaster.' With these words she entered the funeral pyre and the gods assured Râma that Sitâ was pure. And Vibhâvasu brought her out and said the following to Râma. 'O Râma, here is thy Vaidehi—no sin hath visited her. Her heart is pure and she is not spoiled with sin—do thou, therefore, take back Maithilî. Do thou not speak otherwise—I do command thee.' And Râma accepted her. See Râmâya*n*a Yuddhakâ*n*da, canto 115.—रविसुतसहितेन, 'who was accompanied by the son of the god Sûrya.' The genesis of Sugriva and Vâlin is thus given in the Uttarakâ*n*da of the Râmâya*n*a Kshepaka Sarga I. p. 581. N. S. *Edi.* Brahmâ, while one day engaged in the practice of Yoga contemplation, happened to drop a tear of joy, which falling on the ground produced a male monkey—the first of his race. The self-existing god then employed him as a personal attendant upon himself. One day, while the monkey, overcome with excessive thirst, was roaming

about the summit of the Meru in search of water happened to find out a beautiful lake and was looking in at the clear surface of the stream he saw his own reflexion in it. Thinking it to be an enemy he jumped into the water, and when he came out he found himself metamorphosed into a beautiful damsel of the monkey race. The gods Indra and the Sun happened to come there accidentally. Both of them beheld her and were enamoured of her. Their semen fell upon her head and neck respectively. And thus two monkeys were born of her; and they were then called Válin and Sugriva. *Cf.* "वालेषु (*i. e.* on hair) पतितं बीजं वाली नाम बभूव सः। भास्करेणापि तस्यां वै कंदर्पवशवर्तिना। बीजं निषिक्तं ग्रीवायां विधानमनुवर्तता। तेनापि सा वरतनुर्नोक्ता किंचिद्वचः शुभं। निवृत्तमदनश्चाथ सूर्योऽपि समपद्यत। ग्रीवायां पतितं बीजं सुग्रीवः समजायत॥ Cháritravardhana says that the metre of this stanza is नाराच and defines it thus: "इह न नरचतुष्कनाराचमाख्यातं." But this elsewhere is known as तारा or तारका which is thus defined, "त्र्यधिकदशयतिर्ननौ रौ भवेतां ररौ तारका." र घु न। नि र पि। जा त वं। दो वि शु। द्धां प्र गृ। ह्य प्रि यां। The first and the second foot is न (गणः), and the last four are र (गणाः).

CANTO XIII.

P. 396. St. 1.—**अथ.** The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit प्रस्थानानन्तरम् after अथ and पत्नीं after **जायां.—आत्मनः पदं.** is equivalent to विष्णोः पदं. 'the sky.' It is used with reference to the identification of Ráma with Vishnu, whose home (पदं) is said to be the sky. *Cf.* Hemádri and Vallabha: "तस्य हि भूर्भुवःस्वर्लक्षणानि त्रीणि पदानि."—**शब्दगुणं.** Sound according to Hindu phylosophers is the peculiar quality of the sky, as smell is of the earth, taste of the water, form of the light and touch of the air. *Cf.* "वसुंधरा विष्णुपदं द्वितीयमध्यारुरोहेव रजश्छलेन." —**गुणज्ञः.** used simply for the sake of a vocal repetition. *Cf.* Hemádri, "रत्नाकरादिः गुणज्ञः । हरित्वेन रामस्तुतिः । आकाशयानसिद्ध्यर्थं." And Cháritravardhana and Sumativijaya have : "समस्तवस्तुविशेषवित् । अनेन तद्वाक्यस्योपादेयत्वं । रत्नाकरपदेन पयोधेर्दर्शनयोग्यत्वं । हरिशब्देन रामस्योक्तिः स्वेच्छाप्रसारसूचनार्था । शब्दगुणत्वं च यथा शब्दः क्वचिदाश्रितो भवितुमर्हति गुणत्वाद्रूपवदित्यनुमाने पारिशेष्यादाकाश एव शब्दगुणः प्रसिद्धः."—**रामाभिधानो हरिः,** This expression is put in justification of आत्मनः पदं, as meaning विष्णुपदं.

P. 396. St. 2.—**आमलयाद्विभक्तं,** 'divided as far as the Malaya mountain.'—**छायापथेन,** 'by the galaxy or milky-way.' Cháritravardhana renders it by "स्वातीमार्गेण," Hemádri by "गङ्गापथेन," and Sumativijaya and others by "पितृदण्डेन." And further Cháritravardhana has: "शरदि वसन्ते वियदन्तः प्रणाल्याकारो दण्डायमानोऽतीवाकाशविशेषश्छायापथः" इति. And Hemádri quotes Rámáyana, "शुशुभे सुभगः श्रीमान् छायापथ इवाम्बरं" इति.—°**चारुतारं,** Hemádri explains : "मुक्ता शुद्धौ च तारः स्यात्" इत्यमरः । "अनेन मुक्तादिसद्भावः."—**फेनिलं,** On this both Hemádri and Cháritravardhana remark : "फेनिलमित्यचिरवद्धत्वमुक्तं." Sumativijaya has the same.

P. 397. St. 3.—**पूर्वैः किलायं परिवर्धितो नः,** 'This was enlarged by our ancestors,' *viz.*, by the sixty thousand sons of Sagara, who dug out the earth and made the chasm through which they found out the sacrificial steed of Sagara. Bhagíratha their descendant brought down to earth the Gangá from heaven, and filled the chasm they had dug up with its waters that these might purify the ashes of his ancestors. Sagara on recovering the steed, completed his sacrifice, and, in affectionate memory of his sons, denominated Ságara the chasm which they had dug. Ságara is still the name of the ocean, and, especially, of the Bay of Bengal, at the mouth of the Ganges. See Wilson's Vishnu Purána, Vol. III, page 302. *Cf.* also

Râmâyana Sundarakânda, Canto VII. "अहमिक्ष्वाकुनाथेन सगरेण विवर्धितः," also Canto I. "राघवस्य कुले जातैरुदधिः परिवर्धितः। स त्वां राम हिते युक्तं प्रत्यर्चयति सागरः." On परिवर्धितः compare Buddhacharita Canto XI, Stanza 3. "असत्सु मैत्री स्वकुलानुरूपा न तिष्ठति श्रीरिव विक्लवेषु। पूर्वैः कृतां प्रीतिपरम्पराभिस्तामेव सन्तस्तु विवर्धयन्ति"।—**कपिलेन तुरंगे रसातलं संक्रमिते,** Hemâdri explains: "यद्वा। कपिलेन इन्द्रेण" and quotes the following from वैजयन्ती. "कपिलः कपिलो वर्णः कपिलः पाकशासनः" इति. And Vallabha and other commentators render कपिल by "कपिलरूपेणेन्द्रेण." And further Hemâdri gives the following: "यद्यप्यश्वस्य भूतलसंक्रमणमिन्द्रप्रयत्नकृतं तथापि कपिलांतिकेऽश्वदर्शनादनेन हृतोऽश्वः इति पूर्वेषां सगराणां बुद्धिमाश्रित्य कपिलेनेत्युक्तं." And Châritravardhana and Sumativijaya have the following: "यद्यपि तुरगो वासवेनापहारि तथापि मुनेः समीपवर्तित्वात्तेनैवापहृत इति लोकबुद्ध्योक्तत्वान्न विरोधः." *Cf.* Râmâyana Bâlakânda, Cantos 39–40, "तद्गच्छथ विचिन्वध्वं पुत्रका भद्रमस्तु वः। समुद्रमालिनीं सर्वां पृथिवीमनुगच्छथ। एकैकं योजनं पुत्रा विस्तारमभिगच्छत। यावत्तुरगसंदर्शस्तावत्खनत मेदिनीं। तमेव हयहर्तारं मार्गमाणा ममाज्ञया"। See also Wilson's Vishnu Purâna Vol. III. page 299. "At that period, Sagara commenced the sacrifice of a horse, who was guarded by his own sons: nevertheless, some one stole the animal, and carried it off into a chasm in the earth. Sagara commanded his sons to search for the steed; and they, tracing him by the impressions of his hoofs, followed his course, with perseverance, until, coming to the chasm where he had entered, they proceeded to enlarge it, and dug downwards, each for a league. Coming to Pâtâla, they beheld the horse wandering freely about; and, at no great distance from him, they saw the *Ri*shi Kapila sitting, with his head declined in meditation, and illuminating the surrounding space with radiance as bright as the splendours of the autumnal sun shining in an unclouded sky. Exclaiming 'This is the villain who has maliciously interrupted our sacrifice, and stolen the horse: kill him! kill him!' They ran towards him, with uplifted weapons. The Muni slowly raised his eyes, and, for an instant, looked upon them; and they were reduced to ashes by the (sacred) flame that darted from his person."

P. 397. St. 4.—**गर्भं दधाति,** This refers to the evaporation of the oceanic waters by the solar rays. *Cf.* Châritravardhana: "अनेन समस्तोत्पत्तिरभ्यधायि." And Hemâdri says: "अनेन परोपकृतिः."—**वसूनि वृद्धिमश्नुवते,** 'attain maturity,' referring to pearls. *Cf.* Hemâdri: "अनेन श्रीमत्त्वं." And Châritravardhana says, "इत्यनेन रत्नाकरत्वं प्रत्यपादि."—**प्रह्लादनं ज्योतिः,** Referring to the production of the moon from the ocean when it was churned by the gods and the demons. *Cf.* Hemâdri: "अनेन

सौम्यता." And Cháritravardhana has : " एतेन समग्रजाग्रत्संतापापहारिसर्वेव-स्तुजननत्वमुक्तं."—**अबिन्धनं वह्नि**, 'the Vâ*d*ava fire.' *Cf.* Hemádri : " अनेन सत्रुपोषणं." And Cháritravardhana has : " इति विशेषणेन शरणायागतस्य दुर्जनस्यापि धारणत्वमभाणि. " For an account of this see प्रयागमहात्म्य Uttar. Adh. 96. The sage Dadhichi got a child in a mare which was therefore called by the name of Vâ*d*ava. Just after birth the child felt a voracious appetite which could not be satisfied by any thing. At this Brahmâ and other gods became afraid. They could not kill the child as he was produced from a Bráhma*n*a father. When they were in this miserable condition Sarasvatí appeared before her father and wanted to know if there was any thing she could do to serve him. She was told to find out some means of protection against the Bráhma*n*a's child. Upon this she came down upon the earth with her lyre which she played upon so harmoniously that Vá*d*ava hearing the tunes became captivated and forgot his appetite. He then made advances of love to her but they were rejected on the ground that domestic happiness could not be enjoyed with one so voracious. Then Vá*d*ava said he would gladly adopt any means that she could show of lessening his appetite. She then told him to take his seat upon her back and to go with her. He was then carried to the side of the ocean and was told to satisfy his appetite upon the inexhaustible waters of the deep. She told him also that when by this means his appetite will be gratified he will be fit to enter into a conjugal state.

P. 398. St. 5.—**ईदृक्तया इयत्तया वा**. Cháritravardhana explains it as, " ईदृक्तया ईदृशमिति बुद्ध्या । इयत्तया एतावदस्य प्रमाणमिति च विधाय." And Hemádri has, " इदं परिमाणमस्येति इयान् तस्य भावः इयत्ता तया."—**तां तां**, Hemádri explains it as, लोकप्रसिद्धां मत्स्यकूर्मादिरूपामवस्थां प्रतिपद्यमानं । अब्धिपक्षे । कदाचिदुल्लसति । कदाचित्क्षुभ्यति । कदाचिन्मथ्यते." And Cháritravardhana has : " प्रलयकालेऽवलनत्वादिलक्षणां प्रतिपद्यमानं प्राप्नुवन्तं तां तामवस्थां मत्स्यकूर्मवाराहाद्यवस्थां. " And Vallabha has : " समुद्रपक्षे । तां तां वृद्धिक्षय-लक्षणामवस्थां प्रतिपद्यमानं । विष्णुपक्षे तां मत्स्यकूर्माद्यवस्थां प्राप्नुवन्तं &c. "

P. 398. St. 6.—**लोकान्**, भूर्भुवादीन्, says Cháritravardhana.—**अ-सुमधिशेते**, Hemádri explains: " अधिशीङ्स्थासां कर्म " Pá*n*ini, I. 4. 46. इति कर्म । प्रवाहरूपेणार्थस्य विद्यमानत्वाद्वर्तमाने निर्देशः । यदुक्तं । " संभक्ष्य सर्वभूतानि कृत्वा चैकार्णवं जगत् । बालः स्वपिति यश्चैकस्तस्मै मायात्मने नमः". And Vallabha has " यदुक्तं । संहृत्य सर्वभूतानि कृत्वा चैकार्णवं जगत् । बालः स्वपीति यश्चैकस्तस्मै शा ता-त्मने नमः". And Cháritravardhana has : " वर्तमाननिर्देशस्तु प्रवाहरूपत्वात्. "—**प्रथमेन धात्रा संस्तूयमानः**, Hemádri explains: "प्रथमेन नरश्रेष्ठेन धात्रा संस्तूय-मानः । " आदिप्रवरौ प्रथमौ " इति स्मरणात् । दशब्रह्मापेक्षया प्रथमशब्दो वा । हरिवंशे

तथा। " मरीचिरत्र्यंगिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः। भृगुर्वशिष्ठो दक्षश्च नारदो दशमस्तथा। दश ब्रह्माण इत्येते पुराणे निश्चयं गताः " इति। कुमारसंभवेऽपि। " विधाता वेधसामपि " " कुले प्रसूतिः प्रथमस्य वेधसः" इति च। "अनेनास्य प्रलयेऽप्यविनाशो महत्वं च." And Châritravardhana has the following: " दक्षाद्यपेक्षया प्रथमेन धात्रा ब्रह्मणा स्तूयमानः। एतेन समुद्रस्य प्रलयेऽप्यविनाशो विष्णोश्च महत्त्वं सूचितं."—**युगान्तोचितयोगनिद्रः**, 'who practises योगनिद्रा or contemplative repose at the end of each quaternion of Yugas.' Châritravardhana says, " युगान्ते प्रलयकाले उचिताभ्यस्ता योगनिद्रा येन." The world is not subject to destruction periodically at the end of each Yuga but at the end of each quaternion of Yugas. Vallabha says, " युगान्ते उचिता योग्या योगनिद्रा योगगतिर्यस्य. "

P. 398. St. 7.—**एनं शरण्यमाश्रयन्ते**, See Râmâya*n*a Sundarakâ*nda*, Canto VII. 40 fgg. Gorri. edi.—**गोत्रभिदा**. 'By the breaker of mountains.' गोत्र means originally a cow-pen, any fence or similar thing that confines cows, hence the *cloud that confines the cows of heaven* (गावः) *i. e.*, the rain-water. It then came to be a synonym of *mountain*. " गोत्रान् भिनत्तीति तेनेन्द्रेण ". *Cf.* Râmâya*n*a : " पूर्वं कृतयुगे तात पर्वताः पक्षिणोऽभवन्। तेऽपि जग्मुर्दिशः सर्वा गरुडा इव वेगिनः। ततस्तेषु प्रयातेषु देवसंघा महर्षिभिः। भूतानि च भयं जग्मुस्तेषां पतनशङ्कया। ततः क्रुद्धः सहस्राक्षः पर्वतानां शतक्रतुः। पक्षांश्चिच्छेद वज्रेण ततः शतसहस्रशः ". Compare also Vallabha : " शक्राद्भीताः सपक्षाः पर्वता जलाद्रिं प्रविष्टा इत्यागमः ". See readings.—**मध्यमं**, Châritravardhana and Sumativijaya explain it as: " शत्रुमण्डलात्परस्ताद्वर्तमानं मित्रभूमिपतिं. "

P. 399. St. 8.—**रसातलात्**, *i. e.*, पातालात्. This ablative is to be construed with उद्वहन् in the next line.—**अच्छम्**, Châritravardhana explains : " अस्य सिंधोः प्रलये प्रवृद्धमतएवोर्वरपरमाण्वादीनामधःपातादच्छमपमलम् &c." Dinakara too has the same.—**प्रयुक्तोद्वहनक्रियायाः**, Châritravardhana analyses : " प्रयुक्ता उद्वहनस्योद्धरणस्य क्रिया व्यापारो यस्यास्तयोक्तायाः". 'The Vârâha form was chosen', says the Vâyu Purâ*n*a, 'because it is an animal delighting to sport in water.' " जलक्रीडासु रुचिरं वाराहं रूपमस्मरत "। But it is described in many Purâ*n*as as it is in Vish*n*u (देवयज्ञमयं रूपं) as a type of the ritual of the Vedas ...... The elevation of the earth from beneath the ocean, in this form, was, therefore, probably at first an allegorical representation of the extrication of the world from a deluge of iniquity, by the rites of religion. The Bhâgavata describes the Varâha as issuing from the nostrils of Brahmâ, at first of the size of the thumb and presently increasing to the stage of an elephant. *Cf.* " यदेकः सर्वसत्वानां मही मग्ना महाम्भसि। अस्या उद्धरणे यत्नो देव देव्या विधीयताम्।.................... परमेष्ठी त्वपां मध्ये तथासन्नामवेक्ष्य गां। कथमेनां समुन्नेष्य इति दध्यौ धिया चिरं।

सृजतो मे क्षितिर्वार्भिः शव्यमाना रसां गता । अथात्र किमनुष्ठेयमस्माभिः सर्गयोजितैः । यस्याहं हृदयादासं स ईशो विदधातु मे । इत्यर्भाध्यायतो नासाविवरान्महसानघ । वराहतोको निरगादङ्गुष्ठपरिमाणकः." See also Vishnu Purána. Bk. I. Adh. 4. "ततः समुत्क्षिप्य धरां स्वदंष्ट्रया महावराहः स्फुटपद्मलोचनः । रसातलादुत्पलपत्त्रसन्निभः समुत्थितो नील इवाचलो महान् &c." **प्रलयप्रवृद्धम्**. Pralaya means the final day of the world or कल्पान्त. See Vishnu Purána. Bk. I. Adh. 3. "कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चैव चतुर्युगं । प्रोच्यते तत्सहस्रं च ब्रह्मणो दिवसं मुने । ब्रह्मणो दिवसे ब्रह्मन् मनवश्च चतुर्दश । भवन्ति परिमाणं च तेषां कालकृतं शृणु " &c. Fifty years of Brahma's life are said to have passed and the present is called the श्वेतवाराहकल्प. We are living in the first day of Brahma's 51st year.—**मुहूर्तवक्त्रावरणं बभूव**. All the southern Mss. of Mallinátha's commentary, excepting the group, A. D. (*i. e.*, four Mss.) read वक्त्राभरणं. From the way in which he explains the expression it may be said with greater certainty that he had before him for his commentary the text of वक्त्रावरण and not वक्त्राभरण. Although the majority of southern Mss. sides with वक्त्राभरण I would still prefer to read with A. D. that is the four Mss. containing the correct text of Mallinátha. There is no donbt whatever that that is the original reading of Kálidása which Mallinátha selected for his commentary, and that the one chosen by the majority of southern Mss. having the commentary of Mallinátha is spurious. See readings. On this epithet Hemádri remarks: "विवाहकाले ह्यविवाहे हि वधूमुखावगुण्ठनं क्रियते."

P. 399. St. 9.—**मुखार्पणेषु** The plural is used for the sake of metre.—**अनन्य** &c. *Cf.* Hemádri: "न अन्येषां सामान्यं कलत्रं यस्य सः । यस्य कस्यापि पुंसः कान्ताधरस्य पानं स्वस्याधरदानं युगपन्न संभवति । अस्य तु संभवत्येवेत्यनन्यसामान्यत्वं." And Cháritravardhana has the following; अयमर्थः कामी धात्रीपुत्र्याद्युपदेशमंत्रणेनैव चुंबनादौ प्रौढकान्तामुखं पिबति स्वयं च तदधरखण्डनं समर्पणे वा कुशलः सन् ताः पाययतीति ह्यायार्थः । अन्येषु पुरुषेषु बह्वीनां सुंदरीणां समकालमधरखण्डनं पायनञ्च न संभवतीत्यनन्यसाधारणत्वं." Sumativijaya has the same.—**दानदक्षः**. Châritravardhana renders दानं by "खण्डनं समर्पणं च."—**स्वयं पिबति**. Here Hemadri remarks: "तासां तत्र प्रवेशात्."—**पाययते**, Hemádri remarks: "तासु तत्यैकाग्रतत्वात्", and further discusses: "शाच्छासाह्वाव्यावेपां युक्," Pánini. VII. 3. 37. इति युक । "न पादम्याङ्यमाङ्यसपरिमुहरुचिनृतिवदवसः", Pánini. I. 3. 89. इति परस्मैपदं नास्ति । अकर्तृः फले परस्मैपदं स्यादेव । पाययति सोमं याजकः." Châritravardhana too holds the following discussion. "निगरणचलनार्थेभ्यश्च" Pánini. I. 3. 87. इति प्राप्तस्य परस्मैपदस्य "न पादमा" इत्यनेन निषेधात "णिचश्च" Pánini, I. 3. 74. इत्यात्मनेपदं."

P. 400. St. 10.—**तिमयः**, Châritravardhana renders it by "महामत्स्याः," and Hemádri has the following: "अस्ति मत्स्यस्तिमिर्नाम शतयोजन-

विस्तृतः । तिमिंगिलगिलोऽप्यस्ति तद्गिलोऽप्यस्ति राघवः "। राघवो मत्स्यभेदः । "महामीनप्रभेदेऽपि जलधे राघवः स्मृतः " इति विश्वः.—**संमीलयन्तः**, Hemâdri explains : " भोज्यनिर्गमनशङ्कया मुखसंकोचस्तस्मादुत्पथेन जलनिर्गमः । मत्स्यविशेषाणां मूर्ध्नि रन्ध्रमिति प्रसिद्धिः." And Vallabha has : " मीनानां शिरसि विवरमिति प्रसिद्धं."—**ऊर्ध्वं वितन्वन्ति,** On this Châritravardhana remarks : " इति तेषां स्वभावोक्तिः. " See readings.

P. 400. St. 11.—**मातंगनक्रैः,** Hemâdri explains : " मातंगरूपाः नक्रा, जलचरास्तैः । शाकपार्थिवादिः । जलगजैरित्यर्थः." And Châritravardhana says: " मातंगाकारैर्नक्रैर्जलहस्तिभिः । यद्वा । मातंगाश्च नक्राश्च तैः ". And further Hemâdri observes: " यावन्तो दृश्यन्ते नरकरितुरगादयः स्थले जीवाः । तावन्तः सलिलेष्वपि जलपूर्वास्ते तु विज्ञेयाः " इति हलायुधः । भट्टीकाव्ये च । " बभुरुदकनागगणा वेलातटशिखरिणो यत्र. " *Cf.* also: " घोरजलदन्तिसंकुलमट्टमहापंककाहलजलावासम् । आरीणं लवणजलं समिद्धफलबाणविद्धघोरफणिवरम् " इति.

P 400. St. 12.—**विस्फूर्जथु,** Châritravardhana explains it as, " विस्फूर्जितेन (is his reading) बुध्याधिक्येन निर्विशेषाश्चलत्तरंगतुल्या वेलानिला यत्र । प्रसृता इति तरंगसाम्यहेतुः ". Hemâdri too has the same.—**महोर्मिविस्फूर्जथुनिर्विशेषाः,** 'Who do not differ from the shining appearance of the large waves.' The poet means that the serpents which lay at length on the beach and looked exactly like the waves of the ocean that beat near them, could only be recognized to be serpents by the lustre of the gems in their hoods, now made more brilliant by the sun's rays shining upon them. Châritravardhana rightly interprets व्यज्यन्ते by प्रगटीक्रियन्ते. *Cf* also Vallabha : " लहरीभ्रान्तिविभ्राणा इत्यर्थः. " For a similar idea compare, दिङ्नागहस्ताकृतिमुद्वहद्भिर्भोगैः प्रशस्तासितरत्ननालैः । रराज सर्पावलिरुल्लसन्ती तरङ्गमालेव नभोऽर्णवस्य . "

P. 401. St. 13.—**क्लेशादपक्रामति शङ्खयूथं,** Hemâdri explains: " तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु प्रवालेषु सहसोर्मिवेगात्पर्यस्तं पतितमूर्ध्वेष्वङ्कुरेषु प्रोतानि मुखानि यस्य तत् । यद्वा । तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु कथंचित्पर्यस्तमूर्ध्वाङ्कुरप्रोतमुखमेव शङ्खयूथमूर्मिवेगात्सहसापक्रामति गच्छति." And Châritravardhana has, " तवाधरस्पर्धिषु सादृश्यं गतेषु विद्रुमेषु प्रवालेषूर्मिवेगात्तरङ्गरयात्सहसा पर्यस्तं क्षिप्तमत एव विद्रुमाणामूर्ध्वाङ्कुरेषु प्रोतं लग्नं मुखं यस्य तच्छंखयूथं वृन्दं कथंचित्क्लेशादपक्रामत्यपसर्पति."—**अपक्रामति,** Hemâdri discusses: " वा भ्राशभ्लाशभ्रमुक्रमुक्लमुत्रसित्रुटिलषः," Pâ*n*ini, III. 1. 70. इत्यादिना क्रमः श्यन विकल्पः । " क्रमः परस्मैपदेषु " Pâ*n*ini, VII. 3. 76. " इति दीर्घः." Hemâdri derives शङ्ख as " शमेः खः " U*n*âdi Sútra 102, S. K. p. 323. शंख इत्येवमादीनां " उणादयो बहुलं " Pâ*n*ini, III. 3. 1. " इति बहुलवचनादादेशा न भवन्ति इति काशिका. "

P. 401. St. 14.—**पयांसि पातुं प्रवृत्तमात्रेण,** Châritravardhana explains this by "वारीणि पातुं प्रवृत्तमात्रेणावर्त्तस्य जलभ्रमस्य वेगाद्वेगवशाद्भ्रमता घनेन

मेघेन कृत्वायं समुद्रः &c." And Vallabha by "जलमादातुं कृतोपकरणेन &c." And Dinakara by: "जलानि पातुं प्रवृत्तमात्रेण पूर्वभागेन जलं स्पृशता आवर्तस्य जलभ्रमस्य वेगवशाद्भ्रमता मेघेन कृत्वायमब्धिः" &c.—**भ्रमता**, like the churning-handle which at the time of the great oceanic churning here alluded to consisted of mount Mandâra.—**भूयिष्ठं**, Hemâdri explains, "अतिशयेन बहु इति भूयिष्ठं । "बहोर्लोपो भू च बहोः" Pánini, VI. 4. 158. "इष्ठस्य यिट् च" Pânini, VI. 4. 159. *Cf.* S'i. VI. 74. सार्द्रमुर्वीमानिशं नदन्तो यैः श्रावयिष्यन्ति समन्ततोऽमी । तान्येकदेशान्निभृतं पयोधेः सोऽम्भांसि मेघान् पिबतो ददर्श." The legend of the churning of the ocean is given in many Purá*n*as. See Râmáya*n*a Bálaká*nd*a, Canto 45. "पूर्वं कृतयुगे राम दितेः पुत्रा महाबलाः । अदितेश्च महाभागा वीर्यवन्तः सुधार्मिकाः । ततस्तेषां नरव्याघ्र बुद्धिरासीन्महात्मनां । अमराः विजराश्चैव कथं स्यामो निरामयाः । तेषां चिन्तयतां तत्र बुद्धिरासीद्विपश्चितां । क्षीरोदमथनं कृत्वा रसं प्राप्स्याम तत्र वै । ततो निश्चित्य मथनं योक्त्रं कृत्वा च वासुकिं । मन्थानं मन्दरं कृत्वा ममन्थुरमितौजसः &c." This probably refers to the phenomenon of water sprout.

P. 402. St. 15.—**अयश्चक्रनिभस्य**, Analyse अयसो लोहस्य चक्रं तन्निभस्य समानस्य.—**तमालतालीवनराजिनीला**, Hemádri explains, "तमालानां च तालीनाञ्च वनराज्या नीला । धारापक्षे वनराजिवन्नीला."—**लवणाम्बुराशेः**, Analyse लवणश्चासावम्बुराशिश्च तस्य.—**कलङ्करेखेव आभाति**, Sumativijaya quotes the following from अभिधानचिंतामणि—" वृद्धिरम्भसः."

P. 402. St. 16.—**वेलानिलः**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "वेला काले च जलधेस्तीरनीरविकारयोः" इति विश्वः ।—**संभावयति** is equivalent to मण्डयति.—**आयताक्षि**, Châritravardhana, Vallabha, Sumativijaya, Dinakara and others read आयताक्षं and construe it attributively with आननं.—**मण्डनकालहानेः**, Objective genitive. Châritravardhana explains it as "कुङ्कुमादिना त्वया क्रियमाणस्य मण्डनस्य कालहानेः कालक्षेपस्याक्षममसहमानं &c." And Hemádri has: "मण्डनस्य कालहानेः समयातिक्रमस्य अक्षमं मां वेत्तीव । चंचले दष्टाधरत्वान्मण्डनविलम्बमसहमानं मां ज्ञात्वा वायुस्ते मुखं संभावयतीत्यर्थः".—**बिम्बाधरबद्धतृष्णं**, Hemádri explains it as "बिंबाधरे बद्धा तृष्णा येन तं । बिम्ब्याः फलं बिम्बं बिम्बाकारः अधरः बिंबाधरः । शाकपार्थिवादित्वात्समासः । अन्यथा । "उपमितं व्याघ्रादिभिः सामान्याप्रयोगे," Pánini, II. 1. 56. इति समासे सति अधरबिम्ब इति स्यात् । तथा च वामनः । "बिम्बाधर इति वृत्तौ मध्यमपदलोपिन्याम्" इति । यद्वा । बिम्बमधरं हीनं यस्मादिति." Translate the aphorism :—' A case-inflected word denoting subject of comparison is compounded with the words व्याघ्र ' tiger, ' &c., the latter being the standard of comparison, and in construction with the former ; and the compound is तत्पुरुष; provided that any word expressing the common characteristic (सामान्य) as explained above, is not employed. '

P. 402. St. 17.—**सैकतभिन्नशुक्तिपर्यस्तमुक्तापटलं**, 'strown over with pearls that are thrown out from the oysters broken on the strands.' Hemâdri : "सैकते भिन्नाभिः शुक्तिभिः पर्यस्तं पतितं मुक्तापटलं यत्र तत् । सैकतभिन्नशुक्तीति भिन्नं पदं वा." Châritravardhana: "सिकतामयो देशः सैकतं तत्र भिन्नाभ्यो विवृतमुखीभ्यः शुक्तिभ्यः पर्यस्तं पतितं मुक्ताफलानां पटलं वृन्दं यत्र तत्." And Vallabha: "पुलिनविदीर्णशुक्तिपतितमौक्तिकप्रकरं."—**आवर्जित**°, Hemâdri explains: "आवर्जितानां पूगानां क्रमुकानां माला पङ्क्तिर्यत्र तत् । यथा कुमारसंभवे । "आवर्जिता किञ्चिदिव स्तनाभ्यां." And Châritravardhana has: "आवर्जितानमिता पूगानां गोवाकतरूणां [गूवाततरूणां Mss.] माला श्रेणिर्यत्र तत्."

P. 403. St. 18.—**मृगप्रेक्षिणि**, On this epithet Hemâdri remarks, "मृगप्रेक्षिणीति साभिप्रायं । मृगा हि पश्चात्पश्यति." *Cf.* also "ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्धदृष्टिः" इति S'a. I.—**तावत्** Hemâdri renders it by आदौ, and Châritravardhana and Sumativijaya remark, "तावदित्युपहासे."

P. 403. St. 19.—**क्वचित्पथा संचरते सुराणां** &c., For a parallel idea compare Buddhacharita, Canto VI, Stanza 68. "क्वचित्प्रदध्यौ विललाप च क्वचित् । क्वचित्प्रचस्खाल पपात च क्वचित् । अतो व्रजन्भक्तिवशेन दुःखितश्चचार बह्वीरवशः पथि क्रियाः" ॥—**पततां**, Hemâdri explains, "पतत्पतत्रथाण्डजाः" । देवानामूर्ध्वः पंथास्तदधो वातानां । तदधो मेघानां । तदधः पक्षिणामिति क्रमः । आदियमर्कं । देवपथगतिमाह." Châritravardhana explains it in the same way as Hemâdri.—**सुराणां पथा**. This is higher than the region of the clouds, and this last is higher in its turn than that in which the birds fly.

P. 403. St. 20.—**महेन्द्रद्विपदानगन्धी**, Hemâdri analyses, "महेन्द्रद्विपस्य ऐरावतस्य दानस्य मदस्य गन्धोऽस्यास्तीति । इति सौरभ्यमोघे." And further Hemâdri remarks, "महेन्द्रद्विपदानगन्धीत्यत्र गन्धशब्दस्याल्पपर्यायत्वादल्पस्य दानस्य ग्रहणाद्वायोर्मान्द्यं," and Châritravardhana says, "एतेन सौगन्ध्यं."

P. 404. St. 21.—**द्वितीयं**, The first being that which she already has round her wrist.—**उद्भिन्नवलयः**, Hemâdri explains, "उद्भिन्नं प्रकाशितं विद्युद्वलयं येन स घनः".—**आमुश्चतीव**, 'appears to give.' *Cf.* Hemâdri: "बध्नातीव ददातीव."—**कर्णस्पृष्टः**, Hemâdri remarks, "कर्णेति घनमार्गसंचार उक्तः".—**चण्डि**, Here Hemâdri remarks, "सविद्युतं घनं दृष्ट्वा श्यामवर्णसाम्याद्रामः स्व्यन्तरयुक्त इति सीतायाः कोपोऽभूदिति चण्डिपदं," and gives the substance of the verse in the following words; "विद्युद्दितं मेघं दृष्ट्वा नीलोत्पलदलश्यामो रामः स्त्र्यंतरयुक्त इति सीताया वर्णसाम्यात्कोपवत्तेत्यर्थः." And Châritravardhana and Sumativijaya have the following: "विद्युद्युक्तं मेघमालोक्य वर्णसाम्याच्छ्यामोऽसौ रामः स्त्र्यन्तरसंगीति सीतायाः कोपे समुत्पन्ने जाताभिप्रायस्य चण्डीति संबोधन" The Southern and the Dec-

can Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " चण्डस्त्वत्यन्तकोपनः " इत्यमरः।

P. 404. St. 22.—**नवोटजानि**. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " पर्णशालोटजोऽस्त्रियाम् " इत्यमरः।—**चीरभृतः**, Châritravardhana analyses, " चीरं वल्कलं बिभ्रतीति चीरभृतो मुनयः. " And Hemádri remarks, " चीरचीवरपञ्चरमित्यत्र चीरं वासित्वक् [वाशीत्वक् Ms.,] ? इति क्षीरस्वामी. "—**जनस्थानं**, Hemádri explains it by " खरदूषणादिवासं. " —**आश्रममण्डलानि**. Hemádri renders it by " आश्रमदेशान्. " and Cháritravardhana and Sumativijaya interpret it by "आश्रमसमूहानि."—**अध्यासते**, Hemâdri, Châritravardhana and Sumativijaya explain it by " परिपालयन्ति. "

P. 405. St. 23.—**भ्रष्टं नूपुरं मयादृश्यत**, When Rávana carried away Sitâ, she, in her way to Lankâ, dropped a foot-ornament, hoping that it might give her husband a clue to the direction in which she was taken away, if ever he chanced to pass by the way. See Rámáyana Âranyakánda, Canto 52. " चरणान्नूपुरं भ्रष्टं वैदेह्या रत्नभूषितं। विद्युन्मण्डलसंकाशं पपात धरणीतले ।" Also 64 canto of the same. " पश्य लक्ष्मण वैदेह्याः कीर्णाः कनकबिन्दवः । भूषणानां हि सौमित्रे माल्यानि विविधानि च. " With reference to this foot-ornament Cháritravardhana very ingeniously alludes to the orthodox practice still existing in the old school of the pious Bráhmanas of making a संकल्प or a solemn vow to perform a daily observance of the *Mantra* generally known as अजपा after the morning ablutions attended with the necessary sacred precepts connected therewith. He observes, " अस्मिञ्श्लोके कालिदासकविरिष्टदेवतमंत्रं न्यक्षिपदिति संप्रदायः। स च नूपुरपर्यायवाचित्वाद्धंसः " इति जयः ॥ " मञ्जीरो नूपुरोऽस्त्रियाम् ॥ " Dinakara too, as might be expected, has the same observation. " इह पद्ये कविरिष्टदेवतमंत्रं चिक्षेपेति संप्रदायः." The *Mantra* consists of the syllable " हंसः." By inhaling one's breath the syllable हं is produced and by exhaling the breath the syllable सः is also brought forth; and thus it indicates the mystic syllable सोऽहं of the Vedánta doctrine. The *Mantra* that is given in the Tantra book is as follows: " उच्छ्वासैरेव निःश्वासैर्हंस इत्यक्षरद्वयम् । तस्मात्प्राणश्च हंसाख्य आत्माकारेण संस्थितः ॥ नाभेरुच्छ्वास निःश्वासाद्धृदयाग्रे व्यवस्थितः । षष्टिश्वासैर्भवेत्प्राणः षट्प्राणा नाडिका मताः ॥ षष्टिनाड्यस्त्वहोरात्रं जपसंख्याक्रमो मतः । एकविंशतिसाहस्त्रं षट्शताधिकमीश्वरि ॥ जपति प्रत्यहं प्राणी सान्द्रानन्दमयीं परां । विना जपेन देवेशि जपो भवति मंत्रिणः ॥ अजपेयं ततः प्रोक्ता भवपाशनिकृन्तनी " इति ॥ Thus a pious Bráhmana who after morning devotions makes a संकल्प of this अजपा or अजपाजप has not to mutter any actual जप; but the breaths he takes in and gives out during

day and night make up that जप. The number of the breaths generally amount to 21,600.—**बद्धमौनं**, On this epithet Hemâdri makes the following observation: "यः किल विरही सोऽवश्यं भुवि पतति मौनी भवति." And Châritravardhana has, "अपरोऽपि विरहदुःखवान्भूमौ पतितो मौनतामुपयाति."

P. 405. St. 24.—**आवर्जितपल्लवाभिर्मार्गमदर्शयन्**, On this epithet Hemâdri makes the following remark: "अन्यापि सखी करपल्लवेन प्रियाया मार्गं दर्शयति। लतादिषु चेतनाकार्याङ्गीकारात्सीतायाः प्रभावेन वा नम्रत्वेनानभिभूतां गमननिवारणाय सीतया हस्तेन धारणान्नम्रत्वमिति कश्चित्। भीरुशब्देन संज्ञापूर्वकत्वात्संबुद्धौ न गुण इति कश्चित्। मनुष्यजातौ बाहुल्येन प्रयोगात्। "ऊङुतः," Pâ*n*ini, IV. 1. 66. "इत्यूङंतस्य प्रयोग इति वयं। मार्गानुदेश उक्तः."

P. 405. St. 25.—**दर्भाङ्कुरनिर्व्यपेक्षाः**, Through grief at the capture and carrying away of Sitá by Rávana. *Cf.* Châritravardhana: "भक्षणाद्विरताः."—**मां** *scil.* त्वामन्विष्यन्तं.—**व्यापारयन्त्यः** &c., 'directing their eyes towards the southern quarter.' *Cf.* Hemâdri : "दक्षिणदिगवलोकनात्सीता रावणेन नीतेत्यकथयन्." Châritravardhana and Sumativijaya have : "दक्षिणदिगवलोकनेन रावणेन हृतां सीतामकथयन्नित्यर्थः." See Râmâya*n*a Ara*n*yakâ*n*da, Canto 64. "एते महामृगा वीर मामीक्षन्ते पुनः पुनः। वक्तुकामा इव हि मे इंगितान्युपलक्षये। तांस्तु दृष्ट्वा नरव्याघ्रो राघवः प्रत्युवाच ह। क्व सीतेति निरीक्षन्वै बाष्पसंरुद्धया गिरा। एवमुक्ता नरेन्द्रेण ते मृगाः सहसोत्थिताः। दक्षिणाभिमुखाः सर्वे दर्शयन्तो नभस्थलं। मैथिली ह्रियमाणा सा दिशं यामभ्यपद्यत.'—**उत्पक्ष्मराजीनि**, analyse, "उद्गताः पक्ष्मराजयः पक्ष्मपंक्तयो येषां तानि."

P. 406. St. 26.—**माल्यवतः**, *Cf.* Hemâdri : "माल्यवान् पारियात्रकः." According to the legend this mountain rises from the base of the Meru.—**पुरस्तात्**, 'Yonder.'—**नवं पयो यत्र विसृष्टं** &c., that is, 'where I shed tears at the approach of clouds and the fall of rain.' See Râmâya*n*a Kishkindhâkâ*n*da, Cantos 27–28. "तदा स वालिनं हत्वा सुग्रीवमभिषिच्य च। वसन्माल्यवतः पृष्ठे रामो लक्ष्मणमब्रवीत्। अयं स कालः संप्राप्तः समयोऽद्य जलागमः." *Cf.* Hemâdri: "अत्र वर्षर्तुः दुःखेनातिवाहितः इत्यर्थः." And also Châritravardhana and Sumativijaya: "वर्षाकालस्तु त्वद्विरहदुःखेनातिक्रान्त इत्यर्थः."

P. 406. St. 27.—**शिखिनां**, Hemâdri remarks : "शिखिग्रहणं प्रशंसार्थं."—**अर्धोद्गतकेसरं**, Hemâdri analyses, "अर्धं यथा तथा उद्गतानि केसराणि यस्मात्तत्."

P. 406. St. 28.—**घनगर्जितानि**, Hemâdri analyses, "घनानां मेघानां गर्जितानि। यद्वा। घनानि च तानि गर्जितानि."—**तवोपगूढं** 'an embrace to thee.' Hemâdri says, "उपगूढमिति शेषविवक्षाऽभावात्। "अधिगर्थदयेशां कर्मणि," Pâ*n*ini, II. 3. 52. इति न षष्ठी."—**कम्पोत्तरं**, Châritravardhana explains it to mean, "जलदगर्जितभयात्सकम्पया त्वया क्रियमाणमिति यावत्."

P. 407. St. 29.—**आसारसिक्त** &c. "The vapour rising from the ground recently watered by a shower of rain is here compared to the sacrificial smoke of the altar, that has to be taken by a married couple at the time the marriage ceremony is performed. See St. 22, Canto VII. Sumativijaya quotes the following from अभिधानचिंतामणिः "आसारो वेगवान्वर्षः." The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss "धारासंपात आसारः" इत्यमरः।—**नवकन्दलैः**, Hemádri explains it as "द्रोणी पर्णी स्निग्धकन्दा कन्दली भूकदल्यपि" इति शब्दार्णवः। तथा विक्रमोर्वशीये। "आरक्तराजिभिरियं कुसुमैर्नवकन्दली सलिलगर्भैः। कोपादन्तर्बाष्पे स्मरयति मां लोचने तस्याः" इति. Chá́ritravardhana and Sumativijaya have the following: "तादृशनवकन्दलदर्शनात्त्वत्सुखदर्शनात्स्मृतेत्यर्थः."

P. 407. St. 30.—**खेदात्**, Chá́ritravardhana explains this to mean "श्रमात्," 'Through fatigue:' "दूरादवतीर्णानि एव खेदाक्रमादृष्टिः पंपानाम्नः सरसः सलिलानि वारीणि पिबतीव सादरं पश्यतीत्यर्थः। अन्योऽपि पथि श्रान्तः पानीयं पिबति." the fatigue according to him being caused by the sight having to descend to the waters from a great height. Vallabha does not differ from him when he says, "खेदाक्रमादमूनि पंपासलिलानि पिबतीव। साभिलाषदर्शनात्पंपाजलानि ग्रसतीव। किं भूता दृष्टिः। दूरावतीर्णा खिन्ना विप्रकृष्टावगूढा." And Hemádri has: "दूरावतारेऽमनःपानं युक्तं."—**उपान्तवानीरवनोपगूढानि**, Hemádri, Chá́ritravardhana and Sumativijaya explain it to mean "उपान्ते समीपदेशे तटभागे वा वानीराणां वनैः कुंजरूपगूढान्याच्छादितानि वेष्टितानि वा."—**आलक्ष्यपारिप्लवसारसानि**, On this epithet Hemâdri remarks, "इत्यादरहेतुः."

P. 407. St. 31.—**रथाङ्गनाम्नां**, Hemádri interprets it by "**कोकानां**." But Châritravardhana in his explanation agrees with Mallinâtha.—**सस्पृहं**, On this Hemádri observes: "ममापि कदैवं स्यादिति सस्पृहमित्यर्थः." And Châritravardhana and Sumativijaya have the following to say: "ममाप्येवं कदा भावीति साभिलाषमालोकितेत्यर्थः."

P. 408. St. 32.—**सौमित्रिणा सास्नमहं निषिद्धः**, Chá́ritravardhana and Sumativijaya explain it to mean, "रुदन्सौमित्रिर्मां सांतति निवारयमासेत्यर्थः."

P. 408. St. 33.—**विमानान्तरलम्बिनीनां**, 'Hanging from the ends of the balloon.' Chá́ritravardhana reads "अमूर्विमानान्तविलम्बिनीनां" and explains: "कीदृश्यां विमानस्य पुष्पकस्यान्तं नैकट्यं तत्र विलम्बिनीनां लम्बमानानां &c."—**खमुत्पतन्त्यः**, On this Châritravardhana observes: "स्वजातीयारावभ्रमात्प्रत्युड्डीयमानाः." And Hemádri has: "उत्पतनं च स्वजातीयशब्दभ्रमात्."

P. 409. St. 34.—**उन्मुखकृष्णसारा,** On this Hemádri remarks : "उन्मुखत्वं तु विमानघंटिकाशब्दश्रवणात्। नीलश्यामारामावलोकनेन शब्दबुध्या उन्मुखाः कृष्णसारा मयूरा इति वा." And Cháritravardhana has, "नीलोत्पलदलाभिरामं रामं विलोक्यं जीमूतोऽयमिति भ्रान्तेर्मयूराणामुन्मुखत्वामिति भावः। उक्तश्चान्यत्र। "वीक्ष्य राघवमुपात्तकार्मुकं। सेन्द्रचापनवमेघशङ्कया। तत्र तत्र ननृतुः शिखण्डिनः। दर्शनादुपरि वाहनोन्मुखाः" इति। उपरि विमानदर्शनादौन्मुख्यं." Sumativijaya and Vijayánandasúris'varacharaṇasevaka also produce the same.

P. 409. St. 35.—**स्मरामि सुप्तः,** 'I remember to have slept.' See readings.—**अत्रानुगोदं,** On this epithet Hemádri cites the following from शब्दभेदप्रकाश. "गोदा गोदावरीनद्यां मथुरा मधुरापुरि। कविकं कविकायां च स्याद्गवेधौ गवेधुका" इति. And Châritravardhana has the following: "समुदायेषु प्रवृत्ताः शब्दा अवयवेष्वपि वर्तन्ते" इति न्यायादनुगोदमिति पदैकदेशप्रयोगोऽयं। "भीमो भीमसेनः सत्या सत्यभामा" इतिवत्.

P. 410. St. 36.—**प्रभ्रंशयां यो नहुषं चकार,** The twisting of verbs into their component parts (with or without an intervention of a word) seems to be a most favourite mode of use with our poet. *Cf.* R. IX. St. 61. XVI. St. 86. And also Buddhacharita, Canto VI. stanza 58. "पूजाभिलाषेण च बाहुमान्यादिवौकसस्तं जगृहुः प्रविद्धं। यथावदेनं दिवि देवसंघा दिव्यैर्विशेषैर्महयाञ्च चक्रुः" ॥ The legend of Nahusha is given at length in Mahábhárata Udyoga Parvan Adhs. 10-16. Nahusha was the son of Âyus the eldest son of Purúravas, and father of Yayâti. This king is mentioned by Manu as having come into conflict with the Bráhmaṇas, and his story is repeated several times with variations in different parts of the Mahâbhârata as well as in the Purâṇas, the aim and object of it evidently being to exhibit the retribution, awaiting any man who derogates from the power of Brâhmaṇas and the respect due to them. "By sacrifices, austere fervour, sacred study, self-restraint, and valour, Nahusha acquired the undisturbed sovereignty of the three worlds......Through want of virtuous humility the great king Nahusha was utterly ruined.—*Manu.* One version of the story says that he aspired to the possession of Indráṇí, wife of Indra, when that god had concealed himself for having killed a Bráhmaṇa. A thousand great Munis bore the litter of Nahusha through the air, and on one occasion he touched with his foot the great Agastya, who was carrying him. The sage in his anger cried out, "Fall, thou serpent," and Nahusha fell from his glorious car and became a serpent. Agastya, at the supplication of Nahusha, put a limit to the curse ; and according to one version, the doomed man was released from it by the instrumentality of Yudhishṭhira, when he threw off his huge reptile form, became

clothed in a celestial body, and ascended to heaven." See also Brahma Vaivarta Purána Krishna Janma. Uttar. Also Padma-Purâna; and also Wilson's Vishnu Purána, Vol. IV. p. 45 *note.* compare Buddhacharita, Canto XI. verses 14 and 16. "भुक्त्वापि राज्यं दिवि देवतानां शतक्रतौ वृत्रभयात्प्रनष्टे। दर्पान्महर्षीनपि वाहयित्वा कामेष्वतृप्तो नहुषः पपात" ॥ And "बलेर्महेन्द्रं नहुषं महेन्द्रादिन्द्रं पुनर्ये नहुषादुपेयुः। स्वर्गे क्षितौ वा विषयेषु तेषु को विश्वसेद्भाग्यकुला कुलेषु" ॥ I quote from Vanaparvan Adh. 180, where he was himself relating the legend of Yudhishthira. "नहुषो नाम राजाहमासं पूर्वस्तवानघ। प्रथितः पञ्चमः सोमादायोः पुत्रो नराधिप। क्रतुभिस्तपसा चैव स्वाध्यायेन दमेन च। त्रैलोक्यैश्वर्यमव्यग्रं प्राप्तोऽहं विक्रमेण च। तदैश्वर्यं समासाद्य दर्पो मामविशत्तदा। सहस्रं हि द्विजातीनामुवाह शिबिकां मम। ऐश्वर्यमदमत्तोऽहमवमन्य ततो द्विजान्। इमामगस्त्येन दशामानीतः पृथिवीपते." Hemâdri says, "प्रभ्रंशयामिति नहुषविशेषणं वा." And Châritravardhana and Sumativijaya produce the following legend. "पुरा किल पुरुवंशे नहुषाख्यो नृपस्तपोमहिम्ना शक्रपदं प्राप्य शचीमचीकमत्। सा च सुराचार्यप्रेरितागस्त्यादिमुनिजनवाह्यं चतुरस्रयानमारुह्य यदायास्यसि तदा ङरीकरिष्यामीत्युवाच। सोऽपि तद्योगवद्धादरस्तथा कृत्वा मन्दगामिनमगस्त्यं सर्प सर्पेति जल्पन्पादेनाताडयत्समुत्पन्नमन्युः सोऽपि "सर्पो भव" इति तं शशापेत्याख्यायिका."—**आविलाम्भः परिशुद्धिहेतोः**, *Cf.* Châritravardhana: "अगस्त्योदये जलानि प्रसीदन्तीत्यागमः." The star Agastya or Canopus rises about the 16th July. See note to St. 21, Canto IV.—**मयोनः पशात्**, Hemádri interprets it by "आकाशात्". For this Prayoga see our note to St. 61, Canto IX.—**भौमः**, On this Hemàdri, Châritravardhana and Sumativijaya make the following remark, "इति दिव्यस्थानापेक्षया। स्वर्लोकेऽपि तस्याश्रमसंभवात्."

P. 410. St. 37.—**त्रेताग्निधूमाग्रम्**, 'the top of (the columns of) smoke rising from the three-fold fire.' The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit "वृषादरादित्वादेत्वम्" as cited by the Northern Mss. *Cf.* Hemâdri. "त्रित्वमितः त्रेता स चासौ अग्निश्च त्रेताग्निः।" "त्रेतात्वग्नित्रये युगे." The fires here alluded to are, गार्हपत्य, आवहनीय and दक्षिणाग्नि.—**अग्रं**, because the balloon was passing high in the sky above the sacrificial place.—**आक्रान्तविमानमार्गं**, Hemàdri analyses, "आक्रान्तो व्याप्तो विमानस्य मार्गो आकाशो येन तत्." *Cf.* Hemàdri: "आक्रान्तविमानमार्गत्वं प्राणहेतुः."—**इदं**, 'this that you see.'—**घ्रात्वा रजोविमुक्तः**, 'freed from all impurity by my smelling it.' *Cf.* Hemâdri: "गंधस्याघ्राणात्तद्वतो धूमस्याघ्राणत्वमुपचर्यते." The smoke arising from the sacrificial fire is sacred and purifying. Châritravardhana interprets it by "रजसः पापाद्विमुक्तः &c."—**समश्नुते मे लघिमानमात्मा**, 'my soul enjoys lightness,' *i. e.* feels lightened or disburdened of the impurity (रजः). *Cf.* Hemàdri: "भारभूतरजस्त्यागाल्लघुत्वं."

P. 411. St. 38.—**पञ्चाप्सरो नाम**. Châritravardhana takes this to be the name of the tank and construes विहारवारि as an adjective, and seems to understand some such word as सरः after नाम. *Cf.* " विहारार्थं वारि यस्य तद्विहारवारि । पर्यन्ते वनं यस्य तत्पर्यन्तवनं । पञ्चभिरप्सरोभिः सह जलक्रीडनत्वात्पञ्चाप्सरो नामैतत्सरो । यथा रामायणे । " इदं पञ्चाप्सरो नाम तडागं सार्वकालिकं । निर्मितं तपसा तेन मुनिना मन्दकर्णिना " इति प्रसंगतः. And Hemádri explains this to mean, "पञ्चाप्सरसो यत्र तत् । नाम प्रसिद्धं । पर्यन्तवनं एतद्विहारवारि मेघानानन्तरे आलक्ष्यमिन्दुबिम्बमिव दूरादाभाति । पञ्चाप्सरसः कीर्तनेन सा कुप्यतीति । मानिनीति पदे वनस्य श्यामत्वान्मेघसाम्यं । जलस्य स्वच्छत्वादिन्दोः । माण्डकर्णिः पञ्चाप्सरोभिः क्रीडितुं तडागमकरोत् । तथा रामायणे । " इदं पञ्चाप्सरो नाम तटाकं सार्वकालिकं । निर्मितं तपसा तेन मुनिना माण्डकर्णिना." The order of the words पञ्चाप्सरो नाम विहारवारि would perhaps appear to justify Mallinátha's intrepretation rather than that of Châritravardhana, though not necessarily. But it would be preferable to interpret with Châritravardhana. Hemâdri appears to interpret with Mallinátha. See readings. Sumativijaya too interprets with Châritravardhana. See Râmâya*n*a Âra*n*yakâ*n*da, Canto 9. " ते गत्वा दूरमध्वानं लम्बमाने दिवाकरे । ददृशुः सहितो रम्यं तटाकं योजनायतं । ....प्रसन्नसलिले रम्ये तस्मिन्सरसि शुश्रुवे । गीतवादित्रनिर्घोषो न तु कश्चन दृश्यते ।.........इदं पञ्चाप्सरो नाम तटाकं सार्वकालिकं । निर्मितं तपसा राम मुनिना माण्डकर्णिना । स हि तेपे तपस्तीव्रं माण्डकर्णिर्महामुनिः । दशवर्षसहस्राणि वायुभक्षो जलाशये ।.........ततः कर्तुं तपोविघ्नं सर्वैर्देवैर्नियोजिताः । प्रधानाप्सरसः पञ्च विद्युच्चलितवर्चसः । अप्सरोभिस्ततस्ताभिर्मुनिर्दृष्टपरावरः । नीतो मदनवश्यत्वं देवानां कार्यसिद्धये । ताश्चैवाप्सरसः पञ्च मुनेः पत्नीत्वमागताः । तटाके निर्मितं तासां तस्मिन्नन्तर्हितं गृहं । तत्रैवाप्सरसः पञ्च निवसन्त्यो यथासुखं । रमयन्ति तपोयोगान्मुनिं यौवनमास्थितं । तासां संक्रीडमानानामेष वादित्रनिस्वनः । श्रूयते भूषणोन्मिश्रो गीतशब्दो मनोहरः " ॥

P. 411. St. 39.—**पुरा**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit पूर्वस्मिन्काले after पुरा.—**कूटबन्धं** &c., 'enticed into the snare of the youth of five nymphs,' a figure probably suggested by चरन्मृगैः सार्धं in the second line. The word कूट signifies any thing that is treacherous, any thing that *appears* harmless but is really not so. It primarily means deceit, trick or fraud and hence a trap for catching deer. *Cf.* Châritravardhana and Sumativijaya: " यथा कूटयंत्रेण संदानितानां कुरङ्गाणामन्यत्र गमनाभावस्तथा अमुष्यापि यतेः स्यादिति । यौवनकूटयंत्रेण बद्धत्वादन्तस्ताभिरेव रमते इति भावः ". And they explain: " यौवनमेव बन्धं कूटयंत्रमुन्मादार्थं &c. " And Hemádri explains it to mean: " कूटेन बद्ध्यतेऽस्मिन्निति ".—**दर्भाङ्कुरमात्रवृत्तिः**, Hemâdri analyses, " दर्भाङ्कुरा एव दर्भाङ्कुरमात्रं तेन वृत्तिर्यस्य सः. " And further observes: " कूटबन्धोपादानं दर्भाङ्कुरमात्रवृत्तित्वं च मृगसाम्यसूचकं. "

P. 412. St. 40.—**प्रसक्तसंगीत** &c. *Cf.* Châritravardhana and Sumativijaya: "प्रसक्तं समारब्धं संगीतं यत्र तथाभूतोऽयं मृदङ्गानां घोषः शब्दः". And Hemádri explains it to mean, "प्रसक्तं संगीतं नृत्यगीतवाद्यात्मकं मृदङ्गानां घोषः," and further observes: "प्रेक्षार्थं गीतवाद्य तु सङ्गीतकमुदाहृतं" इति हलायुधः। सङ्गीतलक्षणं तु रत्नाकरे [सङ्गीतरत्नाकरे तु Ms.]। "नृत्यं वाद्यं तथा गीतं त्रयं संगीतमुच्यते".—चन्द्रशालाः. Hemádri and Châritravardhana render it by "शिरोगृहाणि." But चन्द्रशाला is a room on the top of a house. so called probably because it is intended for the enjoyment therefrom of moonlight.—अभ्रलिहितसौधभाजः, Hemádri, Châritravardhana and Sumativijaya explain this to mean. "सरोवरजलैरन्तर्हितमाच्छादितं सौधं। सुधया धवलितं गृहं सौधं। तद्भजतामंतर्हितसौधभाक्तस्य."

P. 412. St. 41.—**हविर्भुजामेधवतां चतुर्णां**, Pandit observes, 'this refers to what is called the पञ्चाग्निसाधनं, or a kind of mortification practised between four fires, one in front, one behind and one on either side, and the summer sun shining on the head as the fifth. The votary standing between these fires and heated by the sun over his head practises penance, with the view of obtaining supernatural powers.' Analyse हवींषि भुञ्जन्ते येस्तेषां. *Cf.* Hemádri: "एधाः काष्ठानि विद्यन्ते येषां तेषां। एधशब्दोऽकारान्तः"—सुतीक्ष्णः, Ráma dwelt some time in the peaceful hermitage of this sage during his journey through the Da*n*daká forest. See Rámáya*n*a Âra*n*yakâ*nda*, Canto 9.

P. 412. St. 42.—**सहासप्रहितेक्षणानि**, 'In which they cast their eyes upon him as if through fear.' Vallabha explains it to mean, "सवक्त्रविकारप्रक्षिप्तकटाक्षाणि".—**जनितेन्द्रशंकम्**. Analyse जनिता इन्द्रस्य शङ्का भयं येन तं तथोक्तं.—**व्याजार्धे** &c., The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "पुंस्यर्धोऽर्धं समेंऽशकं" इति विश्वः।

P. 413. St. 43.—**कुशसूचिलावं**, Châritravardhana appears to interpret better than Mallinátha, for he says, "कुशाः सूचय इवाल्पप्ररोहात् लुनातीति। कर्मण्यण्." That is, he takes it as an उपमितसमास. Hemâdri interprets it as: "कुशानां सूचीर्लुनातीति लावस्तं." His interpretation too is not happy.—**सभाजने**, Châritravardhana remarks: "प्रीत्युत्पादनार्थमेतत्," and further observes, "निमित्तात्कर्मयोगे" *Várlika* 1490। चर्मणि द्वीपिनं हन्तीतिवत्सप्तमी। सभाजनीतिदर्शनयोरित्यस्माच्चौरादिकाल्ल्युट्। मृगाणामिति कर्मणि षष्ठी." See Apte's guide 92, p. 67. third *edition*.—**इतः**, Sumativijaya renders it by "अस्यां दिशि."

P. 413. St. 44.—**वाचंयमत्वात्**. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. "वाचंयमपुरंदरौ" इति सुम्।—**किंचित्**, should be taken as an indeclinable adjective qualifying कम्पेन or as an adverb qualifying प्रतिगृह्य. किंचिन्मूर्ध्नः कम्पेन is then equivalent to मूर्धानं किंचित्कम्पयित्वा.

P. 414. St. 45.—**शरभङ्गनाम्नः**, Ráma lived in the hermitage of this Muni on his journey towards the south. See Rámâya*n*a Âra*n*ya-ká*n*da, Canto 5.—**मन्त्रपूतां तनुमप्यहौषीत्**. *Cf.* Hemâdri, Châritra-vardhana and Sumativijaya, "शरभङ्गो महातेजाः प्रविवेश हुताशनं" इति रामायणोक्तिः. S'arabha*n*ga sacrificed himself to fire on a funeral pile. See Ràmáya*n*a Âra*n*yaká*n*da, Canto 5.

P. 414. St. 46.—**भूयिष्ठसंभाव्यफलेषु**, Châritravardhana, Sumativijaya, and Vallabha interpret संभाव्यानि by प्राप्यानि, "अतिशयेन संभाव्यानि प्राप्यानि फलानि येभ्यस्तेषु" says Vallabha. "भूयिष्ठं बहुतरं संभाव्यानि प्राप्यानि फलानि येषु तेषु। पुत्रेष्वपि योज्यं" says Chàritravardhana.—**सुपुत्रेष्विव स्थिता**, *Cf.* Vallabha, "यथा पितर्युपरते सत्पुत्र आगन्तूनानन्दयति तथा तरव इत्यर्थः." —**तस्य**, Chàritravardhana takes this with आश्रमपादपेषु. Hemádri, Vallabha and Mallinàtha construe it better than Châritravardhana. Vallabha does not construe तस्य with अतिथीनां as Pandit observes. See his commentary.

P. 414. St. 47.—**धारास्वनोद्गारिदरीमुखः**, Hemádri explains this to mean, "उद्गिरतीति उद्गारि धाराणां स्वनोद्गारि दरी एव मुखं यस्य सः। यद्वा। धारया स्वनन्तं उद्गारि उच्चरितं दरी एव गुंफा एव मुखं यस्यासौ." And further he observes, "वृषपक्षे धारास्वनः उत्कर्षस्वनः। दरीवन्मुखं यस्य। शृङ्गाग्रे लग्नः अम्बुदवप्रपंको यस्येति." And Chàritravardhana has the following: "धारास्वनो निरन्तरनिनदस्तदनुकारि वातपूरितत्वाद्दरीमुखं यस्य स तथा। अपरत्र। दरीतुल्यं मुखं यस्येति सः। शृङ्गाग्रे लग्नोम्बुद एव वप्रक्रीडावशात्पङ्को यस्य तादृशः." —**ककुद्मान्**, Hemàdri says, "ककुत्ककारान्तः। यवादित्वाद्वत्वाभावः."

P. 415. St. 48.—**विदूरान्तरभावतन्वी**, 'Thin on account of the intervention (*lit.* existence) of a long distance,' *i. e.*, because there lies a great distance between it and us.—**नगोपकण्ठे**, Hemádri discusses, "नगोपकण्ठे तृतीयासप्तम्योर्बहुलमित्यभावाभावपक्षे रूपं."

P. 415. St. 49.—**यवाङ्कुरापाण्डुकपोलशोभी**, Mallinâtha expounds this compound "यवाङ्कुरवदापाण्डौ कपोले शोभी शोभते यः." On this Pandit remarks that the meaning of the poet seems to be आपाण्डुकपोलयोर्यवाङ्कुरवच्छोभत इति *i. e.* the ear ornament (अवतंस) made of the Tamála

leaves shone like blades of Yavas on the slightly white cheeks &c.; and dissolves the compound thus: आपाण्डू च कपोलौ च आपाण्डुकपोलौ। यवाङ्कुरवदापाण्डुकपोलयोः &c. But the compound cannot give that meaning; the adverb यवाङ्कुरवत् cannot, according to the rules, be placed so separate from the word it qualifies. And the meaning which Pandit assigns to the passage in question can also be inferred from the dissolution of the compound which Mallinátha gives. Mallinâtha's way of expounding the compound is rather ambiguous. It is not clear to what epithet he construes यवाङ्कुरवत्.—**मयावतंसः**, On this epithet Hemâdri remarks: " वतंस इति पक्षे " वष्टि भागुरिरल्लोपमवाप्योरुपसर्गयोः" इत्यल्लोपः. "

P 416. St. 50.—**अनिग्रहत्रासविनीतसत्त्वम्**, Analyse न निग्रहोऽनिग्रहः अनिग्रहेणाशिक्षया त्रासो येषां ते अनिग्रहत्रासा दण्डभयरहिता अपि विनीताः सत्त्वाः जन्तवो यस्मिंस्तत् —**आविष्कृतोदग्रतरप्रभावं**, Châritravardhana analyses " आविष्कृतः प्रकटीकृतः उदग्रतरः अधिकः प्रभावो यत्र तत्. "

P. 416. St. 51.—**सप्तर्षिहस्तोद्धृतहेमपद्मां**, not after she was turned into the आश्रम by Anasûyâ, but the epithet, like त्र्यम्बकमौलिमालाम्, is employed to signify how difficult was the task that Anasûyâ undertook and performed.—**अनसूया प्रवर्तयामास**, *Cf.* Râmâya*n*a Ayodhyâkâ*nd*a, Canto 117. Bom. edi. " दशवर्षाण्यनावृष्ट्या दग्धे लोके निरन्तरं। यया मूलफले सृष्टे जाह्नवी च प्रवर्तिता। उग्रेण तपसा युक्ता नियमैश्चाप्यलंकृता &c." **On** सप्तर्षि &c., Hemádri gives the following note: " सप्तर्षिरित्यादिना आकाशस्थत्वं सूचितं। हेमपद्म इति पुण्यत्वं। सप्तऋषयस्तु वाराहिसंहितायां। " सैकावलीव राजति ससितोत्पलमालिनी सहासेव। नाथवतीव च दिग्यैः कौबेरी सप्तभिर्मुनिभिः॥ पूर्वे भागे भगवान्मरीचिरपरे स्थितो वसिष्ठोऽस्मात्। तस्याङ्गिरास्ततोऽत्रिस्तस्यासन्नः पुलस्त्यश्च॥ पुलहः क्रतुरिति भगवानासन्नानुक्रमेण पूर्वाद्याः। तत्र वसिष्ठं मुनिवरमुपाश्रितारुन्धती साध्वी" इति। See B*r*ihatsanhitá, *Bibli. Indi. series* p. 85. verses 1, 5, 6. ये तु प्रवराध्याये ऋषयस्ते तु अष्टौ। तथा स्मृत्यर्थसारे। " जमदग्निभरद्वाजविश्वामित्रात्रिगौतमाः। वसिष्ठकश्यपागस्त्या मुनयो गोत्रकारिणः" इति *Cf.* also Ku. I. verse 16. " सप्तर्षिहस्तावचितावशेषाण्यधो विवस्वान्परिवर्तमानः. "

P. 416. St. 52.—**समध्यासितवेदिमध्याः**, ' taking their seats, as it were, in the middle of their *Vedis.*' ' Vedi is the name of the space bounded by the enclosure round the bottom of the tree made for the reception and retention of water and manure. Vedi is also the name of any piece of ground consecrated for a seat of a sage engaged in devout meditation,' says Pandit. Vedi or Vediká means a raised spot of ground prepared for auspicious purposes; a quadrangular spot before a temple or a palace; it also means an open shade in the

middle of a courtyard &c. *Cf.* Mallinātha "वेदिः परिष्कृता भूमिः". Chāritravardhana translates वेदिबन्धः by "मूलपिण्डिका."—**निवातनिष्कम्पतया,** Hemādri explains it to mean, "वातस्याभावो निवातं तेन निष्कम्पतया निश्चलतया &c."—**वीरासनैः,** Hemādri and Vallabha define it as, "चतुर्वर्गचिंतामणौ तु व्रतांगभूतनियमप्रशंसायां गरुडपुराणे । "उत्थितस्तु दिवा तिष्ठेदुपविष्टस्तथा निशि एतद्वीरासनं प्रोक्तं महापातकनाशनं." And further Vallabha says, "अङ्गुष्ठाग्रैरुर्ध्वबाहुभिः सूर्यावलोकनं वीरासनं." The definition which Mallinātha gives in his commentary is also given by Hemâdri, Châritravardhana and Sumativijaya in their respective commentaries.

P. 417. St. 53.—**राशिर्मणीनामिव गारुडानां,** 'like a heap of emeralds,' referring to the emerald leaves of the tree.—**सपद्मरागः फलितो विभाति,** 'shines with his fruits (as if it were studded) with rubies.'—**उपयाचितः.** Hemādri defines, "दीयते यत्तु देवेभ्यो मनोराज्यस्य सिद्धये । उपयाचितकं दिव्यं दोहदं तद्विदुर्बुधाः" इति.—**प्रतीतः,** Hemādri renders it by "प्रसिद्धः," and Chāritravardhana and Sumativijaya by "प्रख्यातः."

P. 417. St. 54.—**उत्खचितान्तरा,** Analyse उत्खचितं प्रोतमन्तरं यस्याः सा.

P. 418. St. 55.—**प्रियमानसानां,** That the Rājahansas or flamingoes love to repair to the lake Mānasa during the rainy season when the waters of the rivers &c., become turbid is a poetic fiction or कविसमयप्रसिद्धिः. *Cf.* Sâhityadarpa*n*a "तोयाधारेऽखिलेऽस्मिन्प्रसरति मरालादिकः पक्षिसंघः । ज्योत्स्ना पेया चकोरैर्जलधरसमये मानसं यान्ति हंसाः." It seems, however, that they were migratory birds.—**कादम्बसंसर्गवतीव,** On this Châritravardhana remarks: "कलहंसानामीषद्धूसरपक्षत्वाद्यमुनातरंगसादृश्यं । उक्तं च । "कादम्बास्तु कलहंसाः पक्षैः स्फुरति धूसरैः" इत्यभिधानचिन्तामणौ । अन्यत्र । कालागुरुः कृष्णागुरुस्तेन दत्ता पत्रावली यस्याः सा चंदनेन मलयजेन कान्तिना रचिता भुवः पृथिव्या भक्तिर्विच्छित्तिरिव."—**भक्तिर्भुवश्चन्दनकल्पितेव,** 'like a piece of floor ornamented with white sandal, and bearing on it ornamental leaves described by means of black sandal.'

P. 418. St. 56.—**रन्ध्रेष्विवालक्ष्यनभःप्रदेशाः,** Châritravardhana explains it to mean: "अन्यत्र । रन्ध्रेष्वालक्ष्य ईषद्दृश्यो नभस आकाशस्य प्रदेशो यस्याः शुभ्रा धवला शरदभ्रस्य शरत्कालघनस्य लेखेव । आकाशनीलिम्नो लोकप्रसिद्धिसिद्धत्वाद्यमुनातरंगसाम्यं." And Hemâdri says, "नभो नीलमिति प्रसिद्धिः."

P. 418. St. 57.—**कृष्णोरगभूषणा,** The black serpents are described as one of the uncouth ornaments of the god of Death.—**भिन्नप्रवाहा यमुनातरंगैः,** 'Broken into by the ripples of the Yamunâ, *i. e.,* with whose stream the Yamunâ has mixed its waters.

P. 419. St. 58.—**नास्ति शरीरबन्धः**, *Cf.* Kâs'ikhanda Adh. 22. " स्नायायोऽभिषन्मोक्षमन्यान्कामान्विहाय च । सोऽपि मोक्षमवाप्नोति कामदात्तीर्थराजतः. " *Cf.* Hemâdri: " तथा श्रुतिः । " सितासिते सरिते यत्र संगते " इत्यादि । " या गतिर्योगयुक्तस्य तत्त्वज्ञस्य मनीषिणः । सा गतिस्त्यजतः प्राणान् गंगायमुनसंगमे " इति स्मृतिः. And Châritravardhana and Sumativijaya have the following: " सितासिते यत्र सरितौ संगमे तत्राप्लुता दिवमुत्पतन्ति " इति । " ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरास्ते वै जना अमृतं भजन्ते " इत्यन्या श्रुतिः.—**अभिषेकात्पूतात्मनां**, On this Hemâdri remarks: " इति स्नानस्यापि महाफलत्वोक्तिः. " —**तत्त्वावबोधेन**, Châritravardhana interprets it by " ब्रह्मज्ञानेन. "

P. 420. St. 59.—**पुरं निषादाधिपतेरिदं तत्**, *i. e.* शृङ्गवेरपुरं. In some Mss. शृङ्गिवेरं.—**जटासु बद्धासु**, *Cf.* Adhyâtma Râmâyana, " वटक्षीरं समानाय्य जटामुकुटमादरात् । बबन्ध लक्ष्मणेनाथ सहितो रघुनन्दनः. "—**निषादाधिपतेः**, Analyse निषादानां कैवर्तनामधिपतेः स्वामिनो गुहस्य.

P. 420. St. 60.—**ब्राह्मं सरः**, Hemâdri explains: " ब्रह्मण आगतं ब्राह्मं ब्रह्मकमण्डलोरित्यर्थः. "—**बुद्धेरिवाव्यक्तमुदाहरन्ति**. ' Whose origin, sages declare, is the lake Bráhma, like as the *Invisible Principle* is the origin of intelligence. ' Hemâdri explains it to mean: " बुद्धेरव्यक्तं मूलप्रकृतिकारणमिव । अनुत्पादितकार्याणि सत्त्वरजस्तमांसि मूलप्रकृतिः । यथा कुसूलस्य व्रीहयो विष्णावप्यजिताव्यक्ताविन्यत्राशब्दादव्यक्तं प्रकृतिरिति क्षीरस्वामी. " And Châritravardhana has: " बुद्धेर्महत्तत्त्वस्य कारणं प्रकृतिं कथयन्ति । " कथयन्त्येवं सांख्या महदाद्याः प्रकृतिविकृतयः सप्त " इति । " प्रकृतेर्महांस्ततोऽहंकारस्तस्माद्गणश्च षोडशकः । तस्मादपि षोडशकात्पञ्चभ्यः पञ्चभूतानि " । " अभिमानोऽहंकारस्तस्माद्द्विविधः प्रवर्तते सर्गः । एकादशकश्च गणस्तन्मात्रः पञ्चकश्चैव " Sánkhya Káriká verses 22-24. तत्त्वकौमुद्यां प्रस्तावादर्लेखि । " And Vallabha has: " यथा सांख्या योगिनोः बुद्धेरव्यक्तं कारणं वदन्ति । यदुक्तं । " अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे । रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके " इति । अव्यक्तात्किल बुद्धिरुत्पद्यते सांख्याः " See our note to St. 18, Canto X. —**आप्तवाचः**, Hemâdri explains: " आप्ताश्च ता वाचश्च पुराणानि । आप्तानां यथार्थदर्शिनां यथादृष्टार्थवादिनां वाचः पुराणाद्याः. " And Sumativijaya remarks, " यथा बुद्धेः कारणमाप्तवाचो वेदास्तथा सरय्वाः कारणं मानससरोवरं इत्यन्वयः. "

P. 420. St. 61.—**अवभृथावतीर्णैः**. See our note to St. 18, Canto IX.—**जलानि या तीरनिखातयूपा**, *Cf.* St. 35, Canto XVI.—**राजधानीम्**, Explain, राजानो धीयन्तेऽस्यां तां तथोक्ताम्.—**पुण्यतरीकृतानि**, Hemâdri explains, " अतिशयेन पुण्यानि पुण्यतराणि ततश्च्विः । यद्वा । नौस्तरणी तरीः. " Vallabha too has the same.

P. 421. St. 62.—**उत्सङ्ग°**, suggested probably by धात्री, in the third line.—**संभावयाति**, ' honours, ' ' venerates, ' ' pays respects to. ' —**सामान्यधात्रीमिव**, both Hemâdri and Châritravardhana render धात्री by उपमाता.

P. 421. St. 64.—**हनूमत्कथितप्रवृत्तिः**, Hemâdri explains, " हनुर्वदनैकदेशः कुत्सितो यस्य " इति निन्दायामतुप् । " अन्येषामपि दृश्यते " Pâṇini, VI. 3. 137. इति दीर्घः । यथा पुरुषः पूरुषः इति । तस्य हि किल जातमात्रस्य रविरथमुत्पत्य पक्वं फलमिति रविं जिघांसो रणे हनुर्भग्ना इति श्रूयते । " हनूमान् हनुमानपि " इति शब्दभेदप्रकाशे । भरतस्य वार्तानिवेदनार्थं हनुमान् प्रेषितः इत्यनेनैव ज्ञेयं । श्रीरामवनप्रवेशसमये रामचतुर्दशवर्षेष्वतिवाहितेषु समनन्तरं दिने मध्याह्नसमये यदि भवान्नागतस्तदाग्निं प्रवेक्ष्यामीति भरतस्य प्रतिज्ञापि सूचिता. "

P. 422. St. 65.—**त्वामिव लक्ष्मणो मे**, When Râma went out to fight with the demons Khara and others he ordered Lakshmaṇa to protect Sitâ. *Cf.* Hemâdri: " खरदूषणत्रिशिरसां युद्धे सीता सौमित्रिहस्ते स्थापिताभूत् । तथा द्वादशे सर्गे । " निदधे विजयाशंसां चापे सीतां च लक्ष्मणे " इति.—**पालितसंगराय,** Hemâdri, Châritravardhana and Sumativijaya explain it to mean, " पालितः संगरश्चतुर्दशवर्षाणि वनवासरूपा रावणवधविषया वा प्रतिज्ञा येन तस्मै । " प्रतिज्ञाजाग्रश्च संगरः " इत्यभिधानचिंतामणिः. "

P. 422. St. 66.—**पदातिः** Hemâdri analyses, " पादाभ्यामतति गच्छतीति पदातिः. " And further discusses, " अज्यतिभ्यां च " " पादे च " Uṇâdi Sûtras, 569 and 570. S. K. p. 336. इत्यौणादिक इण् । " पादस्य पदाज्याति° " Pâṇini, VI. 3. 52. इति पद्भावः " । —**पश्चादवस्थापितवाहिनीकः**, On this Hemâdri remarks, " इति वीर्योक्तिः", and Châritravardhana says, " इति विनयोक्तिः".—**वृद्धैरमात्यैः**, Hemâdri says, " विजयधर्मपालसिद्धार्थसुमंत्रराष्ट्रवर्धमानाद्यैः ".—**चीरवासाः**, Analyse चीरं मुनिवस्त्रं वासो यस्य सः.—**अर्घ्यपाणिः,** Hemâdri explains it to mean, " अर्घायेदमर्घ्यं अर्घ्यं पाणौ यस्य सः । गड्वादेः परा सप्तमी । अर्घ्यसहितः पाणिर्यस्येति शाकपार्थिवादिर्वा. "

P. 423. St. 67.—**अभ्यस्यतीव व्रतमासिधारं,** The present tense, as here used, denotes that Bharata still observed the difficult vow. On आसिधारं Hemâdri gives the following, " असिधारायाः संबंधि व्रतं । व्रतस्थेन चिरकालमेकशयनस्थितापि स्त्री नोपभुज्यते तदसिधाराव्रतं । " अन्तर्निवृत्तसंगः स्यादसिधाराव्रतं हि तत् " इति वैजयन्ती. And Châritravardhana and Sumativijaya have, ' युवा युवत्या सध्याय पूर्वं भर्तृवदाचरेत् । अन्तर्निवृत्तसंगः स्यादासिधारव्रतं हि तत् " । " यत्रैकशयनस्थापि प्रमदा नोपभुज्यते । असिधाराव्रतं नाम वदन्ति मुनिपुंगवाः" । अथ वा । " शयने मध्ये खड्गं विधाय स्त्रीपुंसौ यत्र ब्रह्मचर्येण स्वपितस्तदसिधाराव्रतमिति कश्चित्." And Vallabha gives the following : " यदेकशयनस्थापि प्रमदा न भुज्यते तदासिधारं व्रतं."—**इयन्ति वर्षाणि**, Hemâdri and Châritravardhana interpret it by " चतुर्दश वर्षाणि. "

P. 423 St. 68.—**ज्योतिष्पथात्** , Here both Hemâdri and Châritravardhana quote the following aphorism : " इसुसोः सामर्थ्ये," Pâṇini, VIII. 3. 44. इति वा षत्वं.

P. 424. St. 69.—**भङ्गिरचितस्फटिकेन मार्गेण,** ' by a flight of steps made of marble.' भङ्ग्या, in the form of steps or a flight of steps.—**अदूरमहीतलेन**, the last step of which series was very near the ground.

P. 424. St. 70.—इक्ष्वाकुवंशगुरवे, Hemâdri discusses, "इति कर्मणि-द्वितीया न्याय्या "क्रियया यमभिप्रैति" इति चतुर्थीतिरूपमालायां। कुमारसंभवे च। "प्रणम्य शितिकण्ठाय" इति. And Châritravardhana has, "क्रियाग्रहणमपि कर्तव्यं" इति चतुर्थी.—मूर्धनि चोपजघ्रौ, On this Hemâdri remarks: "प्रेमातिशये एष वृद्धाचारः," and Châritravardhana has: "इत्यनेन प्रेमाधिक्यं."—पर्यश्रुः, Hemâdri says, "अश्रु परिगतः पर्यश्रुः। "कुगतिप्रादयः," Pâ*n*ini, II. 2. 18. इति समासः. Translate the aphorism:—'The indeclinable word कु 'bad,' the particles called गति, and the prepositions प्र, &c., are invariably compounded with other words with which they are in construction; and the resulting compound is Tatpurusha.'

P. 424 St. 71.—श्मश्रुप्रवृद्धिः, the ministers had not shaved their beards during Râma's exile for fourteen years, as a token of their sympathy with his misfortune. See readings.

P. 725. St. 72.—व्युत्क्रम्य लक्ष्मणमुभौ भरतो ववन्दे. Châritravardhana explains it to mean, "रघुनन्दनेन रामेण कथितावभिहितावुभौ सुग्रीवविभीषणौ लक्ष्मणं व्युत्क्रम्य रामनमस्क्रियान्तरोचितं लक्ष्मणाश्लेषं विहाय भरतो ववन्दे नमश्चकार। अथ वा। लक्ष्मणं व्युत्क्रम्य लक्ष्मणप्रणतिं परित्यज्य तौ ववन्दे इति व्याख्यायां लक्ष्मणस्य ज्येष्ठत्वं प्रतीयते इति."

P. 425. St. 73.—सौमित्रिणा तदनुसंससृजे. 'Thereupon he met the son of Sumitrá.' The root सृज् with सम् means to meet, and governs the person met in the Instrumental case. —स. *scil.* सौमित्रिः, and एनम् the latter *scil.* भरतं. एनम् refers to the nominative of संससृजे. 'Whatever may be the necessity, observes Pandit, of construing one part of the Râmâya*n*a in accordance with another, it is not necessary to distort the verses of Kalidasa to make them conform to the particulars of the story related by Valmiki. I would accordingly refer नम्रशिरसं and अग्य भुजमध्यं to Bharata and not to Lakshma*n*a. Moreover, the words व्युत्क्रम्य लक्ष्मणं in the previous stanza show pretty clearly that Kálidása regarded, at least in this part of the poem, Bharata to be younger than Lakshma*n*a.' And this remark of Pandit is correct as far as the text of Kálidása is concerned. Châritravardhana explains it to mean "लक्ष्मणस्य ज्येष्ठत्वं त्वन्यथा व्याख्येयं। स च लक्ष्मणः प्रणमन्तमेनं भरतमुत्थाप्यास्योरःस्थलेनास्य भरतस्य भुजमध्यं क्रियाविशेषणत्वालिङ्गत." And Hemâdri has सौमित्रिरेनं नम्रशिरसं भृशमालिलिङ्ग च। नम्रशिरस्त्वं च भरतस्य रामानुगमनयुद्धशुश्रूषाद्यभावादित्येके। यद्वा। भरतः सौमित्रिणा संससृजे। किं कृत्वा। एनं लक्ष्मणं प्रणतं उत्थाप्यैनं भृशमालिलिङ्गेति योज्यमिति." Both Hemádri and Vallabha are correct in their interpretation of this stanza. It would not be proper to interpret this stanza according to the story given

in Râmâyana by Válmiki. Kálidâsa might have based this account of his poem according to a different version of the national epic. —दुर्जातबन्धुः &c., See readings. Vallabha remarks : "तथा चोक्तं । आहारं यस्य न प्रीतिः का प्रीतिरितरे जने &c."—रूढेन्द्रजित्प्रहरणव्रणकर्कशेन, analyse, "रूढानि जातानि इन्द्रजितो रावणेः प्रहरणेनायुधेन यानि व्रणानि क्षतानि तैः कर्कशस्तेन."

P. 426. St. 74.—शैलाधिरोहणसुखानि, 'The pleasure of sitting on mountains.'—तेषु क्षरत्सु, denotes how the elephants looked like the mountains, from which streams of water dripple down.—बहुधा, Hemádri renders it by "सप्तभिः प्रकारैः," and says, "बहुगणवतुडति संख्या," Pànini, I. 1. 23. इति संख्यात्वे "संख्याया विधार्थे धा" Pânini, V. 3. 42. इति। Translate the aphorisms·—'The words बहु 'many', गण 'class', and the words ending in the affix वतु (V. 2. 39), and डति (V. 2. 41.) are called numerals'. When the words बहु and गण mean 'abundance' and 'multitude', they are not संख्या. It is only when they are expressive of numbers, that they obtain the designation of संख्या. The necessity of defining संख्या arose in order to exclude such words as भूरि 'numerous &c.,' which though they express numbers are not to be treated as numerals, technically so called. 'The *Taddhita* affix धा (क्रियाप्रकारार्थे) is employed to numerals when it forms adverbs of distribution.'

P. 426. St. 75.—क्षणदाचराणाम्, Analyse क्षणदासु रात्रिषु चरन्तीति क्षणदाचरास्तेषां रक्षसां.—मायाविकल्परचितैः, 'made according to the designs formed in a mere act of imagination,' Máyávikalpa literally means a thought of माया or magic, bringing into the mind that such and such a thing should be accomplished by माया. The cars of Bibhishana, who, being a demon, was possessed of magical powers, had not to be made by means of slow art but had only to be imagined and at once sprang into existence : whereas those of Ráma had to be built by art, aud as no art could give form to all acts of imagination, the cars of Râma were expected to be inferior, but indeed they were superior to those of Bibhìshana.

P. 427 St. 76.—बुधबृहस्पतियोगदृश्यः, On this Hemâdri makes the following remark, "सज्ज्ञीकरणार्थं शत्रुघ्नः पुर्यामेव स्थितः । अतो बुधगुरुयोगसाम्यं [बुधबृहस्पतियोगसाम्यं Ms.] ".—दोषातनम्, On this Hemâdri remarks, "[तदानीं] ग्रहाणां सच्छायत्वात्."—तरलविद्युदिव, Hemâdri remarks, "इति पताकासाम्यं".

P. 427. St. 77.—प्रलयादिवोर्वी, On this Hemâdri remarks, "इति भूतपूर्वः सर्वथानाशः सूच्यते."—इन्द्रो रुचमिव, Hemâdri observes : "इति कान्त्यतिशयोक्तिः".

P. 428. St. 78.—ज्येष्ठानुवृत्तिजटिलं, 'The hair on which had become matted on account of his conduct which imitated that of his elder brother.'—लङ्केश्वर &c., Châritravardhana reads लङ्केश्वरप्रणयभङ्गदृढव्रतं and interprets thus : "लङ्केश्वरस्य प्रणयः स्नेहस्तद्भङ्गे दृढं व्रतं यस्य तत् &c." Dinakara, as might be expected, reads the same.

P. 428. St. 79.—क्रोशार्धं, 'half a kosa'. Mallinâtha explains it by क्रोशैकदेशं. '*a half of a kosa,*' in accordance to the rule that the neuter substantive अर्धं means exactly equal parts or bisection of the whole. And the adjective अर्धः means a part, not necessarily a half. Kâlidâsa appears to have observed the rule with scrupulousness. —आर्यः, Hemâdri renders it by "महाकुलीनः".—प्रकृतिपुरःसरेण, On this Hemâdri observes : "शत्रुघ्नस्य पुरःसरकरणे ज्यायस्त्वाद्रामं प्रत्युद्गमनं नोक्तं."

Canto XIV.

P. 429. St. 1.—**प्रणाशात्**, Hemâdri says, " उपसर्गादसमासेऽपि णोपदेशस्य ", Pâṇini. VIII. 4. 14. इति णत्वं.—**दशान्तरं**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " अवस्थायां वस्त्रान्ते स्याद्दशापि" इति विश्वः ।

P. 429. St. 2.—**ज्ञातौ सुतस्पर्शसुखोपलम्भात्**, *Cf.* Châritravardhana, " किं तु प्राक्पुत्रालिङ्गनसुखस्य परिचितत्वात्सुतस्पर्शसुखस्योपलंभोऽनुभवस्तस्माज्ज्ञातौ " इति. And Hemádri has, " तयोः समानेऽपि स्नेहे स्वसुतस्पर्शसुखमनुपममिति नात्रानौचित्यं."—**यथाक्रमं**, Hemâdri and Vallabha construing this with प्रणतौ explain thus "यथाक्रमं प्रणतौ प्रवृद्धानुक्रमेण चरणपतितौ," *i. e.*, each of the princes bowed down to both the queens according to their seniority, and as Kausalyâ was the senior of the two, she was saluted first and after her Sumitrâ by both the princes. This explanation appears to be necessary for a correct understanding of the simile in the following verse.—**विस्पष्टमस्रान्धतया न दृष्टौ**, *Cf.* Buddhacharita, Canto VIII, Stanza 7. " ततो भ्रमद्भिर्दिशि दीनमानसैरनुज्ज्वलैर्बाष्पहतेक्षणैर्नरैः । निवार्यमाणाविव तावुभौ पुरं शनैरजःस्नातमिवाभिजग्मतुः ॥ "

P. 430. St. 3.—**बिभेद**, ' broke through, ' ' rushed into '.—**गङ्गासरय्वोर्जलमुष्णतप्तं**, ' like the waters (conjoined) of the Gangâ and the Sarayû, heated by summer. ' As the heated waters belonged to two rivers, so the hot tears dropped on the head of each of the princes proceeded from the eyes of both the queens. *Cf.* Châritravardhana: " गंगासरय्वौ हि हैमवत्यौ । ग्रीष्मे हिमं क्षरतीति प्रसिद्धिः".

P. 430. St. 4.—**मार्गान्**, ' scars '. *lit.* passages, viz., through which the darts had entered their persons.—**आर्द्रानिव**, ' as if they were still fresh. ' *Cf.* Châritravardhana: " नूतनानिव."

P. 430. St. 5.—भर्तुः **क्लेशावहा अलक्षणाहं**, This refers to the popular notion that the prosperity or misery of the husband is caused by the auspicious or inauspicious nature of the qualities the wife is possessed of. Pandit's remarks are correct. He says, ' This refers to the popular notion that the misery or prosperity that falls to the lot of a recently married man is attributable to the inauspicious or auspicious qualities of the wife he has just married. Sitá ascribes to her own inauspicious qualities or bad luck, that soon after her marriage her husband had to go into banishment and that Das'aratha put an end to his own life, thereby leaving the two

ladies she addresses in the condition of widows.' *Cf.* Chāritravardhana : "पाणिग्रहणसमनंतरं भर्तुर्वनवासः श्वशुरस्य स्वःस्थित्या च भवत्योर्वैधव्यम-भूदित्यात्मनो दुष्टलक्षणं सूचितवत्यन्यभिप्रायः ".—**अनतिभेदेन**, Hemádri explains this to mean, "भक्तिभेदस्याभावः अभक्तिभेदं तेन." Vallabha says, "तुल्यया भक्त्या," 'with equal reverence'. On this Hemádri and Chāritravardhana hold the following discussion, "तृतीया सप्तम्योर्बहुलं " Pâṇini, II. 4. 84. इत्यमभावः ". Translate the aphorism:—'The change to अम् of the third and seventh case-affixes coming after an Avyayībháva compound that ends in अ, occurs diversely.' As उपकुंभेन or उपकुंभं कृतं 'done by an उपकुंभ.' उपकुंभे निधेहि or उपकुंभं निधेहि 'put it in the उपकुंभ.' Compare also the *Vārtika* "सप्तम्या ऋद्धिनदीसमाससंख्यावयवेभ्यो नित्यमामिति वक्तव्यम् " ।

P. 431. St. 6.—**ननु**, the word ननु is derived from the negative particle न and the interrogative particle नु and introduces a rhetorical question to which an affirmative answer is expected. See Apte's guide 286, pp. 206—207. Both Hemádri and Chāritravardhana interpret ननु better than Mallinátha who construes it with उषित्वा. Vallabha too interprets like Mallinátha. Hemádri has, "हे वत्से उषितं । असौ मातृजः लक्ष्मणो भर्ता रामस्तथैव शुचिना पवित्रेण वृत्तेनाचारेण महत्कृच्छ्रं तीर्णो ननु." And Chāritravardhana says, "भो वत्से शुचि उषितं । मातृजः लक्ष्मणोऽयं तव भर्ता पतिः शुचिना निष्कल्मषेण तथैव वृत्तेनाचारेण महत्कृच्छ्रं व्यसनं तीर्ण उत्तीर्णवाननु ".—**प्रियार्हौ**, Vallabha says, "प्रियवचनयोग्यौ," 'who deserved to be addressed kindly'.—**प्रियमप्यमिथ्या**, 'truly and yet kindly.' This refers to the proverbial difficulty of speaking kindly and truly at the same time. *Cf.* "सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम्." And also "न विव्यथे तस्य मनो न हि प्रियं प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितैषिणः." Ki. I. 25.

P. 431. St. 8.—**मूर्ध्नि जलान्यपप्तन**. *Cf.* Buddhacharita, Canto I. verses 27–35. "तं जातमात्रमथ काञ्चनयूपगौरं प्रीतः सहस्रनयनः शनकैर्गृहीत । मन्दारपुष्पनिकरैः सह तस्य मूर्ध्नि खान्निर्मले च विनिपेततुरम्बुधारे ॥ खात्प्रस्रुते चन्द्रमरीचिशुभ्रे द्वे वारिधारे शिशिरोष्णवीर्ये । शरीरसंस्पर्शसुखान्तरस्य निपेततुर्मूर्धनि तस्य सौम्ये ॥ "—**विन्ध्यस्य** &c., On this epithet Hemádri makes the following remark: "विन्ध्यस्येति वक्ष्यते जायमानवृद्धिसूचकं ".—**सरसीः**, Chāritravardhana explains this to mean, "महान्ति सरांसि सरस्यः" इति व्याख्यकारः.

P. 432. St. 9.—**तावत्**, 'already'.—**गजेन्द्रनेपथ्यविधानशोभा तस्यास्तिरोहितसमग्रकर्मा**, Mallinátha's explanation of the passage appears faulty, when he says गजेन्द्रनेपथ्यविधानेन गजेन्द्रवेषरचनया उदिता या शोभा &c. Because he takes उदित as if it is one of the members of the compound. Supposing he does not connect the epithet in the manner he has explained it in his commentary, the epithet उदित ac-

cording to the sense which he wishes to attach to it becomes useless unless he expounds it in the way already proposed by him. The gist of the passage is that Râma already appeared so perfectly majestic even with his bark-dress as a hermit, that his royal dress could add very little to his majestic appearance. Hemâdri understands उदित as equivalent to उक्त, from वद् and says, "यो रामस्तावत्तपस्विवेषक्रिययापि तापसालंकारक्रियया सुतरामत्यन्तं प्रेक्षणीयो बभूव । तस्य रामस्य राजेन्द्राणां नेपथ्यस्यालंकारस्य विधानं करणं तेन शोभा उदिता उक्ता सती पुनरुक्तामिति दोषो यस्याः सा स्यात् (he appears to have read स्यात् for आसीत्) । पुनरुक्तदोषभयात्पुनर्नाभिधीयते इत्यर्थः । पूर्वमपि तस्य रमणीयत्वात्किमाभरणैः प्रयोजनमिति भावः". And Châritravardhana interprets it in the following way: "यो रामस्तपस्विनां तपोधनानां वेषस्य क्रियया धारणेनापि तावत्साकल्येन सुतरामत्यर्थं प्रेक्षणीयो दर्शनीयो बभूव । तस्य राज्ञां नेपथ्यस्यालंकारस्य विधानेन या शोभा सोदितोक्ता पुनरुक्तदोषाभिधानो दोषो यस्यास्तथाभूता भवेत् । तापसवेषातिशयशोभया राजनेपथ्यशोभा द्वैगुण्ये ऽनुमिते ऽपि यदि सा शोभा कीर्त्यते तदा पौनरुक्त्यं संपद्यते इत्यर्थः". Mallinâtha's interpretation, however, appears more correct than what these commentators give. *Cf.* "रम्याणां विकृतिरपि श्रियं तनोति." Also "किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनां." S'a. I. 20.

P. 432. St. 10.—**सौधोद्गत** &c., *Cf.* St. 10, Canto II. "अवाकिरन् बाललताः प्रसूनैराचारलाजैरिव पौरकन्याः."

P. 432. St. 11.—**सावरजेन सौमित्रिणा**, *i. e.* Lakshma*n*a and S'atrughna each held a chowry on either side of Râma.—**धृतातपत्त्रः**, Analyse धृतमाहितमातपत्रं राजचिह्नं छत्रं यस्य तथोक्तः.

P. 433. St. 12.—**प्रासादकालागुरुधूमराजिः**, *Cf.* Buddhacharita, Canto V. verse 44. "कनकोज्ज्वलदीप्तदीपवृक्षं वरकालागुरुधूपपूर्णगर्भं । अधिरुह्य स वज्रभक्तिचित्रं प्रवरं काञ्चनमासनं सिषेवे" ॥—**वायुवशेन भिन्ना**, 'split by the force of the wind as otherwise it (the कालागुरुधूमराजिः) would not look like the Ve*n*î of a young woman, which consists of three or more braids of hair.—**त्वदुद्दहेन स्वयं**, *Cf.* Châritravardhana. "यथा देशांतरादायातो नायको नायिकाया वेणिं मोचयति"। तथा च हारीतः । "न प्रोषिते अलंकुर्यान्न वेणीं मोचयेदिति." Compare also Hemâdri, "न प्रोषिते अलंकुर्यान्न च [वा Ms.] वेणीं विमोचयेत्" इति हारीतः.

P. 433. St. 13.—**अनुष्ठितचारुवेशाम्**, Analyse अनुष्ठितो रचितश्चारुर्हृद्यो वेशो नेपथ्यं यस्यास्तां तथोक्तां.—**कर्णीरथस्थां**, Hemâdri says, "कर्णीरथः प्रवहणं पुंस्कन्धोह्यमानो रथ इति क्षीरस्वामी." From this explanation of Hemâdri it appears that कर्णीरथ was a conveyance borne on the shoulders of men. May it mean नालकी or a palanquin.—**प्रासादवातायनदृश्यबन्धैः**, *Cf.* Buddhacharita, Canto III. verse 19. "वातायनेभ्यस्तु विनिःसृतानि

परस्परोपासितकुण्डलानि । स्त्रीणां विरेजुर्मुखपंकजानि सक्तानि हर्म्येष्विव पंकजानि " ॥
Translate : 'The lotus faces of the women gleamed while they looked out from the windows, with their ear-rings coming into mutual proximity, as if they were real lotuses fastened upon the houses.'

P. 433. St. 14.—**स्फुरत्प्रभामण्डलम्**, Analyse स्फुरदतिमनोहरं प्रभामण्डलं किरणजालं यस्य तत् ।—**आनसूयं सा बिभ्रती शाश्वतमङ्गरागं**, See Adhyâtma Râmâyana Ayodhyâkânda, canto 9, verse 89. " अंगरागं च सीतायै ददौ दिव्यं शुभानना । न त्यक्ष्यते ऽङ्गरागेण शोभा त्वां कमलानने." See also verse 27, canto XII. *Cf.* Hemâdri : " अनसूयादत्तोऽङ्गरागोऽन्यपुरुषसंगे मलिनः स्यादिति प्रसिद्धिः । अस्यां तु दिदीप एवेति पतिव्रतात्वं ख्यापितं." And Châritravardhana has, "अनुसूयादत्तोऽङ्गरागोऽपरपुरुषसंगे मलिनः स्यादिति पातिव्रत्यख्यापनमिति कश्चित्."
—**शाश्वतं**, Hemâdri discusses, " शश्वद्भवः शाश्वतः । अव्ययानां भमात्रे टिलोपः । आराच्छश्वतोर्नेष्यते । " शाश्वतस्तु ध्रुवो नित्यः " । ननु शाश्वत इत्यत्र । " कालाट्ठञ् , " Pânini, IV. 3. 11. इति ठञा भवितव्यं । "येषां च विरोधः शाश्वतिकः," Pânini, II. 4. 9. इति निर्देशाच्च । यथा न्यासकृत् । " शश्वद्भवः शाश्वतिकः " । अस्मादेव ज्ञापकात् तां तन्वेऽपि इकादेश इति । वामनस्तु शाश्वतमिति प्रत्युक्तः प्रयोगाद्भवतीति । " मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः " इति रामायणे. " —पुनः, See St. 104, Canto XII, and our note on the same.

P. 434. St. 15.—**बलिमत्** , 'Furnished with auspicious things.' The phrase probably means containing articles for his reception. *Cf.* Châritravardhana : "पूजाद्युपहारयुक्तं निकेतं &c. " And Hemâdri says, " उपचारवन्निकेतं " And Vallabha says, " उपहारयुक्तं."—**परिबर्हवन्ति**, Châritravardhana explains it to mean, " सोपस्काराणि सोपहाराणि वा." And Vallabha says, " सपरिच्छदानि सोपकरणानि. "—**आलेख्यशेषस्य**, 'of whom all that remained was a picture drawn on the wall.' *Cf.* Châritravardhana : "चित्रलिखितस्य. " And Vallabha says, " चित्रन्यस्तस्य । स्वर्गतस्य. " And Hemâdri has the following on this, " इति सुकुमारं । परुषेऽर्थे अपारुष्यं सौकुमार्यमिति वामनः, " and Dinakara has, "आलेख्यं भित्तिलिखिताकृतिः शेषं यस्य." See readings.

P. 434. St. 16—**तच्चिन्त्यमानं सुकृतं तवेति**, 'the properly considered merit is thine,' *i. e.*, saying, if we ponder over it thine only is that merit whereby &c.—**नाभ्यनन्दत**, On this Hemâdri makes the following remark : " यदि वरस्त्वया नाङ्गीक्रियते तदानृतवादितया पिता स्वर्गाद्भ्रष्टः स्यात् । यदुक्तं । यो वरं वरदं दत्वा न करोतीह [च Ms.] तत्तथा । स याति नरकं घोरं [नरकं घोरं Ms.] सह पूर्वैः संशयः. " And Vallabha says, " यदुक्तं । यो वरं वरदो दत्वा न करोति च तत्तथा । स याति नरकं घोरं सहपूर्वैर्न संशयः. "

P. 434. St. 17.—**यथा चेतसि विस्मयेन क्रान्ता**, *Cf.* St. 75., Canto XIII, and our note thereon.

P. 435. St. 18.—**सभाजनायोपगतान्** , 'who had come to congratulate him.'—**गौरवमादधानं**, On this Hemâdri remarks : " इति श्रवणहेतुः."

Cf. Buddhacharita. Canto III. Stanza 24. " अयं किल व्यायतपीनबाहू रूपेण साक्षादिव पुष्पकेतुः । त्यक्त्वा श्रियं धर्ममुपैष्यतीति तस्मिन्हि ता गौरमेव चक्रुः" ॥

P. 435. St. 19.—**सीतास्वहस्तोपहृताग्र्यपूजान्**, On this Hemâdri remarks, " इत्यादरातिशयोक्तिः. "

P. 435. St. 20.—**पुष्पं दिवः**, 'the flower of heaven,' an epithet probably suggested by its form, the lightness and swiftness of its motion and perhaps by the alliteration that पुष्प affords " with पुष्पकम्. " *Cf.* Hemádri : " शोभाकरत्वादित्यर्थः. " He also observes on पुष्पक " रम्यत्वात्पुष्पमिव पुष्पकं । " इवे प्रतिकृतौ " Pánini, V. 3. 96. इति कन् " ।—**आत्मचिन्तासुलभं**, 'easily obtainable by his own desire,' *i. e.*, which he was to obtain whenever he should desire it. *Cf.* Cháritravardhana : " आत्मनश्चिन्तया स्मरणमात्रेण सुलभं सुप्रापं. "

P. 436. St. 21.—**प्रतिपन्नराज्यः**, Analyse प्रतिपन्नं लब्धमंगीकृतं वा राज्यं येन स तथोक्तः.—**धर्मार्थकामेषु** &c., *Cf.* St. 57, Canto XVII. and also " धर्मार्थकामाः सममेव सेव्या यस्त्वेकसेवी स जनो जघन्यः. "

P. 436. St. 22.—**निर्विशेषप्रतिपत्तिः**, Analyse निर्गतो विशेषो यस्याः सा निर्विशेषा अभिन्ना प्रतिपत्तिर्गौरवं यस्य स तथोक्तः.—**कृत्तिकासु**, Skanda is represented as the son of the Krittikâs, whence he is called Kârtikeya. S'iva's semen fell into the Fire, who being unable to bear its splendour, went to Brahmâ ; who directed Gangâ to receive it. Gangá became pregnant with it and bore the embryo on a tuft of S'ara grass. The group of the nymphs कृत्तिकाः happened to see it : " शरस्तम्बे महात्मानमनलात्मजमीश्वरं । ममायमिति ताः सर्वाः पुत्रार्थिन्योऽभिचक्रमुः । तासां विदित्वा भावं तं मातॄणां भगवान्प्रभुः । प्रस्नुतानां पयः षड्भिर्वदनैरपिबत्तदा । तं प्रभावं समालक्ष्य तस्य बालस्य कृत्तिकाः । परं विस्मयमापन्ना देव्यो दिव्यवपुर्धराः. " Mahábhárata S'alya Gadâ. Adh. 45, Sts. 2460-63. See our note to St. 47, our edition of the Meghadúta. See also Mahâbhârata Vanaparvan Adh. 223-230.

P. 436. St. 23.—**तेनार्थवान् लोभपराङ्मुखेन**, 'Through him, averse to greed, the people were successful in enriching themselves.' *Cf.* S'a. act VI, verse 155. " येन येन वियुज्यन्ते प्रजाः स्निग्धेन बन्धुना । स स पापादृते तासां दुष्यन्त इति घुष्यताम्. "—**तेन विनेत्रा**, On this Hemâdri remarks : " अर्थवतोऽपि नियंतारं राममंतरेणापि कथं धर्मप्रवृत्तिरित्याह विनेत्रेति. " —**तेन घ्नता विघ्नभयं क्रियावान्**, 'Through him the remover of obstacles the people were successful in the performance of religious rites.'—**पितृमान्**, 'blessed with a father.'—**पुत्री**, 'blessed with a son.'

P. 437. St. 24.—**कृत्वा**, On this Hemâdri remarks, " स्थितयेत्यध्याहार इति कश्चित्. " And Cháritravardhana has " कृत्वेत्यत्र करोत्युपभु-

ज्योः समानकर्तृकत्वात् क्त्वाप्रत्ययः । अथ वा । कृत्वा वर्तमानयेत्यध्याहार्यं समानकर्तृकत्वं."

P. 437. St. 25.—**संचिन्त्यमानानि** &c., 'when recalled to mind.' *Cf.* Châritravardhana: "पुरानुभूतं कष्टं संस्मृत्य संस्मृत्य हृष्टावभूतामित्यर्थः." And Hemádri and Vallabha have the following: 'दुःखं चात्र विरहालाभादि न तु फलमूलादिजनितं । सुखनिवर्त्यत्वात् । तां तां विरहावस्थां विस्मृतां दृष्ट्वा परस्परप्रेमदर्शनेन संतुष्टौ बभूवतुरित्यर्थः । यदुक्तं । "तदेवोपनतं दुःखात्सुखं स्याद्रसवत्तरं । निर्वाणाय तरोश्छाया तप्तस्य हि विशेषतः." *Cf.* Bhavabhûti.

P. 437. St. 26.—**परिणेतुरानन्दयित्री,** objective genitive.—**शरपाण्डुरेण,** Châritravardhana explains it to mean, "शरो मुंजाविशेषस्तद्वत्पाण्डुरेण." —**अनक्षरव्यञ्जितदोहदेन,** 'indicating without words (the existence of) pregnancy.'

P. 438. St. 27.—**वर्णान्तराक्रान्तपयोधराग्रां,** On this Châritravardhana remarks: "अनेन गर्भिण्याः स्वभावोक्तिः." And Hemádri has the following: "गर्भे हि क्षामता मातुर्मूर्च्छा छर्दिररोचकं" इति वाग्भटः and goes on saying, "आम्लेष्टता स्तनौ पीनौ सुस्तन्यौ कृष्णचूचुका" इति वाहडः. —**विलज्जमानां,** On this Hemádri observes: "प्रथमगर्भया । अभिलाषप्रश्ने युक्तैव लज्जा." And Châritravardhana has, "प्रथमगर्भाधाने दोहदप्रश्ने ह्रीयमाणत्वमुचितं."

P. 438. St. 28.—**हिंस्रैर्दष्टनीवारबलीनि,** In which (morsels of) wild rice offered as oblations (by the Munis) are eaten by the ferocious wild beasts.' *Cf.* Vallabha: "हिंस्रैर्दुष्टसत्त्वैर्दष्टनीवारफलानि वनगजमहिषादिनिरुपभुक्तनीवारशालिफलानि." And Dinakara says, "हिंस्रैर्दष्टः कवलितो नीवारस्य बलिरुपहारो यत्र तानि." Pandit says, 'The oblations here referred to were offered to dogs and crows after the sacrifice called Vais'vadeva, and left on the banks of the sacred rivers for the benefit of those innocent animals, but which were seized by beasts of prey. दष्ट is a difficult word here. It properly means nibbled, gnawed, and not eaten (उपभुक्त); and Vallabha's interpretation, that takes नीवारबलयः to stand for बलित्वेन भविष्यमाणानि यानि शालिस्थानि नीवारफलानि, *i. e.*, the rice not as cooked and ready to be eaten, but paddy as yet on the Nivára stalks and which were to be hereafter gathered, cooked, and offered *as oblations* बलयः, seems to explain the word दष्ट better than either Mallinâtha or Dinakara.' This difficulty is removed if we read "हंसैः" instead of "हिंस्रैः," which reading is also the text of Châritravardhana, Sumativijaya, Vijayánandasuris'varacharaṇasevaka and the two Mss. of Hemádri's Darpaṇa (the third Ms. of Hemádri's Darpaṇa reads हिंस्रैः and interprets "अरण्यवृषभादिभिः" &c., like Vallabha). The secondary

meaning of दष्ट would be कवलित ' made a morsel', as interpreted by Châritravardhana or उपभुक्त ' eaten, ' ' devoured,' as interpreted by Vallabha and others, if we but overlook the primary sense of that word. Because words are generally employed in the primary sense or in their secondary acceptation. The Bali oblations of the Vais'vadeva are generally offered to crows, flamingoes, Sârasa birds and other feathered animals. *Cf.* यासां बलिः सपदि मद्गृहदेहलीनां। हंसैश्च सारसगणैश्च विलुप्तपूर्वः. *Mri.* I. And also to dogs, Bhutas, Chándalas, apostates and crows and not to carnivorous animals. *Cf.* " श्वचाण्डालपतितवायसेभ्योऽन्नं भूमौ विकिरेत् " ; It is true that these commentators have not produced any authority for their interpretation from any one of these Kos'as or lexicons, nevertheless their parallel expressions may without any scruple be relied on. *Cf.* Rámáya*n*a Uttarkâ*n*da, Canto 52. " तपोवनानि पुण्यानि द्रष्टुमिच्छामि राघव। गंगातीरोपविष्टानां ऋषीणां उग्रतेजसां । फलमूलाशिनां देव पादमूलेषु वर्तितं। एष मे परमः कामो यन्मूलफलभोजिनां । अप्येकरात्रं काकुत्स्थ निवसेयं तपोवने. "—**कुशवन्ति,** Vallabha interprets it by " दर्भैर्हरितानि, " ' green with Kus'a-grass. ' But Châritravardhana makes the following remark: " कुशवन्तीत्यनेन कुशस्य जन्मसूच्यते. "—**संबद्धवैखानसकन्यकानि,** *Cf.* Hemádri: " वैखानसानां वानप्रस्थानां मृगीणां कन्या यत्रेति क्रीडायोग्यता. " See readings.

P. 439. St. 30.—**ऋद्धापणं,** Hemádri says, " इति पौरसमृद्धिः ".

P. 439. St. 31.—**विजितारिभद्रः.** The name of the person asked was विजय as given in Adhyâtma Râmâya*n*a. " कथाप्रसंगात्पप्रच्छ रामो विजयनामकं। पौरा जानपदा मे किं वदन्तीह शुभाशुभं। सीतां वा मातरं वा मे भ्रातॄन्वाकेकयीमथ। न भेतव्यं त्वया ब्रूहि शापितोऽसि ममोपरि। इत्युक्तः प्राह विजयो देव सर्वं वदन्ति ते। कृतं सुदुष्करं कर्म रामेण विदितात्मना। किं तु हत्वा दशग्रीवं सीतामाहृत्य राघवः। अमर्षं पृष्ठतः कृत्वा स्ववेश्म प्रत्यपादयत् " इति. See readings.—**सर्पाधिराजोरुभुजः,** On this epithet Hemádri remarks : " इति शत्रुवधे दार्ढ्यं."

P. 440. St. 32.—**निर्बन्धपृष्टः** &c., *Cf.* Buddhacharita, Canto XIII. verse 60. " काष्ठं हि मथ्नन् लभते हुताशं भूमिं खनन्विन्दति चापि तोयं। निर्बन्धिनः किंच न नास्य साध्यं न्यायेन युक्तं च कृतं च सर्वं ॥—**परिग्रहादन्यत्र,** Vallabha says, " सीतास्वीकारवर्ज्यं त्वदीयं सर्वं चरितं स्तुवन्ति । राजा यत्परिग्रहचिरोषितदारस्वीकारमकारि। तदस्माकमप्येव पतिनमिति जनोक्तिः ". And Châritravardhana has " सद्रृनस्यापि गृहे कलत्रं शंकनीयं किं पुनर्दुराचारस्य राक्षसराजस्येति भावः। अन्यत्रेति वर्जनार्थेऽव्ययं. "

P. 440. St. 33.—**विद्दे,** Hemádri " कर्मकर्तरि। प्राक्सीतासंबन्धमधुना पृथग्भूतमित्यर्थः. " And Châritravardhana has : " प्राक्सीतामिलितमभूदिदानीं पृथगजनीत्यर्थः". And Vallabha has : " यथा अतितप्तमयो लोहमयोघनेनाहतं सद्विदीर्यते प्रसरति ".

P. 440. St. 34.—एकपक्षाश्रयविक्लवत्वात्. Vallabha explains it to mean, "एकपक्षनिश्चयसंमूढत्वात् । असमर्थत्वात् ". And Cháritravardhana has : "द्वयोः पक्षयोर्मध्ये एकपक्षस्याश्रये यद्विक्लवत्वं तस्मात्." See readings.

P. 441. St. 35.—अपि स्वदेहात्किमुतेन्द्रियार्थात्. *Cf.* Rámáya*n*a Uttarká*n*da, Canto 50. "अथाहं जीवितं जह्यां युष्मान्वा पुरुषर्षभाः । अपवादभयाद्भीतः किं पुनर्जनकात्मजां."—वाच्यं. Here Hemádri quotes the following from Pratápamárta*n*da. "उपक्रोशश्च निर्वादो विज्ञेयं वाच्यमद्वयोः " इति.

P. 441. St. 36.—आत्माश्रयं, Analyse आत्मा आश्रयो यस्य तत्.—पुनश्चेदमुवाच वाक्यं, Hemádri says, "स्वापवादकथनानन्तरं पुनरप्यवक्ष्यादित्यर्थः".

P. 441. St. 37.—राजर्षिवंशस्य, The royal sage here alluded to is Manu, the ancestor of Ráma who founded the throne at Ayodhyâ.—सदाचारशुचेः, Hemádri interprets it by "सता प्रशस्तेनाचारेण शुचेः पवित्रस्य । सतामिति वा."—पयोदवातादिव दर्पणस्य, 'as a soiling coat covers over a looking-glass from a gust of the wind when accompanied by rain.' Hemádri interprets पयोदवातात् by "यथा पयोदेन युक्तो वातस्तस्माद्दार्द्रादित्यर्थः." And Cháritravardhana has : "पयोदकालीनो वातस्तस्मात्पयोदवातादप्परमाणुसंयुक्तात् ". Vallabha says, "पयोदवाताज्जलपवनात् ".—कलंकः, On this Hemádri holds the following discussion : "वाक्यार्थस्य कर्मत्वात्कलंक इति द्वितीयाऽभावः । पश्य मृगो धावति इतिवत् । *Cf.* Uttar. I. 25. "यत्सावित्रैर्दीपितं भूमिपालैर्लोकश्रेष्ठैः साधु शुद्धं चरित्रं । मत्सम्बन्धात्कश्मला किंवदन्ती स्याच्चेदस्मिन्हन्त धिङ्मामधन्यम्."

P. 442. St. 38.—सोऽहं न ईशे, 'that I am unable,' 'I am. therefore, unable.'—आलानिकं स्थाणुमिव द्विपेन्द्रः. As a large elephant who has never experienced bondage before is unable to bear, *i. e.*, does not submit to, a post erected for tying him to. *Cf.* Cháritravardhana : "आलानाय गजबन्धनाय कल्पितमालानिकं स्तम्भं," and Vallabha has, "आलानिकं बलातिगं भूतलस्थपदमालानीभूतं स्थाणुं." and Hemádri interprets it like Mallinátha.—तत्पूर्वं, 'the first,' 'without a predecessor.' Cháritravardhana and Hemádri analyse the compound thus : "स एव पूर्वः प्रथमो यत्र तत्पूर्वं."—अवर्ण, Hemádri explains it to mean, "विरुद्धा वर्णा यस्य सोऽवर्णः । यद्वा । अवर्ण स्तुतिविपर्ययं "।

P. 442. St. 39.—समुद्रनेमिं, On this Cháritravardhana remarks, "भूमिपरित्यागे राज्यप्राप्तुरेव फलप्रवृत्तिः." And further on the next verse he observes, "किमियमसती यत्परित्यज्यते इत्यत आह."

P. 442. St. 40.—किं तु, This particle should be read long as being at the end of a Páda.—शशिनो मलत्वेनारोपिता, this is an example of what is called यतिभङ्ग. Almost all other commentators than Mallinátha read निरूपिता for आरोपिता, which, however, seems to be a spu-

38

rious reading substituted to avoid this fault. For another example of this see Jayadeva's Gitagovinda : "कान्ताधर धरणितलं यच्छ गच्छन्ति यावद्भावं शृङ्गारसारस्वतमयजयदेवस्य विष्वग्वचांसि । छाया &c." See also Siddhánta S'iromani p. 86. Cal. edi. Here an eclipse of the moon is alluded to. The notion is that it is owing to her own fault or sin that the moon is eclipsed. *Cf.* Hemádri : "तथा ज्योतिःशास्त्रे । "शशमंके मृगं त्वन्ये भूच्छायामपरे विदुः । इन्दोर्मण्डलमालिन्यं तमः स्पर्शमलं परे " । उक्तं च । "अंकं केऽपि शशाङ्किरे जलनिधेः पङ्कं परे मेनिरे । सारंगं कतिचिच्च संजगदिरे भूमेश्च बिम्बं परे । इन्दोर्यद्दलितेन्द्रनीलशकलश्यामं दरीदृश्यते । तन्मन्ये परिपीतमंधतमसं कुक्षिस्थमालोक्यते." And Cháritravardhana has, "शशमंके । अभ्रमपरे । अभ्रछायेत्यन्ये । चन्द्रस्यान्तो मालिन्यं सत्यामिति केचित् । एष्वेकतमपक्षैकार्थ्येणेदमुक्तं ।" and further on the next verse he observes: "यदि लोकापवाद एव गरीयान् तर्हि किमर्थं दशग्रीवादिघातार्थं प्रयासो विहितः इत्यताह." —**मतो मे,** Hemâdri discusses "मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च," Pánini, III. 2. 188. इति क्तः । क्तस्य च वर्तमाने षष्ठी । यद्वा । "न मे शब्दो निपातेषु द्रष्टव्यो त्वया मया इत्येतस्मिन्नर्थे" इति वामनः. Translate the aphorism :—'And after roots denoting inclination, understanding, or respect, the affix क्त is employed with the force of the present.' The word मति means 'wish' or 'desire'; बुद्धि means 'knowledge'; and पूजा means 'worship', 'honour,' or 'respect.' As राज्ञां मतः-इष्टः-बुद्धः-ज्ञातः-पूजितः &c., 'the king wishes, desires, thinks, knows, honours, respects &c. The force of the word च is to include other kinds of verbs not included in the above Sútra. Thus the following participles have their senses confined not to the past time only:—शीलितः 'practised,' रक्षितः 'protected,' क्षान्तः 'forbearing,' आक्रुष्टः 'censured,' जुष्टः 'pleased,' रुष्टः 'angry,' रुषितः 'angry,' अभिव्याहृतः 'uttered,' हृष्टः 'happy,' तुष्टः 'satisfied,' and अमृतः 'immortal.' So also सुप्तः 'sleeping,' शयितः 'lying down,' आशितः 'eaten,' लिप्तः 'smeared,' तृप्तः 'satisfied'; all these have a present signification. See readings.

P. 443. St. 42.—**करुणार्द्रचित्तैः,** 'by you with your hearts softened with compassion,' *i. e.*, by allowing your hearts to be softened with compassion for Sítâ.—**धारयितुं,** passive infinitive.—**मया,** Châritravardhana discusses : "गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणामणिकर्ता स णौ," Pánini, I. 4. 52. इत्यादिना नियमान्मयेति कर्तरि तृतीया." See Apte's guide 179. p. 132, and also 44. p. 31.

P. 443. St. 43.—**न कश्चन,** &c., Compare Buddhacharita, Canto II. verse 11. "नाशो वधो बन्धुषु नाप्यदाता नैवाव्रतो नानृतिको न हिंस्रः । आसीत्तदा कश्चन तस्य राज्ये राज्ञो ययातेरिव नाहुषस्य" ॥

P. 444. St. 44.—**लक्ष्मणपूर्वजन्मा,** On this epithet Hemâdri makes the following remark: "यद्यपि भरते लक्ष्मणाग्रजत्वं तथापि प्राधान्यात्प्रकृतत्वा-

द्रामः." This view of Hemádri appears to be in conformity with the Râmâya*n*a. But Kálidâsa regards, at least in this part of his poem, Bharata to be younger than Lakshma*n*a. *Cf.*, Sts. 72-73. Canto XIII. And our note to the same.—**सौम्य**, Hemádri discusses, "साद्य देवता," Pá*n*ini, IV. 2. 24. इत्यधिकारे। "सोमाट्ट्यणा" Pá*n*ini, IV. 2. 30. विधानात्। अन्यत्र सौम्येति चिन्त्यं। उपमानात्साधुः"। And Cháritravardhana has the following: "ननु "सास्यदेवता" इत्यधिकृत्य "सोमाट्ट्यण्" इति विधानादन्यत्र सौम्येति चिन्त्यम्। उपमानात्साधुरित्येके। सोमो देवतातृप्तिहेतुस्ततःसुन्दरोऽपि। तृप्तिहेतुत्वादुपचारात्सौम्य इत्युच्यते."

P. 444. St. 45.—**दोहदशंसिनी तपोवनेषु स्पृहयालुरेव,** That is दोहदं कथयन्ती तपोवनेषु स्पृहयालुरेवमिति शंसन्ती. See above Sts. 26, 28.—**एव,** 'already.'–**तद्व्यपदेशनेयामेनां वाल्मीकिपदं प्रापय्य त्यज** = तद्व्यपदेशेन नीत्वा वाल्मीकिपदं प्रापय्य [तत्र] त्यज. *Cf.* Padma Purâ*n*a Pátâlakha*n*da, Rámás'va. "अद्यैव रात्रौ जानक्या दोहदस्तापसीक्षणे। तन्मिषेण रथे स्थाप्य मोचयैनां महद्वने". —**एनां,** On this epithet Hemádri discusses: "एनामित्यन्वादेशो न। तथा काशिकावृत्तौ। कथं। "अयं दण्डो हरानेन। एतमातंडितं वियादिति यत्र। कस्यचिद्वस्तुनः किञ्चिद्विधाय वाक्यान्तरेण पुनरस्यैवान्यदुपदिश्यते सोऽन्वादेशः। इह तु वस्तुनिर्देशमात्रं कृतं। एकमेव विहितमिति."—**तपोवनेषु,** Here Cháritravardhana discusses, "वनेष्वित्यत्रेप्सितस्याविवक्षितत्वात्। "स्पृहेरीप्सितः", Pá*n*ini, I. 4. 36. इति प्राप्तस्य संप्रदानस्याभावः".

P. 444. St. 46.—**मातरि,** *i. e.*, रेणुकायां.—**भार्गवेण प्रहृतं,** *Cf.* Padma Purâ*n*a Pâtâlakha*n*da Rámás'vamedha. "पित्राज्ञतो जामदग्न्यो मातरं चाप्यघातयत। गुरोराज्ञा नैव लंघ्या युक्तायुक्तापि सर्वथा." See note to St. 65, Canto XI. —**प्रत्यग्रहीदग्रजशासनं,** *Cf.* Buddhacharita, Canto VIII. verse 44 "अहं हि जानन्नपि राजशासनं बलात्कृतः करैपि दैवतैरिव। उपानयं तूर्णमिमं तुरंगमं तथान्वगच्छं विगतश्रमोऽध्वनि" ॥ On this Hemádri remarks: "कथं क्रूरं कर्मण्यङ्गीकार इत्याह."—**आज्ञा गुरूणां ह्यविचारणीया,** *Cf.* Padma Purâ*n*a Pátâlakha*n*da Rámás'va. "अकृत्यमपि कार्यं वै गुर्वाज्ञां नैव लंघयेत." And Cháritravardhana has the following: "अग्रजस्य जनककल्पाद्गुरुत्वं."

P. 445. St. 47.—**अत्रस्नुभिः,** On this Hemádri remarks, "अत्रस्नुभिरिति गर्भिणी धारणयोग्यं." And Cháritravardhana has, "इत्यनेन गर्भपीडाभावः सूच्यते."

P. 445. St. 48.—**आत्मन्यसिपत्त्रवृक्षं जातं,** 'Become the sword-leafed tree towards her.' असिपत्त्रवनं is the name of a Naraka or hell where the leaves of the trees are like blades of a sword. See Bhâgavata Purá*n*a, Sk. V. Adh. 26., Gadya 7, "यस्त्विह वै निजवेदपथादनापदि अपगतः पाषण्डं चोपगतस्तमसिपत्त्रवनं प्रवेश्य" इति. Pandit says, 'In one of the hells, the seventh in number, the Bhâgavata Purâ*n*a prescribes a forest of Asipattra trees, which those who, except in times of adver-

sity, neglect the rites enjoined by the Vedas and accept doctrines which are not orthodox, have to enter as a penalty for their heresies.' Châritravardhana translates असिपत्र: by "सेहुण्डवृक्ष:".

P. 446. St. 49.—**अत्यन्तलुप्तप्रियदर्शनेन**, *Cf.* Châritravardhana: "कादृशेनाऽक्ष्णा अत्यन्तं लुप्तं नष्टं प्रियस्य रामस्य दर्शनं यस्य तेन नेत्रेण". And Hemâdri explains it as "अत्यन्तं लुप्तं प्रियदर्शनं यस्य तेन." And Vallabha has, "नितान्तव्यक्तपतिसङ्गमेन".—**सव्येतरेण स्फुरता तदक्ष्णा आख्यातमस्यै,** On this epithet Hemâdri makes the following remark: "वामं शरीरं सव्यं स्यात्"। "दृगन्तमध्ये स्फुरणेऽर्थसंपत्। सोत्कण्ठता स्यात्स्फुरिते दृगादौ। जयो दृशोऽधःस्फुरणे रणे स्यात्। प्रियश्रुति [प्रियश्रुतिः स्यात् स्फुरिते Ms.] प्रस्फुरिते च कर्णे। पुंसां सदा दक्षिणदेहभागे। स्त्रीणां तु वामावयवे प्रजातः। सदा फलानि [स्पन्दः फलानि Ms.] प्रदिशत्यवश्यं। निहंत्यनुक्ताङ्गविपर्ययेण" इति वसंतराजः." *Cf.* also Râmâyana Uttarakânda. Canto 50. "अशुभानि बहून्येव पश्यामि रघुनन्दन। नयनं मे स्फुरत्येव गात्रोत्कम्पश्च जायते। हृदयं चैव सौमित्रे अस्वस्थमिव लक्षये। औत्सुक्यं परमं चापि अधृतिश्च परा मम। पुरे जनपदे चापि कुशलं प्राणिनामपि। इत्यञ्जलिकृता सीता देवता अभ्ययाचत" इति.

P. 446. St. 50.—**आशशंसे**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the following:—"शंसतेरपेक्षायत्मात्मनेपदमिष्यते".—**शिवं भूयात**, *Cf.* Buddhacharita, Canto XI. verse 69. "इहागतश्चाहमितो दिदृक्षया मुनेरराडस्य विमोक्षवादिनः। प्रयामि चाद्यैव नृपास्तु ते शिवं वचः क्षमेथाः शमतत्त्वनिष्ठुरं॥"—**करणैरबाह्यैः**, Châritravardhana explains the plural by saying "अबाह्यैरान्तरैः करणैर्मनोबुद्ध्यहंकाराख्यैः." And Vallabha has, "अन्तःकरणैर्बुद्धिमानाहंकारैः." The four internal senses, according to the *Vârtika* on the Vedânta Sûtra, are: "मनोबुद्धिरहंकारश्चित्तं करणमान्तरं। संशयो निश्चयो गर्वः स्मरणं विषया इमे". *Cf.* also Padma Purâna, Pâtâlakhanda Râmâs'va. Adh. 55. "रामे भूयाद्धि कल्याणं भरते वा तथानुजे। तत्प्रजासु च सर्वत्र मा भवन्तु विपर्ययाः."—**सावरजस्य**, Hemâdri says, "भद्रार्थत्वात् "चतुर्थी चाशिष्यायुष्य"" Pânini, II. 3. 73. इति षष्ठी."

P. 446. St. 51.—**विहास्यन्**, 'who was about to desert.'—**वनान्ते**, In this epithet अन्त might be taken in the sense of स्वरूप being equivalent to वनप्रदेश. *Cf.* Vaijayanti as quoted by Hemâdri and Châritravardhana: "अन्तोऽध्यवसिते मृत्यौ स्वरूपे निश्चयेऽन्तिके." Compare also Ki. VI. 17. "शुचिमाससाद स वनान्तभुवम्."—**पुरस्तात्**, On this Hemâdri and Châritravardhana quote the following from Vaijayanti: "प्राच्यां पुरस्तात्प्रथमे पुरोर्थेऽग्रत इत्यपि."

P. 447. St. 52.—**निषादाहृतनौविशेषः**, 'to whom an excellent boat was brought by the ferryman.' Compare Hemâdri's explanation. "निषादःश्वपचावन्तेवासी चाण्डालपुक्कसाः। आचाण्डालात्तु संकीर्णाः" इत्यत्र तु क्षीरस्वामी। यत्स्मृतिः। "विप्रान्मूर्धावसिक्तस्तु क्षत्रियायां विशः स्त्रियां। जातोऽम्बष्ठस्तु

शूद्रायां निषादः पारशवोऽपि च । ब्राह्मणाद्वैश्यकन्यायामम्बष्ठो नाम जायते । निषादः शूद्रकन्यायां यः पारशव उच्यते. " *Cf.* Châritravardhana: " सीता याः समभित्य-ध्याहार्यं व्याख्येयमन्यथा । " सीता तमुत्थाप्य जगाद " इति वक्ष्यमाणेन विरोधः स्यात्. "—संधामिव, He crossed the Gangâ, as if he were crossing *i. e.* fulfilling the promise that he had made to his brother of taking and abandoning Sîtâ beyond the Gangâ near the hermitage of Vâlmîki. Mark the play upon ततार.

P. 447. St. 53.—औत्पातिको मेघमिव, 'like a cloud breaking down portentously.' Hemádri explains it to mean : " उत्पातोऽशुभसूचनं प्रयोजनं यस्य स मेघः. " See readings.—उज्जगार, On this Hemádri remarks, " इति प्रतिपाद्यस्यानभिमतत्वं. "

P. 448. St. 54.—प्रकृतिं, Hemâdri explains it to mean, " उत्पत्ति-स्थानं कारणं वा. "

P. 448. St. 55.—इक्ष्वाकुवंशप्रभवः, *Cf.* Buddhacharita Canto IX. verse 4. " शुद्धौजसः शुद्धविशालकीर्तेरिक्ष्वाकुवंशप्रभवस्य राज्ञः । इमं जनं वेत्तु भवानधीरं श्रुतग्रहे मंत्रपरिग्रहे च " ॥—ददौ प्रवेशं जननी न तावत्, ' at first her mother did not grant her entrance into her. ' That is the Earth did not receive Sîtâ her daughter into her bosom *at the time* (तावत्), when she threw herself down upon her person, as she did afterwards (See Canto XV. verses 81-84), as if because she (Earth) did not know how it was possible that Ráma her husband should have deserted her in that way. *Cf.* Hemádri: " तावदिति पश्चात्प्रवेशं दास्यत्येवेत्युक्तं." Cháritravardhana has, " तावदित्यनेन पश्चाद्दास्यतीति सूच्यते. " Compare also Padma Purá*n*a Pàtálakha*nd*a Rámás'vamedha. " तदेव पृथिवी तात जग्राह तनयामिमां । रामो विपापिनीं सीतां न जह्यादिति शंकिनी. "—अकस्मात्, Hemádri explains it to mean, " विभक्तिप्रतिरूपकमव्ययं तथा गणदर्पणे । " चिरात्राय चिराद्धायाकस्माच्चिरस्य मम. "

P. 449. St. 56.—दुःखं न विवेद, *Cf.* Hemádri, " तथा कुमारसंभवे । " कृतोपकारेव रतिर्बभूव, " and further he observes: " संज्ञा स्याच्चेतना नाम."—मोहात्, ' than the faint. '—समतप्यतान्तः, On this Pandit makes the following remark: ' The केचित् whose refutation is attempted by Mallinátha (see commentary) are perhaps right and he is wrong. समतप्यत is not passive but Atmanepada from तप्, of the fourth conjugational class, in which that root is often conjugated both Parasmai and Atmane in a sense other than that allowed by the Sútra तपस्तपः कर्मकस्यैव (Pá*n*ini, III. 1. 88.) The following are a few examples: जाया तप्यते कितवस्य हीना माता पुत्रस्य चरतः क्व स्वित् *Ri*gveda X., 34, 10. इव त्वारातिः सुकृतस्य तिष्ठान्निवर्तस्व हृदयं

तप्येत मे *ibid.* 95, 17. विपरीतं मया चेदं वयं सर्वमुपार्जितं । तदिमामापदं प्राप्य नूनं तप्यामहे वयं. Mahâbhârata I. 6217. तप्स्यसे वाहिनीं दृष्ट्वा पार्थबाणप्रपीडिताम् *ibid.* IV. 1668. कामार्थैः परिहीणोऽयं तप्येयं तेन पुत्रकाः *Ibid.* I. 3165. दुःखेन तप्येत सुखैः प्रहृष्येत्समेन वर्तेत सदैव धीरः *Ibid.* 3585. ' Hemâdri explains this to mean, "प्रत्यागतासुः प्रत्यागता असव प्राणाः यस्याः सा सती अन्तः समतप्यत । कर्मकर्तरि । " And Vallabha says "प्रत्यागतासुः प्राप्तप्राणा सती अन्तर्हृदये समतप्यत । तस्याः सीताया मोहान्मूर्च्छातः प्रबोधः सचेतनाकरः कष्टतरोऽभूद् दुःसहतरो बभूव । किंभूतः प्रबोधः सुमित्रात्मजयत्नलब्धो लक्ष्मणकृतव्यजनादियत्नप्राप्तः ॥ " He too probably takes समतप्यत in the sense of कर्मकर्तरि or the reflexive passive like Hemâdri. Hemâdri as well as Vallabha interpret the sense of समतप्यत in the कर्मकर्तरि or the reflexive passive; which interpretation of theirs is wrong, and rightly refuted by Mallinâtha. Mallinâtha is right when he interprets the sense of समतप्यत in the passive voice. And Pandit's attempt by adducing so many quotations in support of his remarks on Mallinâtha's refutation appears to us quite incorrect. The sense of the form समतप्यत may be active from the intransitive root तप् of the fourth class Atmanepada. According to Pá*n*ini the root तप् is generally used in the reflexive passive when it has only for its object a cognate form derived from the (same) root, *i. e.* तप् . "तपस्तपः कर्मकस्यैव, " Pá*n*ini, III. 1. 88. Translate the aphorism :—' The agent of the verb तप् ' to heat, ' becomes similar to the object, only when the object is the word तपस् itself. ' Thus तप्यते तपस्तापसः ' the devotee performs austere devotion '; but not so in उत्तपति सुवर्णं सुवर्णकारः ' the goldsmith heats the gold. '

P. 449. St. 58.—**आख्यातवाल्मीकिनिकेतमार्गः**, *Cf.* Padma Purá*n*a Pátálakha*nd*a Râmâs'va. " समीपे ते मुनेरस्ति वाल्मीकेराश्रमो महान्."

P. 450. St. 59.—**वाक्यम्**, On this epithet Hemâdri makes the following remark : " वाक्यशब्दस्याविशेषणाभावाद्व्यर्थप्रायत्वं । यद्वा । काव्येषु [काव्ये Ms.] संक्षेपानादरः. "—**सौम्य चिराय जीव**, Compare Buddhacharita, Canto I. verse 81. " तस्मा कृथाः शोकमिमं प्रति त्वं तत्सौम्य शोच्यं हि मनुष्यलोके । मोहेन वा कामसुखैर्मदाद्वा यो नैष्ठिकं श्रोष्यति नास्य धर्मम् " ॥—**बिडौजसा विष्णुरिव**, Hemádri and Vallabha have the following: the former says, " आदित्यत्वे शक्रस्य विष्णुः कनीयान् । " उपेन्द्र इन्द्रावरजः " इत्यमरः ।" and the latter has, " आदित्यत्वेन हि शक्रस्य विष्णुः कनीयान्. " But the reference in this verse appears to be made to उपेन्द्र or the Dwarf incarnation of Vish*n*u. Vámana, the Dwarf, was, according to Vish*n*u Purá*n*a (Wilson's V. P. Vol. III. p. 18), the son of Kâs'yapa by Aditi, the mother of Indra. It is not clear to what legend or legends Kálidása refers when he alludes to the entire dependence of

Vishnu upon the will of S'akra, to whom the former is always represented as being superior. See Wilson's Vishnu Purána, Vol. III. pp. 18-19, and also other Puránas.

P. 450. St. 60.—**प्रजानिषेकम्**, On this epithet Cháritravardhana makes the following remark, "प्रजानिषेकं सूनोरित्यनेनान्यस्य कस्यापीति चित्ते मा कार्षुरिति सूच्यते." And Vallabha says, "भंग्या गर्भग्रहणं सूचयति." —**विज्ञापय**, *Cf.* Padma Purána Pâtâlakhanda Rámás'va. "श्वश्रूजनं ब्रूहि सर्वं मत्सन्देशं रघूत्तम । त्यक्ता वने महाघोरे रामेण निरघा सती &c."

P. 450. St. 61.—**वाच्यस्त्वया मद्वचनात्स राजा**, On this Hemádri observes : "इति युक्तायुक्तविचाराभावः [°विचारभावः Ms.] । कथं मया वक्तुं शक्यते इति चेन्मद्वचनात् &c." Compare for a parallel idea Buddhacharita, Canto VI. verses 23-24. "एवमादि त्वया सौम्य विज्ञाप्यो वसुधाधिपः । प्रयतेथास्तथा चैव यथा मां न स्मरेदपि ॥ अपि नैर्गुण्यमस्माकं वाच्यं नरपतौ त्वया । नैर्गुण्यात्त्यज्यते स्नेहः स्नेहत्यागान्न शोच्यते "॥—**वह्नौ विशुद्धामपि**, On this Hemâdri observes : "इत्यपराधनिरासः । लोकापवादश्रवणादिति त्यागहेतौ दौर्बल्यं । अनेन धीरानायिकात्वं [धीरप्रकारत्वं Ms.] । तथा रुद्रटः । 'सा धीरा वक्ति वक्रोक्त्या प्रियं कोपात्कृतागसम्" इति.—**श्रुतस्य किं तत्सदृशं कुलस्य**, On this Cháritravardhana remarks : "अथ वा कुलस्य वंशस्य गरीयसा प्रत्यक्षप्रमाणेनाधिगतं मम नैर्मल्यमनादृत्य सत्यमसत्यं वेति संशययुक्तात्परोक्षाज्जनापवादश्रवणादेव त्यक्तवतस्तव सदसद्व्यवहाराभिज्ञस्य विद्यान्वययोः सदृशमिति सीताया वक्रोक्तिः." *Cf.* Padma Purána Pâtâlakhanda Rámâs'vamedha. : "सौमित्रे गच्छ रामं त्वं धर्ममूर्तिं यशोनिधिं । मद्वाक्यमेव त्वं ब्रूयाः समक्षं तपसां निधेः । मां तत्याज भवान् यद्वै जानन्नपि विपापिनीं । कुलस्य सदृशं किं वा शास्त्रज्ञानस्य तत्फलं."

P. 451. St. 62.—**कल्याणबुद्धेः**, Hemâdri explains, "कल्याणी शुभा बुद्धिर्यस्येति पुंवद्भावः," and further he as well as Cháritravardhana say, "इति सोल्लुण्ठं [सोत्कण्ठनं Ms.] ".—**न कामचारो मयि शङ्कनीयः**, Compare Buddhacharita, Canto VIII. verse 49. "तदेवमावां नरदेव दोषतो न तत्प्रयातं प्रतिगन्तुमर्हसि । न कामचारो मम नास्य वाजिनः कृतानुयात्रः स हि दैवतैर्गतः" ॥ —**विस्फुर्जथुः**, Hemádri renders it by "स्फुरणं", and Cháritravardhana by "समृद्धिः".

P. 451. St. 63.—**उपस्थितामपास्य लक्ष्मीं**, This refers to Ráma's banishment just as he was about to be crowned. Compare Buddhacharita, Canto VIII. Stanza 83. "त्यज नरवर शोकमेधि धैर्यं कुधृतिरिवार्हसि धार नाश्रु मोक्तुं । त्वजमिव मुदितामपास्य लक्ष्मीं भुवि दशवो हि नृपा वनान्यभीयुः" ॥ —**तदास्पदं प्राप्य**, Mallinátha's construing त्वद्भवनं with आस्पदं प्राप्य is not happy. It would be right to take आस्पदं प्राप्य absolutely in the sense of 'having got the ascendancy' or it would also be preferrable to translate तदास्पदं in the sense of 'that position,' *viz.*, which she wished to gain at first but

was disappointed by Râma's going into exile. Whatever interpretations we put upon तदास्पदं प्राप्य, त्वद्वने can only be properly construed when taken with वसन्ती. *Cf.* Hemâdri : " पूर्वं यामुपस्थितां लक्ष्मीमपास्य त्यक्त्वा मया सीतया सार्धं वनं प्रपन्नोऽसि । तया लक्ष्म्याऽद्य त्वय्यास्पदं प्रतिष्ठां प्राप्य त्वद्भवने वसन्त्यहं रोषान्न सोढास्मि । कर्मणि लुट् । यदा ते व्यसनं तदाहमधुना त्वय्येति भंग्योक्तिः । " आस्पदं प्रतिष्ठायाम् " Pâṇini, VI. 1. 146. इति साधुः । आत्मयापनाय स्थानं प्रतिष्ठेति काशिकावृत्तौ." And Châritravardhana's comments are : " पूर्वमुपस्थितां प्राक्प्राप्तां लक्ष्मीमपास्य त्यक्त्वा मया सार्धं समं वनं प्रपन्नो गतोऽसि । तया लक्ष्म्या त्वद्भवने भवद्गृहे वसन्तीं त्वहं रोषान्न सोढास्मि । किं कृत्वा । त्वय्यास्पदं प्राप्य । यद्यप्यत्रोत्प्रेक्षाद्योतकं पदं नास्ति तथाप्यर्थादुत्प्रेक्षा व्यंग्या." Vallabha also reads : " त्वय्यास्पदं प्राप्य, and interprets त्वय्यास्पदं स्थानं लब्ध्वा......त्वद्भवने वसन्ती...अहं न ......चक्षमे."

P. 451. St. 64.—**भूत्वा शरण्या**, &c. Compare Buddhacharita, Canto VII. verse 47. " एवं प्रवृत्तान्भवतः शरण्यानतीव संदर्शितपक्षपातान् । यास्यामि हित्वेति ममापि दुःखं यथैव बन्धूंस्त्यजतस्तथैव" ॥—**दीप्यमाने**, Châritravardhana translates it by " जाग्रति. "—**निशाचरोपप्लुतभर्तृकाणाम्**, Compare Buddhacharita, Canto VIII. verse 35. " सुहृद्भवेण ह्यविपश्चिता त्वया कृतः कुलस्यास्य महानुपप्लवः" ॥

P. 452. St. 65.—**किं वा** &c., ' or, I would neglect, *i. e.*, make away with this wretched existence, were I not impeded &c.'

P. 452. St. 66.—**सूर्यनिविष्टदृष्टिः**, Analyse सूर्ये निविष्टा दत्ता दृष्टिर्यया सा.—**त्वमेव भर्ता**, *Cf.* Padma Purâna Pâtâlakhaṇda Râmâs'va. " भवे भवे भवानेव पतिर्भूयान्महेश्वर " इति.

P. 453. St. 67.—**तपस्विसामान्यं**, ' in common with other ascetics.' *Cf.* Châritravardhana : " यथा अन्ये तापसा रक्ष्यास्तथाहमपीत्यर्थः."—**नृपस्य धर्मो मनुना प्रणीतः**, *Cf.* Hemâdri : " शस्त्रास्त्रभृत्त्वं क्षत्रस्य वणिक्पशुकृषीर्विशः " इति योगीश्वरश्च । " प्रधानं क्षत्रिये धर्मः प्रजानां परिपालनं " इति. *Cf.* also Manu VII. 17. 35. " स्वे स्वे धर्मे निविष्टानां सर्वेषामनुपूर्वशः । वर्णानामाश्रमाणां च राजा सृष्टोऽभिरक्षिता " इति.

P. 453. St. 68.—**मुक्तकण्ठं**, Hemâdri analyses, " मुक्तकण्ठो यस्यां क्रियायां यथा भवति तथा. "—**चक्रन्द विग्ना कुररीव**, Compare Buddhacharita, Canto VIII. verse 51. " विषादपारिप्लवलोचना ततः प्रनष्टपोता कुररीव दुःखिता । विहाय धैर्यं विरुराव गौतमी तताम चैवाश्रुमुखी जगाद च " ॥

P. 453. St. 69.—**नृत्यं मयूराः** &c., Compare Buddhacharita, Canto VII. Stanza 5. " हृष्टाश्च केका मुमुचुर्मयूरा दृष्ट्वाम्बुदं नीलमिवोन्नमन्तं । शष्पाणि हित्वाभिमुखाश्च तस्थुर्मृगाश्चलाक्षा मृगचारिणश्च" ॥—**वनेऽपि**, Pandit says, ' अपि rather shows that though the forest was not expected to weep, till indeed it did weep, than that lamentation took place *also* in

the palace of Ráma.' On the figure of the verse Hemâdri gives the following: "क्रियादीपकं। "आदिमध्यान्तवर्त्यैकपदार्थेनार्थसंगतिः। वाक्यस्य यत्र जायेत तदुक्तं दीपकं यथा" इति वाग्भटः."

P. 454. St 70.—**कुशेध्माहरणाय.** Analyse कुशाश्च इध्मानि चैतेषां समाहारः कुशेध्म तस्याहरणाय. Compare Buddhacharita, Canto VII, verse 4. "विप्राश्च गत्वा बहिरिध्महेतोः प्राप्ताः समित्पुष्पपवित्रहस्ताः" ॥—**श्लोकत्वमापद्यत यस्य शोकः,** On this epithet Hemádri makes the following remark :"चाण्डालविद्धक्रौञ्चमिथुनदर्शनोत्थेन शोकेन चाण्डालं यदाभत्सेयत्तदाप्रभृति वृत्तानि पद्यान्यभवन्। पूर्वं वाक्यान्येवेति श्रूयन्ते." And quotes, like Mallinátha, the verse from Rámáya*n*a. Cháritravardhana and Vallabha also quote the same verse.

P. 454. St. 71.—**दोहदलिङ्गदर्शी,** Hemádri explains it to mean, "तथा वामनः। "संवीतस्य हि लोकेन न दोषान्वेषणं क्षमं। शिवलिङ्गस्य संस्थाने कस्यासभ्यत्वभावना" इति."—**इति,** 'in the following manner.' The particle इति is often used in reference to what follows. See St. 1, Canto XIII.

P. 454. St. 72.—**विषयान्तरस्थं पितुर्निकेतं प्राप्तासि,** 'Thou hast come to the abode of thy father situated in a different country.' *Cf.* Padma Purá*n*a Pâtàlakha*n*da Rámás'vamedha: "वाल्मीकिं मां विजानीहि पितुस्तव गुरुं मुनिं। दुःखं मा कुरु वैदेहि आगच्छ मम चाश्रमम्। भिन्नस्थाने पितुर्गेहं जानीहि पतिदेवते। ईदृशे कर्मणि मम रोषस्तव महापते" इति. Cháritravardhana explains this to mean, "विषय एकदेशोऽन्तरं मध्यं यस्य तत्रस्थं पितुर्निकेतं गृहं प्राप्तासि। अथ वा। जनकदेशादन्यदेशस्थं पितुर्निकेतमित्यर्थः."

P. 455. St. 73.—**कलुषप्रवृत्तौ,** Hemádri explains it to mean, "कलुषे पापे प्रवृत्तिर्यस्य। यद्वा। कलुषा अस्वस्था प्रवृत्तिर्यस्य."—**उत्खातलोकत्रयकण्टके,** Analyse उत्खातमुन्मूलितं लोकत्रयस्य भुवनत्रयस्य कण्टको जगद्द्रोहित्वात्कण्टकतुल्यो रावणादिर्येन तस्मिन्नित्यर्थः. On this Hemádri remarks: "अनेन स्वाश्रमोपद्रवशामको रावणवधः सूचितः."—**सत्यप्रतिज्ञे,** On this Hemádri observes: "इति दण्डकारण्ये कृता तपस्विरक्षणप्रतिज्ञा सूचिता."—**अविकत्थने,** On this Hemâdri remarks: "इति मुनयो मया रक्षिता इत्यात्मश्लाघाभावः सूचितः."

P. 455. St. 74.—**सतां भवोच्छेदकरः पिता ते,** 'thy father destroys the transmigration of the virtuous.' Janaka was celebrated as a great philosopher. He is also represented as a great ब्रह्मवादिन् or propounder of Brahma or the universal essence. *Cf.* Uttar. IV. "तदयं ब्रह्मवादी पुराणराजर्षिर्जनकः" &c. He is also described in the S'ántiparvan of Mahábhárata (मोक्षधर्म Adh. 328.) as showing

the path to salvation. *Cf.* Chàritravardhana : "सतां मुमुक्षूणां भवस्य (is his reading) संसारस्य छेदे ध्वंसे गुरुर्ब्रह्मवियोपदेष्टा. "—**येनासि ममानुकम्प्या**, On this Hemàdri makes the following remark :' 'मुनेर्भूतानुकम्पित्वे सिद्धेऽपि सीताविश्रम्भार्थं [°विश्वासार्थं Ms.] अनुकम्पोपन्यासः." And also Châritravardhana : "यद्यपि व्रती समस्तप्राणिषु समानचेतास्तथापि सीताविश्वासनायेयमुक्तिः."

P. 455. St. 75.—**इतः**, Hemâdri explains this to mean, "इतो वाल्मीकेर्भविष्यति." And Châritravardhana has "अस्मत्सकाशात्."—**अनघप्रसूतेस्ते अपत्यसंस्कारमयो विधिरितो भविष्यति**, that is, "अनघं यथा तथा भूतायास्तव प्रसूतेः प्रसवानन्तरं तवापत्यस्य जातकर्मादिसंस्काररूपो विधिरत्र वने भविष्यति."

P. 456. St. 77.—**आर्तवं**, On this Hemâdri remarks : "अकालजं मुनीनामभक्ष्यमित्यार्तवं । तथा च मनुः । "कालपक्कैः स्वयं शीर्णैर्वैखानसमते स्थिते" इति कालजं गुणवद्भवतीति."—**उदारवाचः**, Hemâdri explains it to mean, "रम्यवाचः । इति कथाकथनशक्तिः".—**नवाभिषङ्गा**, On this Hemâdri remarks: "इति विनोदार्हता."—**अकृष्टरोहि**, Hemâdri explains it to mean, "अकृष्टोद्भवेन नीवारेण श्यामाकादिनार्थांस्तर्पयेदिति विज्ञानेश्वरः".

P. 457. St. 78.—**पयोघटैः**, *Cf.* Ku. V. St. 14. "अतन्द्रिता सा स्वयमेव वृक्षकान् । घटस्तनप्रस्रवणैर्व्यवर्धयत्."

P. 457. St. 79.—**अनुग्रहप्रत्यभिनंदिनी**, 'receiving the favour with pleasure,' or thanking him for his kind offer.—**दयार्द्रचेताः**, Analyse दयया करुणया आर्द्रं चेतो हृदयं यस्य तथोक्तः.

P. 458. St. 81.—**इङ्गुदी**, &c., Hemâdri discusses, "इङ्गुद्याः फलमिङ्गुदी । इति न तथा । "आश्वत्थवैणवशाक्षनैय्यग्रोधैङ्गुदं फले" इत्यत्र अश्वत्थादेः "प्लक्षादिभ्योऽण्" Pâ*n*ini, IV. 3. 164. इति पुनर्विधेः फले लुङ् नास्तीति क्षीरस्वामी."—**अनुपदं**, Hemâdri analyses, "पदमनुगतमनुपदं."

P. 458. St. 82—**प्रजासंततये**, Hemâdri explains this to mean, "प्रजायाः संततये अविच्छेदाय । न तु जीवितेच्छया."

P. 459. St. 83.—**सीतापरिदेवनान्तमनुष्ठितं शासनं शशंस**, 'related (how) he had executed his command up to the lamentation of Sitá'; *i. e.*, related that he had done what he was ordered and every thing else that occurred up to and including the lamentation of Sitá, after he had abandoned her in a forest near the hermitage of the sage Válmiki.

P. 459. St. 84.—सबाष्पो बभूव, 'had burst into tears.' On the latter half of this Hemâdri remarks: "त्यक्त्वा किमित्यरोदीदित्याह." Compare Buddhacharita, Canto IX. Stanza 13. "कुमार राजा नयनाम्बुवर्षो यत्त्वामवोचत्तदिदं निबोध" ॥

P. 460. St. 85.—रजोरिक्तमनाः, 'with his mind free from the effects of Rajas.' On this Hemádri remarks: "रजोगुणशून्य इति वर्णाश्रमावेक्षणे जागरूकत्वे हेतुः".

P. 460. St. 86.—असंघट्टसुखं वसन्ती, Hemâdri explains this to mean, "असंघट्टेन असंमर्देन सुखं यथा तथा वसन्ती." 'dwelling in a manner full of beatitude because there was no concussion.' Châritravardhana says, "असंघट्टमप्रचलितं सुखं यथा स्यात्तथा." 'Happy without fear of loss or separation.' Vallabha reads and comments upon असंबाधसुखं = "अनुपमर्दसुखं निवसन्ती." Mallinátha's interpretation is not quite clear. संघट्ट is 'concussion' or 'clash,' hence असंघट्टसुखं means, 'in a manner full of happiness because there was no clash,' *i. e.*, because there was no interference from a rival. The goddess of Royal Fortune (Lakshmî) seemed to be happy in her exclusive possession of Ráma the king of Ayodhyá. Vallabha's reading explains the sense of our reading असंघट्टसुखम्, which is equivalent to असंघट्टमत एव सुखं यथा स्यात्तथा. See readings.

Canto XV.

P. 462. St. 1.—**पृथिवीमिव केवलां बुभुजे**, Hemâdri explains it to mean, "भूमिजस्य फलस्य भुक्तत्वाद्भूमिरपि तथोक्ता। एवकारः अन्ययोगव्यवच्छेदार्थः। केवलमिति (is his reading) "त्रिलिंगत्वेकक्रत्स्नयोः" इत्यमरोक्तत्वात्केवलशब्दः समस्तार्थष्टीकान्तरात्। अथैवकारे प्रयुक्ते पुनः केवलशब्दप्रयोगो पुनरुक्ततां प्रतिपादयति। केऽप्यन्यथा समादधते। अन्ययोगव्यवच्छेदार्थ एवकारोऽन्ययोगनिरासार्थः केवलशब्दः। के सुखे अवलामसमर्थामित्यन्ये." Two Mss. of Hemâdri's Darpa*n*a omit the quotation of Amara in the above extract. And Châritravardhana has the following : "निर्णीते केवलमिति त्रिलिंगत्वे न कृत्स्नयोः" इत्यमरोक्तत्वात्केवलशब्दः समस्तार्थः। अन्यथैवकारे प्रयुक्ते पुनः केवलशब्दप्रयोगः पुनरुक्ततां प्रतिपादयति। केऽप्यन्यथा समादधते। अन्ययोगव्यवच्छेदार्थ एवकारोऽयोगनिरासार्थः केवलशब्दः। के सुखे अवलामसमर्थामित्यन्ये."—**बुभुजे**, Châritravardhana discusses, "अनवनस्य प्रयोगार्थो 'दिवं मरुत्वानिव भोक्ष्यते महीं' इत्यत्र निरणायि." The root भुज् is found in the Atmanepada only when it is used in its primary sense of enjoying. In the secondary sense of protecting or ruling it takes Parasmaipada. See the aphorism of Pâ*n*ini "भुजोऽनवने" I. 3. 66. 'After the verb भुज्, the Atmanepada is used, except in the sense of protecting.' Ten Southern and Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary omit the नांदी verse at the opening of the commentary on this stanza. It is given in all the northern Mss. and three Mss. of the Southern country. The stanza as it stands in these Mss. of upper countries appears tobe corrupt and gives no meaning. That Mallinâtha might not have written an opening verse (नांदी) on this canto also appears to be inconsistent since he has one on every other canto of the poem. It may probably be that the correct versionof the verse may have been hopelessly lost.

P. 462. St. 2.—**लवणेन**, See Adhyâtma Râmâya*n*a Uttarakâ*n*da, Canto VI. "मधुनामा महादैत्यः पुरा कृतयुगे प्रभो। आसीदतीव धर्मात्मा देवब्राह्मणपूजकः। तस्य तुष्टो महादेवो ददौ शूलमनुत्तमं। प्राह चानेन यं हंसि स तु भस्मीभविष्यति। रावणस्यानुजा भार्या तस्य कुंभीनसी श्रुता। तस्या तु लवणो नाम राक्षसो भीमविक्रमः। आसीदुरात्मा दुर्धर्षो देवब्राह्मणहिंसकः। पीडितास्तेन राजेन्द्र वयं त्वां शरणं गताः."—**विलुप्तेज्याः**, Analyse, विलुप्ता ध्वस्ता इज्या यज्ञा येषां ते.

P. 462. St. 3.—**तपसो व्ययं न कुर्वन्ति**, *Cf.* Vallabha "शापेन हि तपोऽपचीयते." It is supposed that by pronouncing an imprecation or by otherwise using some extraordinary power, there is caused a diminution of ascetic virtue (तपः). It is for this reason that sages when

troubled by the demons seek the aid of powerful kings for their destruction. Compare Bhatti, " क्षात्रं द्विजत्वं च परस्परार्थं. "

P. 463. St. 4.—**विघ्नप्रतिक्रियाम्**, Analyse विघ्नस्य मखाद्यनुष्ठाने अन्तरायीभूतस्य लवणस्य प्रतिक्रिया प्रतीकारस्तां.—**धर्मसंरक्षणार्थैव**, Hemâdri quotes the following : " यदुक्तं गीतायां । " यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत । अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहं । परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृतां । धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे. "

P. 463. St. 5.—**विशूलः प्रार्थ्यतां**, 'should be assailed when he is not armed with his S'ûla.'

P. 463. St. 6.—**यथार्थं**. Hemâdri analyses, " अर्थमनुगतं यथार्थमित्यव्ययीभावः " ।—**शत्रुघ्नं**, Hemâdri explains it to mean, " तामिर्गर्भः प्रजाभूत्यै दश्रे देवांशसंभवः" इत्युक्तं वि ष्णवंशत्वात् " अमनुष्यकर्तृके च " Pânini, III. 2. 53. इति टक् । यद्वा । " ब्रह्मशत्रुकृतभ्रूणदुःखदोषज्वरादिषु । एषु कर्मसु हन्तेटक् ब्रह्मः सर्वपापभाक् " इति गणदर्पणे च । गोघ्नवन्मूलविभूजादित्वात्को वा. " And Châritravardhana has "अथ वा । "मूलविभूजादित्वात्कः" इति भाष्यवृत्तिकारः." And further Hemâdri and Vallabha have the following remark on the next stanza : " ननु रावणादप्यधिको लवणासुरः शत्रुघ्नेन कथं जेतुं शक्य इत्याशङ्क्याह."

P. 464. St. 7.—**अपवाद इवोत्सर्गं व्यावर्तयितुमीश्वरः**, 'able to stop the enemy, as an exception is able to stop the general rule.' *Cf.* Hemâdri : " अपवादो विशेषविधिः । उत्सर्गं सामान्यविधिमिव । " सामान्यशास्त्रतो नूनं विशेषो बलवान्भवेत् " । बहुव्यापकं सामान्यं । अल्पव्यापको विशेषः । यथा श्रीश इत्यत्र " इको यणचि " Pânini, VI. 1. 77, इत्यस्योत्सर्गस्य " अकः सवर्णे दीर्घः " Pánini, VI. 1. 101. इत्यपवादः । तथोक्तं । " भूयोदर्शनमुत्सर्गो बाधस्तस्यैकदेशगः । अपवादः स विज्ञेयो मृग्यो व्याकरणादिषु " इति । ननु " शब्दविद्यादिशास्त्राणामर्थमाश्रित्य यत्कविः । व्युत्पन्नः कुरुते काव्यमधमं तदुदाहृतं " इति । काव्योपदेशोक्तेरधममिति चेत्तन्न । यथा काव्यप्रकाशे । " वक्त्राद्यौचित्यवशाद्दोषोऽपि गुणः क्वचित् क्वचिन्नोभौ " । वक्तृप्रतिपाद्यमानव्यङ्ग्यवाच्यप्रकरणादीनां महिम्ना दोषोऽपि क्वचिद्गुणः । क्वचिन्न दोषो न गुणः । वैयाकरणादौ वक्तरि प्रतिपाद्ये रौद्रादौ रसे व्यङ्ग्ये कष्टत्वं गुणः । यथा । " दीधीङ्वेवीङ्समः कश्चिद्गुणवृद्ध्योरभाजनं । क्विप्प्रत्ययनिभः कश्चिद्यत्र सन्निहिते न ते " इति । तथा कुमारसंभवेऽपि । " अपवादैरिवोत्सर्गाः कृतव्यावृत्तयः परैः " । उत्सर्गाः सामान्यशास्त्राणि । " न हिंस्यात्सर्वभूतानि " । अपोद्यन्ते एभिरिति अपवादास्तैः । अजालम्भनेत्यादिभिर्विशेषशास्त्रैर्बाध्यन्ते तद्वदत्राप्यनुसंधेयं. "—**अपवादः**, Explain अपोद्यते अनेनेति अपवादः. 'Whatever', observes Pandit, 'may be the fitness of the simile as regards the similitude, it certainly cannot be said to be very poetical, being derived altogether from a pedant's life.' See also below, note on Stanza 9.

P. 464. St. 9.—**रामादेशात्** *i. e.* it was not desired by S'atrughna. The meaning of the verse is that he alone was quite a match for the

demon. *Cf.* " सेना परिच्छदस्तस्य &c. "—**पश्चादध्ययनार्थस्य**, 'referring to the root इ preceded by the preposition अधि, the former according to the poet and Pátanjali the author of the Mahábháshya, being able to signify 'to learn' even without a preposition. *Cf.* Châritravardhana : " यथोपसर्गनिरपेक्षत्वेनैवार्थवत इङध्ययने इत्यस्य धातोः पश्चाद्गामी अधिरुपसर्गो भवति। यद्यपि सूत्रे धातुरुपसर्गं न व्यभिचरति। उपसर्गस्तु धातुं व्यभिचरत्येवमादि महाभाष्ये धातोरेवार्थत्वादुपसर्गस्य द्योतकं निरटंकि। उक्तं च माघे। " धातुलीनमुपसर्ग इवार्थे " इति. " And Hemádri has the following : " इङध्ययनार्थः। अध्युपसर्गोऽपि तमेवार्थमाचष्टे अतस्तेन न कोऽर्पीत्यर्थः। तथात्र सेनया न किंचित्साध्यमस्तीत्यर्थः। " धात्वर्थं बाधते कश्चित् कश्चित्तमनुवर्तते। तमेव विशिनष्ट्यन्योऽनर्थकोऽन्यः प्रयुज्यते "। इति क्षीरतरंगिण्यां क्षीरस्वामी। माघकाव्ये च। " संतमेव चिरमप्रकृतत्वादप्रकाशितमिवाद्युतदङ्गे। विभ्रमं मधुमदः प्रमदानां धातुलीनमुपसर्ग इवार्थं " S'i. X. 15. इति। इङिकावध्युपसर्गतो न व्यभिचरतः. " The simile contained in the latter half of the verse is peculiarly pedantic.

P. 465. St. 10.—**वालखिल्यैरिवांशुमान्**, The Vâlakhilyas are certain sages, supposed to be in attendance on the sun's car. The wife of Kratu, Samnâti, brought forth the sixty thousand Válakhilyas, pigmy sages, no bigger than a joint of the thumb, chaste, pious, resplendent as the rays of the sun. See Wilson's Vishnu Purána, Vol. I. p. 155. The epithet मरीचिपाः is also applicable to these sages. For an account of them see Mahábhârata Adiparvan, Gajakachhapa chapters, 30-31, pages 40-52, Manmatha Natha Datta's *edition*. *Cf.* also the Bhâgavata Purána, Sk. XII. Adh 11. " वालखिल्याः सहस्राणि षष्ठिर्ब्रह्मर्षयोऽमलाः। पुरतोऽभिमुखं यान्ति स्तुवन्ति स्तुतिभिर्विभुम्. " On this Hemâdri observes : " मुनिसंनिधौ तस्य रथारोहणं मुनीनामाज्ञयेति न विरुद्धं. "—**आविष्टवर्त्मा**, Vallabha says, " च्यवनादिभि र्दर्शितपथः ".

P. 465. St. 11.—**मार्गवशात्**, 'On account of his road', *i. e.* the road by which he was to pass lay by the hermitage of Vâlmiki. *Cf.* प्रसंगवशात्, 'as occasion or opportunity offers.'—**यतः**, Gen. of यत् from इ, 'to go.'

P. 465. St. 12.—**तपःप्रभावसिद्धाभिः**. The sages by their ascetic power could produce whatever they desired. *Cf.* St. 94, Canto I. Also Bhatti. " आतिथ्यमेभ्यः परिनिर्विवत्सोः कल्पद्रुमा योगबलेन फेलुः ".—**कुमारं पूजयामास**, On this Hemàdri remarks : " कुमारशब्देनात्र तारुण्यं लक्ष्यते शीलबुद्धिसंपन्नो राजपुत्रः कुमार इत्युच्यते. " See readings.

P. 466. St. 13.—**कोशदण्डौ**, which are the main stays of a kingdom. *Cf.* Hemàdri : " कोशो द्रव्यसमूहः। दण्डश्चतुरंगबलं ". And quotes the following : " दण्डो यमे मानभेदे लगुडे दमसैन्ययोः " इति विश्वः.

P. 466. St. 15.—**मधूपघ्नं**, Hemâdri explains it to mean, " मधुर्नाम लवणस्य पिता मधुदैत्यस्तस्योपघ्नमाश्रयं मधूपघ्नं मधुवनाख्यं मथुरां प्राप. "—**कुम्भीनस्याश्च**, Hemâdri explains it by " कुम्भीनसी रावणस्य स्वसा लवणस्य माता तस्याः कुक्षिजः ".

P. 466. St. 16.—**धूमधूम्रः**, 'black as a smoke,' which was his natural colour as a demon.—**जंगमः**, Hemâdri analyses, " अतिशयेन गच्छतीति जंगमः । यङि पचाद्यच्. "

P. 467. St. 17.—**जयो रन्ध्रप्रहारिणां**, Those who are able to take advantage of the weakness of an enemy generally come off successful *Cf.* Mâgha: "आत्मोदयः परग्लानिर्द्वयं नीतिरितीयती. " And " स्वशक्त्युपचये केचित्परस्य व्यसनेऽपरे. " *Cf.* also St. 61, Canto XVII. Compare also " तदा यायाद्विगृह्यैव व्यसने चोत्थिते रिपोः ".

P. 467. St. 18.—**नातिपर्याप्तं**, Hemâdri explains it to mean, " अमानोना प्रतिषेधे", इत्यस्य न तु नञः । यथा नैकशब्दः सुप्सुपेति समासादिति वामनः ".

P. 468. St. 20.—**सौमित्रेः**, According to the interpretation of Mallinâtha we ought to have पुष्परजस्त्वं and not पुष्परजः. The position of the words गात्रं पुष्परजः प्राप न शाखी would signify that पुष्परजः is nominative, not accusative. Châritravardhana is, therefore, right, when he explains : " शाखी तरुः सौमित्रिगात्रं न प्राप किं तु वातवशातस्तत्तरुपुष्परजः परागः प्रापत्. "

P. 468. St. 22.—**ऐन्द्रमस्त्रं**, *Cf.* Hemâdri and Châritravardhana: " इन्द्रो देवता यस्य तदस्त्रं. " Indra is the destroyer of mountains.—**परमाणुतां प्रपेदे**, *Cf.* Hemâdri : " जालांतर्गते रश्मौ [भानौ Ms.] यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः । तस्य त्रिंशत्तमो भागः परमाणुः स उच्यते । " षष्ठो भागो वा. "

P. 469. St. 23.—**तमुपाद्रवदुद्यम्य**, All the Southern and the Deccan Mss. (except three) of Mallinâtha's commentary read the first half of this verse thus: " दक्षिणं दोषमुद्यम्य राक्षसस्तमुपाद्रवत् " instead of one which we have chosen for our text. Supposing that the reading of the majority of the Southern and the Deccan Mss. of Mallinâtha's commentary be the genuine text of Kâlidâsa, it may, with greater certainty, be said that that text of Mallinâtha's commentary is not the oldest, and hence the genuine text of our poet. There is a consensus of opinions among the commentators that the original reading contained दोः in the neuter. The text of the first half of this stanza of Hemâdri, Châritravardhana, Sumativijaya, Vallabha, Dinakara and Vijayânandasûris'varacharaṇasevaka agrees with the text of the three Southern Mss., as well as all the Mss. of Gujaratha and Râjaputana including the Calcutta

editions. I quote below the lines from Bha*tto*ji Dikshita which would undoubtedly prove the reading in these three Mss. of Southern India to be the oldest if not the correct reading of the poet. He says, " दोषशब्दस्य नपुंसकत्वमत एव भाष्यात् । तेन " दक्षिणं दोर्निशाचरः " इति संगच्छते । भुजाबाहू प्रवेष्टोदोरिति साहचर्यात्पुंस्त्वमपि । " दोषं तस्य तथाविधस्य भजते " इति. " Hemâdri's comments are: " तमिति । निशाचरो लवणो दक्षिणं दोर्भुजमुद्यम्य तं शत्रुघ्नमुपाद्रवत्संमुखमगच्छत् । उत्पातपवनेन प्रेरितः एकतालो गिरिरिव । " भुजबाहू प्रवेष्टोदोः " इति दोःशब्दः पुंसि । अत्र महाकविना क्लीबे युक्तः । एतद्दोषपरिजिहीर्षया । " दोषं रक्षोऽथ दक्षिणं " इति गतिं केचित्कुर्वन्ति । एकाक्षरनिघण्टमालायां तु । " पुंनपुंसकयोर्बाहौ दोः स्याद्दुःखे विदुः स्त्रियां " । बाहा बाहौ [बाहाबाहू Ms.] प्रवेष्टौ च दोः क्लीबेऽपि भुजस्त्रियु " इति भागुरिश्च. " And Châritravrdhana's comments are: " निशाचरो लवणो दक्षिणं दोर्बाहुमुद्यमोत्थाप्य तं शत्रुघ्नमुपाद्रवत्प्रत्यधावत् । क इव । उत्पातपवनेन प्रेरित एकस्तालो वृक्षो यस्य स तादृशो गिरिरद्रिरिव । " भुजबाहू प्रवेष्टो दोः " इत्यमरसिंहोक्त्वाद्दोरिति नपुंसकत्वं चिन्त्यं । निघण्टुकारैर्न पुंसकेऽप्यभिहितः । अथ वा । " दोषं रक्षोऽथ दक्षिणं " इति वा पाठः. " See readings.—उत्पातपवनप्रेरितः, 'set in motion, by an ominous gust of wind.' उत्पातपवन is a wind that rises as a prodigy. For a description of उत्पात see Râmâya*n*a Âra*n*yakâ*n*da, Canto 29, Gorr. edi.

P. 469. St. 24.—**कार्ष्णेन**. Hemâdri's explantion is, " कृष्णं लोहविकारस्तेन । यद्वा । कृष्णो देवता यस्य तेन । " And further he says, " रामेण हि अस्य प्रजतो वैष्णवः शरो दत्तः." And Châritravardhana has, " कृष्णो देवतास्य तत्कार्ष्णं तेन । अथ वा । कृष्णं लोहस्तद्विकारेण. "

P. 469. St. 25.—**दिव्याः कुसुमवृष्टयः**, Kálidása supposes that the gods who had assembled in the sky to witness the scene also participated in the joy of the ascetics at the fall of the demon Lava*n*a, and hence the pouring of the showers of heavenly flowers.

P. 470. St. 26.—**वीरः**, Hemádri explains it to mean, " विशेषेण ईरयतीति वीरः. "

P. 470. St. 27.—**व्रीडयावनतं शिरः**, On this epithet Hemâdri makes the following remark: " उन्नतस्य हि स्वकीर्तिश्रवणाद्व्रीडा । न तु उन्नतत्वमिति विरोधाभासः । तथा माघे । " लज्जते न गदितः प्रियं परो वक्तुरेव भवति त्रपाधिका. " S'i. XIV. 2.—**चरितार्थः**, 'who had their object gained.' Analyse चरितः प्राप्तोऽर्थः प्रयोजनं येन तथोक्तः.

P. 470. St. 28.—**निर्ममः**, This is probably used for its alliteration with निर्ममे. See St. 60, Canto XII, and our note on the same. Analyse निर्गता ममकारः (ममत्वं) यस्मात्सः. The compound is peculiar. The figure according to Hemâdri is अनुप्रास.

P. 471. St. 29.—स्वर्गाभिष्यन्दवमनं. *Cf.* Hemádri :. "यस्य ग्रामादेरारंभे यावत्संख्यो जनो व्यवस्थापि स्वस्थानादाधिक्येन यो जनः सोऽभिष्यन्दशब्देन लक्ष्यते। तस्यान्यत्रानयनं वमनशब्देन लक्ष्यते। स्वर्गादधिकस्थितिरित्यर्थः." And Châritravardhana explains it to mean, "स्वर्गस्याभिष्यन्दवमनं शाखानगरं कृत्वेव विनिवेशिता स्थापिता । अथ च स्वर्गस्याभिष्यन्दवमनं सारोच्चयं तस्याहरणं कृत्वेव विनिवेशिता । उभयथा स्वर्लोकसमाना सेत्यर्थः। "अभिष्यन्दवमनं शाखानगरं" इति चाणक्यः." *Cf.* Ku. St. 37. Canto VI. "अलकामतिवाह्येव वसतिं वसुसंपदाम्। स्वर्गाभिष्यन्दवमनं कृत्वेवोपनिवेशितं" ॥

P. 471. St. 30.—हेमभक्तिमतीं = हिरण्मयशलाकालंकृतां, according to Châritravardhana. And स्वर्णरचनावतीं, according to Hemádri. The हेमभक्तिमत्त्व of the Yamuná was produced by her being चक्रवाकिता.

P. 471. St. 31.—मन्त्रकृत्. On this Hemádri remarks: "इति संस्कारभाविण्यं."

P. 472. St. 32.—कुशलवोन्मृष्टगर्भक्लेदौ. Hemádri explains it to mean, "अस्त्री कुशं कुशो दर्भः" । "धान्ये देशे लवे वाद्ये नातिक्रान्ति यश्चनो" इति मनुष्योकव्याख्याने । लवो मेषोर्णचमरीकेशादिवाची । लवशब्दो मेषादिलोमवाचीति दक्षिणावर्तः । लवस्तृणविशेष इत्यन्ये । एवं ह्युक्तं रामायणे । "यस्तयोः प्रथमो जातः स कुशैर्मन्त्रसंस्कृतः । निर्मार्जनीयस्तेनासौ ततः कुश इति स्मृतः । अथावरस्तयोस्तत्र लवो नाम समाहितः । निर्मार्जनीयो धन्वेवं नाम्ना स तु लवोऽभवत्." And Châritravardhana has: "न तु स्वल्पेण । "धान्ये शब्दे लवे वाद्ये अतिक्रान्ति यश्चनो" इति मनुव्याख्याने लवशब्दो मेखलादिलोमवाचीति दक्षिणावर्तः । लवस्तृणविशेष इत्यन्यः."—उन्मृष्टः, Hemádri interprets it by "मार्जितः."

P. 473. St 35.—तद्योगात्. Hemádri, Châritravardhana and Vallabha do not agree with Mallinâtha as to the sense of this expression. Hemádri: "तद्योगात्रामसाहचर्यात्पतिवत्नीषु द्वौ द्वौ सूनू येषां ते । वीप्साप्रधानोऽयं निर्देशः । ते आसन् । "पत्नी पाणिगृहीता च" । "पत्युर्नो यज्ञसंयोगे" Pâṇini, IV. I. 33. ॥ महात्मनां कुले येऽष्टगुणाः कनिष्ठाश्च नुवर्तन्ते इति भावः । पतिवत्नीषु जीवद्भर्तृकासु । "अन्तर्वत्पतिवतोर्नुक्" Páṇini IV. I. 32. ॥ पतिवत्नी सभर्तृका । देवव्यापकशंका परिहारायोक्तत्वात् । पतिवत्नी संकेतावत्नीषु [संकेतावलीकारः Ms.]." Châritravardhana: "तद्योगात्तस्य रामस्य योगाद्भ्रातृरामसाहचर्यात् । पतिवत्नीषु पतिव्रतासु पत्नीषु द्वौ सूनू पुत्रौ यस्य स द्विसूनुः । द्विसूनुश्च द्विसूनुश्च द्विसूनुश्चेकशेषेण द्विसूनवः । पुत्रद्वययुक्ता अभूवन् । तद्योगात्तच्छब्देन भरतादिपरामर्शस्तस्मादिति कश्चित्." Vallabha: "तद्योगात् । ज्येष्ठानुवृत्तिसंबन्धात् । रामानुगादाचरणयोगात् । एतेन च द्विरधिकापत्यभावशङ्कां निरस्यति । प्रजार्थं गृहमेधिनामिति वाक्याददोषः । संख्यानियमत्र दर्शयति." Mallinátha appears right in construing तद्योगात् with पतिवत्नीषु-तद्योगात्पतिवत्नीषु, 'who were pre-eminent as wives by their connection with them,' *i. e.*, because they had Bharata and other brothers for their husbands.—त्रेताग्नितेजसः, Hemadri explains it to mean. त्रित्वमिताश्चेता अग्नयश्च । पृषोदरादिः । त्रेताग्नीनां तेज इव तेजो येषां ते."

P. 473. St. 37.—तपोऽव्ययो माभूत्. The word व्ययः is here used not in its ordinary sense (St. 3. above), but in the sense of 'obstacle.' For treating a guest hospitably does not cost any ascetic virtue (तपः), but only obstructs its practice for a time. *Cf.* Hemâdri: "आतिथ्यविधिना यस्तपोऽव्ययः."

P. 474. St. 38.—रथ्यासंस्कारशोभिनीं. See note to St. 16, Canto VII.

P. 474. St. 39.—असामान्यपतिं भुवः, 'the exclusive husband of the Earth,' *i. e.*, after his repudiation of Sitâ, Ráma had not taken another wife.

P. 474. St. 40—कालनेमिवधात्, According to the Váyu Purá*n*a, Vol. I. Adh. 6 Bibli. Indi. series, (verses 75–76) Kálanemi, or Káyavadha, was a son of Virochana, the grandson of Hira*n*yakas'ipu. Vish*n*u Purâ*n*a gives the following legend: 'At this present season, many demons, of whom Kálanemi is the chief, have over-run, and continually harass, the region of mortals. The great Asura Kâlanemi, that was killed by the powerful Vish*n*u, has revived in Ka*n*sa, the son of Ugrasena.' See Wilson's V. P. Vol. IV. P. 259. Pandit gives the following legend of this demon. 'Kâlanemi was, according to the Harivа*n*s'a, the son of Hira*n*yakas'ipu, and was a very mighty giant. He had a crown as brilliant as the sun. He was as great as mount Mandâra, and bedecked like it with silver. He had a hundred heads, a hundred arms, a hundred hands, a hundred mouths, and shone like a mountain having a handred peaks. He was killed by Vish*n*u. See Harivа*n*s'a. 2631. *fyg*. *Cf*. also Bhágavata Purà*n*a: "दृष्ट्वा मृधे गरुडवाहमिभारिवाहः। आविध्य शूलमहिनोदथ कालनेमिः। तल्लीलया गरुडमूर्ध्नि पतन् गृहीत्वा। तेनाभ्ययन्नृप मवाहमरिं व्यधीशः."—तुराषाडिव, Hemâdri discusses: अमरपदिभट्ट्यां तु। "छंदसि सहः," Pá*n*ini, III. 2. 63. इति ण्वरभावे श्रुतनाषाड् तुराषाड् इत्यादयां ण्यन्ताः क्विपि साधयितव्याः इति। तुरशब्दव्युत्पत्त्या तुरं वेगं सहयाति। सह मर्षणे। "अत उपधायाः," Pá*n*ini VII. 2. 166 इति वृद्धिः। "क्विच्च" Pâ*n*ini, III. 2. 76. इति क्विप्। "णेरनिटि," Pâ*n*ini, VI. 4. 51. इति णिलोपः। "उपपदमतिङ्" Pá*n*ini, II. 2. 19. इति समासः। "होढः," Pâ*n*ini, VIII. 2. 31. जश्त्वं। "सहेः साडः सः" Pá*n*ini VIII. 3. 56. इति षत्वं। "नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु क्वौ," Pâ*n*ini, VI. 3. 116. इति दीर्घः। प्रकृतिग्रहणेऽण्यधिकस्यापि ग्रहणात्। वृत्तिकृत्तु। "अन्येषामपि दृश्यते," Pâ*n*ini VI. 3. 137. इति दीर्घः। क्षीरस्वामी तु। "तुरं त्वरितं साहयत्यभिभवत्यरीन्" इति। मुग्धबोधव्याख्याकारस्तु। आकारान्ततुराशब्दं मत्वा तुरां वेगं सहते इति तुराषाड् इत्यादि."

P. 475. St. 41.—**प्रत्यर्पयिष्यतः काले कवेराद्यस्य शासनात्**, 'being ordered (not to tell) by the first of poets, who wished to communicate it himself in due time.'

P. 475. St. 42.—**द्वारि चक्रन्द भूपतेः**, *Cf.* Adhyâtma Râmâya*n*a, Uttarakâ*nd*a Canto 4. "ब्राह्मणस्य सुतं दृष्ट्वा बालं मृतमकालतः। शोचन्तं ब्राह्मणं चापि ज्ञात्वा रामो महामतिः। तपस्यन्तं वने शूद्रं हत्वा ब्राह्मणबालकं। जीवयामास शूद्रस्य ददौ स्वर्गमनुत्तमम्" इति.

P. 475. St. 43.—यत्त्वं, 'since thou.'—**कष्टात्कष्टतरं गता**, 'thou art thrown from a miserable condition into still more miserable one,' *i. e.*, thou hast fallen from the frying pan into the fire. The **कष्ट** was that the Earth was bereft of Das'aratha's benign rule. *Cf.* Hemâdri: "दिलीपाद्यपेक्षया दशरथपतित्वं कष्टं। ततो रामपतित्वं कष्टतरं." And Châritravardhana says, "इति रोदनस्वरूपोक्तिः."

P. 476. St. 44.—**न ह्यकालभवो मृत्युः**, *Cf.* St. 4, Canto IX.

P. 476. St. 45.—**यानं सस्मार**, See St. 20, Canto XIV.

P. 476. St. 46.—**गूढरूपा सरस्वती**, 'Sarasvatî with her form concealed,' *i. e.*, the goddess Sarasvati, that presides over speech. **तस्य पुरः उच्चचार.** *Cf.* Uttar. शम्बूको नाम वृषलः पृथिव्यां तप्यते तपः। शीर्षच्छेद्यः स ते राम तं हत्वा जीवय द्विजं॥"

P. 477. St. 48.—**वृक्षशाखावलम्बिनं**, *i. e.*, with his head hanging down towards the earth.—**ऐक्ष्वाकः** On this Sumativijaya remarks, "इक्ष्वाकोरपत्यमैक्ष्वाकः। अण्। उकारलोपो निपात्यते इति वल्लभः." See readings.

P. 477. St. 50.—See readings.

P. 478. St. 51.—**तपस्यनधिकारित्वात्प्रजानां तमघावहम्**, S'ûdras are not entitled to practise asceticism. *Cf.* Hemâdri: "विप्रक्षत्रियवैश्यस्य विशिष्टं कर्म कीर्त्यते" इति मनुः। "ब्राह्मणस्य तपो ज्ञानं तपः क्षत्रस्य रक्षणं। वैश्यस्य च तपो वार्ता तपः शूद्रस्य सेवनं." Also Châritravardhana: "अस्य द्विजस्य शुश्रूषेत्युक्तत्वात्तपस्यनधिकारः." *Cf.* also S'ûdrakamalâkara p. 12, Bom. *edi.*

P. 478. St. 52.—**हिमक्लिष्टकिञ्जल्कम्**, Analyse हिमेन तुषारेण क्लिष्टा गलिताः किञ्जल्काः केसरा यस्य तत्.—**ज्योतिष्कणाहतश्मश्रु**, His mustache as well as beard was burned by the rising flames of the fire over which he hanged himself head downwards. *Cf.* Hemâdri: "अग्नेः शम्बस्य वा ज्योतिष्कणैराहतं श्मश्रु यस्य तत्."

P. 478. St. 53.—**सतां गतिं**, *Cf.* Hemâdri: "शूद्रस्य वर्णत्रयशुश्रूषा स्वर्गः." He also quotes Manu like Mallinâtha.—**तपसा दुश्चरेणापि**.

&c., 'but not by his asceticism which though practised with hard rigour. nevertheless involved a transgression of the path belonging to him (as a S'údra).' *Cf.* Uttar. "युष्मत्प्रसादोपाय एष महिमा न तु तपसः फलम्."

P. 479. St. 54.—**मार्गसंदर्शितात्मना**, 'who showed himself in the way,' मार्गे संदर्शित आत्मा येन स तेन. That is, the sage Agastya met Râma on the road. Râma did not go to his hermitage.—**अपि,** Hemâdri remarks: "अपिशब्दः पूर्वापेक्षया समुच्चये."—**अगस्त्येन,** Hemâdri derives it as, "अगमद्रिं विंध्याख्यं स्त्यापयति शब्दापयति इत्यगस्त्यः। "स्त्यैष्ट्यै-शब्दसंघातयोः" इत्यस्मादादानात् "धात्वादेः षः सः" Pá*n*ini, VI. I. 64. इति णो न भवति."

P. 479. St. 55.—**अलंकारं ददौ,** See Râmâya*n*a Uttarakâ*nd*a Canto 76, verse 30. The ornament was a wrist-let, the same that Ku'sa subsequently dropped in the waters of the Sarayû. See Canto XVI, Sts. 72-73.—**पीतेनेव,** See St. 61. Canto VI.

P. 479. St. 57.—**भ्रातुर्वैवस्वतादपि,** *Cf.* Uttar. "दत्ताभये त्वयि यमादपि दण्डधारे। संजीवितः शिशुरयं मम चेयमृद्धिः" इति. *Cf.* also Hemâdri: "एतत्केन करिष्यते रामस्य चरित्रं त्वदन्यो महात्मा तथागतं बालं कालग्रस्तमजीवयदिति."

P. 480. St. 59.—**ज्योतिर्मयानि धिष्ण्यानि,** Pandit says, 'Certain *R*ishis are identified with the presiding deities of certain stars. Agastya, *e. g.*, is identified with the principal star in the southern constillation of *Canopus*. The *seven Rishis* are also identified with the seven stars of the *Ursa Major.*' Kálidása means to say that not only the Munis who dwelt on earth, but also those, like Agastya and the *seven Rishis*, who had taken their abodes in the stars, that go by their names, came down on earth to attend the sacrificial ceremony. The epithet धिष्ण्य appears to be a favourite word with As'vaghosha. It occurs four or five times in Buddhacharita. See canto I. stanza 2. "आसीद्विशालोन्नतसानुलक्ष्म्या पयोदपंक्त्येव परीतपार्श्वं। उदग्रधिष्ण्यं गगनेऽवगाढं पुरं महर्षेः कपिलस्य वस्तु" ॥ Compare also Buddhacharita, Canto IV. St. 102, VIII. St. 40, and IX. St. 2.—**महर्षयः,** this refers to the seven Prajápatis.

P. 480. St. 60.—**सृष्टलोकेव सद्यः पैतामही तनुः.** 'Usually the genesis,' observes Pandit, 'of the creation is not ascribed to the four mouths of Brahmá, but to Kas'yapa the patriarch who was born of the mind of Brahmâ. Brahmá's four mouths are usually supposed to have given birth to the four Vedas. In our stanza the poet either refers to a legend which is not generally known or

draws upon his own imagination. The former is the more likely supposition.' Kálidása must have referred this account to a legend founded upon a Purána not yet knwn or a different version of Rámáyana itself, such as of Chyavana and other sages of ancient times. *Cf.* Buddhacharita, Canto I. St. 48.—**उपशल्यनिविष्टैः**, Hemádri explains it to mean, "ग्रामान्तमुपशल्यं स्यात्" । ग्रामग्रहणं पुरादेरुपलक्षणार्थं." And Châritravardhana has: "इत्यत्र ग्रामशब्दो नगरोपलक्षणार्थो यथा ग्रामशूकरो न भक्ष्यः इत्यादिवत्."

P. 480. St. 61.—**प्राग्वंशवासिनः**, Prágvans'a is the name of a shed erected towards the east of the हविर्गृह or the sacrificial-hall in which the person performing the sacrifice (*i. e.*, Yajamána) waits with his wife. This shed is always detached from the principal Mandapa or the sacrificial hall.—**जाया हिरण्मयी**, On this Hemádri makes the following remark, "यस्तु पिण्डं पितुः पाणौ विज्ञातो न च दत्तवान् । शास्त्रार्थातिक्रमाद्भीतः सपत्नीकः कथं यजेत्" इति. And Châritravardhana has: "अशोकस्य यज्ञायोग्यत्वेऽपि यज्ञायान्तरं नांगीचकारेत्यर्थः". *Cf.* Râmâyana : "यज्ञे यज्ञे च पत्न्यर्थं जानकी कांचनीभवत्".

P. 481. St. 63.—**प्राचेतसोपज्ञं**, *Cf.* Hemâdri: "प्रचेतसोऽपत्यं प्राचेतसो वाल्मीकिः । तेनोपज्ञा प्राचेतसोपज्ञं । "उपज्ञा ज्ञानमाद्यं स्यात्" । वाल्मीकिनैवाद्यं ज्ञानमित्यर्थः । "उपज्ञोपक्रमं तदाद्याचिख्यासायाम्", Pâṇini, II. 4. 21. इति क्लीबता । "प्राचेतसस्त्वादिकविः स्यान्मैत्रावरुणश्च सः । वाल्मीकिश्चाथ गाधेयो विश्वामित्रश्च कौशिकः" इति. Translate the aphorism —'A तत्पुरुष compound ending with the words 'उपज्ञा' (invention) and 'उपक्रम' (commencement) is neuter in gender, when it is intended to express the starting point of a work which is first invented or commenced.' As, पाणिन्युपज्ञमकालकं व्याकरणं 'the grammars कलाप &c., had their commencement with Pánini's invention.' व्याड्युपज्ञं दुष्करणं 'Vyádi invented दुष्करण.' आढ्योपक्रमं प्रासादः 'the palace is an invention of rich folks.' नन्दोपक्रमाणि मानानि, 'the measures are the invention of king Nanda' Of course, when it has not this sense, the neuter gender is not employed; as देवदत्तोपज्ञो रथः 'the car made by Devadatta,' यज्ञदत्तोपक्रमो रथः 'the chariot commenced by यज्ञदत्त.' So also the sense may be that of invention &c., but when these words are not employed, the neuter gender is not used; as वाल्मीकिश्लोकाः 'the *slokas* invented by Válmiki. Valmiki was the son of प्रचेतस्, a name of Varuna. *Cf.* Rámáyana Uttarakánda. Canto 16. "प्रचेतसोऽहं दशमः पुत्रो राघवनन्दन."—**रामायणं**. Hemádri derives it as, "अयते ज्ञायते चरितमनेनेत्ययनं । रामस्यायनं रामायणं." See commentary.

P. 483. St. 67.—**वयोवेषविसंवादि**, 'which disagreed, *i. e.*, failed. only as to their age and dress'. *Cf.* Rámáya*n*a Uttarakâ*n*da canto 106. " ऊचुः परस्परं चेदं सर्व एव समाहिताः । उभौ रामस्य सदृशौ विम्बाद्बिम्बमिवोद्धृतौ । जटिलौ यदि न स्यातां न वल्कलधरौ यदि । विशेषं नाधिगच्छामो गायतो राघवस्य च ".—**नाक्षिकम्पं**, 'without twinkling their eyes.'

P. 483. St. 68.—**वीतस्पृहतया**, coustrue it with उभयोः and not with नृपतेः. Mallinâtha's interpretation of the epithet is not clear. But the way in which he explains it appears al so correct when we commence to find out by careful inquisition the sense of स्पृहा. The notion of स्पृहा is generally and most correctly applied to the recipient and not to the donor and in this sense of the word Mallinâtha's explanation may be accounted for. Vijayânandasûris'varacharanasevaka also explains the epithet exactly like Mallinâtha. Hemâdri rightly interprets the passage. His commets are " लोकः उभयोः प्रावीण्येन नैपुण्येन न तथा विसिस्मिये । यथा नृपतेः प्रीतिदानेषु वीता [विगता Ms.] गता स्पृहा ययोस्तौ वीतस्पृहौ कुशलवौ तयोर्भावस्तया विस्मययुक्तेन बभूव " ॥ Sumativijaya is also correct. His comments run thus:—" लोकः उभयोः कुशलवयोः प्रावीण्येन तथा न विसिस्मिये तथा विस्मितो नाभूत् । यथा नृपतेः रामस्य प्रीतिदानेषु उभयोर्वीतस्पृहतया । किञ्चित्र गृह्णतः अत एव सर्वेषामाश्चर्यं । &c., " *Cf.* Râmâya*n*a Uttarakâ*n*da, canto 94, verses 17.—21. " श्रुत्वा विंशतिसर्गांस्तान्भ्रातरं भ्रातृवत्सलः । अष्टादश सहस्राणि सुवर्णस्य महात्मनोः ॥ प्रयच्छ शीघ्रं काकुत्स्थ यदन्यदभिकांक्षितं । ददौ स शीघ्रं काकुत्स्थौ बालयोर्वै पृथक्पृथक् ॥ दीयमानं सुवर्णं तु नागृह्णीतां कुशीलवौ । ऊचतुश्च महात्मानौ किमनेनेति विस्मितौ ॥ वन्येन फलमूलेन निरतौ वनवासिनौ । सुवर्णेन हिरण्येन किं करिष्यावहे वने ॥ तथा तयोः प्रब्रुवतोः कौतुहलसमन्विताः । श्रोतारश्चैव रामश्च सर्व एव सुविस्मिताः ॥ " Châritravardhana clearly takes it with नृपतेः. His comments are " लोक उभयोस्तयोर्द्वयोः प्रावीण्येन नैपुण्येन तथा विसिस्मिये विस्मितो नाभूत ॥ यथा नृपते रामस्य प्रीतिदानेषु प्रसादन्यागेषु वीतस्पृहतया दानशौण्डत्वेन विस्मितोऽभूत ॥ His explanation does not appear good. Dinakara, as might be expected, has the same.

P. 483. St. 69.—The commentary given in our edition is supported by all the Deccan and six Mss. of the Southern country in our possession. From this it is clear that Mallinâtha first notices the reading गेये को नु विनेता वां कस्य चेयं कृतिः कवेः, and then adopting it (*the varia lectio*) for his text, begins to interpret the stanza, instead of commenting upon what he originally had for his text. Or in other words forgetting to comment upon his original text begins to interpret a different reading of the verse. It is quite evident therefore, that गेये केन विनीतौ वां कस्य चेयं कृतिः कवेः *was* the text of Kálidása before Mallinâtha, who thinking the difficulty of in-

terpreting the ungrammatical expression of वाम् in the verse, either changed it to गेयं को नु विनेता वां or adopted it as changed in some of the Mss. of the Raghuva*ns*'a's text. Hemádri, who notices almost all the readings, does not appear to have known the reading chosen by Mallinâtha. For he begins thus : " वां युवयोर्गेये गाने केन विनीतौ । कस्य च कवेः कृतिरियमिति राजा स्वयं दृष्टौ तौ कुमारौ वाल्मीकिमशंसतामकथयताम् । अथ । युवयोर्मध्ये कस्य च कवेरिति वा । वां युवयोः संबंधिनः कस्य कवेरिति वा इति । वामित्यव्ययं वा । तथा प्रक्रियाप्रसादे । " वामिति युवामित्यर्थे " । गेयं कोऽत्र विनेतेति केचित्पठन्ति । " षष्ठीचतुर्थीद्वितीयास्वर्थयोः " इति विभक्तीनां व्यतिक्रमनिर्देशादन्यत्रापि वां नाविति केचित् । न वृत्त्यादौ तथा व्याख्यानाभावात् । स्वयमित्यादिरसूचनं ? [इत्यादिसूचनं Ms.]. " Châritravardhana's commentary runs thus : " वां युवां गेये केन विनीतौ शिक्षितौ । वामिति पदैकदेशप्रयोगो यथा " क्रूरग्रहः स केतुः " इति मुद्रावत् [मुद्राराक्षस ?] इति केचित् । तन्न । पदद्वयस्याभावात् । कस्य च कवेरियं कृतिरिति राजा रामेण स्वयं दृष्टौ तौ कुशलवौ वाल्मीकिमशंसतामवादिष्टाम् । वां युवामर्थेऽव्ययमिति कृष्णभट्टाः । वां युवयोः संबंधिनः कस्य कवेरिति केचिद्द्विपाश्विनौ व्याचक्षिरे । वां युवयोर्मध्ये कस्येत्यनेन । षष्ठीचतुर्थीद्वितीयासु वस्नसाविति विभक्तीनां व्युत्क्रमनिर्देशज्ञापकादन्यत्रापि वामादेश इत्यपरे । " गेयं केन विनीतिर्वां " इति पाठो युक्तः इति दक्षिणावर्तः । व्यभिचरति च विस्तरकारमतं " । Vallabha comments upon the text गेये केन विनीतौ वां and notices no other reading. Sumativijaya's commentary runs exactly the same word for word as that given by Châritravardhana; so does Vijayânandasûris'varacharanasevaka. And it is also a fortuitous coincidence that all of these commentators allude to the name of कृष्णभट्टः in their explanations. Sumativijaya says, " वां युवामर्थेऽव्ययं " इति कृष्णभट्टाः. " And Vijayânandasûris'varachara*n*asevaka has " अत्र वां युवामित्यर्थेऽव्ययं इति कृष्णभट्टाः. " This expositor also alludes to the name of Châritravardhana. See note to St. 81. Canto XI. Nagojibha*tta* in his लघुशब्देन्दुशेखर also supports this reading. He says, " नमिहाश्रम न व्याप्तिरित्यादौ, गेये केन विनीतौ वामित्यादाविव विभक्त्यन्तप्रतिरूपकनिपाताङ्गीकारणाद्दोषः " &c., page 132. Benares *edi*. There is no doubt whatever that that is the original reading of the poet, and that the one chosen by Mallinâtha is spurious. See readings.

P. 484. St. 70.—उरीकृत्यात्मनो देहं, ' accepting for himself his person, ' *i. e.*, keeping for himself his own person only. आत्मनः should be construed with उरीकृत्य, and not with देहं. For this reason the reading आत्मने is to be preferred. आत्मने should then be taken to correspond with मुनये. *Cf.* Hemádri : " सानुजो रामः अग्रं वाल्मीकये राज्यं न्यवेदयत्समर्पयत् । यज्ञायतनमात्मनो देहं दूरीकृत्य (is his reading) वर्जयित्वा । दर्शयित्वानिति साधुः. " *Cf.* also Châritravardhana : " आत्मनः स्वस्य देहं दूरीकृत्वा वर्जयित्वा अग्र्यं मुनये राज्यं न्यवेदयत । देहं वर्जयित्वा अग्र्यं मुनये राज्यं

न्यवेदयत् । देहव्यतिरिक्तमन्यत्सर्वं समर्पयामासेत्यर्थः." Vallabha says, "अस्मै मुनये निष्कृत्यर्थमात्मदेहं दूरीकृत्य राज्यं न्यवेदयद्ददौ । यज्ञपरायत्तं देहं न ददामीत्यर्थः." Whether उरीकृत्य or any other reading be the correct one. Vallabha's note, that the king Ráma resigned the kingdom as a price of the Muni's services in bringing up his sons and that he was unable to give up his own person because he had to complete the sacrificial ceremony, is simply valuable.

P. 485. St. 74.—स्वसिद्धिं नियमैरिव, Chàritravardhana explains this to mean, "शौचसंतोषादिभिः स्वाभिलषितार्थसिद्धिमिव," and Hemádri has "स्वर्गापवर्गलक्षणां स्वसिद्धिमिव करिव नियमैरिव यथा कश्चित्पुमान्नियमैरुपवासादिपुण्यैः स्वसिद्धिमानयति तथा." And Vallabha says "नियमैर्ध्यानादिभिः स्वसिद्धिं स्वर्गापवर्गलक्षणां". Cháritravardhana appears very accurate in his explanation.

P. 485. St. 75.—प्रस्तुतप्रतिपत्तये, Hemádri explains it to mean, "प्रस्तुतस्य प्रसक्तानन्तरकार्यस्य सीतायाः शुध्यत्वलक्षणकार्यस्य [शुद्धसत्वलक्षणकार्यस्य Mss.] प्रतिपत्तये ज्ञानाय." And Chàritravardhana has "प्रतिश्रुतकार्यकरणाय." 'to accomplish what had been already promised or agreed upon '.

P. 486. St. 76.—ऋचेव, 'as by the Vedic verse,' *i. e.*, by the गायत्री.

P. 486. St. 77.—काषायपरिवीतेन. Because she was at the time observing an ascetic vow.—वपुषैव, 'from the appearance of her body itself,' *i. e.*, even without the oath she was going to take or the proof of her purity that was to follow it.

P. 486. St. 78.—प्रतिसंहृतचक्षुषः, 'withdrawing their looks from the range of her eyes,' as if being ashamed that it was owing to their own incredulity that she had been reduced to that condition. Vallabha does not perhaps appear to give the correct reason when he says, "राजदारत्वात्."

P. 487. St. 80.—सत्यां = "शपथरूपां," according to Chàritravardhana.—पय आचम्य. What Sitá did on this occasion was nothing else than a दिव्य or an ordeal. Those that go through an ordeal are enjoined to purify themselves previously by bathing &c. *Cf.* Mitákshará, दिव्यप्रकरण. "सचैलस्नातमाहूय सूर्योदय उपोषितं कारयेत्सर्वदिव्यानि नृपब्राह्मणसंनिधौ." Here आचमन or sipping water is substituted for a bathing. And water from the hands of a Bràhma*n*a and especially from the hands of Valmiki's disciples must be supposed to be peculiarly holy and calculated to deter Sità from uttering a falsehood.

P. 487. St. 81.—**मामंनर्भातुमर्हसि.** *Cf.* Râmâya*n*a Uttarak*ánda*, Canto 110. "सर्वान्समागतान्दृष्ट्वा सीता काषायवासिनी । अब्रवीत्प्राञ्जलिर्वाक्यमधोदृष्टिरवाङ्मुखी । यथाहं राघवादन्यं मनसापि न चिन्तये । तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति । मनसा कर्मणा वाचा यथा रामं समर्चये । तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति ".

P. 487. St. 82.—**शातह्रदम्**, Chàritravardhana explains it to mean, "शतह्रदाया विद्युता संबंधि शातह्रदं ज्योतिरिव."

P. 488. St. 83.—**नागफणोत्क्षिप्तसिंहासननिषेदुषी**, 'seated on a throne, parasolled over by the expanded hood of a snake'. Hemâdri explains it thus : "नागस्य शेषस्य फणा तस्यामुत्क्षिप्तं च तत्सिंहासनं च तस्मिन्निषेदुषी."—**वसुंधरा**, *Cf.* Râmâya*n*a Uttarak*ánd*a, Canto 111. "ध्रियमाणं शिरोभिस्तु नागैरमितविक्रमैः ".

P. 488. St. 85.—**संरंभं शमयामास**, 'Pacified his wrath.' *Cf.* **Râmâya*n*a** Uttarak*ánda*, Canto 111. "वसुधे देवि भवति सीता निर्यात्यतां मम । दर्शयिष्यामि वा रोषं यथा मामवगच्छसि । न मे दास्यति चेत्सीतां यथा रूपां महीतले । सपर्वतवनां कृत्स्नां व्यथयिष्यामि ते स्थितिं ".—**विधिबलापेक्षी**, 'having regard to the power of Fate,' *i. e.*, seeing that fate was too powerful. *Cf.* Chàritravardhana: "विधेर्दैवस्य यद्बलं तस्य दृष्टा." Vallabha has the following : विधिर्बलवानायं ते नोत्तरावसर इति स्वयंभुवा बलीं स्वयमागत्य विनिषिद्धः ". The poet need not, however, be supposed to follow the account to which Vallabha refers and according to which Brahmà manifests himself and pacifies Ráma, but may be correctly interpreted to have meant by गुरुः no other than Vasish*th*a or at most Vâlmiki. *Cf.* Hemádri : "गुरुर्वसिष्ठः &c." And also Chàritravardhana : "गुरुर्मुनिर्वाल्मीकिः." But Mallinátha interprets गुरु by Brahmá. He, like Vallabha, may have regard to the following account of Râmâya*n*a Uttarak*ánd*a. Canto 109. "पितामहं पुरस्कृत्य सर्वे एव समागताः । आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः । साध्याश्च देवाः सर्वे ते सर्वे च परमर्षयः " &c. And also "एवं ब्रुवाणे काकुत्स्थे क्रोधशोकसमन्विते । ब्रह्मा सुरगणैः सार्द्धमुवाच रघुनन्दनं । राम राम न संतापं कर्तुमर्हसि सुव्रत."

P. 489. St. 87.—**दत्तप्रभावाय**, Hemádri renders it by "भरताय । दत्तावयतन्यसामर्थ्याय वा । संज्ञायामिकदेशन्यायेनेहाराद्वसो दत्तायेय भामो भामसेनवत्." See readings.—**संदेशात्** *Cf.* Vallabha : "भरतमातुलस्य संदेशात्सिन्धुकूलं देशं भरताय ददौ । वत्स मातुलेन संदिष्टे यथा दुष्टगन्धर्वाक्रान्तोऽयं देशस्तच्छ तद्विजयाय ".

P. 489. St. 88.—**आतोद्यं ग्राहयामास**, 'forced them to take the lute and throw away the arms', *i. e.*, caused them to return to

their usual occupation of musicians and singers. *Cf.* Hemádri: " तथा भरतः । " ततं चैवावनद्धं च [चैवानुविद्धं च Ms.] घनं सुषिरमेव च । चतुर्विधमिदं ज्ञेयमातोद्यं लक्षणान्वितं । ततं तंत्रिगतं ज्ञेयमवनद्धं च [°मनुविद्धं च Ms.] पौष्करं । घनं कांस्यमयं ज्ञेयं सुषिरं वांशमेव च. "

P. 489. St. 89.—**राजधान्योस्तदाख्ययोः**, *Cf.* Cháritravardhana: " तक्षपुष्करवत्योः पुर्योः । " समुदायेषु हि प्रवृत्ताः शब्दा अवयवेष्वप्यवर्तन्त इति न्यायात्तक्षशिलापुष्करवत्योस्तक्षपुष्कराख्यव्यपदेशः ". And Hemádri has: " तक्षकशिलापुष्करावत्योस्तक्षकपुष्करव्यपदेशः. " All these commentators agree with Mallinátha in giving तक्षशिला and पुष्करावती as the names of the cities. पुष्करावती is identified with the *Peukelaotis* of the Greek writers and *Pousekielofati* of Hiouen Thsang. तक्षशिला is supposed to be the same as *Taxila* mentioned by the Greek writers. *Takshas'ilá* or *Taxila* lay between the Indus and Hydaspes, in the vicinity of Manikyala, about Ravil Pindi. See Wilson's *Ariana Antiqua,* p. 196. Pushkalávatí appears to have been situated on the western bank of the Indus somewhere near Attock. The historians of Alexander state that Alexander crossed the Indus near that city. 'I have,' observes Anandoram Boorooah, 'already stated that Sindhu Des'a meant the country of the Upper Indus. This is clear from the writings of Kálidása. We read in the Raghuvans'a that Ráma made over this country to his brother Bharata according to the instructions of his uncle Yudhájit and Bharata conquered the Gandharvas and placed his sons Taksha and Pushkala in charge of towns named after them—Takshas'ilá and Pushkalávati. Both of these places are famous in Indian History—Pushkalávatî or Puskarávatí in the form *Peukelaotis* or *Peukolaitis* and its shortened form Pushkala or Pushkara in the form *Peukelas* were known to Greek writers. It was the capital of Gándhára in the days of Alexander and Arrian in his Indica places it not far from the river Indus It was visited by the celebrated Chinese pilgrim Hiuen Thsang in Nov. 630, who came to *Pu-se-kia-lo-fa-ti* after crossing a great river and travelling 100 *li.* to the north-east of *Pu-lu-sha-pulo* (or Peshawar). General Cunningham in his Ancient Geography of India page 50 comes to the conclusion on grounds described in his work that it must have stood at Hastanagara on the Suat river. I would, however, place it to the north-east of Hastanagara about Báshkala given in some of the maps not only because it agrees in names, but also because Bhárata writers place it on the Himálaya. The 37th Taranga of the Kathá-Sarit-Ságara describes the journey of a merchant of Ujjayinî or Ojain to this town,

who travels northward and passes several rivers and forests and then comes to tho country inhabited chiefly by Mlechhas specified as Tájiks and Turkomen and then crosses the river Vitastá (Behut) and goes into a hilly forest (evidently about the Salt Range), and then arrives at Pushkarávatì, which is thrice said to be on a summit of the Himálaya range. The special mention of Tájiks shows that the writer was fully acquainted with this part of India and makes me reluctant to reject his testimony. The 27th Taranga of the Kathá-Sarit-Ságara describes the position of Takshas'ilá and its former grandeur. It says, " there was a town named Takshas'ilá on the banks of the Vitastá, in whose waters were reflected the images of its edifices. It had a devoted Buddhist king named Kalingadatta and an entirely Buddhist population rich by the blessings of Tárá. The town shone with his uninterrupted rich *stupas* as if with summits of vanity that there was no place like it." The Greek and Chinese accounts, however, make it a more inland town at considerable distance from the Vitastá and I am, therefore, inclined to think that Vitastá is a misprint for Sudámá or Suan river. General Cunningham (p. 119) identifies it with Shahdheri and probably he is not far from truth. The description of Kálidása is, in fact, based on an older work—the Uttarakán*da*, which is interesting not only because giving full particulars, but also because distinctly laying down the country of the Gandharvas on both sides of the Indus and identifying western Gandharvas with the Gándháras of later literature—the *Gandharae* of Ptolemy, traces of which name may probably be still found in the Gundarbar of the Panjab and the Gandgarh mountain to the north of it. The identity of Gandharva and Sindhu-Des'a may be also seen from other considerations. It has been always famous for an excellent breed of horses. Among the presents to Bharata by the king of Kekayas, was a thousand of fire-footed horses of his country. Among the valuable presents to Yudhis*hth*ira in the great Rajasúya festival, were several horses of Gándhára. Hence in the Amarakos'a, we find both Saindhava and Gandharva as synonyms of horses. The Saindhava salt mentioned in the same book evidently refers to the rock-salt found in the Salt Range of mountains, for it does not refer to sea-salt as it is separately mentioned as *Samudra* salt and Má*n*imantha is given as another synonym for *Saindhava* salt and the commentator Mahes'vara explains that it means " produced in the mountain Má*n*imantha " (which can only refer to the Salt Range). But the most convincing proof is a passage of

the Raghuvans'a (V. 73.) and that Saindhava is still understood by all salt-sellers of India as rock-salt. I have, therefore, no hesitation in identifying Mánimantha with the Salt Range and asserting that it stands within the old Sindhu-Des'a. The Greeks call this range *Oromenus,* which is certainly not connected with Raumaka as General Cunningham seems to think (p. 158). All Bhárata authorities agree that Raumaka is the Sambher salt and Rumá is the salt mine (lake) of Sambher. In the Mahábhárata, Gándhára is separately mentioned with its chief Subala, whose daughter Gándhári was married to Dhritaráshtra and Jayadratha figures as the head of Sindhu-Sauviras. There can, therefore, be no doubt that Sindhu in later literature, meant what Arrian understood by it—the country to the east of the Upper Indus or the province of Takshas'ilá. There are other considerations corroborative of this inference. Jayadratha is said to belong to the same family of Ikshvákus to which Bharata belonged and the train of princes that followed him to Sálvas belonged to the land of Sauvîras—S'ibis—Kulindas and Trigartas, who, as will be shown hereafter, were all bordering tribes.'

P. 490. St. 90.—कारापथेश्वरौ, Vallabha explains this to mean, "चंद्रपत्तनः." It is not certain what country is meant by Kárápatha. Anandorám Boorooah gives the following account; but it appears that he has not made any attempt to identify Kárupatha or Kárápatha. He simply says,—' In the district of Bijnour is the large town of Chandapur (lat. 29·8' lon. 78·20'), which is probably Chandrapúra or Chandrakántá of the Rámáyana. We read in the Uttarakánda that the two sons of Ráma's brother Lakshmana were appointed rulers of Kárupatha (Kálidása reads Kárápatha); Angada in the west at Angadapuri and Chandraketu in the north at Chandrakántá in Mallabhúmi. The first is modern Sahabad in Oudh which is still known to its Bhárata inhabitants as Angadapur. It is not due west of Ayodhyá, as Chandrapura (Chándpur) is not due north of it. But as in colours, so in direction, we do not find precision of language in ancient writers. There is another Chándpur in the district of Furrackabad, but it cannot be Chandrakántá, as it is in the same direction as Sháhábád. I am, therefore, almost certain that Chándpur east of Sahranpur is the town called after Chandraketu and that it is situated in the land of northern Mallas'. It may be, as Vallabha interprets, probably the town of Chandrapura or Chándpur. See readings.

P. 490. St. 91.—**निवापान्** = श्राद्धादीन्, according to Chāritravardhana. The word निवाप is derived from वप् to shave, originally applied to shaving the hair on the occasion of funeral obsequies; hence generally **funeral** obsequies or a S'ráddha connected **with** those ceremonies.

P. 490. St. 92.—**तं त्यजेः**, 'him thou shouldst abandon.' The condition was that Ráma should abandon or devote to death any one that should encroach upon them while engaged in conversation. *Cf.* Rámâyana Uttarakánda, Canto 116. "कस्यचित्त्वथ कालस्य रामे धर्मपरे स्थिते । कालस्तापसरूपेण राजद्वारमुपागमत् ।...................यः शृणोति समीक्षेद्वा स वध्यो भविता तव." Hemádri says, 'रहसि संवादिनौ आवां यः कश्चन पश्येत्त्वं तं जनं त्यजेरिति समयः कृतः."

P. 491. St. 94.—**विद्वानपि**, goes with समयं *i. e.*, the agreement between them.—**अभिनत**, the object of this is तं समयं.—**भीतो दुर्वाससः शापात्**. *Cf.* Rámáyana Uttarakánda, Canto 118. "तथा तयोः संवदतोर्दुर्वासा भगवानृषिः । रामस्य दर्शनाकांक्षी राजद्वारमुपागमत् । सोऽभिगम्य तु सौमित्रिमुवाच ऋषिसत्तमः।रामं दर्शय मे शीघ्रं पुरा मेऽर्थोऽतिवर्तते।......अस्मिन्क्षणे मां सौमित्रे रामाय प्रतिवेदय । विषयं त्वां पुरं चैव शपिष्ये राघवं तथा । भरतं चैव सौमित्रे युष्माकं या च संततिः । न हि शक्ष्याम्यहं भूयो मन्युं धारयितुं हृदि " इति.

P. 491. St. 95.—**देहत्यागेन**, "तद्वचनतः प्रागेव देहमत्यजत्" says Hemádri. "रामवाक्यात्पूर्वमेव" says Dinakara.—**योगवित्**, 'who knew the art of Yoga.' That is, he gave up his vital breath by having recourse to Yoga. Vallabha rightly remarks: "योगविद्देहं इत्यर्थः".—**स गत्वा सरयूतीरं**. *Cf.* Rámáyana Uttarakánda, Canto 119. "स गत्वा सरयूतीरमुपस्पृश्य कृताञ्जलिः । निगृह्य सर्वस्रोतांसि (*i. e.*, the cavities of all bodily organs, सर्वेन्द्रियद्वाराणि) निश्वासं न मुमोच ह."

P. 491. St. 96.—**धर्मस्त्रिपादिव**, See Bhágavata Sk. I. Adh. 17, verse 23. "तपः शौचं दया सत्यमिति पादाः कृते कृताः". The same Purána also ordains that Dharma does not abandon only one leg entirely in a Yuga, but that in each Yuga, it abandons one-fourth of each of its four legs in consequence of the predominance of the several constituents of Adharma so that at the end of the fourth it abandons all its legs entirely. "अधर्मांशैस्त्रयो भग्नाः स्मयसङ्गमदैस्तव." *Ibid.* Kálidása's notion is that Dharma loses one leg wholly in each Yuga. Hemadri discusses. "त्रिदिव इत्यत्र पूरणार्थाधिक्यं च । "कृतौ त्रिभागतात्" इति क्षीरस्वामी । गणदोषं च । "भागान्यशब्दे (?) पूरणसंख्या समस्यते विवक्षः । एकपूरणस्य वा स्यानतायभागस्त्रिभागश्च" । अपि त्रयः पादा यस्य स त्रिपाद्धर्म इव । त्रेतायां हि धर्मस्त्रिपादेव । "संख्यासुपूर्वस्य" Pánini. V. 4. 140. इति पादस्यान्त्यलोपः".—**चतुर्भागि**. On this Charitravardhana holds the following discussion, "चतुर्भाग इति समासे पूरणार्थता त्रिभागशेषपादत्रिस्त्यादिवत् । त्रिपादिति " संख्यासु पूर्वस्य " इत्यन्तलोपः."

P. 492. St. 97-98.—कुशावत्यां, At the time of Ráma's death, his two sons Kus'a and Lava reigned respectively at Kus'ávatî in Southern Kosala in the defiles of the Vindhyas and at S'rávasti in Northern Kosalas. In the Matsya Purá*n*a, the last province is called Ganda, a district still known by the same name and occurring in the Mahábhárata after Pánchála among the conquests of Bhîma. There can be no doubt, therefore, that the country north of Ayodhyá comprising Ganda and Baraitch was known as Uttarakosala. The position of S'rávasti, on the other hand, is not beyond dispute. General Cunningham identifies it with Sahet Mahet north of Ayodhá, as he found in it "a colossal statue of Buddha with an inscription containing the name of S'rávasti itself." There can be no doubt that it lies in the same direction as S'rávastî, but I am not certain that it is S'rávastí itself. Like its other utterances, the Vish*n*u Purá*n*a assigns its foundation to king S'rávasta, one of the alleged ancestors of Ráma. It was also called Dharmapatta*n*a or Dharmpurî and a town of that name is, I believe, still extant further north in the Nepal territory.—उदक्प्रतस्थे. The Svarga, according to the Purá*n*as, is situated to the north, so also all the Lokas (the Heavens), which are on the mountain Meru. See the स्वर्गारोहणपर्वन् of the Mahábhárata.—स्थिरधीः, *Cf.* Hemádri and Vallabha: "दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः । वीतरागभयक्रोधः स्थिरधीर्मुनिरुच्यते" इति गीतासु.—अग्निपुरःसरः, A householder who is a widower should always carry the sacred fire with him.—गृहवर्जम्, Hemádri explains it thus: "वर्जनं वर्जो गृहाणां वर्जस्त्यागो यस्मिन्कर्मणि." See readings.

P. 492. St. 99.—कदम्बमुकुलस्थूलैः, Hemádri and Châritravardhana interpret it by "कदम्बमुकुलवत्स्थूलैः".

P. 493 St. 100.—चक्रे त्रिदिवनिश्रेणिः, 'was made a ladder to Svarga.' Ráma himself with his brothers took his seat into the heavenly Vimána, and for the use of the citizens of Ayodhyâ who subsequently followed him, he made the Sarayû into a ladder, that they might ascend thereby to heaven, *i. e*, they had only to bathe themselves in the sacred river to be raised to heaven.

P. 493. St. 101.—यद्गोप्रतरकल्पोऽभूत्, Hemádri explains it to mean, "प्रतरणं प्रतरः । "ऋदोरप्" Pá*n*ini, III. 3. 57. ईषन्न्यूनो गवां प्रतरः गोप्रतरकल्पः". Cows when swimming or floating crowd close to each other, one very closely following upon the tail of another.

P. 493. St. 102.—विबुधांशेषु प्रतिपन्नात्ममूर्तिषु, 'the gods incarnate having now resumed their original form.'—स्वर्गान्तरमकल्पयत्,

On this Hemádri remarks, " यदुक्तं रामायणे । " सर्वे संतानकं यान्तु ब्रह्मलोकादनन्तरं । स्वस्वयोनिं प्रविष्टास्तु ऋक्षवानरराक्षसाः ". This means, that the original site of the heaven or the Svarga proper was now full as it received back its usual occupants in the form of the Vánaras &c. who resumed their original forms as gods, and consequently that there was no room in it for the deified citizens of Ayodhyá. And for this reason the necessity of creating another heavenly abode for these men. *Cf.* Rámáya*n*a Uttaraká*nd*a, Canto 119. " अथ विष्णुर्महातेजाः पितामहमुवाच ह । एषां लोकं जनौघानां दातुमर्हसि सुव्रत । इमे हि सर्वे स्नेहान्मामनुयातास्तपस्विनः ।..............तच्छ्रुत्वा विष्णुवचनं ब्रह्मा लोकगुरुः प्रभुः । लोकान्सन्तानकान्नाम यास्यन्तीमे समागताः "

P. 494 St. 103.—**दक्षिणे गिरौ**, Hemádri interprets it by " सुवेलाद्रौ. "—**उत्तरे च**, Hemádri explains this to mean, " गन्धमादनाद्रौ । पूर्वादित्वात्स्मिन्विकल्पः."—**निर्वर्त्य** &c., Hemadri introduces his comments on this verse by the following remark: " रामायणार्थमुपसंजिहीर्षुराह. " From which it is clear that according to that commentator Kálidása followed the Rámáya*n*a closely in writing the Raghuvansa so far as it bore upon the latter; and that he had also recourse to the other compositions of the Rámáya*n*a, such as that of Chyavana and other sages, which were invogue at the time when the great national epic was written by the sage Válmiki. Compare Buddhacharita, Canto I. Stanza 48

CANTO XVI.

P. 495. St. 1.—Hemádri introduces his comment on this stanza by the following remark : " इदानीं रामायणादधिकमागमान्तरप्रसिद्धमर्थं सर्गचतुष्टयेनाह. "—सप्त रघुप्रवीराः = " लवतक्षकपुष्करांगदचन्द्रकेतुशत्रुघातिसुबाहवः, " says Hemadri.—रत्नविशेषभाजं चक्रुः, Vallabha interprets " तस्य ते करदा बभूवुरित्यर्थः. " He may perhaps be right. Cháritravardhana translates गुणैः by " शौर्यादिभिः. "

P. 495. St. 2.—गजबन्धमुख्यैः, Vijayânandasûris'varacharana-sevaka interprets गजबन्ध by " वने हस्तिग्रहणं. " Like Mallinátha, Hemádri and Cháritravardhana also quote here कामन्दक.

P. 496. St. 3.—दानप्रवृत्तेः. Mark the play upon the word दान. According to Hemádri the epithet makes the adjective दानप्रवृत्तेरनुपारतानां apply to नागानां as well as to कुलद्विपानां. *Cf.* Hemádri: "उभयविशेषणं."—कुलद्विपानां सामयोनिर्वंशः. Cháritravardhana explains this to mean, " सुरद्विपानामैरावणादीनां सामयोनिः सामवेदाध्ययनकल्पोत्पन्नो वंश इव । अयमप्यर्थः स्यात्. " and further he observes, " उक्तं च । हस्ताभ्यां परिगृह्याथ सप्त सामान्यगायत । गायतो ब्रह्मणस्तस्य समुत्पेतुर्मतङ्गजाः. "—अनुपारतानां, Hemádri interprets it by " अविरतानां, " and Cháritravardhana by " निरतानां. "

P. 496 St. 4.—स्तिमितप्रदीपे, Cháritravardhana analyses, " स्तिमिता निश्चलाः प्रदीपा यत्र."—प्रवासस्थकलत्रवेषां, Cháritravardhana analyses, "प्रवासस्थस्य पथिकस्य कलत्रं भार्या तस्या इव वेषो यस्याः सा तां तथोक्तां." And Hemádri says, " विरहिणीवेषधरां. "

P. 496. St. 5.—परेषां. Objective genitive, according to Hemádri, Cháritravardhana and Sumativijaya.—बन्धुमतः, On this Hemádri and Cháritravardhana remark: " अनेन कार्यसिद्धिसूचनं."—साधुसाधारणपार्थिवर्द्धेः &c. Analyse साधूनां सतां साधारणा पार्थिवर्द्धिः राज्यलक्ष्मीर्यस्य तस्य तथोक्तस्य . This epithet, and also पुरुहूतभासः, जेतुः परेषां and बन्धुमतः seem to be employed simply for the alliteration they afford with सा, पुरस्तात्, जयशब्दपूर्वं, and बबन्ध respectively —जयशब्दपूर्वं, Cháritravardhana interprets it by " जयमहाराजेतिशब्दपूर्वं. "

P. 497. St. 6 —अनपोढार्गलम् , Hemádri interprets it by "अनपोढा अनपसारिता अर्गला । अर्गलं द्वारकाष्ठमिति यावत् । यस्य तद् . "

P. 497. St. 7—योगप्रभावो न च लक्ष्यते ते, 'nor do I see that you possess the power of Yoga,' *i. e.*, supernatural power acquired by the practice of the art sprung from Yoga. *Cf.* Cháritravardhana : " यो-

गमभाव: पुरप्रवेशादियोगशक्तिश्च." Dinakara reads "योगसंवेशः" and interprets it as, "योगसंवेशः परकायप्रवेशादियोगशक्तिः" &c.—सावरणे ऽपि. Hemádri explains it to mean, "आव्रियते ऽनेन द्वारमित्यावरणं कपाटमिति." And Cháritravardhana renders it as "पिहिते ऽपि द्वारे."

P. 497. St. 8.—शुभे. Cháritravardhana says, "भो शुभे भद्रे का त्वं सुरी मानुषी वा." And Hemádri has, "हे शुभे त्वं का वर्तसे".—किं वा मदभ्यागमकारणं. On this Cháritravardhana remarks: "कार्यानभिज्ञतामाहेति चेत्तदपि नेत्याह." Dinakara paraphrases the same remark of Cháritravardhana when he says, "अथ किंनिमित्तमागमनमिति चेत्तदपि नेत्याह."

P. 497. St. 9.—स्वपदोन्मुखेन. Hemádri interprets: "स्वपदे वैकुण्ठस्थाने उन्मुखेन." and Cháritravardhana has "स्वपदे निजस्थाने." Ráma being identified with Vishnu.—अनघ्नता. See readings and the various interpretations of the commentators thereon.—नीतिमार्ग. Cháritravardhana says, "इत्यसामर्थ्याच्च समासमशिश्रियत्." and rightly refutes.

P. 498. St. 10.—सौराज्यबद्धोत्सवया = "सौराज्येन सुराज्येन बद्धः स्थिर उत्सवो यस्यास्तया," according to Cháritravardhana.—सूर्यवंश्य. On this epithet Hemádri remarks: "सूर्यवंश्य इत्यनेन त्वमेव मे प्रतिकर्तेति सूचयति."—वस्वौकसारां. On this Cháritravardhana remarks, "वस्वोकसारा नाम कुबेरस्य पुरी तस्यास्त्वाभिनि काचित्। अत्रौकशब्दो ऽदन्तः।" And Hemádri says, "त्रिकाण्डशेषे तु। पुष्करं द्वारं नामनगरं शक्रस्य पूर्वस्यां वासवी अमरावती तथा "वस्वौकसारा शक्रस्य याम्या [याम्यां Ms] संयमिनी तथा। पुरी पुण्या अलकानगरी सौगन्धिकपुरी च" इत्युक्तम्। वसूनां रत्नानामोकः सद्मभिः सारा। श्रेष्ठवस्तूनां धनानां सद्म इति वा। "वसु रत्ने धने वसु। ओकः सद्मनि चाश्रये" अदन्तः। ओकः इत्यदन्तो ऽपि प्रयोगः। वसु। वसुमया रत्नमया ओकांसि गृहाणि सारा श्रेष्ठा."—अभिभूय, *scil.* पुरं.

P. 498. St. 11.—Hemádri begins to interpret this verse with the following remark: "सांप्रतं दशामाह." And Cháritravardhana has the following remark on this verse: "अधुना पुर्या दुरवस्थामाह." —विशीर्णतल्पाट्टशतः, 'with hundreds of broken Talpas and terraces.' Talpa is a room on the top of a house or an upper story and अट्ट seems to be employed here for अट्टालिका or terrace. अट्ट *m. n.* originally signifies, 'an addition to a building,' 'apartment on the roof,' 'upper story;' it also means 'a tower' or 'buttress.'

P. 499. St. 12.—नक्तमुल्काज्वलिताननाभिः. Cháritravardhana analyses, "नक्तं रात्रौ [illegible] ज्वलितानि [illegible]." And Hemádri has the following: "नक्तं रात्रौ [illegible] मांसं [illegible]." 'who seek dead bodies or rotten flesh [illegible] carrion) by the help of the light emitted from their wailing mouths.' And Hemádri has the following remark on this: "[illegible]

न्यः । तथा शिवाशकुने वसंतराजः । " कुबेरकाष्ठां प्रति यः प्रयाति । ज्वालामुखी वाभिमुखा विरौति । तस्याध्वगस्याभिमतार्थसिद्धिर्भवेच्च संपत्तिफलागमश्च [संपत्पुनरागमश्च Ms.]. " Our poet refers to the superstitious notion that the female jackals when wailing at mid-night emit fire from their howling mouths. *Cf.* Bhágavata Sk. I. Adh. 14, verse 12, Bom. edi. " शिवैषोद्यन्तमादित्यमभिरौत्यनलानना, " where the scholiast observes: " शिवा क्रोष्ट्री आदित्यमभिरौति इयत्सूर्याभिमुखं क्रोशति । अनलानना आग्निं मुखेन वमन्ती. " Kálidása means that there was sound for sound (शिवानां नदन्ति मुखानि for कलानि नूपुराणि) and light for light (नूपुररत्नभासः for उल्काः) but the change was inauspicious and foreboded lamentation.—**वाह्यते**, Hemádri discusses : " प्राप्यते । वाहप्रवाहः प्रकृत्यन्तरमर्पात्येके । चुरादिषु बहुलमेतन्निदर्शनमिति स्वार्थे णिच्वा । आह च ॥ " निवृत्तप्रेषणाद्धातोः प्राकृतेऽर्थे णिजिष्यते " ॥ तथा किराते । " आशुकान्तमभिसारितवत्यः." Ki. IX. 38. माघेऽपि । "ताः पूर्वं सचकितमागमय्य मार्गं [गाधं Ms.] " । S'i. VIII. 17. वाह्यते has no causal sense here.

P. 499. St. 13.—**क्रोशति**. Cháritravardhana explains this to mean, " प्रवणकटुशब्दं तनुते इत्यर्थः । जलक्रीडाविलाससमुत्पन्नप्रमदानां करकिशलयवाद्यमानस्य जलस्य वन्यमहिषेण क्षोभे युक्त एव शोकः. "—**शृङ्गाहतं**, *Cf.* S'á. Act II. 40. " गाहंतां महिषा निपानसलिलं शृङ्गैर्मुहुस्ताडितं. "

P. 500. St. 14.—**दर्वोल्काहतशेषबर्हाः**, Hemádri explains this to mean, " दर्वोल्काभिर्हतानि शेषाणि बर्हाणि येषां ते । गलितपक्षतया शेषत्वं. "

P. 500. St. 15.—**असृग्दिग्धं**, it means that instead of the red dye of the lac smeared to the soles of their feet by young women reddening the flights of steps as they came down to the edge of the water, the flights of steps are now reddened with the blood of antitopes killed by tigers which run down the steps to quench their thirst after they have killed and devoured them.

P. 500. St. 16.—**पद्मवनावतीर्णाः**, Cháritravardhana interprets : " पद्मवनात्कमलखण्डादवतार्णाः. "—**दत्तमृणालभङ्गाः**, Cháritravardhana observes " इति सापेक्षत्वेऽपि गमकत्वात्समासः. "

P. 501. St. 18.—**न मूर्छन्ति**, Hemádri interprets it by " न वृद्धिं गच्छन्तीति, " and Cháritravardhana by " न वर्धन्ते, " *i. e.*, 'are not reflected,' ' do not take effect upon. '—**न एव**, On this Cháritravardhana remarks: " इत्यनेन ये प्रागभिन्नवसुधेऽप्यवर्धन्तेत्यसूचि. "

P. 501. St. 19.—**वन्यैः पुलिन्दैरिव वानरैः** &c., Cháritravardhana explains this to mean, " पुलिन्दैः शबरैः सहचरैः सह वानरैः क्लिश्यन्ते बाध्यन्ते । सहार्थे इवशब्दः इति. "

P. 502. St 20.—अनाविष्कृतदीपभासः, कान्तामुखश्रीवियुताः and विच्छिन्नधूमप्रसराः,—On these epithets Cháritravardhana makes the following remark: " विशेषणत्रयेण वार्थोक्ता. "

P. 502. St. 21.—स्नानीयसंसर्गमनाप्नुवन्ति, Cháritravardhana explains this to mean. " स्नानीयं सुंदरीणामङ्गरागादि तत्संसर्गमनाप्नुवन्त्यलभमानानि लोकाक्रमणाभावात्. " And Hemádri has the following: "स्नानीयानि कुङ्कुमादिचूर्णानि चूर्णानि तेषां संसर्गमनाप्नुवन्ति न प्राप्नानि."—उपान्तवानीरगृहाणि, Cháritravardhana analyses " उपान्ते तीरे वानीराणां वेतसानां वनानि (is his reading) येषु तानि । तथा शून्यानि पौरावगमनाभावात् , " ' on whose banks are huts made of live canes, (now deserted). ' The position of सरयूजलानि can only allow उपान्तवानीरगृहाणि to be taken as a Bahuvrihi compound in the above sense. See readings.

P. 502. St. 22.—कारणमानुषीं. Cháritravardhana interprets: " कारणाद्रावणादिवधप्रयोजनान्मानुषीं तनुं मूर्ति हित्वा. " And Hemádri says, " कारणेन लवणवधादिरूपेण मानुषीं, " but the two other Mss. of Hemádri's दर्पण omit this explanation. Because it was not for this purpose that परमात्मा assumed the human form of Ráma but he came incarnate on earth with the view of destroying Rávana with all his legions of demons. And for this reason Charitravardhana's explanation appears to be correct.—कुलराजधानीं. Hemádri explains, " राज्ञा धीयते स्थाप्यते ऽस्यां सा राजधानी तां. "

P. 503. St. 23.—शरीरबन्धेन तिरोबभूव, 'disappeared by her body,' *i. e.*, disappeared by her removing visible form. शरीरबन्ध is literally ' the tie of the body ', *i. e.* the body that ties one down, the body assumed. *Cf.* आसनबन्धधीरः. St. 6, Canto II. Compare also Hemâdri: " मनुष्यदेहं त्यक्त्वा देवांशरूपं जग्राहेत्यर्थः । अदृश्या वा जाता. " The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following remark as produced by the Northern Mss. " मानवं रूपं विहाय दैवं रूपमग्रहीदित्यर्थः " । This explanation appears to have been borrowed from Hemádri's comments.

P. 503. St. 24.—अभ्यनन्दत्, On this epithet Hemádri quotes a verse from गार्ग्य with a slight difference from the one quoted by Mallinátha. " दृष्ट्वा स्वप्नं शोभनं नैव सुप्यात्प्रातर्दृष्टो यः स पाके विधत्ते । शंसेदिष्टं तं च साधुद्विजेभ्यस्तं चाशीभिर्नन्दयेयुर्नरेन्द्रम्. "

P. 503. St. 25.—सैन्यैरनुद्रुतः, On this Hemâdri remarks: "इति सैन्यबाहुल्यं. "—श्रोत्रियसात्कृत्वा, Hemádri says, " श्रोत्रियाणामधीनां कृत्वा विप्रेभ्यो दत्वा, " and Vallabha and Cháritravardhana have, " श्रो-

णेभ्यो दत्वा." On this Pandit gives the following note:—'It is not perhaps clear why श्रोत्रियाः alone were preferred to whom to make a gift of the city. There are more meritorious Brâhma*n*as than श्रोत्रियाः a gift to whom is productive of greater merit to the donor, such as persons who being able to repeat the Veda, practise the Vaidic rites punctually, and yet, *i. e.* besides their being श्रोत्रियाः, are also acquainted with the sense of the Vaidic texts, which श्रोत्रियाः are not generally supposed to do.' It appears that Pandit has misunderstood the sense of the word श्रोत्रिय. The following Sm*r*iti "जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते । विद्यया याति विप्रत्वं त्रिभिः श्रोत्रिय उच्यते" goes against what he says. And Pá*n*ini says, "श्रोत्रियंश्छन्दोऽधीते" V. 2. 84. *i. e.* one that studies the Vedas is a S'rotriya technically so called. S'rotriya means a Bráhma*n*a versed in the study of the Vedas, a profound theologian, a divinity. *Cf.* Mal. I. verse 5 Dr. Bhándarkar's edition. "न श्रोत्रियास्तत्त्वविनिश्चयाय । भूरि श्रुतं शाश्वतमाद्रियन्ते"। It is the S'rotriya alone that deserves such a merited gift, and not an ordinary Bráhma*n*a who is able to repeat the Veda and practise the Vaidic rites punctually.

P. 504. St. 27.—वेलां नीयमानः, *i. e.* 'by means of the tides which propell the waters of the ocean to the shores at the rise of the moon.'

P. 504. St. 28.—रजश्छलेनारुरोह, On this Hemádri and Cháritravardhana remark: "यो बाधां न सहते सोऽवश्यमन्यत्र याति."—विष्णुपदं द्वितीयं, alludes to the name of Trivikrama and the story of Vámana founded upon it. Compare "त्रिविक्रमस्य माहात्म्यमधिकृत्य चतुर्मुखः । त्रिवर्गमभ्यधात्तच्च वामनं परिकीर्तितम् ॥ पुराणं दशसाहस्रं ख्यातं कल्पानुगं शिवं"। *Matsya Purána.* On the three strides of Vish*n*u, by reason of which he is called त्रिविक्रम, see Prof. Wilson's Translation of the *Ri*gveda, Vol. I., Introduction, p. XXXIV.; and Vol. IV., p. 17, note: also, original Sanskrit *Texts*, Part II., pp. 187 and 214-216; Part IV. Chapter II., especially pp. 54-58, and pp. 118-119. Dr. Muir, in his मतपरीक्षा, Part I., -p. 105 of the Sanskrit, p. 16, of the English and twice in pages just referred to, of his *Texts* has quoted a curious relevant passage from दुर्गाचार्य on Yáskha's निरुक्त. "विष्णुरादित्यः । कथमिति । यत आह त्रेधा निदधे पदं निधत्ते पदं निधानं पदैः । क तावत् । पृथिव्यामन्तरिक्षे दिवीति शाकपूणिः । पार्थिवोऽग्निर्भूत्वा पृथिव्यां यत्किञ्चिदस्ति तद्विक्रमते तदधितिष्ठति । अन्तरिक्षे वैद्युतात्मना । दिवि सूर्यात्मना । यदुक्तम् । "तमू अकृण्वन्त्रेधा भुवे कम्" इति । समारोहणे उदयगिरावुद्यन्पदमेकं निधत्ते । विष्णुपदे मध्यंदिनेऽन्तरिक्षे । गयशिरस्यस्तंगिरावित्यौर्णवाभ आचार्यो मन्यते"। "Vish*n*u is the sun (आदित्य). How so? Because (the hymn) says; 'In three places he planted his

step '; *i. e.* plants his step, (makes) a planting with his steps. Where, then, is this done ? ' On the earth, in the firmament, and in the sky, ' according to शाकपूणि. Becoming terestrial fire, he strides over, abides in, whatever there is on earth ; in the shape of lightning in the firmament ; and in the form of the sun, in the sky. As it is said (in the ऋग्वेद. X. 88, 10) : ' They made him to become threefold. ' और्णवाभाचार्य thinks (the meaning is) this ; ' He plants one foot on the ' समारोहण ' (place of rising), when mounting over the hill of ascension ; (another), on the ' विष्णुपद, ' the meridian sky ; (a third), on the ' गयशिरः, ' the hill of setting. " See Wilson's V. P. Vol. III. pp. 18-19. Vallabha says " भूर्भुवः स्वरिति त्रीणि पदानि विष्णोः. "

P. 505. St. 29.—**उद्यच्छमाना गमनाय पश्चात्**, Sumativijaya explains this to mean, " पश्चाद्गामिनी । अनुगमनार्थमुद्योगं कुर्वाणा. " And Hemádri says, " पश्चात्पूर्वस्था कुशावत्याः उद्यच्छमाना गमनायोद्यमं कुर्वाणा &c. " —**पुरः**, Sumativijaya explains, " कटकनिवेशकाले वर्तमाना. " On this stanza Sumativijaya and Vijayánandasúris'varacharaṇasevaka make the following remark " यत्र यत्र दृष्टा तत्र तत्र समग्रा इहेवास्तीति ज्ञातमिति ".

P 505. St. 31.—**कटकान्तरेषु**. Both Hemádri. and Charitravardhana interpret it by " सान्वन्तरेषु."

P. 506. St. 32.—**उपायनानि पश्यन्** . Châritravardhana makes the following remark : " तेषां धान्यर्थं दर्शनं न तु ग्रहणमित्युदारतोक्ता."—**धातुनेदारुणयाननेमिः** &c., Cháritravardhana explains this to mean, " निश्छिद्रधातुत्वात्प्रत्यर्थध्वनिनिर्जितनादत्वाच्च विन्ध्यपर्वतं चिक्रमे इति छायार्थः । कथंच माघेऽप्येवं विधोक्तिः । " दूरं समवन्तोजवलस्य गच्छतः " । " पुरां बहूनां पतनागमनाय सा " इति S i. XII. 61 and 62.

P. 506. St. 33.—**नार्थे नदीये**. Cháritravardhana says. " विन्ध्यस्य संबन्धिनि तीर्थे गजलक्षणस्य मेर्नोर्वन्धात." And Hemadri says, " नदीये गङ्गासंबन्धिनि तार्थेऽवतरणमार्गे. " Dinakara says, " नदीये विन्ध्यसंबंधिनि कर्णतार्थे. " What this कर्णतार्थे signifies it is difficult to make out. Pandit says,—' It is not clear what तीर्थ is meant here, and whether the नद in नदीय refers to the Vindhya. The preceding stanza takes Kus a beyond. *i. e.* to the north of the Vindhya, so that both on that account and because the Ganges has not to be crossed in crossing that mountain. we must suppose either that the king crossed the Ganges at a place called विन्ध्यतीर्थ or by some such name—probably owing to its origin to the vicinity of a branch or off-shoot of the great range of mountains—or that by Gangá the poet means not the main stream

but a tributary of that river, rising in the Vindhya. For when any sacred river is called Gangà, a tributary of that river may easily receive that name from the poet. To interpret तदीये तीर्थे to mean during the crossing of it (= the Gangâ,) *i. e.* while he was crossing it, would involve a tautology, as we already have गङ्गामुत्तरतः. There are some who maintain that the king crossed the Ganges near a place called विन्ध्यवासिनी देवी to the south of Benares.'—**प्रतीपगां**, Hemàdri renders it by "अनुकूलां."

P. 506. St. 34.—**नौलुलितं**, *Cf.* Châritravardhana : "सेनोत्तरणव-शान्नौकाभिर्लुलितं क्षुभितं &c.," and Hemádri says, "नौभिर्लुलितं व्याकुलीकृतं."

P. 507. St. 35.—**वेदिप्रतिष्ठान्** &c., Cháritravardhana interprets it by "यज्ञवेदिस्थान्." And Hemâdri says, "वेदिः प्रतिष्ठास्थानं येषां तान्."

P. 507. St. 36.—**प्रत्युज्जगाम**, On this Hemàdri observes : "इति सेवावसरोक्तिः."—**आधूय**, On this Hemàdri remarks : "इति मान्द्यसौरभ्ये." —**स्पृष्ट्वा तरंगान्** , Here Hemádri observes: "तरंगस्पर्शाच्छैत्यं." And Vallabha has : "एतेन वायोः शीतमन्दसुरभित्वं."

P. 507. St. 37.—**रिपुमग्नशल्यः**, Hemàdri remarks : "इति निर्भयता."—**पौरसखः**, On this Hemàdri remarks: "इति सौम्यता"—**कुलध्वजः**, On this Hemàdri observes : "इति प्रकाशता."

P. 508. St. 38.—**नवीचक्रुः**, On this Hemádri makes the following remark : "अत्र नवीकरणं बीजप्ररोहयोग्यता." And Châritravardhana says, "बीजप्ररोहयोग्यत्वं विदधुः."

P. 508. St. 39.—**परार्ध्यप्रतिमागृहायाः**, *Cf.* Cháritravardhana : "परार्ध्यानि श्रेष्ठानि प्रतिमायुक्तानि गृहाणि यस्याः".—**उपोषितैर्वास्तुविधानविद्भिः**, Cháritravardhana explains this to mean, "उपोषितैः कृतोपवासैः वास्तुगृहारम्भस्तस्य विधानं करणं तत्र प्रवीणैः &c." The Deccan texts on वास्तुशान्ति or ceremony of entering a new or uninhabited house do not prescribe that the priests officiating at the ceremony should fast previously to officiating at it. It is likely that Kálidása refers to a local custom. Vallabha renders वास्तुविधानविद्भिः by "स्थपतिभिः ?। इति हेत्वर्थे तृतीया."

P. 508. St. 40.—**कामीव कान्ताहृदयं प्रविश्य**, *Cf.* Vallabha: "यथा कान्ताहृदयं प्रविश्यान्यैः शरीरावयवैरनुर्जाविलोकमिन्द्रियगणं यथार्हं संभावयति." He is perhaps right.—**राजोपपदं** Hemàdri explains this to mean, "उपोच्चारितं पदमुपपदं राजा उपपदं यस्य तत्। राजगृहमित्यर्थः। "हिरण्यपूर्वं कशिपुं" इतिवत्."

P. 509. St. 41.—**मंदुरासंश्रयिभिः**, On this epithet Hemádri makes the following remark: " सम्यक्श्रयणेन राज्ञः शुभं स्यात्करिणां तथैव सूचितं । तथा योगयात्रावचनं । " परिग्रहारोहणबन्धनाद्यैः । यात्रानुकूल्यं तुरगोत्तमानां । राज्ञः शुभं स्यात्करिणां तथैव । विपर्यये तद्विपरीतमाहुः."—**शालाविधिस्तम्भगतैः**, Hemádri reads शालागृहस्तम्भगतैः, his comments are " शालागृहस्तम्भान्गतैर्नागैर्गजैश्च । " वासः कूटो द्वयोः शाला " । भित्तिनवत्तिवत्सामान्यविशेषभावेन शालागृहशब्दप्रयोगः । यद्वा । " शालागृहं तरुस्कन्धे शाखागारैकदेशयोः " इति विश्वः." Vallabha also reads with Hemádri and comments thus: " शालागृहस्तम्भगतैर्नागैश्च । अश्वशालालानबन्धकरिभिः &c. " Cháritravardhana and Dinakara read " शालावधिस्तम्भगतैः ", and explain thus: " तथा शालानामवधिस्तत्रत्यस्तम्भेषु [अवधिस्तत्र स्तम्भेषु Ms.] गतैर्बद्धैर्नागैर्गजैश्च कृत्वा &c." —**विपणिस्थपण्या**, The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority produced by the Northern Mss. " विपणिः पण्यवीथिका " इत्यमरः । See readings.

P. 509. St. 42.—**पुराणशोभां**, Cháritravardhana remarks: " दशरथादिराज्ये याभूत्तादृशीं शोभां."—**भर्त्रे दिवो नाप्यलकेश्वराय**, On this Hemádri remarks, " इन्द्रकुबेरावपि नापेक्षितवान्, " and Cháritravardhana says, " एतेनेन्द्रधनदतुल्यत्वं राज्ञः । तन्नगरीसमानत्वमयोध्याया इति भावः."

P. 510. St. 43.—**एकान्तपाण्डुस्तनलम्बिहारं**, On this Hemádri remarks: " एकान्तमत्यर्थं पाण्डुस्तनयोर्लम्बिनो हारा यस्मिंस्तं । यौवने स्त्रीणां पाण्डुता प्रसिद्धा । स्तनपाण्डुत्वं कविप्रसिद्धं । " स्तनद्वयं पाण्डु तथा प्रवृद्धं " इति कुमारसंभवे." Vallabha says, " हारा यतिशीतलाः. "—**प्रिया वेशं.** Hemádri remarks, " प्रिया इति पदभङ्गो वा । अस्य प्रियाः एवं विधधर्मसुदं दुर्मितेन्यर्थः । व्रतिशासीन्यत्र ब्रवीत्यर्थग्रहणादुपसृष्टस्य दिशतेर्द्विकर्मकता । तथा । " शिलोच्चयोऽपि क्षितिपालमुच्चैः " इत्यादिशब्दप्रयोगः ". See verse 51, Canto II.

P. 510. St. 44.—**अगस्त्यचिह्नादयनात्**, 'from that part of the equator which is marked by Agastya,' *i. e.* the South. On this Hemádri observes: " अगस्त्यचिह्नादिति स्वालिङ्गनिर्देशाभावात् [स्वामङ्गनिर्देशाभावात् Ms.] । पुरा किल भगवानगस्त्यो दक्षिणापथं प्राप्तो नायाति निवर्तते तद्वदसावपि सूर्यः किं नायास्यतीति शङ्किता दिवसस्यान्तो जाताः " इति."—**हिमस्रुतिं** &c., Hemádri explains this to mean, " हिमवतो हिमालयस्य संबन्धिना हिमस्रुतिं ससर्ज चकार । ग्रीष्मे तापाद्धिमाद्रेर्विलयो [निलयो Ms.] जायत इत्यर्थः । आनन्देन शोतो बाष्पवृष्टिमिव । यदा किल नायको दक्षिणामन्यङ्गनां त्यक्त्वा अन्यां याति तदा सा परितोषादानंदाश्रु मुञ्चति । सपत्नीमात्सर्यं नन्येके [मात्सर्यमित्येके Ms.]." And Cháritravardhana has: " हिमाचलसंबन्धिनीं हिमस्रुतिं तुषारस्रुतिं बाष्पवृष्टिमिव ससर्ज । तदनेन हि तापातिशयात्तुषारस्य विलयः स्यात् । तत्रोत्प्रेक्षते । दक्षिणाशा सपत्नीं परित्यज्यादित्यो मदभ्याशमगादिति हर्षादुत्तरादिगानन्दाश्रुवृष्टिं मुमोचेति भावः । अगस्त्यो दक्षिणस्यां निवसतीत्यगस्त्यचिह्नत्वं दक्षिणायनस्य."—**हैमवतीं हिमस्रुतिं ससर्ज**, 'sent down a drizzling of frost on the Himálaya.' Vallabha says, " हिमाचलभवां हि-

मरुष्टिमाश्रित् ", and further remarks: " यथा भास्वति सौभाग्यवति भर्तरि दक्षिणामपास्य प्रवाणां स्वयं परित्यज्य कौबेरीं कुलजां नारीं सेवितुं समीपमुपागते सति । सा कौबेरी आनन्ददर्शितां वाष्पवृष्टिं मुंचति । सा परितोषादानन्दाश्रु मुंचति ".

P. 510. St. 45.—**जायापती इव**, Chàritravardhana explains this to mean, " यथा प्रणयकलहवशतः पुमान्संतापवान् स्त्री च क्षीणा भवेत् । तथा क्षपादिवसौ घर्मतापभूतामिति भावः । रात्रिसंचारिणीनां राशीनां ग्रीष्मेऽल्पनाडीकत्वात्क्षणदायाः कृशत्वं." And Hemàdri and Vallabha say, " तौ हि कृशौ संततौ भवतः".

P. 511. St. 46 —**उद्दण्डपद्मं**, Analyse उद्गतदण्डाः पद्मा यत्र तत्.

P. 511. St. 47.—**सायंतनमल्लिकानां**, Châritravardhana explains: " सायं भवाः सायंतनास्तासां मल्लिकानां विचिकिललतानामिति. "—**विजृम्भणोद्गन्धिषु**, On this Chàritravardhana makes the following remark : " एतेन सौगन्ध्यलोभः । संख्येयमल्लिकत्वेन ग्रीष्मप्रारंभोक्तिः । अन्योऽपि यो गणनां करोति सोऽवश्यं सशब्दः स्यात् " । Hemàdri says, " अनेन संख्येयं मल्लिकाकुसुमं । कालो ग्रीष्मारंभः सूचितः । सायमव्ययं क्लीबं च । " सायं क्लीबे दिनान्तस्याधिकालः सायमव्ययं" इति मार्तण्डः । अत्राव्ययं " सायंचिरंप्राह्णेप्रगेऽव्ययेभ्यष्ट्युट्युलौ तुट् च" Pà*n*ini, IV. 3. 23. क्लीबे तु सायाह्ना इति. "

P. 511. St. 48 —**स्वेदानुविद्ध**° &c., *Cf*. Hemàdri: " स्वेदेनानुविद्धाश्लिष्टान्यार्द्राणि नखक्षतान्यङ्काश्चिह्नं यस्य तस्मिन् ," and also Châritravardhana : " कीदृशे स्वेदेनानुविद्धं संगतं यदार्द्रनखक्षतं तदङ्काश्चिह्नं यस्य तथाभूते कपोले &c. " But for the drops of perspiration the nail-wound or sore would not be sticky enough to hold the flower.—**भूइष्ठ संदष्टशिखं**, Hemàdri reads " संदष्टभूयिष्ठशिखं, " and explains, " संदष्टा लग्ना भूयिष्ठा शिखा यस्य तत् । आश्लिष्टत्वादार्द्रत्वाद्भूयिष्ठाः संदष्टाः इति वा " । Chàritravardhana also reads with Hemàdri, and explains " संदष्टाः संलग्ना भूयिष्ठा बह्व्यः शिखा यस्य तत् " । Vallabha reads " भूयिष्ठसंदष्टशिखं " and explains thus " भूयिष्ठसंदष्टशिखं नितान्तविलग्नप्रान्तम गण्डस्थले अतिशयसंलग्नशिखम् । " He seems to have read with Mallinàtha. Sumativijaya reads " भूयिष्ठसंलग्नशिखम् " and interprets " भूयिष्ठाः बह्व्यः संलग्नाः शिखाः प्रान्ताः यस्य तद्भूयिष्ठसंलग्नशिखं &c. ; and Dinakara has " भूयिष्ठसंदष्टशिखम्," and his interpretation is भूयिष्ठाः सन्दष्टाः संलग्ना बह्व्यः शिखा यस्य तत्. " See readings. On this Hemàdri remarks : " अत्राग्रयानं हनुमाह. "

P. 512. St. 49.—**धारागृहेषु**, ' in houses furnished with artificial showers.' Chàritravardhana explains thus : " जलधाराभिरुपलक्षिताः गृहा धारागृहा जलयन्त्रगृहास्तेषु," and further he observes, "चतुर्भित्तिजलस्त्रावि जलयंत्रगृहं विदुः " । यन्त्रां जलसंचारकमेदः ', and Vallabha has, " यन्त्रधारामन्दिरेषु. " And further he remarks. " यंत्राणि शालभञ्जिकाप्रभृतीनि तत्करतलद्वयप्रवृत्ततोयधारानिर्यत्र ग्रीष्मोष्मानिर्मथकं धनिनां धाम यंत्रधारागृहं. " And Hemàdri says, " धारायन्त्रैर्गृहेषु ".—**धौतान् शिलाविशेषान्** , Hemàdri interprets it by " चन्द्रकान्तान्. "

P. 512. St. 50.—**स्नानार्द्रमुक्तेष्वनुधूपवासं**, Châritravardhana explains thus : , " कीदृशेषु स्नानेनार्द्रा अत एव मुक्तास्तेषु." And Hemâdri says, " स्नानार्द्राश्च ते मुक्ताश्च तेषु."—**अनुधूपवासं**, Hemâdri explains to mean, " धूपवासस्यानु पश्चादनुधूपवासं. " And Châritravardhana says : " धूपवासादनु पश्चादनुधूपवासं. " And further he remarks : " संस्कृतकेशपाशदर्शनाद्विलासिनः समुल्लसितस्मरा बभूवुरित्यर्थः. "

P. 512. St. 51—**आपिञ्जरा**, Châritravardhana renders it by " ईषत्पिङ्गलवर्णा. " And Hemâdri supports it thus : " पीतरक्तस्तु पिञ्जरः " इत्यमरशेषे. And Vallabha says, " संजातरेणुकणत्वात्पिशङ्गरूपा ".—**मञ्जरी**, Hemâdri remarks : " चूतादेश्च नवोद्भिदि " इति क्षीरस्वामी ".—**खण्डीकृता**, On this Hemâdri makes the following remark : " खण्डीकृतेत्यधिकामजनत्वादिति. "

P. 513. St. 52.—**निदाघावधिना**, Hemâdri explains thus: " निदाघस्य अवधिरन्तो यस्मिन्स ग्रीष्मस्तेन. " —**सर्वे दोषा प्रमृष्टाः**. Hemâdri interprets it thus : " सर्वे संतापखेदकरादयः स्वदोषाः प्रमृष्टा निरस्ताः. "—**मनोज्ञगन्धं**, Hemâdri observes : " मनोज्ञमिति सर्वविशेषणं । यद्वा । सर्वाणि शीधुविशेषणानि । " बहुष्वप्रयुक्तानि गरेयमार्शीधुः " (?) । शेरते ऽनेनेति शीधुः । " शीङो धुक्लक्वलच्वालनः " Unâdi Sûtra, 478, S. K. p. 334. इति धुक्. " And Châritravardhana explains शीधु by " पक्वेक्षुरसोत्पन्नं मद्यं, " and quotes, like Mallinâtha, the authority from the Yâdavakosha. On this passage Vallabha makes the following remark: " अतश्च यत्र सहकारादिमङ्गलसद्भावः । तत्र का दोषगणना."—**कामिजन**, Hemâdri explains to mean " कामिनश्च कामिन्यश्च । " पुमान्स्त्रिया " Pânini. I. 2. 67.

P. 513. St. 53.—**विगाढे**. Hemâdri renders it by " तात्रसंताये प्रवृत्ते सति. " And Vallabha by " तीव्रग्रीष्मसमये. " And Châritravardhana translates विगाढे by " प्रवृद्धे. "—**तापापनोद** &c., Châritravardhana explains this to mean. " तापो दारिद्र्यदुःखमुपतापश्च तस्यापनोदे स्फोटने. "—**पादसेवौ**, Châritravardhana explains the epithet thus. " पादयोश्चरणयोः किरणानां च सेवा ययोस्तौ. " And Hemadri says, " पादसेवा चरणसेवा रश्मिसेवा च ययोस्तौ. "

P. 514. St. 54.—**रोधोलतापुष्पवहे**, Hemâdri explains it to mean, " रोधोलतानां तटवल्लीनां पुष्पवहे । वहतीति वहः । पचाद्यच् . " Châritravardhana also has the same. And Vallabha has : " तटरूहवल्लीकुसुमहारिणि. "

P. 514. St. 55.—**आनायिभिः**, Hemâdri and Vallabha explain it by " धीवरैः. "—**विगाहितुं**. Châritravardhana interprets it by " विलोलयितुं. " Like Mallinâtha, Hemâdri too quotes here the verse from कामन्दक.

P. 514. St. 56.—**उद्विग्नहंसा**, Hemâdri explains this to mean, "उद्विग्ना भीता हंसा यस्याः साभूत्। अङ्गनाभिरिति भयहेतुत्वस्याविवक्षितत्वान्न पञ्चमी। यद्वा। उद्विग्नाश्चकिताः &c."

P. 515. St. 57.—**किरातीमुपात्तबालव्यजनां**, On the figure Châritravardhana observes: "स्त्रियां चामरवाहिन्यामित्युक्तत्वात्किरातीकथनेनैव चामरग्रहणे प्राप्तेऽपि सर्वदैव योषितो बालव्यजनं न संपद्यतेऽतः उपात्तबालव्यजनामिति न पौनरुक्त्यं." Hemâdri notices the reading "किरातं" and observes, "इति पुल्लिङ्गपाठे किरातः स्वकार्यकुब्जः इत्यर्थः। कुब्जाद्या हि अवरोधे रक्षार्थं निर्धार्यन्ते। तथा कामन्दकः। "अन्तःपुरे च विवरे कुब्जकैरातवामनाः" इति. Vallabha interprets किरातीं by निर्यामकपत्नीं (?). But Kâlidâsa does not appear to take the expression in this sense.

P. 515. St. 58.—**पश्य**, Hemâdri explains this to mean, "पश्येति वाक्यार्थस्य कर्मत्वात्। प्रवाह इति द्वितीयाभावः। पश्य मृगो धावतीतिवत्."—**शतशः** = "शतं शतं शतशः" Hemâdri.—**अवरोधैः**, "अवरोधशब्देनान्तःपुरस्त्रियो लक्ष्यन्ते" observes Châritravardhana.

P. 515. St. 59.—**मदरागशोभां**, Châritravardhana explains thus, "मदरागो रक्तिमा तस्यैव शोभां बध्नतीभिः." And further he remarks : "यथा कज्जलेन विलोचनयोः शोभा संपद्यते तद्वत्पानीयैरपि विहितेत्यर्थः".—**नौलुलिताभिः**, Hemâdri remarks : "नौलुलितत्वमञ्जनविलोपे हेतुः".

P. 516. St. 60.—**क्लेशोत्तरं**, Hemâdri interprets, "क्लेश उत्तरो यस्मिन् कर्मणि तथा."—**गुरुश्रोणिपयोधरत्वात्**, Hemâdri explains this to mean, "श्रोणयश्च पयोधरश्च श्रोणिपयोधरं। प्राण्यंगत्वादेकवद्भावः। गुरु श्रोणिपयोधरं यासां तासां भावस्तस्मात."—**गाढाङ्गदैः**, Châritravardhana remarks: "पानीयसंसर्गाद्बाहूनां पीनत्वाद्गाढाङ्गदत्वं। तदुक्त्या च कङ्कणानां च पतनसूचनं."

P. 516. St. 61.—**वारिविहारिणीनां**, Châritravardhana explains thus, "अवतंससंबंधविवक्षया वारिविहारिणीनामिति षष्ठी."—**शैवाललोलान्**, Châritravardhana interprets it by "शैवालास्वादने चपलानिति."—**छलयन्ति**, Châritravardhana, Vallabha and Sumativijaya render it by "वञ्चयंति." And Hemâdri's remarks are : "पूर्वमुत्सारितजलचरत्वादिमं मत्स्यायन्ते। शैवालभ्रमं जनयन्तीत्यर्थः." And Châritravardhana has : "कर्णपूराणां मत्स्याकारत्वात्तेता भयत्रस्ता मीना व्याकुलीभवन्तीति भावः। मीनो मीनमत्तीति प्रसिद्धिः। यद्वा। शैवालभक्षणचपला मीना अवतंसान् शैवालमिति ज्ञात्वा अत्तुमुपक्रान्ताः समानवर्णत्वादत एव वंचिताः". And Vallabha says, "कर्णपूररूपेण शैवालभ्रान्त्युत्पादनं."

P. 516. St. 62.—**आसां जलास्फालनतत्पराणाम्**, *Cf.* Buddhacharita, Canto VIII. verse 29. "करप्रहारप्रचलैश्च ता भृशंयथापि नार्यः सहितोन्नतैः स्तनैः। वनानिलाघूर्णितपद्मकम्पितै रथाङ्गनाम्नां मिथुनैरिवापगाः॥—**मुक्ताफलस्पर्धिषु**, Châritravardhana renders it by "मुक्तास्थूलेषु."—**छिदुरः**, Hemâdri and Châritravardhana explain it as : "स्वयं छिद्यते छिदुरः" इति. For the similar use of स्पर्धिषु compare stanza 13, Canto XIII.

P. 517. St. 63.—**रूपावयवोपमानानि,** Hemâdri explains this to mean, " रूपस्याकारस्यावयवानामुपमानानि," and " शरीरावयवसादृश्यानि " says Vallabha.—**भङ्ग्यः,** Hemâdri explains thus, " अल्पा भङ्गा भङ्ग्यः ".

P. 517. St. 64.—**उत्कलापैः,** " धाराधरनादानुकारिमृदङ्गरवाकर्णनसमनन्तरं हर्षवशादुन्नतः कलापो यैः", says Châritravardhana.—**गीतानुगं.** 'following (*i. e.*, beaten in consonance with) their singing.' The young women beat the water to the music of their voices. They beat the water as they sang.—**वारिमृदङ्गवाद्यम,** "वार्येव मृदङ्गस्तद्वाद्यं वारिमृदङ्गवाद्यं" says Chāritravardhana. And Hemádri has "वार्येव मृदङ्गवाद्यं." And Châritravardhana further remarks : " कान्ताभिस्तथा मनोज्ञं नीरमध्ये कङ्कणशब्दः क्रियते येन तटस्थाः केकिनो घनगर्जितमन्या हर्ष्येयुः".—**संमूर्च्छति,** Hemádri renders it by " स्फुरीभवति, " and Châritravardhana by " वर्धते."

P. 517. St. 65.—**संदष्टवस्त्रेषु,** *Cf.* Hemádri, " इन्दुप्रकाशांकैर्वस्त्राणां शौक्ल्यमुडुशब्देन मौक्तिकबाहुल्यमिति." And Châritravardhana has : " यद्यपि सामान्येन वस्त्रमभ्यधायि तथापि चंद्रप्रकाशसादृश्यार्थं दुकूलं ज्ञेयं " इति.—**रशनाकलापः मौनं भजन्ते,** On this Hemádri makes the following remark : " माघेऽप्युक्तं " : " रामाणामवरतोदगाहभाजां । नारावं व्यतनुत मेखलाकलापः" । S'i. VIII. 45, इत्यादिजलक्रीडाकाले दुकूलधरत्वादिदुप्रभासाम्यमिति. "

P. 518. St. 66.—**दर्पात्** , See readings.

P. 518. St. 67.—**च्युतपत्त्रलेखः,** *Cf.* Hemádri : " च्युता पत्त्रलेखा स्तनभुजकपोलेषु कुङ्कुमादिरचिता रेखा यस्य." And Châritravardhana has : " च्युता नष्टाः पत्त्रलेखास्तिलका यत्र स. "—**मनोज्ञ एव,** On this Vallabha remarks, " यदुक्तं । " रम्याणां विकृतिरपि श्रियं तनोति " इति " ।—**वेषः,** Hemádri renders it by " शृङ्गारः ". And Châritravardhana has " तासां मुखं यूनां कामोद्दीपकं जातमित्यर्थः ".—**विभ्रंशिमुक्ताफलपत्त्रवेष्टः,** Châritravardhana reads °कर्णवेष्टः and explains it thus, " विभ्रंशी श्रवणाद्भ्रंशो मुक्ताफलमयः कर्णवेष्टस्ताडंको यत्र सः &c. Vallabha reads with Mallinatha. Dinakara, as might be expected, agrees with Châritravardhana. See readings.

P. 519. St. 68.—**नौविमानात्,** Hemádri and Châritravardhana analyse, " नौरिव विमानमिति." On this passage Hemádri says, " मालारश्चिन्योः साम्यं."

P. 519. St. 69.—**भ्राजिष्णुना,** Here Hemádri discusses : " भ्राजते तच्छीलो विभ्राट । भ्राजिष्णु रोचिष्णुः । " णेश्छन्दसि " Pánini, III. 2. 137. इत्यनुवृत्तौ । " भुवश्च " Pánini, III. 2. 138. इति चादिष्णुच । भ्राजिष्णुना लोहितचन्दनेन " इति वृत्तौ लौकिकोदाहरणोपन्यासेन भाषायामपीति न्यासकृत् । भवतेरपि छान्दसत्वं कवीनां नेष्टमिति क्षीरतरंगिण्यां । " Translate the aphorisms:—' The affix इष्णुच् in the sense of ' the agent having such a habit &c, ' comes in the छन्दस , after a verb that ends in the causative णि. '

The causatives take this affix in the Vaidic literature. As दृषदं धारयिष्णवः 'who hold the stones.' वीरुधः पारयिष्णवः। 'The affix इष्णुच् in the sense of 'the agent having such a habit &c.,' comes in the छन्दस्, after the verb भू 'to be' also.' Thus भविष्णुः 'be coming.' The word च 'also' indicates the existence of other verbs not included in the above two Sûtras. As भ्राजिष्णुना लोहितचन्दनेन.—**इन्द्रनीलं प्राप्य किमुत**, Hemádri explains it thus: "प्राप्येत्यभिरामक्रियापेक्षया पूर्वकालत्वं। वक्तुं न शक्यते तासां मुखशोभेत्यर्थः। उक्तं च माघे।" मार्द्रीकं प्रियतमसन्निधानमासन्नारीणामिति जलकेलिसाधनानि." S'i. VIII. 30.

P. 520. St. 70.—**वर्णोदकैः**, Hemádri interprets it by "कुङ्कुमादिभी रम्योदकैः." —**काञ्चनशृङ्गमुक्तैः**, 'ejected through syringes made of gold.' Cháritravardhana explains it in the following way, "काञ्चनमयं यच्छृङ्गं जलक्रीडायंत्रं तत्स्थैः। "क्रीडांबुयंत्रे शृङ्गोऽस्त्री पर्वताग्रप्रभुत्वयोः" इति वैजयन्ती. —**सधातुनिष्यन्द इवाद्रिराजः**, 'like the king of mountains washed down by streams containing metallic earth.' *Cf.* Hemádri: "धातुशब्देन लोहितगैरिकादि वस्तूच्यते। तथा सूर्यशते।" "रक्ताः सिक्ता इवौघैरुदयगिरितटी धातुधाराद्रवस्य."

P. 520. St. 72.—**अज्ञातपातं**, Hemádri analyses, "अज्ञातः पातो यस्यां क्रियायां यथा स्यात्तथा," and remarks: "इति जैत्राभरणविशेषणं वा। विहर्तुरिति क्रीडापारतंत्र्यादज्ञाने हेतुः".—**कुम्भयोनेः**, see note to St. 21, Canto IV.—**अधिगम्य**, see St. 55, Canto XV.—**जैत्राभरणं**, Hemádri explains it thus. "जयति तच्छीलं। तृन्। प्रज्ञादित्वादण्। जैत्रं च तदाभरणं च."

P. 521. St. 73.—**अपोढनेपथ्यविधिः**, On this Hemâdri observes: "तत्प्रसंगात्तद्दर्शनं". Cháritravardhana reads अपोढनेपथ्यविधिम्, and explains thus, "जैत्राभरणेन शून्यं रहितमत एवापोढो नष्टो नेपथ्यविधिर्यस्य तादृशं स्वकीयं बाहुं ददर्श पश्यति स्म &c." Hemádri, who reads उपोढनेपथ्यविधिः, explains thus: "उपोढनेपथ्यविधिः कृतालंकारक्रियः। तत्प्रसङ्गात्तद्दर्शनम्." Vallabha reads with Hemádri and explains, "तीरोपकार्यां गतमात्र एव तटस्थां पटकुटीं प्राप्तमात्र एव दिव्येन वलयेन शून्यं बाहुं ददर्श। किं भूतोऽसौ उपोढनेपथ्यविधिरासन्नसंकल्पविधानः प्राप्तालंकारविधानः" &c. Dinakara, as might be expected, agrees in reading with Cháritravardhana. Sumativijaya reads with Hemádri and explains, "उपोढो धृतो नेपथ्यविधिराभरणविधिर्येन स उपोढनेपथ्यविधिः." See readings.

P. 521. St. 74.—**स तुल्यपुष्पाभरणः**, On this Cháritravardhana remarks: "एतेन शोभाभावोक्तिः। पुष्पऽलंकार च समानशेमुर्वात्वाच्च खेदराहित्यं." —**जयश्रियः संवननं**, 'a charm for victory,' *i. e.*, which brought victory to him who carried it. See Sts. 55, 56, Canto XV.

P. 522. St. 76.—**नूनं**, Hemádri and Cháritravardhana explain it thus, "नूनं वितर्के निश्चये वा."

P. 522. St. 77.—**कोपविलोहिताक्षः**, Analyse कोपाद्रोषाद्विशेषेण लोहिते अरुणे अक्षिणी यस्य स तथोक्तः।—**गारुत्मतमस्त्रं**, 'a missile presided over by Garuda or the Great Eagle.' Eagles are the natural enemies of snakes.

P. 522. St. 78.—**समाविद्धतरंगहस्तः**, Hemâdri interprets समाविद्धाः by " इतस्ततः क्षिप्तास्तरंगा एव हस्ता यस्य सः। श्लेषः। तरंग एव हस्तो यस्य सः."

P. 523. St. 79.—**कन्यां पुरस्कृत्य**, Hemâdri explains this to mean, " अत्र कन्या स्वसा। " इमां स्वसारं च " इति वक्ष्यमाणत्वात्। लक्ष्मीकल्पवृक्षयोः स्वसभ्रात्रोरुपमानाच्च ".—**उद्वृत्तनक्रात्**, Châritravardhana explains it to mean, " उद्वृत्ताः क्षुभिता दुष्टा नक्रा जलचरा यत्र तस्मादुभयोरपि विशेषणं ".

P. 523. St. 80.—**प्रह्वेष्वनिर्बन्धरुषो हि सन्तः**, 'for the good are not inexorable in their wrath towards those that bend themselves before them.' A proverbial saying. *Cf.* Hemâdri: " हि हेतोः सन्तः प्रह्वेषु नम्रेषु अनिर्बन्धा अनिर्विष्टा रुड् येषां ते, " and Châritravardhana has: " यतः सन्तः प्रह्वेषु नम्रेष्वनिर्बन्धा इठरहिता रुट् कोपो येषां तादृशाः. " And Hemâdri remarks " कार्यमकृत्वा कथं न्यवर्ततेत्याह प्रह्वेषु &c.—**विभूषणप्रत्युपहारहस्तं**, 'bearing in his hand the ornament that he brought with him to present again to him.'

P. 523. St. 81.—**मानोन्नतेन**, Hemâdri explains thus, "मानेनाहंकारेणोन्नतमुच्छ्रितं तेन. "—**द्विषामङ्कुशं**, On this Hemâdri remarks : " पौरुषं दासोन्नतत्वेन (see verse 78.) द्विषामङ्कुशत्वेन च चन्दनयोग्यता. "

P. 524. St. 82.—**कार्यान्तरमानुषस्य**, *Cf.* Châritravardhana : " दशग्रीववधादिकार्यार्थं मानुषस्य नररूपस्य &c. "

P. 524. St. 83.—**कराभिघातोत्थितकन्दुकेयं**, On this Châritravardhana remarks : " इति विशेषणेनाऽर्वमाभरणदर्शनयोग्यता. "

P. 525. St. 84.—**आजानुविलम्बिना**, This refers to the general notion that it is auspicious to possess hands that reach down to the knees.—°**परिघेण**, Hemâdri renders it by " अर्गलेन. " And Châritravardhana says, " भूमेः रक्षार्थं परिघायमानेन. " And Vallabha interprets it by " अर्गलाभूतेन. "

P. 525. St. 85.—**अनुमन्तुम्**, Châritravardhana renders it by " अङ्गीकर्तुं. "

P. 526. St. 86.—**आप्यो भवान्स्वजन इत्यनुभाषितारं**, 'who replied, you are my honoured relation', *i. e* I accept you as my honoured relation. On the word आप्य in this sense, *Cf.* Uttar. Act. IV. " एष वः श्लाघ्यसंबन्धी &c. "—**अनुभाषितारं**, *lit.* speaking after, *i. e.*, replying, *viz.* to the request conveyed by the words स्वसारं च यवीय-

र्त्रं &c.—समेतबन्धुः, On this Cháritravardhana remarks : " इति विवाहोपचारः ". Analyse समेता मिलिता बन्धवो यस्य सः.—विधिवदास, Cháritravardhana says " कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि " Pánini, III. 1. 40 इति नियमाद्विधिवदिति प्रयोगो मध्ये चिन्त्यः । अथ वा विधिवदित्यस्य क्रियाविशेषणत्वान्निर्दोष इति कश्चित्. " See note to St. 61. Canto IX.

P. 526. St. 87.—साहचर्याय, On this Hemádri remarks : " इत्यनेन प्राजापत्यो विवाहः सूचितः " । " सहचरीति प्राजापत्य इत्याश्वलायनः". Compare As'valáyana Grihya Sútra, Kandiká 6 p. 24. Bibli. Indi. series " सह धर्मं चरत इति प्राजापत्योऽष्टावरानष्टपरान् पुनात्युभयतः " ॥ ' They fulfil the law together: this (is the wedding called) प्राजापत्य. (A son) brings purification to eight descendants and to eight ancestors on both sides. ' —माङ्गल्योर्णावलयिनि, ' Mángalyavalaya means a wristlet to be worn on an auspicious occasion, such as marriage &c., as distinguished from one to be worn on inauspicious rites, such as funeral obsequies. The Kautuka or thread wristlet should generally be made of wool. See note to St. 1. Canto VIII.

P. 527. St. 88.—पंचमं तक्षकस्य, Cháritravardhana says, " तक्षकस्य पंचमं तक्षकपौत्रस्य पौत्रं तं बन्धुं. " And Vallabha has, " तं तक्षकस्य पंचमं प्रतिपौत्रं. "—पितृवधारिपोर्वैनतेयात्, ' from the son of Vinatá (Garuda) who had become his enemy on account of the death of his father '. *Cf.* Cháritravardhana:' पितुः काश्यपस्य वधाद्रिपुरूपाद्वैनतेयाद्गरुडात्."—त्रिभुवनगुरोः, Hemádri remarks : " इति गरुडवाहनत्वं सूचितं. "—औरसं, Hemádri explains this to mean, " उरसा निर्मितः औरसः । " औरसो धर्मपत्नीजः " इति याज्ञवल्क्यः । मनुश्च । " स्वक्षेत्रे संस्कृतायां तु स्वयमुत्पादयेत्सुतं । तमौरसं विजानीयात्पुत्रं प्रथमकल्पजं "। इत्यस्य द्योतकं मैथिलेयमिति कुलप्रकाशनं चोभयोरप्युत्कृष्टत्वख्यापनार्थं."

CANTO XVII.

P. 528. St. 1.—**यामिनीयामाचेतना प्रसादमिव**. It is indeed well known, as all the commentators observe, that with the rise of the dawn the intellectual faculties become clearer (प्रसन्न). *Cf.* Hemâdri: " अत्र चेतनाप्रसादमाप्नोति न पुनराप्नोति कालभेद इति काव्यप्रकाशे । तट्टीकाकृद्भास्करश्च सर्वेषां चेतनायापि प्रसादमाप्नोतीत्यादिवर्तमानकाले एव न्याय्यः " इति. And Vallabha has " चतुर्थान्निशाप्रहरान्नैर्मल्यं प्राप्नोति. " And Cháritravardhana says, " पश्चिमाच्चतुर्थाद्यामिन्या रात्रेर्यामात्प्रहरात्प्रसादं नैर्मल्यमिव तद्वदित्यर्थः. "

P. 528. St. 2.—**पितृमान्**, ' who was eminent as a son, ' *i. e.*, who was blessed with a good father. *Cf.* Hemâdri: " प्रशस्तपितृकः. "

P. 528. St. 3.—**कुलविद्यानां**, Hemâdri says, " राजकुलविद्यानां. " And Cháritravardhana interprets, " आन्वीक्षिक्यादीनां. " And Vallabha has " आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्चतसृणां राजविद्यानां. " ' Of the principal sciences ' to be studied by members of the royal race *i. e.*, the branches of knowledge that are reckoned as chief, like the *Kulaparvatas* among mountains, or *Kulapatis* among hoary headed sages. ' It does not appear, ' says Pandit, ' that the sciences here referred to were required by custom to be studied by members of the *race* (कुल) *of* Raghu, whence they should be supposed to be styled कुलविद्याः. —**अर्थविदां वरः**, Cháritravardhana explains: "अर्थविदां पण्डितानां वरः श्रेष्ठः." —**अग्राहयत्**, Here Hemâdri discusses, "ग्रुगृहद्दृशां" इति केचिदिति कर्म । भट्टिकाव्ये । "अजोग्रहत्तं जनको धनुस्तत्" Bha*tti*. II.42. इति । विद्यासंबन्धे बुध्यर्थत्वाद्द्वितीया च । एके पूर्वार्धे ग्रहेर्बुध्यर्थत्वात्कुशीमिति द्वितीया । उत्तरार्धे तेनेति विभक्तिविपरिणामं कुर्वन्ति. " And Vallabha says, " ण्यन्तोऽपि द्विकर्मका भवन्ति । यथा । वाचयति पुत्रं श्लोकं पिता. " And Cháritravardhana has, " चकाराद्ग्रहेर्ण्यंतस्य द्विकर्मकत्वमिति केचित्. " Compare Buddhacharita, Canto II. verse 24. " अल्पैरहोभिर्बहुवर्षगम्या जग्राह विद्याः स्वकुलानुरूपाः " ॥

P. 529. St. 4.—**जात्यः**, Hemádri explains: " जातौ साधुर्जात्यः. " And Vallabha says, कुलीनधर्योजात्यः" (?) And Cháritravardhana has " मनोहरः. " See readings.

P. 529. St. 5.—**दुर्जयं**, Cháritravardhana explains: " दुर्जयं जेतुमशक्यं दैत्यं. " Hemádri says, " दुर्जयं नाम । दुरभिभवं वा दैत्येन चावधि. " See readings.

P. 529. St. 6.—**कुमुदानंदं**, Hemádri explains this to mean, " कौमुदी ज्योत्स्ना कुमुदानन्दं शशाङ्कमिव । कुशपक्षे । कौ भुवि मोदते कुमुदः । कुलकत्वानात् [कुलत्वात्] आनन्दयतीति." And Vallabha says, "कुमुदानन्दमित्युभयविशेषणं । रवीन्दुकुलोभयोत्पन्नित्वात् . "

P. 530. St. 7.—**तयोः**, Hemádri says, "कुशकुमुद्वत्योर्मध्ये." And Cháritravardhana has: "मृतयोस्तयोर्मध्ये."—**दिवस्पतेः सिंहासनार्धभाक्**, On this Hemádri remarks: "कृतोपकारत्वात्संगरे मृतत्वाच्च." And Vallabha has, "तदर्थं समरे मृतत्वात्."—**द्वितीयापि**, Hemádri explains this to mean, "कुमुद्वती पारिजातपुष्पांशभागिनी शच्याः सखी आसीत्। पत्यनुगमनात्। "तिस्रः कोट्योर्धकोटी च यानि लोमानि मानुषे । तावत्कालं वसेत्स्वर्गे भर्तारं यानुगच्छति" इति शंखांगिरसौ."—**पारिजातांशभागिनी**, Cháritravardhana interprets, "पारिजातपुष्पविभागहरणशीला."

P. 530. St. 8.—**भर्तुः पश्चिमामाज्ञां**, Cháritravardhana explains this to mean, "भर्तुः कुशस्य समनन्तरमतिथिरभिषेक्तव्यः इत्येवंरूपां पश्चिमामन्त्यामाज्ञां स्मरन्तः &c."

P. 530. St. 9.—**चतुस्तम्भप्रतिष्ठितं**, Hemádri says, "चतुर्भिः स्तम्भैः प्रतिष्ठितं," and Cháritravardhana has: "चतुर्भिः स्तम्भैः प्रतिष्ठितं निर्मितं."—**उद्वेदि**, Cháritravardhana renders it by "वेदियुक्तं." And Vallabha has "उद्धता वेदिर्यत्र तदुद्वेदि."—**कल्पयामासुः**, Cháritravardhana explains thus, "शिल्पिभिरभिषेकमण्डपकारिभिः कल्पयामासुरचीकरन्."—**विमानं**, means 'a couch,' मंचक according to Vallabha, but it appears to be no more than a मण्डप, a pavilion or a pandal supported on four pillars with a raised Vedi in it. Hemádri supports this by quoting the following authority from Yádavaprakás'a "विमानोऽस्त्री देवयानं सदा भौमे च वेश्मनि" इति.

P. 530. St. 10.—**तत्र**, Cháritravardhana interprets it by "राज्याभिषेकमण्डपे." And Hemádri says, "विमाने."—**भद्रपीठोपवेशितं**, 'after requesting him to take his seat on an auspicious couch.' भद्रपीठ is equivalent to भद्रासनं the auspicious or sacred seat. *Cf.* Devî Purá*n*a, Nitimayúkha, Benares edition, p. 3. "हैमं च राजतं ताम्रं क्षीरिवृक्षमयं च वा। भद्रासनं च कर्तव्यं सार्धहस्तसमुच्छ्रितम् । सपादहस्तमानं च राज्ञो माण्डलिकान्तरात्" ॥ वराहसंहितायां । त्रिविधस्तस्योच्छ्रायो हस्तः पादाधिकोऽर्धयुक्तश्च । माण्डलिकानंतरजित्समस्तराज्यार्थिनां शुभदः"।—**उपतस्थुः**, Cháritravardhana says, "प्रापुः । इह प्रातिमात्रविवक्षया परस्मैपदं" इति. And Hemádri says, "अभ्यषिञ्चन्नित्यर्थः । देवपूजायभावात्तङ्."

P. 531. St. 11.—**अविच्छिन्नसंतति**, Charitravardhana and Dinakara read with Mallinátha and say, "तस्यातिथेरविच्छिन्ना सन्ततिः प्रवाहो यस्य तादृशं कल्याणमन्वर्मीयतानुमितं." Hemádri also reads with Mallinátha and explains "तस्यातिथेः कल्याणं शिवमविच्छिन्नसन्तत्याविच्छिन्नविस्तारि अन्वमीयत" &c. Vallabha who reads "अविच्छिन्नसन्ततेः" explains thus "अनवरतजायमानमङ्गलोदयस्य तस्य" &c. Pandit says,—'The words, "अविच्छिन्नसंतति कल्याणमन्वमीयत" refer to the notion common even in these days that if music such as is here described (स्निग्धगम्भीर) should be heard immediately that an act is commenced or a question

asked, that act will be attended with prosperity, and the question will be solved in favour of the questioner. Hence it is that music must beat, and is very scrupulously beaten, *the moment* the marriage garlands are exchanged by the bride and bridegroom, or the birth of a son takes place. At all *Rámajayantis* or celebrations of Ráma's birth on the bright ninth of Chaitra, immediately that the preacher comes to treat of the announcement of the birth, exactly at noon, music is beaten. An anxious relation talking or asking in concern regarding the health of his sick friend is assured of cure if music should be heard accidentally the moment he asks or speaks. The poet means that as music was heard the moment that the coronation began, the people inferred that prosperity would attend the king. ' *Cf.* Hemádri : " स्निग्धगंभीरमिन्युभयसूचनं सूचयन्ति । उक्तं च शाकुन्तार्णवे । " स्वरैर्दुःखं भवेद्रूक्षैः सुखं सर्वं शकुन्तयः । आहतानि च वाद्यानि स्निग्धवाचा च मङ्गलं. " See readings.

P. 531. St. 12.—**अभिन्नपुटोत्तरान्**, Hemádri explains this to mean, " किं विधं । दूर्वायवाङ्कुरः ऋक्षत्वकच अभिन्नपुटानि च तैरुत्तरं श्रेष्ठं । अभिन्नपुटानि मधूककुसुमाणि संदष्टपल्लवत्वात् । यद्वा । दूर्वादिभिरभिन्ना युताः पुटाः पल्लवास्तैरुत्तरं सहितं । पुटशब्दस्य पल्लवार्थत्वे सनशत्यां । " संदष्टोष्टपुटाः " । अभिन्नपुटः कार्पासोणवा? कंकण इति वल्लभः. " Here Hemádri evidently quotes from Vallabha's comments. And Cháritravardhana has : " दूर्वा च यवाङ्कुराश्च ऋक्षत्वकच । अभिन्नं संदष्टं पल्लवमस्येत्यभिन्नपुटं मधूकं च एतान्युत्तरं यत्र तं । अभिन्नपुटः कार्पासो वा भल्लातको वा इति."—**नीराजनाविधीन्**, आरात्रिकं says Cháritravardhana, who reads नीराजनाविधिं. And Hemádri has : " नीरस्य शान्त्युपकारस्य आजनं क्षेपोऽत्र । लोहाभिसारोऽस्त्रभृतां राज्ञां नीराजनाविधिरिति पुंसि । दुर्गस्तु । लोहाभिसारस्तु परिनीराजना नृपे । नैषधे च । " रराज नीराजनया स राजघः " इति. Nai. I. 10. Vallabha says, " मङ्गलारात्रिकविधान् जग्राह. " See note to stanza 25, Canto IV.—**भेजे**, ' enjoyed ', ' received ' from the ministers. See readings.

P. 531. St 13.—**जैत्रैरथर्वभिः**, Cháritravardhana explains thus : " जयोद्देशैरथर्वभिर्मन्त्रैर्जिष्णुं जयनशीलं. " And Dinakara says, " जयदायिभिरथर्वणमन्त्रैः", ' by means of hymns from the Atharva Veda, that had the power of making him victorious over his enemies.—**उपचक्रमिरे**, ' began', ' proceeded to' —**पूर्वं**, Cháritravardhana, unlike Hemádri and Mallinátha, takes पूर्वं with जैत्रैरथर्वभिः, *i. e.*, they first recited those *Mantras* that were to render him victorious.

P. 532. St. 15.—**प्रवृद्ध इव**, Cháritravardhana explains this to mean, " प्रवृष्टः (is his reading) पर्जन्यो मेघ इवालक्ष्यतादृश्यत । लोकैरिति शेषः । दक्षिणादानस्य वृष्टिसाम्यं. " Hemádri interprets, " प्रवृष्टः पर्जन्य इव ।

" पर्जन्य शब्दो घनाघने " इति धनंजयः। प्रवृष्ट इति द्वयोर्विशेषणं." He too, like Cháritravardhana, Dinakara, Vallabha, and Sumativijaya reads प्रवृष्टः for प्रवृद्धः. See readings.

P. 532. St. 16.—**वैद्युतस्याग्नेर्वृष्टिसेकादिव**, Hemâdri remarks: " विद्युत्संबंधिनोऽग्नेरिव। जलसेकादग्निरिव वैचित्र्यमिति. " And Châritravardhana has " प्रवृद्धा. "

P. 533. St. 17.—**स्नातकेभ्यः**, It was a prevalent custom among the ancient Áryas to bestow gifts upon the house-holders or married Bráhma*n*as (स्नातकाः) especially that they might utilize them in the performance of sacrificial ceremonies, which a Bráhma*n*a in the unmarried state could not do. Bráhma*n*as, that are Brahmachárins cannot receive gifts on their own account, but must make them over to their preceptors if they have any.

P. 533. St. 18.—**कर्मनिर्वृत्तैः फलैः पश्चात्कृता**, That is, तस्य कर्मभिरुत्पादितैः फलैः प्रत्यादिश्यत. ' was kept aside as unnecessary by the fruits (*i. e.* results) obtained by means of his own good deeds.' The fruits or the results of his own good deeds were so great and so many that they made any blessings from the gratified sages or Bráhma*n*as superfluous. Cháritravardhana explains it to mean, " पूर्वजन्मोपार्जितं पुण्यं ततो निवृत्तैः सिद्धैः फलैः दूरं पश्चात्कृतः कृता. "

P. 533. St. 19.—**बन्धच्छेदं**, Hemádri and Vallabha quote the following : " यदुक्तं। " यौवराज्याभिषेके [युवराजाभिषेके Ms.] च परराष्ट्रावमर्दने। पुत्रजन्मनि वा मोक्षो बद्धस्य [बन्धनस्य Ms.] च विधीयते " and names the figure of the verse as " क्रियादीपकं " इति.

P. 534. St. 21.—**नेपथ्यग्रहणाय**, ' that he might receive decorations or ornaments', *i. e.*, that he might be invested with a royal dress.

P. 534. St. 22.—**प्रसाधकाः**, Hemâdri renders it by " नेपथ्यकारकाः. " And Cháritravardhana by " नापितादयः. "—**तैस्तैः**, Châritravardhana says, " हारकटकादिभिः." And Hemâdri has, " प्रसिद्धैः."—**धूपाश्यानकेशान्तं**, Hemádri explains it to mean, " धूपेनाश्याना ईषच्छुष्काः केशान्ताः यस्य तं। अन्तःशब्दः स्वरूपे वा." And Cháritravardhana says, " धूपेनाश्यानः किंचिच्छुष्कः केशानामन्तः स्वरूपं यस्य तं, " ' who had the ends (*i. e.* extremities) of his hair somewhat dried by fumigations of incense.' After the sacred bathing or consecration (अभिषेक) by holy waters poured on his head the prince had his hair dried by means of fumigations of incense, and these could only dry the ends of the hair, they

being the part exposed to them. Cháritravardhana takes केशान्त as being equivalent to simple केशाः. See above his explanation.

P. 534. St. 23.—**अन्तर्गतस्रजम्**, Analyse, अन्तर्गता अभ्यन्तरं गता स्रग्माला यस्य तं तथोक्तं.

P. 535. St. 24.—**अङ्गरागं समाप्य.** Cháritravardhana explains thus " अङ्गरागं विरचय्य (appears to be his reading) संधाय *i. e.*, अनुलेपं विधाय."—**पत्रं**, Hemádri says, " पत्ररचना." And " पत्रलेखाकारं तिलकं " says Vallabha. And " तिलकं " observes Cháritravardhana.—**मृगनाभिसुगंधिना**, ' perfumed with musk.' *Cf.* Hemádri, " कस्तूरिकया सुगंधिना." And Cháritravardhana says, " मृगमदेन शोभनो गन्धोऽस्यास्तीति तेन. "

P. 535. St. 25.—**हंसचिह्नदुकूलवान्**, ' putting on (*i. e.* wearing) a garment into which were woven figures of swans (*i. e.* flamingoes.)' The हंस is an auspicious bird like the peacock (मयूर), and figures of such birds are woven into the borders and ends of silk-woven-garments to be worn on auspicious occasions. *Cf.* Cháritravardhana : " हंसश्चिह्नं यस्य तादृशं दुकूलं बिभर्तीति सः " (appears to be his reading). And Hemadri says : " हंसाश्चिह्नं यस्य दुकूलस्य तद्वत."

P. 536. St. 26.—**नेपथ्यदर्शिनश्छाया** &c.. It is said in the Puránas that the sun rises on the mountain of Meru, and when it rises it is exactly in a straight line with the horizon and therefore in the position of a looking-glass or a mirror, which it would not be when at other points in the heavens. Again the sun when just risen in the sky is a red round globe (*i. e.*, the disc) like a golden mirror. The use of the word मेरौ in the present passage is that it is a Kalpataru (all-yielding tree) on that mountain only that could have the sun sufficiently near like a mirror. To a Kalpa on earth, for example, or elsewhere, the sun (*i e* the disc of the rising sun) would be too far away to serve as a looking-glass. In this passage, however, the comparison is not at all intended between Atithi's mirror and the mount Meru, nor is any reference specially made to the fact that the mountain is all golden. The Kalpataru is usually described as full of ornaments made of gold and precious stones. Hemádri and Cháritravardhana agree with Mallinatha, where the former comments, " हिरण्मये । दाक्षिणात्यनेति साधु ॥ आदर्शे दर्पणे नेपथ्यदर्शिनस्तस्य छाया प्रतिबिम्बं रेजे । मेरौ कल्पतरोश्छाया तत्र सूर्य इव । मेरुस्थानं सिंहासनं । मेरुस्थस्य कल्पतरोः सूर्यसंक्रान्तत्वं भवतीति मार्गवित । कश्चित्कार्यवशादर्वाचोऽप्यन्ते भवति नो महान् । काम्यमेको हि राज्ञे दर्पणो दर्पणः । क कनेति ?। एवं महत्त्वो दर्पणो माहात्म्याय "॥ And the latter explains this to mean, " हिरण्मये सौवर्णे आदर्शे दर्पणे नेपथ्यं भूषणं दर्शिनो विलोकयतस्तस्यातिथेश्छाया

प्रतिबिम्बो मेरौ विद्यमानस्य कल्पतरोर्देवद्रुमस्य नवे उदिते सूर्ये भानाविव विरराज बभौ। कल्पतरोरपि बह्वलंकारित्वं नूतनस्यादित्यारुणत्वात्। हेमादर्शसादृश्यं मेरावेव वर्तमानस्य कल्पद्रुमस्य सूर्ये प्रतिबिम्बः संभवतीति मेरावित्यधिकः प्रयोगश्चिन्त्यः". Vallabha says, "यथा नवोदिते रवौ कल्पवृक्षच्छाया मेरौ राजते। सोऽप्यनेकाभरणाम्बरसंयुक्तः इति."

P. 536. St. 27.—**राजककुद्**, Hemádri says, "ककुच्छब्दोऽप्यस्ति यथा ककुद्मान् इति क्षीरस्वामी."

P. 537. St. 29.—Hemádri's commentary on this stanza is as follows :—"शुशुभ इति। तेनातिथिना आक्रान्तमधिष्ठितं श्रीवत्सं लक्षणं यस्य तत्। महन्मङ्गलस्यायतनं सभास्थानं च शुशुभे। श्रीवत्सो गृहभेदः। "श्रीवत्सनन्दावर्ताख्यविच्छन्दा बहवस्तथा" इति सज्जनः। श्रीवत्सो नामावर्तविशेषो लक्षणं यस्य तत्। केशवं वक्षः कौस्तुभेनेव। महच्छब्देन राज्यमिति वा। "महद्राज्ये विशाले च" इति विश्वः। तथा माघकाव्ये। "सादिताखिलतयं महन्महः संप्रति स्वनयसंपदैव ते [स्वनयसंवदेव नो Ms.]। किं परस्य स गुणः समश्नुते पथ्यवृत्तिरपि यद्यरोगिताम्." S'i. XIV. 13. And Cháritravardhana's commentary runs thus : "तेनातिथिनाक्रान्तमधिष्ठितं मङ्गलायतनं माङ्गल्यगृहं शुशुभे। कीदृशं। श्रीवत्सो मङ्गलद्रव्यं लक्ष्मीः प्रतिमालक्षणं चिह्नं यस्य तत्तथा महद्विशालं। केन किमिव। श्रीवत्सो लक्षणं चिह्नं यस्य तत्कैशवं विष्णोः संबंधि वक्षः कौस्तुभेनेव। "दर्पणं पूर्णकुंभश्च वृषभं युग्मचामरं। श्रीवत्सं स्वस्तिकं शंखं दीपं चाप्यष्टमंगलं" इति। सभायाः संनिवेशविशेष इत्येके। "स्वस्तिकः सर्वतो भद्रो वर्धमानस्तथा। श्रीवत्सनंद्यावर्तादिः" इति सज्जनोक्तौ." मङ्गलायतनं is also to be taken as an adjective qualifying वक्षः, and श्रीवत्सलक्षणं as one qualifying also मङ्गलायतनं, the hall.

P. 537. St. 30.—**अधिराज्यमवाप्य सः**, Hemádri explains this to mean, "सोऽतिथिः कुमारत्वादनन्तरमधिराज्यमवाप्य भूमौ बभौ। अधिराज्यमवाप्य कुमारत्वाद्धेतोर्वभाविति वा। अधिको राज्ञामिति अधिराजः। "कुगतिप्रादयः" Pâ*n*ini, II. 2. 18. इति समासः। तस्य भावस्तत्".—**रेखाभावात्**=कलामात्रस्वरूपात् According to Cháritravardhana. The gist of this is that in succeeding to supreme power at once after his childhood and not having had to go through the state of a Yuvarâja, he looked like the moon which should from the crescent be at once full without having had to pass through the intermediate phases.

P. 537. St. 31.—**प्रसन्नमुखरागं**, Châritravardhana explains it to mean, "ईषद्धासपूर्वं भाषते इति तादृशं। "श्यामं रक्तं प्रसन्नं च तुर्यं स्वाभाविकं मुखं" इति सोमेश्वरः [कामेश्वरः Ms]."

P. 538. St. 32.—**क्रममाणः**, On this Hemâdri remarks : "अभिषिक्तेन राज्ञा गजमारुह्य पुर्याः प्रदक्षिणा कार्येत्याचारः। "अनुपसर्गाद्वा" Pá*n*ini, I. 3. 43. इति क्रमस्तङ्। "वृत्तिसर्गतायनेषु क्रमः Pâ*n*ini, I. 3. 38. इति वा." And Cháritravardhana says, "अनुपसर्गाद्वा" Pá*n*ini, I. 3. 43. इत्यात्मनेपदं." Translate the aphorisms : 'After the verb क्रम्, the Atmanepada is

optionally employed, when it is not preceded by any preposition.' The root क्रम् may always be conjugated as Atmanepadi when not having any उपसर्ग. (See I. 4. 59.) The option allowed by this Sútra is an example of what is technically known as अप्राप्तविभाषा, *viz.*, an option which is not an alternative limitation to a general rule already found or known. No option is allowed when it takes preposition. As, संक्रामति. 'After the verb क्रम् 'to move' when used, in the senses of 'continuity,' 'energy,' and 'development,' the Atmanepada is employed.' वृत्ति 'continuity' means unobstructed or want of interruption (*i. e.* a taste for, or facility in, anything), सर्ग 'energy' means application, resolution and determination. तायन 'development' means increase and growth. And ऋक्ष्वस्य क्रमते बुद्धिः 'his reason proceeds unobstructed through the *Rig* scriptures.' व्याकरणाध्ययनाय क्रमते 'the pupil shows energy or exerts to study grammar.' अस्मिन् शास्त्राणि क्रमते 'the Sástras are developed in him.' But अपक्रामति 'he runs away.'

P. 538. St. 33.—पूर्वराज, &c., Cháritravardhana interprets it as, "पूर्वेषां राज्ञां दिलीपादीनां." And Hemádri by "कृशस्य." On this verse Hemádri makes the following remark: "अन्येषामपि छत्रे धृते ऽन्यस्य तापाभाव इति विस्मयोक्तिः".

P. 538. St. 34.—सममेवाक्रान्तं गुणैः, Cháritravardhana explains thus, "गुणैः प्रतापादिभिः समं युगपदेवाक्रान्तः". And Vallabha has: "अन्यादेर्धूमितमतान्य स्यापाप्मलङ्घ्य गुणैः सममेवोत्थित उदयश्चास्य संवृत्तः। तदेव प्रथमोदायादयो गुणा उदभवन्निति वाक्यार्थः". Fire has to be involved in smoke before it bursts into flames, the sun has to rise and be gentle before it shines in its splendour, and when it shines fully it is no longer gentle, nor can fire be smoky if it is in flames. Not so with the emperor Atithi, he obtained all the qualities at once and possessed them simultaneously.

P. 539. St. 35.—विशदैः, Hemádri remarks "विशदशब्दः पाण्डुरं इत्यर्थकः इति विश्वप्रकाशः इति."—अन्वयुः, Cháritravardhana says, "पुरप्रदक्षिणक्षणे यत्र यत्रासौ बभ्राम तत्र तत्र व्यलोकयन्नित्यर्थः." And Hemádri says, "अनेन पुरप्रदक्षिणाकाले पुरस्त्रीणां विलोकनमुक्तं."—प्रसन्नज्योतिर्नितः, On this Hemádri and Cháritravardhana quote the following: "इन्द्रं च विष्णुरराणे। "नमोऽस्त्वेव भगवतः शिशुमाराकृतिप्रभो देवि ध्यायं हरंश्च तस्य पुच्छे स्थितो ध्रुव। एष भ्रमन् [ब्रमन् Ms.] भ्रामयति चन्द्रसूर्यादिकान्ग्रहान्."—ध्रुवमिव, Hemádri renders it as "औत्तानपादमिव."

P. 539. St. 36.—अयोध्यादेवता. *i. e.* the deities whose images were worshipped in different Mandiras or temples at Ayodhya.—अ-

नुध्येयं, Vallabha explains this to mean, "अनुग्रहोचितं । सगुणत्वादनुग्राह्यं । अनुग्राह्यदेवताः संनिधानं विदधाति." And Hemádri has: "अनुग्राह्यं हि देवताः सांनिध्यं कुर्वन्ति । "अनुध्यानमनुग्रहे" इति उत्पलमालायां."—**सांनिध्यैः,** Cháritravardhana interprets it by "अनुष्ठानैः".—**प्रतिमागतैः,** Cháritravardhana renders it by "सुस्थितैः."

P. 539. St. 37.—**वेलान्तं,** Hemâdri renders it by "समुद्रप्रान्तं." —**प्रतापः,** On this Cháritravardhana makes the following remark: "कोशदण्डजं तेजः प्रतापः इत्येकः । तेजस्वितापतिपादकः शब्दः इत्यन्यः । कण्टकशोधनाधिकैरुपायैर्वैरिवारनिराकरणाय प्रवर्तकः इत्यपरे."

P. 539. St. 38.—**उभये** Nom. plu. of उभय.—**तत्किं साध्यं,** Hemâdri explains this to mean, "यत्रायुधस्याविषयस्तत्र मन्त्राः । उभयापेक्षया द्वित्वं । अत्रावयवापेक्षं बहुत्वं । धन्विन इत्युचितं."

P. 540. St. 39.—On this verse both Hemádri and Châritravardhana make the following remark: "अथ श्लोकपञ्चकेन प्रकृतिरंजनमिति."—**अर्थिप्रत्यर्थिनां,** Hemádri explains this "अर्थ्यते इति अर्थः साध्यः सोऽस्यास्तीत्यर्थी तत्प्रतिपक्षः प्रत्यर्थीति विज्ञानेश्वरः."—**व्यवहारान्ददर्श,** On this Hemádri, like Mallinátha, quotes the same verse from याज्ञवल्क्य; but Cháritravardhana quotes the following under याज्ञवल्क्य. "व्यवहारान् स्वयं पश्येत् सभ्यैः परिवृतोऽन्वहं" इति. Cháritravardhana reads धर्मज्ञसखः and explains "धर्मशास्त्रं जानंतीति धर्मज्ञास्ते सखायो यस्य स धर्मज्ञसखस्तादृशः" and remarks "सख इति तत्पुरुषत्वादच्प्रत्ययः &c." Vallabha reads with Mallinátha and explains thus. "स धर्मस्थसखो धर्माधिकारपुरुषैः सहितः." Hemádri also reads with Mallinátha and explains, "धर्मे तिष्ठंतीति तेषां सखा धर्मस्थसखः &c." Dinakara reads and comments upon धर्मस्थसखा, taking it as a *Bahuvrihi.* He also notices the reading of Mallinátha.—**संशयच्छेद्यान्,** Hemádri reads with Mallinátha and explains "संशयच्छेदमर्हन्तीति । दण्डादित्वाद्यः" । and also notices the reading of Châritravardhana. He says "संशयच्छेत्तेति पाठे षष्ठीसमासः." Vallabha reads संशयच्छेदान् and explains thus, "किंभूतान्व्यवहारान् संशयच्छेदान् निःसंदेहान् &c." Cháritravardhana reads संशयच्छेत्ता and explains "प्रत्यर्थिनां विप्रतिपादिनस्तेषां संशयस्य छेत्ता स राजा &c., and further remarks "छेत्तेति सम्बन्धे षष्ठीसमासः." See readings.

P. 540. St. 40.—**पाकाभिमुखैर्विज्ञापनाफलैर्युयोज,** 'conferring on them, the fruits of their requests, which were soon to ripen,' *i. e.*, he granted whatever requests they made, and the orders given that the things be granted were soon carried out. विज्ञापनाफलैः is here equivalent to विज्ञापनार्थैः, which अर्थाः became पक्व as soon as the orders of the king were actually carried out. The commentaries of Hemádri, Châritravardhana and Vallabha are perhaps not very clear. Hemâdri

says, " ततःपरं पाकाभिमुखैर्मनोहरैरित्यर्थः । विश्वस्ततायाः फलैर्भृत्यान्युयोज । सुमनसो भावः सौमनस्यं । अभिव्यक्तेन सौमनस्येन निवेदितैः । पुष्पानन्तरं फलसिद्धिरिति । अत्र सौमनस्यादिपदं । उत्तमो हि मुखेन न वक्ति । यथा । " नाकारमुद्रिरसि नैव जहासि कालं । दत्त्वा न शोचयसि नैव विकत्थसे त्वं । निःशब्दवर्षणमिवाम्बुधरस्य राजन् । संदृश्यते फलित एव तव प्रसादः. " And Vallabha has, " ततःपरं व्यवहारदर्शनानन्तरं स राजा भृत्याननुचरान्विज्ञापनाफलैरयोजयत् । किंभूतैः फलैः । अभिव्यक्तसौमनस्यनिवेदितैः प्रकाशाविर्भूतराजकीयमुखप्रसादकथितैः । अपरं किंभूतैः । पाकाभिमुखैः परिपक्वैः । उक्तं च । " नाकारमुद्रिरसि नैव जहासि कालं । दत्त्वा न शोचयसि नैव विकत्थसे त्वं । निःशब्दवर्षणमिवाम्बुधरस्य राजन् । संदृश्यते फलित एव तव प्रसादः. " Cháritravardhana's comments are: " ततोऽनन्तरं स भूपो विज्ञापनया साध्यानि फलानि विज्ञापनाफलानि तैर्भृत्यान्युयोज योजयति स्म । कीदृशैः । अभिव्यक्तेन मन्दहास्यादिना प्रकटीभूतेन । सुमनसो भावः सौमनस्यं प्रसादस्तेन [प्रभावस्तेन Ms.] कथितैरग्र एव पाकं सिद्धिं सन्मुखैर्वदनप्रसन्नतया [विनयप्रसन्नतया Ms.] सिध्यभिमुखत्वं जातैर्न कर्मनिष्पत्तौ विज्ञापनया भूत्या सिद्धिर्जाता । कुसुमाद्यभिव्यक्तौ फलसिद्धिर्युक्तायते. "

P. 541. St. 42.—सोऽभूद्भग्नव्रतः &c., that is, he undid nothing that he purposely did once, except that he always used to restore to their kingdoms his conquered enemies through humanity, even after having removed them himself. Cháritravardhana is evidently wrong in commenting as follows: " शत्रूनुत्खायोन्मूल्य प्रतिरोपयन् स भग्नव्रतोऽभूत् । विजित्यैभ्यो राज्यं न वितरिष्यामीत्युदित्वापि करुणावश्यो वितीर्णवान् । वितीर्यापि तेषां दौरात्म्यमालोक्य भूयो हतवान् । एवं भग्नव्रतोऽभूदिति भावः । उत्खातप्रतिरोपणमपि प्रकृतिप्रीत्यर्थं. " Hemádri explains the verse like Mallinátha and has the following remark: " उद्धृतप्रतिरोपणमपि प्रकृतिप्रीत्यैव इति धर्मविजयोक्तिः. "

P. 541. St. 43.—तानि तस्मिन्समस्तानि, On this Cháritravardhana quotes the following: " यौवनं धनसंपत्तिः प्रभुत्वमविवेकता । एकैकमप्यनर्थाय किं पुनर्यच्चतुष्टयं. "

P. 542. St. 45.—षड्वर्गमजयद्रिपून्, On this Hemádri and Vallabha make the following remark: " यदुक्तं । " हर्षमानमदक्रोधलोभकामाः समुद्यताः [लोभमोहाः सहोद्यताः Vallabha.] । रिपवस्तानजित्वैव को महीं जेतुमिच्छति. " Vallabha has also the following: " एकस्यैव हि यो ऽशक्तो मनसः सन्निबर्हणे । भूमिं सागरपर्यन्तां स कथं ह्यवजेष्यति. "

P. 542. St. 46.—प्रसादाभिमुखे &c., See readings.—निकषे हेमरेखेव, The streak left on the surface of a touch-stone on which a piece of gold is rubbed is not easily wiped out. It generally sticks fast to it until it is removed by rubbing the stone with bee's wax or the cocoa-nut oil. The clearer (प्रसादाभिमुख) the stone the more difficult is to remove the streak of gold from it.

P. 542. St. 47.—कातर्यं केवला नीतिः, 'politics (without of course the undaunted spirit of bravery) is simply timidity. *Cf.*

Hemádri: " नयपूर्वकं पौरुषमाजौ प्रायुङ्क्तेत्यर्थः. "—**सिद्धिं समेताभ्यामुभाभ्यां,** *Cf.* Cháritravardhana and Sumativijaya: " तीक्ष्णादुद्विजते लोको मृदुः सर्वत्र बाध्यते । एतद्बुद्ध्वा महाराज मा तीक्ष्णो मा मृदुर्भव. "

P. 543. St. 48.—**अदृष्टमभवत्,** On this Châritravardhana quotes the following: " उक्तं च । " गन्धेन गावः पश्यंति विद्वांसः शास्त्रचक्षुषा [ब्राह्मणा वेदचक्षुषा Ms.] । चारैः पश्यंति राजानश्चक्षुर्भ्यामितरे जनाः ". Dinakara observes, " राजानश्चारचक्षुषः इति. "

P. 543. St. 49.—**रात्रिंदिवविभागेषु,** Hemádri interprets it by, " पंचदशमुहूर्तेषु. "—**स विकल्पपराङ्मुखः,** Vallabha explains this to mean, " शास्त्रप्रामाण्यात्सिद्धिदर्शनाच्च निर्विकल्पभ्रांतिरहितः. "

P. 544. St. 50.—**सेव्यमानोऽपि,** 'although it was cogitated every day.' The more frequent the consultations on any counsel the greater was the danger of the secrecy being broken. But this was not so with the king. सेव् is a verb that implies not simply a single act of eating, but involves the idea of eating, taking or enjoying anything repeatedly and regularly.—**गुप्तद्वारः,** *Cf.* Hemádri: " आवर्तयन्मुहुर्मन्त्रं धारयेच्च प्रसन्नवत् । अप्रयत्नधृतो मंत्रः प्रस्रवन्निव दहति " इति कामन्दकः. And Cháritravardhana has: " गुप्तं संवृतं द्वारं मंत्रज्ञानोपायभूतमाकारादि यस्य स सेव्यमानोऽपि कदाचिन्न सूच्यते स्म न प्रकटितः । " पारं निवारयत्तार्थे स्वात्मनश्च परस्य च । पाषण्डादीनवज्ञातानन्योन्यमितरेतरैः " इति कामन्दकः. And Vallabha says, " नन्वनुदिनं मंत्रसंगात्कचिद्भेदः स्यात् । स राजा मंत्रः सेव्यमानोऽपि उपास्यमानोऽपि । प्रत्यहं क्रियमाणोऽपीत्यर्थः । गुप्तद्वारः सन्न सूच्यते न ज्ञायते. "

P. 544. St. 51.—**स्वपन्नपि जजागार,** Mark the pun upon the word जजागार. And Vallabha says, " यदुक्तं । " गावो गन्धेन पश्यंति &c." See note to St. 48 above.

P. 544. St. 52.—**द्विषां,** objective genitive according to Hemádri. On this verse Hemadri, like Mallinâtha, quotes Manu.

P. 545. St. 53.—**भव्यमुख्याः,** 'which were aimed at (the acquisition of) prosperity.' This epithet should be taken with शालयः also compare Cháritravardhana: " शालयोऽपि भव्यं मनोहरं मुख्यं मंजर्यादि येषां तथा । ते प्रत्यवेक्षणेन वृषभादिभक्षणरक्षणानुरूपेण निरत्यया निरुपद्रवा अभ्यन्तर एव पचंति " &c.

P. 546. St. 55.—**कामं,** Hemâdri renders it by " स्वेच्छया, and Cháritravardhana interprets it by अत्यर्थं and construes it with क्षमः. And Vallabha explains it by अतिशयेन and also construes it with क्षमः. —**कामं प्रकृतिवैराग्यं,** 'although he was able to suppress immediately

any disaffection of his subjects &c.' It is not clear why Mallinâtha departs from the ordinary signification of कामं, when he interprets, "कामं सम्यक् शमयितुं प्रतिकर्तुं &c." Hemâdri interprets it clearly. He says, "कामं स्वेच्छया प्रकृतिवैराग्यं सद्यः शमयितुं क्षमः। तत्प्रकृतिवैराग्यं नैवोदपादयत्."

P. 546. St. 56.—**शक्येष्वेवाभवद्यात्रा**, On this Cháritravardhana remarks: "स्वस्मादधिकबलस्तु दुर्जयः। समेन तु सुन्दोपसुन्दन्यायः। अतस्ताभ्यां सन्धेः कर्तव्यत्वाद्धीने यात्रां चकारेत्यर्थः." Here Hemádri, like Mallinátha, also quotes the same expression from कौटिल्य.

P. 546. St. 57.—**सदृशस्त्रिषु**, On this Cháritravardhana and Sumativijaya make the following remark: "उक्तं च। धर्मार्थकामाः सममेव सेव्याः। योऽप्येकसक्तः स जनो जघन्यः." And Hemâdri has the following "धर्मार्थकामान्सममेव सेवते सोऽधमः यो द्वौ सेवते स मध्यमः। त्रीन् धर्मार्थकामान् सेवते यः स उत्तमः."

P. 547. St. 58.—**मित्राणि**, 'his friends, *i. e.*, states and kingdoms that were on friendly terms with him. *Cf.* Cháritravardhana: "अरसं तंतुसंबन्धं तथा वंशक्रमागतं। रक्षितं व्यसनेभ्यश्च मित्रं ज्ञेयं चतुर्विधं" इति कामन्दकः.

P. 547. St. 59.—**आस्त सोऽन्यथा**, Cháritravardhana explains this to mean, "अन्यथा शत्रोः सकाशाद्धीनस्तदा स्वस्थाने एवास्त स्थितः।" "शक्येष्वेवाभवद्यात्राः इत्यनेन पौनरुक्त्यं चिन्त्यं." And Hemâdri remarks "शक्येष्वेवेत्यनेनास्य पौनरुक्त्यमितिचेन्न। शक्येष्वेवेत्यत्र विशेषणविषयेऽपि ब्राधिप (?) उक्तः। अत्र शक्त्यादीनां बलाबलवशाद्यानासनत्वमिति न पौनरुक्त्यं." And Vallabha says, "इह शक्त्यादीनां बलाबलवशाद्यानासनविधानं न शक्येष्विति न पौनरुक्त्यमुक्तं."

P. 548. St. 61.—**प्रहर्तन्निरपून्**, On this Cháritravardhana quotes the following from Kau*t*ilya. "दुर्गसेतुवणिक्पथशून्यनिवेशाकरद्रव्यगजकर्माण्यात्मनः प्रवर्तयितुं परस्य चैतान्युपहन्तु राजा यतेत" इति कौटिल्यः.

P. 548. St. 62.—**सांपरायिकः**, 'living upon war,' *i. e.*, looking upon war as its principle of life. Cháritravardhana explains सांपरायिक by "संपरायेण युद्धेन जीवतीति सांपरायिकः," and Hemádri says, "संपरायो युद्धं प्रयोजनमस्येति सांपरायिकः."

P. 549. St. 63.—**शक्तित्रयं** = प्रभावादयः says Cháritravardhana. The powers are प्रभाव, उत्साह and मंत्र.—**आयसमिव**, 'like iron'. आयस *n.* is used in the sense of iron, and it is perhaps not so necessary as to follow Mallinátha, in his explanation of the word.—**अयस्कान्तः**, Hemádri interprets it by "पाषाणविशेषः," and Cháritravardhana says "चुम्बकपाषाणः". Sumativijaya and Vijayánandasúris'varacharanasevaka observe "चम्पकपाषाणः" (?)

P. 549. St. 64.—**वनेषु**, On this Hemádri remarks: "वैराग्यभावात्."—**अद्रिषु**, Hemádri observes: "हेयाभावात्."—**वापिषु**, Hemádri says "ग्राह्यऽभावात्." The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following authority "वापी तु दीर्घिका" इत्यमरः after दीर्घिका and produce it along with the authority for the synonym of उपवनेषु.

P. 549. St. 65.—**यथा स्वं षडंशभाक् चक्रे**, 'was made the enjoyer of one-sixth of their earnings respectively by the Âs'ramas as he was by the different castes'.—Hemádri says, "पुण्यात्षड्भागमादत्ते न्यायेन परिपालयन्" इति योगीश्वरः. And further he observes, "षण्णामंशानामंश इति समासे षडंश इति लक्ष्यते । गणदर्पणे तु । "भाग्यं षडैः शब्दैः पुराणसंख्या समस्यते विबुधैः । पुराणस्य वा स्यात्तृतीयभागं त्रिभागश्च." (?)—**तपः**, Cháritravardhana interprets it by "कृच्छ्रचांद्रायणादिकं."—**अपि**, Mallinátha takes this particle in the sense of च, but the six Southern and Deccan Mss. of his commentary read इव instead of अपि ; and it is also confirmed by Hemádri, Vallabha, Sumativijaya and others. The reading, therefore, appears preferrable on the ground that it gives better sense than the one which is found in the majority of Mss. containing the commentary of our scholiast Hemádri's commentary runs thus:—"विघ्नेभ्यस्तपो रक्षन्सोऽतिथिः । स्वमनतिक्रम्येति यथास्वं । आश्रमैर्ब्रह्मचर्याद्यैः षडंशभाक्चक्रे । कर्मणि । "पुण्यात्षड्भागमादत्ते न्यायेन परिपालयन्" इति योगीश्वरः । तस्करेभ्यश्च संपदः श्रियो रक्षन् वर्णैर्द्विजाद्यैरिव । पुराणार्थस्य इष्टो भवान् । षण्णामंशानामंशः इति समासे षडंश इति लक्ष्यते &c." Cháritravardhana's comments are "विघ्नेभ्यो विघ्नकारिराक्षसादिभ्यस्तपः कृच्छ्रचान्द्रायणादिकं रक्षन् सोऽतिथिस्तस्करेभ्यश्च संपदा जितानि रक्षन् । आश्रमैर्ब्रह्मचारिप्रमुखैर्वर्णैर्ब्राह्मणादिभिर्यथास्वं यो यस्य भागस्तेन षडंशः षडंशस्तं भजन्तीति ताद्दृक्चक्रे कृतः । तद्वहतोः करपत्योश्चोरदेवतयोरिति स्तद् तलोऽश्चेति तस्कर इति" ॥ Vallabha's commentary is "स राजा आश्रमैर्ब्रह्मचर्यादिभिस्तपस्विभिः षडंशभाक्चक्रे । षण्णामंशः । तद्धर्मांशः षड्भागश्चक्रे । कैरिव वर्णैरिव । यथा वर्णैर्ब्राह्मणादिभिर्यथाविभवं षडंशभाक् क्रियते । किं कुर्वन् । विघ्नेभ्यो राक्षसादिभ्यस्तपस्विनां तपो रक्षन् । तथा वर्णानां चतुर्णां संपदस्तस्करेभ्यः" &c. It is not clear what Cháritravardhana reads. See above his commentary. See also Sumativijaya's commentary.

P. 550. St. 66.—**रत्नं**, Here Hemádri says, "जातावेकवचनं." Compare Mallinátha. "जातौ जातौ यदुत्कृष्टं तद्रत्नमभिधीयते." Vallabha says "आकरे रत्नं सुदुत्रे । तथा सम्यं क्षेत्रैः."—**वनेर्गजान्**, On this Hemádri remarks "एतच्च सम्यक्पालनाद्दते."

P. 550. St. 67.—**षण्णां गुणानां**, Here Hemádri quotes the following from कामन्दक. "संधिर्नाविग्रहोयानमासनं द्वैधमाश्रयः । षड्गुणाः स्मृताः."।

and observes, "मौलं भृतं सुहृत्श्रेणिद्विषदाटविकं बलम्" इति.—षण्मुखविक्रमः, Analyse षण्मुखः कार्तिकेयस्तद्वद्विक्रमः पराक्रमो यस्य स तथोक्तः.

P. 550. St. 68.—आ तीर्थादप्रतीघातं, Cháritravardhana explains this to mean, "दण्डनीतिः फलमातीर्थात्तीर्थं मंत्रिपुरोहितसेनापत्याद्यष्टादशकं तत्पर्यन्तमप्रतीघातमव्याहतं फलमानशे प्राप". And further Hemádri and Cháritravardhana quote the following from Kámandaka, "दमो दण्ड इति प्रोक्तस्तस्माद्दण्डो महीपतिः। तस्य नीतिस्तथावृत्तिर्दण्डनीतिर्निरुच्यते." And Vallabha has: "आतीर्थादा प्रवृत्तेः प्रयोगसमकालमेव तस्या दण्डनीतिरप्रतिघातमनभिभ्रष्टं निर्विघ्नं फलमानशे फलं प्राप." The eighteen Tírthas referred to by these commentators including Mallinátha, are, according to चतुर्धर, a commentator on the Mahábhárata, as follows. He appears to have quoted it from a Nítis'ástra, "मंत्री पुरोहितश्चैव युवराजश्चमूपतिः। पञ्चमो द्वारपालश्च षष्ठोऽन्तर्वेंशिकस्तथा। कारागाराधिकारी च द्रव्यसंचयकृत्तथा। कृत्याकृत्येषु चार्थानां नवमो विनियोजकः। प्रदेष्टा नगराध्यक्षः कार्यनिर्माणकृत्तथा। धर्माध्यक्षः सभाध्यक्षो दण्डपालस्त्रिपञ्चमः। षोडशो दुर्गपालश्च तथा राष्ट्रान्तपालकः। अटवीपालकान्तानि तीर्थान्यष्टादशैव तु।" And Cháritravardhana qoutes the following from Kautilya, "मंत्रिपुरोहितसेनापतिराजदौवारिकान्तर्वासिकप्रशास्तृ? [°सास्त Ms. ?] समाहर्तृसंनिधातृप्रदेष्टाध्यक्षदण्डकारकदुर्गपालसीर्थमिति कौटिल्यः."

P. 551. St. 69.—वीरगामिनी, 'that unites herself with a hero.' Excepting Mallinátha all commentators read and comment upon वीरकामिनी. Hemádri says, "वीरं कामयते वीरकामिनी। कुपतिनेति फलं। "कूटयुद्धविकल्पेऽपि" इति पाठे। आद्या सप्तिसप्तमी। द्वितीयाधिकरणे" &c., and Cháritravardhana observes "वीरं कामयते वीरकामिनी &c.," and Vallabha has "वीरकामिनी वीराभिलाषिणी &c." Sumativijaya interprets "वीरं पतिं कामयते इति वीरकामिनी &c." See readings.—कूटयुद्धविधिज्ञे. Here Hemádri quotes the following from Kautilya "विमीषण, अवस्कन्दप्रसादस्यस्तु मार्दनं। एकत्रत्यागघातौ च कूटयुद्धस्य लक्षणं" (?)

P. 551. St. 70.—गन्धद्विपस्य, Here Hemádri and Vallabha quote the following from Pálakápya; "यस्य गन्धं समाघ्राय न तिष्ठन्ति प्रतिद्विपाः। तं गन्धहस्तिनं प्राहुर्नृपतेर्विजयावहं." See note to St. 7. Canto VI.—सस्य, Hemádri discusses: "तस्येत्यत्र खलर्थयोगात्। "न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्" Pánini, II. 3. 69. इति षष्ठी निषेधाभावश्चिन्त्यः। यद्वा। तत्कृतारम्भत्वादित्यनेन संबन्धः शेषत्वात् शेषः." And Cháritravardhana observes, "अन्योगे निषेधात्संबन्धे षष्ठी."

P. 552. St. 73.—तथापि, *i. e.* although he did not allow himself to be praised by supplicants or the needy, his fame, nevertheless, spread itself everywhere, as those who attempted to praise him and were hated for doing so, spread reports that he hated them,

because they praised him, and thereby spread his fame all over the country. *Cf.* Chéritravardhana: " स्तुतिं विना कथं विख्यातिरित्याह । तां स्तुतिं कुर्वन्तीति स्तुतिकारिणस्तेभ्यो द्वेष्टीति । तस्य नृपस्य यशस्तथापि पप्रथे (is his reading) प्रथितं । असौ स्तुत्यं विदधानोऽपि स्तुतिं न सहते इत्येवंरूपा प्रसिद्धिरभूदिति भावः. "

P. 552. St. 74.—**दुरितं दर्शनेन घ्नन्**, On this Chàritravardhana quotes the following from Manu: " अग्निश्चित्कपिला सत्री राजा भिक्षुर्महोदधिः । दृष्टमात्राः पुनन्त्येते तस्मात्पश्येत्तु नित्यशः " इति. But Hemâdri and Mallinâtha quote it under स्मरण. Probably they might have borrowed it from any one of the old commentators on Raghuvans'a.—**प्रजाः स्वतंत्रयांचक्रे,** Both Hemàdri and Chàritravardhana read संवर्द्धयांचक्रे. Hemádri says " सूर्य इव प्रजाः संवर्द्धयांचक्रे " and further remarks " सूर्योऽपि पदार्थानां यथार्थज्ञानेन दुरितं तमो ध्वान्तं नुदन् &c." Cháritravardhana observes, " सूर्य इव प्रजाः शश्वत्संवर्द्धयांचक्रे &c. " Vallabha explains " उदयं प्राप्तः शश्वन्निरंतरं प्रजा वितमसश्चक्रे तमोगुणविरहिताश्चक्रे, " and remarks " सूर्य उदितः सन् प्रजा वितमसः करोति. " Sumativijaya has " सोऽतिथिर्नृपः शश्वन्निरंतरं प्रजा लोका वितमसो निष्पापाश्चक्रे &c. " Dinakara reads with Vallabha and Sumativijaya. This reading is also supported by six of our own Mss. Pandit says:—' Certainly the rising sun does not subject the world to his own power, but he frees them from darkness. I should therefore much prefer to read वितमसः for स्वतन्त्रयां°. ' It is not clear on what ground Pandit rejects the reading of our scholiast. The meaning of the epithet स्वतंत्रयांचक्रे would then be, ' the king made his people subject to his own power, ' when the reflexive pronoun स्व refers to the subject or agent of the action ; but when it refers to the object of the action, it may also mean, ' the king gave his subjects free (*i. e.* virtuous) liberty of action, ' That is, made them ' self-reliant,' ' self-dependent, ' ' independent, ' ' free ' &c., in such a way as not to rebel against him. Mallinátha interprets it by स्वाधीनाश्चकार *i. e.*, the king *made* his subject *faithful* to him. The reading वितमसश्चक्रे as adopted by Vallabha and other commentators is also worthy of note. It means that the king made his subjects free from Tamogu*n*a *i. e.* mental darkness, illusion, error, sin or sorrow. That is, the king made his people wise by giving them knowledge of higher objects.

P. 553. St. 75.—**विपक्षेऽपि गुणा अन्तरं लेभिरे,** *Cf.* Châritravardhana : " तस्य गुणान् श्रावं श्रावं शत्रवोऽपि समत्वमरक्षन्नित्यर्थः."

P. 554. St. 78.—Hemâdri's comments on this verse are as follows : " तं लोकपालानां पंचमं दिशां चतुष्टुपक्षे लोकपालाश्चत्वार एव । " चतस्रः कीर्तये-

देष्टौ दश वा ककुभः क्वचित्" इति वाग्भट्टे । महतां भूतानां पृथिव्यादीनां षष्ठं कुलभूभृतामष्टममूचुः । "महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षपर्वतः । विन्ध्यश्च परियात्रश्च सप्तैते कुलपर्वताः" इति विष्णुपुराणे । समानो धर्मो यस्य स सधर्मा तस्य भावः साधर्म्यं तस्य योगतः । लोकपालानामिति पालनात् । भूतानामिति परोपकरणात् । भूभृतामिति भूमिधारणात्." And Châritravardhana's comments are: "साम्ययोगतः शौर्यादिगुणानां साम्येन शक्रधर्मराजयादःपतिवैश्रवणानां मुख्यानां तं नृपं पंचममाहुः । पंचभूतानां पृथ्वीव्यप्तेजोवाय्वाकाशानां महतां षष्ठमाहुः । परप्रयोजनार्थत्वात् । महतां कुलभूभृतां कुलाचलानां महेंद्रादीनां सप्तानामष्टममाहुर्लोका इति शेषः । भूमिधारणत्वात् । "महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षपर्वतः । विन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तैते कुलपर्वताः" इति विष्णुपुराणे." —**कुलभूभृतां**, Vallabha observes, "हिमवदादीनां."

P. 554. St. 80.—**धनदस्य**, On this Châritravardhana makes the following remark: "कुबेरस्तु धनं दयते रक्षतीति कर्मणा धनद इति कथ्यते । असौ धनं ददातीति धनद इति नाम प्राप्तेत्यर्थः." The meaning of the epithet as suggested by Cháritravardhana appears to be worthy of note.

P. 555. St. 81.—**पूर्वापेक्षी**, 'regarding those first named,' *i. e.*, seeing what they, Indra and Yama and Varu*n*a, did.—**दण्डोपनत°** &c., *Cf.* Hemádri: "दण्डेन दमेनोपनता नम्रास्तेषां चरितं तं भेजिरे &c.," And Cháritravardhana has: "दण्डेनोपायभेदेनोपनतस्य वशीकृतस्य नृपस्येव चरितं भेजिरे &c."

CANTO XVIII.

P. 556. St. 1.—नैषधस्य, Alakánandá literally means the 'joy of Alaká.' According to the Kathásaritságara, Alaká was the capital of Nishadha. According to the Mahâbhârata, the good king Nala was ruler of Nishadha and from his directions to his wife Damayanti after he lost his kingdom there can be no doubt that it was in Northern India, and on the slopes of the Himâlayas. I am, therefore, inclined to think that Nishadha formed a part of modern Kumaon, that Alaká was its capital, and that it was situated on the Alakánanдá. Nala is said to have afterwards changed his capital and settled himself in Central India. See also Wilson's Vishnu Purána Vol. II. p. 102.—निषधान्नगेन्द्रात्, Nishadha is a mountain range said to lie both south and east of Mount Meru. See Wilson's Vishnu Purána Vol. II. p. 111. On this Hemâdri makes the following remark: "प्रायेणास्मिन्सर्गेऽनुप्रासः। वर्णवृत्तिरनुप्रासः पदेषु च" इति काव्यादर्शे। तत्तु "कुरुनादिभ्यो ण्यः" Pánini, IV. 1. 172. जनपदशब्दात्क्षत्रियादिभ्येव कुरुशब्दात्। नकारादिभ्यो ण्ये अणिञोरपवादे कौरव्यो नैचिक्यो नैषध्यस्तस्य राजन्यापि। अत्र नैषधे शेषविवक्षायामण्."

P. 556. St 2.—तेन &c., Nine of our best Mss. (B. C. D. H. J. R.) give and four (A. B. K. L.) omit the second stanza of our text. Seven Mss. have also the commentary of Mallinátha on it. Hemâdri, Vallabha, Sumativijaya and the pu il of Vijayánanda produce the stanza in question and also their comments upon it. Cháritravardhana and Dinakara omit this verse. Hemádri, who is generally much more scrupulous and most trustworthy, does not mention it as a क्षेपक or of spurious origin. It is usual with him to notice and criticise almost all readings of the text and to pass his literary or artistic judgment upon them. In fact not a reading escapes without a critical observation or detailed examination throughout his commentary. And as the favourable evidence of the majority of good Mss. and especially of the commentators including Mallinátha is more important in determining the genuineness or spurious origin of any given stanza, I have therefore introduced the stanza in question in the text on the ground that I do not consider it to be an interpolation or a *Kshepaka*. Pandit considers it to be an interpolation on an insufficient evidence of two of his best Mss. and the only commentary of Dinakara and thus discards the stanza in question from the text of his edition. See Readings.

P. 557. St. 4.—**पुरार्गलादीर्घभुजः**. Hemádri analyses, " पुरस्य अर्गलावद्दीर्घौ भुजौ यस्य सः. "

P. 557. St. 5.—**नलिनाभवक्त्रः**, Analyse नलिनाभं पद्मकान्तं वक्त्रं मुखं यस्य सः सपद्मनिभवदनः.

P. 557. St 6.—**नभश्चरैर्गीतयशाः**, On this Hemádri makes the following note: " इदुनं देवगानं च तारातारस्वनान्तरं । गांधारग्राममित्याहुः संगीतज्ञविसत्तमाः । खड्जमध्यमनामानौ ग्रामौ गायन्ति मानवाः । न तु गांधारनामानं स लभ्यो देवयोनिषु " इति नारदीये.

P. 558. St. 7.—**तत्प्रभवे**, Cháritravardhana reads तत्प्रभवः for he interprets thus, " तस्य नभसः उत्पत्तिस्थानं नभस्तरमें &c.." he also construes अजर्यं attributively with मनः understood. " अजर्यं संगतं मनः पुरदेहबन्धाय मोक्षाय बबन्ध &c." Hemádri agrees in his interpretation with Mallinatha.

P. 558. St. 8.—**द्विपानामिव पुण्डरीकः**. Pun*d*arika is an elephant of the quarter that stands at the south-east corner of the world. —**आहृतपुण्डरीका**, *Cf.* verse 5. Canto IV. and our note thereon. Cháritravardhana reads आहृतपुण्डरीकं, for his comments are " आहृतः कृतः पुण्डरीकनामा यागो येन तथा भूतं पुण्डरीकं. " But prince Pun*d*arika could not have spread the sacrifice called Pun*d*arika before his accession to his father's throne. Hemâdri also reads with Cháritravardhana and explains, " आहृतपुण्डरीकं विस्तृतं सितच्छत्रं ॥ " पुण्डरीकं सिताम्भोजे सितच्छत्रे च भेषजे " इति विश्वः ॥—**पितरि शान्ते**, Hemâdri interprets " वनमाश्रिते सति. " But this explanation of the scholiast does not convey the sense of the poet.

P. 559. St. 9.—**लम्भयित्वा**, Hemádri discusses : " लभेर्गत्यर्थत्वात् । " गतिबुद्धिप्रत्यव° "—Pá*n*ini, I 4.52. इति कर्म । तथा कर्मत्वं न लभेः प्राप्त्यर्थत्वात् । णिचि अणौ कर्तुः कर्मत्वाकर्मत्वे । अस्ति लभिः प्राप्त्युपसर्जनां गतिमाह । अस्तिगत्युपसर्जनां प्राप्तिमाहेति । तत्र पूर्वस्मिन्पक्षे गत्यर्थत्वाद्कर्मणो कर्म । यथा । " दीर्घिकासु कुमुदानि विकाशं नयन्ति शिशिराः शिशिरभासः " । द्वितीयपक्षे । " सित सितिम्ना सुतरां मुनेर्वपुर्विसारिभिः सौधमिवाथ लम्भयन् । द्विजावलिव्याजनिशाकरांशुभिः शुचिस्मितां वाचमवोचदच्युतः " इति माघकाव्ये. S'i. I. 25. And Cháritravardhan a observes " लभेर्गत्यर्थविवक्षया द्विकर्मकत्वं. "

P. 559. St. 10.—**अनीकपत्नावसानं देवादि नाम**, Cháritravardhana explains this to mean, " अनीकपदमवसाने प्रान्ते यस्य तत्तादृशं देवशब्द आदिर्यस्य तद्देवनाम । त्रिदिवे स्वर्गेऽपि व्यश्रूयत श्रुतं । " हिरण्यपूर्वं कशिपुं प्रचक्षते " इत्यादिवन्महाकविप्रयोगत्वान्साधुत्वमन्यथा लक्षितलक्षणाप्रसंगात्. "

P. 559. St. 11.—**पितृमान्**, Hemádri explains thus " पितृमान्प्रशस्तपितृको बभूवेत्युभयप्रीतिः. " Dinakara seems to have omitted this

stanza, though all our Mss. as also Hemádri, Cháritravardhana, Vallabha, Sumativijaya and others produce it.

P. 560. St. 14.—**अहीनगु:**, Hemàdri explains it to mean, " अहीनगुरधिकतेजाः। अहीनं बाहुबलं द्रविणं यस्य सः। अहीनां सर्पाणामिनः शेषस्तस्यैव बाहुर्द्रविणं यस्येति वा। भुजो धारणत्वात्. "

P. 561. St. 15.—**उपक्रमैः**, Cháritravardhana interprets it to mean, " उपायपूर्व आरंभः स्वधाराभ्युपक्रमः ? । धर्मोपधा अर्थोपधा कामोपधा च इति मंत्रिपरीक्षणो-[धर्मपरीक्षणो Ms.] पाधिरिति कश्चित् । " वर्गत्रयसंशुद्धानमात्यान् स्वीषु योजयेत् " इति चाणक्यः. "—**अन्तरज्ञः**, Hemàdri explains thus, " पुंसामन्तरमन्तरात्मानं भेदं वा जानातीति. "

P. 561. St. 16.—**जितपारियात्रं**, Hemádri explains, " माल्यवान् पारियात्रकः." 'It is not quite clear to what chain our ancestors applied the term Páriyátra. But I believe it meant the Sewalik mountains, which run parallel to the Himálaya and guard the Gangetic Doab on the north-east. Hiouen Thsang came to the province of *Poliyetolo*, which appears to stand for Páriyátra, after he crossed the S'atadru on his way from Kullu and as no country was known by that name, it seems to have been applied metaphorically to the country through which the mountain runs, just as Mahendra was applied to Kalinga. If the Sanskrit rendering of the Chinese word is correct (and it has been made by a good Chinese scholar), there is no difficulty in identifying it with the Sewalik chain, as it alone agrees in position. It is, however, curious that the list of its rivers as given in two of the printed Purá*n*as, without agreeing in details contain mostly those rivers which rise in the Vindhya chain. The Vish*n*u Purá*n*a, however, names only the Vedasm*r*iti, which if meant for the Sarasvatî the principal seat of vedic rites, is quite consistent with my supposition. There is another verse in the same chapter which notes " Kàrushas, Mâlavas, and inhabitants of Páriyátra. " It will be shown here after that the Kárushas or Kârûshas lived near the Ganges below Benares. The Málavas are well-known. The inhabitants of Páriyâtra, if I am right, are the people of the ancient kingdom of Prasthala (vide para 63.). There is another piece of evidence in favour of my conclusion, *viz*., that in the Várâhi Sanhitá (XIV. 4.) the mountain Páriyátra is placed in central India already defined (para 7).' This mountain is also called Sudáru (Hemachandra IV. 95.) or " yielding good timber." Thornton says " the Sewalik is in many places covered with forests of Saul, fir, cotton-tree, and various other kinds ". See A. Boorooah's ancient

geography of India page 16.—**उच्चैःशिरस्त्वात्**, On this Hemádri makes the following remark: "पुरुषलक्षणे पडुन्नतं इत्यत्र मूर्धोन्नतेरुक्तत्वात्."

P. 562. St. 17.—**उदारशीलः**; Hemádri analyses, "उदारं शीलं स्वभावः सद्वृत्तं वा यस्य सः."—**जितारिपक्षोऽपि**, Hemádri analyses, जितोऽरीणां पक्षो येन सोऽपि."—**शालीनतां**, Hemádri renders it by "सज्जनतां" and says, "शालीनकौपीने" Pá*n*ini, V. 2. 20. इति साधुः."

P. 562. St. 18.—**युवराजं**, Here Hemádri quotes the following from Kàmandaka: "विनीतात्मौरसं पुत्रं यौवराज्येऽभिषेचयेत्" इति.—**कृत्वा**, The explanations of Mallinátha and Hemádri do not perhaps appear very satisfactory. Vallabha appears to interpret better when he reads "कृत्वाऽयुवानं युवराजमेव" and comments upon it thus, "अयुवानमेवषोडशवर्षधरमेव युवराजं कृत्वा."—**सुखोपरोधि** &c., 'For the life of kings, resembling the life of those in bonds, is opposed to the enjoyment of pleasures.' *Cf.* Chåritravardhana: "यतो हेतोरपरुद्धवृत्तमिवास्वतंत्रचेष्टितमिव वर्तनं यत्र तद्राज्ञां वृत्तमाचरणं सुखोपरोधि सुखविघ्नकरं। राज्ञः कार्यव्यग्रत्वादनवकाशाच्च। तथा चोक्तं। "परेष्वक्षिप्तकार्यो यः कर्माण्यारभते स्वयं। सोऽपरुद्ध इति ख्यातो राजा न सुखभाग्भवेत्" इति। आत्मसंभवः पुत्रः इत्यन्यः." Hemádri notices this reading of Chåritravardhana and observes, "अपरुद्धवृत्तमिति पाठे। "परेष्वक्षिप्तकार्यो यः कर्माण्यारभते स्वयं। अपरुद्ध इति ख्यातो न राजा सुखभाग्भवेत्" अपरुद्धस्य वृत्तमिति षष्ठी समासः." See readings.

P. 563. St. 20.—**नृपमण्डलस्य**, Hemádri explains it by "द्वादशराजमण्डलस्य राजसमूहस्य वा." And Chàritravardhana has: "द्वादशराजचक्रस्य."—**पङ्कजनाभकल्पः**, On this Hemádri holds the following discussion, "पङ्कजं नाभौ यस्येति सप्तम्याः पूर्वनिपाते प्राप्ते गड्वादेः परा सप्तमीति पङ्कजशब्दस्य पूर्वनिपातः। "अच्प्रत्यन्ववपूर्वात्सामलोम्नः" Páni*n*i, V. 4. 75. इति सूत्रे अन्यत्रापीष्यते इत्यच्समासान्तः। योगविभागाद्वा। ततः कल्पप्प्रत्ययः." See readings.

P. 564. St. 21.—**वज्रधरप्रभावः**, Hemádri renders the epithet by "इन्द्रसामर्थ्यः" and remarks, "वज्रशब्दो रत्नोपलक्षणः."

P 564. St. 22.—**उपतस्थे**, On this Hemádri discusses, "उपाद्देवपूजेति तङ्। क्रियाव्ययविशेषणानां क्लीवत्वमेकवचनान्तत्वं वाच्यमिति स्वर्विशेषणं." He reads **स्वः** for **द्यां**. And Chåritravardhana has "उपाद्देवेत्यादिना संगतौ तिष्ठतेरात्मनेपदं."

P. 564. St. 23.—**अश्विरूपः** 'having the form of the As'vins.' Hemâdri analyses "अश्विनोर्दस्रयोः रूपमिव रूपं यस्य सः." Pandit says, 'The As'vins are two Vedic demi-gods represented as young, beautiful, honey-hued, of a golden brilliancy.' *Cf. R*igveda "नू मे हवमा शृणुतं युवाना यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत्" VII., 67, 10, "ता वल्गू दस्रा पुरुशाकतमा

पत्मा नव्यसा वचसा विवासे. " VI., 62, 5. दस्रा हि विश्वमानुषङ्क्षूभिः परिदीयथः धियं जिन्वा मधुवर्णा शुभः पती " VIII., 26. 6.—**हरीश्वधामा,** Hemádri analyses "हरितोऽश्वा यस्य सः हरिदश्वः सूर्यस्तस्येव धाम तेजो यस्य सः." —**आहुः,** Hemádri makes the following remark, "आहुरित्यव्ययमिति केचिदाहुः."

P. 565. St. 24.—**विजज्ञे.** Hemádri reads अधिजज्ञे instead of this and holds the following discussion: "अधिपूर्वो जनिरकर्मकः । "अनौकर्मणि" Pánini. III. 2. 100. इत्यत्र विस्तारेण वृत्तिकारः उपसर्गबलाज्जनेः सकर्मकत्वमिति "॥ And Cháritravardhana says, "सोपसर्गत्वादात्मनेपदं." Translate the aphorism —' The affix ड comes after the verb जन् with a past signification, when the root takes the preposition अनु and is compounded with a word in the accusative case '. As पुमनुजा ' a girl born after the male-child, *i. e.* a girl having an elder brother '. स्त्र्यनुजः ' a boy born after the female-child, *i. e.* a boy having an elder sister. '

P. 565. St. 25.—**द्विषां.** Subjective genitive, कर्तरि षष्ठी.—**हिरण्यरेता.** Hemádri explains it to mean, "हिरण्यं रेतो यस्य सोऽग्निरिव । ' अग्नेरपत्यं प्रथमं सुवर्णं " इति श्रुतेः."

P. 566. St. 26 —**सुखानि लिप्सुः,** On this Cháritravardhana remarks: "सुखानान्त-[सुखातीति Ms] विषयः स्यादिति षष्ठीनिषेधः?" And Hemádri observes "सुखानीति "न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनां" Pánini, II. 3. 69. इति षष्ठीनिषेधः." Translate the aphorism:—' The sixth case affix is not used to express the agent or the object, when the word is governed by an active participle ending in the affix ल or उ, or उक, or by an indeclinable, or by a past participle in क्त and क्तवतु, or by a word ending in an affix having the sense of खल्, or by a noun of agency formed by तृन्. ' After these words, the Instrumental case must be employed to denote the agent, and the accusative case to denote the object. (1) The word ल means the substitutes of ल, *i. e.* the present participles in शतृ, शानच् (III. 2. 124.), कानच् (III. 2. 106.), क्वसु (III. 2. 107), कि and किन् (III. 2. 172). As ओदनं पचन्, पचमानः, पेचानः, पेचिवान्, पपिः सोमं, ददिर्गाः ॥ (2) The affix उ is enjoined by III. 2. 168. As, कटं चिकीर्षुः, ओदनं बुभुक्षुः ॥ (3) The affix उक is ordained by III. 2. 154. as आगामुकं वाराणसीं रक्ष आहुः ॥ *Várttika*:– But the word कामुक in secular Sanskrit, governs the genitive, as दास्याः कामुकः ' lusting for the slave. ' (4) Indeclinables formed by कृत् affixes, as, कटं कृत्वा, ओदनं भुक्त्वा ॥ *Várttika*:–This prohibition, however, does not apply to the indeclinables formed by तोसुन् (III. 4. 16) and कसुन् (III. 4. 17), as, पुरा सूर्यस्योदेतोराधेयः, पुरा क्रूरस्य विसृपो विरप्शिन् (I. 1. 40). (5) निष्ठा *i. e.,* क्त and क्तवतु, as ओदनं भुक्तवान्, देवदत्तेन कृतं. (6) The words formed by खलर्थ

affixes (III. 3. 126), as, ईषत्करो भवता कटः, ईषत्पानः सोमो भवता ॥ (7) The तृन् in the Sûtra is a प्रत्याहार, formed by taking the तृ of शतृ (III. 2. 129) and the final न् of तृन् (III. 2. 135), meaning the affixes शानन् (III. 2. 128), चानश (III. 2. 129), शतृ (III. 2. 130) and तृन् (III. 2. 135). As सोमं पवमानः, नटमाघ्नानः, अधीयन्, नारायणम्, कर्ता कटान्, वदिता जनापवादान् ॥ *Vârtika*:—Optionally so, when the root द्विष् takes the affix शतृ, as, चौरं or चौरस्य द्विषन्.

P. 566 St. 27.—**पतङ्गान्वयभूषणस्य** On this epithet Châritravardhana quotes the following from Abhidhânachintâmani: "द्युमणिः पतङ्गः खगो मार्तण्डः" इत्यभिधानचिन्तामणिः।—सोमसुतः, Hemâdri explains it to mean, "सोमं सोमवल्लीं वा सोमयज्ञं सुनोतीति सोमसुत् तस्य सोमसुतः। "सोमे सुञः" Pânini, III. 2. 90. इति क्विप्" Translate the aphorism: The affix क्विप् comes after the verb सु 'to extract the juice,' with the sense of past time, when the word सोम, in the accusative case, is in composition.' As सोमसुत् 'who has extracted the Soma juice.' This aphorism is also intended for the sake of making a नियम or restrictive rule. The four-fold restriction is here implied, *i. e.* as regards the verb, the tense, the उपपद and the affix.

P. 566. St. 28.—**ब्रह्मिष्ठं**, Châritravardhana explains it by "ब्राह्मणभक्तं." And Hemâdri by "अतिशयेन ब्रह्मवानिति ब्रह्मिष्ठः," and Vallabha says, "प्रकृष्टं ब्रह्मवान् ब्रह्मिष्ठः."—**आब्रह्मसभं**, Here Hemâdri discusses: "आङ्मर्यादाभिविध्योः" Pânini, II. 1. 13. इति अव्ययीभावः। पञ्चम्यपाङ्परिभिरित्यपि। यद्वा। ब्रह्मणः सभा ब्रह्मसभं तन्मर्यादीकृत्य। "सभा राजा" Pânini. II. 4. 23 इति क्लीबवत्." Translate the Sûtras:—'The word आङ् when signifying limit exclusive or limit inclusive, may optionally be compounded with a word ending in the ablative case-affix and the compound so formed is called अव्ययीभाव.' As आपाटलिपुत्र or आपाटलिपुत्राद्वृष्टो देवः 'It rained up to पाटलिपुत्र.' आकुमारं or आकुमारेभ्यो यशः पाणिनेः 'the fame of Pânini extends even to the boys.' 'A तत्पुरुष compound ending with the word सभा 'court' is neuter, provided that it is preceded by (a word synonymous with) the word राजा, or by a word denoting a non-human being.' As इनसभम् 'the king's court.' ईश्वरसभम् 'Lord's court.' But in राजसभा 'the king's court,' the word is not neuter; for synonyms of राजा are only to be taken and not the word-form राजा; an apparent exception to rule I. 1. 68. So also रक्षःसभम् 'the court of the Râkshasas.' पिशाचसभम् &c. But in काष्ठसभा, देवदत्तसभा &c., the word is not neuter; for the word non-human has a technical significance meaning राक्षस or a monster.

P. 567. St. 29.—**कुलापीडनिभे**, Hemâdri explains it by "कुलस्य

आपीडनिभे शेखराभे &c.," and observes, "शिरस्यापीडशेखरौ." And Cháritra-vardhana says," मुगुटतुल्ये । सुप्रजासि । "नित्यमसिच्प्रजामेधयोः" Pánini, V. 4. 122. इत्यसिच्. " Hemádri also quotes the same aphorism.—आनन्दजलाविलाक्ष्यः, Analyse आनन्दजलेनाविले अक्षिणी यासां ताः.

P. 567. St. 30.—**स्पष्टाकृतिः**, Cháritravardhana reads **स्पृष्टाकृतिः** and explains thus "स्पृष्टा अनुकृता ध्याता वा आकृतिर्येन."—**पुत्रिणाम्** 'blessed with virtuous sons. "प्रशस्तपुत्रवताम्" says Hemádri.—**अग्रसंख्याम्**, Analyse अग्रा चासौ संख्या च तां तथोक्ताम्.

P. 568. St. 31.—**वंशस्थितिं तेन वंशकरेण संभाव्य**, 'Making sure the continuance of his family through him the continuer of it &c.' संभाव्य *lit.* 'causing to be,' 'causing to stand or exist,' hence 'making sure.'—**स्पर्शनिवृत्तलौल्यः**, Hemádri explains it to mean, "स्पृश्यन्ते इन्द्रियैरिति स्पर्शा विषयास्तेभ्यो निवृत्तं लौल्यं यस्य सः । स्पर्शान्बहिः बहिर्बाह्यानीत्यत्र गीताभाष्ये स्पृशति शब्दादीनीति."

P. 568. St. 32.—**पुष्यः**, On this Hemádri and Cháritravardhana make the following remark: "पुष्यन्त्यस्मिन्नर्था इति पुष्यः । "पुष्यसिध्यौ नक्षत्रे" Pánini, III. 1. 116. "पुष्यः परकृतं हन्ति न तु पुष्यकृतं परः । अपि द्वादशगे चन्द्रे पुष्यः सर्वार्थसाधकः" इति ज्योतिःशास्त्रे. Translate the Sûtra :—'The words पुष्य and सिद्ध्य are irregularly formed by the affix क्यप् (य), when used as names of asterisms.' पुष् + क्यप् (य) = पुष्यः. It is so called because objects are nourished under the influences of this asterism. सिध् + क्यप् (य) = सिद्ध्यः 'the asterism सिद्ध्य,' another name of पुष्य, so called because things are accomplished under the influence of this star. When not the names of asterisms, the forms are पोषणं 'nourishing,' सेधनम् 'accomplishing.' Compare Buddhacharita, Canto I. stanza 25. "ततः प्रसन्नश्च बभूव पुष्यस्तस्याश्च देव्या व्रतसंस्कृतायाः । पार्श्वात्सुतो लोकहिताय जज्ञे निर्वेदनं चैव निरामयं च"॥ 'At that time the constellation पुष्य was anspicious, and from the side of the queen, who was purified by her vow, her son was born for the welfare of the world, without pain and without illness.'

P. 569. St. 33.—**जैमिनये**, Hemádri explains this to mean, "जैमिनये मनीषिणे । याज्ञवल्क्यस्तस्य गुरौ च शिष्यत्वेनार्पितात्मा." *Cf.* Váyu Purá*n*a. Vol. II. Adh. 26. p. 286. "हिरण्यनाभः कौशल्यो वशिष्ठस्तत्सुतोऽभवत् । पौत्रस्य जैमिनेः शिष्यः स्मृतः सर्वेषु शर्मसु ॥ शतानि संहितानां तु पंच योऽधीतवांस्ततः । तस्मादधिगतो योगो याज्ञवल्क्येन धीमता ॥ पुष्यस्तस्य सुतो विद्वान् ध्रुवसंधिश्च तत्सुतः । सुदर्शनस्तस्य सुतोऽग्निवर्णः सुदर्शनात्." See the genealogical table.—**अजन्मनेऽकल्पत**, 'became free from further regeneration,' *lit.* 'became one who has no (further) birth.' अजन्मन् is here a *Bahuvrihi* compound, *i. e.* न जन्म यस्मिन् स तस्मै मोक्षाय &c.

P. 569. St. 34.—ध्रुवोपमेयः, On this Hemádri remarks: “ ध्रुवोपमाने जगदाधारत्वादत्युच्चत्वाच्च इति. ”

P. 570. St. 35.—दर्शात्ययेन्दुप्रियदर्शने, Analyse दर्शात्ययेन्दुः प्रतिपच्चन्द्रस्तद्वत्प्रियं दर्शनं यस्य तस्मिंस्तथोक्ते.—मृगायताक्षः, Analyse मृगस्येव आयते अक्षिणी यस्य सः.—मृगयाविहारी, Analyse मृगयां विहर्तुं शीलमस्य तादृशः.

P. 570. St. 36.—ऐकमत्यात्, Hemádri explains: “ एकमतीनां भावः ऐकमत्यं तस्मात्. ”—कुलतन्तुम्, Hemádri explains thus, “ कुलस्य तन्तुं वंशस्य विस्ताराधारं. ”—स्वर्गामिनः, On this Hemádri holds the following discussion, “ प्रातिपदिकान्तनुम्विभक्तिषु च ” Pá*n*ini, VIII. 4. 11. इति वा णत्वे स्वर्गामिणः स्वर्गामिनो वा. ”

P. 570 St. 37.—नभसा उपमेयमासीत्, On this Hemádri remarks: “ इति अनन्तत्वं”.—काननेन, On this Hemádri remarks: “ अतिदुर्गमत्वं.”— कुड्मलपुष्करेण तोयेन, Hemádri explains this to mean, “ कुड्मलरूपं पुष्करं पद्मं यत्र तेन तोयेन जलेन च इति सकलाधारत्वं. ”—नवेन्दुना, Cháritravardhana renders it by “ नूतनचंद्रयुक्तेन, ” analyse “ नवः इन्दुर्यस्मिंस्तत्, ‘ having the new moon in it. ’ नवेन्दु does not mean the moon that has just arisen, but the new moon; or the moon of the first day after the अमावास्या.

P. 571. St. 38.—मौलिपरिग्रहात्, Vallabha reads मौलपरिग्रहात् and explains the stanza better than all the commentators. He says: “ स सुदर्शनो मौलपरिग्रहात्कुलामात्यस्वीकरणाल्लोकेन पितुरेव तुल्यो भावी संभावितो मेने. ” Hemádri also reads: मौलपरिग्रहात् and explains, “ मूले भवं मौलं पैतृकं बलं तस्य परिग्रहादङ्गीकारात्पितुरेव पित्रेव तुल्यो भावी संभावितः। अस्तित्वाध्यवसायः संभावना। पितुरिति “ तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्यां तृतीयान्यतरस्यां ” Pá*n*ini, II. 3. 72. इति षष्ठी.” This interpretation is also preferrable. Vijayánandasúris'vara-chara*n*asevaka reads मौलपरिग्रहात् and explains: “ स सुदर्शनः पितुरेव तुल्यो भावी संभावितः। कस्मान्मौलपरिग्रहान्मुगुटधारणात्। अथ वा। मौलपरिग्रहान्मौलाः प्राक्तना वृद्धामात्यास्तेषां परिग्रहादङ्गीकरणात्. ” Sumativijaya reads मूलपरिग्रहात् and explains thus, “ स सुदर्शनः पितुर्जनकस्येव तुल्यः सदृशो भावी भविता लोकेन जनेन संभावितश्चित्ते मानितः। कस्मान्मूलपरिग्रहान्मुगुटं मस्तके धारणाद्वा वृद्धामात्याङ्गीकरणात्. ” For, the connection between the young king taking the responsibility of his kingdom (*i. e.*, wearing the crown) and his subjects predicting that he will be like his royal sire is not clear, nor would the simile that follows in the next half at all suit to the first line unless the young king receives the aid of his ministerial officers to promote his welfare, as does the small cloud that of the eastern wind. It is also doubtful whether मौलि can mean कुलामात्य, which is usually मौल, or मूल and not मौलि.

P. 571. St. 39.—अधिहस्ति, See readings.

P. 572. St. 40.—Chāritravardhana reads आवितानं instead of आवृतात्मा, for he explains thus, " स सुदर्शनः पैतृकस्य पित्र्यस्य सिंहासनस्य प्रतिपूरणाय कामं निश्चितं नाकल्पत न समर्थोऽभूत् । तथापि चामीकरं स्वर्णं तद्वत्पिञ्जरेण पिंगलेन तेजोमहिम्ना महत्त्वेन तत्सिंहासनमावितानमूर्ध्वचस्तत्पर्यन्तं व्याप. " Hemâdri reads आचितेन and explains, आचितेन रात्रीभूतेनात एव तेजोमहिम्ना व्याप ॥ " पिञ्जरं कनके वाजिभेदे पीते च पिञ्जरम् " इति विश्वः ॥ He begins thus " स सुदर्शनः पैतृकस्य सिंहासनस्य प्रतिपूरणाय कामं नाकल्पत न समर्थोऽभूत् । अ * * * * मातुमक्षौ कामं तत् ? । पुनः सिंहासनं चामीकरवत्सुवर्णवत्पिञ्जरेण पीतेन आचितेन &c. " Sumativijaya comments thus " स सुदर्शनः काममत्यर्थं नाकल्पत न समर्थोऽभूत् । कस्मै पैतृकस्य सिंहासनस्य पितुरागतस्य शिशुत्वात्प्रतिपूरणाय व्यापनाय । सिंहासनं महत्तरं यः सयपि (?) लघिष्ठः आसनं पूरणे न क्षमः । पुनस्तथापि तेजोमहिम्ना देहदीप्तिमहत्त्वेन तत्सिंहासनं व्याप आसनं प्राप । कथंभूतेन तेजोमहिम्ना चामीकरपिञ्जरेण हेमवत्कपिलकेशेन । पुनः कथंभूतेन तेजोमहिम्ना । आयतेन विस्तीर्णेन इत्यन्वयः । पितुरिदं पैतृकं तस्य पैतृकस्य । तेजसो महिमा तेजोमहिमा तेन । चामीकरं स्वर्णं तद्वत्पिञ्जरेण पिंगलेन &c. "

P 572. St. 41.—प्रसिद्धैः, Hemâdri renders it by " अलंकृतैः. " —किंचिदिव, 'only a little,' on account of their littleness.

P. 572. St. 42.—महानील, On this Hemâdri holds the following discussion: " ननु सन्महत्परमोत्तमोत्कृष्टाः पूज्यमानैः " Pâṇini, II. 1. 61. इत्यत्र पूजावचनाः सदादयः पूज्यमानैरित्युक्ते महानीलशब्देऽल्पप्रमाणवर्णनात्कथं समासः इति चेन्न । अत्र शुभफलदत्वात्पूज्यमानतास्ति महाजनो महोदधिरित्यादौ पूजां विनाप्युत्तरपदार्थस्य प्रमाणातिरेके बहुलग्रहणानुवृत्तेर्भविष्यतीति न्यासकृत्. " And Chāritravardhana has " सन्महत्परमोत्कृष्टाः " इत्यत्र पूजावचनैः समासोक्तिर्महानिलादावल्पपरिमाणवर्णनं चिन्त्यं । महोदधिरित्यादावधिक्यदर्शनात्. " Vijayânandasúris'varacharaṇasevaka cites the following from the शिशुहितैषिणी of Chāritravardhana. He says, " महानिलादौ अल्पप्रमाणं चिन्त्यमिति चारित्रवर्धनाः."—महाराज इति शब्दो युयुजे, On this Chāritravardhana remarks: " अर्भकेऽपि शिशावपि तस्मिन्सुदर्शने प्रयुक्तमहाराज इति शब्दः कोशदण्डजानान्तभावान्मिथ्या नाभूत्. "

P. 573. St. 43.—काकपक्षात्, Hemâdri explains this to mean, " कपोलयोर्लोलौ उभौ काकपक्षौ शिखण्डौ यस्य तस्मात् । " उभयपक्षविनीतनिद्रः " इत्यत्र उभयशब्दो व्याख्यातः । राजकुमाराणामपि पञ्चशिखा भवन्ति । यदुक्तं [वाल-] रामायणे " चूडापञ्चकमण्डनो क नु शिशुः चण्डः क नाम मुनिः ".

P. 573. St. 44.—निर्वृत्तजाम्बूनदपट्टबन्धे, Hemâdri explains thus, " निर्वृत्तः संपादितो जाम्बूनदस्य स्वर्णस्य पट्टबन्धो यस्य तस्मिन् ललाटे" &c. And Chāritravardhana has : " निर्वृत्तो निष्पादितोऽभिषेकसमयसंबन्धी जाम्बूनदस्य काञ्चनस्य पट्टबन्धो यस्य तादृशे ". And Vallabha says " रचितरुक्ममयमुकुटबन्धे ".—स्मेरमुखः, Hemâdri explains : " स्मेरं हसनशीलं मुखं यस्य सः. " And further discusses : " स्मेरं स्मिङ् ईषद्धसने " नमि कम्पि०" Pâṇini, III. 2. 167, इति रः । पट्टलक्षणं तु वराहसंहितायां । " पट्टः शुभदो राज्ञां मध्येऽष्टाङ्गुलानि विस्तीर्णः । सप्तनरेन्द्र

हिष्याः षड्युवराजस्य निर्दिष्टः। सर्वं च शुद्धकांचनविनिर्मिता श्रेयसो वृध्यै । पंचशिखो भूमिपतेस्त्रिशिखो युवराजपार्थिवमहिष्योः " इति. Bri. San. Chap. 49, p. 241. Bibli. Ind. series.

P. 573. St. 45.—शिरीषपुष्पाधिकसौकुमार्यः, For the parallel expression. *Cf.* Ku. I. 41. "शिरीषपुष्पाधिकसौकुमार्यौ । बाहू तदीयाविति मे वितर्कः" ॥ Chàritravardhana reads शिरीषपुष्पोपमसौकुमार्यः and explains thus, "शिरीषपुष्पोपमं शिरीषकुसुमतुल्यं सुकुमारस्य भावः सौकुमार्यं यस्य स तथाभूतः &c." Vallabha, Dinakara, Sumativijaya and others read the same ; but Hemádri reads with Mallinátha. He says "शिरीषपुष्पाधिकं सौकुमार्यं यस्य स सुदर्शनो भूषणेनापि खेदं यायात् ॥ संबन्धे लिङ् । अथ च नितान्तं गुर्वीं धरित्र्या धुरमनुभावात्सामर्थ्याद्बिभरांबभूव ॥ भीह्रीत्यादि ॥" See readings.

P. 574. St. 47.—संजातलज्जेव, 'as if ashamed,' because she was united with a consort much younger than herself.—उपजुगूह. Chàritravardhana remarks : "अन्यापि कमपि कामयमाना सा त्रपया कपटेनालिंगति."

P. 575. St. 50.—पूर्वजन्मान्तरदृष्टपाराः. Hemâdri analyses : "पूर्वाणि च तानि जन्मान्तराणि तेषु दृष्टं पारं यासां ताः" 'The end of which had been seen, *i. e.*, which had been gone through or completely studied by him in a former state of existence.' The sciences had been studied by the prince in some former birth. And अन्तर has been used here with a clear significance and not simply for the sake of metre.—गुरूणां, Hemádri remarks : "इति बहुत्वाद्बहूनां विद्यानामभ्यासः".—त्रिवर्गाधिगमस्य, Hemádri explains it to mean, "त्रिवर्गस्याधिगमस्य प्राप्तिर्मूलं लिङ्गसंख्याभेदेऽपि विशेषणविशेष्यभावः । त्रिवर्गो धर्मकामार्थैः." Like Mallinátha, Chàritravardhana too quotes the following : "धर्माधर्मौ त्रय्यामर्थानर्थौ वार्त्तायां नयापनयौ दण्डनीत्याम् " इति कौटिल्योक्ते विद्यायां त्रिवर्गमूलत्वं."—जग्राह विद्याः &c., Compare Buddhacharita, Canto II Stanza 24. वयश्च कौमारमतीत्य मध्यं संप्राप्य बालः स हि राजसूनुः । अल्पैरहोभिर्बहुवर्षगम्या जग्राह विद्याः स्वकुलानुरूपाः" ॥ 'When he had passed the period of childhood and reached that of middle youth, the young prince learned in a few days the various sciences suitable to his race, which generally took many years to master.'

P. 575. St. 51.—अश्चितसव्यजानुः, Hemádri explains this to mean, "धनःशास्त्रोक्तप्रकारेणाश्चितः कुञ्चितः आकुञ्चितः सव्यो जानुर्येन सः इति धानुष्कजातिः । "यस्यां यादृगवस्थायां स्याद्रूपं यस्य वस्तुनः । तत्तथैवार्पयत्युक्तिरग्राम्या जातिरुच्यते " इति [का-] व्योपदेशे." Chàritravardhana has "अश्चितं नम्रीकृतं सव्यं वामजानुर्येन सः । आकर्णमाकृष्टं शराणं धनुर्येन सः । स्थानसन्दीढमित्यादिरस्थानपञ्चकेन स्थितिविशेषो दर्शितः."

P. 576. St. 52.—मनसिजतरुपुष्पं, *Cf.* Mv. IV. 1. "तामाश्रित्य श्रुतिपथगतामास्थया लब्धमूलः । संप्राप्तायां नयनविषयं रूढरागप्रवालः । हस्तस्पर्शे मुकुलित इव व्यक्तरोमोद्गमत्वात् । कुर्यात्क्रान्तं मनसिजतरुर्मां रसज्ञ फलस्य."

P. 576. St. 53.—अधिविविदुः, Hemádri explains it by "अधिवेदनं भार्यान्तरपरिग्रहः".

CANTO XIX.

P. 577. St. 1.—**नैमिषं**, The name of a celebrated ancient forest of asceticism, where the great Sauti narrated the Mahábhárata to the sages, and which, according to some of the Purá*n*as, is the only place fit for the practice of religious austerity and free from the impurity of this Kali Age. For the locality of Naimisha, see Prof. Wilson's Essays, Analytical, &c., Vol. I., p. 137. Hemádri notices the reading नैमिशं, and observes, "नैमिशमिति शान्तपाठान्तरं। श्रीभागवतात्प्रथमस्कन्धे श्रीधरीटीकायां ब्रह्मणा विसृष्टस्य चक्रस्य नेमिः शीर्यते कुण्ठीभवति यत्र तन्नेमिशं नेमिशमेव नैमिशं। तथा वायवीये। "एतन्मनोमयं चक्रं मया सृष्टं विसृज्यते। यत्रास्य शीर्यते नेमिः स देशस्तपसः शुभः। इत्युक्त्वा सूर्यसंकाशं चक्रं दृष्ट्वा मनोमयं। प्रणिपत्य महादेवं विससर्ज पितामहः। तेऽपि हृष्टतरा विप्राः प्रणम्य जगतां प्रभुं। प्रययुस्तस्य चक्रस्य यत्र नेमिर्व्यशीर्यत। तद्वनं तेन विख्यातं नैमिशं मुनिपूजितं" इति। नैमिषमिति षांतपाठे वाराहपुराणोक्तं द्रष्टव्यं। तथा हि। गौरमुखं प्रति भगवद्वाक्यं। "एवं कृत्वा ततो देवो मुनिं गौरमुखं तथा। उवाच निमिषेणेदं निहतं दानवं बलं। अरण्येऽस्मिंस्ततस्त्वेतन्नैमिषारण्यसंज्ञितं। भविष्यति यथार्थं वै ब्राह्मणानां विशेषकं"। यद्वा। निमिषः विष्णुरलुतदृष्टित्वात्। तस्य क्षेत्रं। तथैव शौनकादिवचनं। "क्षेत्रेऽस्मिन् वैष्णवेऽऽयम्" इति।

P. 577. St. 2.—**फलनिःस्पृहः**, 'without aiming at any fruit,' *i. e.*, not with the object of securing any thing good on earth, or even enjoyment in the Heaven, but solely without any object—the asceticism that leads ultimately to coalition of the soul with the Supreme Spirit.—**विस्मृतः**, On this Hemádri remarks : "तयोरेव" Pá*n*ini, III. 4. 70. इत्युक्तः क्तः कर्तरि। चिन्त्यः। अन्तर्भावितण्यर्थो वा। विस्मृतमस्यास्तीति "अर्शआदिभ्योऽच्", Pá*n*ini, V. 2. 127. इति वा"। and Cháritravardhana discusses in the following way : "विस्मृत इति आदिकर्मणि क्तो यथा। "नत्वेवं तुरगारूढस्तुरङ्गं विस्मृतो भवान्"। "अन्तर्भावितणिजर्थो वा"। अकर्मकविवक्षया कर्तरि क्तमुत्पाद्य पश्चात्कर्मसंबन्ध इति च कश्चित्। विस्मृतमस्यास्तीति "अर्शआदिभ्योऽच्" पाठान्मत्वर्थीये गुणभूतक्रियाव्यापकत्वात्कर्मत्वमित्येके."

P. 577. St. 3.—**प्रसाधयितुं**, Mark the play upon this word. Mallinátha's explanation is better.

P. 578. St. 4.—**स्त्रीविधेयनवयौवनः**, Hemádri analyses: "स्त्रीणां विधेयमधीनं नवं यौवनं यस्य सोऽभवत्। "विधेयो विनयग्राही".—**संनिवेश्य**, *scil.* तं, to be understood from अधिकारं in the preceding half.—**कुलोचितमधिकारं**, the control over the affairs of his kingdom, which his ancestors were in the habit of exercising.

P. 578. St. 5.—**अपोहत्**. The regular form should be अपौहत् which is also met with. Hemádri gives the purport of this passage in the

following words : "उत्कृष्टा उत्सवपरंपरा तस्यासादिति भावः। and further discusses : "उहवितर्के। "उपसर्गादस्यत्यूह्योर्वेति वाच्यम्" इति तङ्। भावपक्षे रूपं। अधिकरणानुवृत्तेश्चरेटस्याभावात्। चरतीति चरः। ततः सुप्सुपेति समासः। अनेन कामोद्दीपनप्रभाव उक्तः। तथा प्रबोधचन्द्रोदये कामः। "रम्यं हर्म्यतलं नवाः सुनयना गुञ्जद्विरेफा लताः। प्रोन्मीलन्नवमल्लिकाः सुरभयो वाताः सचन्द्रा क्षपाः। यद्येतानि जयंति हंत पुरतः शस्त्राण्यमोघानि मे। तद्वो कीदृगसौ विवेकविभवः कीदृक्प्रबोधोदयः".—**उत्सवः**, Cháritravardhana interprets it by "प्राश्नात्योत्सवः."

P. 579. St. 6.—**इन्द्रियार्थाः** = "स्रक्चन्दनवनितादयः," says Cháritravardhana. Compare Buddhacharita, Canto III, Stanza 51. "यदा च शब्दादिभिरिन्द्रियार्थैरन्तःपुरे नैव सुतोऽस्य रेमे। ततो बहिर्व्यादिशति स्म यात्रां रसान्तरं स्यादिति मन्यमानः"॥ 'But when in the women's apartments his son found no pleasure in the several objects of the senses, sweet sounds and the rest, he gave orders for another progress outside, thinking to himself, 'It may create a diversion of sentiment.'—**दिवानिशं**, Hemádri holds the following discussion : "दिवा च निशा च दिवानिशं। दिवेत्यव्ययं। सर्वो द्वंद्वो विभाषैकवद्भावः। "कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे" Pá*n*ini, II. 3. 5. इति द्वितीया। यद्वा। द्रव्यवाचित्वाद् "विप्रतिषिद्धं चानधिकरणवाचि" Pá*n*ini, II. 4. 13. इत्येकवद्भावः। शीतोष्णस्येव सहानवस्थानलक्षणेन विरोधेन विप्रतिषिद्धत्वात्."

P. 579. St. 7—**गौरवात्**, On this Hemádri quotes the following from Káma*n*daka : "सज्जमानमकार्येषु व्यसनेष्वनुमन्त्रिणो नृपं। गुणावहं हि तेषां च शृणुयाद्वचनं नृपः"। यद्वा। सन्मानात्".—**केवलेन चरणेन कल्पितं**, On this Cháritravardhana remarks : "विरहविह्वलत्वाद्दूरादिव स्थित्वा चरणमात्रं दर्शितमित्यर्थः".

P. 579. St. 8.—**कोमलात्मनखरागरूषितं**, Hemádri, Vallabha, Sumativijaya and Vijayánandasúris'varacharara*n*asevaka read "कोमलांशुनखरागभूषितं," where Hemádri explains, "कोमला अंशवो येषां ते च नखाश्च तेषां रागेण भूषितस्तं." Sumativijaya explains thus, "कोमलांशुनखरागभूषितं स्वनखरक्तत्वेन शोभितं। कोमलांशवो ये नखास्तेषां रागो रक्तिमता तेन भूषितं. &c." A Jaina commentary on Raghuvans'a, obtained from Gujarátha, by one who calls himself a slave of the feet of the most learned Vijayánanda (श्रीविजयानन्दसूरीश्वरचरणकमलसेवक) explains in the following manner, "कोमला अंशवो येषां ते नखास्तेषां रागेण रक्तत्वेन भूषितं शोभितं तं तथोक्तं &c." Cháritravardhana reads कोमलाग्रनखरागभूषितं and explains thus, "कोमलानामग्रनखानां रागेणारुणिम्ना भूषितं &c." Dinakara reads and comments upon "कोमलाग्रनखरागरूषितम्." See readings.

P. 580. St. 9.—**गूढमोहनगृहाः**, Hemádri explains this to mean, "गूढा अदृश्या मोहनगृहाः सुरतगृहा यासु ताः। मुह्यते अनेनेति मोहं। "सुरतं मोहनं प्रोक्तं" इति हलायुधः। मधूच्छिष्टयस्त्रादिना ये गृहा निर्मायन्ते ते हि कामिभोगार्थं जलमध्ये स्थाप्यन्ते। यद्वा। मोहनगृहाः कटिभागाः। तदम्बुभिर्गूढमोहनगृहाः". And Cháritravardhana has : "तदम्बुभिरतासां दीर्घिकाणामम्बुभिर्गूढं गुप्तं मोहनगृहं कटिभागो यासां ताः कामिनीश्चागाहत."

P. 580. St. 10.—**अर्पितप्रकृतिकान्तिभिः**, for the artificial decorations consisting of the collyrium in the eye and the red paintings of the lips were washed away by the water thrown by the young beautiful girls at each other.—**धौतरागपरिपाटलाधरैः**, Châritravardhana interprets this to mean, "धौतः क्षालितो योऽसौ रागोऽलक्तकादिस्तेन पाटलवर्णा अधरा येषां तैः। कृत्रिमशोभायां गतायामपि सहजशोभया तस्य प्रीतिमुदपादयन्नित्यर्थः". And Hemádri has: "धौतरागाः परिपाटला अधरा येषां तैः। अर्पिता दत्ता प्रकृतिः सहजा कान्तिः शोभा एभ्यस्तानि। कृत्रिमशोभायां गतायां निजशोभैवावशिष्टेत्यर्थः".

P. 580. St. 11.—**पानभूमिरचना**, Cháritravardhana renders it by "पल्लवास्तरणादीन्." See note to St. 49, Canto VII.—**अभ्यपद्यत**, Hemàdri remarks: "रचनापदं सद्यो निर्माणसूचकं." And Chàritravardhana says "रचनाग्रहणं नूतननिर्माणसूचनार्थं."—**प्रियासखः**, Hemàdri reads प्रियावृतः instead of प्रियासखः and interprets, thus, "प्रियावृतः सोऽग्निवर्णः पानभूमेः रचनाः विन्यासान् अभ्यपद्यत अगमत्। दिवादि।" Chàritravardhana reads with Hemàdri and explains, "स नृपः पानभूमे रचनाः पल्लवास्तरणादीन् प्रियावृतः स्त्रीयुक्तः सन्नभ्यपद्यत प्रापत्." Vallabha, Dinakara, Sumativijaya and others also read with Hemàdri. See readings.—**वासितासखः**, Chàritravardhana observes: "वासिता स्त्री करिण्योश्च" इत्यमरोक्तेरुभयत्रसिद्धौ प्रियासख इत्यपि कश्चित्."

P. 581. St. 12.—**सातिरेकमदकारणम्**, Cháritravardhana reads सातिरेकमधुगन्धिनम् and interprets thus, "रह एकान्ते नृपेण दत्तमत एव सातिरेको मधुगन्धोऽस्यास्तीति तादृशं मुखासवमङ्गना स्त्रियोऽभिलेषुः पपुरित्यर्थः." Sumativijaya, Dinakara and others read with Cháritravardhana. See readings.—**बकुलतुल्यदोहदः**. This refers to the old notion of the poets that Bakula tree before it puts forth flowers requires that a young beautiful damsel should first rinse her mouth with wine and then throw the rinsing-wine on its trunk. *Cf.* Hemàdri: "बकुलेन तुल्यं दोहदमिच्छा यस्य सः। बकुलो हि स्त्रीमुखासवं वाञ्छति। तथा प्रयोगरत्नावल्यां। "नूपुरान्वितपादेन तरुण्या ताडितो भृशं। अशोककेसरो वक्त्रसीधुगन्धश्च फुल्लति," and further observes, "बकुलबद्धसौहृदं" इति पाठे आश्वासविशेषणं। बकुलो हि मद्यगन्धः। "बकुलः सीधुगन्धश्च मद्यगन्धोऽथ सारसः" इति निघण्टुः." And Chàritravardhana has: "बकुलश्च प्रमदाननासवरूपेण दोहदेन पुष्प्यतीति प्रसिद्धिः."

P. 582. St. 14.—**पार्श्ववर्तिषु गुरुष्वलज्जयत्**, *Cf.* Cháritravardhana: "पार्श्ववर्तिषु भरतविद्योपदेशिष्वभिनयं लोचनहस्तपादं विन्यासादिकमतिलङ्घयितुमन्यथाकर्तुं शीलं यासां ता नर्तकीरलज्जयत्सलज्जाश्चकार। यतो मनोहरन्। अभिनयातिलङ्घनेन गुरवोऽस्मान्नृपासक्तमनसो विदन्तीति नर्तकीनां लज्जा बभूवेत्यर्थः." And Hemádri has: "गुरुषु पार्श्ववर्तिषु सत्सु तद्गतमनस्कतया नर्तक्यो विस्मृताभिनयाः."—**लोलमाल्यवलयः**, Hemádri analyses: "लोलानि माल्यानां वलयानि यस्य सः."

P. 582. St. 15.—**चारु नृत्यविगमे**, Hemádri interprets this to mean, "चारुणो नृत्यस्य विगमेऽवसाने तासां स्त्रीणां मुखं पिबन् । इदृशं मुखपानमिन्द्रकुबेरयोरपि दुर्लभमित्यर्थः." He takes the whole expression as a compound word, and also observes: "चारु इति मुखविशेषणं वा." Cháritravardhana also explains it in the same way. For a similar use of विगम compare Meghadúta I. St. 59. "यस्मिन्दृष्टेकरणविगमात्." Also Buddhacharita, Canto VIII, St. 12."अथोचुरद्यैव विशाम तद्वनं गतः स यत्र द्विपराजविक्रमः। जिजीविषा नास्ति हि तेन नो विना यथेन्द्रियाणां विगमे शरीरिणां" ॥ 'Then they said, 'Let, us go this very day into that forest, whither he is gone, whose gait is like the king of elephants; without him we have no wish to live, like the senses when the souls depart.'—**पिबन्** = चुम्बन्, observe Cháritravardhana, Dinakara and Sumativijaya.—**अमरालकेश्वरौ**, Hemádri explains this to mean, "संज्ञायामेकदेशव्यवहारात् । भीमसेनो भीमः। सत्यभामा भामेतिवत्। अमराशब्देनामरावतीति केश्चिदुच्यते । यद्वा । अमरा अत्र सन्तीत्यमरा "अर्शआदिभ्योऽच्" । तथा अमरशेषः । "अमरात्वमरावत्यां न द्वयोः स्यात्सुदर्शनं" इति । विश्वश्च । "दूर्वामरावती स्थूणा गडूचीष्वमरा मता" इति । अमराया अलकायाश्च स्त्रीलिङ्गनिर्देशात्स्त्रीत्वं व्यज्यते । तेनन्द्रकुबेरयोरेकस्त्रीत्वं । अस्यत्वनेकस्त्रीत्वं । अतस्तयोर्दुर्लभमिति भावः."—**स्वेदभिन्नतिलकं**, Hemádri explains thus, "स्वेदेन भिन्नस्तिलको यस्य तत्."—**प्रेमदत्तवदनानिलः**, Here Hemadri reads "प्रेमदत्तवदनानिलं" as an adjective to मुखं and observes, "प्रेम्णा दत्तो वदनानिलो यस्मै तत् । एतत्क्रियाविशेषणं वा."—**नृत्यविगमे**, On this epithet Hemádri quotes the following definition, "भावाश्रयं तु नृत्यं स्यान्नृत्यं तालसमन्वितं" इति । प्रतापरुद्रोक्तेः स्त्रीनृत्यं चंचत्पुटादि तालयुक्तत्वात्स्वेदभिन्नतिलकत्वं श्लथांगीत्वं च । अत एव नृत्यं सुखातिशयहेतुः । तथा रतिरहस्ये । "अध्वक्लान्ततनुर्नवज्वरवती नृत्यश्लथांगी तथा। मासैकप्रसवा ददाति सुरते षण्मासगर्भा सुखं" इति । "मधुरोद्धतभेदेन तद्द्वयं विविधं पुरं" इति दशरूपोक्तेर्नृत्यमपि भवति."

P. 583. St. 16.—**तस्य** &c., On this passage Hemâdri comments thus: "वल्लभाभिरुपसृत्य गत्वा नवेषु काम्यवस्तुषु संगिनस्तस्याग्निवर्णस्य समागमाः सामि अर्धा भुक्ता विषया येषां ते चक्रिरे । "सामित्वर्द्धे जुगुप्सिते" । यथेच्छमुपभुक्तश्चेदयं निस्पृहः सन्नस्मत्समीपं नायाति । नवसंगीत्वादन्यां यास्यत्यग्निवर्णः स्त्रीभिः सामिभुक्त इत्यर्थः । "सामि" Pânini, II. 1. 27. इति क्तान्तेन तत्पुरुषसमासः । किंविधाः समागमाः । सावरणः प्रच्छन्नो दृष्टः प्रकाशः सन्धिर्येषु ते । तथा गोनर्दीयमते । "संधिः सावरणः प्रकाशश्च" । सावरणो भिक्षुक्यादिना । प्रकाशः स्वयमुपसृत्येति." Châritravardhana's comments are: "नवेषु पूर्वमनुपभुक्तेषु काम्येष्वभिलषणीयेषु इन्द्रियार्थेषु सङ्गिन आसक्तिमतस्तस्य नृपस्य सङ्गमाः संबन्धा वल्लभाभिः स्त्रीभिरुपसृत्य समागत्य साम्यर्धं भुक्ताः सामिभुक्तास्तादृशा विषया येषां ते तथा भूताः कृताः । कीदृशाः समागमाः सावरणो वेषान्तरेण प्रच्छन्नो दृष्टः प्रसिद्धः सन्धिः सन्धानं सङ्केतो येषु ते तथा । एतेन किमुक्तं । ययस्मै समस्ता अस्माभिः संभोगप्रकाराः प्रदर्श्यन्ते तदानवाभिलषणीयवस्त्वासक्तिमत्वादस्मान्परित्यज्यान्यामयमभिगमिष्यतीति विचार्य रमणीभिर्निःशेषविशेषकलिताः संभोगप्रकारा न दर्शिता इति भावः । गोनर्दीयाचार्यमते सन्धिर्द्विविधः । सावरणः प्रकाशश्च । सावरणो भिक्षुक्यादिना प्रकाशस्तु स्वयमुपसृत्य । संकेतेनेति रुद्रटोऽप्याह । तदाभावे

नियुञ्जीत कादिकामित्यादि ?" Vallabha, who reads सावरणदृष्टिसन्धयः, comments as follows on the verse : "वल्लभाभिः कान्ताभिरुपसृत्योपेत्य तस्य राज्ञः समागमाः संयोगाः सामिभुक्तविषयाश्चक्रिरे अर्धभुक्तशब्दादिविषयाः कृताः। किंभूताः समागमाः सावरणदृष्टिसन्धयो निमीलितनेत्रविषयाः । किंभूतस्य तस्य नवेषु काम्यवस्तुषु सङ्गिनो मदनोद्दीपनवस्तुषु सङ्गपरायणस्य." Hemádri, Cháritravardhana as well as Vallabha construe the gerund उपसृत्य better than Mallinátha does. But Cháritravardhana appears to be mistaken like Mallinátha in giving the purport (भावार्थ) of the verse as he usually does at the end of his commentary. Kálidása intends that while the king, who arranged the preliminary negotiations with new damsels sometimes by proxy and sometimes personally, was already in the enjoyment of new pleasures (*i. e.* in the company of new girls) his old mistresses went up to that place and made his pleasures half-enjoyed, *i. e.*, interrupted him. The Southern and the Deccan Mss. of Mallinátha's commentary omit the following substance of the stanza as produced by the Northern Mss. "यथेष्टं भुक्तश्रेत्त्वयं निस्पृहः सन्नस्मत्समीपं नायास्यतीति भावः." This, it appears, has been probably borrowed from the commentary of Hemádri. See above.

P. 583. St. 17.—**असकृत्**, On this Hemádri remarks : "असकृदिति सर्वत्र संबध्यते." Hemádri gives the purport of the passage in the following words, "बन्धनादि सर्वं ताभिः क्रियमाणं वञ्चयन्प्रगटयन्नित्यर्थः। तथाविधाः प्रणयिनीरनुबभूवेति वा"। "अतो गृधिवञ्च्योः प्रलम्भने" Pánini, I. 3. 69. इति नात्रात्मनेपदाभावदोषः." And Châritravardhana has : "वञ्चयन् परिहरन्निति कश्चित्। अत एव "गृधिवञ्च्योः प्रलम्भने" इत्यादिनात्मनेपदाभावाददोषः." Translate the aphorism :–'After the causatives of the verbs गृध् 'to covet' and वञ्च् 'to go,' the Atmanepada is employed, when used in the sense of deceiving, even though the fruit of action does not accrue to the agent.' When these verbs have not the sense of deceiving their causals take Parasmaipada. As श्वानं गर्धयति 'he causes the dog to bark,' अहिं वञ्चयति 'he avoids the serpent.' Cháritravardhana gives the purport in the following words: "गोत्रस्खलनादिना सापराधमेनं कापि तर्जयति। काप्येतं सेर्ष्यमीक्षते। कापि मेखलया बध्नाति। तथाविधो वल्लभोऽनुबभूवेति भावः."

P. 583. St. 18.—**सुरतवाररात्रिषु**, Hemâdri analyses: "सुरतस्य वारोऽवसरो यासु ताश्च ता रात्रयश्च तासु। अस्याः सुरतवारोऽस्यां रात्राविति। "विप्रलम्भो विसंवादः"। अङ्गीकृतासंपादनं इति क्षीरस्वामी."—**दूतिविदितं**, The word दूति is generally found with long ती. Hemâdri supports this by quoting the following :– "दूत्यां दूतिरपि स्मृता" इति शब्दभेदप्रकाशे.

P. 584. St. 19.—**अङ्गुलीक्षरणसन्नवर्तिकः**, = "अङ्गुलीनां क्षरणेन स्वेदेन सन्ना पातिना वर्तिका तूलिका यस्य सः &c.," observes Hemádri. AndCháritravardhana has : "अङ्गुलीस्वेदक्षरणेन सन्ना नष्टा वर्तिः खटिका यस्य स तादृशो वर्तते स्म."

—कथंचित्, On this Cháritravardhana remarks "तत्तत्स्मरणमात्रप्रोद्भूतमन्मथत्वात्सात्त्विकोदयाच्च कथंचिदित्युक्तिः." And Hemádri has "तत्तत्स्मरणमात्रजातकामत्वात्सात्त्विकभावोदयाच्च लेखनासंभवात्कथंचिदित्युक्तिः."

P. 584. St. 20.—**उत्सवविधिच्छलेन**, (supply आनाय्य). 'Under the pretext of their having to celebrate some festive ceremony,' such as requires the presence of the husband. See the 3rd act of the विक्रमोर्वशीयं.

P. 585. St. 21.—**कृतखण्डनव्यथाः**, *Cf.* Cháritravardhana: "कृता संपादिता खण्डनव्यथा अन्याङ्गनासङ्गचिह्नज्ञानोत्पन्ना पीडा यासां ताः." Dinakara, as might be expected, has the following: "कृतोत्पादिता खण्डनव्यथा अन्यन्तरसंगचिह्नज्ञानजं दुःखं यासां ताः." And Hemádri says, "कृता अधिका खण्डनस्य वियोगस्य व्यथा यासां ताः."—**प्रणयमन्थरः**, 'cold in his love,' towards them (*i. e.*, प्रणयिन्यः)'.—**अदुनोत्**, On this Cháritravardhana remarks: "तथा चोक्तं भट्टोद्भटेन "कोपो लघुरपि गुरूयते प्रायोऽभिनवदोषप्रसरात्" इति.

P. 585. St. 22.—**प्रत्यभैत्सुः**, Cháritravardhana observes: "प्रत्युपालम्भनं चक्रुरित्यन्ये। विवर्तनैर्भर्त्सयति स्म। न तु वाक्यैः। प्रत्यक्षादपि स्वप्ने सपत्नीनामभिधानग्रहणमङ्गनानामतिपीडाकारित्वात्कङ्कणभङ्गरुदितैर्भर्त्सनमित्यर्थः."—**प्रच्छदान्तगलिताश्रुबिन्दुभिः**, On this love-smitten state of young women as well as men Jagaddhara quotes the following:—"यदाह भरतः। "अप्राप्तरतिभोगस्य नवस्त्रीरागजन्मना। दश स्थानानि कामस्य काममन्तर्विसर्पतः॥ अभिलाषोऽत्र प्रथमे द्वितीये चिन्तनं तथा। अनुस्मृतिस्तृतीये च चतुर्थे गुणकीर्तनं॥ उद्वेगः पञ्चमे ज्ञेयो विलापः षष्ठ उच्यते उन्मादः सप्तमे प्रोक्तो भवेद्व्याधिस्तथाष्टमे॥ नवमे जडता प्रोक्ता दशमे मरणं भवेत्" इति।

P. 585. St. 23.—**कृप्तपुष्पशयनाँल्लतागृहान्**, Hemádri analyses: "कृतानि पुष्पाणां शयनानि येषु ताँल्लतागृहानेत्य गत्वा। "गृहा पुंसि च भूम्न्येव".—**दूतिदर्शितमार्गदर्शनः**, Hemádri analyses: दूतिभिः कृतं मार्गस्य दर्शनं यस्य सः." Eleven Mss. give the passage अत्र ङीबन्तस्यापि दूतीशब्दस्य &c., at the end of Mallinátha's commentary on 23rd verse. Châritravardhana also notices the difficulty and observes, "दूतीशब्दे ङीपो ह्रस्वत्वं चिन्त्यं। इदन्तो वा." But दूति with short इ is also found in the dictionary. See besides verse 33rd below. Hemádri does not appear to have noticed the difficulty. See note to St. 18th above.

P. 586. St. 24.—**ऊचुः** On this Hemádri remarks: "अनेन स्त्रीणां पूज्यत्वं। तथा शृङ्गारतिलके। "मध्यावदन्त्युपालम्भैर्धीरा पुरुषं यथा." And Cháritravardhana says: "एतास्तु धीरा नायिकाः."—**प्राप्य**, *i. e.*, by his unconsciously speaking to her in sleep by the name of some other girl whom he loved more tenderly.

P. 586. St. 25.—**ललितसगाकुलं**, Compare Buddhacharita, Canto V. Stanza 58, "शिथिलाकुलमूर्धजा तथान्या जघनस्रस्तविभूषणांशुकान्ता। अशयिष्ट

विकीर्णकण्ठसूत्रा गजभग्ना प्रतिपातिताङ्गनेव " ॥ 'Another, with her hair loose and dishevelled, and her skirts and ornaments fallen from her loins, lay with her necklace in confusion, like a woman crushed by an elephant and then dropped.'

P. 587. St. 26.—श्रथांशुकैः &c., For a similar idea compare Buddhacharita, Canto V. St. 58., above.

P. 587. St. 27.—हस्तरोधि, On this Cháritravardhana makes the following remark: "मुग्धां प्रस्तुत्य रुद्रटः। "सकंपा चुम्बने वक्त्रं हरत्येषावगूहिता परावृत्यचिरं तल्पे गात्रैस्तिष्ठति कंपिभिः" इति."—मन्मथेन्धनमभूद्वधूरतं, Hemádri remarks: "यथा इन्धनेनाग्निर्दीप्यते तथा नवोढारतेन तस्य कामो दिदीपे इति."

P. 588. St. 28.—स्मितमनोज्ञया, On स्मित Hemádri quotes the following: "ईषच्च हसितं स्मितं" इति हलायुधः।

P. 588. St. 29.—न्यस्तपादतलमग्रपादयोः, Hemádri interprets this to mean, "अग्रपादयोर्न्यस्तं पादतलं यस्मिंस्तत्। नायकपरिमाणादल्पपरिमाणा नायिका इति स्थितिः। असपिण्डां यवीयसीं वयसा प्रमाणतश्च न्यूनामिति विज्ञानेश्वरः." —कण्ठसक्तमृदुबाहुबन्धनं, "अवनतशरीरत्वात्" says Cháritravardhana. And further he remarks: "इति प्रौढा जातिः."—विसर्गचुम्बनं, On this Cháritravardhana quotes the following from Ratirahasya, "नयनगलकपोलं दन्तवासो मुखान्तः स्तनयुगलललाटाश्चुम्बनस्थानमाहुः। दधति जघननाभीमूलकक्षासु चुम्बन् व्यतिकरसुखमुच्चैर्देशसात्म्येन ? लीढाः."

P. 588. St. 30.—व्यक्तलक्ष्म, to be taken attributively with परिभोगमण्डनं. *Cf.* Cháritravardhana: "व्यक्तानि लक्ष्माणि नखक्षतादिचिह्नानि यत्र तत्परिभोगमण्डलं." See reading.

P. 589. St. 31.—अनवस्थितं, 'excited' not able to show by seriousness that he was going on an errand of a friend. Hemádri and Cháritravardhana interpret it by "चञ्चलं."

P. 589. St. 32.—कण्ठसूत्रं, Châritravardhana, like Mallinátha, quoting the definition of कण्ठसूत्र and also one from Ratirahasya cites also the following: "कण्ठसूत्रहारादि निराकृत्येति कश्चित्। पुरुषायितं विधाय सखेदास्तत्रास्वाप्सुरित्यन्यः".—अपदिश्य, Hemádri says, "अन्यत्र गमिष्यतीति शङ्कया".

P. 590. St 33.—चारदूतिकथितं, 'who was (detected and) *reported* by their female servants employed as spies.'

P. 590. St. 34.—स्पर्शनिर्वृतिम्, In support of this epithet Hemádri quotes the following :– "निर्वृतिः सुस्थितायां स्यादस्तंगमनसौख्ययोः" इति विश्वः।

P. 590. St. 35.—**विजिह्मनयना,** Cháritravardhana, who reads व्यलोकयन् instead of व्यलोभयन्, has the following note: "अधरोष्ठसर्ग विना वेणुवीणावादनं न घटते। ते चामुना रदनखक्षता अतस्तद्वादनं संप्राप्तदुःखाः शिल्पकार्यो मुखविलोचनैरेनमपश्यन्निति भावः". And Hemádri says, "इति साभिप्रायं". And rightly remarks. See readings.

P. 591. St. 36.—**संजघर्ष,** On this Cháritravardhana remarks, "नृत्यस्य गात्रविक्षेपात्मकत्वादङ्गाश्रयतापि घटते। "अव्यक्तरूपं तु सत्त्वं हि ज्ञेयं भावरसात्मकं। आलोकितसमसाचिप्रलोकितविलोकिते। इङ्गिते वागवृत्ते तथा चैवावलोकितं। अष्टौ दर्शनया भेदा नृत्यवाद्यसमाश्रयाः" इत्युक्तत्वात्सात्त्विकान्यवलोकितानीत्यन्ये." —**अङ्गसत्त्ववचनाश्रयं,** Hemádri analyses, "अङ्गं च सत्त्वं च वचनं चाश्रयो यस्य तत्."

P. 592. St. 37.—**कृत्रिमाद्रिषु** = क्रीडाशैलेषु, Observe Hemádri and Vallabha. And क्रीडापर्वतेषु according to Cháritravardhana. On this verse Hemádri and Cháritravardhana make the following remark: "अथ षड्ऋतूनाह".

P. 592. St. 38.—On this stanza Hemádri and Cháritravardhana make the following remark: "प्रावृषमाह".—**आचकाङ्क्ष,** On this Cháritravardhana quotes the following from Rudra*ta*. "देशकालबलात्कोपः प्रायः सर्वोऽपि योषितां। जायते सुखसाध्योऽपि कृच्छ्रसाध्यो हि रागतः" इति.

P. 592. St. 39.—On this verse both Hemádri and Cháritravardhana make the following remark: "शरदमाह".

P. 593. St. 40.—**श्रोणिबिम्बमिव,** On this Cháritravardhana observes, "स्त्रियोऽपि श्रोणिबिम्बादिकं वस्त्राय प्रकटयन्ति" इति. And Hemádri quotes the following: "बिम्बफले बिम्बिकायां प्रतिबिम्बे च मण्डले" इति विश्वः।

P. 593. St. 41.—On this Hemádri and Cháritravardhana make the following general remark: "हेमन्तमाह".—**आग्रथन°,** On this Hemádri makes the following remark: "ग्रंथग्रंथसन्दर्भे। आग्रथनमिति लोपश्चिन्त्यः। अमरशेषे च। "ग्रंथनं गुम्फसंदर्भौ ग्रथनं च ना * *" इति

P. 594. St. 42.—On this Hemadri and Cháritravardhana make the following remark: "शिशिरमाह".—**शिशिररात्रयः,** Hemádri observes: "शिशिरे हि रात्रयो दीर्घाः। अतः सर्वरतोऽस्वपिति."

P. 594. St. 43.—On this Hemadri and Cháritravardhana make the following remark: "वसन्तमाह".

P. 594. St. 44.—Here Hemádri and Cháritravardhana remark: "ग्रीष्ममाह".

P. 595. St. 45.—**मौक्तिकग्रथितचारुभूषणैः**, Pearls were used in large quantities in summer-garments, and summer-ornaments, on account of their cooling effect on body.

P. 596. St. 47.—**एवमिन्द्रियसुखानि निर्विशन्**, Compare Buddhacharita, Canto III. Stanza 51. "यदा च शब्दादिभिरिन्द्रियार्थैरन्तःपुरे नैव सुतोऽस्य रेमे। ततो बहिर्व्यादिशति स्म यात्रां रसान्तरं स्यादिति मन्यमानः ॥—**अनङ्गवाहितः**, Hemádri, Cháritravardhana, Dinakara, Vallabha and Sumativijaya read अनङ्गमोहितः, where Hemádri explains, "अनङ्गेन कामेन मोहितः स्मरणाक्रान्तः &c." Cháritravardhana explains thus, "अनङ्गमोहितः काममोहितः एकतानः &c." —**आत्मलक्षणनिवेदितान्**, Hemádri explains thus, "आत्मनः स्वस्य लक्षणेन कुसुमादिना निवेदिताञ्ज्ञातानृतूनत्यवाहयदतिचक्राम." Cháritravardhana has, "आत्मलक्षणेन पुष्पादिचिह्नेन निवेदितानृतूनत्यवाहयदतिवाहितवान्." See readings.

P. 596. St. 48.—**तं प्रमत्तं**, Hemádri renders it by "अनवहितचित्तमपि".—**दक्षशाप इव चन्द्रं**, *Cf.* Hemádri: "रोहिण्यामेव रममाणाय चन्द्राय क्षयरोगी भवेति दक्षः शापं ददावित्यागमः". And Cháritravardhana has: "सुतापरित्यागाद्दक्षः शशिनं क्षयी भवेति शशापेति प्रसिद्धं". See also Mahábhárata, Gadáparvan, Adh. 35. verses 43 and further. Bom. edi. The propriety of the simile seems to be that the king Agnivar*n*a was as gradually consumed by the formidable disease as is the moon in the dark fortnight of the lunar month.

P. 597. St. 50.—The figure according to Hemádri is तुल्ययोगिता. He quotes the following definition from Kávyaprakás'a. "नियतानां सकृद्धर्मः सा पुनस्तुल्ययोगिता" इति काव्यप्रकाशे.

P. 598. St. 52.—**अघशङ्किनीः प्रजाः**, *Cf.* Cháritravardhana : "मृत इत्यघशङ्किनीः पापं चिंतयन्तीः प्रजा लोकान् &c." Dinakara reads अघशंसिनीः and explains thus, "मृत इत्यघं पापं शंसतीति तादृशीः &c."

P. 598. St. 53.—**अनवलोक्य पावनीं संततिं**, Cháritravardhana remarks : "सन्तानमनवलोक्यैव व्यसुः समजनि इत्यर्थः". And Sumativijaya has : "पुत्रमुखमदृष्ट्वैव क्षयरोगेण मृतः इति भावः".

P. 600. St. 57.—**भावाय**, should be taken with दधाना. See readings.

INDEX.

A.

PROPER NAMES OCCURING IN THE RAGHUVANS'A.

अक्षः XII. 63.
अगस्त्यः IV. 44, VI. 61, XV. 54, XVI. 44.
अग्निवर्णः XIX. 1.
अङ्गदः XV. 90.
अङ्गाः VI. 27, 30.
अजः V. 36. 55. 62. 64, VI. 78, VII. 31. 33. 55, VIII. 6. 17, 21. 24. 69.
अतिथिः XVII. 1.
अतिबला XI. 9, *see* बलातिबले.
अत्रिः II. 75, XIII. 50.
अथर्वा I. 59, VIII. 4.
अनसूया XII. 27, XIII. 51, XIV. 14.
अनूपाः VI. 37.
अमृता X. 58.
अयोध्या XI. 93, XIII. 61, XIV. 29, XV. 38. 60. 98, XVI. 25, XVII. 36.
अरुन्धती I. 56.
अलका IX. 14, XVI. 42.
अवन्तयः VI. 32.
अश्विनौ XVIII. 23.
अहीनगुः XVIII. 14.
इक्ष्वाकुः I. 72, III. 70, V. 55, VI. 71, XII. 20, XIII. 61. 70, XIV. 55, XV. 44. 49.
इन्दुमती V. 39, VI. 70, VIII. 1. 28.
इन्द्रः IV. 16, VI. 62, VII. 35, XVII. 5. 81.
इन्द्रजित् XIII. 73, XV. 26.
उत्कलाः IV. 38.
उत्तरकोसलाः III. 5, VI. 71, IX. 1, XIII. 62, XVIII. 7. 27.
उत्सवसंकेताः IV. 78.
उद्ध्यः XI. 8.
उन्नाभः XVIII. 20.
उमा III. 23.
उरगपुरम् (= नागपुरम् Mallinátha.) VI. 59.
ऊर्मिला XI. 54.
ऊर्ध्वबाहुः XIII. 43.
ऋक्षवान् V. 44.
ऋष्यशृङ्गः X. 4.
ऐन्द्रिः XII. 22.
ऐरावतः VI. 73, XVII. 32.
ककुत्स्थः VI. 71. IX. 19.
कपिलः III. 50. XIII. 3, XVI. 34.
कपिशा IV. 38.
कबन्धः XII. 57.
कलिङ्गाः IV. 38, VI. 53.
कलिन्दः VI. 48.
काकुत्स्थः VI. 2. VII. 3, IX. 65, XII. 30. 46. 72, XIII. 79, XV. 4. 75, XVII. 1.
कामरूपाः IV. 83. 84.
काम्बोजाः IV. 69.
कारापथः XV. 90.

PROPER NAMES OCCURING IN THE RAGHUVANSA.

कार्तवीर्यः VI. 38.
कालनेमिः XV. 40.
कालियः VI. 49.
कालिङ्गः IV. 40.
कालिन्दी XV. 28.
कावेरी IV. 45.
किंनरः IV. 78.
कुण्डिनम् VII 33.
कुबेरः IV. 66, V. 26. 30, IX. 24, XV. 45, XVII. 81.
कुमारः III. 55, V. 36.
कुमुदः XVI. 76. 81. 86, XVII. 6.
कुमुद्वती XVI. 85, XVII. 1. 6.
कुम्भकर्णः XII. 80.
कुम्भजन्मा XII. 31.
कुम्भयोनिः IV. 21, XV. 55, XVI. 72.
कुम्भीनसी XV. 15.
कुम्भोदरः II. 35.
कुशः XV. 32. 63. 97, XVI. 1. 4. 35. 72. 81. 88, XVII. 4, XVIII. 4.
कुशध्वजः XI. 54.
कुशावती XV. 97, XVI. 25.
कुशिकः XI. 37.
कृत्तिका XIV. 22.
कृष्णः VI. 42, X. 48, XV. 24.
कैकयाः IX. 22, X. 55.
केरलाः IV. 54.
केशवः XVII. 29.
कैकेयी XII. 2. 4. 13. 26, XIII. 59.
कैलासः II. 35, V. 28, XII. 89, XIV. 20.
कोसलाः IV. 70, VII. 34, VIII. 70, IX. 22. 79, XI. 49.
कौत्सः V. 1. 30. 32.
कौमुद्वतेयः XVIII. 3.
कौशल्यः XVIII. 27.
कौसल्या X. 55.
कौशिकः XI. 1. 14.
कौस्तुभः X. 10, XVII. 29.
क्रथकैशिकाः V. 39. 61, VII. 32, VIII. 82.
क्षेमधन्वा XVIII. 9.
खरः XII. 42. 47, XIII. 65.
गङ्गा IV. 32. 36. 73, VI. 48, XIII. 57, XIV. 3. 52, XVI. 33. 71.
गरुडः XII. 76.
गरुत्मान् X. 13, XVI. 77.
गुहः VI. 4.
गोकर्णम् (?) VIII. 33.
गोत्रभिद् III. 53, VI. 73, XIII. 7.
गोप्रतरः (?) XV. 101.
गोदा XIII. 35.
गोदावरी XIII. 33.
गोवर्धनः VI. 51.
गौतमः XI. 34.
गौरी IV. 71.
चन्द्रकेतुः XV. 90.
चित्रकूटः XII. 15. 24, XIII. 47.
चैत्ररथः V. 60, VI. 50.
जनकः XI. 35, XIII. 78, XIV. 43, XV. 31.
जनस्थानम् VI. 62, XII. 42, XIII. 22.
जयन्तः III. 23, VI. 78.
जह्नुः VI. 85, XIV. 51.
जानकी XII. 61, XV. 74.
जाह्नवी X. 26. 69.
जीवितेशः XI. 20.
जैमिनिः XVIII. 33.
तक्षः XV. 89.
तक्षकः XVI. 88.
तक्षा (तक्षशिला) XV. 89.
तमसा IX. 16. 72, XIV. 76.
ताडका XI. 15. 18. 21. 28.
ताम्रपर्णी IV. 50.

Proper names occuring in the Raghuvans'a.

तुराषाट् XV. 40.
तृणबिन्दुः VIII. 79.
त्रिकूटः IV. 59.
त्रिजटा XII. 74.
त्रिलोचनः III. 66.
त्रिशिराः XII. 47.
त्र्यम्बकः XIII. 51.
त्वष्टा VI. 32.
तुहिनाद्रिः VIII. 54.
दक्षः III. 33, XIX. 48.
दण्डकः XII. 9, XIV. 25.
दशकण्ठः XIII. 77.
दशमुखः XIV. 87, XV. 103.
दशरथः VIII. 29, IX. 1, XI. 24 57, XII. 54, XIII. 75, XV. 31. 43.
दशाननः X. 75.
दाशरथिः X. 44, XI. 13. 44, XII. 45. 76, XIII. 68, XIV. 1, XV. 8. XVI. 6.
दिलीपः I. 12, II. 23, III. 18. 41. 54, VI. 74, VIII. 11.
दीर्घतपाः XI. 33.
दुर्जयः XVII. 5.
दर्दुरः IV. 51.
दुर्वासाः XV. 94.
दूषणः XII. 46.
देवानीकः XVIII. 10.
धनदः IX. 25.
ध्रुवः XVIII. 34.
ध्रुवसंधिः XVIII. 34.
ध्युषिताश्वः XVIII. 23. *see* व्युषिताश्वः.
नन्दनम् VIII. 32. 95.
नन्दिग्रामः XII. 18.
नन्दिनी I. 82, III. 40.
नभःशब्दः XVIII. 6.
नमुचिः IX. 18.
नर्मदा V. 42.
नलः XVIII. 5.
नहुषः XIII. 36.
नागपुरम् (" उरगाख्यं पुरं ") VI. 59.
नारदः VIII. 33.
नारायणः VII. 13.
निकुम्भः II. 35.
निमिः XI. 49.
निषधः XVIII. 1.
निषधाः XVIII. 1.
नागाः VI. 46.
नैमिषम् XIX. 1.
नैषधः XVIII. 1.
पञ्चवटी XII. 31, XIII. 34.
पञ्चाप्सरः XIII. 38.
पद्मा IV. 5.
पम्पा XIII. 30.
परंतपः VI. 21.
पाण्ड्याः IV. 49, VI. 60.
पारसीकाः IV. 60.
पारिजातः VI. 6, X. 11.
पारियात्रः XVIII. 16.
पार्वती I. 1.
पाशभृत् II. 9.
पाश्चात्याः IV. 62.
पिनाकी VI. 72.
पुण्डरीकः XVIII. 8.
पुण्यजनाः IX. 6, XIII. 60.
पुत्रः XVIII. 30.
पुनर्वसू XI. 36.
पुरन्दरः II. 74, III. 23. 51, IX. 12, XII. 84. XVII. 79.
पुरुहूतः X. 49, XVII. 32.
पुलिन्दाः XVI. 32.
पुष्कलः XV. 89.
पुष्कलावती (?) XV. 89.
पुष्पकम् X. 46, XIII. 40. 79, XIV. 20.
पुष्पपुरम् VI. 24.
पुष्यः XVIII. 32.
पौरस्त्याः IV. 34.

Proper names occuring in the Raghuvans'a.

पौलस्त्यः IV. 80, X. 5. 47. 73, XII. 72. 77. 83. 90. 102, XIII. 72.
प्रचेताः I. 80.
प्रतीपः VI. 41.
प्राग्ज्योतिषाः IV. 81.
प्राचीनबर्हिः IV. 28.
प्रियंवदः V. 53, VII. 61.
प्रियदर्शनः V. 53.
बलनिषूदनः IX. 3.
बलभित् XI. 51.
बलातिबल XI. 9.
बलिः VII. 35.
बहुश्रुतः XV. 36.
बिडौजाः III. 59, XIV. 59.
बिभीषणः XII. 68. 104, XIII. 69, XIV. 17.
ब्रह्मा V. 36.
ब्रह्मिष्ठः XVIII. 28.
ब्राह्मम् XIII. 60.
भगीरथः IV. 32.
भद्रः XIV. 31.
भरतः X. 70. 81, XI. 16. 69, XII. 12. 24, XIII. 64. 66. 68. 70. 72. 77, XIV. 11. 16. 73, XV. 87. 88.
भागीरथी VII. 36, XIV. 28.
भार्गवः XI. 46. 61. 67. 79. 83. 88, XIV. 46.
भियः XI. 8.
भृगुः X. 14.
भोजः V. 39, VII. 2. 13. 18. 29. 35.
मगधाः I. 57, III. 5. 19. 23, VI. 20. 21, IX. 22.
मघवा III. 46. 52, IX. 20, XIII. 36. 39, XVIII. 31.
मतंगः V. 53.
मथुरा VI. 48, XV. 28. 36.
मधुमथ् IX. 48.
मधूपघ्नम् XV. 15.
मनुः I. 11. 17, II. 4. 33, IV. 7, IX. 3, XIV. 67.
मन्दाकिनी XIII. 48.
मरुत् II. 10, IX. 13.
मरुत्वान् III. 4, XVI. 71.
मरुला IV. 55.
मलयः IV. 46. 51, VI. 64, IX. 25. 29, XII. 32, XIII. 2.
महाकालः VI. 34.
महेन्द्रः IV. 39.43, VI. 54, XIII. 20.
महेश्वरः III. 49.
महोदधिः IV. 34. 50, VI. 54.
माण्डकर्णिः XIII. 38, *see* शातकर्णिः
मातलिः III. 67, XII. 86.
मानसम् VI. 26, XIII. 55. 60. (Mallinátha).
माल्यवान् XIII. 26.
मारुतिः XII. 60. 78.
माहिष्मती VI. 43.
मिथिला XI. 32. 52.
मेघनादः XII. 79.
मेरुः I. 14, VII. 24, XVII. 26.
मैथिलः XI. 32. 37. 43. 47. 48. 57. 72, XIII. 77.
मैथिली XI. 93, XII. 29. 36. 38. 55, XV. 37. 56. 73.
मैथिलेयः XV. 31. 63. 71, XVI. 42. 88.
यमः IX. 6. 24, XVII. 81.
यमुना XIII. 57, XV. 2. 30.
यवनाः IV. 61.
यादोनाथः XVII. 81.
युधाजित् XV. 87.
रघुः I. 9, III. 21. 32. 34. 43. 47. 51. 53. 59. 67, IV. 16. 49. 58. 66. 77, V. 12. 24. 26. 28. 39. 63, VI. 6. 68. 76. 83, VII. 71, VIII. 5. 10. 13. 16. 17. 21. 24, IX. 5. 9, X. 68, XI. 2. 54,

XIV. 7. 12. 13. 29, XV. 7. 35. 46. 54, XVI. 1. 8. 23. 35. 39. 42, XVIII. 37.
रघुनन्दन: XIII. 72.
रघुनाथ: XV. 54. 90.
रघुपति: XII. 104, XIII. 76.
राघव: VII. 12. 32. 65, VIII. 16. 25, XI. 6. 10. 17. 22. 32. 35. 42. 47. 48. 70. 79. 83. 88. 89, XII. 32. 44. 51. 53. 69. 85. 96. 103, XV. 6. 44. 92. 96, XIX. 1.
राम: IV. 53. 58, VI. 42, X. 67. 69. 81, XI. 1. 18. 20. 34. 37. 68. 73. 92, XII. 2. 3. 6. 7. 14. 20. 23. 24. 28. 31. 34. 35. 42. 43. 49. 50. 52. 57. 59. 64. 66. 74. 77. 80. 81. 83. 84. 87. 89. 91, XIII. 1. 69. 74. 77, XIV. 15. 19. 21. 58. 68. 84, XV. 3. 5. 9. 34. 39. 43. 48. 56. 64. 65. 67. 70. 71. 86. 89. 94.
रामायणम् XV. 63.
रावण: X. 48, XI. 19, XII. 32. 51. 55. 83. 87. 91. 99. 103.
रुद्र: XI. 47.
रेवा VI. 43, XVI. 31.
लक्ष्मण: X. 71. 81, XI. 2. 6. 26. 54. 91, XII. 9. 39. 44. 77, XIII. 65. 72, XIV. 44. 49, XV. 17. 90. 94.
लक्ष्मी VI. 43. 58, VII. 70, X. 10, XII. 15. 26, XIV. 24. 86, XVI. 79, XVIII. 16. 47.
लव: XV. 32. 63. 97.
लवण: XV. 2. 5. 17. 26. 38. 40.
लङ्का VI. 40. 62, XII. 61. 63. 66. 71. 78. 84, XIII. 78, XV. 103.
लौहित्या IV. 81.
वङ्गाः IV. 36.
वज्रधर: XVIII. 21.
वज्रणाभ: XVIII. 21.
वनायु: V. 73.
वरतन्तु: V. 1.
वरुण: IX. 6, XI. 53.
वसिष्ठ: I. 35, II. 19. 67. 69. 70, III. 40, V. 27, VIII. 3, XVII. 38.
वस्वौकसारा XVI. 10.
वामन: XI. 22.
वालखिल्या: XV. 10.
वाली XII. 58.
वाल्मीकि: XIV. 45. 58. 79, XV. 11. 37. 64. 69. 80.
वासव: III. 58. 63, V. 5, IX. 8 XI. 33. 53.
विडौजा: *see* बिडौजा:.
विदर्भा: V. 40. 60, VI. 58. 66. 84, VII. 1. 30.
विदिशा XV. 36.
विदेहा: XI. 36, XII. 26, XIV. 24.
विद्याधर: II. 60.
विधाता I. 35.
विन्ध्य: VI. 61, XII. 31, XIV. 8, XVI. 31. 32.
विराध: XII. 28.
वृन्दावनम् VI. 50.
विश्वसह: XVIII. 24.
विष्णु: X. 49, XIV. 59, XVI. 28. 82.
वैदर्भ: V. 62, VI. 3, VII. 67.
वैदेह: XIV. 39. 47. 84.
वैदेही XII. 20. 59. 64, XIV. 33. 39. 72, XV. 61.
वैनतेय: XVI. 88.
वैवस्वत: I. 11, XV. 45. 57.
व्युषिताश्व: *or* व्युषिताश्व: XVIII. 23.
शक्र: I. 75, III. 39. 56, IV. 40, VI. 74, XIV. 83, XIX. 30.

Proper names occuring in the Raghuvans'a.

शङ्खणः XVIII. 22.
शची III. 13. 23. 55, VI. 23, VII. 3, VIII. 32, XVII. 7.
शतमखः IX. 13.
शत्रुघ्नः X. 71. 81, XIII. 79, XV.6. 19. 22. 36.
शम्बूकः XV. 50.
शरजन्मा III. 23.
शरभङ्गः XIII. 45.
शरावती XV. 97.
शर्वः XI. 93.
शातकर्णिः *or* माण्डकर्णिः XIII. 38.
शार्ङ्गी XV. 40.
शिलः XVIII. 17.
शूर्पणखा XII. 38. 51.
शूरसेनः VI. 45.
शोणः VII. 36.
श्यामः XIII 53.
षडाननः XIV. 22.
सगरः III. 50.
संपातिः XII. 60.
सप्तर्षयः XIII. 51.
संमोहनम् V. 57.
सरयू VIII. 95, IX. 16, XIII. 63, XIV. 3. 30, XV. 95. 100, XVI. 21. 35. 36. 54. 58. 75, XIX. 40.
सरस्वती III. 9, IV. 6, VI. 29.
सह्यः IV. 52.
साकेतम् V. 31, XIII. 79, XIV. 13, XVIII. 36.
सिन्धुः IV. 67, XV. 87.
सिप्रा VI. 35.
सीता XII. 9. 21. 33. 44. 53. 54. 63. 74. 90, XIV. 5. 19. 26. 54. 59. 71. 83. 87, XV. 1. 39. 71. 76. 80. 84. 85. 86.
सुकेतुः XI. 14.
सुग्रीवः XII. 58, XIV. 17.
सुतीक्ष्णः XIII. 41.
सुदक्षिणा I. 31, II. 21. 64, III. 1. 67.
सुदर्शनः XVIII. 35.
सुधर्मा XVII. 27.
सुनन्दा VI. 20. 37. 70. 80.
सुपर्णः X. 61.
सुप्रतीकः V. 75.
सुबाहुः XI. 29, XV. 36.
सुमन्त्रः XIII. 59, XIV. 47.
सुमित्रा X. 55. 71, XIV. 51. 56.
सुरभिः I. 75.
सुषेणः VI. 45.
सुह्माः IV. 35.
सौमित्रिः XII. 14. 104, XIII. 32. 73, XIV. 11. 53, XV. 14. 20.
स्कन्दः II. 36, VII. 1.
स्थाणुः XI. 13.
स्वाहा I. 56.
हनूमान् XIII. 64.
हरः IV. 32, VI. 62, XI. 83.
हरिः III. 43. 49. 55. 68, VIII. 79, X. 5. 86, XI. 76, XII. 57.103, XIII. 1. 69.
हरिणी VIII. 78.
हिमवान् IV. 79.
हिमाद्रिः XIV. 3.
हिरण्यनाभः XVIII. 25.
हूणाः IV. 68.
हेमाङ्गदः VI. 53.
हैहयाः XI. 74.

B.

AUTHORS AND WORKS QUOTED OR REFERRED TO BY MALLINÂTHA IN HIS SANJÎVINÎ ON THE RAGHUVANS'A.

अमरः I. 1. 2. 3. 7 and *passim.*
आख्यातचन्द्रिका (*w.*) XII. 41.
आपस्तम्बः III. 39 ; XI. 25.
आर्यभट्टः X. 1.
आश्वलायनः II. 75; III. 10.
कणभुक् *Notes on* VIII. 16.
कात्यायनः VII. 26.
कामन्दकः I. 22. 59. 60. 63; III. 35; IV. 8; V. 16. 33; IX. 15. 53; XIII. 7; XVI. 2; XVII. 51. 60; XVIII. 50.
कालिदासः I. 1, and at the end of each canto.
काशिका (*w.*) VIII. 4.
कुमारसंभवम् (*w.*) VII. 22.
कूटस्थीये (*w.*) III. 13.
केशवः I. 4; III. 33; IV. 7. 37; VI. 30; VII. 31. 39; IX. 15.60; X. 12; XII. 11. 15; XV. 5; XVI. 57.
कैयटः V. 72.
कौटिल्यः III. 29. 35; IV. 35; VIII. 21; XV. 29; XVII. 49. 55. 56. 76. 81; XVIII. 50.
क्षीरस्वामी I. 36; V. 41; IX. 22.
गणव्याख्यानम् (*w.*) XI. 41; XII. 19.
गार्ग्यः XVI. 24.
गीता (*w.*) VIII. 20; X. 27.
गोनर्दीयः XIX. 16. 29. 31.
गौतमः I. 25.
चाक्षुषः V. 50.
चाणक्यः I. 22.

दक्षिणावर्तः (An older commentator on the poem). *Introduction.*
दण्डनीतिः (*w.*) I, 26.
दण्डी III 16; IV. 66; VII. 15; IX. 43; XIII. 15; XIX. 51.
दशरूपकम् (*w.*) V. 67; XIX. 31.
नाथः (An older commentator on the poem). I. 23; Also *Introduction.*
नारदः III. 13.
नारसिंहम् (*w.*) X. 56.
नैषधः (*w.*) IV. 45.
न्यासकारः The; IX 23; XII. 19.
न्यासोद्द्योतः (*w.*) II. 34.
पराशरः I. 76; VIII. 73.
पारस्करः III. 10.
पालकाप्यः I. 71; IV. 23; XVI. 3.
ब्रह्मपुराणम् (*w.*) IV. 44.
भट्टमल्लः XII. 41.
भरतः XIX. 36.
भविष्योत्तरम् (*w.*) III. 1; IV. 3.
भागुरिः XI. 21.
भोजराजः XII. 19.
मनुः I. 14. 22. 58. 62. 76. 85. 95; II. 2. 75; III. 11. 18. 28. 29. 33; V. 10. 21; VIII. 4. 14. 73; IX 1. 7; XI. 71; XIII. 24; XV. 53; XVII. 52. 59. 61; XVIII. 15.
महाभारतम् (*w.*) II. 42; IV. 77; X. 19; XI. 74.
महाभाष्यम् (*w.*) II. 1.
महायात्रा (*w.*) IV. 25.

Authors and works quoted or referred to by Mallinâtha in his Sanjîvinî on the Raghuvans'a.

माघकाव्यम् (*w.*) IV. 45; VIII.29.
मातङ्गः I. 39.
मार्कण्डेयः VI. 32.
मिताक्षरा (*w.*) VIII. 19.
मृगचर्मीयम् (*w.*) IV. 39.
याज्ञवल्क्यः I. 20; III 10. 70; VIII. 86; IX. 76; XVI. 88; XVII. 39.
यादवः I. 13. 17. 41; II. 8. 26. 30. 31. 32. 35; III. 28. 29. 31. 52; IV. 15. 36. 46. 53. 73. 77; V. 1. 7. 8. 14. 17. 45. 48. 64. 70; VIII. 80; IX. 16; X. 58; XII. 1. 88; XIII. 67. 75. 79; XIV. 2 13. 24; XVI. 10. 52. 78; XIX. 24. 57.
रतिरहस्यम् (*w.*) XIX. 25. 32.
रससुधाकरः (*w.*) VI. 12.
राजमृगाङ्कः (*w.*) III. 13.
रामायणम् (*w.*) II. 75; IX. 76.77; X. 1; XI. 9. 14; XIII. 53. 73; XV. 24.
लघुजातकम् (*w.*) III. 13.
वाल्मीकिः I. 4.
वसिष्ठः VIII. 18. 24; XIII. 52.
वात्स्यायनः VII. 22; XIX. 16. 31.
वामनः IV. 28; VII. 7; IX. 57; XIX. 50.
वामनपुराणम् (*w.*) VII. 35.
वायुपुराणसंहिता (*w.*) I. 1.
वाहटः III. 1. 2. 6. 8.
विश्वः I. 11. 14. 18. 30; II. 3. 17. 31. 57; III. 3. 10. 27. 30. 33; IV. 18. 30. 53. 63; V. 35. 36. 37. 53. 68; VI. 21. 28. 30. 32. 47. 71; VII. 9. 45. 50. 57; VIII. 19. 24. 94; IX. 16. 24. 50. 65. 75; X. 9. 19; XI. 13. 14. 15. 18. 20. 38. 42. 46. 47. 57. 67. 77. 92; XII. 1. 12. 34. 66. 88. 96. 98; XIII. 4. 7. 9. 24. 62. 72; XIV. 48; XV. 97-98; XVI. 3. 11. 37. 40. 85; XVII. 25. 32. 58. 62; XVIII. 14. 30.
विश्वप्रकाशः (*w.?*) I. 8.
विष्णुपुराणम् (*w.*) IV. 39.
वृत्तिकारः The, VI. 78; XII. 19.
वैजयन्ती (*w.*) XV. 32.
व्यासः II. 73; XIV. 80.
शकुनार्णवः (*w.*) XI. 26.
शङ्खः III. 21.
शब्दार्णवः (*w.*) V. 44.
शाश्वतः I. 38; II. 15. 35. 59; III. 12. 20; IV. 17; V. 43. 49. 59. 73; IX. 18; XVI. 21. 82.
संग्रहः (*w.*) III. 1.
सज्जनः I. 2. 20; XVII. 29.
सिद्धयोगसंग्रहः (*w.*) V. 73. Correctly cited as सिन्धुयोगसंग्रहः by Hemâdri, which see.
स्कान्दम् (the Purá*n*a) VIII. 95.
हरिवंशः (*w.*) II. 75.
हलायुधः I. 7. 12. 63; II. 18. 42. 75; III. 6. 28; V. 4. 15. 73; VI. 43. 53; XI. 1. 14. 27 XVII 47. 68.
हारीतः XIV. 12.
हैमः (*w.*) II. 14; III. 12; IV. 30; XII. 25.

C.

Anonymous quotations by Mallinâtha.

अक्षमा दीव्य (इति श्रुतिः) VI. 18.

अग्निचित्कपिला सत्री राजा भिक्षुर्महोदधिः । दृष्टमात्राः पुनन्त्येते तस्मात्पश्येत नित्यशः (इति स्मरणम्) XVII. 74.

अग्निमुखा वै देवाः (इति श्रुतिः) X. 21.

अग्निं वा आदित्यः सायं प्रविशति (इति श्रुतिः) IV. 1.

अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा झषवणिजौ च दिवाकरादितुङ्गाः । दशशिखिमनुयुक्तिथीन्द्रियांशैस्त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः III. 13.

अत्यन्तासत्यपि ज्ञानमर्थे शब्दः करोति हि I. 27.

अदण्ड्यान्दण्डयन्राजा दण्ड्यांश्चैवाप्यदण्डयन् । अयशो महदाप्नोति नरकं चैव गच्छति I. 25.

अनुष्ठानासमर्थस्य वानप्रस्थस्य जीर्यतः। भृग्वग्निजलसंपातैर्मरणं प्रविधीयतेIX. 81.

अनेकशक्तियुक्तस्य विश्वस्यानेककर्मणः । सर्वदा सर्वथाभावात्किंचित्किंचिद्विवक्ष्यते VII. 59.

अपि माषं मषं कुर्याच्छन्दोभङ्गं त्यजेद्गिराम XIX. 23.

आत्मा वै पुत्रनामासि (इति श्रुतिः) I. 33, XVI. 82.

आदित्यो वा अस्तं यन्नग्निमनुप्रविशति (इति श्रुतिः) IV. 1.

आभासत्वे विरोधस्य विरोधालंकृतिर्मता X. 19.

आशीर्नमस्क्रिया वस्तुनिर्देशो वापि तन्मुखम् I. 1.

इदं सर्वमसृजत यदिदं किंचित (इति श्रुतिः) X. 22.

उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना XIII. 8.

एष वा अनृणो यः पुत्री (इति श्रुतिः) III. 20, X. 2.

ऐश्वर्यरूपतारुण्यकुलविद्याबलैरपि । इष्टलाभादिनान्येषामवज्ञा गर्व ईरितः । मदस्त्वानन्दसंमोहः संभेदो मदिराकृतः XVII. 43.

कामं पितरं प्रोषितवन्तं पुत्राः प्रत्याधावन्ति । एव ह वा एतमग्नयः प्रत्याधावन्ति सशकलान्दारूनिवाहरन् I. 49.

कार्यकारणयोर्भिन्नदेशत्वे सत्यसंगतिः XVII. 33.

कालाक्षमत्वमौत्सुक्यं मनस्तापज्वरादिकृत V. 67. See readings of the same.

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये &c. I. 1.

काव्यालापांश्च वर्जयेत I. 1.

किं बहुना कारवोऽपि निश्चकर्मेत्युपासते (इत्याचार्योः?) X. 26.

कृष्णविषाणया कण्डूयते (इति श्रुतिः) IX. 17.

कृष्णाजिनं दीक्षयति औदुम्बरं दीक्षितदण्डं यजमानाय प्रयच्छति IX. 17.

छिन्द्याद्वाङ्गमपि दुष्टात्मनः I. 28.

जातौ जातौ यदुत्कृष्टं तद्रत्नमभिधीयते XVI. 1.

ज्ञातेऽन्यासङ्गविकृते खण्डितेर्ष्या कषायिता XIX. 21.

तस्मात्सोमो राजा नो ब्राह्मणानाम् (इति श्रुतिः) V. 23.

तुल्योऽनेकत्र दक्षिणः VI. 29.

ते दक्षन्ते दक्षिणां प्रतिगृह्य I. 31.

त्रयाणां वर्णानां वेदमधीत्य चत्वार आश्रमाः (इति सूत्रकारवचनम्) VIII. 14.

दशमे मासि जायते (इति श्रुतिः) III. 13.

Anonymous quotations by Mallinatha.

देयमप्यहितं तस्यै हिताय हितमल्पकम् । श्रद्धाविघाते गर्भस्य विकृतिश्च्युतिरेव वा III. 6.

दोहदस्याप्रदानेन गर्भो दोषमवाप्नुयात् III. 6, XIV. 27.

नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय (इति श्रुतिः) X. 27.

नाशुभव्यसनं प्राप्तं नार्तं नातिपरिक्षतम् VII. 47.

नासाकण्ठमुरस्तालु जिह्वादन्तांश्च संस्पृशन् । षड्भ्यः संजायते यस्मात्तस्मात्षड्ज इति स्मृतः I. 39.

पितृव्यपुत्रे सापत्ने परनारीसुतेषु च । विवाहाधानयज्ञादौ परिवेत्त्राद्यदूषणम् XI.54.

प्रतिपाद्यमहिम्ना च प्रबन्धो हि महत्तरः I. 2.

प्राप्ते तु पञ्चमे वर्षे विद्यारम्भं च कारयेत् III. 28.

प्रोषिते मलिना कृशा (इति स्मरणम्) VI. 23.

प्रोष्यागच्छतामाहिताग्नीनामग्नयः प्रत्युद्यान्ति (इति श्रुतिः) I. 49.

ब्राह्मणः क्षत्रियो वापि वैश्यो वा प्रव्रजेद्गृहात् (इति स्मरणम्) VIII. 14.

मकरन्दस्य मद्यस्य माक्षिकस्यापि वाचकः । अर्धर्चादिगणेपाठात्पुंनपुंसकयोर्मधुः IX. 36.

मणिः शाणोल्लीढः समरविजयी हेतिनिहतः &c. V. 16.

मुखजानामयं धर्मो वैष्णवं लिङ्गधारणम् । बाहुजातोरुजातानामयं धर्मो न विद्यते VIII. 14.

मृदङ्गं दैवतं विप्रं घृतं मधु चतुष्पथम् । प्रदक्षिणानि कुर्वीत विज्ञातांश्च वनस्पतीन् I. 76.

मृदुश्चेदवमन्येत तीक्ष्णादुद्विजते जनः । तीक्ष्णश्चैव मृदुश्चैव प्रजानां सरसो मतः VIII. 9.

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते (इति श्रुतिः) X. 28.

यत्कुर्वते वक्षसि वल्लभस्य स्तनाभिघातं निबिडोपगूढम् । परिश्रमार्थं शनकैर्विदग्धास्तत्कण्टसूत्रं प्रवदन्ति सन्तः XIX.32.

यदहरेव विरजेत्तदहरेव प्रव्रजेत् (इति श्रुतिः) VIII. 14.

रम्याणां विकृतिरपि श्रियं तनोति XVI. 67.

राज्ञा सभासदः कार्या रिपौ मित्रे च ये समाः XVII. 39.

रान्नराविह रथोद्धता लगौ XI. 1.

रिक्तहस्तेन नोपेयाद्राजानं दैवतं गुरुम् IX. 24.

लक्ष्मीकामो युद्धादन्यत्र करिवधं न कुर्यात् (इति शास्त्रम् (?)) IX. 74.

वाचं यच्छति (इति श्रुतिः) IX. 17.

वियोगे योगे वा प्रियजनसदृक्षानुभवनं ततश्चित्रं कर्म स्वपनसमये दर्शनमपि । तदङ्गस्पृष्टानामुपगतवतां स्पर्शनमपि । प्रतीकारः कामव्यथितमनसां कोऽपि कथितः VIII. 92.

विषादश्चेतसो भङ्ग उपायाभावनाशयोः III. 40.

शतं वै तल्पा राजपुत्रा देवा आशापालाः (इति श्रुतिः) III. 38.

शरमयी मौञ्जी वा मेखला । तया यजमानं दीक्षयति IX. 17.

शुभदो मो भूमिमयः I. 1.

स पिता यस्तु पोषकः I. 24.

समासक्तो भवेद्यस्तु पातकैर्महदादिभिः । दुश्चिकित्स्यैर्महारोगैःपीडितो वा भवेत्तु यः । स्वयं देहविनाशस्य काले प्राप्ते महामतिः । आब्रह्माणं वा स्वर्गादिमहाफलजिगीषया । प्रविशेज्ज्वलनं दीप्तं भृगुतः पतनं तथा । एतेषामधिकारोऽस्ति नान्येषां सर्वजन्तुषु । नराणामथ नारीणां सर्ववर्णेषु सर्वदा VIII. 94.

ANONYMOUS QUOTATIONS BY MALLINÂTHA.

समित्पुष्पकुशाग्न्यम्बुमृदन्नाक्षतपाणिकः । जपं होमं च कुर्वाणो नाभिवाद्यो द्विजो भवेत् I. 56.

समिद्धेऽग्नावाहुतीर्जुहोति I. 53.

सलिलमये शशिनि रवेर्दीधितयो मूर्च्छितास्तमो नैशं । क्षपयन्ति दर्पणोदरनिहिता इव मन्दिरस्यान्तः (इति संहितावचनं see Varáhamihira B*ri*. Samh. IV. 2.) III, 22.

सर्वत्र जयमन्विच्छेत्पुत्रादिच्छेत्पराजयम् VIII. 3.

सव्यमाक्षि पूर्वं मनुष्या अञ्जते (इति श्रुतिः) VII. 8.

स्वतः सिद्धेन भिन्नेन संमतेन च धर्मतः &c., I. 1.

स्वरः सत्त्वं च नाभिश्च गाम्भीर्यं त्रिषु शस्यते XVIII. 20.

PK 3796 R2 1897

Kalidasa
The Raghuvansa

[redacted]

PLEASE DO NOT REMOVE
CARDS OR SLIPS FROM THIS POCKET

UNIVERSITY OF TORONTO LIBRARY